हिमप्रस्थ

वर्ष : 60 सितम्बर, 2015 अंक : 6

प्रधान सम्पादक
डॉ. एम.पी. सूद

वरिष्ठ सम्पादक
यादविन्दर सिंह चौहान

सम्पादक
वेद प्रकाश

कम्पोजिंग एवं पृष्ठ सज्जा : **अश्वनी**

सम्पादकीय कार्यालय: हि. प्र. प्रिंटिंग प्रेस परिसर, घोड़ा चौकी, शिमला-5

वार्षिक शुल्क : 150 रुपये, एक प्रति : 15 रुपये

रचनाओं में व्यक्त विचारों से सम्पादकीय सहमति अनिवार्य नहीं

E-Mail : himprasthahp@gmail.com
Tell: 0177 2633145, 2830374

ज्ञान सागर

यदि मानव हमेशा सतर्क रहे, तो उसके हृदय में कुविचार आ ही नहीं सकते।

– स्वामी रामकृष्ण परमहंस

इस अंक में

लेख

साक्षात्कार

कहानी

लघु कथा

कविता/ग़ज़ल/गीत

आखिरी पन्ना

अपनी बात

'निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति कौ मूल
बिन निज भाषा ज्ञान के, मिटै न हिय कै शूल ॥'

भारतेन्दु जी की उपर्युक्त पंक्तियों का भावार्थ है- 'मातृभाषा को समृद्ध करने से ही देश को प्रगतिशील एवं खुशहाल बनाया जा सकता है। अपनी भाषा के ज्ञानोपार्जन से ही अपनी मूल संस्कृति की जड़ों को मजबूत किया जा सकता है।' भारतवर्ष सदियों से ही अपने सांस्कृतिक एवं भाषायी वैविध्य के लिए जाना जाता है और 'अनेकता में एकता' इसकी अनूठी पहचान है। विदेशी संस्कृतियों के प्रभाव के बावजूद हमने अपनी संस्कृति के मौलिक स्वरूप को सदैव अक्षुण्ण बनाए रखा है। किसी भी देश की सांस्कृतिक विरासत को आगे ले जाने के लिए वहां की मातृभाषा को संरक्षण देना बेहद आवश्यक है। हिंदी हमारी राष्ट्रभाषा है और इस पर हम सभी को गर्व है। राष्ट्रपिता महात्मा गांधी का हिंदी भाषा के प्रति अप्रितम लगाव था। उनका मत था कि जिस देश के पास अपनी भाषा न हो, वह राष्ट्र सही मायनों में तरक्की नहीं कर सकता। अपनी निज भाषा के बगैर तो आजादी भी बे-मायनी हो जाती है। किसी भी राष्ट्र के लिए भाषा का प्रश्न केवल अक्षर, शब्द या लिपि का प्रश्न नहीं होता, बल्कि यह देश विशेष की संपूर्ण प्रगति, नियति एवं संस्कृति से जुड़ा प्रश्न है। भारत की अधिकांश जनता आज भी गांवों में निवास करती है। यहां बोली जाने वाली असंख्य बोलियों एवं भाषाओं में ही देश की वास्तविक पहचान छिपी है। इन शब्दों, ध्वनियों, कहावतों और लोकोक्तियों में देश की मिट्टी व ग्रामीण परिवेश की महक आती है। ऐसी स्थिति में यदि हमें अपनी राष्ट्रीयता को अक्षुण्ण रखना है तो देश की राष्ट्रीय भाषा को मजबूत करना होगा। जैसे-जैसे हम विकास की ओर उन्मुख होते हैं, वैसे-वैसे हमारी ग्रहणशील शक्ति में अभिवृद्धि होती है। हिंदी भाषा का विकास एक लंबी प्रक्रिया का प्रतिफल है। संस्कृत-अपभ्रंश से जन्मी हिंदी भाषा ने साहित्य सृजन की स्थिति तक पहुंचने में एक लंबा रास्ता तय किया। आधुनिक हिंदी से राष्ट्रभाषा और फिर राजभाषा से आम भाषा बनने में इसने अनेक चुनौतियों का सामना किया। हिंदी भाषा आज जिस वैज्ञानिक स्वरूप में स्थापित है, वह अपने बलबूते संपूर्ण विश्व को प्रभावित करने में सक्षम है। 21वीं सदी में सूचना प्रौद्योगिकी और संचार माध्यमों के अभूतपूर्व विस्तार से भाषा का स्वरूप भी तेजी से बदलता नज़र आ रहा है। यह ठीक है कि हिंदी भाषा को एक बोलचाल की भाषा के रूप में लोकप्रिय बनाने में सरकारी प्रयासों के अलावा हमारे देश के फिल्म उद्योग और टेलीविजन का महत्त्वपूर्ण योगदान है। लेकिन यह भी सत्य है कि कम्प्यूटर, इंटरनेट, स्मार्ट फोन और टीवी ने हमारी जीवन शैली और भाषायी स्तर को जिस तरह से प्रभावित और नियंत्रित किया है, वह भी एक बहस का ज्वलंत मुद्दा है। आधुनिक दौर में भाषायी स्तर पर हो रहे प्रयोगों से जहां हमारी भाषिक विविधता को बनाए रखने व हजारों साल पुरानी संस्कृतियों और स्मृतियों को सुरक्षित रखने का संकट उत्पन्न हो गया है, वहीं इससे पूरी दुनिया में एक ध्रुवीय संस्कृति पनपने का भी खतरा मंडरा रहा है। बहुराष्ट्रीय कंपनियों को तो अपने साम्राज्य की सहूलियतों के लिए ऐसी ही एकरूपता की दरकार है। हिंदी साहित्य जगत के साहित्य-सृजन में हिंग्लिश भाषा का प्रयोग साहित्यिक हिंदी के स्वरूप को विकृत कर रहा है। हमारी युवा पीढ़ी हिंदी की देवनागरी लिपि की बजाय एस.एम.एस. की भाषा या रोमन-हिंदी को प्रयोग में ला रही है। हमारी राष्ट्रभाषा अत्यंत वैज्ञानिक व समुन्नत भाषा है जिसे ज्ञान-विज्ञान की भाषा के रूप में विकसित व स्थापित किया जाना चाहिए। हमारे भाषा विज्ञानियों को चाहिए कि हिंदी भाषा जहां कहीं भी व्याकरणिक, अर्थ, लेखन व उच्चारण की दृष्टि से कठिन लगे, वहां इसमें सुधार लाकर इसका सरलीकरण एवं सार्वभौमीकरण किया जाना चाहिए। हिंदी हमारी राष्ट्रभाषा है इसे उचित मान-सम्मान दिलाकर यथासंभव प्रोत्साहन देना होगा। राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में हिंदी ही एक ऐसी भाषा है जो पूरे देश को एक-सूत्र में बांधे रखने में समर्थ है। यह भाषा ही नहीं वरन् हमारी संस्कृति का पर्याय है, हमारी भारतीयता की आत्मा है। मात्र हिंदी दिवस मनाने से हिंदी को लोकप्रियता नहीं मिलेगी बल्कि इसके लिए सभी स्तरों पर वृहद कार्य व नीतियां लागू करने की जरूरत महसूस की जा रही है।

– सम्पादक

आलेख

बुछैन
हिमाचल का जनजातीय लोक नाट्य

● सुदर्शन वशिष्ठ

बुछैन को आम लोक भाषा में बु-ज्हेन भी कहा जाता है। वास्तव में इसे तिब्बती भाषा में 'फोर-बर-दो-चोग' कहते हैं जिसका अर्थ है : अमाश्य पर पत्थर फाड़ खेल या अनुष्ठान। यूं तो 'बुछैन' लोकनाट्य स्पिति में अन्य स्थानों में भी खेला जाता हैं किंतु इस का मुख्य केन्द्र स्पिति की पिन घाटी है। यहां के गांव सगनम में अभी भी बुछैन के कलाकार विद्यमान हैं। पिन घाटी कुल्लू और बुशहर के बीच एक संकरी घाटी है जहां आसपास ऊंची ऊंची पर्वत श्रृंखलाएं हैं। दुर्गम स्थान और बिलकुल अलग थलग रहने के कारण यहां की परंपराएं अभी भी जीवित हैं। ''बुछैन' में एक पूरा नर्तक दल रहता है जो गांव गांव में चमत्कारी खेल दिखाते हैं। ये लोग गांव गांव जा कर पूरे अनुष्ठान के साथ नाटक, नृत्य और अपने चमत्कारों के द्वारा ग्रामीणों को रिझा कर अपनी आजीविका भी कमाते हैं। ये अपने इलाके तक ही सीमित नहीं रहते बल्कि दूर दूर जा कर भी अपने खेल दिखाते हैं। किन्नौर, लाहौल, लद्दाख और जंस्कर तक गांव-गांव जा कर ये अपने खेल दिखाते हैं। इनके खेल दिखाने का कोई समय निश्चित नहीं है किंतु फसल के कटने पर अपने करतब दिखाना इन्हें लाभकारी रहता है क्योंकि उन दिनों इन्हें खेल दिखाने के बदले अनाज आदि भेंट में मिल जाता है।

अब इन कलाकारो की संख्या बहुत कम रह गई है। ये वर्ष भर अपना खेल नहीं दिखाते हैं। इस समय विशेष त्योहारों या उत्सवों के समय ही यह खेल देखने को मिलता है।

स्पिति में बुछैन परंपरा सदियों से चली आ रही है। यह परंपरा किसी समय लद्दाख में भी प्रचलित थी। अब वहां यह समाप्त हो चुकी है। स्पिति में भी धीरे धीरे यह समाप्त हो रही है।

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

माना जाता है कि इस अनोखे अनुष्ठान का जन्म तिब्बत में हुआ। इसके जन्मदाता महासिद्ध थंग-तोंग-ग्यलपो माने जाते हैं। इनका जन्म चौदहवीं शताब्दी में हुआ। थंग-तोंग-ग्यलपो का अर्थ 'मरुस्थल का राजा' है। कहा जाता है एक बार इस क्षेत्र में सूखा पड़ गया जिसके कारण अकाल सी स्थिति हो गई। तरह तरह की बीमारियां फैलने से लोग काम करते हुए, घास काटते हुए, खाना खाते हुए और यूंही बैठे बैठे मरने लगे। लोगों में त्राहि त्राहि मच गई। राजा ने कई हकीम वैद्य बुलाए किंतु कोई उपचार न कर पाया। अब लोगों ने भगवान बुद्ध से प्रार्थना की जिसके फलस्वरूप स्वयं अवलोकितेश्वर ने थंग- तो- ग्यलपो के रूप में जन्म लिया। इन्होंने सूखे और अकाल करने वाले दानवों को बुछैन अनुष्ठान कर के समाप्त किया।

दूसरी आस्था के अनुसार नवमी शताब्दी में शासक लड्.दर्मा बौद्ध धर्म का विरोधी हो गया। उसने पूरे तिब्बत से धर्म का नाश करने की ठान ली। उस समय कोई भी व्यक्ति मन्त्र का पाठ नहीं कर सकता था। लामाओं को मारना आरम्भ कर दिया। लामाओं तथा लोगों ने प्रार्थनाएं आरम्भ कर दीं जिसके फलस्वरूप त्रिलोकीनाथ की चाङ्-रे-जिग ने धरती पर अवतार ले कर थंग तोंग ग्यलपो के रूप में जन्म लिया। राजा के धर्मविमुख होने के कारण सारी प्रजा भी नास्तिक हो गई थी। कोई धर्म की बात सुनने के लिए तैयार न था। थंग तों ग्यलपो ने अपना एक नाट्य दल बनाया और धार्मिक अनुष्ठान के साथ चमत्कार दिखाने आरम्भ किए जिससे लोग उनकी ओर आकर्षित हो सकें। चमत्कारों के बीच में ये लोग धर्म का प्रचार भी करने लगे। इन्होनें ने गांव गांव जा कर करतब दिखाने आरम्भ किए और धर्म का प्रचार भी जारी रखा। इससे लोग पुनः अपने धर्म की ओर प्रवृत्त हुए। समय के अनन्तर इन लोगों का यह पेशा बन गया और ये जगह जगह अपने करतब दिखाने लगे।

तीसरे मत के अनुसार चौदहवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में ल्हासा के राजा रूजे-रिबयो-छे-खापा (1357-1419) के शासन में एक दानव या राक्षस ने आतंक मचा दिया। उसके प्रकोप से राज्य में



नाट्य : एक दृश्य

बीमारियां फैलने लगी। लोग परेशान हो गए। वे अपना काम करते हुए, खाना खाते हुए , सोते हुए ही मरने लगे। वैद हकीम, जादू टोने का इलाज करने वाले लामा हार गए। ऐसे समय में किसी ने राजा को बताया कि एक थंग-तोंग-ग्यलपो नाम के चमत्कारी सिद्ध हैं जो एक गोन्पा बना रहे हैं। वे गोन्पा का निर्माण करते तो रात को दानव उसे गिरा देते। वे दिन में पुल बनाते तो रात को दानव उसे बाढ़ से बहा देते।

राजा ने थंग-तोंग-ग्यलपों के पास अपने दूत भेजे और उन से ल्हासा आ कर अपने राज्य को बचाने का अनुरोध किया। थंग-तोंग-ग्यलपो ने राजा का अनुरोध स्वीकार कर लिया और श्वेत पूंछ वाले गरूड़ की सवारी पर ल्हासा पहुंच गए। यहां आ कर उन्होंने पेट के आकार एक पत्थर तलाशा। उस पत्थर में दानवों की आत्मा डाल दी। एक पत्थर खंजर के आकार का लिया और मन्त्र द्वारा एक ही प्रहार से बड़े पत्थर के टुकड़े टुकड़े कर दिए। पत्थर जब टूटा तो जोर से चीखा। यह सब उन्होंने लोगों और दरबारियों के सामने किया। सब के सामने चमत्कार दिखा कर थंग-तोंग-ग्यलपो ने दानव को मार भगाया।

कहा जाता है थंग-तोंग-ग्यलपो का जन्म भोटी पंचांग के अनुसार छठे रबजुड्. के लौह स्त्री वृषभ वर्ष में चड्. के ऊपरी होवा ल्हचे़ रिछेन दीङ्स् में एक साधारण किसान परिवार में हुआ। ये छः भाई बहनों में पांचवें थे। इनका बचपन का नाम ठोवो पल्दन था। बचपन में इन्हें शिक्षा दीक्षा के लिए गोन्पा में भेजा गया। मेधावी होने के कारण इन्होंने शीघ्र ही भोटी भाषा और व्याकरण का ज्ञान अर्जित कर लिया। बाद में उसी गोन्पा में विभिन्न शिक्षा दीक्षा ग्रहण करने के पर अनेक वर्षों तक एकान्त में साधना की। तन्त्र की शिक्षा ग्रहण करने के उपरांत इन्होंने भारत तथा नेपाल के तीर्थ स्थलों की यात्रा की। नेपाल में में इन्होंने कुछ स्तूपों का जीर्णोद्धार किया। अठारह वर्षों तक ये नेपाल के साथ बोधगया में भ्रमण करते रहे। बोधगया में धर्म श्रवण किया और विशेष सिद्धि प्राप्त की।

एक बार ल्हासा जाते हुए इन्हें नदी पार करनी थी। अतः नाव में सवार हुए किंतु इनके पास नाविक को देने के लिए किराया नहीं था। इस पर नाविक ने क्रोध में इनके सिर पर पतवार का वार कर नदी में फेंक दिया। इस घटना से दुखी हो इन्होंने नदी पर पुल बनाने का संकल्प लिया। तिब्बत में ऐसी कई नदियां थीं जिन्हें लोगों को पार कर जाना पड़ता था। अंततः सत्तर वर्ष की आयु में इन्होंने सन् 1430 में लोगों के सहयोग से ल्हदोङ् शलखर में एक पुल का निर्माण करवाया। इस तरह इन्होंने लगभग अट्ठावन पुलों का निर्माण करवाया। इन्होंने कई लकड़ी के पुल भी बनवाए।

जब ल्हासा के राजा ने इन्हें बुलावा भेजा तब भी इन की प्रसिद्धि पुल बनवाने वाले साधक के रूप में फैली हुई थी।

पुलों के साथ साथ थंग-तोग-ग्यलपो भगवान बुद्ध की धातु की मूर्तियां बनवाने के लिए भी प्रसिद्ध रहे। कई गोन्पाओं में मूर्तियों के साथ साथ भीति चित्र भी बनवाए। इन में साधना कक्ष स्थापित करवा कर कंग्यूर और तंग्यूर को स्वर्णाक्षरों में लिपिबद्ध करवाया।

सी.जी. ब्रूस द्वारा बुछैन का वर्णन

लद्दाख में भी कभी बुछैन परंपरा रही है। लद्दाख, जंस्कर, लाहौल, स्पिति और किन्नौर तक बुछैन का खेल प्रचलित रहा है। सन् 1912 में एक यूरोपियन अधिकारी सी.जी. ब्रूस ने लाहौल में बुछैन का खेल देखा। उन्होंने लाहौल के एक आखिरी गांव दो ज़म में इस खेल का प्रदर्शन देखा। यहां गर्मियों में बाजार लगता था जिसमें तिब्बत से ऊन, पश्म, नमक आदि बेचने के लिए लाया जाता और तिब्बती यहां से अनाज, बरतन और कपड़े आदि ले

जाते। उन्होंने इस खेल की जादुई ढंग से समाप्ति पर हैरानी प्रकट की। उन्होंने उल्लेख किया है आरम्भ में प्रार्थना के बाद एक बुजुर्ग पीठ के बल लेट गया जिस के पेट पर एक भारी पत्थर रख दिया गया। उस पत्थर पर एक आदमी तब तक प्रहार करता रहा जब तक कि वह टूटा नहीं। यह नृत्य बड़ी सफाई से किया गया। ब्रूस ने आगे उल्लेख किया है कि दर्शक चारों ओर अर्धवृत बना कर यह खेल देख रहे थे। खेल समाप्त होने पर नर्तक लामा पीतल के वाद्य झांझ को थाली की तरह दर्शकों के आगे कर घूमा। ब्रूस साहब ने इस में एक रुपये का सिक्का डाला और उनके सहायक चंद्र सिंह ने एक दुअन्नी डाली। यह देख कर ब्रूस साहब हैरान रह गए कि बाकि दर्शकों ने केवल एक एक सूई ही डाली। सम्भवतः इस क्षेत्र में सूई भी एक महत्वपूर्ण चीज रही होगी। यहां कई क्षेत्रों में सूई एक दुर्लभ वस्तु थी जो व्यापार के समय अनाज के बदले भी ली जाती थी।

जॉर्ज डी रेरिख द्वारा बुछैन का वर्णन

जार्ज डी रेरिख ने इस खेल को सर्वाधिक सम्मान प्राप्त और इसके पात्रों को दिव्यशक्ति से सम्पन्न माना है। उन्होंने लिखा है कि इस खेल का कभी कभार ही प्रदर्शन किया जाता है। इस खेल का प्रारम्भ दुष्टात्माओं के दमन के लिए हुआ जिसने पत्थरों के टुकड़ों में अपना आवास बना लिया था। अतः इसे तिब्बती में ' फो-वर-दो-चोग' अर्थात् छाती पर पत्थर तोड़ने का खेल कहा जाता है।

रेरिख को इस नाट्य को लाहौल प्रवास के दौरान दो बार देखने का अवसर मिला। इस नाट्य को स्पिति से आए घूमन्तु लामाओं ने प्रदर्शित किया जिन्हें बुछैन कहते हैं। महायोगी थंग-तोंग-ग्यलपो एक बौद्ध मठ का निर्माण करवा रहे थे कि बहुत से अपशकुन होने लगे। दिन में जो निर्माण कार्य हो पाता था, रात को उसे दुष्टात्मा गिरा देते थे। इस गोन्पा को पूरा करने के लिए पहली बार बुछैन का अनुष्ठान किया गया जिससे बौद्ध मठ का निर्माण ठीक ढंग से चल सका। एक लोहे के पुल के निर्माण के समय भी ऐसा ही हुआ। नदी का जल स्तर बढ़ जाता और पुल का निर्माण नहीं हो पाता। अतः दूसरी बार बुछैन का आयोजन किया गया जिसके बाद पुल के निर्माण का कार्य अबाध गति से चल पड़ा।

एक बार ल्हासा में एक दुष्टात्मा 'जा दुद' के प्रकोप से लोगों में बीमारियां फैल गईं। कई तरह के इलाज के बाद भी बीमारियां ठीक न हुंईं अतः थंग-तोंग-ग्लपो को बुलवाया गया जो श्वेत पूंछ वाले गिद्ध पर सवार हो पहुंच गए। उस समय दुष्टात्मा प्रवेश द्वार की दहलीज में छिप कर बैठी थी। ल्हासा नगर में इस पत्थर को सभी लोगों के सामने खुले में रखा गया। थंग-तोंग-ग्यलपो ने उस पत्थर को एक अन्य छोटे पत्थर से तोड़ दिया। इस पत्थर को तोड़ने के लिए किए जाने बारह प्रयासों की चर्चा की गई है। तेरहवीं बार भी पत्थर न टूटे तो अपशकुन माना जाता है। इसके बाद इसे चौराहे में रख कर एक सौ बालकों द्वारा शोर मचाते हुए एक सौ लौहारों या आठ नवयुवकों द्वारा तुड़वाया जाता है।

इसके बाद रेरिख द्वारा पूरे अनुष्ठान का वर्णन किया है जिस में पत्थर पूजन, बुछैन का मन्त्रजाप और नृत्य, चरवाहे का प्रवेश और लोगों को हंसाना, तलवारों का पेट में चुभोना, पत्थर तोड़ना आदि समस्त क्रियाओं का वर्णन किया है। रेरिख ने लिखा है : ''मेरे सामने जिन लामा नर्तकों ने इस विशेष आयोजन में भाग लिया, उनकी छाती असामान्य रूप से बलिष्ठ थी और उनके शरीर बहुत शक्तिशाली थे। इस अनुष्ठान के बाद 'पी-वड़्.' के संगीत के साथ नृत्य आरम्भ हो जाता है। पी-वड़्. का मुख्य अभिनेता बजाता है। नृत्य के साथ लोकप्रिय गीत भी गाए जाते हैं।''

सन् 1920 के गजेटियर में भी उल्लेख है कि प्रत्येक लामा का पुत्र बुछैन बनता था। पिन घाटी के लोग छोटे छोटे नाट्य दल बना कर बुछैन का प्रदर्शन कर अपनी आजीविका चलाते थे। वे गांव गांव ठहर कर धार्मिक कथाएं सुनाते हुए इस नाट्य का प्रदर्शन करते थे। ये लोग तिब्बत के साथ व्यापार भी करते थे जिस में नमक के बदले अनाज का व्यापार होता था। इस नमक को किन्नौर में बेचा जाता था और बदले में लोहा, भ्रेस और शहद लिया जाता।

स्पिति की पिन घाटी, जो इस नाट्य का केन्द्र रही है, में सन् 1917 में उन्नीस परिवार ये नाट्य कर रहे थे। अभी पिछले वर्षों तक भी यहां कुछ नाट्य दल शेष है जो बाकायदा काम कर रहे हैं। इस घाटी के गांव खर, गुलिङ्, लितिंङ्, मुद तथा सगनम में बुछैन नाट्य दल अभी भी विद्यमान हैं। बुछैन बौद्ध धर्म की यिंड्मा या शंगपा शाखा से निकला है। इस का मुख्य केन्द्र या स्थान गुलिङ् में माना जाता है।

बुछैन के जनक

इन सब धार्मिक और कल्याणकारी कार्यों के अलावा थंग-तोंग-ग्यलपो को बुछैन नाट्य परंपरा का जनक माना जाता है। इन्होंने सात बहनों की एक नाट्य मण्डली तैयार की। जगह जगह नाट्य का प्रदर्शन कर ये पुल बनाने के लिए धन एकत्रित करते थे। अपने कल्याणकारी कार्यों के कारण ये ये एक कुशल वैद्य, लोहार, अभियंता माने जाते हैं। बुछैन परंपरा के संस्थापक थंग-तोग-ग्यलपो की मृत्यु सन् 1485 में तिब्बत के चड़्. प्रांत में हुई मानी जाती है।

पुरातन परंपरा का प्रारम्भ

थंग-तोंग-ग्यलपो ने इस लोक नाट्य का प्रारम्भ तिब्बत से किया। चौदहवीं शताब्दी में मणिपा लामाओं द्वारा 'ऊं मणि पद्मे हूं' का जाप करते हुए इस नाट्य की प्रस्तुति की जाती थी। मणिपा लामाओं ने तिब्बत में दीवारों पर कई कथाओं को चित्रों के माध्यम से प्रदर्शित किया। इन कथाओं में धार्मिक और नैतिक शिक्षा भी

दी जाती थी। थंग-तोंग-ग्यलपो का शिष्य बुछैन कहलाता था। मणिपा लामा और बुछैन में मुख्यतः अंतर यह है कि बुछैन मणिजाप के साथ अंत में छाती पर पत्थर तोड़ने का प्रदर्शन भी करते थे। एक कथा है कि थंग-तोंग-ग्यलपो एक बौद्ध विहार का निर्माण करवा रहे थे तो जो निर्माण दिन में किया जाता, रात को उसे राक्षस नष्ट कर देते। तब थंग-तोंग-ग्यलपो ने इस के निवारण के लिए छाती पर पत्थर तोड़ने का समारोह किया इसी तरह एक बार जब वे लोहे के पुल का निर्माण कर रहे थे, राक्षसों और दानवों ने विघ्न डालने आरम्भ कर दिए। यहां भी उन्होंने समारोह कर पत्थर में स्थित आसुरी शक्तियों को पत्थर तोड़ शांत किया। एक अन्य कथा के अनुसार तिब्बत की राजधानी ल्हासा में महामारी फैली तो थंग-तोंग-ग्यलपो सफेद गरूड़ पर सवार हो कर ल्हासा गए और महामारी फैलाने वाली दुष्टात्माओं को पत्थर में बैठा, उसे वज्र के प्रहार से नष्ट कर दिया।

थंग-तोंग-ग्यलपो के शिष्य ही बुछैन कहलाए। इन्होंने इस परंपरा को जारी रखा। आधि, व्याधि, प्राकृतिक आपदा, दैविक आपदा, दानवी आपदा, अकाल, अनावृष्टि आदि विघ्नों को दूर करने के लिए ये लोग अनुष्ठान करने लगे।

इस नाट्य का दूसरा उद्देश्य जनता में बौद्ध धर्म के प्रति आस्था, निष्ठा और विश्वास जगाना है। इस नाट्य को मनोरंजन का एक साधन बनाने के साथ धर्मनिष्ठ बनाया ताकि अत्याचारी और धर्मविरोधी राजा के होते हुए भी धर्म का प्रचार हो सके। बौद्ध धर्म के मन्त्रोच्चारण, धार्मिक कथाओं के प्रवचन के साथ तान्त्रिका और चमत्कारपूर्ण नृत्यों से इस नाट्य ने धर्म का ह्रास होने से रोका। बाद में इसका उपयोग दुष्टात्माओं को दूर भगाने, प्राकृतिक या दैविक आपदा से बचने, रोग नाश करने के लिए होने लगा।

बुछैन की दीक्षा

बुछैन परंपरा हर कोई नहीं निभा सकता। यह पैतृक परंपरा है जो पीढ़ी-दर-पीढ़ी सीखने से आगे चलती है। बुछैन अपने पुत्र को बाल्यावस्था से ही भोट भाषा सिखाता है। स्पिति घाटी में लामाओं को विवाह करना वर्जित नहीं है। बहुत बार लोग अपने कनिष्ठ पुत्र को लामा बनाने के बजाय बुछैन बनाना पसंद करते हैं। बुछैन का इष्टदेव अवलोकीतेश्वर है जिसकी पूजा पद्धति विधि विधान से सिखाई जाती है। मुख्य बुछैन को भी लामाओं की तरह पूरे संस्कार निभाने पड़ते हैं। लगभग सात वर्ष की आयु में ही उसे गुरु के पास ले जा कर धर्म कर्म, साधना की बातें सिखाई जाती हैं। इन्हें बुछैन में किए जाने वाले गीति नाट्य कण्ठस्थ कराए जाते हैं। इस नाट्य में प्रयोग किए जाने वाले वाद्य यन्त्रों का अभ्यास करवाया जाता है। इन्हें विभिन्न कथाओं की व्याख्या करनी भी सिखाई जाती है। इसके बाद युवा होने पर इन्हें एकांत वास में रह कर विशेष साधना करने का भी विधान है। लो सुम, छोस सुम नाम से साधना तीन वर्ष, तीन माह, तीन दिन तक करनी होती है। इस साधना में एक लाख मन्त्रजाप, एक लाख साष्टांग प्रणाम, एक लाख मंडलार्पण तथ एक लाख गुरुयोग पूजा आदि की साधनाएं करनी पड़ती हैं।

मुख्य बुछैन को लोछैन भी कहा जाता है। इसे मे-मे बुछैन भी कहा जाता हैं। बुछैन में मुख्य बुछैन के अतिरिक्त वेनपा और तीन ग्नपा अर्थात् श्रावक होते हैं। वेनपा को हास्य कलाकार के रूप में भूमिका निभानी पड़ती है अतः इसे हास्य संचार करने के गुणों से परिपूर्ण होना आवश्यक है।

शिक्षा दीक्षा पूरी करने के बाद इस दल को अपनी कला का प्रदर्शन समस्त दर्शकों के समक्ष प्रस्तुत करना हाता है।

बुछैन अनुष्ठान का आयोजन

बुछैन का मुख्य क्षेत्र या केन्द्र अब स्पिति की पिन घाटी है। इस घाटी में सगनम के साथ साथ सोलह गांव है जिनमें यह परंपरा बची हुई है।

परंपरागत उत्सव के रूप में मनाए जाने वाले नाट्स का प्रारम्भ नवम्बर में होता है। सबसे पहले थंग-तोंग-ग्यलपो की मूर्ति की स्थापना की जाती है जो इस नाट्य के संस्थापक रहे हैं। यह अनुष्ठान पिन घाटी के मुद गांव से आरम्भ होता है। नाट्य मण्डली के स्वागत हेतु सभी ग्राम वासी इकट्ठा हो जाते है और उन्हें पहनाने के लिए खतग हाथ में लिए रहते हैं। साथ में दूध, दही और मदिरा भी लिए रहते हैं। ये भेंट सब बुछैन को दी जाती है। इनके ठहरने का प्रबन्ध किसी सम्पन्न घर में किया जाता है। ग्राम वासी भी अपनी अपनी श्रद्धा और क्षमता के अनुसार इन की आवभगत व खान पान का प्रबन्ध करते हैं। हर वर्ष इनके ठहरने के लिए एक खाता पीता, सम्पन्न घर चुना जाता है।

नाट्य का प्रारम्भ रात्रि को भोजन के बाद होता है। सर्वप्रथम शंख बजा कर इसके प्रारम्भ की सूचना दी जाती है जिससे लोग इकट्ठे हो जाते हैं। अब मणि जाप किया जाता है और इस बीच ग्रामीण इन लोगों को भेंट करने के लिए सत्तू, घी, अनाज और अपनी अपनी क्षमता अनुसार रूपये पैसे भी लाते हैं।

बुछैन मणिजाप के साथ अपने लाए चित्रों के बारे में बताते हैं। इन चित्रों में पद्म होदबर, डोवा सङ्मो, ग्यलबु नोरसङ् आदि की जीवनियां होती है जिनके बारे में जनसमूह को बताया जाता है। ग्रामीण इन लोगों से ज्ञान बातें अड़े ध्यान से सुनते हैं। मणिजाप पूरा होने पर ग्रामीण अपने साथ लाई सामग्री इन लोगों को भेंट स्वरूप देते हैं।

मंच चयन, मूर्ति स्थापना तथा पात्रों की वेशभूषा

इस लोक नाट्य के लिए विशेष मंच की अपेक्षा नहीं रहती। गांव के प्रांगण में किसी भी खुले स्थान पर यह नाटक खेला जा सकता है। गांव के बीच या किनारे पर बारह गुणा बारह फुट का स्थान पर्याप्त रहता है। इस स्थान या मंच को 'छोद मचम' या 'तोगरा' कहा जाता है। मंच के पीछे या कभी कभी बीच में नाटक

के संस्थापक थंग-तोंग-ग्यलपो' की मूर्ति स्थापित कर दी जाती है। यह मूर्ति अष्ट धातु से निर्मित होती है। इन की मूर्ति एक वृद्ध साधक की मूर्ति होती है जो पालथी मार साधना में बैठा है। सिर पर श्वेट जटाएं और मुकुट, हाथ आगे की ओर जंघाओं पर। ये हाथ में 'छे-बुम' अर्थात् अमृत का पात्र लिए हुए होते हैं। इन्हें प्रायः श्वेत वस्त्र धारण किए बताया जाता है। इस मूर्ति के साथ दो और मूर्तियां स्थापित की जाती हैं जिनमें एक अवलोकीतेश्वर की और दूसरी द्रीमेभ-कुंदनमथर की होती है। इन मूर्तियों को भी श्वेत वस्त्र में लपेट कर रखा जाता है। थंग-तोंग-ग्यलपो की प्रतिमा के बाई ओर एक त्रिशूल रखा जाता है, दूसरी ओर घण्टी। प्रतिमा के चारों ओर सात कटोरियां रखी जाती हैं जिनमें जौ, धूप, पुष्प, जल आदि रखा जाता है। सामने एक दीपक जला कर रखा जाता है। अब कई जगह स्थायी मंच भी बन गए हैं।

मुख्य पात्र बुछैन जिसे लो-छेन भी कहा जाता है, सिर पर पांच रंगों की टोपी या पगड़ी पहनता है। इस टोपी को तिब्बती में 'फोद-का' कहते हैं। स्थानीय बोलियों में इसे 'थोद', 'दरमिजे' भी कहा जाता है। टोपी के पांच रंग पांच दिशाओं के द्योतक माने जाते हैय पूर्व का सफेद, पश्चिम का लाल, उत्तर का नीला, दक्षिण का पीला और आकाश का हरा। ये पंचरंग उस मुकुट के प्रतीक हैं जो बाद्धिसत्व को सिद्धि प्राप्त होने पर मिले। बुछैन के कानों में चांदी के आभूषण होते हैं जिन्हे 'पंदप' कहा जाता है। वह एक लम्बा चोगा पहनता है जो रेशम के रंगीन कपड़ों से बनाया जाता है और जिसकी बांहे हाथों से बाहर तक लम्बी होती हैं। इसके ऊपर वह एक 'तोंगा' नाम का वस्त्र पहनता है और नीचे टांगों में गहरे लाल रंग का ऊनी घाघरा। ऊपर का वस्त्र 'किरा' नाम के रंगीन धागों से बने कमरबंद से बंधा रहता है। पैरों में स्थानीय जूता जिसे 'ल्हम' या 'ट्रेदपा' कहते हैं। इस जूते का तला याक की खाल से बना होता है।

पत्थर तोड़ने की क्रिया के समय बुछैन एक कपड़ा 'पुंग्खप' पीठ पर लटकाता है जो सूईयों से कन्धों पर बान्ध दिया जाता है। पत्थर को सफलतापूर्वक तोड़ने के लिए अभिमन्त्रित और तान्त्रिक अष्टघातु से निर्मित एक आभूषण भी मन्त्रोच्चारण के साथ पहनाया जाता है जिसे 'दोर्जे-फुरफा' कहते हैं। इसमें, ऊपरी भाग में तीन देवी की मूर्तियां तथा निचले भाग में भैरव की मूर्ति बनी होती है। इसे एक सौ आठ मनको की बनी माला 'ठड़ा' पहनाई जाती है। मंगा और मणियों से जड़ा एक हार भी पहनाया जाता है। चांदी और शंख से बना एक और आभूषण 'थोंगा' भी गले में डाला जाता है।

वेनपा को छोड़ अन्य कलाकारों की वेशभूषा बुछैन की तरह ही होती है किंतु वे बुछैन की तरह आभूषणों से सुसज्जित नहीं होते। कई बार अन्य कलाकार साधारण कपड़े ही पहनते है। वे सिर पर लम्बी टोपी पहनते हैं जिसे 'लिंगजिमा' कहा जाता है। शरीर पर खाल पहनते हैं और नीचे ऊनी तंग पायजामा। वेनपा या विदूषक गडरिए की भूमिका फटे पुराने वस्त्र पहनता है ताकि अपनी वेशभूषा से भी वह दर्शकों को हंसा सके।

वाद्य यंत्र

बुछैन में वाद्य यन्त्रों का बहुत महत्त्व है। वाद्य यन्त्रों की ध्वनि से ही पता चलता है कि यह नाट्य आरम्भ हो रहा है। सबसे पहले शंख बजाया जाता है जो दूर दूर तक गांवों में खेल के आरम्भ होने की सूचना देता है। शंख को 'तुग' कहा जाता है।

लामाओं का महत्वपूर्ण यन्त्र 'माणे' है। इसे 'माणे' या 'मणि खोर लो' भी कहा जाता है। मन्त्र जाप के समय इसे हाथ में घुमाया जाता है।

(शेष पृष्ठ 51 पर)



वाद्य बजाते लामा

आलेख

...मैं हिंदी हूं

● गोपाल जी गुप्त

प्रतिवर्ष सितंबर महीने की 14वीं तारीख को मैं शासकीय, अशासकीय स्तर पर पूरे देश में महत्त्वपूर्ण तथा चर्चित हो जाती हूं जिस दिन मेरा गुणगान होने लगता है, प्रतिज्ञाएं-घोषणाएं होती हैं, मेरी समृद्धि को लेकर कई योजनाएं बनती हैं, मुझे स्वर्ण-सिंहासन पर आसीन कर मेरी आरती उतारी जाती है किंतु अगले दिन ही सब कुछ भुला दिया जाता है और मैं अपनी समृद्धि की आशा लिए पुनः हाशिए पर धकेल दी जाती हूं। वास्तव में स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद से मैंने अपने प्रियजनों तथा विरोधियों के बीच रस्साकसी का खेल देखा है। मैं सोचने लगती हूं कि मैं जितना विवादित स्वतंत्रता के बाद हुई उतना इसके पहले नहीं हुई थी। इसका मूल कारण मैं राजनैतिक दृढ़ इच्छा-शक्ति का अभाव ही मानती हूं। जब मैं विदेशों की ओर दृष्टि डालती हूं तो अपने देशवालों पर अफसोस होता है, क्योंकि विदेशों में जितना प्रेम वहां वालों को स्व-भाषा से है उतना पराई भाषा से नहीं, वे स्वभाषा में वार्तालाप, लिखना-पढ़ना गौरव की बात मानते हैं जबकि यहां उलटा है। लोग विदेशी भाषा में ही गौरवानुभूति करते हैं, क्योंकि उन्हें स्वभाषा में वार्तालाप, लिखना-पढ़ना नहीं सुहाता।

निश्चित रूप से ऐसी परिस्थिति में आप मेरे जन्म, विकास आदि के बारे में अपरिचित होंगे, इसी से मैं अपनी आत्मकथा आपको सुनाती हूं। शायद इसे जानकर आपको थोड़ी प्रसन्नता हो। यों तो मेरा जन्म दसवीं शताब्दी में हुआ पर मैं आपको छठी शताब्दी से जानकारी दे रही हूं। संभवतः आपको जानकर आश्चर्य होगा कि मनुष्यों की ही भांति भाषा की भी तीन स्थितियां होती हैं- जन्म, पालन-पोषण (पल्लवन), वार्द्धक्य (अवसान)।

निश्चित रूप से ऐसी परिस्थिति में आप मेरे जन्म, विकास आदि के बारे में अपरिचित होंगे, इसी से मैं अपनी आत्मकथा आपको सुनाती हूं। शायद इसे जानकर आपको थोड़ी प्रसन्नता हो। यों तो मेरा जन्म दसवीं शताब्दी में हुआ, पर मैं आपको छठी शताब्दी से जानकारी दे रही हूं। संभवतः आपको जानकर आश्चर्य होगा कि मनुष्यों की ही भांति भाषा की भी तीन स्थितियां होती हैं- जन्म, पालन-पोषण (पल्लवन), वाद्र्धक्य (अवसान)। बोलचाल की भाषा से ही नई भाषा का जन्म होता है अतः जब कोई भाषा जन्म लेकर पनपने लगती हैं तब कुछ काल के उपरांत उसका पालन-पोषण शुरू होता है और वह विकसित होकर साहित्यिक भाषा का रूप ग्रहण करती है। शनैः शनैः वह परिपक्व होकर अवसान की ओर अग्रसित होने लगती है। अवसान वह अवस्था है जिसके पश्चात पनप रही नई बोली या बोलियां वाद्र्धक्य प्राप्त भाषा का स्थान लेने लगती हैं।

छठवीं शताब्दी में जब लौकिक संस्कृति को पाणिनीय व्याकरण के नियमों में जकड़ दिया गया। उस समय तत्कालीन जन-भाषा-प्राकृत-नव्य रूप में विकसित हो रही थी, जिसकी तीन भाग हुए- प्रथम प्राकृत या पाली प्राकृत, द्वितीय प्राकृत तथा तृतीय प्राकृत। द्वितीय प्राकृत के 5 उपभाग हुए- महाराष्ट्री, शौरसैनी, मागधी, अर्द्धमागधी तथा पैशाची। छठवीं से दशम शताब्दी के बीच प्रथम प्राकृत या पाली प्राकृत जब साहित्य की अवस्था में विकसित हुई तो उसी के साथ बोलचाल की एक अलग भाषा अपभ्रंश भी विकसित होने लगी जो साहित्य की परिधि में आ गई तथा इसने द्वितीय प्राकृत के जिन प्रदेशों की भाषा के साहित्य में प्रवेश किया। वह उसी उपभाग की अपभ्रंश की अमिधा से विभूषित हो गया जैसे महाराष्ट्री अपभ्रंश, शौरसैनी अपभ्रंश, मागधी अपभ्रंश, अर्द्धमागधी अपभ्रंश, नागर अपभ्रंश, उपनागर अपभ्रंश, ब्राचड़ अपभ्रंश आदि-आदि।

दशम शताब्दी में अपभ्रंश भी साहित्यिक नियमों से बंधने लगा तब उसी समय स्थानापन्न बोलचाल की भाषा के रूप में मेरा (यानी हिंदी का) जन्म हुआ तथा मुझे अबहट्‌ठ या पुरानी हिंदी नाम मिला। इस तरह मेरा विकास क्रमशः प्राकृत तथा अपभ्रंश के

गीत

● डॉ. कृपाशंकर शर्मा 'अचूक'



गीत को मत मौन समझो, गीत सन्यासी नहीं
गीत तो सौरभ बिखेरे गीत वनवासी नहीं।
कृष्ण जी ने गीत जाना
फिर नई हुंकार दी
ज्ञान गीता दी
ज्ञान गीता का दिया
अर्जुन की शंका मार दी
गीत के जाने बिना मथुरा नहीं, काशी नहीं
गीत को मत मौन समझो, गीत सन्यासी नहीं
समय की है नियति अपनी
समय की भी चाल है
देश के रणबांकुरों के
जिंदगी की ढाल है
गीत ही 'अचूक' रक्षा, दिखे अविनाशी नहीं
गीत को मत मौन समझो, गीत सन्यासी नहीं।

38-ए, विजय नगर, करतारपुरा, जयपुर, राजस्थान-302 006, मो. 99838 11506

बाद हुआ। अपभ्रंश का परवर्ती रूप अपने अंक में अनेक तत्त्व समाहित किए था अतः मध्यवर्ती नागर अपभ्रंश (पुरानी हिंदी) को मेरे नवीनतम रूप में स्वीकारा जाने लगा। तदनंतर मेरा विकास तीन काल खंड में विभक्त किया गया। आदिकाल (1000 से 1500 ईसवी) जब मेरा अवहट्ठ रूप बदला और मैं नए रूप में विकसित हुई; मध्य काल (1500 से 1800 ईसवी) जब मैं सुव्यवस्थित एवं परिष्कृत रूप में निखरी, आधुनिक काल (सन् 1800 से प्रारम्भ) जिसमें मेरे रूप में और निखार आया और मुझे खड़ी बोली के रूप में साहित्य में स्थान प्राप्त हुआ।

स्वातंत्र्योत्तर संविधान निर्माताओं ने मुझे राष्ट्रभाषा तथा राजभाषा के स्वर्ण-सिंहासन पर बिठाया और संविधान के परंतुक (article) 351 में मेरे विकास, प्रसार, समृद्धि निश्चित करने का दायित्व केंद्र सरकार पर सौंपा ताकि मैं सम्पर्क भाषा के रूप में आगामी 15 सालों में राष्ट्रभाषा रूप में सार्वदेशिक स्वरूप ग्रहण कर सकूं क्योंकि 15 सालों तक मेरे साथ अंग्रेजी को भी रहना था। किंतु यह आज तक नहीं हो सका और विदेशी भाषा की पकड़ और भी मजबूत होती गई। सन् 1963 में राजभाषा अधिनियम तथा सन् 1976 में राजभाषा नियम पारित करके संविधान के परन्तुक 351 के परिपालनार्थ सभी सरकारी काम-काज में मेरा प्रयोग अनिवार्य कर दिया गया। केंद्र सरकार के कार्यालयों, विभागों, उपक्रमों, प्रतिष्ठानों, सरकारी बैंकों, सरकारी निगमों आदि को निर्दिष्ट दिया गया कि वहां के सभी नामपट्ट, बोर्ड, सील-मुहरें, लेटर हेड द्विभाषिक बनाया जाए तथा मुझे अंग्रेजी के ऊपर स्थान दिया जाए, विज्ञापन आदि या तो द्विभाषिक या मात्र हिंदी में निकाले जाएं। इससे मुझे प्रसन्नता हुई तथा लगा कि मेरी स्थिति सुदृढ़ होगी किंतु मुझे इस बात का दुःख है कि मेरी स्थिति अब तक दयनीय बनी हुई है। सर्वत्र अंग्रेजी अब तक अपना वर्चस्व बनाए हुए है। काश राष्ट्रवासी सच्चे मन तथा भावना से मुझे अपनाने का दृढ़ निश्चय कर लें तो मेरे और पूरे राष्ट्र के लिए एक महत्त्वपूर्ण कदम होगा। इससे पूरे समाज एवं राष्ट्र को गौरव की अनुभूति होगी। मुझे विश्वास है ऐसा अवश्य होगा। इन्हीं आशा तथा विश्वास के साथ मैं अपनी आत्मकथा को विराम देती हूं।

'प्रेमांगन', एमआईसी 292, कैलासविहार, आवास विकास योजना-एक, कल्याणपुर, कानपुर, उत्तर प्रदेश-208017, दूरभाष : 0512 2571795

आलेख

राष्ट्र की भाषा

• डॉ. रामसिंह यादव

हिंदी बोलने वालों की संख्या आज समग्र विश्व में दिन-प्रति-दिन बढ़ रही है। पूरी दुनिया में हिंदी बोलने और समझने वालों की संख्या एक अरब से भी ज्यादा है। फिर भी आज हिंदी को अंग्रेजी की गुलामी से संघर्ष करना पड़ रहा है। इस गुलामी के कारण ही समाज में हिंदी का आदर कम है। हिंदी चूंकि आम आदमी, दलितों, श्रमिकों की भाषा है इसलिए अंग्रेजी वाले उससे डरते हैं। वे हिंदी के प्रोत्साहन की बात करते हैं, मगर राज-काज अधिकतर अंग्रेजी में ही चलाते हैं। यह छलावा हिंदी भाषी समझ रहे हैं।

हिंदी देश के सबसे बड़े हिस्से में बोली जाती है। हमें हिंदी भाषा को राष्ट्रभाषा के रूप में स्वीकार करना ही चाहिए। हिंदी के द्वारा सारे भारत को एक सूत्र में पिरोया जा सकता है। हिंदी अब सारे भारत की भाषा बन गई है। हमें उस पर गर्व होना चाहिए। यदि भारतीय लोक कला, संस्कृति और राजनीति में एक रहना चाहते हैं तो इसका माध्यम हिंदी ही हो सकता है। सबको हिंदी बोलना-हिंदी लिखना और हिंदी सीखना ही चाहिए। देश को किसी संपर्क भाषा की आवश्यकता होती है और वह भारत में केवल हिंदी हो सकती है। हिंदी एक जानदार भाषा है। बोलचाल में हिंदी का प्रयोग किया जाना चाहिए। हिंदी को राजभाषा के रूप में इसलिए स्वीकार किया गया है कि हिंदी को जानने-समझने और बोलने वाले देश के कोने-कोने में विद्यमान हैं। प्रख्यात कवि जगदीश सिंह यादव की ये काव्य पंक्तियां :

पूरे भारत को एक सूत्र में लाने वाली हिंदी है,
हर भाषा-भाषी के मन को भाने वाली हिंदी है
राष्ट्र शिखर से विश्व शिखर तक
हिंदी को पहुंचाना है।

हिंदी के लिए महात्मा गांधी, डॉ. राजेंद्रप्रसाद, राममनोहर लोहिया और पुरुषोत्तम टंडन ने खूब संघर्ष किया क्योंकि इनकी निगाह में भरत के लोकतंत्र की अपनी भाषा होनी चाहिए। फिर हिंदी के पास अपार अथाह शब्द-संपदा है। हिंदी हमारे देश की सबसे बड़ी संपर्क भाषा है। हिंदी को मामूली भाषा नहीं कह सकते, क्योंकि अनेक विदेशी विद्वानों ने भारत आकर हिंदी की सेवा की। जिनके नाम- फादर बुल्के, डॉ. जॉर्ज अब्राहम, ग्रियर्सन रोनाल्ड, स्टवर्ड, प्रो. च्यांग निंग स्वई पीटर बरननकोव, आकियो हागा, हमरे बंधा प्रमुख रूप से लिए जा सकते हैं। फादर कामिल बुल्के के हिंदी में काम की सराहना कौन नहीं करना चाहता। हिंदी सेवा के लिए चेक गणराज्य के डॉ. स्मेकल का नाम भी वर्तमान में काफी चर्चा में रहा है। अनेक विदेशियों ने इस देश को अपना मानकर हिंदी सीखी और हिंदी में कार्य किया। अमेरिका सरकार हिंदी सीखने-सिखाने पर करोड़ों डालर खर्च कर रही है ताकि वह भारत में अरबों कमा सके।

हिंदी का स्थान सभी भारतीय भाषाओं में सर्वोच्च है। हिंदी भाषा महान, उदार व सहिष्णु भाषा के रूप में गौरवान्वित है। अपनी सरलता, सहजता, उदारता के कारण आज हिंदी विश्व पटल पर दृष्टिगोचर है। भाषा विशेषज्ञों के अनुसार हिंदी के प्रयोगकर्ता भारत में 70 प्रतिशत से अधिक हैं। जबकि अंग्रेजी भाषा बोलने वालों की संख्या मात्र 0.58 प्रतिशत है। हिंदी की शब्द संपदा 2,50,000 से अधिक है। विश्व के 73 राष्ट्रों के 150 विश्वविद्यालयों में हिंदी पढ़ने-पढ़ाने एवं अवसंधान की सुविधा उपलब्ध है। मारीशस और फिजी में तो 70 प्रतिशत जनता हिंदी का ही प्रयोग करती है। सूरीनाम, त्रिनिदाद, टोबेको, युगांडा आदि में भी 50 प्रतिशत से अधिक लोग (नागरिक) हिंदी भाषा का ही उपयोग करते हैं। श्रीलंका के तीनों विश्वविद्यालयों में हिंदी पढ़ाई जाती है। थाइलैंड में लाखों लोग हिंदी जानते हैं। चीन-जापान-यूरोप और अमेरिका में हिंदी का प्रचार-प्रसार पठन-पाठन जोरों पर है। चीन में आकाशवाणी पर तथा ब्रिटेन में बीबीसी पर हिंदी का वर्चस्व है और वहां के करोड़ों लोग इसके दीवाने हैं।

फ्रांस, इटली, स्वीडन, आस्ट्रेलिया, नार्थ डेनमार्क, स्विटजरलैंड, हॉलैंड, पोलैंड, चेक गणराज्य, जर्मनी, रोमानिया, बुल्गारिया, हंगरी, तुर्की, इराक, मिश्र, लीबिया, संयुक्त अरब अमीरात, दुबई व पाकिस्तान आदि में हिंदी ने अपना स्थान बना

लिया है।

किसी भी देश की राष्ट्रभाषा उसकी अस्मिता की प्रतीक होती है। हिंदी सदैव भारत की राष्ट्रभाषा रही है। हिंदी भारत के जन-जन को प्रिय है। आज हिंदी विश्व की संपर्क भाषा के रूप में विकसित हो रही है। भारत में अंग्रेजी शासन के दौरान लॉर्ड मैकाले ने बड़ी चालाकी से कुछ अंग्रेजपरस्त भारतीयों के सहयोग से सत्ता व शासन में अंग्रेजी थोपने, भारतीय संस्कृति एवं सभ्यता को नष्ट करने का घृणित कार्य प्रारंभ किया। तब क्षुब्ध होकर महात्मा गांधी ने कहा था- "अगर मेरे हाथ में तानाशाही सत्ता हो तो मैं आज से ही विदेशी माध्यम से तुरंत बदलवा दूंगा अथवा उन्हें बर्खास्त कर दूं। मैं तो पाठ्य पुस्तकों में तैयारी का इंतजार नहीं करूंगा वे तो माध्यम से परिवर्तन के पीछे चली आई है।" विडम्बना है कि हमारे राजनेता सत्ता में बने रहने के लिए महात्मा गांधी के सिद्धांतों का उल्लेख करते हैं परंतु उन पर आम सहमति नहीं बनने देते।

किसी भी देश की राष्ट्रभाषा उसकी अस्मिता की प्रतीक होती है। हिंदी सदैव भारत की राष्ट्रभाषा रही है। हिंदी भारत के जन-जन को प्रिय है। आज हिंदी विश्व की संपर्क भाषा के रूप में विकसित हो रही है। भारत में अंग्रेजी शासन के दौरान लॉर्ड मैकाले ने बड़ी चालाकी से कुछ अंग्रेजपरस्त भारतीयों के सहयोग से सत्ता व शासन में अंग्रेजी थोपने, भारतीय संस्कृति एवं सभ्यता को नष्ट करने का घृणित कार्य प्रारंभ किया। तब क्षुब्ध होकर महात्मा गांधी ने कहा था- "अगर मेरे हाथ में तानाशाही सत्ता हो तो मैं आज से ही विदेशी माध्यम से तुरंत बदलवा दूंगा अथवा उन्हें बर्खास्त कर दूं। मैं तो पाठ्य पुस्तकों में तैयारी का इंतजार नहीं करूंगा वे तो माध्यम से परिवर्तन के पीछे चली आई है।"

राजभाषा अधिनियम (मूल) के पारित होने के साथ ही भारत सरकार ने गृह मंत्रालय के अंतर्गत राजभाषा विभाग का गठन किया जिसका प्रधान सचिव स्तर का हिंदी सलाहकार होता है। हिंदी सलाहकार के रूप में प्रथम नियुक्ति राष्ट्रवादी कवि रामधारीसिंह दिनकर की हुई। लोगों की खुशी हुई, आशा बंधी किंतु स्वार्थपरतावश नौकरशाही ने चतुराई भरी चाल चली और हिंदी सलाहकार पद को भी सीनियर आईएएस अधिकारी के लिए सुरक्षित कर दिया। अब हालत यह है कि निष्ठा तो दूर अधिकांश जिसे निचले स्तर तक का हिंदी का भी ज्ञान नहीं है, वह भी हिंदी सलाहकार बन जाता है।

सरकार का राजभाषा विभाग इस क्षेत्र में अक्षम सिद्ध हो रहा है। हिंदी की तमाम सलाहकार समितियां हाथी के दांत बनकर रह गई हैं। मध्यप्रदेश राष्ट्रभाषा प्रचार समिति भोपाल भारत के सुप्रसिद्ध लेखक-कवि साहित्यकार पत्रकार संपादक व समिति के पुरोधा सचिव सर्वेसर्वा श्री कैलाशचंद्र जी पंत हिंदी के प्रचार-प्रसार हिंदी को सर्वव्यापक सभी की भाषा अपनी भाषा बनाने के लिए समर्पित भाव से जुड़े हुए हैं।

इसी प्रकार इंदौर की हिंदी संस्था जिसकी नींव 100 वर्षों पूर्व महात्मा गांधी के सान्निध्य में रखी गई थी, मध्य भारत हिंदी साहित्य समिति कार्य हिंदी के प्रचार-प्रसार, मजबूती के लिए श्रेष्ठता पर है। समिति की साहित्यिक पत्रिका देशभर के साहित्यकार लेखकों, कवियों को वीणा में जोड़ने-प्रकाशित करने का बेहतरी से काम कर रही है। वीणा का संपादक अंतर्राष्ट्रीय ख्यात हिंदी संस्कृत के महापंडित ज्ञाता हिंदी साहित्य के मर्मज्ञ डॉ. विनायक पांडेय संपादक के रूप में कर रहे हैं। जयपुर राजस्थान के श्री महेंद्र जैन के संपादन में पत्रिका अणुव्रत का प्रकाशन हिंदी में किया जा रहा है जो सराहनीय कार्य है। राजस्थान पत्रिका एवं इंदौर का राष्ट्रीय साप्ताहिक समाचार पत्र स्तूपनिक श्याम अवस्थी व बलराम अवस्थी निकाल रहे हैं। पचास वर्षों से स्पूतनिक ने हिंदी भाषा को साहित्य को बहुत बढ़ावा देने का संकल्प लिया है। वे हिंदी भाषा हितैषी हैं।

भारत में हिंदी, हिंदी प्रेमियों के बल-ताकत की भाषा है। हिंदी दिवस पूरे श्रद्धा से मनाया जाना चाहिए। हिंदी भाषा केवल अभिव्यक्ति का साधन नहीं है, बल्कि राष्ट्रीय एकता, राष्ट्र विकास तथा आर्थिक विकास का उपकरण भी है। हिंदी के बारे में कवि श्री अजय चतुर्वेदी ने लिखा है-

आन-बान-शान देश की जुबान है हिंदी
हमारी एकता, संस्कृति की जान है हिंदी॥

14, उर्दूपुरा, उज्जैन, मध्य प्रदेश, मो. 96693 00515



आलेख

राष्ट्रभाषा और लिपि का प्रश्न

● गणपत तेली

भारत में विभिन्न भाषाएं बोली जाती है, उनमें से कई भाषाओं का लिखित स्वरूप सदियों से मौजूद है। उक्त सभी भाषाएं देवनागरी, तमिल, बांग्ला, गुजराती, गुरुमुखी, उड़िया, तेलगु, कन्नड़, मलयालम, उर्दू, मराठी, सिन्धी आदि लिपियों में लिखी जाती हैं। जहां पर गुजराती और मराठी जैसी लिपियां कुछ हेर-फेर के साथ नागरी लिपि के समान ही हैं, वहीं कुछ अन्य लिपियां इनसे पूरी तरह अलग हैं और कुछ लिपियों में एक से ज्यादा भाषाएँ लिखी जाती हैं। इस प्रकार भारत में भाषाओं की तरह ही लिपियों के मामले में भी बहुलता है। इसलिए भारत की आजादी के दौरान हुए राष्ट्रभाषा से संबंधित विवाद और उसकी बहसों में लिपि का प्रश्न भी आ गया। लिपियों का प्रश्न जब भाषा की तरह ही राष्ट्रवाद से जुड़ गया तो एक भाषा की तरह एक लिपि की मांग भी होने लगी।

उक्त विवाद में हिन्दी के पक्षधर विद्वानों और नेताओं, जिनमें गांधी भी थे, का मानना था कि देवनागरी ही एक ऐसी लिपि है जो भारत की एकमात्र लिपि हो सकती है। हालांकि गांधी यह भी कहते थे कि अभी फारसी और देवनागरी दोनों लिपियों को अपना लिया जाय और बाद में जिस लिपि में सामर्थ्य होगा, वह अपना स्थान लेगी-

''लिपि की कुछ तकलीफ जरूर है। मुसलमान भाई अरबी लिपि में ही लिखेंगे हिंदू बहुत करके नागरी लिपि में लिखेंगे। राष्ट्र में दोनों को स्थान मिलना चाहिए। अमलदारों को दोनों लिपियों का ज्ञान अवश्य होना चाहिए जिसमें कोई कठिनाई नहीं है। अंत में जिस लिपि में सरलता होगी, उसकी विजय होगी।''

लेकिन भारत जैसे बहुलतावादी देश में यह प्रस्ताव भी भाषा की तरह ही विवादित प्रसंग साबित हुआ। हिन्दी क्षेत्र की विभिन्न भाषाओं या बोलियों, मराठी, गुजराती के लिए नागरी लिपि चल सकती है, लेकिन द्रविड़ भाषा परिवार की दक्षिण भारत में बोली जाने वाली तेलगू, कन्नड़, तमिल और मलयालम तथा बंगाली के लिए तो यह एकदम अलग लिपि है। चूंकि हिन्दी की लिपि नागरी थी, इसलिए राष्ट्रभाषा विवाद में हिन्दी पक्ष ने स्वाभाविक ही नागरी का समर्थन किया। हिन्दी साहित्य सम्मेलन के सत्रहवें अधिवेशन के सभापति अभिभाषण में राजस्थान के इतिहासकार गौरीशंकर हीराचन्द्र ओझा ने कहा था कि-

''जहां हमारी एक राष्ट्रभाषा हो, वहां हमें एक राष्ट्रलिपि की भी उतनी ही जरूरत है। एक राष्ट्रलिपि का प्रश्न राष्ट्रभाषा के प्रश्न से किसी प्रकार कम महत्त्व का नहीं है। मेरा तो खयाल है कि लिपि की एकता, हमें एक दूसरे के और अधिक सामीप्य में लाकर हमारी संस्कृति की सुदृढ़ एकता का कारण होगी।''

इस तरह राष्ट्रभाषा प्रसंग में भाषा के समान ही लिपि को भी महत्त्वपूर्ण स्थान मिला। ओझा द्वारा दिया गया यह प्रस्ताव कोई अनोखा प्रस्ताव नहीं था, बल्कि भाषाई एकीकरण की तरह बहु-प्रचलित मत था। अपने अभिभाषण में आगे नागरी लिपि को इसके लिए उपयुक्त बताते हुए कहा कि ''हमें अपनी संस्कृति के अनुकूल अपने ही देश की एक लिपि को अपनी लिपि बनानी होगी और एक ऐसी लिपि हमारे पास मौजूद भी है। जैसे देववाणी से भारत की प्रान्तीय भाषाओं का घनिष्ट संबंध हैं, वैसे ही देवनागरी लिपि से सभी भारतीय लिपियों का गहरा संबंध है, क्योंकि वह सब लिपियां एक ही स्रोत से अर्थात् ब्राह्मी लिपि से निकली हैं। देव नागरी लिपि सुन्दरता, सरलता और शुद्धता में सर्वोच्च है। बस इसी लिपि को हमें निस्संकोच भाव से राष्ट्र-लिपि का स्थान प्रदान करना चाहिए।''

हिन्दी साहित्य सम्मेलन जिस तरह से हिन्दी भाषा को प्रचारित करने का काम कर रहा था, उसी तरह से लिपि के मुद्दे पर नागरी लिपि का पक्ष ले रहा था। जिस तरह से हिन्दी भाषा के लिए हिन्दी की स्वाभाविकता पर बल दिया गया, उसी तरह से लिपि के लिए नागरी की। नागरी को अखिल भारत की आधिकारिक लिपि के दावे को बताते हुए जगन्नाथदास रत्नाकर ने सम्मेलन के सभापति के अठारहवें अभिभाषण में कहा था कि, ''जैसी योग्यता हिन्दी भाषा को राष्ट्रीय-भाषा होने की है, ठीक वैसी ही योग्यता नागरी-लिपि को भी राष्ट्रीय लिपि होने को प्राप्त है। यह ऐसी लिपि

है, जो उत्तरीय भारत तथा दक्षिण भारत के भी एक बड़े भाग की भिन्न-भिन्न लिपियों- जैसे, बंगला, मैथिली, कैथी, गुरुमुखी, मराठी, गुजराती इत्यादि- से न्यूनाधिक प्रमाण में मिलती-जुलती है। अतः इन सब प्रांतों के निवासी इसको सरलता से सीख सकते हैं। हां, मद्रास प्रभृति प्रांतों की लिपियां अवश्य भिन्न हैं, पर इस भिन्नता के रहते हुए भी राष्ट्रीय लिपि होने की योग्यता नागरी लिपि में ही मानी जा सकती है।'' डॉ. श्यामसुन्दर दास ने इसे देववाणी संस्कृत से जोड़ते हुए लिखा है कि ''भारत की राष्ट्रीय लिपि नागरी है। चूंकि देववाणी संस्कृत के लिखने के लिए इसका प्रयोग होता है अतः इसे देवनागरी नाम से अभिहित किया जाता है।''

गौरतलब है कि हिन्दी को राष्ट्रभाषा बनाने के लिए उसे भी संस्कृत से जोड़ा गया था और नागरी लिपि को भी उसी से जोड़ा गया। किशोरीलाल गोस्वामी ने इसे दुनिया की सर्वश्रेष्ठ लिपि बताया और हिन्दी के लिए किसी भी ऐसे मत का प्रतिवाद किया जो उसे अन्य भाषाओं से विकसित हुई बताता हो। उन्होंने सम्मेलन के इक्कीसवें अधिवेशन के सभापति के अभिभाषण में कहा कि ''युग युगान्तर से इस देश में जो लिपि और भाषा गृहीत थी और आज भी जिनके द्वारा इस देश का जीवन संचार हो रहा है, उस संस्कृत भाषा और देवनागरी लिपि की वैज्ञानिकता के सम्मुख अब भूमण्डल को नतमस्तक होने के लिए बाध्य होना पड़ता है। वही संस्कृत भाषा और देवनागरी लिपि, सहस्रों भाषाओं में प्रवाहित होती हुई हिन्दी भाषा और नागरी लिपि के रूप में आज आपके सामने उपस्थित हैं।'' इस तरह से संस्कृत को ही हिन्दी और नागरी का स्रोत बताया। इनके विकास क्रम में आई पालि, प्राकृत, अपभ्रंश के रूप को खारिज कर दिया।

हिन्दी को राष्ट्रभाषा बनाने के लिए उसे भी संस्कृत से जोड़ा गया था और नागरी लिपि को भी उसी से जोड़ा गया। किशोरीलाल गोस्वामी ने इसे दुनिया की सर्वश्रेष्ठ लिपि बताया और हिन्दी के लिए किसी भी ऐसे मत का प्रतिवाद किया जो उसे अन्य भाषाओं से विकसित हुई बताता हो। उन्होंने सम्मेलन के इक्कीसवें अधिवेशन के सभापति के अभिभाषण में कहा कि ''युग युगान्तर से इस देश में जो लिपि और भाषा गृहीत थी और आज भी जिनके द्वारा इस देश का जीवन संचार हो रहा है, उस संस्कृत भाषा और देवनागरी लिपि की वैज्ञानिकता के सम्मुख अब भूमण्डल को नतमस्तक होने के लिए बाध्य होना पड़ता है। वही संस्कृत भाषा और देवनागरी लिपि, सहस्रों भाषाओं में प्रवाहित होती हुई हिन्दी भाषा और नागरी लिपि के रूप में आज आपके सामने उपस्थित हैं।''

जिस तरह हिन्दी के सामने अंग्रेजी, उर्दू, हिन्दुस्तानी और कुछ अन्य भारतीय भाषाओं का दावा था, उसी तरह से लिपि के मामले में रोमन, उर्दू, फारसी और अन्य लिपियों का दावा था, लेकिन हिन्दी समर्थक गुट की तरफ से अन्य लिपियों के दावे को सिरे से खारिज कर दिया गया और नागरी के दावे को ही स्वाभाविक बताया गया। हिन्दी साहित्य सम्मेलन के बाइसवें अधिवेशन के सभापति का अभिभाषण देते हुए श्याम बिहारी मिश्र ने कहा था कि ''राष्ट्र-लिपि के रूप में नागरी-लिपि का ही प्रचार भारतवर्ष भर में होना आवश्यक है। न किसी अन्य प्रान्तीय लिपि को यह स्थान मिल सकता है, न उर्दू अथवा रोमन को।'' यहाँ पर भी हम देखते हैं कि तर्क की वही समानता है, जो हिन्दी के संबंध में थी।

यहां लिपि के प्रसंग की चर्चा करते हुए यह उल्लेख करना आवश्यक है कि हिन्दी और उर्दू का विवाद मूलतः लिपि विवाद के रूप में ही प्रारंभ हुआ था। पद्मसिंह शर्मा ने इस विवाद के बारे में लिखा है कि ''हिन्दी उर्दू को दो भिन्न भागों में विभक्त करने का प्रधान कारण लिपि का भेद है। हिन्दी उर्दू के विरोध की बुनियाद लिपि-भेद पर ही कायम हुई है' विरोध का महल इसी पर खड़ा है- दोनों भाषाओं में यही भेद एकता नहीं होने देता। यह लिपि-भेद यदि दूर हो जाय, तो हिन्दी-उर्दू विवाद के बखेड़े कभी खड़े न हों, सब विरोध शांत हो जाय।'' जाहिर है कि दोनों भाषाओं का फर्क ही यही है कि दोनों अलग-अलग लिपियों में लिखी जाती है, अन्यथा अन्य शब्दों का फर्क तो एकदम से बनावटी है। इस मुद्दे का विस्तार से विवेचन हिन्दी, उर्दू, हिन्दुस्तानी विवाद के अध्ययन के दौरान किया जाएगा।

खैर, जब नागरी लिपि के सामने चुनौती के रूप में रोमन और उर्दू का मत आ गया तो इन मतों को खारिज करने और हिन्दी की महत्ता स्थापित करने की प्रवृत्ति आरंभ हुई। 'आज' के संस्थापक संपादक बाबूराव विष्णु पराड़कर ने सम्मेलन के सत्ताइसवें अधिवेशन के सभापति अभिभाषण में कहा था कि ''केवल उर्दू लिपि जानने वाले सज्जन अन्य भाषाओं के शब्दों का ठीक उच्चारण कर ही नहीं सकते- कुछ का कुछ हो जाता है। जिन भाषाओं के पढ़ने का साधन ऐसी सदोष लिपि है, उनके शब्दों का शुद्ध उच्चारण तब असम्भव हो जायगा, जब वे शब्द अप्रचलित होंगे और उनका अर्थ विस्मृत।'' इसी तरह से राष्ट्रभाषा परिषद के चौथे सम्मेलन के सभापति अभिभाषण में चन्द्रबली पाण्डेय ने कहा कि, ''यदि लिपि की दृष्टि से देखा जाय तो नागरी लिपि के सामने उर्दू लिपि ठहर ही नहीं सकती। भारत को अरबी लिपि का अभिमान कैसे हो सकता है और देश की अन्य लिपियों से उसका क्या लगाव है? रही नागरी, सो उसके विषय में सभी जानकारों का कहना है कि विश्व की कोई भी लिपि अपने

वर्तमान रूप में उसके तुल्य नहीं।'' यहां पर चन्द्रबली पाण्डे ने लिपि के संबंध में भी वैसा ही देशी-विदेशी का तर्क दे दिया, जैसा कि भाषा के संबंध में दिया जाता है। कुछ इसी तरह के तर्क के आधार पर रविशंकर शुक्ल ने भी सवाल किया था कि ''आज हमें राष्ट्र-भाषा में संस्कृत और प्राकृत का समस्त साहित्य उतारना है। वह उर्दू लिपि में कैसे लिखा जायगा। गीता का हिन्दुस्तानी-अनुवाद फारसी लिपि में कैसे छपेगा?'' जबकि हिन्दुओं के कई धार्मिक ग्रंथ फारसी में छपे हैं। इन मतों में भी हमें वही तर्क मिलते हैं, जो भाषा के संबंध में दिये गये थे आगे के अध्यायों में हम देखेंगे कि उर्दू के विरोध में यह तर्क भी दिया गया था कि हमारे संस्कृत के शब्द उसमें कैसे उच्चारित होंगे।

उर्दू के बाद रोमन लिपि के दावे की आलोचना करते हुए बाबूराव विष्णु पराड़कर ने अपने सभापति अभिभाषण में कहा था कि ''हमारी ऐसी सुन्दर लिपि के होते हुए भी कुछ सज्जन हमें रोमन लिपि ग्रहण करने का उपदेश देते हैं, इससे बढ़कर आश्चर्य और खेद का विषय क्या हो सकता है? लिपि साम्य की उपयोगिता हम अस्वीकार नहीं करते और इसलिए हम चाहते हैं कि भारत की सब भाषाएं नागरी लिपि में लिखी और पढ़ी जायं। पर इस साम्य के लिए नागरी जैसी सर्वांगपूर्ण और पूर्ण वैज्ञानिक लिपि का त्याग कर के एक अपूर्ण और अवैज्ञानिक लिपि का ग्रहण करना, सर्वथा अनुचित है।'' यह बात मानी जा सकती है कि रोमन लिपि यहाँ की भाषाओं के अनुकूल नहीं है, लेकिन उस लिपि को अपूर्ण और अवैज्ञानिक कहा जाना उचित नहीं है। प्रत्येक लिपि में कुछ खास ध्वनियों के उच्चारण की क्षमता होती है, और वह अपनी ध्वनि व्यवस्था पर चलती रहती है। जरूरी नहीं कि रोमन भारत की ध्वनियों पर खरी उतरें, लेकिन यह अवैज्ञानिक और अपूर्ण नहीं कही जा सकती है, हर लिपि के अपने गुण-दोष होते हैं।

इस लिपि विवाद में रोमन के बनिस्पत नागरी का तार्किक समर्थन करते हुए महापण्डित राहुल सांकृत्यायन ने लिखा था कि ''वैज्ञानिक का मतलब है, लिपि का उच्चारणों के अधिक अनुरूप होना। लेकिन रोमन लिपि के 26 अक्षर हमारे सारे उच्चारणों को प्रकट नहीं कर सकते। नागरी अक्षरों में हम उसके ज्यादा शुद्ध रूप से किसी भी भाषा को लिख सकते हैं, और बिना चित्र दिये।'' महापण्डित द्वारा दिए गए इन तर्कों में अवश्य वजन है क्योंकि किसी भी भाषा से संबंधित लिपि में प्रचलन और प्रयास के कारण तमाम उच्चारणों को अभिव्यक्त करने वाले वर्ण होते हैं। निश्चित ही यह मत पराड़कर की तुलना में तार्किक है। हालांकि राहुलजी भी एक लिपि के पक्ष में थे और उन्होंने उर्दू के लिए भी नागरी लिपि प्रस्तावित की थी, ''... जो समय सामने आ रहा है उसे देखकर मैं परामर्श दूंगा कि लिपि के आग्रह को छोड़कर उर्दू के लिए भी नागरी लिपि को अपनाएं।'' हांलाकि गांधी ने हिन्दुस्तानी के लिए नागरी और उर्दू दो लिपियों का प्रस्ताव किया था, लेकिन अंततः वे भी नागरी के ही समर्थन में थे। उन्होंने लिखा था कि ''सचमुच मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि भारत की तमाम भाषाओं के लिए एक ही लिपि का होना फायदेमंद है, और वह लिपि देवनागरी ही हो सकती है।'' इस तरह से यह स्पष्ट है कि लिपि के एकीकरण में नागरी का मत ज्यादा प्रबल था। यहाँ तक कि भाषा विवाद में सहिष्णु मत रखने वाले गांधी भी लिपि के मामले में नागरी का समर्थन करते हैं, लेकिन यहाँ पर भी यह बात ध्यान रखने लायक है कि जिस तर्क से रोमन भारतीय भाषाओं के लिए ठीक नहीं है उसी तर्क से ये नागरी भी भाषाओं के लिए उचित नहीं होती, जो नागरी में नहीं लिखी जाती। रोमन लिपि को मानने का दावा भी कुछ उसी तरह से सामने आया था, जैसे कि अंग्रेजी मानने का आ रहा था कि यदि देशी लिपियों में विवाद और संघर्ष हैं, तो 'न मेरी, न तुम्हारी' की तर्ज पर रोमन लिपि मान ली जाए। निस्संदेह उसमें कुछ उर्दू समर्थक लोग भी थे। राहुल जी ने उनकी आलोचना करते हुए कहा था कि ''कोई-कोई उर्दू वाले कहने लगे हैं कि क्यों न रोमन लिपि को ही अपनाया जाये। यदि हिन्दी (नागरी) लिपि अरबी लिपि की तरह दोषपूर्ण होती, तो हमें रोमन लिपि अपनाने में कोई आपत्ति न होती। लेकिन रोमन पक्षपाती उर्दूवाले भाइयों को नागरी-जैसी लिपि अपनाने में आनाकानी क्यों? इसलिए कि अगर अरबी लिपि जाती है, तो साथ-साथ हिन्दी लिपि का भी बेड़ा गर्क हो?'' राहुलजी का यह मत भी भाषा विवाद में हिंदुस्तानी के संबंध में दिए गए तर्क के समान ही है जिसमें हिंदुस्तानी के समर्थन की यही कह कर आलोचना की जाती थी कि यह उर्दू न रहे तो हिन्दी भी न रहे की नीति के तहत किया जा रहा है। जब नागरी को एक लिपि के रूप में प्रचारित करने की योजना आई, तो कुछ अहिन्दी प्रदेशों के लोगों की तरफ से सुझाव आया कि नागरी को अन्य लिपियों के करीब लाने के लिए उसमें कुछ सुधार किए जाने चाहिए। इस मुद्दे पर भी पर्याप्त विवाद हुआ था। अंबिका प्रसाद वाजपेयी ने सम्मेलन के

नागरी का तार्किक समर्थन करते हुए महापण्डित राहुल सांकृत्यायन ने लिखा था कि ''वैज्ञानिक का मतलब है, लिपि का उच्चारणों के अधिक अनुरूप होना। लेकिन रोमन लिपि के 26 अक्षर हमारे सारे उच्चारणों को प्रकट नहीं कर सकते। नागरी अक्षरों में हम उसके ज्यादा शुद्ध रूप से किसी भी भाषा को लिख सकते हैं, और बिना चित्र दिये।'' महापण्डित द्वारा दिए गए इन तर्कों में अवश्य वजन है क्योंकि किसी भी भाषा से संबंधित लिपि में प्रचलन और प्रयास के कारण तमाम उच्चारणों को अभिव्यक्त करने वाले वर्ण होते हैं।

अट्ठाइसवें अधिवेशन के सभापति भाषण में स्पष्ट रूप से इसे नकारते हुए कहा था कि ''लिपि सुधार के आन्दोलन से मेरा अनुराग नहीं है, क्योंकि मैं अब तक नहीं समझ पाया कि वर्तमान लिपि से शिक्षा व ज्ञान के प्रचार में क्या बाधाएं पड़ती हैं।'' जबकि यह प्रश्न शिक्षा और ज्ञान का नहीं था, लिपि सुधार की बात उसे भारत की अन्य लिपियों के करीब लाने के लिए किया जा रहा था। इस संबंध में माखनलाल चतुर्वेदी ने तार्किक पक्ष लेते हुए कहा था कि ''हम लिपि सुधार से न घबरायें। इस आर्थिक युग में हमें सस्ते उपकरणों से अधिक विस्तार चाहिए। इस वैज्ञानिक युग में हमारी शोध, लिपि के क्षेत्र वहीं समाप्त नहीं हो गयी, जहां हमारे पूर्वज छोड़ गये, और इस मुद्रण लिपि पर मुद्रण द्वारा की हुई मांगों को मानने से इनकार करना, लिपि को कमजोर बनाना है।'' माखनलाल चतुर्वेदी ने इस बहस के मर्म को समझा और वक्त की जरूरत के अनुसार सुधार का समर्थन किया जबकि संपूर्णानंद ने संतुलित दृष्टि अपनाते हुए कहा था कि ''आजकल लिपि के सुधार का प्रश्न उपस्थित हो गया है। मैं भी समझता हूं कि कुछ परिशोधन की आवश्यकता है, परन्तु ऐसा न होना चाहिए कि केवल छापे की सुविधा के नाम पर हम सारी फरानी परम्परा से नाता तोड़कर, एक नये प्रकार की ही लिपि का निर्माण कर डालें। देवनागरी लिपि भारत के सभी कोनों में न्यूनाधिक प्रचलित है और बिना प्रबल कारणों के उसमें यों ही परिवर्तन न करने चाहिए।'' इससे स्पष्ट होता है कि उस समय दूसरी लिपियों के अनुसार होने वाले सुधारों के अलावा भी लिपि में तकनीकी विकास के अनुरूप संशोधन करने की मांग की जा रही थी।

द्वारा डॉ. पल्लव, 393, डीडीए, ब्लॉक सी एन्ड डी
कनिष्क अपार्टमेंट, शालीमार बाग, दिल्ली-110088

संदर्भ

1 गांधीजी, राष्ट्रभाषा हिन्दुस्तानी, वही, पृ. 31

2 गांधीजी, राष्ट्रभाषा हिन्दुस्तानी, वही, पृ. 11-12

3 गौरीशंकर हीराचन्द्र ओझा, अभिभाषण 17, सभापतियों के भाषण (भाग 2), संपा-डॉ. विद्यानिवास मिश्र, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, इलाहाबाद, 2001, पृ. 99

4 गौरीशंकर हीराचन्द्र ओझा, अभिभाषण 17, सभापतियों के भाषण (भाग 2), पृ. 100

5 जगन्नाथ दास रत्नाकर, अभिभाषण 18, सभापतियों के भाषण (भाग 2), संपा-डॉ. विद्यानिवास मिश्र, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, इलाहाबाद, 2001, पृ. 181-82) सेठ गोविन्ददास ने भी नागरी लिपि को आसान लिपि बताते हुए कहा कि ''देवनागरी वैज्ञानिक दृष्टि से सब से अच्छी और सबसे सरल लिपि है। उसे मद्रास सदृश्य प्रांतों में भी लोग तीन-चार हफ्तों में सीख लेते हैं।'' सेठ गोविन्ददास, डॉ. (सेठ) गोविन्ददास के शब्दों में हिन्दी भाषा आंदोलन, पृ. 148

6 डॉ. श्यामसुन्दर दास, भाषा विज्ञान, प्रकाशन संस्थान, दिल्ली, 2009, पृ. 242

7 किशोरीलाल गोस्वामी, अभिभाषण 21, सभापतियों के भाषण (भाग 2), संपा-डॉ. विद्यानिवास मिश्र, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, इलाहाबाद, 2001, पृ. 186

8 श्यामबिहारी मिश्र, अभिभाषण 22, सभापतियों के भाषण (भाग 2), संपा-डॉ. विद्यानिवास मिश्र, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, इलाहाबाद, 2001, पृ. 204

9 पद्मसिंह शर्मा, हिन्दी, उर्दू और हिन्दुस्तानी, हिन्दुस्तानी एकेडेमी, इलाहाबाद, 1932, पृ. 70

10 बाबूराव विष्णु पराड़कर, अभिभाषण 27, सभापतियों के भाषण (भाग 2), संपा-डॉ. विद्यानिवास मिश्र, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, इलाहाबाद, 2001, पृ. 283

11 चन्द्रबली पाण्डेय, राष्ट्रभाषा परिषद, सभापति अभिभाषण-4 (1943), राष्ट्रभाषा की समस्याएं, संपा-भदन्त आनन्द कौसल्यायन, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, इलाहाबाद, 1986, पृ. 55-56

12 रविशंकर शुक्ल, मौलाना गांधी?, पृ. 33

13 बाबूराव विष्णु पराड़कर, अभिभाषण 27, सभापतियों के भाषण (भाग 2), संपा-डॉ. विद्यानिवास मिश्र, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, इलाहाबाद, 2001, पृ. 281-82

14 नरेश मेहता, हिन्दी साहित्य सम्मेलन का इतिहास (भाग-1), हिन्दी साहित्य सम्मेलन, इलाहाबाद, 1996, पृ. 147 से उद्धृत अभिभाषण-35

15 नरेश मेहता, हिन्दी साहित्य सम्मेलन का इतिहास (भाग-1), पृ. 147 से उद्धृत अभिभाषण-35

16 गांधीजी, राष्ट्रभाषा हिन्दुस्तानी, पृ. 29

17 नरेश मेहता, हिन्दी साहित्य सम्मेलन का इतिहास (भाग-1), पृ. 147-48 से उद्धृत अभिभाषण-35

18 अंबिकाप्रसाद वाजपेयी, अभिभाषण 28, सभापतियों के भाषण (भाग 2), संपा-डॉ. विद्यानिवास मिश्र, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, इलाहाबाद, 2001, पृ. 319

19 माखनलाल चतुर्वेदी, अभिभाषण 31, सभापतियों के भाषण (भाग 2), संपा-डॉ. विद्यानिवास मिश्र, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, इलाहाबाद, 2001, पृ. 406

20 संपूर्णानंद, अभिभाषण 29, सभापतियों के भाषण (भाग 2), संपा-डॉ. विद्यानिवास मिश्र, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, इलाहाबाद, 2001, पृ. 342

- *यदि मानव हमेशा सतर्क रहे, तो उसके हृदय में कुविचार आ ही नहीं सकते।*
  -स्वामी रामकृष्ण परमहंस
- *मौन वह तत्त्व है, जिसमें महान चीजें आकार लेती हैं।*
  -कार्लिल
- *विश्वास के साथ की गई प्रभु-प्रार्थना से बीमार लोगों के रोग भी ठीक हो जाते हैं।* *-अज्ञात*
- *जब हमारा मन शांत होता है, तो वह ब्रह्मांड का आईना बन जाता है, सभी सृजनाओं का दर्पण बन जाता है।* *-चुआंग त्ज़ु*
- *यह संसार जहां तक कल्पना कर सकता है, उससे अधिक वस्तुओं का निर्माण या प्राप्ति प्रार्थना द्वारा संभव है।* *-तेनिसन*

आलेख

भगिनी निवेदिता की दृष्टि में भारतीय नारीत्व

● डॉ. कन्हैयालाल राजपुरोहित



सद्य पुष्पित कुसुम की कोमलता और विद्युद्-लता की कौंध; श्रुति मधुर स्वर लहरी और प्रचण्ड घन गर्जन; वात्सल्य की मृदुता एवं दुष्ट दलन की तेजस्विता; तलस्पर्शी वैदुष्य से उद्भूत वस्तुनिष्ठता और समर्पण की विह्लता; बुद्ध की करुणा और गीतोक्त कर्मयोग; शार्दूल विक्रम व शावकसुलभ निश्छलता जैसे अतिशय दुर्लभ गुणों की दैवी संपदा की सजीव प्रतिमा, अपने अभिधान को शतशः सार्थक करने वाली महीयसी भगिनी निवेदिता के व्यक्तित्व और वैचारिक धरोहर को शब्दों में रूपायित करना सहज नहीं है। उनकी अद्वितीय बुद्धिमत्ता, अभिव्यक्ति की काव्यात्मक शैली, अपने विश्वासों एवं निश्चयों पर अगाध श्रद्धा जैसे गुणों ने उन्हें 'एक विशिष्टता' प्रदान की थी।

भारत की सांस्कृतिक विरासत का उनका ज्ञान व समझ लगभग अनुपम थे। यद्यपि पश्चिमी जगत के सम्मुख हिन्दू धर्म की व्याख्या स्वामी विवेकानंद ने की तथापि प्राचीन भारत के जटिल सामाजिक आदर्शों एवं परम्पराओं के स्पष्टीकरण का दुष्कर कार्य उनकी मानस पुत्री निवेदिता द्वारा सम्पन्न हुआ। जो काम किसी भारतीय व्याख्याकार द्वारा किए जाने पर आत्म-रक्षा प्रतीत होता, वही निवेदिता के हाथों में अपने अंगीकृत देश के मानस लोक की यात्रा बन गया। इस कठिन व नाजुक काम में उनकी सफलता लासानी हैं। उनकी महत्त्वपूर्ण कृति 'The Web of Indian Life' भारत के बारे में पूर्वाग्रहों से ग्रह पश्चिमी मानस को एक प्राचीन संस्कृति के गूढ़ार्थ को समझाने का निष्ठापूर्ण प्रयास है। अपनी कोमल अन्तर्दृष्टि, सुस्पष्ट शैली व वैदुष्य के कारण इसे क्लासिक ग्रंथों की श्रेणी में रखा जाता है।

स्वामी विवेकानंद और निवेदिता दोनों की प्रतिभा में एक समान तत्त्व भारत के लिए उदात्त व गहरे प्रेम से पोषित तलस्पर्शी बौद्धिकता थी। औद्योगीकृत पश्चिम और स्वयं आंग्लीकृत भारत के सम्मुख भारत का चिन्मय स्वरूप प्रस्तुत करना अतिशय कठिन कार्य था, जो भगिनी ने सम्पन्न किया। अपनी पारदर्शी निष्ठा व सच्चाई के बलबूते पर ही वे भारत के हृत्प्रदेश में प्रविष्ट हो सकीं।

अपने गुरुदेव के आह्वान पर भारत पहुंचने के बाद भगिनी भारतीय जीवन के ताने-बाने को गहराई से समझने हेतु पूरी निष्ठा से जुट गईं। धर्मशास्त्रों के अध्ययन के अलावा जनजीवन को प्रेरित और संचालित करने वाले कारकों को समझ पाने में अपनी तीव्र अन्तर्दृष्टि से वे कृतकार्य हुईं। भावनात्मक रूप से भारत के साथ अपने शतशः तादात्म्य के फलस्वरूप ईसाई मिशनरियों द्वारा भारत विषयक किया जाने वाले दुष्प्रचार उन्हें बहुत नागवार गुजरा। अतः उन्होंने ऐसे ग्रंथ लिखने का निश्चय किया, जो मिशनरियों के मिथ्या कथन से उद्भूत पश्चिम में प्रसारित भारत सम्बंधी सतही जानकारी की धुंध में छिपे भारतीय समाज के गरिमामय स्वरूप एवं उदात्त जीवन मूल्यों को सही रूप में उजागर कर सके।

1904 ई. में 'The Web of Indian Life' के प्रकाशित होते ही बौद्धिक हल्कों में हलचल मच गई। अग्रणी पत्र-पत्रिकाओं में इसकी विषय वस्तु और प्रतिपादन शैली की जी खोलकर प्रशंसा की गई। 'Queen' ने 24 अगस्त 1904 को अपनी समीक्षा में लिखा, "ऐसा कभी नहीं होता कि पश्चिम में जन्मे किसी लेखक को पूर्व के हृदय और मानस की व्याख्या करने में ऐसी पूर्ण सफलता मिल सके, जैसी कुमारी नॉबुल को मिली है। काव्यमयी भाषा और वैदुष्यपूर्ण ढंग से लिखे गए इस ग्रंथ से हमें भारत विषयक उन विचारों को संशोधित करने का अवसर मिलेगा, जो

मिशनरियों के भारत सम्बंधी पूर्वाग्रहों से ग्रस्त लेखन के आधार पर निर्मित हुए हैं।"[2]

इसे भारत विषयक प्रामाणिक व आधिकारिक ग्रंथ मानते हुए 'द डेट्रॉयट फ्री प्रेस' ने 24 जुलाई 1904 के अंक में लिखा, "इसे युग प्रवर्तक ग्रंथ माना जा रहा है क्योंकि इसमें भारतीय महिलाओं का आंतरिक जीवन, ऊपरी सतह के नीचे का जीवन, आदर्श, आकांक्षाएं, अनदेखे संसार की वास्तविकता- सभी को इस रूप में उभारा गया है, जैसा पहले कभी नहीं हुआ।"[3]

एक विलक्षण समाजशास्त्री के रूप में उनके द्वारा भारतीय परिवार व्यवस्था के विभिन्न पहलुओं का बारीकी से अध्ययन करने का उद्‌देश्य उसके अन्तर्निहित सौंदर्य और भाव पक्ष को उजागर करना था। भारतीय महिला के जीवन के सभी आयामों, विवाह संस्था, पूर्वी और पश्चिमी सामाजिक संगठन का आधारभूत अंतर जैसी महत्त्वपूर्ण बातों का तलस्पर्शी विवेचन उनकी विशिष्टता का परिचायक है।

उनके अनुसार स्त्री की सृजनात्मक ऊर्जा ने घर का निर्माण किया है। यह सही है कि समाज को अपने कतिपय सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण कार्यों व प्रयत्नों की सफलता के लिए पुरुषों व महिलाओं की संयुक्त ऊर्जा की आवश्यकता होती है। पुरुष केवल एक चतुर बालक होता है। महिला की देख-रेख में ही वह भलीभांति जीवन यापन कर सकता है।4 पौर्वात्य समाज और मूलतः इसके नारीत्व ने स्वयं को अनादि काल से परिवार के केंद्रीय आदर्श के अनुरूप ढाला है। इस विषय में भगिनी आगे कहती हैं, पूर्व परिवार को स्त्री का उचित और विशेष कार्य क्षेत्र मानता चला आ रहा है। सामाजिक इकाई के रूप में परिवार सम्पूर्ण समाज सम्बंधी उसकी अवधारणा का निर्धारण करता है।[5]

भगिनी ने सामान्यतः पूर्वी देशों और विशेष रूप से भारतीय पारिवारिक संगठन का गहराई से अध्ययन किया। इसमें भारतीय घर और भारतीय स्त्रियों के गृहस्थ जीवन के वैशिष्ट्य को उन्होंने काव्यमय भाषा में प्रस्तुत किया है। उनके अनुसार भारतीय महिलाओं द्वारा निर्मित एवं निर्देशित घरेलू जीवन से बढ़ कर रम्य चीज की कल्पना करना कठिन है। यह समझ लेना चाहिए कि एशियाई चिंतन एवं आदर्शवाद को रेखांकित किया कि भारत में पारिवारिक जीवन की पवित्रता एवं माधुर्य को एक महान संस्कृति के धरातल तक ऊपर उठा दिया गया है। यहां 'पत्नीत्व एक धर्म है, मातृत्व पूर्णता का स्वप्न है तथा एक पुरुष का आत्म-गौरव और संरक्षणात्मकता बहुत उच्च स्तर तक विकसित की जाती है।'[6]

भारतीय स्त्रीत्व के महान आदर्श मौन एवं त्याग रहे हैं। निवेदिता ने इस आदर्श को क्षति पहुंचाए बिना आधुनिक व्यावहारिकता प्रदान की। मौन रह कर भी सेवा की जा सकती है क्योंकि महिलाएं पुरुष को सक्रिय करने वाली प्रेरणास्रोत होती हैं। घरों की महानता स्त्रियों की तपस्या में निहित है। सभी देशों में पुरुषों की अपेक्षा महिलाएं ही राष्ट्र की शक्ति और पावनता की संरक्षिकाएं थीं।[7]

अपने आदर्श के रूप में एक भारतीय महिला का जीवन भारतीय मिट्टी की कविता है। वह तमाम सुसंगति और सामाजिक एकता, जिससे विगत कुछ शताब्दियों में पश्चिम पूर्णतः वंचित हो चुका है, वह पूर्व में अभी भी अक्षत है। भारत में महिला की अवधारणा निवेदिता की दृष्टि में अपेक्षाकृत सरल, अधिक व्यक्तिगत और पूर्णतर है। उनके अनुसार जैसे नभ-मंडल के लिए केंद्रबिंदु ध्रुवतारा है, वही स्थान पूर्वी घर के लिए उसके नारीत्व की अचल प्रतिष्ठा का है। इसी में मां की उस अर्चना का रहस्य निहित है जिसमें परिवार की एकता और उसके मुखिया के प्रति निष्ठा की जड़ें व निर्देशित भारतीय घर के जीवन से बढ़कर सुंदर और कुछ भी नहीं है। भारतीय मानस तो मातृत्व को बकौल मुनव्वर राणा इस रूप में देखता है-

ऐ अंधेरे देख ले तेरा मुंह काला हो गया।
मां ने आंखें खोल दीं घर में उजाला हो गया॥

भगिनी का अभिमत है कि सर्वगुण सम्पन्न पत्नी के काव्यात्मक और पौराणिक आख्यानों का यहां बाहुल्य है। जहां यूरोपीय काव्य वाग्दत्ता कुमारी का महिमा मंडन और गुणगान करता है, भारतीय काव्य पतिव्रता पत्नी को आदर्श के रूप में प्रस्तुत करता है। निवेदिता के विचार में दोनों प्रथागत ढांचे हैं जिनके माध्यम से महिला की शुचिता की सर्वोच्च अवधारणा या आदर्श तक पहुंचा जा सकता है।[8] इसी संदर्भ में उन्होंने 'एन ओपन लेटर टू हिंदू वीमन' में लिखा, "पवित्रता और शक्ति ऐसी निधियां हैं, जिन्हें सभी भू-भागों में संरक्षण के लिए प्रजाति (Race) पुरुषों को नहीं महिलाओं को सौंपती है। घर की महानता महिलाओं की तपस्या में निहित होती है। अपने घरों में तपस्विनी की भांति जीवन बिताने वाली महिलाओं के शांत मौन जीवन ने जिनकी महत्त्वाकांक्षा पूर्ण निष्ठावान होने की है, धर्म की रक्षा और संवर्धन के लिए बाहर लड़े गए युद्धों की अपेक्षा बढ़ कर योगदान दिया है।"[9]

पत्नीत्व के भारतीय आदर्श की व्याख्या के संदर्भ में विवाह संस्था का विश्लेषण करते हुए वे बताती हैं कि जहां तक भारत का प्रश्न है, यहां विवाह को आदर्श के रूप में बनाए रखने का अर्थ था, एक लम्बे व कठिन पथ पर चलना जो क्षुर-धारा के समान तेज था। अपने आदर्श रूप में विवाह को वे एक महान अर्पण, एक असीम कोमलता, एक पावन शांति तथा प्रचुर करुणा मानती थीं। उनकी दृष्टि में कठोरतम एक पत्नीत्व वैवाहिक जीवन की शुचिता का आधार नहीं है वरन् यह तो सांसारिक जीवन के अनुभव को आत्मा का अनुभव बनाने पर निर्भर है।[10]

उनका अभिमत है कि पत्नीत्व के भारतीय आदर्श में साध्वीपन की तमाम मूलभूत बातों का समावेश है। स्त्री आदर्श

के अविच्छिन्न उदाहरण के रूप में कार्य करती है। हिंदू नारीत्व की उपलब्धियां शक्ति और प्रेम की अपेक्षा विवेक, सेवा और त्याग की रही हैं। हिंदू महिला साध्वी थी, जो पत्नीत्व और मातृत्व के दायित्वों को उसी भक्ति भाव से पूरा करती थी, जिस भक्तिभाव की अभिव्यक्ति ईसाई साध्वी मेहोना की उपासना के समय करती है।[11] भगिनी का कहना है कि जीवन पर्यंत घनिष्ठता के रुचिर होने के लिए उसकी गहरी नींव पर आधारित होना आवश्यक है। यहां विवाह सूत्र में बंधने वाले दो व्यक्तियों की संतुष्टि पर अनावश्यक बल नहीं दिया जाता। विवाह को परिवार और समाज के प्रति एक दायित्व माना जाता था।

भारतीय महिलाओं की दयनीय स्थिति की तसवीर प्रस्तुत करने के लिए मिशनरियों द्वारा लगाए गए आरोपों का खंडन करते हुए भगिनी ने कहा कि भारतीय महिलाओं को अज्ञ व उत्पीड़ित कहने वाले सभी लोगों को हमारा उत्तर है कि महिलाओं के साथ बुरे बर्ताव का अपराध इस देश में अन्य अपेक्षाकृत युवा देशों की अपेक्षा बहुत कम है। यूरोपीय लोगों को यह नहीं सोचना चाहिए कि पूर्वी स्त्री शिक्षा से वंचित रही है। एक हिंदू स्त्री के जीवन में दो बड़े शैक्षणिक तत्त्व घर का प्रभाव एवं रामायण व महाभारत का प्रभाव है। हिंदू युगलों के पारस्परिक सामंजस्य के बारे में उनका कहना था कि समय बीतने के साथ पति-पत्नी इस कठोर संसार में एक-दूसरे के रक्षा-स्थल बन जाते हैं।

भारतीय दुल्हन के गरिमापूर्ण स्वरूप का चित्रण करते हुए भगिनी लिखती हैं, "वह अपने पति गृह में बहुत कुछ वैसे ही प्रवेश करती है जैसे एक पाश्चात्य महिला गिरजाघर में प्रविष्ट होती हैं। दम्पति का प्रेम एक भक्ति है जो गुप्त रूप से की जाती है। दुल्हन अपने श्वसुर गृह में पूर्ण व प्रभूत पुत्रीत्व से बढ़ कर और कोई उपहार नहीं ला सकती।[12]

निवेदिता के अनुसार हिंदू दम्पति की जीवन शैली के माध्यम से प्रकट होने वाली घरेलू प्रसन्न्ता की अवधारणा बहुत पूर्ण होती है। अपने पति की ओर अभिमुख होने पर एक हिंदू महिला के आनन पर प्रकट होने वाले आलोक को मेरी तरह देखने वाला कोई व्यक्ति कभी इस बात में संदेह नहीं कर सकता कि यह अवधारणा प्रायः जीवन में मूर्त रूप धारण कर लेती है। दुल्हन द्वारा ससुराल में ज्येष्ठों की उपस्थिति में निकाले जाने वाले घूंघट का उन्होंने काव्यमय भाषा में स्पष्टीकरण करते हुए लिखा है- 'With all the shyness of a religious novice comes the girl to her new home".13

दुल्हन के सारे स्वप्न संन्यासिनी भाव से युक्त होते हैं। त्यागमूर्ति महिलाओं के बिंब उसके मानस पटल पर उभरते रहते हैं। एक हिंदू महिला के लिए विवाह बंधन की इस पावनता का भौतिक आकर्षण से कोई लेना-देना नहीं है। एक बार पत्नी यानी सदैव के लिए पत्नी।

वे यह स्वीकार करती हैं कि अन्य स्थानों की भांति भारत में भी दुखमय परिणीत जीवन है क्योंकि स्वार्थी और ईर्ष्यालु पति सभी जगह होते हैं। लेकिन उन्होंने इसके परे जाकर देखा, जहां आत्मा 'अधिकारों' के दावों से खंडित नहीं हुई थी। वे फारसी कविता से ये पंक्तियां उद्धृत करती हैं- "मैं तार बनूं, स्वर तुम बनो। तुम काया बनो, मैं जीवन। इसके बाद कोई यह नहीं कहे कि एक मैं था, दूसरे तुम थे।" चूंकि उन्हें हिंदू पत्नी के जीवन का निकट से अध्ययन करने का अवसर प्राप्त हुआ था, वे इसकी गरिमा से बहुत प्रभावित थीं। रवीन्द्र नाथ ठाकुर के अनुसार निवेदिता प्रेम की अपनी अंतर्दृष्टि से बहुत कुछ देख पाने में समर्थ हुईं। उन्होंने भारतीय सामाजिक व्यवस्था की कार्यप्रणाली को भीतर से देखा था। उनकी टिप्पणियां तथ्यों पर आधारित थीं। आदर्शों की वास्तविकता में आस्था के कारण वे अंतस्थ समरसता व मूलभूत सत्यों को देखने के लिए उती ही उत्सुक थीं।

भगिनी ने सामान्यतः पूर्वी देशों और विशेष रूप से भारतीय पारिवारिक संगठन का गहराई से अध्ययन किया। इसमें भारतीय घर और भारतीय स्त्रियों के गृहस्थ जीवन के वैशिष्ट्य को उन्होंने काव्यमय भाषा में प्रस्तुत किया है। उनके अनुसार भारतीय महिलाओं द्वारा निर्मित एवं निर्देशित घरेलू जीवन से बढ़ कर रम्य चीज की कल्पना करना कठिन है। यह समझ लेना चाहिए कि एशियाई चिंतन एवं आदर्शवाद को रेखांकित किया कि भारत में पारिवारिक जीवन की पवित्रता एवं माधुर्य को एक महान संस्कृति के धारातल तक ऊपर उठा दिया गया है।

मातृत्व की महिमा

भगिनी ने भारतीय समाज में मातृत्व की महिमा की उसके पीछे विद्यमान जीवन दर्शन के संदर्भ में व्याख्या की है। उनकी दृष्टि में सभ्यता पर महिलाओं का प्रभाव पश्चिम की अपेक्षा भारत में कहीं अधिक व्यापक है। ऐसा इस कारण है कि यहां एक स्त्री जिसके मार्गदर्शन में पुरुष न्यूनाधिक रूप से स्वेच्छया चलने को प्रस्तुत होता है, जिसका प्रभाव उस पर सर्वाधिक अमिट होता है, वह है उसकी मां। ये स्त्रियां ही हैं, जिन्होंने शुचिता, त्याग व आध्यात्मिकता की उन महत् प्रेरणाओं को संजो कर रखा है जिन पर आधुनिक भारत टिका हुआ है।[15]

उनकी मान्यता है कि मातृत्व स्त्री के लिए शक्ति प्राप्ति का मार्ग खोल देता है। अपने समस्त अव्याख्येय संताप और आनंद की क्षणभंगुर झलकयुक्त जीवन और कुछ नहीं, ब्रह्मांड के दैवी मातृत्व की अपनी संतानों के साथ क्रीड़ा है।[16] पातिव्रत्य हिंदू महिला के जीवन का केंद्रबिंदु है। चाहे कुछ भी कारण हो, पुत्र

कभी यह सोच भी नहीं सकता कि उसकी मां क्षण के लिए भी उसके पिता के प्रति निष्ठावान नहीं रही है।

भगिनी का कहना है कि माधुर्य की तीव्रता से भरपूर भारतीय घरेलू जीवन में भी ऐसा कोई अन्य बंधन नहीं है, गहराई की दृष्टि से जिसकी तुलना मां और उसके बच्चे को आबद्ध करने वाले रिश्ते से की जा सके। अपने प्रथम शिशु के जन्म के साथ ही तरुणी पत्नी अपनी नव-शिष्यत्व अवधि को पार करके एक आधिकारिक वृत की सदस्या बन जाती है।[17] अगाध माधुर्य, अभंजनीय बंधन, असंदिग्ध पवित्रता- इन सभी बातों और बहुत कुछ का अभिधान मातृत्व है। अपनी काव्यमय शैली में भगिनी ने मातृ वात्सल्य को इस प्रकार वर्णित किया है।

विधवाओं विषयक मिथ्या प्रचार का खंडन

यह तो एक निर्विवाद तथ्य है कि एक भारतीय महिला के जीवन में भरी दोपहरी में अमावस्या की कालिमा तब छा जाती है, जब उसे वैधव्य का वज्राघात झेलना पड़ता है। भगिनी ने स्त्री जीवन के इस चरम अमंगलमय पक्ष का भी गौर से अध्ययन किया। वे इस निष्कर्ष पर पहुंची कि मिशनरियों का यह प्रचार अनर्गल है कि वे 'दुर्गतिपूर्ण जीवन' बिताती थीं और समाज उन्हें 'घृणा व अपमान' की दृष्टि से देखता था। इसके विपरीत ब्रह्मचर्य के प्रति अत्यधिक आदरभाव और पूजा-आराधना में व्यतीत दीर्घ अवधि एवं कठोर संयम के कारण उन्हें श्रद्धा भाव से देखा जाता था। उनका मानना है कि अपने सामाजिक दायित्वों की पूर्ति करते हुए भारतीय विधवा आदर्शों का अनुगमन करते हुए साध्वी का एकांत जीवन जीती है।

भगिनी का स्पष्ट मत था कि भारत को पश्चिम के सम्मुख क्षमाप्रार्थी की मुद्रा में खड़े रहने की कतई आवश्यकता नहीं है क्योंकि जिन आदर्शों ने भारतीय समाज को ढाला है, वे पश्चिम की समझ से परे हैं और पश्चिम की भौतिक उन्नति उसकी श्रेष्ठता का प्रमाण नहीं है। पश्चिम में भले ही स्त्री प्यार की महिमा या वैभव की शक्ति के लिए लालायित हो, भारत में उसके विशिष्ट स्वप्न परिशुद्धता निष्ठा एवं शुचिता के हैं।

सी-2, 'रतन स्मृति' पंचवटी कॉलोनी, रातानाडा, जोधपुर, राजस्थान-342 001, मो. 94602 16100

1. जिन समाचार पत्रों व पत्रिकाओं में इस पुस्तक की समीक्षाएं प्रकाशित हुईं, उनमें से कुछ के नाम हैं :-
-क्रिश्चियन आऊटलुक; द चर्च टाइम्स; द डेट्रियॉट फ्री प्रेस; द डेली ग्राफिक; क्वीन; द इंडियन स्पेकटेटर; द यॉर्कशायर पोस्ट; द सन; द संडे मेल, द मद्रास मेल आदि।

2 व 3. द कंपलीट वर्क्स ऑफ सिस्टर निवेदिता- खण्ड-दो के संपादकीय पूर्व कथन में उद्धृत; पृ. X, XI

4. सिस्टर निवेदिता- लेक्चर्स एंड राइटिंग्ज, पृ. 221

5 व 6. द कंपलीट वर्क्स ऑफ सिस्टर निवेदिता- खण्ड-चार पृ. 243, 255

7 व 8 व 9 द कंपलीट वर्क्स, खण्ड-दो पृ. 465

10. लेटर्स एंड राइटिंग्ज, पृ. 743

11. कंपलीट वर्क्स, खंड 2, पृ. 62

टिप्पणियां एवं संदर्भ

12 व 13. 'ऑफ द हिंदू वूमन एज ए वाईफ'- कंपलीट वर्क्स, खंड 2, पृ. 27, 33

14. भोगवादी पश्चिमी संसार ने स्त्रियों के प्रति कभी पूज्य भाव नहीं रखा। विख्यात चित्रकार पाब्लो पिकासो ने स्त्री को भोग्या मानने वाले पश्चिम की मानसिकता को इन शब्दों में उकेरा है- "In the West Young Woman is a fairy, an old woman is doormat". जबकि भारतीय दृष्टि में-
ऐ मां तेरे चेहरे की झुर्रियों की कसम
हर एक लकीर में जन्नत नज़र आती है॥

15. लेटर्स ऑफ सिस्टर निवेदिता- खंड 1, पृ. 283-84, संपादक प्रो. शंकरी प्रसाद वसु।

16 व 17. कंपलीट वर्क्स, पृ. 17-18

साक्षात्कार

बांग्ला भाषा के शीर्षस्थ उपन्यासकार बिमल मित्र (बांग्ला में 'विमल' को 'बिमल' लिखा जाता है) की याद दिलाता, सितंबर 1991 के आखिरी दिनों उनकी मृत्यु से कुछ माह पूर्व, अभिनव तैलंग द्वारा लिया उनका इंटरव्यू

'मेरा अगला जन्म किसी हिंदी भाषी के घर में हो'

● **अभिनव तैलंग**

'जब मैं छोटा था तो मेरे बोलने पर माता-पिता मुझे डपटते- चुप रहो। बाद में स्कूल गया तो मास्टरजी ने डांटा -बोलो मत, चुप रहो। सन् 1943 में मेरी शादी हो गई तो कुछ समय बीतते ही बीवी भी कहने लगी- बोलिए मत, चुप रहिए न! एक दिन मैंने सोचा कि मुझे हरदम चुप होना पड़ा है, क्यों न अपनी भड़ास लिखकर निकालूं। यूं मेरे पिता मुझे चार्टर्ड अकाउंटेंट बनाना चाहते थे पर मेरी दिलचस्पी हिसाब-किताब में न थी इसलिए मैंने बी.कॉम. के बाद बांग्ला भाषा में एम.ए. कर लिया।' -बिमल मित्र

बांग्ला उपन्यासों और अनेक कहानियों के सर्जक बिमल मित्र ने जाने कहां-कहां, कैसी-कैसी कल्पना से दिलचस्प सैकड़ों पात्रों और प्रसंगों को गढ़ा। उनकी रचनाएं मात्र मनोरंजक नहीं, उनमें व्यक्ति और समाज में चल रही परिवर्तन की तेज धाराओं को रेखांकित करने की अद्‌भुत क्षमता भी है। मुझे 29 सितंबर 1991 को जनता के प्रिय लेखक बिमल मित्र का सान्निध्य और साक्षात्कार करने का सौभाग्य मिला था। मैंने सुना था कि वे युवाओं से बड़े स्नेह से मिलते हैं और काफी समय बतियाते भी हैं, खासकर हिंदी भाषियों से। मैं निश्चित समय पर चेतला सेंट्रल रोड स्थित उनके हवेलीनुमा निवास पर पहुंच गया। वहां हिंदी में बिमल मित्र लिखी नेम प्लेटवाले दरवाजे का कुंडा खटखटाया तो कुछ ही क्षणों बाद उन्हें अपने सामने देखकर अचकचा गया। हड़बड़ाहट में नमस्ते कर उनके चरणों में झुक गया। उन्होंने स्नेहपूर्वक मेरी पीठ थपथपाते हुए कहा- बेटा, सम्मान करने के लिए किसी के चरण छूना जरूरी नहीं। तब मुझे लगा, जैसा उनका नाम है, वैसे ही वे विमल स्वभाव के भी हैं।

ऊंचे कद, सांवले रंग, सिर पर बेतरतीब बिखरे बाल, मैली-सी मोटी धोती और बनियान पहने लेखनी के धनी बिमल दा बड़ी आत्मीयता से पेश आ रहे थे। थोड़ी देर बाद मैंने ढेरों हिंदी, बांग्ला पत्र-पत्रिकाओं, हजारों पुस्तकों से भरे अध्ययन कक्ष में बातचीत शुरू की- 'दा, मुझे कलकत्ता में यह पता लगा कि आप बंगालियों को पसंद नहीं करते हैं, जबकि हिंदी भाषियों की यह धारणा है कि बांग्लाभाषी बेहद संस्कृतिशील और लेखक-कलाकारों का आदर-सत्कार करने वाले होते हैं। मेरी बात सुनकर वे बांग्ला मिश्रित हिंदी में बड़े रोष से बोले- बंगाल में तीन बड़े साहित्यकार हुए हैं- बंकिमचंद्र चटर्जी, रवींद्रनाथ टेगौर और शरतचंद्र। और इन तीनों को जितनी उपेक्षा और दुत्कार बंगाल में मिली, उतनी कहीं और नहीं। सुभाषचंद्र बोस और ईश्वरचंद्र विद्यासागर का जितना अपमान बंगालियों ने किया, उतना किसी अंग्रेज ने भी नहीं किया होगा।

साहब, बीवी और गुलाम, मुजरिम हाजिर, इकाई, दहाई, सैकड़ा, खरीदी कौड़ियों के मोल, चलो कलकत्ता, पति परम गुरु, मिथुन लग्न, चाकर गाथा, वनलता से आखिरी मुलाकात, चलते चलते जैसी सौ से अधिक अनुपम कृतियों के सर्जक बिमल मित्र का अवसान दिवस (2 दिसंबर 1991) हिंदीभाषियों के लिए सर्वाधिक दुःखदायी रहा, क्योंकि उनकी कृतियां हिंदी क्षेत्रों में बड़े चाव से पढ़ी जाती हैं। हिंदी में उनका पहला उपन्यास राख (छाई) राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली द्वारा छापा गया था। सन् 1950 के पहले नौकरी के सिलसिले में बिलासपुर (छत्तीसगढ़) में कई वर्षों रहे। उनका उपन्यास सुरसुतिया इसी अंचल की गाथा है। मेरी उनसे पुरानी बातचीत, जो आज भी सुधी पाठकों के लिए प्रासंगिक होगी।

बिमल दा, वह कौन-सी मजबूरी या प्रेरणा थी, जिसके चलते आपने लिखना शुरू किया ?

जब मैं छोटा था तो मेरे बोलने पर माता-पिता मुझे डपटते- चुप रहो। बाद में स्कूल गया तो मास्टरजी ने डांटा -बोलो मत, चुप रहो। सन् 1943 में मेरी शादी हो गई तो कुछ समय बीतते ही बीवी भी कहने लगी- बोलिए मत, चुप रहिए न ! एक दिन मैंने सोचा कि मुझे हरदम चुप होना पड़ा है, क्यों न अपनी भड़ास लिखकर निकालूं। यूं मेरे पिता मुझे चार्टर्ड अकाउंटेंट बनाना चाहते थे पर मेरी दिलचस्पी हिसाब-किताब में न थी इसलिए मैंने बी. कॉम. के बाद बांग्ला भाषा में एम.ए. कर लिया। मेरे दोनों बड़े भाई डॉक्टर और इंजीनियर बने। बारह-तेरह साल की उम्र से ही मेरे मन में साहित्यकार बनने की लालसा अंकुरित हो चुकी थी। मैं सोचता सस्ती-सी कोठरी में रहूंगा और लिखकर हर माह पच्चीस-तीस रुपये कमा लूंगा। नौकरी या व्यापार कदापि नहीं करूंगा, शादी नहीं करूंगा तो किसी दूसरी सांसारिक झंझटों में भी नहीं फसूंगा। मेरे दोस्त द्विजेन बैनर्जी ने मुझसे कहा था कि मनुष्य के जीवन की श्रेष्ठ संपदा दुःख ही है। प्रभु यीशु, सुकरात और तथागत को चरम् दुःख ने ही महापुरुष बनाया। उसने मुझे यह भी बताया कि समय सबसे बड़ा शक्तिशाली होता है। मैं पहले देश के प्रेसीडेंट अथवा प्राइममिनिस्टर को सबसे बलशाली मानता था।

मेरी पहली रचना मुहल्ले से छपनेवाली एक लघु पत्रिका में छपी। बाद में मैं वसुमती के संपादक सरोज घोष के सम्पर्क में आकर कहानियां लिखने लगा। वे उन्हें वसुमती में छापकर प्रोत्साहित करते रहे। तब मैं भवानीपुर में रहने वाले एक मित्र के घर खूब जाता। वहां मेरी नजर चार्ल्स डिकेंस की ए टेल ऑव टू सिटी' पर पड़ी, जिसे पढ़कर मैं मंत्र-मुग्ध हो गया। फ्रांस की क्रांति पर आधारित इस कृति से प्रभावित होकर मैंने उसी वक्त फैसला किया था कि मैं पलासी के ऐतिहासिक युद्ध पर एक वृहद उपन्यास लिखूंगा। बाद में साहब, बीवी, गुलाम और 'बेगम मेरी विश्वास' उपन्यास उसी निश्चय से रचे गए। सत्रह-अठारह साल की उम्र में मैं एकाग्रचित्त होकर कविताएं और बांग्ला के लोकप्रिय गायकों के लिए गाने लिखकर तीस-चालीस रूपए कमाने लगा था। मुझे एक गीत के बारह रूपए मिलते थे।

लेखक बनने का दृढ़ निश्चय तो आपने कर लिया था पर क्या उसमें अवरोध नहीं आए, क्या आपको ऐसा कभी नहीं लगा कि सिर्फ लेखक बनकर गुजारा करना संभव नहीं है?

रुपये-पैसों, ऐशो-आराम की चाहत मुझमें रत्ती मात्र नहीं रही, लेकिन घरेलू मजबूरियों की वजह से मैंने रेलवे की नौकरी कर ली। पिताजी ने जोर देकर कहा कि बेटा, नौकरी मिलना कठिन है छोड़ तो तुम कभी भी सकते हो। रेलवे की भ्रष्टाचार निरोधक शाखा में रहकर मैंने अपने देश के हर हिस्से की यात्राएं कर देश और देशवासियों को जानने-पहचानने का प्रयास किया। नौकरी के दौरान मुझे बहुत-सी कहानियों-उपन्यासों के महत्त्वपूर्ण पात्र, घटनाएं और विषय मिले। बचे वक्त में मैं कलकत्ता की नेशनल लायब्रेरी में जाकर घंटों अध्ययन-मनन और लेखन करता। उस दौर में मेरा छाई (राख) उपन्यास छपा, जिसमें मैंने सामाजिक स्थितियों को बड़े सहज, सीधे-सादे और सच्चे ढंग से रखा। उसकी कथा एक बेरोजगार नास्तिक युवक की आवारगी के इर्द-गिर्द घूमती है। इसमें नकारात्मक आक्रोश, परिवार में जवान होती लड़कियों, प्रेम की विडम्बना, व्यर्थता और जवान देह के सम्मोहन आदि का खाका तो है ही, उसमें मानसिक करुणा, भावुकता को भी उजागर करने का प्रयास किया गया।

नौकरी के दौरान ही दूसरा विश्व युद्ध शुरू हो गया। मेरी तनख्वाह भी पहले से खूब बढ़ गई तो मेरे मन में भय बढ़ता गया कि यदि मेरी और परिवार की जरूरतें इसी तरह बढ़ती चली गईं तो नौकरी छोड़ देने पर कम रुपयों में गुजारा कैसे होगा और एक दिन मैंने अपनी पत्नी से सलाह-मशविरा करके नौकरी पर जाना बंद कर दिया। ऑफिस से कई पत्र आए, पर मैंने कसम खा ली कि सरकारी नौकर के नाते अब वहां नहीं जाऊंगा। एक दिन मेरे नीचे काम करने वाला सहकर्मी आकर बोला- यदि आप रिजाइन दे दें तो आपकी जगह मेरा प्रमोशन हो जाएगा। मैंने उसी समय एक कोरे कागज पर दस्तखत कर उसे दे दिया। सुविधाओं का अभाव ही संघर्ष की जड़ में है। धन, सुख-सुविधा, यश और सम्मान को भुलाकर ही लेखक अपना धर्म निभा सकता है। नौकरी छोड़ने के बाद मेरा असली जीवन शुरू हुआ। तब मैंने मुस्लिम, क्रिश्चियन एंड हिंदू किताब लिखी। मेरा उपन्यास साहब, बीवी और गुलाम था। इसके पूर्व देश में मेरा उपन्यास छाई धारावाहिक रूप से छप चुका था। इसके पूर्व दो और कहानियां देश ने छापी थीं। पहली कहानी का शीर्षक अमीर और उर्वशी था । नौकरी छोड़ने के बाद मेरे हर साल लगभग तीन उपन्यास और चौबीस- पच्चीस कहानियां, लेख आदि छपीं। (बिमल दा ने मुझे तब नौकरी शीर्षक कहानी के बारे में भी बताया, जो उनकी अंतिम कहानी है, जिसे उनकी मृत्यु के पांच दिन बाद देश ने छापा था)।

अच्छी-भली सरकारी नौकरी छोड़कर लिखकर आजीविका चलाने का निश्चय वाकई बहुत जोखिम भरा था। पर दा, जिस उपन्यास ने आपको बेशुमार प्रसिद्धि और

सफलता में रहा पत्नी का हाथ : बिमल मित्र

लेखकों के अपनी पत्नी के सम्बंध में विचार या अनुभव अच्छे नहीं होते। बुक ऑफ मैरेज के संपादक बर्नार्ड शॉ से विवाह के बारे में जब पूछा गया तो उन्होंने कहा कि जब तक मेरी पत्नी जिंदा है, तब तक इस सम्बंध में सच्ची बातें कहना संभव नहीं और झूठ कहना मुझे गवारा नहीं है। एक और उदाहरण लियो टॉल्स्टॉय का है। वे उम्र बढ़ने के साथ क्षीण हो रहे थे, किंतु उनकी पत्नी का दबदबा बढ़ता रहा। एक दिन ट्रेन में यात्रा करते हुए वे बेहोश हो गए तो टिकट चेकर ने उन्हें अगले स्टेशन पर उतार दिया। उपचार के बावजूद उन्हें बचाया न जा सका। मरने के पहले उन्होंने अपनी इच्छा जताई कि -मेरी पत्नी को मेरा मरा मुंह मत दिखाना। पर मुझे अपनी पत्नी का काफी सहयोग मिला। मैं जहां भी जाता हूं, उसे साथ ले जाता हूं। वही मेरी रचना की प्रथम पाठक है। उसमें जो कमियां होती हैं, मेरा ध्यान उनकी तरफ आकर्षित करती है। मेरी गृहस्थी का काम, इनकम टैक्स का झमेला, बैंक आदि के लफड़े, नाते-रिश्तेदारों, साहित्यिक मित्रों, पाठकों के पत्र, मेल-मुलाकातें उसी के जिम्मे रहते हैं, इसीलिए अपना एक उपन्यास इकाई, दहाई, सैकड़ा मैंने उसी को सर्मिपत किया है। यदि वह घर-संसार की जिम्मेदारी नहीं संभालती तो मैं इतना नहीं लिख पाता।

जरूरत जितना रुपया दिलवाया उसका नाम तो पहले सती विलाप था, साहब, बीवी और गुलाम नाम उसका कैसे पड़ा?

नौकरी छोड़ने पर मेरे और परिवार के समक्ष जो आर्थिक परेशानियां आईं उसकी अलग दास्तां है, पर बांग्ला के साहित्यिक मठाधीशों ने मुझे जिस बुरी तरह इग्नोर करने की साजिशे रचीं, उसने मुझे लंबे समय तक परेशान किया। उन्होंने मुझे चोर लेखक कहकर दुत्कारा और संपादकों, प्रकाशकों को मेरे खिलाफ भड़काया परंतु कविवर रवींद्रनाथ टेगौर की यह पंक्ति कि शत्रु होना शक्तिशाली और सफल बनने का लक्षण है, यदि आपका कोई शत्रु नहीं है तो आप कमजोर हैं, लाचार हैं मेरे निश्चय को दृढ़ करती रही। निंदा और षड्यंत्रों के बावजूद मैं कुछ ही समय में साहित्यिक हलकों का सबसे उपेक्षित किंतु पाठकों का सबसे चहेता लेखक बन गया। बांग्ला की प्रतिष्ठित पत्रिका देश ने मेरे उपन्यास साहब, बीवी और गुलाम को धारावाहिक रूप से छापना शुरू किया तो बांग्ला के जमे हुए कुछ साहित्यालोचकों-लेखकों ने मेरी खूब खिल्ली उड़ाई। तभी एक दिन दिल्ली से एक प्रकाशक का पत्र आया कि वह हिंदी में उसे अनुदित कर छापना चाहता है। मैंने सोचा बांग्ला में ही मुझे जूते पड़ रहे हैं, हिंदीवाले पता नहीं क्या करेंगे ? इस भय से मैंने उसको कोई जवाब नहीं भेजा। तीन साल बाद मालूम पड़ा कि उसने मेरी अनुमति के बिना ही वह उपन्यास छाप दिया और मैं रातों-रात हिंदी पाठकों का चहेता लेखक बन गया।

खैर, जब मैं सती विलाप शीर्षक से यह उपन्यास लिख रहा था, तब मानसिक रूप से कुछ टूट चुका था। बोरियत महसूस होने पर बगल में पन्ने दबाए अपने मित्रों से मिलने टॉलीगंज चला जाता। दोस्त सिगरेट फूंकते, शराब की चुस्कियां लेते ताश खेलते रहते और मेरी खिल्ली उड़ाते रहते। एक दिन मैं उनके पास बैठा लिख रहा था कि मेरा एक दोस्त पत्ता फेंकते हुए चिल्लाया -साहब, बीवी और गुलाम। साहब, बीवी और गुलाम। उसकी चीख सुनकर मैं चौंक उठा। मुझे लगा, मेरे उपन्यास का यही शीर्षक उपयुक्त रहेगा। मैंने देश के प्रकाशक अश्विनी सरकार और संपादक सागरमय घोष को फोन कर बताया कि मेरे उपन्यास का शीर्षक सती विलाप नहीं, साहब, बीवी और गुलाम रहेगा।

आपके इस उपन्यास पर तो प्रख्यात फिल्मकार गुरुदत्त ने फिल्म भी बनाई, इस सम्बंध में कुछ बताएं ?

गुरुदत्त ने अपनी फिल्म के लिए इसे क्यों और कैसे चुना, इसकी अलग दास्तान है पर मैं आपको एक दूसरी बात बताऊंगा। इस उपन्यास के पहले भी मैं लिखता था, छपता भी था पर तब कोई खास हंगामा नहीं हुआ। सन् 1962 में जब साहब, बीवी और गुलाम फिल्म रिलीज हुई तो घर में अचानक नाते-रिश्तेदारों का तांता लग गया। सबकी यह धारणा थी कि मैं अब बड़े बंगले में रहूंगा, एयर कंडीशंड कार में घूमूंगा और बड़ी होटलों में जाकर जुआ खेलूंगा, सट्टा लगाऊंगा। रेस कोर्स में जाकर घोड़ों पर दांव लगाऊंगा। गुरूदत्त की मौत के बाद जब मैं बंबई गया तो उनके भाई आत्माराम गुरूदत्त की अधूरी फिल्म बहारें फिर भी आएंगी पूरी कर रहे थे। शूटिंग हो रही थी। ड्राइंग रूम में बार का सेट लगा था। मुझसे रहा नहीं गया। पूछा -ड्राइंग रूम में बार ? जवाब मिला- आजकल यही फैशन है।

मैंने उस प्रतिक्रिया में अगला उपन्यास कड़ि दिए किनलाम (खरीदी कौड़ियों के मौल) लिखा जो देश ने ही धारावाहिक रूप में छापा। इस उपन्यास में पैसे की चकाचौंध में घिरे मनुष्य की दीवानगी दर्शाई है। आज मनुष्य हर वस्तु पैसों से खरीदना चाहता है पर बदले में उसे असंतुष्टि ही मिलती है। हर दिन अपने अड़ोस-पड़ोस, दोस्त-रिश्तेदारों पर रौब गालिब करने के चक्कर में वह नए-नए उपकरणों को अपने

घर में भर रहा है। मनुष्य चूहा दौड़ में शामिल हो गया है और यह दौड़ लगातार लंबी हो रही है। भोगने के चक्कर में मनुष्य खुद ही उपभोग की वस्तु बन गया है। समाज का निष्ठुरता से दोहन करने वाले श्रीमान घोषाल, हुसैन भाई और दूसरे कई अति-महत्वाकांक्षी और शक्ति-पिपासु लोग सत्ता के केंद्र बने हुए हैं और (कथा नायक) दीपंकर जैसे व्यक्ति असहाय खड़े हैं हालांकि मैंने यही सिद्ध करना चाहा कि कौड़ियों से जीवन का आनंद नहीं खरीदा जा सकता।

आपने आजादी के पहले वाले दिन भी देखे हैं और बाद वाले भी। उस जमाने की देशभक्ति और त्यागवाली भावना एकाएक लुप्त कैसे होती जा रही है ?

आजादी, देशभक्ति, त्याग ! किस जमाने की बातें कर रहे हैं आप? हममें जो जितना ऊंचा खरीददार होता है उसकी इज्जत उतनी ही अधिक है। पहले आदमी की कदर उसकी विद्वता, ईमानदारी, परिश्रम, त्याग-तपस्या और धर्म-निष्ठा के आधार पर की जाती थी पर आज शान-शौकत, रुपये-पैसे, पद इसके मापदंड बन गए हैं। अंग्रेजों के जमाने में भी रिश्वतखोरी थी पर बाद में वह हर स्तर तक जा पहुंची और वह अनैतिक नहीं रही। आज जो अपने को समाज का, जनता का सेवक कहते हैं, उनके लिए सेवा भी आजीविका कमाने का साधन है। मुनाफे के इस धंधे में जुटे समाजसेवी, कार्यकर्ता, मंत्री-संत्री हैं तो जनता की सेवा के लिए पर आलीशान बंगलों में रहकर सूखे मेवे उड़ा रहे हैं।

आपने सौ से अधिक पुस्तकें लिखी हैं, आपके उपन्यास-कहानियों पर फिल्में और धारावाहिक भी बन चुके हैं पर आपको कोई उल्लेखनीय पुरस्कार या सन्मान नहीं मिला, इसकी वजह क्या है ?

सम्मान-पुरस्कारों का मेरे जीवन में कोई महत्त्व नहीं है। पुरस्कार पाकर मैं आरोप-प्रत्यारोपों का केंद्र भी नहीं बनना चाहता। यह सामंती युग की देन है। पुरस्कार के साथ रूपया और नाम जुड़ा होने से कई लोग जोड़-तोड़ करते रहते हैं। लिखने की जगह वे सत्ताधीशों-पूंजीपतियों के तलवे चाट रहे हैं। पुरस्कार-उपाधियों की बजाय लेखक, कलाकार को समाज में सन्मान से जीने का अधिकार मिलना चाहिए। अपनी अस्मिता के साथ जीनेवाला लेखक या कलाकार पुरस्कारों को कतई महत्त्व नहीं देता। मेरे आदर्श चार्ल्स डिकेंस और लियो टॉलस्तॉय हैं। चेखव को भी कोई बड़ा पुरस्कार नहीं मिला तो क्या वे सब छोटे लेखक हो गए ? सूलि प्रूडहोम नामक महिला को आज कौन जानता है जबकि उसे साहित्य में नोबेल प्राइज मिल चुका है। सिनल्कयार लुइस को जब नोबेल प्राइज मिला तो ड्रेसार नामक लेखक ने भरी महफिल में उन्हें गुस्से में थप्पड़ मार दिया था। पुरस्कारों, प्रचार से लेखक की जिंदगी, उसकी ताकत कम होती है। मैंने लिखना आत्मसंतुष्टि और गुजर-बसर के लायक पैसा कमाने के लिए शुरू किया था। बाद में मुझे आरामदायी जिंदगी गुजारने के लिए भरपूर पैसा मिलने लगा। मैंने सदैव लिखना ही अपने जीवन का प्रथम और अंतिम उद्देश्य समझा है। पाठकों से मिला अप्रतिम स्नेह ही मेरा नोबेल प्राइज है। हालांकि मुझे भी कुछ पुरस्कार-सम्मान मिले, जैसे आनंद बाजार पत्रिका द्वारा अशोक कुमार सरकार की स्मृति में मेरा अभिनंदन किया गया था। बांग्लादेश के कवि-हृदय प्रेसीडेंट जनरल इरशाद ने मुझे जून 1985 में राजकीय अतिथि का सन्मान दिया और अपनी सौ किताबें भेंट कीं। हिंदी के प्रख्यात उपन्यास लेखक अमृतलाल नागर ने तो खंजन नयन नामक उपन्यास मुझे समर्पित किया।

आप अपने पाठकों के पत्रों के उत्तर देने के लिए ख्यात रहे हैं पर पिछले कुछ समय से आपने पत्रोत्तर बंद कर दिए इसकी वजह ?

अस्वस्थता की वजह से मैं अपने प्रशंसकों के पत्रों का उत्तर नहीं दे पा रहा हूं। पैरों में सूजन रहती है। नींद आने के लिए मुझे ऐसे तीन कैप्सूल खाने पड़ते हैं। मेरे पास महंगी किताबों के सम्बंध में अनेक पत्र आते हैं, जिनका मजमून यह रहता है कि क्या आप अमीरों के लिए लिखते हैं ? पर मैं क्या करूं, लेखन मेरी जीविका का साधन है और मेरा काम सिर्फ लिखना ही है। किताब का मूल्य निर्धारण हम लेखकों के बस में नहीं है।

आप उन लेखकों में शामिल हैं, जो विवादों के केंद्र में रहे हैं। आजादी के बाद चीनी हमले तक की घटनाओं को केंद्रित कर लिखा आपका उपन्यास इकाई, दहाई, सैकड़ा बंगाल सरकार ने प्रतिबंधित किया था। साप्ताहिक हिंदुस्तान में 22 फरवरी 1970 से छपने वाले सुरसुतिया उपन्यास का भी तत्कालीन मध्यप्रदेश के बड़े हिस्से (वर्तमान छत्तीसगढ़) में जमकर विरोध हुआ था। रायपुर सहित कई जगह आपके पुतले भी जलाए गए। किसी लेखक के साथ आखिर विवाद क्यों जुड़ते हैं ?

जो लेखक जितना सत्योन्मुखी होगा, उतना ही विवादग्रस्त रहेगा। मैंने हमेशा गरीबों के शोषण के खिलाफ लिखा है। मैं आदमी की, व्यवस्था की कमजोरियों को अपनी रचनाओं में उजागर करता रहा हूं।

आपके पात्र जनजीवन से जुड़े पर कभी-कभी कुछ काल्पनिक भी लगते हैं। ऐसा क्यों है दा ?

मेरे सारे पात्र, घटनाएं न तो पूरी तरह वास्तविक होते हैं न ही काल्पनिक। मुख्य पात्रों का आधार कोई व्यक्ति, घटना

विषेष जरूर होती है पर मैं यह नहीं चाहता कि कोई व्यक्ति मुझसे कहे कि आपकी कहानी या उपन्यास का फलां पात्र मैं हूं या वह घटना मेरे साथ घटी है। मैं जब अपने पात्रों की कल्पना करता हूं तो कई वास्तविक चरित्र एक में मिल जाते हैं। साहित्य रचना कटु यथार्थ से ही संभव नहीं है इसके लिए कल्पना की चाशनी का भी महत्व है क्योंकि वह लुभावनी और रोचक होती है जबकि सत्य शुष्क और कठोर रहता है।

राजपाल एंड संस से तीन खंडों में छपने वाला शेषशून्य (एनरदेह) संभवतः आपका अंतिम उपन्यास है। आप जितनी जिंदगी जी चुके, क्या उससे संतुष्ट हैं या अभी और जीने की इच्छा रखते हैं ?

मैं अपने अब तक के जीवन से पूरी तरह संतुष्ट हूं। अस्वस्थ होकर सौ बरस जीना न सिर्फ खुद के लिए, बल्कि अपनों के लिए भी बड़ा दुःखदायी है। ऐसी स्थिति में मृत्यु बड़ी लुभावनी होती है। मन और मस्तिष्क इस उम्र में अधिक क्रियाशीलता बर्दाश्त नहीं कर पाते। अधिक बोलने में कष्ट तो होता ही है, हाथ भी लिखने से मना कर चुके हैं। अब मेरे परम-धाम जाने की घड़ी आ गई है, क्योंकि जब केवल तन अस्वस्थ होता है तब भी जीने का मन करता है, पर अब तो मेरे मन में भी जीने की इच्छा नहीं बची। मैंने अपनी परम आयु अपनी किताबों को दे दी है, ताकि ये सदैव जीवित रहें और मुझे भी जिंदा रखें, क्योंकि नाम की भूख मृत्यु तक ही नहीं, उसके बाद भी रहती है।

क्या आप पुनर्जन्म में यकीन रखते हैं ?

हां और मेरी इच्छा है कि मेरा अगला जन्म किसी हिंदी भाषी के घर, हिंदी क्षेत्र में हो, क्योंकि ईर्ष्या और शत्रुता में डूबे बंगालियों के बीच मैं दुबारा पैदा होना नहीं चाहता।

आप अपनी किस पुस्तक को सबसे अधिाक पसंद करते हैं?

आमी (यानी मैं खुद ही अपनी सबसे अच्छी पुस्तक हूं)। मुस्कराकर बिमल दा ने कहा और कुछ देर बाद मैंने उनसे विदा ले ली, पर वे आज भी मेरे मन-मस्तिष्क में छाए हुए हैं।

एस-75, बालाजी परिसर, मन्दाकिनी कॉलोनी, कोलार रोड, भोपाल 462042 (मप्र) मो. 0 7693992837

ज़हीर कुरेशी की दो ग़ज़लें

द्वंद्व

कभी द्वंद्व बाहर दिखाई दिए,
कभी मन के अंदर दिखाई दिए।

मुझे उसकी बातों के विस्तार में,
अचानक कई डर दिखाई दिए।

कई दृश्य धरती पे आकर दिखे,
कई नभ में उड़ कर दिखाई दिए।

नई पीढ़ियों को कहां आजकल,
पिता-मां 'धरोहर' दिखाई दिए।

हुआ उनका जब तर्क से सामना,
तो वो भी निरुत्तर दिखाई दिए।

समय के मुताबिक मुखौटे तमाम,
शरीफों के मुख पर दिखाई दिए।

कभी रात में भी न आए सपन,
कभी स्वप्न दिन भर दिखाई दिए।

एक राह

कहीं से भी कागज के लगते नहीं,
ये वो फूल हैं जो महकते नहीं।

वो अपनी ही बस्ती से अनजान हैं,
जो घर से सड़क पर निकलते नहीं।

अखरती है बच्चों की गंभीरता,
ये पंछी हैं, लेकिन, चहकते नहीं।

सियासत को हम भी समझते हैं, यार,
गरजते हैं बादल, बरसते नहीं।

अगर अश्रु घर छोड़ कर चल पड़े,
तो फिर तुम उन्हें रोक सकते नहीं।

मिले उनकी काया को दो हाथ भी,
वो खुद को निहत्था समझते नहीं।

वो चलते मिले एक ही राह पर,
कई लोग पटरी बदलते नहीं।

108, त्रिलोचन टावर, संगम सिनेमा के सामने, गुरुबक्श की तलैया, पो. आ. जीपीओ, भोपाल, मध्य प्रदेश-462001, मो. 94257 90565

आलेख

साहित्यकार उपेन्द्रनाथ अश्क की सृजनात्मकता

● सिद्धेश्वर



अश्क जी नाटककार, कथाकार और उपन्यासकार के पहले; कवि हैं। उनकी बहुमुखी प्रतिभा का स्रोत काव्य कला से ही निःसृत हुआ है। यह किसी आलोचक का विचार नहीं है, बल्कि श्री गिरिजा कुमार माधुर जैसे कवि का यह विचार है। सच भी यही है कि उपेन्द्रनाथ अश्क ने अपनी रचना यात्रा की शुरुआत कविता से की थी। छंदात्मक कविता लिखी उन्होंने, तो ग़ज़ल पर भी उनकी कलम चली। उन्होंने मुक्तछंद की कविता पर भी आजमाईश की। वैसे मेरा मानना है कि कविता का चाहे जो भी रूप हो, उसमें कवितापन जरूर होना चाहिए। सिर्फ पहेली बुझाना, क्लिष्ट शब्दों की कलाबाजी करना या गद्यांश को कविता का नाम देना, कविता के प्रति अन्याय है। इन बातों को, कहीं-न-कहीं से अश्क जी महसूस करते थे। संभवतः इसीलिए मुक्तछंद कविता के प्रति वे अधिक उत्साहित नहीं दिखे। उपेन्द्रनाथ अश्क ने अपनी रचनाधर्मिता पर ही एक लम्बी मुक्तछंद कविता लिख डाली थी- "अश्क बहुत श्रम करता है।' इस कविता की दो-एक पंक्तियों पर गौर करें 'काम ही काम उसमें है, प्रतिभा जरा भी नहीं हैं।' हमने तो वर्षों ऐलान किया था/ बोले परिमल के लाल बुझक्कड़, 'अश्क रहेगा एकमात्र ऐसा लेखक दुनिया में, जो केवल निज श्रम के बल पर, बार-बार लिखकर अगणित संशोधन परिवर्तन कर, स्वतः प्रकाशित, स्वतः अचारित ददं-फदं से आखिर। सिक्का अपना दुनिया भर से मनवा लेगा।' (आजकल, दिसंबर 10, पृष्ठ 53)।

संस्मरण की शैली में लिखा गया यह वाक्यांश कविता के रूप में स्वीकारना, कविता के प्रति अन्याय है। दुर्भाग्यपूर्ण ढंग से कुछ ऐसा ही कर्तव्य दिखला रहा है, आज के समकालीन कवियों का एक छोटा-सा गुट। ये पद, नाम, सांठ-गांठ के आधार पर अपनी ठेठ गद्यांश रचना को कविता के नाम पर परोसा जा रहा है और कविता को उपेक्षित कर, हाशिये पर ढकेल रहे हैं। ऐसी कविताओं से पाठक दूर होते जा रहे हैं, तो आश्चर्य क्यों? उपेन्द्रनाथ अश्क इस बात को समझते थे। तभी वे ऐसी रचना लिखते-लिखते रुक-थम जाते थे और फिर तुरंत गद्य लिखते-लिखते तुकबंदी पर उतर आते थे-

उपरोक्त गद्यांश के आगे की पंक्तियां देखें :-

जर्रा-ए-खाक को चाहूं मैं तो सहरा कर दूं
कतरा-ए-अश्क को दूं आब तो दरिया कर दूं॥
मैं जो मजनूं हूं अगर जोश-ए-जूनूं पर आऊं
जिसको देखूं, उसे इक आन में लैला कर दूं॥
आपका दिल है अगर संग तो मैं भी वो हूं
इश्क की आग इसी संग मैं पैदा कर दूं॥

उपेन्द्रनाथ अश्क गद्य लिखते-लिखते कविता भी लिखने लगते थे। इसीलिए कविता के साथ लिखे गद्यांश को कविता मान लेना, सरासर अन्याय है, अश्क के प्रति बेईमानी है।

अश्क जी जितने अच्छे कथाकार यानी गद्यकार थे, उतने ही अच्छे कवि यानी पद्यकार भी थे या सिर्फ इस वजह से उनकी रचनाओं को हेय दृष्टि से देखा जाए। उनकी प्रतिभा की अपेक्षा की जाए, तो यह हमारी संकीर्ण मानसिकता का परिचायक होगा। ऐसी बहुआयामी प्रतिभाओं को उपेक्षित करने के बजाय उन्हें और विशिष्ट श्रेणी में रखना चाहिए। विश्व साहित्य समाज में ऐसी अनेक बहुआयामी प्रतिभाएं अवरित होती रही हैं जिन्होंने अपनी सृजनात्मकता के पैमाने पर सफलता का नया आयाम रचा है। क्या अमर साहित्यकार शेक्सपीयर सिर्फ गद्यकार थे? हिंदी साहित्य जगत में रवीन्द्रनाथ टैगोर, अज्ञेय, धर्मवीर भारती, सूर्यकांत त्रिपाठी निराला, नागार्जुन, सर्वेश्वर दयाल सक्सेना,

जयशंकर प्रसाद, महादेवी वर्मा जैसे अनेक कवि-कथाओं की पहचान चाहे जिस रूप में बनी। किन्तु उन्होंने कहानी, कविता, लेख, संस्मरण, नाटक यहां तक कि उपन्यास सब कुछ लिखा। चित्र पेंटिंग तक बनाया कविवर टैगोर, महादेवी वर्मा ने तो क्या उनका लेखन कालजयी नहीं हुआ? उनकी कला ने अपनी पहचान नहीं बनाई? क्या वे मुख्यधारा के रचनाकार के रूप में नहीं पहचाने गए? तो फिर यह उपेक्षा उपेन्द्रनाथ अश्क जैसे बहुआयामी प्रतिभा के धनी रचनाकार के प्रति क्यों? यह प्रश्न कुछ नया न होते हुए भी वैचारिक स्तर पर, बहस या वैचारिक मंथन की मांग करती है। क्योंकि मेरा यह मानना है कि लेखन चाहे जिस विधा में हो, किंतु पूरी ईमानदारी से हो, और सवाल विधा या अनेक विधाओं की नहीं; उसकी जीवंतता और संप्रेषणीयता का होना चाहिए। इसी में लेखन और लेखक, दोनों की सार्थकता है।

एक बात और। उपेन्द्रनाथ अश्क की बहुआयामी प्रतिभा को लेकर कुछ बातों को आप लोगों के सामने रखने का विनम्र प्रयास किया है मैंने। इसे आप मेरा दुस्साहस भी कह सकते हैं। क्योंकि ऐसी बातें कहने में अधिकांश रचनाकार झिझकते हैं। मैं यहां पर यह भी कहना चाहूंगा कि साहित्य की राजनीति का जो गंदा माहौल बनता जा रहा है, उसके प्रति भी हमें सचेत रहने की आवश्यकता है। मुख्यधारा के कवि-कथाकार बनने के पीछे उपेन्द्रनाथ अश्क ने कभी साहित्यिक दांव-पेंच नहीं खेला। साहित्य समाज ने भले उन्हें एक लम्बे समय तक उपेक्षित किया, किंतु उन्होंने कभी साहित्यिक षड्यंत्र का एक हिस्सा बनना स्वीकार नहीं किया। आज के कई मुख्यधारा के रचनाकारों में यह साहस नहीं दिख पड़ता, जो उपेन्द्रनाथ अश्क में था। इसलिए भी अश्क का लेखन ही नहीं; उनका विचार और व्यक्तित्व भी प्रेरक हैं। प्रेरणास्रोत है- नई पीढ़ी के रचनाकारों के लिए। देर से ही सही उन्होंने खेमा या दांव-पेंच के द्वारा नहीं बल्कि अपने लेखन के बल पर अपनी पहचान को स्थापित किया है। वाद-खेमा और तमाम साहित्यिक विसंगतियों से बचते हुए, अपनी रचनाकर्म के प्रति ईमानदार कवि-लेखकों की संख्या बहुत कम है, आज भी और कल भी। आजकल क्या नहीं हो रहा है, और क्या कुछ नहीं हुआ था- अश्क के जमाने में।

उपेंद्रनाथ अश्क का लेखन ही नहीं, उनका विचार और व्यक्तित्व भी प्रेरक हैं। प्रेरणास्रोत हैं- नई पीढ़ी के रचनाकारों के लिए। उन्होंने अपने लेखन के बल पर अपनी पहचान स्थापित की। वाद-खेमा और तमाम साहित्यिक विसंगतियों से बचते हुए, अपनी रचनाकर्म के प्रति ईमानदार कवि-लेखकों की संख्या बहुत कम है, आज भी और कल भी। आजकल क्या नहीं हो रहा है, और क्या कुछ नहीं हुआ था- अश्क के जमाने में।

जनवादी मोर्चा, प्रगतिशील मोर्चा, वामपंथी मोर्चा आदि। कई कवि कथाकार खेमे (मोर्चा) में बंटने लगे हैं। लेखकों-कवियों का मूल्यांकन उनकी रचनाओं की महत्ता, जीवंतता के आधार पर नहीं; खेमे (मोर्चा) के आधार पर किया जाता रहा है। साहित्य में रचनाकार नहीं। खेमे के व्यक्ति पुरस्कृत हो रहे हैं। साहित्य की गंदी राजनीति अपनी पराकाष्ठा पर है। प्रकाशित पुस्तकें भी खेमों में बंटकर पुस्तकालयों की शोभा बन रही है। कुछ खेमे के लोग इस व्यवसाय से अच्छा लाभ उठा रहे हैं। खरीद-बिक्री, मान-सम्मान में पूरी तरह डूबे हुए हैं। आज पुस्तकें, पहले से अधिक छप रही हैं। सवाल यहां पर यह है कि इन पुस्तकों की भीड़ में, पाठक कहां पर हैं? क्या पुस्तकों का, कवि-कथाकारों का, यही हश्र होना रह गया था? क्यों नहीं पुस्तकें तमाम पाठकों के हाथें में पहुंच रही हैं? क्यों नहीं पुस्तकें तमाम पाठकों के हृदय में रच-बस रही है? क्यों साहित्य सिर्फ लाभ-हानि का व्यवसाय बनकर रह गया है? ये सारी बातें उपेन्द्रनाथ अश्क के जेहन में शोर मचाती रहती थीं। उपेन्द्रनाथ अश्क अक्खड़ स्वभाव के, स्वाभिमानी रचनाकार थे। अश्क ने न तो सिर्फ पुरस्कार पाने के लिए लिखा और न ही मुख्यधारा के रचनाकार बनने के लिए किसी एक विधा तक अपनी सृजन को बांधे रखा। उनकी सृजनधारा बहती हुई नदी की तरह अपने वेग में बहती रही। ठहराव या बंधन उनके सृजन को मंजूर न था।

कहीं-न-कहीं हर इनसान को अपने जीवन में, अपने विचार और उद्देश्य के विरुद्ध समझौता करना ही पड़ता है। उपेन्द्रनाथ अश्क ने भी अपने जीवन के उतार-चढ़ाव में समझौता किया। किंतु यह समझौता लेखन (सृजन) के स्तर पर उन्हें कतई मजूंर न था। तभी तो उपेन्द्रनाथ अश्क का उपन्यास 'बड़ी-बड़ी आंखों' पढ़ने के बाद यशस्वी आलोचक नामवर सिंह ने 'अश्क' को पत्र में लिखा- "उपन्यास मेरे हृदय को कुछ अधिक आर्द्र कर गया। आपके उपन्यास के ये कुछ वाक्य अब भी गूंज रहे हैं- 'हो सकता है समझौता जिंदगी की शर्त हो लेकिन आदमी के पास कुछ तो ऐसा हो जहां वह किसी से समझौता न करे।'

कविता के क्षेत्र में 'प्रात प्रदीप' काव्य संग्रह के माध्यम से वे एक ओजस्वी कवि के रूप में सामने आए। उनकी कविता अपने भावबोध, काव्यबोध के कारण अपनी अलग पहचान बनाई तो उनका गद्य लेखन भी बेहद असरदार रहा। अनुवाद, कहानी, एकांकी, पत्रकारिता, उपन्यास, आलोचना पर मजबूती से कलम चलाकर, उपेन्द्रनाथ अश्क ने अपने समकालीनों, प्रेमचंद, अज्ञेय, माखनलाल चतुर्वेद, महादेवी वर्मा सबका दिल जीत लिया था और वे एक श्रेष्ठ गद्यकार के रूप में भी अपनी पहचान बना ली थी। किंतु उपेन्द्रनाथ अश्क ने स्वयं भी इन बातों को अपने संस्मरण में स्वीकारा है कि मुफलिसी ने मेरा कभी पीछा नहीं छोड़ा। नीलाभ

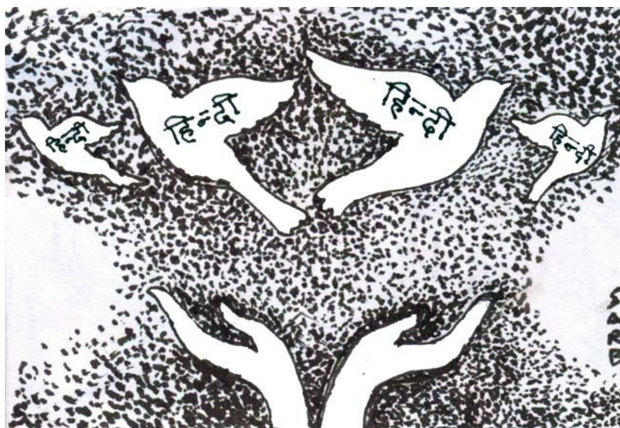
प्रकाशन चलाने के लिए तथा अपनी जीविका चलाने के लिए गद्य लेखन की ओर मुड़ गया। किन्तु सच तो यह है कि जब कविता मुझ पर उतरती है तो फिर मैं और कुछ नहीं कर सकता। कोई दूसरी चीज मेरा ध्यान नहीं सींच पाती। पहले प्यार की तरह वह मुझ पर कुछ इस तरह हावी हो जाती है कि जब तक मैं उसे लिख नहीं डालता, वह मेरा पिंड नहीं छोड़ती। यह ठीक है कि एक बार लिखकर मैं अपने स्वभाव के अनुसार उसकी नोक-पलक संवारता रहता हूं, लेकिन जहां कहानी, नाटक अथवा उपन्यास का पहला वर्जन लिखने में मुझे बहुत कठिनाई होती हैं कविता जैसे अपने-आप कलम की नोक पर उतरती चली आती है और जब तक खत्म नहीं हो जाती, मुझे पूरी तरह अपने बस में किए रहती है।"

उपेन्द्रनाथ अश्क भी जटिल और पहेलीनुमा सपाटबयानी को श्रेष्ठ कविता के रूप में नहीं स्वीकार पाते थे। शायद इसीलिए उनकी कविताओं में वह बोझिलता या जटिलता नजर नहीं आती, जिस शैली को अपनाकर कई सपाटबयानी कवि साहित्य अकादमी, ज्ञानपीठ पुरस्कार, पद्मश्री जैसी उपाधियों से अलंकृत होते रहे हैं, हो रहे हैं, होते रहेंगे। किंतु पाठकों के हृदय में वैसी कविता ही कविता के रूप में अपनी छवि बनाए रख सकेगी और कविता के रूप में जीवित रहेगी, जिसके कायल थे उपेन्द्रनाथ अश्क। कहीं-कहीं तो ऐसा लगता है कि एक श्रेष्ठ कविता के प्रति जैसा हम सोचते-विचारते हैं, उससे जरा भी हटकर, उपेन्द्रनाथ 'अश्क के विचार नहीं रहे हैं। बल्कि कविता को लेकर जो चिंताएं आज हमारे भीतर शोर मचा रही है, यह चिंता कविता के लिए, बहुआयामी प्रतिभा के धनी रचनाकार उपेन्द्रनाथ 'अश्क' के हृदय में भी था और इसीलिए उन्होंने कविता को परिभाषित करने के क्रम में लिखा भी है कि "मैं कविता में सहजता का कायल हूं। दुरूहता और अस्पष्टता दूसरों में भले ही मुझे रुचिकर लगे, अपने यहां मैं उसे पसंद नहीं करता। काव्य पर ही नहीं, यह बात मेरे सारे साहित्य पर लागू होती हैं। जटिल-से-जटिल अनुभूति को मैं सरल और सहज ढंग से प्रस्तुत करने की कोशिश करता हूं। अपने उन समकालीनों के मुकाबले में, जो सीधी सरल बात को भी कठिन और दुरूह बनाकर पेश करते हैं। मैंने बड़ी-से-बड़ी बात को अत्यंत सरल ढंग से रखने की कोशिश की है।"

बहुआयामी प्रतिभा के धनी उपेन्द्रनाथ अश्क जैसे बहुत थोड़े से रचनाकार हमारे विश्व साहित्य समाज में हैं, जिनकी गद्य रचनाएं भी पाठकों के बीच उतनी ही सराही गईं, जितनी पद्य रचनाएं। जहां एक तरफ चर्चित और प्रशंसित 'कांकड़ा का तेली' कहानी ने अश्क को कथाकारों की श्रेणी में ला खड़ा किया, वहीं पर अश्क की 'दीप जलेगा', 'चांदनी रात और अजगर', 'एक फूल की मुस्कान', 'लकड़वग्घे', 'बिके हुए' जैसी कविता ने 'अश्क' को एक संवेदनशील कवि के रूप में पहचान दी। अश्क की 'दीप जलेगा' कविता पढ़कर उनके एक मित्र ने 'अश्क' को पत्र लिखकर खुशी जाहिर की थी- आपकी 'दीप जलेगा' कविता से मुझे अपनी बीमारी से जूझने की प्रेरणा मिली है।

खेमेवाद में बंटे साहित्यकाहरों ने अश्क को सदैव अपने से अलग रखा। सीमा ओझा ने इन्हीं बातों को छेड़ते हुए वैचारिक चिंतन के लिए एक सवाल उछाला है कि हम पढ़े-लिखे बुद्धिजीवी लोग 'साहित्य- समाज का दर्पण है, को प्रस्तुत करने वाले साहित्यकार, क्या अपनी ही साहित्यिक बिरादरी में एक दूसरे की अनदेखी नहीं करते! क्या अश्क की बहुआयामी सृजनात्मक उपयोगिता को देखते हुए, व्यक्ति अश्क पर न सही, साहित्यकार अश्क पर चर्चा तो होनी ही चाहिए! तमाम उपेक्षाओं के बीच 'अश्क' के भीतर आशा और विश्वास का पतन नहीं हुआ था। क्योंकि ऐसे अमर रचनाकार ही लिख सकता है- "नहीं आज ही केवल हमने दीपक बाले/नहीं आज ही केवल हम इस अंधकार से लड़ने वाले" और तिल-तिल मिटता हूं मैं, लेकिन/नहीं छोड़ता-कर्मक्षेत्र के अपने स्थल को..."

अवसर प्रकाशन, पोस्ट बॉक्स नं. 205, करबिगहिया, पटना, बिहार-800 001, मो. 0 92347 60365



आलेख

सामाजिक-आर्थिक और राजनीतिक संक्रमण की कथा 'मय्यादास की माड़ी'

● डॉ. हेमराज कौशिक

(गतांक से आगे)

रेलगाड़ियों के निर्माण का सारा खर्च भारत के नाम डाला जा रहा है। खर्च बेशक हम कर रहे हैं, पर वह वास्तव में भारत को दिया जाने वाला कर्ज है। भारत मूल पूंजी भी अदा करेगा और उस पर ब्याज भी देगा ... यदि भारत से लाभ उठाना है तो हमें रेल गाड़ियों का जाल ही नहीं बिछाना है सत्ता को भी हाथ में लेना है। हम रेल की पटरियाँ भी बिछाएंगे, सड़कें भी बनाएंगे, जमीन को उपजाऊ बनाने के लिए नहरे भी खोदेंगे, संचार के साधनों का भी विकास करेंगे। हम यह सब काम करेंगे।" (पृ. 200) इस प्रकार अंग्रेजी सम्राज्यवादी शक्तियों ने भारत में रेल का जाल बिछाकर तथा अन्य सुधारात्मक कार्यों के कारण अपनी जड़ों को मजबूत करके भारतीय पूंजी और श्रम के शोषण की नयी से नयी युक्तियाँ सोची। उनकी यह नीति रही कि भारत को इग्लैंड का कृषि क्षेत्र बनाया जाए और भारत के किसान अपनी धरती की उपज उन्हें भेजे और वे स्वंय भी भारत जाकर बड़ी-बड़ी जमीने लेकर खेती करें। चाय, काफी, रबर के बागान लगाएं। वे भली भाँति जानते हैं कि कपास से लदा एक-एक जहाज जो भारत से ब्रिटेन पहुँचता है सोने से लदा होता है, वह कपास नहीं, सफेद सोना है। वे भारत में लघु उद्योगों को नष्ट करते हैं और श्रमिकों का निर्ममता से शोषण करते हैं। एक अध्यापक द्वारा पूछा गया एक प्रश्न इसका साक्षी है -'क्या यह सच है कि मुर्शिदाबाद के बुनकरों के अँगूठे काट डाले गए, ताकि वे हथ करघों पर अपना बारीक कपड़ा नहीं बुन सकें, क्योंकि उनके रहते मेन्चेस्टर के हमारे माल के लिए खुली मंडी नहीं मिल सकेगी। (पृ. 203) भारत की पूंजी और श्रमिकों का शोषण करने वाली ब्रिटिश सत्ता भारतीय श्रीमिकों के प्रति किस प्रकार का दृष्टिकोण होता है उसे मंत्री के कथन से समझा जा सकता है। 'हम यह भी भली भाँति जानते हैं हिन्दुस्तानी लोग कामचोर होते हैं, मुस्तैदी और ईमानदारी से काम नहीं करते। वह भी एक तरह से हमारी मजबूरी है पर साथ ही, जितना सस्ता मजदूर हिन्दुस्तान में मिलता है, उतना सस्ता अफ्रीका में भी नहीं मिलता। उसे थोड़ी सी दाल भात मिल जाए तो वह दिन में बारह -बारह घंटे तक काम करता रह सकता है। (पृ. 198-199) मंत्री के इस कथन से उनकी शोषण मूलक मनोवृति और भारतीय समाज के प्रति निकृष्ट सोच का बोध होता है।

भीष्म साहनी ने इस उपन्यास में एक कालावधि का विश्वसनीय आख्यान प्रस्तुत करते हुए सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया का सूक्ष्म अंकन किया है। भारत में रेल का आगमन महत्त्वपूर्ण घटना होती है। इसे आधुनिकीकरण और तकनीकी प्रगति के प्रतीक के रूप में देखा जा सकता है परन्तु रेल के आगमन पर जनमानस में अनेक प्रकार के अन्तर्द्वन्द्व और अन्तर्विरोध उत्पन्न होते हैं। रेल का आगमन भौतिक विकास और तकनीकी विकास का परिचायक होता है परन्तु परम्परागत भारतीय समाज की सोच, अंधविश्वासों और जड़ मान्यताओं को विभिन्न पात्रों के माध्यम से समझा जा सकता है। इस तकनीकी विकास के संबंध में समाज में उनके प्रकार में सांस्कृतिक प्रश्न और शंकाएं विद्यमान होती हैं। लेखक ने समाज के इन अन्तर्द्वन्द्वों को विभिन्न पात्रों के परस्पर वार्तालाप के माध्यम से प्रस्तुत किया है। बूढ़े-बुजुर्ग शंकित होते हैं कि 'जहाँ जहाँ से रेलगाड़ी गुजरेगी आसपास की जमीन जलकर राख हो जाएगी।' किसानों और जमीदारों की शंकाए है कि लाहौर - लायलपुर में जहां भी रेलगाड़ी चलने लगी है, गाय भैंस का दूध सूखने लगा है। जहां-जहां रेल गई है, मवेशियों का दूध आधा रह गया है। (पृ. 175) इसी भाँति जाति विधान और वर्ग भेद से संपृक्त प्रश्न भी उठाए गए हैं - भंगी, चूड़ा चमार भी उसी गाड़ी में बैठेगा और रईस-साहूकार भी उसी में बैठेगा। नेम धर्म भी कोई चीज है या नहीं। साहूकार भी उसी में और उसका देनदार भी उसी में। मोची नाई भी उसी में सेठ साहूकार की क्या रह जाएगी? भीष्म साहनी यहाँ यह भी स्पष्ट करते हैं कि प्रश्न यहाँ धर्म का नहीं होता अपितु इसकी आड़ में विषेश सुविधा और विशेषाधिकार की बात भी प्रमुख होती है - एक ही रफतार पर चलती गाड़ी सेठ साहूकार को भी अपने ठिकाने पर उतनी देर में पहुँचाएगी जितनी देर में भंगी चमार का छांटे की तमीज ही नहीं रह जाएगी। (पृ. 176) अंग्रेजों ने भारत में रेल विस्तार अपने अधिकाधिक धनार्जन और व्यापरिक उद्देश्यों की सिद्धि के लिए किया था परन्तु इसके साथ जिन सामाजिक और

सांस्कृतिक सवालों को शंकाओं और निजी तर्कों के द्वारा उठाया है उससे यह भौतिक विकास प्रकारान्तर से सामाजिक समता और सामाजिक न्याय की दिशा में भी अग्रसर होता है। विशेष वर्ग की विशिष्टता और विशेषाधिकार को यह विकास चुनौती देता है।

भीष्म साहनी ने प्रस्तुत कृति में पुरोहितवाद, कर्मकाण्ड और परम्परागत जड़ आस्थाओं और अंधविश्वासों की विकृतियों को रामदास पुरोहित के माध्यम से व्यंजित की है। उसका समाज में किसी प्रकार का सम्मान नहीं है। उसका निजी जीवन आदर्शों और नैतिक मूल्यों से हीन है। ठिगने कद का पुरोहित चार-चार शादियाँ रचाता है। उसकी तीन पत्नियों की एक के बाद एक की मृत्यु होती है और साठ वर्ष की आयु में छब्बीस सत्ताईस वर्ष की युवती से विवाह करता है। वह स्वंय निःसंतान है परन्तु दूसरे के जीवन मरण संबंधी भविष्यवाणी करता है। परन्तु अपने जीवन के संबंध में कोई भविष्यवाणी नहीं कर पाता है। वह दीवान धनपत के समक्ष नदी की ओर से आते हुए मनीराम के संबंध में भविष्यवाणी करता है। मनीराम का वक्त आ गया है गरीब नवाज। इसी प्रकार विधवा गोमा के संबंध में भी भविष्यवाणी करता है। पुरोहित को ऐसे व्यक्ति के रूप में चित्रित किया गया है जो किसी के बने काम को बिगाड़ सकता है और बिगड़े हुए काम को बना सकता है। उसकी की चतुराई और षड्यंत्र के कारण ही धनपत के पगलैट और रोगी बेटे के साथ वीरां की बेटी रुकमणी की शादी होती है और उसे गालियां भी पड़ती है परन्तु उसके ऊपर किसी प्रकार का प्रभाव नहीं पड़ता। वह जानता है कि जड़ मान्यताओं, अंध विश्वासों और परम्परागत संस्कारों से बंधा समाज उसका कुछ नहीं बिगाड़ पायेगा। लोगों की मान्यता है कि पुरोहित पर हाथ उठाने वाला स्वंय ही नरक को जाता है। रुकमणी की माँ वीरा जब उसे क्रोधावेग में कहती है 'जिसने मेरी बेटी को कुंए में झोंका है, वह तिलतिल कर मरे उसे बावले कुते काटे, उसे फनियर सांप डस डस जाए (पृ. 73)। वीरां के क्रोध के शांत होने पर वह ब्रह्मास्त्र चलाता है 'माड़ी में रुकमणी राज करेगी। कल्ला शरीर का दुबला है पर है तो माड़ी का कुंवर, बडे दीवान जी की आँखों का तारा है, लाहौर का हकीम उसका इलाज कर रहा है देखते देखते वो नौ व नौ हो जाएगा (पृ. 75) धर्म और कर्मकाण्ड का कार्य करने वाले रामदास पुरोहित में किसी भी प्रकार लोकमंगल की भावना नहीं है। विधवा गोमा की मृत्यु होने पर वह उसके सभी संस्कार करवाता है। वही कोठरी में मरी हुई गोमा को सबसे पहले देखता है। अपने जीवन काल में जैसे कैसे विधवा गोमा ने जो पूंजी जमा कर रखी थी और कोठरी में हांडी में दबा रखी थी, उसे पुरोहित हजम कर जाता है। सभी इस रहस्य को समझते हैं। सारा संदेह भी उसी पर होता है। परन्तु कोई उससे नहीं कहता। सभी जानते हैं। मुआ ब्राह्मण अब पाठ करता फिरता है, विधवा गोमा की हांडी निकालकर सब कुछ हजम कर गया है पर उसकी पीठ पीछे बुरा भला कहने के बावजूद उसके, मुँह पर कोई कुछ नहीं कहता। क्या मालूम मुआ ब्राह्मण 'सराप' ही दे डाले। (पृ. 15) इस प्रकार भीष्म साहनी ने भारतीय समाज में व्याप्त रूढ़िवादिता, अंधश्रद्धा और धर्म के नाम पर पंडे पुरोहितों द्वारा किए जाने वाले निकृष्ट कृत्यों को अनावृत किया है। अंग्रेजी सत्ता के दौरान नवीन चेतना लाने के लिए भारत में अनेक समाज सुधार आन्दोलन सक्रिय थे। इस दिशा में नारी शिक्षा आन्दोलन भी महत्त्वपूर्ण था। भीष्म साहनी ने प्रस्तुत कृति में नारी शिक्षा, नारी स्वातंत्र्य और नारी स्वावलम्बन से सम्बद्ध प्रश्नों को उठाया है। सामंतीय समाज में नारी शिक्षा को कोई महत्व नहीं दिया जाता था सामंतीय जीवन यापन करने वाले दीवानों की बहू सामंतीय जड़ मूल्यों और वर्जनाओं को तोड़कर शिक्षा अर्जित करने के लिए वानप्रस्थी जी की पाठशाला में दृढ़ संकल्प और स्वतंत्र निर्णय से नाम लिखवाती है। वानप्रस्थी जी अपने जीवन को नारी शिक्षा के लिए समर्पित करते हैं। उनकी बेटी सुमित्रा का पति इसलिए मर जाता है क्योंकि उसके रुग्ण होने की सूचना जिन पत्रों के माध्यम से दी जाती है, उन्हें सुमित्रा अशिक्षित होने के कारण नहीं पड़ पाती। तीन पत्र प्राप्त होते हैं, परन्तु वह उन्हें घर में रखती जाती है। कई दिनों के अनंतर पिता आकर उन पत्रों को पढ़ते हैं और दामाद की बीमारी का समाचार मिलता है। वे उसके उपचार के लिए बजीरावाद जाते हैं परन्तु तब तक उनकी मृत्यु हो चुकी होती है। वानप्रस्थी को बेटी के अशिक्षित होने का पश्चाताप होता है। वह यौवनावस्था में ही विधवा हो जाती है। पति के देहावसान का उसे गहरा आघात लगता है और वह दिक्रोग से ग्रस्त होती है और बार-बार यही कहती है 'मैंने भी दो अक्षर पढ़ लिए होते तो क्या मालूम वह बच ही जाते'। सुमित्रा की मरणासन्न स्थिति में वानपस्थी मन ही मन प्रतिज्ञा करते हैं कि वे लड़िकियों के लिए पाठशाला खोलेंगे। वे सोचते है कि 'जो काम करने लगा हूँ, उससे मेरी बेटी तो न पढ़ पाएगी पर किसी की बेटी तो पढ़ेगी'। अपने इस दृड़ संकल्प की

भीष्म साहनी ने प्रस्तुत कृति में पुरोहितवाद, कर्मकाण्ड और परम्परागत जड़ आस्थाओं और अंधविश्वासों की विकृतियों को रामदास पुरोहित के माध्यम से व्यंजित की है। उसका समाज में किसी प्रकार का सम्मान नहीं है। उसका निजी जीवन आदर्शों और नैतिक मूल्यों से हीन है। ठिगने कद का पुरोहित चार-चार शादियाँ रचाता है। उसकी तीन पत्नियों की एक के बाद एक की मृत्यु होती है और साठ वर्ष की आयु में छब्बीस सत्ताईस वर्ष की युवती से विवाह करता है। वह स्वयं निःसंतान है परन्तु दूसरे के जीवन मरण संबंधी भविष्यवाणी करता है। परन्तु अपने जीवन के संबंध में कोई भविष्यवाणी नहीं कर पाता है।

सिद्धि के लिए अनेक विरोधों के बावजूद पुत्री पाठशाला की स्थापना करते हैं। दीवान हरनारायण की विधवा बेटी वीरां की बेटी रुकमणी सबसे पहले उनकी पाठशाला में प्रवेश लेती है और धीरे धीरे अन्य लड़कियाँ भी उसकी प्रेरणा से पढ़ने के लिए आती हैं। कल्ले का भाई मंझला रुकमणी के पाठशाला में पढ़ने का विरोध करता है उसे उसका पढ़ना सामंतीय समाज में स्थापित मर्यादाओं के विपरीत लगता है। उसे रुकमणी का खुले वातावरण में निकलना अच्छा नहीं लगता। उसके मित्र भी उस पर व्यंग्यात्मक प्रहार करते हैं। मंझला रुकमणी का प्रतिकार करता हुआ कहता है 'बाप दादा के नाम पर हम कालिख नहीं पोतने देंगे। कोई घर के बाहर कदम रखकर तो देखे। मैं बोटी-बोटी काट डालूँगा। मैं टांगे चीर के रख दूंगा। (पृ0 237) वह अपने विक्षिप्त और रूग्ण ज्येष्ठ भ्राता कल्ला का और उसकी पत्नी रुकमणी का तथा अततः अपने पिता दीवान धनपत का जीना दुभर कर देता है। परन्तु रुकमणी कल्ला से धोखे से विवाह के पश्चात् माड़ी के इतिहास तौर तरीकों और परिवार के कृत्यों को धीरे-धीरे समझती है। आर्य समाज के आन्दोलन से प्रभावित होकर शिक्षा प्राप्त करना चाहती है। सामंतीय समाज की जड़ताओं और वर्जनाओं को तोड़कर आर्य समाज द्वारा स्थापित पाठशाला में अपना नाम लिखवाती है। रुकमणी के विद्यालय में प्रवेश लेने तथा प्रतिदिन पढ़ने जाने के प्रकरण को लेकर मंझला भाई, और उसके मित्र और कई अन्य रूढ़िवादी लोग उसका विरोध करते हैं। रामजगया कहता है 'बड़ी ढीठ लड़की है भाई। मंझले ने लाख समझााया पर नहीं मानी। मेरे घर कोई लड़की ऐसा करती तो मैं सचमुच टांगे तोड़ देता।(पृ. 271) कुबड़े हलवाई की भी इसी तरह की उद्विग्नता होती है कि कभी ऐसे भी बड़े घर की बेटियाँ जगहंसाई करने बाहर निकलती है। उन्हे रुकमणी का शिक्षा ग्रहण करने के लिए वानप्रस्थी की पाठशाला में नाम लिखवाना लड़की की उद्ण्डता और बेशर्मी प्रतीत होती है और परम्परागत मान्यताओं की अवहेलना। वे वानप्रस्थी के विद्यालय को बंद कराने की भी चुनौती देते हैं। परन्तु रुकमणी अपने निर्णय पर दृढ़ रहती है क्योंकि उसका यह निर्णय दुःख और क्लेश में छटपटाने की यातना की गहराइयों में से उभरकर आया है, न जाने कितने दिन तक इसके दिल को मथता रहा है। (पृ0 266)

लेखक ने आर्य समाज के नारी शिक्षा आन्दोलन को औपन्यासिक कथ्य का सृजनात्मक अंग बनाते हए यह स्पष्ट किया है कि सांमतीय मूल्यों वाले समाज में किस प्रकार नारी शिक्षा के प्रसार के लिए वैयक्तिक और सामाजिक स्तर पर विरोधों और बाधाओं का सामना करना पड़ता है। तत्कालीन रूढ़िग्रस्त समाज में नारी शिक्षा के प्रसार के लिए पुत्री पाठशाला का खोलना और उसमें लड़कियों को शिक्षा के लिए प्रोत्साहित करना कितना दुष्कर कार्य था, वानप्रस्थी जी का प्रतिरोध प्रत्येक स्तर पर किया जाता है। सामंतीय समाज की संकीर्ण सोच और पुरुष के मिथ्या दंभ और अंहकार को इससे चोट लगती है। उन्हें एक स्त्री का शिक्षा प्राप्त करना अपमान जनक लगता है। इसलिए वे वानप्रस्थी जी की बुरी तरह पिटाई करते हैं। परन्तु उनका दृढ़ संकल्प और उत्साह इन हिंसात्मक प्रतिरोध के बावजूद खण्डित नहीं होता। वे प्रबल उत्साह और शक्ति से रुकमणी को लाहौर में परीक्षा दिलवाते हैं और उसके उतीर्ण होने के अनंतर अपने ही विद्यालय में अध्यापिका लगवाते हैं और बाद में वही उस विद्यालय की प्रधानाध्यापिका बनती है। इस कार्य में भागसुद्धि और लेखराज उसके सहयोगी होते हैं। उसका पति कल्ला भी शारीरिक रूप में अक्षम और मानसिक रूप में विक्षिप्ता की सी स्थिति में होते हुए भी पत्नी की स्थिति को समझता है और उसकी सुरक्षा के लिए घर से स्कूल तक उसके साथ जाता है। वह अनेक विरोधों के बावजूद शिक्षा ग्रहण करती है और बाद में स्वयं शिक्षिका बनकर अनेक कठिनाइयों का सामना करते हुए वानप्रस्थी जी के बालिका शिक्षा के संकल्प को पूर्ण करने में सहायक बनती है। दीवान धनपत की मृत्यु के बीस वर्ष के अनंतर वह माड़ी छोड़कर स्कूल के निकट दो कमरों के मकान में रहती है और स्कूल की मुख्याध्यापिका बनकर विद्यालय का संचालन करती है। इस मध्य कल्ले में रुकमणी के प्रति आत्मीयता का भाव जाग्रत होता है। वह उसके प्रति पूर्णतः समर्पित हो जाता है और रूक्मो भी उसका हर तरह से ख्याल रखती है। उन दोनों में शारीरिक असमानता होते हुए भी परस्पर आत्मीयता प्रगाढ़ हो जाती है वस्तुतः इन्सान का शरीर भूखा नहीं होता, भूखी तो उसकी आत्मा होती है। रुकमणी उसे लाहौर ले जाकर उपचार के लिए अस्पताल में भर्ती करवाती है और स्वंय अमरनाथ दर्शन के लिए प्रस्थान करती है। परन्तु इस तीर्थ यात्रा में उसे रुग्ण पति का बार-बार स्मरण आता है। उसे पश्चाताप होता है और अकेले छोड़ने का पाप बोध भी। एक चट्टान पर बैठी रुकमणी पति की चिंताओं में निमग्न होती है। उसी समय उसे अचानक ऐसा प्रतीत होता है जैसे झील के उस पार कृष्ण नृत्य करते हुए उसे बुला रहे हैं फिर उसे ऐसा प्रतीत होता है जैसे कृष्ण नहीं अपितु कल्ले नृत्य कर रहा है और उसे ढूँढ रहा है। वह जैसे ही उसकी ओर बढ़ती है नीचे झील में गिरती है और उसकी मृत्यु हो जाती है। उसका पति बाद में रोग मुक्त हो जाता है। उपन्यास में रुकमणी के न मिलने पर पूर्व स्थिति में पहुँच जाता है। उपन्यास में रुकमणी और कल्ला का प्रसंग करुणासिक्त और मार्मिक है और क्रांतिकारी नारी चरित्र के रूप में विकसित किया है और उसकी भूमिका तत्कालीन समाज में क्रांतिकारी होती है परन्तु उसका अंत एक प्रगतिशील चेतना संपन्न लेखक की दृष्टि से अस्वाभाविक प्रतीत होता है। प्रस्तुत उपन्यास में कुछ अन्य नारी पात्रों की सृष्टि की गई है जिनमें मनसाराम की पत्नी ईशार देई उसकी बेटी पुष्पा, मय्यादास की पत्नी देवकी आदि नारियाँ परम्परागत नारी के रूप

हैं। ईशारदेई भाग्य के विधान पर भरोसा करने वाली नारी है। धनपत अपने पगलेट बेटे की शादी उसकी छोटी बेटी के साथ करने का षड्यंत्र रचता है तो वह अपनी परम्परागत सोच के कारण किसी प्रकार का प्रतिवाद नहीं कर पाती। उसका पति इस विकट परिस्थिति में अपना धैर्य खो बैठता है तो वह उसे धैर्य प्रदान करती है। उसकी बेटी पुष्पा का पति विवाह के अनंतर मद्यपी और दुश्चरित्र निकलता है तो भी वह अपनी बेटी को पति के साथ रहने की सीख देती है और पति को वश में रखने के तरीके समझाती है। दीवान धनपत पक्षाघात के कारण असहाय अवस्था में होता है पुष्पा पति की आज्ञानुसार जमीन के आवश्यक कागजात और आभूषण उसी के सामने उठा लेती है। मय्यादास की पत्नी देवकी नितांत श्रद्धा संपन्न परम्परागत नारी है जिसमें नारी सुलभ करूणा और परोपकारिता की भावना विद्यमान है। दान पुण्य, साधु संतों की सेवा, मंदिर गुरुद्वारों दोनों में आस्था रखने वाली नारी लोकमंगल की भावना के कारण ही वह ताल बनाने का कार्य प्रारंम्भ करवाती है। वह पूर्ण नहीं हो पाता। वीरांवाली, गोमा आदि नारियों के माध्यम से वैधव्य जीवन की पीड़ा को व्यंजित किया गया है। इन परम्परागत नारियों में भाग सुद्धि को लेखक ने एक सशक्त और विद्रोही चरित्र के रूप में उभारा है जो किसी से नहीं दबती। किसी भी सच्चाई को किसी के सामने कहने में भयभीत नहीं होती। लेखक ने उसके भयमुक्त और विद्रोही चरित्र की पृष्ठभूमि को प्रस्तुत किया है और उसकी विषम परिस्थितियों को इसके लिए उत्तरदायी माना है। दीवान धनपत, उसके मंझले बेटे घनश्याम और छोटे बेटे हुकुमतराय सभी में धन सम्पति प्राप्ति की लिप्सा और आधिपत्य की चाह है। इसकी प्राप्ति के लिए उनके लिए पारिवारिक रक्त संबंधों और मानवीय संबंधों का कोई महत्व नहीं है । धनपत के बेटों में भी धन और अधिकार प्राप्ति के लिए परस्पर कलह उत्पन्न होती है और पारिवारिक विघटन होता है। धनपत का मंझला बेटा अपने पगलेट भाई कल्ला और उसकी पत्नी के प्रति ईर्ष्या-द्वेष रखता है। उसे अपने मित्रों के कथन से संदेह और विश्वास होने लगता है कि एक दिन बड़ा भाई बीमारी के उपचार के पश्चात् स्वस्थ हो जाएगा और बाल बच्चों सहित वह बड़ा दीवान बन जाएगा। उसकी अपने रूग्ण और अशक्त और विक्षिप्त भाई वानप्रस्थी की पाठशाला में शिक्षा ग्रहण करने लगती है तो वह विरोध करता है और माड़ी में उत्पात मचाता है। जब उसे ज्ञात होता है कि धनपत उसे पालकी में बिठाकर स्कूल भेजता है तो उसकी क्रोधाग्नि तीव्र हो जाती है और अपने पिता से कहता है 'रुकमणी को पालकी में स्कूल भेजते हैं? तुम्हारी मां लगती है, क्या? क्रोधावेग में वह कहता है 'मैं इस माड़ी की ईंट-से-ईंट बजा दूँगा। मेरा हिस्सा दो। बाँटकर अभी दो। मैं सब हरामियों को देख लूँगा। आज ही कल्ले को लात मारकर बाहर नहीं किया तो मेरा नाम नहीं' (पृ. 297) इस घटना से धनपत पक्षाघात की सी स्थिति में पहुंच जाता है उसका शरीर करीब- करीब नकारा हो जाता है। इस स्थिति में स्वयं उसे अपनी देह से दुर्गन्ध आने लगती है और उसका पीछा ही नहीं छोड़ती है । एक समय था जब उससे सभी भयभीत रहते थे । आज वह स्वयं ही पक्षाघात के कारण असमर्थ और अशक्त अनुभव करके अपने आप को लुटता देखता है। उसकी बंडी से मंझले की पत्नी पुष्पा तिजोरी की चाबी निकालकर सारे आभूषण और आवश्यक कागज निकालती है और पुनः चाबी को यथावत वहीं रखती है। इस प्रकार जैसे मनसाराम की बेटी पुष्पा अपने पिता के साथ किए अपमान का प्रतिशोध लेती है । पक्षाघात से पीड़ित श्वसुर केवल बै बै करता रह जाता है। इस आघात को सहन न करने के कारण उसकी मृत्यु हो जाती है। उपन्यास के अंत में हुकूमतराय भी जन-आन्दोलन के समक्ष असहाय हो जाता है। नाना प्रकार के भ्रमों का शिकार होता है । तिलकराज आजाद उसे चुनौती देता है जिससे वह चेतन अचेतन अवस्था में भयाक्रांत रहता है और उस चुनौती से स्वप्नावस्था में भी विचलित हो उठता है । राजनीतिक चेतना की दृष्टि से यह एक महत्त्वपूर्ण औपन्यासिक कृति है । इसमें सिक्ख अमलदारी के पराभव के स्पष्ट कारण विद्यमान हैं। एक और ब्रिटिश उपनिवेशवादी शासकों की कुट नीतियाँ हैं दूसरी और खालसा सत्ता के भ्रष्ट सेनापति जो घोर निजी स्वार्थों की सिद्धि के लिए अपनी ही सेना के पराजय के कारण बनते हैं । अंग्रेजी सत्ता की कुटनीतियों और सामान्यजन के प्रति किए जाने वाल उत्पीड़न और शोषण के विरुद्ध भारतीय देश भक्त युवक दृढ़ संकल्प के साथ अग्रसर होते हैं, अपने ही देश के चाटुकार, घोर स्वार्थी, देशद्रोही तथा अंग्रेज भक्त लागों से लोहा लेना पड़ता है । ध नपतराय हुकूमतराय जैसे अंग्रेज परस्त सामंत अंग्रेजी सत्ता की चाटुकारिता इसलिए करते हैं ताकि वे धनार्जन कर सकें तथा रायबहादुरी की पदवी प्राप्त कर सकें। हुकूमतराय अंग्रेजी सत्ता के साथ मिलकर भारत के स्वतंत्रता आन्दोलन को दमित करने में उनका सहायक बनता है । परन्तु उपन्यास के अंत में उनकी साजिशों और दमन के विरुद्ध तिलकराज आजाद जैसे देश भक्त सामने आते हैं और अन्याय के विरुद्ध चुनौती देते हैं। इस प्रकार यह उपन्यास एक व्यवस्था से दूसरी व्यवस्था में सामाजिकार्थिक और राजनीतिक संक्रमण की कथा प्रस्तुत करता है । सामाजिक राजनीतिक जीवन के यथार्थ को जिस सर्जनात्मक प्रतिभा और कलात्मक विवेक के साथ प्रस्तुत किया है उससे यह कृति हिन्दी के श्रेष्ठ उपन्यासों में अपना विशिश्ट स्थान बनाती है। कथा संयोजन, चरित्र सृष्टि, परिवेश की सघन प्रस्तुति और जीवन दृष्टि के कारण यह रचना भीष्म साहनी की वैचारिक दृढ़ता और कलात्मक प्रौढ़ता की प्रमाण है ।

गांव व डाकघर बातल, तहसील अर्की
जिला सोलन हि.प्र.-173208 मो. 94180-10646

कहानी

फर्ज

● आचार्य डॉ. पी.सी. कौंडल

एक दिन अचानक राजन को दिल का दौरा पड़ा जिससे वह हमेशा-हमेशा के लिए मौत की गहरी नींद सो गया। राजन की मौत का समाचार सारे गाँव में जंगल की आग की तरह फैल गया। राजन के दोस्त नतीम को यह समाचार मिला तो वह रोता, बिलखता लड़खड़ाते कदमों से राजन के घर पहुँचा। थोड़ी देर में गाँव के सारे लोग राजन के घर पर एकत्रित हो गए। नतीम ने देखा कि राजन की पत्नी बाहर बरामदे में बेहोश पड़ी थी। बेटा सुरेश और बेटी नीलू माँ की बगल में बैठे सिसक-सिसक कर रो रहे थे। रो-रो कर उनकी आँखें लाल हो गई थी। नतीम से यह देखा न गया। उसने जाकर दोनों बच्चों को अपने गले से लगा लिया। सुरेश नौ वर्ष का था और नीलू छः वर्ष की। दोनों नतीम को देखकर घुट-घुट कर रोने लगे। रोते हुए सुरेश ने कहा, ''अंकल! आज पापा हमसे क्यों बात नहीं करते ? आज अचानक ये इतनी गहरी नींद में क्यों सो गए हैं ? इसी बीच नीलू बोली, हाँ अंकल ! आप जगाओ न पापा को। हमारे कहने से तो पापा उठ नहीं रहे। अगर आप कहेगें न अंकल, तो पापा जरुर उठ जाएंगे। जगाओ न इन्हे प्लीज।''

दोनों बच्चों की बातें सुनकर नतीम का कलेजा मुँह को आने लगा। उसने एक बार फिर उन दोनों को गले से लगा लिया। उसकी आंखों से आंसूओं की अविरल धारा बहने लगी। वह रुन्धे गले से बोला, 'राजन! मेरे दोस्त! आज अचानक तुमने क्यों हमसे मुँह मोड़ लिया ? अब कैसे समझाऊ इन मासूम बच्चों को ? क्या जबाब दूँ मैं इन्हें ?"

इतने में राजन की पत्नी वनिता को थोड़ा होश आ गया। उसने फटी-फटी निगाहों से चारों ओर नजर दौड़ाई। उसने गाँव के समस्त महिलाओं-पुरुषों को वहाँ पर एकत्रित हुए देखा। वातावरण में सन्नाटा छाया हुआ था। सामने नतीम खड़ा रो रहा था। सुरेश और नीलू उसके साथ चिपके हुए थे और नतीम उनको पुचकार रहा था। यह सब देखकर वनिता की आंखें एक बार फिर आँसुओं से भर आई और गला रुन्ध गया। थोड़ी देर टिक कर वह लड़खड़ाती जबान से बोली, "नतीम! आज तुम्हारा दोस्त रुठ गया है हमसे। तुम कोशिश करके देखो तो, शायद तुम्हारा कहना मान जाए ?''

वनिता की बातें सुनकर नतीम का कलेजा छलनी-छलनी हो गया। अचानक उसके मुख से निकला '' भा ....भी ।''

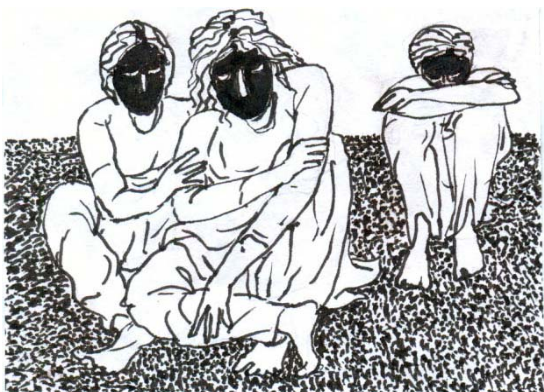
थोड़ी देर नतीम खूब रोया, फिर अपने आँसू पोंछते हुए बोला, भाभी जान! यह सब कैसे हो गया ?''

अपना बोझिल हाथ उठाते हुए वनिता ने कहा, '' कुछ भी पता नहीं चला नतीम, क्या हुआ और कैसे हुआ ? बस यूं समझ लो कि कुछ ही क्षणों में मेरा संसार उजड़ गया। कैसे जी पाऊंगी अब मैं ? कैसे समझाऊं इन मासूम बच्चों को ? वनिता ने डबडबाई नजरों से चारों ओर देखते हुए कहा।

"पने आप को सम्भालो भाभी जान ! शायद अल्लाह को यही मन्जूर था।''

वनिता थोड़ा उठकर बैठ गई। तब सब एकत्रित हुए लोग उसे साँत्वना देने के लिए थोड़ा आगे बढ़े। उसके सिर के बाल बिखरे पड़े थे। आँखे लाल और डबडबाई सी हो गई थी उसकी, और लड़खड़ाकर रह गई थी उसकी जबान। वहाँ पर आये सब लोगों के चेहरों पर मुस्कराहट का नामोनिशान भी न था। सब शोक में डूबे चुपचाप खड़े थे राजन के मृत शरीर के पास। वनिता को छटपटाते हुए देखकर सब सुन्न हो कर रह गये थे। किसी को कुछ भी कह पाने की हिम्मत नहीं हो पा रही थी। कुछ लोग राजन के अन्तिम संस्कार के लिए लकड़ी की अर्थी तैयार करने में लगे हुए थे। आसपास खड़े लोगों की आँखों में वनिता की हालत और बच्चों को रोते बिलखते देखकर आँसू भर आये थे।

एकाएक नतीम ने कहा, ''भाभी जान ! आप तो स्वयं जानती हैं कि यह संसार सभी को छोड़ जाना है एक दिन। आज मेरा दोस्त राजन चला गया, कल हम चले जाएंगे। संसार की रीत



यही है भाभी जान। उसे रोक पाना न आपके हाथ में है, न मेरे और न किसी और के। यह सब अल्लाह की मर्जी पर निर्भर करता है।

इतने में अर्थी तैयार हो गई। दाह संस्कार के लिए लकड़ी का इन्तजाम भी कर लिया गया परन्तु किसी को वनिता के सामने बरामदे में पड़ी राजन की लाश को उठाने का साहस नहीं हो पा रहा था। आखिर गाँव के एक बुजुर्ग ने नतीम को ही यह सब करने के लिए कहा क्यों कि वह जानता था कि नतीम राजन का दोस्त था और वही वनिता को समझा सकता है। थोड़ा साहस करके नतीम ने कहा, ''भाभी जान! जो होना था सो हो चुका है, अब तो आपको अपने दिल पर पत्थर ही रखना होगा ताकि जिन्दगी के बाकी दिन आसानी से कट जाए।''

नतीम की बातें सुनकर वनिता फिर से सिसक-सिसक कर रोने लगी। नतीम ने फिर कहा, '' भाभी जान! अगर आप इसी तरह रोती रहोगी तो आपका स्वास्थ्य भी बिगड़ सकता है। अब तो आपको धीरज रखना होगा। देखो ये बच्चे भी तो आपको रोते हुए देख कर रोते ही जा रहे हैं। जब तक आप रोना बन्द नहीं करेंगी तब तक ये भी चुप नहीं होगें।''

"नतीम कहाँ से लाऊँ वो पत्थर जो मेरे दिल को थाम सके? कहाँ से लाऊँ वो धीरज जो मेरे दिल को समझा सके और कहाँ से लाऊँ मैं वो शब्द जिनके द्वारा मैं इन मासूमों के स्वालों का जवाब दे पाऊँ। अब तो नतीम भाई ! रोना ही लिखा है मेरे नसीब में'' वनिता ने लड़खड़ाती जबान से कहा।

''भाभी जान ! ये तो बच्चें हैं, इन्हे क्या मालूम ? तुम रोती रहोगी तो तुम्हे देखकर ये भी रोते रहेगें। अगर थोड़ा अपने आप को सम्भालोगी तो धीरे-धीरे ये बच्चे भी सम्भल जाऐगें। तुम हर लिहाज से समझदार हो भाभी जान। तुम यह भी जानती हो कि राजन का अन्तिम संस्कार करना भी शेष है और यहाँ पर एकत्रित हुए सब लोग तुम्हारी तरफ ही देख रहे हैं जबकि अन्तिम यात्रा की तैयारी पूरी कर ली गई है।''

''नतीम भाई ! भला किन आँखों से मैं उस अन्तिम यात्रा को देख पाऊंगी ? कहाँ से लाऊँ वो आँखें जो ये सब देख पाएं ? इससे पहले कि तुम राजन की अन्तिम यात्रा ले जाओ, मेरी अर्थी भी तैयार करवा लो नतीम...... मेरी अर्थी भी तैयार करवा लो। मुझसे सहन नही हो पाएगा यह सब। राजन के बगैर मैं जिन्दा नहीं रह सकती ...... नहीं रह सकती।'' अपने हाथ-पांव पटक कर विलाप करते हुए वनिता ने कहा।

''यह तो कोई बात नही बनी भाभी जान ! भला कब तक इस तरह रोती रहोगी तुम? आखिर अन्तिम संस्कार तो करना ही होगा न, इसे तो रोका नहीं जा सकता।"

''नहीं...नहीं... नहीं ! अन्तिम संस्कार की बात न करो तुम। जब तक इन्हे होश नही आ जाता, मैं चौन से नहीं बैठ पाऊँगी। ''वनिता ने दहाड़ें मारते हुए कहा। थोड़ी देर चुप रहने के पश्चात नतीम ने कहा, ''वह समय अब कभी नहीं आएगा भाभी जान ! सब जानते हैं कि जिस शरीर से आत्मा एक बार निकल जाती है, दोबारा फिर कभी भी उसमें लौटकर नहीं आती। तुम अपने आप को झूठी तस्सली मत दो भाभी जान।''

''झूठी तसल्ली तो आप मुझे दे रहे हैं। माफ करना नतीम, मैं जानते हुए भी उस घड़ी का सामना नहीं कर सकती जब आप मेरे राजन को उठाकर ले जाओगे। जब तक ये मेरे पास हैं तो बस मेरे हैं मेरे।''

थोड़ी देर सोचकर नतीम ने आस-पास खड़े लोगों को इशारे से कहा कि वे राजन की लाश को उठाकर अर्थी में रख दें और चलने की तैयारी करें। दो चार आदमी आगे बढ़े और लाश को उठाने लगे। उन्हे देखते ही वनिता उन पर टूट पड़ी और बोली, ''खबरदार, अगर किसी नें मेरे राजन को हाथ भी लगाया तो।''

सब सहम कर रह गये। इस प्रकार आखिर कब तक वनिता के रोने-धोने का इन्तजार करते रहेगें। पूरा दिन बीत चुका था। सूरज डूबने वाला था। काफी समझाने, बुझाने पर भी जब वनिता नहीं मानी तो विवश होकर जबरदस्ती से राजन की लाश को उठाना पड़ा। तब वनिता शेरनी की तरह दहाड़ी थी। विशेष तौर पर नतीम को कड़वे और कठोर शब्दों में बोली, ''तुम होते कौन हो मेरे राजन को ले जाने वाले? मैं देख लूगीं तुम्हे। तुम झूठे हो, पाखण्डी हो, तुम्हारी दोस्ती झूठी है, पाखण्ड है।''

नतीम वनिता की बातों को सुनता गया और सहन करता गया। वह जानता था कि वनिता इस सदमें से बड़ी मुश्किल से बाहर आ पाएगी। वह अपना दिमागी सन्तुलन खो चुकी थी। कुछ लोगों ने वनिता को तब तक रोके रखा जब तक राजन की अन्तिम यात्रा घर से दूर नहीं चली गई। उस वक्त का वह रोन-धोने का दृश्य रोंगटे खड़े कर देने वाला था।

नतीम ने वनिता के रोने-धोने की कोई परवाह नहीं की। राजन के बेटे सुरेश को वह अपने कन्धों पर उठाकर ले गया ताकि

उससे राजन की चिता को अग्नि दिलवाई जा सके। वनिता पीछे से रोती बिलखती छटपटाती रही, परन्तु गाँव की सब महिलाओं ने विभिन्न प्रकार से वनिता को समझाने का प्रयास किया।

श्मशान घाट पहुँच कर राजन के पार्थिव शरीर को चिता पर रख दिया और चिता को एक ओर से राजन के बेटे सुरेश से अग्नि दिलवाई गई तथा दूसरी ओर से नतीम ने स्वंय अग्नि दी। नतीम राजन को मात्र दोस्त ही नहीं बल्कि अपना भाई समान समझता था। राजन की मृत्यु पर उसे बहुत दुःख हुआ था। नतीम और राजन दोनों एक-दूसरे के परिवार को अपने परिवार का हिस्सा समझते थे।

दाह संस्कार के पश्चात सब लोग अपने-अपने घरों को चले गए। परन्तु राजन के कुछ करीबी रिश्तेदार और नतीम वनिता के घर चले गये। श्मशान घाट से दाह संस्कार करने के पश्चात आये लोगों को देखकर वनिता जो बरामदें में गाँव की औरतों से घिरी हुई थी, राजन की याद में फिर से रोने लग पड़ी। नतीम ने तब कहा, ''भाभी जान ! आप इसी तरह रोती रहोगी तो आपके स्वास्थ्य पर भी इसका बुरा प्रभाव पड़ सकता है।''

वहाँ पर समस्त औरतों ने वनिता को बहुत समझाया। इसी बीच नतीम ने वनिता से माफी मांगते हुए कहा, ''भाभी जान! मुझे माफ कर दो क्योंकि राजन के पार्थिव शरीर को मैनें आपके मना करने के बाबजूद भी जबरदस्ती उठवाया था। मगर भाभी जान ! इसके सिवाय और कोई चारा भी तो नहीं था, क्योंकि तुम मान ही नहीं रही थी ।''

आखिर वनिता समझदार थी। वह जान गई थी कि नतीम ने मजबूर होकर उसके रोने-धोने की परवाह न करते हुए राजन की लाश को अन्तिम संस्कार के लिए जबरदस्ती उठवा कर समझदारी का ही परिचय दिया था। बावजूद इसके वनिता शर्मिन्दा थी अपने आप पर कि उसने जो कड़वी और कठोर बातें नतीम को कही थी, वो उसे नहीं कहनी चाहिए थी।

आखिर वनिता समझदार थी। वह जान गई थी कि नतीम ने मजबूर होकर उसके रोने-धोने की परवाह न करते हुए राजन की लाश को अन्तिम संस्कार के लिए जबरदस्ती उठवा कर समझदारी का ही परिचय दिया था। बावजूद इसके वनिता शर्मिन्दा थी अपने आप पर कि उसने जो कड़वी और कठोर बातें नतीम को कही थी, वो उसे नहीं कहनी चाहिए थी।

राजन के न कोई अपना सगा भाई था और न बहन। बस नतीम के साथ उसकी बहुत ही प्रगाढ़ दोस्ती थी। जब से वे इक्कठे स्कूल जाने लगे थे तभी से उनमें दोस्ती हो गई थी। वो दोनों एक साथ खेलते-कूदते और खाते पीते थे। दोनों एक-दूसरे को भाई समझते थे। जब राजन की शादी हो गई थी तब भी नतीम का राजन के घर वैसा ही आना जाना रहा जैसे पहले था। दोनों की दोस्ती में कोई बदलाव नहीं आया था। अब तो करीब छह मास पूर्व नतीम की भी शादी हो गई थी।

राजन की मृत्यु पर वनिता टूटकर रह गई थी। गांव के लोग एक दो-दो कर वनिता को दिलासा देने आ जाया करते थे। नतीम की पत्नी आयशा भी गांव की अन्य औरतों के साथ वनिता के पास बैठी थी। जो लोग श्मशान घाट से नतीम के साथ घर लौटे थे, वे सब वनिता के पास बैठ गए। वनिता बिना पंख के पक्षी की भान्ति छटपटा कर लोगों के बीच टूटी हारी सी बैठी थी। उन सब लोगों के सामने नतीम ने वनिता से कहा, भाभी जान ! अगर आप इजाजत दें तो मैं एक बात आपसे कहना चाहता हूँ।''

वनिता ने टूटे हुए दिल से एक लम्बी सांस भरते हुए कहा, हाँ नतीम भाई, कहो ..... क्या कहना चाहते हो तुम?''

"भाभी जान ! आप जानती हैं कि राजन मेरा दोस्त ही नहीं, बड़े भाई समान था। उसके चले जाने पर जितना दुःख आपको है, उतना ही मुझे भी है। मैं एक भाई का फर्ज अदा करना चाहता हूँ। अगर इसके लिए आप मुझे इजाजत देती हैं तो मैं अपने आप को बहुत भाग्यशाली समझूगां और मेरे दिल का बोझ भी हल्का हो जाएगा। इसके लिए मैं जिन्दगी भर आपका एहसानमंद रहूंगा।"

'' नतीम ! मैंनं भी आपको उनका दोस्त नहीं, बल्कि छोटा भाई समझकर अपना देवर माना है, भला तुम कैसा भाई का फर्ज निभाना चाहते हो यह तो बताओ।'' वनिता ने कहा।

''भाभी जान ! जो होना था, वह तो हो चुका है, अब तो जिन्दगी भर रोना ही रोना है। परन्तु जो कार्य हिन्दू धर्म के अनुसार किए जाने हैं, वो तो अब करने ही होगें। मैं मुसलमान तो जरूर हूँ लेकिन मैंनें अपने आप को अलग नहीं समझा। क्या मुसलमान क्या हिन्दु, हैं तो सब उस अल्लाह के बंदे। अल्लाह कहो या परमात्मा कहो, सभी उसी एक परवरदिगार के नाम हैं। मैं मुस्लमान होकर एक भाई के नाते हिन्दु धर्म के अनुसार राजन भैया की अस्तियों को हरिद्वार ले जाकर गंगा मैया में प्रवाहित करना चाहता हूँ, क्या इसकी मुझे इजाजत है ?''

"नतीम भाई, मैं तुम्हारी भावनाओं की कद्व करती हूँ, परन्तु तुम्हारी ब्रादरी वालों को एतराज न हो कि तुम मुसलमान होकर हम हिन्दुओं के रश्मों-रिवाजों में शामिल हो रहे हो।''

''भाभी जान ! वो तुम मुझ पर छोड़ दो। किसी को एतराज होगा तो होता रहे, लेकिन भाभी जान ! आपको कोई ऐतराज नहीं होना चाहिए।'' नतीम ने कहा।

''नतीम भाई ! मुझे कोई एतराज नहीं है।'' वनिता ने कहा।

''आपका लाख-लाख शुक्रिया भाभी जान ! आप तो जानती

है मेरा कोई भाई नहीं है, राजन ही मेरा सब कुछ था। उसने मुझे बहुत प्यार दिया है। वो राजन ही था जिसने गुलजार के घर जाकर मेरे खातिर आयशा का हाथ मांगा था। मुझे वो दिन याद है भाभी जान ! जब मेरे अब्बा जान मेरी शादी आयशा के साथ करने को राजी नहीं थे। वो किसी अन्य लड़की से मेरी शादी करवाना चाहते थे। मगर आयशा मुझे पंसद थी, यह हमारे साथ पढ़ती थी। जब अब्बा जान ने आयशा का हाथ मांगने उसके घर जाने से मना कर दिया था, तो मेरा भाई राजन ही मेरे खातिर आयशा के अब्बाजान गुलजार के घर गया था। क्यों आयशा, ठीक है न ?'' नतीम ने आँखों में आँसू भरते हुए कहा।

''जी ! अपने चेहरे पर आंचल गिराकर आयशा ने शर्माते हुए कहा।

''इसमें शर्माने की क्या बात है आयशा ? भाभी जान से कोई बात छिपी थोड़े ही है। कम से कम आपको तो मेरे हरिद्वार जाने पर कोई एतराज तो नहीं है न ?'' नतीम ने कहा।

''नतीम! भाभी जान का और कौन है इस दुनिया में ? राजन साहब इनके शौहर थे और हमारे भाई जान ! भाभी जान ने आपको भाई का फर्ज निभाने का जो हक अदा किया है, इसके लिए मैं इनका शुक्रिया अदा करना चाहती हूँ। जो कार्य आप करने जा रहे हैं, यह एक पवित्र कार्य है। भला मुझे इस पर क्या एतराज हो सकता है ?'' आयशा ने कहा।

''भाभी जान ! राजन भैया के चले जाने पर हमारा पूरा परिवार शोक में डूबा हुआ है। मैं जानता हूँ कि आयशा को छोड़कर हमारी मुसलमान ब्रादरी के लोग डटकर विरोध करेगें। मगर मुझे उनकी परवाह नहीं है। कोई जितना चाहे विरोध करे, मुझे तो बस आयशा का साथ और तुम्हारी रजामंदी चाहिए भाभी जान ! मगर मेरी समझ में यह नहीं आता कि भला हिन्दू-मुसलमान में फर्क क्या है? दोनों जब एक ही अल्लाह की सन्ताने हैं तो फिर दोनों को अलग-अलग क्यों समझा जाता है?'' सब इनसान हैं। भले ही कोई हिन्दू है, मुसलमान है, सिख है या इसाई है। सबका महजब एक है और वो है 'इन्सानियत' इससे बढ़कर और कुछ नहीं।''

''नतीम ! तुम ठीक कहते हो, लेकिन इस दुनियां को कौन समझाये। सब अपने जहन में पाले बैठे है उन पुराने दकियानूसी, घटिया और जहरीले विचारों को जो इन्सान को 'इन्सानियत' से कहीं दूर ले जाते हैं और एक दूसरे को जोड़ने के बजाए एक दूसरे में दरार उत्पन्न करने की कोशिश करते हैं। जात-पात, ऊँच-नीच, अपने पराये का जहर घोलकर अनेक मजहबों में बंटे हुए हैं। भला कौन उनके विचारों को बदले, जब कोई मानने को तैयार ही नहीं होता।'' वनिता ने कहा।

''अगर कोई नहीं मानता तो न माने अपनी बला से । हमें क्या? नतीम ने कहा।

आयशा बोली, '' भाभी जान ! अगर आप भी नतीम के साथ हरिद्वार जाना चाहती हैं तो बड़ी खुशी से जा सकती हैं। सुरेश और नीलू मेरे साथ रह लेगें।

''आयशा ठीक कह रही है भाभी जान ! अगर तुम स्वंय मेरे साथ चलना चाहो तो और भी अच्छा होगा।'' नतीम ने कहा।

''नतीम भाई ! जब आप जा ही रहे तो फिर मेरा जाना जरुरी तो नहीं ? आप और मुझमें कोई अन्तर थोड़े ही है? और फिर यहां पर रहना भी तो मेरा जरूरी होगा न। जो लोग घर पर मुझसे मिलने आएंगे, उनको मैं नहीं मिलूंगी तो अच्छा थोड़े ही लगेगा।'' वनिता ने कहा।

''हाँ, आप ठीक कहती हैं भाभी जान ! आप घर पर ही रहें।'' नतीम ने कहा।

आयशा ने फिर कहा, ''देखो नतीम ! आप तो हरिद्वार चले जाएगें। जो लोग भाभी जान को मिलते आते हैं, वे तो दिन-दिन को आएंगे और वापिस लौट जाएंगे। अगर मैं भी घर चली गई तो यहाँ भाभी जान के पास कौन रहेगा? इनके पास यहाँ किसी न किसी का रहना जरूरी है न। इसलिए अगर आप कहें तो मैं आपके हरिद्वार से लौटने तक भाभी जान के पास रह जाऊं?

''तुम ठीक कहती हो आयशा। जब तक मैं लौट कर न आऊं तब तक तुम यहीं ठहर जाना। ठीक है न भाभी जान ?'' नतीम ने कहा।

''जैसा आप लोग ठीक समझें ! मुझे भी तो आप लोगों का ही सहारा है ! वैसे भी, आप ही तो सब कुछ कर रहे हैं।'' वनिता ने कहा।

''हम कर भी क्या सकते हैं भाभी जान ! इतना बड़ा कहर आप पर टूटा पड़ा है। अगर इस दुख की घड़ी में हम आपके काम न आ सकें तो हमारा जीना ही बेकार होगा।'' आयशा ने कहा।

''आयशा जैसा आप लोग सोचते हैं, अगर ऐसा सभी सोचने लग जाएं तो यह आपसी वैर-विरोध की भावना और ये मजहबों के झगड़े, सब खत्म न हो जाएं। आप जितना मेरी खातिर कर रहे हो, शायद ही कोई और कर पाता। मैं तो आप लोगों के समक्ष कुछ कहने के काबिल ही कहाँ हूँ ? मेरी दुनियां तो लूट चुकी है। कुछ दिन और मैं जैसे-तैसे काट लूंगी। लगता है अब मेरे दिन भी थोड़े ही रह गये हैं।''

''ऐसा न कहो भाभी जान ! दिन थोड़े रहें आपके दुश्मनों के। अल्लाह करे आपको खूब लम्बी उम्र लग जाए।''

''भला क्या करूंगी मैं लम्बी उम्र लेकर, किसके खातिर जिऊंगी मैं ?''

''क्यों भाभी जान, आप ऐसा क्यों कहतीं हैं ? आपके बच्चे नहीं है क्या ? इन बच्चों की खातिर आपको जीना ही होगा भाभी जान।" आयशा ने कहा।

हाँ ! यह तो तुमने ठीक कहा आयशा। इनके खातिर तो जैसे-तैसे जिन्दगी को घसीटना ही होगा। वनिता ने कहा।

''जिन्दगी को घसीटना नही है भाभी जान ! बल्कि इसे शानदार तरीके से जीना है। जिन्दगी बार-बार नहीं मिलती।''

''आयशा ! आप लोगों ने तो मुझे जीने का एक नया अंदाज सिखा दिया। आप लोगों का साथ पाकर मैं हंसी खुशी से जीने का प्रयास करूंगी।''

अगले दिन सुबह नतीम राजन की अस्थियां कलश लेकर हरिद्वार चला गया। हिन्दू रिवाज के अनुसार जो भी दान-पुन क्रिया कर्म किए जाते हैं, सब कर लेने के बाद चौथे दिन नतीम हरिद्वार से वापिस लौट आया। उसके लौटने तक आयशा वनिता के पास ही रुकी रही।

नतीम को देखकर वनिता की आँखों में आँसू छलक आए वह रोती हुई बोली ! छोड़ आए न मेरे राजन को हरिद्वार? ''

''भाभी जान ! अगर तुम इसी तरह बात-बात पर रोती रहोगी तो फिर कैसे कटेगी तुम्हारी जिन्दगी ? अपने आँसू पोंछ डालो भाभी जान !"

''क्या करूं नतीम भाई, अब अकेली रह गई हूँ न मैं, बहुत टूट चुकी हूँ मैं।''

''तुम अकेली नही हो भाभी जान ! हम है न आपके साथ। हम आपको टूटने-बिखरने नहीं देंगे। अल्लाह, इसमें हमारी मदद जरुर करेगा।'' आयशा ने कहा।

''आयशा ! आप लोगों ने मुझे इस दुःख की घड़ी में जो सहारा दिया, मेरी समझ में नहीं आता कि इसके लिए मैं किन शब्दों से तुम्हारा आभार प्रकट करुं। कदम-कदम पर आपने मुझे टूटने नहीं दिया। अगर आप दोनों का सहारा मुझे न मिल पाता तो शायद मैं कब की टूट-बिखर चुकी होती आप लागों ने जो अपनापन दिखाया है, इसके लिए मैं आपकी ऋणी हो गई हूँ। अगर मैं जीवित रही और कोई अवसर मिला तो यह ऋण लौटाने का मैं अवश्य प्रयास करूंगी'' वनिता ने कहा।

''भाभी जान ! हम आपके अपने हैं, इसलिए ऋणी होने या ऋण लौटाने का कोई प्रश्न ही उत्पन्न नहीं होता। मैं आपका देवर-छोटा भाई हूँ। मुझे आपने राजन का छोटा भाई मानकर, छोटे भाई का फर्ज अदा करने का कीमती अवसर दिया है भाभी जान। बस, अब एक बार मेरे सिर पर अपना हाथ रखकर मुझे अपना देवर या छोटा भाई पुकारिये भाभी जान।'' नतीम ने वनिता की गोद में अपना सिर रखकर रोते हुए कहा।''

नतीम को रोता देखकर वनिता से भी नहीं रहा गया। पास में खड़ी आयशा से भी नहीं रहा गया। दोनों की आँखें आँसुओं से भर आई।

वनिता ने नतीम के सर पर हाथ रखकर गले से लगाते हुए कहा, मेरे देवर भैया, तुम युग-युग जिओ। परमात्मा करे तुम दोनों को मेरी भी उम्र लग जाए।''

आयशा का दिल इतना पसीज गया कि झट से वह भी वनिता के गले से लिपट गई। दोनों की आँखों से आँसू बह रहे थे।

राजन की दसवीं-तेरहवीं तक नतीम और आयशा वनिता के घर पर ही रुके रहे। वनिता को उन्होने बिलकुल भी अकेले नहीं रहने दिया। तेहरवीं के बाद एक दिन वनिता ने कहा, "नतीम ! आप लोगों ने अपना घर-बार और सारा कारोबार छोड़कर आज तक मेरा साथ दिया है इसके लिए मैं आपका शुक्रिया अदा करना चाहती हूँ। मैं चाहती हूँ कि आप हमेशा मेरे साथ रहें लेकिन मेरी वजह से आपके काम-काज में बाधा आई है। मैं नहीं चाहती कि आप मेरे खातिर अपना नुकसान करते रहो। आप जब चाहो, खुशी से अपने घर जा सकते हो।''

''भाभी जान ! आप हमारी चिन्ता न करें। आपने हमें रोका थोड़े ही है। हम अपनी मर्जी से यहां रह रहे हैं। जब आप अपने आप को सम्भाल लेंगी हम चले जाएगें।'' आयशा ने कहा।

नतीम बोला, 'इसकी आप कोई चिन्ता न करे भाभी जान! तुम कहती हो तो हम चले जाएंगे, लेकिन पहले आपको अपने आपको को सम्भालना होगा। एक ही बात पर सोचना, यह आपका रोना-धोना यह सब आपके स्वास्थ्य के लिए हानिकारक हो सकता है''

''नहीं आयशा! आपका भी अपना घर है, परिवार है, रिश्ते-नाते हैं, वे सब क्या कहते होगें?'' वनिता ने कहा।

नतीम बोला, "इसकी आप कोई चिन्ता न करे भाभी जान! तुम कहती हो तो हम चले जाएंगे, लेकिन पहले आपको अपने आपको को सम्भालना होगा। एक ही बात पर सोचना, यह आपका रोना-धोना यह सब आपके स्वास्थ्य के लिए हानिकारक हो सकता है''

आप लोगों ने मुझे अब जीने का सही मार्ग बता दिया है, मैं अब अपने आप को सम्भालने की पूरी-पूरी कोशिश करूंगी?''

''ठीक है भाभी जान ! आप अपना और इन बच्चों का ख्याल रखियेगा और हमें अपना आशीर्वाद दीजिएगा।''

''मेरा आशीर्वाद आप लोगों के साथ हमेशा-हमेशा रहेगा। आप खुश रहो, फलो और फूलो।"

''भाभी जान ! हम आते-जाते रहेंगे, तुम अपना खयाल रखना।" नतीम ने कहा।

अन्त में नतीम और आयशा दोनों ने वनिता के पांव छुए और अपने घर की ओर अलविदा कहकर चले गए।

गाँव डडोह, पोस्ट ढाबन, तह व
जिला मण्डी (हि.प.)-175027, मो. 098170-15648

कहानी

फ्लैट कल्चर

● डॉ. मनोज मोक्षेंद्र

फ्लैट कल्चर हमें कभी रास नहीं आया। जिस दिन से उस फ्लैट में कदम रखा था, कोई न कोई अनचाही या यूं कहिए कि मन के खिलाफ बात हो ही जाती थी। लाख तरतीब अपनाने पर भी प्राइवेसी भंग हो जाती थी। दरवाजा भले ही अपनी सहूलियत के लिए उटका कर रखा हो, कोई न कोई कॉल बेल बजाकर सीधे अंदर घुस आता था--किचन और डायनिंग रूम तक। जैसेकि यह कोई घर न होकर सराय हो। 'बहन जी, सब्जी वाला आया है, सब्जियाँ ले लो', 'भाभी जी, कपड़े इस्तरी कराने हैं क्या, 'मै'म, टंकी में पानी फुल कर लेना, वरना दस बजे बिजली गुल होने के बाद आपको दिक्कत हो जाएगी, 'वगैरह, वगैरह। बहरहाल, मेरी पत्नी को इन बातों से कोई ज्यादा असुविधा नहीं होती थी क्योंकि पड़ोसी खुद हमारी सुविधाओं के लिए चिंतित दिखाई देते थे। पर, एक दिन, गुप्ता जी ऐन सवेरे का चाय-नाश्ता करते वक्त, अंदर तक घुसते चले आए, 'भाई सा'ब, ऊपरवाले शर्मा जी ने रेलिंग पर गीले कपड़े फैला रखे हैं। बार-बार कहने पर भी वे अपनी आदत से बाज नहीं आ रहे हैं। चलिए, हम मिलकर उनके आगे अपनी आपत्ति दर्ज कराते हैं।'

'हद हो गई', मैं भुनभुनाते हुए उनके साथ शर्मा जी से शिकायत करने चला गया।

पर, गुप्ता जी की ओर से शर्मा जी से शिकायत करने का नतीजा बुरा निकला और उनकी लॉबी वाले उनके चहेते मेरे खिलाफ हो गए। सुबह जब गेट खोला तो पड़ोसी भाभियों की गीली साड़ियाँ हमारे फ्लैट के ऊपर लटक रही थीं। उन्हें जानबूझकर ठीक से न निचोड़े जाने के कारण उनसे पानी धार से टपक रहा था। मैंने कुलदीपा को हिदायत दी की इस मसले को तूल मत देना। मैं उन्हें प्यार से समझा दूंगा।

बहरहाल, इस तरह की आए दिन होने वाली बातों से हम आजिज आ गए और हमने कॉल बेल को पॉवर से डिस्कनेक्ट करा दिया और भीतर से दरवाजे पर चिटखनी चढ़ाकर अंदर बेडरूम में ही ज्यादातर रहने लगे। लेकिन, हमारे इस नकारात्मक रवैए का असर हमारे पड़ोसियों पर अच्छा नहीं पड़ा। आखिर, टाइम-पास के लिए उन्हें हमारा साथ जो चाहिए था। सो, एक शाम जब मैं ऑफिस से लौटकर हाथ-मुँह धो रहा था तो दरवाजे के बाहर एक नहीं, कई लोगों के होने की आहट मिली। जब दस्तक हुआ तो मैंने दरवाजा खोल दिया।

सामने शर्मा जी हाथ में कोई फाइल लिए और उनके पीछे कोई सात-आठ लोग खड़े थे।

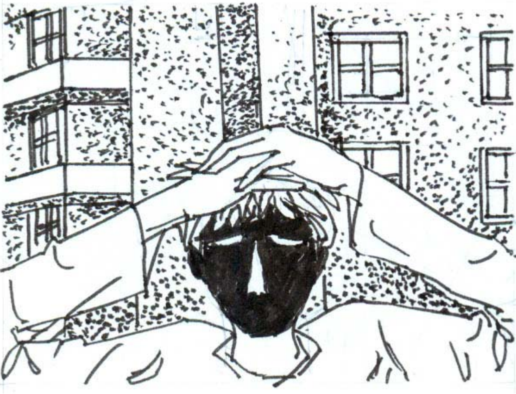
'नमस्कार, जैन सा'ब, हम इस अपार्टमेंट में बेहतर सुविधाएं देने के लिए एक वेलफेयर सोसायटी का गठन कर रहे हैं और आपसे गुजारिश है कि आप इसमें अहम भूमिका निभाएं।' शर्मा जी ने कंधे उचका-उचकाकर हमारे सहयोग की गुहार लगाई।

भलमनसाहत में मैं भी बाग-बाग हो उठा, 'अरे, क्यों नहीं, क्यों नहीं, मैं भी तो इसी अपार्टमेंट का एक अभिन्न हिस्सा हूँ...'

'तो फिर, आज शाम आप कोई आठ बजे शब्बीस ब्लॉक में सैनी जी के फ्लैट में तशरीफ लाएं', शर्मा जी मेरी जबान पर लगाम लगाकर चलते बने।

मैंने अपने लेट-लतीफी स्वभाव के अनुसार, आठ बजे के बजाय पौने नौ बजे सैनी जी के फ्लैट में कदम रखा। पर, वहाँ पहुँचने पर मुझे लगा कि जैसे सब कुछ पहले से तयशुदा था। वहाँ अपार्टमेंट के रिहाइशदारों की भीड़ में पदाधिकारियों के चुनाव का दौर चल रहा था। चुनांचे, मेरे हाजिर होते ही किसी वर्मा जी ने मेरी मर्जी के खिलाफ जनरल सेक्रेटरी के पद के लिए मेरे नाम का प्रस्ताव कर दिया। भीड़ के शोरगुल में मेरी ना-नुकुर किसी ने नहीं सुनी और अफरातफरी में बहुमत से मुझे वेलफेयर सोसायटी का जनरल सेक्रेटरी चुन लिया गया।

मीटिंग से निपटने के बाद जब कंधों पर जिम्मेदारी लादे, मैं



मुँह लटकाए घर में दाखिल हुआ तो मेरी पत्नी ने मुझे बधाई दी, 'अजी, जनरल सेक्रेटरी बनाए जाने पर आपको लख-लख बधाइयाँ!'

अपनी पत्नी की बात सुनकर मैं आश्चर्य में डूब गया। मेरे आने से पहले यह खबर उन तक ही क्या, पूरे अपार्टमेंट में फैल चुकी थी। तभी तो जब मैं अपार्टमेंट के अंदर से गुजर रहा था तो लोगबाग मेरे बारे में ही खुसुर-फुसुर कर रहे थे।

पत्नी कुलदीपा फिर बोल उठी, 'अजी, संतरे-सा मुँह क्यों फुला रखा है? कित्ती चंगी गल है कि आप जनरल सेक्रेटरी चुने गए हो। अब आपकी काबिलियत इन अपार्टमेंट वालों से तो छुपी नहीं है। सरकारी अफसर होने का फायदा तो इन्हें भी मिलना ही चाहिए।'

जब कुलदीपा ने ही मुझे 'जनरल सेक्रेटरी' का तगमा पहना दिया तो इसे कैसे ठुकराया जा सकता था? मैं मन ही मन सोचने लगा- कुलदीपा, अभी तुम्हें यह सब बहुत अच्छा लग रहा है। जब हमारा ड्राइंगरूम नगर निगम के आफिस जैसा एक सार्वजनिक स्थल बन जाएगा, तब तुम्हें पता चलेगा-आटा-दाल का भाव। अरे, हम जैसे बिजी गवर्नमेंट सर्वेंट के लिए ऐसी वेलफेयर सोसायटी ज्वाइन करना कोई आसान बात है क्या?

खैर, मैं भी तैयार था, यह देखने के लिए कि आगे-आगे होता है क्या...

अगले दिन सुबह, बच्चों को स्कूल वैन में बैठाने के बाद जब मैं वापस लौटा तो ड्राइंग रूम में शर्मा जी, सैनी जी और गुप्ता जी को देखकर मुझे कोई आश्चर्य नहीं हुआ। वेलफेयर सोसायटी के पदाधिकारियों के साथ अब तो उठना-बैठना लगा रहेगा। मैंने सोचा, चलो, इनके साथ कुछ देर तक इनका हाल-चाल पूछने के बाद ही ऑफिस के लिए निकलना हो पाएगा- ऑफिस के लिए एकाध घंटे लेट ही सही।

शर्मा जी, जो कल सोसायटी के प्रेसीडेंट भी चुने गए थे, चाय की चुस्कियों में ही बोल उठे, 'जैन सा'ब, इस अपार्टमेंट का बिल्डर अग्रवाल निहायत कमीना आदमी निकला। स्साले ने अपार्टमेंट के चारो ओर फेंसिंग कराने का वादा पूरा नहीं किया और यहाँ से अपना ऑफिस समेटकर चलता बना।'

जब मैंने उस बात पर चिंता जाहिर की तो वह फिर बोल उठे, 'जैन सा'ब, आज मैं भी सदर बाजार काम पर नहीं जा रहा हूँ। सैनी जी ने अपने ऑफिस से इस काम के लिए पहले ही छुट्टी ले रखी है। गुप्ता जी भी गद्दी में आज नहीं बैठने वाले है। यानी, हम सब आज कोर्ट में बिल्डर के खिलाफ एक मुकदमा डालने जा रहे हैं। आप चूंकि खुद एल.एल.बी. हैं और मुझे जानकारी मिली है कि आप कानूनी दाँवपेंचों के बड़े जानकार हैं, इसलिए आपका हमारे साथ कोर्ट में मौजूद रहना बेहद जरूरी है...'

मैं दरवाजे पर खड़ी कुलदीपा के चेहरे को देखते हुए उधेड़बुन में अपनी दाढ़ खुजलाने लगा कि तभी उसने आँखों ही आँखों में इशारा किया, 'अरे, मोहल्ले की बात है और आपको बड़ी इज्जत से साथ चलने को कह रहे हैं तो कोर्ट से लौटने के बाद कुछ देर से ही आफिस क्यों नहीं चले जाते?'

लिहाजा, कोर्ट में केस की स्टोरी मैंने ही तैयार की जबकि नाम-मात्र के वकील ने अपने नाम के दस्तावेज और हमारे हलफनामे पर अपनी मुहर लगाकर फाइल पेश की और तीन दिनों बाद हमें फिर हाजिर होने का निर्देश दिया। इस तरह, जब वहाँ की औपचारिकताओं से निपटने में ही शाम के चार बज गए तो मैंने आफिस में फोन करके उस दिन छुट्टी ले ली।

जब मैं कोर्ट में वकील के साथ अपने बिल्डर अग्रवाल द्वारा किए गए गैर-कानूनी मसलों पर बहस कर रहा था तो मेरे साथ आए सोसायटी के पदाधिकारियों को पूरा यकीन हो गया कि मैं सोसायटी की समस्याओं से निपटने के लिए एक सक्षम व्यक्ति हूँ। कोर्ट से आकर मुझे भी अच्छा लग रहा था। वेलफेयर सोसायटी के पदाधिकारी के रूप में मोहल्ले में मैं नामचीन हो रहा था। जिधर से मैं गुजरता, लोगबाग मुझे महत्व देते हुए मेरा हालचाल जरूर पूछते।

घर लौटकर लेट-लतीफ खाना खाने के बाद मैंने बेडरूम में आकर राहत की साँस ली। तभी कुलदीपा ने आकर बताया कि शर्मा जी का लड़का राहुल आया था। कह रहा था कि आज अंकल तो ऑफिस जा नहीं रहे हैं, इसलिए वे हमारे फ्लैट में आ जाएं। पापा उनका इंतजार कर रहे हैं। अपार्टमेंट पर कुछ मसलों के बारे में चंद जरूरी बातें करनी हैं।

मैंने कुलदीपा की आँखों में बड़ी शिकायताना अंदाज में देखा--अभी क्या? यह तो खेल का आगाज है। ऑफिस से लौटकर रोज मुझे इसी तरह सोसायटी के काम के लिए घर से बाहर रहना होगा- इन शर्मा, सैनी, वर्मा और गुप्ता के साथ। क्लाइमेक्स तक पहुँचते-पहुँचते नानी याद आ जाएगी। पर उसने भी मुस्कराकर और सिर नचाकर मूकाभिनय किया- अब आज आफिस नहीं गए

तो सोसायटी का ही कुछ काम कर लीजिए। आराम-वराम तो होता रहेगा। अब देखिए, मेरी मर्जी के मुताबिक चलेंगे तो एक आदर्श नागरिक के रूप में जाने जाएंगे।

मैं टी-शर्ट और बरमुडा पहने ही बाहर निकल लिया।

शर्मा जी के ड्राइंगरूम का नजारा ही कुछ अलग था। वहाँ सब कुछ उलटा-पलटा पड़ा हुआ था। वे हुड़दंग करने के मूड में लग रहे थे। सोसायटी के कोई दर्जन-भर लोग वहाँ जमे हुए थे। टेबल पर व्हिस्की की बोतलें थीं और कुछ लोग शतरंज के खेल में मशगूल थे जबकि टी.वी. पर कोई वल्गर फिल्म चल रही थी। जब मैंने झिझकते हुए शर्मा जी के जनानाखाने का जायजा लेना चाहा तो वह बोल उठे, 'यार, बीवी को अभी-अभी राहुल के साथ उसके मायके भेज दिया है जो यहीं राजनगर में है। अब हमारे ऊपर कोई निगरानी रखने वाला भी नहीं है। आज, कई दिनों बाद तो मौज-मस्ती का मूड बना है। सोचा कि तुम्हें भी साथ ले लूं। ऐसा मौका रोज-रोज कहाँ आता है? खूब खाएंगे-पीएंगे और ब्लू फिल्में देखेंगे।'

चूंकि मैं कभी ऐसे माहौल का आदी नहीं रहा, छात्र-जीवन में भी पढ़ने-लिखने के सिवाय कभी कोई ऐसी-वैसी नाजायज हरकत नहीं की, इसलिए मैं वहाँ काफी देर तक असहज-सा रहा। बड़ी घुटन-सी महसूस कर रहा था। तभी इसे ईश्वर की अनुकंपा कहनी चाहिए कि कुलदीपा ने कहला भेजा कि लखनऊ से ताऊ जी सपरिवार पधारे हैं। सो, मुझे वहाँ से मुक्त होने का एक बहाना मिल गया। मैंने उस माहौल से रुख्सत होते समय ईश्वर को तहे-दिल से धन्यवाद दिया।

उस शाम जब मैं लखनऊ से पधारे मेहमानों को घंटा-घर का मार्केट घुमाने ले जा रहा था तो अपार्टमेंट के ही कुछ बदमिजाज लौंडों के बीच खेल-खेल में नोक-झोंक के बाद मारपीट हो गई जिसमें शर्मा जी के लड़के राहुल का सिर फट गया। मामला थाने तक जाने वाला था कि मैंने बीच-बचाव करके झगड़े को निपटाया और अपने मेहमानों को वापस घर में बैठाकर राहुल को मरहम-पट्टी कराने अस्पताल चला गया। काफी देर बाद वापस लौटा तो मेहमानों को होटल में डिनर कराने ले गया क्योंकि अपार्टमेंट में पैदा हुए उस माहौल में कुलदीपा के लिए डिनर तैयार करना बिल्कुल संभव नहीं था। बहरहाल, मैं यह सोच-सोचकर शर्म में डूबा जा रहा था कि आखिर, ताऊ-ताई क्या सोच रहे होंगे कि कैसे वाहियात अपार्टमेंट में हमने फ्लैट लिया है और कैसे वाहियात लोगों के साथ हम रह रहे है! सुबह जब ताऊ-ताई टहलने जा रहे थे तो अपार्टमेंट में गजब की गंदगी फैली हुई थी। बोतलें, कंडोम, सिगरेट के पैकेट वगैरह रास्ते में बिखरे हुए थे।

उस दिन, मैंने मेहमानों की खिदमत के लिए एक दिन की और छुट्टी ले ली। सुबह, सैनी जी सोसायटी के किसी काम से आए थे पर, मुझे मेहमानवाजी में व्यस्त देखकर चले गए। उसके बाद भी सोसायटी के कुछ लोग मेरे बारे में पूछने आए। परंतु, कुलदीपा ने उन्हें कोई तवज्जो नहीं दिया। उस शाम, मेहमानों को वापस लखनऊ जाना था। लिहाजा, शाम को उन्हें ट्रेन में बैठाकर वापस लौटा तो मैं बड़ी राहत महसूस कर रहा था क्योंकि उनके रहते अपार्टमेंट में कोई और ऐसी नागवार वारदात नहीं घटी जिससे कि उन्हें किसी और अजीबोगरीब अनुभव से गुजरना पड़ता। इसी बीच जब मैं ड्राइंगरूम में थका होने के कारण सोफे पर लुढ़का हुआ था तभी कुलदीपा मेरे बगल में आकर बैठ गई।

उसने मेरे बालों में अपनी उंगलियाँ उलझाते हुए कहा, 'आप थोड़े में ही थक जाते हैं। देखिए, मैं भी तो कल से मिनट-भर को आराम नहीं कर पाई हूँ। अब समाज में रहते हैं तो हमें सामाजिक जिम्मेदारियाँ भी तो निभानी पड़ेंगी।'

मैं उसका इशारा समझ गया। वह चाहती थी कि मैं ऑफिस की ड्यूटी के साथ-साथ सोसायटी के काम में भी बढ़-चढ़कर हिस्सा लेता रहूँ। मैंने मन ही मन कहा--कुलदीपा, देखना तुम खुद भी इन निठल्ले सोसायटी वालों से ऊब जाओगी।

हम बातचीत में मशगूल थे कि तभी मेरी बिटिया तनु ने आकर बताया कि शर्मा अंकल बाहर खड़े हैं और वह आपसे मिलना चाहते हैं। फिर मैं ड्राइंग रूम में आ गया और तनु से कह दिया कि अंकल को अंदर बुला लाओ।

शर्मा जी सोफे पर बैठने से पहले ही बोल उठे, 'अजी जैन सा'ब! एक बड़ी कामयाबी हमें मिली है।'

'अरे हाँ, बताइए।' मुझे लगा कि जैसे वह कोई भारी जंग जीतकर आए हैं।

'वो बिल्डर अग्रवाल के घर का पता मिल गया है। वो यहीं पास के मोहल्ले में रहता है। आज शाम हमने तय किया है कि अपने पदाधिकारियों के साथ अपार्टमेंट के सभी लोग उसके घर मिलने चलेंगे और उस पर प्रेशर बनाएंगे कि वह अपार्टमेंट के बकाया काम को तुरंत निपटाएय वर्ना, हम उसके खिलाफ ऐसी कानूनी लड़ाई शुरू करेंगे कि उसे छट्ठी का दूध याद आ जाएगा।'

'ठीक है, हम सभी उसके घर चलते हैं और उसे डरा-धमका कर आते हैं', मैंने कान खुजलाते हुए उनके मनोबल में इजाफा किया।

उस शाम हम अग्रवाल के घर गए तो बहसा-बहसी का दौर इतना लंबा खिंचा कि रात के ग्यारह बज गए। उसके गुंडों के साथ झड़प होने से हम बाल-बाल बच गए। उसका कहना था कि उसने अपार्टमेंट में एक भी काम बकाया नहीं छोड़ा है जबकि हमने कल कोर्ट में जो केस दायर किया था, उसमें कोई दर्जन-भर ऐसे काम दर्शाए थे, जिन्हें उसने अपने वायदे के अनुसार पूरा नहीं किया है। बहरहाल, बिल्डर अग्रवाल की नाराजगी की एक अहम वजह यह थी कि उसे पता चल गया था कि वेलफेयर सोसायटी ने उसके

खिलाफ कोर्ट में एक केस डाला है। बस, इसी खुंदक में, वह भविष्य में अपार्टमेंट में कोई भी काम कराने से साफ इनकार कर रहा था। उसने तैश में भुनभुनाकर कहा भी- 'ऐसे कितने केस हम पर चल रहे हैं, एक और केस देख लेंगे? मेरा क्या बिगाड़ लोगे?'

रात के कोई बारह बजे घर लौटकर मैंने खाना खाया। सोने की कोशिश की तो नींद का आँखों से रिश्ता कायम नहीं हो पाया। लिहाजा, पता नहीं कब आँख लगी और जब सुबह के आठ बजे तो मैं हड़बड़ाकर उठा। वह भी कुलदीपा के घर के सारे कामकाज निपटाने के बाद जब वह गुरुद्वारे से वापस लौटकर सबद गुनगुना रही थी। किसी तरह अफरातफरी में तैयार होकर मैं ऑफिस पहुँचा। मैं मुश्किल से अपनी कुर्सी पर बैठा ही था कि मेसेन्जर ने आकर बताया कि सैनी नाम के कोई साहब आए थे और आपसे मिलना चाह रहे थे। मैं सोच में पड़ गया। तभी मेरा मोबाइल बज उठा, 'हैलो जैन सा'ब, मैं वेलफेयर सोसायटी से एस.के.सैनी बोल रहा हूँ। मैं बाहर रिसेप्शन पर खड़ा हूँ। वो आपसे एक जरूरी काम था।'

अपार्टमेंट में आए हुए कोई तीन महीने गुजर गए थे। इस दौरान, मेरी ख्याति अपनी वेलफेयर सोसायटी के एक सफल कार्यकर्ता के रूप में चतुर्दिक फैल गई थी। अब तक मेरी ईमानदारी से किए गए मेहनत-मशक्कत के बदौलत, बिल्डर अग्रवाल ने घुटने टेक दिए थे और नगर निगम के अधिकारी हमारे अपार्टमेंट में दूसरी कॉलोनियों की अपेक्षा बेहतर सुविधाएं देने लगे थे। मैंने अपार्टमेंट के लोगों के कई प्राइवेट काम भी कराए जिससे मैं उनका सबसे बड़ा खैरख्वाह बन गया।

मेरा माथा ठनका- अच्छा, तो ये अपनी वेलफेयर सोसायटी के सैनी जी हैं। मतलब यह कि अपनी सोसायटी अब मेरे ऑफिस तक आ पहुंची है। मैंने रिसेप्शनिस्ट को फोन करके बताया कि सैनी जी को अंदर मेरे चौंबर में भेज दो।

वो आए तो एकदम से अपने मतलब की बात पर आ गए, 'जैन साब, मैं बड़ी मुसीबत में हूँ। मेरे बच्चे का सेंट्रल स्कूल में ऐडमिशन नहीं हो पा रहा है। एड़ी-चोटी की कोशिश कर चुका हूँ। अधिकारियों से खूब मगजमारी भी कर चुका हूँ। अगर आप अपने डी.ओ. लेटर पर सेंट्रल स्कूल के प्रिंसपल से एक रिक्वेस्ट लिख दें तो मेरा बड़ा उपकार हो जाएगा।'

वह हाथ जोड़कर मुझसे बुरी तरह याचना करने लगे। मैंने सोचा- अपनी वेलफेयर सोसायटी का मामला है वह भी एक पदाधिकारी का। आखिर, मेरे अनुरोध पर उसके बच्चे का ऐडमिशन हो जाए तो इसमें हर्ज ही क्या है?

इस तरह, वेलफेयर सोसायटी और ऑफिस की जिम्मेदारियाँ साथ-साथ निपटाते हुए दो दिन और गुजरे थे कि शर्मा जी द्वारा एक सूचना मिली कि कल दोपहर बाद उनके यहाँ कोई खास आयोजन है जिसमें मुझे सपरिवार शामिल होना है। कुलदीपा भी सामने आ-खड़ी हुई- 'अजी, सोसायटी का मामला है। कोई कोताही मत बरतना। कल कायदे से दोपहर बाद, ऑफिस से आधी छुट्टी लेकर यहाँ आ जाना वर्ना, बहुत बुराई हो जाएगी। लोग कहेंगे कि जैन साहब ऐसे छोटे-मोटे आयोजन में कहाँ आने वाले हैं! आखिर, वो एक बड़े अफसर जो ठहरे।'

कुलदीपा के आग्रह को टालना मेरे वश की बात नहीं है। सो, उस दिन, मैं ऑफिस से हॉफ सी.एल. लेकर शर्मा जी के आयोजन में शामिल होने सपरिवार जा-पहुँचा। लेकिन, मैंने देखा कि वहाँ कोई बड़ा जश्न नहीं है--जैसेकि किसी का जन्म-दिन या मैरिज एनिवर्सरी आदि। बस, सैनी जी, वर्मा जी और गुप्ता जी के परिवारजन ही वहाँ मौजूद थे। लिहाजा, शर्मा जी ने खड़े होकर हमारा स्वागत किया जबकि उनकी पत्नी, मेरी कुलदीपा को लेकर दूसरे कमरे में चली गई और मेरे दोनों बच्चे वहाँ दूसरे बच्चों के साथ खेल-कूद में व्यस्त हो गए। मामूली औपचारिकताओं के बाद चाय-पान हुआ फिर, चार बजे के आसपास खाना। मुझे बड़ा कोफ्त हुआ--बस, इतने के लिए ही मुझे ऑफिस का अत्यंत महत्त्वपूर्ण काम छोड़कर वहाँ से छुट्टी लेनी पड़ी। बहरहाल, जब हम लोग वापस अपने फ्लैट में आए तो कुलदीपा ने बताया कि आज मिसेज शर्मा से मेरी खूब बातचीत हुई। शर्मा जी घंटा-घर के पास एक शराब का ठेका लेना चाहते हैं जिसके लिए उन्हें आपकी मदद चाहिए। मैं चौंक गया- तो क्या शराब के ठेके के लिए लाइसेंस दिलाने के लिए सारी जुगत मुझे ही करनी होगी? मैंने कुलदीपा से कहा, 'अब, यह काम मुझसे नहीं हो पाएगा। शर्मा नाजायज आदमी है और मेरी उसके साथ नहीं निभने वाली है।'

पर, कुलदीपा भी शर्मा जी के ही पक्ष में मुझसे तर्क-कुतर्क करने लगी, 'अरे, अब शर्मा जी यह बिजनेस करना चाहते हैं तो करने दीजिए। हमारा क्या जाता है?'

'मतलब यह कि वह हमारे मार्फत ठेका खोलेगा, ठेके पर अवैध धंधा करेगा और जब पकड़ा जाएगा तो कानून की गिरफ्त में मैं आऊंगा क्योंकि उसके ठेके की जिम्मेदारी मेरे ऊपर होगी।' मैं एकदम से बिफर उठा।

पर, कुलदीपा कहाँ मानने वाली? वह मुँह फुलाकर बड़बड़ाती हुई कोप भवन में चली गई- 'शराब के धंधे में कुछ गड़गबड़झाला होगा तो शर्मा जी ही भुगतेंगे।' वह बच्चों की तरह बड़बड़ा रही थी। मैं समझ गया कि अब मुझे शर्मा जी का काम कराना ही पड़ेगा नहीं तो, जिद्दी बीवी दाना-पानी तक के लिए हम सबको मोहताज कर देगी।

अपार्टमेंट में आए हुए कोई तीन महीने गुजर गए थे। इस दौरान, मेरी ख्याति अपनी वेलफेयर सोसायटी के एक सफल कार्यकर्ता के रूप में चतुर्दिक फैल गई थी। अब तक मेरी ईमानदारी से किए गए मेहनत-मशक्कत के बदौलत, बिल्डर अग्रवाल ने घुटने टेक दिए थे और नगर निगम के अधिकारी हमारे अपार्टमेंट में दूसरी कॉलोनियों की अपेक्षा बेहतर सुविधाएं देने लगे थे। मैंने अपार्टमेंट के लोगों के कई प्राइवेट काम भी कराए जिससे मैं उनका सबसे बड़ा खैरख़्वाह बन गया। लोगबाग मेरा फेवर पाने के लिए तरह-तरह के तिकड़म अपनाने लगे। कभी चाय पर बुला लेते तो कभी डिनर पर। शाम को ऑफिस से लौटने के बाद, मैं जैसे ही घर में दस्तक देता, अपार्टमेंट वालों का हुजूम बारी-बारी से उमड़ पड़ता। अब तो कुलदीपा भी एकदम से ऊबने लगी थी क्योंकि उसे हर आगंतुक के लिए चाय-पान जो तैयार करना पड़ता थाय उनकी बेवक़्त खातिरदारी जो करनी पड़ती थी। पर, वह भी मजबूर थी, उनके खिलाफ कुछ भी नहीं बोलती क्योंकि उसने ही तो मुझे महज कॉलोनी में महत्त्वपूर्ण व्यक्ति साबित करने के लिए उनकी खिदमत में उनके सामने पेश किया था जिससे वे ढीठ बनते गए। ऐसे में जब मैं शर्मा, सैनी, वर्मा और गुप्ता आदि की नुक़्ताचीनी करता तो वह खामोश रहती या अपराध-बोध के कारण अंदर किचेन में चली जाती।

चुनांचे, मेरे साथ सबसे बुरी बात यह हुई कि मैं ऑफिस के काम में कोताही बरतने के कारण एक ऐसे बिगड़े हुए अधिकारी के रूप में जाना जाने लगा जो ऑफिस के काम को गंभीरता से नहीं लेता है, अपने अधीस्थों को दबाकर रखता है और अनियमितताएं करने में कोई संकोच नहीं करता। बहरहाल, इसका खामियाजा भी मुझे ही भुगतना पड़ा। वर्ष के अंत में, वार्षिक रिपोर्ट में मेरी जो उपलब्धियाँ दर्शाई गईं, वे अत्यंत निराशाजनक थीं, उस कारण मेरे उच्चाधिकारी मुझसे नाराज रहने लगे और मेरी कार्य-प्रणाली में बार-बार कमियाँ निकालने लगे, रुकावटें डालने लगे। तनाव इतना बढ़ता गया कि इस बाबत मैंने कुलदीपा को भी बतलाने की बार-बार कोशिश की। पर, वह हर बार मुँह बिचकाकर कोई जवाब नहीं देती।

एक दिन, एक अजीबोगरीब घटना ने हमें जैसे नींद से जगा दिया। हमारे किशोर बेटे सुमित्र की आलमारी से शराब की बोतल बरामद हुई जो आधी खाली थी। कुलदीपा तो आपे से बाहर हो गई। जब सुमित्र की पिटाई हुई तो उसने स्वीकार किया कि यह बोतल खुद शर्मा अंकल ने उसे बुलाकर यह कहते हुए दी कि इसके सेवन से कद बढ़ता है और छाती चौड़ी होती है। मैं आवेश में शर्मा के पास जाने वाला ही था कि कुलदीपा ने मेरा हाथ पकड़ लिया, 'अब झगड़ा-फसाद करने से कुछ भी हासिल नहीं होगा। मैं जानती हूँ कि वह शरीफ आदमी नहीं है। आप कुछ कहेंगे तो वह



लड़ने पर उतारू हो जाएगा। क्या आपको मालूम नहीं है कि वह अपार्टमेंट में सबको कैसे दबाकर रखता है? कुछ दिनों से वह आपकी गैर-हाजिरी में मेरे फ्लैट में किसी न किसी बहाने से आने की ताक मे रहने लगा है। मुझे उसका इरादा नेक नहीं लगता है।'

कुलदीपा के शब्द सुनकर मेरे पैरों के नीचे से जमीन खिसकती-सी लगी। मैं तो यह पहले ही भांप गया था कि शर्मा गिरा हुआ इंसान है पर इस बात का बिलकुल अंदाजा नहीं था कि उसकी गंदी नजर मेरे ही घर पर है। लिहाजा, उस दिन शाम को जब मैं थका-मांदा ऑफिस से घर लौटा तो मैंने बेटे सुमित्र को बता दिया कि यदि सोसायटी का कोई आदमी किसी काम से आए तो कह देना कि पापा की तबियत ठीक नहीं है और वह सो रहे हैं। पर, उस अपार्टमेंट में जब से आया था तब से चौन से कुछ पल आराम करना कहाँ मयस्सर था? अभी मैंने मुश्किल से आँखें झपकाई ही थीं कि बाहर उठे अचानक शोर से मैं बेचौन हो उठा। कुछ लोगों के बीच लड़ाई के अंदाज में जोर-जोर से बातचीत हो रही थी जिसमें सैनी की आवाज ज्यादा ऊंची थी। मैं हड़बड़ाकर बाहर निकला तो यह देखकर दंग रह गया कि सैनी ने शर्मा की गरदन जोर से दबोच रखी है। जब मैं उनके पास पहुंचा तो सैनी शर्मा को अपनी पकड़ से मुक्त करते हुए बोल उठा, 'देखिए जैन सा'ब! शर्मा जी मेरे साथ धोखा-धड़ी कर रहे हैं। कोई छः महीने पहले मैंने इन्हें शराब का ठेका खोलने के लिए चार लाख रुपये दिए थे, पर, अब तो ये साफ कह रहे हैं कि मैंने इन्हें एक धेला भी नहीं दिया है। दोस्ती के नाम पर मैंने किसी कागज पर इनसे कुछ भी नहीं लिखवाया। मैंने कभी नहीं सोचा था कि मेरा इतने बड़े दगाबाज आदमी से पाला पड़ेगा।'

शर्मा जी ने भी बार-बार कहा कि सैनी दोस्ती का वास्ता देकर मुझसे झूठ-मूठ के रुपए ऐंठना चाहता है। मुझे तो दोनों बेहद बेईमान लग रहे थे। पर, उस घटना में मैं आद्योपांत खामोश रहा। जब दोनों थाने गए तो भी मैं उनके साथ नहीं गया। दोनों

अलग-अलग मुझसे पैरवी करने के लिए गिड़गिड़ाए, पर मैं टस से मस नहीं हुआ। आखिर, मैं किसका साथ देता? शर्मा का या सैनी का? इसी बीच कुलदीपा ने आकर इशारे से बुला लिया।

सैनी और शर्मा के साथ क्या हुआ, यह जानने की जहमत मैंने नहीं उठाई। लेकिन, उस रात मैं बिलकुल सो नहीं सका। अपार्टमेंट का माहौल बेहद तबाहकुन था। बच्चे भी बिगड़ रहे थे। बारह साल की बेटी तनु भी मुझसे कई बार शिकायत कर चुकी थी कि अपार्टमेंट के बच्चे उसे समीज-शलवार में देखकर 'बहन जी', 'आंटी जी' कहकर छेड़ते हैं क्योंकि मैंने ही उसे सख्त हिदायत दे रखी थी कि उसे सलीके के कपड़े पहनने चाहिए।

कुछ दिनों बाद, मुझे पता चला कि सैनी और शर्मा के बीच किसी न किसी तरह सुलह हो चुकी है और दोनों फिर से साथ-साथ रहने लगे हैं। इस दरम्यान, मैं वेलफेयर सोसायटी से बार-बार कन्नी काटकर कभी किसी मेहमान के यहाँ चला जाता तो कभी ऑफिस से काफी देर बाद लौटता। सोसायटी वालों को मुझसे मुलाकात करने का कभी मौका ही नहीं मिलता।

रविवार का दिन था। कुलदीपा मुझे देख, कुछ-कुछ अचंभित थी क्योंकि कई दिनों के बाद मैं शाम को घर जल्दी आया था। उसने आते ही कहा, 'आज दिन में सोसायटी की जनरल बॉडी की मीटिंग थी जिसमें आपकी गैर-हाजिरी में आपकी सहमति के बिना आपको सोसायटी का प्रेसीडेंट चुना गया है। शर्मा जी का बेटा राहुल कई बार आपको बुलाने आ चुका है।'

मैं मुस्करा उठा, 'अब जल्दी-जल्दी सारे सामान-असबाब की पैकिंग कर लो मैंने यह फ्लैट बेचकर कवि नगर में एक नया विला खरीद लिया है। अब हमें यहाँ एक पल के लिए भी रहना बरदाश्त नहीं हो रहा है। अभी चंद मिनट में कुछ मजदूर बाहर खड़ी ट्रक में हमारे सामान लादने आ रहे हैं।'

जब तक कि मजदूर घर में घुस नहीं आए, तनु और सुमित्र सोच रहे थे कि मैं कोई पहेली बुझा रहा हूँ। उन्हें विश्वास ही नहीं हो रहा था कि हम इस गंदे अपार्टमेंट को छोड़ किसी विला में जा रहे हैं और आखिर पापा ने इतना कुछ इतने चुपके से किया कैसे! दरअसल, मैंने उन्हें कुछ कहने-सुनने का मौका ही नहीं दिया क्योंकि तब तक मजदूर आकर मेरे सामान उठा-उठाकर ट्रक में रखने लगे थे और कुलदीपा भी उन्हें सामानों को हिफाजत से रखने की हिदायतें देने लगी थी। कोई आधे घंटे में घर खाली हो गया। तब तक अपार्टमेंट के पड़ोसी मूक दर्शक बने यह सब कुछ देख रहे थे। कुछ लोग फुसफुसा रहे थे कि जैन सा'ब ने तो यह फ्लैट पिछले साल ही खरीदा थाय फिर क्या वह इस फ्लैट को किराए पर उठाने जा रहे हैं। तभी सैनी और शर्मा आते दिखे। शर्मा जी मुझे कुछ पल चुपचाप देखते रहे फिर मैंने ही उनकी चुप्पी तोड़ी, 'शर्मा जी, कल इस फ्लैट में एक दूसरे जैन सा'ब आ रहे हैं। पर, वह न तो कोई सरकारी अफसर हैं, न ही कोई कानूनदां। हाँ, वह बिल्डर अग्रवाल का साढ़ू भाई है। अगर हो सके तो आपलोग उसे ही सोसायटी का प्रेसीडेंट चुन लेना।'

शर्मा जी हकला उठे, 'पर, जैन सा'ब, आप हमें छोड़कर जा कहाँ रहे हैं? अपना पता-ठिकाना तो देते जाइए। अभी तो आपके जरिए मुझे ढेरों काम करवाने हैं। आपसे अब मिलना कहाँ होगा? मैं आपसे संपर्क में कैसे बना रहूंगा?'

मैंने कहा, 'शर्मा जी, मेरा तबादला तो किसी विदेश में हो गया है। अगर आप वहाँ आ सकें तो मैं अभी आपको अपना पता-ठिकाना नोट कराए देता हूँ।'

मैं अपनी जिंदगी का वह पहला झूठ बोलकर इसी शहर के एक मोहल्ले में सुकून से रह रहा हूँ। कभी-कभार शर्मा जी, गुप्ता जी या सैनी जी रास्ते में टकरा जाते हैं तो मैं उनसे बड़ी सफाई से कतरा कर तेजी से कहीं और निकल जाता हूँ और अगर मजबूरन उनसे बात करनी भी पड़ जाती है तो मैं एक दूसरा झूठ दाग देता हूँ, 'अरे भई, किसी जरूरी सरकारी काम से इंडिया आया था। कल सुबह की ही फ्लाइट से वापस जा रहा हूँ।'

सी-66, विद्या विहार, नई पंचवटी, जी.टी. रोड, गाजियाबाद, उ.प्र.-201 001



कहानी

पहचान

● राकेश पत्थरिया

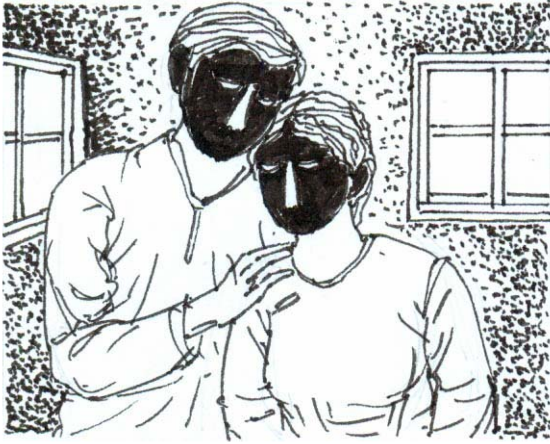
बस की खटखट रमेश को परेशान कर रही थी, वैसे भी सरकारी बस की हालत बेहद खराब और ऊपर से सड़क के गड्ढे पर रमेश कानों में इयरफोन लगाकर गीत सुनता जा रहा था। सफर काफी लम्बा था। शिमला पहुंचने में पूरे 10 घंटे लगते हैं। वह गीतों में ही मस्त था, एक जगह खाने के लिए बस रुकी। सुनीता ने बैग से अखबार में लपेटी कुछ परोंठियां निकाली। परोंठियों के ऊपर अचार रखकर रमेश को दे दिया। रमेश ने कानों से इयरफोन निकालकर परोंठियां पकड़ ली और खाने लगा। आधा सफर हो चुका था, पर रमेश ने सुनीता से जरा भी बात नहीं की थी। सुनीता बार-बार ध्यान दे रही थी कि उन्हें कुछ चाहिए तो नहीं पर रमेश बहुत कम बात कर रहा था।

दोनों की शादी हुए करीब चार महीने हो चुके थे। सुनीता पहली बार रमेश के साथ शिमला जा रही थी। वहीं पर उसकी रोजी-रोटी है। शादी के बाद वो इस बार ही घर आया था। दोनों ने बहुत कम समय साथ गुजारा था। रमेश ने अभी तक उसके जिस्म को छूआ तक नहीं था। एक अजीब सी उलझन में था, कभी-कभी सोचता शादी करके कुछ गलत कर लिया है। वहीं सुनीता भी उसकी चुपी से डरती थी। हालांकि वो बातूनी बहुत थी। मायके में तो उसकी बातें खत्म होने का नाम ही नहीं लेती थी पर रमेश के आगे मानों वो सब बातें पीछे छोड़ आई हो। एक अजब सी चुपी में दोनों का सफर कट रहा था। अब ठंडक का अहसास हो रहा था, बस शिमला पहुंचने वाली थी। सुनीता लम्बे-लम्बे आसमान को छूते देवदार के पेड़ देख रही थी इससे पहले वो कभी शिमला नहीं आई थी। घुमावदार मोघें से गुजरते हुए बस पहाड़ पर चढ़ती जा रही थी। बीच-बीच में रमेश के हाथ की छूअन से सुनीता सहम जाती। अब शिमला का पुराना बस अड्डा आ गया था।

बस से उतरते ही कुली उनके इर्द-गिर्द मंडराने लगे तो रमेश खीझ कर बोला, पीछे हटो हमें यहीं जाना है। थोड़ी दूर तक जाने के बाद उसे लगा कि अब सामान नहीं उठाया जाएगा बस स्टैंड से जाखू तक बहुत चढ़ाई है तो उसने कुली को सामान के लिए बुला लिया। दोनों अजनबियों की तरह चढ़ाई चढ़ते जा रहे थे सुनीता ने कभी इतनी चढ़ाई नहीं चढ़ी थी वो थक चुकी थी पर रुक नहीं रही थी। दोनों के इस सफर में साथ था तो खामोशी का। सुनीता लम्बे-लम्बे पेड़ देखती तो सोचती कि ये भी तो बिलकुल हमारे जैसे ही हैं। कितने पास-पास हैं पर कोई छूअन नहीं है फिर सोचती कि ये तो पता नहीं कितने सालों से साथ-साथ हैं छूअन न सही पर इनको पास होने का अहसास तो उम्र भर रहेगा, जब सर्द हवा चलती तो उसे लगता कि ये पेड़ एक-दूसरे को संदेशा पहुंचा रहे हैं आपस में बातें कर रहे होंगे तब उसे अहसास होता कि हमसे अच्छे तो ये पेड़ हैं, जब तेज हवा चलती तो उसे लगता कि एक-दूसरे से गिला-शिकवा कर रहे होंगे। इन्हीं खयालों में वो चढ़ाई चढ़ती जा रही थी। कुछ देर बाद जब रमेश को उसकी थकान का अहसास हुआ तो उसने आराम करने को कहा। रिज के ऊपर काफी अंधेरा रास्ता था, आधे घंटे की चढ़ाई के बाद वो क्वार्टर में पहुंचे तो थक चुके थे। एक कमरे का क्वार्टर था, वहीं खाने का सामान और गैस वगैरह रखी थी। कमरे में सब चीजें बेतरतीब थी। सुनीता कमरे की हालत देखकर हैरान हो गई थी। कुर्सी कपड़ों से भरी पड़ी थी, कुछ जगह तो सिगरेट के टुकड़े भी थे। कमरे की ऐसी हालत देखकर उसके मुंह से निकल गया, ''आपने इतना गंद डाल रखा है, सफाई नहीं करते।'' उसकी बात पर रमेश ने कहा, ''बस सफाई नहीं कर पाता ये गंदी आदत है मुझमें।''

रमेश मुंह हाथ धोकर बैठ गया और सिगरेट सुलगा ली। सुनीता पहले सोचने लगी अभी सफाई कर देती हूं पर शरीर इतना थक चुका था कि उसमें हिम्मत नहीं थी। बैग में बची बाकी रोटियां गर्म करके उसने और रमेश ने खा ली।

सुबह जब रमेश उठा तो वह हैरान हो गया। सारा कमरा चमक रहा था कहीं पर जरा भी गंदगी नहीं थी। सुनीता ने सुबह जल्दी उठकर सारा कमरा साफ कर दिया था अभी भी वो साफ-सफाई कर रही थी। रमेश को ऑफिस भेजने के बाद कपड़े धोने



लग पड़ी। ढेरों कपड़े थे जो रमेश ने कई दिनों से धोये नहीं थे। सब कामों से फारिग होकर सुनीता बैठ गई थी। उसने हीटर लगा लिया था, ठंड बहुत ज्यादा थी। बाहर हल्की-हल्की बर्फ जमी थी खिड़की से बर्फ से लदे पहाड़ देखती तो उसकी आंखें इस सुंदरता से लबालब हो जाती। पहाड़ पर बर्फ से सजी हनुमान की विशाल मूर्ति को उसने प्रणाम करके खिड़की बंद कर ली। आज उसका दिल कर रहा था कि वो सजे-संवरे खुद को आईने में देखती तो देखती ही रहती। उसने कभी इतने चाव से श्रृंगार नहीं किया था आज काफी देर तक आईने के सामने खुद को सजाती रही। सोचती की रमेश आएंगे तो आज उनसे बातें करूंगी, रमेश ने कभी उससे बैठकर दो बातें भी नहीं की थी। उसका अनछुआ शरीर आज प्यार की लालसा में था। वह अभी तक पति से खुद की ही पहचान नहीं करवा पाई थी।

रमेश भी उससे बातें करना चाहता था पर आदत से मजबूर था, वह खुद को किसी के सामने जाहिर नहीं कर पाता था। उसे पत्नी अभी भी किसी अजनबी की तरह लग रही थी, उसे समझ नहीं आया था अभी तक। अभी तक उसकी भी पत्नी से पहचान नहीं हो पाई थी। वो पहचान जो नए रिश्तों को जन्म देती है।

रमेश क्वार्टर पहुंचा तो वह सुनीता के इस रूप को काफी देर तक देखता रहा। उसे उसका श्रृंगार आकर्षित कर रहा था। आज उन दोनों को एक होना था। वो पत्नी से बातें कर रहा था, प्यार की न सही इधर-उधर की। पत्नी भी उससे बातें करती जा रही थी। आज दोनों के जिस्म भले ही एक हो चुके थे पर शायद वो पहचान फिर भी न हो सकी।

सुबह सुनीता खुद को आईने में देख रही थी तो उसे आईना में खुद का अक्स जरा भी भा नहीं रहा था। वो रमेश से बातें करना चाहती थी उसके बहुत करीब जाना चाहती थी। औरत थी तो औरत का धर्म निभाना बखूबी जानती थी। सबकुछ पीछे छोड़ आई थी। मां-बाप, रिश्ते-नाते और अपना प्यार। सुनीता आज पिछली यादों में खो गई थी। उसे वो प्यार के पल याद आ रहे थे जब कॉलेज में महिंद्र से परिचय हुआ था। कितनी बातें करता था। हाजिर जवाबी तो पूछो ही मत। बहुत प्यार करते थे दोनों। सुनीता न चाहते हुए भी उसकी यादों में डूब ही जाती थी। आज उसका सजने-संवरने का जरा भी मन नहीं था। वो महिंद्र के लिए कभी सजी ही नहीं थी। उसको लुभाने की कभी कोशिश भी नहीं की थी। कॉलेज से अकसर घूमने चले जाते थे वो। शादी भी कर लेती पर मां-बाप नहीं माने, जात-बिरादरी वालों ने अपनी इज्जत के लिए उनके प्यार की बलि ले ली पर अब वो सब भूल कर नई जिंदगी जीना चाहती थी। ऐसी जिंदगी जिसमें वो पति के लिए सोचे उसकी ही खुशी का ध्यान रखे पर पति कभी मन से खुलकर उसके सामने ही नहीं आ पाया था।

रमेश जब लौटा तो सुनीता के चेहरे पर उसे अजीब सी उदासी और अकेलापन नजर आया। सिगरेट सुलगाते हुए पूछने लगा, ''क्या बात है आज कुछ उदास सी नजर आ रही हो।''

सुनीता चेहरे पर बनावटी खुशी के भाव लाते हुए बोली, ''नहीं, ऐसे ही जरा थक गई थी। आप बताओ कैसा रहा आज का दिन।''

''आज का दिन, वैसा ही रहा जैसे हमेशा रहता है, कुछ खास नहीं। कुछ दोस्त मिल गए थे शाम को तो रिज पर घूमने निकल गए।''

आज पहला दिन था जब वो इतनी बातें कर रहे थे। रमेश भी आज उससे कई सवाल पूछा रहा था तो सुनीता भी कई बातें। इन बातों से उसकी चेहरे से बनावटी खुशी टूटकर असली खुशी में तब्दील हो रही थी। शादी के चार महीने बाद पहली बार उसके चेहरे पर प्रसन्नता के भाव दिख रहे थे।

''अच्छा ये बताओ आप इतना चुपचुप क्यों रहते हो। क्या शादी करके आप खुश हैं सही में'', सुनीता ने थोड़ा घबराकर कहा।

रमेश सिगरेट के कश खींचते हुए हंसने लगा, ''शादी, अरे ये तो करनी ही थी। तुमसे नहीं तो किसी और से क्या फर्क पड़ता है।''

सुनीता को उसकी आवाज में परायापन सा नजर आ रहा था। इस तरह उसका जवाब देना उसे अच्छा नहीं लगा तो उसने हिम्मत करके पूछ ही लिया जिसे वो पूछना नहीं चाहती थी। ''क्या तुम्हारी जिंदगी में कोई थी जिसे आज भी आप याद करते हो या भूल न पाये हों।''

उसका ये सवाल सुनकर रमेश हैरान सा हो गया था पर उसे कुछ छुपाने या झूठ बोलने की आदत नहीं थी। सिगरेट को एश ट्रे में बुझाकर बोला, ''हां थी कोई।''

सुनीता, ''तो शादी क्यों नहीं कर ली।''

रमेश लंबी सांस खींचते हुए, ''शादी भी कर लेता लेकिन ये

बहुत साल पहले की बात है कोई चार साल पहले की। न तो अच्छे से तब सैटल था और दूसरा जात-पात का बंधन जो सदियों से इंसान की खुशियों पर खंजर चलाता रहा है, भला उसके वार से मैं कहां बच सकता था। इस खंजर ने न जाने कितनों की ही खुशियों का लहू चखा है पर आज तक इसकी प्यास नहीं बुझी। हम कॉलेज में साथ पड़ते थे। प्यार हो गया फिर क्या था वही प्यार में नाकामी भरा अंजाम जो होता आया है।''

रमेश की बातें सुनकर सुनीता को लग रहा था कि वो अपनी यादों से शायद बाहर नहीं निकले हैं। अच्छा होता अगर वो लड़की ही इनकी जिंदगी में रहती। एक अजनबी के साथ कितनी देर सफर कर सकती हूं मैं। सोचने लगी कि मैं भी तो महिंद्र की यादों से कहां बाहर निकल पाई हूं अभी तक ऐसे में एक अजनबी दूसरे अजनबी से कैसे साथ की उम्मीद रख सकता है। एक-दूसरे से पता नहीं कभी पहचान हो भी पाएगी या नहीं पर अब जिंदगी तो साथ गुजारनी ही है।

रमेश ने फिर सिगरेट होंठों पर लगा ली थी। तभी देखा तो माचिस में कोई तिल्ली नहीं बची थी। सुनीता ने रसोईघर से उठाकर रमेश माचिस दी और कहने लगी आप पहले खाना खा लो। रमेश की बातें सुनकर उसकी आंखें भर आई थी पर वह ऐसा कुछ प्रतीत नहीं होने दे रही थी।

बिस्तर पर बैठे बैठे रमेश को लग रहा था कि उसने कुछ गलत तो नहीं कह दिया। उसे अब खुद पर गुस्सा आ रहा था। इतनी बड़ी बात कह दी पर सुनीता को जरा भी गुस्सा नहीं आया। कितनी महान होती है औरत, सही में त्याग और दूसरों के लिए ही सोचती है।

लेटे-लेटे सिगरेट सुलगाते हुए रमेश कहने लगा, ''क्या तुम्हारी जिंदगी में भी कोई था। अगर था तो तुम बिना झिझक बता सकती हो।''

रमेश की बात सुनकर सुनीता के तो मानों होश ही उड़ गए थे। वो असमंजस में पड़ गई थी। एक औरत के लिए ये कहना आसान नहीं होता। समाज में जहां औरत अभी तक पुरुष से बराबरी के लिए जद्दोजहद कर रही है, वहीं रिश्तों में भी वो अभी पुरुष के समान नहीं है। वास्तव में तो औरत को अभी भी पुरुष से बराबरी का दर्जा कहां मिल पाया है, तो ऐसे में वो अगर कुछ कह देगी तो कहीं रमेश बुरा न मान ले पर वो झूठ नहीं बोल सकती थी। रमेश ने भी तो सारी बात सच और निडरता से सामने रख दी थी तो वो भला अपने पति को इतना बड़ा धोखा कैसे दे सकती थी। झूठ की बुनियाद पर वह कोई रिश्ता नहीं बनाना चाहती थी।

रमेश की बातें सुनकर सुनीता को लग रहा था कि वो अपनी यादों से शायद बाहर नहीं निकले हैं। अच्छा होता अगर वो लड़की ही इनकी जिंदगी में रहती। एक अजनबी के साथ कितनी देर सफर कर सकती हूं मैं। सोचने लगी कि मैं भी तो महिंद्र की यादों से कहां बाहर निकल पाई हूं अभी तक ऐसे में एक अजनबी दूसरे अजनबी से कैसे साथ की उम्मीद रख सकता है। एक-दूसरे से पता नहीं कभी पहचान हो भी पाएगी या नहीं पर अब जिंदगी तो साथ गुजारनी ही है।

हिम्मत करके कहने लगी, ''हां, था कॉलेज के दिनों से जान-पहचान थी।''

रमेश सिगरेट के कश खींचते हुए, ''तो तुमने शादी क्यों नहीं कर ली। अब कहां है वो।''

सुनीता ने जवाब दिया, ''वहीं बात जात-पात बिरादरी। वो आजकल शायद दिल्ली में नौकरी करता है।''

रमेश की बात सुनकर सुनीता को तसल्ली हुई कि वो ये सुनकर खफा नहीं हुए। अब उसे रमेश सही में पति परमेश्वर ही लग रहा था। वो उसकी सोच उसके साफ मन की ओर आकर्षित हो रही थी। जिस्म तो उनके मिल चुके थे पर शायद वो आज अपनी आत्मा उससे मिलाना चाहती थी।

सिगरेट के धुंए से पूरा कमरा भर चुका था तो सुनीता ने खिड़की खोल दी। बाहर से बहुत तेज ठंडी हवा अंदर आ रही थी।

रमेश झिल्लाता हुआ, ''अरे खिड़की क्यों खोल दी। इतनी ठंडी हवा अंदर आ रही है। जानती हो ये शिमला है। यहां की ठंड आदमी को अंदर तक हिलाकर रख देती है।''

सुनीता अपनेपन से डांटते हुए, ''इतनी सिगरेट पीते हो मेरा दम घुट रहा है और क्या करती बताओ। अब इतनी ठंड में बाहर थोड़े चली जाऊंगी।''

रमेश हंसते हुए, ''लो बुझा देता हूं सिगरेट अब खिड़की बंद करो धुआं दो मिनट में चला जाएगा। अच्छा ये तो बताओ अगर तुम प्यार करती थी तो भाग क्यों नहीं गई अगर मेरे केस में मैं सैटल होता तो भागकर शादी कर लेता।''

सुनीता रजाई में दुबकते हुए, ''हां भागने को तो वो भी कहता रहा उसकी नौकरी लग गई थी पर लड़कियों के लिए ये सब आसान नहीं होता। जिन मां-बाप ने इतने साल पाला हो उनको इस तरह रुसवा कर देना किसी लड़की के लिए बहुत मुश्किल होता है।''

सुनीता की बात सुनकर रमेश को लग रहा था कि सही मायने में एक लड़की के लिए प्यार निभाना कितना मुश्किल हो जाता है। पर वो खुश था कि सुनीता ने सबकुछ उसे बिना झिझक कह दिया।

ये बताओ कि अब भी याद तो आती होगी।

सुनीता रमेश की ओर देखकर कहने लगी, ''हां आती है बहुत याद आती है। आज तो बहुत याद कर रही थी पर अब जरा भी नहीं आ रही। आपसे इतनी बातें की कुछ आपका अतीत तो कुछ मेरा अतीत जब निकलकर आया तो सच कहती हूं जरा भी

लघु कथा

छवि

● पवित्रा अग्रवाल

भारतीय संस्कृति में रची-बसी, विदुषी श्वेता बहन जी के सम्मान में एक आयोजन रखा गया था क्योंकि वह धार्मिक आयोजन था। अतः श्रोता भी बहुत थे। संयोजक जी ने कहा, "बहन जी बस अभी आती ही होंगी। वह भारतीयता की बहुत बड़ी समर्थक हैं। वह अभी पश्चिमी देशों में भारतीय सभ्यता और संस्कृति पर व्याख्यान देकर लौटी हैं। आपमें से बहुत लोगों ने उन्हें सुना भी होगा। बहुत अच्छा बोलती हैं।"

तभी हाल में बाबकट बालों में जींस शर्ट पहने एक बेडौल सी महिला ने प्रवेश किया।

संयोजक जी ने उत्साहित होते हुए कहा, "इंतजार की घड़ियां समाप्त हुईं। विदुषी श्वेता बहन जी पधार चुकी हैं। बहनजी आप सीधे मंच पर आ जाएं।"

उन्हें देखकर पीछे महिलाओं में फुसफुसाहट होने लगी, "अरे इन्हें भी लग गई। हवा योरोपीय देशों की।"

"हां यह तो पहचान में ही नहीं आ रहीं। एक बार बाहर जाते ही भारतीय वेशभूषा तो गायब ही हो गई।"

"इससे पहले तो हमेशा उन्हें साड़ी पहने ही देखा था, कभी सलवार सूट में भी नहीं देखा था।"

"हां उनके भारी भरकम शरीर पर यह ड्रेस अच्छी भी नहीं लग रही। इस आयोजन में तो उन्हें भारतीय कपड़ों में ही आना चाहिए था।"

"आजकल अपनी बहू, बेटियां भी तो इस तरह के कपड़े पहनती हैं।"

"वह बात अलग है पर आज श्वेता जी का परिचय जिस रूप में दिया गया है। उस छवि से उनकी वेशभूषा मेल नहीं खा रही।"

घरोंदा, 4-7-126, इसामियां बाजार, हैदराबाद-500027, मो. 9393385447

याद नहीं आ रही उस प्यार की। सही कहूं तो शादी के बाद से आज तक ये पहला दिन होगा जब मुझे उसकी याद नहीं आ रही और इन चंद घंटों से आपसे जो पहचान हुई है वो शायद कभी मुझे अतीत को याद करने भी नहीं देगी। इतना सुख इतनी खुशी मिल रही है कि दिल कर रहा है जोर-जोर से चिलाऊं झूमूं और इतना ही नहीं नाचने को मन कर रहा है।''

रमेश सोचने लगा एक औरत कितनी जल्दी रिश्तों में ढल जाती है। जरा सा अपनापन उसके बड़े से बड़े घाव को भी कितनी जल्दी ठीक कर देता है। जितनी जल्दी सबकुछ भुलाकर शायद औरत किसी को अपनाती है उतनी जल्दी कोई आदमी नहीं कर सकता।

आप बताओ आपको आती है याद, सुनीता ने अब छेड़ते हुए रमेश से पूछा।

''हां, आती है पर अब मुझे भी लगता है कि तुम्हारा साथ उन यादों को धुंधला कर देगा या मिटा देगा। मैं तो आज तक उन यादों में ही जी रहा था। वैसे भी जो बीतता जाता है इक याद बनता जाता है। जो रिश्ते बंधन में न बंधे हों उनकी यादें मिटाना बहुत मुश्किल हो जाती हैं। आदमी में कसक रह जाती है पर जैसे ही उसके बराबरी या उस जैसे रिश्ते सामने आते हैं तो वो यादें मिट जाती हैं। ऐसा मेरा सोचना है बाकी सबकी अपनी अपनी राय होती है। बराबरी के रिश्ते से मेरा मतलब है जैसे प्रेमिका हो तो उसके बराबरी का रिश्ता पत्नी हालांकि समाज में पत्नी का रिश्ता बहुत ऊंचा है पर मैं इसे बराबरी का रिश्ता ही मानूंगा।''

सुनीता झूठमूठ गुस्से में, पत्नी का रिश्ता प्रेमिका से बराबरी का कैसे हो सकता है। पत्नी तो सब धर्म निभाती है सेवा करती है। प्यार करती है अपना सारा परिवार छोड़कर आती है। पूरी उम्र सुख-दुख में साथ रहती है।

रमेश हंसते हुए, बराबरी का इसलिए कि हैं तो दोनों का दिल से दिल के मिलन का रिश्ता ही या दो अजनबियों का रिश्ता जो एक-दूसरे से पहचान का मोहताज होता है। प्रेमिका को तो हम भली-भांति जानते हैं वहीं पत्नी के केस में अगर हम उसे जान जाएं समझ जाएं तो वो भी तो प्रेमिका जैसी ही हो जाती है। एक रिश्ता है जो सामाजिक बंधन में बंध जाता है तो दूसरा प्रेमिका का जो सामाजिक बंधन में बंधना तो चाहता है पर बंध नहीं पाता। अगर प्रेमिका का रिश्ता कामयाब हो जाए तो वो पत्नी का ही हुआ न।

अतीत को साझा करके आज दोनों ने एक दूसरे से पहचान कर ली थी। इस पहचान के लिए दोनों काफी देर तक भटकते रहे थे। आज वो अजनबी नहीं ऐसे पति-पत्नी थे जो एक दूसरे को पहचानने लगे थे। बातों ही बातों में पता नहीं कब दो बज चुके थे। रमेश जो कभी ज्यादा बात नहीं करता था उसका दिल कर रहा था कि सारी रात बातों में ही गुजर जाए और सुनीता का तो दिल झूमने को कर रहा था। रमेश ने उसे बांहों में भर लिया सुनीता के मन में खुशी की तरंगे दौड़ रही थी। आज दो जिस्मों नहीं दो आत्माओं का मिलन होना था।

लेखक गृह, गांव व डाक घर गुम्मर, तहसील देहरा, जिला कांगड़ा 177116, मो. 94184 01552

भूटान की लोक कथा

अब पछताए होत क्या...

● डॉ. उषा बन्दे

किसी गांव से कुछ दूरी पर एक गरीब बूढ़ा रहता था। छोटी-सी झोंपड़ी थी और थे बदन पर पहने कपड़े, बस यही उसकी सम्पत्ति थी। सुबह गांव में जाता, भिक्षा मांगता और जो मिल जाए उसी से गुज़ारा कर लेता। एक दिन भिक्षा में उसे काफी पके चावल मिले। उनमें से जितना खा सकता था, खाया। बाकी उसने आंगन में सुखाने के लिए रख दिया। "जिस दिन कुछ न मिले उस दिन यही भात (चावल) खा लूंगा", यही सोचकर वह अपनी फेरी पर चला गया।

बूढ़े की झोंपड़ी गांव के बाहर थी। आसपास घने पेड़ थे, साथ ही छोटा-सा तालाब था। पेड़ों पर कई प्रकार के पक्षी आकर बैठते थे। फल खाते, चहचहाते, तालाब में डुबकी लगते और पानी पीकर उड़ जाते। उस दिन सौ तोतों का झुंड 'चीं-चीं' करता हुआ आया। उनका ध्यान चावलों पर गया। पूरी टोली नीचे आंगन में आ बैठी और पल में सारे दाने चुगकर उड़ गई।

शाम को जब बूढ़ा घर आया तो देखता क्या है कि पूरा भात (चावल) कोई चटकर गया था। ऊपर देखा तो पेड़ पर बैठे तोते अचानक 'चीं' .... करके उड़ गए। 'तो, यह इन तोतों का काम है!"

बूढ़े को शिकंजे या जाल बनाना आता था। जंगल से बांस ले आया, उन्हें छीला और बड़ा जाल बनाया जिसमें सभी तोते अटक जाएं। उसने दूसरे दिन मेहनत से जाल फैलाया, नीचे चावल रख दिए और चला गया। पहले दिन मिले दानों के लालच में सौ तोतों का वही झुंड आया और दानों की ओर लपका। पर यह क्या? जाल में फंस गए। काफी देर तक फड़फड़ाते रहे पर निकलना असंभव था। "अब क्या करें?" युवा और बच्चे तोते घबरा गए थे। तभी उनका राजा बोला, "घबराओ नहीं। मैं जो कह रहा हूं ध्यान से सुनो।" सब सजग हो गए।

"बूढ़ा के आने का समय हो गया है। अब हम सब जाली से उलटा लटक जाएंगे और ढोंग करेंगे मानो हम मर गए हैं कोई चूं भी नहीं करेगा। बूढ़ा हमें मरा हुआ जानकर एक-एक करके फेंकने लगेगा ताकि उसका शिकंजा खाली हो जाए। अब जिसे वह पहले फेंकेगा वह चुपचाप मृतप्राय पड़ा बाकियों के 'थड्' से गिरने की आवाज को गिनता रहेगा। जब निन्यानवे आवाजें आएंगी तो समझ लेना हम सब छूट गए हैं। और हम इकट्ठे फर् से उड़ जाएंगे!"

सबने सिर हिलाकर 'हां' कहा पर एक छोटे तोते को शंका थी। "निन्यानवे आवाजें क्यों? हम तो सौ हैं?" राजा हंसा, "बच्चे, क्योंकि जो सबसे पहले छूटकर गिरा है वह तो अगली आवाजें गिन ही रहा है न! उसे मिलाकर सौ हुए न!"

इतने में बूढ़ा आता दिखाई दिया। सारे तोते उलटे लटककर मृत होने का ढोंग करने लगे। बूढ़े ने देखा और सोचने लगा, "क्या सचमुच बेचारे मर गए हैं या ढोंग कर रहे हैं। चलो, एक को उठाकर फेंकता हूं। जीवित होगा तो गिरते ही उड़ जाएगा।"

उसने एक को निकाला और दूर पटक दिया। तोता निढाल-सा, निर्जीव पड़ा रहा। इसके बाद बूढ़े ने एक-एक करके सारे तोते फेंके। सभी निर्जीव पड़े रहे। आखिर एक तोता रह गया। बूढ़ा उसे निकालने के लिए झुका तभी उसके चोगे में से एक बड़ा-सा पत्थर 'ठप' से नीचे गिरा। वास्तव में बूढ़े ने तोतों को मारने के लिए कुछ पत्थर चोगे में रखे थे जिनमें से एक गिर गया। जैसे ही 'ठप; आवाज आई गिनती करने वाले तोते ने गिना 'सौ', उसने 'चीं-चीरर्र' आवाज निकालकर साथियों को इशारा किया। पूरी टोली फर्र से उड़ गई। बूढ़ा भौंचक्का हुआ देखता रहा। फिर उसने हाथ में पकड़े तोते से कहा, "सो, मुझे बेवकूफ बनाया तुम लोगों ने। तुम्हारे साथी तो बच निकले पर अब तुम्हें नहीं छोड़ूंगा।"

जो उसके हाथ में पड़ा था वह तोता राजा था। उसने विनती की, "देखो, मुझे मत मारो। मुझे मारने से क्या हासिल होगा? तुम मुझे बेचो। अच्छे पैसे मिलेंगे। भीख मांगने की भी आवश्यकता नहीं रहेगी।"

बूढ़े को यह बात जंच गई। तोते की टांग पर डोरी बांधकर उसे वह शहर ले गया और अच्छे दाम पर बेच दिया। तोता किसी व्यापारी ने खरीदा और उसे बहुत प्यार से रखा। वह उनके घर का सदस्य बन गया।

लगभग तीन वर्ष के बाद तोता व्यापारी से बोला, "अब मैं कुछ दिनों के लिए जंगल में जाना चाहता हूं। अपने लोगों से मिलने की इच्छा है। बूढ़ा हो गया हूं, सो अपनों से मिलने की चाह है।"

"पर लौटोगे न?"

"हां, वचन है। मैं आऊंगा और आते-आते तुम्हारे लिए एक अद्‌भुत फल के पेड़ का बीज लाऊंगा। उसे खाकर तुम जवान रहोगे। तुम भी तो बूढ़े हो रहे हो।"

तोता गया, अपनों से मिलकर दो-तीन महीनों में लौट आया। साथ में अद्‌भुत फल के पेड़ का बीज भी लाया। तोते के कथनानुसार व्यापारी ने बीज बोया। जल्दी ही पौधा उगा, पेड़ बड़ा हुआ, उसमें सुंदर, रसीले फल लगे।

फल देखकर व्यापारी ने सोचा खाकर देख लिया जाए, फिर संशय पैदा हुआ। यह कोई नया फल है। कहीं जहरीला न हो। हो सकता है यह तोता मीठे-मीठे बोल बोलकर मुझे मारना चाहता हो।

व्यापारी ने फल पेड़ पर ही रहने दिया। एक रात पककर फल गिर गया और उसी रात एक विषैला नाग उस पर बैठा रहा। सुबह व्यापारी ने गिरा फल देखा, खाना चाहा पर फिर शंका पैदा हुई। तभी उसका कुत्ता वहां आया और उसने फल खाया। पर यह क्या? खाते ही वह गिर पड़ा।

अब व्यापारी का पारा चढ़ गया। उसने तोते को पकड़ा और कड़क के बोला, "तुम्हारी चाल समझ गया हूं मैं। मुझे खत्म करना चाहते थे न? लो, भुगतो अपने किए का फल।" और उसने उबलता पानी उस पर फेंक कर उसे झुलसाकर मार डाला।

व्यापारी के पेड़ अब फलों से लदे थे। उन रसीले फलों की चर्चा पूरे शहर में थी पर साथ ही लोगों में डर था कि कहीं फल जहरीले न हों।

एक दिन दो बूढ़े भिखारी व्यापारी के पास आए और बोले, "हमें एक-एक फल दे दो। बहुत भूख लगी है।"

"इन फलों के बारे में शंका है। मैं खुद तुम्हें नहीं दूंगा। अपनी इच्छा हो तो स्वयं जानो।"

"देखो, वैसे भी हम बूढ़े और बीमार हैं। काम कुछ कर नहीं पाते। हम मन-ही-मन तैयार होकर आए हैं कि फल खाकर मर गए तो छूट जाएंगे और जवान एवं स्वस्थ बन गए तो प्रभु कृपा।"

उन दोनों ने अपने जोखिम पर फल खाया। व्यापारी डर और कुतूहल से देख रहा था। तभी धीरे-धीरे उन बूढ़े भिखारियों के शरीर सीधे हो गए, मांस-पेशियां कस गईं और देखते-ही-देखते दोनों जवान हो गए।

व्यापारी को अपना तोता याद आ गया जिसे उसने सताकर मार डाला था। बिना सोचे-समझे उठाए कदम के लिए खुद को कोसता रहा। सिर धुनता रहा।

वैक्सलो, लोअर कैथू, शिमला, हिमाचल प्रदेश-171 003

कविता

दो भाई

● **डॉ. जयपाल ठाकुर**



अमन-चैन से नहीं रह सकते
इस विश्व में दो भाई
एक ही मां के लाल-प्यारे
बचपन से एक साथ रहे
भारत मां के आंगन में वो भाई
कोई वैर-विरोध नहीं था उनमें
न थी कोई लड़ाई
सन-सैंतालीस में जुदा हुए वे दोनों भाई
तब से अब तक
छोटा बड़े पर कर चुका
कई बार छिना-झपटी, हाथापाई
दोनों एक-दूसरे के दुश्मन हुए
दिन-प्रतिदिन बढ़ती गई शत्रुता
नहीं रहा आपस में प्रेम भाव
खत्म हुआ दोनों में भाईचारा
कई बार हुई लड़ाई
हर बार छोटे ने ही मार खाई
अमन चैन से नहीं रह सकते
इस विश्व में दो भाई !

गांव मियांपुर, डाकघर पन्जैहरा, तहसील नालागढ़, जिला सोलन, हिमाचल प्रदेश-174 101, मो. 94187 44841

कंचन शर्मा की कविताएं

आँगन की मिट्टी

अहाते की दीवार
और
अट्टालिका के बीच
था जो आँगन
उसकी मिट्टी को
दबा दिया गया है
संगमरमर के
पॉलिशड, चमकदार
पत्थरों से
या फिर⁄
कंक्रीट से
बना दिया गया है
'उसे' साफ सुथरा
ताकि एक तिनका भी
उसमें न उगे,
ताकि एक सूक्ष्म
जीव भी उसमें
न फले
और न ही
एक बूँद पानी तक की
धरती में जाए,
न एहसास रहे
नंगे पाँव तले
हरी मखमली
प्रकृति की चादर का।
कंक्रीट के नीचे की
पल्लवित
पुष्पित
फलित
करने वाली मिट्टी
बना दी गई है बांझ
और बन गया है आँगन
बेरंग, धूसर सा।

बेटी

सदा से अधिवक्ता रही है
अपनी मुव्वकिल 'माँ' की
माँ-बाप की तकरार में
रि श्ते-नातों की मंझदार में।
बेटी
सदा रही है पिता के करीब
उसके बहुत से सुख-दुःख की भागीदार
जो अक्सर पिता नहीं कर पाता है
उसकी माँ से भी।
बेटी
धाय माँ जैसी है अपने भाई-बहनों की
व्याकुल रहती है उनकी चिन्ता में
न्योछावर कर देती है, बहुत बार
अपना यौवन, अपना जीवन
बना लेती है अपनी मंजिल
अपने भाई-बहन के ही स्वप्न।
बेटी
एक उपहार है जीवन का
फूल है उपवन का
उसे तोड़ना
अस्तित्व मिटाना है
सम्पूर्ण परिवार का।

साजिश

कान्वेट स्कूल के बाहर
भरी दुपहर में
इंतजार करती
एक बच्चे की माँ⁄



उठाने को उसका
'स्कूल बैग'
फैंक आई है
अपने कंधे से
रंभाती गाय के लिए
घास का पुल्ला
गोबर का किल्टा
हाथ से मधाणी
कुँए का पानी
हाथ से दराती
अपनों से सहानुभूति
खेतों की असमत
गाँव की किस्मत
और साथ ही
बुजुर्गों की
आस का टोकरा
यह मजबूरी है
हर औरत की
या साजिश है
गाँव खाली करने की।

सेट नं. 11, टीचर्स कॉलोनी, हि.प्र. विश्वविद्यालय, समरहिल
शिमला, हिमाचल प्रदेश-171005, मो. 94180-58158

कविता

फर्ज और कानून

● विनोद शर्मा

होकर मेल फर्ज और कानून का
दिखाए जिंदगी में ऐसे खेल
देखकर दर्पण में रूप इस कदर
दिखे पल-पल ऐसा अभिन्न मेल।

बनकर नींव ठोस जीवन की
निभाए मिश्रण बनकर आकार
हो हमराह चलें ऐसे
आए तनिक भी अधिक किसी पर भार।

कानून बढ़ाए इंसाफ क्षमता
देकर फर्ज को सही अंजाम
न्याय दिखे गौरवपूर्णता से सही
मिले समाज को सुख तमाम।

हो शैली असरदार इस कदर हमारी
मिले फर्ज को उच्च सम्मान
दिखाए कानून सही रास्ता
मंजिल तक जाने को एक समान।

बने समाज का आधारभूत ढांचा
होकर समय के सदा अनुरूप
रखकर मन में अहमियत फर्ज की
अपेक्षानुरूप गरिमामय हो इसका स्वरूप।

कार्य पूर्ण हो सदा इस कदर
आए कभी न बनकर विकार
अतिशयोक्ति तनिक रहकर इसमें
होकर स्वप्न दिखे सदा साकार।

करें कार्य सही फर्ज समझ कर
कानून करे तब अपना काम
होकर बोध सच्चाई का सदा
मिले समाज में तभी सम्मान।

अजब बल है मिश्रण में इसके
करके हल विपदाओं का भार
आए कष्ट यदि राह में कोई
निभाए सही होकर ऐसा किरदार।

होकर चिंतन गहराई से इनका
आए जन-जन में ऐसी सोच
दिखे लाभप्रद समाज में ऐसे
रखकर स्वयम् में पूरी होश।

रहें अडिग हम कार्य के प्रति
बनकर समाज का एक अभिन्न अंग
अहसास दृढ़ता का जगाकर दिखाएं
जगाकर जीवन में सदा नई उमंग।

आए चेतना अवाम् में ऐसी
देकर इसको सही अधिमान
करके अनुसरण सच्चाई से ऐसे
टूटे बुराई से भरपूर अभिमान्।

होकर सक्षम फर्ज व कानून सदा
दिखाए समाज में ऐसा काम
आकर संकट हरगिज़ दिखे
जैसे सच्चाई से हो गया नाम।

आए वो दिन विलम्ब न रहकर
होकर इनका जब बोध तमाम
बटोरे खुशियां तमाम जीवन की
रखकर सोच सही से अवाम।

चले जिंदगी राह पल-पल
बनकर दिखे सौहार्द परिवेश
रहकर एकाग्रता से स्थम् को ऐसे
आकर तनिक भी कोई क्लेश।

दृष्टि अधिकारी, नेत्र विभाग, आईजीएमसी अस्पताल,
शिमला, हिमाचल प्रदेश-171001, मो. 98162 74093

हिमाचल का जनजातीय लोक नाट्य : बुछैन

(पृष्ठ 7 से आगे) यह ताम्बे या चांदी से बनाया जाता है। इसके भीतरी भाग में जाप किया जाने मन्त्र 'ऊं मणि पद्मे हूं' खुदा होता है। नीचे एक लकड़ी की डण्डी हाथ में पकड़ने के लिए बनी होती है। इसके साथ एक घण्टी लगी रहती है। संतुलन बनाने के लिए एक धातु का टुकड़ा जंजीर से बघा रहता है। इस चक्र को 'ऊं मणि पद्मे हूं' का उच्चारण करते हुए दाएं हाथ से क्लॉक वाइज घुमाया जाता है। मन्त्रोच्चारण के समय एक चक्र पूरा होने पर घण्टी बजती है। यूं तो इसे वाद्य की श्रेणी में नहीं रखा जा सकता किंतु प्रारम्भिक मन्त्र जाप के लिए यह महत्त्वपूर्ण है।

वाद्य यन्त्रों में प्रमुख वाद्य का नाम 'बुगजल' है। कांसे का बड़ा हुआ यह एक बड़े आकार का बाहर को उभरे हुए थाल की तरह का वाद्य है। बाहर के उभरे भाग में पकड़ने के लिए धागे लिकले रहते हैं जहां से इसे पकड़ कर दोनों को टकरा कर ध्वनि निकाली जाती है। यह वैसे भी एक महत्वपूर्ण वाद्य है जो गोन्पाओं में पूजा के समय तथा छम्म नृत्य के समय बजाया जाता है। यह देर तक गूंजने वाली ध्वनि उत्पन्न करता है। कांसे का ही एक और वाद्य 'ट्रिल व दोरजे' कहलाता है जो घण्टी से थोड़ा भिन्न और बड़ा होता है। इस में बोधिसत्व और बौद्ध साधकों के चित्र उकेरे होते हैं। डमरू का प्रयोग भी इस नाट्य में किया जाता है। ये डमरू दो होते हैं। छोटे को 'दरू' और बड़े को 'दरछेन' कहा जाता है।



एक ओर महत्वपूर्ण और पुरातन वाद्य 'कोपों' कहलाता है। अखरोट की लकड़ी से निर्मित इस वाद्य के सिरे पर तूम्बा बना होता है। तूम्बे को बकरे की खाल से मढ़ा जाता है। तूम्बे के दूसरे सिरे पर सिंह मुख बनाया जाता है। इस सिरे पर धागा कसने के लिए छः खूंटियों बनी होती है। इन खूंटियों में बकरी की आंत का बारीक धागा कसा जाता है। इस धागों को दूसरे सिरे पर लगी एक कील से कस दिया जाता है। ध ागों के बीच हाथीदांत या हड्डी की बनी घोड़ी रख दी जाती है। इस तरह यह एक वीणा की तरह का साज बन जाता है जिस पर विभिन्न स्वर लहरियां पैदा की जा सकती हैं। इसी तरह का मगर छोटे आकार का वाद्य 'पियांग' कहलाता है। इसमें बकरी की आंत के धागों की जगह तारें या घोड़े के बाल लगाए जाते हैं।

बौद्ध मंदिरों में प्रयुक्त एक वाद्य 'कंगलिंग' का प्रयोग भी बुछैन के समय किया जाता है। यह वाद्य भूत पिशाचए डाकिनी और प्रेतात्माओं से बचाव के लिए बजाया जाता है। यह एक महत्वपूर्ण और तान्त्रिक प्रयोग में लाया जाने वाला वाद्य है। इसे बनाने की विधि भी अजीब है। इसे गर्भवती मृत महिला की टांग की हड्डी से बनाया जाता है। किसी पुरुष या महिला गायक की युवा अवस्था में मृत्यु हो जाने पर महिला की बाईं और पुरुष की

दाईं टांग की हड्डी निकाल इसे तन्त्र विधि से खोखला किया जाता है और यह वाद्य यन्त्र बनाया जाता है। इसे मुंह से फूंक द्वारा बजाया जाता है। इसे बौद्ध गोनपा में तथा बुछैन के समय तान्त्रिक वाद्य के रूप में प्रयोग किया जाता है।

उक्त विशिष्ट वाद्यों के अतिरिक्त बांसुरी जिसे 'लियूं' कहा जाता हैय शहनाई जिसे 'सुल्ना' कहा जाता है और नगारा जिसे 'दामेन' कहा जाता है, बुछैन के समय बजाए जाते हैं।

वेनपा अर्थात् विदूषक

बुछैन एक विध्नहारी और कल्याणकारी कृत्य है। यह प्रतिदिन किया जाता है जब तक बुछैन उस गांव में रहते हैं। बुछैन के दिन प्रातः ही एक लम्बा पत्थर ला कर रख दिया जाता है जिस के ऊपर जौ या गेहूं से स्वास्तिक चिह्न बनाया जाता है। रात्रि को इसी स्थान पर शंख ध्वनि करने के बाद एकत्रित होना होता है। वेनपा अर्थात् विदूषक की भूमिका सबसे पहले आती है। मणि जाप के बाद वेनपा अर्थात् विदूषक एक गडरिये का रूप धारण कर आता है। इस पात्र को लुगजी यानि गडरिया या चरवाहा कहा जाता हैं। इसके हाथ में पत्थर फैंकने के लिए युगदो होता और कन्धे पर टूटा-फूटा थैला। लोगों के हंसाने के लिए यह व्यक्ति उल्टे कपड़े या उल्टी खाल पहनता है, चेहरे पर सत्तू का लेप लगा अपनी मुद्राएं हंसी लाने वाली बनाता है। पीठ पर टूटी-फूटी टोकरी उठाए रस्सा बाटता हुआ गाने गाता है जिससे लोगों का भरपूर मनोरंजन हो सके। बुछैन वेनपा से धर्मकर्म के प्रश्न पूछता है तो ये उल्टे सीधे जबाब दे कर लोगों को हंसाता है। इसने अपनी टोकरी में गुधे हुए 'चाम्-पा' अर्थात् सत्तू रखे होते हैं जिन्हें उंगलियों में घुमा कई प्रकार की व्याख्याएं करता है और अंत में देवताओं को अपित करने के बाद उसे खा जाता है। चोगे से बोतल निकाल का छंग (स्थानीय शराब) पीता है और मतवाला होने का अभिनय करता है। दर्शकों का भी छंग पीने को देने का अभिनय करता है। वह भोटी, हिन्दी और स्थानीय बोलियों में बात कर हंसाने की कोशिश करता है। थैले के कई कुछ निकाल कर बुछैन को देता है कि तुम्हारी पत्नी ने तुम्हें कुल्लू मनाली से तोहफा भेजा है। कई बार यह एक वनमानुष की तरह भी व्यवहार करता है। इसे मिर्गोद अर्थात् आदि मानव और शिकारी भी कहते हैं। अंत में बुछैन इस

का शमन करता है।

मुख्य खेल

बुछैन द्वारा तरह तरह के हैरतअंगेज करतब दिखाना इस नाट्य का मुख्य अंग है।

नाटक के मुख्य पात्र को बुछैन या लो-छैन कहते हैं। वेनपा के अलावा इस नाट्य में दो या तीन कलाकार होते हैं जिन्हें बु-छुड़ कहा जाता है। नाट्य प्रस्तुति के समय बुछैन केवल अधोवस्त्र सा पहन कर आता है। वह केवल अपने आभूषण पहने रखता है। पीठ पर लाल पीले ध्वज, सिर पर रंग बिरंगे कपड़े लपेटे जाते हैं। दोनों बांहों में सूईयां चुभो कर दोनों गालों के बीच भी लम्बी सूई चुभोई जाती है। इस बीच वाद्य यन्त्र बजते रहते हैं। दोनों हाथों में एक नुकीली तलवार ले कर उसकी नोक पर पेट के बल लेट कर करतब दिखाया जाता है। दर्शक मन्त्रजाप करते हुए हैरानी से इस करतब को देखते हैं। एक यंनपा अर्थात् श्रावक को नग्न कर उसके पेट पर तीन बार काले रंग का एक चिह्न लगाया जाता है। उसे दुष्टात्मा के रूप में मान कर उसके पेट पर तीन बार तलवार का वार किया जाता है। इसके बाद होता है पत्थर तोड़ने का प्रदर्शन। यह विघ्न निवारण का प्रदर्शन है। पहले वह मन्त्रोच्चारण करता हुआ पत्थर की परिक्रमा करता है। बार बार पत्थर के सामने झुकता है। एक पात्र से चारों ओर जौ फेंकता है। लो-छैन के प्याले में छंग भरी जाती है। वह उसे पत्थर के चारों ओर पांच बार गिराता है। इसके बाद पत्थर के सामने खड़ा को प्रार्थना करता है। प्रस्तुत ग्रामीणों में किसी को बुला कर जमीन पर लिटा दिया जाता है और उसके पेट पर पतला सा कपड़ा बिछा कर पत्थर रख दिया जाता है। इस पत्थर को बुछैन पेट पर ही तोड़ता है। पत्थर यदि पहले प्रहार से टूट जाता है तो शुभ माना जाता है। यदि दो तीन प्रयासों में भी पत्थर न टूटे तो किसी दूसरे व्यक्ति को लिटा कर पुनः पत्थर तोड़ने का प्रयास किया जाता है।

पत्थर के टूटते ही देवता की जय जयकार की जाती है। पत्थर का टूटना अशुभ पर शुभ, अमंगल पर मंगल और दुष्टात्माओं पर देवताओं की विजय मानी जाती है। एक प्रहार से पत्थर टूटने को 'धर्मकाय' माना जाता है। दूसरे प्रहार से टूटने पर 'सम्भोगकाय', तीसरे पर 'निर्माणकाय', चौथे पर 'चतुर्दिशा स्वामी', पांचवें पर ' पंच ध्यानी बुद्ध', छठे पर 'षष्ठ दिशा बुद्ध' सातवें पर 'सात बुद्धों का समूह', आठवें पर 'अष्ट संगत', नौवें पर 'नव धर्म सिद्धांत', दसवें पर 'दस रूपी गुरू', ग्यारहवें पर 'ग्यारह सिरों वाला अवलोकितेश्वर', बारहवें पर 'धरती माता के बारह रूप' और तेरहवें पर 'वज्रधर' कहा जाता है। तेरह बार प्रयास करने पर भी पत्थर न टूटे तो माना जाता है कि अब महान् विनाशकारी और कष्टकारी समय आने वाला है। अब इस पत्थर को किसी चौराहे पर रख दिया जाता है। अब इसे सौ लोहारों द्वारा एकसाथ प्रहार कर, या आठ नवयुवकों द्वारा प्रहार तोड़ा जाता है। बुछैन द्वारा पत्थर के टूटने पर ग्रामीण पत्थर के टुकड़ों को उठाने के लिए दौड़ते हैं। ग्रामीण इन टुकड़ों को घास रखने की जगह में रखते हैं जिससे घर में दूध घी की वृद्धि होती हैं। इसे घरों में मादक पेय बनाने के पात्र में भी रखा जाता है। विश्वास है कि इससे मदिरा और मादक और स्वादिष्ट बनती है।

अब बुछैन को लोग घर से लाए जौ, अनाज, सत्तू, घी और रुपये पैसे भेंट करते हैं। बुछैन वाद्य बजाता है और सभी नृत्य करने लगते हैं। बुछैन इस समय अश्लील शब्दों का भी प्रयोग करता है ताकि दुष्टात्माएं गांव से भाग जाएं।

नाट्य की समाप्ति पर बुछैन दूसरे गांव की ओर प्रस्थान करते हैं। एकत्रित ग्रामीण उन्हें अपने गांव की सीमा तक छोड़ने जाते हैं। दूसरे गांव के लोग उन का स्वागत करते हुए अपने गांव में श्रद्धापूर्वक ले जाते हैं। इस तरह यह नाट्य गांव गांव में दिखाया जाता है ताकि गांव से दुष्टात्माओं को भगाया जा सके और सारी विघ्न बाधाओं का नाश हो। यह भी परंपरा है कि यदि बुछैन पिन घाटी के अंतिम गांव तक न पहुंच पाएं तो अगले वर्ष उसी गांव से नाट्य की शुरूआत होगी।

स्पिति की पिन घाटी में तो यह परंपरा जीवित है हीय किन्नौर, लद्दाख और लाहौल में भी यह पंरपरा निभाई जाती है। अब घरों में भी सुख समुद्धि के लिए बुछैन दलों को आमन्त्रित किया जाता है। कई जगह फसल कटाई से पहले जब छम्म नृत्य होता है, इसके साथ अंत में बुछैन भी करवाया जाता है। अब विवाह, शुभ कार्य, मेले उत्सव में भी बुछैन होने लगा है। वार्षिक मेलों जैसे लदारचा उत्सव, किनौर तथा केलंग में जनजातीय उत्सवों में भी बुछैन का प्रदर्शन किया जाता है। स्कूल, कॉलेज के समारोहों में भी बुछैन नाट्य किया जा रहा है जो एक अच्छी परंपरा है और इससे यह नाट्य जीवित रह सकेगा।

अन्य विशेषताएं

बुछैन प्रस्तुति में महिलाएं भाग नहीं लेतीं। बुछैन के कलाकार निम्नमध्य वर्ग से होते हैं। किसी को बुछैन में शामिल होने पर प्रतिबन्ध भी नहीं है। सामान्यतः सन्भ्रांत परिवारों से बुछैन नहीं बनते। सन्भ्रांत परिवारों को 'खाड़्छेन' कहते हैं। उनसे अलग हुए परिवार, जिन्हें 'खाड़्छुड' अथात् छोटे परिवार या घर कहा जाता है, से ही बुछैन बनते हैं। समाज में समझे जाने वाले निम्नतर वर्ग जैसे गरा या बेडा से भी बुछैन नहीं बन सकता। बुछैन लामाओं से अलग तरह से लम्बे लम्बे बाल रखते हैं। आम बोलचाल में बुछैन को बु-ज्हेन भी कहा जाता है।

इस कला को सीखने के इच्छुक युवा को दो तीन वर्षों तक किसी दल के साथ रह कर उनके साथ घूमना पड़ता है। इसे गा कर और नाच दिखा कर अपनी योग्यता का प्रदर्शन करना होता है। इसे प्रशिक्षण के समय 'थोगपो' अर्थात् सेवक कहा जाता है।

बुछैन का अर्थ 'बड़ा लड़का' भी है। बौद्ध मत में लामाओं

और शिष्यों को पिता पुत्र के समान माना जाता है। अतः बुछैन का अर्थ है सब से बड़ा शिष्य। बुछैन के संस्थापक थंग तोंग ग्यलपो के नाम से पहले 'फ' लगाया जाता है। उन्हें 'फ डुबछेन थंग तोंग ग्यलपो' कहा जाता है जिस का अर्थ है पिता महासिद्ध थंग तों ग्यलपो।

बुछैन बनने के समय जाप, मन्त्रोच्चारण, तथा कथाएं

बुछैन एक विचित्र परंपरा रही है जिस में कई तरह से मन्त्रजाप, मन्त्रों का लाख लाख बार उच्चारण तथा कई कथाएं सुनाने का प्रचलन रहा है। बुछैन बनना कोई साधारण या आसान क्रिया नहीं है। इसमें कई साधनाओं से हो कर गुजरना पड़ता है जो बहुत कठिन हैं।

मन्त्र जाप

बुछैन में सर्वप्रथम इस परंपरा के संस्थापक थंग-तोंग-ग्यलपो की प्रतिमा के समक्ष एक लाख बार मस्तक झुका कर मन्त्र जाप करना होता है। यह मूल मन्त्र 'ऊं मणि पद्मे हूं' है। 'मणि खोर लो' या मणिचक्र हाथ में लिए हुए, उसे घुमाते हुए यह जाप किया जाता है। दाएं हाथ में मणि चक्र और और बाएं हाथ में 'ठङ्गा' अर्थात् माला ले कर मंच पर स्थातिप मूर्तियों के सामने यह जाप किया जाता है। इसलिए बुछैन को 'मणिपा' भी कहा जाता है। इस क्रिया को 'छाग-बुम' कहा जाता है।



प्रार्थना में गुरु लामा को नमस्कार किया जाता है। गुरु तथा आध्यात्मिक सत्ता के प्रति निष्ठावान होने, अवलोकीतेश्वर के प्रति निष्ठावान होने, थंग-तोंग ग्यल्पो के प्रति निष्ठावान होने की प्रार्थनाएं की जाती हैं जिसे आरम्भ निम्न मन्त्रों से होता हैः-

इस प्रार्थना के बाद लो-छैन शंख बजा कर खेल आरम्भ का संकेत देता है। शंख ध्वनि से दूर दूर के गांवों तक इस की सूचना पहुंच जाती है। एक बड़ा पत्थर ला कर रख दिया जाता है। इस पत्थर पर लो-छेन एक मानव आकृति बनाता है जो दुष्टात्मा की प्रतीक है। इसे धूप दीप दिखा कर इसके चारों ओर नृत्य किया जाता है। सभी वाद्य यन्त्र बजाए जाते हैं। नृत्य धीरे धीरे आरम्भ हो तेज होता जाता है। नर्तक बाएं, दाएं घूमते हुए पूरा चक्कर लगाते हैं।

वेनपा या लुगजी द्वारा संवाद

वेनपा का काम हास्य रस की उत्पति करना है। इसलिए वह ऐसे संवाद बोलता है जिससे दर्शकों में हास्य का संचार हो। यह पात्र तिब्बत के ल्हासा बाजार में रहने वाली लाचघग वांगमो का किस्सा सुनाता है जो बड़ी धार्मिक प्रतीत होती हैं। मन वचन से भी शुद्ध होती हैं, फिर भी उन्हें सिद्धि प्राप्त नहीं होती। वे चित्त को अपने गुरु में रमाने के लिए गुरु के पास जाती हैं, परंतु उनका मन कहीं और ही विचरण करता है।

वेनपा और बुछैन के बीच हंसी मजाक के संवादों के बाद दोनों में लड़ाई हो जाती है। वेनपा को जंगली बादशाह समझा जाता है। बुछैन जौ के दाने अभिमन्त्रित कर के दर्शकों को वेनपा पर फेंकता है। अंत में वह अचेत हो गिर जाता है और निम्न गीत गाता है :

बकआ थोस पा मछोग गी समस गुसम योद।

गीत में महामहिम दलाई लामा, टशी लामा और गुरु लामाय इन तीन के साथ अच्छी फसल, राजा का अन्न भण्डार और धनवान वधु सहित एक पुत्र होने का स्मरण किया जाता है। इसी प्रकार चीनी चाय, खम का मक्खन और अच्छा बौद्ध विहारय इन तीन चीजों का स्मरण किया जाता है। ऐसे गीत के बाद वेनपा का खेल समाप्त हो जाता है।

जब बुछैन तलवार की नोक पर नाभि के सहारे शरीर का पूरा भर डाले खड़ा होता है उस समय भी एक गीत गाया जाता है। यह गीत सुरीला और लम्बा होता है जिसका अर्थ इस प्रकार हैः

''हे दयालु धर्मात्मा, जगत् गुरु! तू सूर्य और चांद के सिंहासन पर बैठा, जो हमारे सिर का ताज है, हम सब को अच्छी तरह से जानता है। हम अनुपम शंख-गृह में, जो हमारी खोपड़ी है, पचास 'खाग-थुड.' दैवी शक्तियों की पूजा करते हैं। हम अपने कण्ठ की मधुर ध्वनि से छह अक्षर के 'ऊं मणि पद्मे हूं' मन्त्र द्वारा प्रार्थना करते हैं। हम विधि के स्रोत चक्र में, जो हमारा वक्ष है, उस दयालू महान् संरक्षक की प्रार्थना करते हैं। हम हर्षोल्लास के स्रोत चक्र में, जो हमारी नाभि है, पांच प्रकार की डाकनियों की पूजा करते है। हम सम्भोग कार्य में, जो हमारे शरीर का गुप्तांग है, दोंर्जे-ग्जोन-नु कर प्रार्थना करते हैं। हम चार भुजाओं युक्त देह से, जो हमारा शरीर है, पवित्र शांत देवता की पूजा करते हैं। हम शरीर के अट्ठाईस जोड़ों में, जिनसे मेरुदण्ड बनता है, अट्ठाईस दैवी शक्तियों के स्वामी की प्रार्थना करते हैं। हम 'ऊं मणि पद्मे हूं' का जाप करते हैं।''

पत्थर तोड़ने से पूर्व के चमत्कारी खेलों में यह महत्त्वपूर्ण प्रार्थना है।

इसके बाद चित्तोपाद के लिए मन्त्रोच्चारण किया जाता है। अपने गुरू या इष्टदेव में चित्त को रमाना बहुत आवश्यक है। इसके लिए भी एक लाख बार मन्त्र का उच्चारण करना होता है।

इस मन्त्र मे कहा गया है कि नरक के समान बड़ा कोई ब्यूह

नहीं, बुद्धि, ज्ञान और त्रिकाया भद्र हैं। इस शरीर में शैशव से ही क्रोध का संचार हो जाता है। मैं आपका शरणागत हूं, मुझे इन सब से मुक्ति दीजिए!

उक्त मन्त्रजाप के अतिरिक्त कुछ छोटे छोटे मन्त्र भी है जिन का जाप करना होता है।

इसके बाद बुछैन को समाधि में बैठना होता है। साधारण बुछैन के लिए समाधि की अवधि एक वर्ष है और मुख्य बुछैन बनने के लिए तीन वर्ष। इस पूरे नृत्य के बाद ही वह किसी नाट्य मण्डली का सदस्य बन सकता है। पहला प्रदर्शन उसे अपने ही गांव में देना होता है और उसके बाद कहीं भी बाहर जा सकता है।

बुछैन द्वारा कथाओं का प्रदर्शन

बुछैन को अपने प्रदर्शन के समय कई कथाओं का सहारा लेना पड़ता है क्योंकि उसे इन कथाओं को सुनाने और इनका नाट्य रूपांतर करने की आवश्यकता पड़ती है। विभिन्न धार्मिक कथा कहानियों, जातक कथाओं को उसे नाट्य के समय सुनाना और प्रदर्शन करना पड़ता है। अतः मुख्य पात्र बुछैन को एक लामा की तरह पठन पाठन करना होता है। उसके घर में इन कथाओं की पोथियां विद्यमान रहती हैं। बौद्ध महापुरुषों की जीवनियां, जातक कथाएं तथा कई प्रसिद्ध प्रसंग इनके नाटक की कथावस्तु बनते हैं।

कहानियों में 'दय लोग नाग सा होन बुम', 'दय लोग लिंगजा छोए किद','दय लोग सांगे छोए जोम', 'उर्ग्यन डिमेद कुनदन', 'डम-जे जुग की यिंमा', 'छोए ग्यल युन रल वा', खिंऊ पदमा होद बर', डुगपा कुन्लेग', 'दोचा मोचा', जुड़्पो दोन योद' आदि कथाओं का प्रयोग इस नाट्य में किया जाता है। इन कथाओं में पुर्नजन्म, महान् साधकों के अतिरिक्त 'मिला रेपा' जैसे कवियों की कहानी भी कही जाती है।

बुछैन द्वारा खेले जाने वाले अन्य नाटक

बुछैन के उक्त परंपरागत नाट्य के अतिरिक्त अन्य नाटक भी खेले जाते हैं। इन नाटकों में तन्त्र की महत्ता रहती है। ये नाटक प्रचलित कथाओं पर आधारित होते हैं। ड्रोवा जंगमों, करमा बागजिन, जुकी यिंमा, लावेद तंडुप, युनाडण्डुब, ल्हाची सेरजोम आदि कथाओं को नाटक के रूप में प्रदर्शित किया जाता है। इन में पद्‌म होतवर, नकसल होतबुम, राजा डिगेद कुंदन, लाचिन कांगजोर का स्वयंवर, रानी सूर्यमुखी के नाटक प्रमुख हैं।

अब बुछैन करने वाले परंपरिक पाट्य दलों की संख्या घट रही है। सन् 1917 में स्पीति की पिन घाटी में उन्नीस परिवार इस नाट्य प्रदर्शन से जुड़े हुए थे। इस के लगभग बीस साल तक संख्या लगभग इतनी ही रही। कुछ वर्ष पहले (सन् 2006) तक नौ नाट्य दल प्रदर्शन कर रहे थे। ये पिन घाटी के सगनम, लीतिंग, बर, खर, गुलिंग और मुद गांवों में थे। समय के प्रभाववश ऐसी दुर्लभ परंपराओं का दिनोंदिन ह्रास होता जा रहा है। बहुत सारे ऐसे समागम समाप्त भी हो चुके हैं। प्रदेश में इस बांठड़ा, करियाला आदि का मंचन किया जाते लगा है। कई जगह महाविद्यालयों के युवा महोत्सवों में ऐसे नाट्य देखने को मिल जाते हैं। कुल्लू में होने वाले गूर खेल या देऊ खेल का मंचन भी कई बार देखने को मिलता है। इसी तरह बुछैन का मंचन भी युवाओं द्वारा महाविद्यालयों के युवा समारोहों में या लादरचा मेला जैसे परंपरागत उत्सवों में या जनजातीय मेलों जैसे नये आयोजनों में किया जाने लगे तो इस पुरातन पंरपरा को जीवित रखा जा सकता है।

'अभिनंदन' कृष्ण निवास
लोअर पंथा घाटी शिमला-171009, मो. 94180-85595



आखिरी पन्ना

मन समर्पित, तुझे तन समर्पित...

इतिहासकार एवं साहित्यकार स्वर्गीय श्री विनोद लखनपाल, सेवानिवृत्त संयुक्त निदेशक सूचना एवं जन सम्पर्क हिमाचल प्रदेश द्वारा लिखित पुस्तक 'भारतीय स्वतंत्रता संघर्ष 1757-1947 प्रमुख घटनाएं एवम् विद्रोह' से अजय पाराशर द्वारा संकलित एवं सम्पादित लेख।

हम आजाद देश हैं और अपनी आजादी के 69वें वर्ष में प्रवेश कर चुके हैं। 15 अगस्त, 1947 में गुलामी के बोझ से झुकी कमर, स्वतन्त्र और प्रकाशमान भविष्य से सीधी हुई थी और अंग्रेजी हुकूमत अपनी आखिरी हिचकी लेकर हिन्दुस्तान से सदा के लिए विदा हुई थी। किस्मत ने साथ दिया, सालों से किये गए संघर्ष ने सफलता अर्जित की, कुर्बानियां रंग लाईं और देश को आजादी के साथ साँस लेने का सौभाग्य प्राप्त हुआ, हम गर्व के साथ सिर उठाकर सभी स्वतंत्र मुल्कों के साथ कदम मिलाकर चलने में सक्षम हुए।

अंग्रेजों के भारत में पाँव जमाने से लेकर यहां से विदा होने तक भारत का स्वतंत्रता संग्राम का इतिहास, जहां एक ओर अंग्रेजों की कूटनीति, कुटिलता, नृशंसता, स्वार्थ और अवसरवादिता को दर्शाता है, वहीं भारतीय रजवाड़ों की मतलबपरस्ती, दोगलेपन, अदूरदर्शिता और संकुचित सोच को भी सामने लाता है। अपने देश से हजारों किलोमीटर दूर मात्र मुट्ठी भर व्यापारियों के समूह द्वारा भारत में विशाल साम्राज्य स्थापित करने में सफल होना, भारतीयों की आपसी फूट, संकुचित मानसिकता और मतलबपरस्ती को दर्शाता है। किन्तु 1857 में आजादी की पहली लड़ाई, पूरे देश में यह चेतना जगाने में कामयाब रही कि फिरंगी अजेय नहीं हैं, उन्हें हराया जा सकता है। लगभग 90 वर्षों तक चले स्वतंत्रता आन्दोलन के कालखंड में भारतीय राजनीति में क्रान्तिकारी आन्दोलन, नौसेना का विद्रोह, काँग्रेस, तथा अन्य राष्ट्रीय संस्थाओं द्वारा चलाए गए आन्दोलन सामने आए। नेताजी सुभाष चन्द्र बोस की आजाद हिन्द सेना की वीरगाथाएं लोगों में आजादी की लौ बढ़ाती रहीं। हमें आजादी तो मिली किन्तु राष्ट्र विभाजन के साथ, शातिर अंग्रेज भारतीय राजनीति में पुनः अपनी चाल में सफल रहे। देशवासी पागल हो गए और भाई ने भाई का गला काटा, इन्सान ने वहशी बन कर अमानवीयता की हर हद पार कर दी। हमने उन्हें भुला दिया जिन्होंने राष्ट्रीय स्वतंत्रता, एकता और अखंडता के लिए अपनी जाँ तक निसार दी और आजादी की बुलन्द और आलीशान इमारत पर बनी दिल लुभाने वाली तस्वीरों को अपने गाढ़े खून की लाली से सजाया और संवारा। आज आजादी के जिस ऊँचे शिखर पर हम तमाम भारतीय खड़े हैं, उसकी मजबूती, टिकाऊपन और खूबसूरती का राज उस चूने-सुर्खी के लेप में छिपा है जिसे आजादी की लम्बी लड़ाई के दौरान हमारे शहीदों और सेनानियों ने अपने लहू और हड्डियों से गूंथा था। उनकी कुर्बानियों को भूल जाना या भुला देना स्वयं को बहुत बड़ा धोखा देना है। किन्तु आज खुदगर्ज और मौकापरस्त लोग चांदी कूट रहे हैं। ऐसे तत्त्वों के खिलाफ हमें आजादी की एक और लड़ाई लड़नी होगी। हमारे अधिकांश लोगों को आज यह एहसास नहीं है कि जो आजादी हमें थाली में रखी मिली है, उसके लिए हमारे पूर्वजों ने क्या-क्या बलिदान दिये हैं और किस प्रकार अत्याचारों को सहा है।

इसमें कोई दो राय नहीं कि आजादी के बाद हमने इन वर्षों में खूब तरक्की की है, सफलता के नए कीर्तिमान स्थापित किए हैं। आज हमारा देश विश्व में तीसरी आर्थिक शक्ति के रूप में उभर कर सामने आया है। अन्तरिक्ष विज्ञान में हमने कई मील पत्थर लांघे हैं। कृषि, शिक्षा, स्वास्थ्य, उद्योग, परिवहन, रक्षा आदि क्षेत्रों में नए आयाम स्थापित किए हैं। हमारे पास गर्व करने के लिए बहुत कुछ है। किन्तु यह भी सत्य है कि हर साल खेती की जमीन कम हो रही है, हजारों किसान खेती छोड़ रहे हैं और खुदकुशी करने के लिए मजबूर किए जा रहे हैं। करोड़ों लोग बेरोजगारी झेल रहे हैं। कई यक्ष प्रश्न भी हमारे समक्ष मुँह बाए खड़े हैं और अगर हमने उन्हें हल नहीं किया तो बतौर व्यक्ति, समाज और राष्ट्र हमारा भविष्य सुरक्षित नहीं। हम भले ही स्वतंत्र राष्ट्र में साँस ले रहे हों किन्तु हमारी आने वाली पीढ़ियों का भविष्य महफूज नहीं। स्वतंत्रता दिवस पर मात्र झंडा फहराने, कुछ समारोह आयोजित किए जाने और सेनानियों एवं शहीदों को याद करने से ही हमारे कर्तव्य की इतिश्री नहीं हो जाती। स्वतंत्रता संग्राम का संघर्ष सामूहिक प्रयास था और इसी प्रकार इसे सुरक्षित रखना भी हम-सब का फर्ज होना चाहिए। हमें न केवल उनके प्रति नतमस्तक होना चाहिए जिन्होंने देश की आजादी में भाग लिया और अपने जीवन का उत्सर्ग किया बल्कि विरासत में मिली इस सौगात की रक्षा उसी प्रकार करनी चाहिए जैसी अपने हम पुरखों

की उस विरासत का करते हैं जिसकी हम कोई कीमत नहीं चुका सकते। हमें सोचना होगा कि हम किस प्रकार इस अमूल्य धरोहर को सुरक्षित रख सकते हैं। कोई अकेला व्यक्ति इसकी सुरक्षा नहीं कर पाएगा, हमें सामूहिक प्रयास करने होंगे और यही एकता है। हमें सोचना होगा कि हम किस प्रकार एकता को कायम रख सकते हैं। हमें हमेशा याद रखना होगा कि केवल देशभक्ति का मंत्र ही हमें मजहब, जाति, भाषा, रिवाजों और रिवायतों के विवादों से ऊपर उठा सकता है। इसके लिए हमें धर्म निरपेक्षता के सही मायने समझने होंगे, सभी थोथी निष्ठाओं से ऊपर उठकर राष्ट्रभक्ति से कोई समझौता नहीं करना होगा, हर प्रकार के आतंकवाद से लड़ना होगा चाहे इसके लिए कोई भी कीमत चुकानी पड़े।

हमें अपने गौरवमय इतिहास, बेहतर वर्तमान और सुनहरे भविष्य के सपनों के साथ एक प्रश्न पर सदैव विचार करना होगा कि हमारा देश महान कैसे बन सकता है, आजादी के इतने वर्षों बाद भी गरीबी क्यों है, सामाजिक व्यवस्था में असन्तुलन क्यों है, इसे किस प्रकार दूर किया जा सकता है, हम राष्ट्र के प्रति जवाबदेह क्यों नहीं है, सभी लोगों को उनका हक क्यों नहीं मिल रहा है, लोगों में साम्प्रदायिक विद्वेष क्यों है, एक देश की सन्तान होकर भी छोटे-छोटे विवाद क्यों हमें अलग सोचने पर मजबूर करते हैं, हमारे नेता स्वार्थी क्यों हैं, क्यों लोग बिना मेहनत के ही लाभ अर्जित करना चाहते हैं, भ्रष्टाचार और रिश्वतखोरी से कैसे पार पाया जाए और हम अपने राष्ट्र को महान क्यों कहें?

इन तमाम विसंगतियों के बावजूद भारत एक महान राष्ट्र है, इसमें कोई सन्देह नहीं। हो सकता है कि कई मुद्दों पर हमारे मध्य मतभेद हों किन्तु आजादी के बाद आवश्यकता पड़ने पर सारे राष्ट्र ने शत्रु के सामने एकजुटता निभाने में कभी पीठ नहीं दिखाई। पाकिस्तान और चीन से युद्धों के अलावा सुनामी, बाढ़, सूखा, भूकम्प और तमाम प्राकृतिक आपदाओं के वक्त पूरा राष्ट्र एक-दूसरे के साथ कंधे से कंधा मिलाकर खड़ा था।

ब्रितानवी हुकूमत के खिलाफ भिन्न-भिन्न धर्मों और सम्प्रदायों ने लोगों में राष्ट्रीयता की भावना पैदा करने में अहम भूमिका निभाई थी और वे मात्र सहायक की भूमिका में थे जबकि राष्ट्र सर्वोपरि था। भारत के स्वतंत्रता संग्राम को आम लोगों का सहयोग और समर्थन यदि प्राप्त हुआ तो इसकी एक मुख्य वजह थी कि हमारे ऋषियों, मुनियों और मनीषियों द्वारा भारतवर्ष की कल्पना 'भारतमाता' के रूप में की गई, जिसे हमने 'सुखदाम', 'वरदाम' और 'मलयज शीतला' आदि कई श्रद्धा और भक्ति समन्वित विशेषणों से उसकी वन्दना की है। आजादी की लड़ाई में कई ऐसी घटनाएं भी हुईं जब भूखे, नंगे और निहत्थे लोगों ने देशभक्ति के रंग में सराबोर होकर 'भारत छोड़ो' और 'करो या मरो' के नारे लगाते हुए अंग्रेजी शासन की चूलें हिला दीं। 'वन्दे मातरम्' के दो शब्दों में न जाने क्या जादू था कि भारत माता के असंख्य वीर इस महामंत्र का उद्‌घोष कर अंग्रेजों की लाठियों और गोलियों को हंस-हंस कर झेलने के अलावा फांसी के फंदे को अपनी प्रेयसी मानते रहे। आजादी की लड़ाई के दौरान जो नारे स्वतंत्रता संग्राम का बीज बने, उनमें

1. वन्दे मातरम्,
2. स्वराज्य हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है,
3. सरफरोशी की तमन्ना अब हमारे दिल में है,
4. इन्किलाब जिन्दाबाद,
5. जय हिन्द,
6. तुम मुझे खून दो, मैं तुम्हें आजादी दूंगा,
7. भारत छोड़ो,
8. करो या मरो
   और
9. दिल्ली चलो, प्रमुख हैं।

किन्तु राष्ट्र विभाजन के वक्त और आज भी कट्टरपंथी और संकुचित विचारधारा वाले कई धार्मिक संगठन और सत्ताकामी नेता अपने निहित स्वार्थों के लिए धर्म और सम्प्रदायों को इस्तेमाल कर रहे हैं। ऐसे लोगों के लिए बंकिम बाबू ने 'वन्दे उदरं' शब्द का प्रयोग ठीक ही किया था।

स्वतंत्रता दिवस हमें एक ऐसा अवसर प्रदान करता है जब राष्ट्र के समक्ष खड़ी सभी चुनौतियों पर विचार करने के अलावा हम उनके समाधान के लिए न केवल संकल्प ले सकते हैं बल्कि एकजुट होकर सही दिशा में सार्थक कदम बढ़ा सकते हैं। हमें याद रखना होगा कि केवल उन्हीं व्यक्तियों ने देश के लिए बलिदान नहीं दिए जिनके नाम हमारे समक्ष आते हैं, लेकिन असंख्य लोग ऐसे भी हैं जिनका स्वाधीनता संघर्ष में कहीं नाम तो नहीं आता किन्तु जिनका खून भारतमाता के चरणों में महावर की तरह अंकित है। हमें लोकनायक जयप्रकाश की कविता 'मेरा जीवन' की इन पंक्तियों को याद रखकर भारत को महान राष्ट्र बनाने के लिए प्रयत्न करने होंगे :-

मंजिलें वे अनगिनत हैं
गन्तव्य भी अति दूर है।
रुकना नहीं मुझको कहीं
अवरुद्ध जितना मार्ग हो।
निज कामना कुछ है नहीं
सब है समर्पित ईश को।

और यहां ईश कोई और नहीं हमारा राष्ट्र है, हमारा प्यारा भारत।

उप निदेशक, सूचना एवम् जन सम्पर्क विभाग,
क्षेत्रीय कार्यालय, कांगड़ा स्थित धर्मशाला-176215

हिमप्रस्थ

वर्ष : 60 अक्तूबर, 2015 अंक : 7

सम्पादकीय कार्यालयः हि. प्र. प्रिंटिंग प्रेस परिसर, घोड़ा चौकी, शिमला-5

वार्षिक शुल्क : 150 रुपये, एक प्रति : 15 रुपये

E-Mail : himprasthahp@gmail.com
Tell: 0177 2633145, 2830374

ज्ञान सागर

कृत्रिम प्रेम बहुत दिनों तक नहीं टिक सकता और स्वाभाविक प्रेम की नकल नहीं की जा सकती।

– स्वामी रामतीर्थ

इस अंक में

लेख

अपनी बात

दो अक्तूबर को हम हर वर्ष 'गांधी जयंती' के रूप में मनाते हैं। सत्य और अहिंसा के पुजारी महात्मा गांधी भारतीय जनमानस के एक ऐसे महानायक हैं जिनके आदर्शों एवं शिक्षाओं की महत्ता को पूरे विश्व में स्वीकारा गया है। विश्व शांति में गांधी जी के अहिंसा के मार्ग को बढ़ावा देने के लिए संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा गांधी जयंती को विश्वभर में प्रति वर्ष 'अंतर्राष्ट्रीय अहिंसा दिवस' के रूप में मनाने का फैसला उनके विश्वव्यापी विचारों एवं सिद्धांतों की प्रासंगिकता को पुष्ट करता है। आज के वर्तमान युग में विश्वव्यापी समस्याओं का शांतिपूर्ण तरीके से समाधान करने के लिए महात्मा गांधी की दूरदर्शी सोच, विचारों और सिद्धांतों के अनुसरण की नितांत आवश्यकता है। महात्मा गांधी का मत था- "यदि हम संसार को वास्तविक शांति की सीख देना चाहते हैं तो हमें सबसे पहले बच्चों से शुरुआत करनी होगी। हमें अपने बच्चों को बाल्यावस्था से ही भौतिक, सामाजिक और आध्यात्मिक तीनों की संतुलित शिक्षा के साथ सार्वभौमिक जीवन-मूल्यों की सीख देकर उन्हें सर्वप्रथम 'विश्व नागरिक' बनाना होगा।" आज जब हम गांधी जी के जीवन और सार्वभौमिक शिक्षाओं की बात करते हैं तो हमें उनके विश्वव्यापी दृष्टिकोण के पीछे प्राचीन भारतीय समृद्ध संस्कृति एवं उच्च परंपराओं के दर्शन होते हैं। उनका मानना था कि स्वतंत्रता को सत्य और अहिंसा के पथ पर चलकर प्राप्त करने से पूरे संसार में भारत के गौरव की अभिवृद्धि होगी और हम विश्व गुरु के प्राचीन गौरव को पुनः प्राप्त कर सकेंगे। आज पूरा विश्व जिस अशांति के दौर और विषम परिस्थितियों से गुजर रहा है, उससे निपटने के लिए गांधी जी की शिक्षाएं और भी अधिक प्रासंगिक और सार्थक प्रतीत होती हैं। बिगड़ती विश्व व्यवस्था को दुरुस्त करने में अहिंसा का मार्ग ही आशा की किरण जान पड़ता है। यह एक संयोग ही है कि देश के तत्कालीन प्रधान मंत्री श्री लाल बहादुर शास्त्री की जयंती भी 2 अक्तूबर को ही पड़ती है। इस दिन पूरा राष्ट्र गांधी जयंती तथा शास्त्री जयंती एक साथ मनाता है। इस वर्ष शास्त्री जी के जन्म दिवस का विशेष महत्त्व है, क्योंकि भारत ने उनके कुशल नेतृत्व में 1965 के युद्ध में विजय का परचम लहराया और हम इस वर्ष इस युद्ध की 50वीं वर्षगांठ मना रहे हैं। सादगी एवं कर्तव्य परायणता की प्रतिमूर्ति लाल बहादुर शास्त्री को देश को सशक्त नेतृत्व प्रदान करने तथा किसानों व जवानों का मनोबल बढ़ाने के लिए स्मरण किया जाता है। विनम्र स्वभाव, दृढ़ इच्छा शक्ति, सहिष्णु विचारधारा और ऊर्जावान शक्ति के मालिक शास्त्री जी लोगों के बीच एक ऐसे व्यक्तित्व के रूप में प्रसिद्ध थे, जिन्होंने न केवल देश की जन-भावनाओं को समझा बल्कि युद्ध के दौरान नाजुक एवं संवेदनशील परिस्थितियों में भी वे देशवासियों की आशाओं एवं आकांक्षाओं पर भी खरा उतरे। गांधी जी के समतुल्य ही उच्च विचार रखने एवं सादगीपूर्ण जीवन यापन के लिए वह सही मायनों में सादगी एवं कर्तव्य परायणता की प्रतिमूर्ति बनकर उभरे। हमारी संस्कृति में अक्तूबर महीने का विशेष महत्त्व है। हिमाचल का प्रसिद्ध 'अंतर्राष्ट्रीय कुल्लू दशहरे' का प्रदेश की समृद्ध संस्कृति के संरक्षण एवं संवर्धन में विशेष योगदान है। अंतर्राष्ट्रीय ख्यातिप्राप्त कुल्लू दशहरा की अपनी एक अलग विशेषता है कि यह पूरे भारतवर्ष में मनाए जाने वाले दशहरे के बाद आरंभ होकर कुल्लू में सात दिनों तक पारंपरिक हर्षोल्लास के साथ मनाया जाता है। मेले में कुल्लू घाटी के सैकड़ों देवी-देवताओं के अनूठे संगम को देखने बड़ी संख्या में श्रद्धालुओं तथा देश-विदेश के सैलानियों का सैलाब उमड़ पड़ता है। हिमाचल प्रदेश की समृद्ध संस्कृति के परिचायक मेले एवं त्योहार हमारे जनजीवन का अभिन्न अंग हैं जिनका हर स्तर पर संरक्षण अति आवश्यक है। आशा करते हैं कि त्योहारों का यह मौसम सभी के जीवन में नई खुशियां लाएगा।

-संपादक

आलेख

लाहुल : लोक और लोकधारा

● तुलसी रमण

लाहुल के भू-भाग पर कई सदियों तक लद्दाख, कुल्लू और चम्बा के राजाओं की जद्दोजहद चलती रही। इन राज्यों की ओर से अपनी-अपनी दिशा से इस अंतरंग लोक को हथियाने के प्रयास होते रहे और यहाँ के कुछ क्षेत्रों पर इन प्रतिद्वंद्वी राजाओं के अधिकार भी बदलते रहे। 17वीं शताब्दी के मध्य में लद्दाख पर मध्य तिब्बत की ओर से मंगोलों ने आक्रमण किया। लद्दाख के राजा देलग नमग्याल (1645-1680 ई.) ने कश्मीर के मुगलों का सहयोग लिया और 'बज़गो' की लड़ाई में आक्रमणकारियों को पीछे धकेल दिया। मंगोलों के हट जाने पर कुल्लू के राजा विधि सिंह (1672 ई.) ने ऊपरी लाहुल का सारा क्षेत्र अपने अधीन कर लिया था। तिब्बती आक्रमण से जूझने के कारण जब लद्दाख के शासक लाहुल की ओर दखल देने के काबिल न रहे तो विधि सिंह ने थिरोटनाला की सीमा तक पट्टन घाटी पर भी कब्ज़ा करके सारे लाहुल पर अपना आधिपत्य कायम कर लिया था।

उसके बाद सन् 1840 में महाराजा रणजीत सिंह ने कुल्लू और लाहुल को एक साथ हथियाकर अपना शासन जमा लिया था। लेकिन 17वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध से लेकर सन् 1840 तक करीब डेढ़ सौ वर्षों की अवधि में लाहुल पर कुल्लू के राजाओं का शासन रहा। यही कारण रहा कि इस अवधि के लाहुल सम्बन्धी अभिलेखों और अन्य दस्तावेज़ों में विधि सिंह का नाम सबसे अधिक मिलता है। आखिर विधि सिंह ने लद्दाख का प्रभाव हटाकर सम्पूर्ण लाहुल को कुल्लू राज्य से जोड़ दिया था; इसलिए उसका नामोल्लेख स्वाभाविक ही था।

विधि सिंह के बाद कुल्लू का राजा मान सिंह (1688-1719 ई.) हुआ। उस काल में कुछ सामंतों ने कुल्लू शासन का विरोध किया; जबकि कोलोंग और तिनन के सामंतों ने मान सिंह के शासन को स्वीकार करके जागीरें हासिल कीं और कुल्लू के सामंतों की तरह खुद ठाकुर भी कहलाए। तभी कोलोंग का नोनो छोगन मुख्य शासक हुआ था।[1]

राजा विधि सिंह के समय में ही लाहुल की प्रशासनिक व्यवस्था में कई सुधार हुए। नज़राने को वस्तुओं की बजाय नकदी में देने का नियम लागू करना भी इनमें एक था। उसके बाद राजा मान सिंह ने लाहुल पर अपने अधिकार को मजबूत करके लिंगटी में लद्दाख के साथ की सीमा तय की, जो अब तक कायम है। उसने गोंधला में किले का निर्माण करवाया और गोंधला परिवार की बेटी से विवाह भी किया। कुल्लू के इन राजाओं के समय में ही नज़राना एकत्र करने तथा दूसरे प्रशासनिक उद्देश्यों से लाहुल के भू-भाग को 'बारह कोठियों' में बाँटा गया था। इनमें से चंद्र घाटी में सिसू, गोंधला और घोशाल की तीन कोठियाँ थीं और गाहर घाटी में करदंग, बरबोग, गुमरंग और कोलोंग की चार कोठियाँ तय की गई थीं। इसके साथ ही चंद्रभागा की पट्टन घाटी में तांदी, वारपा, जाहलमा, जोबरंग और रानिका की पाँच कोठियाँ थीं। इस तरह कुल्लू राज में यह शीत-मरु लोक 'बारह कोठी लाहुल' नाम से जाना जाता था। राजा कुल्लू के अधीन इस सारे क्षेत्र की तब एक 'वज़ीरी' थी। इसलिए लाहुल को कुल्लू राजा की 'सातवीं वज़ीरी' कहा जाता था।

अंग्रेज़ों के शासन काल में लाहुल की कोठियाँ 14 हो गई थीं। एक खोकसर कोठी स्पीति से हटाकर लाहुल में जोड़ दी गई थी। शांशा क्षेत्र की जनता से एकत्र होनेवाला कर पहले त्रिलोकनाथ मंदिर को जाता था, उसे भी साम्राज्यवादी अंग्रेज़ी शासन के दौरान सरकारी ख़जाने में ले लिया गया। इस तरह लाहुल में 14वीं कोठी शांशा की शामिल हो गई थी।

कोठी असल में सरकारी कर एकत्र करने के लिए एक क्षेत्रीय इकाई होती थी। लाहुल के बिखरे हुए क्षेत्र में एक कोठी के अंतर्गत गिनती के ही चंद गाँव आते थे। ऐसे हर क्षेत्र में नज़राने की वस्तुएँ एकत्र करने के लिए एक छोटा भवन भी उपलब्ध कराया गया था। दरअसल वह भवन 'सरकारी कोठी' कहलाता था और इस तरह उसके दायरे में आने वाला क्षेत्र भी 'कोठी' कहलाने लगा था। कुल्लू राजा के शासन काल में तीनों घाटियों की कुल 12 कोठियों की प्रशासन व्यवस्था के लिए एक 'कामदार' नियुक्त किया गया था, जिसका मुख्यालय तांदी में था और कर के रूप में प्राप्त होने वाले अनाज तथा थोबी आदि वस्तुओं के लिए



वहीं एक भंडार-गृह भी बनाया गया था।

अंग्रेज़ों के शासन काल में सारे लाहुल का प्रमुख प्रशासक 'नेगी' नियुक्त किया गया था, जिसके माध्यम से कर एकत्र किया जाता था। उसके अधीन नंबरदार होते थे। कालांतर में लाहुल के प्रशासक के रूप में खंगसर के एक ठाकुर को 'वज़ीर' नियुक्त किया गया और दूसरे ठाकुर को राजस्व अधिकारी बनाया गया था। इन ठाकुरों के पास विरासती शक्तियाँ पहले से थीं और फिर साम्राज्यवादी सरकार द्वारा प्रदत्त शक्तियाँ भी आ जुड़ीं। सरकार की ओर से एसिस्टेंट कमिश्नर गर्मियों में लगभग एक महीने के लिए कुल्लू से लाहुल के प्रवास पर आता था और प्रशासनिक मामलों का निपटारा करके वापिस लौट जाता था। मगर बदलते समय के साथ लाहुल की जनता ठाकुरों से संतुष्ट न थी। इसलिए सन् 1941 में केलंग में नायब तहसीलदार की नियुक्ति की गई और जून, सन् 1960 में 'लाहुल-स्पीति' के जिला बनने तक यही व्यवस्था बनी रही।

आज 'लाहुल-स्पीति' जिला का प्रमुख क्षेत्र लाहुल है और इसमें केलंग तथा उदयपुर दो सबडिविज़न हैं। स्पीति भले ही जिला प्रशासन में लाहुल के साथ जुड़ा है, लेकिन वहाँ की पारम्परिक समाज-व्यवस्था और सांस्कृतिक आधार पर्याप्त भिन्न हैं। प्रदेश के दूसरे जिलों की तरह लाहुल-स्पीति में भी पंचायती राज के अंतर्गत पंचायतें गठित की गई हैं। लेकिन एक भू-खंड या क्षेत्र विशेष के अर्थ में लाहुल की लोकधारा में अभी तक 'चौदह कोठियों' का समाज-भौगोलिक गणित चल रहा है। पुराने लोग तो ब्रिटिश राज से पहले वाले 'बारह कोठी लाहुल' की मुहावरेदारी में भी बात करते हैं। लेकिन इधर 1975 में चम्बा-लाहुल का क्षेत्र भी मुख्य लाहुल में आ जुड़ा है। इसलिए अब लाहुल की चौदह कोठियों में भी चम्बा-लाहुल के क्षेत्र को मिलाकर यह कुछ और विस्तार पा गया है।

लाहुल के लोगों द्वारा स्वतंत्रता पूर्व की कोठियों की गणना न भूलने के भी कई कारण हैं। इनमें प्रमुख है कि सामंती शासन के दौर में सड़कें और यातायात की सुविधाएँ न होने के कारण निकट के एक ग्राम-समूह को ही एक कोठी के अंतर्गत रखा गया था। उसके बाद लगभग डेढ़ सदी की अवधि में, प्रत्येक कोठी के समाज में भी एक तरह की अंतरंगता विकसित हो गई। लोक देवता, उनसे जुड़े अनुष्ठान और शादी-ब्याह, जन्म-मरण के कई रीति-रिवाज़ हर कोठी के कुछ अलग भी होते गए। इससे भी बढ़कर एक स्थायी कारण यह रहा है कि लाहुल के भौगोलिक विस्तार में गाँव या ग्राम-समूह दूर-दूर बिखरे बसे हैं। इसलिए एक कोठी की दूसरी कोठी से सामाजिक व्यवहार में भी दूरी बनी रहती है और इस कारण हर कोठी क्षेत्र की अलग पहचान भी आज तक कायम है।

कृषि और पशुपालन

लाहुल की भौगोलिक स्थिति और ग्राम प्रधान समाज होने के कारण, यहाँ जीवन निर्वाह का प्रमुख साधन कृषि और पशुपालन रहा है। इस भू-भाग में प्रारंभ से ही खेती की प्रधानता रही है और आज लाहुल ने जो आर्थिक समृद्धि पायी है, वह भी प्रमुख रूप से कृषि पर ही आधारित है। ऐसे क्षेत्रों में जहाँ औद्योगिक विकास संभव नहीं होता, कृषि पर निर्भरता स्वाभाविक है। इसलिए लगभग हर जाति और वर्ग के लाहुली लोग कृषि और पशुपालन में पूरे श्रम से जुटे रहते हैं।

कृषि की प्रधानता के रहते हुए भी, लाहुल के ढलानदार पर्वतीय क्षेत्र में कृषि योग्य भूमि बहुत कम है। यही कारण है कि इस विस्तृत भू-भाग में आबादी कम है। पट्टन घाटी में जहाँ अपेक्षाकृत कृषि भूमि अधिक है, वहाँ आबादी भी दूसरी घाटियों की अपेक्षा ज़्यादा घनी है। कृषि भूमि की कमी के साथ ही बर्फ़ानी क्षेत्र होने के कारण यहाँ वर्ष में कृषि कार्य का औसत समय भी बहुत कम रहता है। वर्ष में पाँच-छह महीनों तक लाहुल में बर्फ़ जमी रहती है। इसलिए शेष महीनों में साल में एक ही फसल पैदा की जा सकती है। केवल पट्टन घाटी में ही दूसरी फसल उगाई जाती है। पर्वतों से उतरती खड़ी ढलानों के नीचे नदियों के तटों वाले क्षेत्रों में ही कृषि योग्य भूमि पायी जाती है। यह सिंचाई वाली भूमि 'आबपाश' तथा बिना सिंचाई की 'बरानी' कहलाती है। इसके अलावा पशुओं का चारा पैदा करने के लिए 'दांग' (घासनियाँ) हैं। इन घासनियों में भी यहाँ कूहल के पानी से सिंचाई की जाती है, ताकि पर्याप्त घास पैदा करके, सर्दियों के पाँच-छह महीनों के लिए घर की छतों पर 'रेलंग' (ढेर) लगाकर, उसका भंडारण किया जा सके। लाहुल की प्रमुख फसलें जौ, गेहूँ, काठू, आलू तथा कुठ हैं। सब्जियों में मटर, गोभी, शलगम आदि भी

उगाए जाते हैं। कुठ, आलू और मटर लाहुल की नकदी फसलें हैं। आलू तथा मटर की फसलें पाँच-छह महीनों में तैयार की जाती हैं, लेकिन कुठ की खेती में लंबा समय लगता है। इसके अतिरिक्त लाहुल में हॉप्स की खेती भी शुरू की गई थी, जो पूरी तरह सफल नहीं हो सकी। लेकिन लाहुल को आलू बीज के लिए श्रेष्ठ माना गया है और देश के कई प्रांतों में इसकी बराबर माँग रहती है। सब्जियों में मटर खूब पैदा होता है और ऊँचे दाम बिकता है।

जौ लाहुल में पैदा होने वाला प्रमुख और पारम्परिक अन्न है। यह इस घाटी का मुख्य खाद्यान्न भी रहा है। यहाँ जौ की कई किस्में उगाई जाती हैं। पट्टन में जुलाई के अंत तक जौ तैयार हो जाता है और उसके बाद काठू की बीजाई की जाती है। जौ के अन्न को भून-पीसकर सत्तू तैयार किया जाता है, जो यहाँ का मुख्य पारम्परिक भोजन है। जौ के सत्तू को कई अनुष्ठानों में भी उपयोग में लाया जाता है। इससे ही पूजा में प्रयोग हेतु 'तोरमा' (बलि-प्रतीक) आदि बनाए जाते हैं। ये सत्तू छाछ, छंग या पानी में घोलकर खाए जाते हैं। इसे खाने के लिए दाल या सब्जी की ज़रूरत भी नहीं रहती।

काठू की बीजाई जौ की फसल काटने के बाद उन्हीं खेतों में की जाती है। इसकी फसल लगभग डेढ़ महीने में तैयार हो जाती है। इसलिए पट्टन घाटी में दूसरी फसल काठू की निकल आती है। काठू के आटे की रोटी बनती है और इसके हरे पत्तों को सब्जी के रूप में भी पकाया जाता है।

गेहूँ लाहुल में कम पैदा होता है। इसलिए इसकी बीजाई भी कम की जाती है। यही कारण है कि लाहुल में जौ ने अन्न के रूप में हर तरह से मुख्य स्थान पाया है। यहाँ तक कि एक मिथक कथा के अनुसार राजा गेपंग ने अन्न के जो दाने घाटी में पहले-पहल लाए थे, उनमें भी जौ का ही पहला स्थान था।

कुठ लाहुल की बहुमूल्य उपज है। इसकी जड़ों का उपयोग सुगंधित तेल तथा दवाइयाँ बनाने में किया जाता है। इसके लिए लाहुल का जलवायु उचित बैठता है। कुठ का इस्तेमाल घरेलू स्तर पर भी कई प्रयोजनों से किया जाता है। ऊनी कपड़ों के बीच इसे रखा जाए तो कपड़ों में कीड़े नहीं लगते। इसकी ताज़ा जड़ें पीसकर लगाने से कई तरह के व्रण ठीक हो जाते हैं। कुठ की जड़ें निकालकर देश-विदेश में निर्यात होकर ऊँचे दामों में बिकती हैं।

कुठ की खेती तीन साल में तैयार होती है। कई जगह भूमि उचित न होने पर चार साल भी लग सकते हैं। इसके लिए भूमि में नमी ज़रूरी होती है। इसलिए मई से सितंबर के मध्य कुठ की खेती में कई बार सिंचाई करनी पड़ती है। तीसरे साल कुठ के पौधों में फूल निकलते हैं और उसके बाद डोडे लगते हैं। इन्हें तोड़कर सुखाने के बाद कुठ के बीज निकाले जाते हैं। लेकिन कुठ की खेती में सबसे मूल्यवान इसकी जड़ें होती हैं। पौधे तैयार होने पर जड़ें अलग करके, उनके टुकड़े सुखाकर, बोरियों में मंडियों के लिए भेजे जाते हैं। लाहुल में वर्षा कम होती है। लेकिन वर्ष के लगभग छह महीनों में बर्फ़ बार-बार गिरती है। इससे ऊँचे पर्वतों के बीच बर्फ़ के भंडार भर जाते हैं। गर्मियों में ये ग्लेशियर पिघलते हैं तो घाटियों में पानी छल-छल करता उतरता रहता है। इसी पानी का कूहलों के माध्यम से व्यवस्थित उपयोग किया जाता है।

सिंचाई के पानी की व्यवस्था और उसका वितरण यहाँ की कृषि संस्कृति का एक प्रमुख पक्ष है। इसीलिए लाहुल के 'लाहमोई' उत्सव में 'तिपग' नामक प्रथा के अनुसार जो कृषक कूहल का जितना पानी अपनी खेती की सिंचाई में लगाता है, उत्सव में उसे उसी अनुपात में क्षेत्रीय लोगों को 'छंग' पिलानी पड़ती है। कूहलों के पानी के बंटवारे की भी बारियाँ लगती हैं। गुज़रे सालों में जब मैं चित्रकार सुखदास के घर पहली बार गया तो सींचने की बारी आने पर पानी का उपयोग करने के लिए उन्हें तत्काल उठकर जाना पड़ा था) क्योंकि वह घर में अकेले थे। भले ही अपने खेत में कूहल लगाकर वह जल्दी लौट आए थे। पर्वतों के इन पानियों से ही लाहुल के खेत लहलहा उठते हैं। इसी कारण फसलों के पकने की लाली लाहुलों के चेहरों पर भी खिल आती है।

पशुपालन कृषि के साथ जुड़ने वाला व्यवसाय है। पशु के बिना देहात में खेती संभव नहीं और पशुओं के लिए चारा और कुछ दाना भी खेतों और घासनियों से निकल आता है। लगभग आध वर्ष हिमपात का वातावरण रहने के कारण सर्दियों में पशुओं का पालन बहुत कठिन कार्य है। चारा जुटाकर इतनी अवधि के लिए सुखाकर रखना और बर्फ़ के दिनों में पशुओं की सेवा करना, यह सब जितना कठिन कार्य है, कृषकों का उतना ही प्रिय कार्य भी है।

गर्मियों के दिनों में लाहुल की चरागाहें हरी-भरी हो जाती हैं तो भरमौर तथा कुल्लू के घुमंतू चरवाहे भी चार-पाँच महीनों के लिए लाहुल की घाटियों में डेरा डालकर बरालाचा दर्रे तक पहुँच जाते हैं। लेकिन लाहुल के कृषकों के पास इन महीनों में ही खेती के लिए सीमित समय होता है। इसलिए उन्हें अपने पशुओं के साथ वन में भेजने के लिए चरवाहे नियुक्त करने पड़ते हैं। इस तरह लाहुल में पशुओं के चरवाहों के लिए भी काम निकल आता है। लाहुल की जलवायु के दृष्टिगत गाय, बैल, चुरु, घोड़ा, खच्चर, गधा और याक के अतिरिक्त यहाँ भेड़-बकरियों को पालतू पशुओं के रूप में रखा जाता है।

गाय और याक के मेल से पैदा होने वाले नर पशु को 'ज़ो' या 'ब' कहते हैं और मादा 'चुरू' होती है। 'ज़ो' हल चलाने में उपयोगी होता है। चुरु दुधारू पशु है। इसी तरह चुरु और याक के मेल से पैदा होने वाले नर पशु को 'गरु' और मादा को 'गरी' कहते हैं। इन पशुओं की कुछ और भी संकर नस्लें पैदा होती हैं। इस तरह लाहुल के रहस्य लोक में पशुधन की यह नस्ल-दर-नस्ल पैदाइश भी दिलचस्प है। लाहुली लोगों की दूध और मक्खन की ज़रूरत गाय और चुरु पूरा करते हैं। शीत-मरु हिमालयी प्रांतों में

याक गर्म रेगिस्तान के ऊँट की तरह उपयोगी पशु है। यह पशु हल चलाने तथा बोझ ढोने के कामों में जुटा रहता है।

लाहुल के पालतू पशुओं में भेड़ तथा बकरी ही ऐसे उपयोगी पशु हैं जो पीने को दूध और खेतों को खाद देने के साथ, लोगों के खाने को अपना मांस भी उपलब्ध कराते हैं। बकरे की बनिस्बत लाहुल में मांस के लिए भेड़ का नाम पहले लिया जाता है। इसीलिए यहाँ के लोक देवता और भूत-प्रेत भी भेड़ की बलि को ही प्राथमिकता देते हैं। भेड़ का मांस बकरे की अपेक्षा अधिक गर्म होता है। जब मैं 1990 में पहली बार लाहुल गया तो गाँव खंगसर में अपने मित्र छेरिंग डुगे के पिताजी ने पहला सवाल यही किया था-'भेडू खाते हैं?' शीत बहुल लाहुल के लोग भेड़ की बलि को देवता की पूजा से जोड़कर ही, अपना उदर अनुष्ठान करते हैं।

आवास और भोजन

शीत जलवायु के दृष्टिगत लाहुल में पारम्परिक **आवास निर्माण** भी प्रदेश के दूसरे भागों से अलग तरह का होता है। इसे वर्षा रहित क्षेत्रों का शुष्क स्थापत्य कह सकते हैं। यहाँ के ज़्यादातर घर तीन मंज़िल के होते हैं और छत लकड़ी तथा मिट्टी द्वारा निर्मित सपाट होती है। लाहुल के घर चतुष्कोण होते हैं। इसलिए यहाँ के पुराने गाँवों में सीधी छत और चार कोणों वाले घर दूर से डिब्बों के समूह जैसे दिखाई देते हैं। लाहुल के ठंडे मौसम को देखते हुए इन घरों में रहने की व्यवस्था भी उसी हिसाब से होती है। धरातल मंज़िल में पशुओं के लिए 'ओबरा' होता है, जिसमें गाय-बैल तथा भेड़-बकरियों के लिए अलग कक्ष रहते हैं। सबसे ऊपर की मंज़िल में पूजा-गृह तथा घरेलू वस्तुओं का भंडार होता है। लोगों के अपने आवास के लिए बीच की मंज़िल निश्चित रहती है। नीचे पशु और ऊपर अन्य सामान रखने से यह बीच की मंज़िल गर्म रहती है। इस मंज़िल में प्रवेश कक्ष के बाद एक बड़ा कक्ष 'गुन्सा' कहलाता है। यह बहुआयामी उपयोग के लिए होता है। इसके मध्य में तंदूर जलता है। इसलिए शीतकाल में उठना-बैठना, खाना-सोना सब इसी कक्ष में होता है। इसके साथ ही दो कमरे शयन कक्ष के रूप में अलग भी रहते हैं।

लाहुल के प्राचीन घरों में दरवाजे तथा खिड़कियाँ कम और बहुत छोटे होते थे। ठंड से बचाव की दृष्टि से मज़िलें भी कम ऊँची रहती थीं, जिससे घरों के भीतर रोशनी की व्यवस्था भी पर्याप्त नहीं होती थी। मोरेवियन मिशनरियों द्वारा अन्य जनजातीय क्षेत्रों की तरह लाहुल के केलंग में भी एक केंद्र खोला गया था। इसकी स्थापना सन् 1856 में हुई थी। लाहुल के आदिवासियों पर ईसाई धर्म का तो कोई प्रभाव नहीं पड़ा, लेकिन ईसाई मिशनरियों ने लाहुल के जीवन में अनेक सुधारों के लिए ज़रूर प्रयास किए। यहाँ के घरों में पहले धुएँदार पुराने चूल्हे होते थे, जिनके स्थान पर मिशनवालों ने लोहे के तंदूर शुरू करवाए। इसी तरह उन्होंने घरों में रोशनी के लिए शीशे वाली बड़ी खिड़कियों तथा ऊँचे दरवाज़ों का प्रचलन भी करवाया। शौच आदि के लिए घर के एक कोने में मिट्टी के प्रयोगवाला शुष्क शौचालय भी प्रचलन में लाया।

लाहुल का ग्रामीण समाज घर, गाँव तथा शारीरिक स्वच्छता के लिए अन्य जनजातीय क्षेत्रों की अपेक्षा श्रेष्ठ माना गया है। यद्यपि अन्य शीतबहुल हिमालयी क्षेत्रों में स्नानादि शारीरिक स्वच्छता का अभाव पाया जाता है, किन्तु लाहुल के लोग घरों की भांति अपने शरीर, वस्त्र एवं बिछौनों आदि को भी नियमित रूप से स्वच्छ रखते हैं। इसमें कोई अत्युक्ति नहीं कि स्वच्छता की दृष्टि से कोई भी हिमालयी क्षेत्र लाहुल के समकक्ष नहीं ठहरता।[2]

लाहुल का ग्रामीण समाज घर, गाँव तथा शारीरिक स्वच्छता के लिए अन्य जनजातीय क्षेत्रों की अपेक्षा श्रेष्ठ माना गया है। यद्यपि अन्य शीतबहुल हिमालयी क्षेत्रों में स्नानादि शारीरिक स्वच्छता का अभाव पाया जाता है, किन्तु लाहुल के लोग घरों की भांति अपने शरीर, वस्त्र एवं बिछौनों आदि को भी नियमित रूप से स्वच्छ रखते हैं। इसमें कोई अत्युक्ति नहीं कि स्वच्छता की दृष्टि से कोई भी हिमालयी क्षेत्र लाहुल के समकक्ष नहीं ठहरता।

घर-गृहस्थी के बर्तनों, ओढ़ने- बिछाने के कपड़ों तथा अन्य उपयोगी वस्तुओं में भी लाहुल की अलग पहचान दिखाई देती है। एक समय था जब लाहुल में काष्ठ और प्रस्तर के घरेलू बर्तनों का सर्वाधिक प्रचलन था। आज आधुनिक बर्तनों के चलन के दौर में भी ये पुराने बर्तन नमूने के तौर पर कुछ घरों में दिखाई देते हैं। काष्ठ की परात यानी 'रेंड्रा' आटा गूँदने से लेकर बच्चों को नहलाने तक के काम आती है। दही मथने का पात्र 'ढन्नू' और पानी ढोने का काष्ठ पात्र 'छुज़ोम' कहलाता है। लाहुल में थाली भी लकड़ी की होती थी और लस्सी तथा 'छंग' को रखने का पात्र 'ठोकड़ु' या 'जपठाग' भी लकड़ी का होता था। पत्थर के बर्तनों में कुबद या कुपद प्रमुख माना जाता था, जो छोटे पतीले से लेकर बड़े कड़ाह तक के आकार का होता था। पत्थर के बर्तनों में पका हुआ भोजन अधिक स्वादिष्ट होता है। इन बर्तनों को बनाने वाले 'बाल्ती' लोग हुआ करते थे।

धातु के पात्रों में सबसे अधिक चलन तांबे का रहता था। आज भले ही पीतल और स्टील आदि के बर्तनों का पर्याप्त चलन हो गया है, लेकिन अरक या सरा (मदिरा) निकालने, उसे पेश करने आदि के पारम्परिक बर्तन तांबे के ही हुआ करते हैं। तांबे की चायदानी भी विशेष आकार की होती है, जिसमें चाय को गर्म रखने के लिए जलते अंगारों के लिए भी स्थान बना होता है। लाहुल के लोग एक ही बैठक में नमकीन चाय के 10-12 प्याले पी लेते हैं। इसलिए इसे निरंतर गर्म रखने के लिए, इस विशेष पात्र का निर्माण हुआ है। पारम्परिक थालियाँ और कटोरियाँ अब कांसे की उपलब्ध

हैं और पीतल के केवल लोटे और गिलास होते हैं। इसी तरह रोटी बनाने का तवा, सत्तू बनाने का 'डबर' तथा अन्न के दाने भूनने का 'इस्कर' लोहे के होते हैं।

लाहुल में ओढ़ने-बिछाने के लिए पहले ऊनी वस्त्रों का प्रयोग ही होता था। वहाँ रूई आसानी से उपलब्ध नहीं होती थी। जबकि ऊन अपनी भेड़-बकरियों से निकल आती थी और तिब्बत से भी पर्याप्त मात्रा में मिल जाती थी। बिस्तर पर बिछाने के लिए ऊन की पट्टियों के अंदर पुराने कपड़े भरकर तीन-चार इंच मोटा गर्म 'पलंजा' बनाया जाता था। ओढ़ने के लिए ऊन को कात-बुनकर 'दुंगरे' या 'क्येरे' तैयार की जाती थीं। कंबल की तरह का यह वस्त्र सर्दियों के लिए गर्म रहता था। विरासती घरों में अब भी ये ऊनी बिस्तर रखे मिलते हैं। इसके साथ ही भेड़ की चार खालों को मुलायम करके सिल दिया जाता था और उसे सोते हुए बिस्तर में ऊपर ले लेते थे। सिरहाने के लिए रद्दी ऊन, पुराने कपड़े या बारीक भूस्से का 'खुम' या 'कुम' तैयार किया जाता है।

लाहुल में रहने के कमरों का पारम्परिक फर्नीचर भी विशेष आकर्षक होता है। बैठने के कमरे में अनाज की पराल से तैयार किए गए मोटे आसन बिछाए जाते हैं। उन पर भेड़-बकरियों की खाल मढ़ दी जाती है। इस आसन को 'चकरा' कहा जाता है। इसी तरह का एक अन्य आसन 'पलंजा' पुराने कपड़ों को ऊनी पट्टी में भरकर तैयार किया जाता है। उसके चारों ओर रंगीन कपड़े की गोट सजावट के लिए लगाई जाती है। पट्टनी बोली में ऐसे आसन को 'पोष्र' कहा जाता है। लाहुल के बैठकों में 'ठुलतन' नाम का आसन होता है। मोटे कपड़े को सिलकर उसमें छोटे-छोटे खाने बनाए जाते हैं और उनमें नारियल का रेशा या अनाज का भूसा भर कर उसे तैयार किया जाता है। यह अच्छा मोटा और नर्म बन जाता है। ये ठुलतन बैठने के साथ पीठिका के लिए भी तैयार किए जाते हैं। अब लाहुल में बैठने के लिए 'कली' यानी गलीचों का भी चलन लम्बे समय से चला आ रहा है। सम्पन्न घरों के लोग विभिन्न आकारों के ये गलीचे तिब्बत से मंगवाया करते थे।



लाहुल की बैठक की शान 'सोलचोक' यानी लकड़ी की विशेष चौकी होती है। भोजन कक्ष या बैठक में छंग, चाय या भोजन इन चौकियों पर रखकर ही परोसा जाता है। फर्श पर बिछे आसन पर बैठे हर व्यक्ति के सामने एक अलग चौकी रखी जाती है। यह लगभग डेढ़ फुट लंबी, सवा फुट ऊँची और इतनी ही चौड़ी होती है। यह अखरोट आदि की अच्छी लकड़ी की बनाई जाती है और इसमें कटोरी आदि रखने के लिए दराज भी बनते हैं। प्रत्येक 'सोलचोक' को ड्रेगन आदि की आकृतियों से सजाया जाता है, जिससे यह चौकी बैठक में जनजातीय कलात्मक परिवेश निर्मित करती है। अतिथि को ठुलतन पर बैठाकर उसके सामने सोलचोक रखकर दावत की हर चीज़ परोसी जाती है। फर्श पर बैठकर यह लाहुल के शिष्टाचार का खास अंदाज़ है। चारपाई या पलंग तथा अन्य कोई ऊँचा फर्नीचर लाहुल के जलवायु के अनुकूल नहीं बैठता। अब भले ही इस तरह का फर्नीचर आधुनिक घरों में लाया जाने लगा है, लेकिन अभी तक यह लाहुल की संस्कृति का अंग नहीं बन पाया है।

लाहुल का पारम्परिक **खान-पान** भी जलवायु और उपज की दृष्टि से अनूठा रहा है। यहाँ के निवासियों का प्रमुख भोजन काठू व जौ का अन्न तथा भेड़ का मांस रहा है। गर्मियों के महीनों में सब्जियों में आलू, शलगम और मटर का प्रयोग सबसे अधिक होता है, क्योंकि ये सब्जियाँ लाहुल में पैदा होती हैं। सर्दियों में मांस के थुग्पा (शोरवा) पर ज़ोर रहता है। पेय पदार्थों में नमकीन चाय तथा लुगड़ी या चकती प्रमुख हैं। जौ का सत्तू लाहुल का सबसे प्रिय और पारम्परिक भोजन है। सत्तू, मक्खन तथा हरी सब्जियों को उबालकर सूप तैयार किया जाता है। इसी तरह का सूप मांस के साथ उबालकर भी बनता है। लाहुल में सभी जातियों तथा धर्मों के लोग सामिष भोजी होते हैं।

लाहुल में भी अन्य स्थानों की तरह प्रमुख रूप से तीन वक्त भोजन किया जाता है। सुबह के नाश्ते को अलग-अलग घाटियों में 'सुद' 'केन' या 'छेमा' कहा जाता है। इसमें काठू की रोटियाँ, सब्जी या मांस के साथ पका हुआ सत्तू का घोल यानी 'थुग्पा' अकसर लिया जाता है। दोपहर के भोजन को 'शोद' या 'छिकेन' कहा जाता है। इसमें मुख्य रूप से सत्तू, मोटी रोटियाँ, कुछ चावल, लस्सी तथा मांस के शोरवे और सत्तू से निर्मित 'छाती' का प्रयोग किया जाता है। रात के भोजन को 'ह्याग' या 'गोंसल' कहा जाता है। इसमें भी मोटी रोटी, सत्तू, छाती और उबले हुए आलू या चावल का उपयोग किया जाता है। इन पुराने खाद्य पदार्थों के साथ अब नयी दालों, सब्जियों तथा बाजार में उपलब्ध हर तरह के आटे-

चावल का अधिक प्रयोग होने लगा है। लेकिन लाहुल के पुराने लोग सत्तू, शोरवा, नमकीन चाय और छंग के बिना संतुष्ट नहीं होते।

लाहुल के पारम्परिक जीवन में खाद्य से भी बढ़कर पेय का महत्त्व रहा है। इस घाटी में मादक और अमादक दोनों तरह के पेय विशेष रुचि से ग्रहण किए जाते हैं। शीताधिक होने के कारण विरासती चलन के आधर पर इस क्षेत्र में अपने उपयोग हेतु घरेलू स्तर पर मादक पेय तैयार करने पर कोई सरकारी प्रतिबंध नहीं है और न ही सामाजिक दृष्टि से इसे वर्जित माना जाता है। लाहुल में ये मादक पेय धार्मिक, सामाजिक एवं व्यक्तिगत जीवन के अभिन्न अंग हैं। इनके बिना न तो कोई धार्मिक कृत्य पूरा हुआ समझा जाता है, न सामाजिक-सांस्कृतिक उत्सव भी इन पेयों के बिना सम्पन्न होते हैं। इस तरह मादक पेय यहाँ पारिवारिक उपयोग तथा अतिथि-सत्कार के विशेष अंग हैं। देव-पूजन में भी मादक पेय भेंट तथा प्रसाद के रूप में चढ़ाने के प्रमुख पदार्थ माने जाते हैं। यहाँ तक कि बौद्ध भिक्षुओं के लिए भी सुरापान का निषेध नहीं है। वे लोग मठों में धर्मिक ग्रंथों का पाठ करते समय भी इनका पान करते रहते हैं। गृहस्थ लोगों के घरों में धर्मिक कर्मकांड कराते समय भी, पेय के रूप में प्रस्तुत छंग (हल्का मादक पेय) का वे भिक्षुगण निस्संकोच पान किया करते हैं।[3]

लाहुल के मादक पेयों में छंग, चकती या लुगड़ी प्रमुख हैं। ये तीनों एक ही पेय के विभिन्न बोलियों में अलग-अलग नाम हैं। इसे लगभग सभी लोग विभिन्न अवसरों पर या प्रतिदिन पीते हैं। यह पेय जौ अथवा गेहूँ के अन्न से तैयार किया जाता है। यहाँ का दूसरा मादक पेय 'तीकेशी' या 'सिंग-सिंग' है। यह रंगदार पेय छंग से बेहतर माना जाता है। इसे ताज़ा-ताज़ा पिया जाता है। तीसरा और सर्वश्रेष्ठ पेय 'सरा' या 'अरक' कहलाता है। इसे आसवन विधि द्वारा निकाला जाता है। इस अरक को बनाने की सारी सामग्री एक चौड़े पैंदे और संकरे मुँहवाले तांबे के बर्तन में डालकर, उसे चूल्हे पर चढ़ा दिया जाता है। एक नली के रास्ते से बर्तन से उठती भाप के रूप में सरा या अरक बूँद-बूँद बाहर टपकती जाती है। लाहुल में विशिष्ट अतिथियों के स्वागत में या अन्य विशेष अवसरों पर इसका उपयोग किया जाता है। लोक मान्यता है कि सरा के आसवन में कुदृष्टि भी लगती है, जिसके परिहार के लिए तंत्र-विधि का प्रयोग भी किया जाता है।

'छाकुजा' यानी नमकीन चाय समस्त हिमालयी क्षेत्र का अत्यंत लोकप्रिय पेय है। इसे तैयार करने की विधि भी देशज है। काली चाय की ताज़ा पत्तियाँ, सोडे के साथ खूब उबालकर सुखा ली जाती हैं। चाय बनाते समय इन्हें एक केतली में नमकीन पानी में उबाला जाता है। उसके बाद बाँस या लकड़ी के एक लंबाकार पात्र 'दोंग्मो' में भरकर उसमें मक्खन मिलाया जाता है। इन सारी चीज़ों को मथकर एकाकार करने के बाद, परोसने के लिए, तांबे या पीतल की केतली में भर देते हैं। इस नमकीन चाय का रस लेने वाले लोग एक ही बैठक में कई प्याले पी जाते हैं। ज्यों ही प्याला खाली होता है, उसे फिर भर दिया जाता है। खाली प्याला सामने होना शिष्टाचार के विरुद्ध माना जाता है। इसलिए जिस व्यक्ति की चाय पीने की इच्छा नहीं रह जाती, उसे खाली प्याला सामने से हटा देना पड़ता है। अन्यथा वह लगातार भरता ही जाएगा।

परिवार और समाज

लाहुल के समाज में जन्म से बढ़कर विवाह और मृत्यु के संस्कारों के उपलक्ष्य में विशेष आयोजन होते हैं। प्रसव के समय घर में किसी कार्य विशेष को करने या न करने का कोई परम्परागत नियम नहीं है। यदि प्रसव पीड़ा लंबे समय तक चले तो घर का मुखिया, कुल-देवता या ग्राम-देवता की मनौती करता है, ताकि प्रसव पीड़ा से मुक्ति मिल जाए। चंद्रभागा घाटी में अन्यान्य देवी-देवताओं के साथ सुखद प्रसव के लिए शीर्ष लोक देवता राजा गेपंग की मनौती भी की जाती है। जन्म काल को लेकर जाति विशेष की कुछ अलग धरणाएँ भी लाहुल की घाटियों में हैं। 'चाण' जाति के लोग शिशु के जन्म के समय घर के सब दरवाजे खोल देते हैं। उनकी मान्यता है कि जन्म के समय ही 'विधि माता' नवजात का भाग्य लिखने के लिए घर में प्रवेश करती है। यदि दरवाजा बंद होगा तो वह लौट जाएगी। इसलिए 'विधि माता' के स्वागत के लिए घर के सारे दरवाजे खोल दिए जाते हैं। कुछ क्षेत्रों में यह मान्यता भी है कि शिशु के जन्म लेते ही उसको पहला हाथ ऐसी स्त्री का लगना चाहिए, जिसके काफी बच्चे हों। उनमें पुत्र भी हों तथा कोई बच्चा मरा न हो। ज़ाहिर है इस तरह की मान्यताएँ आदिम जीवन से चली आ रही हैं और इनमें जातियों के स्तर पर भिन्नता भी है। प्रसव-गृह को अकेला नहीं छोड़ा जाता है। बच्चे के सिरहाने में छुरी या चाकू रख दिया जाता है और कुछ लोग लामाओं से लेकर स्न-वा (रक्षा सूत्र) भी रख देते हैं।

अतिथि को ठुलतन पर बैठाकर उसके सामने सोलचोक रखकर दावत की हर चीज़ परोसी जाती है। फर्श पर बैठकर यह लाहुल के शिष्टाचार का खास अंदाज़ है। चारपाई या पलंग तथा अन्य कोई ऊँचा फर्नीचर लाहुल के जलवायु के अनुकूल नहीं बैठता। अब भले ही इस तरह का फर्नीचर आधुनिक घरों में लाया जाने लगा है, लेकिन अभी तक यह लाहुल की संस्कृति का अंग नहीं बन पाया है।

(शेष अगले अंक में)

दयार-दुर्गा कॉलोनी, ढली, शिमला-171012,
मो. 94180 86986

आलेख

धाज्जा नाट्य जिसे पहले निम्न वर्ग से सम्बंधित माना जाता था, आज अन्य वर्गों की आस्था का आधार भी बन गया है। 'धाज्जा' नाट्य भागवत पुराण में वर्णित मथुरा के राजा कंस के दरबार में सबसे बड़े योद्धा- पहलवान- चाणूर से सम्बंधित है। इसमें चाणूर की वीरता की विरुदावली है जिसमें कृष्ण-चाणूर के युद्ध का वर्णन है। मान्यताओं के अनुसार चाणूर कृष्ण से कई दिनों तक युद्ध करता रहा, किंतु कृष्ण द्वारा पराजित न हो सका, अंत में कृष्ण ने छल-बल एवं कूटनीति से उसे पराजित कर मार डाला था। उसकी वीरता एवं नैतिकता के कारण जनसाधारण के एक वर्ग ने उसे सम्मान दिया और अपना आराध्य बनाया।

हिमाचली लोकनाट्य धाज्जा
एक धार्मिक उत्सव

● अमर देव आंगिरस

हिमाचल प्रदेश में 16वीं शताब्दी से लोकनाट्यों की परम्परा रही है। मध्यभारत से आए राणाओं एवं ठाकुरों ने अपने दरबारों में 'कृष्णलीला', 'रामलीला', 'रासलीला' एवं पौराणिक नायकों पर आधारित नाटकों को प्रोत्साहन दिया। किंतु ये आयोजन शासक-वर्ग अथवा सामंत वर्ग के मनोविनोद के साधन बने। आम जनता की भागीदारी इनमें कम ही रहती थी। शासकों की निरंकुशता और जातिवाद इसके प्रमुख कारण थे। दरबारी रंगमंचों की प्रतिक्रिया स्वरूप प्रकृति के खुले प्रांगण में जनसाधारण द्वारा लोक नाट्यों की परम्परा का सूत्रपात हुआ। हिमाचल के पहाड़ी क्षेत्रों में करियाला, बरलाज, बांढड़ा, स्वांग, भगत, हरयात्तर, हरण, बुढ़डा, होरिंङफो एवं धाज्जा लोक नाट्य अस्तित्व में आए। ये लोकनाट्य पौराणिक नायकों के प्रतिकूल, उपनायकों पर केंद्रित हुए।

भारत की स्वतंत्रता प्राप्ति तक ये लोक नाट्य प्रदेश के समस्त क्षेत्रों में धार्मिक आस्था एवं विश्वास से प्रचलित रहे हैं। शरद् ऋतु की सुहानी रातों को विशाल अलाव (ध्याना) जलाकर गांव की चौपाल या मंदिर के प्रांगण में इन लोक नाट्यों का रातभर मंचन होता था। जनसाधारण देवता के नाम पर प्रेमभाव से दान-दक्षिणा भी देते थे तथा नाट्यों का आनंद भी लेते थे। नाट्यों का कथानक राजाओं की मनमानी, शोषण, सामंतशाही का विरोध एवं निर्धनों की असहायता का चित्रण होता था। सामाजिक विसंगतियों एवं अन्याय के विरुद्ध अप्रत्यक्ष रूप से इन नाटकों में प्रायः व्यंग्यात्मक भाषा शैली का प्रयोग होता था। इनकी भाषा निपट देहाती तथा स्थानीय होती थी जिससे जनसाधारण आसानी से समझ सकता था। मनोरंजन के लिए गीत-भजन भी प्रस्तुत किए जाते थे।

वर्तमान समय में मनोरंजन के साधन विकसित होने के कारण ग्रामीण समाज की ये सांस्कृतिक विरासत लुप्तप्रायः होने लगी है। पर्व-त्योहारों पर खेले जाने वाले इन नाट्यों की देवस्थान में पूजा-अर्चना करके आज रस्म अदायगी ही होती है, लेकिन प्रदेश के कुछ क्षेत्रों में ये नाट्य आज भी धार्मिक आस्था से आयोजित होते हैं।

लोकनाट्य 'धाज्जा' या 'ताज्जा' आज भी समस्त प्रदेश में लोकप्रिय रूप से जीवंत लोकनाट्य है। प्रतिवर्ष विशेष पर्व-त्योहार पर देव-मनौतियों के रूप में यह धार्मिक-उत्सव के रूप में रात्रि को नाटक के रूप में प्रस्तुत किया जाता है। 'धाज्जा' की प्रमुख विशेषता इसके प्रति भक्तिभाव है।

धाज्जा नाट्य जिसे पहले निम्न वर्ग से सम्बंधित माना जाता था, आज अन्य वर्गों की आस्था का आधार भी बन गया है। 'धाज्जा' नाट्य भागवत पुराण में वर्णित मथुरा के राजा कंस के

दरबार में सबसे बड़े योद्धा- पहलवान- चाणूर से सम्बंधित है। इसमें चाणूर की वीरता की विरुदावली है जिसमें कृष्ण-चाणूर के युद्ध का वर्णन है। मान्यताओं के अनुसार चाणूर कृष्ण से कई दिनों तक युद्ध करता रहा, किंतु कृष्ण द्वारा पराजित न हो सका, अंत में कृष्ण ने छल-बल एवं कूटनीति से उसे पराजित कर मार डाला था। उसकी वीरता एवं नैतिकता के कारण जनसाधारण के एक वर्ग ने उसे सम्मान दिया और अपना आराध्य बनाया।

'धाज्जा' नाट्य प्रमुखतः सोलन, सिरमौर, बिलासपुर, मंडी, ऊना, कुल्लू, कांगड़ा आदि क्षेत्रों में विशेष रूप से प्रचलित रहा है। प्रदेश से बाहर हरियाणा, राजस्थान में भी यह आस्था का आधार है। 'धाज्जा' नामकरण के विषय में विद्वानों में विभिन्न विचार हैं। 'धाज्जा' को 'दाहजा'; 'दाजा' तथा 'ताज्जा' आदि नामों से पुकारा जाता है। कुछ लोग 'धाज्जा' शब्द को 'दादा' शब्द का अपभ्रंश मानकर इसे बारू नाम के चाणूर-भगत से मानते हैं जिसे लोग श्रद्धा से 'दादा' कहते थे। कुछ लोग इसे अपने इष्टदेव को दहेज की वस्तुओं के रूप में दान देने के कारण इसे 'दाहजा' शब्द से जोड़ते हैं। कुछ लोग 'ध्वजा' शब्द को 'धाज्जा' से जोड़ते हैं, क्योंकि 'चानो' को 'ध्वजा' (झंडा) भी चढ़ाया जाता है। किंतु ये सभी परिभाषाएं असंगत लगती हैं।

वस्तुतः 'धाज्जा' के नाटकीकरण एवं विशाल हस्तबली की झांकी के कारण, जिसमें चाणूर को कृष्ण के समान बलशाली मानकर एक राजा के रूप में सजाकर एवं उसके राज्याभिषेक के रूप में 'ताज' (मुकुट) पहनाकर हस्तबली पर बिठाया जाता है, 'ताज्जा' शब्द अस्तित्व में आया लगता है। यूं भी हस्तबली की झांकी नाट्य में सबसे प्रमुख मानी जाती है जो बहुत मेहनत से बनाई जाती है। इसमें खर्च भी सबसे अधिक आता है। 'ताज्जा' से 'धाज्जा' अस्तित्व में आया है, यह संगत जान पड़ता है।

महाबली चाणूर का लोक कथानक बड़ा रोचक है। मथुरा-नरेश कंस ने कृष्ण को मारने के लिए अनेक षड्यंत्र किए, किंतु सफल न हो सका। स्वयं कृष्ण से युद्ध करने से पहले उसने सबसे बलशाली पहलवान चाणूर को 'मल्ल-युद्ध' के बहाने लड़ने भेजा। यह द्वंद्व युद्ध अढ़ाई दिन (सूर्यास्त से पहले) तक चलता रहा, किंतु चाणूर कृष्ण पर भारी पड़ता रहा। अतः कृष्ण ने छल और माया का सहारा लिया।

कृष्ण की छाया मात्र चाणूर से युद्ध करती रही। कृष्ण ने मायावी रूप धारण किया और चाणूर की पत्नी लूणा राणी' के पास गए।

कृष्ण ने लूणा से पूछा कि भाई चानो कहां है? यह सुनकर चानो की पत्नी ने कहा कि चानो का कोई भाई नहीं है। आप बताइए कि आप कौन हैं? कृष्ण बताते हैं कि बली चाणूर मेरे भाई हैं। हम लोग एक बार अकाल पड़ने पर बिछुड़ गए थे। इस मायावी कथन से लूणा विश्वास करके कहती है कि वे कंस के अखाड़े में मल्लयुद्ध करने गए हैं। वे ही पुरस्कार प्राप्त करेंगे। जब कृष्ण चानो की वीरता का रहस्य पूछते हैं तो वह रहस्य बताने से इनकार कर देती है। वह कहती है कि रहस्य बताने पर वे परास्त हो जाएंगे और वह विधवा हो जाएगी। कृष्ण वचन देते हैं कि विधवा होने की स्थिति में मैं तुमसे विवाह कर सकता हूं। इस शर्त पर वह चानो की शक्ति का रहस्य बतला डालती है। वह बतलाती है कि जब तक आंगन में लगा पीपल का वृक्ष हरा-भरा रहेगा, तब तक चाणूर को कोई नहीं मार सकता, इसके लिए आवश्यक है कि पीपल की जड़ों को उखाड़ दिया जाए और उसके पत्तों को सुखा दिया जाए। तभी उसकी मृत्यु हो सकती है। उसने यह भी बताया कि पीपल की जड़ें पाताल में हैं और चोटी अम्बर में है।

रहस्य जानकर कृष्ण ने पीपल की जड़ों में दीमक लगा दी। दीमकों ने पीपल की जड़ों को खोखला करना शुरू कर दिया। इस रहस्य का पता लगने पर बली चानों ने मुर्गों को पैदा कर दीमक को चट करने को भेजा। कृष्ण ने मुर्गों को मारने के लिए बिल्ली को भेजा। चानों ने बिल्ली को मारने के लिए उल्लू को भेजा। कृष्ण ने उल्लू को अंधा कर दिया और शाप दिया कि तुम दिन में नहीं देख सकोगे। इस प्रकार कृष्ण ने विजय का मार्ग प्रशस्त किया।

अंतकाल में चानो ने कृष्ण से अपने उद्धार की प्रार्थना की। कृष्ण ने वरदान दिया कि तुम संसार में मेरे साथ युद्ध करने के कारण तथा वीरगति प्राप्त करने के कारण 'महाबली' कहलाओगे। जब तक मेरा नाम रहेगा, तब तक तुम्हें भी लोग 'योद्धा' महाबली के रूप में पूजेंगे।

महाबली और कृष्ण का मल्लयुद्ध 'धाज्जा' लोकनाट्य के अंतर्गत ढोल-नगाड़ों के बीच घोष के मध्य इस प्रकार गाया जाता है-

'जांदे कृष्णे हस्ता ढ़ाई, टमका जो बैणे बजाये!
पहली चोट टमके बाई, धरत कम्बी लोकी डराये
दूजी चोट टमके बाई, महल बैठी राणी डराये
तिज्जी चोट टमके बाई, महलां दे कुंगर ढलाये
चौथी चोट टमके बाई, गर्भाणी गर्भ गिराये
छठीचोट टमबे बाई, मारेया चैनू चर्मकार।
जुद्ध लगेया दूई जणेया, सगे मामे सगे भाणजे
आखिरी चोट टमके बाई, कान्हे कंस मारेया घरे जाई।

इसी प्रकार चम्बा क्षेत्र में कृष्ण-चानू का मल्ल युद्ध कुछ इस प्रकार गाया जाता है-

'मथुरा मंज छिंज घुलदी, आज्ञा को दीइएं माता
मामा री छिंजा जो जाणा जरूर, आज दीइए, कल दीइएं ओ माता
मां तो छिंजड़ी घुलणी जरूर, आज्ञा तां दीजी ओ माता
छिंजड़ी मंझ घुलदा चैनू, न तो डैहन्दा कान्हा
आज तो साड़ी सहेली कान्हा, कल छिंज घुलणी जरूर।'

चाणूर 'अछूत' कैसे कहलाया, इसके पीछे जनश्रुति है कि जब चाणूर के तीन भाइयों बली दानो, दहास्र दानों और चाण्डूल दानो ने मथुरा की गली में मृत कुवलयापीड़ हाथी को बाहर फेंकने में असमर्थता प्रकट की तो चाणूर ने हाथी को उठाकर आकाश में उछालते हुए मथुरा से बाहर फेंक दिया। इस प्रकार एक छल द्वारा उसे अछूत मान लिया गया, लेकिन कहा गया कि उसे कलियुग में अछूत नहीं माना जाएगा। राजस्थान-हरियाणा के लोक विश्वासों के अनुसार द्वापर युग में राजा कैलाश मक्का-मदीना में राज करता था। उसकी पत्नी अम्बरी के कोई संतान नहीं न हुई। उन्होंने शिवजी की तपस्या की। कुछ वर्षों बाद शिव के वरदान से उनके चार पुत्र उत्पन्न हुए- कानो, बानो, दानो और सबसे छोटा चानो। वह बहुत बलवान था।

एक दिन चारों भाई एक घने जंगल से गुजर रहे थे कि उन्हें रास्ते में एक मृत हथिनी मिली। उन्होंने चानो को बलवान मानते हुए उसे उस मृत हथिनी को उठाकर फेंकने को कहा। चानो ने उसे आसानी से उठाकर दूर फेंक दिया। उसके बाद उसके भाइयों ने उसे घर से बहिष्कृत कर अछूत मान लिया।

चानो जंगल में चला गया। वहां एक साधु के उपदेश से उसने शिवजी की तपस्या की। शिवजी ने वरदान में उसे शक्ति एवं अमरता का वरदान दिया। उसे यह भी वरदान दिया कि उसका सिर स्वर्ग और पांव पाताल में होंगे।

बाद में चानो दक्षिणी समुद्र की तरफ बंगाल में गया, जहां उसे सूर्यदेश की राजकुमारी लूणा मिली। वह उसकी शक्तियों से प्रभावित होकर उससे प्रेम करने लगी। चानो ने लूणा राजकुमारी के पिता सूरजमल से शादी का प्रस्ताव रखा। राजा ने स्वीकृति दी। विवाह के बाद दोनों जंगल में रहने लगे। वहां उनका शास्त्रार्थ ख्वाजा पीर से हुआ। ख्वाजा पीर ने उन्हें 40 मलंग, 60 जमाती, भैरव के निर्देशन में और नाग बली के संरक्षण में उड़ते हुए नील घोड़े के साथ, एक हाथी, एक धनुष, एक तीर, सारी सेना लाल खान बली और 360 सिरकियों के साथ वरदान दिया।

वैसे चानो की पूजा व्यक्तिगत तौर पर रविदासी समाज द्वारा घर-घर की जाती है, किंतु मनौतियों के रूप में घर-घर धाज्जा, अनुष्ठान एवं नाट्य का आयोजन होता है। धाज्जा पूर्णतया धार्मिक कर्मकांड लगता है, किंतु नाट्य के आयोजन से यह लोगों के मनोरंजन का साधन भी रहा है।

सिद्ध चानो की 'गड्ढा देवता' के रूप में स्थापना की जाती है। जिस घर के प्रांगण में चानो स्थापित करना हो, वहां लगभग एक वर्गफुट गड्ढा बनाया जाता है। इस गड्ढे के अंदर बकरे की बलि देने के पश्चात बकरे का सिर, पैर, मुख्य आंत, पूंछ तथा खून मंत्रोच्चारण के साथ विशेष प्रकार से दबाया जाता है। बकरे के अतिरिक्त विभिन्न स्थानों पर भेडू और मुर्गे की बलि दी जाती है। इन सबको गड्ढे में दबाकर 'मशकेर' (चूहे द्वारा निकाली मिट्टी) या बाम्बी की मिट्टी से दबाया जाता है। गड्ढे के अंदर चौकोर पत्थर रखा जाता है। पत्थर पर दीपक जलाकर साथ में चरण पादुका भी रखते हैं।

इस प्रक्रिया में मुख्य पुजारी 'नचार' घर-परिवार वालों से पूजन सामग्री एवं दान-दक्षिणा के साथ पूजा-अर्चना करवाकर मंत्र जाप करता रहता है। नचार केतली में पानी लेकर देव चानो के स्थान से पानी की धारा छोड़ता हुआ पूरे घर की परिक्रमा करते हुए पानी की 'कार' देता है। 'कार' का अभिप्राय है कि बुरी शक्तियां घर के अंदर प्रवेश नहीं कर सकतीं। नचार ऊंचे-ऊंचे मंत्र पढ़ता है।-

'आद-आद की जुगाद, जुगाद के कुश, कुंश के वीर, वीर के मंडल, मंडल के छैल देओ, कैलाश का बेटा सिद्ध चानो, बली दानो आसमान चोटी पाताल जड़ा। जेत्थी सौरे तेत्थी खड़ा।'

कार देते समय नचार मंत्र पढ़ता है-

'चांदी का जोड़ा, चांदी का घोड़ा, राणी लूणा। जेबे ओपरा-सोपरा हो, दे गवाई। हे लूणा राणी की दुहाई।'

नचार स्तुतिगान करता है-

'चिड़िया दा जोड़ा नाल चलेगा। काली होर मशाण तेरे साथ चलेंगे हस्ती दे मुहरे खड़े मोरा बौरा-बौरा बली मेरे साई दा बौरा।'

गड्ढा स्थापना में 'नालधार' का विशेष स्थान है। इस प्रक्रिया में नचार मनौतीकर्ता के घर के चारों ओर 'कार' (लकीर) लगाता है तथा चारों ओर जल-पंचगव्य छिड़कता है। बकरे के खून को लेकर वधकर्ता अपने दाएं हाथ के पंजे को खून में भिगोकर आयोजनकर्ता के घर के सभी दरवाजों के ऊपर तीन-तीन जगह पंजे की छाप अंकित करता है। विश्वास किया जाता है कि इससे घर में किसी तंत्र-मंत्र का प्रभाव नहीं पड़ता तथा आधि-व्याधियों से छुटकारा मिलता है।

इस आयोजन में रविदासी समाज का विशेष स्थान है। इस आयोजन को अन्य नहीं देख सकते। वे धाज्जे के नाट्य-रूप का आनंद ले सकते हैं।

नालधार के बाद सभी श्रद्धालु गड्ढा देवता को भेंट-प्रसाद आदि चढ़ाते हैं। अंत में प्रमुख भक्त नचार द्वारा लंबी 'अरदास' (मंत्र) द्वारा नालधार का कर्मकांड समाप्त होता है। इसके बाद सबके लिए भोज का आयोजन होता है।

धाज्जा में धर्माचारों के साथ समय के साथ-साथ करयाला, बांठड़ा आदि की तरह मनोरंजन के लिए हास्य-नाटिकाएं तथा स्वांगत जुड़ गए हैं। यह आयोजन सायंकाल से सुबह चार बजे तक चलता है। नाट्य के लिए मनौतीकर्ता के घर के सामने खुले मैदान में अखाड़ा सजाया जाता है। अखाड़ा का अभिप्राय कुश्ती के मैदान से है। यहां मध्य में एक घ्याना (अलाव) जलाया जाता है। इसमें पवित्र पेड़ों पाजा, खैर, बान आदि के मोटे-मोटे लक्कड़ जलते हैं जो सुबह तक निरंतर जलते रहते हैं। अलाव के चारों ओर

नाट्य के कलाकार 'भगत' और नचार घूमते-घूमते गाते रहते हैं। कलाकार हास्य-व्यंग्य के स्वांग प्रस्तुत करते हैं।

प्रदर्शन स्थल पर बीच में त्रिशूल, सांकल, गूर्ज आदि गाड़ दी जाती है। थान के पास लूणा राणी हेतु आस्थास्वरूप सूप, चारू-पल्यार (जूते बनाने के औजार) काली माता का चित्र, बाबा बली का चित्र, मोरपंख, धोती, दीपक, नारियल एवं चावल-दाल आदि रखी जाती है। अखाड़े में एक मशाल जलाई जाती है जो सुबह-पर्यन्त जलती रहती है।

धाज्जा के प्रमुख स्वांगों में 'बौरा' या बाबले का स्वांगत है, जो अग्नि भक्षण करता है। नाट्य के लिए संगीतमय वातावरण बनाया जाता है। दस-पंद्रह बजंतरी प्रारंभ में आधे घंटे तक शहनाई और ढोल-नगाड़े की धुन पर चन्द्रौली- जो राधा की सखी मानी जाती है- उसका नृत्य चलता रहता है। उसकी घुंघरुओं की छनक से वातावरण मधुरता से भर जाता है। चन्द्रौली दीपकों की थाली उठाकर नृत्य करती है। चन्द्रौली का अभिनय पुरुष ही स्त्री वेश में प्रस्तुत करता है। इसके साथ पुरुष गोपियों के वेश में सजकर बांसुरी लिए नृत्य करते हैं ये तीन कलाकार होते हैं। वैसे चन्द्रवली को लक्ष्मी का रूप माना जाता है। इन तीन पात्रों की आरती उतारी जाती है। फिर आरती गाई जाती है।

इसके पश्चात मंच पर जटाधारी, लम्बा टोप पहने, लम्बी दाढ़ी और धोती पहने अखाड़े में नारद के पीछे श्रीकृष्ण एवं गोपियां प्रवेश करती हैं। वह व्यंग्यपूर्ण नृत्य करता, विभिन्न मुद्राएं बनाता मसखरी करता कंस-वध की सूचना देता है। गायक गाकर गोपियों को नारद के आगमन की सूचना देते हैं :-

'नारद मुनि आयो भई नारदमुनि आयो रे
नारद मुनि आयो रे, ब्रह्म नारद आयो रे
केड़िया पुरिया ते आये, केड़िया पुरिया जाणा जी।
सुर्ग पुरिया ते आये जी, धरत लोका जाणा जी।' एवं
'हूण आ गया बंसरी वाला, हूण आ गया बंसरी वाला, बंसरी वल की क्या वे नसाणी
मोर-मुकुट रंग काला, हूण आया गया बंसरी वाला
बंसरी वाले ने किसका मन मोहा...'

इस प्रकार अनेक कृष्ण भजन गाये जाते हैं।

फिर नारद और भगत के बीच व्यंग्य की उक्तियां चलती रहती हैं -

भगत : ओ महाराज, तुम्हारा क्या नाम है?
नारद : नया या पुराणा?
भगत : नहीं, महाराज सच-सच अपणा नांओ बताओ।
नारद : तोसुण मेरा नांव! कक्कड़सींगी-वायावड़ींगी
तूमड़ीया रा बीऊ लगाणा, एत्था पोरे चुप चली जाणा।
नईं तो मां जूत्या-जूत्या की टपकाणा।
भगत : महाराज, आप इस नगरी में नये आए हैं, आपको क्या खिलाऊं?
नारद : अरे, भगत, मूल रोग मूली, पाव रोग भट्टा
आधा रोग काकड़ी, सारा रोग खट्टा।'
और सुण :-
'सदाव्रत सर्वसुखी अन्न खा के भूख मरी
अन्नपूर्णा खाणा पीणा दूजे रागे तूरणा-फिरणा
अन्न देवा तेरी सेवा, झूठ गलाई मिलो मेवा
जो करी म्हारी निंदा, तेसरीया फूखो घरो रीया खींदा
जो करो म्हारी चुगली चाड़ी, तेसरी नठो घरो ते लाड़ी
जो करो म्हारी चरचा, तेसखे मिलो बैकुंठो रा परचा
जो करो म्हारा जाप, तेस रे कटो जन्मो रे पाप।'

नारद और वौरा के स्वांग के बाद नचार आयोजनकर्ता को आशीष के रूप में बाबा बली मरदाना की अरदास पढ़ता है। इसके बाद धाज्जा का प्रमुख स्वांग 'हस्तबली की झांकी' प्रस्तुत होता है जो काफी महंगा स्वांग है। हस्तबली के स्वांग के लिए चार चारपाइयां और सोलह कम्बलों की जरूरत पड़ती है। बारह व्यक्तियों को चारपाइयों के साथ खड़ा करके एक विशाल हाथी की आकृति बनाई जाती है। हाथी के ऊपर चानो को सुंदर ताज (मुकुट) पहनाकर राजा की तरह बिठाया जाता है। हस्तबली को अखाड़े में धीरे-धीरे घुमाया जाता है। नचार जादू-टोने से पीड़ित व्यक्तियों को चूरमा देकर आशीष देता है। साथ में संगीत चलता रहता है।

अखाड़े में काली, हनुमान, भैरों का स्वांगत, नारसिंह की झांकी, अंग्रेज जैंटलमैन का स्वांग, गजरेटियों का स्वांग, रोहलू का स्वांग, साधुओं का स्वांग, लाल फकीर-रोड़ा साईं का स्वांग और पंज मलंग का स्वांग आदि हास्य-व्यंग्य एवं धार्मिक उपदेशों के रूप में रातभर प्रस्तुत किए जाते हैं। जब कोई दर्शक नाट्य से प्रसन्न होकर रुपये देते हैं तो कलाकार अखाड़े में गाकर आशीष देते हैं :-

'जय जननी ज्वालामुखी खूब रचायो खेल
एक रुपैया राजुए दित्या, इनकी बधावे बेल, माताजी इनकी बधावे...।

हिमाचल में चानो के अनेक थान हैं जिनमें रेती का थान तथा समैला का थान प्रमुख हैं।

आज धाज्जा लोक नाट्य धार्मिक तथा नैतिक-मूल्यों के कारण समाज के सभी वर्गों में समान रूप से लोकप्रिय है। इसे देखने सभी जाते हैं तथा मनौतियां करते हैं। धाज्जा की सामाजिक एकता तथा समरसता में भी प्रमुख भूमिका है।

देव उद्यान समीप नर्सरी, दाड़लाघाट, जिला सोलन,
हिमाचल प्रदेश-171102, मो. 94181 65573

आलेख

भारतीय वाङ्मय और कला में
यक्ष, गन्धर्व एवं किन्नर की अवधारणा

● डॉ. मनोरमा शर्मा

भारतीयों की कल्पना में गन्धर्वों का स्थान संगीतकारों में मूर्धन्य है। वेदकालीन संगीत के विवरण में यक्ष, गन्धर्व एवं किन्नरों का अंतर्भाव दिव्य योनि जाति में है। अमरकोष (1, 2) के अनुसार गन्धर्व, किन्नर और यक्ष दिव्ययोनिज हैं। ऋग्वेद (1, 22, 84) में गन्धर्व और यक्ष देवयोनि के अंतर्गत हैं तथा अंतरिक्ष के निवासी बताए गए हैं। इनका पद ध्रुव अर्थात् अविचल माना गया है। गन्धर्वों का सम्बंध नाद तथा वाणी के साथ दर्शित है जो गानविद्या में निपुण हैं। किन्नर नृत्य विद्या में कुशल हैं। यक्ष देवयोनि है । देव तथा यक्षों की सभा में गन्धर्वों और किन्नरों का महत्त्वपूर्ण स्थान है। प्राचीन वाङ्मय और कला के आधार पर यक्ष, गन्धर्व और किन्नर सम्बंधी कल्पना का विकास क्रम खोजा जा सकता है।

गन्धर्व के प्रणेता के रूप में नारद जी द्वारा संगीत का प्रचार इस पृथ्वी पर हुआ। नारद जी ने स्वर्ग के गन्धर्व, किन्नर एवं अप्सराओं को संगीत की शिक्षा दी। प्राचीन वाङ्मय में गन्धर्व तथा किन्नर के साथ अप्सराओं का उल्लेख भी प्राप्त होता है। शिव प्रदोष स्तोत्र में वर्णन है कि 'तीनों जगत की जननी गौरी को सिंहासन पर उपनीत कराकर शूलपाणि शिव ने नृत्य करने की इच्छा प्रकट की। सरस्वती ने वीणा, इन्द्र ने वेणु, ब्रह्मा ने करताल बजाना आरम्भ किया। लक्ष्मी ने गायन किया और विष्णु मृदंग बजाने लगे। इस नृत्यमय संगीत उत्सव को देखने के लिए गन्धर्व, यक्ष, किन्नर, सिद्ध, साध्य, विद्याधर, देवता, अप्सराएं आदि सभी उपस्थित थे।"

यजुर्वेद की तैत्तिरीय संहिता में गन्धर्व और अप्सराओं का सम्बंध विविध देवताओं से स्थापित किया गया है। शतपथ ब्राह्मण के अनुसार गन्धर्वों की संख्या 27 है। शतपथ ब्राह्मण में (14, 6, 31) में यक्षों की भांति गन्धर्व भी सुंदर तथा दिव्य रहस्यों का ज्ञान प्रदान करने वाले हैं।

तैत्तिरीय उपनिषद् के अनुसार गन्धर्वों के दो वर्ग हैं- देव गन्धर्व तथा मनुष्य गन्धर्व। देव गन्धर्व देवयोनिज तथा अंतरिक्ष के निवासी हैं। सुंदर रूप और स्वर सम्पन्नता उनकी विशेषता है। मनुष्य गन्धर्व मानव हैं और गायन वादन संगीतोपासना से गन्धर्वलोक के प्राप्त करते हैं।

अथर्ववेद में (2, 5, 2) गन्धर्वों का परिगणन पितर, देवजन तथा अन्य देवों के साथ किया गया है। दिव्य गन्धर्व का निवास द्यु-स्थल में है। गन्धर्व नृत्यशील हैं (अथर्व, 8, 6) अथर्ववेद के पापमोचन सूत्ता में पाप निवारण के लिए आश्विन और आर्यमन के साथ गन्धर्व तथा अप्सराओं का आवाहन किया गया है। अथर्ववेद (2, 2) के अनुसार गन्धर्व परम गुह्य के रक्षक हैं तथा दिव्य रहस्यों का ज्ञान प्रदान करने वाले हैं। उनकी वाणी मधुर एवं आकर्षक बताई गई है। गन्धर्व शुभ वचन और मधुर वाणी प्रदान करते हैं।

पुराण ग्रंथों के अनुसार गन्धर्व तथा अप्सराओं की गणना विधाता की आदिम सृष्टि में है। गन्धर्व तथा किन्नरों का वही स्थान है जो वैदिक सम्प्रदाय में उपलब्ध होता है। शलाकापुराण में गन्धर्वों को चतुर्विध वाद्य-वादन में पारंगत तथा संगीत के द्वारा ईषोपायना में तत्पर बताया गया है। मत्स्य पुराण के अनुसार शिव, ब्रह्मा, विष्णु आदि देवों की प्रतिमाओं के साथ गन्धर्व, किन्नर, यक्ष, अप्सरा आदि परिचारकों की मूर्तियों का निर्माण किया जाना आवश्यक है।

वायु पुराण के अनुसार गन्धर्व शब्द की व्युत्पत्ति 'धारयन्तो गाः' से है। गायन करने के कारण यह जाति गन्धर्व कहलाती। गायन का प्रयोग करने वाले व्यक्ति गन्धर्व कहलाए। वायु पुराण के अनुसार गायन गन्धर्वों तथा नृत्य किन्नर और अप्सराओं का व्यवसाय रहा है। ये जातियां सदैव से संगीत कला कुशल रही हैं। सरस्वती की आराधना से इन्होंने संगीत कला का ज्ञान प्राप्त किया। गन्धर्वों के गायन तथा किन्नर और अप्सराओं के नृत्य के साथ वीणा, वेणु, पणव, पुष्कर, मृदंग, दुन्दुभि आदि नानाविध वाद्यों और शंखों का वादन किया जाता था।

हरिवंश पुराण के अनुसार श्रीकृष्ण की सभा में गन्धर्व, किन्नर, सूत, मागध आदि कलाकारों को सम्मानीय स्थान प्राप्त था। शिव की उपासना में गन्धर्व तथा अप्सराएं गीत, नृत्य का प्रदर्शन करते थे। हरिवंश पुराण में गन्धर्व का विशद वर्णन प्राप्त होता है। संगीत कला का व्यवसाय करने वाले लोग गन्धर्व, किन्नर तथा अप्सराएं हैं। इनकी गणना दिव्य योनि में है और इनका कार्य देवलोक में संगीत प्रदर्शन करना है।

रामायण भारत का प्राचीन सांस्कृतिक महाकाव्य है। भारत की प्राचीन सांस्कृतिक परम्परा के परिज्ञान का यह महत्त्वपूर्ण स्रोत है। रामायण में गान्धर्व शब्द का अनेक बार उल्लेख हुआ है। संगीत शास्त्र के लिए गान्धर्व संज्ञा थी, जिसके अंतर्गत गीत तथा वाद्य दोनों का अंतर्भाव था। गान्धर्व शब्द के साथ ही गन्धर्व तथा अप्सराओं का उल्लेख भी अनेक बार हुआ है। गन्धर्व और अप्सरा दोनों ही संगीत कला के प्रतिमान रहे हैं। गन्धर्व विशेषतः गान तथा वीणा वादन किया करते थे। अप्सराओं का कार्य इनके साथ नृत्य प्रदर्शन करना था। देव-गन्धर्वों में नारद, विश्वावसु, तुम्बरु, हाहा, हूहू, पर्वत, विशाखिल आदि का उल्लेख भी अनेक बार हुआ है। गन्धर्व तथा अप्सरागण का उल्लेख रामायण में दिव्य तथा अपौरुषेय कलाकारों के रूप में हुआ है। अप्सराओं के अंतर्गत धृताची, मेनका, रम्भा, मिश्रकेशी, उर्वशी आदि दिव्य अप्सराओं के गान-शिक्षक के रूप में वर्णित हैं। देव-गन्धर्वों के समान मनुष्य गन्धर्वों के वर्ग में सूत, मागध, गण और वारांगनाओं का वर्णन रामायण में हुआ है। इनका व्यवसाय संगीत था। गन्धर्व के आचार्यों में नारद और तुम्बरू की ख्याति थी। नृत्य के लिए अप्सराओं को प्रतिमान माना जाता था। नृत्य का व्यवसाय नट, नर्तक और शैलूष जातियां करती थीं। इन्हें किन्नर वर्ग से सम्बोधित किया जाता था। इन्हें राज्याश्रय प्राप्त था।

महाभारत का भारतीय साहित्य में एक विशिष्ट स्थान रहा है। गेय प्रबंधों के अंतर्गत साम, गाथा तथा मंगलगीतियों का प्रमुख रूप से उल्लेख पाया जाता है। इन गाथाओं का गान गन्धर्व तथा कथा गायक पौराणिक व्यक्तियों द्वारा किया जाता था। संगीत के दिव्य कलाकारों के रूप में गन्धर्व तथा किन्नरों का उल्लेख महाभारत में हुआ है। इन गाथाओं का प्रसार मागध, सूत, गण, चारण आदि लोक गायकों द्वारा होता था। गन्धर्व तथा किन्नरों के निवास स्थान पर गीत, नृत्य तथा तूर्य वाद्यों का निनाद सदैव गुंजायमान रहता था। युधिष्ठिर की सभा में तुम्बरू की प्रेरणा पर गन्धर्वों तथा किन्नरों के वाद्यों सहित गायन और नृत्य का उल्लेख भी महाभारत में प्राप्त होता है। महाभारत के (5, 24 सभा.) में उल्लेख है कि इन्द्र की सभा में तुम्बरू आदि गन्धर्वों ने गायन, किन्नरों ने वीणादि वाद्यों के साथ तथा मेनका, रम्भा, उर्वशी आदि अप्सराओं ने भावपूर्ण नृत्य किया था।

महाभारत का भारतीय साहित्य में एक विशिष्ट स्थान रहा है। गेय प्रबंधों के अंतर्गत साम, गाथा तथा मंगलगीतियों का प्रमुख रूप से उल्लेख पाया जाता है। इन गाथाओं का गान गन्धर्व तथा कथा गायक पौराणिक व्यक्तियों द्वारा किया जाता था। संगीत के दिव्य कलाकारों के रूप में गन्धर्व तथा किन्नरों का उल्लेख महाभारत में हुआ है। इन गाथाओं का प्रसार मागध, सूत, गण, चारण आदि लोक गायकों द्वारा होता था। गन्धर्व तथा किन्नरों के निवास स्थान पर गीत, नृत्य तथा तूर्य वाद्यों का निनाद सदैव गुंजायमान रहता था।

जैन तथा बौद्ध सम्प्रदायों में गन्धर्व तथा किन्नरों का वही स्थान है जो वैदिक परम्परा में उपलब्ध होता है। तत्वार्थ सूत्र नामक जैन धर्मग्रंथ में गन्धर्वों और किन्नरों का स्थान व्यन्तर अर्थात् देवलोक में बताया है। पंचमुखी गन्धर्वों का चित्रांकन भी प्राप्त होता है। बौद्ध ग्रंथों में पंचशिख गन्धर्व और यक्षों का वर्णन प्राप्त होता है। भरहुत के मूर्ति शिल्प के गन्धर्व, किन्नर और यक्षों की प्रतिमाएं हैं। बौद्धों के अनुसार गन्धर्वों और यक्षों का अंतर्भाव देवलोक में है।इनका कार्य बोधिसत्त्व की परिचर्या करना है। हाथीगुम्फा शिलालेख से प्रमाणित होता है कि गन्धर्व, किन्नर, यक्ष तथा अप्सरा संगीत विद्या पारंगत वर्ग के हैं। यह शिलालेख पहली शताब्दी का माना जाता है। गन्धर्वों को चतुर्विध वाद्यों और गायन में पारंगत माना गया है तथा संगीत के द्वारा तीर्थांकर की उपासना में तत्पर बताया गया है।

भारतीय मूर्ति निर्माण के प्रमाणित ग्रंथों में अन्य देवताओं के साथ गन्धर्वों, किन्नरों और यक्षों की आकृति का वर्णन है। मानसार ग्रंथ के 58वें अध्याय 'यक्षुविद्याधरादि लक्षणम्' में गन्धर्व, किन्नर और यक्ष को गीत, वीणावादन और नृत्य में रत बतलाया गया है। Gandharvas And Kinnaras in Indianclonography ग्रंथ में इंद्र तथा बुद्ध की भेंट का वर्णन है जिसमें गन्धर्व और अप्सराओं का रूपांकन उपलब्ध है। मथुरा की इन्द्रशैल गुफा में बुद्ध की प्रतिमा के दक्षिण और वीणा धारण किए हुए पंचशिख गन्धर्व अंकित है जिसका अनुसरण छह अप्सराओं द्वारा किया जा रहा है। अमरावती और नागार्जुन कोंडा के स्तूपों पर जो आकृतियां हैं वे गन्धर्वों का परिवार अंकित है। जिसमें गन्धर्व, अप्सराएं और किन्नर तथा यक्ष अंकित हैं। अनुचर जो यक्ष के प्रतीक माने जाते हैं, उसके हाथ मे तुम्बीयुक्त वीणा है।

किन्नर तथा किन्नरियों के सम्बंध में वैदिक वाङ्मय में कोई उल्लेख नहीं मिलता परंतु महाकाव्यों रामायण और महाभारत, पुराण तथा शिल्पशास्त्रों में उपलब्ध विवरणों से उनकी रूपाकृति का परिचय प्राप्त होता है। महाभारत में किन्नरों को यक्षों के साथ

पुलस्त्य की संतति माना गया हैं आरण्यक पर्व अध्याय 6 में गन्धर्वों के सहकर्मी के रूप में किन्नरों का उल्लेख है। गन्धर्वों के समान किन्नर भी संगीतप्रिय हैं तथा मधुर कंठ से संगीत गान करने के लिए विख्यात हैं। अनेक उत्सवों में गन्धर्वों, किन्नरों तथा यक्षों द्वारा संगीतमय प्रस्तुतियों का विवरण मिलता है। वात्स्यायन सूत्र में यक्षरात्रि, कौमुदीजागर आदि उत्सवों के नाम दिए गए हैं। इन समारोहों में गीत, वाद्य, नृत्य, नाटक और आख्यायिकाओं का प्रदर्शन किया जाता था।

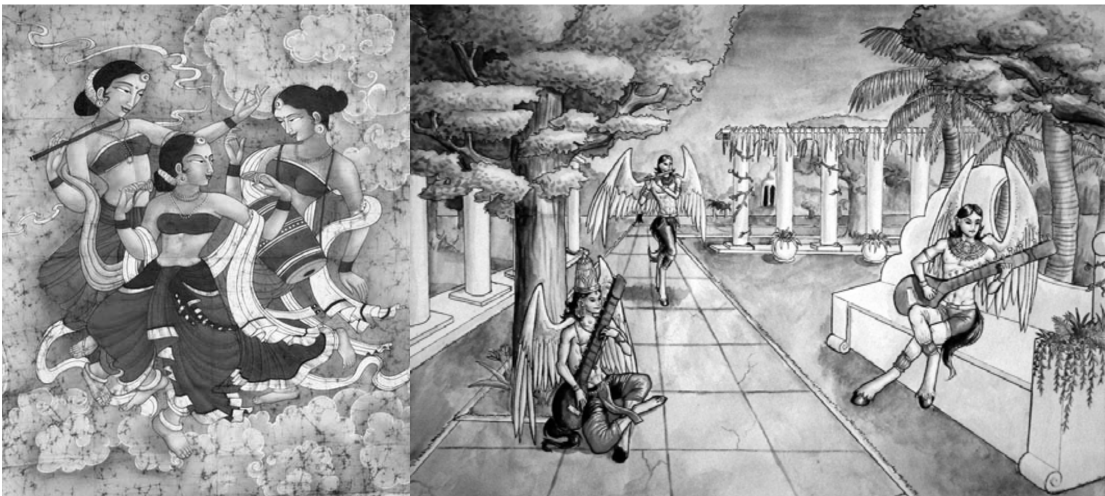
सांची तथा भरहुत शिल्प में किन्नरों की प्रतिमाओं का अंकन उनकी गीत और वाद्यरत भंगिमाओं सहित मिलता है। इसी प्रकार देव प्रतिमाओं के साथ यक्ष, यक्षिणी, किन्नर-किन्नरियां तथा गन्धर्वों की प्रतिमाएं भी प्राचीन मूर्तिकला में अंकित की जाती थीं। गन्धर्व और किन्नरों के सन्दर्भों के साथ यक्षों का वर्णन भी मिलता है। शतपथ ब्राह्मण में गन्धर्वों को अर्धदैवत रूप में वर्णित किया गया है। (14,6,3,1) के अनुसार यक्ष भी देवयोनि में कहे गए हैं। वीणा का अन्तर्भाव मंगलवाद्यों से है। जिस गृह में गन्धर्व गान होता है, वीणा वादन होता है, वहां यक्ष रक्षा करते हैं और वहां भूत पिशाच आदि का प्रवेश सम्भव नहीं।

यक्ष का संदर्भ महाभारत काल में विशेष रूप से हुआ है। युधिष्ठिर तथा यक्ष का संवाद उल्लेखनीय है। यक्ष द्वारा पूछे गए दस प्रश्न और प्रश्न और युधिष्ठिर के उत्तर अध्यात्म के गहन सूत्र माने जाते हैं। इन यक्ष-प्रश्नों से सिद्ध होता है कि यक्ष देवयोनि के प्राणी थे और अनेक विद्याओं के ज्ञाता थे। इन्द्र की सभा में गन्धर्वों, किन्नरों और तुम्बरू द्वारा गायन तथा नृत्यों की प्रस्तुति में यक्षों द्वारा तूम्बीयुक्त वीणा वादन का संदर्भ भी प्राप्त होता है।

गन्धर्व, किन्नरों की भांति यक्ष भी देवयोनि के प्राणी माने जाते हैं। यक्षों को पुलस्त्य की संतति माना गया है। महाभारत के परवर्ती संस्कृत नाटकों और काव्यों में भी यक्ष, गन्धर्व और किन्नरों द्वारा गायन, वादन और नृत्य की प्रस्तुतियों का वर्णन प्राप्त होता है। भास, भद्रक, कालिदास कृत संस्कृत काव्यों में अनेक संदर्भो से ज्ञात होता है कि ये संगीतजीवी जातियां थीं। भास के नाटकों में गन्धर्व की प्रतिष्ठा गान के लिए तथा किन्नर की प्रतिष्ठा वादन और नृत्य के लिए थी। शूद्रक के नाटकों में संगीत का विशद विवरण प्राप्त होता है तथा इन कलाओं के ज्ञाता गन्धर्व और किन्नर माने जाते हैं। कालिदास कृत मेघदूतम् नाटक में नायक यक्ष है। अलकापुरी में यक्षिणी का वर्णन हैं यक्षिणी वीणा वादन में अत्यंत निपुण है और संगीत की विभिन्न विधाओं से परिचित है। मूर्च्छना, सारिका, गात्रवीणा, कैशिक राग आदि संज्ञाओं का प्रयोग यक्षिणी के संगीत ज्ञान का परिचायक है। इसी प्रकार कुमारसम्भवम् नाटक में कालिदास ने शिव की उपासना में किन्नरों द्वारा गाए जाने वाले मंगल गीत का उल्लेख किया है।

गन्धर्वों, किन्नरों और यज्ञों की अवधारणा देवयोनि से मानते हुए भी इसे काल्पनिक माना जाता है। जिस प्रकार शिव, ब्रह्मा, विष्णु आदि देवताओं के स्वरूप की कल्पना है, उसी प्रकार इन्हें भी चित्रांकन तथा प्रतिमाओं में एक स्वरूप प्रदान किया गया है। आज भी आंध्र प्रदेश का 'यक्षगान' एक लोकप्रिय लोक नाट्य है जिसे एक विशेष जाति के अभिनेता अभिनीत करते हैं। इसमें पौराणिक गाथाओं का गान किया जाता है। इन अभिनेताओं को यक्षों की संतान माना जाता है। विशेष अवसरों, त्योहारों और उत्सवों पर यक्षगान अभिनीत करने की आंध्र प्रदेश में परम्परा है। कलाओं तथा वाङ्मय में वर्णित इन संगीतजीवी देवयोनिज जातियों का अध्ययन एक गंभीर अनुसंधान का विषय है।

प्रोफेसर (संगीत) सेवानिवृत्त, 3-खेड़ा निवास, संजौली, शिमला, हिमाचल प्रदेश-171006



आलेख

कन्या पूजन

● डॉ. पीयूष गुलेरी

जब से मैंने होश संभाला और प्रतिवर्ष की समाप्ति पर जन्म-दिन के अवसर पर पूजा-अर्चना तथा 'वर्षगांठ' के दानोपरांत 'कन्या पूजन' का आवश्यक विधान हुआ करता तो मैं भली-भाँति समझ न पाता कि अकसर तीन से पांच वर्ष तक की कन्या का पूजन क्यों करवाया जाता है ? माता जी उस समय विशेष रुप से उपस्थित रहा करतीं और कन्या के चरणों का प्रक्षालन, चंदन-अक्षत-पुष्प से पूजन करवा कर उसके मस्तक पर चंद्राकार टीका लगवाकर मिष्ठान्न करवाकर दक्षिणा देने के उपरांत नत मस्तक होकर आशीर्वाद लेने तक की प्रक्रिया वही करवातीं। 'जयंती मंगला काली, भद्रकाली कपालिनी ! दुर्गा, क्षमा, शिवाधात्री, स्वाहा, स्वधा नमोस्तुते' अथवा "शरणागत दीनार्त, परित्राण परायणे, सर्वस्यार्ति हरे देवी नारायणी नमोस्तुते।" आदि मंत्रों की स्तुति से देवी को प्रसन्न करने की गतिविधि चलती। कन्या के मुख में तीन बार स्वयं मिष्ठान-ग्रास समर्पित करके ऐसा प्रयास किया जाता कि साक्षात् भगवती को भोग लगवाया जा रहा है।

यथेष्ट समय बाद मैं समझने लगा था कि 'कन्या पूजन' सांस्कृतिक विरासत की एक ऐसी अविच्छिन्न परम्परा है, जिसे कन्याओं की वृद्धि, समृद्धि और कृपा के साथ जोड़कर देखा जाता है। कन्या साक्षात भगवती-स्वरूपा है और आदिशक्ति का स्रोत यही आदिशक्ति पूर्वकाल में भी ब्रह्म, विष्णु और महेश की जननी और माया थी तथा अनेक रुपों में स्वयं उनकी प्रेरणा-स्रोत बनकर पत्नी और पथवाहिका भी बनी। सप्तशती में भगवती की प्रार्थना-प्रशंसा में देवता लोग कहते है :- या देवी सर्वभूतेषु मातृरुपेण संस्थिता, नमस्तस्यै, नमस्तस्यै, नमस्तस्यै, नमो नमः॥" यह भगवती ही शक्ति रुपा पुरुष-तत्त्व में व्याप्त होकर उसे निरंतर प्रेरित करती है। अस्तु, शक्ति के बिना पुरुष भी निर्जीव होकर 'शव' बन जाता है। कहा भी गया है कि कैलाश पति विषपायी शिव भी जब (ि) शक्तिविहीन हो जाते हैं तो वे भी अक्षर न रहकर केवल 'शव' ही रह जाते हैं। संसार में जीवित प्राणी का ही मोल और महत्त्व है। 'शव' को तो शीघ्र से शीघ्र अग्नि अथवा मिट्टी के हवाले कर दिया जाता है।

सच तो यह है कि भारतवर्ष में शक्ति स्वरुपिणी देवी के महत्त्व को समझकर ही समाज में इसे संस्कारों के साथ जोड़कर जीवन के साथ अन्योन्याश्रित रूप से टंकित कर दिया गया था। जन्मदिन के अवसर पर पूजोपरांत कन्यापूजन का सिलसिला आज तक अविरल रूप से चलता है और नित्य याद दिलाता है कि कन्या के बिना जीवन शून्य, निर्जीव, और प्रसंगहीन है। बिना कन्या के सृष्टि के विस्तार और विकास की कल्पना ही नहीं की जा सकती। 'गृहस्थ जीवन' संभव ही नहीं। लोक मर्यादा का एक हिमाचली मुहावरा प्रसिद्ध है - दस्सां मर्दा नैं डेरा कनैं इक्सी जनानियां नैं गृहस्थ। अर्थात् एक ही मकान में भले ही दस जनें (पुरुष) एक साथ मिलकर रहते हों जीवन गुज़र.बसर करते हों, तो भी 'डेरा' ही कहा जाएगा, जबकि मकान में मात्र एक महिला के होने से वह घर, गृहस्थ बन जाता है। यही गृहस्थ शेष तीन आश्रम वालों . ब्रह्मचर्य, वानप्रस्थ और संन्यास की पालन हार है।

कन्या वर दायिनी है, सुख दायिनी है, जीवन दायिनी है, प्रेरणा स्रोत है, गति दायिनी है, जीवन दायिनी है और मुक्ति दायिनी भी है। जीवन के सभी यज्ञ इस देवी-स्वरुपा 'शक्ति' के सहयोग और सहभागिता से सम्पन्न होते हैं। बिना सीता के भगवान राम के यज्ञ की सर्म्पूणता में भी तो बाधा आयी थी। पुरातनकाल में भी जितने ऋषि मुनि हुए उनमें से अधिकतर गृहस्थ थे और अपनी सहयोगिनी देवियों के कंधे से कंधा मिलाकर चलने ही के कारण अपार शक्ति और ऊर्जा से सम्पन्न होकर भावी पीढ़ियों के लिए विरासत में महान परम्पराएं और ज्ञान का अथाह सागर छोड़ गए। वैसे गृहस्थ का शब्दकोशीय अर्थ भी 'गृहिणी गृहमुच्यते' किया गया है।

शक्ति-स्वरूपा कन्या (कंजका) के, कन्या, पुत्री, बहिन, प्रेयसी, पत्नी और माता अनेक रुप हैं फिर भी उसका माता रूप ही सर्वोपरि माना गया है। दुर्गा सप्तशती में -"विद्याः समस्ता स्तव देवि भेदाः, स्त्रियाः समस्ताः सकला जगत्सु, त्वयैकया पूरितमम्बयैतत् का ते स्तुतिः स्तक परा परोक्तिः "अर्थात् देविः, सम्पूर्ण विद्याएं तुम्हारे ही भिन्न-भिन्न स्वरूप हैं। जगत में जितनी भी स्त्रियाँ हैं, ये सब तुम्हारी ही मूर्तियां हैं। जगदम्ब! एक मात्र तुमने ही इस विश्व को व्याप्त कर रखा है। तुम्हारी स्तुति क्या हो

सकती है ? तुम ती स्तवन करने योग्य पदार्थों से परे एवं 'परावाणी' हो।

जो कन्या 'परा' वाणी के रूप में भगवती की मूर्ति रूपा कही गई है, वर्तमान में, समाज की बदलती हुई अप संस्कृति में उसी के नाश पर समाज क्यों तुल गया हैं ? कन्या के गर्भ में आने के उपरांत विभिन्न परीक्षणों और अत्याधुनिक उपायों द्वारा गर्भपात द्वारा उसकी 'जानबूझ' कर हत्या की जा रही है। कन्या-भ्रूण-हत्या के पीछे आज की दुनियावी सोच बहुत ही नीच एवं घृणित है। जिस समाज में 'अजाने' गोहत्या का पातक लगने के आध्यात्मिक उपाय, प्रायश्चित और पारायण किये जाते थे, आज उसी समाज में कन्या-भ्रूण-हत्या का सिलसिला दिन प्रतिदिन बढ़ता ही जा रहा है और थमने का नाम नहीं लेता। इसे पाप, बुराई या अपराध समझने की अपेक्षा सामूहिक षड्यंत्र के द्वारा दिन दहाड़े भ्रूण हत्याएं हो रही हैं। ऐसा करते समय हम भूल जाते हैं कि यह न केवल एक सामाजिक अपराध है बल्कि दिन-प्रति-दिन लिंग अनुपात भी गड़बड़ा रहा है। कहा गया है न कि क्रिया की प्रतिक्रिया भी अवश्य होती है। प्रकृति कभी भी अप्राकृतिक कृत्यों और जानबूझ कर किये गए अपराधों को क्षमा नहीं करती और उसका कोप बड़ा भयंकर होता है।

जिस देश में गंगा, यमुना, सरस्वती, कृष्णा, कावेरी, तापती, नर्मदा, सरयू आदि अनेक नदियाँ स्त्रियों के नाम से सम्बंधित होकर पूज्या हैं, जिस देश में मालती, चम्पा, चमेली आदि पुष्प लताएं अपनी सुगंध बिखेरती हैं और जिस देश में साक्षात जगदम्बा-रूप में स्त्री-जाति को यत्र नारयस्तु पूज्यते रमंते तत्र देवताः' कहकर विशेष पहचान प्राप्त हुई है, उसी देश में कन्या- भ्रूण-हत्या का अपराध मनुष्य की दानवी और राक्षसी वृत्ति ही का परिचायक बनता जा रहा है। मातृस्वरूप भगवती की स्तुति करते हुए आदि शंकराचार्य ने कहा है, "चिता भस्मालेपो गरल मशनं दिक् पटधरो।। जटाधारी कंठे भुजगपति हारी पशुपतिः॥ कपाली भूतेशो भजति जगदीशैक पदवीं॥ भवानी त्वतपाणि ग्रहण परिपाटी फलमिदं ॥" अर्थात् भवानी! जो अपने अंगों में चिता की राख- भभूत लपेटे रहते हैं, जिनका विष ही भोजन है, जो दिगम्बरधारी (नग्न रहने वाले हैं), मस्तक पर जटा और कंठ में नागराज वासुकि को हार के रूप में धारण करते हैं तथा जिनके हाथ में कपाल (भिक्षा पात्र शोभा पाता है) ऐसे भूतनाथ पशुपति भी जो एकमात्र 'जगदीश' की पदवी धारण करते हैं, इसका क्या कारण है ? यह महत्त्व उन्हें कैसे मिला, वह केवल तुम्हारे पाणिग्रहण की परिपाटी का फल है। तुम्हारे साथ विवाह होने से ही उनका महत्त्व बढ़ गया।

जिस देश में गंगा, यमुना, सरस्वती, कृष्णा, कावेरी, तापती, नर्मदा, सरयू आदि अनेक नदियाँ स्त्रियों के नाम से सम्बंधित होकर पूज्या हैं, जिस देश में मालती, चम्पा, चमेली आदि पुष्प लताएं अपनी सुगंध बिखेरती हैं और जिस देश में साक्षात जगदम्बा-रूप में स्त्री-जाति को यत्र नारयस्तु पूज्यते रमंते तत्र देवताः' कहकर विशेष पहचान प्राप्त हुई है, उसी देश में कन्या-भ्रूण-हत्या का अपराध मनुष्य की दानवी और राक्षसी वृत्ति ही का परिचायक बनता जा रहा है।

अकसर देखा गया है कि विवाहोपरांत कई पुरुषों का भाग्य भरपूर ऐश्वर्य और खुशियों से इसलिए भर जाता हैं कि उसकी सहयोगिनी के ग्रह.नक्षत्र पति के उत्थान का कारण बनते हैं। इन पंक्तियों के लेखक को जब गग्गल के सुप्रसिद्ध ज्योतिषी पंडित विद्याधर (बिद्धू ज्योतिषी के नाम से विख्यात) ने कहा था कि इस पुरुष का भाग्योदय विवाहोपरांत होगा, वह अक्षरशः सही निकला। विवाह के मात्र तीन महीने के अन्दर-अन्दर पदोन्नति हुई और जीवन ऐश्वर्य सम्पन्न हो गया। उपरिलिखित स्तुति में भी, प्रकटतः विचित्र, भयावह और भयानक वेशभूषा वाले विषपायी शिव, भगवती का पाणिग्रहण करने पर संसार में 'जगदीश' बन गए।

अस्तु, समस्त स्त्रियों को भगवती का रूप मानने वाले देश में, कन्या-भ्रूण-हत्या के जघन्य अपराध और दानवी मानसिकता पर अविलम्ब लगाम लगाने की सख़्त ज़रूरत है, अन्यथा प्रकृति का प्रकोप और दण्ड सामूहिक रूप से जब सभी को भुगतना पड़ता है तो जनता त्राहि-त्राहि कर उठती है। जगदीश्वरी भगवती का एतद् विषयक कथन इस प्रकार है:-"इत्थं यदा यदा बाधा दानवोत्था भविष्यति।

तदा-तदा वतीर्याहं करिष्याम्यरि संक्षयम्।" अर्थात् जब.जब संसार में दानवीय- प्रवृत्तियाँ बढ़कर प्रकृति-विरुद्ध कार्य करेंगी और निरीह प्राणियों को (भ्रूण में ही)! नष्ट करना प्रारंभ करेंगी, तब-तब अवतार लेकर मैं ऐसे शत्रुओं का संहार करूंगी।

देखा जाए तो आदिकाल से पुरुष की अपेक्षा नारियों का समाज में हर प्रकार से अविस्मरणीय योगदान रहा है। कहा भी गया है कि हर महान पुरुष के पीछे किसी नारी का योगदान हुआ करता है। वह स्वयं पुरुष की प्रेरणा बनकर समाज-हितकारी कार्य करवाने में अग्रणी रही है। शिवाजी महाराज, वीर भगत सिंह, सुखदेव, राजगुरु, चन्द्रशेखर आदि देशभक्त वीर क्रान्तिकारियों के निर्माण में नारी की भूमिका सर्वविदित है। पुरुषों की प्रेरणा बनकर वह ही उन्हें अदम्य साहस और शक्ति से ओत-प्रोत करती है। वर्तमान में इंदिरा गांधी, थैचर, भंडारनायके, बेनज़ीर भुट्टो और आंग सूची आदि वीरांगनाओं के योगदान को भुलाया नहीं जा सकता। हिमाचली-संस्   ति में तो 'ध ी' अर्थात् बेटी अर्थात् कन्या को सर्वोपरि स्थान प्राप्त है। कहा भी गया है, 'धीयां जो धिण होंदी' अभिप्राय कि बेटी को अपने माता पिता के प्रति अंत समय तक प्रेम का भाव बना ही रहता है।

अपने निजी जीवन में मैंने अनुभव किया है कि बेटियां बेटे से कहीं कम नहीं प्रत्युत बेटे की तुलना में बढ़कर ही हैं। बेटियों के नाम भी भगवती, गौरी और कान्ह-प्रिया के नाम से क्रमशः गिरिजा और राधिका रखे।

प्रकटतः समाज में यह कथन प्रचलित है कि एक बेटी तीन-तीन परिवारों के भाग्य संवारती है, अर्थात् माता-पिता, सास ससुर, स्वयं अपने और अपने पति के परिवार के दायित्त्व का निर्वाह करके अच्छे समाज के निर्माण में अपनी सक्रिय भूमिका को भी रेखांकित करती है। वर्तमान में कन्या-भ्रूण का कुत्सित कृत्य अपराध-बोधक और समाज की रुग्ण मानसिकता ही को दर्शता है। हमें हर स्तर पर इस प्रकार की घृणित, आपराधिक, समाज विरोधी, पातकी और दानवी सोच को कुंद कर देने के उपाय करने होंगे। हरेक कन्या-भ्रूण-हत्यारे माता-पिता को कन्या गर्भ से यह आदेशात्मक संदेश देती है :-

स्वागत करना आगुंतक का, खुशी खुशी बाँहें फैलाए।
कन्या धन्या बड़ी अनन्या भारत की धरती सिखलाए।।
सीता, गौरी, राधा रानी, कन्या.रुप बड़ा लासानी।
कुल-तारक उद्धारक हूँ मैं, देते रहना मुझको छैया।।
मुझे मार मत देना मैया, तव-गर्भाशय मेरी शैया।।

आज इस संदेश का पालन ही सच्चा कन्या पूजन है।

अर्पणा-श्री, हाउसिंग कॉलोनी, चीलगाड़ी,
धर्मशाला 176215, (हिमाचल प्रदेश)



हाइकू

● **तेज राम शर्मा**

चांद का राज्य
कहीं तो पूर्णिमा है
कहीं अमा है

हुई न प्रातः
अड़ा रथ पहिया
कुछ तो किया।

था भी, कि न था
जो भी था स्वर्ण युग
था वर्ण युग।

जीवन शाम
चिड़ियों की कतार
उड़ तू पार।

हारा था ईशु
मां ने ही बदला था
था जब शिशु।

स्कूली बच्चियां
लो! आंखों में छलके
स्वप्न कल के।

फैलेगी आग
सोने-चांदी के चूल्हे
मिट्टी के चूल्हे।

छेड़ा जो तार
आर्तनाद का स्वर
हुआ सितार।

कलाम में भी
जो हो फ़र्शी सलाम
पाओ इनाम।

इस दौर में
जान पर आई है
जान आई है।

कीचड़ पोली
उनकी खूब होगी
कीचड़ होली।

शब्दों में झांक
दिखे सौंदर्य, जो हो
पारखी आंख।

कैसा बांधा था
तूने पीपल धागा
स्वप्न में जागा।

क्या हंसी होती
जहां तू भी हंसता
मैं भी हंसता।

क्यों तंग दिल
देश भिन्न-बहुल
मन तू खुल।

पकड़ लेता
क्षण था नया-नया
गया तो गया।

पहाड़ ने दी
मुझे ऊंची वो झंडी
वो पगडंडी।

आक्रोश आया
देर हो गई जब
विवेक आया।

क्या पढ़ता तूं
विगत के संकेत
चेत तू चेत।

श्रीरामकृष्ण भवन, अनाडेल, शिमला,
हिमाचल प्रदेश-171003

आलेख

मूर्ति कला में शिव

● डॉ. क्षेत्रपाल गंगवार



शिव के आदि-स्वरूप का साहित्यिक परिचय जहां वैदिक साहित्य में उपलब्ध होता है, वहीं उनका मूर्त स्वरूप सैन्धव संस्कृति में मिलता है। ऋग्वैदिक रुद्र का वर्ण भूरा है (2/33/5) और उनके केश घुंघराले हैं। (1/114/1, 5)। यहां वज्र (2/33/7) और धनुष-बाण (2/33/10; 5/42/11; 10/125/6 आदि) धारण किए रुद्र को ईशान (2/33/9), कपर्दिन (जटाजूटधारी- 1/114/1, 5), कल्पलीकिन (जलने या दहकने वाले 2/33/8) तथा वृषभ (वर्षाकारक या अत्यधिक पुरुषत्वपूर्ण- 2/33/7, 8 आदि) अभिहित किया गया है। उनका वज्र मनुष्य तथा गायों का संहारक होने के कारण उसे अलग रखने की प्रार्थना की गई है (2/33/1)। यजुर्वेद में रुद्र ताम्र वर्ण, लोहित, नीलग्रीव तथा कृत्तिवास हैं (वाजसनेयी संहिता, 16/7) और उन्हें पशुपति, भव, महादेव, ईशान तथा उग्र देव कहा गया है (वाजसनेयी संहिता, 39/81)। शतरुद्रीय स्तोत्र (वाजसनेयी संहिता, 16/1-66) में शिव, शंकर, नीलग्रीव (अथर्ववेद नीलशिखण्डिन) तथा गिरिचर उनके नए विशेषण हैं। रुद्र के यही वैदिक अभिधान पौराणिक शिव में अंतर्निहित हो गए हैं।

सैन्धव संस्कृति की कई मृण्मुद्राओं पर शिव का आदि-स्वरूप निरूपित मिलता है। यहां उनके साथ वृषभ, त्रिशूल (आर्क्यालॉजिकल सर्वे ऑफ इंडिया, वार्षिक विवरण 1930-1940 ई., पृ. 63-64) तथा धनुष तो संलग्न हैं ही, उनका पशुपति तथा योगी स्वरूप प्रसिद्ध पशुपति मृण्मुद्रा पर प्रदर्शित है। यहां योगासीन मानवाकृति के दक्षिण पार्श्व में व्याघ्र व हाथी तथा वाम पार्श्व में महिष व गैंडा और नीचे द्विशृंगी मृग प्रदर्शित है। आकृति ऊर्ध्वमेद्र तथा त्रिमुखी है। सैन्धव संस्कृति में ही शिश्न तथा योनि की आकृतियां भी मिल जाती हैं, जो शिव के पौराणिक प्रतीक-पूजन का आदि-रूप हैं।

कुषाण-काल से शिव का निरूपण सिक्कों पर होने लगा था। पहली शती ई. में विम कदफिसस ने स्थानक शिव को त्रिशूल तथा बाघम्बर धारण किए दिखाया है और स्वयं को महीश्वरस्य उपाधि से विभूषित किया है। (महरजस रजदिरजस सर्वलोग ईश्वरस्य महीश्वरस्य विम कदफिसस मदर। -डॉ. वासुदेव उपाध्याय, प्राचीन भारतीय अभिलेखों का अध्ययन, पृ. 48)। राष्ट्रीय संग्रहालय के स्वर्ण सिक्के (पं. सं. 60. 1165/3888) पर त्रिशूलधारी स्थानक शिव के पीछे नंदी खड़ा है।

कनिष्क के सिक्कों पर चतुर्भुजी शिव त्रिशूल, डमरू, कमण्डलू तथा पाश धारण किए हैं और उनके सिर पर प्रभामंडल है। यहां यूनानी लिपि में शिव का ईश नाम भी अभिलिखित है। कुछ सिक्कों पर शिव के पार्श्व में एक मृग भी खड़ा है और कुछ पर उन्हें त्रिशूल तथा कमण्डलु धारण किए मात्र द्विभुजी दिखाया है। राष्ट्रीय संग्रहालय के स्वर्ण सिक्के (पं. सं. 60.1165/3901) पर स्थानक शिव के एक हाथ में मृग है। कनिष्क के ही कुछ ताम्र-सिक्कों पर शिव के वाम कर में वैष्णव आयुध गदा प्रदर्शित है।

हुविष्क के सिक्कों पर शिव के द्वि तथा चतुर्भुजी दोनों रूप मिलते हैं। इन पर यूनानी लिपि में प्रायः ईश अभिलिखित है। कुछ सिक्कों पर वे हिरन के सींगों पर हाथ रखे हैं। एक सिक्के पर वे शशांकभूषित हैं और अन्य पर धनुर्धारी हैं। कुछ स्वर्ण सिक्कों पर त्रिमुखी एवं चतुर्भुजी शिव दक्षिण करों में वज्र व कमण्डलु और वाम करों में त्रिशूल व गदा धारण किए हैं। हुविष्क के ही एक स्वर्ण सिक्के पर शिव के नाम करों में त्रिशूल तथा वज्र और दक्षिण करों में चक्र तथा छाग है। त्रिमुखी आकृति शिरश्चक्रयुक्त है। यहां शिव का ऊर्ध्वमेद्रत्व उल्लेखनीय है, जो उत्तर-कुषाण से परवर्ती शिव-प्रतिमाओं में प्रायः मिलता है। किसी सिक्के पर शिव का

ऊर्ध्वमेद्रत्व सर्वप्रथम यहीं निरूपित है।

वातुल शुद्ध आगम के अनुसार शैव सिद्धांतों में ब्रह्म के शिव, सदाशिव तथा महेश नामक तीन तत्त्वों की मान्यता है। जहां शिव को सूक्ष्म और सदाशिव को स्थूल-सूक्ष्म, वहीं महेश को स्थूल माना गया है। सृष्टि, स्थिति तथा लय का प्रत्यक्ष सम्बंध इन्हीं से है। भक्तों के लिए वे स्थानक, आसनस्थ, नृत्तरत, वाहनारूढ़, उग्र, सौम्य आदि विविध लीला-रूप धारण करते हैं। इन्हीं महेश की पच्चीस लीला-मूर्तियां हैं।

स्वरूप-निर्माण का प्रस्तुत विवरण दर्शन-विशेष से सम्बद्ध होने के कारण सर्वमान्य नहीं है। बहु प्रचलित मान्यता तथा लक्षण ग्रंथों के अनुसार शैव प्रतिमाओं के लिंग-प्रतिमा तथा रूप-प्रतिमा नामक दो भेद हैं। लिंग प्रतिमाएं यथार्थ लिंग और मुखलिंग रूप में उपलब्ध होती है। मुखलिंग एक, तीन, चार और पांच मुखी मिलते हैं। यथार्थ लिंग का प्राचीनतम मान्य प्रमाण मथुरा से प्राप्त हुआ है, जो पहली शताब्दी ईसा पूर्व का है। यहां वृक्ष के नीचे आयताकार पीठिका पर आसीन लिंग की पूजा की जा रही है।

कुषाणकालीन दक्षिण भारतीय गुडीमल्लम शिवलिंग में छाग तथा कमण्डलुधारी द्विभुजी शिव अपस्मार के कंधों पर खड़े हैं, जबकि इसी काल का इलाहाबाद (भीटा) से प्राप्त शिवलिंग पंचमुखी है जिसमें एक मुख ऊपर और नीचे चारों दिशाओं में चार मुख बने हैं। कौशाम्बी का शिवलिंग चतुर्मुखी है, जिस पर अघोर, उष्णीसिन, योगी तथा नारी मुख उत्कीर्ण हैं। पुष्कर (नांद) के चतुर्मुखी शिवलिंग के अधोभाग में वैष्णव परिवार के विष्णु, एकानंशा, वासुदेव तथा बलराम और ऊर्ध्व भाग में चारों ओर ऊर्ध्वरेतस लकुलीश प्रदर्शित हैं। चतुर्मुखी शिवलिंगों पर शिव के अतिरिक्त सूर्य, विष्णु और ब्रह्मा भी मिलते हैं, जिन्हें हरिहर ब्रह्मादित्य नाम से अभिहित किया जा सकता है। आगे चलकर पंचायतन शिवलिंगों का भी निर्माण हुआ, जिन पर शिव के साथ शक्ति, गणेश, विष्णु और सूर्य को निरूपित किया गया है। मध्य प्रदेश के शिवपुरी तथा मन्दसोर में अष्टमुखी शिवलिंग मिले हैं1, जो अभिज्ञानशाकुन्तलम के नांदीपाठ में आई शिव की अष्टमूर्तियों के प्रतीक हैं।

रूप प्रतिमाएं मुद्रा के आधार पर शांत या सौम्य और अशांत या उग्र दो प्रकार की हैं। अशांत शैव प्रतिमाएं संहार मूर्ति तथा भैरव मूर्ति के रूप में विभाजित की जाती हैं। दस संहार मूर्तियों के नाम हैं- कामान्तक, त्रिपुरान्तक, अंधकान्तक, गजान्तक, जलन्धर-वध, वीरभद्र, ब्रह्माशिरश्च्छेदक (कंकाल या भिक्षाटन), मल्लारि, कालारि और शरभेश। शास्त्रीय तथा लक्षण ग्रंथों में भैरव मूर्ति के आठ, नौ तथा चौसठ स्वरूप तक मिलते हैं।

रूप प्रतिमाएं मुद्रा के आधार पर शांत या सौम्य और अशांत या उग्र दो प्रकार की हैं। अशांत शैव प्रतिमाएं संहार मूर्ति तथा भैरव मूर्ति के रूप में विभाजित की जाती हैं। दस संहार मूर्तियों के नाम हैं- कामान्तक, त्रिपुरान्तक, अंधकान्तक, गजान्तक, जलन्धर-वध, वीरभद्र, ब्रह्माशिरश्च्छेदक (कंकाल या भिक्षाटन), मल्लारि, कालारि और शरमेश। शास्त्रीय तथा लक्षण ग्रंथों में भैरव मूर्ति के आठ, नौ तथा चौसठ स्वरूप तक मिलते हैं।

शांत या सौम्य स्वरूप की सत्ताईस प्रतिमाओं को अनुग्रह, नृत्र, दक्षिण, विशिष्ट तथा सामान्य वर्गों में विभाजित किया जाता है। जहां संहार मूर्तियों में ब्रह्माशिरश्च्छेक तथा शरभेश विशेष उल्लेखनीय हैं, वहीं सौम्य स्वरूपों में रावणानुग्रह, नटराज, कल्याण-सुंदर, अर्धनारीश्वर और हरिहर प्रमुख हैं। ऋग्वेद (10/61/4) तथा शतपथब्राह्मण (1/7/4/1) में ब्रह्मा के जिस अनैतिक व्यवहार का उल्लेख है, उसी ने पौराणिक काल में विस्तृत आख्यान का रूप ले लिया। मत्स्य तथा भागवत पुराण के अनुसार पुत्री पर आसक्त हो जाने के कारण शिव ने ब्रह्मा का सिर काट दिया था। ब्रह्म-हत्या के कारण ब्रह्मा का सिर शिव के हाथ में सम्प्रक्त हो गया, जो काशी के कपालमोचन नामक स्थान पर ही पृथक हो सका। वैष्णवों से वैमनस्य के कारण शैवों ने शिव के शरभेश रूप की कल्पना की। पौराणिक आख्यान के अनुसार हिरण्यकशिपु-वध के पश्चात नृसिंह के अत्यंत उग्र हो जाने पर शिव ने मानव, पशु तथा पक्षी का संयुक्त स्वरूप धारणकर नृसिंह का वध किया।

रावणानुग्रह स्वरूप की प्रतिमाएं यद्यपि उत्तर भारत में भी मिल जाती हैं, परंतु यह दक्षिण भारत में अधिक निर्मित हुई है। ऐसी प्रतिमाओं में कैलास पर सपरिवार आसीन शिव को रावण द्वारा उठाए दिखाया जाता है। एलोरा की कैलास मंदिर गुफा में इसका अत्यंत सुंदर निरूपण है।

नटराज रूप में शिव दायां पैर अपस्मार पर रखकर बाएं पैर को उठाए रहते हैं। उनके स्वाभाविक बाएं हाथ में गजहस्त और दाएं में अभय मुद्रा के साथ अतिरिक्त दाएं हाथ में डमरू तथा बाएं हाथ में आग का गोला रहता है। तमिल ग्रंथ उन्मयि-विलक्कम में शिव के नटराज रूप को व्याख्यायित करते हुए कहा है कि डमरू सृष्टि, अभयमुद्रा पालन, अग्नि संहार और उठा हुआ पैर मुक्ति का प्रतीक है। बादामी में नटराज को सोलहभुजी और हम्पी में अष्टभुजी प्रदर्शित किया गया है। ढाका (मुंशीगंज) की नटराज प्रतिमा में शिव नंदी की पीठ पर नृत्यरत हैं।

कल्याणसुंदर शिव और पार्वती के विवाह की निरूपक प्रतिमा है, जिसका एक अत्यंत उत्कृष्ट उदाहरण एलीफेंटा में उपलब्ध है। बादामी में द्विभुजी शिव बाएं हाथ में डमरू धारण किए दाएं से पार्वती का पाणि-ग्रहण कर रहे हैं। वैवाहिक कार्य प्रायः ब्रह्मा द्वारा सम्पन्न कराया जाता है।

कविता

आना हमारे गांव

● कमलसिंह चौहान

पीपल की ठंडी छांव में
अब आना हमारे गांव में
इठलाती हुई पगडंडियों पर
दीप जले ढांव में
पीपल की ठंडी छांव में...
गांवों के ग्वालों के बीच
राधा खड़ी है अंखियां मींच
रम्भाती गायों के स्वर
घूंघरू बंधे है पांव में
पीपल की ठंडी छांव में...
दीप देहरी पर जले
सब परस्पर गले मिले
दीपावली सबको सुखद हो
दीप जले हर पड़ाव में
पीपल की ठंडी छांव में...
अब आना हमारे गांव में।

कविता निवास, दुर्गा मंदिर के पास, रेलवे स्टेशन रोड, बीड़, जिला खंडवा, मध्य प्रदेश।

सांख्य दर्शन में सृष्टि का हेतु पुरुष और प्रकृति होने के आधार पर शैव-धर्म में शिव और शक्ति के समन्वित रूप में अर्धनारीश्वर स्वरूप का विकास हुआ। यह शैव और शाक्त धर्मो की सहिष्णुता का भी परिचायक है। शिव और शक्ति के समन्वय का उद्घोष कालिदास ने तो किया ही है, पांचवां शती ई. में यूनानी लेखक स्टोबास ने बर्डसेन्स लिखित एक अंश उद्धृत किया है, जिसमें ईसा पूर्व दूसरी शती में सीरिया गए एक भारतीय द्वारा अर्धनारीश्वर की मूर्ति का उल्लेख है। भारत में अर्धनारीश्वर की प्रतिमाएं कुषाणकाल से मिलने लगती हैं, जिनमें वामार्ध शक्ति और दक्षिणार्थ शिव का रहता है। परंतु कुछ अर्धनारीश्वर प्रतिमाओं में इसके विपरीत पार्श्व भी मिलते हैं, जिन्हें क्रमशः शैव और शाक्त अर्धनारीश्वर कह सकते हैं। भुवनेश्वर के परशुरामेश्वर मंदिर में अर्धनारीश्वर को नटराज और महाबलिपुरम् की प्रतिमा में शिव को द्वि तथा शक्ति को एकभुजी प्रदर्शित किया गया हैं अफ्रीका में स्टील निर्मित बीस फुट ऊंची विश्व की सबसे बड़ी अर्धनारीश्वर प्रतिमा है।

शैव और वैष्णव सम्प्रदायों की सहिष्णुता शिव की हरिहर प्रतिमा में परिलक्षित होती है, जिसका प्राचीनतम प्रमाण हुविष्क के सिक्के पर मिलता है। इसमें वामार्थ विष्णु और दक्षिणार्थ शिववत् रहता हैं कुछ प्रतिमाओं में शिववाम पार्श्व में प्रदर्शित हैं। सूत्रधार मंडन के अनुसार जिस प्रकार शंख, चक्र, गदा और पद्म के स्थान-भेद से विष्णु के चौबीस स्वरूपों का निर्माण होता है, उसी प्रकार विष्णु और शिव के संयोग से बत्तीस प्रकार की हरिहर-मूर्तियां बन सकती हैं। आलमपुर (आंध्रप्रदेश) की 13-14वीं शती की प्रतिमा में शिव के साथ नृसिंह और हिमाचल प्रदेश के त्रिलोकनाथ तथा कम्बुज (कम्बोडिया) और चम्पा (वियतनाम) में शिव के साथ बुद्ध का समन्वय है। जावा का 13वीं शती का शासक कृतनगर शिव और बुद्ध के संयुक्त स्वरूप का उपासक होने के कारण शिवबुद्ध नाम से ही सम्बोधित किया जाने लगा था। शिव के साथ शक्ति और विष्णु ही नहीं अन्य देवों के समन्वय से शिवादित्य, हरिहरादित्य, हरिहरब्रह्मादित्य, शिवपितामह, शिवलोकेश्वर, हरिहरादित्यबुद्ध, शिवादित्यपितामह, हरिहरपितामह, चन्द्रार्कहरिहरपितामह आदि की संयुक्त प्रतिमाओं का निर्माण हुआ है।

शिव की एक अन्य उल्लेखनीय प्रतिमा लिंगोद्भव है। कूर्म, वायु, लिंग, शिव आदि पुराणों में प्राप्त एक आख्यान के अनुसार एक बार ब्रह्मा तथा विष्णु में पारस्परिक श्रेष्ठता सम्बंधी विवाद होने पर एक ज्योतिपुंज प्रकट हुआ। ब्रह्मा और विष्णु दोनों ने उसे आश्चर्य भाव से देखा और इस शर्त के साथ ब्रह्मा ने अंत खोजने के लिए ऊर्ध्व और विष्णु ने आदि खोजने के लिए अधोगमन किया कि जिसे अपने उद्देश्य में सफलता मिले, वही महान है। मूर्तिकार ने इसी को मूर्त रूप दे दिया। सीकर के हर्षनाथ मंदिर से प्राप्त 10वीं शती ई. की ऐसी ही लिंगोद्भव प्रतिमा अजमेर संग्रहालय में संग्रहीत है। उत्तर चोलकालीन 12वीं शती की ऐसी ही एक प्रतिमा में अधोगामी विष्णु और ऊर्ध्वगामी ब्रह्मा के अतिरिक्त मध्य में चन्द्रशेखर प्रदर्शित हैं।

अंत में शिव की पार्वती के साथ क्रीड़ारत ऐसी प्रतिमा के उल्लेख का लोभ संवरण नहीं कर पा रहा हूं, जिसका लक्षण-ग्रंथों में अभाव है। स्कंद तथा पद्म पुराणों में शिव-पार्वती की द्यूत-क्रीड़ा का वर्णन है, जिसमें पार्वती विजयी रहती हैं। भोपाल तथा जबलपुर के संग्रहालयों के अतिरिक्त एलोरा, जोगेश्वरी, रीवा, सागर आदि में इस आशय की अनेक प्रतिमाएं देखी जा सकती हैं तथा चंडीगढ़ संग्रहालय में इस अभिप्राय का 18वीं शती का एक लघुचित्र भी है।

जी-109, अंसल सुशांत सिटी, कालवाड रोड, माचवा, जयपुर, राजस्थान-303706, मो. 99287 09343

1. मध्य प्रदेश के पुरातत्व का सन्दर्भ ग्रंथ, पृ. 326 व 337, क्रमांक 1519 अ तथा 1603 ई.

सैर-सपाटा

जन्नत से कम नहीं बरोट व लुहारडी

● बलविन्दर 'बालम'

समस्त हिमाचल ऋषीक है। यहां का कण-कण कलकूजक है। जहां जन्नत अपनी आभा रूपी चिलमन उठाती है। समस्त हिमाचल प्रदेश भारत के ताज की सुरभि है। फबीले, अद्‌भुत मौसमों के अभिवादन-अभिनंदन से ओत-प्रोत। दो-तीन माह के बाद हम कुछ दोस्त हिमाचल (आदि) जाने का कार्यक्रम बना लेते हैं। इस बार हमने खूबसूरत स्थान 'बरोट' तथा 'लुहारडी' का चुनाव किया। फोन पर जाने के लिए समय स्थान निश्चित कर लिया। पठानकोट (पंजाब) से हम तीन दोस्त मैं, राज वकील तथा मनमोहन धकालवी (किसान एवं लेखक) कार पर निकल पड़े पालमपुर की ओर। हम पठानकोट से दोपहर को चले। शाम को पहुंचे पालमपुर। पठानकोट से पालमपुर तीन-चार घण्टे का रास्ता है।

पठानकोट से चार-पांच किलोमीटर की दूरी से पहाड़ी क्षेत्र शुरू हो जाता है। सब से पहले हिमाचल का बैरिअर आता है। यहां गाड़ी के तीस रुपये प्रवेश शुल्क लेते हैं। यह हिमाचल का प्रथम गांव है तंडवाल जो पंजाब-हिमाचल की सीमा को एक करता है। यहां से छोटी-छोटी पहाड़ियां शुरू हो जाती हैं। हिमाचल के होटल, सड़क के इर्द-गिर्द हरे भरे वृक्षों की पारदर्शी छांव, छोटे-छोटे खेत, आम, अमरूद, इलीची और फलों के बाग। सड़क के ऊपर सब्जी बेचने वाले पहाड़ी मित्र। यहां का खीरा, घीआ कद्‌दू, लौंकी मशहूर है। खीरे के साथ काला नमक लगा कर ऊपर नींबू डाल कर देते हैं। मुंह एक बार तो स्वाद-स्वाद हो जाता है। खीरा नींबू इस तरह काट कर रखा जाता है कि पर्यटकों के मुंह से पानी निकल आता है तो हृदय कहता है, 'खीरा खाया जाए।'

कई गांव निकलते हुए हम पहुंचे 'जसूर'। जसूर छोटा-सा शहर है। यहां कई होटल तथा ऐतिहासिक, धार्मिक मन्दिर हैं। यहां से बड़े पहाड़ों की शृंखला आरम्भ होती है। यहां से टेढ़े-मेढ़े रास्ते अपनी पहचान करवाते हैं।

फिर आ जाता है नूरपुर। इस शहर में भी कई मन्दिर हैं। प्राचीन ऐतिहासिक किला है। किले में दो मन्दिर हैं। एक मीरा बाई-कृष्ण का तथा दूसरा काली माता का। नूरपुर से लक्कड़ का कारोबार बहुत होता है। सड़क के किनारे-किनारे आप को लक्कड़ के खुले गोदाम मिलेंगे। कांगड़ा में प्रवेश करते हुए हमने शाम को पालमपुर के रेलवे रेस्ट हाऊस में प्रवेश किया। यह रेस्ट हाऊस बहुत ही मनमोहक स्थान पर स्थित है। साफ-स्वच्छ रेस्ट हाऊस।

यहां सभी सुविधाएं उपलब्ध हैं। हम नाश्ता कर के सुबह ही निकल पड़े मजिल की ओर। राज एडवोकेट कार चलाने में बहुत परिपक्व तथा तजुर्बेकार मित्र है।

पालमपुर बाईपास से हम निकल पड़े। रास्ते में कहीं-कहीं रूक कर फोटोग्राफी का आनंद लेते रहे। बैजनाथ बाईपास होते हुए बैजनाथ से कुछ किलोमीटर दूर ऊपर पहाड़ी पर पहुंच कर हमने दूर से बैजनाथ का चित्र लिया। यहां से बैजनाथ का सारा शहर बहुत अच्छा लगता है। दूर से छोटे घरों के समूह मन को भाते हैं। वादियों के सुन्दर दृश्य नजर आते हैं। खड्डों तथा ऊंची पहाड़ियों का सुमेल आंखों को अच्छा लगता है और हृदय तथा मस्तिष्क में आनंद तथा सुकून पहुंचाता है। एक ऊंची पहाड़ी के मोड़ पर सड़क के आर-पार होता हुआ बहुत ऊंचा हरे रंग का बोर्ड लगा हुआ है जिस पर लिखा हुआ है पठानकोट 134 किलोमीटर तथा पालमपुर 21 किलोमीटर। इस मोड़ पर दायीं ओर एक गोलाकार छत का विश्राम कक्ष बना हुआ है। वहां हमने कुछ समय के लिए विश्राम किया।

दोपहर को हम बहुत ही मर्मस्पर्शी स्थान गांव 'गुम्मा' में पहुंचे। यहां पहाड़ों के बीच रास्ता अंग्रेजी के 'सी' की भांति सड़क का रास्ता बनाता है। इस मोड़ पर होटल (ढाबा), कुछ दुकानें और साथ में एक छोटा मन्दिर है। यहां हमने दोपहर का भोजन किया। यहां की सूलती पहाड़ियों के दृश्य देखते ही बनते हैं। जब सूर्य की किरणे हरी-भरी पहाड़ियों पर पड़ती हैं तो ऐसे प्रतीत होता है जैसे हरियाली के ऊपर प्रकृति ने पारदर्शी सुनहरी चादर ओढ़ दी हो। 'गुम्मा' खूबसूरत घाटी का नाम है। पहाड़ियों के साथ सड़क के पास ही एक शराब की फैक्ट्री भी है। गुम्मा की घाटी में खूब

सब्जियां होती हैं। फलों के खेत भी मिलते हैं। यहां फोटोग्राफी का अलग ही आनंद है। आंखों के माध्यम से मस्तिष्क में कैद हुए चित्र चिरस्थायी रहते हैं। जो सुकून देते हैं। मण्डी जिला के जोगिन्दर नगर से 11 किलोमीटर दूर गुम्मा गांव एक घुमावदार स्थान पर स्थित है। घुमाव से ही यहां का घुमा नाम पड़ा जो बाद में गुम्मा हो गया। गुम्मा में पत्थर के काले नमक की खानें हैं। इन काले नमक की खानों से गुम्मा की एक विशिष्ट पहचान। यह नमक की खानें केन्द्रीय सरकार के नियंत्रण में हैं। यह नमक पशुओं को देने के काम आता है। यह पहाड़ सड़क से छूह कर ऊपर जाते हैं।



गुम्मा वैली

घोघडाधार जिला मण्डी की एक प्रमुख पर्वत श्रेणी है। यह गुम्मा, घटासनी, झटींगरी आदि क्षेत्रों के मध्य धौलाधार पर्वत श्रेणी से अलग होकर उत्तर से दक्षिण की ओर ढलोसा, शिल्हा स्वाड़, लखनाणा, मड़खान जिल्हण, फूटाखल, ग्वालन, रडाहण, सत्तीधार, ग्वाली, घोघड़ाधार, पुन्दल, कलौण, सुराहण, बलहधार, केजोटधार, छाहड़ी, साहल, घुमारडा, भनवाड़, गरलोग, मसेरन, नगरोटा, हुलू, वासा, त्रयाम्वल मठीधार, शाड़ला, लिहागा, कटिन्डी, बडीधार, भलागा, रोड़ाधार आदि शिखरों के अनुसार व्यास नदी के दाएं किनारे स्थित भ्यूली तक विस्तृत है।

इस पर्वत श्रेणी के अर्न्तगत डायना पार्क, हिमरी गंगा आदि स्थान दर्शनीय हैं। मूलरूप में घोघड़ाधार मण्डी नगर से लेकर जोगिन्दर नगर के समीप गुम्मा तक विस्तृत हैं। इस पर्वत श्रेणी में तथा दक्षिणी ढलानों का जलप्रवाह विभिन्न नालों के नामानुसार ऊहल नदी में तथा दक्षिणी ढलानों का अधिकांश जलप्रवाह विभिन्न नालों के रूप में रणा खड्ड में समाहित है। घोघड़ाधार पर्वत श्रेणी का शिल्हा स्वाड़ शिखर सर्वोच्च है। यह समुद्रतल से लगभग छः हजार फुट ऊंचा है। इस पर्वत श्रेणी की उत्तरी ढ़लानों पर कमांद, सतनोग तथा दक्षिणी ढ़लानों पर उत्तर से दक्षिण की ओर पद्दर, नारला, किन्नू, गुम्मा, मण्डी नगर (मण्डी पुरानी) बसे हुए हैं। घोघड़ाधार के अर्न्तगत गुम्मा में हिडिम्बा देवी मन्दिर, हिमरी गंगा में शिव और गंगा मन्दिर, ट्रंन में चामुण्डा मन्दिर, नगरोटा में राधाकृष्ण मन्दिर प्रमुख हैं। इस के अतिरिक्त हिमरी गंगा में एक जलकुण्ड, नारला में जलप्रपात, कटिन्डी में शिव मन्दिर तथा शाड़ला में सरोवर दर्शनीय हैं।

गुम्मा (घोघड़ाधार) चील, शीशम, शेमल के वनों के लिए प्रसिद्ध है। इस श्रेणी के उत्तरी छोर पर झटींगरी में देवदार के घने वन हैं। झटींगरी, मण्डी राजवंश की ग्रीष्माकालीन राजधानी थी। गुम्मा के आस पास भव्य प्रपात गिरते हैं। कई छोटे-बड़े प्रपात पहाड़ियों की सुन्दरता को चार चांद लगाते हैं।

गुम्मा से ऊपर की ओर चल दिए हम कुछ घण्टों का सफर तय कर झटींगरी के चौंक में पहुंच गए। ठंडी हवाओं के सकून देने वाले मनोरम दृश्य हृदय में उतरने लगे। यहां छेटी-छोटी दुकाने हैं यहां चाय आदि मिल जाती है। क्योंकि मैं भ्रमण का ज्यादा शौकीन हूं, इस लिए मैंने दुकानदार से पूछा कि यहां देखने वाली कोई जगह है। उसने कहा यहां से लगभग एक किलोमीटर दाईं ओर ऊंची पहाड़ी पर एक प्राचीन स्थान है, 'रानी की कोठी'। उसने मुझे कुछ कहानियां रानी की कोठी के बारे में सुनाई। मेरे मन में जिज्ञासा बढ़ गई। मैंने गाड़ी से कैमरा निकाला और अकेला ही चल पड़ा 'रानी की कोठी' देखने। सीधा रास्ता। सौंदर्यबोध की परिभाषा बताते पहाड़ों के दृश्य। दूर-दूर पर्वतों की लम्बी-लम्बी मालाएं, ऊंचे-ऊंचे हरे भरे वृक्ष, दूर से बलखाती नदियां, झींसी जारिश में पक्षियों की ओजस्वी मधुर आवाजें, विभिन्न सुमनों की मिश्रित सुरभियां, दूर से दिखते दरियाओं के संगम, गुप्तचर बादलों की बनती तरह-तरह की आकृतियां, दरियाओं का एकांत का मुकम्मल सुकून किसी जन्नत से कम नहीं यह सब कुछ है 'रानी की कोठी' झटींगरी में। रानी की कोठी का एक छोटा चिक्कट भरपूर पथरीला, ऊबड़-खाबड़ रास्ता जो ऊपर पहाड़ी तक जाता नजर आता है। सीधी चढ़ाई। सांस फूलने लगती है क्योंकि रास्ते में पत्थर समतल नहीं हैं। यहां रास्ता खत्म होता है वहां पहुंचते ही किसी आनंद विभोरावस्था में आप चले जाएंगे। लहरों जैसी बर्फीली हवाओं से आप बच नहीं सकते। यहां त्रिकोने पहाड़ों के बीच प्राचीन छोटी-छोटी कोठियां (कमरे) नजर आते हैं। यह सौंदर्य पूर्वक जन्नत युक्त स्थान है। इसे 'रानी की कोठी' कहते हैं। अत्यंत भव्य दृश्य का अद्भुत दिव्य स्थान। तिकोनी नुक्कड़ में घने वृक्षों के बीच रानी की कोठी का स्थान। लगभग एक एकड़ के समतल क्षेत्र में यह स्थान ठंडे मौसम का देवलोक है। इस के आगे थोड़ा रास्ता छोड़ कर फिर लगभग एक एकड़ समतल पहाड़ी है। पहाड़ी की चोटी समतल है। यहां से दूर-दूर के दृश्य, भव्य चोटियां, ऊहल



बरोट में ट्राऊट मत्स्य पालन फार्म

दरिया के दृश्य दिलकश मंजर (नजारे) पेश करते हैं। यह छोटे-छोटे पहाड़ी शैली के प्राचीन घर (कोठियां) मन को, आंखों को अच्छे लगते हैं। इस स्थान का जिस ने चुनाव किया होगा वह जरूर प्रकृति का आशिक होगा। रानी की कोठी झटींगरी जोगिन्दर नगर से लगभग 32 किलोमीटर दूर है। 2130 मीटर की ऊंचाई पर स्थित यह क्षेत्र घने जंगलों से घिरा है जहां देवदार वृक्षों के घने सुन्दर जंगल हैं।

इतिहासमें मिलता है कि इस क्षेत्र का राजा गर्मियों के दिनों में यहां रानी की कोठी आया करता था। झटींगरी के नीचे खूबसूरत घाटी का दृश्य देखते ही बनता है। झटींगरी ऊंची पहाड़ी पर सड़क के ऊपर स्थित छोटा सा शहर है। यहां से ठंडी हवाओं के झोंके अपना दामन खोल देते हैं। झटींगरी में आलू का उत्पादन बहुत होता है। यहां जो लोग घूमने आते हैं वे अपने साथ पिकनिक का सामान सामग्री लेकर आते हैं। रानी की कोठी के खुले आंगन में बच्चों के खेलने-कूदने के लिए अच्छी जलवायु है। ठंडी हवाओं में खाने पीने का मजा आ जाता है। तजुर्बेकार तथा घुमक्कड़ लोग अपने साथ फोलडिंग तम्बू जरूर लेकर आते हैं क्योंकि यहां कब टपकाटपकी (बूंदाबांदी) हो जाए या तेज बारिश आ जाए कोई नहीं पता। बारिश में तम्बू के बीच से दृश्य देखने का अपना ही आनंद होता है। बच्चे तो यहां हर पल का मजा लेते हैं।

ठंडे मौसम का आभास तन मन रूह को शान्ति तथा सम्मोहन की अनुभूति प्रदान करता है। यहां चतुर्दिशा सौंदर्य माला माल है। यहां के तरह-तरह के घूमिल तथा श्याम खेत बादलों के झुण्ड ऊंचे देवदार के वृक्षों से अलिंगन हो कर वर्षा का अभिवादन करते हैं तो ऐसे महसूस होता है जैसे आप आसमान के बीच हैं। रानी की कोठी में रात के समय जब चांद सितारे साफ मौसम में झिलमिलाते हैं तो दृश्य किसी जन्नत से कम नहीं होता। महसूस करने की शक्ति ही जन्नत है। रात के समय पहाड़ों पर दूर-दूर की जगमगाती बस्तियां कितनी अदभुत, कितनी सुन्दर, कितनी आकर्षक, कितनी प्यारी लगती हैं। इसको शब्दों में नहीं लिखा जा सकता। यहां आकर ही महसूस किया जा सकता है।

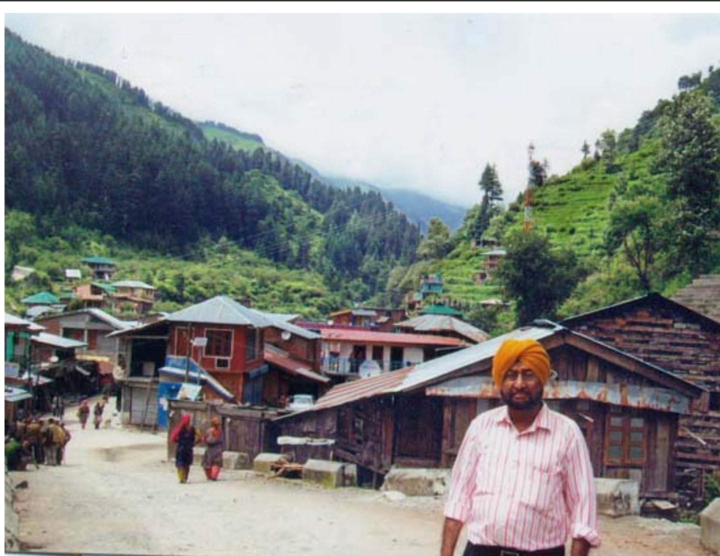
लुहारडी में तेज-तर्रा ठंडी हवाओं के झौंके आप को पैरों पर टिकने नहीं देते। यहां के लोग अभी भी महिलाएं तथा पुरुष प्राचीन हिमाचली पहरावे में देखने को मिलते हैं। यह स्थान बरोट से कहीं अच्छा है। प्राकृतिक नजारे, अद्‌भुत लौकिक-अलौकिक दृश्य तन, मन, रूह, हृदय, मस्तिष्क को छू जाते हैं। मुकम्मल शान्ति और वातावरण की चुप्पी को दरिया की शरगोशियां किसी पाजेब झनकने का अहसास दिलाती हैं।

रानी की कोठी की ओर कोई विशेष ध्यान नहीं दिया। रानी-राजाओं का यह घर जीर्ण-शीर्ण हालत में है। पुरातन विभाग हिमाचल प्रदेश को इस ऐतिहासिक घरोहर एवं रमणीक स्थान की देख-रेख-संभाल की जिम्मेवारी स्वयं अपने हाथ में लेनी चाहिए। यहां अच्छे होटल खोले जा सकते हैं। हिमाचल का यह स्थान विश्व पटल पर आ सकता है और अच्छी आमदन भी हो सकती है। रानी की कोठी श्रेष्ठ धरोहर पिकनिक स्पाट बन सकता है। रानी की कोठी (झटींगरी) से हम बरोट की ओर बढ़े। बरोट जाने के लिए घटासनी जाना पड़ता है। घटासनी एक छोटा सा शहर है। पठानकोट (पंजाब) से घटासनी लगभग 190 किलोमीटर दूर पड़ता है। घटासनी से बरोट जाने का रास्ता एकदम कठिन, सीधी चढ़ाई वाला है। घटासनी की मुख्य सड़क से बरोट को रास्ता जाता है। यह रास्ता एक बड़े दरवाजे नुमा सा लगता है जैसे किसी बड़े महल का मुख्य गेट खुलता है। केवल चार पहिया वाहन जितना मुश्किल रास्ता। घटासनी के बारे में बताया जाता है कि मण्डी पठानकोट सड़क पर मण्डी से 42 किलोमीटर दूर पहाड़ी के एक घट्टा पर एक देवी का स्थान है। यहां घट्टा पर वास करने के कारण देवी माता घट्टावासिनी कहलाई। घट्टावासिनी शब्द कालांतर में घटासनी हो गया जिस से देवी माता को घटासनी माता कहा जाने लगा और यह स्थान घटासनी नाम से प्रसिद्ध हो गया। घटासनी एक सुन्दर घाटी है। घटासनी से बरोट जाते समय सुन्दर तथा नाटकीय ढंग से आप को दृश्य देखने को मिलते हैं। पहाड़ों के साथ-साथ सड़क

नीचे खड्ड और उसमें सांप की भान्ति बहता दरिया। रास्ते में हुरला गांव में प्राचीन पहाड़ी शैली के घर देखने को मिलते हैं। चीड़ के वृक्षों में प्राचीन पहाड़ी गांव दूघर गांव। यह गांव सुन्दर घाटी का दृश्य छोड़ता है। चीड़-ही-चीड़ और उसके घने जंगलों में गुजरती सड़क। एक दम अकेली। पहाड़ों के ऊपर फिर पहाड़। लगभग 25 किलोमीटर की यह सीधी चढ़ाई है। फिर ऊपर देवदार के जंगल शुरू हो जाते हैं। सारा रास्ता जंगल ही जंगल भयावह रास्ता परन्तु मनोरंजन से भरपूर। रास्ते में छोटे-छोटे झरनें देखने को मिलते हैं। गांव टिक्कर में सड़क के समीप ही एक खूबसूरत निर्झर गिरता है। अपने साथ आस-पास मिल कर भव्य विहंगम दृश्य बनाता है। यह गांव टेकरी पर स्थित होने से टिक्कर नाम को प्राप्त हुआ। इस के आगे घना जंगल शुरू हो जाता है जिसे नरगु जंगल कहते हैं। दरिया इस के साथ-साथ चलता है। प्राचीन हिमाचल देखने को मिलता है। रास्ते में ज्वार के हरे भरे खेत। लहलहाते खेत तथा तरह-तरह के फल तथा सब्जियों के खेत देख कर मन-हृदय खिल सा उठता है। दृश्य को छूने वाली सुरभियां सूंधने को मिलती हैं। कई छोटे-बड़े पहाड़ पार करते हुए थके हारे हम बरोट पहुंचे। हिमाचल प्रदेश का ही एक विशेष अद्भुत नजरों वाला स्थान है बरोट। हम गाड़ी एक होटल के पास खड़ी करके घूमने लगे। कुछ खाया पीया। थकावट अभी भी शरीर में चुभन पैदा कर रही थी। परन्तु सुन्दर दृश्य देख कर थकावट छू मंत्र हो गई। वाह-वाह सुन्दर आधुनिक शैलीयुक्त प्राचीन शैली के होटल। बरोट नगर खूबसूरती की जीवंत मिसाल। आसमान की गोद में नजारे बिखेरता भव्य क्षेत्र बरोट। ऊंचे पहाड़ों में बसा सुन्दर नगर। यह स्थान ऐसे प्रतीत होता है जैसे आसमान की गोद में कोई बच्चा खेल रहा हो।

बरोट ऊहल दरिया के छोर पर बसा हुआ है। दरिया के साथ-साथ होटल बने हुए हैं। दरिया अपने से अलग हो कर कई झीलों का स्वरूप लेता है। हरी-हरी पहाड़ियां आतुल्य सौंदर्य के गीत गाती प्रतीत होती हैं। दरिया की कल कल में लहरों के झुरमट जैसे किसी गोरी की पाजेबें छमकती हों। पहाड़ों पर दूर छोटे-छोटे घर ऐसे प्रतीत होते हैं जैसे दीवार पर खिलौने लटकते हों। दूर पहाड़ी की चोटी पर चढ़ कर सुबह का सूर्य देखने का अद्भुत आनंद है। ऐसे जैसे स्वर्ग से कोई रौशनी नंगे पांव उतर रही हो। शाम को ठंडी हवाओं में आसमान जब साफ होता है तो चांद-तारों की बारात के साथ शामिल होना कितना अच्छा, कितना सुखद, कितना दृश्यमई हो जाता है। बादल नीचे और आप ऊपर, जैसे आसमान में उड़ रहे हों। अच्छे-अच्छे मनमोहक दृश्य आप के मन-मस्तिष्क में सदैव के लिए कैद हो जाते हैं जो सुकून का पाठ पढ़ाते रहते हैं। बरोट का इतिहास कुछ इस तरह से कहता है। बरोट मण्डी जिला की चुहार घाटी में ऊहल नदी के किनारे बसा एक रमणीक स्थान है। किसी समय यह स्थान बरा के पौधों से भरा होता था जिससे यहां का नाम बरोढ़ (बरोट) पड़ा है। सन 1925 में ब्रिटिश सरकार की ओर से अंग्रेजी सेना के इंजीनियर कर्नल बंटी तथा मण्डी के राजा जोगेन्दर सेन के बीच एक अनुबंध हुआ जिससे जोगेन्दर नगर की शानन और बस्सी जल विद्युत परियोजना साकार हुई। इस परियोजना का जल भण्डारण केन्द्र बरोट में बना। यहीं से दो बड़े पाइपों से पानी ले जा कर शानन और बस्सी में बिजली उत्पादन किया गया है।

बरोट की विशेषता यह भी है कि यहां बहुत विशाल मत्स्य विभाग ट्राऊट मछली केन्द्र भी है। यहां ट्राऊट मछली का बीज भी तैयार किया जाता है। यह स्थान नवम्बर से फरवरी तक बंद रहता है। इस को मत्स्य पालन विभाग हिमाचल ने संभाल रखा है। ट्राऊट मछली फार्म में 350 रुपये किलो के हिसाब से मछली व्यापारी लोगों को दी जाती है। जबकि बाजार में 7 सौ से लेकर 9 सौ रुपये किलो के हिसाब से बेची जाती है। यह सफेद रंग में होती है तथा देखने में अति सुन्दर। यह मछली ऊहल दरिया के ठंडे पानी में होती है। बर्फ से भी ज्यादा ठंडे तापमान में होती है। हिमाचल सरकार ने विशेष किस्म के उपकरण लगा कर इस मछली के लालन-पालन का प्रबंध किया हुआ है। यह मछली आम (साधारण) मछली से अलग होती है। इस की मांग बहुतायत में पाई जाती है। बरोट के आस पास कई स्थान देखने वाले हैं जैसे नारगु वाइल्ड लाइफ सैंटर, हर्बल म्यूजियम, हर्बल गार्डन इत्यादि।


लुहारडी गांव

बरोट से पता चला यहां से कुछ दूरी पर ऊपर भी एक स्थान देखने योग्य है। यह स्थान


थरोट (लुहारडी) में हथकरघा पर महिला कर्मी

लुहारडी है। बरोट से लगभग छोटे रास्ते से होते हुए हम पहुंचे लुहारडी। प्राकृतिक नजारों की गोद में बसा छोटा गांव लुहारडी। दरिया के ऊपर घनी पहाड़ियों के बीच। सभी पहाड़ियां गांव को छूती हैं। कांगड़ा जिला की बैजनाथ तहसील के छोटा भंगाल क्षेत्र के इस गांव में पहले केवल लुहार समुदाय के लोग रहते थे और उसी आधार पर यहां का नाम लुहारडी पड़ा।

लुहरडी गांव में लगभग एक सौ के करीब घर होंगे। यहां के एक नवयुवक राजेश कुमार (फोन : 09459924807) ने बताया कि यहां के लोग शाही राजपूत की फौज में थे। इसके आस पास ग्यारह गांव पड़ते हैं। यहां के लोग कृषि तथा छोटी खडड्डी (हथकरघा) का काम करते हैं। विशेषतौर पर महिलाएं हथकरघा का काम करती हैं। यहां सब्जियां भी होती हैं। यहां तीन से चार फुट तक बर्फ पड़ती है। लोग भेड़-बकरी पालन भी करते हैं।

सर्दियों में जोगिन्दर नगर तक का रास्ता बर्फ पड़ने के कारण बंद हो जाता है। यहां माता का मन्दिर तथा जय पाषाकोट का मन्दिर भी है। लुहारडी से सीधी चढ़ाई वाले रास्ते से 14 किलोमीटर दूर ऊपर पहाड़ी पर शिव भगवान का मन्दिर सुशोभित है। यहां प्रसिद्ध 'देना सर झील' है। देश-विदेश से लोग तीन तथा चार सितम्बर को 'देना सर झील' शिव मन्दिर के दर्शन करने आते हैं, क्योंकि इन दो दिनों में भारी मेला लगता है। देना सर झील (शिव मन्दिर) की यात्रा पैदल ही करनी पड़ती है। कोई भी वाहन यहां नहीं जा सकता। लुहारडी घाटी एक मूल्यवान प्राकृतिक सौंदर्यपरक स्थान है। ऊहल दरिया कुछ दूरी से निकलता है। यहां ऊहल का प्रथम गांव है। जिला मण्ड़ी में ब्यास नदी के दाएं किनारे प्रवेश करने वाली सब से बड़ी नदी ऊहल है। यह मूलरूप में कांगड़ा जिला के छोटा भंगाल के अर्न्तगत थमसरजोत की दक्षिणी-पूर्वी ढलानों के जलप्रवाह से उद्‌गम लेकर जिला कांगड़ा में चक पनाहट, बकर कयाड़ा, बन क्षेत्र, पलाह चक, व्रन क्षेत्र, बड़ाग्रां, नलहोता, कूड़धार, कग्योड़, कोहड़, गगलू दी माला, चेलरं दी माला, सरला, ध्रामान, जुधार, सरमन, दयोट, नेर, ऊहलधार, अखलोग, मूलथान आदि गांवों के साथ बहती हुई मण्ड़ी जिला में प्रवेश कर बरोट, ढरागन, नरवान, लपासु, काओ, कलहोग, बोचंग, जमतेहड़, बरधान, लपकठंडी, कुलझान, ढलोसा, मरखान, धार, बूलंग, काग्पन, सतनोग, कपलधार, धनवाग, वल्ह, टिक्कर, फागणी, सिपूण, शंगलवाह, कुटाहर, लांझणू, डंगाहर, टीहरी, बरनाला, कमांद, सूरन, कलथवाड़, तमलौट, नमैण, खुरनाल होते हुए ध्राण के पश्चिम में बिंदराबनी के सामने व्यास नदी के दाएं किनारे प्रवेश करती हैं। गहरी खाईंयों में बहने के कारण इस नदी का जल सिंचाई हेतु प्रयोग में नहीं लाया जाता। मात्र बरोट में सरोवरों में जल संग्रह कर सुरंग से जोगिन्दर नगर पहुंचाया गया जहां पूर्व पंजाब (अविभाजित पंजाब) के समय 1930-33 में शानन विधुत परियोजना आरम्भ कर उस समय अमृतसर और लाहौर (पाकिस्तान) की बिजली की आपूर्ति की जाती थी। लुहारडी में तेज-तर्रा ठंडी हवाओं के झौंके आप को पैरों पर टिकने नहीं देते। यहां के लोग अभी भी महिलाएं तथा पुरुष प्राचीन हिमाचली पहरावे में देखने को मिलते हैं। यह स्थान बरोट से कहीं अच्छा है। प्राकृतिक नजारे, अद्‌भुत लौकिक-अलौकिक दृश्य तन, मन, रूह, हृदय, मस्तिष्क को छूह-छूह जाते हैं। मुकम्मल शान्ति और वातावरण की चुप्पी को दरिया की शरगोशियां किसी पाजेब झनकने का अहसास दिलाती हैं।

त्रिकौनी पहाड़ियों के बीच से सर सर चलती सुखद तेज हवाएं ऐसे प्रतीत होती हैं जैसे देवलोक के किसी ऋषि ने हाथ उठा कर हथेली से किसी दिव्यशक्ति का आशीर्वाद-शुभकामनाओं का वरदान चक्र छोड़ दिया हो। दरिया के छोर पर छिछला पानी छोर पर जाकर ऐसे टूटता है जैसे कोई लम्बी सफेद चुनरी की गोटी नुमां किनारी बिछी हो। यहां के हृदयस्पर्शी मिलनसार मीठे स्वभाव के लोग अच्छे लगते हैं, भेले भाले सीधे साधे। यहां से थोड़ी ही दूर पहाड़ों के बीच एक विधुत डैम भी बन रहा है। यहां का मौसम गर्मी के माह में भी अत्यंत ठंडक बरसाता है। कुल मिला कर लुहारडी गांव का मनमोहक मौसम तथा चारों तरफ के नजारे किसी जन्नत से कम नहीं। लुहारडी में एक-दो होटल भी हैं। यहां रहने का पूरा-पूरा इंतजाम है।

बरोट जाएं तो आप रहें लेहारडी में ही। एकांत मई के दर्शन, ऊहल दरिया की घंघरूनुमा खनकती ध्वनियां, पहाड़ों के नजारे, समझें आप ने यहां आकर जन्नत लूट ली है।

ओंकार नगर, गुरदासपुर (पंजाब), मो : 98156–25409

विकासात्मक लेख

आम जन की पहुंच में जन सेवाएं

● जयन्त शर्मा

अधिनियम के अन्तर्गत जनता से सीधे सरोकार वाले 15 विभागों की 86 सेवाओं को सम्मिलित किया गया है। अधिनियम के अन्तर्गत निर्धारित समयावधि में सेवाएं उपलब्ध करवाने के लिए सम्मिलित किए विभागों में स्वास्थ्य, वन, पंचायती राज, राजस्व, उद्योग, सिंचाई एवं जन स्वास्थ्य, कृषि, पशुपालन, सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता, गृह (अग्निशमन सेवाएं), बहुउद्देशीय परियोजनाएं एवं ऊर्जा, शहरी विकास तथा नगर एवं ग्राम नियोजन विभाग शामिल हैं।

जन कल्याण वर्तमान प्रदेश सरकार की प्राथमिकता है और इसके दृष्टिगत प्रदेश में नीतियों व नियमों का निर्धारण किया जा रहा है। सरकार ने आम लोगों को अधिक सुविधाएं व सहूलियतें प्रदान करने के उद्देश्य से अनेक ठोस कदम उठाए हैं। प्रदेश सरकार भ्रष्टाचार के विरुद्ध 'जीरो टॉलरेंस' की नीति अपनाते हुए प्रदेशवासियों को स्वच्छ, पारदर्शी, नागरिक मित्र और प्रभावी प्रशासन उपलब्ध करवा रही है। लोगों को समयबद्ध सेवाओं की उपलब्धता सुनिश्चित बनाने के लिए प्रदेश सरकार हिमाचल प्रदेश जन सेवा गारन्टी अधिनियम के अन्तर्गत आवास, परिवहन, गृह और स्वास्थ्य विभाग इत्यादि सहित अन्य विभागों की 30 और सेवाएं इस अधिनियम के तहत शामिल कर इसे अधिक प्रभावी तरीके से कार्यान्वित कर रही है जिससे अधिक से अधिक लोग लाभान्वित हो सकें। प्रदेश सरकार ने जवाबदेह और पारदर्शी प्रशासन सुनिश्चित बनाने के दृष्टिगत हिमाचल प्रदेश जन सेवा गारन्टी अधिनियम व नियम पारित किया गया है। यह अधिनियम प्रदेशवासियों को निर्धारित समयावधि के भीतर अधिसूचित जन सेवाएं उपलब्ध करवाने की गारन्टी भी प्रदान करता है। इस अधिनियम में निर्धारित समयावधि में सेवा न प्रदान करने अथवा अनावश्यक विलंब की स्थिति में संबंधित अधिकारियों पर जुर्माने का भी प्रावधान किया गया है। इस अधिनियम को और अधिक प्रभावी तरीके से लागू करने के लिए व्यापक योजना तैयार की गई है ताकि लोगों को निर्धारित समयावधि के भीतर अधिसूचित सेवाएं उपलब्ध करवाई जा सकें।

इस अधिनियम के अन्तर्गत जनता से सीधे सरोकार वाले 15 विभागों की 86 सेवाओं को सम्मिलित किया गया है। अधिनियम के अन्तर्गत निर्धारित समयावधि में सेवाएं उपलब्ध करवाने के लिए सम्मिलित किए विभागों में स्वास्थ्य, वन, पंचायती राज, राजस्व, उद्योग, सिंचाई एवं जन स्वास्थ्य, कृषि, पशुपालन, सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता, गृह (अग्निशमन सेवाएं), बहुउद्देशीय परियोजनाएं एवं ऊर्जा, शहरी विकास तथा नगर एवं ग्राम नियोजन विभाग शामिल हैं।

अधिनियम को अधिक प्रभावी बनाने के दृष्टिगत राज्य मुख्य सूचना आयुक्त के समक्ष दूसरी अपील का प्रावधान किया गया है, जबकि अन्य राज्यों में यह शक्तियां संबंधित विभागाध्यक्षों के पास हैं। प्रदेश सरकार ने राज्य प्रशिक्षण नीति के अन्तर्गत सभी विभागों के लिए प्रशिक्षण कार्य योजनाएं तैयार की गई है ताकि कर्मचारियों को पूरी तरह दक्ष किया जा सके, जिससे वे लोगों को बेहतर सेवाएं उपलब्ध करवाने के अपने उत्तरदायित्व का भलिभांति निर्वहन कर सकें। इसके प्रभावी कार्यान्वयन के लिए मास्टर ट्रेनरों को प्रशिक्षण दिया जाएगा और उन्हें जिला और विभागीय स्तर पर तैनात किया जाएगा जिससे यह सुनिश्चित बनाया जा सके कि विभाग निर्धारित समयावधि के भीतर सेवाएं उपलब्ध करवा रहे हैं। इसके अतिरिक्त, इस प्रक्रिया की निगरानी के लिए नोडल अधिकारी भी नियुक्त किए जाएंगे।

अधिनियम के अन्तर्गत निर्धारित समयावधि के भीतर सेवाएं उपलब्ध करवाने के लिए अधिसूचित की गई सेवाओं में पशुपालन विभाग से संबंधित तीन सेवाओं, कृषि विभाग से संबंधित एक सेवा, स्वास्थ्य विभाग की नौ, अग्निशमन सेवाओं की दो, पुलिस से संबंधित 11 सेवाओं, सिंचाई एवं जन स्वास्थ्य की तीन, उद्योग विभाग से संबंधित सात सेवाओं, सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता विभाग की चार सेवाओं, पंचायत राज तथा राजस्व विभाग की क्रमशः छः-छः सेवाओं, नगर एवं ग्राम नियोजन विभाग की सात,

शहरी विकास विभाग की नौ, आवास की 11, परिवहन की तीन और वन विभाग की चार सेवाओं को अधिसूचित किया गया है। कृषि विभाग में मृदा परीक्षण (नमूना) की अधिसूचित सेवा को संबंधित क्षेत्र का मृदा परीक्षण अधिकारी 60 दिनों की निर्धारित समयावधि में उपलब्ध करवा रहा है। इसी प्रकार सिंचाई एवं जन स्वास्थ्य विभाग में घरेलू अथवा वाणिज्यिक पानी के कनेक्शन की स्वीकृति एक माह के भीतर प्रदान किया जाना अनिवार्य है। इसके अतिरिक्त, पेयजल आपूर्ति तथा सिंचाई योजनाओं में छुटपुट खराबी को विद्युत आपूर्ति की बहाली के एक दिन के भीतर ठीक किया जाना अनिवार्य है। अधिनियम के अन्तर्गत संबंधित जिला कल्याण अधिकारी कार्यालय में अनिवार्य दस्तावेजों के साथ आवेदन के तीन दिनों के भीतर वरिष्ठ नागरिकों को पहचान पत्र जारी करना होगा। इसी प्रकार, संबंधित जिला कल्याण अधिकारी द्वारा उक्त प्रक्रिया अनुसार ही तीन दिनों के भीतर अपंग व्यक्तियों को अपंगता पहचान पत्र जारी करना सुनिश्चित किया जाता है।

अधिनियम के अन्तर्गत चरागाह परमिट 24 घण्टों के भीतर उपलब्ध करवाना, मोर्टगेज अनुमति दो सप्ताह के भीतर, जन्म, मृत्यु तथा विवाह पंजीकरण दो दिनों के भीतर जबकि जन्म, मृत्यु और विवाह प्रमाण पत्र की कापी 15 दिनों के भीतर उपलब्ध करवाना अनिवार्य है। इसके अतिरिक्त, राशनकार्ड 60 दिनों की निर्धारित समयावधि के भीतर बनाना अनिवार्य होगा। अधिनियम के तहत संबंधित पुलिस थाना प्रभारी को पुलिस सहायता नम्बर 94501-00100 पर प्राप्त शिकायत तथा ऑनलाईन दर्ज की गई शिकायत पर 24 घण्टों के भीतर कार्यवाही करना अनिवार्य होगा।

प्रशानिक सुधार विभाग की वैबसाईट पर इन सेवाओं के सन्दर्भ में पूरी जानकारी उपलब्ध है। इसके अतिरिक्त, इनके बारे में प्रदेश भर में कार्यशील सभी 2350 लोक मित्र केन्द्रों से भी इनकी जानकारी प्राप्त की जा सकती है। अधिनियम के प्रावधानों को लागू करने और लोगों को इसके बारे में जागरूक करने के लिए संबंधित विभागों का सक्रिय सहयोग सुनिश्चित बनाने के लिए एक व्यापक योजना तैयार की गई है। हिमाचल प्रदेश जन सेवा गारन्टी अधिनियम निःसंदेह संवेदनशील, जवाबदेह और प्रभावी प्रशासन सुनिश्चित बनाने और लोगों को जन सेवाओं की समयबद्ध उपलब्धता सुनिश्चित बनाने की दिशा में एक कारगर पहल है। यह अधिनियम प्रदेश सरकार के विकास को गति देने के प्रयासों को और मजबूत करने के साथ-साथ जनता को तीव्र गति से सेवाएं उपलब्ध करवाने की प्रतिबद्धता को मूर्तरूप देने में मील का पत्थर साबित होगा। **सूचना अधिकारी, निदेशालय, सूचना एवं जन सम्पर्क, शिमला-2**

श्रमिक सम्मान : सरकार की प्राथमिकता

● **डॉ. राजेश कुमार शर्मा**

औद्योगीकरण तथा आर्थिक विकास में श्रमिक वर्ग के महत्व को वैश्विक स्तर पर स्वीकार किया गया है जिससे श्रमिकों का कल्याण और भी महत्त्वपूर्ण हो जाता है। हिमाचल प्रदेश सरकार राज्य के औद्योगिक क्षेत्रों, जल विद्युत परियोजनाओं और अन्य संस्थानों में कार्यरत श्रमिकों के कल्याण के लिए वचनबद्ध है। प्रदेश में 23 से अधिक केन्द्रीय श्रमिक कानूनों व दो राज्य श्रमिक कानून प्रभावी ढंग से कार्यान्वित किए जा रहे हैं।

प्रदेश सरकार ने श्रमिक कानूनों के प्रावधानों के अनुरूप कामगरों को समय पर न्यूनतम दिहाड़ी सुनिश्चित बनाई है। प्रदेश का श्रम एवं रोजगार विभाग न केवल युवाओं को रोजगार दिलाने में सहायता कर रहा है, बल्कि उन्हें कार्य के दौरान बेहतर वातावरण भी सुनिश्चित बना रहा है। कामगारों को सही सेवा वातावरण व सुरक्षा को सुनिश्चित बनाने के लिए समय-समय पर निरीक्षण किए जा रहे हैं।

प्रदेश सरकार द्वारा श्रमिक कानूनों के प्रावधानों के अनुरूप कामगारों को समय पर न्यूनतम दिहाड़ी प्रदान की जा रही है। प्रदेश का श्रम एवं रोजगार विभाग न केवल युवाओं को रोजगार दिलाने में सहायता कर रहा है, बल्कि उन्हें कार्य के दौरान बेहतर वातावरण भी सुनिश्चित बना रहा है। कामगारों को सही सेवा वातावरण व सुरक्षा को सुनिश्चित बनाने के लिए समय-समय पर निरीक्षण किए जा रहे हैं।

प्रदेश में स्थापित हो रहे औद्योगिक संस्थानों व प्रतिष्ठानों व औद्योगिक इकाइयों में उच्च दक्ष तथा तकनीकीयुक्त श्रम शक्ति उपलब्ध करवाने के उद्देश्य से राज्य में 500 करोड़ रुपये की कौशल विकास

भत्ता योजना कार्यान्वित की जा रही है। इस योजना के अन्तर्गत युवाओं को अधिकतम दो वर्ष के कौशल प्रशिक्षण के दौरान 1000 रुपये तथा 50 प्रतिशत से अधिक शारीरिक रूप से अक्षम युवाओं को 1500 रुपये कौशल विकास भत्ता प्रदान किया जा रहा है। इस योजना से अभी तक प्रदेश के 77000 से अधिक युवा लाभान्वित हुए हैं। कौशल विकास कार्यक्रमों को प्रभावी ढंग से कार्यान्वित करने के लिए कौशल विकास निगम गठित किया गया है। प्रदेश के ऊना जिले में 11 करोड़ रुपये की अनुमानित लागत से एक कौशल विकास संस्थान स्थापित किया जा रहा है।

शारीरिक रूप से अक्षम व्यक्तियों को नौकरी संबंधी सहायता उपलब्ध करवाने के उद्देश्य से श्रम एवं रोजगार निदेशालय में विशेष रोजगार कार्यालय स्थापित किया गया है। गत अढ़ाई वर्षों के दौरान इस केन्द्र में 5000 युवा पंजीकृत हुए हैं और 477 पद अधिसूचित किए गए हैं। इसके परिणामस्वरूप, 585 आवेदन प्राप्त हुए और 133 शारीरिक रूप से अक्षम युवाओं को इसके माध्यम से रोजगार उपलब्ध करवाया गया है।

प्रदेश में निर्माण कार्यों में कार्यरत कामगरों के हितों की रक्षा तथा ठेकेदारों के शोषण से बचाने के लिए हिमाचल प्रदेश भवन एवं अन्य सन्निर्माण कामगर कल्याण बोर्ड गठित किया गया है। हिमाचल प्रदेश भवन एवं अन्य सन्निर्माण कामगार कल्याण बोर्ड में वे सभी कामगार पंजीकृत हो सकते हैं, जिन्होंने पूर्ववर्ती 12 महीनों के दौरान 90 दिन तथा मनरेगा में कार्यरत कामगरों ने 50 दिन कार्य किया हो, वे इसका लाभ उठा सकते हैं। अधिनियम के अन्तर्गत प्रत्येक प्रतिष्ठान को कुल निर्माण लागत का एक प्रतिशत बोर्ड में डिपोजिट सैस के रूप में जमा करवाना सुनिश्चित बनाया गया है।

बोर्ड के अधीन पंजीकृत सभी कामगारों को स्वास्थ्य बीमा छत्र, उपकरणों की खरीद के लिए ऋण, शिक्षा तथा विवाह के लिए वित्तीय सहायता तथा महिला कामगरों को साईकिल, सोलर लैम्प, इंडैक्शन चूल्हे तथा वाशिंग मशीन इत्यादि के लाभ प्रदान किए जा रहे हैं। गत अढ़ाई वर्षों के दौरान लगभग 5900 लाभार्थी बोर्ड द्वारा पंजीकृत किए गए और 46,000 से अधिक लाभार्थियों को इस दौरान 885 लाख रुपये के लाभ उपलब्ध करवाए गए।

प्रदेश में औद्योगिक विकास के लिए नियोजित एवं स्थायी शहरी विकास को प्रमुखता प्रदान की गई है। उच्च औद्योगिक क्षेत्रों में सुनियोजित विकास के साथ-साथ प्रवासी मजदूरों के लिए आवासीय सुविधा के प्रावधानों को भी शामिल किया जा रहा है। बद्दी-बरोटीवाला तथा नालागढ़ क्षेत्र में पुरुष तथा महिला कामगर छात्रावास बनाए गए हैं। इसके अतिरिक्त ऊना जिले के औद्योगिक क्षेत्र टाहलीवाल में भी कामगर छात्रावास का निर्माण किया जा रहा है।

सहायक सम्पादक, निदेशालय, सूचना एवं जन सम्पर्क, शिमला

हिमऊर्जा

गैर परंपरागत ऊर्जा का समुचित दोहन

● **ममता नेगी**

राज्य सरकार प्रदेश में उपलब्ध ऊर्जा क्षमता के अतिरिक्त जल विद्युत क्षमता का समुचित दोहन करने के लिये प्रतिबद्ध है। प्रदेश में अक्षय ऊर्जा के क्षेत्र में विभिन्न केन्द्र और राज्य प्रायोजित योजनाओं एवं परियोजनाओं के कार्यन्वयन के लिये हिमाचल प्रदेश ऊर्जा विकास एजेन्सी (हिमऊर्जा) नोडल एजेन्सी के रूप में कार्य कर रही है।

हिमाचल में गैर परम्परागत ऊर्जा स्त्रोतों को बढ़ावा देने और लोकप्रिय बनाने की दिशा में राज्य सरकार के शानदार प्रयासों से प्रदेश के लोगों विशेषकर दूर-दराज के क्षेत्रों में रहने वाले लोगों में उत्साहवर्धक एवं सकारात्मक परिणाम सामने आए हैं। वर्तमान प्रदेश सरकार ने सौर ऊर्जा, माइक्रो हाइडल व बायोमास इत्यादि के सदुपयोग के लिये अनेक कदम उठाए हैं, जिसके परिणामस्वरूप हिमाचल प्रदेश को अक्षय ऊर्जा के क्षेत्र में सर्वश्रेष्ठ प्रदर्शन के लिये पुनः निवेश-2015 पुरस्कार से सम्मानित किया गया है। राज्य सरकार प्रदेश में उपलब्ध ऊर्जा क्षमता के अतिरिक्त जल विद्युत क्षमता का समुचित दोहन करने के लिये प्रतिबद्ध है। प्रदेश में अक्षय ऊर्जा के क्षेत्र में विभिन्न केन्द्र और राज्य प्रायोजित

योजनाओं एवं परियोजनाओं के कार्यन्वयन के लिये हिमाचल प्रदेश ऊर्जा विकास एजेन्सी (हिमऊर्जा) नोडल एजेन्सी के रूप में कार्य कर रही है।

राष्ट्रीय सौर ऊर्जा संस्थान ने प्रदेश में विद्यमान सौर ऊर्जा की व्यापक क्षमता का आकलन किया है। प्रदेश सरकार सौर ऊर्जा क्षेत्र में निवेश को आसान बनाने के लिये सौर नीति में सुधार के लिये कदम उठा रही है। सौर परियोजनाओं को औद्योगिक परियोजनाओं के रूप में लेकर शीघ्रातिशीघ्र भू-संबंधी और सांविधिक मंजूरियां प्रदान की जा रही हैं।

प्रदेश के शिमला और हमीरपुर शहरों को सोलर सिटी के रूप में विकसित करने के लिये एक मास्टर प्लान बनाकर इसे स्वीकृति के लिये केन्द्रीय नवीन एवं नवीकरणीय ऊर्जा मंत्रालय को भेजा गया था, जिसमें शिमला शहर के मास्टर प्लान को स्वीकृति मिल चुकी है। सोलर सिटी कार्यक्रम के अन्तर्गत शिमला के रिज मैदान और पुराने बस अड्डे पर 20-20 किलोवाट के सोलर पावर प्लांट और शिमला के पंचायत भवन में 15 किलोवाट का सोलर पावर प्लांट स्थापित किया गया है।

राष्ट्रीय सौर ऊर्जा संस्थान ने प्रदेश में विद्यमान सौर ऊर्जा की व्यापक क्षमता का आकलन किया है। प्रदेश सरकार सौर ऊर्जा क्षेत्र में निवेश को आसान बनाने के लिये सौर नीति में सुधार के लिये कदम उठा रही है। सौर परियोजनाओं को औद्योगिक परियोजनाओं के रूप में लेकर शीघ्रातिशीघ्र भू-संबंधी और सांविधिक मंजूरियां प्रदान की जा रही हैं।

प्रदेश सरकार ने सोलन जिले में स्थित औद्यानिकी एवं वानिकी विश्वविद्यालय नौणी तथा एनआईटी हमीरपुर में केन्द्रीय नवीन एवं नवीकरणीय ऊर्जा मंत्रालय के विशेष क्षेत्र निरूपण कार्यक्रम के अन्तर्गत दो राज्य स्तरीय नवीकरणीय ऊर्जा पार्क स्थापित किए हैं।

लोगों को वैकल्पिक ऊर्जा स्त्रोत उपलब्ध करवाने के दृष्टिगत प्रदेश सरकार ने राज्य की विभिन्न पंचायतों में 37574 सोलर स्ट्रीट लाईटें लगाई हैं। प्रदेश में भेड़ पालकों को लगभग 4337 सोलर लालटेन और किन्नौर जिले के बाढ़ प्रभावित क्षेत्रों में 10 हजार सोलर लालटेन निःशुल्क वितरित की गई हैं। राज्य के समस्त जिला उपायुक्त कार्यालयों में 48 किलोवाट क्षमता के सोलर प्लांट और 200 एलपीडी क्षमता की सौर जल तापन प्रणाली स्थापित की गई है। इसके अतिरिक्त, 176 पुलिस थानों एवं चौकियों में दो किलोवाट क्षमता के फोटोवॉल्टिक पावर प्लांट लगाए गए हैं।

इसके अतिरिक्त, प्रदेश में 24337 बक्सानुमा और 581 डिश प्रकार के सोलर कूकर वितरित किए गए हैं और प्रतिदिन 2 लाख 84 हजार एक सौ लीटर तापन क्षमता की सौर जल तापन प्रणाली भी स्थापित की गई है। अनुसूचित जाति घटक योजना के अन्तर्गत 9600 से अधिक सोलर लाईटें स्वीकृत की गई हैं। पिछले अढ़ाई वर्षों के दौरान प्रदेश के विभिन्न भागों में 5 मैगावाट तक की क्षमता के 12 पन विद्युत परियोजनाएं जिनकी कुल क्षमता 49.20 मैगावाट है, स्थापित की गई हैं जबकि 35.20 मैगावाट क्षमता की 22 जल विद्युत परियोजनाएं आंबटित की गई हैं।

सूचना अधिकारी, निदेशालय, सूचना एवं जन सम्पर्क, शिमला-2

समकालीन कला एवं शिल्प का संरक्षण

● सचिन संगर

हिमाचल प्रदेश को अपनी समृद्ध सांस्कृतिक विरासत तथा यहां के अनूठे रीति-रिवाजों एवं परम्पराओं के लिये विश्व भर में जाना जाता है। प्रदेश में सदियों पुराने मन्दिरों, दुर्गों तथा अन्य ऐतिहासिक स्मारकों की बहुमूल्य धरोहर है। हिमाचल अपनी उत्कृष्ट कला एवं शिल्प विशेषकर चम्बा रूमाल, थंका, लघुचित्र पेंटिग्ज तथा धातु, स्टोन, काष्ठ शिल्प व विशिष्ट वास्तुकला के लिये भी प्रसिद्ध है। प्रदेश सरकार राज्य की सांस्कृतिक विरासत के सभी स्वरूपों के संरक्षण, सम्वर्धन और प्रोत्साहन के लिये प्रतिबद्ध है। इसके अतिरिक्त, सरकार हिमाचल की समकालीन कला एवं शिल्प के व्यापक प्रसार एवं प्रदर्शन के लिये उचित मंच उपलब्ध करवाने के लिये निरन्तर प्रयासरत है।

इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये शिमला स्थित राज्य संग्रहालय में अलग से एक 'आर्ट गैलरी' की

स्थापना की जा रही है, जिसमें हिमाचल की समकालीन कला एवं शिल्प वस्तुएं प्रदर्शित की जाएंगी। प्रदेश के कलाकारों एवं शिल्पकारों ने अपनी विशेषज्ञता के क्षेत्र में वैश्विक स्तर पर विशिष्ट पहचान बनाई है। संग्रहालय में उनकी कृतियों के प्रदर्शन से न केवल अधिक से अधिक लोग इन कलाकारों की अदभुत कला से परिचित होंगे, बल्कि इन कलाकारों सहित उभरते कलाकारों को प्रोत्साहन एवं वित्तीय सम्मान भी प्रदान किया जाएगा। इस दिशा में शुरुआत करते हुए राज्य संग्रहालय शिमला समकालीन हिमाचली कला एवं शिल्प की नई गैलरी के लिए थंका, चम्बा रूमाल और धातु शिल्प अधिगृहित करने जा रही है।

प्रदेश की समकालीन कला एवं शिल्प को अधिगृहित करने के लिये हिमाचल राज्य संग्रहालय के क्यूरेटर की अध्यक्षता में सात सदस्यीय विशेषज्ञ समिति गठित की जाएगी तथा अधिगृहित वस्तुओं को राज्य संग्रहालय में समकालीन कला एवं शिल्प गैलरी में प्रदर्शन के लिये रखा जाएगा। आरम्भ में समिति थंका पेंटिग्ज, चम्बा रूमाल और धातु कला को अधिगृहित करेगी तथा बाद में काष्ठ शिल्प, स्टोन क्राफ्ट, समकालीन पेंटिग्ज, लघु चित्र पेंटिग्ज इत्यादि का भी अधिग्रहण किया जाएगा।

प्रदेश की समकालीन कला एवं शिल्प को अधिगृहित करने के लिये हिमाचल राज्य संग्रहालय के क्यूरेटर की अध्यक्षता में सात सदस्यीय विशेषज्ञ समिति गठित की जाएगी तथा अधिगृहित वस्तुओं को राज्य संग्रहालय में समकालीन कला एवं शिल्प गैलरी में प्रदर्शन के लिये रखा जाएगा। आरम्भ में समिति थंका पेंटिग्ज, चम्बा रूमाल और धातु कला को अधिगृहित करेगी तथा बाद में काष्ठ शिल्प, स्टोन क्राफ्ट, समकालीन पेंटिग्ज, लघु चित्र पेंटिग्ज इत्यादि का भी अधिग्रहण किया जाएगा।

हिमाचल प्रदेश में पुरातात्विक महत्व वाले अनेक ऐतिहासिक स्मारक एवं प्राचीन मन्दिर हैं तथा प्रदेश सरकार इस अमूल्य विरासत को आने वाली पीढ़ियों के लिये संरक्षित करने के लिये प्रयासरत है। पूर्व में मन्दिरों एवं स्मारकों इत्यादि के जीर्णोद्धार एवं मुरम्मत के लिये अधिकतम 50 हजार रुपये तक की धनराशि उपलब्ध करवाई जाती थी। वर्तमान प्रदेश सरकार ने पुराने मन्दिरों एवं पुरातात्विक दृष्टि से महत्वपूर्ण स्मारकों के पुरातन वैभव को बरकरार रखने के लिये इनकी मरम्मत व जीर्णोद्धार के लिये आवश्यकतानुसार धनराशि उपलब्ध करवाने का निर्णय लिया है।

विविध सांस्कृतिक गतिविधियों के आयोजनों के लिये प्रदेश सरकार सभी जिला मुख्यालयों पर जहां यह सुविधा उपलब्ध नहीं है, इण्डोर सभागारों का निर्माण पर बल दे रही है और इसके लिये वर्तमान वित्त वर्ष के दौरान 25 करोड़ रूपये का बजट प्रावधान किया गया है।

इसके अतिरिक्त, ऐसे मन्दिर जिनकी जमीनें हिमाचल सरकार को या मुजारों को चली गई हैं और जिनकी माली हालत कमजोर है, के रखरखाव के लिये वर्ष 2014-15 में 5 करोड़ रूपये की धनराशि का रिवॉलविंग फंड गठित किया गया था तथा इस निधि में वर्ष 2015-16 में पांच करोड़ रूपये के अतिरिक्त बजट का प्रावधान किया गया है।

प्रदेश सरकार ने समृद्ध सांस्कृतिक विरासत के सभी स्वरूपों के संरक्षण एवं प्रदर्शन को सुनिश्चित बनाने तथा कलाकारों, शिल्पकारों, कवियों, साहित्यकारों और शोधार्थियों को प्रोत्साहन देने के लिये अनेक योजनाएं आरम्भ की हैं। सरकार बहुमूल्य पुरातन पाण्डुलिपियों, छायाचित्रों, पेंटिग्ज, ऐतिहासिक दस्तावेजों तथा अन्य पुरातात्विक एवं अभिलेखीय वृति की महत्वपूर्ण वस्तुओं के संग्रहण एवं संरक्षण पर विशेष बल दे रही है। पुरातन कला एवं संस्कृति के पुनरूत्थान एवं पुनःस्थापन तथा प्रदेश की समृद्ध सांस्कृतिक विरासत के सुदृढ़ीकरण के उद्देश्य से प्रदेश सरकार ने राज्य में ललित कला महाविद्यालय खोलने का निर्णय लिया है।

हिमाचली विद्यार्थियों को प्रदेश से बाहर निष्पादन कला, ललित कला इत्यादि के उच्च अध्ययन संस्थानों में प्रवेश पर छात्रवृतियां भी प्रदान की जा रही हैं।

प्रदेश सरकार के प्रभावी प्रयासों से हिमाचल की ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक विरासत का जहां समुचित संरक्षण एवं संवर्धन सुनिश्चित बनाया जा रहा है, वहीं वैश्विक फलक पर इसकी पहचान को और नये आयाम दिए जा रहे हैं।

जिला लोक सम्पर्क अधिकारी, धर्मशाला, जिला कांगड़ा, हिमाचल प्रदेश।

अरुण कुमार शर्मा की कविताएं

खिड़की से झांकता सूरज

खिड़की से झांकता सूरज
निश्चिंत खड़े देवदारू
स्वच्छ आसमान
वसंत के बाद
गर्मी का मौसम
और सामने
सफेद फूलों से सजी
कांटेदार झाड़ियां
एक मक्षिका
निरंतर मेरे पैन
पर बैठती
लेखन से निवृत्त
करने हेतु
वह मुझे तत्पर
एक शरीर बच्चे की तरह
इधर
खिड़की से आती धूप
टुकड़ों टुकड़ों में ।

चांद

निकला है
तृतीया का चांद
सितारों से भरे
आकाश में
जीवन की प्रातः
का इंतजार
अंधकार की गुफा
इच्छाओं का बांझपन
संभवतः
निराशा के गर्त में
डूबो देता
मैंने कहां देखा
रुपहले चंदा को
चांदी बरसाते
ग्रीष्म की उदास
शाम ने
अंधियारों के द्वार
पहुंचा दिया
आज पुनः चुपचाप
खड़ा धरती पर
मन के समंदर में
हिलोरे लेता
उद्धत ज्वार भाटा।

निदेशक, भाषा, कला एवं संस्कृति विभाग, शिमला, हिमाचल प्रदेश-171 009

कविता

गीत

● डॉ. कृपाशंकर शर्मा 'अचूक'

शब्दों के संग खेलें खाएं, सुखद सुमीत बनें
सांसें सब सरगम हो जाएं, सुर संगीत बनें
झुरमुट आकाशी गंगाएं
अति आमोद करें
तारों की अगणित लड़ियों से
सबकी गोद भरें
आगत विगत मोह जब छूटे, परहित नीत बनें
शब्दों के संग खेलें खाएं, सुखद सुमीत बनें
श्लेष अलंकारों के आगे
नाद विहंगम हो
धरा धाम का रज कण बोले
कोई न कम हो
सागर की मदमस्त तरंगें, जन-जन जीत बनें
शब्दों के संग खेलें खाएं, सुखद सुमीत बनें
शब्द-शब्द में नित उजियारा
साधक समता में
वाणी सत्य शिवम् को जोड़े
खेद विषमता में
भेदान्तर 'अचूक' दूर तो, नित नव गीत बनें
शब्दों के संग खेलें खाएं, सुखद सुमीत बनें।

38-ए, विजय नगर, करतारपुरा, जयपुर, राजस्थान-302 006, मो. 998381 11506

दिनेश शर्मा की कविताएं

लापता चेहरे

मेरे कुछ चेहरे
गुम हो गए हैं
ढूंढने से नहीं
मिल रहे
बाज़ार में उनकी
आमद थी नहीं।

मैंने जंगल में ढूंढा
ग्वाले को
पशु भी नहीं मिले
कुल्हाड़ी की धार
तेज करते
लकड़हारे ने कहा
सड़क में जाकर देखो।

तलाश करता
आपसदारी की चौपाल
टटोलता रहा बच्चों-बूढ़ों को
चौराहे पर पड़े
अकेले पेड़ ने टोका
गांव-गांव मत कहिए
मॉडर्न लोग समझदार हो गए हैं
इंटरनेट पर ही
अपने दुःख-सुख बघारिए।

कदम रखते ही घर में
दादी-दादी पुकारा
सजी-धजी रसोई
मुंह बनाकर बोली
रिश्ते कमरों में बंट गए हैं
कमरे घरों में
ज़रा अपडेट रहना सीखो।

शोर व मौन से निपटी
सभा को पूछा
ईमान कहा है
गुमान में पसरी कुर्सी से
जवाब आया
जागो! ये इक्कीसवीं सदी है
संस्कार की नहीं
अधिकार की बात करो।

खोए हुए
वजूद की तलाश में
घूम रहा हूं बेरंग
अपना सा चेहरा लिए
हैरान हूं
केक्टस
कब मेरा चेहरा हो गया।

खतरे में शब्द

शब्द पीड़ित हैं
शब्द आतंकित हैं
शब्द आकार खो रहे हैं
शब्द अंधेरे हाथों में हैं
अंधेरे नहीं जानते
शब्दों का घटाव-बढ़ाव
शब्दों के बोल
शब्दों के मोल।

अंधेरों का नहीं, कोई
दर्शन
न संस्कार
न उजला जीवन उस पार
अंधेरों ने
इंटरनेट की शॉर्टकट पीढ़ी को
घेर लिया है
शब्द खतरे में हैं।

गिद्ध-दृष्टि

गिद्ध
ऊंची उड़ाने भरने से पहले
बताओ
ऊपर से
कैसी दिखती है दुनिया
क्या हो जाते हैं रिश्ते
तुम आदमी को
मांस के लोथड़े के अलावा
किस नज़र देखते हो।

किसान के हाथ
मजदूर की आंत
अबला की आंख पर
नज़र गड़ा कर ही
तुम गिद्ध कहलाए हो।

रोटी और कविता

घोड़े पर सवार होकर
नदी पार की
पहाड़ को चोटी से पकड़
ऊपर खींच लिया
चांद को बांह में लिए
घूमता रहा सारी रात
फिर रोटी का टुकड़ा
आया मेरे हाथ
और मैं ठिठक गया
भूख मुझे
जड़ों तक ले गई
बीज जहां
जीवन के वास्ते
बिन बंदूक-तलवार
हवा-पानी की तख्तियां लिए
चट्टानों से लड़ रहा था
घोड़े से उतरकर
समझ आया
कविता में
रोटी का अर्थ
हवाई जहाज नहीं होता।

**सहायक प्राध्यापक, समाजशास्त्र, राजकीय महाविद्यालय, रामपुर बुशहर,
जिला शिमला, हिमाचल प्रदेश**

ललित निबंध

संवेदना

● डॉ. दादूराम शर्मा

मैं एक पहाड़ी पर बैठा हूं। वहां से दूर तक फैली सतपुड़ा की श्रेणियां हरित द्रुमराजि और तृणवीरुथों से अभिनव वस्त्रावृता वासकसज्जा नायिका (पति की प्रतीक्षा में सज-धजकर बैठी नायिका) की तरह प्रसन्न दिखाई दे रही है। आकाश में श्यामघन घिर आए हैं। जल भरावनत वायुवाहन जलधरों की गति अत्यंत मंथर हैं। लगता है, वे भाराधिक्य के कारण श्रांत हैं इसलिए पर्वत की चोटियों पर विश्राम करना चाहते हैं। यह लो, मंद्रध्वनि करते ये मेघ चोटियों पर उतर ही पड़े हैं। ऐसा लग रहा है मानो शैलशृंगों से धूमराशि निकलकर मेघों के 'धूमयोनि' नाम को सार्थक कर रही हो। हठात् मेरे मुंह से आदिकवि का यह श्लोक निकल पड़ता है-

समुद्वहन्तः सलिलातिभारं, बलाकिनो वारिधरा नदन्तः।
महत्सु शृंगेषु महीधराणां, विश्रम्प-विश्रम्प पुनः प्रयान्ति॥

बलाकाओं (बगुलों या सारसों को पंक्तियों) से युक्त गर्जना करते हुए मेघ जल के अत्यधिक भार को ढोने से श्रांत हो गए हैं, थक गए हैं इसलिए पर्वतों के ऊंचे-ऊंचे शिखरों पर विश्राम कर-करके पुनः आगे बढ़ रहे हैं।

विरह-विदग्ध प्रोषितपतिका (जिसका पति प्रवास पर हो) की भांति प्रचंड आतप से संतप्त नीरस धरा को नवजीवन से संपृक्त करने वाले ये मेघ बरस पड़ते हैं। कल-कल करते निर्झर इनका कीर्तिमान करते हुए बह चले हैं। मयूर मधुर केकारव और मनोहर नृत्य से इन परसंतापहारी मेघों का अभिनंदन कर रहा है। कृषक बालाएं अपने सरल भ्रूविलासों से कृतज्ञता प्रकट करती हुई उनका स्वागत गान गा रही हैं। कितनी मनोहर है यह प्रकृति! कितने आकर्षक हैं इसके ये उपादान! इसी मेघ को देख कर तो प्रिया-विश्लेषित यक्ष उत्कंठित हो गया था। उसके हृदयस्थ विरह का उत्स उद्दाम वेग से फूट पड़ा था। और वह करुणार्द्र स्वर में पुकार उठा था-

संतप्तानां त्वमसि शरणं तत्पयोद प्रियायाः।
संदेशं मे हर धनपति-क्रोध-विश्लेषितस्य।

मेघ तुम ग्रीष्म से संतप्त प्राणियों की रक्षा करने वाले हो। मैं भी कुबेर के शाप के कारण अपनी प्राणवल्लभा से वियुक्त हो गया हूं। मित्र! तुम मुझ विरही का संदेश मेरी प्रिया तक पहुंचाकर हम दोनों के विरहजन्य संताप को दूर करो।

सोचता हूं क्या मेघ संदेशवाहक बन सकता है? क्या सचमुच में उसने यक्ष की विरह-व्यथा उसकी प्रोषित पतिका प्रेयसी तक पहुंचा दी थी? कालिदास के मन में भी, लगता है, यह शंका उठी थी जिसका समाधान उन्होंने इन शब्दों में प्रस्तुत करने की चेष्टा की है-

धूमज्योतिः सलिल मरुतां सन्निपातः क्व मेघः
संदेशार्थाः क्वपटुकरणैः प्राणिभिः प्रापणीयाः?
इत्यौसुक्यादपरिगणयन् गुह्मकस्तं ययाचे,
कामार्ता हि प्रकृति-कृपणाश्चेतनाचेतनेषु॥

धुएं, बिजली, जल और वायु का सन्निपात (संघ, समूह) मेघ कहां और सर्मेद्रिय प्राणियों द्वारा पहुंचाया जाने वाला संदेश कहां? उत्कंठाधिक्य के कारण यक्ष मेघ के दूतत्व की संगति का विचार किए बिना ही उससे संदेश ले जाने की याचना कर बैठा, क्योंकि कामार्त मनुष्य चेतन और अचेतन का भेद करने में असमर्थ होते हैं।

माना कि प्रिया-विलेषित एकाकी यक्ष विरहोत्कंठित था, कामार्त था, वेदनाधिक्य के कारण उसकी चेतना लुप्त हो रही थी, युक्तायुक्त के विवेक को उसकी बुद्धि खो बैठी थी। फिर, विवेकवानों में मूर्धन्य कविकुल गुरु कालिदास को ऐसे उन्मत्त यक्ष के अरण्यरोदन को अपने काव्य का विषय बनाने की क्यों सूझी? क्या मेघदूत सचमुच उचितानुचित विवेकशून्य कामार्त जन का संबद्ध प्रलाप है? यदि हां तो वह सहस्रों वर्षो से सहृदय काव्य रसिकों और काव्यमर्मज्ञ समालोचकों का हृदय-हार क्यों बना हुआ है?

मनुष्य हृदय और मस्तिष्क इन दो दिव्य विभूतियों को लेकर इस भूतल पर आया है। हृदय भावनाओं और अनुभूतियों का उद्गम स्थान है तो मस्तिष्क विचारों का। एक से साहित्य, संगीत आदि कलाओं की उत्पत्ति होती है तो दूसरे से विज्ञान, दर्शन आदि की और दोनों के सम्यक् योग से धर्म का आविर्भाव होता है।

स्वदुःखानुभूति वेदना है और दूसरों के सुख-दुःख में हर्ष-विषाद की सम्यक् अनुभूति- उन्हें आत्मसात् कर तदनुरूप



भावनाओं का प्रकाशन और चेष्टाएं करना संवेदना है, सहानुभूति है। संस्कृत के कवियों ने प्रकृति के कण-कण को दिव्य चेतना और संवेदना से संपृक्त करके देखा है। वह उन्हें हमारे हर्षोल्लास में उल्लसित और व्यथा-वेदना में संतप्त होते दिखाई दी है। मेघ भी तो भास्कर की प्रचंड किरणों से दह्यमान चराचर के संताप से द्रवीभूत होकर करुण स्वर में रोता हुआ अश्रु-वृष्टि करने लगता है। वह रिक्त धरा के अंचल को अपने संपूर्ण वैभव से परिपूर्ण कर स्वयं अकिंचन बन जाता है। ऐसे संवेदनशील- सर्वस्वदानी मेघ से यक्ष क्यों न अपनी अंतर्व्यथा का निवेदन करे? पर-संतापहारी मेघ को दूत के रूप में अपनी विरहसंतप्ता प्रिया के पास भेजकर क्यों न उसके संताप का निवारण कराए?

मेघ निरपेक्ष दानी है। वह अपने लिए नहीं, समष्टि के कल्याण के लिए बरसता है। सर्वस्व समर्पण ही उसका ध्येय है। परोपकार ही उसका व्रत है पटुकरण (समर्थ इंद्रियों वाले) दूत का अपना व्यक्तित्व होता है। संभव है- कोई प्रच्छन्न स्वार्थ भी हो। राम हनुमान को सीता के पास मुद्रिका के साथ यह संदेश देकर भेजते हैं- बहु प्रकार सीतहिं समुझायहु। कहि बल-विरह वेगि तुम आयहु॥

अशोक-पल्लवों में छिपे हनुमान उचित अवसर की प्रतीक्षा में हैं। सीता आत्मघात का निश्चय कर चुकी है। वे अशोक से अपने रक्त किसलयों को अग्नि के रूप में देकर और राम के विरह से व्यथित उनके शरीर को भस्मसात् करके अपने अशोक नाम को सार्थक करने का निवेदन कर रही है? क्या यही अनुकूल अवसर है, उपयुक्त स्थल है, समुचित ढंग है? किंतु हनुमान बिना विचार किए उनके सामने राम-नामांकित मुद्रिका डाल कर उनके मन में राम के अनिष्ट की आशंका उत्पन्न कर उनके शोक को विषाद में बदल देते हैं और दोनों के प्रेम-तत्त्व को जानने वाले राम के मन को वश में करने वाली सीता से बिना संकोच कह बैठते हैं-

जनि जननी जानहु जिय ऊना। तुम तै प्रेमु राम कहं दूना।
और राम की शीघ्र लौट आने की आज्ञा का,अपने पौरुष-प्रदर्शन का लोभ संवरण न कर पाने के कारण उल्लंघन कर देते हैं। राम का अनन्य प्रीतिभाजन बनने का हनुमान का प्रच्छन्न उद्देश्य यहां कार्यशील है।

पारस्परिक संवेदना से अनुप्राणित हो यक्ष मेघ को अपनी विरहकृशा प्रेयसी नदियों से सानंद मिलने को कहता है। वह जानता है कि मेघ की विभूति परोपकार के लिए है, उसका जन्म ही परहित के लिए हुआ है फिर भी वह उससे नदियों के पास थोड़ी-थोड़ी देर ठहर कर आगे बढ़ जाने की प्रार्थना करता है। राम आगामी कार्यवाहियों के अवसर की अनुकूलता और स्थल की उपयुक्तता को दूत पर छोड़ देते हैं, फलतः उनके कार्य में हनुमान के व्यक्तित्व के संपृक्त हो जाने से विलंब होता है। यक्ष इसे जानता है इसलिए वह मेघ को अवसर और स्थल का स्पष्ट और उचित निर्देश देता है और अंत में अपने परम उपकारी मित्र को अपनी हार्दिक शुभकामना देने से भी नहीं चूकता कि उसका अपनी प्रियतमा विद्युत से कभी वियोग न हो- मा भूतते विद्युता विप्रयोगः।

अतः कहा जा सकता है कि मेघदूत, कामार्त हृदय के असंबद्ध उद्गारों का संकलन नहीं है। वह प्रकृति और उसके उपादानों की महनीय संवेदनशीलता से परिचित दिव्य व्यक्तित्व के हृदयोदधि के मंथन से निःसृत अमृत-कलश है। संवेदना ही करुणा कहलाती है। यही संवेदना मानवता की जननी है, उस मानवता की, जिसका चरमोत्कर्ष वाल्मीकि के ऋषित्व और आदि कवित्व में प्रकट होता है। देवर्षि नारद से परम कारुणिक राम के लोककल्याणकारी चरित्र को सुनकर महर्षि वाल्मीकि उसका ही चिंतन करते हुए तमसा में स्नान करने के उद्देश्य से आश्रम से निकले। तमसा तट के प्राकृतिक सौंदर्य को निहारती उनकी दृष्टि मधुरालाप करते प्रणय-केलि-निरत क्रौंच मिथुन पर पड़ी उनके सिसृक्षाजन्य सहज अनुराग से ऋषि का हृदय भी उल्लसित हो उठा कि तभी एक निषाद के तीक्ष्ण बाण से विद्ध होकर नर क्रौंच की हृदय विदारक वेदना और क्रौंची के आर्तनाद से उनकी हृदयस्थ करुणा का उद्दाम प्रवाह निषाद के प्रति धिक्कारवाक्य या अभिशप्त वाणी के रूप में फूट पड़ा जो आदिकाव्य का प्रथम छंद कहलाया-

निषाद बिद्धांडजदर्शनोत्थं श्लोकत्वमापद्यत यस्य शोकः।
रघुवंश महाकाव्य (कालिदास)

कविता सृजन को प्रश्रय देती है और विनाश का वारण करती है। निषाद ने सृष्टि-रचयिता की सिसृक्षा पर- एकोऽहं

बहुस्याम प्रजेयम् के सृष्टि विस्तार संकल्प पर चोट की थी। प्रकृति के सहज क्रिया-व्यापार में, पर्यावरण के संतुलन में उसने व्याघात उत्पन्न किया था अतः उसका यह मानवता-विरोधी आचरण अभिशाप के योग्य था क्योंकि दूसरों को जीवन देना, दूसरों की प्राण-रक्षा करना ही मानवता है और पर-प्राणापहार (दूसरों का जीवन लेना) अमानुषिकता है, निशाचरता है। अपने सुख-दुःख में, हर्ष-विषाद में, हानि-लाभ में, जय-पराजय में समान रहना-निर्विकार रहना 'स्थितप्रज्ञता' है, धीरता है और दूसरों के हर्ष में हर्षित और विषादमें विषण्ण हो जाना मानवता है, ऋषित्व है किंतु दूसरों के दुःख निवारण के लिए स्वयं को अशेषभाव से अर्पित कर देना ही सच्ची वीरता है, महामानवता है, महर्षित्व है। महर्षि ने महावीर का संधान किया। वाल्मीकि की वाणी वीर क्षत्रिय राम के, जिनके शस्त्र धारण करने पर दीन-दुखियों का आर्तनाद नहीं सुनाई देता था- यस्मिन् ग्रहीतशस्त्रे आर्तशब्दो न श्रूयते; चरितगान में मुखर हो उठी।

राम मुनिया के साथ दंडक वन में विचरण कर रहे थे। उन्हें मुनियों ने नरभक्षी राक्षसों द्वारा खाए गए ऋषियों के कंकाल दिखलाए-

एहि पश्य शरीराणि मुनीनां भावितात्मनाम्।
हतानां राक्षसैर्घोरैर्बहूनां बहुधा वने॥
अतस्त्वां शरणार्थ च शरण्यं समुपस्थिताः।
परिपालय नो राम वध्यमानान् निशाचरैः॥

(वाल्मीकि रामायण)

और निवेदन किया- "दीन-दुखियों को शरण देने वाले राम! हम आपकी शरण में आए हैं, इन निशाचरों से हमारी जीवन रक्षा कीजिए। राम का प्रकृति सुकुमार हृदय इससे करुणा-विगलित हो उठा-

निसिचर निकर सकल मुनि खाए। सुनि रघुवीर नयन जल छाए॥

और उनका समाज का स्थिति-रक्षाकारी अप्रतिहत पौरुष इस घोर अनाचार के उन्मूलन के लिए तुरंत जाग पड़ा-

निसिर हीन करौं मही, भुज उठाई पनु कीन्ह।
सकल मुनिन्ह के आश्रमन्ह जाइ जाइ सुख दीन्ह॥

अपने प्राणों की रक्षा के लिए तो सभी आक्रामक शत्रु से अंतिम सांस तक संघर्ष करते हैं किंतु औरों की रक्षा के लिए अपने प्राणों की बाजी लगाकर अपने से भी अधिक बलशाली शत्रु से भिड़ जाने वाले का जीवन निश्चय ही, अभिनंदनीय और मरण वंदनीय बन जाता है।

अस्त्र-शस्त्र-सज्जित त्रिलोकजयी राक्षसराज रावण के द्वारा हरी जाती हुई सीता की करुण पुकार गृध्रराज जटायु के कानों में पड़ती है- "जटायो पश्य मामार्य! ह्रियमाणामनाथवत्।

अनेन राक्षसेन्द्रेणाकरुणं पापकर्मणा॥

(वाल्मीकि रामायण 3/49/30)

आर्य जटायों ! देखिए यह पापकर्माराक्षसराज अनाथ की भांति मुझे निर्दयतापूर्वक हरकर लिए जा रहा है। साथ ही सीता महाबली रावण और वृद्ध जटायु के बलाबल का विचार करके उन्हें रावण से न भिड़ने का भी परामर्श देती हुई कहती है-

नैव वारयितुं शक्यस्त्वया क्रूरो निशाचरः।
सत्ववान् जितकाशी च सायुधश्चैव दुर्मतिः॥

(वाल्मीकि रामायण 3/49/30)

परंतु आप इस क्रूर निशाचर को रोक नहीं सकते क्योंकि वह बलवान है, अनेक युद्धों में विजय पाने के कारण विजय के अहंकार में चूर है, इसके हाथों में अस्त्र-शस्त्र हैं और यह दुष्ट बुद्धिवाला है।

तथापि वीरवर जटायु यह स्वीकार करते हुए भी कि वे वृद्ध हैं, निहत्थे हैं, और रावण युवा है, अस्त्र-शस्त्र से सज्जित और कवच से संरक्षित हे, उसे द्वंद्व युद्ध के लिए चुनौती देने से नहीं चूकते- वृद्धोऽहं त्वं युवा धन्वी सरथः कवची शरी। न चाप्यादाय कुशली वैदेही मे गमिष्यसि॥ (वाल्मीकि रामायण 3/51/21)

उन्होंने अपने अप्रतिम शौर्य का परिचय देते हुए अपने पंखों के जबरदस्त प्रहार से रावण का धनुष तोड़ डाला, रथ को चकनाचूर कर दिया और अपनी तीखी चोंच और पैने पंजों के दुर्निवार प्रहार से उसके सारथी और घोड़ों को मौत के घाट उतारकर उसे धरती पर गिरा दिया- सभग्नधन्वा विरथो हताश्वो हतसारथिः। अंकेनादाय वैदेहीं पपात भुवि रावणः॥ (वाल्मीकि रामायण 3/51/19)

और उन्होंने रावण को परस्त्री के हरण रूपी उस लोक निंदित और कायरतापूर्ण कर्म के लिए बार-बार धिक्कारा-

यथा त्वया कृतं कर्म भीरुणा लोकगर्हितम्।
तस्कराचरितो मार्गो नैष वीर-निषेवितः॥

(वाल्मीकि रामायण 3/51/19)

और उसकी पीठ पर बैठ कर अपने तीक्ष्ण नखों से उसके अंगों को विदीर्ण करने लगे। किंतु क्रूरकर्मा रावण ने तलवार से उसके पंख और पैर काट डाले और इस तरह उस संवेदना-सिक्त दयावीर ने परोपकार के महायज्ञ में अपने प्राणों की आहुति दे दी।

राजर्षि दिलीप ने बालवत्सा (नवजात बछड़े वाली) नंदिनी गौ की प्राणरक्षा के लिए भूखे सिंह के आगे अपना शरीर मांस के लोथड़े की तरह डाल दिया था- स न्यस्तशस्त्रो हरये स्वदेहमुपानयत् पिण्डमिवामिषस्य-रघुवंश महाकाव्य (कालिदास) द्वितीय सर्ग।

और पर दुःखकातर राजर्षि रतिदेव परमात्मा से न तो आठों सिद्धियों से युक्त परम गति चाहते हैं और न ही मोक्ष की कामना करते हैं। वे तो बस यही चाहते हैं कि संसार के समस्त प्राणियों का समग्र दुःख उन्हें मिल जाए ताकि सभी प्राणी सदा के लिए सुखी हो जाएं- "न कामयेऽहं गतिमीश्वरात्

बाल कथा

रूप का गुमान

● नरेन्द्र देवांगन

लक्ष्मी और दरिद्रा दो सगी बहनें थीं। दीवाली का त्योहार आ गया था। सभी जगह चहल-पहल थी। एक दिन दोनों बहनें खूब सजी-संवरी। दरिद्रा मुस्कुराकर लक्ष्मी से बोली, 'देख, क्या रही है ? मैं तुझसे सुंदर हूं।'

लक्ष्मी भी चुप कहां बैठने वाली थी। बोली, 'नहीं, तुमसे सुंदर मैं हूं।' बस इसी बात पर दोनों झगड़ने लगीं। जब दोनों देर तक भी तय नहीं कर पाईं कि उनमें सुंदर कौन है, तो उन्होंने सोचा कि धरती की सैर को चला जाए। वहां की दीवाली भी देख लेंगे। फैसला भी करा लेंगे कि दोनों में सुंदर कौन है ?'

दोनों सज-धजकर पृथ्वी की ओर जाने लगीं, तो स्वर्ग के देवताओं ने कहा, 'इसके लिए पृथ्वी पर जाने की क्या आवश्यकता है ? हम लोग तय कर देंगे, तुम में कौन अधिक सुंदर है।' लेकिन वे नहीं मानीं।

दोनों बहनें जैसे ही पृथ्वी पर पहुंची, उन्हें एक बनिया मिला। बनिया मंदिर में पूजा करके लौट रहा था। दोनों उससे पूछने लगीं, 'बताओ, हम दोनों में कौन अधिक सुंदर है ?'

बनिया तो था ही चतुर। उसने कहा, 'इस बात का फैसला इतनी जल्दी नहीं हो सकता। आप मेरे घर चलें। वहीं जाकर मैं निर्णय कर पाऊंगा।' दोनों उसके साथ चल पड़ीं।

बनिया उन्हें लेकर अपने घर पहुंचा। घर में पहले लक्ष्मी ने प्रवेश किया। बनिए ने कहा, 'आप तो रूप की खान हैं। आप अंदर तिजोरी वाले कमरे में चलकर विराजें।'

जैसे ही लक्ष्मी ने चलने के लिए कदम बढ़ाया, बनिए ने तारीफ करनी शुरू कर दी। लक्ष्मी तारीफ सुनती गईं और आगे बढ़ती गईं। जब वह तिजोरी वाले कमरे में पहुंचीं, तो बनिया बोला, 'आप थक कई होंगी। आराम कर लें। मैं दरिद्रा जी को देखकर आता हूं।' लक्ष्मी वहीं पसर गईं।

दरिद्रा को दूर से ही आते देख, बनिए ने कहना शुरू किया, 'आप तो वास्तव में ही बहुत सुंदर हैं। आपसे अधिक सुंदर तो कोई नहीं हो सकता। अब आप मुड़कर तो दिखाएं। आपकी चाल भी बहुत सुंदर होगी।'

दरिद्रा अपने रूप के गुमान में बिना कुछ सोचे, मुड़कर चलने लगी। बनिया तारीफ करता रहा, वह चलती रही। धीरे-धीरे वह घर के बाहर चली गईं। बनिए ने राहत की सांस ली। दरवाजा अंदर से बंद कर, सोचने लगा कि धन की देवी मेरे पास हैं, दरिद्रा की क्या जरूरत।'

इसके बाद बनिया तिजोरी वाले कमरे में गया। बोला, 'देवी लक्ष्मी, आपके सौंदर्य और गुणों की कोई तुलना नहीं। दरिद्रा से यही कहा, तो रूठकर चली गईं। आपकी प्रशंसा उसे सहन नहीं हुई। अब आप यहीं निवास करें।' और लक्ष्मी वहीं रहने लगी।

नरेन्द्र फोटो कॉपी, पोस्ट खरोरा,
जिला रायपुर, छत्तीसगढ़-493225

परामष्टर्धियुक्तामनपुनर्भवं वा।
आर्तिं प्रपद्येऽखिलदेहभाजामन्तः
स्थितो येन भवंत्यदुःखाः ॥" (श्रीमद्‌भागवत महापुराण 9/21/12)

कलरव करते पक्षी संध्या के आगमन की सूचना देते हुए अपने नीड़ों की ओर लौट चले हैं। निरभ्र क्षितिज से दृश्यमान भास्कर अपने रागारुण करों से धरा का अंतिम आश्लेषण करता हुआ रातभर के लिए विदा ले रहा है। अचानक एक झटके के साथ मेरी तंद्रा भंग हो जाती है। मेरा मन उच्च-मधुर भावलोक से निम्न-कटु यथार्थ जगत् पर उतर आया है। पारिवारिक समस्याओं से आक्रांत होकर वह मुझे घर की ओर खींचने लगता है। मैं अन्यमनस्कता से चल पड़ता हूं। लगता है, मैंने अपनी अमूल्य निधि खो दी है। मेरा चिंतातुर मन खिन्न है। पैर धीरे-धीरे मेरे शरीर को ढो रहे हैं।

घर दूर है। मन पुनः विचारों में खो जाता है। सोचता हूं- आदि मानव का जीवन पक्षियों की तरह कितना स्वच्छ, निरापद और उन्मुक्त हैं प्रकृति की गोद में बैठकर वह कितनी दिव्य शांति का अनुभव करता था। उसका लक्ष्य आध्यात्मिक था। आज का मानव कितना अभागा है! कितना असहाय है! वह भौतिकता की मशीन का एक पुर्जा बन गया है। निरंतर घिसता जा रहा है। उसका अपना कोई व्यक्तित्व नहीं, लक्ष्य नहीं। वह शिश्नोदर की पूर्ति में अनवरत व्यस्त हाड़-चाम का एक यंत्रचालित पुतला बन गया है। हाय! कहां गई उसकी वह संवेदनाजन्य दिव्य मानवता और अध्यात्म की आस्था? अरे अभागो! अध्यात्मपरायण अमृत आर्यो की संतान भारतीयो! तुम उस दिव्य मणि को गंवाकर- उसे प्रमादवश तुच्छ वस्तु के भ्रम में फेंककर ये कंकड़-पत्थर क्यों समेट रहे हो?

"ताजी! जय जय आम।" (पिता जी जय जय राम) का अस्फुट मधुर स्वर मुझे गृहागमन की सूचना देता है। मैं पुलकित होकर अपने द्विवर्षीय पुत्र को गोद में उठा लेता हूं।

महाराज बाग, भैरवगंज, सिवनी,
मध्य प्रदेश-480 661, मो. 88789 80467

कहानी

दलदल

● सुशांत सुप्रिय

"मैं उस समय बारह साल का था। वह दस साल का रहा होगा। वह -- मेरा सबसे अच्छा मित्र सुब्रोतो।" बूढ़े की भारी आवाज कमरे में गूँज उठी। वह हमें अपने जीवन की सत्य-कथा सुना रहा था

कुछ पल रुक कर बूढ़े ने फिर कहना शुरू किया, "मेरा जन्म सुंदरबन इलाके के पास एक गाँव में हुआ। गाँव से दो मील दूर दक्षिण में दलदल का इलाका था। पिता मछुआरे थे जो गाँव के उत्तर में बहती नदी से मछलियाँ पकड़ने का काम करते थे। पिता बताते थे कि पच्चीस-तीस मील दूर जा कर यह नदी एक बड़ी नदी में मिल जाती थी। गाँव के पूर्व और पश्चिम की ओर घने जंगल थे।

मेरा मित्र सुब्रोतो बचपन में ही अपाहिज हो गया था। पोलियो की वजह से उसकी एक टाँग हमेशा के लिए बेकार हो गई थी। पर मेरी सभी शरारतों और खेलों में वह मेरा भरपूर साथ निभाने की कोशिश करता था। सुब्रोतो की आवाज बहुत सुरीली थी। वह बहुत मीठे स्वर में गीत गाता था। उसके गाए गीत सुन कर मैं मस्त हो जाता था।

हमें गाँव के दक्षिण में स्थित दलदली इलाके की ओर जाने की सख्त मनाही थी। उस दलदल के भुतहा होने के बारे में अनेक तरह की कहानियाँ प्रचलित थीं। हम बच्चे अकसर गाँव के उत्तर में बहती नदी के किनारे जा कर खेलते थे। मैं नदी में किनारे के पास ही तैरता रहता जबकि सुब्रोतो किनारे पर बैठा नदी के पानी में एक कोण से चपटे पत्थर फेंक कर उन्हें पानी की सतह पर फिसलता हुआ देखता

अपने हम-उम्र बच्चों के बीच मैं बड़ा बहादुर माना जाता था। दरअसल मैंने एक बार गाँव में घुस आए एक लकड़बग्घे पर पत्थर फेंक-फेंक कर उसे गाँव से बाहर भगा दिया था। एक बार नदी किनारे खेलते-खेलते गाँव के कुछ बच्चों ने मुझे चुनौती दी कि क्या मैं गाँव के दक्षिण के दलदली इलाके में अकेला जा सकता था? बात जब इज्जत पर बन आई तो मैंने चुनौती मान ली। हालाँकि सुब्रोतो ने मुझे ऐसा करने से मना किया पर तब तक मैंने हामी भर ली थी। यह तय हुआ कि कल मैं गाँव के दक्षिण में स्थित दलदली इलाके में जाऊँगा और सकुशल लौट कर दिखाऊँगा।

नियत दिन सुबह गाँव के सभी बच्चों की टोली गाँव के दक्षिणी छोर पर पहुँची। मैं और सुब्रोतो भी उन सब के साथ थे। मुझे दो मील दूर के दलदली इलाके में जा कर कुछ समय वहाँ बिताना था और फिर सकुशल वापस लौट कर दिखाना था। सबूत के लिए मुझे दलदल की कुछ गीली मिट्टी साथ ले जाए जा रहे थैले में भर कर वापस लानी थी। बाकी बच्चे वहीं मेरा इंतजार करने वाले थे। उस दलदली इलाके में जाने से सभी डरते थे।

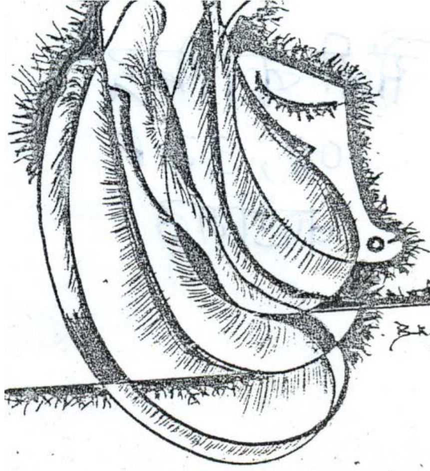
लेकिन ऐन मौके पर मुझे भी उस दलदली इलाके में अकेले जाने में डर लगने लगा। मैंने बाकी बच्चों से इजाजत माँगी कि मेरा प्रिय मित्र सुब्रोतो भी मेरे साथ जाएगा। बाकी बच्चे बड़ी मुश्किल से माने पर सुब्रोतो ने दलदली इलाके में जाने से साफ इंकार कर दिया। जब मैंने उसे हमारी मित्रता का वास्ता दे कर भावुक किया तब जा कर वह मेरे साथ चलने के लिए तैयार हुआ।

आखिर उस सूर्य-जले दिन हमने अपना सफर शुरू किया। दो-ढाई मील चल कर अंत में हम दोनों उस इलाके में पहुँच गए। सामने खदकता हुआ दलदल था जिसमें डरावने बुलबुले फूट रहे थे और अजीब-सी भाफ उठ रही थी। दलदल के किनारे से कुछ दूर पहुँच कर हम दोनों बैठ गए। सुब्रोतो लँगड़ा कर चलने की वजह से बेहद थक गया था और हाँफ रहा था। लेकिन असली काम तो अभी बाकी था। सबूत के तौर पर हमें दलदल की थोड़ी गीली मिट्टी साथ लाए थैले में भर कर वापस ले जानी थी।

सुब्रोतो को वहीं छोड़ कर मैं दलदल की ओर आगे बढ़ा। जमीन घास, मरे हुए पत्तों और फिसलन भरी काई से ढँकी हुई थी। ठीक से कुछ पता नहीं चल रहा था कि कहाँ ठोस जमीन खत्म हो गई थी और गहरा दलदल शुरू हो गया था।

अगला कदम जमीन पर रखते ही मैंने पैर को धँसता हुआ महसूस किया। इससे पहले कि मैं सँभल पाता, मेरा दूसरा पैर भी दलदल में धँसने लगा था।

मैं सुब्रोतो का नाम ले कर जोर से चिल्लाया। लेकिन जब



तक सुब्रोतो लँगड़ाते हुए मेरे पास पहुँचता, मैं कमर तक दलदल में धँस गया था। जैसे नदी में डूबता हुआ आदमी तिनके को भी सहारा समझ कर बचने के लिए व्याकुल हो कर छटपटाता है, उसी तरह मैंने भी सुब्रोतो के अपनी ओर बढ़े हुए हाथ को कस कर अपने हाथों में पकड़ लिया और व्याकुल हो कर छटपटाते हुए खुद को किसी तरह दलदल से बाहर निकालना चाहा। लेकिन जब मैंने उसके हाथ के सहारे दलदल से बाहर निकलने की कोशिश की तो इस खींच-तान में सुब्रोतो के पैर की किनारे पर से पकड़ ढीली हो गई और वह भी मेरे साथ ही उस दलदल में आ गिरा। देखते- ही-देखते वह भी दलदल में कमर तक धँस गया। दलदल हर पल हम दोनों पर अपना शिकंजा कसते हुए हमें नीचे खींचता जा रहा था।

घबरा कर मैंने इधर-उधर देखा। किनारे पर उगे एक बरगद के पेड़ की शाखाएँ दलदल के ऊपर फैली थीं। वहाँ से कुछ लम्बी जटाएँ नीचे दलदल की ओर आ रही थीं।

मैं पूरा जोर लगा कर ऊपर की ओर उचका और मैंने अपने दोनों हाथ उन जटाओं की ओर फैलाए। पता नहीं यह मेरे उचकने का असर था या जटाओं को ही मुझ पर दया आ गई थी, नीचे दलदल की ओर लटकी एक मजबूत जटा मेरी हथेलियों की गिरफ्त में आ गई। उस जटा की पकड़ के सहारे मैं किसी तरह धीरे-धीरे खुद को दलदल से बाहर खींचने में कामयाब हो गया। मैं वैसे भी शरीर से हृष्ट-पुष्ट था। जटा को पकड़ कर मैं ऊपर बरगद की शाखा पर चढ़ गया। तब तक सुब्रोतो छाती तक दलदल में धँस चुका था।

मुझे पता था, यदि मैंने सुब्रोतो को बचाने के लिए जल्दी ही कुछ नहीं किया तो दलदल उसे साबुत निगल जाएगा। लेकिन मेरे हाथ-पैर ठीक विपरीत दिशा में काम कर रहे थे। डर ने मुझे जकड़ रखा था। मेरी देह जल्दी-से-जल्दी उस दलदल की पहुँच से दूर भाग जाना चाहती थी।

मुझे खुद भी नहीं याद, किस तरह मैं पेड़ से उतर कर किनारे पर पहुँचा। जब मुझे होश आया, तब तक सुब्रोतो गले तक दलदल के भीतर जा चुका था। लेकिन उसके हाथ अब भी बाहर थे। मैंने भाग कर पेड़ से लटकती एक लम्बी जड़ तोड़ कर उसकी ओर फेंकी। पर शायद तब तक बहुत देर हो चुकी थी। हालाँकि सुब्रोतो ने जटा अपने हाथों में पकड़ी और मैंने उसे बाहर खींचने की कोशिश भी की किंतु वह जटा सुब्रोतो के अशक्त हाथों से बार-बार छूट जाती थी। संभवतः वह उस दलदल में बहुत गहराई तक धँस चुका था। शायद उसकी देह में अब अधिक ऊर्जा नहीं बची थी। या फिर कोई अथाह शक्ति हमारी तमाम कोशिशों के बावजूद उसे धीरे-धीरे नीचे खींचती चली जा रही थी।

देखते-ही-देखते सुब्रोतो दलदल में गायब होने लगा। मेरी आँखों के सामने ही उस राक्षसी दलदल ने उसे जिंदा निगल लिया। नीचे जाते समय उसके चेहरे पर एक अजीब कातर भाव था, जैसा भाव मारने के लिए ले जाए जा रहे बकरे के चेहरे पर होता है। एक अजीब-सी आवाज हुई और सुब्रोतो का सिर दलदल के भीतर गायब हो गया। दलदल की सतह पर पहले जहाँ सुब्रोतो था, वहाँ कुछ पल बड़े-बड़े बुलबुले फूटते रहे।

फिर एक ऐसी मनहूस सघन चुप्पी वहाँ छा गई जैसे सारे विश्व की आवाजें किसी दानवी शक्ति ने सोख ली हों।

मैं सन्न रह गया। सब मेरी ही गलती थी। सुब्रोतो तो इस दलदली इलाके में आना ही नहीं चाहता था। मैं ही उसे मौत के मुँह में घसीट लाया। मैं अपनी जगह पर जड़ हो गया था।

सुब्रोतो को दलदल में गायब हुए एक-दो मिनट बीत चुके थे। तभी एक अजीब-सी भयावह आवाज हुई -- जैसे गले में कुछ फँस जाने पर कोई चिल्लाने की मर्मांतक कोशिश कर रहा हो।

अब मैं आप को जो बताऊँगा, उस पर आप यकीन नहीं करेंगे। मुझे मालूम है, आप को यह असम्भव लगेगा। आप कहेंगे -- वह मेरा भ्रम था। वहम था। पर नहीं। मैं अपने पूरे होशो-हवास में था। यही सच है।

दलदल में पूरा धँस कर गायब हो जाने के लगभग दो मिनट बाद एक अजीब-सी भयावह आवाज के साथ अचानक सुब्रोतो का कीचड़ से सना सिर और दोनों हाथ दलदली मिट्टी से ऊपर निकल आए ! जी हाँ, मेरा सबसे अच्छा मित्र सुब्रोतो, जिसे कुछ देर पहले दलदल पूरा का पूरा लील गया था, उसने एक झटके से अपना कीचड़-सना सिर और अपने दोनों हाथ दोबारा दलदल से बाहर निकाल लिए थे। क्या उसने अपनी समस्त संचित ऊर्जा केंद्रित करके जीवित बचे रहने का एक अंतिम महा-प्रयास किया था ? क्या वह मौत के पंजों में छटपटा रहे जीवन की एक अंतिम फड़फड़ाहट थी ? या वह कुछ और ही था जो मेरी समझ और कल्पना, दोनों से परे था ? ऐसा मैं इसलिए कह रहा हूँ क्योंकि सुब्रोतो का चेहरा उसका अपना चिर-परिचित चेहरा नहीं लग रहा

था। यह मेरा वह मित्र नहीं लग रहा था जिसे मैं बरसों से जानता था।

दरअसल सुब्रोतो के कीचड़-सने चेहरे पर एक विकृत मुस्कान फैली थी जिसके भीतर से उसकी दो खुली आँखें किसी अतिरिक्त ऊर्जा से चमक रही थीं। दहकते अंगारों-सी लाल आँखें ! मेरी दिशा में फैले उसके दोनों हाथ मदद माँगते-से नहीं लग रहे थे बल्कि मुझे पकड़ कर उस भुतहे दलदल में खींच लेने को आतुर-से लग रहे थे। बल्कि यदि मैं पास होता तो वे हाथ मुझे निश्चित-ही दबोच लेते।

मैं बेहद डर गया और थर-थर काँपने लगा। हालाँकि मेरा जहन मुझे कह रहा था कि मैं फिर से पेड़ से तोड़ी गयी लम्बी जड़ उसकी ओर फेंक कर उसे बचाने का प्रयास करूँ, किंतु मेरी पूरी देह इस सोच के विरुद्ध एकजुट हो गई थी। बदहवास-सा मैं पलटा और वहाँ से सरपट भागा। बहुत दूर जा कर ही मैंने हाँफते हुए मुड़ कर देखा। सुब्रोतो का सिर अब दोबारा दलदल में नीचे धँसने लगा था। किंतु उसके दोनों हाथ अब भी मुझे अपनी ओर बुलाते प्रतीत हो रहे थे ...

जब मेरी आँख खुली तो मैं गाँव में अपने घर के बिस्तर पर पड़ा था। मेरी माँ मेरे सिरहाने बैठी थी। पिता बगल में खड़े थे। मैं उन्हें सुब्रोतो के साथ हुई दुर्घटना के बारे में बता कर रोने लगा। यह सुन कर माँ ने मुझे सीने से लगा लिया। तब पिता ने बताया कि जब मैं कई घंटों तक नहीं लौटा तो गाँव के बच्चे बड़ों को ले कर दलदली इलाके की ओर गए। मैं उन्हें दलदल से कुछ दूर जमीन पर बेहोश पड़ा मिला था। तेज बुखार में तपता हुआ। वे सब मुझे उठा कर गाँव ले आए। पिता ने बताया कि मैं तीन दिनों तक नीम-बेहोशी की हालत में बिस्तर पर पड़ा सुब्रोतो का नाम बड़बड़ाता रहा था। गाँव का ओझा आ कर अपना यत्न कर गया था। उसका कहना था कि उस भुतहा दलदल वाले इलाके में जाने की वजह से मेरे अंदर किसी प्रेत का वास हो गया था। लेकिन अंत में पड़ोसी गाँव के वैद जी के देसी उपचार से ही तीन दिन के बाद आज मुझे होश आया था।

उस त्रासद घटना के बाद मेरा जीवन पहले जैसा नहीं हो पाया। सुब्रोतो के पिता इस सदमे से पागल-से हो गए। वे मुझे अक्सर गाँव के दक्षिणी दलदली इलाके की ओर बौराए-से भटकते दिखते। मैं इस दुर्घटना के लिए खुद को कभी माफ नहीं कर पाया। मुझे लगता, मैं सुब्रोतो को बचा सकता था। लेकिन मैं कायर निकला। भयभीत मैं उसे दलदल में धँसता हुआ छोड़ कर भाग आया। उसकी वह अंतिम छवि मेरे स्मृति-पटल पर सदा के लिए अंकित हो गई थी। दलदली कीचड़ से सना उसका चेहरा ... उसकी विकृत मुस्कान ... अंगारों-सी दहकती उसकी आँखें ... मेरी ओर फैले उसके दोनों हाथ ...। चाह कर भी मैं उस मारक छवि से मुक्ति नहीं पा सका।

अकसर सुब्रोतो मेरे दुःस्वप्नों में आता। मेरी ओर फैले उसके दोनों हाथ मुझे दबोच लेते और अपने साथ उस भुतहा दलदल में खींच ले जाते। सर्दियों की रात में डर की कँपकँपी के कारण मेरी नींद खुल जाती और मैं खुद को पसीने से तर-ब-तर पाता। यह भावनात्मक सदमा मुझे चैन से जीने नहीं दे रहा था। जब मैं आईने में देखता तो मेरी छवि अपना मुँह मोड़ लेना चाहती। मेरा जीवन जैसे उस दलदल का बंधक बन कर रह गया था। मैं अपने दुःस्वप्नों के भीतर फँसा छटपटाता रहता।

मेरी ऐसी हालत देख कर पिता ने मुझे पढ़ने के लिए एक रिश्तेदार के पास कलकत्ता भेज दिया। पढ़ाई के बाद मेरी नौकरी दिल्ली में लग गई। मैं फिर कभी गाँव नहीं गया। दरअसल मैंने अपना गाँव हमेशा के लिए छोड़ दिया था। मुझे दुःस्वप्न आने कम हो गए लेकिन पूरी तरह बंद नहीं हुए। मैं गाँव से दूर चला आया था लेकिन गाँव की स्मृतियाँ मुझसे पूरी तरह दूर नहीं हो सकी थीं।

मैंने शहर की एक लड़की से शादी कर ली। फिर मेरे घर बेटे ने जन्म लिया। समय बीतता गया। कई बरस बाद माँ-बाबूजी भी चल बसे। पर मैं वापस गाँव नहीं गया। उन्हीं दिनों मैंने यह कविता लिखी थी : "तुम डरते हो 'एड्स से' कैंसर से 'मृत्यु से 'मैं डरता हूँ' उन पलों से 'जब जीवित होते हुए भी 'मेरे भीतर कहीं 'कुछ मर जाता है ...।'

धीरे-धीरे मेरा बेटा दस साल का हो गया। वह भी बहुत सुरीली आवाज में गाना गाता था। उसके गाए गीत सुन कर मुझे सुब्रोतो की बहुत याद आती। कभी-कभी मुझे लगता जैसे सुब्रोतो ने ही मेरे घर में बेटे के रूप में जन्म ले लिया है। पता नहीं आप इसके बारे में क्या कहेंगे लेकिन धीरे-धीरे मेरे दिल की यह धारणा मजबूत होती जा रही थी।

अंत में मैंने फैसला किया कि मैं वापस गाँव जाऊँगा। अब मैं चालीस साल का हो गया था। आखिर कब तक मैं उस त्रासद घटना का बोझ सलीब-सा अपने कंधों पर ढोता रहता ?

गर्मी की छुट्टियों में मैं तीस बरसों का लम्बा अंतराल पार करके गाँव चला आया।

मेरी पत्नी और बेटा भी मेरे साथ थे। दूर से देखा मैंने गाँव

गाँव के पूर्व और पश्चिम में उगा जंगल काट दिया गया था। वहाँ कारें बनाने वाली एक विदेशी कंपनी ने अपना प्लांट लगा लिया था। इस कंपनी ने हर तरह के हथकंडे अपना कर कई गाँववालों से भी उनकी जमीन खरीद ली थी। उत्तर में बहती नदी पर बाँध बन गया था। इस की चपेट में आने से हमारा गाँव तो बच गया था लेकिन उत्तर में बसे कई गाँव बाँध के पानी में डूब गए थे और वहाँ के लोग विस्थापित हो गए थे।

के अपने घर को, गोया अंतरिक्ष से देखा मैंने धरती उर्वर को। मन में एक धुकधुकी भी थी कि मेरी अधेड़ आँखें मेरे बचपन के दृश्यों का सामना अब न जाने कैसे कर पाएँगी। मेरे जहन में बचपन के मधुर दिनों की स्मृतियाँ लौटने लगीं। लेकिन गाँव अब पहचाना भी नहीं जा रहा था। वह जैसे एक बाजार में तब्दील हो चुका था। अब घरों में घुस आया था बाजार। बाजार में खो गए थे घर। अब पक्की गलियों वाले कस्बेनुमा स्वरूप में बदल चुके मेरे गाँव में जगह-जगह कोका-कोला और पेप्सी बेचने वाली दुकानें खुल गई थीं।

दुकानों में वोडाफोन, एयरटेल और आइडिया कनेक्शन के सिम-कार्ड बिकने लगे थे। गाँव में डिश टी. वी., टाटा- स्काइ और केबल-कनेक्शन पहुँच चुका था। सुनने में आया कि 'वालमार्ट' भी उस इलाके में अपना आउटलेट खोलने वाला था। कई और बहु-राष्ट्रीय कंपनियों के आउटलेट तो गाँव में पहले ही खुल चुके थे। गाँव अब बाजार की गिरफ्त में जा चुका था। वह मेरा पहले वाला गाँव नहीं रहा था। वह अपना अक्षत क्वाँरापन खो चुका था।

गाँव के पूर्व और पश्चिम में उगा जंगल काट दिया गया था। वहाँ कारें बनाने वाली एक विदेशी कंपनी ने अपना प्लांट लगा लिया था। इस कंपनी ने हर तरह के हथकंडे अपना कर कई गाँववालों से भी उनकी जमीन खरीद ली थी। उत्तर में बहती नदी पर बाँध बन गया था। इस की चपेट में आने से हमारा गाँव तो बच गया था लेकिन उत्तर में बसे कई गाँव बाँध के पानी में डूब गए थे और वहाँ के लोग विस्थापित हो गए थे।

लेकिन जो बात आपको चौंका देगी, अब वह सुनिए। गाँव से दो मील दूर दक्षिण में स्थित दलदल को टनों मिट्टी डाल कर बिलकुल भर दिया गया था। इस ठोस बना दी गई जमीन पर विदेशी सामान बेचने वाली कई दुकानें खड़ी हो गई थीं। उस पुराने दलदल के स्थान पर अब बाजार मौजूद था। बाजार का नया 'दलदल' -- मैंने सोचा।

खैर। समय कब का करवट बदल चुका था। फिर मैं अपने दुःस्वप्नों के जाल में अब तक क्यों फँसा हुआ था? वहाँ खड़े-खड़े मैं बहुत देर तक यही सब सोचता रहा।

मैं सुब्रोतो की याद में कुछ करना चाहता था। मैंने गाँव में जमीन खरीद कर एक अस्पताल बनाने का फैसला किया। मैंने वही जमीन खरीद ली जहाँ पहले दलदल हुआ करता था और अब दुकानें थीं। दुकानें तुड़वा कर मैंने वहीं अपने बचपन के मित्र के नाम पर 'सुब्रोतो मुखर्जी चौरिटी अस्पताल बनवाया। अब इस अस्पताल में इलाके के गरीब और बीमार लोगों की मुफ्त देख-भाल होती है।'

इतनी कहानी सुना कर बूढ़ा खामोश हो गया। मैंने खिड़की से बाहर देखा। बाहर हवा चुप थी। सामने मैदान में खड़े ऐंठे पेड़ चुप थे। वहीं बेंच के नीचे बैठा रोज अपनी ही दुम से झगड़ने वाला लँगड़ा कुत्ता चुप था। एक सिमसिमी खामोशी चू-चू कर सड़क की छाती पर बिछती जा रही थी। और सड़क चुप्पी की केंचुल उतार फेंकने के लिए कसमसा रही थी।

आखिर सघन चुप्पी को रौंदते हुए बूढ़े की भारी आवाज फिर गूँजी, 'अपने डर से कभी मत डरो। डर को देख कर अपनी आँखें कभी मत मूँदो क्योंकि जो डर गया, समझो वह जीते-जी मर गया। आपके मामले में वह डर क्या है, मुझे नहीं पता। पर मेरे मामले में वह डर दलदल था।'

ए-5001, गौड़ ग्रीन सिटी, वैभव खंड,
इंदिरापुरम, गाजयिाबाद, उ. प्र. - 201010, मो : 8512070086

ग़ज़ल

• मनजीत कौर



मग़रूर तेरी राहें
किस तौर फिर निबाहें

मशगूल तुम हुए हो
महरूम मेरी चाहें

तुम पास गर जो होते
महफ़ूज़ थीं फ़िज़ाएं

किससे गिला करें अब
मायूस मेरी आहें

बदली है चाह इनमें
मख़्मूर जो निगाहें

तुम जो जुदा हुए हो
महदूद मेरी राहें

टूटा हुआ ये दिल है
तस्कीं इसे दिलाएं।

म. नं. 60, सेक्टर 5, गुड़गांव,
हरियाणा,
मो. 98734 43678

कहानी

अजनबी

● इन्द्रा रानी

मुझे आज भी याद है उस दिन मैं 'शॉपिंग' करने कनॉट प्लेस गई थी। वहां से लौटते हुए सोचा थोड़ा सेन्ट्रल पार्क में बैठ सुस्ता लेती हूं। सर्दियों की गुनगुनी धूप और लोगों की आवाजाही के बीच ये सही जगह है। मैं एक खाली बैंच देख बैठ गई। तभी मुझे लगा कोई मेरी पीठ पीछे बैठा सुबक रहा है। कौन है देखने के लिए मैंने मुड़कर देखा। वहां एक महिला अपने रूमाल से चेहरा ढके थोड़ा झुकी बैठी थी। शरीर की कंपन से मैंने अंदाजा लगाया कि वह रो रही है। आसपास नज़र दौड़ाई वहां कोई नहीं था। कहीं उनके साथ कोई अनहोनी न हो गई हो, इस आशंका से मैं विचलित हो उठी। मैं उठी और उसके पास जाकर बैठ गई। मुझे यूं बैठते देख अचानक वो झेंपकर सीधी बैठ गई। पचपन साठ के बीच की उम्र। चेहरे से संभ्रांत और समझदार महिला सलवार कुर्ता और कंधे पर लटकता पर्स शायद वो आसपास ही नौकरी करती हो। मैंने पूछ लिया, "आप ठीक हैं ना?"

"जी हां।" बहुत संक्षिप्त-सा मगर नज़र चुराते हुए उत्तर दिया।

"आप रो रही थीं सोचा आपसे पूछ लूं।"

"बस ऐसे ही कभी मन भर आता है तो हो जाता है।" उसने पीछा छुड़ाते हुए कहा।

"बेशक ऐसे में शुभचिंतक मददगार साबित होते हैं।" मैंने कोशिश की।

"शुभचिंतक हैं या नहीं इसका पता बाद में लगता है। अपने मन की बात बता कर हर समय इस अंदेशे से डरना कि बात खुल न जाए। अच्छा है चुप रहा जाए।"

"आपकी बात में दम है कभी हम दिल के राज ये सोचकर दूसरे के संग 'शेयर' करते हैं कि मन की भड़ास निकाल सके पर कुछ समय पश्चात वही राजदार हमारे लिए मुसीबत बन जाता है।

"यही तो, और मेरी जैसी 'सिंगल लेडी' के लिए और भी सतर्कता आवश्यक है।" वह बोली।

"एक सलाह दूं यदि आप मानें तो देखो आप कौन हैं क्या नाम है कहां रहती हैं मुझे बताने की जरूरत नहीं। मैं अपने अनुभव से कहती हूं कि जब कोई गहरे अवसाद में हो तो अकेले उसे छोड़ना अपराध है। ऐसे क्षणों में ही आदमी घबराकर गलत फैसले ले लेता है इसलिए मेरी सलाह है आप बेझिझक अपनी समस्या परेशानी मुझसे कह दें। आपके मन का बोझ हल्का हो जाएगा। यदि मैं कुछ समाधान निकाल सकी तो ठीक वरना आप बिना किसी आशंका के शांत मन से घर लौट जाना।"

वह थोड़ी आश्वस्त लगी। उसने इधर-उधर नज़र दौड़ाई जैसे परख रही है कि कोई हमारी बात सुन तो नहीं रहा। कहने लगी, "मैडम मैं स्कूल में टीचर हूं। बस कुछ महीनों में रिटायर हो जाऊंगी। मेरा बचपन अभावों में बीता था। वजह मेरी मां जवानी में ही विधवा हो गई थी। बड़ी मेहनत से वह हमारी परवरिश कर रही थी। हम तीन भाई-बहन जिसमें मैं सबसे बड़ी थी। मेरे दोनों भाई पढ़ाई में फिसड्डी ही रहे। बहन ने नौवीं में और भाई ने दसवीं के बाद स्कूल जाना बंद कर दिया। बड़ी बहन होने के नाते मैंने भाई को यही समझाया कि पढ़ना नहीं चाहता तो कोई बात नहीं। कम-से-कम कोई काम सीख ले ताकि पैरों पर खड़ा हो सके। दो साल इधर-उधर भटकने के पश्चात् उसने टेलरिंग करनी आरम्भ कर दी। मेरी मां मेरी शादी के सपने देखने लगी थी। सरकारी स्कूल में टीचर लगने से वह बेहद खुश थी।'

मां के संघर्ष को सबसे अधिक मैंने महससू किया था। अभी थोड़ी राहत मिली है तो चाहती थी मां थोड़ी संतुष्टि का स्वाद चख ले। तभी मौसी एक दिन मेरे लिए एक रिश्ता ले आई। उनके हिसाब से जोड़ी एकदम परफेक्ट थी। लड़का भी सरकारी कर्मचारी था। घर-बार सब जांचा परखा था। ये सब सुनकर एकबारगी प्रसन्नता हुई फिर लगा अभी तो थोड़े दिन सुधरे हैं मैं चली गई तब न जाने कब तक घर संभले। भाई की आमदनी इतनी कम है कैसे गुजारा होगा?

जिस दिन लड़के वालों को आना था, मैं एक दिन पहले ही चुपके से लड़के के आफिस पहुंच गई। मैंने जब उसे देखा तो सच कहूं जो कहने गई थी सब भूल गई। सामने एक गौरवर्ण का हेंडसम लड़का खड़ा था। कोई भी ऐसे लड़के को पति रूप में पाकर

निहाल हो जाती। किसी तरह मैंने स्वयं को संयत किया। वह प्रथम प्यारा-सा संवाद आज भी याद है, 'आप यहां कैसे?'

"कुछ बात करनी थी।" मैंने झेंपते हुए कहा।

"चलो केंटीन में बैठते हैं।"

वह जमाना ऐसा नहीं था कि कोई लड़की विवाह से पूर्व लड़के से मिलती फिरे। पर मेरा इरादा नेक था इसलिए मैंने बड़े शांत भाव से उसे अपनी उलझन बता दी और अपनी तरफ से एक सुझाव दे दिया। मैं कामना करते हुए वहां से आई कि जैसे मैंने सोचा है वैसा ही हो।

और चमत्कार हो गया। अगले दिन लड़के ने मेरी जगह मेरी छोटी बहन का हाथ मांग लिया। मेरी बहन पढ़ाई में बेशक पीछे थी, पर रूप-रंग में मुझसे बढ़कर थी। मेरी इसी युक्ति ने उसे पार लगा दिया। मेरी बंधी बंधाई पगार मिलने की गारंटी होने से मां को कर्जा लेने में परेशानी नहीं हुई। मेरी वह पहली मुलाकात जीजा जी के साथ बरसों परिवार से छिपी रही।

कुछ बरस बीते कर्ज की रकम कम हो रही थी। मेरी बढ़ती उम्र को देख मां रिश्तेदारों से मेरे रिश्ते की बात करती नजर आती। उसकी ख्वाहिश एक दिन उसके संग चली गई। छोटी सी बीमारी और सब खत्म। स्कूल में बच्चों को पढ़ाते-पढ़ाते कब उम्र की सीढ़ियां 30 के पार हो गईं, नहीं जानती। स्कूल की सहेलियां शादी करके एक-एक कर बिछुड़ने लगीं। तब मैं भी सपने देखती। सपने देखने की उम्र भी होती है भला। पर मुझे अपने भाई का सपना पहले साकार करना पड़ा। हुआ यूं कि मेरे भाई की दुकान पर एक लड़की कपड़े सिलवाने आई थी और आते-जाते दोनों में प्यार हो गया।



एक दिन भाई मनुहार करते हुए बोला, "जीजी मेरा एक काम कर दो जिंदगीभर आपका आभार मानूंगा।"

"भई काम तो बता, मेरे बस का न हुआ तो।"

"आप ही हैं सब मेरी। मुझे निर्मला से शादी करनी है, आप उसकी मां से बात करो।" उसने कहते हुए अपनी बांहें मेरे गले में डाल दीं। भाई से लड़की के घर का पता लेकर जब मैं उसके घर गइ तो आप सच नहीं मानेंगी, उन्होंने मुझे कितना जलील किया। वो तमककर बोली, "अब हमारी लड़की इतनी गई बीती भी नहीं है कि टेलर को ब्याह दूं। कमाता ही क्या है, रख लेगा ढंग से क्या?"

"आप चिंता न करें मैं गारंटी लेती हूं।"

उनका संशय दूर करने के लिए मुझे अपनी बचत और कर्ज दोनों का सहारा लेना पड़ा। भाभी के जेबर कपड़े और शादी में बहुत खर्चा करना पड़ा। फिर भी मैं प्रसन्न थी कि मैं अपने भाई को मन पसंद जीवन-साथी दिलाने में कामयाबी रही।

दोनों भाई-बहनों की गृहस्थी बसाकर मैं अपने आपको धन्य समझती थी। बहन जब अपने बेटे के साथ आती तो उसे गोद में उठाकर खिलौने मिठाई देकर बड़ी संतुष्टि मिलती। भाभी भी ऐसी मिली थी कि जीजी-जीजी कहते अघाती न थी। 'जीजी आज क्या बनाऊं?' 'जीजी हमें शादी में जाना है कौन सी साड़ी पहनूं?' हर छोटी-बड़ी बात के लिए मेरी राय ली जाने लगी। मुझमें भी बड़प्पन छा गया था। देखते-देखते भाई को दो बच्चे हो गए। मोह ने मेरी सारी सूझबूझ छीन ली थी। सब कुछ न्योछावर करने को मैं तत्पर रहती। भाई-भाभी की तरह उनके बच्चे भी मुझे जीजी कहते हुए खूब लुभाते। मुझे लगता मैं घर की मालकिन हूं। सब कुछ मेरे इशारों पर चलता है। अपनी पगार का सारा धन मैं उन पर लुटाती रही। मेरे अपनों ने मुझे जीजी की पदवी पर बिठाकर अकेलेपन को कभी महसूस नहीं होने दिया। घर में भाई-भाभी के न होने पर उनके बच्चे कभी भी अकेला महसूस नहीं करते थे। उनके साथ बैठना खेलना पढ़ाना सभी मेरे जिम्मे था। जब भाभी तीन महीने तक बिस्तर पर थी तो मैंने ही घर की सारी जिम्मेदारी संभाले रखी। कितने हिलमिल गए थे दोनों। पिछले साल भाई की लड़की भी ब्याह कर चली गई जितना हो सका मैंने आर्थिक मदद की पर अब...

'अब क्या हो गया?' मैंने उत्सुकता से पूछा।

अब से नहीं पिछले चार-पांच वर्षों से महसूस कर रही थी कि भाई-भाभी ने मुझे दुधारू गाय समझकर मोह में बांध रखा था। मुंह से मीठी भाभी की चाल समझ आने लगी थी कि किस तरह बहाने बना-बना कर मुझे लूटती रही। मैंने सारी जिंदगी कोई फिजूलखर्ची नहीं की फिर भी मेरे पास रकम न के बराबर है। भाई को एक दो बार पैसे देने से मना किया तब से उसका व्यवहार रूखा हो चला है।

हाइकू

● डॉ. रामनिवास 'मानव'

सौंदर्य-तीर्थ
लगे त्रिभुवन का
मुझको धरा।

निकला दिन;
दूध-नहाई धूप,
निखरा रूप।

गोधूलि वेला
लगा क्षितिज पर
रंगों का मेला।

रंग-कल्पना,
सांध्य क्षितिज पर
सजी अल्पना।

नभ में इंदु,
मां के माथे का शुभ
सुंदर बिंदु।

फागुनी धूप,
ज्यों अभिसारिका का
दिपता रूप।

आया बसंत;
बनी-ठनी-सी कली
कहां है कंत!

बादल झरा,
आगतपतिका-सी
हर्षित धरा।

पूछे तितली
परिभाषा प्रेम की
फूल-फूल से।

लिया-ही-लिया
प्रकृति से हमने
मां जो ठहरी।

706, सैक्टर-13, हिसार,
हरियाणा-125 005
दूरभाष : 01662 238720

एक दिन जब मैं स्कूल से घर आई तो देखा भाई दो चार लोगों को मकान दिखा रहा है। मैं कुछ समझी नहीं तो पूछ बैठी, 'ये लोग यहां कैसे?'

'अंदर चलो समझाता हूं।" भाई ने इशारों से कहा।

थोड़ी देर में भाई भाभी दोनों ही आ गए। उत्साह से भरे भाई ने बताया, "हम सोच रहे थे मकान को तोड़कर दो मंजिला बनवा लें। कल को दीपक की शादी होगी, जगह होनी चाहिए। हमने हिसाब लगवाया है, आपको रिटायरमेंट पर जो रुपया मिलेगा, उसी में निबटा लेंगे क्यों?"

"मैं आधा कम-से-कम 'फिक्सड डिपोजिट' करवाना चाहती हूं। सारी पूंजी एक साथ नहीं खर्च करना चाहती मैं।" मैंने स्पष्ट कह दिया।

सुनते ही भाभी तुनक गई, "सारी जिंदगी आपकी सेवा की है जीजी, अब अपना-अपना सोचने लगी, हम ही काम आएंगे बुढ़ापे में। आपके आगे-पीछे है कौन?"

उनके बदलते रंग-ढंग से मैं आहत हो उठी, जैसे ही कमरे से बाहर हुई, ये शब्द सुनाई पड़े, "मकान बनवाकर रहूंगी, सोचना जीजी को है घर में रहना है या धन के सहारे रहना है।"

इस उम्र में किसका सहारा ढूंढूं, जिन्हें अपना समझा जीवनभर कमा-कमा कर उनकी गृहस्थी चलाती रही, आज उन्हीं की नज़र में स्वार्थी हो गई। अपनी सारी पूंजी सौंपने का मतलब हमेशा के लिए बेबस लाचार हो जाना है। आज यही सबक मिला है दान करो पर इतना अधिक नहीं कि स्वयं भिक्षुक बन जाओ।

"आप बिलकुल सही सोच रही हैं। धन से ना प्यार ना सम्मान खरीदा जा सकता है। मत भूलो जीवन में एक दरवाजा बंद होता है तो दूसरा खुल जाता है। आज के युग में अकेले निर्वाह करना कोई मुश्किल काम नहीं। हां, अकेलेपन से लड़ने के रास्ते खोजने होंगे।"

मैंने उन्हें दिलासा देते हुए कहा, "आप बिलकुल सही सोच रही हैं। धन से ना प्यार ना सम्मान खरीदा जा सकता है। मत भूलो जीवन में एक दरवाजा बंद होता है तो दूसरा खुल जाता है। आज के युग में अकेले निर्वाह करना कोई मुश्किल काम नहीं। हां, अकेलेपन से लड़ने के रास्ते खोजने होंगे। बुजुर्गों के लिए अब वृद्धाश्रम और कई महिलाएं होम खुले हैं जहां निश्चित राशि देकर घर जैसी सुख-सुविधाओं के साथ रह सकते हैं। परिवर्तन जीवन का नियम है इसलिए लोगों के बदल जाने का गम मत करो। 'अकेली हूं' के डर से अब गलत फैसले मत करना।"

"और वह वृद्धाश्रम का पता, आदि आवश्यक हुआ तो", वह बोल उठी।

"इंटरनेट है ना सभी जानकारी के लिए। और सब शुभ हो इस कामना के साथ विदा लेती हूं।" मैंने उठते हुए कहा।

उसने झट से मुझे गले लगाकर 'शुक्रिया' कहा। हम अजनबी की तरह मिले और अलग हो गए।

524, पॉकेट-5, फेज-1, मयूर विहार, दिल्ली-110091,
मो. 97178 56878

कहानी

रईसी का भूत

● एल. आर. शर्मा

वे दोनों चाय की दुकान में बैठे बातें कर रहे थे।

'' फिर क्या हुआ?'' - मोहन मिस्त्री ने पूछा , जो बिजली की मुरम्मत का काम करता था ।

'' होना क्या था, मैंने संडास के जेट की धार ऐसी पैनी कर दी है कि उस चड्ढे के पिछवाड़े में जख्म हो जाएंगे। छः महीने तक तो बवासीर का इलाज कराता फिरेगा'' - बल्लू प्लम्बर ने डींग हांकी । वह गहरे हरे रंग का सफारी और उसी रंग की कैप पहने हुए था। वास्तव में वह एक बड़ी कम्पनी की वर्दी की नकल करता था और अपने आप को बड़ा उस्ताद समझता था।

'' पर यार बल्लू , यह तो ठीक नहीं है ''- मोहन मिस्त्री बोला।

'' इसमें गलत क्या है? इस त्रिवेणी विहार में लोग पैसों से लदे पड़े हैं, पर जब हम जैसे कामगरों को पैसे देने की बात आती है तो साले मुट्ठी भींच लेते है'' ।

- पर तुम्हें तो पैसे ठीक ही मिले, तुम्हारे काम के तो सौ रूपये ही बनते थे'' ।

- '' अरे , जो पांच रूपये की चाय के लिए बड़े होटलों में पचास रूपये दे सकते हैं, उन्हें हम जैसों की मेहनत के लिए कुछ ज्यादा देने में तकलीफ क्यों होती है''?

'' देख भाई बल्लू,'' - मोहन मिस्त्री समझाने लगा- ''त्रिवेणी विहार हो या मीरगंज मुहल्ले का घर, हमें अपने काम से मतलब होना चाहिए। किसी के पास पैसा ज्यादा है तो हमें क्या? हमारा काम तो वही है न ? हमें तो उसी के पैसे लेने चाहिए। होटल वालों से हमारी क्या बराबरी? होटल के लिए करोड़ों खर्च होते है। हम तो अपनी उसी चार-पांच सौ की टूलकिट से ही काम करते है। फिर हम एक ही काम का अलग-अलग मेहनताना क्यों मांगें ? ''

-''अरे यार, यह धनवान बनने के नुसखे है, तू क्या जाने।''

-'' मैं तो ऐसे नुसखों पर विश्वास नहीं करता। मेहनत और इमानदारी ही असली नुसखा है।''

-'' पर मेरा सपना अलग है, इसीलिए मैं वर्दी भी अलग पहनता हूं।''

-''सपने तो सोए हुए लोग देखते हैं'' ।

-'' जो सपने देखते हैं, वही उन्हें पाने के लिए जी-जान लगा देते है। देखना, मैं एक दिन इसी त्रिवेणी विहार में कोठी खरीदूंगा।''

मोहन मिस्त्री सोचने लगा- इस पर तो पैसे का भूत सवार है। इससे बहस करना बेकार है। वह बात बदल कर बोला-'' तो चड्ढा तुम्हें दोबारा बुलाएगा और संडास का जैट ठीक कराएगा?''

- '' अरे सिर्फ संडास का जैट ही नहीं, उसे तो बाथरूम का नल भी ठीक कराना पड़ेगा। उसमें भी मैंने दो डिफ्यूजर घुसेड़ दिए हैं। नहाने बैठता होगा तो इतना कम पानी आता होगा कि आधे घंटे में फारिग होता होगा।''

'' पर ऐसी हरकतों से तो तुम त्रिवेणी विहार में बदनाम हो जाओगे।''

- ''बदनाम ? अरे सात सौ फ्लैटों और कोठियों के इस त्रिवेणीविहार में मुझे नौ फ्लैटों और तीन कोठियों से बुलावे आते हैं। धीरे-धीरे मैं सौ से अधिक कोठियों का प्लम्बर बन जाऊंगा। फिर मुझे बाहर काम करने की जरूरत नहीं रहेगी। तीस हजार महीना यहीं से कमाने लगूंगा।''

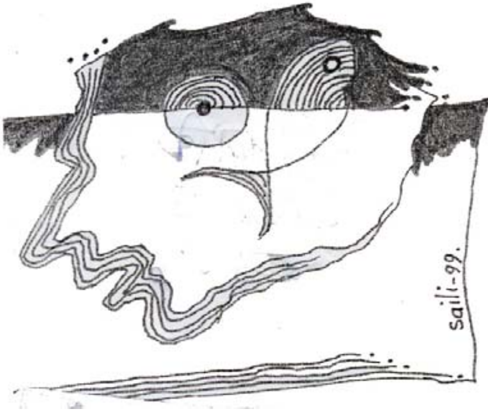
इस पर मोहन ने व्यंग्य किया- '' यह भी तेरा एक सपना है क्योंकि त्रिवेणी विहार में तो ए.एम.सी. है यहां से तो तभी बुलावा आता है , जब ए.एम.सी वालों को पहुंचने में देरी होती है।''

बल्लू - ''ये ए.एम.सी. क्या होता है, भाई?''

मोहन- '' यह एक फर्म से सारी मुरम्मतों का सालाना ठेका होता है। वही फर्म बिजली ,पानी, रंग-रोगन इत्यादि की मुरम्मत और देखरेख करती है।''

बल्लू प्लम्बर के लिए यह नई बात थी । उसने सोचा, जब चड्ढा साहब के घर जाऊंगा , तो इसके बारे में पूरी जानकारी लूंगा।

इतने में उसका मोबाइल घन-घना उठा। '' लो आ गया चड्ढे



का फोन, मैं चलता हूं अब'' बल्लू ने कहा ।

''तू मौज कर यार, तेरी किस्मत तेरे साथ है ।'' - मोहन मिस्त्री बोला और बल्लू को कंधे पर टूलकिट लटका कर जाते हुए देखने लगा । वह भी उठा, चाय के पैसे दिए, अपना बैग उठाया और काम पर निकलने लगा । '' ये पट्ठा मेहनती तो है , पर पैसे का भूत इसके सर पर सवार है जिससे इसकी अच्छे बुरे की समझ भी खत्म हो गई है'' - वह अपने आप में ही बुदबुदाया ।

''साहब, ये बाथरूम की टोंटी तो बदलने पड़ेगी''- बल्लू प्लम्बर चड्ढा साहब से बोला जो दरवाजे पर खड़े देख रहे थे ।

''पर यह टोंटी तो अकेली तीन हजार की है, यह कैसे खराब हो गई?''

''अब अगर खराब है, तभी तो आपने मुझे यहां बुलाया । मंहगी है, तो क्या पानी खुद पैदा करेगी?''

''मैं आज ही दिवाकर से बात करूंगा। खैर अभी तो तुम इसे बदल दो, क्या कोई नई टोंटी साथ लाए हो?''

बल्लू ने अपनी किट खोली और कहा -''हां, मैं कुछ जरूरी सामान हमेशा अपने साथ रखता हूं । इससे मेरा और आप जैसों का समय बचता है। पांच सौ रुपये की टोंटी है। दो सौ रुपये बदलने के लगेंगे।''

वास्तव में टोंटी ढेड़ सौ रुपये की थी और बदलने के पचास रुपये मेहनताना बनता था। एक ही झटके में बल्लू पांच सौ रुपये अधिक बना रहा था और मन ही मन खुश हो रहा था। पैसे के भूत ने विवेक को दबोच कर रखा था ।

चड्ढा साहब बोले - ''चलो, बदल दो । वैसे तो दूसरा बाथरूम भी है, पर मुझे यही बाथरूम अधिक पसंद है।''

बल्लू प्लम्बर ने टोंटी बदल दी। फिर चड्ढा साहब की ओर बोला -'' साहब, पुरानी टोंटी ले जाऊं?''

''नहीं''-चड्ढा साहब ने कहा -'' मैं इसे त्रिवेणी विहार के इंजीनियर को दिखाऊंगा जिनका ए.एम.सी. है।'' यह कह कर चड्ढा साहब ने सात सौ रूपये बल्लू प्लम्बर का दे दिए। बल्लू को पुरानी टोंटी न मिलने का दुख तो हुआ, पर उसने जाहिर नहीं होने दिया। अगर पुरानी टोंटी मिल जाती, जैसाकि प्रायः होता है, तो उसे पांच सात सौ की आमदनी और हो जाती। वास्तव में टोंटी को कुछ हुआ ही नहीं था, यह बल्लू जानता था। चड्ढा साहब के मना करने से अब बल्लू को ए.एम.सी. के बारे में पूछने का भी साहस नहीं हुआ। बल्लू की इस कारगुजारी को जमुना देख रही थी । जमुना चड्ढा साहब के घर झाड़ू-पोचे का काम करने आती थी । वह अन्य घरों में भी काम करती थी, जिसमें पड़ोस के मीरगंज मुहल्ले के टोकिया बाबू का घर भी था। ये टोकिया बाबू रेल में नौकरी करते थे। उन्होंने भले समय में मीरगंज मुहल्ले में एक छोटा सा मकान बनवा लिया था । बल्लू प्लम्बर इन टोकिया बाबू के घर भी एक बार टोंटी बदलने काम कर चुका था। जमुना को याद था कि वहां इसने टोंटी बदलने के पचास रुपये लिए थे। यहां उसी पचास के काम के यह ठग दो सौ रुपये ऐंठ रहा है। जमुना हैरान थी।

बल्लू प्लम्बर चड्ढा साहब के घर से जब निकला तो अमीरी के सपनों में खोया अपनी धुन में जा रहा था। ''मैं कोई मोहन मिस्त्री तो नहीं हूं जो सिर्फ दो जून रोटी के जुगाड़ से संतोष कर लूं। मेरी बात कुछ और है। मैं बलराम हूं। मुझे तो धनवान बनना है, बड़ा ठेकेदार बनना है। सभी कोई जन्म से ही सेठ होते हैं क्या? अपनी मेहनत और लगन से कई अमीर हुए हैं। सुना है निरमा डिटरजैंट वाला पहले साइकिल पर घर - घर जाकर अपना डिटरजैंट बेचता था, और आज वह ....''

वह इन्हीं विचारों में खोया हुआ था कि सामने से अजुध्या आंटी आती हुई दिखाई दी। '' अब यह आंटी अपनी भानजी पुष्पा का राग छेड़ देगी'' - वह अपने आप से बोला।

'' नमस्ते आंटी''- बल्लू ने ऊंची आवाज में पुकारा।

''बलराम, मैंने तुझे सौ बार कहा है, मुझे आंटी मत कहा कर। अरे आंटी भी कोई रिश्ता होता है भला? चाची भी आंटी तो मामी भी आंटी। बुआ भी आंटी और मौसी भी आंटी। कई-कई बार अपनी सास को भी आंटी बुलाते हैं। मुझे मौसी कह ले , पर आंटी मत कहना।''

'' अच्छा मौसी, बस आज के बाद मैं आपको आंटी नहीं कहूंगा।''

'' तूने पुष्पा के बारे में क्या सोचा? उसकी तो अब ब्याह की उमर हो गई है।''

''मौसी, मैं पहले भी कह चुका हूं कि मैं जिन्दगी में कुछ बन कर ही ब्याह करूंगा।''

-''अरे, तू अच्छा-खासा कमा रहा है। अच्छा पहनता है, अच्छा खाता है, दो कमरों का किराए का साफ सुथरा घर ले रखा

है , और तुझे क्या चाहिए?''

-'' अरे मौसी , मेरा सपना बहुत ऊंचा है। मैं सिर्फ एक मिस्त्री ही नहीं रहना चाहता। मैं मिस्त्री से ठेकेदार और ठेकेदार से बड़ा सेठ बनना चाहता हूं।

-''तब तक तो बेटा, पुष्पा को मैं कुंवारी नहीं रख सकती। वह तेईस की हो गई है। दुःख की बात यह है कि बेचारी तेरे नाम की रट लगाए रखती है। सीधे तो अपने मन की बात नहीं कहती, भला गांव की एक भोली-भाली लड़की अपने मुंह से अपने ब्याह की बात कैसे कर सकती है? बस, इतना कहती रहती है कि आजकल बलराम जैसे लड़के नहीं मिलते। न सिग्रेट की लत, न दारू का शौक और न ही गुटका-खैनी का ऐब। बेटा, मैं उसके मन की बात भांपती हूं। यही बात है, जो मैं बार-बार तुझे रिश्ते के लिए मनाती फिरती हूं। वैसे रिश्ते तो बहुत हैं- वो दूनीचंद ढाबे वाला और प्यार सिंह टेलर मास्टर का लड़का विनोद। पर शाम हुई नहीं कि दोनों अद्धा चढ़ा कर थेटर का रास्ता नापते है। हां, उनमें और कोई ऐब नहीं है। पर तू ही बता, यह ऐब क्या कम हैं? मैंने प्यार सिंह टेलर मास्टर से कहा - प्यार सिंह, तेरा विनोद एक अच्छा लड़का है, पर इसे दारू पीने से तो रोक। तो पता है क्या बोला- ''अजुध्या बहन सारा दिन तो दुकान में सिलाई मशीन को खट-खट में अपने को खपाता है, अगर शाम को थकान मिटाने के लिए दो घूंट पी लेता है, तो क्या बुरा है? आखिर जवान आदमी है।'' लो बोलो। प्यार सिंह को तो बस पैसा प्यारा है। बेटा पैसा कमा रहा है, तो लगाम ढीली कर के रखी है। कल को यही दो घूंट का शौक ऐब बन जाएगा, तो पछताएगा।''

बल्लू बड़ी देर से अजुध्या मौसी की बातें सुन रहा था। उसे आगे भी जाना था, बोला- ''मौसी, तेरी सब बातें सही है। अगर तुझे कोई अच्छा रिश्ता मिलता है, तो पुष्पा का ब्याह कर दे। मैं अभी कम से कम तीन साल तक ब्याह की बात नहीं कर सकता।'' यह कह कर वह आगे निकल गया।

अजुध्या ने निराशा से गहरी सांस ली और बुदबुदाई- ''जैसे तेरी मरजी, बेटा भगवान करे, तेरी मति बदल जाए।''

त्रिवेणी विहार में जियालाल साहनी अकेले ऐसे रईस थे जो पन्द्रह कनाल की कोठी में रहते थे । उनकी कोठी के साथ चार क्वार्टर नौकरों के लिए थे। उनमें चार परिवार रहते थे जिनके आठ-दस आदमी और औरतें उनकी कोठी में काम करते थे। साहनी साहब अपनी विशाल कोठी में अपनी पत्नी के साथ अकेले रहते थे। उनके दो बेटों के अमेरिका में चार रेस्टोरैंट थे, जिनमें केवल भारतीय व्यंजन ही परोसे जाते थे और वे बहुत ही लोकप्रिय थे। ये बेटे साल में एक दो बार भारत में आते थे। साहनी साहब के पास तीन मर्सीडीज कारें थी। दोनों पति - पत्नी रोज शाम को शहर के मशहूर सिडार शैडो क्लब में जाते थे। उनके एक नौकर शिवसिंह से बल्लू प्लम्बर की जान पहचान थी। एक बार शिवसिंह अपने क्वार्टर के नल को ठीक कराने बल्लू को ले गया था। उस दिन बल्लू ने पूछ ही लिया - '' यार शिवसिंह, आपके साहब को प्लम्बर की जरूरत नहीं पड़ती क्या?'' यह सुनकर शिवसिंह हंसने लगा। बोला- ''इनके बाथरूमों में जो नल और शावर लगे हैं उनके लिए प्लम्बर मुम्बई से आते हैं''।

'' तो मुझे बुला लिया करो यार।''

'' अरे तुझे कैसे बुलाएं, उनके लिए कम्पनी से ही प्लम्बर आते है ।''

'' वे तो खूब पैसे झाड़ते होंगे।''

'' तो पैसों की यहां क्या कमी है?''

बल्लू बोला-''मैं तो सस्ते में इनका काम कर दिया करूंगा''।

शिवसिंह- ''तू सस्ते की बात करता है । ये लोग तो आम आदमी से बात तक ही नहीं करते। इनके सारे काम मेजर राठौर देखते है, जो इनके मैनेजर हैं। सुनते हैं एक लाख तीस हजार रुपये पगार है उनकी।''

बल्लू-'' अरे बाप रे। एक लाख तीस हजार। उपर वाला भी कईयों को दौलत से लथ- पथ कर देता है कई बेचारे परिवार वालों के लिए दिन-रात मेहनत करते रहते हैं।

शिवसिंह ''राठौर साहब ही हम सब पर हुक्म चलाते है। उनका यहां कोठी के एक कमरे में ही दफ्तर है। बड़े सच्चे आदमी है, एक नए पैसे की हेरा- फेरी नही करते।

बल्लू- ''अरे जो महीने में एक लाख तीस हजार से उपर तनखा पाता है उसे हेराफेरी की जरूरत कहा रहती है? हेराफेरी तो हम जैसे कर सकते हैं, जो पांच हजार कमाने के लिए बस्ता उठाए दिन भर दौड़े - दौड़ फिरते है। तो भैया शिव, कोठी में काम पाने की कोई तरकीब है?''

शिवसिंह-''अभी तो कोई नहीं लगती, होगी तो बताउंगा। मुझे भी यहां नौकरी इसलिए मिली है क्यूंकि मेरा बापू भी यहीं काम करता था। इन लोगों का उसूल है कि घोड़े हों तो नस्ली और नौकर असली।''

अगले दिन सुबह बल्लू और मोहन मिस्त्री उसी चाय की दुकान पर चाय पी रहे थे। मोहन मिस्त्री ने पूछा -'' फिर चड्ढा साहब का काम हो गया था?''

''हां, कर तो दिया , पर बुड्ढा उसी ए.एम.सी. का रोना रो रहा था।''

''क्या कहता था?''

''मैने उसकी टोंटी बदली जिसमें मैंने प्लास्टिक के डिफ्यूजर घुसेड़े थे और जो पानी नहीं दे रही थी । रिवाज के मुताबिक मैंने पुरानी टोंटी ले जाने को कहा, तो बोला -''पुरानी टोंटी तीन हजार की है कैसे खराब हो गई इसकी मैं बात करूंगा कम्पनी से जिनके

पास ए.एम.सी है ।''

-''तो फिर तुम्हें तीन हजार की टोंटी नहीं मिली'' ।

-''हां यार, नहीं मिली, अबकी बार मेरा नुकसान हो गया '' ।

-''तुझे एक आदमी ढूंढता हुआ आया था, मैंने उसे तुम्हारा मोबाइल नंबर दे दिया।''

-''क्या कहता था?''

-''कहता था, त्रिवेणी विहार की ए.एम.सी. के मैनेजर दिवाकर ने बुलाया है।''

-''अच्छा? फिर तो काम बन गया'' । बल्लू खुश होकर बोला -'' शायद ए.एम.सी. वाले मुझे रखना चाहते होंगे । ''अब तो मैं कई टोटियां बसूल करूंगा।''

मोहन मिस्त्री -'' तेरी किस्मत ।''

बल्लू -''तो मैं चलूं?''

-''अरे यार, चाय तो पी लो। लो आ भी गई।''

चाय पीकर जब बल्लू उठने लगा, तो उसके मोबाईल की घण्टी बज उठी। ''आप बल्लू प्लम्बर बोल रहे हैं?''

बल्लू -''हां जी, बोल रहा हूं।''

-''आप चड्ढा साहब के घर ठीक साढ़े ग्यारह बजे पहुंच सकते है? उनके घर दिवाकर साहब आपसे बात करना चाहते हैं।''

-हां जी, ''मैं पहुंच जाऊंगा जी।''

ग्यारह तो बज ही चुके थे। साढ़े ग्यारह बजने से पहले ही बल्लू प्लम्बर चड्ढा साहब के घर पहुंच गया। चड्ढा साहब बालकोनी में बैठे हुए एक व्यक्ति से बातें कर रहे थे, जो उनके सामने एक कुर्सी पर बैठा हुआ था।

''तो यह है ए.एम.सी. के मैनेजर दिवाकर साहब''- बल्लू मन ही मन अनुमान लगाने लगा। उसका अनुमान सच्चा निकला।

अगला आधा घंटा बलराम प्लम्बर के लिए कष्टप्रद बीता। उसे कुर्सी तो बैठने को मिल गई, पर मैनेजर दिवाकर ने उसे खूब डांटा। कहा- ''बलराम, तुम्हारी चालाकियों का पता चल गया है। तुम मुरम्मत करने के बहाने नलों में डिफेक्ट डाल कर लोंगों को तंग करते हो और फिर पुनः उन्हें ठीक करने के पैसे ऐंठते हों? चड्ढा साहब के बाथरूम की इस टोंटी में से दो-दो डिफ्यूजर निकले हैं, वो कहां से आए? मैं तो तुम्हारी रिपोर्ट पुलिस में करना चाहता था पर चड्ढा साहब एक शरीफ और दयालु आदमी है, उन्होंने मुझे ऐसा करने से मना कर दिया। चलो उनके कहने पर तो मैं यह रियायत कर देता हूं। पर अब तुम्हें इस कालोनी में आने की जरूरत नहीं है। हमने अब यहां कम्पनी का प्लम्बर तैनात कर दिया है।''

बल्लू अपमानित होकर बड़े भारी मन से वहां से उठा। तो यह सब इस साले बुडढ़े चड्ढे की करामात है। मैं अब इसको मजा चखा कर के ही रहूंगा। ये कौन सा साला दूध का धुला है, यूं ही बड़ा आदमी तो नहीं बना होगा। इसने भी तो कई पापड़ बेले होंगे। मैं इसका पूरा कच्चा-चिट्ठा उस विक्रम गुप्तचर संस्था से निकलवाऊंगा, फिर देखूंगा इसको। कर्नल विक्रम मुझसे लगाव रखते हैं। मेरी मेहनत की कद्र करते हैं। अभी उनके पास ही चलता हूं''- बल्लू के मन में ये विचार घुमड़ रहे थे। वह अपमानित था और सांप की तरह फुंफकार रहा था। इसी आक्रोश में वह कर्नल विक्रम के कार्यालय में पहुंचा। कर्नल का सारा काम भी वही देखता था और उनके यहां उसका करीब रोज का आना जाना था। वास्तव में कर्नल विक्रम हाथ से काम करने वाले नौजवानों का सम्मान करते थे। उन्हें ऐसे युवकों से घृणा थी, जो सफेदपोश नौकरी की तलाश में बेकार घूमते रहते थे। बल्लू को वे एक परिश्रमी युवक मानते थे।

''आओ बलराम, आज बड़े उदास लग रहे हो''- कर्नल विक्रम ने बल्लू के चेहरे को पढ़ते हुए कहा। बलराम अर्थात् बल्लू प्लम्बर ने अपना मन्तव्य सुनाया। कर्नल विक्रम ने उसे बड़े ध्यान से सुना और मेज पर रखे पानी के गिलास को ओर इशारा करके कहा- ''बलराम, पहले पानी पियो।'' जब बल्लू पानी पी चुका, तो उन्होंने यूं समझाया - ''देखो बलराम, चड्ढा साहब पर तुम्हारा गुस्सा ठीक नहीं है। चड्ढा साहब के बारे में हमारी संस्था सब कुछ जानती है। वे एक भले व्यक्ति हैं। एक निर्धन परिवार से उठ कर वे अपने परिश्रम से कालेज के प्रिंसिपल के पद तक पहुंच गए ऐसे भले आदमी को तुम क्यों तंग करना चाहते हो? अपनी गलतियों को ढांपने के लिए दूसरों की गलतियां ढूंढना अच्छी बात नहीं है। और हमारी संस्था ऐसे किसी काम को हाथ नहीं लेती, जो कानून के खिलाफ हो। अपनी गलतियों को मानकर मेहनत और सच्चाई से आगे बढ़ो। तरक्की करने का यही रास्ता है।

जब कोई बुराई के रास्ते पर चलने लगता है। तो उसका विवेक समाप्त हो जाता है। कर्नल विक्रम की सलाह से बल्लू प्लंम्बर को संतोष नहीं हुआ। वह अब भी अपने किये को ठीक ही मान रहा था। उसके मन में एक दृढ़ विश्वास पैदा हो चुका था कि पैसा कमाने के लिए कोई काम गलत नहीं होता और समाज में जो भी धनी व्यक्ति हैं, उन्होंने अपने जीवन में ऐसे सभी पापड़ बेले हैं जैसे मैं बेल रहा हूं। एक बार जब पैसा आ जाता है, तो पिछले सारे गलत कामों का प्रायश्चित किया जा सकता है। लोग सब भूल जाते हैं, उन्हें केवल यही दिखता है कि फलां-फलां आदमी धनवान हैं। वे स्वतः आदरणीय हो जाते हैं। यही दुनिया का दस्तूर है। यह है पैसे की ताकत। मैं भी जब धनवान बन जाऊंगा, तो ये सब लोग मुझे आदर से देखने लगेंगे। साहनी साहब अपने मुम्बई से आने वाले प्लम्बरों को पचास के काम के पांच सौ देते हैं। तो मुझमें क्या कमी है? यही न कि मैं किसी बड़ी कम्पनी से जुड़ा नहीं हूं?'' वह इन्ही विचारों में खोया हुआ चला जा रहा था कि शिव मंदिर के पास पहुंच गया। जब व्यक्ति को कहीं से भी सहारा नहीं मिलता तो भगवान की याद आती है। बल्लू ने सोचा, चलो मंदिर में मत्था

टेक कर वहां पर स्वामी जी से मिल लेता हूं । सुना है वे पहुंचे हुए तांत्रिक भी है शायद मेरे निवेदन पर चड्ढे को कोई चमत्कार दिखा कर डरा दे। शिव मंदिर पहुंचने पर बल्लू ने स्वामी जी के पैर छुए।

''कल्याण हो बच्चा। कहो चिंता है ?''

बल्लू आश्चर्य में पड़ गया। भला स्वामी जी को मेरी चिंता का कैसे पता लगा ? चोर की दाढ़ी में तिनका। बोला- ''हम दुनियादारों को कई चिंताए होती हैं, स्वामी जी। कृपा करके मेरी चिंता दूर कर दीजिए। आप तो विद्वान हैं, तांत्रिक भी हैं । बहुत कुछ जानते भी हैं।''

स्वामी जी ने ध्यान से बल्लू को देखा, फिर आंखें मूंद कर कुछ पल मौन हो गये। फिर बोले-बेटा, कुछ जानता हूं, तभी इस मंदिर में टिका हुआ हूं, वैसे मुझे यहां कौन रहने देता। तंत्र विद्या से मैं चिंताओं को दूर नहीं करता, पर चिंतित व्यकित का इलाज अवश्य करता हूं। जिस मार्ग में तुम चल रहे हो, उसे त्याग दो। इसी में तुम्हारा कल्याण है और इसी से चिंताओं का भी नाश संभव है।'' यह कह कर स्वामी जी मौन हो गये।

स्वामी जी ने चाहे अंधेरे में तीर मारा हो, पर बात बल्लू के दिल में लग गई। वह चाहता कुछ और था, पर हुआ कुछ और उसे अब और बोलने की हिम्मत नहीं हुई । कुछ देर बैठकर वह मन्दिर से उठा और धीरे-धीरे अपने घर की ओर चल पड़ा। पर तभी उसे त्रिवेणी विहार के दूसरे छोर से कुछ शोर सुनाई दिया। लोग दो-दो, चार-चार के झुण्डों में उस ओर जाते दिखाई दे रहे थे, जिस ओर साहनी साहब की कोठी थी। बल्लू को तो आज वैसे भी समय काटना भारी हो रहा था, सोचा क्यों न मैं भी साहनी साहब की कोठी हो। आऊँ। शिव सिंह से गप-शप भी हो जाएगी और दिल का बोझ भी हल्का हो जाएगा। साथ ही इस शोर का कारण भी पता लग जाएगा। अब वैसे भी साहनी साहब जैसा सेठ ही मेरा सहारा हो सकता है, उस चड्ढे जैसे टटपुंजियों के काम से तो तौबा। क्या ठाठ हैं साहनी के, रईस हो तो उनके जैसा। पर जैसे ही वह



साहनी की कोठी के निकट पहुंचा, उसे जोर-जोर रोने की आवाज सुनाई देने लगी। उसके पांव जल्दी-जल्दी उस ओर बढ़ने लगे। जैसे ही वह कोठी के विशाल गेट पर पहुंचा, वहां का दृश्य देख कर हतप्रभ रह गया। उसके पैर जहां के तहां जम गए।

कोठी के आंगन में सफेद कपड़े से लिपटे दो शव रखे हुए थे बहुत से लोग कुछ दूर खड़े थे। साहनी दहाड़े मार कर विलाप कर रहा था - '' अरे, मेरे बच्चों को क्या हो गया... अरे कल ही तो फोन पर बात हुई थी कि पापा हम आ रहे हैं ....अरे कैसे सफेद कपड़ो में लिपट कर आए रे मेरे कलेजे के टुकड़ो ... अरे अब मैं जिंदा रह कर क्या करुंगा .... अरे कोई डाक्टर को बुलाओ , जरा देखो तो सही कहीं मेरे बच्चे जिंदा ही तो नहीं ... अरे मेरे करोंड़ों रुपये ले लो मेरे बच्चों को जिंदा कर दो... मुझे लेने को आ रहे थे कि पापा आपका जन्मदिन हम अमेरिका में मनाएंगे .... अरे मेरे बच्चों मैं तुम्हारे पास ही आ रहा हूं... वहीं मेरा जन्मदिन मनाना जहां तुम चले गए हो... लगाओ लगाओ आग लगा दो मुझे , मेरा अंतिम संस्कार यहीं कर दो मेरे बच्चों से पहले ही...

हवाई जहाज की दुर्घटना में साहनी साहब के दोनों बेटे मारे गये थे। अब साहनी पागलों की तरह रो रहा था। उधर कोठी के अंदर से उसकी पत्नी की चीखें सुनाई दे रही थी। किसी को उनको चुप कराने या ढांढस बंधाने को साहस नहीं हो रहा था। साहनी की दुनिया ढह चुकी थी। करोड़ों रुपये और विशाल सम्पति अब कोई काम नहीं आ रही थी। इस समय साहनी के पैसे की कोई ताकत कार्य नहीं कर रही थी। यह वही पैसा था, जिसके लिए बलराम प्लम्बर कुछ भी करने को तैयार रहता है। इस दुर्घटना से बल्लू को ऐसा आघात लगा कि उसे समय की भी कोई सुध नहीं रही। जैसे समय थम गया हो । वहां खड़े-खड़े उसे दो घंटे हो गये। अब शाम के पांच बज रहे थे। आज उसे पता लगा कि पैसा भी कितना कमजोर होता है। उसका मन वैराग्य से भर गया। पैसा अब उसके लिए भगवान नहीं रहा। उसके मन में बड़ी उथल-पुथल मची हुई थी।

उसके पांव स्वतः ही अजुध्या मौसी के घर की ओर मुड़ गये।

रास्ते में उसे अजुध्या मौसी, मोहन मिस्त्री और उसकी पत्नी शीला आते हुए दिखाई दिये। उनके पीछे अजुध्या मौसी की भानजी पुष्पा भी सिर झुकाये, उदास सी चली आ रही थी, मानो किसी गाय को रस्से से खींच कर लाया जा रहा हो। बल्लू को सामने देख, वे सभी ठिठक कर खड़े हो गए।

बल्लू के मन में जो तूफान था, वह अब शब्दों के रूप में निकलना चाहता था। जो पैसा कुछ देर पहले उसका भगवान था, अब वह उसके लिए ठीकरा बन चुका था। उसने अजुध्या के सामने जाकर उसका हाथ पकड़ा और कहा- '' मौसी मैं पुष्पा से ब्याह करना चाहता हूं।

'' क्या? क्या कहा फिर से वोलो'' अजुध्या को बल्लू के

शब्द आसमान की बिजली तरह कौंधे।

'' मैं पुष्पा से ब्याह करना चाहता हूं।''

मोहन मिस्त्री ने बड़ी हैरानी से मुंह खोला-'' बल्लू , तुम होश में हो ? तुम सच कह रहे हो?''

बल्लू -''हां , मेरे दोस्त मैं अभी-अभी होश में आया हूं, पहले नहीं था। और सच कह रहा हूँ।''

मोहन-'' पर हम तो पुष्पा का रिश्ता तय करने प्यार सिंह के घर जा रहे थे, क्योंकि तुमने तो कल मौसी को मना कर दिया था।''

-''कल? यहां तो एक पल में कुछ का कुछ हो जाता हैं। मैं आज अभी की और इसी पल की बात कर रहा हूं।''

-''और वो तुम्हारा ठेकेदार और सेठ बनने का सपना?''

-''और सपने देखने छोड़ दिये हैं। मैं अब जाग चुका हूं।''

-''और त्रिवेणी विहार में कोठी कब खरीदोगे?''

-'' मैने अभी कुछ देर पहले देखा कि कोठियों में भी सुख नहीं होता। मैं अपने छोटे से घर में ज्यादा सुखी हूं।''

-'' और वो पैसे कमाने का भूत?''

अभी तक तो बल्लू गंभीर था। उस पर साहनी के घर हुई दुर्घटना का प्रभाव था, जिसको अब वह भुला देना चाहता था। इस सवाल पर उसके चेहरे में हल्की सी मुस्कुराहट आ गई, बोला - ''वो भूत थोड़ी देर पहले भाग गया।''

मोहन मिस्त्री ने भी उसकी मुस्कराहट का साथ दिया - ''चलो अच्छा हुआ, मुझे मेरा साथी वापस मिल गया। अब ब्याह कब करोगे?''

बल्लू ने एक नजर पुष्पा पर डालते हुए कहा- ''अभी, इसी समय।''

यह सुखद परिवर्तन सबके लिए अप्रत्याशित था। इसका सब पर अलग-अलग प्रभाव हुआ। मोहन मिस्त्री प्रसन्न था कि उसका सहयोगी और मित्र सही रास्ते पर आ गया। अजुध्या मौसी गीली आंखों से बार-बार आकाश की ओर कांपते हाथ जोड़ रही थी- मानो कह रही हो भगवान कितना दयालु है। यह उसी की कृपा है कि उसने बलराम की मति बदली है। उसकी भानजी पुष्पा का संसार बस रहा है- वह भी उसके मन के अनुसार । इससे अधिक अजुध्या को और क्या चाहिये था? क्योंकि इस दुनिया में पुष्पा ही उस बुढ़िया के लिए सब कुछ थी।

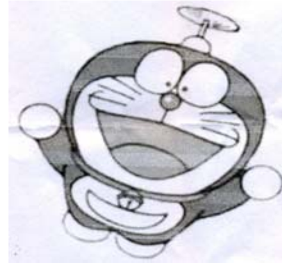
और पुष्पा - वो तो शीला के कंधे पर सिर रख कर उसे आसुंओं से भिगो रही थी। क्या ये आंसू दुःख के थे? नहीं ये असीम आनंद के आंसू थे। ये वे अमृत की बूंदे थी जो बड़ी आराधना से प्राप्त होती है। और पुष्पा ने पिछले दो सालों से कितनी आराधना की थी, कितनी मन्नतें मानी थी, यह कोई नहीं जानता।

42/5 हरिपुर सुन्दरनगर हि.प्र.-175018, मो. 94181-00983

बाल गीत

रोबोट : डोरेमॉन

● डॉ. लीला मोदी



बाईसवीं सदी की टाइम मशीन से आया है
नोबीता का प्यारा पोता डोरेमॉन लाया है
डोरेमॉन आया है सब बच्चों को भाया है
जेब की गैजेट्स से चाहे जो दे जाता है
मैजिक कारपेट पर बच्चों के संग खाता है
एनीव्हैयर दरवाजा जैसे ही खुल जाता है
अमरीका जापान रूस भारत घुमा लाता है
डोरेमॉन सब बच्चों के दिलों में समाया है
डोरेमॉन आया है सब बच्चों को भाया है।
स्माल लाइट से वो छोटा सा कर देता है
बिग लाइट डाल फिर बड़ा बना देता है
बेंबूकोपटर से उड़ विश्व घुमा सकता है
चार्ज करके बैट्री उड़ उड़के इठलाता है
नोबीता के जीवन में खुशी देने आया है
डोरेमॉन आया है सब बच्चों को भाया है।
मित्रों का संकट में समाधान कर देता है
बदले में किसी से वो कुछ नहीं लेता है
मम्मी का बनाया डोराकेक उसे भाता है
बच्चे ललचाते लेकिन पूरा खा जाता है
सबकी मदद करके वो मन में समाया है
डोरेमॉन आया है सब बच्चों को भाया है।

291, मोती स्मृति, टिपटा कोटा, राजस्थान

कहानी

राज़

● हरीश शर्मा

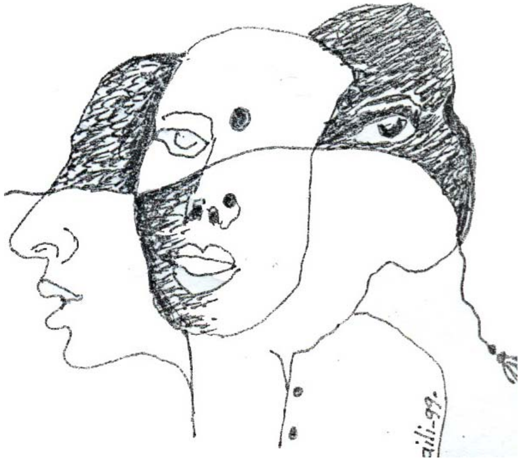
सुबह के धुधंलके में इन्द्र सैर से लौट रहा था। हल्की-हल्की रोशनी सुबह होने का ऐलान कर रही थी। सुनसान कच्चे लिंक रोड़ पर इन्द्र अकेला टहल रहा था। पीठ में दर्द से एक साल तक परेशान रहने के बाद डॉक्टर की सलाह पर सुबह की सैर शुरू की थी। बारिश हो या तूफान पिछले छः महीनों से वह एक दिन भी सैर पे जाना नहीं भूला था। अच्छी कद-काठी वाला इन्द्र अपने जमाने का खूब पंगेबाज हुआ करता था। दोस्तों के पीछे जान छिड़कने वाला इन्द्र, आए दिन दोस्तों के चक्कर में नए-नए पंगे ले लेता था। तभी तो वह यारों की जान था। उसने कल ही सुना था कि किसी ने वहाँ बाघ देखा था। मन-ही-मन घबराया वह हाथ में मोबाइल की टॉर्च लिए दबे पांव आगे बढ़ रहा था कि अचानक मोबाइल की तेज रिंगटोन बज उठी। सुनसान रास्ते में अचानक हुई आवाज ने उसे चौंका दिया था। यूँ खामख्वाह डरने के लिए खुद पर हंसते हुए उसने मोबाइल पलटा, देखा राजीव का फोन था। राजीव इन्द्र का पुराना दोस्त था। दोनों एक-दूसरे को स्कूल के दिनों से जानते थे। राजीव फैशन डिजाइनर था। कई सालों तक एक ही पैफक्ट्री में साथ काम भी किया था दोनों ने।

मोबाइल पर नम्बर पढ़ते ही राजीव के साथ बिताया एक-एक पल जीवन्त हो उठा था। इन्द्र ने 'ओके' बटन दबाकर फोन कान से लगाया और 'हैलो'' कहा। दूसरी ओर से कोई आवाज नहीं आई। इन्द्र बार-बार ''हैलो-हैलो'' कहता रहा। थोड़ी देर बाद ''इन्द्र! या...र, मुझे बचा लो'' लड़खड़ाती आवाज में राजीव का जवाब आया। राजीव की आवाज से ऐसा लग रहा था जैसे वह अन्तिम सांसें ले रहा हो। ''क्या हुआ। हैलो-हैलो'' इन्द्र बार-बार पूछने की कोशिश करता रहा मगर उधर से कोई आवाज नहीं आई और फोन कट गया।

फोन कटते ही इन्द्र की चाल अचानक तेज हो गई। सांसे भी तेजी से दोड़ने लगीं। राजीव की तस्वीर इन्द्र की आँखों के आगे घूम रही थी। अपने नाम ही की तरह सुन्दर, नीली आँखें, लम्बा कद, बहुत ही होनहार नौजवान था राजीव। दिनभर कम्प्यूटर से चिपका नए-नए डिजाईन बनाता रहता था। शाम को थकान उतारने के लिए कभी-कभार इन्द्र के साथ एक-दो पैग भी लगा लेता था। कभी किसी के जन्मदिन तो कभी किसी और बहाने कॉकटेल पार्टी का जुगाड़ हो जाया करता था। पे-डे पर तो एन्जॉए करना मेंडेटरी था। धीरे-धीरे पीने-पिलाने के बहाने ढूंढना राजीव की आदत सी हो गई थी। पार्टी में खूब हंसी-मिजाक होता, इधर-उधर की बातें होतीं। कभी-कभार घर की बात भी एक-दूसरे से शेयर कर लिया करते थे।

एक दिन राजीव ने बताया उसे एक लड़की से प्यार हो गया है, जिसका नाम निशा है। फोन पर घंटों लम्बी-लम्बी बातें करता। बहुत खुश रहने लगा था वह। शाम को काम के बाद ऑफिस से निकलकर उसे मिलने चला जाता। पार्टी-वार्टी सब भूल चुका था। कुछ दिनों तक यही सिलसिला चलता रहा। फिर एक दिन अचानक शाम को आफिस से निकलते हुए राजीव ने इन्द्र से कहा ''यार! बहुत दिन हो गए, पार्टी नहीं की।'' इन्द्र हैरान था, इतने दिनों बाद अचानक पार्टी का खयाल कैसे आ गया। 'बार' में बैठे तो राजीव ने बताया ''यार! प्रोब्लम हो गई। लड़की मेरी कास्ट की नहीं है। मैं तो उसे अपनी जान से भी ज्यादा चाहता हूँ, मगर घरवाले नहीं मान रहे। यार! तुम तो जानते ही हो मेरी मम्मी कितनी कड़क है। मुझे घर से निकाल देने की धमकी दी है। लेकिन मैं निशा के बिना नहीं रह सकता। मुझे तो शादी करनी है तो बस निशा से।'' ''मैं जानता हूँ यार। तूने जो ठान लिया, तू करके ही रहेगा। घर वाले भी कब तक नाराज रहेंगे, आखिर मान ही जाएंगे'' कह कर इन्द्र ने उसे हौंसला दिया।

राजीव ने वही किया। माँ-बाप की मर्जी के बगैर शादी कर ली और शहर में चार मंजिला मकान होने के बावजूद किराए के कमरे में रहने लगा। धीरे-धीरे घर का सामान जोड़ने लगा। जिन्दगी तंगहाली में कट रही थी, मगर वह खुश था। पार्टी के लिए अब ना पैसा था और न ही वक्त। इन्द्र मिजाक करता ''अब यारों के लिए टाईम कहाँ'' तो वह हंस देता। ओवरटाईम लगाना और खूब पैसे कमाकर अपना अलग काम शुरु करना, रात-दिन बस



यही सपना देखता था राजीव। जल्दी ही उसका यह सपना सच भी हुआ। उसके पास अपना कम्प्यूटर तो था ही। माल रोड पर तीसरी मंजिल में कमरा लेकर उसने अपनी बुटीक शुरू कर दी। इस छोटे से शहर में भी अच्छा-खासा काम चल निकला था। अच्छी कमाई होने लगी थी उसकी। वह बहुत खुश था। अब तो इन्द्र से मुलाकात भी कभी-कभार ही होती थी।

करीब एक साल बाद एक दिन बाजार में मिला तो इन्द्र ने हालचाल पूछा। बहुत जल्दी में था। कहने लगा ''बहुत बिजी हूँ, यार। काम के सिलसिले में चण्डीगढ़ जा रहा हूँ।'' इन्द्र ने पूछा, ''भाभी कैसी है। कोई खुशखबरी है कि नहीं।'' ''नहीं यार। सोच रहा हूँ, निशा को बी.एड. करा लूं। एक प्राइवेट कॉलेज में एडमिशन करवा रहा हूँ। निशा बहुत टेलेंटेड है। फिर सारा दिन घर बैठ कर भी बोर हो जाती है बिचारी। कुछ काम करेगी तो चार पैसे कमाएगी'' इन्द्र ने जवाब दिया।

कई सालों तक यूं ही चलते-चलते मुलाकात होती। निशा ने अब बी.एड. कर ली थी। एक प्राइवेट स्कूल में पढ़ाने भी लगी थी, मगर वे अभी भी किराए के कमरे में ही रहते थे। अब उनके एक बेटा भी था। जिन्दगी ने फिर से रफतार पकड़ ली थी।

इन्द्र को पता ही नहीं चला कब वह घर पहुंच गया। राजीव के साथ गुजरा वक्त उसकी आँखों के सामने रह-रह कर घूम रहा था। उसने कपड़े बदले। स्कूटर स्टार्ट किया और किसी को कुछ बताए बिना राजीव के किराए के मकान की ओर चल पड़ा।

पिछली बार वह राजीव से कब मिला था, उसे याद ही नहीं था। कई साल हो गए, मैंने भी कई दिनों से उसके हालचाल पूछने की कोशिश नहीं की। जब कभी आखिरी बार मिला था, तो वह खुश नहीं दिख रहा था। कुछ करने की, आगे बढ़ने की चाह अब उसमें नहीं दिखती थी। न जाने किस परेशानी में होगा बेचारा, यह सब सोचता हुआ इन्द्र उसके घर जा पहुंचा।

दरवाजा खटखटाया। कोई बाहर नहीं आया। जोर से खटखटाया तो दरवाजा खुलने लगा। समझ में आया कि दरवाजा तो पहले से ही खुला था। धक्का दे भीतर गया तो देखा कमरे में चारों ओर धुंआ था। चारों तरफ शराब की बोतलें और सिगरेट के टोटे बिखरे पड़े थे। एक बोतल लुड़की पड़ी थी, जिसमें अभी कुछ शराब बाकी थी। किचन का दरवाजा खोला तो इन्द्र की आँखें फटी रह गईं। राजीव फर्श पर औंधे मुंह पड़ा था। वह डर गया। एक पल को तो उसे ऐसा लगा जैसे वह मर गया है। उसे उठाने को आगे बढ़ा। फिर यह सोच कर रुक गया कि कहीं वह सच में मर गया हो तो मैं तो बेवजह फंस जाउंगा। हो सकता है कि इसकी लास्ट कॉल भी मुझे ही आई हो। इसे हाथ लगाया तो फिंगर प्रिंट भी आ जाएंगे। डर के मारे वह दौड़कर बाहर आ गया।

सोचा पहले उसके घर फोन कर लूँ। फिर भीतर गया। टेबल से राजीव का मोबाइल उठाया। निशा का नम्बर ढूंढकर डायल किया। कोई रिस्पोंस नहीं। फिर अपने मोबाइल से नम्बर डायल किया। निशा ने फोन उठाया ''भाभी जी! मैं इन्द्र बोल रहा हूँ, राजीव का फ्रैंड। भाभी जी, राजीव ने बहुत शराब पी ली है। बेहोश पड़ा है।'' इन्द्र ने झट से सारी बात कही। ''इसमें कौन सी नई बात है। यह तो हर रोज की बात है'' निशा ने जवाब दिया। इन्द्र हैरान था, वह जानता था राजीव-निशा एक दूसरे से कितना प्यार करते थे और अब ये सब क्या हो गया। ना जाने कब क्या ऐसा हुआ कि राजीव को शराब की लत पड़ गई। उसने फिर कहा ''भाभी जी! वह मर जाएगा। आप जल्दी कीजिए। उसे अस्पताल ले चलते हैं, हो सकता है बच जाए। आप बस आ जाइए, प्लीज।'' ''ठीक है। मैं पहुंचती हूँ'' निशा ने इन्द्र के बार-बार कहने पर अनमनी सी हामी भरी।

इन्द्र हिम्मत करके फिर से किचन में गया। राजीव अभी भी फर्श पर वैसे ही पड़ा था। उसका सिर गोद में लिया। पानी की छींटे दिए और राजीव-राजीव कह कर उसे होश में लाने की कोशिश करने लगा। राजीव ने बड़ी मुश्किल से आँखें खोलीं और लड़खड़ाती आवाज में बोलने की कोशश की ''यार...! मुझे ब... चा लो। मैं मरना नहीं चाहता। प्लीज कुछ करो।'' ''हाँ, भाभी जी भी आ रही हैं। तुम्हें अभी अस्पताल ले चलते हैं। डरो मत, तुम ठीक हो जाओगे'' इन्द्र ने तसल्ली देने की कोशिश की। राजीव ने फिर आँखें खोली और कहा ''मैंने तीन दिन से कुछ नहीं खाया, बस शराब पी रहा हूँ। कुछ खाने को मिल जाता तो शायद...।'' इन्द्र ने राजीव को उठा कर बिस्तर पर लिटा दिया और कुछ खाने को लाने के लिए बाहर निकला।

अभी सड़क तक पहुंचा ही था कि एक ऑटो उसके पास आ कर रुका। आँखों पर काला चश्मा लगाए निशा उतरी। ऑटो वाले को पैसे दिए और इन्द्र के पास पहुंची। ''भाभी-जी, आप कहाँ थीं। राजीव अन्दर पड़ा है। इन्द्र ने उतावलेपन में एकदम सबकुछ कह

दिया। निशा रुकी, ''मैं अब यहाँ नहीं रहती। दो महीनों से मायके में रह रही हूँ'' कह कर मकान की सीढ़ियाँ चढ़ने लगी। इन्द्र के पाँव तले मानो जमीन खिसक गई हो। निशा की बेरुखी भरी आवाज में नाराजगी साफ झलक रही थी। इन्द्र समझ गया, जरूर कोई बड़ी बात हुई है। अपनी उल्झन छुपाते हुए उसने कहा ''भाभी, आप अन्दर चलो। मैं उसके खाने के लिए कुछ लेकर आता हूँ।'' निशा ने झट से बात काटते हुए कहा ''नहीं-नहीं, रहने दो। पहले अस्पताल ले चलते हैं। फिर जैसा डॉक्टर कहे, कर लेंगे।'' इन्द्र भी निशा के पीछे-पीछे सीढ़ियाँ चढ़ने लगा। सीढ़ियाँ चढ़ते हुए इन्द्र ने निशा से फिर पूछा ''भाभी जी! ऐसा क्या हो गया कि आप घर छोड़ कर चली गईं और राजीव ने पीना शुरु कर दिया।'' निशा हल्की सी रुकी। पीछे मुड़ कर इन्द्र की ओर देखा और ''मैं क्या बताऊं। मेरी कौन सुनता है। मैं तो समझा-समझा कर हार गई। 'राज' से ही पूछ लेना। वही जाने वो क्या चाहते हैं'' कह कर कमरे में घुस गई। पीछे-पीछे इन्द्र भी पहुंच गया।

निशा राजीव को प्यार से 'राज' पुकारती थी। राजीव इन्द्र से भी अक्सर यही कहता था कि मुझे 'राज' कह कर बुलाया करे। मगर आज राजीव की कहानी इन्द्र के लिए खुद एक राज बन चुकी थी। उसे समझ नहीं आ रहा था कि राजीव की शुखहाल जिन्दगी में ऐसा क्या हुआ कि वह अपनी ही जान का दुश्मन बन बैठा।

भीतर पहुंच कर निशा भावशून्य सी एक कोने में खड़ी हो गई। इन्द्र ने राज को कन्धे पर उठाया। सीढ़ियाँ उतर कर ऑटो में बिठाया। निशा भी आकर ऑटो में बैठ गई और ऑटो शहर के सरकारी अस्पताल की ओर चल पड़ा।

अस्पताल पहुंच कर इन्द्र स्ट्रैचर लाया और राजीव को स्ट्रैचर पर लिटा कर सीधे कैजुअल्टी में पहुंचाया। डॉक्टर आया, पूछा ''क्या हुआ है, इसे।'' इन्द्र ने जवाब दिया, ''डॉक्टर साहब शराब पीकर बेहोश है। प्लीज इसे बचा लीजिए।'' डॉक्टर ने पहले राजीव की एक आँ खोली, फिर दूसरी। उनमें टॉर्च की रोशनी डालकर पुतलियाँ देखीं और बोला, ''बहुत ज्यादा शराब पी ली है। बचना मुश्किल है। पहले लाते तो शायद बच जाता।'' इन्द्र को डॉक्टर की बात सुनकर बड़ा धक्का लगा। खुद को सम्भालते हुए उसने डॉक्टर से कहा ''डॉक्टर साहब! कुछ कीजिए। इसकी सांसे चल रही हैं। यह आँखें भी खोल रहा है। इसने अभी मुझसे बात भी की थी।'' ''बस-बस। इतनी चिन्ता है तो शराब पीने ही क्यों दी इसे। समझा नहीं सकते। अब लेकर आए हो मरने के लिए'' कहते हुए डॉक्टर ने इन्द्र को डांट पिला दी। ''इसे ड्रिप लगाओ'' पास खड़ी नर्स से कहते हुए डॉक्टर ने एक पर्ची पर ड्रिप का सामान और कुछ इंजेक्शन लिखे और पर्ची इन्द्र को थमा दी। निशा दूर खड़ी यह सब देख रही थी। मालूम होता था उसे पहले से पता था कि राजीव की हालत देखकर डॉक्टर इसी तरह पेश आएंगे। शायद पहले भी उसे इस हालत में अस्पताल ला चुकी थी।

इन्द्र चुपचाप पर्ची पर लिखा सामान लाने बाहर चला गया। उसे राजीव की हालत पर बड़ा तरस आ रहा था। साथ ही निशा के बर्ताव पर गुस्सा भी आ रहा था और दया भी। पता नहीं किन हालात से गुजर रही होगी बेचारी। इलाज के लिए पैसे भी होंगे या नहीं। कभी राजीव को कोसता, तो कभी खुद को। मैंने भी सुध नहीं ली कई सालों से इनकी। वह समझ नहीं पा रहा था कि राजीव को आखिर क्या गम सता रहा था कि वह नशे के चंगुल में फंस गया? ऐसा क्या हुआ कि जान से भी ज्यादा प्यारी निशा ने भी राजीव से मुंह मोड़ लिया? यही सब सोचते-सोचते उसने सामान लिया, पैसे दिए और वापिस लौट आया।

इन्द्र हिम्मत करके फिर से किचन में गया। राजीव अभी भी फर्श पर वैसे ही पड़ा था। उसका सिर गोद में लिया। पानी की छींटे दिए और राजीव-राजीव कह कर उसे होश में लाने की कोशिश करने लगा। राजीव ने बड़ी मुश्किल से आँखें खोलीं और लड़खड़ाती आवाज में बोलने की कोशश की।

कैजुअल्टी में पहुंचा तो उसने देखा कि राजीव की हालत बहुत खराब हो चुकी थी। वह सांस लेने के लिए छटपटा रहा था। इन्द्र दौड़ कर उसके पास पहुंचा। राजीव का सिर अपनी गोद में लिया और जोर-जोर से ''डॉक्टर-डॉक्टर'' चिलाने लगा ''पेशेंट को ऑक्सीजन दो।'' निशा भी, जो अभी तक कोने में बुत बनी खड़ी थी अब राजीव के पास आकर बैठ गई। उसकी छाती की मालिश करने लगी। शायद उसे अन्दाजा ही नहीं था कि राजीव की हालत इतनी खराब हो चुकी थी। निशा जैसे गहरी नींद से जाग गई हो। उसे समझ में आ गया था कि अब राजीव के पास वक्त बहुत कम है। उसकी छटपटाहट और पछतावे के आँसुओं से स्पष्ट था कि वह राजीव से कितना प्यार करती थी। एक नर्स ऑक्सीजन लगाने लगी। मगर अब तक बहुत देर हो चुकी थी। राजीव जिन्दगी से हार चुका था। उसकी सांसों की रफ्तार धीमी होने लगी थी। वह दोस्त की गोद में पड़ा फटी आँखों से इन्द्र को आखिरी बार देख रहा था। राजीव का संघर्ष ज्यादा देर नहीं चला। थोड़ी देर में उसकी सांसे रुक गईं। इन्द्र ने अपने हाथ से राजीव की पलकें बंद कीं। निशा फूट-फूट कर रोने लगी। पागलों की तरह फर्श पर लेट गई। हंसते-खेलते परिवार को न जाने किसकी नजर लग गई थी? यह राज भी 'राज' की मौत के साथ ही सदा-सदा के लिए दफन हो गया था।

वशिष्ठ निवास, शिवनगर, टुटू, शिमला-171 011

कविता

सभ्यता

● रमेश शर्मा



सभ्यता का नया रास्ता नापते
गढ़ते हुए विकास की नई परिभाषा
रिश्ते मिट चुके कब से
कब की थक चुकी आंखें
एक अरसा हो चुका
दिल में महसूसे उन्हें!

इतिहास के जर्द पन्नों में
मद्धिम पड़े अक्षरों पर मृत
उन रिश्तों के ऊपर समय की धूल जम गई जैसे!

बांचने अब वे नहीं बुलाते
उनके ऊपर पसरा है अंधेरा
आंखों की पहुंच से बाहर हो चुके उन अक्षरों में
नहीं बची गंध रिश्तों की जैसे!
नहीं बचा कोई जज्बा
कि उनका पाठ करता कोई दिखे कहीं।

सीख लिया जीना
जबसे उनके बिना
जमी पड़ी धूल समय की
और रास्तों पर पसरा अंधेरा
नहीं डराता हमें
नहीं डराते गूंगे अक्षर!

हमें कर दिया इतना स्वतंत्र
भीतर के मर चुके डर ने
कि उनके रहते जीवन में
जैसे जीने का कोई आनंद नहीं था!

जैसे माया पर जीत दर्ज कर ली हमने
बिना पढ़े गीता
और गढ़ लिया कोई नया ग्रंथ
हमने कोई नई सिद्धी प्राप्त कर ली जैसे!

सिद्धी ऐसी
कि बुद्ध और महावीर से अलग
जो जोड़ती नहीं दिलों को
चलकर घृणा और तिरस्कार के रास्ते
जो गढ़ती एक नई सभ्यता
जहां उन्माद बरसता है
हिंसा मारती कुलांचे जहां
जहां रोज नए सपनों के फूलों का हार
पहनाती राजनीति
न जाने किस दुनिया में ले जाती हमें
प्रेम और भाईचारे की लाश की सवारी
क्यों अच्छी लगने लगी जहां
कि हम सरपट भागने लगे उस तरफ
और न जाने किस सभ्यता के मुगालते में जीने लगे हैं
सब कुछ खत्म हो जाने की राह पर चलते हुए भी
न जाने अचानक
क्यों लगने लगा हमें?
कि ऐसी सभ्यताएं
जीवन के सबसे अच्छे दिनों की ओर हमें ले जा रही हैं!

गायत्री मंदिर के पीछे, बोईरदादर, रायगढ़,
छत्तीसगढ़-4960001, मो. 97526 85148

समीक्षा

चिंतन और सिद्धांत की कविताएं 'जय होने तक'

● डॉ. रमेश सोबती

पंजाब के वरिष्ठ हिंदी कवि कुलभूषण कालड़ा के सद्य प्रकाशित काव्य संकलन 'जय होने तक' में यह निष्कर्ष निकालना बहुत बड़ी भूल होगी कि छायावादी कविता वायवीय है और प्रगतिशील कविता ठोस जमीन की। अंतर तो कुछ ही है। वैसे विद्वानों का मानना है कि छायावादी कविता की प्रेरणा का एक ऐतिहासिक-सांस्कृतिक जीवन स्वप्न होता है तो दूसरी ओर प्रगतिशील कविता उस राजनीतिक, आर्थिक तथा सामाजिक वास्तविकता से जन्म लेती है जो हमारा जीवन यथार्थ है। कालड़ा जी की ये संकलित कविताएं विवेक की कविताएं हैं और शास्त्रांध भी हैं। कालड़ा के लिए मनुष्य तथा समाज के प्रति उनकी दृष्टि मायने रखती है और वह उसे एक ऐसी वस्तु मानते हैं जिसमें चिंतन और सिद्धांत अनुस्यूत होकर सीत्कार करते हैं। उसकी कविताओं में भारतीय संस्कृति तथा प्रगतिशीलता का जो खमीर मखरीद खास बना हुआ है। पाठकों के ज़हन पर पुरअसर तासकात छोड़ता है यथा : 'परिस्थितियां व विवशताएं/ बदल देती हैं/ उनके अर्थ जीवन के इन्हीं/ बदलते अर्थों ने/ अब तक/ खूब छला है मुझे/ मैं तो छला गया हूं/ उन रिश्तों से भी/ जिन्हें निभाने हेतु/ मैं खोता रहा/ निरंतर/ अपने जीवन का बसंत। (पृ. 24)

कविता संग्रह : 'जय होने तक'
लेखक : कुलभूषण कालड़ा
अयन प्रकाशन, महरौली, नई दिल्ली,
पृष्ठ 100, मूल्य : 220 रुपये

कालड़ा की कविताओं का आयाम बहुत बड़ा है, जो कई आधुनिक परिस्थितियों को छानबीन कर संजोता है जो पर्सनल एस्से की आक्सीजन के सहारे विचार और सौंदर्य के सीप और मोती नहीं ऐसा पदार्थ निकालता है जिससे पूरा इन्वायरिनमेंट जगमगा उठता है। भारतीय सौंदर्यशास्त्र में दो अर्थ- छवियां मौजूद हैं, एक वस्तु दूसरा रूप। एक वरिष्ठ कवि ने इस विषय पर बार-बार अपनी कविताओं में भरपूर अभिव्यक्ति दी। प्रश्न यह है कि वस्तु और रूप का सम्बंध क्या कविताओं तक सीमित है, क्या उसका लेना-देना केवल पद्य में है, गद्य में नहीं? कालड़ा केवल कवि ही नहीं, गद्यकार भी हैं यानी कहानी लेखक। उपन्यासकार भी। 'धुंधली भोर', 'पीड़ा का सुख' (उपन्यास) तथा 'पल पल का जीवन', 'घर का बरगद' (कहानी संग्रह) आदि गद्य रचनाएं। इनकी प्रस्तुति, इनके रूप और वस्तु पर ही बल दिया गया है। ये रचनाएं व्यंजक भी हैं लाक्षणिक भी। जो कविताएं इस संकलन में हैं वे आधुनिक कवि की चेतना के बल खाते रास्तों से होकर विकसित हुई प्रतीत हो रही हैं। मानसिक उलझने हैं। यह आम तौर पर सभी कवियों में हैं और यह चेतना भटकाव पैदा करती है। इसकी जड़ तक जाएंगे तो तार सप्तक और दूसरे सप्तक के सभी कवि इसकी जद में आ जाएंगे। कविता की ठंडी सांसें हों या गर्म सांसें, मौसम का साक्षात्कार कराती हैं। सांसों का पतलापन कभी धुंध बनता है, कभी अदृश्य होता है लेकिन उसका लचीला अहसास आदमी के भीतर का आकाश भिगो देता है तब कालड़ा की कविता लय में गुनगुनाती है एक पहाड़ी झरने की तरह स्वच्छ और निर्मल। प्रौढ़ कविता उम्र के गंभीर कैनवास में। जीवन की गुहांधकारों में पनपी कविता सीधी और स्पष्ट है, उसका अवसाद दर्द में डूबा हुआ है और गहरी मानवीय करुणा तथा जीवन-जगत की विषमताओं और विडंबनाओं का तीखा त्रासद दंश स्पष्ट दिखाई देता है। 'कौन लिखेगा इतिहास/ उन/ अज्ञात देशभक्तों का/ जिन्होंने/ स्वतंत्रता संग्राम में/ विदेशी साम्राज्य से/ टक्कर लेते हुए/ बहा दी। अपने लहू की/ हर एक बूंद?/ इतिहास के पन्नों में/ आखिर/ कौन दर्ज करेगा/ उन गुमनाम वीरों का/ इतिहास?' (पृष्ठ 30)

कालड़ा की कुछ कविताओं में विशिष्ट भाव-प्रसंगों का जो दिग्दर्शन होता है उनकी अभिव्यक्ति अकल्पनीय तो होती ही है प्रसंगानुकूल टाइम तथा स्पेस की दूरी का आकर्षण बहुत प्रभावित करता है। सच कहूं तो यह कला की शक्ति है। स्वरपंखी कोमल सहज कविता उनकी भावाभिव्यक्ति को दीप्त करती है- 'मां/ ईश्वर का दूसरा/ रूप, मां/ देवताओं की शक्तिरूपा/ आराध्या, मां/ सृष्टि के सर्जन का/ गौरव, मां/ संसार के सम्पूर्ण/ सम्बंधों का आधार, मां/ चेतना भाषा, संस्कार/ संस्कृति व मर्यादा की/ पाठशाला आदि। (पृष्ठ 46) आशय यह कि कालड़ा की कविता को पढ़कर पाठक एकदम मंत्रमुग्ध हो जाता है और अर्थ की प्रतीति का आभास नहीं होता। कविता में उतरते जाते हैं। मन झनझना उठता है। इस स्थापत्य में 'मौन' अनवरत शब्द अपने अर्थ से परे उजास से भर जाते हैं- 'अपनी हर पराजय/ के बीच/ पहचानने लगा हूं/ हर छल का चेहरा/ अब पुनः बनने लगे हैं सही अर्थों वाले/ शब्दों के नए आदर्श/ उगने लगे हैं नए नए सपनों के बीज।' (पृ. 25)

एन.आर.आई. एवेन्यू, सुखचैन रोड, फगवाड़ा, पंजाब-144401, मो. 98153 85535

समीक्षा

ओस में भीगी शहनाज़ की कविताएं

● अहद 'प्रकाश'

नागार्जुन की कविता जिस बोलचाल की भाषा में संवाद करती है, उद्वेलित करती है और सवाल उठाती है वैसी ही अभिव्यक्ति शहनाज़ इमरानी की कविता में प्रस्फुटित होती है। इसमें हमारे समय की बेचैनियां विसंगतियां और कराहें साफ-साफ देखी जा सकती हैं। उनकी कविताएं झकझोरती हैं, आंदोलित करती हैं और साफ़गोई से अपने पाठकों से वार्तालाप करती हैं।

देशवासियों को खाना नसीब नहीं/ और वे पार्टी के बाद का खाना/ ट्रकों में भरकर फेंकते हैं।

मेरे देश में प्रजा तो पीछे रह गई/ और तंत्र बुलेटप्रूफ कारों में/ आगे निकल गया है।

छोटे बच्चे अब भी नंगे हैं/ छुपकर अकसर बर्तन चाट लेते हैं।

दृश्य के बाहर : शहनाज़ इमरानी
प्रकाशक : दख़्ल प्रकाशन, दिल्ली–12
मूल्य पेपर बैक : 100 रुपये

एक ऐसा समय जब हमने पाठक और श्रोता दोनों खोए हैं। लोग छंद और काफिए को कविता की सम्मोहकता से जोड़ते हुए दिमागों की गुदगुदी को साहित्य मानते हों, वहां वैचारिकता की संपन्नता क्या अर्थ रख सकती है लेकिन यह भी सच है कि हमने राजेश जोशी, विष्णुखरे, विनोद कुमार शुक्ल, केदारनाथ सिंह, खगेन्द्र ठाकुर और नरेश सक्सेना को भी बड़े ध्यान से पढ़ा और सुना है। इसी बेशकीमत शृंखला में शहनाज़ इमरानी अपनी कविताओं के माध्यम से आकर्षित करती हैं।

इस संकलन में उनकी कविताएं संग्रहित हैं। उनकी इन धारदार कविताओं में एक निरंतर खोजी और अन्वेषक दृष्टि देखी जा सकती है जो कहीं-न-कहीं हमको विचलित कर देती है। नए समाज की खूबसूरत परिकल्पना से सराबोर उनकी वैचारिकता सिर्फ आक्रोश, करुणा और स्मृतियों से ही हमें रू-ब-रू नहीं कराती अपितु एक खूबसूरत सुबह की उम्मीद भी जगाती हैं।

सड़कें भागते कदमों से थक कर/ आहटें बन जाती हैं। क़त्लगाह बन गया है शहर और वे मेहफ़ूज़ जगहों पर बैठे कहते हैं स्थिति नियंत्रण में है।

कितना आसान है आगे बढ़ना/ अगर सामने रास्ते हैं/ मगर रास्ते सबके लिए कहां होते हैं।

गटर से पानी उबल रहा है। लोग उस पानी में चल रहे हैं/ कितने घरों में न तो रोशनी है और न रोटी/ घर में टी.वी. चल रहा है/ बाढ़ की चपेट में कई शहर आ गए हैं।

कुछ कविताएं कुछ इस अंदाज से आंदोलित करती हैं जिन्हें पढ़कर सिहरन सी होने लगती है लेकिन हमारा बेहिस समाज और सरकारें किस सभ्य समाज की परिकल्पना करती हैं?

सरकार ने कई योजनाएं बनाई हैं/ और एन.जी.ओ. वाले कंडोम बांटकर/ मदद करते हैं/ एक नाम भी मिला है/ सेक्स वर्कर्स/ आखरी समाज की/ सभ्यता बनाए रखने के लिए/ तुम्हारी जरूरत है।

सवालों के इर्दगिर्द कविता किस कदर पशोपेश में समय को देखती और आंकती है, शहनाज़ का यह टुकड़ा देखिएगा।

सवाल जो कभी खत्म नहीं होते/ हर आदमी अपने/ सवालों के बोझ से दबा हुआ है/ रोज़ बदलती है तारीखें/ बदलती हैं शताब्दियां/ नहीं बदलते हैं सवाल/ नहीं मिलते हैं जवाब!

शहनाज इमरानी अपनी कविता के माध्यम से अनेक प्रश्न उठाती हैं- उनकी आंसुओं से भीगी ताजा लहू में डूबी कविता अपने अंदर तक सुखद अनुभूति भी छिपाए लगती है। दिन की हथेली पर से उड़ जाएगी ओस/ पर चमकती रहेगी मेरे अलफ़ाज में हमेशा।

शहनाज़ इमरानी भोपाल के एक स्कूल में अध्यापन करती हैं। देश की अनेक पत्र-पत्रिकाओं में लिखती हैं। कविता के लिए पहला रोचना विश्वकीर्ति कृति और पुरस्कार से नवाजी गई है।

एम.आई.जी. 984, अपार्टमेंट, भोपाल, मध्य प्रदेश
मो. 93294 12531

ISSN : 2454-972X

हिमप्रस्थ

वर्ष : 60 नवम्बर, 2015 अंक : 8

प्रधान सम्पादक
डॉ. एम.पी. सूद

वरिष्ठ सम्पादक
यादविन्दर सिंह चौहान

सम्पादक
वेद प्रकाश

कम्पोजिंग एवं पृष्ठ सज्जा : अश्वनी

सम्पादकीय कार्यालयः हि. प्र. प्रिंटिंग प्रेस परिसर, घोड़ा चौकी, शिमला-5

वार्षिक शुल्क : 150 रुपये, एक प्रति : 15 रुपये

E-Mail : himprasthahp@gmail.com
Tell: 0177 2633145, 2830374

ज्ञान सागर

अपनी सफलता में किस्मत को जो बिलकुल नहीं मानते, वे अपने आपसे मजाक कर रहे हैं।

– लैरी किंग

इस अंक में

लेख

अपनी बात

किसी भी देश की उन्नति एवं प्रगति में वहां की संस्कृति का महत्त्वपूर्ण योगदान रहता है। सभ्य समाज की बुनियाद इन्हीं सांस्कृतिक मूल्यों पर टिकी होती है और यही समृद्ध धरोहर वह तत्त्व है जो राष्ट्र विशेष को अन्य देशों से अलग करते हुए उसे एक विशिष्ट पहचान दिलाता है। भारतवर्ष विश्व का एक ऐसा देश है जो आदिकाल से ही सांस्कृतिक गतिविधियों एवं समृद्ध परंपराओं का केंद्र रहा है। समूचे विश्व की समग्र सभ्यताएं जब प्रगति के शैशवकाल में विचरण कर रही थीं, तब पुरातन भारतीय समाज के ऋषि-मुनियों, विद्वानों एवं चिंतकों ने सामाजिक- सांस्कृतिक-शैक्षणिक विशेषकर धार्मिक-आध्यात्मिक क्षेत्रों में अनुकरणीय उपलब्धियां हासिल कर पूरे विश्व को एक नई राह दिखलाई। यह वही दौर था जब तमाम विश्व विद्वानों और मनीषियों ने भारतीय संस्कृति का गहन अध्ययन कर इसकी महिमा को अपने देशों तक फैलाया। भारतीय संस्कृति की इसी विशेषता का परिणाम था कि समय-समय पर विदेशी आक्रमणकारियों द्वारा हमारी सरजमीं और संस्कृति पर बार-बार हमलों के बावजूद भारतीय संस्कृति ने अपने मौलिक स्वरूप को न केवल अक्षुण्ण बनाए रखा बल्कि विदेशी संस्कृति की अच्छाइयों को भी आत्मसात किया। हमारी संस्कृति की इन्हीं विशेषताओं का प्रतिफल था कि हमें विश्व-गुरु का गौरव प्राप्त हुआ। समाज की विविध संस्कृति के इंद्रधनुष मेले एवं त्योहार, हमारी समृद्ध संस्कृति के परिचायक, संवाहक और संरक्षक है। ये हमारी अनूठी संस्कृति की ऐसी धरोहर है जो सदियों से पीढ़ी-दर-पीढ़ी अपनी सार्थकता को पुष्ट करते हुए आधुनिक दौर में भी उतने ही प्रासंगिक है। देवभूमि के नाम से विख्यात हिमाचल प्रदेश को तो वैसे भी मेले एवं त्योहारों की भूमि कहा जाता है। अपनी समृद्ध सांस्कृतिक, ऐतिहासिक, धार्मिक एवं अनूठी पारंपरिक धरोहर के लिए प्रसिद्ध इस पहाड़ी प्रदेश में मेलों एवं त्योहारों के आयोजन का सिलसिला वर्षभर चला रहता है। प्रदेश में अपार श्रद्धा एवं पारंपरिक तौर-तरीकों से मनाए जाने वाले मंडी शिवरात्रि, चंबा मिंजर, कुल्लू दशहरा तथा रेणुका महोत्सव जैसे अंतरराष्ट्रीय त्योहारों में प्रदेश की अनूठी देव संस्कृति के जीवंत स्वरूप को साक्षात् देखा जा सकता है। शिमला जिले के रामपुर में आयोजित होने वाला लवी मेला उत्तर भारत का एकमात्र पारंपरिक मेला है जो प्रत्यक्ष रूप में आर्थिकी से जुड़ा है और इसे पुरातन अंतरराष्ट्रीय व्यापारिक संबंधों के प्रतीक के रूप भी जाना जाता है। इस वर्ष आयोजित कुल्लू दशहरा महोत्सव में अनेक नए रिकार्ड बने। कुल्लू में 12 हजार महिलाओं द्वारा 'बेटी बचाओ' अभियान के तहत नृत्य, सौ फुट ऊंचे तिरंगे का ध्वजारोहण सहित संस्कृति सदन का लोकार्पण प्रमुख रहे। महोत्सव के दौरान लाखों लोगों की उपस्थिति ने राज्य की समृद्ध संस्कृति का परिचय देश-दुनिया को करवाया। दशहरा एवं दिवाली भारतीय जनमानस के सर्वाधिक लोकप्रिय पर्व है। रोशनी के पर्व दिवाली अज्ञान पर ज्ञान तथा अन्याय पर न्याय की विजय के प्रतीक के रूप में हर वर्ष हर्षोल्लास के साथ मनाते हैं। यह एक ऐसा पर्व है जो न केवल पूरे राष्ट्र को सांस्कृतिक रूप से एक सूत्र में पिरोता है, बल्कि यह हमारी भारतीयता की भावना से गहरे तक जुड़ा है। प्रस्तुत अंक में नियमित सामग्री के साथ-साथ दिवाली पर विशेष सामग्री जुटाई गई है।

–संपादक

आलेख

लाहुल : लोक और लोकधारा

गतांक में आपने इस लेख में लाहुल के इतिहास, रहन–सहन और विविधा पहलुओं के बारे में विस्तार से पढ़ा। प्रस्तुत अंक में लाहुल की सामाजिक व्यवस्था, रीति–रिवाज तथा सांस्कृतिक उपादेय पर प्रकाश डाल रहे हैं **तुलसी रमण**।

लाहुल का समाज परम्परा से पितृसत्तात्मक रहा है। इसमें पुत्र-जन्म के अवसर पर प्रसूता की माँ, बहन या भाई 'शागुण' (मंगल रस्म) का निर्वाह करते हैं। इस शागुण के रूप में वे लोग एक बोतल में सरा या अरक और बालक तथा उसकी माँ के लिए नए वस्त्र लेकर आते हैं। इसके साथ ही गाँव की स्त्रियाँ भी बधाई के रूप में अपने घरों से छंग, सत्तू तथा मक्खन लेकर आती हैं। पुत्र-जन्म की खुशी में तो लाहुल के कुछ स्थानों में 'गोची' उत्सव भी मनाया जाता है, जिसमें क्षेत्र की पुत्रवती स्त्रियाँ एक साथ भाग लेती हैं। पुत्र के मुंडन तथा केश विसर्जन के लिए भी कुछ विधि-विधान परम्परा से चले आ रहे हैं।

लाहुल में बहुपति, बहुपत्नी तथा एक पति ये तीनों तरह की विवाह प्रथाएँ पायी जाती हैं। इनमें बहुपति प्रथा मुख्यतया बौद्धों में प्रचलित रही है और बहुपत्नी की प्रथा दलितों में देखी जाती है। लेकिन ये सारी बातें अतीत की हैं। वर्तमान में लाहुल में भी प्रदेश के अन्य भागों की तरह एकल विवाह होने लगे हैं। लाहुल की घाटियों में विवाह की पारम्परिक रस्में तीन तरह की हैं 1. मोड़े ब्या, 2. बाड़े ब्या और 3. कूज़ा ब्या।

मोड़े ब्या में वर की ओर से कन्या के घर को बारात जाती है और यह विवाह मंगनी की रस्म के बाद पूरी विधि से होता है। यह लाहुल का सबसे बड़ा विवाह संस्कार माना जाता है। इस विवाह में मंगनी से लेकर विवाह सम्पन्न होने तक वर के मामा की भूमिका प्रमुख रहती है। मामा अरक की बोतल लेकर कन्या के माता-पिता के घर जाता है और भानजे के लिए रिश्ता पक्का करके आता है।

पट्टन घाटी के **बाड़े ब्या** में वधु को लेने के लिए बारात नहीं जाती। इसमें मंगनी मोड़े ब्या की तरह ही होती है। बारात की बजाय वर का सिरदार (प्रतिनिधि) तथा वर की बहन दुल्हन लेने के लिए जाते हैं। 'सिरदार' के रूप में वर का चाचा या मामा होता है। दुल्हन जब वर के गाँव पहुँचती है तो वर तथा दुल्हन का धर्म-भाई उसकी अगवानी के लिए गाँव के बाहर तक निकल आते हैं। उसके बाद वधु के स्वागत में 'शागुण' आदि की परम्परागत रस्में होती हैं। बाड़े ब्या में कम व्यय होता है। इसलिए आर्थिक दृष्टि से सीमित साधनों वाले लोग बाड़े ब्या ही करवाते हैं। जबकि आर्थिक दृष्टि से समृद्ध लोग मोड़े ब्या करवाकर अपनी सम्पन्नता भी प्रदर्शित करते हैं।

कूज़ा ब्या लाहुल की सबसे प्राचीन विवाह रस्म है। कूज़ा या कुनमई का अर्थ 'चोरी करके' होता है। इसलिए यह विवाह चौर्य विवाह कहा जाएगा। विवाह की यह रस्म लाहुल की सभी घाटियों में प्रचलित रही है। लाहुल में युवक-युवतियों को परस्पर मिलने की परम्परा से छूट रहती है। इस प्रक्रिया में लड़के और लड़की में प्रेम हो जाए तो लड़का लड़की को अपने मित्र या किसी रिश्तेदार के माध्यम से अंगूठी आदि कोई चीज़ उपहार में देता है, जिसे 'ञा' कहते हैं। लड़के और लड़की के माँ-बाप को भी इस मेल-मिलाप के बारे में मालूम रहता है। लेकिन वे अनजान बने रहते हैं। उसके बाद युवक और युवती एक ऐसा स्थान तय करते हैं, जहाँ से युवक उसे अपने साथियों की मदद से उठा-भगाकर अपने घर ले जाता है। युवक के घर में नववधु का स्वागत होता है और उसके कुछ दिनों बाद लड़के का मामा अरक की बोतल लेकर लड़की के माँ-बाप को मनाने जाता है। लड़की के माता-पिता पहले बहुत बुरा मानते हैं और आसानी से अपनी सहमति नहीं देते। ऐसा दर्शाते हैं कि उन्हें तो बाकायदा मोड़े ब्या ही करवाना था। लेकिन मन ही मन इस बात से भी प्रसन्न होते हैं कि बिना व्यय के लड़की का विवाह हो गया।

लाहुल में विवाह का सबसे पारम्परिक रूप कूज़ा ब्या ही रहा है। असल में पहले अपहरण करके ही विवाह किया जाता था। लेकिन कालांतर में अपहरण की प्रक्रिया ढोंग ही रह गई और व्यय से बचने के लिए इस तरह के चौर्य विवाह सुनियोजित रूप से होने लगे।

ऊपरी लाहुल में चौर्य विवाह को **कुनमयी** कहते हैं। यह उन क्षेत्रों की पुरानी प्रचलित विवाह प्रथा रही है। इसके अतिरिक्त मोड़े विवाह भी इन बौद्ध-बहुल क्षेत्रों में होता है। लेकिन ब्या का तीसरा प्रकार बाड़े ब्या पट्टन के मिश्रित समाज में ही प्रचलन में है। इस विवाह को लघु विवाह कह सकते हैं।

लाहुल में विवाह सम्बन्ध को लेकर हर दृष्टि से व्यावहारिक दृष्टिकोण रहता है। यहाँ के समाज में किसी भी तरह का विवाह सम्बन्ध अपरिवर्तनीय नहीं कहा जा सकता। कूज़ा ब्या में स्वेच्छा से साथी चुनते हैं तो इतनी ही सरलता से विच्छेद भी हो सकता है। यहाँ विवाह जन्म-जन्मान्तर का बंधन नहीं, इसलिए पुनर्विवाह का चलन भी समाज में मान्यता प्राप्त है। हमारे देश में विधवा विवाह को अनेक क्षेत्रों में परम्परा से मान्यता प्राप्त नहीं रही। लेकिन यहां लाहुल के समाज में विधवा तथा परित्यक्ता के विवाह को भी वैसा ही सम्मान प्राप्त है, जैसा कुँआरी लड़की के विवाह का होता है। इस दृष्टि से लाहुल की विवाह प्रथाएँ समाज में स्त्री को पूरा सम्मान और बराबरी की मान्यता प्रदान करती हैं।

बहुपति प्रथा

हिमालय के विभिन्न क्षेत्रों में बहुपति प्रथा तथा बहुपत्नी प्रथा का प्रचलन परम्परा से रहा है। इनमें बहुपति प्रथा विशेष रूप से चर्चा में रही है। हिमाचल प्रदेश के लाहुल तथा किन्नौर आदि जनजातीय क्षेत्रों में बहुपति प्रथा का चलन तिब्बत के अनुकरण में हुआ प्रतीत होता है। जनजातीय समाज में संयुक्त परिवार को बनाए रखने के लिए प्राचीन काल से बहुपति प्रथा का चलन रहा है। इस प्रथा के तहत पत्नी, भूमि और पशुधन पर सभी भाइयों का बराबर अधिकार रहता है। इस तरह की अविभाज्यता से लोगों का पीढ़ी-दर-पीढ़ी एक ही घर में रहना संभव होता है, भले ही एक परिवार के दो-तीन दर्जन तक सदस्य हो जाते हैं। अपवाद स्वरूप यहाँ कुछ परिवारों के सौ के आस-पास भी सदस्य होते रहे हैं।

पत्नी, भूमि तथा पशु-धन पर भले ही समान अधिकार कहा जाए, लेकिन पितृसत्तात्मक समाज की इस पुरानी प्रथा में सबसे बड़े भाई का मान-सम्मान और अधिकार अधिक होता है, क्योंकि विवाह सबसे पहले उसी का होता है, बाकी छोटे भाई उसकी पत्नी को ही पत्नी रूप में मान लेते हैं। बहुपति प्रथा में घर-गृहस्थी की सत्ता पर पत्नी का एकछत्र अधिकार रहता है, क्योंकि पुरुष बाहरी कामों में ही व्यस्त रहते हैं। उस एक पत्नी की इच्छा के विरुद्ध कोई भी भाई अलग विवाह नहीं कर सकता। कोई ऐसा कदम उठा भी ले तो उसके नाम पर पहले से पंजीकृत संयुक्त परिवार के बच्चों का पालन-पोषण भी उसी को करना पड़ता है और पैतृक सम्पत्ति में भी उन बच्चों का हक रहता है। बहुपति प्रथा में संतान पर सभी भाइयों का समान अधिकार होता है। लेकिन व्यवहार की सुविधा के लिए संतानों को भाइयों के आयु क्रम में बाँट दिया जाता है। इसके अतिरिक्त पत्नी के कथनानुसार भी संतान का पितृत्व निर्धारित होता है।

लाहुल में सगोत्र विवाह का सभी जातियों में निषेध है। इस क्षेत्र में दलितों तथा बौद्धों के परम्परा से गोत्र निश्चित हैं और स्वांगला के गोत्र समस्त भारत के ब्राह्मण समाज की तरह होते हैं। बौद्धों में विवाह के लिए पितृकुल का परिहार किया जाता है, लेकिन मातृकुल का नहीं। मामा तथा बुआ की बेटी से विवाह हो सकता है, लेकिन मौसी की बेटी से नहीं। इन्हीं प्रथाओं के आधार पर स्थानीय बोली में मामा तथा ससुर के लिए एक ही शब्द 'अजंग' तथा बुआ, मामी और सास के लिए भी एक ही शब्द 'अने' प्रचलन में है। दलितों में चाण जाति के लोग लोहारों के साथ विवाह सम्बन्ध नहीं रखते। इसलिए इन दोनों जातियों के विवाह अपनी ही जाति में होते हैं। स्वांगला में अंतर्जातीय विवाह मान्य नहीं है, जबकि ऐसा सम्बन्ध हो जाने पर बौद्ध उदार पाए जाते हैं।

बहुपति विवाह वाले परिवार में ज्येष्ठ भ्राता का अधिकार सर्वोपरि रहता है और वही परिवार का मुखिया होता है। शेष छोटे भाई उसके अधीनस्थ रहते हैं। इस प्रथा में कई बार सामान्य संस्कृति के प्रतिकूल विलक्षण स्थितियाँ भी बनती हैं। आयु में अधिक अंतर होने पर भी छोटे भाई को बड़ी उम्र की स्त्री को पत्नी के रूप में स्वीकार करना पड़ता है। ऐसी ही एक घटना का उल्लेख एम.एस. गिल ने अपनी पुस्तक में किया है गुमरंग के तेनज़िन का भाई बड़ी उम्र का था, जिसने विवाह किया था। तेनज़िन ने शिशु अवस्था में रहते हुए बड़े भाई की पत्नी का स्तनपान भी किया था। लेकिन जब वह बड़ा हुआ तो बहुपति प्रथा के तहत उसी का पति बन गया और उससे उसके बच्चे भी पैदा हुए।[4]

बहुपति प्रथा के पक्ष में यह दलील दी जाती रही है कि दो या इससे अधिक भाइयों की अलग-अलग पत्नियों का अपने परिवारों सहित एक छत के नीचे रहना संभव नहीं हो पाता और न ही अलग-अलग परिवार बसाने के लिए पर्याप्त भूमि उपलब्ध रहती है। इसलिए दो या अधिक भाई एक पत्नी के साथ संयुक्त परिवार में विभाजन के बिना रह सकते हैं। अब यहाँ यह प्रथा लगभग समाप्त होने के कगार पर है। लेकिन लाहुल के बुज़ुर्गों के अनुसार यह आज भी व्यावहारिक दृष्टि से सकारात्मक है। छेरिंग दोरजे के अनुसार लाहुली समाज में अभी तक इस प्रथा का करीब दस प्रतिशत प्रभाव बना हुआ है, क्योंकि पुरानी पीढ़ी के विवाह बहुपति प्रथा के अनुसार हुए हैं।

बहुपति प्रथा के कई नकारात्मक पहलू हैं। इस प्रथा के कारण अनेक युवतियाँ समाज में अविवाहित रह जाती हैं, जिन्हें घुटन-भरा जीवन व्यतीत करना पड़ता है। समाज में उन्हें सम्मान भी नहीं मिल पाता। बल्कि वे दयनीय स्थिति में रहती हैं। इनमें से अनेक युवतियाँ बौद्ध भिक्षुणियाँ बन जाती हैं और गोन्पा की सेवा-साधना में जीवन यापन करती हैं। यह स्वेच्छा से संन्यास लेना नहीं है। रीति के कारण है। रीति में भावनाएँ, आकांक्षाएँ और

सपने टूटते नज़र आते हैं। यह आरोपित संयम का जीवन रह जाता है। जो भिक्षुणियाँ नहीं बनतीं वे अपने भाई-भाभियों की कृपा-दृष्टि पर निर्भर रहते हुए एक तरह से सेविकाओं का जीवन व्यतीत करती हैं।

बहुपति प्रथा के अंतर्गत पिता की मृत्यु के बाद सम्पत्ति पर सभी पुत्रों का समान अधिकार होता है। घर-जँवाई आने पर भी सम्पत्ति की मालिक वह लड़की ही रहती है। आगे चलकर वह सम्पत्ति उनकी संतान को मिलती है। सम्पत्ति वाली वह लड़की यदि विवाह करके दूसरे के घर जाती है तो उस सम्पत्ति पर उसके निकट सम्बन्धियों का हक बनता है, जिसे गाहरी बोली में 'ज़गोस्पा' कहते हैं। कोई निस्संतान व्यक्ति दत्तक पुत्र भी ले सकता है। इस प्रथा के अंतर्गत विधवा को भी सम्पत्ति का अधिकार मिलता है। वह उस सम्पत्ति को बेच नहीं सकती। उसके पुनर्विवाह या मृत्यु के बाद सम्पत्ति पर निकट सम्बन्धी 'ज़गोस्पा' का ही अधिकार हो जाता है। विधवा तथा अविवाहिता से उत्पन्न संतान का किसी सम्पत्ति पर कोई अधिकार नहीं होता। पट्टन घाटी में स्वांगला और बौद्धों के बीच हुए अंतर्जातीय विवाह से जो वर्ण-संकर पैदा होते हैं, उन्हें 'गरु' कहा जाता है। स्वांगला पिता और बौद्ध माता से उत्पन्न गरु के वैवाहिक तथा भोजन आदि के सम्बन्ध बौद्ध तथा गरु से हो सकते हैं, स्वांगला से नहीं। इस तरह गरु को स्वांगला से निम्न तथा बौद्धों से उच्च माना जाता है। जिस तरह गाय और याक के मेल से उत्पन्न पशु 'गरु' कहलाता है, उसी तरह स्वांगला पिता और बौद्ध माता की संतान भी 'गरु' कही गई है। यदि गरु पुरुष और स्वांगला स्त्री तीन-चार पीढ़ियों तक विवाह कर लें तो वह संतान स्वांगला मानी जाती है। यदि गरु लड़का और बौद्ध लड़की तीन-चार पीढ़ियों तक विवाह करते जाएँ तो संतान बौद्ध हो जाती है।

लाहुल के समाज में पुरातन काल से वर्गगत भेद नहीं था। प्रायः समानता रहती थी। लेकिन कालांतर में धन-सम्पत्ति, जाति व वर्ण के आधर पर भेद होने लगा है। इस क्षेत्र की प्रमुख घाटी पट्टन में स्वांगला, बौद्ध और दलित तीन वर्णों के लोग बसे हुए हैं। दलितों में 'चाण' और 'लोहार' दो जातियाँ हैं। इसी तरह स्वांगला में 'भाट' का अलग वर्ण है। ये लोग स्वांगला के पुरोहित होकर उच्च माने जाते हैं। सामाजिक एवं धार्मिक कृत्य सम्पन्न करवाने वाले पुरोहित समाज में श्रेष्ठ समझे जाते हैं। लाहुल क्षेत्र में ऐसे तीन प्रमुख वर्ण हैं, जो विभिन्न सामाजिक वर्गों में धर्मिक अनुष्ठान आदि सम्पन्न करवाते हैं। बौद्धों के पुरोहित 'लामा' होते हैं, स्वांगला के 'भाट' और अन्य सामान्य वर्गों के अनुष्ठान 'गूर' करवाते हैं।

लाहुल की सभी प्रमुख घाटियों में स्त्री और पुरुष के मध्य प्रमुख **कार्यों का विभाजन** परम्परा से रहा है। घर के सभी काम स्त्री के जिम्मे रहते हैं और कृषि कार्यों में भी स्त्री की भूमिका ही मुख्य रहती है। पुरुष का काम केवल हल चलाना होता है। बीजाई, फसल भंडारण, निदाई-गुड़ाई, चारा संग्रह, पानी ढोना आदि सभी कार्य स्त्रियों द्वारा ही सम्पन्न किए जाते हैं। लाहुल की स्त्री, धूप या बर्फ़ के रहते हुए भी पीठ पर भारी बोझ उठाकर चल सकती है। गर्मियों में खेतों में औरतें काम करती हैं, जबकि पुरुष घर का काम देखते हैं। इस कार्य विभाजन के कारण भी परम्परा में निहित रहे हैं। लाहुल के समाज की कृषि पर पूर्ण निर्भरता नहीं थी, क्योंकि खेती योग्य ज़मीन कम होने के कारण जीवन निर्वाह के लिए दूसरे धंधे भी अपनाने पड़ते थे। इसलिए पुरुष अकसर भेड़-बकरियों के साथ चरवाहों के रूप में बाहर जाते थे और कई बार व्यापार के सिलसिले में तिब्बत तथा कुल्लू आदि क्षेत्रों में भी जाना होता था। इन स्थितियों में गाँव-घर के सब काम स्त्रियों के जिम्मे ही रहते थे।

लाहुल में घरों के साथ ऐसे सूखे शौचालय बने होते हैं, जिनमें शौच के बाद पानी का इस्तेमाल न करके ऊपर से मिट्टी डाल दी जाती है। खुले बड़े कक्षों जैसे इन गहरे शौचालयों में परत-दर-परत मल जमा होता रहता है। इस मल को भी खेती में उर्वरक के रूप में प्रयोग में लाया जाता है। इस सूखे मल से दुर्गंध हट जाती है। इसे खेतों तक ढोने का काम भी स्त्रियाँ करती रही हैं। इसी तरह पुरुषों के भी कुछ निश्चित काम होते हैं। इनमें हल चलाना, लकड़ी फाड़ना, जंगल से लकड़ी लाना, भेड़-बकरियों के रेवड़ की देखभाल करना, पशुओं का चारा-पानी तथा कताई-बुनाई का काम पुरुष करते हैं। स्त्री के लिए खड्डी चलाना यहाँ हल चलाने की तरह ही वर्जित रहा है।

प्रकृति की कठोरता में जीवन बसर करते हुए सहकारिता लाहुली समाज की नैसर्गिक ज़रूरत है। परस्पर सहयोग और सहानुभूति के बिना कठिन जीवन का निर्वाह संभव नहीं होता। इसीलिए लाहुल में वास्तविक सहयोग होता है, मात्र औपचारिक नहीं। जन्म से मृत्यु तक मनुष्य जीवन के विभिन्न सोपानों पर सहयोग और सहकारिता के लिए अनेक प्रथाएँ बनी हुई हैं। भवन निर्माण, विवाह के आयोजन तथा मृत्यु संस्कार आदि के अवसरों पर परस्पर सहयोग की नितांत आवश्यकता रहती है। भवन निर्माण में बुनियाद से लेकर छत तक कोई कार्य सामूहिक श्रम के बिना पूरा नहीं हो सकता। इसी तरह विवाह और मृत्यु जैसे संस्कार भी सामाजिक सहयोग के बिना सम्पन्न नहीं हो सकते। इसीलिए इन कार्यों में परस्पर सहयोग का कोई लेखा नहीं रखा जाता था। जिस व्यक्ति का काम सबके सहयोग से किया जाता है, वह लोगों के लिए भोजन और पेय आदि की व्यवस्था करता है। सहकारिता के परम्परागत रूप में, बदले में काम करने के लिए हिसाब नहीं रखा जाता था। लेकिन अब यह सहयोग प्रतिदान के आधार पर होने लगा है। जो व्यक्ति जिस तरह के कार्य में सहयोग करेगा, उस व्यक्ति के उसी तरह के कार्य में बदले में सहयोग किया जाएगा। अब सहकारिता की प्रथा ने यह रूप ले लिया है।

मृत्यु संस्कार लाहुल के समाज में सबसे विधिपूर्वक सम्पन्न किया जाता है। कर्म के अनुसार पुनर्जन्म तथा आत्मा की अमरता की धरणा इस समाज में सर्वमान्य है। बौद्ध तथा हिन्दुओं में मृतक संस्कारों में कुछ भेद ज़रूर पाए जाते हैं। चंद्रभागा घाटी के बौद्धों और हिन्दुओं के संस्कारों में कई समानताएँ रहती हैं। यह मेल-जोल साथ-साथ रहने का परिणाम है। तोद तथा गाहर घाटियों के बौद्धों के मृतक संस्कार लगभग समान हैं। ऊपरी लाहुल में 'आत्मा के संक्रमण' हेतु 'फोवा' लगाने के बाद लामा लोग पूजा करते हैं और 'रोब्दग्पा' (शववाहक) शव को आसन पर रखते हैं। **फोवा** क्रिया के लिए इसके जानकार लामा को बुलाया जाता है। इससे पूर्व शव पर खुला कफ़न रखा जाता है और पास ही दीया जला लेते हैं। लामा मृतक स्त्री या पुरुष के सिर की चोटी के बाल पकड़कर तीन बार 'मितग्बा' (अनित्य) कहते हुए मृतक की आत्मा को सुनाते हैं कि अब तुझे अनित्य ने घेर लिया है। इस मनुष्य जन्म को छोड़कर, अपने कर्म के अनुसार नए जन्म की तैयारी करो। वैसे बौद्ध परम्परा में आत्मा को स्वीकार नहीं किया गया लेकिन यहाँ मृतक संस्कार में लामा इसे मानते हैं। इस तरह 'फोवा' की क्रिया के बाद शव को नहलाकर कफ़न पहनाया जाता है।

किसी घर में शव को एक से सात दिन तक रखा जा सकता है और घर से शव को निकालते हुए विशेष अनुष्ठान किया जाता है, जिसे **यांग खुग्पूजा** यानी 'श्री को वापिस लाना' कहते हैं। घर की श्री यानी लक्ष्मी मृतक के साथ न चली जाए, इसके लिए कर्मकांड के तहत ज़ेवर की पोटली और तीर, घर से चलते हुए अर्थी में रख देते हैं। इसके साथ ही पंचमहाभूतों के प्रतीक पीले, हरे, लाल, सफेद और नीले रंग के वस्त्र-खंड भी अर्थी पर रखे जाते हैं। ज़ेवर की पोटली, तीर तथा ये पाँच वस्त्र-खंड शवयात्रा शुरू होने से पहले अर्थी से निकालकर लामा इन्हें एक बालक को सौंपता है। वह बालक इस सामग्री को गृह स्वामी को देता है। इस क्रिया से मान लिया जाता है कि श्री और सद्‌गुण घर में लौट आए हैं।

तोद घाटी में शव के लिए अर्थी को कुर्सी की तरह सजाया जाता है। शवयात्रा में सबसे आगे ढोलवादक (लोहार) शोक धुन बजाते हुए चलता है। उसके पीछे लामा वादक होते हैं और उनके पीछे शववाहक चलते हैं। शंख वादक और पताका वाहक शव के पीछे चलते हैं तथा सबसे अंत में आम शवयात्री होते हैं। हर गाँव या ग्राम समूह की श्मशान भूमि निश्चित रहती है। लेकिन कुछ लोग अपने खेत में भी शवदाह करना उचित समझते हैं। श्मशान पर ले जाकर मृतक के वस्त्र और आभूषण उतारकर, उन ढोलवादकों को दिए जाते हैं जो मृत्यु संस्कार के पूरे उपक्रम में शोक धुन बजाते हैं। चिता के लिए अग्नि भी घर से ले जाते हैं।

श्मशान से लौटते हुए एक विशेष रस्म मार्ग में पूरी की जाती है। लोग घास का तिनका उठाकर दोनों हाथों से तोड़ते हैं और पीछे देखे बिना उस तिनके को पीठ के पीछे फेंक देते हैं। यह मृतक से हमेशा के लिए सम्बन्ध तोड़ने का प्रतीक है। शव दाह से लौटे लोगों को मृतक के घर पर चाय, छंग तथा भोजन आदि देते हैं। मृतक के रिश्तेदार भी रोटी, छंग, सत्तू आदि लेकर आते हैं, क्योंकि मृतक के घर पर उस रोज़ चूल्हा नहीं जलता। मृतक की अस्थियों को मिट्‌टी में मिलाकर किसी बौद्ध धर्मिक स्थल में रखते हैं। मृत्यु के कुछ दिनों के बाद ग्रामीणों तथा सम्बन्धियों को मृत्यु-भोज भी करवाया जाता है। देहांत के 49 दिनों के बाद तथा एक वर्ष के अंदर अंतिम क्रिया-कर्म होता है, जिसे 'सामा' अथवा 'गेवा' कहते हैं। सम्पन्न लोग मृतक की स्मृति में 'छोरतेन' का निर्माण भी करवाने लगे हैं, जिसमें मृतक के अवशेष रखे जाते हैं।

चंद्रभागा घाटी में अधिकांश मृतक-कर्म परम्परागत हिन्दू पद्धति से होते हैं। इन क्रियाओं को 'भाट' संचालित करवाता है। गंगा जल, शंख तथा जौ का प्रयोग इन कर्मों में होता है। दूध के घड़े तथा गाय का दान आवश्यक समझा जाता है। मृतक के प्रतीक रूप में जौ के आटे से मानव आकृति बनाई जाती है और शव के सिरहाने पुरोहित द्वारा दीपक जलाया जाता है। इन क्रियाओं में शास्त्र सम्मत विधि के साथ कुछ लोकाचार भी जुड़ गए हैं और सान्निध्य में रह रहे बौद्धों की मृतक क्रियाओं का भी इनमें कुछ प्रभाव नज़र आता है। पट्‌टन घाटी में मृतक का अशौच यानी पातक 13 दिन का माना जाता है, जबकि बौद्धों में अशौच की कोई मान्यता नहीं है। पातक के इन दिनों में ढोल तथा बांसुरी पर शोक धुनें बजाई जाती हैं और रात को धर्मिक कथाओं का पाठ होता है। यहाँ शवयात्रा, दाह संस्कार और अस्थि प्रवाह के लिए नगाड़े और बांसुरी पर विशेष धुनें बजायी जाती हैं। ये बेल, सितूर और मतवाड़ी समूहों के कई शोक राग होते हैं। परलोक का मार्ग प्रशस्त करने के लिए इन रागों के अतिरिक्त मृत्यु पर सुगिली गीत भी गाये जाते हैं। पट्‌टन में चाण जाति के लोग भी स्वांगला की तरह ही मृतक-कर्म करते हैं। मृतक की स्मृति में विश्राम स्थल का निर्माण भी किया जाता है।

सांस्कृतिक उपादेय के मिथक

लाहुल के समाज में कुछ पारम्परिक उपादेय ऐसे हैं, जिनका विभिन्न सामाजिक, सांस्कृतिक कार्यो और अनुष्ठानों में प्रायः उपयोग होता है। वास्तव में इनमें वे चीज़ें आती हैं, जो लाहुली जनजीवन में सुदूर अतीत से सबसे उपयोगी रही हैं। इन चीज़ों की यह उपयोगिता इनकी उपलब्धता पर भी निर्भर करती है। ऐसी चीज़ों में छंग, सत्तू, मक्खन, भेड़, शुर, शागुण और फर प्रमुख हैं। ये चीज़ें वास्तव में 'मिथक' का रूप ले चुकी हैं। वैसे इस तरह की कुछ और चीज़ें भी निकल सकती हैं, लेकिन ये सात चीज़ें ऐसी हैं, जिनके माध्यम से लाहुल के सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक जीवन की कुछ विशेष व्याख्या हो सकती है।

छंग को क्षेत्र भिन्नता के आधर पर चकती और लुगड़ी भी कहते हैं। यह हिमालय के अनेक क्षेत्रों की तरह लाहुल का भी सर्वमान्य मादक पेय है। विशेष अवसरों के अतिरिक्त लोग इसे अपने घरों में प्रतिदिन भी पीते हैं। सामान्य जन का यह पेय जौ और गेहूँ के अन्न में खमीर पैदा करके तैयार किया जाता है। उत्सवों, अनुष्ठानों में इसका प्रयोग व्यापक रूप से होता है। जन्म से लेकर मृत्यु तक के सभी संस्कारों में भी छंग का पान किया जाता है। लाहुल के सांस्कृतिक जीवन में सबसे महत्त्वपूर्ण समझे जाने वाले 'शागुण' (मंगल रस्म) में छंग का उपयोग प्रमुखता से होता है। शागुण क्रिया में हाथ में ली जाने वाली वस्तुओं में छंग का पात्र प्रमुख रहता है। पूजा के लिए आटे से बनाए गए 'टोटू' और 'तोरमा' आदि भी छंग मिला कर बनते हैं। यह कहना अन्यथा न होगा कि सामान्य हिन्दुओं की पूजा, शुद्धि एवं शुभ कर्म में जिस तरह गंगा जल का उपयोग होता है, उसी तरह लाहुल के बौद्ध अर्पित करने के लिए छंग को प्रयोग में लाते हैं। बौद्धों के पुरोहित लामा लोग भी मन लगा कर छंग का सेवन करते हैं।

सत्तू लाहुली समाज का प्रमुख पारम्परिक भोज्य पदार्थ रहा है। इसलिए यह यहाँ का पवित्र खाद्य भी है। जौ सभी अन्नों में शुभ और निरोग माना जाता है। इसलिए भी जौ का सत्तू आहार में विशेष महत्त्व रखता है। शागुण की क्रिया में छंग के साथ सत्तू का मेल उसी तरह है, जिस तरह हिन्दू पूजा-पद्धति में गंगा जल के साथ जौ और चावल उपयोग में लाए जाते हैं। पूजा कार्यों के लिए 'तोरमा' तथा कुछ अन्य प्रतीक मूर्तियाँ भी सत्तू से निर्मित की जाती हैं। सत्तू का यह सांस्कृतिक महत्त्व इसलिए भी बना है कि लाहुल जैसे क्षेत्र में पैदा होने वाला प्रमुख अन्न जौ रहा है। इस अन्न का आहार सत्तू के रूप में सुपाच्य और सुस्वादु होता है। इसे नमक सहित पानी अथवा लस्सी में घोलकर खाया जा सकता है। लाहुल जैसे क्षेत्र में दालों और सब्जियों का अभाव रहता है। इसलिए सत्तू यहाँ सम्पूर्ण आहार के रूप में प्रचलित रहा है। इसे लंबे समय तक भूनकर तैयार रखा जा सकता है। अन्नादि जो वस्तु जनजीवन में सबसे उपयोगी और सुलभ होगी, वही देवी-देवताओं को चढ़ाने तथा अनुष्ठान व पूजा-कर्म में भी प्रयोग की जाती है। इस दृष्टि से अन्न के रूप में यहाँ सत्तू की प्रतिष्ठा है।

मक्खन भी 'शागुण' में प्रयुक्त होने वाला पवित्र पदार्थ है। भारतीय परम्परा में जिस तरह शुद्ध घी का उपयोग दीया जलाने से लेकर अग्नि में आहुति देने तक प्रत्येक पूजा-कर्म में किया जाता है, उसी तरह लाहुल में मक्खन का उपयोग सभी पूजा-कर्मो में होता है। जलवायु की दृष्टि से शीत मरुस्थल में मक्खन कई दिनों तक रह सकता है। संभवतः इसलिए भी इस क्षेत्र में घी का स्थान नवनीत ने ले लिया है। लाहुल में कई बलि-प्रतीक और टंगरोल आदि पशु-प्रतीक बनाने में भी नवनीत का उपयोग किया जाता है। किसी विशेष अतिथि के आगमन पर भी उसके मस्तक पर मक्खन का टीका लगाया जाता है। इस तरह मक्खन खाद्य के साथ यहाँ का पवित्र पूजा पदार्थ भी है।

शुर लाहुल का पवित्र वृक्ष है। यह देवदार परिवार का ही एक वृक्ष है। इसे अंग्रेज़ी में पेंसिल ट्री कहते हैं। यह देवदार वृक्ष से आकार में छोटा होता है। लेकिन लाहुल में यह 'देवदयार' सबसे बड़ा और महत्त्वपूर्ण वृक्ष है। इसकी नुकीली पत्तियों को अंगारों पर डालकर धूप के रूप में जलाया जाता है। 'शागुण' तथा हर पूजा-कर्म में सुगंधित धूप के रूप में इसी का प्रयोग होता है।

भेड़ लाहुल का प्रमुख पालतू पशु रहा है। इसलिए यह प्रमुख बलि-पशु भी है। वास्तव में भेड़ इस क्षेत्र में मांसाहार के लिए भी सबसे उपयोगी है। भेड़ का मांस गर्म होता है और पकने में भी आसान रहता है। इसलिए लाहुल के शीत-बहुल क्षेत्र में इसका मांसाहार उचित माना जाता है। जनजातीय मानव की आम प्रवृत्ति रही है कि उसे जो चीज़ स्वयं अच्छी लगती है, उसे ही अपने आराध्य देवी-देवताओं को भी अर्पित किया जाता है। यही कारण है कि लाहुल में देवी-देवता, भूत-प्रेत आदि सभी अलौकिक शक्तियों को भेड़ की बलि दी जाती है। इस तरह की भेंट के लिए भेड़ को बंधक भी रखा जाता है। मांसाहार के अलावा भेड़ की ऊन और खाल का भी सदुपयोग किया जाता है। ऊन से सोने-पहनने के वस्त्र बनते हैं और इसकी खाल भी कई तरह से घरेलू उपयोग में लायी जाती है।

शागुण लाहुल का सबसे प्रचलित पूजा-कर्म है, जो अतिथि स्वागत से लेकर सभी देवी-देवताओं के अनुष्ठानों में एक मांगलिक विधि के रूप में किया जाता है। यह एक स्वस्तिक रस्म है। छंग से भरे पात्र के मुख पर मक्खन के टुकड़े सजाए जाते हैं और शुर यानी देवदयार की पत्तियाँ लोगों को दी जाती हैं, जो फूल और धूप का एक साथ काम देती हैं। थाली में सत्तू, घी या तेल से बने मिश्रण यानी 'म्हरपिणि' को पिंड रूप में रखकर, उस पर भी थोड़ा मक्खन रख दिया जाता है। शागुण कर्ता शुर (देवदयार) के पत्ते छंग पात्र में डुबोकर उसके छींटे इधर-उधर उछालता है और इसी के साथ लोग अपने इष्ट देवता का स्मरण करके मंगल कामना करते हैं। शुर के पत्ते घर के चूल्हे में भी अग्नि को अर्पित किए जाते हैं। सत्तू और घी का तनिक मिश्रण तीन बार उछाला जाता है और चौथी बार उसका अंश मुँह में डालते हैं। इस रस्म को ही 'शागुण' कहते हैं।[5] किसी भी शुभ अवसर पर किसी की विदाई या आगमन पर यह मंगलमय रस्म अदा की जाती है।

फर लाहुल के पारम्परिक चूल्हे का नाम है। लेकिन इसकी जगह अब लोहे के तंदूर का प्रचलन हो गया है। शीत-बहुल क्षेत्र में घर के भीतर का रहन-सहन सबसे अधिक अग्नि के पास होता है। इसलिए यह फर घर के सबसे बड़े कमरे के मध्य में जलाया जाता है। अब लोहे का तंदूर भी कमरे के बीच में ही जलता है।

इससे यह सुविधा रहती है कि एक कमरे में सभी लोग खाने-पीने या बातचीत के लिए आग के पास एक साथ बैठ सकते हैं। बर्फ़ के दिनों में तो ज़्यादातर लोग फर वाले कमरे में ही चारों तरफ सो जाते हैं।

उक्त सात चीज़ों का परस्पर गहरा सम्बन्ध भी है। छंग, सत्तू और मक्खन प्रमुख खाद्य और पेय होने के कारण पूजा और अनुष्ठान में भी महत्त्वपूर्ण बने हुए हैं। शुर इन कर्मों में वृक्ष और वनस्पति का प्रतिनिधित्व करता है, जबकि भेड़ प्रतिनिधि बलि-पशु है। ये सभी चीज़ें अग्नि को अर्पित करके ही शागुण यानी स्वस्तिक कर्म का रूप लेती हैं। इस तरह लाहुल की जनजातीय संस्कृति में ये महत्त्वपूर्ण चीज़ें मंगलमय मानी जाती हैं।

लोकोत्सव

हिमाचल प्रदेश के जनजातीय क्षेत्रों में आर्यों और मंगोलों का जातीय मिश्रण होने के फलस्वरूप यहाँ के लोकोत्सवों में भी जातीय आचार-व्यवहार का रोचक सम्मिश्रण दिखाई देता है। इन अवसरों पर समाज की धार्मिक आस्थाएँ मुखर होती हैं। इसलिए लाहुल के लोकोत्सवों में भी हिन्दू तथा बौद्ध परम्पराओं का प्रदर्शन सहज रूप में होता है। यहाँ की आदिम संस्कृति के कई मिथक और प्रतीक इन उत्सवों से जुड़े हैं। इनमें बलि प्रधान प्राचीन उत्सवों के साथ प्रकृति की सत्ता के स्वीकार के उत्सव आज भी मनाए जाते हैं। श्रावण के पहले दिन लाहुल में **शेगचुम** का त्योहार होता है और उसके दूसरे दिन घोशाल में **देइला पोरी** का मेला जुटता है। इस मेले का नाम ही देइला नामक वन-पुष्प से जुड़ा है। उस दिन लोग वन प्रांतर में जाकर देइला के मौसमी फूल लाकर ग्राम देवी को अर्पित करते हैं।

पट्टन घाटी के तलजोन गाँव में हिडिम्बा की स्थापना मौसम की देवी के रूप में है। जब लाहुल में मौसम अनुकूल नहीं रहता तो कृषकों को बड़े संकट से गुज़रना पड़ता है। ऐसे समय में हिडिम्बा को प्रसन्न करने के लिए बलि प्रधान उत्सव का आयोजन जाहलमा, जोबरंग और शांशा की तीन कोठियों के लोगों द्वारा सामूहिक रूप में किया जाता रहा है। लाहुल के शशुर गोन्पा का **छे़चु** उत्सव तिब्बती बौद्ध धर्म के प्रसार के बाद प्रारंभ हुआ है। इसमें बौद्ध धर्म विरोधी तिब्बती राजा लङ दर्मा की हत्या का उत्सव मनाया जाता है। छे़चु के आयोजन कई स्थानों में होते हैं। इस अवसर पर नृत्य-नाट्य 'छम' भी प्रस्तुत किया जाता है। इसलिए कई स्थानों में इसका नाम 'छम नृत्य उत्सव' भी हो गया है।

खोगल लाहुल का सबसे लोकप्रिय उत्सव है। इसी को **हालडा** भी कहते हैं। यह वास्तव में लाहुल का नववर्ष उत्सव है। लेकिन इसमें तिब्बती पंचांग या हिन्दू शास्त्रों के अनुसार नववर्ष के दिन का निर्धारण नहीं होता, बल्कि लाहुलवासी एक अति प्राचीन काल-गणना के आधार पर सूर्यदेव की उत्तराभिमुख स्थिति अर्थात् मकर-रेखा से उत्तर की ओर सूर्य के प्रवेश को, नववर्ष का आरंभ मानते हैं। इस आधार पर 22 दिसंबर के बाद लाहुलवासियों का नववर्ष आरंभ हो जाता है। प्राचीन काल-गणना की यह प्रथा विस्मृत प्रदेश जङ-जुङ में प्रचलित थी।

हिमालय के उत्तर में कैलास पर्वत के क्षेत्रों और उससे जुड़ते लद्दाख और बल्तीस्तान तक के समूचे भू-भाग में जङ-जुङ नामक विस्तृत राज्य था। सातवीं शताब्दी में तिब्बत के राजा स्रोङ चे़न-गम्पो ने इस राज्य को जीतकर तिब्बत में मिला लिया था। लाहुल, जंस्कर, लद्दाख और स्पीति आदि के क्षेत्रों में वही काल-गणना लोक प्रचलित है। इसी के अनुसार नववर्ष उत्सव के उपलक्ष्य में बच्चों के लिए नए कपड़े सिलाए जाते हैं। मादक पेय छंग और मारचू (बटूरे) आदि पकवान बनाए जाते हैं। देवताओं के चबूतरों पर देवदयार (शुर) की टहनी चढ़ाई जाती है। घर के एक कोने में दीवार पर गोबर से गोलाकार लेप करके उसके मध्य लकड़ी की कील पर फूल और सफेद ऊन टांगी जाती है। इसे शिस्कर ल्हामो (लक्ष्मी) की स्थापना मानकर, एक सप्ताह तक स्वादिष्ट पकवान, धूप-दीप और छंग से इसकी पूजा-अर्चना करते हैं।[6]

नववर्ष उत्सव की पहली शाम को हरेक घर से दो-तीन मशालें निकाली जाती हैं और इस तरह पूरे गाँव का एक मशाल जलूस बन जाता है। बाहर निश्चित स्थान पर ये मशालें एक साथ जलाई जाती हैं। यह अग्निपूजा का ही रूप है। इसी उपलक्ष्य में शिस्कर ल्हामो (लक्ष्मी) के साथ ही बरराज या बलराज की भी पूजा की जाती है और अन्न, पशुधन, वस्त्र तथा आभूषण आदि का वरदान माँगते हैं। इस उत्सव की इन अग्नि-मशालों को 'हालडा' कहा जाता है। इसलिए खोगल का ही दूसरा नाम **हालडा** भी है। इस उत्सव का विभिन्न घाटियों में एक सिलसिला शुरू होता है और कई स्थानों में इसे अब भी सामंती समय की प्रथाओं के अनुसार मनाते हैं। लक्ष्मी और बलराज की पूजा से जुड़े इस उत्सव की प्रक्रिया में उत्तरी भारत की दीपावली जैसी कई धरणाएँ जुड़ी हैं।

इसी उत्सव का एक नाम **लोसर** भी है। इस तरह खोगल, हालडा या लोसर लाहुली समाज के नववर्ष उत्सव हैं। ये प्रति वर्ष परम्परानुसार विशेष उत्साह से मनाये जाते हैं। हालडा या खोगल के ठीक पंद्रह दिन बाद तिब्बती पंचांग के अनुसार नववर्ष के पहले दिन 'कुँह' नामक लोकोत्सव मनाया जाता है। इसी उत्सव को किन्नौर तथा कुल्लू के कुछ क्षेत्रों में 'फागली' के नाम से मनाते हैं। फाल्गुन के प्रारंभ में मनाने के कारण इसे 'फागली' कहा गया है। पट्टन क्षेत्र में फागली के अवसर पर बड़े बुज़ुर्गों का अभिवादन किया जाता है। सबसे बृद्ध की पूजा होती है। पालतू पशुओं का भी अभिवादन करते हैं और गेंदे के फूल के झोलुणू (बैज) टोपी या कोट में सजाते हैं।

तिनन और गाहर घाटियों के लोग **हालडा** और **कुँह** के बाद दो-तीन दिनों तक घरों से बाहर नहीं निकलते हैं, न ही दूसरों के घरों में जाते हैं। घर के भीतर ही पूजा-पाठ में समय व्यतीत करते हैं। आपसी मतभेद या झगड़े आदि की स्थितियों से इन दिनों में सायास बचे रहते हैं। लोक मान्यता है कि इन दिनों में जैसा समय व्यतीत होता है, वैसा ही समय वर्षभर देखना पड़ता है। यह भी मान्यता है कि शोर और लड़ाई-झगड़े से शिस्कर अपा (लक्ष्मी) और बलराज अप्रसन्न होकर त्योहार छोड़कर दूर चले जाते हैं। इस तरह यह शांत वातावरण में ध्यान और साधना का समय माना जाता है।

छोदपा तोद घाटी के खंगसर में मनाया जानेवाला प्राचीन लोकोत्सव है। यह सर्दी तथा ग्रीष्म के महीनों में वर्ष में दो बार मनाया जाता है। इसमें पाँच पांडवों की हिमालय यात्रा से लेकर बौद्ध परम्परा की सात देवियों तक के प्रसंग लोकनाट्य के रूप में प्रस्तुत किए जाते हैं। मानव सृष्टि की गाथा का नाट्य रूप भी दर्शाया जाता है। त्रिलोकनाथ की पूजा के उपलक्ष्य में जून के दूसरे सप्ताह में **याने** उत्सव का आयोजन होता है। इस दिन स्त्री-पुरुष व्रत रखकर देवताओं की पूजा करते हैं। यह आत्मशुद्धि का त्योहार माना जाता है। इस अवसर पर वर्ष में हुए बुरे कर्मों के लिए क्षमा माँगते हुए आनेवाले वर्ष में सत्कार्यों की कामना के साथ प्रार्थना की जाती है। पट्टन घाटी के तुंदे गाँव में ही हर वर्ष अगस्त महीने में **पोरी** मेला मनाया जाता है। इस मेले में पहले हज़ारों की संख्या में श्रद्धालु त्रिलोकनाथ की मूर्ति को दूध व दही से नहलाकर मंदिर की परिक्रमा के विशाल जुलूस में भाग लेते थे। आज इस मेले में कुछ नए मनोरंजन के कार्यक्रम भी जोड़ दिए गए हैं।

फरवरी महीने में पुत्रोत्पत्ति का उत्सव **गोची** विशेष परम्परा के अनुसार मनाया जाता है और पुत्र जन्म वाले परिवार जन उस शाम को खूब दावतें देते हैं। प्रथम चैत्र का उत्सव **चैतरोरी** कहलाता है। इन दोनों लोकोत्सवों में तीरंदाजी का विशेष आकर्षण रहता है। सांस्कृतिक कर्मकांड और तीरंदाजी को परस्पर जोड़ने वाले ये उत्सव लाहुल के आदिम जीवन के अवशेष कहे जा सकते हैं।

गोची केलंग का पुत्रोत्सव है। यह नरबलि लेने वाले ग्राम देवता केलंग के सात्विक होने के बाद मनाया जाने लगा था। बीते वर्ष में जिनके पहले पुत्र का जन्म होता है, क्षेत्र की वे स्त्रियाँ इस उत्सव में पारम्परिक वेशभूषा में अपने बालकों सहित आती हैं। हाथ में सुरा पात्र लिए एक बालिका जलूस के आगे चलती है। पीछे कुछ लोग जलती मशालें और पत्तों से भरी मेमनों की खालें लेकर चलते हैं। बालकों के पिता घास-फूस से भरी हुई मेमनों की खालों पर तीर चलाते हैं। इस तरह यह पुत्र प्राप्ति से गौरवान्वित माता-पिता का उत्सव है।

लाहुल में फसल की बीजाई तथा कटाई के अवसरों पर अनेक उत्सव मनाए जाते हैं। ऐसे अवसरों पर लामा को अपने खेतों में आमंत्रित किया जाता है। लामा ही प्रथम बीजाई का शुभ दिन बताते हैं। उस दिन लोक वाद्यों की धुनों के साथ लोग खेतों में काम प्रारंभ करते हैं और खेत में बैठकर ही 'छंग' के सेवन सहित भोजन भी करते हैं। इस कृषि प्रधान उत्सव को **लपसोल** कहा गया है।

इस तरह लाहुल की विभिन्न घाटियों में वर्ष-भर मेले-उत्सव का सिलसिला चलता रहता है। सर्दियों के दिनों में ऐसे उत्सव होते हैं जिनमें घरों के भीतर रहकर ही खाने-पीने के दौर चलते हैं और पूजा-प्रार्थना भी होती है। लेकिन गर्मियों में होने वाले उत्सव देव-स्थानों में होते हैं और उनमें भाग लेने के लिए दूर-दूर से भी लोग आते हैं।

लाहुल की लोकधारा में तेजी से परिवर्तन हो रहा है। कृषि की जगह बागबानी का प्रचलन बढ़ रहा है। पारम्परिक अन्नों की खेती बंद होने के साथ ही पुराना खान-पान भी अब नहीं रहा। लाहुल के लोग जौ के सत्तू छोड़कर दाल-भात खा रहे हैं और थुग्पा से बढ़कर आलू-मटर की सब्जी पर ज़ोर है। पुराने बंद घरों की जगह नयी कोठियाँ बन गयी हैं, जिनके भीतर हिमालय की हवा खुली बह सकती है। बहुपति प्रथा सिमटने के साथ ही संयुक्त परिवारों का विभाजन होने से एकल परिवारों का समाज रूप ले रहा है। विवाह-शादियों में छंग, सरा की बजाय व्हिस्की और बियर की लागत बढ़ गयी है।

अब तक जो त्योहार-उत्सव चलन में हैं, उनका भी स्वरूप बदल चुका है। इनमें औपचारिकता के रूप में कुछ पुरानी प्रथाओं का निर्वाह ज़रूर होता है, लेकिन इन पारम्परिक रस्मों की नयी पीढ़ी के लिए कोई अर्थवत्ता नहीं रह गयी है। इसी तरह मनोरंजन के विरासती माध्यमों की जगह अब नये साधन आ जुड़े हैं। इन सब बदलावों के बावजूद अभी तक लाहुली जनजीवन की कुछ पहचान शेष है। इसमें लाहुली महिलाओं की वेशभूषा सबसे आकर्षक है, जिसमें लाहुली लोक और लोकधरा की अस्मिता निहित है।

दयार-दुर्गा कालोनी, ढली, शिमला-171012
सम्पर्क : 0177-2647347, मो. 09418086986

संदर्भ

1. M. D. Mamgain, State Editor, H.P. District Gazetteers-Lahul and Spiti, 1975, p. 37
2. डी.डी. शर्मा, हिमालय की विस्मय भूमि-लाहुल, पृ. 86
3. वही, पृ. 99
4. M. S. Gill, Himalayan Wonderland, p. 143
5. सतीश कुमार लोप्पा, गीत-अतीत, पृ. 123
6. छेरिंग छोरजे, 'नव वर्ष उत्सव : हालडा', लाहुल-स्पीति : जीवन और संस्कृति, पृ. 198

अनुसंधानिक आलेख

दीपावली में महालक्ष्मी का महात्म्य

● डॉ. रमेश सोबती (डी. लिट्)

महालक्ष्मी जी से निस्संदेह गजों का संबंध है, वाहन के रूप में नहीं, अपितु अभिषेकी गजों के रूप में। इस का उल्लेख प्रतिमालक्षण के ग्रन्थों में मिलता है। श्री सूक्त, 3 (हस्तिनादप्रमोदिनी) मत्स्यपुराण 126-46 के अनुसार भारतीय शिल्प में भी गजभिषिक्ता लक्ष्मी का स्वरूप सर्वाधिक लोकप्रिय रहा है। वाहन के रूप में गज का स्पष्ट साहित्यिक साक्ष्य केवल सकन्दपुराण में मिलता है। समुद्र मंथन के अवसर पर जब लक्ष्मी क्षीर सागर से बाहर आईं तब वे श्वेत गज पर ही आरूढ़ थीं-

पाण्डुरं गजमारूढां स्तूयमानां महर्षिभिः।
सुरद्रुमपुष्पमालां बिभ्रतीं मल्लिकायुतम्।।

(माहेश्वर खण्ड, मोर संस्करण कलकत्ता, 1959, पृ. 56)

देवी दुर्गा के अनेक अवतारों में एक अवतार लक्ष्मी का भी है। लक्ष्मी को धन की देवी कहा गया है और दीपावली को धन का पर्व। धन की देवी लक्ष्मी का आसन कमल है। भारतीय संस्कृति में कमल का महत्त्वपूर्ण स्थान है। वह सभी फूलों में सर्वप्रथम और सर्वश्रेष्ठ है। सृष्टि की उत्पत्ति से संबंधित पौराणिक कथा के अनुसार कमल इस संपूर्ण ब्रह्मांड से भी पुराना है। क्षीर सागर में लेटे हुए भगवान विष्णु की नाभि से सर्वप्रथम कमल पुष्प की ही उत्पत्ति हुई थी। कमल से ब्रह्मा प्रकट हुए और ब्रह्मा ने संपूर्ण सृष्टि की रचना की। वेदों में कहा गया है कि रक्त कमल ब्रह्मा का प्रतीक है, श्वेत कमल विष्णु का तथा नील कमल नीलकंठ शिव का प्रतीक है। लक्ष्मी तो कमल से ही उत्पन्न हुई है। तभी लक्ष्मी को कमला भी कहते हैं। लक्ष्मी को श्रीसूक्त में छरू नामों से संबोधित किया गया है यानि पद्मवर्णा, पद्ममालिनी, पद्मोस्थिता, पद्मप्रिया, पद्महस्ता तथा पद्मसम्भवा आदि :-

पद्मानने पद्म-उरू पद्माश्री पद्म संभवे।
तन्मे भजसि पद्माक्षी येन सौख्यं लभाभ्यहम्।।
पद्मानने पद्मिनी, पद्मपये, पद्मदलायताक्षी।
विश्वप्रिय विश्वमनोनुकूले त्वत्पाद पद्मंमयि सन्निधत्सवा।।
सरसिज निलये सरोजहस्ते धवलतराशुंक गंधाल्य शोभे।
भगवति हरिवल्लभ मनोजै त्रिभुवन मूर्तिकारी प्रसीद महयम्।।

इसका अर्थ है, जिसका मुख कमल जैसा है, कमल जैसी कोमल, ऐसी कमल नयन, हे कमलजा मुझे ऐसा कुछ दे जिससे मुझे खुशी मिले, हे कमला कमल पत्रारूढ़, कमलदल नयन आदि हे भगवति हरिप्रिया पूरी सृष्टि को वैभव संपन्न करने वाली मुझ पर प्रसन्न रहो।

पौराणिक कथा के अनुसार समुद्र मंथन से जो वस्तुएं प्राप्त हुई, उनमें लक्ष्मी का भी आविर्भाव हुआ था। अतः इस कारण लक्ष्मी का पानी से भी विशेष सम्बंध है। कमल की उत्पत्ति भी समुद्र से हुई। इस रूप से कमल तथा लक्ष्मी की जन्मस्थली एक ही है। लक्ष्मी भगवान् विष्णु की पत्नी भी हैं, और विष्णु का निवास क्षीर सागर में है जो कमल की जन्म स्थली भी है। तीसरे, ब्रह्मा ने धरती की सृष्टि कमल पर बैठ कर की थी और यह धरती भी लक्ष्मी का एकरूप मानी जाती है। इसीलिए इसे भूलक्ष्मी भी कहते हैं-

समुद्र वसने देवी पर्वत स्तन मंडले।
विष्णु पत्नि नमस्तुभ्यं पादस्पर्श क्षमस्वमे।।

हे समुद्र रूपी वस्त्र और पर्वत रूपी स्तनों को धारण करने वाली विष्णु पत्नी, मैं तुम्हें नमस्कार करता हूं।

आम तौर पर ग़जसिंह गरुड़ तथा विशेषकर उलूक को लक्ष्मी जी के वाहन के रूप में बताया गया है। लोकमानस में भी एक मात्र उलूक को ही लक्ष्मी का वाहन माना जाता है, लेकिन प्रसिद्ध लेखक डा. ए.एल. श्रीवास्तव लिखते हैं कि इस मान्यता का कोई साहित्यगत साक्ष्य अद्यावधि उपलब्ध नहीं है। और शिल्प में भी कोई स्पष्ट उदाहरण नहीं मिलता पर हां, एक मध्यकालीन प्रस्तर-फलक के रूप में उलूक पंख फैलाए गजभिषेक करता हुआ अवश्य पाया गया है। यहां उलूक, वाहन के रूप में न होकर वाद्यदेव के रूप में है, जिस का लक्ष्मी के समान गजाभिषेक प्रदर्शित है। यह फलक जौनपुर (उत्तर प्रदेश) के तिलकधारी



कालेज के पुरातत्त्व संग्रहालय में संरक्षित है (उलूकवाहिनी लक्ष्मी, ईस्ट एण्ड वेस्ट (रोम), खण्ड 37, सं. 1-4 (1187), पृ. 455-459, चित्र-1-3)। वैसे गरुड़ विष्णु का वाहन है, किन्तु जब विष्णु के साथ लक्ष्मी भी होती हैं तब उन्हें भी गरुड़ासीन माना जाता है। जहां तक सिंह का प्रश्न है, अब तक केवल एक गुप्तकालीन गजलक्ष्मी को सिंह की पीठ पर ललितासनस्था अंकित किया गया है। बिलसड (एटा उ.प्र.) की यह प्रतिमा आज तक अपने ढंग की अकेली, अनूठी और अद्वितीय बनी हुई है। (सिंहवाहिनी गजलक्ष्मी, अ यूनीक आइकन इन इण्डियन सकल्पचरल आर्ट, ईस्ट एण्ड वेस्ट (रोम), खण्ड-42, सं.2-4(1992), पृ. 485-488, चित्र 1-2)। चन्द्रगुप्त-कुमार देवी प्रकार के सिक्कों के पृष्ठ भाग पर सिंह के ऊपर बैठी जो देवी है, उसे आज तक विद्वान निश्चयात्मक रूप से न लक्ष्मी कह सके और न दुर्गा। आज तक यह प्रमाणित नहीं हो सका कि लक्ष्मी का वाहन सिंह है। बंगाल में अलूक को बड़े सम्मान के साथ लक्ष्मी-उलूक से सम्बोधित किया जाता है। अभी-अभी पूर्व बंगाल में 12वीं-13वीं शती ई. में निर्मित ऐसी दो मूर्तियों की जानकारी प्राप्त हुई है कि दीनाजपुर जनपद के कुठमाण्डी नामक स्थान से गोद में बालक लिए एक सन्तान लक्ष्मी की मूर्ति में आसन के नीचे अलूक का अंकन है। यह मूर्ति बंगाल की राज्य पुरातत्व वीथिका में संग्रहित है (एनामुल हक, बेंगाल स्कल्पचर्स : हिन्दू आईकनोग्रेफी अपटू 1250 ई. ढाका, 1992, पृ. 283, चित्र 227)। दूसरी मूर्ति लक्ष्मी-नारायण की है जो उसी जनपद के रायगंज संग्रहालय में प्रदर्शित है। इस में विष्णु के आसन के नीचे गरुड़ और लक्ष्मी के नीचे अलूक उत्कीर्ण है (गौरिश्वर भट्टाचार्य, द विष्णु इमेजे फ्रॉम बंगालरू प्रॉबलेम विद नामेनक्लेचर, ज्ञान-प्रवाह रिसर्च जर्नल (ज्ञान-प्रवाह, वाराणसी), सं. 12, 2008-09, पृ. 7, चित्र 2/6) इन दोनों मूर्तियों की जानकारी देने के लिए मैं आचार्य-ज्ञान-प्रवाह, वाराणसी की हृदय से आभारी। (वैचारिका कोलकता अंक मार्च-अप्रैल-2011)।

उलूक बेशक समृद्धि का प्रतीक है लेकिन मजे की बात यह भी है कि उसे मूर्खता का पर्याय भी माना जाता है। संस्कृत के उलूक अर्थात् उल्लू के लिए भर्तृहरि ने यह कह कर उसकी विशेषता को दर्शाया है कि नोलूकोप्य व लोकते यदि दिना सूर्यस्त किं दूषणम्। अर्थात् यदि दिन में उसे दिखाई नहीं देता तो भला सूर्य का क्या दोष? वैसे वैशेषिक के कर्ता कणाद ऋषि को उलूक भी कहा जाता है। भगवती महालक्ष्मी का शांत रूप में उनका वाहन उलूक पक्षी है। इनकी विशेषता यह है कि इन के शरीर का तापमान वातावरण के साथ घटता बढ़ता नहीं इसीलिए लक्ष्मी ने इस समतार्पा पक्षी को ही वाहन स्वीकार किया और ज्ञानवर्धक बात यह भी है कि यह एक विशिष्ट पक्षी है-इसके द्वारा मरण, वशीकरण, उच्चाटन जैसी सिद्धियां प्राप्त की जा सकती हैं। उल्लू को लेकर कई धारणाएं हैं, जैसे मृत्यु का पूर्वाभास देने वाला। कब्रिस्तान के जराग्रस्त पेड़ों की खोहों, प्राचीन वृक्षों की आसमान में फैली बाहों में छिपे उल्लू का नैश संगीतमय मिजाज, उसके आसुरी सींग, पलकों-विहीन भेद्य नज़रों से घूरना उसे एक विशिष्ट आयाम देता है।

यह तो सभी को ज्ञात है कि रावण वध के बीस दिन पश्चात भगवान् राम अनुज लक्ष्मण व पत्नी सीता के साथ चौदह वर्षों के वनवास पश्चात अयोध्या लौटे थे, उस रात्रि कार्तिक मास की अमावस्या थी अर्थात् आकाश में चाँद बिल्कुल दिखाई नहीं देता था। ऐसे माहौल में अयोध्या वासियों ने भगवान् राम के स्वागत में पूरे नगर को दीपों के प्रकाश से जगमग कर के मानों धरती पर सितारों को उतार दिया। सभ्यता के विकास के साथ यह त्योहार मानवीय हो गया और धन के देवता कुबेर की बजाय धन की देवी लक्ष्मी की इस अवसर पर पूजा होने लगी। दीपावली के साथ लक्ष्मी पूजन के जुडने का कारण लक्ष्मी और विष्णु जी का इसी दिन विवाह सम्पन्न होना भी माना गया है। मान्यतानुसार कार्तिक मास के कृष्ण पक्ष की चतुर्दशी को नरक चतुर्दशी के रूप में मनाने की परंपरा है। पुराणों के अनुसार इसी दिन भगवान् कृष्ण ने राक्षस नरकासुर का वध किया था। नरक चतुर्दशी पर घरों की धुलाई-सफाई करने के बाद दीपक जलाकर दरिद्रता की विदाई की जाती है। वस्तुतः इस दिन दस महाविद्या में से अलक्ष्मी धूमावती की जयंती होती है। अलक्ष्मी दरिद्रता की प्रतीक है, इसीलिए चतुर्दशी को उनकी विदाई कर अगले दिन अमावस्या को दल महाविद्या की देवी कमलासीन माँ लक्ष्मी देवी कमला की पूजा की जाती है।

भारत के विभिन्न राज्यों में तथा विदेशों में दीपावली त्योहार विभिन्न रूपों में मनाया जाता है। केरल में कुछ आदिवासी जातियां दीपावली को राम के जन्म दिवस के रूप में, गुजरात में नमक को साक्षात्लक्ष्मी को प्रतीक मान कर, राजस्थान में दीपावली के दिन बिल्ली का स्वागत कर खीर व मिठाइयां खिलाई जाती हैं, उत्तरांचल के थारू आदिवासी मृत पूर्वजों के साथ दीवाली मनाते

कविता

पर्यावरण के दीप

कमलसिंह चौहान



मौसम के बाजूबंद तट पर संवरने लगे हैं,
घर आंगन दहलीज पर दीप जलने लगे हैं
फूलों की खुशबू भर गई पर्यावरण के आंगन में,
आसमां के सितारे धरा पर उतरने लगे हैं।
मौसम के बाजूबंद तट पर संवरने लगे हैं...
पसरती रोशनी खुशहाली का संदेश देती है,
तम हरने के लिए प्रेम की भाषा दस्तक अब देती है
नेह के रंग को निखारती है दीपावली की संध्या,
पीपल की ठंडी छाया में दीप ज्योति बिखेरने लगे हैं।
मौसम के बाजूबंद तट पर संवरने लगे हैं...
घुंघरू बांधे घर की लक्ष्मी अब रम्भाती है गाय,
उजली मुंडेर पर बैठे दीपक अंधियारे के अब नहीं साये।
दीपावली हो सुखद सबको हरियाली की चादर ताने,
आपस का भाईचारा लेकर दीप एकता के पसरने लगे हैं।
मौसम के बाजूबंद तट पर संवरने लगे हैं...



'कविता निवास', दुर्गा मंदिर के पास, रेलवे स्टेशन रोड,
बीड जिला खंडवा, मध्य प्रदेश-450110, फोन : 07326 286847

हैं। बंगाल तथा उड़ीसा में कालीमाता की पूजा करके, ब्रिटिश संसद में दीपावली-पर्व के उत्सव पर भारतीय नृत्य, संगीत, रंगोली, संस्कृत मत्रों के उच्चारण व हिन्दू देवी-देवताओं की उपासना का आयोजन किया जाता है। ब्रिटेन ने तो इस पर्व पर डाक-टिकट भी जारी किया। कम्बोडिया, श्रीलंका, नेपाल, थाइलैण्ड, जावा, सुमात्रा, मारीशस, गुयाना, दक्षिण अफ्रीका, जापान इत्यादि देशों में धन की देवी लक्ष्मी की पूजा की जाती है।

कठोपनिषद् में यम-नचिकेता का प्रसंग आता है, नचिकेता जन्म-मरण का रहस्य यमराज से जानने के बाद जब यमलोक से वापिस मृत्युलोक में लौटे थे। एक धारणा के अनुसार नचिकेता के मृत्यु पर अमरता की विजय का ज्ञान लेकर लौटने की खुशी में घी के दीप जले थे। किंवदन्ती है कि यही आर्यवर्त की पहली दीपावली थी। एक एतिहासिक घटना के अनुसार गुप्तवंश के प्रसिद्ध सम्राट विक्रमादित्य के राज्याभिषेक के समय पूरे राज्य में दीपोत्सव मनाया। इसके अतिरिक्त इसी दिन राजा विक्रमादित्य ने अपना संवत चलाने का निर्णय किया था। नया संवत चैत्र सुदी प्रतिपदा से चलाया। दीन-ए-इलाही के प्रवर्तक मुगल सम्राट अकबर के शासनकाल में दौलतखाने के सामने 40 गज ऊंचे बांस पर एक बड़ा आकाशदीप दीपावली के दिन लटकाया जाता था। बादशाह जहाँगीर भी दीपावली धूमधाम से मनाते थे। अमृतसर के स्वर्ण मन्दिर का निर्माण भी दीपावली के दिन हुआ था। इसी दिन गुरु हरगोबिंद साहिब बादशाह जहाँगीर की कैद से मुक्त होकर अमृतसर आए थे।

स्वामी रामतीर्थ के जन्म और निर्वाण दोनों दिवसों के रूप में दीपावली विशेष महत्त्व रखती है और बौद्ध धर्म के प्रवर्तक भगवान् बुद्ध के समर्थकों व अनुयायियों ने 2500 वर्ष पूर्व लाखों दीप जलाकर उनका स्वागत किया था। कुल मिला कर दीपावली पर्व से जुड़ी प्रत्येक धार्मिक व पौराणिक मान्यता और ऐतिहासिक घटना इस पर्व के प्रति तथा महालक्ष्मी की आस्था एवं विश्वास बनाए हुए है।

एन.आर. आई. एवेन्यू, सुखचैन रोड,
फगवाड़ा (पंजाब)-144 401, मोबाईल नं. 9815385535

आलेख

महापर्व दीपावली और परंपरा

● हेमंत गुप्ता 'पंकज'

संघर्षमय संसार की कटु स्मृतियों को क्षण भर को भुला देने के लिए मानव इस्ततः मृगमरीचिका में भटकता रहता है। सुख और शांति की पिपासा को शांत करने के लिए उसने नए-नए आयोजन किए। जीवन के उत्पीड़न, शोक, चिंता और दुःख को भुलाकर मानव मुस्करा सके और एक साथ बैठकर हंस सके, गा सके, एक दूसरे पर प्रेम की वर्षा करके खुशियां मना सके। इन्हीं सब मानवीय प्रवृत्तियों ने मिलकर हमारे त्योहारों को जन्म दिया है। उनमें से दीपावली सबसे प्रमुख त्योहार है। यह वर्षभर और शरद काल का प्रधान त्योहार है। इन त्योहारों के अपने-अपने ऐतिहासिक, सामाजिक और सांस्कृतिक महत्त्व है।

दीपावली के पर्व के साथ हमारी ऐतिहासिक तथा धार्मिक मान्यताएं जुड़ी हुई हैं। मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम हिंदू जनमानस के रोम-रोम में बसे हैं। मानव जन्म से मृत्यु तक सांस की डोर इसी सांस्कृतिक महासागर सत्य के केंद्रबिंदु के चारों ओर परिभ्रमण करके जीवन पूर्ण करता है। भगवान राम चौदह वर्ष के वनवास के पश्चात अत्याचारी और दुराचारी रावण का वध करके सहोदर लक्ष्मण तथा पुनीत प्रिया मैथिली के साथ अयोध्या लौटे थे। साकेतवासियों की प्रसन्नता की सीमा नहीं रही। गदगद हृदय से उन्होंने राम का स्वागत किया तथा उस दिन उन्होंने खूब खुशियां मनाईं। घर-घर में पुड़ी और पकवान बने। रात्रि को अयोध्या में घी के दपीक जलाए गए, दीपावली की गई। त्योहार तो कई हैं, परंतु दीपावली की बात तो कुछ और ही है। पांच दिनों तक चलने वाला यह पर्व खुशनुमा मौसम और प्रकाश का रूप ले लेता है। जिसे हर कोई हर्षोल्लास के साथ मनाता है।

यह पर्व मूलतः अंधेरे के विरुद्ध संघर्ष एवं ऋतु परिवर्तन का प्रतीक है। पर्वों के इस महासंगम की शुरुआत दीपावली से दो दिन पहले अर्थात् कार्तिक माह की कृष्ण पक्ष की त्रयोदशी से होती है और कार्तिक शुक्ल पक्ष की द्वितीया को इसका समापन होता है। दीपावली से पहले कई महत्त्वपूर्ण दिवस आते हैं, जिसे लोग दीपावली की तरह ही मनाते हैं।

एकादशी

यह पांच पर्वों की शृंखला का पहला दिन होता है। इस दिन स्त्रियां व्रत रखती हैं और अपने घरों में ग्यारह दीपक जलाती हैं। इस दिन भगवान केशव का पूजन नैवेद्य और आरती कर, प्रसाद ग्रहणकर ब्राह्मणों को भोजन कराते हैं। ऐसा माना जाता है कि इस दिन व्रत करने से सारे पाप धुल जाते हैं।

गोवत्स द्वादशी

इस दिन गाय और बछड़े की पूजा की जाती है। व्रत करने वाली महिलाएं स्नान कर पूजा करती हैं। इस दिन अनाज गेहूं तथा गाय के दूध से बनी वस्तुएं तथा कटे फल आदि नहीं खाने चाहिए। इस दिन 12 दीए जलाए जाते हैं।

धनतेरस

धनतेरस धन की उपासना का पर्व है। दीपावली के पांच पर्वों की शृंखला का यह पहला पर्व है धनतेरस। ऐसी मान्यता है कि देवी का पहला वास धातु पर होता है। धातु के रूप में पहले पीतल और तांबे के बर्तनों की खरीद होती है। इसका शुभारंभ कार्तिक कृष्ण पक्ष की त्रयोदशी (धनतेरस) से होता है। महालक्ष्मी जी कहती है- हे घूमावती अब आप गमन कीजिए। जब मेरा वास होगा। इसलिए धनतेरस घूमावती के गमन और श्रीलक्ष्मी के आगमन का प्रतीक है। इस दिन को धनवंतरि जयंती के रूप में मनाते हैं। इस दिन आयुर्वेद का प्रसार करने वाले भगवान ध नवंतरि समुद्र मंथन से प्रकट हुए थे। यमराज ने अपनी बहन यमुना को वर दिया था कि धन त्रयोदशी के दिन इनके नाम से दीपदान करने से मनुष्य की अकाल मृत्यु नहीं होगी। धन के बारे में कहा जाता है कि धर्म तो धन बढ़े, धन बढ़े तो मान बढ़े जाए। इस रात यम का दीपक भी घर की देहरी पर रखा जाता है। इसके

बाद न तो कोई घर के बाहर जाता है और न ही आता है। यह एक प्रकार ये यम को बांधना है कि देवी, आप हमारे घर पर संकटों और अकाल मृत्यु की छाया न पड़ने दें।

नरक चतुर्दशी (छोटी दीपावली)

देवी को किसी भी प्रकार का मालिन्य स्वीकार नहीं है। न मन का और न ही घर का। इसलिए यह नरक चतुर्दशी पर लोगों को सफाई का संदेश देती है। भगवान से प्रार्थना की जाती है कि नरकासुर के रूप में किसी का जन्म नहीं हो। इसी को छोटी दीपावली भी कहते हैं। कार्तिक कृष्ण चतुर्दशी के दिन नरक चतुर्दशी का पर्व माना गया है। इस दिन आटा, तेल और हल्दी का उबटन बनाकर नहाने का विशेष महत्त्व है। इस दिन सौंदर्य से भगवान श्रीकृष्ण भगवान का पूजन और व्रत किया जाता है। माना जाता है कि ऐसा करने से भगवान सुंदरता प्रदान करते हैं।

लक्ष्मी पूजन की रात दीपावली

कार्तिक कृष्ण अमावस्या को मनाई जाने वाली दीपावली विशेष रूप से लक्ष्मी पूजन का पर्व है, इस दिन लक्ष्मी को प्रसन्न करने के लिए तथा उन्हें अपने घर में स्थायी रूप से रोकने के लिए उनकी पूजा अर्चना की जाती है। ब्रह्मा पुराण के अनुसार कार्तिक कृष्ण अमावस्या को अर्धरात्रि के समय लक्ष्मी जी सद्गृहस्थों के घरों में जहां-तहां विचरण करती हैं। स्वच्छ, शुद्ध, सुशोभित, दीपों से प्रकाशित जिन घरों में वे स्थायी रूप से निवास करती है। इसलिए सभी लोग दीपावली से पहले अपने घरों को लीप-पोत कर साफ-सुथरा व शुद्ध बनाते हैं तथा दीपावली के दिन घरों को अच्छी तरह से सजाकर दीपों की रोशनी से लक्ष्मी जी का पूजन करते हैं।

इस दिन लक्ष्मी जी की पूजा अकेले नहीं करनी चाहिए। लक्ष्मी गणेश पूजन का भी विशेष अर्थ है। माना जाता है कि लक्ष्मी यानी धन अगर अकेले आ जाए, तो वह मनुष्य को पूरी तरह लाभ नहीं पहुंचाता है, बल्कि हानि ही कर सकता है। धन के साथ ज्ञान और बुद्धि का भी होना आवश्यक है, तभी मनुष्य अपने घर का सही इस्तेमाल कर सकता है। इसलिए प्रार्थना की जाती है कि लक्ष्मी तथा गणेश दोनों ही घर-परिवार पर प्रसन्न हो तथा जीवन में मनुष्य अपनी बुद्धि का उपयोग करते हुए धन का उपयोग करें। खील बताशे, दीप, सुहाग-सामग्री, सोने-चांदी आदि से देवी की आराधना करनी चाहिए।

गोवर्धन पूजा

दीपावली के अगले दिन गोवर्धन पूजा की जाती है। इसे अन्नकूट भी कहा जाता है। कार्तिक मास शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा के दिन गोवर्धन पूजा का विधान है। यह विधान कृष्ण के द्वापर युग से प्रारंभ हुआ था। इसी दिन श्रीकृष्ण ने इंद्र के घमंड को चूर किया था। ऐसा माना जाता है कि इस दिन श्रीकृष्ण भगवान ने गोवर्धन पर्वत को अपनी कनिष्का पर उठा लिया था। एक बार इंद्र ब्रजवासियों से क्रोधित हो गए थे क्योंकि बृजवासियों ने उनकी पूजा न करके गोवर्धन की पूजा की थी। इससे क्रोधित होकर इंद्र ने वर्षा आरंभ कर दी थी। जो कई दिनों तक अनवरत चलती रही। सारा ब्रज डूबने लगा। ब्रजवासी रोते-रोते श्रीकृष्ण के पास आए, तब श्रीकृष्ण ने गोवर्धन पर्वत को उठाकर उसके नीचे सबको शरण दी। कृष्ण का प्रताप देखकर इंद्र स्वयं उनकी शरण में आ गए और इसी दिन से कृष्ण गोवर्धनधारी कहलाए और उनके उसी रूप की पूजा होने लगी।

इस दिन स्त्रियां प्रातः नहा-धोकर बड़े विधि-विधान से गोवर्धन पूजा करती हैं। प्रातः घर के बाहर गाय के गोबर का गोवर्धन बनाया जाता है और मिष्ठान और पुष्प आदि से उनकी पूजा की जाती है।

भैया दूज

दीपावली के अगले दिन गोवर्धन पूजा तथा उससे अगले दिन भैया दूज मनाई जाती है। बहनें इस दिन भाई की पूजा कर तिलक लगाकर उसके खुशहाल जीवन की कामना करती हैं।

ए-101, जयश्री विहार, थेगड़ा पुलिया के पास,
कैथून रोड, कोटा, राजस्थान-324003



आलेख

मनाली : ऐतिहासिक एवं धार्मिक पर्यटक स्थल

● डॉ. सूरत ठाकुर

वर्तमान मनाली तथा प्राचीन मनवालय, जिसके चारों ओर देवदार के हरे-भरे पेड़ और बीच में नदी संगम को देखकर ऋग्वेद की एक ऋचा बर्बस ही याद हो आती है -

उपह्वरे गिरीणां
संगमे च नदीनाम्।
धियो विप्रा अजायत।।

अर्थात् पर्वतों के उपह्वरों में नदियों के संगमों पर ही स्थित होकर कवियों ने प्रेरणा पाई है। व्यास घाटी सचमुच में अतुलनीय है। कुलान्त पीठ महात्म्य में यहां के सौंदर्य के बारे में ब्रह्मा ने नारद से कहा था :- हे नारद! जिस पीठ में पार्वती सहित महादेव ने शबर का शरीर धारण किया था, वहां विपाशा और पार्वती नदियां बहती हैं। वह साक्षात दुर्लभ स्वर्ग है, जहां व्यास और बुद्धिमान वसिष्ट ने तप किया था और जहां पूर्व काल में भीलनी के रूप में पार्वती हो रह चुकी है, जहां प्रेत कुष्मांड तथा हजारों योगिनियां रहती हैं, सचमुच वह पीठ देव व दानवों के लिए भी दुर्लभ है। यह मोक्षदायक है। इन्द्रकील पर्वत का आश्रय लेकर यहां देवी भुवनेश्वरी रहती है।

यहां असंख्य सर सरोवर हैं, जिनमें स्नान करके पुण्य कमाने लोग दूर-दूर से आते हैं। यहां ऐसी चरागाहें हैं, जो पर्यटकों को आनन्द प्रदान करती हैं। यहां ऐसी चोटियां व ढलानें हैं, जो साहसिक पर्यटन से जुड़े लोगों में रोमांच भर देते हैं। हरे-भरे जंगल और कल-कल बहती व्यास ने मनाली के सौंदर्य में चार चांद लगाये हैं। ऋग्वेद की ऋचा 10.129.1-3 में कहा गया है कि आरम्भ में न सत था, न असत था, न भूमि थी, न आकाश था, न वायु थी, न दिन था, न रात थी, न मृत्यु थी, न अमृत्व। वहां केवल हिरण्य गर्भ अर्थात् सोने का अण्डा था। हिरण्यगर्भ में महाद्वीप, सागर, पर्वत, उपग्रह, सुर, असुर, मानव थे। तपसा महिमा अर्थात् तप की महिमा से यह अण्डा आरम्भ में केवल दो विभागों में विभक्त हो गया। एक पृथ्वी, एक आकाश, बीच में वायुमण्डल और साथ ही स्वयंभू ब्रह्मा प्रादुर्भूत हुए। प्रादुर्भूत होने के बाद ब्रह्मा चिन्तित हुए कि सृष्टि का निर्माण होना चाहिए। सबसे पहले नियम और सिद्धांत होने चाहिए। नियम से पूर्व अनियमित सृष्टि कैसे। इसलिए ब्रह्मा ने तप और चिन्तन करके सबसे पहले ऋत और सत्य का निर्माण किया -

ऋतंच सत्यं चाभीद्धात् तपसोऽध्यजायत् ततो रात्रयजायत् ततः समुद्रो अर्णवः।

समुद्रादर्णवादधि संवत्सरो अजायत् अहोरात्राणि विद्धत् विश्यस्यमिषतो वंशी।

सूर्याचन्द्रमसौ धाता यथापूर्वयमलपयत दिवं च पृथिवींच अंतरिक्षमथो स्वः। ऋक्-10.24.7-9

तब रात्रि पैदा हुई, फिर अनेक लहरों वाला समुद्र हुआ। फिर उनमें से दिवस, समय, चन्द्र, संवत्सर पैदा किए। उसने सूर्य-चन्द्र जैसे पहले थे, वैसे पैदा किए, पृथ्वी और आंतरिक्ष पैदा किए। इस तरह सृष्टि की रचना तो हुई परन्तु मानव जाति की रचना अभी भी नहीं हो पाई। इसके सृजन के लिए को अनेकों और वर्ष लग गए। अन्ततः मानव जाति की रचना के लिए ब्रह्मा चिन्तित सर्वशक्ति सम्पन्न ब्रह्मा ने अपने आपको, अपने मानस को दो भागों में विभाजित किया। दक्षिण भाग से एक पुरुष जाति के रूप में पुरुष को और वाम भाग से एक नारी जाति के रूप में नारी को उत्पन्न किया। इन दोनों के सहयोग से जो पहला मानव पैदा हुआ, वह मनु स्वायंभुव था। इसी स्वायंभुव से सभी सुर, असुर, महर्षि और मनुष्य पैदा हुए।

आदि मनु ब्रह्मा स्वायंभुव से पैदा हुए, परन्तु बाद के सारे मनु सृष्टि के मानव या सृष्टि की किसी शक्ति से उत्पन्न हुए हैं। उनके लिए सृष्टि पहले से ही विद्यमान थी। प्रथम मनु स्वायंभुव से छटे मनु चाक्षुस तक एतद्पूर्व हो चुके हैं। वर्तमान में श्वेतवराह कल्प का सातवां मन्वन्तर चल रहा है, जिसके प्रवर्तक सातवें मनु वैवस्वत का मनाली से सीधा सम्बन्ध स्थापित होता है। यह कलियुग के मनु कहे जाते हैं। इनका पूर्व के मनु की वंशावली से कोई सम्बन्ध नहीं है। यह विवस्वान अर्थात् सूर्य पुत्र हैं। सर्पराज शेषनाग की शैया पर लेटे विष्णु की नाभि से कमल उपजा है। कमल फूल पर चतुर्मुखी ब्रह्मा विराजमान हैं। उनसे उनका मानसपुत्र मरीचि पैदा हुआ। मरीचि की पत्नी दक्षपुत्री से कश्यप उत्पन्न हुए। कश्यप और उनकी पत्नी अदिति से विवस्वान् और

उनसे वैवस्वत मनु उत्पन्न हुए। भगवत पुराण में इसे श्राद्ध देव मनु कहा गया है। विभिन्न पुराणों और महाभारत के आख्यानों के अनुसार महाप्रलय के बाद भारी जलप्रवाह पर से गुजरती नाव हिमालय के जिस शिखर पर आकर रुकी, उसका नाम हेमकुट बताया गया है और बाढ़ के कुछ जल उतरने के बाद जहां नौका बांधी गई, उसका नाम नौबन्धन (नाऊपनाऊ) था।

वैवस्वत मनु ने मनाली से सृष्टि का पुनर्जीवन आरम्भ किया। वैवस्वत मनु का मूल कार्य सृष्टि रचना नहीं था, वरन् मानव जाति का सृजन था। उसके सामने भूमि थी, आकाश था, अंतरिक्ष थे, चांद-तारे, दिन-रात, और समुद्र था। मत्स्य जो विष्णु अवतार थी, ने मनु को बाढ़ से सचेत किया था। मनु ने उसके आदेशों का पालन करते हुए एक नौका बनाई। उसमें सम्पूर्ण वनस्पतियों के बीज और प्रागकणों के जोड़े सुरक्षित किए और जब महाप्रलय का समय आया, तो मनु ने उसी मछली के सींग के साथ जो अपने पूर्व बचनों के अनुसार तभी वहां पहुंच गई, शेष नाग की रस्सी बनाकर नौका को बांधा। अत्रि, कश्यप, गौतम, जमदग्नि, भारद्वाज, वशिष्ट और विश्वामित्र आदि सप्तर्षि भी आकर नौका में बैठ गए। सारी पृथ्वी, भू, भवः आदि सम्पूर्ण लोक जलमग्न हो गया। मछली नौका को खींचती हुई उधर हिमालय पर्वत की ओर हेमकुट पर लाई। जलप्लावन के प्रलय सागर में मनु की नाव मत्स्य अवतार भगवान सम्भाले हुए थे। हामटा जोत पर मनु और सप्त ऋषियों के नाव से उघर जाने पर मत्स्य भगवान भी नाव से अलग हो गए और उन्होंने पानी के भीतर माछंग गांव में विश्राम किया। विष्णु के आदेशानुसार मनु ने अपनी नौका को हिमालय के एक शिखर नाव प्रबन्धन से बांधा। जब समुद्र नीचे उतरा तो मनु ने सब कुछ नष्ट हुआ पाया। सुनसान, वीरान, निर्जन सन्नाटे के सिवा कुछ नहीं था। तब उसने सबसे पहले यज्ञ किया। यज्ञ अग्नि हवि से श्रद्धा नाम की स्त्री प्रादुर्भूत हुई, उससे उसने विवाह किया। उनसे इला नाम की पुत्री उत्पन्न हुई। मनु महाराज कुछ समय तक अपनी बेटी इला के साथ मनाली से 2 किलोमीटर उघरपूर्व में व्यास के दूसरे छोर पर बस गए। वैवस्वत मनु ने अपने इस मन्वन्तर में मानव सृष्टि का संचालन किया है, अतः उन्हें ही सृष्टि नारायण माना जाता है। इला से ही इस स्थान का नाम अलेऊ पड़ा और यहां पर सृष्टि नारायण का मंदिर उनके यहां पर रहने की पुष्टि करता है।

यह विश्वास किया जाता है कि बाढ़ का पानी हिमालय शिखरों हेमकुट अर्थात् हामटा, इन्द्रकील तथा नावप्रबन्धन तक चढ़ा होगा और जब जलप्लावन का पानी धीरे-धीरे नीचे उतरने से जो भाग सबसे पहले बसा होगा या मनु द्वारा बसाया गया होगा तो उसे कुलान्त पीठ की संज्ञा दी गई होगी। क्योंकि यहां तक आर्य कुल का अन्त हो चुका था। कुलान्त पीठ का जो क्षेत्र दर्शाया गया है, वह अधिक विशाल भी नहीं है। वह हामटा से लेकर पार्वती व्यास के संगम तक फैला है। वास्तव में कुलान्त पीठ का अर्थ है वह पीठ अर्थात् भूभाग जो एक बार मनु के महाजलप्रवाह के कारण पानी में डूब जाने के बाद फिर पानी के सूख जाने पर पहली बार उभर कर स्थापित हुआ। अर्थात् एक बार कुल के अन्त होने पर पुनः स्थापित हुआ। महाप्रलय के बाद मनाली में मनु ने मानवजाति के पुनर्सृजन के लिए घर बसाया। इसलिए उसे मनुआलय कहा गया, जो कालान्तर में मनाली नाम से विख्यात हुआ। लोक साहित्य एवं संस्कृति के प्रसिद्ध विद्वान मौलूराम ठाकुर का मानना है कि हिमाचल में आदि पुरुष मनु के जन्मदाता ब्रह्मा का आदि स्थान ब्रह्मपुर रहा होगा, जो आज चम्बा जिले में भरमौर के नाम से प्रचलित है। यहां ब्रह्मा की अर्धांगिनी ब्रह्माणी देवी का मंदिर है। कुल्लू से 7 किलोमीटर दक्षिण की तरफ खोखन गांव में आदि ब्रह्मा का होना भी सृष्टि की रचना से सम्बन्ध रखता है।

महाप्रलय के बाद मनाली में मनु ने मानवजाति के पुनर्सृजन के लिए घर बसाया। इसलिए उसे मनुआलय कहा गया, जो कालान्तर में मनाली नाम से विख्यात हुआ। लोक साहित्य एवं संस्कृति के प्रसिद्ध विद्वान मौलूराम ठाकुर का मानना है कि हिमाचल में आदि पुरुष मनु के जन्मदाता ब्रह्मा का आदि स्थान ब्रह्मपुर रहा होगा, जो आज चम्बा जिले में भरमौर के नाम से प्रचलित है। यहां ब्रह्मा की अर्धांगिनी ब्रह्माणी देवी का मंदिर है।

कुल्लू में विहंगमणिपाल के राज्य शासन स्थापित होने से पहले छोटे-छोटे राणे-ठाकुरों का शासन था। ये ठाकुर व राणे एक दो या दो से अधिक गांवों के अधिपति थे। इनका अपना शासनतंत्र था। इनमें से कई निरंकुश भी थे, जिन्हें आम जनता को विभिन्न तरीको से सताने में मजा आता था। इनमें पिती ठाकुर का नाम विशेष रूप से लिया जाता है। कहते हैं कि वह नवप्रसूता स्त्री का दूध पीता था। इसी तरह निरमण्ड की देवी अंबिका की भारथा में भी वर्णन हुआ है कि समौर का राणा भी प्रसूता महिला के दूध की खीर बनाकर पीता था।

पिति ठाकुर को मारने के बाद विहंगमणिपाल ने अपना शासन स्थपित किया तो उसने धीरे-धीरे स्थानीय ठाकुरों को एक-एक करके अपने अधीन करना आरम्भ किया। उनके बाद उनके वंशजों ने भी यही प्रक्रिया जारी रखी। फिर भी दूर-दराज तथा ऊंचे स्थानों पर बसे राणा ठाकुरों को वे अपने अधीन नहीं कर सके। ऐसा ही मनाली गांव का झीणा राणा था। झीणा राणा का एक गढ़ मनाली गांव और दूसरा पीछे की तरफ पहाड़ी पर मंजनकोट में था। वह गर्मियों में मनाली के गढ़ में और सर्दियों में मंजनकोट में रहता था। व्यास के दोनों तरफ जगतसुख से ऊपर कोठी गांव तक उसका आधिपत्य था। वह लोगों में बहुत प्रिय था,

इसलिए कुल्लू के राजाओं द्वारा उसे हराना आसान नहीं था। सोहलवीं शताब्दी में कुल्लू के राजा सिद्ध पाल, जिसने अपने बाहुबल से पाल के स्थान पर अपने नाम के आगे सिंह लगाना आरम्भ किया था, उसने सिंह को मल्लयुद्ध करके मारा था। इसीलिए उसका नाम सिद्ध सिंह पड़ा। उसने मनाली के झीणा राणा को मारने के प्रयत्न आरम्भ किए, परन्तु वह सफल नहीं हो पा रहा था। प्रेम और युद्ध में सब कुछ जायज होता है। राजा सिद्धसिंह भी राणा झीणा को मारने के उपाय ढूंढ रहा था। तभी किसी ने उसे झीणा राणा और उसके राज्य के तीरन्दाज तुलसु मुछियाणी साईस के बारे में बताया कि मूछें रखने के कारण झीणा राणा तुलसु मुछियाणी से नाराज चल रहा है। कहते हैं कि मुछियाणी साईस ने अपनी मूछों को बढ़ा दिया था। उसकी मूछें सात मुट्ठी के बराबर लम्बी थी। मूछों के कारण राणा गुस्सा हुआ था कि उसका दास उसकी इच्छा के बिना कैसे इतनी बड़ी मूछें रख सकता है। उसने मूछियाणी को अपनी मूछें काटने को कहा, परन्तु मुछियाणी नहीं माना। तब एक दिन राणा ने उसे बुलाकर कहा, 'तू बहुत बड़ा तीरन्दाज बनता है। यदि तू बैल के ऊपर बैठी चिड़िया (शियारी) को बैल को छुए बिना एक ही तीर से मार गिरायेगा तो तुझे मूछें रखने की अनुमति होगी, वरना तुझे मृत्यु दंड दिया जाएगा।' बैल के ऊपर बैठी चिड़िया को मारना आसान नहीं था। साईस मुछियाणी ने राणा की शर्त स्वीकार कर ली। राजा ने सोचा था कि मुछियाणी बैल के ऊपर बैठी चिड़िया को नहीं मार पाएगा। अतः इसकी मौत निश्चित है। परन्तु मुछियाणी ने एक ही तीर से बैल पर बैठी चिड़िया को मार गिराया। शर्त के अनुसार उसे मूछें रखने की इजाजत मिल गई। इस घटना के बाद मुछियाणी और राणा की दुश्मनी और बढ़ गई।

राजा सिद्ध सिंह जिसे राजा बधानी भी कहते थे, ने इसी दुश्मनी का लाभ उठाने का निर्णय लिया। उसने साईस मुछियाणी को उचित इनाम के बदले राणा झीणा को मारने के लिए राजी कर लिया। सिद्ध सिंह के कहने पर तुलसु मुछियाणी ने कमाणु तथा रामवन के खेतों में काम देख रहे झीणा राणा को छिप कर तीर चलाया, जो उसकी रान पर लगा और वह उसी अवस्था में घोड़े पर सवार होकर मंजनकोट की ओर भागा था। वह प्यास से बेहाल वराकोट के चश्मे में पानी पीने के लिए रुका और वहीं घोड़े से गिर कर उसकी मौत हो गई। घोड़ा जब उसके बिना ही मजनकोट पहुंचा, तब रानियों को उसकी मौत का पता चला। उसकी एक गर्भवती रानी को छोड़कर सभी रानियां उसी के साथ सती हो गई थी। तुलसु मछियाणी की पत्नी भी मंजनकोट में दासी का काम करती थी, वह भी उन्हीं के साथ सती हो गई। झीणा राणा की गर्मियों की राजधानी के गढ़ के खण्डहर मनाली गांव में अभी भी विद्यमान है। तुलसू मछियाणी को वादे के मुताविक राजा सिद्ध सिंह ने शनाग गांव में इनाम के रूप में जमीन दी थी।

झीणा राणा की गर्भवती पत्नी मंजनकोट से छुपते-छुपाते निकल कर एक गांव से दूसरे गांव में शरण लेती रही। उसने अलेऊ में एक शिशु को जन्म दिया, जिसके वंशज अब भी अलेऊ गांव में नवानी खानदान के नाम से रहते हैं।

मंजनकोट में कुल्लू के राजा की चम्बा के राजा के साथ लड़ाई हुई थी। कहते हैं कि यह लड़ाई 12 वर्षों तक चलती रही। अंततः 12 वर्षों के बाद कुल्लू के राजा के पक्ष में फैसला हुआ था। इस खुशी में कोठी गांव में जश्न मनाया गया, जिसमें गद्दी सेना को भी आमंत्रित किया गया था। गांव जाने के लिए व्यास के ऊपर से होकर एक पुल से गुजरना पड़ता था। पुल के नीचे बहुत गहरी खाई थी। कुल्लू के सैनिकों तथा गांव वालों ने एक षड्यंत्र के तहत पहले तो गद्दी सेना को सूर 'कोदरा अन्न की मदिरा' पिलाई। उनके जाने से पहले पुल पर से तखते हटा दिए गये और तखतों के स्थान पर भांग की सूखी डालियां बिछाई गई। गांव में ढोल नगाड़ों को बजाया गया। सुरापान करने के बाद गद्दी सिपाही पुल पार करने लगे तो वे निकाले गए तख्तों के स्थान पर बिछी भांग पर से गहरी खाई में गिरते गए। ढोल नगाड़ों की आवाज के कारण उनकी चीखें पीछे वाले सैनिकों को सुनाई नहीं दे रही थी। गद्दी सेना के साथ भी एक ढोल वाला बजंतरी था। जब वह ढोल वाला पुल से नीचे गिरा तो ढोल की आवाज सुनकर पीछे वाले सिपाही चौंक गए। वे पीछे को हट गए परन्तु पीछे कुल्लू के सैनिक तैयार खड़े थे, उन्होंने एक-एक करके उन सब गद्दी सिपाहियों को मार डाला। जिस स्थान पर यह पुल है, वहां गहरी खाई में उलटे ढांक में काला पोजा नाम का ऐसी झाड़ी है, जो अमरत्व प्रदान करता है, परन्तु इस पोजे के पास पहुंचना असम्भव है।

कुल्लू राजवंश ने जगतसुख, और नग्गर से मनाली के विभिन्न गांवों के ठाकुरों को अपने अधीन करने के बाद मकराहड़ और कुल्लू में राजधानी बनाई और रूपी सिराज और आउटर सिराज के ठाकुरों को अपने अधीन करते हुए राजा ज्ञान सिंह तक शासन किया। कुल्लू में सिख आक्रमण के बाद सन् 1846 में अंग्रेजों ने कुल्लू को भी अपने अधीन कर लिया। ज्ञान सिंह को राजा के स्थान पर राय की उपाधि देकर कुछ अधिकारों के साथ छः बजीरियों में से उसे केवल रूपी की बजीरी दे दी। स्वतंत्रता के बाद भी सन् 1971 तक रूपी बजीरी के राजस्व अधिकार कुल्लू राजवंश के राय महेंन्द्र सिह के पास रहे। स्वतंत्रता के बाद महापंजाब में 1961 तक कांगड़ा जिला के अन्तर्गत कुल्लू उपमण्डल रहा। सन् 1961 में कुल्लू को जिला बनाया गया और सन् 1966 में कांगड़ा के साथ कुल्लू जिला राज्य पुनर्गठन के तहत हिमाचल में प्रदेश में शामिल हो गया। उसके बाद मनाली नग्गर ब्लॉक बना और अब यह उपमण्डल मुख्यालय है।

प्राध्यापक, राजकीय महाविद्यालय, कुल्लू, हि.प्र.

आलेख

रामपुर-सहसवान घराना : प्रतिनिधि कलाकार
डॉ. शन्नो खुराणा

● डॉ. मनोरमा शर्मा

शास्त्रीय संगीत के क्षेत्र में कुछ विभूतियां ऐसी हैं, जिन्हें सुनने की ललक सदैव बनी रहती है। इन्हीं में एक हैं पद्‌मभूषण डॉ. शन्नो खुराणा। Masters of Hindustani Classical Music श्रृंखला के अंतर्गत इंदिरा गांधी राष्ट्रीय कला केंद्र ने हिंदुस्तानी संगीत के विभिन्न घरानों की बंदिशें संग्रहित की हैं। 2015 में हाल ही में डॉ. शन्नो खुराणा की प्रस्तुतियों की 'रामपुर सहसवान घराने की बंदिशों' के शीर्षक से दो डीवीडी का विमोचन हुआ।

बहुआयामी व्यक्तित्व की धनी पद्‌मभूषण डॉ. शन्नो खुराणा रामपुर सहसवान घराने की एक ऐसी विभूति हैं, जिन्होंने इस घराने की गौरवमय परंपरा को अक्षुण्ण बनाए रखा है। 85 वर्ष की आयु में भी ओजपूर्ण गायन की प्रस्तुति डॉ. शन्नो खुराणा की दुर्लभ बंदिशों का संकलन उनकी घरानेदार परंपरागत गुरु-शिष्य परंपरा से प्राप्त शिक्षा का प्रतिनिधित्व करता है।

डॉ. शन्नो खुराणा को सुनना एक अवर्णनीय अनुभव है। उनकी आवाज़ का जादू अप्रितम क्षणों की अनुभूति करवा देता है। खुली, खनक भरी आवाज़ में स्वर-विन्यास, आवाज़ लगाने का अंदाज़ उनकी गुरु-शिष्य परंपरा से प्राप्त गायकी को उद्‌घाटित करता है। आज की युवा पीढ़ी के आवाज़ लगाने का अंदाज़ तो माइक्रोफोन के लिए तैयार करवाया जाता है, उससे बिलकुल अलग ग्वालियर और रामपुर सहसवान घराने की शुद्ध मुद्रा और शुद्ध वाणी जैसे गुणों को शन्नो खुराणा की प्रस्तुति सार्थक करती है। राजस्थान के जोधपुर में 1927 को इनका जन्म हुआ। संगीत शिक्षा का आरंभ काफी छोटी उम्र से ही हो गया था। परंपरागत रूप से पद्‌मभूषण उस्ताद मुश्ताक हुसैन खां के शिष्यत्व में 1958 से रामपुर-सहसवान घराने की शिक्षा कठिन अनुशासन में प्राप्त की। ग्वालियर तथा आगरा घराने की गायकी के गूढ़ तत्त्वों की शिक्षा तथा अध्ययन पं. रघुनाथराव मुसलगांवकर, पं. कृष्ण नारायण रातंजनकर तथ पं. वी.आर. अठावले से प्राप्त हुआ। सुप्रसिद्ध संगीत शास्त्रज्ञ पद्‌मभूषण ठाकुर जयदेव सिंह के मार्गदर्शन में संगीत शास्त्र विज्ञान का गहन अध्ययन किया, जिसके परिणामस्वरूप उनका बहुआयामी व्यक्तित्व ग्वालियर और रामपुर की संगीत परंपरा का प्रतिनिधित्व करता है।

हिंदुस्तानी संगीत की विभिन्न विधाओं पर डॉ. शन्नो खुराणा का पूर्ण अधिकार है। विलंबित खयाल की रचनाएं उनकी सृजनात्मकता तथा प्रभावपूर्ण गायकी से रामपुर सहसवान घराने की गायकी स्पष्ट रूप से झलकती है। विद्वतापूर्ण सीधी सरल बंदिशों की प्रस्तुति द्रुत खयाल और तराने की विविधता से परिपूर्ण होती है। टप्पा, त्रिवट, राग-सागर जैसी कठिन गायन विधाएं कुशलता से प्रस्तुत करने में वे सक्षम हैं।

गत कई वर्षों से शन्नो जी दुर्लभ घरानेदार बंदिशों, अछोप तथा प्रचलित रागों के प्रलेखन और संरक्षण पर कार्य कर रही हैं। 1992 में इनके गाए गए ऐसे 70 रागों का संकलन फोर्ड फाउंडेशन द्वारा संगीत रिसर्च अकादमी, कलकत्ता के लिए किया गया। तत्पश्चात पेरिस में यूनेस्को के माध्यम से Intengible Heritage of the World के लिए शन्नो खुराणा की प्रस्तुतियों को ध्वन्यांकित किया गया। ऐसी अनुभवी विदुषी डॉ. शन्नो खुराणा की बहुआयामी प्रस्तुतियों का संग्रह दो डीवीडी के माध्यम से संगीत प्रेमियों के लिए संग्रहणीय हैं।

डीवीडी-1 में रामपुर सहसवान घराने का पचिय डॉ. शन्नो खुराणा ने Modernity Yet, Tradition: About Rampur Sehaswan Gharana शीर्षक से दिया है। प्रो. नमन अहूजा द्वारा लिए गए साक्षात्कार के माध्यम से इसी डीवीडी के दूसरे भाग में सात अत्यंत दुर्लभ गायन विधाओं की प्रस्तुति है जो इस प्रकार है-

1. बोल- बांट की ठुमरी - राग खमाज, एकताल में निबद्ध।
2. राग बागेश्री - द्रुत खयाल - तीन ताल
3. राग सावनी बिहाग - तीन ताल
4. राग देस - खयाल, मध्यलय, तीन ताल
5. राग जंगला - टप्पा, आड़ा चौताल
6. सोज़ - राग भैरवी में निबद्ध
7. राग सागर - 14 रागों पर आधारित

एकताल में बोल-बांट की ठुमरी जो एकताल में निबद्ध है, उसमें बंदिश के बोल, उसी को आकार और उसी को सरगम में गाना बोल-बांट की ठुमरी की अत्यंत विविधतापूर्ण प्रस्तुति है।

उस्ताद मुश्ताक हुसैन खां से प्राप्त ऐसी गायकी आज कम ही सुनाई देती है। आड़ा चौताल में टप्पा अत्यंत सहजता से प्रस्तुत किया गया है। टप्पा गायकी के लिए विशेष कंठ साधना की आवश्यकता होती है। अद्धा ताल में इसका गायन प्रायः होता है, परंतु आड़ा चौताल जैसे ताल में इस कठिन गायकी को बहुत पारंगता से प्रस्तुत किया गया है। सोज़ की प्रस्तुति एक अन्य विधा की गायन शैली का रूप है। इसी प्रकार राग सावनी बिहाग भी एक अप्रचलित राग है जो आज सुना नहीं जाता। ऐसी दुर्लभ चीज़ों का संग्रह वास्तव में एक Treasure (खजाना) है।

इसी डीवीडी के अगले भाग में राग छायानट में विलंबित खयाल, तिलवाड़ा ताल में निबद्ध, राग छायानट में द्रुत खयाल, एकताल तथा राग छायानट में ही एक अन्य द्रुत खयाल तीन ताल में प्रस्तुत किया गया है। डॉ. शन्नो खुराणा ने बताया कि रामपुर सहसवान घराने में बंदिशों को बहुत महत्त्व दिया जाता है। उस्ताद मुश्ताक हुसैन खां ने बंदिशों को बहुत दिया है। विभिन्न रागों में बंदिशों के माध्यम से रस-निष्पत्ति कैसे की जाती है, इस पर विशेष जोर इस घराने में दिया जाता है। प्रयत्न यही होता है कि विभिन्न रसों का संचरण श्रोताओं तक पहुंचे। रामपुर घराने की कई बंदिशें भातखंडे जी की क्रमिक पुस्तक मालिका में संग्रहित है, परंतु उनमें से कुछ बंदिशों के बोल उस्ताद मुश्ताक हुसैन खां की परंपरागत बंदिशों के बोलों से भिन्न हैं। विभिन्न रागों की कठिन अदायगी तथा उनकी गूढ़ता का अध्ययन एक प्रोफेशनल गायक को अवश्य करना चाहिए तथा उसे विभिन्न गायन शैलियों में भी पारंगत होना चाहिए। ध्रुपद, धमार, खयाल, टप्पा, ठुमरी, दादरा, तराना, भजन, ग़ज़ल सभी शैलियों पर अधिकारपूर्ण प्रस्तुतिकरण आवश्यक है।

हिंदुस्तानी संगीत की विभिन्न विधाओं पर डॉ. शन्नो खुराणा का पूर्ण अधिकार है। विलंबित खयाल की रचनाएं उनकी सृजनात्मकता तथा प्रभावपूर्ण गायकी से रामपुर सहसवान घराने की गायकी स्पष्ट रूप से झलकती है। विद्वतापूर्ण सीधी सरल बंदिशों की प्रस्तुति द्रुत खयाल और तराने की विविधता से परिपूर्ण होती है। टप्पा, त्रिवट, राग-सागर जैसी कठिन गायन विधाएं कुशलता से प्रस्तुत करने में वे सक्षम हैं।

रामपुर-सहसवान घराने की प्रमुख विशेषता इसके स्वर-लगाव का ढंग है। कहां सांस भरना है और कहां सांस लेना है (Break करना) स्वर-लगाव ही एक घराने को दूसरे घराने से अलग करता है। राग का स्पष्ट प्रस्तुतिकरण, किस प्रकार एक स्वर दूसरे स्वर के साथ गुंथता चला जाता है, विशेष प्रकार की मींड का प्रयोग, खटका, मुर्की और गमक के विभिन्न प्रयोग इस घराने की अन्य विशेषताएं हैं। इन बारीकियों को सीना-ब-सीना तालीम से ही ग्रहण किया जा सकता है। राग की भावुकता और मनोवैज्ञानिक पहलुओं का संचरण गायक के व्यक्तित्व का परिचायक होता है। विद्यार्थी को विभिन्न स्वर-प्रयोग में शुद्धता लाने हेतु 'मूर्च्छना' का अभ्यास भी करवाया जाता है, जिस प्रकार कई रागों में मध्यम को स अथवा आधार स्वर (Keynote) मान कर गाया जाता है, उसी प्रकार मूर्च्छना पद्धति में विभिन्न स्वरों को आधार स्वर मान कर गाना स्वर-प्रयोग में कुशलता प्रदान करता है। रामपुर-सहसवान घराने की बंदिशें विविधतापूर्ण होती है। कुछ तानयुक्त बंदिशें भी हैं। एक ही बंदिश को अलग-अलग रागों में भी गाया जाता है, जैसे राग भूपाली में गाई गई बंदिश रागदेशकार या शुद्धकल्याण में भी गाई जा सकती है। ताल के अनुसार बंदिश का वज़न, मधुरता और रस-निष्पत्ति इस घराने की विशेषता है। इसीलिए बहुत सी बंदिशें रूपक ताल, आड़ा चौताल, द्रुत एकताल, झपताल आदि में भी गाई जाती हैं। ब्रजभाषा के अतिरिक्त पंजाबी में भी कुछ बंदिशें भीमपलासी राग और हंसकिंकणी रागों में हैं। सूफियाना बंदिशें चिश्ती परंपरा को समर्पित हैं। सोज़ मुहर्रम के बाद गाया जाता है। अतः रामपुर सहसवान घराने की गायकी बहुआयामी है।

डीवीडी-दो में डॉ. शन्नो खुराणा की प्रस्तुत की गई रामपुर- सहसवान घराने की 33 बंदिशें संग्रहित हैं। इन रचनाओं को सुनकर सहज ही रामपुर-सहसवान घराने की विविधता-पूर्ण गायकी का दिग्दर्शन होता है। विलंबित और द्रुत खयालों की बंदिशें विभिन्न तालों में निबद्धकर प्रस्तुत की गई हैं। राग बिलावल के विभिन्न रूप अल्हैया-बिलावल, देवगिरी बिलावन, जैज बिलावल, शुक्ल बिलावल जैसे राग किस प्रकार एक दूसरे से भिन्न हो जाते हैं, इसका उदाहरण हैं। अहीरी तोड़ी देसी अंग, जंगला, शुक्ल बिलावल और जैज बिलावल जैसे विलुप्त हो रहे रागों की भावपूर्ण बंदिशें वास्तव में रोमांचित कर जाती हैं। राग अडाना में त्रिवट, राग काफी और राग भैरवी में टप्पा कठिन गायन विधाएं हैं। इस शैली के आज गिने-चुने गायक हैं। तीन ताल में निबद्ध त्रिवट पखावज और तबले के बोलों की चमत्कारी प्रस्तुति है। दोनों टप्पा गायन अद्धाताल में निबद्ध हैं। राग जंगला में गाया गया टप्पा आड़ा चौताल ताल में प्रस्तुत किया गया है। राग देस में तराना, राग भीमपलासी में पंजाबी बंदिश इस घराने के एक अन्य पहलू को दर्शाते हैं। इस घराने के कलाकारों ने कठिन परिश्रम से प्रशिक्षण प्राप्त किया है। विलंबिम खयालों की रचनाएं तिलवाड़ा और एकताल में तथा द्रुत खयाल की रचनाएं तीन ताल विलम्बित खयालों की रचनाएं तिलवाड़ा और एकताल में तथा द्रुत खयाल की तीन ताल के अतिरिक्त रूपक, झपताल और द्रुत एकताल में निबद्ध हैं। टप्पा अद्धाताल और आड़ा चौताल

कविता

सिगरेट

● रतन चंद 'रत्नेश'

एक

तुम अचानक चले गए
बिना कुछ कहे, बिना कुछ सुने।
तुम सुनते ही कब थे ?
मैंने कई बार तुमसे कहा था
सिगरेट के पैकेट पर लिखे
वैधानिक चेतावनी पर अमल करो
कुछ तो कहो।
तुमने कभी कुछ कहा नहीं
बस हंसकर टाला
जैसे मन ही मन कहा हो --
लोग बिना सिगरेट पीये भी तो मरते हैं।
दोस्त !
स्वाभाविक मौत और आत्महत्या में
एक बहुत बड़ा फर्क है
एक में सुकुन, दूसरे में दर्द है।
आज तुम्हारी तेरहवीं पर जुटे लोग
जो एक सुर में आलाप रहे हैं
कि हृदयाघात अच्छी मौत है
बिना तकलीफ सहे आदमी
चुपचाप चला जाता है
वे बस तसल्ली को सहला रहे हैं ।
उन्हें भी नहीं पता है मृत्यु और आत्महत्या का फर्क
मृत्यु क्षणिक, आत्महत्या चिरस्थायी है
काश तुम आत्महत्या की इस
गहरी पीड़ा को समझते
मेरे कहे पर सिगरेट छोड़ते
तो आज वह पीड़ा सहनी नहीं पड़ती
तुम्हारे बूढ़े बाप और जीवनसंगिनी को।

दो

जलती है सिगरेट जब
उसकी आग श्मशान में पहुंचकर
किसी धधकते अंगारे में
चुपके से दफन हो जाती है।

तीन

सिगरेट पीना स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है
सिगरेट के पैकेट पर लिखे इस वैधानिक चेतावनी पर
पीने वालों की निगाहें कभी नहीं जातीं
सच मायने में।
अगर जाती भी है तो वे पढ़ नहीं पाते हैं
जबकि हकीकत यह है कि
वे कई-कई भाषाएं जानते हैं।
स्कूल जाता बच्चा
उत्सुकतावश उस खाली पैकेट को उठाकर पढ़ता है
और सिगरेट पीने वाले के सुलगते होठों को देखकर
कई सवालों से घिर जाता है।
फिर इन सवालों को भी वह चुपके से
उन सवालों की फेहरिस्त में शामिल कर लेता है
जिनके सही सही जवाब न कभी मिलते हैं
और न कभी दिए जाते हैं।

म. नं. 1859, सेक्टर 7-सी, चंडीगढ़
मोबाइल-09417573357

में गाए गए हैं। विषय तानें, खटका, मुर्की, सांस पर नियंत्रण, ताल का वैचित्र्य प्रयोग टप्पा गायकी की विशेषताएं हैं, जिन्हें शन्नो जी ने अत्यंत सहजता से प्रस्तुत किया है। सोज़ का गायन एक खूबसूरत प्रस्तुति है। राग सागर की प्रस्तुति अभूतपूर्व है। इस प्रस्तुति में चौदह रागों का समावेश हुआ है। राग बहार से आरंभ कर राग दरबारी पर समाप्ति की गई है। अन्य राग हैं राग बहार, राग रामकली, राग गुणकली, गौरी, शंकरा, भाली-गौरा, श्री, शहना, वृंदावनी सारंग, बसंत, सारंग, सोहनी, मालश्री और दरबारी कान्हड़ा। राग सागर में जिस राग का नामोल्लेख होता है उसी राग में उस पंक्ति का गायन होता है। एक के बाद एक विभिन्न चौदह रागों की प्रस्तुति वास्तव में कठिन साधना की परिचायक है। घरानेदार बंदिशों का संग्रह इस दिशा में स्तुत्य प्रयास है। एक संग्रहनीय कलाकृति है। Masters of Hindustani Classical Music के अंतर्गत रामपुर सहसवान घराने की गायिका पद्मविभूषण डॉ. शन्नो खुराणा पर दो डीवीडी की प्रस्तुति के लिए इंदिरा गांधी राष्ट्रीय कला केंद्र बधाई का पात्र है।

प्रोफेसर संगीत (सेवानिवृत्त), 3-खेड़ा निवास, संजौली, शिमला, हिमाचल प्रदेश-171 006, मो. 98165 34512

आलेख

पहाड़ी जनजीवन एक परिचय

● शास्त्री दीनानाथ गौतम

हिमाचल प्रदेश का पहाड़ी लोक जीवन अत्यंत श्रमशील एवं कठिन है और कृषि एवं पशुपालन प्रमुख व्यवसाय रहा है। इसलिए संस्कृति, सभ्यता और चलन व्यवहार में भी भिन्नता रहना स्वाभाविक ही है। अतः पहाड़ी ढलानों में भी तंग पगडंडियों के मार्ग और कल-कल बहते नदी-नालों को पार करना होता था, पशुओं के लिए घास-पात इकट्ठा करने के लिए हमेशा जान जोखिम में डाल करके ही ढांक-ढंखारों में जाना होता था और इसके लिए घने जंगलों में नालों के आस-पास हरे-भरे वृक्षों पर चढ़ना पड़ता था। तब कहीं पशुपालन करवा पाता था और घराट पिसवाने के लिए खड्डों एवं नदी-नालों में उतरना पड़ता था और मिट्टी के बनाए गए घड़ों में पानी दूर-दूर तक चश्मों से पीठ पर पणैंटी में पानी ढोकर लाना होता था। किरडुओं में गोबर पीठ में उठाकर खेतों में पहुंचाना होता था, अतः घराटों तक पानी बहते घराटों तक मक्की, गेहूं, जौ, कौदा का पीसण खाल से बने खालहडुओं से पीठ पर रस्सियों से बांध कर ले जाना और लाना पड़ता था। अतः हाट-घराट सभी प्रकार के काम-धंधे पीठ पर ही करने होते थे।

कृषि कार्य बैलों और हल जुंगड़ों पर ही निर्भर होता था, हलवाहक को हाली कहा जाता था और बैल दाहिने और बाएं के नाम से जाने जाते थे। बैलों के कंधों पर लकड़ी का ही बनाया गया जुंगड़ा बारीक रस्सी बांध हल-हलाड़ी को भी लाहिकड़ी से कसकर छलाठ हाथ में लेकर हाली हल को चलाता था और आगे-पीछे, ऊपर-नीचे, न्हैंश-वेयूड़ी का संबोधन हाली बैलों को चलने का संदेश देता था। न माने अथवा अनसुना कर दे तो हाली रिंऊंस लकड़ी की लाठी से बैलों को नियंत्रित करता था। बैल ठीक चल रहे हैं तो शाबाश! चल! चल! का संबोधन करके बैलों को संचालित करके शाम तक दो-अढ़ाई बीघा भूमि जोतता था।

कृषि कार्य बैलों और हल जुंगड़ों पर ही निर्भर होता था, हलवाहक को हाली कहा जाता था और बैल दाहिने और बाएं के नाम से जाने जाते थे। बैलों के कंधों पर लकड़ी का ही बनाया गया जुंगड़ा बारीक रस्सी बांध हल-हलाड़ी को भी लाहिकड़ी से कसकर छलाठ हाथ में लेकर हाली हल को चलाता था और आगे-पीछे, ऊपर-नीचे, न्हैंश- वेयूड़ी का संबोधन हाली बैलों को चलने का संदेश देता था।

इसी तरह ही गाय दोहन महिलाएं हाथ में काठ का बना हुआ एक डगरू अथवा माटी का पास लेकर गाय दोहन का काम करती थी। बाद में इसको छाननी से छान करके दूध को चरटू में डाल देती थी। चरटू घड़े की शक्ल का माटी से कुम्हारों द्वारा बनाया होता था। ऊपर लकड़ी का ढकण डालकर ढक दिया जाता था, जो दही बनने पर चरटी के नीचे एक शेही व पराल की चाच्ची रखकर मथा जाता था। मक्खन निकालकर पका कर घी बनाया जाता था। बैलों को भी हल जोतने से पूर्व घास डाला जाता था और हल चलाने से पहले इनकी पीठ को थपथपाया जाता था। हल चलाने से पूर्व भूमि पूजन भी करवाया जाता था। अतः जुताई पूरी होने पर मई अर्थात ज़ोल भी दिया जाता था। दालों की बिजाई के पश्चात अथवा आलू-कचालू बिजाई के बाद मई नहीं फेरा जाता था। केवल मक्की, धान, गेहूं-जौ बोने पर ही मई ज़ोल फेरा जाता था। तदोपरांत किसान केवल निराई-गुड़ाई ही करते थे और पहरा देते थे। बाद में फसल पक जाने पर लुनाई, तुड़वाई करके जौ, गेहूं, धान रस्सियों के काच्छुओं से बांधकर खलिहान खेत से लाए जाते थे और मक्की, कोदरा आदि किल्टों में ढोकर लाते थे। मक्की के सिल्लो को उचाड़ कर स्लेटपोश मकानों की छतों पर सुखाने के लिए डाला जाता था। सूखने पर आंगन खलवाड़ा के द्वारा ही मुसलों से पीट-पीट कर दानों का संग्रह किया जाता था और गेहूं, धान, कांगणी, जौ और दाल माश, कुलथी, रौंगी को तो खलिहान में सुखाकर गोल दायरे में गाय-बैल के मुंह पर छिकड़ बांधकर घुमाना, अन्न का संग्रह, पराल आदि को अलग करके (शेष पृष्ठ 45 पर)

गुजराती कहानी

गो-वर्धन महोत्सव

● मूल लेखक : **शिरीष पंचाल** अनुवादक : **जेठमल ह. मारू**

मथुरा प्रांत के गोपबालों को तो कोई पहुंच पाता नहीं, तिस पर फिर गोकुलवृंदावन के गोपबालों की तो बात ही नहीं की जा सकती। गायों के पीछे तो निरे पागल, कृष्ण ने इनको समझाया था उसके अनुसार प्रत्येक गाय कामधेनु। गाय के लिए एक तो क्या अनेक विश्वामित्रों के विरुद्ध वे युद्ध ठान बैठें ऐसे। गायें चराते-चराते अनेक प्रकार के खेलों की झड़ी लगाने में निपुण, इसके साथ-ही-साथ उत्सव बावले भी इतने ही। और उत्सव-महोत्सव करने या मनाने के लिए इन्हें कोई निमित्त खोजने नहीं पड़ते, ये तो इनके समक्ष चलकर स्वतः ही आते। इनकी मोहिनी-जादूगरनी गोपबालाएं भी ऐसी हीं। चार मिलीं कि जमा रास! इस समय भी एक बड़ा उत्सव मनाने के लिए चारों दिशाओं से सबको आमंत्रित-आमंत्रित करके एकत्रित किया गया था। पिछले वर्ष तो बरसात बहुत देर से आई थी, देरी से यानी कितनी देरी से? ठेठ भाद्रपद में आई। सभी ने बरसात की आशा ही छोड़ दी थी। यद्यपि बरसात आई तब दिल खोलकर बरसी। बालकों से लेकर वृद्ध तक भी पानी में भीगते-भीगते नृत्य की हिलोर चढ़े थे।

परंतु देर से आई उस बरसात ने कुछ वृद्ध यादवों के मन में प्रश्न जगाया और रातों-की-रातों विलंब का कारण खोजने का प्रयत्न वे करते रहे। ऐसा हुआ ही क्यों? प्रकृति लयभंग करे, यह कैसे? पर प्रकृति ऐसा किसलिए करे? निःसंदेह, इंद्रपूजा में ही कुछ अपूर्णता रह गई होगी, देवराज इंद्र की अवकृपा बिना तो ऐसा होता ही नहीं। इसलिए इस बार बरसात के आगमन से पूर्व ही इंद्रपूजा करेंगे, ऐसा दृढ़ निश्चय किया, पुनः ऐसा होगा तो दुबारा पूजा करने से कौन रोकने वाला है? इन्होंने जब अपना यह निर्णय सबको बतलाया तो सभी ने उमंग के साथ इस बात का स्वागत किया। युवा आंखें चंचल हो उठीं और तारामैत्रक (आंखें लड़ाने) के लिए पात्र खोजने लगीं। प्रत्येक वर्ष धूमधाम से, मौजमस्ती से होता उत्सव इस बार तो और अधिक उत्साह से मनाने के लिए सभी आतुरी हो उठे थे। गोकुलमथुरा के निवासियों को तो धन-धान्य की कहां कमी थी? एक-दो वर्ष सूखे चले जाएं तो भी कहां आपत्ति आने वाली थी? अभी तो बरसी हुई बरसात से धरती सूखी हुई ही न थी और वे प्रतीक्षा करने लगे कि कब हेमंत की ठंडी हवाएं चलें, कब शाल्मली के वृक्षों पर से पत्तरे खिरने लगें, कब मुचकुंद के विराट वृक्षों पर पुष्प खिलने लगें, कब आम्र वृक्षों पर मंजरिया लगें और मधुमक्खियां उनके आसपास गुंजन करने लगें और कब मंजरियों में छोटी-छोटी कैरियां लगें। नवयुवक उन खटमीठी-कड़वी कैरियों को चुभलाते-चुभलाते, मंदार और पलाश के रंगों से आंखों को आंजते-आंजते, कितने ही कुंद पुष्पों की वेणियों को प्रियाओं के मस्तक पर गूंथते-गूंथते मधु के साथ प्रिया के ओष्ठमधु की तुलना करते-करते महोत्सव की प्रतीक्षा करने लगे। आखिर आम्र वृक्षों पर कैरियों के गुच्छ झूलने-झूमने लगे, रक्तश्याम जामुन अब वृक्ष पर से पककर खिरने की तैयारी में थे तो कइयों में तो अभी तक जामुन के फूल ही आए थे। नीम की निमझर में से विकसित पीली-हरी निंबोलियों की सुगंध का नशा छाने लगा। कर्णिकार वृक्ष पर सुनहरे-पीले पुष्पों के गुच्छ लहराने लगे, देर शाम से सुबह तक गहरे हरे रंगे के शिरीष पुष्पों का मद जहां महुए के मद की स्पर्धा में उतरने लगा तब तक तो उत्सव के दिन निकट आ गए, एकदम निकट। ऋत्विजों, अध्वर्युओं, होताओं को आमंत्रण भेज दिए गए थे। घर-घर यज्ञ सामग्रियां तैयार होने लगीं। महोत्सव में सोलह कलाओं में नृत्य करने की उम्र वाले युवक-युवतियां आतुर हो उठे, उनमें सम्मिलित होगा कृष्णा की बांसुरी का स्वर, फिर तो और क्या चाहिए?

एक दिन सूरज अभी तक बमुश्किल आधा बांस ऊपर चढ़ा था, प्रातःकाल के वातावरण की आर्द्रता को किरणें वाष्पीभूत कर सकें इतनी तेज न थीं। गायें नित्यक्रमानुसार गोवर्धन पर्वत की तलहटी में जा रही थीं और इनकी गोरज में सूर्यप्रकाश जितना था उसकी अपेक्षा कम लगता था। श्वेत-काली-लाल गायों के साथ-साथ उछल-कूद करते बछड़े बीच-बीच में मां से अलग हो जाते थे,

उन्हें अपने पास बुलाने के लिए गायें रंभाने लगतीं तब वे एकदम चौकन्ने होकर क्षण भर खड़े रह जाते, फिर दौड़ा-दौड़ा करके अपनी-अपनी मां के पास पहुंच जाते थे। सूरज की कम धूप में गायों के नथूनों-मुंह में से निकलते निःश्वासों की गंध के बीच, गायों के साथ-साथ चल रहे महाकाय सांडों के शरीर में से निकलती उत्कट गंध के बीच, इनके गले में बांधे हुए घुंघरुओं की मंजुल ध्वनि भिन्न ही सुनाई पड़ती थी। मार्ग के दोनों ओर क्या-क्या फूला-फला न था? इमली के फूलों की केसरिया-पीली-लाल छटा पर धूप भी उतनी ही मोहक लगती थी। आसोपालव और जामुन के एक सरीखे लगते बौर आ गए थे। नीम की निमझर की सुगंध भी फैल रही थी। एक बार यह फैल जाए तो अन्य सारी सुगंधें गौण हो जाती थीं। इस पशु समूह को हांक रहे गोपबालों की बांसुरियों में से आनंदमिश्रित, उत्साह-मिश्रित स्वर वातावरण में फैल रहे थे। आज नित्य की गोचरभूमि छोड़ अन्य दिशा में वे जा रहे थे।

विशाल खुली गोचर भूमि पर होने वाले महोत्सव के निमित्त से छलक-छलक होते हंसते नेत्रों से इधर-उधर देखते लोग एकत्रित हुए थे। कृष्ण तो पास ही थे और फिर भी वहां न थे। आम्र, आसोपालव के पत्तों से गूंथे हुए तोरण, बीच-बीच में कहीं जुई-जाई-कुंद के हार-गजरे, नीचे जमीन पर नंगे पैर चलें तो पैरों में कहीं कंकड़ चुभे नहीं, सिंगारे हुए गाय-बैल, कल्लोल कर रहे किशोर-किशोरियां, छोटी-बड़ी सभा-गोष्ठियां-कृष्ण इन सबके निकट और फिर भी उनसे बहुत दूर-दूर। गोपबालों के हृदय में न समाती आनंद की लहर का स्पर्श इनको कैसे आज पराया-पराया लगता था? विशाखा से बड़ी-बड़ी गोपांगनाएं आज नाच-झूम रही थीं, फिर भी इनके लिए बांसुरी के स्वर बहाने का मन क्यों नहीं हुआ? अब कहीं दूर छिटक जाने की इच्छा हुई। वहां हृदय



के ठेठ तले में जो है उसको समझने के क्षण प्राप्त होंगे। इस महोत्सव के निमित्त से पागल जैसे हो आए लोगों से, उनके आनंद से, इस आनंदोत्सव की पूर्व संध्याओं से दूर-दूर चले जाने का उनका मन हुआ।

कृष्ण को दो-एक दिन पहले का स्वप्न याद हो आया। स्वप्न में दो सिरजनहार एकत्रित हुए थे। एक पिंगलवर्णी जटावाले, शरीर के आसपास लिपटने हुए कोहरे की धुंधली पर्त वाले, तनिक ठिंगने और सांवले कृष्ण को सभी द्वैपायन कहते थे, दूसरे कृष्ण स्वयं। दोनों नौका में थे। कृष्ण नौका खे रहे थे। 'बोलो, कहां ले जाऊं?'

'कृष्ण, हमें यह नौका ले जाएगी या यह नदी? और यह नौका आप चला रहे हैं या मैं?'

कृष्ण मंद स्मित करते रहे...

व्यास से सहज रूप से ही पूछा, 'कृष्ण, आप कुछ गंभीर लगते हैं न कुछ?'

'नहीं... आप तो मेरे सिरजनहार, आप दुखी करें तो दुखी, सुखी करें तो सुखी...'

'ऐसा न कहें। आप मेरे भी सिरजनहार नहीं?'

'तो भी आप जैसा कहते हैं वैसा करता हूं, मेरी इच्छा तो देवकी के पास ही रहने की थी। वर्षों तक कारावास में रही हुई देवकी थोड़ी प्रसन्न तो रहतीं, पर आपने तो मुझे भेज दिया गोकुल... किसलिए?'

'मेरी अपेक्षा तो आप अधिक ज्ञानी हैं। चरैवेति... चरैवेति... चरैवेति...'

स्वप्न में से मन वापस अन्यत्र विचरने लगा। पहले तो मन छिटक गया दूर-दूर अतीत में। यह अतीत भी कैसा? यज्ञज्वालाओं के पिंगलवर्णी अग्निमय अतीत का स्मरण हो आया। यह अग्नि सच्ची पथदर्शक, सच्चा पुरोहित। गर्भ में भी उसका वास, वसुंधरा पर से अंतरिक्ष में यह मातरिश्वा रूप में प्रकट होती है, मनुष्य की आंख टेढ़ी हो तब समस्त धरती को जला डालने के लिए तत्पर हुई हो ऐसे रूप में यही अग्नि वापस उसकी आंखों में आकर बसती है, फूलती-फलती और ज्वालामुखियों की तरह बाहर उबलने लगती है।

यह परमतेज इंद्र में क्यों दिखाई नहीं देता? इसकी काया तो ईर्ष्याग्नि में से ही निर्मित हुई है ऐसा नहीं लगता? ईर्ष्या में प्रकाश नहीं होता, जहरीली दाहकता होती है। यहां वह जातवेदा-अग्नि नहीं मिलेगी यह मान कर वहां से चल पड़ने की मन में ठानी।

000

सभी लोग आनंदोत्सव की, यज्ञोत्सव की तैयारियों में इस तरह खोए हुए थे कि चुपचाप निकल पड़ते कृष्ण के प्रति किसी का ध्यान नहीं गया। एक विशाखा का अपवाद। कृष्ण की एक-एक चेष्टा पर दृष्टि रखने वाली विशाखा के चमकीले और मुग्ध नेत्र वहां थे। पंद्रह वर्ष की मुग्ध वय में इसका अप्रतिम सौंदर्य खिल उठा था। प्रभात का सूर्यप्रकाश सोनचंपा की पंखुड़ी पर खिल कर जो रंग प्रकट करता है वैसा उसके कपोलों का रंग था। एक बार कोई इन नेत्रों में प्रवेश कर जाए तो फिर तीनों लोक मिथ्या हो जाएं। यह जब कृष्ण की बांसुरी सुनती तब सहस्रदल कमल की तरह खिल उठती और चारों दिशाओं में पराग छलका देती। कृष्ण के साथ की मैत्री ज्यों-ज्यों प्रगाढ़ होती जाती थी त्यों-त्यों उसकी काया का और उसके भीतर का रंग अधिक और अधिक खिलता जाता था।

विशाखा को पहले से ही यह नटखट नटवर अत्यंत प्रिय। यह जी चाहे तब किसी भी वय का बन जाता। उसके समक्ष बालक या युवा, स्त्री या पुरुष ऐसे भेद जैसे लुप्त हो जाते थे। इस समय इस महोत्सव के वातावरण को छोड़ कर कृष्ण कहां जा रहा होगा।

कृष्ण अन्यमनस्क होकर चल रहे थे, कौन चलाता था उनके पैरों को? ये पैर स्वयं की दिशा स्वयं ही खोज लेते थे। यों करते- करते ही ये पैर गोवर्धन पर्वत की तलहटी में जा पहुंचे। गोवर्धन पर्वत... ऊंचा... विशाल पर्वत... और उसके सामने कृष्ण खड़े थे, जैसे एक ही तुलना के पलड़े संतुलित न होते हों!

गोवर्धन पर्वत को देखते ही उसमें से न निकले हुए निर्झरों की आवाजें उनके कानों में पड़ीं। यशोदा की गोद से उतरकर देहरी लांघने के पश्चात फिर गली पार करने से पहले की यमलअर्जुन की आवाज सुनी। ये सभी आवाजें सुनने से पहले यशोदा के नेत्रों में से बही जाती अस्खलित वात्सल्यधारा के कलकल बहते रूप चेतना ने महसूस किए थे। इन नेत्रों के सामने टिकटिकी लगाकर देख रहे थे तब इनके पीछे कारावास की दीवारों को भेद कर यमुना के किनारे-किनारे बह कर आए हुए अन्य दो नेत्रों की व्यथा भी कर्णपट, दृष्टिपट पर पड़ी। इनको देखकर होठों पर विषादयुक्त आनंद प्रकट हुआ। यद्यपि इनमें रही हुई वेदना की ध्वनि रोम-रोम में फैली हुई तो थी ही, कई बार यह वेदना बांसुरी के मनभर, मनमोहक स्वर के रूप में भी प्रकट हुई थी।

कृष्ण और गोवर्धन पर्वत के बीच में समूचा संसार था और फिर भी कुछ भी न था। दोनों जैसे एक दूसरे में प्रवेश करना जानते थे। विशाखा आकर कृष्ण के पार्श्व में खड़ी रह गई। सहसा कृष्ण ने विशाखा के वस्त्र की फरफराहट और सुगंध का अनुभव किया।

'क्यों सबका साथ छोड़कर इस अकेले के पीछे-पीछे चली आई?'

'तू भी तो सबको छोड़कर चला आया है न?'

कृष्ण एक शिला पर बैठे और विशाखा दूसरी पर। दोनों के बीच कोई संवाद आगे बढ़े इतने में तो कस्तूरी उसकी नन्ही बछिया को लेकर आ पहुंची।

कृष्ण ने पूछा, 'कस्तूरी की बछिया का क्या नाम रखा?'

'ले अब तू ही रख दे न!'

'कावेरी...'

एक-दो बार कृष्ण ने 'कावेरी... कावेरी...' पुकारा। फिर इसके शरीर पर हाथ फेरते-फेरते बोले, 'कावेरी'। और यह नन्ही- सी कावेरी कृष्ण के साथ खेलने लगी।

'कृष्ण, तूने मेरी बात का उत्तर नहीं दिया। वहां सारे ही कितना आनंद-प्रमोद मना रहे हैं और तू यहा'

'तू ही बता न क्या करूं? मेरे समक्ष तो स्वजन-ही-स्वजन, उनके रंग में मुझे किसलिए भंग डालनी? सब लोग कितने आनंद- उत्साह से उत्सव को मनाने के लिए आतुर हैं। चिंता तो केवल मुझ अकेले को है... कुछ अनुचित हो रहा है ऐसा लगा। मैं अकेला ही विकस्वर, लय-ताल बिना का; उठ खड़ा हुआ। इतना सारा आनंद हो, कल्लोल हो वहां मेरे जैसे एकाकी की बेचैनी... इसकी कोई ध्वनि-प्रतिध्वनि सुनाई दे, कुछ तिड़के, कुछ मिटे उससे पहले ही निकल जाना अच्छा नहीं? इसीलिए इस दिशा में निकल पड़ा।'

तुमुल झंझावात आया और तरल तरणी-सी जा रही नौका का पाल ही जैसे फट गया। कितना अधिक आनंद हृदय में था और वहां से छलक-छलक कर रोम-रोम में इसके नर्तन का ताल अनुभव करती-करती वह कृष्ण के पदचिह्न सूंघती-सूंघती आई थी। उसके लिए तो कृष्ण ही साक्षात महोत्सव, पर कृष्ण की उपस्थिति में ही गोकुलवासियों के महोत्सव का मूल्य। विशाखा को स्वयं के हृदय में छलकते आनंद के साथ में कृष्ण की बातों का मेल बैठता हो ऐसा लगा नहीं। उसको लगा कि ऐसी सारी बातें करने की बजाय कृष्ण बांसुरी ही बजाया करे तो कितना अच्छा?

उसने कृष्ण के सामने नेह झरती दृष्टि से देखकर कहा, 'एक बात कहूं, कृष्ण'

'कहो... पर तुम्हारे मन में क्या है वह मैं जानता हूं।'

'अच्छा? कहो देखें।'

'तू मुझे यों कहेगी कि यह सारी चिंता छोड़ दे और तू अपनी बांसुरी बजाया कर।'

'अरे! तू तो मेरे विचार भी भांप जाता है... पर तुझे किसलिए यह पूजा अच्छी नहीं लगती? कितना सारा आनंद, बस आंनद-ही- आनंद, संगीत हो, नृत्य हो, नाटक हो... यज्ञयाज्ञादि हो... उत्सव-ही-उत्सव, गांव-गांव से लोग हमारा उत्सव

देखने के लिए आने वाले हैं। हमारा रास देखकर लोग कितने पागल-पागल हो जाते हैं। कोई-कोई तो यों कहता है कि रास शताब्दियों-शताब्दियों तक अमर हो जाने वाला है। तुम्हें क्यों नहीं अच्छा लगता है?'

'कोई महोत्सव एक व्यक्ति के अहंकार को तुष्ट करने के लिए किसलिए मनाना चाहिए?'

'अरे, यहां मनुष्य के अहंकार की बात ही कहां है? इंद्र तो स्वर्ग के राजा। हम सबके राजा। उनको प्रसन्न करने के लिए यह महोत्सव है।'

'राजा प्रजा को प्रसन्न करे या प्रजा राजा को?'

'कृष्ण, कुछ क्षण भूल जा न यह सब कुछ। मुझे बांसुरी सुना। इस वातावरण को स्वरों से महका-महका डाल। दसों दिशाओं में इसका ही नाद, इसके सिवा अन्य कुछ भी नहीं। और स्वर को मेरे लहू में घुल जाने दे।'

कृष्ण कुछ क्षण विशाखा के मुंह को अनिमेष दृष्टि से ताकते रहे। पहले अनेक बार विशाखा को प्रसन्न करने के लिए बांसुरी के स्वर बहाए-फैलाए हैं, ललित से लगाकर सोहिणी के स्वर। इस समय भी उन्होंने कटिबंध में से बांसुरी निकाली। होठों से लगाया और स्वर बहने लगे, विशाखा के लहू में ये घुलने लगे। उसको ऐसा लगा कि स्वर केवल मेरे अंतर में ही नहीं अपितु आसपास की प्रकृति के अंतर में भी बह रहे हैं। स्वर के कारण प्रकृति स्वयं का रंग-रूप जैसे परिवर्तित कर रही थी। कीट से लगाकर कुंजर तक का और शैवाल से लेकर वटवृक्ष तक का जगत इस बांसुरी के नाद से झूम रहा था और वह स्वर जगत में प्रवेश कर गया था।

सहसा स्वरावली थम गई। झरना बहना बंद हो गया? सदासुवासिनी में से प्रकटती सौरभ के प्रवाह के बीच अंतराल आ गया? विशाखा के मुंह पर किसी अकुलाहट के भाव प्रकट हुए। ऐसा तो कभी भी हुआ न था। विशाखा ने कृष्ण के सामने देखा तो वे बांसुरी हाथ में रखकर गोवर्धन पर्वत के सामने ताक रहे थे।

'विशाखा, आज रहने दे। चित्त क्लेशमय है। मन मानता नहीं। वेणुवादन में भी इंद्रपूजा के विचार आते रहे। तुझे भी इसका कितना पागलपन लगा है। तुम्हारा आनंद मुझे छीन नहीं लेना चाहिए। फिर भी इंद्रपूजा तो रोकनी ही पड़ेगी, पर इस तुम्हारे आनंदोत्सव का क्या?'

'मेरा महोत्सव यह तुम्हारा नहीं?'

'क्यों नहीं? तुम्हारा मेरा हम सबका, हमारे आसपास जो कुछ है, जो कुछ है इन सबका महोत्सव। पर यह इंद्रपूजा तो हो ही नहीं सकती। मैं यह नहीं होने दूंगा। स्वर्ग का यह स्वामी कोई तप करे तो सहन नहीं कर सकता। इंद्रासन छिन जाएगा इसका उसको भय है। कितने सारे लोगों के तप भंग कराए हैं उसने। कहा जाता है देवराज और हृदय? यह तो कृष्ण का। श्री-समृद्धि का स्वामी और ऐसी कृपणता, पर मैं उसका अभिमान तोड़ूंगा। पूजा प्रकृति की हो, देव की नहीं। सत्ता प्रजा की और प्रकृति की होती है परंतु देव की तो नहीं ही। इन पृथ्वीवासियों को प्रलय का भय दिखाकर इंद्र हमारी लाचारी का फायदा उठाता है।'

'क्या यह सूर्य, चंद्र, तारे इनके कहने से नहीं चलते?' विशाखा ने सहज भाव से पूछा।

'नहीं... ये प्रकृति के नियम हैं, इनका उल्लंघन कोई कर नहीं सकता। इंद्र भी नहीं। ऋषि-मुनि कहते हैं कि वरुण के नियमों का उल्लंघन कोई भी कर ही नहीं सकता। सूरज को कोई जल्दी उगा नहीं सकता या देर से अस्त नहीं कर सकता।'

'और मानो कि कोई उल्लंघन करे तो'

'इसके नियमों का उल्लंघन करने वाले को प्रकृति दंड देती है। विशाखा, भयानक दंड।'

'इतनी कम उम्र में कितना ज्ञान है तुझे?'

'यही तो दुःख की बात है न। इस समय तो गेडी-दड़ा ही खेल रहा होता तो कितना अधिक आनंद होता। रात को सोते समय सोचा था कि सूरज उगने से पहले ही मैं यमुना तट पर जाकर बैठूंगा, मेरे प्रिय कदंब के नीचे। फिर बांसुरी में से राग- रागिनी बहाऊंगा। इसका नाद गगन में पहुंचेगा। गगन में ही क्यों? बहती जमना में जाकर यह स्वर घुलेगा तब कालीय जैसे अन्य नागों का जहर दूर होगा। यह नदी कितने-कितने झरनों को समा कर बह रही है, इन झरनों के किनारे पर आकर लोग अपने हृदय हल्के करते हैं। इनकी यातनाओं से, इनकी वेदनाओं से झरनों के हृदय भारी और गंभीर हो जाते हैं...।'

'बस, बस... ऐसा ज्ञान अच्छा नहीं लगता कृष्ण, नहीं अच्छा लगता। मुझे लगता है कि चाहे वैसी विकट परिस्थिति में भी लंबे- लंबे वार्तालाप तू कर सकता है, युद्ध के बीच में उपेदश भी दे सकता है।'

तभी दूर से आती पैरों की आहट सुनाई दी, इस कारण विशाखा का ध्यान उस दिशा में गया। धूल के गुब्बार दिखाई दिए, गायों का समूह आता होगा, शायद!

'ले, ये सब तो मुझे खोजते ठेठ यहां तक आ पहुंचे क्या!'

कृष्ण ने देखा तो नंदबाबा के साथ बहुत-से यादव आ रहे थे। मन को तो अच्छा लगा। इस समूह में नंदबाबा से भी अधिक उम्र के कुछ यादव थे। कुछ तेज-तर्रार युवक भी थे। एक संजीदा जैसे दिखते वृद्ध यादव ने अति प्रेम से कहा, 'कृष्ण, तू हम सब यादवों का प्रीतिपात्र। भले-भले वीर पुरुष जो नहीं कर सकते वैसे पराक्रम तो तू ने एकदम छोटी में उम्र में कर दिखाए।'

कृष्ण की समझ में आ गया कि कुछ समय पूर्व स्वयं ने जो विचार नंदबाबा के

समक्ष व्यक्त किए थे वे शायद इन लोगों तक पहुंच गए हैं। इंद्रपूजा यादवों के लिए अनिवार्य लगती है। यह न हो तो बड़ा अनिष्ट होगा ऐसा गलत भीति उनके मन में घर कर गई है।

'हमारे कानों तक ऐसी बात आई है कि तुझे यह इंद्रपूजा महोत्सव अच्छा नहीं लगता और इसके स्थान तू गो-वर्धन महोत्सव करना चाहता है...'

'हां, मुझे ऐसा विचार आया और मैंने पिताजी के समक्ष बात रखी।'

'देख कृष्ण, हम लोग शताब्दियों से यह पूजा करते आए हैं या नहीं? इसकी एक परंपरा बन गई है। परंपरानुसार यह अपराध नहीं, अवगुण भी नहीं। तो परंपरा विद्रोह यह पराक्रम भी नहीं।'

'मैंने किसी विद्रोह की बात नहीं की थी। मैं भी मानता हूं कि जो चक्र को चालू रखता नहीं वह आततायी है। परंतु जो बात मूल से ही गलत हो उसको किस तरह चिपकाए रखा जाए? एक गलत परंपरा चल पड़ी हो तो उसको बदला जा सकता है या नहीं?'

'इंद्रपूजा यह गलत परंपरा?' एक अन्य यादव बोल उठे। इनके स्वर में रोष था। 'क्या इंद्र हमारे स्वामी नहीं? तुमने जिस तरह पराक्रम किए हैं उसी तरह इंद्र ने भी पराक्रम किए हैं। वृत्रासुर, नमुचि, शंबर कई कितने ही राक्षसों का वध किया है। हम तो गोपबाल इसलिए गाय का महत्त्व ही सर्वाधिक समझते हैं न? पणि लोग गायें चुरा ले जाते थे तब उनको कौन वापस लेकर आता था?'

तीसरे एक यादव ने स्वर-में-स्वर मिलाया, 'इंद्रपूजा करें इसी में ही गोवर्धन-पूजा आ जाती नहीं?'

यह सुनकर कृष्ण ने वक्ताओं और इनके पीछे चुपचाप खड़े यादवों के सामने दृष्टिपात किया। पीछे खड़े हुए कइयों ने दृष्टि दूसरी ओर घुमा ली। कृष्ण को शंका हुई कि गोवर्धन पूजा के अपने प्रस्ताव के बाद कई सारी गुप्त चर्चाएं हुई होनी चाहिए। क्या इसके पीछे इंद्र की कुछ संकेत-व्यवस्था होगी?

'देखिए, आप सब मेरे गुरुजन हैं। आपकी आज्ञा शिरोधार्य। मैं परंपरा का अनुसरण तज देने को कहता नहीं। पर मुझे यह परंपरा समझनी तो चाहिए न! मैंने कब कहा कि आप इंद्रपूजा बंद कर दें। मैंने तो प्रस्ताव रखा। आपकी स्वयं की बुद्धि क्या कहती है?'

कई युवा धीरे-धीरे इस समूह में से खिसक कर कृष्ण के पीछे जाकर खड़े हो गए। बुजुर्गों को देखते उसमय उनके नेत्र पलाश और शाल्मली के पुष्पों की स्पर्धा में उतरे हों ऐसा लगा।

एकाएक पीछे की ओर से फुत्कार सुनाई दी। इस दिशा में देखे बिना ही कृष्ण समझ गए यह सात्यकि था।

'तुम सब इंद्र के दास बन गए हो दास। यह जो कहता है वैसे तुम करते हो। इंद्र किसी को भी सहन कर सका है? तो कृष्ण को किस तरह सहन करे? उगते शत्रु को डाम देने के सिवा उसको आता है क्या? इंद्र ने तुम सबको लालच तो नहीं दिए न! और ... हमारे पास क्या नहीं? हें! क्या नहीं? इतनी-इतनी समृद्धि है, तो भी तुम्हें यह कम लगती है? जाओ-मेरी सारी सम्पत्ति बांट देता हूं.. अब?'

वातावरण में गंभीरता न रही, और प्रसन्नता व्याप्त हुई तो कृष्ण बोलने लगे, 'मुझे जब गोवर्धन-पूजा का विचार आया तब मेरे मन में तरंगें उठती थीं- स्वर्ग के बिना वसुंधरा संभव है पर वसुंधरा के बिना स्वर्ग नहीं रहता। यह हमारी वसुंधरा दिव्यरूपा है। सूर्य में केवल अग्नि है, पर वसुंधरा में तो अग्नि है, जल है, पृथ्वी तत्त्व है, इसमें अनेक सूर्यतेज-चंद्रतेज है, इस स्वर्ग में जो ऐश्वर्य है यह तो वसुंधरा के पास से उधार लिया हुआ है... तो फिर इस ऐश्वर्यमती के प्रतीक के समान गोवर्धन की ही पूजा क्यों नहीं करनी?'

'सात्यकि... तुम्हारे पास यथेष्ट धन है, धन है इसलिए उन्मत्त न बन, बुजुर्गों की निंदा मत कर।' एक दूसरे यादव ने सात्यकि को उपालंभ देते हुए कहा।

कृष्ण ने सात्यकि के सामने देखा। इसकी आंखें अभी तक फुत्कार मार रही थीं। फिर धैर्यपूर्वक कृष्ण बोले, 'सात्यकि मौन से अन्य कोई बड़ी वाणी नहीं। यादव किसलिए लालच के वशीभूत हों? और लालच के वश में हो जाएं वे फिर यादव काहे के। वाणी के चार रूप- वैखरी-मध्यमा-परा-पश्यंती। हम गोरक्षक हैं। गाय, यह तो हमारी संस्कृति की प्रतीक... हम यादव संस्कृति के रक्षक हैं... सात्यकि को ही नहीं, किसी को भी क्रोध नहीं करना, क्रोध से मोह उत्पन्न होगा, लोभ जनमेगा... और लोभी किसलिए बनना? राजा बनें या गोपाल- सब सरीखा नहीं?'

दहकती धरती पर या निरंतर अकाल के वर्षों में तिराड़ें पड़ कर क्षत-विक्षत हो चुकी धरती पर बारह मेघ रीझें और थल-थल जल-जल हो जाए, चारों ओर प्रकाश-प्रकाश हो जाए, चमचमाहट करने लगे। इस तरह कृष्ण की वैखरी धीरे-धीरे मध्यमा से परा में से पश्यंती तक जैसे पहुंच गई और वहां उपस्थित सभी श्रोताओं को चंदन-प्रलेप के समान, शरद पूर्णिमा-कौमुदी के समान स्पर्श कर गई।

यादव कुछ बोल नहीं सके, कोई मन-ही-मन बड़बड़ाया, 'अरे तू दस-बारह वर्ष के बालक की तरह बोल न? तुम्हारे सारे लाड- प्यार यशोदा के लिए ही?'

वातावरण में गंभीरता न रही, और प्रसन्नता व्याप्त हुई तो कृष्ण बोलने लगे, 'मुझे जब गोवर्धन-पूजा का विचार आया तब मेरे मन में तरंगें उठती थीं- स्वर्ग के बिना वसुंधरा संभव है पर वसुंधरा के बिना स्वर्ग नहीं रहता। यह हमारी वसुंधरा दिव्यरूपा है। सूर्य में केवल अग्नि है, पर

वसुंधरा में तो अग्नि है, जल है, पृथ्वी तत्त्व है, इसमें अनेक सूर्यतेज-चंद्रतेज है, इस स्वर्ग में जो ऐश्वर्य है यह तो वसुंधरा के पास से उधार लिया हुआ है... तो फिर इस ऐश्वर्यमती के प्रतीक के समान गोवर्धन की ही पूजा क्यों नहीं करनी?'

एक यादव चौंके। इन्हें लगा कि इस कृष्ण को टोकना चाहिए, सब को बहका डालेगा। केवल इसकी बांसुरी ही मोहिनी नहीं, इसकी वाणी ऐसी ही मायाविनी है। परंतु अभी तो इसको रोकना चाहिए।

'कृष्ण, अभी तो किशोर भी नहीं, तू शिशु है शिशु। सत्ता ही सच्चा ऐश्वर्य है- सत्ताविहीन ऐश्वर्य का मूल्य क्या है? इंद्र के पास सत्तारूपी ऐश्वर्य है, और ऐश्वर्य न हो तो भी सत्ता द्वारा ऐश्वर्य खड़े किए जा सकते हैं, क्रय-विक्रय किया जा सकता है। ऐसे सत्ताधारी, ऐश्वर्यवान इंद्र को वेदों के ऋषियों ने नाहक ही स्वीकार किया होगा? हम इन्हीं ऋषियों के अनुज नहीं?'

कृष्ण मंद-मंद स्मित करने लगे, सब कुछ ही इस स्मित में बह जाने के लिए आतुर था। 'यह सामने नदी बह रही है- कौन जाने कितने ही सहस्रों वर्षों से बहती होगी? इसको किसने जन्म दिया? शायद वरुण इसका यश ले सकते हैं- सूर्य के तेज ने इसको जन्म दिया- रूप न होने पर भी अनेक रूपों के सर्जक वायु ने इस नदी को लालित्य प्रदान किया, इंद्र ने क्या दिया? प्रकृति है, मनुष्य है तो देव है, प्रकृति और मानव के बिना देव काहे के?'

'कृष्ण, दीमक के कुतर खाए हुए और गिरूं-गिरूं हो रहे दो पेड़ उखाड़ डाले तो तू बलवान बन गया? बगुलों और संपोलियों को हराए इसमें तुझे छोटी उम्र में अभिमान आ गया? जन्मते ही तो इंद्र ने भी पराक्रम किए थे। तू ने ही कोई अकेले पूतना को मार डाला न था। इंद्र को सूतिकागृह में थे तब ही कुषवा राक्षसी ने इन्हें निगल जाने का प्रयत्न किया था और इंद्र ने उसको मार डाला था। और मानो कि तू कहता है यह मान लें, गोवर्धन-पूजा प्रारंभ कर देते हैं और इंद्रपूजा बंद कर देते हैं। तुझे पता है कि इसका क्या परिणाम आता है?'

'हां, मुझे पता है, फिर भी आप कहिए तो सही!' कृष्ण ने किंचित ही अस्वस्थ हुए बिना कहा।

'इंद्र हमारा सर्वनाश कर डालेंगे... हमारा सर्वनाश करेंगे।'

'आप बहुत कोमल तो हैं ही, साथ-ही-साथ बहुत भीरू भी हैं। इंद्र भले ही उनचास पवन को ले आए, चाहे अनेक प्रकार की अग्नि और अनेक प्रकार के मेघ ले आए, किसलिए हमें झुकना चाहिए? इंद्र की सत्ता से, उसकी धमकियों से हमें

'वज्र आया कहां से? एक मनुष्य की हड्डियों से बनाया गया। आप यह दृष्टांत समझो। देवताओं के उनके दिव्य शस्त्र काम आए भी क्या? यदि मृत मानव की अस्थि में इतनी प्रचंड शक्ति हो तो जीवित मनुष्य की शक्ति कितनी? मुझे वज्र की चिंता नहीं। वज्र के प्रहार की अपेक्षा मेरी बांसुरी के स्वर में मुझे तो अधिक विश्वास है। मानव कैसा है?'

किसलिए डर जाना? वास्तव में तो देवता मनुष्य पर क्यों कुपित हो? राजा प्रजा पर कोपायमान होकर प्रजा का विनाश करने बैठेगा? इंद्र प्रतिस्पर्धियों को, अपने विरोधियों को पराजित करना चाहता है... यदि इंद्र शक्तिशाली था तो फिर केशी राक्षस के समक्ष युद्ध करने के लिए पुरवा की सहायता क्यों ली?' यह कहते समय प्रकाश से चमचमाते कृष्ण के मुख पर कोई ईर्ष्या न थी, कोई क्रोध न था। उनके मुख पर तो मंद-मंद स्मित फड़कता ही रहा था।

'कृष्ण, मुझे अब भय लगता है, और चिंता भी होती है, इन यादवों का विनाश निश्चित है और इसका निमित्त तू बनेगा।'

'क्षमा करें, छोटे मुंह बड़ी बात करता हूं। हमारा यदि विनाश होगा तो वह हमारे कारण ही होगा। देवता यह विनाश नहीं कर सकते...।'

'कृष्ण, तू गंभीर बन। इतने बड़े इंद्र, स्वर्ग की सत्ता, इनके समक्ष हम कौन? यह वज्र उठाते हैं, इनसे सारे राक्षस थरथराते हैं, वृत्रासुर ढेर हो गया। इनके पास वज्र है वज्र और तुम्हारे पास तो केवल बांसुरी है, इससे मनोरंजन हो सकता है, शासन नहीं हो सकता...'

विशाखा को इस संवाद में थोड़ा ही कुछ समझ में आता था। उसको भी लगा कि कृष्ण का हठ अधिक-से-ज्यादा है। त्रिलोक पर विराट सत्ता रखने वाले इंद्र तो हमको क्षण भर में कुचल डालेंगे... जीवन की अमूल्य भेंट मिली है वह यों सामने चलकर होम देने के लिए? भड़भड़ जलती अग्नि की ज्वालाओं से पतंगे बच सकते हैं क्या? नदी के तेज बहाव के आगे तट पर उगे हुए पौधे कितने सुरक्षित? मुझे कृष्ण को समझाना पड़ेगा।

'वज्र आया कहां से? एक मनुष्य की हड्डियों से बनाया गया। आप यह दृष्टांत समझो। देवताओं के उनके दिव्य शस्त्र काम आए भी क्या? यदि मृत मानव की अस्थि में इतनी प्रचंड शक्ति हो तो जीवित मनुष्य की शक्ति कितनी? मुझे वज्र की चिंता नहीं। वज्र के प्रहार की अपेक्षा मेरी बांसुरी के स्वर में मुझे तो अधिक विश्वास है। मानव कैसा है? पशु-पक्षियों की ध्वनि को रूपांतरित करके स्वर्गीय गायन-वादन फैलाता है- ये स्वर षड्ज, ऋषभ, गांधार, मध्यम, पंचम, धैवत, निषाद- स्वर्ग तक गति करते हैं... ब्रह्मांड को हिलाते हैं, ब्रह्मांड में भी जो लय है उसके साथ ये सभी लय एकाकार हो जाते हैं- अप्सराओं-गंधर्वों के नृत्य-संगीत की अपेक्षा इन गोपांगनाओं

के रास कैसे निखर आते है! ये अप्सराएं और देवकन्याएं कैसी रुमझुम-रुमझुम करतीं धरती पर आ पहुंचती हैं...'

बुजुर्ग यादव कृष्ण के इस अस्खलित वाक् प्रवाह के समक्ष जैसे वाचाहीन हो गए। इसके साथ संवाद करने की अपेक्षा उन्होंने नंदबाबा को, वृषभानु को समझाने का प्रयत्न किया।

'यह कृष्ण तो निरा नासमझ है... आप इसको समझाइए। नहींतो हम दुःखी-दुःखी हो जाएंगे... कहीं के नहीं रहेंगे। इंद्र तो माया से हमारी सारी गायों को अदृश्य कर डालेगा। फिर हम गायों के बिना क्या करेंगे?'

नंदबाबा को कृष्ण की बात समझ में तो आ गई थी फिर भी उनके मन में गहरे-गहरे भय था। 'देख कृष्ण, हमारे पास में नहीं अस्त्र, नहीं शस्त्र, हमें किन्हीं राजाओं का आश्रय भी नहीं, जो हैं वे तो दुश्मन हैं। हमारे संकटों का पार नहीं रहेगा। हमारी सहायता करेगा कौन? एक तरफ कंस का क्रोध और दूसरी तरफ इंद्र का कोप... किस तरह सहेंगे यह सार'

'पिताजी! भूल गए हरिश्चंद्र को? दुःख झेलने में क्या कमी थी... दुःख का अनुभव राजा को भी होना चाहिए, दुःख मनुष्य को महान बनाता है। यह सहन करना आता है केवल मनुष्य को... और दुःख से भयभीत किसलिए होना?'

'कृष्ण, दुःख से भयभीत हो जाना यह मानव स्वभाव है। सब लोगों को निर्भयता की शिक्षा नहीं मिली है। शायद तू निर्भय होगा, तुम्हारे पास खोने को कुछ भी नहीं। पर बता तो सही! निरे भयानक जहरीले नाग के साथ युद्ध करने से पूर्व तुझे भय लगा न था?'

'अरे! यह तो निरे जहर से तना-तना हुआ था, उसकी जहर की थैली फटूं-फटूं हो रही थी, यह किसी को काटे, विष उंडेल दे और फिर वापस जहर संचित करने में लग जाता है। इसका कोई अंत नहीं, परंतु तुम्हारे पास इसका सामना करने के लिए कुछ तो होना चाहिए- जहर-के- सामने- जहर की नहीं चलती। दो जहर सम्मिलित हो जाएं यानी सर्वनाश होता है। इसका सामना अमृत से ही हो सकता है, इतना अमृत हमारे पास में होना चाहिए। मेरे पास अमृत कहां से? यह देवताओं के पास में। इनके पास से छीन लेने के लिए श्येन चाहिए, गरुड़ चाहिए। तो मैं करूं क्या? इन गायों को रंभाते सुना; मोर, कोयल जैसों के टहुके सुने, पर्वत मेंसे बह जाते झरनों का कलकल नाद, यशोदा मैया का वात्सल्य प्लावित गीत- इन सबकी मधुर ध्वनि मुझे अमृतमय लगी, यह सरा अमृत बांसुरी में उंडेला। इसकी सहायता से कालीय नाग का दमन किया। इस तरह सभी मेरे साथ ही थे, फिर भय कैसा?'

कृष्ण अभी बोल ही रहे थे तभी आकाश में भयानक मेघ- गर्जना हुई, दूर-दूर काले बादलों में बिजलियों की कौंध के भूरे, रुपहले, हरे, पीले, लाल रंग स्पष्ट दिखने लगे।

'लो, देखो.. इस कुसमय बिजलियां. . इंद्र का वज्र...'

'अरे ऐसा तो बहुत बार होता आया है। इसमें क्या डरने का?'

सबका ध्यान क्षितिज पर कौंधती बिजलियों पर गया। किसी अपरिचित भय की कंपकंपी कइयों के लहू में प्रवेश कर गई। कृष्ण ने इस भय का अनुमान लगाया और आकाश के सामने एक दृष्टिपात किया। उनके मुख पर मंद-मंद स्मित फड़ने लगा। बिजलियों की कड़कड़ाहट के बीच वीणा का धीमा रणकार सुनाई दिया। तन-मन को शांति प्रदान करता, आगत भय की विस्मृति कराता यह स्वर अब अधिक और अधिक स्पष्ट होने लगा। यह आकृति परिचित लगी। ये थे तीनों ही लोकों में यथेच्छ विहरने वाले नारद ऋषि। बालकृष्ण और ऋषिवर के बीच तारामैत्रक हुआ, निःशब्द वाणी व्यवहार हुआ। कृष्ण सहित सबने उन्हें वंदन किया। कुशलक्षेम की थोड़ी बात हुई।

बुजुर्ग यादवों ने ही बात शुरू की। 'मुनिवर, आप ही कृष्ण को समझाइए। शताब्दियों से चली आ रही इंद्रपूजा को रोककर इस वर्ष से गोवर्धन पूजा की रट लेकर बैठा है। इंद्र कोपायमान होगा तो क्या होगा? इस वृंदावन का क्या होगा? लगातार आ रही आपत्तियों से बचने के लिए तो गोकुल छोड़ वृंदावन आए हैं। अब फिर यहां से कहां जाएंगे?'

नारद मुनि ने कृष्ण की आंखों के सामने देखा और बहुत- बहुत भाप लिया। उन्होंने यादवों को धीरज बंधाते हुए कहा, 'कृष्ण की बात एकदम सही है। इंद्रपूजा किसलिए होनी चाहिए? गोवर्धन पर्वत भी हमारी धरती का ही प्रतिनिधि है। पूजा धरती की हो, पूजा प्रकृति की हो। ऐसे अहंकारी इंद्र की पूजा किसलिए?'

नारद मुनि ने कृष्ण की आंखों के सामने देखा और बहुत-बहुत भाप लिया। उन्होंने यादवों को धीरज बंधाते हुए कहा, 'कृष्ण की बात एकदम सही है। इंद्रपूजा किसलिए होनी चाहिए? गोवर्धन पर्वत भी हमारी धरती का ही प्रतिनिधि है। पूजा धरती की हो, पूजा प्रकृति की हो। ऐसे अहंकारी इंद्र की पूजा किसलिए?'

(क्रमशः)

2-ए-2, पवनपुरी, बीकानेर,
राजस्थान-334 003, मो. 94608 93974

मूल लेखक का पता :
233, राजलक्ष्मी सोसायटी, जूना पादरा रोड,
जिला वडोदरा, गुजरात-390007
मो. : 98248 12581

कहानी

क्योंकि उसने कहा था

● डॉ. सत्यपाल शर्मा

प्रोफैसर पार्थ अध्यापन के अपने व्यवसाय में तो सिद्धहस्त हैं ही सृजनात्मक लेखन में भी सर्वत्र अपना सिक्का जमाए हुए हैं। लिखना शुरू करते हैं तो उनकी कलम काग़ज़ों पर सरपट दौड़ती है। पर पता नहीं क्या बात हो गई है कि वह कुछ दिनों से अपने में एक अजीब जैसी कमज़ोरी महसूस करने लगे हैं और उनकी कलम सरपट दौड़ना तो दूर चलना भी मानो भूल गई है। शायद पत्नी सुशीला की अकाल मृत्यु ने उन्हें अवसाद में डुबोना शुरू कर दिया है या फिर आशंका यह भी है कि लेखक के रूप में शायद वह चुक गए हैं। पहले वह देर रात तक बैठे लिखते रहते थे, पर अब उन्हें कुछ सूझता ही नहीं। उनके सृजनकर्म की खेती को सूखा निगलने लगा है। रात को वह बैठते तो हैं पर लिख नहीं पाते कुछ भी। ऐसा लगने लगा है कि कोई मनहूस छाया मंडराने लगी है उन पर।

बेटे सव्यसाची और बहू अर्चना से वह बार-बार अपनी तरह-तरह की बीमारियों की बात करते हैं। कमज़ोरी उन्हें हमेशा घेरे रहती है और उन्हें लगता है कि उन्हें या तो कोई बीमारी लग गई है या लगने वाली है। बेटा और बहू उनका हौसला बढ़ाते हुए जोर देकर कहते हैं कि वह बिलकुल ठीक है पर वह यह मानने को बिलकुल तैयार नहीं कि वह अस्वस्थ नहीं हैं। वह रात बड़ी देर तक बैठते हैं और बैठे-बैठे कहानियों के प्लाट बुनते हैं पर पूर्णता तक कोई भी पहुंच नहीं पाता। उनकी सृजनात्मकता को पूर्ण विराम लग गया है।

एक रात वह खोए-खोए से ज्योंही अपने बिस्तर पर लेटते हैं त्योंही उनके साथ एक अजीब जैसी घटना घटती है। उनके सामने एक महिला आ खड़ी होती है। बड़ी खूबसूरत तो नहीं पर भरी-पूरी स्वस्थ देह वाली है यह स्त्री जो किसी भी पुरुष को अपनी ओर आकृष्ट कर सकती है। प्रोफैसर पार्थ मन-ही-मन कहते हैं- हे भगवान मैं यह क्या देख रहा हूं। क्या कोई अज्ञात-अदृष्ट सत्ता मेरी परीक्षा ले रही है? रात के साढ़े बारह बजे हैं। कलम अब भी मेरे हाथ में है। शायद कोई प्लाट सूझ जाए ऐसा सोच रहा हूं। वह अपने से कहते हैं- प्रोफैसर, तुमने दूसरों पर तो बहुत कहानियां लिखी हैं, परंतु आज तो तुम्हारी ही कहानी बनने जा रही है। कौन होगा इसका रचयिता? बारह बजकर चालीस मिनट हो गए हैं। सड़क पर सन्नाटा पसरा है। सामने वाले ओई के पेड़ की सबसे ऊंची फुनगी पर बैठा उल्लू थोड़ी-थोड़ी देर पर 'हू-हू' बोल रहा है। चारों ओर अंधकार का सागर लहरा रहा है। लोग नींद की सुखद-सुकोमल शैया पर सुध-बुध खोए पड़े हैं। पर इधर मैं क्या देख रहा हूं? कुछ भी तो नहीं समझ पा रहा। यह महिला मेरे इस कमरे में दाखिल कैसे हुई होगी? मैं तो हमेशा द्वार भीतर से बंद करके सोता हूं और अभी भी यह बंद ही है। है न एक हैरानी वाली बात? इस महिला ने तो मुझे एक बड़ी सोच में डाल दिया है।

किसी भरी-पूरी गदराई देह वाली यौवनवती को अपने शयनकक्ष में बेखटके आई देखकर एक भय जैसा महसूस होने लगा है मुझे। पता नहीं क्या घटने जा रहा है मेरे साथ! क्या यह सचमुच कोई स्त्री ही होगी? स्त्री के रूप में कुछ और भी तो हो सकता है जैसाकि पुराने वक्तों की कहानियां कहती हैं। शायद मेरे आचरण की जांच की जा रही है। पर मैंने ऐसा क्या किया है कि कोई अज्ञात-अदृष्ट सत्ता मेरी परीक्षा लेने पर उतारू हो गई है। पर मैं भी इतना कच्चा नहीं हूं। बात-बात में पिघल जाने वाला भावुक प्राणी भी नहीं हूं। अपने को भली प्रकार संभाल-साध रखा है मैंने। प्रोफैसर साहिब रुककर कुछ सोचते हैं और फिर कहते हैं- 'मैंने सबल-सशक्त बनने की कोशिश तो की है फिर भी पता नहीं एक भय क्यों तारी होने लगा है मुझ पर। सोचता हूं कि पूछ लेने में क्या हर्ज है कि वह कौन है, कहां से आई है और क्या चाहती है। पर पहले यह तो पता चले कि बंद दरवाजे की रुकावट की परवाह न करते हुए वह मेरे इस सोने के कमरे में कैसे आ घुसी है। दरवाजा खटखटाने में इसका क्या चला जाता। मैं स्वयं खोल देता। पर हैरानी की बात तो यह है कि दीवारें भी इसे रोक पाने में समर्थ नहीं हो सकी हैं। ऐसी कौन सी चामत्कारिक शक्ति है इसके पास जो असंभव को भी संभव बनाए दे रही है। इसे डर भी नहीं लगा। आधी रात के समय किसी औरत का किसी अनजाने-अनपहचाने मर्द के सोने के कमरे में बेखटके आ घुसना क्या मर्यादा का



उल्लंघन नहीं है? पक्की खिंची लक्ष्मण रेखा का लांघना नहीं है? यह औरत है या क्या है? पूछ ही लेता हूं।

महोदया, द्वार बंद है। आप भीतर कैसे आ गई हैं?

कोई भी बाधा मेरे आड़े नहीं आ सकती। मैं औरत बेशक हूं पर वह नहीं हूं जो आप सोच रहे हैं। किसी भी अवरोध को नहीं मानती मैं। द्वार को भीतर से ताला लगा होता तो भी मैं बेखटके भीतर आ जाती। आप डर गए क्या? घबराएं नहीं महोदय मैं आपको कुछ नहीं कहूंगी। मुझे लगता है कि आप मुझ से नहीं खुद से डर रहे हैं। पर इसमें आपका क्या दोष है, क्योंकि आप जिस दुनिया में रह रहे हैं और जिस माहौल में सांस ले रहे हैं उसमें औरत एक अप्राप्य अजूबा ही मान ली गई है। मुझे अपने इस कमरे में देखकर आपका हैरान-परेशान होना स्वाभाविक ही है।

ओहो, इतनी दिलेरी? दाद देनी चाहिए तुम्हारी इस निर्भयता की। पर महोदया, माना कि आप बड़ी दमदार और दबंग हैं, पर हैं तो आखिर औरत ही न। और ज़रा समय तो देखो। आधी रात बीत चुकी है। शायद आप नहीं जानतीं कि वक्त कैसा खराब चल रहा है। स्त्रियों को तो आजकल और विशेषकर रात के समय बहुत संभलकर चलना चाहिए। किसी भी स्त्री का आधी रात के समय बिना किसी रक्षक के अकेले चल पड़ना खतरे से खाली नहीं। आप नहीं जानतीं कि रात के समय यहां चोर-उचक्कों, लुच्चे-लफ़ंगों और गुंडों का राज होता है। आप किस दुनिया में रह रही हैं। यह इक्कीसवीं सदी है, कालिदास का समय नहीं जिसमें राह चलती थककर सोई कृष्णाभिसारिकाओं पर कोई आंख उठाकर भी नहीं देख सकता था। आज हमारे यहां सर्वत्र असामाजिक तत्त्वों की भरमार हो गई है। स्त्रियां तो आजकल दिन के समय भी सुरक्षित महसूस नहीं करतीं। नई चाल ने पुरानी कदरों-कीमतों और नैतिक मान्यताओं को ध्वस्त कर दिया है। समृद्धि में सैक्स प्रधान हो गया है। और आप चली आई हैं बेधड़क होकर। महिलाओं को तो खुद भी अपना ध्यान रखना चाहिए।

आप बिलकुल ठीक कहते हैं महोदय। कुछ भी गलत नहीं कहा है आपने अपने इस लंबे-चौड़े व्याख्यान में। मैं महिला ज़रूर हूं और मेरा जिस्म भी जैसा कि आप देख ही रहे हैं, किसी भी पुरुष को बलात् लुभा सकता है। स्त्रियों को बच-बचकर तो चलना ही चाहिए, पर मुझे किसी रक्षक या रक्षाकवच की ज़रूरत नहीं।

महोदया, माना कि आप सशक्त और समर्थ हैं और आप में आत्मबल और आत्मविश्वास की भी कमी नहीं पर आप हैं तो स्त्री ही न जिसे हमारे यहां अबला माना जाता है।'

आप भी मुझे अबला ही मान रहे हैं? लगता है सामंती मानसिकता से आप मुक्त नहीं हो पाए हैं। जानबूझकर ही आपने स्त्री को अबला बना रखा है ताकि आप अपने को उसका स्वामी और रक्षक सिद्ध कर सकें।

महोदया, आप मुझे ग़लत मत समझें मैं स्त्री को अबला नहीं मानता। मैं तो आपको सिर्फ़ आगाह कर रहा हूं कि ज़रा संभल कर चलना चाहिए ताकि आपके साथ कोई अनचाही घटना न घट जाए। डर कर चलने में कोई बुराई तो नहीं। वीर और पराक्रमीजन भी समय की नज़ाकत को समझते हुए पीछे हट जाते हैं। परिस्थितियों का दबाव बलवानों को भी पीछे हटने को मजबूर कर देता है।

'मैं न तो डरने वाली हूं और न पीछे हटने वाली ही। मुझे कोई हाथ लगा कर तो देखे? किसी को भी हाथ आने वाली नहीं हूं मैं।'

'महोदया आप कुछ ज़रूरत से ज्यादा ही आत्मविश्वास से भरी हुई हैं, पर आप नहीं जानतीं कि यहां कैसे-कैसे मुंहज़ोर दबंग हैं। आए दिन बलात्कार और अपहरण की घटनाएं होती रहती हैं यहां'

मैंने कहा न सर कि मुझे कोई हाथ नहीं लगा सकता। मुझे आम स्त्रियों जैसी न समझें। मरणधर्मा लोग हैं वे जो मार खाते हैं। ये मर्त्य प्राणी हैं क्या चीज़। मौत को सामने देख तो इनके हाड कांप जाते हैं। मैं इनके जैसी मिट्टी की बनी हुई नहीं हूं। विश्वास न हो तो आजमा कर देख लें।

मैं आप को हाथ लगाऊंगा? 'शान्तं पापं-शान्तं पापम्' परस्त्री स्पर्श को महापाप मानता हूं। मुझे इन घटिया लोगों की श्रेणी में तो न रखें महोदया।

आप मुझे ग़लत समझ रहे हैं। आप एक प्रयोग तो कर देखें। आपको कोई

प्रोफैसर पार्थ अपने कांपते हुए हाथ से उसकी देह को छूने की भरपूर कोशिश करते हैं परंतु उनके हाथ को कुछ भी महसूस नहीं होता है। अंततः वह दोनों हाथों से उसकी देह को अपने काबू में करने का प्रयत्न करते हैं लेकिन उन्हें कुछ भी ठोस और नर्म-गर्म महसूस नहीं होता।

पाप-वाप नहीं लगेगा। आपको पता चला जाएगा कि मैं क्या चीज़ हूं- किस धातु की बनी हूं। आपको यह भी पता चल जाएगा कि मैं कौन हूं, कहां से आई हूं और मेरा सम्बंध क्या है साधारण मनुष्यों के साथ। आगे बढ़िए सर और स्वयं अनुभव कीजिए। आजमाने में कोई हर्ज नहीं। मैं आपको विश्वास दिलाती हूं कि आपको कोई पाप नहीं लगेगा। 'अच्छलं मित्रभावेन सतां दारावलोकनम् मित्र भाव से अथवा आत्मीय (माता, बहन, पुत्री) भाव से स्त्री को देखने से कोई पाप नहीं लगता। मुझे छूकर ही तो आपको पता लगेगा कि मैं क्या हूं।'

महोदया, मैं तो किसी कल्पित स्त्री को भी छूने से डरता हूं और आप तो स्वस्थ और भरी-पूरी काया वाली जीती-जागती स्त्री हैं। मेरे साथ यद्यपि पाप-पुण्य वाली कोई बड़ी बात नहीं है और मैं मर्यादाओं की जकड़बंदी में फंसा हुआ भी नहीं हूं पर मेरा संस्कार मुझे किसी पराई स्त्री को छूने की इजाजत नहीं देता।

'संस्कार तो तब आड़े आएगा न महोदय कि जब मेरा स्पर्श होगा।'

तो प्रोफैसर पार्थ डरते-डरते से अपना हाथ आगे बढ़ाते हैं। केवल हाथ ही नहीं उनकी देह भी कांप रही है। उन्हें लगता है कि वह कोई ऐसा काम करने जा रहे हैं जो समाज में बिलकुल मान्य नहीं। महिला निस्संकोच भाव से कहती है- डरिए नहीं महोदय, आपको कुछ भी होने का नहीं। मुझे छूने की कोशिश कीजिए। हां- हां आगे बढ़िए। हां, और आगे, थोड़ा और आगे। मन पक्का कीजिए और मुझे स्पर्श करने की कोशिश कीजिए।

प्रोफैसर पार्थ अपने कांपते हुए हाथ से उसकी देह को छूने की भरपूर कोशिश करते हैं परंतु उनके हाथ को कुछ भी महसूस नहीं होता है। अंततः वह दोनों हाथों से उसकी देह को अपने काबू में करने का प्रयत्न करते हैं लेकिन उन्हें कुछ भी ठोस और नर्म-गर्म महसूस नहीं होता। लगता है जैसे उनके हाथ हवा में चल रहे हैं अथवा शून्य में आगे बढ़े हैं। इसपर महिला एक विजेता के से स्वर में कहती है- 'देख लिया न सर। मैंने ग़लत तो नहीं कहा था न?'

प्रोफैसर साहिब हैरान भी हैं और परेशान भी। उनकी देह पसीने से तर हो गई है। समझ नहीं पतो कि यह हो क्या रहा है। अंततः पराजित हुए से कहते हैं- 'मैं समझ नहीं पा रहा महोदया कि आप हैं कौन, और रात के इस स्याह सन्नाटे में, बिना कोई खटका किए, बिना किसी पूर्व सूचना के और बिना किसी डर-खौफ के कैसे आ घुसी हैं मेरे इस शयनकक्ष में। स्त्रियोचित झिझक भी महसूस नहीं हुई आपको। आप हैं भी और हैं भी नहीं। आखिर आप चाहती क्या हैं?

उनके इस दो-टूक प्रश्न के उत्तर में वह कहती है- 'बहुत कुछ नहीं चाहती प्रोफैसर साहिब। आपको केवल एक संदेश देना है।'

मुझे संदेश देना है?

हां आपके लिए ही है यह संदेश।

आधी रात का यह रहस्य-रोमांच वाला कालखंड ही आपको सही लगा है संदेश देने के लिए? दिन के समय नहीं आ सकती थीं?

नहीं, दिन सही नहीं होता कुछ भी सुनने-सुनाने के लिए। रात हमारी अपनी होती है। दिन के समय सुनता भी कौन है। लोग सुनते हुए भी नहीं सुनते। आवाज़ों के जमघट से घिरा मनुष्य कोई स्पष्ट और सही बात सुनता भी कहां है?

किसका संदेश है?

सुशीला दीदी का।

सुशीला कौन? मैं नहीं जानता सुशीला नाम की किसी स्त्री को। किसी अनजान स्त्री से मेरा क्या सम्बंध?

सम्बंध प्रोफैसर पार्थ सम्बंध है

मुझे आप बहुगामी मान रही हैं? मैं वोमेनाइज़र नहीं हूं। मर्यादापालक हूं। अपनी सीमाएं जानता हूं। अपने इर्द-गिर्द खिंची लक्ष्मण-रेखाओं को लांघने की तो कभी सोची ही नहीं मैंने। मैंने अपने को अच्छी तरह संभाल रखा है।'

मैं आप पर कोई दोषारोपण करने नहीं आई हूं सर। मुझे आप ग़लत समझ रहे हैं। सिर्फ़ आपको एक ज़रूरी संदेश देना है मुझे। सुशीला के साथ अपने संबंध से मुकर क्यों रहे हैं सर। सुशीला को आप नहीं जानते? जिसके साथ जिंदगी का इतना लंबा समय काटा उसके साथ आपका कोई संबंध ही नहीं? स्त्रियां तो मरती-मरती भी पति का कुशल मंगल चाहती हैं और उसके लिए दुआ करती हैं और आप पुरुष लोग उन्हें भूलते देर नहीं लगाते।'

महिला के उन्हें कुछ रोषपूर्वक ऐसा कहने पर प्रोफैसर पार्थ को एक झटका सा लगता है और उन्हें याद आने लगते हैं अपने दाम्पत्य के वे दिन कि जब उनकी तबीयत थोड़ी सी भी बिगड़ती थी तो उनकी सहधर्मिनी उनकी सेवा करती हुई बार-बार भरे गले से कहती- 'आपको कुछ नहीं होना चाहिए। और मरते समय भी यही शब्द थे उसकी ज़बान पर।

प्रौफैसर साहिब उस महिला द्वारा की गई अपनी जवाबतलबी की प्रतिक्रिया में क्षमाप्रार्थी जैसे स्वर में कहते हैं- ओह समझा, आप मेरी स्वर्गीय धर्मपत्नी सुशीला की बात कर रही हैं? पहले क्यों नहीं बताया आपने?

आपकी जीवनसंगिनी का आपके लिए एक ज़रूरी संदेश है प्रोफैसर साहिब। इसे सुनें ही नहीं इसपर ध्यान भी दें। महिला द्वारा उन्हें इस प्रकार ताकीद किए जाने पर वह कहते हैं- 'वह जीवन संगिनी और सहधर्मिनी कभी थी महोदया लेकिन वह तो बहुत पहले मेरा साथ छोड़ गई थी। चिता की धधकती लपटों ने उसका अस्तित्व मिटा दिया था।'

'अस्तित्व कभी मिटता नहीं महाशय। उसकी देह बेशक आज नहीं है पर वह तो है। उसने संदेश भेजा आपके लिए।'

क्या संदेश है महोदया?

संदेश तो दो चार शब्दों का ही है पर अर्थ इसका बहुत गहरा है। उसने कहा है कि अगर पहले नहीं मानी मेरी बात, तो अब तो मानो। 'आपको कुछ नहीं होना चाहिए।'

संदेश सुनते ही अपने भीतर बहुत गहरे में उतर जाते हैं प्रोफैसर साहिब और उन्हें एक-एक कर सब बातें याद आ जाती हैं और वह मन-ही-मन कहते हैं- सचमुच मैं उसका कहा नहीं मानता था बीमारियों का शिकार हो जाता था। मेरी ब्लड शूगर हमेशा बढ़ी रहती और मैं न मीठा खाना कम करता और न नियमित रूप से दवा ही लेता। मेरा ब्लड प्रेशर भी कभी नार्मल नहीं होता था फिर भी परहेज नहीं करता था। वह मुझे लम्बी सैर के लिए कहती और मैं हमेशा सुस्ती कर जाता और मधुमक्खी की तरह लिखने-पढ़ने में लगा रहता। मैं तो छोटे-छोटे घरेलू कामों से भी कतराता था और विवशतावश सारे कामों में उसे ही जुटना पड़ता था। वह तो अपना धर्म खुशी-खशी निभाती पर मैंने कभी अपना धर्म नहीं निभाया। मैंने तो उसकी बुनियादी जरूरतों का भी ध्यान नहीं रखा। और फिर सहसा अपनी पूर्व अवस्था में आते हुए कहते हैं- 'होना क्या है मुझे?'

कुछ भी हो सकता है प्रोफैसर साहिब आपकी सुस्ती और असावधानी सिर्फ आपको ही नहीं आपके पूरे परिवार को संकट में डाल सकती है। सुशीला दीदी ने आपको चेताया है। आप अपनी निरंतर गिरती सेहत के प्रति सावधान नहीं हैं। आपकी सेहत डांवाडोल रहती है और आप हैं कि इसकी ओर से आंखें मूंदे हुए हैं।'

हां, यह तो ठीक है। मैं अपने स्वास्थ्य पर ध्यान नहीं देता। वह अपनी ओर से ठीक ही कहती थी कि 'आपको कुछ नहीं होना चाहिए। आखिरी सांस लेते हुए भी उसने मेरे भले की ही कामना की थी।'

और प्रोफैसर साहिब के पास के कमरे से कुछ आवाजें आती सुनाई देती हैं। और फिर एक ऊंचा स्वर- 'पापा आज उठना नहीं है आपने' बहू के आवाज लगाने पर वह एक झटके के साथ उठ जाते हैं। कुछ समय तक आंखें बंद किए मौन साधे बैठे रहते हैं और फिर यकायक कपड़े बदलते हुए बहू से कहते हैं- 'सैर को जा रहा हूं।' एक घंटे तक लौटूंगा। नहाने का पानी तैयार रखना बेटा। और बेटे विश्वबंधु से कहना कि दफ्तर जाते समय मेरी पर्ची ले जाए और वापिसी पर मेरी दवाएं लेता आए।

87 लाजपतनगर (चीलगाड़ी),
धर्मशाला, जिला कांगड़ा, हिमाचल प्रदेश–176 215

कविता

सौंदर्य तेरी परिभाषा

● अर्चना शर्मा

पसीने से सनी
मैले-कुचैले कपड़ों में लिपटी
सिर पर
रेत और रोड़ी का तसला लिए
पीठ पर बांधे नन्हा शिशु
वात्सल्य से लबालब कोमल काया भी
कठोर श्रम से वज्र सी लगती
बदन उसका छेनी और घन से
तराशा गया है
बिखरे बाल
धूप में झुलसा चेहरा
फटे होठ, तिड़कते हाथ
उसके संघर्षमय जीवन की गवाही देती
पांव में फटी बिवाइयां
सब श्रम साधना के अनूठे सौंदर्य को
दर्शाते हैं
शोभाचार की दुनिया से कोसों दूर
वह स्वच्छ और निर्मल सौंदर्य की
परिचायक है
तन की परवाह किए बिना
निरंतर परिवार के लिए मिटती है
अनेक भूमिकाएं निभाती वह
सड़क पर अपनी उम्र घिसती है
अस्पताल, राशन की दुकान हो
या पानी का बिल
हर पंक्ति में सबसे पीछे खड़ा दिखती है
सर्दी, गर्मी और बरसात में
घिस-घिस कर
उसे बना दिया है- काला हीरा
पसीने से तर
और धूल से सने बदन में भी वो मुझको
श्रम की देवी ही दिखती है
मैं जब-जब उसे देखती हूं
तो मन संवेदना से भर उठता है
और मन में केवल एक ही प्रश्न उठता है-
सौंदर्य... तेरी परिभाषा क्या है?

नाहन, जिला सिरमौर, हिमाचल प्रदेश,
मो. 98167 54441

कहानी

भविष्य

● डॉ. लीला मोदी

आपका एडमिशन भी पवई आई आई टी मुंबई में हुआ है ना?

हां।

आपके परिवार की ओर से फोटो सहित छपी न्यूज पढ़ी थी।

जी।

मेरा नाम लक्ष्मी है। मेरे पिता चूरू में बिजनेस करते हैं।

कुबेर मधुर आवाज सुनता है। अपरूप सौंदर्य को देख ठगा सा रह जाता है।

मुझे कुबेर कहते हैं। मेरे पिता सीकर में बिजनेस करते हैं। लगता है, आपको कहीं देखा है। यस, ध्यान आ गया। हम दोनों के चयन का बधाई संदेश पास-पास ही छपा था।

लक्ष्मी कुबेर का आकर्षक व्यक्तित्व निहारती है। यह हमारे मुनीम जी हैं। मेरे पिता बिजनेस के सिलसिले में मुंबई में ही हैं। मुझे स्टेशन पर लेने आएंगे। छुक-छुक, छुक-छुक ट्रेन आगे बढ़ती जा रही है। कुबेर और लक्ष्मी का परिचय भी उसी रफ्तार से बढ़ रहा है।

लक्ष्मी और कुबेर मेधावी विद्यार्थी हैं। साथ-साथ पढ़ रहे हैं। मुंबई से राजस्थान दोनों साथ आते हैं-साथ जाते हैं। एक दूसरे को कॉपरेट करते हैं। फोन पर बातें करते हैं। गहरे दोस्त बन जाते हैं। दोनों के परिवारों का आपस में परिचय होता है। खुशी और गमी में शरीक होने लगते हैं।

दोनों की पढ़ाई का अंतिम वर्ष है। देश-विदेश की कंपनियां कैंपस इंटरव्यू लेने आती हैं। उनके प्रोजेक्ट्स लोगों को दंग कर रहे हैं। हर कंपनी दोनों को चयन करती है। बैंगलुरू की कंपनी दोनों का चयन कर लेती है।

कुछ दिनों बाद सभी को बिछुड़ना है। एक यादगार दिन मनाने खंडाला आते हैं। आज मौसम सुहावना है। अचानक बिजली कड़कने लगती है। बादल उमड़-घुमड़ रहे हैं। बारिश होने लगती है। दोनों एक पेड़ के नीचे आकर खड़े हो जाते हैं। दोनों भीगे हुए हैं। मन में विचारों की बारिश हो रही है। कुबेर खामोशी तोड़ते हुए कहता है-

लक्ष्मी मैं पूरी जिंदगी तुम्हारे साथ बिताना चाहता हूं। तुम क्या सोचती हो।

मैं और मेरे मम्मी-पापा भी यही सोचते हैं। वो लोग पढ़ाई खत्म होने का इंतजार कर रहे हैं। अब बात करने आएंगे। दोनों हाथ मिलाते हैं। कसते हैं और चूमते हैं। जिंदगी साथ बिताने का वादा करते हैं।

दोनों परिवार जात-पात में एक से हैं। आचार-संहिता और खान-पान भी एक जैसा है। चार साल से तो गहन जानकारी है। धन-दौलत में एक जैसे हैं। बच्चों के परस्पर लगाव को सभी जानते थे। परिवारों में रजामंदी हुई। आज दोनों शादी के बंधन में बंध गए। कुबेर का भरा-पूरा परिवार है। लक्ष्मी लाड़ली इकलौती बेटी है। वह बड़े परिवार से घबराती है। उसे संयुक्त परिवार की परंपराएं बंधन लगती हैं। भारतीय संस्कृति की प्रथाएं तो झमेला लगती हैं। वह प्रतिपल एपॉइंटमेंट कॉल की प्रतीक्षा करती है। रोज वेबसाइट खोलती है। आज लक्ष्मी के पैर जमीं पर नहीं है। प्रसन्नता से बोली-

'सुनो...इन्फोसिस से दोनों का एपॉइंटमेंट कॉल आ गया है। पचास लाख का पैकेज है!

दादा जी समझाते हैं-

बच्चो, कुछ दिन तो हमारे साथ गुजारो। अभी तुम यहीं काम करो। कुछ दिन आराम करो। अपने रुपयों की क्या कमी है।

दादी जी भी अपनी तरह से समझाती हैं-

नई लाड़ी ऊंच-नीच क्या समझे। बाल बच्चे हो जाने दो। हमारे हाथों में पल जाएंगे।

वहां कौन पालेगा? अपने और परायों में अंतर होता है। एक-दो साल तक तो बालक अनबोला होता है। एकाएक किसी पर विश्वास भी तो नहीं कर सकते। कोई कुछ खिला-पिला दे। टोना-टोटका ही कर दे। बोलने-बतलाने लगे। पढ़ने लगे, तो तू बैंगलुरू तो क्या, बिदेस चली जाना। कोई नहीं रोकेगा।

दोनों ने हजारों सपने बुने थे। स्वावलंबी और स्वतंत्र जीवन जीना चाहते थे। दुनिया को कुछ करके दिखाना चाहते हैं। अपने बनाए गए नऐ प्रोजेक्ट्स को मूर्त रूप देना चाहते हैं। सबको अपना भविष्य साकार करने की बात कहते हैं। बैंगलुरू आ जाते हैं।

कुछ ही समय में आलीशान फ्लैट खरीद लेते हैं। दोनों के पास अलग-अलग कार है। आज उनके पास बेहतरीन भौतिक सुख-सुविधा है। उन्हें अपने प्रयासों पर गर्व होता है। बेटा हो जाता है।

मैं इसका नाम भविष्य रखती हूं। दोनों एक साथ कहते हैं। पहले हम इसका भविष्य बनाएंगे। फिर यह हमारा भविष्य बनेगा। उसके लिए उज्ज्वल भविष्य के नए-नए सपने देखते हैं।

मैं इसे पढ़ने विदेश भेजूंगा।

हम भी वहीं किसी विदेशी कंपनी को ज्वाइन कर लेंगे।

हां, यह ठीक रहेगा।

तुम इसकी देख-रेख के लिए साफ-सुथरी परफेक्ट नौकरानी रखना।

मैंने तो रख भी ली है। उसका नाम कला है। वह कल से आ रही है।

दोनों सुबह सात बजे घर से चले जाते हैं शाम छह बजने के बाद घर आते हैं। बच्चे के लिए महंगे-से-महंगे खिलौने लाते हैं। नित नए और सुंदर कपड़े लाते हैं। एक राजकुमार की तरह पालन कर रहे हैं। फिर भी वह मुरझाया-सा रहता है। दस दिन के बाद उसका पहला जन्मदिन था। उसे धूमधाम से मनाना चाहते हैं। सब तैयारी हो चुकी है।

आज भविष्य बुखार में तप रहा है। चेहरा निस्तेज है। बार- बार मां से चिपक रहा है। पिता का हाथ पकड़ कर खींच रहा है। जैसे ही कला उसे गोद में लेती है। उसके बाल खींचता है। रो-रो कर आज उसका बुरा हाल है। कला खिलौना दिखाती है। वह उसे उठा-उठा कर गुस्से में फेंकता है। उससे छूत की बीमारी की तरह दूर भागता है। दूध की बोतल देती है। उसे भी फेंक देता है। टॉफियां, बिस्केट, बैलून, खिलौनों से बहलाने का प्रयास निरर्थक है। आज उसे कोई चीज, आकर्षित नहीं कर पा रही है।

लक्ष्मी कुबेर से कहती है-

'तुम... आज छुट्टी ले लो।

मेरी एक विदेशी... कंपनी के साथ जरूरी मीटिंग है।

अदरवाइज़ मैं ही छुट्टी ले लेती।

मेरी ब्रांच में भी आज... विदेशी कंपनी आ रही है। उनके साथ जरूरी



अपोइंटमेंट है। इसके बाद बॉस मेरा पैकेज बढ़ा देंगे। वरना मैं घर अवश्य रुक जाता। ऐसा तो यह... रोज ही करता है। बीमारी में थोड़ा ज्यादा चिड़चिड़ा हो गया है। बालहठ इसलिए ही प्रसिद्ध है। हमें देखकर ज्यादा जिद करेगा। जल्दी निकलो। कला संभाल लेगी। कितना ध्यान रखती है। हरदम साफ-सुथरा। हमें तो हमेशा मीठी नींद में ही सोते मिला है। उसे दवा ठीक से समझा दी थी ना?

हां, समझा तो रखी है।

दोनों अनमने हैं। बेमन से ऑफिस चले जाते हैं।

लक्ष्मी का मन ऑफिस में भी नहीं लगता। बार-बार बच्चे की याद आती है। मन अजीब-सा हो रहा है। बच्चे की तपन अपने शरीर में महसूस होती है।

चपरासी कहता है- मैडम आज की मीटिंग कैंसिल हो गई है।

क्या? कैसे?

वह कंपनी अब अगले सप्ताह आएगी।

लक्ष्मी के पंख लग जाते हैं। साहब को बच्चे का हाल बताती है।

साहब उसे घर जाने को कहते हैं। वह छुट्टी लेकर घर लौटती है। कार स्टार्ट करती है। तेजी से घर पहुंचना चाहती है। रास्ते में कमर्शियल स्ट्रीट में ट्रेफिक है। वह ट्रेफिक में फंस जाती है। कार रुकती है। वह इधर-उधर देखती है। अचानक उसकी नजर एक भिखारिन पर पड़ती है। भिखारिन कुछ पहचानी-सी लगती है। उसकी गोद में एक मैला-कुचैला बच्चा है। मुंह पर काजल बह रहा है। शरीर पर चीथड़े लटक रहे हैं। बालों में धूल भरी है। बच्चा चीख-चीख कर रो रहा है। भिखानि उसके गालों पर जोर-जोर से चांटे मार रही है। कभी बाल खींच रही है। रोते- चीखते बच्चे पर तरस खाकर लोग भिखारिन को भीख दे जाते हैं। बच्चा गोद से उतरने को झींक रहा है। लक्ष्मी गौर से भिखारिन को देखती है। जानी-पहचानी लगती है। कार पार्क करके आती है। इतने में भिखारिन आगे निकल जाती है। लक्ष्मी फल वाले से पूछती है-

भाई साहब वह भिखारिन कहां गई?

आ जाएगी।

रोज यहां-वहां भीख मांगती है।

लक्ष्मी ने दूसरे दुकानदार से पूछा-

यह कब से भीख मांगती है?

युवा अकड़कर कहता है। अब भिखारियों का टाइम टेबल भी याद रखेंगे क्या? खाली-पिली में टाइम वेस्ट कर रही हो। धंधे में पहले ही मंदीवाड़ा है।

जूस वाले से पूछती है-

ठीक से तो पता नहीं है।

पर दस-ग्यारह महीने से देख रहा हूं।

वह फुटपाथ पर बैठे एक बच्चे को नोट देती है। फिर पूछती है... बेटे, यह किस समय भीख मांगने आती है?

बच्चा उसे पूरी बात बताता है। मेडम साहिबा, कमाने का यह भी एक तरीका है। बच्चों से भीख मंगवाने के तो गैंग-के-गैंग हैं। पर वह बच्चे दूसरों के चुराए होते हैं। उनके तो हाथ-पांव तक काट देते हैं आंखें आंख फोड़ कर अंधा बना देते हैं। किसी

की जीभ काट देते है। इसका तो अपना है। अभी छोटा भी है ना। इसलिए नहीं काटे। वरना... खच्च। थोड़ा बड़ा हो जाएगा। तब काटेगी। यह सुबह नौ-दस से शाम पांच बजे तक रहती है।

लक्ष्मी बेचैनी से भिखारिन को इधर-उधर देखती है। बार-बार रूमाल से पसीना पोछती है। चेहरे पर कितने ही भाव आ रहे हैं।

इतने में पीछे से आवाज आती है-

'साब, मेरा बालक बीमार है। मर जावेगो, दवा-दारू के वास्ते...पीस्सा दे... दे. .. माई... तेरे... टाबर जीवै...। तेरा सुहाग अमर होवे। माथे पर बिंदी दमदम दमके।

तेरो नाम होवे। तेरे बाल-बच्चों का नाम अमर होवे। मेरा बालक भूखा... मरे है...

लक्ष्मी आवाज पहचान जाती है। पीछे मुड़ती है। नजरें मिलते ही दंग रह जाती है...!

'कला...!

'कला...!!

कला...!!!

भिखारिन के मुंह का रंग उड़ जाता है। कलेजे के टुकड़े भविष्य को छीन लेती है। छाती से चिपका लेती है। कभी गाल चूमती है। कभी बालों पर हाथ फेरती है। आंखों से झर-झर आंसू झर रहे हैं। अपना जीवन सारहीन लगता है। भगवान...!

लक्ष्मी-कुबेर... आई आई टीयन... सॉफ्टवेयर इंजीनियर... महीने में एक करोड़ कमाने वालों का इकलौता लाडला बेटा! भि... खा... री...! ओफ...!

अभी तो हमने इसे यह भविष्य दिया है। आत्मग्लानि से भर जाती है। पैरों के नीचे से जमीन खिसक जाती है।

कंधे से पर्स नीचे गिर जाता है। कपड़े अस्त-व्यस्त हो जाते हैं। धम्म से बच्चे को लेकर जमीन पर बैठ जाती है। विवेकशून्य हो जाती है। जैसे सर्वस्व लुट गया हो। कला, कला करके, कला सिखा गई!

दूसरे दिन अपना इस्तीफा भेजने को कहती है। कुबेर समझाता है। उसे भारतीय संस्कृति की संयुक्त परिवार परंपरा और प्रथाएं बहुत अच्छी लगती हैं। उनका महत्त्व समझ में आ जाता है। अपनों की बहुत-सी यादें मानस में उमड़-घुमड़ रही हैं। याद आते हैं वेद ऋचाओं से शब्द। दादा ससुर साहब के। कितना, किस-किस तरह प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से समझाते रहे हैं-

जीने के लिए कितना रुपया चाहिए?

माता-पिता संतान को बुढ़ापे के सहारे के रूप में देखते हैं।

मातृ और पितृ ऋण कैसे चुकाया जाता है।

एक दिन सभी को बुढ़ापा आता है।

अपने और पराए का अर्थ। अंत में जीवन सार वाक्य-

'बेटा आज लोग-बाग बंटते-बंटते इतने बंट गए कि एक दूसरे से ही कट गए। डालियों, पत्तियों, कलियों-कोंपलों और जड़ों तक से कट गए।

मोबाइल में नम्बर डायल करती है-

हैलो... दादा सा... भविष्य का जन्मदिन अगले सोमवार को है। आप और दादी सा आज ही... हम पलक पावड़े बिछाकर इंतजार कर रहे हैं। आप लोग जितना जल्दी हो सके, आ जाइए।

भविष्य दादा-दादी की गोद में खेल रहा है। किलकारी और हंसी पूरे दिन गूंजती रहती है। चार ही दिनों में उसकी रंगत बदल जाती है। बहुत से शब्द बोलना सीख जाता है। शरीर में चंचलता और फुर्ती भर जाती है। दादा-दादी की अंगुली पकड़ कर चलना सीख रहा है।

लक्ष्मी कहती है। सुनो जी, मुझे तो अब भविष्य का भविष्य ज्यादा सुरक्षित लग रहा है।

दादा-दादी से मनुहार करती है। उन्हें हमेशा के लिए अपने पास ही रोक लेती है।

291, मोती स्मृति, टिपटा कोटा,
राजस्थान-324006

ग़ज़ल

● भीम सिंह नेगी

चांद जब रात में सूरज की जगह ले लेता है,
तो अंधेरे में भी चांदनी बिखेर देता है।

कमजोर समझ कुचलने का दुस्साहस न करना
तिनका भी कभी आंख फोड़ देता है।

पतझड़ कितना भी कहर बरपा ले वृक्ष पर
समय आने पर वह हरा-भरा हो लेता है।

जख्म कितने भी गहरे क्यों न हों लेकिन
वक्त हर जख्म को भर देता है।

साहस के साथ नेक राह चले-चल, बढ़े चल
बहादुरों की कहानी एक दिन जर्रा-जर्रा कह देता है।

भीम ईश्वर पर भरोसा रखना 'ए' दोस्त!
वह दुखियों के तमाम दुखों को हर लेता है।



हि.प्र राजकीय मुद्रणालय, घोड़ा चौकी, शिमला,
हिमाचल प्रदेश-171 005, मो. 94599 23978

कहानी

सूनी कोख

• डॉ. जय करण

आज फिर सुबह ही रोने का करुण स्वर सेवती के मकान से गांव में प्रातः काल की शांति को भंग कर रहा था। प्रत्येक दिन मकान के अंदर से, जोर-जोर से हँसने-रोने, खाली टीन बजने की आवाजें आया करती हैं। शहर के क्वाटरों में आवाजें एक कमरे से दूसरे कमरे तक नहीं पहुंचती। यहाँ हंसना-रोना, सुख-दुःख व्यक्तिगत सम्पति होती है, जिससे कभी-कभी तो परिवार के सदस्यों को भी वंचित रहना पड़ता है। केवल जन्मदिन, शादी -विवाह जैसे समारोह या गमी ही इन्हें कुछ क्षणों के लिए मिला जाते हैं। लेकिन गांव आज भी हमें सामाजिक प्राणी होने का अहसास करवाते हैं। यहाँ आज भी सुख -दुःख में सामूहिक रूप से साथ दिया जाता है। मैं लगभग बीस वर्ष पूर्व के अतीत में खो जाता हूँ। तब यह लगभग साठ-बासठ वर्ष की आयु में अपने स्वर्गीय पति का घर छोड़ तीसरी बार विवाहिता होकर इस गांव में आई थी। पड़ोस के दादा जी हाल ही में सेंटर गवर्नमेंट के दफ्तर से सेवा काल पूरा कर सेवानिवृत होकर आये थे।

घर पर बुजुर्ग लोग बात किया करते थे कि इनकी पहली पत्नी से एक पुत्री है, जिसके जन्म के समय ही इनकी पत्नी भगवान को प्यारी हो गई थी। मेरे अनुमान के अनुसार यह लगभग चालीस वर्ष पहले की बात रही होगी। इस बीच इन्होंने कोई दूसरी शादी नहीं की।

उस समय गांव से बहुत कम लोग सरकारी नौकरी में हुआ करते थे। नौकरी से सेवानिवृत्त होकर जो भी एकाध आता था उसे बड़ा सम्मान दिया जाता था। करमु दादा को भी पूरे गांव वालों ने धाम परोस कर सम्मानित किया। साथ ही आने वाले पंचायत चुनावों में उन्हें प्रधान पद का उम्मीद्वार बनाने का निर्णय लिया। चुनावी मुद्दे को लेकर हर रोज करमु दादा के घर में भीड़ लगी रहती। रात-रात तक मीटिंग का दौर चलता। प्रधान पद के लिए करमु दादा का नाम सामने आते ही गांव दो गुट में बंट गया। एक गुट सत्ताधारी पंचायत पंचों का और दूसरा गुट नए प्रतिनिधि के समर्थकों का यह गुट नए उमीदवार के रूप में करमु दादा को पंचयात चुनाव में उतारने की ठान चुका था। दूसरी ओर करमु दादा थे, जिन्होंने बतीस साल के सेवा काल में अच्छे से अच्छे योग्य अफसरों के साथ ड्यूटी की थी। ग्रामीणों के बढ़ते दबाव को देख कर करमु दादा ने मंझे हुए खिलाडी की तरह पैंतरा चला। वे अपनी बात पर अड़ गए।

"यदि आप चाहते हैं कि मैं इस पंचायत का प्रतिनिधित्व करूँ तो, इसके लिए मैं किसी तरह का चुनाव नहीं लडूंगा। पंचायत के सारे लोग यदि मुझे निर्विरोध प्रधान चुनते हैं तो मुझे कोई आपत्ति नहीं है। चुनाव में होने वाले खर्च से सरकार को बचाया जा सकता है। ऊपर से पूरी पंचायत के निर्विरोध चुन कर आने पर इनाम की जो राशि पंचायत को प्राप्त होगी वह विकास कार्यों में लगाई जा सकती है। फैसला आप सभी मतदाताओं के हाथ में है।

धीरे-धीरे करमु दादा की यह शर्त पूरी पंचायत में आग की तरह फैल गई। घर-घर में इस शर्त की चर्चा होने लगी। सभी मतदाताओं ने करमु दादा के फैसले को सराहा। विपक्षी दल करमु दादा की ताजपोशी से बौखला गया था। प्रशासन के बढ़ते दबाव के कारण दोनों गुटों में शीघ्रातिशीघ्र समझौता हुआ।

अंततः करमु दादा ने पंचायत प्रधान की शपथ ली। उन्होंने पांच साल का कार्यकाल पूरा किया। इस बीच उन्होंने पंचायत में विकास के लिए अनेक सराहनीय कार्य किए। पानी के टैंक, बेसहारा बेटियों के विवाह, वृक्षारोपण युवाओं को बंजर भूमि पर पुनः जुताई कर उपजाऊ बनाने को आर्थिक सहायता उपलब्ध करवा कर विकास की एक नई इबारत लिखी। उनके कार्यकाल में पंचायत ने कई पुरस्कार प्राप्त किये। पांच वर्ष के प्रतिनिधित्व से ही उन्होंने लोगों के दिलों पर राज किया। अगले चुनाव के लिए लोगों ने उन्हें फिर मौका देने की बात रखी तो वे बिलकुल मना कर गए।

"मैंने पहली बार आप सभी का मान-सम्मान रखा। अब इस उम्र में इतनी बड़ी जिम्मेवारी का काम मुझ से न हो पायेगा।"

कुछ वर्ष नवदम्पति छोटे भाई के परिवार के साथ सुखी विवाहित जीवन व्यतीत करते रहे। अब पड़ोस के लोग करमु दादा के घर आने जाने का बहाना ढूंढने की ताक में रहते। सभी पड़ोसी नई-नवेली दुल्हन को देखनें या उससे बातचीत करने को उत्सुक रहते। कहीं उनके परिवार वाले बुरा न मान जाये? कभी आदमी नहीं देखे? जैसी बातें सुनने को न मिल जाएँ? डर मन में रहता था। हम लोग कभी छाछ, कभी दूध, कभी नमक तो कभी हल्दी। यदि सब कुछ घर पर है तो आग जलाने के लिए दो तिल्ली माचिस मांगने चले रहते।

गांव में आज भी छोटी-मोटी आवश्यकताओं की पूर्ति पड़ोस के परिवारों से की जाती है। लोग इसमें बुरा नहीं मानते। लेकिन आज शिक्षा के प्रचार-प्रसार ने इस प्रचलन पर धीरे-धीरे अंकुश लगा दिया है। गांव में भी परिवार आपस में जरूरत पड़ने पर वस्तुओं का आदान प्रदान करने में शर्म महसूस करने लगे हैं।

कभी -कभार जब नई नवेली दुल्हन हम बच्चों से आने का कारण या हमारा नाम पूछ लेती वह क्षण हमारे लिए किसी जंग जितने से कम नहीं होते थे। हमें अपने आँगन में देख वह अंदर से मीठी गोलियां, टॉफियां वगैरह लाकर बांटती। और दुपट्टा सिर पर सरकाती हुई अंदर की ओर जाते हुए कहती, 'चलो सब घर जाओ अब कल आना' हम उछलते-कूदते घर की ओर लौट आते। उनके मुँह से कल फिर आने की बात सुन हम उस आने वाले कल के इन्तजार में पागल हो जाते। वह कल कब आएगा, रात-रात भर नींद नहीं आती थी, और अगली सुबह हम सभी उनके बरामदे में पंक्तिबद्ध हो जाते। अपने -अपने हिस्से की टॉफियां लेकर फिर घर की ओर लौट आते।

सफेद बालों के मध्य लाल सिंदूर से रंगी उनकी मांग, माथे पर सुसज्जित बड़ी लाल बिंदी, नाक पर बड़े आकर का कोका, काफी देर तक हमारी आंखो के आगे घूमता रहता। शायद भगवान ने उन्हें सुंदर एवं सुडौल शरीर दिया था, केवल कोख सूनी दे दी थी। बच्चे न होने की कमी वह खुद भी महसूस करती थी। इसी टीस को शायद वह हम बच्चों को प्रसन्न करके दूर किया करती थी।

लोग उसे बांझ कह कर पुकारते थे। हम अकसर गांव की औरतों को झुंडों में बाते करते सुनते थे। कोई इसके बच्चे होने और कोई न होने की कहानी सुनाती। वे उसे कभी अर्श पर तथा कभी फर्श पर ले आती। यह इसका तीसरा पति है। इसके दो भाई हैं जो इसे बहुत मानते हैं, परन्तु भाभियाँ ! ननद- भाभी की कहीं निभी है जो इनकी निभती" आदि-आदि।

हर-रोज गाँव के किसी न किसी आदमी से नई नवेली दुल्हन के प्रति नई खोज का शोध पत्र पढ़ते सुना जाता था। हफ्तों -महीनों यही सिलसिला चलता रहा। धीरे-धीरे नवदम्पति की राम कथा सुनते-सुनते लोगों के कान पक गए। लोग बोर होने लग गये। गांव में कभी-कभार ही अब इनकी बात चलती थी। अब उन्हें नई लाड़ी नहीं बल्कि गांव में सभी औरत, मर्द बच्चे सास, जेठानी, भाभी, दादी चाची आदि रिश्तों से सम्बोधित करने लगे थे।

समय के बहाव के साथ उन्होंने भी



घर से बाहर निकलना आरम्भ कर दिया था। पानी, लकड़ी को आते जाते वह भी गांव वालों के साथ घुल-मिल गई थी।

एक दिन घास को जाती बार उनकी मुलाकात मेरी माता जी से हो गई। बातों-बातों में उन्होंने माता जी को अपने जीवन की गाथा सुनाई। बहू, "मेरे भी दो बार बच्चे जन्में थे, परंतु भगवान ने उन्हें नहीं रखा। मेरा विवाह हुए तीसरा महीना चल रहा था कि इसी बीच मैं गर्भवती हो गई। मेरी सास बहुत खुश थी। मेरी तबियत काफी खराब रहने लगी थी। मुझे घर के कामों से दूर रखा जाने लगा। मेरे खान-पान पर विशेष ध्यान दिया जाने लगा। खाने के लिए मैं जो मांगती मेरी हर इच्छा पूरी की जाती। इसी तरह छह महीने बीत गए। मेरे सातवां महीना चल रहा था। मैं बहुत खुश थी। एक दिन शाम के समय अचानक मेरे पेट में दर्द शुरू हुआ। सासु-माँ ने मुझे घी के साथ अजवायन, सोया आदि दिया। परन्तु शाम होने को आ गई थी। दर्द कम होने का नाम नहीं ले रही थी। दस बजे से ऊपर का समय रहा होगा। सासु-माँ ने ससुर जी से पास के गांव में जा कर दाई को बुला लाने को कहा। ससुर जी हाथ में डंडा और रोशनी के लिए लालटेन लेकर निकले। आधी रात बीत चुकी थी जब वे वापिस लौटे। दाई ने सुरक्षित प्रसव करवाने की बहुत कोशिश की परन्तु कोई फायदा नहीं हुआ। बच्चा पैदा होते ही भगवान को प्यारा हो गया था। लगभग दो वर्ष बाद मैं फिर गर्भवती हुई। इस बार मैं शीघ्र ही इस सुख से वंचित हो गई। चौथे महीने ही मेरा गर्भपात हो गया। और मैं एक बार फिर असहाय, निराश खाली हाथ थी। सारा परिवार इस पीड़ा को अपने अपने ढंग से भोग रहा था। परन्तु दो बार संतान खोने की जो पीड़ा मैंने भोगी उन्हें व्यक्त कर पाना मेरे लिए आज भी कठिन है।"

"सासु जी, आपने बताया कि गर्भवती होने के उपरांत उन्होंने आपकी बहुत देखभाल की, फिर क्या कारण रहे जिससे आप को ससुराल छोड़ने के लिए बाध्य होना पड़ा?"

"बेटा, आज हर सास-ससुर,पति परिवार के लिए कुल चिराग चाहता है। सभी वंश को फलता फूलता देखना चाहते ह। दो बार के गर्भपात के आठ-नौ वर्षों बाद भी जब मेरा दामन खाली रहा तो सभी नफरत भरी नजरों से मेरी ओर देखने लगे। परिवार का इकलौता बेटा होने के कारण जल्द-से-जल्द उसे वे संतानवान देखना चाहते थे। मेरा पति मुझे बहुत प्यार करता था। लेकिन ननद, एवं सास-ससुर के

बहकावे में आने के बाद वह मुझसे दूरियां बढ़ाने लगा था। वह हर रोज शाम को शराब पीकर आने लगा था। बात-बात पर मुझ से झगड़ने का बहाना ढूंढता फिरता था। रंड -चंड, पता नहीं क्या-क्या गालियां देता था। कई बार तो मुझे पीटता भी था। उसकी बहनों ने उसके लिए कोई और लड़की ढूँढ ली थी। उसके न चाहते हुए भी उन्होंने उसे शादी के लिए राजी करवा लिया था। मुझसे बात करने के डर से वह मेरे सामने नशे में धुत होकर ही आता था। मैं बात को ताड़ गई और एक दिन सब कुछ छोड़- छाड़ माइके आ गई। दिन-हफ्ते बीतते गए, महीने भर से ऊपर का समय बीत जाने के बाद भी जब मैंने ससुराल वापिस लौटने का नाम नहीं लिया तो भाभियाँ भांप गई।

"कहीं यह लड़ झगड़ कर तो नहीं आई है ? इससे पहले तो यह कभी इतने दिन मायके में नहीं लगाती थी।" धीरे-धीरे शक विश्वास में बदल गया। बड़े भैया मुझे लेकर चिंतित रहने लगे। हम तीन भाई बहनों में वह सबसे बड़े थे। माता-पिता का साया बचपन में ही हम पर से छिन गया था। उन्होंने ही माँ-बाप की तरह पाला पोसा था। एकाध बार उन्होंने मुझ से कारण जानने का प्रयास भी किया था। मेरी आंखों में आँसू देख वह उठ कर बाहर चले गए थे।"

एक सुबह जब मैं जागी तो भाभी ने मुझे बताया कि , "तेरे भैया आज सुबह ही गांव के तीन-चार बुजुर्गों को साथ लेकर बातचीत करने तेरी ससुराल गए हैं। आते-आते देर हो जाएगी।"

यह सब सुनने के बाद मेरा मन उदास हो गया। तरह-तरह के सवाल मन में पैदा हो रहे थे। नहीं ,नहीं भैया को मुझे बताये बगैर नहीं जाना चाहिए था। साथ गए बिरादरी के लोगों के सामने वहां उन्हें कहीं जलील कर दिया तो? दिन भर मैं अपने कमरे में बिस्तर पर लेटी रही। मुझे किसी ने पूछने की जरूरत महसूस नहीं की।

साँझ के समय दरवाजा खुलने की आवाज आई। बड़ी भाभी हाथ में चाय का गिलास थामे कमरे में अंदर ही आ रही थी। चाय का गिलास मेरी ओर बढ़ाते हुए मेरी चारपाई पर बैठ गई। मेरे सिर पर हाथ फेरते हुए मुझ से सवाल करने लगी।

'क्या तू वापिस ससुराल नहीं जाना चाहती? क्या तू नहीं चाहती कि ससुराल में तेरे साथ जो मनमुटाव चल रहा है उसे तेरे भैया बुजुर्ग लोगों को ले जाकर खत्म करें ? आखिर तू चाहती क्या है ?"

वह कहती जा रही थी उनके सवाल मेरे मन-मस्तिष्क पर पत्थर के समान घाव दे रहे थे। मैं भाभी को क्या जबाब देती ? एक तो वह मुझ से उम्र में बड़ी थी, दूसरे मेरे मन में एक द्वन्द्व चल रहा था। मैं उन्हें कैसे समझाती? पति व ससुराल का सुख सभी के नसीब में नहीं होता। जबरदस्ती तो पांव में पहना जूता भी जख्म ही देता है। सुख कोई खरीदने की चीज नहीं जो बाजार गए और जरूरत के हिसाब से खरीद लाए। यह तो ऊपर वाले की देन पर निर्भर करता है, किसे कम और किसे ज्यादा।

देर रात भैया और दूसरे लोग वापिस लौटे। उस रात उन सब लोगों ने हमारे घर पर ही खाना खाया। खाना खाते हुए वे लोग भाभी और छोटे भाई-भाभी को मेरी ससुराल की घटना के बारे में बता रहे थे। उन लोगों की बातों से जितना मैं समझ सकी, मुझे लगा मेरी ससुराल वालों ने मुझे ही दोषी ठहराया था। मेरा घरवाला कुछ पीकर था कुछ पीने का ड्रामा करता रहा। मेरे बारे में उसने एक शब्द भी जुबान पर नहीं लाया। परन्तु सास -ससुर व् ननद ने कोई कसर नहीं छोड़ी। मुझ पर घर से गहने व नकदी तक चुरा कर ले जाने का इल्जाम लगा दिया। सास बार-बार ताने मारे जा रही थी, "चलो ठीक ही कर गई। हमने तो पुलिस पंचायत, कहीं भी तो कोई रिपोर्ट नहीं लिखवाई। वैसे भी बाँझ थी। ऐसी गाय-भैंस को भी लोग सड़कों पर छोड़ देते हैं, हमने तो फिर भी छत दे रखी थी। अगले एतवार को हमने अपने बेटे की शादी तय की है। हो सके तो आप लोग भी जरूर दर्शन दें।" कहते हुए हाथ जोड़कर अंदर चली गई। और एक- एक करके परिवार के सारे सदस्य अंदर चले गए। आँगन को खाली होता देख हम लोग भी वहां से उठ कर वापिस घर आ गए।

"मेरा पति मेरी भी उम्र ले कर जीये। मैं यही दुआ करती हूं। बाकी भगवान सब देख रहा है।" लम्बी कहानी कहती हुई वह सिर दोनों टांगों के बीच कर केवल हिलती जा रही थी। शायद वह अपनी अश्रुधारा से अपने जख्मों को सींच रही थी। उनके भावों में उतार-चढ़ाव अपने पति को लेकर ही थ। पति का हर रोज सुबह काम पर जाना। उसका खाना बांधना, उसके कपड़े, जुराब, रुमाल, थैला धोना तो कहीं उसके लिए सुन्दर स्वेटर बनाना। यादें उसके सामनें परत-दर-परत खुलती जा रही थी। और वह अतीत की स्मृतियों में खो जाती है। पति के बारे में वह आज भी किसी के मुँह से कुछ नहीं सुनना चाहती थी।

"अगले एतवार उसकी शादी है", "बेटा, भैया के मुँह से उस दिन के शब्द मुझे आज भी याद है।" अपने पति का किसी दूसरे का हाथ थामना, अलग -अलग भाव मेरे मन मैं प्रकट होने लगे थे।"

"कुछ दिनों बाद भाभी के मायके वालों की ओर से मेरे लिए एक रिश्ता आया। महीने बाद ही मेरा उससे परायणा हो गया। उसकी यह पहली शादी थी। हफ्ते भर में ही मुझे मालूम पड़ गया कि जिससे मेरा परायणा हुआ है उसे मिर्गी के दौरे पड़ते हैं। इस दौरान यह कई-कई दिनों अचेत पड़ा रहता है। मुझे भाभी के मायके वालों पर बहुत क्रोध आया। आखिर उन्होंने इतनी बड़ी बात मुझसे छुपाई क्यों? भैया ने बोझ समझ कर कहीं मुझे इस मरीज के पल्ले तो नहीं बांध दिया? लेकिन भैया ऐसा नहीं कर सकते। यदि उन्हें यह बात पता होती तो वह मुझ से जरूर जिक्र

करता। मैं अपने नए ससुराल में जैसे-तैसे रहने लगी। सर्दियों के दिन थे, घर पर कोई नहीं था। मैं खेत से बेवल की डालियाँ लाने गई हुई थी और सासु-माँ ओबरे में पशुओं को चारा डालने।

वह चूल्हे के पास बैठे आग सेंक रहे थे। अचानक उसे दौरा पड़ गया। सासु- माँ को रसोई से चमंडे के जैसे कुछ जलने की बदबू आई। वह आनन-फानन में रसोई की ओर भागी। वहां उन्होंने जो देखा उसे देख वह दंग रह गई। उनके मुंह से सिवा चीख के और कुछ नहीं निकला। मेरे पति का एक पाँव आधे से ज्यादा आग के अंगारों में बुरी तरह झुलस चुका था। आधा पांव जल जाने के बाद भी उसे कोई होश नहीं थे। घरेलु दवाइओं से उसका इलाज चला। जख्म भरते लगभग चार महीने से ज्यादा का समय लगा होगा।

हमारा परायणा हुए तीसरा साल चल पड़ा था। मैं अब तक भी प्रसव पीड़ा से वंचित थी। 'हे भगवान मेरी सूनी कोख भी भर दे। दामन फैला कर हर रोज यही दुआ माँगा करती थी। पड़ोस में जब किसी के यहां बच्चा पैदा होता तो मैं केवल इतना ही कहती, हे भगवान यह बच्चा तूने मेरी कोख में क्यों नहीं दिया ? मैंने कभी भी भगवान से नहीं माँगा कि मुझे लड़का दे या लड़की। बस अपनी कोख से औलाद जन्मना चाहती थी। अपने सूने आँगन में बच्चों की किलकारियां सुनना उन्हें अपने आँगन में गिल्ली डंडा, अखरोट, कंचे खेलता देखना चाहती थी। एक तरफ पति की यह हालत दूसरी तरफ सूनी कोख।

सास भी बात-बात पर ताना दिया करती, "बहू पड़ोसन के बेटे की शादी तुम्हारे बाद हुई थी न? तूने क्या सोच रखा है? तेरे दिन कब चढ़ेंगे?" और मैं लज्जित सी सिर झुकाए सब कुछ सुनने को मजबूर एवं विवश थी। शर्म से मेरा सिर आँगन में गाय के खूंटे से भी नीचे चला जाता।"

"सासु जी अब तो आप के सुख के दिन आ गए हैं। दुःख झेल कर एक न एक दिन भगवान सुख भी दिखता ही है। ससुर जी को पेंशन मिल ही जाती है दो लोगों का गुजारा इतनी कमाई से मजे में हो जाएगा।"

"परन्तु बेटा बहू इस उम्र में मैं मातृत्व का सुख तो पा नहीं सकती न।"

"तो क्या हुआ आपके देवर के भी तो चार पांच बच्चे हैं। उनमे से ही किसी एक को कानूनी तरीके से अपने पास ले ला। या घर पर ही लिखा-पढ़ी करवा लो । वह आपकी देख भाल भी कर लेगा और आप लोगों को भी औलाद की कमी नहीं खलेगी।"

"होने को तो कुछ भी हो सकता है बहू लेकिन दुनिया की कौन औरत नहीं चाहती होगी की उसकी अपनी संतान न हो ? जिसने उसकी छाती से मुहं लगा कर स्तनपान न किया हो ? फिर अपनी कोख का जन्मा तो अपना ही होता है। मैं बच्चा होने की उम्मीद से हर वर्ष स्वेटर, जुराबें, टोप बुना करती। हर वर्ष होली, दीवाली, मेले- त्योहारों पर रंग, फुलझड़ियाँ, खिलौने खरीद लाती। स्कूल जाते बच्चों को देख मैं भी वर्दी, बस्ता, किताबें खरीद लाती।

आज मैं सोचती हूँ कि मैं पागल थी। रही लिखा पढ़ी की बात तो जब ऊपर वाले ने मेरी कोख में नहीं लिखा तो मात्र कागज पर लिख देने से वह मेरा कैसा हो जायेगा? इसकी क्या गारंटी कि वह हमारी देख-भाल करेगा ही? अब तो बुढ़ापे की चिंता सताती है। अभी तो शरीर चलता फिरता है कल को बैठ जायेंगे तो कौन खिलायेगा? बहू मैंने बहुत प्राण तोड़े है, दिन-दिन भर काम करती थी।

लेकिन आज मैं सोचती हूँ कि मैं पागल थी। रही लिखा पढ़ी की बात तो जब ऊपर वाले ने मेरी कोख में नहीं लिखा तो मात्र कागज पर लिख देने से वह मेरा कैसा हो जायेगा? इसकी क्या गारंटी कि वह हमारी देख-भाल करेगा ही? अब तो बुढ़ापे की चिंता सताती है। अभी तो शरीर चलता फिरता है कल को बैठ जायेंगे तो कौन खिलायेगा? बहू मैंने बहुत प्राण तोड़े है, दिन-दिन भर काम करती थी। कभी भी अपने शरीर की परवाह नहीं की। मायके में रहकर भी यह नहीं सोचा की भाभियाँ ही काम करे। केवल यही डर सताता रहता था कि वह यह न कह दें कि ससुराल छोड़ कर हमारे ऊपर बोझ बनी हुई है। बैठकर खा रही है। इसी वजह से कभी शिकायत का मौका नहीं दिया। मन में किस के क्या रहता था, क्या मालूम? अपनी कोख के ऊसर रह जाने की पीड़ा तो है ही। भले ही उस सुख की अनुभूति को दो बार भोगा हो, लेकिन उनका जीवित न रहना और पुनः गर्भ धारण न कर पाना किसी भी स्त्री के लिए सबसे बड़ा कलंक है।"

"सासु जी, आप इतना क्यों सोचती हैं ? बच्चे नहीं रहे तो इसमें आप का क्या दोष? आखिर इसमें इंसान कर भी क्या सकता है ? भगवान के आगे इंसान मजबूर एवं लाचार है। आज तो लाखों विवाहित पढ़ी लिखी औरतें बच्चे पैदा करना ही नहीं चाहती। वे जान बूझ कर इस झंझट में नहीं पड़ना चाहती।"

"बेटा, तू भी ठीक ही कहती है। परंतु कहानी यहीं खत्म नहीं हुई। मुझे अभी भगवान के आगे बड़ी परीक्षा देनी थी। हमारा परायणा हुए अभी चौथा साल लगा था कि एक दिन उसे फिर दौरा पड़ गया। दो दिन तक वह अचेत पड़ा रहा। मैंने सास-ससुर को समझाने की बहुत कोशिश की कि वह उसे किसी सरकारी अस्पताल में ले चले। लेकिन वे लोग घरेलू इलाज के सिवा किसी डॉक्टर-वॉक्टर पर विश्वास नहीं करते थे। गांव में सड़क की सुविधा नहीं थी। अकेली औरत क्या करती? मैं गांव में एक दो लोगों के पास गई कि मेरा आदमी पिछले दो दिनों से जिंदगी और मौत से लड़ रहा है, उसे अस्पताल तक पहुँचाने में मेरी मदद करो। लेकिन इतने बड़े गांव में

से एक भी आदमी उसे उठाने को तैयार नहीं हुआ। शायद उन्हें डर था कि लाग की यह बीमारी कहीं उन्हें भी न लग जाये। बेहोशी की हालत में उन्हें चौथा दिन लग गया था। सुबह जब मैं उन्हें देखने बिस्तर के पास पहुंची, उनकी बाजू हिला कर देखी तो वह सुखी लकड़ी के समान सख्त थी। मेरे मुंह से जोर की चीख निकल पड़ी। ससुर जी मेरी चीख को सुन कर कमरे में आ गए। उन्होंने अचेत पड़े अपने बेटे को इधर-उधर पलट कर देखा। वह रोते-रोते बेटे की मृत देह पर गिर पड़े। सब कुछ खत्म हो चुका था मेरा जीवन फिर घोर अंधाकार से भर गया था। उस समय जरूर सारा गांव इकट्ठा हो गया। तेरहवें दिन शुद्धि के बाद ही परिवार वाले मेरे ऊपर तानो की बौछार करने लगे। पति की मृत्यु के बाद मुझे छह महीने भी ससुराल में नहीं रहने दिया गया। बेटे के साथ ही बहू को भी खो देने की आशंका उन्हें नहीं थी। घर से निकलने के लिए तरह-तरह से तंग किया जाने लगा। एक दिन मेरे छोटे भैया-भाभी मुझसे मिलने आये थे। दूसरी सुबह जब वह वापिस लौटने को तैयार हुए तो मैं भी अपमान और लांछन की जिंदगी से मुक्ति पाने उनके साथ मायके आ गई।"

"उसके बाद आप सासु जी मायके में ही रही या आपके मन में आया...?"

"बेटा ,उसके बाद के बारे में भी बता देती हूँ, नहीं तो तेरे मन में भी जिज्ञासा बनी रहेगी कि मैं यहाँ तक कैसे पहुंची ? मैंने कैसे कैसे वक्त के थपेड़ों को सहा है ? ससुराल से पांव उठ जाने के बाद मैंने अबकी बार ज्यादा दिन मायके मैं नहीं बिताया। भाइयों पर बोझ न बन जाऊं, आखिर उनके भी तो बीवी बच्चों से भरा पूरा परिवार था। कब तक वे मुझे अपने घर में पालते। इसलिए अपना पेट पालने के लिए कोई काम-धंधा ढूंढने का मन बना लिया। पड़ी लिखी तो मैं थी नहीं जो दफ्तर वगैरह में नौकरी ढूंढती, मुझे तो किसी के यहाँ बच्चे संभालने, कपड़े-बर्तन धोने का काम ही मिल सकता था। मैंने अब आत्म-सम्मान के साथ जीवन जीने का निर्णय ले लिया था। बार-बार के ब्याह से मुझे नफरत हो गई थी। बिना फल का पेड़ फिर लकड़ियों के काम आ जाता है, परन्तु बेऔलाद नारी किसी काम की नहीं। भगवान यदि किसी को नारी देह दे तो उसको कोख सूनी न दे।"

कहते-कहते उनकी आँखों से आंसुओं की लड़ी बहने लगी "बड़े भैया को जैसे ही मेरी मंशा की भनक लगी उन्होंने पास बुला कर मुझे फटकार लगाई।"

"तू इतनी सयानी हो गई है कि अपने निर्णय आप लेने लगी है। अभी मैं मरा नहीं हूँ। तुझे मेरे जीते जी किसी के यहाँ आया बनने की कोई जरूरत नहीं। आखिर बुजुर्गों की जगह-जमीन में तेरा हिस्सा अभी खड़ा है। हम तीनों ने एक कोख से जन्म ले रखा है। एक दूसरे के सुख -दुःख में साथ नहीं निभाएंगे क्या ?

भैया के मुंह से ये शब्द सुन मेरी आँखें भर आई और मैं उनके कंधे पर सिर रख कर बिलख -बिलख कर रोने लगी। मेरे आंसुओं ने उनकी सारी कमीज भिगो कर रख दी। मैं अपने माँ -बाप की इकलौती बेटी व दो भाइयों की अकेली बहन थी। जन्म के बाद ही माँ की मौत हो जाने के उपरांत पिता ने एक माँ और पिता की तरह हम तीनों का पालन पोषण किया था। पिता को गुजरे अभी दो साल हुए थे कि भैया के ऊपर मेरी व छोटे भाई की जिम्मेवारी आ पड़ी। मेरी शादी की बात चल पड़ी थी। पिता की मौत का खालीपन आज तक हृदय में भरा नहीं है। शायद अब तो कभी भी नहीं।

"अभी मायके में रहते मुझे कुछ ही दिन बीते थे कि हमारी दूर के रिश्ते की बुआ मेरे लिए यह रिश्ता ले आई। यह भी तीन -चार साल पहले ही नौकरी से रिटायर हो कर आये थे। इनके बारे में सब कुछ बता दिया गया था। रिटायर पति को सम्भालना बहुत कठिन होता है। वे पूरी तरह पत्नी पर आश्रित होते हैं।"

"सासु जी, आजकल तो आप लोग नया घर बना रहे हैं।"

"बेटा, मैं तो इन्हें कितना समझाती रही कि हमें घर-वर बनाने की कोई जरूरत नहीं। कहीं किराये पर कमरा लेकर बची -खुची जिंदगी कट ही जाएगी। कोई बच्चे-वच्चे तो ब्याहनें नहीं, जिनके लिए मकान खड़े करें। परन्तु इन्होंने मेरी एक न मानी। देवर ने कभी मकान बनाने की जरूरत महसूस नहीं की। दो-दो लाड़ियां ऊपर से चार-पांच बच्चे। बेचारे इतने बड़े परिवार को पालते या मकान बनाने फंसते। उन्होंने बुजुर्गों के बनाये दो कमरों में ही गुजारा किया।

अब ये कहते हैं, "सारी उम्र घर से बाहर नौकरी में रहा, बीवी पहले ही मर चुकी थी। फिर मकान की जरूरत महसूस नहीं हुई । हर आदमी का ख्वाब होता है कि जीवन में उसका एक खूबसूरत मकान हो। फिर नाते-रिश्ते व पड़ोसी मेरी खिल्ली उड़ाएंगे। एक तो बुढ़ापे में शादी की और फिर बीवी को ले कर चलता बना। मैं भाई के साथ ऐसा नहीं कर पाउँगा। भले ही हम नए घर में रहने का सुख न भोग पाएं। भाई का परिवार भी तो मेरा ही परिवार है।"

एक और घटना घट गई थी जिसने उसके जीवन को अश्रुओं से भर दिया है। दादा जी गले के कैंसर से पीड़ित हो गए थे। पैसों की कमी उनके इलाज में आड़े नहीं आने दी गई। दादी ने दुनिया भर के वैद , हकीम, डाक्ट से उनका इलाज करवाया। परन्तु जब आयु पूरी हो जाये तो कोई क्या कर सकता है ? और फिर जब जान पर बन आती है तो किसी की नहीं चलती। और एक दिन दादा जी, दादी को रोता बिलखता छोड़ वे इस दुनिया से चल बसे। दादी अपने नवनिर्मात मकान में एक बार फिर जिंदगी की जंग लड़ने के लिए अकेली पड़ गई थी। दादी बार-बार फफक फफक कर रो रही थी। घर का सारा काम बेआवाज हो रहा था। शुद्धि के बाद सारे

रिश्तेदार एक-एक कर विदा हो गए।

दादी एक बार फिर विधवा की पोशाक पहनने को विवश व मजबूर थी। सफेद पोशाक, सफेद रूखे बाल सुख चेहरा, गड्ढे में धंसी आँखें , चूसे आम की तरह पिचके गाल। किस ने विधवा की पोशाक के नियम बनाये होंगे ? सोचना न चाह कर भी दादी के मन में कई बार यह विचार जन्म लेते थे। सूनेपन को मिटाने में उनकी साथी थी ,आँगन में बंधी गाय। दादी उसी गाय को घास पानी का बंदोबस्त करने में जुटी रहती थी। गाय की जिम्मेवारी की वजह से उनका नाते रिश्तेदारों , व गांव पड़ोस में आना जाना भी बहुत कम हो गया था। वह अकसर बीमार रहने लगी थी। जब तक वह चलने फिरने लायक थी डॉक्टर के पास चली जाती थी। कुछ समय बाद वह चलने-फिरने में असमर्थ हो गई। दवा -दारू को जाने के लिए उन्हें दूसरे आदमी के सहारे की जरूरत महसूस होने लगी। देवर के परिवार की उनके स्वास्थ्य में कोई रुचि नहीं थी। वे गांव में लोगों के पूछने पर यही कह कर बात टाल देते थे कि इसके पास पैसों की क्या कमी ? यदि पैसा पास में हो तो बीमारी से लड़ने में कोई परेशानी नहीं होती। हम ठहरे बाल बच्चे वाले इन्हें पालें या इस बुढ़िया को डॉक्टर के पास ढोते फिरें? इतना समय किस के पास? दादी की हालत इतनी बिगड़ चुकी थी कि इधर-उधर सहारा ले कर बिस्तर से खड़ी होने की कोशिश करती, फिर लुढ़क पड़ती। जैसे पाँव शरीर का भार ढोने में अक्षम हो गए हों।

वैसी ही स्थिति में एक दिन दादी अपने कमरे में बिस्तर पर सहारा लेकर बैठी हुई थी। उनमें खड़ी होने कि हिम्मत नहीं थी। देवर के घर से आकर कोई चाय का गिलास सामने पड़े ट्रंक के ऊपर रख गया था। खाली चाय। बूढ़ी विधवा चाय के अलावा कुछ खा-पी नहीं सकती क्या? शुरू-शुरू में चाय के साथ-साथ एक-आध चपाती भी मिल जाया करती थी। आज वह भी बंद हो गई थी। उन्हें याद आया कई दिनों से एक गिलास में थोड़ी सी चाय एक चपाती ही उसके नसीब में लिखी थी।

अपनी दिन-प्रतिदिन बिगड़ती दुर्दशा को देखते हुए तथा दो वक्त की रोटी की खातिर वह देवर की सारी शर्तें मानने को तैयार हुई। उन्होंने अपनी सारी संचित जमा पूंजी, जगह जमीन अतः चल -अचल सम्पति अपने देवर के बेटे के नाम करवा दी। जिसने जमा पूंजी व जगह-जमीन अपने नाम करवाने पर सशर्त उनकी देख भाल व क्रिया-कर्म करने का संकल्प लिया था। देख-भाल तो वह भली-भांति कर नहीं पा रहा था, क्रिया-कर्म की अभी तक बारी नहीं आई थी। उसने अपने शौक पूरे करने हेतु गाड़ी खरीद ली थी। इस त्रासदी ने उन्हें विचलित कर दिया था। वह प्रायः भटक जाती है। वह कई बार गिरती है और उनका माथा व घुटने लहूलुहान हो जाते हैं। अब सर्दी-गर्मी, बरसात के मौसम में भी कभी उनका दरवाजा बंद नहीं हुआ। शायद उनकी बाँहों में अब वह ताकत नहीं रही जो वर्षा से भीगे लकड़ी के दरवाजे को बंद करने का दम भर सके। उनके इर्द -गिर्द भयानक सूनापन है। जीरो वाट का बल्ब हल्का मदम प्रकाश कर संध्या होते ही उनके कमरे में अपना कर्तव्य वहन करता है। जब से उन्होंने खाट पकड़ी है,वह कदमों की आहट से ही अंदाजा लगा लेती है कि रास्ते में फला आदमी जा रहा ह। शायद ही कभी इतनी बड़ी गलती उनकी जुबान से हुई हो कि उन्होंने जिसे आवाज लगाई हो और वह वही आदमी औरत न हो कर कोई और निकला हो। उनकी जरूरत अब केवल रोटी तक ही सिमट गई थी। जिसे भी पुकारती बस एक रोटी मांगती।

"मेरे टब्बर वालों ने मुझे भूखे मार दिया है' यही वाक्य वह हर उस आदमी औरत से कहती जो उनको सँभालने उनके आँगन में पहुँचता। वैसे कम ही आदमी उनके आँगन में प्रवेश करने की हिम्मत जुटा पाते थे, यदि कहीं उनके परिवार वाले देख लेते तो जान छुड़ानी मुश्किल हो जाती थी।

'हम मर गए हैं क्या? यदि इससे इतनी ही हमदर्दी है तो अपने घर ले जा कर सेवा टहल करा। क्रिया -कर्म भी देख लेना। सुबह, शाम, दोपहर तीनों वक्त खाना, टाइम-टाइम पर चाय, नहलाना-धुलाना इसके कपड़े धोना क्या यह सारे काम नहीं होते क्या ? सब हम कर रहे हैं। इसका चूल्ह-चौका लीप रहे हैं। बुढ़ापे की हर जरूरत का हम ध्यान रख रहें हैं। अब क्या चाहते हो?' जैसे न जाने कितने व्यंग्यात्मक उलाहने उस आदमी औरत को सुनने पड़ते, जो हमदर्दी जताने आँगन में जाता या रंगे हाथों वहां पकड़ा जाता। वह कहीं का न रहता और मुंह लटकाये अपने काम पर या घर लौट पड़ता। देवर-देवरानी तथा उनके बच्चों द्वारा प्रताड़ित दादी, जीवन के अस्थि पिंजर को घसीट रही थी। वह कमरे से आँगन तक बच्चे की तरह घुटनों के बल सरक कर चलती थी। कपड़े उनके शरीर पर नाममात्र को ही होते थे। अब उन्होंने गंदगी इतनी फैलानी शुरू कर दी थी जिसकी बदबू सारे पड़ोस में फैल गई थी। जीवन के अंतिम पड़ाव में उन्होंने आते-जाते लोगों को अपनी ओर आकर्षित करने के लिए खाली टीन बजाना शुरू कर दिया था। वह बच्चों की तरह शोर करती थी। दादी का स्वास्थ्य दिन-प्रति-दिन गिरने लगा था। बेचारी एक दम असहाय हो उठी थी। वह मरणासन्न थी परन्तु परिवार के किसी सदस्य ने दरवाजे पर जा कर अंदर झाँका तक नहीं , जैसे वहां कोई रहता ही न हो। हफ्ता भर मौन रहने के बाद दादी मृत्यु को प्राप्त हो गई। सभी दयालु, परोपकारी और सहानभूति रखने वाले पड़ोसी थे परन्तु देवरानी के भय से किसी ने नजदीक फटकने की कोशिश नहीं की। उसके तड़फने के अंतिम क्षणों के दृश्य का कोई अंत नहीं था।

गांव व डाकघर सालाना, जिला शिमला,
हिमाचल प्रदेश, मो. 94599 69717

व्यंग्य

बीवी-बच्चे और बजट

● डॉ. श्याम मनोहर व्यास

बीवी, बच्चे और बजट तीनों का एक त्रिभुज बनता है। तीनों में आपस में घनिष्ठ संबंध है। यदि यह बजट समबाहु रूप में रहता तो ठीक है अन्यथा विषमबाहु त्रिभुज बनने पर समस्याओं का अंबार-सा लग जाता है। बजट इस त्रिभुज का शीर्ष बिंदु है। इसके ऊपर-नीचे होने पर गृहस्थी का संतुलन बिगड़ता है। बीवी और बजट दोनों एक-दूसरे के विरोधी हैं। बीवी का लक्ष्य है आय कम, खर्च ज्यादा। जब भी अवसर मिलता है, एक-दूसरे पर आक्रमण कर देते हैं। फरवरी महीने के अंतिम सप्ताह का अंतिम दिन महत्त्वपूर्ण होता है। इस दिन केंद्रीय वित्त मंत्री अपने सूटकेस में से बजट का पिटारा खोलते हैं। इसी के अनुरूप घर खर्च में कमीबेसी होती है। बजट पेश होने के पूर्व बीवी चाहती है कि उन वस्तुओं को अधिक मात्रा में खरीद लिया जाए जो कर लगने के बाद महंगी होंगी।

फरवरी व मार्च के महीनों में घर का बजट असंतुलित हो जाता है, महंगी होने के भय से अनचाही वस्तुएं भी घर में आ जाती हैं। मार्च में महंगाई बढ़ने से आवश्यक वस्तुओं का भी घर में अभाव हो जाता है। आयकर की राशि चुकाने से मार्च का वेतन आधा ही मिल पाता है। अप्रैल मास में परीक्षाएं होने के कारण बच्चे व्यस्त रहे हैं। बीवी को भी अपने काम से फुर्सत नहीं मिलती।

मई के माह में बच्चों के परीक्षा-परिणाम घोषित होते हैं। फलस्वरूप खर्चा बढ़ता है। बच्चों के उत्तीर्ण होने की खुशी में इन्हें बाहर सैर-सपाटे को ले जाना पड़ता है। दो माह का वेतन एक-ही- माह में समाप्त हो जाता है। बड़ी कठिनाई से ले-देकर जून मास व्यतीत होता है। फिर आता है जुलाई का माह, सर्वाधिक खर्चे वाला माह! बच्चों के प्रवेश, पुस्तकें, पोशाक आदि पर अनिवार्य रूप से होने वाला व्यय अधिकांश सरकारी कर्मचारियों को इस माह में जी.पी.एफ., बीमा आदि से ऋण लेना पड़ता है। तभी जाकर सारे कार्य पूरे हो पाते हैं। इस माह में गृहस्थी का त्रिभुज विषमबाहु बन जाता है।



कई बार मैं घर का संतुलित बजट बनाने का प्रयास करता हूं, पर सफल नहीं हो पाता। आय से व्यय बढ़ जाता है। मैं राज्य व केंद्र सरकार की तरह 'ओवर-ड्राफ्ट' की व्यवस्था करने में असमर्थ हूं।

पत्नी आवश्यक मदों को सबसे नीचे रखती है और विलास की सामग्री को सबसे पहले प्राथमिकता देती है।

वह कहती है कि भारत में नए-नए उद्योग-धंधे इन्हीं वस्तुओं के निर्माण के लिए खुल रहे हैं अतः खरीदना राष्ट्रीय-हित में है!

आज देश में नई अप-संस्कृति के दर्शन हो रहे हैं। बच्चों को शुद्ध दूध-घी नहीं मिले, पर घर में टी.वी. सैट, कंप्यूटर, इंटरनेट जरूर हो। कैसा अनोखा बदलाव आ रहा है! इस फैशनपरस्ती का व्यापारी भी खूब लाभ उठा रहे हैं।

पचास रुपये की वस्तु को सौ रुपये की बताकर उसपर पचास प्रतिशत का 'डिस्काउंट' देकर ग्राहक को मूर्ख बनाया जा रहा है। बलिहारी है ऐसी फैशनपरस्ती को! मैं बीवी व बजट दोनों के तेवर नहीं समझ पाता। भारतीय बजट की तरह बीवी भी जीवन की समस्याओं को सुलझाती कम, वरन् उलझाती अधिक है।

सोने के आभूषण भारतीय नारियों को प्राणों से भी अधिक प्रिय हैं। आज दस ग्राम सोने का मूल्य एक सरकारी साधारण कर्मचारी के मासिक से भी अधिक है।

पत्नी का कथन है- "कंचन के बिना कामिनी का जीवन व्यर्थ है।" उसकी यह फरमाइश पूरी करना आज के इस युग में एक ईमानदार व्यक्ति के लिए बड़ा कठिन है। मैं उसे अर्थशास्त्र का नियम बतलाते हुए कहता हूं- "देखो प्रिय! यदि पेट काट कर थोड़ा सोना

लघु कथा

गांव का आदमी

● रामकुमार आत्रेय

आदमी की आयु साठ-पैंसठ वर्ष के लगभग रही होगी हालांकि देखने में वह बिलकुल भी बूढ़ा नहीं लग रहा था। उसके द्वारा सलीके से पहने कुर्ता पायजामा को देखकर लग रहा था कि वह एक शिक्षित आदमी है। उसने गांव के किसी आदमी की तरह अपने गले में साफा भी डाला हुआ था। वह सड़क के साथ- साथ पैदल चल रहा था। अचानक एक गाड़ी उसके समीप आकर रुक गई। वह चौंक कर उसकी ओर देखने लगा। उसने देखा कि ड्राइविंग सीट पर बैठा व्यक्ति सूटिड-बूटिड है और हाथ के संकेत से वह उसे अपने पास बुला रहा है।

आदमी गाड़ी के समीप पहुंचा तो गाड़ी वाले ने खिड़की खोलते हुए उससे पूछा- "किस जगह जा रहे हैं आप?"

"अलीपुर गांव जाना है मुझे।" उसने सहज भाव से उत्तर दिया।

"यह गांव यहां से कितनी दूर है और कहां पर है?" अगले प्रश्न ने तुरंत आदमी के कानों पर दस्तक दी।

"सामने थोड़ी दूर पर जो टोल प्लाजा है न, उसके आगे एक गांव छोड़कर, अगला गांव है। बिलकुल सड़क के साथ।" आदमी यह सब बताते हुए एक बार झिझका, पर बताया उसने सही था।

वह समझ नहीं पा रहा था कि गाड़ी वाला उससे यह सब क्यों पूछ रहा है।

"आओ गाड़ी में बैठो, मैं आपको वहां तक लिए चलता हूं।" गाड़ी वाले ने दरवाजा खोलकर आदमी को निमंत्रण दिया।

आदमी थोड़ी-सी हिचक के साथ गाड़ी में बैठ गया। पूछने पर उसने बताया था कि पैदल चलना उसकी मजबूरी है। बाइक वह चलाना नहीं जानता और लिफ्ट मांगना उसे भीख मांगने जैसा लगता है।

टोला प्लाजा निकट आने पर गाड़ी वाले ने गाड़ी धीमी करते हुए उससे कहा, "मेरे लिए आपको एक काम करना है। वह यह कि जब टोल टैक्स वाले पैसे मांगें तो कहना कि आप कलसाना गांव के सरपंच राजेंद्र सिंह के यहां जा रहे हैं। आप तो लगते ही गांव के आदमी हैं।"

जब तक वह हां या ना में उत्तर देता टोल प्लाजा आ चुका था। टैक्स की मांग होने पर गाड़ी वाले ने खुद उत्तर दिया, "ये सज्जन कलसाना वाले सरपंच के रिश्तेदार हैं। उनसे मिलने जा रहे हैं। गाड़ी का नम्बर लिख लो-0444। यकीन न हो तो राजेंद्र जी को फोन करके पूछ लो। वे भी हिस्सेदार हैं न टैक्स उगाहने की मैनेजमेंट के।"

टैक्स उगाहने वाले ने बैरियर हटा दिया।

"बेकार में 150 रुपये आने-जाने के निमित्त देने पड़ते। मैं कोई अपने काम तो जा नहीं रहा हूं। स्कूलों में जाकर बच्चों को अच्छी-बच्छी बातें सिखाता हूं।" गाड़ी आगे बढ़ाते हुए उसने खुद ही टिप्पणी की थी।

मुश्किल से एक किलोमीटर चले होंगे कि गाड़ी रुक गई। गाड़ी वाले ने दरवाजा खोलते हुए कहा, "अब नीचे उतरिए ताऊ जी।"

"मगर आप तो कह रहे थे कि मुझे अलीपुर तक ले चलोगे। क्या हुआ? कहो तो पैसे दे दूंगा मैं वहां तक के?" आदमी ने आहत होते हुए कहा था।

"अरे ताऊ जी, मुझे यहां से बायीं ओर मुड़ना है। नहीं तो आपको जरूर ले चलता। उतरो मुझे देर हो रही है।" स्वर में कुछ कड़ापन आ चुका था।

गांव का आदमी नीचे उतर गया। वह खुद को ठगा हुआ-सा महसूस करते हुए वहीं खड़े-खड़े गाड़ी को आगे जाते देखता रहा।

864-ए/12, आजाद नगर, कुरुक्षेत्र, हरियाणा-136 119, मो. 0 94162 72588

खरीद भी लें तो कुछ वर्षो बाद उसका मूल्य तो दुगुना हो जाएगा पर तुम पुरानी पड़ जाओगी। उस वस्तु का साथ क्या देना जो अपना मूल्य तो बढ़ाए पर दूसरों का घटा दे!"

यह भी सत्य है कि त्योहारों के दिनों में भी घर का बजट असंतुलित हो जाता है। उदाहरण के लिए दीपावली के पावन पर्व के दो दिन पूर्व धनतेरस के पर्व पर धार्मिक मान्यता के अनुसार बर्तन खरीदना आवश्यक है। चाहे घर में सभी प्रकार के बर्तन हों! बर्तन की यह खरीद भी घर के बजट पर असर डालती ही है। दीपावली पर सगे-संबंधियों, मित्रों व वी.आई.पी. जन को उपहार स्वरूप जो वस्तुएं भेंट की जाती हैं, उन पर काफी व्यय हो जाता है। यह भी आखिर बजट पर प्रभाव डालता ही है।

एक भारतीय गृहस्थ की तरह मेरा प्रयास यह रहता है कि मैं बीवी, बच्चों व बजट का त्रिभुज समबाहु रूप में देख सकूं। देश संक्रमण काल से गुजर रहा है, एक मोड़ पर आकर खड़ा है, मैं अपने परिवार को इससे उबारना चाहता हूं। घर में संतुलन चाहता हूं, क्या नक्कारखाने की तूती में मेरी आवाज कोई सुनेगा? आपकी शुभकामनाएं चाहता हूं!

15, पंचवटी, उदयपुर, राजस्थान-313004, मो. 93521 03162

कविता

लौटोगी नहीं क्या

● श्याम सिंह घुना



आज मैंने जब
वह कोना देखा
जहां तुम बैठा करती थी
तो सिहर उठा मेरा तन बदन

झिलमिलाता नभ
उद्वेलित सुगंधी
मस्त अनिल
यथावत् सभी कुछ
किंतु तुम वहां न थी
उस कोने में
तम ध्वांत हुआ जाता था

निस्तब्ध वहां वह
धड़कनें अपनी मैं सुनता रहा
आशिक को एकाकी देख
उड़गण स्थिर हुए किंतु
निर्दयी चंद्र निष्ठुर
मुस्कुराता रहा उसी अदा में

झिंगुरों की झांएं झांएं से
परेशान होकर
लगी हवा हुंकारने तो
मौन हुए सब राग
मन स्थिर हुआ
पलटा कोने को देखा
जाने क्या आई दिल में
बढ़कर आगे कमरे में
दीया जला दिया मैंने
जाने के बाद तुम्हारे
जब भी गया वहां
जहां जहां हम तुम गए थे
वह जमाना याद आता रहा
जब रातें लंबी दिन छोटे
सफर सुहाना लगता था

पर्वत शिखर घने जंगल
बलखाती घाटियां
मनचले मचलते झरने
गाती नदियां ढलती सांझ
अब वह सब
मुझसे दूर रहने लगे हैं

इनको भी तुम से ही
स्नेह था संभवतः
मेरे साथ व्यवहार अब
वैसा ही हो गया है
जैसा तुम्हारे आने से पूर्व था

गाना चाहता
आवाज नहीं निकलती
नाचना चाहता
पांव नहीं उठते
गीत मेरे गूंगे हो गए
अपने ही सजोए स्वप्नों के शीशमहल
लोप हुए जाते
जो तुमने दिखाया दीया
वह विस्मरणीय
अमिट व अद्भुत
क्या होता प्यार यह मैंने जाना
उसकी आग में जलना

आज अनुभव हुआ
मेरे जीवन का एक पहलू
मेरे विचारों का एक महत्त्वपूर्ण क्षेत्र
बन कर रोम-रोम में समाई तुम
कितनी दूर निकल गई
यह कोई पूछे तो
मैं भी नहीं बता पाऊंगा

तुम और करीब आ सकी हो
तनिक और दूर जा कर
यदि भूल न जाओ
याद होगा तुमने इसी कोने में
मेरी गोद में लेट कर कहा था-
मैं फिर आऊंगी।

न जाने कब तुम
खयालों में आ जाओ रात दिन
यह सोचकर सतर्क रहता हूं
तुम्हारे स्वागत के लिए
शायद तुम आ जाओ
फिर से एक रात के लिए
लौटोगी नहीं क्या?

लगता अभी अभी गई हो
कोमल अपने हाथों से
मेरे गालों को सहला कर
लौट आओगी अभी अभी
अपने पिपासित होठों से
मेरी आंखों को चूमने
या शायद भूल गई थी तुम
मेरे हाथों को
अपने हाथों से दबाना सहलाना

अरे हां!
अपनी छाती से लगाना तो
भूल ही गई थी तुम मुझे
लौटोगी नहीं क्या?

गांव लिंगाह, डा. झिकनीपुल, तहसील चौपाल, जिला शिमला, हिमाचल प्रदेश-171 211

कविता

बाजार

डॉ. कमल के. 'प्यासा'



ये बाजार है
यहां सब कुछ बिकता है
मोल तोल भाव चलता है
भौय कैसी भी हो...
नई पुरानी आधी या पूरी
घिसी-पिटी
चोरों की या लूट की
दिखती हो
बिकती है, मुक जाती है।

बाजार सरेआम है
प्रत्यक्ष सामान है
पारखी नज़र हो
दमखम पॉकेट गर्म हो
राम ले लो रहीम ले लो
कोई भी निशान ले लो
बस थोड़ा जुगाड़ चाहिए।

बाजार में सब चलता है
घिसा हो... पिटा हो
डिगरी डिप्लोमा हो
मास्टर और उसके असूल
जमीर हो या कानून
तौर तरीके सभी बिकते हैं
यहां मिलते हैं
सलीके जीने के
गोली बारूद असला ड्रग
जब चाहे ले लो
कोई रोक नहीं, टोक नहीं
बेझिझक/बेहिसाब ले लो।

इस बाजार में
कभी उठता उछाल है
कभी धड़ाम से गिरता है
लेकिन ग्राफ (मार) तो
आम आदमी (मजदूर व गरीब किसान)
का ही गिरता है
वह गिरता है उठता नहीं
हमेशा के लिए उठ जाता है।
सस्ता निपट जाता है।

बाजार गिरे को गिराता है
मरे को मारता है
जिंदा हो या मुर्दा
यहां सब कुछ बिकता है
बाल भी खाल भी
राख भी खाक भी
मल से मूत्र तक निपट जाता है!
लाचार... मजबूर
है नहीं जिसका वजूद
हाथोहाथ निकलता है... मुक जाता है!!

पृर्थी 34/7 अप्पर समखेतर, मंडी,
हिमाचल प्रदेश-175 001, मो. 98821 76248

पहाड़ी जनजीवन

(पृष्ठ 21 से आगे) सूप से हवा में पुणाई करके अनाज साफ होता था।

फसल खेतों में दो किस्म की होती थी। एक बस्तर खेती अर्थात एक साल खाली रखकर फिर खेत किनारों को अर्थात न्हैंश और ब्रेयूड़ ठीक तरह से कुदाल लगा करके समतल खुदाई करके फसल बोई जाती थी जिसको बसौर खेती कहा जाता था, दूसरी हर साल केवल एक बार ही हल लगाकर कसारी खेती किसान करता था। फसल वह भी ठीक ही होती थी। साग-सब्जी लगाने वाले छोटे-छोटे खेतों को शंदरू-शवाडू कहा जाता था जिसमें काठू और सरसों साग, हल्दी-मिर्च, पुदीना आदि लगाया जाता था। ऊंची पहाड़ियों पर काठू शाक भी बहुत लगाया जाता था। पहाड़ों में खेती को पानी सिंचाई की आवश्यकता नहीं रहती थी। कारण यह कि मौसमी बरसातें समय-समय पर स्वयं ही होती रहती थीं। फसल लगाने के पश्चात बंदरों एवं भालुओं से फसलों को बचाने के लिए खेती के ठीक निकट स्थल मोर्च पर टाप्परी अर्थात पहरेदारी के लिए चार लक्कड़ पोल खड़े करके ऊपर बनाई जाती थी जो प्रायः दोमंजिला होती थी। भूमि पर आग जलाने के लिए अंगीठा कच्चा होता था। ऊपर दुमंजिली सतह पर पहरेदार तख्ते आदि बिछाकर आराम से बैठता भी था तो रात्रि पहरे के लिए सोता भी था। जानवरों की हिंसा से भी बचा रहता था। निचली भूमि सतह पर कुत्ता बांधकर आराम से रखता था। बंदरों को भगाने के लिए कुत्ते को शाबाश! शाबाश!! कर प्रोत्साहित करता था और भालू आदि को भी बड़ी देर के बाद आवाज लगाकर खेतों में उजाड़ न करने के लिए सावधान करता रहता था। इस तरह किसानों का जीवन बहुत श्रमशील एवं सजगता और दिन-रात पहरेदारी करने का ही रहता था। पहाड़ी किसान खेती-बाड़ी का कार्य भी बड़ी तन्मयता और श्रमशील होकर करता था।

पूर्व विधायक द्रंग-30, गौतम विहार, टांडू,
तह. सदर, जिला मंडी, हिमाचल प्रदेश-175 001,
दूरभाष : 01905 266722

कविता

मेरा भारत महान

● मनोज कुमार 'शिव'



जन्म लेने को जहाँ
तत्पर रहते है भगवान!
कृष्ण राम अवतरित हुए
आए जहाँ महावीर हनुमान!
पवित्र भारत भूमि में जन्मा
हर जन है भाग्यवान!
गर्व से होता सीना चौड़ा
मेरा भारत देश महान!

ऋषि-मुनियों की धरती हमारी
सभी जन हैं एक समान!
प्यार भाईचारा, ईमान दिलों में
इकट्ठा रहते हिंदू मुसलमान!
साथ साथ सभी खुशियाँ मनाते

जब भी आए होली/दीवाली/रमजान!
अनेकों विविधताएँ खुद में समेटे
ऐसा मेरा भारत देश महान!

हर प्रांत की अपनी भाषा
अलग वेशभूषा है पहचान!
घर आया हुआ अतिथि जहाँ
समझा जाता है देव समान
यूँ सोचते देश के बारे में
जेहन में आ ही जाता है
अभिमान!
बडों को सम्मान छोटों को
प्यार जहाँ मिलता
वो है मेरा भारत देश महान!

आया जब भी खतरा देश पर
हो गए सैकड़ों जोशीले कुर्बान!
देश का वैभव बचा रहे
जाए तो चली जाएगी जान!
गुरु गोविंद सिंह जैसे दानी हुए
दे दिया पूरे वंश का बलिदान!
ऐसे सुपूत अपने गर्भ में पाले
धन्य है मेरा देश महान!

सबसे सुंदर, गहरी सभ्यता हमारी
विश्व को मार्ग दर्शन हेतु
रहा योगदान!
वेदो उपनिष्दों, पुराणों में हमारे
छपा हुआ है महाज्ञान!
नदियोँ को माता कहते हैं हम
पत्थर की मूर्ति को मिलता
देव सम्मान!
आस्था कूट कूट कर भरी दिलों में
धन्य है मेरा भारत देश महान!

सुंदर सुंदर नजारें यहाँ
प्रकृति ने किए हमें प्रदान!
कहीं बिछी है बर्फ, कहीं रेत,
कहीं भीड़भड़का, कहीं
बिलकुल सुनसान
छह-छह ऋतुएं जहाँ मिलती है
खूब आनंद में रहता हर इंसान!
जलधि धोते जिसके चरणों को
वो है मेरा भारत देश महान!

तीज पर्व त्योहारों पर जहाँ
सजती है हर एक दुकान!
सुस्वादु भोजन के रस मिलते
जहाँ बनते हैं नित नए पकवान!
ओणम, बै साखी, दुर्गापूजा, पोंगल
मनोविषाद का मिटा देते
नामोनिशान
हर पर्व कुछ संदेश देता है जहाँ
वो है मेरा भारत देश महान!

विश्व का सबसे बड़ा लोकतंत्र
तिरंगा है जिस देश की शान!
हजारों वर्ष पुराना इतिहास हमारा
नीवें हिला पाना नहीं आसान
मिटती नहीं हस्ती हमारी
मिट गए अनेकों जहान
वो धर्म गुरु वो पथ प्रदर्शक
वो है मेरा प्यारा हिंदुस्तान!!

पुत्र श्री गोकुल राम ठाकुर, गाँव लोअर घियाल, डाकघर नमहोल, तह. सदर, जिला बिलासपुर, हिमाचल प्रदेश-174032, मोबाइल 8679146001

लघु कथा

फिर क्यों आई हो?

● शंकर लाल माहेश्वरी

बार-बार इनकार करने पर भी पीछा नहीं छोड़ती, तुम समय व स्थान का भी अनुमान नहीं लगाती, कब कौन कहाँ कैसी भी अवस्था में हो तुम तपाक से आ जाती हो। लाख मना करने पर भी तुम्हारे कानों पर जूं नहीं रेंगती। उस दिन स्टेशन की सूनी बेंच पर तुम आकर बैठ गई। और तो और बापू की धर्मसभा में भी तुमने मेरा पीछा नहीं छोड़ा। हजारों धर्मप्रेमियों के मध्य तुमने वहाँ आकर अच्छा नहीं किया। दोपहर की तेज गर्मी हो या बरसाती बयार, मौसम की नर्मी हो या सुहानी साँझ। सदैव मेरी छाया सी बनी रहती हो, ऐसा क्या हो गया हैं तुम्हें ?

तुम्हें तो मान-सम्मान की कोई परवाह हैं नहीं, मेरी तो कोई प्रतिष्ठा होगी न, तुम न रात देखती हो न दिन। मेरे ऑफिस तक पहुँचने की तुम्हारी हिम्मत कैसे हो जाती हैं, मेरे साथी कार्यकर्ता क्या सोचते होंगे। कभी सोचा हैं तुमने ? घर-परिवार के लोग मुझे सदा कोसते रहते हैं, उलाहना देते हैं, झगड़ा करते हैं फिर भी तुम इतनी ढीट हो कि स्थिति को समझे बिना चली आती हो।

उस दिन मेरे निकटतम मेहमान आये थे, रात देर तक हम बतियाते रहे और तुम आ धमकी, क्या सोचा होगा उन्होंने ? लोग बातें बनाते हैं, गली-मोहल्ले में चर्चा का बाजार गरम हो जाता है, मेरे बाहर जाते-आते लोग अंगुलिया उठाते हैं, बातें करते हैं, नाक-भौं सिकोड़ते हैं, मैं शर्म के मारे पानी-पानी हो जाता हूँ, फिर भी तुम अपनी मेल-मुलाकात कम नहीं कर पाती, ऐसा क्यों ? पागल हो गई हो क्या ?

घर में बीवी-बच्चे-बहुएँ सभी हैं, लड़के-लड़कियों पर अच्छा प्रभाव नहीं पड़ता, उनके बीच अपमानित होना पड़ता हैं मुझे। कई बार ''तू-तू-मैं-मैं'' हो जाती हैं, झगड़ा बढ़ जाता हैं तो गली-मोहल्ले के लोग दर्शनार्थी बन जाते हैं। खिल्लियाँ उड़ाते हैं। इतना सब कुछ होते हुए भी तुम्हारा दिल नहीं पसीजता, ऐसा क्या हैं जो तुम सन्तुलित नहीं हो पाती।

उस दिन एकादशी का व्रत था। पाठ-पूजा में बैठा था। माला-जप चल रहा था। वहाँ भी तुम आ गई। क्यों ? मेले में भी तुमने पीछा नहीं छोड़ा। सुबह-शाम, दिन-दोपहर कुछ भी नहीं देखा, और वहीं की वहीं बनी रहती हो। सारे मेलार्थी दाँतो तले अंगुली दबाते रहे। कथा करने वाले स्वामीजी ने मुझे अलग से टोका और ढेर सारा उपदेश दे डाला। पर करता भी क्या ? शर्म से गरदन नीची करके उपदेश सुनता रहा और तुम्हे कोसता रहा। आखिर मैंने क्या बिगाड़ा है तेरा? उस दिन होटल में बैठा ही था कि तुम आ गई। समीप वाले ने खरी-खोटी सुनाई और कह दिया कि कुछ तो शर्म करो यार ! तभी दूसरे सभी ठहाका लगाकर हँसने लगे और मेरा सिर नीचा का नीचा रह गया। तुम कितनी जिद्दी हो, तुम तो इतनी निष्ठुर और निकम्मी निकली कि अपनों की पीड़ा भी नहीं समझ पाती। तुम कभी विचार तो करो। इस तरह कभी भी अचानक तुम्हारा आना, लम्बे समय तक ठहरना, भीड़ भरे सभा सम्मेलनों में भी तुम्हारी उपस्थिति कितनी दुखदायी हो जाती है मेरे लिये। हाँ, इतना जरूर हैं कि मैनें तुम्हे अपनाया, साथ दिया, मान-सम्मान दिया, भरपूर समय दिया, तुम्हारे आ जाने के बाद किसी भी प्रकार व्यवधान मुझे बरदास्त नहीं होता, यह जरूर है कि तुम्हारे न आने पर चिड़चिड़ा स्वभाव भी बन जाता, सिरदर्द का होना, बैचेनी बढ़ना, थकान और घबराहट होना सभी कुछ हो जाता हैं, फिर भी मर्यादा भी सामाजिक दस्तूर तो है न ! लोग मेरी हँसी उड़ाये, बातें बनाये, चिड़ावे, पीठ पीछे गालियां देवे, अपमानित करे, क्या तुम्हें अच्छा लगता है ? बोलो जवाब दो।

तुम्हें संयमित होना चाहिये, मर्यादा का पालन करना चाहिये, लोकलाज से डरना चाहिये, समाज की नीति के अनुकूल बनना चाहिये, समय देख कर आना चाहिये। फिर लम्बे समय का ठहराव भी तो उचित नहीं लगता, कुछ समझा करो। सभी लोगों की यह स्थिति नहीं हैं। उनके पास भी तुम्हारी ही तरह आवाजाही रहती हैं, किन्तु निश्चित समय सीमा में। यों तुम्हारी तरह कभी भी कहीं भी उनके पास इस तरह कोई आती-जाती नहीं हैं। देर रात में आकर जल्दी चले जाने का स्वभाव होता हैं उनका। यदि तुम भी रात के अँधेरे में जब कोई नहीं हो सभी का अलगाव हो जाये तब तुम धीरे से आकर ठहर जाओ तो किसी को कोई एतराज नहीं होगा। फिर जल्दी भोर में चले जाना तुम्हारे और मेरे लिये हितकर होगा। अगर थोड़ी बहुत भी समझ हैं तो दिन में कभी मत आना, जब रिश्तेदार, मित्र-परिजन साथ हो तो देखा करो, तुरन्त चले

जाना। हठधर्मी करके आसन मत जमा लेना, ऐसा करोगी तो तुम्हार मान-सम्मान बढ़ेगा। उस दिन बस स्टेण्ड के मुसाफिरखाने में मैं अपने मित्रों के साथ बैठा, कुछ आप बीती घटनाओं का वर्णन कर रहा था, तुम अचानक आ गई। मैनें तुमसे बचने की खूब कौशिश की फिर भी साथियों को तुम्हारा एहसास हो गया और वे हतप्रभ रह गये। जब मैं अचानक चौंक उठा तो उन्होंने कह दिया कभी-कभी ऐसा ही होता हैं। भविष्य में ध्यान रखने की सीख देते हुए आई बस में बैठकर चले गये। तुम्हे याद होगा, उस दिन मैं भारी बुखार से पीड़ित था। सिर में जोरों का दर्द था। श्वास रोग से अत्यधिक विचलित हो गया। हाथ पैरों ने काम करना बन्द सा कर दिया। डॉक्टरों का ताँ-ताँ लग गया, तब तुम नहीं आई। चार दिन तक पीड़ा भोगता रहा, किन्तु तुम्हारे दर्शन न रात में न दिन में हो पाये। ऐसा क्यों ? दुःख के दिनों में तुम मुझे बिलकुल भूल गई।

वस्तुतः तुम अत्यधिक स्वार्थी हो, अपना सुख ही तुम्हारे लिये सर्वोपरि हैं। तुम उन दिनों अपना मुँह तक नहीं दिखा पाई, फिर भला तुमसे क्या अपेक्षा की जा सकती है। यदि उस समय दिन में एक बार भी तुम आ जाती तो मुझे सुख मिलता। बीमार के लिए पल भर का सुख भी कम नहीं होता हैं। ठीक है कि नहीं।

एक दिन तो तुमने हद ही करदी। आधी रात के भयंकर अँधेरे में मुझे साथ चलने को मजबूर कर दिया। मैं गाँव की गलियों में अनमना मौन साधे तुम्हें साथ लिये चलता रहा, फिर चलता रहा, चलता रहा तभी किसी के सामने से आने की जोरों की आहट सुनी तो में अवाक् रह गया और तेजी से भागकर वहीं पहुँचा जहाँ से प्रस्थान किया था। याद है न तुम्हें ? बताओ फिर क्यों आई हो !

मेरी मानो तो एक बात कहूँ, तुम पढ़ते समय किसी विद्यार्थी के पास, माल बेचते समय व्यापारी के पास, पूजा करते समय पूजारी के पास, खेत जोतते समय कृषक के पास, सीमा पर पहरा देते सैनिक के पास तथा वाहन चलाने वाले चालक के पास और देश चलाने वाले नेता के पास बेसमय मत आया करो ताकि वे देश का काम निर्बाध रूप से करते रहे। समझी न !

सुनो ! अब ध्यान रखना, जब आओ तो धीरे से आना, हो-हल्ला हो रहा हो तो कहीं ठहर जाना। सभी चलें जावें तब आना और पूरा समय साथ रहकर रात के अन्तिम प्रहर में ही चले जाना। अच्छा, अलविदा। बुरा मत मानना।

कहा सुना माफ करना- निंदिया रानी !

पूर्व जिला शिक्षा अधिकारी
पोस्ट- आगूचा, जिला- भीलवाड़ा
राजस्थान- 311022, मो- 9214581610

कविता

वह बुजुर्ग

• मनोज चौहान

ईश्वर का सुमिरन
करता वह बुजुर्ग
चेहरे पर प्रसन्नता
संतोष और शांति की
आभा लिए
दिख जाता था अकसर
गांव के किसी भी
रास्ते पर
टहलते हुए।

एक अंतराल के बाद
गांव गया
तो चेहरे पर
प्रसन्नता के भाव
तो दिखे
मगर भीतर तक
कचोटता
एकाकीपन
भी झलक रहा था
कहीं।

जीवन के अस्सी
से भी अधिक
बसंत देख चुकी
वह आंखें
उजागर कर रही थीं
भीतर की
वेदना को।

वह मुखिया है
भरे-पूरे
और समृद्ध
परिवार का
कुशलता से निर्वहन
कर चुका है वह
सभी जिम्मेदारियों का।

मगर जीवन की
कटु और अटल
सच्चाई को
मानना
नहीं होता
इतना आसान
उम्र के इस
पड़ाव पर।

जीवन संगिनी
का विछोह
अखरता है हमेशा।

जीवन के तमाम
साझे अनुभव
दस्तक दे जाते हैं
अकसर
मानस पटल पर।

गहरी खामोशी लिए
ताकता है वह
शून्य में
और बढ़ा लेता है
कदम
घर की ओर।

एसजेवीएन कॉलोनी, दत्तनगर,
रामपुर बुशहर, जिला शिमला, हिमाचल
प्रदेश-172 001, मो. 94180 36526

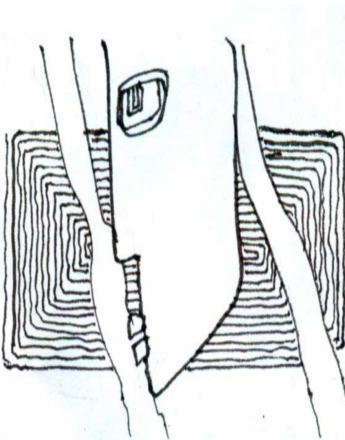
लघु कथा

सूरत

● सोमी प्रकाश भुव्वेटा

टैक्सी चालक राज बहुत खुश था। क्योंकि जिस लड़की को वह पसंद करता था। आज उसके घर से उसके लिए फोन आया था। जैसे ही उसने फोन पिक किया। आगे से एक मर्दानी जवाब में 'हेलो' सुनाई दिया। उस आवाज को सुनकर राज मायूस हो गया। उसे तो यही लग रहा था कि हो न हो अंजली का ही उसके लिए फोन आया है।

लेकिन, जब पिक किया तो मर्दानी आवाज सुनकर राज सन्न रह गया। खैर, अंजली के घर से जब फोन आ ही गया था तो उसे अटेंड तो करना ही था। राज ने भी हेलो का जवाब देते हुए कहा जी नमस्कार आप किससे बात करना चाहते हैं। बात करने वाले ने खुद को अंजली का पिता बताते हुए कहा कि कल उसके यहां कुछ मेहमान आ रहे हैं। क्या तुम उन्हें रेलवे स्टेशन पर जाकर पिक कर सकते हो।



राज रेलवे स्टेशन जाने की मनाही करने वाला था। लेकिन जब राज को यह बताया कि अंजली ने ही उसका नंबर देकर बताया है कि राज रेलवे स्टेशन जाकर रिश्तेदारों को पिक कर लेगा।

यह बात सुनते ही राज ने झट से रेलवे स्टेशन जाकर मेहमानों को पिक करने की बात स्वीकार कर ली।

राज खुश भी था और मायूस भी। खुश इसलिए था कि उसे अंजली के घर से फोन आया था। वहीं, मन-ही-मन उसे यह बात भी खाए जा रही थी कि जो मेहमान आ रहे हैं, कहीं वह अंजली को देखने तो नहीं आ रहे।

दूसरे दिन राज रेलवे स्टेशन पर मेहमानों को लेने जा पहुंचा। मेहमानों में एक सुंदर युवक और उसके मां-बाप शामिल थे। राज को तो जैसे अब पूरा यकीन हो ही गया कि अब यह पक्का अंजली को ही देखने आए हैं। राज ने भी झट से इन मेहमानों को अपनी टैक्सी में बैठा कर उन्हें अंजली के घर छोड़ने पहुंच गया। जिस अंजली की झलक पाने को राज दिन में दसे से बारह चक्कर उसके घर के आसपास की सड़क से होकर लगाता था। आज जब मेहमानों को लेकर अंजली के घर आने का मौका मिला तो राज के पांव थम से गए। उसने मेहमानों को अंजली के घर के गेट के बाहर छोड़ दिया और फिर वापिस चल दिया। अंजली की झलक पाने को आतुर रहने वाले राज के साथ आज उलटा किस्सा घटा।

जिस अंजली के दीदार के लिए राज तरसता रहा, आज की रात का इंतजार अंजली कर रही थी। शायद अंजली राज से कुछ कहना चाहती थी। लेकिन, राज की अंजली तक पहुंचने की हिम्मत ही नहीं हो पाई। और फिर, अंजली के घर पहुंचे मेहमानों की खूब खातिदारी हुई। दो दिन बाद मेहमानों की वापसी थी। इसलिए राज को फिर से फोन किया गया। आज फोन खुद अंजली ने किया था। अंजली की आवाज सुनकर राज बहुत खुश हुआ और मेहमानों को स्टेशन तक छोड़ने के लिए समयानुसार घर जा पहुंचा।

सफर थोड़ा लंबा था। इसलिए राज ने भी बातों का सिलसिला मेहमानों के साथ छेड़ दिया। राज ने इन मेहमानों के बारे में जो सोचा था, वही सच निकला। मेहमानों ने भी अंजली के सौंदर्य की तारीफ करते हुए कहा कि बाकी सब तो ठीक है। लेकिन अंजली देख नहीं सकती है। इसलिए उन्होंने रिश्ता करने से मना कर दिया है। राज की तो जैसे मन की मुराद ही पूरी हो गई। वह अंजली से शादी करने को राजी था। लेकिन इसके लिए अंजली की स्वीकृति भी जरूरी थी।

राज अगले दिन अंजली के घर जा पहुंचा और फिर उसने शादी का प्रस्ताव रख दिया। अंजली ने राज का प्रस्ताव यह कहकर ठुकरा दिया कि वह उस पर बोझ नहीं बनना चाहती। साथ ही अंजली ने यह भी कहा कि जब तक उसकी आंखें ठीक

नहीं होती, तब तक वह किसी से भी शादी नहीं करने वाली। राज अंजली को बहुत प्यार करने लगा था। इसलिए उसने ऑपरेशन के जरिए अंजली की आंखें ठीक करवाने की सोच ली। ऑपरेशन के लिए तीन लाख की जरूरत थी। राज ने अपनी टैक्सी तक बेच दी और अंजली का ऑपरेशन करवा लिया। अंजली ऑपरेशन के जरिए बिलकुल ठीक हो गई।

राज खुश था कि अब तो अंजली उसके साथ शादी कर लेगी। राज का ऐसा सोचना गलत था। अंजली के घर जब राज पहुंचा तो उसने यह कह कर शादी का प्रस्ताव ठुकरा दिया कि उसकी सूरत ठीक नहीं। इस जवाब को सुनकर राज सन्न रह गया और उलटे पांव अपने घर लौट आया। अंजली की आंखों के ऑपरेशन के लिए पैसों के जुगाड़ में टैक्सी बिकने के कारण बुरे हालात से गुजर रहे राज को नौकरी की दरकार थी। इसलिए वह शहर के अस्पताल में आए नए स्किन स्पेशलिस्ट की गाड़ी चलाने लगा। ड्यूटी ऑन और ऑफ होने पर ही राज डॉक्टर साहब को उसके गंतव्य तक छोड़ता था। एक दिन डॉक्टर साहब ड्यूटी टाइम ऑफ होने के बावजूद जब ऑपरेशन थियेटर से नहीं निकले तो राज खुद ऑपरेशन थियेटर में जा पहुंचा। डॉ. साहब बुरी तरह से झुलसी एक युवती के ऑपरेशन में व्यस्त थे। ऑपरेशन थियेटर से निकलने के तुरंत बाद डॉक्टर साहब घर की ओर निकलने पड़े। अस्पताल से डॉक्टर साहब का घर थोड़ा दूर था। इसलिए बातों का सिलसिला शुरू होने पर बर्निंग केस पर चर्चा छिड़ गई। डॉक्टर साहब बोल पड़े कि यार राज आज जिस लड़की का ऑपरेशन करते वक्त थोड़े लेट हुए हैं, उसका नाम अंजली है। उसका चेहरा इतना खराब हो गया है कि अब कभी ठीक नहीं हो सकता। अंजली के पिता का देहांत हो चुका है और अब उसका कोई नहीं। सूरत अच्छी होती तो कोई अच्छा वर भी मिलता। लेकिन अब इस लड़की का क्या होगा? इतना सुनते ही राज बोल पड़ा। डॉक्टर साहब यदि लड़की का नाम अंजली है तो फिर उसकी सूरत जैसी भी हो, वह उसके साथ शादी करने को तैयार है।

ब्यूरो चीफ, हिमाचल दस्तक, दैनिक समाचार पत्र,
चंबा, जिला चंबा, हिमाचल प्रदेश,
मो. 98162 01010

लघु कथा

अग्नि-दाह

● डॉ. रामनिवास 'मानव'

भयंकर दुःख के साथ वह भीषण द्वंद्व में भी फंसा था। काका की चिता लगभग सज चुकी थी; चंदन, घी, कपूर आदि डालकर उनके अंतिम संस्कार की सभी तैयारियां पूरी कर ली गई थीं। अब बारी थी, तो चिता को मुखाग्नि देने की।

चारों पुत्रों में ज्येष्ठ होने के कारण चिता को मुखाग्नि देना उसका जन्मजात अधिकार था और परंपरा भी। लेकिन उसके अंतर्मन में तो कुछ और ही चल रहा था।

वह काका का सबसे प्रिय पुत्र था, काका का जितना प्यार-दुलार और स्नेह-सान्निध्य उसे प्राप्त हुआ है, उतना तो अन्य तीनों भाइयों को मिलाकर भी प्राप्त नहीं हुआ होगा। तीसरे-चौथे बेटे के संबंध तो काका से ठीक थे,पर दूसरे की उनसे कभी नहीं बनी।

दूसरे को काका से क्यों और क्या-क्या शिकायतें रहीं, यह वह कभी समझ नहीं पाया। वह तो इतना जानता था कि काका वैसे बिलकुल नहीं थे, जैसा दूसरा सोचता था। उसकी दृष्टि में दोष दूसरे का ही था, जिसके मन में काका के प्रति अकारण घृणा भरी थी।

आज उसने दूसरे के मन की उस सारी घृणा को, काका की नश्वर देह के साथ ही, भस्म करने का निर्णय कर लिया। इसके लिए अपना अधिकार भी छोड़ने को तैयार था वह।

आज उसने दूसरे के मन की उस सारी घृणा को, काका की नश्वर देह के साथ ही, भस्म करने का निर्णय कर लिया। इसके लिए अपना अधिकार भी छोड़ने को तैयार था वह।

"बेटा, चिता को मुखाग्नि दो।" पूला थमाते हुए पंडित जी ने उससे कहा था।

पूला दूसरे की ओर बढ़ाते हुए उसने कहा- "चिता को मुखाग्नि दूसरा देगा।"

"नहीं बेटा, यह तो बड़े का अधिकार होता है।" पंडित जी ने उसे समझाया- "परंपरा तथा शास्त्रीय विधान भी यही है।"

"ये सब पुरानी और दकियानूसी बातें हैं, पंडित जी! मैं इन्हें नहीं मानता।" उसने स्पष्ट किया और इससे पूर्व कि वहां उपस्थित अन्य लोग कुछ जानते, समझते या कहते, उसने दूसरे का हाथ पकड़कर काका की चिता को प्रज्वलित करवा दिया।

अश्रुपूरित आंखों से वह देख रहा था कि एक ओर काका का पार्थिव शरीर साक्षात् अग्नि में जल रहा था, तो दूसरी ओर दूसरे का शरीर पश्चाताप की अग्नि में।

'अनुकृति' 706, सैक्टर-13, हिसार,
हरियाणा-125005, मो. 8053545632

समीक्षा

काव्य संग्रहों में निहित आलौकिक आनंद की अनुभूति तखैयुल की रौ

● रमेश चन्द्र शर्मा

तीनों काव्य संग्रह, मेरे सामने हैं। इन्हीं की समालोचना करने का मुझे सौभाग्य प्राप्त है। 2013 में प्रकाशित हुए हैं। इनके रसास्वादन का मौका इस कारण मिल गया, क्योंकि आजकल मैं उदासी की तीव्रता से इतना ग्रस्त रहा हूँ कि मुझे राहत के लिए कुछ काव्य संग्रहों को पढ़ने की जरूरत महसूस हुई। 1946 में जब मैं महेन्द्रा कॉलेज में द्वितीय वर्ष का विद्यार्थी था, लिखता हिन्दी में था। पढ़ता उर्दू भी था। हमारे कालेज की पत्रिका के उर्दू सैक्शन में मुहम्मद अहसन चतुर्थ वर्ष के छात्र की एक नज्म छपी थी -

मेरे दिल पे छाई हुई है उदासी
अगर तुम कहो तो कोई शेर कह लूँ
तुम्हारी जुदाई के सदमों को सह लूँ
तखैयुल की रौ में ही कुछ देर बह लूँ।

इन पंक्तियों ने मेरा मार्गदर्शन किया। इसी कारण तीनों पी. एच.डी. प्राप्त कवयित्रियों के काव्य संग्रह भी पढ़े। अच्छे ही नहीं, बहुत अच्छे लगे। इनकी प्रभावोत्पादकता भिन्न होते हुए भी, इनमें अपनी ही किस्म का अलग-अलग तिलिस्मी नजरिया विद्यमान है। एसोसिएट प्रोफेसर, सेंट बीड्स कालेज डा. अंजलि दीवान की कविताओं में वेदना का कलापूर्ण चित्रण है। अध्यापिका डा. कांता शर्मा की कविताओं में करुणा है, नारीत्व गुणों की झंकार भी है।

डा. संगीता सारस्वत जी के काव्य संग्रहों में समाजिकता भी है, कविता के विभिन्न रूप भी हैं। वे गजलें भी लिखती हैं। दो ही वर्षों में डा. संगीता जी ने तीन कविता संग्रह प्रकाशित करवा लिए हैं। अतएव वे बहुसर्जक कृतिकार भी हैं। उनकी तीनों पुस्तकें पेपर बैक हैं। सैलाब काव्य संग्रह पर स्याही और सफेदी से रंगे पहाड़ और तालाब जैसी धरा है। पहाड़ और बर्फ का दृश्य स्पष्ट है। सुन्दर है। बाकी दोनों काव्य संग्रहों की हार्डबाऊंड पुस्तकें बेहतरीन आवरण सज्जा वाली है। डा. दीवान की पुस्तक पर स्त्री के एक चेहरे पर दो रूप हैं और डा. कान्ता वाली पुस्तक में पथरीली धरती, पीछे पहाड़ भूदृश्य, प्रकृति छवि है। मेरे पास अपनी काफी बड़ी लाइब्रेरी है। मगर इन पुस्तकों की मनोहरता ने भी मुझे आकर्षित किया। फिर सवाल कसौटी और पैमाने का आया, जिनके आधार पर इनकी निष्पक्षता से मूल्यांकन करूँ। महादेवी वर्मा जी की याद आई, जो मीरा के बाद ऐसी नारी कवि हुई, वेदना जिनके लिए व्यक्तिगत अभिशाप नहीं था। वरदान था। अंग्रेजी जुबान को कवि शैले भी वेदना को कविता के लिए प्रेरणा मानते थे। उनके अनुरूप, जो गीत वेदना से जितना परिप्रोत होगा, वह उतना ही मीठा होगा। तुम दुख वन इस पथ से आना। (नीरजा)। ऐसा ही कुछ डा. दीवान की कविताओं में पढ़ा। मैंने एक कविता मार्च 2006 में प्रकाशित करवाई थी। नाम था, अमृता के न होने का अर्थ। मैंने कविता में लिखा था - ''अमृता/ ऐसी परिस्थिति में वैसे परिवेश को/ बेबाक कविता लिख सकती थी तुम!'' इसी कविता में मैंने लिखा - ''बारिस शाह तो बस/ सम्मान योग्य सूफी है/ उसने तो तुम्हें/ नारी के दुखों, उसकी मजबूरी का प्रतिनिधि बनाया।'' डा. कान्ता और डा. संगीता की कविताओं में कहीं न कहीं कुछ सोज भी मिलता है। अमृता जी की आवाज में इस कद्र सोज था कि कविता दिल में उतर जाती थी। डा. संगीता जी का कविता पाठ जरूर सुना। बाकी दोनों कवयित्रियों को कविता पाठ करते हुए नहीं सुना। कविता पाठ का मजा तो अमिताभ बच्चन को सुनने पर मिलता है। उनकी जुबानी मधुशाला हरिवंश राय बच्चन की कविताओं के कुछ अंश सुने। अटल बिहारी वाजपेयी जी को जब भारत रत्न दिया गया तो टीवी पर उनका पहले से रिकॉर्डिड कविता पाठ सुनकर आनन्द आया। ''हार नहीं मानूँगा/ रार नई ठानूँगा/ काल के कपाल पर लिखता-मिटाता हूँ/ गीत नया गाता हूँ।'' यह उनकी, ''मेरी इक्यावन कविताएं' पुस्तक के 23 पृष्ठ पर हैं। उनके कविता पाठ से यह कविता निश्चित ही अमर रहेगी। इसी प्रकार भवानी प्रसाद मिश्रजी की कविता ''गीत बेचता हूँ'' याद आई। वे अमर हैं। उनको कविता पाठ करते फिर से टीवी पर देखा। सुस्पष्ट याद है। पहले भी सुना था। आशा है यह तीनों

कवयित्रियां कविताएं तो जरूर लिखेंगी, कविता पाठ की सार्थकता को भी अपनाएंगी।

आजकल ही दिनकर जी की दो चर्चित कृतियों, संस्कृति के चार अध्याय और परशुराम की प्रतीक्षा के स्वर्ण जयंती वर्ष पर दिल्ली में एक कार्यक्रम भी आयोजित हुआ। पता चला तो इसके अतिरिक्त भी तथ्यज्ञान प्राप्त करने के लिए संदर्भ के संकेत मिले। जो तीनों काव्य संग्रहों के गुणों के रसास्वादन के लिए और भी अनुकरणीय एवं निश्चयपूर्ण उदाहरण हैं। मसलन -

''प्रेम मानवी की निधि है, अपनी तो वह क्रीड़ा है।

प्रेम हमारा स्वाद, मानवी की आकुल पीड़ा है।''

आगे लिखकर इन विदुषियों की कविताओं की कुछ पंक्तियां मेरी इस धारणा को प्रमाणित करेंगी।

मैं 86 वर्ष का हो गया हूँ। मेरी पहली कविता 1946 में छपी थी। तब मैं 16 वर्ष का था। नहीं चाहता कि कविता का शान्ति दूत, कबूतर, पंछी, मानव के हाथों से उड़ जाए और अलौकिक आनन्द का जरिया, कविता के स्वाद के बिना आदमी के जीवन को रसहीन न बना दे। रूखा न रहने दे। फीका न छोड़ दे। कविता का आलौकिक आनन्द मानवता को मिलता रहे। मेरा यह उद्देश्य भी है। कविताएं अखबारों या पत्रिकाओं में छपती रहती हैं। अभी तक इसी कारण कविता जिन्दा है। कुछ प्रकाशकों की कविताएं छापने के लिए बेरुखी इस विधा के प्रति अन्याय है। जाने माने कवि या प्रभावशाली लोग ही काव्य संग्रह छपवाने में कामयाब होते हैं। तो, जब भी मौका मिलता है, मैं कविताओं की सद्वृत्ति पर, उनके गुणों पर लेख आलेख लिखता हूँ। मेरा सतत प्रयास रहेगा कि जब तक जान है या जहान में मैं हूँ, मैं कविता की विधा के प्रसार में रुचि लेता रहूँ। प्रकाशकों को भी इस ओर सौहार्दपूर्ण रवैया अपनाने के लिए विदेन करते हुए जता देना चाहता हूँ कि कमाई के लिए, अन्य विधाओं की पुस्तकों से कमाई होती रहे, तो साथ- साथ बीच-बीच में नए और पुराने कवियों की रचनाएं भी छापें। काव्य संग्रहों की कीमत कम रखें, तो धीरे-धीरे वह समय भी आएगा, जब कविताएं पढ़ने वाले पाठकों की कमी नहीं रहेगी। यह मेरी विनीत राय है। ''कविता तो हमारी सांस्कृतिक विरासत और हमारे वर्तमान को संश्लिष्ट रूप में जीवंत करने का नाम है।'' (आधुनिक आलोचना बनाम शैली विज्ञान - पृष्ठ 11 लेखक - डा. कृपा शंकर सिंह)। इसी पुस्तक में वे कहते हैं कि ''ब्रह्मा जो वेदों के रचयिता हैं, स्रष्टा के साथ कवि भी कहलाते थे।'' मैं उनसे सहमत हूँ कि कविता भावुक-चिन्तन का परिणाम होती है। कविवर पन्त जी ने कहा था-''वियोगी होगा पहला कवि, आह से उपजा होगा गान।'' विषय से कुछ हट कर यह लिखना कहना अनिवार्य लगा। संदर्भहीन नहीं।

'लम्हा-लम्हा' जो मुझे डा. अंजली ने एक साहित्यिक कार्यक्रम के बाद भेंट की थी। पढ़ने, सोचने, समझने योग्य है। नारी क्षमा, शान्ति करूणा की जीती-जागती मूर्ति है। इतिहास भी जब नारी के बारे में लिखता है तो कविता सा लगता है। दिनकर जी की ऐसी धारणा सही है। डा. अंजली दीवान 'मेरा परिचय' में लिखती है -

''झूठी खुशियों को किनारे छोड़/ क्या मैं एक बार फिर अपने को/ अपने से मिला पाऊंगी'' (पृ. 3)। कविता चिड़ियां में वे कहती हैं - ऐ चिड़िया/ काश मैं तू होती/ तो बस नया अफसाना/ शुरू हो जाता'' (पृ. 2)। 'इतनी सी बात में' उन्होंने लिखा - ''न बात तुम्हारी हो/ न बात हमारी हो/ बस बात बात में/ बात हो जाए''(पृ. 5) । वे यह भी (पृ.19) व्यक्त करती है - "यह नहीं कि साथी मिला नहीं / पर न जाने क्यों/ वह अकेला छोड़ गया। अकेलेपन का है/ जन्म-जन्म का साथ/ तभी तो हूँ मैं अकेली''। इस वक्त मुझे महादेवी वर्मा जी की यह पंक्तियां याद आई - ''अपने इस सूनेपन की मैं हूँ रानी, मतवाली/ प्राणों का दीप जलाकर करती रहती दीवाली।'' डा. दीवान की कविता (पृ. 20) और भी वेदना पूर्ण है'' प्यार के दो बोल सुनने को/ रही हूँ तरसती सर्वदा। तुम कुछ नहीं देना चाहते/ वो चलो न दो/ पर दुत्कारना मत।'' आगे पृष्ठ 42 पर उन्होंने स्पष्ट किया - ''मेरे पास वह सब था/ जो सबके पास नहीं होता।'' भटकती जिन्दगी (पृ. 48) की कविता में उन्होंने और भी साफ-साफ कहा - ''पिछले दिनों रिश्तों को ऐसे टूटते देखा है/ कि इन्सानियत से विश्वास उठने लगा है''। कविता हथियार हो ही नहीं सकती। वह केवल शोषण के विरोध की मानसिकता है।'' (डा. कृपा शंकर सिंह- आधुनिक आलोचना बनाम शैली विज्ञान - पृ.22)। डा. दीवान की अपनी एक कविता में वे कहती हैं - ''मेरी उजड़ी कोख/ ताने देती है/ रात भर''। (पृ. 78)' मां, 'मैं नहीं'- यह सपाट बयानी जरूर है। आजकल की कवयित्री ही जीवन और परिवेश की विषमता इस प्रकार प्रकट कर सकती है। मैं आइन्दा के लिए निवेदन करूँगा कि डा. दीवान बिम्बों का प्रयोग ज्यादा किया करें। जैसे कि महादेवी वर्मा की इस पंक्ति में हैं - ''प्रिय सान्ध्यगगन मेरा जीवन''। डा. अंजली दीवान की पुस्तक की निम्न पंक्तियां उनके आशावाद का उदाहरण है, ''लाल चुनरियां ओढ़े/ एक दिन अपने को/ उसके पास पाऊंगी।'' (पृ. 90-नया क्षितिज)। मुझे यहां महादेवी जी की कविता का यह अंश याद आया - ''मैं पलकों में पाल रही हूँ, यह सपना सुकुमार किसी का।''

डा. अंजली दीवान की यह पुस्तक हरियाणा साहित्य अकादमी के सौजन्य से प्रकाशित हुई है। प्राक्कथन में डा. श्याम सखा श्याम निर्देशक हरियाणा साहित्य अकादमी ने लिखा है'' वर्ष 2012 के दौरान आयोजित पुस्तक प्रोत्साहन योजना के अंतर्गत डा. अंजली दीवान की 'लम्हा लम्हा' शीर्षक पांडुलिपि को अकादमी पुस्तक प्रकाशनार्थ प्रोत्साहन योजना के अन्तर्गत स्तरीय पाया गया है।'' इसलिए न केवल डा. अंजली जी, बल्कि हरियाणा

साहित्य अकादमी भी बधाई के पात्र है।

दूसरा काव्य संग्रह, 'अचानक नहीं सूखी नदी', डा. कान्ता शर्मा जी का है। ये सभी 88 पृष्ठों में समाहित 60 रचनाएं हैं। वे श्रेष्ठ कवयित्री हैं, उनकी सर्जनाएं महत्त्वपूर्ण हैं। उनकी अत्यन्त कोमल और जीवन्त कविता की निम्न पंक्ति से समालोचना का शुभ आरम्भ करता हूँ - ''एक दिन/ खो जाऊं/ तुम्हारे आगोश में/ और समर्पित हो जाऊँ/ भूल कर अपना अस्तित्व' (पृ. 42- कविता 'एक दिन')। ऐसी स्त्रियोचित कविता अपनी विशिष्टता एवम् अनन्यता पाठकों, श्रोताओं के दिल और दिमाग पर अपनी छाप छोड़ जाती है। भारतीय नारी की कविता होने की मिसाल है। वे अत्यन्त रोचक और अदम्य जीवन्त प्रेम पर कविता लिखने में महारत रखती हैं। दिनकर जी की कविता एक अंश है - '' रूप की अराधना का मार्ग! आलिंगन नहीं तो और क्या है।'' जब हम महादेवी वर्मा, मीरा और अमृता प्रीतम की रचनाओं को पढ़ा करते थे, तो रमणीय प्रसन्नता का आभास होता था। इसी संदर्भ में मैं डा. रेखा जी की, जिन्हें अपनी काव्य कृतियों पर, राज्य सम्मान चन्द्रधर शर्मा गुलेरी हिमाचल प्रदेश का सर्वोच्च सम्मान मिला, 2012 में प्रकाशित कविता की ओर ध्यान आकर्षित करता हूँ - ''मेरी पसीजी हथेली में/ अब भी फड़फड़ा रहा है/ तितली के पंखों जैसा/ वही भुर भुरा सुनहरा शब्द/प्यार/कहो हो तो इसे आकाश को दे दूँ''! (पृ. 81 पुस्तक - विरासत जैसा कुछ)। मैंने यह कविता इसलिए लिखी क्योंकि नारी द्वारा लिखी कविता की विषेशता, विशिष्टता अपने आप व्यक्त होती दिखाई दी। इस उदाहरण से डा. कान्ता की रचनाओं की खूबी बताई है। अब मैं कान्ता जी की अन्य कविताओं की पर विहंगम दृष्टि डालकर सौहार्द पाठकों को, उनकी काव्य अनुभूति से अवगत कराता हूँ। ''अम्मा का चादरू लपेट/ बनना चाहती हूँ/ साड़ी वाली मेम'' (पृ. 13)। हर यौवन में प्रवेश करती युवती की इस प्रकार की इच्छा बड़ी अच्छी तरह प्रकट कर दी है उन्होंने। उनकी कल्पना शक्ति देखने परखने में आनन्द आता है। - ''सिहर गई मैं/ बाहें बहुत छोटी हो गईं/ आकाश समेटने के लिए/ उस रात/ चान्द को पाना तो दूर/ चान्द को छू नहीं पाई'' (पृ. 20)। आगे पृष्ठ 23 पर यह है - ''नाहक परेशान होते हो तुम/ नदियां के सूख जाने से/ कभी हृदयों में झांक कर देखो/ सूखा मरुस्थल मिलेगा तुम्हें/ और देखेंगे - ''इस शहर में हरियाली/ खुशबू, उमंग भरते-भरते/ थक गए होंगे/ तुम्हारे हाथ।'' (पृ. 25)। उनकी यह काव्यात्मक अनुभूति सराहनीय है। वर्णन चित्रमय है। पाठक पर बिम्बात्मक और प्रतीकात्मकता का गहरा असर पड़ता है। पर्यावरण प्रदूषण जैसे विषय पर ऐसी कविता, कविता ही है। पृष्ठ 30 पर अपने गांव के बारे में उन्होंने लिखा - ''बदल गया है मेरा गांव/आदमी का भोलापन/ कहीं खोने लगा है/ मेरा गांव अब शहर होने लगा है।'' मैंने कहीं पढ़ा था कि दृष्य काव्य का आनन्द ब्रह्मानन्द से बढ़कर है। इसलिए मैं अपनी ही कविता का अंश पेश करना भी वाजिब समझता हूँ। ''इतिहास है मेरा गांव'' कविता (पृ. 69 पुस्तक ईव,) ''मुरझाई हुई थी रातों की आलसी आशंका/ अतीत अभी भी वर्तमान से बेखबर था/ भविष्य प्रतीक्षारत, बेअसर, प्रत्याशी लगा/ रंगशाला में ऊँघना हुआ दर्शक जैसा।'' दोनों ही कविताओं में गांव के प्रति असहाय पीड़ा को गहराई से महसूस किया गया है। और सीन (दृष्य) चित्रपट की तरह दिल और दिमाग पर छा जाता है। कान्ता जी अपने बारे में कहती हैं - ''आज मैं किरण बन गई/ सूरज की तपश से निकली याद।'' कान्ता जी ने अपनी पिछली काव्य संग्रह की किताब में खुद का तखल्लुस किरण लिखा था। अब पाठक महोदय को आभास हो गया होगा कि इस लेख के शीर्षक की पहेली कैसे बूझी जा सकेगी। वे मेरे विचार में पूर्णतः भारतीय सभ्यता, मान मर्यादा को संजोकर रखने वाली नारी हैं। "सच बतलाना/ इतना प्यार/ इतनी आत्मियता/ तुम्हें मिली है किसी से/''। (पृ. 77)।'' आदत बन गई थी/ तुम्हारे पीछे चलने की/ रुक गई मैं/ न जाने कहां / पहुँच गए तुम'' (पृ. 83)। मुझे फिर से महादेवी वर्मा जी की निम्न पंक्तियां लिखने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है - ''तुम अगर प्रतीक्षा हो, मैं/ पग विरह-पथिक धीमा''। और भी लिखने में खुशी होती है - ''चित्रित तू मैं हूँ रेखा क्रम/ मधुर राग तू मैं स्वर संगम।'' स्पष्ट है कान्ता जी को अपने प्रियतम के साथ तादात्म्य स्थापित करने का भी सौभाग्य प्राप्त है, जो पाठक के लिए रूचिकर कविता बन गया। इन्होंने आत्मग्रस्त कवयित्री के नाते भ्रष्टाचार पर भी आक्रोश जताया है (पृ. 53 - कविता समाचार)। ऐसी भावुक कवयित्री को समाज में व्यक्त विषमता को उभारते देखना आश्चर्य की बात नहीं है।

गत 2014 के आम चुनाव से पूर्व भ्रष्टाचार काफी बड़ा मुद्दा था। बहुत कम पाठकों को याद होगा कि नवम्बर 1983 में इस समय से 20 वर्ष पूर्व, डा. ओम प्रकाश सारस्वत जी की, ''हिमप्रस्थ'' पत्रिका में एक कविता छपी थी, जिसका नाम था - ''जात, हंसों के कुल और पलटू''। उसे पढ़ने पर ज्ञात होता है कि इन हालात की भविष्यवाणी डाक्टर साहब को तब हो गई थी। यह ''प्रिमॅनिशन'' है। पूर्वाभास है। ''देखो बहानों के शुष्क पत्रों से/ ढके नहीं जाते जवान होते/ ज्वलन्त प्रश्नों के अग्निशरीर।'' और आगे - ''हर आदमी/ माई का लाल बनकर सीट पर बैठा है/ आम आदमी गिड़गिड़ा कर लौट आता है/ अधिकारी कागजों में आंकड़े दिखाता है।'' ऐसी कविता फूलों के रंग से, दिल की कलम से नहीं लिखी जाती। यह कविता आज के हालात के अनुसार युक्ति युक्त है। एचपी यूनिवर्सिटी में प्राध्यापक थे। मनीषी हैं। साहित्यकार है। इन्हीं की धर्मपत्नी, डा. संगीता सारस्वत जी, जो स्वयम् भी सेंट बीड्स कालेज में सह-आचार्य है, की पुस्तक - काव्य सग्रह - तीसरी समालोचना के लिए प्राप्त पुस्तक ने भी मुझे गम गलत करने में सहायता की। उनके विचारों-खयालों में इतनी ताजगी है

आलेख में समालोचना वाली पुस्तकें : (काव्य संग्रह)

'लम्हा लम्हा', कवयित्री : डा. अंजली दीवान
प्रकाशक : महाजन पब्लिशर्ज, संजौली, शिमला-6
पृष्ठ संख्या : 90, मूल्य : रुपये 200/-

'अचानक नहीं सूखी नदी', कवयित्री : डा. कान्ता शर्मा
प्रकाशक : सारांश प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड,
प्रधान कार्यालय : 75-ए, पाकेट -4, मयूर विहार,
फेज-1, दिल्ली-110091
पृष्ठ संख्या : 88, मूल्य रुपये 120/-

'सैलाब', कवयित्री : डा. संगीता सारस्वत
प्रकाशक : महाजन पब्लिशर्ज, संजौली, शिमला-6
पृष्ठ संख्या : 98, मूल्य : रुपये 180/-

कि मन उसमें बन्ध जाता है। हर दिन महसूस होने वाली बातें उन्होंने काव्यकृति बना दीं।

संगीता जी की कई कविताएं यथार्थ को स्थान देते हुए व्याकुलता की युक्तियुक्त प्रेरणा से भी पृथकता नहीं रखती हैं। इनकी कविता नियन्ता'' (पृ. 46-47), प्रत्यंचा (पृ. 55-56) और यथार्थ (पृ. 61) को पढ़ते ही स्पष्ट हो जाता है कि समाज की हालत पर आक्रोश, बनावटी दिखावटीपन पर कटाक्ष उनके अन्तर में कवि की आवाज है। स्थितियों को उनके प्रतीक और बिम्ब अर्थ प्रदान करते हैं। इनकी शैली अपने पति देव की काव्य रचनाओं से भिन्न लगी। फिर भी इनकी रचनाएं मात्र महिलाओं की मर्म कथा सी नहीं है। संगीता जी की कविताओं के 4 अध्याय है, जिनमें 68 कविताएं हैं। बिम्ब और प्रतीक इनके विचारों को सुन्दर अर्थ देते हैं। उदाहरण - ''सहमी गलियों के/ यात्री/ अन्धेरे/ छटपटाते हैं/ क्योंकि/ शहर के कोने कोने की/ हवा ताजा है।'' (पृ. 55), ''लोग कहते हैं/ घर का खालीपन/ आदमखोर होता है/ चबा डालता है इन्सान को।'' (पृ. 60), ''जब सुर संगीत मिला और लय में सुन्दर ताल मिला/ जब भावों में अहसास मिला तब कविता का फूल खिला। (पृ. 83)। अब मैं इनमें करुणा के प्रति झुकाव की बात करता हूँ ''मां/ अब एक मुस्कान नहीं/ केवल एक/ प्रश्न है। '' (पृ. 62) ''एक अच्छे कल की/ आशा में वह/ जी लेना बेहतर समझती है/ विवशता में/ या/ इसी को/ अपनी नियति मानकर''। (पृ. 17) ''नारी जो दुःख बांट कर नहीं, रोकर जी हल्का करती है।'' (पृ. 18), ''पुरुष ने नारी को कुछ नहीं दिया/ मगर उसे बिन मांगे सब कुछ मिला/ क्योंकि वह पुरुष था''। (पृ. 21) और 'अस्तित्व' कविता में - ''... लाख तोड़ा करो/ लोहा मुझ पे/ उफ न करूँगी/ निर्जला की तरह।''(पृ. 43)।

निष्कर्ष यह निकलता है कि इनके काव्य में करुणा की प्रेरणा सैलाब की तरह फैली हुई है। वहीं अंजली जी की कविताओं में विरह वेदना भी है। डा. कान्ता के काव्य में अपने आराध्य की अराधना ज्यादा है। मैं कह सकता हूँ कि ये तीनों कवयित्रियां महादेवी वर्मा की आदर्श विरासत को संभाल रही है। काल के व्यवधान ने इनकी रचनाओं में शैली को कुछ अन्तर जरूर आने दिया है। परन्तु विरह वेदना करुणा की समानताएं काफी है। जाहिर है कि भारतीय नारी, चाहे कविता भी लिखती हो तो अपनी मान मर्यादाओं की सीमाओं में रहती है। मैं यहां फिर से दिनकर जी की उद्धरणीय कविता के अंश पेश करके अपने इस अन्वेषण स्वरूप आलेख को समाप्त करता हूँ।

''वह नारी है, केवल उसके ही पास बन्धु,/
सौन्दर्य, शान्ति, कविता, तीनों का मिश्रण है।'' (नारी)

सेवानिवृत आईएएस, टकसाल हाऊस, छोटा शिमला
शिमला - 171002 (हिमाचल प्रदेश), दूरभाष - 0177-2621199

हिमप्रस्थ में ऊना जिला विशेषांक

'हिमप्रस्थ' मासिक पत्रिका में शीघ्र ही ऊना जिला विशेषांक प्रकाशित किया जा रहा है। अंक में विशेष रूप से ऊना जिला का इतिहास, सामाजिक-आर्थिक व राजनीतिक महत्त्व, देव संस्कृति, मेले व त्योहार, लोक साहित्य एवं संस्कृति, पर्यटन, ऐतिहासिक एवं पौराणिक धार्मिक स्थल तथा विकास इत्यादि पर सामग्री प्रकाशित की जाएगी। इस अंक के लिए आपका सहयोग अपेक्षित है। विस्तृत जानकारी के लिए गिरिराज/हिमप्रस्थ कार्यालय में सम्पर्क करें।

- वरिष्ठ सम्पादक

रपट/ राज्य स्तरीय संस्कृत दिवस समारोह

'बिना संस्कृतं जीवनं निष्फलं ते'

● आचार्य ओमप्रकाश 'राही'

श्रावणी पूर्णिमा से संवलित रक्षाबंधन के पुण्य पर्व पर हिमाचल प्रदेश भाषा विभाग द्वारा देवनगरी कुल्लू के देवसदन में आयोजित राज्य स्तरीय संस्कृत दिवस समारोह के अवसर पर हिमाचल के विभिन्न जनपदों से पधारे संस्कृत कवियों के मुखारविंद से निःसृत देववाणी कविता सरिता कुछ इस कदर बही कि श्रोता देर रात तक उसमें डुबकी लगाते रहे।

समारोह के आरंभ में मुख्य अतिथि उपायुक्त कुल्लू श्री राकेश कंवर तथा विभाग के अध्यक्ष श्री अरुण कुमार शर्मा सहित मंचस्थ विद्वानों द्वारा दीप प्रज्वलित किए जाने के बाद समारोह विधिवत रूप से आरंभ हुआ। विभागीय अधिकारी तथा विपाशा के सम्पादक मंच संचालक वासुदेव ने कहा कि इस बार एक नवीन प्रयोग करते हुए 'लोक में रामायण गायन विधा' के अंतर्गत कुल्वी कलाकारों को आमंत्रित किया गया है। इसके अंतर्गत यद्यपि ईश्वरीदास ने अपने सहयोगी कलाकारों सहित ठेठ कुल्वी में रामायण के वनगमन-सीताहरणादि प्रसंग उपस्थापित किए तथा प्रोमिला ठाकुर ने भी रावण-सीता-गरुड़ संवाद को कुल्वी में पेश किया तथापि लगभग एक घंटे तक चले इस प्रयोग को बहुत सफल नहीं माना जा सका, क्योंकि इस अवधि में यह 'संस्कृत दिवस' न लगकर 'कुल्वी दिवस' लग रहा था।

तदुपरांत जैसे ही संस्कृत कवि सम्मेलन आरम्भ हुआ तो प्रदेश के कवियों ने अपनी भावपूर्ण तथा सुललित व सुमधुर रचनाओं द्वारा इस आयोजन को चिरस्मरणीय बना दिया।

सर्वप्रथम सिरमौर से पधारे युवा कवि दिलीप वशिष्ठ ने अपने प्रभावी स्वर में 'टप्पे' शैली में कुछ पद सुनाकर समारोह की बेहतरीन शुरुआत की। उन्होंने सस्वर कहा- 'मा ब्रूहि हीनं वचः। पश्यतु मम हृदयम्-व्रणमभवत्तव बचसा।' तथा च 'कति पुत्राः कति भ्राता। कोऽपि न तथा मित्रं-ममतामयी यथा माता।'

सोलन से आए मदन हिमाचली ने शिक्षण संस्थानों में बढ़ रही असामाजिक एवं हिंसक घटनाओं पर चिंता प्रकट की। चम्बा से आए सुशील कुमार ने प्राकृतिक सुषमा सम्पन्न हिमाचल का वर्णन करते हुए कहा-

सुसरलजनान्वितः बहुप्रियः हिमाचलः अखिलसुखसम्पद' प्रकृति मनोहरः।

डलहौजी मशोबरा धर्मशाला, ब्रह्पुरम् मैकलोडगंज चायलः सुविहारो हिमाचलः।

कांगड़ा से पधारे डॉ. प्रभात शर्मा ने दिल्ली घटना, नेपाल भूकंप, संजौली महाविद्यालय, मणिकर्ण प्राकृतिक प्रकोप जैसी तात्कालिक घटनाओं को लेकर पद प्रस्तुत किए।

डोहगी से पधारे डॉ. कृष्ण पाण्डेय ने 'चंचलं चिर चातरं कोमलं कमनीयकम्/ स्वागतं नवयौवनम्' नवयौवन का सुंदर वर्णन किया जबकि सिरमौर के जगीदशचंद्र ने 'हे विभो आनंद सिंधो मे च मेधा दीयताम्' सस्वर रचना पेश की। स्थानीय महाविद्यालय की छात्रा सोनिया ने संस्कृत भारती के गीत 'मनसा सततं स्मरणीयम्...लोकहितं मम करणीयम्।' तथा कुमारी अम्बरा ने 'शूराः वयं धीराः वयम्...' गीत प्रस्तुत करते हुए अपने सुंदर स्वर तथा संगीतप्रियता का अच्छा परिचय दिया।

सुदूर लाहौल स्पीति से पहुंचे पन्नालाल सूर्यवंशी ने 'जयतु भारतं विश्वमोहनम्/ जयतु संस्कृतं लोकोपकारकम्/ पठतु संस्कृतं लोकरंजनम्।' रचना द्वारा संस्कृताध्ययाध्यापन की ओर प्रेरित किया तथा जांगला से आए डॉ. सुरेश कुमार ने चातुर्मास्य के चलते 'वासुदेव महादेव गुरुदेव जगत्प्रभो! प्रदाय ब्रह्मविद्यां मे धन्यं करोतु जीवनम्,- सस्वर रचना प्रस्तुत की।

आशुकवि डॉ. मनोहरलाल 'आर्य' ने समस्त सुख-सुविधाओं से संपन्न होने पर भी संस्कृत के बिना जीवन की निष्फलता का चित्रण इस प्रकार किया- पतिस्त्वं धनानां निधिः सम्पदां वा

कुबेरो भर्वेर्वा धवो राजलक्ष्म्याः।
सदा वीतचित्ते वसेर्वा तथापि
बिना संस्कृतं जीवनं निष्फलं ते।

संस्कृत महाविद्यालय डोहगी के प्राचार्य डॉ. भक्तवत्सल शर्मा ने भा-रत भारत की गरिमा का वर्णन करते हुए कहा-

विश्वपूज्यं मदीयं भूतले भारतं सुंदरं भारतं पुष्पितं भारनम्
वेदवेदांगमूलं हीदं भारतं सत्यधर्माश्रितं हि मम भारतम्।

संस्कृत भाषा के प्रचार-प्रसारार्थ पूर्णतः कटिबद्ध हि. प्र. संस्कृत अकादमी सचिव डॉ. मस्त राम शर्मा ने अकादमी की गतिविधियों से परिचित कराने के पश्चात् छंदमुक्त रचना पेश करते हुए कहा- 'प्रिय! कथं रोदिषित्वम् अस्मिन् झंझावाते/तवाहं पूरकोऽस्मि/आगमिष्यति नैव शैथिल्यम्/ तव चरणयोः झंझावालेऽस्मिन्...।'

इन पंक्तियों के लेखक ने 'तुम अगर साथ देने का वादा करो...' फिल्मी गीत की धुन पर संस्कृत गीतिका प्रस्तुत की-

मद्वचः श्रूयतां मे मनस्सुंदरि त्वं यदा नेत्रयोर्मे विषयं गता।
रूपलावण्ययुक्तं विलोक्य मुखं शोचनीया दशा मेऽधुना वर्तते।

अकादमी के पूर्व सचिव डॉ. हरिदत्त शर्मा ने स्वतंत्रता के पश्चात् हुई भारतीय परिणति पर चिंता प्रकट करते हुए अपनी हृदयस्पर्शी रचना 'कीदृक् परिणतिं जाता सा मदीया स्वतंत्रता?' में अनेक प्रश्न उद्घाटित करते कुछ यूं कहा-

शीलं मूलं व्यपगतं गता पूत परम्परा
पाखण्डनिरताः सर्वे लोकलुण्ठनतत्पराः।
अर्थेहा जीवनं जातं नग्ना नृत्यति दुष्टता
ईदृग् परिणतिं जाता मदीया सा स्वतंत्रता।

हिमाचल भाषा विभाग के निदेशक श्री अरुण कुमार शर्मा ने उपस्थित विद्वानों का स्वागत एवं धन्यवाद ज्ञापित करते हुए विभागीय गतिविधियों से परिचित कराने के उपरांत अपनी संस्कृतप्रियता तथा विद्वत्ता के अनुरूप कलकल निनाद करती विपाशा का शब्दचित्र खींचते कहा-

धीर समीर शीतलकण सीकरैः
कल-कल छल-छल नीर कणैः।
चंचल चारु निनादित स्वनैः
बहति विपाशा वहति विपाशा।

इनके अतिरिक्त लायक राम भारद्वाज (सिरमौर), युवा कवि अर्जुनसिंह (चंबा), रविकुमार गौड (सुंदरनगर), पदमदेव (सोलन), डॉ. ओमकुमार शर्मा (कुल्लू) आदि कवियों ने अपने प्रभावशाली काव्यपाठ द्वारा इस राज्य स्तरीय संस्कृत कवि सम्मेलन को चिरस्मणीय बना दिया।

समारोह की अध्यक्षता कर रहे अंतर्राष्ट्रीय ख्यातिप्राप्त विद्वान राष्ट्रपति से सम्मानित प्रो. केशव शर्मा ने जहां अपनी विद्वत्ता के अनुरूप धाराप्रवाह संस्कृत सम्भाषण से श्रोताओं को मंत्रमुग्ध कर दिया, वहीं अपने कविता प्रवाह में कुल्लू सौंदर्य का वर्णन किया। विश्व भ्रमण करने पर भी यदि पर्यटकों का मन तृप्त न हो तो उन्हें कुल्लू आने का निमंत्रण दिया।

द्विदिवसीय इस राज्य स्तरीय संस्कृत सम्मेलन के दूसरे दिन 'वेदकालीन शासन व्यवस्था' विषयानुरूप प्रथम शोधपत्र डॉ. भक्तवत्सल शर्मा ने प्रस्तुत किया जिसमें उन्होंने वेद ऋचाओं को उद्धृत करते हुए सप्रमाण वेदकालीन शासन व्यवस्था से परिचित कराया।

विद्वान अनुसंधाता ने एक ओर वेदों के 'नासदीय'- 'पुरुष' 'विराट सूक्त' से उन-उन मंत्रों को उद्धृत किया तथा साथ ही चंबा जिला की 'जलबिम्बी गाथा', किन्नौर-लाहुल स्पीति की 'बोनपोगाथा' सिरमौर की 'गुग्गा गाथा' महासुवी -जरमाउल गाथा' जैसे लोकाख्यानों का सुंदर वर्णन करते हुए अपने विषय से पूरा न्याय किया है।

दोनों शोधपत्रों पर परिचर्चा में भाग लेते हुए डॉ. प्रेमलाल गौतम, जगतराम शास्त्री, सीताराम ठाकुर, कृष्णमोहन पाण्डेय, डॉ. मस्तराम शर्मा, डॉ. विजय राव, बालमुकुंद शर्मा, डॉ. ओमकुमार शर्मा आदि विद्वानों ने अपने मंतव्यों को जोड़ा जबकि कविता का मिनी विलास डॉ. मनोहर लाल आर्य ने विषय से सम्बंधित एकादश मंत्रों का पद्यानुवाद करते हुए अपनी अनुपम काव्य प्रतिभा का परिचय दिया।

परिचर्चा उपरांत दोनों पत्र वाचकों ने पत्र में उठाई शंकाओं, जिज्ञासों का समाधान किया तथा अध्यक्षीय भाषण में प्रो. केशव शर्मा के आशीर्वचनपरक उद्बोधन के बाद कुल्लू जिला भाषा अधिकारी प्रोमिला गुलेरिया द्वारा प्रभावशाली में प्रस्तुत धन्यवाद ज्ञापन के साथ यह द्विदिवसीय राज्य स्तरीय संस्कृत दिवस समारोह अनेक अर्थों में मधुर स्मृतियां छोड़ते हुए सोल्लास संपन्न हुआ।

प्राध्यापक (संस्कृत), राजकीय महाविद्यालय संजौली,
शिमला, हिमाचल प्रदेश-171 006

- *श्रम के बगैर संपदा, आत्म के बगैर आनंद, मानवता के बगैर विज्ञान, चरित्रा के बगैर राजनीति, नैतिकता के बगैर व्यापार और त्याग-बलिदान के बगैर पूजा-अर्चना- ये सात सबसे जघन्य पाप हैं।*
  -महात्मा गांधी
- *मनुष्य के सभी कार्य इन सातों में से किसी एक वजहों से होते हैं : मौका, प्रकृति, मजबूरी, आदत, कारण, जुनून, इच्छा।*
  -अरस्तू

ISSN : 2454-972X

हिमप्रस्थ

वर्ष : 60 दिसम्बर, 2015 अंक : 9

प्रधान सम्पादक
डॉ. एम.पी. सूद

वरिष्ठ सम्पादक
यादविन्दर सिंह चौहान

सम्पादक
वेद प्रकाश

कम्पोजिंग एवं पृष्ठ सज्जा : अश्वनी

सम्पादकीय कार्यालय : हि. प्र. प्रिंटिंग प्रेस परिसर, घोड़ा चौकी, शिमला-5

वार्षिक शुल्क : 150 रुपये, एक प्रति : 15 रुपये

रचनाओं में व्यक्त विचारों से सम्पादकीय सहमति अनिवार्य नहीं

E-Mail : himprasthahp@gmail.com
Tell: 0177 2633145, 2830374

ज्ञान सागर

झूठ बोलना तलवार के घाव की तरह है, घाव तो भर जाता है परंतु उसका निशान कभी नहीं जाता।

- शेख सादी

इस अंक में

लेख

कहानी

लघुकथा

कविता/ग़ज़ल

आखिरी पन्ना

अपनी बात

वर्ष 2015, हिमप्रस्थ पत्रिका के लिए कई मायनों में विशेष एवं घटनाप्रद रहा। विशेष इसलिए कि इसने इस वर्ष अपनी अनवरत यात्रा के 60 वर्ष सफलतापूर्वक पूर्ण किए। जिन उद्देश्यों को लेकर यह पत्रिका अस्तित्व में आई थी, उन्हें प्राप्त करने की दिशा में हम निरंतर प्रयत्नशील एवं अग्रसर हैं। साहित्यिक क्षेत्र, विशेषकर पाठकों में अपनी प्रासंगिकता एवं उपयोगिता बनाए रखने के लिए पत्रिका, देश के ख्यातिप्राप्त साहित्यकारों की रचनाओं को प्रकाशित करती रही है और समय-समय पर विशेषांकों का प्रकाशन भी होता रहा है। इस परंपरा को जारी रखते हुए इस वर्ष हमने पत्रिका के साठ वर्ष पूर्ण होने के उपलक्ष्य में विशेषांक का प्रकाशन किया है। कुछ खट्टी-मीठी यादें, प्रिय-अप्रिय घटनाओं के साथ यह वर्ष भी हमें अलविदा कह रहा है। अप्रिय स्मृतियों से तात्पर्य हिमप्रस्थ के यशस्वी संपादक श्री रामदयाल नीरज जी इस वर्ष 8 नवंबर, 2015 को हमें सदा के लिए अलविदा कह गए। हिमाचल के साहित्यिक अदारों में 'मास्टर जी' और 'गुरु जी' के नाम से विख्यात नीरज जी का यूं अचानक चले जाना, उनके भाई-बंधुओं, प्रियजनों एवं परिजनों को गमगीन कर गया। साहित्यिक एवं सामाजिक जगत् विशेषकर गिरिराज एवं हिमप्रस्थ परिवार के लिए तो यह एक ऐसी क्षति है जिसकी पूर्ति नहीं की जा सकती। हिमप्रस्थ को शुरू करने से लेकर उसे वर्तमान स्वरूप तक पहुंचाने में उनका योगदान अतुलनीय है। हिमप्रस्थ के आरंभिक दौर में, जब प्रदेश में न तो लेखक थे और न ही संपादकीय सहयोगी, पत्रिका के लिए सामग्री जुटाना दुष्कर कार्य था। अपने दम पर अकेले किसी प्रकाशन को देश की प्रतिष्ठित पत्रिकाओं के समानांतर ला खड़ा करना किसी चुनौती से कम न था। उन्होंने अपने संपादकीय दायित्वों को बखूबी निभाते हुए प्रदेश के उभरते एवं उदीयमान रचनाकारों के लिए एक सशक्त साहित्यिक मंच प्रदान किया। हिमाचल के इतिहास, लोक संस्कृति एवं साहित्य में उनकी गहरी पकड़ थी जिसकी झलक उनके संपादकीय कृत्यों एवं लेखन में देखी जा सकती है। साहित्य सृजन के क्षेत्र में उन्होंने कविता, ग़ज़ल, गीत, नाटक तथा निबंध लेखन के साथ-साथ लोक साहित्य विधा में भी विशेष योगदान दिया। 'हिमाचल की लोकगाथाएं' नामक पुस्तक में उन्होंने हिमाचल की जिलावार लोक गाथाओं को अनुवाद के साथ बेहद रुचिकर ढंग में प्रस्तुत किया जो लोक साहित्य के शोधार्थियों के लिए आज भी एक उपयोगी दस्तावेज है। हिमप्रस्थ की वर्तमान पीढ़ी को भले ही उनके साथ कार्य करने का अवसर न मिला हो, लेकिन उनका साहित्यिक एवं संपादकीय योगदान हमारे लिए सदैव प्रेरणास्रोत रहा है और भविष्य में भी रहेगा। हिमप्रस्थ में कार्यरत हमारी पीढ़ी का यह सौभाग्य है कि हमारे पास पत्रिका में संपादकीय सहयोगियों के विचारों का अथाह भंडार विद्यमान है जो हमारे लिए व आने वाली पीढ़ियों के लिए सदैव लाभप्रद एवं उपयोगी बना रहेगा। इस विरासत को हम आगे ले जाने के लिए निरंतर प्रयत्नशील रहें, यही उनके लिए सच्ची श्रद्धांजलि होगी। लेकिन जीवन चलने का नाम है, बस, चलते जाना है। इस यात्रा में एक छोर पर बिछुड़न है, विसर्जन है, तो दूसरी ओर आगमन है, सृजन है। नया साल द्वार पर खड़ा है। उसका स्वागत है। अभिनंदन है। पाठकों को इस बेला पर हार्दिक शुभकामनाएं। आओ हम सब मिलकर इस पावन धरा पर नई सोच, नए जोश व होश के बीज बो कर नवसृजन के फूल सजाएं।

–संपादक

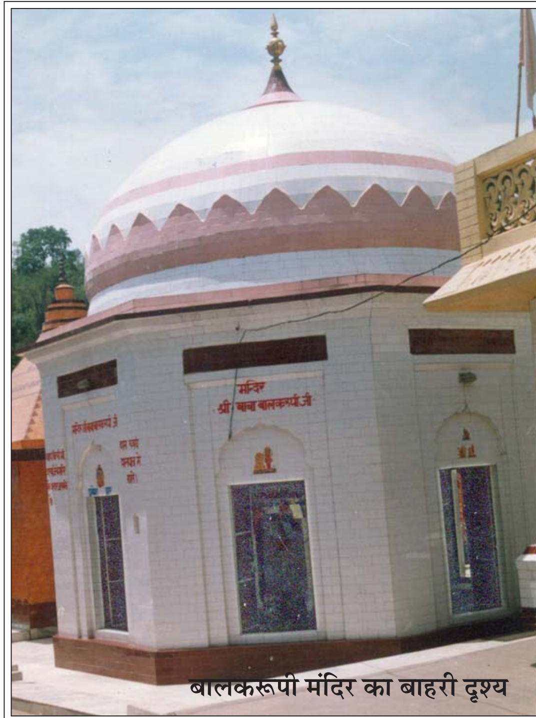
आलेख

मनोकामना पूरी करते हैं श्रीबालकरूपी

● अशोक सरीन

उत्तर भारत में भगवान शिव के दो प्रसिद्ध धाम हैं। कश्मीर में श्री अमरनाथ और हिमाचल में श्री मणिमहेश। हर वर्ष लाखों श्रद्धालु मोक्ष प्राप्ति के लिए वहां जाते हैं। ये धाम समुद्रतल से14 हजार फुट ऊंचाई पर स्थित हैं। इन धामों की यात्रा जुलाई-अगस्त, बरसात के दिनों में होती है। इन दिनों भारी वर्षा होने से जनजीवन अस्त-व्यस्त हो जाता है। श्री अमरनाथ व श्री मणिमहेश तक पहुंचने में श्रद्धालुओं को कई प्रकार की कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। ऊबड़-खाबड़, पथरीले रपटीले मार्ग, वर्षा, तेज हवा, बर्फीली आंधी, अंधेरा, बादलों की गर्जना, आसमानी बिजली का कौंधना, शरीर को कंपकंपा देने वाली ठंड, ऑक्सीजन की कमी से सांस फूलना, आतंकवादियों का खौफ कदम-कदम पर श्रद्धालुओं की परीक्षा लेता है। पर भोलेनाथ के दर्शनों का जुनून श्रद्धालुओं की राह में आने वाली सभी बाधाओं को परास्त कर देता है। श्रद्धालु टोलियों में शिव महिमा का गुणगान करते हुए गंतव्य की ओर बढ़ते हैं। श्री अमरनाथ में जहां प्राकृतिक हिमबूंदों से निर्मित 15 फुट ऊंचे बर्फानी शिवलिंग में शिवजी के रूप में दर्शन होते हैं, वहीं कैलाश पर्वत जो शिवलिंग के आकार में विद्यमान है, के दर्शन कर श्रद्धालुओं का मनोरथ पूरा हो जाता है। कहा जाता है इसी कैलाश पर्वत पर शिव-पार्वती का वास है। प्रस्तुत कथा श्री मणिमहेश धाम से शुरू होती है।

हिमाचल प्रदेश में चंबा खूबसूरत पहाड़ी शहर है। सन् 1905 में यहां घूमने आए डच विद्वान डॉ. फोगल चंबा के मायावी सौंदर्य से इतने प्रभावित हुए कि उन्होंने इसे 'चंबा है अचंभा' कहा। रावी नदी के तट पर बसा यह शहर सन् 920 में राजा साहिल बर्मन ने अपनी बेटी चंपा की याद में बसाया था। चंबा श्री मणिमहेश का प्रवेश द्वार है। मणिमहेश धाम चंबा से 93 किलोमीटर दूर है। चंबा से 67 किलोमीटर दूर भरमौर नामक स्थान तक पर्याप्त बस सेवा है। यहां 84 प्राचीन मंदिर है। यहां से 13 किलोमीटर दूर हड़सर नामक स्थान तक हल्के वाहन जाते हैं। हड़सर से आगे 13 किलोमीटर धणछो और वहां से 7 किलोमीटर दूर पवित्र मणिमहेश धाम है। हड़सर से आगे 13 किलोमीटर का रास्ता चुनौतियों भरा है। सीधी चढ़ाई, खराब मौसम, सांस फूलने से श्रद्धालुओं को परेशानी होती है। पर धीरे-धीरे भक्तों का कारवां भगवान शिव का स्मरण कर मंजिल तक पहुंच जाता है। अधिकांश श्रद्धालु भरमौर से मणिमहेश तक पैदल चलते हुए पहुंचते हैं। दुर्बल, भारी शरीर वाले घोड़ों पर बैठकर मणिमहेश जाते हैं। यह तो था मार्ग परिचय। कैलाश पर्वत के पांव में बर्फीले पानी की झील है जहां श्रद्धालु स्नान कर सामने खड़े विशाल कैलश पर्वत को भोले नाथ का प्रतीक मान कर शीश नवाते हैं। हर वर्ष जन्माष्टमी को यहां स्नान पर्व होता है। देश के कोने-कोने से श्रद्धालु भोलेनाथ के दर्शनों के लिए श्री मणिमहेश धाम पहुंचते हैं। यहां दो प्रकार का स्नान होता है जिसे 'छोटा स्नान' और 'बड़ा स्नान' कहते हैं। हर वर्ष के स्नान को 'छोटा' और बारह वर्ष बाद 'बड़ा स्नान' जिसे महाकुंभ कहते हैं। हरिद्वार की तरह मणिमहेश में



बालकरूपी मंदिर का बाहरी दृश्य

सामान्य व विशेष स्नान होता है। जो लोग सामान्य स्नान (छोटा स्नान) में न जा सकें वे बारह वर्ष बाद बड़े स्नान (महाकुंभ) में अवश्य जाते हैं। आइए, अब श्री बालकरूपी की शुरुआत करें।

श्री मणिमहेश यात्रा की परंपरा सदियों पुरानी है। आज कहीं भी आने-जाने के लिए बस, रेलगाड़ी, वायुयान, समुद्री जहाज की सुविधा है। पर प्राचीनकाल में ऐसा कुछ न था। कहीं भी जाने के लिए पैदल चलना पड़ता था। तीर्थ यात्रा पूरी करने में कई दिन लग जाते थे। इस बात का भी संदेह बना रहता था कि घर से तीर्थ यात्रा पर निकला भक्त लौटकर भी आएगा या नहीं? ऐसी ही स्थिति में एक वयोवृद्ध व्यक्ति अपने जीवन की अंतिम वेला में मणिमहेश यात्रा पर निकला। वह शिव का परम भक्त था। बूढ़ा- कमजोर शरीर, टूटे-फूटे पथरीले रास्तों, खराब मौसम में उस वृद्ध व्यक्ति को चलने में बड़ी मुश्किल हो रही थी। उसने एक झोले में सफर के लिए कुछ खाने का सामान और वस्त्र डाल रखे थे। यह भारी झोला उठाना उसके वश से बाहर हो रहा था। मगर मन में भोलेनाथ के दर्शनों के मोह वह जैसे-तैसे आगे बढ़ रहा था। यात्रा के बीच रात गुजारने तथा थकान दूर करने के लिए वह वृद्ध एक गद्दी (भेड़-बकरी पालने वाला) के घर ठहर गया। उस गद्दी ने वृद्ध व्यक्ति का खूब आदर-सत्कार किया। प्रातः पुनः यात्रा शुरू करने से पूर्व वृद्ध भक्त ने अपना भारी थैला उस गद्दी के पास यह कहकर रख दिया कि वह लौट आने पर इसे ले लेगा। वृद्ध ने आगे बढ़ना शुरू किया। उसे ऊंचे पहाड़ पर चढ़ते हुए बड़ा कष्ट हो रहा था। दो कदम चलने पर सांस लेने में दिक्कत आ रही थी। मन-ही-मन शिव भगवान का स्मरण करने से उसे राहत मिल रही थी। अंततः पर्वतराज हिमालय के बर्फानी शिखरों को पार करते हुए वृद्ध भक्त श्री मणिमहेश जी के सरोवर पर पहुंच गया। वहां वह स्नानादि से निवृत्त होकर कैलाश पर्वत की ओर मुखकर अपने आराध्य भगवान शिव की पूजा में लीन हो गया। दिन गुजर गया। वहां आए अन्य श्रद्धालु पवित्र झील में स्नान तथा कैलाश पर्वत को नमन कर लौट चुके थे। पर वृद्ध भक्त वहीं आसन जमाए श्री भोलेनाथ के स्तुति गान में मगन था। जब वृद्ध ने शिव महिमा के गुणगान से निवृत्त होकर नेत्र खोले तो देखा सूर्य नारायण अस्ताचल की ओट में जा चुके थे। उनके अतिरिक्त उस समय वहां कोई न था। अब वह और भी निश्चिंत होकर शिव के ध्यान में खो गए। ईश्वर की इच्छा से जिस पर्वतराज (कैलाश) पर भगवान शिवजी के दर्शन होते हैं, उसी पर्वत से परम दैदीप्यमान ज्योतिष्मति, एक परमसुंदरी देवकन्या के तुल्य साक्षात् सिंहवाहिनी श्रीभवानी उमा भगवती एक स्वर्ण कलश हाथ में लिए नीचे उतरी और पवित्र झील में स्नान करके कलश को जल से भरकर तथा सुंदर-सुंदर फूल लेकर पुनः पर्वतराज कैलाश पर चढ़ने लगी। वह वृद्ध भक्त भी सम्मोहित होकर भगवती के पीछे-पीछे चलते हुए उस परमधाम दिव्य कैलाश पर्वत पर श्री माता पार्वती जी की कृपा से पहुंच गए।



पिंडी रूप में श्रीबालकरूपी

वहां श्री भगवान महेश्वर अपने सिंहासन पर बैठे हुए अपनी लीला से पार्वती जी से पूछने लगे, "हे देवी पार्वती! तुम्हारे पीछे यह मनुष्य कौन है? जो मेरे धाम में आ पहुंचा है। यहां पहुंचना तो बिना मेरी इच्छा के देवताओं को भी दुर्लभ है।"

यह सुन श्री जगदंबा भवानी पार्वती जी ने कहा, "आपकी कृपा के बिना किस में सामर्थ्य है जो यहां पहुंच सके। इसलिए मेरे पीछे-पीछे आने वाला यह मनुष्य कोई आपका ही बालक या पुत्र होगा। हे शंभो! आप जगत पिता हैं और आपकी ही कृपा से यह प्राणी मेरे पीछे-पीछे चलकर यहां पहुंचा है।" बस फिर क्या था? देवाधिदेव भोलेनाथ आशुतोष देवी पार्वती के इस प्रकार चातुर्यपूर्ण उत्तर देने पर प्रसन्न हो गए और अपना करकमल वरदानमय हाथ उन वृद्ध के सिर पर फेर कर वरदान दिया, हे भक्त! मैंने तुम्हें अपना निज बालक रूप दे दिया। अब तुम बालकरूपी नाम से विख्यात होओगे। मेरे ही नाम से अर्थात् शिव स्वरूप होकर संसार में पूजे जाओगे। सो हे वत्स! अब तुम धरती पर लौट जाओ। परंतु देवलोक पहुंचकर भगवान श्री महेश्वर जी के दर्शनों से इनके पूर्व जन्मों के कर्म-बंधन समाप्त हो गए थे। अब उस वृद्ध भक्त को धरती पर लौटना अच्छा न लग रहा था। वह मोक्ष प्राप्त कर चुके थे। उनका धरती (मातृलोक) से नाता टूट चुका था। वह भोलेनाथ के चरणों में गिरकर कैलाश पर्वत पर ही रहने का अनुरोध करने लगे। पर भोलेनाथ ने पुनः कहा, "बेटा, मेरा दिया हुआ वरदान कभी मिथ्या नहीं होगा। अब तुम शिवरूप हो गए। मेरे ही अनुरूप तुम्हारा भी पूजन होगा। जालंधर पीठ (कांगड़ा) में न्यूगल नाम की एक नदी बहती हुई व्यास गंगा से जाकर मिलती है। उसके दक्षिण किनारे पश्चिम दिशा में हार नामक ग्राम है, वह तुम्हारा निज आश्रम होगा। इस स्थान में तुम्हें सभी लोग 'बालकरूपी' नाम से तुम्हारी पूजा करेंगे। जो फल मेरी भक्ति, पूजन तथा ध्यान करने से मेरे भक्तों को प्राप्त होता है, वही तुम्हारे भक्तों को भी मिलेगा।" इतना कहकर श्री शंकर भगवान (मणिमहेश) ने उन्हें वहां से विदा

कर दिया।

कैलाश पर्वत से बालकरूपी, शंकर लौटकर उस गद्दी के पास पहुंचे जहां मणिमहेश जाते समय वृद्ध के रूप में उन्होंने अपने सामान का थैला रखा था। उन्होंने वह थैला उससे मांगा। परंतु गद्दी ने कहा वह थैला एक वृद्ध यात्री ने मेरे पास रखा था। वह जब मणिमहेश से लौटकर आएंगे तो मैं इसे उन्हीं को दूंगा, आपको नहीं। आप एक बालक हैं वह वृद्ध थे।

उस गद्दी को समझाते हुए बालकरूपी ने कहा, "हे मित्र! वह वृद्ध मैं ही हूं। श्री मणिमहेश (भगवान् शिवजी) की कृपा से बालक का रूप पाकर तुम्हारे पास आया हूं। वह थैला मुझे लौटाकर मुझे विदा करो।"

वह गद्दी असमंजस में पड़कर किंकर्तव्यविमूढ़ हो गया। कुछ देर सोचने के बाद उसने प्रश्न किया, "महाराज, आप ही वह वृद्ध सज्जन हैं, तो बालक कैसे बन गए?" इतना कहकर उस गद्दी ने अपना सिर बालक रूपी शंकर के चरणों पर रख दिया और बालकरूपी रहस्य जानने के लिए अनुरोध करने लगा।

गद्दी के इस प्रकार प्रेमानुरोध को देखकर बालकरूपी बने उस वृद्ध ने सारी घटना विस्तार से उसे बता दी।

यह सुनकर वह गद्दी भगवान शिव के दर्शनों को लालायित हो उठा। उसने श्री बालकरूपी से कहा, "हे प्रभु! आज से आप मेरे गुरु और मैं आपका शिष्य हूं। आप मायावी देवलोक से श्री महादेव जी का आशीर्वाद पाकर बालकरूपी रूप में प्राणियों का उद्धार करने धरती पर आए हैं। मैं भी भगवान शंकर का भक्त हूं। मुझे उनके दर्शनों का मोह है। मेरी आपसे प्रार्थना है मुझे आप भी उनके दर्शन करवा कर मोक्ष दिलाएं। गुरु कभी अपने शिष्य को निरश नहीं करते।"

बालकरूपी ने उस गद्दी को बहुत समझाया कि अब भगवान् मणिमहेश के दर्शन करना असंभव है। तुम अपना हठ छोड़ दो। वहां श्री महादेव की इच्छा बिना कोई नहीं जा सकता। पर गद्दी न माना और बार-बार मणिमहेश जाने की जिद्द करने लगा।

बालकरूपी को अंततः अपने शिष्य गद्दी की बात माननी पड़ी। वह गद्दी को लेकर मणिमहेश की ओर चल पड़े। मणिमहेश पहुंचकर गुरु-शिष्य ने स्नान किया। इससे निवृत्त होकर वे कैलाश पर्वत पर चढ़ने लगे। तभी आकाशवाणी हुई, "हे बालक, ऊपर आने का प्रयास न करना। यहीं से वापस लौट जाओ। इसी में तुम्हारा भला है।"

बालकरूपी ने आकाशवाणी को अनसुना कर दिया तथा गद्दी के साथ पर्वत पर चढ़ने लगा। परिणामस्वरूप गद्दी जहां खड़ा था, वहीं शिला में बदल गया। यह मानवाकार की शिला आज भी मणिमहेश आए श्रद्धालुओं को दिखाई देती है। इससे पूर्व बालकरूपी आगे बढ़ते एक बार फिर आकशवाणी वातावरण में गूंजी- "बेटा, इस गद्दी को मैंने अपने गण 'कालीनाथ' का रूप दे दिया है। लोग इसकी पूजा करेंगे। तुम अपने निज आश्रम लौट जाओ। जो मैंने तुम्हें आदेश दिया है, उसका पालन करो। इस गद्दी भक्त को ऊपर आने का अधिकार न था, इसलिए शिलारूप हो गया। तुम्हें दिव्य (शिव) रूप दिया गया है। तुम मेरी आज्ञा का पालन करो। मेरी रची मर्यादा का उल्लंघन न करना। यह मेरी आज्ञा है।

आकाशवाणी सुन बालकरूपी ने एक बार शिला बन चुके अपने शिष्य गद्दी को देखा और अपने निज आश्रम की ओर चल पड़े।

वह गद्दी जो भगवान शंकर (मणिमहेश) की कृपा से उनके गण 'कालीनाथ' में बदल गया था, आज बाबा बड़ोह के नाम से प्रसिद्ध है। उनका बाबा बड़ोह नाम से एक अनाम भक्त ने नौ करोड़ रुपये की लागत से भव्य मंदिर बनाया है। यह मंदिर मंडी-पठानकोट राष्ट्रीय उच्चमार्ग पर नगरोटा बगवां नामक शहर से बाईस किलोमीटर दूर है। उस अनाम व्यक्ति ने मंदिर के साथ आस-पास के गांवों के छात्र-छात्राओं की सुविधा के लिए महाविद्यालय भी स्थापित किया है। कभी निर्जन, बियावान स्थल आज बाबा बड़ोह के कारण उत्तर भारत में प्रसिद्ध है। यहां हर वर्ष जून-जुलाई के माह में हर सोमवार मेला लगता है, जिसमें दूरदराज से लोग इस मंदिर में बाबा जी के दर्शन करने आते हैं। यहां मांगी सच्चे मन से मनौती अवश्य पूरी होती है।

उधर, भगवान शिव की आज्ञा पाकर बालकरूपी अपने निज आश्रम हार ग्राम आ गए। वहीं वह गांव के पास घने जंगले में बालक रूप में रहने लगे। इसी गांव के कुछ ग्वाले प्रतिदिन अपने मवेशी चराने जंगल जाते थे। इन्हीं ग्वालों में एक ब्राह्मण ग्वाला बारह-तेरह वर्षीय जोगू राम था, जो अपनी गाय, भैंस, बैल चराने जंगल जाता था। उसकी भैंसों में एक श्वेत रंग की छोटी आयु की कट्टी जो अभी 'नई' भी न हुई थी, भैंसों के झुंड से निकलकर नित्य जंगल के बीच बड़ी-बड़ी झाड़ियों में चली जाती। इन झाड़ियों के बीच छह-सात वर्ष का एक सुंदर, गोरे रंग का बालक साधु रूप में ध्यान लगाए बैठा रहता था। उसके सिर पर जटाएं, हाथों में दंड-कमंडल होता था। वह कट्टी उस बालक के पास खड़ी होकर जुगाली करने लगती। उसके थनों से दूध की धारा बालक के कमंडल में गिरती। इस दूध को जटाधारी बालक पी जाता।

इधर, कट्टी बालकरूपी को नित्य दूध पिलाती, उधर जोगू राम अपनी भैंसों के बीच कट्टी को न पाकर उसे यहां-वहां ढूंढता पर वह कहीं नजर न आती। पर शाम ढलते वह कट्टी गोशाला में आ जाती। जोगू राम को तब बड़ी हैरानी होती। जिस कट्टी को ढूंढने के लिए वह जंगल का चप्पा-चप्पा छान मारता, वह सांझ ढलते कैसे गोशाला आ जाती? जोगू राम के लिए यह रहस्य बना हुआ था।

एक दिन जोगू राम ने कट्टी का पीछा किया। कट्टी के पीछे-पीछे चलता वह घनी झाड़ियों तक पहुंच गया। आगे का दृश्य देख जोगू राम स्तब्ध रह गया। झाड़ियों के बीच एक सुंदर सुकुमार बालक श्री भगवान बाल मुकुंद के रूप सरीखा बैठा था। उसके चेहरे पर विशेष चमक थी। उसे देख किसी दिव्य बालक का आभास होता था। वह बालक अपने कमंडल में दूध भर जाने पर उसे पी जाता। जोगू राम अपलक निगाहों से यह सब देख रहा था। कुछ देर बाद जोगू राम सामान्य हुआ तो उसने बड़ी नम्रतापूर्वक दोनों हाथ जोड़कर उस दिव्य बालक से पूछा, "महाराज, आप कौन हैं? इस कट्टी के थनों से दूध की धारा कैसे निकल रही है। कृपा करके मेरे इन प्रश्नों का उत्तर देकर मेरी जिज्ञासा शांत करें। हे भगवान! मैं एक अबोध बालक आपके श्री चरणों की शरण में आया हूं। मुझे अपना दास मानकर मेरा संदेह दूर कीजिए। इस समय मैं असमंजस में हूं जो मैं देख रहा हूं वह सच है या यह मेरी कल्पना है।

जोगू राम की नम्रता भरी वाणी और भोलेपन से प्रसन्न होकर बालकरूपी जी ने उसे शुरू से अब तक की पूरी जानकारी देकर अपने हाथों से उसे भी कट्टी का दूध पिलाया और उसे यह भेद किसी पर न प्रकट करने को कहा।

इस घटना के बाद जोगू राम पूर्णतया बालकरूपी शंकर को समर्पित हो गए। वह जंगल में अपने मवेशी छोड़ बालकरूपी जी की सेवा-सुश्रुषा करते। उस कट्टी का दूध, अपने प्रभु का दिया हुआ प्रसाद मानकर पी लेते। दिनभर जोगूराम उनके चरणों में पड़े रहते। कई बार घर भी नहीं जाते। भोजन, प्यास-नींद की परवाह न करते।

जोगू राम के अनायास इस परिवर्तन पर उसके माता-पिता बहुत चिंतित थे। उन्हें लगा उनका बेटा किसी रोग का शिकार हो गया है जिससे उसकी भूख-प्यास और नींद समाप्त हो गई है। शरीर कमजोर और चेहरा पीला पड़ गया है। वह बार-बार अपने पुत्र से पूछते बेटा, तुझे क्या कष्ट है? दिन-ब-दिन तुम्हारा शरीर कमजोर हो रहा है। तुम न भोजन करना न घर रहना पसंद करते हो। इसका क्या कारण है? जोगू राम को बालकरूपी जी ने भेद न प्रकट करने की हिदायत दे रखी थी। वह न अपना मुंह खोल सकता था न बालकरूपी जी सेवा करना छोड़ सकता था। जोगू राम की चुप्पी उसके माता-पिता का दुख बन गई।

एक दिन जोगू राम को उसके घरवालों ने बाहर जाने से रोक लिया और बार-बार उसके रोग के बारे में पूछने लगे। इस पर जोगू राम ने चुपके से अपने इष्ट देव बालकरूपी जी की शरण में जाकर विनती की, "हे प्रभु, मुझे मेरे घरवालों ने बाहर जाने पर अंकुश लगा रखा है। मुझे रोगी समझकर बार-बार मुझसे रोग का कारण पूछ रहे हैं। आपने अपना भेद खोलने से मुझे मना कर रखा है। इस स्थिति में मैं उन्हें क्या कहूं जिससे उन्हें संतोष हो जाए और आपको दिया वचन भी भंग न हो। हे स्वामी मैं आपकी शरण में आया हूं मेरी रक्षा कीजिए।"


तांबे का बैल

अपने प्रिय भक्त जोगू राम को परेशान देख बालकरूपी ने कहा, "बेटा, तुम चिंता न करो। अपने माता-पिता से कह दो कि मैं अपने गुरु की शरण ग्रहण कर चुका हूं। यह जानकर वे सब जान जाएंगे और चिंतामुक्त होकर तुम्हारे रास्ते में बाधा नहीं बनेंगे।"

एक अन्य बात कह रहा हूं दुखी न होना। आज से मैं तुम्हें इस रूप में नज़र नहीं आऊंगा। तुमने मेरी बड़ी सेवा की है। इसलिए तुम मेरे प्रिय सखा हो। आगे भी तुम और तुम्हारा वंश मेरी पूजा करने (पुजारी) का अधिकार होगा। बेटा, मेरा भेद तुमने अभी तक दूसरों पर प्रकट नहीं किया था तो मैं तुम्हें इस रूप में मिलता रहा। अब मेरी आज्ञा से तुम यह रहस्य अपने माता-पिता को बता दोगे तो मैं भविष्य में इस रूप में नज़र नहीं आऊंगा।"

बालकरूपी के मुख से यह बात सुन जोगू राम उनके पांव पर सिर रखकर रोने लगा। मुझे ऐसी सजा न दो प्रभु। आपके बिना मेरा जीना मुश्किल हो जाएगा। मैं आपकी याद में तड़प-तड़प कर जान दे दूंगा।

बालकरूपी ने जोगू राम के सिर पर हाथ फेरते कहा, "बेटा, मैं तुम्हें अपने पुराने रूप में न मिल सकूंगा पर तुमको मेरी प्रतिमा मिलेगी। जिसके गले में शेषनाग और यज्ञोपवी का स्पष्ट चिह्न होगा। जिस स्थान से मेरी मूर्ति को खोदकर बाहर निकाला जाएगा उसे किसी उखाड़ने वाले अस्त्र की थोड़ी चोट लग जाने पर उससे दूध या रक्त की धार निकलेगी। उसे मेरा ही विग्रह समझ लेना। दूध की धार निकलने का अभिप्राय यह है कि लोग मुझे दुग्धाहारी कहेंगे और मेरा स्नान दूध से करवाया करेंगे। रक्तधारा का अभिप्राय बलि प्रदान से है। अब तुम घर जाकर अपने माता-पिता को सारी बात बताकर उनके मन का संदेह दूर कर दो।"

जोगू राम बालकरूपी से अलग नहीं होना चाहते थे। उसकी आंखों से आंसू बह रहे थे। उसका दुःख वैसा ही था जैसा प्रियजन के बिछुड़ने से होता है।

बालकरूपी अपने भक्त की मनस्थिति

भांप चुके थे। उन्होंने उसे ढांढस बंधाया और वर दिया कि महाशिवरात्रि और होली के उत्सव पर मैं तुमसे अपने असली रूप में मिला करूंगा। और जब कभी तुम्हारी इच्छा मुझसे मिलने की हो, मैं तुमसे उसी रूप में मिलूंगा जिस रूप में तुमने मुझे देखा है।

जोगू राम ने घर आकर अपने माता-पिता को अपने तथा बालकरूपी जी के बारे में सच्चाई बता दी जिसे सुन उन्होंने बेटे को गले से लगा लिया।

हिमाचल में जिला कांगड़ा के मुख्यालय धर्मशाला से आठ किलोमीटर दूर एक प्राचीन स्थान है 'अघंजर महादेव'। यह स्थान महात्मा लोगों की तपोभूमि है। कई वर्ष पूर्व यहां एक परम ज्ञानी वृद्ध महात्मा श्री लालपुरी जी योगीराज रहते थे। वह सर्वगुण संपन्न, उच्चकोटि के विद्वान थे। उनकी तपस्या के अद्भुत चमत्कार सर्वत्र विख्यात थे। उनकी ख्याति से प्रभावित होकर जोगू राम के पिता उन्हें सम्मान सहित अपने घर ले आए। जोगू राम के पिता ने विद्वान महात्मा को अपने बेटे के बारे सब कुछ बता कर श्री बालकरूपी जी की प्रतिमा जो कहीं धरती के नीचे थी, की प्रतिष्ठा करने की विनती की। महात्मा श्री लालपुरी जी जोगूराम को देखते ही सारी बात जान गए थे। उन्होंने उस स्थान पर जहां बालकरूपी अपने भक्त जोगूराम के साथ कट्टी का दूध पिया करते थे, वहां बालकरूपी की कीर्ति का गायन गांववासियों के साथ शुरू किया। धूप-दीप नैवेद्य सहित उस पवित्र भूमि का पूजन वेदपाठी पंडितों द्वारा करवा कर उस भूमि को पवित्र नदियों के जल से साफ किया गया। वहां नर-नारी भगवत् कीर्तन कर रहे थे। महात्मा जी की आज्ञा से भक्त जोगू राम अपने हाथों से कुदाल लेकर एक स्थान पर भूमि को खोदने लगे। जिस प्रकार सूर्य नारायण प्रातःकाल उदयाचल से उदय होते हैं, उसी तरह भगवान बालशंकर रूपी श्री बालकरूपी जी अपने भक्त जोगू रामकी प्रेम व भक्ति को देखकर भूमि से लिंग रूप में प्रकट हुए। उस स्थान को आज भी 'कुदाल-कूट' के नाम से जाना जाता है। भूमि खोदते समय बाल शंकर बालकरूपी की प्रतिमा पर कुदाल की दो चोटें लगी थीं। इनमें से दुग्ध की धारा और रक्त निकला। उसी समय एक पालकी सजाई गई जिसमें बालकरूपी की प्रतिमा को रख न्यूगल नदी के किनारे ले जाया गया। नदी के जल से प्रतिमा को स्नान करवाया गया। उस समय कुछ क्षणों के लिए नदी का पानी दूध में बदल गया। यह शुभ संकेत था। बालकरूपी की प्रतिमा को स्नान करवाने के बाद पुनः पालकी में रखकर कहार आगे बढ़े। रास्ते में पत्थर की चट्टानों में पानी के तेज प्रवाह से बड़े-बड़े गहरे कुंड बने हुए थे। उन कुंडों में एक पानी से भरे कुंड के पास थोड़ी देर विश्राम के लिए पालकी को रखा गया। बाद में यह पालकी इतनी भारी हो गई कि उसे उठाया न जा सका। पालकी के संग चल रहा जनसमूह हैरान था कि पालकी इतनी भारी कैसे हो गई? इतने में उस कुंड के बीच से आवाज आई मेरी प्रतिमा को इस कुंड के पानी से स्नान करवाओ फिर पालकी उठेगी। इस पर महात्मा श्री लाल पुरी जी तथा जोगू राम ने उस कुंड के जल से प्रतिमा को स्नान करवाया। तब पुनः जलकुंड से शब्द उभरा कि इस जलकुंड को नमन कर इसी के जल से स्नान करने वाली बांझ महिला की कोख हरी हो जाएगी। कई असाध्य रोग भी इस जल से दूर हो जाएंगे। इस कुंड को मेरा मुख्य द्वार माना जाए। यहां मेरे चरण चिहृन दिखाई देंगे। यह कुंड 'भुच्चर कुंड' के नाम से प्रसिद्ध है। यहां चरण चिहृन भी हैं।

उस कुंड के जल स्नान के बाद बालकरूपी जी की प्रतिमा को पालकी में बिठा कर एक रमणीक स्थान पर लाया गया। इस ऊंचे स्थल पर कई सुंदर फूल और घने छायादार वृक्ष थे। उस स्थान पर गंगाजल, चंदन, अक्षत, पुष्प, धूप, दीप तथा नाना प्रकार के नैवेद्य से धरती का पूजन करके श्री बालकरूपी की प्रतिमा को महात्मा लालपुरी और वेदपाठी पंडितों ने जोगूराम के हाथों पूजन करवाकर स्थापित करवा दिया। बालकरूपी जी के मंदिर में बाल शंकर बालक रूपी जी के पवित्र दर्शनों के साथ मंदिर के प्रांगण में नंदीगण (बैल) के भी दर्शन करने योग्य हैं। यह एक बड़ी सुंदर और विशालकाय तांबे की मूर्ति है। नंदीगण की स्थापना के पीछे भी एक कथा जुड़ी है जो इस प्रकार है :

एक दस वर्षीय कन्या जो राजपूत घराने की थी, की मां का देहांत हो जाने पर उसकी विमाता उससे घर के कामों के अतिरिक्त जंगल में मवेशी चराने का काम भी करवाती थी। कन्या इस काम को करने से कतराती थी। उसे पशुओं के साथ अकेली जंगल जाना अच्छा न लगता था। पर विमाता की आज्ञा टालना उसके वश में न था। एक दिन साहस कर उस कन्या ने विमाता से कहा कि वह पशुओं को चराने के लिए जंगल नहीं जाना चाहती। वहां उसे डर लगता है। इस पर विमाता गुस्से में लाल होती बोली, "तू कोई राजकुमारी नहीं है जो जंगल नहीं जा सकती। तुझे यह काम करना ही होगा। अब फिर कभी यह बात न करना नहीं तो बुरा होगा।"

विमाता के तेवर देख वह कन्या पशुओं को चराने जंगल चली गई। जंगल में वह बालकरूपी को मन में याद कर उनसे प्रार्थना करती कि हे भगवान मेरा इस दुनिया में कोई नहीं है। विमाता मुझसे बहुत काम लेती है। मैं जंगल में पशु चराने नहीं जाना चाहती। मेरी आपसे विनती है कि इस काम से मुझे मुक्त करवा दो। यह प्रार्थना वह हर रोज करती। उसकी प्रार्थना रंग लाई। संयोगवश उस जंगल में शिकार खेलते राजकुमार वहां से गुजरे जहां वह कन्या अपने पशु चरा रही थी। जैसे ही राजकुमार की दृष्टि उस कन्या पर पड़ी, वह उसे अपनी रानी बनाने का मन बना बैठे। राजकुमार ने अपने कुछ अनुचरों को आज्ञा देकर उस कन्या के संबंधियों को बुलाया और उस कन्या से अपना ब्याह करने की इच्छा प्रकट की। कन्या के संबंधियों ने खुशी-खुशी राजा

की बात मान ली। कन्या की बड़ी धूमधाम से राजकुमार के साथ शादी हो गई। रानी बनने के बाद कन्या पिछली बातें भूल गई। विवाह के बाद उसने बालकरूपी को याद तक न किया। बस राजसी वैभव में खो गई। कुछ समय बाद रानी, राजा कुछ अन्य परिवार के लोग अपने आप फूल गए। इस रोग को दूर करने के लिए बड़े-बड़े नामी वैद्यों ने अपने नुस्खे आजमाए पर व्यर्थ रोग दिन-ब-दिन बढ़ता ही गया। जब कोई भी उपाय सार्थक न हुआ तो राजपरिवार की चिंता बढ़ गई। एक रात एक छोटी सी कन्या ने रानी को स्वप्न में प्रकट होकर कहा, "रानी तू सब कुछ भूल गई। तू विमाता के उन शब्दों को भूल गई जिसने तुम्हारे जंगल में पशु न ले जाने की बात सुन कहा था कि तू कोई राजकुमारी नहीं है। तुम यह भी भूल गई कि जंगल में बालकरूपी जी से तूने इस काम से मुक्ति दिलाने के लिए मनौती मांगी थीं अब तू महाराज अभय चंद की महारानी बन गई तो सब कुछ भूल गई। तुमने जो मनौती पूरी होने पर भेंट करने की बात भगवान बालकरूपी से की थी, उसे पूरा कर। इतना कहकर वह दिव्य कन्या अदृश्य हो गई। रानी को अपना वचन याद आया। उसने बालकरूपी जी से मनौती मांगी थी कि यदि वह जंगल जाने से बच गई और उसका विवाह किसी राजकुमार से हुआ तो वह तांबे का बैल मंदिर में स्थापित करेगी। रानी को अपना वचन पूरा न करने का दुख हुआ। उसने बालकरूपी से अपनी भूल के लिए क्षमा याचना कर एक तांबे की मूर्ति मंदिर के प्रांगण में स्थापित करवा दी। मूर्ति स्थापना से राजपरिवार के सभी सदस्य रोगमुक्त हो गए।

इस बैल रूपी मूर्ति के उबटन रूप में आटा, थोड़ा देसी घी, हल्दी मिलाकर मलने से दाद, खुजली, चम्बलादि चर्म रोग ठीक हो जाते हैं। बैल के पीछे उसकी पूंछ पकड़े ग्वाले की मूर्ति है। लोग अपने बच्चों की रक्षा के लिए इस ग्वाले को वस्त्र चढ़ाते हैं। श्री बालकरूपी जी से कई अलौकिक घटनाएं जुड़ी हैं। सन् 1866 में जुलाई मास के पहले सोमवार को बालकरूपी की मूर्ति से पसीना बहने लगा जिससे मूर्ति से शृंगार उतर गया। उनकी मूर्ति को चंदन से धोकर पुनः उसका शृंगार किया गया। वहीं एक अन्य चमत्कार हुआ। मंदिर प्रांगण में बैल की मूर्ति से मूत्र बहने लगा। यह मूत्र केसरी रंग की धारा में तीन दिन तक बहता रहा। उस समय असंख्य लोगों ने इस करिश्मे को अपनी आंखों से देखा। लंबाग्राम रियासत के राजा प्रताप सिंह कई गणमान्य व्यक्तियों के साथ यह कौतुक देखने बालकरूपी मंदिर में आए थे। वहां उपस्थित सभी लोगों ने अपनी-अपनी पगड़ियां (उन दिनों सिर पर पगड़ी बांधने का रिवाज था) बैल के केसरी रंग के मूत्र से रंग कर अपने सिर पर बांधी थी। दूसरी बार अगस्त 1911 के माह में इसी नंदीगण ने लाख त्यागी थी जैसे छोटे-छोटे बछड़े मल त्याग करते हैं। लाख (मल) का त्यागना एक माह तक जारी रहा था। यह दूसरी घटना जोगूराम वंश की सातवीं पीढ़ी के पुजारी पंडित मोरध्वज शर्मा ने प्रत्यक्ष देखी थी।

श्री बालकरूपी जी की महिमा दूर-दराज तक फैली हुई है। जिनके घर संतान न हो या कोई मानसिक अथवा शारीरिक रूप से दुखी हो वे बालकरूपी जी की शरण में आते हैं और मनवांछित फल पाते हैं।

बालकरूपी जी के मंदिर के साथ ही श्री कामाख्या देवी का प्राचीन मंदिर है; यहां भी लोग बड़ी श्रद्धा से देवी के दर्शन करते हैं। शिवशक्ति सदा अभिन्न रूप से इस क्षेत्र के लोगों का कल्याण करती हैं। इस कारण श्री जगदंबा कामाख्या देवी की यात्रा भी आवश्यक है।

श्री महाशिवरात्रि के पर्व से ही बालकरूपी जी की होली शुरू हो जाती है। सर्वप्रथम बालकरूपी जी की प्रतिमा के ऊपर केसर, गुलाल और रंग डाला जाता है। उसके बाद मंदिर से यात्रा शुरू होती है और श्री जोगू राम जी की प्रतिमा के ऊपर भी केसर, गुलाल व रंग डाला जाता है। रात्रि के समय बालकरूपी जी का विशेष पूजन होता है। रात्रि जागरण में आस-पास के गांवों से लोग बड़े उत्साह से मंदिर आते हैं। अर्द्धरात्रि के समय आरती होती है। होली तक यूं ही समारोह चलता है। होली दिवस पर भी बालकरूपी जी तथा भक्त जोगू राम की प्रतिमाओं पर केसर, गुलाल व रंग डाला जाता है। उस दिन लोग बालकरूपी, जोगू राम के साथ गुलाल की होली खेलते हैं।

जिला कांगड़ा के प्रमुख शहर पालमपुर से बालकरूपी मंदिर जो बालकरूपी गांव में स्थित है, चालीस किलोमीटर दूर है। पालमपुर-हमीरपुर राज्य मार्ग पर पालमपुर से पैंतीस किलोमीटर दूर जांगल नामक स्थान से एक पक्की सड़क पांच किलोमीटर दूर बालकरूपी मंदिर को छूती है। अधिकांश लोग जांगल से बालकरूपी पैदल सफर करते हैं। पर जो चलने में असमर्थ हैं, उन्हें जांगल से बस, थ्रीव्हीलर मंदिर जाने के लिए मिल जाता है। वर्षभर बालकरूपी मंदिर में श्रद्धालुओं का तांता लगा रहता है। दूर-दूर से लोग अपने बच्चों का यहां मुंडन संस्कार करने आते हैं। बालकरूपी जी की कृपा से यह निर्जन स्थान अब सारा वर्ष श्रद्धालुओं से भरा रहता है। इन्हीं की मेहरबानी से लोगों को रोजगार मिला है और परिवार दो जून रोटी खा रहे हैं। यहां जमा दो तक पाठशाला है, बैंक व पचास दुकानों का बाजार बन गया है। चाय-नाश्ता, प्रसाद के अतिरिक्त यहां विविध प्रकार के सामान की दुकानें हैं। मंदिर में रात्रि विश्राम के लिए धर्मशाला और अन्य सभी सुविधाएं मौजूद हैं।

सिटी लाईट प्रिंटर्ज, पालमपुर, जिला कांगड़ा,
हिमाचल प्रदेश-176 061, दूरभाष : 01894 232565

आलेख

भारतीय संस्कृति में नारी : अतीत से वर्तमान

● शिव सिंह चौहान

मानव सभ्यता के आदिकाल से नारी कुटुम्ब का एक मूल घटक बनी रही है। समाज और वर्गीय समुदाय में उसकी भूमिका पूर्व निर्धारित है। सृष्टि में प्रकृति के उपरांत उसकी भागीदारी को उपेक्षित नहीं किया जा सकता। मनुष्य ही नहीं, सब सचर जीवों की दुनिया में उनकी मादाओं की समुदाय में हिस्सेदारी को स्पष्ट रेखांकित किया जा सकता है। शेर, हाथी और दीगर चौपायों में उनकी मादाओं की परिवार के सौख्य में हिस्सेदारी उनके प्रजातीय स्तर पर बराबर बनी रहती है। पतंगे, भुनगे और परिन्दे भी ऐसी विशेषताओं से वंचित नहीं। इसी तरह परिन्दों का अपना अलग संसार है जिसमें पखेरू मादाओं का उनके जातीय-प्रजातीय परिवेश में महत्त्वपूर्ण योगदान बना रहता है।

इनके बरक्स आदमी एक परिष्कृत समझ और विवेक-बुद्धि को धारण करने वाला जीव है। स्त्री का वुजूद मानव सभ्यता और संस्कृति के आचरण का एक कार्यकारी उपांग है। मानव सभ्यता को प्रकृति और विराट सत्ता का एक नायाब उपहार है वह। स्त्री परम्परागत मानवीय मूल्यों को न केवल सुरक्षित बनाए रखती है अपितु अपनी संतान को वह बेशकीमती संस्कारों से भी पामाल करती है। पुरुष जबकि बाहर के कार्यो और आजीविका की जिम्मेदारियों को वहन करता है। स्त्री आने वाली पीढ़ियों को जन्म देकर उनका सम्पोषण करते हुए समग्र देश-काल में मानव संभावनाओं को सुचारू ढंग से व्यवस्था में बांधकर उसे एक निर्भर करने योग्य कार्य व्यापार में बदल देती है। संसार को उसने हर युग में प्रतिश्रुत नायक और महानायक दिए हैं जिन्होंने समय-समय पर सभ्यता को पतन से बचाया है और आड़े समय में उसे एक आदर्शोन्मुख व्यवस्था से नवाज़ा है।

उपर्युक्त नज़रिए से स्त्री की भूमिका को मानव समाज में एक सामान्य अथवा औसत रुतबा नहीं दिया जा सकता। ऐसे स्वर्ण युग भी आते और जाते रहे हैं जब परिवार एक समुदाय के रूप में नमूदार थे और जहां कबीलाई व्यवस्था मूलतः घर-परिवार की महिला के हाथ में रही। पूर्व वैदिक काल में मातृ-प्रधान व्यवस्था के प्रमाण मिलते हैं। तब परिवार साझे थे, संयुक्त थे और घर की प्रधान महिला का ही एकाधिकार था। इससे पूर्व वनवासी आदिम समाज में भी स्त्री ही प्रमुख कर्ताधर्ता थी। सभी दैनन्दिनीय चर्याओं के सूत्र भी प्रधान स्त्री में ही निहित थे। देवासुर संग्राम और सभ्य आदमी की सत्तात्मक प्रभुता के कारण अन्य युद्धों के वृहद् कालखंड में स्त्री की जातीय सुरक्षा का प्रश्न उठ खड़ा हुआ और तद्नुसार पुरुष ने पूरे समाज के संचालन की बागडोर अपने हाथ में ले ली और इस तरह तत्कालीन समाज में नारी का रुतबा और उसकी प्रतिष्ठा मांद पड़ गई। इस खतरनाक और अप्रिय सामाजिक रूपान्तरण में न केवल अहंकारी क्रूर दानवों अपितु इन्द्र जैसे देवताओं की भी खलनायकीय भूमिका रही। राजसी सत्ता का तथाकथित जनतंत्र और देश चाल भी स्त्री-वर्ग की प्रतिष्ठा के विघटन का कारण बनी। गौतम पत्नी अहल्या से इन्द्र द्वारा किया गया व्यभिचार, रावण द्वारा सीता का अपहरण इसके ज्वलंत उदाहरण हैं। विदर्भ के राजा जनक के दरबार में ज्ञानियों के बीच शास्त्रार्थ करने वाली मेधावी ऋषि पुत्री गार्गी की प्रतिवाद करती ध्वनि तब मंद पड़ गई थी। पुरुष प्रधान समाज के निर्माण के बाद त्रेता और द्वापर की स्त्रियां आक्रांता तत्त्वों का शिकार बन गईं और अंततः वे समय की विपरीत आंधियों द्वारा लज्जित, उपेक्षित और शोषित होती रहीं। एक धोबी के कहने पर सीता निन्दित हुई, उसकी पवित्रता पर सन्देह किया गया और एक धीरे-धीरे पति को जो अपने समय का एक युगन्धर नायक था, उसे अपनी पत्नी का परित्याग करना पड़ा। जिस धीरोदात्त त्रेतायुग के महानायक राम ने अभिशापित अहल्या को शापमुक्ती दी थी और जिसके हृदय में अपने समय की नारियों के लिए स्नेह और आदर भरा था- लोक निन्दा के डर से उन्होंने अपनी एक अनिन्द्य धर्मपरायण पत्नी के परित्याग में देर न लगाई। पता नहीं किस पाप का प्रायश्चित करवाना चाहते थे भगवान राम। स्त्री की विडम्बना का यह एक सनसनीखेज ज्वलंत उदाहरण है। न्याय हार गया और तर्क येन-केन-प्रकारेण जीत ही गया।

रामायण की उत्तर रामचरित मानस-स्थिति मूलतः एक महत्त्वपूर्ण राजसी स्त्री के चरित्र हनन को रेखांकित करती है।

वैदिक नारी की आदर्श छवि खंडित हुई थी। रामायण काल द्विजातीय सभ्यताओं के आंतरिक द्वंद्व को संकेतित करती एक कालजयी घटना है। इस द्वंद्व में जहां एक तरफ असंतुष्ट राक्षस जाति के राजसी लोग हैं, तो दूसरी तरफ वे आगंतुक आर्यावर्त के लोग है जिनकी अपनी एक अलग संस्कृति और एक अलग आचार संहिता थी। एक तरफ था गुरु शुक्राचार्य का दक्षिणात्य कबीला तो दूसरी तरफ था उत्तरी ध्रुव क्षेत्र से आई आर्य जनजातियां जो स्वयं को उच्च वर्गीय और श्रेण्य मानती थीं। ऐसे युद्ध यूनान में भी हुए हैं। 'हेलन ऑफ ट्राय' इसकी एक समुचित ऐतिहासिक मिसाल है। सब जानते हैं कि महाभारत की लड़ाई महज़ भूमि के असमान विभाजन के कारण नहीं हुई थी। महाभारत के चतुरंग (चौसर) में द्रौपदी ही एक अति महत्त्वपूर्ण युद्ध क्रीड़ा का मोहरा बनी थी।

महाभारत काल में भी तत्कालीन समय की नारी पुरुष के खलनायकत्व और एकाधिकार का उपकरण बनी हुई थी। उस युग के महानायक कृष्ण ने ऐसी ही शोषित की गई सोलह सौ स्त्रियों को दुष्ट जरासंध की कैद से मुक्त कराया और उन्हें अपनी नवस्थापित राजधानी द्वारिका में पुनर्स्थापित किया था। द्वापर के अंत तक स्त्री की प्रतिष्ठा अधिकांशतः समाप्तप्राय नज़र आती है। वैश्विक व्यवस्था में उसकी प्रतिष्ठा आदरयोग्य थी जबकि चर्चित युग के अंत तक पहुंचते पहुंचते मानव-सभ्यता की यह मूल्यवान मानवीय धरोहर उसकी आदर्श छवि पूरी तरह जर्जर और खंडित हो चुकी थी। और तब, उसके बाद, उसका साधारणीकरण हुआ और वह एक सामान्य सी सामाजिक एकक बन कर रह गई। समय के गलियारे में स्त्री की प्रतिष्ठा और उसके रुतवे का उतार-चढ़ाव एक निरंतर चलती हुई दिलचस्प ऐतिहासिक-सामाजिक प्रक्रिया है जिस पर हम आगामी सन्दर्भो में परिचर्चा करेंगे।

समकालीन कालखंड में समीप वर्तमान और तत्कालिक वर्तमान में आज हम नारी के अनेकानेक वर्गीय रूपों को रेखांकित कर सकते हैं। प्रमुखतः इनमें शासनाध्यक्ष, शिक्षाविद्, वैज्ञानिक, राजनीतिज्ञों और दीगर प्रौद्योगिकीविद् तथा बहुधा व्यावसायिक श्रेणियां हम चिन्हित कर सकते हैं क्योंकि वर्तमान युग एक जनवादी वर्गीय युग है जिसमें आधुनिक स्त्री की भूमिकाएं विशद् हैं।

यदि पौराणिक साहित्य और देवताओं से सम्बन्धित कथाओं का अनुगमन किया जाए तो देवताओं का राजा इन्द्र एक विलासी और आमोद-प्रमोद चाहने वाला व्यक्ति रहा होगा। प्रासंगिक कथाओं में उसका महल और उसका दरबार सभी राजसी उपादानों से लैस नज़र आता है। वहां अप्सराओं की एक दीर्घा भी दिखाई देती है। वे सब नृत्यांगनाएं हैं। इन्द्र सभा को अलौकिक सौंदर्य से परिपूरित करती हुई। अर्थात् स्वर्ग के देवतागण भी घरेलू स्त्री और पोषित पतिकाओं में भेंद करते थे। इन्द्र अकसर उनका इस्तेमाल कामिनियों के रूप में करते थे ताकि अध्यात्मक में डूबे ऋषियों की तपस्या को भंग किया जा सके और स्वर्ग में अपने सिंहासन को सुरक्षित रखा जा सके। इसके अलावा विष-कन्याओं और सुरा-सुंदरियों का ज़िक्र भी चर्चित साहित्य में प्रचुरता से उपलब्ध होता है। गुप्तचर व्यवस्था को चालने वाली ये मायावी शक्तियां एक ऐसी श्रेणी की स्त्रियों की ओर इशारा करती हैं जिन्हें व्यवस्था ने खरीदा हो। वे सब राजसी सत्ता के सक्रिय पुर्जे से हैं जो शासकीय सत्ता को दुर्भेद्य बनाने में सहायक रही हैं। उत्तर मध्यकाल और पूर्व-वर्तमान काल में यही स्त्रियां रसिक लोक में मानसिक और शारीरिक आनंद का स्रोत रही हैं।

गुप्त काल की नगरवधुएं भी राजसी और श्रेष्ठी वर्ग को समय-समय पर आह्लाद प्रदान करती रही हैं। उनका संस्थानगत रूप से ज्यादा शहरी और कस्बाती रुचि का संवर्द्धन करती रही है। तुर्क, पठान और मुगलिया युगों में इसने एक यौन व्यवसाय का बाज़ारू रूप ग्रहण किया जो स्त्री वर्ग के यौन शोषण और उसे एक काम-कर्मी के रूप में प्रस्तुत करता है। इस तरह की स्त्री मंडी और बाज़ार व्यवस्था जहां एक ओर स्त्री की नैतिक गिरावट को अंकित करती है, वहीं पूरे पुरुष समाज के नैतिक विघटन और पतन को भी प्रचुरता से साथ छायांकित करती है।

समकालीन कालखंड में समीप वर्तमान और तात्कालिक वर्तमान में आज हम नारी के अनेकानेक वर्गीय रूपों को रेखांकित कर सकते हैं। प्रमुखतः इनमें शासनाध्यक्ष, शिक्षाविद्, वैज्ञानिक, राजनीतिज्ञों और दीगर प्रौद्योगिकीविद् तथा बहुधा व्यावसायिक श्रेणियां हम चिन्हित कर सकते हैं क्योंकि वर्तमान युग एक जनवादी वर्गीय युग है जिसमें आधुनिक स्त्री की भूमिकाएं विशद् हैं।

महाभारत का युद्ध समाप्त होने और महानायक भगवान कृष्ण के अवसान के बाद भारतीय इतिहास एक अंधे युग में परिवर्तित हुआ। पौराणिक मूल्यों का क्षय होता रहा जिसका असर भारतीय महाद्वीप के निवासियों पर भी पड़ा। मनु की वर्णाश्रम व्यवस्था पूरी तरह खंडित हो चुकी थी और उसके स्थान पर जातीयता की कट्टरता अपनी जगह बना रही थी जिसने पूरी सामाजिक व्यवस्था को खंड-खंड कर दिया। स्त्रियों में भी रूढ़िवाद और अंधआस्था ने अपना स्थान बना लिया। ब्राह्मणवाद का पाखंड भी जनलोक में अपना प्रभाव छोड़ता रहा जिसका प्रतिहार बुद्ध और महावीर द्वारा प्रवर्तित धर्मो द्वारा किया गया। जैनियों में समाज के वे वर्ग आए जो त्रिजातीय द्विजों से बाहर थे। बौद्ध और जैन धर्मों ने एक नए अवतारवाद ने आम और श्रेष्ठी जनों में

अपनी पैठ बना ली। कुछेक शताब्दियों तक परिवर्तन का क्रम चलता रहा। उधर जनलोक में भी ग्राम्य की जगह नगरी सभ्यता को लोकप्रियता प्राप्त हुई। लेकिन उत्तर महाकाल में शंकराचार्य के आगमन से हिंदू वर्ण व्यवस्था अपने एक नवीन रूप में उभरकर सामने आई जिसने वर्णगत समाज को अपनी परम्परा को एक नए सिरे से आगे आने का अवसर प्रदान किया। जैन धर्म कुछेक जाति-वर्गीय समुदायों तक ही सीमित बना रहा और बौद्ध धर्म देश की संस्कृति में अपनी प्रभुता कायम नहीं कर सका। इन नए दो सम्प्रदायों का उत्तरोत्तर विभाजन भी हुआ। जैन मतावलम्बी श्वेताम्बर, दिगम्बर और बौद्ध हीनयान और महायान में बंट चुके थे। बुद्ध महायान की माध्यमिक शिक्षाओं को लेकर आए थे जबकि हिंदुओं के तंत्र सिद्धांत भी कालांतर में इसमें शामिल हो गए।

इन बातों का प्रभाव नए उदित हो रहे महिला-समाज पर भी पड़ा। वह भी अलग-अलग वर्गों में विभाजित हो रही थी। जातीय कट्टरता से प्रपीड़ित आम स्त्री समाज और दलित समार्जन संत और भक्ति मतों की भी राह पकड़ी और इस तरह समाज की पूरी संरचना में ही अभूतपूर्व बदलाव आता गया। मगर इन परिवर्तनों के बावजूद इतिहास के दबावों से प्रभावित आम स्त्रियों ने अपनी आस्तिकता और परम्परा को नहीं छोड़ा। बेशक जब उनके जनलोक में वह नए बदलावों और लोक संस्कृति को अपनाती रही थी।

पूर्वोत्तर काल में समय-समय पर यूनानी, तुर्क, मंगोल आदि आक्रांताओं ने भी धर्म संकुल हिंदू समाज को पर्याप्त प्रभावित किया। इससे धीरे-धीरे सोच-विचार, आचार-व्यवहार और रहन-सहन में भी परिवर्तन आता जा रहा था। प्राचीन भारतीय संस्कृति अब रूढ़ और असहिष्णु होती जा रही थी। अतः इन प्रभावों ने भारतीय नारी वर्ग में भी सांस्कृतिक पेचीदगियों को साथ लाया। सुदूर दक्षिणात्य व्यक्तियों ने यद्यपि प्राचीन भारतीय श्रेण्य तत्त्वों को उसकी निरंतरता में अवश्य ही महफ़ूज़ रखा। पुरा-भारतीय जातीय संस्कृति के मूल्यों को सुरक्षित रखने में दक्षिण भारत के स्त्री समाज का भरपूर योगदान रहा है। यह बात वहां के नृत्य, संगीत और लोकोत्तर क्लासिकी कलाओं में आज भी महफ़ूज़ देखी जा सकती है। उत्तरवर्ती क्षेत्रों में यद्यपि बाह्य एवं आंतरिक प्रभावों के कारण वहां के स्त्री समाज में व्यापक रूपांतरण नज़र आता है। इन क्षेत्रों की परम्पराएं विशुद्ध रूप से लोक परम्पराएं हैं- अलग-अलग ग्राम्य और अर्धनगरीय क्षेत्रों के लिए अलग-अलग जिसके तत्त्व उस जनलोक में आज भी देखे जा सकते हैं।

मुगलों के समय में स्त्री को अपनी शुचिता और नैतिकता बनाए रखने के लिए पर्दे और घूंघट का रिवाज़ भी प्रचलित रहा, पर अंगरेजों के आने के बाद उसमें कुछ ढील अवश्य ही आ गई थी। और अब तो ये पर्देदारियां और झरोखे से चुपके-चुपके झांकने वाली व्यावहारिक संस्कृति अब पूरी तरह नष्ट हुई नज़र आती है। नई शिक्षा और नई-नई सोच में नई भारतीय तहज़ीब पर ऐतिहासिक समय के अंतरालों के मध्य दूसरी संस्कृति के प्रभाव भी कमोबेश बने रहे हैं। सिकंदर और उसके सेना अधिकारियों की आमद के कालखंड में भी ये प्रभाव देखे जा सकते हैं। वह मौर्यों और तत्कालीन राजनय के महारथी चाणक्य का समय था जिसे चंद्रगुप्त, बिदुंसार और अशोक जैसे प्रियदर्शी सम्राटों और उनके प्रजा जनों ने भी महसूस किया था। उस समय की समर नीति, कला व स्थापत्य में इसे असरंदाज देखा जा सकता है। तत्कालीन महिला समाज में भी ये क्रॉस कल्चर इन्फ्लूएन्स इतिहास की पर्तों में ढूंढने पर अवश्य ही मिल जाएंगे।

मुगलिया शासन काल में पर्शियन कला, सौंदर्य बोध और स्थापत्य सम्बंधी साज-सज्जा प्रभावी हुई। मुगलिया रहन-सहन, पहनावा और पाकशास्त्र भी भारतीय रसोई घरों और मेहमान नवाज़ी के समारोहों पर दर्शनीय है। इसे अवशेष के रूप में आज भी हम अपने दस्तरखानों में परिलक्षित कर सकते हैं। भारतीय पारम्परिक लोक संगीत में भी हम इन प्रभावों को देख सकते हैं। तुर्की कालखंड में अमीर खुसरो की सूफियाना रंगत महिला शैली गीतों में बराबर देखने को मिलती है। इस्लामिक क्षेत्रों के लोग यहां की लोक कला, रीति-रिवाज और समाज शास्त्र से पूरी तरह प्रभावित थे जिसका पर्यवेक्षण मुस्लिम सूफियाना प्रचारकों ने एक समन्वित संस्कृति के निर्माण के रूप में किया था। वे खूबियां मुस्लिम राजसी हरमों और अमीरी जनानखानों से भारतीय नारी संसार में पहुंची थी और प्रत्युत्तर में पारम्परिक विनिमय के स्तर पर सांस्कृतिक अदारों तक अपनाई जाती रही। अकबर, जहांगीर और शाहजहां के शासनकाल में समन्वित संस्कृति का जो रूप बना, उसमें दोनों की घरेलू संस्कृति का मिला-जुला रूप देखने को मिलता है। पुरुषों के अलावा स्त्री वर्ग ने भी इस सांस्कृतिक सामाजिक प्रक्रिया में वैकल्पिक और अनुपूरक स्तर पर भूमिका-प्रतिभूमिका निभाई, इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता। यद्यपि सम्राट औरंगजेब की कट्टर साम्प्रदायिक गतिविधियों के कारण परस्पर सांस्कृतिक आदान-प्रदान का यह व्यवहार कहीं मंद पड़ गया था फिर भी इसकी भूमिगत अंतर्धारा से इनकार नहीं किया जा सकता। मुगल पहरावे और व्यवहार पर राजस्थान का आंशिक प्रभाव भी उस समय के परशियन लोक में कायांतरित देखने को ऐतिहासिक संग्रहागारों में अवशेष के रूप में देखने में आता है जिसका इतिहासकारों और कला समीक्षकों ने विस्तृत अध्ययन किया है।

मुगलिया रजवाड़ाशाही के उपरांत यूरोपीय संस्कृति के देशांतर प्रभाव भी ब्रिटिश शासनकाल के समय के हम आज स्पष्ट चिन्हित कर सकते हैं। मगर यह एक आशास्पद बात है कि भारत मूल के महिला वर्ग ने अपने परम्परागत सांस्कृतिक रूपों को कभी

एकांगी व्यवहार नहीं दिया अपितु परात्मिक यूरोपीय प्रभावों को पूरे तार्किक ढंग से अपनी जीवनचर्या में समोया है। अर्थात् सलवार- कमीज और पुराने आभूषणों को भी नए-नए डिजाइनों में घड़वा कर शालीनता के साथ अपनाया।

भारतीय महिलाएं आज बहुरंगी देशिक संस्कृति का एक अनुपम उदाहरण हैं। उनमें आपको उनकी मूल पहचान के साथ-साथ कमोबेश अन्य क्रॉस संस्कृतियों के बहुधा रंग-शेड देखने को मिलते हैं। उसका दृष्टिकोण अब अधिकांश तआस्सुबी और संप्रदायवादी नहीं रहा। उसने अपने आध्यात्मिक जातीय अंतरर्जातीय मूल्यों के साथ-साथ यथाशक्ति समानुपात रीति से अन्य संस्कृतियों के प्रवासी मूल्य को भी समुचित ढंग से ग्रहण किया है। सीता, अनुसूया और गार्गी के आनुवांशिक मूल से उठी हुई ये महिलाएं आज देशांतर सराहना की पात्र भी हैं। मगर साथ ही यह बड़ी चिंता की बात है कि हमारी बहुत-सी बहनें और माताएं शिक्षा और भौतिक विकास में आज भी पिछड़ी हुई हैं। अतः समसामयिक शासन का यह दायित्व है कि वह उनके समग्र विकास और कल्याण के लिए योजनाबद्ध रूप से कार्य करे। देश की लगभग एक तिहाई नारी आबादी अपने भौतिक अंधेरों और दुश्वारियों से मुक्त नहीं हुई है। उनके लिए पारिवारिक और वर्गीय स्तर पर रचनात्मक कार्य होने चाहिए ताकि आने वाले वर्षों में तेज़ी से उनका सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक उत्थान किया जा सके और उन्हें देश के लोक जीवन की मुख्यधारा में शामिल किया जा सके। जातीय विषमता दूर हो तभी हम राष्ट्रीय स्तर के प्रजातंत्र को सुदृढ़ और अक्षुण्ण बना सकेंगे।

भारतीय महिलाएं आज बहुरंगी देशिक संस्कृति का एक अनुपम उदाहरण हैं। उनमें आपको उनकी मूल पहचान के साथ- साथ कमोबेश अन्य क्रॉस संस्कृतियों के बहुधा रंग-शेड देखने को मिलते हैं। उसका दृष्टिकोण अब अधिकांश तआस्सुबी और संप्रदायवादी नहीं रहा। उसने अपने आध्यात्मिक जातीय अंतर्जातीय मूल्यों के साथ-साथ यथाशक्ति समानुपात रीति से अन्य संस्कृतियों के प्रवासी मूल्य को भी समुचित ढंग से ग्रहण किया है।

यह एक बड़ी चिंता का विषय है कि स्त्रियों के प्रति अपराधों में भी इन दिनों अभूतपूर्व इजाफ़ा हुआ है। सामूहिक बलात्कार और हत्याएं रोज़-ब-रोज़ घटित हो रही हैं। इस पर भी पुलिस का आरक्षी शिकंजा और कानून की गिरफ्त भी मज़बूत होनी चाहिए। महज़ मीडिया में इन घटनाओं का प्रचार-प्रसार काफी नहीं है। मुझे मालूम नहीं शासक वर्ग, प्रशासनिक अधिकारी, सिक्योरिटी स्टाफ और स्वयं एनजीओ संगठन इसके अवरोध और नियंत्रण के लिए क्या कर रहे हैं। चिंता इस बात की है कि अपराधकर्ताओं में न केवल प्रोफेशनल अपराधी बल्कि युवा और नाबालिग आयु के लड़के भी इन जघन्य अपराधों के बाइस बनते जा रहे हैं। इन अपराधों पर कड़ी रोक लगनी चाहिए और इनके पक्ष में राष्ट्रीय स्तर पर अभियान भी चलाए जाएं तो बेहतर होगा।

ई-मीडिया की तसवीरों और फिल्मी दुनिया की कारकर्दगी के ज़रिए समाज के युवाओं के लिए भी एक ऐसा कल्चर परोसा जा रहा है जिसने हमारे परम्परागत स्वस्थ सामजिक मूल्यों को नुकसान पहुंचाया है। इसका विरोध आवश्यकता अनुसार न केवल एनजीओज़ करें अपितु सरकार द्वारा स्थापित सेंसर और कानून भी इस ओर ध्यान दे। प्रजातंत्र और समाजवादी माहौल में रहने-जीने का मतलब यह हरगिज़ नहीं कि मीडिया और सिनेमा और फैशन शोज़ नैतिक बातों का खयाल न रखते हुए बेबाक बने रहें।

ऐसे सकारात्मक उपायों को व्यापक सामाजिक स्तर पर फरोग दिया जाना चाहिए तभी हम एक गतिशील और प्रगतिशील राष्ट्रीय समाजवाद के लक्ष्य को प्राप्त कर सकेंगे।

कुछ संस्थाएं इस संदर्भ में एक व्यापक सामाजिक स्तर पर इस महान लक्ष्य की प्राप्ति के लिए आगे आई हैं।

नंदी ग्राम, सुबाथू रोड, धर्मपुर,
जिला सोलन, हिमाचल प्रदेश-173 209

हिमप्रस्थ में ऊना जिला विशेषांक

'हिमप्रस्थ' मासिक पत्रिका में शीघ्र ही ऊना जिला विशेषांक प्रकाशित किया जा रहा है। अंक में विशेष रूप से ऊना जिला का इतिहास, सामाजिक-आर्थिक व राजनीतिक महत्त्व, देव संस्कृति, मेले व त्योहार, लोक साहित्य एवं संस्कृति, पर्यटन, ऐतिहासिक एवं पौराणिक धार्मिक स्थल तथा विकास इत्यादि पर सामग्री प्रकाशित की जाएगी। इस अंक के लिए आपका सहयोग अपेक्षित है। विस्तृत जानकारी के लिए गिरिराज/हिमप्रस्थ कार्यालय में सम्पर्क करें।

- वरिष्ठ सम्पादक

आलेख

शब्दों की दुनिया से जूझती समकालीन हिंदी कविता

● डॉ. सत्यनारायण स्नेही

वे शब्द जो मुझे दादा से मिले
उन में से कुछ सुरक्षित हैं आज भी मेरे पास
शब्द जो मुझे मेरी मां से मिले
मैं भूल चुका हूं सारे के सारे
वे शब्द जो सीखे मैंने पाठशाला में
सबके सब बो दिये रोटी के लिए
वे शब्द जिन्होंने आज गिरफ्तार कर लिया है मुझे
वे शब्द न मेरी मां के हैं
न मेरी पाठशाला के
मैं डरता हूं जिन से बार-बार
मेरा बच्चा खेल रहा है उनसे
लगातार

भाषा का महत्त्वपूर्ण उपकरण है शब्द। शब्दों द्वारा ही भाषा परिपूर्ण होती है, शब्दों के बिना कविता का कोई अस्तित्व नहीं होता है। भाषा में शब्द किसी-न-किसी अर्थ एवं अवधारणा के प्रतीक होते हैं। ये अर्थ अधिकांशतः समाज स्वीकृति होते हैं। आज वैश्वीकरण के दौर में बाजारवादी नीतियों के तहत शब्द अपने मूल अर्थ से विलग होने लगते हैं। समकालीन कविता में शब्द और उसके प्रयोग से निमित भाषा और बदलती अर्थ छवियों को बेहद संजीदगी के साथ व्यक्त किया गया है। समकालीन कवि अपनी चिंता व्यक्त करता है कि जो संस्कार पूर्वजों से मिले, हमने अपनी पीढ़ी में कुछ एक सजोंये, जिससे हम जीवन की वास्तविकता को समझ पाये हमने ऐसी शिक्षा प्राप्त की है जिससे हम अपना और परिवार का भरण पोषण कर पाये लेकिन सूचना प्रोद्योगिकी एंव टैक्नोलोजी के इस युग में ये तंत्र जिस तरह से हमारे ऊपर हावी हो चुका है और आने वाली पीढ़ी की जो शिक्षा व्यवस्था है, उसमें न संस्कार होंगे न मानवीय मूल्य और न ही मनुष्य जीवन के सलीके।

वास्तव में इस देश में जब भी किसी बच्चे की औपचारिक शिक्षा प्रारम्भ की जाती है तो पहले वर्णमाला उसके बाद शब्द और भाषा सीखाई जाती है। भाषा द्वारा ही समग्र अवधारणाओं की अनुभूति एवं अभिव्यक्ति होती है। हमारी शिक्षा एवं संस्कारों का आधार भी भाषा है। भाषा के द्वारा ही हम जन्म से मृत्यु पर्यन्त रोते है हंसते हैं, बतियाते हैं। सुख और दुख को साझा करते है। भाषा ही ऐसा माध्यम है जो हमें एक दूसरे को अपना होने का एहसास करवा सकता है। इसी के द्वारा पीढ़ियों में परम्पराएं एवं संस्कार जीवित रहते हैं। लेकिन आज की व्यवस्था में अर्थतन्त्र हावी है। मनुष्य के प्रतिस्पर्धा के स्थान पर ईर्ष्या बढ़ गई है। हम आने वाली पीढ़ी को सिर्फ पैसे कमाने वाली मशीन बनाना चाहते हैं। पहले शिक्षा एक अच्छे नागरिक बनाने के लिए दी जाती है पढ़ा लिखा व्यक्ति अथवा समाज सबसे प्रबुद्ध विवेकशील एवं संवेदनशील होता था वहीं सभ्य एवं सुसंस्कृत होता था लेकिन आज की विकसित एवं परिवर्तित व्यवस्था में ऐसा नहीं है। आज हम वह पढ़ा रहे है जिसमें टैक्नोलॉजी है, कम्पयूटर, मोबाइल, ने चिंतनशीलता के स्थान पर तनाव और दबाव बढ़ा दिया है। आज का शिक्षित व्यक्ति बौद्धिक स्तर पर विकसित नहीं होता। अपितु उसे तकनीकी स्तर पर विकसित होने की आवश्यकता है। उसे शब्दों के अर्थ गाम्भीरय स्थान पर सिर्फ प्रयोग को जानना है और वह भी वही शब्द सीखेगा जिसका उपयोग उसके नवसृजित कार्य व्यवसाय में होगा। उसकी भाषा भी तदनुरूप प्रयुक्त होती है। इस नवीन आयातित शिक्षा पद्धति में न संस्कारों के शब्द है, न भाषा, न ही अवधारणा। यहां मनुष्य जीवन के मायने बदल जाते हैं। संवेदना, सहानुभूति आत्मीयता, जज्बात नैतिकता, हमदर्दी जैसे शब्द इस शिक्षा व्यवस्था में कहीं पर नहीं है, दादा से जो शब्द मिलते है वह महज प्रयोग के लिए नहीं होते, उसमें जीवन की दशा एवं दिशा निर्दिष्ट होती है। माता-पिता उन्हीं संस्कारों से अपने बाल-बच्चों का भरण-पोषण करते हैं। मातृ वात्सल्य से ही रिश्तों की बुनियाद रखी जाती है। यहीं से आत्मीयता का अहसास शुरू होता है। जिन्हें हम आयातित शब्दों एवं आरोपित भाषा द्वारा खण्डित कर रहे हैं।

बेटा, वह मेरे हंसने की रोने की भाषा है
जागने की, सोने की भाषा है

मैंने तुम्हारी जेबों में बिजूका के पैरों वाली
जो भाषा भर दी है
वह डराने धमकाने की चीज है
तुम्हारे सपनों की भाषा नहीं [2]

इंटरनेट के इस युग में बच्चों से बचपन छीन लिया है। न माता पिता के पास कथा-कहानी सुनाने का समय है और न ही बच्चों के पास सुनने का। इंटरनेट से उन्हें पूरी दुनिया की जानकारी प्राप्त हो रही हैं। प्रत्येक प्रश्न के समाधान मिल रहे हैं समग्र जीवन के मूल प्रश्नों का समाधान इस शिक्षा एवं भाषा में नहीं है-

ऐसे समय में जब तमाम स्कूल पढ़ा रहे हैं
तराजू की वर्णमाला
फिर कौन याद करेगा नीम का पेड़
कौन पूछेगा गाँव किधर है बापू [3]

आज वह भाषा खत्म हो रही है जिससे रिश्तों की महक आती है जिसमें सुख दुःख की अनुभूति होती है। संचार के इस युग में समग्र तकनीक अंग्रेजी आधारित है इसलिए हमारी समूची शिक्षा का आधार तकनीकी रूप से सक्षम बनाने का है। ये तभी सम्भव हो सकता है यदि हमारी अंग्रेजी मजबूत होगी। इससे हम वैश्विक संदर्भ को समझ सकते है समृद्ध और सम्पन्न हो सकते है। कम्पयूटर और समूचे तन्त्र को जान सकते है। परन्तु अपने मूल उत्स, और अस्मिता की पहचान नहीं हो सकती। सूचना तंत्र की गिरफ्त में आया व्यक्ति अपनी असलियत को नहीं जान पाता है।
-

दादी नहीं जानती
किले और कलम की भाषा के बीच से आदमी
जब लौटता है गांव की ओर
वह भूल जाता है पूरी तरह
हल और हेंगे की भाषा
उसके पास होती है डरावने सपनों की एलबम
देश-विदेश के खोटे सिक्के
जिनसे नहीं खरीदे जा सकते सुन्दर सपने [4]

समकालीन हिन्दी कविता में अलग-अलग दृष्टिकोण से इस सत्य को उद्घाटित किया है कि आज लोगों के जीवन में जो बदलाव आ रहा हैं अपने को आधुनिक सभ्य, सम्पन्न बनने की होड़ में सबसे पहले भाषा में परिवर्तन परिलक्षित होता है उसके बाद चाल-चलन रीति-रिवाज, वेश-भूषा में बदलाव आ रहा है। विकास एवं परिवर्तन की इस प्रक्रिया में भारत की ही नहीं संसार की अनेक भाषाएं अपना अस्तित्व खो रही है। 'एटलस ऑफ वर्ल्ड लैंग्वेजेज, हेड लैंग्वेजेज, रेड बुक आदि पुस्तकों के आधार पर कहा जा सकता है कि उतरी अमेरिका के कनाडा और यूनाइटेड स्टेट्स में सौ साल पहले रेड इंडियन और एस्किमों की भाषाओं के साथ कुछ 187 भाषाएं थी, उनमें से 38 भाषाओं के बचने की खबर चिंतित करने वाली है। अलास्का में 20 भाषाएं थी 10 बची हैं। इसी तरह आस्ट्रेलिया के आदिवासियों की भाषाएं हर रोज मर रही है। वहां 300 में से 65 भाषाएं किसी तरह अपनी सांसे चला रही है। कोई जानता है कि क्या इंग्लैण्ड में भी कई भाषाएं थी जिनमें आज केवल अंग्रेजी बची है। 5 अंग्रेजी भाषा अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रसारित हो रही है। परन्तु कई भाषाएं विलुप्त हो गई है कई विलुप्ति के कगार पर है। भाषा विलुप्ति और भाषा विकृति के वैसे तो कई कारण हो सकते है। पर आज के संदर्भ में भूमंडलीकरण और उपभोक्तावादी संस्कृति के मध्य जीवन स्तर को बेहतर करने की ख्वाहिश में लागों द्वारा मूल स्थान का त्याग, गाँव से बाहर की तरफ पलायन, व्यावसायिक शिक्षा की ओर अत्यधिक झुकाव से भाषाओं के अस्तित्व पर संकट पैदा हुआ है।

आज अंग्रेजी का वर्चस्व पूरी दुनिया में है। अंग्रेजी अतंर्राष्ट्रीय स्तर की भाषा है। कम्पयूटर, मोबाइल और इंटरनेट ऐसे संचार माध्यम है जिनमें अंग्रेजी का वर्चस्व है। तो अंतर्राष्ट्रीय बाजार और संचार माध्यम के जरिये अंग्रेजी विश्व के कोने-कोने में पहुंच गई है। अन्तर्राष्ट्रीय बाजार और संचार क्रांति के बढ़ते दायरे के कारण अंग्रेजी वर्चस्व की भाषा बन गई है। अंग्रेजी आज की युवा पीढ़ी की अनिवार्य भाषा होने के साथ-साथ पहली भाषा की पंसद बनती जा रही है। कारण यह है कि इस युवा पीढ़ी को बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के प्रलोभन अन्तर्राष्ट्रीय बाजार के आकर्षक और हमारी तदनुरूप शिक्षा पद्धति। हमारा देश बहुभाषिक चारित्र वाला है। ऐसी स्थिति में जो भाषा पनप रही है, वह अंग्रेजी और भारतीय भाषाओं के मेल से उत्पन्न खिचड़ी भाषा है। जैसे, आज हिन्दी और अंग्रेजी के सम्मिश्रण से जो नयी भाषा कॉन्वेंट-शिक्षित युवा-पीढ़ी के बीच लोक-प्रिय हो उठी है, जिसे सुविधा के लिए 'हिग्लिश' भी कहा जाता है। ऐसे में लोक-भाषाएं, जन भाषाएं, मातृभाषाएं विनष्टि की स्थिति में है।

भाषा महज सूचनाओं का माध्यम भर नहीं हैं। वह मनुष्य और मनुष्यता की पहचान है। भाषा के लुप्त होने की पीड़ा झेलता कवि कहता है कि आज भी अनेक जानकारियां दूसरी भाषाओं में मौजूद है। अपनी भाषा एवं शब्दावली उतनी समृद्ध नहीं जितनी दूसरी भाषा है-

हम स्वप्न को डरे हुए देखते हैं टूटते उल्का पिंडों की तरह
उस भाषा के अन्तरिक्ष से
लुप्त होते चले जाते हैं एक एक कर सारे नक्षत्र
भाषा जिसमें सिर्फ़ कूल्हे मटकाने और स्त्रियों को
अपनी छाती हिलाने की छूट है
जिसमें दंडनीय है विज्ञान और अर्थशास्त्र और शासन से
सम्बन्धित विमर्श
प्रतिबन्धित हैं जिसमें ज्ञान और सूचना की प्रणालियां वर्जित हैं विचार[6]

कोई भी भाषा सीखना बुरा नहीं है, बुरा है तो अपनी भाषा की उपेक्षा कर बाजारवाद और आधुनिकता की चकाचौंध में पड़कर अपनी सांस्कृतिक और भाषायी पहचान को खो देना। क्योंकि इसी पर किसी देश की अस्मिता निर्भर करती है। समाज के इस बदलते परिदृश्य में समकालीन कवि अपनी भाषा की अवहेलना करने वालों को सचेत करता हुआ कहता है -

एक भाषा है जिसे बोलते वैज्ञानिक और समाजविद्
और तीसरे दर्जे के जोकर
और हमारे समय की सम्मानित वेश्याएं और क्रांतिकारी शरमाते हैं जिसके व्याकरण और हिज्जों की भयावह भूलें ही
कुल शील, वर्ग और नस्ल की श्रेष्ठता प्रमाणित करती हैं[7]

अपने जीने-मरने, रोने-हंसने, सुख-दुःख की अभिव्यक्ति की भाषा की स्थिति को बयान करती है यें पंक्तियां-

अपनी देह और आत्मा के घावों को और तो और
अपने बच्चों और पत्नी तक से छुपाता
राजधानी में कोई कवि जिस भाषा के अन्धकार में
दिनभर के अपमान और थोड़े से आचार के साथ
खाता है पिछले रोज की बची हुई रोटियां
और मृत्यु के बाद परिश्रमिक भेजने वाले किसी राष्ट्रीय अखबार या मुनाफाखोर प्रकाशक के लिए
तैयार करता है एक और पांडुलिपि[8]

समकालीन कवि जैसे विलुप्त होते पेड़-पौधों और पशु पक्षियों की प्रजातियों को बचाने का पक्षधर है, उसी तरह विलुप्त होती बोलियों, भाषाओं को बचाने का पक्षधर है। बहुभाषी समाज वाले राष्ट्र के हित में यही है। समकालीन कवि जब देखता है कि भाषाओं का अपना स्वभाव तिरोहित होता जा रहा है, संचार माध्यम की प्रमुख भाषा अंग्रेजी में, भाषाओं के शाब्दिक अर्थ उतरते जा रहे हों बाजार में, भाषाओं की प्रतीकात्मकता समाती जा रही हो विज्ञापन की खोल में तो कवि चुप नहीं रह पाता। कात्यायनी की वाणी अभिशाप बन कर फूट पड़ती है- वे जो भाषा को बदलकर, शब्दों को मनमाने अर्थ देकर हमसे चीजों की पहचान छीनने की कोशिश कर रहे है, इतिहास उन्हें भीषण शाप देगा।[9] इसी प्रकार निर्मला पुलुत ने 'मेरा सब कुछ अप्रिय है उनकी नजर में' कविता में अपनी भाषा के विलोपन का डर और तथाकथित श्रेष्ठता का उल्लेख है-

मजाक उड़ाते हैं हमारी भाषा का
हमारे चाल-चलन रीति-रिवाज
कुछ भी पंसद नहीं उन्हें
पसंद नहीं है, हमारा पहनावा-ओढ़ावा[10]

कवयित्री के मत में स्थिति ऐसे बन गई है कि हमें यदि सभ्य बनना है तो उनकी भाषा को सीखना होगा, उन्हीं की तरह बतियाना होगा। उनकी भाषा से अभिप्राय अंग्रेजी भाषा एवं अंग्रेजियत से है जिसमें हमारा रहन-सहन, मान-मर्यादाएं, रीत-रस्म, परम्पराएं मान्यताएं और वेश-भूषा अपना न होकर पाश्चात्य प्रभावित हो उनका ये कवितांश द्रष्टव्य है-

सभ्य होने के लिए जरूरी है उनकी भाषा सीखना
उनकी तरह बोलना-बतियाना
उठना-बैठना
जरूरी है सभ्य होने के लिए उनकी तरह पहनना-ओढ़ना[11]

आज जिस तरह से सभ्यता के प्रतिमान बदले हैं इससे तो यही प्रतीत होता है कि आने वाले समय में न हमारी ये भाषा रहेगी और नहीं हमारी परम्पराएं बचेगी। वह भाषा जिसमें हमारे जीवन की धड़कनें विद्यमान है हमारी रीत-रस्म एवं मान्यताएं जिसमें हमारी अस्मिता और पहचान है। सभ्यता की बदली प्राथमिकताओं में ये सब बदल रहा है। भाषा ही वह माध्यम है जो एक आदमी को दूसरे आदमी के साथ जोड़ता है। इसी के माध्यम से एक पीढ़ी के संस्कार दूसरी पीढ़ी के लिए सुरक्षित रहते हैं। भाषा की इस उपेक्षा से पिछली पीढ़ी के साथ सम्पर्क खत्म हो जाएगा। जिसमें जीवन की मार्मिक अनुभूतियां, संवेदनाएं, और जज्बात है वो शब्द और भाषा भी खत्म हो जाएगी।

समकालीन कविता युग और समय की समस्याओं को विशेष रूप से रेखांकित करती है। वर्तमान समय के संदर्भ में भाषा के स्वरूप और उसकी स्थिति पर समकालीन कविता में विचार व्यक्त किया गया है क्योंकि समकालीन कवि इसे आज एक नैतिक दायित्व के रूप में समझा रहे हैं। इसलिए कवियों ने समग्र सामाजिक विकृतियों पर बेबाकी से प्रहार किया है।

आज की आवश्यताओं को पूरा करने और जीवन स्तर को ऊंचा उठाने के लिए आदमी इतना व्यस्त है कि उसके पास किसी के लिए कोई समय नहीं है एक तरफ वह टैक्नॉलॉजी का गुलाम है दूसरी ओर आत्मीय अभिव्यक्ति का अभाव तभी तो लम्बे-लम्बे पत्रों की आत्मीयता से निकली भावनात्मक भाषा आज लुप्त हो रही है-प्रभा मजूमदार के शब्दों में-

चार पन्नों के पत्र
ई मेल की
दो लाईनों में
सिमटने लगे
या दो साल के अन्तराल में
एकाध फोन काल में [12]

संचार के इस युग में भावनाओं का संचार खत्म हो गया है। वह भाषा खत्म हो रही है जो भावनात्मकता तथा रिश्तों की अहमियत को दर्शाती है। कवि कुमार कृष्ण ने इस सच को 'गांव किधर है कविता द्वारा अवगत करवाया है।

क्या तुम भी बोल सकते हो दादी की भाषा?
बच्चे ने एक दुकान की ओर इशारा किया

पापा उधर देखो
शायद उस सब्जी बेचने वाली औरत के पास बची हो
थोड़ी बहुत
क्या करेंगे आप उस भाषा का?[13]

आज के समय में सिर्फ मतलब से ही एक दूसरे से बातचीत होती है वह भी कार्य-व्यवसाय के विषय में। प्यार, मुहब्बत सुख-दुःख, सहानुभूति की न तो भाषा है और नहीं भावनाएं। व्यक्ति पूर्णतया आत्म केन्द्रित हो गया है लफ्जों की आलमारियां खोलने वाला आदमी' कविता में कवि इस चिंता को व्यक्त करता है कि शब्द, कविता एवं पुस्तकें ही भावी-पीढ़ी को संस्कारित कर सकती है अन्यथा मनुष्य -मनुष्य से पूरी तरह पृथक हो जाएगा। रिश्तों के कोई मायने नहीं बचेंगे।

जिस दिन हो जाएंगी बन्द
लफ्जों की अलमारियां
बंजर हो जाएगी उस दिन पूरी पृथ्वी
कोई नहीं खटखटाएगा किसी का दरवाजा[14]

इंटरनेट के इस युग में पुस्तकों की उपयोगिता कम हो गई है। लेकिन ये सच है कि ज्ञान का जो संचय पुस्तकों में हो सकता है वह टैक्नालॉजी शायद उस तरह से न रख सके। जो संवेदनाएं, एवं अनुभूतियां पीढ़ियों में संचारित एवं संप्रेषित होती है वह तकनीक द्वारा सम्भव नहीं है। इस स्थिति को इंगित करते शब्दों के बीज' कविता में कवि कहता है।

एक दिन नहीं रहेगी अलमारियां
तब कहां रहेंगे शब्द
कहां रहेगी पिता की उम्मीद
मां के आंसू
पत्नी और बच्चों के सपने[15]

इस स्थिति से चिंतित कवि भाषा एवं शब्दों को बचाने का आग्रह करता है कि यदि संवेदनाएं होगी तभी मनुष्यता बचेगी, रिश्ते रहेंगे, हमदर्दी रहेगी जीवन का महत्व रहेगा

यदि हो सके तो बेटा बचा लेना
दो-चार शब्दों के बीज
हो सके तो बचा लेना
बांझ होने से पृथ्वी
हो सके तो बचा लेना शब्द
जिनसे झरते रहें
रिश्तों के छोटे-छोटे फल[16]

आज पहले जैसे परिवार, रिश्ते, सदभावना, नहीं है, लोगों में एकाकीपन बढ़ा है, परिवार की अवधारणा ही बदलती नजर आ रही है। बुर्जुग उपेक्षा के शिकार है। उनके अनुभव, शिक्षा एवं प्रेरणाओं का नई पीढ़ी में कोई मतलब नहीं बचा है। ऐसे हालात में कवि की ये पंक्तियां अवलोकनीय है

वक्त बहुत कम है-
कविता की जेबों में जल्दी से भर लो
फटे-पुराने रिश्ते
नरगिस के फूलों की खुशबू
चूड़ियों की खनखनाहट
बैलों की घंटियां
चांद तारों की कहानियां
हो सके तो छुपा लो कहीं भी
दादी का, नानी का बटुआ[17]

समकालीन हिन्दी कविता धीरे-धीरे हमारे जीवन से दूर होती अनिवार्य चीजों को बचाने की कवायद है जिससे मनुष्य बेहतर जीवन जी सके। भाषा मनुष्य के चिन्तन चेतना, आचार-व्यवहार एंव संस्कार का प्रतीक है। आदमी जिस तरह की भाषा प्रयोग करता है उससे उसकी सोच एवं मानसिकता परिलक्षित होती है। उसकी शब्दावली उसके व्यक्तित्व का परिचालक होती है अपनी पारंपरिक पद्धतियों, प्रतिमानों और भाषा को दर किनार कर भूमण्डलीकरण की इस दौड़ में सिर्फ व्यवसायिक होना समाज एवं मनुष्य दोनों के लिए खतरनाक सिद्ध हो सकता है। सूचना और संचार की गिरफ्त में आया आदमी उसके अनुप्रयोग तक सीमित है। संचार की एक भाषा सभी भाषाओं पर हावी होती जा रही है और भाषागत विविधता नष्ट होने की ओर है। समकालीन कवि ये भी चाहता है, कि दुनिया में ऐसी भाषा फैले जो वैविध्यपूर्ण हो, जिसमें जीवन के सभी रंग सुरक्षित रहे।

ऐसी हो भाषा
कि उसमें हों लाखों के बोलने के ढंग
कि उसमें हो पूरे जीवन का रंग [18]

इसका एक कारण यह भी है कि हमारी संकुचित मानसिक बुनावट है। हमें आज अपने संस्कार परम्पराएं एंव जीवन शैली तुच्छ लगती है जबकि पाश्चात्य सभ्यता का आकर्षण एंव प्रवेश तीव्र गति से बढ़ रहा है। हमें अपने तौर-तरीके बुरे और उनके अच्छे लग रहे हैं। हम लगातार उसी का अनुगमन कर रहे हैं। इसी चिंता में कवि देखता है कि शब्दों की जगह चमकदार और चौंधाती वस्तुओं ने ले ली है यह वर्तमान का सच है- यही है हमारे समय का एक सबसे पूरा बिंब और एक दिलचस्प प्रहसन भी

कि जो जगह भरी होती थी कभी खूबसूरत शब्दों से
वहां अब चमकदार जूते भरे है[19]

वस्तुतः समकालीन कवि के लिए शब्द का महत्त्व अन्न से कम नहीं है। एकान्त श्रीवास्तव ने अपने पहले कविता संग्रह का नाम ही रखा-'अन्न है मेरे शब्द'

कवि जब शब्द और भाषा पर उपभोक्तावादी संस्कृति द्वारा हमले होते देखता है, तो उसका सृजनात्मक पक्ष इस तरह प्रकट करता है-

अन्न है मेरे शब्द
पृथ्वी की उर्वरता के आदिम साक्ष्य
जन्म लेना चाहते हैं बार-बार
संसार को बचाए रखने की
पहली और आखिर इच्छा बनकर [20]

कवि शब्दों मे उर्जा भर कर भाषा को नया जीवन प्रदान करता है जबकि उपभोक्तावादी संस्कृति में शब्द दोहन के शिकार बन जाते हैं और संस्कारित तत्व क्षरित होने लगता है। भाषा की अभिव्यक्ति शब्दों द्वारा होती है और शब्द ध्वनियों के समूह से आकार ग्रहण करते है। परन्तु ध्वनि-समुच्चय से ध्वनियां धीरे-धीरे लुप्त होती जा रही है। वर्तमान टैक्नालॉजी मोबाइल, वॉटसएप, फेसबुक, ईमेल द्वारा जो संदेश संप्रेषित किये जा रहे है उसकी भाषा, लिपि और शब्दों का स्वरूप पूरी तरह से विकृत हो गया है। वह वो शब्दावली है जिसे आम पावक न तो पढ़ सकता है और न ही समझ सकता है। जैसी विकृति ये नवीन शब्दावली है वैसे ही इसकी अर्थ संप्रेषणीयता, जो प्रतिदिन कोई न कोई नए संदर्भों का उद्घाटन करती है। समकालीन कवि ने भाषा और लिपि में विलोपन और विकृतियों पर अपनी चिंता व्यक्त की है। प्रस्तुत अंश में लुप्त होते चंद्र बिन्दु के विषय में कवि कहता है-

मुझे चंद्रबिन्दु की चिंता है
लिपि को सुदूर जन तक पसारने वाले ये छापे
खाने रौंद जाएंगे क्या-
देवनागरी लिपि की सर्वाधिक सुन्दर सुघड़ कोमल आकृति यंत्र वक्ष में
न रहेगी चंद्रबिन्दु के लिए जगह
सूरज की पीठ पर छापने वाले अखबार
छापेगे चंद्रबिन्दु के बगैर
बड़ी होगी जो पीढ़ी बेटे-बेटियों की
अनुस्वार के उदित गोलाकार में चंद्रबिन्दु की आस्ताभा नहीं पहचानेगी [21]

इसी तरह 'मूर्धन्य 'ष' के लिए एक विदा गीत' कवित में ध्वनि-समुच्चय से लुप्त होती ध्वनियों का उल्लेख करता है -

बेचारा मूर्धन्य 'ष'
जिह्वा से जो गिर गया रास्ते में
बोली से बिछड़ गया
टोली से फिसल गया
डूब गया अन्धेरे में [22]

समकालीन हिन्दी कवि प्रचलन से बाहर हो कर लुप्त होती ध्वनियों के इस संकट से परिचित हैं इसी लिए आह्वान करता हुआ कहता है-

चिंता करो मूर्धन्य 'ष' की
इसी तरह बचा सको तो बचा लो 'ङ'
देखा, कौन चुरा कर लिये जा रहा है खड़ी पाई
और नागरी के सारे अंक
जाने कहां चला गया ऋषियों का 'ऋ' [23]

आज हमारे समक्ष जैसे-जैसे नई चीजें आ रही है उसी तरह नित नई संकल्पनाए एंव अवधारणाएं बन रही हैं, वैसे ही तदनुरूप शब्दावली। पुरानी संस्कृति मान्यताएं एंव अवधारणाएं खत्म हो रही हैं। यहां तक कि जैसे कई तरह के पेड़-पौधों, अनाजों की प्रजातियां और कई मनुष्य के उपयोग की वस्तुएं अब नष्ट हो गई है न वह चीजें हैं न हीं उसकी पहचान के लिए प्रयुक्त शब्द। आने वाले समय में यह स्थिति और विकराल होती जा रही है। अगली पीढ़ी पिछली पीढ़ी के समय की बहुत सारी चीजों और अवधारणाओं से अनभिज्ञ है। नई और आत्याधुनिक वस्तुओं के उपयोग एंव अपनाने में कोई मनाही नहीं है परन्तु इन सांस्कृतिक चीजों को लुप्त होने से बचाना जरूरी है ताकि हमारी संस्कृति जिन्दा रहे, भाषा भी जिंदा रहे जो इन चीजों का बोध कराए। विकास और परिवर्तन के इस दौर में कवि विद्वान लोगों से प्रश्न करता है-

मैं कहां पर टांग दूँ अपने दादा की मिरजई
किस संग्रहालय को भेजूं पिता का बसूला
मां का कर धन और बहन के बिछुए में
किस सरकार को सौंपू हिफाजत के लिए [24]

विदेशी चीजों के आकर्षण और उनके प्रति लोगों के झुकाव को देखकर अपनी सांस्कृतिक विरासत को बचाने की वकालत करते हुए कवि उदय प्रकाश कहते है-

सरदार जी, आप तो बचाइये अपनी पगड़ी
और पंजाब का टपा
मूल्ला जी उर्दू के बाद आप फिक्र करे कोरमे के शोरबे का जायका बचाने की [25]

समकालीन कवित शब्दों और भाषा को सही अर्थवत्ता और सही स्थान दिलाने की हिमायती है। शब्दों द्वारा व्यक्त भाषा का गहरा सम्बन्ध समाज तथा व्यक्ति की अपनी रुचि और संस्कार के साथ रहता है। भाषा ही एक दूसरे को करीब लाती है। तभी तो वह जीवन की समग्र संकल्पनाओं, अवधारणाओं और अनुभूतियों को व्यक्त करने के लिए शब्दों को बचाने की वकालत करता है। कवि अशोक वाजपेयी 'शब्द गिरने से बचाते हैं' कविता में ऐसा ही कहते प्रतीत होते हैं कि शब्द हमेशा पथ प्रदर्शन करते हैं -

शब्द गिरने से बचाते हैं-
वे भारहीन गिरते हैं
अन्तः करण पर ----
कभी-कभी जब हम गलत रास्ते पर होते हैं
शब्द जूतों के अन्दर अचानक उभर आई
कील की तरह गड़ते हैं -

वे हमें रोक न सके
पर इतना जतला जरूर देते हैं
कि हम किसी और रास्ते भी जा सकते हैं [26]

इसी तरह कवि विश्वनाथ प्रसाद तिवारी शब्दों की अहमियत को बताते हैं 'शब्द' कविता का यह अंश अवलोकनीय है-

शब्द सृष्टि की कुंजी
बोलना होठों की कसरत नहीं
लिखना उंगलियों का खेल नहीं
शब्द होने का सबूत है
वह विराट मौन को तोड़ता है
एक निबिड़ अन्धकार से उबारता है [27]

साहित्य का जन्म ही शब्द ग्रहण में होता है रचनाकार अपने अनुभवों की साहित्यिक अभिव्यक्ति शब्दों द्वारा करता है। कवि अपनी अनुभूति को काव्यानुभूति बनाने के लिए सर्वप्रथम उपयुक्त शब्दों की खोज करता कविता की सर्वाधिक सार्थवाही शक्ति शब्द है। कविता चाहे किसी भी भावना की अनुवृति हो किसी उतेजना की अभिव्यक्ति को किन्तु सर्वप्रथम वह अपने मूल रूप में शब्द जीवी है। समकालीन कविता में शब्दों की सार्थकता उसकी अर्थ छवियों में है। शब्दों में मनुष्य की आत्मा है शब्दों द्वारा ही व्यक्ति के अन्तःकरण की अनुभूति को व्यक्त किया जा सकता है। यदि भाषा में सत्यानुभूति को व्यक्त करने योग्य शब्द नहीं है तो मानव जीवन में उसकी कोई उपयोगिता नहीं है। एकान्त श्रीवास्तव की कविता का ये अंश उल्लेखनीय है -

शब्दों में नहीं है।
टगर तुम्हारी आत्मा की झिलमिलाहट
तो वे झूठे हैं
तुम्हारे प्यार के रंग
तुम्हारे अंतस के झंझावात
तुम्हारे दुख की परछाइयां
तुम्हारे कमीज की कॉलर पर जमी धूल
अगर शब्दों में नहीं है-
आईने हैं शब्द
इनके सामने खड़े हो और देखो
शब्दों में नहीं है
अगर तुम्हारी आत्मा की झिलमिलाहट [28]

आज सूचना और प्रौद्योगिकी के जिस युग में हम जी रहे हैं जहां भाषा एंव संचार के नित नए अनुप्रयोग हो रहें हैं नई नई संकल्पनाएं हमारे जीवन में उभर कर आ रही है। उससे हमें शब्द ही उभार सकते हैं।

कवि कुमार कृष्ण पूरे विश्वास के साथ 'कविता की कोख' कविता में कहते हैं -

उसे पूरा यकीन है
नहीं घिसते शब्द, नहीं टूटते शब्द
मरते नहीं शब्द, शब्द नहीं होते क्षीण
कविता की कोख से बार बार जन्म लेने पर
हृष्ट-पुष्ट होते है शब्द [29]

इसीलिए कवि कुमार कृष्ण शब्दों द्वारा व्यक्त ऐसी भाषा में कविता लिखने की हिमायत करते हैं, जो हृदय संवाद कर सके जिसमें रिश्तों की गरमाहट, मानवीय मूल्यों, लोक वेदना और लोक चेतना का समावेश हो-

गन्ने की तरह गांठ दार
अमरूद की तरह अनगिनत बीज वाली
लिखो तुम कविताएं बेशुमार
वर्णमाला के अक्षरों में
अ से ज्ञ तक
बचा लो मेरे दोस्त
पृथ्वी की मिठास 30

इससे आगे अशोक वाजपेयी के शब्दों में सार्थक कविता वही है जिसमें इन सब चीजों का समावेश होगा-

बहुत सारा जीवन, पूर्वज,
प्रेम, आंसू, अपमान
लोगों का शोरगुल, अरण्य का एकान्त,
भाषा का घर, लय का अंतरिक्ष [31]

अतएव ऐसी भाषा का प्रयोग हो जिससे हम अपने आप को पहचान सके। समकालीन कवि अपनी भाषा की दुर्दशा देखकर कभी दुख व्यक्त करते हैं, कभी आक्रोश प्रकट करते है, कभी निराशा का भाव प्रकट करते हैं, कभी भाषा की विडम्बना की ओर संकेत करते हैं, कभी दुरुस्त भाषा का सपना देखते हैं। समकालीन कविता अपने समय के प्रति सचेत है, अपने युग तथा परिवेश के प्रति सजग हैं। उपभोक्तावादी संस्कृति के दौर में तीव्र हुए विभिन्न समकालीन प्रश्नों से दो चार होते हुए यह कविता मानवता के पक्ष से अपना बयान प्रस्तुत करती हैं। भूमण्डलीकरण और उपभोक्तावादी और में भाषा के अस्तित्व पर संकट छा गया है। हम अपनी संस्कृति को भूलकर अपनी पहचान खोते जा रहे हैं। यह स्थिति निरन्तर भयानक होती जा रही है। आज हम आर्थिक, मानसिक एवं सामाजिक रूप से गुलामी की ओ बढ़ रहे हैं। विदेशी निर्माण, और विदेशी आचरण की तरफ हमारा आकर्षण उत्तरोत्तर बढ़ रहा है। बाहरी संस्कृति का सर्वप्रथम प्रभाव हमारी सोच, समझ और अभिव्यक्ति पर पड़ता है जिसके फलस्वरूप सबसे पहले हमारी भाषा विकृत होती हैं हमारी शब्दावली बदलती है और हमारे संस्कार क्षीण होते हैं। मनुष्य जीवन में शब्दों और उसके अर्थ गाम्भीर्य से निर्मित संस्कारों को बचाने की कवायद समकालीन कविता में की गई है। जीवन में संस्कारों मर्यादाओं और अनिवार्य परम्पराओं के निर्वहन के लिए तद्विषयक शब्दों का संयोजन

कविता

लाला लालोलाल है

● नवीन हलदूणवी

लाला लालोलाल है,
नौकर तो कंगाल है।
भैया! हर महकमे का,
साहिब मालोमाल है॥

कालेधन वालों की तो,
आज चांदी हो गई।
बेचारे मजदूर का तो,
बुरा हाल-चाल है॥

भोले औ' ईमानदार,
लोक मेरे गांव के,
गांवों को तो लूट लेता ,
शहर का दलाल है॥

बगैर पैसे मौज मेला,
उतनी ही दूर है।
अमीर से गरीब ज्यों,
आकाश से पाताल है॥

गोगडीले शाह की तो,
होती वाह-वाह जी।
आज सारे युग की तो,
टेढ़ी-मेढ़ी चाल है॥

खोट-पोट खाने वाले,
आज मोटे हो गये।
बोलबाला लूट का और,
लूट का कमाल है॥

चोर उचक्के खा गये,
गरीब की कमाई को।
'नवीन' तभी जग में तो,
महंगी रोटी-दाल है॥

काव्य-कुंज जसूर-176201,
जिला कांगड़ा (हिमाचल प्रदेश),
मो. 09418846773

आवश्यक है। वो शब्द जिसमें हमारे जीवने की सच्चाई, और अस्मिता छिपी है उनका जिंदा रहना कितना आवश्यक है, हमारे जीवन में क्या उपयोग एवं महत्त्व है, समकालीन कविता में इसे बडी बारीकी से रेखांकित किया है। कवियों ने उन शब्दों और भाषा के प्रयोग को प्राथमिकता दी है जिसमें हृदय की धड़कने विद्यमान हो, जिसमें जीवन संस्कार, अपनापन रिश्तों का ताप, सत्यानुभूति, संवेदनाएं व्यक्त की जा सके। ये शब्दावली कम्पयूटर, मोबाइल, इंटरनेट या अन्तर्राष्ट्रीय भाषा में नहीं मिल सकती है। ये शब्द अपने परिवार, बुजुर्ग अपने लोक जीवन और अपनी भाषा में मिल सकते है। इन्ही शब्दों द्वारा हम अपने आप को पहचान सकते है। अपने जीवन की उपयोगिता एवं महत्व को समझ सकते हैं। अत्याधुनिकता और व्यवसायीकरण के अन्धानुकरण में ये शब्द ही हमें आत्मीयता का अहसास करवाते हैं। समकालीन कविता इन्हीं शब्दों की हिफाजत में खड़ी, मानवीय मूल्यों को बचाए रखने में इनकी उपयोगिता का एक जीवन्त दास्तावेज है।

विभागाध्यक्ष हिन्दी, राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय
रामपुर बुशैहर, जिला-शिमला

संदर्भ :

1. कुमार कृष्ण, पहाड़ पर नदियों के घर, पृ. 40
2. वही, पृ. 25
3. वही, पृ. 25
4. वही, पृ. 53
5. मनीषा झा, समय संस्कृति एवं समकालीन कविता, पृ. 133
6. उदय प्रकाश, एक भाषा हुआ करती है, पृ. 92-93
7. वही, पृ. 91
8. वही, पृ. 93
9. मनीषा झा, समय संस्कृति एवं समकालीन कविता, पृ. 138
10. निर्मला पुलुत, नगाडे की तरह बजते शब्द, पृ. 72
11. वही, पृ. 73
12. प्रभामजुमदार, उन्नयन पृ., 167,168
13. कुमार कृष्ण, पहाड़ पर नदियों के घर, पृ. 24-25
14. वही, पृ. 62
15. वही, पृ. 54
16. वही, पृ. 54-55
17. वही, पृ. 36
18. राजेश जोशी, नेपथ्य में हंसी, पृ. 64
19. राजेष जोशी, दो पक्तियों के बीच में, पृ. 74
20. एकान्त श्रीवास्तव, अन्न हैं मेरे शब्द, पृ. 102
21. ज्ञानेन्द्रपति, संशयात्मा, पृ. 176
22. वही, पृ. 177
23. उदय प्रकाश, रात में हारमोनियम, पृ. 21
24. वही, पृ. 21-22
25. वही, पृ. 22
26. अशोक वाजपेयी, कुछ रफू कुछ थिगड़े, पृ. 79
27. विश्वनाथ प्रसाद तिवारी, शब्द और शताब्दी, पृ. 11
28. एकांत श्रीवास्तव, मिट्टी से कहूँगा धन्यवाद, पृ. 65
29. कुमार कृष्ण, गाँव का बीजगणित, पृ. 33
30. वही, पृ. 41
31. अशोक वाजपेयी, कुछ रफू कुछ थिगड़े, पृ. 12

आलेख

दलित साहित्य की पृष्ठभूमि

● डॉ. रमाकांत

उत्तर आधुनिकता ने विकेन्द्रीयता को जन्म दिया। पिछड़े, दलित, स्त्री सामाजिक न्याय तथा क्षेत्रीय अस्मिता का साहित्य कई धाराओं में तेज गति से बहने लगा। हालांकि अस्मिता का साहित्य भारतीय परिवेश में पहले से मौजूद था और दलित साहित्य मराठी, कन्नड़ और तेलुगू-तमिल भाषाओं में शीर्ष पर पहुँच चुका था। स्त्री-लेखन भी नारी मुक्ति आन्दोलन के बाद साहित्यिक फलक पर विद्यमान था, विश्व स्तर पर नीग्रो साहित्य अपना स्थान पहले से ही बनाए हुए था, लेकिन हिंदी में इन धाराओं ने उत्तर आधुनिक काल में जोर पकड़ा। इस काल में केन्द्रीयता, एकाधिकार और राष्ट्रीयता गौण हुई और अस्मिता मुखर।'[1]

20 वीं सदी में इस बहिष्कृत समाज की चर्चा शुरू हुई। दरअसल भारतीय मानस दो समाजों के सिद्धान्त को मानता रहा है। वह समाज के स्तर को जन्म के आधार से जोड़ता है, इसलिए व्यक्ति के वर्ग का स्तर उसके सामाजिक या जन्म के स्तर को कभी न प्रभावित कर सका, न ही बदल सका। बँटवारा सवर्ण और असवर्ण अभिजन और आम आदमी के बीच रहा। इसलिए इनके दो मूल्य भी रहे हैं जो आज भी हमारी जीवन प्रणाली, हमारी मानसिकता तथा हमारी सामाजिक, राजनीतिक, प्रशासनिक और न्यायिक प्रणाली तक को प्रभावित कर रहे हैं। क्या दो मानकों, दो मानसिकताओं पर साहित्य आज भी चुप्पी साधे रह सकता है।'[2] एक अभिजन सवर्ण है जिसे सब कुछ पाने का अधिकार है- सत्ता, प्रतिष्ठा, धन, ज्ञान, समृद्धि, ऐश्वर्य, सेवा-सुश्रुषा यानी सब अधिकार, कर्त्तव्य कोई नहीं!

'दूसरा है- असवर्ण जिसे 'शूद्र' कहते हैं। जिसे शास्त्रों द्वारा इन सबसे वंचित रखा गया। वे केवल सेवा करने के दावेदार हैं। फल प्राप्ति की इच्छा भी वे नहीं कर सकते। सब दमन कष्ट उनकी भाग्य रेखा में पूर्व निर्धारित है। पूवर्जन्म के फल हैं। अब जब यह वर्ग इस धारणा को नकारने लगा है और अभिजन समाज से सवाल करने लगा है, सब अधिकारों में हिस्सेदारी ही नहीं बल्कि जनसंख्या के आधार पर अपनी हिस्सेदारी भी चाहने लगा है और तथाकथित मानवता के नाम पर, अपने को मानव सिद्ध करते हुए वह उनसे मानवीय व्यवहार की अपेक्षा ही नही बल्कि मानवीय व्यवहार करने के लिए उन्हें बाध्य करने का भी सपना देखने लगा है तो दोनों का साहित्य एक कैसे होगा? एक अन्याय करने वालों का पोषक चाटुकार एवं उनके मनोरंजन का साधन है तो दूसरा सदियों की पीड़ा उड़ेलता, आक्रोश से भरा अन्याय का विरोधी।'[3]

दलित साहित्य का उद्‌भव लगभग छठे दशक में, मराठी साहित्य में एक साहित्यिक आन्दोलन व सामाजिक विद्रोह के रूप में हुआ, जिसके माध्यम से दलित व शोषित समाज का विद्रोह मुखरित हुआ है। उत्तरोत्तर उसका सम्मूर्त्तन और पल्लवन कन्नड़, तमिल व गुजराती में हुआ। हिंदी साहित्य के अन्तर्गत दलित चिन्तन और रचना कर्म के नाम पर कोई आन्दोलन नहीं हुआ, किन्तु वर्ण व जाति के नाम पर शोषित, उपेक्षित, पीड़ित, प्रताड़ित, वंचित, त्याज्य एवं दीन-हीन जीवनानुभूतियों को प्रगतिशील अर्थवत्ता का माध्यम अवश्य बनाया गया है। प्रेमचन्द, निराला, शमशेर, नागार्जुन, केदारनाथ अग्रवाल आदि सभी प्रगतिशील रचनाकारों ने मानव समाज के शोषित व वंचित वर्ग को अपनी रचना का माध्यम बनाया है। मराठी साहित्य की भांति हिंदी में दलित साहित्य की कोई पृथक धारा नहीं रही है और न ही मराठी से उधार ली गयी अवधारणा के अनुरूप हिंदी साहित्य में दलित चिन्तन और सर्जनात्मक भावभूमि को अंगीकार किया गया है। सोद्देश्य दलित साहित्य की बुनियाद है महाराष्ट्र का दलित आन्दोलन।

दलित विमर्श का जिस तरह राजनैतिक विकास हुआ, उस तरह साहित्यिक विकास नहीं हुआ। साहित्य में उसकी तीन धाराएँ मिलती हैं। पहली धारा स्वयं दलित जातियों में जन्में लेखकों की है, जिनके पास स्वानुभूति का विराट संसार है। दूसरी धारा हिंदू लेखकों की है, जिनके रचना संसार में, 'दलितों का चित्रण सौन्दर्य सुख की विषय वस्तु के रूप में होता है।' तीसरी धारा प्रगतिशील लेखकों की है, जो दलित को सर्वहारा की स्थिति में देखती है।

कबीर ने वर्ण व्यवस्था से पीड़ित दलित जनता की पीड़ा को दलित धारा का रूप दिया और अपने समकालीन सम्पूर्ण हिन्दू-

मुस्लिम समाजों को उद्वेलित कर दिया। यह उद्वेलन इस रूप में नहीं था कि उन्होंने दोनों धर्मों की कुरीतियों पर चोट की और पंडित, मुल्ला दोनों को फटकारा, बल्कि इस उद्वेलन का कारण था कि कबीर ने अपने को न हिंदू माना और न मुसलमान। उन्होंने अपना अलग पंथ विकसित किया, जिसमें न हिंदुओं के राम की चिन्ता है और न मुसलमानों के अल्लाह का गम है। यथा-

'हिन्दू कहो तो हो नहीं, मुसलमान भी गारी।
और
सुर नर मुनिजन औलिया यह सब उरली तीर।
अलह राम की गम नहीं, तहं घर किया कबीर।।'[4]

हिंदी में प्रमुख रूप से कबीर की कविताओं में पहली बार उस सड़ी-गली मान्यताओं का खुलकर विरोध मिलता है, यथा-

'गर्भ बास महि कुल नहि जाती।
ब्रह्म बिंद ते सब उतपाती।।
जौ तू ब्राह्मण ब्राह्मणी जाया।
तौ आन बाट काहे नहीं आया।।
तूम कत ब्राह्मण हम कत शूद।
हम कत लोहू तुम कत दूध।।
कहु कबीर जो ब्रह्म विचारै।
सो ब्राह्मण कहियत है हमारे।।'[5]

ऐसे ही रैदास की एक पंक्ति दर्शनीय है, जिसमें समता की बात की गयी है-

ऐसा चाहो राज मैं, जहां मिलै वसन को अन्न।
छोट-बड़ों सब सम बसै, रैदास रहै प्रसन्न।।'[6]

दलित संत कवियों का युग विक्रम की पन्द्रहवीं शताब्दी माना जाता है। अंग्रेजी हिसाब से भी यह 14-15वीं शताब्दी का युग था। आगे की दो शताब्दियों में दलित विमर्श का विकास दिखायी नहीं देता। इसका कारण यह हो सकता है कि दलित चेतना के विरुद्ध प्रतिक्रान्ति की धारा बहुत तेज हो गयी और उससे टक्कर लेना दलितों के लिए मुश्किल हो गया हो। लेकिन इसके बावजूद यह नहीं माना जा सकता कि दलित चेतना की वह धारा, जिसका कबीर ने सूत्रपात किया, आगे चलकर बिलकुल सूख गयी हो। दरअसल, यह धारा अलग प्रवृत्ति की थी और परिवर्तनकारी थी, इसलिए यह हो सकता है कि ब्राह्मण इतिहास लेखकों ने इस धारा को उपेक्षित किया हो। कबीर, रैदास आदि को उपेक्षित करना इसलिए मुश्किल रहा, क्योंकि वे इतिहास के पात्र नहीं, इतिहास के निर्माता थे, युग प्रवर्तक थे। लेकिन 19वीं शताब्दी में साहित्य की दलित धारा भारत के लगभग सभी भाषाओं में पुनः उभरती हुई दिखायी देती है। इसका कारण यह था कि इस समय तक भारत में अंग्रेजी राज्य कायम हो चुका था और ईसाई मिशनरियों के प्रभाव से अछूतों में शिक्षा का प्रकाश पहुँचने लगा था। इस नवजागरण ने प्रायः सभी भाषाओं में दलित रचनाकार पैदा किए, जिन्होंने न सिर्फ अपना साहित्य और अपना इतिहास लिखा, बल्कि अपने समय के साहित्य को प्रभावित भी किया। सातवें दशक के हिंदी साहित्य में खास तौर से कविता में व्यवस्था के विरुद्ध तीव्र विद्रोह मिलता है। राजनैतिक अव्यवस्थाएँ, सामाजिक भेदभाव, आर्थिक विषमाताएँ, सांस्कृतिक पतन और इन सबके बीच मानव का शोषण इस दशक के साहित्य के केन्द्र में है। यह साहित्य कभी लघु मानव की बात करता है, कभी सहज मानव की और कभी हताश-निराश मानव की मनःस्थिति का वर्णन करता है। सामाजिक यथार्थ इस दशक के साहित्य में अत्यन्त विद्रूप और जुगुप्सापूर्ण है। जैसे कैलास वाजपेयी की यह कविता-

'और चाहे कुछ भी नहीं दिया सभ्यता ने
कम से कम यह तो किया है सभी को
बराबर अमानव बना दिया।[7]

इस तरह की घोर निराशावादी और तर्कहीन कविताएँ इस दौर में ज्यादा लिखी गयीं। इस युग की कविता में पूँजीवादी संस्कृति का विरोध लोकतंत्र के विरोध तक पहुँच गया है। देखिए राजकमल चौधरी की यह कविता-

आदमी को तोड़ती नहीं है लोकतांत्रिक पद्धतियाँ
केवल पेट के बल उसे झुका देती हैं
धीरे-धीरे अपाहिज धीरे-धीरे नपुंसक बना देने के लिए
उसे शिष्ट राजभक्त देशप्रेमी नागरिक बना लेती हैं।
हम लोगों को अब शामिल नहीं रहना है,
इस धरती से आदमी को हमेशा के लिए
खत्म कर देने की साजिश में।'[8]

धूमिल में भूख का यह यथार्थ है-

'भूख ने उन्हें जानवर कर दिया है
संशय ने उन्हें आग्रहों से भर दिया है।'[9]

इस प्रकार हिंदी कविता में दलित विमर्श का कोई पृथक् रूप नहीं है। मार्क्सवाद से प्रभावित इस जनवादी कविता में पूरा मनुष्य ही दलित है जिसे लोकतंत्र ने अपाहिज बना दिया है। पूंजीवादी तंत्र ने उसे अमानव बना दिया है जिसमें कुंठाएँ हैं, जीवन के प्रति वितृष्णा है और बकलम लीलाधर जगूड़ी उसका भूकंप धंसा घर, पृथ्वी में बंद हो चुका है।' भटका हुआ अकेलापन-यही इस युग की कविता का यथार्थ है। इसके बावजूद जगदीश गुप्त का 'शंबूक' लघु काव्य भी इसी कालखण्ड की रचना है, जिसमें दलित विमर्श इतिहासबोध के रूप में सामने आता है। वे शंबूक के माध्यम से वर्णव्यवस्था पर क्रान्तिकारी प्रहार करते हैं-

'जो व्यवस्था व्यक्ति के सत्कर्म को भी मान ले अपराध
जो व्यवस्था फूल को खिलने न दे निर्बाध
जो व्यवस्था वर्ग-सीमित स्वार्थ से हो ग्रस्त
वह विषय घातक व्यवस्था शीघ्र ही हो अस्त।'[10]

नरेश मेहता के 'शबरी' और भारत भूषण के 'अग्निलीक' खण्ड काव्यों में भी विचारोत्तेजक विमर्श है। नरेश मेहता की शबरी कहती है-

'क्या धर्म तत्त्व से ऊँची है वर्णाश्रम मर्यादा?
तब व्यर्थ तपस्या, पूजन यह गंगा भी है शूद्रा।'[11]

लेकिन इसी दशक में स्वयं दलित लेखकों का साहित्य अस्तित्व में आया। कहा जाता है कि पहले यह मराठी में आया, पर ऐसा नहीं है। दलित साहित्य का उदय हिंदी और मराठी में लगभग एक ही समय में हुआ है। हिंदी में साठ के दशक में चन्द्रिका प्रसाद जिज्ञासु दलित चेतना के साहित्य के प्रवर्त्तक है। इसकी शुरुआत भी कविता से ही हुई। कविता और गद्य में दलित-चेतना की बेहतरीन पुस्तकें इसी समय प्रकाशित हुईं, जिनमें चन्द्रिका प्रसाद जिज्ञासु, ललई सिंह यादव, डॉ. अंगने लाल, सुंदर लाल सागर, डॉ. डी. आर. जाटव, रजनीकान्त शास्त्री, मंगलदेव विशारद, रामस्वरूप वर्मा, खेमचन्द्र सौगत, लालचन्द्र राही, बदलू राम रसिक आदि लेखकों की पुस्तकों के साथ-साथ डॉ. अम्बेडकर, भदंत आनन्द कौशल्यायन, राहुल सांकृत्यायन, अछूतानन्द और रामस्वामी नायकर की क्रान्तिकारी पुस्तकों का प्रकाशन हुआ। इस साहित्य को यद्यपि 'दलित साहित्य' का नाम अभी नहीं मिला था, पर इन लेखकों की पुस्तकों ने एक सशक्त दलित-विमर्श को उभारा था। सत्तर के दशक में बाकायदा 'दलित साहित्य' के नामकरण के साथ जो साहित्य अस्तित्त्व में आया, उसके मूल में 60 के दशक का दलित-विमर्श ही था। हिंदी में उन पुस्तकों को पढ़कर ही नए दलित लेखकों की जमात पैदा हुई थी, जो आज दलित-साहित्य के प्रख्यात हस्ताक्षर हैं।

दलित कविता में वर्ण व्यवस्था के खिलाफ आक्रोश और विद्रोह है। उसकी जाति चेतना एक ऐसे समाज की वाहक है, जो स्वतंत्रता, समता और बंधुत्व पर आधारित हो।

दलित-साहित्य के माध्यम से पहली बार वह सामाजिक यथार्थ सामने आया, जिसे दलित लेखकों ने स्वयं भोगा था। मराठी में दया पवार ने 'अछूत' नाम से अपनी आत्मकथा लिखी, जो किसी भी दलित की पहली कहानी है। यह रोंगटे खड़े कर देने वाली यंत्रणा की कहानी है, जिसे लेखक ने स्वयं भोगा था। मरे हुए जानवरों के शरीर को उधेड़ना, उससे मांस काटकर लाना, उसे घरों में टांगकर सुखाना, उसका सड़ना, उसको पकाकर खाना, इस सबको पढ़ना, एक अछूत के जिन्दा नर्क से गुजरना है। इसके बाद 'अक्कर-माशी', 'उठाईगीर' और हिंदी में 'अपने-अपने पिंजरे' तथा 'जूठन' आत्मकथाएँ आयीं, जिन्होंने एक नया ही सामाजिक यथार्थ हमारे सामने रखा, जिसे इसके पूर्व किसी दलित्तेत्तर साहित्यकार ने प्रस्तुत नहीं किया था। ओमप्रकाश वाल्मीकि की 'जूठन' सवाल उठाती है कि यदि दलित समस्या, वर्ग समस्या है और जन्मना दलितों के सिवा भी लोग दलित हैं, तो यह व्यवस्था किसने बनायी कि 'जूठन' उठाने और खाने का काम जन्मना दलितों को ही करना पड़ा। यदि गरीबी ही मुख्य समस्या है और दलित भी वैसे ही गरीब हैं, जिस तरह की दूसरी जातियों में गरीब हैं तो दया पवार की 'अछूत' आत्मकथा उनसे पूछ सकती है कि फिर मरे जानवरों का सड़ा मांस उन गरीबों को क्यों नहीं खाना पड़ा?

मराठी दलित लेखकों ने हिन्दूधर्म, उसकी आस्थाओं और उसकी परम्पराओं को नकारा। नामदेव ढसाल ने लिखा- 'मैं तुम्हारे ग्रंथों को गालियाँ देता हूँ।' यशवंत मनोहर ने लिखा- 'मैं इन हरामखोर परम्पराओं पर विध्वंस का हल चलाता हूँ।' अरुण काम्बले ने लिखा- 'तुम्हारी ढोंगी संस्कृति मुक्ति की घोषणाओं की गर्जन की कम्पन से ढह जायेगी।' हिंदी दलित कवियों ने भी इसी विमर्श को आगे बढ़ाया। ओम प्रकाश वाल्मीकि ने पूछा- 'यदि तुम्हें नदी के तेज बहाव में उल्टा बहना पड़े/दर्द का दरवाजा खोलकर भूख से जूझना पड़े/भेजना पड़े नयी नवेली दुल्हन को/पहली रात ठाकुर की हवेली/तब तुम क्या करोगे? डॉ. धर्मवीर लिखते हैं-

वर्ण निठल्लों के अधिकार चले आ रहे हैं,
जातियाँ मूर्खों की सम्पत्ति घोषित है।
अस्पृश्यता प्रमादियों का पहला बचाव है।'[12]

निस्संदेह दलित कविता में वर्णव्यवस्था के खिलाफ आक्रोश और विद्रोह है। उसकी जाति चेतना एक ऐसे समाज की वाहक है, जो स्वतंत्रता, समता और बंधुत्व पर आधारित हो। इसी आधार पर वह हिन्दुत्व की विरोधी तथा बौद्ध धर्म की समर्थक है। ओमप्रकाश वाल्मीकि ने इस दलित विमर्श को एक सार्थक वर्ग चेतना से ही जोड़ने की कोशिश की है। उनकी कहानी, 'मैं ब्राह्मण नहीं हूँ' का यहाँ उल्लेख किया जा सकता है। इस कहानी में दो मुख्य पात्र हैं, एक मिराशी जाति का दलित है और दूसरा बढ़ई जाति का पिछड़ा। दोनों गांवों से आकर शहर में ब्राह्मण बनकर रहते हैं और दोनों ही अपने नाम के आगे शर्मा लगाते हैं। दोनों के मकान पास-पास हैं और दोनों सम्पन्न हैं, पढ़े-लिखे परिवार हैं, दोनों परिवारों के बीच अच्छे सम्बन्ध हैं, खाना-पीना है। मिराशी के लड़के से बढ़ई की लड़की की शादी तय हो जाती है पर ऐन वक्त पर बढ़ई को अपने मित्र की जाति का पता चल जाता है। घर में कोहराम मच जाता है। दोस्ती दुश्मनी में बदल जाती है। वर्गीय धारणा खत्म हो जाती है और जातीय धारणा मजबूत हो जाती है। इस समस्या को कहानी में बढ़ई ब्राह्मण की बेटी हल करती है यह रहस्य खोलकर कि वे भी ब्राह्मण नहीं हैं। यह एक महत्त्वपूर्ण कहानी है जिसके माध्यम से जाति की धारणा पर व्यापक प्रहार किया गया है। यह एक ऐसा दलित-विमर्श है, जो न केवल जातिविहीन समाज का, बल्कि वर्ग विहीन समाज का भी समर्थन करता है।

'दलित साहित्य की कल्पना आज अधिक विकसित हुई है, परन्तु उसकी अभिव्यक्ति प्रथमतः सन् 1928 में हो चुकी थी, किन्तु उसका स्वरूप आज के जैसा नहीं था, उसमें एक सरल अर्थ निहित था- दलितों द्वारा लिखा साहित्य यानि दलित साहित्य।'[13] आज भी कुछ परम्परावादी मराठी साहित्यकार दलित साहित्य पर यही अर्थ चिपका देते हैं। परन्तु सन् 1956 में बाबा साहेब अम्बेडकर द्वारा किए गए धर्म चक्र आन्दोलन के बाद उसका मूलभूत स्वरूप परिवर्तित हुआ है। दलित मनुष्य के जीवन का दलित लेखकों के द्वारा किए गए चित्रण और दलित जीवन की स्थितियों का कल्पना के आधार पर दलितों द्वारा किए गए चित्रण को 'दलित-साहित्य' कहना दलित साहित्य की कल्पना पर अन्याय है। आज दलित साहित्य के क्षेत्र में विस्तार होने के कारण उसकी पृष्ठभूमि को भी वैचारिक व दार्शनिक आधारों पर विभाजित किया गया है।

ब्वॉयज होस्टल-5, ब्लॉक-2, रूम नं. 27, पंजाब विश्वविद्यालय, सेक्टर-14, चंडीगढ़-160014, मो. 9646375961

संदर्भ सूची

1. रमणिका गुप्ता, 'दलित चेतना साहित्यिक एवं सामाजिक सरोकार', दिल्ली, समीक्षा प्रकाशन, प्र. सं. 2001, पृ. 30
2. वही, पृ. 37-38
3. वही, पृ. 38
4. कंवल भारती, 'दलित विमर्श की भूमिका', इलाहाबाद, इतिहास बोध प्रकाशन, प्र. सं. 2002, पृ. 103
5. वही, पृ. 15
6. वही, पृ. 104
7. वही, पृ. 122
8. वही, पृ. 122
9. वही, पृ. 122
10. वही, पृ. 123
11. वही, पृ. 123
12. वही, पृ. 125
13. सदानन्द शाही, 'दलित साहित्य की अवधारणा और प्रेमचन्द', गोरखपुर, प्रेमचन्द साहित्य संस्थान, प्र. सं. 2000, पृ. 159

बोध कथा

कल की चिंता क्यों

● रितेंद्र अग्रवाल

एक रियासत का जमींदार काफी मेहनती, ईमानदार तथा जनसेवक था। एक बार उसने अपने मुनीम को बुलाकर पूछा- जरा आकलन करके बताओ हमारे पास जो धन है, वह कितने दिन का है।

मुनीम ने कहा- ठीक है। कुछ दिन बाद मुनीम ने बताया कि हमारे पास जो धन है, इसी तरह से खर्च हो तो छह पीढ़ी के लिए काफी होगा।

जमींदार ने सोचा तो फिर सातवीं पीढ़ी का क्या होगा? वह चिंतित रहने लगा।

जमींदार के लोग एक संन्यासी को बुलाकर लाए। उसने जब जमींदार से समस्या पूछी तो संन्यासी ने कहा ठीक है।

संन्यासी बोला- कल सुबह हम एक शख्स से मिलने चलेंगे आप उसके लिए खाना ले चलिएगा। जमींदार बोला- ठीक है।

अगले दिन संन्यासी के साथ जमींदार शहर के बाहर एक गरीब व फकीर के घर गए, उन्होंने खाना दिया तो वह बोला आज का खाना तो पड़ोस से आ गया है। इसे आप ले जाएं।

जमींदार बोला- कल के लिए काम आ जाएगा।

गरीब ने कहा- कल की कल देखेंगे। ईश्वर खयाल करेगा, आज क्या सोचना।

जमींदार सोचने लगा- यह आदमी कल की नहीं सोच रहा और खुश है। मैं छह पीढ़ी के बाद सातवीं के लिए दुखी हूं। क्यों?

सोचते ही जमींदार चिंतामुक्त हो, प्रसन्न हो गया

हारिए न हिम्मत

हरीश नाम का एक बालक एक शहर में रहता था। वह कई जगह नौकरी ढूंढ चुका था। लेकिन नहीं मिली। हिम्मत हार रहा था। सोच रहा था, मेरी किस्मत ही खराब है। मुझे काम नहीं मिलेगा। उसकी सोच बदलने लगी। उसके दादाजी ने देखा तो चिंतित होने लगे। उन्होंने सोचा- यह ठीक नहीं है, बच्चे के लिए।

उन्होंने काफी कोशिश की लेकिन बेकार।

एक दिन हरीश दादाजी के साथ बाजार जा रहा था। रास्ते में देखा कि एक आदमी जिसका एक हाथ नहीं है, हंसते, गुनगुनाते हुए रिक्शा चला रहा है।

दादाजी ने कहा- देखा, बेटे उसके हाथ नहीं है, फिर भी रिक्शा चला रहा है। तुम तो फिट हो फिर क्यों दुखी हो?

हरीश ने कहा- दादाजी समझ गया। अब दुखी नहीं होऊंगा।

हिम्मत नहीं हारनी चाहिए, धैर्य से काम लेना चाहिए जीवन में।

11/500, मालवीय नगर, जयपुर, राजस्थान-302017,
मो. 0 75974 36456

आलेख

हिंदी पुस्तकें बनाम हिंदी पत्रिकाएं दशा व दिशा

● कृष्णवीर सिंह सिकरवार

आज भारत देश के लगभग प्रत्येक घर की सुबह दैनिक पत्र पढ़ने के साथ होती है जिन्हें लगभग 80 से 90 प्रतिशत पाठक पढ़ते होंगे। गाँव वाले इलाके जहाँ पर किसान व मजदूर वर्ग रहता है इस प्रकार की सामग्री समुचित व्यवस्था व शिक्षा का अभाव होने के कारण पढ़ने से वंचित रह जाते है। किंतु शहरी इलाकों मे इनकी दशा बेहद अच्छी है, ज्यादातर पाठक इन दैनिक पत्रों को पढ़ते है। इन दैनिक पत्रों का मूल्य कम होने के कारण यह प्रत्येक पाठक की पहुँच में भी होता है। इस प्रकार इन दैनिक पत्रों की बिक्री संतोषप्रद कही जा सकती है।

प्रस्तुत आलेख में हिंदी पुस्तकों की बिक्री व हिंदी की लघु पत्रिकाओं की दशा व दिशा के संदर्भ में विस्तृत प्रकाश डालने का प्रयास किया गया है। पुस्तक प्रकाशनों का हमेशा से ही यह रोना रहा है कि हिंदी मे छपने वाली पुस्तकों की बिक्री बहुत ही निराशाजनक है। यह प्रश्न बड़ा अजीब परंतु सत्य भी है कि हिंदी में पुस्तकें बिकती क्यों नहीं है? वैसे भी पुस्तकें समाज का दर्पण होता है, परंतु यह दर्पण आज धुंधला-सा हो गया है। हिंदी पुस्तकें पहले भी छपती थी आज भी छपती है परंतु आज इन पुस्तकों की बिक्री में बेहद कमी आयी है और इन पुस्तकों को पढ़ने वाले पाठकों की संख्या भी धीरे-धीरे कम होती जा रही है।

सच पूछा जाए तो इन पुस्तकों की बिक्री का एक अनोखा गणित काम करता है, प्रकाशक प्रारंभ में पुस्तक की 500 से 600 प्रतियाँ छापता है। इन प्रतियों के बिक जाने पर ही दोबारा छापने का प्रयास करता है। यहाँ यह कहना अति आवश्यक है कि कभी-कभी दोबारा पुस्तक को छापने में कई वर्ष व्यतीत हो जाते हैं। यह सब इस बात पर निर्भर होता है कि पहले की छपी हुई प्रतियों को बिकने में कितना समय लगा, अगर पुस्तक छपने के उसी वर्ष उसकी सभी प्रतियाँ समाप्त हो जाती है तथा बाजार में उक्त पुस्तक की निरंतर मांग बनी हुई है तभी प्रकाशक पुस्तक को दोबारा छापने का साहस करता है। अगर पुस्तक की प्रारंभ में ही छपी हुई प्रतियाँ नहीं बिकती हैं तो जब तक बची हुई प्रतियाँ बिक नहीं जाती दोबारा छापने में कई वर्ष व्यतीत हो जाते है।

इस प्रकार पुस्तक छापना व बेचना बड़ा ही जोखिम का कार्य हो गया है। फिर किताब की कीमत भी प्रकाशकों द्वारा किताब पर आयी हुई लागत से करीब चार से पाँच गुना ज्यादा रखी जाती है, ताकि अगर पचास प्रतिशत पुस्तकें भी बिकती हैं तो किताबो पर आयी हुई लागत वसूल हो जाये इस तरह देखा जाए तो पुस्तकों की 300 से 400 प्रतियों की बिक्री हो जाने पर उक्त किताब सफल मानी जा सकती है तथा उसके अगले संस्करण के छापने के विषय में विचार किया जाता है।

वैसे भी आज सरपट दौड़ते समय को देखते हुये यह अंदाजा आसानी से लगाया जा सकता है कि देश भर में कितने ऐसे पाठक होंगे जो साहित्य को पढ़ने का शौक रखते होंगे तथा जो शौक रखते भी होंगे वह सभी अपनी घर-गृहस्थी के फेर में पढ़ने की वजह से तथा समयाभाव के कारण कितना समय अपने शौक को पूरा करने को दे पाते होंगे यह कहना अभी संभव नहीं है। फिर भी इन सब बातों से इतर एक आम पाठक जो वाकई साहित्य प्रेमी है तथा किसी भी हालत में अच्छा साहित्य पढ़ना चाहता है वह किताबों की बढ़ी हुई कीमत के कारण साहित्य खरीद नहीं पाता तथा अपने शौक की तिलांजलि देकर आगे बढ़ जाता है।

इन पुस्तकों की बिक्री बड़ी हुई कीमत के कारण सबसे ज्यादा प्रभावित होती रही है। आज कोई भी पुस्तक उठाकर देख लो उसके पृष्ठों से ज्यादा उसकी कीमत मिलेगी। अब अगर 50-70 पृष्ठ की पुस्तक की कीमत 200-250 की बीच होगी तो क्योंकर पाठक उसको खरीदेगा। अब पाठक अपनी पंसद की पुस्तक को पढ़ना चाहता है, मगर ज्यादा कीमत होने के कारण खरीद नहीं पाता है। इस वजह से पुस्तकों की बिक्री प्रभावित हो रही है, इस समस्या के समाधान के लिये निजी प्रकाशन व शासन को इस दिशा मे ठोस कदम उठाने होगें तभी पुस्तकों की बिक्री संतोषजनक बनायी जा सकती है। पुस्तकों की कीमत कम रखी जावे व ज्यादा से ज्यादा पुस्तकों को पेपरबेक में छापा जाना चाहिये

जिससे पुस्तकों को आम पाठक नसीब हो सके।

हिंदी में प्रकाशित पुस्तकों के प्रकाशनों का कहना कि पुस्तकों की बिक्री संतोशजनक नहीं है व इनके प्रकाशन में जितनी लागत आती है उतना मुनाफा इनकी बिक्री से नहीं हो पाता है व हर बार नुकसान ही उठाना पड़ता है। इस संबंध मे प्रख्यात कथाकार ममता कालिया अपने एक साक्षात्कार में इस प्रकार खुलासा करती हैं कि- "किताबें इतनी मंहगी होती है कि सभी के लिये इसे खरीदना संभव नहीं हो पाता। खुद मेरी किताबें इतनी महंगी है कि मैं उन्हें खरीद नहीं पाती......आप सोचिए, साहित्य की रफ्तार पत्रिकाएं हैं।'' (1) यहाँ पर ममता जी के किताबों के महंगी होने के संबंध में स्पष्टतः विचार परिलक्षित होते है।

"...आज प्रकाशक सपाट रूप से कहते है कि 'कोई पुस्तकें खरीदता नहीं', अधिकतर 'पुस्तकें तो पांच सौ प्रतियों के प्रिंट ऑर्डर से छपती हैं। वह भी रखी रहती है', आदि।'' (2) कुछ हद तक यह बात सही भी हो सकती है परन्तु देश मे हर वर्ष आयोजित होने वाले पुस्तक मेले कुछ और ही नजारा बयाँ करते हैं। यह पुस्तक मेले देश में हर वर्ष आयोजित किये जाते है जिनमें देश भर के विभिन्न प्रकाशनों के साथ-साथ विदेशों के प्रकाशन भी अपनी पुस्तकों को बिक्री के लिये भाग लेते हैं व पुस्तक प्रेमी बड़ी संख्या में एकत्रित होते हैं और अपनी पसंद की पुस्तकों को खरीदते व साहित्यिक मित्रों को भेंट स्वरूप प्रदान करते हैं। इन मेलों में लाखों करोड़ों की पुस्तकों की बिक्री इस बात को पुष्ट करती है कि आज भी देश मे अच्छी पुस्तकों को खरीदने वाले पाठकों की कमी नही है बशर्ते उन्हें सही जगह व पुस्तकों का बेहतर प्रचार-प्रसार मिले तो पाठक मिल ही जायेंगे।

एक निजी समाचार पत्र में लेखक व पाठक के बीच के रिश्ते को इस प्रकार परिभाषित किया गया है- "हिंदी में जो लेखक हैं वही पाठक है। यानी, लोग एक दूसरे का लिखा पढ़ लेते है और आपस में तारीफें करते रहते हैं। पाठकों की कमी का अधिक रोना वे ही रोते है जो खुद को बड़ा लेखक व हिंदीसेवी समझते हैं और तमाम पद पुरस्कार तथा सम्मान झटक लेना चाहते हैं। वे यह भी मानते हैं कि गलती उन लोगों की है जो उनका लिखा पढ़ते नहीं है। यह सवाल स्वयं को हिंदी लेखक समझने वाले तमाम लोगो से है कि आपने कितने पाठक बनाऐं हैं ? क्या आप लेखन के नाम पर विचारधारा, अपनी कुंठा और बौद्धिकता ही परोस रहे हैं और सोच रहे है कि लोग इसे पढ़कर स्वयं को धन्य मानेंगे ? या फिर आपने कभी ऐसा लिखने की कोशिश की है जिसे पढ़कर मन में गुदगुदी हो, दिल भर आए, भावनाएं उमड़ने लगे, प्रेरणा मिले या उत्सुकता जागे? रोना-धोना छोड़िए। ऐसा लिखिए, जो असरदार हो, पढ़ने वाले के दिल तक पहुँचे।'' यहाँ लेखक की लेखनी व उसके अन्तर्द्वन्द्व के संदर्भ में बहुत कुछ देखने को मिलता है।

प्रायः देखा जाता है कि पुस्तकों की अच्छी बिक्री हेतु उनका प्रचार प्रसार कम ही किया जाता है जो कि किसी भी दृष्टि से उचित नहीं है। वर्तमान समय प्रचार प्रसार का समय है, अगर वस्तु का प्रचार प्रसार बेहतर ढंग से नहीं किया जायेगा तो वह आम आदमी की जानकारी में नहीं आ पायेंगी और उसकी बिक्री भी प्रभावित होगी। आज हम टेलीविजन व अन्य मीडिया संसाधनों के माध्यम से देखते हैं कि रोजाना इंसानों के काम में आने वाली दैनिक वस्तुऐं चाहे वह सुई से लेकर हवाई जहाज ही क्यों न हो, इन पर लाखों-करोड़ों रुपये विज्ञापन के रूप में खर्च किये जाते है। इस प्रचार प्रसार का लाभ भी विज्ञापन कंपनियों एवं उस वस्तु की बिक्री पर कई गुना होता है। परंतु पुस्तकों की बिक्री हेतु किसी प्रकार का विज्ञापन नहीं किया जाता है, क्योंकि विज्ञापन आदि पर लाखों रुपये का खर्चा आना संभावित होता है। फिर इस बात की भी कोई गारंटी नहीं होती है कि लाखों रुपये खर्च करके पुस्तकों की बिक्री हो ही जायेगी। इस वजह से अच्छी-से-अच्छी पुस्तकें आम पाठकों की जानकारी में न आने के कारण उनकी पहुँच से दूर हो जाती है तब उसकी बिक्री का तो सवाल ही नहीं उठता। पुस्तक की बिक्री हेतु उसका आम पाठक तक जानकारी पहुँचना जरूरी होता है। पाठक पुस्तक पढ़ना चाहता है परंतु आवश्यक प्रचार प्रसार के अभाव में पुस्तक की बिक्री प्रभावित होती है। यहाँ यह कहना भी आवश्यक है कि पुस्तकों के प्रकाशकों द्वारा हमेशा यह आरोप लगाये जाते है कि पाठकों में साहित्य के प्रति उदासीनता हो गई है, गलत है।

अगर पाठकों की साहित्यिक उदासीनता का प्रकाशनों द्वारा रोना रोया जाता है तो यह पुस्तक मेले देश भर मे आयोजित नहीं किये जाते जिसका सबसे बडा उदाहरण दिल्ली में प्रतिवर्ष फरवरी माह में आयोजित होने वाले पुस्तक मेले का लिया जा सकता है जो आज भी रिकार्ड पुस्तकों की बिक्री के लिये जाना जाता है और पाठकों के द्वारा इसका प्रतिवर्ष इन्तजार किया जाता है। "देशभर के रेलवे स्टेशनों के बुक स्टॉल गवाह है कि न केवल सस्ते उपन्यास, बल्कि हिंदी में उपलब्ध सर्वोत्तम, स्तरीय साहित्य भी लोगों द्वारा निरंतर खरीदा जाता रहा है। वह भी बिना विज्ञापन। उसे साधारण पाठक खरीदते है। शरतचंद्र, बंकिम चंद्र, रवीन्द्रनाथ, प्रेमचंद, बच्चन, दिनकर, अज्ञेय, वृंदावनलाल वर्मा, अमृतलाल नागर, नरेन्द्र कोहली, टॉलस्टाय, चेखव, जेन ऑस्टिन, शेक्सपियर, डिकेंस, आर्वेल आदि अनेक लेखकों के जितने भी संस्करण, जितने तरह के प्रकाशकों द्वारा छापे जाते हैं, सब बिक जाते है।'' (3) हां आज बेहतर प्रचार प्रसार के अभाव में पुस्तकों की जानकारी पाठकों तक पहुंच नही पाती है इस कारण अच्छी से अच्छी पुस्तकें पाठकों के इंतजार मे दम तोड़ देती हैं। आज यह आवश्यक हो गया है कि पुस्तकों का बेहतर तरीके से प्रचार प्रसार किया जाये तो देश मे पुस्तकों को खरीदने वाले पाठकों की कमी नहीं है। सरकार को भी ऐसे तरीके खोजने होंगे जिनके माध्यम से पुस्तकों

की जानकारी आम पाठकों तक बेहतर तरीके से पहुँच सके तभी इनकी बिक्री को संतोषजनक बनाया जा सकता है।

आज पुस्तकों की सफलतम बिक्री हेतु प्रकाशनों की निगाह में एक ही सफल तरीका बचा है, थोक में बिक्री करने का जो यह प्रकाशक देश भर में फैले हुए सरकारी पुस्तकालय, गैर सरकारी पुस्तकालय एवं भारत सरकार के कई संस्थानों को करते है। यह विभाग अपने लिये थोक में पुस्तकों का क्रय करता है, अतः प्रकाशक भी इन्ही संस्थानों से संपर्क स्थापित कर अपनी पुस्तकों को बिक्री करते है तथा अच्छा लाभ प्राप्त करते है। इस कारण भी वे पुस्तकों का कम ही प्रचार प्रसार करते है, परंतु यहाँ भी जान पहचान व घूसखोरों का बोलबाला रहता है जो इन चीजों में निपुण होते हैं वे अच्छा लाभ कमा लेते हैं और जिनकी इन संस्थानों में जान पहचान नहीं होती है उन्हें निराश होना पड़ता है। इस सब के वावजूद भी पुस्तकों का लाभ आम पाठकों को नहीं मिल पाता है। क्योंकि यह पुस्तकें उक्त संस्थानों की अलमारियों की शोभा बढ़ाती रहती है तथा बेहतर रख रखाव व पाठकों की कमी होने की वजह से दीमकों की खुराक बनकर खत्म हो जाती है।

हममें से बहुतों को वह जमाना याद होगा, जब हिंद पॉकेट बुक्स ने पुस्तक व्यवसाय में क्रांति ला दी थी.....जिसके कारण क्लासिक्स और अन्य अच्छी किताबें हर पुस्तक प्रेमी के हाथ में दिखाई देने लगी थी। हिंद पॉकेट बुक्स ने भी लाखों किताबें बेची होंगी, जिनमे से अधिकतर की कीमत एक रूपया थी। इसे हम पुस्तक संस्कृति और व्यावसायिकता का मधुर मिलन कह सकते हैं......वास्तव में, प्रकाशक लेखक और पाठक के बीच एक संवेदनशील पुल है। यह पुल ऐसा होना चाहिए जिस पर दोनों ओर से यात्रियों का तांता लगा रहे।'' (4)

यहाँ पर भारतवर्ष के सबसे सफलतम माने जाने वाले प्रकाशन की चर्चा किये बगैर बात पूर्ण नहीं हो सकती है। यह प्रकाशन है, गीताप्रेस गोरखपुर जो कई वर्षो से धार्मिक साहित्य प्रेमियों को सस्ती व अच्छी पुस्तके उपलब्ध करवाता आ रहा हैं। आज की मँहगाई में भी इस प्रकाशन ने अपने सुधी पाठकों के हित को देखते हुये पुस्तकों के दामों में बहुत ज्यादा बढ़ोतरी नहीं की है। अभी भी इस प्रकाशन से प्रकाशित पुस्तकें आम पाठकों के बीच लोकप्रिय बनी हुई है। इस लोकप्रियता का एक कारण यह भी है कि इस प्रकाशन ने सीधे अपने पाठकों के बीच पुस्तकों को पहुँचाने के लिये देशभर में अपनी एजेंसियां खोल रखी है, जिसके कारण पाठक सीधे इन एजेंसियों पर जाकर पुस्तक को खरीद सकता है। इस तरह पाठक का पुस्तक को मंगाने पर होने वाला डाकखर्च व्यय (40 से 50 रु.) भी बच जाता है जिसका सीधा फायदा पाठकों को होता है।

उदाहरण के रूप में इस प्रकाशन से प्रकाशित रिकार्ड बिक्री के लिये पहचाने जाने वाली पुस्तक 'श्री रामचरित मानस' धार्मिक हिंदी ग्रंथ व 'सुंदर काण्ड' पुस्तक का नाम ले सकते है जो आज प्रत्येक हिंदू धर्म को मानने वाले पाठकों के घर में देखने को मिल जायेगी। इन ग्रंथों को घर का प्रत्येक सदस्य पढ़कर अपनी जिज्ञासा शांत करता है। एवं इन पुस्तकों की प्रतियाँ विशेष धार्मिक अवसरों पर उपहार स्वरूप भेंट करता है। फलस्वरूप यह ग्रंथ अपने पाठकों के बीच शुरुआत से ही अत्यधिक लोकप्रिय रहा है। इसी लोकप्रियता के कारण इन पुस्तकों की निरन्तर माँग बनी हुई है। आज भी अपने प्रथम प्रकाशन से यह ग्रंथ निरन्तर छपे चले आ रहे है व इसके कई संस्करण प्रकाशित हो चुके हैं। पाठकों के बीच इनके लोकप्रिय होने का एक अन्य कारण इनका मूल्य बेहद कम होना भी है। 'श्री रामचरित मानस' हार्डबाउंड में लगभग 800 पृष्ठों का है तथा इसका मूल्य मात्र 75 रु. रखा गया है जो किसी भी लिहाज से पाठकों की जेब से दूर नहीं है। इसी तरह 'सुंदर काण्ड' 40 से 50 पृष्ठों का होने के बावजूद मूल्य महज 5 रुपये है। कहा जा सकता है कि पाठकों से इन पुस्तकों में आयी लागत मूल्य ही वसूला जाता है। अतएव यह ग्रंथ आज सबसे ज्यादा बिकने वाले कहे जा सकते हैं।

आज पुस्तकों की बिक्री इन्टरनेट के माध्यम से भी की जा रही है। यह एक अच्छा कदम है, परंतु यहाँ भी बड़ी हुई कीमतें पुस्तकों की बिक्री प्रभावित करती हैं तथा जागरूक पाठकों को निराश ही होना पड़ता है। आज नई-नई तकनीक का समय है जिसमें सबसे महत्वपूर्ण इन्टरनेट का होना है। आम जनमानस में इन्टरनेट एक लोकप्रिय व सशक्त माध्यम बन चुका है, जहाँ पर कई कंपनियाँ पुस्तकों को बेच रही है। कई हजार पुस्तकों को गूगल बुक एवं ई-बुक के रूप में अपलोड करके रखा गया है जिन्हें एक आम पाठक निःशुल्क पढ़ सकता है व इन पुस्तकों की जानकारी ले सकता है। कई बेवसाइड हिंदी पुस्तको के संदर्भ में अच्छी जानकारियाँ पाठकों तक पहुँचा रही है, लेकिन इन्टरनेट शहरी पाठकों के पास उपलब्ध हो सकता है। ग्रामीण क्षेत्र तो अभी भी इन माध्यमों से अछूता ही माना जायेगा। जो पाठक अपनी निजी लायब्रेरी बनाकर अध्ययन करते है उन्हें तो यहाँ से निराशा ही हाथ लगेगी।

आज पुस्तकों की बिक्री इन्टरनेट के माध्यम से भी की जा रही है। यह एक अच्छा कदम है, परंतु यहाँ भी बड़ी हुई कीमतें पुस्तकों की बिक्री प्रभावित करती हैं तथा जागरूक पाठकों को निराश ही होना पड़ता है। आज नई-नई तकनीक का समय है जिसमें सबसे महत्त्वपूर्ण इन्टरनेट का होना है। आम जनमानस में इन्टरनेट एक लोकप्रिय व सशक्त माध्यम बन चुका है, जहाँ पर कई कंपनियाँ पुस्तको को बेच रही है।

साहित्य जगत् में कुछ ऐसे भी पाठक होते हैं जो सस्ता साहित्य पढ़ने का शौक रखते हैं उन्हें यह किताबे बाजार में हाथ ठेलों पर 20 से 25 रुपये में आसानी से प्राप्त हो जाती है जिनमे सेक्स संबंधी, फिल्मी गानों से संबंधित, चुटकुलों आदि से संबंधित, जासूसी उपन्यास एवं कहानियों से संबंधित आदि। इन किताबों का अपना एक पाठकवर्ग होता है तथा यह पुस्तकें खासकर इन्ही के लिये छापकर उपलब्ध करायी जाती हैं क्योंकि एक तो यह किताबें बेहद सस्ती होती है तथा मनोरंजक भी व आसानी से कहीं पर भी उपलब्ध हो जाती हैं। इन पुस्तकों को छापने में भी लागत कम आती है अतः इन्हें थोक में छपवाकर देश भर में फैले इन प्रकाशकों के ऐजेन्टों के माध्यम से बिक्रय किया जाता है। इन पुस्तकों पर प्रकाशकों को लागत का कई गुना लाभ मिलता है जो कि आज के नजरिये से बुरा नहीं है। इन पुस्तकों की सर्वाधिक बिक्री रेलवे स्टेशनों व बस स्टेण्ड आदि पर ज्यादा देखने को मिलती है क्योकि 20 से 25 रुपये वाली मनोरंजक पुस्तक अगर किसी यात्री का यात्रा के दौरान भरपूर मनोरंजन करती है तो यह बुरा नहीं है। ऐसे में इन किताबों को पैसा वसूल किताबें कहे तो अतिशयोक्ति नहीं होगी। बिक्री के लिहाज से प्रकाशनों के लिये सफल कदम माना जा सकता है परंतु यह पुस्तकें सभ्य समाज का निर्माण नहीं करती है, क्योंकि इन पुस्तकों में दोयम दर्जे का साहित्य ही पाठकों को परोसा जाता है, उच्च साहित्य नहीं।

इस प्रकार साहित्यिक पुस्तकों के इतिहास पर नजर डालें तो हम पाते हैं कि कुछ कालजयी किताबें जैसे-महान साहित्यकार मुंशी प्रेमचंद के उपन्यास- 'गोदान', 'निर्मला', 'रंगभूमि', 'गबन' एवं 'कर्मभूमि' आदि। डॉ. धर्मवीर भारती के विश्वप्रसिद्ध उपन्यास 'गुनाहों का देवता' व 'सूरज का सांतवा घोड़ा' आदि। अमृता प्रीतम की पुस्तकें पिजंर' व 'रसीदी टिकिट' आदि। कमलेश्वर का बेहद लोकप्रिय उपन्यास 'कितने पाकिस्तान' आदि। यहां सैकड़ों पुस्तकों का नाम लिया जा सकता है जो अपने पाठकों के बीच अत्यधिक लोकप्रिय रहीं। इन पुस्तकों की मांग में आज तक कोई कमी नहीं आई है तथा इनकी मांग निरंतर पाठकों के बीच अभी भी बनी हुई है। इन पुस्तकों के कई संस्करण प्रकाशित हो चुके हैं। पाठक इनको आज भी खरीद रहा है, क्योंकि यह सभी पुस्तकें इतनी लोकप्रिय पुस्तकें है कि इनका एक खासवर्ग हमेशा ही इनको पंसद करता रहा है। परंतु आज न ऐसे लेखक बचे है जो ऐसी किताबों की रचना कर सके और न ही ऐसे पाठक है जो इतनी महंगी किताबों को खरीद सके। पुस्तकों के संबंध में एक महान साहित्यकार ने कहा है कि भारतवर्ष में एक आम पाठक पुस्तकें पढ़ना तो चाहता है परंतु खरीदकर नहीं, मांगकर। इस तरह पैसा भी बच जाता है व पुस्तक लौटायी जाये यह भी जरूरी नहीं है।

पुस्तकों को आम जनमानस में लोकप्रिय बनाने के लिये शासन को भी इस दिशा में बेहतर कदम उठाने चाहिये ताकि हिंदी पुस्तकों की बिक्री संतोषजनक बनायी जा सके। इस संबंध में कुछ तरीके अपनाये जा सकते है-सर्वप्रथम पुस्तकों की कीमत किसी भी लिहाज से ज्यादा न हो, ज्यादा से ज्यादा पुस्तकों के पैपरबेक संस्करण निकाले जाने चाहिये, बेहतर प्रचार प्रसार किया जाना चाहिये ताकि देश के कोने-कोने में संबंधित पुस्तकों की जानकारी सभी तक पहुंच सके। इन उपायों से हम किसी हद तक पुस्तकों की बिक्री संतोशजनक कर सकते है तथा एक सभ्य समाज का निर्माण कर सकते हैं। चूंकि पुस्तकों का पाठक एक आम आदमी होता है अतः पुस्तकों का उन तक पहुँचना आवश्यक है।

पुस्तकों की दशा व दिशा से पाठकों का अवलोकन कराने के पश्चात् देश भर में प्रकाशित हो रही छोटी-बड़ी लघु पत्रिकाओं की रोचक जानकारी से पाठकों का परिचय कराना आवश्यक हो गया है। हिंदी में प्रकाशित हो रही विभिन्न प्रकार की पत्रिकायें जिनमे मासिक, द्वैमासिक, त्रैमासिक, छःमाही एवं वार्षिक है, इन पत्रिकाओं की स्थिति व उनके बेहतर प्रचार प्रसार के संबंध में विचार किया गया है।

आज हिंदी में देश से कई छोटी बडी साहित्यिक पत्रिकायें प्रकाशित हो रही है एवं इन पत्रिकाओं का पाठक वर्ग भी बहुतायत में है जो इनको खरीदता व पढ़ता है इस दृष्टि से इनकी स्थिति सुदृढ़ कही जा सकती है। एक अनुमान के मुताबिक देश में आज 15 हजार से अधिक आई.एस.एस.एन. वाले जर्नल और शोध पत्रिकाएं प्रकाशित हो रही हैं। भारत दुनिया में सर्वाधिक पंजीकृत पत्र पत्रिकाएं प्रकाशित करने वाला देश है। चीन के बाद दुनिया भर में दूसरे स्थान पर सर्वाधिक प्रतियाँ भारत से ही प्रकाशित हो रही है। 31 मार्च 2014 तक देश में 94067 पत्र पत्रिकाएं पंजीकृत थे। इनमें से 8155 आवधिक और शेश 12511 दैनिक प्रकाशन है। इनमे हिंदी भाषा की पत्र पत्रिकाऐं सर्वाधिक है। उ.प्र. से सर्वाधिक पंजीकृत पत्र पत्रिकाओं का प्रकाशन हो रहा है।

यह पत्रिकायें आज व्यापक रूप सें प्रकाशित हो रही है व इनका क्षेत्र फैलता जा रहा है। पाठकों को पत्रिकाओं के माध्यम से साहित्यिक क्षेत्र में हो रही हर छोटी बड़ी घटनाओं की जानकारी हिंदी के नये पुराने रचनाकारों की लेखनी से प्राप्त होती रहती है। इस संबंध में स्व. राजेन्द्र यादव जी के अंतिम भाषण के रूप में दृश्यांतर मासिक पत्रिका में दर्ज लघु पत्रिकाओं के संबंध में विचारों को जानना जरूरी है वे कहते हैं कि-''...आप विश्वास कीजिए साप्ताहिक, मासिक, त्रैमासिक सब मिलाकर पाँच सात पत्रिकाएं तो रोज मेरे पास आती है। ये वो हैं जो आती हैं, ना जाने कितनी और हैं जो नहीं आती। हिंदी में आज करीब दो से ढाई हजार पत्रिकाएं प्रकाशित हो रही है और उनको पलटना तक मुश्किल है। इसलिये ये कहना कि हिंदी में पत्रिकायें नहीं है गलत है...मुझे लगता है कि पत्रिका में जो चीज विशिष्ट होती है वह है रचनायें।

कई पत्रिकाओं में हम एक ही तरह की चीजें पाते हैं। कोई भी विषय ले जैसे उपन्यास पर केन्द्रित पत्रिका 'उपन्यास' नाम से ही निकलती थी। जैसे आलोचना पर केन्द्रित पत्रिका है और कविताओं पर तो खैर जरूरत ही नहीं कुछ कहने की। मेरा खयाल है कि 50 पत्रिकाएं ऐसी हैं जो सिर्फ कविताओं से भरी रहती है जिन्हें कोई पढ़ता है या नहीं, मालूम नहीं। हर अच्छी पत्रिका में संपादक को एक लीक पर चलना होता है कि उसने 20-25 पन्ने कविता के रंग डाले और जान छूट गई, और कुछ सोचने की जरूरत ही नही।'' (5)

हिंदी में प्रकाशित होने वाली साहित्यिक लघु पत्रिकाओं की स्थिति बेहतर कही जा सकती है क्योंकि एक तो इनकी कीमत कम होती है व आसानी से यह पत्रिकायें पाठकों को रेलवे स्टेशन, बस स्टैण्ड एवं देश के प्रत्येक शहरों में खुले पुस्तकों व पत्र पत्रिकाओं के स्टॉल पर प्राप्त हो जाती है। अतः इन पत्रिकाओं की स्थिति पुस्तकों की अपेक्षा बेहतर ही मानी जा सकती है।

इन पत्रिकाओं की लोकप्रियता का एक कारण यह भी है कि कम कीमत में यह पाठकों तक पहुँच रही है और इनके पाठकों को खरीदकर पढ़ने में कोई गुरेज नहीं होता है। इनकी बिक्री भी दिनों दिन संतोषजनक होती जा रही है। बढ़ती हुई महंगाई का असर इन पत्र-पत्रिकाओं पर देखने को मिला है तथा इनकी कीमतों में मूल्य वृद्धि भी हुई है। परंतु अभी भी कीमतें पाठक की जेब से बाहर नही है अतः इनकी बिक्री फिलहाल संतोषप्रद कही जा सकती है। देश में कई पुरानी पत्रिकायें बेहतर प्रचार प्रसार के अभाव में व आर्थिक स्थिति सुदृढ़ न होने के कारण असमय बंद हो चुकी है। फिर भी हिंदी साहित्यिक पत्रिकाओं का एक अपना बाजार है जो इनको जिंदा बनाये रखे हुये है।

आज महंगी पत्रिकाओं में उज्जैन से प्रकाशित मासिक साहित्यिक पत्रिका 'समावर्तन' का नाम लिया जा सकता है। इस मासिक पत्रिका की कीमत 150 रुपये मासिक व वार्षिक 1500 रुपये है जो किसी भी दृष्टि से उचित नहीं है क्यों कि इतनी कीमत में एक अच्छी पुस्तक पाठक को मिल सकती है तो वह पत्रिका क्योंकर खरीदना चाहेगा। लगता है इस पत्रिका का प्रकाशन अमीर पाठकों के लिये किया जा रहा है। आम पाठकों को इसे पढ़ने के लिये सोचना बंद करना पड़ेगा। इसके विपरीत देश में सस्ती पत्रिकायें भी प्रकाशित हो रही हैं जिनकी कीमत बहुत ही कम रखी गयी है। इस संदर्भ में हिमाचल प्रदेश शिमला से प्रकाशित मासिक पत्रिका 'हिमप्रस्थ' का नाम लिया जा सकता है। इस पत्रिका के संपादक श्री वेद प्रकाश हैं। तथा इस पत्रिका की कीमत मात्र 15 रुपये मासिक व 150 रुपये वार्षिक रखी गयी है। यह एक लगभग 56 पृष्ठ की संपूर्ण साहित्यिक पत्रिका है जिसमें सभी विचारों को समाहित किया जाता है। यह पत्रिका कम कीमत में पाठकों का मार्गदर्शन करती है जो स्वागतयोग्य है, अतः ऐसी पत्रिकाओं का बेहतर प्रचार-प्रसार किया जाना चाहिये व पाठकों तक ऐसी पत्रिकाओं की जानकारी पहुंचायी जानी चाहिये। पाठक स्वयं अपने स्तर से ऐसी लघु पत्रिकाओं का प्रचार प्रसार अपने साहित्यिक मित्रों को जानकारी देकर कर सकते है। यह एक ऐसा साहित्यिक कर्म होगा जिसमें पाठकों के साथ-साथ संपूर्ण राष्ट्र का भला होगा।

वर्तमान में लघु पत्रिकाओं के प्रकाशन को दो भागों में बांटा जा सकता है, एक शासकीय प्रकाशन दूसरा गैर शासकीय प्रकाशन। आज देश में बहुतायत में शासकीय पत्रिकायें नियमित रूप से निकल रही है जिनमें से कई पत्रिकाओं को सरकार द्वारा निःशुल्क वितरण हेतु रखा गया है, ऐसी पत्रिकाओं का उद्देश्य पाठकों के बीच हिंदी भाषा व साहित्य का बेहतर प्रचार प्रसार करना है। इन पत्रिकाओं को पाठकों का भी भरपूर प्यार व स्नेह मिल रहा है। इन पत्रिकाओं का संपादन का भार वयोवृद्ध वरिष्ठ मूर्धन्य साहित्यकार संभाल रहे है जिन्होंने तमाम जिंदगी पत्रकारिता व साहित्यिक क्षेत्र में गुजारी है। पत्रकारिता का संपूर्ण अनुभव इन पत्रिकाओं में मिलता है। पत्रिका को निरंतर गतिमान बनाये रखने के लिये सरकारी आर्थिक मदद भी प्राप्त होती है जिसके कारण ये पत्रिकायें पाठकों के बीच निरंतर अपनी उपस्थिति दर्ज कराने में सहायक सिद्ध हो रही है। आज इन पत्रिकाओं की पाठक संख्या हजारों में नही लाखों में है जो इनके प्रकाशित होने का हर माह इंतजार करते है।

ऐसी पत्रिकाओं में कुछ बेहतरीन पत्रिकाओं के नाम लिये जा सकते है जो पाठकों पर अपनी पकड़ बनाये हुये हैं। हिंदी की डाइजेस्ट मासिक साहित्यिक पत्रिका 'नवनीत', जिसका प्रकाशन भारतीय विद्या भवन, क.मा. मुंशी मार्ग, मुम्बई से हर माह होता है। इस पत्रिका के संपादक विश्वनाथ सचदेव है। महात्मा गांधी अंतर्राष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय वर्धा महाराष्ट्र तीन पत्रिकाओं का प्रकाशन करता है जिसमें पहली है-'बहुवचन' अंतर्राष्ट्रीय त्रैमासिक हिंदी पत्रिका, वर्तमान में इस पत्रिका के संपादक-अशोक मिश्र है। दूसरी पत्रिका है- 'पुस्तक-वार्ता' द्वैमासिक समीक्षा पत्रिका, एवं तीसरी पत्रिका है- 'हिन्दी लैग्वेज डिस्कोर्स राइटिंग' यह त्रैमासिक अंग्रेजी की पत्रिका है।

संस्कृति मंत्रालय भारत सरकार 'संस्कृति' नामक सांस्कृतिक विचारों की प्रतिनिधि अर्द्धवार्षिक पत्रिका का प्रकाशन करता है। इस पत्रिका के संपादक भारतेश कुमार मिश्र है जो संयुक्त निदेशक संस्कृति मंत्रालय भारत सरकार के पद पर पदस्थ है। यह पत्रिका पहले त्रैमासिक प्रकाशित की जाती थी और भारत सरकार द्वारा इसकी केवल 400 प्रतियाँ मुद्रित करवायी जाती थी। बीच मे यह पत्रिका कुछ समय के लिये बंद कर देनी पड़ी थी इसके बाद अक्तूबर 2000 से इस पत्रिका का पुनः प्रकाशन किया गया। इस बार पत्रिका को छमाही कर दिया गया। अब इस पत्रिका की

3000 प्रतियाँ मुद्रित करवायी जाती हैं जो देश के लगभग समस्त विश्वविद्यालयों, पुस्तकालयों, लेखकों, देश विदेश के सुविख्यात विद्वानों को निःशुल्क उपलब्ध करवायी जाती है। इस पत्रिका की विभिन्न विशेषताओं के साथ-साथ यह भी एक विशेषता है कि यह पत्रिका पूर्णतः निःशुल्क है।

उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान हजरतगंज लखनऊ द्वारा पत्रिका प्रकाशन योजना व बाल साहित्य सम्बर्धन योजना के अन्तर्गत 'साहित्य भारती' त्रैमासिक पत्रिका तथा बच्चों की प्रिय पत्रिका 'बालवाणी' द्वैमासिक का प्रकाशन किया जाता है। साहित्य भारती त्रैमासिक पत्रिका की संपादिका डॉ. अमिता दुबे जी है। इस त्रैमासिक पत्रिका के प्रतिवर्ष चार अंक प्रकाशित किये जाते है। इसी संस्थान द्वारा बच्चों की प्रिय पत्रिका बालवाणी द्वैमासिक का प्रकाशन किया जाता है जिसका स्वागत बाल पाठकों एवं सुधी समीक्षकों द्वारा निरंतर किया जा रहा है। इस पत्रिका के वर्ष में छह अंक प्रकाशित किये जाते है।

राजस्थान साहित्य अकादमी उदयपुर से प्रकाशित मासिक पत्रिका 'मधुमती' के प्रबंध संपादक डॉ. प्रमोद भट्ट है। साहित्य और संस्कृति की मासिक पत्रिका 'वागार्थ', कोलकाता से प्रकाशित होती है जिसके संपादक एकान्त श्रीवास्तव व कुसुम खेमानी है। राष्ट्रभाषा हिदी एवं साहित्य के मूल्यों को समाज तक पहुँचाने के उद्देश्य से वर्ष 1927 में पत्रिका 'वीणा' का प्रकाशन प्रारंभ किया था तब से यह पत्रिका निरंतर प्रकाशित हो रही है। वर्तमान में इसके संपादक डॉ. विनायक पाण्डेय है। यह पत्रिका मध्य प्रदेश के इन्दौर जिले से प्रकाशित हो रही है।

हिमाचल प्रदेश शिमला से सूचना एवं जन संपर्क विभाग द्वारा प्रकाशित गिरिराज साप्ताहिक तथा मासिक पत्रिका हिमप्रस्थ का प्रकाशन किया जाता है। 'हिमप्रस्थ' के संपादक वेद प्रकाश हैं जबकि 'गिरिराज' के संपादक श्री विनोद भारद्वाज हैं। यह साप्ताहिक वर्ष 1978 से प्रत्येक बुधवार को नियमित तौर पर प्रकाशित हो रहा है। भाषा विभाग हिमाचल प्रदेश द्वारा शिमला से ही एक और साहित्यिक द्वैमासिक पत्रिका 'विपाशा' का प्रकाशन किया जा रहा है। पत्रिका के मुख्य संपादक श्री अरुण कुमार शर्मा हैं। इस पत्रिका की एक प्रति का मूल्य 15 रुपये व वार्षिक 60 रुपये है। यह पत्रिका भी कम कीमत में पाठकों को भारतीय संस्कृति एवं साहित्यिक पृष्ठभूमि से बखूबी परिचय करा रही है। आज जब सब जगह मंहगाई की मार से आम आदमी जूझ रहा है तब साहित्यक लघु पत्रिकाओं की बड़ी हुई कीमतो को चुनौती पेश कर 'हिमप्रस्थ' व 'विपाशा' जैसी पूर्णरूपेण साहित्यिक पत्रिकायें पाठकों की जिज्ञासाओं को शांत कर रही हैं, ऐसी पत्रिकाओं का सर्वत्र स्वागत होना चाहिये एवं प्रत्येक साहित्यिक प्रेमी पाठकों को एक बार अवश्य ही देखना चाहिये।

हिन्दुस्तानी प्रचार सभा द्वारा 'हिन्दुस्तानी जबान' नामक एक द्विभाषी पत्रिका का प्रकाशन किया जाता है। यह पत्रिका हिंदी और उर्दू दोनों भाषाओं का रूप सामने रखती है। पत्रिका की प्रधान संपादक डॉ. सुशीला गुप्ता जी है एवं पत्रिका मुम्बई से प्रकाशित हो रही है। मुगलसराय चन्दौली से प्रकाशित त्रैमासिक पत्रिका 'रेलमुक्ता' एक निःशुल्क पत्रिका है। पत्रिका के संपादक श्री दिनेशचन्द्र जी है। प्रकाशन विभाग नई दिल्ली द्वारा साहित्य व संस्कृति की मासिक पत्रिका 'आजकल' का प्रकाशन वर्ष 1945 से निरंतर किया जा रहा है। वर्तमान में पत्रिका की संपादिका फरहत परवीन है। आज इस पत्रिका के देश में हजारों नहीं बल्कि लाखों पाठक सदस्य हैं जो इस पत्रिका को खरीदते है।

म.प्र. हिंदी प्रचार सभा भोपाल से साहित्य की द्वैमासिक पत्रिका 'अक्षरा' प्रकाशित हो रही है। पत्रिका के प्रधान संपादक डॉ. कैलाशचन्द्र पंत जी है एवं पत्रिका की संपादिका डॉ. सुनीता खत्री जी है। भारत भवन भोपाल से साहित्य की आलोचनात्मक त्रैमासिक पत्रिका 'पूर्वग्रह' प्रकाशित की जा रही है। पत्रिका के प्रधान संपादक रामेश्वर मिश्र 'पंकज' है। दूरदर्शन की मीडिया, साहित्य, संस्कृति और विचार की साहित्यिक मासिक पत्रिका 'दृश्यांतर' का प्रकाशन नई दिल्ली से किया जा रहा है। पत्रिका के संपादक श्री अजीत राय जी है। इस पत्रिका ने कम समय में ही पाठकों के बीच अपनी जगह बना ली है।

राजभाषा विभाग गृह मंत्रालय भारत सरकार नई दिल्ली से 'राजभाषा भारती' नामक एक त्रैमासिक पत्रिका का प्रकाशन किया जा रहा है। इस पत्रिका के संपादक श्री हरिन्द्र कुमार जी है। सहायक संपादक श्री राकेश शर्मा 'निशीथ' जी है। यह पत्रिका पूर्णतः निःशुल्क है। हिंदी अकादमी से त्रैमासिक पत्रिका 'इन्द्रप्रस्थ भारती' प्रकाशित होती है जिसका प्रकाशन नई दिल्ली से किया जा रहा है व पत्रिका का संपादन डॉ. हरिसुमन विष्ट जी संभाल रहे है। साहित्य अकादमी नई दिल्ली से एक द्वैमासिक पत्रिका 'समकालीन भारतीय साहित्य' का प्रकाशन किया जा रहा है। केन्द्रीय हिंदी निदेशालय की पत्रिका 'भाषा' है जो अगस्त 1960 से नियमित रूप से प्रकाशित की जा रही है। यह पत्रिका दिसंबर 1991 तक त्रैमासिक थी। वर्ष 1992 के आरंभ से इसका प्रकाशन निरंतर द्वैमासिक पत्रिका के रूप में हो रहा है। पत्रिका का प्रकाशन नई दिल्ली से किया जा रहा है।

डॉक्टर हरी सिंह गौर विश्वविद्यालय सागर मध्यप्रदेश से राजभाषा उन्नयन के रूप में वार्षिक पत्रिका 'भाषा भारती' का प्रकाशन हो रहा है इस पत्रिका के संपादक वरिष्ठ रचनाकार डॉ. छबिल कुमार मेहेर जी है। इस पत्रिका का प्रकाशन पिछले दो वर्षो से हो रहा है तथा कम समय में ही पाठकों का ध्यान अपनी ओर आकर्षित करने में इस पत्रिका की महती भूमिका रही है। यह एक निःशुल्क वितरण के लिये है।

भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद् नई दिल्ली से द्वैमासिक

पत्रिका 'गगनांचल' का प्रकाशन किया जाता है। पत्रिका के संपादक श्री अरुण कुमार साहू जी है। भारतीय पेट्रोलियम संस्थान की त्रैमासिक पत्रिका 'विकल्प' देश की एक ख्यातिप्रद पत्रिका के रूप में अपना नाम दर्ज करा चुकी है। डॉ. दिनेश चन्द्र चमोला के रूप में इसको एक ऐसा प्रतिभावान संपादक मिला है जो अपनी बेहतरीन उपस्थिति से इस पत्रिका को नई ऊँचाइयों पर ले जाने का दृढ़ संकल्प कर चुके हैं। यह एक निःशुल्क वितरण के लिये है।

सूचना एवं जनसंपर्क विभाग राजस्थान का मासिक पत्र 'राजस्थान सुजस' शीर्षक से प्रकाशित होता है, पत्रिका के संपादक श्री नर्वदा इंदौरिया जी है। नई दिल्ली से प्रकाशित 'इस्पात भाषा भारती' द्वैमासिक पत्रिका है, पत्रिका के संपादक श्री हीरा बल्लभ शर्मा जी है। यह वह शासकीय पत्रिकायें है जो अपनी सामग्री व कलेवर की वजह से पाठकों के बीच अपनी उपस्थिति दर्ज कराने मे पूर्णतः सिद्ध हो रही है। यहाँ पर मुख्य-मुख्य शासकीय लघु पत्रिकाओं का परिचय दिया जा चुका है। इन पत्रिकाओं के अलावा भी अन्य शासकीय पत्रिकाओं के प्रकाशन से इंकार नहीं किया जा सकता है।

कुछ गैर शासकीय मुख्य-मुख्य पत्रिकाओं के विषय में पाठकों को जानना जरूरी है जो अपनी उच्च्य साहित्यिक सुरुचिपूर्ण सामग्री के कारण पाठकों के बीच अपनी जगह बनाये रखने में सफल सिद्ध हो रही है। मुख्य-मुख्य पत्रिकाओं के नाम इस प्रकार है- 'प्रेरणा', त्रैमासिक पत्रिका, 'परीकथा', द्वैमासिक पत्रिका, 'वर्तमान साहित्य', मासिक पत्रिका, 'पाखी', मासिक पत्रिका, 'कथाक्रम', त्रैमासिक पत्रिका, 'व्यंग्य यात्रा', त्रैमासिक पत्रिका, 'अभिनव इमरोज', मासिक पत्रिका, 'समीक्षा', त्रैमासिक पत्रिका, 'शोधदिशा', त्रैमासिक पत्रिका, 'सरस्वती सुमन', त्रैमासिक पत्रिका, 'दूसरी परम्परा', त्रैमासिक पत्रिका, 'कथादेश', मासिक पत्रिका, 'लहक', मासिक पत्रिका, 'संप्रेषण', त्रैमासिक पत्रिका, 'चिन्तन दिशा', त्रैमासिक पत्रिका, 'तद्भव' त्रैमासिक पत्रिका, 'परिन्दे', द्वैमासिक पत्रिका आदि। चूंकि देश से आज हजारों की संख्या में पत्रिकायें प्रकाशित हो रही हैं। सभी का वर्णन यहां स्थानाभाव के कारण करना संभव नहीं है। पाठकों के बीच लोकप्रिय मुख्य-मुख्य पत्रिकाओं की एक छोटी सी जानकारी पाठकों के समक्ष रख दी गयी है।

आज कम्प्यूटर व इन्टरनेट के युग में कुछ पत्रिकायें सीधे बेवजाल पर भी प्रकाशित की जा रही है। यह भी एक सराहनीय एवं क्रांतिकारी कदम है, क्योंकि बेवजाल पर प्रकाशित होने से यह पत्रिकायें देश में ही नहीं बल्कि विदेशों मे बैठे प्रवासी भारतीय पाठक व साहित्यकार कभी भी कहीं भी आसानी से इन पत्रिकाओं को पढ़ सकते है। इस लिहाज से इन पत्रिकाओं के प्रकाशनों द्वारा विदेश में भेजने का डाक खर्च भी बच जाता है जो कि काफी ज्यादा होता है और पत्रिका भी काफी समय बाद पाठकों तक पहुँचती थी। अब बेवजाल पर सीधे प्रकाशित होने से पाठकों को काफी सुविधा हो गयी है। इस प्रकार बेवजाल पर पत्रिकाओं का प्रकाशन पाठकों के दृष्टिकोण से लाभप्रद ही माना जावेगा। बेवजाल पर प्रकाशित मुख्य-मुख्य पत्रिकाओं की जानकारी इस प्रकार हैः- 'गर्भनाल,' मासिक पत्रिका, 'साहित्य रागिनी', मासिक पत्रिका, 'समय' द्वैमासिक पत्रिका, 'वसुधा' त्रैमासिक पत्रिका, 'अपनी माटी' त्रैमासिक पत्रिका यह कुछ पत्रिकाओं के नाम हैं जो सीधे बेवजाल पर ही प्रकाशित होती हैं। इसके अलावा कई प्रकाशन बेवजाल एवं मुद्रित रूप में भी अपनी पत्रिकाओं का प्रकाशन कर रहें है।

समग्रतः यह आसानी से कहा जा सकता है कि भारतवर्ष शुरू से ही आध्यात्मिक व साहित्यिक विधा का गढ़ रहा है जहाँ पर प्राचीनकाल से ही भारतवर्ष के निवासी रामायण, महाभारत, श्रीमद् भगवद्गीता, वेद, पुराण आदि ग्रंथों का रसास्वादन करते चले आ रहे है, एवं यह सिलसिला आज भी बदस्तूर चालू है। साहित्यिक विधा हमेशा से ही पाठकों के बीच लोकप्रिय रही है। आज भी पाठकों के बीच कई हजार छोटी-बड़ी साहित्यिक पत्रिकायें व हिंदी पुस्तकें हमारे देश से प्रकाशित हो रही जो पाठकों के बीच लगातार अपनी उपस्थिति बनाये हुये हैं। जरूरत केवल इन पुस्तकों व पत्रिकाओं को बेहतर प्रचार व प्रसार की है ताकि जनमानस तक इनको सीधे पहुँचाया जा सके। सरकार को भी इस दिशा में कुछ निर्णय लेने होगे ताकि साहित्य की यह परंपरा हमेशा कायम रह सके।

संदर्भ :-

1 साक्षात्कार, आजकल मासिक पत्रिका, प्रकाशन विभाग, नई दिल्ली, जनवरी 2008, पृ. 33

2 पाठक से दूरी का सच, श्री शंकर शरण, जनसत्ता दैनिक पत्र, नई दिल्ली, दिनांक 26/10/2014

3 पाठक से दूरी का सच, श्री शंकर शरण, जनसत्ता दैनिक पत्र, नई दिल्ली, दिनांक 26/10/2014

4 मगर हिंदी में प्रकाशक हैं कितने, श्री राजकिशोर, जनसत्ता दैनिक पत्र नई दिल्ली, 02/11/2014

5 राजेन्द्र यादव का अंतिम भाषण, दृश्यांतर मासिक पत्रिका, सितम्बर 2013, दूरदर्शन नई दिल्ली, पृ. 71

आवास क्रमांक एच-3,
राजीव गांधी प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय,
एयरपोर्ट, बायपास रोड, गांधीनगर, भोपाल, (म.प्र.)-462033
मोबा: 9826583363

आलेख

चिट्ठी का सफरनामा

● प्रकाश गौतम

जब हम डाक विभाग की बात करते हैं, हमारे मन में चिट्ठियां बांटते हुए पोस्टमैन, पत्रों, मनीऑर्डरों, लैटर-बॉक्सों और डाक घर की मोहर का विचार आता है। परंतु डाक विभाग का जो रूप आज हमारे सामने हैं, उसने विगत में कई रूप रंग बदले है और आज भी दिन-प्रतिदिन इस में नए-नए बदलाव आते जा रहे।

हमारे मन में यह विचार आता है कि पहला संदेशवाहक कौन था। इतिहास में इस बारे में कुछ भी लिखित में नहीं है। इस बारे स्मृतियों और पुराणों के माध्यम से भूतकाल में झांकना होगा तब हमें पता चलेगा कि देवर्षि नारद जी पहले संदेशवाहक थे। वे देवताओं, दानवों, शिवजी, ब्रह्मा जी, विष्णु जी के बीच संदेशों का आदान-प्रदान करते थे। संदेशवाहक के लिये पुराणों में 'दूत' शब्द का प्रयोग किया गया है। त्रैतायुग में रामायण की रचना महर्षि वाल्मीकि के द्वारा की गई। इसमें उल्लेख आता है कि भगवान राम ने अंगद को रावण के पास दूत बना कर भेजा था। द्वापर युग में पांडवों की ओर से भगवान कृष्ण कौरवों के पास दूत बन कर गए थे। इतिहास में वर्णित है कि विभिन्न सम्राट और राजा एक दूसरे के पास संदेश भेजने की लिये दूत का सहारा लेते थे। महाकवि कालिदास ने अपनी रचनाओं जैसे अभिज्ञान शाकुंतलम, कुमारसंम्भव, मेघदूतम में संदेशवाहक पात्रों का खुल कर उल्लेख किया है। कौटिल्य ने अपनी रचना अर्थशास्त्र में संदेशवाहक के कर्तव्यों एवं संदेशवाहक के प्रति राजा के कर्तव्यों का विस्तृत वर्णन किया है। बाहरवीं शताब्दी में दिल्ली के चौहान वंश के प्रसिद्ध राजा पृथ्वीराज चौहान के दरबार के राजकवि चंद्र बरदाई के द्वारा राजा जय चंद के दरबार में दूत बन कर जाने का उल्लेख भी इतिहास में आया है। दूत अथवा संदेश वाहक को मारना या हानि पहुंचाना अपराध था।

मोहम्मद गौरी ने दिल्ली का शासन अपने गुलाम कुतुबदीन ऐबक को सौंपा। कुतुबदीन ऐबक (1206-1211) ने अपने शासन को चुस्त-दुरुस्त करने के लिये तथा शाही संदेश अपने सूबेदारों और सिपाह-सालारों तक पहुंचाने और उनसे संदेश प्राप्त करने के लिये हरकारे नियुक्त किये थे। इन संदेशवाहकों के माध्यम से वह गज़नी में मोहम्मद गौरी के सम्पर्क में रहता था। इसके बाद अल्लाऊद्दीन खिल्जी (1296-1316) के शासन काल में इस व्यवस्था में और सुधार हुआ।

शेर शाह सूरी के शासन काल (1540-1545) में उपरोक्त व्यवस्था में और अधिक सुधार हुआ। जब शेर शाह सूरी द्वारा कलकत्ता से लाहौर तक ग्रांड-ट्रंक-रोड का पुनर्निर्माण करवाया गया, तब उसने हर दस कोस की दूरी पर दो घुड़सवार हरकारे तैनात किये जो लिखित शाही फरमानों को तेजी से यहां से वहां पहुँचाते थे। हरकारों के लिए जगह-जगह सरायों का निर्माण शेर शाह सूरी ने करवाया। यदि देखा जाए तो आज जो डाक व्यवस्था है, उसने अपना आकार शेर शाह सूरी के शासन काल में ही लेना प्रारंभ किया था। मुगल काल में इस डाक व्यवस्था से विशेष छेड़-छाड़ नहीं की गई। सन 1616 में सर थोमस रो जहंगीर के दरबार में आया और उसने इंगलैड की महारानी की ओर से हिंदोस्तान में व्यापार करने की इजाजत मांगी जो दे दी गई। इसके साथ ही भारत में ईस्ट-इंडिया कम्पनी और ब्रिटिश शासन के बीज बो दिये गए।

इतिहासकार इस बात पर एक मत नहीं है कि डाक शब्द की उत्पति कैसे और कहां से हुई। जहां तक अनुमान है, ऐसा प्रतीत होता है कि मध्यकाल में डाक शब्द हिंदी भाषा के डगर शब्द से बिगड़कर बना है जिसका मतलब होता है रास्ता या राह। डाक हरकारे जब ग्रांट-ट्रंक-रोड पर चलते थे, तब इन्हें डगरिया कहा जाने लगा जिसका अर्थ है डगर पर चलने वाले। बाद में डगरिया शब्द बिगड़ कर डाकिया बन गया। जो संदेश डाकिये ले कर जाते थे, उन्हे डाक कहा जाने लगा देश के अधिकतर ग्रामीण क्षेत्रों में डाक हरकारे आज भी पैदल ही अंग्रेलों के साथ-साथ कई रियासतों ने भी इस शब्द को अपना लिया।

मध्यकाल में आम जनता में पत्र लिखने का रिवाज नहीं था। केवल राजे-महाराजे तथा संभ्रांत लोग ही संदेश भेजते थे। ये संदेश

या तो भोजपत्र पर या फिर रेशमी वस्त्र पर लिखे जाते थे।

सन 1766 में लार्ड क्लाईव ने ईस्ट इंडिया कम्पनी की डाक व्यवस्था की शुरुआत की। सन 1774 में बंगाल प्रेसिडेंसी के अंतर्गत कलकत्ता जी.पी.ओ. की स्थापना लार्ड वारेन हेस्टिंग्ज के द्वारा की गई। सन 1786 में मद्रास जी.पी.ओ. की स्थापना हुई जो मद्रास प्रेसिडेंसी में था। इसके बाद सन 1793 में बंबई जी.पी.ओ. की सथापना ईस्ट इंडिया कँपनी की बंबई प्रेसिडैंसी द्वारा की गई। इन तीनों प्रेसिडेंसियों में उस समय डाक व्यवस्था का प्रबंधन इन प्रेसिडेंसियों द्वारा स्वतंत्र रूप से किया जाता था। इसके अलावा भारत में सेंकड़ों रियासतें थी, जहां डाक व्यवस्था नाम की कोई चीज नहीं थी। इससे पूरे देश में डाक व्यवस्था में एकरूप नहीं थी।

सन 1837 में ब्रिटिश सरकार द्वारा एक एक्ट पास कर के तीनों प्रेसिडैंसियों की डाक व्यवस्था को एकीकृत करके एक सिंगल डाक व्यवस्था की शुरुआत भारत में की गई। इसके अंतर्गत आम जनता भी अपने पत्र भेज सकती थी। सन 1853 में कलकत्ता से आगरा के बीच भारत की पहली टेलीग्राफ लाईन बिछी। इसी साल बंबई और थाने के बीच भारत की पहली रेल गाड़ी भी चली। उस समय भारत में वाईसराय लार्ड डल्हौजी था।

सिंधिया शासकों ने अपनी एक स्वतंत्र डाक व्यवस्था शुरू की थी, जिसे सिंधिया डाक का नाम दिया गया। सिंधिया डाक के अंतर्गत डाक टिकट भी जारी किये गए जिनका डाक के इतिहास में अपना अलग महत्त्व है। 15 अगस्त 1947 को भारत स्वतंत्र हुआ। इस उपलक्ष्य में जय-हिंद सीरीज के तीन रंगीन टिकट डाक विभाग द्वारा जारी किये गए। इसके बाद तो डाक विभाग द्वारा आज तक हजारों रंग-बिरंगे डाक टिकट जारी किये जा चुके हैं। ये डाक टिकट दो प्रकार के है। पहली श्रेणी को डैफिनिटिव डाक टिकट है जो आम उपलब्ध टिकट हैं जिनका प्रयोग लोग पत्रों और अन्य डाक वस्तुएँ भेजने के लिये करते हैं। दूसरी तरह के टिकटों को फिलैटली के टिकट कहा जाता है। फिलैटली के टिकट बहुत ही आकर्षक रूप-रंग के, बहु-आयामी झलकियां बताने वाले, पशु-पक्षियों, नदियों-झीलों, त्योहारों, महान हस्तियों आदि के उपर किसी मौके विशेष पर केवल एक बार ही विशेष समारोह आयोजित करके जारी किये जाते हैं। कुछ लोगों में फिलाटेली के टिकट इकट्ठा करने का शौक जुनून की हद तक होता है। इस प्रकार के टिकटों के संग्रह की जिला, राज्य, राष्ट्रीय एवँ अंतर्राष्ट्रीय स्तर की प्रदर्शनियां डाक विभाग व अंतर्राष्ट्रीय डाक संगठनों द्वारा आयोजित की जाती है। भारतीय राष्ट्रीय डाक म्युजियम नई दिल्ली में है। जहां तक विश्व के पह्ले डाक टिकट की बात है, वह पैन्नी-ब्लैक था जो इंगलैंड में सन 1840 में जारी हुआ था। सन 1874 में युनिवर्सल युनियन की स्थापना स्विट्जरलैंड के बर्न शहर में हुई। वर्तमान में इसके 192 सदस्य है। भारत इसका पहला सदस्य है। वर्ल्ड पोस्ट दिवस दिनांक 9 अक्तूबर को प्रति वर्ष मनाया जाता है।

15 अगस्त 1972 को डाक विभाग ने एक अनोखा प्रयोग किया जब छह अंकों से बने पिन-कोड की शुरुआत की गई। पूरे भारत को आठ पिन कोड क्षेत्रों मे बांट दिया गया। पत्रों और अन्य डाक वस्तुओं पर पते के अंत में पिन कोड लिखा जाने लगा, जिससे डाक वस्तुएं इधर-उधर न भटक कर सीधे प्राप्तकर्ता को मिल जाए। डाक विभाग का यह प्रयोग अत्यंत सफल रहा है। इससे पूर्व एक ही नाम के अलग-अलग डाकघर होने की स्थिति में डाक वस्तुएँ भेजी जाती रहती थी ताकि वे प्राप्तकर्ता को मिल जाए।

एक अगस्त 1986 को डाक विभाग द्वारा स्पीड-पोस्ट शुरू की गई। आज स्पीड-पोस्ट ने डाक विभाग को एक नये अयाम तक पहुंचा दिया है। सन 1990 में डाक विभाग द्वारा मुम्बई और चेन्नई में औटोमैटिक मैल प्रोसैसिंग सेंटर स्थापित किये गये जहां द्रुत गति से पत्रों की छँटाई होती है।

पहले डाक व तार विभाग एक ही विभाग था परंतु सन 1985 में भारत सरकार द्वारा बेहतर सेवाएँ देने के लिये डाक विभाग को अलग विभाग बना दिया गया।

यद्यपि सरकारी कर्मचारियों, सेना, पुलिस, सार्वजनिक क्षेत्रों के, सरकारी निगमों, निकायों, युनिवर्सिटियों, स्कूलों, कॉलेजों आदि के कर्मचारियों के लिये पहले ही डाक जीवन बीमा उपलब्ध था परंतु ग्रामीण क्षेत्रों की आवश्यकताओं को देखते हुए ग्रामीण डाक जीवन बीमा नाम की एक नई योजना की शुरुआत 24 फरवरी 1995 को डाक विभाग द्वारा की गई। यह योजना ग्रामीण क्षेत्रों में अत्यंत लोकप्रिय हो चुकी है। डाक जीवन बीमा और ग्रामीण डाक



देश के विकास में विशेषकर ग्रामीण क्षेत्रों के विकास में डाक विभाग ने अपना बहुमूल्य योगदान दिया है। डाक विभाग जहां परंपरागत सेवाओं को दूरस्थ स्थानों तक पहुंचा रहा है, वहीं लघु बचत योजनाओं के माध्यम से लोगों का अर्थिक स्तर भी बढ़ा रहा है। साथ ही जहां लघु बचत योजनाओं के माध्यम से राष्ट्र निर्माण के लिये डाकघरों के माध्यम से धन जुटाता है, वहीं दूसरी ओर राज्य सरकारें भी इससे लाभान्वित होती हैं।

जीवन बीमा योजनाओं के लिये डाक विभाग द्वारा एक अलग निदेशालय नई दिल्ली में बनाया गया है।

सन 1995 के बाद डाक विभाग द्वारा कई अलग-अलग प्रकार की योजनाएँ जैसे ई-पोस्ट, मीडिया पोस्ट, ई-मनीऑर्डर, इंस्टेंट मनीऑर्डर, डाईरैक्ट पोस्ट, बिल मेल सर्विस, मोबाईल मनीऑर्डर, एक्सप्रैस पार्सल, बिजनैस पार्सल, आदि सेवाओं की शुरुआत की गई है। कुछ विदेशी कम्पनियों के साथ टाई-अप करके आई.एम.टी.एस. तथा मनी-ग्राम सेवाओं को डाक विभाग के माध्यम से चलाया जा रहा है कोई भी व्यक्ति जिसके नाम पर पैसा विदेश से आया है, डाकघर को अपना गुप्त कोड बता कर धन प्राप्त कर सकता है।

सन 1993 में डाक विभाग में उस समय एक नई क्रांति आ गई जब डाकघरों में कंप्यूटर लगने शुरू हुए। इसके बाद डाक विभाग के प्रधान डाकघर, मुख्य डाकघर और उपडाकघरों में हर प्रकार का काम कंप्यूटरों पर ही होना प्रारंभ हुआ। इससे सेवाओं की गुणवत्ता बढ़ी है। आजकल डाक विभाग के प्रधान डाकघर, मुख्य डाकघर और बहुत से उप डाकघर केंद्रीय बैंकिंग प्रणाली सी. बी. एस. से जुड़ चुके है और अगले आने वाले एक साल में सभी बड़े-छोटे डाकघरों के इस एकीकृत केंद्रीय बैंकिंग प्रणाली से जुड जाने की आशा है। सभी डाकघरों के कंप्यूट्रीकृत केंद्रीय प्रणाली सी.बी.एस. से जुड़ जाने के बाद डाक विभाग की काया ही पलट जाएगी।

डाक विभाग भारतीय सेना को भी अपना सक्रिय योगदान दे रहा है। डाक विभाग की एक शाखा आर्मी पोस्टल सर्विस के नाम से सशस्त्र सेना का एक अभिन्न अंग है। इसका प्रभारी मेजर जनरल रैंक का अफसर होता है। डाक विभाग के नियमित कर्मचारी एवँ अधिकारी प्रतिस्थापना पर आर्मी पोस्टल सर्विस में जा सकते हैं।

डाक विभाग ने आजकल अपने ए.टी.एम. भी लगाने शुरू कर दिये है। डाकघर बचत बैंक खाताधारकों को ए.टी.एम. कार्ड जारी किये जाते है जिससे पैसा निकालने के लिए डाकघरों के काऊंटरों पर लम्बी लाईन में खड़ा नहीं होना पड़ता है। देश में पहला ए.टी.एम. चेन्नई में लगा था। हिमाचल प्रदेश में पहला ए. टी.एम. शिमला जनरल पोस्ट ऑफिस में लग चुका है। अन्य चुने हुए डाकघरों में भी ए. टी. एम. लगाने की प्रक्रिया चल रही है। निकट भविष्य में देश में एक डाक भुगतान बैंक भी बनने जा रहा है। ऐसी आशा की जाती है कि सभी डाकघरों के केंद्रीय कंप्यूटर प्रणाली पर आ जाने के बाद डाक विभाग एक नए ही रूप में नजर आएगा।

इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता कि देश के विकास में विशेषकर ग्रामीण क्षेत्रों के विकास में डाक विभाग ने अपना बहुमूल्य योगदान दिया है। डाक विभाग जहां परंपरागत सेवाओं को दूरस्थ स्थानों तक पहुँचा रहा है, वहीं लघु बचत योजनाओं के माध्यम से लोगों का अर्थिक स्तर भी बढ़ा रहा है। साथ ही जहां लघु बचत योजनाओं के माध्यम से राष्ट्र निर्माण के लिये डाकघरों के माध्यम से धन जुटाता है, वहीं दूसरी ओर राज्य सरकारें भी इस से लाभान्वित होती है क्योंकि राज्य सरकारों को केंद्र से ऋण उसके द्वारा लघु बचतों के माध्यम से जुटाए गए धन के निश्चित प्रतिशत के आधार पर मिलता है। वर्तमान में बचत बैंक, 5 वर्षीय आवर्ति जमा, 1,2,3 व 5 वर्षीय सावधि जमा, लोक भविष्य निधि खाता, मासिक आय योजना, 5 व 10 वर्षीय राष्ट्रीय बचत योजना, 100 महीने के किसान विकास पत्र, सुकन्या समृद्धि योजना में धन निवेश कर के लाभान्वित हो सकते हैं।

सन 1947 में जब भारत स्वतंत्र हुआ था, तब पूरे भारत में मात्र 23,344 डाकघर थे। अब पूरे भारत वर्ष में विभिन्न श्रेणियों के 1,55,000 से ऊपर डाकघर है जो कश्मीर, हिमाचल, सिक्किम, अंडेमान-निकोबार जैसे दुर्गम क्षेत्रों सहित देश के विभिन्न भागों में स्थित है। जहां तक मानव संसाधन का प्रश्न है, युवाओं में डाक विभाग में सेवा करने की प्रबल लालसा देखी गई है। पदों की प्रकृति को ध्यान में रखते हुए अलग-अलग स्तरों पर भर्ती संघ लोक सेवा आयोग, कर्मचारी चयन आयोग तथा स्थानीय स्तर पर की जाती है।

डाक विभाग जहां एक ओर सीधे-सीधे लाखों लोगों को रोजगार दे रहा है, वहीं अन्य लाखों लोग डाकघर द्वारा चलाई जा रही बचत योजनाओं के अभिकर्ता बन कर रोज़गार प्राप्त कर रहे हैं। लाखों अन्य लोग परोक्ष रूप से डाक विभाग की सेवाओं से लाभान्वित हो रहे हैं।

डाक विभाग का नाम आते ही ईमानदारी की याद भी आ जाती है। डाक विभाग का जो विकास हुआ है उसका श्रेय डाक विभाग के ईमानदार, मेहनती कर्मचारियों और अधिकारियों को जाता है जो इस विभाग की परंपरागत छवि को बरकरार रखते हुए जी जान से इसे स्वावलंबी बनाने में जुटे हैं। निजि पत्र लिखने का रिवाज आजकल नहीं रहा है। ई-मेल और मोबाईल और कुरियर के इस जमाने में भारी प्रतिस्पर्धा का सामना डाक विभाग को करना पड़ रहा है परँतु इन सब से प्रतिस्पर्धा करते हुए भी डाक विभाग अपनी पुरानी परम्पराओं का निर्वहन बखूबी कर रहा है और अपने लिये नए क्षितिज ढूंढ रहा है। डाकघर जनमानस के बीच रचा-बसा है।

सीनियर पोस्टमास्टर, शिमला जनरल पोस्ट ऑफिस, शिमला, हिमाचल प्रदेश-171001, मो. 94180-31951

गुजराती कहानी

गो-वर्धन महोत्सव

● मूल लेखक : **शिरीष पंचाल** अनुवादक : **जेठमल ह. मारू**

(गतांक से आगे)

'देवर्षि, इंद्र राजा कोप करेंगे तो आप सहायता करने वाले हैं?'

'अपना रक्षण करने में आप समर्थ हैं, इसलिए निश्चिंत रहिए। हां, यह आपको करिश्मा अवश्य दिखाएंगे, आपको भयभीत करेंगे क्योंकि यह उनका स्वभाव है। परंतु आखिरकार विजय पृथ्वी की और पराजय स्वर्ग की। स्वर्ग में तो अथाह अभिमान है। इसके अभिमान की एक कहानी सुनिए। एक समय काश्यप ऋषि ने यज्ञ के लिए सबको काम सौंपा। वालखिल्य ऋषिगण, तो अंगूठे जितने। गाय के खुर से बने गड्डे में पानी भर गया हो तो भी इन्हें यह पानी पार करने में महाकष्ट होता था। पर काश्यप ऋषि ने काम सौंपा तो क्या करें? ये ऋषि एकत्रित होकर पलाश की एक छोटी डाली उठाकर आ रहे थे। इंद्र को भी काम सौंपा गया। ये शक्तिशाली, लकड़ियों का बड़ा गट्ठर लेकर यज्ञस्थल जा रहे थे। रास्ते में वालखिल्यों को देखकर इन्होंने इनका मजाक उड़ाया, तो क्रोधान्वित ये ऋषि अन्य अधिक शक्तिशाली इंद्र के सर्जन की तैयारियां करने लगे। काश्यप ऋषि ने बामुश्किल वालखिल्यों को समझाया।'

'मुनिवर, आप कहते हैं तो भी हमें शंका रहा करती है। स्वर्ग के सामने पृथ्वी का कितना बल?'

'देखिए, एक काल में वाल्मीकि नाम के ऋषि थे यह तो आप जानते ही हैं। वे एक कथा लिखना चाहते थे, जिसमें समग्र गुण मूर्तिमंत हुए हों ऐसे व्यक्ति की कथा। ऐसा गुणवान कोई देव तक उनको नहीं मिला। आखिरकार मनुष्यों में से उन्हें रामचंद्र मिल गए इसलिए उनकी कथा लिखने के लिए वे तैयार हो गए। यहां भी देखिए, तीनों लोकों में बोलबाला किसका?'

युवा यादव नारद मुनि की बात सुनकर उत्साह में आ गए। ऐसा हर्ष इनके हृदय में व्याप गया कि कृष्ण को ऊंचा उठा लेकर गोल-गोल घूमने लगे।

कृष्ण की दृष्टि विशाखा पर पड़ी। उसकी आंखों में से अश्रुधारा बहती थी। विशाखा एक तो चंपकवर्णी और इसमें सूर्य प्रकाश, अश्रु या जगमगाते मोती? उसके हृदय की प्रसन्नता आंखों में से छलक-छलक कर प्रकट होने लगी थी।

सारे यादव वहां से विदा हुए तो विशाखा ने कृष्ण की ओर देखा और वह कावेरी से लिपट गई। कृष्ण ने बांसुरी होठों पर टिकाई और स्वर-गंगा बहने लगी। शाम का समय होने वाला था, प्रातः गया हुआ गायों का समूह गोधूलि के समय वापस लौट रहा था, उनके कानों में कृष्ण का वेणुनाद सुनाई दिया। गायें बछड़ों सहित पूंछें उछालतीं, चौकड़ी भरतीं कृष्ण के आसपास समूह के रूप में आ खड़ी रहीं। कृष्ण सभी गायों के सामने दृष्टि डालते-डालते बांसुरी बजाए जा रहे थे। इसमें गायों का रंभाना मिलता जाता था। कृष्ण विशाखा को लेकर आगे बढ़ने लगे और गायें उनके पीछे-पीछे।

000

जहां धरती की धूल पहुंचती थी, जहां केवल कायाएं थीं, छायाएं न थीं, जहां नेत्रों में अश्रु आते न थे ऐसे स्वर्ग में, देवताओं की सभा में उर्वशी के कनक उज्ज्वल चरणों के छंदोलय से सभी उन्मत्ते, चंचल बन रहे थे। स्वर्ग के अधिपति देव ऐश्वर्यपूर्ण महालय में सिंहासन पर आरूढ़ होकर अपनी सत्ता से छलक-छलक होते चारों दिशाओं में दृष्टिपात करते थे। मन में अपनी सत्ता के प्रभाव तले न आए हुए क्षेत्रों का विचार-विमर्श चालू था। परंतु गहरे-गहरे कहीं कोई खटका था इसीलिए ही उर्वशी के लय-ताल, गंधर्वो के गायन-वादन चित्त को आनंद देते न थे। वे अशांति अनुभव करते थे, किसी भी तरह से यह घबड़ाहट दूर होनी चाहिए।

इतने में नृत्य का अंतिम लय-ताल सुनाई दिया और चारों दिशाएं आनंद से झनझना उठीं। इंद्र उर्वशी के अतिप्रसन्न मुख के सामने ताक रहे थे और तभी उनके कानों में देवर्षि नारद का वीणा वादन सुनाई दिया। सहसा खड़े हो उन्होंने और सभी देवों ने भी ऋषिवर का सत्कार किया, वंदन किया।

नारद ऋषि ने इंद्र के मुख के सामने देखा। कुछ क्लांति छाई हुई लगी।



'शचिपति, गंधर्वों के यह मधुर गान और उर्वशी-मेनका के नृत्य क्यों आपको प्रसन्न नहीं कर सकते?'

'देवर्षि, किसी अनजाने भय ने जैसे मुझे घेर लिया है। कुछ भनक लग रही है पर हमको किसी को इसका संकेत मिलता नहीं। कहीं तप चलता होगा? कहीं कोई मेरी सत्ता के विरुद्ध, स्वर्ग के सामने सिर उठाने की कोशिश कर रहा होगा?' इंद्र के स्वर में ग्लानि लगती थी।

'आपका भय सही है। वृंदावन में शताब्दियों से चली आ रही इंद्रपूजा अब नहीं होगी।'

'तो?'

'वहां इंद्रपूजा के बदले गो-वर्धनपूजा होगी।'

उनचास पवन एक साथ इंद्र के कर्णद्वार के आगे सरसराहट करने लगे। उनका हाथ सहसा वज्र पर आ गया। उनके सहस्रों नेत्रों में से पिंगलवर्णी अग्नि ज्वालाएं प्रकट होना चाहती थीं। परंतु देवर्षि की उपस्थिति में मन पर संयम रखकर पूछा, 'देवर्षि, सहसा यह पूजा बंद करने का कारण क्या? कौन है इसके मूल में?'

'कृष्ण के सिवाय वहां दूसरा कौन हो? वह पूरा विद्रोही है, छोटी उम्र में भी शूरवीर है। कितने-कितने राक्षसों को उसने पराजित किया। आखिर में उसने ही तो कालीय नाग को छका कर समुद्र में वापस भेज दिया।'

'हां, हमारी अप्सराएं भी उसी की कामना करती हैं। रंभा कहती है कि मैं धरती पर जाऊं और कृष्ण की बांसुरी के स्वर पर नृत्य करूं। परंतु आखिर यह है कौन? कौन है यह? ग्वालिया है ग्वालिया। और एक ग्वालिये की यह धृष्टता? इसके पास है क्या? बताइए तो सही, ऋषिवर, इसके पास क्या है? और मेरे पास क्या नहीं?'

'हां... हां... इसके पास है क्या?' दूसरे देवों ने भी स्वर में स्वर मिलाया।

देवर्षि क्षण-दो-क्षण इंद्र के मुख के सामने देखते रहे। अणु-अणु में से कुछ उछल-उछलकर बाहर निकल आने के लिए प्रयत्नशील था। इसकी ज्वालाएं अजेयों को मात देकर दीन, असहाय पंगुओं को भस्मीभूत करना चाहती थीं।

'वैसे देखो तो इसके पास कुछ नहीं। जो कुछ संपत्ति है, ऐश्वर्य है यह सारा आपके पास में है। इसके पास तो केवल धूल है, धूल में से यानी कि मिट्टी में से उगते बांस और उनसे बनती है बांसुरी। कृष्ण के पास में बांसुरी है।'

'हंऽऽ...' समग्र वातावरण को कंपा डालती इंद्र की हुंकार सुनाई दी। 'बांसुरी' लकड़ी से बनाई हुई बांसुरी ही न?'

'देवराज, यह बांसुरी सुनने जैसी है। इसके स्वर पर मोर नृत्य आरंभ करते हैं, हिरनियां कृष्णसार मृगों के साथ में वृंदावन की दिशा में कुलांचें लगाती हैं, गोपियां घर का काम छोड़कर बंशीव चली जाती हैं।'

'देवर्षि, आप तो त्रिलोक में विहरते हैं, संगीत विशारद हैं, गंधर्वगान और अप्सराओं के नृत्य सुने हैं, देखे हैं फिर भी आपको एक ग्वालिए की बांसुरी अधिक प्यारी लगती है?'

'हां, इस ग्वालिए की बांसुरी प्यारी लगती है, अत्यंत प्यारी लगती है। सुनिए... इसका मधुर वेणुनाद सुनाई दे रहा है। स्वर धरती पर प्रकट होते हैं और बहते हैं ठेठ स्वर्ग तक... शक्रराज, स्वर्ग के आपके संगीत-नृत्य चाहे जितने उत्कृष्ट हों, चाहे जितने शास्त्रोक्त हों, पर धरतीवासियों के नृत्य-संगीत की तुलना तो नहीं कर सकते। आपके पास केवल अमृत है, इनके पास में अमृतमय मृत्यु है, आंसू हैं। इस संगीत-नृत्य को स्पर्श होता है मृत्यु का और आंसू का। यह स्पर्श इनके संगीत-नृत्य को शाश्वत बना देता है और आपका संगीत-नृत्य बन जाता है नश्वर। स्वर्गाधिपति, आपके पास सत्ता है और इस सत्ता की अग्नि आंसुओं के स्रोत को जला डालती है। आप तो विहार करने अनेक बार धरती पर जा पहुचंते हैं, कोई भी धरतीवासी कभी भी विहार करने स्वर्ग में आया?'

'ऋषिवर, आप कैसे भूल गए कि यह शक्ति मनुष्य में नहीं। हम इस ब्रह्मांड में जी-चाहे वहां विहार कर सकते हैं।'

'देवराज, पृथ्वीवासियों को स्वर्ग की अनिवार्यता ही नहीं। इनको तो दूसरों की आंखों में भी स्वर्ग दिखता है। धरती के कण-कण में ब्रह्मलोक है, वैकुंठ है, कैलास है।'

'नारदमुनि, क्षमा करना। इस त्रिलोक पर जो राज्य करना चाहे उसको भावुक होना रास नहीं आता। बात-बात में पृथ्वीवासियों की तरह अश्रुपात करना हम देवताओं को शोभा नहीं देता। हम आंसुओं से कभी प्रसन्न होते नहीं, हमें तो भोग चाहिए,

नैवेद्य चाहिए। आंसुओं से प्रसन्न होने वाले आशुतोष कैलास में बसते हैं, स्वर्ग में नहीं। हमें प्रसन्न न करें वे तो हमारे नित्यशत्रु हैं, हमारी पूजा न करें इनके लिए मेरा वज्र है, अग्नि के पास में सिंदूरवर्णी ज्वालाएं हैं, वरुण के पास में प्रलयंकर जल है, वायु के पास में उल्काओं को घसीट ले जाए, ऐसे झंझावात हैं। कृष्ण को और वृंदावनवासियों को आखिरकार हमारी शरणागति स्वीकार करनी ही पड़ेगी। वे लोग गायों की जिस समृद्धि पर अभिमान करते हैं ये सारी हमारे प्रति आभारी हैं। इतना ही नहीं, मनुष्यों का अस्तित्व तक हमारा आभारी है। इसका ऋण भार इनके सिर पर है।'

इंद्र ने बहुत कुछ कह दिया था फिर भी इनको अपेक्षा थी कि कोई देव मेरी बात आगे बढ़ाएगा परंतु थोड़ी प्रतीक्षा करने के बाद भी कोई नहीं बोला इसलिए इंद्र ने ही बात आगे चालू रखी।

'देवर्षि, आपकी बात से लगता है कि आपको वृंदावन के कृष्ण का अति निकट का परिचय है। मिले तो कहना कि इंद्र जितनी कृपा बरसा सकता है उसकी अपेक्षा अनेक गुनी अवकृपा भी कर सकता है। मेरे क्रोध के आगे मेरा वज्र मक्खन जैसा। शंकर त्रिलोचन और मैं सहस्रलोचन और यह प्रत्येक लोचन नीलकंठ का तीसरा लोचन बन सकता है। चाहूं तो इन हजार-हजार आंखों से मैं विष फैला सकता हूं। मेरी आज्ञा हो तो सूर्य चंद्र हो जाए और चंद्र सूर्य हो जाए।'

'देवेंद्र, आपके शब्द-शब्द से अहंकार प्रकट होता है। भूल गए उस यक्ष को? एक त्रण को भी कोई आंच पहुंचा सका था? आपकी लाख सावधानी के बावजूद भी गरुड़ स्वर्ग में से अमृत ले गया तब क्या रोक सके थे उसको? तो फिर कृष्ण का आप क्या कर सकने वाले हैं? आपका विनाश न हो यह देखना।'

'हमारा विनाश? देवर्षि, हम अमर हैं अमर।'

'इंद्र, मैं तो आपको बुद्धिशाली मानता था। मैं स्थूल विनाश की बात नहीं करता। पृथ्वीवासियों के हृदय में से आप बहिष्कृत हों यह भी विनाश नहीं? वृंदावन में आपकी पूजा नहीं हो सकती।'

'सुन रहे हो न देवताओ! एक ग्वालिया स्वर्ग को चुनौती दे रहा है। सजाओ अपने-अपने दिव्य अस्त्र-शस्त्र।'

000

वृंदावन के एक सामान्य ग्वाले ने त्रिभुवन स्वामी इंद्र को चुनौती दी और इंद्रपूजा का बहिष्कार किया इसलिए वे बहुत कुपित थे। 'ऐसी चुनौती देने वाला कोई राजा हो तो समझ में आता है, यह तो नितांत सामान्य व्यक्ति, गायें चराना जानने वाला... अति तुच्छ व्यक्ति विद्रोह करने वाला हो गया है और क्या? मैं अपना क्रोध त्याग नहीं सकता। सांप अपना विष त्याग देगा? सिंह मांसाहार त्याग देगा? समुद्र अपनी तरंगें, आकाश अपनी नीलिमा, चंद्र अपनी शीतलता त्याग देगा? भिखारी-भिखमंगे एकत्रित होकर मुझे... मुझे पथभ्रष्ट करना चाहते हैं! यह ग्वाला नहीं जानता कि उस स्त्री के पेट में पैठ कर मैंने अपने प्रतिस्पर्धी बनना चाहते गर्भ के सात टुकड़े कर डाले थे, उस प्रत्येक टुकड़े के पुनः सात-सात टुकड़े कर डाले थे, आखिरकार मुझ से क्षमा मांगी तब इन उनचासों को मेरे साथी के रूप में स्वीकार किया था।'

इंद्र को तो गोवर्धन पर्वत के कण-कण में, निकट में से ही बह रही रम्यघोषा कालिंदी के अलसमंथर प्रवाह में अपने प्रतिस्पर्धी और शत्रु ही दिखते थे। जिस तरह पर्वत-शिखरों का प्रतिरोध करके, वृक्ष पर वज्र का आघात करके, समस्त शिखरों पर के आवरण दूर कर पानी को मुक्त किया था और प्रकृति को आज्ञांकित बनाई थी उस तरह सभी को, जड़-चेतन को, वनस्पति व प्राणी सृष्टि को वे आज्ञांकित बनाना चाहते थे। इंद्र हाथ में वज्र लेकर दसों दिशाओं में घूमने लगे : कहां है कृष्ण? कृष्ण कहां है? इस वज्र से अब तक कितने ही पर्वतों को चूर-चूर कर डाला है। आज तुम्हारे दर्प-पर्वत को भी चूर-चूर कर डालूंगा। वृंदावनवासी त्राहिमाम्-त्राहिमाम् कहने लगेंगे। सहायता के लिए तुम्हारे पास कोई नहीं आएंगे, सभी मेरे पास में आएंगे। तुम्हारे पास से उन्हें मृत्यु मिलेगी और मेरे पास से जीवन। मृत्यु चाहे जितनी सुभग हो और जीवन चाहे जितना दुर्भाग्यमय या यातनामय हो तो भी मनुष्य तो जीवन ही चाहेगा। तुम्हारे गोवर्धन पर्वत की रज-रज कर डालूंगा। उसकी रज में से, उसके टुकड़ों में से मेरे पृथ्वीवासी अनुचरों के निवास बनवाऊंगा, तुम्हारे ही सामने। तुम देखते रहना।

000

इंद्र ने उनचास पवन और बारह ही मेघों को वृंदावन पर टूट पड़ने की आज्ञा दे दी। वातावरण के रंग बदलने लगे थे। सृष्टि की रचना हुई थी तब कुछ भी स्थिर न था। कभी पर्वत के स्थान पर समुद्र और समुद्र के स्थान पर पर्वत बन जाते थे। नदियां अनेक बार अपने मार्ग बदला करती थीं। शेषनाग ने पृथ्वी को मस्तक पर धारण किया था, इस समय भी जाने यही हो रहा हो ऐसा लगा। एक समय अमृतपान कराते समय देवताओं के रूप में आ पहुंचे राहू और केतु की जानकारी चंद्र और सूर्य ने प्रकट कर दी थी। इसका वैर लेने के लिए राहू-केतु और सूर्य को ग्रस जाने के लिए तैयार हुए थे, 'मैं अकेला किसलिए यह सब कुछ सहूं' यों सोचकर सूर्य ने अपना तेज अनेक गुना बढ़ा दिया तब जो उल्कापात हुआ था वैसे उल्कापात की जैसे तैयारी होने लगी।

पर वृंदावनवासियों को इसकी कुछ भी गंध नहीं आई। इन्होंने वृंदावन के बाहर पैर रखा न था। गायों को कोई गोचर लोक गया न था। सूर्योदय होने से पूर्व ही समग्र वृंदावन उत्सव की तैयारी में लग गया था। घर-घर आम्रपर्णों के, आसोपालव के तोरण लटकने लगे थे। रात को तैया करके रखी हुई जुई, जाई और कुंद पुष्पों की मालाएं घरों के प्रवेश द्वारों पर ही नहीं, गोपवनिताओं के केशों में ही नहीं पर छोटे-छोटे बछड़ों के गलों में भी शोभा देती थीं।

ब्राह्मणों, ऋत्विजों ने यज्ञ-वेदियां तैयार कर रखीं थी। सभी ने नैवेद्य भी तैयार कर दिए थे और फिर भी किसी की आंखों में इसका रज मात्र भी भार लगता न था।

सभी महोत्सव के लिए आ पहुंचे थे। ग्राम्य विस्तारों से हुनरमंद अपनी कला-कारीगरी लेकर आए थे, क्रय-विक्रय करने वाले अपने-अपने मंडपों में तरह-तरह की वस्तुएं प्रदर्शित करते बैठे थे। आसपास के नगरजन भी यह गोवर्धन महोत्सव कैसा होगा यह देखने-जानने आ पहुंचे थे और उन्होंने तय किया था कि अब वे अपने वहां भी ऐसा महोत्सव मनाएंगे।

उषाकाल में वातावरण शांत और निर्मल था, हवा अनुकूल होकर चल रही थी। आम्रवृक्षों पर से अभी तक आम्र उतारे नहीं गए थे, नीचे गिरे हुए आमों में से भले-भले वैरागियों, त्यागियों का मोहभंग हो ऐसी सुगंध चारों दिशाओं में फैल रही थी। सारे ही आश्वस्त थे, आमोद-प्रमोद में लीन थे। ऐसा उत्सव कोई एक दिन थोड़े ही चलने वाला था? तीन-तीन दिन चलने वाला था।

कृष्ण पौ फटने से पहले ही खुले आकाश के नीचे आ गए थे। अंधेरे की कमोबेश रेखाएं वातावरण में छाई हुई थीं। सहसा कृष्ण की दृष्टि आकाश पर गई। सिर पर तारे दिखते न थे। धरती पर जिस तरह पुष्प महकते हैं उसी तरह आकाश में तारे महकते हैं। कहां गए ये महकते तारे? तभी धीरे-धीरे उजाला होने लगा। कृष्ण ने आंखें मूंद लीं। समग्र वातावरण जैसे श्वास-में-श्वास बनकर भीतर प्रविष्ट हो रहा था। बंद आंखों के सामने काले रंग में से जामुनी लाल रंग प्रकट होने लगा। वे चौंक उठे। हवा की गति में सहसा परिवर्तन आया, वहां उपस्थित लोगों को प्रारंभ में तो कोई अंदेशा हुआ नहीं। कृष्ण को इस परिवर्तन में कुछ अपरिचितता लगी। मंथर गति में से तीव्र बनती जाती गति के पीछे स्वाभाविकता न थी। यह हवा पल्लू को फरफराने वाली न थी, अश्वत्थों (पीपल) की कोंपलों को हिलाने-डुलाने वाली थी। कृष्ण को प्रतीति हुई कि यह पवन अब विशाल वृक्षों को जड़-मूल से उखाड़ डालने वाला था। इस पवन में आर्द्रता भी लगती थी। आंखें खोलीं तो आकाश में सिंदूरिया रंग जमते देखा, जो सभी वृक्षों को, धरती को रंग रहा था। यों तो साधारण दिन में सारा कैसा शोभा देता, पर आज इसमें से किसी अपरिचितता का संकेत प्रकट होता था। कुछ अस्वाभाविक था। यह सिंदूरिया रंग क्यों लहू में कंपकंपी फैला था। तभी धीरे-धीरे यह रंग भूरा हो गया और देखते-ही-देखते ये भूरे से काला होकर सर्वत्र छा गया।

ऐसा होने पर भी उन्होंने बांसुरी होठों पर लगाई और विशाखा की स्मिवती आंखें कहती थीं : 'कृष्ण, मेरे लिए तो बांसुरी के सिवाय जगत मिथ्या हो गया, यदि बिजली कौंधे और कड़कड़ाहट हो तो भी मुझे यह न दीखे, न ही सुनाई दे। मैं सुनती रहूंगी केवल यह बांसुरी। इस धरती पर हो रही बरसात की सुगंध नहीं आती, इस जल का स्पर्श नहीं होता, मुझे तो केवल वेणुनाद ही सुनाई दे रहा है। स्वर के दर्शन होते हैं। इसी की सौरभ मुझे उन्मत्त कर डालती है। जैसे मेरी जिह्वा इस स्वर को ग्रहण करती है, मैं घूंट-घूंट में इसका पान करती हूं और समूचा ब्रह्मांड मुझ में प्रवेश करता है। मेरे रुधिर में इसका लय प्रवेश करता है। मेरे उच्छवास में से बाहर आया हुआ यह स्वर पुनः तुम्हारे स्वर में घुल जाता है। कृष्ण, एक बात पूछूं?'

'पूछ न!'

'यह तुम्हारे पास केवल बांसुरी है, इसका कोई वैभव नहीं, सरस्वती की वीणा के तार होते हैं, इसके तो तार तक नहीं। इंद्र के पास तो कला के सिरजनहार गंधर्व हैं, अप्सराएं हैं इन्हें अनुभव करने वाले देवता हैं और तो भी क्यों ये अपूर्ण हैं?'

'तू तो जानती है देवता विलासी हैं, सुरापान करते-करते संगीत-नृत्य का आनंद लेते हैं। कला विलास नहीं। विलास स्वर्ग में शोभा देता है, कर्म शोभायमान होता है उदार रमणीया पृथ्वी पर। मेरी बांसुरी सीधी-साधी है। है तो छेद वाली, वज्र की तरह यह कोई ठोस नहीं, खोखली है। सृष्टि में बह रही हवा को मेरे भीतर उतारती है, रंध्र-रंध्र में और कोष-कोष को हवा छूती है और सब कुछ ही जीवंत हो जाता है, निरा चैतन्यमय, परंतु यह केवल मुझ में ही सीमित रहना चाहती नहीं। सृष्टि ने जो प्रदान किया है, इसे लेकर ज्यों-का-त्यों तो बैठे कैसे रहा जा सकता है, इसलिए इसको मैं बाहर बहा देता हूं। यों तो मेरे होंठ इस काष्ट के टुकड़े को छूते हैं, पर इस काठ के टुकड़े में प्रवेश करते हैं मेरे प्राण, सृष्टि समस्तज के प्राण और फिर मैं इस प्राण का रूपांतर स्वर में कर देता हूं। यह रूपांतर शक्ति प्रदान करता है। इसी कारण ही मुझे प्रतीति है कि मेरी यह बांसुरी वज्र का सामना कर सकती है। इसे मैं न बजाऊं तो अकुला जाता हूं, तुझे भी यह अस्वस्थ कर डालती हैं तुम सबकी संवेदनाएं, इस धरती में से उग निकले हुए बीजांकुर, आंवल-बबूल से लेकर पारिजातक तक के वृक्ष, आकाश में उड़ते शक्करखोर से लगाकर बाज-गिद्ध तक के पक्षी, जल में हिलोरे मारते अंखफोड़वा-मगरमच्छ जैसे जलचर, कीट सृष्टि इन सबका लय मेरे लहू में लीन होता है, फिर स्वर प्रकट होते हैं।'

'मेरे विचारों का, मेरी उलझनों का तू प्रत्युत्तर दे रहा हो ऐसा लगता है।' कहते-कहते विशाखा चुप हो गई। आसपास देखने लगी, वहां तो केवल आनंदोत्सव की तरंगें थीं। इनके उत्साह, आनंद के पार से कुछ आ रहा था। पर क्या था यह? कृष्ण ने जो बोला वह इस रहस्यमय अनागत को पाकर?

'कृष्ण, कृष्ण... किसी अमंगल के चिह्न लगते हैं। यह फर-फर बहती हवा बदल गई है, कोई आसुरी तत्त्व आक्रमण करने आ रहा हो ऐसा लगता है। तुम्हें तो लग ही रहा है न?'

'पर तू तो कहती थी कि मुझे भय लगता नहीं।'

'ऐसा भय तो जो भीरू हो उसको लगता है। मैं भीरू नहीं'

'फिर भी इंद्र के इस कोप का कुछ निवारण तो करना पड़ेगा

न!'

'एक सरल उपाय है।'

'कौन-सा?'

'वृंदावनवासियों को इंद्र को वचन देना पड़ेगा कि भविष्य में वे कभी भी उन्नत मस्तक नहीं जीएंगे, इंद्र के चरणों के समक्ष मस्तक झुकाकर रहेंगे... कई यादव तो क्षमा मांगने के लिए तत्पर हैं। दुष्ट कंस के त्रास को सहन कर रहे हैं इसी तरह देवों के त्रास को भी सहन कर लेंगे।'

कृष्ण ने कोई प्रत्युत्तर नहीं दिया। आंखों-आंखों से ही दूसरा विकल्प पूछा।

'दूसरा मार्ग है तुम्हारे पास में। सारे ही कहते हैं कि तुम्हारे पास में दिव्य शक्तियां हैं।'

'दिव्य शक्तियां तो स्वर्गवासियों के पास में। हमारे पास में है तो केवल मानव शक्ति।'

'जो भी हो वह, कोई उपाय कर न!'

'एक समय ब्रह्मा से कोई अपराध हो गया। उन्हें दंड देने की शक्ति किसी एक देव में नहीं थी इसलिए सारे देवों ने सम्मिलित होकर प्रत्येक देव से सत्त्व लिया और महारुद्र का सर्जन किया। यह महारुद्र यानी कि पशुपति। यह सामूहिक सर्जन था। इसी तरह ही इंद्र के कोप से बचने के लिए मुझ अकेले की शक्ति नहीं चल सकती। सबकी शक्ति एकत्रित करनी पड़ती है। तब ही महाशक्ति बनेगी। देख, सामने रही यह महाशक्ति।'

विशाखा ने देखा तो महार्णव गर्जना कर रहा था।

यकायक बिजलियां कौंधने लगीं, निर्बल-दुर्बल हृदयों को बिदारती मेघगर्जना सुनाई पड़ने लगी। कृष्ण को अपना भय सच्चा होता लगा। काले-काले बादलों में जल तेज झलकने लगा। सूर्य बमुश्किल एक-दो बिलांत ऊपर चढ़ा था वहीं वह छिप गया। काली रात के धागे में सब कुछ पिरोया जाने लगा। चारों दिशाएं अंधेरे में खो गईं।

प्रातःकाल विशाल मंडप में सबको एकत्रित होना है ऐसी सूचना कृष्ण ने दी थी इसलिए छोटे-बड़े सभी वहां एकत्रित हुए, फिर ऋत्विजों की उपस्थिति में कृष्ण ने गोवर्धनपूजा का आरंभ वेणुवादन से किया। कृष्ण के वेणुवादन की ख्याति दूर-दूर तक फैली हुई थी, इसलिए इस वादक को देखने और वादन सुनने के लिए आए हुए लोग रोमांचित हो उठे। पवन इन वादन आंदोलनों को आकाश की ओर ले जाता था और वृक्षों के पत्ते, जड़-मूल द्वारा इसकी ध्वनि जैसे पाताल गंगा को आंदोलित करने के लिए प्रयत्नशील थी। गोवर्धन पर्वत की तलहटी में वर्तुलाकार में कदंब के पांच विराट वृक्ष खिले हुए थे। विशाखा को इन वृक्षों का बहुत आश्चर्य था। पिछले कुछ समय से वे असामान्य तरीके से बढ़ रहे थे। आरंभ में इनके पत्तों में से छनकर आते सूर्य चंद्र के प्रकाश धरती पर सुंदर छटा बिखेरते थे, धीरे-धीरे एक-एक किरण धरती पर पड़नी बंद हो गई थी। उसने कृष्ण को एक-दो बार पूछा भी था। पर कृष्ण तो प्रत्युत्तर दिए बिना ही केवल मंद-मंद मुस्काते ही रहे थे और उसने देखा तो पूतना, यमली अर्जुन, धेनुकासुर, केशी, बकासुर, अघासुर, कालीय नाग ये सब कदंब के नीचे अग्रिम पंक्ति में आकर पहचाने नहीं जा सकें, इस तरह बैठे थे।

यज्ञयाग का आरंभ होने से पूर्व एक वृद्ध यादव ने कहा, 'इस पूजा का पहला विचार कृष्ण को आया था इसलिए यही हमें कुछ अवश्य कहेगा।'

विशाखा के हृदय की ही यह बात थी इसलिए यह तो ठेठ भीतर से प्रकट होने वाली वाणी सुनने के लिए आतुर हो उठी।

गरज रहे बादलों के बीच, कृष्ण ने बांसुरी के स्वर की नाईं अपनी वाणी फैलानी शुरू की : 'मुझे तो बांसुरी बजाने के सिवा आता ही क्या है? मेरा बस चलेगा तो जीवन के अंत तक बांसुरी ही बजाया करूंगा। बहुत दिन पूर्व मुझे विचार आया था कि किसलिए इंद्र की सत्ता स्वीकार करनी चाहिए। हमने लंका के राजा की निंदा-टीका इसलिए की थी कि उसने सब देवताओं को बंदी बना लिया था और तो भी रात में सूर्य उग सकता था। इंद्र ने मरुत, वरुण, अग्नि को अपने अंकुश के नीचे कर रखे हैं, प्रकृति के सारे ही तत्त्वों को इस अपनी मुट्ठी में रख रखा है यह कैसे सहन किया जा सकता है। इंद्र की कृपा से तो हमें कुछ प्राप्ति होती नहीं। हमें जो प्राप्ति होती है वह इस धरती में से ही होती है। सूर्य प्रकाश बिखेरता है, यही तेज जल को मेघ में रूपांतरित करता है, यह मेघ हम पर जल बरसाता है। इसलिए पूजा तो प्रकृति की हो, इंद्र की नहीं। इस गोवर्धन पर्वत की तलहटी में हमारी गायें चरती हैं, इसकी तलहटी में उगे हुए वृक्ष हमें छाया प्रदान करते हैं, फल देते हैं। देखिए सामने, ऊपर देखिए, आकाश में रंग बदल रहे हैं, शायद आज ही इंद्र कोप करेगा, असमय बरसात का तांडव शुरू करेगा, हमें भयभीत करेगा, लोभ-लालच देगा, परंतु हम इस सबके समक्ष अडिग खड़े रहेंगे।'

तभी यकायक बिजलियां कौंधने लगीं, निर्बल-दुर्बल हृदयों को बिदारती मेघगर्जना सुनाई पड़ने लगी। कृष्ण को अपना भय सच्चा होता लगा। काले-काले बादलों में जल तेज झलकने लगा। सूर्य बमुश्किल एक-दो बिलांत ऊपर चढ़ा था वहीं वह छिप गया। काली रात के धागे में सब कुछ पिरोया जाने लगा। चारों दिशाएं अंधेरे में खो गईं। सूर्यग्रहण के समय जिस तरह सर्वत्र अंधकार फैल जाता है, उस तरह से इस समय भी अंधकार छा गया। बालक रोने लगे। पक्षी चीत्कार कर करके नीचे गिरने लगे। एकाएक आ पड़ी इन विपत्तियों का प्रतिकार करने की सूझ किसी में भी न थी। इतना ही अच्छा था कि खेतों में फसल लहलहाती न थी, फसल के अनाज के ढेर न थे। जो कुछ भी पका हुआ था वह

सब कुछ कभी का घरों में पहुंच चुका था।

कृष्ण सभी को इन विराट कदंब वृक्षों के नीचे ले गए वहां सभी सुरक्षित बैठ गए। कृष्ण ने युवा यादवों की सहायता से जल-पान की, खानी-पीने की व्यवस्था की थी। विशाखा को कृष्ण की दूरंदेशी के लिए मान उपजा। विशाखा और कुछ युवा कृष्ण को घेर कर बैठ गए।

बात-बात में जानने को मिला कि कुछेक बुजुर्गों को कृष्ण के प्रति विरोध था, वे इंद्रपूजा चालू रखने के लिए आखिर तक तैयार थे। उन्होंने कुछ गायें छिपा देने की योजना बनाई थी। किसी ने यह भी कहा कि पांचेक बुजुर्गों को इंद्र ने आज्ञा की थी। ये बुजुर्ग कई सारे नीति-नियम बनाने, आचार संहिताएं खड़ी करने के लिए तत्पर थे। जो इनका विरोध करे उन सबको वृंदावन में से देश निकाला देने की बात सोची गई थी।

इस समय इसी बात की चर्चा हो रही थी। कृष्ण ने आश्वासन देते हुए कहा, एक राय होकर पांच लोग हजार के लिए नियम नहीं बना सकते।'

एक भीरू युवा बोल पड़ा, 'पर इन पांच के पास में जो सत्ता है वह हम पांच हजार के पास नहीं।'

'प्रश्न यह नहीं कि सत्ता किसके पास है, नियम गलत हों तो उनका विरोध करना चाहिए जो नियम हों वे सबके लिए हों, वरुण के नियमों का उल्लंघन इंद्र किस तरह कर सकता है? यह ऋतु वर्षा की नहीं, ग्रीष्म में वर्षा होती है, तो किसी ने तो नियमों का उल्लंघन किया ही है यह मान लेना चाहिए। इंद्र को कोई अधिकार नहीं कि हमको भयभीत करने के लिए वैशाख में बरसात भेजे।'

'कृष्ण, इंद्र को, वृंदावनवासियों को दंड देगा ही। बुजुर्ग हमें देश निकाला देंगे। तू यह मानता है कि सभी तुम्हारा साथ देंगे? सारे ही कोई तुम्हारे पीछे-पीछे आने वाले नहीं।'

बोलने वाले को बीच में ही बोलने से रोककर विशाखा बोल उठी, 'मैं पीछे नहीं आने वाली, मैं ही पहले निकल जाऊंगी। कृष्णविहीन वृंदावन को क्या वृंदावन कहा जा सकता है? यह आगे और मैं इसके साथ में, जिनको आना हो वह आए साथ में।

'विशाखा, तू पागल न बन, कितने सारे यादव इंद्रपूजा चालू रखने का वचन देकर बैठे हैं, इंद्र ने उनको धन-धान्य से समृद्ध करने का वचन दिया है। जो पूजा नहीं करेंगे उनके अस्तित्व मिट जाएंगे। ऐसी धमकी दी है।'

'मित्रो, मैं आपको वचन देता हूं। देखिए सिरजनहार ने बहुत कुछ सिरजा, इसी तरह पीपल को भी सिरजा। अब यह सिरजनहार यों कैसे कह सकता है कि मैं धरती पर से पीपल का अस्तित्व ही मिटा डालूंगा। पीपल तो क्या तिनके तक को जीने का अधिकार है। मात्र बाहुबल से जगत खड़ा नहीं किया जा सकता और खड़े हुए जगत को नष्ट नहीं किया जा सकता।'

एक कोने से आवाज आई, 'कृष्ण, इंद्र ने ऐसा लालच दिया है कि हम तुम्हें स्वर्ग के रहस्य देंगे।'

'अच्छा! पर स्वर्ग के रहस्य पाकर करेंगे क्या? जब तक इसदिव्य रत्नावसुंधरा के रहस्य न जान सकें तब तक अंतरिक्ष पाकर क्या करेंगे?'

'नहीं... नहीं... तो भी इंद्र की बात बिलकुल भूलने जैसे नहीं. .. वे तो हमको देव समान बनाने के लिए तैयार हैं, एक-एक बालक निरोगी, सुंदर...'

विशाखा बोले बिना रह न सकी। वह कृष्ण के पास आकर खड़ी रह गई। 'नहीं बनना हमें देव समान। हमें तो मानव ही रहना है। जो तुच्छ है इसको नहीं महान बनाना और जो महान है उसको छोटा बनाना नहीं। तिनके के बदले वटवृक्ष नहीं चाहिए। और.. . और देवता तो अपूर्ण हैं।'

'किस तरह?'

'कभी देवों ने नहीं पहचाना जन्म और नहीं पहचानी मृत्यु।'

'विशाखा, तू नहीं मानती उतना इंद्र शक्तिशाली है और सत्ता के आगे तो झुकना ही पड़ता है।'

'कौन-सी सत्ता? हृदय स्वीकार करे वह सत्ता या चतुर मन कहे वह सत्ता?'

'कृष्ण, हमें चिंता हो रही है कि इस समय तो ये यादव तुम्हारी बात मान रहे हैं पर सोच कि...'

'आपत्ति काल में मुझे छोड़ दें तो? स्वछंदी बन बैठे तो? चलित हो जाएं तो? ऐसी सभी संभावनाएं स्वीकार कर लेनी चाहिए?'

पांच विराट कदंब वृक्षों के नीचे सभी सुरक्षित थे और उसके आनंद में विशाखा ने रास रचाना शुरू किया। वृंदावन की गोपांगनाएं तो पागल बनकर बांसुरी के नाद में झूमने लगीं। यह गीत-संगीत वर्षा के घोर रव को बींधकर स्वर्ग के द्वार को झकझोरने लगा।

000

इंद्र ने देखा तो वृंदावासियों पर किसी का भी प्रभाव हुआ न था। वे झुकना चाहते न थे। इतनी अधिक बरसात और तो भी कृष्ण तो निरांति से बांसुरी बजाता है। वर्षा की घनघोर ध्वनि को बींधकर इसकी बांसुरी का नाद दसों दिशाओं में फैल रहा है। घुटनों के बल चलने की उम्र में इसने यमलअर्जुन वृक्ष उखाड़ डाले थे ऐसी बात सुनी है। परंतु ये कदंब वृक्ष वायु देवता से भी उखाड़े नहीं जा सके। क्या कृष्ण देवसभा में हमारा गर्व भंग करने आ पहुंचे यक्ष का भक्त होगा? नहीं तो इतने भयानक तांडव में समांतर संगीत की साधना कैसे चल सकती है? विनाश के निकट होने पर भी आनंद मना रहा है और दूसरों को आनंद-प्रमोद करा रहा है। पर कुछ करना पड़ेगा यह सोचकर इंद्र ने अग्नि को आमंत्रित किया।

'अग्निदेव, वरुण देव ने तो हाथ खड़े कर दिए। अब आप युद्ध में जाइए। आप तो जिसको छूते हैं, वह सारा अग्निमय हो

जाता है। सोचा था उसकी अपेक्षा कृष्ण अधिक बलवान निकला। उसने वृंदावासियों के लिए आश्रय स्थान बना दिया है। हम स्वर्ग में जो आनंद कर नहीं सकते थे, वे आनंद कृष्ण धरती पर करा रहा है। जाइए अग्नि, सारी शक्तियां आजमाइए। मैं अरुण को आज्ञा देता हूं कि वह सूर्य का सारथि पद त्याग दे। चाहे वृंदावन पर सूर्य देव आग-आग बरसाएं।'

'क्षमा देवराज! विनतापुत्र अरुण को सूर्य का सारथि पद देने की आज्ञा प्रजापिता ने दी थी। आपका आधिपत्य वहां नहीं चल सकता। आप जो आज्ञा प्रदान कर रहे हैं, उसके क्या परिणाम आएंगे इस पर विचार किया है कभी? वृंदावन के विरुद्ध आपके द्वेष का भोग समस्त पृथ्वीवासियों को किसलिए बना रहे हैं?'

'इसकी चिंता कृष्ण को करनी है। मेरा प्रतिकार करने से पहले उसे विचार करना चाहिए था।'

'महाराज, आपकी आज्ञा भयानक है। यह वृंदावनवासियों को ही नहीं समस्त प्रजा को खा जाएगी। निर्दोष और निर्बल लोगों की हत्या इस तरह नहीं की जाती।'

'क्या? अग्निदेव आप मेरी आज्ञा का अनादर करना चाहते हैं?'

'नहीं... देवराज की आज्ञा शिरोधार्य पर यह देवाज्ञा नहीं। मेरा एक नाम पुरोहित है, सबका हित देखने वाला, सबके आगे रहने वाला। मेरे समक्ष हैं ये वृंदावनवासी, गोकुलवासी, स्त्रियां, बालक। ये सब मेरी अग्नि ज्वालाओं के स्पर्श मात्र से मृत्यु को प्राप्त होंगे। नहीं, देवराज नहीं। ऐसी आज्ञा दानवराज भी नहीं देते। क्षमा करें, महाराज! मेरी विवेकबुद्धि ऐसी आज्ञा मानने से मना करती है।'

'क्या? मेरी... मेरी आज्ञा का उल्लंघन। मैं सोमपान का आपको अधिकार नहीं दूंगा। आप मना करेंगे तो आखिरकार मैं उनपर वज्र प्रहार करूंगा।'

'शुक्रराज, मेरी बात मानिए। आप वृंदावनवासियों को झुका नहीं सके। इसका मर्म समझें।'

'अग्निदेव, यदि आप मेरी आज्ञा का पालन किए बिना ही स्वर्ग सुख, भोग-उपभोग, ऐश्वर्य, समृद्धि, इन मेनका, रंभा, उर्वशी, घृताची के नृत्य-संगीत का उपभोग करना चाहें तो यह नहीं हो सकेगा। या तो मेरी आज्ञा का पालन करें या स्वर्ग में से विदा लें. ..'

देवसभा कांप उठी, इंद्र के वचनों में निहित अहंकार सबको जलाने लगा। अग्निदेव क्या करेंगे? जैसे उनके कानों में वृंदावनवासियों के चीत्कार, आर्त्तनाद, यातनाओं की ध्वनि-प्रतिध्वनियां पड़ीं, अग्निज्वालाओं में फंसे हुए गोपाल, शिशु, गोपकन्याएं ही नहीं, अभी तो बमुश्किल जिनके पांखें फूटी थीं, वे शुकशावक, पयपान करते बछड़ों को लात मारकर दूर धकेल देना चाहती गायों के चीत्कार कानों में पड़े। हरेकच वृक्षों को घेर चुकी अग्नि का स्पर्श पत्तों के भीतर रहे हुए जल को हुआ और चारों ओर धूम्रवलयों में समस्त गोवर्धन पर्वत ढक गया। इंद्र का अटहास चारों ओर गूंजें मारता था। 'रंभा, मेनका आरंभ करो नृत्योत्सव। चित्रसेन, गायन-वादन शुरू कीजिए...'

वरुण, मरुत्गण, अश्विनी कुमार स्तब्ध थे। चारों दिशाओं में इंद्र का वज्र घूमता हो और यत्र-तत्र-सर्वत्र अपनी सत्ता फैला रहा हो ऐसा लगा। अग्नि के सामने सबकी दृष्टि लगी थी। अग्नि को विचार हो आया कि एक समय यहां के यक्ष के स्थान पर हेमवती उमा प्रकट हुई थीं, इसी ही तरह इस समय भी प्रकट हों तो कितना अच्छा? इंद्र की क्रोधाग्नि का सामना उमा के स्निग्ध मधुर नेत्र ही कर सकते हैं। मन-ही-मन वे उनका स्तवन करने लगे।

'अग्निदेव, मेरी आज्ञा समझ में आई या नहीं?' इंद्र की गर्वोक्ति सुनी और अग्नि की स्वगत लीला थम गई।

'जैसी आज्ञा देवराज, मैं स्वर्ग में से विदाई पसंद करता हूं। ये समस्त सुख-भोग, संगीत-नृत्य, आप ही भोगें...' इंद्र सिंहासन पर से उठने को हुए पर वहीं-के-वहीं पर ही स्थित रहे।

'मैं वृंदावन जाता हूं, वहां अनेक रूपों में उपस्थित रहूंगा।' यों कहकर अग्नि ने धीरे-धीरे चलते हुए विदा ली। वायु को लगा था इंद्र अग्नि को रुक जाने की विनती करेंगे, परंतु इंद्र ने तो राजहठ पकड़ा था और राजधर्म त्याग दिया था।

अग्निहीन इंद्र को तेज कुछ क्षीण होने का आभास हुआ। इंद्र ने चारों तरफ दृष्टिपात किया। अग्नि की अनुपस्थिति से स्वर्ग की महत्ता घटेगी ऐसा वे मान नहीं सके।

इंद्र कुछ बोले उससे पहले वरुण आसन पर से उठ खड़े हुए, 'क्षमा शक्रराज, आप सहस्राक्ष हैं और तो भी दृष्टिहीन हैं, अग्नि बिना जल को मैं किस बरसाऊंगा। वृंदावनवासियों को जल से पराजित करने गए तब तक तो ठीक, परंतु अग्नि को आप ऐसी आज्ञा दें यह कैसे चले, इन्होंने आपकी आज्ञा का अनादर करके नीतिभंग की पर इन्होंने स्व-रूप सहेजे रखा। जहां अग्नि वहां मैं, मैं इनका अनुचर हूं।' कहकर पर्जन्यदेव भी अग्नि के पीछे-पीछे चल निकले।

और इस तरह सारे देव-देवियों ने स्वर्ग का ऐश्वर्य, स्वर्ग की समृद्धि को स्वर्ग में ही रहने देकर विदा ली।

इंद्र स्तब्ध! अपने समक्ष घटी घटना की जैसे उनको प्रतीति होती न थी।

स्वर्ग सूना हो गया। इसकी शून्यता को दूर करने के लिए इंद्र ने उर्वशी को बुलाया। वह प्रकंपित चाल से आई पर अंत में कुछ दूर खड़ी रह गई।

'उर्वशी, दूर क्यों? निकट आओ।'

पर उर्वशी निकट नहीं सरकी।

'क्यों उर्वशी, कोई दुविधा है?'

'अधिपति, क्षमा। स्वर्ग में कभी भी दुर्गंध होती नहीं.. पर

आज आपकी काया में से दुर्गंध बही आ रही है.. यह दुर्गंध मुझ से सही नहीं जाएगी, हममें से किसी को भी सहन नहीं। हम भी गंधवती वसुंधरा पर कृष्ण के पास जाएंगी, कृष्ण की बांसुरी के स्वर पर नृत्य करेंगी।'

इंद्र कुछ बोलें, कि इससे पहले सारी अप्सराएं वृंदावन की दिशा में जाने लगीं।

स्वर्ग की सीमाएं मानों अनेक गुनी हो गईं। देवराज इंद्र इस विराट स्वर्ग में इधर-उधर चक्कर लगाने लगे। नहीं संगीत, नहीं नृत्य, नहीं सोमपान... पर उन्होंने हृदयदौर्बल्य को मार हटाया : मेरे साथ में भले ही कोई न हो, भले मेरे साथ मातरिश्वा न हो या वरुण न हो, भले योजक-अग्नि मेरे साथ न हो, इस हाथ में वज्र तो है ही। अब इसे लेकर गोवर्धन पर आक्रमण के सिवाय और कोई विकल्प नहीं।

इंद्र के व्यक्तित्व का एक अंश अग्नि की बात स्वीकार कर लेने का कहता था पर इस अंश को वे गाड देना चाहते थे। अग्निदेव की सच्ची, कड़वी बातों में तथ्य तो था परंतु वे आज ममता के वशीभूत थे। 'मैं अकेला ही युद्ध करूंगा।' उन्होंने देखा तो कदंब के वृक्षों का छत्र कृष्ण और वृंदावनवासियों को अनुकुल आ गया था, बारह मेघ के आक्रमण के बावजूद किसी को आंच आई न थी। इसलिए अब वज्र हाथ में लेकर आकाश में घूमने लगे, वृंदावन के आकाश में मंडराए हुए कृष्ण-मेघ पर वज्र के प्रहार करने लगे। अधिक गुदगुदे पानी वाले बादलों को तितर-बितर कर डालने में इंद्र को देर नहीं लगी परिणामतः जैसे आकाश ही फट पड़ा।

वृंदावन की धरती दिखती न थी। चारों दिशाओं से पानी बरसने लगा। कदंब वृक्ष इस पानी को रोक सकें ऐसे न थे, कृष्ण की बांसुरी के स्वर थम गए, विशाखा और सखियों के रास थम गए, बालक-किशोर भयभीत हो गए। इंद्र के कोप से कृष्ण किस तरह रक्षा करेंगे, इसकी चिंता सबको होने लगी।

कृष्ण ने बांसुरी कटिबंध में खोंसी। विशाखा भयभीत। वर्षा की झड़ी की ठंड से कांपते शिशुओं को आश्वस्त करती-करती वह सब जगह घूम रही थी।

कई सारे यादवों को निमित्त मिल गया, वे नंदबाबा को कहने, लगे, 'हम तो कहते ही थे कि कृष्ण को अंकुश में रखो, यह उच्छृंखला हो गया है। त्रिभुवनस्वामी की पूजा नहीं करने का कोई कारण न था। आपने इसको रोका नहीं इसका यह परिणाम!'

नंदबाबा के चेहरे पर ग्लानि और क्लांति थी। 'पर देवर्षि नारद की बात सुनकर हम सबने गोवर्धन पूजा की क्या सम्मत्ति नहीं दी थी?'

'नारद! है यहां इस समय? देखिए, हमारी दशा कैसी हो गई है? घरबार छोड़कर इन पेड़ों के नीचे बेसहारा आकर यहां खड़े हैं। कंस की मथुरा भी इसकी अपेक्षा तो ठीक थी।'

'मित्र, कंस का स्मरण इस समय क्यों करते हो? यह नर-राक्षस! उग्रसेन को कारावास में डाला, बहन-बहनोई को कारावास में डाला, ताजा जन्मे हुए भानजों की निर्दयतापूर्वक हत्या की... पूरी मथुरा इसके पापों से भरी-भरी है।'

'यहां भी क्या है इस समय? मैंने तो कृष्ण से कहा भी था कि तू ही यादवों का सर्वनाश लाएगा... लो... सर्वनाश आ पहुंचा... चारों दिशाओं में पानी-ही-पानी... और बरसात तो रुकने का नाम ही लेती नहीं...'

'धीरजे रखो...'

'काहे का धीरज? यह पानी उतरे इतनी देर, इंद्रपूजा का संकल्प आपके द्वारा कराएंगे। और आपके कृष्ण को भेज देंगे मामा कंस के पास में, वहां चाहे यह अपना बुद्धिचातुर्य और वीरता दिखाए।'

कृष्ण कदंब वृक्षों में से बाहर आए। चारों ओर पानी-ही-पानी था। क्षितिज के इस छोर से उस छोर तक एक सरीखी मेघमालाएं थीं। अतीव गहरा भूरा रंग और इसमें बीच-बीच में हृदयविदारक विद्युत्लताएं...।

अनराधार मेघ के बरसने के अनुभव कोई कम न थे। परंतु इस समय हो रहा अनुभव असाधारण था। जैसे सृष्टि के सिरजनकाल का जल बरस रहा था। बरसात के साथ विनाशकारी तूफान भी बहता आता था। काले भंवर बादल निचुड़-निचुड़ कर धरती पर बरस रहे थे। यह जल और यह स्थल है, यह आकाश है और यह धरती है यह भेद मिट गए थे।

इंद्र तो बहुत कुपित थे। सांप के मुंह में मेंढक जीवित रह सकता है, भूखे विकराल बाघ के हमले से बछड़ा उबर सकता है, बाज के पंजे में फंसा हुआ कबूतर बच सकता है पर मेरे क्रोध से वृंदावनवासी बचने वाले नहीं यह मान कर इंद्र अधिक-और-अधिक वेग से वज्र घुमाने लगे। इसकी फुत्कार बरसात की झड़ियों में घुल जाती थी।

कृष्ण पानी घंघोलते-घंघोलते गोवर्धन के पास में जा खड़े रहे। तलहटी से शिखर तक के गोवर्धन को आंखों की पुतलियों में समा लिया।

'हे महागोवर्धन, गोकुलवासियों के जीवनदाता, जीवनधात्रा. .. आज इंद्र कोपायमान हुआ है, अब तक हमने इसकी पूजा चालू रखी। अब यह पूजा बंद करने का निर्णय गोकुलवासियों ने किया, इसलिए इसने हमें दंड की ठानी है। गोकुलवासियों का ये विनाश चाहता है, मेरी बात छोड़ो... दूसरे तो इनके भक्त थे न? इनको भी कहां अभयवचन दिया है? इनको क्यों अपना कल्याणकारी वरदहस्त नहीं बताया? इसने तो अपने भक्तों का विनाश करने की भी सोची है।

'मैं इस समय हमारे समग्र परिवार की रक्षा के लिए आपके पास आया हूं। इनको बचाने का एकमात्र मार्ग आपकी छत्रछाया

के नीचे रहने का है। मैं आपको लीलामात्र में ऊंचा उठा लूं। प्रभु, चाहे इसको मेरा अभिमान समझें। रावण की तरह मैं शक्ति प्रदर्शित करने आया नहीं। जगतभर के मनुष्यों और पृथ्वी के, जीवसृष्टि के प्रतिनिधि के रूप में मैं नम्र भाव से विनती करने आया हूं।'

'आपने इस पर्वत पर सबको आश्रय दिया है। वृक्षों, वृक्षों पर अनेक रंगी-अनेक गंधी पुष्पों, लताओं, इन वृक्षों पर बसने वाले पक्षियों, इनके घोंसलों में पांखें नहीं फूटी हों, ऐसा बच्चों, वृक्ष के तने पर चढ़-उतर करती कीटसृष्टि, वृक्षों के तने के पास में नाग के बिल, धरती पर जहां पैर रखो, वहीं बीजांकुरित हुई नव वनस्पतियों, जीवों... महामना, मुझे यह भय है कि मैं सबको उठाऊंगा तो इस जीवसृष्टि को आंच आएगी। हे पर्वतराज, पंख जैसे हल्के हो जाएं तो इन जीवों को आंच न आए, मैं उठा लूं बाद में फिर गरिमायुक्त होइए। हमारे मनुष्यों की विनती को मान-सम्मान दीजिए...।'

कृष्ण प्रार्थना करके चुप हो गए।

'लो... यह कृष्ण तो यहां है।' पांच-सात बुजुर्ग यादव थे और इनके पीछे दस-पंद्रह युवाओं की टोली थी। कृष्ण को उनकी आंखों से लगा कि वे झगड़ा करना चाहते थे। एक मजाकिया बीच में बोला, 'कृष्ण, गोवर्धन प्रसन्न हुए क्या?'

पीछे से विशाखा आ पहुंची और कृष्ण के एक ओर खड़ी हो गई।

'तू क्या करना चाहता है? कुपित हुए इंद्र को मनाने का अब एक ही रास्ता है और वह है इंद्र महोत्सव मनाने का। हम इनसे क्षमा मांगे।'

'किसलिए? हमने कोई अपराध किया नहीं। अपराध तो इसी ने किया हैं क्षमा इसे मांगनी चाहिए।'

'क्या? इंद्र हम से क्षमा मांगे?' तीन भुवन के स्वामी हमारे समक्ष झुकें?'

'जो भूल करे वह क्षमा मांगे।'

'क्षमा की बात जाने दें। हम इंद्रोत्सव करते हैं।'

'नहीं।'

'तो फिर क्या करना है तुझे?'

'आप मुझे सहयोग दें, इंद्र का मिथ्याभिमान टूटना ही चाहिए। आज यह वृंदावनवासियों को हैरान करता है, अगले दिन दूसरों को पीड़ित करेगा। सत्ता हो इसलिए अन्यों को कुचल डाला जाए? शंकर भगवान के तीसरी आंख है पर वे इसका उपयोग कभी-कभी ही करते हैं... इंद्र को मैं थका डालना चाहता हूं। इसलिए मैं इस समय गोवर्धन पर्वत उठा लेता हूं। इसकी छत्रछाया में हम सारे ही सुरक्षित रहेंगे। फिर इंद्र को जितना बरसना हो, बरसे।'

यादव कृष्ण की बात का विश्वास नहीं कर सके, 'क्या तू गोवर्धन उठाएगा?'

'अरे, तुम देखो तो सही कि यह कैसे उठाता है? यदि तू यह नहीं उठा सका तो हम इंद्र महोत्सव मनाएंगे न?'

'हां!'

यह सुनकर यादव जोश में आ गए। 'चलो, चलो, हम इंद्र महोत्सव की तैयारी करने में जुट जाएं। यह पर्वत कोई इससे उठने वाला नहीं।'

विशाखा के हृदय में धकपक होने लगी। कृष्ण को इस तरह इंद्र महोत्सव की हामी भरने की जरूरत नहीं थी।

हवा में बात फैली कि कृष्ण इतना बड़ा गोवर्धन पर्वत उठाएगा। सब लोग समूह में एकत्रित होने लगे। अगली दिन गोवर्धन पर्वत के मध्यभाग तक खोद निकाली हुई सुरंग में कृष्ण ने प्रवेश किया और कुछ देर में ये बीच के भाग में जा पहुंचे।

विशाखा ने गोवर्धन पर्वत की मन-ही-मन वंदना की।

'देखिए, यह है गोवर्धन पर्वत का निचला भाग। मैं यहां से गोवर्धन को उठाता हूं।'

और सबके देखते-देखते कृष्ण ने गोवर्धन पर्वत को लीलामात्र को उठाता हूं।'

और सबके देखते-देखते कृष्ण ने गोवर्धन पर्वत को लीलामात्र में ऊंचा उठा लिया। इसको उठाते समय कृष्ण की काया भी ऊंची हुई। कृष्ण ने वृंदावनवासियों को गोवर्धन पर्वत के नीचे बुलवा लिया। सभी आश्चर्यचकित हो गए, विरोधी यादव यह घटना मान ही सकते नहीं थे। गोवर्धन ने कृष्ण की विनती को स्वीकार किया था इसलिए हल्कापन अनुभव हो रहा था। गोपबालों से कृष्ण ने लट्ठों के सहारे-आधार लगवाए। आनंदोत्सव आरंभ हुआ। बांसुरी बजी, रास रचा गया। उर्वशी, रंभा, मेनका और दूसरी अप्सराओं के नृत्य आरंभ हुए। इस धन्य क्षण में पृथ्वीवासियों के सम्मुख अपने दैवी नृत्य नैवेद्य के रूप में प्रस्तुत किए।

गोवर्धन पर्वत के आसपास के सभी क्षेत्रों के लोगों को प्रलयकाल का अनुभव हो रहा था। इन्होंने किसी-किसी समय में बड़ी होती मछली की और मनु की कथा सुनी थी। कहां गई वह मछली और कहां है मनु? यहां तो सब जगह हिरण्याक्ष ही आंखों के समक्ष थे। नदियों में, झरनों में मरे हुए पशु, बड़े-बड़े उखड़े हुए वृक्षों के तने। ये तने ईंधन के लिए खींच लाना चाहते तरुणों की

देखते-देखते कृष्ण ने गोवर्धन पर्वत को लीलामात्र में ऊंचा उठा लिया। इसको उठाते समय कृष्ण की काया भी ऊंची हुई। कृष्ण ने वृंदावनवासियों को गोवर्धन पर्वत के नीचे बुलवा लिया। सभी आश्चर्यचकित हो गए, विरोधी यादव यह घटना मान ही सकते नहीं थे। गोवर्धन ने कृष्ण की विनती को स्वीकार किया था इसलिए हल्कापन अनुभव हो रहा था।

भीड़ भी तट पर जमी थी। प्रारंभ में तो ऐसे पुरुषार्थों के लिए उत्साह था, पर अब सभी थक गए थे। तभी कहीं से बात सुनने के लिए मिली कि बचना हो तो गोवर्धन पर्वत के निकट पहुंच जाइए इसलिए कई गाड़ों में बैठकर, पैदल चलकर, कई-कई रथ में बैठ कर चल पड़े। रास्ते में फंस जाने वाले भी कम न थे। एक-दूसरे की सहायता करते ये सब धीरे-धीरे बढ़ रहे थे। इस तरह भूखे, थके-हारे लोग जब गोवर्धन पर्वत के पास में पहुंचे तब इस दृश्य को देखकर ही इनकी भूख-प्यास, थकान दूर हो गई। गोवर्धन पर्वत के नीचे जो जाता उसका समावेश हो जाता था।

सात दिन तक वर्षा सतत बरसती रही। रास-नृत्य-गीत खेले-गाए जाते रहे। आखिरकार इंद्र थके। प्रारंभ में तो कुछ समझ नहीं आया। परंतु आकाशी मेघों का तांडव घटा। पहले तो तुमुल नाद सुनाई देता था और अब वह थमने लगा था। बिजलियां भी कौंधनी कम हो गई थीं। कृष्ण की दृष्टि बांसुरी बजाते-बजाते आकाश से धरती और धरती से आकाश पर घूम जाती थी। इन्होंने भी इस परिवर्तन को भांप लिया। विशाखा ने कृष्ण की दृष्टि परख ली थी।

आहिस्ता-आहिस्ता मेघमाला बिखरने लगी। वर्षा रुकी। सूर्यप्रकाश धीरे-धीरे गोवर्धन पर्वत को, वृंदावन को, वृंदावनवासियों को आलोकित करने लगा। कृष्ण ने गोवर्धन को सावधानी से धरती पर रखा और स्वयं बाहर आए।

कृष्ण के इस अप्रतिम कृत्य के साक्षी बने सारे ही लोग आनंदविभोर हो गए। इनके मन में सूर्य, गोवर्धन और कृष्ण एकाकार होने लगे।

तभी देवता भी प्रकट हुए। इन देवताओं के साथ में एक वृद्ध भिक्षुक भी था। वह कृष्ण के पास में आया।

'हे महामना कृष्ण... क्षमा...'

कृष्ण ने भिक्षुक को आलिंगन दिया, 'स्वर्ग को क्षमा देने वाला मैं कौन? परंतु अब आप यही रूप धारण कर रखना।'

चारों दिशाओं में सर्वत्र भरा हुआ पानी घटता गया, धरती सुवासित हो गई। विशाखा ने पुनः रास आरंभ किया। उर्वशी, रंभा, मेनका, घृताचि ने साथ दिया। कृष्ण की बांसुरी के स्वर बहने लगे। तभी वीणा का मधुर नाद सुनाई दिया। बांसुरी और वीणा के साथ सभी ने गोवर्धन स्तुति की। अग्निवरुणादि देवों की उपस्थिति से वातावरण तेजोमय हो गया। (समाप्त)

2-ए-2, पवनपुरी, बीकानेर, राजस्थान-334 003,
मो. 94608 93974

मूल लेखक का पता :
233, राजलक्ष्मी सोसायटी, जूना पादरा रोड,
जिला वडोदरा, गुजरात-390007
मो. : 98248 12581

लघु कथा

सोच

● **शबनम शर्मा**

रोहन मेरे पड़ोस में रहता है। मैं भी इस स्थान पर कुछ दिनों पहले ही आई हूँ। वह छोटा सा बालक मात्र दस-ग्यारह बरस का है। अकसर मुझे देखते ही मुस्कुरा देता। मुझे भी उसे देखकर अच्छा लगता। एक दिन साथ की पड़ोसन ने बताया कि ये बालक मात्र पांच बरस का था जब इसकी माँ चल बसी। अब यह सौतेली माँ के पास है, उसके भी दो बच्चे और हैं। माँ-बाप दोनों इससे अच्छा व्यवहार नहीं करते। फिर भी यह हमेशा मुस्कुराता इनका सारा काम करता रहता है।

एक दिन जोरों की बारिश हो रही थी। मैं गलियारे में बैठी बारिश का मजा ले रही थी कि रोहन भी हमारे घर आ कर मेरे पीछे खड़ा हो गया। पानी से भीगा वह और भी सिकुड़ा सा लग रहा था। मुझे चाय पीने का बहाना मिल गया। मैं उसे अन्दर ले गई। तौलिये से उसका सिर पोंछा, उसे कुर्सी पर बिठाया और चाय बनाने लगी। इसी बीच मैंने पढ़ाई के बारे में उससे कुछ बातें पूछनी शुरू की।

गजब के जवाब थे उसके। मेरा मन प्रसन्न हो गया। मैंने उसे शाबाशी दी और चाय बिस्कुट खाने का आग्रह किया। जैसे ही उसने चाय का कप उठाया, उसकी बाजू पर नीला गहरा निशान मुझे पसीज गया। ''ये क्या हुआ?''

वो चुप शान्त बैठा रहा।

मैंने फिर पूछा, उसने जवाब दिया, ''कल रात माँ की मदद कर रहा था, ठीक से काम न कर पाया, दो रोटी मुझसे जल गई। माँ ने चिमटा मार दिया। बस ये जरा सी लग गई।''

मेरे मुँह से चीख निकल गई, ''जरा सी, ये जरा सी है। तेरे पापा ने कुछ नहीं कहा?''

''वो क्या कहते, वो तो मुझे ही डाँटते। पर आँटी, एक बात बताऊँ, ये कोई बड़ी बात नहीं है। अगर आज मेरी माँ जिन्दा होती तो मैं बिगड़ जाता। ये दोनों सख्त हैं तो मैं अपनी कक्षा में प्रथम आता हूँ और कभी एक बड़ा अफसर बन ही जाऊँगा। फिर देखना...'' कहकर वो तेजी से भाग गया।

मैं उसकी बड़ी अनोखी सोच पर हाथ मलती रह गई।

अनमोल कुंज, पुलिस चौकी के पीछे, मेन बाजार, माजरा,
तह. पांवटा साहिब, जिला सिरमौर, हि. प्र. - 173021
मो. 09816838909

कहानी

खबर हो गया एक आदमी

● सैली बलजीत

मेरे बारे में तो बस सभी इतना ही जानते हैं कि भिखमंगा होगा कोई। मेरी शक्ल से तो हर कोई भिखमंगा ही समझेगा मुझे... मेरा हुलिया देखा था ना? मेरे बारे में तुम्हारी भी तो यही राय बनी होगी, लेकिन... मुझे हाथ पसारे हुए भीख मांगते हुए तुमने देखा था 'टरेन' में। 'टरेन' में ही तो देखा था तुमने मुझे... जब मैं ठिठुरते हुए 'टरेन' के इस डिब्बे में घुसा था तो एक बार तो तुम मेरी ओर टकटकी बांधे हुए देखने लगे थे, जैसे मैं किसी चिड़ियाघर से भागा हुआ कोई जंगली जानवर होऊं। पर उससे तुम लोग ज्यादा विचलित नहीं हुए थे। मैं चुपचाप डिब्बे के दरवाजे के पास ही बैठ गया था... जाड़े से बर्फ हुए से फर्श पर... संडास के पास... जबकि मेरे पास से गुजरने वाले हर शख्स को मुंह-नाक पर रूमाल रखे हुए ही देखा था मैंने। बदबू मुझे भी तो आ रही थी संडास से जिसका दरवाजा खराब होने की वजह से बंद नहीं हो रहा था... हालांकि बदबू मुझे भी आ रही थी... लेकिन संडास की बदबू से ज्यादा बदबू शायद मेरे कपड़ों से आ रही थी, ऐसा मैं जानता हूं। तुमने भी तो देखा होगा कि मेरे मैले-कुचैले चीकट हुए कपड़ों पर किस तरह काली तहें जमी हुई थीं मैल की... रात हो गई थी, इसके साथ ही जाड़ा भी बढ़ गया था, मुझे किसी ने दरवाजा बंद करने का हुक्म दिया... एक तगड़ा-सा मूंछों वाला आदमी था वह, बंद कर ओए बुड्ढे दरवाजा... बाप की गाड़ी समझ रखी है... कर बंद इसे... ठंड से मरना है तो मर... हमें क्यों मारने लगा है..."

"थूकने को खोला था..." मैंने इतना ही कहा था।

"अब खोला तो एक रखूंगा तेरी गर्दन पर... चले आते हैं बाप की गाड़ी समझकर..." कोई जना कड़ियल आवाज में बोला था।

"नहीं खोलूंगा जी..."

"अब आदमियों की तरह वहीं बैठा रह अगर थूका तो उठाकर बाहर पटकूंगा...समझा..."

"समझ गया जी..."

"क्या समझ गया?"

"जो कहा है आपने..."

वे चार-पांच जने थे। वे लोग फिर ताश खेलने लगे थे, बीच-बीच में रुक-रुक कर बतियाने के अलावा वे बीड़ियों के सुट्टे भी मारते थे। इस बीच गर्मागर्म चाय लिए हुए एक छोकरा आ गया था। गाड़ी किसी टेसन पर खड़ी थी।

डिब्बे में सभी जने गर्म चाय की चुस्कियां लेते हुए, जाड़े से ठंडे हुए हाथों को कांच के गिलासों पर रखे हुए, गर्माहट लेने लगे थे... मैं नहीं बैठा रहा था... ठंडे फर्श ने मेरी पिंडलियां... मेरी कमर... सब कुछ बर्फ की तरह ठंडी-शीत कर दिया था... मैं हाथों को कब तक आपस में रगड़ता, मेरी ललचाई आंखों में शायद 'टरेन' में बैठी एक छोटी-सी बच्ची ने देखा था... जो शायद जान गई थी कि मुझे इस वक्त चाय की तलब की नहीं.. चाय की जरूरत थी... मेरे कानों में एक तोतली-सी आवाज घुसी थी...

"मम्मी... एक कप चाय उसे भी पिला देते हैं..."

"किसे?" उस लड़की की मां ने डपटा था उसे शायद।

"उस आदमी को... जो कई घंटों से ठंडे फर्श पर बैठा है... मम्मी बिचारा ठंड से कांप रहा है देखो तो..." उस बच्ची ने मेरी तरफ इशारा किया था। चुप नहीं बैठ सकती... वह औरत फिर कड़की थी।

"मम्मी उसे पिला दो ना चाय..."

"नहीं बेटी... ऐसे आदमी गंदे होते हैं... इन्हें मुंह नहीं लगाते... तुम चाय पिओ और ऊपर बर्थ पर सो जाओ कंबल लेकर।"

मेरे भीतर चाय की तलब उस वक्त मेरे लिए जरूरत हो गई थी... मैं भिखारी होता तो मांग कर चाय पी सकता था... लेकिन नहीं... मैं लहू के घूंट पीकर रह गया था। फिलहाल मेरे अंदर रात गुजारने के लिए कई तरकीबें फन फैलाए हुए उठ खड़ी हुई थीं। डिब्बे का दरवाजा बंद हो जाने से ठंड तो बराबर उसी तरह रही थी... रात ज्यों-ज्यों पसरती गई थी, ठंड मेरे जोड़ों के भीतर रेंगने लगी थी। मैं चाय के बिना रह पाया था। दिल पर पत्थर रख लिया था। जेब में क्या होना था मेरे... सवेरे से एक रुपया बचाकर रखा था, जेब में वैसे ही पड़ा था, टटोलकर देख लिया था। अगर आधा कप चाय देने को कोई चाय वाला छोकरा राजी हो जाता तो मैं एक रुपये में आधा कप चाय ही पी लेता... लेकिन चाय तो आती है,

दो रुपये में एक कप... मैंने सोचा था कि चाय सवेरे पीऊंगा... हाथ पसारने से वह मर तो नहीं जाएगा... अगर हाथ न पसारे तो यह शरीर के भीतर तक उतरने वाली सर्दी उसे मार देगी... उसका जिस्म कमान की तरह मुड़ने लगा था।

'टरेन' में सभी जने अपनी दुनिया में खोए हुए ठठाने लगे थे। बच्चे बिस्कुटों वाले पैकेट फाड़-फाड़ कर इधर-उधर फेंकते रहे थे। लगभग सभी लोगों ने अपने-अपने कंबल निकाल लिए थे। बुजुर्ग औरतें उछल रहे बच्चों को कंबल ओढ़ा कर सुलाने लगी थीं। जहां तक मेरी नजर आती थी डिब्बे में कई जने तो अपने साथ लाए गए रोटी वाले डिब्बों को फर्राटे से खोलने लगे थे। चपर-चपर करते हुए रोटी खाने लगे थे सभी।

कुछ देर पहले ताश में लीन उस सामने की सीट वाले लोगों ने अब बैक में से दारू की बोतल निकाल ली थी।

"पानी का जुगाड़ है ना?" उसी मोटी मूंछों वाले आदमी ने दूसरे जने से पूछा था।

"पिछले टेसन से भर लिया था... यह देखा. ..." उस शख्स ने प्लास्टिक से भरी बोतल सामने रख दी थी।

"गिलासियां हैं ना... या करें कोई इंतजाम?"

"क्या इंतजाम करेंगे...?"

"रात भर ठंड से अकड़ना है क्या...?"

"फौजी रम ले आया था मैं... अब गिलासियां निकाल फटाफट..."

"स्टील के दो-एक गिलास हैं... निकालूं?"

"अब फटाफट कर... बारी-बारी लगा लेंगे. .. तगड़े पैग ही डालते हैं... कौन बार-बार मुंह का स्वाद कसैला करे... पटियाला पैग ही चलेगा आज।" वे सभी बारी-बारी एक ही गिलास से दारू पीते हुए नशिया गए थे।



तब वे दुनिया भर की बातों का रस लेने लगे थे। अनाप-शनाप बकने लगे थे। "तू क्या देखता है आंखें फाड़कर? तुम्हें कह रहा हूं बुड्ढे... सुना नहीं?" उसने शायद फिर मुझे निशाना बनाया था।

"बोलो साब अब क्या गलती हो गई..." मैं डर से कांपने लगा था, कहीं अभी उठकर एक थप्पड़ न लगा दे मेरे गाल पर।

"क्या आंखें फाड़कर देख रहा था... दारू पीते हुए लोग कभी देखेने नहीं... बोलता क्यों नहीं...?"

"मैं क्या आंखें फाड़ूंगा... गरीब ने क्या देखना है और क्या नहीं देखना... साब... क्यों अपना मजा किरकिरा करते हैं... मैं क्या कहता हूं आपको... जब से टरेन चली है.. यहीं बैठा हूं भूखा-प्यासा..."

"तो क्या हम तेरे लिए रोटियों का भी परबंद करें अब... हम पर अहसान कर रहा है.. हम क्या करें अगर तू भूखा बैठा है...?"

"मैंने आपके आगे हाथ तो नहीं पसारे...?"

बीच में काई दूसरा मेरी तरफ देखकर थूकते हुए बोला था, "क्यों मजा खराब करता है, उससे क्यों पंगा ले रहा है... बेचारा पड़ा है... किसी को क्या कहता है... छोड़ यार... ऐसे आदमियों को मुंह नहीं लगाते... काम करो भाई अपना... दारू है बोतल में तो डाल दे..."

वे फिर बारी-बारी दारू की गिलासियां गटागट चढ़ाने लगे थे। इस बीच वे अगले टेसन आने का इंतजार करने लगे थे।

"हो जाए ताश की एक बाजी?" एक जना बोला था।

"नहीं... ओए... अब खाना खाएंगे..." दूसरे ने इनकार कर दिया था शायद।

"अगला टेसन तो आ जाने दे..."

"अगला टेसन... कौन-सा आने वाला है?"

"मेरे खयाल में लुधियाना ही होगा..."

"तो वहां तो गर्मागर्म भटूरे-पूरियां ही खाएंगे... चाय पी-पी कर कलेजा जला रहे हैं कब से..."

"और दारू ने तो और कलेजा जला दिया... आग लगा दी.... फौजी रम ने..."

"पर मजा भी तो आया है ना...सफर का पता ही नहीं चला... वरना ताश खेलते हुए झपकियां आने लगी थीं..."

"पर सो नहीं जाना... अगला टेसन आने वाला है..."

"सोना क्या है... यार डर लगता है..."

"किससे?"

"सामने वाले बुड्ढे से..."

"क्यों...?"

"क्या पता रात को जब सभी सो जाएंगे... कोई चीज-सामान लेकर ही ना चंपत हो जाए...।"

"तो जाग कर काटनी पड़ेगी रात...?"

"गाड़ी में वैसे भी कौन-सी नींद आती है?"

"तो भी खयाल तो रखना ही पड़ेगा ना?"

"तो जागते रहना तू भाई...हम तो खूब सोएंगे... दारू अब चढ़ रही है... ऐसे में तेजी से पेग चढ़ाते गए... अब पता दे रही है अपना... फौजी रम असली लगती है...."

"देखो तो टेसन आने वाला है क्या... गाड़ी की रफ्तार कुछ धीमी हुई लगती है..."

"जब आएगा. पता चल जाएगा... अभी से चिंता क्यों करता

है... भूख क्या हमें नहीं लगी?"

"पर मेरी बात समझ गया ना... उस बुड्ढे पर नजर जरूर रखना..."

वे सभी जने ठहाकों में लीन हो गए। हा... हा... हा...

मैं भिखमंगा ही सही लेकिन मेरे बारे में घटिया सोच जाने क्यों सोच रहे थे, वे लोग। मुझे ऐसे लग रहा था, जैसे मैं एक बहुत बड़ा गुनहगार हो गया हूं, उन सभी की नजरों में... वह कांपने लगा था ठंड से।

अगला टेसन लुधियाना था, मुझे इससे कोई सरोकार नहीं था.. मैंने इससे क्या लेना-देना। मुझे तो बस सफर की इस तोड़ देने वाली पीड़ा से ही दो-चार होना था अभी। मेरे लिए तो सफर का बाकी बचा हिस्सा मौत की तरह फफकारता हुआ दिखने लगा था। क्या करूं जेब में पड़े एक रुपये के सिक्के का... इससे क्या आएगा? एक बीड़ी का बंडल भी अब साढ़े तीन रुपये का आने लगा है... आधा कप चाय तो कोई देने से रहा... फिर आधा बंडल बीड़ियों का कौन देगा... उसने सोचा था अगर आठ-सात बीड़ियां उसकी जेब में होतीं तो इस वक्त ठंड से बचने की झूठी कोशिश तो की जा सकती थी।

मुझे तो बस सफर की इस तोड़ देने वाली पीड़ा से ही दो-चार होना था अभी। मेरे लिए तो सफर का बाकी बचा हिस्सा मौत की तरह फफकारता हुआ दिखने लगा था। क्या करूं जेब में पड़े एक रुपये के सिक्के का... इससे क्या आएगा? एक बीड़ी का बंडल भी अब साढ़े तीन रुपये का आने लगा है... आधा कप चाय तो कोई देने से रहा... फिर आधा बंडल बीड़ियों का कौन देगा... उसने सोचा था अगर आठ-सात बीड़ियां उसकी जेब में होतीं तो इस वक्त ठंड से बचने की झूठी कोशिश तो की जा सकती थी।

तुम सभी डकार मारते हुए, अपनी सीटें पर आ जमे थे, मूंछों को ताव देते हुए। रूई वाली महंगी सिगरेट का अधजला टोटा जमीन पर फेंकते हुए, जूते के तले से मसल दिया था। अगर जलता हुआ टोटा यों का यों फेंक देते तो मैं उसे उठा कर दो-चार सुट्टे तो मार लेता... पर मैंने गिला किया? नहीं ना? मैं कौन होता हूं, गिला करने वाला... मुझे डर लग रहा था कि जाड़े से कहीं निमोनिया न हो जाए मुझे... निमोनिया हो जाएगा तो वह रोक पाएगा... चलो छुटकारा मिलेगा इस नरक वाली जिंदगी से... जी कर भी कौन-सा पहाड़ तोड़ लिया है, बीवी थी, मर गई बेचारी वो भी... अधरंगे हो गया था उसे... बाल बच्चा कोई हुआ ही नहीं... तब से इसी तरह गाड़ियों में बदरंग सफरों की अंधी दौड़ में शामिल रहा है। अंधी दौड़ ही है उनकी जिंदगी के बेनाम और बिना किसी मकसद वाले अंधे सफर की। इस सफर से कब छुटकारा मिलेगा...? वह जानता होता तो इस तरह इस गंदी संडास के पास भला कभी बैठता... चीकट हुए मैल की असंख्य तहों वाले कपड़े भला कभी पहनता? उसे अब तो यह भी याद नहीं कि इन कपड़ों को पहने हुए महीने हो गए हैं या साल... कपड़ों को धोना अब उसके वश से बाहर हो गया है... उसे याद है ये कपड़े बटाला वाली 'पराथना सभा' वालों के कारिंदों ने उसे दिलवाए थे। शायद शहर में किसी सेठ ने सभा वालों को गरीब लोगों को इकट्ठा करने को बोला था... और भिखमंगे लोगों की कतार में वह भी खड़ा हो गया था। एक गर्म स्वेटर, कुर्ता, पायजामा और एक कंबल मुफ्त में मिल रहा था... कौन छोड़ता है... फिर उसे तो इसकी सख्त जरूरत थी, तभी से उसके जिस्म पर वही कपड़े सटे हैं... साल और तारीख उसे याद नहीं... उसने महसूस किया कि ठंड से उसका जिस्म थरथराने लगा था... भूख और ठंड ने उसे तोड़ दिया था, उसने महसूस किया था कि इस वक्त रात के बारह बज गए होंगे। गाड़ी के उस डिब्बे में लगभग लोग सो गए थे... खुर्राटों की आवाज और गूंज रही थी।

"मम्मी देखो वही बुड्ढा... हमारी सीटों के नीचे सो रहा है...।" उसी बच्ची ने कहा था शायद। उसने सुना था, नींद भला आती है ऐसे भूखे पेट और ऊपर से कड़ाके की सर्दी... उफ...

"तू जाग रही है अभी, मुई..." उसकी मां ने उसे डांट दिया था।

"नींद नहीं आ रही मम्मी..."

"कोई डरावना सपना तो नहीं देख लिया?"

"नहीं मम्मी, बदबू आ रही है..."

"उठा दूं इस बुड्ढे को...?"

"नहीं मम्मी... बेचारा कहां सोएगा?"

"हमें क्या जहां मर्जी मरे... ठेका ले रखा है क्या इसका?"

"मम्मी देखो तो बेचारा है भी या मर गया है... हिलजुल नहीं रहा।"

"तू सो बेटी... तू क्यों चिंता करती है..."

"नहीं मम्मी... उस बेचारे को भूख लगी होगी... बेचारा भूखा ही सो गया... कोई कंबल भी तो नहीं उसके पास..."

"नहीं मम्मी... उस बेचारे को भूख लगी होगी... बेचारा भूखा ही सो गया... कोई कंबल भी तो नहीं उसके पास..."

"तो मैं क्या करूं? अपना कंबल उसे दे दूं?"

"मैं ऐसे तो नहीं कह रही।"

"मम्मी जब हम खाना खा रहे थे तो देखा नहीं बेचारा यह बुड्ढा किस तरह टुकुर-टुकुर हमारी ओर तार रहा था... देखा था ना?"

"नहीं तो बेटी..."

"मम्मी उसे एक रोटी दे देते तो बेचारा आशीशें देता।"

"ऐसे ही नखरे करते हैं, दिखावा करना कोई इनसे सीखे।"

"ऐसा क्यों कहती हो मम्मी... सुन लेगा तो..."

"उसका डर है मुझे?"

"अच्छा नहीं लगता ना..., उस पर तरस आ रहा है..."

कब तक खुसर-फुसर होती रही थी, मां-बेटी के बीच। मैंने सब सुना था, नींद मुझे भला कैसे आती, हड्डियों तक उतरी हुई ठंड में। कंबल मेरे पास होता तो मैं भला आराम से न सोया होता। कंबल तो मेरा पिछले हफ्ते चुरा लिया था किसी ने टेसन पर, नया कंबल कहां से आता। जाने फिर कोई दानी सज्जन 'पराथना सभा' में आए कंबल बांटने...? इसलिए तो मैं बटाला जा रहा हूं। कितनी उम्मीदें बंधी हैं इस सफर पर... सुना है, वहां बूढ़ों को मुफ्त रोटी खिलाते हैं वे लोग, वहां रहने के लिए भी अच्छा जुगाड़ है, लेकिन उनकी शर्त है- सिर्फ घर वालों के कठोर रवैए से टूटे बूढ़े लोगों को ही जगह मिलती है वहां। फिर वह तो ठहरा एकदम फटीचर, न कोई आगे न कोई पीछे। पिछली बार किसी ने शिकायत कर दी थी, तीसरे दिन परबंदकों ने उसे उठा बाहर फेंका था... वह फिर सड़क के फुटपाथ पर आ गया था।

पिछले दो घंटे से करवटें लेते हुए, बेकार सोने की कोशिश में उसकी कमर की जकड़न और बढ़ी है। उसे लगता है कि वह ठंड उसकी जान लेकर ही छोड़ेगी। बाहर किसी टेसन से 'चाय गर्म' का शोर उसके कानों में पड़ा तो उसे अहसास हुआ कि दिन चढ़ने वाला है। वह उठ बैठा था, फर्श से स्वेटर को झाड़ा था। कितनी गर्द चढ़ आई थी कपड़ों पर। उसने मुंह पर हाथ फेरा था, कई हफ्तों से बढ़ आई खूंटेनुमा दाढ़ी के बाल चुभने लगते थे हाथों को। उम्र अभी इतनी नहीं हुई उसकी। लेकिन बुड्ढा कैसे हो गया, उसे लगा था वह तो जन्म से ही बूढ़ा हो गया है। चिंताएं आदमी को बूढ़ा कर देती हैं। उसकी चाय की तलब फिर जाग उठी थी। वह इस बार भीतर तक छटपटाया था।

उसने देखा था, आसपास की सीटों पर पसरे लोग जमुहाई लेते हुए सीटों पर बैठ गए थे। चाय वाला गर्मागर्म चाय की कांच वाली गिलासियां लोगों को थमाते हुए आगे बढ़ गया था। उसकी ललचाई हुई आंखों में फिर चाय की उम्मीदें तैरने लगी थीं। उसके दिल में एक बार तो आया था कि वह अभी जोर से चिल्ला उठे, "गरीब पर तरस खाओ लोगो...एक कप चाय का सवाल है... कोई भगत सज्जन है? भगवान के नाम पर एक कप चाय पिला दो... भगवान भला करेगा... रहम करो गरीब पर... बचा लो मुझे।"

लेकिन उसकी जुबान पर जैसे ताला पड़ गया था, जमीर अभी उसका जिंदा है, जिस दिन जमीर मर गया समझो, वह भी मर गया।

उठते ही उसे पेशाब की तलब हुई थी। वह पेशाब के लिए संडास की तरफ चला गया था। कांपने लगा बेतरह से... ठंड उसके लिए कहर बनके टूट रही थी। वह अंदर चला गया था, टट्टी-पेशाब के लिए... भीतर से कुंडी लगाना भूला नहीं था।

मुझे इतना भर तो सुनाई देता रहा था, बाहर से लोगों ने खूब हल्ला किया था। उसका जिस्म एकाएक अकड़ने लगा था। उसने हाथ हिलाने की चाह में थोड़ा जोर लगाया तो... बेकार... गर्दन में जकड़न... टांगों में जकड़न... सांस धौंकनी की तरह... जुबान बंद. .. बहुत चाहा कि ऊंची आवाज में पुकारे सहायता के लिए... हाथ कुंडी तक नहीं पहुच पाए... वह छटपटा रहा है। संडास के भीतर गिर पड़ता है... धड़ाम से... पेशाब की एक बूं नहीं निकली... टट्टी पेशाब सब बंद... जिंदगी का खेल खत्म... जुबान लड़खड़ा रही है। कुंडी तक हाथ नहीं पहुंच पाता... असहाय... टूट गया... जिंदगी की डोर टूट गई... पखेरू उड़ गया...

संडास के बाहर आए मुसाफिर कब से खड़े हैं बाहर, दरवाजा खटखटाना जारी है। कुंडी भीतर से बंद है। कोई आवाज नहीं भीतर... लोग हैरान हैं। एक घंटे से प्रक्रिया जारी है।

"कौन है अंदर? स्साला टट्टी गया है या सो गया है? रात के शराबियों वाली मंडली में से कोई बोला था...

"कब से खटखटा रहे हैं... दरवाजा खोलता ही नहीं..." कोई दूसरा तैश में आ जाता है।

"मैं तो कहता हूं... तोड़ देते हैं दरवाजा..."

"इतना मजबूत दरवाजा टूट सकेगा...?"

"कोशिश करके देखते हैं..."

"आखिर भीतर है कौन?"

"हमें क्या पता..." कोई कंधे उचका देता है।

"वो कमबख्त बुड्ढा तो नहीं अंदर?"

"पता नहीं..."

"दिख तो नहीं रहा... सवेरे तो उसे देखा था। फर्श पर लेटे हुए... उसके बाद नहीं दिखा..."

"कितने बजे थे?"

"चार के करीब होगा टैम..."

"मैं तो कहता हूं.. मर-गुजर गया होगा... ठंड से... वरना टट्टी के लिए इतना टैम थोड़े लगता है..."

"कोई क्या कर सकता है..."

"खबर कर देनी चाहिए रेलवे वालों को..."

"देखते हैं... पर कमाल हो गया, आखिर भीतर वाला आदमी बोल क्यों नहीं रहा..."

"बिना टिकट तो नहीं घुस गया भीतर कोई..."

"कौन घुसेगा भीतर... सिवाय उस रात वाले बुड्ढे के... मैं तो कहता हूं, हो गया उसका राम-नाम-सत्त.. दी इंड... खलास.. . छूट गया दुनिया के झमेलों से..."

"यह स्वेटर किसका हो सकता है?" किसी ने मैल से चीकट हुए स्वेटर को जूते से आगे धकेलते हुए कहा था।

"उसी का है... बिलकुल उसी बुड्ढे का... आखिर बाहर क्यों उतार गया... तभी मरा है... ठंड से..."

"इसका मतलब उस बुड्ढे का हो गया दी इंड..."

"होना ही था... भूख से कब तक भिड़ता... फिर जाड़ा तो इन लोगों के लिए कयामत लेकर आता है..."

तभी सीट से उतर कर वह बच्ची भी वहां पहुंच गई... संडास के बाहर... अपनी मां के साथ।

"क्या हुआ मम्मी?"

"किसी ने भीतर से कुंडी लगा ली है... खोल ही नहीं रहा।"

"मैं खटखटाती हूं..."

"नहीं बेटी... कोई फायदा नहीं... कितने लोग एक-दो घंटे से दरवाजा खटखटा के हार गए हैं..."

"अंदर गया कौन है?"

"कहते हैं, वही रात वाला बुड्ढा है भीतर..."

"उसे तड़के तो देखा था.. ठीक से था..."

"ठीक कहां था... कांप रहा था..."

"तो मम्मी मर गया वो?"

"पता नहीं... अब कोई क्या कह सकता है..."

"तुम्हें कहा था कि मम्मी उसे चाय पिला देते हैं..."

"चाय पीने से क्या वह बच जाता?"

"शायद..."

"नहीं कुड़िए... जाने क्या बीमारी थी उसे...?"

"मर गया बेचारा भूखा-प्यासा... ऊपर से ठंड, मरना ही था उसे... हम सभी ने उसे मार दिया..." छोटी बच्ची उदास हो गई लगती है।

"सभी ने कैसे? चुप नहीं रह सकती... अब लैक्चर बंद, समझी... चल अपनी सीट पर..." उसकी मां सख्त होती दिखती है।

"नहीं मम्मी... ऐसा क्यों हो गया..."

"मुझे नहीं पता... अब चुप कर... मर गया तो हम क्या करें. .. बोल? उसके साथ मर जाएं?"

"सात... आठ... नौ... दस... ग्यारह... बारह... फिर एक.. . दो...तीन... लोग दरवाजा खटखटाते रहे थे। कोई रेलवे वालों को बताने नहीं गया था। न ही कोई रेलवे वाला ही रात में डिब्बे में आया था। शाम तक जैसे कुछ भी नहीं हुआ हो। ताश खेलने वाले यात्री उसी तरह ताश खेलने में लिप्त रहे थे। चाय वाले छोकरे उसी तरह चाय गर्म का आलाप करते रहे थे। खेल-तमाशे करने वाले छोटे-छोटे काले-कलूटे लड़के 'टरेन' में अपने करतब दिखाते हुए पैसे इकट्ठे करने के लिए अपनी झोलियां फैलाते रहे थे। पैसों के लिए फर्श पर झाड़ू लगाने वाले छोकरे भी अपनी तरस वाली सूरत लिए हुए गुहार करते रहे थे... औरतें शादी ब्याह से वापसी पर होने वाली वार्तालाप में लीन थीं... कुछ भी नहीं बदला था...

गाड़ी आखिरी स्टेशन पर पहुंचने वाली है।

लोग अपना सामान समेटने लगे हैं। अभी तक भी संडास का दरवाजा भीतर से बंद है। इस बीच दो बार टिकट चेकर राउंड लगा चुका है। किसी ने उसे यह नहीं कहा कि लैट्रिन का दरवाजा भीतर से बंद हुए लगभग बारह घंटे हो गए हैं। किसी को क्या पड़ी है? ड्यूटी वाले संतरी भी बीच-बीच में चक्कर लगाकर वापस लौट गए हैं। कोई भी नहीं कह पाया उससे, सारा किस्सा।

लोग अब भी फुसफुसा रहे हैं।

एक जना कहता है, "अब तो पक्का हो गया, वह बुड्ढा मर गया..."

"बिलकुल जी... वरना इतना टैम कोई भीतर से कुंडली लगाकर रखता है?" दूसरा जना उत्तर देता है।

"पुलिस वाले खुद आ जाएंगे... गाड़ी के जम्मू पहुंचने पर.. ."

"ठीक है, जी, कौन पंगे में पड़े। कोर्ट-कचहरियों के झमेले बहुत बुरे होते हैं मर गया सो मर गया... हम क्यों चिंता करें?"

"अगर वह बुड्ढा ठंड से न मरता तो भूख से मर जाना था उसने... पता नहीं कितने दिनों से भूखा था..."

"उसके स्वेटर की जेब से एक रुपये का सिक्का फर्श पर गिर गया था। जो अभी ज्यों-का-त्यों ही पड़ा था। यही पूंजी थी उस बूढ़े की। लोग स्वेटर को जूतों से टटोलने लगे थे। तभी जाने किसी को क्या सूझी कि जूते की नोक से घिसटते हुए चीकट हुई स्वेटर को गाड़ी से बाहर छितरा दिया। एक रुपये का सिक्का वहीं पड़ा रहा था।

तभी एकाएक हाथ में झाड़ू लिए हुए फर्श बुहारने वाले छोकरे की गिद्धदृष्टि उस सिक्के पर पड़ी तो झट से उसे उठा लिया था उसने। उस बुड्ढे की कुल जमा पूंजी भी खत्म हो गई थी।

गाड़ी कुछ क्षणों में ही जम्मू प्लेटफार्म पर आकर रुक गई थी। लोग अपना सामान उठाए हुए नीचे उतरने लगे थे। गाड़ी खाली हो गई थी। उस डिब्बे की लैट्रिन में भीतर से बंद हुई कुंडी तब तक भी बंद ही रही थी।

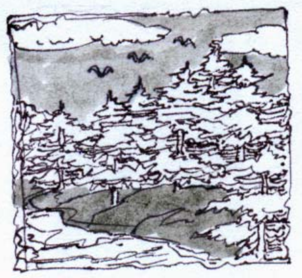
अखबार में इसकी खबर छप जाएगी, एकाध दिनों में कि चलती ट्रेन में लैट्रिन के लिए गए एक भिखमंगे की ठंड से मौत हो गई। लैट्रिन का दरवाजा भीतर से बंद होने के कारण तोड़ कर लाश को बाहर निकाला गया... वगैरह... वगैरह... और आदमी एक खबर हो जाएगा।

लेकिन... इस बात की खबर किसे होगी कि उस बुड्ढे की ठंड-भूख से हुई मौत के लिए कौन जिम्मेदार है... गाड़ी के उस डिब्बे से सबसे आखिर में वही छोटी लड़की उतरी है, जो बार-बार पीछे पलट कर देख रही है... उसे अपनी मां पर एक ही गिला है कि अगर उस बुड्ढे को चाय का कप पिला दिया होता तो शायद वह ना मरता... लेकिन किसी के पास वक्त होता तो... तो भी उस बुड्ढे को मरना ही था... वह कहीं और जाकर मर जाता...।

1288, लेन-4, श्रीरामशरणम् कॉलोनी, डलहौजी रोड, पठानकोट, पंजाब-146 001, मो. 98780 78570

विनोद ध्रब्याल राही की लघुकथाएं

निर्भर



धरती ने मेघ को सराहा, ''हे मेघ! भगवान तेरा भला करे। ज्येष्ठ-आषाढ़ की गर्मी जब मेरी काया को झुलसाती है तो तू ही शीतलता का मरहम लगाता है। तू ही मेरे तन की अगन मिटाता है।''

धरती द्वारा अपनी प्रशंसा सुनकर मेघ बोला, ''लज्जित न कर, मात्! मैं तो तुच्छ हूं। तू मेरी जननी है। जो जल मैं तुझ पर बरसाता हूँ वो तेरा ही तो है। तेरी उष्णता ही जल देती है मुझे। तू ही मेरा पोषण करती है।''

''यह उष्णता मेरी नहीं। यह तो सूर्य का प्रताप है। वही उष्णता देता मुझे। तभी मैं तेरा पोषण कर पाती हूँ। वही परोपकारी है।'' धरती बोली।

सूर्य धरती और मेघ का वार्तालाप सुन रहा था। धरती द्वारा अपनी बड़ाई सुनकर बोला, ''हे धरती ! मैं परोपकारी नहीं। परोपकारी तो नभ है। उसी ने मुझे अपनी विशाल गोद में स्थान दिया। वही माँ-बाप सा प्यार लुटाता है मुझपर। तभी तो मैं तुझे उष्णता दे पाता हूँ।''

नभ अपना गुणगान सुन रहा था। वह गरजा, ''सूर्य! मैं परोपकारी नहीं। मैं तो अपना फर्ज निभा रहा हूँ। परोपकारी तो ईश्वर है। यह मेरी विशालता उसी की दी हुई है। तभी तो तू, चाँद, सितारे और अनगिनत रहस्य मेरी शोभा बढ़ा रहे हैं। सच तो यह है कि धरती बिन मेघ, मेघ बिन धरती, मेरे बिन धरती और तुम सब बिन मैं कुछ भी नहीं। एक दूसरे के बिना हमारा अस्तित्व ही नहीं है। हम सब एक दूसरे पर निर्भर हैं।''

पद्धर की देई

चपरासी ने ग्यारह बजे डॉक्टर के कमरे का ताला खोला। हालांकि अस्पताल खुलने का समय नौ बजे का था। सुबह से ही पंक्ति में लगे लोग एक दूसरे को पंक्ति न तोड़ने की सलाह देने लगे।

तभी पद्धर की देई वहाँ आ गई। उसका नाम देई था और उसके गाँव का नाम पद्धर इसलिए सभी उसे पद्धर की देई कहकर बुलाते थे। वह कंधे पर लंबा डंडा उठाए रखती थी। डंडे के दूसरी ओर कपड़ों की गठरी बांधी होती थी। उसने नजरें घुमाकर पूरे स्थल का जायजा लिया। डंडा नीचे रख दरवाजे के साथ सटकर खड़ी हो गई। लोगों ने उसे पंक्ति में लगने की हिदायत दी परंतु उसने अनसुनी कर दी।



साढ़े ग्यारह बजे डॉक्टर आया। कुर्सी पर बैठकर उसने दो तीन फोन कॉल्स निपटाए। तब तक दूसरा डॉक्टर भी आ पहुंचा जिसकी तैनाती किसी दूसरे अस्पताल में थी परंतु अकसर यहीं देखा जाता था। चाय भी आ गई। बारह बजने को हो आए। लोगों की बेचैनी बढ़ती जा रही थी। पंक्ति में पीछे खड़े लोगों ने आगे खड़े लोगों पर अंदर जल्दी जाने का दबाव बनाना शुरू कर दिया था। एक दो ने अंदर जाने के लिए डॉक्टर से आज्ञा मांगी परंतु असफल रहे।

तभी अधपगली देई को पता नहीं क्या सूझी। चपरासी को परे धकेलकर अंदर जा पहुंची और धड़ाम से मुक्का डॉक्टर के मेज पर दे मारा। दोनों डॉक्टर सहम गए।

डॉक्टर की ओर ऊँगली उठाकर वह बोली,''सुधर जाओ तुम लोग। सरकार गप्पें मारने की तनख्वाह नहीं देती। जल्दी से मुझे बुखार की दवाई दे दो वरना छोड़ूंगी नहीं। मुझे दूसरे गाँव शादी में जाना है।''

डॉक्टर ने बिना समय गंवाए थर्मामीटर उसके मुँह में ठूँस दिया। देई से हिम्मत पाकर तीन चार मरीज चपरासी को परे धकेलकर अंदर आ गए।

रा.मा.पा.अनूही (कोटला), जिला कांगड़ा हि. प्र.-176205
मो : 96259 66500

अमर बरवाल 'पथिक' की कविताएं

शब्द

शब्दों का अकाल पड़ा है
पैदावार कहां से हो।
मन की मिट्टी बांझ हो चली
कविता यार कहां से हो।
ईश्वर से हम मिलने निकले
मन्दिर, मस्जिद, गुरुद्वारे
बंद हुए जब मन के चक्षु
साक्षात्कार कहां से हो।
गली-गली में खुली दुकानें
धर्म के ठेकेदारों की
हो मन में बारूद भरा तो
परोपकार कहां से हो।
मृग-तृष्णा सा है जीवन
व्याकुल और बेचैन 'पथिक'
बाहर कुछ और भीतर कुछ है
फिर उद्धार कहां से हो...



...2...

शब्द जब आकाश से उतरते हैं
जेहन के चैकपोस्ट से गुजरते हैं
कागज पर आ कर थम जाते हैं
आंख को नम भी कर जाते हैं
कभी तो उपनिषद से लगते हैं
कुरान की कभी आयतें बन जाते हैं
गुरुबाणी के शब्द बन कर
रूह में सीधे उतर जाते हैं
आदमी माध्यम है कब रचता है
रब की मर्जी से खुद ढल जाते हैं

...3...

मस्तिष्क

नींद और ख्वाब के चक्र-व्यूह को
जब- जब तोड़ता है
शब्दों के पीछे...
बेलगाम दौड़ता है।
उन में ढूंडता है ...
अपने अनगिनत सवाल
और उनके जवाब...
सफा-दर-सफा.
लगाता है जिन्दगी का हिसाब
रोजमर्रा की संवेदनाएं...
उमड़ पड़ती हैं ...
भड़ास स्वरूप
और वो समझता है
उसने कुछ नया रच दिया
समाज को नया सच दिया
मन ही मन मुस्कुराता है
प्रियजनों को सुनाता है
लेकिन शायद यह भूल जाता है
कि वो शब्दों को नहीं।
शब्द उसे रच रहे हैं...
मूर्ख है नासमझ है...
लेखनी को अपना समझ रहा है
नाहक शब्दों से उलझ रहा है।

...4...

तैर रहे थे यहां-वहां
कुछ शब्द जो मेरे पास आए।
कहें हमें कुछ ऐसे बांधो
हम भी शाश्वत हो जाएं।...

जुदा-जुदा जब तक होंगे हम
कोई समझ ना पाएगा
एक सूत्र में हमें पिरो दो
अपने अर्थ समझ पाएं...
बिखरे हुए हैं इस सृष्टि में
अलग-अलग परिधानों में
अनजाने बन कर फिरते हैं
दुनिया के वीरानों में।
कोई ऐसा यत्न करो
मिलजुल कर कुछ कर पाएं।
शब्द हों या मानव हों दोनों
जुदा-जुदा बेमतलब हैं
जब भी चले वह कदम मिला कर
युग परिवर्तन कर पाए।

...5...



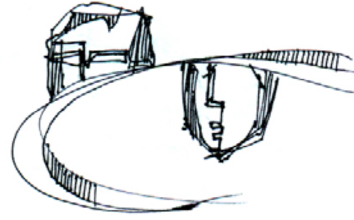
शब्द बिन कहे चुपचाप
ही सब कह गये।
हम उन्हें बस देखते
ही रह गये।
खोल दी आंखें कभी तो
कभी विस्मित कर गयी
घर कभी अपने दम पर
नयनों में जल भर गयी।
ज्ञान पर विज्ञान पर
संविधान पर कभी ध्यान पर
विकास पर इतिहास पर
व्यंग्य और उल्लास पर
धर्म पर कभी कर्म पर
जीवन के अनबुझे मर्म पर
जब शब्द एकत्रित हुए
कुछ तार झंकृत हुए
संसार को जागृत किया
मनुष्य को अमृत दिया।

उपकरणीय अभियंता,
डॉ. यशवंत सिंह परमार बागबानी एवं वानिकी
विश्व विद्यालय, नौणी, सोलन, हि.प्र., मो. 94184 72685

कविता

चक्र

● पुष्पा मेहरा



आश्रय पा बीज का
मां धरा की गोद में
पलकर बढ़ी हूं
शरीर-परिवार-जाति
धर्म समाज के
कुंदन से गढ़ी हूं
चमक इसकी खो न जाए
इसी धुन में रमी हूं।

कोई मुझसे कह रहा है
चांद, तारा, सूर्य बनकर
स्वतंत्र हस्ती है तुम्हारी
पर तुम तो सीमाओं से घिरी
निरी भ्रम में रमी हो।

कोई कह रहा है मुझसे गुनगुनाकर-
मैं- माटी
मैं- पवन
मैं- गगन
मैं- अग्नि
मैं- जल से बनी हूं
नाद हूं मैं-
घूमता जो सात चक्रों में।

बी-201, सूरजमल विहार, दिल्ली-92,
दूरभाष : 011 22166598

रामकुमार आत्रेय की कविताएं

प्रार्थना किस के लिए



सुबह-सुबह
सरकारी स्कूल के दो बच्चे
खड़े हो गए आगे निकल कर
बाकी खड़े थे पंक्तिबद्ध
सिर झुकाए, हाथ जोड़े
उनके सामने
प्रार्थना हो गई शुरू
दो बच्चे जैसा कहते
बाकी के सब वही दोहराते
किसके लिए कर रहे हैं
वे प्रार्थना
तो पूछने पर उन्होंने बताया
शराब की उस बदबू से
पीछा छुड़ाने के लिए
जो आ रही थी बेखटक
उन दो अध्यापकों के मुंह से
जो खड़े थे उनींदे से

उन समाचार पत्रों के लिए भी
जो थमे थे
दो अध्यापकों के हाथ में
जो कुर्सी पर पसरे थे
कार्यालय में।

बहस करते हुए
उन कुछ अध्यापकों की
सुरक्षित वापसी के लिए भी
जो अपने-अपने कारोबार
में व्यस्त थे कहीं
और स्कूल में आए
हो गया था पूरा एक सप्ताह
प्रार्थना तो प्रार्थना थी
जो होनी ही थी हर
हाल में!

नंगे पांवों का सफर

पक्के चौड़े
सपाट राजमार्गों पर
गर्व के साथ दौड़ते
झूठ के शानदार रथ
सस्ती-पुरानी चप्पलें
पहनने के आदी मेरे पांव
नहीं चल सके सिर झुका कर
उनके पीछे-पीछे

मैंने सीखा है कि
सच की राह नहीं होती
कभी भी समतल
उसे चलना होता है
उबड़-खाबड़
कंटीली पगडंडियों पर नंगे पांव

मुझसे बिना पूछे ही
मेरे पांवों ने
अपनी चप्पलों को छोड़कर
राजमार्ग के किनारे
अपना लिया है नंगे पांवों का सफर।

मुर्दों का गांव



बाबा कबीर
आपने जिक्र किया था
तुमने एक पद में
मुर्दों के किसी गांव का
तब
मेरी बुद्धि थी बहुत छोटी
और पद तुम्हारा छिपाए था
अपने आपमें बहुत-बहुत बड़ा अर्थ
इसीलिए माथ पीट कर रह गया था
तब मैं

आज जहां भी जाता हूं
मिलता है वहीं मुझे मुर्दों का गांव
जहां फूलों की, की जाती है निंदा
कांटों का किया जाता है गुणगान
बचपन की आंखों में जहां पानी
अपराधों में लिप्त जवानी
पेड़ की जिस छांव में
करते हैं लोग गुजर-बसर
फाड़कर मुंह
उसी को कहे गंदी छांव
सचमुच बाबा हर गांव है
जिंदा-मुर्दों का गांव।

864-ए/12, आजाद नगर, कुरुक्षेत्र, हरियाणा-136 119.
मो. 0 94162 72588

कविता

हम जो चाहते हैं

● **संजीव कुमार श्रीवास्तव**

पढ़ना चाहते हैं हम
अनुभवों के
एक जीवंत दस्तावेज की तरह तुम्हें
जो दबी पड़ी हो अरसे से
धूल की परतों में लिपटी
किसी जंग खाती आलमारी के दराज में
लिखी गई हो जो
भले ही कुछ अनगढ़ तरीके से।

तराशना चाहते हैं हम
कुछ इस तरह तुम्हें
जैसे किसी शिल्पकार को
किसी अनगढ़ पत्थर में भी
दिख जाया करती है संभावना
किसी अनमोल कलाकृति की
और साकार हो उठने के बाद
आंकी जाती है जिसकी कीमत
करोड़ों-अरबों डॉलर में
साथ ही संजोया जाने लगता है जिसे
विरासत और संस्कृति की
अमूल्य धरोहर के रूप में।

सहलाना चाहते हैं हम
तुम्हारी कोमल भावनाओं को
मानवता के स्नेहिल स्पर्श से
जिसकी छुअन
जीवन भर रोमांचित करती रहे तुम्हें
और जिस किसी को भी छू ले
तुम्हारी परछाई
स्पंदित होती रहे पुलक से
वो भी सारी उम्र।

खेलना चाहते हैं हम
तुम्हारे साथ
शब्दों की गेंद को
अपनी कलम के बल्ले से
बार-बार तुम्हारी ओर उछालकर
बिलकुल सधे/ और तनिक शरारती अंदाज में
ताकि आहिस्ता-आहिस्ता ही सही
उसे अच्छी तरह से

कैच करना सीख सको तुम
और अपनी विरासत व परिवेश की
बेजान पिच पर
खड़ी होने के बाद
जीवन की बाधाओं का विकेट चटखाने में
महारत हासिल हो सके तुम्हें।

गुजरना चाहते हैं हम
तुम्हारी राहों से
तुम्हारी यादों से
तुम्हारे बचपन से
तुम्हारे सपनों से
ताकि उनमें बिछे कांटों की शिनाख्त कर
संभावनाओं और सीमाओं के
बीच के अंतर को पाटते हुए
मुकम्मल बनाई जा सके
तुम्हारे आने वाले कल की राहें
जिसमें अपनी राहें मिलाकर
मंजिल हासिल कर सके
वंचनाओं का दंश झेलती
तुम्हारे इर्द-गिर्द की दुनिया
और इत्तेफ़ाकन
किसी मोड़ पर
तुमसे आ टकरानेवाला
भूला-भटका कोई शख्स।

छेड़ना चाहते हैं हम
उस सितार की तरह तुम्हें
दबे पड़े होते हैं जिसके जिस्म में
अनगिनत राग
जो निगाहें चार होते ही
झंकृत हो उठते हैं
अपने आसपास की नीरवता को चीरते हुए
और गुंजायमान हो उठती है
एकदम से
सारी सृष्टि।

देखना चाहते हैं हम
तुम्हारी आंखों की रोशनी में
उस दुनिया को बिलकुल करीब से
हमारे इर्द-गिर्द होते हुए भी जो
नज़रों से अकसर
ओझल ही रहती आई है अब तक
प्रतिबद्धताएं नाकाफी साबित होती दिखती है कभी-कभी
उसकी निशानदेही में
पर जनमते ही तुम्हारे वजूद का
हिस्सा बन चुकी है जो
जिसमें है तपिश
किसी लुहार की भट्टी में
धधक रही आग की
साथ ही है हंसिये का-सा पैनापन
भूख की जड़ों को अनवरत काटने के लिए
और भटकता फिरता है बचपन जहां
शीशम के पेड़ों से पटे बियाबानों में
घास के गठर की शक्ल में
जिंदगी का बोझ सिर पर लादे।

भीगना चाहते हैं हम
तुम्हारे आंसुओं की बारिश में
जिसमें नमक की तरह घुले हों
बीते क्षणों के तुम्हारे सारे दुःख-दर्द
छुपाती आई हो जिन्हें पीछे छुपी
तुम्हारी विवशता को
समझने की चेष्टा
किसी ने नहीं की शायद।

दिखाना चाहते हैं हम
एक नई दुनिया की राह
विचारों के आकाश में
उड़ा ले जाकर तुम्हें
सबकी नजरों के सामने
समझ के पंख लगाकर तुममें
ताकि अपनी जमीन से
इंच भर सिसके बगैर भी
समेट सको तुम अपने दामन में
बेशुमार चांद-सितारे
और बिखेर सको उन्हें
अपने इर्द-गिर्द की दुनिया में
अंधेरे कोनों में
ताकि पसरता चला जाए
धीरे-धीरे
उजाला-ही-उजाला
चारों ओर।

मुखर्जी नगर, दिल्ली, मो. 99905 18195

दिनेश रावत की कविताएं

फासला

एक तरफ
आलीशान बंगलों के
मखमली लिहाफ में लिपटे लाडले
दूसरी तरफ
मजबूरियों के मारे
गुदड़ी के लाल
जो जीते हैं
आजन्म
अभावग्रस्त जीवन
जिन्हें न निवाला
निगलने को
न लत्ता
ढकने को तन
जिसके चलते जुट जाते हैं
बालपन से ही वे
जुटाने में इन्हें
और
बनते हैं सहयोगी
परिजनों के
बस!
गरीबी-अमीरी का
यही फासला बन जाता है
हमेशा के लिए
और बना रह जाता है ताउम्र
जिस कारण वे
पहुँच नहीं पाते हैं वहाँ
उन्हें पहुँचना होता है जहाँ।



विश्वास

इतना तो तय है
कि
एक न एक दिन
तुम्हें
सुनाना ही होगा फैसला
मेरी मेहनत व मुकदर का
आखिर कब तक
लेते रहोगे
परीक्षा
मेरे सयंम व संघर्ष की

मैं नहीं
कहता है
मेरा विश्वास
जब भी सुनाया जायेगा
फैसला
जीत तुम्हारी नहीं
मेरी होगी।



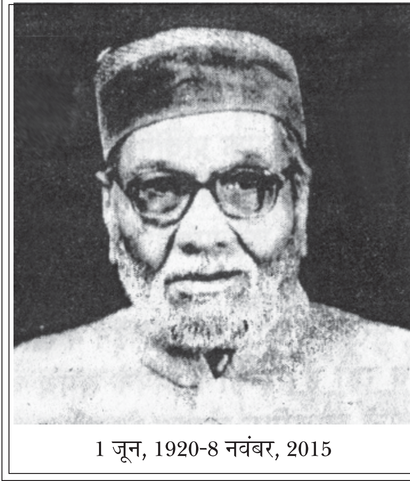
सपने

सपने कौन नहीं देखता?
चलने के
उड़ने के
आगे बढ़ने के
शिखर पर चढ़ने के
आसमाँ को छूने के
मगर होते हैं पूरे सिर्फ उनके
जो
जकड़े नहीं होते
बेड़ियों में
वरना
अभाव संसाधनों का और
असमानता अवसरों की
तोड़कर रख देते हैं पंख
भरने से पहले ही उड़ान।

रा.प्रा.वि.-मेतली, जौलजीबी, जनपद-पिथौरागढ़,
उत्तराखंड
सम्पर्क 9927272086

पुण्य संस्मरण

वरिष्ठ साहित्यकार रामदयाल नीरज का जाना


1 जून, 1920-8 नवंबर, 2015

'मास्टर जी' और 'गुरु जी' के नाम से विज्ञात श्री रामदयाल शर्मा जी नीरज, 8 नवंबर 2015 को अपनी इहलीला समेटकर एक लंबी यात्रा पर चले गए। साहित्यिक, सामाजिक जगत् में उनका अभाव खलता रहेगा। साहित्य के कार्यक्रमों, सामाजिक- सांस्कृतिक आयोजनों में उनकी उपस्थिति, माहौल को खुशनुमा और गरिमापूर्ण बना देती थी। पहले, अध्यापन और बाद में, लोक संपर्क विभाग की मासिक पत्रिका 'हिमप्रस्थ' के यशस्वी संपादक होने से लेकर सेवानिवृत्ति के अनंतर भी वे अपनी रुचि के लोक साहित्य; लोकनाट्य, लोकगाथाओं एवं लोककथाओं पर शोधरत रहे। 'सरस्वती नदी' पर इकट्ठे किए अनेक लेखों पर वे निरंतर चिंतन करते रहते और जब भी मिलते, कहते आप तो सारस्वत हो, कितना काम किया?

रामदयाल जी की, वैसे भले ही कोई कविता, कहानी, ग़ज़ल, गीत, निबंध की स्वतंत्र पुस्तक सामने न आई हो, परंतु 'लोक गाथाओं' पर उन द्वारा संपादित पुस्तक 'हिमाचल की लोक गाथाएं' बड़े काम की है, जिसमें सारे हिमाचल की जिलावार लोक गाथाओं को अनुवाद समेत, अपनी संपादकीय सोच के साथ प्रस्तुत किया है। लोक साहित्य पर उनकी मजबूत पकड़ का यह अच्छा प्रमाण है। लोकसाहित्य के अनेक शोधार्थी उनकी इस पुस्तक से लाभान्वित होते हैं।

वे 94 वर्ष के सजग, सावधान, अध्ययनरत, चर्चा पटु साहित्यकार थे। किसी कार्यक्रम में, सादर बुलाइए, वे अभी भी विमर्श करते थे। 'हिमप्रस्थ' की संपादकी ने उन्हें अनेक तजुर्बे दिए थे। उन्होंने पत्रिका को, देश की बड़ी पत्रिकाओं की समकक्षता में ला खड़ा कर दिया था।

'हिमप्रस्थ' की प्रारंभिक अवस्था पर चर्चा करते हुए वे हंसते हुए कहते थे कि उस समय शुरुआती दिनों में न लेखक थे न संपादकीय सहयोगी। 'खुद ही सारी प्लानिंग करता, खुद ही लेख लिखता, और खुद ही संपादकीय दायित्व निभाता।' वे सच में एक जिम्मेदार व्यक्तित्व थे, जो जिस भी काम का दायित्व ले लेते, उसे बखूबी निभाते। वे कहते, बाद में तो 'हिमप्रस्थ' में सत्येन शर्मा, श्रीनिवास श्रीकांत, किशोरी लाल वैद्य, ज़िया सिद्दीकी आदि का सहयोग मिला और 'हिमप्रस्थ' का पूरे देश में नाम हो गया।

'नीरज; जी हरफनमौला व्यक्ति थे। कभी लहर आई, तो अध्यापक हो गए, कभी मन किया तो मुंबई चले गए, कभी लोक संपर्क विभाग में नौकरी कर ली तो कभी मंचीय नाटकों की ओर तो कभी लोकनाट्यों की तरफ हो लिए। उन्हें, हिंदी, अंग्रेज़ी, पंजाबी, बंगला के ज्ञान के साथ हिमाचल की अनेक बोलियों की बारीक पकड़ थी। अभी दो साल पूर्व ही, 'गेयटी' थियेटर शिमला में, गुरु रवींद्र नाथ टैगोर, शताब्दी वर्ष के उपलक्ष्य में, हिमाचल, भाषा कला अकादमी द्वारा आयोजित एक कार्यक्रम की अध्यक्षता करते हुए उन्होंने पढ़े गए पर्चों पर जो गहन विमर्श किया, और गुरुदेव के जीवन से संबंधित जो मार्मिक प्रसंग सुनाए, वे उनकी हिंदीतर साहित्यकारों के बारे में विशिष्टता को प्रमाणित करने के लिए पर्याप्त थे।

रामदयाल जी, मित्रों के मित्र और जिज्ञासु वृत्ति के मधु संचयक थे। उनके पुस्तकालयों में, इतिहास, पुराण, साहित्य, लोक साहित्य, मनोविज्ञान एवं समाज विज्ञान तक की अनेक पुस्तकें थीं। इतनी बड़ी आयु तक कायिक, वाचिक, पारिवारिक, सामाजिक दायित्वों का निर्वाह करते हुए, साहित्य साधना में रत रहना, कोई मनीषी रचनाकार ही कर सकता है। वे सदा हंसते हुए ही मिलते और खुश-खुश ही विदा होते। आज उनके जाने से उनके सारे इष्ट-मित्र, परिवार, रिश्तेदार गमगीन हैं। ईश्वर, उनकी आत्मा को यथाभिलषित दें और उनका लोकोत्तर मार्ग प्रशस्त करें।

000

ISSN : 2454-972X

हिमप्रस्थ

वर्ष : 60 जनवरी-फरवरी, 2016 अंक : 10-11

सम्पादकीय कार्यालयः हि. प्र. प्रिंटिंग प्रेस परिसर, घोड़ा चौकी, शिमला-5

वार्षिक शुल्क : 150 रुपये, एक प्रति : 15 रुपये

E-Mail : himprasthahp@gmail.com
Tell: 0177 2633145, 2830374

ज्ञान सागर

जब ऐसा लगे कि लक्ष्य हासिल करना मुश्किल है, तो लक्ष्यों में फेरबदल न करें, बल्कि अपने प्रयासों में सकारात्मक प्रयास करें।

इस अंक में

लेख

यात्रा कथा

बाल नाटक

कहानी/बाल कहानी

लघु/लोक/नीति कथा

कविता/ग़ज़ल

समीक्षा

आखिरी पन्ना

अपनी बात

बच्चे, जीवन-उपवन के सुमन होते हैं जिनकी खिलखिलाहट, उपस्थिति घर-संसार के माहौल को खुशगवार बना देती है। उनकी मौजूदगी जिंदगी में नई ऊर्जा भर देती है। मन-मस्तिष्क को प्रफुल्लित व आनंदित कर देती है। संबंधों में घनिष्ठता और आत्मीयता बढ़ा देती है। नन्हे-मुन्ने बच्चों की अपनी एक अलग ही दुनिया होती है। वे पुष्प वाटिका में इठलाती कलियों की तरह होते हैं जिनमें असीम खुशियों एवं सौंदर्य व प्रतिभा का अपार खजाना समाया होता है। कलियों के खिलने पर जैसे पूरा वातावरण सुगंधित होकर खिलखिला जाता है, ठीक उसी तरह बच्चों में छिपी प्रतिभा निखर जाने से समस्त सामाजिक परिवेश ही आलोकित हो उठता है। बालपन की मासूमियत और नटखट शरारतों में छिपे भोलेपन से भला कौन अछूता रह सकता है। बच्चों के चंचलतापूर्ण व्यवहार में ऐसी अद्भुत ताकत होती है जो घर-परिवार के गंभीर-से-गंभीर एवं तनावपूर्ण माहौल को भी पलभर में खुशनुमा बना सकती है। बाल मन तो कच्ची मिट्टी की तरह होता है जिसे कैसा भी आकार दिया जा सकता है। बच्चे की पहली शिक्षक उसकी मां और पहली पाठशाला परिवार होता है जहां उसे मिले संस्कार व नैतिक शिक्षा न केवल उसके जीवन को अर्थपूर्ण बनाते हैं, बल्कि स्कूल में औपचारिक शिक्षा ग्रहण करने में भी सहायक होते हैं। बाल एवं किशोर अवस्थाओं के मध्य इसी दौर में बच्चे अकसर घर में दादा-दादी, नाना-नानी तथा माता-पिता से कथा-कहानियां सुनकर बड़े होते हैं। मौखिक बाल साहित्य की यह वही अमूल्य निधि है जिसके सहारे वे कल्पना लोक और आभासी दुनिया में विचरण आरंभ करते हैं। शायद यहीं से बच्चों के मानसिक एवं शारीरिक विकास और चरित्र निर्माण की प्रक्रिया आरंभ होती है। इसमें बाल साहित्य के मौखिक अथवा लिखित दोनों ही स्वरूपों की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। जिस पीढ़ी में हमारा बचपन गुजरा उसमें शायद आधुनिक प्रौद्योगिकी एवं तकनीक का इतना बोलबाला नहीं था जितना कि आज है। इसीलिए उस दौर की पीढ़ी के बच्चों में बाल साहित्य व बुजुर्गों के सान्निध्य का अच्छा खासा प्रभाव था। लेकिन पुरानी पीढ़ी और आज की पीढ़ी के बचपन में जमीं-आसमां का अंतर आ गया है। एक तो कॉनवेंट शिक्षा पद्धति के प्रभाववश अपने बच्चों को बोलने की तोतलावस्था से ही अंग्रेजी स्कूलों में दाखिल करवाने का मोहपाश, ऊपर से किताबों और बस्तों का इतना बोझ है कि बचपन उसी में दब कर रह जाता है। युवावस्था में प्रतिस्पर्धा का दौर शुरू हो जाता है। अभिभावकों का 'कुछ बनने की महत्त्वाकांक्षा' का बोझ और बच्चों में 'उससे इतर बनने की चाहत' का दबाव उनमें खीझ और तनाव का सबब बन जाता है। असफलता बच्चों में नकारात्मक भाव पैदा करती है जिससे उनमें गलत रास्ते अख्तियार करने की मजबूरी साफ झलकती है। इसमें कोई संदेह नहीं कि सूचना एवं प्रौद्योगिकी में आए क्रांतिकारी बदलाव से भी हमारा जीवन प्रभावित हुआ है। आज की युवा पीढ़ी टेलीविजन, कंप्यूटर, लैपटॉप, टेबलेट और स्मार्ट फोन की पीढ़ी है जो अपने आपको स्मार्ट कहलाना ज्यादा पसंद करती है। नई प्रौद्योगिकी एवं तकनीक विशेषकर, स्मार्टफोन जैसी अत्याधुनिक सुविधाओं से हमारा जीवन आसान हुआ है। पूरी दुनिया एक 'स्मार्ट विलेज' में तबदील हो गई है और स्मार्ट फोन व इंटरनेट से संसार की समस्त जानकारियां एक टच/क्लिक पर सुलभ हैं। लेकिन अत्याधुनिक तकनीक जिस तेजी से फायदा पहुंचाती है, उससे कहीं अधिक तीव्रता से नुकसान भी पहुंचा सकती है। वर्तमान पीढ़ी के बच्चे होश संभालने के तुरंत बाद सीधे स्मार्ट दुनिया के तिलिस्मी (जादुई) वैबजाल में इस कदर फंसते जा रहे हैं कि वह दिन-रात इसी चक्रव्यूह में उलझे रहते हैं। ऐसा प्रतीत होता है जैसे उनका बचपन ही प्रौढ़ हो रहा हो। बचपन-लड़कपन,

किशोरावस्था-युवावस्था इन सबमें फर्क या फासला कम होता जा रहा है। उनके जीवन की ये अवस्थाएं एक दूसरे से उलझती सी प्रतीत हो रही हैं। इससे न केवल समाज में नैतिकता, तहजीब और व्यवहार के मायने बदलने लगे हैं, बल्कि मातृभाषा, लिपि व व्याकरण के तौर-तरीकों में आ रहे परिवर्तन से हिंदी एवं प्रांतीय भाषाओं के अस्तित्व पर भी संकट मंडरा रहा है। उससे भी अधिक पाश्चात्य संस्कृति का अंधानुकरण, आग में घी का काम कर रहा है। आज की पीढ़ी के बच्चे तो स्मार्ट फोन एवं दूसरे गैजेट्स के इतने दिवाने हैं कि वे अपना अधिकतर समय इसी के इस्तेमाल पर बिता रहे हैं। छुपन-छुपाई, चोर-सिपाही जैसे ग्रामीण परिवेश के पारंपरिक खेल तो अब गुजरे जमाने के खेल बनकर रह गए हैं। जबकि ग्रामीण समाज का संस्कृति को पीढ़ी-दर-पीढ़ी आगे बढ़ाने में भरपूर सहयोग रहा है बाहरी क्षेत्रों के प्रभाव से अछूते और निर्लिप्त रहते हुए। स्थानीय बोली और भाषा ने प्राचीन जनोपयोगी साहित्य को कंठस्थ रख अगली पीढ़ियों तक पहुंचाया है। विभिन्न सर्वेक्षणों में पाया गया है कि स्मार्ट फोन एवं अन्य इलेक्ट्रॉनिक गैजेट्स के अधिक इस्तेमाल की बढ़ती प्रवृत्ति से बच्चों के व्यवहार एवं स्वभाव में नकारात्मक परिवर्तन आ रहा है। ऐसा भी नहीं कि आधुनिक प्रौद्योगिकी का प्रयोग बच्चों को नहीं करना चाहिए। फेसबुक और इंटरनेट जैसी अत्याधुनिक प्रौद्योगिकी के इस्तेमाल से आज बच्चे ज्ञानार्जन और इसके विस्तार की दिशा में पुरानी पीढ़ी से बेहतर हैं। इंटरनेट पर भी स्तरीय बाल साहित्य प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है। लेकिन आज हमारे आसपास बहुत कुछ तेजी से बदल रहा है। दुनिया बदल रही है। समाज बदल गया है, परिवार भी और बच्चों की परवरिश भी। उन्हें वे सभी सुख-सुविधाएं आसानी से सुलभ हो रही हैं जो बीते दिनों पहुंच से बाहर थीं। आज के बच्चे बेहतर परवरिश में पल रहे हैं। लेकिन इस प्रक्रिया में उनमें जो कुछ मौलिक था, विशेष था, अनूठा था, वह गायब हो रहा है। वे जो सीख रहे हैं, पढ़ रहे हैं, वह उन्हें मशीनी बना रहा है। बेशक यह उनके जीवन स्तर को सुख-सुविधाओं से संपन्न करेगा, लेकिन बहुत कुछ 'अपना' छीन भी रहा है। बचपन जीवन का आधार है। इसी पर जीवन के भविष्य की इमारत खड़ी होगी। हमें अपने बच्चों को घर परिवार में अच्छे संस्कार देने होंगे, अच्छा बाल साहित्य उपलब्ध करवाना होगा। जिससे उनकी भाषा विशेषकर, मातृभाषा तो परिष्कृत होगी ही, साथ ही संस्कार ग्रहण कर वे भारतीय संस्कृति के ध्वजवाहक बनेंगे। इसलिए इसे मजबूत बनाकर ही बच्चों के भविष्य को उज्ज्वल बनाया जा सकता है। पूर्व राष्ट्रपति डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन ने कहा है- 'साहित्य का कर्तव्य केवल ज्ञान देना नहीं है, परंतु एक नया वातावरण देना भी है।' इस आदर्श वाक्य को अपने विचार-मनन का पर्याय बनाकर हमने बाल साहित्य के लिए ग्राउंड तैयार करने का प्रयास किया है। इस पर हम कितना खरा उतर पाए हैं, सुधि पाठकगण आकलन एवं मूल्यांकन कर अपने महत्त्वपूर्ण सुझाव/सलाह से हमें अवश्य अवगत कराएंगे। बाल साहित्य की उपयोगिता, बेहतर परवरिश व संस्कार देने के लिए पत्रिका ने एक छोटा-सा प्रयास किया है। नए साल का पहला अंक बाल साहित्य विशेषांक के रूप में आपके समक्ष है। रचनाकारों ने जिस संलग्नता और तत्परता से हमें अपना भरपूर सहयोग दिया, वह काबिलेतारीफ है। उनका तहेदिल से आभार।

-संपादक

मो. 94180 06164

आलेख

बाल साहित्य में रचना होगा नया संसार

● पुष्पा भारती

हमारे एक ताऊजी थे- पं. छोटेलाल शर्मा। किसी जमाने में जयपुर महाराजा के खजांची हुआ करते थे। हम सब बच्चे उन्हें दाढ़ी वाले ताऊजी कहते थे। हम उनसे किसी भी शब्द के अर्थ पूछें- उन्हें पता होता था, सारी स्पैलिंग भी उन्हें मालूम थीं, किसी पहाड़े में कभी उनसे गलती होती ही नहीं थी। कहीं से कित्ता भी मुश्किल सवाल सोचकर आओ, उन्हें सारे जवाब मालूम होते थे। आखिर हम भाई-बहनों ने मान लिया था कि यह सब उनकी दाढ़ी का ही कमाल है। हम सबने उनकी दाढ़ी के आगे आत्मसमर्पण करके उनकी परीक्षा लेनी बंद कर दी, क्योंकि सारे संसार के ज्ञान का रहस्य उसी दाढ़ी में जो छिपा था। जो वे कहते, हम सादर सिर झुकाकर मान लेते।

कहानी गढ़-गढ़कर सुनाने की यह जो कला है, उसे हमारे देश ने सदियों पहले सीख लिया था। बचपन में कहानियां सुन-सुनकर पीढ़ी-दर-पीढ़ी हम संस्कारवान बनते चले आए हैं। तभी तो इकबाल ने लिखा था-

यूनान-मिस्र ओ रोमां सब मिट गए जहां से
कुछ बात है कि हस्ती मिटती नहीं हमारी।

आज शहरी सभ्यता में परिवार की संस्था धीरे-धीरे लुप्त हो रही है, न्यूक्लीयर परिवार बनते जा रहे हैं; पर छोटे शहरों में, गांवों में आज भी संयुक्त परिवारों में दादा-दादी या नाना-नानी या ताऊ-ताई जैसे बुजुर्ग रात को सोते समय बच्चों को कहानियां जरूर सुनाते हैं। वे बुजुर्ग भले ही स्कूली ज्ञान न रखते हों, पर जीवन और अनुभव ने इन्हें जो ज्ञान दिया है, उसे वे बच्चे की नसों में प्राणवायु की तरह उतार देते हैं। साहित्यिक कहानियों का हमारा इतिहास बहुत पुराना नहीं है। परदेसों में जब ओ. हेनरी, रुडयार्ड किपलिंग, मोपासां या चेखव आदि एक से बढ़कर एक कहानियां लिख रहे थे, तब हम इस क्षेत्र में कहीं नहीं थे। चेखव की मृत्यु 1904 में हुई थी, तब हमारी साहित्यिक कहानी कला आरंभिक अवस्था में ही थी। मैं अपने यहां की दादी-नानी की जिस कहानी कला की बात कर रही हूं, वह कला हमें अपनी संस्कृत, पाली और अपभ्रंश से मिली है। उस समय का लिखा बाल-साहित्य हमारी अमूल्य धरोहर है- उन कहानियों से मिले संस्कारों से जो भारतीय चरित्र और भारतीय संस्कृति बनी, वह दुनिया में बेमिसाल है। हमारी अपनी अलग पहचान है।

सर्वविदित है कि संसार का प्राचीनतम ग्रंथ ऋग्वेद है। ऋग्वेद की यम-यमी की कथा, पुरुरवा-उर्वशी की कथा या सरमा और पाणिगण के लाक्षणिक संवाद पढ़िए और देखिए, कैसी विलक्षण कला है वहां। उसके बाद आते हैं ब्राह्मण ग्रंथ। उन ग्रंथों में सौपर्णी-काद्रव जैसे रूपात्मक आख्यान अद्‌भुत हैं। फिर उपनिषदों की रूपक कथाएं, रामायण, महाभारत के उपाख्यान, नहुष-ययाति, शकुंतला-दुष्यंत, नल-दमयंती आदि की कथाएं कितनी रोचक हैं। कथा सरित्सागर, हितोपदेश, पंचतंत्र, वैताल पंचविंशतिका, सिंहासन द्वात्रिंशिका, शुक-मैना, शिव और स्कंद की पुराण कथाएं- ये सब हैं भारत की कहानियों के अनंत रूप। इन सब कहानियों का उद्‌देश्य होता था धार्मिक आचार और आध्यात्मिक तत्त्वचिंतन करते हुए नीति और कर्तव्य की शिक्षा देना। यानी बहुत संक्षेप में कहें तो बच्चों को बेहतर इनसान बनाने की जमीन तैयार करती हैं ये कहानियां।

बाद में वीर राजाओं के शौर्य, प्रेम, न्याय, ज्ञान और वैराग्य के किस्से, समुद्री यात्राओं की साहसपूर्ण कथाएं, आकाश और अगम्य पर्वतों की कथाएं खूब प्रचलित हुईं। ऐसी कथाओं का सबसे प्राचीन ग्रंथ है- 'गुणाढ्‌य की बृहत्कथा।' इसमें रामायण के प्रसंग, उदयन-वासवदत्ता की कहानी, समुद्री व्यापारियों तथा राजकुमार और राजकुमारियों के पराक्रम की घटना-प्रधान कथाएं बड़ी ही रोचक हैं। मैंने जो इतने सारे नाम गिनाए हैं, समझ लीजिए, वे पूरे कथा-भंडार के शतांश भी नहीं हैं। उस समय सैकड़ों लोककथाएं भी प्रचलित थीं। जिनमें उड़नखटोला, उड़ाकू घोड़ा, देवी-देवता, राक्षस, देव, अप्सराओं आदि के बड़े रोचक किस्से भी सुनाए जाते थे। सच बात है दौरे जमां कुछ भी कर ले, कितनी भी दुश्मनी कर ले- इन कहानियों से मिली नीति और शिक्षा के संस्कार हमें आज भी जिलाए हुए हैं।

स्कूली शिक्षा की बात जाने दीजिए। वहां तो रोज पद्धतियां

और नीतियां बदलती रहती हैं। नई-नई प्रणालियां चला दी जाती हैं। अभी कुछ वर्षों पहले समाजशास्त्रियों, वैज्ञानिकों, मनोवैज्ञानिकों और शिक्षकों के बड़े-बड़े सम्मेलन हुए और इस बात पर बल दिया गया कि बच्चों को जो परीकथाएं आदि सुनाई जाती हैं। हाथी, भालू, शेर, खरगोश आदि की कहानियां उनके लिए लिखी जाती हैं, ये सब बेकार हैं। ये कहानियां बच्चे के जेहन को कुंद बनाती हैं। आज विज्ञान का युग है, आज बच्चा जानता है कि चांद में कोई बुढ़िया बैठी चरखा नहीं कातती। वह तो एक पत्थर है। बच्चा जानता है कि आसमान में स्वर्ग नहीं होता, भगवान् नहीं होते, देवी-देवता, राक्षस या परियां नहीं होतीं। उनकी सामाजिक चेतना कुंठित होती है, वे झूठ के साथी बनने लगते हैं, वगैरह-वगैरह तर्क दिए गए। इन लोगों के सुझाव थे कि परी कथाओं की जगह वैज्ञानिक तथ्यों पर आधारित कहानियां लिखकर बच्चों को बदलते सामाजिक परिवेश से जोड़ा जाना चाहिए।

मैं इस प्रकार की बातों से सहमत नहीं हूं। इस तरह की कोशिशों से हम बच्चों के दिमाग पर जबरदस्ती प्रौढ़ प्रवृत्तियों को लादेंगे। अभी कुछ ही समय पहले एक शोध कार्य के दौरान वैज्ञानिकों को पता लगा है कि बच्चे कंप्यूटर या टेलीविजन पर अथवा वीडियो पर जो तथाकथित वैज्ञानिक कहानियां देखते हैं, उनसे उनके दिमाग का केवल वही हिस्सा प्रभावित होता है, जो सामने के दृश्य जगत् को देख पाता है और मूवमेंट को समझ पाता हैं। बस, इन्हें निरंतर देखते रहने से दिमाग के बाकी हिस्से कुंद पड़ने लगते हैं। इन वैज्ञानिकों का यह निष्कर्ष था कि टेलीविजन या फिल्म देखने की बजाय काल्पनिक कहानियां सुनकर बच्चों के मस्तिष्क के सामने का वह हिस्सा प्रभावित होता है, जिसके स्पंदन से बच्चे के व्यवहार का निर्माण होता है, बच्चे में इमोशन और भावना निर्मित होती है और संवेदनशीलता आती है। कल्पनाशक्ति बढ़ने के साथ-साथ उसका दिमाग तेज होता जाता है।

वस्तुतः बच्चों की दुनिया प्रौढ़ों की दुनिया से अलग होती है। वह दुनिया तीन तरह की होती है। एक तो वह, जो सामने साक्षात् दिखाई देती है, दूसरी वह जो उनका बालमन कल्पना कर लेता है और तीसरी होती है वह दुनिया, जो वास्तविक और काल्पनिक दुनिया का मिला-जुला रूप होती है। हम बड़ी उम्र के लोग यथार्थ और कल्पना को अलग-अलग करके देख सकते हैं। पर बच्चों के लिए वास्तविक और काल्पनिक दुनिया गड्डमड्ड होकर ही सच्चाई का रूप ले पाती है। अगर हम चाहते हैं कि बच्चों के वर्तमान से जोड़कर उन्हें संस्कार देते हुए उनके चरित्र का समुचित विकास करें। संघर्ष करते हुए, चुनौतियों को स्वीकार करते हुए आगे बढ़ते जाने का साहस और संकल्प इनमें जगाएं तो हमें उनके लिए ऐसे ही साहित्य का निर्माण करना होगा, जो उनकी कल्पना-शक्ति को और-और पैना बनाए। उन्हें ऐसी कहानियां सुनाएं, जो उनमें अपनी फंतासी बुन लेने की शक्ति विकसित करें।

कुछ वर्ष पहले जर्मन भाषा में एक पुस्तक छपी थी, जिसके विद्वान लेखक ने बताया है कि बाइबिल में जिन चालीस कथनों की कथाएं वर्णित हैं, उनका स्रोत हमारे उपनिषदों में है। उन्होंने वे चालीस श्लोक भी उपनिषदों में से चुनकर प्रस्तुत किए हैं, जिन पर वे कथाएं आधारित हैं। इसमें आश्चर्य भी नहीं है, क्योंकि प्राचीनकाल से दोनों ही भाषाओं में खूब आदान-प्रदान होता रहा है। और तो और, वैज्ञानिकों के लिए काबा और काशी, मक्का और मदीना सबकुछ आज नासा है। नासा में जो वैज्ञानिक शोध होते हैं, वे आज के संसार को नई दिशाएं देते हैं। अभी हाल ही में वहां के एक शोध से समुद्र में उस पुल का पता लगा है, जिसे राम ने रावण की लंका तक पहुंचने के लिए बनाया होगा। वैज्ञानिक तथ्यों के अनुसार यह पुल लाखों बरस पुराना होगा। यानी कि 'कुछ बात है कि हस्ती मिटती नहीं हमारी।'

मैं संसार भर के तमाम बाल साहित्य लेखकों और बाल फिल्म निर्माताओं का आह्वान करती हूं कि भारत की बाल कथाओं के इस अकूत खजाने की ओर ध्यान दें। उन्हें एक-से-एक नायाब रत्न मिलेंगे, जिनके प्रयोग से बच्चों के भविष्य की पुख्ता नींव बनाई जा सकेगी। इन कहानियों में बेहतर जीवन-मूल्य जगाने की ताकत छिपी है। ध्रुव, अभिमन्यु, प्रह्लाद, राणा प्रताप, शिवाजी जैसे सैकड़ों-हजारों महान् व्यक्तियों के चरित्र की गाथा पढ़कर बचपन से ही ऊंचे लक्ष्य बनने लगते हैं। इस ओर ध्यान गया था श्री अनंत घई का और उन्होंने 'अमरचित्र कथा' नाम से इस तरह के लोगों की कहानियां चित्र कथाओं के रूप में प्रकाशित कीं। पश्चिम की नकल में कॉमिक और कार्टून कथाएं पढ़ने वाले बालक इसकी ओर आकृष्ट हुए। बच्चों से अधिक उनके माता-पिता आकर्षित हुए, क्योंकि उनके पास बच्चों को ये कहानियां सुनाने का समय ही नहीं होता था और चित्रों के माध्यम से कहानी पढ़ना बच्चों को भी रुचिकर लग रहा था। सो काम बन गया और देखते-देखते भारत में ही नहीं, परदेसों में भी अमरचित्र कथा की श्रृंखला बहुत लोकप्रिय हो गई। यहां तक कि 2009 में टैक्सास यूनिवर्सिटी ने कैथरीन मैकलिन को भारत की अमरचित्र कथाओं पर किए गए उनके शोधकार्य के लिए डॉक्टरेट की पदवी दी। उनकी थीसिस का विषय है- अमरचित्र कथा ऐंड द कंस्ट्रक्शन ऑफ इंडियन आइडेंटिटीज'।

समय कितना भी बदले, भारतीय कथाओं का आकर्षण कभी कम नहीं होगा। अमरीका और लंदन में तो ये कथाएं बहुत लोकप्रिय हो चुकी हैं। यह सच है कि जमाना बदल गया है, जमाने की जरूरतों के मुताबिक हमें भी अपना नजरिया बदलते हुए काम करना है, पर यह भी सच है कि बदलते जीवन-मूल्यों के साथ एक शाश्वत सच भी होता है, जो कभी नहीं बदलता। छोटी-छोटी बातों से नया सीखने और जानने को बालक हमेशा उत्सुक रहता है।

पुरानी भारतीय कथाओं में इतना लचीलापन है कि उनकी मूल भावना को बरकरार रखते हुए उन्हें आधुनिक जरूरतों के अनुसार आधुनिक मुहावरे में ढालकर पेश किया जा सकता है। सारे पश्चिमी जगत् में अत्यंत लोकप्रिय ईसप की फेबल्स भारत के पंचतंत्र और हितोपदेश से प्रेरणा लेकर ही लिखी गई हैं।

हमें ऐसे बाल साहित्य का निर्माण करना है, जो आज के वर्तमान समाज से बच्चों को जोड़े, पर साथ ही साथ उनमें वह दृष्टि भी पैदा करे, जो बुराई पर अच्छाई की विजय दिखाए। पर यह सब हम अपनी भाषा में उपदेश की शैली में नहीं कर सकते। यह काम तो हमें बच्चों के मन की गलियों में घूमकर ही करना होगा और इन गलियों में वास्तविकता और कल्पना अटूट ढंग से आपस में गुंथी होती है। हमारी जानकारी की लोमड़ी के पास भाषा नहीं होती, पर उनकी चालाक लोमड़ी बोलती है। उनका खरगोश कोट-पैंट और टाई पहनता है। उनका बाज पक्षी शेर, कछुआ और चील से दोस्ती करता है। सब एक-दूसरे की मदद करते हैं। उनका नंदी बैल अपने मनुष्य मालिक को सद्बुद्धि देता है। उनके पंछी जानते हैं कि एक-एक तिनका या डंडियां तोड़ी जा सकती हैं, पर सबको इकट्ठा करके एक जगह रखकर आपस में बांध दो तो उन्हें कोई तोड़ नहीं सकता। इनके नन्हे-नन्हे चूहे और खरगोश अपने दांतों से जाल कुतरकर महाशक्तिशाली शेर की जान बचा सकते हैं। मेरे कहने का मतलब यह है कि सामाजिक और वैज्ञानिक भी हम उन्हें उन्हीं के नन्हे विश्वासों और काल्पनिक जगत् से जोड़कर ही दे सकते हैं।

दुर्भाग्य से आज सारे संसार में बच्चों को कुछ ऐसा भी परोसा जा रहा है, जो कल्पना और वास्तविकता का मिला-जुला रूप तो है, पर ध्येय उसका वह नहीं है, जो ऊंचे संस्कारों का निर्माण कर सके। आज के बैटमैन, सुपरमैन, स्पाइडरमैन, निन्झा टर्टल, पावर रेंजर आदि सब कहने को तो इनसाफ के लिए लड़ते हैं, पर उस तथाकथित इनसाफ की आड़ में बच्चों को सिर्फ हिंसा में लिप्त रखा जा रहा है। पौकीमौन मौन्स्टर हैं, उनके रनर ही उन्हें आपस में लड़वाते रहते हैं। जी.आई., जो आपस में लड़ते ही रहते हैं, हजारों किस्म के हथियारों का उपयोग करते हैं। इमोशन डालने की कोशिश में दिखाया जा रहा है कि पौपाई और ब्रूटस औलिव नाम की लड़की के लिए आपस में चालबाजी के साथ लड़ते रहते हैं, कभी यह लड़की को लेकर भाग जाता है तो कभी वह। पर अधिकतर जीत पौपाई की होती है, क्योंकि वह पालक खाता है।

बच्चों के दिल और दिमाग ब्लॉटिंग पेपर या स्पंज जैसे होते हैं, तुरंत ही देखी या कही हुई बात को जज्ब कर लेते हैं। इस तरह की फिल्में या कहानियां उन्हें कौन सा मनोरंजन और रोमांच देती हैं या उन्हें देखकर उन्हें कैसे संस्कार मिलते हैं, यह बात आप समझ ही सकते हैं। ऐसा नहीं है कि पश्चिम में ऐसी ही बाल फिल्में या सीरियल बनते हैं। अभी कुछ ही समय पहले हिंदी में डब किया गया 'लिटिल वंडर्स' नाम का सीरियल बहुत ही रोचक था। बाल फिल्मों के उत्सवों में अकसर बहुत अच्छी बाल फिल्में देखने को मिलती हैं। अमरीका, कनाडा आदि के अलावा चीन, जापान, यहां तक कि ईरान से भी बहुत अच्छी बाल फिल्में आती हैं, पर अफसोस यह है कि उनका उतना प्रचार और प्रसार नहीं होता, जितना हिंसा-प्रधान धारावाहिकों का हो रहा है। बाल साहित्य का सृजन करना बच्चों का खेल नहीं है। कथाओं में दृष्टि, संयम, सूझ-बूझ और सार्थक कल्पना के योग से ऐसा कथानक बुनना होता है, जिसमें बच्चा उलझता चले और अंत में असत्य पर सत्य को विजय मिलती देखे। संदेश या शिक्षा का यह ताना-बाना पूरे कथानक में इस तरह पिरोना होता है कि उपदेश या नीति शिक्षा को जबरन लादना न लगे।

बच्चों को सुनाई जाने वाली कहानियों से ही हम उनके भविष्य की नींव बनाते हैं। यह काम बहुत सावधानी से करना होता है। यही सावधानी भविष्य के अच्छे नागरिकों का निर्माण करती है। साहित्यिक कहानियां लिखने से ज्यादा कठिन होता है बाल साहित्य लिखने का काम। इसके लिए दूरदृष्टि, संयम, सूझबूझ और सार्थक कल्पना के योग से ऐसा कथानक बुनना होता है, जिसमें बच्चा उलझता-रमता चले और तमाम मुश्किलों का सामना करके अंत में सफलता प्राप्त कर ले। उसे पता भी न चले कि इन मुश्किलों से लड़ने के बीच उसने बहुत कुछ ऐसा सीख लिया है, जो निरे उपदेशों या नैतिक शिक्षा के भाषणों से नहीं मिलता। बाल साहित्य में साहित्यिक विधाओं के सारे गुण होते हुए भी उन ताने-बानों के बीच में से इरादतन संदेश या शिक्षा का तीसरा धागा जिस रस्सी से बुन दिया जाएगा, उतना ही श्रेष्ठ बाल साहित्य सृजित होगा।

आज विज्ञान का युग है। बच्चों के नन्हे-नन्हे विश्वासों और काल्पनिक जगत् से जोड़कर उन्हें सामाजिक और वैज्ञानिक जानकारी देनी होगी, तभी उसे वे आत्मसात् कर सकेंगे। हमारा प्राचीन साहित्य मनोरंजन और शिक्षा के बीच की बारीक रेखा को पहनाकर ही रचा गया था। हमें वैज्ञानिक जानकारियां देते हुए आज फिर उसी तरह की पद्धति की पृष्ठभूमि रचकर बच्चों की अपनी दुनिया से जोड़कर उनके लिए साहित्य-सृजन करने की बहुत जरूरत है।

आज के युग में टेलीविजन और वीडियो गेम बच्चे की जरूरत बन गए हैं। उस दिशा में पश्चिम से उधार लिए गए कथानक नहीं वरन् अपने देश की सामाजिक, पारिवारिक, आध्यात्मिक और नैतिक जरूरतों के साहित्य की रचना करनी होगी। आज बच्चों की दुनिया को नई तरह से संवारने की जरूरत को प्राथमिकता देनी होगी।

5, शांकुतला, साहित्य सहवाह, बांद्रा पूर्व,
मुंबई, महाराष्ट्र-400015

आलेख

चरित्र निर्माण में बालपन के संस्कार

● डॉ. संगीताश्री

व्यक्ति के प्रत्येक आयुवर्ग के लिए साहित्य उस खाद/खुराक की तरह है, जिससे उसके व्यक्तित्व का निर्माण होता है। साहित्य हर मनुष्य के लिए उसके विचारों की प्रेरणाभूमि और उसकी कल्पनाओं को आकाश उपलब्ध कराता है। श्रेष्ठ कृतियां बालकों में, रचनात्मक भूमिकाओं का आधार बनाती हैं।

साहित्य से सत्-संस्कार मिलते हैं और सत्संस्कारों से उत्तम चरित्र। उत्तम चरित्र ही विश्व में चर्चा के वृत्त में रहते हैं। महर्षि वाल्मीकि ने 'चारित्र्येण च को युक्तः'; का निश्चय करके ही रघुवंशी श्रीराम को अपने महाकाव्य का महानायक बनाया था।

बचपन के संस्कार बालमन पर गहरा असर छोड़ते हैं। महाकवि जयशंकर प्रसाद ने, अपने एक नाटक अजातशत्रु के प्रथम अंक के प्रथम दृश्य में, मगध की राजकुमारी पद्मावती से, मगध सम्राट की छोटी रानी और राजमाता को राजकुमार कुणीक (पद्मावती का भाई) को लेकर एक वाद-विवाद में कहलवाया था कि 'अभी कुणीर किशोर है, यही समय सुशिक्षा का है। बच्चों का हृदय कोमल थाला है, चाहे इसमें कंटीली झाड़ी लगा दो, चाहे फूलों के पौधे।' आशय यह कि बाल्यावस्था/कुमारावस्था में ही सच्चे अच्छे संस्कारों के बीज उगते हैं जो आगे चल कर पल्लवित/फलान्वित होते हैं।

यदि व्यवहार की दृष्टि से देखें तो बालक एक से तीन-चार वर्ष की आयु तक शिशु होता है किंतु इस आयु में भी उस पर वस्तुएं/घटनाएं अपना संस्कार छोड़ती हैं। हमारे यहां तो गर्भ में भी अजन्मे शिशु पर, बाह्य प्रभावों/बातों के असर की चर्चा है। अर्जुन पुत्र, अभिमन्यु ने मां के गर्भ में ही चक्रव्यूह के भेद की वार्ता सुनी थी। प्रह्लाद बचपन में ही, मां से, प्रभु की गोद की बात सुनकर वन में तपस्या करने चला गया था। आशय यह कि बालपन के संस्कार, व्यक्ति को क्या-से-क्या बना देते हैं !

चार से आठ वर्ष की उम्र तक बच्चा बालक कहलाता है। इस अवस्था में, वह स्पष्ट बोलना, मनोनुकूल खाने-पीने की पसंद-नापसंद के बारे में निजी राय रखने लगता है। यह द्वितीय अवस्था सीखने, समझने, जानने की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण होती है। इस आयु वर्ग में, प्रश्नात्मकता और जिज्ञासावृत्ति प्रबल होती है। तृतीय अवस्था आठ से बारह वर्ष तक की होती है जिसमें, वह स्वयं को थोड़ा बड़ा होता हुआ पाता है। इसमें वह बड़ों की बातों पर अधिक ध्यान देता है और बड़ा होने को अग्रसर होता है। तेरह से उन्नीस वर्ष की आयु तक बालक 'टीनएज' में होता है जिसमें वह जहानभर के ज्ञान से परिचित होना चाहता है। इसी आयु में वह, सपने देखना शुरू करता है। महत्त्वाकांक्षाएं पालता है। 'जोखिम' उठाने को तैयार हो जाता है। अपने अलग पथ की सोचता है। नायक होना चाहता है। नायकों के चरित्रों का अध्ययन करता है। यही उम्र दाढ़ी-मूंछ उगने की भी है। आयु का यही काल, युवाकाल है। इस अवस्था में पहुंचा बालक, युवक/युवान होता है। हमारे पहले के साहित्य में सोलह वर्ष का बालक, जवान मर्द माना गया है। इस समय वह एक जिम्मेदार व्यक्तित्व का मालिक हो जाता है। कहा भी गया है कि 'प्राप्तेतु षोडशे वर्षे, पुत्रं मित्रवदाचरेत्' अर्थात् बेटे के सोलह वर्ष के हो जाने पर, बाप उसे मित्र की तरह, व्यवहार करे। इस अवस्था को पहुंचा हुआ युवान सभी पिछली अवस्थाओं से भिन्न व्यवहार/चरित्र का व्यक्ति हो जाता है। इस स्थिति में वह सबसे अधिक मुखर, उत्तेजक, प्रतिक्रियात्मक, निषेधात्मक तथा स्वीकार्यता/अस्वीकार्यता के प्रति अधिक संवेदनशील होता है। समझदार मां-बाप को इस अवस्था में भी उसे उचित-अनुचित की सीख देनी चाहिए। इस सीख का संस्कार भी उसे भावी-जीवन में राह दिखाता है।

इस अवस्था में व्यक्ति का 'अहम्' 'मैं न मानूं' अथवा 'मैं क्यों मानूं' की मुद्रा में होता है। 'अहम्' का अर्थ 'मैं भी कुछ हूं' अथवा 'मैं ही सब कुछ हूं', है। अहंकार और अहमन्यता, इसी से विकसित हैं।

असंस्कारित 'अहमन्यता' व्यक्ति को विमूढ़ता (एक प्रकार के मूर्खतापूर्ण हठ) की ओर ले जाती है। गीता कहती है- अहंकार विमूढ़ात्मा, कर्त्ताहमिति मन्यते।' यह सब कुछ का कर्ता होने का मान (दंभ) व्यक्ति को विवेकियों की दृष्टि में, उच्चासन से गिरा देता है। इसलिए हमारे यहां, श्रेष्ठ होने/रहने के लिए सतत्

प्रयत्नशीलता की बात कही गई है। गीता का यह विवेक सतत् विचारणीय है-

यद्यदाचरतिश्रेष्ठस्तत्तदेवेतरो जनः।
स यत् प्रमाणं कुरुते लोकस्तदनुवर्तते ॥

श्रेष्ठता भारतीय संस्कृति का सर्वोच्च मूल्य है। श्रेष्ठता हमारा आदर्श भी है और प्राप्ति भी। जिसने कभी/कहीं उत्तमता देखी ही न हो, उसका साक्षात्कार ही न किया हो, उसे क्या पता, कि उसका कितना मूल्य और महत्त्व है।

संस्कृत व्याकरण में क्रिया के तीन वचन हैं- एकवचन, द्विवचन और बहुवचन। इन क्रियाओं के कर्ता अन्य पुरुष, मध्यमा पुरुष और उत्तम पुरुष के क्रम में हैं। यहां पर आचार्य ने पहले तीसरे व्यक्ति को रखा, फिर दूसरे को और उत्तम पुरुष को अर्थात् स्वयं को सबसे अंत में। यह हमारी संस्कृति के एक बड़े विचार/मूल्य की बात है। तीन व्यक्तियों में सबसे पहले- तीसरे को, आदर देना, फिर दूसरे को और फिर खुद को, यह भारत में ही संभव है। पाश्चात्य संस्कृति, खासकर अंग्रेजी सभ्यता/संस्कृति की प्राणभूत भाषा में, यही क्रम, 'फर्स्ट पर्सन' अर्थात् उत्तम पुरुष, पहले; सेकंड पर्सन, अर्थात् द्वितीय पुरुष, दूसरे नंबर पर और फिर 'थर्ड पर्सन' अर्थात् तृतीय पुरुष की स्थिति है। यह संस्कारों की बात है। दूसरों को अधिमान देना आर्य संस्कारों में है। दूसरे को अधिमान दूसरे की बड़ाई है। यह बड़ाई ही सम्मान है। सम्मान, हमारी मूल्य-संहिता का/व्यवहार पद्धति का (अवसरानुकूल) प्रथम करणीय है।

व्यक्ति में 'अहं' की सत्ता, उसकी शिक्षा, उसके परिवार/परिवेशगत व्यवहार, उसके संस्कारों/समस्त कार्यों के संघात, स्वरूप, उसके चिंतन और सोच से विकास पाती है। मनुष्य का समूचा व्यक्तित्व उसके 'अहं' के इर्दगिर्द घूमता है। विश्व के तमाम बड़े व्यक्तित्वों में उनका 'अहं' ही केंद्रीय तत्त्व रहा है। इस 'अहं' के कारण ही 'मैं' और 'मेरे' की भावना प्रबल होती है। व्यक्तित्व के संवर्द्धन में, वेदांतियों/दार्शनिकों, संतों, मनोविश्लेषकों ने इसकी समीक्षा की है। पश्चिम के मनोचिकित्सक डॉ. सिगमंड फ्रायड ने मनोवृत्तियों के ऊपर गहन चिंतन कर गहरे अर्थों में उनकी दिशाएं निश्चित की हैं।

फ्रायड के मनोविज्ञान में, कामवृत्ति, संघर्ष, दमन और अवरोध महत्त्वपूर्ण हैं। उनके मत में संघर्ष, प्रारंभ में, मानस की दो सतहों/स्तरों पर होता है। ऊपरी अथवा बाह्य सतह तो वातावरण के संपर्क में आती है और भीतरी सतह, इसके संपर्क में नहीं आती। फ्रायड और उसके अनुयायी, पहली अवस्था को 'अहम्' की संज्ञा देते हैं। 'इदम्' या इसके विपरीत यह मानस का, यथार्थ से समन्वित अंश है। परंतु इसका विकास, 'इड' से माना गया है। इसे वे 'अहं' का संघटित भाग मानते हैं। 'अहं' संसार और इड के बीच, मध्यस्थता का कार्य करता है। यह 'इड' की मौलिक प्रवृत्तियों को संसार के यथार्थ के अनुरूप और संसार को, 'इड' की वासनाओं के अनुकूल बनाने का प्रयास करता है। इस प्रयास में यह प्रायः 'इड' की वासनाओं का दमन करता है। दमित वासनाएं, इड का ही अंग बन जाती हैं। 'अहं', चेतन-अवचेतन, दोनों रूपों में कार्य कर रहा है। अवचेतन रूप में यह 'इड' (इदम्) का साथी होकर रहता है।

'अहं' मनुष्य के बौद्धिक और व्यावहारिक दोनों पक्षों में सक्रिय रहता है। विकृत अहं वृत्ति, 'हुं वृत्ति' के समनुरूप है। अहंकार एक प्रकार का मनोविकार है जो मन की सम-अवस्था को विषम बना देता है। 'अहंकारी' एक तरह से मनोरोगी है जिसकी सोचने की शक्ति उसे समता के रास्ते पर नहीं चलने देती। वह घोर स्वार्थी और 'परले' दर्ज का खुद्दार होता है। उसके हर काम में मैं-मैं, और खुद को आगे रखने की प्रवृत्ति होती है। अहंकारी के मन में मूढ़ता भर जाती है। रावण, मेघनाद, कुंभकरण, दुर्योधन, दुःशासन, शकुनि आदि सब मूढ़मति/गति थे। सही को सही न समझने वाला मूढ़मति ही होता है। व्यक्तित्व का सबसे बीमार पक्ष है अहं। पंद्रह-सोलह वर्षों की वय का 'अहं' यदि उसे अनुकूल चिकित्सा या दिशा न मिले तो अनियंत्रित हो घातक हो उठता है।

हमारे दार्शनिक, समाजशास्त्रियों, चिंतकों ने, समाज/राष्ट्र को आदर्श बनाने के लिए, हज़ारों वर्षों तक मनन और प्रयोग करके विश्व में एक आदर्श-समाज व्यवस्था स्थापित की। उन्होंने सारी उम्र, व्यक्ति को सुधारने और उसे अनुकरणीय मनुष्य बनाने पर श्रम किया। आयुपर्यंत आचरण की पवित्रता और श्रेष्ठता कैसे बनी रहे, इसी पर चिंतन किया। इसके लिए निरापद मार्गों और साधनों का अन्वेषण किया। ऐसी परंपराएं स्थापित कीं जो आने वाली पीढ़ियों तक हितकर सिद्ध हुईं।

वे जानते थे कि मानव एक असंस्कारित जीव है। उसे संस्कारित करने/तराशने की आवश्यकता है। उसका मूल स्वभाव, कामी, हिंस्र, स्वार्थी पशु-सा है। समाज कहीं, बहुश्रृंगी घातक पशुओं का अविवेकी झुंड/समूह ही न बनकर रह जाए, इसलिए उन्होंने संस्कारों की परिकल्पना की। संस्कार, व्यक्ति के हर प्रकार के अंतः/बाह्य मैल को 'उगाल' (गला) देता है।

ऋषियों का संस्कारों पर कार्य, एक लंबी शोध प्रक्रिया है। बच्चे के जन्म के पूर्व से लेकर, व्यक्तित्व के पूर्ण विकसित हो जाने तक संस्कारों की भूमिका है।

एक प्रेरक दिशानिर्देश की प्रक्रिया का नाम है संस्कार। यह मणि तक को तराशने की विधि है जो जन्मागत दोषों को भी दूर करती है। व्यक्ति की संपूर्ण आचरण पद्धति को निर्दुष्ट बनाना संस्कारों का उद्देश्य है।

हर वह साधन प्रक्रिया, जिससे समय-समय पर आवश्यक शोधक कार्य हुआ, संस्कार कहलाया। हमारे जीवन में ऐसे सोलह अवसर विशेष चिन्हित हैं जहां पर संस्कारों की आवश्यकता अनुभव हुई। इन संस्कारों ने, मनुष्य को श्रेष्ठ मनुष्य बनने/बनाने

में प्रबलतर योग किया।

गर्भाधान से पूर्व मां-बाप की प्रतिज्ञा और चिंतन, एक वीर-विद्वान संतति के आगमन के लिए एक बहुत बड़े विधान की पूर्विका है। ऐसे ही पुंसवन्, सीमंत, जातकर्म, नामकरण, अन्नप्राशन, कर्णवेध, यज्ञोपवीत, विद्याध्ययन, समावर्त, थरिणयादि- सब व्यक्ति के जीवन को अंतः-बाह्य रूप से संस्कारित करने हेतु अनिवार्य कार्यों में सम्मिलित थे। इससे व्यक्तित्व में दायित्वबोध, कृतज्ञताबोध, विनम्रता, सहनशीलता, शांति, सद्‌भाव, प्रेम और समरसता के मूल्यों का बीजवयन और उनका भावी जीवन में निर्वाह करने की क्षमता का भी बोध उपजता है।

भारत में केवल बालपन में ही नहीं, अपितु मनुष्य के जीवन तक यह ज्ञान-बोध की प्रक्रिया चलती है। जीवन को पच्चीस-पच्चीस वर्षों के आयुवर्ग में रखकर, ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और संन्यास, इन चार आश्रमों में बांटकर, उनके दायित्वों का अभिधान कर एक बहुत-बड़े सामाजिक कार्य का निर्वहन किया गया है। आठ से पच्चीस वर्ष की आयु अवस्था तक गुरु के आश्रम में रहकर, विद्याध्ययन करते हुए, आश्रम के सभी कार्यों को करने से बालक में, आज्ञापालन की 'हां' धर्मिता की प्रवृत्ति के साथ, सहिष्णुता, क्षमाशीलता, सहअस्तित्व तथा सहभागिता की भावना का प्रबल संस्कार निर्मित होता है। इसी आश्रम/वय में ब्रह्मचर्य के पालन से स्वयं को सर्वक्षम बनाने तथा सादा जीवन, उच्च विचार के मूल्यों के पालन करने का सुअवसर मिलता है। गुरुओं के आश्रम सब प्रकार के संस्कारों के ज्ञान और व्यवहार के केंद्र होते थे।

सहनाववतु सह नौ भुनक्त सहवीर्यं करवा वहै।
तेजस्विनावधीतमस्तु मा विद्विषा वहै।

यह साथ-साथ, गुरु-शिष्य में, एक दूसरे की रक्षा की भावना, साथ-साथ भोजन की आदत, साथ-साथ बढ़ना, बली होने की प्रवृत्ति, तेजस्वी होने की प्रक्रिया और किसी से द्वेष न करने की संस्कृति, गुरुओं के आश्रमों से ही आती है। हमारे विद्यालय/आश्रम 'सर्वभवन्तु सुखिनः' का संस्कार देते हैं।

भारतीय घरों के बालक, एक बहुत-बड़ी मूल्यसंहिता; संस्कार पद्धति की परीक्षा-सरणि से गुज़र के आते हैं। एक घास-फूस की झोंपड़ी में, वैश्विक मूल्यों के जनक रहते हैं और दूसरी सामान्य पल्लियों में, उस ओर उस जैसे अनेकों ज्ञान के मूर्तिमंत आचार्यों से गृहीत दीक्षा/मंत्र/ज्ञान, वाले गृहस्थ जो अपने बच्चों को त्यागी, जितेंद्रिय, गुणज्ञ और एकात्मबोध के फलस्वरूप समानानुभूति के संस्कारों से ये पल्लीवासी बालक भी, विश्वबद्ध मूल्यों के महान् संधाता बनते रहे हैं।

भारतीय संस्कृति में, माता-पिता, अग्रज-भाई-बहनों, दादा-दादी, बुआ, चाचा-चाची, नाना-नानी, मामा-मामी आदि संबंध संस्थाओं का बच्चों के प्रति व्यवहार पुनः-पुनः कीर्तनीय है। इनका स्नेह, इनकी शिक्षाएं, इनकी वर्जनाएं, इनका दुलार, इनका प्यार, इनकी मनुहार, इनकी आत्मीयता उदाहरणीय है। हमारे संस्कारवान् घर, उत्तम, अनुकरणीय मानवीय मूल्यों के वैश्विक कोष हैं। संबंधों की जितनी विशाल मूल्यसंहिता, हमारी भारतीय समाज/परिवार व्यवस्था में है, उतनी कहीं नहीं। संबंधों/रिश्तों की जितनी लतरें यहां छितरी हैं, उनके घनेपन और विस्तार का पार नहीं। सात-सात पीढ़ियों तक संबंधों के नामों की बेल फूलती/फूटती चली जाती है। दो परिवारों के रिश्तों की डोर ही व्यक्तियों को जन्मांतर तक बांधे रखती है। एक बच्चा/बालक अपने पिता के भाई को, चाचा, उसकी पत्नी को चाची, बड़े भाई को ताऊ, पत्नी को ताई, मां की बहन को मौसी/ मासड़, बुआ, बुआई, कितने ही नामों से पुकारता है न कि केवल अंकल और आंटी। मेरा आशय है कि संयुक्त परिवारों में बच्चे के विभिन्न स्नेहिल संस्कार उन्हें तरह-तरह से परिवार, समाज से बांधे रखते हैं। पूरी मानवता, किन्ही-न-किन्ही संबंधों/मूल्यों/संस्कारों की ऊष्मा से ही तो जीवित है।

एक अनुकूल परिवेश के अभाव में आज का समाज/आधुनिक परिवार, संस्कारविहीन होते जा रहे हैं। पहले एकात्मीकरण से वैश्वीकरण आबद्ध था। आज एकाकीपन और निजताओं से विच्छिन्नता, अलगाव, एकांतिकता बढ़ रहे हैं। व्यक्ति अकेला हो रहा है। संयुक्त परिवारों से, मध्यम और मध्यम से अणु हो गए परिवारों में, बच्चों/बालकों का कोई साथी नहीं। दादा-दादियों, ताऊ-ताइयों, चाचा-चाचियों की गोद गरिमाएं/ऊष्माएं बच्चों से दूर चली गई हैं। बच्चे, एक सहज प्यार के अभाव में निर्धन हो गए हैं।

वे नींद न आने तक, दादी-नानियों, मांओं-बुआओं, की सुंदर परियों की, घुड़सवार राजकुमारों की, अत्याचारी राक्षसों, एक तिल को बांटकर खाने वाली संतोषी सात बहनों की, कथाएं अब कहां? अब नींद लाने के बहाने/उपाय कौन लाएगा? उनमें अपनापन, ठंडे पड़ते रिश्तों में गर्मी एवं स्वतः उपजी ममता के ज्वार कौन उपजाएगा?

अब बाज़ारवाद ने नैतिकता और संस्कारशीलता को निगल लिया है। इस अर्थप्रधान युग में, बस हमारे कोमल संस्कार ही पीछे छूट रहे हैं। वैश्विक प्रतियोगिता में हमारे अणु परिवारों के बच्चे अकेले, तनावग्रस्त और भयापन्न हो गए हैं। सही मनोरंजन कहीं भाग गया है। कंप्यूटर, टीवी, मोबाइल और मशीन उपकरणों में फंसकर बालक मशीन से/हृदयहीन होते जा रहे हैं। वे गलाकाट प्रतिस्पर्धा और एक अंतहीन थकानभरी दौड़ में शामिल हो गए हैं।

अतः आज, समाजविज्ञानियों, चिंतक साहित्यकारों, सुधार संस्थाओं, शिक्षा/शिक्षण संस्थानों, के कंधों पर एक बहुत बड़ी नैतिक/सामाजिक/साहित्यिक जिम्मेदारी आ पड़ी है कि हमारे

बाल/बालकों के हितों, उनकी शिक्षा, दीक्षा, उनके संस्कारों को समयानुरूप परंतु भारतीय मूल्यों/संस्कारों से परिपूर्ण साहित्य का निर्माण करें तो हमारे बाल/बालक समय की गति के साथ भी चल सकें और संस्कारवान् भी कहला सकें। हिंदी में, बाल साहित्य को अभी समय की चाल, बच्चों/बालकों की बढ़ती बौद्धिक मांग के अनुसार अपना स्वरूप निर्मित करना होगा। उसे ज्ञान के सभी अनुशासनों-अंतरानुशासनों, विश्व की श्रेष्ठ भाषाओं के साहित्य के अनुवादों से समृद्ध होना होगा, तभी भारतीय बालकों में, नैतिकता, सामाजिक ज्ञानात्मक संस्कारों का उदय हो सकेगा। यहीं मैं एक बात स्पष्ट कर दूं कि संस्कार केवल आनुष्ठानिक ही नहीं होते। वे परिवेशगत भी होते हैं। जैसे माहौल, पर्यावरण/ वातावरण में आप रहते/रह रहे हैं, वहां का व्यवहार, वहां की गतिविधियां भी आप पर असर डालती हैं। आपके घर, गलियों, विद्यालयों, मित्रों का वातावरण कैसा है, आपके मां-बाप, आपके गुरुजनों, आपके मित्रों का व्यवहार कैसा है, इसका भी प्रभाव बाल/बालकों के कोमल/अपरिपक्व मन पर पड़ता है। बच्चा जो देखता है, वह सीखता भी है। आज बाल साहित्य के सृजन और विकास की बहुत आवश्यकता है जो बच्चों में अच्छे संस्कार सृजित कर सके। केंद्रीय और प्रदेश सरकारों को स्कूलों और पंचायतों के अतिरिक्त जगह-जगह बाल पुस्तकालयों, जिनमें दैनिक, साप्ताहिक, मासिक, द्विमासिक, त्रैमासिक, षाण्मासिक आदि पत्र-पत्रिकाएं, सी-डीज़, पुस्तकें, सम्मिलित हों, की स्थापना करनी चाहिए। सभी प्रदेशों में बाल अकादमियां हों, जो समय-समय पर बच्चों और बाल साहित्यकारों के लिए कार्यक्रमों का आयोजन करें। यहां विभिन्न भाषाओं की पत्र-पत्रिकाएं और अनूदित पुस्तकें उपलब्ध होनी चाहिएं। बाल साहित्यकारों का सम्मान होना चाहिए। शिक्षा ही सब क्षमताओं की जननी है। अच्छे संस्कार बाल/बालकों की सबसे बड़ी ताकत हैं।

सेंट बीड्ज कॉलेज, शिमला,
हिमाचल प्रदेश-171 006

युवाओं में नैतिक शिक्षा

• उमा ठाकुर

अंग्रेजी में कहावत है, 'दि चाइल्ड इज़ ऐज़ ओल्ड ऐज़ हिज़ एन्सेस्टर्ज' अर्थात् बच्चा उतना ही सयाना होता है जितना कि उसके पूर्वज। शिशु एक कोरे कागज की तरह होता है। इस कोरे कागज पर चाहे काली स्याही से लिख दें अथवा रंगीन कलाकृति गढ़ दें, यह अभिभावक की परवरिश पर निर्भर करता है। बच्चा माता-पिता, परिवेश, मित्रों और शिक्षकों के आचरण के अनुरूप ही ढलता व बढ़ता चला जाता है।

नीति शास्त्र की उक्ति है, 'ज्ञानेनहीनाः पशुभिः समाना' अर्थात् ज्ञान से हीन मनुष्य पशु के समान होता है। ज्ञान की प्राप्ति शिक्षा से ही होती है। ऋषियों की दृष्टि में विद्या वही है जो हमें अज्ञान के बंधन से मुक्त करे। 'लैंग्वेज ऑफ द अंडरवर्ल्ड'' नामक अपनी कृति में सुप्रसिद्ध समाजशास्त्री डॉ. डेविड डब्ल्यू मॉरर ने कहा है कि आप समाज में अपरिपक्व बच्चों की भरमार है। बाल अपराध एक विश्वव्यापी समस्या बनती जा रही है। गांव से लेकर शहरों तक गरीब-अमीर सभी वर्गों के बच्चे अपराधी प्रवृत्तियों में सम्मिलित देखे जाते हैं।

प्रत्येक युग में शिक्षा की परिभाषा और उद्देश्य के साथ उसका स्वरूप भी बदल जाता है। वर्तमान शिक्षा प्रणाली में भी नैतिक शिक्षा पर बल देना जरूरी है। स्वामी विवेकानंद जी ने सभी के लिए वैदिक ज्ञान जरूरी बताया है, पहले बच्चे गुरुकुल में रहकर वेदाध्ययन करते थे और 25 वर्षों तक ब्रह्मचर्य का पालन करते थे। अगर 25 वर्षों तक वेद पढ़ना संभव नहीं तो, वर्तमान में उसका कुछ अंश पाठ्यक्रम में शामिल किया जाना चाहिए।

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में, हम युवा पीढ़ी की बात करें तो, हम यही पाएंगे कि युवाशक्ति जो समाज की अहम धुरी होती है, वह पाश्चात्य सभ्यता के रंग में कुछ इस कदर खो-सी गई है कि अपने प्राचीनतम संस्कृति, परंपरा और सभ्यता के मूल्यों को भूलती जा रही है। आधुनिक बनने की चाह में अपने नैतिक मूल्यों को हटाकर अनैतिकता की दौड़ में शामिल हो रहे हैं। इसी वजह से वह नशे की प्रवृत्ति में संलिप्त होकर अपराध, कुव्यसन, भ्रष्टाचार को अपना जीवन मूल्य बना रहे हैं। सही मार्गदर्शन न होने की वजह से युवामन में भटकाव की स्थिति पैदा हो रही है।

निष्कर्ष रूप में यह कहा जा सकता है कि शिशु जो एक कोरे कागज के समान होता है, वह न तो नैतिक होता है और न अनैतिक। अभिभावक बचपन से ही युवा होते उस शिशु में संस्कारों का ऐसा बीज स्फुटित कर सकते हैं। युवा होने पर जिसकी जड़ों को पाश्चात्य सभ्यता का कीड़ा भी खोखला नहीं कर सकता। स्पर्धा की अंधी दौड़ से या फिर कुव्यसन के कारण युवावर्ग में जो नैतिक मूल्यों का हनन हो रहा है, उसे मीडिया कुछ हद तक कम कर सकता है। भटके युवा को राह दिखाकर उन्हें अपनी प्राचीन संस्कृति के मूल्यों के प्रति जागरूक कर सकता है। आकाशवाणी शिमला से कार्यक्रम 'युववाणी' के माध्यम से समय-समय पर युवावर्ग से जुड़े मुद्दों जैसे भ्रष्टाचार नशाखोरी आदि पर वार्ता, परिचर्चा अथवा कवि गोष्ठी प्रसारित की जाती है, जो भटके युवा को सही राह पर लाने का प्रयास करती है। युवामन, भटकाव की स्थिति से उभरे और वह सही राह पर चलकर मंजिल पा ले, इसके लिए नैतिक शिक्षा पर बल देना बेहद जरूरी है।

धौलटा निवास, नियर विनटेज़, छोटा शिमला,
शिमला, हिमाचल प्रदेश-171 002, मो. 94594 83571

आलेख

बाल मन को संवारता साहित्य

● राजेंद्र 'पालमपुरी'

बाल मन पर साहित्य या बच्चों जैसे लिखे साहित्य का प्रभाव विशेष रूप से पड़ता है। लेकिन बच्चों के लिए... बच्चों जैसा लिख पाना कोई आसान नहीं। बच्चों की गुदगुदी मुस्कान का असर हर उम्र के व्यक्ति पर न पड़े, यह कहना अपने-आपको भ्रमित करना ही नहीं, बल्कि सरासर ग़लत ही होगा। बच्चों की मीठी मुस्कान तो दुखी और कठिन समय में भी मधुरता के रंग भर देती है, अनायास ही हमारे, हम सभी के जीवन में। घर-परिवार में बच्चों की किलकारियां, इनकी हंसी-ठिठोली वास्तव में घर को स्वर्ग बना देती है। ऐसा सभी कहते ही नहीं, बल्कि जानते भी हैं, महसूस भी करते हैं।

किंतु इसी मुस्कान को बच्चों के चेहरे पर लाना कोई आसान काम नहीं। और फिर 'साहित्य' तात्पर्य कविता, कहानी, नाटक, और गीतों द्वारा इन्हें खुश रखा जाना या फिर इनके बालमन पर कोई विशिष्ट प्रभाव डाल देना, यह काम नामुमकिन तो लगता ही है, बल्कि बहुत मुश्किल भी है। रोते हुए बच्चे को हंसाना, ज़िद्द करते हुए बच्चे के ध्यान को किसी अन्य दिशा में परिवर्तित करना अपने आपमें एक अद्भुत कला है जो हर इनसान में नहीं होती। बच्चों के मनोविज्ञान को समझते हुए बच्चों के बालमन की भावना को, इनकी इच्छा को जान लेना एक बहुत बड़ी उपलब्धि है।

बच्चा क्यों, कैसे, कब और कहां हंसता है... बाल साहित्यकार यदि यह समझ ले, जान ले तो निश्चय ही 'बाल साहित्यकार' साहित्य की बुलंदियां छू सकता है। और इसका उदाहरण टेलीविजन पर इक्का-दुक्का विज्ञापन जो कि मात्र 5-7 सेकंडों के ही या कहें कि कुछ लम्हों के ही होते हैं, 'कारगर' होते नज़र आते हैं। कुछ विज्ञापन जैसे 'पुश करो खुश रहो', 'सुनते नहीं हो'... आदि की 'स्क्रिप्ट' (आलेख) कुछ लम्हों के ही होकर भी बहुत कुछ कहने की सामर्थ्य रखते हुए बस रोमांचित और उत्साहित करते एक अनोखी सी गुदगुदी देते हुए गुज़र जाते हैं। उस समय टेलीविजन पर इन विज्ञापनों को देखते बच्चों को या यह कहें कि 'बालमन' की क्या दशा होती है...... यह बस देखते ही बनती है।

बच्चे ऐसे विज्ञापनों में स्वयं को 'चरितार्थ' करते हुए अनुभव करते हैं। और स्वयं ही मुस्कुराते देखे जा सकते हैं। एक विज्ञापन 'सुनते नहीं हो ऽऽऽ' में तो बच्चे अकसर खिलखिलाते हुए नज़र आते हैं। इस विज्ञापन में बच्चे के मनोभाव यह दर्शाते हैं कि 'वे' भी अपने से बड़ों को 'अच्छी सलाह' दे सकते हैं। इसी एक 'संवाद' के चलते बच्चे स्वयं को गौरवान्वित महसूस करते हैं। क्या कहें... बस कमाल की 'स्क्रिप्ट' या आलेख लिखे हैं- ऐसे विज्ञापन वालों ने!

यही आलेख उस 'स्क्रिप्ट राइटर' या लेखक की सफलता की निशानी है कि बच्चे भले ही इन विज्ञापनों से कुछ अधिक न सीख पाएं, लेकिन उनका 'बालमन' इन्हें देखने को लालायित रहता है, उत्साहित रहता है, प्रतीक्षारत रहता है। ऐसा मेरा निजी या कह सकते हैं, व्यक्तिगत अनुभव है। और मैं समझता हूं यही वह 'बाल साहित्य' है जो बस चंद लम्हों, कुछ क्षणों में बस कुछ पंक्तियों में ही 'अपना काम' अपना प्रभाव, अपना असर छोड़ जाए! और ऐसा साहित्य केवल बस कुछ गिने-चुने लोगों के नाम ही रहा है।

बाल साहित्य की अन्य विधाओं में जैसे कविता, कहानी, उपन्यास, निबंध, नाटक और जीवनी आदि के क्षेत्र में, उत्कृष्ट सामग्री न हो, कहा नहीं जा सकता क्योंकि बाल नाटकों की एक अच्छी पुस्तक 'उमंग' हाल ही में सुप्रसिद्ध कवि व आलोचक अशोक वाजपेयी के संपादन में राजकमल प्रकाशन से प्रकाशित हुई है। बल्कि जानकार लोग यह भी जानते हैं कि भले ही हिंदी में बाल साहित्यकारों की संख्या 'न' के बराबर रही हो, लेकिन 'बड़ों' के लिए लिखने वाले कितने ही साहित्यकारों ने समृद्ध बाल साहित्य की रचना भी की है जिनमें विष्णु प्रभाकर, जय प्रकाश भारती, राष्ट्रबंधु, हरिकृष्ण देवसरे, क्षमा शर्मा, दामोदर अग्रवाल, शेरजंग और दिविक रमेश आदि के नाम उल्लेखनीय होने के साथ-साथ प्रशंसनीय भी हैं। और इसके साथ ही कविता के क्षेत्र में भी जो

अनूठा साहित्य रचा गया है, उसे ध्यान में रखते हुए स्व. जय प्रकाश भारती ने इस समय को 'बाल साहित्य' का 'स्वर्णिम युग' कहा है! जहां तक बच्चों की पहली पुस्तक के प्रकाशित होने का प्रश्न है, तो यह किताब सन् 1623 ई. में 'जटमल' द्वारा लिखित पुस्तक 'गोरा बादल की कथा' मानी जाती है।

बाल कविता के क्षेत्र में श्रीधर पाठक, विद्याभूषण 'विभु', द्वारिका प्रसाद माहेश्वरी, सोहनलाल द्विवेदी आदि बहुत सारे रचनाकारों की रचनाएं अमर हैं। स्वाधीन भारत में भले ही इनकी अधिक उपेक्षा होती आई हो, किंतु रचनाओं की दृष्टि से बिना शक/निस्संदेह यह युग 'स्वर्ण युग' कहा जाए तो अतिशयोक्ति न होगी। सर्वेश्वर दयाल सक्सेना, श्रीप्रसाद, दामोदर अग्रवाल, बालकृष्ण गर्ग, रमेश तैलंग, कृष्ण शलभ, श्याम सिंह 'शशी', बच्चन, भवानी प्रसाद मिश्र और प्रभाकर 'आमचे' जैसे कवियों ने भी बाल साहित्य में अपनी उपस्थिति दर्ज की है।

1947 से 1970 तक के समय को हिंदी 'बाल कविता' के शिखरों का 'गौरव युग' माना जाना भी सौभाग्यशाली है। क्योंकि प्रकाश मनु के शब्दों में इस युग को 'गौरव युग' कहने का अर्थ है कि इस समय में 'बाल कविता' में ऊर्जावान और काव्य क्षमता से परिपूर्ण, संभावना से पूर्ण और नए युग की चेतना लिए हुए या यह कहना भी ग़लत न होगा कि अपने दामन में समेटे हुए प्रतीत होती है, अनुभव होती है। वह न तो इस समय से पहले ही थी, और न ही फिर इस समय के बाद ही कहीं नज़र आई हो... कहा नहीं जा सकता। यहां दामोदर अग्रवाल की शिकायत भरी कुछ पंक्तियां बच्चों के लिए कि-



'बड़े शरम की बात है बिजली, बड़े शरम की बात!
जब देखो गुल हो जाती हो, ओढ़ के कंबल सो जाती हो।
नहीं देखती हो, यह दिन है, या यह काली रात है,
बिजली, बड़े शरम की बात !!

और शेरजंग की कविता के यह अंश कि-

'कितनी अच्छी, कितनी प्यारी, सब पशुओं से न्यारी गाय,
सारा दूध हमें है देती, आओ इसे पिला दें चाय!!

बच्चों के बालमन की कल्पना को उद्‌गारित करती और हल्की-हल्की गुदगुदी देतीं ये केवल दो-दो पंक्तियों की क्षणिकाएं कितना आनंद देती हैं, यह केवल बालमन ही समझ सकता है। यहां मुझे अपनी लिखी कविता 'बच्चे' की कुछ लाइनें बरबस ही याद आती हैं जो हिमाचल प्रदेश की प्राथमिक कक्षाओं में 'एक स्तर' के बच्चों के लिए पाठ्य पुस्तक में रखी गई है, कुछ इस प्रकार है-

'बड़े निराले मेरे बच्चे, भोले-भाले मेरे बच्चे,
सूरज जैसे दिखते मुझको, गोरे-काले मेरे बच्चे !!

अपनेपन का भाव लिए यह कविता आज भी बच्चों में लोकप्रिय तो है ही, मेरे शिक्षक भाइयों की भी पसंद है।

छोटी कक्षाओं में हमारे समय में बिलकुल छोटी-छोटी सहज और सरल भाषा में लिखी कविताएं, जब हमने पढ़ीं और सुनीं... यकीन ही नहीं होता कि वह रचनाएं हमें अभी तक भी कंठस्थ हैं। बस ऐसा ही 'बाल साहित्य' बच्चों के लिए 'परोसने' की आवश्यकता है जिसे बच्चे सरलता से पढ़ तो सकें ही 'कंठस्थ' भी कर पाएं। सन् 1970 के बाद के इसी दौर की कविता में यानी 'बाल कविता' में बहुत सारे और भी नाम दिखाई पड़े, विशेषकर युवा लेखकों की हिस्सेदारी काफ़ी बड़ी नज़र आती है। जिनमें तीन-चार पीढ़ियों के 'बाल साहित्य' के कवि एक साथ खड़े दिखाई देते हैं। जिनमें रमेश तैलंग, दिविक रमेश और जय प्रकाश भारती की ये बाल रचनाएं 'अले... छुबह हो गई.... आंदन बुहाल लूं, कपपले पे धूल छने है... इन्हें छंभाल लूं' (अरे सुबह हो गई, आंगन बुहार लूं, कपड़े ये धूल सने हैं, इन्हें संभाल लूं') और यह भी कि 'एक था राजा... एक थी रानी, दोनों करते थे मनमानी। राजा का तो पेट बड़ा था, रानी का भी पेट घड़ा था!!' आदि कविताएं अनायास ही बाल मन को अपनी ओर आकर्षित करने में बेहद सफल रहीं... कहना ग़लत न होगा।

हमारे घरों की अंगनाइयों में भी अकसर बच्चों को ऐसी ही पंक्तियां बोलते सुना करते हैं हम 'एक था राजा, एक थी रानी... दोनों मर गए खतम (खत्म) कहानी'।

यही नहीं बहुत सारी हमारी हिंदी फिल्मों के फिल्मी गीतों में बाल साहित्य अनायास ही देखने-सुनने को मिल ही जाता है और जिसे प्रायः हम... हम सभी गुनगुनाते हैं जिनमें 'चंदा मामा दूर के', नाना तेरी मोरनी को मोर ले गए, नन्हा-मुन्ना राही हूं, दादी अम्मा-दादी अम्मा, मान जाओ', 'ईचक दाना, बीचक दाना, दाने ऊपर दाना' तुम्हीं हो माता-पिता तुम्हीं हो आदि फिल्मी गीत और भजन शामिल हैं। यह सब बाल साहित्य से ही तो परिपूर्ण हैं, जिसे हम आज भी नहीं भुला पाए हैं।

दादी-नानी की कहानियां तो हमने... हम सभी ने भी सुन ही रखी हैं, बचपन के दिनों की जो अभी तक भी याद दिलाती हैं, हमें

उन रिश्तों की... जिनमें सिर्फ प्यार और सिर्फ प्यार के सिवा और कुछ नहीं था शामिल। वह कहानियों, और कविताओं, उन पहेलियों का प्यार, उन बड़े-बूढ़ों के इस संसार से जाते ही खत्म हो गया... फनां हो गया। कहानियां सुनने और सुनाने के जोड़-तोड़ में हम कब दादी/नानी के दामन में लिपटकर सो जाते थे पता ही न चलता था। सुबह नींद के खुलने या आंख जब खुलती तो मां के सीने से चिपके हुए होते थे हम... हम सब!

जादू की छड़ी वाली 'परी', जादुई और तिलिस्मी 'खुल जा सिमसिम', 'क्या हुक्म है मेरे आका' 'अली बाबा और चालीस चोर' 'अकबर-बीरबल', 'शेखचिल्ली' 'विक्रम-बेताल', 'हातिमताई', 'तोता-मैना', 'शीरी-फरहाद', 'लैला-मजनूं', 'हीर-रांझा', 'सोहनी-महिवाल', 'रानी झांसी', 'हरिसिंह नलवा', 'वीर शिवाजी', 'गुरु नानक', 'ईसा मसीह की कहानियां' और नाटकों में 'अमर सिंह राठौर' आदि नाटक शामिल होते थे। 'शेखचिल्ली' की कहानियां तो हम अपने बड़े-बुजुर्गों से जिद्द करके भी सुना करते थे। कभी सर्दी के दिनों में अलाव सेंकते हुए तो गर्मियों में पीपल या बरगद के बड़े पेड़ की छांव के नीचे प्रायः कहानियां और 'गप्पें' मारने और सुनने को हम सदा लालायित रहते थे। लेकिन जैसे-जैसे समय में परिवर्तन आया वैसे ही पहले रेडियो, टेलीविज़न और अब कंप्यूटर और लैपटॉप ने बच्चों के 'बाल मन' पर अपना कब्ज़ा कर लिया है।

लेकिन कुछ भी कहें बच्चों के 'बाल साहित्य' की बात पर धर्मग्रंथों में प्रस्तुत वृतांत या कहानियां भी प्रायः अपनी अमिट छाप छोड़ती दिखाई देती हैं।

जहां तक बच्चों की पहली पुस्तक के प्रकाशित होने का प्रश्न है, तो यह किताब सन् 1623 ई. में 'जटमल' द्वारा लिखित पुस्तक 'गोरा बादल की कथा' मानी जाती है। ...श्री के. शंकर पिल्लई द्वारा 'बाल साहित्य' के विकास के संदर्भ में 'चिल्ड्रन बुक ट्रस्ट' की स्थापना सन् 1957 में की गई थी। इस ट्रस्ट का मुख्य उद्देश्य बच्चों के लिए उचित 'नमूने' (डिजाइन) व सामग्री उपलब्ध करवाना है।

वैसे बात बाल साहित्य की ही की जाए तो किसे फुर्सत है अब साहित्य पढ़ने और पढ़ाने की। बात बहुत कड़वी है किंतु ऐसे बाल साहित्य की हम सदैव अपेक्षा रखते हैं, जिससे हमारी आने वाली पीढ़ियों में नैतिकता, राष्ट्रप्रेम और अपनी संस्कृति, अपने संस्कारों को सहेजने में हम अपनी और अपने बच्चों की मदद कर सकें। किंतु संस्कारों की यदि बात की जाए तो 'टेलीविजन' के कुछ विज्ञापन आसानी से यह काम चंद पलों में ही करने में सहायक सिद्ध हो रहे हैं जिन्हें नकारा नहीं जा सकता- जैसे एक विज्ञापन 'मेरे जूते ऽऽऽ' और झट से 'पोते' द्वारा दादा के जूते पालिश करके देना अच्छे संस्कारों का परिचय देता है।

यही दृश्य कुछ दिन पहले विदेश से आई मेरी छह वर्षीय पोती 'दीया' ने जब चरितार्थ कर दिखाया तो हम सब ठगे से और हैरान रह गए। बड़े-बुजुर्गों का सम्मान और राष्ट्रप्रेम तो हमारी आदतों, हमारे शिष्टाचार से समाप्त हो गया है। माता-पिता सरदार किशन सिंह और विद्यावती, चाचा अजीत सिंह से आज़ादी की बातें, किस्से-कहानियां सुन-सुनकर ही सरदार भगत सिंह ने स्वतंत्रता हेतु अपनी शहादत दी। धर्मगुरु... गुरु नानक देव जी को भी उनको मां तृप्ता और पिता कालू राम मेहता से ही 'सच्चा सौदा' करने की सीख मिली।

माता-पिता के सम्मान और सेवा भाव या उनकी आज्ञा को सर्वोपरि मानना 'पितृभक्त श्रवण कुमार' और 'श्रीराम' जैसे उदाहरण देकर बाल मन को प्रभावित करने में सक्षम हैं ऐसी ही कहानियां हमारे धर्मशास्त्रों की। कहा जाए तो 'बाल साहित्य' लेखन की कला अत्यंत प्राचीन है। नारायण पंडित ने 'पंचतंत्र' नामक पुस्तक में पशु-पक्षियों को माध्यम बनाकर बच्चों को शिक्षा प्रदान की। कहानियां सुनना तो बच्चों की सबसे प्यारी आदत है। बचपन में हमारी दादी-नानी और हमारी मां हमें कहानियां ही नहीं बल्कि 'लोरियां' भी सुनाती थीं। साहस, बलिदान, त्याग और परिश्रम ऐसे ही गुण हैं, जिनके आधार पर व्यक्ति आगे बढ़ता है और यह सभी गुण हमें... हम सभी को अपनी मां से ही प्राप्त होते हैं।

श्री के. शंकर पिल्लई द्वारा 'बाल साहित्य' के विकास के संदर्भ में 'चिल्ड्रन बुक ट्रस्ट' की स्थापना सन् 1957 में की गई थी। इस ट्रस्ट का मुख्य उद्देश्य बच्चों के लिए उचित 'नमूने' (डिजाइन) व सामग्री उपलब्ध करवाना है। इसमें 5 से 16 वर्ष तक की आयु के बच्चों के लिए बेहतर बाल साहित्य उपलब्ध है और इस ट्रस्ट द्वारा हमारी पाठशालाओं यानी सरकारी पाठशालाओं में पर्याप्त पुस्तकें उपलब्ध हैं, जिन्हें पाठशाला प्रबंधन द्वारा 'पुस्तकालय' के रूप में सहेजा जाता है। इस पुस्तकालय का हम कितना उपयोग बच्चें से कराते या स्वयं करते हैं, इस बारे में 'टिप्पणी' करना मैं उचित नहीं समझता हूं। हां, बाल साहित्य में इसी पुस्तकालय में पुस्तकें जैसे, पौराणिक कथाओं में कृष्ण-सुदामा, भक्त प्रह्लाद, पर्वत की पुकार, रंगों की महिमा, ननिहाल में गुज़रे दिन, पांच जासूस, विज्ञान के मनोरंजक खेल, इनसान का बेटा, गुड्डी, मास्टर साहब, अम्मा का परिवार, छोटा शेर बड़ा शेर और पर्यावरण पर आधारित अनोखे रिश्ते, कंप्यूटर, घड़ी, टेलीफ़ोन, रेलगाड़ी आदि और भी बहुत सारी पुस्तकें उपलब्ध हैं।

डॉ. राय मैमोरी चिल्ड्रन वाचनालय तथा पुस्तकालय की स्थापना भी की गई है, जो केवल 16 वर्ष तक के बच्चों के लिए ही हिंदी और अंग्रेजी भाषा में 30,000 से भी अधिक पुस्तकें उपलब्ध

कराने में सक्षम है। पत्रिकाओं के संदर्भ में बात की जाए तो अनेक भारतीय भाषाओं में 'चंपक, बाल हंस, बाल भारती, नन्हे सम्राट नंदन तथा युवाओं के लिए 'मुक्ता' आदि पुस्तकें प्रकाशित होती हैं।

पंजाब केसरी, दिव्य हिमाचल, जागरण, अमर उजाला, नवभारत टाईम्स, आदि समाचार पत्रों में भी एक 'बच्चों का कोना' विशेष रूप से बच्चों के लिए ही प्रकाशित किया जाता है। जिसमें बाल प्रतिभा को विकसित करने के लिए अवसर दिया जाना एक विशेष प्रयास है। 'टाईम्स ऑफ इंडिया' के दरियागंज स्थित एन. आई.ई. सेंटर में दिल्ली के स्कूली बच्चों की रचनाओं पर आधारित शिक्षा का पृष्ठ संपादित होता है, जो अत्यंत सूचनाप्रद तथा रंगबिरंगी आभा को लेकर प्रकाशित होता है जिसमें दिल्ली के सभी स्कूलों की गतिविधियां प्रकाशित की जाती हैं। जो कि बाल साहित्य के क्षेत्र में एक अनूठा कदम है।

हमारे हिमाचल प्रदेश में भी 'सर्वशिक्षा अभियान' के चलते 'अक्कड़-बक्कड़' बच्चों के लिए मासिकी आरंभ की गई है, जिसमें प्रदेश के लगभग प्रत्येक जिले के बच्चों की रचनाएं, कार्टून, रंग भरो, बूझोतो जाने, सामान्य ज्ञान, कहानियां, कविताएं और पौराणिक कथाओं में विक्रम और बेताल' की 'लड़ीवार' कथाएं शामिल थीं। बच्चों को साहित्य के रूप में परोसा जाना, एक अनूठा व आनंदमय प्रयास था शिक्षा विभाग द्वारा, जिसे हिमाचल प्रदेश के छात्र-छात्राओं और शिक्षकों द्वारा विशेष रूप से सराहा जाना इस मासिक पत्रिका की सफलता मानी जा सकती है।

हिमाचल प्रदेश में भी 'सर्वशिक्षा अभियान' के चलते 'अक्कड़-बक्कड़' बच्चों के लिए मासिकी आरंभ की गई है, जिसमें प्रदेश के लगभग प्रत्येक जिले के बच्चों की रचनाएं, कार्टून, रंग भरो, बूझो तो जानें, सामान्य ज्ञान कहानियां, कविताएं और पौराणिक कथाओं में विक्रम और बेताल' की 'लड़ीवार' कथाएं शामिल थीं। बच्चों को साहित्य के रूप में परोसा जाना, एक अनूठा व आनंदमय प्रयास था शिक्षा विभाग द्वारा, जिसे हिमाचल प्रदेश के छात्र-छात्राओं और शिक्षकों द्वारा विशेष रूप से सराहा जाना इस मासिक पत्रिका की सफलता मानी जा सकती है।

और इसी हिंदी बाल साहित्य की बात की जाए तो 'जय प्रकाश भारती' को बाल साहित्य का युग प्रवर्तक माना जाता है। लेकिन 'रोहित अस्थाना' की 'चुनी हुई बाल कहानियां', 'मार्गदर्शन के लिए तरसते बच्चे' (संजय द्विवेदी), 'हिंदी का बाल साहित्य' (दिविक रमेश) मधुमति का बाल साहित्य, श्यामसिंह शशी का 'भारतीय बाल साहित्य' आदि पुस्तकों द्वारा भी बालमन द्वारा पढ़ा या पढ़ाया जाना अपने आपमें एक बेहतरीन और उम्दा पर्याय है बालमन को प्रभावित करने का।

किंतु संचार माध्यमों के फैलते जाल ने बच्चों से पुस्तकों को ही नहीं, उनका बचपन भी छीन लिया है, जो कहानियां वह सुनते थे और उनमें अपने नायकों को तलाशते थे। बच्चों की प्रकाशित इन पत्रिकाओं ने, इन संस्कारों को ही आगे नहीं बढ़ाया, बल्कि कथा, कहानियों को विस्तृत भी किया। लेकिन धीरे-धीरे बाल पत्रिकाएं ही बंद होती चली गई और बच्चों के मिज़ाज में भी अंतर आता स्पष्ट नज़र आने लगा। तकनीक और संचार माध्यमों ने जहां बच्चों के लिए दूसरे दरवाज़े खोले और टी.वी. इंटरनेट से लेकर कार्टून फिल्मों में बच्चों ने अपने नायक-नायिकाओं को तलाशने की चेष्टा की, वहीं संचार के नए साधनों ने बच्चों से न उनका बचपन ही छीना, बल्कि कथा-कहानियों का जो एक संसार. .. एक तिलिस्मी, एक जादूगरी संसार था, उससे भी बच्चे धीरे-ध ीरे दूर होते गए। ज़ाहिर है तकनीक ने उन्हें एक नई दिशा या विशाल दुनिया से परिचय तो कराया लेकिन इसी तकनीक ने बच्चों को जीवन के कई चकाचौंध-सुनहरे रंगों यानी इंद्रधनुषी रंगों से भी बहुत दूर कर दिया।

किंतु बच्चों से दूर होते 'बाल साहित्य' के बावजूद आज भी अच्छा साहित्य लिखा जा रहा है। और यह उम्मीद भी की जा रही है कि देर-सवेर तकनीक की उस चमकीली दुनिया से बच्चों का मोहभंग होगा और 'किताबें' फिर से उनकी साथी-संगी बनकर और उनके नए नायकों की उंगली पकड़कर बचपन की दहलीज से पार उतारने में अपनी विशेष, एक खास भूमिका अदा करने में कोई कसर बाकी नहीं छोड़ेगी।

आशा और विश्वास किया जाना चाहिए कि बाल साहित्यकार भी इस दशा में 'बाल मनोविज्ञान' और आज के इस आधुनिक युग की ज़रूरतों को समझते हुए एक नए 'बाल साहित्य' की रचना करके देश के इन नौनिहालों में एक नई जिज्ञासा, नई कल्पना... एक नई दुनिया के विकास की संरचना करने में सहायक सिद्ध होंगे। बाल साहित्य के चलते जिन कल्पनाओं की उड़ान से हमारे 'बाल मन' चाहे-अनचाहे कहीं दूर जाते नज़र आते हैं, अवश्य ही फिर से अपनी कल्पनाओं के पंखों पर विश्व के आकाश में विचरते दिखाई देंगे, ऐसी आशा है।

पोस्ट बॉक्स नं. 45, मनाली, जिला कुल्लू,
हिमाचल प्रदेश-175 131,
मो. 86288 53773

आलेख

कहां खो गया चहकता बचपन

● भगवती प्रसाद गौतम

राष्ट्रीय शिक्षा आयोग (कोठारी कमीशन : 1964-66) की विस्तृत रिपोर्ट के 'एपिलोग' में बच्चों के भविष्य को लेकर माता-पिता की खास चिंता को जिस तरह रेखांकित किया गया है उसका मूल भाव यही है कि हमारे स्कूल और कॉलेज बेरोजगार बच्चों और अविवाहित बच्चियों के लिए प्रतीक्षालय बनकर रह गए हैं।

वस्तुतः वह आज़ादी के बाद का ऐसा दौर था जब यहां तकनीक और प्रौद्योगिकी का ऐसा विस्तार नहीं हुआ था जैसा आज के काल-खंड में दिखाई देता है। बदलते समय के साथ इस विस्तार ने दुनिया भर की सोच को ही बदल दिया है। रोज़गार का स्वरूप बदल गया है। पारिवारिक संबंधों की अवधारणा बदल गई है। व्यक्तित्व-विकास एवं चरित्र-सृजन के माध्यम बदल गए हैं। कुल मिलाकर देखें तो इस सदी के मनुष्य की जीवन शैली ही बदल गई है। बच्चों में समय से पहले भविष्य की आहट अनुभव होने लगी है। सीधे-सीधे कहें तो वे समय से पहले बड़े हो रहे हैं। उनका निश्छल बचपन, उनका मासूमियत-भरा बालपन टीवी, कंप्यूटर और मोबाइल सरीखे परदों में कैद होकर रह गया है। भूमंडलीकरण के इस दौर में सब-कुछ सिमटकर उनकी अंगुलियों के नीचे आ गया है।

प्रौद्योगिकी का प्रभाव

वैसे यह वह समय है जिसमें मनुष्य-जीवन को प्रौद्योगिकी का साथ ही नहीं मिला, अपितु इसके चलते बहुत-कुछ ऐसा भी प्राप्त हुआ जिसने बरबस ही उसे कई चमत्कारों से रू-ब-रू भी करा दिया। यह प्रसंग ज्यादा पुराना नहीं है, जिसमें 17 वर्ष पूर्व बिछुड़ी दो बहनें अनायास ही आ मिलीं और वह भी फेसबुक की वजह से। दरअसल एरीजोना (अमेरिका) की 18 माह की केटी को संयोग से छोटी बहन नेल्सी का नाम और जन्म-दिनांक याद रह गया। वह बड़ी हुई तो उसने नेल्सी का फोटो व कुछ सूचनाएं फेसबुक पर अपलोड कर दीं। बस फिर क्या था, चंद घंटों बाद ही कुछ लोगों और समाचार सूत्रों के जरिए उन दोनों बहनों की भेंट हो गई।

शुरुआती बचपन से ही जिंदगी की लड़ाई लड़ते एक ऐसे बच्चे का मामला भी सामने आया है जिसका नाम है राहुल। वह 'मायलाइट्स पोस्ट वायरल' नाम की बीमारी से पीड़ित है। हाथों में कलम पकड़ने की कोई ताकत नहीं है, फिर भी उसकी अंगुलियां कंप्यूटर के की-बोर्ड पर बड़ी तेजी से चलती और थिरकती-सी लगती हैं। उसकी सुनने-समझने की क्षमता भी जबरदस्त है और सवालों के सटीक उत्तर प्रस्तुत करने में वह बिलकुल देर नहीं करता। इसी के बूते 10वीं, 12वीं, बीसीए और एमसीए जैसी सभी परीक्षाओं में वह 'टॉपर' रहा। हां, इस सफलता में उसकी मां, बहन और शिक्षकों के धैर्य की भी कड़ी परीक्षा होती रही मगर उन्होंने भी किसी पड़ाव पर हार नहीं मानी।

यह शहर (कोटा) अब कोचिंग नगरी के नाम से जाना जाता है। लेकिन मौज-मस्ती और भौतिक संसाधनों से दूर, अभावों में जीवन जीकर भी बहुत कुछ कर गुजरने की तमन्ना रखने वाले लखा राम, खै राज, सुधा और कपिल गौतम... नितांत निर्धन एवं दयनीय पृष्ठभूमि से आए इन चारों किशोरों ने इस वर्ष की मेडिकल प्रवेश परीक्षा में श्रेष्ठतम अंकों के साथ सफलता हासिल की और साबित कर दिखाया कि प्रतिभा को आगे बढ़ने से कोई रोक नहीं सकता। सच्ची लगन, मजबूत इरादे और सतत परिश्रम के बल पर ही मिलती है मंज़िल...।

भयावह स्थितियों से जूझता बचपन

मगर इसी के उलट समाज में ऐसे दृश्य-परिदृश्य भी सामने आते रहे हैं जहां खाने-पीने, खेलने- कूदने और पढ़ने-लिखने की उम्र में कई बच्चे कहीं बर्तन मांज रहे हैं, कहीं गन्ना पेल रहे हैं, कहीं रेत-ईंटें ढो रहे हैं तो कहीं गले-सड़े कचरे के ढेर में धंसकर ऐसी चीजें बीन रहे हैं, जिन्हें किसी कबाड़ी को संभलाकर वे कम-से-कम एक वक्त की रोटी जुटा सकें। इसी के चलते मानव तस्करी विरोधी यूनिट ने पिछले दिनों यहां पांच नाबालिगों को बालश्रम से मुक्त कराया। इस कार्यवाही में 10 से 12 वर्ष के तीन बालक और दो बालिकाएं एक मेस में बंधुआ मजदूरों की तरह काम करते पाए गए थे।

यह तो केवल एक प्रकरण है जो अभी हाल में सामने आ गया। ऐसे और भी अनगिनत मामले हैं... और हो सकते हैं जो मासूम बचपन को कुकृत्यों, अपराधों और दुष्कर्मों की दुनिया की ओर धकेल रहे हैं। उल्लेखनीय है कि 'नेशनल क्राइम रिकॉर्ड ब्यूरो' के अनुसार जहां 1971 में दुष्कर्म के दर्ज मामले 2487 थे, वहीं यह संख्या अब 36735 तक पहुंच गई है। चिंताजनक स्थिति यह है

कि दुष्कर्म की बीमारी अब बच्चों को भी चपेट में ले रही है। विगत वर्ष (2014) में बच्चों द्वारा दुष्कर्म के 1989 मामले पंजीकृत हुए, जिनमें सबसे अधिक (434) मामले मध्य प्रदेश में उजागर हुए। इनमें समग्रतः 60.3 फीसद वृद्धि का आकलन माना गया। चौंकाने वाली बात यह भी है कि दुष्कर्म के 95 फीसद मामलों में अपराधी कोई सगा-संबंधी, परिचित अथवा जानकार व्यक्ति होता है और 40 फीसद मामलों में पीड़ित अवयस्क ही होता है।

भारतीय पुलिस सेवा से जुड़ी पूर्व अधिकारी किरण बेदी के अनुसार तो "... इससे ही स्थिति की गंभीरता का अनुमान लगाया जा सकता है। इन आंकड़ों की गहराई में जाएंगे तो इससे भी भयावह स्थिति दिखाई देगी।... इसके लिए जिम्मेदार कौन है? इसके लिए समाज की भी जवाबदेही बनती है।...(सच) दुष्कर्म पशुता है।" सवाल तो उठ ही सकता है- आखिर इस हैवानियत का, इस क्रूरता-निर्ममता का अंत कब और कहां जाकर होगा? क्या इस प्रश्न का कभी कोई सटीक उत्तर मिल सकता है?

डिजिटल वर्ल्ड

आश्चर्यचकित कर देने वाले इस एक और आपराधिक केस को कौन-कैसे नज़रअंदाज कर सकता है? खाते-पीते घर-घराने की एक किशोरी (गुजरात) ने खेल के बहाने खुद से 6 वर्ष बड़े भाई की आंखें बांधी, हाथ बांधे और सीने में चाकू ही जा घोंपा। भाई का 'दोष' सिर्फ इतना था कि वह अपनी अवयस्क बहन को किसी लड़के से मिलने से रोकता था। सवाल यह है कि लड़की के मन में ऐसा कुत्सित विचार आया कहां से? सच तो यही है कि उसे इस घिनौने कृत्य की प्रेरणा मिली किसी 'क्राइम पेट्रोल' जैसे सीरियल से। वास्तव में कितना कठिन समय है यह ! कितना अजीब लगता है जब पढ़ने-सुनने को मिलता है कि एक स्कूली किशोर के बस्ते से पिस्टल जब्त की गई है या फिर किसी छठी-सातवीं कक्षा में अध्ययनरत छात्रा की किताबों-कापियों के बीच छिपी शराब की थैली व अन्य आपत्तिजनक सामग्री मिली।

बच्चों का बड़ा होना भी उतना ही सहज और स्वाभाविक है जितना शैशव के बाद बालपन, बालपन के बाद कैशौर्य और कैशौर्य के बाद यौवन का उपस्थित हो जाना। आप चाहे अभिभावक हैं, अध्यापक हैं या उनके जीवन में कोई और...उन्हें बढ़ने दीजिए अपने आप। लेकिन आप अपने स्तर पर सही व सकारात्मक बने रहिए

सोशल मीडिया से जुड़े 'एसोचेम' द्वारा अभी-अभी करवाए गए एक सर्वेक्षण के अनुसार महानगरों में 8-13 आयुवर्ग के 73 प्रतिशत बच्चे फेसबुक अथवा दूसरी साइटों पर अत्यधिक सक्रिय रहते हैं। इस संदर्भ में 'सोशल डेवलपमेंट फाउंडेशन' ने देश के कुछ नगरों-महानगरों के 4000 से अधिक माता-पिताओं/अभिभावकों से बातचीत के आधार पर जानकारी हासिल की है और कहा है कि 75 प्रतिशत अभिभावकों ने खुद उनके अकाउंट बनाने में मदद की है। इसी से जुड़ा एक तथ्य यह भी है कि 85 प्रतिशत बच्चों की पसंद फेसबुक के साथ-साथ गूगल प्लस, वाट्स ऐप, स्नेपचेट जैसी साइटें भी हैं। जाहिर है, यही आकर्षण, यही सम्मोहन अब बच्चों को भी चंगुल में फांस-फंसा रहा है। इस क्षेत्र के अनुभवी लेखक विशेष गुप्ता (जन/रवि. 23.8.2015) कहते हैं- "सच्चाई यह है कि सोशल मीडिया साइट का प्रयोग करने के मामले में भारत आज एशिया में तीसरा और विश्व में चौथा देश है। ...दादा-दादी और नाना-नानी की बांहों से लिपटकर कहानियां सुनने वाला बचपन अब डिजिटल दुनिया के आभासी समाज के साथ विकसित हो रहा है। ...संस्कृति और सांस्कृतिक मूल्यों की सीख देने वाले परिवार और स्कूल तक बच्चों के बचपन से दूर होते जा रहे हैं।"

हकीकत यह है कि केवल बच्चे ही नहीं, हमारे अनेक अपने परिजन, हमारे समाज, हमारे अधिकांश नगर-कस्बे ऐसे ही उलझे फंदों की जकड़ में आ गए हैं। बालमन के मर्मज्ञ अखिलेश श्रीवास्तव चमन लिखते भी हैं- "ये फंदे हैं सूचना क्रांति के, बाजारवाद के, उत्तर आधुनिकता के, अति महत्त्वाकांक्षा के और भौतिकता की अंधी दौड़ के। ...लेकिन इससे सर्वाधिक प्रभावित हो रहे हैं बच्चे। बच्चे जो हमारी आशा हैं, हमारा भविष्य हैं और हमारे आने वाले कल की तस्वीर हैं।" (आजकल, नव. 2009) वे तो और भी आगे बढ़कर कहते हैं कि बीते दशकों में जब से एक के बाद एक टीवी, कंप्यूटर और मोबाइल यानी तीन पर्दों का हमारे घरों में प्रवेश हुआ है, उन्होंने हमारी सुख-शांति, शील-संस्कार, अदब-लिहाज, मान-मर्यादा सबकुछ 'बे-परदा' करके रख दिया है। ...और अब तो जब से स्मार्ट फोन आया है तब से लैपटॉप का चलन भी फीका दिखाई देने लगा है। यद्यपि कई उत्साही अभिभावक छोटी उम्र के बच्चों को मनचाहे मॉडल दिलवा तो देते हैं किंतु बाद में उन्हें चिंता सताने लगती है कि वे ही बच्चे हमेशा फोन पर इंटरनेट खोले बैठे मिलते हैं या गेम खेलते दिखाई देते हैं और अंततः बरबस ही कई तरह की शारीरिक-मानसिक विकृतियों के शिकार हो जाते हैं।

भटकाव के शिकार

यह भी एक ध्रुव सत्य है कि सीखना बच्चों की जन्मजात एवं नैसर्गिक प्रवृत्ति है। परिवार उनका पहला शिक्षण केंद्र होता है और पहली गुरु होती है मां। विद्यालय उनका दूसरा केंद्र है जहां उन्हें एक नहीं, अनेक शिक्षकों का सान्निध्य प्राप्त होता है। घर-बाहर का यह परिवेश ही उनके शारीरिक, मानसिक, भाषिक, भावनात्मक और सृजनात्मक विकास में अर्थात सर्वांगीण विकास में खास भूमिका निभाता है। मगर तब कोई भी सकते में आ जाता है जब 'पहली गुरु' मां ही ढाई वर्ष की बच्ची का गला इसीलिए घोंट देती है और खुद भी आत्महत्या कर लेती है कि उसकी बेटी

मानसिक विकलांगता से ग्रस्त है। जाहिर है, बेटी की परवरिश करने वाली मां भी तो किसी दिमागी विकार से पीड़ित रही, जो उसे इतना भयावह और जघन्य कदम उठाना पड़ा।

इस विशाल लोकतंत्र की धरती पर ऐसे और भी उदाहरण मिल जाएंगे जहां संतानों के जीवन को संवारने वाले अभिभावक खुद ही जबरदस्त भटकाव के शिकार हो रहे हैं। पिछले दिनों कानपुर के गंवई क्षेत्र के एक प्रौढ़ ने तंत्र-मंत्र के फेर में पड़कर 'बलि' के नाम पर अपनी ही नौ वर्षीय बेटी की जान ले ली। मन घुटता है यह सोच-सोचकर कि आखिर कब उबरेगा समाज रूढ़ियों-अंधविश्वासों की इस जड़ता से? कब संभलेगा मनुष्य अंधेरी राहों में ठोकरें खाते हुए गिरने से?

समस्या यह है कि नई-पुरानी पीढ़ियों में संवादहीनता के चलते बालपन से कैशौर्य की ओर बढ़ते बच्चों को अभिभावकों की सीख-सिखावन व टोका-टोकी से परेशानी है तो अभिभावकों को शिकायत है कि बच्चे उन्हें कुछ समझते ही नहीं। वस्तुतः मॉल में घूमना, मित्रों के साथ मस्ती मारना, ब्रांडेड कपड़ों-जूतों के लिए हठ करना, तरह-तरह के जंकफूड के स्वाद चखना...और तो और, धूम्रपान, तंबाकू, हुक्का, शराब जैसे नशों की दुनिया में विचरना, यह सब इस उदीयमान पीढ़ी की लाइफ स्टाइल का एक अपरिहार्य हिस्सा बन गया है। नशामुक्ति के क्षेत्र में सक्रिय गैर सरकारी संगठन 'कृपा फाउंडेशन' (पणजी) के संस्थापक फादर जोसेफ परेरा के मुताबिक वर्तमान में गोवा में बड़ी संख्या में स्कूली बच्चे विभिन्न प्रकार के मादक पदार्थों के चंगुल में फंसते जा रहे हैं और स्थिति अब खतरनाक स्तर तक पहुंच गई है।

समाधान

दरअसल ये सब बातें आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, और स्वास्थ्यिक दृष्टि से इतनी घातक साबित हो रही हैं कि अंततः जीवन को निचोड़कर रख छोड़ती हैं। आखिर अनगिनत सवालों से घिरे इस भटकाव का क्या कोई समाधान है?...हां, है एक ही समाधान, वह है शिक्षा...बस, सार्थक शिक्षा। 'सार्थक शिक्षा' इसलिए कि इस दौर में शिक्षा के अभिप्राय बदल गए हैं। शिक्षा के निजीकरण की हवा के साथ ही समानांतर कोचिंग संस्कृति फूल-फल रही है। रोज़गारपरक पाठ्यक्रमों और नई सदी की तथाकथित मांग के चलते नैतिक जीवन मूल्यों को परे ठेलते हुए दुधमुंहे बच्चों को भी आईएएस, सीईओ, इंजीनियर, डॉक्टर या अन्यान्य लुभावने शब्दों से अवगत कराया जाता है और उम्र के साथ वह दौर आ ही जाता है जहां बच्चा सोते-जागते, उठते-बैठते तनाव भरी जिंदगी जीने लगता है। मनोरोग विशेषज्ञों के निष्कर्षानुसार मेरे ही गृहनगर में अध्ययनरत 40 प्रतिशत बच्चे 'साइकोसोमेटिक प्रोब्लम' (दिमागी अवस्था से शरीर में होने वाले असामान्य अनुभव) से ग्रस्त हैं। अंततः ऐसी स्थिति बन आती है कि कोई-न-कोई 'योगेश' हॉस्टल की ऊपरी मंज़िल से कूदकर जिंदगी से हाथ धो बैठता है। (दैभा/12.8.2015) मुंबई से 12 गुना छोटा होते हुए भी यहां मुंबई से ज्यादा आत्महत्याएं होती हैं। राष्ट्रीय अपराध ब्यूरो के मुताबिक विगत वर्ष (2014) में ही यहां 45 छात्रों ने अपना जीवन समाप्त किया।

शायद इसी प्रसंगवश एक आलेख (जन 19.4.2015) में रमेश चंद्र मीणा बेबाक टिप्पणी करते हैं- "सफलता की सौ फीसद गारंटी के साथ ढाई लाख छात्रों में से महज़ दस फीसद भी सफल नहीं हो पाते तो उनके हाथ निराशा आती है। यहां हारे हुए को किसी तरह की जगह नहीं है। सारी गलती हारने वाले की मानकर उसे सहज ही भुला दिया जाता है। असफलता का आंकड़ा नब्बे फीसद होते हुए भी कोचिंग संस्थाएं सफल हैं क्योंकि सफलता की आस में नई खेप हर साल आ पहुंचती है।"

बोझिल बस्तों के साथ परवरिश

चहकते-किलकते बालपन के विकास में बाधक बनने वाले तत्त्व और भी हो सकते हैं, किंतु बोझिल बस्तों और होमवर्क की मारा-मारी का आलम अलग ही है। बच्चों की दबी-झुकी पीठों को देखकर दुष्यंत कुमार की एक ग़ज़ल की ये शुरुआती पंक्तियां बरबस ही याद हो आती हैं-

"ये सारा जिस्म झुककर बोझ से दुहरा हुआ होगा।
मैं सजदे में नहीं था, आपको धोखा हुआ होगा।"

वस्तुतः हम भूल जाते हैं कि बच्चों की परवरिश भी किसी कला-कौशल से कम नहीं है। लेकिन कुछ अभिभावक बच्चों के भविष्य और उनके कार्य-कलापों को लेकर ज्यादा ही सजग रहते हैं। वे हमेशा 'होवरिंग' (मंडराते रहने वाले) या 'हेलिकोप्टर पैरेंट्स' की भूमिका में नज़र आते हैं। आकुल-व्याकुल मनोस्थिति के साथ उनकी दृष्टि सदैव बच्चों कि गतिविधियों पर जमी रहती है। यदि यों कहें कि वे खुद बच्चों से ज्यादा बंधन में जकड़े हुए रहते हैं तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी।

सच तो यह है कि बच्चों का बड़ा होना भी उतना ही सहज और स्वाभाविक है जितना शैशव के बाद बालपन, बालपन के बाद कैशौर्य और कैशौर्य के बाद यौवन का उपस्थित हो जाना। आप चाहे अभिभावक हैं, अध्यापक हैं या उनके जीवन में कोई और.. .उन्हें बढ़ने दीजिए अपने आप। लेकिन आप अपने स्तर पर सही व सकारात्मक बने रहिए, अपनी यथोचित उपस्थिति से संबलन करिए... क्योंकि आप ही उनके असली आदर्श हैं। आप ही हैं जो जीवन मूल्यों और संस्कारों से उन्हें संवार सकते हैं। हां, दिल से उनके साथ रहना है, उन्हें भरपूर प्यार देना है, हर पल, हर क्षण आत्मिक जुड़ाव बनाए रखना है। ...बाकी तो वे अपने कदम खुद ही उठाएंगे और नए-से-नए अनुभवों से गुजरते हुए अपने व्यक्तित्व-सृजन की राह पर बढ़ते चले जाएंगे।

1-त-8 अंजलि, दादाबाड़ी, कोटा (राज)-324009
मो : 0 94611 82571

आलेख

आओ! लौटा दें मुस्कुराता बचपन

● मंजु गुप्ता

सुदर्शन फकीर की पंक्तियां हैं -

"मुझको लौटा दो बचपन का सावन
वो कागज की कश्ती वो बारिश का पानी"

बच्चों की वो स्वच्छंद मौज-मस्ती और बेफिक्री का आनंद आज के बचपन में से लुप्त हो गया है।

हम भौतिकवादी, प्रगतिवादी, तकनीकी और प्रौद्यागिकी के युग में रह रहे हैं। जहां संयुक्त परिवारों का विघटन हुआ है। बचपन में नाना-नानी, दादा-दादी, बुआ, मौसी आदि का लाड़-प्यार मिलता था, वे बच्चों को गोद में बिठा कहानी सुना, खाना खिलातीं थीं, लोरी दे सुलाती, मनपसंद स्वादिष्ट व्यंजन प्यारे हाथों से बना खिलाती थीं और बच्चा बन खेलती थीं। वे बचपन को मानव मूल्यों से पोषित कर संस्कारों की नींव से गढ़ते थे। अब बच्चों का लालन-पालन एकल परिवार में होने की वजह से अधिकतर पति-पत्नी काम पर जाते हैं। बच्चा होने के बाद नौकरानियों का सहारा लेना पड़ता है, कितने शिशु तो इनको ही मां मानने लगते हैं। कुछ तो 'डे-केयर', पालनाघर, 'क्रेच' आदि में पलते हैं। बोलने-सीखने के लिए प्ले स्कूल में भेजते हैं। क्या वे बच्चों को संस्कार, मौज-मस्ती, खुशियां दे सकेंगे? जवाब नहीं में है।

बच्चों के लालन-पालन में मां की भूमिका महत्त्वपूर्ण मानी जाती है क्योंकि बाल्यकाल में मां बच्चों के पास सबसे ज्यादा रहती है। उनकी मां पहली गुरु भी होती है। जैसे महान शिवाजी के बचपन पर मां जीजाबाई की शिक्षाओं-संस्कारों का प्रभाव था।



अब तो बच्चों का घर-बाहर शोषण हो रहा है, घर में ही रिश्तेदार उन नादानों को बहला फुसलाकर यौनाचार करते हैं। हाल ही की केंद्र सरकार की रिपोर्ट के अनुसार 53 प्रतिशत बच्चों का एक और कई बार यौन शोषण हुआ है, बच्चों को चुराकर ले जाने वाला गिरोह, अपहरणकर्ता आदि की घटनाएं उनमें खौफ पैदा कर देती हैं, बचपन की यह भयावह तस्वीर कई बार मन को विचलित कर देती है।

बाहर की दुनिया में गरीबों का बचपन भूख-प्यास से छटपटा रहा है, फुटपाथों पर जीवन बसर करने वाले खुद तो भीख मांगते हैं, बच्चे भी इस काम में लग जाते हैं। कितने बाल श्रमिक कम दाम पर काम कर दो वक्त की रोटी की जुगाड़ में लगे रहते हैं। कितनी मासूम बच्चियों को कोठे पर बेचकर, वेश्यावृति में लगाकर उनका बचपन नष्ट कर दिया जाता है। बच्चों पर काम का बोझ नहीं होना चाहिए।

सुभद्राकुमारी चौहान की बेटी के बचपन की ये पंक्तियां याद आ रही हैं-

'मां ओ ! कह कर बुला रही थी
मिट्टी खाकर आई थी
कुछ मुंह में कुछ लिए हाथ में
मुझे खिलाने आई थी।'

अन्य कवि की पंक्ति- **'जिसके कारण धूल भरे हीरे कहलाए'**

कहने का तात्पर्य यह है कि जिस धूल भरे हीरे का वर्णन किया है वह नन्हे बच्चे हीरे से बढ़कर हैं। धूल ही उनका श्रृंगार है जबकि आज के बचपन को संभ्रांत माता-पिता धूल से बचाना चाहते हैं। बढ़िया ब्रांड के बनावटी प्रसाधन-सामग्री को महत्त्व देते हैं। सामाजिक बदलाव के कारण रेत, मिट्टी में खेलने नहीं देते हैं। तो वे अपनी

कल्पनाशक्ति का बोलता संसार कहां बनाएंगे? जबकि अपनी चंचलता के कारण शांत रहना उन्हें पसंद नहीं, खिलौने से खेल कर बचपन बहलाते हैं। बचपन में खेल-खेल में अपने दोस्तों का चिढ़ाने का भी उन्हें आनंद आता था, सूरदास जी की पंक्ति-

'मैया मोह दाऊ खिझाय
मोसो कहत मौल का लिन्हों।'

अब तो यह अनोखा आनंद, भोलापन, मासूमियत आज के बचपन में नहीं दिखाई देते हैं, सामाजिक बदलाव के कारण इलेक्ट्रॉनिक मीडिया, कंपयूटर, वीडियो गेम, दूरदर्शन, मोबाइल आदि के कारण बच्चे घर के अंदर अपना मनोरंजन करते हैं जिनसे उनका शारीरिक, सामाजिक, भावनात्मक विकास नहीं होता, वे अकेलापन, कुंठा, तनाव और बीमारियों से ग्रसित हो जाते हैं। आज के बच्चों के बचपन में पचपन नजर आ रहा है, उनमें मस्ती, शरारत, रूठना-मनाना, नादानियां, भोलापन आदि नहीं रहा।

उनका बचपन इंटरनेट के इंद्रजाल में फंस कर 'नेट पिटारे' में अपनी दुनिया की अच्छाई-बुराई देख रहा है। जैसे कार्टून फिल्म देखना, वीडियो गेम में स्कोर प्वाइंट बढ़ाना, सेक्स की साइटों के प्रभाववश अश्लील हरकतें करते हैं, बचपन में यौन विकृति का खतरा मंडराने लगा है। ड्राईंगरूम में बैठ आज का बचपन मोनो, मेट्रो, बुलेट की रफ्तार, कटरीना, करीना की तस्वीर, स्त्रियों की नकारात्मक भूमिकाओं और मंगल यान का मंगल में प्रवेश करते हुए देख रहा है।

नन्हा बचपन पढ़ाई के बोझ से दब रहा है, स्पर्धाओं की होड़ लगी हुई है, जिम्मेदारी, उत्तरदायित्वों के बोझ से मासूमियत खत्म हो रही है। पढ़ाई, तनाव, चिंता से बचपन चिड़चिड़ा, परेशानियों से युक्त हो गया।

अब तो मां के हाथों के व्यंजन बच्चों को नसीब नहीं हैं। रेडीमेड फूड संस्कृति की थाली बच्चों को परोसी जा रही है।

बच्चे देश का भविष्य हैं। इसलिए उनकी बचपन रूपी नींव को सुदृढ़ करने के लिए माता-पिता, समाज को जागरूक होना पड़ेगा। बच्चा जहां पल रहा है, वहां का परिवेश कैसा है? यह ध्यान रखना होगा, बच्चों को अच्छे-बुरे का ज्ञान देना होगा। हमें बच्चों को उनका बचपन लौटाना होगा। तभी घर, समाज और देश का हित होगा।

19, द्वारका, प्लॉट 31, सेक्टर 9-ए, वाशी, नवी मुंबई-400 703, मो. 0 98339 60213

रितेंद्र अग्रवाल की लघु कथाएं

बेटा नहीं बेटी

ऑफिस जाने को तैयार होते पिता ने कुछ काम याद आने पर बेटी को आवाज लगाई, "रितु बेटे, कहां हो, जरा आना तो।"

कोई जवाब नहीं मिलने पर, चंद मिनट पश्चात् फिर आवाज लगाई, "रितु बेटे!!" परंतु फिर कोई जवाब नहीं।

उन्हें आश्चर्य हुआ। एक आवाज पर भागी आने वाली लड़की जवाब क्यों नहीं दे रही?

उन्होंने कमरे में जाकर देखा तो बेटी आनंद से खेल रही थी।

उन्होंने पूछा, " मैंने आवाज लगाई थी, तुमने जवाब नहीं दिया।"

बेटी बोली, "आपने रितु बेटे को बुलाया था, मैं बेटी हूं।"

पापा ने कहा,"मैंने प्यार से बुलाया था।"

बेटी ने कहा, "पापा मुझे लगता है कि आप पुत्र-मोह से पीड़ित हैं। अपनी छुपी हुई इच्छा को मुझे बेटा कहकर पूरा करते हो।"

"नहीं बेटा, ऐसा नहीं है। मैं तुम्हें बहुत प्यार करता हूं। मैंने कभी बेटा-बेटी जैसा सोचा ही नहीं। बस। प्यार से 'बेटे' संबोधन दे देता हूं।"

"पापा, मैं बेटी हूं, बेटी ही बने रहना चाहती हूं। मुझे बेटा मत समझिए कभी।"

"ठीक है, बेटी", कहकर पापा ने बेटी को गले लगाकर कहा, "मुझे गर्व है, तुम पर।"

कड़वी सच्चाई

मोहल्ले की सेठानी रोज की तरह आज जब मंदिर में पूजा के लिए पहुंची तो एक गरीब महिला ईश्वर से प्रार्थना कर रही थी, "हे भगवान, मुझे बेटी ही देना, मेरे भविष्य एवं देखभाल के लिए। मैं पूरी शिद्दत से प्रसाद चढ़ाऊंगी। पूजा-अर्चना करूंगी।"

सुनकर सेठानी को आश्चर्य हुआ। पूजा करने के बाद जब बाहर निकली तो सेठानी ने पूछा, "बहन, एक बात पूछूं?" "हां पूछो।" गरीब महिला ने कहा।

"सब लोग तो ईश्वर से बेटा मांगते हैं। वंश आगे चलाने के लिए। बुढ़ापे से सहायता के लिए, आदि।

गरीब स्त्री बोली, "बहन बुरा न मानना, मुझे बेटी ही चाहिए। घरों में काम करेगी। हाथ बंटाएगी, दो पैसे कमाएगी।"

"लेकिन बेटी तो पराया धन होती है।" अमीर महिला ने कहा।

"हां, पराया धन होती है। पराए घर जाकर भी मां-बाप की चिंता करती है। आकर संभालती है। इसलिए ईश्वर से मैं हर हाल में बेटी ही मांगती हूं।"

सुनकर अमीर महिला उसको गोल-गोल आंखों से देखती रही।

11/500, मालवीय नगर, जयपुर, राजस्थान, 302 017, मो. 0 75974 36456

आलेख

बच्चों का बदलता स्वभाव और व्यवहार

● कंचन शर्मा

आज हम अपने आस-पास नजर डालें, आस-पास ही क्यों यदि अपने घरों में ही झांक कर देखें तो साफ पता चलता है कि बच्चे अब तीव्रता से बदल रहे हैं। ये भी ठीक है कि जब समाज ही तीव्रता से बदल रहा है तो ऐसे में स्वाभाविक है कि बच्चे व उनसे जुड़ा बाल मनोविज्ञान, स्वभाव व व्यवहार सब कुछ बदलेगा ही। चिन्ता तो इस बात की है कि यह बदलाव नकारात्मक दिशा की ओर अग्रसर है। वर्तमान समय में बच्चों में न तो बालसुलभ मासूमियत दिखती है, न ही उनकी उम्र के अनुसार व्यवहार। यूं प्रतीत होता है कि बच्चे अपनी उम्र से कई गुणा अधिक परिपक्व हो गए हैं। बच्चों के इष्टतम् विकास को समाज के लिए महत्त्वपूर्ण माना जाता है इसलिए बच्चों के सामाजिक, भावनात्मक, संज्ञानात्मक व शैक्षिक विकास को समझना आवश्यक है। यह तभी संभव है यदि हम बाल मनोविज्ञान को समझें। बाल-मनोविज्ञान तीन शब्दों से बना है, बाल, मन व विज्ञान। बच्चे के मन को समझना कोई आसान कार्य नहीं, यह एक वैज्ञानिक विधा है। यह मनोविज्ञान की वह शाखा है जिसमें गर्भावस्था से लेकर प्रौढ़ावस्था तक के मनुष्य के मानसिक विकास का अध्ययन किया जाता है। बच्चों का स्वभाव, उनकी रुचियां और उनके शौक यदि; माता-पिता समझ लें तो उनके मन तक आसानी से पहुंचा जा सकता है।

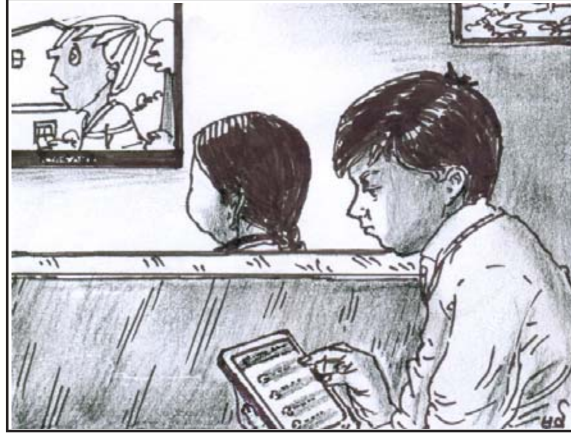
जब समाज ही तीव्रता से बदल रहा है तो ऐसे में स्वाभाविक है कि बच्चे व उनसे जुड़ा बाल मनोविज्ञान, स्वभाव व व्यवहार सब कुछ बदलेगा ही।

यूं भी आज के बदलते परिवेश में बाल मन को समझना बहुत आवश्यक हो चुका है। परिवर्तन प्रकृति का शाश्वत नियम है। बदलते परिवेश, बदलते वातावरण, बदली शिक्षावृत्ति के कारण हमारे बच्चों का रहन-सहन एकदम बदल गया है। बदलते परिवेश के कारण बच्चे न केवल शारीरिक व मानसिक रूप से अव्यवस्थित हो रहे हैं अपितु आश्चर्यजनक रूप से जिद्दी, हिंसक व कुंठित भी होते जा रहे हैं। बाल अपराधों से जुड़े आंकड़ों में विगत वर्षों में लगभग चालीस प्रतिशत बढ़ोतरी हुई है। बच्चे न केवल आपसी झगड़ों, घरों से पैसे चुराने, नशे, जुए, फैशन, अनुचित यौन आचरण की ओर लिप्त हो रहे हैं अपितु एकाकीपन के गहन अंधकार में विलीन होते जा रहे हैं। कितनी ही संस्थाएं बदलते बाल मनोविज्ञान पर काम करके इनके पीछे छुपे कारणों का पता लगाने में जुटी हैं।

बदलते बाल मनोविज्ञान के लिए वर्तमान शिक्षा प्रणाली काफी हद तक जिम्मेवार है। प्राचीन भारत में जिस शिक्षा व्यवस्था का निर्माण किया गया था, वह समकालीन शिक्षा प्रणाली से समुन्नत व उत्कृष्ट थी लेकिन कालांतर में भारतीय शिक्षा व्यवस्था का ह्रास हुआ। विदेशी आक्रांताओं ने यहां की गुरुकुल व्यवस्था को छिन्न-भिन्न करके भारतीय शिक्षा व्यवस्था को बदल डाला। पश्चिमी षड्यंत्रों के फलस्वरूप उन्नीसवीं शताब्दी के आरंभ में आश्रम एवम् गुरुकुल पद्धति पूर्णतः समाप्त कर दी गई जिसके बाद भारत में आधुनिक शिक्षा व्यवस्था अपने अस्तित्व में आई। स्वाधीन भारत ने ब्रिटिश परंपराओं का अनुकरण करते हुए नई शिक्षा नीति का निर्माण अवश्य किया किंतु वह किसी भी दृष्टि से भारत के लोगों की आवश्यकताओं व परंपराओं के अनुरूप सही नहीं बैठ पाई। विद्यार्थियों में पनपती जा रही उग्रता, अवसाद एवम् आत्महत्या की प्रवृत्तियों ने शिक्षा के औचित्य पर गंभीर प्रश्न खड़े कर दिए हैं। वर्तमान शिक्षा पद्धति के अनुसार आज का विद्यार्थी 5-6 घंटे विद्यालय में रहकर शेष पूरा दिन अपने घर में रहता है। गृहस्थ अपने कार्यों में संलिप्त रहते हैं। ऐसे में बच्चों का संरक्षण करने वाला कोई नहीं, घर में अब वे कुछ भी करने के लिए स्वतंत्र हैं। यही नहीं इस व्यवस्था में पढ़ने वाले बच्चों का घर-परिवार में ही अधिक समय व्यतीत होता है। घर में जो कुछ भी अच्छा-बुरा हो रहा होता है, उसका प्रभाव उनके जीवन में पड़ता है। ग्रामीण क्षेत्रों में तो प्रायः चाय, बीड़ी, सिगरेट, तंबाकू, शराब आदि मादक पदार्थों का सेवन प्रत्येक घर में होता है अतः

बड़ों को देखते हुए गलत आदतें शनैः शनैः उनमें भी घर कर जाती हैं और वह भी वैसे ही बन जाते हैं। बाद में स्वभाव में आने से रोकने से भी नहीं रुकतीं और पीढ़ी-दर-पीढ़ी ये बुराइयां समाज में आती रहती हैं।

यूं भी शिक्षा में तीन प्रकार के संबंध होते हैं। बालक तथा शिक्षक का संबंध, बालक व विषय का संबंध, बालक व समाज का संबंध। गुरुकुल प्रणाली में शिक्षा का उद्देश्य आत्मिक उन्नति, व्यक्तित्व निर्माण और गुणात्मक विकास हुआ करता था। इस प्रणाली में शिक्षा के विषय व संख्या विद्यार्थी की रुचि व क्षमता पर निर्भर करती थी लेकिन आज ऐसा नहीं है। प्रारंभिक कक्षाओं में हर विद्यार्थी को एक समान विषय पढ़ने की बाध्यता ने विद्यार्थियों में अध्ययन के प्रति अरुचि पैदा कर दी है। शिक्षा जो कि मूलतः उत्सुकता, उत्कंठा और आनंद का विषय है, बच्चों के लिए बोझ बन चुकी है जिसकी वजह से बच्चे आत्महत्या जैसे अनैतिक कदम उठा रहे हैं। यूं भी आज की शिक्षा प्रणाली आत्मिक उन्नति, व्यक्तित्व निर्माण व गुणात्मक विकास से परे आजीविकामूलक है जो लोकहितकारी कभी नहीं हो सकती। वर्तमान शिक्षा प्रणाली औद्योगिक व शोषणमूलक होती जा रही है। यही कारण है कि



बालमन को समझना होगा

● मनोज चौहान

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में स्थितियां तेजी से बदली हैं। एक विद्यार्थी के जीवन में जहां शिक्षकों का अहम योगदान है, वहीं दूसरी तरफ अभिभावकों की भूमिका को भी कम करके नहीं आंका जा सकता। वैश्वीकरण और प्रतियोगिता के इस दौर में हर अभिभावक यही चाहता है कि उनकी संतान परीक्षा में अच्छे अंक लेकर उत्तीर्ण हो। यूं तो पूरा वर्ष ही अभिभावक अपने बच्चों के लिए चिंतित रहते हैं, मगर यह चिंता उस वक्त और अधिक बढ़ जाती है जब परीक्षाएं सामने हों। अपने बच्चों के लिए अभिभावकों की यह चिंता तो लाजिमी है, मगर इस बात का ध्यान रखना भी नितांत आवश्यक है कि अपेक्षाएं इतनी अधिक न हो कि छात्र 'डिप्रेशन' में ही आ जाएं। 'डिप्रेशन' में आकर छात्रों द्वारा खुदखुशी जैसे दुखद मामले भी अकसर प्रकाश में आते रहे हैं। अभिभावकों को अपने बच्चों की तुलना अन्य बच्चों से करने से भी बचना चाहिए क्योंकि हर बच्चा विभिन्न गुणों, विवेक और शारीरिक क्षमता और स्वभाव के साथ ही पैदा होता है। इसीलिए वह कुशाग्रता, बुद्धि और व्यक्तित्व के मामले में एक-दूसरे से अलग होता है। बच्चों में ऐसे कई जन्मजात गुण होते हैं जिनपर अभिभावकों के मार्गदर्शन और व्यवहार का असर पड़ता है।

बीबीसी शिक्षा संवाददाता 'शॉन कॉगलन' की एक रिपोर्ट के अनुसार चीनी परिवारों के बच्चे पश्चिमी देशों के स्कूलों में बेहतर प्रदर्शन करते देखे गए हैं। वर्ष 2014 में ब्रिटेन के 'इंस्टीट्यूट ऑफ एजुकेशन' द्वारा ऑस्ट्रेलियाई स्कूलों का अध्ययन किया गया, जिनमें यह जानने की कोशिश की गई कि क्यों ये चीनी बच्चे दूसरों से बेहतर प्रदर्शन करते हैं। उक्त अध्ययन में यह बात सामने आई कि चीनी परिवारों के 15 साल के बच्चे अपने ऑस्ट्रेलियाई सहपाठियों से 2 साल आगे थे। यह अध्ययन इसके लिए कड़ी मेहनत और अभिभावकों की प्रतिबद्धता की ओर इशारा करता है।

कई बार अभिभावक अपने बच्चों से अपनी उन अपूर्ण इच्छाओं को पूरा करने की भी आशा लगा बैठते हैं जिन्हें वे कभी अपने विद्यार्थी काल में या अपने जीवन में करने में सफल न हुए हों। यह जरूरी नहीं है कि बच्चे की रुचि उन्हीं चीजों में हो, जो उनके लिए अभिभावक सही समझते हों। दसवीं कक्षा उत्तीर्ण करने के बाद विषयों का चयन करती बार भी अभिभावकों को अपनी मर्जी बच्चों पर नहीं थोपनी चाहिए बल्कि उन्हें उनकी मर्जी और रुचि के अनुसार ही विषयों का चयन करने देना चाहिए। अभिभावकों और बच्चों के बीच एक स्वस्थ संवाद का होना जरूरी है ताकि बच्चे अगर किसी परेशानी से जूझ रहे हों तो उसका एक सकारात्मक हल निकाला जा सके। अपने जीवन के प्रेरणादायक प्रसंग और अनुभवों को बच्चों के साथ साझा करके भी उन्हें तनाव और भयमुक्त किया जा सकता है।

एसजेवीएन कॉलोनी, दत्तनगर, रामपुर बुशहर,
जिला शिमला, हिमाचल प्रदेश, मो. 94180 36526

उच्च शिक्षित व ऊंचे पदों पर बैठे व्यक्ति भी अनैतिक कार्यों में लिप्त पाए जा रहे हैं। इस तरह से आधुनिक शिक्षा प्रणाली बालमन पर कुठाराघात करके समाज को एक गलत दिशा की ओर ले जा रही है।

यही नहीं, भारत की संयुक्त परिवार व्यवस्था भी सुदृढ़, सुसंस्कृत, व्यक्तित्व निर्माण की आधारशिला हुआ करती थी जो बाल विकास के लिए अत्यंत महत्त्वपूर्ण थी। मनुष्य के जन्म से लेकर किशोरावस्था के अंत तक होने वाला जैविक व मनोवैज्ञानिक परिवर्तन ही बाल-विकास कहलाता है। क्योंकि यह विकासात्मक परिवर्तन काफी हद तक जन्म से पहले के जीवन के दौरान आनुवांशिक कारकों व घटनाओं से प्रभावित हो सकता है इसलिए बाल विकास को भी बाल मनोविज्ञान के हिस्से के रूप में शामिल कर लिया गया है। भारत की गौरवशाली समृद्ध संयुक्त परिवार प्रणाली बच्चों के विकास व उनकी मनोस्थिति को जानने-परखने व उसे सही दिशा में ले जाने के लिए अत्यंत महत्त्वपूर्ण थी। मानव जीवन में संस्कारों का बड़ा महत्त्व है। प्राचीन काल से ही भारतीय संस्कृति में मनुष्य के लिए जन्म से मृत्यु तक सोलह संस्कारों की व्याख्या की गई है। इसमें गर्भ संस्कार भी एक प्रमुख संस्कार माना गया है। माता के गर्भ में आने के बाद से गर्भावस्था तक भी शिशु को संस्कारित किया जा सकता है। महाभारत काल में अर्जुन द्वारा अपनी पत्नी सुभद्रा को चक्रव्यूह की जानकारी देने और अभिमन्यु द्वारा उसे ग्रहण करके सीखने की पौराणिक कथा इस बात का प्रमाण है कि गर्भावस्था शिशु किसी चैतन्य जीव की तरह व्यवहार करता है तथा सुनता-सुनता ग्रहण भी करता है। घर संस्कारों की जन्मस्थली है अतः संस्कारित होने का कार्य घर से ही प्रारंभ हो जाता था। पीढ़ी-दर-पीढ़ी सोलह संस्कार देने की प्राचीन व्यवस्था मूलतः संयुक्त परिवार व गुरुकुल व्यवस्था की ही देन थी। हर समाज में कुछ नीतिगत बातें, कुछ परंपराएं एवम् कुछ धार्मिक मान्यताएं होती हैं जिन्हें हम संस्कार कहते हैं। इन संस्कारों को अगर भावी पीढ़ियों तक न पहुंचाया जाए तो ये नष्ट हो जाते हैं। आज के दादा-दादी, नाना-नानी व माता-पिता यह भूल रहे हैं कि जो संस्कार उन्हें पूर्वजों से मिले थे, वे इन संस्कारों को भावी पीढ़ी तक नहीं पहुंचा पा रहे हैं। संयुक्त परिवारों में बचपन से ही बच्चों को नमस्कार, चरण-स्पर्श, मंदिर जाना, धार्मिक पर्वों में भागीदारी करने व पारिवारिक आयोजनों में सम्मिलित होने का अवसर मिलता था, वहां बच्चे स्वयं ही दीक्षित व शिक्षित हो जाते थे। परंपराओं को आगे पहुंचाना संयुक्त परिवार की ही देन थी लेकिन वर्तमान में एकल परिवार के चलन ने संयुक्त परिवार की संरचना का आधार तोड़ दिया है जिसका सीधा असर

वर्तमान पीढ़ी की बदलती मानसिकता

● डॉ. रजनीकांत

यह भी यथार्थ है कि आधुनिक रंग में रंगे बच्चे अपराधी और हिंसक होते जा रहे हैं। इनको 'व्यवसायी अपराध' में संलग्न होते देखकर लगता है कि रक्तरंजित कथाएं जैसे जीवंत हो उठी हों। कई तरुण नियोजित चोरियों में संलिप्त हो रहे हैं। यहां से खतरनाक अपराध की शुरुआत होने लगती है। कई तरुण निर्मम बन जाते हैं। अपने अपराधों पर जरा भी ग्लानि का अनुभव नहीं करते। अभी हाल में मुंबई के एक स्कूल छात्र ने स्क्रू ड्राइव से अपने दादा और चचेरे भाई को मार दिया। दादा का दोष यह था कि पोते के सौ रुपये मांगने पर उन्होंने इनकार कर दिया था। इस तरुण ने अपने रक्तरंजित वस्त्र वाशिंग मशीन में डाल दिए। कीमती सामान इधर उधर बिखेर दिया। और खुद स्कूल चला गया। अर्ध-अवकाश को घर वापिस आया। दुखी और अज्ञानी होने का नाटक किया। जब चारों ओर से दबाव पड़ा तब जाकर अपना अपराध स्वीकार किया। एक अन्य घटना में रंजना चौधरी एक अच्छी मां थी। अपने बेटे का भला चाहती थी। उसे आई. आई. टी. में प्रवेश दिलाना चाहती थी। बेटा अपने दोस्तों संग शॉपिंग प्लाजा में खूब पैसे फूंकने लगा था। मां को यह जानकर बुरा लगा। मां ने बेटे के पैसों पर पाबंदी लगा दी। बेटे ने हथौड़ा लिया और मां के सिर पर दे मारा। मां बेटे को सुधारना चाहती थी। लड़के ने कानून अपने हाथ में ले लिया। और अब वह कारावास में है।

आज सभी की जीवनशैली एवं व्यवहार में अप्रत्याशित परिवर्तन आया है। शराब को पहले बुरा समझा जाता था। किंतु आज यह द्रव्य पदार्थ उच्च जीवन का प्रतीक बन गया है। सिगरेट पीना आम बात है। कॉलेज छात्र उच्च स्तर के रूप में डिस्को में जाते हैं। रईसजादे नई महंगी गाड़ियों में मनमानी करते हैं। 'रेव' और 'इक्टेसी' पार्टियों में जाना आम बात हो गई है। आधुनिक अभिभावक अपने बच्चों को पूरी आज़ादी दे रहे हैं। तेज़ ड्राइविंग के शौकीन इन रईसजादों को दो-चार लोगों के कुचले जाने का दुःख भी नहीं होता। माता पिता का कर्तव्य है कि वे अपने बच्चों को अंदर-बाहर से समझें-जानें। उनके दोस्तों के विषय में जानकारी रखें। अपने बच्चों के साथ वार्तालाप स्थापित करें। खुद उनके साथ अच्छा व्यवहार करें और उनसे इस प्रकार के व्यवहार से अपेक्षा रखें। घर में अनुशासनप्रिय वातावरण होना जरूरी है। बच्चों में शौक पैदा करना जरूरी है ताकि वे काम में व्यस्त रहें। खाली न रहें। खाली दिमाग शैतान का घर होता है। सभी बच्चे अपराधी प्रवृत्ति के नहीं होते। प्रतिकूल वातावरण उन्हें अपराधी बना देता है। माता-पिता, शिक्षकों, समाजसेवियों का दायित्व है कि वे बच्चों को प्रेमपूर्ण व्यवहार सिखाएं। उन्हें नैतिक शिक्षा देने का प्रयत्न करें ताकि भावी पीढ़ी राष्ट्र का गौरव बन सके।

राजविला, लोअर कैथू, शिमला 171003
मो. : 94183 44159

बालमन पर पड़ा है। आज के बच्चों में परिवार को लेकर दायित्व, अपनेपन की भावना, दुनियादारी गौण हो चुकी है। ऊपर से मां-बाप दोनों के कामकाजी होने के कारण बच्चे दूसरे माध्यमों से पल रहे हैं जिससे उनका समुचित विकास नहीं हो पा रहा है। बच्चे बाल साहित्य से दूर हिंसक टीवी दृश्यों, नकारात्मक धारावाहिक देखने में संलिप्त रहते है। नाना-नानी व दादा-दादी की प्रेरणादायक कथा कहानियों से अब उनका कोई वास्ता नहीं। यह भी सत्य है कि बदलते परिवेश में संस्कारों में परिवर्तन होता रहता है। नई बातें जुड़ जाती हैं कुछ पुरानी बातें छूट जाती है। संस्कार हमारी अस्मिता, संस्कृति व अपनेपन की पहचान हैं। घर के शालीन और सौम्य वातावरण में पला-बढ़ा व्यक्ति समाज में शालीनता सद्व्यवहार, मर्यादा लेकर पहुंचता है।

सामाजिक परिवेश की बात करें तो इसके अंतर्गत परिवार, मोहल्ला, गांव, मित्र, सहपाठी, पड़ोसी तथा अध्यापकगण आते हैं। बालक समाज में जैसे आचरण व स्वभाव की संगति में आता है वही संस्कार उसके बालमन पर बद्धमूल हो जाते हैं। भारतीय समाज की संगति की एक अलौकिक जीवन पद्धति थी जिसे आधुनिक परिवेश ने छिन्न-भिन्न कर खोखला कर दिया जिसका सीधा असर बालमन पर पड़ रहा है और इस तरह से एक कमजोर भविष्य की नींव तैयार हो रही है। मनुष्य व मनुष्य के बीच और मनुष्य व प्रकृति के बीच का संबंध सूत्र तो यूं भी सोलह संस्कारों की परंपरा के ध्वस्त होने से ही टूट चुका है। ऐसे में बाल विकास का परिवेश तो बदलेगा ही।

आज अर्थ की प्रधानता बढ़ी है। माता-पिता संस्कारों की जगह भौतिक सुख-साधन उपलब्ध कराकर बच्चों को सुखी व खुश रखने की परिकल्पना करने लगे हैं जो भ्रांतिमूलक तो है ही व बाल- विकास के लिए भी नकारात्मक चेष्टा है।

बाल-मनोविज्ञान को समझने व बाल-विकास के लिए एक अहम तत्त्व अध्यापक भी है। अध्यापक का कार्य बच्चों को किसी विषय से संबंधित सूचनाओं का खजाना नहीं बनाना है, उसे तो उसका संपूर्ण व्यक्तित्व उभारना है। जैसे एक बीज में वृक्ष बनने की योग्यता है, कली में फूल बनने की योग्यता है, सूर्य अपनी किरणों से उन्हें विकसित करने की प्रेरणा देता है, वैसे ही अध्यापक भी इन्हें खिलने का अवसर प्रदान करे। उनकी योग्यता का विस्तार हो, उसके लिए उपयुक्त वातावरण प्रदान करे। उन्हें 'सर्वभूत हिते रताः' की भावना से काम करने की प्रेरणा दे। जरूरी नहीं वे पढ़ लिखकर डॉक्टर या इंजीनियर ही बनें, वे गायक भी बन सकते हैं। खिलाड़ी भी बन सकते हैं या व्यापारी भी। अगर वे जबरदस्ती से कुछ भी बनेंगे तो उनके व्यवहार में असंतोष ही झलकेगा। बच्चों के ज्ञान में कुछ और जोड़ने के लिए उसमें उनकी भागीदारी आवश्यक है। वे श्रोता बनकर बेमन से सुनते न रहें बल्कि सीखने में भी पूरे हिस्सेदार बनें। अपने व्यवहार को आदर्श व मर्यादित रखकर बच्चों के आगे मिसाल पेश करें।

माता-पिता व आचार्य मिलकर बच्चे के व्यक्तित्व का निर्माण करते हैं। उनका मार्गदर्शन करके हम सही अर्थों में उन्हें मनुष्य बनाते हैं। जरूरी है कि हम स्वयं को प्रज्वलित दीप के समान बनाए रखें। प्रतिदिन होने वाले परिवर्तनों से परिचित रखें। नए बच्चों की नई सोच से तालमेल बिठाएं। शिक्षण-प्रशिक्षण व स्वाध्याय निरंतर चलने वाली प्रक्रिया है, इसका प्रवाह बनाए रखें।

और भी कितने ही कारण हैं, जैसे बच्चों के खानपान में बदलाव, शारीरिक स्वस्थता, आत्मनिर्भरता, सहभागिता, नेतृत्व की भावना से भरे-पूरे खेल; अब टेलीविजन, विडियो गेम्ज, कंप्यूटर गेम्ज जैसे एकाकीपन के अंधेरे में धकेल चुके हैं। अब बच्चों की शक्तियों, योग्यताओं को पूर्ण रूप से पल्लवित, पुष्पित करना एक चुनौती बन चुका है। जाने क्यों आज बच्चे यह सोचने लगे हैं कि कब बचपना खत्म हो और वे बड़े बन जाएं। बच्चे आखिर चाहते क्या हैं, यह सोचने के लिए शायद किसी के पास वक्त नहीं। हमें चाहिए कि हम बच्चों की सभी संभावनाओं को पूर्ण मानें। यूं भी सभी बच्चों में कुछ न कुछ बनने की योग्यता है, विशेष गुण हैं। वे अपनी इन योग्यताओं का विकास चाहते हैं। हमें उन्हें विकसित होने का अवसर प्रदान कर इन विशेष गुणों की प्रशंसा करनी चाहिए। हम बच्चों का ही नहीं, अपनी मनोविज्ञान भी समझें। इस बात को पूरी तरह समझ लें जैसे तेज रफ्तार से नदी के प्रवाह को नहीं रोका जा सकता है, उसे थोड़ा मोड़ दे सकते हैं; उसी तरह हम बच्चों की भावनाओं को भी नहीं रोक सकते, केवल दिशा दे सकते हैं। इसके लिए जरूरी है स्वयं का व्यक्तित्व निर्माण, शिक्षा प्रणाली में सुधार व पारिवारिक संरचना को सुदृढ़ बनाया जाए तभी और केवल तभी आज का बच्चा कल का उज्ज्वल भविष्य बन सकता है।

सेट नं. 11, टीचर्स कॉलोनी, समरहिल, शिमला-171 005
मो. 94180 58158

आलेख

युवाओं को अनुशासन व सहनशीलता का पाठ

● वंदना राणा

'बच्चे मन के सच्चे, सारे जग की आंख के तारे।
नन्हे नन्हे फूल हैं ये, भगवान को लगते प्यारे।'

कितनी सुंदर, कितनी शाश्वत और कितनी प्यारी पंक्तियां हैं ये किसी गीतकार की। कोई भी वक्त हो, युग हो, देश हो, इनसान हो, धर्म हो, जाति हो... सब जगह बच्चों की एक सी मासूमियत, एक सा भोलापन, एक सी मुस्कान और एक सी किलकारी, एक सा अपना मोह लेने वाला अंदाज होता है। हम चाहें सात समुद्र पार हों, सरहद के इस या उस पार हों, बच्चों का एक सा सुंदर संसार होता है। कभी-कभी मन सोचता है हम बच्चे ही रहते, बड़े न होते तो अच्छा था... क्योंकि बच्चों की दुनिया बहुत निराली और प्यारी है। जब हम बच्चों के साथ होते हैं, उनके आस-पास होते हैं, एक शांत और खुशनुमा माहौल बन जाता है। बच्चों की मुस्कान देखकर अनायास ही अधरों पर हमारे मुस्कान खिल उठती है। खुदा के इन नन्हे फरिश्तों को देखकर तनाव-भय दूर हो जाता है।

बच्चों का बाल-मन कोरे कागज की तरह होता है, जिसमें काला-उजला-रंग-बिरंगा कुछ पहले से अंकित नहीं होता, बस साफ सुथरा होता है। यह तो जैसा घर-समाज-माहौल होता है, उसकी छवि उसमें पड़ने लगती है। अच्छी-बुरी जैसी भी, समय के साथ-साथ यह छवि गहरी होती चली जाती है। हम देखते हैं आजकल बच्चों के लिए समाज में जैसा माहौल बन रहा है, वह भविष्य में इनके सुंदर संसार में कितनी विकृतियां लाने वाला है। तनाव, गुस्सा, असहनशीलता, झुंझलाहटें, घबराहटें और कम समय में बहुत कुछ पाने की चाहतें बच्चों के लिए गलत दिशाएं बना रही हैं। बच्चे समय से पहले ही बड़े होते नज़र आने लगे हैं। धरती में सीधा चलना नहीं सीखते और हवा में आसमान के लिए उड़ानें भरने को आतुर रहते हैं। किसे दोष दें- समाज को, आधुनिक परिवेश को मीडिया को या इंटरनेट की दुनिया को, जिसने बच्चों का बचपन लील लिया है और उन्हें बनी बनाई सामग्री इंटरनेट से प्राप्त करने की आदत बचपन से पड़ने लगी है जिससे उनके मानसिक विकास में कल्पना का तत्त्व क्षीण होता जा रहा है।

कहते हैं समय भाग रहा है, यह गलत है, समय नहीं भाग रहा, वह अपनी ही गति से सदियों से, अनंत काल से चल रहा है। सूरज अपने समय से उगता और ढलता है। पानी उलटी दिशा की तरफ नहीं, नीचे की ओर बहता है। कभी देखा-सुना है किसी ने पानी ऊपर की तरह बह रहा है। नहीं न! पंछियों का कलरव भी वही है, दिन तो रात में ढले नहीं, न ही रातों में सूर्य देव निकले हैं। रात में तो चांद-सितारे ही निकलते और दिखाई देते हैं। कुदरत के सबके लिए कायदे-कानून वही हैं, समय चाहे आदिकाल का हो या आज का ही क्यों न हो। बस, हम भाग रहे हैं जाने कहां-किधर बेलगाम से...। लेकिन इस बीच बच्चों की दुनिया में ठहराव सा आ गया है। समय रुक सा गया है। उनकी मुस्कानें फीकी पड़ने लगी हैं। कुछ बस्तों का बोझ, कुछ अपनों और समाज की अपेक्षाएं उनसे ज्यादा हो गई हैं जिससे बच्चे तनाव महसूस करने लगे हैं। सहनशीलता खत्म हो गई है। कुछ दिन पहले की घटना है... एक पिता ने अपने बेटे को जरा सा डांट दिया- डांटा क्या नाराजगी भरे स्वर में इतना ही कहा, "इतनी रात को घर आ रहे हो, नशा करके. .. कहां थे तुम अब तक...?" बस बेटा पैर पटकता हुआ गुस्से में कमरे में गया और फंदा लगा लिया। अभी चौदहवें साल में उसने प्रवेश किया था। इतनी कम उम्र में अबोधपन में इतना बड़ा कदम उठा लिया। सोच-सुन-देखकर हम हैरान-परेशान रह जाते हैं। समाज में बच्चों के अंदर कितना गुस्सा भरा है...क्यों... आखिर क्यों... कौन इसका जिम्मेवार है। समाज में जो कुछ अंटशंट घट रहा है, उसका असर सीधे बच्चों के दिमाग पर हो रहा है। वैज्ञानिक युग कहें इसे या आधुनिक युग। इस भागमभाग में नैतिक मूल्य हम बच्चों के अंदर डालना भूल रहे हैं। बच्चों में अपनेपन का अभाव पैदा हो रहा है जो प्यार वो अपने परिवार से पाना चाहते हैं, नहीं मिलता है तो वे उसे बाहर ढूंढते हैं, अपनापन ढूंढते हैं। अकेलेपन के शिकार बच्चे गलत रास्तों में चलकर बचपन-यौवन-जीवन तबाह कर लेते हैं। अकसर माता- पिता को यह कहते सुनते हैं, "हमने तो इसे कोई कमी नहीं छोड़ी, फिर भी इसने ऐसे किया। जो इसने चाहा, दिया- पैसा, गाड़ी, पूरे

ऐशोआराम सबकुछ दिया... फिर भी ऐसा हाल... हम क्या करें?" आजकल समाज की तसवीर ऐसी ही नज़र आ रही है। बच्चों को 'आया' के हवाले, इंटरनेट, टीवी, मोबाइल के हवाले करके मां-बाप निश्चिंत हो जाते हैं। सुबह जल्दी जाते हैं, शाम को लेट घर पहुंचते हैं और छुट्टी वाले दिन में कामों में व्यस्त रहते हैं। बच्चों की तरफ कब ध्यान देते हैं... कहां जाते हैं, क्या करते हैं, नहीं पूछते। स्कूल में 'पेरेंट्स-टीचर मीटिंग' में आकर टीचर से हिदायतें, शिकायतें सुनकर रिपोर्ट कार्ड लेकर घर आकर संतुष्ट हो जाते हैं। फिर वही दिनचर्या... काम-धाम... और बच्चे बेलगाम। मां-बाप जब उनसे पूछते हैं तो काफी वक्त हो जाता है। समय हाथ से निकल जाता है। 'हाय-वाय' तक सीमित बच्चों और बड़ों के दायरे रह जाते हैं... बस। आरामदायक जीवन शैली भी बच्चों को निठल्ला बना रही है।

कभी-कभी लगता है वो वक्त काफी अच्छा था जब बच्चों को घर के कामों में, रीति-रिवाजों में शामिल किया जाता था। ग्रामीण परिवेश में खेतों-खलिहानों में काम करना, बैलों को जोतना... बीज डालना, गुड़ाई-नदाई फसलों की देखभाल, पशुओं को चारा-पानी दिलाना... बावड़ियों से पानी भरवाना और घर के अंदर लड़कियों से काम करवाना जैसे खाना बनाना, सिलाई-कढ़ाई-बुनाई, आंगन बुहारना जैसे महीन काम बड़े सलीके-तरीके से करवाए जाते थे। बचपन से ही बच्चों की हर कार्य में भागीदारी सुनिश्चित की जाती थी। बड़ों को आदर भाव, छोटों से प्यार भाव सिखाया जाता था। रसोई में खाना खाना, इकट्ठे होकर गप्पशप मारना होता था, जिससे बच्चों में अपनापन, आदरभाव, संस्कार खून में ही रस-बस जाते थे। कहने और सिखाने की जरूरत ही नहीं पड़ती थी। जैसे स्कूलों में, क्लास में अनुशासन में रहना होता है। किसी भी सांस्कृतिक कार्यक्रम में जब बच्चों को शामिल किया जाता है, तब बहुत प्यार से बच्चे वह कार्य करते हैं। बहुत छोटे बच्चे अपनी तुतली जुबान से कविताएं कहते हैं, उनका चित्रण करते हैं।



बच्चे देखकर ज्यादा सीखते हैं, जैसे अक्षर ज्ञान सिखाने के लिए किताबों में पशु-पक्षियों और फलों-फूलों की तसवीरों के साथ अक्षर (स्वर-व्यंजन) लिखे होते हैं, उन्हें देखकर बच्चे जल्दी समझ लेते हैं कि यह आम है, फूल है, झंडा है, भालू और शेर है आदि। उसी तरह समाज में जो कुछ घटित हो रहा है। उसका असर बच्चों के दिल-दिमाग पर बहुत जल्दी हो रहा है आजकल बच्चे प्रौढ़ों, किशोरों की भांति कार्य करते हैं। बातें करते हैं और उन्हें अंजाम तक भी पहुंचा रहे हैं। टीवी चैनलों में अश्लील कार्यक्रम उनकी सोच को कुपित कर रहे हैं। इंटरनेट से जुड़कर अकेले रहकर गलत लोगों के साथ संपर्क साध रहे हैं। उनपर किसी की नज़र नहीं, कोई रोक-टोक नहीं। इसका भुगतान माता-पिता को तो देना ही पड़ता है। साथ-ही-साथ देश को भी चुकाना पड़ रहा है क्योंकि भावी देश का भविष्य इन्हीं बच्चों को ही तो कहा जाता है।

देश-समाज और अपने घर-जीवन को सुखी और उन्नत बनाना है तो बच्चों पर ज्यादा ध्यान देना होगा। माता-पिता स्कूल पर ही सारी जिम्मेदारी सौंपकर खुद बेफिक्र हो जाते हैं जो ठीक नहीं है। बच्चे स्कूल में कुछ घंटे व्यतीत करते हैं। अनुशासन में रहते हैं। अध्यापकों की नज़र में रहते हैं। वैसे ही घर में भी अनुशासन में रह सकते हैं, नज़र में रह सकते हैं यदि मां-बाप चाहें तो। आखिर घर से ही पड़ोस, पड़ोस से समाज, समाज से प्रदेश, प्रदेश से देश और देश से विश्व बनता है। इसलिए घर में ही बच्चों को अनुशासन और नैतिकता का पाठ पढ़ना चाहिए। बच्चे हमारी जिम्मेवारी हैं, हमें उन्हें सही तरीके से निभाना होगा। अगर हम पिक्चरों की बात करें तो बच्चों के लिए तारे जमीं पर जैसी पिक्चरों का निर्माण हुआ है, वैसे ही और फिल्मों का निर्माण बच्चों के लिए होना चाहिए। दूसरे उनके लिए बाल साहित्य लिखा जाना चाहिए ताकि बच्चों के बालपन में कोमलता, उत्सुकता, जिज्ञासा व जागरुकता खत्म न हो। बच्चों के मन बहुत संवेदनशील होते हैं। किसी चीज़ को देखकर उनपर असर ज्यादा होता है। इसलिए समाज का दायित्व बनता है कि बच्चों के लिए सुखद माहौल बनाए न कि हिंसक। सभ्य बने। जिस तरह राह चलते लोग सड़कों में थूकते हैं, गंदगी डालते हैं, बच्चे भी वही करते हैं। बड़ों को पहले समझदारी का पाठ सीखना चाहिए तभी बच्चों

लघुकथा

मान्यताएं बदल गईं

● नरेंद्र देवांगन

हमारी बगिया का माली दलित है, अतः माताजी उसे तुलसी का बिरवा नहीं छूने देती थीं। एक बार माताजी सख्त बीमार पड़ीं। घर में किसी को तुलसी के बिरवे का ध्यान ही नहीं रहा और माली ने भी माताजी के क्रोध के कारण उसे सींचने का साहस नहीं किया। जब बिरवा कुम्हलाने लगा, तब माली से न रहा गया और उसने बिरवे को सींच ही दिया। फिर तो वह प्रतिदिन उसे सींचने लगा। तुलसी फिर से लहलहाने लगी, क्योंकि उसे इस बात से कोई सरोकार नहीं था कि उसकी परवरिश करने वाला दलित है या स्वर्ण।

स्वस्थ होने पर जब माताजी अपने बिरवे को सींचने आईं, तो देखा कि माली उसे दुलार से छू रहा है। माताजी को देख कर माली सकपकाते हुए बोला, 'मांजी, बिरवे को मैं तिल-तिल मरते न देख सका इसलिए इसे सींच कर मैं आपका अपराधी बन गया हूं, जो चाहें आप सजा दें।'

माताजी बोलीं, 'अपने बिरवे को हरा-भरा देख कर मैं खुश ही हूं। यदि तू इसे न सींचता, तो यह मर गया होता और इसकी हत्यारिणी मैं और मेरी मान्यताएं होतीं। शहर के सभी डॉक्टरों ने जब मुझे जवाब दे दिया, तब एक दलित डॉक्टर ने ही मुझे जीवन दान दिया और एक दलित माली ने मेरे इस बिरवे को।' कहते-कहते माताजी का गला भर आया।

नरेंद्र फोटोकापी, पोस्ट खरोरा, जिला रायपुर, छत्तीसगढ़-493225, मो. 94242 39336

को अच्छी बातें सिखा पाएंगे। खुद झूठ बोलते हैं और बच्चों को कहते हैं झूठ मत बोलो। एक बार किसी के घर गए बच्चे ने कहा, "पापा घर पर नहीं हैं।" हालांकि उसके पापा अंदर कमरे में ही थे। हमने कुछ नहीं कहा, उलटे पैर बाहर आ गए। बहुत से किस्से ऐसे होते हैं हर रोज। समाज में बच्चों से झूठ बोला और बुलवाया जाता है। भीख मंगवाई जाती है। मजदूरी करवाई जाती है, इसलिए कानून बनते हुए भी बाल मजदूरी बढ़ रही है। गलत काम करवाए जाते हैं इसलिए कम उम्र में बच्चे हिंसक, उत्पाती, लुटेरे, चोर और अनैतिकता की अंधेरी काल कोठरी की तरफ बढ़ रहे हैं। उनका जीवन तो अंधकारमय हो ही रहा है, साथ ही देश का भविष्य भी अंधेरों में डूब रहा है। ऐसे में बाल सुधार गृह बढ़ रहे हैं। उनके संरक्षण के चर्चे हो रहे हैं। जो कुछ हो रहा है, हम सब उससे अनभिज्ञ नहीं हैं, इसलिए गंभीरता से बच्चों के बारे में सोचना होगा।

समाज सेवी संस्थाएं तो बच्चों को सुधार ही रही हैं। हमारा भी सामाजिक दायित्व बनता है कि हम इस ओर अपना सहयोग दें। बच्चों के लिए वक्त निकालें, उनसे बातचीत करें, उन्हें अकेला न छोड़ें। बच्चों से जितना अधिक संवाद होगा, उतना बच्चे अपनेपन का अहसास करेंगे। आपके हमारे नजदीक आएंगे। बेशक, बहुत से परिवार ये सब करते भी होंगे लेकिन हर परिवार में संवाद और भाईचारा, आपसी मेलजोल बढ़ना चाहिए। घर के कामों में बच्चों से हाथ बंटाइए, लड़का हो या लड़की, घर के कार्यों में शामिल करें। कोई बहाना मत बनाइए, अपने से बड़ों के साथ शालीनता और सभ्य तरीके से पेश आइए तो बच्चे भी वैसा ही करेंगे। दादा-दादी, नाना-नानी आदि रिश्तों के करीब लाइए न कि उनसे दूर रहकर अपनी व्यस्तता का बहाना बनाइए। समाज के सब बच्चे अच्छे, संस्कारी, नैतिक हो सकते हैं यदि घर का माहौल सही रखा जाए। यही काम, यही व्यस्तताएं पहले समय में भी होती थीं, मगर बच्चे पढ़ाई लिखाई, खेलकूद और खेतीबाड़ी और घरेलू कामकाज में पारंगत होते थे, तहजीब और सलीका उनमें कूट-कूटकर भरा होता था, परिवार में, रिश्तों में मर्यादा और मिठास होती थी, कुदरत के प्रति उस समय भी बच्चों का जुड़ाव था। फिर कैसे आज बच्चों को हमने ऐसी आबोहवा घर और वातावरण में दे दी कि उनका चहुं ओर दम घुटने लगा है। क्यों उनमें असुरक्षा की भावना आ गई, क्यों आजकल बच्चे तनाव और नशे में जीना ठीक समझते हैं। क्यों आखिर क्यों? इस सबके कहीं-न-कहीं समाज दोषी है जिसने बच्चों को डरावना माहौल दे दिया है। रहने को बच्चे मजबूर हैं। यह मजबूरियां, ये दुश्वारियां हमारी दी हुई हैं बच्चों को। इन्हें दूर करिए, बच्चों की मासूम आंखों में सुंदर सपनों की तसवीर दिखाइए। उनके भाग्यविधाता हम हैं, उनका भाग्य संवारिए। बच्चों के लिए पैसे और ऐशोआराम का सामान ही मत जुटाइए। उनके लिए प्यार, सद्भाव, नैतिक मूल्यों और अनुशासन की भी दौलत अर्जित रखिए, उन्हें संस्कार और देशभक्ति के जज़्बात देकर उनके जीवन और भविष्य को सुंदर बनाइए। उन्हें सहनशीलता का पाठ पढ़ाइए न कि उकसाइए। देश, समाज, हमारा जीवन यह सब बच्चों को देकर ही सुरक्षित, शिक्षित और सुंदर बनेगा। इस देश का नागरिक होने के लिए और इनसानी चोला पहनकर अपने बच्चों की खातिर हमें इतनी जिम्मेवारी तो लेनी ही होगी। बच्चे सुंदर, भोल-भाले-प्यारे तो होते ही हैं, सुरक्षित भी हो जाएं तो मानवता भी खुशहाल होगी। अन्न-धन से हम संपन्न होंगे। बच्चे हृष्टपुष्ट होंगे तो समाज तंदुरुस्त और समृद्ध होगा।

सैट 3, टाईप-3, कैंडल लॉज, लौंगवुड, शिमला, हिमाचल प्रदेश-171 004, मो. 94184 39685

आलेख

अध्ययनरत विद्यार्थियों से आग्रह है कि वह किसी भी विषय को छोटा अथवा बड़ा या सुगम अथवा कठिन न मानें। अध्ययन में रुचि एवं जिज्ञासा को बढ़ाते हुए पूरे मनोयोग से पाठ्यक्रम को पढ़ने तथा समझने का प्रयास करें और जितना समय एक विषय को विद्यालय में पढ़ने के लिए देते हैं, कम-से-कम उतना समय घर पर भी उस विषय के काम अथवा मनन-चिंतन व स्मरण के लिए अवश्य दें। कोई भी मां-बाप घर पर किसी भी बच्चे को घरेलू काम के लिए कभी भी पढ़ते समय उसे उठाकर दूसरे काम में नहीं लगाते हैं।

आज का युवा कल का भविष्य

● **रमेशचंद्र 'मस्ताना'**

आज का युवा कल का भविष्य है, कर्णधार है और प्रदेश एवं देश की नाव का खेवनहार है। युवाओं के लिए शिक्षा की सीढ़ी ही एकमात्र ऐसा माध्यम है जिसके द्वारा वह समय आने पर बड़ी-से-बड़ी ऊंचाइयों-बुलंदियों को छू सकता है। शिक्षा के बिना न केवल व्यक्ति अधूरा होता है अपितु उसे समाज में उचित आदर-मान भी प्राप्त नहीं हो पाता है। वर्तमान में शिक्षा का क्षेत्र इतना व्यापक एवं संभावनाओं से भरपूर बन चुका है कि उसे किसी एक सीमित दायरे में बांधना या रेखांकित करना कठिन ही नहीं अपितु असंभव है। आज की शिक्षा व्यवस्था राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्यों में उभरती हुई समस्त विश्व को एकसूत्र में बांधने की क्षमता रखने वाली बन चुकी है। वर्तमान समय की शिक्षा स्वतंत्रता-प्राप्ति के पहले या बाद के कुछ दशकों तक की बाबूगिरी, लिपिकीय ज्ञान अथवा केवल सफेद-रंगी-नौकरी के दायरे से निकल विभिन्न रोज़गारपरक व्यवसायों से जुड़ने वाली शिक्षा बनती जा रही है। आज शिक्षा दिमाग के तंतुओं के संचालन-उद्वेग के साथ-साथ कर्मनिष्ठा तथा रोज़ी-रोटी के साथ जुड़ती हुई युवा वर्ग के लिए समाज में एक सम्मानित जीवन व्यतीत करने के अतिरिक्त परिवार-प्रदेश एवं राष्ट्र तक को समृद्ध बनाने तक की महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती दिखाई दे रही है। आज जहां शिक्षा के ढांचे को समग्र व समुन्नत बनाने हेतु विभिन्न विद्यालयों से लेकर विश्वविद्यालयों तक की स्थापना के साथ-साथ व्यावसायिक प्रशिक्षण प्रदान करने वाले संस्थानों की संरचना में एक लोक कल्याणकारी सरकार अपनी भूमिका निभा रही है, वहां निजी क्षेत्र में भी कई ऐसे चेहरे हैं जो विभिन्न समूहों के संस्थान चलाकर शिक्षा व व्यवसाय आधारित नई पौध को तैयार करने में योगदान देते हुए स्वयं भी समृद्ध बन रहे हैं और युवा पीढ़ी को भी शिक्षित-प्रशिक्षित करके रोज़गार के द्वार तक पहुंचाकर राष्ट्र की समृद्धि में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं।

शैक्षणिक ज्ञान और विज्ञान चाहे वह किसी भी क्षेत्र में जाने के लिए अर्जित करना हो, उस सबकी नींव और मूल-आधार विद्यालयी शिक्षा के सोपान में नवीं अथवा दसवीं कक्षा का ही होता हैं। किसी भी छात्र अथवा छात्रा के जीवन में पंद्रह-सोलह वर्ष की अवस्था एक ऐसी अवस्था होती है जिसमें किसी का भी महान बनना अथवा बिगड़ना पूर्णरूपेण आधारित होता है। यही वह समय होता है जिसपर उसके भविष्य के सारे सुनहले सपने रूप-आकार प्राप्त करना शुरू करते हैं। यही समय विद्यालय जाने वाले विद्यार्थियों के साथ-साथ उनके अभिभावकों के लिए भी एक बहुत बड़ी चुनौती का समय होता है। इस समय बच्चे के बौद्धिक विकास और उसकी रुचि-अभिरुचि को पहचानना बहुत आवश्यक होता है। दसवीं कक्षा उत्तीर्ण करने के उपरांत कई स्थानों पर मां-बाप हद-से-अधिक अपेक्षाएं अपने बच्चों से रखते हैं कि वह सारी अपेक्षाएं न केवल भविष्य में घातक व पछतावे वाली ही सिद्ध होती हैं अपितु कई बार ऐसे विषयों अथवा क्षेत्र को चुन लेते हैं जिसकी कठिन डगर पर चलना बाद में उनके लिए मुसीबत बन जाता है। जिस क्षेत्र को वह 'खाला जी का घर' समझ कर प्रवेश करना चाहते हैं, समय आने पर उस घर के आंगन में ही अथवा दहलीज के बाहर ही धड़ाम से गिर जाते हैं। ऐसी स्थिति में न वहां से वापस मुड़ना ही संभव हो पाता है और न ही वह किसी दूसरे रास्ते पर ही चलने योग्य रह पाते हैं।

दसवीं उत्तीर्ण करने के उपरांत जमा दो तक की शिक्षा क्योंकि वर्तमान में किसी भी क्षेत्र में जाने के लिए अनिवार्य बन गई है, इसलिए इसमें प्रवेश के लिए विषयों का चयन अथवा कला (मानविकी)-विज्ञान, वाणिज्य-व्यावसायिक संकाय के समूह का चयन बहुत महत्त्वपूर्ण हो जाता है। मौजूदा शिक्षा व्यवस्था में जमा दो स्कूलों में शैक्षणिक विषयों के साथ-साथ नवीं कक्षा से ही कुछ व्यावसायिक विषयों को भी विद्यालयी-स्तर पर कुछ विद्यालयों में

प्रारंभ किया गया है जो कि न केवल सरकार की सकारात्मक सोच का परिचायक ही है अपितु विद्यार्थियों के उज्ज्वल भविष्य की नींव का आधार-पत्थर भी माना जा सकता है। विगत कुछ वर्षों से मां-बाप की बच्चों के प्रति इच्छाएं और अपेक्षाएं इतनी अधिक बढ़ गई हैं कि वह अपने लाडलों को डॉक्टर या इंजीनियर से कम बनाना ही नहीं चाहते हैं। स्वप्न अथवा ख्वाब देखना बुरी बात नहीं है, मन स्वप्निल होना भी चाहिए परंतु उन स्वप्नों को पूरा करने के लिए संस्कार, सुविधाएं, बौद्धिक विकास और सबसे अधिक ज्ञान अर्जित करने की दृढ़ इच्छाशक्ति का होना भी अनिवार्य होता है। आज के जमाने में काम कोई भी छोटा या बड़ा नहीं है और प्रत्येक क्षेत्र में रोजगार के अवसरों में भी कमी नहीं है। सरकारी, अर्द्धसरकारी, गैर-सरकारी और व्यावसायिक प्रतिष्ठानों में राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय स्तर तक रोज़गार के अवसर कोई कम नहीं है परंतु उन अवसरों को प्राप्त करने में प्रतियोगिता हद से भी बहुत अधिक है। अब 'एक अनार सौ बीमार' की बात तो क्या 'एक अनार हजार बीमार' वाली स्थिति सामने आ चुकी है।

आजकल कुछ एक स्थितियों में विद्यालयी-स्तर की शिक्षा के संकायों में विज्ञान को, वाणिज्य को, व्यावसायिक शिक्षा को और फिर मानविकी समूह को उज्ज्वल भविष्य एवं सर्वोच्चता के क्रम में रखने की परंपरा-सी बन गई है। विज्ञान संकाय के विषयों को बहुत अधिक कठिन एवं उनकी पुस्तकों को मोटे भारी-भरकम आकार में होने के कारण सबके दिमाग में न घुसने वाले विषयों के रूप में सिद्ध करने का प्रयास किया जाता है। यहां तक कि मोटी पुस्तकों का हौवा खड़ा करके कई विद्यार्थियों को विज्ञान के विषय पढ़ने से भी वंचित रखने का प्रयास किया जाता है। जमीनी सच्चाई जबकि यह है कि कोई भी विषय कमतर या अधिकतम नहीं होता है, कोई भी विषय आसान या कठिन नहीं होता है। बात होती है तो केवल रुचि की और इच्छाशक्ति की। जब भी कोई विद्यार्थी पूरे मनोयोग अथवा मनोबल से किसी भी विषय का चयन अपनी इच्छा व रुचि से करता है तो उसके लिए कुछ भी कठिन अथवा असंभव नहीं रह जाता है और न ही उससे उसकी मंजिल दूर हो पाती है। जहां तक कार्यक्षेत्र अथवा व्यवसायों की बात है तो कोई भी कार्य-व्यवसाय छोटा या घटिया अथवा बड़ा या महान नहीं होता है, मन की भावनाएं छोटी या बड़ी होती हैं। मजबूरी में अथवा रुचि न होने पर किसी को किसी अरुचिकर कार्य में यदि धकेला भी जाता है तो न तो वह कार्य के साथ ही न्याय कर पाता है और न ही देश-प्रदेश की उन्नति में ही सार्थक सहयोग कर पाता है। किसी भी कार्य-व्यवसाय-नौकरी में भौतिकवादी इच्छापूर्ति के साथ-साथ कर्तव्य-कर्म के प्रति निष्ठा एवं एकाग्रता होना भी अनिवार्य होता है।

जमीनी सच्चाई जब कि यह है कि कोई भी विषय कमतर या अधिकतम नहीं होता है , कोई भी विषय आसान या कठिन नहीं होता है। बात होती है तो केवल रुचि की और इच्छाशक्ति की। जब भी कोई विद्यार्थी पूरे मनोयोग अथवा मनोबल से किसी भी विषय का चयन अपनी इच्छा व रुचि से करता है तो उसके लिए कुछ भी कठिन अथवा असंभव नहीं रह जाता है और न ही उससे उसकी मंजिल ही दूर हो पाती है।

किसी भी विद्यार्थी को अब संकाय अथवा विषयों का चयन आंख मूंद कर अथवा भेड़-चाल की तरह कदापि नहीं करना चाहिए। नवीं-दसवीं के उपरांत जमा एक में प्रवेश पाते समय विषय अथवा संकाय का चयन बहुत सोच-विचार कर करना चाहिए। अंकों के आधार पर तथा बच्चे की रुचि का आंकन एवं सम्मान करते हुए ही माता-पिता को ऐसे विषयों का चयन करना चाहिए जिनके द्वारा वह जमा दो के उपरांत ही अपने भविष्य अथवा रोज़गार की तलाश को पूरा कर सके। यदि उच्चतम शिक्षा ग्रहण करनी है तो उसी के अनुरूप आधार बनाकर आगे बढ़ना चाहिए और उसमें जी-तोड़ मेहनत के साथ मैरिट में स्थान निश्चित करने की दृढ़ इच्छाशक्ति के साथ पांच-दस वर्ष उच्च शिक्षा प्राप्ति में लगाना कदापि अनुचित नहीं है अपितु एक सार्थक प्रयास ही कहा जा सकता हैं। इसके विपरीत यदि कोई द्वितीय अथवा तृतीय श्रेणी में उत्तीर्ण होता रहे और फिर किसी भी प्रतियोगी परीक्षा में पास न होकर धक्के खाता रहे तो इससे तो बेहतर है कि जमा दो के बाद ही किसी व्यावसायिक संस्थान में रुचि के अनुरूप किसी व्यवसाय में एक-दो अथवा तीन वर्ष का प्रशिक्षण अथवा अनुभव प्राप्त कर रोज़गार तलाश कर ले तो उसका भविष्य दो चार वर्ष में ही कम खर्चे पर संवर सकता है।

वर्तमान युग क्योंकि प्रतियोगिता का युग है और प्रत्येक युवा को अपनी योग्यता सिद्ध करने के लिए कड़ी प्रतियोगिता के कठिन पड़ावों को पार करना अनिवार्य होता है। अब प्रत्येक व्यवसाय अथवा प्रशिक्षण में प्रवेश करने अथवा रोजगार प्राप्ति के लिए प्रतियोगी-परीक्षा का पास करना और वह भी अधिक-से-अधिकतम अंकों की प्राप्ति के साथ, इसलिए किसी भी प्रतियोगी के व्यक्तित्व में बहुआयामीय गुणों के साथ-साथ कम-से-कम चार क्षेत्रों में भरपूर ज्ञान का होना अति आवश्यक है। सर्वप्रथम दो भाषाओं- हिंदी एवं अंग्रेजी का ज्ञान, उसके व्याकरण एवं वर्तनी के साथ होना अनिवार्य है। द्वितीय प्रदेश, राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तर का सामान्य ज्ञान भी प्रतियोगी के पास होना चाहिए और तृतीय अपने अध्ययन क्षेत्र के दो विषयों में पूरी महारत हासिल होनी चाहिए। इसी के साथ-साथ चतुर्थ रूप में अपनी बोली, परिवेश, रीतिरिवाज और परंपराओं के संबंध में पूरी जानकारी रखना भी आवश्यक होता है। इन समस्त गुणों अथवा योग्यताओं

के साथ-साथ यदि कोई प्रतियोगी अपने मन में दृढ़ इच्छाशक्ति एवं प्रतिस्पर्धा की भावना को लेकर चलता है तो वह न केवल किसी भी प्रकार की प्रतियोगी परीक्षा में मनवांछित सफलता के चरमशिखर को ही छूता है अपितु मनचाही मंजिल व उद्देश्य को भी प्राप्त कर सकता है।

आज भले ही सरकारी क्षेत्र में नौकरी पाने के बाद प्रत्येक युवा जहां अपने भविष्य को पूर्णरूप से सुरक्षित समझने लगता है वहां एक अति चिंतनीय बात जिसका बहुत ज्यादा प्रभाव अकसर देखने को मिलता है, वह है निरंतर घटती कार्य-संस्कृति की भावना। कोई समय था जब कोई व्यक्ति अपने पद, पदवी या कुर्सी की बात बताता हुआ, किसी भी जान-पहचान या अजनबी को भी, बातचीत होने पर यह कहता हुआ प्रसन्नता या तसल्ली अनुभव करता था कि कभी भी कोई भी मेरे योग्य सेवा हो तो अवश्य मौका दीजिएगा! खेद की बात है कि अब ऐसी भावनाओं में निरंतर कमी आती जा रही है और टालमटोल-टरकाऊपन अथवा अपने कर्तव्य से पीछे हटने का ही प्रयास अधिकतर किया जाता है। एक समय पर सदा के लिए समाप्त होने वाली समस्या के समाधान कम ही बतलाए जाते हैं। दूसरी ओर अब धीरे-धीरे सरकारी सुविधाओं और पक्की नौकरी देने पर भी कंजूसी करते हुए नए-नए कायदे-कानूनों और उपायों के द्वारा निरंतर कैंची चलाई जा रही है। यही कारण है कि अब युवाओं में सरकारी क्षेत्र की अपेक्षा निजी क्षेत्र की ओर रुझान भी बढ़ रहा है और गैर सरकारी या सीमित क्षेत्रों में ही लोगों को रोज़गार के अवसर तलाशने पड़ रहे हैं। निजी क्षेत्र में भी क्योंकि प्रतियोगिता बहुत अधिक है और दूसरों के साथ प्रतिस्पर्धा भी है इसलिए वहां कार्य एवं योग्यता की कदर भी होती है और कार्य संस्कृति को बढ़ाने के साथ-साथ प्रोत्साहन भी बहुत अधिक दिया जाता है। योग्य कर्मचारियों को जहां समय-समय पर सुविधाएं, बोनस तथा मान-सम्मान दिया जाता है वहां प्रबंधन-निरीक्षण की व्यवस्थाएं भी उच्च पदाधिकारियों द्वारा की जाती हैं।

आज देश-प्रदेश के उज्ज्वल भविष्य और राष्ट्र की उन्नति व विकास के लिए यह आवश्यक है कि देश की युवा पीढ़ी को योग्य, संस्कारी, नशामुक्त तथा कुंठाओं से पूर्णतया विहीन बनाया जाए। किसी भी युवा में जहां संस्कार बचपन से या जन्म से मां-बाप द्वारा भरे-संजोए जाते हैं, वहां उन्हें सुशिक्षित, सुयोग्य एवं आदर्श नागरिक बनाने का उत्तरदायित्व अध्यापक समाज पर होता है। किसी भी छात्र के लिए पंद्रह से बीस वर्ष तक का समय उसके बनने या बिगड़ने का समय होता है और इसी समय में सुधारवादी प्रक्रिया के लिए अध्यापक समाज के दक्ष हाथ ही एक जिम्मेदार की भूमिका निभा सकते हैं। बच्चे हमेशा कच्ची एवं गीली मिट्टी की तरह होते हैं और उनके लिए कोई सुधारवादी ढांचा किसी-न-किसी अध्यापक के द्वारा ही बनाया जाता है। उसी सुधारवादी ढांचे में किसी कुशल कारीगर-अध्यापक के हाथ ही छात्र-छात्राओं को तराश कर सुयोग्य बनाते हैं। आज सभी क्षेत्रों में नए-नए शोधा, तरीके, अन्वेषण, प्रयोग, सुझाव एवं सुधार कई कुछ हो रहा है और यह सब कुछ पठन-पाठन की प्रक्रिया में भी अवश्य होना चाहिए। आज विज्ञान और वैज्ञानिक उन्नति (मेरा विज्ञान से अभिप्रायः साईंस से नहीं अपितु किसी भी क्षेत्र के विशेष ज्ञान से है) सर्वोच्चता के चरम शिखर को छू रही है। अध्यापक को भी अपने अध्यापन के क्षेत्र में नए-नए शोध व तकनीक अपनाकर भावों को और अधिक विकसित व विस्तृत बनाते हुए केवल छात्र-छात्राओं को पढ़ाना ही नहीं चाहिए अपितु स्वयं भी पढ़ना चाहिए। अपने पाठ्यक्रम के संदर्भों को नए-नए आयामों और जीवन मूल्यों से जोड़ते हुए अतीत की बातों व घटनाओं को नवीनता और आधुनिकता के साथ जोड़कर नई-नई व्याख्याएं और संभावनाएं तलाशते हुए बच्चों के 'विशेष ज्ञान' में वृद्धि करनी चाहिए। यदि किसी के आविष्कार, किसी के द्वारा कही गई बात या कथन अथवा किसी ऐतिहासिक घटना को केवल उसी समय की परिधि में ही बांधकर पढ़ाया जाएगा तब तो वह बात या घटना केवल उसी काल या व्यक्ति की ही होकर रह जाएगी। वास्तविकता तो यह है कि अतीत की कोई भी घटना या सद्विचार युगों-युगों तक काल सापेक्ष बनती हुई वर्तमान में भी प्रासंगिक बनकर लोगों को प्रेरणा अथवा सीख देती रहे। अध्यापक का कर्तव्य केवल शिष्य-वर्ग को तत्कालीन परिस्थितियों से अवगत करवाना ही नहीं होता है अपितु उन परिस्थितियों का वर्तमान एवं भविष्य में क्या-क्या प्रभाव परिलक्षित हो सकता है, उन सबके विषय में सभी लाभ-हानियों सहित अवगत करवाना चाहिए। इसलिए अध्यापक को अपना अध्ययन क्षेत्र विस्तृत व विशाल बनाकर नए-नए तथ्यान्वेषणों से अपने शिष्यों को अवगत करवाने का प्रयास करना चाहिए।

एक अंतिम संदेश उन विद्यार्थियों के नाम जो अभी तक मिडल, मैट्रिक अथवा जमा दो कक्षाओं में अध्ययनरत हैं। उनसे आग्रह है कि वह किसी भी विषय को छोटा अथवा बड़ा या सुगम अथवा कठिन न मानें। अध्ययन में रुचि एवं जिज्ञासा को बढ़ाते हुए पूरे मनोयोग से पाठ्यक्रम को पढ़ने तथा समझने का प्रयास करें और जितना समय एक विषय को विद्यालय में पढ़ने के लिए देते हैं, कम-से-कम उतना समय घर पर भी उस विषय के काम अथवा मनन-चिंतन व स्मरण के लिए अवश्य दें। कोई भी मां-बाप घर पर किसी भी बच्चे को घरेलू काम के लिए कभी भी पढ़ते हुए से उठाकर दूसरे काम में नहीं लगाते हैं। यदि कोई बच्चा घर पर पढ़ने या याद करने के लिए नहीं बैठता है तो वह केवल अपनी मनमर्जी से या मौजमस्ती मारने की इच्छा से ही। इसलिए भविष्य को संवारने के लिए विद्यालय की पढ़ाई के साथ-साथ घर पर भी उससे अधिक मनन-चिंतन एवं अध्ययन होना चाहिए। दूसरी

महत्त्वपूर्ण बात कक्षा में कभी भी डरू अथवा डरपोक नहीं बनना चाहिए। हमेशा ही कुछ नया जानने-सीखने की जिज्ञासा रखकर ही विद्यालय जाना चाहिए। सुबह स्कूल जाते समय अवश्य विचार करें कि मैं घर से किसी भी विषय का कितना काम या अध्ययन करके जा रहा हूं। यदि किसी दिन किसी विशेष या विपरीत परिस्थिति में वह काम नहीं हो पाया है तो अध्यापक के पूछने से पहले ही अपने अध्यापक को अपनी परिस्थिति से अवगत करवा कर क्षमा-याचना करके दूसरे दिन पूरा काम करने का वायदा कर लीजिए। सत्य बतलाने पर डांट-डपट-झिड़की की अपेक्षा क्षमादान अवश्य मिलेगा और प्यार पाकर कार्य करने का उत्साह व लगन भी ज्यादा पैदा होगी। यदि झूठ का सहारा लोगे तो एक झूठ को छिपाने के लिए दस झूठ बोलने पड़ेंगे परंतु फिर भी झूठ, झूठ ही रहेगा, वह अध्यापक द्वारा पकड़ भी लिया जाएगा। यह बात अलग है कि वह आपको बताएं या न बतलाएं। इसी प्रकार शाम को छुट्टी होने पर स्कूल गेट के बाहर से घर तक यह चिंतन अवश्य करें कि आज पूरे दिन में उसने नया और विशेष क्या सीखा, जिसका उसे अभी तक 'विशेष ज्ञान' नहीं था। कहीं ऐसा तो नहीं है कि जैसे कोरे सुबह आए थे, वैसे ही कोरे वापस तो नहीं जा रहे हैं। यदि ऐसा है तो बात ठीक नहीं है और यह समझिए कि आपने अपने जीवन का एक बहुमूल्य दिन बेकार में ही खो दिया है। कक्षा में बैठे हुए भी और अध्यापक के द्वारा यह पूछे जाने पर कि क्या समझ में आ गया- केवल 'हां जी' की रट से अथवा सिर नीचा करके मौन स्वीकृति कभी भी नहीं देनी चाहिए। यदि बात अथवा समस्या वास्तव में ही समझ आ गई है तो प्रसन्नतापूर्वक स्वीकार कीजिए और फिर अध्यापक या किसी दूसरे के द्वारा पूछने पर उसका उत्तर निस्संकोच भाव से अवश्य दीजिए। यदि बात समझ में नहीं आई तो एक बार नहीं, बार-बार पूछिए, कक्षा में पूछिए और यदि पीरियड का समय हो गया है तो खाली समय में अध्यापक के पास जाकर अपनी समस्या का समाधान अवश्य करवाइए। किसी के द्वारा बताई हुई बात याद रहे न रहे परंतु अपने द्वारा पूछी हुई बात का जो उत्तर मिलता है वह पूरी आयुभर स्मरण रहता है- यह निश्चित है। इसलिए प्रश्न पूछने की आदत और उत्तर जानने की जिज्ञासा हमेशा मन में बनाए रखनी चाहिए। किसी भी तथ्य या प्रश्न का पीछा तब तक मत छोड़िए जब तक उसके संबंध में पूरी जानकारी, सही समझ एवं सही अर्थ का पता नहीं चल जाता है।

प्रतियोगिता के इस युग में विद्यार्थियों के लिए शिक्षा एवं संस्कारों का महत्त्व बहुत अधिक है। विद्यार्थी को चाहिए कि जीवन मूल्यों को पहचानते हुए उन पर शुद्ध एवं सात्त्विक रूप से आचरण कर आगे बढ़ने का प्रयास करे। 'आज नहीं कल देखा जाएगा' को अपना कर आलस्य की भावना का परित्याग करके शुरुआत का प्रयास तत्काल ही कर देना चाहिए। वर्तमान में मोबाइल एवं कंप्यूटर की संस्कृति ने युवा वर्ग को सबसे अधिक प्रभावित किया है। इसका ज्ञान और चालन आज जहां सभी के लिए आवश्यक एवं अनिवार्य बनता जा रहा है, वहां सूचना प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में इंटरनेट के साथ इनका प्रयोग अंतर्राष्ट्रीय आवश्यकता भी बन गई है। इनका प्रयोग एवं सदुपयोग जहां बहुत अधिक लाभदायक है वहां इनका दुरुपयोग किसी सीमा तक घातक भी कहा जा सकता है। सूचना प्रौद्योगिकी की इस क्रांति ने आज के विद्यार्थी वर्ग को भी बहुत प्रभावित किया है। आज विद्यार्थियों का अंगूठा मोबाइल अथवा कंप्यूटर पर इतना तेज चलता है कि कहना ही क्या? सारा डाटा एवं फाइलें उसे अवश्य याद रहती है परंतु पाठ्यक्रम के पाठ स्मरण नहीं रहते हैं। बात तो सारी मन की व पसंद की होती है। दिनभर मोबाइल से चिपक कर बातें भी की जा सकती हैं, मैसेज भी टाइप किए जा सकते हैं परंतु एक प्रार्थना पत्र लिखना अथवा आवेदन पत्र भरना पड़े तो वह दूसरों का सहारा तलाशते हैं। इसी प्रकार परीक्षाओं में नकल की दुष्प्रवृत्ति भी विद्यार्थियों के लिए घातक है। नकल करके पास होना अथवा नकल करवाना, दोनों ही किसी-न-किसी के भविष्य के साथ खिलवाड़ है। इसलिए आज के विद्यार्थी को नैतिक मूल्यों एवं संस्कारों के अंतर्गत प्रत्येक क्षेत्र का 'विशेष ज्ञान' अर्जित करने के लिए अपने बाल्यकाल अथवा युवापन में प्रवेश करते ही लक्ष्य अथवा उद्देश्य का निर्धारण करके उसी के अनुरूप विषय अथवा संकाय का चयन करके तन-मन से उसी में जुट जाना चाहिए। पांच-दस-पंद्रह-बीस वर्षों का यह मनोयोग- मनोबल-कठिन परिश्रम-ईमानदारी-कर्तव्यनिष्ठा एवं जिज्ञासा- प्रतिस्पर्धा की भावना आपको पूरी आयु भर सुख, समृद्धि एवं सम्मान अवश्य प्रदान करेगी और आप एक आदर्श नागरिक बनकर जीवन यापन करने में भी सफल हो पाएंगे।

विद्यार्थी को नैतिक मूल्यों एवं संस्कारों के अंतर्गत प्रत्येक क्षेत्र का 'विशेष ज्ञान' अर्जित करने के लिए अपने बाल्यकाल अथवा युवापन में प्रवेश करते ही लक्ष्य अथवा उद्देश्य का निर्धारण करके उसी के अनुरूप विषय अथवा संकाय का चयन करके तन-मन से उसी में जुट जाना चाहिए। पांच-दस-पंद्रह-बीस वर्षों का यह मनोयोग-मनोबल-कठिन परिश्रम-ईमानदारी-कर्तव्यनिष्ठा एवं जिज्ञासा-प्रतिस्पर्धा की भावना आपको पूरी आयु भर सुख, समृद्धि एवं सम्मान अवश्य प्रदान करेगी।

मस्त कुटीर, नेरटी (रैत), जिला कांगड़ा,
हिमाचल प्रदेश-176 208, मो. 0 94180 58914

आलेख

लोक संस्कृति में बालोपयोगी साहित्य

● विनोद भारद्वाज

हिमाचल की धरा से प्रस्फुटित लोक साहित्य में प्रकृति, जनजीवन, पहाड़ की व्यापकता, सुंदरता व मन के भावों की स्पष्ट झलक देखी जा सकती है। यहां की सुंदर वादियों, एकांत वातावरण ने मानव मन को शब्द साधना से जोड़कर साहित्य सृजन की अविरल धारा को प्रवाहमान बनाए रखा है। कंठ व कलम से निकला संगीत व साहित्य स्वच्छंद विचारों का वह रूप है, जिसे यहां के निवासियों ने अपनी समृद्ध संस्कृति का हिस्सा बना/संजोकर रखा है। पीढ़ी-दर-पीढ़ी यहां गांव-गांव में आयोजित होने वाले धार्मिक उत्सवों, मेलों व सांस्कृतिक आयोजनों में इसके साक्षात दर्शन होते हैं।

हिमाचल की पुरातन संस्कृति के अवलोकन से स्पष्ट है कि यहां का जनजीवन सुदूर पहाड़ों पर बसे छोटे-छोटे गांवों, सीढ़ीनुमा खेतों, खलियानों, बावड़ियों, जंगलों, पशु-पक्षियों, देवालयों, उत्सवों व मेलों के इर्दगिर्द घूमता नज़र आता है। ऐसे सुरम्य स्थानों पर प्रकृति के मध्य मानव को थोड़ी मेहनत के साथ जीवन यापन संभव था। नमक के लिए ही पहाड़ों तथा घाटियों को लांघना पड़ता था। संतोषी जीवन जीने वाले निवासियों का जीवन लकड़ी के बने घरों के आंगन, खेतों में गंगी के स्वरों, दूर पहाड़ों पर भेड़-बकरियों व पशुओं को चराते वक्त स्वर लहरियों के बीच व सांझ-सवेरे परिवार जनों के साथ रसोई में चूल्हे के समक्ष व्यतीत होता था। ऊंचे पहाड़ों में सर्द ऋतु में बर्फबारी के दिनों में आग का सान्निध्य ही जीवन का सहारा होती थी तथा उसी के समीप परिवार अपने विचारों, संस्कृति, जीवन की व्याख्या कर नई सुबह का इंतजार करता था। मां, दादा-दादी, नाना-नानी व परिवार के ठगड़े-बुजुर्ग ही अपनी जुबां से जीवन का यथार्थ सुनाते थे। यही कंठस्थ मौखिक साहित्य का रूप माना जाता था। ये सिलसिला सदियों से अनवरत पहाड़ी नदी के बहाव व शीतल जल के माफिक बहता आ रहा है। लेकिन गांव की स्थितियों में बदलाव की बयार, शिक्षा के प्रचार-प्रसार व अन्य आधुनिक कारकों से इसमें अब बदलाव देखने को मिल रहा है। ग्रामीण परिवेश में घराट लोगों के वैचारिक आदान-प्रदान के केंद्र होने के कारण मौखिक लोक साहित्य के प्रसार का जरिया रहे हैं। आज यह संस्कृति लगभग लुप्तप्राय है।

यह सत्य है कि आज की पीढ़ी को सयाणों (बुजुर्गों) की बात (गल) भी अच्छी नहीं लगती। बुजुर्गों के सान्निध्य में बैठना भी उन्हें अच्छा नहीं लगता। गांवों से शहरों में बच्चों को श्रेष्ठ शिक्षा प्रदान करने के प्रचलन ने इस स्थिति को और भी विकट बना दिया है। बच्चे शहरों की चकाचौंध से अधिक प्रभावित हुए हैं। अपनी भाषा, बोली में बात करने से भी कतराते हैं।

वर्तमान स्थिति यह है कि गांव बुजुर्गों के हवाले रह गए हैं। चाहे प्रदेश का कोई भी जिला हो, नौकरी, व्यवसाय पढ़ाई के लिए पलायनवादी प्रवृत्ति देखने को मिल रही है। छोटे कस्बों तथा बड़े शहरों का बढ़ता स्वरूप इसका उदाहरण है।

हिमप्रस्थ अगस्त 1972 के अंक में हिंदी में बाल साहित्य लेख में मंडी के सुप्रसिद्ध लेखक व साहित्यकार श्री सुंदर लोहिया के शब्दों में, "उस काल में भी हिंदी बाल साहित्य अभी भी अविकसित अवस्था में है। हिंदी के मूर्धन्य साहित्यकार इस क्षेत्र में न जाने क्यों योगदान देने में कतराते हैं। बाल साहित्य के प्रति हमारे प्रतिष्ठित साहित्यकारों की उपेक्षा, इस तथ्य का स्पष्ट परिणाम है कि ये लोग आने वाली पीढ़ियों के लिए उदासीन हैं।"

इसी लेख में वह लिखते हैं कि हालांकि इस काल में हिमाचली लेखकों ने बालोपयोगी साहित्य का सृजन किया। डॉ. मस्तराम कपूर 'उर्मिल' का उपन्यास 'नीरू और हीरू' कांगड़ा के लोक जीवन पर आधृत है। इसमें एक गूंगे ग्वाले तथा एक बैल की कहानी वर्णित है।

इसी क्रम में डॉ. सुशील कुमार 'फुल्ल' का बाल उपन्यास 'टकराती लहरें' भी प्रकाशित हुआ। यह उपन्यास 1965 के भारत-पाक संघर्ष की पृष्ठभूमि पर लिखा गया है। उसमें भी एक बालक जिसके पिता युद्ध में शहीद हुए थे, की साहस भरी कहानी है। किशोरी लाल वैद्य की 'हिमाचल की लोक कथाएं' भी प्रकाशित हुई। उन्होंने मंडी जिले में प्रचलित बाल लोककथाओं को चुनकर इस पुस्तक का प्रकाशन करवाया। इसमें प्राथमिक कक्षाओं में अध्ययनरत शिक्षार्थियों व बालकों के मानसिक विकास के लिए उपयोगी लोक लोककथाएं हैं।

जम्मू-कश्मीर अकादमी ऑफ आर्ट, कल्चर ऐंड लैंग्वेजिज़

द्वारा प्रकाशित शीराजा के जुलाई, 2012 में गुरु रवींद्र नाथ टैगोर विशेषांक में 'रवींद्रनाथ टैगोर का बाल साहित्य लेख' में डॉ. ज्ञान सिंह ने स्पष्ट लिखा है कि टैगोर ने बाल साहित्य की रचना करके कोमल पौध को ऋषियों की तरह वेदांती बनाने की कोशिश की। उनकी पहली कविता 'विष्टि पड़े टापुर-टुपुर' में 'जीवन का रस' तथा नाटक 'मुद्रा' में बच्चों के कोमल मन में दया, परोपकार, ईश्वरभक्ति, गुरु निष्ठा और लोक सेवा वगैरह के आदर्श स्थापित करने का प्रयास किया है।

हिमाचली हिंदी साहित्य के इतिहास काल विभाजन का उल्लेख डॉ. सुशील कुमार फुल्ल एवं आशु फुल्ल ने हिमाचल की हिंदी कविता (आलोचनात्मक इतिहास-विकास) में किया है। हिमाचल की साहित्यिक परंपरा कोई सवा तीन सौ वर्ष पुरानी है। सामाजिक-आर्थिक तथा राजनैतिक परिस्थितियों ने भी अनुकूल साहित्य सृजन को प्रभावित किया है।

इस पुस्तक के अनुसार हिमाचल का साहित्यकाल आदिकाल या दरबारी काल 1675 ई. से 1900 ई. तक, मध्य काल या पूर्व स्वतंत्रता काल 1900 से 1947 तक आधुनिक काल या स्वतंत्र्योत्तर काल 1947 से आरंभ हुआ। इन कालों में बाल साहित्य का अधिक उल्लेख नहीं है। सुंदर लोहिया के लेख के अनुसार प्रदेश के नवोदित साहित्यकार ने सत्तर के दशक में एक प्रयास किया था। साहित्य को स्थान देने में वर्ष 1955 से सूचना एवं जन संपर्क की पत्रिका हिमप्रस्थ ने नवोदित लेखकों को यथासंभव स्थान दिया। 1978 से गिरिराज साप्ताहिक ने भी इस परंपरा को निभाया है। भाषा कला एवं संस्कृति तथा अकादमी के प्रकाशनों में हिंदी तथा पहाड़ी लेखों में इसे बढ़ावा मिला लेकिन सभी प्रकाशनों में लेखक एक ही रहे। वे कुछ तो शहरी जीवन में रहकर गांव की संस्कृति को देखते रहे।

नव लेखकों को सूचना प्रौद्योगिकी की नई विधाओं को अपनाकर अपनी संस्कृति को नया स्वरूप देने की जरूरत है। कलम के माध्यम से उद्धृत होने वाले शब्दों को पिरोकर हम अपनी भावी पीढ़ियों के लिए विचारों का सुंदर गुलदस्ता दे सकते हैं।

बदलाव प्रकृति का नियम है। इस बदलाव ने मानव को स्थितियों से नई सोच, नई विचारधारा दी है। भौगोलिक परिस्थितियों, सामाजिक सरोकारों का प्रभाव भी साहित्य सृजन में देखने को मिलता है। बदलते परिप्रेक्ष्य में साहित्य सृजन में भी बदलाव आया है। प्रकाशित साहित्य के साथ-साथ इंटरनेट पर वट्सऐप, ट्वीटर, ब्लॉग पर भी विचारों को साझा किया जा रहा है। इससे पाठकों में इजाफा हुआ नज़र आता है। इससे युवा मन पर क्या प्रभाव पड़ रहा है, इसका अध्ययन होना आवश्यक है।

ब्रिटेन के दुरहम विश्वविद्यालय के मानव विज्ञानी डॉ. जेमी तेहरानी और पुर्तगाल के लिस्बन विश्वविद्यालय के लोक गायक सारा ग्रासा डॉ. सिल्वा ने एक अध्ययन में पाया है कि लोक कथाएं एक से दूसरे देश में यात्राएं करती रही हैं।

'रॉयल सोसायटी ओपन साईंस' में प्रकाशित लेख में डॉ. तेहरानी ने अध्ययन के दौरान लोक कथाओं की जड़ें खोजने के लिए भारतीय-यूरोपीय भाषाओं के वंश-वृक्ष का उपयोग किया। इन पुरातन भाषाओं में लोक कथाओं की जड़ें मिलती हैं। भारत सहित सभी देशों में लोक कथाओं के अध्ययन उपरांत बच्चों की भेड़िये वाली कहानियां मिलती हैं। बहुत थोड़े से हेरफेर के साथ सभी जगह लगभग एक किस्म की कथा मिलती है। इस अध्ययन से मानव जाति के क्रमिक विकास का पता चलता है तथा विकास सभी जगह एक समान ही हुआ है। ये कहानियां समाज को दादी-नानी के मुख से सुनाई गई हैं। इनमें से कुछ कहानियां तो छह हजार साल पुरानी भी हैं। मानव के विकास के क्रम में गांव, खेत, खलिहान, वन, पेड़, पक्षी, वातावरण लाखों सालों से रहे हैं। हिमालय की धरा पर भी यहां के बाशिंदों ने इसे केंद्र में रखा है।

गांव की पगडंडियां अब सूनी हो रही हैं। लेकिन आदमी ने अपने गंतव्य तक पहुंचने के लिए नई राह को चुना है। इस नई राह पर चलते हुए उसने साहित्य सृजन की नई राह को लगभग अपना लिया है। बर्फ से ढकी चोटियां, निर्मल जल से लबालब नदियां, हरे भरे वन, लहलहाते खेत, फलों से लदे बाग, गांव-गांव तक सड़क, स्कूलों की ओर दौड़ते बच्चे अभी भी सृजनशीलता के लिए मानव को आमंत्रित कर रही हैं। मानव की आंखें-मन वही हैं, लेकिन उसका देखने तथा सोचने का नजरिया बदल गया है। भौतिकवादी प्रवृत्ति उसपर हावी हो गई लगती है। इन सबसे ऊपर उठकर नई सोच तथा नई विचारधारा को जन्म देने की भी जरूरत है। नव लेखकों को सूचना प्रौद्योगिकी की नई विधाओं को अपनाकर अपनी संस्कृति को नया स्वरूप देने की जरूरत है। कलम के माध्यम से उद्धृत होने वाले शब्दों को पिरोकर हम अपनी भावी पीढ़ियों के लिए विचारों का सुंदर गुलदस्ता दे सकते हैं। नए विचारों तथा नई सोच, नई परिस्थितियों तथा युवाओं की जरूरतों को ध्यान में रखकर हमें बाल साहित्य का सृजन करना होगा। अन्यथा अब दादा-दादी की चिरकाल से चली आ रही कहानियों से भावी पीढ़ी की ज्ञान पिपासा को बुझाया नहीं जा सकेगा।

दयाल हाउस, जाखू रोड, संजौली, शिमला, हिमाचल प्रदेश-171006, मो. 94181 58987

संदर्भ

1. हिंदी में बाल साहित्य, सुंदर लोहिया, हिमप्रस्थ, अगस्त 1972
2. हिमाचल की हिंदी कविता (आलेचनात्मक इतिहास- विकास, डॉ. सुशील कुमार फुल्ल एवं आशु फुल्ल
3. हजारों साल पुरानी दादी-नानी की कहानियां-एक अध्ययन, दैनिक जागरण।

बाल साहित्य में कल्पना और यथार्थ

● मनोहर चमोली 'मनु'

हम सभी ने अपने जीवन में सैकड़ों कहानियां पढ़ी-सुनी होंगी। ये वे कहानियां हैं, जो स्कूली किताबों से बाहर पढ़ी और सुनी हैं। जैसे-जैसे हमने पढ़ना-लिखना सीखा, वैसे-वैसे कहानियां पढ़ने-सुनने का सिलसिला बढ़ता गया। दादी-नानी, पत्र-पत्रिकाओं से इतर रेडियो, टीवी और सिनेमा की कहानियां शामिल करें तो यह संख्या हजारों में पहुंच सकती है। मुझे अच्छी तरह से याद है कि बचपन में ही मैंने रेल, समुद्र, गिलहरी, हाथी और जहाज के दर्शन कहानियों यानी कल्पना में कर लिए थे। बस इन्हें अपनी आंखों से देखा नहीं था। जब वास्तविक रूप से अपनी आंखों से देखा तो मैं हैरान था। मुझे आज भी याद है जब मैं पहाड़ से बारहवीं कक्षा पास कर आई.टी.आई. करने मैदानी क्षेत्र में आया था, तब मैंने पहली बार गिलहरी को देखा था। गिलहरी इतनी छोटी होती है! यह मेरे लिए हैरानी की बात थी। मैं अपलक गिलहरी को देखता रहा। बहुत दिनों तक गिलहरी मेरे मन-मस्तिष्क से हटी नहीं। कारण? किस्सों-कहानियों में तो गिलहरी बेहद चतुर और बड़ों-बड़ों को हराने वाली सशक्त पात्र बन कर मेरे मन में अच्छी तरह बस गई थी। लेकिन वास्तव में वह कुछ और ही निकली। हलकी सी आहट पाते ही एकदम से पेड़ पर चढ़ जाती है। असल में वह कौए को भी क्या चकमा देती होगी! लेकिन मेरे सामने तो पूर्व में गिलहरी कहानियों में हीरो की तरह आई थी। मुझे अजीब सा लगा था और मैं मन-ही-मन उन कहानियों के बारे में एक बार नए सिरे से सोचने को बाध्य हो गया था, जिन कहानियों में गिलहरी मुख्य पात्र के तौर पर आई थी।



ऐसा ही कुछ हाथी, रेल और समुद्र को पहली बार देखने पर हुआ था। मैंने कल्पना भी नहीं की थी कि हाथी इतना बड़ा होता होगा कि उसे देखने के लिए सिर उठाना पड़ेगा। जब मैंने पहली बार हाथी देखा तब मैं स्नातक का छात्र था। इसी तरह समुद्र का तट देखना तो मेरे लिए अविस्मरणीय घटना ही थी। समुद्र भी मैंने तब देखा जब मैं स्नातक की पढ़ाई पूरी कर चुका था। समुद्र विहंगम होता है। उसकी लहरों में इतना शोर हो सकता है। जहां तक नजर जाती है, वहां तक पानी ही पानी होता है। यह सोच समुद्र को देखकर दूर तलक गई। जबकि कहानियों में समुद्र इस तरह से कहीं नहीं आया था। इसी तरह से समुद्री यात्रा और हवाई यात्रा भी विचित्र अहसास देती होगी। कहानियों में इनका चित्रण और वास्तविक अहसास में जो अंतर होता है, उसकी तुलना भी विचित्र होती है।

आज मैं अपने बच्चों को हर रोज एक-न-एक कहानी सुनाता हूं। कुछ बेहद काल्पनिक। कुछ बेसिर-पैर की और कुछ अपने अनुभव के आधार पर जी चुके जीवन के आधार पर। कहने का अभिप्राय यह है कि किसी चीज, सामग्री, जीव या और भी जो कुछ हो, उसके बारे में पढ़ना और सुनना अलग बात है तथा उसे अपने हाथों से छूकर देखना या अपनी नंगी आंखों से अपने सामने देखना बिलकुल अलग बात है। उसका आनंद ही कुछ और है। पहली बार देखी गई चीज के बारे में पूर्व में अनुमान और कल्पना करना

बिलकुल ही दूसरी बात है। उसी को दृश्य-श्रव्य माध्यमों से देखकर जानना एक अलग अनुभूति है।

कई बार जब तक हमने कोई जीव या सामग्री देखी नहीं है, उसकी कल्पना कर अनुमान लगाना दूसरा ही मामला हो जाता है। फिर जब भी हम उस जीव या सामग्री को साक्षात् देख लेते हैं, तो अकसर वस्तु-चीज-जीव-सामग्री हमारे अनुमान और कल्पना की पकड़ से बेहद दूर होती है। शायद ही कोई ऐसी चीज होगी, जिसका अनुमान हमने उसे अप्रत्यक्ष रूप में देखकर किया होगा और जब हमने उसे प्रत्यक्ष देखा हो तो वह एकदम सटीक या बेहद करीबी मिली हो। इसका अर्थ यह नहीं है कि अनुमान और कल्पना करना बेकार ही रहा? क्या अनुमान और कल्पना का जीवन में कोई महत्व नहीं है? है। बहुत है। असीमित है। अनुमान और कल्पना के मायने बच्चों के हिसाब से तो और भी दिलचस्प हैं। हम हर आयु के स्तर के बच्चों के लिए अनुमान और कल्पना को बेहद फंतासी जैसा स्थापित करें। यह कहीं-न-कहीं बच्चे की अनुमान शक्ति और कल्पना के साथ खिलवाड़ होगा। माना कि हम राई का बीज की अवधारणा बच्चों के समक्ष रख रहे हैं तो वह हमारी रचना सामग्री में पहाड़ की तरह न आए। हम राई का जो भी रेखाचित्र खींचें, वह ऐसा हो कि कहीं-न-कहीं बच्चे के मन-मस्तिष्क में राई की अवधारणा को पुष्ट करने में मदद मिले। बच्चा अपने स्तर पर राई का एक काल्पनिक खाका या चित्र बना सके। जब बच्चा जीवन में कभी भी राई का बीज पहली बार देखे तो वह इतना आश्चर्य व्यक्त न करे कि यह न कह दे- ''अरे! राई का बीज ऐसा होता है?''

हां। यह अलग बात है कि यथार्थ से परे काल्पनिकता के सहारे हम कोई अवधारणा नहीं बल्कि कोई मूल्य प्रदर्शित करना चाहते हैं। मसलन मुंशी प्रेमचंद की कहानी 'ईदगाह' है। यह कहना ठीक न होगा कि 'ईदगाह' बाल साहित्य में नहीं आ सकती। यह विषय दूसरा हो जाएगा। यहां उस कहानी को कोई भी पढ़ सकता है। बच्चा भी। खैर....हामिद के बारे में सवाल उठ सकता है कि आखिर उस उम्र का बच्चा अपनी दादी के प्रति इतना संवेदनशील हो सकता है? असल जीवन में यह अपवाद ही नहीं असंभव-सा लग सकता है। बाल स्वभाव तो चंचल होता है। जहां अन्य बच्चे मेला से अपने लिए भिन्न-भिन्न खिलौने लाए, वहीं हामिद चिमटा कैसे ले सकता है? बमुश्किल तो मेला देखने के लिए अनुमति मिली। खर्च करने के लिए कम पैसे। उस पर तुर्रा यह कि बच्चा चिमटा उठा लाया। लेकिन यह कहानी बच्चे की दिमागी परिपक्वता से इतर उसमें जगाती संवेदनाओं की कहानी है। मानवीय मूल्यों की ओर इशारा करती हुई कहानी है। और भी बहुत कुछ कहाती-सुनाती-जगाती हुई कहानी है। खैर....अब हम इस कहानी में भी यथार्थ खोजने लगे तो हो गया। इस कहानी में हामिद का दादी के प्रति अगाध प्रेम का प्रदर्शन भी है। कहानी कहीं-न-कहीं यह भी बताने का प्रयास करती है कि हमें अपनी खुशियों के साथ दूसरों के कष्टों की भी चिंता करनी चाहिए। यह भी बड़े कभी-कभी ही नहीं अकसर छोटों की गहरी सोच की थाह नहीं पा पाते।

अनुमान और कल्पना कुछ न करें, लेकिन इतना तो करें कि बच्चे उस चीज, वस्तु या जीव के प्रति सोचें, चिंतन करें। उसे खोजें, तलाशें और जीवन के साथ उसका अंतर्संबंध स्थापित करें। मुझे लगता है कि बाल साहित्य लिखते समय रचनाकार अंतःस्थल में एक औसत खाका तो ध्यान में रखता ही होगा कि आखिर उसकी रचना किस आयु वर्ग के बच्चे के लिए है। यदि वह ऐसा नहीं करता है तो उस रचना के अधिकाधिक पसंद न किए जाने के खतरे बढ़ जाएंगे। हालांकि मोटे तौर पर इस तरह का विभाजन ठीक नहीं माना जाता। लेकिन जब हम कल्पना और यथार्थ को शामिल करने की बात कर रहे हैं, तब यह जरूरी होगा।

अनुमान और कल्पना कुछ न करें, लेकिन इतना तो करें कि बच्चे उस चीज, वस्तु या जीव के प्रति सोचे, चिंतन करे। उसे खोजे, तलाशे और जीवन के साथ उसका अंतर्संबंध स्थापित करें। मुझे लगता है कि बाल साहित्य लिखते समय रचनाकार अंतःस्थल में एक औसत खाका तो ध्यान में रखता ही होगा कि आखिर उसकी रचना किस आयु वर्ग के बच्चे के लिए है।

मैं अपने घर से शुरू करता हूं। मेरा छोटा बेटा अभी ढाई साल का है। वह अपनी उम्र के बच्चों की तरह ही बड़ों की बाते सुनता है। कहता है- ''नानाजी ने गाल में थप्पड़ मारा। एक यहां और एक यहां। गाल लाल-लाल हो गए।'' रात को सोते समय वह ध्वनियों को सुनकर बता देता है कि वह जहाज नहीं मोटर साईकिल है। बड़ा बेटा पांच साल का हो गया है। वह कहानियां गौर से सुनता है। बीच-बीच में अपनी आंखों को आसमान की ओर नचाते हुए मेरी परवाह किए बिना उस कहानी में अपनी कहानी जोड़ने लगता है। कुछ पात्र जोड़ने लगता है। कभी कभी नहीं, अब तो अकसर वह मुझे टोकते हुए कहता है कि नहीं उसने ऐसे बोला होगा। नहीं, वो फिर वहां जाता है। आदि-आदि बातें शामिल करता है। इस वय वर्ग के बच्चे अब अपनी समझ से राय देने लग जाते हैं।

जब मैं एक साथ सब बच्चों को एक साथ बिठाकर कोई कहानी सुनाने लगता हूं तो दस और बारह साल वाले बच्चे कहानी में यथार्थ वाली कहानियों पर अधिक गौर करते हैं। उन्हें फंतासी कहानी अब ज्यादा दिलचस्प नहीं लगती। वहीं सात साल का भतीजा और आठ साल की भतीजी को ऐसी कहानियां सुनने में मजा आता है, वे दोनों जीवन की सच्चाइयों से इतर कल्पना और अति कल्पना से अधिक सराबोर वाली कहानियों को अधिक पसंद

करते हैं। यथार्थपरक कहानियां सुनते हैं लेकिन उनके चेहरे तब सामान्य हो जाते हैं। मानों उन्हें बेस्वाद और भरपेट भोजन कर लेने के बाद फिर से भोजन करने को कहा जा रहा हो। हां। वह अपने जी चुके जीवन में देखी-भोगी गई बातों से हर कहानी को जोड़ना नहीं भूलते। अब यह जरूरी भी नहीं कि इन छह बच्चों के आधार पर हम समेकित बच्चों के स्वभाव का सार निकाल लें। लेकिन मैं तो अकसर कहानी की चर्चा करते समय बच्चों की आयु को देखते हुए इन बातों पर लंबे समय से किसी निष्कर्ष की तलाश में हूं।

कई बार अलग-अलग आयु के बच्चों को एक साथ चार-पांच कहानियां ले जाकर सुनाने-पढ़ाने के अध्ययन ने मुझे चौंकाया है। यदि कहानियों में आयु वर्ग के हिसाब से कथावस्तु नहीं है तो बच्चों के समूह में कई बच्चे बौर होने लगते हैं। वह प्रतिक्रिया करना छोड़ देते हैं। एक के बाद एक कर सारी कहानी नहीं सुनाने से भी वह चाव नहीं आ पाता जो पहली कहानी सुनाते समय सब बच्चों के चेहरे पर था। बच्चे दूसरी कहानी के बाद से ही अपनी एकाग्रता खोने लगते हैं। ऐसा क्यों हुआ होगा? बाल साहित्य की कोई रचना पढ़ने या सुनाने से पहले जब भी हम यह परख लेते हैं, या अंदाजा लगा लेते हैं कि अमुक रचना किस आयु वर्ग के बच्चों के लिए अधिक उचित है तो अमूमन वह अपवादस्वरूप बच्चों में ग्राह्य हो जाती है। यदि कहानी सुनाते समय हम बच्चों की आयु के अनुसार यथार्थ और कल्पना का घोल तय कर कहानी का चयन कर लेते हैं तो कहानी चल पड़ती है। बच्चे एकाग्रता से सुनते भी हैं और उन्हें मजा भी आता है। बहुत छोटे बच्चों को यथार्थपरक कहानियां ज्यादा नहीं भातीं। उन्हें तो चटपटी, मजेदार, गुदगुदाने वाली, कल्पनाओं के पंख लगाने वाली कहानियां ज्यादा भाती हैं। उन्हें अभी जीवन के कड़वे और सच्चे तानों-बानों से बुनी कथावस्तु से क्या लेना-देना?

लेकिन वहीं जो बच्चे बड़े हो रहे हैं। वे जो अब अपने ही जीवन को अपने अनुभव के सांचे में फिट करते हुए एक-एक कदम आगे बढ़ाने लगे हैं, उन्हें अति काल्पनिक, फंतासी से इतर उन यथार्थवादी कहानियों में अधिक मजा आता है, जिनसे वे खुद दो-चार होते हैं। कहानी सुनाने के साथ यदि ऐसा अधिक मजेदार होता है, तो फिर हम यही प्रयोग रचना लिखते समय क्यों नहीं कर सकते? दुनिया की आबादी में बच्चे तीस फीसद से अधिक हैं। यह बच्चे दुनिया का भविष्य हैं। राष्ट्र की प्रगति में बच्चों की भूमिका महत्त्वपूर्ण है। स्वस्थ और समग्र विकसित बच्चा ही तो किसी राष्ट्र के विकास में महत्ती भूमिका निभाता है। विकसित देशों की नीतियों पर नजर डालने से स्पष्ट होता है कि वह देश अन्यों की अपेक्षा इसलिए भी समृद्ध हैं, क्योंकि उन्होंने बच्चों को खुशहाल बचपन दिया। बच्चों के हित में कई योजनाएं संचालित कीं।

आज अभिभावक गर्भस्थ शिशु से लेकर बालिग होने तक अपने बच्चे के प्रति बेहद सजग और संवेदनशील दिखाई देते हैं। आज उनकी शिक्षा, खेल, कॅरियर रहन-सहन और खान-पान तलक के पहलुओं पर बाजार की पैनी नजर है। पिछले दो दशकों में बच्चों के प्रति उदार और दूरदर्शिता से भरे नजरिए में आशातीत वृद्धि हुई है। बच्चों की शिक्षा के साथ-साथ बाल साहित्य पर भी विहंगम चर्चा, बहस और विमर्श तेजी से बढ़े हैं। आज बच्चों में पढ़ने के प्रति रुचि जगाने वाली कई पत्रिकाएं बाजार में हैं। यह और बात है कि बच्चे क्या पढ़ना चाहते हैं? बच्चों को पढ़ने के लिए कैसी सामग्री दी जानी चाहिए? बच्चों को कैसी सामग्री नहीं देनी चाहिए? क्या बाल पत्रिकाएं बच्चों को स्वस्थ साहित्य उपलब्ध करा पा रही हैं? क्या बच्चों की पत्रिकाएं बच्चों के लिए हैं? बाल साहित्य से बच्चों में वैज्ञानिक जागरुकता को कैसे बढ़ाया जा सकता है? इस तरह के कई सवाल हैं, जिन पर समय-समय पर बाल साहित्यकार चर्चा कर रहे हैं।

इन दिनों एक बेहद महत्त्वपूर्ण सवाल विमर्श का विषय बना हुआ है। बाल साहित्य में कितना यथार्थ हो और वह कितना कल्पना से भरा हुआ हो? इसमें कोई दो राय हो नहीं सकती कि अब तक जितना भी बाल साहित्य लिखा गया है, उसमें बहुत सारी रचना सामग्री बाल मनोविज्ञान, बाल स्वभाव और बाल रुचियों की दृष्टि से असरदार नहीं है। नीरस और निष्प्रभावी रचना के कई कारण हो सकते हैं। एक बड़ा कारण तो यह है कि बाल साहित्यकारों में अमूमन अधिकतर ने बच्चे को कच्चा घड़ा, मिट्टी का लोंदा और कोरी स्लेट मान लिया। यह धारणा भी एक कारण है कि बच्चों को कुछ भी परोस दो, वह उसे ग्रहण कर ही लेगा। यह भी कारण संभव है कि रचना का निर्माण करते समय बच्चे की अवस्था का ध्यान ही न रहा हो। यह भी संभव है कि किसी रचना की प्रक्रिया के समय बच्चे की समझ, रुचि और मनोस्थिति का ध्यान न रहा हो। यह भी संभव है कि बाल साहित्यकार ने अपने बचपन को ध्यान में रखते हुए रचना लिखी हो, जबकि जब वह रचना अस्तित्व में आई तब उसके बचपन को बीते चालीस साल और गुजर गए हों। क्या चालीस सालों में बच्चों का बचपन वैसा ही रहा होगा? तब क्या ऐसी रचना सामग्री चालीस साल बाद के बचपन में जी रहे बच्चे को भाएगी?

सामान्यतः दुनिया में बच्चों की आयु वर्ग का कोई सार्वभौमिक खाका नहीं है। कहीं तो बालिग होने तक के सभी बच्चों को बच्चा ही माना जाता है। कहीं किशोर उम्र चौदह से सोलह है तो कहीं तेरह से पंद्रह मानी जाती है तो कहीं कुछ और मानी जाती है। आपराधिक कृत्यों में भी बच्चे की उम्र सीमा में मत-मतांतर हैं। शैक्षिक लिहाज से देखें तो कक्षा पांच तक के बच्चों के लिए अलग स्कूल हैं। कक्षा छह से आठ में पढ़ने वाले बच्चों के लिए अलग स्कूल हैं। नौ और दस में पढ़ने वाले बच्चों के लिए अलग स्कूल हैं। यानी इन आयु वर्ग के बच्चों की हर तरह की जरूरतें अलग-अलग हैं। बहरहाल आम तौर पर हम अपने आस-

पास यह सुनते आए हैं कि बच्चा हर साल अपने रंग बदलता है। जब तक बच्चा चलना-फिरना नहीं सीख लेता, उसकी एक सीमित दुनिया होती है। लेकिन उस सीमित दुनिया में भी उसका अपना अनुभव मायने रखता है। वह खुद देखकर-टटोलकर अपनी समझ बढ़ाता रहता है।

जब हम उस बच्चे की दैनिक क्रियाएं देखते हैं, जो चलने-फिरने लगता है तो उसकी गतिविधियां तेजी से बढ़ने लगती हैं। वह अब संकेतों से आगे अपनी भावनाओं को सार्थक-निरर्थक ध्वनियों के सहारे आकार देने लगता है। वह हर अनोखी और नई चीज को अपने हाथ में लेने को आतुर रहता है। जब हम उन बच्चों की दैनिक क्रियाओं को देखते हैं, जो तीन साल से अधिक के हो गए हैं, तो वह कई काल्पनिक बातों और चीजों को बातचीत में शामिल करने लगते हैं। यह बच्चे अब किस्सा सुनाने लग जाते हैं। कहानी सुनने में इनकी दिलचस्पी बढ़ने लगती है। यह बच्चे तेजी से बातों को ग्रहण करते हैं। अपनी अभिव्यक्ति में बड़ों का अनुसरण करते हैं।



छह साल की उम्र तक आते-आते बच्चा अपने मन की कहने लगता है। अपने मन की करने लगता है। कई बार वह बड़ों की बातों को सुन कर भी अनसुना करने लगता है। मना करने वाली बातों-गतिविधियों को ही करता है। करना चाहता है। लेकिन खुद हुए अनुभव से ही वह किसी दृष्टिकोण को आत्मसात् करने लगता है। सात साल की उम्र तक आते-आते बच्चा कहने लगता है- ''क्या ऐसा होता है? नहीं नहीं। ऐसा थोड़े न होता है।'' इन सब उदाहरणों का जिक्र यहां करने का मकसद मात्र इतना ही है कि उपरोक्त बच्चों की आयु के लिए एक ही रचना कैसे कारगर हो सकती है? पढ़ना सीख गए बच्चों के लिए तो और भी चुनौतियां हैं। अभी-अभी जो बच्चे अक्षर पहचान कर वाक्य मिलाकर पढ़ना सीखें हैं, उनके लिए लिखना तो और भी चुनौती भरा है। अब उपरोक्त आयु वर्ग के बच्चों को ध्यान में रखते हुए विचार करते हुए आसानी से महसूस किया जा सकता है कि सभी बच्चों के लिए एक जैसी कल्पना मुनासिब नहीं होगी। क्या कल्पना और अति कल्पना में अंतर नहीं रखना होगा? वह भी आयु वर्ग के बच्चों के स्तर के आधार पर।

ऐसे आयु वर्ग के बच्चे जो अब जीवन की असलियत को समझना शुरू करने लगते हैं। वे जान चुके होते हैं कि सूरज तो स्थिर है। सूरज न तो डूबता है और न ही उगता है। वे जान चुके होते हैं कि चंदा मामा नहीं है। चांद तो एक ग्रह है। आदि-आदि। अब इस तरह के जानने और मानने वाले बच्चों के लिए भी क्या अलादीन का चिराग चलेगा? नहीं चलेगा। यहां एक सवाल उठ सकता है। फिर तो फिल्में और फिल्मी गीत भी यथार्थपरक होने चाहिए? जवाब कुछ भी हो। फिल्म और गीत कुछ नहीं सीखाते। यह कहना तो गलत होगा। यह कहना भी गलत होगा कि किसी भी फिल्म से हम कुछ सीखते ही नहीं। लेकिन अमूमन फिल्म और गीत हम मनोरंजन के लिए देखते-सुनते हैं। अब बालफिल्म और बाल गीतों के लिए यह कहना दूसरी बात हो जाएगी। बाल साहित्य के मामले में भी यह चिंतन जरूरी होगा कि क्या बाल साहित्य का मकसद मात्र मनोरंजन करना रह गया है? आज तो बच्चों के पास मनोरंजन के कई साधन हैं। तब भला बाल साहित्य का मकसद विहंगम नहीं होना चाहिए?

हमारा बाल साहित्य उस यथार्थ का सामना करने के लिए क्यों न हो जो बच्चों को साहित्य के सहारे तैयार करे? बस इस बात का ध्यान रखते हुए कि बचपन कहीं खो न जाए। सुनहरा बचपन फिर कभी लौटता नहीं। सतरंगी सपनों की अनंत यात्रा और अति काल्पनिक उड़ानों का आनंद बचपन में ही लिया जा सकता है। इसे जीवंत बनाए रखना और बचाए रखना बाल साहित्यकारों की ही जिम्मेदारी है। बशर्ते वह बाल साहित्य का सृजन नई पौध की आवश्यकताओं और रुचियों के अनुरूप कर सकें। आज आवश्यकता इस बात की है कि हम कोशिश करें कि बाल साहित्य ऐसा रचें, जो बच्चों के भावी जीवन में मददगार हो। कल्पनाओं की उड़ान हो तो ऐसी हो, कि बच्चे के मन-मस्तिष्क में उसका सकारात्मक असर पड़े। वह शक्तिमान की तरह छत से छलांग लगाने की कोशिश न करे। वह जान ले कि शक्तिमान जो दूसरों की मदद करने के लिए पलक झपकते ही पहुंच जाता है, उन्हें भी अपनी क्षमतानुसार मदद का भाव अपने हृदय में संजोना है। कल्पना और अनुमान की उड़ान से बच्चों में वैज्ञानिक जागरुकता जगे तो कोई बात बने। ऐसा साहित्य किसी काम का नहीं जो बच्चों में सामाजिक समरसता की बजाय आपस में ईर्ष्याभाव से उपजी प्रतियोगिता कराने लगे। आखिरकार बचपन से किशोर और फिर युवा होने की यात्रा में भी तो वह यथार्थ का सामना करता है।

भितांई, पोस्ट बॉक्स-23, पौड़ी, पौड़ी गढ़वाल,
उत्तराखण्ड-246001, मोबाइल: 0 94121 58688

आलेख

किसी को तो बनना होगा मार्गदर्शक

● डॉ. राकेश 'चक्र'

ज्यों-ज्यों भौतिक विकास का चक्र तेजी से घूम रहा है, त्यों-त्यों, बचपन असमय ही युवा और प्रौढ़ बनता जा रहा है। जब बचपन अपनी कक्षा तथा ट्यूशन का होमवर्क करते-करते निढाल हो जाता है, तब वह टीवी, मोबाइल और कंप्यूटर से चिपक जाता है। अब बचपन के पास खेलने-कूदने के लिए पार्क या मैदान आदि में जाने का समय ही नहीं है, इसी कारण उसका बचपना, बचपन से छिनता प्रतीत हो रहा है। पूर्व की भांति न घरों में बाल पत्रिकाओं का प्रवेश है और न ही बच्चों को उन्हें पठन-पाठन का आदेश है। क्योंकि माता-पिता की यह सोच हो गई है कि बच्चे ने यदि बाल साहित्य या नैतिक साहित्य पढ़ा तो कहीं उनका बच्चा अन्य बच्चों की तुलना में पिछड़ा हुआ ना समझा जाए। वे अपने बच्चे को मॉडरन या आधुनिक बनाना चाहते हैं, अर्थात् मॉडलों की भांति रैंप पर अपनी चकाचौंध बिखेरने वाला। वह अपने बच्चे को स्वामी दयानंद, विवेकानंद या महात्मा गांधी आदि महापुरुषों की विचारधारा में ढालने के बिलकुल पक्षधर नहीं हैं, अर्थात् भारतीय संस्कृति में ढालने के विरोधी। वे अपने बच्चों को फिल्मी नायकों की तरह मॉडरन बनाकर ऐसे पद पर सुशोभित करना चाहते हैं, जहां लक्ष्मी की बरसात सदा होती रहे। येन-केन-प्रकारेण उनके बच्चे बस लक्ष्मी पुत्र या पुत्री बनें।

परिवारों में बाल साहित्य का अभाव

जब तक देश में रेडियो का प्रचलन रहा, तब तक घरों में बालसाहित्य पढ़ा जाता था, उसे बच्चे भी पढ़ते थे और बड़े भी, लेकिन जब से भौतिक विकास को पंख लगे हैं, घरों में टीवी, कंप्यूटर और मोबाइल ने प्रवेश किया है, तब से बाल साहित्य का पढ़ना-पढ़ाना बहुत कम हुआ है। वर्तमान में बहुत कम लोग ही अपने घरों में बालसाहित्य को प्राथमिकता दे रहे हैं, जबकि पूर्व में चंदामामा, नंदन, चंपक, बालभारती और बालवाणी जैसी पत्रिकाएं बड़े मनोयोग से पढ़ी जाती थीं।



मोबाइल/टीवी और कंप्यूटर का बढ़ता क्रेज- गांव से लेकर शहरों तक मोबाइल, टीवी, कंप्यूटर ने बच्चों और बड़ों को अपने जाल में ऐसा जकड़ लिया है कि वे इसी में अपनी खुशियां ढूंढने लगे हैं। इसका अति प्रयोग किए जाने के कारण 20 प्रतिशत बच्चों की आंखों पर चश्मा चढ़ गया है अथवा वे आंखों के रोगों से ग्रसित हो गए हैं। अधिकांश बच्चों की पाचन प्रणाली गड़बड़ा गई है, जिनमें कुछ मोटापे से ग्रसित हैं, तो कुछ कुपोषण से। टीवी पर परोसे जा रहे विज्ञापनों से बच्चे वही वस्तुएं खाने की फरमाइश करते हैं, जिसका टीवी पर अधिक प्रचार-प्रसार हो रहा होता है। टीवी देखते हुए भोजन या जलपान करना उनकी दिनचर्या में शामिल हो गया है, जिससे बच्चों को जिह्वा से निकलने वाले लार-रस उचित मात्रा में नहीं मिल पा रहे हैं, बच्चे कब्ज और गैस जैसी बीमारियों के शिकार हो रहे हैं। भोजन से अरुचि तथा चिप्स, चाकलेट, चाउमिन आदि में उनकी रुचि बढ़ती ही जा रही है। बाल साहित्य पढ़ने का समय टीवी, मोबाइल और कंप्यूटर आदि ने उनसे छीन लिया है।

माता-पिता की बच्चे से बढ़ती अपेक्षाएं

वर्तमान युग में हर माता-पिता चाहता है कि उसका बच्चा इंग्लिश मीडियम के स्कूल में पढ़कर फर्राटेदार अंग्रेजी बोले तथा अपनी कक्षा में अधिक-से-अधिक नंबर लाए, ताकि अड़ोस-पड़ोस और संबंधियों में अपना सीना ऊंचा

करके कह सकें कि उनके बच्चे ने अपनी कक्षा या स्कूल में टॉप किया है। इन्हीं अपेक्षाओं के चलते बच्चों पर इतना मानसिक दबाव और तनाव आ गया है कि उनसे बाल साहित्य बहुत दूर छूटता जा रहा है। इन अपेक्षाओं के चलते अधिकांश परिवारों में तनाव और अशांति का राज हो गया है। बच्चे को डराया-धमकाया और मारा-पीटा तक जाता है, उसे हतोत्साहित किया जाता है। जिसके कारण बच्चों में आत्महत्या तथा घर से भाग जाने की प्रवृत्ति भी बढ़ी है।

अंग्रेजी माध्यम विद्यालयों में पढ़ाने की होड़

वर्तमान में पूरे देश में इंग्लिश मीडियम विद्यालय कुकरमुत्ते की तरह गली-कूचों में फल-फूल रहे हैं। प्रत्येक माता-पिता चाहता है कि उसका बच्चा इंग्लिश मीडियम स्कूल में पढ़कर उनका नाम रोशन करे। इस स्पर्धा के चलते हर माता-पिता चाहता है कि येन-केन-प्रकारेण धन कमाया जाए, ताकि उनका बच्चा अच्छे-से-अच्छे इंग्लिश मीडियम विद्यालय में पढ़ सके। इसी होड़ ने घर-घर में अशांति पैदा कर दी है। हम या हमारे जैसे अनेकानेक लोग राजकीय विद्यालयों में पढ़कर आगे बढ़े हैं, लेकिन आज के माता-पिता का भरोसा हिंदी मीडियम विद्यालयों से उठ चुका है, इसी कारण राजकीय स्कूलों में पढ़ाने वाले अध्यापक भी अपने बच्चों को इंग्लिश मीडियम विद्यालयों में पढ़ा रहे हैं। जब शिक्षकों का ही यह हाल है, तो बाकी लोगों की सोच क्या होगी? ऐसी होड़ में बालसाहित्य की हिंदी या प्रांतीय भाषाओं में पत्र-पत्रिकाओं, पुस्तकों की ओर माता-पिता का ध्यान कैसे जा सकता है, क्योंकि उनकी सोच बन गई है कि यदि उन्होंने हिंदी या प्रांतीय भाषाओं के बालसाहित्य की ओर रुचि बढ़ा दी, तो उनकी इंग्लिश कमजोर हो जाएगी, बच्चा पिछड़ जाएगा। इसी सोच के चलते आज के बच्चे अपनी मातृभाषा में अनुत्तीर्ण हो रहे हैं। न तो उनकी इंग्लिश अच्छी हो पाती है और न ही हिंदी या मातृभाषा।

नैतिक शिक्षा का अभाव

ज्यों-ज्यों इंग्लिश मीडियम विद्यालयों का क्रेज बढ़ रहा है, त्यों-त्यों बच्चों में हाय-बाय... या कोरी औपचारिकताओं के अतिरिक्त कुछ भी शेष नहीं बचा है, अर्थात् बच्चों में नैतिक मूल्यों का ह्रास हो रहा है, क्योंकि अधिकांश विद्यालय या कहूं कि जितने भी शिक्षा के बोर्ड हैं, उन्होंने नैतिक शिक्षा या साहित्य को अपने कोर्स से बाहर कर दिया है। ऐसा प्रतीत हो रहा है कि शिक्षा के अधिकांश बोर्ड पश्चिमी संस्कृति के ध्वजवाहक बन गए हों तथा भारतीय संस्कृति के विरोधी। पूर्व में नैतिक शिक्षा पढ़ाई जाती थी, बच्चों में नैतिक मूल्यों के प्रति रुझान रहता था तथा बाल साहित्य पढ़ने का मन करता था।

सुविधाभोगिता और दिखावा

ज्यों-ज्यों भौतिक विकास का रथ आगे बढ़ रहा है, त्यों-त्यों प्रत्येक परिवार सुविधाभोगिता और दिखावे के मोहजाल में जकड़ता ही जा रहा है। सुविधाभोगिता मनुष्य की सोच को संकुचित करती है तथा दिखावा मनुष्य को हवा में उड़ने-उड़ाने के लिए लालायित करता है। ये दोनों वर्तमान में ऐसी धुरी बन गए हैं, जिसमें सभी चक्कर लगाने को बेताब हो रहे हैं। इनकी पूर्ति करने में सभी अपने सुंदर जीवन को नरकीय बना रहे हैं। अति की सुविधाभोगिता मनुष्य के तन और मन को तो बीमारियां परोस ही रही है, साथ ही मनुष्य को अंदर से खंडहर कर पतन की ओर ले जा रही है। ऐसे में बाल साहित्य का पढ़ना-पढ़ाना परिवार में कैसे संभव है। खाओ ... पिओ ... मौज उड़ाओ की संस्कृति की जहां जय-जयकार हो रही हो, वहां उनके लिए बाल साहित्य किस खेत की मूली है।

प्रत्येक परिवार में सुविधाभोगिता के साथ-साथ दिखावा भी चरम पर है। जब किसी बच्चे के माता-पिता दिखावा को चलन में लाते हैं, तो उनका बच्चा भी उन्हीं से सीख जाता है, साथ ही बच्चा ज्यों-ज्यों बढ़ा होता जाता है, त्यों-त्यों वह समाज और संगी-साथियों के साथ रहकर दिखावा करने लगता है। इसको हवा-पानी देने में चलचित्रों का भी बहुत बड़ा योगदान है। दिखावा का पर्यायवाची है फैशन। चलचित्रों के माध्यम से फैशन भी अपने नए-नए रूपाकार में प्रदर्शित हो रहा है, जिसे बच्चे और बड़े अपनाने में अपने जीवन का बहुमूल्य समय बरबाद करते रहते हैं। आज तो प्रत्येक कस्बा और शहरों में ब्यूटी पार्लर आदि भी खुल गए हैं, जहां मन की सुंदरता की अपेक्षा तन को सजाने-संवारने के नए-नए टिप्स दिए जाते हैं। लोग अपने बहुमूल्य समय के साथ-साथ धन की बरबादी करने में अपनी शान समझते थकते नहीं हैं। ऐसे लोग किसी गरीब या भूखे का पेट भरने और नंगे तन पर वस्त्र ढांकने में कभी भी दरियादिली नहीं दिखाते हैं।

जो भी परिवार वर्तमान परिवेश में जितना अधिक सुविधाभोगिता, दिखावा और फैशन में डूबा है, वह उतना ही सत् साहित्य और बाल साहित्य से दूर होता जा रहा है, इसको कहने में तनिक भी संकोच नहीं लगता है।

जो भी परिवार वर्तमान परिवेश में जितना अधिक सुविधाभोगिता, दिखावा और फैशन में डूबा है, वह उतना ही सत् साहित्य और बाल साहित्य से दूर होता जा रहा है, इसको कहने में तनिक भी संकोच नहीं लगता है।

बचपन में खेल-कूद, व्यायाम या योग

भौतिक विकास ने बचपन को घर की चाहरदीवारी में कैद करके रख दिया है, वह यंत्रवत हो गया है, उससे खेलने-कूदने की आजादी छीन ली गई है, उसके स्व विकास के पंख कतर दिए गए हैं, वह एक किताबी कीड़ा भर रह गया है। रोज-रोज की होती

डांट-डपट और 'ये करो ... वो मत करो' ने बच्चे के मस्तिष्क को कुंद कर दिया है। अधिकांश माता-पिता बच्चे से कहते हैं कि खेलना मत, खेलने-कूदने से चोट लग जाएगी ... घर से बाहर निकला तो कोई अपहरण कर ले जाएगा। इन सब सख्त पाबंदियों तथा भय ने उसे खेलने-कूदने से भी वंचित कर दिया है। इसलिए बच्चा आउट-डोर गेम की बजाय इन-डोर गेम ही खेल पाता है। कंप्यूटर पर चैटिंग, गेम तथा टीवी पर कार्टून फिल्में और मोबाइल पर गेम खेलने में मस्त और व्यस्त बना रहता है।

जिस परिवार में बच्चे के माता-पिता दोनों नौकरी करते हैं, वहां तो बच्चा इन सब चीजों का इतना आदी हो जाता है कि जिसके लिए शब्द भी छोटे पड़ रहे हैं। बच्चे के माता-पिता को ये भी पता नहीं रहता है कि बच्चा हमारे सामने या पीछे करता क्या है? बस उनका उद्देश्य हो जाता है कि धन कमाओ और कथित इंजॉय करो तथा बच्चे को भी करने दो।

बाल साहित्य या सत् साहित्य के पठन-पाठन की ओर कैसे आकर्षित हों ?

वर्तमान परिवेश में असमय बड़े हो रहे बच्चों को ऐसे क्या टिप्स दिए जाएं, कि बच्चे अपनी भारतीय संस्कृति की ओर उन्मुख होकर बाल साहित्य एवं सत् साहित्य की ओर आकर्षित हों। अब से बीस वर्ष पहले बाल अपराध न के बराबर थे। यदि आज इस ओर दृष्टि डाली जाए, तो बच्चे हत्या, डकैती, चोरी, बलात्कार जैसे जघन्य अपराध करने की ओर उन्मुख हो रहे हैं। इसका जिम्मेदार कौन है? उत्तर है आज का समाज। आज के शिक्षाशास्त्री, मनोवैज्ञानिक और समाजशास्त्री यह मान रहे हैं कि पूर्व की अपेक्षा अब बच्चों का मानसिक विकास कहीं ज्यादा तेजी से हो रहा है। सूचना के विस्फोट का यह दौर उन्हें समय से पहले ही परिपक्व बना रहा है। ऐसे में कुछ सावधानियां अभिभावकों को बर्तनी होंगी। कुछ उपाय यहां देना समीचीन होगा, जिससे बच्चे बाल साहित्य या सत् साहित्य की ओर आकर्षित हों तथा अपराधों की ओर अग्रसित न हों -

अभिभावकों का उत्तरदायित्व

अभिभावक ही प्रत्येक बच्चे के सर्वप्रथम मित्र बनते हैं, वे जैसा बच्चे के सम्मुख क्रिया-कलाप, आचरण एवं व्यवहार आदि करते हैं, वैसा ही बच्चे उनसे सीखकर करने लगते है। अभिभावकों को अपने बच्चों के पालन पोषण में पहले की अपेक्षा ज्यादा सावधानी बरतनी होगी। बेशक! अभिभावक बच्चों के जीवन में नाहक दखल न दें, लेकिन उनपर दृष्टि अवश्य रखें। देखें कि उनका बच्चा कहां जा रहा है? क्या कर रहा है? कैसे लोगों से मिल-जुल रहा है? फेसबुक और इंटरनेट जैसी अत्याधुनिक प्रौद्योगिकी का प्रयोग अपने ज्ञान के विस्तार के लिए कर रहा है या फिर उसका दुरुपयोग कर रहा है। इंटरनेट पर भी बाल साहित्य उपलब्ध है, अभिभावकों को ऐसी प्रेरणा देनी होगी कि उनका बच्चा बाल साहित्य को पढ़े तथा ज्ञान-विज्ञान की बातें सीखे।

अभिभावकों का उत्तरदायित्व यह भी बनता है कि वे बच्चों के सम्मुख ऐसे टीवी सीरियल या अन्य फूहड़ सामग्री न देखें, जिससे बच्चे के मन पर विपरीत असर पड़े और बच्चा नकारात्मक सोचवाला बन जाए या अपराधों की ओर उन्मुख हो जाए।

प्रत्येक परिवार में अपनी मातृभाषा की बालसाहित्य या सत् साहित्य की पत्र-पत्रिकाएं अवश्य मंगानी चाहिए

वर्तमान परिवेश में जब हम टीवी, कंप्यूटर आदि से चिपक रहे हैं, तो हमारे पास साहित्य को पढ़ने-पढ़ाने के लिए समय ही नहीं बचता है। प्रत्येक परिवार में कुछ अच्छी पत्र-पत्रिकाएं तथा पुस्तकें अवश्य पहुंचनी चाहिएं। उन्हें स्वयं पढ़ें तथा अपने बच्चों को भी समय मिलने पर पढ़ने के लिए प्रेरित करें। जिससे उनकी मातृभाषा तो परिष्कृत होगी ही तथा साथ ही वे अच्छे संस्कार भी ग्रहण कर भारतीय संस्कृति के ध्वजवाहक बनेंगे।

आधुनिक प्रौद्योगिकी का प्रयोग आवश्यकता पर ही करें

ज्यों-ज्यों सुविधाभोगिता के मायारूपी जाल में हम फंसते जा रहे हैं, त्यों-त्यों आधुनिक प्रौद्योगिकी के सदुपयोग के स्थान पर दुरुपयोग करते जा रहे हैं। मोबाइल दूरसंचार का एक अच्छा यंत्र है, लेकिन लोग इसका सदुपयोग कम, दुरुपयोग अधिक कर रहे हैं। बिना सिर-पैर की बातें घंटों-घंटों करना, गेम खेलना, अनर्गल मैसेज भेजते रहना आदि लोगों का शगल बन गया है। यह सब बड़ों से सीखकर बच्चे भी उसका दुरुपयोग कर रहे हैं।

एक तरफ धन की बरबादी, तो दूसरी तरफ समय की, साथ ही कम सुनने की बीमारी भी मुफ्त में ले रहे हैं। छोटे-छोटे बच्चे, जो कक्षा पांचवीं- छठी में पढ़ रहे हैं, उन्हें भी अपना निजी मोबाइल क्रय करवाने की आवश्यकता पड़ रही है, यदि उनके अभिभावक उनकी जिदें पूरी नहीं करते हैं तो वे जघन्य कदम उठाने को तैयार रहते हैं। अभिभावकों को चाहिए कि वे आधुनिक विज्ञान का सद्पयोग तो करें, लेकिन दुरुपयोग से स्वयं भी बचें तथा अपने बच्चों को भी बचाएं, हो सके तो अपने बच्चों को अच्छे कार्यक्रमों के बारे में बताएं, जिससे बच्चों में सकारात्मक ऊर्जा का संचार हो सके।

नैतिक साहित्य प्रत्येक विद्यालय में कक्षा आठवीं तक पढ़ाया जाना चाहिए

विद्यालय चाहे अंग्रेजी माध्यम का हो अथवा हिंदी माध्यम का, लेकिन उसमें कक्षा आठवीं तक नैतिक साहित्य अवश्य पढ़ाया जाना चाहिए, ताकि बच्चों का मन अच्छी प्रेरणा लेकर सकारात्मक बने। पूर्व में नैतिक शिक्षा हमारे पाठ्यक्रमों में थी, उससे बच्चे में कुछ-न-कुछ अच्छे विचार आते ही थे। आज के परिवेश में तो नैतिक शिक्षा इसलिए भी पढ़ाया जाना आवश्यक है कि बच्चा नई-नई प्रौद्योगिकी के मायाजाल में फंसता जा रहा है, उसका सदुपयोग कम, दुरुपयोग ज्यादा कर रहा है। असमय में

परिपक्वता के कारण ही बच्चा अनेकानेक प्रकार के अनैतिक कार्यों की ओर अग्रसर हो रहा है। इंटरनेट पर पोर्न दृश्यों को देखकर बलात्कार जैसे अपराधों में संलिप्त हो रहा है। कभी हमने सपने में भी नहीं सोचा होगा कि यह विज्ञान का विकास बच्चों का भविष्य इस तरह धूमिल कर खाई में डालने में सहायक बनेगा।

इस ओर हमारे देश की केंद्र एवं राज्य सरकारों को ध्यान देना चाहिए कि वे आठवीं तक पाठ्यक्रमों में नैतिक साहित्य/शिक्षा की ओर ध्यान दें, तो बच्चों का भविष्य संवारा जा सकता है, बच्चे ही हमारी कल की पूंजी हैं। बच्चे संवरेंगे तो देश संवरेगा, अर्थात् महान बनेगा।

माता, दादी और नानी आदि द्वारा बच्चों को प्रेरक कहानियां सुनाई जानी चाहिए

अधिकांश परिवारों में पूर्व में माताएं, दादियां और नानियां आदि बच्चों को सुलाने से पहले लोरियां तथा कहानियां आदि सुनाया करती थीं, जिससे बच्चे में सकारात्मक ऊर्जा का संचार होकर उसका तन-मन स्वस्थ बनता था। जब बच्चा धीरे-धीरे बड़ा होता था, तब उसे ज्ञानवर्द्धक साहित्य से लगाव होने लगता था। परिवारों में टीवी, मोबाइल और कंप्यूटर आदि के बढ़ते क्रेज ने भारतीय शाश्वत परंपरा से विमुख करने का काम किया है। इस ओर हमारी विदुषी महिलाओं को आगे आने की आवश्यकता है। प्यारे बच्चों के लिए भारतीय महिलाएं पूर्व की भांति प्रेरणास्रोत बनकर अपनी अहम भूमिका निभाएं।

बच्चों के अभिभावकों द्वारा बच्चों को किताबी कीड़ा नहीं बनाया जाना चाहिए

वर्तमान में अभिभावकों के द्वारा अपने बच्चों को अंग्रेज बनाए जाने की लालसा में, उनको ऐसा किताबी कीड़ा बना दिया गया है कि उसे एक तरफ पहाड़ दिख रहा है, तो दूसरी ओर खाई। उसे समझ नहीं आ रहा है कि वह क्या करे और क्या न करे? अभिभावकों द्वारा हर समय की 'पढ़ो-पढ़ो की रटंत विद्या' बच्चों को मानसिक और शारीरिक रूप से तो कमजोर कर ही रही है, साथ ही उसे जिद्दी और बागी स्वभाव का बना रही है। कितने ही बच्चों को हमने नजदीक से परखा-जाना है कि जिस परिवार में अभिभावक चीख-चीख कर बोलते हैं या हर समय पढ़ो-पढ़ो की रटंत लगाते रहते हैं, उस परिवार में हमेशा तनाव और अशांति बनी रहती है तथा जिस परिवार में अभिभावक अपने बच्चों के प्रति सहज, सरल रहकर नपा-तुला बोलकर आंखों से ही इशारों में बातें करते हैं, वहां बच्चों को पढ़ो-पढ़ो-पढ़ो के लिए नहीं कहना पड़ता है।

अभिभावकों को चाहिए कि वे परिवार में सहजता, सरलता और सत्यता का वातावरण घोलकर अपने बच्चों को सुयोग्य बनाने में अग्रणी भूमिका निभाएं।

समय से जागो-सोओ-पढ़ो-खेलो की आदत

अभिभावकों को चाहिए कि वे अपने बच्चों को ऐसा ढालें कि बच्चे रात्रि में जल्दी सोएं तथा भोर में जागकर अपनी नियमित दिनचर्या में लगें और पढ़ें। समय से तैयार होकर विद्यालय जाएं। बच्चों से एक डायरी बनवाएं, जिसमें पढ़ने के साथ-साथ, खेलने-कूदने और आधा या एक घंटा टीवी पर कुछ अच्छे और ज्ञानवर्द्धक सीरियलों को देखने का भी समय निश्चित हो। अपने बच्चों को न तो ऐसे कठोर अनुशासन में ढालें कि बच्चा बागी बन जाए तथा न ही ऐसे ढीले अनुशासन में कि बच्चा उच्छृंखल हो जाए।

बाल सभा/बाल भारती जैसे कार्यक्रम पूर्व की भांति पुनः विद्यालयों में प्रारंभ होने चाहिए

पूर्व में प्राइमरी तथा जूनियर कक्षाओं में माह में एक या दो शनिवार के दिन बाल सभा/बाल भारती के नाम से एक कार्यक्रम होता था, जिसमें बच्चे ही सभा के अध्यक्ष एवं संचालक बनकर रचनात्मक कार्यक्रम किया करते थे। इस कार्यक्रम से बच्चों की प्रतिभा तो निखरती ही थी, साथ ही उनमें आत्मविश्वास भी बढ़ता था। इस कार्यक्रम के माध्यम से बच्चे कविता, कहानी, लेख तथा डिबेट आदि के कार्यक्रम प्रस्तुत करते थे। इसी कारण बच्चों को बाल पत्रिकाएं पढ़ने का चाव बना रहता था। आज ऐसे कार्यक्रमों को पुनर्जीवित करने के लिये राज्य एवं केंद्र सरकारों को आगे आने की आवश्यकता है।

बाल साहित्य या बाल साहित्य की पत्र-पत्रिकाओं को जीवनदान देना है, तो बाल साहित्य को साहित्य का दर्जा देना ही होगा। बाल साहित्य के प्रचार-प्रसार हेतु देश के समस्त इंटरमीडिएट विद्यालयों में पुस्तकालयों का विधिवत गठन और निर्माण करना होगा, ताकि बच्चा खाली पीरियड में वहां बैठकर बाल साहित्य से जुड़ सके।

बाल साहित्य या बाल साहित्य की पत्र-पत्रिकाओं को जीवनदान देना है, तो बाल साहित्य को साहित्य का दर्जा देना ही होगा। बाल साहित्य के प्रचार-प्रसार हेतु देश के समस्त विद्यालयों में पुस्तकालयों का विधिवत गठन और निर्माण करना होगा, ताकि बच्चा खाली पीरियड में वहां बैठकर बाल साहित्य से जुड़ सके। साथ ही प्रत्येक परिवार में बच्चे की मातृभाषा में एक समाचार पत्र तथा एक-दो मासिक बाल पत्रिकाओं को मंगाए जाने की आवश्यकता है जिससे बच्चों की बाल साहित्य से एकनिष्ठता बढ़े तथा बच्चा असमय ही परिपक्व न बने। बच्चे का बचपन में बच्चा ही बना रहना परिवार और समाज के लिए सुखदायी है।

90, शिवपुरी, मुरादाबाद, उत्तर प्रदेश
मोबाइल : 0 94562 01857

आलेख

रोचक एवं प्रेरणाप्रद हो बाल साहित्य

● आशा शैली

बाल साहित्य का पहला और मुख्य उद्देश्य होता है स्वस्थ समाज का निर्माण। 'बाल्यकाल में सीखा-पढ़ा मनुष्य की स्मृति में बना रहता है और उसके चरित्र निर्माण में सहायक होता है।' समाज की सुव्यवस्था हेतु बाल्यावस्था में किए गए प्रयास ही चरित्र की सुदृढ़ नींव सिद्ध होते हैं, हमारे इतिहास में ऐसे अनेकों प्रमाण मिल जाते हैं जो इस सिद्धांत की पुष्टि करते हैं। इसे हम इस प्रकार भी समझ सकते हैं, कि जैसे अनियंत्रित उगी वनस्पति बाग-बगीचों की संज्ञा नहीं पा सकती, उसी प्रकार असंस्कारित जनसंख्या सभ्य समाज नहीं कहलाती। जिस तरह माली जब उपवन में अथवा गमले में जंगल के किसी पौधे को आरोपित करता है, तो वह उसे जंगल में विकसित होने वाले पौधे की तरह प्रकृति के सहारे नहीं छोड़ता, और न ही अन्य मौसमी वृक्ष-लताओं एवं पौधों के समान उसकी देखरेख करता है, वरन् माली उसे उसकी प्रकृति के अनुरूप परिवेश प्रदान करता है। यही कार्य बालक के जीवन में सत्साहित्य करता है।

कहा जाता है कि 'व्यक्ति के (प्रथम) तीन वर्ष की आयु तक, संपूर्ण जीवन का 'आधा' मानसिक विकास हो जाता है।' अर्थात् शेष 50 प्रतिशत के लिए उसका संपूर्ण जीवन बचता है। अतः यही वह उचित समय है जब बालक को सही शिक्षा के रूप में सत्साहित्य उपलब्ध कराया जाना चाहिए। जो दादी-नानी लोककथाओं के माध्यम से कराती रही हैं, जिसके एवज़ में आज हम बालक को टीवी के सामने बैठाकर अपने कर्तव्य की इतिश्री समझ लेते हैं। जो न केवल अपनी रेडियोधर्मिता के कारण बच्चों के स्वास्थ्य को प्रभावित करता है बल्कि उनके मानसिक विकास को भी प्रभावित करता है।

उम्र के साथ-साथ बालक की बुद्धि ज्यों-ज्यों विकसित होती जाती है, त्यों-त्यों वह संसार को समझने लगता है और उसकी शिक्षा-दीक्षा के सहारे उसे संस्कारित करके सभ्य समाज के योग्य बनाया जाता है। गुरुकुलों का अस्तित्व इस बात का प्रमाण है कि बालपन से ही समाज की सुव्यवस्था का उत्तरदायित्व संभालने की नींव डालने की हमारे देश की परंपरा रही है। अतः यह ध्रुव सत्य है कि साहित्य, और वह भी, सत्साहित्य समाज को संस्कारित करने का कार्य करता है।

उम्र के साथ-साथ बालक की बुद्धि ज्यों-ज्यों विकसित होती जाती है, त्यों-त्यों वह संसार को समझने लगता है और उसकी शिक्षा-दीक्षा के सहारे उसे संस्कारित करके सभ्य समाज के योग्य बनाया जाता है।

प्रत्येक बालक, चाहे वह शिक्षित हो अथवा अशिक्षित, बढ़ती आयु के साथ मन में कोई-न-कोई स्वप्न लेकर बढ़ता है, परंतु यदि बालक को उचित प्रशिक्षण अर्थात् दिशासूचक साहित्य बोध के साथ आगे बढ़ने की दिशा दिखाई जाए तो यही बालक बड़े होने पर अपने जीवन की सार्थकता में समाज को एक सुंदर गुलदस्ते का रूप देता है। अपवाद को छोड़ दें तो प्रत्येक बालक किसी-न-किसी विभूति को अपना आदर्श मानकर चलता है। उसका यह लक्ष्य बचपन में सुनी कोई कहानी रहती है। परिपक्वावस्था होने पर कोई बालक संगीतकार बनकर अपनी कला की पराकाष्ठा को सफल मानता है तो कोई ईश्वर की प्राप्ति को। कोई जीवन की सार्थकता प्रेम के निर्वाह में देखता है। अभिनेता कला की उत्कृष्टता में जीवन का अर्थ खोजता है तो लेखक अपने लेखन की विशेषता अर्जित कर लेने पर जीवन को धन्य मानता है। सैनिक का आदर्श लेकर चलने वाला युवा, देशप्रेम की बलिवेदी पर जीवन अर्पण करने वाला धुन का धनी जीवन को वंदनीय मानता है। चिकित्सक रोगोपचार में ही जीवन की सार्थकता देखता है तो वैज्ञानिक के लिए स्वच्छंद नदियों को नियंत्रित करना, पर्यावरण की शुद्धि एवं अन्य खोजें जीवन के मूल्य हो जाते हैं। इन्हीं धुन के पक्के उत्साही युवाओं के बढ़ते कदम समाज निर्माण में लक्ष्य-पथ के मील पत्थर सिद्ध होते हैं, जिनसे उनकी जीवन यात्रा आगे बढ़ती है। यही समाज का सही और समुन्नत रूप होता है।

मुझे याद है, कक्षा चार में हमें 'बूंद की अभिलाषा, राम की शक्तिपूजा, खूब लड़ी मर्दानी' आदि कविताएं, कबीर और रहीम के नीतिपरक पद, मीरां और तुलसी के साहित्य को पढ़ने का खूब अवसर मिला, जिसका प्रभाव मैं आज भी अपने जीवन में कहीं-न-कहीं अनुभव करती हूं। मैं स्वयं महादेवी वर्मा से पागलपन की सीमा तक प्रभावित रही हूं। यहां मैं यह कहना भी आवश्यक समझती हूं कि बालबुद्धि रोचकता की ग्राहक अवश्य ही होती है और गीतों की गेयता निर्विवाद रोचकता समेटकर चलती है। मुझे यह भी स्मरण है कि हम लोग पहाड़े कितनी तन्मयता के साथ गा-गाकर याद करते थे। निःसंदेह यही बाल मनोविज्ञान है, जिसे समझना आज के युग निर्माताओं के लिए बहुत आवश्यक है।

जब हम बाल मनोविज्ञान को जान और समझ लेते हैं, तभी हम बच्चों को उनके व्यक्तिगत बुद्धि-भेद के आधार पर, उनके बुद्धि-स्तर एवं उनकी योग्यता को ध्यान रखते हुए, सरलतापूर्वक शिक्षित कर सकते हैं तथा उन्हें उचित दिशा-निर्देश भी दे सकते हैं, जिससे कि वे अपनी क्षमताओं का भरपूर उपयोग करके अपने भविष्य को उज्ज्वल बना सकें।



यहां यह भी स्मरण रखना आवश्यक है कि नैतिकता ही मानव को पूर्णता प्रदान करती है। अतएव स्कूली शिक्षा के साथ-साथ ही बालक-बालिकाओं को नैतिकता का भी ज्ञान देना आवश्यक है। इसका ज्ञान भी जीवन में उतना ही अपरिहार्य है, जितना कि जीवित रहने के लिए श्वास लेने के साथ, खाना-पीना आदि आवश्यक है, क्योंकि नैतिकता के अभाव में कोई भी व्यक्ति अपने सामाजिक दायित्वों का निर्वहन समुचित रूप में नहीं कर सकता है। जब व्यक्ति को नैतिक कर्तव्यों का ज्ञान हो जाता है, तो वे उसके जीवन का अपरिहार्य अंग बन जाते हैं। इस स्थिति में व्यक्ति स्वभावतः शुभ कार्य करने लगता है, क्योंकि तब उसे शुभ और अशुभ में भेद का ज्ञान हो जाता है।

व्यक्ति जब तक अज्ञान की स्थिति में रहता है, तभी तक वह उचित-अनुचित में वास्तविक भेद नहीं कर पाता। जिस दिन उसे नैतिकता का ज्ञान हो जाता है, उस दिन से वह स्वयमेव अनैतिक तथा पाशविक प्रवृत्तियों से मुक्त होने का प्रयत्न करने लगता है। व्यक्ति जानबूझकर अनुचित कार्य नहीं करता है। इसलिए आवश्यक है कि बाल्यकाल से ही नैतिक शिक्षा दी जाए।

विद्वानों के अनुसार 'बाल्यावस्था में ही नैतिक व्यवहार की पृष्ठभूमि के निर्माण का श्रीगणेश हो जाता है। आगे चलकर बालक के नैतिक व्यवहार के विकास का निर्देशन यही पृष्ठभूमि करती है। इस अवस्था में माता-पिता को यह चाहिए कि बालक को उचित-अनुचित की पर्याप्त शिक्षा देने के बाद ही दंड-विधि अपनाएं। माता-पिता को बालकों को उसी अवस्था में दंड देना चाहिए, जब बालक जान-बूझकर अनैतिक व्यवहार करे।'

घर में बच्चों के प्रति जो दायित्व माता-पिता का है, विद्यालय में वही दायित्व अध्यापकों का भी है। इसके लिए यह आवश्यक नहीं है कि नैतिक शिक्षा हेतु अध्यापकों की विशेष रूप से नियुक्ति की जाए, किंतु यह नितांत आवश्यक है कि प्रत्येक अध्यापक जागरूक एवं कर्तव्यनिष्ठ हो तथा उसमें सहानुभूति का भाव भी हो। इन गुणों के अभाव में वह योग्यतम् व्यक्ति होने पर भी अपने कार्य में पूर्णतः सफल नहीं हो सकेगा।

बच्चों के लिए कविता और कहानियां लिखते और सुनाते हुए मुझे आभास हुआ कि परीकथाओं से कहीं अधिक प्रेरणाप्रद और रोचक हमारे युगपुरुषों के जीवन की छोटी-बड़ी घटनाएं होती हैं।

घटनाएं यानी कि सच! जो आज के युग में परी-कथाओं जैसा ही लगता है। अधिक पुरानी घटनाओं के केंद्रीय पात्र अपने आप में अचंभा लगते हैं, बच्चे सोचते हैं कि यह लोग वास्तव में थे भी या नहीं, इसीलिए उन महापुरुषों के जीवन से कुछ प्रेरणादायक घटनाएं, जिन्हें गुजरे अभी अधिक समय नहीं हुआ है और जो अभी माता-पिता और बच्चों के मन में सच के रूप में विद्यमान हैं, की कहानियां बच्चों की मार्गदर्शक हो सकती हैं। ये कहानियां बालोपयोगी होने के अपने दायित्व की पूर्ति करती हैं।

रचना, (जो इतिहास सापेक्ष होती है) जिस समय रची जाए उस काल के घटनाक्रम को प्रतिबिंबित करती है। कोई भी साहित्यकार अपने वर्तमान से अछूता नहीं रह सकता। अपने धरातल पर खड़े इस प्रकार के साहित्य को हम ऐतिहासिक दस्तावेज कह सकते हैं। क्योंकि इसमें लौकिक साक्ष्य और इतिहास का समन्वय होता है।

किसी भी देश-काल में यदि सत्ता निरंकुश हो जाए तो उसका आतंक जन-मन पर व्याप्त हो जाता है। हमारे साहित्य में परशुराम एक बहुपरिचित नाम है जो आतंवादियों के लिए काल बनकर सामने आया था। तत्कालीन राजा सहस्रबाहु के निरंकुश शासन के विरोध में खड़े परशुराम को यदि साहित्य अंकित न करता तो वह इतिहास नहीं बनता परंतु परशुराम इतिहास नहीं साहित्य ही

में अंकित हैं। भारत के विभिन्न भागों में परशुराम से संबंधित लोककथाएं उपलब्ध होती हैं जिनमें वह निरंकुश सत्ता से लड़ते दृष्टिगोचर होते हैं।

वर्तमान समय में भारत में लोकतंत्र है और इस समय वर्तमान परिस्थितियों को लेकर रची जा रही रचनाएं इतिहास एवं समय सापेक्ष हैं, इन्हें नकारा नहीं जा सकता। हमें हर ऐसी समय सापेक्ष रचना का स्वागत करना चाहिए।

आनंद से जीने की कला लोकमंगल में खुद को खपाने की कला है। अपने जीवन संग्राम में धरती से आकाश तक को समुन्नत बनाने की कला। मनुष्य के लिए केवल खाना-पीना, सो जाना, धन जोड़ना और धन जोड़कर छोड़ जाना तो जीवन का लक्ष्य नहीं है। जो इस सबसे परे किसी बड़े लक्ष्य के प्रति स्वयं को तिल-तिल खपाते हैं, वह भूगोल की सीमा रेखा फलांगते हुए संपूर्ण जगत के हो जाते हैं। ऐसे व्यक्तियों के जीवन चरित (जीवनी) वर्तमान और आने वाली पीढ़ियों के लिए प्रकाश स्तंभ का कार्य करते हैं। ऐसा उद्दात साहित्य बच्चों के लिए उपलब्ध कराना आज के युग की सबसे बड़ी और अनिवार्य आवश्यकता है, इसे प्रत्येक बाल साहित्यकार एवं बाल कल्याण को अपना लक्ष्य बनाने वाली संस्थाओं को समझना होगा।

जीवन के विभिन्न क्षेत्र धर्म, राजनीति, साहित्य, समाज सेवा, शिक्षा, ज्ञान, विज्ञान में अपनी वैचारिकी और रचनात्मक ऊर्जा की मानवीय उदात्तता से जग के कल्याणार्थ स्वयं को आहूत करने वाले मनीषियों के जीवन में झांकने पर संस्कार-शीलता के विभिन्न रंग मिलते हैं। प्रेम, त्याग, निष्ठा, समर्पण के यह अद्भुत पक्के रंग ही व्यक्तित्व का निर्माण करते हैं। यह रंग प्रेरक होकर बचपन से किशोर और फिर आगे तक जीवन के हर मोड़ पर अनुकरण की प्रेरणा देते हैं।

बाल साहित्य की वर्तमान दशा पर विचार करने से यह आभास होता है कि वर्तमान समय में पूरा मानव समाज दिशाहीन हो रहा है। ऐसे में बालमन को दिशा देना और भी कठिन कार्य होता जा रहा है। सब जानते और मानते हैं कि वर्तमान में पुस्तकों की खपत न के बराबर है, किंतु ऐसा है नहीं, लोग पुस्तक पढ़ना तो चाहते हैं किंतु मांगकर। बालमन सचित्र और रंगीन पुस्तकों की ओर सहज आकर्षित होता है, किन्तु समस्या वही खरीदकर न पढ़ने की है।

सोचने की बात तो यह है कि यदि मांगकर भी पुस्तक पढ़ी जा रही है तो पढ़ी तो जा रही है, और पुस्तक पढ़ी जा रही है तो साहित्य का मूल्यांकन हो रहा है और मूल्यांकन हो रहा है तो हमारा दायित्व क्या है इसे साहित्यकार को समझना है।

दूरदर्शन के 'स्पाइडरमैन' और 'ही-मैन' जैसे कार्यक्रमों ने जहां बच्चों को चमत्कारों में उलझाया है वहां उन्हें बाहर की दुनिया से काटकर अंतमुर्खी बनाया है, वहीं शक्तिमान जैसे कार्यक्रमों ने

साहित्य में विज्ञान की नित नई खोजों की प्रश्नोत्तरी है जिसे आज के बालसाहित्य की परिधि से बाहर नहीं रखा जा सकता। आज के युग में हमारे तमाम बाल साहित्यकार जी-जान से इस प्रयास में जुटे हैं कि बच्चों को अच्छा साहित्य उपलब्ध कराया जाए।

भारतीय योग एवं अध्यात्म के प्रति आस्था को जगाया है। जबकि साहित्य का उद्देश्य व्यक्ति को अंतमुर्खी बनाना कदापि नहीं होता। साहित्य शब्द का अर्थ ही सर्वहिताय-सर्वसुखाय कहा जाता है, बाल साहित्य यदि गरिष्ठ शब्दावली से आच्छादित न होकर बालमन को सरलता से प्रभावित कर सके तो साहित्य सार्थक हुआ। फिर बच्चे को जब रुचि उत्पन्न हो जाएगी तो वह पुस्तक क्रय करने की भी चिंता करेगा और पढ़ने की आदत बचपन से होने पर बड़े होने पर भी, अथवा यूं कहें कि जीवन पर्यंत बनी रहती ही है। अतः बाल साहित्य ही सही अर्थों में समाज को दिशा देने में सार्थक भूमिका निभा सकता है और इसे दिशा देना बाल साहित्यकारों का दायित्व भी है, हमें सावधानी रखनी है कि बच्चे को अच्छे संस्कार देने के लिए हम उसे उत्तम साहित्य उपलब्ध कराएं। साहित्य में विज्ञान की नित नई खोजों की प्रश्नोत्तरी है जिसे आज के बाल साहित्य की परिधि से बाहर नहीं रखा जा सकता।

आज के युग में हमारे तमाम बाल साहित्यकार जी-जान से इस प्रयास में जुटे हैं कि बच्चों को अच्छा साहित्य उपलब्ध कराया जाए। इसके विपरीत भारतीय पटल से चंदामामा जैसी अच्छी पत्रिकाएं गायब होती जा रही हैं फिर भी नित नए अखबार और कुछ मध्यम और लघु पत्रिकाएं इस कमी को पूरा कर रही हैं, यह संतोषप्रद है। लोक कथाओं का बालकों के जीवन में महत्त्वपूर्ण योगदान रहता है। आज के साहित्य में लोक कथाओं के संकलन का जो भी प्रयास हो रहा है वह सराहनीय है, क्योंकि लोककथाएं सामाजिक चरित्र की पक्षधर होती हैं और बच्चे (विशेषकर छोटे बालक) उन्हें बड़ी रुचि से सुनते हैं। हमारे पाठ्यक्रमों से तुलसी, सूर और कबीर का अंतर्ध्यान हो जाना भी विनाशकारी है। इन्हें पाठ्यक्रमों में दोबारा स्थान दिलाने का प्रयास करना चाहिए।

संपादक शैलसूत्र
कार रोड, डा. लालकुआं, जिला नैनीताल,
उत्तराखंड-262402, मो. 0 94567 17150

आलेख

हिंदी बाल कविताओं में राष्ट्रीय चेतना

● उमेश चंद्र

हिंदी साहित्य का क्षेत्र विस्तृत और विविधता लिए हुए है। बाल साहित्य में पंचतंत्र, हितोपदेश, कथासरित्सागर आदि अपनी श्रेष्ठता के कारण आज भी महत्त्वपूर्ण स्थान बनाए हुए हैं। दादी-नानी की कहानियों से बाल साहित्य की शुरुआत हुई। भारतेंदु युग ने इस साहित्य को समृद्ध किया, फिर बाद के दशकों में इसमें निरंतर जागरूकता और गंभीरता आती गई। बच्चे देश के भावी कर्णधार हैं। बच्चों का वर्तमान के साथ-साथ उनका भावी जीवन भी बहुत महत्त्व रखता है। उन्हें अपने को हर स्थिति में मजबूत रखना है, सुदृढ़ रखना है। ऐसी स्थिति में बाल-साहित्य की महत्त्वपूर्ण भूमिका हो जाती है। उसका दायित्व और भी बढ़ जाता है। बच्चों के लिए लिखना आसान नहीं है। बाल साहित्य रचना एक कला है। बीसवीं सदी के महत्त्वपूर्ण और बाल पत्रिका 'बालसखा' के संपादक लल्ली प्रसाद पांडेय का कहना है- ''बाल साहित्य वही लिख सकता है जो अपने को बच्चों जैसा बना ले। बड़े होकर बच्चा बनना मुश्किल है और उससे भी मुश्किल है बच्चा बनकर उसके अनुकूल लिखना।''[1]

बाल साहित्य में मनोरंजन भी अहम कड़ी है। बाल साहित्य को लेकर विभिन्न विद्वानों ने अपने मत प्रस्तुत किए हैं। बाल साहित्य के पुरोधा निरंकारदेव 'सेवक' के अनुसार- ''जिस साहित्य में बच्चों का मनोरंजन हो सके, जिसमें वे रस ले सकें और जिसके द्वारा वह अपनी भावनाओं एवं कल्पनाओं का विकास कर सकें, वह बाल साहित्य है।''[2] बाल रचनाएं बच्चों में सहजता, सरलता, सज्जनता, सहनशीलता, सहिष्णुता, दयालुता तथा परोपकार आदि उदात्त भावनाओं का बीजारोपण करें, उन्हें अन्याय, अनीति, अनाचार, हिंसा तथा ईर्ष्या-द्वेष आदि कुत्सित भावनाओं से विरत करें, उनके कौतूहल का तार्किक शमन करें, उनका ज्ञानवर्द्धन करें, उनकी कल्पनाशक्ति का विकास करें, उन्हें आशावादी बनाएं, उनमें आत्मसम्मान, आत्मविश्वास एवं आत्मनिर्भरता की भावना का संचार करें तथा अपने परिवेश के प्रति जागरूक, जिम्मेदार एवं संवेदनशील बनाएं। लल्ली प्रसाद पांडेय ने 'बालसखा' पत्रिका के जनवरी 1917 के अंक में लिखा था- ''बाल साहित्य का उद्देश्य है बालक, बालिकाओं में रुचि लाना, उनमें उच्च भावनाओं को भरना और दुर्गणों को निकालकर बाहर करना, उनका जीवन सुखमय बनाना और उनमें हर तरह का सुधार करना।''[3] कविता के रूप में घटनाओं या पात्रों के माध्यम से कही गई बातें बच्चों को भाती हैं तथा बालमन पर सीधा असर करती हैं। महान कवयित्री महादेवी वर्मा कहती हैं- ''बालक तो स्वयं एक काव्य है, स्वयं ही साहित्य है।''[4]

वीर शिवाजी को इनकी माताजी द्वारा सुनाई गई वीररस की कहानियों ने ही वीर योद्धा बनाया। राष्ट्रभक्ति की कविताएं, गीत पढ़कर, कितने युवा देश के लिए शहीद हो गए। प्रभावकारी साहित्य को पढ़कर बालक, भावी जीवन जीने की कला, युक्ति, अनुभव ग्रहण करता है। हिंदी बाल काव्य में राष्ट्रीय चेतना के भावों की सबल एवं समृद्ध स्वरों में अभिव्यक्ति हुई है। पंद्रह अगस्त का दिन-स्वाधीनता दिवस, आजादी का पर्व, राष्ट्रीय दिवस के रूप में स्वतंत्रता का स्वागत करता, बलिदानों का पुण्य स्मरण करता, शहीदों को नमन करता, सेना, सैनिक के प्रति मातृभूमि की रक्षा का उत्तरदायित्व पूर्ण यशोगान करता, आजादी को सुरक्षित रखते हुए संकल्प करता एवं सर्वस्व न्योछावर करने की भावनाओं के रूप में अभिव्यक्त हुआ है।

स्वतंत्रता प्राप्ति के साथ 'भारत अपना' की भावनाएं बलवती हुई हैं। डॉ. श्रीप्रसाद के शब्दों में -

''भारत अपना देश, देश की माटी कितनी प्यारी।
भारत बने महान, कामना रहती यही हमारी।''[5]

भारत देश महान बना और बना रहेगा, उसकी पृष्ठभूमि में वीरों का उत्सर्ग है। डॉ. राष्ट्रबंधु जी ने अपनी लेखनी में 'वीरों का देश-भारत कहा है -

''वीरों का है देश हमारा
जय-जय भारत देश हमारा।''[6]

डॉ. विनोदचंद्र पांडेय भारत की रक्षा करने वाले वीर सेनानी को पूरा सम्मान प्रदान करते हैं -

''सुंदर स्वर्ग समान देश यह, भारतवर्ष हमारा।

इसकी रक्षा सदा करेंगे, हम बच्चे सैनानी।''[7]

नेहा वैद देश को सर्वोपरि और वंदनीय मानती हैं। वह बच्चों में जोश भरती हैं और उनके साहस की सराहना करती हैं -

''विजय-पताका लेकर बढ़ते
पांव न पीछे इनके पड़ते।
सोया साहस रोज जगाते,
साथ सत्य का सदा निभाते।
राह स्वयं पर्वत ने खोली,
यह नन्हे वीरों की टोली।''[8]

राष्ट्रीयता की भावनाओं से ओत-प्रोत बाल कविताओं के माध्यम से बाल साहित्यकारों ने बच्चों को देशभक्ति का पाठ पढ़ाया है। राष्ट्रकवि सोहनलाल द्विवेदी झरने, पहाड़ियों के दर्शन कराते हुए देश भावना को दिखते हैं-

''झरने अनेक झरते, जिसकी पहाड़ियों में
चिड़ियां चहक रही हैं, हो मस्त झाड़ियों में।
अमराइयां घनी हैं, कोयल पुकारती है,
बहती मलय पवन है, तनमन संवारती है।
वह धर्मभूमि मेरी
वह कर्मभूमि मेरी
वह जन्मभूमि मेरी
वह मातृभूमि मेरी।''[9]

डॉ. मित्रेश कुमार गुप्त देशप्रेम की अभिव्यक्ति के लिए माटी का कर्ज चुकाने के हेतु धरती मां के चरणों में अपना सब कुछ अर्पण कर देने, मातृभूमि पर मर मिट जाना आदि भावनाएं शब्दों के माध्यम से प्रकट करते हैं-

''हमको अपना देश मनोरम,
प्राणों से भी प्यारा है।
तन मन धन न्योछावर कर दें,
यह कर्त्तव्य हमारा है।''[10]

प्रभाष मिश्र 'प्रियभाष' देशभक्ति को नित्य कर्म मानते हैं और देशहित में प्राण त्याग करने की भावना को प्रबल करते वह लिखते हैं-

''रहे प्रयास नित्य-प्रति जिनसे
भारत बने महान।
अंतिम अभिलाषा यह मेरी,
तजूं देश-हितप्राण।''[11]

हमारे भारत के जवान सरहद पर देश की रक्षा जाग-जागकर और अपने प्राण न्योछावर करके करते हैं और हम अपने घरों में चैन की नींद सोते हैं। हम भारतीय जो काम एक बार ठान लेते हैं वह करके ही दम लेते हैं। राजनारायण चौधरी 'नमन तुम्हें शत बार' में लिखते हैं-

''तुम स्वदेश के वीर सिपाही
स्वतंत्रता के रक्षक।
हंस-हंस करते न्योछावर
अपना अमूल्य जीवन तक।
देशभक्ति के सिवा कहां कुछ
तुमको सूझा करता ?
शत्रु तुम्हारे सम्मुख आने
से हरदम है डरता।''[12]

बालक देश की आधारशिला हैं। इनकी सुचित शिक्षा, संवेगिक व बौद्धिक विकास पर ही देश का विकास संभव है। प्रारंभ से ही इन्हें राष्ट्रीय, जनतांत्रिक मूल्य आधारित शिक्षा देने की भी आवश्यकता पड़ती है जिससे एक जागरूक नागरिक के रूप में इनका उत्तरोत्तर विकास हो। आज बाल साहित्यकारों ने अपनी बाल कविताओं के माध्यम से बच्चों में राष्ट्रीय चेतना जगाने का काम किया है। देशबंधु शाहजहांपुरी की बाल कविताओं में राष्ट्रीय चेतना उभर कर आई है। वे लिखते हैं-

"पंद्रह अगस्त आया है फिर से,
लेकर खुशियों का उपहार।
बलिदानों के गीतों से अब,
गूंज उठे ये गगन अपार।''[13]

अपनी कविता 'मेरा देश है सोना-चांदी' में प्रमोद लायटू ने भारत की सोने-चांदी से तुलना करते हुए भारत को शांति-अहिंसा वाला देश कहा है -

''मेरा देश है सोना-चांदी, मेरा देश है हीरा,
यहीं जन्मते गौतम-गांधी, यहीं जन्मती मीरा।
रामकृष्ण की पावन भूमि, लक्ष्मीबाई का यह देश,
शांति अहिंसा प्रेमभाव का, सदा दिया सार्थक संदेश।
ईद, दिवाली, होली मनती, बजते ढोल-मजीरा॥''[14]

देश की एकता-अखंडता को बाल साहित्यकारों ने अपनी कविताओं में बड़े ही सुंदर ढंग से पिरोया है। डॉ. रोहिताश्व आस्थाना ने 'बालवाणी' के नवीन अंक में अपनी 'झंडा' कविता में झंडा का यशोगान किया है-

''हम बच्चों के स्वर में हरदम,
जन-गण-मन है गाता झंडा।
अपने वीर शहीदों की है,
हमको याद दिलाता झंडा॥''[15]

रमेशचंद्र पंत अपनी बाल कविता 'तिरंगा कभी न झुकने देंगे' में भारत को हमेशा आगे बढ़ता रहे देखना चाहते हैं। वे बच्चों से कहलवाते हैं-

''भारत के उत्थान-प्रगति का,
रथ न रुकने देंगे।
खाते हैं हम शपथ तिरंगा,
कभी न झुकने देंगे।''[16]

हमारा भारत देश संतों का देश रहा है। यहां पर देवता भी जन्म लेने के लिए तरसते हैं। 'बाल भारती' मासिक पत्रिका के जनवरी 2015 के अंक में प्रशांत अग्निहोत्री कहते हैं-

''गंगा यमुना ज्यों मणिमाला,
हरियाली की नवल दुशाला।
ओढ़े अपनी भारत माता,
जन्म यहां ले स्वयं विधाता।
भक्त, संत, कवि करते रहते,
इसकी सुषमा का गुणगान।
देश हमारा बहुत महान॥''[17]

डॉ. नागेश पांडेय 'संजय' अपने कविता संकलन 'यदि ऐसा हो जाए' में अपनी कविता 'हिंदुस्तान हमारा देश' में देश को दुलारा कहते हैं और देश को ताज कहते हुए बच्चों को इसका पहरेदार बतलाते हैं-

''प्यारा देश, दुलारा देश,
हिंदुस्तान हमारा देश।
हमें देश पर नाज है,
देश हमारा ताज है।
हमें देश पर गर्व अपार,
हम सब इसके पहरेदार।''[18]

विमला जोशी 'विभा' राष्ट्रीय पर्व को मिलजुलकर मनाने का आह्वान करती हैं। वे लिखती हैं -

''आओ साथियो मिलजुल कर,
हम आजादी का पर्व मनाएं।
तीन रंग का झंडा प्यारा,
आज खुशी से हम फहराएं।''[19]

निष्कर्षतः हम कह सकते हैं कि बालक की मनोदशा, उसकी आजादी, उसकी किलकारी, उसके सपने, उसकी हलचलें सब बाल साहित्य की मूल्यवान पूंजी है। बाल साहित्य केवल मनोरंजन नहीं है। बच्चों को एक ठोस धरती मिले, उड़ान भरने के लिए स्वच्छंद आकाश मिले, धूप भी छांव-सी लगने लगे, फूलों के साथ कांटे भी सुहाने लगे, ऐसा जो बाल साहित्य करता है वह शाश्वत रचना हो जाती है। हम सभी का कर्त्तव्य है कि जो देश पर न्योछावर हुए हैं, उनको प्रणाम करें तथा देश को प्रगति के सर्वोच्च शिखर पर पहुंचाते हुए देश की सुरक्षा के भाव को सर्वोपरि जीवन मूल्य मानें।

ग्रा. आटा, पो. मौलागढ़, तह. चन्दौसी,
जिला संभल, उ.प्र.- 244412, मो. 0 97208 99620

संदर्भ ग्रंथ

1- अखिलेश श्रीवास्तव चमन, ऐसा हो बच्चों का साहित्य, संपादक-फरहत परवीन, आजकल पत्रिका, नवंबर 2014, प्रकाशन विभाग, सूचना भवन, नई दिल्ली, पृष्ठ 12
2- वही, पृष्ठ 12
3- वही, पृष्ठ 12
4- वही, पृष्ठ 15
5- हिंदी बालकाव्य में राष्ट्रीयता की भावना, डॉ. रमेश मयंक, बालवाटिका मासिक पत्रिका, अगस्त 2012, पृष्ठ 16
6- वही, पृष्ठ 16
7- वही, पृष्ठ 16
8- नेहा वैद, बोल रही जन-गण की बोली, बालवाटिका मासिक पत्रिका, अगस्त 2012, पृष्ठ 15
9- धरोहर कविताएं- सोहनलाल द्विवेदी, प्रस्तुति कृष्ण शलभ, बालवाटिका मासिक पत्रिका, अप्रैल 2013, पृष्ठ 36
10- डॉ. मित्रेश कुमार गुप्त, वीर बालक, बालवाटिका मासिक पत्रिका, अप्रैल 2012, पृष्ठ 12
11- प्रभाष मिश्र 'प्रियभाष', अभिलाषा, बालवाटिका मासिक पत्रिका, अप्रैल 2012, पृष्ठ 36
12- राजनारायण चौधरी, नमन तुम्हें शत बार, बालवाटिका मासिक पत्रिका, अप्रैल 2012, पृ. 42
13- डॉ. देशबन्धु शाहजहाँपुरी, बाल कविता-'पन्द्रह अगस्त', बालवाटिका मासिक पत्रिका, स्वातंत्र्य चेतना अंक, अगस्त 2015, नंदभवन कावाँखेड़ा पार्क, भीलवाड़ा (राज.), पृ. सं. 14
14- प्रमोद लायटू, बालवाणी मासिक पत्रिका, जुलाई-अगस्त 2015, संपा. अनिल मिश्र,उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान, हिंदी भवन, महात्मा गांधी मार्ग, लखनऊ, पृष्ठ 02
15- वही,पृ. सं. 46
16- रमेशचन्द्र पंत, बाल कविता-'तिरंगा कभी न झुकने देंगे', बालवाटिका मासिक पत्रिका, स्वातंर्त्य चेतना अंक, अगस्त 2015, नंदभवन कावांखेड़ा पार्क, भीलवाड़ा (राज.), पृ. सं. 20
17- प्रशांत अग्निहोत्री, देश हमारा बहुत महान, बाल भारती मासिक पत्रिका, संपा. आभा गौड़, जनवरी 2015, सूचना भवन, लोधी रोड, नई दिल्ली, पृष्ठ 25
18- डॉ. नागेश पांडेय 'संजय', 'हिंदुस्तान हमारा देश' कविता 'यदि ऐसा हो जाए' संकलन में संकलित कविता।
19- विमला जोशी 'विभा', बाल कविता- 'आजादी का पर्व', बालवाटिका मासिक पत्रिका, स्वातंत्र्य चेतना अंक, अगस्त 2015, नंदभवन कावांखेड़ा पार्क, भीलवाड़ा (राज.), पृ. सं. 23

- हमारे हिम्मत न कर पाने का कारण यह नहीं है कि कुछ कर पाना कठिन है, बल्कि कुछ कर पाना कठिन इसलिए है कि हम हिम्मत ही नहीं करते। -अज्ञात
- किसी सफल व्यक्ति तथा दूसरे के बीच अंतर ताकत का नहीं, इच्छाशक्ति का होता है। -अज्ञात

आलेख

बाल कविता और भवानी प्रसाद मिश्र

● प्रकाश चंद्र

हिंदी साहित्य की केंद्रीय चर्चा में बाल साहित्य कम ही रहा है। हमेशा से बाल साहित्य को अगंभीर साहित्यिक कर्म के रूप में देखा गया। आज भी बाल साहित्य के अस्तित्व पर अलग से कम ही बात होती है। इसलिए कभी बचकाना साहित्य कह कर तो कभी साहित्यिक गंभीरता (जो कम ही दिखती है) के नाम पर बाल साहित्य को केंद्र से बाहर ही रखा गया। इसके बावजूद हिंदी में बाल साहित्य लेखन आरंभ से होता रहा। अगर बाल साहित्य पर एक नजर दौड़ाएं तो बाल साहित्य के रूप में हमारे यहां नीति-कथाओं से लेकर लोककथाओं तक का एक लंबा इतिहास रहा है जो एक 'सीख' के साथ-साथ बच्चों का मनोरंजन भी करता आया है। इन कथाओं में 'पंचतंत्र' एक ऐसी पुस्तक रही है जिसका संबंध हर बचपन से जुड़ा रहा। इसके आतरिक्त मौखिक रूप से परियों की कहानियों से लेकर नानी और दादी के 'होममेड' किस्सों के कल्पना लोक में हर बाल मन विचरण करता आया है। ये किस्से और कहानियां बचपन को एक मानसिक संस्कार देती थीं, जिसमें मनोरंजन के साथ-साथ सीख और उपदेश अंतर्निहित होता था। समय के अनुसार इसमें भी परिवर्तन हुआ। आज बच्चे कल्पना में नहीं बल्कि यथार्थ में विचरण करना चाहते हैं। आज बच्चे किसी भी बात को सहज स्वीकार नहीं करते हैं। इस बदलाव में समय, परिस्थितियों के साथ परिवार के वातावरण की अहम भूमिका रही है। कहानी आरंभ से ही बाल साहित्य की प्रमुख विधा रही है पर आज उपन्यास से लेकर कविता, नाटक, व्यंग्य आदि विधाओं में भी बाल साहित्य रचा जा रहा है। बाल साहित्य का प्रभाव आज बच्चों पर कितना पड़ रहा है? सूचना और विज्ञान के इस युग में बाल साहित्य की सार्थकता क्या है? कुछ ऐसे प्रश्न हैं जिनके बारे में गंभीरता से विचार करने की जरूरत है।

बाल साहित्य यानी बच्चों के लिए लिखा गया साहित्य। साहित्य के माध्यम से बच्चों में 'खास तरह' का संस्कार पैदा करना बाल साहित्य का ध्येय होता है। खास तरह से आशय यहां बच्चों को अपनी परंपरा, संस्कृति और महानता से परिचय कराना होता है। दिविक रमेश एक आलेख में बाल साहित्य का आशय स्पष्ट करते हुए लिखते हैं कि- "बाल साहित्य का मूल आशय बालक के लिए 'उपयोगी' सृजनात्मक साहित्य से है। बहुत से लोग बालक के लिए 'उपयोगी' अथवा शिक्षाप्रद साहित्य को भी बाल-साहित्य में, ठीक-गलत, गिन लिया करते हैं। उदाहरण के लिए साइकिल पर कविता और साइकिल से संबद्ध, बालक को ध्यान में रख कर प्रस्तुत की गई जानकारी पूर्ण सामग्री दो अलग-अलग रूप हैं। पहला सृजनात्मक साहित्य है तो दूसरा उपयोगी।" लेकिन बाल साहित्य के संदर्भ में हरिकृष्ण देवसरे का मत थोड़ा अलग है, वे लिखते हैं कि- "किसी भी बालक का मानसिक और चारित्रिक विकास को जो तत्त्व प्रभावित करते हैं उनमें बच्चों का अपना सामाजिक और पारिवारिक परिवेश, माता-पिता की विचारधारा और स्कूल के वातावरण की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। किंतु इन सबसे अधिक पैना और गहरा प्रभाव वह साहित्य छोड़ता है जिसे वे अपना समझ कर पढ़ते हैं, जो उनकी रुचि के अनुकूल होता है, जिससे वे तादात्म्य स्थापित करते हैं और जिसमें वे अपने मन की अनुभूतियों की अभिव्यक्ति पाते हैं। वस्तुतः यही साहित्य 'बाल साहित्य' कहलाता है। पुराने जमाने में यह बालसाहित्य अलिखित या मौखिक रूप में था।" बाल साहित्य किसे कहा जाए? वे कौन से तत्व हैं जो बाल साहित्य के लिए अपेक्षित हैं? इन संदर्भों को लेकर विद्वानों ने लगभग समान रूप से विचार किया है। हिंदी बाल साहित्य : कल और आज नामक आलेख में अखिलेश श्रीवास्तव लिखते हैं कि "बाल साहित्य यानी बच्चों के लिए रचा गया साहित्य, यानी बच्चों को शिक्षित एवं संस्कारित करने के उद्देश्य से रचित साहित्य, यानी वह साहित्य जिसके साए में पलकर बचपन किशोर होता है, जवान होता है और एक सुसंस्कारित नागरिक बनता है। बाल साहित्य यानी वह साहित्य जो बच्चों के अंदर साहित्यिक अभिरुचि का बीजारोपण करके उन्हें भविष्य का कवि, लेखक, समालोचक अथवा गंभीर पाठक बनाता है।" बाल साहित्य को लेकर इतना परिवर्तनकारी भाव और अपेक्षाएं ठीक नहीं है। बाल साहित्य पढ़कर कोई कवि या समालोचक बनेगा, यह अपेक्षा कविता से क्रांति जैसी है। मूलतः बाल साहित्य वह साहित्य

बाल साहित्य की आरंभिक धारा को बाल कविता के जरिए ही अपेक्षित विस्तार मिला जिसकी स्पष्ट झलक उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध और बीसवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध काल से ही देखने को मिल जाती है। भारतेंदु युग में हिंदी की प्रथम बाल पत्रिका 'बाल दर्पण' (1882) निकलती है, इसके साथ ही बाल साहित्य लेखन का आविर्भाव हिंदी में होता है।

है जो मनोरंजन के साथ-साथ बच्चों में पठन-पाठन का संस्कार विकसित करता है।

बाल साहित्य की आरंभिक धारा को बाल कविता के जरिए ही अपेक्षित विस्तार मिला जिसकी स्पष्ट झलक उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध और बीसवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध काल से ही देखने को मिल जाती है। भारतेंदु युग में हिंदी की प्रथम बाल पत्रिका 'बाल दर्पण' (1882) निकलती है, इसके साथ ही बाल साहित्य लेखन का आविर्भाव हिंदी में होता है। हिंदी कविता में श्रीधर पाठक से बाल कविता लेखन की शुरुआत होती है। इस दौर में श्रीधर पाठक (बाल भूगोल, भारत गीत) के अतिरिक्त बाल मुकुंद गुप्त (खिलौना) महावीर प्रसाद द्विवेदी (बालविनोद), अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध' (बाल-विभव, चंद्र खिलौना) आदि ने भी बाल कविताएं लिखीं। इस युग में विद्याभूषण विभु जैसे कवि भी थे जिन्होंने प्रचुर मात्रा में बाल साहित्य लिखा। इनकी कविता 'घूम हाथी झूम हाथी' बड़ी चर्चित रही है। इसके अलावा महादेवी वर्मा, रामकुमार वर्मा, सुमित्रानंदन पंत, रामधारी सिंह दिनकर आदि कवियों ने भी 'शिशु', 'बालसखा' जैसी बाल पत्रिकाओं के माध्यम से बाल साहित्य को समृद्ध किया और उसके विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। इस पूरे कालखंड की बाल कविताओं में 'नीतिपरक' संदर्भ अधिक देखने को मिलते हैं। लेकिन समय, काल और परिस्थितियों के अनुसार बाल साहित्य के विषय और कलेवर में परिवर्तन आया। आजादी के बाद बाल साहित्य की भाषा तुतलाने की बजाय सीधे-सीधे तौर पर संवाद करने लगी और 'नीति' की जगह उसमें अब बच्चों की रुचि और एक नए समाज की कल्पना का समावेश दिखाई देने लगा।

आजादी के बाद की बाल कविता को एक दिशा देने तथा व्यापक पहचान दिलाने का काम कवि शेरजंग गर्ग ने किया। बदलती मनोवृत्ति के अनुरूप कविता की भाषा और शिल्प में परिवर्तन बालकवि शेरजंग गर्ग की कविताओं में देखा जा सकता है। लेकिन इस पूरे परिवर्तन को अखिलेश श्रीवास्तव परिस्थितिजन्य मानते हैं और इन परिस्थितियों का बाल मन व बाल कविता से रिश्ते को कुछ ऐसे व्याख्यायित करते हैं "स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद देश में आए व्यापक सामाजिक परिवर्तन के साथ ही बच्चों के प्रति सामाजिक दृष्टिकोण में भी भारी बदलाव आया। अभी तक परिवार तथा समाज में बच्चों की रुचियों तथा आवश्यकताओं को गंभीरता से नहीं लिया जाता था। लेकिन स्वतंत्रता के बाद बच्चों के अस्तित्व को मान्यता मिली, परिवार, समाज में उनको महत्त्व मिलने लगा उनमें शिक्षा के प्रचार-प्रसार पर विशेष ध्यान दिया जाने लगा।" इस परिवर्तन का प्रभाव बाल कविता पर स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। इन बदलती परिस्थितियों के साथ बाल कविता लेखन में कवि भवानी प्रसाद मिश्र का पदार्पण होता है। आज़ादी के बाद आपातकाल आज़ाद भारत की एक बड़ी घटना थी, इस घटना ने समाज के सभी लोगों को प्रभावित किया। भवानी प्रसाद मिश्र को इस दौर में सत्ता का विरोधी घोषित कर जेल में डाल दिया गया। इस दौरान उन्होंने बाल कविताएं लिखीं जो 'तुकों के खेल' नामक संग्रह में संगृहीत हैं।

अब तक बाल कविता बाल साहित्य की एक सशक्त विधा बन चुकी थी। बच्चे आरंभ में लोरियों और शिशु गीतों के माध्यम से कविताएं सीखते हैं। किंतु हिंदी में अधिकांशतः जो कविताएं लिखी गई वे छोटे बच्चों को ध्यान में रख कर लिखी गईं। बड़े बच्चों के लिए जो कविताएं लिखी गई हैं, वे या तो राष्ट्रीय भावना की कविताएं रही हैं या उन्हें कुछ सीखाने के उद्देश्य से लिखी गई थीं। बढ़ती उम्र के बच्चों यानी किशोर वय के बच्चों की मानसिकता और उनकी सोच को अभिव्यक्ति देने वाली कविताओं का नितांत अभाव रहा। भवानी प्रसाद मिश्र इस अभाव को काफी हद तक दूर करते हैं। भवानी की नेहरू पर लिखी कविता 'याद तुम्हारी' हो या 'पंद्रह अगस्त' कविता या फिर 'भाईचारा' सभी बाल कविताओं में राष्ट्रीय भावना व सीख के साथ एक सोच व विज़न स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। भवानी की कविताएं बाल मन को गुदगुदाती ही नहीं बल्कि पूरी मानसिक कसरत भी कराती हैं। 'तुकों के खेल' कविता को ही देखा जाए तो उसमें पूर्ण मानसिक कसरत है। मेल बेमेल/तुकों के खेल/जैसे भाषा में ऊंट की/नाक में नकेल!/इससे कुछ तो/बनता है/भाषा के ऊंट का सिर/जितना तानो/उतना तनता है!

भवानी प्रसाद मिश्र ने आरंभ से ही बाल कविताएं लिखीं। भवानी की आज़ादी से पहले की बाल कविताओं में जहां एक ओर खिलंदड़ापन दिखाई देता है तो वहीं उन कविताओं में बाल मनोविज्ञान का पूरा समाजशास्त्र भी मौजूद है। बाल मन को आकर्षित करने वाली कविता 'आम' एक ऐसी कविता है जिसमें

बहुत ही सहजता से भवानी फलों के राजा से परिचित भी कराते हैं और उसके बारे में जानकारी भी देते हैं। कवि बड़े ही सरल शब्दों में आम की आकृति उसके गुणों समेत बाल मन पर अंकित करता है- यह फल कहलाता है आम/जी खुश होता सुनते नाम/इसका पीला-पीला रंग/कभी हरा भी होता संग/किसको नहीं सुहाता है/मेरे तो मन भाता है! 1937 में लिखी इस कविता में लय और ताल का ऐसा तालमेल है जो स्वतः ही बाल मन को अपनी ओर आकर्षित करता है। वाल्टर डिला मोरे ने लिखा कि 'कविता के शब्दों की ध्वनि संगीत की ध्वनि से मिल जाती है। तब वे शब्द केवल सुनने से ही आनंद और प्रसन्नता प्रदान करते हैं'। भवानी की कविताओं के शब्दों में भी ध्वनि खनक गहरी होती है। उनकी बाल कविता 'भाईचारा' शब्दों के माध्यम से बाल मन पर लंबे समय तक असर छोड़ने वाली कविता है- अक्कड़ मक्कड़, धूल में धक्कड़,/दोनों मूरख, दोनों अक्खड़,/ हाट से लौटे, ठाट से लौटे/एक साथ एक बाट से लौटे........../ मगर एक कोई था फक्कड़/मन का राजा, कर्रा-कक्कड़......../उसने कहा, सही वाणी में/डुबो चुल्लू भर पानी में/ताकत लड़ने में मत खोओ/चलो भाई-चारे को बोओ! याद रहे यह वह कवि है जिसका उस समय की जटिल सामाजिक और राजनैतिक गतिविधियों में महत्त्वपूर्ण दखल था। उन जटिल संरचनाओं के बीच से, इस तरह की बाल सुलभ और कोमल कविता भी कवि लिख रहा था जो बालकोचित भाव से पूर्ण थी।

बालक का मन बिलकुल निष्कपट होता है उसमें न कोई राग होता है न किसी के प्रति विद्वेष की भावना। बचपन का अपना एक संसार होता है जिसमें बाल मन विचरण करता है। बाल मन में समाए इस संसार को शब्दों के माध्यम से कम ही कवि अभिव्यक्त कर पाते हैं- हर किसी कसौटी पर कस लो/हम हैं पूरे-हम सच्चे हैं/हम बच्चे हैं/हम कभी नहीं होंगे बूढ़े/हम बच्चे हैं/हम अच्छे हैं/हम सच्चे हैं। बाल मन की उथल-पुथल को अभिव्यक्त करने के लिए बाल मनोविज्ञान की समझ जरूरी है। भवानी में बाल मनोविज्ञान की गहरी समझ है। बालक के मन में अपने आस-पास की वस्तुओं और पशु-पक्षियों के प्रति विशेष आकर्षण होता है और उनके बारे में जानने की गहरी लालसा भी। इसलिए देखने में आता है कि बाल कहानियों के पात्रों में बिल्ली, शेर, लोमड़ी, कुत्ता, कबूतर, गोरैया, गिलहरी आदि का बाहुल्य दिखाई देता है। बाल मन को पशु-पक्षी ज्यादा आकर्षित करते हैं। भवानी बाल मन की फंतासी को बहुत ही अच्छे से पकड़ते हैं और बिल्ली और लोमड़ी की कहानी को कविता में पिरो कर एक सुंदर कविता लिखते हैं- एक बिल्ली शहर से जंगल गई/देखकर उसको वहां बिलकुल नई/एक आई लोमड़ी हंसने लगी । इसी कविता की अंतिम पंक्तियों में भवानी खेल-खेल में बड़ी गहरी व शिक्षाप्रद बात सहज शब्दों में कहते हैं- पास में सौ गुण अधूरे कुछ नहीं/वे अगर पूरे नहीं तो कुछ नहीं/सौ अधूरे एक पूरे पर निसार/एक आया काम, कब आए हजार! 'बिल्ली और लोमड़ी' कविता पंचतंत्र की कहानियों का ही एक्स्टेंसन है। पर यह कविता कहीं-न-कहीं बाल कविता के प्रौढ़ होने की ओर भी संकेत करती है। इसमें बाल मन के कौतूहल के साथ एक महीन सीख भी है जो बड़ी महत्त्वपूर्ण है।'एक आया काम, कब आए हजार'? यह पंक्ति उमंगों से भरे बाल मन को थोड़ा ठहर कर सोचने को मजबूर करती है और बाल मन में एक जिज्ञासा भी पैदा करती है। इसके साथ ही भवानी की 'अपना-अपना काम' कविता को देखा जाना चाहिए जिसमें वे कुत्ते और गधे की प्रसिद्ध बाल कहानी को कविता में पिरोते हैं और लगभग रूढ़ हो चुकी इस उक्ति- जिसका काम उसी को साजे/और करे तो डंडा बाजे। को एक नए अंदाज में बच्चों के सामने रखते हैं। देखा जाए तो भवानी की बाल कविताओं में कोरी फंतासी और कोरा मनोरंजन ही नहीं है बल्कि उनमें एक सीख भी अंतर्निहित है।

बच्चों के लिए कविता का आनंद बहुत विस्तृत होता है और कई प्रकार का होता है। कविता में बालक की कल्पना उसके ज्ञान की सीमा को पार करके आगे निकल जाती है। उसके भाव उसे इतनी दूर ले जाते हैं जहां ज्ञान से काम नहीं चलता। लेकिन भवानी की बाल कविताओं में कल्पना लोक के बरक्स यथार्थ का समावेश अधिक है- वर्णमाला का गीत कविता में जहां भवानी वर्णमाला पर कविता लिखते हैं तो वहीं चाचा नेहरू पर लिखी उनकी कविता 'याद तुम्हारी' नेहरू की एक छवि गढ़ती है- सुख देती है, दुख देती है, बारी-बारी/चाचा नेहरू याद तुम्हारी!/उदय हुए तुम इस धरती पर/सूरज जैसे........../चले गये तुम यह तो सच है/मगर उदा'रन छोड़ गये हो/बैठे-बैठे रोने-धोने की परंपरा/तोड़ गये हो! । नेहरू का बच्चों के प्रति विशेष लगाव था वह तो जगजाहिर है। लेकिन भवानी का भी गांधी और नेहरू के विचारों के प्रति विशेष लगाव था। नेहरू के प्रति बाल मन में

बाल साहित्य में भाषा का अपना विशेष महत्त्व होता है। भाषा जितनी ही रोचक एवं कौतूहलपूर्ण होगी, बच्चों को पढ़ने में उतना ही मजा आएगा। बाल कविता में तो भाषा का महत्त्व और भी बढ़ जाता है। बाल कविता में ऐसे शब्दों का प्रयोग हो जो बच्चों के छोटे संसार से परिचित हों। भवानी की बाल कविताओं की शब्द योजना बाल संसार के इर्द-गिर्द की ही होती है।

जिज्ञासा पैदा करना और उसके साथ ही 'बैठे-बैठे रोने-धोने की परंपरा/तोड़ गये हो!' जैसी पंक्तियों के माध्यम से बाल मन में उत्सुकता भी भवानी जगाते हैं। जानने की ललक, जिज्ञासा और उत्सुकता पैदा करना बाल साहित्य का प्रमुख लक्ष्य होता है जिसमें भवानी सफल दिखते हैं।

बाल साहित्य में भाषा का अपना विशेष महत्त्व होता है। भाषा जितनी ही रोचक एवं कौतूहलपूर्ण होगी, बच्चों को पढ़ने में उतना ही मजा आएगा। बाल कविता में तो भाषा का महत्त्व और भी बढ़ जाता है। बाल कविता में ऐसे शब्दों का प्रयोग हो जो बच्चों के छोटे संसार से परिचित हो। भवानी की बाल कविताओं की शब्द योजना बाल संसार के इर्द-गिर्द की ही होती है। चाचा नेहरू पर लिखी उनकी कविता में देखें तो कवि पूरी कविता में ऐसे शब्दों का प्रयोग करता है जो बाल मन के अनुरूप हैं। कविता में आया एक शब्द 'उदाहरण' को कवि बाल शैली में उदा'रन लिखता है। इसके साथ ही 'पंद्रह अगस्त' जैसी राजनैतिक कविता में भी कवि बहुत ही सहज शब्दों में बहुत कुछ अभिव्यक्त करता है- सांप रबर का ले आए बाजार से/थमा दिया पापा ने हमको प्यार से!/सांप सरीखा रंग, चाल भी लहर-लहर/मगर नहीं है जान, नहीं कोई जहर...../ आजादी भी आयी है बाजार से/किसी पापा ने हमें थमा दी प्यार से! 1979 में लिखी गई यह कविता आज़ादी को लेकर इतना बड़ा व्यंग्य बहुत ही सहज शब्दों में व्यक्त करती है। भवानी की बाल कविताओं की यही सबसे बड़ी ताकत है। बाल कविता के विकास को भी इस कविता के माध्यम से देखा जा सकता है। जो समीक्षक बाल कविता को आज भी बचकाना साहित्य समझ कर उसके अस्तित्व को नकारते हैं उन्हें भवानी की बाल कविताओं को पढ़ना चाहिए। मुख्यधारा की कविताओं से भी भवानी की कई बाल कविताएं आगे हैं 'पंद्रह अगस्त' उसका एक उदाहरण मात्र है। विष्णु खरे ने कविता के संदर्भ में कहा कि "यदि मुझसे पूछा जाए कि आज की कविता में क्या देखा जाना चाहिए तो मैं कहूंगा कि आदमी के अस्तित्व और उसके सामने खड़े सारे संकटों को लेकर चिंता और प्रतिबद्धता, मानव होने के रोमांचक मामले में गहरी दिलचस्पी, जीवन और रिश्तों के अनंत वैविध्य के प्रति उत्सुकता और इन सबको अपनी भाषा और शैली में कह पाने की क्षमता।" भवानी की कविताओं में वह सारी क्षमताएं देखी जा सकती हैं जिनकी बात विष्णु खरे कह रहे हैं।

बाल साहित्य में भाषा का अपना विशेष महत्त्व होता है। भाषा जितनी ही रोचक एवं कौतूहलपूर्ण होगी, बच्चों को पढ़ने में उतना ही मजा आएगा। बाल कविता में तो भाषा का महत्त्व और भी बढ़ जाता है। बाल कविता में ऐसे शब्दों का प्रयोग हो जो बच्चों के छोटे संसार से परिचित हो।

कुल मिलकर देखा जाए तो आज के बच्चों के पास अनंत जिज्ञासाएं हैं। वे इतना कुछ जानना चाहते हैं कि सब कुछ बता पाना शायद संभव नहीं। बच्चे वह सब कुछ जानने के लिए उत्सुक रहते हैं जो उनके आस-पास घट रहा होता है। चाहे वह चांद पर आदमी पहुंचने की घटना हो, बलात्कार की घटना हो, दंगों की घटना या फिर विज्ञापनों के माध्यम से दिखाई जाने वाली सामग्री के बारे में हो। इसलिए आज जरूरी है कि उन्हें बदलते परिवेश के लिए तैयार किया जाए। यह समय चंदामामा की कहानियों का नहीं रहा न ही 'मोगली' की जंगल गाथा का, यह समय 'टॉम एंड जेरी' से भी आगे बढ़ चुका है। आज का समय 'हथोड़ी' और 'छोटा भीम' का समय है जिसके पास करामाती शक्तियां हैं जो बच्चों की फंतासी को बहुत दूर तक ले जाता है। इसमें भले ही बाजार की अहम भूमिका हो पर बच्चों की बदलती मानसिक संरचना को भी अनदेखा नहीं किया जा सकता है। आज इन पहलुओं को बाल साहित्य लिखते हुए ध्यान में रखना होगा। इसके अलावा कुछ प्रश्न हैं जिनपर भी विचार करने की जरूरत है। आखिर बाल साहित्य से भी गांव गायब क्यों है? गांव में रहने वाले बच्चों की मानसिकता से जुड़ी रचनाएं कम ही लिखी गई हैं। एक लड़के और एक लड़की का बचपन एक सा नहीं होता है, फिर भी क्यों बाल साहित्य से लड़कियों को प्रायः उपेक्षित रखा गया? आदि।

शोधार्थी
महात्मा गांधी अंतर्राष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा
मो.– 0 96570 62744

संदर्भ पुस्तकें

- भवानी प्रसाद मिश्र रचनावली भाग-7, (सं.) विजय बहादुर सिंह, (2002), अनामिका पब्लिशर्स, नई दिल्ली
- कविता के सौ बरस (सं.) लीलाधार मंडलोई, (2008) शिल्पायन पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली
- बाल साहित्य मेरा चिंतन हरीकृष्ण देवसरे, (2002), मेधा बुक्स, नई दिल्ली
- हिंदी बाल कविता का इतिहास प्रकाश मनु, (2003), मेधा बुक्स, नई दिल्ली
- भवानी प्रसाद मिश्र का काव्य संसार कृष्णदत्त पालीवाल, (2004), वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली
- आजकल (पत्रिका) (सं) सीमा ओझा, नवंबर-2008

आलेख

वर्तमान समय में बाल पत्रिकाएं एवं साहित्य

● पवन चौहान

बाल साहित्य अर्थात बच्चों के लिए लिखा जाने वाला साहित्य। बाल साहित्य जहां बच्चों में अच्छे संस्कारों का विकास करता है वहीं उनमें नई ऊर्जा का संचार करता है। यदि हम बाल साहित्य के इतिहास में झांकें तो आधुनिक हिंदी साहित्य का निर्माता भारतेंदु हरीशचंद्र को जाता है और साथ ही उन्हें बाल साहित्य का जनक भी माना जाता है। भारतेंदु हरीशचंद्र ने 1882 ई. में 'बाल दर्पण' नामक पत्रिका का प्रकाशन आरंभ करवाया। इसके बाद की पत्रिकाओं जैसे शिशु, वानर कुमार, बालसखा, विद्यार्थी आदि पत्रिकाओं से सही मायनों में बाल साहित्य की मौलिक, सामयिक और उद्देश्यपूर्ण लेखन की शुरुआत मानी जाती है। बाल साहित्य में इसके बाद भी बहुत सारी पत्रिकाएं प्रकाशित हुईं जिसमें बाल हितकर, बाल प्रभाकर, बाला बोधिनी, मानीटर, चमचम, अमर कहानी, राजा भैया, बालक, मेला, बाल मेला, छात्र हितैषी, दोस्त कलरव, तारा, बाल लहर, बाल परंपरा आदि। इन पत्रिकाओं ने निःसंदेह बाल साहित्य सृजन को उसमें समय नई दिशा और दशा प्रदान की। 1940-50 में बाल साहित्य में एक नया जोश और गति मिली जब श्रीधर पाठक, ठाकुर श्रीनाथ सिंह, विष्णुकांत पांडे, लल्ली प्रसाद पांडे, द्वारका प्रसाद माहेश्वरी, सोहन लाल द्विवेदी, निरंकार देव सेवक आदि बहुत से ख्यात लेखकों ने बाल साहित्य के विकास, प्रचार-प्रसार और इसके उत्थान के लिए अपनी सारी ऊर्जा और प्रतिभा को लगा दिया।

इसके बाद बहुत सारी पत्रिकाएं आईं जिन्होंने बाल साहित्य के क्षेत्र में अपने स्तर, पठनीयता, पेंटिंग, रेखांकन और स्तरीय सामग्री के कारण पाठकों के दिलों में जल्दी ही अपनी जगह बना ली। इनमें हम 'पराग' का नाम लें तो गलत न होगा। हरिकृष्ण देवसरे ने इस पत्रिका में कई प्रयोग किए। उन्होंने इस पत्रिका में कल्पना लोक, चमत्कार आदि घेरे से पाठकों को हकीकत की दुनिया का सामना करवाया। देवसरे ने तर्कसंगत, समय सापेक्ष्य और यथार्थपरक दृष्टि के कारण बाल साहित्य में एक नई नींव रखी। पाठकों ने देवसरे के इस प्रयोग को सहर्ष स्वीकार किया और जल्दी ही 'पराग' सबकी पसंदीदा पत्रिका बन गई। बाल साहित्य में एक विशेष घटना तब हुई जब अहिंदी क्षेत्र मद्रास से 1948 में 'चन्दामामा' पत्रिका का प्रकाशन प्रारंभ हुआ। इस पत्रिका को पाठकों ने बहुत जल्द ही अपने पाठन का हिस्सा बना लिया और यह पूरे देश में बहुत लोकप्रिय हो गई। बाल साहित्य में इस वक्त कविता, कहानी, नाटक, उपन्यास आदि हर विधा में लिखा जा रहा है।

आज का बाल साहित्य कई विविधताओं से भरा पड़ा है। आज के बाल साहित्य में जहां परियों, राजा-रानी, पशु-पक्षियों की कहानियां सम्मिलित हैं वहीं इसमें वैज्ञानिक दृष्टिकोण और आज के वर्तमान समय के यथार्थ को प्रस्तुत करती कहानियां बखूबी पढ़ी जा सकती हैं। कई पत्रिकाएं परी कथाओं, भूत-प्रेत, राजा-रानी की कथाओं को सिरे से नकारती नजर आती हैं। वे इन कहानियों को बच्चों को यथार्थ से दूर ले जाने का इलजाम जड़ती हैं।

अभी कुछ समय पहले के शोध कार्य के दौरान वैज्ञानिकों को इस बात का पता चला कि बच्चे कंप्यूटर, टेलीविजन या वीडियो पर जो तथाकथित वैज्ञानिक कहानियां देखते हैं, उनसे उनके दिमाग का केवल वही हिस्सा प्रभावित होता है जो वह सामने के दृश्य जगत को देख पाता है और मूवमैंट को समझ पाता है। बस, इन्हें निरंतर देखते रहने से दिमाग के बाकी हिस्से कुंद पड़ने लगते हैं। इन वैज्ञानिकों का यह निष्कर्ष था कि टेलिविजन या फिल्म देखने के बजाय काल्पनिक कहानियां सुनकर बच्चों के मस्तिष्क के सामने का वह हिस्सा प्रभावित होता है, जिसके स्पंदन से बच्चे के व्यवहार का निर्माण होता है, बच्चे में इमोशन और भावना निर्मित होती है और संवेदनशीलता आती है। कल्पनाशक्ति बढ़ने के साथ-साथ उसका दिमाग भी तेज होता जाता है। यहां आज दोनों तरह के हिस्सों की सख्त जरूरत है ताकि बच्चा यथार्थ में रहकर अपनी कल्पनाशक्ति से भी लबरेज़ रह सके और उसके संस्कार, व्यवहार में भी आत्मीयता बनी रह सके।

चित्र कथाएं बच्चों को बहुत आकर्षित करती हैं। आज लगभग सभी पत्र-पत्रिकाएं इन चित्र कथाओं को नियमित

प्रकाशित कर रही हैं ताकि बच्चों का पत्रिका के प्रति आकर्षण बना रह सके। इन पत्र-पत्रिकाओं में इसके अलावा बच्चों को बहुत-सी चीजें, सीखने के लिए सामग्री दी जाती है। जिसमें बिंदु से बिंदु मिलाओ, रंग भरो, पजल, अल्फाबेट गेम, माथा पच्ची, वर्ग पहेली, गणित पहेली, विश्व की बहुत सारी जानकारी और अन्य प्रकार की बहुउपयोगी सामग्री दी जाती है। इस तरह की जानकारी बच्चों के सर्वांगीण विकास में बहुत लाभदायक सिद्ध होती है।

बच्चों के लिए लिखी जाने वाली और सुनाई जाने वाली कहानियों से हम उनके भविष्य की मजबूत नींव बना सकते हैं। यह कार्य हमें बहुत एहतियात से करना होगा। इसी सावधानी से हमें भविष्य में अच्छे नागरिकों का निर्माण करने में मदद मिलती है। आज विज्ञान का युग है। बच्चों के नन्हे-नन्हे विश्वासों और काल्पनिक जगत से जोड़कर उन्हें सामाजिक और वैज्ञानिक जानकारी देनी होगी तभी उसे वे आत्मसात् कर सही मार्ग पर आगे बढ़ सकेंगे। यदि हम हिमाचल प्रदेश की बात करें तो यहां भी हमें ऐसे कई नाम मिल जाते हैं जिन्होंने बाल साहित्य के क्षेत्र में उम्दा योगदान दिया है। इनमें हम संत राम वत्स, मस्त राम कपूर, गिरिधर योगेश्वर, सैनी अशेष, डॉ. प्रत्यूष गुलेरी, डॉ. गौतम व्यथित, कृष्णा अवस्थी, राम प्रसाद 'प्रसाद', राम मूर्ति वासुदेव प्रशांत, प्रेम सागर कालिया, मोती लाल घई, सुदर्शन डोगरा का नाम ले सकते हैं। इन साहित्यकारों ने बाल कविता, बाल गीत और बाल कहानियों पर मुख्य रूप से कार्य किया है। यदि बाल उपन्यास की बात करें तो हम इसमें सुशील कुमार फुल्ल का नाम शामिल कर सकते हैं। लेखिका आशा शैली का बाल उपन्यास 'कोलकता से अंडेमान तक' प्रेस में है। इसके अलावा हिमाचल से वर्तमान में रत्न चंद रत्नेश, कृष्ण चंद्र महादेविया, पवन चौहान, डा. नलिनी विभा 'नाजली', अशोक सरीन, अनंत आलोक, हरदेव सिंह धीमान, अदिति गुलेरी, राजीव त्रिगर्ती, प्रदीप गुप्ता आदि लेखक भी बाल साहित्य की सृजनता में लगे हैं। अदिति गुलेरी ने तो अपनी पी-एच. डी. के लिए बाल साहित्य को ही प्रमुखता दी। उनका विषय था 'हिमाचल में बाल साहित्य सर्वेक्षण एवं विश्लेषण'। इन सब बातों को सामने रखकर हम कह सकते हैं कि हिमाचल में बाल साहित्य पहले भी रचा जाता रहा है और आज भी इसकी रचनाशीलता अपनी प्रगति पर है।

आज का बाल साहित्य पहले के मुकाबले बहुत विकसित रूप में हमारे सामने मौजूद है। पहले विद्यार्थी बाल साहित्य को अपने शोध का विषय बनाने से डरते थे। उन्हें इस बात की चिंता हमेशा बनी रहती थी कि उन्हें बाल साहित्य भरपूर मात्रा में नहीं मिल पाएगा। लेकिन आज हालात बदले हुए हैं। बाल साहित्य को बहुत से विद्यार्थी अपने शोध का विषय चुन रहे हैं। देश के पुस्तकालयों में पहले के मुकाबले आज बाल साहित्य की कमी नहीं खलती है। पिछले कुछ वर्षों में बाल साहित्य को घर-घर तक पहुंचाने वाली कई बाल पत्रिकाओं का प्रकाशन बंद हो चुका है। जो निश्चय ही बाल साहित्य और बाल साहित्यकारों के लिए अच्छी खबर नहीं है। लेकिन बावजूद इसके आज भी बहुत सारी पत्र-पत्रिकाएं बाल साहित्य को सहर्ष प्रकाशित कर रही हैं। वर्तमान में नंदन, बालहंस, बाल भारती, चंपक, चकमक, बालवाटिका, बालप्रहरी, नन्हे सम्राट, बच्चों का देश, बालवाणी, देवपुत्र, अक्कड़-बक्कड़, टिंकल, बाल लेखनी, बाल प्रभात, अभिनव बालमन, स्नेह, लोट पोट, हंसती दुनिया, कोंपल, पाठक मंच बुलेटिन, पुष्पवाटिका, ललु जगधर आदि ऐसी बहुत-सी पत्रिकाएं हैं जो पूर्णतयः बाल साहित्य को समर्पित हैं। किशोरों की पत्रिका सुमन सौरभ को भी हम यहां शामिल कर सकते हैं। इसके अलावा बाल साहित्य के लिए सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह है कि प्रौढ़ साहित्यिक पत्रिकाओं ने भी बाल साहित्य की महत्ता को समझते हुए इसे अपनी पत्रिकाओं में कुछ पन्ने देकर नियमित रूप से प्रकाशित करने की जिम्मेदारी उठाई है। यह इस बात का प्रमाण है कि अब बाल साहित्य ने अपनी जड़ें मजबूती से जमा ली हैं। ऐसी पत्रिकाओं में साहित्य अमृत, शीराजा, अंतिम जन, कर्तव्य चक्र, समावर्तन, परिंदे, साहित्य समीर, सत्यदर्शन जैसी पत्रिकाओं का नाम लिया जा सकता है। इसके अलावा आजकल, मधुमती, साहित्य अमृत, नया ज्ञानोदय, नवनीत, कादंबिनी, हरिगंधा, समकालीन भारतीय साहित्य, हिमप्रस्थ, शब्द सामयिकी आदि ऐसी पत्रिकाएं हैं जो समय-समय पर बाल साहित्य पर विशेष अंक निकाल रही हैं। नैनीताल से निकलने वाली पत्रिका 'शैल सूत्र' भी बाल विशेषांक निकालने की योजना पर कार्य कर रही है। यह बाल साहित्यकारों के लिए बहुत ही शुभ संकेत है। इसके अलावा विभिन्न समाचार पत्र भी बच्चों के लिए हर सप्ताह या पाक्षिक अंतराल में बच्चों की सामग्री लेकर आते हैं। इनमें जनसत्ता, दैनिक ट्रिब्यून, दैनिक भास्कर (बाल भास्कर), दैनिक हरिभूमि (बाल भूमि), मध्यप्रदेश जनसंदेश (बालरंग), प्रभात खबर (बाल प्रभात), गिरिराज, नेशनल दुनिया, जनसत्ता, अमर उजाला, दैनिक जागरण, राष्ट्रीय सहारा, राजस्थान पत्रिका, नई दुनिया, डेली मिलाप, नवभारत टाइम्स, आज, दैनिक नवज्योति, जनवाणी, हिंदुस्तान आदि के नाम प्रमुखता से लिए जा सकते हैं। वैब पत्रिकाएं भी इस क्षेत्र में पीछे नहीं रही हैं। वे भी बाल साहित्य

आज का बाल साहित्य पहले के मुकाबले बहुत विकसित रूप में हमारे सामने मौजूद है। पहले विद्यार्थी बाल साहित्य को अपने शोध का विषय बनाने से डरते थे। चिंताग्रस्त रहते थे कि उन्हें बाल साहित्य भरपूर मात्रा में नहीं मिल पाएगा। लेकिन हालात बदले हुए हैं। आज बाल साहित्य को बहुत से विद्यार्थी अपने शोध का विषय चुन रहे हैं।

यदि हम हिमाचल प्रदेश की बात करें तो यहां भी हमें ऐसे कई नाम मिल जाते हैं जिन्होंने बाल साहित्य के क्षेत्र में उम्दा योगदान दिया है। इनमें हम संत राम वत्स, मस्त राम कपूर, गिरिधर योगेश्वर, सैनी अशेष, डॉ. प्रत्यूष गुलेरी, डॉ. गौतम व्यथित, कृष्णा अवस्थी, राम प्रसाद 'प्रसाद', राम मूर्ति वासुदेव प्रशांत, प्रेम सागर कालिया, मोती लाल घई, सुदर्शन डोगरा का नाम ले सकते हैं। इन साहित्यकारों ने बाल कविता, बाल गीत और बाल कहानियों पर मुख्य रूप से कार्य किया है। यदि बाल उपन्यास की बात करें तो हम इसमें सुशील कुमार फुल्ल का नाम शामिल कर सकते हैं। लेखिका आशा शैली का बाल उपन्यास 'कोलकता से अंडेमान तक' प्रेस में है। इसके अलावा हिमाचल से वर्तमान में रत्न चंद रत्नेश, कृष्ण चंद्र महादेविया, पवन चौहान, डा. नलिनी विभा 'नाजली', अशोक सरीन, अनंत आलोक, हरदेव सिंह धीमान, अदिति गुलेरी, राजीव त्रिगर्ती, प्रदीप गुप्ता आदि लेखक भी बाल साहित्य की सृजनता में लगे हैं। अदिति गुलेरी ने तो अपनी पी-एच. डी. के लिए बाल साहित्य को ही प्रमुखता दी। उनका विषय था 'हिमाचल में बाल साहित्य सर्वेक्षण एवं विश्लेषण'। इन सब बातों को सामने रखकर हम कह सकते हैं कि हिमाचल में बाल साहित्य पहले भी रचा जाता रहा है और आज भी इसकी रचनाशीलता अपनी प्रगति पर है।

को साहित्य की अन्य सामग्री के साथ सहर्ष छाप रही हैं। इनमें हस्ताक्षर, जयविजय, जनकृति आदि पत्रिकाओं का नाम लिया जा सकता है। इसके अलावा देश की प्रमुख महिला केंद्रित पत्रिकाएं भी बाल साहित्य में अपना योगदान दे रही हैं। वे छोटे बच्चों से लेकर किशोरों की परवरिश, उनकी शिक्षा-दीक्षा, उनके विकास आदि विषयों पर बहुत अच्छी व शोधात्मक सामग्री लेकर आती हैं। निश्चय ही यह सामग्री छोटे बच्चों की ओर अभिभावकों के नजरिए को सकारात्मकता प्रदान करती है जो बच्चों के विकास, उनकी देख-रेख व उनके सुनहरे भविष्य के लिए बहुत सहायक सिद्ध होती है।

यदि हम बाल साहित्य के पूर्व काल में नजर डालें तो हमें इस बात की जानकारी मिल जाती है कि बाल साहित्य इसके प्रारंभ काल में काफी उपेक्षा का शिकार भी रहा है। लेकिन फिर धीरे-धीरे सबके दृष्टिकोण में परिवर्तन हुआ और हर भारतीय भाषा में फिर इसकी जरूरत महसूस की जाने लगी। बाल साहित्य को लेकर आज गंभीर चिंतन और विमर्श का सिलसिला शुरू हो चुका है।

यूं बाल साहित्य के हमारे प्राचीन स्रोत मुख्यतः भारतीय महाकाव्य, प्राचीन लोककथाएं, पौराणिक कथाएं आदि रही हैं। इसके साथ ही पंचतंत्र, कथा सरित्सागर जैसे प्राचीन कथा साहित्य भी बाल साहित्य की रीढ़ की हड्डी हैं। लेकिन आज बाल साहित्य में बहुत बदलाव आया है। संयुक्त परिवार टूटे हैं और एकल परिवारों का जन्म हुआ है। व्यक्ति आज अपने कार्य में इतना व्यस्त हो चुका है कि उन्हें अपने बच्चों के साथ ढंग से बात करने तक का समय नहीं बचा है जिसके कारण दादा-दादी, नाना-नानी की कहानियों का तारतम्य टूट गया है। बच्चों के लिए यह वह साधन था जिसके जरिए वे अपने सामने हर जवाब को अपने बुजुर्गों से पूछकर अपनी हर जिज्ञासा एवं इच्छा की पूर्ति करते थे। यह वह तरीका था जिसके कारण उनमें अच्छे संस्कारों का विकास होता था। बड़े बच्चों के हरेक प्रश्न पर उन्हें हर बात के सही-गलत में फर्क महसूस देता था।

आज मुख्यतः इस बात पर चिंता जताई जा रही है कि मल्टीमीडिया जिस तरह से बच्चों के ऊपर हावी हो चुका है, उससे बच्चों का बचपन गुम होता जा रहा है। बच्चा मल्टीमीडिया के इन तमाम तंत्रों जैसे कंप्यूटर, लैपटाप, स्मार्टफोन आदि से बाहर ही नहीं निकल पा रहा है। वह वही देख रहा है जो उसे दिखाया जा रहा है। बहुत से ऐसे कार्टून चैनल हैं जहां बच्चों को बच्चों की सामग्री परोसी जा रही है। वह वैज्ञानिक दृष्टिकोण तो लिए हुए है लेकिन वह हमेशा लड़ाई-झगड़े, गुंडागर्दी, आतंकवाद आदि तमाम ऐसे विचारों से गुजरती है जो बच्चों में प्रतिकूल प्रभाव डालती है। यही कारण है कि इससे बच्चों की जीवन शैली पर गहरा प्रभाव पड़ा है और यह बच्चों को हिंसक और आक्रमक बना रहा है। उनकी भाषा शैली भी कार्टून सीरियलों के पात्रों जैसी हो गई है। बच्चों की भाषा बच्चों जैसी ही होनी चाहिए, न कि प्रौढ़ जैसी।

आज बेशक, इस बात पर बल दिया जाना चाहिए कि बच्चों में वैज्ञानिक सोच जागृत हो लेकिन यह भी ध्यान रखा जाना चाहिए कि वह सोच उन्हें अपराध की ओर न धकेलकर उनमें अच्छे संस्कारों का विकास कर पाए। तभी हमारा बच्चों के लिए लिखना सार्थक सिद्ध हो पाएगा और एक अच्छे समाज के निर्माण के लिए बीज बो सकेंगे।

गांव व डा.- महादेव, तहसील सुंदर नगर,
जिला मंडी (हि. प्र.)-175018, मो. 094185 82242

वसंत पंचमी

विश्व के आदिग्रंथ ऋग्वेद में सरस्वती को विद्या और बुद्धि की देवी कहा गया है। ज्ञान व्यक्ति को विनम्र एवं विवेकशील बनाता है और इन गुणों को यदि बचपन में ही पोषित किया जाए तो युवाओं के भविष्य को उज्ज्वल बनाया जा सकता है। बच्चों को विद्या की देवी मां सरस्वती के बारे में जानकारी देने के उद्‌देश्य से यह लेख इस अंक में सम्मिलित किया गया है। –संपादक

विद्या की देवी मां सरस्वती

● **प्रो. योगेश चंद्र शर्मा**

सरस्वती विद्या और बुद्धि की देवी हैं। उन्हीं से हमें पवित्रता, शुद्धि, समृद्धि और शक्ति प्राप्त होती है। प्राचीन ग्रंथों में इनका संबंध यज्ञीय देवता इड़ा और भारती से भी जोड़ा गया है। इनका प्रिय वर्ण श्वेत है, जो सात्त्विकता, सहजता और सरलता का प्रतीक है। यह वर्ण ईर्ष्या और क्रोध से परे रहकर शुद्ध ज्ञान का भी प्रतीक है। सरस्वती के वस्त्र भी श्वेत हैं और उनका आसन भी श्वेत कमल है। उनका वाहन श्वेत राजहंस है, जो नीर क्षीर विवेक का प्रतीक है। मां सरस्वती का यह व्यक्तित्व ज्ञान की पिपासा और शांति की लालसा रखने वाले किसी भी भक्त को अपनी ओर आकर्षित करने में समर्थ है। माघ शुक्ल पंचमी को वसंत पंचमी के दिन मां सरस्वती का आविर्भाव माना जाता है। तद्‌नुसार इस दिन सरस्वती के वार्षिक-पूजन का विधान है।

विश्व के आदिग्रंथ ऋग्वेद में सरस्वती का वर्णन है। प्रारंभ में सरस्वती का वर्णन पवित्र नदी के रूप में किया गया, जिसके किनारे बैठकर ऋषि-मुनियों ने मंत्रों की रचना की और वैदिक साहित्य की नींव लगाई। बाद में इन्हें नदी-देवता के रूप में स्वीकार किया गया और फिर इन्हें वाग्देवी के रूप में मान्यता मिली। ऋग्वेद में इसे सत्य बात कहने की प्रेरणा देने वाली और सुमति का ज्ञान करवाने वाली देवी की संज्ञा दी गई है। ऋग्वेद में ही इन्हें 'पावक' अर्थात् सबको पवित्र करने वाली और 'शंतमा' अर्थात् शांति देने वाली और सबका कल्याण करने वाली देवी भी कहा गया। सरस्वती के उपासकों में भी हमें इसी गुण की अपेक्षा रहती है। विद्या की प्राप्ति व्यक्ति को नम्र और विनयी बनाती है। सरस्वती, भारती और इड़ा इन तीन देवियों को ऋग्वेद (10.110.8) में तिस्रो देवी की भी संज्ञा दी गई। इस प्रकार ऋग्वेद-काल से ही देवी के रूप में सरस्वती को मान्यता मिल गई थी। कालांतर में ब्राह्मण ग्रंथों (शतपथ ब्राह्मण 3.9.1 तथा ऐतरेय ब्राह्मण 3.1) में इस रूप का और अधिक विकास हुआ। शतपथ ब्राह्मण (14.2.1,12) में स्पष्ट रूप में कहा गया- 'वाक वै सरस्वती'। उपनिषद् काल में तो मुख्यतः सरस्वती पर ही एक उपनिषद् की भी रचना कर दी गई- 'सरस्वती रहस्योपनिषद्'। पौराणिक काल में सरस्वती का रूप पूरी तरह विकसित हुआ।

पुराणों में सरस्वती के अनेक रूपों की चर्चा की गई। उनके जन्म के बारे में भी अनेक विचारधाराएं सामने आईं। एक विचारधारा के अनुसार स्वयं ईश्वर के मुख से सरस्वती का जन्म हुआ। इसीलिए इनका नाम 'वाणी' रखा गया। एक अन्य पौराणिक कथा के अनुसार सरस्वती का जन्म, पार्वती के शरीरकोष से हुआ। इसीलिए इनका एक नाम कौशिकी पड़ गया। देवी भागवत् के अनुसार सरस्वती का जन्म श्रीकृष्ण की जिह्वा से हुआ और उन्होंने ही सरस्वती-पूजा को प्रचारित किया।

प्राचीन संस्कृत साहित्य में सरस्वती का ब्रह्मा से विशेष संबंध है। ब्रह्मा संपूर्ण सृष्टि के रचयिता और रक्षक हैं। वे आदिपुरुष हैं। सृष्टि में सर्वप्रथम उन्हीं का आविर्भाव हुआ तथा बाद में उन्होंने सृष्टि का निर्माण किया। सृष्टि-निर्माण से संबंधित विभिन्न कथाएं पुराणों में हैं। एक कथा के अनुसार ब्रह्मा के दाएं भाग से स्वायंभुव मनु तथा बाएं भाग से शतरूपा उत्पन्न हुई। यही दोनों सृष्टि के जन्मदाता बने। ब्रह्मा की पत्नी के रूप में ब्रह्माणी का नाम लिया जाता है, जो उनकी शक्ति भी है। ब्रह्माणी के बारे में विशेष विवरण प्राप्त नहीं होता। लेकिन एक कथा के अनुसार ब्रह्मा ने स्वयं अपने शरीर के एक हिस्से से जिस नारी का निर्माण किया और जिसका नाम शतरूपा था, उसी को ब्रह्माणी भी कहा गया। शतरूपा इतनी सुंदर थी की स्वयं ब्रह्मा उसकी तरफ देखते रह गए। शतरूपा को ही सावित्री, सरस्वती, गायत्री तथा संध्या आदि नामों से भी पुकारा गया। इस संदर्भ में सरस्वती को ब्रह्मा की पत्नी बतलाया गया।

कुछ पुराणों में सरस्वती के इसी रूप को काफी अधिक उभारा गया। दूसरी तरफ सरस्वती के बारे में यह भी कहा गया कि ब्रह्मा के मुख से उत्पन्न होने के कारण वे ब्रह्मा की पुत्री हैं और इसी रूप में उन्हें 'वाग्देवी' कहा जाता है। जनधारणा के अनुसार ब्रह्मा ने इन्हें अपनी पत्नी बना लिया था और इसीलिए कुछ प्राचीन ग्रंथों में ब्रह्मा के पूजन का निषेध किया गया है। संभवतः इसीलिए ब्रह्मा का केवल एक ही प्राचीन स्वतंत्र मंदिर उपलब्ध होता है और वह पुष्कर में है। एक कथा के अनुसार पुष्कर में जब सभी देवता अपनी-अपनी पत्नियों के साथ यज्ञ कर रहे थे, तब संयोगवश ब्रह्मा की पत्नी वहां उपस्थित नहीं थी। तब ब्रह्मा ने क्रोधवश एक गोपिका को ही गायत्री नाम देकर अपने साथ यज्ञ में बैठा लिया। जब सावित्री (सरस्वती) वहां आई और उन्होंने यह सब देखा तो उन्होंने ब्रह्मा को शाप दिया कि उनका पूजन पुष्कर के अतिरिक्त कहीं नहीं होगा। संभवतः इसीलिए सरस्वती के भी प्राचीन काल के स्वतंत्र मंदिर उपलब्ध नहीं होते। अन्य देवमूर्तियों के साथ सरस्वती की भी प्रतिमा की स्थापना अलग बात है।



पौराणिक कथाओं में हमें अकसर ही अतिशयोक्तियों की भरमार देखने को मिलती है। उनमें ऐसे प्रक्षिप्त अंश भी काफी अधिक ठूंसे हुए प्रतीत होते हैं, जो मान्य विचारधारा के विरोधियों द्वारा बाद में जोड़ दिए गए। यहां भी कुछ ऐसी ही स्थिति प्रतीत होती है। वेद सहित संपूर्ण ज्ञान का स्रोत ब्रह्मा को ही माना जाता है। सरस्वती प्रकारांतर में ज्ञान की ही प्रतीक हैं। इस रूप में भी सरस्वती, ब्रह्मा की पुत्री हैं। ज्ञान की प्रतीक देवी से ब्रह्मा के प्रभावित होने में कोई आश्चर्य की बात नहीं है। मगर केवल इसी से सरस्वती, ब्रह्मा की पत्नी नहीं बन जातीं। सरस्वती को ब्रह्मा की शक्ति के रूप में भी स्वीकारा गया है। प्राचीन ग्रंथों में ब्रह्मा के अनेक पुत्र, पौत्र, प्रपौत्र और मानस पुत्रों का वर्णन मिलता है, मगर उनमें कहीं भी मां के रूप में सरस्वती की चर्चा नहीं है। सरस्वती, संतानविहीन हैं।

गायत्री उस मंत्र का नाम है, जिसकी रचना ऋषि विश्वामित्र ने पुष्कर में की थी और जिसे सवितृ देव को अर्पित किया गया था। इस गायत्री-मंत्र को आज भी हिंदू समुदाय अपने लिए अत्यंत पवित्र और बुद्धि का दाता मानता हैं। घर घर में इस मंत्र का पाठ किया जाता है और इस मंत्र से यज्ञ भी किए जाते हैं। इस तथ्य से हमें यह जानकारी मिलती है कि ये तीनों देवियां सावित्री, गायत्री और सरस्वती समान रूप में बुद्धि और सद्गुणों की प्रतीक हैं। इसलिए पुष्कर में आयोजित तपस्या के महाकुंभ में आदिपुरुष ब्रह्मा के साथ इन तीनों का संदर्भ में आना सहज स्वाभाविक है। कालांतर में इसी तथ्य को आधार बनाकर सरस्वती को ब्रह्मा की पत्नी के रूप में प्रस्तुत करने के लिए प्रतीकात्मक कथाएं बना ली गईं। सावित्री, गायत्री और सरस्वती ये तीनों देवियां ज्ञान की प्रतीक हैं और ब्रह्मा ज्ञान के मूल स्रोत हैं। ज्ञान के उपासक हम सब हैं और इस रूप में हम सब सरस्वती के भक्त और पुत्र हैं तथा सृष्टि के पितामह ब्रह्मा सरस्वती के भी पिता हैं। डॉ. संपूर्णानंद ने अपने ग्रंथ 'हिंदू देव-परिवार का विकास' में कहा है कि 'इन कथाओं को पुराणों में नहीं देना चाहिए था। पुराण जनसाधारण के लिए हैं। यह आशा करना कि लोग इसका गंभीर आध्यात्मिक अर्थ समझ लेंगे, दुराशा मात्र है।'

एक अन्य उल्लेख के अनुसार लक्ष्मी, गंगा, सरस्वती तीनों पहले नारायण (विष्णु) की पत्नी थीं। बाद में गंगा और सरस्वती को नारायण से दूर होना पड़ा। तब इन्होंने अपने को दो भागों में विभाजित कर लिया। एक भाग में ये नदी के रूप में रहीं और दूसरे भाग में देवी के रूप में। देवी के रूप में भी सरस्वती के दो स्वरूप बने। ज्ञान की देवी के रूप में भारती या सरस्वती कहलाई और दूसरे रूप में ब्रह्माणी।

अन्य देवी-देवताओं के समान सरस्वती के चित्रों में भी उनके चार हाथ बतलाए जाते हैं। उनके दो हाथ वीणा थामने और उसे बजाने में व्यस्त हैं। तीसरे में पुस्तक तथा चौथे में माला है। वीणा, संगीत और अन्य सभी प्रकार की कलाओं की प्रतीक है। सरस्वती की कृपा के बिना कोई भी व्यक्ति किसी भी विद्या में श्रेष्ठ कलाकार नहीं बन सकता। पुस्तक उस ज्ञान की प्रतीक है, जिसकी स्वामिनी स्वयं सरस्वती हैं। ज्ञान की देवी के रूप में ही मां सरस्वती की आराधना अधिकांश शिक्षण संस्थाओं में की जाती है। परीक्षाओं में बैठने वाले छात्र-छात्राएं भी अपना शिक्षण कार्य प्रारंभ करने से पहले मां सरस्वती का स्मरण करना आवश्यक समझते हैं। माला अध्यात्म और निष्ठा की प्रतीक है, जिसके अभाव में कोई भी शिक्षण कार्य सफलता से संपन्न नहीं हो सकता। सांस्कृतिक कार्यक्रमों में भी सर्वप्रथम कला की स्वामिनी मां सरस्वती की आराधना प्रस्तुत की जाती है। सरस्वती की अभिव्यक्ति हमारे प्रत्येक शब्द में होती है। वह शब्द चाहे लिखा जाए और चाहे बोला जाए। इसलिए हिंदुओं में अधिकांशतः किसी भी प्रकार के ज्ञान की प्राप्ति के लिए सरस्वती

का आशीर्वाद आवश्यक माना जाता है। कभी कभी सरस्वती के एक हाथ में माला के स्थान पर 'कमंडलु' भी दिखलाई देता है, जो इस बात का प्रतीक है कि ज्ञान का भंडार अक्षय होता है। वह कभी समाप्त नहीं होता। विश्वभर को ज्ञान बांटने के बाद भी ज्ञान का कमंडलु भरा ही रहता है। यह केवल ज्ञान की विशेषता है, धन या अन्य वस्तुओं की नहीं।

सरस्वती की वार्षिक पूजा के लिए माघ शुक्ल की पंचमी, वसंत पंचमी का दिन विशेष रूप से निर्धारित किया गया है। इस समय का वासंतिक वातावरण ज्ञान की देवी सरस्वती की उपासना के लिए सर्वश्रेष्ठ अवसर प्रदान करता है। अनेक स्थानों पर बालकों का विद्यारम्भ भी इसी दिन से किया जाता है। शिक्षण संस्थाओं में इस दिन विशेष कार्यक्रम आयोजित किए जाते हैं। सांस्कृतिक कार्यक्रम भी संपन्न होते है। सरस्वती-पूजन, कहीं सरस्वती के चित्र के सामने और कहीं उनके प्रतीक के रूप में कलम-दवात के सामने किया जाता है। कहीं-कहीं आश्विन शुक्ल नवमी को भी पुस्तकों के रूप में सरस्वती का पूजन किया जाता है। सामान्यतः यह पूजन सप्तमी से दशमी तक चार दिन चलता है। मां सरस्वती का ध्यान इस मंत्र के साथ किया जाता है-

या कुन्देन्दुतुषारहार धवला, या शुभ्र वस्त्रावृता
या वीणावरदण्डमण्डितकरा, या श्वेत पद्मासना।
या ब्रह्माच्युतशंकर प्रभृतिभिर्देवैः सदा वन्दिता
सा मां पातु सरस्वती भगवती निःशेषजाड्यापहा॥

ब्रह्मवैवर्त पुराण के गणेश खंड (40,61-67) में सरस्वती-पूजन की विधि विस्तार से बतलाई गई है।

10/611-मानसरोवर,
जयपुर-032020 (राज.)

लघु कथा

बैडमिंटन के खिलाड़ी

● सुनीता तिवारी

अगले सप्ताह 'जवाहर कॉलेज' का 'आर्या कॉलेज' के साथ मैच होना था। शाम का झुरमुटा घिर आया था। सभी खिलाड़ी पास के मैदान में तेज रोशनी करके जोर-शोर से प्रैक्टिस करने में लगे थे। साथ ही बैडमिंटन खेलते वक्त एक-दूसरे पर छींटाकशी करते हुए शोर कर रहे थे। रिंकू मनोज को उसकी गलती बताना चाह रहा था। मनोज गलती मानने को तैयार न था। तभी रिंकू ने कुछ ऊंची आवाज में अपनी बात कही। मनोज कुछ जवाब देता, इतने में ही मैदान के बाहर से किसी महिला की 'हेल्प हेल्प' चिल्लाने की डरी हुई सी आवाज आई।

बैडमिंटन के खिलाड़ियों ने आव देखा, न ताव रेलिंग कूदते हुए बाहर को भागे। बाहर सड़क पर रोशनी नहीं थी। उन्होंने देखा कि एक विदेशी महिला से मोटरसाइकिल वाला उसका पर्स छीनकर भागने की कोशिश कर रहा है। महिला भी कम होशियार नहीं थी। उसने तुरंत मोटरसाइकिल वाले की बांह पर अपने नाखून गड़ा दिए। मोटरसाइकिल वाले ने खुद को बचाने के लिए दूसरे हाथ से महिला को जोर से धक्का दिया।

धक्का लगते ही महिला नीचे गिर गई। पर बैडमिंटन के खिलाड़ियों ने सारी बात समझकर तुरंत मोटरसाइकिल वाले को दबोच लिया। लड़कों ने उसे दे दनादन, दे दनादन पीटना शुरू कर दिया। महिला का पर्स उससे लेकर महिला को लौटा दिया। इस बीच शैवाल ने पुलिस को फोन कर दिया था। लुटेरे को पुलिस के हवाले करके वे लड़के उस विदेशी महिला से सॉरी कहने लगे। क्योंकि उनके भारत में आकर उसे यह सब झेलना पड़ा था। महिला ने रिंकू का कंधा थपथपाकर उसका फोन नंबर ले लिया। साथ ही लड़कों से कहा कि जहां तक सड़क पर रोशनी नहीं है, वहां तक वे उसे छोड़ दें। सामने के होटल में ही वह ठहरी हुई थी। लड़कों को धन्यवाद देकर वह अपने होटल में जल्दी से चली गई।

विदेशी महिला को अगले दिन अपने देश लौटना था। जब वह अपने घर पहुंची, तो उसने सबको पूरा वाक्या सुनाया। शाम के वक्त महिला के पति ने रिंकू के फोन पर फोन करके प्रैक्टिस कर रहे सभी खिलाड़ियों को धन्यवाद कहा। साथ भारत सरकार को पत्र लिखा कि ये भारत के बहादुर लड़के इनाम के हकदार हैं।

एक सप्ताह बाद मैच में रिंकू की टीम की जीत हुई। ट्रॉफी पाकर सब खिलाड़ी बहुत खुश थे। उनकी खुशी तब दोगुनी हो गई, जब गणतंत्र दिवस के मौके पर सरकार की तरफ से विशेष सम्मान दिया गया। कॉलेज में प्रिंसिपल सर ने एसेंबली में बैडमिंटन मैच की जीत पर बधाई दी और विदेशी महिला की रक्षा के लिए उन सब लड़कों की उस वर्ष की फीस माफ करने का एलान किया। बैडमिंटन के खिलाड़ियों ने आपस में वादा किया कि किसी की मदद के लिए वे इसी तरह साथ मिलकर आगे आएंगे।

अब बैडमिंटन के खिलाड़ियों को सब 'जांबाज गैंग' के नाम से जानने लगे थे और लुटेरे उनसे डरने लगे थे।

13/80, विक्रम विहार, लाजपत नगर,
नई दिल्ली-110 024, मो. 98107 77097

विकासात्मक आलेख

स्वस्थ व शिक्षित बचपन

● योगराज शर्मा

इसमें कोई दो राय नहीं कि पिछले कुछ दशकों में हिमाचल प्रदेश ने शिक्षा व स्वास्थ्य के क्षेत्र में उल्लेखनीय प्रगति की है। बदलते सामाजिक-आर्थिक परिदृश्य के इस दौर में नया आधारभूत ढांचा खड़ा करना हालांकि किसी चुनौती से कम न था लेकिन सरकारी स्तर पर इस दिशा में किए गए संजीदा प्रयासों का ही प्रतिफल है कि आज हम एक ऐसे मुकाम तक पहुंच पाए हैं जिस पर हम गौरव अनुभव कर सकते हैं। एक सभ्य समाज की परिकल्पना स्वस्थ व शिक्षित बचपन से ही की जा सकती है। बच्चे जितने स्वस्थ व शिक्षित होंगे, समाज हर मायने में उतना ही सुदृढ़ और संपन्न होगा। बच्चे देश का भविष्य होते हैं। देश के भविष्य को उज्ज्वल बनाने के लिए शासन तंत्र में बैठे लोगों का दूरदर्शी होना आवश्यक होता है। अपनी इसी दूरदर्शिता का परिचय देते हुए हिमाचल प्रदेश सरकार ने स्वास्थ्य व शिक्षा जैसी बुनियादी सुविधाओं को मुहैया करवाने के लिए विशेष पहल की है। इसी का नतीजा है कि हिमाचल शिक्षा व स्वास्थ्य के मानकों में देशभर में अव्वल है। स्वास्थ्य के क्षेत्र में हुई प्रगति के परिणामस्वरूप प्रदेश में शिशु मृत्यु दर में भी कमी आई है। राज्य सरकार के सार्थक प्रयासों के चलते ही आज हिमाचल विकास व खुशहाली की नई इबारत लिख रहा है।

स्वास्थ्य के साथ शिक्षा भी सभ्य समाज के निर्माण के लिए एक महत्त्वपूर्ण अंग है। किसी भी देश का विकास उसकी शिक्षा प्रणाली पर निर्भर करता है। क्योंकि किसी भी देश की उन्नति के लिए हर नागरिक जिम्मेवार होता है। अपने ज्ञान, संस्कार व अच्छे आचरण के जरिए वह देश को बुलंदियों तक पहंचा सकता है। देश की अर्थव्यवस्था को भी शिक्षित वर्ग ही सही ढंग से चला सकता है।

विशेषज्ञ चिकित्सा सेवाओं के विस्तार से नागरिकों खासकर बच्चों व महिलाओं के स्वास्थ्य में व्यापक सुधार आया है। कुपोषण सहित दूसरी गंभीर बीमारियों से राज्य के नागरिकों को निजात मिली है। राज्य सरकार द्वारा चलाई जा रही कल्याण योजनाएं कमजोर वर्गों के लिए सहारा बनी हैं।

प्रदेश सरकार बच्चों के कल्याण के प्रति सदैव सजग रही है। बच्चों का समग्र विकास सुनिश्चित बनाने के लिए समेकित बाल विकास योजना के तहत 6 माह से 6 वर्ष आयु वर्ग के बच्चों को पूरक पोषण आहार उपलब्ध करवाया जा रहा है। इसके अलावा राज्य के सोलन, कुल्लू, चम्बा व कांगड़ा जिलों में राजीव गांधी किशोरी सशक्तीकरण योजना चलाई जा रही है। कामगारों के बच्चों को बेहतर शिक्षण सुविधाएं मुहैया करवाने के लिए भी राज्य सरकार द्वारा 1500 रुपये की वित्तीय सहायता प्रदान की जाती है।

इन तमाम उपलब्धियों के आलोक में एक तथ्य हमारे सामने चुनौती की तरह खड़ा है कि वैश्विक स्तर की स्वास्थ्य सेवाओं को कैसे मुहैया करवाया जाए। हालांकि एम्स स्तर के चिकित्सा संस्थान खोलने के ऐलान से इस दिशा में पहल जरूर हुई है। लेकिन इसके लिए बहुत कुछ करना अभी बाकि है। हिमाचल जैसे छोटे राज्य जिसकी कुल आबादी करीब 70 लाख के लगभग है, में हर तरह के संक्रमण व बीमारियों का ग्राफ राष्ट्रीय स्तर के मुकाबले काफी नीचे है। फिर भी स्वस्थ बचपन की खातिर ऐहतियाति कदम उठाना जरूरी है।

यदि हमें देश व प्रदेश में सामाजिक असमानता की खाई को पाटना है तो यह सुनिश्चित करना होगा कि देश के स्वस्थ युवा देश की उत्पादकता में योगदान करने में सक्षम हो। शहरी व ग्रामीण स्वास्थ्य कार्यक्रम, स्वास्थ्य बीमा योजना तथा स्कूलों में चलाई जा रही स्वास्थ्य योजनाएं इस दिशा में उठाए गए कुछ ठोस कदम हैं। शिक्षण संस्थानों में बच्चों की स्वास्थ्य जांच हेतु समर्पित सचल स्वास्थ्य दलों द्वारा विद्यार्थियों की डाक्टरी जांच कर रोगी बच्चों का सरकारी तथा सूचीबद्ध निजी अस्पतालों में निशुल्क उपचार किया जा रहा है। देश के नागरिक के तौर पर हमारा यह कर्तव्य है कि हम सभी स्वास्थ्य के प्रति जागरुकता बढ़ाने में सहभागी बनें। साथ ही स्वास्थ्यचर्या भी अपनाएं ताकि हमारा यह सुंदर प्रदेश ज्यादा स्वस्थ हो सके।

स्वास्थ्य के साथ शिक्षा भी सभ्य समाज के निर्माण के लिए एक महत्त्वपूर्ण अंग है। किसी भी देश का विकास उसकी शिक्षा प्रणाली पर निर्भर करता है। अपने ज्ञान, संस्कार व अच्छे आचरण के जरिए वह देश को बुलंदियों तक पहंचा सकता है। देश की अर्थव्यवस्था को भी शिक्षित वर्ग ही सही ढंग से चला सकता है। शिक्षा के अभाव में देश का भविष्य भी अंधकारमय हो सकता है। वर्तमान दौर में भी एक ऐसी शिक्षा प्रणाली की आवश्यकता है जिससे हर नागरिक ज्ञानवान और अच्छे आचरण वाला बन सके।

इन्हीं बिंदुओं को ध्यान में रखते हुए शिक्षा क्षेत्र सदैव ही हिमाचल प्रदेश सरकार की प्राथमिकता सूची में रहा है। इसी के परिणामस्वरूप प्रदेश में साक्षरता दर 83.78 प्रतिशत तक पहुंच गई है। छात्रों के कल्याण व उन्हें गुणात्मक शिक्षा मुहैया करवाने के लिए सरकार ने अनेकों ऐसी योजनाएं संचालित की हैं जिनके सार्थक परिणाम सामने आ रहे हैं। सर्वशिक्षा व राष्ट्रीय माध्यमिक शिक्षा अभियानों के माध्यम से जहां शिक्षण संस्थानों का आधारभूत ढांचा विकसित हुआ है वहीं छात्रों को गुणात्मक शिक्षा सुविधा भी उपलब्ध हुई है। ऐसी योजनाओं में सरकारी स्कूलों के बच्चों के लिए हिमाचल पथ परिवहन निगम की बसों में निःशुल्क यात्रा की है जिसमें 12वीं कक्षा तक के छात्रों को निगम की बसों में घर से स्कूल जाने तथा वापिस आने के लिये निःशुल्क यात्रा सुविधा उपलब्ध करवाई गई है। इसके साथ ही स्कूली बच्चों को वर्दियां व पुस्तकें भी निःशुल्क ही मुहैया करवाई जा रही है।

राष्ट्रीय स्तर के आई.आई.टी, आई.आई.एम तथा एम्ज जैसे संस्थानों में प्रवेश पाने वाले सभी हिमाचली विद्यार्थियों को 75 हजार रुपये की एक मुश्त प्रोत्साहन राशि प्रदान की जा रही है। विद्यालयों में विद्यार्थियों को पठन-पाठन की अत्याधुनिक तकनीक से जोड़ने के लिए प्रदेश में 'राजीव गांधी डिजिटल योजना' कार्यान्वित की जा रही है जिसके तहत वर्ष 2015-16 के दौरान 10 हजार नेटबुक/लैपटाप वितरित किए जा रहे हैं। गुणात्मक शिक्षा के साथ-साथ विद्यार्थियों को उनके घर-द्वार के नजदीक शिक्षा सुविधा उपलब्ध करवाने के लिए प्राथमिक, उच्च तथा वरिष्ठ माध्यमिक स्कूलों और महाविद्यालयों को खोला जा रहा है। बीते तीन वर्षों के दौरान 994 नये स्कूल खोले अथवा स्तरोन्नत करने के साथ-साथ राज्य के दूरदराज क्षेत्रों में 25 महाविद्यालयों को खोला गया है। इन शिक्षण संस्थानों से शिक्षा ग्रहण कर प्रदेश के होनहार युवा विभिन्न क्षेत्रों में अपनी प्रतिभा को प्रदर्शित कर प्रदेश व देश का नाम रोशन कर रहे हैं।

प्रदेश में बेरोजगार युवाओं के कौशल विकास के लिए 500 करोड़ रुपये की **'कौशल विकास भत्ता'** योजना कार्यान्वित की जा रही है। इस योजना के अंतर्गत बेरोजगार युवाओं को 1000 रुपये प्रतिमाह तथा विशेष क्षमता वाले युवाओं को 1500 रुपये प्रतिमाह भत्ता दिया जा रहा है। इस योजना के तहत अब तक 1,03,242 युवा लाभान्वित हो चुके है।

राज्य के स्कूलों में लागू की गई सतत् मूल्यांकन विधि से शिक्षा की गुणवत्ता में व्यापक सुधार आया है। इसी का नतीजा है कि राष्ट्रीय शैक्षणिक एवं व्यवस्था विश्वविद्यालय द्वारा तैयार विकास सूचकांक में प्राइमरी व अप्पर प्राइमरी शिक्षा के संयोजन में हिमाचल प्रदेश को चौथा स्थान हासिल हुआ है। इसके साथ ही हिमाचल प्रदेश में प्रारंभिक शिक्षा स्तर पर ड्राप आउट दर भी शून्य तक पहुंच गई है। छात्रों को रोज़गारपरक शिक्षा प्रदान करने के लिए तकनीकी शिक्षा व्यवस्था को राज्य के स्कूलों में लागू किया गया है। इसके अन्तर्गत ऑटोमोबाइल, स्वास्थ्य सेवा, आईटी, रिटेल, सिक्योरिटी, पर्यटन और कृषि जैसे सात ट्रेड शामिल किए गए हैं।

इन सबका एक ही उद्‌देश्य है कि प्रदेश के युवा ज्ञानवान व संस्कारित बनें और प्रदेश की सुंदर वादियों से निकल कर देश व दुनिया को अपनी आभा से हीरे व मोतियों की तरह सुशोभित करें।

उप संपादक, गिरिराज साप्ताहिक, शिमला-171 005



यात्रा कथा

बच्चों की दुनिया में पांच दिन

● देवेंद्र मेवाड़ी

इसी दुनिया में है वह साफ-सुथरी, शांत और सुकून भरी छोटी-सी दुनिया, यह पहले पता नहीं था। पता तब चला जब फेसबुक की डिजिटल दुनिया के मेरे एक अनजाने दोस्त हेमवतीनंदन का फोन मिला, "याद है, एक-डेढ़ साल पहले मैंने एक बार आपको फोन किया था कि विद्यार्थियों से विज्ञान की बातें करने के लिए आपको बुलाऊंगा। आपने 'हां' कहा था।"

मैंने कहा, "जी, मुझे याद है।"

"तो बस आप आरक्षण करा लीजिए। आपको हरिद्वार आना है," वे बोले।

"लेकिन, यह तो बताइए कि किन विद्यार्थियों से कहां मिलना है?"

"यहां हरिद्वार के आसपास ही मिलना है। मैंने डी. ए. वी. सेंटेनरी स्कूल, देव संस्कृति विश्वविद्यालय और गायत्री विद्यापीठ में बात कर ली है।"

"लौटना कब है?"

"वह फिर तय कर लेंगे। लौटने का आरक्षण मैं उसी हिसाब से करा दूंगा।"

मेरे लिए बिलकुल नई जगह, मित्र भी अपरिचित और स्कूल, विद्यार्थी, शिक्षक सभी अपरिचित! ऊपर से धर्म और आस्था की नगरी में निखालिस विज्ञान की बातें। सोच कर रोमांच हो आया। निश्चय किया कि जाऊंगा तो जरूर, अपरिचितों की उस अनजान दुनिया में। एक ही लालच था, जिज्ञासाओं से दिपदिपाते विद्यार्थियों से बातें करने का मौका मिलेगा। हेमवती से बात की। कहा, "बच्चों को सौरमंडल की सैर कराऊंगा, मंगल ग्रह तक मंगलयान की रोमांचक यात्रा के बारे में बताऊंगा और विज्ञान कथा सुनाऊंगा।

मन में यह सब और पीठ पर अपना रकसैक लाद कर यात्रा पर रवाना हुआ। अल-सुबह रेडियो टैक्सी से नई दिल्ली रेलवे स्टेशन और वहां से शताब्दी का आरामदेह सफर करके हरिद्वार। मेरे अपरिचित मित्र का कहना था कि फिक्र मत कीजिएगा, वहां स्टेशन पर कोई न कोई आपको लेने आ जाएगा। मैंने सोचा, जाहिर है वह भी कोई अज्ञात अपरिचित ही होगा! हरिद्वार पहुंचते-पहुंचते फोन मिला, "मेवाड़ी जी बोल रहे हैं?"

"जी, बोल रहा हूं।"

"नमस्कार, मैं पी सी पुरोहित बोल रहा हूं, प्रिंसिपल डी. ए. वी. सेंटेनरी पब्लिक स्कूल, जगजीत नगर। हेमवती जी ने बताया था आपके बारे में। हरिद्वार स्टेशन से कितनी दूर हैं?"

"बस पहुंचने ही वाला हूं।"

"वहां ड्राइवर गाड़ी लेकर खड़ा है। आपको यहां हमारे पास आना है।"

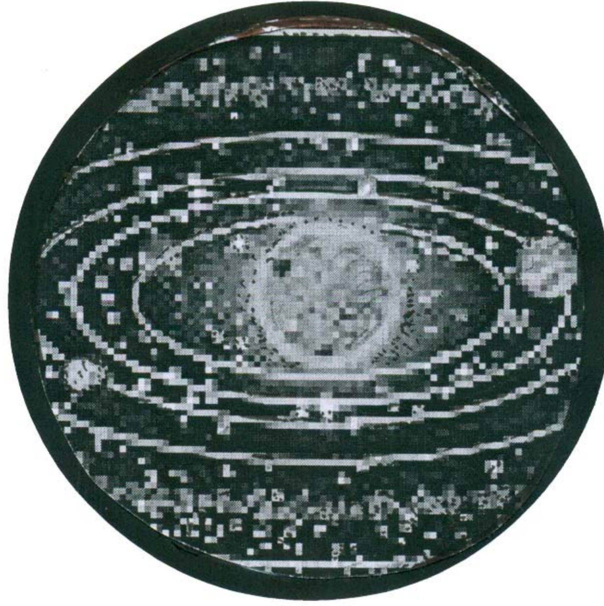
जब तक ड्राइवर का नाम पूछूं, फोन कट गया। सोच ही रहा था कि ड्राइवर को कैसे पहचानूंगा कि फोन पर एस एम एस आ गया, 'ड्राइवर भूपाल, गाड़ी नं. यू के 3091। उसे आपका नंबर दे दिया है।' स्टेशन आया। भूपाल को फोन मिलाया और बात करते-करते गाड़ी तक पहुंच गया। वह मेरा सामान उठाने लगा तो मैंने उसे अपना नियम बताया कि अपना बोझ मैं स्वयं उठाता हूं। खैर, भूपाल के साथ स्टेशन से सात-आठ किलोमीटर दूर जगजीतनगर, कनखल में डी ए वी सेंटेनरी पब्लिक स्कूल के हरे-भरे परिसर में पहुंचे। प्रिंसिपल पुरोहित जी से पहली बार मिला, लेकिन दस-पंद्रह मिनट की बातचीत के बाद ही लगने लगा जैसे एक अरसे से जानता हूं उन्हें।

बातों-बातों में पता लगा कि उनका यह विद्यालय डीएवी के शताब्दी वर्ष 1986 की देन है जब इसे हरिद्वार के वैदिक मोहन आश्रम में शुरू किया गया था। 1995 से यह जगजीत नगर के इस परिसर में चल रहा है। कभी जहां इस विद्यालय में केवल 63 विद्यार्थी पढ़ रहे थे, आज 3,430 विद्यार्थी शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं। विद्यालय लगभग 8 एकड़ क्षेत्र में फैला हुआ है। उत्तराखंड के पहाड़ों में जहां कहा जाता है कई विद्यालयों में शिक्षक ही नहीं हैं या दो-एक शिक्षक ही पूरा स्कूल संभाल रहे हैं, वहीं यहां डी. ए. वी. सेंटेनरी पब्लिक स्कूल में शिक्षक वर्ग के 108 स्टाफ सदस्य हैं, जान कर बहुत खुशी हुई। खुशी इस बात से भी हुई कि विद्यालय के पुस्तकालय में 10,275 पुस्तकें हैं और बच्चों के पढ़ने के लिए

40 पत्रिकाएं तथा 7 अखबार आते हैं।

चारों ओर की हरियाली और चींटियों की तरह सहज रूप से चलते विद्यार्थियों की अनुशासित कतारें देख कर मन बार-बार बचपन में लौटता और उन बच्चों की कतारों में शामिल होने के लिए मचलता रहा। तभी प्रिंसिपल पुरोहित जी ने कहा, "दीवाली के अवसर पर बच्चों ने 'दीवाली हाट' लगाई है। आप हाट देखेंगे तो बच्चे खुश हो जाएंगे।"

मैंने कहा, "खुशी तो मुझे होगी बच्चों से मिल कर। चलिए, कहां चलना है।" वे मुझे स्कूल के बड़े हाल में ले गए। बच्चों की लगाई उस हाट को मैं देखता ही रह गया- कहीं दीपावली के मिट्टी के दीए सजे थे तो कहीं रंग-बिरंगी मोमबत्तियां। कहीं बालिकाएं हाथों पर मेहंदी रचा रही थीं तो कहीं कंदीलें सजी थीं। मंच पर रामलीला के सभी मुख्य पात्र सजे-धजे विराजमान थे तो एक ओर राष्ट्रीय एकता का प्रतीक बने विद्यार्थी पटाखों के बहिष्कार का संदेश दे रहे थे। बच्चों ने मेरे माथे पर तिलक-अक्षत लगाए तो मन भावुक हो उठा। उन्हें शुभकामनाएं देकर अतिथि गृह के कमरे में चला आया।



सांझ के समय प्रिंसिपल पुरोहित जी के साथ लंबे-चौड़े खेल के मैदान में चहलकदमी की और परिसर में उगे हरे-भरे पेड़ों के बारे में पूछता रहा। वे हर पेड़ के बारे में कुछ इस तरह बताते रहे जैसे वे भी उनके विद्यार्थी हों, जिन्हें विद्यालय में एडमिशन देकर लगातार उनकी प्रगति पर नजर रख रहे हों। मैंने उन्हें एक छात्रा को माता-पिता की उपस्थिति में धीरे-धीरे समझाते हुए चुपचाप सुन लिया था कि माता-पिता ने तो तुम्हें जन्म दिया है, स्कूल में तुम्हारे पिता हम हैं। तुम्हारी प्रगति को देखना और तुम्हें सही रास्ता दिखाना हमारी जिम्मेदारी है। पेड़ों के बारे में भी वे कुछ इसी भाव से बातें कर रहे थे।

"ये देखिए, रुद्राक्ष के पेड़। वनस्पति विज्ञान की भाषा में 'इलियोकार्पस'। इन्हें हम पतंजलि योगपीठ से लाए। मैं बड़ी ललक के साथ उन दोनों पेड़ों को देख रहा था क्योंकि रुद्राक्ष के पेड़ मैंने पहली बार वहीं देखे। पुरोहित जी ने उनमें से एक पेड़ पर लगे हरे गोल फल भी दिखाए। पास में ही अमलतास और छतीन भी खड़े थे। सामने उस पार अशोक के पेड़ों की हरी-भरी कतार के साथ खड़े दो चीड़ के पेड़ दिखाई दिए। मैदान के दूर दाहिने किनारे पर बांस की गाछ झूम रही थी। देर शाम मालती के फूल खुशबू बिखेर कर रात्रिचर कीटों को परागण के लिए आमंत्रित करने लगे थे। मैदान के बाएं किनारे पर धीर-गंभीर युवा बरगद खड़ा था जिसे संवेदनशील प्रिंसिपल साहब ने धावकों के ट्रैक से हटाया नहीं था, यह सोच कर कि प्यारे बच्चो, बरगद को काटने के बजाय उसकी बगल से निकल लो। बरगद भी तुम्हारी दौड़ देखता रहेगा!

विद्यालय के परिसर में पीपल, बकाइन, सागौन, छतीन, हिना, सिल्वर ओक, करीपत्ता, सिरिस, जामुन, बेल, अमलतास, गुलमोहर, प्राइड ऑफ इंडिया, बॉटल ब्रश के पेड़ों के साथ ही खुशबू बिखेरती रातरानी भी लगी हुई थी। श्यामा और गौरी तुलसी के घने पौधे गमलों की शोभा बढ़ा रहे थे।

शाम ढली और छात्रावास के 40 विद्यार्थी विज्ञान कथा सुनने के लिए हाल में आकर बैठ गए। तभी मेरे अनजाने मित्र हेमवतीनंदन भी मिलने आ गए। उन्हें साथ लेकर हम कहानी सुनाने चल पड़े। उन बच्चों को मैं प्रकृति के विनाश और धरती से विदा हो रहे जीवों की दर्दभरी कहानी सुनाना चाहता था। इसलिए अपनी विज्ञान कथा 'लौटे हुए मुसाफिर' सुनाई। कहानी सुनाते-सुनाते उनसे कहा कि पहले हमारे देश में चारों ओर भरपूर और घनघोर जंगल थे। उनमें लाखों जीव रहते थे। जंगल कटे, शहर बने और आज हम चिड़िया घरों में उन चंद बचे हुए जीवों को देख रहे हैं। मैंने उनसे पूछा, "दोस्तो, जरा सोचो, कल क्या होगा?" वे सोचते रहे और मैं अपनी कल्पना में उन्हें पच्चीस-तीस वर्ष बाद के एक चिड़ियाघर में ले गया, जहां आज के तमाम पशु-पक्षी थे, लेकिन वे सभी मशीनी पशु-पक्षी थे। उदास बच्चे वर्तमान में वापस लौटे तो भविष्य की कल्पना करके सिहर उठे। उन्होंने संकल्प किया कि वे जंगलों को बचाएंगे, जीव-जंतुओं को बचाएंगे।

पुरोहित जी ने पूछा, "क्या शाम को आसपास कुछ देखना चाहेंगे? कहीं दर्शन करना चाहेंगे?" मैंने कहा, "मैं केवल गंगा, प्रवासी पक्षियों, जीव-जंतुओं या पेड़-पौधों के दर्शन करना चाहूंगा। इनमें से जो भी मिले। शाम के धुंधलके में पुराहित जी के साथ गंगा किनारे हरि की पौड़ी की ओर निकले। लेकिन, कौन-सी गंगा? वहां

सफाई के कारण बैराज से ही गंगा का पानी रोक दिया गया था। इसलिए जगमगाते बल्बों की पीली रोशनी में हरि की पौड़ी के घाटों पर आर-पार पड़ा वह बजबजाता कचरा ही दिखा जो गंगा मां के श्रद्धालुओं ने उसकी गोद में भर दिया था। वह सब देख कर मन उदास होना ही था, हुआ। वहां से निकल कर हम डी. ए. वी. मोहन आश्रम में गए जहां हरिद्वार आने वाले लोगों को आश्रय मिलता है। आश्रम में एक पब्लिक स्कूल भी चलता है। देर शाम वापस लौटे।

रास्ते में पुराहित जी ने पूछा, "आप प्रवासी पक्षियों की बात कर रहे थे?"

मैंने कहा, "हां, मैंने पढ़ा है कि यहां नीलधारा पक्षी विहार में बड़ी संख्या में प्रवासी पक्षी आते हैं। उनसे मिलने का बड़ा मन है।"

उन्होंने कहा, "आप सुबह-सुबह नीलधारा जा सकते हैं। वहां जाने का प्रबंध हो जाएगा।

ठंडी हवा में सुबह 5 बजे सारथी विनोद और राजू के साथ नीलधारा में गंगा की निर्मल धारा देखने निकला। सोचा, वहीं पक्षी विहार का पता पूछ लेंगे। विनोद सन्यास मार्ग से होकर गंगा बैराज तक ले गया। रास्ते में उसने बताया कि तमाम संन्यासी यही गंगा के तट पर अपने अखाड़ों में रहते हैं। हम कुछ देर गंगा बैराज पर घूमे, फिर पुल पार करके पक्षी विहार के बारे में पूछताछ की। पर इसके बारे में किसी को कुछ पता नहीं था। राजू ने ही अनुमान लगाया कि जाड़ों में बहुत चिड़ियां गंगा किनारे आ जाती हैं, शायद वे ही होंगी जिनके बारे में आप पूछ रहे हैं। बाद में पता लगा, दीपावली के बाद ठंड बढ़ जाने पर नीलधारा के आसपास बड़ी संख्या में प्रवासी पक्षी आ जाते हैं। मन मायूस हुआ कि वे विदेशी मेहमान नहीं मिले। बस, चार-पांच बगुले रेत में दम साधे खड़े थे।



विनोद और राजू धोबीघाट की ओर चले। वह बहुत खुली और साफ-सुथरी जगह थी। कुछ लोग सुबह की सैर पर आ रहे थे। किनारे पथरीले ढलान पर कई कव्वे और कुछ कुत्ते खुशनुमा सुबह का आनंद ले रहे थे। तभी, पूर्व में चंडीमंदिर की पहाड़ी के पीछे सुनहरी उजास बढ़ती गई और लो, स्वर्णिम किरणें बिखेरता सूरज निकल आया! सूरज ने गंगा के पानी में झांका। मैंने उन क्षणों को अपने कैमरे में कैद कर लिया। आसपास की हरियाली की दी हुई प्राणवायु में कई बार गहरी सांसें लीं। दूसरी ओर मैदान में गाएं, भैंसे चर रही थीं। राजू ने कहा, "जब केदारनाथ में बाढ़ आई थी तो गंगा में बह कर आए कई शव इस मैदान में भी बिखर गए थे। उन्हें देखा नहीं जा सकता था। मां कस कर बांहों में बच्चे को पकड़े हुए....दर्दनाक दृश्य था।" हम सोचते हुए चुपचाप डी. ए. वी. परिसर में लौट आए।

सुबह कतारों में खड़े विद्यालय के हजारों बच्चों की प्रातःकालीन प्रार्थना सभा को देखना एक अद्भुत अनुभव था जिसमें बच्चे दैनिक समाचार सुनाने के साथ-साथ सामयिक विषयों पर अपने विचार भी व्यक्त कर रहे थे।

मैंने देखा, 11.30 बजे हाल में आठवीं कक्षा के 250 बच्चे मेरे साथ सौरमंडल की सैर पर जाने के लिए मेरी प्रतीक्षा कर रहे थे। मैं प्रिंसिपल सर के साथ हाल में पहुंचा और सौरमंडल में उड़ान भरने से पहले बच्चों को सहज बनाने के लिए उनके साथ तारों भरे आसमान और आकाशगंगा के बारे में बातचीत की। उनसे अमीर खुसरो की पहेली पूछी :

"एक थाल मोती भरा,
सबके सिर पर औंधा धरा।
चारों ओर वह थाली फिरे, मोती उससे एक न गिरा।।"

कुछ बच्चे समझ गए। बोले, आसमान। मैंने पूछा, क्या अनुमान लगा सकते हो कि हम कोरी आंख से आसमान में लगभग कितने तारे देख सकते हैं? वे जिज्ञासा से देखते रहे। मैंने बताया, वैज्ञानिकों का अनुमान है कि कोरी आंख से हम लगभग 8500 तारे देख पाते हैं! और पूछा, "अच्छा दोस्तो, यह बताओ हमारी आकाशगंगा में कितने तारे हैं?"

ओशो और कुछ अन्य विद्यार्थियों ने कहा, "करीब 600 बिलियन।"

उन्हें शाबासी देकर मैंने बताया कि हमारी आकाशगंगा में लगभग 6 अरब तारे हैं। उनमें से एक हमारा प्यारा तारा है। "कौन-सा है वह तारा?" मैंने पूछा तो सभी बच्चे बोले, "सूर्य"।

अब वे सौरमंडल की सैर के लिए तैयार थे। मैं उन्हें कल्पना-यान पर सूर्य के पास ले गया। उसे नजदीक से देखा, उसके बारे में जाना और फिर सौरमंडल के ग्रह-उपग्रहों की ओर

हाइकू

• हेमंत भार्गव

तारे चमके
रोशनी दिखाकर
सुबह गए।

उदास मन
घिसता चंदन
काम बेमन।
वो चला गया

अब वो यहां नहीं
जहां से गया।

बहता लहू
मरता इनसान
हे भगवान!
रूठी बेग़म

बेचारे हुए हम
निकले दम।

बर्फ पिघले
पहाड़ पर नहीं
रिश्तों पर।

गांव सानन, डाकघर डुमैहर, तहसील अर्की,
जिला सोलन, हिमाचल प्रदेश-173 221

आगे बढ़े। पहले बुध, फिर शुक्र, पृथ्वी, मंगल, क्षुद्रग्रहों की पट्टी, बृहस्पति, शनि, यूरेनस और नेप्च्यून। हमने अपनी इस यात्रा में पांच बौने ग्रह यानी प्लूटो, ईरिस, सेरेस, हौमीया, मेकमेक और सेडना को भी देखा। बर्फीली गेंदों की कुइपर पट्टी और ऊर्ट बादल भी देखा। हमें प्लूटो की ओर जाता हुआ 'न्यू होराइजंस' अंतरिक्ष यान और मंगल ग्रह की परिक्रमा कर रहा अपना मंगलयान भी देखा। वापसी में हमें बहुत दूर तक धूमकेतु भी दिखाई दिया। गोली की तरह तेजी से गिरती उल्काएं भी दिखाई दीं।

पृथ्वी पर लौटते समय जब हमें अंतरिक्ष से अपना भारत देश दिखाई दिया तो मैंने उन बच्चों से पूछा, "दोस्तो, जरा बताओ, कैसा दिखाई दे रहा है हमारा प्यारा देश?"

कुछ बच्चों ने तपाक से भारत के अंतरिक्ष यात्री राकेश शर्मा के शब्द दुहरा दिए, "सारे जहां से अच्छा हिंदोस्तां हमारा!"

मैंने पूछा, "दोस्तो, हम सौरमंडल के सीमांत तक की सैर कर आए। क्या पूरे सौरमंडल में तुम्हें कहीं कोई तितली, कोई चिड़िया, कोई फूल, पेड़-पौधे दिखाई दिए?"

"नहीं" बच्चे एक साथ बोले।

"तो दोस्तो, देखो, हमारी यह पृथ्वी कितनी अनोखी है। इसमें जीवन की धड़कन है, यहां लाखों-करोड़ों जीव-जंतु हैं, हम हैं। आओ, इस खुशी में जीवन का गीत गाएं।"

कल्पना अंतरिक्षयान से उतर कर सभी बच्चों ने मेरे सुर में सुर मिला कर जीवन का गीत 'जीवन तेरे रूप अनेक' गाया और फिर कतार बांध कर वे अपनी कक्षाओं में चले गए।

विद्यालय में मेरा अगला सत्र था- मंगलग्रह और मंगलयान। श्रोता थे विज्ञान विषय के नवीं और दसवीं कक्षा के 90 विद्यार्थी और विज्ञान शिक्षक-शिक्षिकाएं। सभी श्रोताओं को मैं मंगलग्रह के पास ले गया, उन्हें मंगल की कुशल मंगल बताई। रूखे-सूखे मंगल ग्रह की लाल-गेरुई रेत-बालू और धूल भरी आंधी के साथ-साथ हमने उसके ध्रुवों पर जमी बर्फ की टोपियां देखीं। सौरमंडल का सबसे ऊंचा पहाड़ ओलिंपस मोंस और गहरी घाटियां तथा मैदान भी देखे। जब बच्चे मंगल ग्रह को देख रहे थे तो मैंने उन्हें युवा कवि राकेश रोहित की कविता 'मुझे लगता है मंगल पर एक कविता धरती के बारे में है' सुनाई। और, जब वे मंगल के दो चांद देख रहे थे तो कविता में सौरमंडल के पर्यटन पर निकले कवि कुमार अंबुज की वे पंक्तियां भी दुहराईं कि 'सोचते हुए खरामा-खरामा पहुंचा मंगल ग्रह पर वहां मुझे दो चंद्रमा मिले जिन्होंने किया स्वागत!'

और, फिर बच्चों के साथ पृथ्वी पर इसरो के अंतरिक्ष वैज्ञानिकों और इंजीनियरों के पास लौटा। हमने मंगलयान का निर्माण, उसका प्रमोचन और मंगल ग्रह तक की 300 दिन की लंबी यात्रा देखी। मंगलयान को मंगल ग्रह की कक्षा में स्थापित होते हुए देखा। मैंने बच्चों से विदा ली, आत्मीयता के साथ मिला शॉल और विद्यालय के माली के स्नेह की डोरी से बंधा गुलदस्ता उठाया, प्रिंसिपल पुरोहित जी के साथ चाय पी और फोन सुना।

मित्र हेमवतीनंदन का फोन था। उन्होंने बताया, "आपको अब देव संस्कृति विश्वविद्यालय में जाना है। वहां से फोन आएगा। फोन आया, "मैं सांभवी बोल रही हूं। आप विश्वविद्यालय के गेट पर आएंगे तो आपको वहां से हमारे लोग अतिथि गृह में पहुंचा देंगे। आपको वहीं रुकना है।"

"आप?" मैंने पूछा।

"मैं कोऑर्डिनेटर हूं।"

"धन्यवाद सांभवी जी।"

पुरोहित जी ने मुझे विनोद और राजू के साथ देव संस्कृति विश्वविद्यालय पहुंचा दिया। वहां गगन देशमुख मौजूद थे। वे मुझे अतिथि गृह में ले गए।

सी-22, शिव भोले अपार्टमेंट्स
प्लाट नं. 20, सैक्टर-7, द्वारका फेज-1
नई दिल्ली- 110075, मो. 0 98183 46064

नाटक

हम बच्चे नहीं

● गोविंद शर्मा

पात्र

1. राजू।
2. बड़े भैया।
3. तीन चार दूसरे बच्चे।

(गली में आठ से ग्यारह वर्ष के कुछ बालक कंचे खेल रहे हैं। इन खेलते बच्चों को दूर से आता एक बच्चा दिखाई देता है। सभी खेल रोक देते हैं और एक दूसरे को दूर से आते उस बच्चे की ओर इशारा करते हुए कहते हैं.....)

एक बच्चा- आ गया राजू, आ गया। कंचे का चैंपियन आ गया। अब आएगा मजा.....।

दूसरा बच्चा- वाह! यह कैसा चैंपियन? इसे तो मैंने कई बार हराया है। पिछले दिनों से जरूर यह जीतता आ रहा है। मेरे से पंद्रह-बीस कंचे जरूर जीत गया है। मैंने भी रघु से जीत कर हिसाब बराबर कर लिया है। यह देखो एकदम नये कंचे.....हां, आज इसे भी हराकर दिखा दूंगा।

तीसरा बच्चा- अगर आज तू जीत गया तो हम तुम्हें चैंपियन कहना शुरू कर देंगे।

चौथा बच्चा- भावी चैंपियन जिंदाबाद।

(सभी बच्चे हंस पड़ते हैं। राजू उनके पास पहुंच जाता है।)

राजू- किसकी जिंदाबाद हो रही है?

एक- किसकी हो रही है, यही अभी पता नहीं। आज तुम्हारा मुकाबला इस हीरो से होगा। निकालो, अपने कंचे,....आज तुम्हारी चैंपियनशिप खतरे में है। इसलिए नहीं कि इसके पास नए कंचे हैं। इसलिए कि इसके पास नया विश्वास है।

राजू- यह बात तो सर ने आज सुबह ही बताई थी कि जीत के लिये विश्वास जरूरी है। पर आज मैं नहीं खेलूंगा।

दूसरा बच्चा- (आश्चर्य से) तुम नहीं खेलोगे? यह क्या कह रहे हो? तुम तो खाना बीच में छोड़कर खेलने के लिए तैयार हो जाते हो। तुम्हें तो गहरी नींद से जगाना हो तो बस इतना ही कहना काफी होता है- राजू कंचे....।

राजू- ठीक कहते हो तुम ,पर.....।

तीसरा बच्चा- पर क्या? लगता है तुम अपना विश्वास कहीं रखकर भूल गए और वह हमारे इस नए हीरो ने उठा लिया है।

राजू- अरे, ऐसा नहीं है। मेरा आत्मविश्वास मेरे भीतर मौजूद है। उसका उपयोग अब दूसरी जगह होगा।

चौथा बच्चा- कहां?

राजू- सुनो, मेरी आज की कहानी सुना.....आज सुबह मेरे बड़े भाई ने मेरा स्कूल बैग खोल लिया। पुस्तकों और कापियों में उन्हें कोई कमी नहीं मिली। पर दस कंचे मिल गए।

एक बच्चा- फिर तो तुम दोनों कंचे खेलने में लग गए होंगे?

राजू- अरे नहीं, अब मेरे बड़े भैया मेरे साथ कंचे नहीं खेलते। वे अपने को बड़ा मानने लगे हैं।

दूसरा बच्चा- इसका मतलब उन्हें क्रिकेट खेलने से फुरसत नहीं मिलती...।

राजू- क्रिकेट तो कभी-कभी ही खेलते हैं। उन्हें जन्मदिन पर पापा ने एक मोबाइल फोन दे दिया था। उसपर से उनकी नजरें ही नहीं उठती हैं।

एक बच्चा- तो उन्होंने उन कंचों का क्या किया, यह तो बताओ।

राजू- यही तो बता रहा हूं। उन्होंने बड़ा भाई होने के नाते मुझे खूब उपदेश पिलाया। शीघ्र ही आने वाली परीक्षाओं की याद दिलाई....।

दूसरा बच्चा- यार,एक बात समझ में नहीं आती, हमारे अध्यापक, माता-पिता, बड़े भाई-बहन.....सबके सब एक जैसी बातें ही क्यों करते हैं? वे यह क्यों नहीं सोचते कि हमारे कान पक गए हैं, उनकी एक जैसी बातें सुन-सुन कर। कोई नई बात क्यों नहीं करते?

राजू- हम भी तो रोजाना एक जैसे कंचों से खेलते हैं। क्रिकेट या दूसरे खेलों की बॉल भी गोल ही होती है। वीडियो गेम भी एक जैसे ही होते हैं।

एक बच्चा- छोड़ो, छोड़ो, तुम भी अपना-अपना ज्ञान

दिखाने लगे। यह बताओ फिर क्या हुआ?

राजू- हुआ यह है कि थोड़ी देर हमारे में बातें होती रहीं फिर दोनों ने एक दूसरे से वादा किया कि परीक्षा तक मैं गली-स्कूल-घर में कंचे नहीं खेलूंगा और वे मोबाइल पर अपना वक्त खराब नहीं करेंगे। इसके बाद मैंने तो अपने सारे कंचे उनको सौंप दिए, एक महीने के लिए। इसलिए दोस्तो, आप लोग चाहे खेलो, चाहे मेरा अनुसरण करो.....।

(इसके बाद सभी बच्चे कुछ-न-कुछ राजू से और आपस में कह रहे हैं। पर वह सुनाई नहीं दे रहा..... इसके बाद बच्चे राजू के बैग में कुछ डालने भी लगे और राजू एक कागज पर लिख भी रहा है। इसके बाद सब बच्चे चले जाते हैं।)

(अगला दिन। घर का दृश्य। घर में सभी अपने-अपने काम में व्यस्त। राजू स्कूल ड्रेस में एक तरफ बैठा नाश्ता कर रहा है। उसके बड़े भैया इधर उधर कुछ ढूंढ रहे हैं। अचानक उनकी निगाह वहां रखे राजू के बैग पर चली जाती है। उसे देखकर चौंक जाते है और अपने आपसे बोलते हैं)

बड़े भैया- इन दिनों गृहकार्य तो ज्यादा नहीं कोई एक्स्ट्रा एक्टिविटि भी नहीं होती। फिर राजू का बैग इतना फूला हुआ क्यों है? देखूं जरा क्या भर रखा है इसमें।

(बड़े भैया राजू को बिना बताए उसका बैग खोलकर देखते ही चौंकते है और फिर जोरों से चिल्लाते हैं)

बड़े भैया- राजू............

राजू- क्या हुआ भैया? क्या कल वाला बिच्छू दोबारा दिख गया है?

बड़े भैया- (गुस्से में अपना सिर हिलाते हैं।) नहीं......।

राजू- नहीं? अरे, वह कैसे दिख सकता है। वह तो कल ही घर से बाहर हो गया था। क्या छिपकली...

बड़े भैया- छिपकली नहीं, तुम ....तुमने मेरा विश्वास तोड़ा हैं तुमने मुझसे झूठा वायदा किया, मुझे धोखा दिया....।

राजू- क्या बात करते हैं? मैंने इतना कुछ कर दिया और मुझे पता ही नहीं कि मैंने क्या किया है।

बड़े भैया- कल तुमने वादा किया था कि परीक्षाओं तक कंचे नहीं खेलोगे।

राजू- यह आप क्यों याद दिला रहे हैं? यह तो मैं परीक्षा के बाद आपको याद दिलाऊंगा, अपने कंचे ब्याज सहित वापस लेने के लिए....।

बड़े भैया- वे दस कंचे लेकर क्या करेगा तू? अभी तेरे बैग में कंचों का गोदाम है। मुझसे यह झूठ क्यों बोला कि अब तुम परीक्षा तक कंचे नहीं खेलोगे?

राजू- तो यह बात है...।

बड़े भैया- हां, बात तो यही है, पर अब तुम दूसरी बात बनाने जा रहे हो.........।

राजू- नहीं भैया जी नहीं, जरा शांत हो जाइए और मेरी बात सुनिए। कल आप रात में मुझसे मिले नहीं। सुबह मैं भूल गया और स्कूल जाने की तैयारी में भी व्यस्त हो गया। आपको कुछ बताना था, वह बताना भूल गया। हुआ यह कि मैंने अपने कंचे आपके बैंक में जमा कराने की खबर जब दोस्तों को बताई तो पहले उन्होंने मेरा मजाक उड़ाया। कहा, तुम परीक्षा के कारण कंचे नहीं खेलोगे, यह मजाक है। फिर, धीरे धीरे बात उनकी समझ में आ गई...।

बड़े भैया- पर बात मेरी समझ में नहीं आई। माना कि तुमने कंचे नहीं खेले, यह तम्हारे जीते हुए नहीं है तो ये आए कहां से? तुमने खरीदे हैं?

राजू- भैया जी, यही तो आपको समझाना है ये कंचे आपके. ....।

बड़े भैया- मेरे? लेकिन मैं तो अब इनके हाथ भी नहीं लगाता। मेरे हैं तो तुम्हारे बैग में क्यों है?

राजू- ये आपके ही जीते हुए हैं। हुआ यह है कि मेरे दोस्तों ने भी वादा कर लिया है कि परीक्षा तक कंचें नहीं खेलेंगे। उन्होंने यह सारे कंचे मुझे इसलिए दिए हैं कि इन्हें आपके बैंक में जमा करा दूं। कंचों के साथ के कागज को भी देखो। उस पर लिखा है कि किसके कितने हैं। आपने इन्हें बिना खेले ही जीत लिया है। खेलते इसलिए नहीं कि अब आपको मोबाइल से फुरसत कहां..... पर मेरे दोस्त कंचे खेलते हैं, कच्चे नहीं हैं....।

मैंने मोबाइल फोन मां के पास जमा करा दिया है, परीक्षा तक अब मेरे हाथों में किताब होगी।

(बड़े भैया ने साथ के कागज को पढ़ते हुए जोर से आवाज लगाई- मां)

राजू- (कुछ चौंकते हुए) अब मां को बुलाकर मेरी शिकायत करोगे? हे भगवान, सब कुछ सच बता दिया, फिर भी भैया को विश्वास नहीं हो रहा.........।

बड़े भैया- (राजू के कंधे पर हाथ रखकर, मुस्कराते हुए) नहीं नहीं, राजू, मुझे तुम पर पूरा विश्वास है। तुमने और तुम्हारे दोस्तों ने कमाल किया है। मां को तो इसलिए बुला रहा हूं कि तुम्हें विश्वास दिला सकूं कि मैंने मोबाइल फोन मां के पास जमा करा दिया है, परीक्षा तक अब मेरे हाथों में किताब होगी....।

राजू- वाह भैया, हम कच्चे नहीं हैं....।

बड़े भैया- बल्कि हम सच्चे हैं.....।

(दोनों भाई एक दूसरे से लिपट कर हंसते हैं। परदा गिर जाता है।)

ग्रामोत्थान विद्यापीठ, संगरिया, ,
मध्य प्रदेश-335063, मो. 0 94144 82280

नाटक

ठीक है बापू !

● अशोक अंजुम

पात्र

नट-नटी : सूत्रधार
मोंटी- उम्र : 14 वर्ष
सुनीता- उम्र : 35 वर्ष,
गांधी जी
शिक्षक-1
शिक्षक -2
कक्षा के कुछ विद्यार्थी (सुविधानुसार)

मंच पर नट का प्रवेश

नट– हां, तो मेहरबान, साहिबान, कदरदान!

दूसरी ओर से नटी का प्रवेश

नटी– अरे, आगे तो बोलो पहलवान!

नट– अरे, तू भी आ गई।

नटी– क्यूं, मुझ पर क्या कोई रेस्ट्रक्शन है?

नट– अय हय, तू तो अंग्रेजी भी बोलती है।

नटी– ये सब छोड़...ये बता कि यहां इतने सब लोग क्यों जमा हैं?

नट– अरे बावली, तुझे ये भी नहीं पता...अरे हम इन्हें आज एक छोटा सा नाटक 'ठीक है बापू' दिखाने जा रहे हैं।

नटी– क्या कहा, कहां जा रहे हैं?

नट– अरी बावली, जा कहीं नहीं रहे...अरे यहां जो महानुभाव उपस्थित हैं, हम उन्हें एक नाटक दिखाएंगे।

नटी– अच्छा! तो ये बोल न...चल फिर शुरू करते हैं।

नट– ठीक है चल...

(मंच से प्रस्थान)

ड्राइंगरूम का दृश्य। एक बच्चा थका-हारा-सा आता है और आते ही कुर्सी पर पसर जाता है।

तभी उसकी मां सुनीता का मंच पर प्रवेश-

सुनीता– अरे मोंटी, आ गया बेटा! आज बड़ी देर कर दी!

मोंटी– आज का मैच बहुत इंपोर्टेंट था मम्मी। मैंने आज चार विकेट लिए...पचास रन भी बनाए! मैं आज मैन ऑफ द मैच चुना गया।

सुनीता– ये तो ठीक है बेटा, लेकिन कल के पेपर की भी फिकर है...कल साइंस का पेपर है...उसकी कैसी तैयारी है?

मोंटी– ठीक है मम्मी! आप देखना बहुत अच्छे मार्क्स आएंगे।

सुनीता– तुम्हें पढ़ते तो मैं देखती नहीं हूं, तब, मेरी समझ में तो आता नहीं कि तुम कैसे अच्छे नम्बर ले आओगे...मुझे तो डर है कि कहीं फेल ही न हो जाओ!

मोंटी– अरे नहीं मॉम...आप चिंता न करो।

सुनीता– अच्छी बात है बेटा...ईश्वर करे अच्छे मार्क्स आएं तुम्हारे।

(कहते हुए कमरे से चली जाती है)

मोंटी– (स्वयं से) मैंने मां से कह तो दिया लेकिन साइंस में वाकई मेरी कुछ भी तैयारी नहीं है। अब क्या होगा...? (बेचैनी से हाथ में किताब लेकर इधर-उधर घूमते हुए पढ़ने का अभिनय करता है।)

मोंटी– हड़बड़ी में तो मुझे कुछ भी याद नहीं हो रहा, क्या करूं कुछ समझ नहीं आ रहा।

(पुनः टहलते हुए याद करने की कोशिश करता है।)

मोंटी– धत्! बार-बार दिमाग क्रिकेट के फील्ड की तरफ चला जाता है, खुद के लगाए हुए चौके-छक्के याद आने लगते हैं, दोस्तों की शाबाशी, दर्शकों की तालियां, फिजिक्स के लाइट और साउंड पर भारी पड़ रही हैं ...क्या करूं, कुछ समझ नहीं आ रहा. ..(कुछ देर सोचते हुए) अब तो लगता है एक ही फार्मूला अपनाना पड़ेगा कि चीटिंग के लिए पर्चियां बना लूं...हां, ये ठीक रहेगा। (कुर्सी पर बैठकर तेजी से कागजों की पर्चियां बनाता है, बार-बार इधर-उधर तथा अंदर के दरवाज़े की ओर भी देखता जाता है। पर्चियां बन जाने के बाद सभी को हाथ में लेते हुए।)

मोंटी– इसे शर्ट के कॉलर में रख लूंगा...इसे जूते के सॉक्स में...इसे अपनी डेस्क में छिपा दूंगा...इसे अंदर वाली जेब में...इसे.

..

(अभी मोंटी योजना बना ही रहा था कि उसे महात्मा गांधी की आवाज़ सुनाई देती है।)

गांधी जी– ये गलत है मोंटी बेटा।

मोंटी– क..क..कौन? अचानक हड़बड़ा जाता है!

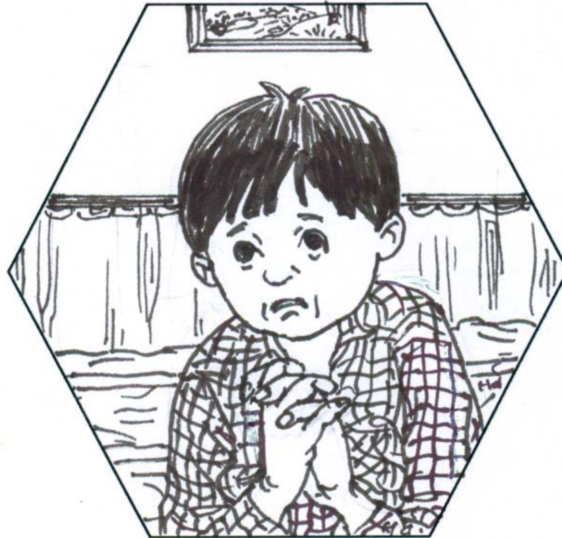
गांधी जी– (मंच पर प्रवेश करते हुए।) ये...ये...मैं हूं मोंटी बेटा...मैं...गांधी...मोहनदास करमचंद गांधी...।

मोंटी– (आंखें मलते हुए) बा..ब..बापू आप!?

गांधी जी– हां बेटा...मैं...मैं ही हूं...तुम परीक्षा उत्तीर्ण करने के लिए जो तरीका अपना रहे हो, वह उचित नहीं है प्रिय!

मोंटी– अरे क्या बापू! आप भी कैसी बातें करते हो? इससे कुछ नहीं होता...अब जब मैं लर्न नहीं कर पाया तो पास होने के लिए कुछ तो करना पड़ेगा!?

गांधी जी– ऐसे उत्तीर्ण होने से बेहतर है कि तुम अनुत्तीर्ण हो जाओ। जीवन सच्चाई-ईमानदारी से चलता है ...इस प्रकार चीटिंग करने से तुम जीवन में कभी सफल नहीं हो सकते!



मोंटी– सच्चाई-ईमानदारी (हंसता है) बापू...अब आपकी सच्चाई, ईमानदारी को कोई नहीं पूछता...दो पैसे की भी कीमत नहीं है अब इनकी...

गांधी जी– मोंटी बेटे...ये वो नैतिक मूल्य हैं जो कभी भी समाप्त नहीं हो सकते..

मोंटी– अरे ये मूल्य-वूल्य छोड़ो बापू...मालूम है आज मैंने जबरदस्त बैटिंग करते हुए पचास रन बनाए और चार विकिट भी लिए...मुझे मैन ऑफ द मैच मिला है...

गांधी जी– (मुस्कुराते हुए) ये सब तो ठीक है लेकिन इस वजह से तुम कल होने वाली विज्ञान की परीक्षा की बिलकुल तैयारी नहीं कर पाए...

मोंटी– अरे बापू...उसी की तो तैयारी कर रहा था (चीटिंग की पर्चियां दिखाता है) ये देखिए...आपने बेवक्त एंट्री मार के डिस्टर्ब कर दिया!

गांधी जी– बेटा, मेरी बात हमेशा याद रखना...जो लोग सफलता के लिए गलत मार्ग अपनाते हैं वे जीवन भर पछताते रहते हैं।

मोंटी– मेरा मूड खराब मत करिए बापू...इधर मैं देख रहा हूं कि आप कहीं भी पहुंच जाते हो...आजकल फ़िल्मों में भी आपने एंट्री मार ली है...अभी-अभी आपको मैंने संजय दत्त की 'लगे रहो मुन्ना भाई' में भी देखा था...क्या जोरदार एक्टिंग की है आपने...मज़ा आ गया...।...लेकिन बापू, सॉरी, अब आप जाइए...मुझे अभी कुछ और पर्चियां बनानी हैं...

गांधी जी– देखो मोंटी बेटा, एक बार फिर सोच लो...और फिर... अगर पकड़े गए तो सभी के सामने तुम्हारा कितना अपमान होगा...क्या ये सोचा है तुमने?

मोंटी– अरे बापू ...किसी को ज़रा-सी भी हवा नहीं लगने दूंगा...चीटिंग में अपुन का जवाब नहीं (कॉलर ऊंचे करता है) पिछले साल एनुअल एग्ज़ाम में एट्टी परसेंट चीटिंग करके ही लाया था...वरना अपुन के पास पढ़ाई-लिखाई के लिए टाइम कहां है...अपुन को तो क्रिकेट के मैदान में, या यार-दोस्तों के साथ मटरगस्ती करने में मज़ा आता है...अच्छा बापू... प्लीज़ आप किसी और को ये सब पाठ पढ़ाइए... प्लीज़ डोंट टेक अदरवाइज़, दरअसल अभी मुझे बहुत काम है।

गांधी जी– अच्छा बेटे... जैसी तुम्हारी इच्छा...मैं तो यही कहूंगा कि तुम ईमानदारी से अपनी परीक्षा दो...

(गांधी जी का मंच से प्रस्थान)

मोंटी– (अनसुना करते हुए) ओ.के., बाय-बाय, टाटा बापू...बाय...

मोंटी– ये बापू भी पता नहीं कहां से आ टपके, कितना टाइम खा गए मेरा...उफ..! (पुनः पर्चियां बनाने में लग जाता है।)

(पर्दा गिरता है)

मंच पर **नट-नटी** का प्रवेश

नटी– क्यों रे नट, ये मोंटी तो बड़ा बदमाश है ।

नट– हां, देख तो, इसने बापू की बात भी नहीं मानी!

नटी– देखा, चीटिंग के लिए कितना कांफिडेंट था।

नट– हां, नकल की पर्चियां बना-बनाकर कैसी जगह-जगह फिट कर ली हैं उसने!

नटी– अब गया कहां, वो दिखाई नहीं दे रहा।

नट– अरे जाएगा कहां...स्कूल गया है एग्ज़ाम देने!

नटी– स्कूल...अरे हां...टाइम क्या हो रहा है!

नट– 'घड़ी देखते हुए' नौ बजे हैं!

नटी– अरे, तब तो एग्ज़ाम चल रहा होगा, चलो चलकर

देखते हैं क्या चल रहा है?

नट– हां, हां चलो!

(पर्दा गिरता है)

(क्लास रूम का दृश्य, परीक्षा चल रही है। परीक्षार्थियों के बीच मोंटी भी बैठा हुआ है। शिक्षक परीक्षार्थियों के बीच इधर-उधर टहलते हुए सब पर निगाह रखे हुए हैं। मोंटी शिक्षक की निगाह बचाकर चीटिंग के पर्चे निकालकर चीटिंग करने की कोशिश करता है, तभी अचानक शिक्षक की निगाह उसपर पड़ जाती है। शिक्षक तेजी से उसके पास आता है और उसे चीटिंग के पर्चे के साथ पकड़ लेता है। मोंटी सॉरी सर कहता है लेकिन शिक्षक एक अन्य शिक्षक को बुलाकर मोंटी की पूरी तलाशी लेता है। मोंटी के कपड़ों में जहां-तहां चीटिंग की पर्चियां निकलती जाती हैं।)

शिक्षक 1– (दूसरे से) सर, आप इसे प्रिंसिपल साहब के ऑफिस में ले जाइए।

शिक्षक 2– कमाल है, ये तो पूरी किताब से ही पर्चियां बना लाया है।

शिक्षक 1– (मोंटी से) इतना टाइम तुमने पर्चियां बनाने में लगाया, इतने में तो तुम बहुत कुछ याद कर लेते।

मोंटी- (रोते-रोते) सॉरी सर, सॉरी सर...अब कभी चीटिंग नहीं करूंगा, इस बार माफ कर दीजिए सर...प्लीज़ सर!

शिक्षक 2– तुम मेरे साथ चलो। माफ़ करना है या नहीं इसका निर्णय तो प्रिंसिपल सर करेंगे। (रोते हुए मोंटी को लेकर, दूसरा शिक्षक उसकी कॉपी और चीटिंग की पर्चियों के साथ उसे प्रिंसिपल के ऑफिस की ओर ले जाता है।)

(पर्दा गिरता है)

नटी– अरे नट, ये मोंटी तो पकड़ा गया...मुझे पहले से ही डर था!

नट– पकड़ा तो जाना ही था ...ये आजकल के बच्चे पता नहीं अपने आपको कितना होश्यार समझते हैं।

नटी– हां, सोचता होगा कि टीचर की आंखों में धूल झौंक देगा।

नट– हां और नहीं तो क्या...अरे, टीचर ऐसे नकलची बच्चों के हाव-भाव बड़ी आसानी से ताड़ जाते हैं।

नटी– और नहीं तो क्या...अरे टीचर्स का पाला तो अकसर ऐसी स्थितियों से पड़ता ही रहता है।

नट– अरे हां, तुझे कुछ पता है कि प्रिंसिपल साहब ने मोंटी को क्या सज़ा दी?

नटी– हां, हां सुना है, साइंस में जीरो होने के कारण अब उसकी एक साल की पढ़ाई मारी जाएगी।

नट– चीटिंग के मामले में प्रिंसिपल साहब के नियम बहुत कड़े हैं।

नटी– हां, इस बारे में वे किसी की नहीं सुनते!

नट– चल तो ज़रा मोंटी के घर चल कर देखते हैं उस पर क्या बीत रही है।

नटी– हां चल, चलकर देखें तो...

(पर्दा गिरता है)

(मोंटी अपने कमरे में अकेला बैठा सिसक रहा है!)

मोंटी– (स्वयं से सिसकते हुए) आज मैंने मां-पिताजी का बुरी तरह दिल तोड़ दिया है (हिचकियां) निश्चित रूप से बहुत बदनामी का काम किया है मैंने...(हिचकियां लेते-लेते फिर जोर से रोने लगता है।) तभी बापू प्रकट होते हैं।

गांधी जी– मोंटी बेटे!

(सिसकियां लेते हुए धीरे-धीरे सिर उठाकर बापू को देखता है और 'बापू' कहते हुए ज़ोर से रोने लगता है!)

गांधी जी– अब क्यों रोते हो बेटा...रोओ मत!

मोंटी– मुझे माफ़ कर दो बापू...आपने कितना समझाया.. .कितना मना किया...लेकिन मेरी अक्ल पर तो जैसे पर्दा पड़ा हुआ था...मैंने आपकी बात नहीं मानी...(रोता है)

गांधी जी– रोओ मत मोंटी बेटा...जो समय बीत गया वह वापस नहीं आता...जीवन में भूल हर इनसान से होती है...लेकिन सच्चा इनसान वह है जो इन भूलों से सीख ले और जीवन में उन्हें फिर भूलकर भी न दोहराए।

मोंटी– (सिसकते हुए) आप सच कहते हैं...बापू! मैं कसम खाता हूं कि अब भविष्य में कभी ग़लत तरीकों से सफल होने की कोशिश नहीं करूंगा, सदा सच्चाई और ईमानदारी के रास्ते पर चलूंगा।

गांधी जी– मोंटी बेटा, सच्चाई-ईमानदारी की राह पर चलना कठिन अवश्य है लेकिन यही वे गुण हैं जो मनुष्य को जीवन के सर्वोच्च यानी शिखर की ओर ले जाते हैं। अगर मनुष्य निर्भीकता के साथ इन रास्तों पर चलता रहे तो एक-न-एक दिन वह अवश्य अपने लक्ष्य को पा लेता है। तुम मेरी यह बात अच्छी तरह से गांठ बांध लो।

मोंटी- ठीक है बापू, मैं आपकी यह सीख अब कभी नहीं भूलूंगा।

(पर्दा गिरता है)

समाप्त

सम्पादक : अभिनव प्रयास
गली-2, चंद्रविहार कॉलोनी (नगला डालचंद)
क्वारसी बाईपास, अलीगढ़-202001 (उ. प्र.)
मो. 0 9258779744

राष्ट्रीय बहादुरी पुरस्कार विजेता गुंजन की व्यथा पर आधारित कहानी

दीदी हमें बचा लो

● रजनीकांत शुक्ल

दिन के करीब तीन बजे का समय था। छुट्टी के बाद बच्चे स्कूल वैन में बैठकर घर जा रहे थे। वैन अभी रास्ते में थी। अचानक वैन में बैठे सभी बच्चे चौंक पड़े। उन्हें सामने से शोर सुनाई दिया। एक आदमी साइकिल पकड़े आगे-आगे भागता चला आ रहा था। उसके पीछे लोगों की भीड़ शोर मचाती उसकी ओर पत्थर फेंकती चली आ रही थी। वैन के पास आते ही उसने साइकिल को वैन के ठीक सामने डाल दिया। अचकचाकर ड्राइवर ने वैन में ब्रेक लगा दिया।

वैन के रुकते ही वह व्यक्ति दौड़कर वैन में चढ़ गया। अब वह तेजी से ड्राइवर की सीट की ओर बढ़ा। उसके हाथ में एक पिस्तौल नजर आ रहा था। जिसे उसने वैन में चढ़ते ही अपनी जेब से निकाल लिया था। उसके हाथ में पिस्तौल देखकर पीछा करने वाली भीड़ डर कर रुक गई।

उसने वह पिस्तौल ड्राइवर के सिर पर लगाते हुए कहा- 'जल्दी से बैक करके वैन को ले के चलो।'

पहले तो ड्राइवर ने मना किया लेकिन जब उसने पिस्तौल को सिर में मारते हुए फिर धमकाया तो घबराकर ड्राइवर ने वैन पीछे घुमाई और तेजी से आगे की ओर बढ़ा दी। वैन में पहली और दूसरी कक्षा के दस बच्चे बैठे थे। उसमें से एक ड्राइवर का बेटा भी था जो आगे बैठा था। एक आठवीं कक्षा की छात्र गुंजन शर्मा भी वैन में थी जो कि पिछली सीट पर बैठी थी। मगर गड़बड़ होती देख वह पीछे से वैन में आगे आ गई।

अब वैन के सामने कोई नहीं था। वैन सड़क पर तेजी से भागी चली जा रही थी। पुलिस वैन का पीछा करने लगी थी। पकड़े जाने के डर से वैन के अपहरणकर्ता ने ड्राइवर से वैन को तेज और तेज चलाने के लिए कहा। वैन जब आगे एक चेकपोस्ट के पास से गुजरी तो वैन को इस बुरी तरह भागता देख एक सिपाही ने वैन रोकने के लिए कहा।

यह देख वह व्यक्ति चीखा- 'हट जाओ सामने से' ... और यह कहते-कहते उसने पिस्तौल का रुख सामने किया और गोली चला दी। हड़बड़ी में वह गोली वैन में अंदर ही टकराई उसके छर्रे बिखर गए। उनमें से एक टुकड़ा गुंजन के हाथ में आ गिरा। उसने घबराकर उसे नीचे फेंक दिया। लगता उस व्यक्ति के सिर पर खून सवार था। पुलिस वाला डरकर पीछे हट गया।

आगे नागालैंड का बार्डर था जहां घने जंगलों का सिलसिला शुरू होता था। जब वैन जंगल के करीब से गुजरने लगी तो अपहरणकर्ता ने ड्राइवर को वैन वहीं एक किनारे पर रोक देने को कहा। ड्राइवर ने तुरंत वैन रोक दी।

अपहरणकर्ता तेजी से वैन से उतरने के लिए लपका। वैन से उतरते हुए अचानक कुछ सोचकर वह अंदर की ओर मुड़ा और उसने दो नन्हीं बच्चियों को पकड़ लिया। इस तरह अजनबी व्यक्ति द्वारा पकड़ने पर वे दोनों बच्चियां जोर-जोर से रोने लगीं। वैन में सवार अन्य बच्चे भी सहम गए।

'ऐ चुप्प'- अपहरणकर्ता गुर्राया।

कोई उपाय न देख वे गुंजन की ओर निरीह दृष्टि से देखती हुई चिल्लाई- 'बा आमक भोसुआ आमि की करी। मान टू एवक मारी दीवा'

गुंजन को लगा कि जैसे यह पुकारने वाली रोती हुई प्यारी बच्ची अनुष्का न होकर उसकी छोटी बहन नैंसी है जो उससे मदद के लिए गुहार लगा रही है- 'बचा लो न दीदी ये आदमी हमें मार देगा।'

गुंजन एकदम से आगे बढ़ी और उस व्यक्ति से बोली- 'अंकल, इन दोनों को छोड़ दो मुझे ले चलो मैं आपके साथ चलने को तैयार हूं।'

कहते-कहते उसने ड्राइवर की ओर इस आशा भरी नजर से देखा कि उस समय वैन में उन सबसे बड़ा था शायद वह उनकी कोई मदद करेगा।

अपनी ओर गुंजन को ताकता हुए देख ड्राइवर बोला- 'चली जाओ चली जाओ, कुछ नहीं होगा, ये तुम्हें छोड़ देंगे।'

गुंजन को एकबारगी बड़े जोर का गुस्सा आया। जिसे वह बड़ा समझ रही थी वह कितना छोटा निकला। बजाय बचाने के वह उसे खुद खतरे में जाने के लिए कह रहा था।

पुलिस पीछे आने वाली थी। अपहरणकर्ता के पास ज्यादा सोचने का समय नहीं था। उसने तत्काल गुंजन का हाथ पकड़ा और वैन से नीचे कूद गया।

वह गुंजन को लेकर सीधा उस घने जंगल में घुस गया। पुलिस द्वारा पकड़ लिए जाने के डर से वह तेजी से भागता चला जा रहा था जबकि तेरह साल की गुंजन उसके पीछे घिसटती चली जा रही थी। कांटेदार झाड़ियों में उसके कपड़े फंसते अटकते जा रहे थे। मगर वह रुकने का नाम नहीं ले रहा था। वह जल्दी से जल्दी असम पुलिस की पहुंच से दूर नगालैंड की सीमा में घुस जाना चाहता था।

कुछ देर बाद पेड़ों और झाड़ियों की घनी सीमा थोड़ी कम हुई क्योंकि आगे एक नदी थी। उसने बजाय सीधे रास्ते से जाने के जहां ज्यादा पानी भरा था वहां से गुंजन को लेकर जाना पसंद किया। उसने गुंजन को पानी में डुबा दिया और फिर उसे पानी में ही खींचता हुआ नदी पार करने लगा। शायद वह इस तरह अपने पावों के निशान न छोड़कर पीछे आनेवाली पुलिस का ध्यान बंटाना चाहता था। इसका पता तब और लगा जब उसने गुंजन की एक बांह पकड़ कर आगे बढ़कर झाडियों के बीच एक बड़ा सा आठ बनाया। उसका इरादा न केवल पुलिस को बल्कि उसके साथ आने वाले कुत्तों को भी कनफ्यूज करने का था। कांटेदार झाड़ियों और मच्छर तथा कीड़ों के बीच इस तरह बेदर्दी से घसीटे जाने से गुंजन की चीख निकल गई। उसके कपड़े कई जगह से फट गए और शरीर में कांटे चुभ गए।

मगर अपहरणकर्ता ने इस बात की कोई परवाह न की। काफी देर चलने के बाद आगे बढ़ते-बढ़ते वह बांसों के एक झुरमुट के नीचे रुका । अब तक वह स्वयं भी काफी थक चुका था। उसने गुंजन को वहां बैठाया और खुद भी लंबी-लंबी सांसें लेने लगा।

उसने गुंजन से कहा- 'सुनो लड़की! अभी थोड़ी देर यहां बैठो। जब पुलिस ढूंढ कर चली जाएगी तो मैं तुम्हें तुम्हारे घर छोड़ दूंगा।'

काफी समय हो गया, अंधेरा घिर आया। 2013 की चार दिसंबर की वह रात अब गहराने लगी थी।

उधर पुलिस और तमाम लोग चुप नहीं बैठे थे। रात करीब डेढ़ बजे के करीब अचानक हलचल सी हुई। टार्च की रोशनियां चमकने लगीं और 'गुंजन' 'गुंजन' पुकारने की आवाजें पास आतीं जा रही थीं।

जवाब में गुंजन ने जैसे ही आवाज देनी चाही अपहरणकर्ता ने अपनी जेब से एक दूसरी पिस्तौल निकाली। उसने उसमें से कुछ गोलियां निकाल कर पहली पिस्तौल में डालते हुए उसको चुप रहने का इशारा किया। साथ ही उसके मुंह में पिस्तौल डालते हुए फुसफुसाया- 'अगर आवाज निकली तो इस पिस्तौल से भी आवाज निकलेगी।' उसने दोनों पिस्तौलों से गुंजन को कवर किया हुआ था।

मुंह के अंदर पिस्तौल पड़ी होने के कारण गुंजन बोलने की स्थिति में नहीं थी। दोनों दम साधे बांसों के झुरमुट के बीच पड़े रहे और ढूंढने वाले पास से ढूंढते हुए निकल गए।

जब वे कुछ दूर निकल गए तो अपहरणकर्ता ने गुंजन के मुंह से पिस्तौल निकाली और उससे कहा- 'तुम चुपचाप बिना आवाज किए यहीं शांत बैठी रहो।' मैं अभी थोड़ी देर में लौटकर आता हूं।'

गुंजन ने हां में सिर हिलाया तो अपहरणकर्ता 'गुंजन' 'गुंजन' की आवाज लगाता हुआ आगे जाकर उसी भीड़ में जा मिला।

गुंजन कुछ देर तक तो अपहरणकर्ता का इंतजार करती रही। मगर इसके बाद थकान और नींद से उसकी आंखें भारी होने लगीं। उसने सुन रखा था कि इस जंगल में हाथी और दूसरे खतरनाक जानवर भी रहते हैं मगर इस समय नींद के आगे उसके सारे डर दूर हो गए और अंधेरे में झाड़ियों के बीच वह सो गई।

सुबह जब आंख खुली तो उसने देखा कि अपहरणकर्ता अभी तक वापस नहीं आया था। गुंजन वहां से घर जाने के लिए जंगल से बाहर निकली। काफी देर इधर-उधर भटकने के बाद उसे कुछ चाय के बागान दिखाई दिए। जब वह बागान को पार कर रही थी तभी उसने कुत्तों के भौंकने की आवाज सुनी तो वह उसी ओर चल दी।' जहां आगे एक झोपड़ी दिखाई दी जिसमें उसे कुछ लोग मिले।

गुंजन ने उनसे पूछा- 'अंकल मेन रोड का रास्ता किधर है बता दें, मुझे अपने घर जाना है।'

उन लोगों ने जब एक लड़की को ठंड में भीगे कपड़ों में ऐसी बुरी हालत में देखा तो उसे आग के पास बैठाया। उसके लिए चाय बनाई और पुलिस को खबर कर दी।

खबर मिलते ही जोरहाट और डिबरूगढ़ से पुलिस के बड़े अधिकारी वहां आ गए। उन्होंने बहादुर गुंजन को गले से लगा लिया। जिसने दो नन्हे बच्चों को बचाने के लिए खुद को अपहरणकर्ता को सौंप दिया था। दिसंबर की कड़ाके की ठंड में सारी रात घने जंगल में रही। भीगे कपड़ों में खतरनाक जानवरों के बीच... कई पुलिस अधिकारी की आंखें उसकी दिलेरी पर भर आईं।

असम के मुख्यमंत्री ने उसे दो लाख रुपये का पुरस्कार दिया।

उन्होंने प्रदेश स्तर पर प्रतिवर्ष ऐसी बहादुरी दिखाने वाले बहादुर बच्चे को 'गुंजन शर्मा वीरता पुरस्कार' दिए जाने की घोषणा भी की। गुंजन को देश के प्रधानमंत्री द्वारा राष्ट्रीय वीरता पुरस्कार प्रदान किया गया।

के. ए. 363 सेक्टर -12 प्रतापविहार
गाज़ियाबाद उ. प्र. 201009
मो. 0 98688 15635

विकास और समृद्धि का पर्याय

हिमाचल

पच्चीस जनवरी का दिन हिमाचल प्रदेश के लोगों के लिए एक यादगार दिवस है। वर्ष 1971 में इसी पावन दिन तत्कालीन प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी ने ऐतिहासिक रिज मैदान शिमला से हज़ारों प्रदेशवासियों को संबोधित करते हुए हिमाचल प्रदेश को पूर्ण राज्यत्व का प्रदान किया। इसके साथ ही हमारा प्रदेश भारतीय गणतंत्र का 18वां राज्य बना।

पूर्ण राज्यत्व दिवस पर मुख्य मंत्री वीरभद्र सिंह का आलेख

मैं, इस अवसर पर हिमाचल प्रदेश के सभी लोगों को हार्दिक बधाई देता हूं। मैं इस पावन धरा के उन महान सपूतों व देशभक्तों के प्रति भी सम्मान व कृतज्ञता व्यक्त करता हूं, जिन्होंने हिमाचल प्रदेश को देश में पर्वतीय क्षेत्र के विकास का आदर्श बनाने में अपना महत्त्वपूर्ण योगदान दिया। इस पावन दिन हम हिमाचल निर्माता तथा प्रदेश के प्रथम मुख्य मंत्री डॉ. यशवंत सिंह परमार को भी अपने श्रद्धासुमन अर्पित करते हैं, जिन्होंने न केवल प्रदेश को पृथक पहचान एवं दर्ज़ा दिलाने में योगदान दिया बल्कि प्रदेश के भविष्य के विकास के लिए एक मज़बूत नींव भी रखी। आज हमें यह कहते हुए गर्व अनुभव हो रहा है कि हमारा प्रदेश न केवल पर्वतीय राज्यों के लिए विकास का आदर्श बना है, अपितु यह बड़े राज्यों के साथ भी विकास के विभिन्न क्षेत्रों में एक अग्रणी राज्य बन कर उभरा है।

प्रदेश में हुए इस अभूतपूर्व विकास का श्रेय यहां के मेहनतकश लोगों के साथ-साथ केंद्र तथा प्रदेश में अधिकतर समय सत्तासीन रही कांग्रेस सरकारों द्वारा प्रदान कुशल नेतृत्व को भी जाता है। भारत के प्रथम प्रधानमंत्री पंडित जवाहर लाल नेहरू ने हिमाचल प्रदेश को एक पृथक राजनीतिक इकाई के रूप में पहचान दिलाई। वहीं श्रीमती इंदिरा गांधी का प्रदेश के प्रति अपार स्नेह था कि हिमाचल प्रदेश को 25 जनवरी, 1971 को पूर्ण राज्य का दर्जा प्राप्त हुआ। प्रदेशवासियों के आशीर्वाद एवं



स्नेह से मुझे छठी बार मुख्य मंत्री के रूप में प्रदेशवासियों की सेवा करने का अवसर मिला है। इन वर्षों में मैंने प्रदेश के विकास एवं प्रदेशवासियों के कल्याण के लिए अथक प्रयास किए ताकि लोगों की आशाओं एवं आकांक्षाओं पर खरा उतर सकूं।

वर्तमान प्रदेश सरकार ने एक माह पूर्व ही अपने वर्तमान कार्यकाल के तीन वर्ष पूरे किए हैं। हमारा प्रयास प्रदेशवासियों को पारदर्शी, जवाबदेह एवं कारगर शासन प्रदान करना तथा सरकार की नीतियों एवं कार्यक्रमों के लाभ बेहतर ढंग से जनमानस तक पहुंचाने का रहा है।

आम आदमी का कल्याण सरकार की नीतियों का केंद्रबिंदु रहा है। सामाजिक सुरक्षा पेंशन को 450 रुपये से बढ़ाकर 600 रुपये प्रतिमाह किया गया है। इस योजना के अंतर्गत 3,04,921

वृद्ध विधवाएं तथा विशेष रूप से सक्षम लोग लाभान्वित हुए हैं। 90 वर्ष से अधिक आयु वर्ग के वृद्धजनों को बिना किसी आय सीमा के मापदंड के 1100 रुपये प्रतिमाह की सामाजिक सुरक्षा पेंशन प्रदान की जा रही है।

राजीव गांधी अन्न योजना कार्यान्वित कर प्रदेश के लगभग 37 लाख लोगों को 3 किलो गेहूं, दो रुपये प्रति किलो तथा दो किलो चावल 3 रुपये प्रति किलो की दर से प्रतिमाह प्रति व्यक्ति प्रदान किए जा रहे हैं। सभी 18,23,665 राशनकार्ड धारकों को सार्वजनिक वितरण प्रणाली के अंतर्गत लाकर 77 लाख से अधिक लोगों को लाभान्वित किया गया है तथा उन्हें गेहूं, चावल, दालें, खाद्य तेल तथा आयोडीनयुक्त नमक उपदानयुक्त दरों पर प्रदान किया जा रहा है।

प्रदेश में बेरोजगार युवाओं के कौशल विकास के लिए 500 करोड़ रुपये की कौशल विकास भत्ता योजना कार्यान्वित की जा रही है। इस योजना के अंतर्गत बेरोजगार युवाओं को 1000 रुपये प्रतिमाह तथा विशेष क्षमता वाले युवाओं को 1500 रुपये प्रति माह भत्ता दिया जा रहा है। इस योजना के अंतर्गत अब तक 1,03,242 युवा लाभान्वित हो चुके हैं।

वर्तमान वित्तीय वर्ष के दौरान जनजातीय उप योजना के अंतर्गत 432 करोड़ रुपये आबंटित किए गए हैं। प्रदेश में अनुसूचित जाति, अन्य पिछड़ा वर्ग तथा अल्पसंख्यक समुदायों के लोगों के कल्याण एवं विकास के लिए 1503 करोड़ रुपये आबंटित किए गए हैं।

प्रदेश का विकास मुख्यतः ग्रामीण क्षेत्रों की समृद्धि पर निर्भर करता है, क्योंकि प्रदेश की 90 प्रति   ात से अधिक जनसंख्या इन क्षेत्रों में रहती हैं। प्रदेश में 111.19 करोड़ रुपये की डॉ. वाई.एस. परमार, किसान स्वरोजगार योजना कार्यान्वित की जा रही है, जिसके अंतर्गत किसानों को पॉलीहाउस के निर्माण के लिए 85 प्रतिशत उपदान प्रदान किया जा रहा है। किसानों को टपक/फव्वारा सिंचाई सुविधाएं प्रदान करने के लिए 154 करोड़ रुपये की राजीव गांधी सूक्ष्म सिंचाई योजना आरंभ की गई है।

प्रदेश के सामाजिक-आर्थिक विकास में बागबानी की महत्त्वपूर्ण भूमिका है। राज्य के लिए 1000 करोड़ रुपये की हिमाचल प्रदेश बागबानी विकास परियोजना स्वीकृत करवाई गई है। एंटी हेलनेट पर उपदान को 50 प्रतिशत से बढ़ाकर 80 प्रतिशत किया गया है तथा सेब, आम एवं किन्नू प्रजाति के फलों के समर्थन मूल्यों में वृद्धि की गई है।

इंदिरा आवास योजना के अंतर्गत 854 करोड़ रुपये व्यय कर 13,652 घरों का निर्माण किया गया है, जबकि राजीव आवास योजना के अंतर्गत गत तीन वर्षों में 2280.47 लाख रुपये खर्च कर 2141 घर निर्मित किए गए हैं। प्रदेश में मनरेगा को सफलता से कार्यान्वित किया जा रहा है। इस योजना के अंतर्गत 1447.34 करोड़ रुपये व्यय कर 708.63 लाख श्रम दिवस सृजित किए गए हैं, जिनमें से 438.94 लाख श्रम दिवस महिलाओं द्वारा सृजित किए गए हैं।

प्रदेश सरकार राज्य में पंचायती राज संस्थाओं को सुदृढ़ करने के प्रति वचनबद्ध है। हाल ही में सरकार द्वारा पंचायती राज संस्थाओं एवं शहरी स्थानीय निकायों के चुनाव सफलतापूर्वक आयोजित किए गए हैं। पंचायती राज संस्थाओं तथा स्थानीय शहरी निकायों को धनराशि के समयबद्ध हस्तांतरण हेतु संस्तुतियां प्रदान करने के लिए पांचवें राज्य वित्त आयोग का गठन किया गया है। वर्ष 2013-14 के दौरान राज्य वित्त आयोग के अंतर्गत पंचायती राज संस्थाओं 81.55 करोड़ रुपये तथा वर्ष 2014-15 में 85.26 करोड़ रुपये जारी किए गए हैं। 14वें वित्त आयोग की सिफारिशों के अनुरूप वर्तमान वित्तीय वर्ष के दौरान पंचायती राज संस्थाओं को 194 करोड़ रुपये जारी किए गए हैं।

मेरी सरकार सभी बच्चों को गुणात्मक शिक्षा प्रदान करने के प्रति वचनबद्ध है। गत तीन वर्षों के दौरान प्रदेश में 994 नए स्कूल खोले अथवा स्तरोन्नत किए गए तथा 25 नए महाविद्यालय खोले गए। प्रदेश के सरकारी स्कूलों एवं केंद्रीय विद्यालय में पढ़ने वाले बच्चों को स्कूल आने-जाने के लिए निःशुल्क यात्रा सुविधा प्रदान की जा रही है। राजीव गांधी डिजिटल योजना के अंतर्गत वर्तमान वित्तीय वर्ष के दौरान 10वीं

प्रदेश में बेरोजगार युवाओं के कौशल विकास के लिए 500 करोड़ रुपये की कौशल विकास भत्ता योजना कार्यान्वित की जा रही है। इस योजना के अंतर्गत बेरोजगार युवाओं को 1000 रुपये प्रतिमाह तथा विशेष क्षमता वाले युवाओं को 1500 रुपये प्रति माह भत्ता दिया जा रहा है। इस योजना के अंतर्गत अब तक 1,03,242 युवा लाभान्वित हो चुके हैं।

तथा 12वीं के 10,000 मेधावी विद्यार्थियों को निःशुल्क नेटबुक/लेपटॉप प्रदान किए जा रहे हैं।

प्रदेश के ऊना ज़िले में भारतीय सूचना प्रौद्योगिकी संस्थान तथा सिरमौर जिले में भारतीय प्रबंधन संस्थान खोला गया है। राजीव गांधी राजकीय इंजीनियरिंग कॉलेज, नगरोटा बगवां में कक्षाएं आरंभ हो गई हैं। प्रदेश में विभिन्न स्थानों पर 19 नए आईटीआई खोले गए हैं तथा दो नई आईटीआई अधिसूचित की गई हैं।

इस अवधि के दौरान प्रदेश में 100 नए स्वास्थ्य संस्थान खोले गए अथवा उनका दर्जा बढ़ाया गया है। चंबा, हमीरपुर तथा सिरमौर जिलों में 190 करोड़ रुपये प्रति मेडिकल कॉलेज के प्रावधानों के साथ तीन नए मेडिकल कॉलेज खोले जा रहे हैं। इन मेडिकल कॉलेजों के लिए विभिन्न श्रेणियों के लिए 1775 पद सृजित किए गए हैं। प्रदेश के लिए एक अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान स्वीकृत किया गया है, जिसे बिलासपुर जिले में खोला जाएगा।

शिमला के निकट घणाहट्टी में 150 करोड़ रुपये की लागत से इंदिरा गांधी मेडिकल कॉलेज, शिमला के दूसरे परिसर का निर्माण किया जाएगा, जिसमें 100 बिस्तरों वाला अस्पताल, दंत महाविद्यालय तथा नर्सिंग कॉलेज होंगे। डॉ. राजेंद्र प्रसाद मेडिकल कॉलेज, टांडा में 45 करोड़ रुपये की लागत से एक सुपरस्पेशलिटी खंड का निर्माण किया गया है। ईएसआईसी मण्डी को शीघ्र ही प्रदेश सरकार द्वारा अधिगृहीत किया जाएगा।

गत तीन वर्षों के दौरान प्रदेश में 1365.65 किलोमीटर नई सड़कों तथा 134 पुलों का निर्माण किया गया। इसके अलावा इस अवधि में 255 गांवों को सड़कों से जोड़ा गया। प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना के दौरान 532 करोड़ रुपये की लागत से 2267 किलोमीटर सड़कों की 241 विस्तृत परियोजना रिपोर्ट भारत सरकार से स्वीकृत करवाई गई है। इस दौरान 603 करोड़ रुपये लागत की 2489 किलोमीटर लंबाई की 378 सड़क परियोजनाएं भी पूरी की गई हैं।

हर घर को स्वच्छ पेयजल प्रदान करना राज्य सरकार की प्राथमिकता रही है। गत तीन वर्षों के दौरान 6949 अतिरिक्त बस्तियों को ग्रामीण जलापूर्ति योजना के अंतर्गत लाया गया है। इस अवधि के दौरान पेयजल आपूर्ति योजनाओं पर 773 करोड़ रुपये व्यय किए गए हैं तथा जलाभावग्रस्त क्षेत्रों में 4887 हैंडपम्प स्थापित किए गए हैं। 400 करोड़ रुपये की लागत से 10,586 हेक्टेयर क्षेत्र को सिंचाई सुविधा प्रदान की गई है। ऊना जिले में 922 करोड़ रुपये की स्वां तटीकरण परियोजना तथा कांगड़ा जिले में 180 करोड़ रुपये की छोंछ खड्ड परियोजना पर कार्य प्रगति पर है। शिमला जिले के लिए 191 करोड़ रुपये की पब्बर नदी तटीकरण परियोजना स्वीकृत की गई है।

नियोजित औद्योगिक विकास आर्थिक वृद्धि एवं प्रदेश के युवाओं को रोजगार के अवसर उपलब्ध करवाने के लिए एक मुख्य क्षेत्र है। राज्य सरकार ने प्रदेश के बेहतर एवं तीव्र औद्योगिकीकरण के लिए औद्योगिक सलाहकार परिषद् का गठन किया है। उद्यमियों को प्रदेश में निवेश के लिए आकर्षित करने हेतु मुंबई, बैंगलुरू, अहमदाबाद तथा नई दिल्ली में 'इंवेस्टर



मीट' आयोजित की गई हैं। प्रदेश के कांगड़ा जिले के कंदरौड़ी में 95.77 करोड़ रुपये की अनुमानित लागत तथा ऊना जिले के पंडोगा में 88.05 करोड़ रुपये की लागत से नए आधुनिक औद्योगिक क्षेत्र विकसित किए जा रहे हैं। प्रदेश में नए उद्योगों की स्थापना को एक ही आवेदन पत्र पर 45 दिनों के भीतर समयबद्ध स्वीकृतियां प्रदान की जा रही हैं।

एकल खिड़की स्वीकृति एवं अनुश्रवण प्राधिकरण द्वारा इस अवधि के दौरान 11,663 करोड़ रुपये निवेश की 219 इकाइयों को स्वीकृति प्रदान की गई है, जिनमें लगभग 22000 लोगों को रोजगार उपलब्ध होगा। नए उद्यमियों की सुविधा के लिए स्टाम्प शुल्क एवं लैंडयूज (भूमि उपयोग) हस्तांतरण शुल्क में कटौती की गई है। 300 से अधिक हिमाचलियों को रोज़गार प्रदान करने वाली नई औद्योगिक इकाइयों से पांच वर्षों तक केवल एक प्रतिशत विद्युत शुल्क वसूला जाएगा।

राज्य सरकार प्रदेश में सतत् पर्यटन विकास के प्रति वचनबद्ध है। प्रदेश में साहसिक पर्यटन को बढ़ावा देने के लिए हाल ही में कांगड़ा जिले के बीड़-बिलिंग में पैराग्लाइडिंग विश्व कप का आयोजन किया गया। प्रदेश के प्रमुख स्थलों में अधोसरंचना विकास तथा समृद्ध विरासत के सरंक्षण के लिए एशियाई विकास बैंक द्वारा 570 करोड़ रुपये की वित्तीय सहायता स्वीकृत की गई हैं। धर्मशाला-मैकलोड़गंज, हिमानी- चामुंडा, शिमला बाईपास-लिफ्ट तथा पलछान-रोहतांग रज्जू मार्गों के निर्माण के लिए समझौता ज्ञापन पर हस्ताक्षर किए गए हैं।

सरकार लोगों को जवाबदेह व कुशल प्रशासन प्रदान करने के लिए वचनबद्ध है, ताकि प्रदेश के सभी क्षेत्रों का संतुलित विकास तथा सभी वर्गों का समान विकास सुनिश्चित बनाया जा सके। हमारी सरकार हिमाचल प्रदेश को देश का समृद्ध एवं विकसित राज्य बनाने के लिए निरंतर प्रयासरत है। इसके लिए मैं प्रदेश के प्रत्येक नागरिक से सक्रिय सहयोग व समर्थन की अपील करता हूं।

प्रकृति ने हिमाचल प्रदेश को अपार जलविद्युत क्षमता प्रदान की है, जिसमें से अब तक 9432 मेगावाट क्षमता का दोहन ही हो पाया है। वर्ष 2014-15 के दौरान 956 मेगावाट क्षमता का दोहन किया गया है, जबकि वर्तमान वित्तीय वर्ष के दौरान हम 1050 मेगावाट क्षमता के दोहन के प्रति वचनबद्ध हैं। प्रदेश सरकार ने एक वृहद एलईडी प्रोत्साहन योजना आरंभ की है, जिसके अंतर्गत घरेलू उपभोक्ताओं को बाजार भाव से आधे से भी कम मूल्य पर एलईडी बल्ब प्रदान किए जा रहे हैं। गत दो वर्षों के दौरान प्रदेश के सभी घरेलू उपभोक्ताओं को उपदानयुक्त दरों पर बिजली उपलब्ध करवाने के लिए 708 करोड़ रुपये का उपदान दिया गया है। वर्तमान वित्तीय वर्ष के लिए 380 करोड़ रुपये का प्रावधान किया गया है।

प्रदेशवासियों को सुरक्षित, भरोसेमंद तथा आरामदेह परिवहन सेवाएं प्रदान करना सरकार की प्रतिबद्धता है। राज्य पथ परिवहन निगम के बेड़े में 1231 नई बसें शामिल की गई हैं, जबकि 300 और बसें शीघ्र उपलब्ध करवाई जाएंगी। सभी महिलाओं को राज्य पथ परिवहन निगम की सामान्य बसों में प्रदेश के भीतर किराये में 25 प्रतिशत छूट दी जा रही है।

राज्य सरकार ने टीडी नीति/ नियामों में संशोधन कर टीडी धारकों को राहत पहुंचाई है। प्रदेश के 775 गांवों की एक लाख से अधिक जनसंख्या को वन्य प्राणी क्षेत्रों से बाहर किया गया है। वर्ष 2013-15 के दौरान प्रदेश में एक करोड़ औषधीय पौधे रोपे जाएंगे, जबकि वर्तमान वित्त वर्ष के दौरान 45 लाख ऐसे पौधे रोपने का लक्ष्य रखा गया है।

अकुशल श्रमिकों की दिहाड़ी को बढ़ाकर 180 रुपये किया गया है। 5 वर्ष का सेवाकाल पूरा करने वाले अनुबंध कर्मियों तथा 31 मार्च, 2015 को 7 वर्ष का नियमित सेवाकाल पूरा करने वाले दिहाड़ीदारों को नियमित किया गया है। 31 मार्च, 2015 को आठ वर्ष का सेवाकाल पूरा करने वाले अंशकालिक कर्मियों को दिहाड़ीदार बनाया गया है। प्रदेश सरकार ने राष्ट्रीय स्वास्थ्य बीमा योजना से वंचित सभी दिहाड़ीदारों, अंशकालिक कर्मियों, आंगनवाड़ी कार्यकर्ताओं/ सहायिकाओं, मिड-डे-मील कार्यकर्ताओं को 'मुख्यमंत्री राज्य स्वास्थ्य सुरक्षा योजना' के अंतर्गत लाया गया है ताकि उन्हें सामान्य एवं गंभीर बीमारी में स्वास्थ्य सुविधाएं उपलब्ध हो सकें।

प्रदेश सरकार लोगों को जवाबदेह व कुशल प्रशासन प्रदान करने के लिए वचनबद्ध है, ताकि प्रदेश के सभी क्षेत्रों का संतुलित विकास तथा सभी वर्गों का समान विकास सुनिश्चित बनाया जा सके। हमारी सरकार हिमाचल प्रदेश को देश का समृद्ध एवं विकसित राज्य बनाने के लिए निरंतर प्रयासरत है। इसके लिए मैं प्रदेश के प्रत्येक नागरिक से सक्रिय सहयोग व समर्थन की अपील करता हूं।

पूर्ण राज्यत्व दिवस के इस पावन अवसर पर मैं एक बार पुनः सभी प्रदेशवासियों को हार्दिक बधाई देता हूं। इस पावन अवसर पर हम हिमाचल प्रदेश को देश का सर्वाधिक विकसित राज्य बनाने के लिए पुनः संकल्प लेते हैं।

000

कहानी

काटते हो तो उगाओ भी

● डॉ. सुशीलकुमार फुल्ल

एक गांव में एक लकड़हारा रहता था। वह हर रोज जंगल में जाता, लकड़ियां काटता तथा उन्हें बेचकर अपनी आजीविका कमाता था।

एक दिन वह एक बड़े वृक्ष को काटने लगा। उसने सोचा उसे ज्यादा लकड़ी मिलेगी तथा उसे पैसे भी ज्यादा मिलेंगे। उस वृक्ष के नीचे एक साधु विश्राम किया करता था। कभी-कभार वहीं बैठकर वह तपस्या भी करता था। लकड़हारा अभी वृक्ष काट ही रहा था कि साधु आ गया। साधु ने उससे कहा- "भाई! जब तक वृक्ष लगाओ न, तो उसके बदले में काटो भी न।"



"महात्माजी, यह बात तो ठीक है- लकड़ी बेचना है- अतः मैं तो इस वृक्ष को काटूंगा ही।" वह अपनी कुल्हाड़ी चलाने लगा।

"मैं तुम्हें बदले में अद्भुत घड़ा दूंगा। इससे जो मांगोगे, वह मिलेगा। लेकिन आज से तुम वृक्ष नहीं काटोगे।" साधु ने उसे घड़ा देते हुए कहा।

वह अद्भुत घड़ा लेकर बड़ा प्रसन्न हुआ तथा घर को चल दिया। घर पहुंचा तो पत्नी ने कहा, "लाओ आज की कमाई कहां है?" "आज मैं पैसे तो लाया नहीं।" लकड़हारे ने कहा।

"तो आज सायं भोजन भी नहीं मिलेगा।" वह क्रुद्ध स्वर में बोली।

लकड़हारे ने उसे घड़े के बारे में सब कुछ बता दिया। वे दोनों घड़े को लेकर एक कमरे में बंद हो गए। उन्होंने घड़े से कपड़े मांगे। दोनों के लिए बड़े बढ़िया सिले-सिलाए कपड़े आ उपस्थित हुए। वे दोनों अब सज-धज कर बैठ गए। अब चिंता थी कि इतने बढ़िया कपड़े पहनकर वे कच्चे मकान में कैसे रहें। उन्होंने घड़े से एक सुंदर भवन की मांग की। तुरंत सुंदर भवन तैयार हो गया। फिर उन्होंने परखने के लिए लड्डू, बर्फी तथा अन्य मिठाइयों की इच्छा प्रकट की। घड़े ने सब कुछ दे दिया।

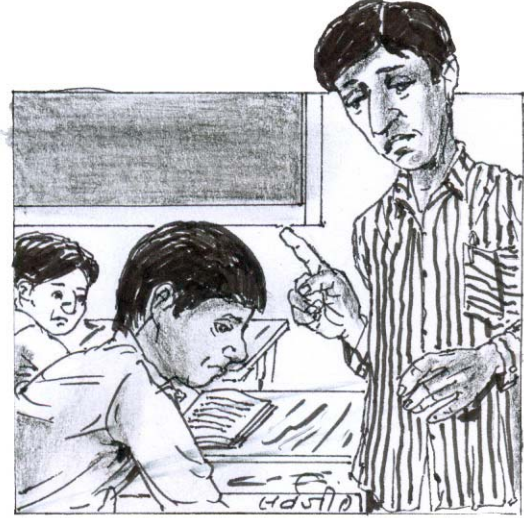
लकड़हारा तथा उसकी पत्नी बहुत खुश थे। सुबह होते ही उन्होंने अपने मित्रों तथा पड़ोसियों को बुलाया। घर और कपड़ों को देखकर वह लोग विस्मित हो गए। लकड़हारे ने उन्हें जी भरकर मिठाई खिलाई।

फिर लकड़हारे ने घड़ा सिर पर रखा तथा नाचना शुरू कर दिया। वह बहुत खुश था। वह नाच रहा था और लोग पूछ रहे थे- यह अद्भुत घड़ा तुमने कहां से लिया? उसने सदाशय साधु की कहानी सुनाई- जो वृक्ष के काटने के पक्ष में नहीं था। वृक्ष न कटे, इसलिए साधु ने घड़ा उसे दिया। वह उतावला होकर और भी तेजी से नाचने लगा।

ओह! तभी घड़ा सिर से फिसल गया तथा फर्श पर गिरते ही टूट गया। लकड़हारा बहुत उदास हो गया। उसकी आंखों में वह सदाशय साधु तैर गया। शायद लकड़हारे को खुशी की नजर लग गई थी।

कहते हैं अद्भुत घड़ा टूटने के दिन से लकड़हारा उदास रहने लगा तथा लकड़ियां काटने लगा। कुछ लोगों का कहना है कि लकड़हारे को एक ही आवाज सुनाई देती- काटते हो तो उगाओ भी- काटते हो तो उगाओ भी- और लकड़हारा निरंतर उस साधु का इंतजार करता रहता है।

नकली दाढ़ी



विद्यार्थी कोई भी शरारत-भरा काम करते तो उनका नेता राजेश होता। दसवीं बी कक्षा सदैव प्रधानाध्यापक की निगाहों में रहती। स्कूल में कोई भी शरारत होती तो प्रधानाध्यापक ही क्या सभी अध्यापकों की शंका उसी कक्षा के विद्यार्थियों पर होती। होती भी क्यों न, क्योंकि राजेश सदा इन बातों की खोज में रहता।

छोटी कक्षा के विद्यार्थियों को बिना कारण ही पीट देना या कक्षा में शोर मचाना उसके लिए मामूली बातें थीं। पढ़ने में वह अच्छा था, इसलिए अध्यापकों ने कभी उसे कड़ा दंड नहीं दिया। नए अध्यापकों के लिए तो वह सदा ही समस्या बना रहता।

प्रधानाध्यापक ने बहुत सोच-विचार के पश्चात् राजेश के पिता को बुलाया।

''कहिए, कैसे बुलाया आपने।'' पूछा राजेश के पिता ने।

''राजेश के विषय में।''

''क्या राजेश पढ़ता नहीं, काम नहीं करता?''

''पढ़ता तो है परंतु कक्षा में अध्यापकों के प्रति-विशेषकर जो नए अध्यापक आते हैं - स्कूल में छोटे विद्यार्थियों के प्रति उसका व्यवहार सराहनीय नहीं। हर कार्य में रोड़ा अटकाना उसकी आदत बन गई है। अध्यापक जरा श्यामपट्ट पर लिखने लगे तो या तो लड़कों को पीछे वाले दरवाजे से भगा देना या फिर श्यामपट्ट की ओर चाक फेंकना कितना अशोभनीय है, इसकी कल्पना तो आप स्वयं कर सकते हैं।''

प्रधानाध्यापक वस्तु-स्थिति समझा कर चुप हो गए। राजेश के पिता ने भी शांतिपूर्वक प्रधानाध्यापक की बात को सुना और प्रधानाध्यापक से कुछ कह कर चले गए। प्रधानाध्यापक को कुछ आशा बंधी।

राजेश के पिता सीधे बाजार गए। वहां से कुछ खरीदा तथा घर लौट आए। राजेश ने देखा उस दिन उसके पिता कुछ उदास, कुछ विचारशील-से दिखाई दे रहे थे। डर के मारे वह बोला नहीं।

दूसरे दिन राजेश स्कूल गया तो उसके सहपाठी शैल ने कहा - ''पता है आज एक और नया अध्यापक आया है। बूढ़ा-सा। लंबी काली दाढ़ी वाला। वही जिसने ऐनक लगा रखी है। तो कुछ हो जाए आज भी फिर।''

''क्यों नहीं?'', झूम कर राजेश बोला।

मास्टर जी कक्षा में आए तो सभी लड़के बंद मुंह किए मुस्करा रहे थे। मानो कह रहे हों- मास्टर जी, तैयार हो जाइए।

मास्टर जी ने पढ़ाना आरंभ किया।

राजेश ने पीछे से उनकी पीठ पर एक छोटा-सा चाक फेंका। सब लड़के मास्टर जी की प्रतिक्रिया देखने के लिए उत्सुक हो उठे।

मास्टर जी ने पीछे मुड़कर देखा और केवल इतना ही कहा - 'यह आदत अच्छी नहीं।' फिर श्यामपट्ट पर लिखने लग गए।

लड़के बैठे लिख रहे थे, परंतु राजेश जैसे डैस्क पर बैठा ऊंघ रहा हो या फिर किसी नई शरारत में विचारमग्न बैठा हो।

''राजेश! तुम क्यों नहीं लिख रहे।'' मास्टर जी ने पूछा।

''कब लिख लोगे?'' क्रोधावेश में मास्टर जी बोले।

''कह दिया, जब जी चाहेगा लिख लूंगा।'' सारी कक्षा के विद्यार्थी इस बढ़ते हुए तनाव का मजा ले रहे थे।

''अभी लिखो।'' साथ ही मास्टर जी ने उसका हाथ पकड़ कर झंझोड़ दिया।

पता नहीं राजेश को क्या हुआ। अपने आपको कक्षा में अपमानित अनुभव कर वह इसका बदला लेना चाहता था। अध्यापक ने जब उसका हाथ झंझोड़ा तो उसने भी जोर से अध्यापक के हाथ झंझोड़ दिए। इसी हाथापाई में नकली दाढ़ी जो मास्टर जी ने लगा रखी थी वह उतर गई।

सारी कक्षा खिलखिला कर हंस पड़ी।

परंतु राजेश को तो मानो काठ मार गया है। वह नकली दाढ़ी वाला उसका अपना पिता ही तो था। राजेश को बड़ी लज्जा आई।

''बेटा! एक बात सदा मन में रखो। जब तक तुम अपने अध्यापकों को अपने मां-बाप की तरह नहीं समझते, तब तक शिक्षा प्राप्त कर पाना संभव नहीं। यदि इस ढंग से शिक्षा प्राप्त कर भी लोगे तो भी लाभ नहीं उठा पाओगे।'

राजेश की आंखों में आंसू थे। उसने अपने पिता जी के चरण छुए परंतु बोला कुछ नहीं।

पुष्पांजलि, राजपुर, पालमपुर, जिला कांगड़ा,
हिमाचल प्रदेश-176 061, मो. 94180 80088

कहानी

भरने दो उड़ान

• सुमन शर्मा

नीले चमकीले आसमान में, सुंदर नगों की भांति सितारे, यहां-वहां अभी भी, छिटके हुए थे। मुर्गे की बांग, सुबह होने का संदेश ज़रूर दे रही थी।

यशोदा का परिवार, अपने घर के कच्चे आंगन में, खुले आकाश के नीचे, गहरी नींद में सो रहा था। गली में लगे पीपल के पेड़ पर कोयल भी, प्रभात की लाली का स्वागत करने के लिए, कूकने लगी थी। घर के आंगन में तोते का पिंजरा था, तोता भी पंख फड़फड़ा कर, अपनी सीमित सी सीमाओं में फुदकने लगा था।

पिछले दिन की थकान, अभी उतरी नहीं थी कि यशोदा के लिए एक नए दिन की शुरुआत हो गई।

उसने हाथ आगे बढ़ा कर, पास की चारपाई पर सो रही, 'पूजा' को हिलाया और बोली, 'पूजा ओ पूजा उठ सवेरा हो गया है।'

पूजा ने करवट बदल ली और सिर तक चादर ढकते हुए बोली, 'अभी तो अंधेरा है, मां ! थोड़ी देर और सोने दो ना।'

'नहीं बेटा, हम सोये रहे, तो हमारे घर के सदस्यों की पूरी की पूरी दिनचर्या ही बिगड़ जाएगी।' तेरे बाबूजी का सात बजे रेलवे फाटक पर पहुंचना बहुत ज़रूरी है। फाटक का सिग्नल नहीं दिया तो रेलवे दुर्घटना हो जाएगी। तेरे चाचा समय पर नौकरी पर नहीं पहुंचे, तो सेठ नौकरी से निकाल देगा।'

पूजा, झुंझलाकर उठ जाती है। वह यशोदा की ओर हाथ बढ़ा कर कहती है, 'लाओ, दो मुझे दूध की डोलची और पैसे।

वह रोज की भांति दूध लेने चल देती है। यशोदा, तब तक रसोई घर में चौका चूल्हा तैयार करने लगती है।

पूजा दूध लेकर घर लौट आती है और बाहर जाकर पीपल के पेड़ के नीचे बने चबूतरे पर बैठ जाती है।

गांव की गलियों से निकल कर छोटी-छोटी पगडंडियों से, मुख्य सड़क की ओर जाती हुई, स्कूल के बच्चों की टोलियां। बस पूजा तो अपलक उन्हें देखती रह जाती थी।

सड़क के दूसरे किनारे पर बना, स्कूल सात बजे लग जाता है। इसके बाद पूजा की हम उम्र का कोई बच्चा गली में नहीं दीखता था। पूजा अपने दो साल के भाई 'हरि' को गोद नें लटकाए यहां--वहां घूमती फिरती थी। मां को ढेर सारा घर का काम करना होता था। पूजा को खीज आती थी, जरा गोदी से नीचे उतारो और हरि रोने लगता था।

हरि सो जाता तो मां पूजा को घर के काम में हाथ बंटाने को बुला लेती।

दोपहर को एक बजे वह फिर चबूतरे पर जा बैठती। स्कूल से वापिस आते छात्रों की टोलियों को वह देखती। हँसते खिलखिलाते आपस में बतियाते बच्चे।

उसके घर आंगन में, पिंजरे में बंद तोते और पूजा में कितनी समानता थी। तोता भी, आकाश में उड़ते पक्षियों को देखकर, केवल अपने पंख फड़फड़ा कर रह जाता था और पूजा भी, बस खुली आंखों से स्कूल जाने का सपना ही देखती रहती थी।

एक बार मां-बाबूजी के सामने उसने स्कूल जाने की इच्छा प्रकट की थी। दोनों ने उसे समझा बुझा दिया, कि लड़कियों का स्कूल जाना व्यर्थ है, उन्हें तो घर का चौका-चूल्हा संभालना पड़ता है, भला पढ़ने लिखने में समय व्यर्थ करने से क्या लाभ।

छुट्टियों में आभा की मौसी शहर से आई थीं, उनकी दोनों बेटियां, स्कूल जाती हैं। आभा मौसी ने जब पूजा को स्कूल भेजने की वकालत पूजा के बाबूजी से की थी, तो बाबूजी कैसे बिगड़े थे। आभा मौसी जब अपने घर लौट गई थी तो, अम्मा के साथ बाबूजी की कितनी लंबी बहस छिड़ गई थी। कितनी खरी खोटी सुनाई थी, बाबूजी ने अम्मा को, 'तेरी बहिन क्या यहां मेरी बेटी को बिगाड़ने आती है? पूजा स्कूल चली जाएगी, तो हरि की देखभाल कौन करेगा, घर का काम कौन संभालेगा? वर्दी और क़िताबों के लिए पैसे कहां से आएंगे।'

मां ने जब दबी जुबान में कहा था, कि और बच्चे भी तो स्कूल जाते हैं। तब बाबूजी कितना लाल-पीला हो गए थे। 'मुझ से ज़ुबान लड़ाती है। लड़की को इसलिए पढ़ाना चाहती है कि, वह मर्दों के बराबर खड़ी होकर उनके मुंह लगे। खबरदार ! इस घर

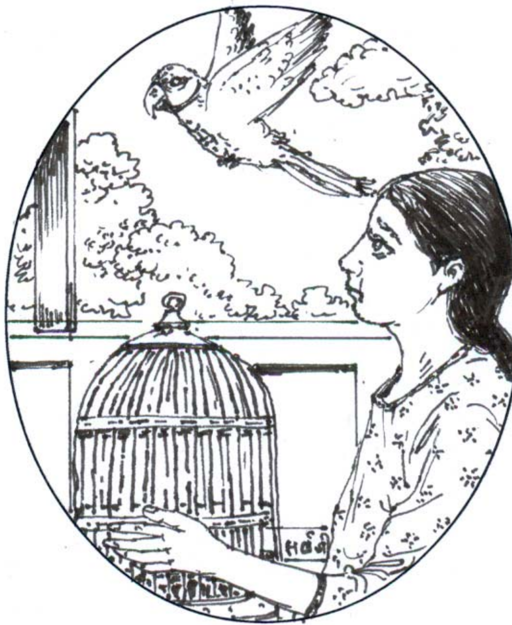
में जो किसी ने पढ़ने का नाम लिया।'

एक शाम पूजा की मां अपने छोटे बेटे को सुलाते-सुलाते खुद भी गहरी नींद में सो गई। पूजा ने दबे पांव घर का दरवाज़ा खोला और पड़ोस में अपनी हमउम्र इंदु के पास पहुंच गई।

उसके चेहरे पर असीम जिज्ञासा के भाव दिख रहे थे, वह इंदु के समक्ष ऐसे खड़ी हो गई, मानो कोई साहूकार से, रुपया उधार मांगने आया हो।

इंदु ने पूजा से पूछा, 'क्या बात है पूजा तेरा चेहरा ऐसा क्यों उतरा है ?' पूजा ने, दयनीय सूरत बनाते हुए इंदु से कहा, 'तनिक अपने बस्ते में से किताबें निकाल कर तो दिखाओ, कैसी होती हैं?' इंदु के चेहरे पर कुछ ऐसे भाव आ गए, मानो उसके पास कुबेर का खजाना हो। वह इतराती हुए बोली , 'अभी लाती हूं, लेकिन ध्यान से देखना कहीं फट न जाए।'

इंदु एक-एक पुस्तक पूजा के सामने रखती रही। पूजा जो भी किताब हाथ में लेती उसके पृष्ठ उलट-पलट कर देखती और ठगी सी रह जाती।



वह किताबों के रंगीन संसार में खोई हुई थी, कि यशोदा उसे ढूंढती हुई आ गई। यशोदा ने उसके गाल पर एक ज़ोरदार तमाचा जड़ दिया। वह पूजा को फटकारते हुए बोली, जल्दी घर चल, तेरे बाबूजी को पता चल गया, तो मेरी चमड़ी उधेड़ देंगे।

पूजा अपनी आधी अधूरी इच्छा को मन में दबाए मां के साथ घर चली गई। किताबों का जादू उसके दिमाग में छा चुका था। वह मां के काम में हाथ बटाने लगी, उसने डरते-डरते मां से फिर सवाल कर लिया, 'मां बाबूजी मुझे स्कूल क्यों नहीं जाने देते।'

यशोदा ने बेलन हाथ में उठा कर कहा, 'अभी तेरी ठुकाई करती हूं , बहुत जुबान चलने लगी है तेरी।'

तभी सरकारी सर्वेक्षण करती हुई, एक टीम वहां पहुंच गई। वह न केवल ऐसे बच्चों की लिस्ट बना रही थी, जो स्कूल नहीं जाते, अपितु उनके स्कूल न जाने का कारण भी लिख रही थी।

यशोदा ने उन्हें दरवाजे से भीतर नहीं घुसने दिया और कह दिया कल सुबह जब पूजा के बाबूजी घर पर हों तब आना।

शाम को पूजा के बाबूजी जब दफ्तर से घर आए, यशोदा ने उन्हें सारी बात बताई। बाबूजी ने नाक फूला कर कहा, 'आने दो कल उन्हें, मैं उनकी अच्छी खबर लूंगा। ये हमारा घर का मामला है, सरकार कौन होती है, इसमें टांग अड़ाने वाली।'

रात को अचानक हरि रोने लगा, उसके पेट में बहुत ज़ोर का दर्द हो रहा था। यशोदा एक सप्ताह पहले उसके लिए डिस्पेंसरी से पेटदर्द की दवाई लाई थी, जिसका ढक्कन हरा था। वह अलमारी में से हरे ढक्कन वाली शीशी उठा लाई और उसने दो बड़े चम्मच भरकर हरि को पिला दी। मगर यह क्या? हरि की तो हालत और खराब हो गई। वह बेहोश हो गया उसके हाथ पैर अकड़ गए। यशोदा ज़ोर-ज़ोर से रोने लगी। सारा घर जाग गया।

पूजा के चाचा डॉक्टर के घर भागे, ज़ोर-ज़ोर से डॉक्टर के घर का दरवाजा खटखटाने लगे। डॉक्टर की पत्नी बाहर आई और बोली, 'डॉक्टर साहिब तो शहर मीटिंग में गए हैं।'

पूजा के चाचा दौड़े- दौड़े घर वापिस आए और यशोदा से वह शीशी मांगी, जो दवाई उसने हरि को पिलाई थी। उस शीशी को देख कर पूजा के चाचा ने अपना सर पकड़ लिया। वह चिल्लाया, 'भाभी आपने तो हरि को कीटनाशक पिला दिया। बस हरा ढक्कन देखा और दे दी दवा। अरे दवा का नाम तो पढ़ लिया होता।' ये सुनते ही यशोदा के पैरों तले ज़मीन खिसक गई। वह बोली, 'भाई! मुझे कहां पढ़ना आता है।'

पूजा के चाचा ने जल्दी-जल्दी उस शीशी के साथ संलग्न कागज़ पढ़ा, जिसमें आवश्यक निर्देश दिए थे और एक इंजेक्शन का नाम भी लिखा था, जो इस कीटनाशक के असर को काम कर सकता था। वह तीर की तर्ज पर घर से बाहर निकला।

उसने केमिस्ट की दूकान चला रहे, देविंदर को नींद से जगाया, उसकी दुकान खुलवाकर इंजेक्शन लिया और नर्स बिमला के घर जाकर दरवाजा पीट-पीट कर सारा किस्सा सुनाया। बिमला इंजेक्शन लगाने को तैयार हो गई।

कुछ ही देर में हरि को होश आ गया। पूरे परिवार ने चैन की सांस ली।

अगली सुबह, स्कूल में भर्ती कराने के लिए फार्म बांटने वाली, सरकारी टीम ने घर का दरवाजा खटखटाया। पूजा के बाबूजी ने दरवाज़ा खोला। पूजा तो डर कर खटिया के पीछे छिप गई। उसे लगा अब बाबूजी इस टीम को खरी खोटी सुनाएंगे। मगर ये क्या ? बाबूजी ने तो उन्हें बैठने के लिए कुर्सियां दीं। मां

कविता

मां मैं दौड़ूंगा

● संजय वर्मा 'दृष्टि'

मां मैं तुम्हारे लिए दौड़ूंगा
जीवन भर आप मेरे लिए दौड़ती रहीं
कभी मां ने यह नहीं दिखाया कि
मै थकी हूं

मां ने दौड़ कर जीवन की सच्चाइयों
का आईना दिखाया
सच्चाई की राह पर
चलना सिखाया

अपने आंचल से मुझे
पंखा झलाया
खुद भूखी रह कर
मेरी तृप्ति की डकार
खुद को संतुष्ट पाया

मां आपने मुझे अंगुली
पकड़कर चलना ⁄लिखना सिखाया
और बना दिया बड़ा आदमी
मैं खुद हैरान हूं

मैं सोचता हूं
मेरे बड़ा बनने पर मेरी मां का हाथ और
संग सदा उनका आशीर्वाद है
यही तो सच्चाई का राज है

लोग देख रहे हैं खुली आंखों से
मां के सपनों का सच
जो उन्होंने मेहनत⁄भाग दौड़ से पूरा किया
मां हो चली बूढ़ी
अब उससे दौड़ा नहीं जाता किंतु
मेरे लिए अब भी दौड़ने की इच्छा है मन में

मां अब मै आप के लिए दौड़ूंगा
ताउम्र तक दौड़ूंगा
दुनिया को ये दिखा सकूं
मां से बढ़ कर दुनिया में
कोई नहीं है!



125, शहीद भगत सिंह मार्ग मनावर
जिला धार (म. प्र.)-454446

को कहा, सबके लिए छाछ लेकर आओ। इसके बाद जो हुआ उस पर तो पूजा को भी विश्वास नहीं हो रहा था।

बाबूजी जी ने पूजा को खटिया के पीछे से हाथ पकड़कर बाहर निकाला और उस टीम से बोले, 'ये हमारी बेटी पूजा है, 'झटपट इसका नाम स्कूल में दाखिला लेने के इच्छुक बच्चों की लिस्ट में दर्ज कर लो और हमारे हरि के लिए आंगनवाड़ी का एक फॉर्म भर दो। यशोदा इसे आंगनवाड़ी में छोड़कर, घर का काम आराम से कर लेगी।

इस पर टीम के एक सदस्य ने हंसते हुए कहा , 'आपको तो सब जानकारी है, फिर अब तक आपने इस सुविधा का लाभ क्यों नहीं उठाया?'

पूजा के बाबूजी बोले, 'बस ये समझ लीजिए आंख पर पट्टी चढ़ी थी, अब उतर गई।

टीम उनके घर से हंसी खुशी विदा हुई। पूजा अपने बाबूजी के पास आकर बोली, 'बाबूजी मेरी एक बात और मान लो न।' उसके बाबूजी बोले, 'हां बोल बिटिया आज हम बहुत खुश हैं।' पूजा बोली, मिट्ठू को आज़ाद कर दो, उसे भी छू लेने दो आसमान।'

बाबूजी ने पूजा के सर पर प्यार से हाथ फेरा और तोते का पिंजरा खोल दिया। पिंजरा खुलते ही मिट्ठू दूर आकाश की ओर उड़ गया। पूजा भीगी पलकों से आसमान निहारती रही।

बी-2/184, पश्चिम विहार, नई दिल्ली-110 063,
मो. 0 98104 85427

कहानी

करमू चाचा का तांगा

● डॉ. सुनीता

बचपन की बातें याद करती है नीना, तो मन दौड़-दौड़कर नानी के गांव जा पहुंचता है। और फिर सालवन गांव की यादों में ऐसे रम जाता है कि समय का कुछ पता ही नहीं चलता।

नीना जब छोटी थी, कोई दस-ग्यारह बरस की, तब तो हालत यह थी कि कोई छुट्टी होते ही उसकी चीख-पुकार शुरू हो जाती थी, 'चलो मां चलो, नानी के गांव में। बताओ, कब चलोगी नानी के गांव में?''

सुनकर नीना की मां खुश भी होतीं, पर कभी-कभी परेशान होकर डांट भी दिया करती थीं, "क्या दिन भर गांव-गांव लगाए रखती है! शहर अच्छा नहीं लगता, तो जा, गांव में ही जाकर रह ले।''

नीना रोंआसी हो जाती, तो मां झट मनाना शुरू कर देती, "अच्छा, मेरी बिट्टो, चलेंगे, जल्दी ही जाएंगे। बस, गरमी की छुट्टियां आने दे।''

और नीना ने मां से पक्का वादा करा लिया था कि इस बार वह पूरी की पूरी गरमी की छुट्टियां नानी के गांव में ही बिताएगी।

गरमी की छुट्टियां होते ही नीना ने मां को फिर याद दिलाया, "चलो मां, चलो नानी के गांव में!''

मां ने झटपट तैयारी की। नीना और रोहित को साथ लिया और गांव की यात्रा शुरू हो गई। पहले बस में और फिर देर तक करमू चाचा के तांगे में।

करमू चाचा का तांगा गांव के ऊबड़-खाबड़ रास्तों पर टिक-टिक-टिक करके आगे बढ़ता, तो नन्हे रोहित को डर लगता, पर नीना खिलखिला पड़ती। कहती, "करमू चाचा का तांगा, तांगा नहीं, किसी राजा का रथ है। मुझे तो इस पर सवारी करके बड़ा मजा आता है।'' इस पर नीना की मां हंस पड़तीं और करमू चाचा अपने तांगे को और भी तेज भगाना शुरू कर देता।

गांव में पहुंचकर नीना को इतने पुराने दोस्त और सहेलियां मिल गईं कि वह तो सारा दिन उन्हीं के साथ खेल-कूद में मस्त हो गई। और फिर रात को नानी से किस्से-कहानियां सुनने का प्रोग्राम। कई रोज यों ही गुजर गए। नीना की मां ने दो-एक बार कहा भी, "नीना, बहुत दिन हो गए। शहर में तेरे पिता जी परेशान हो रहे होंगे। अब वापस चलना चाहिए।'' पर नीना भला इतनी जल्दी गांव को छोड़कर कैसे लौट जाती? वहां उसे इतनी नई-नई बातें जानने-सुनने को मिल रही थीं। इतने नए-नए खेल थे। पेड़ों की ठंडी छांव में घर बनाने और दौड़ने-भागने का आनंद ही कुछ और था। अब तो रोहित को भी यह अच्छा लगने लगा था। नीना ने कहा, "मां...मां, आप लौट जाइए। मैं और रोहित छुट्टियां खत्म होने पर आएंगे।''

मां के चले जाने पर तो नीना की शरारतें और भी बढ़ गईं। उसका प्यारा खेल था पेड़ पर चढ़कर वहां से नीचे छलांग लगाना। एक बार छलांग लगाते समय उसका पैर पेड़ की डाल में ऐसे अटका कि नीचे गिरी तो सिर खूनमखून हो गया। उधर से करमू चाचा अपना तांगा लेकर आ रहे थे। नीना की हालत देखी, तो झट उसकी नानी के घर पहुंचाया। फिर करमू चाचा ही अपने तांगे में वैद्य लक्खीराम जी को बिठाकर ले आए। उन्होंने पट्टी बांधी, पर नीना का दर्द के बारे बुरा हाल था। नानी मुश्किल से उसे संभाल पा रही थी।

तब करमू चाचा नीना के पास बैठकर गप्पें हांकते रहे और 'ऊं -ऊं' कर रोती नीना न जाने कब खिलखिलाकर हंस पड़ी।

तीसरे दिन अपना तांगा लेकर फिर आए करमू चाचा। बोले, "चल नीना, तुझे घुमाकर लाऊं। तेरा मन भी बदल जाएगा।''

नीना और रोहित के साथ-साथ गांव के और बहुत से बच्चे भी बैठे और करमू चाचा का तांगा गांव से कुछ बाहर जंगल की ओर दौड़ पड़ा। वहां नीना ने पहली बार नाचते हुए मोर देखे और दूर, बहुत दूर एक हिरन भी दिखाई दिया। खूब सारे बंदर भी पेड़ों पर उछल-कूद कर रहे थे। तांगे में बैठे बच्चे पहले तो डरे, फिर तालियां बजाकर खिलखिलाकर हंसे। नीना ने पूछा, "करमू चाचा, आपको जंगल में तांगा चलाते डर नहीं लगता?''

करमू चाचा हंसकर बोले, "वाह, डर कैसा! मैं तांगा दौड़ाऊं तो शेर भी मेरा पीछा नहीं कर सकता। उसे मुंह की खानी पड़ेगी!'' सुनकर नीना समेत तांगे में बैठे बच्चे जोर से चिल्लाए, "करमू



चाचा, जिंदाबाद!''

फिर एक-एक कर छुट्टियां खत्म होती गईं। नीना के स्कूल खुलने का दिन पास आ गया। नीना के पिता जी की चिट्ठी आई, "प्यारी बेटी, तुमने नानी को बहुत तंग किया होगा। अब करमू चाचा से कहना, इस शनिवार को वह तुम्हें बस में बिठा देगा। यहां मैं तुम्हें बस अड्डे पर लेने आ जाऊंगा।"

वह दिन भी आ गया, जब नीना और रोहित को गांव छोड़कर करमू चाचा के तांगे में बैठकर शहर की यात्रा करनी थी। उस दिन आसमान में बादल छाए हुए थे और बूंदा-बांदी भी हो रही थी। नानी बोलीं, "नीना, आज रहने दे। कल चले जाना। स्कूल तो सोमवार को ही खुलेगा न!''

नीना बोली, "नानी, पिता जी बेकार में बस अड्डे पर घंटों खड़े रहेंगे, परेशान होंगे। आज ही चले जाएं तो अच्छा है।''

करमू चाचा का तांगा नीचे आकर खड़ा था। नानी के साथ-साथ गांव भर के बच्चे नीना और रोहित को तांगे तक छोड़ने आए। नानी बार-बार समझा रही थीं, "बस में आराम से बैठना। शरारत मत करना।'' नीना और रोहित तांगे में बैठे और करमू चाचा ने झट तांगा दौड़ा दिया।

पर थोड़ा दूर आगे जाते ही बारिश तेज हो गई। बिजली कड़कने लगी। रोहित डर गया। पर नीना ने समझाया, "डर मत रोहित, अभी करमू चाचा हमें बस में बैठा देंगे। फिर हम जल्दी ही शहर पहुंच जाएंगे।''

लेकिन अब पानी इतना तेज हो गया था कि रास्ते का कुछ पता ही नहीं चल रहा था। कच्ची सड़क थी, पर उस पर तेजी से बहता, ठाठें मारता पानी। बीच-बीच में घोड़ा आगे बढ़ने से इनकार कर देता, दोनों टांगे ऊपर करके खड़ा हो जाता। करमू चाचा प्यार से उसे मीठी फटकार देते, तो वह आगे चलता। अंदर-ही-अंदर डर तो नीना को भी लग रहा था। पर वह अपना डर भूलकर रोहित को चिपकाए हुए थी। प्यार से समझा रही थी, "डर मत रोहित, डर मत! करमू चाचा तो कितने होशियार हैं। देखना, अभी तांगा पक्की सड़क पर आया जाता है।''

और तांगा पक्की सड़क पर पहुंचता, इससे पहले ही एक गड्ढे में पहिया फंसा तो करमू चाचा का तांगा उलट गया। नीना और रोहित दोनों पानी में डुबक-डुबक करने लगे। करमू चाचा दौड़कर आए। दोनों को पानी से निकाला, छाती से चिपकाया। फिर बोले, "अरे, तुम्हारे तो सब कपड़े गीले हो गए! मेरा घर पास में है। चलो, चलकर पहले कपड़े बदलो।''

करमू चाचा ने प्यार से घोड़े की गदरन पर हाथ फेरा तो अपनी अक्खड़ता भूलकर, फिर वह संभल-संभलकर चलने लगा। तांगा गड्ढे से बाहर आ गया था। अब वह करमू चाचा के घर की ओर दौड़ रहा था, जो सड़क के पास ही था। नीना और रोहित करमू चाचा के घर पहुंचे, तो सर्दी के मारे उनके दांत बज रहे थे। शरीर में कंपकंपी छूट रही थी। करमू चाचा की पत्नी यशोदा ने नीना और रोहित को अपने बच्चों के कपड़े लाकर बदलने को दिए। सूखे कपड़े पहनकर दोनों ने गरम-गरम चाय पी, परांठे खाए। तब कुछ चैन पड़ा।

अगले दिन फिर करमू चाचा का तांगा दौड़ रहा था। करमू चाचा ने नीना और रोहित के साथ अपने बेटे शिवराम को भी बिठा लिया था। बस अड्डे पर आकर करमू चाचा खुद नीना और रोहित के साथ बस में बैठे। शिवराम तांगा लेकर वापस चला गया।

उस दिन करमू चाचा के साथ नीना और रोहित घर पहुंचे, तो नीना की मां-पिता जी की खुशी का ठिकाना न था। उन्होंने करमू चाचा को बड़े प्यार से दुआएं दीं। करमू चाचा उस दिन शहर में ही रहे। अगले दिन गांव लौट गए।

उसके बाद तो नीना जब-जब गांव गई, करमू चाचा के तांगे की सवारी करना नहीं भूली। करमू चाचा के तांगे में बैठकर दूर-दर की सैर करने का मजा ही अलग था।

अब नीना बड़ी हो गई है, लेकिन करमू चाचा की मीठी बातें अब भी नहीं भूली। हां, पिछले साल वह गांव गई थी तो करमू चाचा उसे लेने के लिए नहीं आए। तांगा तो करमू चाचा का ही था, पर उसे उनका बेटा शिवराम चला रहा था। नीना ने नानी से गांव के बारे में ढेरों बातें की। फिर करमू चाचा की बात भी चली। नानी बोलीं, "करमू गुजरा तो तुझे बहुत याद कर रहा था नीना। उसने मुझे सफेद मोतियों की यह माला दी थी कि नीना की जब शादी हो, तो उसे करमू चाचा की ओर से यह उपहार देना।''

नीना ने सफेद मोतियों की उस माला को संभालकर रख लिया। जब-जब वह उसे पहनती है, करमू चाचा का हंसता-मुसकराता चेहरा आंखों के सामने आ जाता है।

545, सेक्टर-29, फरीदाबाद (हरियाणा)-121008,
मो. 91 99108 62380

कहानी

हाथ की लकीरें

● डॉ. फकीरचंद शुक्ला

आखिर दो वर्ष के बाद दीनू गांव के लिए चल पड़ा। यह बात नहीं कि उसे कभी गांव की याद नहीं आई, मगर वह मजबूर था। दुकान का काम इतना बढ़ गया था कि उसके लिए एक दिन का समय निकाल पाना भी संभव न था। पर गांव के प्रति उसका लगाव बहुत था, अतः उसकी बराबर वहां जाने की इच्छा होती थी।

दीनू अभी तक वह दिन नहीं भूला था जब उसकी मां ने उसकी खूब पिटाई की थी और वह घर से भाग आया था।

जब दीनू पांचवीं कक्षा में पढ़ता था तब उसके पिताजी का देहांत हो गया। दीनू और उसकी मां के लिए तो मानों मुसीबतों का पहाड़ टूट पड़ा था। दीनू की पढ़ाई भी छूट गई। उसे जमींदार के खेतों में काम करना पड़ा। अगर वह काम न करता तो घर का गुजारा होना मुश्किल था। ऐसे में वह स्कूल कैसे जा सकता था! वैसे दीनू पढ़ाई में बहुत कमजोर था। वह पांचवीं कक्षा में दो बार फेल हो गया था।

दीनू पढ़ाई में तो कमजोर था ही, किसी अन्य काम में भी उसका मन नहीं लगता था। जहां कहीं भी वह काम करता, कुछ दिन बाद ही या तो मालिक उसे नौकरी से निकाल देता या वह खुद ही नौकरी छोड़ देता।

''अरे, तू कुछ करेगा भी या यों ही मेरा खून पीता रहेगा? ''एक दिन मां ने रूआंसी होकर कहा था।

''मां, तुझे अपनी पड़ी है। कभी मेरा हाल भी तो देख लिया कर। वे जानवरों की तरह काम लेते हैं और बात-बात पर गालियां देते हैं।" दीनू ने गुस्से से कहा- ''जब मैं उनके किसी काम को मना नहीं करता तब वे गाली-गलौच क्यों करते हैं?"

''बेटे, वे लोग अमीर हैं, गाली-गलौच तो उनके लिए मामूली बात है, '' मां ने ढाढस बंधाते हुए कहा- ''गाली देते हैं तो तुम्हें क्या, अपनी ही जुबान गंदी करते हैं।''

''मगर मुझ से यह सहा नहीं जाता। मैं कोई और काम ढूंढ लूंगा।" दीनू ने गुस्से से कहा।

''अरे, तू कुछ करेगा भी या यों ही हवाई किले बनाता रहेगा?" मां बोली।

बस इसी प्रकार मां-बेटे में अकसर तकरार होती रहती।

एक दिन दीनू की मां को पड़ोसन ने सुझाव दिया, ''चाची, किसी पंडित से क्यों नही पूछ लेतीं? हो सकता है तुम कोई मन्नत देना भूल गई हो। तुमने दीनू के लिए मन्नतें भी तो बहुत मांगी थीं।"

दीनू की मां को उसकी बात जंच गई। हो सकता है कि दीनू पर किसी भूतप्रेत का साया हो, वरना भला कभी ऐसा हुआ है कि घर में खाने के लिए अन्न तक न हो और आदमी कोई काम ही न करे।

बस उसी दिन दीनू की मां दीनू को साथ लेकर गज्जू पंडित के पास जा पहुंची। पंडितजी ने स्लेट पर लकीरें खींच कर हिसाब लगाना शुरू कर दिया। फिर पहले दीनू का बायां हाथ देखा और बाद में दायां और तब दोनों हाथों की लकीरों को एक साथ पढ़ा।

थोड़ी देर तक सोच-विचार करके पंडितजी ने बहुत गंभीर स्वर में दीनू की मां से कहा, ''बहनजी, इस लड़के के हाथ में तो भाग्य की रेखा ही नहीं है। ऐसी लकीरों वाला बालक न तो पढ़-लिख सकता है और न कोई काम-काज कर सकता है। बस, यों ही जैसे-तैसे दिन काटता रहेगा।''

दीनू की मां सुनकर हैरान रह गई। 'न जाने कितनी मन्नतें मानने के बाद तो भगवान ने एक औलाद दी थी और उसकी किस्मत भी इतनी खराब निकली,' यह सोचकर मां का मन भर आया।

''धैर्य रखो, बहनजी, ''पंडितजी ने एक बार फिर दीनू के हाथ की लकीरों को पढ़ना शुरू कर दिया- ''इसके हाथ में भाग्य की एक हल्की-सी रेखा दिखाई दे रही लेकिन भाग्य का सितारा चमकाने के लिए कुछ उपाय करना पड़ेगा।" पंडितजी ने दीनू की मां को तसल्ली देते हुए कहा।

''सच, पंडितजी..."

''हां, बहनजी, मगर..." कहते हुए पंडितजी रुक गए।

''मगर क्या, पंडितजी?"

''बहनजी, उपाय करवाना पड़ेगा। एक लाख पाठ तो मंत्रों

के करने होंगे। हवन करना पड़ेगा और..." पंडितजी बोलने के साथ-साथ स्लेट पर कुछ लिखते भी जा रहे थे-''मेरे खयाल से तीन-चार सौ रुपये तो खर्च हो ही जाएंगे।"

''तीन चार सौ...दीनू की मां के पैरों तले से तो जमीन सरक गई।

''धैर्य से काम लो, बहनजी। बच्चे की जिंदगी का सवाल है। अगर भाग्य पकड़ में आ गया तो तीन-चार सौ रुपये तो यह घर बैठे-बैठे ही कमा लिया करेगा।

मां दुविधा में पड़ गई। इतने पैसों का इंतजाम कैसे कर पाएगी। घर में कोई गहना भी नहीं था, जो उसे बेच देती।

''सोच लीजिए, बहनजी, उपाय करवाना चाहो तो पैसों की चिन्ता मत करना। आपका ज्यादा खर्च नहीं होने दूंगा," पंडितजी ने कहा- ''वैसे उपाय जितनी जल्दी करवा लेंगी उतना ही आपके और बालक के लिए अच्छा होगा।"

मां घर लौट आई। वह दिन भर यही सोचती रही कि पैसों का प्रबंध कैसे करे। तभी उसे याद आया कि दीनू के पिता ने दीनू के पैदा होने पर उसके लिए सोने की चेन बनवाई थी। उसने उसी को बेच डालने का मन बना लिया।

मगर दीनू नहीं माना। मां के बहुत समझाने पर भी वह अपनी जंजीर देने को तैयार नहीं हुआ। मां ने क्रोध में उसे बुरी तरह पीटा और चीख कर कहा, ''अभी निकल जा घर से। पंडितजी ठीक ही कहते हैं, तेरी किस्मत ही खराब है। मैं तो तेरे लिए इतनी भाग-दौड़ कर रही हूं और तुझे जरा भी परवाह नहीं।"

दीनू ने भी आव देखा न ताव फौरन शहर के लिए चल पड़ा। शहर में उसके मित्र श्याम का बड़ा भाई हरि साइकिलों की मरम्मत का काम करता था। दीनू उसकी दुकान पर जा पहुंचा और उसे आपबीती सुनाई।

''तू चिंता मत कर, दीनू मैं तुम्हें साइकिल में पंक्चर लगाना सिखा दूंगा। धीरे-धीरे तू खुद ही सब कुछ सीख जाएगा ''हरि ने दीनू से कहा- ''पर अपनी मां को चिट्ठी जरूर डाल देना। वह



उसने भूल कर भी पैसों के मामले में किसी से बहस नहीं की। अगर कोई दादा दिखने वाला लड़का पैसे देने में आनाकानी करता तो दीनू हाथ जोड़ कर उससे कहता, ''आप तो हमारे अन्नदाता हैं, आप लोगों के सहारे ही तो हम लोग दो रोटी खा लेते हैं।"

परेशान हो रही होगी।"

तब से दीनू हरि के पास ही रहने लगा और साइकिलों की मुरम्मत का काम सीखने लगा। दीनू के आने के कारण हरि की आमदनी बढ़ने लगी थी। दीनू पहिए में से ट्यूब निकाल कर पानी में डाल कर देख लेता कि कहां पंक्चर लगाना है। तब हरि पंक्चर लगा देता। कई बार हरि साइकिल ठीक करने के बाद पेंच इत्यादि कसने का काम दीनू के लिए छोड़ देता।

जल्दी ही दीनू साइकिल की मरम्मत के काम में निपुण हो गया। उसने हरि से कुछ रुपये उधार लेकर कालेज के पास पीपल के एक पेड़ के नीचे अपना अलग अड्डा बना लिया। उसने एक पुरानी साइकिल भी खरीद ली।

दीनू सुबह ही एक छोटे बक्से में अपना सामान डाल कर पेड़ के नीचे अपने अड्डे पर पहुंच जाता और दिन भर काम करता रहता। उसे काम से फुरसत ही नहीं मिलती थी।

कॉलेज के लड़के पैसों के मामले में उसे अधिक परेशान नहीं करते थे। वैसे दीनू पैसे उचित ही मांगा करता था। उसने भूल कर भी पैसों के मामले में किसी से बहस नहीं की। अगर कोई दादा दिखने वाला लड़का पैसे देने में आनाकानी करता तो दीनू हाथ जोड़ कर उससे कहता, ''आप तो हमारे अन्नदाता हैं, आप लोगों के सहारे ही तो हम लोग दो रोटी खा लेते हैं।"

और यह सुन कर वह लड़का भी खिलखिला कर हंस पड़ता और कहता, ''तू बातें खूब बना लेता है।"

दरअसल, हरि ने दीनू को पहले ही सावधान कर दिया था कि वह कॉलेज के लड़कों से कभी बहस न करे, वरना वहां उसका काम नहीं जम पाएगा। दीनू ने हरि की यह बात गांठ बांध ली थी।

एक दिन एक लड़का साइकिल ठीक करवाने के लिए दीनू के पास आया। दीनू ने उसे हंसते हुए कहा, ''बाबूजी, आपके पास

यह साइकिल अच्छी नहीं लगती।"

''क्यों?"

''आप कॉलेज में पढ़ते हैं। आप के पास तो नई साइकिल होनी चाहिए। इस तरह की छकड़ा साइकिल तो मेरे जैसे मजदूर के पास ही अच्छी लगती है।"

''अबे, काहे को ऊल-जलूल बोल रहा है?"

''ठीक है, बाबूजी, जैसा आप को अच्छा लगे। मुझे तो मरम्मत करनी है और खासकर ऐसी साइकिलों की मरम्मत से तो मुझे लाभ ही होगा, ''दीनू ने एक-एक शब्द पर जोर दे कर कहा- ''वैसे मेरी मानो तो इसे 200-300 रुपये में बेच दो।"

''क्या बकता है? 200-300 रुपये में कहीं साइकिल मिलती है?" लड़के ने चिढ़ते हुए कहा।

''जैसी आपकी इच्छा, ''कहते हुए दीनू साइकिल ठीक करने लगा।

पर दीनू की बात उस लड़के के मन में घर पर गई। कुछ ही दिनों बाद उसने वह साइकिल 350 रुपये में दीनू को बेच दी।

दीनू तो स्वयं मिस्तरी था। उसने दो दिन में ही साइकिल की कायापलट कर दी। इसी प्रकार दीनू ने 10 पुरानी साइकिलें खरीद ली थीं। वह उन साइकिलों को किराए पर देने लगा।

दीनू की आमदनी दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही थी। दीनू ने कॉलेज के पास ही लकड़ी का एक खोखा बनवा लिया था। उसने नई बस्ती में जमीन खरीद कर एक कमरा भी बनवा लिया था।

दीनू दिन निकलते ही अपनी दुकान पर चला जाता था और काम पूरा करते-करते उसे रात हो जाती थी।

दो वर्ष से वह गांव नहीं गया था। वह चाहते हुए भी गांव नहीं जा सकता था। उसे समय ही नहीं मिलता था। एक दिन के लिए भी दुकान बंद करने से उसका 100-150 रुपये का नुकसान होता था।

लेकिन मां के बार-बार बुलाने पर आखिर एक दिन दीनू गांव के लिए चल पड़ा।

जब वह गांव के निकट पहुंचा तो उसे यह देख कर बहुत खुशी हुई कि उसके गांव तक पक्की सड़क बन गई है।

जब दीनू गांव के बीच लगे पीपल के पेड़ के पास पहुंचा तो पेड़ के नीचे चारपाई पर लेटे व्यक्ति पर नजर पड़ते ही उसके पांवों को मानो ब्रेक लग गए- ''अरे, यह तो गज्जू पंडित लगते हैं। कैसे बूढ़े लग रहे हैं, सिर के बाल चांदी की तरह सफेद हो गए हैं और चेहरा झुर्रियों से भर गया है। चेहरे पर पीलापन साफ दिख रहा है!" दीनू बुदबुदाया।

''नमस्कार, चाचा!" दीनू ने कहा।

''जुगजुग जियो, बेटा, '' गज्जू पंडित ने गौर से उसकी ओर देखते हुए कहा-''बेटा, मैने तुम्हें पहचाना नहीं।"

''चाचा, मैं दीनू हूं।"

''दीनू ? अरे कहीं तू रूलदू का बेटा दीनू तो नहीं?"

''हां चाचा, मैं वही हूं।"

''अरे, तू तो पहचानने में भी नहीं आ रहा। एकदम जवान हो गया है।"

यह सुन कर दीनू मुस्करा दिया।

''भई, गांव वालों को तो तू भूल ही गया है।" गज्जू पंडित बोला।

''क्या करूं चाचा, फुरसत ही नहीं मिलती। आप सुनाइए, कामकाज कैसा चल रहा है?"

''कामकाज कहां है बेटा, बस दिन काट रहा हूं, '' गज्जू पंडित ने गहरी सांस लेते हुए कहा- ''आ, इधर बैठ जा मेरे पास।"

पर दीनू बैठा नहीं। उसने व्यंग्यात्मक स्वर में कहा, ''पर, चाचा, तुम तो विद्वान आदमी हो। कोई उपाय कर लेते। और फिर उपाय करने के लिए तुम्हारा तो कुछ भी खर्च नहीं होना था।"

दीनू गज्जू पंडित की उपाय करवाने वाली बात अभी तक भूला नहीं था।

''क्यों चाचा, मैं सच कह रहा हूं न?" दीनू ने पूछा- ''तुम उम्र भर दूसरे लोगों की किस्मत सुधारने के लिए उपाय करते रहे, अपने लिए भी कुछ उपाय कर लेना था!"

''अब क्यों घाव पर नमक छिड़क रहा है," गज्जू पंडित ने तिलमिला कर कहा- ''अगर चाचा से इतनी ही हमदर्दी है तो तू ही कर दे उपाय। मेरे छोटे बेटे को अपने साथ शहर ले जा। और नहीं तो दो वक्त की रोटी कमाने के लायक तो हो ही जाएगा।"

''मुझ से जो भी बन पड़ा, जरूर करूंगा चाचा, मगर तुम आज से मंत्रों द्वारा लोगों की किस्मत बदलने की बजाय उन्हें सही शिक्षा देना। परिश्रम से हाथ की लकीरें तो क्या आदमी जो चाहे बदल सकता है।" कहते हुए दीनू लंबे-लंबे डग भरता हुआ वहां से घर के लिए चल दिया।

230-सी, भाई रणधीर सिंह नगर
लुधियाना, पंजाब-141012, मो. 0 98153 59222

- मेहनत करने से दरिद्रता नहीं आती। धर्म करने से पाप नहीं रहता, मौन रहने से कलह नहीं होती और जागते रहने से भय नहीं होता। -चाणक्य

कहानी

परीक्षा

● मृदुला श्रीवास्तव

दिवाकर दसवीं कक्षा का बहुत ही होशियार और समझदार विद्यार्थी था। उसकी आयु यही कोई पंद्रह-सोलह वर्ष की रही होगी। उसके माता-पिता शिमला से मीलों दूर मंडी में पिछले पांच साल से रह रहे थे। पांच वर्ष पहले उसके पिता कांगड़ा से एस.डी.एम. बनकर मंडी आए थे। तब वह पांचवी कक्षा में पढ़ता था। मंडी में उन्हें कोई स्कूल ठीक नहीं सूझा तो उन्होंने उसका दाखिला शिमला के एक प्रतिष्ठित पब्लिक स्कूल में करवा दिया था। पांच साल से वह शिमला में ही होस्टल में रहकर अपनी पढ़ाई कर रहा था।

इस वर्ष उसकी दसवीं की बोर्ड की परीक्षा होनी थी इसलिए वह खूब मेहनत से पढ़ाई करने में लगा रहता था। फिर उसे हर साल की तरह इस साल भी तो अच्छे अंक लेने थे।

मनीष भी उस शहर में पढ़ता था जो दिवाकर का बहुत अच्छा दोस्त था। वे दोनों न तो एक ही स्कूल में पढ़ते थे और न ही एक ही होस्टल में रहते थे। उनकी मित्रता कब और कैसे हुई यह तो वे दोनों खुद भी नहीं जानते थे। दोनों में समानता बस इतनी ही थी कि दोनों दसवीं कक्षा के होशियार विद्यार्थी थे और दोनों एक ही बस स्टाप पर आकर अपनी अपनी बसें पकड़ते थे। एक दूसरे से दोस्ती निभाने के लिए वे बस इतना ही समय एक दूसरे को दे पाते थे।

मनीष दूसरे स्कूल में पढ़ने वाला विद्यार्थी शिमला के ही एक सरकारी स्कूल मे पढ़ता था। वह एक गरीब परिवार का मगर ईमानदार और मेहनती ग्रामीण लड़का था। उनके गांव में आठवीं तक का ही सरकारी स्कूल था। उसकी विधवा मां भी चाहती थी कि उसका बेटा पढ़-लिख कर अपने पैरों पर खड़ा हो जाए। इसलिए उसने मनीष को उसकी नानी के पास रहकर शिमला पढ़ाई करने के लिए भेज दिया था। तब से मनीष अपनी नानी के छोटे से घर में रहते हुए लगन से अपनी पढ़ाई में व्यस्त हो गया।

हर वर्ष मनीष को स्कूल में प्रथम अपने पर छात्रवृत्ति मिलती थी। अगर मनीष इस वर्ष भी दसवीं कक्षा में अच्छे अंक प्राप्त कर ले तो वह निश्चित रूप से अपनी पढ़ाई जारी रख सकेगा क्योंकि वह जानता है कि उसकी मां में इतना सामर्थ्य नहीं कि वह छात्रवृत्ति की सहायता मिले बिना उसकी पढ़ाई जारी रखवा सके।

मनीष रोज भीड़ भरी प्राइवेट बस से ही अपने स्कूल जाता था। कई बार बस न आने पर वह पैदल ही चल पढ़ता था। दिवाकर भी उसी बस स्टाप से अपनी स्कूल बस पकड़ता था और स्पोर्टस क्लब अभ्यास के लिए जाता था। वह बैडमिंटन का अच्छा खिलाड़ी भी था। फिर वहां से सीधे स्कूल आ जाता था। यही क्रम दो साल से चल रहा था।

वे दोनों रोज ही मिलते थे इसलिए उनमें मित्रता हो गई । दोनों में से एक अगर वहां नहीं आता तो दूसरा उदास हो जाता था। मनीष बस स्टाप पर खड़े खड़े ही दिवाकर की गणित की कई समस्याएं मौखिक ही हल कर देता था। दिवाकर उसकी बुद्धिमता से प्रभावित हुए बिना नहीं रहता था।

मनीष एक दिन दिवाकर को अपनी नानी के घर ले गया। दिवाकर तो चाहकर भी मनीष को अपने होस्टल में नहीं ले जा सकता था। वहां बाहर के लड़कों को आने की अनुमति जो नहीं थी।

बोर्ड की परीक्षा नजदीक थी। बीस दिन शेष थे। मनीष तीन-चार दिन तक बस स्टाप पर नहीं आया तो दिवाकर का दिन घबराने लगा और उस दिन स्पोर्टस क्लब जाने की बजाय वह होस्टल से सीधे मनीष की नानी के घर गया।

नानी की बूढ़ी आंखें मुश्किल से ही उसे पहचान पाई थी। वे दरवाजे पर हाथ में टिफिन लिए कहीं जाने के लिए चप्पल पहन रही थी। ''कौन'' उन्होंने पूछा।

''मैं दिवाकर नानी मां '' दिवाकर ने चरण छूते हुए कहा तो नानी पहचान गई।

दिवाकर ने महसूस किया कि नानी मां के चेहरे पर आज झुरियों के साथ गहरी चिन्ता की लकीरें भी साफ दिखाई दे रही है। ''आप टिफिन लेकर कहां जा रही है ? ...क्या बात है नानी मां. ...मनीष तो ठीक है न?'' उसने एक साथ कई प्रश्न पूछ डाले। ''मनीष सिविल अस्पताल में चार दिन से भर्ती है। उसका

एक्सीडेंट हो गया था। प्राइवेट बस वाले ने उसके बस से उतरते ही बस चला दी। मनीष के दोनों पैर पिछले पहिए की नीचे आ गए। ....एक पैर की हड्डी में फ्रैक्चर हो गया और दूसरे का आपरेशन कल होना है।...पता नहीं मेरा मनीष चल भी पाएगा या नहीं, कहते-कहते उसकी नानी की आंखों से अब तक रुके आंसू निकल पड़े।

आपरेशन की बात सुनकर दिवाकर का दिल एकबारगी घबरा गया लेकिन वह संभलकर बोला। ''नानी मां आप चिंता मत कीजिए। मैं हूं न। मैं सब संभाल लूंगा।''

''उसकी मां को भी खबर देनी है।''

''नहीं-नहीं ऐसा मत कीजिए। वे लोग घबरा जाएंगे। बाद में आराम से बता देंगे।...फिर आप मेरे होते हुए बिलकुल चिंता मत कीजिए। दिवाकर नानी को ढांढस बंधाते हुए बोला।

''वह सब तो ठीक है बेटा पर परीक्षा सिर पर है। दस दिन शेष है। रोल नंबर और डेटशीट भी आ गई है। मेरा तो दिल घबरा रहा है। उसकी आगे की पढ़ाई का सारा दारोमदार इसी परीक्षा पर है - नानी कह रही थी।



''हां पेपर तो आ ही गए है। उसके खुद के बोर्ड के पेपर भी तो इसी तारीख से है- सोचते हुए वह बोला।

''उसका सेंटर यहीं पास के स्कूल में पड़ा है। कम से कम बीस मिनट तो पैदल चलकर जाना ही पड़ेगा। नानी की कही यह बात कि पैदल चलकर जा सकते हैं, सुनकर दिवाकर को कुछ आशा बंधी।

''तो फिर आप और मत सोचिए। बस आपरेशन ठीक हो जाए। टांके तो सात-आठ दिन में ठीक हो जांएगे। बाकि रही फ्रेक्चर की बात, तो उसके रहते भी मैं उसे सैंटर तक पहुंचा सकता हूं। पैर पर प्लास्टर तो चढ़ा ही होगा।

''मगर कैसे ?'' नानी ने उत्सुकतावश पूछा।

अच्छा आप यह टिफिन मुझे दीजिए। मैं अस्पताल होकर आता हूं। दिवाकर ने बड़ी चतुराई से नानी की बात टालते हुए कहा।

दिवाकर सिविल अस्पताल नियमित रूप से जाने लगा। उसका एक पैर अस्पताल में तो दूसरा उसकी नानी के घर होता था। कई दिन वह ठीक से सोया नहीं था।

आठ दिन बाद मनीष को अस्पताल से छुट्टी मिल गई। परीक्षा की चिंता उसे अंदर-ही-अंदर सता रही थी। वैसे तो वह अस्पताल में भी डाक्टर के मना करने के बावजूद अधलेटा रहकर अपनी दोहराई करता रहा था लेकिन फिर भी उसको अपने प्लास्टर चढ़े पैर को देखकर चिंता होती थी। डाक्टर ने पैर जमीन पर टिकाने तक को मना किया था। मनीष की पढ़ने की लगन देखकर दिवाकर भी अपना मन मजबूत बना रहा था।

होस्टल में सूचना देकर दिवाकर अब मनीष की नानी के घर पर ही रहता था। नहलाना, धुलाना, कपड़े पहनाना.... उसका हर काम वह स्वयं ही करता था।

परीक्षा में दो दिन शेष थे। दिवाकर होस्टल में वार्डन को सूचना देने गया कि वह कुछ दिन और बाहर रहेगा। काफी दिन पहले आया उसके पिता का पत्र वार्डन ने उसे दिया। उसके पिता ने खूब मेहनत करने और परीक्षा अच्छी तरह देने की बात लिखी थी। दिवाकर ने तुरन्त पत्रोत्तर भेजा लेकिन अपने परीक्षा से जुड़ी कोई बात उसने नहीं लिखी। वह जानता था कि वह या तो परीक्षा नहीं दे पाएगा या फिर देर से अपने सेंटर पहुंचेगा। यह बात जानकर उसके माता-पिता को दुख होगा।

आखिरकार परीक्षा का दिन भी आ पहुंचा। पहली परीक्षा गणित की थी। वह तड़के उठा और मनीष को नहलाने-धुलाने लग गया। मनीष ने सोचा कि दिवाकर भी अपनी यूनिफार्म पहनेगा। लेकिन यह क्या दिवाकर ने साधारण कपड़े पहन लिए।

''तुम तैयार नहीं हो रहे हो? तुम्हारा सेंटर कहां पड़ा है। तुमने बताया नहीं? काश मैं भी परीक्षा देने जा पाता। मेरी तैयारी पूरी है लेकिन मैं तो बेसाखी का सहारा लेकर भी नहीं..। मनीष दुखी मन से बोला।

''तुम परीक्षा देने नहीं जा रहे हो, यह तुम से किसने कहा ? तुम परीक्षा दोगे और बहुत अच्छी तरह दोगे....।'' दिवाकर ने मनीष की बात काटते हुए दृढ़ता से कहा। ''लेकिन कैसे?''

मैं नीचे होकर बैठता हूं। तुम मेरे दोनों कंधे कसकर पकड़कर लटक जाओ। मैं तुम्हें सेंटर तक पहुंचाऊंगा। दिवाकर ने मनीष की खाट के पास नीचे उकड़ूं बैठते हुए कहा।

''क्यों मजाक करते हो? तुम पेपर नहीं दोगे क्या? तुमने अपने एक वर्ष को मजाक समझ लिया है क्या? एक साल बहुत कीमती होता है। मैं ऐसा अन्याय तुम्हारे साथ नहीं होने दूंगा।''

मनीष ने दिवाकर की बात को नकारते हुए कहा। मेरा एक साल खराब होने से कुछ बिगड़ने वाला नहीं। मैं अगले वर्ष फिर परीक्षा दे दूंगा। ''मनीष मेरे अच्छे दोस्त, बीता समय वापिस नहीं आता। परीक्षा का यह अवसर हाथ से निकल गया तो तुम्हारा जीवन अवश्य बर्बाद हो जाएगा। इसलिए नाहक जिद्द छोड़ो और जैसा मैं कह रहा हूं वैसा ही करो।...दिवाकर ने कठोरता से कहा।

''लेकिन इतनी खड़ी चढ़ाई ...अगर इतनी खड़ी उतराई चढ़ाई न होती तो मैं व्हील चेयर से .... । यहां शिमला में तो व्हील चेयर भी नहीं चल सकती वरना मैं व्हील चेयर से सेंटर तक चला जाता और फिर सीढ़ियां भी 60-65 है।

''अच्छा अब समय व्यर्थ मत गवाओं। जाने में समय लगेगा कहते हुए दिवाकर ने मनीष को अपनी पीठ पर उठा लिया।

''मनीष रास्ते भर दिवाकर को हो रहे कष्ट और हानि के बारे में बराबर सोचता रहा। इतना प्यार और इतना बड़ा त्याग........? देखते ही देखते दिवाकर ने कब उसे परीक्षा केंद्र पहुंचा दिया और कब निश्ंचित सीट पर ले जा कर बिठा दिया मनीष को पता ही नहीं चला। तीन घंटे बाहर ही प्रतीक्षा करने के बाद मनीष को पुनः पीठ पर उठाकर उसके घर की ओर चल पड़ा।

परीक्षाएं समाप्त हो गई थी। दिवाकर एक अजीब सी खुशी और संतुष्टि अनुभव कर रहा था। दिवाकर ने दो परीक्षा छोड़ दी थी और अपने माता-पिता से परीक्षा न देने की बात छुपाने का उसे बेहद दुख था। तीन परीक्षाएं उसने एक घंटा देरी से जाकर विशेष अनुमति लेकर दी थी। दो घंटों में तीन घंटे जितना तो नहीं हां पर ढाई घंटे जितना तो उसने तेजी से लिख ही लिया था तीनों पेपरों में।

परीक्षा परिणाम तीन महीने बाद घोषित होने वाला था। दिवाकर के पिता उसे घर ले जाने अपनी कार से आए थे।

रास्ते में ही दिवाकर ने हिम्मत करके अपने पिता को सारी बात सच-सच बता दी। वैसे उसके पिता को शिमला पहुंचने पर वार्डन से सारी बात पहले ही पता चल चुकी थी।

''शाबाश बेटे। इतनी अच्छी बात तुम रोते-रोते बता रहे हो। तुम अपनी दसवीं की परीक्षा ठीक से न देकर अंकों में भले ही पिछड़ गये हो लेकिन अपने दोस्त की मदद करके तुम अपने जीवन की इस दोस्ती की परीक्षा में खरे उतरे हो। घर पहुंचकर दिवाकर के पिताजी उसकी पीठ थपथपाते हुए कह रहे थे।

''तुमने अपने बेबस और जरूरतमंद दोस्त की मदद करके न केवल उसका एक साल बचाया बल्कि उसका पूरा जीवन बिखरने से बचा लिया। दिवाकर की मां कह रही थी।

''लेकिन तुम अगर हमें अपनी समस्या लिखते या एक फोन करवा देते वार्डन से तो मैं मनीष के लिए अपनी गाड़ी ड्राइवर के साथ भिजवा देता या फिर शिमला में ही किसी को कह देता.....उसके एस.डी.एम पिता ने कहा।

''लेकिन तुमने हमसे यह बात छुपाकर बहुत बुरा किया। बच्चों को अपने माता-पिता से कभी कोई बात नहीं छिपानी चाहिए। अगर तुम बता देते तो तुम भी अपनी सारी परीक्षाएं दे सकते थे और मनीष भी। ...पिता समझाते हुए बोले।

''डैडी मुझसे सचमुच बहुत बड़ी भूल हो गई। मुझे माफ कर दीजिए। अब मैं कभी भी आपसे कोई बात नहीं छिपाऊंगा। दिवाकर ने रोते हुए कहा।

''अच्छा, तुम्हें अपनी गलती का एहसास हो गया। अब ये लो तुम्हारा ईनाम। हमने पहले ही खरीद लिया था। पिताजी ने अचानक एक खूबसूरत मिनी लैपटॉप मेज पर रखते हुए कहा।

''लेकिन यह तो आपने मेरे प्रथम अपने पर देने को कहा था और मेरी तो दो पेपरों में कंपार्टमेंट आई है।'' दिवाकर अनायास बोल उठा।

कंपार्टमेंट नहीं प्रथम ही आए हो तुम अपनी इस दोस्ती की परीक्षा में।'' पिता जी ने दिवाकर को गले लगाते हुए कहा।

मनीष को तालियों की गड़गड़ाहट के बीच ढेर सारे पुरस्कार और विशेष छात्रवृति प्रदान की जा रही थी। उसने पूरे शिमला जिले में ही नहीं पूरे हिमाचल प्रदेश में प्रथम स्थान प्राप्त किया था।

अपना स्वप्न साकार होते देख मनीष की विधवा मां दिवाकर को बहुत प्यार से निहार रही थी। आज उसकी खुशी का ठिकाना नहीं था। उसने देखा दिवाकर छोड़ी गई अपनी दो उन परीक्षाओं में कंपार्टमेंट आने की वजह से पुनः उन परीक्षाओं को देने की तैयारी में जुटा हुआ है। एक खूबसूरत प्रसन्नता, शांति और संतोष का भाव उसके मुखमंडल पर साफ झलक रहा है।

फ्लैट नं. 2, द्वितीय तल, हिमालय अपार्टमेंट्स
(गोल्डी जनरल स्टोर के पास), कसुम्पटी, शिमला,
हिमाचल प्रदेश-171009, मोबाईल -9418539595

- क्रोध एक प्रचंड अग्नि है। जो मनुष्य इस अग्नि को वश में कर सकता है, वह उसको बुझा देगा। जो इसे वश में नहीं कर सकता, वह स्वयं को जला लेगा। -महात्मा गांधी
- जुबान ही एक ऐसी चीज है जिसकी वजह से इनसान या तो दिल में उतर जाता है या दिल से उतर जाता है। -अज्ञात

कहानी

स्मार्ट फोन

● अरविंद कुमार 'साहू'

राजू एक सरल और मेधावी बच्चा था। उसके पिताजी गांव के प्राइमरी स्कूल में अध्यापक थे। उनका परिवार सीमित आमदनी के कारण सादगीपूर्वक रहता था। राजू ने इसी वर्ष गांव के स्कूल से आठवीं कक्षा पास की थी और अब वह पांच किलोमीटर दूर कस्बे के स्कूल में नौवीं की पढ़ाई कर रहा था। नए स्कूल में बहुत से अमीर घरों के बच्चे भी पढ़ते थे, जो प्रायः अच्छे कपड़े पहनते थे और बहुत फिजूल खर्ची भी करते थे। कई बच्चे तो घर से मंहगे मोबाइल फोन भी लेकर आते थे और राजू जैसे बच्चों को दिखाकर खूब रौब झाड़ते थे। इन्हें देखकर राजू का बालमन भी बेचैन होने लगता था कि काश ! उसके पास भी ऐसा 'स्मार्ट फोन' होता।

राजू के पिताजी के पास एक पुराना मोबाइल था, जिस पर कभी-कभी फोन आते थे। पिताजी ने उसे भी मोबाइल का उपयोग करना सिखा दिया था, ताकि जब वे किसी काम में व्यस्त हो, तो राजू आने वाली कॉल का जवाब दे सके। इस मोबाइल में बहुत सीमित सुविधाएं थी। एक अलार्म था जो सुबह पांच बजे जगाने का काम करता था। एक सांप वाला साधारण खेल था जो खाली समय में मज़ेदार लगता था। कुछ संगीत की धुनें थीं जो कोई फोन आने पर बजती थी। हां, एक कैलकुलेटर भी था, जिस पर राजू प्रायः अपनी गणित की समझ को जांच लेता था।

कुल मिलाकर मोबाइल में उसकी रुचि बढ़ गई थी।

जबसे उसने महंगे मोबाइल यानी स्मार्ट फोन देखे तो उसे अपना पुराना मोबाइल एकदम बेकार लगने लगा। स्मार्ट फोन में गाने सुनने और वीडियो देखने की सुविधा तो थी ही, साथ में फोटो खींचकर फिल्म भी बनाई जा सकती थी। उसमें रेडियो-टीवी भी चल सकते थे। यहां तक कि एक नक्शा था, जो उसके घर तक रास्ता भी बता सकता था। यही नहीं, उसमें एक 'गूगल' था जो दुनिया भर की कोई भी जानकारी मिनटों में दे सकता था। इतना ज्ञान तो उसके मास्टर जी को भी नहीं होगा। उसमें और भी तमाम उपयोगी कार्यक्रम थे, जिनके बारे में राजू सोच भी नहीं सकता था कि एक छोटा सा मोबाइल इतने काम का हो सकता है।

राजू का बालमन भटकने लगा था। वह रोज सोचता, काश! ऐसा ही एक स्मार्ट फोन उसके पास भी होता तो कितना अच्छे होता। वह बहुत सी बातें इतनी जल्दी सीख जाता जिसके लिए उसे अभी वर्षों प्रतीक्षा करनी पड़ेगी। गूगल द्वारा वह अपना ज्ञान इतना बढ़ा लेता कि उसकी कक्षा तो क्या पूरा स्कूल उसके ज्ञान की प्रशंसा करता। काश ! उसके पिताजी भी इतने धनी होते कि उसकी ये इच्छा झट पूरी हो जाती। उसके पिताजी सचमुच राजू की भावनाओं का बहुत ध्यान रखते थे। उनका हमेशा प्रयास होता था कि राजू खुश रहे और उसके जरूरत की आवश्यक चीजें उसे जरूर मिलें ताकि वह प्रसन्नचित्त होकर अपनी पढ़ाई व प्रगति करता रहे।



लेकिन ...... ये स्मार्ट फोन तो उनके महीने भर के वेतन में भी नहीं आ सकता था।

वह निराशा से भर उठा था। उसकी आकांक्षा लगातार बढ़ती जा रही थी।

राजू सोचता रहता कि काश ! कोई चमत्कार हो जाता और ये स्मार्ट फोन उसके हाथ लग जाता। पर उसे कोई इतना महंगा स्मार्ट फोन उपहार या पुरस्कार में भी तो नहीं देने वाला था।

वह करे तो क्या करे ?

"भगवान ! कहीं पड़ा हुआ ही मिल जाता तो वह उसे छुपाकर रख लेता ।" - वह बालक बुद्धि चमत्कार की आशा में प्रार्थना भी करने लगा था । ...और एक दिन, स्कूल के बाहर रास्ते में उसे सचमुच एक पड़ा हुआ स्मार्ट फोन दिख गया । जाने किसका छूट गया था, पर राजू की तो मानो प्रार्थना ही पूरी हो गई थी । पहले तो वह झिझका, और डरा भी कि दूसरे की वस्तु नहीं छूनी चाहिए, भले ही वह पड़ी हुई क्यों न हो । किंतु जल्द ही उसकी झिझक पर स्मार्ट फोन का आकर्षण हावी हो गया । उसने सतर्कतापूर्वक इधर- उधर देखा ।

घर पहुंच कर जल्दी से उसने बस्ता रखा और बिना हाथ मुंह धोए ही अपने कमरे में घुस गया। वह स्मार्ट फोन चलाने की बड़ी जल्दी में था। खुशी-खुशी उसने मोबाइल चालू किया और फिर धीरे-धीरे उसकी चमत्कारी दुनिया में डूबता चला गया।

कोई भी आस पास नहीं था । वह जल्दी से फोन उठाकर चलता बना ।

घर पहुंच कर जल्दी से उसने बस्ता रखा और बिना हाथ मुंह धोए ही अपने कमरे में घुस गया । वह स्मार्ट फोन चलाने की बड़ी जल्दी में था । खुशी-खुशी उसने मोबाइल चालू किया और फिर धीरे-धीरे उसकी चमत्कारी दुनिया में डूबता चला गया । एक के बाद एक, वह सारे फीचर तेजी से खोलता-देखता जा रहा था । उस के हाथ बड़ी तेजी से कीबोर्ड पर थिरक रहे थे ।

वह सोच रहा था कि कितनी जल्दी सब कुछ जान-समझ ले और अपने मन की इच्छाएं पूरी कर ले । आज वह साथी बच्चों के साथ शाम को खेलने भी नहीं गया । आज उसको भूख भी नहीं लगी, जबकि खाने का समय हो गया था । मां ने कई बार पुकारा तो कह दिया कि भूख नहीं है । घंटे बीत गए, राजू को समय का पता ही नहीं चला । रात हो गयी थी । वह फोन से खेलते-खेलते, उसे हाथ में पकड़े हुए ही थक कर सो गया ।

देर रात तक जागने के कारण राजू सुबह भी देर तक सोता रह गया । पिता जी को आश्चर्य हुआ कि सुबह पांच बजे उठने वाला आज इतनी देर तक सोया है । अब तो परीक्षा के दिन भी आने वाले हैं । वह उसे देखने कमरे में गए तो राजू दुनिया से बेखबर सोता मिला । उसके चेहरे पर मासूमियत और परम संतुष्टि के भाव छाए हुए थे । उन्होंने प्यार से झुक कर उसका माथा चूमा और धीरे से जगाने लगे । तभी राजू ने एक करवट ली और स्मार्ट फोन उसके हाथ से छूट कर गिर गया । पिताजी चमक उठे । यह क्या? राजू के पास महंगा मोबाइल फोन । कहां से आया? उन्हें समझते देर न लगी कि राजू देर रात तक क्यों व्यस्त था? अब उनके लिए सब कुछ जानना बहुत जरूरी हो गया था ।

राजू के उठते ही उन्होंने स्मार्ट फोन के बारे मे पूछा । राजू को ज़ोर का झटका लगा । जैसे उसकी चोरी पकड़ी गई हो । उसने डरते-डरते पिताजी को सारी बात बता दी । वे तत्काल बोले "बेटे ये बहुत गलत बात है । पहली बात तो दूसरे कि कोई भी वस्तु लेनी हीं नहीं चाहिए, और यदि पड़ा हुआ भी मिला है तो यह बात हमको कल ही बतानी चाहिए थी । हमें तुरंत यह मोबाइल उसके मालिक को या पुलिस स्टेशन में जाकर लौटाना होगा । अन्यथा, हम पर ईमानदार होने के बावजूद चोरी का आरोप भी लग सकता है । पिताजी की बातें सुनते ही राजू के होश उड़ गए । वह अपराध बोध से भर गया । उसे अपनी गलती का आभास हो चुका था ।

उसने तुरंत पिताजी जी से क्षमा मांगी और स्वीकार किया कि वह इस फोन को अच्छी तरह चला कर देखने-समझने और आनंद उठाने का मोह नहीं छोड़ पाया था । पिताजी शांति से बोले, "बेटे! गलतियां सबसे हो जाती है । लेकिन इसका आभास होते ही भूल सुधार जरूर करना चाहिए । अन्यथा देर होने पर परिणाम विनाशकरी भी हो सकता है । चलो जल्दी से तैयार हो जाओ । हम गांव के प्रधान जी के साथ जाकर इसे पुलिस को सौंप देंगे । वह मालिक को ढूंढ लेगी ।"

थोड़ी देर बाद वे लोग कस्बे की पुलिस चौकी में बैठे थे । दरोगा जी बता रहे थे कि इस स्मार्ट फोन की शिकायत उनके पास आ चुकी है । हमने सर्विलांस के जरिए उसे खोजने का प्रयास भी शुरू कर दिया है । इसी गांव के आस-पास की लोकेशन मिल रही है । कुछ देर में हम आपके घर तक पहुंच ही जाते । अच्छा किया कि आप लोग खुद इसे यहां ले आए । अगर यह आपके घर से बरामद होता तो आप पर चोरी या समान छिपाने का आरोप जरूर लगता । आप लोग कानूनी लफड़े में फंसते और गांव में लोग तरह-तरह की बातें फैलते । बहरहाल, अब आप निश्चिंत रहें । हम इसे सही मालिक तक जल्द ही पहुंचा देंगे ।"

इसके बाद दरोगा जी ने राजू को भी प्यार से समझाया, "बेटे! कभी भी लालच में न पड़ना । इस तरह की लावारिस वस्तुओं में विस्फोटक पदार्थ भी हो सकता है । चोरी का आरोप न सही किंतु विस्फोट होने से जान-माल का भारी नुकसान भी हो सकता है । ऐसे मामलें में तत्काल पुलिस या अपने समझदार बड़े -बुजुर्गो को बताना चाहिए । तभी ठीक और जरूरी कार्यवाही हो पाएगी ।"

"जी सर, मैं हमेशा ध्यान रखूंगा ।" राजू का सिर पश्चाताप से झुका हुआ था । इस घटना से उसे एक नई सीख मिल गई थी ।

साहू सदन , अकोढ़िया रोड, ऊंचाहार
जिला रायबरेली (उ प्र)-229404, मो : 9451268214

कहानी

नेहा का सपना

● रतन चंद 'रत्नेश'

गर्मी के दिन थे। नेहा अपने पापा के साथ बरामदे में सोने की कोशिश कर रही थी। पापा उसे सुलाते-सुलाते स्वयं गहरी नींद में सो गए थे, पर नेहा को नींद नहीं आ रही थी। वह खुले आसमान में फैले टिमटिमाते तारों को निहारे जा रही थी। पाठशाला में उसकी सहपाठिनी मीनू ने उसे उड़न-तश्तरी के बारे में बताया था। उसने वीडियो पर कोई फिल्म देखी थी। बाद में घर आकर नेहा ने अपने पापा से उड़न-तश्तरी की सच्चाई के बारे में पूछा था। पापा ने बताया था कि कई लोगों ने विश्व के कई स्थानों पर उड़न-तश्तरी को देखा है, पर वह किसी ग्रह से आता है या किसी देश का अत्याधुनिक यान है, इसके बारे में सही जानकारी प्राप्त नहीं हुई है।



नेहा इस समय भी उस उड़न-तश्तरी के बारे में सोच रही थी। सोचते-सोचते उसे नींद आ गई। रात में अचानक जब उसकी आंखें खुली तो उसने आकाश में एक गोलाकार प्रकाशमान वस्तु देखी। ऐसा जान पड़ा कि वह वस्तु धरती की ओर ही आ रही है। नेहा ने घर से बाहर आकर देखा तो सचमुच वह तश्तरीनुमा वस्तु कुछ ही दूरी पर पेड़ों की झुरमुट के पास उसके आंखों के सामने उतरी। नेहा उत्सुकतावश उस ओर बढ़ी। निकट पहुंचने पर उसने देखा यह वस्तु तो वही उड़न-तश्तरी है। तभी उसमें से आवाज आई, ''नेहा, डरो नहीं। हमारे करीब आओ। हम दूसरे ग्रह से आए हैं और पृथ्वी के लोगों से मित्रता करना चाहते हैं, पर हम जब भी पृथ्वी की ओर आते हैं, पृथ्वीवासी हमारे यान को संदेह की दृष्टि से देखते हैं और तेज गति से चलने वाले वायुयान से हमारा पीछा करते हैं। हमारी सबसे बड़ी उपलब्धि यह है कि हम पृथ्वीवासियों की मन की बातें पढ़ लेते हैं। इस विज्ञान के कारण हमने तुम्हारा नाम भी जान लिया है।''

नेहा उस उड़न-तश्तरी के निकट पहुंची। उसके दरवाजे से चार-पांच गुड्डे-गुड़िया से दिखने वाले छोटे-छोटे मानवाकृति निकले।

''नेहा, डरो नहीं।'' उनमें से एक ने कहा। ''हमें पता है कि तुम एक अच्छी लड़की हो। तुमने हमारे बारे में जानने का प्रयत्न किया, यह हमें महसूस हुआ था। तभी तो हम तुमसे मिलने आए हैं।''

वे नेहा के सामने आकर खड़े हो गए। नेहा का भय समाप्त हो चुका था। वे बोलने वाले गुड्डे-गुड़िया उसे बहुत अच्छे लगे। नेहा की उम्र सात वर्ष की थी फिर भी कद में दूसरे ग्रह के निवासी उससे छोटे थे।

उन्होंने एक-एक कर नेहा का हाथ अपने हाथों में लेकर चूमा। वह उनसे मिलकर बहुत प्रसन्न हुई।

उनमें से एक ने नेहा से पूछा, ''क्या तुम हमारे साथ उड़न-तश्तरी की सैर करोगी? हम आधे घंटे में तुम्हें घुमा लाएंगे और तुम भी हमारे बारे में बहुत कुछ जान जाओगी। इस तरह तुम्हारी जिज्ञासा भी शांत हो जाएगी।''

नेहा उनके साथ जाने के लिए राजी हो गई। उसे उनके साथ जाना भी अच्छा लग रहा था।

नेहा का हाथ पकड़कर वे उसे उड़न-तश्तरी में ले गए। अंदर जाने पर उसे लगा कि वह विज्ञान-लोक में आ गई है। उनमें से एक बौने ने एक बटन दबाया तो एक गद्देदार कुर्सी आ गई जिस पर उसे बड़े आदर से बिठाया गया। इसी बीच उड़न-तश्तरी हवा

में उड़ने लगी। पलक झपकते ही नेहा के सामने ढेर सारी मिठाइयां और फल एक मेज पर आ गए।

नेहा ने मिठाई का एक टुकड़ा उठाया और उनसे कहा, ''मैं इस समय कुछ खाना नहीं चाहती, मित्रो। बस मुझे घूम-घूमकर यहां की विचित्र दुनिया देख लेने दो।''

यह कहकर वह उठकर सब कुछ गौर से देखने लगी। वहां वैसे कई जीवित गुड्डे-गुड़िया थे। एक गुड्डे ने नेहा को अपनी तरफ बुलाया। जब वह उसके पास पहुंची तो टीवी के पर्दे के सामने वह बैठा कुछ देख रहा था। उसे गुड्डे ने बताया कि यहां बटन दबाकर दुनिया का हर बड़ा शहर देखा जा सकता है। तब नेहा ने उस पर्दे पर कई शहर देखे जो रात के अंधेरे में जगमग कर रहे थे।

नेहा को वहां उस उड़न-तश्तरी पर सब कुछ बहुत पसंद आया। वह उनके व्यवहार से ही बहुत खुश थी।

उसने कहा, ''अगर सचमुच हम पृथ्वीवासी और आप लोगों में मित्रता हो जाय तो कितना अच्छा हो? आप लोग तो बहुत भले हैं। हम लोगों से मित्रता क्यों नहीं करते?''

''हमने कई बार पृथ्वीवासियों से मित्रता करने की कोशिश की। हम विकसित भी बहुत हैं। इस मित्रता से हमारा और तुम्हारा भी भला होगा पर हम जब भी मित्रता के लिए पृथ्वी की ओर आते हैं, हमें पता चल जाता है कि तुम्हारे पृथ्वीवासी हमारे प्रति अच्छा दृष्टिकोण नहीं रखते हैं। वे अपना स्वार्थ देखते हैं और उनका विचार हमें नुकसान पहुंचाने का होता है। जब भी उनका हृदय साफ होगा, हम अवश्य मित्रता करेंगे।'' उनमें से एक गुड्डे ने कहा।

दूसरा बोला, ''अच्छा नेहा, चलो हम तुम्हें तुम्हारे घर छोड़ आते हैं। समय हो गया है और हमें अपने ग्रह वापस भी पहुंचना है। चाहते तो थे तुम्हें अपने ग्रह की भी सैर करवाएं पर तुम्हारे मम्मी-पापा चिंतित होंगे। हम तुमसे मिलने आते रहेंगे। हमारी और तुम्हारी दोस्ती पक्की, पर यह बात तुम किसी को बताना नहीं क्योंकि लोगों को पता चला तो वे हमारा इंतजार करेंगे। इसका पता हमें पहले चल जाएगा और इस प्रकार तुम हमसे कभी मिल नहीं पाओगी।''

इसी बीच पता ही नहीं चला कि कब उड़न-तश्तरी जमीन पर उतर गई। उड़न-तश्तरी का दरवाजा खुलते ही एक गुड्डे ने कहा, ''नेहा, जल्दी से अपने घर चली जाओ। कुछ लोगों को हमारे आने का पता चल गया है। हम जल्दी से यहां से चले जाना चाहते हैं।

नेहा ज्योंही उतरकर अपने घर की ओर बढ़ी, देखते ही देखते उड़न-तश्तरी उड़कर आंखों से ओझल हो गई। नेहा चुपचाप घर पहुंचकर अपने पापा के बगल में लेट गई।

चूहों का भोज

● **रवींद्र नाथ टैगोर** मूल बांग्ला से अनुवाद : **रतन चंद 'रत्नेश'**

लड़कों ने कहा, ''यह अन्याय है, हम नये पंडित से किसी भी दशा में नहीं पढ़ेंगे।''

संस्कृत के नए अध्यापक का नाम काली कुमार तर्कालंकार था।

छुट्टियां बीतने पर लड़के अपने-अपने घरों से रेलगाड़ी में स्कूल लौट रहे थे। उनमें से एक मजाकिया किस्म के लड़के ने नये अध्यापक पर काले कद्दू का बलिदान के नाम से एक तुकबंदी बनायी थी। सारे मिलकर उसे ही ऊंचे स्वर में गा रहे थे। ठीक उसी समय आड़खोला स्टेशन पर एक बूढ़े व्यक्ति उनके कूपे में चढ़े। साथ में उनका बिस्तर था और कपड़े से मुंहबंद दो-तीन हंडिया, एक टीन का ट्रंक और कुछ पोटलियां थीं। बिचकुन नाम का लड़का चिल्ला उठा, ''बुडढे यहां जगह नहीं है, कहीं और जाकर बैठो।''

''बहुत भीड़ है, कहीं जगह नहीं। मैं यहां कोने में बैठा रहूंगा। तुम लोगों को कोई असुविधा नहीं होगी।'' कहकर बूढ़ा एक कोने में चादर बिछाकर बैठ गया।

उसने लड़कों से पूछा, ''बच्चों तुम कहां और क्या करने जा रहे हो?''

बिचकुन ने फट से कहा, ''श्राद्ध करने।''

बूढ़े ने पूछा, ''किसका श्राद्ध?''

इस पर उन्हें सुनने को मिला, ''काले कद्दू, हरे लंका (हरी मिर्च) का।''

ऐसा सुनते ही सभी लड़के सुर में सुर मिलाकर गाने लगे ---

''काला कद्दू ताजा लंका, मिलकर हम बजा देंगे डंका।''

जब आसनसोल में गाड़ी रुकी तो हाथ-मुंह धोने के लिए बूढ़ा नीचे उतरा। लौटने पर बिचकुन ने चेताया, ''यहां न रहें महाशय।''

''क्यों भला?'' बूढ़े ने पूछा।

''यहां चूहे भरे पड़े हैं।''

''चूहे.... क्या कह रहे हो?''

कविता

नन्हे जासूस

● शादाब आलम

जांच-परख करने में माहिर
हम नन्हे जासूस।
आंखें-कान खुले रखते हैं
रहते चौकन्ने-तैयार
पता लगा लेते अम्मा ने
कहां छुपाकर रखे अचार
दिनभर मस्त रहें अपने में
होते ना मायूस।
जहां मिलेंगे अपने मन के
सभी खिलौने व सामान
हमे पता किस गली-मुहल्ले
में पड़ती है वह दूकान
हँसते-गाते हुए निकलता
अपना रोज़ जुलूस।
चोर-सिपाही, लुका-छुपी का
अकसर खेला करते खेल
सूझ-बूझ से पकड़ चोर को
सीधे पहुंचाते हैं जेल।
अपने थाने में न चलती
है बिलकुल भी घूस।

Shadab Alam, Employee I'd-357302,
Tech. Mahindra, A-6, Sector 64, Noida,
U.P.-201301, Mob: 09899261552

''देखिए न! आपके इन हंडियों में घुसकर क्या कर डाला उन चूहों ने।''

उस बूढ़े व्यक्ति ने देखा कि जिन हंडियों में मिठाइयां थीं, वे सब खाली पड़ी हैं।

''...और आपकी पोटली में जो कुछ बंधा था, उसे भी साथ लेते गए।''

पोटली में उनके बगीचे के पांच पके आम थे। वे सज्जन हंसकर कहने लगे, ''ऐसा लगता है कि चूहों को बहुत भूख लगी है।''

बिचकुन बोला, ''नहीं, नहीं... वे होते ही ऐसे हैं। भूख न होने पर भी खाते रहते हैं।''

इस पर सभी लड़के शोर मचाते हुए हंसे। ''हां महाशय, कुछ और होता तो वह चट कर जाते।''

सज्जन कहने लगे, ''एक गलती हो गई मुझसे। गाड़ी में इतने अधिक चूहे होंगे, यह जानता तो उनके खाने के लिए कुछ अधिक लेता आता।''

इतना कुछ करने के बावजूद जब बूढ़े को तनिक भी गुस्सा नहीं आया तो लड़कों को निराशा हुई। अगर वे गुस्सा होते तो उन्हें मजा आ जाता।

बर्दवान में आकर गाड़ी रुकी। यहां घंटा भर रुकेगी। दूसरी लाइन में गाड़ी बदलनी पड़ेगी। सज्जन ने कहा, ''बच्चो, अब तुम्हें कष्ट नहीं दूंगा। दूसरे कूपे में जाकर बैठूंगा।''

''नहीं नहीं ऐसा नहीं होगा। हमारे कूपे में ही बैठें। आपकी पोटली में कुछ बचा हो तो हम सब मिलकर उसकी हिफाजत करेंगे। कुछ भी बर्बाद नहीं जाने देंगे।''

बूढ़ा राजी हो गया। ''ठीक है, तुम सब बैठो, मैं अभी आता हूं।''

लड़के गाड़ी में बैठे रहे। थोड़ी देर बाद ही एक मिठाई वाला उनके कूपे के पास पहुंचा। साथ में वह बूढ़ा व्यक्ति भी था।

हरेक लड़के को मिठाई का दोना देते हुए वे बोले, ''अब चूहे भूखे नहीं रहेंगे।''

लड़के खुशी से नाच उठे। आम की टोकरी लेकर आमवाला आया। भोज में आम भी दिया गया।

लड़कों ने उनसे पूछा, ''आप कहां जा रहे हैं?''

उन्होंने कहा, ''मैं काम की तलाश में चला हूं। जहां काम मिला, वहीं रह जाऊंगा।''

लड़कों ने पूछा, ''आपको कैसा काम चाहिए?''

वे बोले, ''मैं पंडित हूं, संस्कृत पढ़ाता हूं।''

लड़के खुशी में ताली बजाने लगे, ''... तो फिर आप हमारे स्कूल में चलें।''

''आपके स्कूल वाले मुझे क्यों रखेंगे भला?''

''उन्हें रखना ही पड़ेगा। काला कद्दू, ताजा लंका को हम वहां घुसने ही नहीं देंगे।''

''तुम लोगों ने तो मुझे मुश्किल में डाल दिया। यदि स्कूल के सेक्रेटरी मुझे पसंद न करें तो....?''

''उन्हें पसंद करना ही पड़ेगा, वरना हम सब स्कूल छोड़ देंगे।''

''ठीक है, तो फिर मुझे ले चलो।''

गाड़ी स्टेशन पर पहुंची। वहां स्वयं सेक्रेटरी उपस्थित थे। वृद्ध व्यक्ति को देखकर कहने लगे, ''आइए, आइए तर्कालंकार महोदय, आपका हार्दिक स्वागत है।'' फिर उन्होंने उनका चरण-स्पर्श किया।

म.नं. 1859, सेक्टर 7-सी, चंडीगढ़-160 019
मो. : 09417573357

कहानी

चिंटू की मम्मी

● डॉ. मंजरी शुक्ला

अरे, मम्मी...आप इस बार भी क्यों पैरेंट-टीचर मीटिंग में चल रही हो और फिर से वही पुरानी हरी साड़ी...।

दस साल का चिंटू चिड़चिड़ाता हुआ बोला।

पर उसकी मम्मी तो खुशी के मारे फूली ही नहीं समा रही थी। एक-एक पाई इकट्ठा करके उसने अपने इकलौते बेटे का एडमिशन शहर के सबसे बड़े स्कूल में बड़ी मुश्किलों से करवाया था। चिंटू के पापा के ना रहने के बाद तो जैसे वो अपने सारे सपने चिंटू की आँखों से ही पूरे कर लेना चाहती थी।

इसलिए वह उसकी बात पर ध्यान ना देते हुए बोली- "अब जल्दी से चल वरना मीटिंग खत्म हो जायेगी।"

"हो ही जाए तो अच्छा है। "चिंटू धीरे से बुदबुदाया, पर उसकी मम्मी तो अपने बच्चे के मार्क्स जानने के लिए बहुत उत्सुक हो रही थी।

चिंटू ने एक नज़र अपनी मां को देखा जो ढेर सारा तेल लगाये एक सादी सी लंबी चोटी बनाए हुए थी और अपनी वही पुरानी दो साड़ियों में से हमेशा की तरह सूती हरी साड़ी पहने हुए थी। चिंटू को अपनी सहेलियों की मम्मियां याद आ गई जो बहुत ही फ़ेशनेबल थीं और सिर्फ अंग्रेजी में ही बात करती थीं।

चिंटू सर झुकाए हुए चला जा रहा था पर उसकी मम्मी के पैर तो मानो हवा से बातें कर रहे थे।

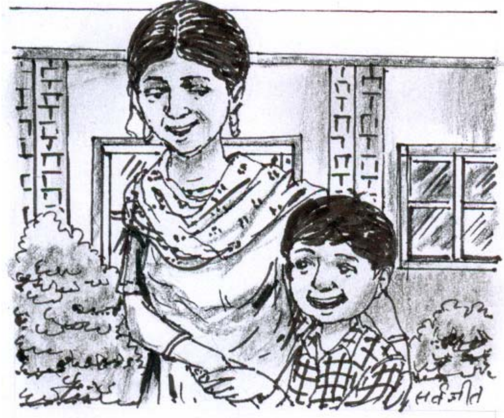
"हे भगवान, आखिर स्कूल आ ही गया। "चिंटू गेट पर बोला

उसकी मम्मी ने आश्चर्य से पूछा - "तो हम लोग तो स्कूल ही आ रहे थे ना?"

चिंटू के सभी दोस्त उससे हँस कर मिल रहे थे। वहां पर उसकी मम्मी को भी सब नमस्ते कर रहे थे पर पता नहीं क्यों उसे लग रहा था कि सब मन ही मन उसकी मम्मी पर हँस रहे थे।

जब वे दोनों उसकी क्लास में पहुंचे तो टीचर ने चिंटू की बहुत तारीफ़ की और उसके फर्स्ट आने की बात बताई। जिसे सुनकर उसकी मम्मी के ख़ुशी की आंखों में आंसू छलक पड़े। उसने साड़ी के पल्लू से अपनी आंखें पोंछ लीं।

टीचर मुस्कुरा दी पर चिंटू को अपनी मम्मी पर बड़ा गुस्सा आया।



तभी टीचर बोली- "प्रिंसिपल मैडम आपसे मिलना चाहती हैं। आपका बेटा सब सेक्शंस में फर्स्ट आया हैं ना।"

यह सुनकर मम्मी खिलखिलाकर हंस पड़ी और उसके साथ प्रिंसिपल मैडम से मिलने चल दी। जब वे लोग कमरे के अंदर पहुंचे तो स्कूल के माली काका और मैडम बैठकर बातें कर रहे थे। प्रिंसिपल मैडम ने मुस्कुराकर उसे और उसकी मम्मी को बैठने के लिए कहा।

तभी माली काका बोले- "तो अब मैं चलता हूं।

बहुत काम हैं मुझे।

"जी..." कहकर प्रिंसिपल मैडम उठी और उनके पैर छूने लगी।

माली काका ने उन्हें आशीर्वाद दिया और कमरे से मुस्कुराते हुए बाहर चले गए।

चिंटू ये देखकर आश्चर्यचकित रह गया। उसकी आंखों के आगे जैसे कमरा घूमने लगा। इतनी बड़ी प्रिंसिपल मैडम, इतनी अच्छी साड़ी पहने और इतने गंदे-संदे रहने वाले माली काका के पैर छू रही थी।

उसमें इतनी हिम्मत भी नहीं थी कि वो मैडम से कुछ पूछता इसलिए चुपचाप उन्हें ताकता रहा।

पर प्रिंसिपल मैडम चिंटू के मनोभावों को बड़ी ही आसानी से समझ गई। उन्होंने सबसे पहले अपनी कुर्सी से उठकर उसकी मम्मी को गले से लगाया और बोली- "आज तक मेरे स्कूल में 99 परसेंट मार्क्स किसी बच्चे के नहीं आए थे। आपके बेटे ने आज हमारे स्कूल का नाम रोशन कर दिया पर इसकी असली हकदार मैं आपको मानती हूं।"

मम्मी खुशी से गदगद हो उठी और बड़े ही प्यार से चिंटू की ओर देखने लगी-

"आप इसे किससे ट्यूशन पढ़वाती हैं ?" मैडम ने आगे पूछा...

यह सुनकर उसकी मम्मी की आंखों में आंसू भर आए।

वह रुंधे गले से बोली- "मैडम, हम लोग बहुत गरीब हैं, इसलिए ट्यूशन नहीं लगवा सकती। मैं इसे खुद ही पढ़ाती हूं।"

यह सुनकर प्रिंसिपल मैडम ने चिंटू को देखकर भावुक होते हुए कहा- "बेटा, फर्स्ट तुम नहीं तुम्हारी मम्मी आई हैं।"

और उन्होंने उन्हें अपने ही स्कूल में नौकरी का आवेदन करने के लिए बोला।

फिर उन्होंने मुस्कुराकर चिंटू अपने पास बुलाया और कहा- "बेटा, वो माली काका मेरे पिताजी हैं। उन्होंने ही मुझे इस काबिल बनाया कि आज मैं इतने बड़े स्कूल की प्रिंसिपल हूं।"

यह सुनते ही चिंटू अपनी माँ से लिपट गया और फफक- फफक कर रोने लगा।

उसकी माँ उसे गोदी में उठाकर चुप कराने लगी और मैडम मुस्कुरा रही थी क्योंकि वो जानती थी कि ये चिंटू के पश्चाताप के आंसू थे जिन्होंने उसके मन का सारा अंधकार धो दिया था और वहां सिर्फ ज्ञान और विवेक का प्रकाश था।

अब चिंटू प्रिंसिपल रूम से निकलते वक्त मम्मी का हाथ जोर से पकड़े हुए था और उसे गर्व था कि उसकी माँ ने कितनी सादगी में रहते हुए भी उसके लिए सब कुछ किया।

उसने मम्मी की ओर हंसकर देखा जो अभी भी स्कूल को एक टक निहार रही थी और बहुत खुशी-खुशी वहां से घर की ओर प्रस्थान कर रही थी।

401, तुलसियानी स्क्वायर, गर्ल्स हाई स्कूल के पास
विपरीत भगवती अपार्टमेंट, क्लाइव रोड
सिविल लाइंस, इलाहाबाद, उ. प्र.211001,
मो. 96137 97138

जितेश कुमार की कविताएं

सूरज का परिवार

चलो चलें सूरज के पास,
जिसकी फैमिली सबसे खास।
आठ लोग रहते हैं घर में,
दिन बीतता केवल चक्कर में।
इन लोगों का नाम ग्रह है,
नैन-नक्श सब अलग तरह हैं।
सूर्य के सबसे नजदीक बुध,
सबसे छोटा प्यारा खुद।
शुक्र का सबसे ऊंचा पारा,
फिर भी शाम-भोर का तारा।
जीवन, जिसकी अपनी पहचान,
नीली पृथ्वी उसका नाम।
मंगल लाल, लाल घर आता,
सबसे बड़ा गुरु कहलाता।
अंगूठी पहना नाम शनि है,
दूसरा सबसे बड़ा यही है।
लेटा ग्रह कहलाता अरुण है,
सबसे दूर हरा वरुण है।

पानी

पानी-पानी, कर शैतानी,
जिद है तेरी, कर मनमानी।
एक नहीं है तेरा रूप,
छांव बनी हो, या हो धूप।
गर्मी पाकर उड़ जाते हो,
कितनी दूर चले जाते हो।
कहलाते हो तुम जलवाष्प,
धुआं-धुआं-सा तुम जलवाष्प।
पड़ी ठंड जब कड़क-कड़क के,
जम जाते तुम बरफ-बरफ से।
न हो ठंढ़ी, न हो गरमी,
बहता केवल अपनी मरजी।
पानी तेरा कितना काम,
बिन तेरे सब काम तमाम।
गंध नहीं तेरा कोई भी,
स्वाद नहीं तेरा कोई भी।
नहीं तुम्हारा कोई रंग,
जीवन के तुम पूरे अंग।

मकान नं. J/44, ज्ञानसरोवर कॉलोनी, रामघाट रोड,
अलीगढ़, उ. प्र.-202001, मो. 0 94577 17788

बाल संस्मरण कथा

दादू माई लव

● गंगा राम राजी

मैं तब दो महीने का ही रहा हूंगा, मेरी दादी-मां ने मुझे यही कहा था। उसे भी अब ठीक से याद नहीं रहता। अब दादी-मां अपनी स्मृतियों में खोई रहती हैं पता नहीं किस पल को याद करते करते गुम हो जाती हैं, कौन सी यादों की पीड़ा का एहसास हो जाता है कि वह कुछ बोलते बोलते ऐसी चुप्पी धारण करती हैं कि लाख कोशिश करने पर भी मुंह से कुछ बोल न निकलने के बदले आंखों से ही गंगा यमुना फूट पड़ती है। इन्हीं धाराओं के माध्यम से वह एक व्यथा काव्य कह डालती हैं।

दादी-मां जब भी समय लगता तो मेरा बचपन मुझे सुनाती ही रहती। मैं बड़े चाव से सुनता रहता--- गुगू अभी दो महीने का हुआ है दादी-मां को पूरी तरह से याद तो नहीं। गुगू अर्थात मेरा वचपन का नाम। एक बार दादी-मां ने मुझे गुगू कहकर क्या पुकारा मेरा तो नाम ही गुगू स्थापित हो गया। चंचल-चंचल मेरे नयन , हल्की-हल्की मुस्कुराहट, जब इच्छा हुई मूत्र कर दिया, अपनी मर्जी का बालक, पूर्ण निश्छल हृदय! न कोई छल न कोई कपट जिसे इन क्रियाओं का ज्ञान तक नहीं, इसलिए तो उसकी मुस्कराहट हृदय को भाव विभोर कर देती है। शेक्शपीयर की पोईम 'सैवन सटेजिज ऑफ दा मैन' में बचपन की यह अवस्था पहला पायदान मानते हुए इस स्टेज को परमात्मा के समीप बताते हुए निश्छल हृदय के साथ तुलना की है।

मां-बाप, दादा-दादी मेरे पैदा होने की चाहे कितनी खुशियां क्यों मनाए, कुछ लोंगों को चाहे कितनी ईर्ष्या क्यों न हों, उसे अर्थात मेरे को किसी से कोई मतलब नहीं और और न ही मुझे इन सब बातों का ज्ञान होता है, मेरा तो अपना संसार है, अपनी दुनियां है। मैं तो एक इच्छाधारी हूं, इच्छा होने पर सोता हूं , इच्छा होने पर जागता हूं, इच्छा होने पर रोता हूं, इच्छा होने पर मुस्काता हूं। मैं सम भाव से जीता हूं, यह वही समभाव है जिस तक पहुंचने के लिए बड़े-बड़े ज्ञानी ध्यानी वर्षों लगा देते हैं।

इस सम भाव के अतिरिक्त एक दूसरी स्थिती भी है। भूख लगने पर जब मैं चीखता, मम्मी क्षण में ही दूध पिलाने पहुंच जाती है, जब मेरा बिस्तर मूत्र से गीला हो जाता है तो मम्मी सेकेंड में उसे बदल देती है। अपने आप चाहे गीले में रहे परन्तु मेरा बिस्तर सूखा और साफ होगा।

दादी-मां ने अपनी बात जारी रखते हुए आगे कहा- जब-जब मैं अपने ननिहाल जाता हूं तो दादा-दादी कुछ खोया-खोया सा महसूस करने लगते। दरअसल उन्हें लगता कि मेरी देख भाल नानके में हो ही नहीं सकती। दादी-मां को तो रात में नींद ही नहीं आती, रात को जब भी उठती तो कहती, ''बहू लापरवाह सी है। कहीं नंगा तो नहीं हो गया होगा। आज तो ठंड भी कुछ ज्यादा ही है। कहीं गीला ही तो नहीं सो रहा है?''

''सो जा, जब गुगू का बाप कनु पैदा हुआ था तो तू सोती थी? जब तक कनु नहीं सोता रात रात उठ कर उसे देखती रहती, अब सो जा और मेरे को भी सोने दे। बहू भी मां है उससे बढ़ कर उसका ख्याल कौन रखेगा।'' दादा ने दादी-मां को समझाने की कोशिश की।

वास्तव में बात यह थी कि जब मैं ननिहाल जाता तो दादू की हालत दादी-मां से भी खराब होती परन्तु दादू किसी को बताते तो नहीं थे। दादू , दादी-मां को फोटोग्राफी का बहुत शौक था। मेरे कई फोटो की उन्होंने एलबम बना रखी थी उसी को देखते रहते। दादू हमेशा यही कहते कि मेरी नानी सुस्त, आलसी और लापरवाह है। इसलिए दादू, दादी-मां को मेरी चिंता अधिक होती।

दादी-दादू सोने का प्रयत्न करते परन्तु नींद उन्हें कम ही पड़ती। वे कहते कि मौसम खराब है ठंड अधिक होने लगी है। मैसम चाहे खराब हो चाहे न हो जब भी मैं ननिहाल जाता तो उन्हें मौसम खराब ही लगता।

आज तो वास्तव में हल्की-हल्की वर्षा हुई है। वर्षा के बाद यहां ठंडक हो जाती है। बस फिर क्या था उनका ध्यान गुगू की ओर जाना स्वभाविक ही है, क्योंकि गुगू ननिहाल में जो है। दादू ने दादी-मां को सुला दिया। परन्तु न तो दादू सो पा रहा था न दादी-मां, जब कि वे एक दूसरे से सोने का बहाना कर रहे थे। गुगू की फिल्म दोनों के दिमाग में चल रही थी।

इसी उधेड़बुन में दादी-मां की आंख लग गई। थोड़ी देर में

बादल गरजने लगे बिजली चमकने लगी, एक तेज गर्जना ने दादी-मां की नींद उड़ा दी। वह जल्दी से बिस्तर पर उठ बैठी तो देखा दादू पहले ही बिस्तर में बैठे हैं। उनको बिस्तर में बैठ देख दादी-मां कुछ ज्यादा ही बौखला गई बोली, ''आप अभी तक सोए नहीं! मुझे सोने को कहते हो। अच्छा अभी बहू को फोन लगाओ और गुगू की खबर लो। यह जो बादल गरजा है, मुझे कुछ होने लगा है। अभी फोन करो अभी।'' दादी-मां ऐसी घबरा कर बोल रही थी कि उन्हें कोई सपना हुआ हो। तभी दादी-मां दादू के साथ लिपट गई।

दादू को पहले गुस्सा आने लगा परन्तु जब दादी-मां दादू से लिपट गई तो वे उन्हें समझाने लगे, ''सामने घड़ी देख रही हो , रात के दो बज रहे हैं अभी फोन करना ठीक रहेगा क्या? तुम यूं हीं परेशान हो रही हो फोन से वे वहां परेशान हो जाऐंगे। इस समय फोन करने का अर्थ कुछ और ही निकलता है। तुम आराम से सो जाओ।''

दादू ने एक लम्बी सांस ली और दादी को बिस्तर में लिटा दिया। समय बहुत हो गया था, आखिर नींद ने उन्हें घेर ही लिया।



दादी-मां ने आगे बताया- सुलाने पर भी जब मैं सोता नहीं था, तो मम्मीं की नींद खराब तो होती ही थी, मुझे दादी-मां के कमरे में छोड़ आती, ''अपने लाडले को संभालो खराब कर रखा है इसे।''

मुझे चौन और दादी-मां को खुशी होती। अंधे को क्या चाहिए, दो आंखें। अब मैं कान्हा के पद चिन्हों पर चलने लगा। रात को मम्मी को तंग करता और वे मुझे दादी-मां, दादू के पास छोड़ आती।

दादू को खर्राटे मारने की आदत थी। मेरे आते ही दादी-मां उन्हें खर्राटे नहीं मारने देती। दादू का नाक ही पकड़ लेतीं। उनका सांस बंद होता तो दादू को पता चल पड़ता कि गुगू सोने आया है। दादी तो ताने मार ही लेती, '' कुंभकरणी नींद सोए हो , ... खर्राटे बंद करो गुगू आया है इसे सोने दो।''

दादी-मां का हुक्म तो मानना ही पड़ता। हुक्म की तामील करते हुए वे बोले, ''ओहो गुगू आया है ,मैं भूल ही जाता हूं क्या करूं अब कुछ याद ही नहीं रहता।''

और दादू मेरे गाल से एक छोटी सी पारी लेना नहीं भूलते । फिर दादू हंसे बिना नहीं रहते, मुझे भी हंसाने का प्रयत्न करते परन्तु दादी-मां ने उन्हें बीच में रोका, ''चुप करो जी बच्चे की नींद डिसटर्ब मत करो।'' दोनों की मेरे बारे में आपस में नोक-झोंक चलती रहती।

दादू को नींद भी जल्दी आती और जाग भी जल्दी। दादू उंघने लग गए। दादी-मां कहती कि मैं दादू पर गया हूं। शरराती तो था दादू की मूंछे मेरे हाथ की मुट्ठी में आ जाती। जब उसे खींच पड़ती तो दादू की नींद उचट जाती परन्तु मेरी मुट्ठी को वे छुड़वाते नहीं, दादी को कहते, ''जल्दी से फोटो ले ले। मेरी मूंछें पकड़ने वाला तो घर में हुआ है। तुम कैमरा लाओ इस दृश्य को कैमरे में कैद कर लो। यह जब बड़ा होगा तो देखेगा कि क्या क्या हरकतें करते थे जनाब।'' दादी-मां ने कैमरा लाया और तुरन्त फोटो ले ली। दादी-मां और दादू को फोटोग्राफी का बड़ा शौक था।

आज मैं इन फोटो को देखता हूं तो हंसी आती है। मैं बचपन में बहुत सुंदर रहा हूंगा। आज भी तो सून्दर हूं। दादा दादी-मां सुंदर थे, मम्मी-पापा भी सुंदर हैं तो मैं भी सुंदर हूंगा। मैं उन फोटो को देख लेता हूं। अच्छा लगता है। मन भर आता है। दादी-मां तो अकसर देखती ही रहती है।

आज सोचता हूं कि दादा-दादी, मां उनका प्यार याद है उनका नाम याद है, उनकी हर हरकत याद है। परंतु आने वाली पीढ़ी तो ऐसी आ रही है उन्हें अपने दादा-दादी का नाम तो दूर वे अपने बाप का नाम ही भूल जाऐंगे, फिर भी स्कूल में प्रवेश के लिए यदि मां-बाप का नाम जरूरी नहीं होता तो वे शायद उन्हें भी भूल जाते। इसमें नई पीढ़ी का कसूर नहीं है, चारों ओर बातावरण ही इस तरह से बन रहा है। पहले ज्वांइट परिवार होता था, वहीं पर दादा-दादी मां-बाप, आगे बेटे बहू, पौत्र आदि इकट्ठे रहते। बच्चों को बुजुर्गों का प्यार मिलता, पारिवारिक संस्कार मिलता जो आज नहीं है। आज पति-पत्नी दोनों काम पर जाते हैं, बच्चों को मशीन में डालने जैसे क्रच में छोड़ आते है, वहां किसको क्या मिलेगा?

मैंने अपने दादा-दादी की गोद में न जाने कितनी बार मूत्र, हगनी की होगी जिससे मुझे एक तृप्ति मिलती थी जो आज की सन्तानों को लाख कोशिशों के बाद भी उपलब्ध कहां?

मेरे दादू अकसर प्रातः ही मंदिर जाया करते थे। मंदिर जाने से पहले वे मुझे गोदी में उठाकर प्यार करते। एक दिन दादू ने मुझे उठाया मैं कन्हैया की तरह शरारती तो था ही मुझ से मूत्र हो गया। दादू तो मंदिर वैसे ही जाने लगे थे परन्तु दादी-मां ने डांट दिया, ''पहले नहा लो। इस तरह से मंदिर थोड़े जाते है, भगवान क्या बोलेंगे?''

दादू बोले, ''भागवान, कन्हैया तो तेरे घर में हैं । नराज कैसे होगें? यह तो नटखट है जब भी मंदिर जाता हूं यह मूत्र छिड़काव

कर ही देता है। चल चल मंदिर भी तो इसका ही है।''

परंतु दादी-मां कब मानने वाली ! जिद्दी है दादी-मां। दादू उस दिन तो फिर से नहा कर मंदिर चले गए थे, परन्तु उस दिन के बाद दादू मंदिर गए ही नहीं। अब नहा कर आते ही मेरे पांव छूते बोलते, '' मेरे कान्हा तो घर में ही है। मैं कैसा मूर्ख हूं, अपने कान्हा को छोड़ उधर मंदिर जाता हूं।''

आज दादू खूब याद आ रहे हैं। समाचार पत्रों में उनका फोटो छपा है, उन्हें साहित्य अकादमी का पुरस्कार जो मिलना है। सुबह से फोन आने शुरू हो गए हैं। सबसे पहला बधाई का फोन मेरी प्रिय शारदा का आया। दादू होते तो उसे भी बहुत प्यार करते। मैंने टी.वी. ऑन कर रखा है। दादू के स्थान पर दादी-मां पुरस्कार लेने दिल्ली गई हैं। पापा भी साथ हैं। ग्यारह बजने वाले हैं। सभी भाषाओं के कवि, कथाकार, लेखक, चिंतकों के नाम पुकारे जाने लगे हैं।

दादू का नाम पुकारा , सारा हाल तालियों से गूंज उठा। मैं यह सब टी.वी. पर देख रहा था। दादी-मां के साथ पापा भी पुरस्कार लेने उठे, तो हाल एक बार फिर से तालियों से गूंज उठा। मेरी आंखें भर आई। मैं यहीं पर खड़ा हो गया। तालियां बजाने लगा। सोच रहा था यदि दादू होते तो... परंतु उन्हें पुरस्कार की इच्छा कभी नहीं हुई। मैंने मम्मी को आवाज लगाई। मम्मी किसी सहेली से मोबाईल पर बात कर रही थी। बार-बार आवाज लगाने पर मम्मी नहीं आई। टी.वी. पर कार्यक्रम चल रहा था।

दादी-मां ने पुरस्कार प्राप्त किया। उधर दर्शक तालियां बजा रहे थे इधर मैं टी.वी. के आगे तालियां बजा रहा था। मेरी आंखों से गंगा यमुना फूटने लगी, मंम्मी फोन पर व्यस्त थी। तभी मेरी मंगेतर कमरे में आई बोली,'' व्हट इज दिस?''

मेरे से कुछ नहीं बोला जा रहा था। आंखें भीग गई , गलाभर आया फिर से तालियां बजाने लगा। तभी मेरे भरे गले से निकल पड़ा 'माई दादू माई लव'... बस आगे कुछ नहीं बोल पाया। शायद वह समझ गई थी कि कुछ भावनात्मक है।

मेरी मंगेतर को कुछ समझ नहीं आ रहा था। टीवी स्क्रीन में पापा और दादी-मां को देख कर सब उसके समझ आ गया। वह मुझे देख तालियां बजाने लगी। तालियां बजाते बजाते उसका ध्यान सामने एल.सी.डी. के ऊपर दादू के साथ मेरा बचपन का फोटो जिसमें मैंने उनकी मूछें पकड़ रखी है, दादू उसमें खिलखिलाते हुए हंस रहे थे, पर गया।

तभी मम्मी ने कमरे में तालियां बजाते हुए प्रवेश करते हुए पूछा, ''गुगू इस पुरस्कार के साथ राशि कितनी मिलती है?''

मैं मम्मी की ओर देखता तालियां ही बजाता रहा।

राजमहल, पुराना बाजार, सुंदनरग, जिला मंडी, हिमाचल प्रदेश, मो. 94180 01224

कविता

नन्हे पक्षी की सीख

• प्रतिभा शर्मा



राह रोककर इक पक्षी ने,
पूछा मुझसे जंगल में।
बड़े रौब से बोल उठा,
क्यों आग लगाई जंगल में?
उजाड़ दिया प्रकृति को,
क्यों न दया दिखाई जंगल में?
याद रखना ओ मानव! जिस दिन,
श्राप हमारा लग जाएगा।
त्राहि-त्राहि मच जाएगी,
जग अंधियारे में बदल जाएगा।
कितने दिन प्रकृति मां भी,
प्रहार तुम्हारा सहन करेगी।
फूटेगा गुस्सा जब दुनिया,
खाक में फिर मिल जाएगी।
वक्त अभी भी है संभलो,
यूं सृष्टि का न विनाश करो।
पेड़ लगाकर धरा का अपनी,
दुल्हन सा सिंगार करो।
जंगल में होगा मंगल।
चहूं ओर भी मंगल छाएगा।
आपदाओं से डरने का फिर,
वक्त नहीं रह जाएगा।
नन्हे से उस पक्षी ने थी,
बात पते की बतलाई।
जिओ और जीने दो की,
अद्‌भुत भाषा थी सिखलाई।

प्रवक्ता हिंदी, रा. व. मा. विद्यालय, धनत्थर, जिला बिलासपुर, हि. प्र. -174034, मो. 94181 78006

कहानी

उड़न तश्तरी

● सुशांत सुप्रिय

बात तब की है जब वह नौ साल का था और चाचा-चाची के यहां मंदिर मार्ग पर बने उनके सरकारी फ्लैट में गर्मी की छुट्टियां बिताने आया था। चूंकि वह दोपहर में खूब सो लेता था, इसलिए रात का खाना खाने के बाद बारह-एक बजे तक आस-पास घूमने-टहलने की छूट उसने चाचा-चाची से ले रखी थी। एक रात वह घूमते-फिरते बिड़ला मंदिर के पीछे 'रिज' के जंगल में जा निकला था। दरअसल वह बचपन से ही निडर था। भूत-प्रेतों के किस्से भी उसे नहीं डरा पाते थे। अकसर वह वीरान पगडंडियों पर अकेले ही घूमने निकल जाता था।

उस रात भी यही हुआ था जब उसने पहली बार उस विशाल उड़न-तश्तरी को देखा था- पूर्णिमा की रात में चमकती हुई, बिड़ला मंदिर से भी दस गुना ऊंची, विशाल और भव्य। हैरानी की बात यह थी कि उसके उड़ने से कोई शोर नहीं हो रहा था , बल्कि रात का सन्नाटा और गहरा हो गया था। झींगुरों ने भी अपना गीत गाना बंद कर दिया था, और पहली बार वह अपने दिल की धड़कनें गिन सकता था। आकाश जैसे तारों के बोझ से नीचे झुक आया था। समय जैसे ठिठक कर वहीं रुक गया था। पर कुछ देर हवा में टंगी रह कर वह उड़न-तश्तरी गायब हो गई थी- उसे मंत्रमुग्ध छोड़ कर।

वह अगली रात फिर वहां आया, लेकिन उस रात उसे वह उड़न-तश्तरी नजर नहीं आई। उसने भी हार नहीं मानी और वह उसकी खोज में हर रात वहां आने लगा- 'रिज' के जंगल में, सांप-बिच्छुओं और बंदरों की परवाह नहीं करता हुआ। वह जैसे एक आदिम आकर्षण से खिंच कर वहां चला आता, और आखिर अगली पूर्णिमा की रात में वह उड़न-तश्तरी उसे फिर नजर आई थी। वह उतनी ही विशाल और भव्य थी और उसके आने में एक शोरहीन तेजी थी। उस घनी रात में थोड़ी देर आकाश में मंडरा कर वह गायब हो गई थी- उसे रोमांच से सिहरता हुआ छोड़ कर।

जब कई पूर्णिमा की रातों में उसने उस उड़न-तश्तरी को देखा, तब एक दिन उसने खाने की मेज पर चाचा-चाची को उसका रहस्य बताना चाहा। पर उन्होंने उसकी बात को मानने से इनकार कर दिया। बल्कि चाची को थोड़ी फिक्र भी हुई कि कहीं लड़के का दिमाग तो नहीं खिसक गया जो यूं बहकी-बहकी बातें कर रहा है। चाचाजी ने भी पूछा, 'क्या इन दिनों कॉमिक्स ज्यादा पढ़ रहे हो?' चाची ने तो यह भी कहा कि कि रात-बिरात जंगल-बियाबान में घूमने से सिर पर भूत-प्रेत और जिन्न-चुडैल चढ़ जाते हैं। इस पर चाचाजी हंस दिए और बात आई-गई हो गई। पर उसने उड़न-तश्तरी की खोज में 'रिज' के जंगल में जाना नहीं छोड़ा।

अगली बार पूर्णिमा वाली रात वह कॉलोनी में कपड़े इस्त्री करने वाले के छह साल के बेटे रमुआ को भी अपने साथ ले गया। इस बार वह उड़न-तश्तरी उन दोनों को नजर आई। वे दोनों चिल्ला कर हाथ हिलाते हुए उसकी ओर भागने लगे।

रमुआ हैरानी से पूछने लगा कि आसमान में लटकी वह इत्ती बड़ी चमकीली, गोल चीज क्या है? तभी, हवा में टंगे उस विशाल यान का दरवाजा अचानक खुला और उन दोनों के मुंह भी खुले-के-खुले रह गए। दरअसल यान के भीतर से कुछ अजीब से जीव उड़न-तश्तरी की बाल्कनीनुमा जगह पर आ खड़े हुए। हालांकि उसके मुंह से 'बाप रे' निकल गया पर वह बिलकुल नहीं डरा। उसने उनकी ओर हाथ हिलाया और जवाब में उन जीवों ने भी अपने शरीर का हाथनुमा अंग हिलाया। उसे लगा जैसे दुनिया रुक गई हो और अब कोई यह दृश्य नहीं बदलेगा। वह घास पर लेट कर बादलों को उड़ता देख रहे बच्चे-सा खुश हो गया। लेकिन उसी पल रमुआ डर कर थर-थर कांपने लगा। जब उसने रमुआ का हाथ पकड़ कर उसे दिलासा दिया तब जा कर वह कुछ ठीक हो पाया।

चांदनी रात में उसने पहली बार उन जीवों की ओर ध्यान से देखा और पाया कि वे सभी बिलकुल काले थे- रात से भी ज्यादा काले, इतने काले कि कालापन भी शर्मा जाए। उस पल उसे एक असीम खुशी महसूस हुई, क्योंकि उसका अपना रंग भी काला था, हालांकि उसके दूसरे भाई-बहन गोरे-चिट्टे थे। शायद इसीलिए उसे दादी उतना प्यार नहीं करती थी जितना उसके दूसरे भाई-बहनों को। इससे कभी-कभी उसमें हीनता की भावना आ जाती थी। पर उस रात उन काले जीवों को उड़न-तश्तरी उड़ाता देख कर वह बेहद खुश हुआ। उन जीवों में कोई भी गोरा नहीं था। वे जीव

उसके लिए प्रेरणा-स्रोत बन गए। बड़े-बड़े काम करना केवल गोरे लोगों की बपौती नहीं है, यह बात उसे समझ में आ गई। उसी पल वह यह भी समझ गया कि केवल गोरा होने से कुछ नहीं होता। असली बात तो इनसान के भीतर की क्षमता में है। वह जान गया कि काले लोग भी प्रतिभाशाली होते हैं। तभी तो ये काले जीव उड़न-तश्तरी जैसी चीज बना और उड़ा पाए। यह सब सोच कर उसे हौसला मिला।

पर उसी समय रमुआ न जाने क्यों डर कर रोने लगा । तब पल के सौवें हिस्से से भी कम समय में वह उड़न-तश्तरी गायब हो गई और उसे अफसोस हुआ कि वह उस पल को कभी न बीतने वाला नहीं बना पाया। रमुआ रो रहा था और उन दोनों में उम्र में वह रमुआ से बड़ा था। इसलिए उसने रमुआ को चुप कराया और वे वापस लौट आए।

अगले दिन हिम्मत करके उसने फिर चाचा-चाची को उड़न-तश्तरी की घटना विस्तार से बताई, पर उसकी बात सुन कर इस बार चाचा भी चिंतित हो उठे।

उन्होंने जोर दे कर कहा कि उसने जरूर कोई सपना देखा होगा। पर वह जानता था कि वह सब सपना कतई नहीं था। उसने अपनी बात दोहराई और चाचा जी को बताया कि वह उड़न-तश्तरी केवल पूर्णिमा वाली रात में ही दिखाई देती है। हालांकि इस बारे में वह कुछ नहीं बता पाया कि ऐसा क्यों था। यह सुन कर चाचा ने कहा कि उड़न-तश्तरी-वश्तरी कुछ नहीं होती, और उन्होंने जरूर कोई हेलिकॉप्टर या हवाई जहाज देख लिया होगा। लेकिन वह जानता था कि ऐसा नहीं था, कि वह उड़न-तश्तरी एक हकीकत थी। अगली पूर्णिमा वाले दिन उसने चाचाजी से फिर बात की और उसकी गलतफहमी दूर करने के लिए रात में चाचाजी उसके साथ स्वयं चल दिए। लेकिन वह गलतफहमी नहीं थी बल्कि एक ठोस सच्चाई थी, क्योंकि अचानक वह उड़न-तश्तरी उसे फिर नजर आई- उतनी ही विशाल और भव्य। रोमांच से उसकी देह में फिर सिहरन होने लगी और उसे लगा जैसे धरती सांस रोककर यह नजारा देख रही हो। उसने चाचाजी को उड़न-तश्तरी दिखानी चाही पर उन्हें कुछ भी दिखाई नहीं दिया, हालांकि रमुआ, जो इस बार भी उनके साथ था, उस उड़न-तश्तरी को साफ-साफ देख पा रहा था। वह इस अजूबे पर हैरान हुआ कि जो चीज उन बच्चों को बिलकुल साफ दिखाई दे रही थी, वह उसके चाचा को क्यों नहीं दिख पा रही थी। पर उसी समय चाचाजी ने उसे डांट कर कहा कि कहीं कोई उड़न-तश्तरी नहीं थी। वे सभी चुपचाप लौट आए थे, हालांकि इस रहस्य का पता लगाने चाचा-चाची और रमुआ का बाप अगली पूर्णिमा की रात भी उन बच्चों के साथ दोबारा 'रिज' के जंगल में गए। पर उस बार भी बड़े लोगों को वह उड़न-तश्तरी नहीं दिखी, जबकि बच्चों को वह साफ नजर आ रही थी।

अगले दिन हिम्मत करके उसने फिर चाचा-चाची को उड़न-तश्तरी की घटना विस्तार से बताई, पर उसकी बात सुन कर इस बार चाचा भी चिंतित हो उठे।

जब वह बड़ा हुआ तो उसने खुद ही इस पहेली का हल निकाल लिया, जो यह था, बच्चे सच्चाई का प्रतीक होते हैं। वे निर्मल और निष्कलंक होते हैं। वे छल-प्रपंच से दूर होते हैं और मासूम होते हैं। उनकी दुनिया बेहद सहज और पारदर्शी होती है। दूसरी ओर बड़े लोग अकसर पाखंडी, अवसरवादी , झूठे और दगाबाज होते हैं। उनकी दुनिया बेहद कृत्रिम और मुखौटों से भरी होती है। वह इस नतीजे पर पहुंचा कि वह उड़न-तश्तरी केवल सच्चे और मासूम बच्चों को ही दिखाई देती थी। उसकी यह धारणा इस बात से भी पुष्ट हो गई कि पांच-छह साल बाद जब वह दोबारा चाचा-चाची के पास आया और पूर्णिमा की रात में उसने दोबारा उस उड़न-तश्तरी को ढूंढना चाहा तो उसे वह दोबारा दिखाई नहीं दी। वह समझ गया कि अब वह बड़ा हो चुका था और अपने बचपन की मासूमियत खो चुका था ।

कॉलेज में जब उसकी दोस्ती मुझ से हुई तो उसने यह बात मुझे भी बताई। लेकिन मैं उस पर हंसा नहीं और न ही मैंने उसका मजाक उड़ाया। मैंने उसकी आंखों में झांक कर देखा। मुझे उसमें सच्चाई जैसा कुछ नजर आया। इसलिए एक पूर्णिमा की रात मैं, मेरी दीदी और जीजाजी, उनका पांच साल का बेटा और वह - मेरा दोस्त, हम सभी बिड़ला मंदिर के पीछे वाले 'रिज' के जंगल में उसकी बताई जगह पर पहुंचे। उसकी धारणा तब सही निकली जब मेरी दीदी का बेटा उड़न-तश्तरी को देखकर खुशी से किलकने लगा और अपने नन्हें-नन्हें हाथ उसकी ओर हिलाने लगा, जबकि हम बड़ों को वह उड़न-तश्तरी कहीं दिखाई नहीं दी । तब हम जान गए कि वह वहां है क्योंकि छोटे बच्चे झूठ नहीं बोलते और यह सच है।

पर यदि आपके मन में इस बात को ले कर शंका हो और आप यह सोच रहे हों कि यह सब कोरी कल्पना है, मनगढ़ंत बातें हैं, तो मेरी बात पर बिलकुल यकीन मत कीजिए। आप अपने छोटे बच्चे को ले कर बिड़ला मंदिर के पीछे वाले 'रिज' के जंगल में पूर्णिमा की रात में जाइए। वहां आपका बच्चा आपको स्वयं बता देगा- 'पापा, वह देखो, कित्ता बड़ा उड़ने वाला गोला!' तब आपको वाकई अफसोस होगा कि काश आप भी छोटे बच्चे होते और पूर्णिमा की रात में आप भी उस उड़न-तश्तरी को देख पाते - बिड़ला मंदिर से भी दस गुना ऊंची, विशाल और भव्य, अपने भीतर एक समूची रहस्यमय दुनिया समेटे हुए।

I-5001, गौड़ ग्रीन सिटी, वैभव खंड,
इंदिरापुरम, गाज़ियाबाद, उ. प्र. -201010, मो. 85120 70086

कहानी

नन्हा-सा खुश्शू खरगोश

● प्रकाश मनु

एक था कुक्कू। बहुत छोटा-सा। होगा कोई पांच-छह बरस का। उसे घूमना पसंद था। पर अकेला भला उसे कौन जाने देता? छोटा-सा कस्बा था माखनपुर, जहां वह रहता था। घर में मां, पिता, भाई-बहन सब थे। पर सबसे ज्यादा प्यार करती थीं मां। मां की पुकार पर वह जहां भी हो, दौड़ा चला आता।

एक बार की बात, कुक्कू की मां तालाब पर कपड़े धोने के लिए जा रही थीं। कुक्कू बोला, "मां-मां, मैं भी साथ चलूंगा।"

मां बोलीं, "ठीक है कुक्कू, चल। तू भी वहां आसपास घूम-घाम लेना। तेरे होने से काम में थोड़ी मदद भी हो जाएगी।"

मां सिर पर कपड़े की बड़ी-सी पोटली लिए आगे-आगे थीं और पीछे-पीछे कुक्कू चल रहा था। मां ने उसे भी कपड़ों की एक निक्कू सी गठरी दे दी थी। कुक्कू ने गठरी हाथ में पकड़ी और मां के पीछे चलते-चलते पहुंच गया तालाब के पास। खूब बड़ा सा तालाब था। पास ही सरसों के पीले-पीले फूलों वाले खेत थे, ऊबड़-खाबड़ टीले, पगडंडियाँ, कांटों के बीच खिलखिलाकर हंसते नागफनी के लाल-पीले फूल और दूर-दूर तक गुलबाँसा की झाड़ियां।

जितनी देर तक मां कपड़े धोती रहीं, कुक्कू आसपास के खेतों में दौड़ता, भागता, खेलता रहा। सर्दियां की गुनगुनी धूप चारों ओर फैली थी। किसी नरम नाजुक खरगोश की तरह भली-भली। मन में गुदगुदाहट पैदा करती।...और आसपास पीले वनफूलों की बहार थी। तालाब के चारों ओर झाड़ियां में खिले तुरही जैसे पीले-पीले फूल उसे भा गए। उन्हें देख-देखकर वह खुश होता। फूलों को तोड़ता और उनके साथ खेलता।

कभी-कभी मां कोई छोटा-मोटा कपड़ा सुखाने के लिए कहतीं, तो दौड़कर जाता और उसे सूखने के लिए आसपास की किसी झाड़ी पर डाल देता। या फिर मां को चादर, धोती, पग्गड़ या कोई और बड़ा कपड़ा सुखाने में मदद करता। उसका यह खेल था। बड़ा मजेदार खेल।

एक और खेल था उसका, जिसमें चीं-चीं-चीं, चिहुक-चिहुक करती चिड़ियां शामिल थीं। उनमें ढेर की ढेर गौरैया थीं। फिर कुछ दूर कबूतर, गुरसल, तोते। सबकी अलग-अलग टी-टुट-टुट। देखकर कुक्कू को बड़ा मजा आता। सोचता, 'थोड़ा मैं भी जानता होता, चिड़ियों जैसी टी-टुट-टुट तो सबकी बातें समझ लेता।' अपने हिस्से का काम करके थोड़ी सी फुरसत मिलती तो वह दौड़कर वहीं आ जाता, जहां पीले-पीले फूलों वाले सरसों के खेत के अगल-बगल चिड़ियों की सभाएं चल रही होतीं।

कुक्कू अपनी इसी दुनिया में खोया हुआ था कि मां बोली, "देख कुक्कू, इतने सारे कपड़े सूख रहे हैं। इनका खयाल रखना। कहीं जाना मत, यहीं रहना।"

कुक्कू उन सूख रहे कपड़ों के आसपास ही खेलने लगा, ताकि कपड़ों की निगरानी भी होती रहे। पर धूप इतनी प्यारी और गुनगुनी थी कि वह खेलते-खेलते दूर गुलबाँसा की एक झाड़ी तक पहुंच गया। वहां उसे दिखाई दी लाल रंग की एक पुरानी-सी किताब। कुक्कू ने उठाकर देखा, वह बालपोथी थी, जैसी वह खुद भी क्लास में पढ़ता था।

बालपोथी के पन्ने कहीं-कहीं फट गए थे। फिर भी साफ-साफ पढ़ा जा रहा था, क से कबूतर, ख खरगोश....ग गमला...! कुक्कू हैरान होकर सोच रहा था, "अरे, यहां तालाब के किनारे यह बालपोथी कहां से आ गई? जरूर मेरे जैसा ही कोई और छोटा बच्चा यहां कभी आया होगा। उसी की किताब यहां छूट गई है।"

"मैं इस किताब को पढ़कर यहीं पीले वनफूलों की झाड़ी के पास रख जाऊंगा। वह बच्चा दोबारा आएगा, तो उसे यह मिल जाएगी।" उसने सोचा।

फिर कुक्कू मजे से किताब पढ़ने लगा। क से कबूतर, ख से खरगोश, ग से गमला...घ घड़ी...! पढ़ते हुए वह जोर-जोर से बोल भी रहा था, ताकि उसका ध्यान इधर-उधर भटके नहीं। पर तभी उसे लगा, कोई चुपचाप आकर उसकी बगल में बैठ गया है और गरदन हिलाता हुआ बड़े ध्यान से उसे देख रहा है।

कुक्कू ने गरदन घुमाकर देखा, तो दिखलाई दिया नन्हा-सा खुश्शू खरगोश। बड़ी-बड़ी काली आंखों और काली चित्तियों वाला, बड़ा ही सुंदर खरगोश।

"अभी-अभी तुम मेरा नाम क्यों ले रहे थे?" खुश्शू खरगोश ने जोर से हंसते हुए कहा। उसकी हंसी ऐसी थी, जैसे वह कुक्कू

का बड़ा पक्का दोस्त हो।

"अरे, मैं तुम्हारा नाम थोड़े ही ले रहा था। मैं तो अपना पाठ याद कर रहा था, क से कबूतर, ख से खरगोश...! पता नहीं कौन बच्चा है, जो यह किताब छोड़ गया?" कुक्कू बोला।

"पर यह तो मेरी किताब है। मैंने ही तो इसे छिपाकर रखा था झाड़ियों के बीच!" खुश्शू खरगोश ने मुसकराते हुए कहा।

"तुमने...? भला तुमने क्यों? क्या तुम्हें किताब पढ़नी आती है?" कुक्कू ने अचरज से भरकर पूछा।

"आती नहीं है तो क्या हुआ, सीख जाऊंगा।" खुश्शू हंसकर बोला।

"मगर...कैसे? मेरा मतलब तुम कैसे सीखोगे? तुम कोई मेरी तरह बच्चे थोड़े ही हो।" कुक्कू ने कहा।

"तुम्हारी तरह नहीं हूं तो क्या? हूं तो बच्चा ही। मेरे मम्मी-पापा भी हैं तुम्हारी तरह। यहीं झाड़ियों के पास है हमारा घर।" कहकर उसने दूर झाड़ी के पास वाले एक टीले की ओर इशारा किया।



कुक्कू को हैरानी हुई। बोला, "तो क्या तुम थोड़ा-थोड़ा पढ़ लेते हो? क से कबूतर, ख से खरगोश?"

"सो तो नहीं, पर मैं तो चित्र देखता हूं। चिड़िया का, कबूतर का, भालू का, हिरन और शेर का। बड़ा मजा आता है। मेरा तो यही पढ़ना है।" खुश्शू ने आंखें नचाकर कहा।

कुक्कू बोला, "अच्छा, तो कभी मेरे साथ स्कूल चलना। वहां भोलानाथ मास्टर जी हमें पढ़ाते हैं। बड़े अच्छे हैं। उनके पास बड़ी सुंदर किताबें हैं जिनमें शेर, हाथी, भालू, खरगोश के बड़े-बड़े चित्र हैं। वे जरूर कोई रंग-बिरंगे चित्रों वाली किताब तुम्हें देंगे। उसे पढ़ना। वह तुम्हें बहुत अच्छी लगेगी।"

"ठीक है, कल मैं तुम्हारे साथ चलूंगा कुक्कू, जरूर चलूंगा।" खुश्शू मारे खुशी के उछलने-कूदने और कलामंडियां खाने लगा।

कुक्कू को बड़ा अच्छा लगा। कपड़े सूखे तो नन्हे खुश्शू खरगोश को 'बाय' करके वह मां के साथ घर चलने लगा। पर खुश्शू खरगोश बोला, "अरे कुक्कू, मैं तुम्हारा घर तो देख लूं। नहीं तो कल तुम्हारे साथ स्कूल कैसे जाऊंगा?"

फिर तो कुक्कू मां के पीछे-पीछे और कुक्कू के पीछे-पीछे खुश्शू खरगोश। घर आया तो कुक्कू ने खुश्शू खरगोश को भी अंदर आने के लिए कहा, पर उसने अपना दायाँ पंजा उठाकर आदाब किया और फिर यह जा और वह जा।

अगले दिन कुक्कू कंधे पर बस्ता टांगे स्कूल जाने के लिए घर से निकला। वह सोच रहा था, "अरे! खुश्शू खरगोश भी तो मेरे साथ स्कूल जाना चाहता था। पर पता नहीं, कहां होगा वह? काश, वह भी मेरे साथ स्कूल चलता, तो कितना मजा आता।"

अभी वह यह सोच ही रहा था कि एक महीन-सी आवाज सुनाई दी, "सुनो कुक्कू, मैं यहां हूं, यहां!"

कुक्कू बड़ा हैरान था। सचमुच खरगोश उसके पैरों के पास ही खड़ा था और अब वह उछलता-कूदता, फुदकता हुआ साथ चल रहा था। कभी-कभी कोई कुत्ता तंग करता तो वह तेजी से आगे दौड़ लगा देता।

थोड़ी देर में कुक्कू के साथ खरगोश भी स्कूल पहुंचा, तो देखकर सब हैरान रह गए, "अरे, यह क्या?"

"मास्टर जी, यह खुश्शू खरगोश है। कह रहा था कि मैं भी पढ़ूंगा। मैं कल मां के साथ तालाब पर गया, तो वहाँ यह मिला और हमारी दोस्ती हो गई। वहीं मुझे इसकी बालपोथी भी मिली। खुश्शू खरगोश उसमें जानवरों के चित्र देखता है।" कुक्कू ने बताया।

सुनकर मास्टर भोलानाथ जी को हंसी आ गई। उन्होंने खुश्शू से कहा, "तुम सामने वाली डेस्क पर बैठ जाओ। इसलिए कि तुम बिलकुल छोटे-से हो। नीचे बैठोगे तो किसी को दिखाई नहीं दोगे।"

खुश्शू खरगोश फौरन उछला और बड़े मजे में ऊपर डेस्क पर जाकर बैठ गया। सब उसकी अदा देखकर हंस रहे थे। खुश्शू खरगोश भी इतने सारे बच्चों के बीच बड़ा खुश था।

मास्टर जी ने खुश्शू की बालपोथी देखी तो बोले, "अरे, मुझे पता नहीं था, तुम पढ़ भी सकते हो। मैं तुम्हें दूसरी किताब दूँगा। उसमें बड़े-बड़े रंगीन चित्र हैं। तुम्हें अच्छी लगेगी। जब तक मन हो, आराम से पढ़ते रहो।"

कहकर मास्टर जी ने अलमारी में से एक सुंदर-सी, रंग-बिरंगी किताब निकालकर खुश्शू को दी। फिर क्लास में बच्चों को पढ़ाना शुरू कर दिया। खुश्शू खरगोश भी ध्यान से मास्टर जी की बातें सुनता रहा। बीच-बीच में शेर, हाथी, हिरन, भालू के बड़े-बड़े चित्र देखने में मगन हो जाता। देखते-देखते चौंकता, फिर अचानक जोर से हंस पड़ता। सारी क्लास का खूब मनोरंजन हो रहा था।

इंटरवल हुआ तो सब बच्चे बाहर खेलने के लिए जाने लगे। मास्टर जी बोले, "अभी आधी छुट्टी हुई है। खुश्शू, चाहो तो तुम भी बच्चों के साथ खेलो।"

सब बच्चे खुश। खुश्शू भी। वह जोश में सबके साथ खूब

भाग-दौड़, उछल-कूद करने लगा। उसने बात ही बात में अपने एक से एक कमाल दिखाए। एक-दो तो बिलकुल सर्कस वाले तमाशे। इनमें चकरी की तरह हवा में गोल-गोल घूमने वाला खेल तो गजब का था।

"पता नहीं, कहां से सीख लिए ये सर्कस वाले अजब खेल-तमाशे इसने?" सोच-सोचकर कुक्कू हैरान।

फिर स्कूल के बड़े वाले मैदान में बच्चों के साथ खुश्शू की खूब लंबी रेस हुई। खुश्शू ऐसे दौड़ा कि जैसे पैरों में बिजली हो। बच्चे कहने लगे, "अरे, राम-राम! यह तो पूरा जादूगर है। हम भला इससे कैसे जीतेंगे?" बीच-बीच में मौज में आकर वह कलामुंडियां भी खाने लगता। कभी फिरकी की तरह नाचता। देखकर सभी हंसते-हंसते लोटपोट हो रहे थे।

और सचमुच थोड़ी ही देर में खुश्शू खरगोश ने रेस जीत ली। सब बच्चे जोर-जोर से तालियां बजा रहे थे और वाह-वाह कर रहे थे। एक लंबे कद वाले लड़के रामू भोला ने उसे कंधे पर बैठाया और मैदान में खुश्शू खरगोश का जुलूस निकलने लगा। सारे बच्चे 'खुश्शू जिंदाबाद!' के नारे लगा रहे थे।

तभी खुश्शू खरगोश को मम्मी-पापा की याद आई। सोचने लगा, "अरे, मैं उन्हें बताकर तो आया नहीं। वे जरूर मुझे ढूंढकर परेशान हो रहे होंगे।...वैसे भी लंच का टाइम तो हो ही गया।"

खुश्शू एकाएक धम्म से नीचे कूदा तो बच्चे हैरान, "अरे-अरे, अचानक खुश्शू को क्या हुआ?"

मगर खुश्शू तो दौड़ता जा रहा था। तोजी से दौड़ता-दौड़ता वह पहुँचा मास्टर भोलानाथ जी के पास। बोला, "मास्टर जी, मैं तो भूल ही गया। मेरे मम्मी-पापा मुझे तालाब के पास ही ढूंढ़ रहे होंगे। बहुत परेशान होंगे। मुझसे गलती हुई, उन्हें बताकर आना चाहिए था न!"

कहकर खुश्शू ने घर जाने की इजाजत मांगी। मास्टर जी बोले, "खुश्शू, यह चित्रों वाली किताब तुम अपने साथ ले जाओ। वैसे भी आज तुमने इतने कमाल दिखाए हैं कि तुम्हें इनाम तो मिलना ही चाहिए। यह सुंदर किताब ही तुम्हारा इनाम है। इसे घर पर आराम से पढ़ना। जब पढ़ लो तो मैं दूसरी किताब दूंगा। जब भी तुम्हारा मन करे, स्कूल आ जाया करो। तुम्हें यहां आने से कोई नहीं रोकेगा।"

खुश्शू खरगोश ने खुश होकर कहा, "अच्छा मास्टर जी।" उसने किताब ली। फिर दायाँ पंजा उठाकर कुक्कू और सब बच्चों को 'आदाब' कह, घर की ओर सरपट दौड़ लगा दी। ऐसा लग रहा था कि स्कूल आने की खुशी में खुश्शू के पांव जमीन पर नहीं पड़ रहे। मास्टर भोलानाथ जी, कुक्कू और सब बच्चे बड़ी हैरानी से उसे देख रहे थे और हाथ हिलाकर 'बाय' कह रहे थे।

545, सेक्टर-29, फरीदाबाद (हरियाणा)-121008
मो. 91-9810602327

प्रेरक प्रसंग

रोटियां

● **विनोद ध्रब्याल राही**



मां अपने बेटे को आवाजें लगा रही थी। काफी देर तक आवाजें लगाने पर भी बेटा नहीं आया तो मां उसके कमरे में पहुंची। बेटा कमरे में भी नहीं था। मां की नजर बेटे की अलमारी पर पड़ी। बहुत सी चींटियां अलमारी के अंदर जा रही थीं। मां ने अलमारी खेली। अलमारी के अंदर रखी किताबों के पीछे दो सूखी रोटियां मिलीं। चींटियां उन्हीं रोटियों के लिए अलमारी में जा रही थीं। मां ने रोटियां बाहर फेंक दीं। बेटे के आने पर मां ने उससे रोटियों के बारे में पूछा,''बेटा, तुम्हारी अलमारी में से मुझे दो सूखी रोटियां मिलीं। वे रोटियां तुमने वहां क्यों रखी थीं?''

''मां, मैं रोज अपनी रोटियों में से दो रोटियां बचाकर हमारे स्कूल के गेट के बाहर बैठने वाली भिखारिन को देता हूं। पिछले कल वह वहां नहीं थी इसलिए मैंने उसके हिस्से की रोटियां अलमारी में रख दीं। अभी पता चला कि कल उसका देहांत हो गया।'' बेटे ने जवाब दिया।

बेटे की बात सुनकर मां की खुशी और आश्चर्य का ठिकाना न रहा। वह अपने बेटे पर गर्व करने लगी। उस खुशनसीब मां का वह बेटा कोई और नहीं बल्कि हमारे महान स्वतंत्रता सेनानी 'नेताजी सुभाष चंद्र बोस' थे।

रा.मा.पाठशाला अनूही (कोटला) जिला कांगड़ा
हि प्र 176205, मो : 9625966500

कहानी

पेटू बिज्जू

● कृष्ण चंद्र महादेविया

धनेशर गांव कड़ी मेहनत और फसलों के लिए दूर-दूर तक जाना जाता था। लोहड़ी का त्योहार था। रात के करीब ग्यारह बज चुके थे। मास्टर रत्न चंद्र और उनके घर के सारे सदस्य बैठक में बैठ कर अंताक्षरी खेल रहे थे। केवल बिज्जू को उसकी माता रसोई में खिचड़ी खिलाने लगी थी। बिज्जू को घी और खिचड़ी तो यूं भी बहुत अच्छी लगती थी। आज वह सातवीं बार घी-खिचड़ी खाने लगा था। घर के दूसरे सदस्य उसे पेटू-पेटू कह कर कई बार चिढ़ा चुके थे। 12-13 वर्ष के बिज्जू का डीलडॉल सामान्य से बहुत ज्यादा था। उनका घर गांव के दूसरे घरों से हटकर और काफी बड़ा था।

अचानक शोर-रोना और टूटने-भजने की आवाजे सुनकर उसकी माता बैठक की ओर दौड़ गई। बिज्जू ने अभी गर्म-गर्म घी गैस से उतारकर थाली में रखी खिचड़ी में उंडेला ही था। वह भी धीरे-धीरे बैठक की ओर जाता एकदम खिड़की के पास रुक गया। उसने दबे पांव एड़ियां उठाकर खिड़की से देखा कि पांच छह डाकू टाइप के लोगों ने उसके पिता, भाई-बहन, दादा-दादी और बुआ को दुपट्टों से बांध कर सोफों पर गिरा दिया था। उसकी मां, बूआ, दादी और बहन के सारे सोने के गहने उसके पिता की घड़ी अंगूठी और जेब के सारे पैसे उन्होंने छीन लिए। उन पांचों डाकुओं के हाथ में हथियार और मुंह कपड़ों से पूरी तरह ढके थे। चार के पहनावे मिलते-जुलते तथा पांचवा उनकी पंचायत के लोगों से मिलता था। पांचों उसके पिता और माता को डराते थप्पड़ मारते रुपयों की मांग करने लगे थे। उन्हें पिटते देख बुआ-दादी-भाई और बहन रोने लगे थे। बिज्जू एकदम दबे पांव रसोई में आ गया। उसने अपना साहस नहीं खोया और मन ही मन कुछ निर्णय ले लिया। उसने अपनी थाली में खिचड़ी के ऊपर दो कल्छुल पिघला घी डाला और हल्दी पाऊडर के दो चम्मच अपनी खिचड़ी में डाल दिए, फिर उन्हें मिलाकर अपने दायें हाथ की उंगलियों, हथेली में इस तरह चिपका लिया कि दिखाई न दे। जब उसके अध्यापक पिता को भी पांचों चोर रुपयों के लिए पीटने लगे तो बिज्जू दौड़ कर उनके पास आया।

''मैं बताता हूं। प्लीज पिताजी को मत मारिए अंकल। प्लीज मत मारिए।'' बिज्जू ने रोने का नाटक करके अपनी पंचायत के पहनावे वाले डाकू के पांव भी पकड़ लिए। उसने अपनी पीली हल्दी सनी उंगलियां सफेद बूट पर लगा दी। फिर वैसे ही उसने दूसरे मोटे-तगड़े डाकू के पांव छुए और बड़ी होशियारी से हल्दी उसके नसवारी बूटों पर मल दी। उसकी हरकत को कोई ताड़ नहीं पाया था। ''हां-हां बताओ। वर्ना हम तुम सबको जान से मार देगें।'' तलवार लहराते एक अन्य डाकू गर्जा था।

''चलो अंकल मैं बताता हूं ... पिता जी अपना वेतन बैंक में रखते है। हमारी पढ़ाई और घर के खर्च के लिए गुजारे जितनी राशि निकाल कर घर में रखते हैं बाकी बैंक में ही रहने देते हैं किंतु पंद्रह हजार रुपये हमारी फीस-वर्दी के लिए अलमारी में रखे हैं उन्हें आप ले जाइए।''

''हां चल बता, कहां हैं?'' एक अन्य डाकू बोला।

बिज्जू उन्हें बैठक के बाहर दूसरे कमरे में ले गया। उन्हें रुपयों वाली अलमारी दिखाई जहां एक रजिस्टर के भीतर रुपये रखे थे। वे पंद्रह हजार समेटने लगे तो बिज्जू उनकी आंख बचाकर तुरन्त बैठक में लौट गया और उसने झटपट बैठक का दरवाजा भीतर से चिटकनी लगाकर बंद कर लिया। फिर जोर-जोर से चोर-चोर, डाकू-डाकू पुकारने लगा। फिर घर के दूसरे सदस्य भी चोर-डाकू पुकारने के साथ गांव वालों को सहायता के लिए पुकारने लगे।

दूर घरों से आवाजें आती और बल्ब जलते देख पांचों डाकू आनन-फानन में बाहर की ओर दौड़ गए। उनके दूर जाते कदमों की पदचाप से बिज्जू ने अंदाजा लगा लिया कि वे अब भाग गए हैं। उसने तुरंत अपने पिता और दूसरे लोगों के हाथ खोल दिए। उसके पिता ने तुरंत पुलिस को फोन लगाया किंतु थानेदार ने फोन पर ही लुटे गहनों और रुपयों की जानकारी ली और सुबह तहकीकात करने आने को बताया। गांव के आठ-दस लोग चोर-चोर की आवाजें सुनकर उनके यहां पहुंच गये थे। उन सभी ने मास्टर रत्न चंद्र और उसके पिता तथा घर के सदस्यों को हौसला दिया। फिर डकेती के घटनाक्रम पर चर्चा करते उन्होंने सुबह एस. पी. से मिलने का कार्यक्रम बनाया और लौट गए थे। मास्टर रत्न

चंद्र और उनके घर के सदस्य रात को एक दो-बजे के बाद ही अपने-अपने रूम में सो पाए थे। सुबह मास्टर रत्न चंद्र के घर लोगों का तांता लगने लगा था गांव में चोरी-डकैती पर सभी गांव वासी हैरान-परेशान हो गए थे। सभी ने उन्हें एक बार फिर सांत्वना दी। वे सभी आज आपातकालीन ग्रामसभा में अन्य प्रस्तावों के साथ-साथ ग्राम की सुरक्षा के लिए अपने अपने विचार रखने का मन बना चुके थे। उसके बाद वे प्रधान को साथ लेकर एस.पी. से मिलने जाना चाहते थे, गांव के बीच चोरी की घटना उनमें भय और रोष पैदा कर गई थी। बिज्जू भी अपने पिता के साथ ग्राम सभा में शामिल होने आ गया था। क्योंकि उनके घर के पास ही पंचायत घर में ग्राम सभा होनी निश्चित हुई थी। मास्टर रत्न चंद्र के घर हुई चोरी-डकैती की खबर हर ओर फैल गई थी।

ग्राम सभा में करीब तीन सौ आदमी पहुंच चुके थे। बिज्जू भी पिता के पास खड़ा था। ग्राम सभा पंचों और अन्य लोगों ने अपनी बातें और विभिन्न प्रस्ताव रखे थे। फिर मंच पर उनकी पंचायत के सातवें वार्ड के पंच लखवीर यादव आया और देशप्रेम और चोरी-डकैती पर गंभीरता से भाषण देने लगा। एकाएक बिज्जू का ध्यान पंच लखवीर यादव के जूतों पर पड़ा। एक जूते में पीला निशान साफ दिख रहा था। वह चुपचाप अपने पिता के पास आया और उनको किनारे की तरफ ले जाकर उनके कान में रात को घी-खिचड़ी और हल्दी पाऊडर की बातें बताई। घी से मिलकर हल्दी का पक्का रंग जूतों से असानी से नहीं छूटता। उसके पिता ने दूर किनारे जाकर एक बार फिर थानेदार से फोन पर बात की और अपने बेटे की चतुराई भी बताई। पंच लखबीर यादव के जूते पीले रंग की सूचना सुनने पर थानेदार अब तुरंत दलबल सहित ग्राम सहित ग्राम सभा में ही आ धमका। थानेदार और सिपाहियों को सामने पाकर एक घड़ी लखबीर यादव चुप हो गया था किन्तु फिर संभल कर पुनः भाषण देने लगा था। थानेदार की तीखी निगाहें उस पर थी। फिर कुछ सोचकर थानेदार तुरंत उसके पास पहुंचा। पंच साहब रात 11 बजे से 12 बजे के बीच आप कहां थे?

''घर था जनाब, मगर आप क्यों पूछ रहें हैं? कहीं मुझे ही तो डाकू नहीं समझ रहें।'' नकली हंसते और निडर बनने की एक्टिंग करते पंच लखबीर यादव बोला।

''फिर तुम्हारे जूते पर यह हल्दी का निशान क्यों है? निशान? कहां है...।'' अपने जूते पर पीला निशान देखकर वह सकपका गया था। ''यह निशान मास्टर रत्नचंद्र जी के बेटे बिज्जू ने रात तुम्हारा पांव पकड़ते लगाया था।'' थानेदार ने दांत पिसते कहा और जोर का तमाचा उसके मुंह पर जड़ दिया। ग्राम सभा में उपस्थित सारे लोग सन्नाटे में आ गए।

चुपचाप सारी घटना बता दे और डकैती में शामिल अपने साथियों के नाम भी बता दे वर्ना तुम्हारी सारी पंची निकाल दूंगा। सभी के सामने तुम्हारी हड्डी पसली तोड़ दूंगा।'' थानेदार गर्जा।

पंच लखबीर यादव की सीटी-पिटी गुम हो गई थी। उसने हथियार डाल दिए और डकेती में शामिल होने की बात सिर झुका कर स्वीकार कर ली। उसने रात की डकैती में अपने वार्ड में किराये के मकान में रहने वाले चारों फेरी वालों के नाम भी बता दिये। बस फिर क्या था। पंच यादव को वहीं स्तंभ से बांध कर पुलिस टीम चारों फेरी वालों को पकड़ने चली गई। जल्दी ही उन्होंने चारों को पकड़ कर उन्हें वहीं ग्रामसभा में ले आए। बिजू ने एक फेरी वाले के जूते में भी पीला निशान लगाया था। उनके और पंच के पहरावे को देखकर उसे शक हो गया था कि बाहर और गांव के किसी व्यक्ति का उनके यहां डकैती का हाथ हो सकता है। अचानक गांव के कुछ युवकों ने पांचों डाकुओं को पीटना शुरू किया और उनको पीट-पीट कर अधमरा बना दिया। बड़ी कठिनाई से थानेदार और पुलिस कर्मियों ने उन्हें छुड़ाया। थानेदार और प्रधान की पूछताछ से उन्होंने सब उगल दिया था। लुटे गहने और रुपये छुपाए स्थानों से लाने के लिए एक फेरी वाले डाकू और चार सिपाही भेज दिये थे।

चोरी का सामान बरामद हो गया था। पांचों डाकुओं को पुलिस थाने ले गई थी। ग्राम सभा और पूरी पंचायत में आज बिज्जू की होशियारी की ही चर्चा थी। बिज्जू की सूझबूझ और बहादुरी पर पंचायत प्रधान ने पांच हजार रुपये इनाम ग्राम सभा में बिज्जू को प्रदान किया। पंचायत प्रधान ने ग्राम सभा में बिज्जू की बहादुरी के लिए राज्य पुरस्कार देने के लिए प्रस्ताव पास कर जिलाधीश को भेज दिया था। अगले दिन अखबारों और टी.वी. चैनलों पर बिज्जू की सूझबूझ और होशियारी के समाचार उसके फोटो के साथ आए थे। पाठशाला और गांव के सभी जन उसकी प्रशंसा करते शाबाशी देते थे। बिज्जू अब सभी का हीरो था। वह बहुत खुश था।

विकास कार्यालय, पद्धर,
जिला मण्डी (हि. प्र.)-175012, मो. 8679156455

कहानी

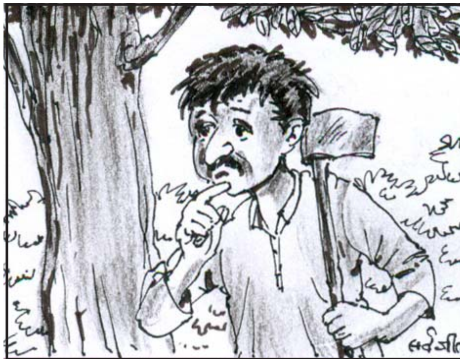
पेड़ की सीख

● अनंत आलोक

तड़ाक ! तड़ाक ! की आवाज जंगल की शांति को भंग कर रही थी, चोटी का पसीना एड़ी से होते हुए जूते को गीला कर रहा था। इन सब बातों से बेखबर चंचलू कुल्हाड़ी चलाए जा रहा था। तभी धड़ाम की आवाज के साथ पेड़ जड़ से अलग हो ओंधे मुंह गिर पड़ा। आह भर के चंचलू ने कुल्हाड़ी एक ओर फेंकी और विश्राम करने वहीं पत्थर पर बैठा ही था कि "हाय! हाय!" की आवाज सुन वह चौंक पड़ा। यूं लग रहा था ज्यों आवाज किसी गहरे गड्ढे से आ रही हो । चंचलू ने खड़े होकर इधर-उधर नजर दौड़ाई, लेकिन वहां आस पास तो कोई न था ! वह हैरान परेशान आवाज की ओर कान लगा ढूंढने लगा तो पाया आवाज तो पेड़ के पास से ही आ रही थी।

चंचलू थर थर कांपने लगा, शरीर से फिर से पसीना चूने लगा। वह बुरी तरह घबरा गया कि कहीं कोई अनर्थ तो नहीं हो गया। उसे लगा शायद कोई व्यक्ति पेड़ के पास होगा और पेड़ के गिरने के साथ ही इसके नीचे आ गया हो! कहीं पेड़ के नीचे जमीन में न धंस गया हो !'' हाय राम ये क्या अनर्थ हो गया। हे मेरे प्रभु! इसकी रक्षा करो'' बचाओ... बचाओ ..., अरे कोई है... ! जल्दी आओ अनर्थ हो गया ! सुनो गांव वालों जल्दी आओ'' उसके मुंह से बरबस ही आवाजें आने लगी । हालांकि वहां दूर दूर तक कोई घर गांव नहीं था।

सौभाग्य से वहीं कुछ दूरी पर कुछ लकड़हारे उसी ओर आ रहे थे। उन्होंने चंचलू की आवाज सुनी तो दौड़े दौड़े आए। "क्या हुआ भाई क्यों चिल्ला रहे हो?'' उनमें से एक ने पूछा। चंचलू की आंखों से अश्रु धारा अविरल बह रही थी, आंखें पोंचते हुए बोला "मुझ से बहुत बड़ा पाप हो गया है ... कोई पेड़ के नीचे आ गया है! ये सुनो रोने की आवाज़।'' लकड़हारे भी घबरा गए ! आवाज़ तो सच में बिलकुल किसी मनुष्य की लग रही थी। उन्होंने आव देखा न ताव धना धन पेड़ पर कुल्हाड़ियां बरसानी आरम्भ कर दीं। देखते ही देखते उन्होंने पेड़ को छोटे छोटे टुकड़ों में काट दिया। लेकिन ये क्या! अब तो आवाज़ पेड़ के हर टुकड़े से आने लगी। पेड़ के टुकड़ों को उन्होंने उलट-पलट कर देखा लेकिन उनके नीचे तो कोई भी नहीं था। सभी हैरान थे। फिर ये आवाजें आ कहां से रही हैं ! ....फिर चंचलू ने दोनों हाथ जोड़ पेड़ से प्रार्थना की "हे वृक्ष देवता ! मुझे माफ करो, कोई भूल चूक हो गई हो तो मुझे दंड दो! हम सब बड़े हैरान हैं ये आवाजें कहां से आ रही हैं ! अब आप ही हमारी शंका का समाधान कीजिए।''



तभी जवाब आया ! हां चंचलू तुम पापी तो हो! तुमने अनगिनत पेड़ों की बलि ली है लेकिन लगाया एक भी नहीं ! हां एकदम सही सोच रहे हो मैं पेड़ ही हूं।'' सभी लोग बड़े हैरान थे, सिर में हाथ लगा कर बैठ गए और पेड़ की बात बड़े ध्यान से सुनने लगे। पेड़ ने आगे कहना शुरू किया। "आज से चालीस वर्ष पहले की बात है एक बीज उड़ कर आया और यहां गिरा। पूरे छह महीने तक वह पानी की एक बूंद पाने को आकाश की ओर निहारता रहा। हवा बहती रही, मिट्टी, पत्ते और पत्थर ऊपर गिरते रहे। इस प्रकार बीज जमीन में कुछ ओर नीचे धंसता रहा। तभी वर्षा की एक कोमल फुहार पड़ी और बीज खुशी से झूमने लगा। अंगड़ाई लेकर आंखें खोली तो इस अद्भुत संसार को देख कर मन ही मन प्रफुल्लित हो उठा। अब तक उसके भीतर संचित भोजन भंडार भी समाप्त हो चला था।

कुछ ही दिनों में वह अपनी कोमल पत्तियों से, सूर्य का प्रकाश लेकर प्रकाश संश्लेषण की क्रिया द्वारा अपना भोजन स्वयं बनाना सीख गया। वह धीरे धीरे बढ़ने लगा...।'' पेड़ कहता जा रहा था और वहां सिर में हाथ लगाए बैठा चंचलू और लकड़हारे शांतचित्त हो सुन रहे थे। पेड़ ने आगे कहा, "चंचलू जानते हो वह बीज किसका था ? ...वह मेरा ही बीज था। इस प्रकार इस जगत में मेरा जन्म

नवीन हलदूणवी की कविताएं

गर्मी का मौसम

गर्मी का मौसम है आया,
सूख रही है सबकी काया।
खाना बासी हुआ विषैला,
अम्मा ने हमको बतलाया।
मांग रहा है जीवन पानी,
ढूंढ रहे पक्षी भी छाया।
ठंडी कुलफी मटके वाली,
खाने को मुन्ना ललचाया।
लू से बचना प्यारे बच्चो,
गुरुओं ने हमको समझाया।
वीर सपूत 'नवीन' बनेंगे,
भारत मां को शीश झुकाया।

बच्चे हैं

बच्चे हैं धरती के फूल,
नफरत को सब जाते भूल।
दीदी कहती मीठे बोल,
मिलजुल भैया झूला झूल।
पानी ले आई बरसात,
गर्मी में उड़ती है धूल।
सुंदर भारत देश प्यारा,
दुनियादारी ऊल - जलूल।
आज करें 'नवीन' बन्दना,
मात-पिता का प्यार कबूल।

काव्य-कुंज जसूर, जिला कांगड़ा, हिमाचल प्रदेश-176201, मो. 9418846773

हुआ। एक दिन की बात है एक नन्हीं सी बालिका मेरे पास आई और मेरे कोमल पत्तों को अपने नन्हे-नन्हे कोमल हाथों से सहलाया। मेरा मन प्रफुलित हो उठा। मुझे रोमांच का अनुभव हो रहा था। स्वतः ही मेरे मन में मानव जाति के प्रति प्रेम उमड़ पड़ा और दिन प्रतिदिन बढ़ता ही गया।

आते जाते राही मेरी ठण्डी छांव में बैठकर अपनी थकान मिटाते और सुकून पाते। कुछ तो जाने अनजाने मेरी पत्तियों और टहनियों को यूं ही मरोड़ कर चले जाते लेकिन में उनकी इस भूल के लिए उन्हें कभी कुछ न कहता। एक दिन तो हद ही हो गई, एक मनुष्य मुझ पर चढ़ा और मेरी सारी की सारी टहनियां काट डालीं। मैं तड़पता रहा चिल्लाता रहा लेकिन वह न माना। अपनी पत्तियों से वंचित हो मैं बहुत दिनों तक भोजन नहीं बना पाया और मुझे अपने भीतर संचित भोजन का ही प्रयोग करना पड़ा।

मुझे मनुष्य पर क्रोध तो बहुत आया लेकिन .... थोड़े ही दिनों में मेरी नई पत्तियां आने लगीं और मैं पुरानी बातों को भूल कर फिर से मनुष्य की सेवा में लीन हो गया। चंचलू ! मैं तो कहता हूं जो कुछ भी मेरे पास है सब तुम मनुष्यों के लिए ही तो है। मेरा तो समस्त जीवन ही आप लोगों के लिए है। लेकिन यदि आप हमें नष्ट ही कर दोगे तो क्या आप लोग जीवित रह पायोगो! हम वृक्ष ही हैं जो प्राण वायु को साफ कर आपको स्वच्छ हवा देते हैं अन्यथा समस्त चराचर जगत से प्राणियों का समूल नाश हो जाएगा। मेरे कंद मूल और फल खाकर ही जंगली जानवर अपना पेट भरते हैं। हे मनुष्य! तुम इतना भी भूल गए कि आदिमानव मेरे फल फूल खाकर ही जीवित रहता था और मानव बनने तक भी पूर्णतः हम पर ही निर्भर हुआ करता था।" चंचलू ने असंख्य वृक्ष अब तक काटे थे लेकिन आज उसे एहसास हो रहा था कि जैसे उसने इतने मनुष्यों का कत्ल किया हो । उसकी आंखों से आंसुओं की धार रुकने का नाम नहीं ले रही थी। पेड़ ने आगे कहा "चंचलू मैंने तो हमेशा ही आप लोगों का भला किया ... और आपने इसका ये बदला दिया! तुमने तो हद ही कर दी। तुम तो वृक्ष जाती के विनाश पर ही तुले हो ! हाय रे मनुष्य ! इतना क्या बुरा किया था हमने तुम्हारा।''

पेड़ की करुण गाथा सुन चंचलू फूट फूट कर रो पड़ा। वह पेड़ से लिपट कर बार बार क्षमा याचना करने लगा। "मुझे क्षमा कर दो हे वृक्ष देवता! मैं बहुत पापी हूं। मैंने अपने लालच के लिए सैंकड़ो वृक्षों का कत्ल किया। लेकिन अब मेरी आंखें खुल गई हैं ... मैं वचन देता हूँ कि आज के बाद मैं एक भी पेड़ नहीं काटूंगा, इतना ही नहीं मैं दूसरों को भी ऐसा करने से रोकूंगा। मैंने आज तक जितने भी वृक्ष जाने अनजाने काटे हैं उन से दो गुणा ज्यादा वृक्ष लगाऊंगा और उनकी रक्षा करूंगा। दूसरे लकड़हारों ने भी अपने अपने औजार हाथ में लेकर सौगंध खाई कि आज के बाद भूखे रह लेंगे लेकिन पेड़ कभी न काटेंगे। पेड़ ने चंचलू से विदा ली और शांत हो गया। सभी लकड़हारे भारी कदमों से अपने अपने घरों की ओर चल पड़े। आज उनकी पीठ पर कोई बोझा नहीं था लेकिन कदम पहले से भी अधिक भारी महसूस हो रहे थे।

चंचलू ने पेड़ को दिया वचन निभाया और एक हजार पेड़ों का एक जंगल बसाया जिसे चंचलू जान से भी ज्यादा प्यार करता है।

'साहित्यालोक' बायरी डा. ददाहू सिरमौर,
हिमाचल प्रदेश-173022, मो. 0 9418740772

कहानी

ताकत एकता की

● शैलेंद्र सरस्वती

एक किसान और उसकी पत्नी ने एक बैल, एक बकरी, एक हंस, एक सुअर और एक मुर्गा पाल रखा था। किसान और उसकी पत्नी सभी जानवरों का बहुत प्यार से देखभाल किया करते थे अतः सभी जानवरों को भी दोनों पति-पत्नी बहुत प्यारे लगते थे। एक रात किसान के घर से खाने की मोहक खुशबू से खींच कर सभी जानवर किसान के घर की खिड़की के पास चले आये। ''वाह! क्या खुशबू आ रही है!...लगता है कि किसान और उसकी पत्नी खाना खा रहे हैं", बैल ने कहा तो सभी जानवरों ने चुपके से भीतर झांका तो उन्होंने देखा कि वाकई में एक लंबी मेज पर तरह- तरह के पकवान सजे थे और किसान और उसकी पत्नी हंस-हंस कर एक-दूसरे से बातें कर रहे थे।

बातें करते हुए अचानक किसान ने अपनी पत्नी से कहा, ''सुनो! मुर्गा हमारे किस काम का? .....हम दोनों को उसकी बांग की भी कोई जरूरत नहीं, सूरज की किरणें जब हमारे कमरे में भर जाती हैं तो हमारी नींद यूं ही खुल जाती है। ...ऐसा करते हैं कि उसे पका कर खा लेते है।" किसान की बात सुन उसकी पत्नी ने कहा,''बात तो तुम सही कह रहे हो जी.. ..मेरा भी इतने दिनों से उसको खाने का मन कर रहा था। ...हमारा अनाज खा-खा कर कितना मोटा हो गया है!" यह सुन कर खिड़की से सटे मुर्गे को चक्कर सा आ गया।



फिर किसान ने समय-समय पर बाकी सभी जानवरों-पक्षी को मार कर खाने की बात अपनी पत्नी से कही तो खिड़की के पास खड़े सभी जीवों के होश उड़ गये। ''देखा, आदमी कितना मतलबी और खतरनाक है। जब तक जरूरत है तब तक हमसे दूध, अंडे लेता है। अपने खेतों में काम करवाता है, लेकिन जिस दिन इसका हमसे जी भर जाता है तो हमें मार कर खाने में दो पल की भी देरी नहीं करता!" बकरी ने तैश में आते हुए कहा। ''अब तो हमारी यहां से भागने में ही भलाई है। वरना इनकी कड़ाही में हमारी बोटियां पकती नजर आएगी", हंस ने अपनी गर्दन हिलाते हुए कहा। ''लेकिन हम जाएंगे कहां?" मुर्गे ने प्रश्न उठाया। ''जंगल भाग चलते हैं। इनसानों की बस्ती में तो फिर कोई इनसान हमें पकड़ेगा, हमारा उपयोग करेगा और जी भर जाने पर काट कर खा जाएगा", बैल ने अपने साथियों से कहा। ''लेकिन जंगल में तो दूसरे खतरनाक मांसाहारी जानवर हमें जीने न देंगे", सूअर ने संदेह जताया। ''हम सभी मिलकर साथ रहेंगे। एकता रहने से कोई हमारा कुछ नहीं बिगाड़ पायेगा'', बैल ने सूअर का संदेह दूर किया। फिर क्या था, रातों-रात सारे जीव चुपके से किसान के घर से खिसक लिए।

सारे साथियों ने गहरे जंगल में एक विशाल बरगद के पेड़ की शरण ली। बहुत दूर से चल कर आने के कारण वे बहुत थक गये थे अतः बरगद के नीचे सभी गहरी नींद में सो गए। अगले दिन जब सूरज की लालिमा आसमान में गहराई तो सभी जानवर आंखें मलते हुए बैठ गये। मुर्गा जंगल की खुली हवा में खुश हो कर जोर- जोर से बांग लगाने लगा। "आओ! अब हम मिलकर एक घर बना लेते हैं। एक घर होगा तो हम मौसमी और अन्य बाहरी मुसीबतों से बचे रहेंगे", बैल ने अपने साथियों से कहा। बैल की बात सुन बकरी ने आंखें मटकाते हुए कहा,''मुझे तो किसी घर-वर की कोई जरूरत नहीं। गर्मियों में खुले में रहना मुझे पसंद है और सर्दियों में मेरे लंबे बालों से मुझे गर्मी मिल जाती है।" हंस ने जवाब दिया, ''मेरे तो दोनों पंख ही मेरा घर है। एक पंख कंबल का काम करता है तो दूसरा नरम-नरम बिछौने का।" सूअर ने इठलाते हुए कहा, ''मैं तो जमीन खोद कर,उसमें जमा कीचड़ में आराम से रहूंगा।" अंत में मुर्गे ने कहा, ''मैं तो किसी ऊंचे पेड़ की डाल पर बैठ कर आराम से दिन गुजार लूंगा।"

परी कथाओं जैसा कमरा

बच्चों को अच्छे संस्कार देने तथा उनमें पढ़ने की रुचि बढ़ाने के लिए अनेक प्रयोग दुनियाभर में हो रहे हैं। बच्चों को जन्मदिन पर पुस्तकें देना, पुस्तकालय लेकर जाना, पुरस्कार में पुस्तकें देना इत्यादि। कुछ विद्यालयों में बाल साहित्य में रुचि के लिए विशेष कक्षाओं का आयोजन करना प्रमुख है। इस रुचि को बढ़ावा देने में आज प्रकाशित हो रहे पत्र-पत्रिकाएं भी विशेष योगदान दे रही हैं। सप्ताह में एक दिन बच्चों के लिए रुचिकर सामग्री प्रकाशित की जा रही है। चंडीगढ़ से प्रकाशित होने वाली अंग्रेजी अखबार स्कूली बच्चों के लिए एक विशेष संस्करण प्रकाशित कर रही है, जिसका आवंटन सीधे स्कूलों में हो रहा है। भारत में ही नहीं बल्कि विदेशों में भी मां-बाप अपने बच्चों को साहित्य के प्रति रुचि हेतु नए प्रयोग कर रहे हैं।

ब्रिटेन के नॉटिंघमशायर की महिला केरी राइट ने अपनी बेटी क्लोए के लिए परी कथाओं जैसा कमरा बनाया है। बेटी में इन लोक कथाओं में पात्रों की आकृतियों को देखकर पढ़ने के प्रति रुचि बढ़े, इसलिए उसने यह प्रयोग किया है। इस प्रयोग से दो वर्ष की क्लोए में पढ़ने की रुचि पैदा हो गई है। इस कक्ष में निर्माण तथा आकृतियां बनाने में उसने एलिस इन वंडरलैंड जैसी 90 पुस्तकों की मदद ली। भारत में बच्चों को सोने से पहले कहानी सुनाना जीवन का हिस्सा होता था। अब बच्चे तथा मां-बाप टेलीविजन की कहानियां देखकर सोने लगे हैं। पुस्तक की कहानियों को सुनना तथा सुनाने को जीवन का हिस्सा बनाने की जरूरत है। इससे बाल मन को कल्पनाशील बनाने में मदद मिलेगी।

सभी की स्वार्थ भरे जवाब सुन कर बैल बहुत दुखी हुआ। ''ठीक है, तुम सभी जो मन में आये वह करो! ....फिलहाल मुझे तो एक घर की जरूरत है, सो तुम लोग मेरी मदद करो या न करो, मैं तो घर बनाकर उसमें ही रहूंगा", बैल ने अपने साथियों से कहा।

जल्दी ही बैल ने लकड़ी का एक सुंदर घर बना लिया और उसके आगे एक सुंदर बाग भी लगा लिया। बैल अब अपने घर में आराम से रहने लगा जबकि उसके साथी अपनी ही धुन में खोए हुए थे। जल्दी ही मौसम बदला। गर्मी की जगह बरसात और फिर हर तरफ सर्दी का साम्राज्य कायम हो गया। बैल को छोड़कर सारे जानवरों का सर्दी के मारे बुरा हाल हो रहा था। जब सर्दी को सहन करना उनके बस की बात नहीं रही तो सभी ने मिलकर बैल के घर का दरवाजा खटखटाया। अपने गर्म बिस्तर में रजाई ओढ़कर सोये बैल ने पूछा,''कौन है?" उसके साथियों ने गुहार लगाई कि इस हाड़ कंपाती सर्दी में वह उन्हें अपने घर में आने दे। बैल को खरी-खोटी सुनाने का मौका मिल गया,''क्यों, जब मैं अकेला घर बना रहा था, तब तुम में से कोई मेरी मदद करने को आया?...तब तो बड़ा इतरा रहे थे।'' बैल की बात सुन सभी ने अपने किये की माफी मांगी तो बैल का दिल भी पसीज गया। अपने बिस्तर से उठ उसने घर का दरवाजा खोला और अपने सभी साथियों को घर में आने दिया।

घर में घुसते ही सभी साथियों ने बैल का धन्यवाद दिया। सुअर तहखाने में सोने चला गया तो बकरी जलते अलाव के पास जा लेटी। हंस सोफे पर चादर ओढ़कर सो गया तो मुर्गा जलते हुए लैम्प के नीचे मेज पर रखे डिब्बे में सिमट कर उंघने लगा। अगले दिन पौ फटते ही मुर्गा घर की छत पर चढ़कर बांग लगाने लगा। तभी पास से गुजर रहे एक भेड़िये की उस पर नजर पड़ी। ''वाह! आज तो मैं शानदार नाश्ता करूंगा!" भेड़िये ने मन ही मन सोचा।

''नमस्ते मुर्गे जी! ...लगता है आप इस जंगल में नये-नये रहने आये है!" भेड़िये ने मुर्गे के पास पहुंच कर अपनी आवाज में शहद घोलते हुए कहा तो मुर्गे ने सतर्क होते हुए कहा, ''हां तो.. ..मेरे साथ मेरे और साथी भी है।" भेड़िये ने सोचा कि मुर्गे के साथ उसके और साथी मुर्गे की ही होंगे। यह सोचते ही भेड़िये के मुंह से लार टपकने लगी। ''क्या आप मुझे अपने साथियों से मिलाने के लिये अपने घर में नहीं आने देंगे मुर्गे जी?'' कहते हुए भेड़िया घर के दरवाजे की तरफ बढ़ने लगा तो भेड़िये की नीयत ताड़ते हुए मुर्गे ने उससे कहा,''दो मिनट रुकिये भेड़िया जी!....मैं अपने साथियों से आपका स्वागत करने को तो कह दूं", कहते हुए मुर्गा खिड़की से तुरंत घर के अंदर चला गया और अपने साथियों को भेड़िये के आने की खबर कर दी। मुर्गे की बात सुन सभी भेड़िये का सामना करने को तैयार हो गये।

भेड़िये ने जैसे ही दरवाजा खोला, बकरी ने एक कटोरी लाल मिर्च का बुरादा उसकी आंखों में झोंक दिया। हंस ने अपनी चोंच से उसके कान कुतर डाले तो सुअर ने अपने मजबूत दांतों से उसकी पूंछ चबा डाली और अंत में बैल ने अपने सींगों से उसे उछाल कर जमीन पर ऐसे पटका कि बेचारे को दिन में ही तारे नजर आ गये। भेड़िया फिर दुम दबा कर ऐसे भागा कि एक बार भी उसने पलट कर नहीं देखा।

''क्यों...मैं कहता था न कि एकता में बहुत बड़ी ताकत होती है!'' भेड़िये के जाने के बाद बैल ने अपने साथियों से कहा तो सभी साथियों ने उसकी बात का ताली बजा कर समर्थन किया।

नारायणी निवास, मोबाइल टॉवर के सामने, धरनीधर कॉलोनी, उस्ता बारी के बाहर, बीकानेर, राज-334005, मो. 7877986321

कथा

...और जंगल गाने लगा

● अंकुश्री

बाघमारा जंगल बहुत घना था। ऊंचे-ऊंचे पेड़, घनी झाड़ियां। वहां तरह-तरह के जानवर रहते थे। जंगल के निकट एक गांव था - बालालौंग। बड़ा-सा गांव था। वहां के लोग जंगल पर आश्रित थे। सभी खुशहाल थे। वे दिन-दिन भर जंगलों में घूम कर फूल, फल, बीज, पत्ता, गोंद, दातौन, लकड़ी, छाल आदि वन पदार्थ जमा करते थे। गांव में सोमवार को साप्ताहिक हाट लगता था। गांव वाले जंगल से वन पदार्थों को हाट में बेचते थे और अपने लिये सामान खरीदते थे।

लेकिन इधर कुछ वर्षों से जंगल की कटाई होने लगी थी। बाहर से कुछ लोग वाहनों से जंगल में आकर मोटे-मोटे पेड़ों को कटवा कर ले जाने लगे थे। ग्रामीणों को पेड़ों की कटाई-छंटाई करने से मजदूरी मिल जाती थी। वन पदार्थों की बिक्री से कम पैसा मिलता था। इसलिये गांव वाले पेड़ों की कटाई से बहुत खुश थे।

देखते-देखते जंगल के सारे पेड़ कट गये। महुआ, कटहल, आम, जामुन, सखुआ, केंद, पिआर, आदि कुछ भी नहीं बचा। जंगल में हरियाली की जगह बिरानगी छा गयी। गांव वालों को पेड़ काटने से मिलने वाली मजदूरी बंद हो गयी। जंगल से जो वन पदार्थ चुन-बिन कर लाते थे, वह भी समाप्त हो गया। आजीविका के लाले पड़ गये। उनकी स्थिति खराब हो गयी। कुछ ही वर्षों में गांव की सारी अर्थ-व्यवस्था गड़बड़ा गयी।

उस दिन सोमवार था। हाट में लोगों की भीड़ जुटी हुई थी। एक तरफ सब्जियां बिक रही थीं। एक तरफ मसालों की दुकानें सजी थीं। वहीं नमक बिक रहा था, जिसके खरीददार अधिक थे। कुछ दुकानों में चावल, दाल और अनाज बिक रहा था। भोजन के लिये शाकाहारी और मांसाहारी हर प्रकार के सामान बिक रहे थे। जलावन बिक भी रहा था, लकड़ी की फल्लियां भी बिक रही थीं।

हाट में खाने के भी तरह-तरह के सामान बिक रहे थे। नीमकी, सेव, पेड़ा, बतासा आदि सजे हुए थे। ढुसका और पकौड़ी की भी दुकानें थीं। चावल और उड़द-दाल से बने ढुसका की तीन दुकानें थीं। ढुसका छन रहा था। कई लोग अपनी बारी आने की प्रतीक्षा में खड़े थे। चाय भी बहुत बिक रही थी।

एक तरफ हंड़िया का बाजार लगा हुआ था। चावल को सड़ा कर बनायी गयी हंड़िया को लोग शराब की तरह पी रहे थे। जंगल के निकटवर्ती गांव वालों के नशा का यह मुख्य साधन थी।

जतरू का बाप चुन्दा भी नशे का आदी था। जतरू ने विद्यालय से लौटते समय देखा कि नशे में कोई गिरा हुआ है। नशे में किसी का गिरे रहना उस गांव के लिये आश्चर्य की बात नहीं थी। वहां का यह आम दृश्य था। जतरू ने देखा कि वह उसके पिता हैं। वह चिल्ला कर बोला, ‘‘अरे बाप ! उठ, उठ !!’’ कोशिश करके भी वह पिता को उठा नहीं पाया। जलेशर हाट से लौट रहा था। वह सहारा देकर चुंदा को घर ले गया।

रात में सभी सो गये तो जतरू ढ़िबरी की रोशनी में थोड़ी देर पढ़ने बैठा। वह स्थिर मन से पढ़ रहा था। रात का समय, वातावरण शांत था। तभी उसे पेड़ की टहनियां टूटने की आवाज सुनाई पड़ी। पेड़ की कटाई-छंटाई दिन में होती है, रात में नहीं। वह मन ही मन कुछ सोचने लगा। जतरू की आशंका सही निकली। करीब सौ गज की दूरी पर एक हाथी पेड़ की टहनियां तोड़ रहा था। हाथी काफी गुस्से में था। जतरू समझ गया कि हाथी अब गांव के घरों को तोड़ेगा। वहां रखा महुआ और धान खा जायेगा।

गांव में हाथी आया सुन कर कुहराम मच गया। पिछले सप्ताह ही शिबु की पत्नी और शनिचरा के बेटा को हाथी ने मार दिया था। दोनों हाट से गांव लौट रहे थे। उनके माथे पर महुआ की पोटली थी। वे अंधेरे में हाथी को नहीं देख पाये थे। बगल से गुजरते समय हाथियों ने उन्हें रौंद कर मार डाला था।

उस दिन भी हाथियों ने दो आदमियों को कुचल दिया। प्रेमचंद बाजार से लौट रहा था। अंधेरा होना शुरू हो गया था। उसके हाथ में केरोसीन तेल का जर्किन था। वह आगे बढ़ा जा रहा था। तभी अंधेरे में उसे कोई आकृति दिखायी दी। दो हाथी चुपचाप खड़े थे। प्रेमचंद हाथियों को देख कर ठमक गया। उसने पीछे मुड़ कर दूसरा रास्ता पकड़ लिया। वह अभी गांव की ओर जा ही रहा था कि उसे किसी के चिल्लाने की आवाज सुनाई पड़ी, ‘‘बचाओ ! बचाओ !!’’

आवाज़ थोड़ी देर में बंद हो गई थी। प्रेमचंद समझ गया था कि हाथियों की चपेट में कोई आ गया है। हो-हल्ला सुनकर लालटेन, टार्च, भाला, लाठी आदि लेकर लोग वहां पहुंच गए थे। भोंदू और रकटू को हाथियों ने मार दिया था। हर सप्ताह हाथियों द्वारा कोई-न-कोई ग्रामीण मारा जाता था। हाथी लोगों को भी मारते थे, घरों को भी तोड़ देते थे। वे घर के अंदर रखे महुआ और धान भी खा जाते थे।

शराब की महक से भी हाथी पहुंच जाते थे। वे घर में रखी शराब पी जाते थे। हाथियों के जाने-आने से खेत की फसल रौंदने से खराब हो जाती थी। खेत में धान की फसल तैयार रहने पर हाथी उन्हें भी चट कर जाते थे। जब कभी हाथी कोई नुकसान पहुंचाते थे, गांव वाले मुआवज़ा के लिये प्रशासन तक पहुंच जाते थे। मुआवजा लेने-दिलवाने में ही गांव वाले परेशान थे। थोड़ा पढ़े-लिखे नेता किस्म के लोग अपना काम-धंधा छोड़ कर मुआवज़ा दिलवाने में लगे रहते थे। इससे उन्हें कुछ कमाई हो जाती थी। समस्या की जड़ में जाने की किसी को फुरसत नहीं थी। ऊपर ही ऊपर सारा काम हो रहा था। आखिर यह कब तक चलता। मुआवज़ा कोई विकल्प नहीं था।



एतवा एक समझदार युवक था। वह समझ रहा था कि मुआवज़ा से गांव का विकास संभव नहीं है। उसने प्रश्न उठाया कि आखिर गांव में हाथी आते क्यों हैं? हाथी जंगली जानवर हैं। इतना बड़ा जंगल छोड़ कर वे गांव में आना क्यों चाहते हैं ? किसी ने कहा, ''हाथी भोजन की तलाश में गांव में आते हैं।''

प्रेमचंद और एतवा गांव के युवा थे। हाथियों के आतंक से निपटने के लिए उन्होंने ग्रामीणों की बैठक बुलाई। सैकड़ों लोगों ने बैठक में भाग लिया। हाथियों के आतंक से निजात पाने के लिए तरह-तरह के विचार आए।

''हाथियों को गांव से दूर भगा दिया जाए।''

''हाथियों को जंगल में आहार मिल जाए तो वे गांव में आदमी के बीच नहीं आएंगे।''

''गांव के चारों तरफ कंटीले तार लगा दी जाए।''

''हाथी भगाओ दल' का गठन किया जाए, जो हाथियों को गांव में नहीं घुसने दे।'' '

''हाथियों के प्रवेश मार्गों के पहले घरों में पटाखे का भंडार रखा जाए और शाम होने पर थोड़ी-थोड़ी देर पर पटाखा छोड़ा जाए।

''शाम होने के बाद गांव के चारों तरफ बिना साइलेंसर की मोटरसाइकिल से आवाज निकालते हुए भ्रमण किया जाए।''

बैठक में तरह-तरह के विचार आए। चर्चा के बाद वे खारिज होते गये। काफी देर तक यही सब चलता रहा।

बैठक में बुजुर्गों का अधिक बोलबाला था। युवा प्रायः चुपचाप ही थे। बुजुर्गों के विचारों पर कोई अंतिम निर्णय नहीं हो पा रहा था। प्रेमचंद के मन में कुछ बातें कुलबुला रही थीं। उसने कहा, ''गांव में हाथी शाम के बाद आते हैं। उससे पूर्व उनके प्रवेश मार्ग पर मशाल जला दिये जाएं।'' उसने आगे कहा, ''गांव में हाथी भोजन के लिये आते हैं। इसलिये घरों के अंदर अनाज नहीं रखा जाए। गांव के बाहर ऊंची चट्टानों में गड्ढ़ा बना कर उसमें अनाज रखा जाये और उसे चट्टानों से ढक दिया जाए।''

प्रेमचंद की बातें सभी गौर से सुन रहे थे। वह बिलकुल नयी बातें कर रहा था, ''हमें एक और सावधानी बरतनी होगी। घरों में महुआ नहीं रखना होगा। साथ ही यह भी आवश्यक है कि किसी घर में शराब नहीं रखी जाए और न कोई शराब पीकर गांव में आए।''

''लेकिन हम लोग शुरू से ऐसा करते आ रहे हैं। पहले तो हाथी कभी नहीं आते थे !'' यह गांव के बुजुर्ग पोकलू काका की आवाज़ थी।

उन्हें प्रेमचंद ने बताया, ''काका! पहले और अब की स्थिति में अंतर आ गया है। हम लोग जंगलवासी हैं। सबसे बड़ा अंतर जंगल में आया है। अब न ऊंचे-ऊंचे पेड़ बचे हैं और न घने जंगल। अभी स्थिति ऐसी हो गई है कि एक किनारे से जंगल के दूसरे किनारे पर खड़े आदमी को देखा जा सकता है। अब तो सिर्फ जंगल की जमीन बची है और कुछ झाड़ियां।''

''लेकिन ऐसा हुआ कैसे ?'' एक बुजुर्ग ने सबसे प्रश्न किया।

एक दूसरे बुजुर्ग ने कहा, ''हम जंगलवासियों की मुख्य आजीविका जंगल है। पहले हम लोग जंगल से फल, फूल, बीज, दातौन, पत्ता, जलावन, आदि इकट्ठा किया करते थे। हाट में उसे बेचते भी थे। लेकिन कुछ दिनों से जंगल कटवाने वालों की मजदूरी पर आश्रित हो गए थे। अब स्थिति ऐसी हो गयी है कि जंगल में पेड़ भी नहीं बचे हैं। ऐसे में गांव के आसपास मजदूरी भी नहीं मिल पाती है।''

''इसी कारण ऐसी नौबत आयी है। हम लोग भूखमरी के कगार पर खड़े हैं। मजदूरी के लिये काफी दूर शहर जाना पड़ता है। मजदूरी रोज नहीं मिलती। शहर जाने-आने में काफी समय

निकल जाता है। हम लोग बहुत थक जाते हैं। कब रात हुई और कब सुबह- यह पता ही नहीं चल पाता।'' गांव का एक दूसरा युवक एतवा बोल रहा था, ''हम लोग तो गांव से दूर चले जाते हैं। लेकिन जंगल के जानवर कहां जाएं ! छोटे-छोटे जानवरों का तो अस्तित्व ही खत्म हो गया। आप लोग जितने जानवरों के बारे में बताते हैं, वे अब कहां दिखाई देते हैं ? बाघ, तेंदुआ, हिरण, गौर सब खत्म हो गए। जंगली सूअर और जंगली कुत्ता भी यहां के जंगल में अब नहीं दिखते। कुछ भेड़िया बचे हैं और आठ-दस भालू।''

एतवा की बातें सुन कर सभी शांत हो गए। वहां बैठे लोगों को लगा कि काठ मार गया हो। एतवा ने आगे कहा, ''यदि हम लोगों ने जंगल को कटने नहीं दिया होता तो ऐसी स्थिति नहीं आ पाती। सारी तबाही की जड़ है जंगल की बर्बादी।''

''हमने तो जंगल की सुरक्षा की कभी बात ही नहीं सोची। इतना बड़ा जंगल है, इसकी सुरक्षा के लिये क्या चिंता की जाए।'' पोकलू की आवाज में लाचारी थी, ''जंगल हमारी सुरक्षा करता है, हम इसकी सुरक्षा क्या करें ?''

''हमारी ऐसी ही सोच ने हमें उजाड़ दिया।'' प्रेमचन्द ने कहा, ''हम लोग सोचें कि हमें आगे क्या करना है। बीती बातों को दोहराने से अब कोई लाभ नहीं है।''

''लाभ है।'' एतवा ने कहा, ''इसका एक बहुत बड़ा लाभ है। बीती बातों को जानने-सुनने से हमें सबक मिलता है।" उसने आगे कहा, "हम अब भी अपने गांव को खुशहाल बना सकते हैं। इसे हाथियों के आतंक से बचा सकते हैं।''

उसके बाद से कई तरह के पक्षी गांव में दिखाई देने लगे। जंगल से भी तरह-तरह के पक्षियों और जानवरों की आवाजें आने लगी। लगता था कि जंगल जिंदा हो गया है और बोल तथा गा रहा है।

''वह कैसे ?''

''सबसे पहले हम लोग हाथियों के भोजन की व्यवस्था करें। जंगल में खाली जमीन पर बांस के भरपूर पौधे लगा दें। जंगल के किनारे के खेतों में ईख लगा दें। हाथियों में विशेषता है कि जब तक बांस या ईख तैयार नहीं हो जाता, वे उसे नहीं खाते हैं।'' गांव के एक बजुर्ग का यह सुझाव सभी को भाया।

एक दूसरे बुजुर्ग ने कहा, ''जंगल प्रकृति की देन है। यदि इसे छेड़ा नहीं जाये तो इसका विकास स्वतः हो जाता है। इसके लिए गांव के मवेशियों को जंगल में जाने से रोकना होगा। एक काम हमें और करना होगा। जलावन या अन्य कार्यों के लिये पेड़ों की कटाई बंद करनी होगी। ऐसा करने से एक साल में ही जंगल में हरियाली आ जाएगी। दूसरे साल के बाद उजड़े जंगल की जगह हरा-भरा जंगल दिखने लगेगा।

एतवा ने कहा, ''हम गलती नहीं दोहराएंगे। जंगल को बचाएंगे।''

गांव वालों ने भी एक स्वर में कहा, ''हम गलती नहीं दोहराएंगे, जंगल को बचाएंगे।''

जंगल की सुरक्षा के लिये लोगों ने कमर कस ली। दूसरे दिन से ही लोग इस काम में लग गए।

जंगल में एक नदी बहती थी। वह काफी ऊंचाई से नीचे आती थी। घूम-घुमा कर बहती वह नदी कहीं पतली होकर बहती थी तो कहीं चौड़ी होकर। सालों भर उसमें पानी रहता था। गांव वालों ने एक काम किया। नदी जहां पतली होकर बहती थी, वहां चट्टान जमा कर दी। इससे नदी में जगह-जगह पानी का ठहराव हो गया। यह जंगल के स्वास्थ्य के लिये बड़ा लाभकारी रहा।

वसंत में सभी पौधों में कोंपल आ जाते हैं। कटे हुए बड़े-बड़े पेड़ों से भी कोंपल फूट पड़े। नदी के आसपास के कटे पेड़ों से खूब सारे कोंपल निकल आए। उन पेड़ों की वृद्धि भी तेज हो गई। वहां खूब हरियाली फैल गई। गांव वालों ने एक-दो कोंपलों को छोड़ कर बाकी हटा दिए। उनका तेजी से विकास होने लगा। बरसात आने पर जंगल में कई तरह के पौधे उग आए। बरसात खत्म होने तक जंगल में हरियाली भर गई। खाली जगहों में बांस के पौधे लगा दिये गये थे। वे भी काफी तेजी से बढ़ने लगे।

गांव वाले रात में जाग कर ढोल बजाते और पटाखे छोड़ते थे। इससे गांव में हाथियों ने आना बंद कर दिया। सुबह-सुबह गांव के कुछ युवक खेत से ईख काट कर जंगल में रख आते थे। हाथी उसे चटखारे ले-लेकर खाते थे।

गांव का प्राथमिक विद्यालय रविवार को बंद था। विद्यालय परिसर के बाहर बच्चे खेल रहे थे। तभी एक मोर जंगल की ओर से उड़ता हुआ आया और विद्यालय की छत पर बैठ गया। बच्चों की उस पर नजर पड़ी तो वे ताली बजाने लगे। वे खुशी से नाचने भी लगे। उन बच्चों ने कभी मोर नहीं देखा था।

बात तुरंत गांव में फैल गयी। मोर को देखने के लिये पूरा गांव जमा हो गया। ''वर्षों बाद कोई मोर गांव में आया है।'' पोकलू ने कहा। उसके बाद से कई तरह के पक्षी गांव में दिखाई देने लगे। जंगल से भी तरह-तरह के पक्षियों और जानवरों की आवाज आने लगे। लगता था कि जंगल जिंदा हो गया है और बोल तथा गा रहा है।

गांव वाले भी बहुत खुश थे। अब वे हाथियों से आतंकित नहीं थे। हर कोई खुश था। खुशी जंगल से लेकर गांव तक दिखाई दे रही थी। गांव वाले रात में नगाड़ा बजा कर एकजुट हो जाते थे और मांदर की थाप पर नाचते-गाते थे। ऐसा लगता था कि जंगल गा रहा है और गांव वाले नाच रहे हैं।

सिदरौल, प्रेस कॉलोनी, पोस्ट बौक्स 28, नामकुम,
रांची, बिहार-834 010

भाषांतर (ऑस्कर वाइल्ड की कहानी 'द यंग किंग')

युवा नरेश

● अनु : **द्विजेंद्र द्विज**

यह रात उसके राज्याभिषेक के लिए निर्धारित रात से पहले की एक रात थी और युवा नरेश अपने सुंदर कक्ष में अकेला बैठा हुआ था। सब दरबारी उन दिनों प्रचलित औपचारिक व्यवहार का निर्वाह करते हुए उसके समक्ष सर धरती पर झुकाते हुए, उसकी अनुमति प्राप्त कर राजमहल के महा-कक्ष में, शिष्टाचार के प्राध्यापक से कुछ अंतिम पाठ सीखने के लिए जा चुके थे, जहां कुछ ऐसे दरबारी भी थे जिनका शिष्टाचार अभी भी बहुत सहज था, जो कि एक दरबारी के लिए, मुझे कहने की आवश्यकता ही नहीं हैं, एक बहुत गंभीर अपराध है।

किशोर- क्योंकि वह अभी किशोर ही था- क्योंकि वह अभी केवल सोलह वर्ष का ही था- उनके चले जाने पर दुःखी नहीं था, और वह आराम की गहरी निःश्वास छोड़ते हुए कढ़ाईदार गद्दे के नर्म कोमल सिरहानों पर पसर गया था और वहां व्यग्र आंखें किए हुए और मुंह बाये किसी भूरे वनदेव, या शिकारियों द्वारा बिछाए गए जाल में ताज़ा फांसे हुए किसी तरुण जंगली शावक -सा लेटा हुआ था ।

और वास्तव में शिकारी ही उसे ढूंढ कर लाए थे, जिन्हें वह लगभग संयोगवश मिला था, नंगा और हाथ में बांसुरी लिए हुए, वह एक करीब गडरिए (जिसने उसे पाला-पोसा था, और जिसे वह सदा अपना पिता ही समझता था) के रेवड़ के पीछे चल रहा था। यह किशोर, बूढ़े राजा की इकलौती बेटी के एक अजनबी के साथ गंधर्व विवाह से जन्मा बेटा था (अजनबी राजकुमारी से कहीं बहुत नीचे की हैसियत का था, और जिसने , कुछ लोग कहा करते थे, अपने बांसुरी वादन के अद्भुत जादू से युवा राजकुमारी को अपने मोह-पाश में बांध लिया था जबकि कुछ लोग रिमिनि के कलाकार का नाम भी लेते थे जिसे राजकुमारी कुछ अधिक ही सम्मान देती थी, और जो गिरजे में अपने कार्य को अधूरा छोड़कर, अचानक शहर से लुप्त हो गया था) जिसे एक सप्ताह से भी कुछ कम आयु में, उसकी सोई हुई मां के बिस्तर से चुरा कर, शहर से एक दिन की दूरी पर स्थित जंगल के दूरस्थ भाग में रहने वाले एक निःसंतान साधारण किसान दंपति को सौंप दिया गया था। दुःख, अथवा प्लेग, जैसा कि दरबारी वैद्य ने कहा था, अथवा, जैसा कि कुछ लोगों ने बताया था, मसालेदार शराब के जाम में मिलाकर दिए गए तीखे इटेलियन विष ने, श्वेत लड़की, जिसने इस बच्चे को जन्म दिया था, को होश में आने के एक घंटे के भीतर ही मौत की नींद सुला दिया था, और जब नवजात को अपने घोड़े की काठी के आगे डाले हुए एक विश्वस्त संदेशवाहक, थके-मांदे हुए घोड़े की पीठ से झुकते हुए, गडरिए की झोंपड़ी के अक्खड़ दरवाजे को खटखटा रहा था, राजकुमारी का शव शहर से दूर परित्यक्त गिरजे में खोदी गई एक खुली कब्र में डाला जा रहा था जहां , लोग कहते थे कि अद्भुत और अद्वितीय सुंदरता से संपन्न एक युवक का शव भी पड़ा था , जिसके हाथ गांठदार रस्सी से पीछे की ओर बंधे हुए थे और जिसकी छाती पर घोंपे हुए छुरों के बहुत लाल घाव थे।

कहानी तो, कम-अज़-कम, ऐसी ही थी, जिसे लोग एक-दूसरे से फुसफुसा कर कहा करते थे। यह निश्चित ही था कि मृत्युशैया पर लेटे हुए बूढ़े राजा ने या तो अपने महापाप के प्रायश्चित से, अथवा केवल इस इच्छा से वशीभूत हो कर कि उसका राज्य उसके वंशजों से किसी और के हाथ न चला जाए, किशोर को बुलवा लिया था, और, परिषद की उपस्थिति में, उसे अपना उत्तराधिकारी स्वीकार कर लिया था ।

और ऐसा प्रतीत होता है कि अपने पहचाने जाने के पहले क्षण से ही उसने सुंदरता के प्रति अनुराग के वे संकेत दर्शा दिए थे, जो उसके भावी जीवन को इतना अधिक प्रभावित करने वाले थे। उसकी सेवा के लिए स्थापित कक्षों में उसके लिए तैयार किए हुए नर्म कपड़ों और कीमती आभूषणों को देखकर उसके होंठों से फूटने वाली आनंदातिरेक की उसकी चीख, और खुरदरे चर्म के कुरते और बकरी के चमड़े के खुरदरे लबादे को उतार फेंकते हुए उसके लगभग पागल हर्षोन्माद के बारे में उसके परिचारक प्रायः बात करते थे । साथ ही साथ उसे अपने जंगली जीवन की स्वतंत्रता की भी वास्तव में बहुत याद आती थी। और उसके लिए स्वाभाविक ही था उसका दरबार की क्लिष्ट औपचारिकताओं पर झुंझलाना जो प्रतिदिन उसे अधिकांश समय के लिए व्यस्त रखती

थीं, परन्तु उसका अद्‌भुत महल-आनंद-महल, जैसा कि लोग कहा करते थे- जिसका स्वामी उसने अब स्वयं को पाया था, उसे अपने आनंद के लिए ताजा बने हुए नए संसार-सा प्रतीत होता था : और जैसे ही वह स्वयं को परिषद समिति अथवा दर्शन कक्ष से बचा पाता, सुनहले कांसे के शेरों से सजे हुए बड़े ज़ीने के चमकदार नील-लोहित कांच की सीढ़ियां उतर, सौंदर्य में दर्द की, और एक तरह से बीमारी से उबरने की, दवा ढूंढ रहे व्यक्ति की तरह कक्ष -कक्ष और गलियारा-गलियारा भटकता था ।

इन खोजी-यात्राओं, जैसा कि वह इन्हें कहा करता था- और, वास्तव में, ये यात्राएं उसके लिए अद्‌भुत जगहों से होकर गुजरने वाली समुद्री यात्राओं की तरह थीं : कभी कभी दुबले-पतले, सुंदर बालों वाले, झूलते हुए चोड़ और भड़कीले फड़फड़ाते हुए रिबन पहने हुए दरबारी परिचर उसके साथ होते थे, परन्तु प्रायः वह अकेला ही होता था, एक निश्चित तीव्र नैसर्गिक प्रवृति- जो लगभग एक शकुन विद्या या भविष्यवाणी ही थी- से अनुभव करते हुए कि कला के रहस्यों को एकांत में ही बेहतर सीखा जा सकता है और यह कि बुद्धिमता की तरह सुंदरता भी, एकाकी साधक से ही प्रेम करती है।



इस काल में उससे कितनी ही विचित्र कहानियां जोड़ दी गई थीं। कहा जाता था कि एक हृष्ट-पुष्ट नगरपति- जो नागरिकों की ओर से आलंकारिक भाषण देने आया था- ने वेनिस से हाल ही में लाई गई महान कलाकृति के समक्ष सच्ची प्रशंसा में झुकते हुए उसका ध्यान अपनी ओर आकर्षित कर लिया था, और इससे कुछ नए देवताओं की पूजा की घोषणा की प्रतीति हुई थी। एक और अवसर पर कई घंटे उसकी कमी खली थी, और एक लंबी तलाश के बाद उसे महल के एक छोटे से कक्ष में एक उत्तरी कंगूरे में यूनानी मणि पर उकेरी हुई एडोनिस (सुंदरता और कामना के अत्यन्त सुन्दर यूनानी देवता) की आकृति को, भाव-समाधिस्थ व्यक्ति की तरह टकटकी बांधे निहारते हुए देखा गया था। कहानी तो यही प्रचलित थी कि प्राचीन प्रतिमा (जो पत्थर का पुल बनाने के अवसर पर नदी की सतह से मिली थी और जिस पर हैड्रियन के बिथिनियाई दास का नाम उकेरा हुआ था) के संगमरमरी माथे पर अपने गर्म होंठ गड़ाते हुए भी उसे देखा गया था। उसने एक रात एंडिमियन (यूनानी पौराणिक कथाओं में वर्णित एक अत्यंत सुन्दर युवक जिससे चांद की देवी 'सेलीन' रोज़ रात को मिलने आती थी) की चांदी की प्रतिमा पर चांदनी के प्रभाव को निहारते हुए भी बिताई थी।

सभी दुर्लभ और अमूल्य वस्तुएं निश्चित रूप से उसे अत्यधिक आकर्षित करती थीं, और उन्हें मंगाने की उत्सुकता में वह कई व्यापारियों को दूरस्थ स्थानों को भेजता था कुछ व्यापारियों को वह उत्तरी समुद्रों के अशिष्ट मछुआरों के साथ तृणमणि के अवैध व्यापार के लिए भेजता था, कुछ व्यापारियों को वह मिस्र भेजता था उस विचित्र हरे फ़ीरोज़े के लिए जो केवल राजाओं की क़ब्रों में ही उपलब्ध होता है और जिसमें, कहा जाता है कि जादुई गुण भी होते हैं, रेशमी कालीनों और रंग-रोग़न किए हुए बर्तनों के लिए कुछ व्यापारियों को फ़ारस भेजता था, और बाक़ी व्यापारियों को जाली, रंगीन हाथी दांत, चंद्रशिलाओं, संगयशब के कंगनों, संदल की लकड़ी, नीली तामचीनी तथा ऊनी शालों के लिए भारत भेजता था।

परंतु इस समय उसका सर्वाधिक ध्यान उसके अपने राज्याभिषेक के अवसर के पहरावे, सोने के जालीदार वस्त्र, और माणिक्य-जटित मुकुट, और मोतियों की रेखाओं और छल्लों से सुसज्जित राजदंड पर था। वास्तव में आज रात वह अपने राजसी गद्दे पर लेटे हुए , खुली अंगीठी में चीड़ की लकड़ी के बहुत बड़े जलते हुए ठेले को देखते हुए, इन्हीं चीज़ों के बारे में सोच रहा था। रूपांकन जो अपने समय के अत्यंत प्रसिद्ध कलाकारों द्वारा किए गए थे, उसके समक्ष कई महीने पहले प्रस्तुत कर दिए गए थे, और उसने आदेश भी दे दिए थे कि कारीगरों को इन्हें कार्यरूप देने के लिए रात-दिन काम करना होगा और यह कि उनके कार्य के अनुरूप जवाहर ढूंढने के लिए समस्त विश्व को खंगालना होगा । कल्पना में उसने अपने आपको राजसी पोषाक में गिरजे की ऊंची वेदी पर खड़े देखा, और एक मुस्कान उसके बाल-सुलभ होंठों पर आकर खेलने के लिए ठहर गई, और उस मुस्कान ने उसकी काली जंगली आंखों में चमक बिखेर दी।

कुछ समय बाद वह अपने स्थान से उठा, और उसने चिमनी के उत्कीर्ण सायबान का सहारा लेते हुए धीमे-से प्रकाशित कक्ष को देखा। दीवारों पर बहुमूल्य पर्दे 'सुन्दरता की विजय' का प्रतिनिधित्व कर रहे थे। एक बहुत बड़ी आलमारी, जिसका एक कोना मणिकांचन और लाजवर्द से भरा था, और खिड़की के ठीक सामने खड़ी थी अद्‌भुत ढंग से सजी हुई अलमारी, जिस पर वेनिसी शीशे के कुछ उत्कृष्ट चशक पड़े थे तथा गहरी धारियों वाले सुलेमानी पत्थर का एक कप था। बिस्तर की रेशमी चादर पर, नींद के थके हाथों से गिरे हुए होने का आभास देते, हल्के पीले रंग के पोस्ता फूल काढ़े हुए थे और हाथी दांत की लंबी धारीदार बांसुरियां मखमली चंदवे को थामे हुए थीं, चंदवे से शुतुर्मुर्ग़ पंखों के बड़े-बड़े गुच्छे फेन की भांति नक्काशीदार छत की हल्की पीली चांदी की ओर निकले हुए थे। उसके सिर से ऊपर रोग़नदार

दर्पण-थामे-नार्सीसस की हरी कांस्य प्रतिमा दिखाई दे रही थी । मेज़ पर जम्बुमणि का एक सपाट-सा कटोरा पड़ा था।

बाहर वह गिरजे के गुंबद को छाया तले घरों पर बुलबुले की तरह लटके हुए तथा नदी किनारे की धुंधली छत पर थके हुए प्रहरियों को टहलते हुए देख पा रहा था। दूर, एक उद्यान में, बुलबुल गा रही थी। खुली खिड़की से चमेली की भीनी-भीनी खुशबू आ रही थी। उसने अपने भूरे कुंडलों को माथे से हटाया, और एक वीणा को उठाकर अपनी उंगलियों को उसके तारों पर भटक जाने दिया। उसकी बोझिल पलकें झुक रही थीं और एक अजीब सी सुस्ती उसपर हावी हो गई। इससे पहले उसने इतनी उत्सुकता से, या इतने असीम आनंद से सुंदर चीज़ों के रहस्य और जादू को अनुभव नहीं किया था ।

जब घंटाघर ने आधी रात का गजर बजाया तो उसने एक घंटी को छुआ और परिचरों ने अंदर आकर उसके सर पर गुलाब-जल उंडेलते हुए, तथा उसके सिरहाने पर फूल छिड़कते हुए, उसके लंबे झूलते लबादे को विधिवत रूप से खुलवा लिया। कमरे से परिचरों के चले जाने के कुछ ही क्षणों बाद, उसे नींद आ गई।

नींद आते ही उसने एक सपना देखा, और यह उसका सपना था- उसने देखा कि वह एक लम्बी अटारी में, करघों की खड़खड़ाहट में खड़ा था। दिन की बहुत ही अपर्याप्त रोशनी जालीदार खिड़कियों से झांक पा रही थी, और उसे अपने-अपने करघों पर झुके हुए बुनकरों की मरियल आकृतियां दिखला रही थी। हल्के पीले, बीमार-से दिखने वाले बच्चे बड़ी-बड़ी-आड़ी कड़ियों पर पांव के बल बैठे हुए थे। जैसे ही ढिरकियां ताने पर दौड़ती थीं, बच्चे करघे के भारी डंडों को उठाते, और जब ढिरकियां रुक जातीं वे डंडों को गिराते थे जिससे धागों पर दबाव पड़ता था। बच्चों के चेहरे ऐसे थे मानों उन पर अकाल ने चिकोटी काट ली हो, और उनके पतले हाथ कांप रहे थे। मेड़ों पर झुकी कुछ मरियल-सी औरतें सिलाई कर रही थीं। उस जगह भयानक दुर्गंध फैली हुई थी। हवा गन्दी और बोझिल थी, दीवारों से नमी बह कर टपक रही थी ।

युवा नरेश बहुत ज़ोर से चीखते हुए, नींद से जाग उठा। और उसने स्वयं को अपने ही कक्ष में पाया और उसकी दृष्टि खिड़की के बाहर धुंधली हवा में लटके हुए बहुत बड़े मधु-रंगी चांद पर पड़ी।

युवा नरेश एक बुनकरों में से एक के पास जाकर खड़ा हो गया और उसे देखने लगा।

और बुनकर ने उसे क्रुद्ध होकर देखा, और कहा, "तुम मुझे क्यों देख रहे हो? क्या तुम्हें हमारे स्वामी ने हमारी जासूसी के लिए रखा है?"

"तुम्हारा स्वामी कौन है?" युवा नरेश ने पूछा।

"हमारा स्वामी!" वह कटुता से चिल्लाया, "वह भी मेरे ही जैसा मनुष्य है। वास्तव में, हम दोनों में अंतर केवल इतना है कि वह बढ़िया कपड़े पहनता है जबकि मैं चीथड़े पहनता हूं, और यह कि जब मैं भूख के कारण कमज़ोर हूं, वह ज़रूरत से ज़्यादा खाकर भी ज़रा-सा भी बीमार नहीं होता ।

"धरती स्वतंत्र है, " युवा नरेश ने कहा, "और तुम किसी के दास नहीं हो।"

"युद्ध में," बुनकर ने उत्तर दिया, "सबल निर्बल को दास बनाता है और शांति में धनी निर्धन को दास बनाता है, हमें जीवित रहने के लिए काम करना पड़ता है, और वे हमें इतनी कम मज़दूरी देते हैं कि हम मरने को विवश हैं, हम उनके लिए सारा दिन खून पसीना एक करते हैं और वे अपनी तिजोरियों में सोना ठूंसते हैं, हमारे बच्चे असमय मुरझा जाते हैं, और जिन्हें हम प्रेम करते हैं उनके चेहरे कठोर और अशुभ हो जाते हैं , अंगूरों को मसलते हम हैं, और शराब और लोग पीते हैं। अनाज हम बीजते हैं, और हमारे अपने पास दाना तक नहीं है, हम ज़ंजीरों में हैं, लेकिन हमारी ज़ंजीरों को कोई आंख नहीं देखती, और हम दास हैं, यद्यपि लोग हमें स्वतंत्र कहते हैं।"

"क्या सबका हाल यही है?" युवा नरेश ने पूछा।

"सबका हाल यही है," बुनकर ने उत्तर दिया, "जवानों का भी बूढ़ों का भी, औरतों का भी, मर्दों का भी, बच्चों का भी और बुढ़ापे के कारण क्षीण लोगों का भी। व्यापारी हमें पीस रहे हैं, और जो वे चाहते हैं, हमें करना पड़ता है। पादरी मज़े में है और माला जपता रहता है, और हमारी परवाह किसी को नहीं है। दरिद्रता अपनी भूखी आंखों के साथ, हमारी धूप-रहित गलियों से होकर रेंगती आती है, और उसके पीछे पीछे आता पाप अचानक दिखाता है अपना चेहरा। दुःख हमें सुबह जगाता है, शर्म सारी रात हमारे पास बैठी रहती है। लेकिन इन बातों का तुम्हारे लिए क्या अर्थ है? तुम हम में से नहीं हो। तुम्हारा चेहरा तो बहुत प्रसन्न है।" और वह नाक-भौं सिकोड़ते हुए वहां से हट गया और उसने ढरकी को करघे से परे फेंक दिया , और युवा नरेश ने देखा कि इस में तो सोने का धागा चढ़ा हुआ था। अत्यधिक भय ने उसे जकड़ लिया, और उसने बुनकर से कहा, "और यह वस्त्र क्या है जो तुम बुन रहे हो?"

"यह वस्त्र युवा नरेश के राज्याभिषेक के लिए है।" उसने उत्तर दिया, "तुम्हें इससे मतलब?"

युवा नरेश बहुत ज़ोर से चीखते हुए, नींद से जाग उठा। और उसने स्वयं को अपने ही कक्ष में पाया और उसकी दृष्टि खिड़की के बाहर धुंधली हवा में लटके हुए बहुत बड़े मधु-रंगी चांद पर पड़ी।

वह फिर सो गया, और उसने सपना देखा, और यह उसका सपना था- उसने देखा कि वह एक बहुत बड़े पोत की छत पर लेटा था और पोत को सौ दास खे रहे थे। उसके पास ही एक गलीचे पर

पोत का स्वामी बैठा हुआ था वह आबनूस की लकड़ी की तरह काला था। उसकी पगड़ी गहरे लाल रंग के रेशम की थी । चांदी की बड़ी-बड़ी बालियों का भारी बोझ उसके कानों की लोलकियों को खींच रहा था। वह हाथी दांत की तुला थामे हुए था।

दास कमर पर लिपटे हुए चीथड़ों को छोड़ लगभग नंगे ही थे। और प्रत्येक दास अपने साथ वाले दास के साथ जंजीरों से जकड़ा हुआ था। गर्म सूर्य भी उनपर अपनी क्रूरता चमका रहा था। पोत की मार्गिका से ऊपर नीचे जाते हुए हब्शी उन पर चमड़े के कोड़े बरसा रहे थे। वे अपनी पतली भुजाएं फैलाए, पानी में अपनी भारी पतवारों के साथ पोत को खे रहे थे। पतवारों से नमक की फुहारें उड़ रही थीं।

अंततः वे एक खाड़ी में पहुंचे और, स्थिति का आकलन करने लगे। तट से हल्की-सी हवा ने आकर छत और बहुत बड़े तिकोने पाल वाले पोत को सुंदर लाल धूल से ढांप दिया। जंगली गधों पर सवार तीन अरबों ने आकर उनपर भाले फेंके। पोत के स्वामी ने रंगीला तीर उनमें से एक के गले पर मारा। वह तट की फेन में गिरा, और उसके साथी सरपट भाग खड़े हुए। पीले पर्दे में लिपटी, ऊंट पर बैठी हुई एक औरत कभी कभार पीछे रह गए शव को देखती हुई, धीरे-धीरे उनके पीछे-पीछे चलती रही।

जैसे ही उन्होंने लंगर डाल कर पोत को किनारे लगाया, हब्शी पोत के फलके से रस्सियों की भारी भरकम सीसा युक्त सीढ़ी निकाल लाए। पोत के स्वामी ने सीढ़ी के सिरों को लोहे के दो सीखचों के साथ बांध कर एक तरफ से समुद्र में फेंक दिया। फिर हब्शियों ने एक सबसे युवा दास को पकड़ा, उसकी बेड़ियां तोड़ डालीं और उसके नथुनों और कानों में मोम भर कर उसकी कमर के साथ एक भारी पत्थर बांध दिया। थका- मांदा दास सीढ़ी से रेंगता हुआ, समुद्र में ओझल हो गया। वह जहां से उतरा था वहां से कुछ बुलबुले उठे। अन्य दास उत्सुकतावश दूसरी ओर देखते रहे। पोत के मंदान पर शार्कों को आकर्षित करने वाला व्यक्ति बैठा हुआ था और नीरस ढँग से लगातार ढोल पीटे जा रहा था ।

कुछ समय बाद गोताखोर पानी से निकल आया और हांफता हुआ सीढ़ी से चिपक गया। उसके दायें हाथ में एक मोती था। हब्शियों ने वह मोती उसके हाथ से ले लिया, और दास को फिर पानी में फेंक दिया। दास अपनी पतवारों पर सो गए।

बार बार गोताखोर पानी से ऊपर आता, और हर बार अपने साथ एक सुंदर मोती निकाल कर लाता था पोत का स्वामी उन मोतियों को तोल कर हरे चमड़े के छोटे-से थैले में रख देता था।

युवा नरेश ने कुछ कहने का प्रयास किया । लेकिन उसे ऐसा लगा कि उसकी जीह्वा उसके तालू से चिपक गई थी, और होंठ ने हिलने से इनकार कर दिया था। हब्शी आपस में चहक रहे थे, और उन्होंने चमकदार मनकों की एक माला को लेकर झगड़ा शुरू कर दिया। दो सारस पोत के इर्द-गिर्द मंडरा रहे थे।

फिर गोताखोर अंतिम बार ऊपर आया, और इस बार जो मोती साथ लाया वह ओमज़ के सब मोतियों में से सुंदर था। इसका आकार पूर्णिमा के चांद-सा था, और यह मोती भोर के तारे से भी अधिक सफेद था। लेकिन दास का चेहरा अद्भुत रूप से पीला था, और जैसे ही वह छत के ऊपर गिरा, उसके नथुनों और कानों से रक्त फूट पड़ा। वह कुछ समय के लिए कांपा, और ठंडा हो गया। हब्शियों ने अपने कांधे उचकाए और उसके शव को समुद्र में फेंक दिया।

और फिर पोत का स्वामी हंसा, और, उसने हाथ बढ़ाकर, मोती ले लिया, और जब उसने मोती को देखा तो उसे अपने माथे से लगा कर सर झुका लिया। 'यह मोती,' उसने कहा, 'युवा नरेश के राजदंड को सुशोभित करेगा, 'और उसने हब्शियों को लंगर उठाने का संकेत दे दिया।'

यह सुन कर युवा नरेश जोर से चीखा, और नींद से जाग उठा और खिड़की से उसने मद्धम सितारों को बीनती हुई उषा की लंबी उंगलियां देखीं। और वह फिर सो गया, और उसने सपना देखा और यह उसका सपना था- उसे लगा कि वह एक धुंधले जंगल में भटक रहा था , जिसमें अद्भुत फल और सुंदर ज़हरीले फूल लटक रहे थे, वहां से गुज़रते हुए सांप उस पर फुंफकार रहे थे, और सुंदर सुग्गे चीढ़ते हुए टहनियों से उड़ रहे थे। गर्म दलदल में बड़े-बड़े कछुए सो रहे थे। पेड़ बंदरों और मोरों से अटे पड़े थे।

जंगल की बाहरी सीमा तक पहुंचने तक वह आगे से आगे बढ़ता रहा, और वहां उसने असंख्य लोगों को सूखी नदी की सतह पर कठोर परिश्रम करते हुए देखा। वे एक चट्टान पर चींटियों के झुंड की तरह इकट्ठे थे। वे ज़मीन में गहरे गडढे खोद कर उनमें घुस रहे थे। उनमें से कुछ लोग चट्टानों को कुल्हाड़ों से फाड़ रहे थे, कुछ लोग रेत में छटपटा रहे थे। वे केक्टसों को जड़ों से उखाड़ रहे थे और सिंदूरी मंजरियों को रौंद रहे थे। वे बहुत जल्दी में थे, और एक दूसरे को पुकार कर बता रहे थे कि काम जल्दी करना है, और कोई भी बेकार नही बैठा था। (शेष अगले अंक में)

विभागाध्यक्ष, अनुप्रयुक्त विज्ञान एवं मानविकी,
राजकीय पॉलीटेक्निक, कांगड़ा, जिला कांगड़ा, हिमाचल प्रदेश,
मो. 94184 65008

जयप्रकाश मानस की कविताएं

पंछी का मन दुखता

कुआं है गांव में
कुएं में घटता पानी
सोचकर मछली को
है बड़ी हैरानी।

घास है जंगल में
घास भी मुरझाई
सोचकर गायों की
आंखें भर आईं।

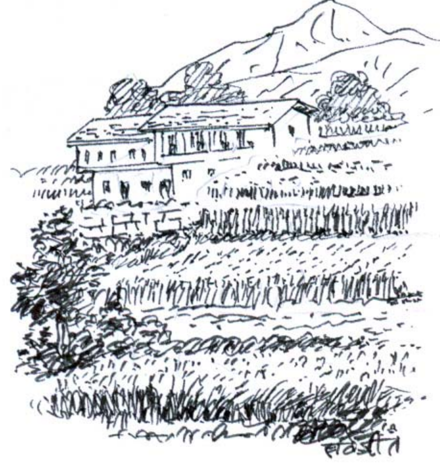
पेड़ है पर्वत में
पेड़ भी लो सूखता
सोचकर पंछी का
मन बहुत दुखता।

चलो चलें अब झील पर

टांग दें बस्ता कील पर
चलो चलें अब झील पर।

पकडें मछली बंसी डाल
सीपी, घोंघा रखें संभाल
नजर रहे पर चील पर।

जा बैठें फिर नाव में,
घूमें पानी के गांव में
नाविक काका की अपील पर।



रखते नहीं उधार खेत

सबके पालन हार खेत
कितने समझदार खेत

देते ये फौलादी ताकत
जैसे हों लुहार खेत

अन्न, फल, फूल, सब्जी देते
सबसे बड़े उपहार खेत

जैसे बोयें, पायें वैसे
रखते नहीं उधार खेत.

सीखें लहलहाना इनसे
धरती का शृंगार खेत।

साथ निभाते जीवन भर
कृषकों के सच्चे यार खेत।

संपादक, www-srijangatha-com
कार्यकारी संपादक, पांडुलिपि (त्रैमासिक)
एफ-3, छगमाशिम, आवासीय परिसर, पेंशनवाड़ा
रायपुर, छत्तीसगढ़-492001, मो. 0 94241 82664

मनीषा जैन की कविताएं

मोर

बारिश होती
मोर नाचते
पंख खोलते
नीली गर्दन को मटकाते
जब-जब अपने पंख खोलते
पूरा घेरा एक बनाते
नाच-नाच कर शोर मचाते
इंद्रधनुष से रंग फैलाते
सिर पर इनके एक मुकुट है
गर्दन ऊंची रंग रंगीली
बैठ गये पेड़ों की डाली
बारिश आती नीचे उतरें
नाच दिखाएं
जोर जोर की कूक लगाएं
बारिश होती मोर नाचते
पंख खोलते
नीली गर्दन को मटकाते।

बच्चे

बच्चे कितने अच्छे होते
देख सभी को हैं मुस्काते
हाथ बढ़ाओ फट आ जाते
सीने से लग कर सो जाते।



खेल

खेल खेलते सारे बच्चे
नहीं कोई मैल है मन में
एक दूसरे से मिल कर
कई तरह के खेल बनाते
खेल खेल कर जब थक जाते
मम्मी की गोदी चढ़ जाते
खुश हो जाते सारे बच्चे
खेल खेलते सारे बच्चे।

हम भी अगर बच्चे होते

हम भी अगर बच्चे होते
सुबह सुबह स्कूल को जाते
मुंह में दूध बताशा रख कर
रोते रोते हंसने लगते

हम भी अगर बच्चे होते
मां की बाहों में झूलते
कोई अगर डांट लगाता
मुंह बना कर हम इतराते

पापा के पीछे छुप जाते
नए नए फिर कपड़े लाते
चाट-पकौड़ी जम कर खाते
घर भर में हम धूम मचाते

जो भी कोई बाजार जाता
वही हमें संग ले जाता
हम भी अगर बच्चे होते
दूध मलाई जमकर खाते।

165-ए, वेस्टर्न एवेन्यू
सैनिक फार्म, नई दिल्ली-110080, मो. 0 98715 39404

डॉ. फहीम अहमद के गीत

बातों की रेल

बच्चों के बीच चली
बातों की रेल।

एक- एक डिब्बे में
बातों की पुड़िया।
होंठों से निकल ज्यों
फुदक रही चिड़िया।

चिड़िया उड़ाने का
शुरू हुआ खेल।

कोयल की बोली-सी
मीठी है बानी।
थोड़ी-सी बुद्धू है
थोड़ी सयानी।

मिसरी का चाशनी से
हो गया मेल।

लगती है बागों में
भौरों की गुनगुन।
बातों के मोती को
जीभ चुगे चुनचुन।

बातों की क्लास में
कोई न फेल।

ढाए हवा कहर

बोली चील ! अरी सुन कोयल
कहां रहेंगे हम।
हुई हवा ज़हरीली जब से
घुटता मेरा दम।

सांस नहीं लेते बनता है
ढाए हवा कहर।
चलो भाग कर जान बचाएं
छोडें जल्द शहर।

चिड़ियों की आवाज़
चिड़िया ने उठाई
कहां बनाएं नीड़।
रोज़ पेड़ कटते जाते हैं
बढ़ती जाती भीड़।

रोक कुल्हाड़ी बात हमारी
सुनो भाइयो खास।
पेड़ न होंगे तो फिर कैसे
लेंगे हम-तुम सांस।



मैना उड़ी फुर्र

मैना लाई दही बड़ा
हाथी खाए खड़ा खड़ा।

खाकर फूला उसका पेट
सीधा गया खाट पर लेट।

खाट बोली चुर्र
मैना उड़ी फुर्र।

मगरमच्छ के आंसू

मगरमच्छ क्यों रोते हो तुम
बोला एक सियार।
मम्मी ने मारा या खाई
पापा से फटकार।

मगरमच्छ बोला ,सलाद मैं
बना रहा था आज।
आंखों में आंसू भर आए
ज्यों ही काटा प्याज।

485/301, जेलर्स बिल्डिंग, बब्बू वाली गली, लकड़ मंडी, डालीगंज,
लखनऊ, उ. प्र. 226020, मो. 0 94502 85248

परशुराम शुक्ला की कविताएं

बातें जनहित वाली

माह जनवरी छब्बीस को हम
सब गणतंत्र मनाते।
और तिरंगे को फहरा कर,
गीत खुशी के गाते।।

संविधान आजादी वाला,
बच्चो! इस दिन आया।
इसने दुनिया में भारत को,
नव गणतंत्र बनाया।।

क्या करना है और नहीं क्या?
संविधान बतलाता ।
भारत में रहने वालों का,
इससे गहरा नाता ।।

यह अधिकार हमें देता है,
उन्नति करने वाला।
ऊँच-नीच का भेद न करता,
पंडित हो या लाला।।

हिन्दू, मुस्लिम, सिख, ईसाई,
सब हैं भाई-भाई।
सबसे पहले संविधान ने,
बात यही बतलाई।।

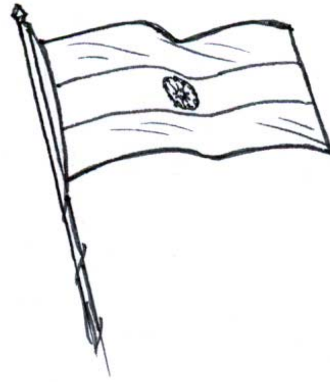
इसके बाद बतायी बातें,
जन-जन के हित वाली।
पढ़ने में ये सब लगती हैं,
बातें बड़ी निराली।।

लेकर शिक्षा कहीं, कभी भी,
ऊँचे पद पा सकते।
और बढ़ा व्यापार नियम से,
दुनिया में छा सकते।।

देश हमारा, रहें कहीं हम,
काम सभी कर सकते।
पंचायत से एम.पी. तक का,
हम चुनाव लड़ सकते।।

लेकर सत्ता संविधान से,
शक्तिमान हो सकते।
और देश की इस धरती पर,
जो चाहे कर सकते।।

लेकिन संविधान को पढ़कर,
मानवता को जानो।
अधिकारों के साथ जुड़े,
कर्तव्यों को पहचानो।



पढ़ने लिखने से दूर होती बुराई

आओ बच्चो! आज तुम्हें हम,
एक बात बतलाते।
पढ़ना-लिखना बहुत जरूरी,
यह तुमको समझाते।।

पढ़ने-लिखने वाले बच्चे,
आगे बढ़ते जाते।
देश विदेश घूमते जग में,
अपना नाम कमाते।।

पढ़ने-लिखने से होती है,
सारी दूर बुराई।

पढ़ने से यदि दूर रहे तो,
समझो आफत आई।।

पढ़ने-लिखने वाले बच्चे,
नींद चैन की सोते।
और बिना पढ़ने वाले सब,
सारा जीवन रोते।।

पढ़ने वाले निर्भय होकर,
इम्तहान में जाते।
दूर पढ़ाई से जो रहते,
मन ही मन घबराते।।

पढ़ने वाले सौ में सौ तक,
अपने नंबर लाते।
और नहीं जो पढ़ते बच्चे,
वे जीरो तक पाते।।

नेता, अफसर, बाबू सारे,
बनते पढ़ने वाले।
और न पढ़ने वाले करते,
घपले और घुटाले।।

पढ़ने को तुम जीवन मानो,
इसकी आदत डालो।
टालो काम दूसरे लेकिन,
पढ़ने को मत टालो।।

पूरी कभी न होती शिक्षा,
यह ज्ञानी बतलाते।
इसीलिए तो मेरे दादा,
नयी पुस्तकें लाते।।

जीवन के अंतिम दिन तक तुम,
पढ़ना और पढ़ाना।
अपने साथ दूसरों का भी,
जीवन सफल बनाना।।

आइवरी 20, प्लेटिनम पार्क, टी.टी. नगर, भोपाल, मध्य प्रदेश-462003, मो. 99268 56086

आओ हम भी करें दोस्ती

● **दिविक रमेश**

आओ हम भी करें दोस्ती
जैसे स्टेशन और रेल की
आओ हम भी करें दोस्ती
जैसी अपनी ओर खेल की।

कहानी और कविता वाली
पुस्तक भी तो कितनी प्यारी
जी करता है पुस्तक से भी
करें दोस्ती प्यारी प्यारी।

एक सीक्रेट चलो बताएं
टीचर जी भी दोस्त हमारी
साथ खेलतीं हमें पढ़ातीं
कितनी अच्छी दोस्त हमारी।

नहीं जानते अरे दोस्ती
चॉकलेट सी क्यों है लगती
सच्ची सच्ची अरे दोस्ती
हमें केक सी मीठू लगती।

कितना मजा हमारा होता
अगर दोस्त तारे बन जाते
उनके जन्मदिनों पर जाकर
ढेर खिलौने हम दे आते।

क्यों मन करता सब बच्चों से
करें दोस्ती प्यारी प्यारी
क्यों मन करता कभी किसी से
हो कुट्टी न कभी हमारी।

बी-295, सेक्टर-20, नोएडा, उत्तर प्रदेश-201301

डॉ. प्रत्यूष गुलेरी की कविताएं

निराला मुन्ना

मुन्ना बड़ा निराला है
नानी मां ने पाला है

नानी इसको भाती है
लड्डू खूब खिलाती है

मुख चूमे यह नानी का
काम करे शैतानी का

दौड़ा भागा पानी को
पकड़ नचाया नानी को

नानी कुछ शरमाती है
मुन्ना! मुन्ना! गाती है

नानी इतना फूल गई
नाना का दुःख भूल गई।

होली है होली

रंग उड़ाती धूम मचाती
बच्चों की आई है टोली
नाचेंगे हम गाएंगे हम
रंगों का उत्सव है होली

रंग बिरंगे रंग लिए हैं
गूंज रही होली की बोली
बीनू, मीनू, शीला, विमला
भर गुलाल की लाईं झोली

टींकू घर से बाहर आया
रंग भरी पिचकारी खोली
नीले पीले मुंह देखकर
सब कहते 'होली है होली'

आपस में सब बैर भुलाकर
गले लगाए कहती होली
एक रहे हैं एक रहेंगे
बच्चों की गाती है टोली।

रजिया चली बाजार

रजिया बेटी चली बाजार
घोड़े पर है आज सवार

कपड़ों के हैं क्या ही कहने
सुंदर पहने इसने गहने

देखे इधर-उधर खुशहाल
घोड़े की मदमस्त है चाल

'पापा! खींचो जरा लगाम
दिल कर आया खाने आम

आमों के थे ऊंचे दाम
उसने लिया कलेजा थाम

पापा बोले- 'बिटिया रानी
टॉफी खाकर पीओ पानी

बढ़िया खूब खिलौने ले लो
घर में चलकर जी भर खेलो'

बोली रजिया 'पापा आओ
सांझ ढली अब घर पहुंचाओ।'

मोबाइल के फंक्शन

मेरे नाना मैं सिखाती
मोबाइल के फंक्शन
बेहिचक अब इसे चलाओ
मत लो कोई टेंशन
ऑफ ऑन यहां से होते
लाल हरा पहचानो
बटन दबाकर नंबर मिलता
यह ओके तुम जानो
संदेश भेजना है अगर
तो मैसेज में जाओ
टाईप करके फिर नाना
ओके बटन दबाओ
मीनू में ऑप्शन फिर देखो
जो चाहो वह मिलता
बात देश विदेश करो तुम
दिल पूरा है खिलता।

हो! हो! हा! हा!

नन्हा मुन्ना छैल छबीला
ड्रेस पहन कर नीला पीला
हाथ में पकड़ा मैंने फूल
चला हूँ पढ़ने आज स्कूल
अपनी मिस का राज दुलारा
माँ की आँखों का हूँ तारा
संगी-साथी मुझे बुलाएं
आ जा मिलकर बैलून फुलाएं
डोरी बाँध के खूब उड़ाएं
बड़े जोर से शोर मचाएं
भागें सारे दाएं-बाएं
हो! हो! हा! हा! दौड़ लगाएं।।

**कीर्ति कुसुम, सरस्वती नगर, पो.आ. दाड़ी,
तहसील धर्मशाला, जिला कांगड़ा हि.प्र.-176057,**
मो. : 0 94181 21253

राजीव कुमार 'त्रिगर्ती' की कविताएं

बादल

देखो बादल उड़े जा रहे,
पानी भरकर लिए जा रहे।

नाले-पोखर, नदियां झरने
बादल को पानी देते हैं,
सूरज को जाकर तुम ढक दो
उससे यही शपथ लेते हैं,
कितना पानी पिए जा रहे
देखो बादल उड़े जा रहे।

अम्बर पर छतरी सा तनकर
उमड़-घुमड़ हैं खूब मचाते,
काले-काले बड़े निराले
आपस में ही भिड़-भिड़ जाते,
गड़गड़-गड़गड किए जा रहे
देखो बादल उड़े जा रहे।

हर पहाड़ की चोटी पर हैं
दूर बहुत मैदानों पर भी,
जंगल-जंगल नदिया-नदिया
यही खेत-खलिहानों पर भी,
गांव-शहर पर चढ़े जा रहे
देखो बादल उड़े जा रहे।

कभी तो रिमझिम बरसा करते
कभी तो फट-फट जाते बादल,
कभी मूसलाधर बरसते
कभी तो बस भरमाते बादल,
दूर देश को चले जा रहे
देखो बादल उड़े जा रहे।

तुम्हें देखकर खुश किसान हैं
फसलें इनकी लहरा दो,
मरे घास में जान डाल दो



हरियाली को फहरा दो,
खुशियां मन में भरे जा रहे
देखो बादल उड़े जा रहे।

रुको-रुको सब रिमझिम बरसो
घर-आंगन सब भर जाएंगे,
भीग-भागकर उछल-कूदकर
सारे बच्चे घर जाएंगे,
काहे को तुम छले जा रहे
देखो बादल उड़े जा रहे।

मामाजी

भोले-भाले मामाजी
पहने तंग पाजामाजी।
मीठे के शौकीन बड़े हैं
खूब जलेबी खाते हैं,
गुस्से में न मामी आए
रबड़ी-चमचम लाते हैं,
थोड़ा मामीजी को देकर
खुद वो खूब उड़ाते हैं,
दंड पेलते सुबह-सबेरे
बन जाते हैं गामाजी।
भोले-भाले मामाजी
पहने तंग पाजामाजी।
एक बार था जाना जयपुर
चले गए थे दिल्लीजी,
घर में सारे मिलकर उनकी
खूब उड़ाते खिल्लीजी,
कहते हैं कि शेर को मारा
डरें देखकर बिल्लीजी,
उनकी न कोई बात सुने तो
करते खूब हंगामाजी।
भोले-भाले मामाजी
पहने तंग पाजामाजी।

चिड़िया

फुर्र-फुर्र उड़ जाती चिड़िया
तिनका-तिनका लाती चिड़िया।
जोड़-जोड़कर तिनका-तिनका
अपना नीड़ बनाती चिड़िया।।
डाल-डाल पर रोज फुदकना
घर-घर आना जाना है,
दाना-दाना चुनकर खाना
करती रोज बहाना है,
घर-आंगन और गली मुहल्ले
सचमुच खूब सुहाती चिड़िया।
डाल-डाल पर फुदक के बैठे
सबको गीत सुनाती है
दाना-दाना चुनकर लाती
मेहनत हमें सिखाती है,
आओ चिड़िया से हम सीखें
कैसे हंसकर जीते हैं,
मेहनत की नदिया का पानी
कैसे मिलकर पीते हैं।

गांव : लंघू, डाकघर गांधीग्राम, तह : बैजनाथ,
जिला कांगड़ा, हि.प्र. 176125, मो. 9418193024

प्रभुदयाल श्रीवास्तव की कविताएं

साक्षर चूहेराम

अ-आ , इ-ई,उ-ऊ पढ़कर,
हुए साक्षर चूहेराम।
कागज कलम किताबें लेकर,
किया शुरू लिखने का काम।

दिन भर कड़ा परिश्रम करते,
पैसे खूब कमाते।
शाम भले ही किसी बैंक में,
जाकर जमा कराते।

उन्हें बैंक से एक पास बुक,
और चैक बुक आई।
बड़े जतन से, बहुत सुरक्षित,
बिल में ही रखवाई।

दिवस दूसरे सुबह उठे तो ,
देखा खेल निराला।
हाय! चेक बुक और पास बुक
को खुद ने खा डाला।

माथा रहे पीटते दिन भर,
अपना चूहा भाई।
अपनी ही आदत क्यों खुद को,
हो जाती दुखदाई।



गुड़िया पाठ पढ़ेगी



मेरी गुड़िया पाठ पढ़ेगी,
नन्हें नन्हें छोटे से।

पापा लेकर आये कापी,
मम्मी लाई पेन।
दादाजी पुस्तक ले आये,
उन्हें तब पड़ा चैन,
छोटी पुस्तक के अक्षर हैं,
सुन्दर-सुन्दर मोटे से।
अभी पढ़ेगी बड़े प्रेम से,
अ अनार का पाठ
आज दिख रहे हैं गुड़िया के,
परियों जैसे ठाठ।
हल्ला गुल्ला सुनकर दादी,
जाग उठीं हैं सोते से।

कर डाले अक्षर उच्चारण ,
उसने अपने आप।
पढ़े सभी स्वर, व्यंजन जैसे ,
हों गायत्री जाप
कितना ज्ञान भरा गुड़िया के ,
है दिमाग में छोटे से।

12 शिवम सुंदरम नगर छिंदवाड़ा, मध्य प्रदेश-470001

डॉ. नागेश पांडेय 'संजय' की कविताएं

दादी ने ई-मेल किया

खेल-खेल में खेल किया,
दादी ने ई-मेल किया।
गुड़िया बैठी साथ में
माउस पकड़ा हाथ में।
पहले दादी चकराई
मन में थोड़ा घबड़ाई।
मैं यह सब कुछ क्या जानूं?
बात नहीं तेरी मानूं।
पर गुड़िया ने उकसाया,
सब कुछ उनको समझाया।
जैसा जो बतलाती थी,
दादी करती जाती थीं।
हिन्दी टाइप थी मुश्किल,
धुकुर धुकुर करता था दिल।
पर दिमाग जब खर्च किया,
झट गूगल में सर्च किया।
ढूँढ लिया जी कन्वर्टर,
लगी दबाने फिर अक्षर।
फिर क्या जी आयी तेजी,
वे लिखती थीं अंगरेजी।
हिन्दी में हो जाता था,
मजा बड़ा ही आता था।
दादी बोली खुश होकर,
जादूगर है कंप्यूटर।



सैर पहाड़ों की

भैया, मैंने सैर करी, इस बार
पहाड़ों की।

दूर-दूर तक बस हरियाली ही
हरियाली थी।
झर-झर झरते झरनों की छवि
बड़ी निराली थी।
ऊँचे-नीचे, टेढ़े-मेढ़े
पतले रस्ते थे।
लोग वहां के मेहनतकश थे,
खुलकर हंसते थे।
मौसम कुछ अलबेला ही था,
बड़ा झमेला था।
दिन थे भैया गरमी वाले,
राते जाड़ों की।
भैया, मैंने सैर करी इस बार
पहाड़ों की।

खूब खुबानी, लीची हमने
तोड़-तोड़ खाई।
बाल मिठाई पूरे तीन किलो
थी मंगवाई।
खिले फूल थे खूब घाटियों में
जाकर तोड़े,
स्केटिंग की, खूब बर्फ के
गोले थे फोड़े।
नाचे कूदे हो-हो कर, जी भर
चिल्लाए हम,
जब भी कभी सुनाई दी आवाज
नगाड़ों की।
भैया, हमने सैर करी इस बार
पहाड़ों की

सुभाष बाल विद्या मंदिर के पीछे
सुभाष नगर, शाहजहाँपुर, उ. प्र.-242001

कविता और विज्ञान

● डॉ. छवि निगम

नीला सुंदर गगन यह विस्तृत
कल्पना हुई पूर्ण कवि की,
अरे, यहाँ कोई रंग कहाँ है?
ये तो माया है 'अपवर्तन' की।
अहा ,आ जरा इनमें तो झांको
नायिका की भावपूर्ण आँखें,
कहाँ, अरे ये तो मनुष्य की
साधारण सी 'दृश्येंद्रियाँ' हैं।
अपनी पृथ्वी से दूर स्वर्ग में
सुना, देवताओं का वास रहा है,
आज के मानव को देखा क्या?
अंतरिक्ष के आगे घूम रहा है।
चलो भागें हम तितली के संग
कैसी न्यारी शोभा इन फूलों की,
न ये केवल जायांग पुमंग पुंज
दूलपुंजों 'का एक समूह तो है।
प्रेम नफरत दोस्ती दुःख सुख
जीवन में कितने उतार चढ़ाव हैं,
जिम्मेदार कुछ तो इनमें हारमोंस
कुछ दिमाग में केमिकल लोचा है।
रचनाकार अपना एक मत देता
वैज्ञानिक मस्तिष्क दूसरा कहता,
तो किस राह पर है आगे बढ़ना
मति भ्रम तो ये मिट ही न पाता।
कोई परम शक्ति है सृष्टिकर्ता
विनाशी भी इसका वो ईश ही है,
कैसे रच सकता यह सृष्टि वो?
खुद को सिद्ध न कर पाया जो है।
पर कहो तो ये तर्क कहाँ से पाया
वैज्ञानिक बुद्धि इतनी कैसे पायी
बस यहीं तो आ, मैं विज्ञान हुआ
निरुत्तर सच, सुन मेरे कविवर भाई।

**723, ब्लॉक 15, कैलाश धाम सोसाईटी, सेक्टर 50,
नोएडा, उत्तर प्रदेश-201301**

नभ को छू लो

● अभिनव अरुण



इंटरनेट में खोया चुनमुन
देखो खुद में रहता गुमसुम
हम बच्चों से दूर हुआ है
आदत से मजबूर हुआ है
खेल कूद उसको नहीं भाते
हम उसको कितना समझाते
हंसी ठिठोली मेज जोल से
बैट बाल रन और गोल से
तन-मन स्वस्थ सदा रहते हैं
जीवन में ऊर्जा भरते हैं
घर से बाहर भी है दुनिया
गुड्डे गुड़िया चुनिया मुनिया
दोस्त मित्र रिश्ते नाते हैं
पेड़ों पर पंछी गाते हैं
चमचम चन्दा झिलमिल तारे
बांह पसारे तुम्हें पुकारें
उनसे भी मिलते जुलते तुम
फूलों सा हँसते खिलते तुम
झूले झूलो नभ को छू लो
अनुशासन को कभी न भूलो
अनुशासन ही देश बनाता
अनुशासन ही सबको भाता

**वरिष्ठ उद्घोषक,
आकाशवाणी वाराणसी (उत्तर प्रदेश)-221010**
मोबाइल : 94156 78748

तुम कितने अच्छे हो बापू

● डॉ. देशबंधु 'शाहजहांपुरी'



रोज सुबह उठकर खेतों में ,
हल बैलों के संग जाते हो।
दिन भर कठिन परिश्रम करके ,
साँझ ढले घर में आते हो।
नहीं डांटते कभी हमें तुम ,
ईश्वर से सच्चे हो बापू।
तुम कितने अच्छे हो बापू।

मुझसे कहते खूब पढ़ो तुम ,
लेकिन खेलो भी मन भरके।
खुले नयन में स्वप्न संजोकर ,
पूरा करना तुम प्रण करके।
खेला करते संग हमारे ,
सच, बिलकुल बच्चे हो बापू।
तुम कितने अच्छे हो बापू।

जब भी नई फसल आती तब ,
तुम मेरे कपड़े सिलवाते।
साल, महीने मगर तुम्हारे ,
धोती, कुर्ते में कट जाते।
ठान लिया जो, करना है वो ,
निश्चय के पक्के हो बापू।
तुम कितने अच्छे हो बापू।

आनंदपुरम कॉलोनी (बीबीजई चौराहा),
कनौजिया अस्पताल के पीछे, शाहजहाँपुर (उ. प्र .)- 242001
मोबाइल : 09936604767

सत्य का राज

● रोचिका शर्मा

कितनी सुंदर दुनिया होती, अगर न कोई झूठ बोलता

मोल भाव पूरा करके भी, माल कोई ना ग़लत तोलता

बात न करते घुमा फिरा कर, पल भर में ये समझ ही जाते

तू ने बोला मैं ने बोला, इक दूजे को ना झुठलाते

आओ हम सब प्रण करें ये, ना बोलेंगे अब हम झूठ

करें जमा विश्वास की पूंजी, बात हमारी रहे अटूट

नव वर्ष की मंगल बेला पर, हम नया संदेसा देंगे आज

हार झूठ की होती हर दम, सदा ही होता सत्य का राज



Ceebros Belvedere, Model School Road,
Kumarsamy Nagar Opposite Nilgiris, Shollingnallore,
Chennai -600 119

स्वच्छता गीत

● कृष्णा ठाकुर 'कविता'

बच्चा बच्चा कूद पड़ा है स्वच्छता के अभियान में।
यही हिमाचल आगे होगा सारे हिंदोस्तान में ।।
गन्दगी क्यों है गौर करें,
सब मिलकर इसी सवाल पर।
जहां भर में यह कलंक है,
भारत मां के भाल पर ।।
हम मतवाले स्वच्छता के, हो हो हो...डटेंगे अब मैदान में।
यही हिमाचल आगे होगा पूरे हिंदोस्तान में ।।
सनमुख खड़ी समस्या सबके ,
करनी दूर अस्वच्छता है।
स्वच्छता लाना हर घर आंगन,
यह नहीं अग्नि परीक्षा है ।
पीछे नहीं हटेंगे जब तक... हो हो हो जान है अपनी जान में।
यही हिमाचल आगे होगा सारे हिंदोस्तान में ।।

खुद से हम शुरुआत करेंगे,
घर घर में ये बात करेंगे।
अस्पताल, स्कूल और दफतर ,
हर कदम हम साथ चलेंगे ।
अस्वच्छता से कमी न आए, हो हो हो आन बान और शान में।
यही हिमाचल आगे होगा सारे हिंदोस्तान में ।।
स्वच्छता सपना गांधी का,
पूरा हमको करना है ।
एक से एक हाथ मिलाकर,
लिए काफिला बढ़ना है।
जब जब जन ने बिगुल बजाया, हो हो हो... लहर चली जहान में।
यही हिमाचल आगे होगा सारे हिंदोस्तान में ।।
बच्चा बच्चा कूद पड़ा है स्वच्छता के अभियान में।

'कृष्णा कुंज' बाशिंग, कुल्लू, हिमाचल प्रदेश।
मोबाइल : 94180-63160

नन्हे फूल

● गोपाल शर्मा



बगिया के ये नन्हे फूल ,
चुभ न जाएं इनको शूल ।
सदा रहें ये हंसते गाते ,
खाते पीते मौज उड़ाते ।
यह जीवन का है प्रभात ,
छेड़ो एकता की कोई बात ।
छुए न कपट की काली रात,
क्रोध लगाए न छुपकर घात ।
अभाव का न हो इनको ज्ञान,
भेद भाव का न ध्यान ।
जात पात को जान न पाएं,
ऐसा इनको पाठ पढ़ाएं ।
आशाओं के दीप हैं प्यारे ,
वर्तमान की आंख के तारे।
कोमल तन और कोमल मन है,
उत्तम इन्हें प्रेम का धन है ।
इनके बोलों में है मिठास,
झूठ नहीं है इनके पास ।
नफरत की कहीं पड़े न धूल,
बगिया के ये नन्हे फूल ।

21, जय मार्कीट, कांगड़ा, हिमाचल प्रदेश-176001

संजीव ठाकुर की कविताएं

मेरे भैया, मेरी दीदी

मेरे भैया, बड़े कमाल
कर देते हल सभी सवाल
और अगर मैं शोर मचाऊं
होता उनका चेहरा लाल !
एक दिन एक लड़के ने
मुझको बहुत सताया
बातों ही बातों में उसने
मुझ पर धौंस जमाया
यदि न आए होते भैया
बहुत बुरा होता मेरा हाल

मेरी दीदी बड़ी कमाल
करतीं मुझसे कई सवाल
उलटा-पुलटा कुछ कह दूं तो
हंस-हंस कर होतीं बेहाल !
एक दिन एक लड़के ने
मुझको कुछ कह डाला
बातों ही बातों में उसने
मुझको बहुत चिढ़ाया
अगर न आई होतीं दीदी
शर्म से होता चेहरा लाल !



हवा सुहानी

हवा सुहानी, हवा सुहानी
ना है अंधड़, ना है पानी
हवा सुहानी, हवा सुहानी
बच्चो, खूब करो मनमानी
हवा सुहानी, हवा सुहानी
मगन हो गई चिड़िया रानी
हवा सुहानी, हवा सुहानी
बूढ़ी दादी हुई दीवानी
हवा सुहानी, हवा सुहानी
कहे चुप बैठी हो नानी?

निकल पड़ी है धूप

देखो निकल पड़ी है धूप !
बच्चे खेल रहे सड़कों पर
अपना सब कुछ भूल
फूलों की क्यारी में खिल गए
कितने सारे फूल !
देखो खिली सुनहरी धूप !
सूरज ने अंगड़ाई ली तो
घर में दुबका जाड़ा
खूंटे की रस्सी को तोड़
दौड़ पड़ा पाड़ा !
देखो खिल-खिल हंसती धूप !
पशु-पंछी भी खुश हो-होकर
चहक रहे सारे
आसमान में चमक रहे हो
जैसे ढेरों तारे !

एस. एफ 22, सिद्ध विनायक अपार्टमेंट ,
अभय खंड 3, इंदिरापुरम,
गाज़ियाबाद -201010, दूरभाष : 0120-4116718

नीति कथा

● सुदर्शन वशिष्ठ

बहुत पुरानी बात है, एक पंडित काशी से शिक्षा ग्रहण कर लौटा। घर पहुंचा तो एक दिन उसने एक पर्ची अपने सेवक को दी और कहा, जो व्यक्ति इसकी पांच हजार मुद्राएं कीमत देगा, उसे बेच देना।

सेवक पर्ची ले कर बाजार जा पहुंचा। बाजार में दूकान दूकान जाकर वह पर्ची दिखाने लगा। सबने एक पर्ची देख उसकी हंसी उड़ाई और कहा : ''भाई! इस कागज के टुकड़े को इतना महंगा कौन खरीदेगा! इसमें ऐसा है ही क्या!''

होते होते दोपहर होने को आई। अंत में वह एक दूकान में जा घुसा। उस समय दूकान में साहूकार का लड़का बैठा था। साहूकार घर में खाना खाने गया था। सेवक ने पर्ची उसे पकड़ाई और कीमत भी बता दी। साहूकार के लड़के ने पर्ची ध्यान से पढ़ी। उसमें लिखा था :

होते का बाप, अणहोते की मैया
होते की भैण, अणहोते का भैया।
नजर की जोरू, गांठ का रूपैया
जागे सो पाए, सोए सो खोए।

साहूकार के लड़के ने आव देखा न ताव, झट पर्ची जेब में डाली और गल्ले से पांच हजार मुद्राएं निकाल उसे दे दीं।

दोपहर ढले साहूकार लौटा तो उसने देखा, संदूक से मुद्राएं गायब हैं। उसने बेटे को पूछा कि क्या कोई माल लिया है या आढ़ती को धनराशि दी है! बेटे ने बताया : ''पिताजी, मैंने पांच हजार मुद्राओं में यह पर्ची खरीदी है। देखिए! इसमें क्या पते की बातें लिखी हैं।''

तब साहुकार ने यह सुना तो पर्ची देखी। उसमें कुछ विशेष न पा कर वह आग बबूला हो गया और उसी समय बेटे की कोड़ों से पिटाई कर दी। साथ ही उसे तुरंत दूकान से बाहर होने का हुक्म सुना दिया।

मार खाने के बाद बेटे ने दूकान से बाहर आ कर पुनः वह पर्ची पढ़ी......क्या वास्तव में मुझ से ही भूल हो गई। पर्ची में पहली पंक्ति थी : होते का बाप.......



वाह रे लिखने वाले! तूने तो बिलकुल सच्चाई लिख डाली। यदि मैं कुछ कमाता तो पिता कितने खुश होते। खोने पर मुझे निकाल दिया। चलो ठीक है, अब दूसरी पंक्ति परखते हैं।

घर में वह मां के पास गया और सारा किस्सा सुनाया और कहा : ''मैं जा रहा हूं मां! पिताजी आते ही होंगे और मुझे पीटेंगे।''

मां ने बेटे को सीने से लगा लिया और रोने लगी। फिर भीतर जा कर दो लाल आंचल में छिपा कर लाई और देते हुए कहां : ''इन्हें रख ले बेटा! मुसीबत में काम आएंगे।''

मां से विदा ले वह चल दिया। कुछ दूर जा कर उसने साधु वेश धारण कर लिया। राह चलते चलते उसने सोचा, लिखने वाले ने लिखा है.... होते की भैण....।

अब बहन को परखते हैं। जब वह खूब सारी भेटें ले कर बहन के घर जाता था तो उसकी खूब खतिरदारी होती। बहन 'भैया! भैया!!' कहते न थकती थी।

बहन अच्छे घर ब्याही थी। बहन की हवेली समीप आ गई। उसे हवेली में घुसते हुए बड़ी झिझक हुई। फिर सोचा, बहन पहचान तो लेगी। वह अंदर चला गया। बहन घर में ही थी। बहन ने उसे देख पहचाना ही नहीं। वह भीतर से आटा ले आई और भिक्षा के रूप में उसकी झोली में डाल दिया। वह बहन के चेहरे को देखता रहा और मन नही मन लिखने वाले को सराहता रहा।

''मुझे रात काटनी थी'', उसने कहा कि अब शायद बहन पहचान ले।

''तो बाहर आंगन में पड़े रहो।'' बहन खीजने लगी। भीतर से आवाज लगा कर सास ने पूछा तो बोली : ''ऐसे ही कंगाल चले आते हैं, पता नहीं कहां से!''

वह आंगन में पड़ लम्बा गया। आग जलाई और बहन के दिए बाजरे के आटे की रोटियां पकाईं और वहीं एक पत्थर के नीचे दबा दीं। सुबह उजाला होने से पहले वह आगे निकल गया।

अब उसने सोचा, अपने भैया अर्थात दोस्त की परीक्षा भी लगे हाथ ले ही लें, वह क्या करता है।

अगले नगर में उसका दोस्त रहता था जो एक बड़ा साहूकार था। अंधेरा होते ही उसने दोस्त का दरवाजा खटखटा दिया।

दोस्त उसे इस हाल में देख बड़ा हैरान परेशान हुआ। बड़े आदर से उसने उसे अंदर बैठाया और सारे हालात की जानकारी ले कर ढाढस बंधाया। खाना खाने के बाद दोस्त ने कहा : ''भैया! मुसीबतें तो आती ही रहती है। तुम मुझ से धन ले लो और अपना कारोबार शुरू करो। भगवान सहायता करेंगे।''

''ठीक है मित्र! अभी मैं बहुत थक गया हूं, सुबह सलाह मश्विरा करेंगे।''

रात वह सो तो गया, नींद नहीं आई। देर तक करवटें बदलता रहा। जहां वह सोया था, वहां ठीक सामने दीवार पर दोस्त की पत्नी का नौलखा हार टंगा था। हार के साथ ही दीवार पर एक चित्रलिखित मोर था। जब उसने दीवार की ओर टकटकी लगाई थी तो क्या देखता है कि चित्रलिखित मोर उस हार को धीरे धीरे निगलने लगा। वह बहुत घबराया। हार तो मोर निगल जाएगा और नाम मेरा लगेगा। आधी रात को ही वह वहां से चुपचाप भाग खड़ा हुआ।

उन दिनों उसकी पत्नी मायके में थी। सोचा, वहां जा कर भी परख लिया जाए कि नजर से बाहर पत्नी कैसे रहती है।

ससुराल की हवेली के बाहर उसने डेरा डाल दिया। जब आधी रात बीती तो हवेली का दरवाजा खुला। उसकी पत्नी सोलह शृंगार किए निकली। जब वह आगे निकल गई तो वह दबे पांव पीछे हो लिया। पत्नी एक अन्य धनिक की हवेली में घुस गई। वह वापस आ कर वहीं धूणा जमा बैठ गया। होते होत सुबह होने को आई वह लौटी। वह भीतर जाने लगी तो उसने पांव अड़ा कर उसे गिरा दिया।

''पता नहीं कौन मुस्टंडे यहां छिपे रहते हैं।'' वह बड़बड़ाई और उसे गालियां देते हुए जल्दी से भीतर चली गई। गिरते समय पत्नी का हार नीचे गिर गया जिसे उसने फट से उठा कर वहीं एक पत्थर के नीचे दबा दिया।

सुबह होते ही वह वहां से रफूचक्कर हो गया।

जाते जाते वह एक ऐसे देश में पहुंच गया जहां अकाल पड़ा हुआ था। लोगों को खाने को नहीं मिल रहा था और लोग दाने दाने को मोहताज थे। उसे ऐसी जगह भिक्षा कहां से मिलती! उसने मां के दिए लाल बेच कर पेट पाला और आगे निकल गया। उसकी गांठ में लाल थे, जो काम आए। वैसे तो उसके घर में बहुत धन था, पर वह किस काम का, जो गांठ में नहीं है। उसे याद आया..... नजर की जोरू, गांठ का रूप्पैया।

एक बार उसे एक रात सराय में काटनी पड़ी। वह बहुत थक चुका था। सोने को मन कर रहा था। उसे अंतिम उपदेश् का स्मरण हो आया......जागे सो पाए, सोए सो खोए।

अतः उसने निश्चय कर लिया कि रात सोएगा नहीं। जब रात काफी बीत गई तो वहां दो चोर आए। दोनों के पास चोरी का माल था। वह दुबका हुआ देखता रहा। चोरों ने सराय की दीवार का एक पत्थर हटाया और माल वहां छिपा दिया और चलते बने।

वह धीरे से उठा और दीवार का पत्थर हटाया। देखते ही वह दंग रह गया। वहां तो दीवार हीरे जवाहरातों से अटी पड़ी थी। उसने फट से सारा माल झोली में डाला और रातोरात आगे बढ़ गया।

अब उसने इस धन से बहुत सारा सामान खरीदा। तम्बू लग गए। नौकर चाकर चारों ओर घुमने लगे। पूरा राजसी ठाठ बाट बन गया। अब उसने वापस जाने की सोची।

जगह जगह तंबुओं में डेरा डालते हुए वह नौकर चाकरों सहित अपने ससुराल के नगर जा पहुंचा। ससुराल वालों को जब खबर पहुंची कि उन का दामाद लाव लश्कर सहित आ रहा है तो उन्होंने उसे लाने के के लिए सेवक भेजे। वह अपने सभी नौकर चाकरों को छोड़ अकेला ही हवेली की ओर आया और हवेली के बाहर खड़ा हो गया। पत्नी झट से दौड़ी हुई आई और उसे भीतर बुलाने लगी। वह बाहर ही खड़ा रहा और बोला : ''मेरी जगह तो यही है।'' पत्नी ज्यादा आग्रह करने लगी तो उसने पत्थर हटा कर हार निकाल पत्नी को दिखाया। पत्नी का चेहरा उतर गया। वह समझ गई कि उस रात उसे ठोकर से गिराने वाजा साधु यही था।

पत्नी को वहीं छोड़ वह आगे बढ़ गया।

अब बहन का नगर आ गया। भाई को इतने ठाठ बाट के साथ आया देख वह उसे लेने आई। जब रात खाना खाने लगे तो बहन ने छत्तीस व्यंजन परोस थे। यह सब न खा कर वह आंगन में गया और पत्थर के नीचे से रोटी ले आया। बहन शर्म से गड़ गई।

अगला पड़ाव उसने दोस्त के यहां डाला। दोस्त ने पहले की ही तरह खातिरदारी दी। रात को उसी कमरे में सुलाया जहां दोस्त की पत्नी का नौलखा हार दीवार से टंगा था। गई रात जब वह जागा तो देखा कि वही चित्रलिखित मोर हार मुंह से उगल रहा है। उसने उसी समय दोस्त को जगाया और कहा, देखो! वह हार मैंने नहीं चुराया था। दोस्त ने उसे गले गला कर कहा : ''मैंने तुम्हें कभी कहा कि तुमने हार चुराया है। तुम तो यहा लौट कर ही नहीं आए। बुरे दिन आते हैं तो ऐसा ही होता मेरे दोस्त।''

दोस्त से विदा ले कर वह जगह जगह डेरे डालता अपने नगर में आ पहुंचा। उसके आने की खबर सब जगह फैल गई। जब पिता तक सूचना पहुंची तो वे दौड़े हुए आए और बेटे को गले लगा लिया। उसने पिता से अच्छी तरह बात नहीं की और सीधे घर जा कर मां के चरणों में गिर गया।

'अभिनंदन', कृष्णा निवास, लोअर पंथाघाटी, शिमला,
हिमाचल प्रदेश-171 009, मो. 94180 85595

सैन्नी अशेष की लघु कथाएं

मां की तलाश

हिमालय में एक छोटा सा गांव था।

गांव में पांच-सात मकान थे। सब मकान दूर दूर थे।

बारह साल की डोलमा और दस साल के दोरजे का घर तो और भी दूर था। पिछले साल के भूकंप में उनके दादा-दादी और पिता जान गंवा चुके थे। भूकंप के वक्त वे दोनों मां के साथ नानी के गांव में न होते तो वे भी शायद न बचते।

'मां, तुम इतना काम मत किया करो', एक दिन डोलमा ने पशुओं को चरागाह की तरफ ले जाते हुए कहा, 'अब हम बड़े हो गए हैं। आज स्कूल में छुट्टी है। शाम को लौटते समय मैं और दोरजे चूल्हे के लिए लकड़ी भी लेते आएंगे।'

रात को सोने से पहले जब मां उन्हें गीत सुनाकर सुला रही थी तो दोरजे ने पूछा, 'मां, तुम कई बार गाते गाते रोने लगती हो। क्यों?'



'तुम दोनों चिंता न करो, गीत और आंसू अपने आप मेरे भीतर से आते हैं और मुझे इनसे शांति और शक्ति मिलती है।'

मां जलाने के लिए लकड़ी और पशुओं के लिए घास लाती, पानी लेने झरने पर पहुंचती, वहीं से कपड़े धोकर लौटती। चूल्हा जलाने से पहले बगल की पशुशाला से दूध दूह कर लाती, खाना पकाती, बच्चों को खाना और दूध परोस कर उन्हें दूर के स्कूल में जाने के लिए तैयार करती। बाद में खुद खाती। दिन भर खेत में काम करती और पीठ पर चीजें लाद कर पशुओं के साथ लौटती।

दूर के पर्वतों पर हर परिवार के कुछ खेत और चरागाहें थीं, जहां वे सर्दियों की बर्फ हट जाने के बाद जाते। मां वहां जाकर भी आलू और घास आदि लेकर लौटती। जब पशु वहां रहते तो दूध और लस्सी भी लाती। वहां उनकी दोघरी यानी कामचलाऊ कुटिया भी थी।

एक दिन जब स्कूल में छुट्टी थी, दोरजे जिद करके अपनी थोड़ी सी भेड़ बकरियों को चराने निकल पड़ा। उसके साथ एक मेमना भी था, जिससे वह बहुत खेलता था। लेकिन शाम तक वह नहीं लौटा तो मां और डोलमा घबरा गईं। दोनों उसे पुकारती हुई जगह जगह नंगे पांव दौड़ने लगीं। मां के हाथ में दराती थी और डोलमा के हाथ में लाठी। अचानक उनकी नजर लौटती हुई भेड़-बकरियों पर पड़ी। वे और भी घबरा उठीं, क्योंकि दोरजे और मेमना उनके साथ नहीं थे। तभी उनकी नजर एक चीते पर पड़ी जो छप्पड़ से पानी पी रहा था। मां ने सोचा कि उसने दोरजे और मेमने को खा लिया। दराती लहराते हुए और चिल्लाते हुए वह चीते की तरफ दौड़ी तो चीता लंबी छलांगें लगाता हुआ जंगल में जा छिपा। उसी समय मां के कानों में दोरजे की आवाज पड़ी, 'मां, हम यहां हैं।' मां ने देखा, ढलान की एक छोटी सी गुफा में से दोरजे मेमने को लेकर बाहर निकल रहा था। 'मां, चीता मेमने को खाना चाहता था। मैं इसे लेकर गुफा में घुसा और बड़े पत्थर से गुफा को भीतर से बंद कर लिया।'

मां की चीखें खुशी में बदल गईं। उसने डोलमा की तरफ मुड़ कर उसे पास बुला लिया।

दो साल बीत गए।

एक दिन मां दोघरी गई हुई थी। अचानक बर्फ पड़ने लगी। डोलमा ने दोरजे से कहा, 'मां शायद आज नहीं लौटेगी।'

तभी उस तरफ से लौटने वाली एक औरत ने उन्हें बताया, 'उसे आज ही लौटना पड़ेगा, क्योंकि बर्फ तेज होती जा रही है। रास्ते बंद हो गए तो वह फंस जाएगी। इस वक्त वह आसानी से लौट रही होगी।'

लेकिन मां तो अगले दिन भी नहीं लौटी। बच्चे घबरा गए। तीसरे दिन सुबह उन्होंने गर्म कपड़े, टोपी और मजबूत जूते पहने और हाथों में लाठी, पीठ पर खाने की चीजें और रस्सी आदि लेकर मां की तलाश में निकल पड़े। उन्हें उम्मीद थी कि मां उन्हें रास्ते में आती मिल जाएगी। लेकिन वह नहीं मिली। बर्फ से ढकी पगडंडी खोजते हुए वे किसी तरह दोपहर को दोघरी जा पहुंचे।

'वह देखो, हमारी कुटिया की छत पर धुआं उठ रहा है।'

दोरजे खुशी से चीखा तो डोलमा भी चीखी, 'हां, मां चूल्हा ताप रही होगी।'

दोनों ने पास पहुंच कर मां को पुकारा तो वह लंगड़ाती हुई बाहर आई।

वे दोनों उससे लिपट गए।

मां ने बताया : 'मैं तो परसों लौट रही थी, मगर चली ही थी कि बर्फ में फिसल कर गिर पड़ी। पांव में मोच आ गई। मुझे पता था कि तुम दोनों जरूर आओगे। लेकिन बर्फ लगातार बढ़ रही है, अब यहां ज्यादा रुकना खतरे से खाली नहीं है। मेरा पांव अब पहले से ठीक है।'

उन्होंने भरपेट भोजन किया। डोलमा और दोरजे ने वह सामान अपनी पीठ पर बांध लिया, जिसे मां साथ लेकर लौट रही थी।

अंधेरा होते होते जैसे ही वे घर के पास पहुंचे, घर लौट चुके पशु उन्हें पुकारने लगे।

फूल का जन्मदिन

''**कितना** सुंदर है!''

''सूरज की पहली किरण में कैसा प्यारा लग रहा है!''

प्रेमवन के गुलाबवन में पंछी यही बातें कर रहे थे। वे सब एक पेड़ पर बैठे थे। सब गुलाब पर टकटकी लगाए थे।

''ऐसा क्या देख लिया सब ने सुबह सुबह?'' तोताराम ने पूछा तो सब गाने लगे- ''चड्ढी पहन के फूल खिला है, फूल खिला है...''

सचमुच बहुत सुंदर गुलाब खिला था। वह ओस से नहाया हुआ चमक रहा था। हवा उसे टहनी पर झुला रही थी। शरमाते हुए वह कुछ ज्यादा लाल हो गया था। फूलों और पंछियों ने उसे बधाई देते हुए कहा- ''जन्मदिन मुबारक हो!''

गुलाब ने सबको धन्यवाद दिया।

सामने के पेड़ पर बैठे जंपी बंदर ने कहा- ''बेवकूफो! जन्मदिन एक साल के बाद आता है। यह चार दिन बाद मर जाएगा, तब मरणदिन मना लेना।''

पिंकी चिड़िया बोली- ''इस बंदर को क्या मालूम कि जब फूल खिलता है, तभी उसका जन्मदिन होता है।''

सब नाचने गाने लगे तो बंदर पेड़ से नीचे उतरते हुए चीखा- ''मैं अभी इस गुलाब को एक झापड़ मार कर बिखरा दूंगा। फिर मनाते रहना जन्मदिन!''

तभी रानी मक्खी ने उसके माथे पर गहरा डंक मारा। वह बुरी तरह चीखा और पेड़ से नीचे गिर गया। उसके पांव में मोच आ गई। अब सबने पूछा- ''बोलो, अब तुम्हारा मरणदिन मनाएं?''

कुछ ही देर में वहां बहुत से पंछी, तितलियां और भौंरे आ गए। सबने बताया कि रानी मक्खी ने उन्हें गुलाब के जन्मदिन पर बुलाया है।

मोर ने बंदर से कहा- ''फूल का बुरा सोच कर तुम खुद ही आफत में पड़ गए। तुम दूसरों की खुशी से क्यों चिढ़ते हो?'' तभी चिंपू चिंपाजी दौड़ा दौड़ा आया और बोला- ''मुझे रानी मक्खी ने बंदर की मोच उतारने के लिए बुलाया है।'' फिर उसने बंदर से कहा- ''आज के बाद अगर तुमने किसी को परेशान किया तो मैं तुम्हारी टांगें तोड़ दूंगा।''

बंदर ने सबसे माफी मांगी और वचन दिया कि अब वह किसी को परेशान नहीं करेगा। वह बोला- ''चिंपू चाचा, जल्दी से मेरी मोच खोल दें ताकि मैं भी सबके साथ ठुमके लगा सकूं।''

कुछ ही देर में बंदर सबके बीच एक टांग पर नाच रहा था।

चिंपू ने उसे आराम करने की सलाह दी।

नन्हा गुलाब अपने छोटे से जीवन के इस बड़े जश्न में खो गया था।

सब उसे घेर कर नाचते गाते रहे।

कार का अहंकार

डोंक गधे के कान अचानक खड़े हो गए।

''क्या हुआ, डोंक?'' उसके कानों के बीच बैठी चिरो चिड़िया ने पूछा।

''तुमने किसी को चिल्लाते हुए नहीं सुना क्या?''

''तुम अपना घास चरो, डोंक! दिमाग खपाओगे तो मस्त कैसे रह पाओगे?''

''मगर, चिरो...से बहुत अजीब चीख थी।''

''तुम जब खुद चिल्लाते हो तो कभी सोचते भी हो कि कैसा भूकंप आ जाता है? लेकिन जब शांत हो जाते हो तो मैं देखती हूं कि उससे कहीं कोई फर्क नहीं पड़ा। पृथ्वी अपनी धुरी से जरा भी इधर-उधर नहीं हटती। सूरज अटल रहता है। मुर्गे बांग देना और मुर्गियां अंडे देना बंद नहीं करतीं।''

लेकिन डोंक गंभीर था- ''मजाक छोड़ो, चिरो! कोई खतरनाक जानवर इस तरफ आ रहा है।''

आवाज सुन कर अब चिरो भी सतर्क हो गई।

वे दोनों दूरदराज के पहाड़ी इलाके में थे। अभी कुछ ही दिन पहले पास के गांव तक चौड़ी सड़क बनी थी।

अचानक नजदीक जोर की आवाजें गूंजी तो चिरो उड़ कर पेड़ पर जा बैठी। जब तक डोंक भागता, कोई अजीब किस्म का लाल जानवर उसके सामने आकर खड़ा हो गया।

''अबे, गधूस! अपना जूस बनवाना है क्या? रास्ता छोड़,

वरना टांगें तोड़ दूंगा!''

अब डोंक ने देखा, लाल जानवर पर उसका मालिक अपने परिवार के साथ सवार था। सब डोंक को सामने खड़ा देख कर हंस रहे थे।

डोंक चकरा कर जहां का तहां खड़ा रह गया।

कार का मालिक चीखा- ''इस गधे को कौन समझाए कि हमने नई कार खरीदी है और आज से पहले यहां किसी भी तरह की गाड़ी नहीं पहुंची थी।''

कार चढ़ाई पर थी। जैसे ही डोंक सामने से हटा, कार की सोंसों और पोंपों बंद हो गई। लेकिन कार आगे बढ़ने की बजाय रुकी रही। मालिक ने देर तक उसे स्टार्ट करने की कोशिश की, मगर वह टस से मस नहीं हुई। सब नीचे उतर कर पैदल चल पड़े।

जैसे ही वे कुछ दूर पहुंचे, कार ने कहा- ''उल्लू गधे! यह तेरी वजह से हुआ। चल, दूर हो जा मेरी नजरों से, वरना स्टार्ट होते ही कुचल डालूंगी।''

बेचारा डोंक जाने ही लगा था कि उसने कार के मालिक को लौटते देखा। उसने कार में से ढेर सारा सामान उतारा और डोंक की पीठ पर लाद कर उसे हांकता हुआ चल पड़ा।

तभी कार ने किसी की आवाज सुनी- ''तू चाहे कितनी भी महंगी और सुंदर है, मगर जब जरूरत पड़ी तो मेरा दोस्त डोंक ही काम आया। जरूरत पड़ने पर सब गधे को बाप बना लेते हैं!''

कार ने देखा, सामने के पेड़ से उड़ान भर कर चिरो उसकी तरफ आ रही है।

''घमंड करने से तू स्टार्ट नहीं हो जाएगी।'' चिरो ने उसकी पीठ पर बैठ कर कहा- ''इतना अहंकार ठीक नहीं। यहां अगर सबसे दोस्ती कर लोगी तो डोंक तुम्हें घसीट कर तुम्हारे मालिक के घर तक ले जाएगा।''

कार सोच में पड़ गई।

घंटे भर के बाद डोंक लौट आया। उसकी पीठ पर खाने-पीने की कई चीजें लदी हुई थीं।

''लो, शहर से आई चीजें खाओ, चिरो! कार वालों ने हमें खाने-पीने को दी हैं।''

चिरो उसकी पीठ पर आ बैठी और बोली- ''चलो, नदी किनारे चलते हैं, जहां हमारे कई दोस्त नहा रहे हैं। सब मिल कर खाएंगे।''

वे कुछ दूर गए ही थे कि उन्हें कार की पुकार सुनाई दी- ''मेरे नए और प्यारे दोस्तो! अपने दोस्तों की मदद से शाम तक मुझे घर पहुंचा देना।''

और यही हुआ! शाम को मोटू हाथी की मदद से जब उन्होंने कार को घर पहुंचा दिया तो कार के मालिक और उसके परिवार ने डोंक और चिरो के सब दोस्तों को दावत दी।

मोटू हाथी को उन्होंने ढेर सारे गन्ने भी खाने को दिए।

चंदा मामा से पूछा चकोर ने

पूर्णिमा का चांद चमक रहा था।

चकोर उसे मोहित होकर देख रहा था।

अचानक उसे लगा कि चांद उसे देख कर मुस्कराया है। उसने हिम्मत करके पूछ लिया : 'चंदामामा, क्या मैं आपसे कुछ पूछ सकता हूं?'



'जरूर पूछो!' इस बार चांद ने सीधे उसकी आंखों में देख कर कहा।

'क्या मनुष्य सचमुच आपके यहां हो आया है? आप जैसे नजर आते हैं, क्या वैसे ही हैं?'

चांद बोला, 'पहली बात तो यह जान लो कि मेरी रोशनी मेरी अपनी नहीं हैं, बल्कि सूरज की है। यह रोशनी मुझ पर उतनी पड़ती रहती है, जितना मैं सूरज के सामने रहता हूं। यानी तुम्हारी पृथ्वी जितना मेरे और सूर्य के सामने से हटती जाती है, उतना मैं तुम्हारे सामने आता जाता हूं। आज मैं बिलकुल सामने हूं, कल से घटता जाऊंगा।'

चकोर ने पूछा, 'क्या तुम्हारा ऐसा भी कोई हिस्सा है, जिस पर प्रकाश पड़ता ही नहीं?'

'हां, तुम मुझ पर जो सांवले धब्बे देख रहे हो, वे वास्तव में मुझ पर बने गहरे गड्ढे हैं, जिनमें सूरज का प्रकाश नहीं पहुंचता। इनसे बनने वाली शक्ल को ही कई लोग खरगोश या चर्खा कातने वाली बुढ़िया मान लेते हैं। लेकिन मेरे कुछ बाहरी हिस्से भी हैं, जिन पर सूरज की आंख नहीं पड़ती। ये ध्रुवीय हिस्से वैज्ञानिकों ने 1961 में खोजे थे। पृथ्वी के उत्तरी और दक्षिणी ध्रुवों पर भी ऐसे हिस्से हैं, जहां महीनों रात रहती है।'

'क्या तुम और सूरज दिन की तरह रात को भी कुछ जगहों पर एक साथ नजर आते हो?'

चकोर के ऐसे सवालों से चांद खुश नजर आ रहा था। उसने कहा, 'लेनिनग्राद, नार्वे, फिनलैंड और स्वीडन आदि देशों में कभी कभी हम दोनों देर रात तक एक साथ नजर आते हैं। तब लोग रात को उत्सव भी मनाते हैं।'

अब चांद को चकोर का पहला प्रश्न याद आया कि क्या मनुष्य सचमुच चांद पर उतर चुका है? चांद ने कहना शुरू किया : '1969 में अमरीकी नागरिक नील आर्मस्ट्रांग मुझ पर उतरा था। उसके पीछे एडविन उतरा था। फिर सोवियत संघ यानी रूस का यूरी गागरीन मुझ तक पहुंचा था।'

चकोर हंस कर बोला, 'उनके पास तो अंतरिक्ष यान थे, मैं तो खुद उड़कर तुम तक आ सकता हूं न?'

'मुझ तक आने के लिए सिर्फ यान या पंख नहीं, बहुत कुछ चाहिए। सांस लेने के लिए पृथ्वी वाली आक्सीजन के बिना तो मुझ पर आना असंभव है।'

चकोर कुछ सोचने लगा, फिर अचानक बोला, 'मुझे शक है कि मनुष्य ने आज तक आपको छुआ तक नहीं है।'

यह सुनकर पहले तो चांद चौंका, फिर बोला, 'सचमुच तुम्हारी बुद्धि तेज राकेट की तरह चलती है। यह सच है कि आज तक मनुष्य ने नहीं, उसके शरीर पर चढ़ी चीजों ने ही मुझे छुआ है। उसके नंगे पांव या नंगे हाथ कब मुझे छुएंगे, मैं नहीं बता सकता। हां, वह मेरे जिन कंकर पत्थरों को वह ले गया था, उन्हें उसने धरती पर लौट कर जरूर नंगे हाथों से छुआ होगा। मनुष्य अगर अपनी धरती के झगड़े छोड़ कर पृथ्वी को बर्बाद होने से बचा ले तो वह जल्दी अंतरिक्ष में मजे से घूमने फिरने लगेगा।'

चकोर ने पूछा, 'इसके लिए मनुष्य को सबसे पहले क्या करना होगा?'

'हिमालय, नदियों, पेड़पौधों, पशुपक्षियों और कुदरती जगहों को अपनी फैलाई गंदगी और अपने लालचों से बचाना पड़ेगा, जिनके कारण पृथ्वी नष्ट होने लगी है।'

रात का चौथा पहर शुरू होने जा रहा था। चकोर ने देखा, चांद का चमकता हुआ गोला पर्वत के लंबे देवदारों के पीछे छिप रहा था।

'हम फिर मिलेंगे', चांद ने कहा।

दोनों ने मुस्करा कर एक दूसरे से विदाई ली।

कप में गप्प !

रुनझुन और राघव के घर में दो प्याले थे।

दोनों प्याले चीनी मिट्टी से बने थे। दोनों बहुत सुंदर थे।

रुनझुन और राघव इन प्यालों में दूध पीते थे।

रुनझुन के प्याले का नाम छोटू और राघव के प्याले का नाम मोटू था।

एक दिन दोनों बच्चे पड्डल मैदान में खेलने चले गए। छोटू और मोटू प्याले घर में अकेले थे। दोनों ने फैसला किया- ''जब तक बच्चे लौटें, चलो, हम अपने घर में सैरसपाटा करें।''

वे दोनों घर की चीजों से मिल कर उनका हालचाल पूछने लगे। अचानक उन्हें खयाल आया कि क्यों न पहले नहा धो लिया जाए!



वे नहाने लगे तो बाल्टी ने उन्हें सावधान किया, ''साबुन जरा कम लगाना, वरना अगर फिसले तो गिर कर ठीकरे हो जाओगे।''

मग बोला- ''मुझे हाथ में पकड़ना तुम्हें भारी पड़ेगा, तुम दोनों बारी बारी एक दूसरे में पानी भर कर नहा लो।''

उन्होंने ऐसा ही किया और नहा धोकर बाहर निकले।

बाहर रखी मेज ने उनसे मजाक किया- ''ठिंगुओ, कितना भी चमक लो, कुछ ही देर में बच्चे आएंगे और तुम्हें फिर मैला कर देंगे।''

छोटू ने गुस्से से मेज को देखा और मोटू से कहा- ''इन लोगों की तरफ ध्यान न दो। एक कान से सुनो और दूसरे से निकाल दो।''

मोटू बोला- ''दूसरे कान से कैसे निकालूं? मेरा तो एक ही कान है!''

''मेरा भी तो एक ही कान है,'' छोटू ने कहा- ''ऐसा करते हैं, अपने कान से तुम सुनो, फिर मैं अपने कान से निकाल दिया करूंगा।''

यह सुनकर मोटू कुछ और फूल गया और बोला- ''रुनझुन और राघव को अगर पता चल गया कि हमारे पास भी बहुत दिमाग है तो वे हमें भी अपने साथ खेलने ले जाया करेंगे और सेरी बाजार में समोसे खिलाएंगे।''

उनकी बातें सुनकर मेज जोर से हंसी और बोली- ''जिनकी खोपड़ी ही खुली हुई हो, वे ऐसी ही हवाइयां छोड़ेंगे! बच्चों ने सुन लिया तो तुम दोनों के इकलौते कान मरोड़ेंगे।''

मोटू बोला- ''जाओ, हमने तुम्हारी बकवास एक कान से

सुनी और दूसरे से निकाली।''

''तुम दोनों जब मुझ पर आकर बैठोगे, तब अगर दोनों को नहीं नचाया तो कहना!''

दोनों प्याले मेज से ध्यान हटा कर दूसरी चीजों से बातें करने लगे।

सामने लगे कलैंडर ने फड़फड़ा कर कहा- ''मुझे याद है, जब तुम्हें इस घर में पहली बार लाया गया था तो उस दिन बत्तीस जनवरी थी।''

यह सुन कर सब हंसने लगे।

''कलैंडर होकर भी गलत तारीख बताते हो!'' सामने लगे आईने ने कहा- ''जनवरी में 31 के बाद एक फरवरी आती है।''

मेज बोली- ''जैसे ही कैलेंडर इन खुली हुई खोपड़ी वालों से बातें करने लगा, इस कलैंडर की खोपड़ी भी खुल गई।''

यह सुन कर कलैंडर ने कहा- ''नहीं। मैं तो जब इस घर में आया था, तब से सामने टंगे आईने में ही खुद पर छपी तारीखें देखता आया हूं। अपने आप को मैं खुद कैसे सीधा देख सकता हूं?''

अब सबकी समझ में आ गया कि कलैंडर ने आईने में 23 को उल्टा यानी 32 पढ़ लिया था।

सारी चीजें दोनों प्यालों से गप्पें लड़ा रही थीं। सभी उन दोनों से चाय पिलाने का वादा मांग रहे थे। तभी दरवाजे पर आवाज हुई। दरवाजा खुलने से पहले दोनों प्याले रसोई में जाकर अपनी जगह पर बैठ गए।

कुछ ही देर में रुनझुन और राघव दोनों प्यालों में दूध पी रहे थे।

मेज पर बैठे बैठे छोटू प्याले ने मोटू प्याले के कान में कहा- ''अगर इस मेज ने हमें नचाया तो इसी की खोपड़ी पर गर्म गर्म दूध गिरेगा।''

मोटू धीरे से मेज से बोला- ''मेज बहन, जब हम खाली हो जाएं तभी हमें नचाना, वरना तुम जल जाओगी और तुम्हारा हुलिया बिगड़ जाएगा। हम तुम्हारे दोस्त हैं, इसलिए तुम्हारा नुकसान नहीं करना चाहते।''

मेज हौले से मुस्कराई और बोली- ''छुटकुओ, मैं तो तुमसे मजाक कर रही थी। तुम इतने प्यारे और शैतान हो कि मैं अगर तुम्हें नचाऊंगी भी तो गिराऊंगी नहीं।''

''धन्यवाद!'' छोटू और मोटू ने एक साथ कहा- ''इसी बात पर कल टी पार्टी में हम तुम्हें भी चाय पिलाएंगे। उस वक्त हम सब नाचेंगे।''

उनकी बातों से बेखबर रुनझुन और राघव ने अपने अपने प्याले उठाए और दूध की चुस्कियां लेने लगे।

द्वारा 'हिमतरु' प्रकाशन, ढालपुर, कुल्लू,
हिमाचल प्रदेश-175 001, मो. 94187 23938

बाल कलम

मां

• कृतिका ठाकुर

मां तुम ही हो जिसने मुझे जन्म दिया
पाल पोस कर बड़ा किया
तुमने दिया मुझे इतना प्यार
कि भूल गई मैं सारा संसार।

हां ! मां वो ही हो तुम
जिसने मुझे इतना प्यार दिया
पर बदले में कुछ नहीं लिया।

मां ! तुम मुझे छोड़ के कभी मत जाना
ये वादा तुम अवश्य निभाना।
तुम हो प्यारी और मनभावना
करती हूं बस ही दुआ
सदा तुम मेरे संग रहना

कक्षा छठी, ताराहाल, शिमला

हिमप्रस्थ में ऊना जिला विशेषांक

'हिमप्रस्थ' मासिक पत्रिका में शीघ्र ही ऊना जिला विशेषांक प्रकाशित किया जा रहा है। अंक में विशेष रूप से ऊना जिला का इतिहास, सामाजिक-आर्थिक व राजनीतिक महत्त्व, देव संस्कृति, मेले व त्योहार, लोक साहित्य एवं संस्कृति, पर्यटन, ऐतिहासिक एवं पौराणिक धार्मिक स्थल तथा विकास इत्यादि पर सामग्री प्रकाशित की जाएगी। इस अंक के लिए आपका सहयोग अपेक्षित है। विस्तृत जानकारी के लिए गिरिराज/हिमप्रस्थ कार्यालय में संपर्क करें।

- वरिष्ठ सम्पादक

कथा

परिवर्तन

● उषा छावड़ा

परीक्षा के दिन नजदीक आ रहे थे। सभी बच्चे कमर कसकर पढ़ाई करने में जुटे हुए थे। सबके घरों में सिर्फ एक ही बात सुनाई देती थी, "अरे, समय बर्बाद मत करो। समय जब एक बार चला जाता है तो फिर हाथ नहीं आता। इसलिए समय का सदुपयोग करो और अच्छे अंकों से परीक्षा में पास हो जाओ।"

मीतू के घर पर भी सब आवाज़ें उसे सुनाई पड़ती रहती थीं। पर मीतू को यह सब सुनना बिलकुल अच्छा नहीं लगता था।

दरअसल मीतू बचपन से ही पढ़ाई में कमजोर थी। उसे चित्रकारी करना पसंद था। जब भी अपनी पुस्तक में कोई चित्र देखती, वह उसे बनाने लगती। उस समय उस पाठ में क्या लिखा है, उसे सब भूल जाता। ऐसे ही वह कम अंकों से किसी तरह पास होती रही। "पर अब ऐसा नहीं चलेगा। उसकी अध्यापिका ने उसे साफ़ कह दिया था। पांचवी कक्षा में कम अंक लाने से पास नहीं करेंगे।"

मीनू को अब बहुत डर लगने लगा था. जब भी कोई पुस्तक खोलती, थोड़ी देर के लिए उसे देखती, फिर उसे बंद कर देती। उसे लगता कि कोई उस पुस्तक में है जो उसे चिढ़ा रहा है। एक दिन वह बड़ी ही मायूसी से कक्षा में अकेली बैठी थी कि वहां से उसकी कक्षाध्यापिका निकली। उन्होंने कक्षा में झांका। मीतू को अकेले वहां बैठे देख वह चौंक गई। उसने बड़े प्यार से उसके सर पर हाथ फेरा और अकेले बैठे रहने का कारण पूछा। मीतू फफक कर रो पड़ी। कहने लगी, "मैडम जी , बचपन से मैं पूरी तरह ध्यान नहीं लगा पाती थी। मेरा ध्यान भटक जाता था और इसलिए मुझे पढ़ाई बोझ लगने लगी है। अब परीक्षा आ रही है। मैं क्या करूं?"

उसकी अध्यापिका ने कहा ," मैं तुम्हारी अन्य अध्यापिकाओं से बात करती हूं। कुछ हल तो निकालेंगे।" ऐसा बोलकर कक्षाध्यापिका वहां से चली गई।

उन्होंने अगले दिन उसकी सारी अध्यापिकाओं से बात की और सबने निर्णय लिया कि मीतू को वे सब मिलकर प्रोत्साहित करेंगी। मीतू की कक्षा के अन्य विद्यार्थियों से भी बातचीत की गई अब जब मीतू अगले दिन कक्षा में आई तो कक्षा के सभी विद्यार्थी उसे कुछ अलग से दिखाई दे रहे थे। सबका व्यवहार उसके प्रति आज बदला हुआ था। मीतू घबरा गई। उससे फिर तो कोई गलती तो नहीं हो गई है। वह सोच में पड़ गई। तभी विज्ञान की अध्यापिका कक्षा में आई और उन्होंने तितली के पंखों के बारे में बताया- फिर उन्होंने तितली के जीवन चक्र के बारे में बात की और कुछ प्रश्न पूछे। मीतू आज संभल कर बैठी थी। उसने भी धीरे से एक प्रश्न का जवाब दिया। उसकी अध्यापिका ने उसे शाबाशी दी। सारे बच्चों ने भी तालियां बजाई। अध्यापिका ने उसे श्यामपट पर एक तितली बनाने के लिए बुलाया। चित्रकारी में तो मीतू माहिर थी ही। उसने झट एक सुंदर तितली बना डाली। पूरी कक्षा उसके सुंदर चित्र को देख कर चकित रह गई, मीतू को तो कुछ समझ नहीं आ रहा था। उसे लगा जैसे कोई जादू का खेल चल रहा हो। वह मुस्कुरा उठी। कितने दिनों के बाद वह मुस्कुराई थी। उसके लिए तो तालियां कभी बजी ही नहीं थीं। हर समय तो बच्चे उसे बुद्धू कहकर चिढ़ाते थे और अध्यापिकाओं से हमेशा डांट ही खाती थी।

अगला पीरियड पीटी का था। सब बच्चे फटाफट नीचे भाग गए। वह भी धीरे धीरे विद्यालय के मैदान में पहुंच गई, आज मैडम दौड़ प्रतियोगिता करा रही थी। मीतू एक तरफ जाकर खड़ी हो गयी. तभी मैडम ने उसे भी दौड़ने के लिए प्रोत्साहित किया। उसकी हिम्मत बंधी और वह भी पंक्ति में खड़ी हो गई। जैसे ही सीटी बजी बच्चे भागे। मीतू के अंदर जाने आज कहां से शक्ति आ गई थी। वह बहुत तेज भागी। उसने तृतीय स्थान प्राप्त किया। मैडम ने उसे कहा, " घर पर अच्छे से पौष्टिक आहार खाओ और दूध पीयो। तुम्हारे अंदर अधिक शक्ति आ जाएगी। तुम प्रतिदिन योग और दौड़ने का अभ्यास करोगी तो तुम अवश्य प्रथम आ पाओगी।"

मीतू को समझ आ गयी थी कि क्यों वह धीरे-धीरे काम करती थी, क्यों उसका मन पढ़ाई में टिक नहीं पाता था। हर समय बिस्कुट और चुरमुर खाने से उसकी भूख नहीं मिटती थी और पढ़ाई से मन उचटने लगता था। इसी वजह से वह कमजोर भी हो गयी थी। मां के कई बार समझाने पर भी वह आधी रोटी खाती थी, कोई सब्जी उसे पसंद नहीं थी। थोड़ा सा दूध पीकर ही और पीने से मना कर देती उसका नतीजा वह आज भुगत रही थी।

आज जब वह घर लौटी तो उसने ठीक से भोजन किया, कोई जिद नहीं की और अपनी कक्षा की बातें भी बताई। आज मां ने कितने दिनों बाद उसकी चहक सुनी थी। दिन भर में कक्षा में जो पढ़ाई हुई थी उसे धीरे धीरे समझने की कोशिश की, पर पूरा समझ नहीं पाई।

अगले दिन वह समय से पहले उठ गई। उसे पीटी मैडम की बात याद आई। उसने थोड़ा व्यायाम किया और फिर नहा धोकर जल्दी ही तैयार होकर विद्यालय पहुंच गई। सब बच्चे भी उससे ठीक से बात कर रहे थे। आज उसने महसूस किया कि उसे कक्षा में अधिक डर भी नहीं लग रहा था। तभी उसकी सहेली नीता ने उसे बुलाया और कहा, “मीतू, चल कक्षा में पीछे की तरफ बैठते हैं, चुपके चुपके टिफिन में से कुछ खा लेंगे, मैडम जी को पता भी नहीं चलेगा।” ऐसा ये दोनों कई बार करती थीं और इसलिए उनका ध्यान कक्षा में चल रही पढ़ाई से हट जाता था। मीतू ने झट मना कर दिया। उसने कहा, “मैं तो आज दूध पीकर आई हूं। मुझे भूख नहीं है। मैं, मैडम जी जो समझा रही हैं, उसे ठीक से समझना चाहती हूं। मैं आज से पीछे नहीं बैठूंगी। तुम भी वहां मत बैठो। “वह अगली कुर्सी पर आकर बैठ गई। नीता भी उसके पास आकर बैठ गई। सामने बैठने पर अब वे दोनों अध्यापिका की बात भी ध्यान से सुन पा रही थीं। आज पढ़ाई में भी उसका मन लग रहा था। वह आज थोड़ा सा पढ़ कर आई थी। जो-जो अध्यापिकाएं कक्षा में आ रहीं थीं, वे सब मीतू में आए परिवर्तन से खुश थीं। आज पूरे दिन मीतू को किसी से डांट भी नहीं पड़ी थी।

धीरे-धीरे दिन बीतने लगे। मीतू प्रतिदिन सुबह जल्दी उठती, थोड़ा व्यायाम करती, अच्छे से नाश्ता करती और दूध पीकर विद्यालय आती। मीतू अब पूरी तरह कक्षा में ध्यान से सुनती। जो बात समझ नहीं आती, हिम्मत करके मैडम जी से पूछ लेती। जब उसे कुछ कठिनाई होती, कक्षा के कुछ होशियार बच्चे भी उसे समझा देते। सारी अध्यापिकाएं और बच्चे भी अब उससे अच्छे से बातें करते। मीतू अब खुश रहने लगी थी। परीक्षा कल से शुरू होने वाली है, पर मीतू को अब कोई चिंता नहीं है। उसने सब कुछ पहले ही पढ़ लिया है, सबने मिलकर उसकी मदद जो की है।

82, जूपिटर अपार्टमेंट, डी ब्लॉक
विकासपुरी, नई दिल्ली-110 018

संग्रह-संग्रह में अंतर

● **डॉ. दिनेश चमोला 'शैलेश'**

दो ज्ञानी साधु थे । दोनों ईश्वर में अगाध श्रद्धा रखते थे। एक तन से व एक मन से ।....... सांसारिकता से दूर वे जब भी मिलते तो धर्म, दर्शन, अध्यात्म व जीवन -सत्य पर गहन ज्ञान चर्चा करते। पहले साधु कहते-

'हमने जब संसार छोड़ दिया है.... तो फिर घुस-घुसकर संसार की विषय वासनाओं, चिंताओं...भौतिकताओं में घिरे रहना कहां तक न्यायोचित है ?'

'लेकिन महामुने! यदि संतजन संसार की उपेक्षा कर अपने में ही लीन हो जाएंगे...तो फिर संसार में ज्ञान-भक्ति का प्रचार- प्रसार कौन करेगा? ज्ञानदान के लिए कितनी भक्ति आवश्यक है उससे बढ़कर दक्षिणा भी तो आवश्यक है न स्वामी. ...अन्यथा भूखा साधु क्या भक्ति करेगा?' दूसरे साधु ने कहा।

'केवल इतना हो तो ठीक है.....लेकिन जब प्रवचन करने वाले तथाकथित ज्ञानी साधु ईश्वर के नाम पर पूरे कबीले के साथ उंची-उंची फीस लेकर....दूसरों को सदाचार की सीख देकर स्वयं अनाचार में लिप्त रहें....तो क्या वह ईश भक्ति का प्रचार है? धर्म के ऐसे ठेकेदार तो ईश्वर व भक्ति के मार्ग में सबसे गड़े अवरोधक हैं।....जो स्वयं को सर्वश्रेष्ठ कह कर दूसरे गुरुओं व पंथों को दोयम कहता हो ... ..वह भला संत कैसे हो सकता है? क्रोध, अहंकार, ईर्ष्या व द्वेष को जो लेशमात्र भी न छोड़ पा रहा हो....वह भला क्या उपदेश दे सकेगा?......जो स्वयं ही भटका हो . ...वह दूसरों को कौन से मोक्ष के मार्ग पर ले जाने का दावा कर सकेगा?' पहले साधु ने कहा।

'मित्र! इस संसार में जीने के लिए आदर्श नहीं, अभिनय आवश्यक है। मुझे तो अपने धर्म प्रचार के लिए...तथा अपने बड़े आश्रम के निर्माण के लिए पर्याप्त धन-दौलत की आवश्यकता है- अभी मुझे ज्ञान व भक्ति नहीं, बल्कि मौद्रिक शक्ति चाहिए.....ताकि मैं एक विश्व स्तरीय अत्याधुनिक सुविधाओं से युक्त एक बड़ा आश्रम बनवा सकूं......यदि इस संग्रह में आपका ज्ञान मेरे लिए कुछ सहायक बन सके तो तभी मेरा सहयोग आपको प्राप्त हो सकता है...अन्यथा..आपका मार्ग अलग. ....और मेरा मार्ग अलग।'

कहकर दूसरा साधु सत्संग-प्रवचन के लिए अपने निर्धारित कार्यक्रम के अनुसार माल बटोरने के लिए दूसरे नगर चला गया....व पहला साधु सत्य व भक्ति की खोज में एकांत अर्थात जंगल की ओर चल दिया ।

दोनों ही संग्रह की तलाश में थे....एक का धन संग्रह.....सब कुछ होते हुए भी कुछ नहीं था.... जबकि दूसरे का कुछ नहीं होते हुए भी बहुत कुछ था .....पहले का संग्रह लिप्साओं का मकड़जाल था....जबकि दूसरे का आनंद व परमार्थ से परिपूर्ण आत्मसंधान व जगत कल्याण का आनंदमय मार्ग ।

'अभिव्यक्ति', 167, गढ़ विहार, फेज-1, मोहकमपुर,
देहरादून, उत्तराखंड-248005

कथा

सड़क पर पत्थर

● शशिभूषण बडोनी

श्याम और सुमन सातवीं कक्षा में पढ़ते थे। पहाड़ में उनका गांव काफी ऊंचाई पर स्थित था। उन्हें अपने गांव से कस्बे के स्कूल के लिए तीन किलोमीटर पैदल ही जाना पड़ता था। उनके गांव से कस्बे के लिए थी तो सड़क भी, लेकिन पहाड़ी घुमावदार होने के कारण वह रास्ता दूर पड़ता था। फिर बस भी नियमित नहीं चलती थी। तब वे दोनों ही पैदल रास्ते की पगडंडी से ही स्कूल आते-जाते थे।

पैदल रास्ते के बीचोबीच कभी-कभी वे सड़क पर भी गुजरते। वहां कुछ चौड़ी जगह होने के कारण वे कुछ देर वहां पर खेलते-कुदते। कभी-कभी खेलते-खेलते वे सड़क पर पत्थर जमा कर देते और फिर जाते समय उन पत्थरों को यूं ही छोड़ देते। फिर कभी यदि दूर से कोई मोटर आती दिखती तोवे गौर से खड़े होकर देखते। वहां पत्थर जमा होने के कारण मोटर उस स्थान पर रुक जाती। फिर मोटर से कोई उतरकर पत्थर हटाता, तभी मोटर आगे बढ़ती। उन्हें यह सब देखना अच्छा लगता।



एक बार जब वे दोनों ही स्कूल जा रहे थे तो रास्ते में नवीं कक्षा में पढ़ने वाला अनिल भी उनके साथ चल दिया। सड़क पर फिर श्याम व सुमन पत्थरों से खेलने लगे। फिर कुछ देर बाद वे पत्थरों को बिना साफ किए ही चलने लगे तो अनिल को यह देखकर चुप न रहा गया। उसने उन्हें डांटकर कहा, "देखो श्याम और सुमन यह बहुत गंदी बात है। ऐसा करने से सड़क पर चलने वाले वाहनों के साथ कोई दुर्घटना भी हो सकती है। यहां पर पत्थर रखना ठीक नहीं...।" किंतु श्याम व सुमन पर अनिल की सलाह का कोई विशेष प्रभाव न पड़ा। वे मुस्कुराते हुए चले गए तो अनिल ने ही फिर सड़क से वे पत्थर दूर फेंके।

एक दिन फिर वे उसी तरह सड़क पर खेलने के बाद पत्थर छोड़कर स्कूल की ओर चल दिए। तभी दूर से उन्हें एक स्कूटर सवार आता दिखाई दिया। वे भी दूर से खड़े होकर बहुत उत्सुकता से देखने लगे। उन्हें यह देखने की उत्सुकता हो रही थी कि स्कूटर पत्थरों के समीप आकर खड़ा होगा तब पत्थर उठाकर उन्हें फेंकना पड़ेगा...।

तभी उन्होंने देखा स्कूटर पत्थरों के समीप आकर धीमी गति से हो गया। लेकिन यह क्या... उन्होंने देखा स्कूटर शायद पत्थरों से टकराया और तभी स्कूटर सवार फिसलकर कुछ दूर जा गिरा। श्याम व सुमन तो देखकर घबरा ही गए। उनकी तो सिट्टी-पिट्टी ही गुम हो गई थी। उन्हें तो यह कल्पना भी नहीं थी कि ऐसा भी हो सकता है। तभी श्याम से नहीं रहा गया। वह उधर भागकर पहुंचा। उसे देखकर सुमन भी भागा।नजदीक पहुंचने पर तो उनके होश ही उड़ गए। स्कूटर सवार और कोई नहीं श्याम के बड़े भाई राम ही थे। राम ने उन दोनों को देखा तो कराहते हुए खड़े हुए और बोले, "अरे श्याम और सुमन तुम यहां क्या कर रहे हो... आओ, इधर आओ... यह स्कूटर से जो सामान गिरा है इसको जरा उठाओ और यह देखो यह पत्थर फेंकते क्या तुमने किसी को देखा है? इतनी गंदी हरकत किस मूर्ख ने की होगी"

श्याम और सुमन सामान उठाते जा रहे थे और उनका दिल बहुत जोर से धड़क रहा था। राम भैया कह रहे थे, यह तो शुक्र है मैंने हेलमेट पहन रखा था। यदि न पहना होतो तो जानते हो, सिर में भी भयंकर चोट लग सकती थी। और सिर की चोट तुम्हें पता है कितनी खतरनाक हो सकती है।"

दोनों सुबककर रोते हुए अपनी गलती का बखान करने लगे, "भैया, वह गलती हम दोनों से ही हुई थी। वह पत्थर हम खेल-खेल में छोड़ गए थे। हमें यह पता नहीं था कि इन पत्थरों से ऐसी दुर्घटना भी हो सकती है। भैया... हमें माफ...।"

राम को तब सारी बातें समझ में आ गई थीं। वह दोनों लड़कों की भोली पर नादान बातों को समझ गए थे। उन्होंने दोनों को डांटते हुए समझाया, "देखो तुम दोनों कितनी बड़ी भूल कर रहे थे, तुम्हारी उस छोटी सी गलती से किसी के साथ भी भयंकर दुर्घटना भी हो सकती थी। तुम दोनोंयह बात अच्छी तरह समझो और भूलकर भी कभी भविष्य में ऐसी गलती मत दुहराना। सोचो यदि तुम्हारे भैया के साथ भी आज कोई बड़ी दुर्घटना हो जाती तो? शुक्र है, मेरे कोई चोट नहीं लगी, मामूली खरोंचे हैं। अच्छा खैर... अब तुम जल्दी से अपने स्कूल जाओ... मैं धीरे-धीरे नजदीक के अस्पताल से होकर चला जाऊंगा।"

"भैया, हम दोनों भविष्य में कभी ऐसी गलती नहीं करेंगे। भैया हमें माफ कर दो।" दोनों की आंखों में स्कूल की तरफ जाते हुए पश्चाताप के भाव साफ-साफ झलक रहे थे।

आदर्श विहार, ग्राम व पोस्ट शमशेरगढ़, वाया नेहरू ग्राम,
देहरादूर, उत्तर प्रदेश-248 019, मो. 94105 50100

कथा

चांद, बादल-हंस और परी रानी

● मंजु महिमा

आकाश में पूरा चांद हंस-हंसकर अपनी चादनी बिखेर रहा था। तभी बादल के 2-3 सफेद टुकड़े, जो हंस के आकार में थे, आए। एक हंस चांद से कहने लगा, 'मामा! मैं परी लोक से आया हूं। हमारी परी रानी की आंख में फांस (तिनका) लग गई थी जिससे उनकी आंखों का अंजन (काजल) बहे जा रहा है।'

दूसरे बादल-हंस ने बात को आगे बढ़ाते हुए कहा, ' चंदा मामा! उस अंजन की कालिख चांदनी पर गिर रही है, जिसके कारण वह काली पड़ती जा रही है और परी लोक में अंधकार बढ़ता जा रहा है।'

चांद ने आश्चर्य जताते हुए कहा, 'अच्छा!'

तीसरे बादल-हंस ने कहा, 'प्यारे मामा! और अंधेरा हो जाने के कारण हम सब मुसीबत में फंस गए हैं। हमारी आपसे विनती है कि कृपया आप हमारे साथ चलें।'

'परन्तु इसमें मैं तुम्हारी कैसे मदद कर सकता हूं?' चांद ने पूछा

बादल हंस ने कहा, 'आप हमारी परी रानी को हंसा दीजिए, वह हंसने लगेगी तो तो उनकी आंख से काजल बहना बंद हो जाएगा और वहां का अंधकार दूर हो जाएगा।'

तीनों बादल -हंस मचलने लगे, 'चलिए ना मामा, कृपया चलिए ना!'।

बादल-हंसों की मीठी मनुहार चंदा मामा को अच्छी लगी और वे बादल-हंसों पर सवार होकर परी रानी को हंसाने चल पड़े। उन्हें परी लोक पहुंचने में चौदह दिन लग गए, पंद्रहवे दिन जैसे ही वे वहां पहुंचे, परी लोक से अंधेरा दूर हो गया, सभी जगह खुशियां छा गईं। परी रानी को पता लगा तो वह दौड़ती हुई आई, बर्फ की बड़ी गेंद जैसे चंदा मामा को लुढ़कते देखकर, वह रोना भूल गई और खिलखिलाकर हंस पड़ी। उसकी खिलखिलाहट से कई फूल झड़े जो तारे बन गए।

चंदामामा, बादलों, परियों और सितारों के साथ खुशी-खुशी खेलने लगे, लेकिन चंदा मामा वहां हमेशा कैसे रह सकते थे? उनके न रहने से पृथ्वीलोक में अंधकार हो गया था। दूसरे दिन उन्होंने परी रानी से कहा, 'अब मुझे जाना ही होगा। मैं तो बस तुम्हें हंसाने ही आया था।' यह सुनकर सभी परियां, बादल-हंस उदास हो गए और राह रोककर खड़े हो गए। चांद ने उन्हें समझाते हुए कहा, 'वैसे मुझे भी तुम्हारे साथ बहुत आनंद मिला है, पर पृथ्वी निवासी सब मेरा इंतजार कर रहे हैं, वे लोग मुझे बहुत चाहते हैं। मेरी पूजा करते हैं। यहां तक कि कुछ लोग तो मुझे देखकर ही भोजन करते हैं अतः मेरा वहां भी जाना आवश्यक है।'

परी रानी और सबने उनसे फिर आने का वादा लिया। बादल-हंस पर सवार हो चंदा मामा फिर भूलोक की ओर चल दिए। वहां पहुंचने में उन्हें वही चौदह दिन लगे। उधर चंदा मामा की याद में परी रानी ने फिर रोना शुरू कर दिया और आंखों से अंजन बहने के कारण परी लोक में फिर से अंधकार होना शुरू हो गया था।

पंद्रह दिन बाद चंदा मामा को फिर परी लोक की ओर लौटना पड़ा। इसीलिए बच्चों ! हमको पूरा चांद देखने के लिए एक महीने का इंतजार करना होता है। चौदह दिन हम जाता हुआ चंद्रमा देखते हैं और चौदह दिन हम आता हुआ चंद्रमा देखते हैं ...है न! मजेदार बात...।

कविता

मैना बोली

मैं चुप बैठी थी, पेड़ के नीचे,
मैं ना बोली, मैना बोली ।
मैं चौंकी, देखा ऊपर,
मैना बैठी कहती पुकर-पुकर,
'देखो कैसा बरसा पानी?'
मेहनत से जो नीड़ बना था,
कैसे उस पर 'फिर गया पानी।'
नहीं रही हूं अब मैं रा नी।'
मैं बोली, क्यों हो घबराती?
मेहनत से जब जुट जाओगी,
सुन्दर नीड़ बना पाओगी,
फिर से रानी बन जाओगी ।
'हां, यह तो सच कहा तुमने,
जो डरते नहीं मेहनत से,
वे घबराते नहीं मुसीबत से ।
कहकर वह उड़ गई फुर्र से,
मैं ना बोली, मैना बोली।

8, अंजन अपार्टमेंट, भाई काका नगर,
थलतेज, अहमदाबाद, गुजरात-380 059

समीक्षा

बाल मनोविज्ञान का 'अनमोल सच'

● विजय पुरी

बहुआयामी व्यक्तित्व की मल्लिका डॉ नलिनी विभा नाज़ली को साहित्यिक जगत में कौन नहीं जानता। मृदुभाषी और माधुर्य स्वरांजलि की धनी नाज़ली हिंदी, उर्दू, अंग्रेजी भाषा में कई साहित्यिक विधाओं पर अपनी गहरी एवम् मजबूत पकड़ रखती हैं। बाल मनोविज्ञान की पृष्ठभूमि पर लिखे 'अनमोल सच' बाल काव्य संग्रह में भिन्न भिन्न रूपरंगों की उन्हत्तर कविताएं संकलित हैं। इस काव्य संग्रह की सबसे बड़ी विशेषता कवयित्री द्वारा काव्य भावों का स्वयं चित्रांकन कर बालमन पर अमिट छाप छोड़ने का एक ऐसा प्रयास किया है, जिससे बच्चे कविता लेखन और चित्रकला की बारीकियां स्वयं सिखने में सक्षम तो होंगे ही, साथ ही उनमें रचनात्मक अभिव्यक्ति विकसित होगी और भाषायी ज्ञान भी परिपक्व होगा। यहां पठन श्रवण तो है ही, चित्र दर्शन द्वारा बालमन ही नहीं अन्य आयु वर्ग के पाठक भी समग्र भाव धारा से अभिभूत हो सकते हैं।

काव्य संग्रह में संकलित कविताओं में कहीं सीख है, शिक्षा है तो कहीं निरन्तर आगे बढ़ते रहने की प्रेरणा--- 'सच की राह में चलने वाले, के रस्ते में सदा उजाले।' 'भोर की वेला' कविता में अलसुबह उठने की महत्ता का वर्णन भिन्न भिन्न प्राकृतिक उपादानों से समझाते हुए कवयित्री कहती हैं---'भोर के स्वागत गान सुनो तुम, पंछी छेडें तान सुनो तुम, खुश हो नाचे मोर रंगीला, जीवन में तुम भी मुस्काना, भोर की वेला में उठ जाना।' अतः वे हर तरह का रंग अपनी उमंग के साथ प्रेषित करने में सिद्धहस्त हैं। 'आई चिड़िया' कविता में मेहनत करने वालों की लगन इस तरह अभिव्यक्त हुई है---'तिनका तिनका लगन से चुनती, और घौंसला अपना बुनती।' वहीं ईर्ष्या के वशीभूत हो अपने अक्स को भी सहन नहीं कर पाते लोगों के लिए इस तरह कहा है---'कांच पर अपना अक्स ताकती, खिड़की पर फिर चोंच मारती।' अतः बैर विरोध के कारण व्यक्ति अपना अस्तित्व भी भूलता जाता है।

प्रकृति की मनोहारी छटा मनमोहकता तो लाती है, साथ ही जीवन एवं वातावरण में संतुलन बनाए रखती है। किन्तु वर्तमान समय में तथाकथित सामाजिक ठेकेदार उन्नति के उल्लास में, वैभव विलास के लिये प्राकृतिक संसाधनों से खिलवाड़ कर रहे हैं, उन्हें उजाड़ रहे हैं, धरती बंजर हो रही है-- 'लोभी इनसानों के डर से, कुल्हाड़ी आरों के डर से, कंपित बड़ा है पेड़।'

सच में कटते पेड़ों से धरती के सौंदर्य का भी खात्मा हो रहा है, वसुधा का सुहाग लुटता प्रतीत हो रहा है। वृक्षों में रहने वाले पक्षी पखेरू भी भयभीत हैं-- 'चट चट करते जंगल जलते, अगणित जीव थे इनमें पलते, नीड़ों में खग झुलस गए, पेड़ों की खोह में नाग सखी, आग लगी है, आग लगी है, सर्वनाश की आग सखी।' इस भूमि को, धरती मां को वरदान देने वाली कहकर उससे छेड़ छाड़ रोकने की अपील 'हमारी धरती' कविता में की है। प्रकृति वर्णन से संबंधित अन्य कविताएं भोर की वेला, कुदरत और विज्ञान, चोट न पहुंचे, करें जानवर मदद अपार, शृंखला, ओले, आई गर्मी रे, ऋतु मल्हार, षड ऋतुएं भी भाव और भाषा के आधार पर उत्तम हैं। एक नई सोच के तहत प्रकृति की रक्षा के लिए तरु उपहार में देकर धरती को पुनः शृंगारिक करने की अच्छी पहल कही जा सकती है--'आओ मिलकर पौधा रोपें, तरु उपहार में जग को सौंपे।'

उसी देश का अस्तित्व युग युगांतर तक रह सकता है, जिस देश के निवासियों को अपनी माटी से सच्चा स्नेह हो। स्वदेश प्रेम का जज़्बा यदि बालमन में ही भर दिया जाय तो राष्ट्रभक्ति कभी कम नहीं हो सकती। इस संकलन में तिरंगा, पूजन किसका, मनोभाव हैं एक, अपनी भाषा-अपना है धन, मशाल, सहयोग भावना, मातृभूमि की सेवा में, धन्य हैं वे नौजवान में देश प्रेम के सन्दर्भ समग्रता से देखे जा सकते हैं। जिन शहीद देशभक्तों ने भारत की आज़ादी हेतु अपना सर्वस्व त्याग दिया, उन्हें कवयित्री ने देवगणों, संतजनों, तपस्वियों, महामुनियों से उच्चतर माना है। देव पूजन के स्थान पर शहीद के बलिदान को श्रेष्ठ मानते हुए नमन करना हमारा दायित्व बन जाना चाहिए- 'जिनके बलिदानों के आगे सृष्टि, शीश झुकाती है, नमन में जिनके हर मानव की दृष्टि झुक-झुक जाती है। नतमस्तक, कर जोड़, नम्र हो, ध्यान उन वीरों का नाम।' यही उनकी शहीदों के प्रति विनम्र एवम् सच्ची श्रद्धांजलि है।

संगीत साधिका विभा जी ने संगीत को आधार बना कर, पांच हैं ललित कलाएं, संगीत, ढोल नामक कविताएं लिखी हैं। सारी सरगम का महत्त्व समझाते हुए वे कहती हैं--'ध्वनि नाद से बनते हैं स्वर, और स्वर से संगीत, आओ बच्चों मिलकर गायें इन्हीं सुरों से गीत।' मां की ममता को कोई नकार ही नहीं सकता, मां का स्थान सबसे ऊपर है, यह सभी जानते हैं--'कहे कहानी मां बुन बुनकर, मां की थपकी लोरी सुनकर, और अधिक गहराए नींद, मां की गोद में आए नींद।' वहीं पिता के महत्त्व को अमीर और गरीब बच्चे किस तरह आंकते हैं, उसका वर्णन बड़ा ही सार्थक एवं हालात पर चोट करने वाला है। अमीर का बच्चा हर चीज ब्रांडेड चाहता है तो दूसरा मेहनत के बलबूते आगे बढ़ना चाहता है, मंदिर का प्रसाद पाकर ही संतुष्ट हो जाता है। दोनों अपने पिता की आर्थिकी को ध्यान में रखकर अपनी मांगों की पूर्ति करवाना चाहते हैं। कलरव करते पक्षियों, उछलते कूदते पशुओं पर रची 13 कविताएं आई चिड़िया, कव्वे, कबूतर, सीपियां घोंघे शंख, मछलियां, घोड़ा भागा, बतखें, जैकी, चूहे, हाथी, बंदर, खरगोश और सारस भी अत्यंत आकर्षक हैं। अतः जलचर, थलचर और नभचर में विचरण करने वाले कई जीवों का चित्रण संग्रह को बालमन के और अधिक निकट ले जाता है।

अध्यात्म एवं दार्शनिकता के संदर्भों को त्रि महिमा, हे भुवन स्वामी, कीमती एक पल, कर्म धर्म है, हे प्रभु, सादा पहनावा कविताओं में स्पष्ट देखा जा सकता है। वहीं किसान मजदूरों का मान सम्मान करते हुए मजदूरों को निर्मिति का मसीहा, विश्व विकास का आधार तथा निरंतर कर्म में विश्वास करने वाला मानकर श्रद्धा भाव से अभिनंदन किया है तो खेतों में हरियाली तथा अन्न भंडार भरने वाले कृषक की मुस्कान इन शब्दों में की है- 'रंग लाई कृषक की मेहनत, अन्न भरा भंडारों में। महका आंगन, झूम उठा मन, मुस्काया आखिर माली।' किसान की मेहनत से ही अन्न भंडार भरते हैं और समग्र सृष्टि आनंद विभोर हो उठती है। 'दीपों का त्योहार, होली आ गई कविताएं पर्व त्योहार मनाने के उल्लास का वर्णन करती है।

अपने आंतरिक मनोभावों की आकर्षक अभिव्यक्ति और सम्मोहक संवेदना का द्विअर्थक संदेश देती यह कविता संग्रह की प्रतिनिधि कविता कही जा सकती है--'यह तो मैं ही जानती, किस तरह तृण तृण जुटाया। जूझते हर पल बिताया, क्षण हर इक अब याद आया। चार दिन रहते हुए, अब वो भी तुमको खल रहे हैं। नीड़ मेरा मत उजाड़ो, प्राण इसमें पल रहे हैं। नाश की कर कल्पना, अश्रु मेरे ढल रहे हैं।' अतः सामाजिक चुनौतियों से जूझते, संपूर्ण जीवन का सारा सार, हंसता गाता परिवार ही सुख का आधार है।

अंततः कहा जा सकता है कि इस संग्रह की सम्पूर्ण कविताएं बच्चों की मानसिकता को ध्यान में रखकर लिखी गयी हैं। आज के युग में नैतिक मूल्यों का ह्रास पारिवारिक एवम् सामाजिक जीवन में संत्रास को बढ़ावा दे रहा है। भौतिकता के युग में बच्चे नई नई तकनीकों से तदाकार हो रहे हैं, किन्तु सदाचार एवं सभ्य व्यवहार को भूलते जा रहे हैं। उनको दिशा दिखाने का काम नाज़ली जी ने इस संग्रह में बखूबी किया है। सरल भाषा में सुंदर भावों की अभिव्यक्ति बाल मनोविज्ञान के आधार पर की है। 96 पृष्ठों की इस पुस्तक का मूल्य 350 रुपये प्रथम दृष्टि में अधिक लग सकता है, किंतु जब पुस्तक हाथ में आती है तो लगता है कि यह मूल्य कुछ भी नहीं है।

प्रत्येक पृष्ठ में और प्रत्येक कविता में भावानुसार रंगीन चित्र विभा जी के अथक परिश्रम की कहानी कहते हैं। उच्च कोटि का कागज, उच्च कोटि की छपाई भी इसे उत्तमता की ओर ले जाती है। प्रत्येक आयु वर्ग के लोगों को यह पुस्तक आकर्षित करेगी, उन्हें रुचिकर लगेगी और लाभान्वित होकर वे सभ्य संस्कारी समाज निर्माण में सहायक होंगे। सच में यह संग्रह संग्रहनीय है।

पुस्तक : अनमोल सच
लेखिका : डॉ. नलिनी विभा 'नाज़मी'
प्रकाशक : अमृत प्रकाशन, शाहदरा, दिल्ली-100032
पृष्ठ : 96
मूल्य : 350 रुपये

ग्राम पदरा पोस्ट हंगलोह, तहसील पालमपुर,
जिला कांगड़ा हिमाचल प्रदेश-176059, मो 09816181836

सुनहरे भविष्य का आगाज़

● कुमार भमौता

बच्चे मन के सच्चे। सच का आईना। छल-कपट से दूर। मासूम, सहज-सरल। कबीर की 'सफेद चदरिया' और कोरे कागज की तरह। जी हां, जिस पर कोई भी मनमाफिक लिख या 'रेखाचित्र' खींच सकता है। जैसे मोबाइल में 'टेक्स्ट मैसेज' 'कंपोज' या कोई 'पिक' 'टैग' कर सकता है वैसे ही इनपर परिवार, समाज, राष्ट्र अपने संस्कार-अपने व्यवहार की इबारत लिखकर अपने अनुरूप उन्हें ढालता है। इसी में मां-गुरु-अभिभावक-दोस्तों की भूमिका अहम हो जाती है। बाल्यावस्था, किशोरावस्था, तरुणाई और युवावस्था में इन सबका अपना-अपना प्रभाव रहता है और उनकी देखरेख और परवरिश का असर ताउम्र दिखता है।

बचपन का मतलब मौज-मस्ती-बेफिक्री के दिन। गुदगुदाने-खिलखिलाने के दिन। सरल-सहज-स्वाभाविक दिन। 'रूठी दादी अम्मा' को मनाने के दिन, दादा की उंगली थामे प्रश्न-पर-प्रश्न पूछे जाने की ललक के साथ दुनिया को समझने-जानने और घूमने के दिन। 'नन्हा मुन्ना राही' 'देश का सिपाही' बनकर 'जय हिंद' कहने में गर्व महसूस करने के दिन। ...और आखिरी पड़ाव में बीते हुए दिनों में लौट आने की तमन्ना। क्यों? हर कोई इस 'क्यों' के सवाल का जवाब जानता है कि कोई लौटा नहीं पाया है, न लौटा पाएगा। वास्तव में, जिंदगी के कंप्यूटर में 'डू' का ऑप्शन ही काम करता है, 'अनडू' और 'रीडू' की व्यवस्था इस जीवन में नहीं है। 'सहज पके सो मीठा होय' कुछ ऐसी ही व्यवस्था से जुड़ा हुआ है मनुष्य जीवन। इसी मिठास में पककर परिपक्व होता आया है। कर्म और इसकी प्रधानता। संसार की हर व्यवस्था में इसे कण-कण में महसूस किया जा सकता है, समझा जा सकता है और अनुभव भी किया जा सकता है। सूर्य, चांद, तारे, ऋतुएं, दिन-रात इसके साक्षी हैं। पल-पल सृजन हो रहा है। पुराना टूट रहा, नया बन रहा है। इसी व्यवस्था की डोर से बंधी यह दुनिया चलायमान है, गतिशील है। सदियां बीत गईं, कहीं स्थिरता नहीं, ठहराव नहीं। यही सच है, यथार्थ भी। खोने को कुछ नहीं, लेकिन पाने को बहुत कुछ है। निर्भर करता है कि कौन कितना ले या दे पाएगा। इसके बीज बचपन में ही पड़ जाते हैं, पनपने लगते हैं और फूल बनकर महकने- संस्कारित होने लग जाते हैं। जीवन की बगिया बहार बनकर महकती है, सजती है।

जीवन की पाठशाला का यहीं से आगाज़ होता है। प्रथम गुरु मां! फिर परिवार के बाकी सदस्य। और शुरू होता है सीखने-सिखाने का लंबा सिलसिला। समय के साथ जिम्मेदारियों का बढ़ता बोझ। इन्हें निभाते-निभाते इनसान जीवन के आखिरी पड़ाव तक पहुंच जाता है। क्या खोया, क्या पाया पर विचार करता। हासिल और न-हासिल की दरारों को पाटने की खीझ और टीस लिए। अतीत, वर्तमान और भविष्य के दरम्यान अंतरालों में तारतम्य बिठाने की कोशिश करता, निकल पड़ता है बचपन की सुनहरी यादों और पलों को खोजने। 'सारी दौलत और शोहरत' देकर 'उन दिनों' के 'कागज की कश्ती बारिश के पानी' को पाने की उम्मीद लिए। बचपन भविष्य का आधार है। इसे मजबूत बनाना है। संस्कारों से-परंपराओं से। बहुत कुछ सिखाना है। ग्रहण करवाना है। जोड़ना है संबंधों से, समाज से, देश-विदेश की जानकारियों से, आज से, अपने आसपास के वातावरण से, चेतन-अचेतन से ताकि जीवन में आत्मीयता व संलग्नता बनी रहे, जीवन प्रवहमान रहे।

तेजी से बदलते दौर में दुनिया भी उतनी तीव्रता से सिमट रही है। दूरियां मिट रही हैं। पूरी दुनिया एक देश-एक गांव सी लगती है। तमाम जानकारियां, समाचार झटपट मिल जाते हैं। बच्चों को आज के हिसाब से पहचान के लिए उसी रूप-स्वरूप में आना समय की जरूरत बन चुकी है। इंटरनेट आज बुनियादी आवश्यकताओं में शुमार हो चुका है। कंप्यूटर और माउस का सम्मोहन बरबस खींचता है। सांप-सीढ़ी का खेल, समुद्र टापू बीते जमाने का खेल बनकर यादों में रह गए हैं। दिलोदिमाग में छाए रहने वाले 'चंदा मामा' ईद के चांद और 'नाना-नानी की कहानियां' व 'पंचतंत्र' के पशु-पक्षी छू-मंतर हो चुके हैं। आधुनिक युग में नव तकनीक ने मनोरंजन के लिए आज अनेकों 'वीडियो गेम्स', मोबाइल, गैजेट्स का साम्राज्य बाजार में फैला दिया है। इन यांत्रिक 'खिलौनों' के अधिक उपयोग से बच्चों में खिन्नता, चिड़चिड़ापन, अवसाद और अंतर्मुखी होने के भाव पनप रहे हैं। खेलकूद के आनंद, मस्ती और खुशी से बच्चे दूर हो गए हैं। उनके नैसर्गिक बहाव-फैलाव को रोक रहे हैं। ये गैजेट्स कुछ समय के लिए खुशी दे सकते हैं, लेकिन उल्लास और उत्सव का माहौल पैदा नहीं कर सकते। उनसे स्वाभाविक और भावनात्मक व्यवहार को छीनकर रिश्तों का कृत्रिम आवरण ओढ़ने पर मजबूर कर रहे हैं।

'यांत्रिक खिलौनों' से खेलते-बढ़ते बच्चे 'यांत्रिक बच्चों' में तबदील हो रहे हैं और बड़े होकर 'यांत्रिक मशीन या रोबोट'

बनकर रह जाएंगे। उनकी सौम्यता, कोमलता, उनका बाल-मन सख्त मिजाज और गुस्सैल होता जा रहा है। इनका समयबद्ध और आवश्यकतानुसार प्रयोग ज्ञानवर्धन में सहायक है। दुनिया भर की जानकारी एक क्लिक पर मिल जाएगी। परंतु 'वर्चुअल वर्ल्ड' 'आभासी दुनिया' के जाल में उलझने के अतिरिक्त भी दुनिया है। अपनी दुनिया जिसमें आत्मीयता, घनिष्ठता और विश्वनीयता अधिक है। कुदरत का सान्निध्य है। 'सोशल मीडिया' और 'ऐप्स' के 'अजनबी' और 'टाइमपास' दोस्तों की ऊहापोह से निकलकर 'फेस-टू-फेस' बातचीत और रू-ब-रू संवाद के अलग मायने हैं। अर्थ खोलते संबंध जान-पहचान के लिए यकीनन जरूरी और मददगार। बेशक आज का दौर प्रतिस्पर्धा का है। इस दौड़ और होड़ में सभी बच्चों को चाहे-अनचाहे सम्मिलित किया जा रहा है। उनकी कोमल भावनाओं से हर कोई खेल रहा है। घर-परिवार, समाज और बाजार इसमें बढ़चढ़ कर हिस्सा ले रहे हैं। उनके मनोविज्ञान को जाने बिना अभिभावक अपनी भारी भरकम आशाओं का बोझ उनपर थोपते हैं, लाद देते हैं। यह बोझ उनपर दबाव और तनाव लेकर आता है। हर बच्चा 'यूनीक' है, अपने आपमें विशिष्ट है। सबकी अलग पहचान है। इसको खोने नहीं देना है बल्कि उनके नजरिए से देखते हुए समाधान तलाशने हैं। और उन्हें आगे बढ़ने में मदद करनी है। इसलिए आत्मस्पर्धा का होना जरूरी है जिसमें गलतियों से सीखा जा सकता है, कमियों को सुधारा जा सकता है। असली विजेता वही है जो सुधार को आधार बनाकर आगे बढ़ता है। डर के आगे जीत तभी संभव है जब लक्ष्य को साधने के लिए लगन, धैर्य, गंभीरता, साहस और विश्वास हो। सकारात्मक सोच हो। इस तरह के भावों के अंकुरण दिलोदिमाग में रचे-बसे रहने चाहिए।



दिमाग से काम लेना है। 'इस रूट की सभी लाइनें व्यस्त' नहीं रखनी हैं, बल्कि हर लाइन खुली होनी चाहिए। नई बिछानी भी हैं और फैलानी भी। 'दिमाग की बत्ती' हर समय जलाए रखना है ताकि नए विचारों और नए आइडियाज को 'इस रूट' पर आसानी से आने-जाने में सुविधा हो। दिल की भी सुनें। वह तुम्हारी सुनेगा। तुम एक बार पूछोगे, वह हजार बार बताने को तत्पर रहेगा। दिल और दिमाग में तालमेल बिठाना है। सामंजस्य स्थापित करना है। समय का उपयोग करना है। भरपूर सदुपयोग। जहां से जो भी सकारात्मक मिले, मनपसंद मिले, ग्रहण करते जाना है। बालसुलभ जिज्ञासा को जगाए रखना है। सीखने की ललक को खत्म न होने देना। फिर देखना, मंजिल दूर नहीं। 'जो तुम हो' से 'जो तुम होना चाहते हो' को पा सकते हो। अपनी इच्छाओं और अभिलाषाओं के शिखर को छू सकते हो। बड़े-बुजुर्गों और गुरुजनों से आशीर्वाद लेना न भूलना। इनमें बड़ी ताकत है। दुआओं का असर प्रभावी और सटीक होता है। स्वस्थ जीवन के लिए व्यायाम, योग और ध्यान को अपने जीवन में उतार लेना।

लकीर का फकीर बनने से गुरेज करते हुए कुछ जानकर, कुछ मानकर आगे बढ़ते जाना है। जीवन सहज होता जाएगा। अपना रास्ता खुद बनाना है या फिर एक नया रास्ता खोजना है, तलाश करना है। इसके लिए 'भगीरथ प्रयास' की जरूरत होगी। गंगा की धारा फूट पड़ेगी। अमृतवर्षा होगी। जब तुम शिखर पर होंगे, गर्व महसूस होगा। खुशी मिलेगी। लेकिन ध्यान रहे साथ में तुम्हारे 'अहम्' भी खड़ा हो जाएगा। यहीं पर तुम्हारी असली परीक्षा है, परख है। तुम औरों के बारे में क्या राय रखते हो, क्या सोचते हो? आधुनिक, सभ्य और सहनशील होने का प्रमाण साथ रखना और स्वयं को खरा सोना सिद्ध करना। महापुरुषों की प्रेरणापरक जीवनियां-प्रसंग, स्वतंत्रता सेनानियों के बलिदान, वीर जवानों के हौसले जीवन को सकारात्मक बनाने में सहयोगी बनेंगे। महात्मा गांधी के 'सत्य के प्रयोग' से बच्चे सीख ले सकते हैं। युवावस्था में स्वामी विवेकानंद के 'सिंहनाद' से प्रेरणा पाकर हुंकार भर सकते हैं। यह कभी आपको कमज़ोर नहीं पड़ने देगा। यही नहीं, 'सुरक्षित भविष्य बेहतर भविष्य' के लिए पूर्व राष्ट्रपति ए.पी.जे. अब्दुल कलाम के सपने 'अग्नि' में पंख लगाकर खुले आसमान में उन्मुक्त 'उड़ान' भरते हुए 'तारे जमीं पर' ला पाने में सामर्थ्य हासिल कर पाएंगे। सब संभव है, ठीक होगा ही। अंतर की ज्वाला को धधकने देना। सुलगने देना भीतर-ही-भीतर। ज्ञान प्रस्फुटित होगा। सारी ऊर्जा को समेट लेना। स्रोत को ढूंढकर, पहचान कर पूरी क्षमता से आगे बढ़ना। संभावनाओं, अनुसंधानों और खोजों का यह संसार तुम्हारे लिए है। स्वागत को खड़ा है बांहें फैलाए; प्रेम और करुणा के फूल लिए, विश्वास और आस्था के मोती उठाए। चुन लेना अपने लिए जो सही हो, उचित लगे। दिव्य आशीषों की बारिश तुम्हारे लिए होगी ही। जीवन संवेदनशील, विवेकशील, सृजनशील और लयबद्ध होगा। तब आनंद और उल्लास का उत्सव हर पल मनेगा।

द्वारा भारद्वाज भवन, रामनगर, शिमला,
हिमाचल प्रदेश-171 004, मो. 98162 85095

प्रेस तथा पुस्तक पंजीयन अधिनियम की धारा 19 'डी' के अन्तर्गत अपेक्षित 'हिमप्रस्थ' मासिक के स्वामित्व एवं अन्य विषयों से सम्बन्धित विवरण

फार्म-4 (नियम 8 देखिये)

प्रकाशन स्थान	'हिमप्रस्थ' कार्यालय हिमाचल प्रदेश, राजकीय मुद्रणालय परिसर, शिमला-171005
प्रकाशन अवधि	मासिक
मुद्रक	डॉ. डी.के. गुप्ता नियंत्रक, मुद्रण एवं लेखन सामग्री विभाग, हिमाचल प्रदेश, शिमला-171005
नागरिकता	भारतीय
प्रधान सम्पादक	डॉ. एम. पी. सूद
नागरिकता	भारतीय
वरिष्ठ सम्पादक	यादविन्दर सिंह चौहान
नागरिकता	भारतीय
सम्पादक	वेद प्रकाश
नागरिकता	भारतीय
प्रकाशक	डॉ. एम. पी. सूद निदेशक, सूचना एवं जन सम्पर्क विभाग, हिमाचल प्रदेश, शिमला-171002
नागरिकता	भारतीय
उन व्यक्तियों के नाम और पते जो मासिक के स्थायी स्वामी हैं, जो समस्त पूंजी के एक प्रतिशत से अधिक सांझेदार/ हिस्सेदार हों	हिमाचल प्रदेश सरकार एलर्जली, शिमला-171002

मैं डॉ. एम. पी. सूद यह घोषित करता हूं कि मेरी अधिकतम जानकारी के अनुसार ऊपर दिया गया विवरण सत्य है।

(डॉ. एम. पी. सूद)
निदेशक, सूचना एवं जन सम्पर्क विभाग
हिमाचल प्रदेश

29 फरवरी, 2016

ISSN : 2454-972X

हिमप्रस्थ

वर्ष : 60 मार्च, 2016 अंक : 12

सम्पादकीय कार्यालयः हि. प्र. प्रिंटिंग प्रेस परिसर, घोड़ा चौकी, शिमला-5

वार्षिक शुल्क : 150 रुपये, एक प्रति : 15 रुपये

रचनाओं में व्यक्त विचारों से सम्पादकीय सहमति अनिवार्य नहीं

E-Mail : himprasthahp@gmail.com
Tell: 0177 2633145, 2830374

ज्ञान सागर

हमें अपनी आवाज की अहमियत का पता तब चलता है जब हमें खामोश कर दिया जाता है।

– मलाला यूसुफजई

इस अंक में

अपनी बात

हिमाचल का नाम ज़हन में आते ही प्राकृतिक सौंदर्य से सराबोर दृश्यावलियों की इंद्रधनुषी छटा अनायास ही मन-मस्तिक पर तैरने लग जाती है। प्रकृति के विविध रूपों से शृंगारित इस प्रदेश का नैसर्गिक सौंदर्य आगंतुकों को उल्लास से भर देता है। प्राकृतिक सौंदर्य के साथ-साथ यहां का सांस्कृतिक वैभव भी निराला है। देव प्रधान संस्कृति से ओतप्रोत लोगों के जनजीवन में मेले एवं त्योहारों का महत्त्वपूर्ण स्थान है। देवी-देवता और धार्मिक उत्सव यहां के सांस्कृतिक जनजीवन के सदैव अंग-संग रहे हैं। राज्य का शायद ही ऐसा कोई स्थान या क्षेत्र हो जहां किसी-न-किसी रूप में उत्सवों का आयोजन न होता हो। वर्ष के शुरू में मकर संक्रांति/लोहड़ी और वसंत पंचमी के पश्चात महाशिवरात्रि एक ऐसा पर्व है जो संपूर्ण राज्य में पूरे उत्साह एवं हर्षोल्लास और परंपरिक रीति-रिवाजों के साथ मनाया जाता है। हिमाचल प्रदेश को शिवभूमि के रूप में भी जाना जाता है और यहां के जन मानस द्वारा शिव की लोक रूप में पूजा की जाती है, शायद इसीलिए शिवरात्रि को प्रदेशभर में एक महापर्व के रूप में मनाया जाता है। इसे वसंत के आगमन और मौसम के बदलाव के प्रतीक के रूप में भी जाना जाता है। इसके आयोजन के साथ ही हिमाचल प्रदेश में साल भर चलने वाले मेलों की शुरुआत हो जाती है। देश भर में भगवान शिव और पार्वती के मिलन पर्व के रूप मनाए जाने वाले इस त्योहार को प्रदेश भर में एक अलग ही अंदाज में मनाया जाता है। पूरे भारत में दो ही ऐसे स्थान हैं जो शिव महिमा की प्राचीनतम अवधारणा से जुड़े हैं, उनमें पहला स्थान है वाराणसी और दूसरा है छोटी काशी के नाम से प्रसिद्ध मंडी। वाराणसी की तरह मंडी नगर में भी नदी घाटी अथवा घाटों की सभ्यता के साथ विकसित अनेकों शिव मंदिरों की समानता के कारण ही इसे छोटी काशी के नाम से जाना जाता है। वहां गंगा है और यहां विपाशा यानी व्यास। इसी प्राचीन परंपरा का जीत-जागता उदाहरण है अंतर्राष्ट्रीय मंडी शिवरात्रि महोत्सव जो देश भर में अपनी तरह का अलग लोकोत्सव है। जनपद के सौ से अधिक देवी देवतागण एक सप्ताह तक मंडी नगर में देव मेहमान के रूप में रहते हैं और ऐसा अनूठा देव समागम अन्यत्र शायद ही कहीं और देखने को मिले। इस बार मंडी शिवरात्रि में स्थानीय मंडियाली बोली, जनपद की समृद्ध लोक कला की परिचायक 'मंडी कलम' और देववाद्य यंत्रों की देव धुनों को प्रोत्साहन एवं लोकप्रिय बनाने की दिशा में सार्थक पहल की गई है। शिवरात्रि के निमंत्रण पत्र 'नियुंद्र' को मंडी कलम के पारंपरिक चित्रों के साथ मंडियाली बोली में अति सुंदर तरीके से प्रकाशित किया गया है। इसके इलावा अंतर्राष्ट्रीय शिवरात्रि महोत्सव में इस बार पहली बार सामुहिक देव वाद्ययंत्र ध्वनि कार्यक्रम का आयोजन किया गया, जिसमें विभिन्न देवी देवताओं के बजंत्रियों द्वारा प्रस्तुत मधुर देवधुनों से पूरा नगर देवमय हो गया। मेले एवं त्योहार हमारी समृद्ध संस्कृति, लोकाचार और परंपराओं के परिचायक हैं जिनमें हिमाचल के जीवंत स्वरूप को साक्षात देखा जा सकता है। राज्य की इस अनूठी विरासत के संरक्षण एवं संवर्द्धन में जहां एक ओर प्रदेशवासी निरंतर अपना रचनात्मक सहयोग दे रहे हैं वहीं हिमाचल सरकार भी इस दिशा में सदैव प्रयत्नशील रही है। प्रदेश सरकार द्वारा जिला, राज्य और राष्ट्रीय स्तर के मेलों एवं त्योहारों के आयोजन के लिए क्रमशः तीस हजार, एक लाख और दो लाख रुपये की अनुदान राशि प्रदान करने का प्रावधान किया गया है। यही नहीं राज्य में सांस्कृतिक आयोजनों के लिए आवश्यक अधोसंरचना मुहैया करवाने के लिए जिला मुख्यालयों में सभागार अथवा संबंधित निर्माण गतिविधियों के लिए 10 करोड़ रुपये का बजटीय प्रावधान किया गया है। प्रदेश की समृद्ध कला एवं संस्कृति पर आधारित वृत्तचित्र बनाने के इच्छुक युवा कलाकारों को समुचित आर्थिक सहायता प्रदान करने पर भी विशेष ध्यान दिया जा रहा है। प्रदेश की अनूठी देव संस्कृति में अगाध श्रद्धा रखने वाले लोगों तथा राज्य सरकार के सतत् प्रयासों का ही प्रतिफल है कि हिमाचल की अनमोल सांस्कृतिक विरासत को दुनियाभर में एक विशेष पहचान मिली है।

– संपादक

ललित निबंध

लोकोत्तर-लोकायित काव्य

● डॉ. ओम्प्रकाश सारस्वत

अरुणोदय होते ही अवसन्न विश्वमन के विजड़ित द्वार, बन्दघरों/हवेलियों के लौह-कपाट, अंधगुहामार्ग एवं चिन्तन के शतसहस्रार, देखते-ही-देखते खुलने-खिलने लग जाते हैं। सुनहरी सुबह का निर्मल-आलोक, समस्त जड़जंगम को अपने आगोश में भर लेता है। अणु-परमाणु दिप-दिपा उठता है। एक अलौकिक ज्योतिपर्व के महावतरण का मुहूर्त्त घटित हो जाता है।

स्वतःसम्भूत प्रज्ञान के आधान हमारे विश्वचेता ऋषियों ने, अरुणोदय की इस महावेला का जब प्रथम साक्षात्कार किया तब उनके हर्षातिरेक के निनाद से दिग्दिगन्त स्पंदित हो उठा। दिशाएं, प्रसन्न हो खिलखिलाने लगीं। खगकुल नवनव छन्दों में गाने लगा। मरुत, मस्ती में झूम उठा और निरभ्र आकाश की हंसी और उज्ज्वल हो उठी।

ऋषिकुल, अगणित सिद्धमन्त्रों, अनुपम स्तोत्रों, अनन्त स्तुतियों से इस अपूर्वा के स्वागत-सत्कार में जुट गया। अक्षय ऊर्जा के इस रक्तलोहित गोले को देख, संसार की धमनियों में, धनात्मक कणों की अधिकता से, खून की ललाई बढ़ गई। ऋषियों की कृतज्ञता, उनकी कल्पना, उनकी कविता एवं उनकी कला, नृत्य के अकूत गतिचारों में थिरकने लगी। आर्षमन, सहज ही पुकार उठा-देखो रे देखो, विधाता के इस अलौकिक/लोकायित सद्योजात देव काव्य को-**पश्य देवस्य काव्यम्**। अलौकिक सोने की स्याही से लिखी यह स्वर्णिम कविता, धरती की पट्टी पर **पाली-दर-पाली** बिखरी पड़ी है।

प्रत्येक उषाकाल में इसी कविता की भास्वरता विराजती है। चरैवेति, चरैवेति से प्रेरित यह ज्योति, सतत् प्रसरणशील और विकासशील है। यही देती है प्रत्येक प्राणि को अथाह उत्साह और अखंड विश्वास का संस्कार। यह सुषुप्ति की जागृति और जागृति की उपस्थिति है।

परमेश का यह काव्य, न कभी मरता है और न कभी पुराना/जीर्ण होता है। इसकी अक्षय्यता को देख कर ही तो कहा है कि यह **चितिगर्भ काव्य, 'न ममार न जीर्यति'** है। लोकोत्तर होता हुआ भी लोकायित यह काव्य, न कभी नाश को प्राप्त होता है और न कभी जीर्ण/पुराना पड़ता है। यह, विधाता की क्षण-क्षण नवीन रहने/होने वाली सृष्टि है।

प्रातः-प्रातः इस ज्योतिपर्व को देखकर, आनन्दितचित्त ऋषि आस-पड़ोस को सम्बोधित करते हुए बोला-हे पुण्यात्माओ! हे निर्मल-विरुज मनो! आओ, इसे देखो, इसे जानो, इसे जियो, इसे पहचानो! इसका स्पर्श लो! इसकी तरलता में नहाओ। इसकी गुणता पर रीझो। इसकी रीति को जानो। इसकी वर्णवर्णिता को गुनो। इसके समतोल को देखो, न तोलाभर अधिक और न माशाभर न्यून।

इस काव्य को मृत्यु का शाप नहीं लगता। समय का घुन इसमें छेद नहीं कर सकता। अजरता इसका स्वाभाविक धर्म है। नित्यता इसका प्राकृतिक गुण। एक दृष्टिमधुर सौन्दर्य, इसकी स्थायी सत्ता है। इसलिए इस उत्तमोत्तम वैश्विक महाकाव्य की उदारता का आन्नद लो। इसके विज्ञान को, स्वरों की उदात्त, अनुदात्त स्वरित शैलियों में, वाणी के परा, पश्यन्ती, वैखरी रूपों में, नव-नव छन्दों में बिखराओ। परमचैतन्य का शरीक यह, हमारी आत्माओं का सगोत्री है। यह हमारी आत्मभूता है। यही है वह दिव्य आभा/चेतना, जो आप में, हममें, सबमें ब्रह्माण्डीय ज्योति की तरह पिण्डे-पिण्डे और कण-कण में व्याप्त है। इससे निजता बढ़ाओ, इसमें अपनत्व जगाओ।

ये कल-कल निनादिनी सरिताएं, इसकी प्रेरणा से गतिशील हैं। पंछियों के कण्ठों में इसी के गीत और पंखों में इसी की उड़ान है। इसके कहने पर ही आता है सूर्य। इसी के आने पर रंभाती हैं धेनुएं। धेनुएं, जो अपने अपरप्राण बछड़ों को देखते ही स्रवित हो उठती हैं। जैसे अलौकिक गौ/वाणी, ऋषि के पास दौड़ी चली आती है। ऐसी ही किसी प्रभात वेला को देख कर, ऋषि ने कहा था कि यह-

देवानां चक्षुः सुभगा वहन्ती श्वेतं नयन्ती सुदृशीकमश्वम्।
ऊषा अदर्शि रश्मिभिर्व्यक्ता, चित्रामघा विश्वमनु प्रभूता॥

अर्थात् यह उषा, देवों की दर्शनमयी आँख, दिव्य दृष्टि को, धरती पर लाती हुई, उसे लोकायित बनाती हुई, पूर्ण दृष्टिवाले सूर्य का नेतृत्व करती हुई, सुखदात्री रश्मियों द्वारा व्यक्त होकर अपने विभिन्न-विचित्र ऐश्वर्यों से परिपूर्ण, अपने जन्म को सब में व्यक्त कर रही है। यहां पर उषा के प्रकाश; उसकी सामर्थ्य को अलौकिक शक्तिमत्ता से संयुक्त माना गया है। इसी लिए वह उषा-गोमती,

अश्वावती वीरवती है या **गोमती रूषसः सर्ववीरा ... अश्वदा, अश्वनवत् सोम सुत्वा**, अर्थात् मनुष्य के लिए कई प्रकार की पूर्णताओं, शक्ति, आन्तरिक चैतन्य और प्रसन्नता को लाती है, जो अपनी ज्योतियों/रश्मियों से भास्वर है। सब संभव बलों, शक्तियों से सम्पन्न है। मनुष्य को जीवन की शक्ति प्रदान करती है जिससे वह परम सत्ता के दिव्य आनन्द का अनुभव कर सके। यहां पर उषा के उस उज्ज्वल और व्यावहारिक रूप को अभिव्यक्त किया गया है जो व्यक्तियों को अज्ञानताओं/से मुक्त कर, उनके बन्द द्वारों को खोल, ज्ञान के मीलों विस्तृत मैदानों के प्रवेश द्वार पर पहुंचाती है।

आपने देखा होगा कि अरुणोदय पर एक हल्की, पद्म प्रभा-सी आभा, पृथ्वी की शिरा-शिरा में, उसके अन्तःकरण में संचरित हो जाती है। यही आभा व्यक्ति को, उसके सत्य, उसकी सुन्दरता, उसके शृंगार, उसकी शान्ति, उसकी कान्ति, उसकी मनोज्ञता, उसके अपनत्व, उसके मनुष्यत्व, उसकी पूर्णता का आभास कराती है। इसी आभा से बनता है व्यक्ति, द्रष्टा, स्रष्टा, प्रष्टा और मनस्वी। **कस्मै देवाय हविषा विधेम**, में इसी की प्रश्नाकुलता है। निर्णय के निबिड़-संकुल पलों में, यही है निश्चयात्मिका बुद्धि। कहीं यह, अनुभवों/ज्ञान की प्रतीतियों के आधार पर रागारूण, नीलाभ, कुमकुमवर्णी, गुलाबी, रागमय, रक्ताभ, पीताभ, नीलाभ है तो कहीं यह ज्योतिस्वरूपा अरुणोदय। ये सब नाम, रूप-रंग, हमारी कलादीर्घाओं में वर्णों, प्रतीकों, बिम्बों, प्रकाश, उत्साह/खुशी, मंगल, स्वस्तिक एवं लौकिक-अलौकिक वैभव की इबारतें बनकर वर्णित हुए हैं।

मनीषी कहते हैं कि यही पावन ज्योति, व्यक्ति के मूलाधार के घुप्प अंधेरों में प्रसुप्त-कुण्डलिनी को जगा कर स्वाधिष्ठान, मणिपूर, अनाहत, विशुद्ध, आज्ञा और सहस्रार के चक्र-दर-चक्रों, दर्रों-दर-दर्रों, घाटियों-दर-घाटियों, बीहड़ों-पर-बीहडों/, संकरे-से-संकरे गुहामार्गों, खतरों भरे प्राणघाती मौकों से ऊर्ध्वारोहण करा कर दिव्य चेतना का संस्पर्श कराती है। इस आभा का अमोघ तेज, गहन से गहनतर और व्यापक से व्यापकतर है। परम लोकों के दीपों में इसी प्राभा की लौ है। यह सामान्य मन, बुद्धि और वाक् से परे है। उपनिषद् कहती है -**यतो वाचा निर्वतन्ते अप्राप्य मनसा सह**। जहाँ इस ज्योति का स्रोत है और जो परम-आलोक का मूल है, वही सभी ताराओं, सभी सूर्यों, और आकाशगंगाओं में प्रसृत है। उस पावनप्रकाश की सिद्धि, जन्म-जन्मांतरों की साधनाओं से प्रापणीय है।

मनीषी कहते हैं कि यही पावन ज्योति, व्यक्ति के मूलाधार के घुप्प अंधेरों में प्रसुप्त- कुण्डलिनी को जगा कर स्वाधिष्ठान, मणिपूर, अनाहत, विशुद्ध, आज्ञा और सहस्रार के चक्र-दर-चक्रों, दर्रों-दर-दर्रों, घाटियों-दर-घाटियों, बीहड़ों-पर-बीहडों/, संकरे-से-संकरे गुहामार्गों, खतरों भरे प्राणघाती मौकों से ऊर्ध्वारोहण करा कर दिव्य चेतना का संस्पर्श कराती है। इस आभा का अमोघ तेज, गहन से गहनतर और व्यापक से व्यापकतर है। परम लोकों के दीपों में इसी प्राभा की लौ है।

मैं आपको बड़ी दूर ले आया परन्तु यात्राओं जिज्ञासाओं से ही दूरियां और प्राप्तियां पास आती हैं। ऋषि ने इस उषाकाल को, परम लावण्य का परम कोष, कान्ति का वृहद् केन्द्र, गहन क्रांति का पहला पल, मादकता का मूल और आप्यायित कर देने वाली सनातन मधुरिमा का पुञ्जीभूत रूप कहा है। उस अत्यन्त लुभावने वातावरण में स्नात होने को कौन समुद्यत नहीं होगा? इस समुदय से विमोहित होकर, महाद्रष्टा ने, इस काल को, ऋग्वेद के बीस सूक्तों में उछल-उछल कर विवेचित किया है। ऋषि के सारे विशेषण, इस विश्व सुन्दरी के लिए सोच-सोच कर पहनाई गई रेशमी साड़ियों जैसे हैं। उसने परमलालित्यपूर्ण इस प्रकृतियोषा को सर्वोच्च सौन्दर्य सत्ता मानकर अपनी अनुभूतियों के अनेक अन्तरपट खोले हैं। भारतीय साहित्य में नारी के संदर्भों में उभरे सारे सौन्दर्यवाची पदनाम/पर्याय इसी परम्परा में, शालीन स्तरीयता के उदाहरण हैं। वेद में जिन, पृथ्वी, उषा, वाक् आदि को देवता कहा गया है वे सब नारी गुणात्मा हैं।

नारी के श्रेष्ठत्व में देवत्व के गुणों का अभिधान है। पिता के घर की लाडली ये पति की प्रियाएं हैं। ये अपने कुल की शोभा होकर भी पति के घर का शृगार हैं। ये विवाह काल तक ब्रह्मचारिणी, उच्च शिक्षा/संस्कारसम्पन्ना तथा अपना पति चुनने में स्वतंत्र हैं। ये घर के कामों में दक्ष और रणकौशल में निपुण हैं। ऋग्वेद में पत्नी, पति के प्रति प्रेम रखने वाली, एकनिष्ठ तथा हर काम में, सहभागिनी कही गई है। असती, विपथगामिनी और पति से द्वेष रखने वाली नारी असंस्कारी बताई गई है। ऐसे ही पति भी, अपनी पत्नी के प्रति एकनिष्ठ, सदाचारी और सच्चरित्रवान् होना वांछित है।

वैदिक साहित्य में, उषा के बहाने, नारी की प्रकृति को ही उपन्यस्त किया गया है। उषा की तरह लोक की नारी की विभिन्न भूमिकाएं हैं। वह कहीं सूर्य की प्रेयसी है तो कहीं चमकीले कपड़े पहने, एक नर्तकी। सूर्य, युवक की तरह उसका पीछा करता है। कहीं यह रात्रि की छोटी बहन है तो कहीं स्वर्ग की दुहिता। ऋषि द्वारा प्रयुक्त अधिकाधिक रिश्तों के नाम, परवर्त्ती भारतीय रचनाओं एवं हमारे समाज के कौटुम्बिक संबन्धों में सादर गृहीत हैं। इससे भारतीय समाज-परिवारों में, रिश्तों के नामकरण में एकरूपता आई है। इस दृष्टि से भारत के चिन्तकों की विश्व परिवार को यह अन्यतम देन है। इससे, एक सुदृढ़ सामाजिक व्यवस्था को मानक आधार मिला है।

ऋषि ने पुरुष को अर्द्धनारीश्वर और नारी को उसकी अर्द्धांगिनी कह कर, व्यक्ति-मनोविज्ञान, समाज-विज्ञान, शरीर-विज्ञान, मानवीय-संरचना विज्ञान के एक बहुत बड़े रहस्य को उजागर किया है। शरीर विज्ञानी जानते हैं कि हर पुरुष में नारी के, और हर नारी में पुरुष के, आधे-आधे तत्व/गुण रहते हैं। नारी से पुरुष बनने और पुरुष से नारी बनने की सच्चाई को शल्यचिकित्सा विज्ञान ने, अब 'टेबल पर ऑपरेट कर,' यथार्थतः दिखा दिया है। हमारे यहां दर्शन में शिव-शक्ति के योग/संयुक्ति की महा-परिकल्पना, इसी तथ्य को समक्ष रख कर की गई है। कहते भी हैं 'जहां शिव वहां शक्ति' और 'जहां शक्ति वहां शिव'। शिव-शक्ति अथवा पुरुष-स्त्री, दोनों का सत्य ही मिल कर सृष्टि का सम्पूर्ण सत्य बनता है। विश्व में जहां कहीं भी कोमलता, करूणा, दया, प्रेम, माया, ममता, सौन्दर्य, स्नेह और आकर्षण है वहां नारी है और जहां कठोरता, पौरुष, साहस, ऊर्जा, ओज और दृढ़ता है वहाँ पुरुष है। सृष्टि रहस्य का न्याय, दोनों की सहभागिता, समवर्तिता और समरसता पर आधारित है।

रक्षम के चारों ओर भीमकाय, शत-सहस्रभुज महारक्षकों को देख कर मैं निश्चय नहीं कर पा रहा था कि ये उन्नतकंधर, उदग्र स्कंध महाशैल, किस दीर्घतपा, महातपा, उग्रतपा, परमतपा महर्षि की यज्ञाहुतियों से निर्मित संसार है। सत्य, न्याय, परोपकार और तप के प्रचार के लिए ऋषि के अन्यत्र स्थानान्तरित हो जाने पर गर्वाभिभूत, स्वाभिमानसंयुत, दर्पप्रेरित, नैतिक हौंसलों और अडिग साहस के जीवन्तरूप ये देवदारू अपनी संततियों समेत दृढ़चरण हो व्यवस्थित हैं। मुझे लग रहा है कि अपनी कर्मभूमि/ तपोभूमि को तजते समय, महोग्र तपःपूत पिता के इन पुत्रों ने (पितृऋण से मुक्ति हेतु) प्रतिज्ञा कर कहा होगा कि हे पिता! जाओ, हम सदा सावधान, जाग्रत, अनिमेष आपकी यशस्काय कीर्ति को; आपकी पवित्र भारती के आकाश को, आपकी पुण्याहुतियों की पावन यज्ञभूमि और कल्याण/कामनाओं की इस उत्स पुण्यप्रसू को सदा-सर्वदा अक्षुण्ण और संरक्षित रखेंगें। जब तक आप नहीं लौटते, हम तब तक, अपनी इस जन्मभू को परिवारित किए रहेंगे। निर्मलमन की गहराईयों से निकले वचन, अपनी सम्पूर्ण संभावनाओं में प्रतिफलित होते हैं। महामना उस ऋषि के वश्यवाक् पुत्रों की ब्राह्मीवाणी अपनी सम्पूर्ण सत्यता में यथार्थ सिद्ध हुई।

किन्नौर के रक्षम की, इस विरज-नीरूज उषा की प्रकृति, हर किसी को रंजित करने में सक्षम है। इसने अपने मोहपाश में, सब को बांधा है। जितने जलचर, भूचर और खेचर हैं वे सब, अपार इस स्वर्गीय आभा पर विमुग्ध हैं। यहां रक्षम की करूणा, वसपा की पावन धारा में मिल कर, चट्टानों के महाकान्तार के स्रोतों में विगलित हो, बुद्ध की महाकरुणा का महोत्सव रच रही है। यहां का पत्ता-पत्ता, पादप-पादप, तृण-वीरूध, लता-वल्लरियां सब, इस धरती के कण-कण का गान गा रहे हैं। एक दूसरे के सुर में सुर मिलाते हुए, ज्यों 'हां में हामी' भर रहे हैं। मैं इस सब से अभिभूत हूं। इसके आत्मीय सत्कार से विनत हूं। मैं अन्तरात्मना मुदित हूं। किन्तु ऊंची-ऊंची चट्टानें, असंगठित नुकीले प्रस्तर, कराल काल की तरह मुंह बाए, अभिशापों की तरह खड़े हैं। मुझे उनसे भय लग रहा है। मैं मूलतः एक भयापन्न प्राणी हूं। मैं मनुष्येतर हरकतों से डरता हूं। इतना ही नहीं, मैं तो मानवीय दुर्बलताओं, अनीति, दुष्टता, धृष्टता, ईर्ष्या से भी भय खाता हूं। निर्लज्जता, अमर्यादा, अनैतिकता मुझे विकंपित कर देते हैं। प्रभु, साहस दें ताकि मैं, नैतिकताओं, सन्मूल्यों पर अडिग रहूं।

22 मई 2015 की विमल-अमल प्रातः है। भगवान् विष्णु अपने प्रभुविष्णु महाकाव्य के प्रथम अध्याय का अवतार कर रहे हैं। वे अग्रिम स्वर्ण अध्यायों की रूपरेखा बांध रहे हैं। पंछियों के असंख्य स्वरों में प्रकृति अपनी हजार जिह्वाओं से अहोभाग्यता का समुच्चार कर रही है। बड़ा उल्लसित विहान है। सदानीरा वसपा में ऋषिकुल की रूहें, नहा धोकर तर्पण-अर्चन-वन्दन कर पुण्यात्मा प्रवाहिनी के तट पर, रचनाओं का उत्सर्जन कर रही हैं। वसपा, ऋषियों की शुभाशंसाओं/प्रशंसाओं से संस्कारित है। आज सद्यःस्नाता उषा भी, युवती, प्रौढ़ा, नवोढ़ा, योषिता, कामिनी, कान्ता, भामिनी, भामा, कमनीया, कमलानना, पद्मा, पद्मजा, शुभ्रा, कल्याणी, पद्मवर्णा, भास्वरा सी समुज्ज्वला दिखाई दे रही है। एक स्वर्गिक आनन्द, वसपा के अल्हड़ सौन्दर्य से अभिभूत अठखेलियाँ कर रहा है। मेरा मन, उस समय आन्तरिक विशदता से लघु-लघु, गुरू-गुरू, मोहित-विमोहित हो रहा था। मैं अचंभित, हर्षित, गर्वित था।

मैंने अपने फोन-कैमरे से उस दिव्य आभा काय उस मनोरम दृश्य का, उन गिरि शिखरों पर उतरती सोनप्रभा के कई चित्र कैद कर लिए। मैं तत्काल अपने साथ आए, आत्मीयों को जगाने का आदेश-गर्भित अनुरोध करने लगा। बेटा, मेरी आवाज सुनकर, उसी समय अपना कैमरा लेकर बाहर आ गया। मैंने जाना, कि मन से पुकारो तो आत्मा सुनती है। पुत्र, अपनी आत्मा का कायान्तरण है। कहा भी तो है-**आत्मा वै जायते पुत्रः**।

वातावरण बहुत ही शान्त और उत्सवनुमा था। बेटे ने चारों ओर के शिखरों पर उतरती स्वर्णाभा के अनेक मनोरम रूप अंकित किए। मैं, उसकी प्रसन्नता और सक्रियता देख कर मुग्ध था। हर क्लिक पर उसके मुख से 'वाह' निकल रही थी। गुलाबी ठंडक लिए उस प्रात में भी, स्वर्गिक आतप, जब तक गेस्ट हाऊस के आंगन तक नहीं उतर आई, बेटे ने उस दिव्य आतपस्नात समय की एलबम तैयार कर ली। तभी उसकी माता और माता की सहेली ने भी हमें, ज्वाइन कर लिया और अपनी नारी-सुलभ प्रकृति के अनुसार, 'हमें हिल्लोलित करके क्यों नहीं जगाया ' के उलाहने के साथ, यथारुचि कुछ चित्र संग्रहित किए। वैसे, जागने को बहाना, और जगाने को इशारा भर पर्याप्त होता है, परन्तु........

......। देह के अन्दर स्थित प्रज्ञाकूट की तरह अनेक चक्रों से परिवारित, प्रकृति के विशुद्ध चक्र-सा प्रतीत होती पर्वतकूट माला, हजारों कल्पनाओं और लाखों संभाव्यताओं को उजागर कर रही थी। रक्षम की लोकोत्तर छटा, तन-मन को सहलाकर आत्मा तक को नहला रही थी।

कभी प्राग्ज्योतिषपुर गए सिद्ध गुरुगोरखनाथ ने वहां कामाक्षी मंदिर के यहां, पर्वतों से उतरे अनघ प्रकाशप्रवाह को देखा तो भूमा के उस माहात्म्य का भेद, अनेक रूपों में दृष्टिपथ में अक्षरांकित हो गया। देहलोक के प्रज्ञाचक्रों का साक्षात्कार कर चुकी उनकी प्रतिभा की आंख ने, कामरूप की सिद्ध-प्रसिद्ध 'कामाख्या पीठ' को आध्यात्मिक चक्रों के समान्तर पाया। सिद्धप्रवर की पश्यन्ती मेघा प्रकटी और वे बोल उठे-

आधारं प्रथमं चक्रं, स्वाधिष्ठानं द्वितीयकम्।
योनिस्थानं द्वयोर्मधये पंकजं च चतुर्दलम्॥
तन्मधये प्रोच्यते योनिः, कामाख्या सिद्ध वन्दिता।

अर्थात् प्रथम चक्र जो मूलाधार है और दूसरा जो स्वाधिष्ठान, इन दोनों के मध्य है योनिस्थान और वही काम (रूप) पीठ है। मूलाधार -संज्ञक, गुदा के समीपस्थ चतुर्दल कमल-के मध्य त्रिकोणाकृति योनि है- यही कामाख्या पीठ कहलाती है। मुझे लगा कि सब ओर से रक्षित यह रक्षम भी इस देवघरा की विरजा योनिस्थली है जो सहस्रों जीवात्माओं की जननी है।

सभी सातों चक्रों के अपने-अपने स्वरूप हैं जो कमल दलों की तरह विवेचित हैं। ये अपनी-अपनी विशिष्टताओं के द्योतक हैं। कुण्डलिनी जिस-जिस पद्म चक्र के दलों का विकचन करती हैं वे दल, साधक योगी को अपनी-अपनी सामर्थ्यों से भर देते हैं। आत्मद्रष्टा योगियों ने, मूलाधार के चार, स्वाधिष्ठान के-छह, मणिपूर के दस, अनाहत के बारह, विशुद्ध के सोलह, आज्ञा के दो, और सहस्रार के हजार दल/पत्र कहे हैं। इन पत्रों के सम्पर्क में आने पर बुद्धि तत्तत् कार्यों की अचूक क्षमता/दक्षता पा जाती है। कुण्डलिनी के, प्रथम चक्र मूलाधार से सम्पर्क हो जाने पर, विद्या-आरोग्य की प्राप्ति, दूसरे चक्र के सम्पर्क से काव्य-प्राप्ति, तीसरे से विविधविद्या-सामर्थ्य, चौथे से ईशत्व, पांचवें से वक्तृता, छठे; आज्ञा से वाक्सिद्धि, और अन्तिम सातवें चक्र के सम्पर्क से मुक्ति प्राप्ति कही गई है। शरीर के पंच तत्वों से भी क्रमशः मूलाधार का पृथ्वी तत्व से, स्वाधिष्ठान का जल से, मणिपूर का तेज से, अनाहत का वायु से, विशुद्ध का आकाश से, आज्ञा का महत् से और सहस्रार का तत्त्वातीत निःसीम से योग माना गया है। इन तत्वों के क्रमशः रक्त, सिंदूरी, नील, अरुण, धूम्र, श्वेत और वर्णातीत रंग कहे गए हैं। मनीषी सातों चक्रों का सम्बन्ध उत्तरोत्तर, भूः, भुवः, स्वः, महः, जनः, तपः, और सत्य लोकों से भी जोड़ते हैं। इन सभी चक्रों का विकास हो जाने पर, व्यक्ति सतत् अनेक लोकों के सम्पर्क में आने की योग्यता हासिल कर लेता है। आत्मविज्ञान इन चक्रों के स्थान के बारे में पहले चक्र मूलाधार की स्थिति गुदा व योनि, दूसरे की पेडू, तीसरे की नाभि, चौथे की हृदय, पांचवें की कंठ, छठे की भ्रूमध्य, और सातवें सहस्रार की संस्थिति, मस्तिष्क में कहता हैं। कुछ साधक अन्नादि पंच कोशों और त्रि नाड़ियों सषुम्नादि से भी कुण्डलिनी/जागरण ऊर्ध्वारोहण को अनुसूत्रित करते हैं।

मैं सोच रहा था कि हमारी यात्रा भी कई संकरे मार्गों, बीहड़दर्रों, भयावह मोड़ों से होती हुई, मूलाधार, शिमला से प्रारंभ हो कर, रामपुर के स्वाधिष्ठान से चलकर, वांगतू के मणिपूर से चढ़कर सांगला की अनाहत वैली से गुजरती हुई रक्षम के विशुद्ध द्वार पर पहुंची है। अगले दिन छितकुल के आज्ञा चक्र को छू कर प्रदेश के सीमोत्तर देश में मनसा प्रवेश हेतु तत्पर है। सबकी आत्मा एक अनिर्वचनीय आनन्द का अनुभव कर रही थी।

रक्षम से हिमाचल के अन्तिम सीमावर्ती गांव छितकुल की दूरी, एक घंटे भर की है। वहां जाने के लिए हम सभी बहुत उत्साहित थे। होते भी क्यों न? प्रदेश/देश के आखिर एक सीमांत गांव को देखने का दुर्लभ अवसर मिल रहा था। रक्षम रेस्ट हाऊस के चौकीदार को धन्यवाद कहकर हम लक्ष्य की ओर अग्रसर हुए। गहरी खड्डों, भयंकरी खाईयों के साये मन-मस्तिष्क पर हावी थे। देखते ही देखते संकरे मार्ग को प्रशंसनीय धैर्य, सावधानी और तत्परता से स्ववश करते हुए उत्सव ने सूचना दी कि छितकुल कुल बीस मिनट का सफर है। तभी हम भूर्जवृक्षों के एक बड़े प्राकृतिक उपवन में प्रवेश कर गए। हमने तत्काल गाड़ी रोक दी। असंख्य वर्षों से असंख्य रूपों में जिनकी महिमा गाई जाती रही है, हमने उन परम पवित्र वृक्षों के दर्शन करके स्वयं को धन्य माना। मैंने उत्सव को इन वृक्षों की महत्ता, गुणवत्ता, श्रेष्ठता तथा उपयोगिता के बारे में बताया। मैंने कहा बेटे! हमारे लिखित उस आदि आर्ष ज्ञान के संरक्षक ये भूर्ज वृक्ष ही हैं। इनके ही पत्रों और छाल पर हमारे प्रथम आचार्यों ने वेद-वेदांग, उपनिषद्, आरण्यक एवं ब्राह्मणग्रंथ आरेखित किए। तरह-तरह के छोटे-बड़े वृक्षों की एक साथ अवस्थिति को देखकर, मन, सहअस्तित्व/सहवर्तित्व के बोध से उल्लसित हो उठा। मैंने उस उत्सर्गपरायण महान् वृक्ष परम्परा को मन-ही-मन शत-सहस्रशः प्रणाम किए। जिस वृक्ष-संतति ने, सरस्वती की रक्षा, अपनी खाल-छाल देकर की वह वृक्षकुलसरणि सर्वथा/सर्वदा नमस्य है। धन्य है यह महा देश, जहाँ वृक्ष तक अपनी जननी, जन्मभूमि तथा संस्कृति की सुरक्षा हेतु दधीचि जैसे ऋषियों तथा उत्सर्ग-कामी वीरों की तरह, सदा तन-प्राण तक न्योछावर करने को तत्पर रहते हैं।

जी-6, नॉल्जवुड कॉलोनी, शिमला, हिमाचल प्रदेश-171002, मो. 094180-54054

आलेख

अमरकांत : मध्यवर्ग की विडंबनाओं का कथाकार

● डॉ. हेमराज कौशिक

अमरकान्त की कथा सृजन यात्रा का समारंभ स्वातंत्र्योत्तर काल के प्रथम दशक में उस समय से होता है जब कहानी की संवेदना भूमि में एक नया उन्मेष होता है जिसे नयी कविता की भांति बाद स्वातंत्र्योत्तर काल के प्रथम दशक में नयी कहानी की संज्ञा दी गई। अमरकान्त की कहानी 'डिप्टी कलक्टरी' पुरस्कृत होकर कहानी विशेषांक में प्रकाशित हुई थी। यह कहानी विशेषांक 1955 के उत्तरार्ध में प्रकाशित हुई थी। नयी कहानियों के साथ यह कहानी भी चर्चा के केन्द्र में रही। इससे पूर्व उनकी कहानी 'दोपहर का भोजन' दो तीन वर्ष पूर्व प्रकाशित हो गई थी। यह वह दौर था जब उनके समकालीन कथाकार धर्मवीर भारती, फणीश्वर नाथ रेणु राजेन्द्र यादव, निर्मल वर्मा और कमलेश्वर कहानियों के माध्यम से परम्परा में मोड़ लाकर कहानी की संवेदना भूमि और भाषा-शैली में नवीनता से पूर्ववर्ती रचनाकार जैनेन्द्र अज्ञेय यशपाल से पार्थक्य बनाने का दावा कर रहे थे। नयी कहानी के दौर के इन कहानीकारों ने नर-नारी संबंधों का चित्रण बिम्बों, प्रतीकों और कलात्मक भाषा शैली से युक्त कहानियों में किया। ऐसे समय में अमरकान्त ने अपने समकालीन कहानीकारों में पृथक संवेदना की कहानियाँ लिखी। उन्होंने प्रमुख रूप में निम्न मध्यवर्गीय और मध्यवर्गीय समाज का चित्रण सहज शैली में किया। उन्होंने अपनी कहानियों में अपने समाज की विसंगतियों, विद्रूपता और अन्तर्विरोध को जिस सादगी और प्राणवता के साथ प्रस्तुत किया उससे उनकी कहानियां नयी कहानियों बिम्बों और प्रतीकों की दुरुहता से अलग खड़ी नजर आती हैं। परन्तु इस सुदीर्घ अंतराल के बाद अमरकान्त की कहानियों का विश्लेषण करने से ज्ञात होता है कि वे नयी कहानी, साठोत्तर कहानी, अकहानी, सचेतन कहानी, समानान्तर कहानी जैसे आन्दोलनों की जययात्राओं से पृथक अपनी विशिष्ट पहचान बनाए हुए हैं। अपनी पीढ़ी ही नहीं अपितु परवर्ती पीढ़ी के अन्य कथाकारों की भांति वे ज्यादा चर्चित नहीं रहे। डॉ. नामवरसिंह नयी कहानी के प्रमुख आलोचक रहे हैं उन्होंने यद्यपि अमरकान्त की कहानियों की विशिष्टताओं का उल्लेख अपने निबंधों में किया है, परन्तु नयी कहानी के चर्चित कहानीकारों की भांति वे उनके प्रिय कहानीकार कभी नहीं रहे।

अमरकान्त की कहानी यात्रा का अवलोकन करें तो ज्ञात होता है कि वे अपने समवयस्क कथाकरों की अपेक्षा कथा सृजन की ओर उनके बाद आए। उनकी पहली कहानी सन् 1949 में 'बाबू' शीर्षक से आगरा से निकलने वाली पत्रिका में प्रकाशित हुई थी। अमरकान्त ने प्रयाग विश्वविद्यालय से बी.ए. करने के बाद हिन्दी और उसके साहित्य के लिए काम करने का निश्चय किया। उन्हें उस समय सरकारी नौकरी सरलता से मिल सकती थी परन्तु उन्होंने पत्रकारिता को अपना व्यवसाय बनाया और आगरा के दैनिक पत्र 'सैनिक' के संपादकीय विभाग में कार्य करना प्रारंभ किया। उन्होंने अपने पिता और चाचा की आकांक्षा के विपरीत मन ही मन लेखक बनने का दृढ़ संकल्प किया। ऐसे समय में 'सैनिक' के विशेषांक में उनकी पहली कहानी 'बाबू' प्रकाशित हुई थी। परन्तु उस अंक को उनके घर से कोई ले गया इसलिए कहानी का रिकार्ड ही नष्ट हो गया। बाद में वे प्रगतिशील लेखक संघ के संपर्क में आए और उनकी बैठकों में हिस्सा लेने लगे। रामविलास शर्मा, राजेन्द्र यादव, रावी राजेन्द्र रघुवंशी तथा अन्य प्रभृति लेखक उन बैठकों में उपस्थिति होते थे। उस समय वे बैठक के अंत में गजल गाया करते थे। इस दौरान अमरकान्त ने 'इन्टरव्यू' शीर्षक कहानी लिखी जिसे उन्होंने प्रगतिशील लेखक संघ की एक बैठक में सुनाया था। यह प्रथम अवसर था जब उनकी कहानी की किन्हीं साहित्यकारों ने प्रशंसा की थी। इस कहानी से उनकी रचनात्मक यात्रा का प्रारंभ हुआ। उसके बाद उन्होंने 'बाबा' (जो बाद में सवा रुपये शीर्षक से प्रकाशित हुई) 'गले की जंजीर' 'कम्युनिस्ट', 'नौकर' 'सुहागिन' आदि कहानियों का सृजन किया जिन्हें उन्होंने प्रगतिशील लेखक संघ की बैठकों में समय समय पर सुनाकर प्रशंसा प्राप्त की। इसके पश्चात् उन्होंने इलाहबाद के अमृत पत्रिका शीर्षक पत्र के संपादकीय विभाग में कार्य किया। प्रारम्भ में शरतचंद्र से प्रभावित रहे और इंटरमीडियट कक्षा में प्रवेश लेने के अनंतर उन्होंने शरतचंद्र के स्टाइल पर लम्बी कहानियाँ लिखी। अपने आत्मकथ्य में वे शरतचंद्र के योगदान का उल्लेख करते हैं। शरतचंद्र की रचनाओं ने गहरी रोमांटिक संवेदनाओं के द्वारा भारत में एक अद्भुत कार्य किया। शरतचंद्र ने युवक-युवतियों को संवेदना के स्तर पर अपने व्यक्तित्व का एहसास कराया, नारी को अभूतपूर्ण गरिमा प्रदान की और उनको अनंत सपने प्रदान किए। शरतचंद्र का रोमांटिसिज्म व्यक्तित्ववाद, कोरी काल्पनिकता, कलाबाजी और छद्म आधुनिकता पर आधारित नहीं है। उनकी

रचनाएं अपने समय के प्रगतिशील यथार्थ की गहरी समझ पर खड़ी होती है और परिवर्तन की कामना को तीव्रता से व्यक्त करती हैं। (अमरकान्त : एक मूल्यांकन सं. रविन्द्र कालिया, पृ.24) परन्तु आगरा में लेखन की शुरुआत से कुछ पूर्व ही शरतचंद्र के रोमांटिसिज्म से वे मानसिक रूप में मुक्त होने का प्रयत्न करने लगे। देश के राजनीतिक परिदृश्य में घटित घटनाओं और प्रक्रियाओं के कारण शरतचंद्र के प्रभावों से वे मुक्त हो गए। इसके पश्चात् वे प्रेमचन्द की ऐतिहासिक दृष्टि सम्पन्नता एवं प्रगतिशीलता से अधिक आकर्षित हुए। इस संदर्भ में वे आत्मकथ्य में कहते हैं 'प्रेमचन्द ने साहित्य के क्षेत्र को देश के निम्नतम समाज तक पहुंचा दिया। साहित्य में सदियों से शोषित और अन्याय से पीड़ित लोगों का चित्रण एक सर्वथा नयी घटना थी। यह एक प्रगतिशील विद्रोह की, अन्याय, शोषण और निर्धनता के विरुद्ध संघर्ष की, सामाजिक एवं आर्थिक न्याय के लिए सतत् प्रयास की और पिछड़ेपन, पुनरुत्थानवादिता, उच्चता, अस्पष्टता, ग्रामीणता एवं प्रतिक्रियावादिता के विरुद्ध जनवादी कला मूल्यों की परम्परा थी।' (अमरकान्त : एक मूल्यांकन सं. रवीन्द्र कालिया, पृ.32)

अमरकान्त अपनी प्रारंभिक कहानी यात्रा से ही नितांत चर्चित हो गए। 'डिप्टी कलक्टरी', 'दोपहर का भोजन', 'जिन्दगी और जोंक' आदि कहानियां सृजन काल से लेकर अब तक चर्चा के केन्द्र में रही हैं। ऐसा बहुत कम होता है कि कोई रचनाकार अपनी प्रारंभिक कहानियों से ही पाठकों का ध्यान आकर्षित कर दे। अमरकान्त ऐसे ही विरग कथाकार हैं। अमरकान्त की बहुचर्चित कहानी 'डिप्टी कलक्टरी' में शकलदीप बाबू, उनकी पत्नी जमुना और बेटा नारायण प्रमुख चरित्र है। कहानी का तंतु विन्यास शकलदीप बाबू के इर्दगिर्द बुना गया है। वह मध्यवर्गीय व्यक्तित्व है और स्थानीय अदालत में मामूली मुख्तार है। इस व्यवसाय से प्राप्त आय से परिवार का भरण पोषण करना दुष्कर होता है। वार्धक्य की ओर बढ़ती आयु में यह व्यवसाय चलाना उसे और भी कठिन हो जाता है। उनका बेटा नारायण डिप्टी कलक्टरी के पद के लिए प्रतियोगिता परीक्षा में बैठता है। परन्तु असफल होता है। वह फिर परीक्षा में बैठना चाहता है परन्तु समस्या फीस भेजने की है। जमना पति की विवशता को समझती है परन्तु बेटे के प्रति वात्सल्य के कारण पति से बेटे की फीस देने का आग्रह करती है। पति झुंझलाहट से कहता है 'तो मैं क्या करूँ। मैं तो हैरान परेशान हो गया हूं।' इन पक्तियों में एक निर्धन अभावग्रस्त परिवार की बेबसी प्रकट होती है। वह जैसे कैसे बेटे की फीस भरता है और बेटा परीक्षा में उतीर्ण होता है। उसका साक्षात्कार भी होता है। उसका सोलहवां स्थान आता है परन्तु चयन सूची दस तक सीमित रह जाती है। कहानीकार अमरकान्त ने नारायण के इन्ट्रव्यू से लेकर चयन सूची में सम्मिलित होने तक की मनःस्थिति का मनोवैज्ञानिक चित्रण किया है। एक अभावग्रस्त परिवार की महत्वकांक्षाओं और भविष्य के सुखद सपनों की कल्पना है। वे स्वप्न उस समय ध्वस्त हो जाते हैं जब बेटे का नाम चयन सूची से बाहर हो जाता है। इस बिन्दु पर कहानी का परिवेश निराशा के अंधकार में डूब जाता है। यहां कहानी एक नया मोड़ लेती है। सारी महत्त्वाकांक्षाओं और भवितव्य के स्वप्नों को त्यागकर यह चिंता होती है कि बेटा कहीं कुछ न कर बैठे। यह कहानी स्वतंत्र भारत के प्रथम अंक में रचित कहानी है। औपनिवेशक काल में अवसरों का अभाव था, रोजगार के साधन सीमित थे, यह आशा थी कि आजादी के बाद युवा पीढ़ी को योग्यता के अधार पर अवसर मिलेगा। परन्तु युवा पीढ़ी का यह स्वप्न सीमित अवसरों के कारण ध्वस्त होता है तथा नारायण जैसे अनेक शिक्षित युवक दिन-रात घोर परिश्रम करने के बाद भी अपने लक्ष्य तक नहीं पहुँच पाते हैं। शकलदीप और जमना जैसे माँ-बाप सीमित साधनों के होते हुए भी ऋण के बोझ तले दबकर भी बच्चों के कैरियर बनाने के लिए हर संभव कोशिश करते हैं। शकलदीप देवताओं का आशीर्वाद भी लेता है। बेटे के लिए पढ़ाई के लिए अनुकूल परिवेश भी बनाते हैं और अंधश्रद्धाओं का आश्रय भी लेते हैं। परन्तु सफल होने पर भी सीमित चयन सूची के कारण डिप्टी कलक्टरी नहीं बन पाता। बेटे के घोर नैराश्य को देखकर माँ-बाप की चिंता कैरियर से हटकर बेटे की जीवन रक्षा की ओर उन्मुख हो जाती है। यह कहानी मध्यवर्गीय परिवार की आकांक्षाओं और स्वप्नों के ध्वस्त होने की त्रासदी को नितांत तटस्थता से व्यंजित करती है।

अमरकान्त अपनी प्रारंभिक कहानी यात्रा से ही नितांत चर्चित हो गए। 'डिप्टी कलक्टरी', 'दोपहर का भोजन', 'जिन्दगी और जोंक' आदि कहानियाँ सृजन काल से लेकर अब तक चर्चा के केन्द्र में रही है ऐसा बहुत कम होता है कि कोई रचनाकार अपनी प्रारंभिक कहानियों से ही पाठकों का ध्यान आकर्षित कर दे। अमरकान्त ऐसे ही विरग कथाकार हैं।

'दोपहर का भोजन' भी मध्यवर्गीय परिवार की निर्धनता और अभावग्रस्तता को व्यंजित करने वाली अद्वितीय कहानी है। मध्यवर्गीय परिवार की निर्धनता कहानीकार ने मुंशी चंद्रिका प्रसाद के परिवार के माध्यम से प्रस्तुत की है। बाबू चंद्रिका प्रसाद की मकान किराया नियंत्रण विभाग से छंटनी के कारण नौकरी चली जाती है। इस स्थिति में घोर निर्धनता और अभावों का सन्नाटा परिवार में छा जाता है। तीन बच्चों के पिता की पैंतालीस वर्ष की उम्र में नौकरी से छंटनी होने के कारण परिवार दारिद्रय में घिर जाता है। क्षुधातृप्ति के साधनों का भी अभाव हो जाता है। दोपहर

के भोजन के समय मां सिद्धेश्वरी पति और तीन बच्चों को संशयों और अभावों से मुक्त रखना चाहती है। घोर नैराश्य में भी परिवार को एकसूत्र में बांधे रखने के लिए एक दूसरे की प्रशंसा करती है, उनकी झूठी बड़ाई करती है। वह आर्थिक कठिनाइयों में जूझते पति और तीन बेटों को भूखे न रहने देने के लिए त्याग और उदारता से पारिवारिक सामंजस्य स्थापित करती है। अमरकान्त ने इस कहानी में सिद्धेश्वरी की मनःस्थिति का मार्मिक चित्रण किया है सिद्धेश्वरी ने खाना बनाने के बाद चूल्हे को बुझा दिया और दोनों घुटनों के बीच सिर रखकर शायद पैर की उगलियाँ या जमीन पर चलते चींटे-चींटियों को देखने लगी। अचानक उसे मालूम हुआ कि बहुत देर से उसे प्यास लगी है। वह मतवाले की तरह उठी और गगरे से लोटा भर पानी लेकर गट गट चढ़ा गई। खाली पेट पानी उसके कलेजे को लग गया और हाय राम कहकर वहीं जमीन पर लेट गई। सिद्धेश्वरी उन अभावग्रस्त परिवार की भारतीय नारियों की प्रतीक है जो स्वयं भूखे रहकर पति और संतति की चिंताओं की मुक्ति के लिए अपने आप को पूर्ण रूप से समर्पित कर देती है। भूखे पेट रहकर भी परिवार में सामंजस्य स्थापित करने के लिए वह भरसक प्रयत्न करती है। क्षुधा विह्वल होकर भी उसकी चिंता कभी पति की बेकारी को लेकर है तो कभी बेटों को लेकर है। अपने छः वर्षीय बेटे की दुर्बलता उसके हृदय को विदीर्ण कर देती है। वह अपने सबसे छोटे बेटे की दुर्बल देह देखती है जिसके गले तथा छाती की हड्डियां साफ दिखाई देती है और उसके हाथ पैर बासी ककड़ियों की भाँति सूखे और बेजान पड़े हैं। 'छः वर्ष के बच्चे के शरीर पर कपड़े नहीं है वह आधे टूटे खटोले पर नंग-धडंग पड़ा है। कहानी में निर्धनता और बेबसी के अनेक मार्मिक चित्र पाठक को विह्वल करते हैं और आजादी के बाद के निर्धन परिवारों के घोर अभावों के चित्र प्रस्तुत करती है और यह सवाल उठाती है कि इस प्रकार की भीषण विह्वल करने वाली स्थितियों से मानव कब मुक्त होगा। एक लम्बे अंतराल के बाद भी यह कहानी अपनी प्रासंगिकता बनाए हुए है। 'दोपहर का भोजन' में कहानीकार ने नितांत तटस्थता के साथ एक परिवार के माध्यम से समूचे निम्न मध्यवर्गीय समाज के घोर दारिद्रय और अभावों की पीड़ा को मूर्तिमान किया है। यह कहानी अमरकान्त की कहानियों में वशिष्ट स्थान रखती है। अपने समय की भावधारा का अतिक्रमण करती हुई यह कहानी आज भी प्रासंगिक है और अपना ऐतिहासिक महत्व बनाए हुए है।

'जिन्दगी और जोंक' भी अमरकान्त की नितांत चर्चित कहानी है। इसमें सामाजिक व्यवस्था की विषमता और विसंगतियों को उद्घाटित करते हुए सम्पन्न वर्ग के अमानवीय चेहरे को सामने लाया है। सम्पन्न वर्ग अभावग्रस्त और जीवन की मूलभूत आवश्यकताओं से वंचितवर्ग की विवशताओं का लाभ उठाकर उनका उपयोग निजी स्वार्थों को सिद्धि के लिए करता है। कहानी में गोपाल उर्फ रजुआ ऐसा ही निरीह चरित्र है जिसका शोषण शिवनाथ बाबू और मुहल्ले के दूसरे लोग अधिकार सहित करते हैं। उन्हें ऐसा नौकर मिल जाता है जिसे जुठा या बासी खाना देकर अपने संकेतों पर नचाया जा सकता है। मुहल्लों के दूसरे लोग भी उसे जुठा खाना देकर काम लेने लगते हैं। शिवनाथ बाबू उस पर साड़ी चोरी होने का इल्जाम भी लगाते हैं और उसकी निर्ममता से पिटाई की जाती है। बाद में साड़ी घर में ही मिल जाती है परन्तु उन्हें रजुआ को अकारण पीटने का पश्चाताप नहीं होता। प्रस्तुत कहानी में कथाकार अमरकान्त ने द्वन्द्वात्मक दृष्टि से परस्पर विरोधी स्थितियों का निरूपण करते हुए रजुआ के चरित्र की सृष्टि की है। वह नितांत विपरीत परिस्थितियों में जीवन यापन करता है। वह पशु की भाँति जीवन यापन करता है। वह मनुष्य है परन्तु वह कभी कुत्ता प्रतीत होता है कभी गधा, कभी बैल। पशु आत्महत्या नहीं करता। रजुआ भीषण संकटों और यातनाओं में भी जीवन में रस की तलाश करता है। वह दाल भात रोटी नमक खाता है, पगली से दैनिक आवश्यकता की पूर्ति करता है। पतिया की पत्नी से हंसी ठिठोली करता है। गान्धी महात्मा की जय बोलता है। रुग्ण देह की रक्षा के लिए अंधविश्वास के रूप में अपने मरने की झूठी खबर फैलाता है। यह सभी स्थितियाँ कहानी में रजुआ की निरीह, करुणा और तुच्छ स्थिति को निरूपित करती हैं। रजुआ में जीवन के प्रति गहन जिजीविषा है। प्रेमचन्द की चर्चित कहानी 'कफन' की भाँति यह एक अविस्मरणीय कहानी है।

'केले, पैसे और मूँगफली' में भी मध्यवर्ग की विपन्नता और विवशता का चित्रण है। इस कहानी में यह प्रतिपादित किया है कि दफ्तर में कार्य करने वाला वेतन भोगी मध्यवर्ग का व्यक्तित्व महीने के अन्त में इतना असहाय हो जाता है कि अपनी संतति की मामूली सी इच्छा पूर्ति के लिए भी उसके पास पैसे नहीं होते हैं। बेटे की जिद्द है कि फेरी वाले से एक पैसे का एक केला खरीद कर उसे दे। आर्थिक विपन्नता तनाव का कारण बनती है। बच्चे की जिद्द को पूरा करने पर बच्चे को अकारण पीटना, पति-पत्नी की परस्पर कलह, घर में पैसे होने का संदेह आदि मध्यवर्गीय मानसिकता को प्रकट करते हैं। घर से अखबार लेकर बाजार में बेचना फिर उन छः आनों से पत्नी और पुत्र को प्रसन्न करने के लिए केले और मुँगफली लाना एक मध्यवर्गीय व्यक्तित्व की विडम्बनात्मक और करुण स्थिति को ही उभारती है। अमरकान्त ने इस कहानी में यह दिखाया है कि इस विपन्न अवस्था में भी मध्यवर्गीय व्यक्तित्व के सामने अपनी प्रतिष्ठा का प्रश्न बना रहता है। कहानी में राजेश का पिता जो कार्यालय में उपसंपादक है, अपनी प्रतिष्ठा को बचाए रखने के लिए बाजार में अखबारों को बेचने के लिए ले जाते हुए अनेक झूठ बोलता है ताकि कोई उसकी निर्धनता को कोई न समझ सके।

(शेष अगले अंक में)

देव मिलन का पर्व

● अशोक सरीन



देवभूमि हिमाचल शक्ति रूप मां पार्वती का मायका और भूतनाथ बाबा महादेव जी की तपोभूमि है। इस भूमि में मंदिरों का अद्‌भुत संगम है। मेला, उत्सव, पर्व यहां की सांस्कृतिक छटा बिखेरने के माध्यम हैं। इन्हीं में शुमार है मंडी का शिवरात्रि पर्व जो अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर मनाया जाता है।

जिला मंडी 3950 वर्ग किलोमीटर में फैला हुआ है। यहां लगभग 500 प्राचीन मंदिर हैं, जिसमें से अकेली मंडी तहसील में 150 मंदिर हैं। इसी कारण इसे मंदिरों का नगर और छोटी काशी कहा जाता है। शिवरात्रि पर्व मंडी नगर में सात दिनों तक बड़ी धूमधाम से मनाया जाता है। देश-विदेश के पर्यटक इस पर्व को देखने मंडी आते हैं। पठानकोट से 210 किलोमीटर दूर समुद्रतल से 2495 फुट ऊंचाई पर नीली ब्यास नदी के किनारे मंडी शहर स्थित है। यदि आप खिलौनानुमा रेलगाड़ी से सफर करना चाहें, तो पठानकोट से जोगिंद्रनगर नामक स्थान तक यह सुविधा सुलभ है। जोगिंद्रनगर से मंडी 57 किलोमीटर दूर है और यह सफर बस अथवा टैक्सी से तय किया जा सकता है।

मंडी शिवरात्रि शुरू होने के पीछे कई किंवदंतियां हैं। ऐतिहासिक तथ्यों का अध्ययन किया जाए तो पता चलता है कि मंडी शिवरात्रि की शुरुआत वर्ष 1788 से हुई। उन दिनों यहां राजा सूरमा सेन का शासन था। राजा अपनी बहादुरी और दिलेरी के लिए प्रसिद्ध है। उनका एक बेटा था ईश्वरी सेन। राजा सूरमा सेन जब तक जीवित थे किसी ने उनकी रियासत पर आंख न उठाई। उनकी अचानक मृत्यु हो जाने से रियासत पर दूसरी रियासतों के राजाओं के आक्रमण का खतरा मंडराने लगा। युवराज ईश्वरी सेन उस समय सात वर्ष का बालक था। अल्पायु में ही उन्हें राजगद्दी पर बिठा दिया गया। इस अवसर का कांगड़ा के पराक्रमी व महत्त्वाकांक्षी राजा संसार चंद ने लाभ उठाया। उसने नन्हे राजकुमार को कैद कर लिया। पर कुदरत ने कुछ ऐसा खेल खेला कि उन्होंने युवराज को कैद से मुक्त कर दिया। जिस दिन युवराज ईश्वरी सेन अपनी रियासत मंडी पहुंचा उस रोज संयोगवश शिवरात्रि पर्व था। युवराज के सुरक्षित घर पहुंचने की खुशी में इस पर्व को मंडी में सात दिनों तक धूमधाम से मनाया गया। वहीं से शिवरात्रि मनाने की प्रथा शुरू हुई। रियासत के लोगों के अनुसार भगवान शिव की कृपा से युवराज रियासत पहुंचे थे अन्यथा उनकी जान को खतरा था।

कुछ विद्वानों का मत है कि मंडी में शिवरात्रि की शुरुआत सन् 1526 में भूतनाथ मंदिर के अस्तित्व में आने से हुई। इस मंदिर का निर्माण सोलहवीं शताब्दी में राजा अजबर सेन ने किया था।

एक अन्य स्रोत के अनुसार राजा सूरज सेन (1637-1664) की अपनी कोई संतान न थी। राज्य के लिए उत्तराधिकारी न होने से प्रजा चिंतित थी। इस विचित्र परिस्थिति में राजा सूरजसेन ने सन् 1648 में भगवान कृष्ण की रजत मूर्ति का निर्माण करवाया

बड़ा देव कमरूनाग

मंडी जिले में बड़ा देव के नाम से विख्यात कमरूनाग देवी-देवताओं की तरह रथ पर सवार होकर महाशिवरात्रि महोत्सव में भाग लेने नहीं आते। इतिहासकारों का कहना है कि जब मंडी रियासत थी और इस रियासत के राजा ने देव कमरूनाग व अन्य को मेले में आने का न्योता दिया तो बड़े देव ने कहा कि यदि राजा मेरे निवास से लेकर मंडी तक सोने की सड़क बना दे तो मैं रथ पर सवार होकर आऊंगा और अढ़ाई घंटे तक मंडी नगर में सोने की बारिश करूंगा। कहते हैं तब राजा ने बड़े देव की बात नहीं मानी और कहा कि अगर सोने की बारिश करनी है तो केवल मेरे महल में करो। यदि पूरे नगर में सोने की बारिश हुई तो मुझमें व अन्य लोगों में क्या फर्क रह जाएगा। तब से बड़े देव अन्य देवी-देवताओं की तरह सजधज कर पालकी में नहीं आते, केवल उनकी प्रतीक छड़ी ही पहले आती है। बड़े देव की छड़ी को लेकर उनके करिंदे (पुजारी) व गुर (प्रवक्ता) मंडी के सबसे ऊंचे स्थान टारना माता के मंदिर में ही ठहरते हैं। उधर, पौराणिक कथाओं में भी देव कमरूनाग का जिक्र है। देव कमरूनाग हिमालय की ओर से महाभारत में कौरवों के पक्ष में लड़ने के लिए जा रहे थे कि रास्ते में भगवान श्रीकृष्ण को उनकी महान शक्ति का अहसास हो गया। उन्होंने छल से देव कमरूनाग को मार दिया लेकिन एक वीर योद्धा होने के कारण उनकी इच्छा की पूर्ति करते हुए उन्हें एक ऊंचे पेड़ पर बिठा दिया जहां से वे महाभारत का युद्ध देखते रहे। यही नहीं मंडी में बड़ा देव कमरूनाग को बारिश का देवता माना जाता है। शिवरात्रि महोत्सव के दौरान मौसम ठीक रहे, इसके लिए स्वयं जिला प्रशासन बड़ा देव से मन्नत मांगते हैं।

राजघराने से आज भी लेनी पड़ती है पूजा की अनुमति

पूर्व रियासत मंडी के देवशासक श्री राजमाधव जी के मंदिर में पूजा-अर्चना के लिए आज भी जिला प्रशासन को पूर्व रियासत के शासकों को एक पत्र लिखकर अनुमति लेनी पड़ती है। हालांकि इस मंदिर पर पूर्व रियासत का हक कानूनन नहीं है, मगर वर्षों से चली आ रही इस रियासत को जिला प्रशासन आज भी निभा रहा है।

सरकारी नुमाइंदे देते हैं देवताओं को निमंत्रण

प्राचीन देव परंपरा को आज के आधुनिक युग में समेटे हुए मंडी के महाशिवरात्रि महोत्सव में ग्राम्य देवी-देवताओं को जिला प्रशासन निमंत्रण पत्र आज भी अपने अधिकारियों व कर्मचारियों के द्वारा उनके स्थान पर भेजता है। जबकि बड़ा देव के नाम से प्रसिद्ध देव कमरूनाग को तो राजस्व विभाग का तहसीलदार स्तर का अधिकारी स्वयं न्योता देने जाता है।

मेले में रिश्तेदारी भी निभाते हैं देवी-देवता

देव परंपरा का अनूठा संगम मंडी के महाशिवरात्रि महोत्सव में देखने को मिलता है। इस मौके पर जिले के दूर व दुर्गम गांवों से आए देवी-देवता जो रिश्ते में परस्पर कुछ-न-कुछ लगते हैं, अपनी रिश्तेदारियां भी निभाते हैं। लोक संस्कृति पर शोध कर चुके वरिष्ठ साहित्यकारों ने अपने शोध-पत्रों में इस बात का उल्लेख किया है कि इन देवी-देवताओं के आपस में रिश्ते हैं। कोई किसी का भाई है तो कोई किसी की बहन। जब देवी-देवताओं की पालकियां मंडी के पड्डल मैदान में आती हैं तो राह में अपने भाई-बहन को देख दैविक शक्ति खुद-ब-खुद पालकी को उस तरफ ले जाती है जहां पर इनकी पालकियां परस्पर एक दूसरे को स्पर्श करती हैं। यही नहीं, यह भी देखा गया है कि जब किसी देवता की इच्छा न हो तो उसका रथ उठाने वाले कहारों में मजबूरन उस दिशा में चलना पड़ता है जहां पर देवी-देवता की इच्छा हो।

और इसे राजा माधव की संज्ञा देकर शिवरात्रि के दिन मंडी रियासत को समर्पित किया। यह प्रतिमा दमदमा राजभवन में प्रतिष्ठित की गई है। शिवरात्रि पर्व पर जिला मंडी के गांवों से आए देवी-देवता राज माधव को झुक-झुक कर नमन करते हैं।

जिला मंडी में लगभग 300 गांव हैं। हर गांव का अपना देवता है। शिवरात्रि के अवसर पर दूरदराज गांवों के देवता पालकियों में बैठ ढोल-नगाड़े व अन्य वाद्य यंत्रों के साथ भगवान राजमाधव से मिलने मंडी आते हैं। हर देवता के साथ चार कहार और गांव के कुछ प्रतिष्ठित व्यक्ति होते हैं। दूर दुर्गम गांवों से देवी-देवताओं की शोभायात्रा चार-पांच दिन शिवरात्रि उत्सव से पूर्व शुरू हो जाती है। मार्ग में देवी-देवताओं के दर्शन करने वाले श्रद्धालुओं की टोलियां उनके दर्शन कर उनसे आशीर्वाद लेती हैं। लोगों की इन देवताओं में गहरी आस्था है।

महाशिवरात्रि का शुभारंभ भूतनाथ मंदिर से होता है। शिवरात्रि के दिन इस मंदिर को दुल्हन की तरह सजाया जाता है। मंदिर के प्रांगण में आग जलाई जाती है और हवन किया जाता है। प्रज्वलित अग्नि में लकड़ी डालना बड़ा पवित्र समझा जाता है। रात भर मंदिर में श्रद्धालु भजन-गायन कर शिवमहिमा का गुणगान करते हैं।

शिवरात्रि के दिन मंडी के राजदेवता राजमाधव की पूजा की

जहां आज भी देवताओं का है शासन

भारत का सर्वोच्च न्यायालय दिल्ली में है। छोटे न्यायालयों से गुजरता मुकद्दमा न्याय की सीढ़ियां पार करता वहां पहुंचता है। उसका निर्णय सभी को मान्य है। पाठकों को जानकर ताज्जुब होगा कि हिमाचल के कई गांवों में केवल देवता का ही शासन चलता है। इनमें जिला मंडी के गांव भी शामिल हैं। इन गांवों में किसी भी निर्णय का अधिकार देवता के हाथ में है। देवता के मुख से निकला शब्द ही कानून है। कानून तोड़ना किसी के वश में नहीं। देवता की अवहेलना करने का किसी में साहस नहीं। उसके अधिकार को कोई चुनौती नहीं दे सकता। उस गांव की प्रत्येक वस्तु पर देवता के नाम की मोहर लगी है। छोटा-बड़ा, अमीर-गरीब सभी देवता की नजर में समान हैं। रिश्वत, सिफारिश देवता के लिए अमान्य है। उस गांव का प्रत्येक व्यक्ति तन-मन-धन से देवता को समर्पित है।

हिमाचल के जिला मंडी के हर गांव का अपना देवी-देवता है। देखने में तो देवता पत्थर या धातु की निर्जीव मूर्ति होती है, पर उसकी शक्ति इतनी अपरिमित होती है कि उसकी आज्ञा के बिना कोई परिंदा भी पर नहीं मार सकता।

पाठक जानना चाहेंगे कि पत्थर या धातु के मूक देवी-देवता से गांववासी कैसे अपनी बात करते हैं। हर देवी-देवता का अपना 'गुर' होता है। जो मान-सम्मान लोग देवता को देते हैं, वैसा ही मान-सम्मान गुर को भी दिया जाता है। गुर बनना आसान नहीं, उसे कई कठिन परीक्षाओं से गुजरना पड़ता है। जब किसी गांववासी को देवता से अपनी समस्या के बारे में बात करनी हो तो वह 'गुर' से संपर्क करता है। गुर देवता में ध्यान लगाता है। इस बीच उसका शरीर झूमने लगता है। उसका देवता से संपर्क जुड़ जाता है। वह आम आदमी की तरह ही देवता से बात करता है पर देवता जो जवाब देता है उसे 'गुर' ही सुन सकता है और कोई नहीं। इस प्रकार गांववासी को गुर द्वारा उसकी समस्या का निदान बताया जाता है।

मंडी के शिवरात्रि मेले का असली व लोकनाम जात्रा बताया जाती है। उसके बाद एक शोभा यात्रा दमदमा राजभवन से भूतनाथ मंदिर तक निकाली जाती है। दो किलोमीटर का सफर तय करने के बाद शोभा यात्रा मंडी शहर के पड्डल मैदान में पहुंचती है। जहां गांव-गांव से आई देवी-देवताओं की पालकियां कतारबद्ध होकर अपने मुख्य देवता राजमाधव से मिलने खड़ी हो जाती है। यह दृश्य देखते ही बनता है। मंडी शहर के मध्य में स्थित सेरी रंगमंच सात दिनों तक हर सांझ देश-विदेश के कलाकारों का आकर्षण होता है। इस रंगमंच पर प्रतिदिन सांस्कृतिक कार्यक्रम संपन्न होते हैं जो रात देर तक चलते हैं।

मंडी पर सिखों के दसवें गुरु गोविंद सिंह जी की बड़ी कृपा और आशीर्वाद रहा है। इस बात का उल्लेख यहां बने गुरुद्वारे के बाहर लगे साइन बोर्ड पर मिलता है। इसके अनुसार सन् 1709 के अप्रैल माह में श्री गुरु गोविंद सिंह जी महाराज मंडी से 22 किलोमीटर दूर रिवालसर नामक स्थान जहां पवित्र झील है, पधारे थे। वहां उन्होंने पहाड़ी राजाओं को अन्याय और आततायी मुगलों का नाश करने तथा न्याय की आवाज बुलंद करने के अपने उद्देश्य के बारे में अवगत करवाया था।

उस समय मंडी के राजा सिद्धसेन थे। उन्हें गुरु जी के रिवालसर आने का पता चला तो वह अपने तीन पुत्रों सहित पालकी लेकर गुरुजी के पास पहुंचे तथा गुरुजी से अपनी रियासत में चरण रखने का अनुराध किया। हुआ यूं था कि मंडी रियासत में दो वर्ष से वर्षा न होने के कारण अकाल जैसी स्थिति पैदा हो गई थी। राजा सिद्धसेन को एक विद्वान पंडित ने बताया कि कोई ऐसा सज्जन जिसके हाथ घुटनों से नीचे तक लंबे हों, मंडी आए तभी राज्य खुशहाल हो सकता है और प्रजा सुखी रह सकती है। गुरु गोविंद सिंह जी ऐसे ही दिव्य पुरुष थे। गुरु जी ने राजा सिद्धसेन का अनुरोध स्वीकार कर लिया तथा पालकी में बैठ गए। गुरु जी को पालकी में बैठाकर स्वयं राजा सिद्धसेन तथा उनके तीन बेटे अपने कंधों पर उठा कर लाए। मंडी पहुंचकर जिस स्थान पर गुरुजी की पालकी को उतारा गया, उसी स्थान पर अब गुरुद्वारा साहब बना हुआ है।

मंडी आकर गुरु गोविंद सिंह ने ब्यास नदी में एक मिट्टी की हांडी बहा दी। हांडी ब्यास नदी की लहरों पर ऊपर-नीचे तैरने लगी। गुरु जी ने हांडी को निशाना बनाकर तीर छोड़ा। हांडी उलट गई पर टूटी नहीं। इस पर गुरुजी ने कहा-

"जैसे बची यह हांडी,
वैसे बचेगी तेरी मंडी,
जो मंडी को लूटेंगे
तूानी गोले छूटेंगे।"

आज भी मंडी के लोगों को विश्वास है कि इस शहर पर गुरुजी की कृपा और आशीर्वाद है। मंडी के गुरुद्वारा साहब में गुरु जी की बंदूक, रकाब, पलंग, तलाई, कंघा आज भी मौजूद है।

द्वारा सिटी लाईट प्रिंटर्ज, पालमपुर-176 061, कांगड़ा, हिमाचल प्रदेश।

जाता है। क्योंकि यह जात्रा पर्वत श्रेणियों व ग्रामों के देवताओं की भगवान शिव अर्थात् महादेव से मिलने की यात्रा है। इस यात्रा में मंडी के देव शासक श्री राजमाधव के समक्ष उपस्थित होकर ग्राम्य देवताओं की पूजा करना और उनके आतिथ्य में रहने के बाद श्री राजमाधव को देवी-देवताओं को साथ लेकर शासन की साज-सज्जा में बाबा भूतनाथ का अभिषेक व पूजन मुख्य आकर्षण हैं। इस जात्रा का विशेष उत्सव तंत्र और मंत्र का उपयोग वहां की सुरक्षा व संपन्नता के लिए करते हैं। महाशिवरात्रि मेले का यही एक भाग है, जिसका सरकारीकरण नहीं हुआ है। यह मेला सात दिनों तक मंडी के पड्डल मैदान में मनाया जाता है। इस मेले का व्यापारिक महत्त्व भी देश में बढ़ने लगा है। यही कारण है कि देश की प्रतिष्ठित कंपनियां यहां पर स्टॉल लगाने में रुचि लेती हैं। वहीं जिले के लोगों के लिए वर्षभर की महत्त्वपूर्ण चीजों की खरीददारी के लिए भी यह मेला अलग स्थान रखता है।

मेले के प्रथम दिन सुबह देव शासक श्री राजमाधव की सवारी के साथ पुलिस व होमगार्ड, बैंड-बाजे पूरे लाव-लश्कर के साथ जिला प्रमुख भूतनाथ मंदिर में जाकर भगवान शिव की पूजा-अर्चना करते हैं। इसके साथ ही सात दिवसीय मेले की शुरुआत हो जाती है। दोपहर को जलेब (शोभायात्रा) निकाली जाती है। इसमें आगे-आगे घुड़सवार, पीछे पुलिस बैंड, होमगार्ड, पुलिसकर्मी, स्कूली बच्चों के बीच श्री राजमाधव की पालकी तथा उनके पीछे मुख्य अतिथि व सारे दरबारी चलते हैं। इस शोभा यात्रा में दूर दराज गांवों से पालकियों में आए देवी-देवता महाशिवरात्रि का विशेष आकर्षण रहते हैं। प्राचीन वाद्य यंत्रों से देवी-देवताओं के संग आए बजंतरी पूरे शहर को संगीत की पारंपरिक स्वर लहरियों से मोहित कर देते हैं।

सात दिवसीय महाशिवरात्रि पर्व में गांवों से आए सभी देवी- देवताओं के कारिंदों के रहने, भोजन आदि की व्यवस्था प्रशासन द्वारा की जाती है। इनकी संख्या सैकड़ों में होती है। देवी-देवता की एक पालकी के साथ 20-25 व्यक्तियों का होना आम बात है। जबकि बड़े देवता के रूप में माने जाने वाले देव कमरूनाग के आगमन पर जिला उपायुक्त और शिवरात्रि महोत्सव आयोजन समिति के अध्यक्ष को उनकी अगुवाई करनी पड़ती है।

लघु कथाएं

● परमजीत कौर आशट

गिरगिट

आज की विचार गोष्ठी में प्रोफेसर गोगना का भाषण बेहद प्रभावशाली था। भाषण-समाप्ति पर हाल में काफी देर तक तालियां बजती रहीं। प्रो. गोगना की तरफ से 'फिल्मी पोस्टरों में अश्लीलता' के संदर्भ में पेपर पढ़ा गया था।

प्रोग्राम के उपरांत प्रो. गोगना व उसका एक मित्र स्कूटर पर घर आ रहे थे कि अचानक उनका एक्सीडेंट हो गया। प्रो. साहिब का साथी तो सुरक्षित था, लेकिन प्रो. गोगना को गंभीर चोट आई थी, और वह बेहोश थे।

भारी हुजूम होने पर, लोगों ने हादसे की वजह पूछी तो प्रोफेसर के साथी ने बताया, "हुआ तो कुछ भी नहीं था। गोगना जी का ध्यान स्कूटर चलाते हुए, 'ए' प्रमाण-पत्र वाली फिल्मी के उस पोस्टर की जानिब चला गया था।"

उसकी सोच

जून का महीना था। मैं कस्बे के बस-स्टैंड पर खड़ी थी। मेरे नजदीक आकर एक रिक्शा रुका। मैंने देखा कि रिक्शावाला पसीने से तर-बतर और बुरी तरह हांफ रहा था। उसके रिक्शे से भारी भरकम शरीर का मालिक, एक सेठ उतरने का प्रयत्न कर रहा था।

यह सब देखकर मेरी सोच से न रहा गया। वह बोली, "जरा देखो तो, इस हाथी जैसे सेठ से पैदल या किसी दूसरे वाहन से यहां तक न आया गया था। रिक्शे वाले को कितनी तकलीफ हुई है, कितनी बुरी तरह हांफ रहा है, बेचारा?"

मेरी सोच के ये मूक-शब्द, न जाने कैसे, रिक्शेवाले की सोच से जा टकराए। वह तत्काल बोली, "इस सेठ को भला-बुरा मत कहो, सवारी तो इस कस्बे से हमें बड़ी मुश्किल से मिलती है। अगर ऐसी सवारी हमको न मिले तो हम तो भूखे मर जाएंगे।"

रिक्शे वाला जा चुका था। रिक्शवाले की सोच के समक्ष, मेरी सोच लज्जाजनक थी।

गांव व डाकघर घग्गा, जिला पटियाला,
पंजाब-147 102, मो. 78144 95004

आशुतोष महाशिव का कल्याणकारी नर्तन

• गोपालजी गुप्त

शिव एक ओर गहन साधना-तपश्चर्या के देवता हैं साथ ही वह अनुपम प्रेम, अनूठे दांपत्य, सद्भावना तथा कल्याण के पर्याय भी हैं। वह नृत्य, लास्य, भाषा, लालित्य, उल्लास, शास्त्रों, कलाओं के प्रवर्तक, संहार के अधिष्ठाता, प्रलयंकारी रुद्र भी हैं। नटराज, नृत्याचार्य शिव का तांडव नृत्य से अटूट संबंध है। 'मराठी भारतीय संस्कृत कोश' में उन्हें विशिष्ट रूप वाला, नाट्यकला प्रवर्तक, नटराज कहा गया है तथा संपूर्ण ब्रह्मांड को उनकी नृत्यशाला। पुराणों के अनुसार उनका नर्तन अनवरत चलता रहता है क्योंकि नृत्य का विराम ही प्रलय का प्रतीक है। शिवपुराण उन्हें नृत्यकला प्रवर्तक एवं सुरताल का महाज्ञाता बताता है। उनका नटराज स्वरूप सृजन तथा विध्वंस के विरोधाभासी क्रियाओं की संयुक्त अभिव्यक्ति है। उल्लेख्य है कि बिना विनाश सृजन अर्थहीन है, बिना सृजन विनाश अनर्थकारी। उन्मुक्त सृजन एवं निर्द्वंद्व विनाश दोनों स्थितियां एक आंतरिक उल्लास पर आधृत है यही शिव के नर्तन का भाव है।

शिव एक ओर गहन साधना-तपश्चर्या के देवता हैं साथ ही वह अनुपम प्रेम, अनूठे दांपत्य, सद्भावना तथा कल्याण के पर्याय भी हैं। विद्वतजन शिव को इतिहास पुरुष कहते हैं। कालांतर में लोकश्रद्धा, लोक प्रवृत्तियों के संधानों से शिव की विविधताओं का विकास हुआ, वह रसायन शास्त्र, आयुर्वेद-निष्णात, व्याकरणाचार्य भी हैं। पाणिनीय व्याकरण के 14 सूत्र नटेश्वर सूत्र, उनके डमरू की नाद से निकला है।

भरतमुनि के नाट्य शास्त्र के अनुसार शिव ने 32 प्रकार की मंगल चेष्टाएं (अंगहार), हस्तचालन क्रियाएं (रेचक), मंडलावर्तन क्रियाएं (पिंडीबंध) के संयोग से नृत्य तंडुमुनि को सिखलाया, तंडुमुनि ने वाद्ययंत्रों के संयोग से उसी नृत्य को तांडव नाम से प्रचारित किया। डॉ. आनंदकुमार स्वामी के अनुसार "शिव के नृत्य एवं लय की विभिन्न गतियां हैं, शिव नर्तक तथा दर्शक दोनों हैं, उनका नृत्य संगीतमय आदिशक्ति का विलास है जिससे लोगों का जीवन संचालित होता है, वह ब्रह्म की पांच क्रियाओं सृष्टि, स्थिति, संहार, तिरोभाव, अनुग्रह का द्योतक है।" ज्ञातव्य है कि तांडव में नृत एवं नृत्य का समाहार है। नृत भावाश्रित, नृत्य ताल मिश्रित होता है। तांडव रौद्र तथा सुंदर दोनों है। हेनरिख जीमर का कथन है कि 'शिव के नृत्य की मुद्राएं, अवस्थाएं, भंगिमाएं ब्रह्मांडीय अस्पष्टता की सूचक, उनकी हस्त भंगिमाएं, पद-स्थिति, कटि अवस्था उस सृजन, विनाश की स्थिति की सूचक हैं जिसके परिणामस्वरूप उद्भव एवं विकास की नियंत्रित समायोजनात्मक स्थिति का, सृजन का निर्माण होता है।' वस्तुतः उनके नृत्य को पद-चालन, विभिन्न भंगिमाओं में इतिहास की बहुरंगी घटनाएं हैं इसलिए यह युगचक्र, इतिहास प्रवाह है। इस प्रकार नटेश्वर शिव का नर्तन संपूर्ण ब्रह्म विधान का उदात्त रूपायण है। शव से शिव रूप की ओर प्रस्थान नटेश्वर के नृत्य का विकास है।

विद्वतजन शिव को इतिहास पुरुष कहते हैं। कालांतर में लोकश्रद्धा, लोक प्रवृत्तियों के संधानों से शिव की विविधताओं का विकास हुआ, वह रसायन शास्त्र, आयुर्वेद-निष्णात, व्याकरणाचार्य भी हैं। पाणिनीय व्याकरण के 14 सूत्र नटेश्वर सूत्र, उनके डमरू की नाद से निकला है। ये 14 सूत्र हैं अइउण, ऋलृक, एओङ, एऔच, हयवरट, लण्, ञमङणनम्, झभञ, घढधष, जबगडदश, खफछठथचटतव, कपय, शषसर, हल। ये ही संस्कृत व्याकरण के आदि सूत्र हैं।

शिव महाकाल हैं, उनका दांपत्य प्रेम अद्वितीय, अनिर्वचनीय है। सती के दाह के उपरांत वे शव लेकर विश्वभ्रमण इसका प्रमाण है।

'प्रेमांगन', एमआईजी 292, कैलास विहार, आवास विकासयोजना सख्या-1, कल्याणपुर, कानपुर, उ. प्र.-208 017,
दूरभाष : 0522 2575 795

स्मृति

जिंदगी में रूमानियत को ढूंढता शायर साहिर लुध्यानवी

● हंसराज भारती



'दुनिया ने तजुर्बात-ओ हवादिस की शक्ल में
जो कुछ मुझे दिया है वो लौटा रहा हूं मैं'

तजुर्बात : अनुभवों हवादिस : हादसों

'जिंदगी हयात एक मुस्तकिल गम के सिवा कुछ भी नहीं शायद।
खुशी भी याद आती है तो आंसू बनके आती है'

(ये दोनों ही अशआर साहिर के पहले काव्य संग्रह 'तल्खियां' से उद्‌धृत हैं) मुस्तकिल : स्थिर, पक्का

उर्दू भाषा हिंदुस्तान की एक विशेष भाषा है जो मध्यकाल में हिंदू-मुस्लिम संस्कृतियों के साझे प्रभाव से अस्तित्व में आई। उर्दू जुबान का उदगम् राज दरबारों के सान्निध्य से हुआ और इसे उस समय की सत्ता का भरपूर राज्याश्रय भी प्राप्त हुआ। फिर धीरे-धीरे उर्दू राज दरबारों के दरोदीवारों से बाहर निकलकर सामान्य जन की भाषा बनने लगी। एक समय में पूरे उत्तरी भारत ही नहीं सुदूर दक्षिण में भी हैदराबाद, बीजापुर गोलकुंडा तक इस भाषा का असर रसूख था। भारत की अधिकतर भाषाओं पर इसने अपना प्रभाव डाला। उर्दू की लिपि फारसी है। शब्दावली में अरबी, फारसी के शब्द अधिक हैं। पर इसकी शैली खड़ी बोली की है। उर्दू साहित्य की सबसे सशक्त विधा है उर्दू कविता या शायरी। इस शायरी ने राजा और रंक सबको अपना कायल बनाया है।

बीसवीं सदी की शुरुआत के साथ ही उर्दू शायरी में एक नया और खूबसूरत मोड़ आता है। राज दरबारों की छत्र-छाया में पलने वाली उर्दू शायरी में अब तक शराब, शबाब, हुस्न-ओ-इश्क की रंगीनियों और राजदरबारों के तिलिस्मी माहौल का बोलबाला था। लेकिन इस सदी के शुरुआती सालों में इस माहौल से बाहर आकर अवाम की शायरी बनने लगी थी। इकबाल ने 1904 ईस्वी में 'सारे जहां से अच्छा हिंदोस्तान हमारा' जैसा कौमी तराना लिखा था। अवाम की ख्वाहिशों, उम्मीदों, दुख, तकलीफों, अरमानों, जद्दोजहद के जज्बे को बड़ी शिद्दत, साफगोई और ईमानदारी से बयान कर रही थी। बिना किसी लाग-लपेट के उर्दू शायरी अब पुराने अंदाज को छोड़कर नए दौर की सोच के साथ अपने कदम मिला रही थी। खुद पर चस्पां हुस्न-ओ-इश्क की शायरी के घेरों, राजदराबारों के शाही माहौल की रोमानी और तल्ख हकीकतों से दूर रंगीन फिजाओं की कैद से बाहर, नंगी और खुली धरती पर अपनी दस्तक दे रही थी। उर्दू शायरी के लिए यह एक नुमाया और दूर तक असरंदाज होने वाली तबदीली का दौर था। हर लिहाज़ से, यानी अपने अंदाज-ए-बयां में से भी और शायरी के कंटेंट से भी।

सन् 1936 में भारतीय प्रगतिशील लेखक संघ की स्थापना हुई। तरक्की पसंद (प्रगतिशील) तहरीक ने हिंदुस्तानी अदब को सीधे तौर पर अपने असर-ओ-रसूख के दायरे में ले लिया था। हिंदी सहित उर्दू के कई नामवर अदीब इस तहरीक के साथ सीधे बावस्ता हुए। इस तहरीक के असर के कारण उर्दू शायरी के विषय अब राजदरबार की रंगीनियां नहीं बल्कि अवाम की जिंदगी के सारे

जाने- अनजाने पहलू थे।

इस दौर की उर्दू शायरी को जिन शायरों ने एक नई बुलंदी की ओर इसके कदम बढ़ाए, इसमें एक नया जज्बा और अंदाज़-ए-फिक्र पैदा किया, एक नई जमात से शायरी को रु-ब-रु करवाया, उन शायरों में जनाब साहिर लुध्यानवी का नाम सरेफ़ेहरिस्त है। साहिर सही मायनों में अवाम के जज्बातों के शायर हैं।

साहिर लुध्यानवी का असली नाम अब्दुल हयी था। इनका जन्म 8 मार्च, 1925 को पंजाब के लुधियाना शहर में हुआ था। इसी शहर के नाम पर उन्होंने अपना तख़ल्लुस 'लुध्यानवी' रखा। साहिर के पिता एक जमींदार थे। इनकी माता इनके पिता की चौथी पत्नी थी। जब साहिर आठ वर्ष के थे तो इनकी मां अपने पति से अलग रहने लगी थी। साहिर अपनी मां के साथ ही रहे। सामंती समाज में औरत की हैसियत और रुतबा क्या और कैसा था, साहिर ने इसे बहुत करीब से देखा था। औरत की सामाजिक दुर्दशा और शोषण आने वाले सालों में उनकी शायरी में बड़े तल्ख और बेवाक अंदाज में नुमे हुए। साहिर की शिक्षा-दीक्षा लुधियाना शहर में हुई। लुधियाना के मशहूर गवर्नमेंट कॉलेज के वे विद्यार्थी रहे। यहीं पर जब पढ़ते थे तो सन् 1943 में महज अठारह साल की उम्र में कॉलेज से निकाल दिए गए। इनका पहला काव्य संग्रह 'तल्खियां' लाहौर से 1945 में प्रकाशित हुआ। इस संग्रह के प्रकाशित होने के साथ ही साहिर एकदम चर्चा के केंद्र में आ गए। अठारह साल की युवावस्था, जब एक इनसान मुहब्बत के कमसिन जज्बे से लबरेज होता है। जिंदगी और दुनिया की तल्ख हकीकतों को भी रुमानी चश्मे से देखने की खव्वत दिलोदिमाग पर सवार होती है। पर साहिर अपनी नज़्म 'ताजमहल' जो :तल्ख्यिां' में संग्रहीत है, बड़े साफ लहजे और लफ्ज़ों में कहते हैं :-

इक शहनशाह ने दौलत का सहारा लेकर
हम गरीबों की मुहब्बत का उड़ाया है मज़ाक
मेरी महबूब कहीं और मिला कर मुझसे।

इससे पहले 'ताजमहल' को अमर प्रेम का ही प्रतीक माना जाता था। इस खूबसूरत और लाजवाब मकबरे की तारीफ में सब कुछ लिखा जाता था पर साहिर ने इस कविता में उन सैकड़ों-हजारों मजदूरों के दबे अहसासों को भी जुबां दी है। ये नज़्म उस वक्त की तहरीक की अदब में सीधी नुमाइंदगी करती है। इस मज़मुए (संग्रह) की नज़्मों और ग़ज़लों में आने वाले वक्त की उर्दू शायरी के तेवर साफ-साफ और दूर तलक नज़र आ रहे थे। बाद के सालों में भी साहिर ने इस अंदाज-ए-फिक्र को अपनी शायरी में मुसल्लसल (निरंतर) जारी रखा। साहिर का यह संग्रह इतना मकबूल (लोकप्रिय) हुआ कि इसके कई संस्करण बाद में प्रकाशित हुए। मजेदार बात है कि 'तल्खियां' के हिंदी में ही अब तक पच्चीस के लगभग संस्करण निकल चुके हैं। साहिर की शायरी हिंदी में भी उतनी ही मान्य और लोकप्रिय है जितनी उर्दू में।

रूमानियत साहिर की शायरी की खास पहचान है। रोमानी तेवर में जिंदगी की हकीकतों का बयान। एक मंज़र (दृश्य) नज़्म में वे लिखते हैं :-

हसीं शबनम आलूद पगडंडियों से
(शबनम आलूद : ओसभरी)
लिपटने लगे सब्ज पेड़ों के साए
वो दूर एक टीले पे आंचल सा झलका
तसुव्वर में लाखों दीए झिलमिलाए। (तसव्वुर : कल्पना)

अपने नायाब, लाजवाब अनगिनत गीतों, ग़ज़लों की वजह से साहिर हिंदी वालों के लिए कोई अपरिचित नाम नहीं है। उनके गीत आज भी वैसे ही तरोताजा, रोमानियत से सराबोर, खास अंदाज-ए-बयां के लहजे वाले, दिल की गहराइयों को छूने वाले और देर तक याद रहने वाले व तन्हाइयों में गुनगुनाने के काबिल हैं।

'तल्खियां' की नज़्मों और ग़ज़लों में उस दौर की तरक्की पसंद सोच की तर्जुमानी एक नौजवान शायर की शायरी में मिलती है। इस उम्र में भी शायर समाज में व्याप्त, गरीबी, शोषण, गैरबराबरी, नाइनसाफी से वाकिफ ही नहीं वरन् उसको बदलने के लिए बेचैन भी है। बाद में साहिर फिल्मी दुनिया में बतौर गीतकार बनकर शोहरत की बुलंदियों पर पहुंचे। 'नौजवान' ऐसी पहली फिल्म थी जिसके गीत लिखकर वह फिल्मों की रंगीन दुनिया में पहचान बनाने में सफल हुए। परंतु यहां आकर साहिर ने अपनी शायरी और उसके स्तर पर कोई समझौता नहीं किया। वरन् अपने गीतों की साहित्यिकता को जीवित रखते हुए एक से बढ़कर एक श्रेष्ठ स्तरीय गीत हिंदी सिनेमा को दिए। अपने गीतों के स्तर के कारण साहिर आज भी सम्मानीय हैं, सबसे बेहतर हैं। अपने फिल्मी गीतों में भी उन्होंने समाज के दोहरे मानदंडों, पाखंडों और विसंगतियों की बखिया उधेड़ने में कसर नहीं छोड़ी। फिल्म 'बरसात की रात' की ग़ज़ल 'जिंदगी भर न भूलेगी वो बरसात की रात' और कब्बाली 'न तो कारवां की तलाश है न हमसफर की तलाश है न हमसफर की तलाश है' ने साहिर को शोहरत भी दी और एक पहचान भी। उर्दू के कई नामवर शायर फिल्मी दुनिया में भी अपना सिक्का जमाए हुए थे और अदबी दुनिया में भी। इन शायरों की वजह से हिंदी फिल्मों को एक से बढ़कर एक कालजयी गीत और ग़ज़लों की सौगात मिलती रही। मज़रूह सुल्तानपुरी, शकील बदायूंनी, राजा मेहंदी अली खाान, हसरत जयपुरी और साहिर आदि उस दौर में सक्रिय थे। बाद में गुलजार, शहरयार, निदा फाज़ली जैसे मशहूर शायरों ने इस

रिवायत को जारी रखा। आजकल गीतों की दुनिया में एकरूपता सी है और पुराने गीतों में ही सब प्रकार की अवल्लयित नजर आती है। इन सबमें साहिर सबसे जुदा और इंकलाबी सोच के हिमायती थे। औरत की जिंदगी को लेकर भारतीय समाज में जो हद दर्जे का दोगलापन और गैर इंसानी बर्ताव है उसे लेकर साहिर के ये दो गीत मिसाल हैं, पहला फिल्म 'कल्पना' का ये गीत :

'औरत ने जन्म दिया मरदों को, मरदों ने उसे बाज़ार दिया
जिस कोख में इनका जिस्म ढला, उसी कोख का कारोबार किया।'

और दूसरा 'चकले' के उन्मान (शीर्षक से) तल्खियां में संकलित है।

ये कूचे ये नीलाम घर दिलकशी के,
ये लूटते कारवां जिंदगी के...
ये पुरपेच गलियां, ये बेख्वाब बाज़ार
ये गुमनाम राही, ये सिक्कों की झनकार
ये इस्मत के सौदे, ये सौदों पर तकरार...।

फिल्म 'प्यासा' हिंदी सिनेमा में एक क्लासिक दर्जा रखती है। उसमें साहिर की तरक्की पसंद सोच की बड़ी साफ तसवीर इस गीत के जरिए भी नुमाया होती है। ये दोनों गीत 'प्यासा' फिल्म के हैं।

ये महलों ये तख्तों, ये ताजों की दुनिया
ये इंसान के दुश्मन समाजों की दुनिया
ये दौलत के भूखे रिवाजों की दुनिया
ये दुनिया गर मिल भी जाए तो क्या है?

इसी प्रकार फिल्म 'फिर सुबह होगी' का यह गीत भी मेहनतकश अवाम की उम्मीदों, उनके ख्वाबों, अरमानों के एक दिन साकार होने का पैगाम देता है :

'वह सुबह कभी तो आएगी
इन काली सदियों के सर से, जब रात का आंचल ढलकेगा
जब दुख के बादल पिघलेंगे, जब सुख का सागर छलकेगा।
जब अंबर झूम के नाचेगा, जब धरती नगमें गाएगी
वह सुबह कभी तो आएगी।'

एक और कविता 'कल और आज' में भी कवि भविष्य के प्रति आशावान है। इस कविता की एक खासियत इसकी सरल भाषा और भाव प्रवणता है।

कल भी बूंदें बरसी थीं
कल भी बादल छाए थे
और कवि ने सोचा था
रुत बदलेगी, फूल खिलेंगे, झोकें मद बरसाएंगे
उजले-उजले खेतों में रंगीन आंचल लहराएंगे...

इसके अलावा और भी बहुत सारी नज़्में और गीत हैं जिनमें साहिर का तर्ज़ेफिक्र, लफ़्जों का बाना पहने, हर पढ़ने और सुनने वालों को अपने जादू से कायल कर देता है। साहिर की मशहूर नज़्में हैं 'शाहकार', 'ताजमहल' 'ये किसका लहू है' मुझे सोचने दे', 'मेरे गीत तुम्हारे हैं' 'कभी कभी मादाम' 'चकले', मेरे गीत, 'सुबहे नौरोज़'; आदि।

रूमानियत हर शायर की अपने-अपने अंदाज-ए-बयां के लिहाज से उसकी पहचान होती है। उसकी शायरी के जिस्म और रूह के दरम्यान का रिश्ता होता है। साहिर की रूमानियत के साथ एक धीमे-धीमे बढ़ते सरूर की कैफियत होती है जो आदमी को तल्ख हकीकतों की दुनिया के साथ-साथ एक दूसरी दुनिया में भी ले जाती है। जहां यादें हैं, सपने हैं, अरमान हैं, उम्मीदें हैं और हैसियत का अहसास। ये अहसास ही उनकी शायरी को एक अलग मुकाम 'कभी-कभी', 'एक खूबसूरत मोड़ ' पर खड़ा करता है तभी शायर कह उठता है

चलो इक बार फिर से अजनबी बन जाएं हम दोनों
मेरे हमराह भी रुसवाइयां हैं मेरे माज़ी की (अतीत की)
तुम्हारे साथ भी गुजरी रातों के साए हैं...। या फिर कवि पर रोमानियत इस कद्र हावी है कि

चांद मद्धम है, आसमां चुप है, नींद की गोद में जहां चुप है
दूर वादी में दूधिया बादल, झुककर पर्वत को प्यार करते हैं
दिल में नाकाम हसरतें लेकर, हम तेरा इंतजार करते हैं।...

अदबी दुनिया में साहिर लुध्यानवी और पंजाबी की महान कवयित्री अमृता प्रीतम के मुहब्बत के अफसाने काफी चर्चित हुए थे। अमृता ने अपनी आत्मकथा 'रसीदी टिकट' में इन रिश्तों का खुलासा किया था। साहिर ताउम्र कुंआरे ही रहे। फिल्म जगत में आने के बाद मुंबई(तब बंबई) ही उनकी रिहायशगाह रही। वहीं पर 25 अक्तूबर 1980 को उर्दू शायरी और हिंदी सिनेमा के महान गीतकार इस दुनिया-ए-फानी से हमेशा-हमेशा के लिए कूच कर जाते हैं। साहिर की मौत के साथ ही हिंदी फिल्मों के गीतों के स्वर्ण युग का एक किला ढह जाता है। अपने नायाब, लाजवाब अनगिनत गीतों, ग़ज़लों की वजह से साहिर हिंदी वालों के लिए कोई अपरिचित नाम नहीं है। उनके गीत आज भी वैसे ही तरोताजा, रोमानियत से सराबोर, खास अंदाज-ए-बयां के लहजे वाले, दिल की गहराइयों को छूने वाले और देर तक याद रहने वाले व तन्हाइयों में गुनगुनाने के काबिल हैं।

ले दे के अपने पास फ़क़त एक नजर तो है
क्यों देखें ज़िंदगी को किसी की नज़र से हम
माना कि इस जमीं को गुलजार न कर सके
कुछ खार कम तो कर गए, गुजरे जिधर से हम।

32/1, बसंतपुर, सरकाघाट, जिला मंडी, हिमाचल प्रदेश-175 042, मो. 0 98163 17554

आलेख

नासिरा शर्मा के कथा साहित्य में सामाजिक कुरीतियां

● उपदेश सूद

हिंदी कथा साहित्य में नासिरा शर्मा एक ऐसे व्यक्तित्व के रूप में प्रख्यात हैं, जिन्होंने हिंदी की विभिन्न सर्जनात्मक विधाओं पर अपनी लेखनी चलाई है। नासिरा शर्मा का लेखन बच्चों के साहित्य के शुरू हुआ। बच्चों के लिए कहानियाँ लिखने के साथ-साथ इन्होंने अपने आस-पास घट रहे सामाजिक परिवेश को भी अपनी लेखनी का विषय बनाया। अपने देश ही नहीं बल्कि अपनी विभिन्न देशों की यात्रा के दौरान वहाँ के परिवेश को भी इन्होंने शब्द दिए हैं। समाज में घट रही घटनाओं की परतों को खोला है। समाज के प्रत्येक वर्ग को पैनी दृष्टि से देखा है व उसे शब्दों में ढाला है।

नासिरा शर्मा का जन्म 22 अगस्त, 1948 को इलाहाबाद में एक संपन्न मुस्लिम शिया परिवार में हुआ। पिता उर्दू के प्रोफेसर तथा माता एक सफल गृहिणी थीं। इनकी प्राथमिक व माध्यमिक शिक्षा इलाहाबाद के ही एक कॉनवेंट में हुई। बी.ए. की पढ़ाई इलाहाबाद विश्वविद्यालय से की। फारसी भाषा में स्नातकोत्तर उपाधि जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, दिल्ली से प्राप्त की। फारसी भाषा के अतिरिक्त नासिरा शर्मा का झुकाव अंग्रेजी, हिंदी, उर्दू आदि भाषाओं पर भी है। अपनी शिक्षा पूरी होने के बाद दिल्ली में उन्होंने जामिया मिलिया विश्वविद्यालय में फारसी तथा उर्दू अध्यापन कार्य किया। लेखन कार्य की व्यस्तता तथा कुछ कठिनाइयों के कारण अध्यापन कार्य उन्हें छोड़ना पड़ा। इसके कुछ समय बाद रेडियो स्टेशन पर प्रोग्राम ऑफिसर के रूप में कार्यभार संभाला। पत्रकार होने के नाते कई जानी-मानी पत्र-पत्रिकाओं से स्थायी रूप से जुड़ी रहीं। अब स्वतंत्र लेखन कार्य में रत हैं। इन्हें अनेक पुरस्कारों से सम्मानित किया जा चुका है।

किसी भी साहित्यकार का व्यक्तित्व प्रत्यक्ष व परोक्ष रूप से उसके साहित्य में प्रतिबिंबित होता है। नासिरा शर्मा ने बाल साहित्य लेखन के साथ-साथ दस उपन्यास, नौ कहानी संग्रह, दो लेख संग्रह और दो अनूदित कहानी संग्रह लिखे हैं। इसके अतिरिक्त कई पत्रिकाओं का कुशल सम्पादन भी किया है। आधुनिक युग में महिला कहानीकारों में नासिरा शर्मा ने अपनी एक अलग पहचान बनाई है। इनके लेखन का दायरा देश और विदेश की असीमित परिधियों में फैला हुआ है।

नासिरा शर्मा ने समाज के सभी वर्गों पर दृष्टि डाली है और उन्हें शब्द दिए हैं। समाज मानव के जटिल सम्बन्धों का ऐसा समूह है जिसमें स्वहित की कामना से तथा समान उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए व्यक्ति अथवा परिसर स्वेच्छापूर्वक सहयोग देते हैं। मानव समाज के संगठन के लिए सबसे महत्त्वपूर्ण आधार यह है कि मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। समाज के बिना उसके जीवन की कल्पना नहीं की जा सकती। परिवार से लेकर विश्वव्यापी मानव समूह तक को समाज की संज्ञा दी जाती है। व्यक्तियों के इन्हीं पारस्परिक संबंधों के जाल को ही समाज कहते हैं।

मनुष्य और समाज का चोली दामन का सम्बन्ध है। मनुष्य अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए समाज पर ही अवलंबित रहता है। अतः उसे सामाजिक बन्धनों का पालन करना पड़ता है। समाज के बदलते स्वरूप के कारण सामाजिक समस्याओं का स्वरूप भी बदल रहा है। सामाजिक विघटन की यह स्थिति परिवर्तन की तीव्रता के कारण उत्पन्न होती है। समाज की बदलती परिस्थिति में पुरानी परम्पराएँ, मूल्य, व्यवहार, नियम अनावश्यक हो जाते हैं। नव परम्पराओं, मूल्यों, नियमों तथा व्यवहार को व्यक्ति जल्दी से आत्मसात् नहीं कर पाता। परिणामस्वरूप वे समस्याएँ बनकर व्यक्ति के सामने आ जाती हैं। नासिरा शर्मा ने अपने साहित्य में अनेक कुरीतियों का चित्रण करते हुए कई समस्याओं का समाधान भी प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। आज के समाज में लिंग भेद, कन्या-भ्रूण हत्या, जाति-पाति, अवैध सम्बन्ध आदि अनेक कुरीतियाँ अपना विस्तृत दामन फैला चुकी हैं। नासिरा शर्मा के साहित्य में कुरीतियों का वर्णन इस प्रकार है-

लिंग भेद

निम्न मध्यवर्ग में लड़कियों का पुरुष के साथ कंधे-से-कंधा

मिलाकर काम करने को हेय दृष्टि से देखा जाता है। विशेषकर जब वह मुस्लिम परिवेश हो, तो उसे सहन भी नहीं किया जा सकता। भारत के घर-घर में, जहाँ पुराने विश्वास पल रहे हों, वहाँ लड़के को वंश का 'दीया' माना जाता है। भारतीय परिवेश में बेटे को जो लाड-प्यार मिलता है, उस की तुलना में लड़कियों को सिर्फ उपेक्षा ही प्राप्त होती है। कुछ लड़कियाँ जो मन से कमजोर होती हैं, वे इस उपेक्षा भरे माहौल में टूट जाती हैं। पर कुछ लड़कियों में पर्याप्त उपेक्षा की प्रतिक्रिया होती है, वे परिस्थितियों के विरुद्ध संघर्ष करती हैं।

नासिरा शर्मा की 'चार बहनें शीशमहल की' कहानी में चार बहनों की त्रासद कथा को इसी रूप में चित्रित किया गया है। शरीफ के चार बेटियाँ हैं। खानदान में कोई लड़का नहीं, इसी कारण उसकी माँ उसे दूसरी शादी करने की सलाह देती है, 'मेरी मानो, तो दूसरी शादी कर लो बेटा। लड़कियाँ भी पल जाएँगी और तुम्हारी गृहस्थी भी संभल जाएगी . . . मरदों को चार शादियों की इजाजत है, फिर ऐसा क्या है जो नहीं हो सकता?' औरतों के लिए तो कई बंधन हैं परन्तु मर्द मनमानी करने के लिए स्वतन्त्र हैं।

नासिरा शर्मा की 'दहलीज' कहानी इस प्रवृत्ति का दूसरा पहलू उजागर करती है। हमारे परिवेश में लड़की की उपेक्षा और लड़के को ममत्व की दृष्टि से देखा जाता है। बेटे को बेटी की तुलना में अधिक महत्त्व दिया जाता है। कहानी में तीन बहनें हैं- सकीना, हुमैरा, और शाहीन। उनका एक भाई है जावेद। तीनों बहनें पढ़ने में होशियार हैं। स्कूली शिक्षा समाप्त करने पर दादी के कारण आगे पढ़ाई नहीं कर पातीं। जावेद की हर मांग पूरी होती है। उसे पढ़ने का पूरा मौका मिलता है। शिक्षा के लिए विदेश जाना है तो दादी जावेद के लिए पचास हजार रुपयों का प्रबंध करती है। तीनों बहनें यह सब देखती हैं और चाहती हैं कि वे कहीं पार्ट टाईम नौकरी कर लें। परंतु इसमें भी दादी एतराज करती हैं। जिस परिवेश में ये तीनों बहनें जी रही हैं, उसमें उन्हें अपने ढंग से जिंदगी जीने का अधिकार ही नहीं दिया गया है। सकीना अपने भाई जावेद का एक आदेश ठुकराती है, तो दादी सकीना को उससे माफी माँगने को कहती है, 'नस्ल बेटों से चलती है, ये लड़कियाँ तो मुंडेर पर बैठी गौरैया हैं, अपने बसेरे को उड़ जाएंगी, पलटकर नहीं आएँगी। बुरे वक्त का साथ लड़का होता है, चाहे काना ही क्यों न हो।' इसी का नतीजा होता है कि सकीना घुट-घुट कर जीने के लिए अभिशप्त है और शाहीन ने आत्महत्या का रास्ता अपना लिया।

'पत्थर गली' कहानी की फरीदा की भी यही त्रासदी है। घर में उस पर अनेक प्रतिबंध लगाए जाते हैं, जिससे वह बेहद घुटन महसूस करती है। अपनी इच्छा से वह कुछ भी नहीं कर सकती। 'स्कूल के ड्रामे में फरीदा बढ़-चढ़ कर हिस्सा लेती रही थी मगर जब कला केंद्र की बात आई तो घरवालों ने इजाजत नहीं दी। खानदान की बदनामी होगी। फरीदा दिल मसोस कर रह गई उसी के बाद दूसरा मुकाबला डिबेट का रखा गया। मगर वहाँ लड़के-लड़कियाँ साथ थे, इसलिए बड़े भाई साहब बोल पड़े- लड़कियों को घर में रहना चाहिए।" हमारे समाज में विशेषतः मुस्लिम समुदाय में ऐसी अनेक फरीदा घुटन भरा जीवन जीने के लिए विवश हैं जहाँ पर लड़कियों की अपेक्षा लड़कों को अधिक अधिमान दिया जाता है।

'संगसार' कहानी की आसिया अपने पति सुख से असंतुष्ट है, अतः किसी दूसरे व्यक्ति से वह शारीरिक संबंध स्थापित कर लेती है। उसकी माँ उसे समझाते हुए कहती है, 'मर्द सीगा भी करेगा, ब्याहता के रहते दूसरी शादी भी करेगा और बाहर भी जाएगा, उसे कौन रोक सकता है भला? लोग थू-थू भी करेंगे तो फर्क नहीं पड़ता, मगर औरत यह सब करेगी तो न घर की रहेगी, न घाट की।' स्पष्ट है कि समाज में स्त्री-पुरुष में भेदभाव की नीति अपनाई जाती है। स्त्री को पुरुष की अपेक्षा हीन समझा जाता है। डॉ. माधुरी दुबे का कथन इस सम्बन्ध में बिलकुल ठीक लगता है, 'जन्म से अभिशप्त, जीवन से संतप्त, अक्षय वरदानमयी नारी सदियों से समाज द्वारा उपेक्षित और उत्पीड़ित है। उसे यह अधिकार ही कभी नहीं मिला कि वह समाज द्वारा लादे गए बंधनों को काट सके, शृँखलाओं को तोड़ सके और मुक्तभाव से जी सके।' आधुनिक कहे जाने वाले इस समाज में भी नारियाँ इस नियति को भोगने के लिए विवश दिखाई देती हैं।

आज भारतीय समाज बेशक बेटा-बेटी एक समान का नारा लगाए, परंतु वास्तविकता इसके विपरीत है। आज के पढ़े-लिखे समाज में भी लड़कों को अधिक अधिमान दिया जाता है, उन्हें महँगे स्कूलों में भेजा जाता है और लड़कियाँ घर का सारा काम-काज करती हुई शिक्षा ग्रहण कर रही हैं। उनके खान-पान, रहन-सहन में भी भेदभाव किया जाता है। फिर भी कुछ भारतीय परिवार बेटी को कम नहीं आँकते हैं। लिंग भेद विषय पर नासिरा शर्मा ने अपने कथा साहित्य में करारे व्यंग्य किए हैं।

कन्या भ्रूण हत्या

स्त्री के साथ भेदभाव की नीति उसके जन्म के पूर्व से ही प्रारम्भ हो जाती है। सोनोग्राफी के माध्यम से गर्भवती स्त्री के गर्भ में पुत्र है या पुत्री यह जानकारी प्राप्त कर ली जाती है। यदि पुत्र होने वाला है तो परिवार वालों की खुशी का ठिकाना नहीं रहता और यदि पुत्री होने वाली हो तो समस्त परिवारजन दुःखी हो जाते हैं। आसारानी बोहरा के अनुसार, जिस क्षण से भारतीय लड़की धरती पर साँस लेती है, उसकी भावी जिन्दगी का स्वरूप निश्चित होने लगता है। हाय लड़की आ गई की तर्ज पर शोकसभा प्रारम्भ हो जाती है।' नासिरा शर्मा ने कन्याओं के साथ भेदभाव और कन्या भ्रूण हत्या का चित्राण अपने साहित्य में किया है।

'अपनी कोख' कहानी में कन्या भ्रूण हत्या के पक्ष में सास-

बहू दोनों हैं। साधना एक बेटी की माँ है। छः महीने में ही वह दोबारा से गर्भवती हो जाती है। 'सास ने फिर पोते की रट लगाई, सास के साथ साधना के मन में लड़के की तमन्ना मचल रही थी और क्यों न मचलती, आखिर माँ होने के नाते उसको भी बेटा पैदा करना अच्छा लगता। सो दोनों औरतें मन ही मन लड़का होने का जाप करने लगीं। जब बेचैनी हद से बढ़ी तो सास ने बहू से कह दिया कि वह क्यों न पता लगवा ले क्लीनिक जा कर कि आखिर कोख में है क्या? साधना की जिज्ञासा को जैसे पंख लग गए और संदीप के मना करने के बावजूद सास-बहू एक दोपहर क्लीनिक पहुँच गईं। जितनी खुश दोनों गई थीं, उतनी ही थकी उदास लौटीं। सास का तो जैसे दिमाग ही फिर गया था। निराशा ने उनको बौरा-सा दिया, घर पहुँचते-पहुँचते उन्होंने फैसला ले लिया कि यह बच्चा बहू को गिरा देना चाहिए। लड़कियों की फौज तो बनानी नहीं है।' मुझे दूसरी पोती नहीं चाहिए बहू-सास बोली। साधना कह उठी कि हम कर ही क्या सकते हैं? हम दोनों कर सकते हैं। यदि तुम चाहो तो ... सास का उत्तर था। यानी कि ... साधना एकदम सास की बात का अर्थ समझते हुए आशा- निराशा के भाव चेहरे पर लिए सास को ताकने लगी। इस बार वह सास से बोली, 'आपको वचन देती हूँ कि तीसरा गर्भ मैं गिरा दूँगी अगर ... आप मेरा विश्वास कीजिए।' इस प्रकार बेटे की चाह में दोनों सास-बहू कन्या भ्रूण हत्या के लिए तैयार हैं। इस सामाजिक कुरीति को जड़ से उखाड़ फेंकना चाहिए ताकि स्त्री जाति सम्मानपूर्वक जीवन जी सके। नासिरा शर्मा के साहित्य में कन्या भ्रूण हत्या जैसी कुरीतियों का वर्णन किया गया है जो आज एक बहुत बड़ी समस्या है।

जाति-पाति

जाति प्रथा के अंतर्गत ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र का वर्चस्व है। निम्न वर्ण के सदस्यों को परंपरागत रूप से अस्पृश्य या अछूत कहा जाता था, पर आज उन्हें हरिजन या अनुसूचित जाति में परिगणित करते हैं। अछूत जातियों के प्रति उच्च जातियों के सदस्यों द्वारा अपनाई गई छुआछूत की भावना ही अस्पृश्यता है। अस्पृश्यता की समस्या आज उन साठ-करोड़ हिंदुओं की समस्या है, जिन्हें सभी मानवोचित अधिकारों से वंचित करके एक बड़े भाग को पंगु बना दिया गया है। मानव को मानव मात्र से छू लेने पर अपवित्र मान लिया गया है। इसी संदर्भ में विवेकानंद जैसे मर्मज्ञ विद्वान ने कहा था- 'मानव उच्चता का कोई धर्म इतने सुंदर रूप में व्यक्त नहीं करता जितना कि हिंदू धर्म और किसी भी धर्म में मानव का इतना अधोपतन देखने को नहीं मिलता जितना हिंदू धर्म में। अपनी उदारता, वैज्ञानिकता और त्याग में हिंदू धर्म सर्वोच्च है जबकि अस्पृश्यता जैसी भावना के कारण वह निष्कृष्टतम है। यह कैसी विडम्बना है कि एक ओर आदिशंकराचार्य के अज्ञान को काशी में एक शूद्र ने दूर किया था और दूसरी ओर उन्हीं के धर्म की रक्षा के लिए नियुक्त पुरी के शंकराचार्य ने अस्पृश्यता को शास्त्रों द्वारा अनुमोदित कहकर एक संकीर्ण मनोवृत्ति का परिचय दिया।' अतः हमारे प्राचीन ग्रंथों व पुराणों में भी जाति-पाति जैसी समस्या को उजागर किया गया है।

नासिरा शर्मा की कहानियाँ समाज में व्याप्त धर्म, जाति, संप्रदाय आदि की दीवारों को तोड़ती हैं। इन कहानियों में प्रेम का एक निर्मल संसार भी देखने को मिलता है। प्रेम का यह संसार दाम्पत्य जीवन का प्रेम भी है, जहाँ अलग-अलग धर्म के अलग-अलग जाति के स्त्री-पुरुष, पति-पत्नी का सम्बन्ध स्वीकार करते हैं। 'इनसानी नस्ल' कहानी का नवाब धर्म व जाति की परवाह न करते हुए सविता से विवाह कर लेता है। परंतु माँ को यह बात बिलकुल नहीं सुहाती। माँ-बेटे का इसी संदर्भ में यह संवाद द्रष्टव्य है, 'दूसरे मजहब वालों से दोस्ती तो हो सकती है मगर नस्ल नहीं चल सकती। ... अपनी कोख से अपना बच्चा पैदा किया जा सकता है, पराया नहीं।' 'पराया बच्चा इनसान की नस्ल का नहीं होता है। क्या?' होता है, मगर दीन-मजहब, कानून, रीति-रिवाज का भी तो कुछ खयाल करो।' 'ये सब कानून, अम्माँ, इनसान के बनाए हुए हैं। इनसान ही इन्हें बदल सकता है।' माँ दूसरे मजहब की लड़की को दिल से नहीं अपना पाती।

नासिरा शर्मा की कहानियाँ समाज में व्याप्त धर्म, जाति, संप्रदाय आदि की दीवारों को तोड़ती हैं। इन कहानियों में प्रेम का एक निर्मल संसार भी देखने को मिलता है। प्रेम का यह संसार दाम्पत्य जीवन का प्रेम भी है, जहाँ अलग-अलग धर्म के अलग- अलग जाति के स्त्री-पुरुष, पति-पत्नी का सम्बन्ध स्वीकार करते हैं। 'इनसानी नस्ल' कहानी का नवाब धर्म व जाति की परवाह न करते हुए सविता से विवाह कर लेता है। परंतु माँ को यह बात बिलकुल नहीं सुहाती।

'खुशबू का रंग' कहानी की नायिका ने जाति, बिरादरी और देश की परिसीमा लांघकर ऐसे नौजवान से प्यार किया जिसे कभी भी जेल हो सकती थी। माँ-बाप कभी नहीं चाहते थे कि उनकी बेटी ऐसे लड़के से रिश्ता रखे जो अपनी जात-बिरादरी का नहीं है। पापा उसे समझाते हुए कहते हैं कि, 'पर बेटी, वह न हमारी जाति का है न बिरादरी का, न देश का फिर उसका क्या ठीक?' परंतु बेटी विभिन्न तर्क दे कर उससे रिश्ता तोड़ने से इनकार कर देती है। कहानी 'पाँचवां बेटा' में भी जाति को लेकर अमतुल परेशान हो जाती है। इमामबाड़े की छत बारिश के कारण टपकती रहती है जिसके करण अमतुल चिंता में है। उसके चारों बेटे शहर की भीड़ में खो गए हैं। कोई नहीं है जो उसकी मदद करे। ऐसे में उसकी बचपन की सहेली विनती का बेटा सुलाखी इमामबाड़े की

छत पर तिरपाल डालता है। अमतुल को जैसे ही पता चलता है कि सुलाखी इमामबाड़े की छत पर चढ़ा है तो उसके सारे बदन में रोंगटे खड़े हो जाते हैं। वह मुँह ही मुँह में बड़बड़ाई, 'यह क्या कर डाला इस सिरफिरे ने! मेरी मिट्टी पलीद कर दीन-दुनिया तबाह कर डाली।' अमतुल को सुलाखी का छत पर चढ़ना ठीक नहीं लगा। उसे लगा कि उसका धर्म आज भ्रष्ट हो गया है। छोटी जाति वाले सुलाखी को वह जी भर पर कोस रही थी।

कहानी 'सतघरवा' में भी जात-पात की समस्या को उजागर किया है। इस कहानी का नायक अब्दुल शहद का छत्ता निकालने में माहिर है। एक परिवार के अनुरोध पर उसे छत्ता निकालने के लिए बुलाया जाता है। परिवार की बुजुर्ग महिला को वह दादी के रूप में देखता है किंतु दादी की बहू को यह बात पसंद नहीं आती क्योंकि अब्दुल छोटी जाति का है। 'अब्दुल शहद छानकर भरा भगौना गुल्लो को थमाकर बाल्टी लेकर चला गया। उधर मेम साहब का पारा सातवें आसमान को छू रहा था कि इस घर में इन छोटे लोगों को जाने क्यों माताजी मुँह लगाती हैं।' मेमसाहब यानि बहू अब्दुल से इतनी नफरत करती है कि उसे पुलिस द्वारा धमकी दिलवाती है और घर का दरवाजा उसके लिए बंद कर देती है। अतः जाति-पाति की समस्या को नासिरा शर्मा ने अपने कथा साहित्य में चित्रित किया है।

अवैध सम्बन्ध

अवैध संबंध के कई पहलू हैं। कभी यह आर्थिक विवशता के कारण होता है, कभी यौन संतुष्टि की अतृप्ति के कारण स्थापित हो जाते हैं। नौकरी और व्यवसाय में स्त्रियाँ अधिक संख्या में सहभागी हो रही हैं। वहाँ के परिवेश एवं पारस्परिक संपर्क से अवैध संबंधों में वृद्धि हो रही है। नासिरा शर्मा ने इस वर्तमान सच्चाई को अपने कथा साहित्य में अभिव्यंजित किया है।

'संगसार' कहानी की नायिका आसिया अपने पति से यौन तृप्ति नहीं पाती, इसलिए मायके आकर एक पुरुष से तृप्ति करती है। वह अपनी बड़ी बहन आसमा से पूछती है, 'सच बताना, क्या वह सब तुम्हें अपने शौहर से मिला, जिसकी तमन्ना एक औरत के दिल में रहती है, या सिर्फ हर साल एक अदद औलाद का तोहफा मिलता रहा।' आसिया परपुरुष से दैहिक संबंध रखती है। एक दिन वे दोनों शारीरिक सम्बन्ध स्थापित करते हुए पकड़े जाते हैं। पुरुष को उसके मित्र किसी तरह बचा लेते हैं परन्तु आसिया को संगसार करने का आदेश दिया जाता है।

'इच्छा घर' कहानी ऐसी स्त्री की कहानी है जो अपनी इच्छा पूर्ण करने के लिए नैतिकता की सारी सीमाएँ लाँघने में सफलता प्राप्त कर लेती है। नीलम एक मकान खरीदना चाहती है जिसके लिए वह ठेकेदार रामसिंह से आर्थिक सहायता की अपेक्षा रखती है। नीलम विवाहित होने के बावजूद उससे शारीरिक संबंध स्थापित करती है। रामसिंह काम का बहाना बनाकर रूबी को ऑफिस में छोड़कर उसके घर आया। हर तरह से भूख मिटाकर जब वह ऑफिस लौटता तो उसको मरगिल्ली-सी रूबी में कोई आकर्षण नजर नहीं आता था।' नीलम अपनी इच्छा पूर्ति के लिए रामसिंह जैसे भेड़िये की फर्म में अपनी ही बेटी रूबी को नौकरी के लिए भेजती है और अंत में रूबी को उसके हवाले कर देती है।

अवैध संबंध व्यक्ति को पतन की ओर ले जाते हैं। ये संबंध व्यक्ति के सोचने समझने की शक्ति को नष्ट कर देते हैं। 'पत्थर गली' कहानी की नाहिद एक विद्यालय में नौकरी करती है। वहाँ के प्रिसिंपल विवाहित हैं फिर भी उनके नाहिद से शारीरिक संबंध स्थापित हो जाते हैं। 'जिंदगी जीने की हवस में सबके दामन दागदार नहीं, बल्कि जल कर राख-राख हो गए थे। नाहिद ने किसी स्कूल में नौकरी कर ली थी और वही शायद, जाने किस मजबूरी के तहत ... प्रिंसिपल से ... मगर कैसी मजबूरी थी? प्रिंसिपल के तीन बच्चे हैं, बीवी है- क्या मिला नाहिद को' दोनों को अवैध संबंधों के कारण बदनामी के सिवा कुछ न मिला।

'एक न समाप्त होने वाली प्रेमकथा' की चंद्रा विवाहिता है। वह एक परपुरुष से संबंध रखती है तथा अपने पति की मृत्यु का कारण बनती है।

'दूसरा ताजमहल' कहानी की नयना विवाहिता है व उसके बच्चे भी हैं, फिर भी रविभूषण नामक व्यक्ति जो स्वयं तीन बच्चों का पिता है उससे प्रेम करती है। दोनों घंटों तक फोन पर प्रेम वार्तालाप करते रहते। 'नयना के दिल में पति नरेंद्र के खिलाफ भरा गुबार कभी-कभी फोन पर निकल जाता। आखिर एक दिन रवि ने कह दिया कि क्यों सहती हो यह सब? चली आओ सब कुछ छोड़ मेरे पास।' फिर भी वह आशंकित है कि उसका यह रिश्ता मान्य होगा या नहीं। 'क्या बच्चे इस रिश्ते को स्वीकार कर पाएँगे, शायद वे मुझसे घृणा करने लगें।' नयना अपने परिवार में उपेक्षित-सा जीवन यापन करती हुई घुटन महसूस करती है। रविभूषण से बात करना उसे अपने शुष्क जीवन में प्रेमरूपी झरने के बहने का एहसास कराता है। अतः गृहस्थी की चिंता किए बिना वह रविभूषण से संबंध स्थापित करना चाहती है।

'यहूदी सरगर्दन' कहानी में भी लेखिका ने अवैध संबंधों की चर्चा की है। कहानी का नायक वोरहान विवाहित है। चार बच्चों का बाप होते हुए भी वह विवाहिता सहर से शारीरिक संबंध स्थापित करता है। डॉ. वोरहान के शब्दों में, 'तीस साल, मर्द की भरपूर जवानी का जाम छलकने की उम्र होती है, और तीस वर्ष औरत की काम वासना की पराकाष्ठा का समय होता है। सहर तीस वर्ष की भरपूर औरत थी। इश्क और जवानी की दीवानगी हमारे बीच पाँच साल तक चली। ... जाने कैसे उसके पति को हम पर शक हो गया। मैं उसका जीवन खराब नहीं करना चाहता था। इसलिए खामोशी से अमरीका चला गया।' अच्छे परिवार से संबंध रखने के बावजूद दोनों में अवैध संबंध स्थापित हो जाते हैं। सहर

कविता

व्यवस्था के प्यारे लाल

● श्याम सिंह घुना

कुर्सियों पर मसीहा चढ़ गए
आकाओं के आजकल भाव बढ़ गए।

कंक्रीट लोहे के निरंकुश दलाल
हो गए व्यवस्था के प्यारे लाल।

जल जंगल काश्तकारों की ज़मीन
हो गई पूंजी निवेश के अधीन।

आवास कॉलोनियों से आवाजें आ रहीं
ज़मीन की आत्मा को नीतियां क्यों खा रही?

जंगलों का जब कहीं नामोनिशां न होगा
गाते बलखाते नदी नालों का तब क्या होगा?

गांव लिंगाह, डाकघर झिकनीपुल, चौपाल,
जिला शिमला, हिमाचल प्रदेश-171 211

कविता

बारिश

● हरदीप बिरदी

देखो ना बारिश हो रही है, पर इक तेरी कमी है
हवा है भीनी भीनी सी, पर मेरे लिए ये थमी है।

लोगों के लिए है खुशी ये, सब के चेहरे पर रौनक
मुझे देख हैं हैरान सब, इसको न जाने क्या गमी है।

सब हो गया है नया सा, पानी ने साफ कर दी धूल
मेरा ही नहीं हुआ उद्धार, यादों की जो धूल जमी है।

रम गया है पानी जमीं में, प्यास बुझी धरती की
सूखे मन पे न असर हुआ, तेरी याद जो रमी है।

6826, सैट नं. 10, न्यू जनता नगर, डाबा रोड, लुधियाना,
पंजाब-141 003, मो. 90416 00900

ने शादीशुदा होने के बावजूद पति को धोखा देकर डॉ. वोरहान से सालों अवैध संबंध बनाए रखा।

'मिस्र की ममी' कहानी की योता का पति शहाब व्यवसाय हेतु ज्यादातर बाहर रहता है। अकेलापन योता को कचोटता रहता है। वह विवाह पूर्व मित्र कुरूश के प्रति आकर्षित हो जाती है। उससे यौन-तृप्ति प्राप्त कर उसके बच्चे की माँ बनना चाहती है। 'कुइयाँजान' उपन्यास का नायक कपूर अपने वैवाहिक जीवन से सुखी है फिर भी एक अन्य स्त्री से उसके अनैतिक संबंध बन जाते हैं। वह अपने मित्र डॉ. कमाल से बेझिझक कहता है, 'मेरा अफेयर हो गया है।' इस अनैतिक संबंध का उसे कोई पश्चाताप नहीं है। वर्तमान समय में बढ़ते पाश्चात्य प्रभाव के कारण अवैध संबंधों में वृद्धि हुई है।

निष्कर्षतः लेखक एक दीपक के समान होता है जो समाज को सही राह दिखाता है। नासिरा शर्मा ने अपने लेखन के माध्यम से समाज को एक नई दिशा दी है। विभिन्न कहानियों के माध्यम से उन्होंने इन कुरीतियों को हमारे समक्ष रखा है और समाधान भी प्रस्तुत किया है। समाज में व्याप्त कुरीतियाँ समाज को विखंडित करती हैं, देश की प्रगति में बाधक होती हैं तथा देश के विकास को अंधकार के गर्त में डूबो देती हैं। प्रबुद्ध नागरिक होने के नाते हमारा यह कर्त्तव्य बन जाता है कि हम समाज में इन कुरीतियों को पनपने न दें, इन्हें जड़ से उखाड़ फेंके और एक स्वस्थ व जागरूक समाज के निर्माण में अपना योगदान दें।

शुक्ला निवास
ढींगरा एस्टेट, बालूगंज, शिमला-171 005

संदर्भ

1 नासिरा शर्मा, खुदा की वापसी, पृ. 49
2 वही, प . 67
3 नासिरा शर्मा, पत्थर की गली, पृ. 135
4 वही, प . 154
5 माधुरी दुबे, हिन्दी साहित्य के कुछ नारी पात्र, पृ. 1
6 आसारानी बोहरा, नारी शोषण : आयने तथा आयाम, पृ. 24
7 नासिरा शर्मा, बुतखाना, पृ. 22
8 वही, प . 24
9 शंकर दिग्विजय, हिन्दुस्तान, 6 अप्रैल 1969, उद्धृत
10 नासिरा शर्मा, इनसानी नस्ल, पृ. 123
11 नासिरा शर्मा, शामी काग़ज, पृ. 12
12 नासिरा शर्मा, इनसानी नस्त, पृ. 35
13 नासिरा शर्मा, संगसार, पृ. 122
14 नासिरा शर्मा, बुतख़ाना, पृ. 107
15 नासिरा शर्मा, पत्थर गली, पृ. 157
16 नासिरा शर्मा, दूसरा ताजमहल, पृ. 16
17 वही, पृ. 24
18 नासिरा शर्मा, पत्थर गली, पृ. 69
19. नासिरा शर्मा, कुइयाँजान, पृ. 210

आलेख

वीरेंद्र जैन के 'सुखफ़रोश' उपन्यास में नारी और बाजारवाद

● मोहिंद्र सिंह

अर्थव्यवस्था का सामाजिक व्यवस्था से बहुत गहरा संबंध होता है। व्यक्ति, समाज अथवा राष्ट्र के विकास का प्रश्न सीधे-सीधे उसके आर्थिक ढांचे से जुड़ा होता है। मार्क्स का तो यह मानना है कि व्यक्ति तथा समाज के क्रिया-कलापों का नियमन ही उनके आर्थिक संबंधों द्वारा होता है। मार्क्स के मतानुसार, "जीवन की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए भोजन, आवास, वस्त्र आदि के उत्पादन की प्रक्रिया के दौरान मनुष्य परस्पर ऐसे सुनिश्चित संबंध स्थापित करते हैं जो उनकी इच्छा से स्वतंत्र और अपरिहार्य होते हैं तथा जो भौतिक उत्पादन की शक्तियों के विकास की सुनिश्चित अवस्थाओं के अनुरूप हुआ करते हैं। इन संबंधों की समष्टि से समाज का आर्थिक ढांचा बनता है जिसके ऊपर न्यायिक और राजनीतिक व्यवस्था का भवन खड़ा होता है तथा जिसके अनुरूप ही सामाजिक चेतना के सुनिश्चित रूप विकसित होते हैं।"[1] मार्क्स ने न्याय व्यवस्था, राजनीति, धर्म, दर्शन, संस्कृति, साहित्य एवं कला सभी को बाह्य संरचना के अंतर्गत माना है। उत्पादन शक्तियों और उत्पादन संबंधों के निरंतर संघर्ष से उत्पादन विधि में परिवर्तन आता है और उसके अनुकूल ही इस बाह्य संरचना में।

वर्तमान समय में भूमंडलीकरण एक ऐसी पूंजीवादी प्रक्रिया में देखा जा रहा है, जिससे आगे राष्ट्रीय सरकारें जनहित के लिए कोई कदम उठाने में असमर्थ हो जाती हैं। वे अंतर्राष्ट्रीय बाजार के नियम और शर्तों में बंध जाती हैं। भूमंडलीकरण के संबंध में सच्चिदानंद सिन्हा का विचार है, "पूंजीवाद की मृत्यु-कामना करते हुए कार्ल मार्क्स ने 1848 में ही कम्युनिस्ट घोषणापत्र में इसके गुणों का बखान इस रूप में किया था "अपने उत्पादों के बाजार की तलाश बुर्जुआ को पूरे भूमंडल में दौड़ाती है। इसे अपना नीड़ सर्वत्र बनाना है, इसे हर जगह बसना है, इसे अपना संबंध सर्वत्र फैलाना है।"[2] भूंडलीकरण की स्थापना और प्रचार के लिए विभिन्न तत्त्वों की आवश्यकता रहती है।

भूमंडलीकरण की प्रक्रिया के वाहक हैं बहुराष्ट्रीय निगम। मुक्त बाजार, जहां देशों के बीच व्यापारिक प्रतिबंध न हो, पूंजी का मुक्त विनिमय, वित्तीय और आर्थिक नियंत्रण के लिए गठित हुआ अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष, विश्व बैंक, विश्व व्यापार संगठन, बहुराष्ट्रीय कंपनियां, ब्रेटन वुड्स और 'गैट समझौते' भूमंडलीकरण की प्रक्रिया को आगे बढ़ाते हैं। ये संस्थाएं या निकाय विश्व के सभी देशों को ऐसे आर्थिक तंत्र में जकड़ने की कोशिश कर रहे हैं, जहां पूंजी का प्रत्यक्ष शासन चलता है। यही भूमंडलीकरण है। भूमंडलीकरण की व्यवस्था को कार्य के स्तर पर बाजार द्वारा लागू किया जाता है। बाजार हर चीज को वस्तुपरक दृष्टिकोण से देखता है।

अंग्रेजी के 'Market' का हिंदी पर्याय बाजार है जो मूलतः हिंदी में फारसी से आया है। बाजार में वस्तुतः बड़े पैमाने पर जीवनोपयोगी चीजों को खरीदने और बेचने का काम होता है। जो क्रय-विक्रय से संबंधित स्थान होता है, उसे भी बाजार के रूप में जाना जाता है। उपभोक्ता और सौदागर, दोनों के अस्तित्व से बाजार का अस्तित्व बनता है। अतः जिसमें क्रय-विक्रय, लेने-देने या खरीदने-बेचने आदि का व्यापार होता है, उसे बाजार कहते हैं। बाजार के संबंध में अर्जुन चव्हाण का विचार है, "बाजार मूलतः खरीदने-बेचने और लेने-देने के व्यवहार का नाम है। जहां चीजें बेचने और खरीदने की बड़े पैमाने पर व्यवस्था होती है; जहां सौदागरों और ग्राहकों की बड़ी कतार होती है, बहुत बड़ी भीड़ होती है, वहां की स्थिति को बाजार कहा जाता है।"[3] समकालीन समय और समाज में उपभोक्तावादी प्रवृत्ति बढ़ती जा रही है। विभिन्न व्यवसाय करने वालों की संख्या में भी इजाफा हुआ है। अतः बाजार में गहमा-गहमी आ गई है। ऊपर से वैश्वीकरण, निजीकरण तथा उदारीकरण ने उपभोक्तावादी संस्कृति को जन्म दिया है। दुनिया आज सौदागर और उपभोक्ता दो भागों में बंटने लगी है।

बाजार भूख पैदा करता है वस्तु के लिए, जिसके लिए वह कई तरह के हथकंडे अपनाता है, जिसका सबसे असरदार रूप

विज्ञापन है। बाजार के लिए हर चीज़ उपयोगी है। उपयोग की नीति बाजार और भूमंडलीकरण से होते हुए पूंजीपति वर्ग तक पहुंचती है जहां अथाह पैसा है, जो अपनी उपभोग की लालसा को निम्न वर्ग तक लादना चाहता है। एक आम इनसान को अपनी सीमा और जरूरत से ज्यादा चीजों का इस्तेमाल करवाने के लिए, मनोवैज्ञानिक रूप से बाजार कई तरह के हथकंडों का इस्तेमाल करता है। भूमंडलीकरण के व्यापार में वस्तु का जिस प्रकार से आयात-निर्यात हुआ है, उसमें स्त्री के प्रति पारंपरिक वस्तुवादी अवधारणा का इस्तेमाल किया गया है। इस संबंध में राजेंद्र यादव का मत है, "भूमंडलीकरण ने औरतों को अतीत की किसी भी कालावधि के मुकाबले अधिक निर्ममता और संपूर्णता से एक बिकाऊ जिंस में बदल दिया है।"[4] स्त्री को बाजारवादी समाज में एक प्रदर्शन के रूप में इस्तेमाल किया जा रहा है।

आज स्त्री का बाजारीकरण पिछली सारी स्थितियों से बढ़ चढ़कर हुआ है। क्योंकि पहले यह कुछ खास वर्गों तक सीमित था, जिसे बाजार ने अब वस्तु के रूप में हर वर्ग तक खींचने और पहुंचाने की कोशिश की है। बाजार का छोटा रूप भूमंडलीकरण से पहले मौजूद था; उसी बाजार ने भूमंडलीकरण के बाद स्त्री को वस्तु के रूप में इस्तेमाल होने की प्रवृत्ति को व्यापक आयाम दिया है। जहां कोई देश अपने यहां स्त्री सशक्तीकरण की बात करता है, वहीं दूसरी ओर उसको वस्तु के रूप में इस्तेमाल होने पर गैर-जिम्मेदाराना रुख अपनाए हुए है।

नई पीढ़ी के उपन्यासकारों में वीरेंद्र जैन का नाम उल्लेखनीय है। इन्होंने साहित्य की लगभग सभी विधाओं में लेखनी चलाई है। वीरेंद्र जैन को उपन्यास क्षेत्र में विशेष सफलता प्राप्त हुई है। एक उपन्यासकार के रूप में उन्होंने मुख्य रूप से भारत की ग्रामीण एवं सामान्य जनता के दुख-दर्द को चित्रित किया है। वीरेंद्र जैन एक यथार्थवादी उपन्यासकार हैं। वीरेंद्र जैन की साहित्यिक प्रशस्तियों का उल्लेख करते हुए मनोहरलाल ने लिखा है, "दैनिक देशबंधु (जबलपुर) के 'पूछिए परसाई से?' स्तंभ के अंतर्गत मध्य प्रदेश के भाटापारा के नरसिंह यादव ने प्रश्न भेजा जयशंकर प्रसाद, मुंशी प्रेमचंद, हजारीप्रसाद द्विवेदी और माखनलाल चतुर्वेदी का हिंदी साहित्य में उल्लेखनीय योगदान है। चूंकि उक्त साहित्यकार हमारे बीच नहीं रहे, लेकिन इनके स्तर के साहित्यकार या अनुयायी आपके दृष्टिकोण में कौन-कौन हैं? कृपया अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करें।

इसके उत्तर में सुप्रसिद्ध व्यंग्कार हरिशंकर परसाई ने जवाब दिया "उत्तम साहित्य लेखन की परंपरा खत्म नहीं हुई है। आज जो लिख रहे हैं, उनके मरने पर बहुतेरे महान माने जाएंगे। समय में जो कृति टिक जाए वह 'क्लासिक' होती है। मैंने एक तरुण लेखक वीरेंद्र जैन का उपन्यास 'डूब' पढ़ा। ग्राम जीवन की समझ उसका चित्रण, भाषा किसी कदर प्रेमचंद से कम नहीं है। फणीश्वर नाथ 'रेणु' से तो अच्छी है।"[5] कहने का तात्पर्य वीरेंद्र जैन के साहित्य में शिल्प एवं शैली की प्रवाहमय ऊर्जा है। ऊर्जा वर्तमान यथार्थ को पकड़ने की है। उनका 2010 में लिखा गया उपन्यास 'सुखाफ़रोश' भारतीय मध्यवर्ग (विशेषकर महानगरीय मध्यवर्ग) में एक आवेश की तरह व्याप्त बाजारवाद-उपभोक्तवाद को केंद्र में रखकर लिखा गया है। साथ ही इसमें मानवीय संबंधों में आते विचित्र परिवर्तनों को भी लक्षित किया गया है।

विश्व में बहुत सारी कंपनियां लोगों तक अपना सामान पहुंचाना चाहती हैं। इसके लिए वह ऐसे कर्मचारी चाहती हैं जिसे देख, सुन लोग उनपर अतिशीघ्र विश्वास कर ले। फलतः वैश्विक बाजार महिलाओं की ओर देख रहा है। बजार ने जिस तरीके से स्त्री के सौंदर्य की परिभाषा बनाई है, उसका ठीक-ठाक प्रभाव दुनिया के कई समाजों में पड़ा है। जिस कारण स्त्रियां जो बाजार के बनाए गए सौंदर्य के पैमानों को ही अपनाती हैं और उसी में जीने की आकांक्षा रखती है। यह आकांक्षा एक तरीके से बाजार की मानसिकता के अनुरूप है, जो उसे और भी मजबूत बनाती है। "आज हर पेशे में, जिसमें औरतें काम करती हैं, नए सिरे से वर्गीकरण हो रहा है। तमाम पेशे, जिनमें औरते होती हैं, प्रदर्शन के पेशे में बदले जा रहे हैं। पेशों में और व्यापार में सुंदरता को मूल पेशों से अलग श्रेणी की तरह बनाया जा रहा है।"[6] कंपनियां नारी को अपनी कंपनी में विशेष स्थान देती हैं। 'सुखफ़रोश' उपन्यास में **आई हो** कंपनी ग्राहकों को पटाने के लिए नारी का इस्तेमाल करती है। भोले-भाले लोगों को प्रलोभन देकर कंपनियों द्वारा ठगी का शिकार बनाने के लिए नारी का प्रयोग किया जाता है। अविनाश दास के घर में आई हो, कंपनी का फोन आता है, फोन पर बहुत ही मृदु आवाज में कल्पना नामक युवती बोलती है, "मैं **आईहो** यानी इंटरनेशनल हॉलीडेज ऑर्गनाइजेशन से बोल रही हूं। हमारे लकी इनामी ड्रॉ में आपके पापा के तीन इनाम निकले हैं। एक लाख रुपये का बीमा, जिसका प्रीमियम हमारी कंपनी भरेगी। पति-पत्नी को, यानी आपके मम्मी-पापा को हमारे खर्चे पर विदेश में तीन दिन, दो रातें किसी शानदार होटल में बिताने का मौका और एक सरप्राइज गिफ्ट आइटम।"[7] कंपनियां अपने विभिन्न प्रकार के कार्यक्रमों, विज्ञापनों

नई पीढ़ी के उपन्यासकारों में वीरेंद्र जैन का नाम उल्लेखनीय है। इन्होंने साहित्य की लगभग सभी विधाओं में लेखनी चलाई है। वीरेंद्र जैन को उपन्यास क्षेत्र में विशेष सफलता प्राप्त हुई है। एक उपन्यासकार के रूप में उन्होंने मुख्य रूप से भारत की ग्रामीण एवं सामान्य जनता के दुख-दर्द को चित्रित किया है। वीरेंद्र जैन एक यथार्थवादी उपन्यासकार हैं।

और ऑफर की जानकारी के लिए महिला कर्मचारियों का प्रयोग करती है।

कंपनी उन महिला कर्मचारियों को ज्यादा महत्त्व देती हैं जो देखने और बात करने में माहिर हो। जो ग्राहकों को विभिन्न तरीके से सहमत कर सकें। वह परिवार के सदस्यों की पूरी जानकारी रखती हैं और अवसर मिलने पर बेवजह उनकी भी तारीफ कर ग्राहक का ध्यान आकर्षित करती हैं। आयीहो कंपनी की कल्पना अविनाश दास से बात करते हुए अपनी विशेष समझदारी का प्रयोग करती है, "जी आपकी बिटिया ने ही यह नंबर बताया था। इस नंबर पर भी कई बार फोन मिलाया था मगर अफसोस किसी ने यह फोन उठाया ही नहीं। बाद में आपकी बिटिया ने, बड़ा प्यारा नाम है उसका सौम्या। तो सौम्या ने बताया कि आप दफ्तर से कहीं गए हुए हैं और लौटकर दफ्तर नहीं आएंगे बल्कि एक और जगह जाएंगे। उसने वहां का नंबर भी दिया था। मैंने वहां भी फोन किया था।[8] विभिन्न हथकंडों को अपनाकर कंपनी जनता को सहमत करने में सफल हो जाती है। इसी कारण विज्ञापन या प्रचार के लिए स्त्री पहली पसंद बन गई है।

बाजार का सबसे सशक्त पहलू है किसी भी इनसान को मनोवैज्ञानिक रूप से अपनी हैसियत और जरूरत से ज्यादा वस्तुओं का इस्तेमाल करने और खरदीने के लिए सहमत करना। यह सहमति भी ऐसी कि सब कुछ लुटने के बाद भी सामने वाले को उसका अहसास तक न हो। यह मात्र नारी ही कर सकती है। 'सुखफ़रोश' उपन्यास में नारी शक्ति के वशीभूत होकर ही अविनाश दास पहले कल्पना और बाद में काम्या की बातों में अपना सब कुछ गवां बैठता है। अविनाश दास कल्पना की बातों से खुश हो उसकी तारीफ करना शुरू कर देता है। कल्पना अपनी व्यस्तता का बहाना बनाकर किनारा करना चाहती है तो अविनाश दास कहता है, "आप जानती हैं, बल्कि मुझे भी बता चुकी हैं कि मैं एक विजेता हूं। लोग, खासकर लड़कियां तो किसी विजेता के करीब आने की फिराक में रहती हैं और आप हैं कि एक विजेता को अलविदा करने की जल्दी में हैं। इसका मतलब या तो आप लड़की नहीं हैं या फिर दुनियादार नहीं हैं।"[9] अविनाश दास आयीहो कंपनी की कल्पना की बातों में आकर उसकी ही तारीफ करने लग पड़ता है। यही तो कमाल है जिसे बड़ी कंपनियां भुनाती हैं। अविनाश दास स्वयं को विजेता समझकर कंपनी की विभिन्न योजनाओं में धन लगाकर गवां बैठता है।

नारी विज्ञापन का केंद्रबिंदु बन गई है। विभिन्न कंपनियां बाजार की इस मांग को पूरा करने के लिए तत्पर हैं। क्योंकि इस बात से कोई भी इनकार नहीं कर सकता कि जहां नारी होगी, वहां पर पढ़े-लिखे लोग भी उनकी बातों में अकसर आ जाते हैं। आज मल्टीनेशनल कंपनियां नारी को सामने कर लोगों को ललचाकर अपने पास आने पर मजबूर कर देती हैं। 'सुखफ़रोश' उपन्यास में एक सेवानिवृत्त अध्यापक भी इस ठगी का शिकार बनता है, "देखिए मैं एक रिटायर टीचर हूं। आप लोगों ने मुझे यह सब्जबाग दिखाया था कि आपकी ऐशगाह जिसे आप रिसॉर्ट कहते हैं, उसमें हिस्सेदारी लेने से मुझे हर महीने घर बैठे खासी आमदनी हुआ करेगी और मेरा बुढ़ापा चैन से कटेगा।"[10] एक रिटायर अध्यापक रिसॉर्ट में अपने जीवन की सारी पूंजी लगाकर गंवा बैठता है।

लोगों को लुभाने तथा ठगने तक की प्रक्रिया कंपनी की एक सोची समझी रणनीति का हिस्सा होता है। कंपनी अपने काम में बिलकुल निपुण होती है। लेखक ने 'सुखफ़रोश' उपन्यास में आयीहो कंपनी के माध्यम से ऐसी कई कंपनियों की कार्य प्रणालियों से पर्दा उठाया है, "नंबरों की छंटाई में यह ध्यान रखो कि नंबर एक ही इलाके के न हों। डायरेक्टरी में नंबर भले ही अक्षर क्रम से होते हैं लेकिन नंबरों की शुरुआती संख्याओं से पता लग जाता है कि कौन-सा नंबर किस इलाके का है। जिन इलाकों में अपर मिडिल क्लास के लोग रहते हैं, उन्हीं के नंबर नोट करो... सूची बनाते समय इस बात का भी ध्यान रखो कि किन्हीं दो पड़ासियों को एक ही दिन फोन या एक ही हफ्ते में फोन न किया जाए।"[11] कंपनियों की कार्यप्रणाली को उद्घाटित किया गया है। कंपनी इस बात का पूरा ध्यान रखती है कि एक ही इलाके और दो पड़ोसियों को एक साथ फोन नहीं करना है क्योंकि वह आपस में बात कर सकते हैं। वह समझ सकते हैं कि ऐसा भी लोगों को लॉटरी के नाम पर ठगा जा रहा है।

कंपनी के मालिक अपने कर्मचारियों को लोगों को अपने वश में करने के तौर-तरीके समझाते हैं। उन्हें विशेष प्रकार का प्रशिक्षण दिया जाता है। उन्हें अपनी पहचान छुपाकर आम लोगों से बात करने के लिए कहा जाता है। एक युवती को सहज महसूस करवाने के लिए आयीहो कंपनी का एमडी उसे कहता है, "फिर फोन पर तुम जिनसे बतिया रही होती हो, वे तो तुम्हारे सामने भी नहीं होते। न कभी जीवन में सामने आने वाले हैं। उन्हें तो तुम्हारा नाम तक पता नहीं। जिस नाम से तुम उनसे बात कर रही होती हो, वह तो तुम्हारा नाम है नहीं। फिर कैसा संकोच,कैसी शर्म? कैसी झिझक, कैसा भय?... तुम्हारी आवाज मीठी है। तुम हाजिर जवाब हो! इसीलिए मैंने तुम्हें रखा था और यह काम सौंपा था।"[12] कंपनी के कर्मचारी अकसर अपनी असली पहचान छुपाते हैं। इस प्रकार लोगों को ठग कर वह आसानी से बच निकलते हैं।

एक कंपनी नारी को विभिन्न भूमिकाओं में कार्य पर रखती है। या यूं भी कहें कि कंपनी फोन पर बात करने, ग्राहकों से मिलने और ठगी करने के लिए अलग-अलग भूमिका में युवतियों या महिलाओं का प्रयोग करती है। आज नारी की देह की नुमाइश कर लोगों को भोग के लिए आमंत्रित करना आम बात हो गई है। यह सब धन के बलबूते हो रहा है। इस संबंध में राजेंद्र यादव का मत है, "आज के विज्ञापन का संदेश यह है कि सुंदर औरत उसी पुरुष

इन्द्रा रानी की कविताएं

सांझ

होते हैं विराजमान
तेजस्वी रवि बाबा रोज
मुखमंडल पर गुलाल मले
नित्य करते अग्नि प्रज्वलित
निर्धारित समय पर
विशाल हवनकुंड में युगों से।

सृष्टि का यह मूक योगी
सांझ बाला के आते ही
चेहरा जब अपना धोता है
गगन के फर्श पर
फैलती है लालिमा गजब की।



दीवार

गूंगी दीवार सी मैं
नजर आती हूं क्या
उन अशिष्ट लोगों को
जो गाहे बगाहे मुझ पर चिपका देते हैं
अपने उद्‌गार इश्तहार की तरह।

अकसर कसमसा कर मैं रह जाती हूं मौन
राय शुभचिंतकों की 'नो बिल प्लीज' से
बात बन सकती है
मगर एतराज उठाता है मन
ऐसा करने से पूर्व स्वीकारना होगा
मुझे स्वयं को दीवार
जो यकीनन सत्य नहीं है।

524, पॉकेट 5, मयूर विहार-1,
दिल्ली-110 091, मो. 97178 56878

को अपना उपयोग करने देगी जिसके पास कीमत और प्रतिष्ठित ब्रांडों वाली उपभोक्ता चीजें होंगी। औरत की देह का बिकाऊ इस्तेमाल और वह भी इतने खुले निर्लज्ज ढंग से अतीत में कभी नहीं हुआ।"[13] कंपनी अपनी देह को हथियार बनाने वाली युवती को अधिक पैसे अदा करती है। आयीहो कंपनी का एमडी इस प्रक्रिया के लिए एक युवती को तैयार करते हुए कहता है, "मैं तो तभी से तुम्हारे लिए दो नाम भी सोच लिए थे सुगंधा और लावण्या। अभी तुम्हें सपना नाम दिया हुआ है न। तो हे सपना देवी, तन और मन लगाकर काम अंजाम दो और धन लेती रहो। जब तुम्हारा मन कुछ और करने को हो जाए; तब मुझे बताना और तभी यह भी बताना कि इन दोनों में से तुम्हें कौन सा नाम पसंद है। मेरी तरफ से यह वादा रहा कि मैं इनमें से कोई एक नाम किसी और को तभी दूंगा जब एक तुम अपने लिए पसंद कर चुकोगी।"[14] इस प्रकार कंपनी नारी को उनके कार्य के लिए विभिन्न मानदंडों के अनुसार वेतनमान अदा करती है। दैहिक रूप से नारी को कार्य करने के अतिरिक्त और ज्यादा पैसे दिए जाते हैं।

नारी वर्तमान समय में बाजारवाद की मुख्य मांग बन गई है। वह बाजार का केंद्रबिंदु है। आज विज्ञापन, प्रचार और लोगों को अपनी ओर आकर्षित करने के लिए नारी का प्रयोग किया जा रहा है। नारी की मृदु और मोहक आवाज का फायदा बड़ी-कंपनियां उठा रही हैं। लोगों को ठगने और अपनी वस्तुओं का क्रय करने के लिए भी नारी का दैहिक इस्तेमाल हो रहा है। "पूंजी जब कोई जगह बनाएगी तो वह अपने निशान भी बनाएगी; लेकिन ये जो जगह बनी है, आप ध्यान दें कि एक-डेढ़ सदी की ही है। मीरा और रजिया, मुमताज आदि का छोड़ दें, तो ज्यादातर नाम आधुनिक काल के ही हैं, जो पूंजीवादी विकास के साथ ही बने हैं। जाहिर है कि आधुनिक समय में ही औरतों को ज्यादा सत्ता मिली है। लेकिन यह सत्ता शून्य में नहीं बनी है, विकास के रास्ते बनी है।"[15] नारी घर की चारदीवारी से बाहर निकलकर बाजारवाद का एक अहम हिस्सा बन गई है। जहां नारी ने कुछ खोया है, तो बहुत कुछ पाया है।

सुपुत्र श्री अमर सिंह, गांव कुडंग,
डाकघर भिरड़ी, तहसील बैजनाथ, जिला कांगड़ा,
हिमाचल प्रदेश-176 088, मो. 98175 64813

संदर्भ

1. अनिल राकेशी, छायावादोत्तर कविता में समाज-समीक्षा, पृ. 25
2. सच्चिदानंद सिन्हा, भूमंडलीकरण की चुनौतियां, (भूमिका से)
3. अर्जुन चव्हाण, विमर्श के विविध आयाम, पृ. 116
4. राजेंद्र यादव, हंस (मार्च 2001), पृ. 28
5. मनोहरलाल (सं.), वीरेंद्र जैन का साहित्य, पृ. 16
6. राजेंद्र यादव (सं.), हंस पत्रिका (मार्च 2001), पृ. 108
7. वीरेंद्र जैन, सुखफरोश, पृ. 8
8. वीरेंद्र जैन, सुखफरोश, पृ. 36
9. वीरेंद्र जैन, सुखफरोश, पृ. 40
10. वीरेंद्र जैन, सुखफरोश, पृ. 165
11. वीरेंद्र जैन, सुखफरोश, पृ. 162
12. वीरेंद्र जैन, सुखफरोश, पृ. 160
13. राजेंद्र यादव (सं.), हंस (मार्च 2001), पृ. 42
14. वीरेंद्र जैन, सुखफरोश, पृ. 163
15. राजेंद्र यादव (सं.), हंस (मार्च 2001), पृ. 109

संस्मरण-स्मृति

रवींद्र कालिया : एक संवेदनशील कहानी का खो जाना

● राजेंद्र राजन

पंजाब ने कला, साहित्य और फिल्मों के क्षेत्र में एक से बढ़ कर एक हीरे दिये हैं। कुंदन लाल सहगल जालंधर के किला मौहल्ला में रहते थे। 1960-62 के आसपास रवींद्र कालिया के साथ एक ही कक्षा या आगे पीछे उनके दो अंतरंग मित्र पढ़ा करने थे जो बाद में जाने माने सेलीब्रिटीज बने। यानी जगजीत सिंह और सुदर्शन फाकिर। जब जगजीत सिंह मुंबई में 1970 के आसपास संघर्ष कर रहे थे तो रवींद्र कालिया ने ही एक लॉज में उनके आवास की व्यवस्था करवाई थी। सुदर्शन फाकिर की नज़्म जिसे अक्सर लोग गजल समझ बैठते है, वो कागज की कश्ती वो बारिश का पानी को जब जगजीत ने गाया तो वे रातोरात बुलंदी के शिखर पर पहुंच गए। बाद में जगजीत ने फाकिर की लिखी बेशुमार ग़ज़ले गाईं। फाकिर ने बेगम अख्तर के लिए भी ग़ज़लें लिखी। 'यलगार' फिल्म के अलावा कई फिल्मों के गीत लिखे। मगर शराब ने फाकिर को 60 साल के आसपास हमसे छीन लिया। जगजीत सिंह 70 की उम्र में चले गए और रवींद्र कालिया 77 की उम्र में। तीनों का जबरदस्त याराना था।



रवींद्र कालिया से मेरी पहली भेंट 24 दिसम्बर 2005 को कोलकाता में भारतीय भाषा परिषद के कार्यालय में ही स्थित उनके निवास पर हुई थी। तब वे वहां 'वागर्थ' के संपादक थे और ममता कालिया निदेशक। पहली मुलाकात में ही कालिया जी से बेतकल्लुफी का अंदाज दिल को छू गया था। वे हर नए लेखक से यूं मिलते थे जैसे पहले से उनसे परिचित हों। आत्मीयता, बोध, स्नेह, खलूस और हर किसी को अपना दीवाना बना लेने का दूसरा नाम था रवींद्र कालिया। हिमाचल से उनका खास लगाव था और यहां के लेखकों और साहित्यिक व सांस्कृतिक माहौल के बारे में जानकारी हासिल करने में उनकी रुचि को देखकर मैं चकित था। ठीक उसी शाम हम पुनः कोलकाता के एक आलीशान होटल की छत पर एक विवाह में मिले। मैं खासतौर पर शिमला से अपने लेखक, चित्रकार दोस्त मोहन किशोर दीवान की बेटी की शादी में शिरकत करने पहुंचा था।

बहरहाल, बहुमंजिला होटल की उस छत पर शाम अपने पूरे शबाव पर थी। खूबसूरत जवां और हसीं चेहरों चुंधियाती रौशनियों और आर्केस्ट्रा की सुरीली धुनों और गीतों की स्वरलहरियों के दरम्यान मैं खुद को तन्हा सा महसूस कर रहा था। दीवान साहब मुझे कालिया जी की टेबुल पर ले गए जहां वे ममता जी के साथ बातचीत में मशगूल थे। बड़े से खूबसूरत कांच के गिलास में स्कॉच की खुशबू मुझे भी सराबोर किए जा रही थी। टेबुल पर कालिया जी और ममता जी के साथ बैठने की देर थी कि एक जवां वेटर कृत्रिम मुस्कान बेखेरता हुआ मेरे पास आया और बोला 'ड्रिंक्स प्लीज'। मैं यूं शरमा रहा था जैसे सोमरस का मैंने महज किताबों में नाम पढ़ा हो। 'ले लो। भई शिमला से आए हो। ठंड भी साथ लाए हो। ट्रेन के लंबे सफर की थकान दूर हो जाएगी' कालिया जी ने इसरार किया। 'चलिए एक पैग ले लेता हूं। आपका खूबसूरत साथ तो किसी किसी को ही नसीब होता है। ज्यों-ज्यों रात ढलने लगी पैग का हिसाब रखना मुश्किल हो गया। शादी का माहौल तो यूं भी खुशनुमा होता है। फिर मैं और कालिया जी एक कम रौशनी के कोने में चले गए, 'राजन जी ममता जी के सामने पीना मुश्किल है। वे रोकती- टोकती रहती हैं।' ठीक ही तो कहती हैं। लिमिट में ही रहे तो अच्छा है। वैसे मैं और ममता जी जब कुछ देर के लिऐ अकेले थे तो ममता जी ने मुझसे कहा था, रवींद्र से कहो। वे ज्यादा

न पीएं। उन्हें फिक्र हो जाती है ...। खैर बहकने के बाद अकसर आदमी अपना मन खोलने लगता है। उस पर लेखक तो बेहद उतावला होता है। कालिया जी पर जॉनी वाकर ब्लैक लेबल का सरूर था कि उन्होंने अपना मन खोलना शुरू कर दिया, "बस कुछ महीनों की बात है। प्रकाशन और पत्रिका को ज्ञानपीठ ट्रस्ट पुनर्जीवित करना चाहती है। वो लोग यह बर्दाश्त नहीं कर पा रहे कि 'नया ज्ञानोदय' घाटे में छपे और किताबों की बिक्री से संतोषजनक आय न हो।"

वे निकट भविष्य में भारतीय ज्ञानपीठ के निदेशक और 'नया ज्ञानोदय' के संपादक दोनों पदों को सुशोभित करने वाले है। मैं हैरान था कि पहली ही मुलाकात में उन्होंने अपना मन मुझसे खोल दिया था। वैसे कालिया जी जब 2003 में वागर्थ में आए थे तो चंद महीनों में ही उन्होंने पत्रिका को हिंदी साहित्य जगत और पाठकों की चहेती पत्रिका बना दिया था। युवा लेखकों की खोज और उनकी रचनाशीलता को मंच प्रदान कर उन्होंने जता दिया था कि वे भले ही बूढ़े हो रहे हों लेकिन बूढ़े बरगदों की नीरस, चुकी हुई और पुनरावृत्तियों से भरपूर रचनाओं को छाप छाप कर पत्रिका के पन्ने जाया नहीं करना चाहते। यही वजह थी कि कालिया जी के आते ही 'वागर्थ' में छपने वाले युवा लेखकों की होड़ सी लग गई और पत्रिका की लोकप्रियता और ब्रिक्री को नए पंख लग गए। उन्होंने न केवल युवा लेखकों की खोज की अपितु उनकी रचनाओं को चर्चा के केंद्र में लाने का प्रयास किया।

कालिया जी लेखकों, दोस्तों से फोन पर मीठा सा, गुदगुदाता संपर्क बनाए रखते। हंसी, ठिठोली मजाक में वह दोस्तों में नये प्राण फूंकते रहते। वे हर व्यक्ति का फोन अटैंड करते और किसी वजह से बात न हो पाए तो उसे काल बैक करते। कुछ हिंदी लेखक और लेखिकाओं के मध्य प्रगाढ़ संबंधों को यूं बयान करते मानों वे उनके गवाह रहे हो, उनका यह अंदाज मित्रों को सहज बनाना व उनके साथ खुशियां बांटने जैसा था।

अप्रैल 1991 में जब वर्तमान साहित्य के संपादक विभूतिनारायण राय ने उन्हें कहानी महाविशेषांक का अतिथि संपादक का जिम्मा सौंपा तो उसे कालिया ने बखूबी अंजाम दिया था। यह महाविशेषांक बेशुमार लेखकों का संगम था, जो इसके प्रकाशन के बाद, कई साल तक उसमें छपी रचनाओं को लेकर आलोचनात्मक घमासान मचाता रहा और वे आपस में लड़ते-भिड़ते रहे। इसे उस महाविशेषांक की गति या दुर्गति कहें कि घोर आलोचना और न थमने वाली टीका-टिप्पणियों के बीच दर्जनों बेहतरीन कहानियां नेपथ्य में चली गयी या प्रायोजित बहसों के बरक्स उन्हें मुरझाने या कुम्हलाने पर बाध्य कर दिया गया। इस महाविशेषांक का हश्र यह हुआ कि चर्चित कहानी की बहस एक कहानी पर आकर टिक गयी। यानी कृष्णा सोबती की 'ऐ लड़की'। शिमला के समीप मशोबरा में बीमार मां और बेटी के मध्य राग विराग को लेकर रची गयी यह रचना अन्य कई कहानियों पर भारी पड़ी। लेकिन कहानी महाविशेषांक में दर्जनों बेहतरीन कहानियां छपी थी जिनका नोटिस लिया ही नहीं गया। यह हिंदी जगत की त्रासदी है। लेकिन कहानी महाविशेषांक के रूप में कालिया ने हिंदी जगत को एक ऐसा नायाब तोहफा दिया जो आज भी लेखकों और पाठकों की स्मृति में रचा बसा है।

कोलकाता के बाद जब रवींद्र कालिया जी अंततः भारतीय ज्ञानपीठ में बतौर निदेशक और संपादक के रूप में पदासीन हो गए तो उनसे मित्रता प्रगाढ़ होती गयी। 'नया ज्ञानोदय' की लोकप्रियता को वे जिस बुलंदी पर ले गए वह स्वयं में अद्भुत व अविश्वसनीय घटना थी। जिस प्रकार किसी जमाने में पाठकों को हर सोमवार को धर्मवीर भारती के संपादन में छपने वाली साप्ताहिक पत्रिका धर्मयुग की बेसब्री से प्रतीक्षा रहती थी उसी प्रकार 'नया ज्ञानोदय' के नए अंक के इंतजार में पाठक, लेखकगण एक माह तक पलकें बिछाए रहते। इस मायने में कालिया जी जादूगर थे। बेवफाई और प्रेम विशेषांक की धूम रही तो युवा पीढ़ी के रचनाकारों को केंद्र में रख कर निकाले महाविशेषांक हाथोहाथ बिके। ऐसे दौर में जब साहित्यिक पत्रिकाओं की बिक्री पर ग्रहण सा लगा हुआ था और हंस जैसी पत्रिका कुछ हजार तक बमुश्किल बिक पाती थी, 'नया ज्ञानोदय' की प्रसार संख्या 20 हजार तक पहुंच गयी। कालिया जी मुझसे अनेक ऐसे संस्मरण लिखवा पाए जो रूटीन में मैं शायद न लिख पाता। धर्मशाला का शहरनामा, देविका रानी की कुल्लू यात्रा, जालंधर में उपेंद्रनाथ अश्क का कल्लोवाली मोहल्ला या फिर दादा साहब फालके की पहली मूक फिल्म राजा हरीशचन्द्र के संघर्ष पर शोधपरक लेख। वागर्थ में रहते उन्होंने मेरी एक कहानी 'फालतू के लोग' छापी थी तो 'नया ज्ञानोदय' में 'पतझड़-इधर उधर' प्रकाशित की। इस बीच किसी कारणवश मेरी उनसे अनबन भी हो गयी। लेकिन यह उनका बड़प्पन ही था कि उन्होंने मेरी नाराजगी को दिल से नहीं लगाया और मुझसे सहज रूप से दोस्ती बनाए रखी। उनके दुश्मनों की फेहरिस्त में शायद धर्मवीर भारती जैसे लेखक रहे होंगे। मैंने लाजपतनगर में उनके घर जाकर इरावती के लिए उनका लंबा इंटरव्यू करने का प्रयास किया था लेकिन रात में लेट होने और 30-35 किलोमीटर दूर शक्ति नगर एक्सटेंशन में अपनी बेटी के घर पहुंचने के कारण वह इंटरव्यू अधूरा ही रहा और कभी पूरा नहीं हो पाया जिसका मुझे मलाल है।

कालिया जी लेखकों, दोस्तों से फोन पर मीठा सा, गुदगुदाता संपर्क बनाए रखते। हंसी, ठिठोली मजाक में वह दोस्तों में नये प्राण फूंकते रहते। वे हर व्यक्ति का फोन अटैंड करते और किसी वजह

से बात न हो पाए तो उसे काल बैक करते। कुछ हिंदी लेखक और लेखिकाओं के मध्य प्रगाढ़ संबंधों को यूं बयान करते मानों वे उनके गवाह रहे हो, उनका यह अंदाज मित्रों को सहज बनाना व उनके साथ खुशियां बांटने जैसा था। बड़े संपादकों व लेखको में ही ये गुण होते है। मौजूदा दौर में ज्यादातर साहित्यिक पत्रिकाओं के तथाकथित मठाधीश संपादकों में एरोगेंस और अंहकार कूट कूट कर भरे हुए हैं। लेखकों या पाठकों से फोन पर बात करना शायद वे अपनी तौहीन समझते हैं। इस मायने में कालिया जी के अलावा राजेंद्र यादव भी अपवाद रहे। कालिया का जीवन कहानी जैसा ही था। किस्सागोई उनकी नस नस में थी। जब कभी मैंने उन्हें हिमाचल में बर्फबारी के बाद पांगी, लाहुल, रोहतांग आदि इलाकों में जीवन के ठहर जाने के किस्से सुनाए तो उनकी जिज्ञासा देखते ही बनती थी। दिसंबर, जनवरी, फरवरी मार्च में अकसर हैलीकाप्टर की उड़ाने न होने के कारण रोगियों का मौत के आगोश में समा जाना इन क्षेत्रों की ऐसी त्रासदी है जिसके प्रति सभी प्रांतीय सरकारों की संवेदनहीनता याकसां बनी रहती है। 30 अगस्त 2011 को जब मैं 58 साल की आयु पूरी करने पर रिटायर हुआ तो शाम को कालिया जी को फोन किया। मैं बेहद उदास था। 26 साल तक सरकारी नौकरी करने के बाद मानों मेरा कोई प्रिय मुझसे बिछड़ गया हो। मैं अवसाद में डूबा हुआ था। बोले, 'यार तुम क्यों डिप्रैस हो रहे हो? तुम तो भरी जवानी में रिटायर हुए हो। 58 साल की उम्र भी क्या बड़ी होती है। इरावती के अंक निकालो। फिल्में बनाओ। घूमो फिरो। क्रिएटिव व्यक्ति के लिए उम्र कोई मायने नहीं रखती।'

किसी भी पत्रिका को कैसे लोकप्रिय बनाना है, इस कला में रवींद्र कालिया बखूबी सिद्धहस्त थे। उन्हें वन मैन आर्मी भी कहा जाता था। वे जिस भी पत्रिका में संपादक बनकर जाते, देशभर की सभी भाषाओं के लेखकों का एक आभामंडल उनके इर्द-गिर्द अपने लिए स्पेस निर्मित करने लगता। लेखकों की बड़ी फौज वे खुद व खुद तैयार कर लेते। नया ज्ञानोदय में रहते हुए उन्होंने अनेक युवा पीढ़ी महाविशेषांक निकाले और लेखकों की एक ऐसी युवा पीढ़ी तैयार कि जो माकूल मंच के लिए किसी दरिचे की तलाश में थे। युवा लेखकों में जो कहानीकार याद आते हैं उनमें मनीषा कुलश्रेष्ठ, पंकज मित्र, संजय कुंदन, प्रभात रंजन, अनिल यादव, प्रत्यक्षा, सोनाली सिंह, कुणाल सिंह, चंदन पांडेय, तरुण भटनागर, दीपक श्रीवास्तव, वंदना राग, अल्पला मिश्र, मनोजकुमार पांडेय, राकेश मिश्र, शिल्पी, पंखुरी सिन्हा, राजीव कुमार, पंकज सुबीर, शर्मिला बोहरा जालान, राजुलाशाह, विमलचंद्र पाण्डेय, मो.आरिफ, गीत चतुर्वेदी नाम उल्लेखनीय है। इसी प्रकार युवा कवियों के रूपे में जिन लेखकों में अपनी उपस्थिति दर्ज की उनमें हरे प्रकाश उपाध्याय, शिरीषकुमार मौर्य, रवींद्र स्वप्निल प्रजापति, कुमार वीरेंद्र, विशाल श्रीवास्तव, सौमित्र सक्सेना, तुषार धवल, व्योमेश शुक्ल, निशांत, रमेश प्रजापति, अंशु मालवीय, यतींद्र मिश्र, आर. चेतनक्रांति, निर्मला पुतुल इत्यादि चर्चा में रहे। अनेक युवा लेखकों, जिन्हें अच्छे प्रकाशक छापने से गुरेज करते थे, की पुस्तकें भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन से छपवाईं और उन्हें अपनी सृजनात्मक प्रतिभा की अभिव्यक्ति के लिए सार्थक मंच दिया।

नया ज्ञानोदय के प्रेम महाविशेषांक और बेवफाई महाविशेषांक की धूम रही तो इनके लिए कालिया जी की खूब आलोचना भी हुई। लेकिन प्रत्येक विषय पर केंद्रित महाविशेषांक के बारे में हैरत वाली बात यह थी कि अनेक बार पत्रिका के संस्करण बार-बार छपवाने पड़े। हिंदी साहित्य के इतिहास में यह एक अजूबा ही कहा जाएगा। विभूतिनारायण राय ने जब 'नया ज्ञानोदय' में छपे एक साक्षात्कार में औरत के लिए 'छिनाल' शब्द का प्रयोग किया तो महिला लेखिकाओं में हड़कंप सा मच गया। मैत्रीय पुष्पा ने अन्य कुछ लेखिकाओं के साथ मिलकर विभूति और कालिया जी के विरुद्ध आंदोलन सा छेड़ दिया। एक वक्त ऐसा भी आया जब कालिया और विभूति, दोनों की ही नौकरियां खतरे में पड़ने लगी और यह विवाद लंबे समय तक मीडिया में बहस का वायस बना रहा। नया ज्ञानोदय में ही मनाली की तथाकथित लेखिका स्नोवा वार्नो पर भी खूब विवाद छिड़ा जिसकी जड़ में एस. आर. हरनोट का लेख रहा। यह सही है कि विवाद किताबों, पत्रिकाओं और फिल्मों के पाठक और दर्शकों की संख्या में इजाफा करते है। लेकिन रवींद्र कालिया ने कभी भी उन पत्रिकाओं में छपने वाली सामग्री की गुणवता से समझौता नहीं किया जिनके वे संपादक रहे। अलबता सामग्री चयन ऐसा कि आम पाठक भी पत्रिका का दीवाना हो जाए।

बहुत कम पाठक जानते होंगे कि कालिया जी का परिवार मूलतः हिमाचल से संबंध रखता था। उनके पुरखे चिंतपुरनी में पुजारी थे और 100 या 150 साल पहले वे जालंधर जा कर बस गए थे। जालंधर में जब कालिया जी डीएवी कॉलेज में पढ़ते थे तो मोहन राकेश वहां हिंदी पढ़ाते थे। मोहन राकेश अपने इस होनहार विद्यार्थी से इतने प्रभावित हुए कि उनकी पहली कहानी उन्होंने धर्मवीर भारती को धर्मयुग में प्रकाशनार्थ भिजवाई थी। बाद में जब मोहन राकेश सारिका के संपादक बने तो उन्ही की सिफारिश पर कालिया जी को धर्मयुग में उपसंपादक की नौकरी मिली थी। यह बात दीगर है कि मोहन राकेश की ही तरह अपनी शर्तों पर जीने वाले कालिया जी की लम्बे समय तक धर्मवीर भारती से नहीं बनी और मुंबई जैसी चमक धमक वाले शहर को छोड़ कर इलाहाबाद चले गए। धर्मवीर भारती के साथ घोर मनमुटाव और भारती जी की कथित तानाशाही कार्यशैली के कारण कालिया जी ने धर्मयुग को अलविदा कह दिया था।

कभी कभी ऐसा लगता है मानों रवींद्र कालिया के कुशल व चमत्कृत कर देने वाले संपादक ने उनके कथा साहित्य को परदे के

पीछे धकेल दिया हो। उनकी कहानियां काला रजिस्टर, नौ साल छोटी लड़की, सुंदरी उपन्यास खुदा गवाह है, 17-रानाडे रोड आदि की खूब चर्चा रही। लेकिन मुम्बई, इलाहाबाद, दिल्ली, जालंधर आदि जगहों पर उनके कार्यकाल के दौरान लिखे संस्मरण उनके किस्सागो चरित्र व व्यक्तित्व को खूब उभारते हैं। उनके संस्मरणों को पढ़ते हुए प्रतीत होता है जैसे हम कोई फिल्म देख रहे हो। बिम्बों की रचना ऐसी कि पाठक स्थान विशेष पर पहुंच जाए।

1982 में कालिया का उपन्यास 'खुदा सही सलामत है' बहुत चर्चित रहा। 'काला रजिस्टर' मूलत धर्मवीर भारती की हेकड़ी पर केंद्रित कहानी थी। भारती की हिटलरी कार्यशैली कालिया को नाकाबिले बर्दाश्त थी। बस फिर क्या था। मोहन राकेश की सिफारिश पर धर्मयुग में गए थे। छोड़ दी नौकरी। भाषा, शिल्प कथन के स्तर पर उनकी कहानियां, उपन्यास और संस्मरणों का एक बड़ा पाठक वर्ग वे इसलिए तैयार कर पाए क्योंकि उनकी भाषा में नदी की रवानगी थी। उर्दू हिंदी का गजब का सम्मिश्रण या जिसे आम पाठक भी सहजता से समझ लेता था और लम्बे समय तक पाठकों को उनके पात्र हांट करते रहते। कालिया ज्ञानरंजन, काशीनाथ सिंह और दूधनाथ सिंह की पीढ़ी के कथाकार थे। कोलकाता में ही अपने प्रवास के दौरान मैने भारतीय भाषा परिषद की बुकशॉप से कालिया जी के संस्मरणों का संकलन 'गालिब छुटी शराब' खरीदी थी। इस पुस्तक का शीर्षक रहस्यमय है। लगता है इसमें शराब छोड़ने के किस्से हो लेकिन यह तो मय से भरपूर है। जब जब ये संस्मरण हंस, दैनिक ट्रिब्यून और दीगर पत्र पत्रिकाओं में धारावाहिक रूप से छपे उनकी प्रसार संख्या में हैरतअंगेज इजाफा हुआ। कालियाजी ने मुझे बताया था कि 'गॉलिब छुटी शराब' के 11 संस्मरण छप चुके हैं और उन्हें 2-3 लाख की रॉयल्टी मिल चुकी हैं। इस पुस्तक पर उन्हें वाणी प्रकाशन ने कई बार रॉयल्टी के अग्रिम चेक भेजे। किंतु जो पैसा लिख लिख कर पुस्तकों से कमाया वह सब इलाज में गवां दिया।

बहुत कम पाठक जानते होंगे कि कालिया जी का परिवार मूलतः हिमाचल से संबंध रखता था। उनके पुरखे चिंतपुरनी में पुजारी थे और 100 या 150 साल पहले वे जालंधर जा कर बस गए थे। जालंधर में जब कालिया जी डीएवी कॉलेज में पढ़ते थे तो मोहन राकेश वहां हिंदी पढ़ाते थे।

2010 में चण्डीगढ़ में शिरोमणी पुरस्कार प्राप्त करने के बाद कालिया जी और ममता जी शिमला आए थे। गर्मियों के दिन थे। पीटरआफ में सरकारी गैस्ट हाउस में केवल एक ही दिन की आवास व्यवस्था थी। सो नाराज होकर दूसरे दिन दिल्ली लौट गए थे। यूं मैंने उन्हें तत्कालीन मुख्यमंत्री प्रेम कुमार धूमल से भी मिलवाया था लेकिन यह संक्षिप्त सी भेंट थी और अपना उपन्यास '17-रानाडे रोड' की एक प्रति उन्होंने धूमल जी को भेंट की थी। यह बात मेरे लिए ताउम्र अविस्मरणीय रहेगी कि रवींद्र कालिया जी मेरे बार-बार आग्रह के बाद 30 जुलाई को हमीरपुर आए थे और 31 जुलाई को मुंशी प्रेमचंद जयंती पर इरावती के बैनर में संपन्न साहित्य संवाद में वे 'इरावती सृजन सम्मान' के मुख्यअतिथि थे। सरोज परमार को यह सम्मान उन्होंने अपने कर कमलों से प्रदान किया था। कालिया जी के हाथों से यह सम्मान प्राप्त कर सरोज जी फूली नहीं समा रही थी। 30 की शाम को नोएडा से 500 किलोमीटर का इनोवा में सफर तय कर जब हमीरपुर में एनआईटी के गेट पर पहुंचे थे तो तपाक से बोले, 'यार भाई राजन। इतने लंबे सफर में हडडी पसली एक हो गयी।' निश्चित रूप से वे अस्वस्थ थे और कुछ कदम चल पाना भी उनके लिए मुश्किल था। कदाचित मेरे अनुरोध को वे मना नहीं कर पाये थे और विभूतिनारायण, ममता कालिया के साथ हमीरपुर पहुंच ही गए थे। इरावती मेरे प्रति व हिमाचल के लेखकों के प्रति कालिया जी का असीम लगाव, प्रेम, सम्मान भाव और संवेदशीलता जैसे गुणों से वे लबरेज थे कि खूब लंबा सफर तय कर वे हमीरपुर पहुंच पाए थे। ममता कालिया जी को ऊना से हमीरपुर के रास्ते दोनों ओर के खूब हरे भरे पहाड़ों ने मोहित किया था और वे बार-बार इस बात का जिक्र करती रही थीं। फिर 23 सितंबर को कालिया जी के नोयडा से सटे गाजिबाद स्थित फलैट में मैं बमुश्किल पहुंच पाया था। ज्ञानपीठ से रिटायरमेंट के बाद कुछ लाख डिस्काऊट पर कुसुम असल के अंसल बिलडरस से यह फ्लैट खरीदा था। लेकिन यहां वीरानी सी छाई हुई थी और मुझे उनका व ममता जी का सुनसान से माहौल में रहना अखर रहा था। खैर मैं पाखी के कार्यालय में संपादक प्रेम भारद्वाज से भेंट कर टैक्सी लेकर कष्टदायक खोज के बाद कालिया जी की आसमान छूती इमारत में पहुंच पाया था। दूसरे दिन मुझे अपनी बेटी व बच्चों के साथ श्रीनगर जाना था और उससे पूर्व मैं कालिया जी से मिलने का इच्छुक था। बड़े जोरों की भूख लगी थी। सो चार बजे के आसपास ममता जी ने खूब स्वादिष्ट खाना खिलाया था जिसमें चिकन, कढ़ी, चावल और भी बहुत कुछ का अद्भुत कम्बीनेशन था। लेकिन रवींद्र कालिया जी के अस्वस्थ होने के कारण मैं चिंतित था। उन्होंने बताया कि उनके एक बेटे ने इलाहाबाद से शिफ्ट कर पास ही नोएडा में फ्लैट ले लिया है। यह सुखद समाचार था। कालिया जी का जाना हिंदी जगत के लिए ऐसी क्षति है जिसकी कभी पूर्ति नहीं की जा सकती।

(लेखक कहानीकार और इरावती के संपादक हैं)

गांव बल्ह, डाकघर मौंहीं,
तहसील व जिला हमीरपुर, हि. प्र.-177 030
मोबाइल: 94180-20610

विकासात्मक आलेख

बेरोजगार युवाओं के लिए वरदान 'कौशल विकास योजना'

● डॉ. राजेश के. शर्मा

हिमाचल प्रदेश में स्थापित हो रही औद्योगिक इकाइयों, संस्थानों तथा प्रतिष्ठानों को तकनीकी एवं उच्च कुशल श्रमशक्ति उपलब्ध करवाने के उद्देश्य से राज्य सरकार द्वारा मई, 2013 से 500 करोड़ रुपये की 'कौशल विकास भत्ता योजना' कार्यान्वित की जा रही है। इससे बेरोजगार युवाओं के कौशल उन्नयन एवं उनकी रोजगार क्षमता को बढ़ाने में सहायता मिलेगी। इस योजना के अन्तर्गत, कौशल प्रशिक्षण प्राप्त कर रहे युवाओं को एक हजार रुपये प्रतिमाह तथा शारीरिक तौर पर 50 प्रतिशत से अधिक विकलांगजनों को 1500 रुपये प्रतिमाह भत्ता प्रदान किया जा रहा है। भत्ते को अधिकतम दो वर्षों तक प्रदान करने का प्रावधान है। इस योजना के अन्तर्गत अभी तक 1,10,601 युवाओं को लाभान्वित किया जा चुका है और लाभार्थियों को 74,01,23,354 रुपये का भत्ता प्रदान किया गया है।

16 से 36 वर्ष आयु वर्ग के बेरोजगार हिमाचली युवा जिनकी वार्षिक पारिवारिक आय दो लाख रुपये से कम हो, इस योजना का लाभ प्राप्त कर सकते हैं। अभ्यर्थी की शैक्षणिक योग्यता कम से कम आठवीं पास होनी चाहिए, लेकिन मिस्त्री, बढ़ई, लोहार व पलम्बर का प्रशिक्षण प्राप्त करने वाले इच्छुक अभ्यर्थियों के लिए शैक्षणिक योग्यता की शर्त को समाप्त कर दिया है, ताकि अधिक संख्या में युवाओं को लाभान्वित किया जा सके।

राज्य सरकार ने ऐसे प्रशिक्षण संचालकों को पर्याप्त अधोसंरचना सुविधा सुनिश्चित बनाने तथा लाभार्थियों को गुणात्मक प्रशिक्षण सुनिश्चित बनाने के उद्देश्य से आवश्यक दिशा-निर्देश जारी किए हैं। गैर-सूचना प्रौद्योगिकी निजी प्रशिक्षण संस्थानों को सूचीबद्ध करने के लिए प्रदेश के सभी जिलों में संबंधित उपायुक्तों की अध्यक्षता में समितियों का गठन किया गया है। वर्तमान में राज्य में 909 प्रशिक्षण संस्थान प्रमाण पत्र/ डिप्लोमा प्रशिक्षण पाठ्यक्रम का संचालन कर रहे हैं। इन संस्थानों में से 350 सरकारी संस्थान, 355 सरकारी मान्यता प्राप्त निजी प्रशिक्षण संस्थान तथा 204 प्रशिक्षण संस्थान जिला स्तर समितियों द्वारा सूचीबद्ध हैं।

16 से 36 वर्ष आयु वर्ग के बेरोजगार हिमाचली युवा जिनकी वार्षिक पारिवारिक आय दो लाख रुपये से कम हो, इस योजना का लाभ प्राप्त कर सकते हैं। अभ्यर्थी की शैक्षणिक योग्यता कम से कम आठवीं पास होनी चाहिए, लेकिन मिस्त्री, बढ़ई, लोहार व पलम्बर का प्रशिक्षण प्राप्त करने वाले इच्छुक अभ्यर्थियों के लिए शैक्षणिक योग्यता की शर्त को समाप्त कर दिया है, ताकि अधिक संख्या में युवाओं को लाभान्वित किया जा सके।

यह महत्त्वाकांक्षी योजना आई.टी.आई. के सभी पाठ्यक्रमों, पॉलीटैक्निक, राष्ट्रीय कौशल योग्यता संरचना, व्यावसायिक प्रशिक्षण के लिए राष्ट्रीय एवं राज्य परिषद, सरकारी संस्थान/ होटल प्रबन्धन, राष्ट्रीय परिषद द्वारा मान्यता प्राप्त होटल प्रबन्धन संस्थानों द्वारा होटल प्रबन्धन में डिप्लोमा/प्रमाण पत्र तथा सरकार द्वारा मान्यता प्राप्त पाठ्यक्रमों को कवर करती है। इसके अतिरिक्त, सरकार द्वारा मान्यता प्राप्त विश्वविद्यालयों द्वारा प्रदान किए जाने वाले आई.टी/कम्पयूटर सर्टिफिकेट/डिप्लोमा, सरकार द्वारा प्राधिकृत प्रशिक्षण संस्थान, राष्ट्रीय स्तर के संस्थानों जैसे एनआईआईटी, एपटैक, एआईएसईसीटी, हिन्दुस्तान कम्पयूटर्स, कम्पयूटर मेंटिनेंस कारपोरेशन और जैटकिंग इत्यादि संस्थानों में प्रदान किए जाने वाले प्रशिक्षण भी योजना के अन्तर्गत आते हैं।

इसके अतिरिक्त जिला स्तर की समितियों द्वारा सूचीबद्ध संस्थान फैशन डिजाईनिंग, ब्यूटीशियन, कटाई एवं सिलाई, कढ़ाई, बुनाई, सॉफट टवाय मेकिंग, मोबाईल मुरम्मत, वनों पर आधारित बांस की टोकरियां, मूर्तिकला व हस्तशिल्प इत्यादि सूक्ष्म उद्यमों, जो युवाओं को स्वरोजगार आरम्भ करने में मदद करते हैं, भी योजना के अन्तर्गत शामिल किए गए हैं।

नर्सिंग क्षेत्र में रोजगार की

संभावनाओं के दृष्टिगत नर्सिंग में डिप्लोमा/सर्टिफिकेट प्रशिक्षण के अतिरिक्त, बीएससी नर्सिंग/ सरकारी एवं सरकारी संबद्धता प्रशिक्षण संस्थान से नर्सिंग में कोई भी स्नातक डिग्री को अप्रैल, 2015 से इस योजना में शामिल किया गया है।

कौशल विकास कार्यक्रमों के प्रभावी कार्यान्वयन के लिए राज्य में कौशल विकास निगम की स्थापना की गई है। ऊना जिले के हरोली में अनुमानित 18 करोड़ रुपये की लागत से एक कौशल विकास संस्थान की स्थापना की जा रही है। राज्य सरकार चरणबद्ध तरीके से प्रदेश के सभी जिलों में ऐसे संस्थान खोलने पर विचार कर रही है। इन संस्थानों में औद्योगिक इकाईयों की आवश्यकताओं के अनुसार बेरोजगार युवाओं को प्रशिक्षण प्रदान किया जाएगा और इससे प्रशिक्षणार्थियों की 100 प्रतिशत प्लेसमेंट सुनिश्चित होगी। युवाओं को रोजगार के बेहतर अवसर प्रदान करने के लिए सरकार औद्योगिक संगठनों से उन्हें कुशल मानव शक्ति की जरूरतों को पूरा करने के लिए सम्पर्क कर रही है। उद्योगों की आवश्यकताओं के अनुरूप योजना के अंतर्गत नये पाठ्यक्रमों को शामिल करने के लिये आवश्यक पग उठाए जा रहे हैं। राज्य सरकार हिमाचल प्रदेश के युवाओं को कॅरियर काऊंसलिंग सेवाओं पर बल दे रही है। इसके लिए, सरकार एशियन विकास बैंक के सहयोग से 10 जिला स्तरीय रोजगार कार्यालयों को आदर्श कॅरियर केन्द्रों में परिवर्तित किया जा रहा है जिसके लिये 31.70 करोड़ रुपये की राशि आबंटित की गई है। हिमाचल प्रदेश रोजगार कार्यालयों का आधुनिकीकरण करने वाला देश का अग्रणी राज्य होगा। ये मॉडल कॅरियर केन्द्र राज्य के विद्यालयों, कालेजों तथा व्यावसायिक प्रशिक्षण संस्थानों में कॅरियर काउंसलिंग सेवाएं प्रदान करेंगे। कॅरियर काउंसलिंग के दौरान कौशल उन्नयन प्रशिक्षण तथा वर्तमान प्रतिस्पर्धा के दौर में इसके महत्व के बारे में मार्गदर्शन किया जायेगा।

हिमाचल प्रदेश द्वारा शुरू की गई यह महत्त्वाकांक्षी योजना राज्य के बेरोजगार युवाओं के लिये वरदान साबित होने के साथ-साथ उद्योगों को उनकी मांग के आधार पर कुशल मानवशक्ति भी उपलब्ध करवा रही है।

सहायक संपादक, निदेशालय सूचना एवं जन संपर्क, शिमला-2

स्वास्थ्य सेवाओं में अव्वल हिमाचल

● **रवि सहगल**

प्रदेश के लोगों को आधुनिक स्वास्थ्य सेवाएं उपलब्ध करवाने के लिए राज्य सरकार दूर-दराज के क्षेत्रों तक चिकित्सकों एवं पैरा मेडिकल स्टाफ के पदों को भरने के साथ-साथ ढांचागत सुविधाओं को सुदृढ़ करने के निरन्तर प्रयास कर रही है।

प्रदेश के लोगों को बेहतर स्वास्थ्य चिकित्सा सुविधाएं उपलब्ध करवाने तथा अद्यतन तकनीकों के साथ-साथ औषधीय उपचार एवं शल्य चिकित्सा के उच्च मानदंडों की पालना को सुनिश्चित बनाने की वचनबद्धता को कायम रखने के लिए राज्य सरकार ने स्वास्थ्य क्षेत्र को पर्याप्त धनराशि उपलब्ध करवाई है।

पिछले तीन वर्षों के दौरान राज्य सरकार ने उपयुक्त अधोसरंचना एवं स्टाफ सहित ग्रामीण एवं कठिन क्षेत्रों में स्वास्थ्य संस्थान खोलने एवं स्तरोन्नत करने पर विशेष बल दिया है। ग्रामीण स्तर तक गुणात्मक स्वास्थ्य सेवाओं के विस्तार की वचनबद्धता को पूरा करने के लिए इस वित्त वर्ष के दौरान अकेले स्वास्थ्य क्षेत्र में 1050 करोड़ रुपये खर्च किए गए। सरकार के सतत् प्रयासों से हिमाचल प्रदेश उत्कृष्ट स्वास्थ्य मानकों में देश का अग्रणी राज्य बनकर उभरा है। अत्याधुनिक एवं बेहतर ढांचागत सुविधाएं, अनुसंधान सुविधाएं तथा पर्याप्त स्टाफ की उपलब्धता को सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक पग उठाए गए हैं। राज्य सरकार ने पिछले तीन वर्षों के दौरान विशेषज्ञ चिकित्सकों के 60 पद तथा अन्य चिकित्सकों के 500 पदों सहित नर्सों एवं पैरा मेडिकल स्टाफ के अनेकों पदों को भरने के साथ-साथ 100 से अधिक स्वास्थ्य संस्थान खोले अथवा स्तरोन्नत किए हैं।

प्रदेश के दो प्रमुख स्वास्थ्य संस्थानों आईजीएमसी शिमला और डॉ. राजेन्द्र प्रसाद मेडिकल कॉलेज टांडा को सुपर स्पेशियलिटी केन्द्रों के रूप में विकसित किया जा रहा है। भारत सरकार से 567 करोड़ रुपये की वित्तीय सहायता से चम्बा, हमीरपुर तथा नाहन में तीन और मेडिकल कॉलेजों की स्थापना की जा रही है।

अखिल भारतीय चिकित्सा आयुर्विज्ञान संस्थान (एम्स) के सहयोग से राज्य में पहली बार टेली-स्ट्रॉक प्रबंधन कार्यक्रम आरम्भ किया गया है। आईजीएमसी के साथ-साथ नूरपुर, रामपुर और कुल्लू में अत्याधुनिक ट्रॉमा केन्द्रों की स्थापना की जा रही है। प्रदेश सरकार, इंदिरा गांधी मेडिकल कॉलेज एवं अस्पताल शिमला और डॉ. राजेन्द्र प्रसाद मेडिकल कॉलेज टांडा प्रत्येक के

लिए एमबीबीएस की 100 सीटें बहाल करने में सफल हुई है। सरकार के निरन्तर प्रयासों से आईजीएमसी शिमला के नर्सिंग स्कूल को स्तरोन्नत करके नर्सिंग कॉलेज किया गया है।

प्रदेश के दूरवर्ती क्षेत्रों के लोगों को विशेषज्ञ चिकित्सा सेवाएं उपलब्ध करवाने के उद्देश्य से 10 जिलों में विशेषज्ञ चिकित्सकों के अलावा मोबाइल डॉयाग्नोस्टिक इकाइयों की स्थापना की जा रही है तथा इन इकाइयों में अल्ट्रासाउंड की सुविधा और आवश्यक जीवन रक्षक दवाइयां उपलब्ध होंगी।

शिमला के कमला नेहरू मातृ एवं शिशु चिकित्सा अस्पताल में 16.50 करोड़ रुपये की लागत से 100 बिस्तरों के अतिरिक्त खण्ड का निर्माण किया जा रहा है। इसी प्रकार का 100 बिस्तरों वाला मातृ एवं शिशु अस्पताल मण्डी के आंचलिक अस्पताल में स्थापित किया जा रहा है।

भारत सरकार से 567 करोड़ रुपये की वित्तीय सहायता से चम्बा, हमीरपुर तथा नाहन में तीन और मेडिकल कॉलेजों की स्थापना की जा रही है। राज्य के लिए एक एम्स स्वीकृत किया गया है, जो बिलासपुर जिले में स्थापित किया जा रहा है। एम्स की स्थापना से राज्य में स्वास्थ्य सेवाओं की गुणवत्ता और सुदृढ़ होगी।

प्रदेश के दो प्रमुख स्वास्थ्य संस्थानों आईजीएमसी शिमला और डॉ. राजेन्द्र प्रसाद मेडिकल कॉलेज टांडा को सुपर स्पेशियलिटी केन्द्रों के रूप में विकसित किया जा रहा है।

टांडा कॉलेज में 45 करोड़ रुपये की लागत से एक सुपर स्पेशियलिटी खण्ड का निर्माण किया गया है तथा विभिन्न श्रेणियों के 242 पदों को भरा गया है। शिमला के कमला नेहरू अस्पताल को स्तरोन्नत करके मातृ शिशु अस्पताल किया गया है, जहां 100 अतिरिक्त बिस्तर उपलब्ध करवाए जाएंगे।

आईजीएमसी शिमला में 100 बिस्तरों के एक अतिरिक्त परिसर का शीघ्र निर्माण किया जाएगा और इसमें दंत चिकित्सा एवं नर्सिंग कॉलेज भी होगा। प्रधान मंत्री स्वास्थ्य सेवा योजना चरण तीन के अन्तर्गत 150 करोड़ रुपये व्यय करके आईजीएमसी के स्तरोन्यन की योजना स्वीकृत की गई है।

आईजीएमसी शिमला, प्रदेश सरकार का उत्तर भारत में एक मात्र संस्थान है, जो ओपन हार्ट सर्जरी सुविधा के साथ सुपर स्पेशियलिटी एमसीएच कार्यक्रम भी क्रियान्वित कर रहा है। आईजीएमसी के हृदय शल्य केन्द्र को और सुदृढ़ किया गया है और इसमें ओपन हार्ट सर्जरी सहित सीएबीजी, वाल्व बदलना तथा जन्मागत हृदय रोगों की शल्य चिकित्सा सुविधाएं उपलब्ध हैं। ओपन हार्ट सर्जरी करवाने वाले अधिकांश रोगियों को मुख्य मंत्री राहत कोष से वित्तीय सहायता प्रदान की जा रही है। राष्ट्रीय स्वास्थ्य बीमा योजना तथा स्कूल चिकित्सा कार्यक्रम आरम्भ होने से अधिक से अधिक रोगी इस सुविधा से लाभान्वित हो रहे हैं।

हाल ही में आईजीएमसी के यूरोलॉजी विभाग में किडनी में पत्थर के शल्यमुक्त उपचार के लिए लिथोट्रिप्सी सुविधा उपलब्ध करवाई गई है। राज्य सरकार ने आईजीएमसी परिसर में निःशुल्क जीवन रक्षक औषधालय खोला है, जहां गरीब एवं बीपीएल रोगियों को 300 प्रकार की जीवन रक्षक दवाइयां निःशुल्क उपलब्ध करवाई जा रही हैं। अन्य रोगी भी बहुत कम दामों पर इन दवाइयों को प्राप्त कर सकते हैं।

सूचना अधिकारी, निदेशालय सूचना एवं जन संपर्क, शिमला-2

आत्मरक्षा का हथियार 'समर्थ' योजना

● ममता नेगी

राज्य के सर्वांगीण विकास और उन्नति के लिए जरूरी शांतिपूर्ण माहौल बनाए रखने की जिम्मेदारी पुलिस प्रशासन बखूबी निभा रहा है। शासन के इस महत्वपूर्ण क्षेत्र पर राज्य सरकार विशेष ध्यान दे रही है। हिमाचल प्रदेश पुलिस व्यावसायिकता एवं समर्पण की उच्च्य भावना का बेहतरीन प्रदर्शन करती रही है। यही कारण है कि यह पहाड़ी प्रदेश संगठित अपराधों, हिंसा और कानून व व्यवस्था जैसी बड़ी समस्या से लगभग मुक्त है। पुलिस बलों के उत्तरदायी दृष्टिकोण के कारण ही राज्य के लोगों में सुरक्षा की भावना उत्पन्न हुई है।

प्रदेश के पुलिस बल की कानून एवं व्यवस्था बनाए रखने की वचनबद्धता के कारण हिमाचल प्रदेश राज्य शांतिप्रिय एवं सर्वाधिक सुरक्षित राज्य के रूप में जाना जाता है। राज्य सरकार महिलाओं के विरुद्ध किसी प्रकार के अपराध के प्रति बहुत संवेदनशील है और राज्य में महिलाओं के साथ अपराध की घटनाएं लगभग नगण्य हैं तथा राज्य पुलिस बल महिलाओं के प्रति अपराध के सभी मामलों की जांच में मुस्तैदी एवं गुणात्मकता सुनिश्चित बना रहा है जिसके चलते अपराधियों की समय पर ध रपकड़ कर इन्हें कानून के हवाले किया जा रहा है।

राज्य सरकार ने महिला सुरक्षा से जुड़े मामलों का निराकरण करने की दिशा में अनेक नए कदम उठाए हैं जिसके फलस्वरूप, राज्य में पिछले तीन वर्षों के दौरान महिलाओं के प्रति अपराधों की दर में गिरावट आई है। महिला शिकायतकर्ताओं को सुविधाजनक एवं भयरहित वातावरण प्रदान करने के लिये प्रत्येक जिले में महिला सैल एवं मानव तस्करी विरोधी इकाइयों की स्थापना की

गई है। राज्य सरकार ने प्रत्येक पुलिस स्टेशन में 7 से 10 महिला पुलिस कर्मियों को तैनात किया है जिससे महिलाओं के आत्मविश्वास में वृद्धि सुनिश्चित हुई है और साथ ही महिलाएं पुलिस के पास जाकर आपराधिक घटनाओं की बिना किसी झिझक के रिपोर्ट करने में सक्षम हुई हैं। प्रदेश सरकार ने महिलाओं के विरुद्ध अपराध के त्वरित संज्ञान तथा महिलाओं की संकट के दौरान किसी भी कॉल में सतर्कता व तुरंत प्रतिक्रिया करने के लिये पुलिस मुख्यालयों में 'महिला त्वरित बल' की स्थापना की गई है। राज्य सरकार ने महिला हैल्पलाईन, पुलिस एसएमएस सेवा, महिलाओं के विरूद्ध अपराध के माड्यूल की निगरानी के लिये महिला कर्मियों की प्रशिक्षित टीम को तैनात किया है। वर्ष 2015 के दौरान एसएमएस के माध्यम से कुल 2772 शिकायतें प्राप्त हुई जिनमें से अधिकांश का निपटारा कर लिया गया है। महिला शिकायतकर्ताओं से प्राप्त आपातकालीन कॉलों की प्रगति एवं कार्रवाई की निगरानी के लिये राज्य मुख्यालय में पुलिस महानिरीक्षक स्तर के अधिकारी को नोडल अधिकारी के रूप में तैनात किया गया है।

प्रदेश सरकार ने अपराधियों की आसान पहुंच के लिये पुलिस थानों में पर्याप्त महिला पुलिस स्टॉफ को तैनात किया है। राज्य सरकार ने शिमला, धर्मशाला तथा मण्डल में तीन महिला पुलिस थानों की स्थापना की हैं और अब वर्ष 2016 के दौरान बद्दी व कुल्लू में दो और महिला पुलिस थानें खोले जाएंगे।

राज्य सरकार ने 'समर्थ योजना' के अन्तर्गत अपराधों से मुकाबला करने के लिए लड़कियों को सशक्त बनाने की पहल की है। प्रदेश के स्कूलों एवं कालेजों की लड़कियों में आत्मविश्वास उत्पन्न करने के लिये समर्थ योजना आरम्भ की है जिसके तहत प्रदेश पुलिस द्वारा लड़कियों को निहत्थे लड़ने का प्रशिक्षण प्रदान किया जा रहा है। वर्ष, 2015 के दौरान हि.प्र. पुलिस बल ने 89653 लड़कियों को यह प्रशिक्षण प्रदान किया है।

प्रदेश सरकार ने पुलिस थानों में पर्याप्त महिला पुलिस स्टॉफ को तैनात किया है। शिमला, धर्मशाला तथा मंडी में तीन महिला पुलिस थानों की स्थापना की गई है और अब वर्ष 2016 के दौरान बद्दी व कुल्लू में दो और महिला पुलिस थानें खोले जाएंगे। प्रदेश सरकार की योजना प्रदेश के सभी जिलों में चरणवद्ध तरीके से महिला थाने खोलने की है ताकि महिलाओं को एक भयरहित माहौल मिल सके। अपराधियों की त्वरित धरपकड़ तथा कानून के बेहतर प्रवर्तन के परिणामस्वरूप महिलाओं के विरुद्ध होने वाले अपराधों में गिरावट दर्ज की गई है। निश्चित तौर पर इसका श्रेय प्रदेश बल पुलिस को दिया जाना चाहिए। हिमाचल प्रदेश में शासन व्यवस्था देशभर में अव्वल है तथा राज्य सरकार प्रदेश में शांतिपूर्ण वातावरण को बनाए रखने के लिये प्रतिबद्ध है।

सूचना अधिकारी, निदेशालय सूचना एवं जन संपर्क, शिमला-2

दुर्गम क्षेत्रों में भी आरामदेय यात्रा का लुत्फ

● प्रेम ठाकुर

हिमाचल प्रदेश सरकार प्रदेश के दूर-दराज क्षेत्रों तक लोगों को आधुनिक परिवहन सुविधाएं प्रदान करने पर विशेष बल दे रही है। प्रदेश में परिवहन को एकमात्र साधन भूतल परिवहन की महत्ता को ध्यान में रखते हुए यात्रियों को सुरक्षित एवं आरामदायक यात्रा सुविधा उपलब्ध करवाने पर विशेष ध्यान दिया जा रहा है।

लोगों की अपेक्षाओं के अनुरूप परिवहन सेवाओं का आधुनिकीकरण किया जा रहा है। आधुनिक सुविधायुक्त बसों को परिवहन निगम के बेड़े में शामिल किया गया है और कार्यशालाओं में उचित सुविधाएं उपलब्ध करवाने के साथ-साथ विभिन्न स्थानों पर नए बस अड्डों का निर्माण तथा वर्तमान बस अड्डों का उन्नयन व आधुनिकीकरण किया जा रहा है।

हिमाचल प्रदेश के गठन के उपरांत प्रदेश में सड़क नेटवर्क को सुदृढ़ करना राज्य सरकार की सर्वोच्च प्राथमिकता रही है और आज प्रदेश में हजारों किलोमीटर लम्बी सड़कों का जाल बिछ चुका है। पथ परिवहन निगम के पास आज 2655 बसों का बेड़ा है और प्रदेश भर में 2400 रूटों पर बसें चल रहीं है। मैंदानी एवं पहाड़ी क्षेत्रों के सड़क मार्गों पर समुद्रतल से 16 हजार फुट तक की ऊंचाई पर भी निगम की बसें अपनी सेवाएं दे रहीं हैं। चूंकि पहाड़ी एवं दुर्गम क्षेत्रों में बस चलाना एक चुनौतिपूर्ण कार्य है इसलिए चालकों की कार्य क्षमता बढ़ाने पर विशेष ध्यान दिया जाता है।

हिमाचल पथ परिवहन निगम में कार्यरत चालकों और तकनीकी कर्मचारियों की कार्य कुशलता बढ़ाने के लिए अनेक पग उठाए जा रहे हैं। शिमला शहर में पायलट परियोजना के आधार पर कैश लैस टिकट प्रणाली आरम्भ की गई है। प्रति वर्ष बेहतर माइलेज देने वाले चालकों एवं परिचालकों को एक-एक लाख रुपये के प्रोत्साहन पुरस्कार का प्रावधान किया गया है। इसी तरह, बसों के संचालन की लागत में कटौती लाने वाले तकनीकी कर्मचारियों के लिए भी एक लाख रुपये के पुरस्कार प्रदान करने

का निर्णय लिया गया है।

यात्रियों की सुरक्षा सरकार की विशेष प्राथमिकता है जिसे सुनिश्चित बनाने के लिए चालकों को नियुक्ति के समय विशेष प्रशिक्षण दिया जाता है और दुर्घटना की स्थिति में उनके विरुद्ध कठोर अनुशासनात्मक कार्रवाई की जाती है। बसों में सीडी प्लेयर व बड़े आकार के शीशे लगाने पर पाबंदी लगाई गई है। नशे की स्थिति में कोई चालक वाहन न चलाएं, इसके लिए डयूटी के दौरान उनकी जांच की जाती है। समय-समय पर चालकों की चिकित्सीय जांच को भी अनिवार्य बनाया गया है। सड़क जांच समिति द्वारा बसों को चलने योग्य घोषित करने के उपरांत ही सड़कों पर उतारा जाता है। विभिन्न बस अड्डों पर सीसीटीवी कैमरा स्थापित किए गए हैं और चरणबद्ध तरीके से सभी बस अड्डों पर इन कैमरों की सुविधा दी जा रही है।

वोल्वो और अन्य लग्जरी बसों में भी सीसीटीवी स्थापित करने की प्रक्रिया आरम्भ की गई है। उपभोक्ताओं की सुविधा के लिए हेल्पलाइन नम्बर 94180-00529 तथा 98050-00529 आरम्भ किया गया है जिन पर निगम व निजी बसों से सम्बन्धित 50 से 60 कॉल प्रतिदिन प्राप्त हो रही हैं।

गत तीन वर्षों के दौरान निगम के बेड़े में 1300 नई बसें शामिल की गई और 316 और बसें, जिन में 16 लग्जरी बसें भी शामिल हैं, और शामिल की जाएंगी। इसी दौरान 365 नए रूट भी आरम्भ किए गए हैं और बसों को जीपीएस, सीसीटीवी व यात्री सूचना प्रणाली से सुसज्जित किया गया है। सरकार प्रदेश के प्रमुख धार्मिक व ऐतिहासिक स्थलों को लग्जरी बस सेवाओं से जोड़ने के लिए प्रयासरत है। शिमला, दिल्ली, मनाली, चम्बा, धर्मशाला, कांगड़ा, बैजनाथ, पालमपुर, मैकलोडगंज, हमीरपुर, हरिद्वार और चंडीगढ़ में सभी प्रकार की बसों के लिए ऑनलाइन बुकिंग सेवा आरम्भ की गई है। शीघ्र ही इसे रामपुर व सरकाघाट में भी आरम्भ किया जाएगा।

निगम की आमदनी बढ़ाना राज्य सरकार का लक्ष्य है। निगम ने शिमला शहर में टैक्सी सेवाएं आरम्भ की हैं, जो प्रतिबंधित सड़कों पर सफलतापूर्वक चल रही हैं। विशेषकर वरिष्ठ नागरिकों, बीमार व्यक्तियों, शारीरिक रूप से अक्षम लोग, महिलाओं व बच्चे इससे विशेषतौर पर लाभान्वित हो रहे हैं। पर्यटकों की सुविधा के लिए मनाली से रोहतांग रूट पर सीएनजी बस सेवा आरम्भ करने की प्रक्रिया शुरू कर दी गई है।

सामाजिक दायित्व के तहत प्रदेश सरकार सरकारी स्कूलों व महाविद्यालयों के विद्यार्थियों व विशेष रूप से अक्षम लोगों को निःशुल्क बस सेवा उपलब्ध करवा रही है। इसके अतिरिक्त सरकारी कर्मचारियों, पुलिस जवानों और जेल वार्डनों इत्यादि को रियायती दरों पर परिवहन सुविधा प्रदान की जा रही है, जिस पर 110 करोड़ रुपये वार्षिक व्यय हो रहे हैं। प्रदेश सरकार ने पथ परिवहन निगम के कर्मचारियों के कल्याण के लिए अनेक पग उठाए हैं। पथ परिवहन निगम 147 करोड़ रुपये वार्षिक पेंशनों पर व्यय कर रही है, जबकि वर्ष 2012-13 में इसकी देनदारी 47 करोड़ रुपये थी।

सहायक लोक संपर्क अधिकारी,
निदेशालय सूचना एवं जन संपर्क, शिमला-2

यात्रियों की सुरक्षा सरकार की विशेष प्राथमिकता है जिसे सुनिश्चित बनाने के लिए चालकों को नियुक्ति के समय विशेष प्रशिक्षण दिया जाता है। हिमाचल पथ परिवहन निगम में कार्यरत चालकों और तकनीकी कर्मचारियों की कार्य कुशलता बढ़ाने के लिए अनेक पग उठाए जा रहे हैं। वोल्वो और अन्य लग्जरी बसों में भी सीसीटीवी स्थापित करने की प्रक्रिया आरम्भ की गई है। उपभोक्ताओं की सुविधा के लिए हेल्पलाइन नम्बर 94180-00529 तथा 98050-00529 आरम्भ किया गया है



हिमाचल पथ परिवहन निगम में कार्यरत चालकों और तकनीकी कर्मचारियों की कार्य कुशलता बढ़ाने के लिए अनेक पग उठाए जा रहे हैं। शिमला शहर में पायलट परियोजना के आधार पर कैश लैस टिकट प्रणाली आरम्भ की गई है। प्रति वर्ष बेहतर माइलेज देने वाले चालकों एवं परिचालकों को एक-एक लाख रुपये के प्रोत्साहन पुरस्कार का प्रावधान किया गया है।

कहानी

कामघर

● रमेश कुमार सोनी

"मे आई कम इन सर" की पहचानी आवाज ने बॉस को क्रोध दिला दिया क्योंकि वह एक महत्त्वपूर्ण फाईल में उलझे हुए थे। झुंझलाते हुए बेमन से कहा- यस......... तुम फिर आ गए....? काम पूरा हो गया क्या....? नहीं........ तो फिर क्या काम है....? झिझकते हुए बोधराम ने धीमी स्वर में कहा- "सर...... कल की छूट्टी चाहिए....." क्यों....?........... सर कामघर जाना है। कामघर!! ये क्या होता है....? वैसे तो सबके घर में काम होता है ये सुना जरूर था परंतु ये कामघर....... कभी सुना नहीं मैंने। कोई नया बहाना ढूंढकर लाए हो क्या तुम इस बार? पिछले सप्ताह तीन दिन की छुट्टी से वापस आये हो तुम, यहां पेंडिंग फाईलों की बाढ़ आ गयी है कौन निपटाएगा....? मुझे भी जवाब देना पड़ता है, तुम्हारा क्या है? जरा विस्तार से समझाओ कि कामघर किस बला का नाम है....?

डरा सहमा सा बोधराम अपने बॉस को समझाने की कोशिश करने लगा कि आखिर कामघर है क्या? सर जी....किसी के घर में जब कोई मृत हो जाता है तब वहां दुःख के साथ विविध मृतक संस्कार कर्म संपन्न किये जाते हैं जैसे इधर दशकर्म, तेरहवीं और श्राद्ध कर्म आदि किये जाते हैं। यह सब कार्य जिस मृतक के घर में होता है उस घर को- कामघर कहते हैं। सर गांव में मेरे पिता समान गुरुजी का दुखद निधन हुआ है। गांव में उस दिन टावर नहीं था सो सूचना आज मिली है वरना मैं सण्डे को वहां हो आता सर। देखो बोधराम इक्कीसवीं सदी में जी रहें हैं हम, जो चले गये वो देखने नहीं आते कि कौन उनके काम में आया कौन नहीं आया? हां मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है उसके नाते सबके सुख-दुःख में शामिल होना चाहिए। एक काम करो तुम अगले सण्डे को उनके परिवार वालों से मिल आना फाईल में घुसे हुए बॉस की आवाज में तल्खी आने लगी थी। सर......मुझे तो जाना ही होगा लोक लाज की बात है किसी के सुःख में नहीं गया तो चल जाता है, दुःख में खड़ा होना होता है जी। गांव में तो कम लोग हैं सारे पहचाने जाते हैं। वैसे भी यदि इस वक्त में गांव में रहता तो पूरी जिम्मेदारी मेरी होती और सर......... वहां हमारे यहां एक रिवाज है कि ऐसे घरों की सेवा में प्रत्येक घर से कोई न कोई दुःख बाँटने जरूर जाता है कोई रसोई बना के लाकर उन्हें खिलाने कि कोशिश करता है तो कोई उनके काम के समय रसोई बनाने का जिम्मा लेता है या स्वयंसेवा के रूप में परोसने लग जाता है और सबसे बड़ी बात यह है कि दाह संस्कार में हरेक घर से लकड़ी निकलती है वहां दाह क्रिया के लिए लकड़ी खरीदनी नहीं पड़ती। बोधराम अपनी बातों से बॉस को पिघलाने में लग गया था। फाईल पलटते बॉस एक लम्बी चुप्पी के बाद पूछ बैठे, तुम्हारे फाईल का क्या हुआ? सर मैंने पूरी कर दी है......... ठीक है और बाकी के फाईल .... सर वो लौटने पर कर दूंगा............. ठीक है ओवरटाईम करना पड़ेगा मंजूर हो तो जा सकते हो। यस सर की आवाज के साथ केबिन का दरवाजा भिड़ा गया बोधराम थैंक यू कहते हुए.....।

बोधराम जानता था कि इस बार बीमारी का आवेदन लगाता तो उसे बीमारू बता कर इंक्रीमेंट को रोका जा सकता था। पिछली बार बच्चों को एडमीशन दिलाने तीन दिन की बीमारी का बहाना बनाकर वह छुट्टी ले चुका था। बोधराम एक मल्टी नेशनल कंपनी में रायपुर में टाइपिस्ट कम कंप्यूटर आपेरटर था जिसके जिम्मे और भी कई सेक्शन असिस्ट करना था। सुबह नौ बजे से रात नौ बजे तक की बारह घंटे की ड्यूटी होती थी। घर के लिए पूरा बेकार बेकामिल सा हो गया था बोधराम। सारा घरेलू काम पत्नी को करना पड़ता था रात में सिर्फ वह घर में सोने जाता था किसी लॉज की तरह। इन कंपनीयों का बस चलता तो उसकी भी व्यवस्था कर देते। एक तो कम वेतन और दूसरे पूरी ताकत और दिमाग निचोड़ लेते हैं फिर कुछ वर्षों बाद बाहर का रास्ता दिखा देते हैं। गांव के पुरोहित जी ठीक ही कहा करते हैं- जो पढ़ा लिखा है वह बड़े शहर में बड़े लोगों की बड़ी कंपनी में जी हुजूरी करेगा और जो नहीं पढ़ा



है यही स्थानीय लोगों के यहां गुजर-बसर कर लिया करते हैं, जमाना ऐसा ही चल रहा है।

राजधानी रायपुर से बसना महज 135 कि.मी. की दूरी की निजी, सार्वजनिक वाहनों से यात्रा करना सदा से ही थकान भरा रहा है। चार से पांच घंटे की उनकी मन मर्जी झेलनी होती है यात्री सुविधा के अभाव और उपर से पूरा किराया चुकाते हुए उनकी गुण्डागर्दी का बोनस भी मिल ही जाता है। जहां कोई दिखा बस रोक लिया वहीं स्टापेज........ लेकिन स्टापेज आते ही हिटलरी फरमान की आगे जाने वाले न उतरें हमारी जिम्मेदारी नहीं होगी।। लघुशंका के लिए भी रोकने को तैयार नहीं, बच्चों, वृद्धों के साथ बोधराम भी तड़प गया था मन बहलाने फ्लैश बैक में घुस चुका था वह........ हरी भरी वादियां पहाड़ी किनारे गांव, गांव से गुजरती पहाड़ी बारिशी झोरकी (नाला) छोटी सी झोपड़ी और गिने-चुने लोगों के बीच एक छोटा सा प्राथमिक विद्यालय गांव का एक मात्र पक्की छत वाला भवन, पगडंडियां, हैंडपंप, तालाब, शिव मंदिर और आंवला नवमीं तथा शिवरात्रि का उत्सव सब मिलके मनाना, रामनवमी पर कोई भी अपने यहां ब्याह का लगन नहीं करता था क्योंकि सब मिलके कीर्तन नाचते थे कितनी प्यारी धुन होती थी "हरे राम, हरे राम, राम-राम हरे-हरे, हरे कृष्ण, हरे कृष्ण, कृष्ण-कृष्ण, हरे-हरे".................। कैसे कई गांव के साजिंदों के साथ नर्तक अपनी-अपनी थाप में भजन करने को मजबूर कर देते थे। दलों में एक बार महिला दल भी उड़ीसा से बुलाया गया था सभी के लिए भंडारा चलता था, सब प्रेम से महाप्रसाद ग्रहण करते थे। छोटे-बड़े, ऊँच-नीच के भेद से दूर एक प्यारा गांव सदैव एक और नेतृत्व रहता, आदेश माना जाता था सिर्फ एक रिटायर्ड शिक्षक रामदीन का जिनकी अपनी साख उनके ज्ञान और शिक्षा की अलख जगाने को लेकर फैली थी। गुरुजी के नाम से जाने जाते थे मास्टर रामदीन। हर छोटे-बड़े काम में, उनकी सलाह ली जाती थी, सभी के वे मुखिया थे चाहे लड़की की शादी तय करनी हो या वधू पसंद करनी हो यही मुखिया बनकर खड़े होते थे।

कहाँ जाना है...? बोधराम की तंद्रा भंग हुई। हाँ... बसना दो टिकट देना, टिकट लेकर वह फिर उसी चेप्टर की सुध में घुस गया और बुधनी जो उसकी पत्नी थी वह गांव और स्टॉपेज के साथ बस के यात्री गिनते हुए अपने सामानों की सुरक्षा में लगी हुई थी क्योंकि बस में लिखा था- यात्रीगण अपने सामानों की जिम्मेदारी स्वयं करें, हमारी कोई जिम्मेदारी नहीं होगी"।

मास्टर रामदीन उसी के गांव से सेवानिवृत्त शिक्षक थे लेकिन फिर भी पूर्ववत अपनी शिक्षा मुफ्त में वहीं देते थे। आखिर विकास खंड बसना से पैंतालिस कि.मी. दूर स्थित इस गांव में जहां आधुनिक सुविधाएं नाम मात्र को थी, वहां कोई पढ़ा-लिखा नौजवान अपनी पोस्टिंग से पहले ही संशोधन अपने मनचाहे स्थान पर दो-पांच हजार रुपये रिश्वत पर करवा लेता था और गांव है कि सिर्फ रामदीन के हिस्से ही शेष रहा था। हरेली के दूसरे दिन की बात याद है बुधराम को किस तरह गुरुजी उसके घर धमक पड़े थे यह कहते हुए कि- कहां वो फगनी? सुनत हस तोर लईका कई से स्कुल नई आवत है? फगनी अपना दुखड़ा रो बैठी लेकिन गुरु जी के आगे एक ना चली उसकी और आखिरकार उसे वापस स्कूल भेजना ही पड़ा। पढ़ने का जो हौसला दबाया जा रहा था वह जाग उठा और वह पांचवीं, आठवीं, दसवीं, बारहवीं आखिरकार लगातार पास कर गया जब गुरूजी ने कहा था कि पढ़ते-पढ़ते कोपा में आई.टी.आई. कर ले, तकनीकी ज्ञान रोजगार दिला देता है। उसने बात मानी वैसा ही कर लिया, कुछ दोस्तों नें मां बाप के पुस्तैनी रोजगार में लगना उचित समझा, कुछ ने पढ़ाई अधूरी छोड़ दी। इस बीच हैजा के प्रकोप ने उसके मां को भी निगल लिया था। अकेला रह गया। बुधराम को आर्थिक सहयोग गुरुजी से मिला था। शाम को वह कुछ बच्चों का ट्यूशन ले कर उसने कुछ कमाने की भी कोशिश शुरू कर दी थी। गुरुजी भी अकेले बचे रह गये थे उनकी पत्नी का देहावसान एक दुर्घटना में हो चुका था। बेटा सुखराम राजधानी के हॉस्टल में रहकर एम. टेक. परीक्षा पास कर विदेश में नौकरी पर भेजा गया था पाँच साल का कांट्रेक्ट था। रामदीन और बुधराम दोनों अकेले थे लेकिन लगे हुए थे गांव में शिक्षा की अलख जगाने। संस्कृति, परंपरा की रक्षा हेतु इनकी सभी बातों को गाँव वाले मानते क्योंकि सभी को उन्होनें कभी न कभी पढ़ाया ही था लिहाज, मर्यादा, ईज्जत वहाँ अब भी जिन्दा थी। गाँव में मोबाइल का नया-नया टावर लगा था लेकिन बिजली प्रायः बंद होने से उसकी बैटरी चार्ज नहीं हो पाती और नेटवर्क प्रायः फेल हो जाता था। गाँव में अस्पताल के नाम से मितानिन ही एकमात्र डॉक्टर थी। अस्सी की उम्र में गुरुजी डिजिटल दुनिया में पुरानी हड्डी के दम पर संघर्ष कर रहे थे। सुखराम ने लाख चाहा कि वे उनके साथ चलें विदेश में साथ रहें देख-भाल हो जाएगी। गुरुजी ने कहा था कि- तू तो काम पर चला जायेगा वहां मेरी सुध

कौन लेगा? यहाँ गाँव में मेरी सुध लेने एक हजार हाथ-पैर और जांगर है, मेरी चिंता मत कर तू जा।

जब भी बुधराम गाँव की सरहद पर आता उसके रोएँ खड़े हो जाते, आँख भर जाती, माँ की याद...., अपनी कुटिया..., गुरुजी का लाड़... उसे याद आ ही जाता। उसने कभी अपने पिता को देखा नहीं सिर्फ सुना था कि शराब की लत उसे ले डूबी थी। वे एक खेतिहर मजदूर हुआ करते थे। गुरुजी की असामयिक मृत्यु ने उसे हिलाकर रख दिया था। उसकी सुखराम से बात नहीं हो पायी थी चिंता से भरे उसके कदम गाँव की गली में पड़े तो उसने सबसे पहले गुरुजी के कामघर जाना उचित समझा क्योंकि इस बार बुधराम कहीं और जाने की सोच भी नही सकता था वरना उसकी यारी रसिकों के साथ थी और उसने बहुत बार आग्रह कर बुलाया भी था। दरवाजे पर ही सुखराम मिल गया था कहने लगा- 'पूरी तैयारी हो गयी है तुम्हे बस व्यवस्था सम्भालनी है' और कहते हुए गले लगकर रो पड़े दोनों। व्यवस्था का जायजा लेते हुए बुधराम समझ चुका था कि- गुरुजी का संस्कार पैसों पर भारी पड़ा था।

शोक पत्र सभी को मिल चुका था, सभी ओर एक ही चर्चा थी कि गुरुजी के यहाँ कामघर जाना है। सुबह से ही मिलने वाले आने लगे, जत्थे के जत्थे कोई नारियल, कोई फूल तो कोई धोती-पंछा भेंट करता। गुरुजी की तस्वीर पर श्रद्धा सुमन अर्पित कर नाश्ता करते और चल देते। रिश्तेदार जान पहचान वालों के साथ ट्रैक्टर भर-भर के लोग पहुँचने लगे। भीड़ बढ़ती गई एक अटूट सिलसिला चल पड़ा था कि कामघर जाना है। सभी जानते हैं कि गुरुजी भी सभी के यहाँ के छोटे-बड़े सभी कार्यक्रमों में अपनी हाजिरी जरूर देते या शगुन भिजवाते थे सो सारे लोगों के चहेते भी थे। भीड़ जब नाश्ता कर चुकी और समाज के लोग जो पदाधिकारी थे, पहुँच गए तब भीड़ दो पंक्तियों में खड़ी हो गई। एक ओर शोकाकुल परिवार और दूसरी ओर सामाजिक लोग। दोनों ओर से ढांढस और गुरुजी की महत्ता का बखान क्रमशः होने लगे। धन्यवाद ज्ञापन और गंगाजल के साथ सभी को सुखराम ने भोजन हेतु निवेदित किया। इस शुद्धी और समाज मिलौनी की यह अनूठी व्यवस्था इस अंचल में सभी के लिए लागू थी, हैसियत चाहे जो भी हो उसे तो यह करना ही है।

लोग छककर भोजन करने लगे पूड़ी, भात, दालफ्राई, बैंगन और करेले का भजा, पनीर, छोले की महकती सब्जी और मखना का आमील के साथ सेव, खीर, पापड़, सलाद....... आदि। पंगत उठते और बैठते रहे, रेडिमेड दोना, पत्तल और प्लास्टिक के गिलास चलते रहे। लोग कहते रहे सुखराम से या बुधराम से कि अच्छी व्यवस्था किया है चलता हूँ, मुझे दो जगह और जाना है, जल्दी है क्या करोगे सब जगह निपटाना पड़ता है...। नहीं जाओगे तो नहीं चलता.... बुरा मान जाते हैं, एक जगह से होकर आया हूँ....!! अजीब सगल हो चुका था वहां पंगत की भीड़ कूड़ा का ढ़ेर छोड़े जा रही थी, यह कामघर कभी तो जलसाघर लगता तो कभी उपस्थिति घर। व्यवस्था देखते हुए कुछ लोगों की बातें सुनकर संतुष्ट हुआ बुधराम कि अब तो ठीक-ठाक है वरना हैसियत के अनुसार चार से पाँच मिठाई, चार से पाँच सब्जियाँ परोसी जाती थीं, अच्छा है समाज ने प्रतिबंध लगा दिया है। मन ही मन बुधराम ने समाज को शुक्रिया कहा। भीड़ में आगे उसे यह भी सुनने को मिला कि ऐसे ही शादी-ब्याह में मांसाहार पर प्रतिबंध लगा है वरना शराबियों की संख्या बढ़ रही थी। अच्छा हुआ शुभ कार्य में हत्या कहाँ तक जायज थी। लोंगों ने इसमें भी तोड़ निकाला हुआ है जो लोग अब माँसाहार के ज्यादा शौकीन हैं वे इसे मड़वाझरन में करने लगे हैं....!!

कामघर एक तो मृतक का शोक संतप्त परिवार है फिर उस पर ट्रैक्टर भर-भर के टूट पड़ते हैं लोग। गरीब परिवार तो यह बोझ सह नहीं पाता टूट जाता है कर्ज के बोझ से। सामाजिक मर्यादा-परम्परा की दुहाई देकर पाँच से दस हजार लोगों को मृतक भोज कराना और कामघर में शोक का नाम-काम सिर्फ महिलाओं के हिस्से बड़ी अजीब सी बात थी। अंततः पंगत खत्म हुई सामान-दरी समेटे गए सभी ने चैन की सांस ली।

बुधराम और सुखराम को ढांढस देने आए करीबी लोगों के साथ समाज के कुछ लोगों में सायं चाय की चुस्की का दौर चल रहा था, बुधराम ने कह दिया कि- कामघर में भी आप लोगों को आने वालों की संख्या नियंत्रित करनी चाहिए जैसे बारात में नियंत्रित किये हो। उसने शहर के कुछ समाज के उदाहरण से अपनी बात को रेखांकित किया। एक खामोशी के बाद मुखिया ने कहा- दुःख के काम में कैसे किसको रोकोगे....? लोग खिसकते गये धीरे-धीरे यह कहते हुए कि- ये लोग शहर में रहते हैं, गाँव से इनको क्या...? इन्हें शहरी रंग चढ़ गया है....!! बुधराम-सुखराम के बीच वार्ता चल रही थी कि- गाँव में गाँव कहाँ बचा है? सब तो शहरी और औद्योगिक विकास निगल चुका है। ट्रैक्टर, हारवेस्टर, खाद, दवाई, मोबाईल, इंटरनेट, जीन्स, टॉप के साथ खोखले होते रिश्तों में गाँव कहाँ बचा है? दोनो अगली सुबह उदास मन से और टूटी कमर के साथ वापस लौट रहे हैं सिर झुकाए कामघर से.......!!

सुखराम अपने कांट्रेक्ट पूरे करने विदेश चला गया, वहीं बुधराम ने छुट्टी में मित्रों के साथ नाटक मंडली ज्वाइन कर ली। नाटक में उसने कामघर की इस कुरीति को दूर करने का मंतव्य बना लिया था.....। गुरुजी का घर राह देख रहा है कि कोई तो दूसरा गुरुजी उस स्कूल और उस घर में कब रहने आएगा.......? कब स्कूल की प्रार्थना में गुरुजी शामिल होंगें...? कब कामघर जलसाघर होने से बचेगा...?

जे.पी. रोड, बसना
(छ.ग.) 493554, मो. 94242 20209

कहानी

आईना

● रमेश शर्मा

ग्रामीण बैंक की नौकरी करते हुए अनिमेष को लगभग पंद्रह साल होने को थे। इन पंद्रह सालों में सुदूर ग्रामीण अंचलों में जहां जहां बैंक की शाखाएं थी, उसे अलग अलग गांवों में काम करने का अवसर मिला था। शुरुआत के दस साल तो वह गांवों में ही रहा सो गांव के रीति रिवाजों से वह भली भांति परिचित होता गया। बैंक में ग्रामीणों के रोज रोज के आने जाने से संवाद का जो सिलसिला चला, उन सिलसिलों ने जीवन में कई तरह के अनुभव संचित करने का अवसर भी उसे दे दिया। जैसा कि गांव की एक संस्कृति यह भी होती है कि वहां का हर आदमी रक्त संबंधी न हो कर भी कुछ न कुछ आपसी रिश्तों से बंधा रहता है, वह भी इन रिश्तों की डोर में समय के साथ बंधता चला गया। कोई किसी का मामा तो कोई किसी की भाभी, कोई किसी का चाचा तो कोई किसी की मामी। वहां रिश्तों की एक फेहरिश्त होती जो लोगों को आपस में बांधे रखती। आपसी संवाद से नए नए प्रसंग खुलते जो हार्दिक खुशी दे जाते तो कभी उनके कारण जीवन में बिलकुल नए तरह के अनुभव भी मिलते। दस साल का यह अंतराल कई अर्थों में अनिमेष के लिए अनमोल था।



शादी के बाद जब से वह शहर का बाशिंदा बना, रात उसकी शहर में गुजरती और दिन का समय वह इन ग्रामीण क्षेत्रों के बैंको में आकर काम करते हुए बिताने लगा। उसे रोज बस में अप डाउन करते लगभग पांच साल होने को थे। रोज दो घंटे आना और दो घंटे जाना। बस का सफर कष्टदायी होते हुए भी वह इसका आदी हो चुका था। बस में आने जाने वाले रोजाना के यात्रियों से उसकी जान पहचान हो गई थी। बस के चालक और कंडक्टर द्वारा बैंक वाले साहब के नाम से पुकारे जाने के कारण रोजाना के यात्री भी उसे इसी नाम से संबोधित करने लगे थे। पांच साल पहले ग्रामीण जीवन के रिश्तों के मीठे अनुभव पीछे छुटते जा रहे थे। साहब शब्द कभी भी उसे पसंद नहीं था। यह शब्द उसे आपसी रिश्तों के बीच कभी दीवार की तरह लगता तो कभी उसे लगता कि ग्रामीण जीवन में बसी रिश्तों की सहजता को एक दिन यह शब्द निगल जाएगा। यह शब्द अंग्रेजों और राजे महाराजों के समय से चलन में आकर समाज में इस कदर घुसपैठ कर चुका था कि अब इससे लोगों में खौफ पैदा होने लगी थी। संबोधन कम बल्कि रुतबा और खौफ पैदा करने वाले इस शब्द से उसे बचपन से नफरत थी फिर भी इस शब्द से उसका रोज का आमना सामना था। वह तो चाहता था कि उसे कोई भैया पुकारे, कोई भांजा कहे, कोई देवर कहे या इस तरह के किसी अन्य रिश्ते से वह संबोधित हो तो उसके दिल को कितना शुकून मिले, पर साहब शब्द ही उसका असली परिचय बनता जा रहा था।

भले ही वह ग्रामीण क्षेत्रों के बैंकों में काम कर रहा था पर शहर का बाशिंदा हो जाने के कारण पूरी तरह अब शहरी बाबू साहब की एक छवि ग्रामीणों में उसकी बन चुकी थी। उससे लोगों की एक दूरी बनती जा रही थी। वह अब किसी का भांजा किसी का देवर या किसी का भैया नहीं रह गया था।

एक दिन अपनी पत्नी कविता के सामने इन सारी बातों को लेकर उसकी चर्चा हुई थी।

"ये क्या उल्टी सीधी बातें आप कह रहे हैं। आप एक बैंक में मेनेजर हैं, ग्रामीणों से इस तरह के कुछ भी रिश्ते जोड़ना आपको शोभा नहीं देता। अगर आपको लोग साहब कहकर संबोधित कर रहे हैं तो इसमें बुरा क्या है। आपको उनसे थोड़ी दूरी बनाकर रखने में यह शब्द कितना सहायक है, इस बात को समझने की कोशिश आप क्यों नहीं कर रहे हैं!" - बचपन से शहरों में पली बढ़ी एक शहरी पत्नी के जवाब से उसे आश्चर्य नहीं हुआ था।

उसकी पत्नी ने सिरे से उसकी भावनाओं को खारिज कर

दिया था। उसके इस व्यवहार से वह कदापि नाराज नहीं हुआ। वह जानता था कि अनुभवों से गुजरे बिना इन छोटे छोटे रिश्तों की अहमियत को समझा नहीं जा सकता था।

बचपन की घटनाओं को अब तक वह भूला नहीं था। उन दिनों वह दस साल का था। उसके पिता एक गांव में स्कूल मास्टर थे। पिता की तनख्वाह बहुत कम थी इसलिए परिवार का खर्च किसी तरह चलता था। एक बार मां इतनी बीमार हो गई कि शहर में उसका लम्बा इलाज चला। पिताजी के सामने पैसे की समस्या इस कदर खड़ी हो गई कि आगे मां का इलाज करा पाना उनके लिए संभव नहीं हो पा रहा था। उन्होंने जी पी एफ फंड के लिए विभागीय आवेदन भी किया पर उनके साहब ने किसी तरह की संवेदना दिखाए बिना अपात्र होने की बात कहकर इसके लिए साफ इनकार कर दिया था। उन दिनों पिताजी और मां का गांव के हर आदमी से कुछ न कुछ रिश्ता था। इन्हीं रिश्तों के चलते मदद को कई हाथ उठे थे। सबने मां के इलाज में कुछ न कुछ आर्थिक मदद की थी। भले ही मां चल बसी थी पर ग्रामीणों के इस उदारता से भरे आचरण ने उसके दिल में एक बड़ी जगह को घेर लिया था। छोटी उम्र में ही आपसी रिश्तों के अर्थ उसे समझ में आने लगे थे। ये रिश्ते उसके लिए खून के रिश्तों से भी बढ़कर थे क्योंकि खून के रिश्तों ने भी मां के इलाज में उस वक्त पिताजी का कोई सहयोग नहीं किया था।

पत्नी की बातों से आज उसे तकलीफ जरुर हो रही थी पर समय आने पर सारी बातें एक दिन वह भी समझ लेगी इस प्रत्याशा में उसने इस प्रसंग को वहीं विराम दे दिया था।

पत्नी की बातों से आज उसे तकलीफ जरूर हो रही थी पर समय आने पर सारी बातें एक दिन वह भी समझ लेगी इस प्रत्याशा में उसने इस प्रसंग को वहीं विराम दे दिया था।

बैकों में हर तीन साल में स्थानांतरण हो जाने का नियम था। उसे एक ही जगह तीन साल होने को थे। उसका स्थानांतरण होना लगभग तय था। संयोग से स्थानांतरण के बाद उसे जो जगह मिली उसके बारे में अनिमेष को लोगों से जो जानकारी मिली उसके अनुसार उसकी दूरी शहर से बहुत अधिक थी जहां रोज रोज आना जाना संभव ही नहीं था। कविता को यह बात कतई पसंद नहीं आ रही थी कि उन्हें अब गांव की ओर जाना पड़ेगा, पर किसी तरह मजबूरी में वह तैयार हुई थी। शहर में जिस मकान में वे रह रहे थे उनका खुद का नहीं था, इसलिए मकान के देखभाल की भी कोई समस्या उनके सामने नहीं थी। पूरा सामान एक मेटाडोर में लादकर वे आराम से नई जगह के लिए निकल पड़े थे। कविता का उदास चेहरा देखकर रास्ते भर वह उसे समझाने की कोशिश करता रहा। कई जगह रुककर चाय नास्ता करते हुए वे चले जा रहे थे।

नई जगह शहर से दो सौ किलोमीटर दूर थी जहां उसकी पोस्टिंग हुई थी। वे पांच घंटे का सफर तय करने के बाद गंतव्य तक आ पहुंचे थे। लोगों को उनके इंतजार में खड़ा देखकर अनिमेष को खुशी हुई थी। उनके रहने के लिए बैंक की ओर से आवास की व्यवस्था कर दी गई थी। उनके पहुंचने के बाद सारा सामान मेटाडोर से उतार कर ग्रामीणों ने खुद घर के भीतर रख दिया। कविता का यह पहला अनुभव था। यह एक सुंदर सा गांव था, जहां हरियाली के साथ साथ शांति थी। रहने लायक लगभग सारी सुविधा होने के कारण उसकी पत्नी को भी ज्यादा परेशानी नहीं हो रही थी। यहां के लोगों के व्यवहार में एक सादगी और मिठास का अनुभव भी उसे होने लगा था।

कुछ दिनों में ही सबके साथ वे घुलमिल गए थे। उसकी पत्नी किसी की मामी बन चुकी थी तो किसी की भाभी, कुछ महिलाएं प्यार से उसे दीदी कहकर भी बुलाने लगी थीं। शुरुआत में उसकी पत्नी को ये रिश्ते जरूर अटपटे लगते रहे पर धीरे धीरे इसके मर्म को पकड़ना वह सीख रही थी।

धीरे धीरे साहब शब्द अनिमेष का पीछा छोड़ रहा था। इससे उसे बड़ी शांति और खुशी मिल रही थी। पत्नी कविता को ग्रामीण परिवेश में खुशी खुशी ढलते देखकर उसकी आधी परेशानी पहले ही खत्म हो चुकी थी।

बैंक के बाद जब वह घर लौटकर आता तो कविता के चारों तरफ ग्रामीण महिलाएं उसे घेरे हुए बैठी दिखाई पड़तीं। कविता उन्हें कभी सिलाई बुनाई का काम सिखाया करती तो कभी महिलाओं की किसी समस्या को लेकर उनके बीच चर्चा हो रही होती। कविता का एक मकसद यह भी होता कि यहां की महिलाएं अपनी बातों को रखना भी सीखें।

गणेश चतुर्थी का पर्व सामने था। इस अवसर पर ग्रामीण महिलाओं को सामने लाने के लिए एक परिचर्चा का आयोजन उनके बीच तय हुआ था। हालांकि ज्यादातर महिलाएं सार्वजनिक मंच पर सामने आने को तैयार नहीं दिख रही थीं पर कविता ने उन्हें समझा बुझाकर मानसिक रूप से तैयार किया था। सबके मन में एक जिज्ञासा बनी हुई थी कि कौन किस तरह और क्या बोलेगा, पर जब यह परिचर्चा आरंभ हुई तो लोगों को यह देख सुनकर आश्चर्य भी हुआ कि उनके घर की बहू-बेटियां भी अपना एक स्वतंत्र विचार रखती हैं जिसका घरों में सम्मान किया जाना चाहिए।

धीरे-धीरे यह सिलसिला चल निकला। छोटी छोटी बच्चियों पर भी माताओं का असर साफ साफ दिखने लगा। गांव की महिलाओं में एकजुटता देखकर कविता को बहुत खुशी मिलती जिसका जिक्र अनिमेष से कई बार वह कर चुकी थी।

एक बार गांव में जिले के बड़े बड़े अधिकारियों का दौरा था। ग्रामीणों की एक बड़ी सभा आयोजित की गई जिसमें बड़ी संख्या

में महिलाएं भी शामिल हुईं। सभा को एक एक कर सारे अधिकारी संबोधित करते रहे। गांव की समस्याओं को लेकर बहुत से सवाल ग्रामीणों से उन्होंने किए। सवालों के जवाब देने के लिए पहली बार एक वृद्ध ग्रामीण खड़े हुए। उन्होंने आत्मीयतावश एक युवा अधिकारी को बेटा कहकर संबोधित किया। यह बात उन्हें पसंद नहीं आई। उनके चेहरे के हाव भाव से यह साफ साफ झलकने लगा। इसका अंदाजा लग जाने के बाद साथ बैठे एक अन्य अधिकारी ने वृद्ध को टोकते हुए कहा कि बार बार वे बेटा बेटा कहकर संबोधित न करें बल्कि साहब शब्द से उन्हें संबोधित किया जाए तो सभा की गरिमा बनी रहे। उनकी बात सुनकर वृद्ध को झिझक महसूस होने लगी। जिस सहजता से वे अपनी बात कह पा रहे थे वह सहजता अब कहीं खो चुकी थी। कविता भी उस सभा में महिलाओं के साथ बैठी थी। साहब शब्द का खौफ कविता ने जीवन में पहली बार महसूस किया था। अनिमेष कितना सही थे और वह कितना गलत थी आज उसे महसूस हो रहा था। वह चुपचाप थी पर पास बैठी महिलाओं को यह बात सहन नहीं हो पाई। वे एक साथ उठ खड़े हुए और कहने लगे- “एक उम्रदराज व्यक्ति ने बेटा कह दिया तो आप लोगों ने उसे अपमान समझ लिया। क्या आपके पिता भी आप सबको साहब कहकर बुलाते हैं ? माफ करना साहब, यह सब हमारी परंपरा में नहीं है। यहां सबको हम किसी न किसी रिश्ते से संबोधित करते हैं। आपको अगर पसंद नहीं तो आपकी नापसंदगी आपको मुबारक !

महिलाओं की बातें सुनकर युवा अधिकारियों के पसीने छूट गए। उन्होंने अपनी गलती के लिए पूरी सभा के सामने क्षमा मांगी। कविता को अच्छा लगा कि ग्रामीण महिलाओं ने पढ़े लिखे लोगों को आज आईना दिखाया था।

गायत्री मंदिर के पीछे, बोईरदादर,
रायगढ़ छत्तीसगढ़ ,
मो. 9752685148

राधेश्याम भारतीय की लघु कथाएं

भूख

राजकिशोर का बापू नवनिर्मित ईमारत पर काम कर रहा था। ठेकेदार की लापरवाही के कारण उस ईमारत की छत ढह गई। कई मजदूरों के साथ वह भी वहीं दबकर मर गया। आज तीसरे दिन उसका अंतिम संस्कार हो रहा था।

शमशान घाट में राजकिशोर अपने बापू को मुखग्नि देने आगे बढ़ा तो न जाने क्या सोचकर वहीं रुक गया। ''बेटा, आगे बढ़ो, हम तुम्हारे साथ हैं।'' एक बुजुर्ग ने यह कहते हुए राजकिशोर को हिम्मत दी।

वह बढ़ा पर अपने छोटे भाई की ओर और जलती हुई लकड़ी उसे पकड़ाते हुए बोला ''-भाई, बापू को मुखग्नि तू दे।''

''अरे बेटे! ये तू क्या कर रहा है? बाप को अग्नि देने का काम बड़े बेटे का होता है। ऐसा करने से तुम्हारे बापू को मोक्ष मिलेगा। बेटे तू ही अग्नि दे। ये तो वैसे बहुत भी छोटा है।'' उसी बुजुर्ग ने समझाते हुए कहा।

''दादा ...'' इतना कह वह सुबक-सुबक कर रोने लगा।

बूढ़े ने उसे गले से लगा लिया। और उसे चिता की ओर ले जाने लगा।

''नहीं दादा, अग्नि छोटा ही देगा ।''

'' पर क्यूं?''बुजुर्ग ने पूछा।

'' दादा घर में खाने को कुछ नहीं है । यदि मैंने अग्नि दी तो एक सप्ताह मुझे घर पर बैठना पड़ेगा और...... बिना दहाड़ी कैसे काम चलेगा.?...'' यह कहते हुए उसकी आवाज भर्राह गई और वह कोई शब्द न कह पाया।

विश्वास की डोर

रजवंती की सास गाँव से कुछ दिनों के लिए शहर आई थी।

आज जब उसकी बड़ी पोती सुबह सवेरे अपनी स्कूटी पर गई तो वह सोचने लगी बिटिया आज इतनी जल्दी कहाँ चली......। वह आवाज देकर बिटिया से पूछने ही वाली थी कि तभी उसके दिमाग में एक बात आई- जाते हुए को पीछे से आवाज नहीं लगानी चाहिए। जैसे ही उसकी माँ कमरे से बाहर आई तो उसने पूछा, -'' आज बिटिया इतनी जल्दी कहाँ गई ?''

''माँ जी, आज उसे अपने बॉस के साथ एक प्रोजैक्ट पर जाना है।''

''क्या! .....बहू मुझे ये सब ठीक ना लागे। जवान बच्चों के मामले में इस तरह की लापरवाही ठीक नहीं........।''

''माँ जी, कम्पनियों में साहब के साथ जाना आम बात है। वैसे भी मेरी बेटी के बड़े अरमान हैं। वो आसमान की बुलन्दियों को छूना चाहती........''

''वो सब तो ठीक है,पर, बहू हमने भी दुनिया देखी है। ... आसमान में उड़ती पतंग की डोर कब कोई काटकर ले जाए, पता नहीं चलता। आदमी को जानवर बनते देर लगती है क्या भला? बुढ़िया ने बहू की बात बीच में ही काटते हुए कहा।''

''पर मां जी, मेरी बच्ची ऐसी नहीं है। वह मेरी विश्वास की डोर से बंधी है और मैं अच्छी तरह जानती हूँ। मेरी बेटी इस डोर को कभी कटने नहीं देगी, पहले भी उसने अपनी मजबूती के उदाहरण दिए हैं। अब बच्चों पर विश्वास तो करना ही पड़ेगा। '' इतना कहकर रजवंती अपने कमरे में चली गई।

नसीब विहार कॉलोनी, घरौंडा, करनाल,
हरियाणा-132 114, मो. 0 93153 82236

कहानी

जाखू वाली 'माया'

• अर्चना नौटियाल

आज बड़ी अजीब सी बात यह हुई कि सुबह नाश्ता बनाते वक्त अनायास ही माया की याद आ गई । कहते हैं अतीत समय गुजर जाने के साथ साथ धुंधलाता रहता है पर मुझे तो बीता हुआ समय एक चबी हुई च्यूइंगम की तरह लगता है जो कहीं भी चिपकने पर, कितना ही निकाल कर फेंकना चाहो, निकलने की बजाय चिपकता ही चला जाता है, क्यों आपके साथ भी होता है न ऐसा ? अब माया को ही ले लो, आज से शायद पैंतालीस बरस पीछे की बात रही होगी जब हमारे पापा ने शिमला तबादला होने पर शिमला की जाखू पहाड़ी पर एक घर किराए पर लिया था। हिमाचल प्रदेश की खूबसूरत सी राजधानी शिमला को भला कौन नहीं जानता, यह कभी अंग्रेजों द्वारा बसाई गई थी। हाँ तो इसी शिमला की सबसे उंची वाली पहाड़ी पर जाखू के रास्ते पर एक बड़ी खूबसूरत कोठी है 'रौधेनी कैसल'। ठीक उसके सामने थी हमारी कोठी 'ओक वुड प्लेस' जिसे कभी फूलो वाली कोठी भी कहते थे। कहते हैं अंग्रेजों ने जब भारत छोड़ा तब कोई अंग्रेज अपने खानसामे को यह कोठी उपहार में दे गया था। उसने इसे आगे एक स्थानीय निवासी श्री बागा को बेच दिया। उन्हीं श्री बागा ने इस कोठी में सोलह सैट बनाये और सब को नंबर देकर किराये पर उठा दिया। हमारे घर का नम्बर था चार।



हम सब वहाँ एक दूसरे को कैदियों की तरह नम्बर से ही पुकारा करते थे जैसे छह नंबर वाले अंकल आंटी , दो नम्बर वाले, एक नम्बर वाली आंटी आदि आदि।

ओकवुड प्लेस का नाम हम सब शान से लेते थे और यह ओकवुड प्लेस अभी भी शान से वहीं खड़ा है। इस ओकवुड प्लेस में रहने वाले सभी सोलह सैट्स के सदस्य बहुत ही प्रेम से रहते थे। कहने को अलग अलग परिवार थे परंतु एक दूसरे के सुख दुख में सब बराबर के भागीदार होते थे। हमारा चार नम्बर तो था ही लाजवाब। वह शायद पूरी कोठी का मध्य भाग था जो सामने प्रवेश द्वार से शुरू होकर आखिर तक एक के पीछे एक बडे बड़े कमरों के रूप में था । सुनी सुनाई बात है कि कोठी का यह भाग पहले अंग्रेजों का डासिंग फ्लोर था जो बाद में खूब बड़े बड़े चार कमरों तथा उनके पीछे रसोई में तबदील कर एक रिहाइशी सैट बना दिया गया था। रसोई से बाहर जाने का दरवाजा था जो पाखाने में खुलता था।

बात माया की चल रही थी, माया कौन थी? उन दिनों सारे शिमला में ड्राई लैट्रीन हुआ करती थी। माया बेचारी मैला ढोने वाली थी। अच्छी भली तंदुरुस्त लंबी चौड़ी माया की आवाज भी उसके डील डौल के अनुरूप ही थी । वह रोज पिछली सीढ़ियों से धप धप करती आती थी और वहीं खड़े खड़े आवाज देती थी -बीबी जी पानी डाल दो। अम्मा जैसे ही बाहर निकलती थी वह उकडू बैठ पिछले, अगले दिन की सारी खबरे देकर अपना झाडू पकड कर उठ खड़ी होती थी। मेरा नाम कभी उसने ठीक से नहीं पुकारा हमेशा अरर. ..चना कहती थी। मैं सोचती थी यह मेरे नाम को इतने टुकड़ों में क्यों तोड़ देती है ? मेरे भाई मनोज को हमेशा विनोद कहती थी।

माया का आदमी इतबारी बड़ा पियक्कड़ था। रोज पीता था तथा अपने से उंची कद काठी वाली माया से मारपीट करता था। वह रोज अम्मा को दिखाती थी अपनी बाहों और टाँगों पर पड़े हुए नील के निशान। मैं अम्मा के पीछे खड़ी सोचती थी इतबारी तो इतना ज्यादा मोटा भी नहीं, लम्बा भी नहीं यह उससे कैसे मार

खाती है। मैं तो पूछ भी बैठती थी पर बस हर बार उसका रटा रटाया सा उत्तर होता था 'हम औरत बानियों का अपना अपना नसीब'। मनोज तो उसे कई बार डंडा भी लाकर थमा देता था और कहता था अब इतबारी मारेगा तो उसे इस डंडे से मारना। तब माया की उस खोखली हँसी से मैं बडी विचलित हो जाती थी। शायद मेरी अम्मा भी विचलित होती थीं तभी तो अम्मा मुट्ठी में कुछ नोट दबा कर खुसर पुसर करते हुए माया की हथेली पर रख देती थी। बदले में उसके आशीषों की झड़ी लगती थी। भगवान राजी रखे, भगवान खूब बरकत दे, भगवान आपका भला करे - उसकी आवाज दूर तक जाते जाते भी सुनाई देती थी।

हर रविवार को हमारे यहाँ नियम था कि दिन में कुछ विशेष भोजन बने। रविवार को नियमानुसार कभी राजमा, कभी छोले कभी दाल उड़द बनते थे और अम्मा की हिदायत होती थी कि माया के लिए भी अवश्य बचाया जाए। बार बार दोहराती थी अम्मा यह बात। रविवार को दिन के समय पूरी कोठी को माया को एक समय का खाना देना होता था। वह एक बजे निकलती थी खाना लेने के लिए। हमारे घर तक पहुंचते पहुंचते करीब ढाई तीन बजते थे, घंटी बजती थी तो मैं समझ जाती थी कि माया आ गयी। अम्मा आराम करने लेटती थी मुझे हिदायत देकर कि उसे खाना दे देना।

बात माया की चल रही थी, माया कौन थी? उन दिनों सारे शिमला में ड्राई लैट्रीन हुआ करती थी। माया बेचारी मैला ढोने वाली थी। अच्छी भली तंदुरुस्त लंबी चौड़ी माया की आवाज भी उसके डील डौल के अनुरूप ही थी। वह रोज पिछली सीढ़ियों से धप धप करती आती थी और वहीं खड़े खड़े आवाज देती थी -बीबी जी पानी डाल दो।

मैं जब उसे खाना देती थी तो वह अपना पतीला आगे करती थी उसमें सब घरों से आई हुई सब्जी दाल आदि होते थे जो सब उसी एक पतीले में रल मिल जाते थे। मैं उससे हमेशा पूछती थी कि किसमें डालूं? मेरे राजमा या चने बताने पर अलग बरतन निकालती थी अन्यथा उसी पतीले में खुशी से डलवाती थी। मुझे हैरानी होती थी यह सब मिक्स हो गया अब यह क्या करेगी, कैसे खायेगी इसे, पर उसके चेहरे पर तो बडा संतुष्टि का भाव रहता था, उसकी यह हिदायत भी रहती थी कि बरतन उसके बरतन से ना छू पाए।

मैं उसकी यह बात समझ नहीं पाती थी। उसका घर कोठी के सरवैन्ट्स क्वार्टर में था। कौतुहलवश एक दिन मैं और मेरी सहेली उसका घर देखने भी गये। घर क्या था बस एक कमरा था। साफ सुथरे बर्तन बिस्तर देखकर लगता था इतनी साफ रहती है यह फिर भी हम सबसे इतना दूर क्यों भागती है। हम सब खेलते खेलते उसके पास से निकलते थे तो दस कदम दूर खड़ी हो जाती थी और कहती थी दूर हो जाओ। मनोज तो उसे खूब चिढ़ाता था और उसे बार बार छू कर भाग जाता था। तब वह जोर से रौबीली आवाज में कहती थी ठहर जा विनोद बीबी जी से शिकायत लगाऊंगी, जाकर नहा लियो।

हाँ तो बात उसके सब घरों से लाये गये अलग-अलग व्यंजनों को एक ही बरतन में रला मिलाकर लेने की चल रही थी।

एक दिन मैं ने उससे पूछा कि वह खाने का क्या करती है और कैसे खाती है यह सब मिलाजुला खाना। बोली, 'पराँठे बना लूंगी', और आज सुबह इतने वर्षों बाद नाश्ता बनाते वक्त मुझे उत्तर मिल गया। हुआ यूं कि फ्रिज में कल सुबह बनी थोड़ी दाल, दिन की थोडी सब्जी व रात की थोड़ी दाल सब्जी पड़ी थी। मेरे बेटे ने कहा मैं तो नाश्ते में मैगी खाऊंगा। मैंने सोचा अपने और पति के लिए क्या बनाऊं? सोचते सोचते अनजाने में ही सारी दालें, सब्जियाँ आते में मिक्स करके आटा गूंथ लिया और परांठे बना लिए। खाते वक्त जब पहला कौर मुंह में डाला तब 'माया' मेरी आँखों के सामने आ खड़ी हुई प्रश्नवाचक मुद्रा में यह पूछती हुई कि कहो कैसे लगे परांठे ? सच इतने स्वादिष्ट और लज़ीज़ पराँठे मैंने आज तक नहीं खाए थे। तब समझ पायी कि माया अगर मैला ढोने वाली न होती तो क्या पता एक बहुत बड़ी कुक होती। अब बैठी सोच भी रही हूं कि अंग्रेजों ने जब शिमला बसाया था तो काश उस समय अपने इंगलिस्तान की तरह हर घर में ड्राई की जगह पिट लैट्रीन बना दी होती, तब शायद हमारी माया को मैला न ढोना पडता और वो भी हमारी तरह एक सामान्य जीवन बसर कर रही होती।

301, मारुति फ्लैट्स, गायकवाड कंपाउंड
ओ. ऐन. जी. सी. के सामने, मकरपुरा रोड, वडोदरा,
गुजरात 390 009, मो. 0 97246 32266

- अपने जीवन को बदलने के लिए आपको केवल एक व्यक्ति की जरूरत होती है और वह है- आप खुद। -अज्ञात
- आप जो करने से डरते हैं, उसे करिए और करते ही रहिए। अपने डर पर जीत पाने का यही सबसे सफल तरीका है। -अज्ञात
- युवा या बुजुर्ग होना उम्र से नहीं, सोच से पता चलता है। आपकी सोच बताती है कि आपकी उम्र क्या है। -मुहम्मद अली
- व्यक्ति अपने विचारों का ही परिणाम होता है- जैसा व सोचता है, वैसा ही बनता है।। -अज्ञात

भाषांतर (ऑस्कर वाइल्ड की कहानी 'द यंग किंग')

युवा नरेश

● अनु : **द्विजेंद्र द्विज**

(गतांक से आगे)

एक गुफ़ा के अंधेरे से 'मृत्युदेव' और 'धन-लोलुपता' उन्हें देख रहे थे, और मृत्युदेव ने कहा, 'मैं बहुत थक चुका हूँ, मुझे इनमें से एक तिहाई दे दो, और मुझे जाने दो।'

लेकिन धनलोलुपता ने इनकार करते हुए अपना सिर हिलाया। 'वे मेरे दास हैं,' उसने उत्तर दिया ।

और मृत्युदेव ने उसे कहा, 'तुम्हारे हाथ में क्या है?

'मेरे पास अनाज के तीन दाने हैं,' उसने उत्तर दिया, 'लेकिन तुम्हें इससे मतलब?'

'मुझे इनमें से एक दे दो,' मृत्युदेव चिल्लाए 'मेरे बगीचे में बोने के लिए, सिर्फ एक, और मैं चला जाऊंगा।"

'मैं तुझे कुछ नहीं दूंगी' धनलोलुपता ने कहा, और उसने अपना हाथ अपने कपड़ों की तह में छुपा लिया।

और मृत्युदेव हंसे और उसने एक प्याला निकाला, और प्याले को पानी के तालाब में डुबोया, और प्याले में से निकल कर एक सिरहन-सी लोगों में फैल गई, और एक तिहाई लोग मर गए, उसके बाद ठंडी धुंध आ गई, और पानी के सांप उसके साथ-साथ चल रहे थे ।

और जब धनलोलुपता ने इतने लोगों को मरे हुए देखा, तो वह छाती पीट-पीटकर रोने लगी, उसने अपना बंजर सीना पीट लिया, और ज़ोर-ज़ोर से रोई। 'तुमने मेरे एक तिहाई दासों को मार दिया है।' वह चिल्लाई, ' तुम यहाँ से चले जाओ। तार्तार के पहाड़ों में युद्ध होने वाला है, और दोनों पक्षों के राजा तुम्हें पुकार रहे हैं, अफ़गानियों ने काला बैल काट दिया है और वे युद्ध स्थल की ओर बढ़ रहे हैं, वे अपने भालों को ढालों के साथ टकरा चुके हैं, और उन्होंने लोहे के टोप धारण कर लिए हैं। तुम मेरी घाटी को क्या समझकर रुके हुए हो? यहाँ से चले जाओ, और फिर यहां कभी मत आना ।'

'नहीं,' मृत्युदेव ने उत्तर दिया, और उन्होंने एक काला पत्थर निकाला, और जंगल में फेंक दिया, और जंगली विषगर्जर के झुरमुट से आग की ज्वाला का लबादा पहने ज्वर निकल आया। ज्वाला भीड़ में से गुज़री, और उसने लोगों को छू लिया, और वह जिन-जिन लोगों को छूती गई वे सब मरते गए। वह जहां-जहां से गुज़री, उसके कदमों तले की घास मुर्झा गई।

धनलोलुपता कांप उठी, और उसने अपने सर में धूल डाल ली। 'तुम क्रूर हो,' वह चिल्लाई, 'भारत के चार-दीवारियों वाले शहरों में अकाल पड़ा है और समरकंद के जल-कुंड सूख चुके हैं। मिस्र के चार-दीवारों वाले शहरों में अकाल पड़ा है, और जंगलों से टिड्डी-दल वहां आ गए हैं। नील नदी में बाढ़ नहीं आई है, और पादरियों ने आइसिस और ओर्सिस को श्राप दे दिया है। तुम वहां जाओ, जहां तुम्हारी आवश्यकता है, और मेरे दासों को छोड़ दो ।'

'नहीं ,' मृत्युदेव ने उत्तर दिया, 'लेकिन जब तक तुम मुझे अनाज का दाना नहीं दोगी , मैं नहीं जाऊंगा।'

'मैं तुम्हें कुछ नहीं दूंगी,' धनलोलुपता ने कहा ।

मृत्युदेव फिर हंसे, और उन्होंने उंगलियों से सीटी बजाई, और एक औरत हवा में उड़ती हुई आई। उसके माथे पर प्लेग लिखी थी, दुबले-पतले गिद्धों का झुंड उसके इर्द-गिर्द मंडरा रहा था। उसने अपने पंखों से सारी घाटी को ढंक लिया, और वहां कोई भी जीवित नहीं बचा ।

और धनलोलुपता चीखती हुई जंगल के रास्ते भाग गई। और मृत्यु देव अपने लाल घोड़े पर सवार होकर हवा से भी तेज़ गति से उड़ गए।

और घाटी की सतह के कीचड़ से ड्रैगन और शल्कों वाली भयानक चीखें रेंगती हुई निकल आई। गीदड़ रेत पर कूदते हुए और अपने नथुनों से हवा को सूंघते हुए आ गए।

और युवा नरेश रोने लगा, और उसने कहा, 'ये मरने वाले लोग कौन थे और क्या ढूंढ रहे थे ?'

'वे युवा नरेश के मुकुट के लिए जवाहर ढूंढ रहे थे,' उसके पीछे खड़े एक आदमी ने कहा।

और युवा नरेश चौंक उठा, और घूम कर उसने एक तीर्थयात्री के वेश में एक व्यक्ति को देखा जो हाथ में चांदी का दर्पण थामे हुए था। उसका चेहरा पीला पड़ गया, और उसने कहा,

"किस नरेश के लिए?'

और तीर्थयात्री ने कहा : 'इस दर्पण में झांको और तुम उसे देख सकोगे।'

उसने दर्पण में झांका, और, अपना चेहरा देखकर जोर से चीखा और उसकी नींद खुल गई, तेज़ धूप छन कर कमरे में आ रही थी, और उद्यान के पेड़ों और उनकी महक में पंछी गा रहे थे।

और राजमहल के उच्चतम अधिकारी और अन्य अधिकारियों ने भीतर आकर उसे अभिवादन किया, और परिचर उसके लिए स्वर्ण के वस्त्र ले आए, और उसके सामने मुकुट और राजदंड रख दिया।

और युवा नरेश ने उन्हें देखा, वे बहुत सुंदर थे। आजतक उसने जो देखे थे उससे भी कहीं अधिक सुंदर। लेकिन उसे अपने स्वप्न याद आ गए, और उसने अपने अधिकारियों से कहा : इन्हें ले जाओ, क्योंकि मैं इन्हें धारण नहीं करूंगा।'

और दरबारी चकित हो गए, कुछ तो हंसने लगे, क्योंकि उन्होंने सोचा कि वह मज़ाक कर रहा था।



लेकिन उसने फिर उनसे कठोरता से बात की, और कहा : इन वस्तुओं को मेरी नज़रों से दूर कर दो, भले ही यह मेरे राज्याभिषेक का दिन है, मैं इन्हें धारण नहीं करूंगा। क्योंकि दुःख के करघे पर, और पीड़ा के सफेद हाथों द्वारा बुनी गई है मेरी पोषाक। लोगों के रक्त से सना है जवाहर का हृदय, और मृत्यु है मोतियों के हृदयों में ।' और उसने उन्हें अपने तीन स्वप्न सुना दिए ।

युवा नरेश के स्वप्न सुन कर दरबारियों ने एक दूसरे को देखा और और बुदबुदा कर कहने लगे, निश्चित रूप से यह पागल है, क्योंकि स्वप्न तो स्वप्न है, कल्पना तो कल्पना है? ये वास्विकता तो नहीं हैं कि इनकी ओर ध्यान देना आवश्यक हो। और जो लोग हमारे लिए परिश्रम करते हैं, हमें उनके जीवन से क्या लेना-देना है? क्या कोई तब तक रोटी नहीं खाएगा जब तक कि वह किसान को न देख ले, या तब तक शराब नहीं पियेगा जब तक वह शराब बनाने वाले को न देख ले?''

और राजमहल के उच्चतम अधिकारी ने युवा नरेश से बात की, और कहा, 'स्वामी, आपसे प्रार्थाना है कि आप अपने इन दुःस्वप्नों को एक तरफ रख दें, और यह उजली पोषाक पहन लें, और यह मुकुट धारण कर लें क्योंकि लोग कैसे जानेंगे कि आप नरेश हैं, अगर आप नरेश की पोषाक में नहीं हैं?'

और युवा नरेश ने उस अधिकारी को देखा। 'क्या वास्तव में ऐसा है?' उसने पूछा, क्या वे मुझे नहीं पहचानेंगे अगर मैं नरेश की पोषाक नहीं पहनूंगा?

'स्वामी, वे आपको नहीं पहचानेंगे।'

'मैं समझता था कि ऐसे पुरुष भी हो गुज़रे हैं जो राजाओं जैसे भी हुआ करते थे,' उसने उत्तर दिया, 'लेकिन हो सकता है कि तुम ठीक ही कह रहे हो, लेकिन फिर भी मैं न तो यह पोषाक पहनूंगा, और न ही इस मुकुट से अपना राज्याभिषेक करवाऊंगा , मैं तो जैसा महल में आया था वैसा ही यहां से जाऊंगा ।'

और उसने वहां से सब लोगों को चले जाने के लिए कहा, एक परिचारक को छोड़कर, जिसे उसने अपने साथ के लिए रख लिया, वह भी उससे एक वर्ष छोटा किशोर ही था। युवा नरेश ने उसे अपनी सेवा में रखा, और स्वच्छ पानी में नहाने के बाद, उसने एक बड़ी रंगदार अलमारी खोली जिसमें से उसने चमड़े का कुर्ता और बकरी की खाल का वह चोग़ा निकाला जिसे वह रेवड़ की मरियल भेड़ों की रखवाली करते हुए पहनता था। उसने ये वस्त्र पहने और हाथ में गडरिए वाला खुरदरा दंड पकड़ लिया।

और नन्हें परिचारक ने चकित हो कर अपनी बड़ी-बड़ी और नीली आंखें खोली, और मुस्कुराकर उसे कहा, ' स्वामी, मैं आपकी पोषाक और राजदंड तो देख पा रहा हूं, परन्तु, आपका मुकुट कहां है?' और युवा नरेश ने बाल्कनी पर चढ़ रही जंगली कंटीली झाड़ी की एक टहनी को तोड़कर उसका छोटा-सा वृत बनाया, और सिर पर धारण कर लिया ।

'यही होगा मेरा मुकुट,' उसने उत्तर दिया।

और वह इसी पहरावे में अपने कक्ष से महाकक्ष में प्रवेश कर गया, जहां अभिजात्य लोग उसकी प्रतीक्षा में थे। और अभिजात्य लोगों ने आनंद लिया, और उनमें से कुछ लोगों ने उसे पुकार कर कहा ,'स्वामी, लोगों को नरेश की प्रतीक्षा है और आप उन्हें भिखारी के दर्शन करवाने जा रहे हैं,' और कुछ अन्य जो योग्य थे, ने कहा, 'यह तो राज्य के लिए कलंक है, और हमारा नरेश बनने योग्य नहीं है।' उसने उन्हें कोई उत्तर नहीं दिया, लेकिन आगे बढ़ता रहा और ज़ीने के चमकदार नील-लोहित कांच की सीढियाँ उतर गया, और कांसे के मुख्य द्वारों से निकल कर वह अपने घोड़े पर सवार हो गया, और गिरजे की ओर बढ़ चला, नन्हा परिचर उसके पीछे-पीछे भाग रहा था।

लोग हंसे और कहने लगे, "नरेश का विदूषक घुड़सवारी कर रहा है,' और उन्होंने उसका उपहास उड़ाया।

और उसने लगाम खींची और कहा, 'नहीं, लेकिन मैं तो नरेश हूँ।' और उसने उन्हें अपने स्वप्न सुना दिए।

और भीड़ में से एक व्यक्ति आगे बढ़ा और बहुत कड़वे लहजे में उससे बोलने लगा, "श्रीमान, क्या आप नहीं जानते कि धनवानों की विलासता से निर्धनों का जीवन चलता है? आपकी सज-धज से हमारा पालन-पोषण होता है, आपके दुर्गुण हमें रोटी देते हैं। क्रूर स्वामी के लिए श्रम करना कटुतापूर्ण है , परंतु कोई स्वामी ही न होना और भी कटुतापूर्ण है। आपको लगता है कि हमें कौए रोटी देंगे? और आपके पास इन चीज़ों का उपाय भी क्या है? क्या आप ग्राहक को कहेंगे,'तुम इस भाव खरीदोगे' और विक्रेता को कहेंगे , 'तुम इस भाव बेचोगे', मुझे नहीं लगता। अपने महल में जाइए और अपना नील लोहित और भव्य वस्त्र धारण कीजिए । आपको हमसे और हमारे दुखों से क्या लेना-देना?"

'क्या धनी और निर्धन भाई-भाई नहीं हैं? ' युवा नरेश ने पूछा।

'हैं, और धनवान भाई का नाम केन (आदम और हव्वा के दो बेटों में से बड़ा बेटा जिसने अपने छोटे भाई एबल को मार दिया था) है।'

युवा नरेश की आंखों में आंसू आ गए, और वह बुदबुदाते हुए लोगों में से निकलता हुआ आगे बढ़ता रहा, और नन्हा परिचर भयभीत हो कर भाग लिया ।

और जब वह गिरजे के द्वार पर पहुंचा, सैनिकों ने अपने परशु निकाल लिए और कहा, 'तुम यहां क्या ढूंढ रहे हो? इस द्वार से नरेश के अतिरिक्त और कोई प्रवेश नहीं कर सकता ।

और उसका चेहरा क्रोध से लाल हो गया, और उसने कहा, 'मैं नरेश हूं,' और उनके परशुओं को एक तरफ करके वह गिरजे में प्रवेश कर गया ।

और जब बूढ़े धर्माध्यक्ष ने उसे गडरिए के वस्त्रों में अंदर आते हुए देखा, वह चकित हो कर अपने आसन से उठ गया, और उससे मिलने गया और कहा, 'मेरे बच्चे, क्या यह राजसी परिधान है? और मैं किस मुकुट से तुम्हारा राज्याभिषेक करूंगा ? और मैं तुम्हें कौन-सा राजदंड थमाऊंगा? निश्चित रूप से आज तुम्हारे लिए आनंद का दिवस है, अवमानित होने का नहीं।'

'क्या आनंद वह पहनेगा जिसे दुःख ने रचा है? ' युवा नरेश ने कहा। और उसने अपने तीन स्वप्न धर्माधीश को सुना दिए।

और जब धर्माधीश ने उन्हें सुना तो उसने त्योरियां चढ़ा लीं, और कहा, 'मेरे बच्चे, मैं एक वृद्ध व्यक्ति हूं और अपने जीवन की शरद ऋतु में हूं, और मैं जानता हूं कि विश्व में बहुत दुष्कर्म भी होते हैं। वहशी लुटेरे पहाड़ों से उतरकर आते हैं और बच्चों को उठा कर ले जाते हैं और हब्शियों को बेच देते हैं। कारवानों की प्रतीक्षा में शेर लेटे रहते हैं और ऊंटों पर झपट पड़ते हैं, जंगली सूअर घाटी की सारी फसलें उखाड़ देते हैं और गीदड़ पहाड़ियों के ऊपर लगी बेलों को चबा डालते हैं। समुद्री लुटेरे तटों पर तबाही ढा देते हैं और नौ सैनिकों के जहाज़ों को जला देते हैं, और उनके जाल छीन लेते हैं। नमक के दलदलों में रहते हैं कोढ़ग्रस्त लोग, सरकंडों के बने होते हैं उनके घर, और कोई उनके निकट जा नहीं सकता। भिखारी शहरों में घूमते रहते हैं और वे कुत्तों के साथ बैठकर खाना खाते हैं, क्या तुम यह सब कुछ होना बन्द कर सकते हो? क्या तुम किसी कोढ़-ग्रस्त के साथ शयन करोगे? या किसी भिखारी के साथ बैठ कर खाना खाओगे? क्या शेर तुम्हारा कहा मानेंगे, और क्या जंगली सूअर तुम्हारे आदेश का पालन करेंगे? जिसने दुःख की रचना की है क्या वह तुमसे अधिक बुद्धिमान नहीं है? इसीलिए जो तुमने किया है, उसके लिए मैं तुम्हारी प्रशंसा नहीं कर रहा हूं अपितु तुमसे अनुरोध कर रहा हूं कि वापस राजमहल को लौट जाओ, प्रसन्नतापूर्वक वह वस्त्र धारण करो जो एक राजा को शोभा देता है, और मैं तुम्हें स्वर्ण-मुकुट पहना कर तुम्हारा राज्याभिषेक करूंगा, और मोतियों से जड़ा हुआ राजदंड तुम्हें प्रदान करूंगा । और जहां तक तुम्हारे सपनों की बात है, तुम उन पर तनिक भी विचार न करो। सारे संसार का भार एक व्यक्ति के लिए बहुत अधिक है सारे संसार का दुःख भी एक हृदय के लिए बहुत अधिक है।'

'आप इस घर में ऐसा कह रहे है?' युवा नरेश ने कहा, और वह धर्माध्यक्ष को पीछे छोड़ता हुआ, वेदिका की सीढ़ियां चढ़ गया, और ईसा की प्रतिमा के समक्ष खड़ा हो गया ।

वह ईसा की प्रतिमा के समक्ष खड़ा हो गया, उसके दाएं-बाएं, सोने के अद्भुत बर्तन पड़े थे, पीली मदिरा का चषक था और पवित्र तेल की शीशी पड़ी थी वह ईसा की प्रतिमा के समक्ष दंडवत हुआ, और जवाहरात जड़े गिरजे में बड़ी-बड़ी मोम-बत्तियां जगमगा उठीं, और अगरबत्ती का धुआं बारीक नीली मालाओं की तरह गुंबद की ओर लहराने लगा। उसने अपना सिर प्रार्थना में झुकाया और पादरी अपने कड़कदार चोग़ों में रेंगते हुए वेदिका से दूर हो गए।

अचानक, बाहर की गली से, एक जंगली शोरगुल के साथ, म्यानों से तलवारें खींचे हुए, सिरों पर बंधे पंख लहराते हुए, रंगदार लोहे की ढालें थामे हुए, अभिजात्य लोग प्रविष्ट हुए। 'कहां है स्वप्न-दृष्टा?' वे चिल्लाए, 'कहाँ है नरेश, जिसने भिखारी का पहरावा पहना है- वह लड़का जो हमारे राज्य के लिए कलंक है, हम अवश्य उसे काट डालेंगे, क्योंकि वह नहीं है हम पर शासन करने योग्य।'

और युवा नरेश एक बार फिर नत-मस्तक हुआ, उसने फिर प्रार्थना की, और प्रार्थना करने के बाद वह उठा, उसने घूमकर उदास हो कर उन्हें देखा।

और, रंगदार खिड़कियों से धूप छन कर उस पर आ रही थी

और धूप की किरणों ने उसके शरीर पर जालीदार वस्त्र बुन दिया जो सुंदर था उससे भी अधिक सुंदर, जो पहले उसके लिए बुना गया था। सूखा दंड जो वह थामे हुए था, हरा भरा हो उठा और उसपर कुमुदिनियां खिल उठीं जो मोतियों से अधिक सफेद थीं। और सूखी कंटीली झाड़ी भी खिलखिला उठी और उसपर मुस्कुरा उठे लाल गुलाब जो लाल माणिक्यों से भी अधिक लाल थे। श्रेष्ठ मोतियों से श्वेत थीं कुमुदिनियां और उनकी टहनियां थीं चांदी-सी चमकदार। माणिकों से अधिक लाल थे गुलाब और उनके पत्ते थे स्वर्णिम।

वह खड़ा था उनके सामने राजसी वस्त्रों में, और जवाहर- जटित गिरजे के द्वार खुल गए। असंख्य किरणों वाली प्रदर्शिका के कांच से अद्भुत रहस्यमय प्रकाश चमक उठा। वहां खड़ा था वह राजसी पोषाक में , और उस स्थान पर प्रभु की अनुकंपा बरस रही थी और प्रकीरित आलों में संत हिलते हुए दिखाई देने लगे। राजा के भव्य पहरावे में वह उनके समक्ष खड़ा था। संगीत निकला वाद्यराज से और शहनाईवादकों ने बजाई शहनाई, और गायक गाने लगे।

और लोग विस्मय में दंडवत हो गए, अभिजात्य लोगों की तलवारें म्यानों में वापस चली गईं और उन्होंने उसे सम्मान दिया, और धर्माध्यक्ष का चेहरा पीला पड़ गया, उसके हाथ कांपने लगे। और उसने कहा , 'मुझसे महान (परमपिता) ने किया है तुम्हारा राज्याभिषेक' और धर्माध्यक्ष युवा नरेश के सामने दंडवत हो गया। युवा नरेश ऊंची वेदिका से उतर आया, लोगों में से होता हुआ राजमहल को लौट गया। परंतु किसी में उसका चेहरा देखने की हिम्मत नहीं थी क्योंकि उसका चेहरा एक देवदूत के चेहरे जैसा था।

(समाप्त)

विभागाध्यक्ष, अनुप्रयुक्त विज्ञान एवं मानविकी, राजकीय पॉलीटेक्निक, कांगड़ा, जिला कांगड़ा, हिमाचल प्रदेश, मो. 94184 65008

कविता

कण

● **धनंजय सुमन**

पहले नहीं था
काफी समय लगा
इस संसार में आने को
मैं तरसता रहा था।

मंजिल न मिली थी
मगर मारा-मारा फिरता
कभी यहां, तो कभी वहां
भटकता हुआ जा रहा था।

जब मिला तो
एक छोटा सा मिला
वह भी मां के गर्भ में
पलता गया मैं वहां पर था।

वो छोटा सा कण
नवम् महीने में जो
असली रूप में आ गया
वो कौन था, मैं ही तो था।

बाहर आने के लिए
मां-बाप होते कितने बेचैन
पल-पल इंतजार में वह
अपनी पलकें बिछाए रहते थे।

जब मैं बाहर आया
तो नाते-रिश्ते भी और पिता
ज्यादा मां को खुशी हुई होगी
जिसने अपने पेट में संजोए रखा था।

पाल-पोस कर बड़ा किया
तब छोड़ चला वो बेटा
नई-नवेली दूल्हन के साथ
अपने नाते-रिश्तेदारों को भूल गया था।
उस मां को तो वह
बस इतना ही कह गया कि
तूने मुझे सिर्फ जन्म दिया था
अब बीवी का हुआ गुलाम था।

घर-आंगन की उन किलकारियों पर
ना जाने किसकी नज़र लगी थी
बीवी के कहने पर वह
छोड़ गया प्यारा संसार था।

धिक्कार है ऐसे उस कण पर
जो बीवी के आगोश में
अपने पूर्वजों को इस तरह से
रूलाते हुए निकल गया था।

बेटा-बहू कल तुम भी तो
बाप-मां बच्चों के बनोगे
तब तुम भी पछताओगे
जब तुम्हारे बच्चे भी छोड़ जाएंगे।

सब कुछ तो
यहीं पर मिल जाता है
कहां स्वर्ग और कहां पर नरक
सब कहने की ही तो बाते हैं।

गांव व डाकघर बातल, तह. अर्की, जिला सोलन, हिमाचल प्रदेश, मो. 94594 06015

व्यंग्य

मेघदूत का टी.ए. बिल

● बी.एल. आच्छा

जैसे बीरबल लहरें गिनने के लिए जहाजों के आवागमन को रोक सकता है, वैसे ही ऑडिटर भी कागज पर आती हुई लक्ष्मी को। यों आंकड़ों के खेल निराले होते हैं, पर उनमें भी मजे के अवसर होते हैं। न होते तो गणितज्ञ का एलजेब्रा आनंद में लंबायमान न होता। ऑडिट की सूखी जमीन भी ठहाकों के अवसर निकाल ही लेती है।

इस बार जब कालिदास का टी.ए. बिल कोषालय पहुंचा तो ऑडिटर मुस्कुरा दिया। यों उसने कालिदास के साहित्य को भी पढ़ा था। नाटक भी देखे थे। पर इच्छा थी कि उनके साथ संगत हो जाए। दरअसल यक्ष की विरह वेदना का संज्ञान लेते हुए राजाज्ञा प्रसारित हुई थी कि उसका संदेश लेकर किसी कवि को अलकापुरी भेजा जाए। कालिदास को मुकर्रर किया गया तो वे भी विश्वविद्यालयीन विशेषज्ञ की तरह अड़ गये- ''मैं सड़क मार्ग से नहीं, एयर-मेघ से जाऊंगा।'' यक्षों की दुनिया धनी-मानी थी ही। सो वे रामटेक पर्वत से एयर-मेघ के साथ अकलकापुरी पहुंचे और अपना टी.ए. बिल कोषालय भिजवा दिया।

कोषालय की आपत्तियां कागज पर उतरने लगीं। मंद-मंद मुस्कुराते हुए ऑडिटर ने लिखा- कालिदास को हवाई रूट से भेजा गया था, तो वे सीधे नागपुर होते हुए अलकापुरी न जाकर विदिशा में क्यों अटके? विदिशा से वे वक्री होकर उज्जैन क्यों चले गये। इस तरह यात्रा मार्ग एवं दिन क्यों बढ़ाए गये? दूसरी आपत्ति यह कि कालिदास ने मौजमस्ती से पर्यटन का आनंद लिया। विदिशा में यक्षिणियों के सौंदर्य में सुलझे रहे और उज्जयिनी में महाकाल मंदिर में कपोत-कपोती का कलकूजन में कविता बिखेर दी। वे शिप्रा और गंभीरा के जल प्रवाह में भी उलझे रहे। यही नहीं नगर के मार्गों पर जाती हुई श्रमिकाओं के पसीने पर नन्हीं बूंदे भी बरसा दीं। तीसरी आपत्ति यह कि टी.ए. बिल में केवल हवाई विवरण नहीं है। ये जमीनी विवरण भी हैं। एक साथ सड़क और हवाई यात्रा आपत्तिजनक है। चौथी आपत्ति यह कि कालिदास को विरह की चिट्ठी लेकर जाना था, सो भी 'यक्ष सरकार के सेवार्थ' लिफाफा सील लगाकर। माना कि यक्ष ने मौखिक संदेश दिया होगा, पर कवि ने उसमें अपना मसाला मिला दिया है। उसने लिखा है- श्यामल लताओं में तुम्हारा शरीर, चकितहरिणी की आंखों में तुम्हारी चितवन, चंद्रमंडल में तुम्हारा मुख, मयूर-पंखों में तुम्हारी केशराशि, नदी की तरंगों में तुम्हारी भौंहों का विलास देख लेता हूं, पर सारे सुंदर उपमान एक साथ नहीं मिलते जैसी तुम्हारी सुंदर देह में एकत्र मिल जाते हैं।' तो क्यों न ऐसा माना जाए कि कवि ने यक्ष के बहाने अपना काम उसी तरह निकाला है, जैसे कई बार निजी कार्यों के लिए सरकारी काम निकालकर यात्रा कर ली जाती है। अतः यह बिल मूलतः वापस किया जाता है।

कोषालय की आपत्तियां कागज पर उतरने लगीं। मंद-मंद मुस्कुराते हुए ऑडिटर ने लिखा- कालिदास को हवाई रूट से भेजा गया था, तो वे सीधे नागपुर होते हुए अलकापुरी न जाकर विदिशा में क्यों अटके? विदिशा से वे वक्री होकर उज्जैन क्यों चले गये। इस तरह यात्रा मार्ग एवं दिन क्यों बढ़ाए गए? दूसरी आपत्ति यह कि कालिदास ने मौजमस्ती से पर्यटन का आनंद लिया।

आपत्तियां विभागाध्यक्ष तक लौटीं, तो वे भी मुस्कुराते हुए चिंतित हो गये। ऑडिटर भी कितना मजेदार है, कंडिकाओं में भी रस ले रहा है। छंद कालिदास ने रचे, वैसे ही ऑडिटर ने कंडिकाओं के छंद। उन्होंने कालिदास को बुलाया। बोला- अब आप ही कोषालय में जाकर इन कंडिकाओं के निराकरण की बात कर लो।' कालिदास तो स्वाभिमानी थे ही। यों भी राज्याश्रय उन्हें कम ही स्वीकार्य था। पर ऑडिट-आपत्तियों को पढ़कर वे भी मुस्कुरा गये। आखिरकार कोषालय पहुँचे और ऑडिटर से बात की।

ऑडिटर ने कहा- 'पहले आप बताइए कि चाय लेंगे या

कविता

जब मैं बड़ी हो जाऊँगी

● सरला शर्मा

बापू मेरा मुरझाया, अम्मा भी मुरझाई,
कसूर मेरा नहीं जो, भैया की जगह मैं आई,
देखना एक दिन बापू-अम्मा,
भैया के जैसा मैं भी, घर में उजियारा लाऊँगी,
जब मैं बड़ी हो जाऊँगी।

अम्मा मुझे चाहिए तेरी ममता का आँचल,
बाँहों का झूला, लोरी, दुलार और प्यार,
तुम्हारे सपने है भैया से, वो सब सपने टूट गए,
जितने भी टूटे सपने फिर से उन्हें सजाऊँगी,
जब मैं बड़ी हो जाऊँगी।

किस्मत को दोष न दो, मैं बोझ नहीं हूँ,
हर काम की चिंता पल भर मैं दूर करूंगी,
खुशियों के अहसास से सेवा कर,
तुम्हारा घर आंगन महकाऊँगी,
जब मैं बड़ी हो जाऊँगी।



मैं तुलसी तुम्हारे आँगन की,
जब-जब थके-हरे घर आयोगे,
तुम दोनों मुझे प्यार न देना,
मैं खूब सारा प्यार लूटाऊँगी,
जब मैं बड़ी हो जाऊँगी।

अम्मा-बापू तुम मेरा साथ देना,
मजबूत बनाना मेरे हौसले को,
घर लक्ष्मी है बेटी तुम्हारी,
बुरे वक्त में काली भी बन जाऊँगी,
जब मैं बड़ी हो जाऊँगी।

तुम मेरे हर वजूद को उड़ान देना,
कल्पना चावला बन ऊँची उड़ान भरूंगी,
तुम बन जाना मेरी छत्र छाया,
झांसी की रानी बन खुद की लाज बचाऊँगी,
जब मैं बड़ी हो जाऊँगी।

मैं गरीब माँ-बाप की बेटी भले ही,
मेहनत करके तुम्हारा नाम रोशन करूंगी,
मुझे इस दुनिया में सम्मान दिलाना,
मैं दुनिया की सबसे बहादुर बेटी बन दिखाऊँगी,
जब मैं बड़ी हो जाऊँगी।

मुझसे से ही हर वंशज है,
मुझसे नवजीवन सम्भव है,
आज सब बहुत पछताए,
कल मैं सबका जीवन हर्षाऊँगी,
जब मैं बड़ी हो जाऊँगी।

गाँव हनल, डॉ. नकौड़ा पुल,
तह. चौपाल, जिला शिमला,
(हि.प्र.)-171211, मो. 9418718206

कॉफी? या गर्मी बहुत ज्यादा है तो 'ठंडा यानी....' बुलवा लूं, ताकि मेघदूत की श्रमिकाओं के माथे पर, वर्षा की बूंदों की तरह आपका पसीना भी सूख जाए।' कालिदास अचंभित हुए। कोषालय तो कभी चाय पिलाता नहीं है और ये महाभाग ठंडा पिलवा रहे हैं, सो भी इतनी आपत्तियों के बावजूद। कालिदास बोले- 'मैं तो आपत्तियों के निराकरण हेतु आया था, और आप हैं कि.........।' ऑडिटर ने कहा- 'सो तो हो जाएंगी, आप क्यों चिंता करते हैं ?' कालिदास बोले- 'अरे, इतनी भारी भरकम आपत्तियां। ये आपत्तियां तो न मुझे जमीन पर चलने देती हैं, न मेघ की तरह हवा में उड़ने देती हैं। सारी यात्रा की हवा ही निकल गई।' ऑडिटर ने कहा- 'सर, आपकी कविताएं तो हमारी इन कंडिकाओं के ऊपर हवाई यात्रा करती रहती हैं। हम कौन आपत्ति लगाने वाले हैं, जिनकी रसधार हमारे भीतर बहती है। एकबारगी इच्छा थी कि आप मेघों को दूत बनाकर कोषालय भी ले आते। सो बुलवा लिया। अब तो ठंडा पीकर हमें भी ठंडक दीजिए। आपकी रचनाएं तो समयमान-वेतनमान में नहीं, युगान्तर में भी पाठकों के आकाश में यात्रा करती रहेंगी। कालिदास प्रमुदित थे। ऑडिट में साहित्य रस का ऐसा योग? सत्कार के बाद कालिदास विदा हुए तो ऑडिट की आपत्तियां भी विदा हो गई।

25, स्टेट बैंक कॉलोनी, देवास रोड, उज्जैन, म. प्र.,
मो. 94250 83335

रवि प्रताप सिंह की ग़ज़लें

एक

छत है दीवारें हैं लेकिन घर कहां है
सेज फूलों की है पर बिस्तर कहां है।

नींद ये पलकों से अकसर पूछती है
ख्वाब हैं पर ख्वाब में मंजर कहां है।

शर्म को गहना बना पहना है उसने
लाज से बढ़कर कोई जेवर कहां है।

मेरी आंखों में लहू का एक दरिया
अश्क का कतरा मेरे अंदर कहां है।

कत्ल जहरीली जुबां से हो गया था
नासमझ कहते रहे खंजर कहां है।

हार कर कहना पड़ा उस बेवफ़ा से
आईने को चूमता पत्थर कहां है।

सर लिए था हाथ में और पूछता था
'रवि' बताओ मेरे धड़ का सर कहां है।

दो

दहशत के जब वृक्ष लगाए नफरत के फल पाओगे
कहते थे तुमसे ना साथी एक दिन तुम पछताओगे।

बगिया फ़फ़क-फ़फ़क रोती है पत्ता-पत्ता सिसक रहा
फूलों को जिसने कुचला हो दोषी तुम कहलाओगे।

देर तो वैसे बहुत हो चुकी फिर भी अभी संभल जाओ
वर्ना खुद की आग में जल कर नक्शे से मिट जाओगे।

रास ना आयी तुम्हें रोशनी पोषक तुम अंधियारे के
दीपक के संग जल कर देखो उजियारा बन जाओगे।

हम तुम आज पड़ोसी हैं पर एक कोख के जन्मे हैं
इक दिन गले हमारे लग कर अपने अश्क बहाओगे।

क्यों लड़ते हैं आपस में हम आओ मिल-जुल कर रह लें
दरिया बन तुम बहकर देखो सागर से मिल जाओगे।

रवि हैं यदि हम नभ के तुम भी उसी फ़लक के चंदा हो
एक गगन ही घर है अपना कब तक यह झुठलाओगे।

तीन

छोड़ कर माशूक के किस्से सितम को होड़ दें
इंकलाबी हो कलम या शायरी ही छोड़ दें।

इस सियासत ने हमारी थालियां भी छीन लीं
रोटियों के हक़ की खातिर बंदिशें सब तोड़ दें।

फिर किसी मंझधार में कश्ती न फंस जाए कोई
हाथ में पतवार ले तूफां के रुख को मोड़ दें।

झोपड़ी को बेदखल करके बने हैं जो महल
हाथ में लेकर हथौड़ा वो कंगूरे फोड़ दें।

हम तुम्हारा हाथ थामें तुम बगल के हाथ को
मिल के सारे हाथ इस हिंदोस्तां को जोड़ दें।

चार

अंधेरों को गरल सा पी रहा हूं
जगत में शंभु सा मैं जी रहा हूं।

कभी ठहरे हुए जल सा नहीं था
मैं बहती धार गंगा की रहा हूं।

धरा धारण किए सुंदर वसन जो
उन्हें नभ से छुपा कर सी रहा हूं।

कहीं पर गर्जना है सिंधु जैसी
कहीं ढहते शिखर सा भी रहा हूं।

मुझे जितना सुमन समझें पराया
भ्रमर सा मित्र बन कर ही रहा हूं।

427/सी, पालीपूकुर, पो. आ. श्रीभूमि,
कोलकाता-700 048, मो. 80135 46942

समीक्षा

किसान की एक दुःख भरी दास्तां 'अकाल में उत्सव'

● पवन कुमार

पंकज सुबीर हमारे समय के उन विशिष्ट उपन्यासकारों में हैं जिनके पास 'कन्टेन्ट' तो है ही उसे अभिव्यक्त करने की असीम सामर्थ्य भी है। किस्सागोई की अद्‌भुत ताकत उनके पास है। 'अकाल में उत्सव' पंकज सुबीर का हाल में प्रकाशित उपन्यास है, जिसकी चर्चा हम यहां कर रहे हैं। पंकज सुबीर ने अपने पहले ही उपन्यास 'ये वो सहर नहीं' (वर्ष 2009) से जो उम्मीदें बोई थीं वे 'अकाल में उत्सव' तक आते-आते फलीभूत होती दिख रही हैं। नौजवान लेखक पंकज सुबीर इन अर्थों में विशिष्ट उपन्यासकार हैं कि वे अपने लेखन में किसी विषय विशेष को पकड़ते हैं और उस विषय को धुरी में रखकर अपने पात्रों के माध्यम से कथ्य का और विचारों का जितना बड़ा घेरा खींच सकते हैं, खींचने की कोशिश करते हैं। उनकी सबसे बड़ी ताकत यह है कि वे विषयवस्तु, पात्रों और भाषा का चयन बड़ी संजीदगी से करते हैं और उसमें इतिहास और मनोविज्ञान का तड़का बड़ी खूबसूरती से लगाते हैं।

वे अपने कथ्य को भाषा के हथियार से और भी मारक बना देते हैं। संभवतः इसीलिए उनके पात्र लोक भाषा का प्रयोग करते हैं, आवश्यकता पड़ने पर अंग्रेजी भी बोल लेते हैं और वो अंग्रेजी जो आज की आम फहम जुबान है। तभी तो 'अकाल में उत्सव' के ग्रामीण पात्र जहां इंदौर-भोपाल-सिहोर जनपदों के आस-पास के क्षेत्र में बोले जाने वाली अपभ्रंश 'मालवी' भाषा में बातचीत करते हैं, वहीं कलेक्टर और ए.डी.एम. जैसे इलीट क्लास करेक्टर हिंदी मिश्रित अंग्रेजी में बोलते नजर आते हैं। 'अकाल में उत्सव' में भाषा के इस बेहतरीन प्रयोग के साथ-साथ पंकज सुबीर ने किसानों और शहरी पात्रों की मानसिक दशा और उनके मन में चल रहे द्वंदों-भावों को अभिव्यक्ति देने में जो चमत्कार उत्पन्न किया है वह सराहनीय है।

बात आगे बढ़ाते हैं और चर्चा करते हैं उपन्यास 'अकाल में उत्सव' की विषय वस्तु की। उपन्यास ग्रामीण परिवेश और शहरी जीवन की झांकी को एक साथ पेश करते हुए आगे बढ़ता है। अर्थात एक ही समय में दो कहानियों का मंचन एक साथ इस उपन्यास में होता दिखता है। एक ओर मुख्यमंत्री के निर्वाचन क्षेत्र के एक गांव 'सूखा पानी' का एक आम किसान 'रामप्रसाद' इस उपन्यास का प्रमुख पात्र है जिसकी आंखों में आने वाली फसल की उम्मीदें जवान हैं तो दूसरी तरफ सरकारी अमले का मुखिया श्रीराम परिहार आई.ए.एस. नाम का एक पात्र है जो शहर का कलेक्टर है, जिसके इर्द-गिर्द कुछ अधिकारी-समाजसेवी -नेता-पत्रकार टाइप लोग हैं जो इसी दौरान शहर में 'नगर उत्सव' के आयोजन को लेकर सक्रिय हैं। जहां रामप्रसाद की उम्मीदें परिपक्व होने से पहले ही बेमौसम बरसात की वजह से उजाड़ हो जाती हैं वहीं दूसरी ओर 'नगर उत्सव' का आयोजन पूरी ठसक के साथ किया जाता है। रामप्रसाद के पारिवारिक जीवन में उसकी पत्नी, बच्चे, भाई, बहिनें, बहनोई इत्यादि हैं, जिनकी परिधि में वह केंद्रीय पात्र के रूप में उभरता है। दूसरी ओर, जैसा कि अवगत हैं कि श्रीराम परिहार और उसके इर्द-गिर्द कुछ अधिकारी-समाजसेवी -नेता-पत्रकार टाइप लोग हैं जो 'नगर उत्सव' के आयोजन को लेकर अपना उल्लू सीधा करने में लगे हुए हैं। इस दुनिया की अपनी ही सोच-भाषा-दर्शन-जीवन शैली है, जिसमें वे जीते हैं। फरवरी-मार्च का महीना चल रहा है।

बजट लेप्स न हो जाए इसलिए सरकारी व्यय पर 'नगर उत्सव' का मनाया जाना और इसी दौरान ओलावृष्टि से किसान रामप्रसाद की न केवल फसल बल्कि जीवन का करुणांत इस उपन्यास का सार है। यद्यपि पाठक को शुरुआती कुछ पृष्ठों को पढ़ने के बाद ही पूरी कथा और कमोबेश कथा के अंत का अनुमान लग जाता है किन्तु पात्रों की भाषा-संवाद और उनकी मनोदशा पाठकों को इस उपन्यास से अंत तक जुड़े रखने के लिए बाध्य करती है। किसी उपन्यासकार के लिए भला इससे बड़ी सफलता और क्या हो सकती है? दिलचस्प बात ये है कि नितांत अलग सी

लगने वाली इन दोनों दुनियाओं का एक सम्मिलन स्थल भी है जहां इन दो दुनियाओं के मुख्य पात्र अनायास रूप से मिलते हैं। अर्थात उपन्यास में दो-तीन बार ऐसे अवसर आते हैं जब किसान रामप्रसाद, कलेक्टर श्रीराम परिहार से अनायास मिलता है। तीनों बार इन दोनों पात्रों के बीच कोई खास वार्तालाप तो नहीं होता लेकिन तीनों बार ही ये मुलाकातें उपन्यास की कथा वस्तु को बहुत ही दिलचस्प तरीके से विस्तार प्रदान करती हैं।

उपन्यास में ग्रामीण जीवन विशेषतया किसानों की जिंदगी पर बहुत करीने से रोशनी डाली गई है। किसान की सारी आर्थिक गतिविधियां कैसे उसकी छोटी जोत की फसल के चारों ओर केंद्रित रहती हैं और किन-किन उम्मीदों के सहारे वो अपने आपको जीवित रखता है, यह इस उपन्यास का कथानक है। पंकज सुबीर ने इस उपन्यास में पकती फसल से लगी उम्मीदों के सहारे सुनहरे भविष्य की कल्पना में खोए किसान 'रामप्रसाद' के मार्फत आम भारतीय किसान का हाल उकेरा है। 'रामप्रसाद' के माध्यम से पंकज सुबीर बताते हैं कि आम किसान आज भी मौसम की मेहरबानी पर किस हद तक निर्भर है। मौसम के उतार-चढ़ाव के साथ ही किसानों की उम्मीदों का ग्राफ भी ऊपर नीचे होता रहता है। मौसम का परिवर्तन इस तेजी के साथ होता है कि किसान को संभलने का मौका भी नहीं मिलता। सेंसेक्स एक बार डूबे तो संभलने की उम्मीदें लगायी जा सकती हैं मगर किसान की फसल पर अगर पानी-पाला पड़ गया तो संभलने के सारे विकल्प समाप्त हो जाते हैं। मौसम की आंख मिचौलियों के बीच किसान न केवल तहसील-बिजली-बैंक- को- आपरेटिव जैसे विभागों के बकाये को चुकाता है बल्कि तमाम सामाजिक रस्मों को भी पूरा करता है। गांवों में आज भी विवाह और मृत्यु दोनों ही, परिवार को समान रूप से कर्जे में डुबा कर चले जाते हैं। विवाह में भी वही होता है, मेहमान जुटते हैं, पूरे गांव को और आस-पास के रिश्तेदारों को खाना दिया जाता है और मृत्यु होने पर भी वही होता है। अंतर सिर्फ इतना होता है कि विवाह के अवसर पर एक उल्लास होता है मन में और मृत्यु के अवसर पर दुःख होता है। किसान इन आयोजनों में आने वाले खर्चों को भी वहन करता है भले ही ये किसान की पत्नी के शरीर पर बचे एक मात्र गहने चांदी से बनी 'तोड़ी' से पूरे होते हों। किसान की जद्दोजहद ये भी है कि वह 'तोड़ी' को बेचे या गिरवी रखे ... अर्थात यहां किसान के पास उपलब्ध विकल्प कितने तंग हैं, ये बस महसूस ही किए जा सकते हैं। इन गहनों को खरीदने-बेचने वाला एक ही समुदाय है जो 'साहूकार' के नाम से जाना जाता है। किसान और साहूकार का आपसी रिश्ता पीढ़ियों पुराना होता है और पूरी तरह विश्वास पर आधारित होता है। साहूकारों ने तो अपना ही गणित और पहाड़े बना रखे हैं। किसान जब आता, तो वह अपना जोड़-भाग किसान को बताने लगता है "देख भाई तीन महीने का हो गया ब्याज, तो ढाई सौ के हिसाब से ढाई सौ तीया पंद्रह सौ और उसमें जोड़े चार सौ पिछले तो पंद्रह सौ और चार सौ जुड़ के हो गए छब्बीस सौ। उसमें से तूने बीच में जमा किए तीन सौ, तो तीन सौ घटे छब्बीस सौ में से तो बाकी के बचे अट्ठाइस सौ, ले माँड दे अँगूठा अट्ठाइस सौ पे। समझ में आ गया ना हिसाब? कि फिर से समझाऊँ?' किसान को क्या समझ में आना। वह चुपचाप से अपना अँगूठा लगा कर उठ के आ जाता है। रकम बढ़ती जाती, ब्याज बढ़ता जाता है और जेवर धीरे-धीरे उस ब्याज के दल-दल में डूबता जाता, डूबता जाता है। किसान के जीवन में बढ़ते दुख उसकी पत्नी के शरीर पर घटते जेवरों से आकलित किए जा सकते हैं। नई बहू जब आती है तो नए घाघरे, लुघड़े, पोलके के साथ तोड़ी, बजट्टी, ठुस्सी, झालर, लच्छे, बैंदा, करधनी में झमकती है। फिर धीरे-धीरे उम्र बढ़ने के साथ खेती-किसानी की सुरसा अपना मुँह फाड़ती है और महिलाओं के शरीर पर से एक-एक जेवर कम होता जाता है। जेवर जो शरीर से उतर कर किसी साहूकार की तिजौरी में गिरवी हो जाते हैं। और किसान के घर की चीज़ एक बार गिरवी रखा जाए तो छूटती कब है? पहले सोने के जेवर जाते है, फिर उनके पीछे चाँदी के जेवर। हर जेवर जब गिरवी के लिए जाता है, तो इस पक्के मन के साथ जाता है कि दो महीने बाद जब फसल आएगी, तो सबसे पहला काम इस जेवर को छुड़वाना ही है। लेकिन अगर यह पहला काम ही अगर सच में पहला हो जाता, तो इस देश में साहूकारों की तिजोरियाँ और उनकी तोंदें इतनी कैसे फूल पातीं।

'यदि चालीस साल में सोना चालीस गुना बढ़ गया तो गेहूँ भी आज चार हज़ार के समर्थन मूल्य पर होना था, जो आज है पन्द्रह सौ। मतलब यह कि हर एक क्विंटल पर ढाई हजार रुपये किसान की जेब से सब्सिडी जा रही है।'

लेखक ने बड़ी कुशलता से बल्कि सच कहूँ तो एक कृषि अर्थशास्त्री और सांख्यिकी विशेषज्ञ की हैसियत से किसान की उपज के मूल्य को आज के उपभोक्ता सूचकांकों के सापेक्ष विश्लेषण की कसौटी पर जांचा है। लेखक बहुराष्ट्रीय कंपनी के उत्पादों को कच्चे उत्पादों के बीच का गणित बहुत ही सरल अंदाज से समझाता है "पंद्रह सौ रुपये क्विंटल के समर्थन मूल्य पर बिकने वाली मक्का का मुर्गी छाप कार्न फ्लैक्स 150 रुपये में 500 ग्राम की दर से बिकता है। मतलब यह कि 300 रुपये किलो या तीस हज़ार रुपये क्विंटल की दर से। किसान धूप, बरसात, ठंड में, खेतों में अपनी ज़िंदगी को झोंकते हुए पाँच महीने में जो फसल पैदा करता है, उसे केवल 1500 रुपये क्विंटल मिल रहा है और जो वातानुकूलित चैम्बर में बैठ कर मशीन से उस मक्का को केवल पाँच मिनट में चपटा कर कॉर्न फ्लैक्स बना रहा है, उसे बीस गुना,

तीस हजार रुपये? समर्थन मूल्य तो है मगर वह किसको समर्थन देने के लिए बनाया गया है, यह बेचारा किसान कहाँ जानता है।

यदि चालीस साल में सोना चालीस गुना बढ़ गया तो गेहूँ भी आज चार हज़ार के समर्थन मूल्य पर होना था, जो आज है पन्द्रह सौ। मतलब यह कि हर एक क्विंटल पर ढाई हजार रूपये किसान की जेब से सब्सिडी जा रही है।"

किसान की मजबूरियों का चिट्ठा आगे बढ़ाते हुए लेखक रहस्योद्घाटन करता है कि "एक एकड़ में खरपतवार नाशक, कीट नाशक और खाद का खर्च होता है, लगभग पाँच हज़ार रुपये। पलेवा और सिंचाई पर बिजली या डीज़ल का खर्च करीब तीन हज़ार रुपये प्रति एकड़ होता है। इसके बाद गेहूँ की कटाई तथा थ्रेशर से निकालना भी, लगभग दो हज़ार रुपये प्रति एकड़ पड़ता है। और लगभग सात आठ सौ रुपये प्रति एकड़ मंडी तक की ढुलाई। एक हज़ार रुपये अन्य सभी प्रकार का खर्च होगा। इस प्रकार मोटा-मोटा हिसाब लगाया जाए तो प्रति एकड़ करीब पंद्रह हज़ार रुपये का खर्च तो तय ही है। एक एकड़ में यदि सब कुछ बिलकुल ठीक-ठाक रहा, तो लगभग सोलह से बीस क्विंटल के बीच गेहूँ का उत्पादन होता है। यदि हम अठारह क्विंटल के आँकड़े को ही औसत मान कर चलें, तो एक एकड़ का किसान अपने परिवार के साल भर खाने के लिए कम से कम सात आठ क्विंटल तो बचाएगा। बाकी बचा दस क्विंटल जिसको सरकारी समर्थन मूल्य पंद्रह सौ रुपये प्रति क्विंटल के हिसाब से बेचने पर मिलेगा पंद्रह हज़ार रुपये, और लागत ? वही पंद्रह हज़ार रुपये। यदि किसान का समर्थन मूल्य भी पिछले पच्चीस सालों में बढ़े सोने के हिसाब से बढ़ता, तो उसे आज पंद्रह नहीं साठ हज़ार मिलते।

किसान की दुर्दशा पर तब्सिरा करते वक्त लेखक ने 'रामप्रसाद' के उन निजी लम्हों पर भी रोशनी डालने का प्रयास किया है, जो प्रायः अंधेरे का शिकार होकर रह जाते हैं। तमाम लेखकों की लफ्जों की रोशनी इस अंधेरे को चीरने में नाकामयाब रहती है लेकिन पंकज सुबीर ने यहां भी अपनी उपस्थिति दर्ज की है। किसान का जहन यूँ तो हमेशा आर.आर.सी. (रिकवरी रिवन्यू सर्टीफिकेट), बरसात, धूप, खाद, पानी, सूद वगैरह में में ही घूमता रहता है परंतु कभी-कभी वो अपने लिए भी जीता है। इन्हीं कुछ निजी लम्हों में किसान रामप्रसाद अपनी पत्नी कमला के बारे में सोचता है।

इस उपन्यास के माध्यम से लेखक ने लोक जीवन की झांकी को बिलकुल जीवंत अंदाज में प्रस्तुत किया है। उदाहरण के तौर पर जब रामप्रकाश के बहनोई की माँ की मृत्यु हो जाती है तो मातम का दृश्य लेखक ने बड़ी ही कुशलता के साथ जिया है। सूखा पानी और आस-पास के ग्रामीण अंचलों में महिलाओं द्वारा मातम के अवसर पर रोने का अभी भी एक दिलचस्प तरीका है। मौत और दिलचस्प? हाँ यही सच है। यहाँ पर महिलाएँ रोती कम हैं, गाती ज्यादा हैं। उस व्यक्ति का नाम ले-लेकर कोई भजन सा गाती हैं और अंत में रोने की ध्वनि उत्पन्न करती हैं। जो गाती हैं, उसमें मरने वाले के गुण, उसकी अच्छाई एक-एक कर बताती हैं और रोती जाती हैं। उससे जुड़ी घटनाएँ उसके साथ के अपने व्यक्तिगत अनुभव, या वह मरने से पहले क्या कर रहा था, मतलब सब कुछ बाकायदा गा-गाकर बोलती हैं और हर पंक्ति के अंत में फिर रोती हैं, ज़ोर से। यह रोना दिखाव का नहीं होता है बल्कि सचमुच का होता है, वह सचमुच ही दुखी होती हैं। लेकिन पारंपरिक रूप से उनको अपना दुख गा-गाकर ही व्यक्त करना होता है।

'अरी तुम तो भोत अच्छी थी, काँ चली गी रे ऽऽऽऽ'

'अरे अभी तो मिली थी मोय बड़नगर वाली बइ की शादी में रे ऽऽऽऽ'

'अच्छी खासी तो ले के गया था, डाग्दर होन ने मार डाली रे ऽऽऽऽ'

कर्जे और आर.आर.सी. की धनराशि चुकाने के समय किसान की मनोदशा का एक और उदाहरण मन में कहीं संताप, गहरी सी कुंठा छोड़ जाता है। "कमला की तोड़ी बिक गई। बिकनी ही थी। छोटी जोत के किसान की पत्नी के शरीर पर के जेवर क्रमशः घटने के लिए होते हैं।

उपन्यास का यू.एस.पी. इसकी भाषा है, और भाषा में भी मुहावरों और लोक कहावतों का प्रयोग है। 'अकाल में उत्सव' का एक प्रमुख पात्र मोहन राठी है जो प्रशासन का चाटुकार है, बेहतरीन मनोवैज्ञानिक है, अवसरवादी है और बेहतरीन वक्ता भी है।

'कोरी का जमाई बड़ा जानपाड़ा, चाहे जो करवा लो.......!'

'रांडया रोती रेवेगी और पावणा जीमता रेवेगा।'

मोहन राठी एक ऐसा पात्र है जो भाषा में नए प्रतिमान तो गढ़ता ही है एक मनोवैज्ञानिक की हैसियत से भी प्रकट होता है। लेखक इस पात्र के माध्यम से कहता है कि "प्रशंसा, या विरोधी की निंदा सुनना है तो शारीरिक सुख जैसा ही आनंद लेकिन, उसमें और इसमें एक बड़ा अंतर यह होता है कि यहाँ पर कोई चरम संतुष्टि का बिंदु नहीं आता, यहाँ पर कोई स्खलन जैसा नहीं होता

पुस्तक :	'अकाल में उत्सव' उपन्यास
लेखक :	पंकज सुबीर
	प्रकाशक शिवना प्रकाशन, सम्राट कॉम्प्लैक्स बेसमेंट, सीहोर, मप्र 466001, दूर : 07562405545
मूल्य :	150 रुपये,
पृष्ठ :	224, वर्ष : 2016

कविता

आदमी होने की शर्त

● अशोक गौतम



आज की तारीख में
आदमी होने के लिए जरूरी है
जेब में हों नाखून भेड़िए के, सियार के
पर
सजग हाथों में हो ताजे गुलाब का गमकता गुलदस्ता
जेब में हों अस्त्र-शस्त्र ठूंस-ठूंस कर भरे
पर होंठों पर हो ऐसी मुस्कान
ज्यों सोए-सोए भी उड़ाते हों कबूतर
धुएं के आसमान के खिलाफ

आदमी होने के लिए जरूरी है
भरे पेट भी भूख लगाना अपने को ताबड़तोड़
ताकि खा सको हर भूखे का हिस्सा मजे से
उसे चिढ़ाते हुए
नहीं मरने चाहिएं पेट में पलते भेड़िए

आदमी होने के लिए जरूरी है
मन में हो द्वेष, ईर्ष्या काला बाजारी गोदाम से
जिसे सरकार के कारिंदे चाह कर भी न टोह सकें
पर
आंखों से छलके स्नेह ऐसा कि तुमसे बेहतर
मानवता का पुजारी कोई
तीनों लोकों में नहीं मिल सकता दिन-रात दीया लिए

दिमाग भरा हो ठसाठस असहिष्णुता से
पर
जुबान लड़खड़ा रही हो प्रेम, भाईचारे के नारे लगाते
लसलसाते कैमरों के सामने

लोमड़ी आतुर हो जब सीखने को चालाकी के सुर
जेब में हो जब हर किसी से
बदतमीजी करने का परमानेंट लाईसेंस
कौवा घूमने लगे जब आगे-पीछे सीखने को कांव -कांव
कुत्ता जब शरमा जाए भौंकता देखकर

तो बिन सोचे-समझे, तर्क-बेतर्क मान लेना बिन विमर्श के
तुम आदमी होने की हर शर्त पूरी करने लगे हो।

गौतम निवास, अप्पर सेरी रोड,
सोलन-173212 हि.प्र., दमो. 94180 70089

है। हर आनंद किसी बिंदु पर जाकर समाप्त होता है लेकिन, यह किसी भी बिन्दु पर समाप्त नहीं हो सकता। यह तो एक सतत् प्रक्रिया है। यह त्वचा रोग को नाखून से खुजाने जैसा आनंद है, आप जब तक खुजाते रहेंगे, तक तक आपको आनंद आता रहेगा, बल्कि बढ़ता रहेगा आनंद। आप खुजाना बंद करेंगे, तो आनंद आना बंद हो जाएगा, उसके स्थान पर फिर से खुजालने की उत्कंठा बढ़ जाएगी।"

बहरहाल 'अकाल में उत्सव' हमारे समय का वह महत्त्वपूर्ण उपन्यास है जो यह दिखाता है कि हम समानांतर रूप से एक ही देशकाल परिस्थिति में दो अलग-अलग जिंदगियां जी रहे हैं। एक ओर दबा कुचला हिंदुस्तान है और हिंदुस्तान का किसान है जिसकी दुनिया अभी भी न्यूनतम समर्थन मूल्य पर ही टिकी हुई है और दूसरी तरफ चमकता दमकता इंडिया है जहां तकनीकी प्रगति है, धन है, अवसर है।

लेखक पंकज सुबीर ने 'अकाल में उत्सव' के माध्यम से एक ऐसी कृति दी है जो हमारे देश को समझने के लिए महत्त्वपूर्ण औजार साबित हो सकती है। उन्होंने अपनी कृति के माध्यम से ऐसी चीखों को हम तक पहुँचाने का काम किया है जो कमोबेश अनसुनी ही दबी रह जाती हैं। प्रमुख पात्र रामप्रसाद के करुणांत पर यही आह निकलकर रह जाती है कि 'आखिरी शब दीद के काबिल थी बिस्मिल की तड़प, सुबह दम कोई अगर बाला-ए-बाम आया तो क्या.........।'

(समीक्षक भा.प्र.से. के वरिष्ठ अधिकारी हैं तथा वर्तमान में सहारनपुर में डीएम के रूप में पदस्थ हैं।)

'सिंह सदन', राजा का बाग,
गली -7ए, मैनपुरी, उत्तर प्रदेश, मो. 9412290079

समीक्षा

विसंगतियों से जूझने का प्रयास 'बाबू समझो इशारे'

● डॉ. राजेंद्र वर्मा

'बाबू समझो इशारे' कुमार विनोद का पहला व्यंग्य संग्रह है। इससे पहले उनके कविता और गजल संग्रह पाठकों के द्वार अपनी दस्तक दे चुके हैं। इस संग्रह के व्यंग्य विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुए हैं। इन्होंने अपने व्यंग्य का आधार विविध समसामयिक विषयों को बनाया है। इशारों ही इशारों में वे राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक विसंगतियों पर एक संवेदनशील रचनाकार की तरह न केवल नजर रखते हैं बल्कि पाठकों की संवेदना को भी हौले-हौले झकझोरने का प्रयास करते हैं। अधिकतर व्यंग्य क्योंकि दैनिक पत्रों की आवश्यकताओं के अनुरूप लिखे गए हैं, अतः किसी भी व्यंग्य का कलेवर वृहत् नहीं है। कम शब्दों में बड़ी-बड़ी बातें न करके व्यंग्यकार सहज रूप में ही जीवन की उन विसंगतियों की ओर पाठकों का ध्यान आकृष्ट करने का सफल प्रयास करता है जिनको हम अक्सर इग्नोर कर देते हैं। व्यंग्य संग्रह के पन्नों में से गुजरते हुए इतना तो स्पष्ट है कि व्यंग्य-शैली कुमार विनोद को सहज प्राप्त है और अपनी रचनाओं के माध्यम से वे सबको इस संवाद-यात्रा में शामिल होने का आमंत्रण देते हैं। व्यंग्यों की प्रस्तुति इतनी रोचक कि पाठक एक ही सिटिंग में संपूर्ण रचनाओं से गुजरने के लिए बाध्य हो जाता है।

संग्रह में बाजारवादी प्रवृतियों पर काफी व्यंग्य आए हैं। 'टोटका नींबू मिर्च के "फ्यूजन का', 'जरूरत एक अदद कोच की', 'फिल्म और कंट्रोवर्सी' इसी तरह की रचनाएं हैं। 'हे चमत्कार तेरा ही आसरा' व्यंग्य में व्यंग्यकार ने शिक्षा के क्षेत्र में बढ़ती हुई व्यापारीकरण की प्रवृत्ति की ओर ध्यान आकृष्ट किया है। शिक्षा और व्यापार के घाल-मेल का बुनियादी शिक्षा पर तो निस्संदेह ही बुरा प्रभाव पड़ रहा है।

इधर बाजार और बाजारवादी प्रवृत्ति ने जीवन की दशा और दिशा को बहुत प्रभावित ही नहीं किया है बल्कि इसके कारण जीवन से जुडी हुई कई संवेदनाएं पृष्ठभूमि में चली गई हैं। जाहिर है, सजग लेखक इस परिस्थिति से बच कर नहीं निकल सकता अन्यथा वह लेखक ही न होता। अतः इस संग्रह में बाजारवादी प्रवृतियों पर काफी व्यंग्य आए हैं। 'टोटका नींबू मिर्च के फ्यूजन का', 'जरूरत एक अदद कोच की', 'फिल्म और कंट्रोवर्सी' इसी तरह की रचनाएं हैं। 'हे चमत्कार तेरा ही आसरा' व्यंग्य में व्यंग्यकार ने शिक्षा के क्षेत्र में बढ़ती हुई व्यापारीकरण की प्रवृत्ति की ओर ध्यान आकृष्ट किया है। शिक्षा और व्यापार के घाल-मेल का बुनियादी शिक्षा पर तो निस्संदेह ही बुरा प्रभाव पड़ रहा है। कहना न होगा कि आज के जीवन की अधिकतर विसंगतियों का परिणाम यही घाल-मेल है। कुमार विनोद की बानगी शिक्षा एक ऐसा व्यवसाय हो गया है कि 'हींग लगे न फिटकरी, रंग चोखा'. येन-केन-प्रकारेण रातोरात अमीर बनाने की अभिलाषाएं आसमान छू रही हैं। रातोरात अमीर बनने वाले लोग आज देवताओं की तरह पूजे जाते हैं। नैतिकता का जीवन से ह्रास हो गया है। कुमार विनोद के अनुसार 'हवालात की सैर इन बड़े लोगों के लिए महज सुबह शाम के वक्त की जाने वाली सैर ही तो होती है'।

'शाहरुख-धोनी अदला-बदली की सोर्स फाइल' व्यंग्य में पुलिस और चोर, राजनीति-और अपराध, क्रिकेट और सिनेमा की अदला-बदली के प्रसंगों के माध्यम से लेखक ने संपूर्ण व्यवस्था को ही कटघरे में खड़ा किया है। क्रिकेटर का फिल्मों से और अभिनेताओं का क्रिकेट से गहरा सम्बन्ध हो गया है। यहाँ भी महत्त्व खेल का नहीं पैसों का है, रुपयों का है। ये सारे प्रसंग लेखक को सपने में दिखाई देते हैं, इससे भी पता चलता है कि इस प्रवृत्ति ने वास्तव में ही आम आदमी के मन-मस्तिष्क को कितने गहरे से प्रभावित किया है। बाजारवाद का विकृत चेहरा 'फिल्म और कंट्रोवर्सी' नामक व्यंग्य में भी उजागर हुआ है। फिल्मों में जानबूझ कर 'ऐसे कंट्रोवर्शिअल सीन भरे जाते हैं जो दिमागों में भले ही जहर भर दें' लेकिन 'प्रोड्यूसर को मालामाल' कर देते हैं। एक और व्यंग्य 'बिजली बिल से चमकी किस्मत' में प्रशासकीय

संवेदनहीनता को प्रभावपूर्ण अभिव्यक्ति मिली है। 'जाखू मंदिर में बापू के तीन बंदर' व्यंग्य के माध्यम से लेखक ने आज के राजनीतिक यथार्थ को बखूबी प्रत्यक्ष किया है। 'मानसून पर निर्भरता' में राजनीतिक निष्क्रियता की पोल खोली गई है। 'चांद पर बंगला बने न्यारा' संग्रह के व्यंग्य में चांद पर बसने की परिकल्पना की सुन्दर अभिव्यक्ति हुई है। 'मुशायरा हिट करवाने के अचूक नुस्खे' में साहित्यिक गोष्ठियों और सभाओं के सतहीपन, खोखलेपन और गंभीरता की कमी को निशाना बनाया गया है। इस प्रकार व्यंग्यों की विविधता और ताजगी पाठक को आद्यंत बांधे रखती है।

'स्लैप डे का फंडा', नामक रचना में हल्के-फुल्के अंदाज में प्रेम की सीमा निर्धारित की गई है तो 'कान्हा भये उदास अबके होली में' पारंपरिक त्योहारों को भूल कर नए रुझानों पर हल्का व्यंग्य किया गया है और सचेत भी किया गया है कि पश्चिम की नकल पर हमारे समाज में पैठ बना रहे नए आयोजनों में सामूहिकता और आनंद का अभाव है। 'गणित की कक्षा में ब्लू लाइन' नामक रचना में ब्लू लाइन बसों को उनकी सही लाइन पर तंत्र कभी ला ही नहीं सकता', कहकर व्यंग्यकार ने हमारी व्यवस्था और संवेदनशीलता पर बड़ा प्रश्नचिह्न लगाया है। ब्लू लाइन बसों द्वारा बार-बार आम नागरिकों के कुचले जाने पर यह प्रश्न तथाकथित रूप से गणित की कक्षा में छोटे-छोटे बच्चों को तो उद्वेलित करता है किन्तु शासन-प्रशासन को कोई फर्क नहीं पड़ता। यह प्रस्तुति नवीन ताजगी लिए हुए है। अन्यत्र भी कई नवीन प्रयोग हुए हैं। 'फेयरवेल पार्टी-2014', 'टमाटर आलू संवाद का सीधा प्रसारण', जरूरत एक अदद कोच की', 'टेररिज्म डिप्लोमा का संशोधित पाठ्यक्रम', 'राग त्वांग की रूपरेखा' आदि रचनाओं में अभिव्यक्ति के स्तर नवीन प्रयोग हुए हैं जिससे कथ्य नई ताजगी के साथ पाठकों के समक्ष प्रस्तुत हुए हैं। कुमार विनोद का यही प्रयास है कि आपाधापी के इस दौर में भी मानव-मूल्यों के प्रति लोगों को संवेदनशील बनाए रखा जा सके नहीं तो पृथ्वी तो किसी प्रकार टिकी हुई है चांद तो हमेशा-हमेशा के लिए पृथ्वी की गोद में समा जाएगा।

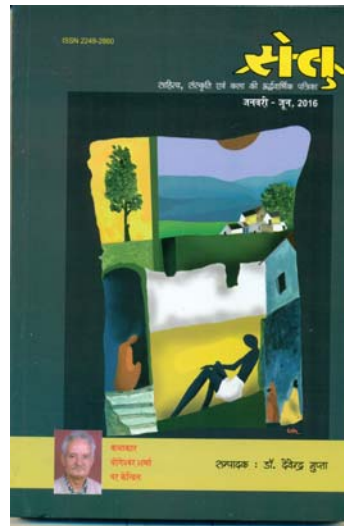
राजीव गांधी राजकीय महाविद्यालय, कोटशेरा,
चौड़ा मैदान शिमला-171004

बाबू समझो इशारे, व्यंग्य संग्रह/ कुमार विनोद, बोधि प्रकाशन, जयपुर, मूल्य : 80 रुपये

कथाकार योगेश्वर पर केंद्रित 'सेतु' का नया अंक

हिमाचल प्रदेश क्रिएटिव राइटर्स फोरम शिमला के सौजन्य से प्रकाशित हिंदी की साहित्य पत्रिका 'सेतु' का बीसवां अंक पाठकों के मध्य आ पहुंचा है। यह अंक हिमाचल से हिंदी साहित्य के प्रतिष्ठित कहानीकार योगेश्वर शर्मा के साहित्यिक अवदान पर केंद्रित है।

यह जानकारी पत्रिका के संपाकद डॉ. देवेंद्र गुप्ता ने देते हुए बताया कि यद्यपि कथाकार योगेश्वर शर्मा के मात्र दो प्रकाशित संग्रह हैं फिर भी हिंदी कथा जगत में कहानीकार के रूप में योगेश्वर शर्मा का एक खास मुकाम है। उन्होंने रहस्योद्घाटन करते हुए बताया कि योगेश्वर शर्मा ने 16 कहानियां और लिखी हैं और आशा की जानी चाहिए कि उन कहानियों का अगला संकलन शीघ्र ही पाठकों के समक्ष आ जाएगा। इस अंक में विशिष्ट कवि के रूप में ज्ञानपीठ नवलेखन से पुरस्कृत विमलेश त्रिपाठी की दस प्रेम कविताओं के अतिरिक्त राकेश रोहित, राहुल देव, सुरेश नारायण कुसुंबी वाल, गीता डोगरा और तरसेम गुजराल की कविताओं का पाठक रसास्वादन करेंगे। बृज किशोर झा, शेर सिंह, विक्रम सिंह, डॉ. कैलाश आहलूवालिया, रज्जा सिंह और त्रिलोक मेहरा की कहानियां विमर्शों और सामाजिक मुद्दों को उठाती हैं। कविता को समर्पित पत्रिका 'कृति ओर' के संपादक अमीर चंद वैश्य का आलेख आज के समय के लोकधर्मी कवि विजेंद्र की लंबी कविताओं के कथा, शिल्प और स्थापत्य को विशेष रूप से उजागर करती है। संपादकीय 'हद से बेहद' में संपादक डॉ. देवेंद्र गुप्ता ने योगेश्वर शर्मा के दो संग्रह 'नंगा आदमी' और 'आ गया भराड़ीघाट' की चर्चा की है और नोबेल पुरस्कार प्राप्त स्वेतलाना का संक्षिप्त परिचय भी रखा है।

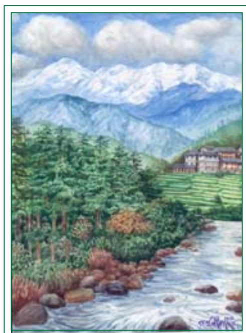


इसके अतिरिक्त पुस्तक समीक्षाएं, पुस्तक परिचय के अतिरिक्त विरासत स्तंभ में मुंशी प्रेमचंद का 'साहित्य का उद्देश्य' नामक लेख है। वस्तुतः यह लेख एक व्याख्यान है। प्रेमचंद ने 1936 में 'प्रगतिशील लेखक संघ' की स्थापना के अवसर पर यह व्याख्यान दिया था।

पत्रिका आवरण और सामग्री दोनों के स्तर पर संग्रहणीय है।

हिमप्रस्थ

वर्ष : 60 अप्रैल-मई 2015 अंक : 1-2



सम्पादकीय कार्यालयः हि. प्र. प्रिंटिंग प्रेस परिसर, घोड़ा चौकी, शिमला-5

वार्षिक शुल्कः 50 रुपये, एक प्रति : 5 रुपये

रचनाओं में व्यक्त विचारों से सम्पादकीय सहमति अनिवार्य नहीं

E-Mail : himprasthahp@gmail.com
Tell: 0177 2633145, 2830374

ज्ञान सागर

इस संसार में घृणा को घृणा द्वारा नहीं रोका जा सकता। मात्र प्रेम के द्वारा ही उसका निषेध होता है। यह सनातन नियम है।

- गौतम बुद्ध

इस अंक में

लेख

साक्षात्कार/व्यक्तित्व

धरोहर पन्नों से

कहानी

कविता/ग़ज़ल

लघुकथा

समीक्षात्मक लेख

अपनी बात

हिमप्रस्थ पत्रिका ने वर्ष 1955 में हिमाचल दिवस के सुअवसर पर प्रवेशांक के साथ राज्य की पहली सरकारी पत्रिका के रूप में अपनी यात्रा शुरू की। साठ साल की अवधि में इसने सरकारी संरक्षण की पत्रिकाओं की आम छवि से हटकर हिंदी साहित्य के क्षेत्र में विशेष मुकाम हासिल किया है। इससे हिमालय में नवोदित इस पर्वतीय शासकीय इकाई को साहित्य जगत में नई पहचान मिली। इस पहाड़ी प्रदेश में हिमप्रस्थ का पदार्पण एक ऐसे समय में हुआ जब यहां नियमित रूप से निकलने वाली पत्र-पत्रिकाओं का सर्वथा अभाव था। प्रदेश में बिखरी पड़ी सांस्कृतिक धरोहरों को सुव्यवस्थित और प्रामाणिक तरीके से प्रकाश में लाने के साथ-साथ पत्रिका ने हिमाचल के उभरते और स्थापित रचनाकारों को एक सशक्त साहित्यिक मंच प्रदान किया है। हिमाचल एक ऐसा पहाड़ी राज्य है जिसके हर जनपद और हर क्षेत्र की अपनी एक अलग संस्कृति, बोल-चाल, रहन-सहन और समृद्ध देव संस्कृति है। पत्रिका ने प्रदेश की इस समृद्ध संस्कृति को न केवल पोषित एवं संरक्षित किया है बल्कि राज्य की छोटी-छोटी अंचलिक धरोहरों को एक-दूसरे से रु-ब-रु करवाकर पाठकों तक पहुंचाने में भी महत्त्वपूर्ण योगदान दिया। इसने सूचना प्रौद्योगिकी में आए क्रांतिकारी परिवर्तनों के इस युग में भी मूल्यनिष्ठ लेखन को जीवंत रखा है। समय की मांग के अनुरूप इसमें जनोपयोगी एवं सुरुचिपूर्ण सामग्री को समाहित किए जाने से पत्रिका को प्रासंगिक बनाए रखने में सहायता मिली है। पत्रिका में हिमाचल के साथ-साथ देश के अन्य राज्यों के लेखकों की रचनाओं को भी उचित स्थान दिया जाता रहा है। हमारा लगातार यही प्रयास रहा है कि प्रदेश और देश के अन्य भागों के लेखकों एवं रचनाकारों के बीच एक सार्थक एवं अर्थपूर्ण संवाद बना रहे जिससे पत्रिका को साहित्य की मुख्यधारा से जोड़े रखने में मदद मिल सके। पत्रिका के लिए यह गर्व की बात है कि इसमें समय-समय पर देश के ख्यातिप्राप्त साहित्यकारों की रचनाएं प्रकाशित होती रही हैं। पत्रिका के शुरुआती दौर में हिमाचल प्रदेश के दुर्गम और जनजातीय क्षेत्रों तथा अन्य जनपदों को लेकर पं. राहुल सांकृत्यायन की एक लम्बी धारावाहिक श्रृंखला प्रकाशित हुई। इससे पत्रिका का न केवल एक नया पाठक वर्ग तैयार हुआ बल्कि साहित्य जगत में हिमप्रस्थ को राष्ट्रीय स्तर पर एक नई पहचान भी मिली। इसके अलावा देश के अनेक नामी-गिरामी साहित्यकारों ने अपनी रचनाओं से पत्रिका का सम्मान बढ़ाया है। इस पहाड़ी प्रांत के सर्वांगीण विकास को जन-जन तक पहुंचाने और इसे राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में मूल्यांकित-विश्लेषित करने की भूमिका भी यह पत्रिका समय-समय पर निभाती आई है। पत्रिका में प्रकाशित स्तरीय सामग्री की सत्यता एवं प्रमाणिकता का आभास हमें तब होता है जब विश्वविद्यालयों और शिक्षण संस्थानों के अनुसंधानकर्ता एवं शोधार्थी अपने शोध कार्यों के लिए हिमप्रस्थ को संदर्भ पत्रिका के रूप में उपयोग में लाते हैं। हमारे लिए यह बेहद संतोष का विषय है कि पदार्पण के समय जिन उद्देश्यों को लेकर यह पत्रिका आरम्भ हुई थी, उनकी प्राप्ति की दिशा में यह निरंतर अग्रसर है। साठ साल पूर्व संस्कृति, साहित्य और विकास को समर्पित पत्रिका का जो सपना संजोया था, आज वह पूरा होता प्रतीत हो रहा है। पत्रिका के प्रथम सम्पादक श्री हरिकृष्ण मिट्टू, तदोपरांत सर्वश्री राम दयाल नीरज, सत्येन्द्र शर्मा, ज़िया सिद्दिकी और केशव नारायण जैसे सुधि सम्पादकों की सम्पादकीय विरासत को आगे ले जाने के लिए हम निरंतर प्रयत्नशील हैं। प्रस्तुत अंक में हम हिमप्रस्थ में साठ वर्ष की अवधि के दौरान प्रकाशित उपयोगी एवं रुचिकर सामग्री में से कुछ चुनिंदा लेख दे रहे हैं- ताकि सुधि पाठकगण पत्रिका की इस अबाध यात्रा से रु-ब-रु हो सकें। पत्रिका में हम हिमाचल प्रदेश के विकासात्मक, सांस्कृतिक एवं साहित्यिक पक्षों को उजागर करने वाली सामग्री को सदैव प्राथमिकता देते रहे हैं और भविष्य में भी देते रहेंगे। इसी संकल्प के साथ हिमप्रस्थ परिवार इस पत्रिका से जुड़े हर लेखक को इसके छह दशक पूर्ण होने पर बधाई देता है, जिनके सहयोग से हम अपनी साहित्यिक यात्रा को आगे बढ़ाने में कामयाब हुए हैं।

–सम्पादक

समान व सर्वांगीण विकास का आदर्श

हिमाचल



● वीरभद्र सिंह,
मुख्य मंत्री, हिमाचल प्रदेश

पन्द्रह अप्रैल, 1948 को 30 पहाड़ी रियासतों के विलय के साथ हिमाचल प्रदेश अस्तित्व में आया। इस ऐतिहासिक दिन से अपनी यात्रा आरम्भ करने के बाद यह प्रदेश प्रगति के पथ पर निरंतर अग्रसर है। विगत छह दशक से अधिक समय से राज्य ने अपनी एक अलग पहचान बनाई है।

हिमाचल प्रदेश ने इन वर्षों में अभूतपूर्व व अद्वितीय उपलब्धियां अर्जित की हैं। प्रति व्यक्ति आय, राज्य सकल घरेलू उत्पाद, साक्षरता दर जैसे विभिन्न विकासात्मक सूचकों तथा शिक्षा, स्वास्थ्य व सड़क जैसी मूलभूत सुविधाओं में प्रदेश में हुआ विकास इसका साक्षी है। प्रति व्यक्ति आय जो वर्ष 1948 में मात्र 240 रुपये थी, आज बढ़कर 1,04,943 रुपये हो गई है। राज्य सकल घरेलू उत्पाद 26 करोड़ रुपये से बढ़कर वर्ष 2014-15 में, अग्रिम अनुमानों के अनुसार, 95,587 करोड़ रुपये हो गया है। साक्षरता दर 7 प्रतिशत से बढ़कर 82.8 प्रतिशत हो गई है। खाद्यान्न उत्पादन वर्ष 1948 के 2 लाख मीट्रिक टन की तुलना में बढ़कर 16 लाख मीट्रिक टन से अधिक तथा फल उत्पादन 1200 मीट्रिक टन से बढ़कर 8.66 लाख मीट्रिक टन पहुंच गया है।

प्रदेश द्वारा अर्जित इन उपलब्धियों का श्रेय राज्य के मेहनतकश व ईमानदार लोगों के साथ-साथ राज्य सरकारों को भी जाता है, जिन्होंने प्रदेश को योग्य नेतृत्व प्रदान किया। मैं, इस पावन धरा के सभी महान सपूतों के प्रति अपना सम्मान व कृतज्ञता व्यक्त करता हूं, जिन्होंने हिमाचल प्रदेश को सर्वांगीण व संतुलित विकास का आदर्श बनाने में अपना रचनात्मक सहयोग दिया। इस पावन दिवस पर हम हिमाचल प्रदेश के प्रथम मुख्यमंत्री डॉ. वाई.एस. परमार को नमन करते हैं जिन्होंने राज्य के शैशवकाल में इसके विकास की ठोस नींव रखी।

हिमाचल प्रदेश के लोगों ने अधिकांश समय कांग्रेस सरकारों में अपना विश्वास व्यक्त किया। प्रदेशवासियों के आशीर्वाद से मुझे छठी बार मुख्यमंत्री के रूप में हिमाचल प्रदेश की सेवा करने का अवसर मिला है। इन वर्षों में मैंने प्रदेशवासियों की आशाओं के अनुरूप खरा उतरने के भरसक प्रयास किए हैं।

वर्तमान प्रदेश सरकार ने 25 दिसम्बर, 2012 को प्रदेश की बागडोर सम्भाली तथा तब से इसके प्रयास प्रदेश के समान व संतुलित विकास पर केंद्रित रहे हैं। 'सर्व कल्याण-समग्र विकास' हमारी सरकार का मूलमंत्र रहा है। इसके लिए समाज के कमजोर वर्गों, उपेक्षितों तथा जरूरतमंदों के सामाजिक-आर्थिक उत्थान व कल्याण को सर्वोच्च प्राथमिकता दी जा रही है। हमारा प्रयास लोगों को पारदर्शी, जवाबदेह तथा दक्ष प्रशासन प्रदान करना है, ताकि सरकार की नीतियों एवं कार्यक्रमों के समुचित लाभ लागों तक पहुंच सकें।

आम आदमी का कल्याण सरकार की नीति व नियोजन का केंद्रबिन्दु रहा है। 3,04,921 वृद्धजनों, विधवाओं तथा शारीरिक रूप से अक्षम व्यक्तियों को सामाजिक सुरक्षा पेंशन प्रदान की जा रही है। सामाजिक सुरक्षा पेंशन को गत दो वर्षों में 450 रुपये से बढ़ाकर 550 रुपये किया गया था, वर्तमान वित्तीय वर्ष से इसे बढ़ाकर 600 रुपये प्रतिमाह किया गया है। इसी प्रकार 80 वर्ष से अधिक आयु के वृद्धजनों को 1100 रुपये प्रतिमाह की दर से सामाजिक सुरक्षा पेंशन प्रदान की जाएगी।

राज्य सरकार महिलाओं व बच्चों के कल्याण के प्रति वचनबद्ध है। 35 हजार रुपये तक वार्षिक पारिवारिक आय वाली महिलाओं को छोटे कारोबार आरम्भ करने के लिए दी जा रही 2500 रुपये की वित्तीय सहायता को वर्तमान वित्त वर्ष से बढ़ाकर 5000 रुपये किया गया है। कन्याओं के प्रति लोगों में सकारात्मक बदलाव लाने के लिए सरकार ने 6 वर्ष तक की सभी बालिकाओं को सरकारी अस्पतालों में निःशुल्क चिकित्सा सुविधा प्रदान करने का निर्णय लिया है। इंदिरा गांधी बालिका सुरक्षा योजना के अंतर्गत एक कन्या के उपरान्त स्थायी परिवार

नियोजन अपनाने वाले दंपतियों को दी जाने वाली प्रोत्साहन राशि को 25 हजार से बढ़ाकर 35 हजार रुपये तथा दो कन्याओं के उपरांत स्थायी परिवार नियोजन अपनाने वाले दंपतियों को दी जाने वाली प्रोत्साहन राशि को 20,000 से बढ़ाकर 25,000 रुपये किया गया है। बेटी है अनमोल योजना के अंतर्गत बी.पी.एल. परिवारों की दो कन्याओं तक पहली से दस जमा दो कक्षाओं तक दी जा रही छात्रवृत्ति में 50 प्रतिशत की वृद्धि की गई है।

जनजातीय क्षेत्रों का संतुलित विकास तथा जनजातीय लोगों का कल्याण राज्य सरकार की हमेशा सर्वोच्च प्राथमिकता रही है। वर्तमान वित्तीय वर्ष के दौरान जनजातीय उपयोजना के तहत 432 करोड़ रुपये आबंटित किए गए हैं। जनजातीय क्षेत्रों के लिए गैर-योजना सहित कुल 985 करोड़ रुपये का आबंटन किया गया है। अनुसूचित जाति व अन्य पिछड़े वर्गों तथा अल्पसंख्यक समुदायों के कल्याण व विकास के लिए 1503 करोड़ रुपये आबंटित किए गए हैं।

प्रदेश की शत-प्रतिशत जनसंख्या को सार्वजनिक वितरण प्रणाली के अंतर्गत लाया गया है। राज्य उपदान योजना के अंतर्गत राशन कार्ड धारकों को 4796 उचित मूल्य की दुकानों के माध्यम से तीन दालें, दो खाद्य तेल तथा आयोडीन नमक उपदान युक्त दरों पर उपलब्ध करवाया जा रहा है। गत दो वर्षों में इस योजना के अंतर्गत 457 करोड़ रुपये खर्च किए हैं तथा वर्तमान वित्तीय वर्ष में इसके लिए 210 करोड़ रुपये का प्रावधान किया गया है। प्रदेश में उपभोक्ताओं की समस्याओं के समाधान के लिए एक टोल फ्री उपभोक्ता हैल्प-लाईन सेवा स्थापित की गई है। सार्वजनिक वितरण प्रणाली के बेहतर कार्यान्वयन तथा इसमें चोरी रोकने के लिए राज्य सरकार ने 14 करोड़ रुपये की ई-पी.डी.एस. परियोजना आरम्भ करने का निर्णय लिया है। इस योजना के अंतर्गत सभी पात्र परिवारों को डिजिटल राशन कार्ड जारी किए जाएंगे।

हिमाचल प्रदेश ने इन वर्षों में अभूतपूर्व व अद्वितीय उपलब्धियां अर्जित की हैं। प्रति व्यक्ति आय, राज्य सकल घरेलू उत्पाद, साक्षरता दर जैसे विभिन्न विकासात्मक सूचकों तथा शिक्षा, स्वास्थ्य व सड़क जैसी मूलभूत सुविधाओं में प्रदेश में हुआ विकास इसका साक्षी है। प्रति व्यक्ति आय जो वर्ष 1948 में मात्र 240 रुपये थी, आज बढ़कर 1,04,943 रुपये हो गई है। राज्य सकल घरेलू उत्पाद 26 करोड़ रुपये से बढ़कर वर्ष 2014-15 में, अग्रिम अनुमानों के अनुसार, 95,587 करोड़ रुपये हो गया है। साक्षरता दर 7 प्रतिशत से बढ़कर 82.8 प्रतिशत हो गई है। खाद्यान्न उत्पादन वर्ष 1948 के 2 लाख मीट्रिक टन की तुलना में बढ़कर 16 लाख मीट्रिक टन से अधिक तथा फल उत्पादन 1200 मीट्रिक टन से बढ़कर 8.66 लाख मीट्रिक टन पहुंच गया है।

प्रदेश का विकास मुख्यतः ग्रामीण क्षेत्रों की खुशहाली व समृद्धि पर निर्भर करता है, क्योंकि राज्य की लगभग 90 प्रतिशत जनसंख्या इन्हीं क्षेत्रों में निवास करती है। राज्य सरकार कृषि क्षेत्र को प्राथमिकता देकर ग्रामीण आर्थिकी को सुदृढ़ करने पर विशेष ध्यान दे रही है। प्रदेश में डॉ. वाई.एस. परमार किसान स्वरोजगार योजना कार्यान्वित की जा रही है, जिसके अंतर्गत किसानों को पॉलीहाउस के निर्माण लिए 85 प्रतिशत उपदान दिया जा रहा है। वर्तमान वित्तीय वर्ष के दौरान इस योजना के अंतर्गत 2 लाख वर्ग मीटर अतिरिक्त क्षेत्र को पॉलीहाउस के अंतर्गत लाने के लिए 30 करोड़ रुपये का प्रावधान किया गया है।

प्रदेश में 8,500 हेक्टेयर क्षेत्र को टपक/ फवारा सिंचाई प्रणाली के अंतर्गत लाने के लिए राजीव गांधी सूक्ष्म सिंचाई योजना आरम्भ की गई है। इस योजना के अंतर्गत चार वर्ष की अवधि में 154 करोड़ रुपये खर्च किए जाएंगे। सरकार द्वारा मुख्यमंत्री किसान एवं खेतीहर मजदूर सुरक्षा नामक एक नई योजना आरम्भ की गई है, जिसके तहत किसानों व खेतीहर मजदूरों को मृत्यु अथवा स्थायी रूप से अपंगता की स्थिति में डेढ़ लाख रुपये तथा आंशिक रूप से अपंग होने की स्थिति में 50 हजार रुपये का बीमा छत्र प्रदान किया जा रहा है। प्रदेश सरकार के सतत प्रयासों के परिणामस्वरूप राज्य में बेमौसमी सब्जियों का उत्पादन 14 लाख टन पार कर गया है, जिससे किसानों को लगभग 2500 करोड़ रुपये की आय हो रही है। वर्तमान वित्तीय वर्ष के दौरान बेमौसमी सब्जियों को और बढ़ावा देने के लिए 60 करोड़ रुपये आबंटित किए गए हैं। हिमाचल प्रदेश के सामाजिक-आर्थिक उत्थान में बागबानी की महत्त्वपूर्ण भूमिका है। वर्तमान वित्तीय वर्ष के दौरान 3 हजार हेक्टेयर अतिरिक्त क्षेत्र को उन्नत बागवानी फसलों के अन्तर्गत लाने का लक्ष्य रखा गया है। बागबानी फसलों की संरक्षित खेती के लिए राज्य सरकार ने ग्रीन हाऊस के निर्माण के लिए उपदान को 85 प्रतिशत किया है। इसी प्रकार फल फसलों, विशेषकर सेब को ओलावृष्टि से बचाने के लिए एंटी हेलनेट पर उपदान की दर को 80 प्रतिशत किया गया है। वर्तमान वित्तीय वर्ष के दौरान उच्च मूल्य फूलों तथा सब्जियों को संरक्षित खेती के तहत 2 लाख वर्ग मीटर अतिरिक्त क्षेत्र तथा एंटी हेलनेट के अंतर्गत 12 लाख वर्ग मीटर क्षेत्र लाने का लक्ष्य रखा गया है।

मौसम आधारित फसल बीमा योजना को सेब के लिए 17 विकास खण्डों से बढ़ाकर 35 विकास खण्डों तथा रबी मौसम 2014-15 के दौरान आम के लिए 10 विकास खण्डों से बढ़ाकर 17 विकास खण्डों के लिए बढ़ाया गया था। अब इस योजना का प्रदेश के सभी विकास खण्डों में विस्तार किया गया है। इसके अलावा, आलूबुखारा, आड़ू तथा किन्नू जैसे फलों को भी कुछ खण्डों में बीमा छत्र के अंतर्गत लाया गया है। दुग्ध उत्पादन में वृद्धि लाने तथा देसी नस्लों के संरक्षण के लिए नई पशु प्रजनन नीति बनाई जा रही है। इस प्रजनन नीति के अंतर्गत कृत्रिम गर्भाधान द्वारा पशुओं की देसी व पहाड़ी नस्लों के संरक्षण की परिकल्पना की गई है। कृत्रिम गर्भाधान एवं प्रजनन सम्बन्धित अधोसंरचना को सुदृढ़ करने के लिए 5.71 करोड़ रुपये का प्रावधान किया गया है। दुधारु पशुओं, विशेषकर गाय के लिए उपयुक्त नीतियां व कार्यक्रम तैयार करने के उद्देश्य से राज्य में एक गौवंश संवर्द्धन बोर्ड

का गठन किया जाएगा। प्रदेश में दुग्ध उत्पादकों की आय में वृद्धि करने के लिए इस वर्ष प्रथम अप्रैल से दूध के प्रापण मूल्य में एक रुपये प्रतिलीटर की वृद्धि की गई है।

राज्य सरकार द्वारा प्रदेश में सभी लोगों को स्वच्छ व सुरक्षित पेयजल प्रदान करने को विशेष प्राथमिकता दी जा रही है। ऊना जिले में 922.48 करोड़ रुपये की स्वां नदी तटीकरण परियोजना का कार्य प्रगति पर है। कांगड़ा जिले के इंदौरा तहसील में छोंछ खड्ड के तटीकरण पर 180 करोड़ रुपये खर्च किए जा रहे हैं। वर्तमान वित्तीय वर्ष के दौरान 2 हजार हेक्टेयर क्षेत्र को बाढ़ से बचाने के लिए 187 करोड़ रुपये का प्रावधान किया गया है। प्रदेश की कठिन भौगोलिक स्थिति के कारण यहां सिंचाई के लिए उठाऊ सिंचाई योजनाओं पर निर्भर रहना पड़ता है। इसके दृष्टिगत किसानों को राहत देते हुए सरकार ने निर्णय लिया है कि व्यक्तिगत तथा किसानों के समूह द्वारा उठाऊ सिंचाई योजनाएं अथवा बोरवैल स्थापित करने के लिए उन्हें 50 प्रतिशत उपदान दिया जाएगा।

गरीबी उन्मूलन, रोजगार सृजन, समुदाय सशक्तीकरण तथा ग्रामीण क्षेत्रों में मानव एवं आर्थिक संसाधनों का विकास राज्य सरकार की प्राथमिकता रही है। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए अनेक कल्याण एवं विकास योजनाएं आरम्भ की गई हैं। वर्तमान वित्तीय वर्ष के दौरान राजीव आवास योजना, इंदिरा आवास योजना तथा अन्य आवास योजनाओं के अंतर्गत 75 करोड़ रुपये की लागत से 10 हजार घरों का निर्माण किया जाएगा। मनरेगा के अंतर्गत किसानों द्वारा निजी भूमि पर पानी के टैंकों के निर्माण को प्रोत्साहित करने के उद्देश्य से राज्य सरकार ने कच्चे पानी के टैंकों को पॉली लाईन्ड टैंकों या पक्के पानी के टैंकों में परिवर्तित करने के लिए अतिरिक्त सामग्री हेतु 20 करोड़ रुपए प्रदान करने का निर्णय लिया है। स्वच्छ भारत मिशन-ग्रामीण के अंतर्गत राज्य सरकार शेष बची सभी 2017 बस्तियों को शामिल करने तथा वर्तमान वित्तीय वर्ष के दौरान प्रदेश की 477 ग्राम पंचायतों में ठोस एवं तरल कचरा प्रबंधन के कार्यान्वियन करने पर विशेष बल देगी।

प्रदेश सरकार राज्य में पंचायती राज संस्थाओं को सुदृढ़ करने के प्रति वचनबद्ध है। पंचायती राज संस्थाओं तथा स्थानीय शहरी निकायों को धनराशि के समयबद्ध हस्तांतरण हेतु संस्तुतियां प्रदान करने के लिए पांचवें राज्य वित्त आयोग का गठन किया गया है। सरकार द्वारा वर्तमान वित्तीय वर्ष के दौरान राज्य बजट से पंचायतों को 109 करोड़ रुपये जारी किए जाएंगे। इसके अलावा, 14वें वित्त आयोग की सिफारिशों के अनुरूप वर्तमान वित्तीय वर्ष के दौरान 195 करोड़ रुपये भी जारी किए जाएंगे। वर्तमान वित्तीय वर्ष के दौरान पंचायत सहायकों के 400 पद भरे जाएंगे, ताकि प्रत्येक पंचायत को कम से कम एक कार्यकर्ता उपलब्ध हो सके।

प्रदेश सरकार राज्य में सभी बच्चों को शिक्षा सुलभ करवाने के प्रति वचनबद्ध हैं। गत दो वर्षों के दौरान राज्य में 719 नए स्कूल खोले अथवा स्तरोन्नत किए गए तथा प्रदेश के ग्रामीण क्षेत्रों में 14 नए महाविद्यालय खोले गए। स्कूलों में शिक्षा गतिविधियों को सुदृढ़ करने के लिए हिमाचल प्रदेश स्कूल शिक्षा बोर्ड के 10वीं तथा 12वीं कक्षा के मेधावी विद्यार्थियों को राजीव गांधी डिजिटल योजना के अंतर्गत वर्तमान वित्तीय वर्ष के दौरान 10,000 नेटबुक/लैपटॉप प्रदान किए जाएंगे। प्रदेश की सभी वरिष्ठ माध्यमिक पाठशालाओं तथा महाविद्यालयों में छात्रों को प्रशिक्षण एवं व्यवसाय संबंधी मार्गदर्शन के लिए करियर गाईडेंस/ कांउसलिंग सुविधा आरम्भ की जाएगी।

राज्य सरकार प्रदेशवासियों को उत्तरदायी एवं योग्य प्रशासन प्रदान करने तथा प्रदेश के सभी क्षेत्रों व समाज के प्रत्येक वर्ग के संतुलित विकास के प्रति वचनबद्ध है। हमारा यह प्रयास है कि हिमाचल प्रदेश को देश का सर्वाधिक समृद्ध एवं विकसित राज्य बनाया जाए। प्रदेशवासियों के सहयोग एवं समर्थन से हम इस उद्देश्य को अवश्य प्राप्त करेंगे।

प्रदेश सरकार राज्य में तकनीकी शिक्षा को सुदृढ़ करने पर विशेष बल दे रही है, क्योंकि तकनीकी एवं व्यावसायिक शिक्षा, दक्षता विकास में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है तथा इससे युवाओं को रोजगार के अधिक से अधिक अवसर प्राप्त होते हैं। कांगड़ा जिले के नगरोटा में एक इंजीनियरिंग कॉलेज खोला गया है, जबकि एक और इंजीनियरिंग कॉलेज शिमला जिले के ज्यूरी में खोला जाएगा। प्रदेश में अलग से एक ललित कला महाविद्यालय खोला जाएगा, जहां विद्यार्थियों को विजुअल एवं फाईन आर्ट्स जैसी कलाएं सिखाई जाएंगी। शिमला जिले के झुण्डला में एक क्षेत्रीय महिला व्यावसायिक प्रशिक्षण संस्थान खोला जाएगा।

प्रदेशवासियों को उनके घरद्वार पर बेहतर एवं विशेषज्ञ स्वास्थ्य सेवाएं प्रदान करना सरकार की वचनबद्धता है। बिलासपुर जिले में अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान खोला जाएगा। प्रदेश के नाहन, चम्बा तथा हमीरपुर में 189-189 करोड़ रुपये की लागत से तीन मेडिकल कॉलेज खोले जाएंगे। इंदिरा गांधी मेडिकल कॉलेज शिमला में टर्शरी स्वास्थ्य सेवाएं प्रदान करने के लिए 150 करोड़ रुपये की लागत से एक सुपर स्पेशियलिटी खण्ड का निर्माण किया जाएगा। डॉ. राजेन्द्र प्रसाद मेडिकल कॉलेज टाण्डा के बर्न यूनिट को 5 करोड़ रुपये की लागत से सुदृढ़ किया जाएगा। राज्य के सभी जिला अस्पतालों में चरणबद्ध रूप से बर्न यूनिट स्थापित किए जाएंगे। प्रदेश के जनजातीय तथा दुर्गम क्षेत्रों में विशेषज्ञ स्वास्थ्य सेवाएं उपलब्ध करवाने के लिए नागरिक अस्पताल केलांग व काज़ा तथा सिरमौर एवं चम्बा जिलों के 25 सामुदायिक स्वास्थ्य केंद्रों तथा सामुदायिक स्वास्थ्य केंद्र डोडरा-क्वार में सार्वजनिक निजी सहभागिता के अंतर्गत पायलट आधार पर टेली-मेडिसन परियोजना आरम्भ की जाएगी। एकल महिलाओं तथा 80 वर्ष से अधिक आयु के वृद्धजनों की सामान्य स्वास्थ्य देखभाल एवं गम्भीर बीमारी के उपचार के लिए मुख्यमंत्री राज्य स्वास्थ्य देखभाल योजना आरम्भ की गई है। इसके लिए कोई आय सीमा निर्धारित नहीं की गई है। बच्चों के स्वास्थ्य देखभाल के लिए सचल स्वास्थ्य दल शिक्षण संस्थानों का नियमित दौरा

करेंगे तथा बीमार बच्चों को सरकारी एवं सूचीबद्ध निजी अस्पतालों में निशुल्क उपचार सुविधा उपलब्ध करवाई जाएगी।

प्रदेश सरकार राज्य में सड़क निर्माण को विशेष प्राथमिकता दे रही है। प्रदेश के गठन के समय राज्य में सड़कों की कुल लम्बाई केवल 228 किलोमीटर थी, जो आज बढ़कर 33,737 किलोमीटर हो गई है। प्रदेश की 3243 पंचायतों में से 3117 पंचायतों को पहले ही सड़कों से जोड़ा जा चुका है, जबकि शेष पंचायतों को सड़कों से जोड़ने का कार्य प्रगति पर है। प्रदेश ने नाबार्ड द्वारा प्रदान की गई धनराशि का समुचित उपयोग सफलतापूर्वक किया है तथा 2 हजार करोड़ रुपये के ऋण प्राप्त कर राज्य में 2381 परियोजनाओं को पूरा किया गया है। प्रदेश के लिए 632 किलोमीटर कुल लम्बाई के पांच नए राष्ट्रीय उच्च मार्ग स्वीकृत किए गए हैं। ये उच्च मार्ग हैं - मनाली से सरचु, समधु से ग्राम्फू, पुराना मटौर से मेकलोडगंज, कटोरी बंगलो से भरमौर तथा अम्ब से मुबारकपुर।

योजनाबद्ध व त्वरित औद्योगीकरण, विकास दर में वृद्धि लाने तथा युवाओं को रोजगार के अधिक से अधिक अवसर प्रदान करने के लिए एक महत्त्वपूर्ण क्षेत्र है। वर्तमान में प्रदेशभर में स्थापित 40,500 औद्योगिक इकाइयां लगभग 3 लाख व्यक्तियों को रोजगार प्रदान कर रही हैं। प्रदेश के तीव्र तथा नियोजित औद्योगीकरण के लिए औद्योगिक सलाहकार परिषद् का गठन किया गया है। उद्यमियों को गुणात्मक अधोसंरचना प्रदान करने के लिए प्रदेश के औद्योगिक क्षेत्रों में अधोसंरचना के विकास के लिए 40 करोड़ रुपये आबंटित किए गए हैं। इसके अतिरिक्त, बद्दी- बरोटीवाला-नालागढ़ विकास प्राधिकरण को विभिन्न विकासात्मक कार्यों के लिए 20 करोड़ रुपये प्रदान किए जाएंगे। कांगड़ा जिले के कंदरौरी में 107 करोड़ रुपये तथा ऊना जिले के पंडोगा में 112 करोड़ रुपये की लागत से अत्याधुनिक औद्योगिक क्षेत्र विकसित किए जाएंगे। प्रदेश के युवाओं में उद्यमशीलता विकसित करने के लिए उद्यम विकास योजना आरम्भ की जाएगी। राज्य में नए औद्योगिक क्षेत्र स्थापित करने के लिए एक ही आवेदन पत्र पर 45 दिनों के भीतर सभी स्वीकृतियां प्रदान की जाएंगी।

प्रदेश सरकार राज्य के सतत पर्यटन विकास के प्रति वचनबद्ध है। शिमला के आस-पास तथा राज्य के अन्य पर्यटन स्थलों में नए हैलीपैड विकसित किए जाएंगे। प्रदेश में साहसिक पर्यटन को बढ़ावा देने के लिए कांगड़ा जिले के बीड़-बिलिंग में पेराग्लाइडिंग विश्वकप आयोजित किया जाएगा। एशियन विकास बैंक से 62 मिलियन डॉलर के ऋण के द्वारा वर्तमान वित्तीय वर्ष के दौरान कौशल विकास तथा समुदाय आधारित पर्यटन गतिविधियों को प्रोत्साहन देने के लिए पर्यटन अधोसंरचना परियोजनाएं कार्यान्वित की जाएंगी। इसमें प्रदेश भर के विभिन्न गांवों के लगभग 3000 युवाओं का कौशल विकास एवं प्रशिक्षण प्रदान करना भी शामिल है।

राज्य सरकार कृषि क्षेत्र को प्राथमिकता देकर ग्रामीण आर्थिकी को सुदृढ़ करने पर विशेष ध्यान दे रही है। प्रदेश में डॉ. वाई.एस. परमार किसान स्वरोजगार योजना कार्यान्वित की जा रही है, जिसके अंतर्गत किसानों को पॉलीहाउस के निर्माण लिए 85 प्रतिशत उपदान दिया जा रहा है। कृषि तथा बागबानी क्षेत्र को मिली प्राथमिकता से राज्य में ग्रामीण आर्थिकी मजबूत हुई है। सरकार ने सिचांई तथा नई कृषि प्रौद्योगिकी को बढ़ावा देकर किसानों को लाभान्वित किया है।

घरेलू उपभोक्ताओं तथा उद्योगों को गुणात्मक एवं निर्बाधित विद्युत आपूर्ति सुनिश्चित बनाने के लिए राज्य सरकार प्रतिबद्ध है। प्रदेश में विद्यमान कुल 27,436 मेगावाट जल विद्युत क्षमता में से अभी तक 9,432 मेगावाट क्षमता का दोहन किया जा चुका है। वर्तमान वित्तीय वर्ष के दौरान 1050 मेगावाट अतिरिक्त क्षमता के दोहन का लक्ष्य रखा गया है। ऊर्जा क्षेत्र में निवेश को आकर्षित करने के लिए 5 मेगावाट क्षमता तक की परियोजनाओं पर लगने वाले शुल्क को राज्य विद्युत नियामक आयोग द्वारा नियंत्रित एवं स्वीकृत किया जाएगा तथा दोहन की गई पूर्ण ऊर्जा का क्रय हिमाचल प्रदेश राज्य विद्युत बोर्ड लिमिटेड द्वारा किया जाएगा। प्रदेश सरकार ऊर्जा संरक्षण के लिए एल.ई.डी. प्रोत्साहन कार्यक्रम आरम्भ करेगी। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत सभी घरेलू उपभोक्ताओं को बाजार भाव से आधी कीमत से भी कम मूल्य पर 3 एल.ई.डी. बल्ब उपलब्ध करवाए जाएंगे। उपभोक्ताओं से इसके लिए आरम्भ में केवल 10 रुपये प्रति बल्ब देने होंगे तथा शेष राशि 10 रुपये प्रति बल्ब प्रतिमाह की दर से आने वाले बिजली के बिलों के माध्यम से वसूली जाएगी।

राज्य सरकार लोगों को सुरक्षित, विश्वसनीय तथा आरामदेह परिवहन सेवाएं प्रदान करने के लिए प्रतिबद्ध है। राज्य पथ परिवहन निगम द्वारा 510 नई बसों की खरीद की गई है तथा जवाहर लाल नेहरू शहरी नवीकरण मिशन के अन्तर्गत 800 और नई बसें शीघ्र खरीदी जा रही हैं। प्रदेश सरकार कर्मचारियों के कल्याण को सदैव प्राथमिकता देती रही है। दिहाड़ीदारों की दिहाड़ी इस वर्ष प्रथम अप्रैल से 180 रुपये की गई है। 31 मार्च, 2015 को सात वर्ष का सेवाकाल पूरा करने वाले सभी दिहाड़ीदारों तथा पांच वर्ष का सेवाकाल पूरा करने वाले सभी अनुबंध कर्मचारियों को नियमित किया जाएगा। इसी प्रकार 31 मार्च, 2015 को आठ वर्ष का सेवाकाल पूरा करने वाले सभी अंशकालिक कर्मियों को दिहाड़ीदार बनाया जाएगा। प्रदेश सरकार द्वारा ऐसे सभी दिहाड़ीदारों, अंशकालिक कार्यकर्ताओं, आंगनवाड़ी कार्यकर्ताओं/ सहायिकाओं तथा मिड-डे-मील कार्यकर्ताओं को मुख्य मंत्री राज्य स्वास्थ्य देखभाल योजना के अन्तर्गत लाया जाएगा, जो राष्ट्रीय स्वास्थ्य बीमा योजना के दायरे में नहीं आते हैं। योजना के तहत उन्हें साधारण बीमारी एवं असाध्य रोगों के लिए स्वास्थ्य सेवाएं प्रदान की जाएंगी। अंशकालिक जलवाहकों के मानदेय को गत दो वर्षों में 1300 रुपये से बढ़ाकर 1700 रुपये प्रतिमाह किया गया है।

राज्य सरकार प्रदेशवासियों को उत्तरदायी एवं कुशल प्रशासन प्रदान करने तथा प्रदेश के सभी क्षेत्रों व समाज के प्रत्येक वर्ग के संतुलित विकास के प्रति वचनबद्ध है। हमारा यह प्रयास है कि हिमाचल प्रदेश को देश का सर्वाधिक समृद्ध एवं विकसित राज्य बनाया जाए। प्रदेशवासियों के सहयोग एवं समर्थन से हम इस उद्देश्य को अवश्य प्राप्त करेंगे।

■■■

आलेख

लोक संस्कृति, साहित्य की पोषक 'हिमप्रस्थ'

● मुकेश अग्निहोत्री
सूचना एवं जन सम्पर्क मंत्री
हिमाचल प्रदेश



'हिमप्रस्थ' ने अपनी स्थापना के 60 साल पूरे कर लिए हैं, संस्कृति का पोषक हर शख्स और साहित्य जगत से जुड़ा हर व्यक्ति इसके लिए बधाई का पात्र है क्योंकि हिमाचल प्रदेश में 'हिमप्रस्थ' एक ऐसी मासिक पत्रिका है जिसने संस्कृति एवं साहित्य के पोषण में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। 'गिरिराज' और 'हिमप्रस्थ' हर परिस्थिति में एक दूसरे के भागीदार रहे हैं। यह पत्रिका न केवल पाठकों की रुचि और अपेक्षाओं पर खरी उतरी है बल्कि प्रदेश की समृद्ध संस्कृति, लोक कलाओं, लेखकों, साहित्यकारों, कवियों इत्यादि को भी एक सशक्त मंच देने में सफल हुई है। पत्रिका अपने पाठकों को ही सर्वोपरि मानते हुए शुरू से बिना किसी लाग-लपेट और लालच-प्रलोभन के आम जन के विचारों का संवाहक बनी रही है और उनकी अभिरुचियों के परिमार्जन में हरसंभव योगदान में विश्वास किया है। लेकिन प्रकाशन का इतना लंबा सफर यूं ही नहीं बीत गया। सूचना प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में आए क्रांतिकारी परिवर्तनों के इस युग में भी पत्रिका ने स्तरीय लेखन को जीवंत रखा है जो इसकी कामयाबी का संबल रहा। प्रदेश का प्रबुद्ध लेखक वर्ग इसके लिए बधाई का पात्र है क्योंकि इसकी सफलता में किए गए उनके प्रयास बेजा नहीं गए। बेशक, पत्रिका 'सरकारी उपक्रम' का एक हिस्सा है और इसकी एक सीमा है, लेकिन बाजारीकरण और उदारीकरण के इस दौर में फली-फूली उपभोक्तवादी संस्कृति ने जिस तरह पत्र-पत्रिकाओं को अपनी रीति-नीति में बदलाव के लिए प्रेरित किया है, उसके विपरीत मौजूदा विपणन आधारित बाजार में बढ़ावा देने की होड़ में 'हिमप्रस्थ' ने एक संतुलन स्थापित कर पत्रकारिता व लेखन की गरिमा को बनाए रखने का भरपूर प्रयास किया है। प्रसन्नता की बात है कि इसमें पत्रिका को सफलता मिली, जो सामाजिक मूल्यों और पत्रकारिता के मूल्यों के लिए चिंतित सुधिजनों के लिए अच्छी खबर है। पत्रकारिता, सामाजिक दायित्व और सरोकारों से परिपूर्ण एक ऐसा क्षेत्र है, जिसमें आंख मूंद कर बाजार की तर्ज पर नहीं सोचा जा सकता। इसी सोच का नतीजा है कि पत्रिका की सामग्री, स्तम्भों व लेखों की विश्वनीयता और पाठकों की इसके प्रति आत्मीयता का आज कोई सानी नहीं है।

'हिमप्रस्थ' के हर अंक में देवभूमि हिमाचल के दर्शन तथा कठिन भौगोलिक पहाड़ों की बयार से मैदानी इलाकों की माटी की सौंधी-सौंधी महक विद्यमान रहती है, जो न केवल राज्य में इसके पाठकों, बल्कि देश के कोने-कोने में बसे प्रदेश के लोगों को प्रफुल्लित कर रही है। साठ साल पहले जिन लोगों ने जिस तरह की पत्रिका का सपना देखा था, वह आज पूरा हुआ है। पत्रिका का स्वरूप इस तरह तैयार किया गया है कि हर वर्ग इससे प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकता। साहित्यिक व सांस्कृतिक ज्ञानोपार्जन का इससे अच्छा माध्यम और नहीं दिखता। 'लघु कथा' में प्रदेश भर के महान रचनाकारों की रचनाएं न केवल समाज की बुराइयों पर सटीक प्रहार करती हैं बल्कि हर वर्ग को इसके मूल में छिपे संदेश को भी प्रवाहित करती हैं। कहानीकार व कवि दोनों को पर्याप्त कालम देकर पत्रिका अपनी पहचान और उद्देश्य का निवर्हन करती है। मुझे आज भी याद है विश्वनाथ प्रसाद तिवारी की कविताओं के कुछ अंश- 'लोग गायब हो रहे हैं'। हालांकि मेरा कविता की तरफ ज्यादा झुकाव नहीं रहा, लेकिन इन्हें पढ़कर मुझे कविता में व्याप्त संवेदनशीलता

का गहराई से अहसास हुआ। कहानियां हमारे सामाजिक परिदृश्य व आसपास के माहौल को उजागर करती हैं। पत्रिका में संस्कृति की व्यापक सामग्री पाठकों को दी जाती है और 'धरोहर' स्थलों को भी 'पहचान' मिली है।

प्रदेश के पर्यटन स्थलों से लेकर देवभूमि के दर्शन तक कई कॉलम ऐसे हैं जो न केवल सूचनाप्रद हैं बल्कि हमारे समृद्ध इतिहास की रोचक जानकारी को उपलब्ध करवाते हैं। इसके अलावा पत्रिका में छपने वाले विभिन्न लेख न केवल नवोदित लेखकों को प्रोत्साहित करते हैं बल्कि प्रख्यात लेखकों के लेख सभी के लिए प्रेरणा का स्रोत बनते हैं। प्रख्यात लेखकों की ऐसी लम्बी शृंखला है, जिन्हें पढ़कर नई पीढ़ी के लेखकों ने आज अपना स्थान बनाया है। और यही मूल उद्देश्य भी पत्रिका का रहा है कि प्रदेश के नौजवान लेखकों को पत्रिका के माध्यम से जोड़ कर दिशा दी जा सके ताकि यहां की समृद्ध संस्कृति एवं साहित्य को संजोने के लिए नई पौध तैयार हो।

'हिमप्रस्थ' का सफर 15 अप्रैल, 1955 से शुरू हुआ था। हालांकि इसका स्वरूप और रूपरेखा 1953 में बननी शुरू हो गई थी। केन्द्र से अनुमति के बाद ही साहित्य जगत में इसका पदार्पण हुआ था। श्री हरिकृष्ण मिट्टू इसके पहले संपादक बने। यह पूरी तरह से सरकारी पत्रिका थी और तब भी मासिक ही छपती थी। जिस दौर में यह पत्रिका पाठकों के पास आई, उस वक्त उत्तर भारत में उर्दू जुबान का बोलबाला था। ऐसे में पूरी तरह हिंदी साहित्य को स्थान देने का यह अनूठा प्रयास कठिन ही नहीं जटिल भी था। राष्ट्रीय स्तर पर बड़े व महान साहित्यकारों व लेखकों की तूती बोलती थी। ऐसे में तत्कालीन संपादकों के समक्ष सबसे बड़ी चुनौती स्थानीय अथवा प्रदेश के लेखकों को स्थान देने की थी। इसलिए लोक संस्कृति के साथ-साथ प्रदेश के हिंदी साहित्य से जुड़े लेखकों को 'मंच' दिया गया। लेखकों को इसके लिए पारिश्रमिक भी दिया जाता था। अब भी दिया जाता है। पत्रिका से जुड़े लोगों के ये सार्थक प्रयास ही थे कि इसकी गिनती थोड़े समय में ही राष्ट्रीय स्तर पर होने लगी। निराला जी जैसी महान हस्तियों की लेखनी से पत्रिका को गौरव मिला। भारत सरकार ने उस समय देश भर में सरकारी विभागों की पत्रिकाओं की समीक्षा की थी, जिस पर महान लेखक दिनकर ने टिप्पणी करते हुए 'हिमप्रस्थ' को नम्बर एक का दर्जा दिया था। इतना ही नहीं, 'बीबीसी' लंदन ने भी इसकी समीक्षा की और कहा था कि- हिमप्रस्थ एक अनजाने क्षेत्र के लिए बहुत वातायन (खिड़की) खोलता है। यह हम सभी के लिए गौरव की बात है।

उपलब्धियों और सफलता के मार्ग पर चलते हुए पत्रिका ने समूचे साहित्यिक जगत में जो स्थान पाया है, शायद ही साहित्य और संस्कृति से जुड़ी अन्य पत्रिकाओं को मिला हो। कटु अनुभव और कठिनाइयां इससे जुड़े लोगों के समक्ष आई होंगी लेकिन उद्देश्य से पत्रिका ने कभी विमुखता नहीं दिखाई और हम कह सकते हैं कि इसने हमेशा साहित्य व लोक संस्कृति का पोषण किया।

बाजारीकरण के मौजूदा दौर में जहां साहित्य व संस्कृति से जुड़ी अनेक पत्र-पत्रिकाएं इतिहास बन गई हैं, यह चिंता का विषय है। लेकिन 'हिमप्रस्थ' ने उतार-चढ़ाव के बावजूद स्थान कायम रखा और सामाजिक मूल्यों के साथ प्रेरक प्रसंग दिए। वैसे भी साहित्य मनुष्य के मनुष्य होने का प्रमाण है, इसलिए जब तक मानव है, साहित्य मर नहीं सकता और मनुष्य को श्रेष्ठतर बनाने के प्रति साहित्य सदा प्रतिश्रुत रहा है। लेकिन चिंता इस बात की है कि आज साहित्यकारों को उपयुक्त स्थान नहीं मिल रहा। हर तरफ से उनके लिए स्थान सिमटता जा रहा है। उप-संस्कृतियों के शोर में हमारी समृद्ध संस्कृति जैसे कहीं गुम हो गई लगती है। अति आधुनिकतावाद साहित्य व संस्कृति के लिए खतरा बनने लगे हैं। ऐसे में अपनी संस्कृति व साहित्य का संरक्षण नितांत आवश्यक है। ताकि हम न केवल वर्तमान में बल्कि आने वाली पीढ़ियों को भी अपने प्रदेश की समृद्ध सांस्कृतिक विरासत के बारे में बता सकें और उसे जीवित रख सकें।





वरिष्ठ सम्पादक की कलम से

हिमप्रस्थ मासिक पत्रिका ने अपने प्रकाशन के 60 वर्ष पूरे कर लिए और इस अंक के साथ यह 61वें वर्ष में प्रवेश कर रही है। 15 अप्रैल 1955 में हिमाचल प्रदेश के गठन की आठवीं वर्षगांठ पर इस पत्रिका ने अपनी यात्रा शुरू की जो न कभी थमी और न कभी रुकी। हालांकि इस अवधि में देश की अनेक पत्रिकाएं दम तोड़ गईं जो हिमप्रस्थ के साथ-साथ या इससे भी पहले की थीं।

वर्ष 1955 में पत्रिका की शुरुआत प्रदेश के बुद्धिजीवियों, विद्वानों और पठन-पाठन में रुचि रखने वाले लोगों के लिए एक सुखद घटना थी। इसमें दो राय नहीं कि उस समय तक भी प्रदेश जहां विकास में पिछड़ा था पत्रकारिता के क्षेत्र में भी बहुत पीछे था। इसका जिक्र हिमप्रस्थ के प्रथम सम्पादक हरिकृष्ण मिट्टू ने अपने प्रथम सम्पादकीय में भी किया था।

इस पत्रिका के प्रकाशन का उद्देश्य जनता और सरकार के बीच सम्पर्क को बढ़ाना रहा है। किसी भी पत्र पत्रिका के सफल प्रकाशन के लिए आवश्यक व्यवस्था, प्रबन्ध व्यवस्था, कुशल कर्मचारी तथा प्रसार व्यवस्था की आवश्यकता रहती है। प्रारम्भ में हैंड कम्पोजिंग व लेटर प्रेस में छपने वाली यह पत्रिका आज छपाई की आधुनिक तकनीक के साथ ऑफसेट पर छापी जा रही है और पाठकों के हाथों में यह समय पर पहुंच रही है। जिस उद्देश्य के लिए इसका जन्म हुआ था, आज उसकी प्राप्ति तक यह पहुंची है और अपने मकसद में कामयाब हुई है। पत्रिका से जुड़े लोगों के सार्थक प्रयासों का ही प्रतिफल है कि आज इसकी गिनती राष्ट्रीय स्तर पर है। समय-समय पर जाने माने बड़े लेखकों के इसमें छपने से इसका गौरव बढ़ा है। प्रबुद्ध लेखकों-साहित्यकारों के साथ-साथ नवोदित लेखकों के लिए भी पत्रिका एक बेहतर मंच रहा है। पत्रिका के माध्यम से संस्कृति की अनेक अप्राप्य और मूल्यवान सामग्री पाठकों को उपलब्ध करवाई गई है। राजकीय पत्रिका होने के बावजूद इसने अपनी प्रासंगिकता को बनाए रखा, परिणामस्वरूप साहित्य जगत में इसकी उपयोगिता और महत्ता को स्वीकारा गया है। इस पर्वतीय राज्य की संस्कृति व लोक साहित्य सम्बन्धी अपेक्षाओं को पूरा करने की दिशा में भी हिमप्रस्थ ने महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है व पर्वतीय मानस में दबी सांस्कृतिक और लोक संभावनाओं को भी सुव्यवस्थित ढंग से प्रकाश में लाया है। इसने हमेशा साहित्य व लोक संस्कृति का पोषण किया है। सफलता की राह पर चलते हुए पत्रिका ने समूचे साहित्यिक जगत में एक नाम पाया है।

इस पत्रिका से मेरा जुड़ाव वर्ष 1995 से रहा जब मैं गिरिराज साप्ताहिक का सम्पादक बना। गिरिराज के साथ-साथ मुझे हिमप्रस्थ के सम्पादक पद का कार्यभार भी दिया गया। उस समय वरिष्ठ सम्पादक के पद पर श्री शिव दत्त गर्ग तैनात थे। ऐसी पत्रिका जिसके सम्पादकीय मण्डल में साहित्यिक पृष्ठभूमि से आने वाले हरिकृष्ण मिट्टू, रामदयाल नीरज, सत्येन्द्र शर्मा, जिया सिद्दीकी, रामकृष्ण कौशल, किशोरी लाल वैद्य, केशव नारायण, सतीश धर, ठाकुर दत्त शर्मा आलोक, संजय शर्मा जैसे जाने माने नाम शामिल हो, उनकी परम्परा को आगे ले जाना किसी चुनौती से कम न था। वर्ष 1995 में सम्पादक बनने पर एक साथ दोनों का सम्पादन करना दोहरी चुनौती थी। इस दौरान पत्रिका की स्तरीयता के साथ-साथ इसकी साज-सज्जा व प्रचार-प्रसार पर भी विशेष ध्यान दिया गया। वर्ष 1995 से पत्रिका के आवरण को बहुरंगीय बनाया गया। हिमप्रस्थ में विशेषांक प्रकाशन परम्परा को जारी रखते हुए इसमें विशेष अंक निकाले जाने के क्रम को भी जारी रखा गया जिसमें कहानी, चम्बा सहस्राब्दी, सोभा सिंह, ताबो, स्वर्ण जयंती विशेषांक, लोक साहित्य एवं संस्कृति आदि अनेक विशेष अंक प्रकाशित किए गए।

हिमप्रस्थ में अब प्रदेश के जिलों पर विशेष अंक निकाले जा रहे हैं। इस कड़ी में अभी तक कुल्लू, मंडी तथा शिमला जिलों पर अंक प्रकाशित किए जा चुके हैं। इनमें प्रकाशित सामग्री विद्वानों व छात्रों के लिए उनके अनुसंधान कार्यों में भी उपयोगी सिद्ध होगी। साहित्यकारों, बुद्धिजीवियों के अतिरिक्त देशभर के विद्वानों की रचनाएं आज भी बराबर पत्रिका में प्रकाशित की जा रही हैं। साहित्यिक, ज्ञानवर्धक, विकासपरक सामग्री पत्रिका के प्रत्येक अंक में समाहित रहती है। प्रिंट, सोशल व इलैक्ट्रॉनिक मीडिया में आई क्रांति और नए दबावों के बावजूद हिमप्रस्थ का वजूद आज भी बरकरार है।

यादविन्दर सिंह चौहान

प्रदेश के प्रसिद्ध कहानीकार एवं कवि श्री केशव नारायण वर्ष 2007 में सेवानिवृत्त होने तक काफी लम्बे अरसे के लिए हिमप्रस्थ के साथ किसी-न-किसी रूप में जुड़े रहे। हिमप्रस्थ के सम्पादक और वरिष्ठ सम्पादक के रूप में अपने सेवाकाल के दौरान उन्होंने हिंदी क्षेत्र के स्थापित एवं उदीयमान लेखकों को जोड़कर पत्रिका को निखारने व संवारने का अनुकरणीय कार्य किया।

गौरव एवं गरिमा के साथ यात्रा जारी है...

लोक सम्पर्क विभाग में मेरा आना एक संयोग ही था। वर्ष 1974 के सर्दियों के दिन थे। उस वक्त मैं हमीरपुर में खाद्य एवं आपूर्ति विभाग में इंस्पेक्टर के पद पर कार्यरत था। किसी कार्यवश उन दिनों मैं मंडी गया हुआ था। एक शाम मैं अपने मित्र प्रो. सुंदर लोहिया से मिलने गया। उनसे साहित्य पर चर्चा हो रही थी। इसी दौरान प्रसंगवश मेरी नौकरी का ज़िक्र भी हुआ। मैंने लोहिया जी से कहा कि इंस्पेक्टरी की नौकरी मेरी रुचि से मेल नहीं खोती।

'तुम लोक सम्पर्क विभाग में आवेदन क्यों नहीं करते। इस विभाग में उप सम्पादक के पद के लिए आज ही अखबार में एक विज्ञप्ति छपी हुई है।' प्रो. सुंदर लोहिया ने कहा।

मुझे तो जैसे मन की मुराद मिल गई। मैंने उनसे अखबार दिखाने को कहा। तभी शहर की बिजली चली गई। उन्होंने कहा कि बिजली आने दो फिर अखबार दिखाता हूं।

'नहीं-नहीं' आप अभी ले आइए। और साथ में एक मोमबत्ती भी। फिर मोमबत्ती की रोशनी में मैंने विज्ञप्ति देखी। विज्ञप्ति में दर्शाई गई सभी योग्यताएं मैं पूरी करता था। मैंने हमीरपुर लौटकर आवेदन किया। और इंटरव्यू में चुन भी लिया गया।

वर्ष 1975 के संभवतः मई माह में ज्वाइन किया और फिर वर्ष 2007 में सेवानिवृत्त होने तक मैं लगभग छब्बीस वर्ष 'हिमप्रस्थ' के साथ किसी-न-किसी रूप में जुड़ा रहा।

इस दौरान रामदयाल नीरज जी, सत्येन्द्र शर्मा जी, ज़िया सिद्दीकी जी जैसे वरिष्ठ सहयोगियों का सान्निध्य मुझे मिला। उनसे बहुत कुछ सीखने को भी मिला।

तत्पश्चात अन्य सहयोगियों यथा श्रीनिवास श्रीकान्त, शिव दत्त गर्ग, ठाकुर दत्त शर्मा 'आलोक', संजय शर्मा, रूप सिंह नेगी, यादविन्दर सिंह चौहान, बद्री सिंह भाटिया, रणजीत सिंह राणा तथा सम्पादकीय कर्म से जुड़े अन्य सहयोगियों से 'हिमप्रस्थ' को निरंतर बेहतर बनाने और राष्ट्रीय स्तर पर इसकी एक अलग पहचान बनाने में भरपूर सहयोग मिला।

छब्बीस वर्ष तक इस पत्रिका से जुड़े रहना अपने आपमें एक अविस्मरणीय अनुभव था। साहित्य और संस्कृति पर केन्द्रित 'हिमप्रस्थ' के विशेषांकों का प्रकाशन देश-प्रदेश में चर्चा का विषय रहा। और इस बहाने देश तथा प्रदेश के जाने-माने तथा नवोदित लेखकों के कृतित्व से गुज़रने का मौका मिला। और उनकी रचनाओं को 'हिमप्रस्थ' में प्रकाशित करने का सुख भी।

किसी भी पत्रिका का लगातार 60 वर्षों तक निर्बाध प्रकाशन एक उपलब्धि है। 'हिमप्रस्थ' को यह गौरव और गरिमा हासिल है।

मेरी यह हार्दिक कामना है कि भविष्य में भी इसका प्रकाशन इसी गौरव एवं गरिमा के साथ जारी रहे।

केशव नारायण

एक यादगार मुलाकात

देश के जाने-माने लेखक श्री पद्म गुप्त अमिताभ के हिमप्रस्थ के प्रथम सम्पादक श्री हरिकृष्ण मिट्टू के साथ बहुत ही मधुर सम्बंध रहे हैं। लेखक ने श्री मिट्टू का वर्ष 2012 में देहावसान होने से पूर्व 14 जुलाई, 2009 को एक साक्षात्कार किया था जिसके मुख्य अंश पत्रिका के साठ वर्ष पूर्ण होने के अवसर पर पाठकों की जानकारी के लिए यहां प्रस्तुत किए जा रहे हैं -सम्पादक

हिमाचल प्रदेश की राजधानी शिमला से लोक सम्पर्क विभाग द्वारा प्रकाशित पत्रिका 'हिमप्रस्थ' मासिक के प्रकाशन के आधी सदी से ऊपर का समय (साठ वर्ष) हो चुका है और सरकारी पत्रिकाओं की आम छवि से हटकर इसे सम्पूर्ण हिंदी जगत में विशेष स्थान प्राप्त है। आजकल तो प्रदेश में अनेक अच्छी पत्रिकाएं प्रकाशित हो रही हैं और अनेक रचनाकार देश-प्रदेश में प्रतिष्ठित हैं किन्तु आधी सदी पहले स्थितियां इसके विपरीत थीं। दशकों तक यहां के रचनाकारों को मंच प्रदान करने का काम 'हिमप्रस्थ' ने ही किया।

उन्हीं प्रारम्भिक दिनों के बारे में जानने के प्रयास में मैं 'हिमप्रस्थ' के प्रथम सम्पादक श्री हरिकृष्ण मिट्टू से मिला था।

मई की एक सुहानी सुबह रेलगाड़ी से जब मैं शिमला पहुंचा तो जीवन के चौबीसवें वर्ष में था। उन्हीं दिनों श्री ओंकार ठाकुर, जो जबलपुर से 'शताब्दी' नामक साहित्यिक पत्रिका निकालते थे, शिमला आए हुए थे और वाई.एम. सी.ए. हॉस्टल में ठहरे हुए थे। वे मेरे बड़े भाई के समान थे और मैं उन्हें जबलपुर से ही जानता था। उसी शाम उनसे मिलने उनके कमरे में पहुंचा तो मेरा परिचय शिमला के दो साहित्यकारों से हुआ- श्री अनिल राकेशी और श्रीयुत् श्रीनिवास श्रीकान्त।

अनिल राकेशी को मैं उनके किशोर वय की जालंधर से प्रकाशित उन दिनों के प्रसिद्ध हिंदी दैनिकों 'वीर प्रताप' और 'मिलाप' में छपी हुई रचनाओं से जानता था। श्रीनिवास से मेरा प्रथम परिचय था जो जीवन भर के अंतरंग सम्बंध में बदल गया। मुझे अमिताभ उपनाम श्रीनिवास ने ही दिया।

साहित्य से मुझे बचपन से ही लगाव था और कॉलेज के दिनों में नियमित रूप से कविता लिखने लगा था, अतः शिमला पहुंचने के पहले ही दिन, नगर के दो प्रमुख कवियों से भेंट मात्र संयोग नहीं था। पता चला श्रीनिवास वहां के लोक सम्पर्क विभाग में हैं, जहां से 'हिमप्रस्थ' नामक एक अच्छी साहित्यिक पत्रिका निकलती है। शीघ्र ही 'हिमप्रस्थ' के सम्पादन से जुड़े श्री रामदयाल नीरज (जिन्हें लोग प्यार से मास्टर जी या गुरु जी कह कर बुलाते थे), सत्येंद्र शर्मा, ज़िया सिद्दिक़ी (जो मध्य प्रदेश से प्रकाशित 'हितवाद' और हिंदी की 'नई दुनिया' में काम कर चुके थे), किशोरी लाल वैद्य और रामकृष्ण कौशल से परिचय हुआ। ये लोग शिमला की हिंदी साहित्य की गतिविधियों के केंद्र में थे। इन्हीं लोगों के साथ मंडी के सुंदर लाल लोहिया (कमलेश्वर द्वारा सम्पादित 'नई कहानियां' में प्रकाशित उनकी कहानी के कारण मैं उनसे परिचित था), चम्बा के देव बड़ोतरा और नंदेश कुमार भी जुड़े थे। उन्हीं दिनों कलकत्ता से चंडीगढ़ होते हुए सांध्य कालेज में पढ़ाने वाले आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के शिष्य, कवि, कथाकार डॉ. परेश से भी परिचय हुआ।

ऐसे वातावरण में मेरी साहित्यिक अभिरुचि को बल मिला और छिटपुट लिखने वाला मैं अब निरंतर लिखने लगा क्योंकि 'हिमप्रस्थ' के रूप में छपने का माध्यम मिल गया और सहयोगी रचनाकारों की प्रेरणा भी।

कुछ ही सप्ताह में 'हिमप्रस्थ' के मुख्य सम्पादक और निदेशक, लोक सम्पर्क विभाग श्री हरिकृष्ण मिट्टू से भी परिचय हुआ। उन दिनों पर्यटन और लोक सम्पर्क विभाग संयुक्त थे। उनका बड़ा बेटा राकेश, सांध्य कालेज में अंग्रेज़ी पढ़ाता था और मेरा समवयस्क था। वह शीघ्र ही मेरा घनिष्ठ मित्र बन गया। यह मित्रता घनिष्ठ पारिवारिक अंतरंगता में बदल गई और मैं उनके परिवार का स्थायी सदस्य बन गया।

पुनर्गठन के बाद सुशील कुमार फुल्ल, केशव आदि भी हिमाचल आ गए। केशव तो 'हिमप्रस्थ' के सम्पादक और वरिष्ठ सम्पादक भी रहे और बाद में 'शिखर' निकालने लगे।

पत्रकार के रूप में कथाकार विजय सहगल भी वहीं थे। वे एक वर्ष बाद 'टाईम्स ऑव इंडिया' समूह में चले गए और बाद में

अनेक वर्ष तक 'दैनिक ट्रिब्यून' के सम्पादक रहे।

नौवें दशक में शिमला छूट गया। आना-जाना लगा रहा किंतु फिर ब्रेन हैमरेज के कारण मैं स्वयं जीवन से अनेक वर्ष कटा रहा। जुलाई 2009 में अपने शिमला प्रवास के दौरान श्री हरिकृष्ण मिट्टू से मिलने माल रोड के निकट स्थित उनके निजी आवास पर गया। मिट्टू साहब जो रिटायरमेंट के बाद भी युवा और ऊर्जावान लगते थे, अब बहुत अशक्त हो चुके थे। अवस्थाजनित व्याधियों के अतिरिक्त उन्हें अनेक व्यक्तिगत आघातों से जूझना पड़ा था। कुछ ही वर्ष पूर्व उनके छोटे पुत्र रमेश मिट्टू का निधन हो गया था, उनके अन्य सभी बेटे-बेटियां भी शिमला से बाहर थे और वे लगभग नितांत एकाकी जीवन व्यतीत कर रहे थे। वे अपने अनेक प्रिय मित्रों को भी खो चुके थे जिनमें उनके आत्मीय शायर श्री अरमान शहाबी भी थे। चौदह जुलाई 2009 की उस दोपहर को मेरी जो बातचीत मिट्टू साहब से हुई, उसी के कुछ अंश यहां प्रस्तुत हैं

पद्म : सर! आप तो पहले से बहुत कमज़ोर लग रहे हैं।

मिट्टू साहिब : हां, पद्म, उम्र का तकाज़ा है। रीढ़ की हड्डी में कुछ 'प्रॉब्लम' है। पिछले साल एक्सीडेंट हो गया था, उससे पूरी तरह 'रिकवर' नहीं हो पाया। उन लोगों ने कहा कि इस उम्र में ऑपरेशन का 'रिस्क' नहीं उठा सकते। कहते हैं आप खुशकिस्मत हैं कि इस हादसे में आपके 'स्पाईनल कॉर्ड' को कोई नुकसान नहीं पहुंचा वरना 'पैरालिसिस' का खतरा था। मैं कहीं आ-जा नहीं सकता जिसने मिलता होता है, यहीं आ जाता है। तुमसे पहले अभी एक विधायक होकर गए हैं।

पदम : आप 'हिमप्रस्थ' के पहले सम्पादक हैं। उन प्रारम्भिक वर्षों पर कुछ रोशनी डालेंगे?

मि. सा. : मैंने 'संघ लोक सेवा आयोग' के माध्यम से 'हिमप्रस्थ' के प्रथम सम्पादक के रूप में पदभार ग्रहण किया। बाद में मैंने एच.ए.एस. (हिमाचल प्रशानिक सेवा) भी यू.पी.एस.सी. के माध्यम से ही 'ज्वाइन' की क्योंकि तब हिमाचल को पूर्ण राज्य का दर्जा नहीं मिला था। उससे पहले मैं 'टाईम्स ऑव इंडिया' का विशेष संवाददाता था। 'हिमप्रस्थ' के सम्पादक के रूप में नियुक्ति के बाद मेरे दिमाग़ में पत्रिका का जो ख़ाका उभरा था, उस बारे में मैंने तत्कालीन मुख्य मंत्री डॉ. यशवंत सिंह परमार के साथ विचार-विमर्श किया। 1955 में शिमला जैसे स्थान से, जहां किसी भी प्रकार की साहित्यिक गतिविधि का नितांत अभाव था, एक नई हिंदी पत्रिका निकालना, चुनौती भरा काम था। उन दिनों पूरे हिमाचल में शायद ही कोई लेखक रहा होगा जिसकी कहीं कोई पहचान हो। (यशपाल जैसे जो कुछ लिख रहे थे, वे प्रदेश से बाहर रहकर लिख रहे थे) इसी कारण उन प्रारम्भिक वर्षों में लगभग पूरी पत्रिका विभिन्न छद्म नामों से मुझे खुद ही लिखनी पड़ती थी। रचना सामग्री को लगातार बनाए रखने का और कोई ज़रिया न था। मैं पत्रिका का सम्पादक था, लेखक था और सहायक निदेशक पब्लिसिटी के रूप में प्रचार-प्रसार का अतिरिक्त ज़िम्मा भी मुझे सौंप दिया गया।

सबसे बड़ी बात थी कि पूरे विभाग में एक भी आदमी ऐसा नहीं था जिसे प्रिंटिंग से सम्बंधित तकनीकी पहलुओं की कुछ भी जानकारी हो। यह ज़िम्मेवारी भी मुझी पर आन पड़ी। इस क्षेत्र में दिल्ली में रहकर प्राप्त किया हुआ अनुभव मेरे बहुत काम आया।

दरअसल, मैं था तो 'टाईम्स ऑव इंडिया' का विशेष सम्वाददाता किंतु हिंदी की प्रसिद्ध पत्रिका 'सरिता' ग्रुप के कारवां और 'सरिता' मासिक के लिए भी नियमित रूप से लिखता था। इनका दफ्तर उन दिनों कनाट प्लेस में था जो बाद में झंडेवालान चला गया। (पाठकों को स्मरण होगा कि 'सरिता' भारतीय, विशेषकर हिंदू समाज में फैली कुरीतियों, रूढ़ियों और अंधविश्वासों के विरुद्ध मुहिम छेड़ने वाली अग्रणी पत्रिका रही है)। पत्रिका के सम्पादक श्री विश्वनाथ गुप्ता मेरे परिचित थे और मैं वहां जाता रहता था। वहां मैं उनकी प्रिंटिंग मशीनों और उनसे जुड़ी विभिन्न तकनीक, कम्पोज़िंग से लेकर छपाई तक सारी प्रक्रियाओं को बड़े ध्यान से देखता था। तुम तो जानते ही हो, उन दिनों कम्पोज़िंग करना कितना कठिन काम था, हाथ से एक-एक 'लेटर' चुनते थे। हर बात पूछ-पूछ कर उसे समझने की कोशिश करता।

बस ऐसे ही पुरानी छकड़ा मशीनें थीं।

पदम : उन दिनों तो ट्रेडल मशीनें रही होंगी?

मि. सा. : नहीं, ट्रेडल तो नहीं थी, 20x30 की पुरानी मशीनें थीं। 'सरिता' का प्रिंटिंग का वही अनुभव मेरे काम आया। सारी- सारी रात बैठकर अपनी तसल्ली के मुताबिक काम करवाते थे। इसीलिए आज अगर कोई देखेगा तो उसे एकदम फ़र्क नज़र आ जाएगा कि 55 और 57 के दरम्यान छपे 'हिमप्रस्थ' की प्रिंटिंग और कवर उसके बाद के छपे 'हिमप्रस्थ' की प्रिंटिंग से कहीं बेहतर और कवर अधिक सुंदर हैं।

पदम : बाद में तो और लेखक भी 'हिमप्रस्थ' से जुड़ने लगे होंगे?

मि. सा. : हां, मोहन राकेश मेरा दोस्त था। वो 'बोहिमियन

टाईप' था।

पदम : उन दिनों तो वो शायद बिशप कॉटन स्कूल में टीचर भी था।

मि. सा. : नहीं, वह तो बहुत पहले की बात है। वह अकसर शिमला आता रहता था और मेरे पास ही ठहरता था।

(यह कहते हुए कुछ क्षण के लिए पुरानी यादों में खो जाते हैं और मोहन राकेश को याद करके बहुत भीगे हुए स्वर में कहते हैं)

'ही वॉज़ ए डियर फ्रेंड'।

और वो 'आंधी' का लेखक कौन था भला? वही जो दूरदर्शन का डायरेक्टर भी रहा।

'कमलेश्वर', मैं कहता हूं।

'हां कमलेश्वर, ही वॉज़ ए डियर फ्रेंड आलसो। फिर शैलेंद्र था जो फिल्मों में गाने लिखता था। और भी बहुत थे।

(मिट्टू साहब दिमाग़ पर ज़ोर डालते हैं किंतु उन्हें नाम याद नहीं आते)

तो इन्होंने भी मदद की।

पदम : 'हिमप्रस्थ' में हिमाचल के दुर्गम और जनजातीय क्षेत्रों को लेकर राहुल सांकृत्यायन की भी तो एक लम्बी धारावाहिक शृंखला छपी थी।

मि. सा. : हां, पत्रिका की सफलता और पहुंच में राहुल सांकृत्यायन का भी बहुत बड़ा हाथ था।

फिर मैं दूसरे लोगों को आगे लाया। एक होनहार और साहित्य प्रेमी युवा लेखक रामदयाल नीरज जो हमारे विभाग में कार्यरत थे, को मैंने देखा कि उसको हिमाचल की लोक संस्कृति और यहां की स्थानीय परम्पराओं का बहुत ज्ञान था पर उसको ग्रूमिंग grooming) की ज़रूरत थी। मैंने उसे प्रोत्साहित किया और अपने साथ लगाकर इस काम में प्रशिक्षित किया। वह एक उत्साही युवक था और उसने बहुत मेहनत की। उसने काम में रुचि लेना प्रारम्भ कर दिया और जिम्मेवारी भी ले ली।

फिर सत्येंद्र आया। ये सब लोग बहुत मेहनती थे और अपने काम के प्रति गंभीर थे। बाद में और लोग भी आ गए। जब इन लोगों ने काम सम्भाल लिया तो मैं भी बेफ़िक्र हो गया। पत्रिका चल निकली और मैंने इस तरफ ध्यान देना बंद कर दिया।

आजकल लेखक तो बहुत हो गए हैं पर समय के साथ बहुत कुछ बदल भी गया है। कम्प्यूटर, प्रिंटिंग टेक्नीक और इंटरनेट के विस्तार के कारण प्रिंटिंग में बहुत सुधार हो गया है और अब तो लेखक, सम्पादक, प्रिंटर सब कम्प्यूटर से ही काम करते हैं। एक तो आजकल पढ़ने का चलन बहुत कम हो गया है। यह आजकल के लेखकों के लेखन के स्तर और उनकी बौद्धिक पहुंच में साफ झलक रहा है क्योंकि 'सेंसुअल प्लेज़र' के लिए टी.वी. पर हल्के- फुल्के कार्यक्रम ही देखते हैं।

पद्म : शायद मनोरंजन की तरफ़ ध्यान अधिक हो गया है।

मि. सा. : अरे नहीं पद्म! बुद्धिजीवी और लेखक के लिए तो गंभीर किस्म की किताबें पढ़ना भी एक मनोरंजन था। आजकल का मनोरंजन बौद्धिक तो रहा नहीं, 'सेंसज' को 'प्लेज़र' देने वाला ही रह गया, जिसमें दिमाग़ का इस्तेमाल न हो, खाली 'सेंसुअल ग्राटीफिकेशन' हो, बस।

पद्म : मैं एक बात भूल गया। 'हिमप्रस्थ' में अनेक बरसों तक पहाड़ी गीत और उनकी 'नोटेशन' (स्वर लिपि) भी तो छपती रही?

मि. सा. : पद्म! गीत मर जाते हैं या समय के साथ बदल जाते हैं पर धुनों को ज़िंदा रखना बहुत ज़रूरी है। शायद यही हमारी कोशिश थी।

पद्म : जीवन में आपके सैकड़ों लोगों से सम्बंध थे। कुछ रिश्तों की बात करेंगे?

मि. सा. : ज़िंदगी में 'रिलेशनशिप्स' तो बहुत हैं पर 'रिलेटेडनेस' नहीं है। उसके बिना रिश्तों में एक 'कैजुअलनेस' ही रह गई है। मात्र औपचारिकता जो औपचारिकता की कसौटी पर भी खरी न उतरे।

(फिर उनकी आंखें भर आती हैं और भर्राए स्वर में कहते हैं)

वो भी मर गया ना?

(मैं समझ जाता हूं, उनका इशारा यारों के यार, उनके घनिष्ठ मित्र उर्दू के शायर श्री अरमान शहाबी से है जो शिमला नगर निगम में सहायक नगर योजनाकार था और बाद में बम्बई जाकर पटकथा लेखक बन गया। कुछ लोकप्रिय टी.वी. सीरियल के अतिरिक्त उन्होंने अभिनेत्री जया बच्चन के लिए एक टी.वी. सीरियल बनाया था। माधुरी दीक्षित और ऋषि कपूर की प्रसिद्ध फिल्म 'साहिबां' की पटकथा भी उन्होंने लिखी थी। बाद में निर्देशक इंदरजीत के साथ उन्होंने ग्रेसी सिंह को लेकर 'चंचल' नाम से एक फिल्म भी बनाई थी पर उसके प्रदर्शन से पहले ही वह चल बसे)

मेरी भी आंखें भर आई थीं। उसके बाद मैंने उनसे विदा ली और यह मेरी उनसे अंतिम मुलाकात थी। 6 अगस्त, 2012 को मिट्टू साहब हमसे सदा-सदा के लिए बिछुड़ गए।

20-आसासिंह बाग़, नारायणगढ़ रोड, बलदेव नगर,
अम्बाला शहर, मो. 94163 78090

साक्षात्कार

हिमालयी भू-भाग में साहित्य की अनुगूंज



हिमप्रस्थ के षष्टीपूर्ति अवसर पर प्रदेश के जाने-माने साहित्यकार **श्री सत्येन्द्र शर्मा** व **किशोरी लाल वैद्य** से शिमला में **विनोद भारद्वाज** द्वारा की गई भेंटवार्ता के प्रमुख अंश सुधी पाठकों के लिए प्रस्तुत किए जा रहे हैं

तीन मई रविवार का दिन। एक लम्बे अरसे बाद खिली हुई धूप। देवदारों की घनी छांव में हल्की-सी ठंडक। शिमला रेलवे स्टेशन को पार कर, नाभा एस्टेट की उतराई उतरते हुए दिल में खुशी का अहसास, मस्तिष्क में ढेरों सवाल। साहित्य के योगी से बातचीत का तयशुदा कार्यक्रम। उधेड़बुन में रास्ता नाप लिया। मेरे पास से कौन गुजरा कुछ मालूम नहीं। नाभा एस्टेट स्थित रॉयल होटल सरकारी आवास के प्रांगण में छुट्टी के दिन का शांत माहौल। नाभा रियासत के काल में बनी इस इमारत की लकड़ी की सीढ़ियां चढ़ना आरम्भ करता हूं। एक-एक मंज़िल को पार करते हुए ऐसा महसूस हो रहा था जैसे वर्षों के एक अंतहीन सफर के बाद मंज़िल मिल रही हो। दरवाजे पर रुककर कर धीरे से घंटी बजाई।

...किवाड़ खुला। उनके सुपुत्र श्री संजय शर्मा से बातचीत करता हुआ मैं ड ्राईंग रूम में दाखिल हुआ। बातों का सिलसिला आरम्भ हुआ। इसी बीच हिमाचल के जाने-माने साहित्यकार, लेखक, गीतकार व हर दिल अजीज श्री सत्येन्द्र शर्मा जी कमरे में दाखिल हुए। इसलिए बिना संकोच के संवाद का सिलसिला आरम्भ हुआ। कमरे में दीवान के साथ लकड़ी की कुर्सी पर विराजमान शर्मा जी, जिन्हें अदब से बड़े पंडित जी कहा जाता है, जीवन के इस पड़ाव में भी ऊर्जावान, चुस्त तथा युवावस्था से लेकर अभी तक की सभी स्मृतियों, जानकारियों, किस्सों, कहानियों को याद रखे हुए हैं। वर्ष 1988 में सूचना एवं जन सम्पर्क विभाग से मुख्य सम्पादक के पद से सेवानिवृत्त पंडित जी की दिनचर्या पुस्तकों, पत्र-पत्रिकाओं तथा अखबारों से शुरू होती है। उनके कक्ष में हजारों दुर्लभ पुस्तकों की अपनी एक अलग लाइब्रेरी है, जिन्हें उन्होंने अपनी सुविधानुसार संजो कर रखा है। वहीं अपने पलंग के आस-पास और नीचे पांच-सात बक्सों में दुर्लभ पुस्तकों का खजाना रखा दिखा। उनके पास जाने वाली हर प्रकाशित सामग्री को वे ध्यान से पढ़ते हैं। फिर उसकी कतरन कर उसे सम्बन्धित फाइल में लगा देते हैं। घर परिवार का कोई भी सदस्य उनकी इजाजत के बिना उनकी एक भी कतरन को फेंक या बेच नहीं सकता। बातों-बातों में व्यंग्यात्मक लहज़े में उन्होंने कहा कि एक बार उनकी पुत्रवधू वीना शर्मा जो सरकारी विद्यालय में प्रिंसीपल हैं, ने कुछ अखबारों को अनुपयोगी समझकर बाहर रख दिया, इस पर उन्होंने उनसे कहा कि आपके लिए तो यह शायद गैर जरूरी सामान होगा लेकिन मेरे लिए तो यह अमूल्य निधि का अहम हिस्सा है। आज भी जब किसी पत्रकार, साहित्यकार व शोधकर्ता को विशेष जानकारी की जरूरत पड़ती है, तो उन्हीं से सम्पर्क साधा जाता है। पंडित जी को साहित्यिक क्षेत्र की जानकारियों का चलता-फिरता शब्दकोश कहा जाता है। पहले पंडित जी का प्रेस रूम, प्रेस क्लब में रोज हाजिरी देने का एक नियम था, लेकिन जीवन के इस पड़ाव में वे अब पहले की तरह माल रोड नहीं आ पाते। वे माल रोड पर टहलते हुए अपने संगी साथियों से अनेक जानकारियां बांटते व अपनी स्मृतियों को साझा करते मिल जाते थे।

पचासी वर्षीय श्री सत्येन्द्र शर्मा जी का जन्म 4 अप्रैल, 1930 को श्री दर्शन लाल के घर वर्तमान उत्तराखंड राज्य की राजधानी देहरादून में हुआ। देहरादून से एम.ए.बी.टी. करने के उपरांत वर्ष 1957 में हिमाचल प्रदेश के लोक सम्पर्क विभाग में उप सम्पादक पद पर अपनी सेवाएं आरम्भ कीं और हिमप्रस्थ पत्रिका के प्रकाशन

से जुड़े। श्री सत्येन्द्र शर्मा ने अपनी शिक्षा के दौरान ही पत्रिका का प्रकाशन आरम्भ कर दिया था। साहित्य के प्रति उनका विशेष लगाव था। इसका अंदाजा इसी बात से लगाया जा सकता है कि स्नातकोत्तर की शिक्षा के समय उन्होंने महाकवि निराला तथा छायावाद पर कार्य किया था। आपने तत्कालीन हिंदी के लब्ध प्रतिष्ठ लेखकों के साथ इस विषय पर पत्र व्यवहार किया था। इनमें यतेन्द्र, सुमन, वीरेन्द्र मिश्र, अंग्रेजी विभाग प्रयाग विश्वविद्यालय के हिंदी विभाग में कार्यरत हरिवंश राय बच्चन, डॉ. प्रेम शंकर (सागर) प्राध्यापक प्रमुख हैं। प्रथम अप्रैल, 1955 को निराला जी ने श्री सत्येन्द्र शर्मा को अपनी पुस्तक 'गीत गूंज' अपने हस्ताक्षरों सहित भेंट की थी। 'Geet Gunj is consecrated to Sayendera Sharma a post graduate to be. -Nirala 1.4.1955' विगत सात दशकों से सत्येन्द्र शर्मा ने कहानियों, गीतों, कविताओं, लेख, निबंध, साक्षात्कार से साहित्य को पुष्ट किया है तथा उनके विचारों का प्रवाह आज भी कलम व मार्गदर्शन के माध्यम से प्रवाहमान है।

गौरतलब है कि हिमप्रस्थ का प्रकाशन 15 अप्रैल, 1955 को आरम्भ हुआ था। वे दो वर्ष उपरांत इस पत्रिका से जुड़े। उनसे पूर्व पत्रिका के प्रकाशन मंडल में सम्पादक हरिकृष्ण मिट्टू, उप सम्पादक राम दयाल नीरज थे। निदेशक लोक सम्पर्क श्री प्रेम राज महाजन के मार्गदर्शन में इसका प्रकाशन हो रहा था। हिमप्रस्थ की साठ वर्ष की साहित्यिक यात्रा के सम्बंध में श्री सत्येन्द्र शर्मा से हुई बातचीत के कुछ अंश यहां प्रस्तुत हैं :-

प्रश्न : साठ के दशक में तत्कालीन हिमाचल प्रदेश सरकार द्वारा इस प्रकाशन को आरम्भ करने का क्या मकसद था?

उत्तर : वर्ष 1957 में जब मैं इस पत्रिका के साथ जुड़ा तो उस वक्त प्रदेश अपनी विकास यात्रा के आरम्भिक दौर में था। राज्य के भीतरी भागों में शिक्षा, स्वास्थ्य, सहित अनेक संस्थान खुल रहे थे। सड़कों का निर्माण हो रहा था। जहां-जहां सड़क पहुंच रही थी, वहां विकास नज़र आने लगा था। कृषि-बागबानी को नई दिशा देने का कार्य आरम्भ हो रहा था। अब जरूरत थी कि प्रदेशवासियों को अपनी संस्कृति, सभ्यता, परम्पराओं की जानकारी उपलब्ध करवाई जाए। वहीं विकास की भी जानकारी मिले। इसी सोच को ध्यान में रखते हुए हिमप्रस्थ का उदय हुआ। राजनीतिक तौर पर भी अपनी बात को जनमानस तक पहुंचाने का यह एक बहुत ही सशक्त माध्यम साबित हो रहा था। इसका लाभ भी मिला। चम्बा वाले महासू वाले को, सिरमौर वाले बिलासपुर वाले को जान सके। या यूं कहें कि शब्दों के माध्यम से संस्कृति का आदान-प्रदान हुआ।

प्रश्न : आपकी नज़र में साहित्य सृजन और विकास के क्षेत्र में इस प्रकाशन का क्या योगदान रहा जिसे आज के पाठकों, लेखकों के साथ साझा किया जा सके।

उत्तर : तीस छोटी-बड़ी रियासतों का विलय कर हिमाचल का उदय हुआ था। प्रदेश के प्रथम मुख्य मंत्री यशवन्त सिंह परमार ने वर्ष 1955 में हिमाचल दिवस पर हिमप्रस्थ का शुभारम्भ कर दूरदर्शिता का परिचय दिया। इसके प्रकाशन से हिमाचलियों को अपनी संस्कृति, सभ्यता तथा इतिहास की जानकारी मिली। लेखों, चित्रों तथा रेखांकन के माध्यम से महासू, चम्बा तथा अन्य जनजातीय क्षेत्रों को एकसूत्र में पिरोने का रास्ता प्रशस्त हुआ। सबसे बड़ी विशेषता यह रही कि इसके नियमित प्रकाशन से राज्य के लेखकों, साहित्यकारों तथा नवोदित लेखकों को अपने विचार प्रकट करने का एक मंच प्राप्त हुआ। प्रदेश की विकट भौगोलिक परिस्थितियों के मद्देनज़र राज्य में दैनिक तथा साप्ताहिक समाचार पत्रों तथा पत्रिकाओं की पहुंच नगण्य थी। राज्य की राजधानी शिमला तथा 9 अन्य छोटे शहरों में The Tribune, धर्मयुग, साप्ताहिक हिन्दुस्तान तथा कादम्बिनी पत्रिकाओं की पहुंच सीमित क्षेत्रों और लोगों तक थी। राज्य में आकाशवाणी केन्द्र शिमला में 16 जून, 1955 को आरम्भ हुआ था। ऐसे में सरकारी नीतियों के प्रचार-प्रसार में हिमप्रस्थ का योगदान बढ़ता गया।

प्रश्न : पत्रिका के शुरुआती दौर में हिमप्रस्थ परिवार यानी सम्पादक मंडल में कौन-कौन से लोग शामिल थे और राज्य के प्रमुख लेखक, कलाकार और चित्रकार जो पत्रिका से जुड़े। उस समय के साहित्यिक व लेखकीय परिदृश्य में आए बदलाव को आप कैसे आंकते हैं?

उत्तर : मोटे चश्मे के पीछे से तेजस्वी नजरों व अपनी याद्दाश्त पर जोर डालते हुए एक गंभीर मुद्रा में कहा कि हिमप्रस्थ के प्रकाशन से पूर्व राज्य में मात्र दो ही पत्रिकाओं का प्रकाशन होता था। हिमप्रस्थ के पहले सम्पादक श्री हरिकृष्ण मिट्टू, हिमाचल आने से पूर्व नई दिल्ली में टाईम्स आफ इंडिया के विशेष संवाददाता थे, वहीं राम दयाल नीरज जिन्हें आज भी मास्टर जी या गुरु जी के नाम से जाना जाता है, सिरमौर रियासत में सिरमौर ग़ज़ट के प्रकाशन से जुड़े थे। उन्हें प्रदेश की लोक संस्कृति, सभ्यता, स्वतंत्रता आंदोलन से जुड़ाव में कार्य का बहुत ही ज्ञान था। उनके जुड़ाव से पत्रिका को नया स्वरूप देने में सहायता मिली। ज़िया सिद्दीकी मध्य प्रदेश से प्रकाशित हिमवाद तथा हिंदी की नई दुनिया से जुड़े थे। किशोरी लाल वैद्य अध्यापन कार्य छोड़कर साहित्य के प्रति लगाव के कारण पत्रिका से जुड़े।

रामकृष्ण कौशल, पुस्तकालय से जुड़े होने तथा लेखन में अभिरुचि के कारण इस साहित्यिक यात्रा में जुड़े। वहीं श्रीनिवास श्रीकान्त का सोलन रियासत से सम्बंध था। पिता जी के साथ राज्य के बाहर रहने का अनुभव तथा निराला के साथ सम्बंधों तथा एक समर्पित लेखक की अभिरुचि के साथ लेखन कार्य में जुड़े। हम सभी एक टीम की तरह कार्य करते थे तथा पत्रिका के स्तर को बनाए रखने के लिए नए-नए प्रयोग भी करते थे। उस समय हिमप्रस्थ परिवार में राज्य के ही नहीं बल्कि देश-प्रदेश के लेखक भी जुड़े थे। सबका तो याद नहीं लेकिन मंडी जिले से के.एल. वैद्य, बी.एल. कपूर, हेमेन्द्र वैद्य, सुंदर लोहिया, चूढ़ामणी, मोती लाल घई, सिरमौर से चंद्रमणी वशिष्ठ, जिन्हें पहाड़ी मृणाल कहा जाता है, चतर सिंह पंवार, सोलन से विजय सहगल, कंडाघाट से देवेन्द्र कुमार बंसल, शिमला से हरदयाल सिंह 'नास्तिक', बिलासपुर से जय 'कुमार', केशवानंद ममगाईं, कैलाश भारद्वाज, निर्मल कुमारी पंवार, जयदेव शर्मा कमल, सुदर्शन कुमार गौड़, राम कुमार काले 'सन्यासी', धामी से नंद लाल 'मुतखि' ने सभी विषय पर लिखे लेखों से पत्रिका की शान बढ़ाई। उत्तर प्रदेश से शैलेश मटियानी का पत्रिका को बहुत ही सहयोग मिला। इनमें से अधिकांश बहुत लम्बे अरसे तक इस पत्रिका से जुड़े रहे।

पत्रिका को अपनी कला से लोकप्रिय बनाने में विश्वनाथ मेहता का योगदान सराहनीय है। वर्ष 1988 के उपरांत सर्वजीत ने इससे अपनी तूलिका के माध्यम से जान डाली। कैमरे की आंख से सरजू प्रसाद जो कहानीकार भी थे तथा बी. कुमार का कमाल देखने वाला था। उनके चित्रों में पहली बार हिमाचल की असली तसवीर देखने को मिली।

प्रश्न : हिमप्रस्थ पत्रिका में उस समय कौन-कौन से स्थायी स्तम्भ थे। नव लेखकों को पत्रिका के प्रति अभिरुचि पैदा करने के लिए क्या प्रयास किए जाते रहे?

उत्तर : प्रश्न को सुनते ही, फुर्ति से कुर्सी से उठे और अपने निजी पुस्तकालय से वर्ष 1957 की हिमप्रस्थ उठाकर लाए। उस पर नज़र दौड़ाते हुए बोले, देखिए, स्थायी स्तम्भों में नारी जगत, दद्दा की कलम, लोक गीत, अपनी बात के तहत सम्पादकीय, विकास का दर्पण- गतिशील हिमाचल, हिमाचल स्वर गंगा सहित कहानी, कविता, साहित्य, संस्कृति के कॉलम थे। 'दद्दा की कलम' कॉलम में दद्दा हर अंक में लेखक की सोई हुई शक्ति

हिमाचल की कला संस्कृति के मर्मज्ञ

किशोरी लाल वैद्य



शिमला का 'कैनेडी कॉटेज'। प्रथम मार्च, 1962 का दिन, 25 वर्षीय एक युवा जेब में कलम तथा मन मस्तिष्क में लेखन का जुनून लेकर हिमाचल प्रदेश लोक सम्पर्क विभाग के हिमप्रस्थ कार्यालय में प्रातः दस बजे दाखिल हुआ। सम्पादक की कुर्सी पर श्री राम दयाल नीरज विराजमान थे। वे अपने कार्य में व्यस्त कुछ लिख रहे थे। युवक ने अपना परिचय दिया तथा सम्पादक महोदय ने इशारे से उसे बैठने को कहा। थोड़ी देर उपरांत एक पन्ना लिखना बंद किया तथा परिचय प्रारम्भ हुआ। कुछ समय तक प्रकाशन सम्बंधी आवश्यक जानकारियां दीं और जो पन्ना लिखा था, उसे युवक के हाथ में थमाते हुए कहा, इसे पढ़ो और पूरा करो। 2 मार्च, 1937 को जन्मे श्री किशोरी लाल वैद्य का यह प्रथम दिन का अनुभव था। जून 1960 में राजकीय उच्च विद्यालय हटगढ़ जिला मंडी में एक शिक्षक के रूप में अपने सेवाकाल का आरम्भ किया। लोक सम्पर्क विभाग में उप सम्पादक के रूप में अपनी नियुक्ति के दौरान 1974 तक हिमप्रस्थ पत्रिका में प्रकाशन से जुड़े रहे। बाद में जिला लोक सम्पर्क अधिकारी, उप निदेशक, मुख्य मंत्री के प्रेस सचिव पद पर अपनी सेवाएं दीं। वे मार्च 1995 में संयुक्त निदेशक के पद से सेवानिवृत्त हुए। लोक सम्पर्क विभाग में आने से पूर्व लेखन का उन्हें शौक था। वर्ष 1960 में हिमप्रस्थ में उनका एक शोध लेख प्रकाशित हुआ जिससे लेखन के प्रति उनकी अभिरुचि बढ़ी।

हिमाचल की कला संस्कृति पर उनका लेखन विगत पांच दशकों से निरंतर जारी है। पहाड़ी चित्रकला एवं हिमाचल में मंदिर स्थापत्य अध्ययन एवं अनुशीलन आपके विशेष विषय हैं।

'हिमाचल के मंदिर' पुस्तक श्री वैद्य की प्रमुख पुस्तक है। इस पुस्तक के माध्यम से पाठकों को राज्य के मंदिरों की सटीक जानकारी

मिली। वर्ष 1999 में श्री वैद्य को इस पुस्तक के लिए हिमाचल कला भाषा एवं संस्कृति अकादमी द्वारा सम्मानित किया गया। इससे पूर्व, अकादमी द्वारा 'पहाड़ी चित्रकला 1969 ग्रंथ के लिए 1983 में सम्मानित किया गया था। इसी ग्रंथ के लिए उन्हें वर्ष 1970 में हिमाचल सरकार और वर्ष 1971 में उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा पुरस्कार प्राप्त हुए।

श्री वैद्य की अंग्रेजी पुस्तक The Cultural Heritage of the Himalayas (1971) पश्चिमी हिमालय की संस्कृति पर प्रथम प्रामाणिक कृति के रूप में चर्चित रही है। 'प्रवासी के अनुबंध' (1981) द्वारा अपने लाहुल स्पीति के कार्यकाल के दौरान लाहुल स्पीति के दुर्गम क्षेत्र एवं कठोर जलवायु में रची-बसी जनजातीय जीवन शैली एवं कला धरोहर का एक आत्मीय चित्रण उनकी लेखकीय परिपक्वता को दर्शाता है। अपनी जन्मभूमि मंडी जनपद पर 'हिमालय की लोक कथाएं' (1971) में बालोपयोगी मौखिक धरोहर को संरक्षित करने का अनूठा प्रयास किया गया है। श्री वैद्य कहानी, कविताएं तथा उपन्यास लेखन में भी सिद्धहस्त हैं। 'तट के बंधन' (उपन्यास 1963) एवं 'सफेद प्रतिमा काले साये' (आकाशवाणी शिमला से प्रसारित एवं कुछ अन्य कहानियों का संकलन, 1963) लेखक की आरंभिक दौर की परिचायक रचनाएं हैं। श्री वैद्य को बहुचर्चित 'एक कथा परिवेश' (हिमालयी क्षेत्र के अठारह कहानीकारों की प्रतिनिधि रचनाओं का संकलन, 1971) के सम्पादन का भी श्रेय प्राप्त है। कलाकार सरदार सोभा सिंह से श्री वैद्य का गहरा रिश्ता रहा। उनकी कृतियों तथा कार्यों को पाठकों तक पहुंचाने का श्रेय भी उन्हें जाता है। आज भी उनके घर पर सोभा सिंह जी द्वारा भेंट कृतियां तथा अनेक पत्र उन्होंने संजोकर रखे हैं। वहीं नोरा रिचर्ड के साथ भी वे निरंतर पत्राचार करते थे। इससे श्री वैद्य की कला के प्रति समर्पण एवं रुझान का पता चलता है। उन्होंने वर्ष 2001 में सरदार सोभा सिंह की जन्म शताब्दी पर विशेष स्मारिका का सम्पादन व प्रकाशन किया, वहीं हिमप्रस्थ में भी उन पर विशेष लेख लिखा।

आकाशवाणी से श्री वैद्य एक लम्बे समय से जुड़े हैं। आकाशवाणी के नई दिल्ली केन्द्र में 'विशेष रूपकों के अखिल भारतीय कार्यक्रम के अंतर्गत 18 जुलाई, 1996 को श्री वैद्य द्वारा 'साधनापीठ ताबो' शीर्षक से लिखित रूपक का प्रकाशन हुआ। वहीं पहाड़ी चित्रकला सम्बंधी आलेख पर हिमाचल कला भाषा एवं संस्कृति ने वृतचित्र का निर्माण किया जिसका लोकार्पण 2 सितम्बर, 2004 को मुख्य मंत्री श्री वीरभद्र सिंह ने किया। अपने 50 वर्षों के लेखकीय जीवन के कार्यकाल को याद करते ही उनके चेहरे पर रौनक-सी आ जाती है। आज के लेखकों तथा सम्पादन कार्य से जुड़े व्यक्तियों के लिए वे मिसाल हैं व प्रेरणा स्रोत हैं। हिमप्रस्थ में 60 वर्ष से सफर पर उन्होंने अपनी विचार साझा करते हुए कहा कि जीवन के इस पड़ाव पर हिमप्रस्थ परिवार द्वारा रचनाकारों को स्मरण करना हमारे लिए सम्मान की बात है।

जगाता था। यह पाठकों में बहुत ही लोकप्रिय था तथा इसके माध्यम से लेखकों को समसामयिक जानकारियों का आदान-प्रदान व नवोदित लेखकों को लेखन के प्रति प्रोत्साहित किया जाता था। लोकगीत कॉलम से राज्य की कला, भाषा, बोली के विभिन्न रूपों की अभिव्यक्ति होती थी। चन्द्रमणि वशिष्ठ को इस कॉलम को लिखने की महारत हासिल थी। गतिशील हिमाचल- प्रदेश का प्रगति का लेखा-जोखा था। वहीं हिमाचल की स्वर गंगा के माध्यम से पहाड़ी नारियों, गानों में गंगी की स्वर लिपि का ज्ञान आम जन तक पहुंचाने का प्रयास था।

प्रश्न : आपने देश के प्रतिष्ठित रचनाकारों, संगीतकारों, कलाकारों को पत्रिका के साथ जोड़ा है। इसका आज तक और कोई सानी नहीं है। आप किसे अपना सर्वश्रेष्ठ योगदान मानते हैं।

उत्तर : यह सच है कि हिमप्रस्थ के साथ राज्य के लेखकों तथा अन्य प्रांतों के मशहूर लेखकों को जोड़ा गया। आजादी के बाद देश में नव जागरण तथा प्रगति का दौर चला। हिमप्रस्थ पत्रिका के लिए मेरा विशेष योगदान राहुल सांकृत्यायन की अप्रकाशित पुस्तक 'हिमाचल प्रदेश का क्रमबद्ध प्रकाशन हिमप्रस्थ में 1967 से आरम्भ होना कहा जा सकता है। इस कड़ी के माध्यम से साहित्य के महान मनीषी को हिमाचल प्रदेश की इस पत्रिका के साथ जोड़ना एक बहुत बड़ी उपलब्धि थी। इस धाराबद्ध लेख शृंखला के माध्यम से प्रदेश तथा देशवासियों को हिमाचल की तथ्यपरक जानकारी सुलभ हुई। इसके अलावा तत्कालीन उपराज्यपाल श्री बजरंग बहादुर सिंह ने एक कार्यक्रम आरम्भ किया। इसके तहत देहात में रहने वाले निवासियों की जिज्ञासाओं तथा प्रश्नों को आमंत्रित किया जाता था। प्रश्नों के उत्तर देने के लिए हर विभाग में एक जिम्मेदार अधिकारी की तैनाती की गई थी। लोक सम्पर्क विभाग में मुझे इस कार्य का जिम्मा दिया गया था। उत्तरों को सीधे प्रश्नकर्ताओं तक पहुंचाया जाता था। वहीं श्रेष्ठ प्रश्नों के उत्तरों को The Tribune तथा हिमप्रस्थ पत्रिका में भी प्रकाशित किया जाता था।

प्रश्न : उस समय साहित्य जगत के आपके साथियों में एक धारणा थी है कि आप पत्रिका में विभिन्न छद्म नामों से लेख लिखते थे। संपादकीय मंडल के लिए ऐसे कौन से कारण रहे?

उत्तर : रहने दो भाई, हम सभी तो मिलकर काम करते थे। सत्येन्द्र शर्मा, अजीत रंजन बंन्धोपाध्याय तथा मयूर कंठी के नाम से लिखता था। इन नामों से लिखने का

मकसद एक ही था कि पाठकों को एक ही अंक में विभिन्न विषयों पर जानकारी मिल सके। मयूर कंठी का तो एक किस्सा भी है। इस नाम से ऐसा लगता था कि कोई महिला लेखक है तो ढेरों पत्र मुझे आते थे। मैं भी उनका उत्तर सुश्री मयूर कंठी के रूप में ही देता था। इसका मकसद यह होता था कि हम पत्र के माध्यम से पाठकों को प्रदेश की कला संस्कृति के प्रति आकर्षित कर सकें। प्रिय धनंजय को 11 मार्च, 1961 में लिखा एक पत्र जो अगस्त, 1962 के अंक में प्रकाशित हुआ, मुझे आज भी याद है जिसे मैंने हिमाचल विंटर स्पोर्ट्स क्लब कुफरी, हिमाचल प्रदेश के पते से लिखा था। इसमें कुफरी में स्कीइंग, लोक संगीत, नालदेहरा गोल्फ कोर्स, राम दयाल नीरज का उल्लेख, कुंजू-चंचलों का उल्लेख कर हिमाचल की तसवीर पेश की थी, ऐसे ढेरों पत्र मेरे पास मौजूद हैं।

प्रश्न : चिट्ठियों से याद आया आप पत्र लेखन में अग्रगामी थे। ऐसा कहा जाता है कि आपकी जेब तथा बैग में पोस्ट कार्ड रहते थे। इसे कब लिखना, किस पोस्ट ऑफिस में डालना, इस बारे में सदैव गम्भीर रहते थे।

उत्तर : हां, पत्र लेखन मेरा शौक है। आज भी बना हुआ है। मैंने देश तथा प्रदेश के अनेक प्रबुद्ध लेखकों को पत्राचार के माध्यम से जोड़ने का कार्य किया। इस कार्य से मुझे बहुत ही सुकून मिलता है। बलराज साहनी, नोरा रिचडर्स सहित अनेक लेखकों को जोड़ा तथा उनसे विचारों को 'पत्र-दर्पण' कॉलम के माध्यम से पाठकों तक पहुंचाया। आज का सम्पादक पत्र लिखने से गुरेज करता है। इंटरनेट व वट्सऐप में विश्वास ज्यादा हो गया है। अब तो पत्र आते ही नहीं। यूं कहो डाकिया आज आदमी के जीवन से गुम हो गया है। लेकिन मेरे पास तो आज भी अनेक लेखकों के खत आते हैं। पत्र व्यवहार से लेखकों के साथ हमारा एक गहरा एवं आत्मीय लगाव रहा। हिमप्रस्थ में छपी श्रेष्ठ कहानियों का एक संकलन 'बर्फ के हीरे' भी प्रकाशित हुआ था। यह हिमाचल के लेखकों की कहानियों का पहला कहानी संग्रह था। इसका प्रकाशन निजी तौर पर किया गया था। लोक सम्पर्क विभाग द्वारा मार्च, 1960 में प्रकाशित 'हिमाचल के लोक गीत' पुस्तक के सम्पादन में भी सहयोग दिया।

प्रश्न : कहानीकारों का पहला संग्रह व हिमाचल के लोक गीत पुस्तक के प्रकाशन के अतिरिक्त कोई ऐसा कार्य जो जो आपको स्मरण हो?

उत्तर : हिमप्रस्थ का प्रकाशन तो नियमित तौर पर हो रहा था। इसी दौरान लोक सम्पर्क विभाग द्वारा श्वेत श्याम पर्दे पर हिमाचल की पहचान बनाने के लिए वृतचित्र 'देवभूमि हिमाचल' का निर्माण किया गया। इसके सम्पादन तथा निर्माण में भी सहयोग किया। इस कार्य से सीने जगत तथा देशवासियों ने हिमाचल को देखा तथा समझा। इससे पहले यहां बनने वाली फिल्मों तथा अंग्रेजों द्वारा लिखी पुस्तकों, दस्तावेजों में ही हिमाचल की जानकारी उपलब्ध थी।

रेडियो से जुड़े एस.एस.एस. ठाकुर से सम्बन्धित जानकारी देते हुए कहा कि इस महानुभाव की जयंती आगामी माह आ रही है। इस पर तुलसी रमण जी ने श्रेष्ठ कार्य किया है। उन्हें कहकर गिरिराज या हिमप्रस्थ के लिए लेख जरूर प्रकाशित करवाएं।

प्रश्न : हिमप्रस्थ ने छह दशकों का सफर तय कर लिया है। इन छह दशकों पर आपका पाठकों व लेखकों व सम्पादक मंडल को क्या संदेश है।

उत्तर : सबसे बड़ी बात यह है कि आरम्भिक सफर के लेखक के. एल. वैद्य, मोती लाल घई, कमल के प्यासा, गुलेरी बंधु, ओम प्रकाश सारस्वत, सुंदर लोहिया, बी.एल. कपूर, ओ. सी. हांडा, मौलू राम ठाकुर, छेरिंग दोरजे, तोबदन, दीनानाथ शास्त्री, विजय सहगल जैसे लेखकों को आज भी पत्रिका में लिखते हुए देख कर आनन्द की अनुभूति होती है। हिमप्रस्थ पत्रिका हिमाचल का एक ऐसा शब्दघोष है जिसकी गूंज देशभर में सुनी गई और आज भी गुंजायमान है। हिमप्रस्थ के इस सफर के दौरान मुझे वर्ष 1978 में शुरू हुए विभाग के साप्ताहिक पत्र गिरिराज के प्रथम सम्पादक बनाने का मौका मिला।

मेरा यह कहना है कि आज लेखकवृंद यात्रा वृत्तांत कम लिख रहा है। लेखकों को नोट्स लेने की आदत नहीं है। जैसे कि पूर्व में लेखकों को day to day diary लिखने की आदत थी। हिमप्रस्थ में ऐसे शोधपरक लेख ज्यादा प्रकाशित होने चाहिए जिससे हिमाचल के प्रति अधिक-से-अधिक लोग आकर्षित हों।

लगभग चार घंटे की बातचीत के दौरान सबसे महत्त्वपूर्ण बात थी कि पंडित जी ने इस लम्बे सत्र के दौरान भोजन तक नहीं किया। उनकी धर्मपत्नी श्रीमती विदुषी शर्मा ने बताया कि जब साहित्य तथा बातचीत का सिलसिला शुरू होता है तो परिचर्चा या चर्चा से ही उनकी क्षुधा शांत हो जाती है। फिर भूख नहीं लगती। पंडित जी की साहित्यिक यात्रा तथा अपने इस जुनून को आगे बढ़ाने में परिवार का सहयोग सर्वोपरि है। सम्पूर्ण जीवन स्पष्टवादी विचारधारा को अपनाकर एक अलग नाम कमाया है।

दयाल हाउस, संजौली, शिमला-171 005,
मो. 94181 58987

लोक संस्कृति एवं साहित्य के मनीषी

राम दयाल नीरज



वर्ष 1955 में जब हिमप्रस्थ शुरू हुई, हिमाचल में गिने-चुने ही लेखक थे। अड़तालीस पृष्ठों की पत्रिका के लिए सामग्री जुटाना एक दुष्कर कार्य था। जैसी रचनाएं आ जातीं, उनका उपयोग करते हुए बचे पृष्ठों के लिए सारी सामग्री को भिन्न-भिन्न नामों से तैयार करके स्वयं लिखते और पत्रिका निकालते। यह कार्य हिमप्रस्थ पत्रिका के प्रथम उप सम्पादक श्री राम दयाल नीरज जी जिन्हें गुरु जी के नाम से जाना जाता है। आज भले ही अटपटा-सा लगता हो लेकिन यह सत्य है कि पहले तीन अंकों तक की सामग्री को गुरु जी ने स्वयं ही तैयार किया था। 15 अप्रैल, 1955 को 'हिमप्रस्थ' का प्रवेशांक निकला और वर्ष 1960 में नीरज जी हिमप्रस्थ के सम्पादक बने। 12 फरवरी, 1922 को जिला सिरमौर के एक गांव लाणाबाका डा. डिंगर किन्नर तहसील पच्छाद जिला सिरमौर में जन्मे श्री नीरज केवल दस वर्ष की वय में ही घर से निकल गए। चौथी कक्षा तक वे लुधियाना में पढ़े और तदनन्तर 1937-38 में मुंबई रहकर मारवाड़ी कमर्शियल हाई स्कूल (मराठी-हिंदी माध्यम) से मैट्रिक तथा अपने ही श्रम से प्रभाकर, बी.ए. करके 1940-41 में लाहौर के एस.एस.वी. सीनियर एंग्लो वर्नाकुलर मॉडल स्कूल से अध्यापन प्रशिक्षण करके 1943 में नाहन आकर शमशेर हाई स्कूल में अध्यापक हो गए। 1945-46 में डॉ. यशवन्त सिंह परमार के साथ, प्रजा मंडल आंदोलन में भाग लिया। 1952 में लोक सम्पर्क विभाग में नियुक्ति ली और इसी विभाग से 1980 में उप निदेशक के पद से सेवानिवृत्त हुए। नीरज जी के शब्दों में, "जब मैंने सम्पादकी सम्भाली, तब नई कविता का दौर था। अज्ञेय, शमशेर तथा मुक्तिबोध का दौर था। हमारे यहां भी कैलाश भारद्वाज तथा अनिल राकेशी (जो पहले गीतकार थे) नई कविता लिखने लगे। फिर देश/प्रदेश के कई कवि-लेखक हिमप्रस्थ से जुड़ गए और पत्रिका आधुनिक होती गई। इस उम्र में भी वे लेखन व सृजन में सक्रिय हैं। नीरज जी स्वभाव से हंसमुख, वृत्ति से शोधक, नियम से अध्ययनशील, शोध में खोजी, 'वाद में निर्णायक, ज्ञान में जिज्ञासु, संगोष्ठियों में तर्कधर्मी तथा लेखन में स्तरीयता/नूतनता के पक्षधर हैं। हिमाचल के इतिहास, संस्कृति एवं साहित्य से सम्बन्धित उनकी पकड़ गहरी तथा व्यापक है।

95 वर्षीय गुरु जी सृजन की दृष्टि से कविता, ग़ज़ल, गीत, नाटक तथा निबंध लिखते हैं। निबंध लेखन में उनकी रुचि विशेष है। वे कहते हैं कि आज निबंध बहुत कम लिखा जा रहा है। अध्ययनशीलता समाप्त हो गई है इसलिए शोधवृत्ति भी संकुचित हो रही है। प्रदेश के लेखकों के सम्बंध में उनका कहना है कि श्रीनिवास श्रीकान्त, सुंदर लोहिया, अनिल राकेशी, चंद्रमणि आदि लेखकों ने साहित्य जगत में विशेष स्थान बनाया है। भाषा ही साहित्य का स्तर बनाती है। आज लेखन में, भाषा पर बहुत मेहनत करने की जरूरत है। मैं जब हिमप्रस्थ का सम्पादक था, तब बहुत-सी रचनाओं को मैं, भाषा के स्तर पर सुधार कर छापता था। वे अपने लेखन में शब्द प्रयोग के प्रति पूर्ण सजग हैं।

गुरु जी ने अपने सम्पादकीय दायित्वों को बखूबी निभाया है। इनके साथ जुड़े सत्येन्द्र शर्मा, रामकृष्ण कौशल, किशोरी लाल वैद्य, जिया सिद्दिकी, श्रीनिवास श्रीकान्त एवं केशव नारायण की टीम ने हिमप्रस्थ से कई लेखक जोड़े और स्वयं भी साहित्य रचना करके प्रदेश की साहित्यिकता को समृद्ध किया। प्रदेश में लेखकीय वृत में इनकी विशेष उपस्थिति है। श्री नीरज जी के शब्दों में, "अभी तक तो लेखक या कवि बनने का स्वांग करता हूं किंतु वास्तव में कुछ नहीं बन पाया। अध्ययन का नशा है जिसकी आदत मुझे मेरे व्यवसाय ने डाली, सो छूटती नहीं है कम्बख्त मुंह से लगी हुई। शताब्दी छूने जा रहा हूं, यही काफी है।" हिमाचल की संस्कृति के बारे में कहते हैं कि संस्कृति का अध्ययन रूढ़ियों को अपनाना नहीं, अपितु अपनी जड़ों को पहचानना है- कुछ पुराना छोड़ती जाती है और कुछ नया लेती जाती है। समाज कभी भी किसी युग में ठहरा हुआ नहीं रहा, सदैव मंद गति से आगे ही बढ़ता रहा।

हिमाचल की संस्कृति की विशेषताओं पर विचार प्रकट करते हुए नीरज ने कहा, "मैंने हिमाचल प्रदेश को पूरी तरह जाना ही कहां, जो मैं विशेषताएं गिना पाऊं? वास्तव में भारत में अनेक प्रदेशों में से यह भी एक ऐसा प्रदेश है, जो आदि मानव के कार्य-कलापों से लेकर आधुनिक मानव की प्रगति तक का साक्षी रहा है। इस प्रगति अथवा विकास के प्रमाणिक चिह्नों को इसने अपने में सुरक्षित ढंग से बचाए रखा है, ऐसा मेरा विश्वास है। इस छोटे से प्रदेश में विविधताओं का अम्बार देखता हूं। अनेक बोलियां, विविध खान-पान, रहन-सहन, अनेक वेशभूषाएं, प्रकृति के विभिन्न स्तर, जीवन के विभिन्न स्तर, जीवित रहने में विभिन्न उपक्रम, मनोरंजन के अनेक स्तर और न जाने कितनी-कितनी विभिन्नताएं।

हिमाचली नवयुवक लेखकों को अपनी संस्कृति से मोह होना चाहिए, उस पर निरपेक्ष रूप से चिंतन-मनन, अध्ययन एवं लेखन को शोध एवं विश्लेषण का विषय बनाना चाहिए। देवताओं के देश को मानव का देश समझ कर लिखें और खूब लिखें।

(अक्तूबर, 2011 में हमारे साहित्यकार कॉलम के तहत रामदयाल नीरज पर डॉ. ओमप्रकाश सारस्वत के लेख से साभार)

ज़िया सिद्दीकी एक बेजोड़ भाषा शिल्पी थे जिन्होंने बेजान-से-बेजान विषय में भी ऐसी जान डाली कि नीरस विषय भी रुचिकर लगने लगता। हिमप्रस्थ में रहते हुए 'दद्दा की कलम', प्रदेश की संस्कृति, परम्परा, कला विशेषकर वृतचित्र लेखन को शोधपूर्वक लिखा। वे लम्बे अरसे तक हिमप्रस्थ के सम्पादक रहे।

घर से दूर पहचान बनाए रखने की कोशिश

● ज़िया सिद्दीकी

जहां तक हिमाचल प्रदेश का सम्बंध है परम्परागत निष्पादन कलाओं को फिर से जीवित करना अब केवल सम्भ्रांत लोगों का सरोकार नहीं रह गया है। प्रदेश की परम्परागत कलाविधाओं को या जीवन और जीवंतता प्रदान करने के लिए अनेक व्यक्ति और संगठन जिस तत्परता से अग्रसर हैं, उसे देखकर लगता है कि अब यह आम आदमी का सरोकार बन गया है।

यातायात सुविधाओं के अभाव में हिमाचल सदियों तक अलग-थलग रहा और उसकी संस्कृति भी अनछुई बनी रही। लेकिन जब से हिमाचल में संचार सुविधाओं का विस्तार हुआ है तब से हिमाचल की संस्कृति और खास तौर पर उसकी लोक-कलाविधाओं ने बाहरी प्रभाव को समाहित करने की अपनी अद्भुत क्षमता का प्रदर्शन किया है। बशर्ते ये प्रभाव इसकी शैली और विषय वस्तु से मेल खाते हों। कुछ लोग शायद इस बात से इनकार करें। लेकिन हिमाचली गद्दी नृत्य में राजस्थानी नृत्य के अभाव और भिन्न पग संचालन के बावजूद 'पढवा' नृत्य पर पंजाबी प्रभाव देखा जा सकता है। इसी तरह बौद्ध मठों के अहातों में विलक्षण मुखौटा पहनकर नृत्य करते हुए लामाओं को देखकर दर्शक तिब्बत पहुंच जाता है। स्वयं तिब्बत की निष्पादन कलाओं की अपनी एक बेजोड़ परम्परा है। दलाई लामा द्वारा धर्मशाला को अपनी रिहाइश बनाए जाने के बाद काफी संख्या में तिब्बती हिमाचल प्रदेश में आकर बस गए हैं। अपने घरों से दूर ये तिब्बती अपनी समृद्ध परम्परागत निष्पादन कलाओं के संरक्षण और संवर्धन की बड़े सचेतन होकर कोशिश कर रहे हैं।

इन तिब्बतियों को हिमाचल में रहते हुए अब काफी अरसा हो गया है और यदि उन्होंने हिमाचलियों के साथ या हिमाचल वासियों ने उनके साथ सांस्कृतिक सान्निध्य स्थापित कर लिया हो तो उसमें किसी को आश्चर्य नहीं होना चाहिए। हिमाचल के मेलों और त्योहारों में तिब्बती कलाकारों द्वारा अपनी कला का प्रदर्शन अब एक आम बात है। उनकी निष्पादन कलाएं अब हिमाचल वासियों को विदेशी नहीं लगती।

फिलहाल यह नहीं कहा जा सकता कि तिब्बती निष्पादन कलाओं ने हिमाचल की निष्पादन कलाओं पर कोई प्रभाव डाला है या डालेगी। अलबत्ता यह देखने और समझने की बात है कि किस सम्पूर्ण भाव और परिश्रम से तिब्बती अपनी निष्पादन कलाओं का संरक्षण और संवर्धन कर रहे हैं। जाहिर है कि उनके लिए अपनी कलाओं के संरक्षण का अर्थ स्वयं अपनी पहचान का संरक्षण है।

हिमाचल के पर्वतीय नगर धर्मशाला पहुंचने पर दलाई लामा ने तिब्बत के कुछ दक्ष कलाकारों तथा कुछ और लोगों को लेकर 1959 में तिब्बती नृत्य एवं नाट्य समिति की स्थापना की। बाद में इस समिति का नाम बदल कर निष्पादन कलाओं का तिब्बती संस्थान रख दिया गया। पिछले 30 सालों में इस संस्थान ने अनेक दक्ष कलाकार तैयार किए हैं जो तिब्बतयों को अपनी पारम्परिक कलाओं से परिचित करवाते हैं। आज इस संस्थान के जो सदस्य हैं वे ही असली तिब्बती संगीत, नृत्य और मंच परम्पराओं के जीवित मर्मज्ञ हैं। ये कलाकार नियमित रूप से अभ्यास करते हैं और इनकी परिस्थितियों में तिब्बती लोक गीत और नृत्य तथा दरबारी, रस्मी और तांत्रिक नृत्य सभी कुछ शामिल है।

निष्पादन कलाओं का तिब्बती संस्थान तिब्बत के नृत्य नाट्य 'इहामो' का घर है। यह संस्थान अपनी आधारभूत कलागत उत्तरदायित्वों का निर्वाह करने के साथ-साथ एक कार्यशाला भी चलाता है जिसमें उसकी जरूरत के वस्त्र और वाद्य तैयार किए जाते हैं। अपने उद्देश्यों को पूरा करने के अलावा तिब्बती निष्पादन कलाओं की परम्परा के संरक्षण की दिशा में इस संस्थान का एक और बड़ा ही महत्त्वपूर्ण योगदान है। यह संस्थान कला निर्देशकों और संगीतकारों को प्रशिक्षित करता है। इन प्रशिक्षित कलाकारों को भारत में स्थित तिब्बती स्कूलों में नियुक्त किया जाता है, जहां वे युवा तिब्बतियों को उसकी विरासत से परिचित कराते हैं। यह संस्थान हर साल वसंत में अपना नृत्य नाट्य 'इहामो' प्रस्तुत करता है। नृत्य और नाटक के दूसरे कार्यक्रम साल भर में चलते रहते हैं। इसके कलाकार दलों ने संसार के विभिन्न देशों का भ्रमण किया है और भारत में भी उन सभी स्थानों पर जाते रहते हैं। जहां तिब्बती बस्तियां हैं। भारत के बड़े शहरों में भी यह संस्थान अपने कार्यक्रम प्रस्तुत करता है और सांस्कृतिक समारोहों में भाग लेता है।

(हिमप्रस्थ, अगस्त, 1989 के अंक में प्रकाशित)

आलेख

पर्वतीय परिंदे का सफरनामा



हिमप्रस्थ के साठ वर्ष के सफर पर प्रदेश के प्रसिद्ध साहित्यकार **श्रीनिवास श्रीकान्त** ने अपने अनुभव एवं स्मृतियां एक लेख के रूप में साझा की हैं।

हिमप्रस्थ ने अपने सेवा-कार्य के साठ वर्ष पूरे कर लिए हैं। इस दौरान पत्रिका निष्पादन रचनात्मक व घटनात्मक रहा। इस पत्रिका को अपने आरम्भ से ही दूरन्देश, महत्त्वाकांक्षी और सुयोग्य सम्पादकीय व्यवस्था का समर्थन प्राप्त रहा। सम्पादकीय परिवार के सदस्य एक मिशनरी ज़ील के लोग थे। समय के निर्धारित अंतरालों के बाद बदलाव और पुनर्गठन की स्थिति में भी हर परिवार के प्रत्येक सदस्य ने सम्पादकीय कलम का सिपाही बनकर मनोयोग से अपनी भूमिका निभाई है।

वर्ष 1948 में अप्रैल मास के मध्य पश्चिमोत्तर हिमालय में हिमाचल प्रदेश के नाम से एक पर्वतीय प्रशासनिक इकाई का उदय हुआ था तथा उसे तब कुछ बरस बाद विधान सभा गठित करने का अधिकार भी प्राप्त हुआ था। पत्रकारिता के मानचित्र पर हिमाचल की कोई पहचान नहीं थी। उस समय की सरकार ने यह महसूस किया कि यहां कोई ऐसा प्रिंट माध्यम होना चाहिए जो समय की रचनात्मक प्रवृत्तियों को प्रकाश में लाने का उपक्रम कर सके। यह आशास्पद बात रही है कि शासकीय पत्रिका होने के बावजूद सम्पादकीय संगठन के सदस्य सामान्य रूप से प्रेस-कोड का पालन करते हुए भी लेखकीय रचनाओं पर पत्रिका की बुनियादी नीति और उद्देश्यों के अनुरूप निर्णय लेने के लिए स्वतंत्र थे। सम्पादकों की पदीय-क्रम-परम्परा (हीरार्की) में एक-के-बाद-एक ऐसे प्रतिभावान सम्पादक नियुक्त होते रहे जिनके दिशा- निर्देशन में पत्रिका निरन्तर अपना कायान्तरण करने में भली प्रकार कामयाब रही। साथ ही उसने देशिक विद्वजनों और पाठकों के बीच न केवल हिमाचल प्रदेश के भीतर अपितु देशभर के हिंदी हल्कों में अपनी साख बनाई।

हिमप्रस्थ में न केवल यथाशक्ति स्तरीय सामग्री का चयन और प्रकाशन होता रहा है बल्कि इसकी साज-सज्जा और रूपांकन भी रचनात्मक साहित्य के पाठकों में अपनी रुचिकर लोकप्रियता अर्जित कर सका। विश्वविद्यालयों के अनुसंधानकर्ता गत समय में अपनी एम. फिल और डॉक्टरेट के लिए सामग्री का उपयोग करते देखे जा सकते जो पत्रिका में प्रकाशित उपयोगी सामग्री की विश्वसनीयता को प्रमाणित करता है।

इस पत्रिका ने हिमाचल की रचनात्मक मेधाओं को देश की मुख्यधारा से जोड़ने का प्रयास किया है। इस दृष्टि से यह महज़ एक सीमित से क्षेत्र की मुख पत्रिका बनकर ही अपनी भूमिका नहीं निभाती रही, पूरे हिंदी क्षेत्र को समय-समय पर इसने उपयुक्त प्रतिनिधित्व दिया है। हिमालय की संस्कृति, इतिहास, लोकआस्था के बहुत से लेख पत्रिका की फाइलों के पृष्ठों पर आज भी देखे और पढ़े जा सकते हैं। उक्त नज़रिए से हम इसे एक विशाल संदर्भ-स्रोत (रेफरेन्शिस सोर्स) भी कह सकते हैं। पर्वतीय लोक जीवन और अनुश्रुत परम्परा की अनेक मणियां, अगर टटोला जाए, तो इसके कोष में जगमगाती देखी जा सकती हैं। नाटककारों, चित्रकारों, संगीतकारों पर लिखे गए आलेख भी आपको हिमप्रस्थ की अद्यतन फाइलों में मिल जाएंगे। सत्येन्द्र शर्मा, किशोरी लाल वैद्य जैसे नामचीन रूप से पहचाने जाने वाले सम्पाादकों ने अपने समय में लगातार अमूल्य एवं स्मरणीय सामग्री पत्रिका संगठन को उपलब्ध कराई है। इस संदर्भ में पत्रिका के सम्पादक रामदयाल नीरज और ज़िया उर्रहमान (पेट् नाम ज़िया) का नाम लेना मैं नहीं भूलूंगा। हिमप्रस्थ को रूपाकार देने और उसके लिए एक स्थायी प्रणाली विकसित करने में और उस समग्र के कार्यान्वियन में उनकी भूमिका महत्त्वपूर्ण रही है।

हिमप्रस्थ में ऐसा बहुत कुछ प्रकाशित हुआ है, जिसकी कालान्तर में अपनी एक अलग पहचान है। इनमें धारावाहिक आलेख हैं, उपन्यास हैं और है पर्वतीय संस्कृति से परिपूर्ण प्रचुर आधिकारिक अनुसंधान सामग्री भी। पं. राहुल सांकृत्यायन का धारावाहिक किन्नर देश और शैलेश मटियानी का उपन्यास गोपुली

गफूरन उदाहरणार्थ रेखांकित किए जा सकते हैं।

सत्येन्द्र शर्मा साक्षात्कार की कला में माहिर थे। उन्होंने निष्पादन कला की सुविख्यात शख्सीयतों के अलावा फिल्मी संगीतकारों और गायकों पर भी प्रचुर मात्रा में लिखा है। इनमें भी बर्मन और सज्जाद के साक्षात्कार तथा गायक मन्ना डे पर लिखी गई सामग्री उल्लेख्य है। सत्येन जी फिल्मी और कला क्षेत्र की दीगर सामग्री को एकत्र करने में हमेशा चुस्त-दुरुस्त बने रहे। उसका उपयोग भी वह एक रचनात्मक बुद्धिजीवी पत्रकार की तरह करते थे। सत्येन् के बरक्स, कहें तो, रामदयाल नीरज के पत्रिका में योगदान को भी भुलाया नहीं जा सकता। वे दोनों पत्रिका-परिवार में अपने इस प्रकाशन के लिए सामरिक क्षमता बने रहे थे। प्रकाशन की राह में आने वाली हर अड़चन का शर्तिया इलाज उनके पास था। रामदयाल नीरज, मास्टर जी के नाम से जाने जाते थे। परिवार के अंदर भी और बाहर भी।

पर्वतीय संस्कृति, परम्परा, लोक संगीत के ज्ञान में नीरज जी सचमुच एक निष्णात साता नज़र आते थे। लोक कला और प्रथाओं की सराहना में उनकी दृष्टि रचनात्मक थी। पत्रिका में प्रकाशन के लिए आने वाली सभी तद्‌विषयोक्त चीज़ों को वह पूरी तरह उलट-पलट कर और परख भी करने के बाद ही अपनी सहमति देते थे। लोक वाद्यों का उन्हें पूरा ज्ञान था। एक सम्पादक के रूप में उनकी भूमिका सेवानिवृत्ति तक पूरी बनी रही। सत्येन जी की तरह वह कवि भी थे।

प्रथम सम्पादक दिवंगत श्री हरिकृष्ण मिट्‌टू जिनके तत्त्वावधान में इस नवोदित पत्रिका का छठे दशक में प्रादुर्भाव हुआ। पत्रकारिता के क्षेत्र से आए हरफनमौला प्रतिभा के धनी थे। वह एक द्विभाषी श्रेणी के बुद्धिजीवी थे। अपने सम्पादकत्व में उन्होंने इस पत्रिका का आरम्भिक रूपाकार और विषयवस्तु तय किया। और कालांतर में वह राज्य के लोक सम्पर्क संगठन के निदेशक भी बने। उक्त पद पर कार्य करते हुए उन्होंने इस पत्रिका के मुख्य संरक्षक के रूप में अपनी सेवाएं दीं। उनकी प्रेरणा से ही-जब तक वह विभाग में रहे, पत्रिका को समय-समय पर मार्गदर्शन प्राप्त होता रहा। हरिकृष्ण मिट्‌टू ने लोक सम्पर्क-व्यक्ति (पीआर. मैन) के रूप में अपनी प्रशासकीय योग्यता द्वारा न केवल 'हिमप्रस्थ' अपितु हिमाचल राज्य में लोक सम्पर्क विभाग को एक अलग पहचान दी है। वे एक ज़हीन पत्रकार-लेखक तो थे ही, थिएटर में भी उनकी व्यक्तिगत रुचि थी। मनोहर सिंह, सुशील और रवि जैसे पूर्वकालिक उभरते रंगकर्मियों को उन्होंने समय- समय पर प्रोत्साहन प्रदान किया।

इस स्वनामधन्य पत्रिका की दीर्घा में वरिष्ठ सम्पादक केशव का नाम भी काबिलेजिक्र है। कहानीकार और कवि केशव ने अपने सेवाकाल के दौरान हिंदी क्षेत्र के उदीयमान रचनात्मक लेखकों को पत्रिका की परिधि में लाकर इसकी पहचान को और गाढ़ा किया है और यह खुशी की बात है कि ऐसे प्रयास पत्रिका की समकालीन व्यवस्था द्वारा भी निरंतर किए जा रहे हैं।

हिमप्रस्थ की निहारिका सितारों से भरपूर है। ये कुछ ऐसे हस्ताक्षर हैं जिन्होंने पत्रिका के माध्यम से हिमाचल के इतिहास को अपना अचूक योगदान देकर इसे समुज्ज्वल बनाया है।

मैं पत्रिका की षष्टिपूर्ति के अवसर पर भूतपूर्व और समकालीन प्रबंधकर्ताओं तथा सभी विभागीय- अनुभागीय कार्यसेवियों को इस शुभ अवसर पर बधाई देता हूं।

हिमप्रस्थ की साठ वर्षों की यात्रा एक पर्वतीय गरुड़ का कामयाब सफ़रनामा है। इस दौरान न जाने कितने अद्‌भुत आसमान खंडों से गुज़री है यह सुदीर्घ और मेधावी यात्रा।

9/ए, पूजा हाउस बिल्डिंग सोसायटी
सन्दल हिल्स, कामनानगर (लोअर चक्कर), शिमला-171005,
दूरभाष : 0177 2633272



आलेख

स्वतंत्रता से पूर्व हिमाचली हिंदी कवि और राष्ट्रीय एकता के स्वर

● डॉ. प्रत्यूष गुलेरी

हिमाचल प्रदेश हिमालय की तराई में स्थित प्राकृतिक सौंदर्य से भरपूर प्रदेश है। आदिकाल में वैदिक ऋषि-मुनियों की तपःस्थली और वैदिक आर्यों की निवास भूमि भी यह प्रदेश रहा है। सृष्टि का आदि पुरुष मनु मनवालय यानी मनाली में रहता था। वशिष्ठ, व्यास और भृगु ऋषि के आश्रम यहां आज भी मौजूद हैं।[1] इतना भर कहने का आशय यह है कि हिमाचल प्रदेश एक प्रागैतिहासिक प्रदेश है जिसका मानव जाति की परम्परा में महत्त्वपूर्ण स्थान है। यह प्रदेश जम्मू-कश्मीर, लद्दाख, पंजाब, हरियाणा तथा उत्तर प्रदेश राज्यों से घिरा है। शिमला, सोलन, धर्मशाला, कांगड़ा, नाहन-रेणुका, रामपुर डलहौजी, हमीरपुर, ऊना, मण्डी और कुल्लू-मनाली इस प्रदेश के मुख्य नगरों में गिने जाते हैं। रावी, चिनाव, व्यास, सतलुज, यमुना और गिरि-पब्बर प्रदेश की मुख्य नदियां हैं।

15 अप्रैल 1948 को 30 पहाड़ी रियासतों के विलय के पश्चात हिमाचल प्रदेश अस्तित्व में आया। अंग्रेजीकाल में ये रियासतें पंजाब हिल स्टेटस तथा शिमला हिल स्टेटस में बंटी थी। 1 नवम्बर 1966 को भाषायी आधार पर प्रांतों का पुनर्गठन हुआ तो पंजाब का पहाड़ी भाषी क्षेत्र जिसमें कुल्लू, कांगड़ा, लाहुल-स्पीति, नालागढ़ तथा ऊना मिलाकर इसका क्षेत्रफल और जनसंख्या दुगुनी हो गई। किन्नौर और लाहुल-स्पीति जिलों की भाषा भारत-तिब्बत परिवार की है जबकि शेष दस जिलों के समस्त क्षेत्र में हिमाचली भाषा बोली जाती है जो भारतीय आर्य भाषा परिवार से संबध रखती है। इसके क्षेत्र को इसकी बालियों के संदर्भ में देखा जाना चाहिए।[2] हिमाचली भाषा ने भी अन्य भारतीय भाषाओं के लोक साहित्य से शिष्ट साहित्यिक यात्रा की है, उस पर यहां कहना समुचित नहीं। हमारा अभिप्राय यहां हिमाचली हिन्दी भाषा के काव्य में राष्ट्रीय एकता के स्वर तलाशने का है। स्वतंत्रता से पूर्व के हिमाचली काव्य में दो ऐसे अमर रचनाकार हुए हैं जिनकी कविता में राष्ट्रीय एकता के स्वर तीव्रता से मुखर हुए हैं। इनमें पहले हिमाचली भाषा के कवि 'पहाड़ी गांधी' बाबा कांशी राम और दूसरे हिंदी के सुप्रसिद्ध कथाकार 'उसने कहा था' के लेखक श्री चन्द्रधर शर्मा गुलेरी'। बहुत कम हिन्दी साहित्य के पाठकों और अध्ययन करने वाले साहित्यकारों को मालूम होगा कि गुलेरी जी ने भी प्रारंभिक दौर में पहले कविता ही लिखी और उनकी इस कविता में भारतेंदु युग के राष्ट्रीय कवियों की भान्ति राष्ट्रीय चेतना का स्वर उजागर है।

कालक्रमानुसार इनसे पूर्व 11 जुलाई, 1882 को जन्में बाबा कांशी राम पहाड़ी गांधी स्वतंत्रता सेनानी के साथ गायक और एक संगीतज्ञ भी थे। सरोजनी नायडू ने उन्हें 'बुल बुल-ए-पहाड़' की उपाधि दी तथा 1937 में गढ़दिवाला की राजनैतिक सभा में पंडित जवाहर लाल नेहरू ने उन्हें 'पहाड़ी गांधी' का नाम दिया था। पहाड़ी गांधी ने अपने जीवनकाल में तीन सौ से अधिक कविताएं और हिमाचली गीत लिखे हैं। पहाड़ की जनता में गांव-गांव घूम कर अपने देशभक्ति के गीतों से युवकों जागृति का संदेश दिया था। देश से अंग्रेजी हुकूमत को उखाड़ फेंकने का शंखनाद किया था। इनकी जिंदगी का अधिकतर भाग जेलों में बीता। जेलों में गीत कविताएं रचते और जेल से छूटने पर उन्हें हिमाचली पहाड़ी जनता में सुनाते। हिमाचल में उस समय लोग इन्हें 'स्याहपोश जरनैल' के नाम से भी पुकारते रहे। इन्होंने तब तक काले कपड़े पहने रखने का संकल्प उठाया था जब तक कि देश आज़ाद नहीं हो जाता। पर देश की स्वतंत्रता से सिर्फ चार वर्ष पूर्व 15 अक्तूबर 1943 में इनका निधन हो गया।

इनकी कविता का वर्ण्य विषय प्रमुख रूप से देश भक्ति, राष्ट्रगान, अछूतोद्धार-धर्माडम्बरों का पर्दाफाश करना रहा। पहाड़ के लागों को स्वतंत्रता संग्राम हेतु तैयार करने के उददे्श्य से बाबा कांशी राम ने अपने रचे गीत कविताएं गांव-गांव जाकर सुनाए। अपनी-अपनी कुलदेवी को मत्था टेक कर उन्होंने इन्कलाव बुलाया। लिखतें है-

हुण मन्नो ग्लाया कांशी दा
डर रखो नां तुसां फांसी दा
असां लैणा सुराज झट लोको
फिरी बस्सी तां कांगड़ा देस जाणा ।[3]

राष्ट्रीय प्रेम भावना से उद्‌भूत कांशीराम की कवित्व शक्ति सीमाओं का अतिक्रमण कर त्याग और देश सेवा के अगाध प्रेम सिंधु में विलीन हो गई। अपना सर्वस्व देश को समर्पित कर दिया। उन्होंने देश के नागरिकों से कहा मैं तो कई बार जेल जा आया। जेल जाना इज्जत की बात है, देश के लिए स्वागत का द्वार है-

मैं तां कई बार जेल जाई आया
तां पैगाम सुणायां
जिंदा लाज नी लाणी
इक्को बार जन्मणा असां
बाबे दी लाज रखणी
देस बड़ा ऐ कौम बड़ी ऐ
कुल्जा मत्था टेकी कन्नै
इन्कलाब बोलणा, ओ कांशी
फिरी जेल जाणा।

वह देश की बहनों और युवतियों को आजादी की लड़ाई लड़ने के लिए प्रेरित करते हुए एक अन्य कविता में लिखते हैं- मुझसे यह मत पूछो मैं कौन हैं और घराना कौन सा है। अब तो सारा हिन्दोस्तान ही मेरा घर है। भारत माता मेरी मां है। वह मां अंग्रेजों ने कैद कर रखी है। उसे दुशमन की जंजीरों से मुक्त कराना है। कवितांश द्रष्टव्य है-

एह् मत पुछ मेरिए भैह्णे
मैं कुण, कुण घराना है मेरा
सारा हिन्दुस्तान ऐ मेरा
भारत मां है माता मेरी
ओ जंजीरा जकड़ी है
ओ अंग्रेजा पकड़ी है
कांशी उसजो आजाद कराणा है
मुड़ी-मुड़ी जेल जाणा है। (पहाड़ी गांधी बाबा कांशीराम/शमी शर्मा)

उन्होंने स्वप्न लिया कि वह दिन कब आएगा जिस दिन स्वतंत्र देश भारत का झंडा लहराएगा। अंग्रेजों ने जितने जुलम हम पर किए हमने भी उतना रंग जमा कर दिखा दिया। खून से रंगी कुर्बानियां देकर यह तिरंगा कांशी हम किस दिन लहराएगें। कवि ने इच्छा जाहिर की है कि उसके मरने पर उसके अंग-अंग का टुकड़ा आसमान में फेंक दिया जाए ताकि मेरे देश के उड़ने वाले पक्षियों की भूख मिट जाए। मैं तब भी खुश रहूंगा। कवि कांशी राम पहाड़ी गांधी की कविता लोकरंग में रंगी और भाव-संप्रेषणीयता में अव्वल दर्जे की है। उन्होंने जो लिखा जीवन में उसे करके दिखाया। अटक जेल की कहानी में स्वतंत्रता सेनानियों को किस तरह संताप देते रहे अंग्रेजी शासक, उसका शब्द चित्र हिन्दुस्तानी भाषा में इस तरह करते हैं-

जेल अटक का हाल सुनाते हैं
जिससे हम अभी-अभी आते हैं
जहां सिंधु का किनारा था
वही हाल तुम्हे बताते हैं
कच्ची रोटी हमें खिलाते हैं
पानी सी दाल बनाते हैं
टाट वर्दी पहनाई जाती है
ला हथकड़ी खड़ा करते हैं
भाजी में चमड़ा डाला जी
इक दाल में चूहा निकाला जी
जब दिन सर्दी के आते हैं
हमें ठंडे पानी से नहलाते हैं
हम पर जुल्म कमाते हैं
कांशी यह हाल सुनाते हैं। (पहाड़ी गांधी बाबा कांशीराम/शमी शर्मा)

स्वतंत्रता से पूर्व की इस कविता में जन-जागरण और राष्ट्रीय एकता के स्वरों की अधिक गूंज है। वह युवाओं को अपनी जवानी देश के नाम होम करने की बात करते हैं। उन्होंने संदेश दिया कि देश पर मर मिट कर ही आजादी मिलने वाली है। यह एक तरह से वीर कौम तैयार करने की बात थी। कवितांश देखे-

कुस कम तेरा रंग रूप
कुस कम तेरी जवानी
कुस कम तेरा इल्म हुनर
कुस कम ते बलवानी
मरी नैं देश दी खातिर तू
लब्बै नहीं आज़ादी। (पहाड़ी गांधी बाबा कांशीराम/शमी शर्मा)

हिन्दी साहित्य के द्विवेदी युग में 7 जुलाई 1883 को जन्में अमर कथाकार चन्द्रधर शर्मा गुलेरी जी ने कहानियों से पहले कविताएं भी लिखी हैं, ये हिमाचल प्रदेश के पहले हिन्दी कवि हैं जिन्होंने राष्ट्रीय एकता, स्वतंत्रता संघर्ष और देश प्रेम की भावना से ओतप्रोत कविताएं लिखी हैं। ये कविताएं शायद ही हिन्दी जगत के सामने आती, अगर डॉ. पीयूष गुलेरी ने उन पर शोध कार्य न किया होता। ये कविताएं उनकी प्रसिद्ध कहानी 'उसने कहा था' के सामने नजर अंदाज की जाती रहीं। हालांकि ये कविताएं संख्या में इतनी अधिक नहीं है फिर भी गुलेरी जी का राष्ट्र प्रेम, देशभक्ति और अंग्रेजी सत्ता के प्रति विद्रोह की भावना इनमें सहज ही देखी जाने योग्य है।

गुलेरी जी की इन कविताओं में स्वदेश और स्वदेशी की भावना

अधिक उजागर हुई है। भारतीयों के मन में ब्रिटिश साम्राज्य के प्रति जो गुस्सा और ग्लानि के भाव भरे थे उन्हें उजागर करने के लिए गुलेरी जी ने निंदापूर्ण और व्यंग्यात्मक शैली का प्रश्रय लिया है। भारतीयों के मन से हीन भावना हटाने और देश के गौरवपूर्ण इतिहास को उनके समुख रखकर राष्ट्रीय एकता को सुदृढ़ करने के लिए उन्होंने दमदार कविताएं रचीं हैं। रूस पर जापान की शानदार विजय का उदाहरण देकर एशिया की विजयदशमी कविता में भारतीयों को भी देश की स्वतंत्रता पर प्राण न्योछावर करने के लिए प्रेरित किया है। वह लिखते हैं-

प्राचीन लोग, विजया दिन में बतावें
सीमा उलांघ अपनी, रिपुधाम जावें
जो शत्रु पास नहिं, रिपु चित्र ही को
संग्राम में हत करै, बलबुद्धि जो हो।

गुलेरी जी की कविता में एक ओर भारत के प्राचीन गौरव की झलक-अनुराग है तो दूसरी ओर रूढ़िगत परंपराओं-सामाजिक कुरीतियों के प्रति आक्रोश की भावना है।[4] इस तरह वह हिन्दी के हिमाचल प्रदेश में ऐसे पहले राष्ट्रीय कवि बन जाते हैं जिनकी कविता राष्ट्र प्रेम से ओतप्रोत है और राष्ट्रीय एकता का जयघोष भी करती है। भारत की जय कविता में अखंड भारत का गुणगान करते देशवासियों से धर्म और सम्प्रदाय से ऊपर उठकर मिलकर भारत के नव-निमार्ण की बात करते हैं। एकता के सूत्र में बंध जाने की दूरदृष्टि का संदेश देते हैं। विभिन्नता और विविधता में भी गुलेरी जी ने एक राष्ट्र, एक देश-सर्वधर्म एकता के भाव को भारतवासियों के सम्मुख इस तरह से रखा है-

मिलो सर्व भारत संतान
एक तान-तन प्राण
गाओ भारत का यशोगान।
भारत भूमि तुल्य नहिं कोई स्थान
नहिं गिरि हिमाद्रि समान
फलवती बसुमती पुण्यवती
शतखंड रत्न का निधान।
क्या भय? क्या भय?
गाओ भारत की जय।

लगता है गुलेरी जी ने स्वामी विवेकानंद का मंत्र गांठ बांध रखा था-'उठो, जागो, गंतव्य को प्राप्त करो।' योगी अरविंद का संदेश था- 'राष्ट्रवाद एक ईश्वरीय धर्म है, राष्ट्र ईश्वर है।' गुलेरी जी भी मानते थे-सभी धर्मों के लोग भारत के पुत्र हैं। परस्पर मित्र हैं। क्या हिन्दू, जैन, सिख, बौद्ध और मुसलमान सब चित में एक मनुष्य की मानें। सब मिल कर भारत भूमि का कल्याण करें- उद्धार करें। निर्भय होकर दुश्मन की सब कुचालों को विफल कर दें। एकता ही तुम्हें बल देने वाली है। भारत मुख को उज्ज्वलता प्रदान करो-

हिन्दु, जैन, सिख, बौद्ध, मुसलमान
पारसी, सहूदी और ब्राह्म
भारत के सब पुत्र, परस्पर रहो मित्र
रखो चित्ते गणना समान।
उठो, उठो, कर उत्साह, मांगो सुख प्रभु हाथ
कर धरि कर लो उद्धार।
क्यों डरो भीरू? करी साहस आश्रय
यतो धर्मस्ततो जयः
छिन्न-भिन्न हीनबल, ऐक्य से पाओगे बल
माता सुख उज्ज्वल करो, कौन भय?[5]

समालोचक के नवम्बर-दिसम्बर, 1905 में प्रकाशित देश प्रेम एक अन्य कविता 'झुकी कमान' में गुलेरी जी ने व्योमवाणी के माध्यम से स्वातंत्र्य चेतना जगाने और जन्म भूमि को माता के समान आदर-सम्मान देने का आग्रह तो किया ही है साथ गुलामी की बेड़ियों को काटने के लिए एक तान से इकट्ठा होने का बीज मंत्र भी भारतीयों को दिया है। जो भी भारतवासी जिस कार्य में लगा है वह व्योमवाणी सुनते उसे छोड़ कर स्वदेश को स्वातंत्र्य दिलाने की खातिर एकजुटता का प्रमाण दें। स्वतंत्रता स्वर्ग से भी कई गुणा अधिक सुख देने वाली है-

'माता! रोको न निज पुत्र आज
संग्राम का स्वाद(मोद), उसे चखाओ
तलवार-भाले भगिनी! उठा ला
उत्साह भाई निज को दिलाओ
तू सुंदरी! ले प्रिय से विदाई
स्वदेश मांगे उनकी सहाई।'
आगे गई धनुष के संग व्योमवाणी
है सत्य ही विजय, निश्चय बात जानी
'है जन्म भूमि जिनकी जननी समान
स्वातंत्र्य है प्रिय जिन्हें शुभ स्वर्ग से भी
अन्याय की जकड़ती कटु बेड़ियों को
विद्वान वे कब समीप निवास देंगे।'

(गुलेरी रचना संचयन)

हिमाचल प्रदेश में आजादी से पूर्व की हिमाचली हिन्दी कविता में जिस राष्ट्रीय एकता के स्वर इन दो कवियों में प्रमुखता से मिलते हैं वह राष्ट्रीय धारा अगले दो-तीन दशक ही नहीं, वर्तमान की हिमाचली कविता में भी प्रबलता से प्रवाहमान है।

कीर्ति कुसुम, सरस्वती नगर ,डाकघर दाड़ी, धर्मशाला, हिमाचल प्रदेश-176057, मो. 94181 21253

1. कुलूत देश की कहानी/लाल चन्द प्रार्थी
2. हिमाचली/ मौलूराम ठाकुर/साहित्य अकादेमी/पृ.13
3. पहाड़ी गान्धी बाबा कांशी राम पृ. 6/डॉ. शमी शर्मा
4. गुलेरी रचना संचयन/प्रत्यूष गुलेरी-पीयूष गुलेरी/ साहित्य अकादेमी पृ. 28
5. गुलेरी रचना संचयन/प्रत्यूष गुलेरी-पीयूष गुलेरी/ साहित्य अकादेमी पृ. 30

आलेख

लाहुल : हिन्दू और बौद्ध परम्परा का समवाय

● तुलसी रमण

दुर्गम पहाड़ों के मध्य लाहुल का यह छोटा भू-खंड, अनेक जातियों के लोगों ने अतीत की अनगिनत सदियों में, न जाने कहाँ-कहाँ से आकर बसाया है। इनमें मोटे तौर पर आर्य और मंगोल चेहरे नाक, आँख आदि से आज भी स्पष्ट पहचाने जा सकते हैं। उनमें भी छोटे कुनबों या कबीलों के स्तर पर भिन्नता साफ झलकती है। ऐसी स्थिति में उन सबके परम्परागत जातीय विश्वासों, धारणाओं, आदर्शों, कर्मकांडों और धार्मिक मान्यताओं आदि का अनोखा मिश्रण होना स्वाभाविक है। यही कारण है कि प्रारंभिक जड़ात्मवाद (ऐनिमिज़्म) से लेकर बहुदेववाद और बहुधार्मिक सम्प्रदायों तक के अनेक तत्त्वों के मध्य पारस्परिक सम्बन्ध दृष्टिगोचर होते हैं। आज के लाहुल में प्रमुखतया प्रचलित हिन्दू और बौद्ध धार्मिक परम्पराओं में भी कुछ ऐसा सम्मिश्रण हुआ है कि इनमें से किसी एक को शुद्ध रूप में अलग निकालकर रखना संभव प्रतीत नहीं होता। इसका मुख्य कारण यहाँ सदियों से चले आ रहे लोकधर्म में ढला जनजातीय स्वभाव है। यही तथाकथित लोकधर्म या जनजातीय आस्था आज की हिन्दू और बौद्ध परम्पराओं को भी किसी न किसी स्तर पर परस्पर जोड़े हुए है। यहाँ के अधिकांश हिन्दू-बौद्ध लोकाचारों में आदिम प्रथाओं का समावेश आज भी देखने को मिलता है। इस तरह समाज में लोकाचारों के मिश्रण की रीति सदियों से बनी रही, तभी यहाँ के हिन्दू तथा बौद्ध अनुयायियों में पारस्परिक मेल-जोल, सहकार और सहिष्णुता आज भी है। इसी सद्भाव के फलस्वरूप इन दोनों समुदायों के समाज-व्यवहार में भी सम्मिश्रण दिखाई देता है।

वर्तमान लाहुल की धार्मिक मान्यताओं को लेकर विचार करते हुए मोटे तौर से बौद्ध और हिन्दू धर्म का ही उल्लेख किया जाता है और इनकी पृष्ठभूमि में लाहुल के आदिम धर्म की चर्चा 'लुङ्पई छोए' यानी क्षेत्रीय धर्म के नाम से होती है। वास्तव में 'लुङ्पई छोए' नाम का कोई ऐसा मान्य धर्म नहीं रहा, जिसका अपना कोई निश्चित मत या सिंद्धात हो। लाहुल के संदर्भ में इस शब्द का प्रयोग सबसे पहले मोरेवियन मिशन के डॉ. ए.एच.फ्रेंके ने किया था। तब वह तिब्बत के पुरातत्त्व पर शोध कर रहा था। उसने यह शब्द लिखित में लाया और उसके बाद हारकोट ने अपनी पुस्तक 'कुल्लू, लाहुल एंड स्पीति' में इसका इस्तेमाल किया। तदनंतर हर किसी ने बिना विचारे इस शब्द का प्रयोग एक धर्म के रूप में ज़ारी रखा। फ्रेंके ने इस 'लुंङपई छोए' शब्द का अनुवाद 'घाटी का धर्म' के अर्थ में किया था। यह बात समझ में आती है कि यदि उसने स्वयं इस शब्द को नहीं गढ़ा तो किसी बौद्ध ने इसे, यहाँ पहले से बसे गैर-बौद्धों के लोकाचार के लिए कहा होगा। संभवत: कुछ पीढ़ियों तक इस अर्थ में इसका इस्तेमाल होता रहा होगा, तभी इसे फ्रेंके ने सुना और अपनी पुस्तक में इसका प्रयोग कर लिया।[1]

दरअसल लोक में जिस तरह से अनेक मुहावरों और कहावतों का बनना और प्रयोग होना व्यवहार में देखा जाता है, उसी तरह अनेक पारिभाषिक शब्द भी अस्तित्व में आते हैं। ये शब्द सामाजिक व सांस्कृतिक भावों की अभिव्यक्ति के साधन बनकर भाषा में अपना विशेष स्थान बना लेते हैं। 'लुङ्पई छोए' भी इसी तरह का समाज स्वीकृत शब्द प्रतीत होता है, जो लाहुल के स्थानिक लोकधर्म यानी विशेष लोकाचार के लिए व्यवहार में आकर पारिभाषिक शब्द बन गया लगता है। समाज की प्रवृत्तियों का औसत निकालने पर जो प्रमुख मान निर्धारित होता है वही लोकधर्म कहलाता है। तभी फ्रेंके ने इसे लपककर 'स्थानिक धर्म' के संदर्भ में इस्तेमाल किया और एक व्यापक क्षेत्रीय भाव का बोधक यह शब्द व्यवहार में चल निकला तो बिना किसी निश्चित मत या सिद्धांत के ही धर्म कहलाने लगा। वैसे भी भोटी के शब्द लुङ्पा=क्षेत्र और छोए=धर्म को मिलाकर 'लुङ्पई छोए' का हिन्दी अनुवाद 'क्षेत्रीय धर्म' ही बनता है, जो लाहुल के संदर्भ में प्रयुक्त होने पर इस घाटी के लोकधर्म का लक्ष्यार्थ देता है।

इस शब्द के व्यावहारिक पक्ष को देखते हुए यह बात सामने आती है कि लाहुल के आदिम समाज में नरबलि, पशुबलि आदि की जो प्रथाएँ अस्तित्व में रहीं और वृक्षों, पहाड़ों, चट्टानों आदि

की पूजा के जो लोकानुष्ठान होते रहे, उन सबको मिलाकर ही लोकाचार का अर्थबोधक यह 'लुङ्पई छोए' शब्द प्रचलन में आया होगा। लेकिन यहाँ यह बात भी उल्लेखनीय है कि भले ही इस 'स्थानिक धर्म' का, अन्य मान्यता प्राप्त धर्मों की तरह, कोई मत या सिद्धांत न रहा हो, मगर उस आदिम लोकाचार की जड़ें लाहुल के जनजातीय जीवन में इतनी गहरी धँसी हैं कि आज बौद्ध और हिन्दू धर्म के प्रसार के रहते भी वह पुरातन लोकाचार या लोकधर्म निर्मूल नहीं हो सका है। बल्कि व्यवहार को देखते हुए एक बात यह भी समझ में आती है कि लाहुल में हिन्दू और बौद्ध धर्मों के सामाजिक आचार-व्यवहार में जो अनूठा समवाय दृष्टिगोचर होता है वह इस 'लुङ्पई छोए' के ज़मीनी आधार के कारण भी है।

प्रायः यह देखने में आता है कि लाहुल निवासी जब किसी हिन्दू या बौद्ध पूजा-स्थल, उत्सव या अनुष्ठान आदि में भाग लेने या किसी भी महत्त्वपूर्ण कार्य या यात्रा आदि के लिए घर से निकलते हैं तो अपने घर या गाँव में कहीं भी स्थापित मान्यता वाले कुलदेव, गृहदेव, ग्रामदेव, क्षेत्रपाल आदि का ध्यान करना नहीं भूलते। इस तरह 'लुङ्पई छोए' वास्तव में ऐसा आदि धर्म या लोकाचार है, जो आज तक किसी न किसी रूप में बना हुआ है। इस तथाकथित धर्म की सबसे बड़ी सुविधा यह है कि इसके लिए किसी विशाल व भव्य मठ या मंदिर की ज़रूरत कभी नहीं रही। इस धर्म के देवी-देवता, राक्षस या भूत-प्रेत, सभी समान भाव से किसी पेड़, पत्थर, पर्वत-शिखर, जलस्रोत या अलग से दिखाई देनेवाले झाड़-झंखाड़ में भी निवास कर लेते हैं।

दरअसल लोक में जिस तरह से अनेक मुहावरों और कहावतों का बनना और प्रयोग होना व्यवहार में देखा जाता है, उसी तरह अनेक पारिभाषिक शब्द भी अस्तित्व में आते हैं। ये शब्द सामाजिक व सांस्कृतिक भावों की अभिव्यक्ति के साधन बनकर भाषा में अपना विशेष स्थान बना लेते हैं। 'लुङ्पई छोए' भी इसी तरह का समाज स्वीकृत शब्द प्रतीत होता है, जो लाहुल के स्थानिक लोकधर्म यानी विशेष लोकाचार के लिए व्यवहार में आकर पारिभाषिक शब्द बन गया लगता है। समाज की प्रवृत्तियों का औसत निकालने पर जो प्रमुख मान निर्धारित होता है वही लोकधर्म कहलाता है।

इस 'लुङ्पई छोए' की व्याख्या करते हुए लाहुली विद्वान रामनाथ साहनी ने लिखा है कि वास्तव में यह 'लुङ्पई छोए' बुरी तरह विकृत शैव-शाक्त मत और तंत्र विद्या का सम्मिश्रण रहा है, जिसके अंतर्गत नागों, अर्द्धदेवों और वैयक्तिक देवताओं की पूजा होती है। इसमें कोई विशेष पूजा-स्थल न होने का कारण यह है कि शिव को आमतौर पर एकांत या आश्रमवासी माना जाता है, जिसे किसी घर-बार की ज़रुरत नहीं होती। 'शिव पुराण' के अनुसार शिव की रूप और अरूप दोनों तरह से मान्यता है।[2] इसलिए शिव की पूजा खुले में या किसी छोटे देहरे में लिंग, त्रिशूल या प्रस्तर पिंडी आदि के रूप में होती है। इसी तरह काली, जोगणी या दुर्गा के रूप में रोहतांग व कुंजम जैसे शिखरों पर शक्ति निवास करती है। यह शक्ति-पूजा भी लोक व्यवहार में है। कभी किसी वृक्ष, चट्टान या स्थान विशेष में भी जोगणियों या सावणियों आदि की मान्यता होती है। इस तरह शिव-शक्ति और इनके इर्द-गिर्द रहने वाले अनेक लोक देवताओं की मान्यता लाहुल के विभिन्न गाँवों में परम्परा से रही है।

लाहुल की देव परम्परा में हिन्दू और बौद्ध देवी-देवताओं का अनूठा समवाय देखने को मिलता है। आज की राजनीति धार्मिक भावनाओं को भुनाने में सक्रिय है। इस दृष्टि से धार्मिक सम्प्रदायों के आधार पर जन-समुदायों को बाँटकर भी राजनीतिक लाभ उठाया जाता है। धार्मिक सद्भाव या समरसता के उद्घोष के पार्श्व में धार्मिक -साम्प्रदायिक विद्वेष फैलाकर समाज को बाँटा जाता रहा है। इस तरह के व्यापक समाज-राजनीतिक परिदृश्य के रहते हुए भी लाहुल के कुछ प्रमुख देवस्थल आज भी हिन्दू-बौद्ध एकता के जीवंत प्रतीक बने हुए हैं। इनमें पट्टन घाटी के तुंदे गाँव का 'त्रिलोकनाथ' और उदयपुर का 'मृकुला देवी' मंदिर प्रमुख हैं। इस संदर्भ में मान्यता यह भी है कि बौद्ध मत का महायान सम्प्रदाय भारतीय संस्कृति की मूल धारा में प्रवृत्त हुआ तो इसमें अवतारवाद और मूर्ति पूजा को मान्यता मिल गई। इसी के परिणाम स्वरूप इस देश में कुछ ऐसे धर्म-स्थल अस्तित्व में आए जो हिन्दुओं और बौद्धों के साँझे तीर्थ बन गए। पट्टन घाटी के ये दोनों देव-स्थल इसी परम्परा में गिने जा सकते हैं। इन मंदिरों की धार्मिक मान्यताओं, लोक कलाओं और लोकोत्सवों आदि में बिना किसी भेदभाव के समग्र समाज सम्मिलित रहता है।

त्रिलोकनाथ

लाहुल की पट्टन घाटी के तुंदे गाँव (ऊँचाई 2760 मी.) का प्राचीन मंदिर बोधिसत्व अवलोकितेश्वर और त्रिलोकनाथ शिव का साँझा पूजा-स्थल माना जाता है। वास्तव में किसी भी पूजा-स्थल का विवेचन उसके श्रद्धालुओं की भावना के दृष्टिगत होता है। त्रिलोकनाथ के मंदिर में बोधिसत्व की प्रतिमा को हिन्दू मतावलंबी शिव मानकर अर्चना करते हैं और बौद्ध मत के लोग अवलोकितेश्वर के रूप में उसकी पूजा करते हैं। इस मंदिर के वास्तुशिल्प और परिसर की पुरा-वस्तुओं में भी दोनों परम्पराओं का समवाय देखा जा सकता है। अवलोकितेश्वर को पद्मपाणि भी कहा गया है। हिन्दू परम्परा में जो स्थान पद्मनाभ

विष्णु का है, बौद्धों में वही स्थान पद्मपाणि अवलोकितेश्वर का है। भगवान शिव और विष्णु में अभिन्नता की जो अवधारणा हिन्दू मत में 'हरिहर' की उपासना पद्धति से स्थापित हुई है, वही आदर्श समन्वय लाहुल में त्रिलोकनाथ शिव और बोधिसत्व अवलोकितेश्वर की साँझी उपासना से साक्षात् हुआ है। नेपाल में तो भगवान बुद्ध को शिव के अवतार के रूप में मान्यता प्राप्त है, जबकि भारत में इन्हें भगवान विष्णु का नौवाँ अवतार मानते हैं।[3]

तुंदे गाँव में इस मंदिर की स्थापना को लेकर एक लोककथा भी है और इसी प्रसंग पर एक लोकगीत भी प्रचलन में है, जिसे 'भ्यार का गीत' कहा जाता है। वास्तव में यह 'भ्यार' बौद्ध 'विहार' का ही अपभ्रंश शब्द प्रतीत होता है। लेकिन लोकगीत में 'भ्यार' शब्द नहीं है, धवल प्रतिमा का उल्लेख है। इस लोकवार्ता के अनुसार तुंदे गाँव के राणा के ग्वाले को सात जलधाराओं से निकलते सात सुंदर देवदूत दिखाई दिए; जो उसकी गायों का दूध पी लेते थे। आख्यान शैली में लम्बे विवरण के अंत में ग्वाला एक देवदूत को उठाकर घर लाना चाहता है। उस देवदूत ने शर्त रखी कि कोई भी आवाज़ सुनकर पीछे मत देखना, वरना तुम्हारी यह कामना पूरी नहीं होगी। ग्वाले ने अंततः पीछे देख लिया और वे दोनों प्रस्तर की धवल मूर्तियों के रूप में परिवर्तित हो गए। सुंदर मूर्तियों को देखकर रानी गदगद हो गई और राणा ने उनके लिए तुंदे में मंदिर बनवाया। उसमें मूर्तियाँ स्थापित की गईं और उनकी पूजा होने लगी। इसी उपक्रम में मेला मनाया गया, जो आज तक आयोजित होता है।

देवताओं की स्थापना और मंदिर निर्माण के प्रसंगों में, देवशक्ति द्वारा गाय का दूध पीने और गाय द्वारा मूत्र करने की जगह देव-प्रतिमा मिलने के असंख्य किस्से, देवभूमि कुल्लू की लोकवार्ता में मिलते हैं। यह एक आम चलन है और लोक में इसी तरह से मिथक रूप लेते हैं। 'भ्यार' का यह गीत राणा की शान और मेले के वर्णन के उद्देश्य से किसी दरबारी लोक कवि द्वारा बाद में रचा गया प्रतीत होता है। यह कथा भी राणा व रानी से जोड़कर बाद में कल्पित की गई होगी।

इसी त्रिलोकनाथ मंदिर को लेकर बाद में बौद्ध समुदाय की ओर से तथ्यात्मक दावे के साथ नहीं, बल्कि अनुमान के आधार पर, यह भी कहा जाने लगा कि जब पद्मसंभव तिब्बत जाते हुए लाहुल से गुज़रे तो त्रिलोकनाथ और गुरु-घंटाल इन दोनों पूजा-स्थलों की स्थापना उन्होंने की। लेकिन दूसरी ओर इस बात के साक्ष्य तो हैं कि आचार्य शांतरक्षित और पद्मसंभव की ज्ञान-परम्परा के बौद्ध-स्थल लाहुल में स्थापित हुए; मगर इस बात का प्रमाण पद्मसंभव की जीवनी में भी नहीं मिलता कि उस तांत्रिक बौद्ध आचार्य ने स्वयं लाहुल जाकर मठों की स्थापना करवाई। त्रिलोकनाथ और गुरु-घंटाल के धर्मस्थलों की वास्तुशैली और निर्माण संयोजन से भी यह प्रतीत होता है कि ये दोनों देवगृह तिब्बती बौद्ध परम्परा के न होकर, उससे पूर्व की भारतीय परम्परा में निर्मित हुए हैं। इसीलिए ये दोनों धर्मस्थल स्थापत्य व लोक मान्यताओं के आधार पर तिब्बती परम्परा के गोन्पाओं से अलग दिखाई देते हैं।

कला समीक्षक किशोरी लाल वैद्य का कहना है कि चम्बा रियासत के किसी शासक द्वारा पारम्परिक शिखर शैली के अंतर्गत त्रिलोकनाथ मंदिर का निर्माण युक्ति संगत लगता है। इस मंदिर का गर्भगृह और सभा-मंडप न्यूनाधिक उसी शैली के परिचायक हैं, जिसके अंतर्गत चम्बा, कुल्लू, मंडी आदि में शिव मंदिरों के निर्माण की लंबी एवं समृद्ध परम्परा रही है। सातवीं शती में चम्बा के शासक मेरू वर्मन ने कुल्लू के राजा दत्तेश्वर पाल को युद्ध में परास्त कर चंद्रभागा घाटी के बड़े भाग (थिरोटनाला से लेकर रौली गाँव तक) पर अपना आधिपत्य स्थापित कर लिया था। मंदिर स्थापत्य शिखर शैली का द्योतक हो अथवा काष्ठ कला (छतराड़ी, भरमौर और उदयपुर स्थित काष्ठ मंदिर) का संवाहक; त्रिलोकनाथ और उदयपुर के मंदिर मूलतः हिन्दू मंदिर हैं; लेकिन कालांतर में इनके कुछ अंश बौद्ध धर्म, संस्कृति एवं कला के प्रभाव से भी अछूते नहीं हैं।[4]

एक मत यह भी है कि ईसवी सन् की दूसरी या तीसरी सदी के आसपास देश के दक्षिण प्रांतों में लकुलीश सम्प्रदाय का बहुत प्रचार रहा है और कालांतर में वही सम्प्रदाय पाशुपत सिद्धांत की एक शाखा बन गया था। कतिपय पुराविदों का कहना है कि त्रिलोकनाथ के विहार की शैली से प्रतीत होता है कि आरंभ में यह विहार लकुलीश सम्प्रदाय का मंदिर रहा हो, जिसे बाद में बौद्ध विहार का रूप दे दिया गया होगा। विहार के बाह्य स्वरूप को देखकर यह भले ही लकुलीश या शिव मंदिर जैसा प्रतीत होता है, परन्तु इसके प्रवेश द्वार के शिखर मध्य पर उत्कीर्ण बोधिसत्वों की आकृतियाँ इस तथ्य को प्रमाणित करती हैं कि यह आरंभ से ही बौद्धों का पूजा-स्थल रहा है।[5]

त्रिलोकनाथ मंदिर का पुजारी अब भी बौद्ध लामा है, जबकि मंदिर संस्था का मुखिया स्थानीय राणा है। आरती के समय यहाँ हिन्दू मंदिरों की तरह ढोल, नगारे, रणसिंघा आदि वाद्य बजाए जाते हैं और बौद्ध विधान की पूजा के साथ बौद्ध वाद्य भी बजते हैं। त्रिलोकनाथ के पूजा गृह में घी का अखंड दीप जलता रहता है, जिसके लिए विभिन्न समुदायों के श्रद्धालु अपने घरों से घी लाते हैं। त्रिलोकनाथ में प्रति वर्ष अगस्त के महीने में 'पोरी' मेला आयोजित किया जाता है। उस दिन त्रिलोकनाथ की प्रतिमा को दूध से नहलाया जाता है।

लोकवाद्यों की धुनों के साथ मंदिर की परिक्रमा की जाती है। इस शोभायात्रा में मंदिर का अश्व भी चलता है। यह शोभायात्रा राणा के आवास तक पहुँचती है तो राणा पारम्परिक सज-धज के साथ उस घोड़े पर सवार होकर मेला देखने आता है। सामने

के एक मकान पर बैठकर राणा सपरिवार 'पोरी' मेला देखता है और स्वयं भी जनता को दर्शन देता है।

देवता और सामंत के एक साथ दर्शन से ही हिमाचल के अनेक मेले परम्परा का निर्वाह करते हैं। इसलिए 'पोरी' मेले का यह सारा उपक्रम सामंती दौर में स्थापित हुआ प्रतीत होता है। त्रिलोकनाथ के दर्शन और इस मेले में भाग लेने के लिए पूरे लाहुल के अतिरिक्त लद्दाख, तिब्बत, स्पीति, जंस्कर, कुल्लू, चम्बा आदि से भी हज़ारों लोग आते रहे हैं। छेरिंग दोरजे के अनुसार कुल्लू के लोग यदि त्रिलोकनाथ के दर्शन की इच्छा व्यक्त कर दें तो मान्यता है कि बारह वर्षों तक त्रिलोकनाथ प्रतीक्षा करता है। इसलिए बारह वर्षों की अवधि में यह इच्छा अवश्य पूरी की जाती है। ये लोग एक यात्रा में ही त्रिलोकनाथ की मूर्ति, वहाँ के राणा और मृकुला देवी के दर्शन करते रहे हैं। देश के विभिन्न स्थानों के श्रद्धालु इस तीर्थस्थल की यात्रा के लिए आते हैं। तिब्बत और नेपाल से भी लोग त्रिलोकनाथ के दर्शन के लिए आते रहे हैं। इस तरह हिन्दू और बौद्ध दोनों परम्पराएँ मिलकर यहाँ जनजातीय लोकोत्सव का रूप ले लेती हैं।

मृकुला देवी मंदिर

पट्टन घाटी में चंद्रभागा और मयाड़नाला के संगम पर स्थित उदयपुर में मृकुला देवी का ऐतिहासिक मंदिर है। उदयपुर गाँव का मूल नाम मरकुल था। इसी नाम से गाँव की देवी मृकुला कहलाई। अनुमानतया इस मंदिर का निर्माण काल कुछ पुराविदों ने ग्यारहवीं–बारहवीं सदी का भी माना है। लेकिन हेरमन गोएत्स ने लिखा है कि ऊपरी रावी तथा मध्य चंद्रभागा घाटियों में नैसर्गिक परिरक्षण बड़ा प्रभावशाली रहा है। परिणामतः चम्बा में अनेक ऐसे स्मारक विद्यमान हैं जो भारतीय इतिहास तथा कला सम्बन्धी कतिपय दुरूह एवं संवेदनशील अध्यायों पर प्रकाश डालते हैं। इनमें चम्बा के तीन मंदिर—भरमौर, छतराड़ी तथा मृकुला (उदयपुर) भी उल्लेखनीय हैं। सुगंधित देवदार के भारी–भरकम शहतीरों से निर्मित हिन्दू मंदिर यहाँ पर सातवीं तथा आठवीं शताब्दी के प्राचीन प्रमाण हैं। भले ही एक से अधिक बार इनका जीर्णोद्धार किया गया होगा। परन्तु बारह–तेरह सौ वर्ष पूर्व के प्रमाणों के रूप में इन काष्ठ–मंदिरों का अस्तित्व अपने आप में किसी आश्चर्य से कम नहीं।[6]

मृकुला मंदिर के गर्भगृह में महिषासुर मर्दिनी की अष्टधातु प्रतिमा स्थापित है। इस मूर्ति के आसन में टांकरी लिपि में उकेरित आलेख से मालूम होता है कि इस मूर्ति का निर्माण शास्त्र संवत् 4645 अर्थात् 1569–70 ई. में भद्रवाह निवासी पंचमाणक द्वारा किया गया था और इसे स्थानीय ठाकुर हिमपाल ने मंदिर को समर्पित किया। डॉ. फोगल ने इस आलेख का देवनागरी में रूपांतर यों किया है—

> ओं ठाकुर महश्री हीमपालन। श्री महादेवी मर्कुल उदी। पिन्नुः पुत्र–पौत्रेण सर्वकाल तिष्ठति देव श्रीयो भवति। तं म शुभकृत
>
> श्री कश्मीर यद वन्त। मार निरहण मर्कुल देवी उपनि। ओं स्वस्तिः अस्य देवती री रि मूल्या घटापने दी सहस 4645 सोमडिराष्य भद्रावकाषापुरीः पंजमाणक जीणकेन घटिता![7]

किशोरी लाल वैद्य का कथन है कि वर्तमान अवस्था में इस मंदिर का निर्माण अथवा पुनर्निर्माण चम्बा रियासत के राजा उदय सिंह (1690–1720 ई.) द्वारा 1695 ई. के आसपास हुआ माना जा सकता है। इसी वर्ष उदय सिंह ने मरकुल गाँव को अपने एक सीमांत जिले के मुख्यालय के रूप में चुनकर इसे उदयपुर नाम दिया था।[8]

मृकुला देवी मंदिर में भी हिन्दू तथा बौद्ध दोनों समुदायों के लोग पूजा–अर्चना करते हैं। हिन्दू इस प्रतिमा की पूजा महिषासुर मर्दिनी के मूर्त रूप में करते हैं, जबकि बौद्ध इसी प्रतिमा को बौद्ध तांत्रिक देवी वज्रवराही (दोरजे फ़गमो) मानकर इसकी अर्चना करते हैं। इस तरह हिन्दू–बौद्ध समुदायों का समन्वय इस मंदिर परिसर में भी देखा जा सकता है।

दरअसल इस तरह के प्रमुख कलात्मक मंदिरों के पुनर्निर्माण और मुरम्मत आदि कार्यों का सिलसिला सदियों के अंतराल में चलता रहता है और इससे सम्बन्धित कालादि के तथ्यों की लिखित सूचना उपलब्ध न होने की स्थिति में पुरावशेषों के आधार पर ही ऐतिहासिक तथ्यों का आकलन किया जाता रहा है या फिर अनुश्रुतियों के माध्यम से अनुमान लगाए गए हैं।

मृकुला देवी मंदिर में भी हिन्दू तथा बौद्ध दोनों समुदायों के लोग पूजा–अर्चना करते हैं। हिन्दू इस प्रतिमा की पूजा महिषासुर मर्दिनी के मूर्त रूप में करते हैं, जबकि बौद्ध इसी प्रतिमा को बौद्ध तांत्रिक देवी वज्रवराही (दोरजे फ़गमो) मानकर इसकी अर्चना करते हैं। इस तरह हिन्दू–बौद्ध समुदायों का समन्वय इस मंदिर परिसर में भी देखा जा सकता है। इस संदर्भ में कुछ बातें अनायास सोच में आती हैं। एक यह है कि ग्रामीण जनमानस की प्रायः यह प्रकृति और प्रवृत्ति रहती है कि वे किसी भी देव–स्थल में श्रद्धावनत होकर अर्चना कर लेते हैं। इसमें वे अपने–पराए का भेद नहीं करते। उन्हें आस्था के साथ सिर झुकाने के लिए कोई स्थान चाहिए। वे किसी भी पूजा–स्थल की अवहेलना नहीं कर सकते।

(संदर्भ सहित शेष अगले अंक में)

दयार–दुर्गा कालोनी, ढली, शिमला–171012

जालन्धर पीठ का आध्यात्मिक एवं धार्मिक महत्त्व

● अजय पाराशर

कांगड़ा जनपद की जालन्धर पीठ आदिकाल से ही आध्यात्मिक, धार्मिक, सांस्कृतिक, सामाजिक और राजनैतिक दृष्टि से चैतन्य रही है तथा उसे सनातन, पवित्र, पुण्य और सत्कर्म स्थली होने का गौरव प्राप्त है। सृष्टि के आरम्भ में दैवी तथा मानवी सृष्टि के प्रवर्तक प्रजापति कश्यप-अदिति द्वारा इस क्षेत्र में सृष्टि के विस्तार का उल्लेख मिलता है। भगवती के अनन्य उपासक, महाबली स्वर्गविजेता दैत्यराज जालन्धर ने इसी क्षेत्र में साधनलीन होकर देवी से परमपद प्राप्त किया था। जालन्धर की पत्नी, परम सती वृन्दा ने उसकी मृत्यु के उपरान्त पालमपुर के समीप वन में स्वयम् को दाहित किया था। भगवती वज्रेश्वरी ने इसी भू-भाग पर, ध्वस्त यज्ञ में भाग ले रहे देव समुदाय को अंगभंग कर, दण्डित किया था। देवी द्वारा प्रजापति दक्ष के उपक्रमित यज्ञ को कांगड़ा में ध्वस्त किये जाने के उपरान्त, शिवजी के आदेश से दक्ष ने विघ्नविनाशक गणेश की पूजा-अर्चना के पश्चात् पुनः नौ करोड़ आहुतियों की यज्ञपूर्ति से ज्वालामुखी के यज्ञकुंड में उसे सम्पूर्ण किया था।[1] कालेश्वर, दक्ष की तपःस्थली रही है। परन्तु दुर्भाग्य से काश्यप मन्दिर अब पौंग बांध की झील में जल समाधि ग्रहण कर चुका है। सती वियोग से विक्षिप्त महादेव को अपने मोहभंग के लिए इसी क्षेत्र में पराशक्ति की आराधना करनी पड़ी थी। भगवान विष्णु ने भी सतीश्राप मुक्त होने के लिए इसी क्षेत्र में तप किया था। महर्षि वशिष्ठ ने, महाभारत एवं अन्य वाङ्गमय की रचना के माध्यम से सनातन धर्म एवं संस्कृति के प्रचारक तथा पीठ वैदिक संहिताओं के तारणहार बने महर्षि वेदव्यास को, आवश्यक परा मार्गदर्शन के लिए जालन्धर पीठ में ही तपने की सलाह दी थी। पाण्डवों की इस भू-भाग से आजीवन घनिष्ठता बनी रही। इस क्षेत्र को महापराक्रमी और ज्ञानी रावण, महाबली अर्जुन, विश्वकर्मा, जमदग्नि, अंगिरस, वृहस्पति, वशिष्ठ, गायत्री महामंत्र के द्रष्टा विश्वामित्र, माण्डव्य, लोमश, अगस्त, भृंगी आदि प्राचीन वैदिक ऋषियों, बौद्ध तथा जैन सम्प्रदायों के महापुरुषों के कठोर पुरश्चरण, तप और साधन की साक्षी बनने का गौरव प्राप्त हुआ। योगी भर्तृहरि, धार्मिक, सामाजिक और राजनैतिक संविधान अर्थात् 'मनुस्मृति' के प्रणेता महाराज मनु, तंत्र साधना के प्रवर्तक मत्स्येन्द्रनाथ, गुरु गोरक्षनाथ, कश्मीरी शैव-सिद्धान्त के प्रतिष्ठापक आचार्यपाद अभिनव गुप्त के गुरु तथा तंत्रलोक के रचयिता आचार्य शम्भुनाथ, महाकालेश्वर और श्री ज्वालाजी में साधनलीन रहे जालन्धरनाथ के अतिरिक्त कई अन्य दिव्य पुरुषों ने साधना एवं विभिन्न ग्रंथों की रचना के लिए इसी शान्त, रम्य और प्रकृति के क्रोड़भूत क्षेत्र को चुना।[2]

देवी भगवती ने भले ही जलन्धर को सृष्टि का निर्माण, पालन तथा संहार करने वाले देवत्रय-ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव का अपहरण एवं निरादर करने पर, उसे उन्हीं के हाथों मारे जाने का शाप दिया था। परन्तु भगवती त्रिपुरा का अनन्य उपासक होने एवं परस्त्री को जननी के समान सम्मान दिए जाने के कारण, वह देवी का परमप्रिय भक्त था। अपनी मृत्यु से पूर्व जब उसने माता दुर्गा से अपने नौ रूपों सहित जलन्धरपीठ में निवास करने की प्रार्थना की तो देवी ने 'तथास्तु' कहते हुए उसे वर दिया कि जो भी साधक या भक्त उसके क्षेत्र में स्थित शक्तिपीठों में आकर मेरी पूजा करेगा, उसकी सभी मनोकामनाएं पूर्ण होंगी।

'जालन्धर पुराणम्' में उपलब्ध आख्यान के अनुसार भगवान शिव ने युद्धरत जालन्धर के असीम पराक्रम, शौर्य, साहस, नेतृत्व क्षमता, बलिदान, परोपकार और त्याग आदि गुणों से प्रभावित होकर, जब उसे मृत्यु से पूर्व दो वरदान मांगने के लिए कहा, तो अपने को अनुगृहीत अनुभव करते हुए जालन्धर ने रुद्र से दोनों वरदान ग्रहण किए। अपने पहले वरदान में जालन्धर ने भगवान विष्णु से उसे अपने शरीर में प्रविष्ट होने की अनुमति देने अनुग्रह किया। अपने हृदय में परोपकार की भावना कूट-कूट कर भरी होने के कारण, जालन्धर ने अपने दूसरे वरदान में शिव से अपनी देह में बारह तेजोलिंगों के साथ निवास करने की प्रार्थना की ताकि संसार के समस्त प्राणियों के योगक्षेम के पश्चात् उनके पापों का निवारण हो सके।

देवी भगवती ने भले ही जालन्धर को सृष्टि का निर्माण, पालन तथा संहार करने वाले देवत्रय-ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव का अपहरण एवं निरादर करने पर, उसे उन्हीं के हाथों मारे जाने का शाप दिया था। परन्तु भगवती त्रिपुरा का अनन्य उपासक होने एवं

परस्त्री को जननी के समान सम्मान दिए जाने के कारण, वह देवी का परमप्रिय भक्त था। अपनी मृत्यु से पूर्व जब उसने माता दुर्गा से अपने नौ रूपों सहित जालन्धरपीठ में निवास करने की प्रार्थना की तो देवी ने 'तथास्तु' कहते हुए उसे वर दिया कि जो भी साधक या भक्त उसके क्षेत्र में स्थित शक्तिपीठों में आकर मेरी पूजा करेगा, उसकी सभी मनोकामनाएं पूर्ण होंगी। जालन्धर ने देवी से प्रार्थना की कि यदि किसी साधक या भक्त के साधन या अनुष्ठान में कोई त्रुटि रहने पर, वह स्वयं उसकी पूर्ति करने की अनुकम्पा करें।

इन तीनों वरदानों से अभिभूत जालन्धर, 48 कोस के अपने परिक्रमा क्षेत्र में अपने भौतिक शरीर को विस्तार देते हुए, सम्पूर्ण सन्तुष्टि के साथ प्राणों का उत्सर्ग करते हुए, आत्मलीन होकर विष्णुधाम में निवास करने जा पहुंचा। उसे प्राप्त प्रथम वरदान के परिणामस्वरूप सम्पूर्ण जलंधरपीठ की भूमि देवभाव से विष्णुस्वरूपा मानी गई है। भगवान विष्णु पवित्रता के पर्याय हैं। अतः इस भूमि में विष्णु सम्बन्धी यज्ञ, अनुष्ठान एवं कर्म अन्य स्थानों की अपेक्षा शीघ्र सफलतापूर्वक संपूर्ण होते हैं। जलंधरपीठ या उसके शरीर पर द्वादश तेजोलिंगों की स्थापना होने से यह भूमि शिव और शक्ति के गणों से ओत-प्रोत है। ज्ञातव्य है कि जब जालन्धर युद्धभूमि में गिरा तो उसके शरीर का विस्तार 48 कोस तक जा पहुंचा और उसके प्रकम्पन्न से त्रिगर्त भूमि का समस्त भू-मंडल डोल उठा।[3]

एक अन्य आख्यान के अनुसार युद्धभूमि में जालन्धर के गिरने से हुए अति त्रीव प्रकम्पन्न से भयभीत देवताओं ने भगवान शिव से जालन्धर दैत्य को अपने तेजोलिंगों से इतना गहरा दबाने की प्रार्थना की कि वह पुनः उनके विनाश का कारण न बन सके। देवताओं की प्रार्थना पर भगवान शिव ने उसके शरीर पर लिंगों की स्थापना की, जिसके फलस्वरूप इस भूमि को शिव के अक्षय तेज से जाज्वल्यमान तेजपुंज भूमि होने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। यहां पर किए गए सभी प्रकार के रुद्र यज्ञ, याज्ञ एवं पूजा संबंधी अनुष्ठान अनायास ही फलीभूत होते हैं, क्योंकि उनके मूल में निहित शैवभूमि का तेजस्वी आशीर्वाद सदा वरदहस्त के रूप में स्वतः ही प्राप्त होता है। इस स्थान पर महारुद्र, अतिरुद्र याज्ञ करने से ब्रह्मवर्चस्व की प्राप्ति सब प्रकार के पापों का क्षय होकर हर तरह से योगक्षेम की संसिद्धि होती है।[4]

पौराणिक साहित्य में हिमालय को शिवस्वरूप माने जाने के कारण हिमाचल क्षेत्र को देवभूमि होने का गौरव प्राप्त है। हिमालय को देवात्मा की संज्ञा देते हुए, उसे देवताओं और देवाङ्गनाओं की क्रीड़ास्थली के रूप में व्याख्यात किया गया है। इसकी पवित्रता, सात्विकता और देव परम्पराओं से क्षेत्र का कण-कण आप्लावित है, जिससे यहां की लोक संस्कृति निबद्ध है। परन्तु यह सौभाग्य केवल उन्हीं व्यक्तियों को मिलता है, जो जागृत हैं अर्थात् जिनका तीसरा नेत्र खुला होता है। आदिकाल से ही यह स्थान यहां निवसित शैव, शाक्त और वैष्णव ऋषियों की धरोहर रहा है। इसीलिए इसे देवात्मा भगवान आशुतोष और आदिशक्ति का शैव-शाक्त प्रदेश होने के अतिरिक्त भगवान विष्णु के धाम की संज्ञा दी जाती है।[5]

जालन्धर पीठ की भौगोलिक परिकल्पना

पौराणिक भारत में पीठों का स्थापित विभाजन पूर्व से पश्चिमी हिमालय की ओर क्रमशः कामाख्या पीठ, कूर्वांचल पीठ, बदरी-केदार पीठ, कौलान्त पीठ, जालन्धर पीठ और शारदा पीठ है। पीठ का शाब्दिक अर्थ अधिष्ठान, टिकने या ठहरने की जगह है। अतः जालन्धर पीठ का अर्थ मुख्यतः 'जालन्धर के टिकने या ठहरने का स्थान' माना जा सकता है।[6] पद्म पुराण के एक प्रसंग में जालन्धर क्षेत्र को समुद्र कहा गया है। जालन्धर का शाब्दिक अर्थ 'जलं धारयति इति जालन्धर' है।[7] पौराणिक परम्पराओं एवं मान्यताओं के अनुसार जालन्धर राज्य की सीमा सुदूर कुल्लू से वर्तमान जालन्धर तक फैली हुई थी। यह क्षेत्र धनुषाकार में 12 योजन या लगभग 65 किलोमीटर तक फैला हुआ है।[8] वक्राकार के मध्य से बाणगंगा नदी, श्रीचामुण्डा-नन्दिकेश्वर धाम के ऊपर स्थित धौलाधार पर्वतशृंखला से बाण की आकृति में निकलती है और दक्षिण द्वार के समीप वीरेश्वर में पहुंचने के पश्चात् व्यास के आंचल में समा जाती है। अतः इसे बाणगंगा भी कहा जाता है।[9] जालन्धर पीठ के चार द्वारपाल माने जाते हैं। बैजनाथ के समीप स्थित महाकाल को पूर्व दिशा का द्वारपाल माना जाता है। पश्चिम में अवस्थित द्वारपाल करवीरेश्वर अब पौंग बांध के जलग्रहण क्षेत्र में निमग्न हो चुके हैं। दक्षिण दिशा के द्वारपाल कालेश्वर महादेव और उत्तर दिशा के द्वारपाल नन्दिकेश्वर माने गए हैं। अम्बिका, वज्रेश्वरी, जयन्ति और ज्वालामुखी को पीठ की अधिष्ठात्री देवियां माना जाता है। पीठ की दक्षिणी सीमा व्यास नदी है। कालेश्वर तीर्थ के अतिरिक्त पीठ के सभी स्थान व्यास नदी के दाईं ओर स्थित है। पीठ में कुल 360 तीर्थ हैं। पीठ की परिक्रमा या यात्रा दक्षिण में व्यास नदी के बाएं तट पर स्थित कालेश्वर महादेव से आरंभ होती है और 74 विभिन्न तीर्थों की यात्रा करने के पश्चात् वज्रेश्वरी देवी के दर्शन होते हैं। वज्रेश्वरी, जालन्धर पीठ का मुख्य स्थान या बिन्दु है। वर्णित सभी तीर्थों में स्नान करने के उपरान्त पुनः ज्वालामुखी होकर कालेश्वर महादेव में यात्रा सम्पन्न मानी जाती है।[10]

जालन्धर पीठ का आध्यात्मिक स्वरूप

पौराणिक दृष्टि से ही नहीं आध्यात्मिक या वैज्ञानिक दृष्टि से भी जालन्धर पीठ दश दिकपालों, श्रीचक्र स्वरूपा और संहार शक्तियों की प्राकृतिक परिवेष्ठन वाली भूमि की आकृति कुण्डलाकार एवं सप्त भू-वृत्तों से आवृत होने के कारण, स्वाभाविक तौर पर पृथ्वी का जालन्धर बंध बन जाती है। इस प्रदेश में प्रवाहित अन्तः और बाह्य प्राण को स्वतः ही मध्य पथ में संचारित करने की विलक्षण क्षमता है, जिससे कोई भी सदाचारी व्यक्ति यहां कुछ समय व्यतीत कर यहां नित बरसने वाले आध्यात्मिक रस और आत्मिक ऊर्जा को अनुभूत कर सकता है।[11] स्वामी विवेकानन्द अपनी

पुस्तक 'राजयोग' में अध्यात्म को भौतिक विज्ञान से इतर परिभाषित करते हुए कहते हैं कि भौतिक विज्ञान की प्रयोगशाला की तरह साधक या ऋषि अध्यात्म को अपनी शारीरिक प्रयोगशाला में निर्धारित मानकों के तहत अनुभव और सिद्ध तो कर सकता है परन्तु इसके निष्कर्षों का हर व्यक्ति की प्रकृति और संस्कारों पर निर्भर होना अध्यात्म की विशेषता है।

श्री कुमारानन्द कुलावधूत के शिष्य श्री आचार्य प्रह्लादानन्द ने स्वतः ग्रंथ 'जालन्धर-पीठ-दीपिका' में जालन्धर पीठ के यात्रा मार्ग को भौगोलिकता के आधार पर क्रमिक रूप में विकसित किया है। श्री आचार्य प्रह्लादानन्द ज्वालामुखी क्षेत्र के अष्टभुजा मन्दिर में साधनरत थे। उन्होंने पीठ में चतुष्कोण श्रीयन्त्र की परिकल्पना करते हुए श्रीयन्त्र के कोणों के समान पीठ में दक्षिणादि पूर्वान्त चार द्वारों का निश्चय किया है। पीठ की धनुषाकार परिकल्पना का श्रीयंत्र से सामंजस्य बिठाने हेतु शोभानाथ, गंगेश और वैद्यनाथ को पीठ रेखा से बहिर्भूत किया गया है। लेकिन लोकमान्यता को सम्मानित करने के लिए शोभानाथ और वैद्यनाथ की स्तुति से श्रद्धा भी प्रकट की गई है। उन्होंने शक्ति के पौराणिक स्वरूपों को मान्यता देकर उसके यौगिक स्वरूप को ही अधिमान दिया है। यात्रापथ को कुण्डलाकार सर्पिणी, जलेबी तथा कुण्डलिनी का आकार देते हुए उस मान्यता को स्थापित करने का प्रयास किया है, जिसमें इस पथ द्वारा यात्रा करने से साधक की कुण्डलिनी शक्ति जाग्रत होने से आध्यात्मिक यात्रा का मार्ग प्रशस्त होता है। अपनी इस रचना में वह 141 देवस्थानों का वर्णन करते हुए कहते हैं कि इस विहित यात्रा के लिए लगभग 68 दिनों का समय अपेक्षित है। परन्तु यह यात्रा-काल निर्धारण आज से करीब 160 वर्ष पूर्व किया गया था और तब परिवहन साधनों का विकास न के बराबर था। उन्होंने अपनी रचना में किस स्थान पर कितना समय व्यतीत करना है, भी निर्देशित किया है। लेकिन विभिन्न क्षेत्रों में हुए विकास के कारण यात्रा-मार्ग भी बदल गए हैं। बदली भौगोलिक परिस्थितियों के कारण कई देवस्थानों के नाम भी शेष नहीं रहे हैं।

जालन्धर पीठ का आकार चक्राकार माना गया है। अपनी इस चक्रमयी विशेषता के कारण यह भूमि शिवशक्तिमयी अथवा साम्ब-सदाशिव है। ध्यातव्य है कि श्री चक्रपराम्बा ललिता स्वरूप होने से चिदग्रिस्वरूपा हैं। अपने इन तमाम गुणों के कारण जालन्धर क्षेत्र सभी सत्कर्मों को तत्काल सम्पूर्णता प्रदान करने की क्षमता रखता है। भुक्ति और मुक्ति दोनों ही दृष्टियों से सक्षम इस क्षेत्र की अर्हता के चलते शास्त्रों में इसकी स्तुति की गई है। यह क्षेत्र सकाम और निष्काम भक्तों के लिए महत्त्व रखता है।[12]

इस भूमि के कवलीकृत होने से इसकी प्रकृति कुण्डलिनी स्वरूपा हो जाती है। इसे तीनों ही लोकों अर्थात् भू, भुवः और स्वलोक वस्तुतः पृथ्वी, अन्तरिक्ष और परेव्योमनि भुवनों के गुणात्मक अनुभव की खान होने के कारण, साधकों ने इसे दुर्लभ कहा है। अपने कुण्डलिनी आकार के चलते यह सर्वमंत्रस्वरूपिणी है। यहां सभी मंत्र अतिशीघ्र सिद्ध होकर फल देते हैं। अपनी इसी विशेषता के चलते आकार में लघु होते हुए भी यह क्षेत्र असंख्य देवी-देवताओं के मन्दिरों तथा साधनालयों का गढ़ रहा है।[13]

महाकाली, महालक्ष्मी, बगुलामुखी, चामुण्डा, महिषमर्दिनी आदि देवी के सभी रूपों की गहन योग साधना द्वारा उपलब्ध यौगिकशक्ति को ही शक्तितत्व के रूप में मान्यता दी गई है। परा सत्ता भगवती कुण्डलिनी अर्थात् प्राण शक्ति जागृत होकर जैसे-जैसे षट्चक्र भेदन करती जाती है, उसी अनुपात में यौगिक शक्ति के उपार्जन से साधक काम, क्रोध, लोभ, मोह आदि समस्त विकारों पर विजय प्राप्त करता जाता है।[14]

कुण्डलिनी रूप इस यात्रापथ की परिकल्पित स्थान-सारिणी के अनुसार साधक के 1. कालेश्वर से कलोहा के रास्ते देहरा, 2. देहरा से खटयाड़ी, 3. खटयाड़ी से धमेटा, फतेहपुर होकर त्रिलोकनाथ, 4. त्रिलोकनाथ से चड़ी के रास्ते धर्मशाला, 5. धर्मशाला से योल होकर चामुण्डा, 6. चामुण्डा से पालमपुर, 7. पालमपुर से बैजनाथ, 8. बैजनाथ से पुनः पालमपुर होकर थुरल, 9. थुरल से कुंजद्वार, 10. कुंजद्वार से सुजानपुर, 11. सुजानपुर से नादौन, 12. नादौन से चामुक्खा, 13. चामुक्खा से नादौन के रास्ते ज्वालामुखी, 14. ज्वालामुखी से रानीताल-दौलतपुर, 15. दौलतपुर से बड़ोह, 16. बड़ोह से पुनः रानीताल होकर बनखंडी, 17. बनखंडी से हरिपुर गुलेर, 18. गुलेर से नगरोटा-सूरियां, 19. नगरोटा से लंज होकर समीरपुर (गग्गल), 20. गग्गल से बगुली (गंगभैरव), अंजनी, कन्यादेवी तथा मच्छराल होकर संगमेश तथा 21. जयन्ती के रास्ते कांगड़ा (पैदल मार्ग) तथा 22. कांगड़ा से पुनः ज्वालामुखी और अन्त में पुनः कालेश्वर पहुंचने पर सम्पन्न मानी जाती है। श्री पृथुराम शास्त्री ने अपनी पुस्तक 'जालन्धर-पीठ-दीपिका' में इस यात्रा में देहरा से खटियाड़ी के लिए जल मार्ग और गुलेर से नगरोटा-सूरियां के लिए रेल मार्ग द्वारा पहुंचने का उल्लेख किया है। उन्होंने आदिकाल से चली आ रही इस परिक्रमा या यात्रा को वर्तमान में उपलब्ध सुविधाओं के मुताबिक सम्पन्न करने का वर्णन किया है। कालानुसार उपलब्ध परिवहन सुविधाओं के अनुसार यात्रा का माध्यम कोई भी हो सकता है लेकिन तीर्थों के धार्मिक महत्त्वानुसार परिक्रमा का चक्र यही रहना चाहिए ताकि यात्रापथ कुण्डलिनी स्वरूप बना रहे।

कालेश्वर महादेव से आरंभ होने वाली इस परिक्रमा के दौरान यात्री, भक्त या साधक जिन तीर्थों में पहुंचता है उनमें शालेश्वर या थलेसर, क्रोडेश्वर (देहरा-बाड़ी स्थित घोंडा महादेव), पौंग बांध में जलमग्न काश्यपेश (कासब जख), नरयाणा में जलमग्न नृहरि, करवीरेश्वर (कारुए दा वण), रत्नावली (रतनौती) नदी, जलमग्न वास्त्वीश (बाथू जख), किंमनस्क-मनोनाथ (कतनौर), त्रिलोकनाथ

(कोटला के समीप), चण्डिकापाद (चौंडा), शोभानाथ, गंगेश्वर, नन्दिकेश्वर, श्रीचामुण्डा, नगरी और गोपालपुर के मध्य वन में स्थित भतृहरि योगी स्थान, अलहिलाल और पपरोला के मध्य स्थित पल्लिकेश्वर, तुम्बिकेश्वर (त्रियम्बकेश्वर), तारिणी, आशापुरी, वैद्यनाथ या बैजनाथ, सिद्धेश्वर, क्षीरेश, गौरी, शीतला, महाकाल, पपरोला स्थित सावित्री, वेणुगंगा या बिनवा संगम, श्मशान, महाकालीपद, शवकुण्ड, मधुमती, लुटकेश्वर, शिवपुर, कुंजद्वार, बालकरूपी, न्युगल, सुजानपुर स्थित व्यासेश्वर, बिल्वकेश, लवणेश्वर, नादौन स्थित जयश्रीदेवी, चामुक्खा या चमुक्खा, देवी तालाब, मणिकर्णिका, वीरेश, बुधेश्वर, अष्टादशभुजा, सरस्वती, नागार्जुन, अम्बिकेश्वर, कपिस्थल, वारुणी नदी, अन्जनी, हनुमान, अप्सरा कुण्ड, शूलपाणेश्वर, क्षीरगंगा, गौरीकुण्ड, सूर्यकुण्ड, ज्वालामुखी, लतेश, गोरखनाथ, बड़ोह स्थित बटेश्वर, सुधाकुण्ड, पंचानन, पिप्पलेश, बगलामुखी, वनेश्वर, वाणी नदी, शिवतीर्थ, लक्ष्मीनारायण, विष्णुतीर्थ, माधवेश, बालादेवी, अष्टादशभुजा, ततवाणी, तप्तेश्वर, नागस्थान, केदारेश, समीरपुर स्थित भद्रकाली, इच्छी स्थित गंगभैरव, मसरेहड़ और योल के मध्य स्थित अंजनीदेवी, नगरोटा बगवां के समक्ष पहाड़ी पर स्थित कन्यादेवी, कन्यादेवी और नगरोटा बगवां के मध्य स्थित केदारेश, गणपति, मत्येन्द्र (मछराल), पाताल-बाणगंगा संगम, संगमेश, यतीशान, जयन्ती माता, चक्रकुण्ड, कालीस्तोत्र, सूर्यकुण्ड, कुण्डलेश्वर, वायुदेव क्षेत्र, नैमिषक्षेत्र, राम-सीताकुण्ड, गया, प्रयाग, वीरभद्र, कुरुक्षेत्र, वृद्धकेदार, अर्जुनेश, पातालगंगा, बाणेश्वर, सिंहेश्वर, लुटकेश, भुवनेश, सरस्वती, चामुण्डा, पार्श्वनाथ (आदिनाथ), नागार्जुन, अम्बिका, भैरव, लक्ष्मीनारायण, कर्पूर सागर, इन्द्रेश्वर, कपाली भैरव, वज्रेश्वरी, ज्वालामुखी और अन्त में पुनः कालेश्वर हैं। यह परिक्रमा या यात्रा सम्पन्न कालेश्वर से आरंभ होकर कालेश्वर में ही सम्पूर्ण मानी जाती है।[15] लेकिन श्री आचार्य प्रह्लादानन्द कृत 'जालन्धर-पीठ दीपिका' में वर्णित तमाम तीर्थ अपनी प्राचीनता या काल के आधार पर तर्कसंगत प्रतीत नहीं होते क्योंकि कुछ तीर्थ तो जालन्धर-देव युद्ध काल और इस दौरान त्रिदेव-भगवान ब्रह्मा, विष्णु और शिव के वृन्दा शापित होने तथा श्राप के प्रभाव से मुक्ति पाने के लिए देवत्रय द्वारा जालन्धर पीठ क्षेत्र में सघन तपस्या के परिणामस्वरूप तथा कालान्तर में इसी शाप के चलते सती द्वारा अपने पिता दक्ष प्रजापति के यज्ञकुण्ड में स्वयं को दाहित किए जाने एवं विभिन्न स्थानों पर गिरे उनके अंगों पर विकसित मन्दिर तो उस युग के माने जा सकते हैं, परन्तु कई स्थल कालान्तर में विकसित हुए प्रतीत होते हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि इन मन्दिरों या स्थलों के जालन्धर पीठ में अवस्थित होने के कारण उनके महत्त्व में बढ़ोतरी करने के उद्देश्य से, लेखक ने उन्हें अति प्राचीन दर्शाने के लिए अपनी पुस्तक में इस धार्मिक यात्रा या परिक्रमा के साथ जोड़ दिया होगा। उदाहरण के लिए कांगड़ा स्थित पार्श्वनाथ एवं नागार्जुन मन्दिर। कालान्तर में इसी तरह कई अन्य स्थान भी सम्बन्धित सम्प्रदायों या अनुयायियों द्वारा इसी तरह अपने सम्प्रदाय के योगक्षेम या प्रसिद्धि के लिए पीठ के साथ जोड़ दिए गए। भारतीय इतिहास की सबसे बड़ी विडम्बना है कि प्राचीन काल से ही इतिहास और धर्म को एक-साथ जोड़ दिए जाने के कारण ऐतिहासिक घटनाओं एवं काल की तार्किक तथा पक्षपातमुक्त व्याख्या, विवेचन, विश्लेषण, आकलन और निर्धारण किसी भी युग में संभव नहीं हो पाया। विदेशी शासन के बाद स्वातंत्र्योत्तर भारत में भी इस प्रक्रिया और दृष्टिकोण में कोई विशेष अन्तर नहीं आया। घटनाओं की व्याख्या में गल्प जोड़ दिए जाने के कारण, काल-निर्धारण में सही समय बताने और घटनाओं की निरपेक्ष व्याख्या के स्थान पर एक बार की बात है, प्राचीन समय की बात है या बहुत समय पहले की बात है, आदि से काम चलाने और इतिहासकारों द्वारा अपने तुच्छ उद्देश्यों की पूर्ति में लगे रहने के कारण किसी भी युग में घटनाओं की न्यायपूर्ण एवं तार्किक व्याख्या कभी संभव नहीं हो पाई। कई मर्तबा तो एक ही धार्मिक- आध्यात्मिक घटना या ऐतिहासिक घटना को भी, विभिन्न स्थानों पर विभिन्न पात्रों के साथ थोड़े-बहुत अन्तर या वृद्धि के साथ जोड़ने से इतिहास पर पड़ी धूल को हटाने में मुश्किल का सामना करना पड़ता है। परन्तु जालन्धर पीठ एवं त्रिगर्त प्रदेश के धार्मिक तथा आध्यात्मिक महत्त्व को दर्शाते चाहे कितने भी अस्पष्ट या भ्रांतिपूर्ण आख्यान या सन्दर्भ उपलब्ध हों, इनकी पौराणिकता एवं ऐतिहासिकता पर कोई सन्देह नहीं किया जा सकता। पुराणों में जालन्धर पीठ माहात्मय का महत्त्व एवं श्रेष्ठता आज भी बरकरार है। जालन्धर पीठ की समस्त भूमि आदिकाल से ही विभिन्न आम्नाय, विचार, आचार, मंत्र और उपासना पद्धतियों की साक्षी रही है। धर्म की प्रबलतम समन्वय साधना के कारण यह पीठ और भी महत्त्वपूर्ण हो जाती है क्योंकि यहां शैव, शाक्त, वैष्णव, सौर एवं गाणपत्य मतों और उपासना पद्धतियों का बड़ी ही उदार मनोभूमि के स्तर पर समन्वय हुआ है।

जलन्धर पीठ का आकार चक्राकार माना गया है। अपनी इस चक्रमयी विशेषता के कारण यह भूमि शिवशक्तिमयी अथवा साम्ब-सदाशिव है। ध्यातव्य है कि श्री चक्रपराम्बा ललिता स्वरूप होने से चिदग्निस्वरूपा हैं। अपने इन तमाम गुणों के कारण जलन्धर क्षेत्र सभी सत्कर्मों को तत्काल सम्पूर्णता प्रदान करने की क्षमता रखता है। भुक्ति और मुक्ति दोनों ही दृष्टियों से सक्षम इस क्षेत्र की अर्हता के चलते शास्त्रों में इसकी स्तुति की गई है। यह क्षेत्र सकाम और निष्काम भक्तों के लिए महत्त्व रखता है।

(संदर्भ सहित शेष अगले अंक में)

उप निदेशक, क्षेत्रीय कार्यालय, सूचना एवं जन सम्पर्क, धर्मशाला

हिमप्रस्थ के धरोहर पन्नों से

प्रस्तुत अंक के इस भाग में साठ वर्षों के दौरान हिमप्रस्थ में प्रकाशित देश के सम्मानित लेखकों व रचनाकारों की रचनाओं और अन्य रुचिकर सामग्री में से चुनिंदा लेख दिए जा रहे हैं ताकि पाठकों को पत्रिका की इस अबाध यात्रा से रू-ब-रू करवाया जा सके।

कुछ स्मृतियां

● **डॉ. यशवन्त सिंह परमार**

पंडित जवाहर लाल नेहरू को हमसे जुदा हुए काफी अर्सा हो चुका है। इस अर्सा में भारत में बहुत कुछ हुआ है। कई तबदीलियां आई हैं। लेकिन पंडित जी की न मिटने वाली याद आज भी हर देशवासी के दिल में ताजा है। जिस्मानी तौर पर तो वह आज हमारे बीच नहीं हैं, लेकिन भारत की जिन्दगी का कोई भी अंग ऐसा नहीं जिस पर उनकी आलीशान शख्सीयता की छाप मौजूद नहीं हो। हमारा सियासी जीवन, सामाजिक और सांस्कृतिक गतिविधियां और आर्थिक ढांचा, सब पर उनका अमिट प्रभाव है। उनका बताया हुआ रास्ता आज भी हमारे लिए मशअलेराह है और जवाहर-ज्योति भारत के लिए अमर है। लेकिन आज के दिन मैं उनकी सार्वजनिक शख्सीयत के बारे में ज्यादा न कहता हुआ कुछ उन निजी लमहात का जिक्र करूंगा जो कि मैंने स्वर्गीय पंडित जी के साथ गुजारे हैं और जो मेरा एक ज़ाती सरमाया है, जिनसे मुझे हमेशा प्रेरणा और उत्साह प्राप्त होते हैं।



उस वक्त की बात है जब हिमाचल पार्ट 'सी' स्टेट था। मुझे उस वक्त भी हिमाचल के मुख्यमंत्री होने का सौभाग्य प्राप्त था। मेरे खिलाफ हमारे उस वक्त के लेफ्टीनैन्ट गवर्नर और इन्सपैक्टर-जनरल, पुलिस ने इन्तजामिया मामलात के बारे में कुछ शिकायत स्वर्गीय पंडित नेहरू से की थी। पंडित जी उस वक्त मशोबरा के पास 'रिट्रीट' में ठहरे थे। उन्होंने मुझे वहां उन शिकायात के बारे में पूछने के लिए बुलाया था। पंडित जी ने कुछ नाराजगी का इज़हार करते हुए कहा कि हाल ही में उन्होंने एक बड़े राज्य के मुख्यमंत्री को इसलिए कुर्सी छोड़ने को कहा कि वो अपना काम तसल्लीबख्श तरीके से नहीं कर रहे थे।

मैंने जवाब दिया- "पंडित जी, जहां मैं भारत को एक महान और समृद्ध देश बनाने की आपकी दूरदर्शी नीति का बहुत प्रशंसक हूं वहां हिमाचल को ऊंचा उठाने का मेरा भी एक ख्वाब है जिसको मैं सारे स्वार्थ छोड़कर साकार बनाना चाहता हूं, अगर आप यह महसूस करते हैं कि मैं उस पे ठीक ढंग से काम नहीं कर रहा हूं और मैंने कहीं गलती की है तो मैं इसी वक्त अपना इस्तीफा पेश करने को तैयार हूं।"

पंडित जी लगभग एक मिनट तक मेरी तरफ देखते रहे। उनकी नाराजगी की बाढ़ उतरती हुई नज़र आने लगी। वो बिलकुल बदल गए। गुस्सा शांत हुआ। फिर वो ऊंची आवाज़ में बोले- "तुम बुजदिल हो परमार! तुम अपने फर्ज से भागना चाहते हो?" मैंने जवाब दिया- "पंडित जी, मैं फर्ज से भाग नहीं रहा हूं। लेकिन अगर यह महसूस किया जाता है कि मैं अपने इस ओहदे के अहल नहीं हूं तो मुझे इस पर रहना नहीं चाहिए। आप किसी और को मुख्यमंत्री नामज़द कर दीजिए।"

इसके बाद उनके तौरो-तेवर में मुकम्मल तबदीली आ गई। अब उनके लबो-लहजा में एक पिदराना शफ़क़त थी। उन्होंने मुझे कुछ बहुत कीमती सुझाव दिए जोकि ताजिन्दगी मेरी मूल्यवान निधि रहेंगे। मैं इस मीटिंग से एक नई शक्ति और नया उत्साह प्राप्त करके लौटा।

उन्हीं दिनों की बात है कि हमारे लेफ्टीनेंट गवर्नर पंडित जी के साथ सुबह का नाश्ता कर रहे थे। श्रीमती इंदिरा गांधी प्लेटों को इधर-उधर रख रही थीं। तो पंडित जी ने हंसते हुए कहा, "जनरल साहब! इन्दु डा. परमार की अच्छी दोस्त है। वह शायद जानना चाहेगी कि यहां उनके बारे में क्या बात हो रही है।" और मुस्करा दिए।

पंडित जी को पहाड़ों से बहुत प्यार था और पहाड़ों के बारे में ज़ज़्बाती हो जाया करते थे। सन् 1953-54 में मुझे दिल्ली जाने का इत्तफाक हुआ। पंडित जी ने डिनर पर कुछ विदेशी राजदूतों को बुला रखा था। मैं भी उस डिनर में मौजूद था। उन्होंने मेरा तार्रूफ सफीरों से कराते हुए मेरी तरफ इशारा करके कहा, "मेरे पहाड़ी राज्य के मुख्यमंत्री से मिलीए।" उनका लबों-लहजा उस वक्त बड़ी शान और गर्व से भरा हुआ था। इससे सारे माहौल में नई ताज़गी सी आ गई थी।

पंडित जी को जाहिरी शान व शौकत से चिढ़ थी। इन्तजामियां मामलात में वो सजावट-बनावट की जगह असली काम पर जोर देते थे। उन दिनों की बात है जब मैं कन्सटीट्यूएण्ट असैम्बली का मैम्बर था। पार्ट 'सी' स्टेट बिल जेरे-गौर था। हम लोग इस बात के लिए जद्दो-जहद कर रहे थे कि हिमाचल में चीफ-कमिश्नर की बजाय लेफ्टीनेंट गवर्नर हो। मैंने उनसे अर्ज की कि हमारे यहां छोटी-छोटी रियासतें थीं और लोगों के दिल में हुकूमत का अब भी एक प्रतीक कायम है और उनके ज़ज़्बात उस स्थान पर एक लेफ्टीनेंट गवर्नर को देखना चाहेंगे। पंडित जी ने झल्ला कर कहा, "मैं यह लाव-लश्कर, शानो-शौकत पसन्द नहीं करता कि ए.डी.सी. हो, मिलिटरी सेक्रेटरी हो, यह हो, वो हो। यह सब क्या है? मेरी समझ में यह सब कुछ नहीं आता।"

मैंने गुजारिश की कि पंडित जी हम तो एक प्रतीक मात्र चाहते हैं। लाव-लश्कर नहीं। हम को ए.डी.सी. नहीं चाहिए, मिलिटरी सेक्रेटरी नहीं चाहिए। मगर चीफ़ कमिश्नर के बजाय लेफ्टीनेंट गवर्नर का नाम चाहिए। इस पर पंडित जी शान्त हो गए और मुस्कुरा कर कहा, "अच्छा, यह मैं देख लूंगा।"

सोशलिज्म में पंडित जी का अटल विश्वास था। इसकी कई मिसालें उनके जीवन में मिलती हैं। मैं 1952 में जब अपने पहले मंत्रिमंडल की तश्कील के लिए उनके पास गया तो मैंने उसमें जात और जमायत के संतुलन का खयाल रखते हुए एक शख्स को मंत्रिमंडल में न लेने का सुझाव दिया क्योंकि वो एक खास जात से ताल्लुक रखता था। इस पर पंडित जी झल्ला उठे और उन्होंने गुस्से में आकर कहा, "मैं जात-पात की बात नहीं जानता? यह बिलकुल फिजूल और गलत नजरिया है।" इस पर मैंने अर्ज की कि, "पंडित जी, वो तो गैर-हाजिर मालिक है और मुजारों से ही अपना काम करवाते हैं।" यह सुनते ही पंडित जी बिलकुल बदल गए और उनका गुस्सा शांत हो गया और फरमाया कि ऐसी सूरत में उनको नहीं लेना चाहिए।

पंडित जी को कई बार गुस्सा आ जाता था। लेकिन अगर कोई उनको पूरी तरह से सुनकर अपना नज़रिया ठीक तरह से उनके सामने पेश कर सकता था तो वो बड़े ध्यान से सुना करते थे और अगर उस बात में माकूल दलायल हों तो वो मान जाया करते थे। उनका गुस्सा ठंडा हो जाता था और मुख्तलिफ इनसान नज़र आने लगते थे।

हिमाचल से पंडित जी को खास दिलचस्पी थी। राज्य-पुनर्गठन-कमीशन के वक्त की बात है। अभी कमीशन ने सरकार को अपनी रिपोर्ट पेश नहीं की थी। लेकिन मुझे एक दोस्त के जरिए मालूम हुआ कि कमीशन ने यह फैसला किया है कि हिमाचल को पंजाब में मदगम कर दिया जाए। मैं इस बात से बहुत बेचैन था। मैंने एकदम पंडित जी को खत लिखा कि हमारा भविष्य उन लोगों के हाथ में नहीं सौंपा जा सकता जो चाहे कितने ही अक्लमंद हों लेकिन जो हमारी भावनाओं और आशाओं का खयाल न करते हुए हमें पंजाब में मिलाने की सिफारिश करें। मैंने यह भी लिखा था कि हम सारा मामला आपके हाथों में छोड़ते हैं और हमें आपका फैसला मंजूर होगा। एकदम जवाब आया-

"तुम शायद ज्यादा जानते हो। कमीशन ने अभी तक कोई ऐसी सिफारिश नहीं की। मेरा तो खयाल है कि पुनर्गठन का ज्यादा प्रभाव दक्षिण भारत पर होगा और उत्तरी भारत पर इसका असर कुछ ज्यादा नहीं होगा।"

जब पुनर्गठन का फैसला हो गया और हिमाचल अपने प्रजातांत्रीय ढांचे की कुरबानी देकर एक अलग इकाई बना रह गया तो मुख्यमंत्री को लिखे जाने वाले अपने पाक्षिक खत में पंडित जी ने लिखा था- "मैं कुछ राज्यों की विस्तार की नीति को बहुत बुरा समझता हूं।" -और उन्होंने इस बात की तरफ ध्यान दिलाया कि हिमाचल भी इस नीति का शिकार होने जा रहा था और उसे लोगों की मर्जी के खिलाफ पड़ोसी बड़े राज्य में मिलाने की कोशिश की गई। जब हिमाचल को केंद्र-प्रशासित क्षेत्र बना दिया गया तो हमने इसमें प्रजातंत्र वापिस लाने की जद्दो-जहद शुरू की। पंडित जी के सामने अपनी मांग पेश करते हुए मैंने कहा- "जनाब! अमरीका में तो 1879 में ही छोटे-छोटे केंद्र प्रशासित इलाकों में दो सदनों वाला प्रजातांत्रीय ढांचा दे दिया गया था। तो क्या आप जैसा प्रजातंत्र-प्रेमी जिसकी तरफ सारा संसार आंखें लगाए है, हिमाचल जैसे बड़े केंद्र-प्रशासित इलाके में विधान सभा नहीं दे सकेगा।

जब हिमाचल को केंद्र-प्रशासित क्षेत्र बना दिया गया तो हमने इसमें प्रजातंत्र वापिस लाने की जद्दो-जहद शुरू की। पंडित जी के सामने अपनी मांग पेश करते हुए मैंने कहा- "जनाब! अमरीका में तो 1879 में ही छोटे-छोटे केंद्र प्रशासित इलाकों में दो सदनों वाला प्रजातांत्रीय ढांचा दे दिया गया था। तो क्या आप जैसा प्रजातंत्र-प्रेमी जिसकी तरफ सारा संसार आंखें लगाए है, हिमाचल जैसे बड़े केंद्र- प्रशासित इलाके में विधान सभा नहीं दे सकेगा। **पंडित जी मुस्कुराए और उन्होंने मज़ाक में कहा, "क्या आप मेरे गृह मंत्री को भी हिला सकेंगे?"**

पंडित जी मुस्कुराए और उन्होंने मज़ाक में कहा, "क्या आप मेरे गृह मंत्री को भी हिला सकेंगे?" -उनका इशारा स्वर्गीय पंडित गोविन्द बल्लभ पंत की तरफ था जिनका शरीर अंग्रेज सरकार की लाठियों की वजह से हिलता रहता था। मैंने जवाब दिया, "पंडित जी, हम जानते हैं कि आपके लिए पंत जी जैसे मजबूत इरादे वाले होम मिनिस्टर की ख्वाहिशात के खिलाफ कोई फैसला लेना मुश्किल होगा। लेकिन हम उन्हें नरम करने की कोशिश कर रहे हैं।" इस पर पंडित जी मुस्कुरा दिए।

पंडित जी को अंतर्राष्ट्रीय मर्यादाएं बहुत अजीत थीं। चीनी हमले से पहले मैंने अपने तिब्बत सीमा के दौरे के बाद पंडित जी से गुजारिश की कि अगर वो इजाजत दें तो हम दस हजार मुरब्बा मील तिब्बती इलाके को बगैर किसी किस्म की केंद्रीय सहायता के अपने साथ मिला सकते हैं क्योंकि यहां के लोगों ने हमारे साथ मिलने की ख्वाहिशात का इज़हार बाहमी दोस्तों के जरिए किया है। यह सुनते ही पंडित जी गुस्से में अपने आपे से बाहर हो गए और उन्होंने कहा, "यह तो हमलावरों की नीति है और पंचशील के खिलाफ है। हम पड़ोसी के इलाके पर आंख नहीं जमा सकते।" मुझे एक लंबी झाड़ और लेक्चर सुनना पड़ा।

एक और बात मुझे उसी सिलसिले में याद आती है। चीन का भारत पर हमला हो चुका था और मैं एक दोस्त की तरफ से वार-फंड में इमदाद के लिए पंडित जी को सोना भेंट कर रहा था। उस वक्त मैंने गुजारिश की, "पंडित जी,एक सीमा-चौकी जिस पर बार्डर-पुलिस तैनात है वहां फौजी दस्ता तैनात करने का हुक्म दिया जाए।" इस पर पंडित जी ने खीझकर जोर से कहा, "हर आदमी फौज मांग रहा है। क्या लोग बुजदिल हो गए हैं? हमारे पास और फौज नहीं है?" मैंने मुआफी मांगते हुए कहा, "मुझे अफसोस है कि मैंने इस मामला का जिक्र छेड़ा। दरअसल वह सीमा-चौकी बहुत छोटी-सी है और अगर हमने किसी तरह से आपको इसके लिए परेशान किया तो हम निहायत शर्मिंदा हैं। हम खुद अपनी सीमा की हिफ़ाजत का इंतजाम करेंगे।"

घर पहुंचने के थोड़ी देर बाद मुझे पंडित जी का एक खत मिला जिसमें बताया गया था कि हालात बहुत मुश्किल हैं और हमें हर मामला पर राष्ट्रीय दृष्टिकोण से देखना है, हमें जरूरत से ज्यादा घबराना नहीं चाहिए, सीमा की सुरक्षा का पूरा ध्यान रखा जा रहा है।"

ये 'और कुछ और' यादें आज मेरे सामने उभरती हैं। ऐसा लगता है कि वो आज भी उसी तरह मुस्कुरा रहे हैं, नाराज हो रहे हैं, आदेश दे रहे हैं, उनकी महान शख्सीयत आज भी हमें रास्ता दिखा रही है। उनकी स्मृतियां अर्मा है। उनका हमारा जिंदगी के हर पहलू पर इतना प्रभाव है कि ऐसा महसूस ही नहीं होता कि वे हमसे जुदा हैं।

(हिमप्रस्थ, जून, 1975 के अंक में प्रकाशित)

ग़ज़ल

सब्र की सीमा

● शबाब ललित



अर्ज़ियां सब फाईलों में खो गईं
राह तक कर उम्मीदें सो गईं।

जो खिलाती थीं सुमन मधु प्रीत के
वे हवायें कैसे कान्टे बो गईं।

प्रीत सागर का किसे साहिल मिला
कश्तियां अकसर भंवर में खो गईं।

मेरे खैमों की तनाबें तोड़ कर
आंधियां आराम से फिर सो गईं।

हम सफर बिछुड़े हैं कितने मार्ग में
जाने किस किस को यह आंखें रो गईं।

इक न इक रावण उन्हें हर ले गया
सब्र की सीमा से बाहर जो गईं।

वह समन्दर सा बदन याद आ गया
मछलियां फिर तन में ज़िन्दा हो गईं।

शहर के मेले से लौटीं लड़कियां
जाने फिर किन रास्तों में खो गईं।

वह मुलाकातें भी कैसी थीं 'शबाब'
मेरी आंखों में जो आंसू बो गईं।

(हिमप्रस्थ, सितम्बर-अक्तूबर, 1985)

हिमप्रस्थ के धरोहर पन्नों से

हिमप्रस्थ के शुरुआती दौर में हिमाचल प्रदेश के दुर्गम और जनजातीय क्षेत्रों को लेकर पत्रिका में पं. राहुल सांकृत्यायन की एक लम्बी धारावाहिक शृंखला प्रकाशित हुई थी। इससे हिमप्रस्थ को देशभर के साहित्य जगत में एक नई पहचान मिली। उनकी इसी शृंखला में से प्रस्तुत है एक लेख।

हिमाचल प्रदेश प्रागैतिहासिक किन्नर

● राहुल सांकृत्यायन

कनौर किन्नर देश है। किन्नर के लिए किंपुरुष शब्द भी संस्कृत में प्रयुक्त होता है, अतः इसी का नाम किंपुरुष देश या किंपुरुषवर्ष भी था। किन्नर या किंपुरुष देवताओं की एक योनि मानी जाती थी, किंतु उससे इतिहास के जानने में कोई सहायता नहीं मिलती। यदि किन्नर का शब्दार्थ बुरा आदमी ले लें, तो अपने शत्रु के लिए ऐसे शब्दों का प्रयोग हुआ ही करता था। ऐसा नाम आर्यों की भाषा में होने से यह काम उन्हीं का हो सकता है। किन्नर को आजकल आसपास वाले कन्नौरा कहते हैं। पहले कन्नौर या किन्नर का क्षेत्र बहुत विस्तृत था। कश्मीर से पूर्व नेपाल तक प्रायः सारा ही पश्चिमी हिमालय तो निश्चित ही किन्नर जातियों का निवास था, चंद्रभागा (चनाब) नदी के तट पर आज कहीं कनौरी भाषा नहीं बोली जाती, किंतु 'सुत्तपिटक' के 'विमानवत्थु' में ईसापूर्व द्वितीय सदी में लिखा है 'चंद्रभागातदोतोरे अहासि किन्नरो तदा', जिससे स्पष्ट है कि पार्वतीय भाग के चनाब के तट पर उस समय किन्नर रहा करते थे। इसी तरह उत्तर काशी (टिहरी) के पास के घरासू आदि 'सू' शब्दांत गांव बतलाते हैं कि कभी वहां भी किन्नरी भाषा बोली जाती थी- किन्नरी भाषा में 'शू' या 'सू' शब्द देवता के लिए आता है। आर्यों द्वारा अपने पड़ोसी पहाड़ियों को यह नाम शत्रुता से नहीं बल्कि किसी और कारण से भी दिया गया हो सकता है, किंतु इसे हम तभी कह सकते हैं जब मालूम हो कि उस समय के आर्य उनसे अधिक शुद्धताप्रेमी थे।

अस्तु, जैसे भी हो आधुनिक कनौर शब्द किन्नर का ही अपभ्रंश है, और किसी समय किंपुरुष या किंपुरुषवर्ष सारे हिमालय का नाम रहा होगा। यद्यपि आज वह संकुचित हो बुशहर रियासत (अब महासू जिला) को एक तहसील चिनी तथा कुछ नीचे उतर कर उससे लगे हुए 20-25 गांव के लिए व्यवहृत होता है।

भाषातत्त्व की दृष्टि से विश्लेषण करने पर कनौरी भाषा- जिसका सर्वाधिक प्रचलित रूप हम्-स्कद है- की बोलियां हैं थोशङ् पो-स्कद, शुम-छो-स्कद्, शुन्नम्-स्कद्, उस्कद्, नयम्स्कद्। इनमें तीन भाषाओं के तत्त्व मिले हुए हैं- तिब्बती (भोट) भाषा संस्कृत और इन दोनों से भिन्न एक तीसरी किरात भाषा। मानवसमाज की सुपरिचित वस्तुओं के नामों में इन तीनों भाषाओं का भाग कितना है, इसे अभी ठीक से नहीं कहा जा सकता, क्योंकि किन्नर का अभी पूर्ण शब्दकोश तैयार नहीं हुआ है। यहां हम हम्-स्कद् के शब्दों का विश्लेषण करते हैं :

1. **भोटभाषा के शब्दों में–** में (आग), शिङ् (काष्ठ) सेम्चन् (प्राणी), चङ्-कू (भेड़िया), शा (मांस), क्रा (केश), मिक् (आंख), मिक्पू (भौं), कद्, स्कद् (भाषा), निश् (दो), शुम् (तीन), ङ (पांच), टुग (छह), विम् (घर), लाद् (उत्तर), शीमिक् (मृत्यु), तोङ्मिक् (मारना), ताङमिक् (देखना, दिखाई देना), जलमिक् (भेंट करना), फन्मिक (हराना), शैमिक (मारना), तुङ्मिक् (पीना, पिलाना)।

2. **संस्कृत के तत्सम्-तद्भव शब्द–** इनका प्रयोग करते समय अंत में बहुधा इङ् या अङ् जोड़ दिया जाता है जैसे- मटिङ् (मिट्टी), दुवङ् (धुआं), अन्ध्यारङ् (अंधार), सोर्गङ् (स्वर्ग, आकाश), रतिङ् (रात), रितङ् (ऋतु), भारङ् (भार), खेरङ् (क्षीर), दुवारङ् (द्वार), मजङ् (मध्य), कुखिङ् (कुक्षि)। कभी-कभी संस्कृत शब्दों के अंत में 'अस्' भी हो जाता है जैसे- चोरस् (चोर), परमेशरस् (परमेश्वर), जैपालस् (अजपाल)। संस्कृत के शब्द कनौरी भाषा में काफी मिलते हैं और सभी तरह के- काठो, काष्ठ), कोहर (कुहरा), बिजुल (बिजली, रिखा (रीछा), खउ (खाद्य), छोप (सूप, मांसरस), रंडोलस (रंडुवा), बोंगवान् (भगवान), पुजा (पूजा), बोदी (बहुत), बया (भैया)। संस्कृत धातुओं में निक् मिक् लगा कर प्रयोग किया गया है- लान्निक (लाना), भगेन्निक (भागना), हटेमिक् (हटाना), विचारेमिक् (विचारना), म्यङ्मिक् (भय करना), पुजालन्निक् (पूजा करना), पक्यामिक् (पकाना), फेक्यामिक् (फेंकना), पोलटेन्निक (पलटना), जोडेमिक् (जोड़ना), लटक्यामिक् (लटकना), भूज्यामिक् (भुंजना), वसन्निक (वसना), बजमिक् (बजाना), छयामिक् (छोड़ देना), रङ्यमिक् (रंगना), सज्यामिक् (सजना), लजाशेमिक् (लजाना), सुंचान्नक (सोचना), कटयामिक् (काटना), गोल्यामिक (गलाना)।

3. **किरात भाषा वस्तुत :** कनौरी भाषा का मूल अंश है, जिसके कुछ शब्द हैं- शू (देवता), ओम् (पथ), रङ् (गिरि), ती (पानी), शुप् (फेन), पोम (हिम), टङ् (बर्फ़), ठो (अंगार), राक (ताप), लान् (वायु), जू (बादल), युनेक् (सूर्य), लाइ (दिन), गोल् (मांस), रुद (सींग), कुई (कुत्ता), फो (हरिन), होम् (भालू), ऐरङ् (आखेट), खस (भेड़ी), दमस् (बैल), रो (तख्ता), पोलाच (रुधिर), वस् (मधु), टालङ् (चमड़ा), शोक् (कंठ), ताकुस् (नाक), गार् (दांत), वङ् (चरण), लिङ् (हृदय), रिङ्-स् (बहन), छङ् (पुत्र), चिमेत् (बेटी), छद् (जमाता), तेम् (पुत्रवधू), रु (ससुर), तेते (दादा), कोतेते (परदादा), कोणस् (मित्र), जङ् (सोना), ठोग् (सफेद), सै (दस), रा (सौ), लोन्निक (बहुत), कुखया (बहुत, ज्यादा), केन् (तुम), कोमो (भीतर), रेनम् (वसंत), इवा (नीचे), ईमिक (प्रश्न करना), रोमिक् (बोलना), हचेमिक् (होना), सकुन्निक् (उबालना), कुन्निक (बांधना), रन्निक (देना), रेन्निक (बेचना), युन्निक (चलना, चूर्ण करना), (लन्निक (करना), कन्निक (बुलाना), बुन्निक (आना), द्वन्निक (निकलना, प्रकट होना), लोनिक (कहना), ग्वास्तिक (खोदना, काटना), कस्-मि् (मिलना, मिलाना), लन्निक (बनाना, पकाना), उन्निक (लेना, मांगना), तोशे मिक् (बैठना), अन्निक (परिहास करना, हंसना), छिवमिक् (चूसना), पन्निक (उबालना, पोंछना), हुन्निक (सोखना), नारमिक् (गिनना), चेनूमिक् (सोना), सबयुबमिक् (लादना, उठाना)।

कनौर लोगों के प्रागैतिहासिक परिचय के लिए अभी तक उनकी भाषा ही एकमात्र सहायक है। आगे चलकर सम्भव है उस समय की भौतिक सामग्री भी प्राप्त हो जाए। किन्नर जाति का सबसे पुराना स्तर है किरात-किन्नर, जिसका पहले खसों के साथ समागम हुआ। आर्य ताम्रयुग में भारत में पहुंच चुके थे। सम्भव है, उस समय चंद्रभागा से बहुत पश्चिम तक किन्नर रहते हों, और उसी समय खस पशुपालों से उनका सम्पर्क हुआ हो। आगे चलकर यह सम्पर्क तथा प्रभाव इतना बढ़ा कि आज अधिकांश किन्नर-किरात लोगों ने अपनी भाषा को सर्वथा छोड़कर आर्यभाषा को अपना लिया है। जैसे- हिमाचल के किन्नर खसों के बाहुल्य और प्रभाव के कारण अपनी भाषा को छोड़ बैठे, वैसे ही उत्तरी छोर के किन्नर पीछे भोट देशियों के प्रभाव में आकर भोट भाषाभाषी बन गए। किन्नर-किरात जाति चीनी-तिब्बती जाति की ही एक शाखा है, यह हम बतला आए हैं।

वह भोटवासियों के सम्पर्क में कब आए? आज की भाषा और लोगों की मुखाकृति को देखकर यह समझना गलत होगा कि मानसरोवर प्रांत, लद्दाख और कन्नौर के सीमांत भाग, (हङ्रङ्) में पहले भोट (तिब्बती) लोग रहा करते थे। वस्तुतः भोट जाति का पश्चिम में विस्तार ईसा की सातवीं सदी में होने लगा, जबकि भोट सम्राट स्रोङ् चन्-गेम्पो (630-50 ई.) ने सारे तिब्बत, सारे हिमालय और गिलगित, ह्वाङ्हो तट तक फैले भोट-साम्राज्य की स्थापना की। इसी समय किन्नर देश में भी भोट सैनिक, शासक और पशुपालक पर्याप्त संख्या में आकर रहने लगे। भोट- साम्राज्य-स्थापक स्रोङ् चन्-गेम्बो ही तिब्बत में बौद्ध धर्म का संस्थापक और तिब्बती साहित्य का आरम्भक था। उसे पहले बौद्ध धर्म-प्रचारक दूर-दूर तक पहुंच चुके थे, तो भी वह यहां के जैसे पिछड़े लोगों में पहुंचे, इसका प्रमाण नहीं मिलता। हां, अशोक के राज्य से इनका सम्पर्क ज़रूर रहा होगा। देहरादून जिले में चकराता की सड़क पर पहाड़ से नीचे उतरते ही कालसी का पुराना किन्तु अब ध्वस्तप्राय नगर पड़ता है। इसी के नीचे यमुना तट पर अब भी वह शिला है जिस पर अशोक के अभिलेख खुदे हुए हैं। अशोक के और अभिलेखों की भांति ये भी ऐसे स्थान पर खुदवाए गए, जहां अधिक जन समागम होता था। कालसी (खलतिका) उस समय मध्यदेश के साथ हिमालय के व्यापार का एक प्रधान केंद्र था, इसमें संदेह नहीं। यहीं हिमवंत की समूरीखाल (बुदलीमृग), पशम तथा कोमल ऊन के दुस्स, कस्तूरी तथा दूसरी बहुमूल्य वस्तुएं आकर बिकती थीं। पालि वाङ्मय में उल्लिखित अजपथ (बकरी का रास्ता) यहां से आरम्भ होता था। आज भी जाड़ों में काफी संख्या में कनौरे अपनी भेड़-बकरियों को लेकर कालसी पहुंचते हैं, यद्यपि व्यापार की मंडियां रामपुर (बिसाहर), शिमला और कुल्लू में खुल जाने से अब कालसी का वह महत्त्व नहीं रहा और वह प्राचीन नगरी सिसक-सिसक कर मर रही थी।

उपर्युक्त कथन से यह निश्चित है कि ईसापूर्व तीसरी सदी में किन्नर लोगों का अशोक के साम्राज्य के साथ सम्पर्क था। बौद्ध धर्म से सम्पर्क स्थापित करने के लिए उनमें संस्कृति का स्तर ऊंचा होना चाहिए था जिसका पता मालूम नहीं होता। इसका प्रमाण कन्नौर की प्रत्येक पुरानी बस्ती में पाई जाने वाली वह मृतक समाधियां हैं, जिन्हें यहां के लोग भ्रम से खछे-रोम्खङ् (मुसलमान-कब्र) कहते हैं। आधुनिक कनौरे लोग सिवाय आपत्काल के अपने मुर्दों को जलाते हैं। इसीलिए मकान के लिए नींव खोदते, खेत बनाते या सड़क निकालते समय जब कोई पत्थर के टुकड़ों से चिनी, पटिया से ढंकी मृतक-समाधिक निकल आती है, तो उसे वह मुसलमान की कब्र कह उठते हैं। उन्हें यह नहीं मालूम कि मुसलमानी कब्रों में बर्तनों में भोजन और मदिरा नहीं रखी जाती और न ही इस प्रदेश में कभी मुसलमानों का निवास रहा। वह यह भी नहीं समझ सकते कि कभी उन्हीं के पूर्वज अपने मृतकों को जलाते नहीं गाड़ते थे और मृतात्माएं कब्र में आकर भूखी न रह जाएं, इसके लिए मिस्रियों की भांति कब्र में खाद्य और पेय सामग्री रखते थे।

जहां तक मुझे स्मरण है, कनौर इन मृतक-समाधियों की ओर विद्वानों का ध्यान आकृष्ट नहीं हुआ, यद्यपि लद्दाख की मृतक समाधियों का उल्लेख हुआ है, और यह भी माना गया है कि पहले लद्दाख में तिब्बती-भाषाभाषी जाति नहीं रहती थी। जून 1948 में ऊपरी किनौर के लिप्पा (लिताङ्) गांव में मैं ठहरा था। वहां के

जोतिसी लामा ने किसी गुम्बा (मठ) की नींव डालते समय हड्डी निकलने की बात कही। फिर कान खड़ा कर जब मैंने पूछा, तो सीधा-सादा उत्तर मिला- इधर खछे रोम्खङ् बहुधा निकल आती हैं। खछे (मुसलमान) कब्र यहां नहीं हो सकती, सोच कर मैंने पूछा- हड्डी के साथ बर्तन भी रहते हैं? उत्तर मिला- बर्तन मिलना अनिवार्य है। यह भी पता लगा कि बर्तन बहुधा मिट्टी के होते हैं, जिन्हें लोग फेंक देते हैं या लड़के खेल कर फोड़ डालते हैं। और पूछताछ करने पर एक आदमी के खेत में कुछ साल पहले कब्र निकलने का पता लगा। उसे बुलाकर कुदाल ले हम लोग उसके बोये खेत की ओर चल पड़े, यद्यपि वह बार-बार कह रहा था कि कब्र को हमने खोद कर फेंक दिया। उसके खेत में कुदाल चलाने की नौबत नहीं आई, उसके पड़ोसी पंजीराम के खेत से भी कब्र निकलने का पता लगा। आठ साल पहले किसी पुजारी की असावधानी के कारण आधा गांव जल गया- यहां के मकानों का अधिक भाग लकड़ी का होता है। पंजीराम ने अपना घर गांव के बीच में अवस्थित अपने खेत में बनाना आरम्भ किया। नींव खोदते समय कुदाल पत्थर के पटिये से टकराई। पटिया हटाने पर पातालपुरी की ओर जाने का द्वार मिला, जिसके नीचे उतरने को पत्थर की खुड्डियां थीं। पंजीराम ने हाथ-दो-हाथ खोद कर छोड़ दिया। लोगों ने छिपे खजाने की बात बतला कर उत्साहित किया। गांव के जेलदार बंसीलाल भी पहुंच गए। और कुदालें चलीं। चार-पांच हाथ नीचे जाने पर जगह कुछ चौड़ी थी जिससे मुर्दे की हड्डियां और दूसरी कुछ चीज़ें मिलीं। पंजीराम ने चीज़ों के मिलने की बात से इनकार किया, किंतु जेलदार के कथनानुसार उसमें से बर्तन आदि निकले थे, खजाना नहीं। पंजीराम अब उस स्थान पर खड़ा कर चुके थे। मैं कुदाल लिए उसे भीतर से देखने का आग्रह कर रहा था। पंजीराम ने कहा- अभी एक खछे रोम्खङ् निकली थी।

पंजाराम की जान में जान आई, जब मैंने कहा- चलो इसी को खोदें। कब्र खेत के ऊपरी सिरे पर दीवार (मेड़) मी जड़ में थी, जिसके ऊपर से पानी की नाली बहती थी, और बरसों से पानी उसके भीतर पहुंच चुका था। खुदवाने पर तीन हाथ लम्बी डेढ़ हाथ चौड़ी हाथ भर ऊंची पाषाणखण्डों से चिनी कब्र मिली। पंजीराम की पहली कुदाल ने ढांकने की एक पटिया को ही वहां रहने दिया था। उसे हटवाया। हड्यिां अस्तव्यस्त फेंकी हुई थीं और पानी लगने से खुसखुस टूट रही थी। खोपड़ी आधी (लम्बाई में) थी जिसकी लम्बाई आधा घेरा 18 इंच और चौड़ाई का आधा घेरा 6 इंच था। देखने से स्पष्ट मालूम होता था, आदमी दीर्घकपाल था। हाथ-पैर की हड्डियां बतला रही थीं कि आदमी लम्बे कद का था और कब्र में पैर को मोड़ कर उसे रखा जा सका होगा। खोपड़ी में ऊपरी दांतों के आधी पंक्ति मौजूद थी जिसमें तीन दाढ़ें दांत-जड़ में कुछ आगे को बढ़े थे। आदमी की आयु 35-40 साल की रही होगी। हड्डियां इतनी खुसखुसी और टूटती थीं कि उन्हें दिल्ली पहुंचाने का प्रबंध नहीं किया जा सकता था। यद्यपि मेरी बड़ी इच्छा थी कि एक सम्पूर्ण कंकाल हाथ लगे, किंतु यहां कब्र स्वेच्छा से खोद कर निकाली नहीं जा सकती। गांव के वैद्य ने आंचल फैलाकर हड्डियों को मांग लिया। उन्होंने उन्हें जला, घोंट कर दवा तैयार कर उसे कितने ही बीमारों के पेट में उतारा होगा।

इस कब्र से निम्न ऐतिहासिक बातों का पता लगा– 1. लिप्पा के पुराने निवासी आजकल के अपने वंशजों की भांति गोल कपाल या मध्य कपाल नहीं दीर्घकपाल थे- वैसे ही जैसे लद्दाख के पुराने निवासी। 2. वह मुर्दे को जलाते नहीं, गाड़ते थे। 3. कब्र में मुर्दो का सिर पश्चिम की ओर होता था। 4. मुर्दो के साथ खाद्य और पेय रखते थे, 5. सम्भवतः लोग लम्बे कद के थे। कब्र खोदते समय पंजीराम को मालूम हुआ कि मैं कब्र से निकली चीज़ों का अच्छा दाम भी दूंगा इसलिए उन्होंने घर से लाकर एक कांसे का कटोरा ओर एक मिट्टी का टोंटीदार मद्यकुतुप दे दिया। उनका कहना था कि दोनों चीज़ें इसी कब्र में सिर के पास दाहिनी ओर रखी हुई थीं। लेकिन, उनकी बात संदिग्ध है। यह हो नहीं सकता कि बड़ी कब्र के मुर्दे के पास और कोई चीज़ न रही हो। जेलदार ने भी दूसरे दिन चीज़ों के निकलने पर ज़ोर दिया और जब पंजीराम को बुलाया तो उन्हें आने की हिम्मत न हुई। ऐसा कटोरा और मद्यकुतुप आजकल इस इलाके में नहीं बनते। दोनों के कारीगर अपनी कला के दक्ष थे। कटोरा साढ़े सात इंच व्यास का पूर्ण अर्धगोल है जिसकी पेंदी की धातु बहुत जगह उड़ गई है। कुतुप में अंगूठा जाने लायक मुंह और सुंदर टोंटी लगी हुई थी।

समाधि के काल के बारे में कुछ बातें कही जा सकती हैं 1. उस समय यहां दीर्घ कपाल आदमियों की बस्ती थी, जिनका तिब्बती गोलकपाल लोगों से सम्पर्क नहीं हुआ था। 2. अभी बौद्ध धर्म का परिचय नहीं हुआ था, इसलिए मृतक के खाद्य और पेय का प्रबंध करना पड़ता था- अर्थात् यह समाधियां उस समय की है जबकि भोट (तिब्बती) लोग का पश्चिम में विस्तार नहीं हुआ था या राज्य विस्तार होने पर भी अभी उसका व्यापक प्रभाव नहीं पड़ा था। भोट- इतिहास से हमें मालूम है कि ईसा की सातवीं सदी के मध्य में भोट-राज्य का विस्तार इस प्रदेश में हुआ था। व्यापक प्रभाव के लिए कम-से-कम एक सदी और होनी चाहिए। इस प्रकार ऐसी कब्रें आठवीं सदी से पीछे की नहीं हो सकतीं।

कनौर की भाषा में तिब्बती-शब्द और लोगों में तिब्बती रक्त भी सातवीं सदी के मध्य से सम्मिलित होने लगा। खसों तथा आर्यो की भाषा का रक्त का प्रभाव उनके प्रथम सम्पर्क ताम्रयुग अथवा ईसापूर्व द्वितीय सहस्राब्दी से आरम्भ हुआ जो आगे बढ़ता ही गया और आज तो किन्नरों का ऐसा बहुत थोड़ा भाग रह गया जिसने अपनी आदिम किरात भाषा के कुछ अंश को सुरक्षित रखा है।

किन्नरी (कनौर) के इतिहास को निम्न भागों में बांटा जा

सकता है :

1. किन्नर (प्राग्-खस, प्राग्-आर्य)- काल :ताम्र युग ई.पू. 10वीं सदी से पूर्व

2. आर्य-खस (प्राग भोट)-काल : ईसवी 7वीं सदी तक

3. भोट-काल : ईसवी 13वीं सदी तक

4. ठाकरशाही : ईसवी 14वीं सदी तक

5. कामरु (रामपुर)-राजवंश : फरवरी 1948 ई. तक

प्रथम काल की भौतिक सामग्री अभी हमें निश्चित तौर से नहीं मिली है। भाषा के सहारे कुछ बातें हम पहले लिख चुके हैं। उससे यह भी मालूम होता है किसी समय यह भूभाग मोन्ख्मेर या किरात जाति का निवास स्थान होने से इंदोचीन और इंदेनेसियाई की जातियों से लगातार सम्बंधित था। उस समय से बहुत पीछे भोटकाल के आरम्भ होने तक तिब्बत के भीतर ही किरात या ना मोन् लोग रहते थे। नेपाल-उपत्यका से उत्तर तिब्बत के भीतर किरोड् वाला इलाका मोनूयुल (मोनूदेश) कहा जाता है। आज भी मध्य तिब्बत के दक्षिणी भाग में अवस्थित बहुतेरे ध्वंसावशेषों को मोन्-पा लोगों की पुरानी बस्तियां बतलाई जाती हैं। स-सक्य के महान् विहार के दक्षिण में अवस्थित मब्-जा उपत्यका में पचीसियों पत्थर की दीवारों वाले परित्यक्त घरों को मोन्-पा लोगों को कहा जाता है, यद्यपि इसमें संदेह के कारण हैं, तो भी यह परम्परा इस तथ्य को बतलाती है कि कभी इस भाग में मोन् लोग रहते थे।

प्रथम काल की भौतिक सामग्रियों के अभाव में हम यहां सजातीय भाषाओं के तुलनात्मक अध्ययन से कुछ बातें और कह सकते हैं। प्राग् भोटकाल की सामग्री से हमें अधिक बातों का पता लग सकता है। यदि इन खछे-रोमखड़्ों की सावधानी से खुदाई और जांच-पड़ताल की जाए। इनका पता मुझे लिप्पा से नीचे जंगी, रारङ्, अक्पा में ही नहीं बल्कि ऊपर कनम्, स्पू होते भोट सीमा पर अवस्थित भारत के अंतिम गांव नमग्या तक मिला है। स्पू से एक मिट्टी का बर्तन भी हस्तगत हुआ। कनम् में कुछ साल पहले हिंदुस्तान-तिब्बत सड़क को नई जगह से निकालते समय कई कब्रें निकलीं, जिनके मिट्टी के बर्तनों और हड्डियों को खछे-रोम्खड् कह कर फेंक दिया गया। आश्चर्य यह है कि इस सड़क की देखरेख भारतीय इंजीनियर और ओवरसियर कर रहे थे अनपढ़ नहीं थे। किंतु, पठित होने का अर्थ संस्कृत होना अनिवार्य नहीं है। स्वतंत्र हिमाचल प्रदेश और उसके योग्य संस्कृति-कला मर्मज्ञ शासकों को देखना होगा कि अब से ऐसी बहुमूल्य व ऐतिहासिक सामग्री नष्ट न होने पाए।

मृतक समाधियों की उपलब्ध सामग्री (कांसे का कटोरा और मिट्टी के मध्यकुतुप) से पता लगता है कि प्राक् भोटकाल में किन्नर लोगों का सांस्कृतिक तल आज से निम्न नहीं था। यद्यपि अभी उनके धार्मिक विश्वास आरम्भिक थे।

(हिमप्रस्थ, अक्तूबर, 1968)

कविता

मां पिता और बेटी

● कृष्ण चन्द्र महादेविया

प्रगतिशील पिता
बन जाता है कैसे
डौंड की तरह
और माता
थान और कुलदेवी से
कितनी ही बार
मांग चुकी है मन्नतें
मगर आंखें
मुक्त नहीं हो पाती
पीड़ा की प्रेत छाया से।



सुनार के शो केस में
गहनों जैसी बेटी
कई-कई बार
परख के बाद भी
न-नुकर और नुक्स में
बार-बार आरोपित होती
हरी डाली सी झुकी
मौन लौट जाती है
बार-बार मरते
सपनों की नाव खेते।

चादरू को मां
मुंह में दबाए
भरे गले को
उम्मीद के कप पर उंडेलते
शुभ विवाह के
खाली कार्डों को सहलाते
लिखवाना चाहती है सबमें
संगीत-पूजा-बारात और
लग्न-मुहूर्त का समय।

विकास कार्यालय पधर, जिला मंडी,
हिमाचल प्रदेश-175012

1. डौंड : कबूतर, 2. थान : परिवार देवता, चादरू : दुपट्टा

हिमप्रस्थ के धरोहर पन्नों से

राम दयाल नीरज ने हिमप्रस्थ के शुरुआती दौर में इस पत्रिका को संवारने में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया। वे काफी समय तक इसके सम्पादक रहे। उन्हें इस पर्वतीय प्रदेश की लोक संस्कृति और स्थानीय परम्पराओं का गहन ज्ञान था और उन्होंने इस विषय पर अनेक शोधपरक लेख लिखे। उनके ऐसे ही लेखों में से एक सुधी पाठकों की जानकारी हेतु प्रस्तुत है। –सम्पादक

लोक नृत्य एवं संगीत

● राम दयाल नीरज

हिमाचल प्रदेश के श्रम-साध्य जीवन का नृत्य और संगीत में अन्योन्याश्रित सम्बंध रहा है। व्यक्तिगत श्रम-शक्ति को सामूहिक रूप में एक बिंदु पर केंद्रित करने के लिए संगीतात्मक लय युगों से इस धरती पर वरदान सिद्ध होती रही है। वह लय चाहे 'हइया' की सामूहिक गुहार में हो या 'हुम्बे' की हुंकार में, 'हश्शे' के प्रयास में हो अथवा 'शाब्बा' के विश्वास में। देवभूमि हिमाचल में संगीत और नृत्य ने मानव के साथ ही जन्म लिया है। देवों, गंधर्वो और किन्नरों ने यहां के कण-कण को लय, गति और मदिर स्वरों से सींचा है।

नृत्य

इस देवधरा ने असंख्य लोक-गीतों को जन्म दिया, जिन्होंने यहां के मानव पगों में लय, गति और ताल के मोहक नूपुर सजाए और अनोखी थिरकन भर दी है। हिमाचल के लगभग सभी लोक-गीत नृत्य-प्रधान हैं, वे चाहे व्यक्तिगत हों या सामूहिक। इन लोक-गीतों और नृत्यों के साथ बजने वाले हिमाचली साज या वाद्य यंत्र तीन प्रकार के हैं। देसी- जैसे नफीरी ढोल आदि, पहाड़ी जैसे हुड़क, खंजरी बगैरा और तिब्बती- जैसे मुरचंग आदि। कई स्थानों पर नृत्यों के साथ स्वर-वाद्यों का प्रयोग नहीं होता केवल ताल वाद्य बजते हैं। नृत्यकारों में नृत्य-गीत की कड़ियां उठाने वाला होता है- नृतकों का लीडर या अगुआ, जिसके गीत की हर कड़ी, समाप्त होने से दो-चार मात्रा पहले ही, अन्य नृतकों द्वारा सामूहिक रूप से उठा ली जाती है। इस प्रकार स्वर-वाद्यों की अनुपस्थिति में न तो धुन का तारतम्य ही टूटता है और न ही गाते नाचते नृतकों का दम फूलता है। हिमाचल के सभी सामूहिक लोक-नृत्य, विलम्बित लय से आरम्भ होकर द्रुत लय पर समाप्त होते हैं। किंतु इस विधा का प्रयोग केवल ऐसे अवसरों पर ही किया जाता है जहां लोकनृत्य विलम्बित से मध्य लय तक ही सीमित रहते हैं। यहां के लोगों के लिए लोक-गीतों की अपेक्षा लोक-नृत्य मनोरंजन का अधिक सफल साधन रहे हैं। इसका कारण एक तो यह है कि इन नृत्यों में प्रत्येक व्यक्ति भाग ले सकता है, दूसरा यह है कि इन नृत्यों का कार्यक्रम जी भर जाने तक चलता रहता है। इस प्रकार प्रत्येक व्यक्ति इन नृत्य कार्यक्रमों में दर्शक भी होता है और नर्तक भी। द्रुत और मध्य लय के नृत्य, इस लम्बे कार्यक्रम में कई बार आते हैं। नृत्य की माला पूरी रात के लिए नहीं टूटती। किस लय का नृत्य किस लोक-गीत पर कब होना है, इसे सिवा लीडर के कोई नहीं जानता। यदि सारी रात के लोक-नृत्यों को ध्यान से देखा जाए तो अधिकतर नृत्य विलम्बित लय के होते हैं। कारण है यहां के लोगों का प्रकृति के अनुरूप शांत, धीमा और स्वस्थ स्वभाव। प्रकृति रूप में हिमाचल की धरती अति क्रूर है, जिसका सामना करने के लिए स्वभाव का तेज और कठोर होना हानिकारक है। यहां का व्यक्ति जब घाटियां चढ़ता है तो उसके कदम हल्के, दृढ़ और धीमे उठते हैं ताकि वह थक न जाए। यहां कोई भी ताबड़-तोड़ नहीं होता, यही स्वभाव यहां के नृत्यों की लय में भी प्रवेश कर गया है। 'भंगड़ा' जैसे द्रुत लय वाले नृत्य इन ऊंचाइयों पर सारी-सारी रात कदापि नहीं चल सकते। हिमाचल के सभी नृत्य यहां की प्रकृति और मानव-स्वभाव के अनुकूल हैं।

यहां के लोक-नृत्यों की अपनी ही अनोखी लय और गति है। भौगोलिक और सामाजिक दृष्टि से समान भू-खंडों की नृत्य-शैलियां समान तो हो सकती हैं किंतु किसी दूसरे का प्रतिरूप नहीं हो सकतीं। नृत्य शैली के मूल आधारों से आगे लय, गति और ताल के फलस्वरूप जो विकास होता है, उसमें स्थानीय विशेषताएं आ जाती हैं। यही विशेषताएं एक से अनेकता का अनुभव कराती हैं और विश्व की परिधि से खींच कर स्थान विशेष की ओर ले जाती हैं। यहां के नृत्य छह, आठ, बारह और सोलह मात्राओं की स्थानीय लय-गति पर आधारित हैं। इन लय और गतियों पर निर्भर तालों की क्या लोच-लचक है और क्या गति और चाल, यह एक अलग विषय है जिसे मैं यहां नहीं लूंगा। सीधे तौर पर देखने से यहां के नृत्य ऐसे लगते हैं, जैसे कुछ लोग सामूहिक रूप से कदम-से-

कदम मिलाकर चल रहे हों, कभी तेज और कभी आहिस्ता, कभी पीछे और कभी आगे। किंतु उनकी एक सुनिश्चित गति है जो देखने में आकर्षक लगती है। इन नृत्यों में किसी मुद्रा या मूड की अभिव्यक्ति नहीं होती, कमर से ऊपर कुछ अंगों में बराबर एक विशेष लचक के साथ झटका दिया जाता है जो सागर की लहरों में क्षणिक अवरोध का सा आभास देता है। इस प्रदेश के कुछ नृत्य ऐसे भी हैं जिनमें केवल नारियां ही नाचती हैं। व्यक्तिगत नारी-नृत्यों में 'पढुआ' या 'गिद्दा' नृत्य हैं जिन्हें गाते हुए भी नाचा जाता है और बिना गाए भी। अब नाचने वाली स्त्री गाती है तो गीत का मुखड़ा स्वयं उठाती है और शेष बैठी हुई स्त्रियां उसे दोहराती हैं। जब कोई स्त्री बिना स्वयं गाए नाचती है तो मुखड़ा और अन्तरा बैठी हुई स्त्रियां भी गाती हैं। संगत के लिए किसी वाद्य की कोई विशेष आवश्यकता नहीं होती, केवल ताली और गीत की लय पर ही सारा नृत्य हो जाता है।

स्त्रियों के सामूहिक नृत्य का नाम है- 'रासा'। यह पुरुषों के 'माला' नृत्य के ही समान होता है। किन्नौर आदि हिमाचल के कुछ जिलों में माला नृत्य स्त्री-पुरुष का सम्मिलित नृत्य भी है। हिमाचल प्रदेश में रासा और सर्वप्रिय माला नृत्य के ताल, लय और पग संचालन की दृष्टि से भिन्न-भिन्न प्रकार हैं। इसी नृत्य को 'नाटी' भी कहा जाता है। नृत्य के अन्य प्रकारों में है 'युद्ध-क्रीड़ा-नृत्य' और 'युद्ध- नृत्य' जिन्हें देखते हुए ऐसा लगता है कि हिमाचल की धरती युगों तक युद्धों का क्षेत्र रही हैं, 'ठोडा' सिरमौर और महासू जिले में प्रचलित युद्ध-क्रीड़ा-नृत्य है। इस नृत्य में विभिन्न-ताल-वाद्यों पर ठोडा ताल बजती है और दो विभिन्न नर्तक दलों में धनुष-बाण युद्ध होता है। इसमें एक समय में केवल दो नर्तक नाचते हैं। इसी प्रकार युद्ध-नृत्यों में कुल्लू जिले का तलवार-नृत्य विशेष बाजों के साथ और सिरमौर जिले का 'डांगरा नृत्य' विशेष गायकों के साथ क्रमशः तलवार और डांगरा अथवा परशु लेकर नाचे जाते हैं। इस प्रदेश में मनुष्य ही नहीं, देवता भी नचाए जाते हैं। यदि वे पालकी में हों तो उन्हें उठाने वाले के कंधे पर नाचेंगे और अगर वे अपने स्थान पर हैं तो पुजारी या किसी अन्य व्यक्ति के शरीर में नाचते हैं। ऐसे समय में वाद्य-यंत्रों पर बराबर देव-बाज या ताल बजती है।

यहां के लोक-नृत्यों की अपनी ही अनोखी लय और गति है। भौगोलिक और सामाजिक दृष्टि से समान भू-खंडों की नृत्य-शैलियां समान तो हो सकती हैं किंतु किसी दूसरे का प्रतिरूप नहीं हो सकतीं। नृत्य शैली के मूल आधारों से आगे लय, गति और ताल के फलस्वरूप जो विकास होता है, उसमें स्थानीय विशेषताएं आ जाती हैं। यही विशेषताएं एक से अनेकता का अनुभव कराती हैं और विश्व की परिधि से खींच कर स्थान विशेष की ओर ले जाती हैं।

संगीत

देवभूमि हिमाचल में जितनी विविधताएं नृत्यों में हैं उतनी ही संगीत में भी हैं। इस प्रदेश में संगीत धरती को सजोकर रखने वाली कुछ गंधर्व जातियां रही हैं जिनकी जीविका राजाओं-राणों और लोगों का मनोरंजन करने पर आधारित रही है। ये जातियां ताल और स्वर में सिद्धहस्त रही हैं। यहां के लोगों ने सदा उनके गले को सराहा है। इन जातियों ने स्वर-वाद्यों की अपेक्षा ताल-वाद्यों पर विशेष ध्यान दिया है। फिर भी हिमाचल में स्वर-वाद्यों में फूंक वाले साज़ और तार वाले साज़ दोनों ही हैं। फूंक वाले साज़ों में नफीरी, मुरली आदि पूर्ण सप्तक के साज तथा रणसिंहा करनाल आदि सीमित स्वर वाले साज हैं। इनके अतिरिक्त तारों साज़ है किंदरी अथवा इकतारा। ताल-वाद्यों में हिमाचल प्रदेश में तीन प्रकार के वाद्य हैं- गमक वाले, झंकार वाले और स्थिर स्वर वाले वाद्य। पहली प्रकार के वाद्यों में आते हैं- घड़ा, हुड़क, ढोल आदि। दूसरे प्रकार के वाद्यों में आते हैं- नकारा, दमामटू आदि। सभी ताल-वाद्य, घड़ा और खंजरी के अतिरिक्त बारीक छड़ी या डंडों से बजाए जाते हैं।

इस प्रदेश में गीत गाते समय स्वर-वाद्यों द्वारा संगत की प्रथा नहीं है। इससे यह सिद्ध होता है कि स्वर-वाद्यों की यहां बहुत कम आवश्यकता समझी गई है। वैसे नफीरी और मुरली का प्रयोग नृत्य गीतों में होता तो है, किंतु संगत के लिए नहीं अपितु गीत के मुखड़े और अंतरों की धुन दोहराने के लिए। इसी बात को ऐसे भी कहा जा सकता है कि नृत्यकार अपना गीत इन साजों पर षड्ज पहचान कर ही गा सकता है। ऐसा भी देखा गया है कि गायक वर्ग बिना किसी स्वर और ताल-वाद्यों के भी गा रहा है तथा उसके स्वर, लय और ताल बराबर सुरक्षित हैं। ऐसे अवसर पर घड़े की गमक, हाथों की ताली और गायकों का गीत आरम्भ करने पर षड्ज को आकार में गाना, किसी भी साज की अनुपस्थिति की अनुभूति नहीं होने देते। इसके अतिरिक्त गीत या अंतरे की धुन न टूटे और साथ ही गायक को दम लेने का अवसर भी प्राप्त हो, इसके लिए धुन को दो-चार मात्रा पहले उठा कर दोहराने की विधि है। हिमाचल के संगीत को हम तीन मुख्य भागों में बांट सकते हैं। पहला भाग है वाद्य-संगीत, जिसमें साजों पर केवल धुन ही बजती है। दूसरा है बाज-संगीत, जिसमें केवल रसोद्रेक के ध्येय से वाद्यों-यंत्रों पर निश्चित तालें बजती हैं और तीसरा भाग है गीति-संगीत, जिसमें सामूहिक और व्यक्तिगत दोनों प्रकार की गायक विधाएं प्रयुक्त होती हैं। पहले प्रकार अर्थात् वाद्य-संगीत में बिना ताल के धुनें भी बजाई जाती हैं और तालयुक्त धुनें भी। चौमासे में मुरली पर छेड़ी गई धुनें बड़ी सम्वेदनशील और सम्मोहक होती हैं। ये सभी धुनें खुली, तालहीन होती है, जिन्हें सुनकर चलता राही बरबस रुक जाता है। तालयुक्त धुनों में नौबत का नाम आता है जिसे नफीरी पर शास्त्रीय रागों में

और ताल वाद्यों पर लोक शास्त्रीय तालों में बजाया जाता है। नौबत की नौ हिमाचली लोक-शास्त्रीय तालें हैं।

इसी तरह दूसरे प्रकार अर्थात् बाज-संगीत रौद्र, वीर आदि रसों को जागृत करने के लिए केवल ताल-वाद्यों पर 'ठोडा' 'गड़ाई' 'जागरा' आदि विभिन्न लोक-तालें बजाई जाती हैं। करनाल, रणसिंहा जैसे सीमित स्वरों वाले स्वर-वाद्यों का प्रयोग केवल देव- आह्वान के समय ही किया जाता है।

हिमाचली संगीत के तीसरे प्रकार अर्थात् गीति-संगीत के मुख्य दो पक्ष हैं एक व्यक्तिगत गान और दूसरा सामूहिक गान। इन दोनों पक्षों में तालयुक्त और बिना ताल गायन की विधियों का प्रयोग होता है। बिना ताल सामूहिक गान में विवाह गीत आदि और व्यक्तिगत गान में 'लामण' 'झुरी' आदि मुख्य है। इस प्रदेश के संगीत का अध्ययन करने पर यह बात स्पष्ट हो जाती है कि यहां शास्त्रीय, लोक शास्त्रीय और शुद्ध लोक-संगीत शैलियों का प्रचलन है। ये तीनों शैलियां अपने-अपने समय की देन हैं। यहां का संगीत स्वर प्रधान न होकर ताल और लय प्रधान है। उदाहरणार्थ यदि आप शुद्ध लोक-संगीत शैली को लें, तो आप देखेंगे कि इस शैली में गीतों की धुनों के अंदर चार-पांच स्वरों से अधिक स्वरों का प्रयोग नहीं हो रहा है। धुनों में अंतरा भी नहीं होता। शास्त्रीय संगीत के आधर पर रागों की औड़व, षाड़व और सम्पूर्ण जातियां पांच स्वरों से आरम्भ होती हैं किंतु हिमाचली धुनों में कई बार तीन स्वरों में भी पूर्णता दिखाई देती है। इन धुनों को सुनने पर ऐसा लगता है कि जैसे ये किसी राग पर आधारित तो है किंतु इन धुनों में राग सिद्ध नहीं हो पाता। ऐसा विश्वास होता है कि शास्त्रीय रागों के मूल रूप यहां की लोक-धुनों में सुरक्षित है। जिस कच्चे माल से भारतीय रागों का निर्माण कभी हुआ था, वह कच्चा माल अब भी हिमाचली संगीत में सुरक्षित है। दूसरी शैली आती है लोक-शास्त्रीय शैली, जिसमें राग तो शास्त्रीय होते हैं किंतु तालें सभी हिमाचली हैं जिनकी लय और गति पर प्रदेश की छाप है। दोनों शैलियों में से तालें छह से लेकर अठाईस मात्राओं की बंदिशों में है। इसके पश्चात् तीसरी शैली शास्त्रीय संगीत शैली है जिसका प्रयोग यहां के राजा-राणों के कारण होता रहा है। इसमें पहाड़ी और देसी दोनों प्रकार के वाद्य-यंत्रों का प्रयोग किया जाता है।

हिमाचल के नृत्य और संगीत पर अभी तक कोई अन्वेषण नहीं हुआ। अतः यह भय है कि उस अनछुई धरती की कला परम्परा के अनछुए माणिक, बूढ़ी पीढ़ी के साथ ही दफ़न हो जाएंगे।

(हिमप्रस्थ, जून, 1972 के अंक में प्रकाशित)

कविता

न यूं कोई सम्भल सका

अरे ओ हिमधवल शिखर, अचल, अडिग, अभय, सबल;
तेरे निरीह प्राणियों की, ज़िन्दगी हुई सफल।
कभी समय तो वह भी था, कि हम सकल निराश थे;
कि दासता की शृंखलाओं में कसे, उदास थे।
न कह सकें, न सह सकें, न अश्रु भी बहा सकें;
उदास जिन्दगी से थे न पथ कोई दिखा सके।
कि यूं गिरा दिए गए, भटक के जा गिरे कहीं;
न यूं कोई सम्भल सका, कि यूं कोई गिरा नहीं।
समस्त आर्य वृत ने यूं आफतें सही तो थीं
उजड़ गए, कि लुट गए, मलानतें सही तो थीं।
था हुकम एक का मगर, नज़र थी एक की कड़ी
प्रभुत्व एक ही का था, उसी की बेड़ियां पड़ी
यहां तो दो प्रभुत्व थे, पिसे तो खूब पिस गए;
सरल निवासियों के सर झुके तो यूं कि घिस गए।
कि दो प्रशासकों के दण्ड की प्रताड़ना सही;
न यूं कोई सम्भल सका, कि यूं कोई गिरा नहीं।
कि टिमटिमाते दीप ने अनल शिखा बिखेर दी;
पशुत्व-बल झुलस गया, ओ 'दासता' धकेल दी।?
'हिमाचली' उठा सुषुप्त सिंह सा सजग हुआ,
कि क्रुद्ध सर्प बन गया, बढ़ा जिधर कि मृग हुआ।
कि सर पे पांव रख भागे कि जिनका सर पे पांव था,
उन्हीं के दाव से गिरे, कभी जो उनका दाव था।
न शस्त्र थे न अस्त्र से न रक्त की नदी बही,
न यूं कोई सम्भल सका कि यूं कोई गिरा नहीं।
झुका 'हिमाचली' तो यूं कि खाक तक में मिल गया,
उठा 'हिमाचली' तो यूं कि आसमां भी हिल गया।
कि मैली धज्जियों में भी जमा लहू उबल उठा,
दबी चरण की धूल का गुबार सर पे चढ़ उठा।
कि दासता हिली ओ तख्त उसका डगमगा गया,
कि मुट्ठी भर 'पहाड़ियों' से देश जगमगा गया।
जहां कुचल दिए गए थे सर उठा दिया वहीं
न यूं कोई सम्भल सका कि यूं कोई गिरा नहीं।

• राम दयाल नीरज,

हिमप्रस्थ दिवस अंक, वर्ष 1, अंक 1, अप्रैल 1955

हिमप्रस्थ के धरोहर पन्नों से

मियां गोवर्धन सिंह हिमाचल प्रदेश की एक ऐसी शख्सीयत थे जिन्होंने अपनी कलम से न केवल प्रदेश में इतिहास लेखन विधा को समृद्ध किया बल्कि उन्होंने हिमाचल की देवभूमि में स्थित मंदिरों की स्थापत्य कला एवं शैली पर वृहद कार्य किया। उनके लेखकीय कोष में से प्रस्तुत है यह लेख।

हिमाचल में मंदिर स्थापत्य

● मियां गोवर्धन सिंह

किसी भी क्षेत्र के लोगों के बारे में जानकारी हासिल करने का सबसे बढ़िया तरीका है उनकी कला और उनके स्थापत्य का सांगोपांग अध्ययन। मगर कलात्मक अतीत की पहचान हम तभी कर सकेंगे जबकि किसी भी तरह का पूर्वाग्रह हममें न हो। वस्तुतः कला को उसके गम्भीर प्रयोजन के प्रकाश में ही देखा जाना चाहिए।

हिमाचल प्रदेश के लोगों की सृजनात्मक शक्ति का परिचय हमें उनकी कलात्मक अभिव्यक्ति में मिलता है जिसका सम्प्रेषण प्रागैतिहासिक और ऐतिहासिक काल में भारत के मैदानों और मध्य एशिया से पहाड़ों की ओर आने वाली जातियों ने किया। किसान जब हिमाचल की घाटियों में आकर बसे तो अपने साथ सिंधु घाटी की कला परम्पराओं को लाए जबकि मध्य एशिया से आने वाले खश अपने साथ मध्य एशिया के प्रकरण। इनके बाद शक, कुषाण, हूण, गुज्जर और बहुत से और लोग आए। आक्रांताओं की हर लहर अपने पीछे जाति, धर्म, भाषा और रीतिरिवाजों के चिह्न छोड़ती गई जो कालांतर में इस भूमि के सांस्कृतिक जीवन से एकाकार होते चले गए। इस तरह हर बात ने, चाहे वह बाहर से ग्रहण की गई हो अथवा यहां की मौलिक हो, यहां की जमीन में अपनी जड़ें जमा दीं और ज्यों-ज्यों समय बीतता गया, एक परम्परा के रूप में वह पुष्पित और पल्लवित होती गई।

प्राचीन और मध्ययुग में ही हिमाचल प्रदेश ने कला और स्थापत्य का बहुमूल्य कोष संचित कर लिया था। मैदानी इलाकों की बनिस्बत हिमालय युद्ध और विजय के प्रभावों से भी बचा हुआ था जिससे इस बात की सहज ही पुष्टि हो जाती है कि कालांतर में यहां बहुत सी चीज़ों में बदलाव क्यों नहीं आया। स्थापत्य भी ऐसी चीज़ों में से एक है। थोड़े से फेरबदल को छोड़कर यहां की वास्तुकृतियां आज दो हजार साल के बाद भी प्रायः वैसी की वैसी हैं। पर्वतीय स्थापत्य का अति प्रारम्भिक स्वरूप हमें प्राचीन मंदिरों में मिलता है।

हिमाचली कला और स्थापत्य को हम मोटे तौर पर तीन वर्गों में बांट सकते हैं- देशज अथवा खश, भा-आर्य अथवा नागर और भा-तिब्बती।

देशज शैली

इस शैली का प्राचीनतम उदाहरण हमें औदुम्बर (दूसरी-तीसरी शताब्दी) के सिक्कों में मिलता है। धारा घोष की चौकोर ताम्र और रौप्य मुद्राओं पर मंदिर की तरह की कोई आकृति उत्कीर्ण है। एलक्जैण्डर कनिंघम ने इस आकृति को दो अथवा तीन मंजिला पिरामिड मंदिर बताया है। औदुम्बर की मुद्राओं पर बने मंदिर में ध्वज, त्रिशूल और परशु उत्कीर्ण है जिनसे यह पता चलता है कि वह एक शैव मंदिर हो सकता है। उक्त प्रस्तुति कोई भवन-विशेष न होकर शैली मात्र ही है। चौकोर आधारतल की एक ओर दो पादानें हैं और मंदिर के चारों ओर एक खुला प्रदक्षिणा-पथ। केंद्रीय स्तम्भों पर हो सकता है, फूलदार डिज़ाइनों, सर्पाकृतियों और पशु अथवा पक्षियों को उत्कीर्ण किया जाता रहा हो। यह वास्तव में टीलेनुमा कक्ष अथवा दो या तीन मंजिला स्तूप न होकर पर्वतीय मंदिर ही था। समाधियों में ऐसा काष्ठ, स्लेट और पीतल का मिला-जुला अस्तर और पृष्ठभूमि में विस्तृत दृश्य कुल्लू और व्यास घाटियों के मंदिरों में आज भी देखा जा सकता है।

हिमालय का स्थापत्य मूलतः काष्ठाधारित था जो कि शीशम की तरह दीमक और कीड़ों से सुरक्षित था। काष्ठ पर आधारित स्थापत्य की आयु एक हजार वर्ष के लगभग होती है। हिमाचल हिमालय की मध्य पट्टी में स्थित देवदार की लकड़ी से निर्मित ऐसे मंदिर यत्र-तत्र बिखरे हैं जो भव्य, चित्रमय तथा बारीकी से उत्कीर्ण हुए हैं।

देवदार की लकड़ी इमारत को चिर-स्थायी बनाने के लिए इस्तेमाल में लाई जाती है तथा यह पत्थरों की चिनाई को क्रियात्मक रूप से आपस में बांधे रखती है। शहतीरों को ज़मीन के समान्तर

लगाया जाता है- सीधा और तिरछा नहीं। सुनिर्मित घर या मंदिर में लकड़ी का यह प्रयोग बड़ी सावधानी से किया जाता है। शहतीर लगभग एक फुट गहरे और दीवार जितने लम्बे होते हैं। एक शहतीर बाहर और दूसरा अंदर की ओर। शहतीरों के बीच की जगह पत्थरों से भर दी जाती है। साथ ही दीवार के शहतीर उससे ऊपर होते हैं। इस प्रकार काष्ठ-विन्यास वैकल्पिक ढंग से किया जाता है ताकि वह ठोस दीवार को थामे रखने में सक्षम हो सके। पर्वतीय शैली में बनी इन इमारतों का काल-निर्धारण नहीं हो सकता। केवल उन्हीं के बारे में सुनिश्चित हुआ जा सकता है जो किसी की जीवित स्मृति में बनी है।

ये मंदिर सामान्यतः गांव के ऊपर अथवा गांव के मध्य बनाए जाते हैं। इन मंदिरों के स्थापत्य को हम चार प्रमुख शैलियों में बांट सकते हैं। ये सम्भवतः धार्मिक विश्वासों के विभिन्न स्तरों तथा नई और पुरानी जातियों के विभिन्न समयों पर हुए मिलन को व्यक्त करती है।

बुनियादी तौर पर ये सभी मंदिर या तो वर्गाकार हैं अथवा चौकोर। छत की शैली को यदि पहचान का आधार बनाया जाए तो ये चार किस्म के हैं :-

(क) एक तरफ से ढलवां छत और बरामदे से सुसज्जित पत्थर और लकड़ी के वर्गाकार अथवा चौकोर मंदिर।

(ख) पिरामिड आकार की छत वाले पत्थर और लकड़ी के वर्गाकार अथवा चौकोर मंदिर।

(ग) पैगोडा आकार के लकड़ी और स्लेट से निर्मित क्रमिक छतों वाले पत्थर और लकड़ी के वर्गाकार या चौकोर मंदिर।

(घ) ढलवां और पैगोडा शैली की छत के सम्मिश्रण से बने मंदिर- जिन्हें सतलुज घाटी शैली के नाम से जाना जाता है।

हिमाचल प्रदेश में लकड़ी और पत्थर के एक तरफ से ढलवां छत वाले वर्गाकार अथवा चौकोर मंदिर प्राचीनतम हैं। ऐसे मंदिर पूरे क्षेत्र में बिखरे हैं। इनका ऊपरी हिस्सा प्रायः मरम्मत किया हुआ मिलता है लेकिन आधारतलीय कार्य निश्चय ही बहुत पुराना है। मंदिरों के ये ढांचे आकार-प्रकार में एक दूसरे से भिन्न हैं। पर जहां बरामदों की निर्मिति और नक्काशी में यह भिन्नता परिलक्षित है, वहीं सभी में एक समानता भी है और वह है, आधारतल में सुंदर ढंग से तराशे गए बड़े और आकर्षक पत्थरों का प्रयोग। इन मंदिरों में सम्भवतः भरमौर की लक्षणा देवी, दतराड़ी की शक्तिदेवी, उदयपुर की काली देवी, कुल्लू घाटी के बिजली महादेव, चैनी के मुरलीधर, चुंग की चुंगार्सा देवी और त्रिजियारी के महासू अद्वितीय हैं। ऊपरी सतलुज और पब्बर घाटियों में इस शैली के अनेक मंदिर हैं।

हिमाचल प्रदेश में लकड़ी और पत्थर के एक तरफ से ढलवां छत वाले वर्गाकार अथवा चौकोर मंदिर प्राचीनतम हैं। ऐसे मंदिर पूरे क्षेत्र में बिखरे हैं। इनका ऊपरी हिस्सा प्रायः मरम्मत किया हुआ मिलता है लेकिन आधारतलीय कार्य निश्चय ही बहुत पुराना है। मंदिरों के ये ढांचे आकार-प्रकार में एक दूसरे से भिन्न हैं। पर जहां बरामदों की निर्मिति और नक्काशी में यह भिन्नता परिलक्षित है, वहीं सभी में एक समानता भी है और वह है, आधार-तल में सुंदर ढंग से तराशे गए बड़े और आकर्षक पत्थरों का प्रयोग।

भरमौर और छतराड़ी के लक्षणा देवी और शक्ति देवी मंदिरों का कालानुमान सम्भव है क्योंकि इनमें लगी पीतल की मूर्तियों में राजा मेरू वर्मन द्वारा इनकी स्थापना का ब्योरा भी अंकित है। इन मूर्तियों के आकार-प्रकार के आधार पर यह कहा जा सकता है कि अनुमानतः 700 ईस्वी की हैं। इन इमारतों में देवदार की लकड़ी इस्तेमाल हुई है। हिमालयी देवदार को अगर ठीक ढंग से सीजन (अनुकूलित) किया जाए तो यह काफी टिकाऊ सिद्ध होता है। मौसम से प्रभावित नक्काशी जैसे कि लक्षणा देवी मंदिर के अग्रभाग में है- जल्दी ही खराब हो जाती है। लेकिन जहां वह सुरक्षित है, अब भी अपने अच्छे रूप में बनी हुई है।

हिमालयी स्थापत्य के अध्ययन के लिए हिमाचल प्रदेश में कुल्लू सबसे ज्यादा उपयुक्त क्षेत्र है। तमाम इलाके में धार्मिक और पवित्र भवनों के लिए एक तरफ की ढलवां छत वाली शैली प्रयुक्त हुई है। ये इमारतें भूकम्प से सुरक्षित हैं क्योंकि इनमें गारे का इस्तेमाल नहीं हुआ है। गारे का प्रयोग भूकम्प के समय लगने वाले झटकों को अवरुद्ध करता है।

इस शैली का सर्वोत्तम उदाहरण पार्वती घाटी में 8,076 फुट की ऊंचाई पर बना हुआ त्रिअंकी छतवाला बिजली महादेव का मंदिर है। इस शैली के अन्य मंदिरों में बाहरी सराज स्थित निरमण्ड के अम्बिका देवी और परशुराम मंदिर उल्लेखनीय हैं। परशुराम मंदिर में स्पीति के महासामंत समुद्रसेन का ताम्र पट्टिका पर उत्कीर्ण एक अभिलेख है। पुरालिपि शास्त्र के आधार पर यह पट्टिका सातवीं शताब्दी की है।

शिमला की पहाड़ियों में उपरोक्त स्थापत्य से मिलते-जुलते अनेक भवन हैं जो सतलुज, गिरी और पब्बर की ऊपरी घाटियों में हैं। इस शैली का दिलचस्प नमूना सराहन स्थिति राजा बुशहर का प्रासाद एवं भीमाकाली का मंदिर है। यह पहाड़ी वास्तुकला का सर्वोत्तम नमूना है। यद्यपि इसके सम्बंध में कोई अभिलेख प्राप्त नहीं होता फिर भी यह निश्चय ही बहुत पुराना है। दूसरे पहाड़ी मकानों की तरह इस मंदिर में भी मिट्टी की चिनाई और देवदार के शहतीरों का इस्तेमाल हुआ है। छत ढलवां और दायीं ओर से नतोदर (कनकेव) है। जो महानुभाव चीनी स्थापत्य से परिचित नहीं वे इसे चीनी स्थापत्य से प्रभावित बताएंगे। यह भवन 1800 वर्ष पुराना

बताया जाता है।

शिमला पहाड़ियों का दूसरा महत्त्वपूर्ण मंदिर चौपाल में सराहन स्थित बीजट का मंदिर है। इसकी पृष्ठभूमि में देवदार का भव्य वन और 11,922 फुट ऊंचा शंक्वाकार चूड़ शिखर है। यह मंदिर दो समानांतर चौकोर आकार के भवनों से बना है जिनकी दीवारों में पत्थर और टिम्बर की प्रत्यावर्ती (आल्टरनेट) तहें हैं। किनारों से ढलवां और बीच से उभरी हुई मंदिर की सलेटी छत की ओरियां लकड़ी के तख्तों से ढकी हैं। इन्हें सजावटदार बनाने के लिए छह इंच लम्बी उत्कीर्ण की हुई मगजियां- जिन्हें घंटियां भी कहा जाता है- तख्तों की निचली धारी पर, बरामदों के नीचे, नाकों अथवा खूंटियों के सहारे टांगी गई हैं। हवा चलने पर ये घंटियां मधुर ध्वनि पैदा करती हैं। शिल्पियों के जहन में घंटियों का विचार सम्भवतः दत की कोरों पर लटकती हिमवर्तिकाओं से आया होगा।

मंदिर में शिल्प के अत्यंत खूबसूरत नमूने भारी संख्या में मौजूद हैं। इसका बंद और खूबसूरत बरामदा छज्जों से सुसज्जित है जिस पर परम्परागत शैली में कार्य हुआ है। इसके निर्माण में मेखों का इसतेमाल नहीं हुआ है जोकि हिमाचली स्थापत्य की अपनी विशेषता है। दरवाज़ों और आलों की चौखटों पर स्थानीय अभिप्राय (मोटिफ) प्रचुर मात्रा में उत्कीर्ण हैं। पुराने जुब्बल का पोरी देवी का अनेक मंजिला मंदिर भी इसी शैली में बना हुआ है।

पिरामिडी छतों वाले मंदिर जुब्बल घाटी की विशेषता है। ऐसे मंदिर हमेशा वर्गाकार कुर्सी पर बनाए जाते हैं। ये प्रायः एक या दो मंजिला हैं। इससे ज्यादा मंजिलें इनमें नहीं होती। इनकी छतें मिस्र के प्राचीन पिरामिडों से मेल खाती हैं।

पुराने जुब्बल के इस मंदिर की चारों निचली ओरियां समान लम्बाई की हैं जो मध्य की ओर उत्तरोत्तर तंग होती जाती है। इससे बीच में पिरामिड की आकृति बन जाती है जो सबसे ऊपर कलश अथवा लकड़ी के छत्र से मंडित रहती है। इस शैली के महत्त्वपूर्ण मंदिर जुब्बल और हाटकोटी में मौजूद हैं। बाद के मंदिर आठवीं शताब्दी के हैं।

हाटकोटी के शिव-दुर्गा के मंदिर की प्रलम्बी छतें स्लेट से आच्छादित हैं। छतों के ऊपर लकड़ी की छतरी है। छत की कार्निसें काठ की फिरकियों से अलंकृत हैं। हर कोने में काठ की घंटियां लटकी हैं। उनके इर्दगिर्द नक्काशी का अच्छा काम किया गया है।

पैगोडानुमा स्थापत्य अन्य स्थापत्य शैलियों में सबसे ज्यादा दिलचस्प है। इसका उद्‌भव हिमालयी स्थापत्य के इतिहास में एक महत्त्वपूर्ण प्रश्न बना हुआ है। पाश्चात्य इतिहासकार इसे चीनी प्रभाव बताते हैं। लेकिन यह भ्रामक है क्योंकि पैगोडा शैली तो सामान्यतः भारत से नेपाल और तिब्बत होती हुई यहीं से चीन और जापान की ओर गई है। कुछ नेपाली कलाकारों को चीन बुलवाया गया था जहां पीकिंग में उन्होंने सातवीं शताब्दी के मध्य प्रसिद्ध श्वेत पैगोडा (मेरू मंदिर) बनाया। यह तथ्य मंदिर पर संस्कृत और चीनी भाषा में उत्कीर्ण एक शिलालेख से स्पष्ट होता है।

कुछ लोगों का कहना है कि यह शैली नेपाल से इस क्षेत्र में आई जहां काठमांडो घाटी में इस शैली के मंदिरों का बाहुल्य है। दूसरों की यह स्थापना है कि यह सम्भवतः ईसा के आरम्भिक युग में भारतीय मैदानों से स्थानांतरित हुई। यह तथ्य औदुम्बर के सिक्कों से भी पुष्ट होता है।

पैगोडा एक ऐसी शैली है जिसके लिए भारतीय कला के इतिहासकारों ने विभिन्न क्षेत्रीय नाम दिए हैं। हिमालयी क्षेत्र के संदर्भ में यदि पैगोडा के सुपरिचित आकार को ध्यान में रखा जाए तो यह बात सहज ही समझ में आ जाती है। हिमालयी पैगोडा शैली की छतें एक दूसरे से स्थापित ढलवां छतें हैं और ऊपर की छतें नीचे की छतों से उत्तरोत्तर छोटी होती जाती है। आधार मंजिल की अंदरूनी दीवारें प्रायः लकड़ी से मढ़ी हुई होती हैं और इससे भंडार-गृह का काम लिया जाता है। इमारत का बाकी हिस्सा कहीं-कहीं लकड़ी से निर्मित है। ओरियां कंकरीट के स्थान पर घड़े हुए पत्थर से आवृत होती है।

हिमाचल प्रदेश के मंडी, कुल्लू, शिमला और किन्नौर क्षेत्रों में पैगोडा शैली के अनेक मंदिर हैं इनमें से कुछेक तो बहुत पुराने कहे जा सकते हैं। मंडी का पाराशर मंदिर, मनाली में डूंगरी का हिडम्बा देवी का मंदिर, नग्गर का त्रिपुरा सुंदरी मंदिर, ड्यार का त्रिजुगी नारायण, कुल्लू घाटी में खोखण का आदिब्रह्मा मंदिर तथा किन्नौर में चगांव और सुंगरा के महेश्वर मंदिर पैगोडा स्थापत्थ्य शैली के कुछ प्रसिद्ध मंदिर हैं।

पाराशर का मंदिर जिला मंडी की एक हरी-भरी घाटी में तैरते हुए भूमिखंडों की एक छोटी-सी झील के किनारे समुद्र तल से 9,000 फुट की ऊंचाई पर स्थित है। इस मंदिर का निर्माण मंडी के राजा बाणसेन- जिसकी मृत्यु 1346 में हुई- द्वारा बताया जाता है।

कुल्लू को इस शैली के सर्वाधिक मंदिरों का क्षेत्र होने का गौरव प्राप्त है। ऐसे मंदिरों में लकड़ी की नक्काशी का सबसे उम्दा काम हुआ है जो हिमाचल प्रदेश में अन्यत्र दुर्लभ है। कुल्लू में इस शैली के कोई सोलह से ज्यादा मंदिर होंगे। इस तरह का आखिरी मंदिर हुरला गांव में सन् 1970 में निर्मित हुआ था। जहां तक बनावट और रूपरेखा का प्रश्न है, इनमें से कुछेक तो अद्वितीय कहे जा सकते हैं। अब तक डूंगरी का प्रसिद्ध चतुर्स्तरीय पैगोडा ही एक ऐसा मंदिर है जिसका शिलालेख के आधार पर तिथि निर्धारण हुआ है।

इस मंदिर का निर्माण 1553 ईस्वी में राजा बहादुर सिंह ने करवाया। इसमें लकड़ी की चार स्तरीय ढलवां छतें हैं। सबसे ऊपर की छत वृताकार है जिस पर पीतल का एक कलश और त्रिशूल जड़ा है। मंदिर 80 फुट ऊंचा है। इसका अग्रभाग परिष्कृत उत्कीर्णो से सुसज्जित है। नक्काशी स्थानीय लोक शैली में है तथा इसमें प्रथागत देवी-देवताओं, हाथियों, पात्रों और बेलबूटों के नमूने उत्कीर्ण हैं।

पैगोडा शैली का एक अन्य उदाहरण शैंशर का पांच स्तरीय छत वाला मनु ऋषि का मंदिर है। नग्गर का त्रिपुरा सुंदरी मंदिर भी इस शैली के आकर्षक मंदिरों में से है। यह त्रि-स्तरीय मंदिर देवदार की लकड़ी से निर्मित हैं क्षेत्र में प्रचलित परिपाटी के अनुसार इसकी सबसे ऊपरी छत वृताकार तथा नीचे की दो छतें विशेषतः गोलमटोल काष्ठ स्तम्भों से विभाजित हैं जिनमें से घाटी में दूर तक फैले भू-दृश्य का अवलोकन किया जा सकता है। मंदिर अपनी वर्तमान अवस्था में 15वीं शताब्दी का हैं।

सतलुज की ऊपरी उपत्यका और खासकर किन्नौर क्षेत्र में पैगोडा शैली के अनेक मंदिर हैं। इनमें भी सुंगरा, कठगांव और चगांव के महेश्वर मंदिर उल्लेखनीय हैं। ऊखा का मंदिर भी दर्शनीय है।

सुंगरा स्थित मंदिर का बुनियादी खाका वर्गाकार है और छत त्रि-स्तरीय है। निम्नतम छत सबसे बड़ी और सबसे ऊपर की गोलाकार है- जो कुल मिलाकर कीप के आकार की है। निम्नतम छत के चौकोर शहतीरों के सिरों पर शेर की पूरे आकार की तस्वीरें बनी हैं।

चौथे प्रकार की शैली पैगोडा और ढलवां छत का सम्मिश्रण है। यह शैली आम तौर पर सतलुज की ऊपरी उपत्यका में पाई जाती है अतः इसे सतलुज घाटी शैली के नाम से भी अभिहित किया जा सकता है। बाहरी सिराज के बाहना महादेव और धनेश्वरी देवी के मंदिर इसके सटीक उदाहरण हैं। यह शैली पब्बर घाटी में भी पाई जाती है।

कुछेक आधुनिक मंदिरों को छोड़कर ज्यादातर पहाड़ी मंदिर पुराने हैं। घाटियों और ढलानों पर बिखरे ये असंख्य मंदिर प्राचीन पर्वतीय धर्म-परम्परा के अनुसार प्रायः शिव, दुर्गा, नाग और अन्य अनेक स्थानीय देवताओं की पूजा-परिचर्या से सम्बंधित हैं। इनमें से कुछेक मंदिरों की प्राचीनता का अंदाजा इस बात से सहज ही लगाया जा सकता है कि यद्यपि काठ की नक्काशी और कुछेक मुख्य भागों का समय-समय पर जीर्णोद्धार किया जाता रहा है- मंदिर के गर्भगृह प्रायः बिना किसी जीर्णोद्धार के अब भी वैसे-के-वैसे ही बने हुए हैं।

भारतीय कला और संस्कृति की परम्परा 3,000 वर्ष पुरानी है। ईसा से 15वीं शताब्दी पूर्व आर्यों ने पूरे उत्तर भारत में अपना अधिपत्य स्थापित कर लिया था। आर्य-काल लगभग 1400 ईसा पूर्व से 750 ईसवी बाद अर्थात् मध्यकालीन हिंदुयुग के उदय तक माना जाता है। इस लम्बी कालावधि में अनेक राजा आए और गए। ब्राह्मणवाद, बौद्ध धर्म और जैन धर्म जैसे अनेक सम्प्रदायों का प्रसरण हुआ। पर इन सबसे महत्त्वपूर्ण जो बात हुई, वह थी, भा-आर्य कला का एक परिष्कृत कला के रूप में विकास।

भारतीय कला और संस्कृति की परम्परा 3,000 वर्ष पुरानी है। ईसा से 15वीं शताब्दी पूर्व आर्यों ने पूरे उत्तर भारत में अपना अधिपत्य स्थापित कर लिया था। आर्य-काल लगभग 1400 ईसा पूर्व से 750 ईसवी बाद अर्थात् मध्यकालीन हिंदुयुग के उदय तक माना जाता है। इस लम्बी कालावधि में अनेक राजा आए और गए। ब्राह्मणवाद, बौद्ध धर्म और जैन धर्म जैसे अनेक सम्प्रदायों का प्रसरण हुआ। पर इन सबसे महत्त्वपूर्ण जो बात हुई, वह थी, भा- आर्य कला का एक परिष्कृत कला के रूप में विकास।

भा-आर्य वास्तुकला

भारतीय इतिहास के इस कालखंड में बहुत से साम्राज्यों की स्थापना भी हुई और उनका अंत भी। इनमें से एक था मौर्य साम्राज्य। मौर्यो में सबसे प्रसिद्ध राजा अशोक (273-232 ई. पूर्व) हुआ है जिसने बौद्ध धर्म के प्रसार के लिए सर्वाधिक प्रयास किए हैं। तीसरी बौद्ध परिषद् का आयोजन उसी के समय में हुआ था। अशोक मौर्य के समय सम्मानित बौद्ध भिक्षुओं के मिशन हिमालय-क्षेत्र को भी भेजे गए थे। इनमें भी मज्झन्तिक और मज्झमिक के नाम उल्लेखनीय है। मज्झन्तिक को कश्मीर तथा गंधार और मज्झमिक को दूसरे हिमालयी क्षेत्रों में भेजा गया।

हिमालयी क्षेत्रों की ओर आने वाला भिक्षुओं का दल अपेक्षतः बड़ा था। इसमें कस्सपगोत्त, धुन्धिभिस्सर, सहदेव और मुलकदेव नाम के चार भिक्षु सम्मिलित थे। ये भिक्षु अपने साथ भारतीय कला-परम्परा को लाए तथा इन्होंने हिमालय-क्षेत्र में अशोक के नाम पर कुछेक स्तूपों का निर्माण करवाया। इनमें से एक स्तूप कुल्लू घाटी में था जिसके बारे में हमें ह्यून-त्सांग के लेखों से पता चलता है। यह चीनी यात्री 630-645 ईसवी में भारत आया था। शायद इन्हीं भिक्षुओं ने यमुना और टौंस नदी के संगम पर स्थित अशोक का कालसी लेख भी उत्कीर्ण करवाया।

मौर्य साम्राज्य के बाद की शताब्दियों में उत्तर भारत में कई छोटी-बड़ी राजशाहियां स्थापित हुईं। इन्होंने हिमालयी क्षेत्र की कला के विकास को समय-समय पर प्रभावित किया। इनमें कुषाण (50 ई. पू.-210 ई.) भी थे। कनिष्क इनमें सबसे प्रभावशाली राजा था। उसका शासन मध्य एशिया से लेकर मथुरा तक फैला हुआ था। पश्चिमी हिमालय का क्षेत्र उसके अधीनस्थ था। कुषाणों के कलात्मक प्रतिमान का प्रभाव निश्चय ही इस क्षेत्र पर भी पड़ा।

कांगड़ा, जो कि प्राचीन काल में त्रिगर्त के नाम से जाना जाता था। इस काल के पुरावशेषों से भरा पड़ा है। खनियारा का दूसरी शताब्दी का लेख एक विहार की आधारशिला की जानकारी देता है जिसे कृष्णयश नामक एक व्यक्ति ने निर्मित करवाया। चेड़ी में एक मंदिर की नींव मिली है जिसमें बड़े आकार के पत्थरों और उनको बांधने के लिए लोहे के शिकंजों का प्रयोग किया गया है।

यहां प्राप्त एक मूर्त्याधार से यह पता चलता है कि इस पर वज्रवाराही की मरीची देवी की मूर्ति बनी हुई होगी।

इससे यह सिद्ध होता है कि यह मंदिर निश्चय ही कभी बौद्ध-पीठ रहा होगा। लेख पर कोई तिथि नहीं दी गई है जिसे सम्भवतः पांचवीं और छठी शताब्दी के बीच निर्धारित किया जा सकता है। गुप्तकाल- जो कि चौथी शताब्दी के आरम्भ से लेकर सातवीं शताब्दी के मध्य तक माना जाता है और जिसे भारतीय इतिहास का स्वर्णयुग कहा जाता है- का एक भी स्मारक हिमाचल में दृष्टिगोचर नहीं होता।

657 ईसवी में हर्ष की मृत्यु के बाद इस भारतीय स्वर्णयुग का अंत हुआ और हिंदू युग के बाद आया राजपूत युग। इस परम्पराधर्मी युग की प्रमुख विशेषता थी राजपूत-वर्ग का उदय। राजपूतों ने उत्तर भारत के इतिहास और कला के विकास में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। विभिन्न राजपूत वंशों से सम्बंधित मुखियाओं ने आठवीं और नवीं शताब्दी के दौरान नए राज्यों की स्थापना की। हर्ष की मृत्यु और 12वीं शताब्दी में मुसलमानों के आगमन के बीच के साढ़े पांच सौ वर्षों को राजपूत-काल कहा जा सकता है।

इस अंतराल में अनेक राजपूत राजशाहियां स्थापित और समाप्त हुईं। उत्तरी भारत राजनीतिक परिवर्तन का एक तूफानी समुद्र बना हुआ था। कुछेक राजशाहियां ही साम्राज्य के स्तर तक पहुंचीं जबकि बहुधा उन पर आश्रित राज्य ही बनी रहीं। बहुत-सी ऐसी भी थीं, जिन्होंने अपने समय में हिमाचल तक पूरे भारतवर्ष पर अपना अधिपत्य जमाया, जिन्होंने विजित प्रदेश में अपने वंशजों को स्थापित किया तथा उन्हें मैदानों से इस ओर आने का निमंत्रण दिया। उनके साथ कलाकार, कारीगर, दुर्ग-निर्माता, सिपाही आदि भी स्थानांतरित हुए। ये लोग अपने साथ गुप्तोत्तर युग की कला और स्थापत्य को भी लाए।

समय गुजरने के साथ-साथ यहां के मूल निवासियों ने प्रवासियों से उनकी कला का ज्ञान प्राप्त किया तथा उसे सुंदर मंदिरों और मूर्तियों के रूप में कार्यान्वित किया जो कि आज भी हिमाचल प्रदेश में यत्र-तत्र देखने को मिलता है।

हिमाचल में शिखर शैली के अनेक मंदिर हैं। ये बहुधा आठवीं शताब्दी के बाद से लेकर पंद्रहवीं शताब्दी तक के कालांतर में निर्मित हुए। ये प्रायः नगरों और घनी आबादी वाले क्षेत्रों में पाए जाते हैं। नगरों में अवस्थित होने के कारण इन्हें नागर शैली के मंदिरों के नाम से जाना जाता है।

नागर मंदिरों की दो उपशैलियां हैं। एक शैली के अंतर्गत ऐसे मंदिर आते हैं जिनमें एक गर्भगृह है। इस गर्भगृह में मुख्य देवता की मूर्ति प्रतिष्ठित रहती है। मंदिर में कोई मंडप नहीं। कुल्लू में बजौरा का विश्वेश्वर मंदिर ऐसा ही एक मंदिर है।

इन मंदिरों में अकसर दो स्तम्भों पर खड़ा एक सजावटदार द्वार-मंडप भी होता है। दो स्तम्भ न हों, ऐसे द्वार मंडप भी हैं।

दूसरी शैली के मंदिरों में मंडप बना होता है। प्रतिमा अंदर गर्भगृह में रखी होती है। ऐसे मंदिरों में कांगड़ा घाटी में बैजनाथ स्थित वैद्यनाथ और मंडी के पंचवक्त्र और त्रिलोकीनाथ मंदिर आते हैं। इन मंदिरों का निर्माण सम्भवतः पंद्रहवीं और सोलहवीं शताब्दियों में हुआ।

चम्बा और अन्य पर्वतीय क्षेत्रों में स्थित नागर मंदिरों में आमलक के ऊपर तथा चारों ओर लकड़ी अथवा जस्त का एक छत्राकार आवरण शिखर-चोटी पर होता है। अनुपयुक्त लगने वाला यह ढांचा भरी बर्फ से इमारत की रक्षा करता है। इससे यह भी स्पष्ट होता है कि नागर मंदिरों का उद्भव मैदानों में हुआ है और पर्वतीय क्षेत्रों में उक्त शैली का प्रवेश बहुत बाद में हुआ।

हिमालयी क्षेत्र में नागर अभिकल्पना के सबसे पुराने उदाहरण सम्भवतः कांगड़ा घाटी में मसरूर के एकाश्म (मोनोलीथिक) मंदिर हैं। इन मंदिरों को चट्टान में तराशा गया है और इनमें आरम्भिक नागर मंदिरों की सभी विशेषताएं परिलक्षित होती हैं। ये सम्भवतः आठवीं शताब्दी के हैं।

मसरूर के मंदिर विशेष रूप से इसलिए भी उल्लेखीनय हैं क्योंकि शिला में उत्कीर्ण वेदियां, जो कि पश्चिम और दक्षिण भारत में आम फहम हैं, हिमालय क्षेत्र में सर्वथा अनजानी हैं।

मसरूर में भा-आर्य स्थापत्य की शिखर शैली के पंद्रह मंदिरों का समूह है जो कि तराशों के सजावटदार नमूनों से भरपूर है।

मुख्य वेदिका को ठाकुरद्वारे के नाम से जाना जाता है। इसमें तीन प्रतिमाएं हैं जिन्हें राम, लक्ष्मण और सीता की मूर्तियां बताया जाता है। सरदल (लिटल) पर शिव की आकृति से यह लगता है कि यह मंदिर मूलतः महादेव को समर्पित रहा होगा।

इस कोटि के अन्य मंदिरों में चम्बा के मणिमहेश, भरमौर, त्रिविष्णु तथा त्रिशिव के मंदिर, लाहौर के त्रिलोकीनाथ, बजौरा के विश्ववेश्वर, नग्गर के गौरी शंकर; जगतसुख के संध्या गायत्री देवी, निरथ के सूर्य तथा हाटकोटी के अनेक मंदिर आते हैं। इन मंदिरों का निर्माण आठवीं और दसवीं शताब्दी के मध्य हुआ।

हाटकोटी की तीन मील की परिधि में अनेक मंदिर हैं। इसीलिए इस घाटी को मंदिरों की घाटी भी कहा जाता है।

हाटकोटी की वास्तुकला के उत्कृष्ट नमूनों में एक अलग शैली उभर कर सामने आई है, जिसे जुब्बल कला-शैली कहेंगे। मंदिरों की बाहरी भित्तियों पर ठोस नमूने और सुंदर तराशी का काम जुब्बल के अनजाने वास्तुकारों की कुशलता को प्रतिबिम्बित करता है।

इनमें से बहुत से मंदिरों के अवशेष घाटी में यहां वहां बिखरे हैं। ऐतिहासिक और सांस्कृतिक महत्त्व के ये अवशेष गौरवमय अतीत तथा उस प्राचीन भारतीय कला व संस्कृति को उद्घोषित करते हैं जो किसी समय हिमालय की ऊंची वादियों में प्रसरित रही।

हिमाचल प्रदेश में मंडप वाले नागर मंदिर बहुत कम हैं। इन मंदिरों में भी वैद्यनाथ (कांगड़ा), त्रिलोकीनाथ और पंचवक्त्र महादेव (मंडी) के मंदिर उल्लेख्य हैं। इनका निर्माण बाद में हुआ।

वैद्यनाथ मंदिर में शारदा लिपि में उत्कीर्ण लेख के अनुसार मंदिर का निर्माण मनयुक और आहुक नामक दो व्यापारी भाइयों ने 1204 ई. में करवाया। मंडप की छत चार बड़े स्तम्भों पर टिकी है जोकि उठी हुई शाखाओं से जुड़े हैं और जो मंदिर गर्भ के प्रवेश तक एक मार्ग-सा बनाते हैं। इन स्तम्भों पर के प्रस्तरपाद (आर्किट्रेव) सीलिंग के विस्तार को कक्षों में बांटते हैं जोकि टोडेदार पत्थर की शिलाओं से उन्मीलित हैं।

मंडप के आगे एक शानदार द्वार-मंडप है जो चार स्तम्भों पर खड़ा है। मंडप की उत्तरी और दक्षिणी दीवारों पर एक-एक छज्जेनुमा खिड़की है। चारों कोनों को भारी पुश्तेनुमा प्रक्षेप से सुदृढ़ बनाया गया है जो कि अर्ध-जड़ित लघुशिखर मंदिरों के आकार के हैं। प्रत्येक में दो आले बने हुए हैं जिनमें मूर्ति शिलाएं रखी हैं।

स्थापत्य की विशेषताओं से परिपूर्ण ये मंदिर पर्वतीय संस्कृति के अनगाहे अतीत और देश के मैदानी क्षेत्रों के बीच एक कड़ी है, यद्यपि सादृशता का यह सूत्र बहुत ही महीन है। ये मंदिर सातवीं से पंद्रहवीं शताब्दी के बीच की भारतीय कला और संस्कृति को प्रकाशित करते हैं।

मैदानों में जबकि ये स्मारक क्रमिक आक्रमणों का शिकार हुए, पहाड़ी क्षेत्रों में ये सुरक्षित बने रहे। इस संदर्भ में देश की थाती के मूल्यांकन के लिए ये एक महत्त्वपूर्ण स्थानापन्न साबित हो सकते हैं।

किन्नौर, लाहौल और स्पीति का हिमालय पार का क्षेत्र भा-आर्य और मंगोल जातियों का मिलन-स्थल है। यहां के निवासियों में यद्यपि दोनों जातियों की विशेषताएं हैं फिर भी भा-आर्य तत्त्व कुछ अधिक ही मुखर है। इस भूमि के आरम्भिक प्रवासी सतलुज और चनाब की निम्न घाटियों से ऐतिहासिक काल की शुरुआत में यहां स्थानांतरित हुए। किन्नौर और स्पीति के उत्तरी छोर पर मंगोलाकृति के लोग रहते थे। इस जाति के लोग आरम्भिक काल में उत्तर-पूर्व की ओर से आए थे। स्पीति के लोगों के वंश-नाम इस बात को स्पष्ट करते हैं कि इनमें से अधिकांश जन्स्कर, लद्दाख और गिलगित से आए होंगे। बाद के समय में कुछ लोग साथ लगने वाले पश्चिमी तिब्बत के इलाके से भी आए। राजनीतिक परिस्थिति और आर्थिक समस्याओं ने ही सम्भवतः इन लोगों को अपेक्षतः ज्यादा सुरक्षित स्थानों पर आने के लिए विवश किया होगा।

किन्नौर, लाहौल और स्पीति का हिमालय पार का क्षेत्र भा-आर्य और मंगोल जातियों का मिलन-स्थल है। यहां के निवासियों में यद्यपि दोनों जातियों की विशेषताएं हैं फिर भी भा-आर्य तत्त्व कुछ अधिक ही मुखर है। इस भूमि के आरम्भिक प्रवासी सतलुज और चनाब की निम्न घाटियों से ऐतिहासिक काल की शुरुआत में यहां स्थानांतरित हुए। किन्नौर और स्पीति के उत्तरी छोर पर मंगोलाकृति के लोग रहते थे। इस जाति के लोग आरम्भिक काल में उत्तर-पूर्व की ओर से आए थे।

उपलब्ध ऐतिहासिक, जीवाष्मीय और मुद्रा विषयक प्रणाली के आधार पर यह कहा जा सकता है कि बहुत पुराने समय में स्पीति पर उन हिंदू वंश के राजाओं का अधिपत्य था जिन्हें 'सेन' के कुल-नाम से जाना जाता था। इनमें से एक राजा का नाम समुद्र सेन था। इस राजा के समय की 7वीं शताब्दी की ताम्र पट्टिका निरमंड के मंदिर में मौजूद है। रुद्र पाल (600-650 ई.) के शासन में कुल्लू दो पीढ़ियों तक स्पीति राज्य का दाता राज्य बना रहा। दसवीं शताब्दी में स्पीति श्रीहीन हो गया था। बुशहर-किन्नौर राज्य की परम्परात्मक स्थापना भी ईसा पूर्व के युग तक जाती है।

जैसा कि पहले भी कहा गया है, भारत और उससे बाहर बौद्ध धर्म का विस्तार करने में अशोक की निर्णायक भूमिका रही है। वह एक उत्साही बौद्ध शासक था जिसका शासन पश्चिम में कंधार और उत्तर में सिंधु नदी के पार तक फैला हुआ था। चीनी और तिब्बती प्रमाणों के अनुसार उसके साम्राज्य का विस्तार खोतान तक था। अशोक की ही तरह कुषाण राजा कनिष्क (7वी-8वीं ई.) भी बौद्ध धर्म और विद्वानों का संरक्षक रहा। उसने अपने साम्राज्य का विस्तार मध्य एशिया से लेकर बनारस और दक्षिण में सांची तक किया।

खलत्से में ए.एच. फ्रैंक द्वारा खोजा गया खरोष्ट्री में उत्कीर्ण उसका एक शिलालेख यह दर्शाता है कि उत्तर-पूर्व में उसका साम्राज्य तिब्बत के सीमांत तक फैला था।

इस काल में भी यह धर्म अपनी कला सहित उत्तरी भारत से नदी घाटियों के जरिए लद्दाख, लाहौल-स्पीति और किन्नौर के पश्चिमी हिमालय क्षेत्र तक पहुंचा और वहां से मध्य एशिया, चीन और तिब्बत तक फैला। चीनी-बौद्ध यात्री ह्यून-त्सांग द्वारा 635 ई. में कुल्लू और लाहौल की यात्रा इस बात को प्रमाणित करती है कि यहां बौद्ध धर्म तिब्बत से पहले अस्तित्व में था।

सातवीं शताब्दी के दौरान भारत में बौद्ध धर्म का पतन हुआ और हिंदू धर्म पुनः जीवित हुआ। तिब्बत में राजा स्रोंग-त्सन-गैम्पो (627-640 ई.) का उदय हुआ जिसने चीनी और नेपाली राजकुमारियों से विवाह किया। ये राजकुमारियां बौद्ध धर्म की कट्टर अनुयायी थीं जिसके फलस्वरूप तिब्बत पहली बार इस धर्म के सम्पर्क में आया। इस राजा ने तिब्बती लिपि का अंतिम रूप से निर्धारण करने के लिए 632 ई. में सम्भोटा नामक एक मंत्री को कुछेक विद्यार्थियों सहित लिपियों के अध्ययन के लिए कश्मीर भेजा। ये लोग किस मार्ग से वहां पहुंचे यह तो मालूम नहीं। अनुमान है कि यह अध्ययन दल ऊपरी सतलुज घाटी और स्पीति

और चंद्रभागा घाटियों से होता हुआ कश्मीर गया होगा क्योंकि यह रास्ता ज्यादा सुरक्षित और सुविधाजनक प्रतीत होता है। बाद के समय में पद्मसंभव और रिन्-चेन-सांग-पो (958-1055 ई.) द्वारा भी यही मार्ग अपनाया गया।

रिन-चेन्-सांग-पो तीन बार भारत आया और कुल मिलाकर 17 वर्ष तक यहां रहा। उस द्वारा अपनाए गए मार्ग ने उसे या तो निम्न सतलुज घाटी क्षेत्र में पहुंचा दिया होगा और उसके बाद ब्यास घाटी के पर्वतांचल और कश्मीर के उत्तर-पश्चिम में अथवा स्पीति और चंद्रभागा घाटी लांघते हुए। अनेक मंदिरों का निर्माण उसके नाम के साथ जुड़ा हुआ है। लोक विश्वास के अनुसार उसने अपने जीवन काल के दौरान पश्चिमी हिमालय में 108 विहारों का निर्माण करवाया। गुगे के राजा ये शेडो और लद्दाख के रजा ल्हे-बु-ब्यानगी-चुब-सनास-दपा ने उसे वित्तीय सहायता प्रदान की। इस कार्य को सम्पन्न करने के लिए रिन्-चेन-सांग-पो ने कश्मीरी और तिब्बती कलाकारों का सहयोग लिया जिन्होंने भारतीय और तिब्बती प्रभावों के अंतर्गत अनेक मठों और मंदिरों का निर्माण किया।

लाहौल, स्पीति और किन्नौर स्थित जिन विहारों का निर्माण रिन-चेन्-सांग-पो और उसके समय से जुड़ा है उनमें ताबो, धमार-खा का ल्हा-लुन-ना-थाओ ल्हाब्रान', स्पीति में किगि-ख्यिम का ब्डोर-ल्हा, -रो-पग, कानम्, चीनी के समीप हु-बु-लांग-कार, नाको का लोत्से-बाही-ल्हा-खान, किन्नौर में ख्याहर का ल्हा-ब्रेन और लाहौल का गमुर है। मगर रिन-चेन्-सांग-पो ने ही 11वीं शताब्दी में सब मंदिरों और विहारों का निर्माण करवाया हो ऐसी बात नहीं, बखाह-रगिडपा सम्प्रदाय के भिक्षुओं ने भी ऐसे मंदिरों और विहारों का निर्माण करवाया था। अनेक मंदिरों और विहारों के मामले में यह स्पष्ट नहीं है कि दोनों में से अमुक किसने बनवाया होगा।

यहां यह स्पष्ट कर देना होगा कि लाहौल, स्पीति और किन्नौर में पाए जाने वाले केवल ग्यारहवीं शताब्दी के मंदिर ही अति प्राचीन या आरम्भिक नहीं। लाहौल का गंधला मंदिर पद्मसम्भव के समय से सम्बंधित है।

बौद्ध मंदिरों में एक अथवा अनेक सभा-भवन हैं। दीवारें धूप में सुखाई गई ईंटों से बनी हैं। छतें समतल हैं तथा वे लकड़ी की कड़ियों और स्तम्भों पर टिकी हुई हैं। दरवाजा प्रायः पूर्व की ओर खुलता है। विहार भव्य और ऊंची जगह पर बने हैं। ये गांव से दूर होते हैं जिनमें प्रार्थनालय, भोजनालय और भंडारण की सुविधा भी रहती है। इनके चारों ओर छोटे-छोटे प्रकोष्ठ होते हैं जिनमें भिक्षु रहते हैं। हर विहार में सामान्यतः दो अथवा तीन प्रार्थनालय होते हैं- एक सर्दियों के लिए, दूसरा गर्मियों के लिए और तीसरा मुख्य लामा के लिए। दीवारों पर भीतर की ओर चित्र और थांके बने हुए हैं।

स्पीति स्थिति ताबो विहार इन सब विहारों में महत्त्वपूर्ण है। यह सात मंदिरों का एक समूह है। मंदिर में पाए जाने वाले एक अभिलेख के अनुसार इसका निर्माण 996 ई. में रिन्-चन्-सांग-पो द्वारा किया गया। इस मंदिर की इमारत स्पीति नदी के ऊपर एक समतल पीठिका पर अवस्थित है। बिहार ऊंचे स्थल पर बने हुए हैं जिनमें किन्नौर के ढांकर, की, ल्हा-लुन, नाको, पू, लियो, चांगो तथा लाहौल के गुरु घंटाल, करदङ, शाशुर, तयुल, गमुर, कंगनी, गुमरङ और जुतिङ के विहार उल्लेखनीय हैं।

विहारों और मंदिरों के अतिरिक्त यहां 'छोस्तेन' भी हैं। ये विशिष्ट इमारतें स्तूपों से ली गई हैं जिनका प्रसार इन ऊंचे पठारों में उस समय हुआ जब महायान सम्प्रदाय में नए विचार और भारतीय स्थापत्य की नई अवधारणाएं प्रवेश पा रही थीं। छोस्तेन का आकार-प्रकार प्राचीन बौद्ध अवधारणाओं से भिन्न है। 'छोस्तेन' शब्द का अर्थ है 'आधान अथवा पूजा' की जगह।

छोस्तेन का मूल ढांचा एक वर्गाकार आधार तल, गुम्बद और तेरह शुंडाकार सीढ़ियों से निर्मित होता है। आधार तल पृथ्वी, गुम्बद जल और सीढ़ियां अग्नि के प्रतीक हैं। ये सीढ़ियां रूढ़ शैली में बने हुए एक छत्र तक पहुंचती हैं। छत्र वायु का प्रतीक है जो कि छोस्तेन के शिखर पर आकाश की परिधि से आवेष्ठित रहता है। छोस्तेन के मुकुट पर सूर्य और चंद्रमा का 'युगल प्रतीक' बना होता है।

छोस्तेन की सीढ़ियां एक वर्गाकार तल तक पहुंचती हैं जिसे सिंहासन कहा जाता है। इस पर चौड़ाई में कम होती हुई चार और पादानें होती हैं जिन पर एक गोलाकार पात्र तथा नौ से तेरह तक चक्र होते हैं।

छोस्तेन आठ प्रकार के हैं। ये जन्म से निर्वाण तक बुद्ध की जीवन लीलाओं को चित्रित करते हैं। ये प्रायः विहारों के इर्द-गिर्द अथवा यात्री मार्गों पर बने होते हैं।

इस प्रकार हम देखते हैं कि हिमाचल तीन विभिन्न कलाओं और संस्कृतियों का संगम है तथा यह धार्मिक सहिष्णुता का उदाहरण प्रस्तुत करता है।

(हिमप्रस्थ, जनवरी-मार्च, 1981 के अंकों में प्रकाशित)



हिमप्रस्थ के धरोहर पन्नों से

कांगड़ा कला खोज की पृष्ठभूमि

• महेन्द्र सिंह रंधावा

गांव का स्वर्ग 1924 में छूट गया, और मैं लाहौर से मिशन कॉलेज में भरती हो गया और 1926 में गवर्नमेंट कॉलेज में। यहां अमीरों के लड़के बड़े सूट-बूट पहनकर आते और नाक भी रेशमी रूमाल से ही पोंछते। लाहौर का किले-जैसा डरावना रेलवे स्टेशन मुझे हमेशा उदास कर देता। जब कभी बौटनी की प्रयोगशाला से अवकाश मिलता, तो मैं लाहौर के अजायबघर में चला जाता। यह गुम्बद वाली इमारत, जिसके सामने भंगियों की तोप गड़ी हुई है, बड़ी विचित्र-सी है, ढालों, तलवारों, पुरानी बंदूकों और भी कई छुट-पुट चीजों से भरी हुई। प्रवेश-द्वार के पास शीशे की अलमारियों में कुछ तसवीरें लगी हुई थीं। इन चित्रों के लाल, हरे, नीले और पीले रंग मुझे सदा अपनी ओर आकर्षित करते, इनमें राजा-रानियों के साथ, बादलों के सुंदर दृश्य देखने को मिलते; तो कहीं भवनों की छत पर गर्दन उठाए और बादलों से प्यार कर रहे होते; और कहीं कुओं पर स्त्रियां घड़े लिए हुए पानी भर रही होतीं! इन चित्रों में, चित्रकार ने ग्राम्य जीवन को इतने प्यार और उत्साह से दर्शाया था कि इनको देखकर मुझे अपना गांव याद आ जाता। पूछने पर पता चला कि ये चित्र हमारे पड़ोसी जिले कांगड़ा में अठारवीं और उन्नीसवीं शती में चित्रित किए गए थे।

सन् 1933 में मैंने आई.सी.सी. की परीक्षा पास की और दो साल लंदन में काटे। गांव की शांति की तुलना में लंदन के यातायात के कोलाहल से भी घबरा गया। डामर से पुती सड़कें और धुएं से काली हुई पत्थर की इमारतें, जो सिर उठाकर सूरज की रोशनी और खुली हवा को ढूंढने की व्यर्थ कोशिश कर रही थीं, बड़ी निराश-सी दिखाई देतीं। मन में कई बार उमंग उठी कि किसी खुली जगह निकल जाऊं और धरती माता के दर्शन करूं। जब हैम्प्सटैड द्वीप में मैंने हरी घास और मिट्टी देखी तो बड़ी खुशी हुई। मिट्टी का डला हाथ में लेकर यों लगा जैसे अपने गांव की धरती की निशानी हाथ लग गई हो। इनसान इसलिए नहीं बना कि कुर्सियों पर बैठे और मकान की चारदिवारी में बंदी होकर रह जाए। जब मनुष्य का प्रकृति से सम्बंध छूट जाता है तो वह घुलने लगता है और उसमें वे सब गुण, जो मिट्टी, हवा और धूप पैदा करती है; लुप्त होने शुरू हो जाते हैं। गांव के लोग आम तौर पर मिलनसार, हृदय और सच्चे होते हैं। और यह गुण प्रकृति से, नित्य का निकट सम्बंध ही पैदा करता है। इन लोगों को उठाकर पक्के शहरों में डाल दो तो यही चालाक, धोखेबाज, झूठे, तंगदिल और कुटिल बन जाते हैं।

किसी ने मुझसे पूछा था कि भारत के ग्रामीणों और पश्चिम के वासियों में बड़ा अंतर क्या है? मैंने उत्तर दिया कि हमारे भीतर दिल है, मोहब्बत है, और हम एक-दूसरे के दुख-सुख के साझी होते हैं; और वे लोग चाहे चतुर और मेहनती हैं, पर बड़े कोरे हैं जिन्हें अपने को छोड़कर कोई और दिखाई नहीं देता। इनके फूलों में रंग तो है पर सुगंधित नहीं। अगर कुछ एक में सुगंधि है भी तो केवल नाम-मात्र की। हमारे फूलों में रंग चाहे न हो, सुगंधि अवश्य होती है। पश्चिम के लोगों के बारे में पूरणसिंह ने ठीक ही अनुभव किया था कि यहां मुश्किल से ही कोई दिल वाला दीखता है। स्त्री-पुरुष और मां-बेटे के बीच एक गहरी-सी अदृश्य खाई है। पड़ोसी का पड़ोसी से कोई सम्बंध नहीं। हर अंग्रेज का घर उसका किला होता है, इसकी फसीलें मजबूत और ड्योढ़ी का द्वार मजबूत ताले से बंद होता है। पहले तो कोई एक-दूसरे के घर बिना बुलाए जाता नहीं, यदि कोई भूला-भटका चला ही जाए तो कोई पानी तक को नहीं पूछता। एक-दूसरे के प्रति ये इतने कोरे हैं कि मुझे हैरानी होती थी। अगर इनको रेलगाड़ी में बैठा देखा तो और भी अचम्भ होता है। हर आदमी अखबार के पीछे मुंह-छिपाए बैठा होता है। कोई साल-भर बाद, मुझे इस ठंडी-सुन्न और बलगमी स्वभाव की दुनिया का अनुमान हुआ। ठीक है, लंदन चाहे लाखों पुरुषों-स्त्रियों से भरा है; पर एक विदेशी के लिए, जिसका कोई दोस्त, मित्र न हो, यह अरब के मरुस्थल से भी सूनी जगह है।

मुझे जब भी पढ़ाई से फुरसत मिलती आर्ट गैलरियों और

ब्रिटिश म्यूजियम में चला जाता। वहां कांगड़ा का एक चित्र देखकर बड़ी खुशी हुई और गांव याद आ गया। यह चित्र 'वासक सज्जा' नायिका है और म्यूजियम वालों ने इसके कार्ड भी छापे हुए हैं। एक सुंदरी लाल घाघरा पहने और नीला दुपट्टा ओढ़े, पत्तों की सेज पर नदी किनारे बैठी है। वह अपने प्रियतम की प्रतीक्षा में है। यदि फूलदार झाड़ियां हैं, और चंद्रमा आकाश को सुशोभित कर रहा है। इस चित्र में भारतीय नारी की सुंदरता और कोमलता बड़ी कारीगरी से दिखाई गई है। जब कभी अकेले बैठे हुए इस चित्र का ध्यान आता कि प्यार की वह जोगन प्रेम में डूबी हुई, अपने प्रियतम का अभी तक इंतजार कर रही होगी, तो दिल में टीस-सी उठती और कांगड़ा के चित्र, जो मैंने लाहौर में देखे थे, फिर से याद आ जाते?

दो वर्ष बाद स्वदेश लौटा और अक्तूबर 1934 में मुझे जिला सहारनपुर में असिस्टैंट कलैक्टर नियुक्त किया गया। इस जिले के देहातों की गरीबी देख कर दिल में जोश आया कि इनके सुधार का काम किया जाए। उन दिनों अंग्रेजों का बोलबाला था, और कोई अफसर दम नहीं भर सकता था। वे दिखावे का ग्राम-सुधार ही चाहते थे, असली नहीं। अगर कोई लगन के साथ काम करता तो उसको दिल से नफरत करते, चाहे मुंह से कुछ न कहते। अंग्रेज अफसरों की परवाह न करते हुए मैंने यह काम सहारनपुर, फैजाबाद और अल्मोड़ा के जिलों में खूब उत्साह से किया और लोगों में एक लहर पैदा कर दी।

इन्हीं दिनों लाहौर से चालीस प्रतिशत कांगड़ा-शैली के चित्र, पंजाब म्यूजियम शिमला में आ गए। यह भारत के पंजाब के लिए, लाहौर म्यूज़ियम के कला- भंडार का भाग था। इनमें से बहुत-से चित्र बड़े सुंदर थे। मैंने सोचा कि साठ प्रतिशत कमी चित्रों की बांट के कारण हो गई है, उसको पूरा किया जाए।

1938 में मेरा तबादला अल्मोड़ा हो गया। यह पहाड़ी जिला संस्कृति और कला का केंद्र बना हुआ था और बहुत-से पश्चिमी कलाकार, विद्वान और योगी यहां कालीमठ के पहाड़ पर रहते थे। यहां मेरी भेंट बरूस्टर नामक एक अमरीकी कलाकार से हुई। शनिवार और रविवार, मैं उन्हीं के यहां व्यतीत करता। वहां से बिनसर के पहाड़ों, और नैना देवी तथा नंदाकोट की बरफानी चोटियों के अत्यंत सुंदर दृश्य दिखाई देते। बरूस्टर साहब ने कुमाऊं की वनस्पतियों, पहाड़ों और मंदिरों के बड़े भव्य चित्र बनाए थे। ये मेरे मन को बहुत भाते। 1940 में मुझे इलाहाबाद बदल दिया गया, और बरूस्टर की कला पर मैंने एक छोटी-सी किताब लिखी। कला के सम्बंध में यह मेरी पहली पुस्तक थी और मुझे इस बात का बड़ा मान था कि कला के पारखियों में अब मेरा भी नाम जुड़ गया है।

1942 में जब मैं रायबरेली का डिप्टी कमिश्नर था, जी में आया कि अपनी पुस्तक की प्रतियों के बदले कला के अन्य विद्वानों से कला-साहित्य इकट्ठा किया जाए। इसी सिलसिले में बंगाल के कला-पारखी अर्धिन्द्र गंगोली को मैंने अपनी किताब भेजी और बदले में उसकी एक छोटी-सी पुस्तक, जिसमें कांगड़ा शैली के चित्र थे, भेजने का अनुरोध किया। कुछ दिनों बाद गंगोली का पत्र आया। उसमें लिखा था, "आपकी किताब किसी काम की नहीं। आपको मालूम ही नहीं कि भारतीय कला है क्या? यदि आप कांगड़ा शैली के चित्र देख पाएं तो आपको पता चले कि कला किसको कहते हैं?" अपनी किताब की निंदा पढ़कर बड़ा क्रोध आया और गंगोली के पत्र टुकड़े करके मैंने बाहर फेंक दिया। गुस्सा चाहे बहुत था, पर उसकी कांगड़ा-कला की उत्कृष्टता की बात मेरे मन में जैसे गड़-सी गई। 1945 में, मैं इंडियन कौंसिल ऑफ एग्रीकल्चरल रिसर्च का सेक्रेट्री बनकर दिल्ली आया और देश के बंटवारे तथा आज़ादी के बाद, अपना नाम उत्तर प्रदेश से बदलवाकर पंजाब में लिखवा दिया। 1948 में जब पंजाब आया तो टूटे-फूटे, धूल में मिले, लहू-लूहान पंजाब में यहां-वहां, हर कहीं शरणार्थी कैम्प ही दिखाई देते। 1949 में पंजाब सरकार ने जमीन की बांट का काम मुझे सौंपा। यह काम मैंने त्रिलोकसिंह और प्रेमनाथ थापर के साथ मिलकर किया। उजड़े हुओं को बसाकर, और कई नई योजनाएं बनाकर मुझे बड़ा संतोष हुआ। कांगड़ा में 'वार टी एस्टेट' नाम से चाय बागान है। कांगड़ावासी चाहते थे कि यह उनको अलॉट कर दिया जाए। 1951 तक, जब काम-काज का जोर जरा हल्का पड़ा, मैंने सोचा कि कांगड़ा का दौरा करके इस चाय-बागान को देखा जाए। अप्रैल 1951 में, मैं पालमपुर पहुंचा और घोड़े पर सवार होकर बहुत सारे गांव देखे। धौलाधर को दूर से तो कई बार देखा था, पर निकट से देखने का अवसर अब ही मिला। घाटी की सुंदरता देखकर मुझ पर वही असर हुआ जो रांझा का हीर को देखकर पहली बार देखने पर हुआ होगा। जी चाहता था कि इन बर्फ़ानी पहाड़ों को देखता ही रहूं, देखता ही रहूं।

इन दौरों में ही सोभासिंह चित्रकार से मिलने का अवसर प्राप्त हुआ। इन्होंने अन्दरेटा गांव के एकांत में कुटिया बनाई है। सोभा सिंह ने कांगड़ा-चित्रों के एक संग्रह का जिक्र किया जो भवारना के मियां रामसिंह के पास था। दिल में शौक उठा कि कांगड़ा-कला की उत्पत्ति और विकास की खोज की जाए। इस बीच मुझे अम्बाला का कमिश्नर बनाकर भेज दिया गया। जालंधर के कमिश्नर के पास, अम्बाला के कमिश्नर के मुकाबले में ज्यादा अपीलें अम्बाला कमिश्नर को भुगतनी पड़ती थीं। मैंने कांगड़ा की अपीलें स्वीकार कर लीं ताकि इस बहाने मुझे कांगड़ा का इलाका देखने का और अधिक अवसर मिल सके।

इन्हीं दिनों लाहौर से चालीस प्रतिशत कांगड़ा-शैली के चित्र, पंजाब म्यूजियम शिमला में आ गए। यह भारत के पंजाब के लिए, लाहौर म्यूज़ियम के कला-भंडार का भाग था। इनमें से बहुत-से चित्र बड़े सुंदर थे। मैंने सोचा कि साठ प्रतिशत कमी चित्रों की बांट के

कविता

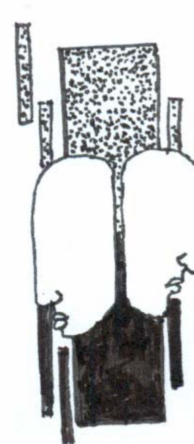
रिश्ते

● डॉ. कमल के. 'प्यासा'

रिश्ते
कैसे भी हो
खून के या जान पहचान के
नाजुक होते हैं
रेशम की डोर की तरह
तार तार हो जाते हैं
उलझ जाते हैं
बिखर जाते हैं
सूखे तिनकों की तरह।

रिश्ते जोड़ते हैं
गैर पराए अनजानों को
सम्बंधों के गठजोड़ में
उमर भर साथ निभाने को।
रिश्तों की कारगुजारी से
रिश्ते बदलते हैं
मानसिक उत्पीड़न होता है
और जुबान सिल जाती है।

रिश्तों को निभाने को
बहुत कुछ खोना पड़ता है
तंज तरह-तरह के सुनकर
नजरें झुका कर
मर मर कर जीना पड़ता है
क्योंकि
रिश्तों की गरिमा से
जहां खुशियां मिलती हैं
आंसू भी टपकते हैं
सुख दुख बयां होते हैं
रिश्तों के रिश्तों में!
फिर वह हों खून के
या जान पहचान के!



नॉमनी सी.पी.सी.एस.ई. व जीव-जंतु कल्याण शिक्षा अधिकारी,
मंडी, हिमाचल प्रदेश, मो. 0 98821 76248

कारण हो गई है, उसको पूरा किया जाए। अम्बाला में एक बहुत से बड़े सांस्कृतिक मेले का आयोजन किया, और उसकी आमदनी से न केवल बहुत-से पुस्तकालय ही खोले, इसके साथ ही कांगड़ा घाटी में जो चित्र मिले, सब खरीदकर पंजाब म्यूज़ियम शिमला में रख दिए। फिर पंजाब सरकार को प्रेरित किया कि वह भी इस कला-संग्रह के अभियान में योग दे। पंजाब सरकार के मंत्री सरदार प्रतापसिंह कैरों और सरदार उज्ज्वलसिंह के सहयोग से बीस हजार रुपया प्रति वर्ष कांगड़ा चित्रों की खरीद के लिए मिलने लग गया और भारत के दूर-दूर के नगरों में से कांगड़ा के जो भी चित्र उपलब्ध हुए, सब-के-सब इकट्ठा करके पंजाब म्यूज़ियम के हवाले किए। भारत सरकार के सूचना और कला मंत्रालय ने 1953 में मुझसे कहा कि कांगड़ा कला पर किताब लिखूं। कलाकार सुशील सरकार और फोटोग्राफर मोतीचंद जैन को संग लेकर मैंने कांगड़ा घाटी का एक और दौरा किया और कांगड़ा, गुलेर, लम्बाग्राम और नदौन में राजाओं के चित्र-भंडारों की खोज की। इसी वर्ष ही पंजाब सरकार ने मुझे पंजाब का डैवेलपमेंट कमिश्नर नियुक्त किया और मुझे सारे पंजाब के गांवों मे घूमने की छूट मिल गई। पंजाब के गांवों के दौरे फिर से बसाने के महकमे के काम के दौरान भी, काफी किए थे। गांव बसाने के काम में, यह अनुभव बहुत काम आया। सबसे बड़ी खुशी तो मुझे यह हुई कि अब मुझे कांगड़ा के गांवों की सेवा करने का अवसर मिला। अगस्त 1953 में मैं शिमला से पंजाब की नई राजधानी चंडीगढ़ आ गया। यहां मुझे श्री डब्ल्यू.जी. आर्चर की पहाड़ी चित्रकला पर लिखी हुई पुस्तक पढ़ने का अवसर मिला। इस पुस्तक ने मुझे बड़ा प्रभावित किया। सबसे बड़ी बात तो यह थी कि आर्चर ने लंदन में बैठकर जो अनुमान लगाए थे, वह सही निकले। इस सच्चे और गहरी खोज के काम ने, मेरे दिल में आर्चर के लिए बड़ा सम्मान जगाया। मैं उनको व्यक्तिगत रूप से नहीं जानता था, पर फिर भी पत्र लिखा। उनका बड़ा प्यार-भरा जवाब आया। मैंने उन्हें कांगड़ा आने का निमंत्रण दिया। मुझे बड़ी खुशी हुई कि वे 1954 में भारत, मेरे पास आए। भारत के बड़े लेखक डॉ. मुल्कराज आनंद भी उनके साथ थे। हम तीनों ने कांगड़ा का दौरा किया।

हिमप्रस्थ, अप्रैल-मई, 2005
कांगड़ा (कला, देश और गीत) पुस्तक में प्रकाशित लेख

हिमप्रस्थ के धरोहर पन्नों से

सिरमौर के गीत

• चन्द्र मणि वशिष्ठ

कला के अनेकों रूप हैं। संगीत भी तो एक कला है और मैं समझता हूं यह कला का सर्वश्रेष्ठ रूप है। संगीत, शान्ति, सुख, मनोरंजन एवं शक्ति प्रदान करने वाली कुछ वस्तुओं में से एक वस्तु है, इसे कौन नहीं जानता। संसार में वह कौन सा स्थान है, कौन सा देश है, कौन सी वस्तु है जहां संगीत अपने कनिष्ठ भ्राता 'नृत्य' के साथ विराजमान न हो, कोयल की कूक, पपीहे की पुकार, मोर का नृत्य, नदियों की बहती कल-कल धारा क्या यह सभी संगीत नहीं? सच पूछिए तो संसार स्वयं एक संगीत है। चाहे वह करुणा रस के गीत गा रहा हो, चाहे शृंगार रस के और चाहे उसमें हो वैराग्य की छाया, संगीत केवल एक है, एक ही रहेगा! यह बात और है कि उसे आवाज, स्वर, ताल, या लय के आधार पर अनेक-अनेक रूपों में खड़ा कर दिया जाए। भारत संगीत की भूमि है, यहां के अणु-अणु में संगीत है, पंजाब के लोक गीत, बंगाल के बंगला गीत और इसी प्रकार भारत के शास्त्रीय एवं लोकगीत अपनी-अपनी भाषा में अपनी-अपनी प्रकार का एक विशेष आकर्षण रखते हैं।

भारत के उत्तरी भाग में एक सुन्दर पहाड़ी छोटा-सा प्रान्त हिमाचल है। इसमें ठण्डे गगनचुम्बी पहाड़ों, घने देवदार, चील के वनों से घिरी शीघ्रगामी नदियों वाला प्रकृति का महान सौन्दर्य छिपा है। हिमाचल के निवासी, स्वस्थ देखेंगे जो सलोना है अद्भुत है और प्रियतर है, जिसमें छिपे हैं हिमाचलियों के विचार, प्यार, वीरता, रहन-सहन के ढंग, देशभक्ति के भाव और प्रकृति देवी के उपकार।

"टिब्बे दी पोड़ी रोही हियों के मामा मेरा
लागा पुहाड़ो दा जियो के मामा मेरा
शेली वागुरो शेला पाणी
बिची फुली धोरती री रानी
आंड़ा झवाल पांडा कशोगा
देश पुहाड़ो रा बसणे जोगा
फुली फुलीटू गली माशो
पूरी कोरी पुहाड़ी री आशो के मामा मेरा"

"जहां पहाड़ों की चोटियों पर बर्फ पड़ी है जहां शीतल पवन के झोंके चलते हैं और पुष्पों की साम्राज्ञी 'विंची' खिली है, जहां झरने थिरक रहे हैं उस पहाड़ में मेरा मन लगता है वह पहाड़ बसने के योग्य है। भगवान उस देश की आशाएं पूरी करे।"- यह है इस गीत का अभिप्राय। हिमाचली को अपने देश के प्रति प्रेम और उसके लिए शुभकामनाएं।

तुकबंदी के कारण किसी संगीतप्रिय व्यक्ति द्वारा बन जाते हैं और फिर ज्यूं-ज्यूं वह गीत लोगों में फैलता जाता है उसमें कड़ियां जोड़ते रहते हैं। ऐसे गीतों की मात्रा भी अधिक है जिनकी पहली कड़ी अर्थहीन यानी तुकबंदी के लिए होती है और दूसरी कड़ी में ही गीत का आशय झलकता है जैसाकि यह लोकगीत :- "लागे झोंके लागे झोंके आया कोरी छेड़ुआ म्हारे गांवों के छांव ढलकी छांव ढलकी त्हारे होला मिलना आई भोलकी, पाता चियो रा पाता चियो रा, यह एक प्रेमी और प्रेमिका के प्रश्नोत्तर हैं इसकी पहली कड़ी जैसे 'लागे झोंके, लागे झोंके' का केवल तुकबंदी से ही मतलब है यानी वृक्ष पर एक प्रकार का फल लगा है। दूसरी कड़ी में पूर्णतया भाव है। सारे गीत का अर्थ है "हमारे गांव चले आओ मिलने को मन उत्सुक है सूर्य अस्त हो चुका है अब न मिला जाएगा।- सुबह आना- तुम नहीं आओगे, मुझे तुम्हारे मन का अच्छी तरह पता है।"

यहां के गीतों के साथ ढोलकी, खन्जरी, एक मृदंग जैसा छोटा साज़ एक तारा, कनाल, धौंकू, ऐसे साज़ बजाए जाते हैं जो अति प्यारे लगते हैं। दिवाली में 'होलक', एक बड़ा-सा डमरू जैसा साज़ 'दमामटू', नकारे की भांति के एक साज़ के साथ बजाया जाता है। नृत्य करने वाले कलाकार, एक सफेद रंग का भिन्न-भिन्न प्रकार के फूलों से सजा हुआ चोला या लबादा सा ओढ़ कर हाथ में तलवार या कुल्हाड़ा जिसे 'डांगरा' कहते हैं एक दायरे में बड़ी सुन्दरता से नृत्य करते हैं। दरम्यान में 'होलक' बजाने वाला घूमता रहता है और कुछ फासले पर अन्य साज़िन्दे एक पंक्ति में बैठकर या खड़े होकर अपने साज़ बजाते रहते हैं। पहाड़ी अनेक प्रकार के नृत्यों में

'रासा' नृत्य अधिक महत्त्व और सुन्दरता रखता है। नाचने वाले पीठ के पीछे से एक दूसरे का हाथ थामते हैं और गिनती के साथ मात्राओं और ताल के हिसाब से पग हटाते और बढ़ाते हैं। दूसरे दर्जे पर 'नाटी' नृत्य हैं इसे 'गीह' भी कहते हैं। चार आदमियों का जोड़ा एक लोकगीत को गाता है और केवल एक व्यक्ति एक खास ढंग से नृत्य करता है।

प्रकृति की गोद में पले, यहां के हिमाचली सुन्दर और चरित्रवान हैं। इनके मन में निर्मल प्रेम की धारा बहती रहती है। जब दूर पहाड़ों की वादी में कोई दरिया अपनी शब्द ध्वनि से रात का सन्ताप चीर देता है चांदनी चमकी होती है, और बर्फ झिलमिला रही हो। ऐसे में बांसुरी की धुन के साथ जब शृंगाररस का यह गीत झंझोटी की तर्ज़ में गूंज उठता है तो ऐसे लगता है हम पृथ्वी पर नहीं स्वर्ग में हैं।

"चांद घेरा बादले माछी घेरी जाले।
हम घेरे सोणिये तेरे तिल्ले काले।"

चांद बदलों ने घेर लिया। मछली जाल में फंस गई और प्रिय मुझे तुम्हारे चेहरे के काले तिल ने अपना मतवाला बना लिया है।"

हिमाचल के गीतों के सम्बन्ध में एक विचित्र बात न जाने किस प्रकार पैदा कर दी गई है कि यहां केवल ऐसे ही गीत होते हैं जिनमें एक प्रेमी का अपने प्रेयसी को भगा ले जाने के वर्णन के अतिरिक्त और कुछ होता ही नहीं। यह बात नहीं है जहां दो प्रेमियों की कहानी के गीत हैं, वहां वीर रस वात्सल्य रस इत्यादि के गीतों का भी अभाव नहीं। दीपावली के समय सिरमौर में 'मदना', 'कमना' इत्यादि जो गीत गाए जाते हैं वे ऐतिहासिक गीत हैं उनमें वीरता है देशभक्ति है और सच्चाई तथा साहस के विचार हैं जो प्रायः 'झंझोटी' के दिल को चीर देने वाली अतिप्रिय और आकर्षक तर्ज पर गाए जाते हैं। देखिए जागकरण का महागीत कितना सुन्दरभाव लिए हुए है।

"बयूज बोलो बांठिया जुग पोलटा रे
बागड़ी तेरी पोड़ी रोही जाड़ो
भूखे छेडुए दे लोई राड़ो
थाम बुलो हाथो दा होलटा रे
देव ऋखि रा तू ओसों जाया
निखणा बैठी रो सामां गवाया
सांड़ बुलो ढोबदा सा टोलटा रे
शिक्षा रा तुये लायो चाणो
न्यारा छाड़ प्याशा थाम माणों।"

"नव युवक, उठ, जाग, युग बदल चुका है। तेरे खेत बंजर पड़े हैं, भूख से बिलखते हैं तेरे बच्चे, हाथ में हल पकड़, और खेतों को उपज से लहरा दे। तू देवताओं की सन्तान है। व्यर्थ बैठ कर काम न चलेगा कुछ काम कर। शिक्षा ग्रहण कर, प्रकाश फैला दे, जाग, जाग, जाग कि युग बदल चुका है।"

यह हिमाचल, देवभूमि है। यहां बड़े-बड़े विशाल मन्दिर आपको स्थान-स्थान पर मिलेंगे। विष्णु के अवतार भगवान परशुराम के सम्बन्ध में भक्ति भाव से पूर्ण एक पहाड़ी भजन सिरमौरी भाषा में इस प्रकार है :-

"शुण धाव मोड़ो रे आया तेरी पोली दा
जुगो रा सताया, लालचोरा भरमाया
बारी-बारी रा पापी ताओ दारो आ शोरमाया
भुजदा लागा रे पापो री झोली दा
हाथो दा डोगरा गोले दी माला
रिणका रा जाया, पुजको रा पाला
रुलदा लागा रे नोरिको दी रोली दा,

"हे भगवान परशुराम मेरी पुकार सुनो मैं जमाने का सताया लालच और मोह में फंसा जन्म-जन्म का पापी तुम्हारे द्वार पर आया हूं। मेरी फरियाद सुन। तुम्हारे हाथ में रक्षा के लिए परशु है। तुम मां रेणुका के वीर पुत्र हो तुम्हारे गले में पुष्प माला शोभायमान है। मैं नरक के गढ़े में गिरा हूं। मुझे उबारो, मेरी पुकार सुनो।"

स्वच्छ प्रेम से भरपूर ऐसे गीतों का खजाना हिमाचल ही है। कुंजुआ, सुरमी, हीरो गंगी, आदि लोकगीत जिनमें दर्द है, तड़प है। सिसकियां हैं और अरमान हैं क्यों न हृदय में उतरेंगे। किन्तु इन गीतों में उतरने के लिए यहां की संस्कृति भाषा और भाव से परिचित होना अत्यावश्यक है।

हिमप्रस्थ, नवम्बर, 1955

गीतों के साथ ढोलकी, खन्जरी, एक मृदंग जैसा छोटा साज़ एक तारा, कनाल, धौंकू, ऐसे साज़ बजाए जाते हैं जो अति प्यारे लगते हैं। दिवाली में 'होलक', एक बड़ा-सा डमरू जैसा साज़ 'दमामटू', नकारे की भांति के एक साज़ के साथ बजाया जाता है। नृत्य करने वाले कलाकार, एक सफेद रंग का भिन्न-भिन्न प्रकार के फूलों से सजा हुआ चोला या लबादा सा ओढ़ कर हाथ में तलवार या कुल्हाड़ा जिसे 'डांगरा' कहते हैं एक दायरे में बड़ी सुन्दरता से नृत्य करते हैं।

मुझे कभी इसका खेद नहीं हुआ कि मैं चुप क्यों रहा। फिर भी इस बात का खेद कई बार हुआ कि मैं बोल क्यों पड़ा। **-पाइथागोरस**

हिमप्रस्थ के धरोहर पन्नों से

कलाकार सोभा सिंह

● अमृता प्रीतम

छोटी-सी मेज पर लकड़ी की एक तख्ती रखकर सोभा सिंह जी के कलाकार हाथों ने रेशमी रंग की चिकनी मिट्टी को जोड़ा। बहुत समय से वे मेरी मूर्ति बनाना चाहते थे। मैं सामने कुर्सी पर बैठी हुई थी। दो होल्डरों के मुंह के आगे बारीक-सी दो तारों के धागे से बांधकर उनके मूर्तिकार हाथों ने मिट्टी में से मेरी आकृति को उभार लिया।

"आप अगर चाहें तो साथ-साथ पढ़ती भी जाइए। आपने खलील जिब्रान पढ़ा है।" सोभा सिंह ने मुझसे पूछा।

"मैंने उसकी तीन पुस्तकें पढ़ी हैं।"

"कौन-कौने सी?"

"दी प्रोफेट, ए टीयर एण्ड ए स्माइल तथा सीक्रेट्स ऑफ दी हार्ट।"

"आज उसकी एक और पुस्तक पढ़िए।" और सोभा सिंह ने अपनी दायीं तरफ पड़ी एक पुस्तक उठाकर मुझे अपनी पसन्द का पन्ना निकाल दिया।

"आपको कौन-कौन से लेखक बहुत अच्छे लगते हैं।?" मैंने पूछा।

"मुझे खलील जिब्रान बहुत पसंद है, वाल्ट विटमैन और कृष्णमूर्ति भी।"

"और चित्रकार?"

"अंग्रेज चित्रकार 'जोन मिले' और 'लार्ड लिटन' बड़े यथार्थवादी और अच्छे लगे हैं। माइकेल एन्जोलो भी बहुत बड़ा कलाकार था, पर उसमें एक कमी थी कि वह जिंदगी से भागकर कला का आश्रय लेता था। वास्तव में कला जिंदगी के लिए होनी चाहिए।"

मैं बहुत छोटी उम्र से सोभा सिंह जी की कला को देखती आ रही हूं। पिता जी जब उनके घर जाते थे, मैं साथ हुआ करती थी। वे सारे चित्र और उनके चित्रकार का लाहौर वाला स्टूडियो, दिल्ली का स्टूडियो, प्रीतिनगर का घर और अब कांगड़ा वैली में अन्दरेटे वाला स्टूडियो मेरी यादों में से गुजर गए।

"आपकी नजर में आपका कौन-सा चित्र सबसे श्रेष्ठ है?" मैंने पूछा।

"मैंने 'सोहनी' का चित्र भी उसी लगन के साथ बनाया है, जिस लगन से गुरु गोविंद सिंह का चित्र।"

"मेरा मतलब है कि जिसमें आपने अपने को सबसे अधिक समो डाला हो।"

"एक चित्र है, मैंने उसका नाम 'पोइट्री' रखा है। उर्दू कविता का प्रभाव लेकर मैंने वह बनाया है। उसमें एक तारों वाला साज़ है, और साज़ वाले की आंखों के आगे एक औरत और पास शराब।"

"देखने वालों को अपनी 'सोहनी' शायद कभी नहीं भूलेगी। उसमें एक दैवीय प्रभाव है।"

"औरत का यह प्रभाव मेरे दिल में एक खास व्यक्ति ने बिठाया था। मैं जब आठ-नौ बरस का था, मेरी मां की मृत्यु हो गई। मेरी दोनों बहनें ब्याही गई थीं, मेरी अर्द्धबहनें..."

"अर्द्धबहनें कैसे?"

"एक मां की तरफ से और एक पिता की।"

"कौन सा गांव था आपका?"

"श्री हरगोविन्द पुरा।"

"घर में सिर्फ पिता जी। पर वे कहा करते थे कि अगर तू लड़का न होकर पत्थर पैदा हो जाता तो नमक पीस लेते, अब तुझे क्या करें?"

"आप पढ़ते नहीं थे क्या?"

"पढ़ने की तरफ मेरा जी नहीं लगता था। घर से दौड़ जाता था। गांव के निकट एक बंध थी- रेतीली चट्टानों में से पानी गिर-गिरकर जो जगह बनती है, उसे बंध कहे हैं। कड़ाहों के टूटे हुए कुंडे और पतरियां लेकर मैं बंध में चला जाता था। एक चाकू मेरे पास हमेशा रहता था, उन रेतीली चट्टानों को खोद-खोदकर मैं मूर्तियां बनाता था।"

"उस समय राम या कृष्ण ही बनाते होंगे?"

"हां जी, मैंने राम, सीता और हनुमान की बड़ी मूर्तियां बनाई थीं।"

"पिता जी ने देखी थीं?"

"हां जी, देखी थीं। दिल में प्रसन्न भी हुए, पर वे कहते थे : तू सारी उम्र भूखों मरेगा। कला रोटी नहीं देती। एक बार मैंने तंग आकर सोचा कि चलो, मर ही जाएं और मरने का मुझसे सबसे अच्छा ढंग यही लगा कि मुझे निमोनिया हो जाए।"

"फिर?"

"मैं खूब भागा, खूब भागा कि पसीने से तर हो गया। और फिर ठंडे पानी में छलांग लगा दी। सर्दी तो जरूरी लगी, पर निमोनिया नहीं हुआ, बल्कि भाग-भागकर जो गर्मी लगी थी और दिल घबरा रहा था, वह ठंडे पानी में नहाकर ठीक हो गया। उसके बाद मेरा जीने को दिल हो आया।"

मुझे भी हंसी आ गई और उन्हें भी।

"वैसे मैं नंगा भागा था, और पानी में छलांग लगाते समय अपने वस्त्र साथ ले गया था कि नहाकर बाद में पहन लूंगा।"

"ताकि निमोनिया कुछ-कुछ हो।"

"नहाकर भूख लग गई। मैंने कच्चे सिंघाड़े खाए। पहले पिता जी के भय से घर नहीं आता था। उस दिन घर जाने का साहस भी हो आया।"

"आप औरत में दैवीय प्रभाव के सम्बंध में कुछ कहने लगे थे?"

"हमारे गांव में एक रायसहाब थे। उसका बेटा शराबी और आवारा था, पर बहू साक्षात् देवी थी।"

"कितनी आयु की थी?"

"कोई बाईस बरस की।"

"और आप?"

"कोई आठ-नौ बरस का। वह पर्दे में रहने वाली बड़े घर की औरत, एक दिन उसने हमारे घर का द्वार खटखटाया। घूंघट में से कहने लगी, मैं राय साहब की बहू हूं।"

"पिता जी घबराकर उठे और कहने लगे, क्या बात है?"

"उसने उसी तरह घूंघट निकाले रहकर कहा, "आप बच्चे को मारा न करें। आप जानते हैं कि वह आपसे भयभीत हुआ घर नहीं आता, रोटी नहीं खाता, अगर उसकी मां जीवित होती..."

"आप कितने बड़े थे, जब आपकी मां की मृत्यु हुई?"

"असल में मेरे पिता जी की मां से अनबन रहती थी। मैं अढ़ाई-तीन बरस का था, जब मां बीमार पड़ गई और पिता जी ने उसे मायके भेज दिया।"

"फिर?"

"मां के बचने की कोई आशा नहीं थी। उसने पिता जी को कहला भेजा कि मुझे देखना चाहती है। पिता जी मुझे ले गए और दूर से दिखाकर लौटा ले आए। मुझे याद नहीं। कुछ दिन गुजर गए, मेरी मां मुझे मिले बिना मर नहीं सकी। मां की सांस अटकी हुई थी। मेरे मामा जी मेरी मां को पालकी में डालकर ले आए कि एक बार उसे बच्चा दिखा दें। पिता जी ने यह शर्त रखी कि मां के मुंह पर बारीक-सा वस्त्र डाल दिया जाए ताकि उसकी सांस लड़के को न छुए। इसी तरह किया गया। पर मां आखिर मां थी। उसने दोनों बाजू मेरी ओर फैला दिए। पिता जी मुझे बाजू से खींचकर बाहर ले गए। बस, मुझे यही याद है कि मुंह पर सफेद वस्त्र पड़ा हुआ और दोनों बाजू मेरी ओर फैले हुए।"

मेरे भीतर की मां और औरत तड़प उठी। मेरी आंखें छलक उठीं और एक क्षण मुझे यही लगा, जैसे मेरी अंतिम सांस हो और मैं अपने बच्चे को एक बार देखने के लिए सिसक उठी होऊं।

"मुझे अब तक औरत वही औरत लगती है, जिसमें दैवीय प्रभाव हो। और हरेक औरत में से रायसाहब की बहू ढूंढता हूं।"

"राय साहिब की बहू ने आपकी कोई चीज देखी थी या नहीं?"

"नहीं जी, वह बहुत जल्दी मर गई थी।"

सोभा सिंह जी फिर रुककर बोले, "औरत के सौंदर्य का मियार तब बना था, जब मैं बगदाद में था।"

"बगदाद में तो आप सेना में भर्ती हो गए थे न? नक्शानवीस होकर?"

"हां जी, साठ रुपये वेतन पर गया था, फिर धीरे-धीरे ढाई सौ तक पहुंच गया था। वहां जिस जगह मैं रहता था, उस मकान में बाईस कमरे थे, और उसमें बाईस परिवार रहते थे। बड़ी गरीबी थी। एक-एक कमरे में एक-एक परिवार की गुजर नहीं होती थी। पर सुबह जब मैं उठता तो बाहर खुली जगह सबके सब खाटों पर सोये हुए होते। सोई पड़ी उन दूध सी सफेद लड़कियों के छोटे-छोटे और काले बाल ऐसे बिखरे रहते, जैसे वे सपनों में लिपटी हुई परियां हों।"

कई घंटे बैठने से सोभा सिंह जी को थकान अनुभव हुई। उसी दिन सुबह उन्होंने रबड़ की नई गद्दी खरीदी थी। उन्होंने लिफाफे में से निकाली और दोहरी करके उसे अपने नीचे बिछा लिया। हंसकर कहने लगे, यहां कौन सी इन्दरकौर देखती है। आज नई गद्दी बिछाता हूं।"

इन्दरकौर उनकी पत्नी का नाम है। मुझे बरसों पुरानी बात याद आई कि जब इन्दरकौर मायके चली जाती थी और सोभा सिंह जी अपना साटन का लिहाफ उलटी ओर से ओढ़कर सोया करते थे। सूती रुख बाहर को कर लेते थे और रेशमी भीतर को। कहा करते थे, "लोगों को बेशक बुरा लगे, पर आज रात साटन का नरम रुख मेरे शरीर से छूएगा।" मैंने जब यह बात उन्हें याद दिलाई तो वे खूब हंसे और कहने लगे, "मैं जब बाजार से नया बूट खरीदता हूं तो नया बूट ही पहनकर आता हूं, पुराने डिब्बे में डालकर आता हूं। आजकल इन्दरकौर ने मेरे लिए कश्मीर से एक गर्म चादर मंगवाई है, पर बक्से में रख छोड़ी है कि पहले मेरा कोट फट जाए, फिर वह मुझे चादर देगी।"

सोभा सिंह जी थोड़ा सा लंगड़ाते हैं। काम करते हुए उन्हें एक बार उठना पड़ा। छड़ी का सहारा छोड़कर तब वे फिर से बैठे, तो

दुःखी होकर कहने लगे, "आपने बायरन की जीवनी पढ़ी है?"

"हां जी, पढ़ी है।"

"आपको वह स्थान याद है, जहां वह अपनी प्रेमिका से मिलने जाता है, और उसके कमरे में से आवाज आ रही होती है?"

वह अपनी दासी को कह रही होती है कि वह कभी भी लंगड़े बायरन से शादी नहीं करेगी।

"हां, वही स्थान। और फिर जब उस लड़की की शादी किसी और से हो जाती है, तो बायरन अपनी डायरी में लिखता है, उसने उस आदमी से शादी कर ली, जो लंगड़ा नहीं था।'

"मैं पूछना चाहती थी कि आज आपने बायरन की डायरी वाली बात क्यों सुनाई; पर पूछ नहीं सकी। सिर्फ इतना ही कहना, आपने शादी किस उम्र में की थी?"

"जब बगदाद से लौटकर आया था, मेरी बहन ने ही लड़की ढूंढकर मेरी शादी भी कर दी थी।" फिर तनिक रुककर सोभा सिंह जी ने मुझसे पूछा, "आपका क्या विचार है कि आदमी के ऊंचा उठने के लिए प्रेरणा सहायक होती है या जीवन की कठिनाइयां?"

"प्रेरणा।" मैंने कहा।

"मेरा भी यही विचार है। मुझे तो यह लगता है कि गुरु नानक के व्यक्तित्व के विकास में सबसे अधिक हाथ उसकी बहन नानकी का था। आपने वैनगाग की जीवनी पढ़ी है?"

"पढ़ी है। मैंने 'माया' कविता उसी के सम्बंध में लिखी है।"

"आपका क्या खयाल है कि वह जो कुछ बन सका, उसके पीछे उसके भाई के व्यक्तित्व का हाथ नहीं था?"

"अवश्य था।"

"इस प्रेरणा में जादू होता है। एक बार मैंने एक अपरिचित लड़की से कहा कि मैं किसके लिए चित्रकार बनूं? उसने मुझसे पूछा कि तुम्हारा कोई नहीं? मैंने कहा- कोई नहीं। और फिर जैसे सारे खालीपन को भरने वाली उसकी आवाज आई- "आप मेरे लिए पेंट करोगे?" जब वह चली गई तो इस तरह लगा कि जहां वह बैठी थी, वहां से एक स्निग्धता उठकर मेरी तरफ आ रही थी। तत्पश्चात् जो चित्र बनाए हैं, उसमें जिंदगी ज्यादा है।"

मुझे सोभा सिंह जी का अन्दरेटे वाला स्टूडियो याद आया, जिसकी शीशे की बड़ी खिड़की के आगे सिर्फ गुलाब लगा हुआ है और जिसमें से उगती सुगंध में सड़क पर से गुजरती हुई पहाड़ियों के गीत मिले हुए होते हैं। खिड़की के पास रखे हुए मेज पर चित्रकार के रंग और ब्रुश होते हैं और जिंदगी चित्रकार की कैनवस पर उभरते होठों में से मुस्करा उठती है।

मेरी कलम ने दुआ मांगी कि औरत के भीतर की मां और औरत के भीतर की प्रेमिका सदा जीवित रहे और जिंदगी कलाकारों के कौशल में सदा मुस्कराती रहे।

प्रस्तुति : विनोद लखनपाल (हिमप्रस्थ, नवम्बर, 2001)

कविता

क्षमा करना किताब

• डॉ. सुशील कुमार फुल्ल

हे किताब!
तुम्हें मेरा नमन
मैं जानता हूं कि
किताब कभी बूढ़ी नहीं होती
और न ही कभी मरती है
लेकिन मैं बूढ़ा हो गया हूं
और घर में मेरी जगह
सिमटने लगी है
घरवालों को घर छोटा पड़ने लगा है
और उन्हें लगता है
कि किताबों और बूढ़े फालतू चीज़ें हैं
हे मेरी किताब! हे मेरी मां!
मुझे क्षमा करना
तुम्हें और मुझे यह स्थान छोड़ना होगा
क्योंकि घर में और बहुत कुछ
आने वाला है कि
चमकता हुआ किसी बाबे का बुत
किसी विदेशी मेक का घूमता हुआ बाजा जो
घर को कोलाहल से परिपूर्ण रखेगा
बूढ़ों और किताबों की अब क्या जरूरत
इससे पहले कि मेरे घर वाले तुम्हें
मच्छर उड़ाने के लिए जला दें
मैं तुम्हें जल में प्रवाहित कर देना चाहता हूं
जैसे मेरी मां ने अपने धर्मग्रंथ को
यह सोच कर प्रवाहित कर दिया था
कि हम उन ग्रंथों को श्रद्धापूर्वक नहीं रखेंगे
क्षमा चाहता हूं मां!
कि बीस कमरों वाले मकान में
बीते कल की चीजों के लिए मोई मोह नहीं।

पुष्पांजलि, राजपुर-पालमपुर, जिला कांगड़ा, हिमाचल प्रदेश-176 061

हिमप्रस्थ के धरोहर पन्नों से

नई कविता
आधुनिकता की भूमिका

• प्रभाकर श्रोत्रिय

यों इस बात से इनकार नहीं है कि हर युग अपने में आधुनिक होता है और हर क्रांतदर्शी लेखक या विचारक अपने समय में आधुनिक रहा है, लेकिन जिसे हम 'आधुनिकता' कहते हैं उसका सम्बंध विज्ञान-युग के आविर्भाव से है। विज्ञान का सीधा अर्थ है- जो तथ्यात्मक हो, प्रयोग और परीक्षण से प्रमाणित किया जा सके। विज्ञान प्राचीन और आधुनिक की स्पष्ट विभाजक-रेखा है। वह मनुष्य में यह विश्वास पैदा करता है कि अपना नियंता वह स्वयं है। कोई अदृश्य पारलौकिक सत्ता नहीं। विचार के क्षेत्र में सृष्टि के अदृश्य विधान को अपनी नियति सौंपने से इनकार, यथार्थ के साक्षात्कार और बौद्धिक-चेतना का नाम विज्ञान है। आधुनिकता सम्बंधी प्रायः सारे विचार इसी की बुनियाद पर खड़े है और टकराहट का मुद्दा भी वही है।

एक ओर विज्ञान-दृष्टि ने व्यक्ति के चौतरफा पराश्रय के विरुद्ध विद्रोह की चेतना उत्पन्न की तो दूसरी ओर उसने समूची मानवता को भाग्य, नियति, परलोक, रूढ़ि वगैरह के बहाने होने वाले शोषण से मुक्त होने का आह्वान किया। इस तरह आधुनिकता मूलतः दो अवधारणाओं में बदली-व्यक्तिवादी और समष्टिवादी। दुनियाभर के सारे वाद और विचार इन्हीं के विविध संयोजन, स्वीकार-अस्वीकार से जन्मे हैं।

व्यक्तिवादी, अस्तित्ववादी, नकारवादी, क्षणवादी, विकासवादी, मनोविश्लेषणवादी विचारों का दावा है कि वे अतीत से विद्रोह की प्रेरणा देते हैं, मनुष्य को अपनी अस्मिता के प्रति सचेत करते हैं, उसे वायवीय-काल्पनिक दुनिया से परे हटाते हुए, समय में जाने का बोध पैदा करते हैं, भाववाद से बुद्धिवाद की ओर ले जाते हैं, उसका अपनी नियति से साक्षात्कार कराते हैं आदि।

साम्यवादी, समाजवादी, यथार्थवादी, मानवतावादी आदि विचार-दर्शन मनुष्य की सामूहिक मुक्ति के उद्घोष हैं। मनुष्य की परस्परता को यथार्थ के स्तर पर जगाना, इतिहास के गत्यात्मक वैज्ञानिक विश्लेषण के द्वारा वर्तमान और भविष्य के लिए संघर्ष और सम्भावना का व्यावहारिक उपाय बताना, यथार्थ को लेकर स्यापा करने की बजाय उसे बदलने का आह्वान करना, वर्गों की आर्थिक क्रियाओं का विश्लेषण करते हुए वर्ग-विहीन समाज की स्थापना के लिए संघर्ष करने को उद्यत करना, यथार्थ का आलोचनात्मक बोध पैदा करना, मनुष्य के भीतर की मानवता जगाकर उसमें सृष्टि के प्रति वैष्णव-बोध जगाना आदि लक्ष्य इनमें से किसी-न-किसी विचार के मूल में हैं।

आधुनिकता के निर्माण में दोनों ही अवधारणाओं की भूमिका है जिसे हम 'नई कविता' कहते हैं, वे इन दोनों विचार-सरणियों से प्रभावित हुई हैं।

आधुनिकता की समस्त विचारधाराओं के दो केंद्र हैं- यथार्थ और सत्य की पहचान और मुक्ति और स्वाधीनता की चेतना। इन्हें वे अपने-अपने ढंग से परिभाषित करती हैं। लेकिन यथार्थ की पहचान हो या सत्यान्वेषण, मुक्ति हो या स्वाधीनता- उनका प्रयोजन मनुष्य है। इसी दृष्टि से अगर हम प्रश्न कर कि यथार्थ क्या है- विषमता, शोषण, सत्ता पूंजी, विज्ञान या उद्योग का पदार्थ-रूप प्रत्यक्ष जगत में दिखाई पड़ने वाली हलचलें वगैरह। अगर ये सब यथार्थ हैं तो सत्य क्या है- मृत्यु को अतिक्रमित करती जिजीविषा, अमरता, परिवर्तन, आस्था, विजयेच्छा, समता भाव, बुद्धि, तमाम जीवन-मूल्य या कोई मानवेतर कल्पना लोक : मुक्ति कैसे परिभाषित होगी- व्यक्ति की मुक्ति, समाज की मुक्ति, संसार से मुक्ति, परम्परा या संस्कृति या देश या काल से मुक्ति? और आखिर स्वाधीनता से हमारा आशय क्या है- स्वेराचार, वामाचार, स्वकेंद्रण, आत्मनिर्भरता, आत्मानुशासन या व्यक्ति अथवा समाज की स्वाधीनता। इतने सारे सवाल मैं इसलिए पूछता हूं कि अगर आप विभिन्न वादों-विचारों से अगर ऐसे सवाल पूछेंगे तो आपको अलग-अलग उत्तर मिलेंगे, जबकि वे कई बार एक जैसे शब्दों का इस्तेमाल करते हैं।

इसलिए आधुनिकता के जटिल प्रत्ययों में से सही आधुनिकता का चुनाव करने के लिए हमें पूछना होगा कि कौन-सा विचार किस हद तक गत्यात्मक यथार्थ के माध्यम से मानवीय

कल्याण का सत्य हमें उपलब्ध करता है या मानव-विरोधी यथार्थ को मानवीय हित के सत्य द्वारा अतिक्रमित करता है : उसकी मुक्ति की अवधारणा किस हद तक व्यक्ति की मुक्ति को सामाजिक और मानवीय मुक्ति या समाज की मुक्ति में व्यक्ति की मुक्ति को समाहित करती है? उसका विद्रोह किस हद तक सार्थक विद्रोह है : और अंततः यह कि वह किस हद तक मानवीय भाव को बुद्धि से समन्वित कर मनुष्य-रचना की संपूर्णता को अर्थ देता है : क्योंकि मानवता के व्यापक बोध के बिना आत्म-बोध या यथार्थ की जड़ीभूत पहचान के रूप में जगत-बोध क्या हमें आधुनिक बना सकता है : कोई विचार यदि मानव-हित के रचना-विधान में तबदील नहीं होता है तो क्या अंततः वह वायवीय नहीं होता तो क्या अंततः वह वायवीय नहीं हो जाता। या मनुष्य को हम केवल आर्थिक क्रियाओं में परिभाषित करते हुए उसके समस्त मूल्य, यातनाएं, भावनाएं उदारताएं गौण मान बैठे तो क्या सार्थक आधुनिकता रच सकते हैं? आधुनिक वादों-विचारों को लेकर ऐसे सवाल हमारे मन में पैदा होते हैं तब तो और भी जब हम यह महसूस करते हैं कि कोई वाद-विचार अपने में संपूर्ण नहीं है और वह सृजन युग जिसे लेकर हम यहां विचार कर रहे हैं स्वयं ऐसा कशमकश झेलता रहा है। आलोचना ने भी विचारों के सायों में विभिन्न कवियों को बिठाते हुए उनके द्वंद्व पर कम ही गौर किया है और विभिन्नता की समता को तरह देते हुए पूरे काव्य युग को कुंठित रुग्ण मानसिता से ग्रस्त कवियों का जमावड़ा कह कर गहराई में उतरने की जिल्लत नहीं उठाई।

यह ठीक है कि आधुनिकता विश्व चेतना है और काल सापेक्ष भी है, लेकिन यह बात भूल कर कि वह देश सापेक्ष होती है हमने बहुत गड़बड़ियां की हैं। किसी भी चेतना का संक्रमण सरल या ज्यामितिक गति से नहीं होता, वह प्रत्येक देश के स्वभाव और परिवेश में ढलती और टकराती है, यहां देश की भूमिका महत्त्वपूर्ण हो उठती है। लेकिन आधुनिक विचारों को ग्रहण करते हुए हमने कई बार उनका अपने समय और इतिहास के बीच तथ्यपरक मूल्यांकन नहीं किया। नतीजे में आधुनिकता अधिकतर बौद्धिक वर्ग की बहसों और फैशन की दुनिया का जुमला बनकर रह गई। इस तरह की आधुनिकता केवल दिखावटी संभ्रांत वर्ग में कैद हो जाया करती है। व्यक्तिवादी सोच ही नहीं, समष्टिवादी सोच ने भी इस मामले में कोई विशेष पहल नहीं की जबकि नव-वामपंथी : न्यू लैफ्ट : भी यह मानने लगे हैं कि समाजवादी क्रांति का रूपायन हर देश की अपनी परिस्थिति, स्वभाव के अनुरूप ही हो सकता है।

यह ठीक है कि आधुनिकता विश्व चेतना है और काल सापेक्ष भी है, लेकिन यह बात भूल कर कि वह देश सापेक्ष होती है हमने बहुत गड़बड़ियां की हैं। किसी भी चेतना का संक्रमण सरल या ज्यामितिक गति से नहीं होता, वह प्रत्येक देश के स्वभाव और परिवेश में ढलती और टकराती है, यहां देश की भूमिका महत्त्वपूर्ण हो उठती है। लेकिन आधुनिक विचारों को ग्रहण करते हुए हमने कई बार उनका अपने समय और इतिहास के बीच तथ्यपरक मूल्यांकन नहीं किया।

लेकिन जिनके दिमाग में पुरानी बातें जमा हैं वे अब भी टस-से-मस नहीं होना चाहते। हमारे वामपंथी चिंतकों ने इस बात पर गौर नहीं किया कि भारत का जातिवादी ढांचा मूलतः आर्थिक सुधारों पर खड़ा नहीं है, उसमें अतीत एक भिन्न किस्म की अंतर्बाधा और धार्मिक किस्म की रूढ़ि में बैठा है, जो केवल आर्थिक समानता से खत्म नहीं हो सकता। इसलिए गांधी की हरिजनोद्धार वाली विचारधारा भारत में साम्यवाद की पहली सीढ़ी बन सकती थी। वामपंथियों ने भारत में स्त्री के अलग किस्म के शोषण को भी नज़रअंदाज किया और उसे भी पुरुषों के साथ आर्थिक वर्ग में रखा। भारत का मानस उतना भौतिकवादी नहीं है, जितना अध्यात्मवादी। इसका मूल्यांकन उपयोग न करते हुए वामपंथी किताबी निर्देश पर चलते रहे। उन्होंने अपने वैचारिक कठघरे इतने सख्त बनाए कि कई संवेदनशील कवियों ने बाद में उससे नाता तोड़ लिया। एक सार्थक विचार देशगत विवेक की उपेक्षा से रूपायित न हो सका। हम पूछते हैं कि क्या पचास साल में भी उस जनता को संगठित किया जा सका, उस तक अपने विचार पहुंचाए जा सके जिसकी वकालत किताबों में, भाषणों में, दल में की जाती रही है? यह एक क्रियात्मक विचार है इसलिए इसकी परिणति और प्रभाव के बारे में ऐसे ठोस सवाल करना गैरमुनासिब न होगा। आज प्रगतिशीलता एक फैशन बन कर रह गई है और वे लोग भी उससे जुड़ गए हैं जो स्वयं पूंजीपति सत्ताधारी शोषक हैं।

व्यक्तिवादी आयातित विचारों के साथ भी ऐसा ही हुआ। उन्हें भी देश के विवेक से न देखा गया न रूपायित किया गया। जबकि गोष्ठियों में पढ़े जाने वाले परचे और कॉफी हाउसों में हुई बहसों में वे लबालब भरे थे। इस बीच देश इस कदर गायब और शर्म की चीज़ माना गया कि यहां जन्मने वाली विचारधारा या अनुकूल विचार बयान देने लायक, बात करने लायक भी न रहे। मसलन लोहिया का समाजवाद या गांधीवाद। और यह उस जमाने में हुआ जब जनता साम्राज्यवादियों से संघर्ष कर रही थी और बाद में शासकों को भोग रही थी और अत्यंत संवेदित स्थिति में थी।

ऐसा क्यों होता है कि कोई विचार फैशन बन कर रह जाता है या आचरण और बहस में दोहरे ढंग से सामने आता है। वह समाज का विचार बनने की बजाय विचार का समाज बन जाता है और अब भी सीमित। मैं समझता हूं कि जब विचारों को केवल बौद्धिक स्तर पर लिया जाता है, तो विचारों का एक एलिट समाज बन जाता है, जो अपने में अहमग्रस्त और जन निरपेक्ष हो जाता है। एज़रा

पाऊंड, राबर्ट ग्रैव्स, फलाबैयर आदि के विचार इसके प्रमाण हैं जो कि एक कवि की कविता को सिर्फ दूसरे कवि के लिए या 30-35 समझदार पाठकों के लिए या किसी अयथार्थ हवा के लिए लिखना ही सार्थकता मानते हैं, बदकिस्मती से ऐसे जांबाज़ हमारे बुद्धिजीवियों, रचनाकारों, में भी हुए।

बहरहाल, बात यूं है कि विचारों के फैशनेबल होने का सम्बंध जन-निरपेक्षता यानी देशगत स्वभाव से उसे समन्वित न करने से है। क्योंकि तब जनता की तो कोई दिलचस्पी उसमें होती नहीं फलतः उससे जुड़े लोगों के सोच और आचरण पर जनता की आलोचक निगाह नहीं पड़ती, इसलिए सबकी आंखों से दूर अपने आयवरी टावर में बैठे-बैठे वे लोग ऊलजलूल सोचते रहते हैं। आचार्य शुक्ल ने रसात्मक बोध के लिए लोक हृदय में व्यक्तित्व के परिहार की जो बात कही थी वह विचारों, प्रक्रियाओं की प्रतिष्ठा के लिए भी अपने ढंग से सही है।

केवल विदेशी विचारों की बात ही नहीं है विदेशी उपकरण भी जब तक देश की अपनी प्रकृति और उपादेयता की व्यावहारिक दृष्टि से नियोजित नहीं होते, तब तक वे न सिर्फ अनुकूल, बल्कि प्रतिकूल असर छोड़ते हैं। हमारे कुछ महत्त्वपूर्ण चिंतकों और नीति निर्माताओं ने लगता है इस तथ्य पर किंचित गौर किया था। डॉ. राधाकृष्णन ने एशिया और अफ्रीका के संदर्भ में ग्रहण और त्याग के विवेक की ओर इशारा किया है। यह दीगर बात है कि सोच और उपयोग के बीच की खाई की वजह से वह कारगर नहीं हुआ :-

पूर्व ओर पश्चिम की सैनिक विजयों और जबरदस्त शासन का विरोधी है किंतु दूसरी ओर पश्चिम के रेलवे इंजिनों, डायनेमो और विज्ञान का स्वागत करता है। वह विजेताओं को निकाल कर बाहर करना चाहता है, फिर भी उनकी संख्याओं को स्वीकार करता है। पूर्व के देश उनका उपयोग गरीबी मिटाने, आर्थिक अवसरों को विस्तृत करने या पदार्थों, स्वास्थ्य, सफाई के स्तर को ऊंचा उठाने में करना चाहते हैं

- पूर्व और पश्चिम कुछ विचार, पृ. 105

पूर्व या भारत ने पश्चिम से यह सब तो लिया मगर उसके ज़रिए जो चाहा था क्या उसे मिला। उलटे उपकरणों की वृद्धि के साथ यहां अमानवीयकरण, गरीबी, बेरोजगारी और शोषण बढ़ता गया। इन विकृतियों में देशी बुराइयां भी शामिल हो गईं और आधुनिकता का एक काकटेल तैयार हुआ। क्योंकि ये सारे उपकरण उन शक्तियों के हाथ में पड़े जिनकी दिलचस्पी जनता की बजाय खुद में थी। इसलिए वे उनका नियोजन जनहित में न कर सकें।

यही हाल औद्योगीकरण का हुआ। यह ठीक है कि आधुनिक विश्व की स्पर्धा में खड़े होने के लिए किसी भी देश में औद्योगीकरण का ढांचा खड़ा करना जरूरी होता है। यह भी ठीक हैकि औद्योगीकरण की अनिवार्य यातना से गुजरे बिना किसी भी देश का 'पुनरुजीवन और पुनरुत्थान संभव नहीं है। जैसा कि रजनी पामदत्त ने कहा है- "आधुनिक इतिहास का वर्तमान युग औद्योगिक है- सही है लेकिन क्या इतिहासकारों ने यह भी सोचा है कि भारत जैसे गांवों के देश में औद्योगीकरण का तीव्र गति, कृषि और ग्रामोद्योगों के तीव्र विकास से समन्वित किए बिना और घोर विषमता पैदा कर देगी। आज शहरों की तृष्णाग्नि में गांव स्वाहा हो रहे हैं। उनकी अर्थव्यवस्था छिन्न-भिन्न हो गई है। शहर कुप्पा हो रहे हैं। पूंजीवाद को बढ़ावा मिल रहा है। गांवों में कुलक वर्ग बढ़ रहा है- क्या यही औद्योगीकरण से उत्पन्न आधुनिकीकरण है? हमने पश्चिम से औद्योगीकरण तो ले लिया; लेते जा रहे हैं : मीर भालत के लिए ऐसी औद्योगिक संस्कृत नहीं बनाई जिसका वास्तविक लाभ बहुसंख्यक जनता को मिलता। यह स्पष्ट हो जाना चाहिए कि भारत के औद्योगीकरण का वही रूप नहीं हो सकता जो पश्चिम का है।

हालांकि भारत अत्यधिक विषमताओं और विसंगतियों का देश है। पामदत्त ने ठीक ही इसे कालदोषों का देश कहा है। लेकिन हमारा यह मतलब नहीं है कि बैलगाड़ी के चलते हवाई जहाज का निर्माण नहीं होना चाहिए या खेती के पुराने औजारों का जब तक इस्तेमाल होता है तब तक कृषि सम्बंधी उच्च अनुसंधान बंद कर देने चाहिए। अगर धर्म-कर्म-मंदिर-तंत्र-मंत्र जारी है तो विज्ञान-विचार-यथार्थ-तर्क अर्थशास्त्र का अध्ययन चिंतन जारी नहीं रहना चाहिए। आदिवासी जंगलों में नंगे रहते हो तो शहरों में इमारतें नहीं बननी चाहिए। दुरुस्त कहना यह है कि जब तक विषमता जारी है, हमें आधुनिक होने का ढोंग नहीं पालना है। चाहे उपकरण विचार संस्थाएं, प्रक्रियाएं हम बाहर से लें लेकिन उनका इस्तेमाल और रूपायन अपने देश की जलवायु, संस्कार, आवश्यकता, उपादेयता के अनुरूप करना ही हमें ऐसा आधुनिक बनाता है जो वर्ग या व्यक्ति की मुक्ति की अपेक्षा व्यापक समाज को मुक्त करता है। यही सच्ची आधुनिकता का सार सत्य है। लगातार दूसरों की परम्परा और उपलब्धियों का आंख मूंद कर पीछा करना हमें परमुखापेक्षी, आलसी, आत्माभिमानरहित और ढोंगी बनाता है। अपनी संस्कृति परम्परा, अस्मिता, जनता, यथार्थ और ज्ञान से लगातार घृणा करते हुए कोई देश क्या आत्मनिर्भर मौलिक और क्रांतिकारी हो सकता है।

जाहिर है कि जब देश की राजनीतिक-सामाजिक आर्थिक-वैचारिक स्थितियां इस कदर गड्डमड्ड और दृष्टिहीन हो आधुनिकता के नाम पर समाज का ऊपरी ढांचा लगातार निचले बुनियादी ढांचे को स्वार्थ और दिखावे के खातिर नष्ट और शोषित करते हुए नई संरचना और दिशा भी न दे पा रहा हो तब रचनाकारों का उत्तरदायित्व कितना बढ़ जाता है? इसको जांचने के ही लिए हमने आधुनिकता की उपर्युक्त चर्चा की है क्योंकि नया कवि आधुनिक संवेदना, परम्परा का मोहभंग, विद्रोह और नवीन रचना

प्रयोग के दावे के साथ अवतरित हुआ था। हम जानते हैं कि परिवेश का प्रभाव रचना पर होता है कवि भी परिवेश का अंग है, लेकिन वह समाज की आंख भी है जिसके जरिए समाज जीवन को देखता समझता और विश्लेषित करता है।

नई कविता में 'प्रयोग' शब्द के बहु प्रचलन से ही संकेत मिलता है कि यह कविता विज्ञान युग की है और विज्ञान तथा विकल्प से परहेज का युग बीत चुका है। कविता से अनुभूति की प्रमाणिकता, सत्यापन आदि की मांग विज्ञान दृष्टि से ही उपजी है। लेकिन इस प्रज्ञा बोध को लोगों ने दूर तक खींचने की कोशिश की है जैसी कि हिंदी वालों की आदत है। इस मामले में रामधारी सिंह दिनकर का यह समीकरण देखना दिलचस्प होगा।

- चूंकि विज्ञान आवेशमयी भाषा का प्रयोग नहीं करता, इसलिए, नए कवि और लेखक आवेशमयता से बचे रहना चाहते हैं। चूंकि विज्ञान शब्दों के मामले में मितव्ययी होता है, अतएव नव लेखक भी शब्दों की मितव्ययिता बरतना चाहता है। और चूंकि विज्ञान का तथ्य वस्तुओं का यथातथ्य वर्णन होता है, अतएव नवलेखक और कवि भी हमेशा कल्पना की लगाम हाथ में रखते हैं और बराबर सतर्क रहते है कि उनका वर्णन अतिरंजित न हो जाए। वैज्ञानिक का एक लक्षण यह भी है कि वह दूसरों को प्रभावित करने को न तो एक शब्द लिखता है, न एक शब्द बोलता है मेरा खयाल है कि यह विज्ञान का ही प्रभाव है कि साहित्य में अब 'रेटारिक' गुण नहीं दोष माना जाने लगा है। विज्ञान का एक यह गुण भी है कि वह निंदा-स्तुति दोनों से तटस्थ रह कर सत्य की शोध में लगा रहता है।-

गोया कविता न हुई विज्ञान का सिलैबस हो गई। यद्यपि दिनकर द्वारा दिखाई गई अनेक विशेषताएं नई कविता में हैं और उनका अर्थ भी स्पष्ट है लेकिन विज्ञान से इनका गणितीय साम्य दिखा देने से ही उन्हें कारण कार्य की हैसियत नहीं मिल जाती। किसी भी ज्ञान या विचार का कविता पर इस तरह अक्षरशः प्रभाव नहीं पड़ता वह रचनाकार के मानस में अन्य प्रभावों के साथ घुलमिल जाता है। यथार्थ चेतना और बौद्धिकता जो विज्ञान युग का अवदान है, उसने जीवन की सभी दिशाओं और अभिव्यक्तियों की तरह कविता को भी प्रभावित किया है।

इनमें गत कविता की प्रतिक्रिया, साहित्य और जीवन दृष्टि और रचनाकार के बदले हुए स्वभाव आदि ने घुल कर रचना का जो रूप और स्वभाव हासिल किया उससे हमारी सहमति हो या असहमति लेकिन मात्र विज्ञान से उसका समीकरण बिठाना युक्ति के लिए युक्ति है। इसलिए भी कि विज्ञान के व्यापक प्रभाव के बावजूद कविता को उसमें टकराना भी होता है। क्योंकि विज्ञान मात्र 'सत्यान्वेषण' है जबकि साहित्य सत्यान्वेषण के साथ ही मूल्य सापेक्ष है, विज्ञान की तरह मूल्य निरपेक्ष नहीं उसकी तटस्थता यांत्रिक तटस्थता नहीं होती। वह विज्ञान की तरह प्राक्कल्पना : हायपोथीसिसः से प्रमेयः थीसिसः तक नहीं पहुंचती बल्कि जीवनानुभूति और काव्यानुभूति से चलते हुए उत्प्रेरण और संवेदन तक पहुंचता है। निर्णय या फैसला देने में उसकी रुचि नहीं रहती। इसलिए अगर कोई कविता है तो वह विज्ञान की तरह फार्मूला या प्रमेय नहीं हो सकती। लेकिन विज्ञान हो या तकनालोजी राजनीति हो या मनोविज्ञान जो भी प्रक्रिया ज्ञान या विचार समय की रचना में हिस्सा लेते हैं कविता के लिए परहेज की चीज़ नहीं हो सकती। बहुत पहले आचार्य भामह ने स्पष्ट कहा है :

न स शब्दों न तद्राच्यं न सा विद्या न सा कला
जायते यन्न काव्यांगं अहां भार : महान कवे।

गरज़ कि जीवन में ऐसी कोई वस्तु नहीं है जो काव्य का अंग न बन सके। प्रतिभा की चरितार्थता ही यह है कि वह समय के केंद्र से टकराए, उससे बच कर न निकले। मेरा आरोप तो बल्कि यह है कि विज्ञान की विभीषिका और वरदान दोनों का जिस तीव्रता से अनुभव किया जाना चाहिए था, जहां किया गया। केवल उससे उत्पन्न बौद्धिक प्रभाव, व्यंजना के लिए उसकी शब्दावली का यत्र-तत्र उपयोग और आधुनिक जीवन के विश्लेषण में प्रभाव के स्तर पर उसका यत्किंचित सहयोग लेकर, इनके माध्यम से पिछली कविता से अपनी पृथक पहचानों को रेखांकित किया गया।

(हिमप्रस्थ, अंक मई 1985 में प्रकाशित)



हिमप्रस्थ के धरोहर पन्नों से

नये की जन्म-कुण्डली

• **गजानन माधव मुक्तिबोध**

मैं एक ऐसे व्यक्ति को जानता हूं जिसे (क्षमा कीजिए) मैं एक ज़माने में बहुत बुद्धिमान समझता था। मुझे उससे बहुत आशाएं थीं कि वह आगे चलकर एक मेधावी, प्रतिभाशाली पुरुष निकलेगा। लोग समझते थे कि मैं उस व्यक्ति को अनुचित महत्त्व दे रहा हूं। मुझे लगता था कि वह व्यक्ति हमारी भारतीय परम्परा का ही एक विचित्र परिणाम है। वह अपने विचारों को अधिक गम्भीरतापूर्वक लेता। वे उसके लिए धूप और हवा-जैसे स्वाभाविक प्राकृतिक तत्त्व थे, शायद इससे भी अधिक। दरअसल, उसके लिए न वे विचार थे, न अनुभूति। वे उसके मानसिक भूगोल के पहाड़, चट्टान, खाइयां, ज़मीन, नदियां, झरने, जंगल और रेगिस्तान थे। मुझे यह भान होता रहता कि वह व्यक्ति अपने को प्रकट करते समय, स्वयं की सभी इन्द्रिय-शक्तियों से काम लेते हुए, एक आंतरिक यात्रा कर रहा है। वह अपने विचारों या भावों को केवल प्रकट ही नहीं करता था, वह उन्हें स्पर्श करता था, सूंघता था, उनका आकार-प्रकार, रंग-रूप और गति बता सकता था, मानो उसके सामने वे प्रकट साक्षात् और जीवंत हो। उसका दिमाग लोहे का एक शिकंजा था या सुनार की एक छोटी-सी चिमटी, जो बारीक-से- बारीक और बड़ी-से-बड़ी बात को सूक्ष्म रूप से और मजबूती से पकड़कर सामने रख देती है।

लेकिन यह बात पुरानी हो गई। अब मुझे लगता है कि मैं भी बुद्धिमान हो गया हूं। मुझे ऐसा लगता कि मेरे दोस्त की बुद्धिमत्ता का कारण उसकी ज़िन्दगी ही ज्यादा थी, न कि केवल मस्तिष्क-तंतुओं की हलचल।

बारह वर्षों के बाद एकाएक मेरी उससे मुलाकात हुई, तब आनन्द और आश्चर्य का कोई ठिकाना न रहा। आनंद से भी ज्यादा आश्चर्य। नदियों की दो धाराओं के बीच इतने बड़े-बड़े पहाड़ आ गए थे कि उन्होंने हमारी दिशाएं भी बदल दी थीं। जब फिर से मुलाकात हुई तो स्वभावतः हमारा ध्यान इन पहाड़ों की लम्बाई-चौड़ाई, ऊंचाई-नीचाई पर गया। बारह वर्ष बाद, अब तो हम दो हो गए हैं, तो किस तरह?

उसके बाल सफेद हो गए थे। लेकिन यह कहना मुश्किल था कि वह नौजवान नहीं है। यों कहिए कि वह भूतपूर्व नौजवान था। मतलब यह कि प्रभाव उसके वर्तमान रंग-रूप का न होकर उनके भूतपूर्व रंग-रूप का होता था। मुझे वह असर अच्छा लगता। जी चाहता कि उसके बारे में रोमैण्टिक कल्पना की जाए। लेकिन यह कहना मुश्किल था कि उसकी सुंदरता उसके रूप की थी, या उसके माथे पर पड़ी हुई रेखाओं की। कम-से-कम मुझे तो वे लकीरें अच्छी लगतीं। खूबसूरत कागज़ सुंदर होता ही है, लेकिन यदि वह कोरा हुआ, और उसमें कोई मर्म-वचन लिखे हुए न रहे तो, सौंदर्य में रहस्य ही क्या रहा? सौंदर्य में रहस्य न हो तो वह एक खूबसूरत चौखटा है।

सामने पीपल का वृक्ष है। चांदनी में उसके पत्ते चमचमाते कांप रहे हैं। चांदनी और उसमें चित्रित हुई छायाएं हमारे मनोलोक को एक नई दिशा दे रही हैं। मुझे मालूम था कि मेरे मित्र के लिए शैले की 'ओड टु वैस्ट विंड' उतनी ही दूर है जितना कि मेरे लिए'स्क्वेअर रूट ऑफ माइनस वन' लेकिन इसके बावजूद ये दूरियां हमारी पहचानी हुई थीं, और शायद इसीलिए वे प्रिय भी थीं।

जब-जब मुझे दूरियों का भान होता है, तब मुझे अच्छा भी लगता है और बुरा भी। अच्छा इसलिए कि दूरी हमारी गति की एक चुनौती है। बुरा इसलिए कि मित्रों के बीच दूरी खटकती है। हम एक ही भाषा का उपयोग तो करते हैं लेकिन अभिधार्थ एक होते हुए भी ध्वन्यर्थ और व्यंग्यार्थ अलग-अलग हो जाते हैं। यह दूरी के कारण हैं। दूरी पर विजय पाना मानव-स्वभाव है। वह एक साहस-रोमांस है। अब हमें एक-दूसरे को फिर से खोजना-पाना है।

एक तरह से मुझे खुशी भी थी कि मैं उसे कतई भूल गया था और उससे बहुत दूर निकल गया था। शायद यह आवश्यक भी था। नहीं तो मैं उससे आच्छन्न हो जाता। मेरी अपनी दृष्टि से वह असाधारण और क्रूरता भी उसमें थी। निर्दयता भी उसमें थी। वह अपनी एक धुन, अपने एक विचार या एक कार्य पर, सबसे पहले खुद को, और उसके साथ अपने लोगों को कुरबान कर सकता था। इस भीषण त्याग के कारण, उसके अपने आत्मीयों का उसके विरुद्ध

युद्ध होता, तो वह उसकी क्षति भी बरदाश्त कर लेता। उसकी ज़िंदगी के इस बुनियादी तथ्य से मैंने हमेशा वैर किया। जब वह राजनीति में उतरा तो मैंने उसके घरवालों के सामने गरजकर यह आरोप लगाया कि वह उसका पलायन है, अपना उत्तरदायित्व वहन न करने की प्रवृत्ति है। मैंने उससे यह भी कहा कि वह राजनीतिक व्यक्ति है ही नहीं। राजनीति के साथ जब वह साहित्य में उतरा तब मुझे कुछ अच्छा लगा। लेकिन तब तक उसकी हालत बिगड़ चुकी थी। घर के विरोध और बाहर के विरोध से वह जर्जर हो गया था। लेकिन बेहद जिद्दी होने के सबब वह अड़ा रहा। और तब से हम एक-दूसरे से दूर-दूर होते चले गए।

लेकिन आज मैं सोचता हूं कि सांसारिक समझौते से ज्यादा विनाशक कोई चीज नहीं- खास तौर पर वहां, जहां किसी अच्छी महत्त्वपूर्ण बात करने के मार्ग में अपने या अपने-जैसे लोग और पराए लोग आड़े आते हों। जितनी जबरदस्त उनकी बाधा होगी, उतनी ही कड़ी लड़ाई भी होगी, अथवा उतना ही निम्नतम समझौता होगा।

इस भीषण संघर्ष की हृदय-भेदक प्रक्रिया में से गुजरकर उस व्यक्ति का निजत्व कुछ ऐंडा-बेंडा, कुछ विचित्र अवश्य हो गया था। किंतु सबसे बड़ी बात यह थी कि उसकी बाजू सही थी। इसलिए वह असामान्य था।

दूसरे शब्दों में, मैं सामान्य उसको समझता हूं जिसमें अपने भीतर के असामान्य के उग्र आदेश का पालन करने का मनोबल न हो। मैं अपने को ऐसा ही आदमी समझता हूं। मैं मात्र सामान्य हूं। मैं नामी-गिरामी हूं (यह बात अलग है)। और चूंकि वह व्यक्ति हमेशा मेरे भीतर के असामान्य को उकसा देता था, इसलिए अपने भीतर के उस उकसे हुए असामान्य की रोशनी में, मैं एक ओर स्वयं को हीन अनुभव करता, तो दूसरी ओर, ठीक वही असामान्य मेरी कल्पना और भावना को उत्तेजित करके मुझे, अपने से बृहत् और व्यापक जो भी है, उसमें डुबो देता- चाहे वह इंटीग्रल कैल्क्युलस हो, सुदूर नेब्यूला हो, या कोई ऐतिहासिक कांड हो, अथवा कोई दार्शनिक सिद्धांत हो, या विशाल सामाजिक लक्ष्य हो। इसलिए मैं अपने और अपने मित्र के जरिए असामान्य के अंतःचरित्र और सामान्य के दबाव को भली-भांति जानता था।

लेकिन मेरी गति और दृष्टि कुछ और थी। जब मैं कोई काम करता तो इसलिए कि उससे लोग खुश होते हैं। वह काम करता तो सिर्फ इसलिए कि एक बार कोई काम हाथ में लेने पर उसे अधिकारी ढंग से भली-भांति कर ही डालना चाहिए। मेरी व्यावहारिक सामान्य-बुद्धि थी। उसकी कार्य-शक्ति, आत्म-प्रकटीकरण की एक निर्द्वन्द्व शैली। हम दोनों में दो ध्रुवों का भेद था। जिन्दगी में मैं सफल हुआ, वह असफल। प्रतिष्ठित, भद्र और यशस्वी मैं कहलाया। वह नामहीन और आकारहीन रह गया। लेकिन अपनी इस हालत की उसे कतई परवाह नहीं थी। इसका मुझे बहुत बुरा लगता, क्योंकि वस्तुतः वह मेरी यशस्विता को भी बड़ी सत्ता के रूप में स्वीकार न कर पाता।

इतने वर्षों बाद मेरी जिंदगी में जब वह वापस आया, तो मुझे लगा कि यह उस उल्कापिंड की भांति है, जो सैकड़ों वर्षों के अवकाश के बाद सूर्य के पास आकर एक चक्कर लगा लेता है, और पुनः अपने आकाशमार्ग पर निकल जाता है। इस सुदूर यात्रा के उसके अनुभव की कीमत मैं जानता हूं, भले ही किन्हीं अप्रत्याशित संघर्षों में टूट-टूटकर, वह धूल बनता हुआ, खरबों मील दूर के किसी अंधेरे शून्य में, खो जाए।

किंतु आज उसने मुझसे कहा कि उसकी पूरी जिंदगी भूल का एक नक्शा है। मैं उसके विषाद को समझ गया। वह जिंदगी में छोटी-छोटी सफलताएं चाहता था। उसके पास तो सिर्फ एक भव्य असफलता है। (यह मेरी टिप्पणी है, उसकी नहीं)। मैंने सिर्फ इतना ही जवाब दिया, 'लेकिन नक्शा तो है! यहां तो न गलत का नक्शा है, न सही का!'

मैंने उसका दिल बंधाने की कोशिश की। और मैं कर ही क्या सकता था। मनुष्य के लिए यह स्वाभाविक ही है कि वह थोड़ी-बहुत सांसारिक सफलता की इच्छा रखे। किन्हीं असावधान क्षणों में ही, उसने मुझसे कहा कि वह स्वयं भूल का एक नक्शा है। वरना वह ऐसा नहीं कहता। लेकिन आज का जमाना कैसा है, जबकि बुलबुल भी यह चाहती है कि वह उल्लू क्यों न हुई!

चांदनी में एक जादू होता है। लेकिन यह जादू अलग-अलग लोगों के लिए अलग-अलग है। न मालूम हमारी बात कहां से शुरू हुई। मैं डर-डरकर उससे बात करता जा रहा था। कहीं ऐसा न हो कि उसे जाने-अनजाने मुझसे कोई चोट पहुंचे। क्योंकि उसने अपने विचारों के लिए खून बहाया है, जिंदगी खत्म की है। इसीलिए मैं धीरे-धीरे उसकी बात सुनता जा रहा था। और जहां मतभेद व्यक्त करना हो वहां मैं, अपनी आदत के अनुसार, उत्तेजित होने के बजाय, मुसकराकर बात कह देता!

मैंने उससे पूछा, 'पिछले बीस वर्षों की सबसे महान घटना कौन-सी है?'

एक मिनट तक उसने मेरी तरफ देखा और फिर छूटते ही कहा, 'संयुक्त परिवार का ह्रास!'

मैं स्तब्ध हो गया।

उसी ने मेरे कंधे पर हाथ रखकर खिलखिलाते हुए कहा, 'और इस तथ्य का साहित्य से बहुत बड़ा सम्बंध है।'

चारों ओर चांदनी की रहस्यमय मधुरता फैली हुई थी। चारों और ठंडा एकांत फैला हुआ था। मेरी अजीब मनःस्थिति हो गई। मैं अपने पड़ोसियों की जिंदगियां ढूंढने लगा, अपने परिचितों का जीवन तलाशने लगा। एक अनिच्छित बेचैनी मुझमें फैल गई। हां, यह सही है कि जिंदगी और जमाना बदलता जा रहा था। किंतु मैं परिवर्तन के परिणामों को देखने का आदी था, परिवर्तन की प्रक्रिया

को नहीं।

एक बात कह दूं- आजकल की आवश्यकताओं के अनुसार मैं चित्रकला और नृत्यकला से लेकर मानववंश-शास्त्र तक, सबकी जानकारी रखता हूं। इस सम्बंध में बहुतेरे दिलचस्प तथ्य मेरे दिलो-दिमाग के पिछले पॉकेट में रखे हुए हैं। इसलिए मुझसे कोई ज्यादा गड़बड़ नहीं कर सकता। जब मेरे मित्र ने एकदम संयुक्त परिवार की बात कही तो मैंने उसका इम्तिहान लेने की जिद करके उससे पूछा, 'और इन वर्षों में सबसे बड़ी भूल कौन-सी हुई?'

एक मिनट के लिए वह चुप रहा, फिर उसने जवाब दिया, 'राजनीति के पास समाज-सुधार का कोई कार्यक्रम न होना। साहित्य के पास सामाजिक सुधार का कोई कार्यक्रम न होना। सबने सोचा कि हम जनरल (सामान्य) बातें करके, सिर्फ और एकमात्र राजनीतिक या साहित्यिक आंदोलन के जरिए, वस्तुस्थिति में परिवर्तन कर सकेंगे। फलतः सामाजिक सुधार का कार्य केवल अप्रत्यक्ष प्रभावों को सौंप दिया गया...

'देखते नहीं हो, आजादी के बाद जातिवाद का उदय क्यों हुआ- खासकर राजनीतिक संस्थाओं के भीतर! कांग्रेस जैसे राष्ट्रीय संगठनों के अंदर! सामाजिक सुधार का कार्य केवल अप्रत्यक्ष प्रभावों को सौंप देने के कारण ही साहित्य में भी गड़बड़ है...'

उसकी यह उक्ति मुझे बड़ी हास्यास्पद प्रतीत हुई। उसमें मुझे मूर्खता के विशाल दृश्य दिखाई देने लगे। उसने अपनी बात को रबर-जैसा तान दिया है- ऐसा मुझे लगा।

उसने अविश्वास से मेरी आंखों की तरफ देखा। शायद यह सही है कि मैं उसे बेवकूफ मान रहा हूं।

रात में, और वह भी चांदनी रात में, सामने के सेमल के झाड़ पर बैठे हुए कुछ कौवे चौंक पड़े। शायद किसी चिमगादड़ ने वहां झपट्टा मारा हो। कुछ कौवे उड़े, पेड़ के आस-पास कुछ देर मंडराये, और फिर किसी डाल पर जाकर बैठ गए।

लेकिन मेरा मित्र तैश में था। उसने कहा, 'समाज में वर्ग है, श्रेणियां हैं। श्रेणियों में परिवार है। समाज की एक बुनियादी इकाई परिवार भी है। समाज की अच्छाई-बुराई परिवार के माध्यम से व्यक्त होती है। मनुष्य के चरित्र का विकास परिवार में होता है। बच्चे पलते हैं, उन्हें सांस्कृतिक शिक्षा मिलती है। वे अपनी सारी अच्छाइयां-बुराइयां वहां से लेते हैं। हमारे साहित्य तथा राजनीति के पास ऐसी कोई दृष्टि नहीं है जो परिवार को लागू हो...'

एक मिनिट के लिए वह चुप रहा और आगे बढ़ता गया। जमाने के साथ, संयुक्त सामंती परिवार का ह्रास हुआ। उन विचारों और संस्कारों के प्रति विद्रोह भी किया गया, जो सामंती परिवार में पाए जाते थे।

'लेकिन उसके बाद क्या हुआ? लड़के बाहर राजनीति या साहित्य के मैदान में खेलते, और घर आकर वैसा ही सोचते या करते जो सोचा या किया जाता रहा। समाज में, बाहर, पूंजी या धन की सत्ता के विद्रोह की बात की गई, लेकिन घर में नहीं। वह शिष्टता और शील के बाहर की बात थी। मतलब यह कि अन्यायपूर्ण व्यवस्था को चुनौती घर में नहीं, घर के बाहर दी गई। घर का संघर्ष कठिन था। उसमें भावनाओं की टकराहट उन्हीं से होती थी, जो अपने प्राण के अंश थे। इसीलिए न केवल उस संघर्ष को टाल दिया गया, वरन् एक अजीब ढंग का समझौता किया गया। यह हुआ! मैं कहता हूं, यह हुआ! मानो इसे!'

मुझे लगा मानो वह मुझे गाली दे रहा है। एक ठंडी लहर मेरे पूरे शरीर में दौड़ गई। फिर भी चूंकि मुझे लगा कि उसकी बात अभी अधूरी ही है, इसलिए मैं चुप रहा।

वह बोला, 'इसलिए पुराने सामंती अवशेष बड़े मजे में हमारे परिवारों में पड़े हुए हैं। पुराने के प्रति और नए के प्रति इस प्रकार का एक बहुत भयानक अवसरवादी दृष्टि अपनाई गई है। इसीलिए सिर्फ एक सप्रश्नता है। प्रश्न है, वैज्ञानिक पद्धति का अवलम्बन करके उत्तर खोज निकालने की न जल्दी है, न तबीयत है, न कुछ। मैं मध्यवर्गीय शिक्षित परिवारों की बात कर रहा हूं।

'जो पुराना है, अब वह लौटकर आ नहीं सकता। लेकिन नए ने पुराने का स्थान नहीं लिया। धर्म-भावना गई, लेकिन वैज्ञानिक बुद्धि नहीं आई। धर्म ने हमारे जीवन के प्रत्येक पक्ष को अनुशासित किया था। वैज्ञानिक मानवीय दर्शन ने, वैज्ञानिक मानवीय दृष्टि ने, धर्म का स्थान नहीं लिया। इसलिए केवल हम अपनी अंतःप्रवृत्तियों के यंत्र से चालित हो उठे। उस व्यापक, उच्चतर, सर्वतोमुखी मानवीय अनुशासन की हार्दिक सिद्धि के बिना, हम 'नया-नया' चिल्ला तो उठे, लेकिन वह 'नया क्या है- हम नहीं जान सके।! क्यों? नया जीवन, नए मान-मूल्य, नया इनसान, परिभाषा-हीन और निराधार हो गए। वे दृढ़ और व्यापक मानसिक सत्ता के अनुशासन का रूप धारण न कर सके। वे धर्म और दर्शन का स्थान ले सके।'

(हिमप्रस्थ, नवम्बर, 2001)

भरोसा उस चिड़िया की तरह है जो भोर से पहले के अंधेरे में भी उजाले को महसूस कर लेती है। -रवीन्द्र नाथ टैगोर

कुछ अलग करना है तो भीड़ से हटकर चलो। भीड़ साहस तो देती है, पर पहचान छीन लेती है। -अज्ञात

अगर जिंदगी में किसी तरह का कोई संघर्ष नहीं है तो समझिए कि प्रगति भी नहीं है -अज्ञात

जहाज किनारे पर सबसे सुरक्षित रहता है, लेकिन वह किनारे के लिए बना नहीं है। -विलियम शेड

हिमप्रस्थ के धरोहर पन्नों से/ संस्मरण

पत्रों की रोशनी में प्रेम चंद

● उपेंद्र नाथ 'अश्क'

मेरे पास तो पत्र ही हैं, केवल कुछ पत्र ही। वैसे तो हर साहित्यिक के पास उस विख्यात लेखक का कोई-न-कोई स्मृति-चिन्ह अवश्य मौजूद है- कोई उपन्यास, कोई कहानी अथवा किसी कहानी की याद ही, किंतु मेरे पास तो इन सबमें से कुछ नहीं। उनसे मिलना, बातचीत करना तो दूर रहा, मैं तो उनके दर्शन भी न कर सका। इसी वर्ष के आरम्भ में वह लाहौर आए, मेरे मकान से कोई आध मील के फासले पर शताब्दी के अवसर पर उन्हें अपना भाषण देना था। मैं उनके दर्शन करना चाहता था, परंतु यह सब होते हुए भी मैं उनसे न मिल सका। परिस्थितियों ने इसकी आज्ञा ही न दी। मैं उनके दर्शनों के लिए समय न निकाल सका। हो सकता था, मैं किसी-न-किसी भांति उन्हें केवल देख लेता, परंतु मैं तो उनसे केवल मिलना ही न चाहता था, कुछ बातें भी करना चाहता था और इसके लिए समय कहां था। यदि उस समय कहीं पता होता कि लाहौर में उनका यह आना अंतिम आना है, तो मैं बातें करने की अभिलाषा छोड़ कर केवल उनके दर्शन ही कर लेता। परंतु तब ऐसा किसने सोचा था। खयाल था, अभी कई बार भेंट होगी, बातचीत करने के कई मौके आएंगे। इरादा करता था, मुसीबतों से तनिक छुट्टी मिलते ही बनारस जाऊंगा और उनसे जी भरकर बातचीत कर लूंगा। एक बार उन्होंने बनारस बुलाया भी, पर मैं जाने का प्रबंध ही न कर सका। सोचता था, इस बार किसी-न- किसी तरह प्रबंध करके अवश्य जाऊंगा। परंतु दिल-की-दिल में ही रही और प्रेमचंद केवल 56 वर्ष की आयु में ही इस संसार से विदा हो गए। अब तो उनकी स्मृति के तौर पर मेरे पास कुछ पत्र ही हैं। इनमें ही मैं उनके जीवन का प्रतिबिम्ब देखता हूं।

स्वर्गीय प्रेमचंद से मेरे परिचय का कारण मेरी कहानी 'औरत की फितरत' थी। और यद्यपि आज मुझे यह कहानी कुछ अच्छी नहीं लगती, परंतु उस समय जब यह नवम्बर 1931 में सुदर्शन जी की पत्रिका 'चंदन' में प्रकाशित हुई थी तो उस समय की अपनी कहानियों में मैंने इसे सर्वश्रेष्ठ समझा था, पर जब फार्मन क्रिश्चियन कॉलेज की कुछ छात्राओं और दूसरी बहनों ने इसके विरुद्ध सुदर्शन जी को लिखा, तो मैं अत्यंत निराश हो गया था। यद्यपि दूसरे ही अंक में सुदर्शन जी ने इस कहानी का मर्म समझाने के लिए डेढ़ पृष्ठ खर्च कर दिए थे, परंतु वह उनका अपना दृष्टिकोण था। इससे मुझे कुछ तसल्ली न हुई थी। इन्हीं दिनों में भावुकता के कारण मैंने श्री प्रेमचंद जी को एक पत्र लिखा और यद्यपि उनके व्यक्तित्व को देखते हुए मुझे उत्तर पाने की कुछ अधिक आशा न थी, परंतु जब कुछ दिन बाद ही गणेशगंज (लखनऊ) के पते से उनका उत्साहवर्धक पत्र मिला, तो मेरे आश्चर्य और उल्लास की सीमा न रही। उस पत्र में उन्होंने लिखा था-

> "मैंने तुम्हारी दोनों कहानियां शौक से पढ़ीं। वर्णन शैली की सरलता और परिपक्वता तो तुम्हें एक प्रौढ़ कलाकार बताती हैं। दोनों कहानियां अच्छी हैं। मेरे विचार में तो कोई नई चीज़ कहने से कहीं अच्छा है कि प्रकृति का एक सच्चा चित्र खींच दिया जाए।"...

इसके बाद इस पत्र में उन्होंने कहानी-लेखन सम्बंधी कुछ बातें लिखी थीं।

मैं जानता हूं, भली-भांति महसूस करता हूं कि उनके इन दो वाक्यों ने मेरे दिल में कितना साहस, कितनी स्फूर्ति और कितना बल भर दिया था। आज चाहे अपनी इस कहानी को मैं इतना अच्छा न समझूं और चाहे बाद में उन्होंने भी यह समझा हो कि इसमें एक वास्तविकता है जिसे बेदर्दी से पामाल किया गया है। परंतु इस बात के लिए मैं इस कहानी का ही कृतज्ञ हूं कि इसकी बदौलत मुझे साहित्य के इस सम्राट का परिचय प्राप्त हुआ, जिसने मेरे बाद के साहित्यिक जीवन पर बड़ा प्रभाव डाला। इसके बाद तो यह पत्र व्यवहार अंतिम बीमारी तक जारी रहा। फरवरी 1932 में उन्होंने मेरी उर्दू कहानियों के दूसरे संग्रह का परिचय भी लिखा।

प्रेमचंद जी के कुछ पत्रों से मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि पत्र-पत्रिकाओं ने उनके जीवन काल में उनका वह आदर नहीं किया जिसके वह अधिकारी थे और प्रकाशक के व्यवहार से तो वह दुखी थे ही। मेरे इस कथन पर शायद कुछ लोगों को आश्चर्य हो- क्या प्रेमचंद को भी प्रोत्साहन की आवश्यकता थी? इन महानुभावों से मैं कहूंगा कि बड़े-से-बड़े साहित्यिक को इनकी आवश्यकता होती है और मेरे विचार में तो यदि ईश्वर भी साहित्य क्षेत्र में आ जाए तो उसके साहित्यिक जीवन पर भी इसका प्रभाव पड़े बिना न रहे। यह दूसरी बात है कि प्रेमचंद जी इस अखबारी बढ़ावे के प्रति उदासीन रहे। क्या हुआ यदि उनकी वर्षगांठ नहीं मनाई गई, क्या

हुआ यदि उन्हें कोई अभिनंदन ग्रंथ नहीं दिया गया, क्या हुआ यदि उनकी पुस्तकों को मंगला प्रसाद पारितोषिक के लायक नहीं समझा गया, क्या हुआ यदि वह कभी साहित्यिक सम्मेलन के सभापति न बनाए गए। उन्हें इस प्रोपेगंडा, व्यक्तिगत रसूख, पार्टीबाजी अथवा धन के बल पर प्राप्त की हुई ख्याति की परवाह नहीं थी, आवश्यकता भी नहीं। उनकी चीजों को सर्वसाधारण ने सर आंखों पर स्थान दिया। हिंदी, उर्दू दोनों भाषाओं को पढ़ने वालों ने उनकी कृतियों को अपनाया। मुझे स्वयं याद है कि 'प्रेम पचीसी' और 'प्रेम बत्तीसी' मैंने आठवीं श्रेणी में पढ़ डाली थी और यद्यपि उस समय हम अधिक समझ न पाते थे, परंतु मैं और भाई साहिब शौक से उनकी कहानियों को पढ़ते थे। भाई साहिब मुझसे दो श्रेणी आगे थे। उन्हें प्रेमचंद जी की चीजें पढ़ने का उन्माद सा था, जहां कहीं उनकी कोई चीज मिलती, झट ले आते। मैं भी पढ़े बिना न मानता था। प्रेमाश्रम और सेवा सदन हमने नवीं, दसवीं में पढ़ डाली होंगी। उन्हें हर श्रेणी के लोगों में शौक से पढ़ा और सुना जाता था। उनकी भाषा में, उनकी वर्णन शैली में वह बात है जो दिल को अपनी ओर खींच लेती है। कहीं कृत्रिमता या बनावट नहीं 'कर्मभूमि' के अंतिम पृष्ठों में जब बिछुड़े हुए देर के बाद मिलते हैं तो सब प्रसन्न हैं, सब चेहरे हर्ष से खिल पड़ते हैं। केवल मुन्नी उदास है। देखिए उसकी हालत का चित्र प्रेमचंद जी किस प्रकार खींचते हैं-

"रही मुन्नी, वह अलग विरक्त भाव से सर झुकाए खड़ी है। उसके जीवन की सूनी मुंडेर पर एक पक्षी न जाने कहां से आकर बैठ गया था। उसे देखकर वह आंचल में दाना भरे, आ, आ, कहती पांव दबाए उसे पकड़ लेने के लिए लपक कर चली। उसने दाना जमीन पर बखेर दिया। पक्षी ने दाना चुगा, उसे विश्वास भरी, आंखों से देखा, मानो पूछ रहा हो- तुम मुझे स्नेह से पालोगी, या चार दिन अपना मन बहला कर पर काट लोगी और पिंजरे की दीवारों से सर फोड़ने के लिए छोड़ दोगी। लेकिन उसने ज्यों ही पक्षी को पकड़ने के लिए हाथ बढ़ाया, वह फुर से उड़ गया और तब एक दूसरी डाली पर फुदकता हुआ उसे संदेह भरी आंखों से देखने लगा, मानो कह रहा हो- मैं आकाश का पथिक हूं, तुम्हारे पिंजरे में मेरे लिए सूखे दाने और कुल्हिया में पानी के सिवा और क्या धरा है?"

मुन्नी के जीवन में अमरकांत जिस प्रकार आए और चले गए, उसका वर्णन इससे अच्छा और क्या हो सकता है? सारे उपन्यास को पढ़ने के पश्चात इस एक पैरे में मुन्नी की निराशाओं और हसरतों की कहानी, प्रेमचंद जी ने इस प्रकार दी है कि पढ़ कर अनायास ही दाद देने को जी चाहता है। क्या रूपक है और क्या उपमाएं? प्रेमचंद जी को वह स्थान देने में, जो उन्हें मृत्यु के समय प्राप्त था, उनके लाखों श्रद्धालु पाठकों का हाथ सम्पादकों से कहीं अधिक है और यह इस बात का प्रमाण है कि प्रेमचंद अपने पढ़ने वालों के दिलों पर राज करते थे- उनके हृदय सम्राट थे। केवल प्रोपेगंडा अथवा किसी सम्पादक की कलम से निकले हुए चार अक्षरों के बनाए हुए सम्राट न थे।

इसके बाद मुझे उनके तीन और पत्र प्राप्त हुए। मुझे मिले अंतिम पत्र में उन्होंने लिखा था यदि आदमी का वश हो तो कहीं देहात में जा बैठे। दो चार जानवर पाल ले और जीवन को देहात वालों की सेवा में बिता दे। नगरों में और विशेष कर बड़े नगरों में स्वास्थ्य, जीवन सब नष्ट हो जाते हैं। इस समय इतना ही, थक गया हूं। लेटूंगा। -प्रेमचंद

अपने तौर पर साहित्य की सेवा करने के लिए उन्होंने हंस और जागरण दो, मासिक तथा साप्ताहिक पत्र निकाले, परंतु सरस्वती प्रेस, आर्थिकी परेशानी और दूसरी कठिनाइयों के कारण वह उन्हें लाभ पर न चला सके। 14 फरवरी, 1934 के एक पत्र में उन्होंने इस ओर भी संकेत किया। यह पत्र उन्होंने साप्ताहिक जागरण के कार्यालयों से लिखा है। पत्र वह मुझे उर्दू में लिखते थे। इसका एक बड़ा उदाहरण मैं नीचे देता हूं :-

चिरंजीवी उपेंद्रनाथ जी,

दीर्घकाल के पश्चात तुम्हारा पत्र मिला, जिसे पढ़कर काफी चिंता पैदा हो गई। साहित्य-सेवियों के लिए यह बड़ी कठिनाई का युग है। विशेष तौर पर जब स्वास्थ्य भी ठीक न हो। हिंदी में पत्रों की अवस्था उर्दू से अच्छी नहीं। मैं स्वयं दो पत्र प्रकाशित कर रहा हूं और दोनों में बराबर हानि उठा रहा हूं। यहां तक कि अब जी बेजार हो गया है और चाहता हूं कि खूबसूरती से छुटकारा पा जाऊं।

हिंदी में अवस्था अत्यंत निराशाजनक है। प्रकाशकों का कटु अनुभव जैसा आपको हुआ है, उससे अधिक बुरा मुझे हो रहा है। वह... मेरे डेढ़ सौ रुपये दबाए बैठा है। एक दूसरा प्रकाशक लाहौर ही में मेरा सात सौ रुपया हजम करना चाहता है। पत्रों का यह हाल है, प्रकाशकों का यह, बेचारा लेखक क्या करे? – **प्रेमचंद**

एक दूसरे पत्र में भी उन्होंने जागरण के इस नुकसान की ओर संकेत किया था और लिखा था-

"इतनी हानि सहन करना अब मेरी शक्ति से बाहर है, परंतु साहस और संतोष से सहे जा रहा हूं। ग्राहकों की संख्या बढ़ने से इस हानि के पूरा होने का भरोसा नहीं। हां, विज्ञापन काफी संख्या में मिल जाएं तो भार हल्का हो जाए।"

इसी हानि से तंग आकर, जैसा कि स्वयं उन्होंने मुझे बम्बई (अब मुम्बई) से लिखा- अपने जीवन के अंतिम दिनों में वह सिनेमा की जगमगाती दुनिया की ओर आकृष्ट हुए। परंतु इस ओर

उन्हें बड़ी निराशा हुई। उनके चित्रपट 'बाजारे हुस्न' और 'मिल' तैयार हुए। मिल, बाजारे हुस्न से अच्छी सुनी जाती है। मैंने स्वयं तो तीन साल से सिनेमा देखना ही छोड़ रखा है चूंकि यह चित्रपट भी इसी बीच में आए इसलिए मैं देख न सका। परंतु 'मिल' की इस सफलता के होते हुए भी वह सिनेमा के इस प्रकाशवान, मनोमुग्धकारी और लुभावने संसार में न रह सके। इस वातावरण में उनका दम घुटने-सा लगा। हानि-लाभ का विचार त्याग कर वह अपने कथनानुसार अपने 'कुंज आफियत' (शांति निकुंज) में वापिस जाने के लिए विकल हो उठे।

बम्बई से उन्होंने (2 जनवरी, 1935) एक लम्बा पत्र लिखा, जिसमें दूसरी बातों के अतिरिक्त सिनेमा संसार के सम्बंध में अपने कटु अनुभवों का भी वर्णन किया था और इस दुनिया में आने और इसे तिलांजलि देने के कारणों पर भी प्रकाश डाला। मैं इस पत्र में से एक उद्धरण नीचे देता हूं-

"भई मैं तो अब इस जीवन से तंग आ गया हूं। यहां डायरेक्टरों की मनोवृत्ति ही अनोखी है। 'बाजारे हुस्न' की मिट्टी पलीद कर दी। अब 'मिल' कुछ अच्छी रही है... परंतु सत्य पूछो तो भाई मुझे तो अपना वह 'शांति निकुंज' ही अधिक पसंद है। शीघ्र ही इस दुनिया से छुटकारा प्राप्त कर लूंगा और बनारस चला जाऊंगा।"

पत्र बहुत लम्बा है, परंतु जान-बूझकर मैंने उसमें से कुछ छोड़ दिया है। आप इन दो पंक्तियों से ही उनकी बेजारी और निराशा का अनुमान लगा लीजिए। जैसा उन्होंने लिखा, वैसा ही किया भी। शीघ्र ही बम्बई को छोड़कर वापिस बनारस चले गए। फिर उन्होंने हंस को नई सूरत में निकाला। इसके पश्चात हमारा पत्र-व्यवहार कुछ देर के लिए बंद रहा। ज्ञात होता है, वह और अधिक परेशान रहे। उनके जीवन में सफलताओं के मुकाबले में निराशाओं और असफलताओं का पलड़ा भारी रहा और इन्हीं असफलताओं ने अंत को उनकी जान ले ली।

मैंने उन्हें अपनी एक कहानी 'निशानियां' भेजी थी, जिसे बाद में उन्होंने 'हंस' में सबसे पहले स्थान देकर प्रकाशित किया। इन्हीं दिनों में मेरी सबसे पहली कहानी 'सरस्वती' में छपी थी। इसका नाम 'प्रेम की वेदी' था, जो मेरी उर्दू कहानी 'मुहब्बत की कुरबानगाह' का अक्षरशः अनुवाद थी। चूंकि हिंदी में मेरी यह पहली ही कहानी थी, इसलिए मैं इसमें जबरदस्ती हिंदी शब्द ठूंस बैठा था और 'निशानियां' चूंकि इसके बहुत देर बाद लिखी गई थी, इसलिए इसमें वर्णन शैली का प्रवाह कम न होने पाया था। दोनों कहानियों के सम्बंध में लिखते हुए उन्होंने अपना मत भी लिखा-

"निशानियां लिखने पर तुम्हें बधाई देता हूं। बहुत अच्छी चीज है। इस महीने 'हंस' में दे रहा हूं। 'सरस्वती' में तुम्हारी कहानी 'प्रेम की वेदी' पढ़ी। इसमें तुमने व्यर्थ ही हिंदी शब्द ठूंसने का प्रयास किया है। मेरे विचार में शब्द चाहे हिंदी, उर्दू, अरबी तथा फारसी कहीं से भी क्यों न लिए जाएं। किंतु आवश्यक यह है कि घटनाक्रम और वर्णन शैली का प्रवाह कायम रहे।"

अपनी कृतियों में भी प्रेमचंद इसी नियम के अनुयायी थे। हिंदी में उनकी अपनी शैली है। उन्होंने कभी इस बात का ध्यान नहीं रखा कि शब्द कहां से आता है, खयाल रखा है तो घटनाक्रम और वर्णन शैली के प्रवाह का। अपने नाटक 'प्रेम की वेदी' में वह 'मुस्तसना' जैसे दुरूह और लकड़तोड़ जैसे साधारण शब्दों तक का प्रयोग कर गए हैं।

हिंदी में 'गोशाए आफियत' का दूसरा नाम ही प्रेमाश्रम है। मैं प्रेमाश्रम से एक उद्धरण देता हूं-

"ये सब आपको कठपुतली बनाकर नचाएंगे। बदनामी से बचने का इसके सिवा कोई उपाय नहीं कि उन्हें मुंह ही न लगाया जाए। आपका सलाहकार ईजाद हुसैन भी एक ही घाघ है उससे होशियार रहिएगा। वह तरह-तरह से आपको अपने पंजों में लाने का प्रयास करेगा। आज ही मैंने उसके मुंह से ऐसी बातें सुनी हैं, जिससे मुझे ऐसा विदित होता है कि वह आपको धोखा दे रहा है।"

इसके बाद मुझे उनके तीन और पत्र प्राप्त हुए। मुझे मिले अंतिम पत्र में उन्होंने लिखा था-

यदि आदमी का वश हो तो कहीं देहात में जा बैठे। दो चार जानवर पाल ले और जीवन को देहात वालों की सेवा में बिता दे। नगरों में और विशेष कर बड़े नगरों में स्वास्थ्य, जीवन सब नष्ट हो जाते हैं। इस समय इतना ही, थक गया हूं। लेटूंगा। **-प्रेमचंद**

और फिर तीन महीने की लम्बी बीमारी के पश्चात वह देहात के किसी शांतिमय कोने में जा बैठने की अभिलाषा को दिल में लिए हुए ही संसार से कूच कर गए। मंदभाग्य, मुर्दापरस्त भारतवर्ष मृत्यु के पश्चात तू अपने इस सम्राट की स्मृति में आंसू बहाया करेगा, उसके नाम पर श्रद्धा के फूल चढ़ाया करेगा, उसकी बरसियां मनाया करेगा। पर जीवन में? यह कहानी दूसरी है, दुखदायक है। मैं उनकी मृत्यु के पश्चात इस पत्र को कई बार पढ़ चुका हूं और कल्पना-ही-कल्पना में इस शेरदिल साहित्यिक के जीवन के कई चित्र खींच चुका हूं, जो जानता था कि निर्धनता और दुखों का एक नैतिक पहलू भी है और जो इन परीक्षाओं से निकल कर केवल मनुष्य ही न बना, बल्कि देवता बन गया। मैं इस पत्र को पढ़ कर कई बार दिल-ही-दिल में रोया भी हूं। कुछ उनकी बेबसी पर और कुछ अपनी बेबसी पर।

प्रस्तुति- डॉ. नवीन शर्मा
(हिमप्रस्थ, जुलाई-2001)

कविता

अगली धूल जमने तक

● तेज राम शर्मा



पुस्तकें
बेतरतीव जमा हो रही थीं वर्षों से
रेक में उन पर धूल जम रही थी
पत्रिकाओं का अम्बार
लग रहा था अलग से

पत्नी ने भी
पुस्तकों की तरह
चुप रहना सीख लिया था

एक दिन
एक किताब को
अपनी ही पहचान की तरह कहीं
विस्मृत स्मृति के धुंधलके में
ढूंढते-ढूंढते थक गया

पुनर्जागरण-सा ऊर्जा का एक झोंका
पता नहीं कहां से आया
कि दो रेक जोड़ कर
पुस्तकों को व्यवस्थित करने में जुट गया

धूल की परत
अभी उतरी ही थी
और फड़फड़ाए थे कुछ पन्ने
कि जगह के लिए
किताबों में छिड़ गया महाभारत

रामायण और महाभारत की टेक लिए
खड़ी नहीं रहना चाहती थी
अति-आधुनिक छरहरी कविता पुस्तकें
गद्य-पद्य, हिंदी-अंग्रेजी, संस्कृति-इतिहास,
प्राच्य-पाश्चात्य, जनवादी-विवादी, दर्शन-कुकरी
सब में बुरी तरह से ठन गई थी

सुनहरी जिल्द वाली जब कुछ
ड्राइंग-रूम की ओर जाने लगी
तो पत्नी चिल्लाई
ड्राइंग-रूम में रखता है कोई किताबें
ज्यादा शोर मचाया तो
घूमते ही रहते हैं यहां कबाड़ी

मैं बीच-बचाव कर ही रहा था
कि इतने में आलोचना पुस्तकों में
छूए पानी की नौबत आ गई
आधुनिक, उत्तर, दक्षिण, वाम, रूप-अरूप
रस, ध्वनि, अपोह-ऊहापोह
फसाहत-बलागत दुगर्त
संरचना-विरचना
उच्च ताप में
पता नहीं क्या-क्या अनाप-शनाप

देर रात तक चलता रहा शोर
मैं बीच-बचाव करता रहा
पूरी तरह से कोई भी पुस्तक
संतुष्ट नहीं थी अपने स्थान से
पर बच गई थीं सब इस बार
कबाड़ी के तराजू में तुलने की नियति से
अगली धूल जमने तक
सब थीं व्यवस्थित
सब थीं गुम-सुम।

श्रीराम कृष्ण भवन, अनाडेल, शिमला,
हिमाचल प्रदेश-171003

शुभदा पांडेय की कविताएं

रंजनिया

कल दिखी थी रंजनिया
टीला से उतरते
इतराते पुरानी पीली
बंगले से मिली
लहंगा-चुनरी में
सबसे जबरन मिलती
धाक दिखाती
चोटी में बार-बार अंगुली फंसाती
जिद करती मेहंदी लगवाने की
दूर से आवाज देती आजी
काट गई सपनों को
बांस की धार से
तार-तार
कपड़े से नहीं मिलेगा दाल-भात
चारा, खर-पात
श्रमजीवी अढ़ाते नहीं
खटते हैं
जैसे गिनती हैं किरणें
महुआ के फूल
बीनती है रंजनिया चइला।

सूरज के नाम

खुलती है नित्य एक तिजोरी
बिना ताला वाली
कोई लूट, सेंध, चोरी-बाजारी नहीं
काला-धन भी नहीं
स्वर्णमयी नयनों से निहारता
कोई उदार
दे जाता है सब कुछ
और हम विफल हैं व्यापार में
अतिथि आगमन के सत्कार में
धोखेबाज हैं एक निश्छल प्यार में
वो आया और चला गया
हम ठगे और ठगे से रह गए
सिर धुनते दिन भर
और बीतता है दिन
पाई-पाई छाया को बीनते।

असम विश्वविद्यालय, शिलचर, असम-700011

कविता

इतिहास और आकाश

● प्रो. बसन्ता

इतिहास हम बदल नहीं सकते
केवल पढ़ सकते हैं।
उसमें 'यदि', 'परंतु', 'लेकिन' लगाकर
कुछ कल्पनाओं के साथ
अलंकृत, सुसज्जित और व्यवस्थित
कर सकते हैं लेकिन
तथ्यात्मक सत्य से
कभी खिलवाड़ नहीं कर सकते।
ऐसा करके हम पददलित कर लेते हैं
इतिहास की सार्वभौम सच्चाई को।
इस आईने को धूलधूसरित कर देने से
मानवता की हत्या स्वयं हो जाती है :
सांस थम जाती है
शाश्वत जीवनादर्श की,
मानव के उत्कर्ष की!

अनंत आकाश को
कौन माप सकता है
इसका न आदि है, न अंत
इसमें व्यवस्थित है दिग-दिगंत
ध्वनि-प्रतिध्वनि
शब्दों का आश्रय
समग्र सृष्टि को आगोश में समेटे हुए
निर्लिप्त, निर्लेप
सुख-दुख से उदासीन,
आंधी, तूफान का साक्षी
नर संहार विध्वंस और अवशेष
आदि का मूक दर्शक!
विचलित कभी नहीं होता
शोक व उल्लास से,
सृष्टि और विनाश से,
हंसी और विलाप से,
प्रशस्ति व प्रलाप से!

अध्यक्ष, अंग्रेजी विभाग,
सरदार वल्लभभाई पटेल महाविद्यालय, भभुआ,
बिहार-821101, मो. 8083283052

कविता

शाम-सवेरा

● नन्दकिशोर बावनिया

देखो, स्याह रंग में डूबी शाम को
रवि, शांति देकर चले, विश्राम को।

पंछी चहकते लौट चले अपने डेरों को
अनुशासन से बनाते अपने घेरों को।

तरु खड़े उदास, लेते धीमी सांस
ऊंघने लगे, आने वाले रवि की आस।

आकाश में लालिमा सर्वत्र है छाई
चेहरा उदास लेकर संध्या चली आई।

श्रमिक भी थककर चले अपने घर
रवि शांत छोड़ चले जग चराचर।

रात ने ली समय की डोर अपने हाथ
वह छा गई सब ओर, अंधेरों के साथ।

विरहणी का दर्द अब बढ़ता जा रहा है
दूर कहीं कोई दर्द भरा गीत गा रहा है।

सिकुड़ ली है पंछियों ने भी अपनी पांखें
श्रम से निढालों की लग गई है आंखें।

स्वप्न सागर में वे गोते लगाने लगे हैं
बंद नयन भी कई सपने सजाने लगे हैं।

नींद भर स्वप्न सुख में खो जाते हैं।
सुख-दुख की अनुभूति वे पाते हैं।

दुख से दुखी रात भी आंसू बहाने लगी है।
उजालों से डर, अंधेरों के महल गिराने लगी है।

भोर ने रवि के आने का दिया संदेश
रवि फिर सजा कर आया, नया रक्तवेष है।

63, सरस्वती नगर, धार, मध्य प्रदेश-454001
मो. 9406669333

कविता

तुम ही हो!

● शास्त्री दीनानाथ गौतम

मां-बहन-बेटी भी तुम ही हो
धर्म सहभागिनी और भी तुम ही हो
मां तुम चलो मैं फिर आऊंगा
तां तूने एक शती को छूआ है
मैं भी एक शतक करके आऊंगा
और तुम्हारी विजय पताका फहराऊंगा।

क्योंकि मैं तेरा जातक हूं
तुम्हारी कोख का पातक हूं
किंतु मां इस अंतराल में
तुम सिर्फ मेरी ही मां बनकर रहना।

मां इस बात का ध्यान रखना!
चूंकि मैंने पुनः तुम्हारी कोख में पलना है
तुम फिक्र मत करो मेरी माता
मैं शत्रुओं का विष गटक जाऊंगा।

मां मैं तेरा एहसान कदापि नहीं भूलूंगा
तेरे गर्भ में मैंने नौ माह बिताए हैं
मां- पिता केवल अन्नदाता/ नमक दाता भी
तूने तो स्वयं गीले में मुझे सूखे में सुलाया है
दुलराया है झुलाया है तू पालनहार भी है।

मां मैं तेरा ऋण चुका नहीं सका हूं
तुझे किंचित् सहारा नहीं दे पा रहा हूं
मां अगली बार मुझे फिर जन्म देना
मैं एक-एक क्षण का हिसाब दे पाऊंगा।

नारी तुम्हारे अनेक रूप तू संसार की दात्री है
रिश्ते तुम्हारे अनेक हैं किंतु जन्म दात्री है
समग्र संसार नतमस्तक तुम्हारे आगे
नारी नर की खान है और गर्भ-धात्री है।

पूर्व विधायक, द्रंग-30, गौतम विहार, टाण्डू, तह. सदर, जिला मंडी, हिमाचल प्रदेश-175001
सम्पर्क : 01905 266722

हाइकु

डॉ. कुँवर दिनेश सिंह

प्रणय

1
प्रेम में राधा
भावना के बल से -
कृष्ण को बाँधा



2
तुम जो मिले
जीवन में फाल्गुन
सुमन खिले

3
बाहों में तुम
सारे संशय-भ्रम
हो गये गुम

4
छुपाऊं कैसे
एहसास प्यार का
बताऊं कैसे

5
दर्द का रिश्ता
दिल ढूंढे जिसको
आये रिश्ता

6
बोलते नैन
हम दोनों की चुप्पी
तोड़ते नैन

7
तन है कहीं
प्यार में पगलाया
मन है कहीं

8
मन उचाट
आँखों आँखों में अब
रात को काट

9
लग जा गले
फिर कोई भी भ्राँति
जी को न छले

10
चुप्प न रहो
प्रेम का नियम है
कुछ तो कहो

11
दिल की कही
लगे बिल्कुल सही
प्यार है यही

12
जन्मों का नाता
दूर-दूर दिलों को
पास ले आता

13
बैठे हैं यूं ही
प्यार हुआ जब से
ऐंठें हैं यूं ही

14
लगती पूरी
गागर ये प्रेम की
फिर अधूरी

वासन्ती दौर

1
रुत फाल्गुनी
धरा की जिजीविषा
बढ़ी चौगुनी

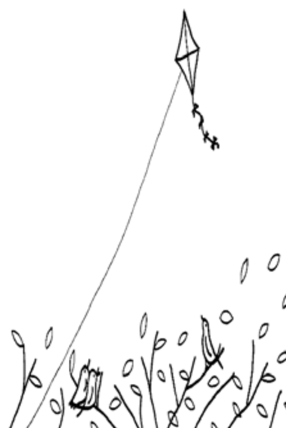
2
वासन्ती दौर
मन को मोह रहे
आमों के बौर

3
शिशिर गया
मही का मिजाज ही
ज्यों फिर गया

4
फूले बादाम
हरे तोतों के दल
भूले आराम

5
सरसों फूली
हरी बाहों पर पीली
पांखुरी झूली

6
आया है मीत
कली का मन मोहे



7
उड़ी शलभ
आसमान में राह
हुई अलभ

8
ऋतु नायक
आया हाथों में लिये
पुष्प सायक

9
देखो क्यारी में
गुलाबों की वाहिनी
है तैयारी में

10
ये कचनार
वासन्ती हवा को दे
जोश अपार

11
बीज हैं फूटे
संशय आवरण
समस्त टूटे

12
तितली नाचे
फूल से फूल मस्त
रोमांस बांचे

13
देखो अलि को
गुदगुदाते हुये
बाला कली को

14
मनचला है
कली का जी अलि ने
खूब छला है

15
वाह! सुवास
मोहक मधुमास
लाया उजास

16
रमा मौसम
अलि-सुमन संग
इदन्न मम!



1
अकेला पेड़
घर की दीवार से
सटा है पेड़

2
नन्हा सा सोता
बीहड़ जंगल में
एकल रोता

3
नार अकेली
छेड़ती बार बार
हवा सहेली

4
डगर सूनी
जी बहलाने आयी
हवा बातूनी

3, सिसिल क्वार्टर्ज, चौड़ा मैदान, शिमला,
हिमाचल प्रदेश-171004
मोबाईल: 0-94186-26090

कविता

स्वार्थ की आंधी

● वंदना राणा

इन दिनों
कोयल का खुश होना, चहकना
लगता है मुझे
पानी के बुलबुले जैसा
जाने कब फूट जाए

बहुत दिनों से
बात हो रही है
उस पेड़ को कटवाने की
धूप की खातिर
उसके और साथी भी चढ़ चुके हैं भेंट
स्वार्थ की

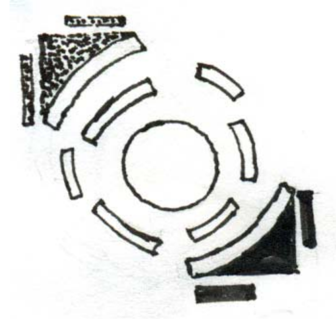
ऐसे में कुछ कटवा दिए
कुछ सुखा दिए
बेमौत मारे गए
कई पेड़
मेरे घर के आगे पीछे
कभी
आशियाना हुआ करते थे परिंदों के
आजकल
चल रही है बात
हरे-भरे बचे एकमात्र पेड़ को कटवाने की
जिस पर बैठी चहचहाती
कोयल शाम ढले
गीत सुहाना गाती है
उसका मधुर राग कानों में मीठा रस घोल रहा है
मगर
उदास है मन
उन साजिशों को सुन देखकर
जिसका शिकार होने वाला है
यह पेड़,
जिसका पता न पेड़ को है
न ही कोयल को
स्वार्थ की आंधी में जाने कब
इनका आशियाना बिखर जाए
इन दिनो...!

सैट नं. 3, टाइप 3, कैंडल लॉज, लौंगवुड,
शिमला-171 001
मो. 0 94184 39685

कविता

एक दृश्य

● रमेश कुमार सोनी



धरती के कैनवास पर
जब बारिश हरे रंग भरती है
तो आसमान भी इंद्रधनुष बनाकर
स्पर्धा में खड़ा हो जाता है।
जब धरती वसंत में सजकर
रंग-बिरंगी हो जाती है
तब आसमान भी जलन से
पीला होकर तमतमाने लगता है।
इन सबसे दूर चांद
जब दुधिया रोशनी से हौले-हौले
पेड़ों का श्वेत-श्याम चित्र उकेरता है
तब मेरा चितेरा मन
हार मान लेता है चांद से
मैं अपने ब्रश और रंगों को समेट रहा हूं
क्योंकि मुझे अंतिम धड़कन तक बचाना है-
चांद के बनाए चित्रों को।
अद्भुत वशीकरण है इनमें
इन्हें देखने के लिए होनी चाहिए-
मन की आंखें और
बचाने के लिए चाहिए-
धरती से भी भारी कलेजा;
कभी देखा है आपने दुधिया रोशनी में
झील की सतह पर उकेरे गए पीपल का चित्र।

जे.पी. रोड, बसना, छत्तीसगढ़-493554

कहानी

बची हुई आदमीयत

• बद्री सिंह भाटिया

बड़ी देर से वह प्यास महसूस कर रहा था। तेज धूप में लाश के साथ साइकिल खींचना मुश्किल पड़ रहा था। मन कर रहा था, कहीं घनी छाँव मिले तो सुस्ता ले। प्यास भी ठण्डी हो जाए। मगर जाने की जल्दी और वापसी का फिक्र, उसे रोके थी। वह समय पर जिला अस्पताल पहुँचना चाहता था ताकि समय पर बेटी का पोस्टमार्टम हो सके।

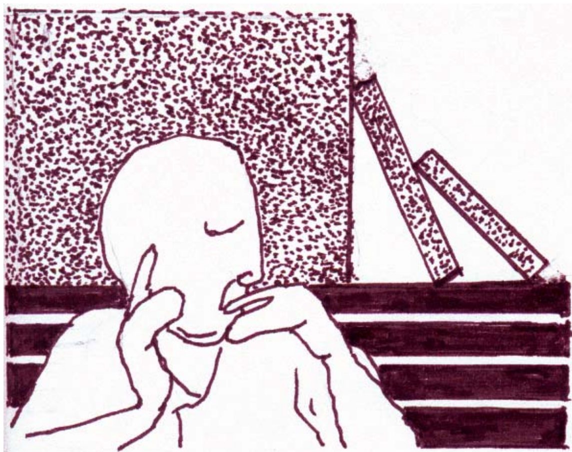
आगे उसे पीपल का पेड़ दिखा। हाँ! यहाँ उसे सुस्ता लेना चाहिए। सोचा उसने। ये सफेदे, कीकर के पेड़ ठण्डी छाँव नहीं देते। शमा भी सुस्ता लेगी। इसे भी तेज धूप सता रही होगी। पर पानी... नहीं वह पानी नहीं पी सकता-जब तक की शमा का अंतिम संस्कार नहीं हो पाता।

उसने छाया में साइकिल स्टैण्ड पर खड़ी की। सम्भाल कर, ठीक सन्तुलन बनाकर और छाँव में बैठ गया। पाकेट से बीड़ी निकाली और मुँह में लगाई। हाथ में माचिस पकड़ी। तिल्ली से झर्र करने ही वाला था कि साइकिल पर लेटी बेटी का खयाल आया-ओंठो में बीड़ी दबाए ही बड़बड़या-देख बेटा ! तूने क्या कर दिया? अपने बापू को ये सजा... मुझे प्यास लगी है। तुझे भी लगी होगी। पर पानी ...चलो मैं तो पी लूँगा पर तुझे कैसे पिलाऊँ? तू तो...और देखो सालों ने क्या कहा? जिला अस्पताल ले जाऊँ, तुझे। वहाँ तेरी चीर फाड़ कराऊँ? तब... तब होंगे उनके कागज पूरे! उन्हें पता चलेगा कि तू कैसे मरी! ... और वो थानेदार, लुच्चा साला। बोलता-मैं क्या करूँ? कानून है। ऐसे में हम कागज बन्द नहीं कर सकते। पोस्टमार्टम तो करना ही है। आत्महत्या का मामला है...। तेरे साथ वो सिपाही जा रहा है। तब मैं फिर गिड़गिड़ाया था। कितनी मिन्नतें की थीं उसकी। पर वो बोला-कर्मचन्द मैं कुछ नहीं कर सकता! ये करना ही पड़ेगा। और जब मैं तेरे पास आया तो वह सिपाही जो साथ आया था-बोला था-'कर्में ये कागज ले और वहाँ दिखा देना। मुझे एक और तहकीकात में जाना है। पोस्टमार्टम के बाद जो कागज वहाँ से मिले यहाँ ले आना, मुझे देना। तब लाश जलाना वर्ना....मैंने कितना कहा था-साहब मैं गरीब हूँ। पैसे नहीं हैं मेरे पास। मैं किसी गाड़ी का खर्च भी बरदाश्त नहीं कर सकता। परसाल ही तो जमीन रहन रखी है- अब जो कमाता हूँ उससे सुबह शाम ही चलती है- ओह! कितना कड़वा उत्तर था उसका। 'ये तो करना ही पड़ेगा।'

और बेटा, मैंने तब बिरादरी की ओर निहारा था। कोई कुछ नहीं बोला था-अस्पताल के प्राँगण से कोई न कोई बहाना कर निकल गए थे- और वह डाक्टर, कितनी रुखाई से बोला था- यहाँ पोस्टमार्टम का प्रबन्ध नहीं है। मैं क्या कर सकता हूँ। जिला अस्पताल ले जाओ। और मैं लाचार। क्या करता। तुम नहीं जानती। भीतर कमरे में तुम्हारी लाश! बाहर मैं और मेरी हताशा। तुम एक निर्जीव देह... मेरी बेटी... तुम जो शायद कहीं और चली गई होंगी-जहाँ तुम्हारा मन था-तभी तो तुम... मुझे देखती कि मैं भी बाहर जिन्दा लाश हो गया था- क्या करूँ की सी स्थिति। अपने भाई बान्धवों के बारे सोचता-आज कोई नहीं है? पाकेट में इतना पैसा नहीं है कि गाड़ी करूँ। कुछ सोच मन बनाया भी। एक गाड़ी वाले को पूछा था- भइया लाश! वह उछल पड़ा था-भाई शादी में जाना है, गाड़ी में लाश...नहीं, दूसरे ने कहा था-लाश नहीं ढोते! एक ने इतने पैसे मांगे कि पैर के नीचे से जमीन ही खिसक गई... बेटा तू नहीं जानती उस समय मेरी क्या दशा थी? आज आदमी, रिश्तेदार सब जीते जी के ही हैं। पैसे वालों के हैं... मैं अकेला हो गया था वहाँ। पर बेटा तू बता, तुझे क्या पड़ी थी ऐसा करने की? क्यों किया तूने. ..ये जीवन तो...।'

काफी देर बाद कर्मू ने झर्र कर माचिस जला दी। बीड़ी के सिरे पर लगाई और कश खींच कर उठ गया-'बस हो लिया आराम। चलते हैं। ऐसा न हो कि समय हो जाए, और... तब रात वहाँ ही काटनी पड़ेगी। एक लाश के साथ कैसे कटेगी रात उस बेगाने शहर में!'

वह उठा, छाँव में खड़ी की साइकिल को सीधा किया। ऊपर



लाश होने से बहुत जोर लगा। गंतव्य की ओर आगे बढ़ने लगा.. .थोड़ा आगे चल कर बोला, 'बेटा तुम्हारी लाश पड़ी थी। मैं अपने बारे में सोच रहा था कि तभी वार्डबॉय आया- 'ऐ भइया, ये लाश उठाओ और...।' कितना निर्दयी निष्ठुर। मुझे उसका तुम्हे लाश कहना बुरा लगा था-एक बाप की बेटी मरी है। और वह...। मैंने कहा था, उठाता हूँ। इधर-उधर नजर दौड़ाई, दो लोग जो गाँव से आए थे, वे भी चले गए थे। एक सिपाही था-वही जो लौट गया था-उसने भी कहा था-भाई कर कुछ मुझे भी काम है। मैं उठता कि नर्स आई- 'ये भाई, तू सुनता क्यों नहीं। और मरीज भी है यहाँ! हमें यही नहीं देखना... देखा एक औरत भी नही समझती कि... खैर मैं उठा, तुझे उठाया, बाहर रखा और असमंजस की स्थिति-क्या करूँ? तभी सूझा साइकिल पर ले चलता हूँ। और चारा भी क्या था। समय और पुलिस का डर... और सीढ़ी बनाई। मैंने अपनी साइकिल ली-उस पर तुझे बान्धा और चल दिया। पोस्टमार्टम तो कराना ही है... और देख, जब सिपाही का पता चला कि जिला अस्पताल की यात्रा पैदल होगी तो उसे एक तहकीकात स्मरण हो आई। धमकाया कि ये कागज लो और... तब मुझे अपने पास माकूल पैसे न होने पर स्वयं पर बहुत गुस्सा आया। पर क्या करता, तू तो जानती ही है... 'अब बता मेरी क्या दशा बनी। ऊपर से तेज धूप और बीस किलोमीटर का रास्ता। कैसे पार होगा... हाय, तूने ये क्या किया?'

उसकी आँखों से अश्रुधारा बहने लगी। वह बुदबुदाया, 'असल में गरीब की बेटी को सब कुछ सहन कर लेना चाहिए। और गरीब को भी। मोटी चमड़ी का हो जाना चाहिए ताकि कोई असर ही न पड़े।'

आगे चलते उसने लड़की को सम्बोधित कर कहा- 'देखा बेटा- सड़क से जाने कितनी गाड़ियाँ आ जा रही हैं, पर किसी ने हमारी ओर ध्यान नहीं दिया।'

वह सड़क के किनारे साइकिल घसीटता आगे बढ़ता रहा- आगे, और आगे। एक दो जगह राह में चलते लोग उसे देख ठिठके। एक दो ने तो पूछा भी था- भाई ये क्या है। आदमी सा। पर उसने उत्तर नहीं दिया- आगे बढ़ता रहा। चुप। स्वयं को समझाता, अगर तफसील देने लगा तो ठहरना पड़ेगा- वे कारण जानना चाहेंगे, गाँव का नाम पूछेंगे। फिर कहेंगे कि क्या वहाँ लोग मर गए हैं कि... कि वहाँ कोई गाड़ी-वाड़ी नहीं की, कि तेरे पास पैसे नहीं क्यों... अपने बुरे दिनों को क्यों नहीं बचाया...। फिर बेटी से सम्बोधित हो कहा, 'तुम सोचती होगी कि उन्हें जवाब क्यों नहीं दिया?... बेटा, यह 'क्यों' बड़ी खराब होती है। इसके जाने कितने पहलू होते हैं- और आदमी... क्यों के बाद कैसे, कहाँ, कौन में फँसा रह जाता है। परिणाम को प्राप्त हुए बगैर। सो नहीं बोला। और देखो! वे भी अपने-अपने हो लिए। कौन किसकी परवाह करता है।'

वह और आगे बढ़ा। आगे चार-पाँच लोग जा रहे थे। बतियाते। उनकी नजर उस पर पड़ी। उनसे आगे बढ़ते एक ने पूछा था-भाई क्या हुआ? बोला -कुछ नहीं! तब एक लड़के ने आगे बढ़ते, साथ चलते पूछा था- अस्पताल जा रहे हो। उसने सहज कहा-हाँ!

'क्या हुआ? गिर..।'

'नहीं।'

'बीमार है तो...।'

...कोई उत्तर नहीं।

'कोई गाड़ी।'

उसने हल्के गुस्से में कहा- 'भाई छोड़ो, क्यों पूछ रहे हो? अपना रास्ता नापो।'

'ठीक है नहीं पूछते- मैं सोच रहा था। तुम थके से लग रहे हो। साइकिल मैं खींच लेता। मैं भी तुम्हारी तरह गरीब हूँ, जानता हूँ।' उसने जबरदस्ती से हैंडिल पकड़ लिया था। 'ताऊ लाओ।'

वह साइकिल पर रखी बेटी की लाश से मन ही मन सम्बोधित हुआ, 'देखा बेटा शमा-अभी है, धर्म कहीं टिका हुआ। गरीब ही गरीब का दर्द समझ सकता है। मैं तो समझा था कि गरीब भी गरीबी का उपहास उड़ाता है। इस लड़के ने साइकिल पकड़ी तो तुम्हारा बोझा- सन्तुलन बनाते डगमगाया था- तुम्हारा शरीर भारी हो गया था- ये होता भी है। जिन्दा आदमी हल्का होता है। लाश बनता है तो भारी हो जाता है।'

'तुमने सुना होगा, आगे बढ़ते लड़के ने कहा- मुँह खोल देना चाहिए, हवा लगेगी।'

उसने तो दया भाव से कहा, पर मैं टूट गया। आँसू निकल पड़े। कुछ नहीं बोला तो उसने आगे बढ़ते मेरा चेहरा देखा-'बाबा रो रहे है?'

'हाँ! बेटा।'

'क्यों आप तो...।'

'बेटा ये जिन्दा नहीं है।'

'हैंऽ!' वह अचरज से एक मिनट के लिए खड़ा हो गया था।

'मतलब!' पूछा था उसने।

वह लाश से बोला, 'बेटा तुम नहीं जानती मैं उस समय कितना टूटा था। छलनी हो गया था। मैंने उससे साईकिल का हैण्डल लेना चाहा, पर वह कसकर पकड़े था- बोला- कहाँ, कैसे!'

'आत्म हत्या का मामला है। स्थानीय अस्पताल में पोस्टमार्टम का प्रबन्ध नहीं है सो जिला अस्पताल जाना है।' मैंने कहा था। तूने सुना होगा। इस पर उसने कितने प्रश्न किए। वही जमाने के लोगों की हृदयहीनता के और फिर स्वयं भी रुआँसा हो गया था-बड़ी देर बाद बोला था- 'हिम्मत करो आप! ये जमाना ही ऐसा है। इस प्रदेश में ही नहीं पूरे देश में', क्या पूरे विश्व में गरीबों की दशा ऐसी ही है- बस जो नहीं देखा वहीं अच्छा है..।

....बेटा उसने बताया-शायद तूने सुना भी होगा। हाँ सुना ही होगा। तेरी आत्मा तो साथ चल रही होगी...सुना है, जब तक मृतक का दाह संस्कार नहीं हो जाता उसकी आत्मा शरीर के साथ रहती है जब तक कि दाह संस्कार न हो जाए... क्योंकि ये तो शरीर मरता है आत्मा थोड़े ही मरती है। वह तो देह के पूराना होने पर उसे छोड़ नया शरीर प्राप्त करती है-वैसे ये आत्मा बड़ी बेईमान चीज होती है। निष्ठुर, निर्मम, स्वार्थी। अपनी मौज करती रहती है-मौज खत्म तो लात मार दी। और मृत्यु ले आई। मृत्यु भी कोई बहाना बनाती है और... पर आत्महत्या में क्यों साथ देती होगी? उसे तो जीवन का आनन्द लेना चाहिए। पर क्या पता उसका इतना ही सम्बन्ध हो। तभी... क्या पता ये बातें हम गरीबों की समझ से बाहर है। हम तो इतना जानते हैं जितना कोई बड़ा आदमी बता देता है।

लड़का बोला था, 'दो बरस पहले उसके साथ भी ऐसा ही हादसा पेश आया था-खूब खजल हुआ था वह। उसे भी थाने वालों की, अपने सरीकों की जलालत सहन करनी पड़ी थी। गाँव के एक तगड़े व्यक्ति ने उसकी बहन के साथ बलात्कार कर उसे मार दिया था- तब...'

...पर बेटा तू मुझे बताती तेरे साथ क्या हुआ जो इतना बड़ा कदम उठाया-आज तेरा बापू किस तरह...तू बताती तो मैं करता कुछ। बलात्कार हुआ था तो अपनी माँ को बताती। हम सहन कर लेते या करते कुछ। तुम तो हमारे पास होती।

उसने फिर पूछा, 'किसी के साथ तेरे प्रेम सम्बन्ध तो नहीं थे और उसने तुझे धोखा दिया हो तो भी... मैं सब स्वीकार कर लेता। मैं जानता हूँ गरीबों के साथ ही होता है ये सब। गरीब की जवान बेटी पर सबकी नजर होती है-उसके कपड़ों से बाहर निकल रही उसकी जवानी कोई बरदाश्त नहीं करता-गरीब पिता सब जानते हुए भी मन मसोस कर रह जाता है- क्या करें की सी स्थिति...मैं तो कहता हूँ गरीबों के बेटियाँ होनी ही नहीं चाहिए। तू भी...समाज के लुच्चे-लफाड़े जिन्हें कोई काम-काज नहीं होता, इस इसी फिराक में रहते हैं कि कब किसकी इज्जत से खिलवाड़ करें। कब किसकी ऐसी-तैसी करे। तमाशा देखें।'

हम तो मृत का संस्कार करने में लगे थे मगर पता नहीं चला कब किसने खबर कर दी पुलिस को? पंचायत मेम्बर ने कहा- 'भाई लाश को मत छेड़ो अभी पुलिस आ रही है। पहले पंचनामा होगा फिर...।' और सभी आए लोग उठकर खड़े हो गए थे। तेरे अंतिम संस्कार को लाया सामान उसी तरह बिखरा पड़ा रह गया था। बिरादरी के लोग तो चाहते थे कि शीघ्रता से अंतिम संस्कार हो, मिट्टी बनी देह को आग को समर्पित करके वे अपने-अपने काम पर जाएँ। पर... तब जब पुलिस आई तो कितने लोग रह गए थे? तीन-चार और हम... भाई ने तो आना नहीं था। वह लड़कर ही अलग हुआ था। पर... हो सकता है उसने मेम्बर को भड़काया हो और जाकर थाने में सूचना दी हो... वह मेरा तमाशा देखना चाहता है। हाँ! उसी ने किया होगा ये सब। मेरा दुश्मन और कौन हो सकता है? पर...तेरी माँ की भी कई लोगों से बजती रहती है। अक्खड़ औरत है। किसी कड़वी बात को सहन नहीं करती- सहनशीलता तो उसमें है ही नहीं। मक्खी तक सहन नहीं करती। एकदम भड़क उठती है- शायद इन दिनों घासनी में या खेत में कोई झगड़ा हुआ हो... तब किसी ने।'

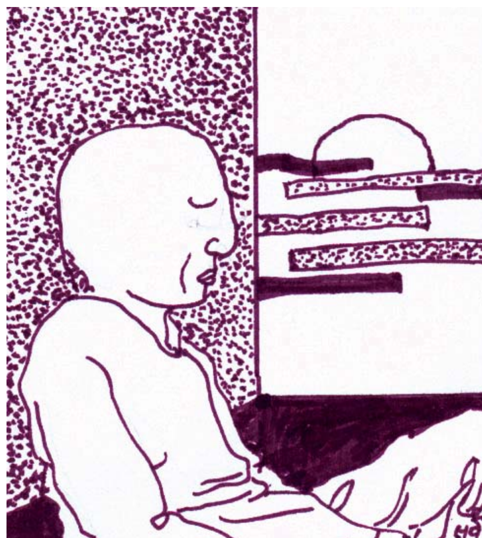
उसकी आँखों से अश्रुधारा बहने लगी। वह बुदबुदाया, 'असल में गरीब की बेटी को सब कुछ सहन कर लेना चाहिए। और गरीब को भी। मोटी चमड़ी का हो जाना चाहिए ताकि कोई असर ही न पड़े।' आगे चलते उसने लड़की को सम्बोधित कर कहा- 'देखा बेटा-सड़क से जाने कितनी गाड़ियाँ आ जा रही हैं, पर किसी ने हमारी ओर ध्यान नहीं दिया।'

पर एक बात समझ नहीं आ रही। तू इस अन्जाम तक पहुंची कैसे? कहीं कम्पनी के किसी आदमी ने ही तो नहीं। आजकल कम्पनी में कई तरह के लोग आए हैं। कई गाँवों में कई वारदातें हो गई हैं- वो सामने के गाँव में... औरत ने ही अपना आदमी मरवा दिया। बेचारा वह... घर जा रहा था। राशन का सामान लेकर। रास्ते में दरान्त से तीन लोगों ने प्रहार किए और खत्म। उसका क्या दोष था? घाट पर जरा सी शराब पीकर थोड़ा बहका ही तो था- चुनाव में उसकी पार्टी के व्यक्ति की जीत पर ही तो कुछ कहा था- उसकी क्या पार्टी वो कोई कार्यकर्त्ता थोड़े भी था-बस समर्थक मात्र। इस बार उसने जिसे वोट दिया वो जीत गया था-बस इतना ही। यही तो बहाना था। पर बेटा बात और थी। उसकी घरवाली के सम्बन्ध कहीं और थे-उसे कम्पनी से जमीन अधिग्रहण का काफी पैसा मिला था-बस...पर तू बता देती तो...मैं तेरी शादी कर देता उससे जिसने तेरे साथ...पर तूने तो बताया ही नहीं बस कर गई ये... तेरे दिन चढ़ गए थे तो भी कुछ करता-तू अपनी माँ को बताती- बस ये क्या कि उठी और लटक गई पेड़ से-पता है तुझे लटकते कितने लोगों ने देखा! ये तुझे नहीं, तू तो मर गई थी, मुझे देखा। मेरी कितनी बेइज्जती हुई, कितने

सवाल पूछे गए मुझसे। तुझे पेड़ से उतारने कोई आगे नहीं आया। सब बोलते-पुलिस आने दो। तब...तब मैं ही चढ़ा पेड़ पर- यह सोच कि कुछ साँस बाकी हो और तुझे अस्पताल ले चलूँ कि तूने ये काण्ड अभी-अभी किया हो! सो... पर शाम को तो तू घर पर ही थी-ये कब आई यहाँ! पता नहीं चला। तब उतारा था तुझे। पर तब तक तू जा चुकी थी। तेरी तो देह भी ठण्डी हो चुकी थी। फिर..

शायद यह मेरे नशा करने की वजह से हुआ होगा। तेरी माँ ने कहा भी था-दरवाजे में आवाज हुई थी- ये! उठ और जाकर देखो। तब मैंने ही कहा था- तू सोई रह। और मैं...बेटा क्या हो गया ये सब? मैं मुआ अपने में ही मस्त रहने लगा था-- पर ऐसा नहीं मैं अपनी गरीबी से परेशान था-- ऊँचा उठना चाहता था। पर कोई रास्ता नहीं मिल रहा था। जब कुछ नहीं सूझता था तब थोड़ी सी ले लेता था।'

...बेटा समाज में अच्छे लोग भी होते हैं। दरअसल उन तक हमारी पहुँच कम होती है। जो अच्छा बनते हैं, वे प्रायः नहीं होते, और जो होते हैं वे दिखावा नहीं करते-अब उसी लड़के को देखो-उसने अपना काफिला छोड़ा-उनके साथ उसे अपने गन्तव्य पर जाना था- उनके साथ उसके जाने कितने वायदे थे, कितने सरोकार थे पर नहीं! उसने मेरा साथ चुना। कितनी दूर तक आया था वह- बोला था- अंकल, हाँ! अंकल बोला था वह। पहले बाबा कहा था-तब उसने मेरा चेहरा देखा था-मेरी उम्र का अन्दाजा नहीं था। पर जब उसने तेरी उम्र पूछी मात्र सोलह साल, दसवीं की परीक्षा भी नहीं दी थी अभी, तैयारी चल रही थी और तब तुमने.. । बोला था-अंकल आगे चलता, पर लौटना भी है, इधर कस्बे में थोड़ा काम है। सो... ।' तब मैंने कहा था-'बेटा कस्बा तो पीछे छूट गया।'



'हाँ! पर मैं लौट जाऊँगा। आप जाओ। मैं... । साइकिल पकड़ाते उसकी आँखें भरी थीं। मानो तुम उसकी वह बहन हो जिसके साथ... । ये दुराचारीय बेटा सब जगह होते हैं। ये तब भी थे जब रामचन्द्र होते थे, कृष्ण भी। परन्तु उनकी गाथाएँ उतनी ज्यादा नहीं हैं। वे जो भी है, अमीरों के संग की है, हमारे जैसे गरीब तब भी होंगे। आज तो बस...वह लड़का लौट गया था। क्या नाम था? मैं पूछ ही नहीं पाया, गाँव भी नहीं, वर्ना कभी उसका आभार प्रकट करने चला जाता। कभी वह मिल ही जाता- क्योंकि आदमी को आदमी मिल ही जाता है, खूह को खूह नहीं। पर अब क्या किया जा सकता है मुझ पर तो अस्पताल पहुँचकर तेरा पोस्टमार्टम करवाने और फिर लौटने का प्रभाव ज्यादा था। ज्यादा सोचने की शक्ति ही नहीं रही थी। विपदा थी मुझ पर, सो...मैं पूछ ही नहीं पाया-बेटा! अनाम, तू माफ करना मुझे। मैं कृतघ्न नहीं हूँ परन्तु...।

000

लाश के साथ बतियाता कर्मचन्द आगे बढ़ता गया। शहर के समीप पहुँचा। छोटा सा कस्बा। उपनगर कहें तो ज्यादा ठीक। लोगों की आवाजाही बढ़ने लगी थी। गाड़ियों के हार्न पर हार्न बजते रहे और वह आगे बढ़ता रहा। तभी एक दुकान पर से एक युवक उछल कर उसके पास आया। पूछा, 'बाबा ये क्या है?' क्या उत्तर दे? वह आगे बढ़ने लगा तो उसने रोक दिया- 'नहीं। रुको। पहले तो उसे लगा यह कोई रास्ते में मिले युवक की तरह ही होगा। मगर जब उसने जरा कड़क हो रुको कहा तो रुक गया और उसके चेहरे पर निरीह सी नजर डाली। फिर पूछता है। कर्मचन्द ने रुआँसे अपना किस्सा बताया। इतने में उसके गिर्द और लोग भी खड़े हो गए थे। लड़के के साथ तभी एक और युवा आया। उसने फोटो लिए। डायरी में नोट लिए और पुलिस एस.पी. को फोन किया। विधायक को भी। दूसरे स्थानीय नेताओं को भी। एक हूजूम खड़ा हो गया। साइकिल पर लाश। चौदह किलोमीटर दूर...त...त...च्च...च्च...

कर्मचन्द परेशान। हाथ में बन्धी घड़ी देखता-समय हो रहा है। सोचता कहीं... तब उसे उस युवा ने आश्वस्त किया-बाबा तुम रुको। बहुत हो लिया। चौदह किलोमीटर! लाश के साथ! पुलिस...छीऽ छीऽ। ये पुलिस की डियूटी थी। और तभी अस्पताल से एम्बुलेन्स आ गई। लड़के ने कर्मचन्द से कहा-साइकिल उस दुकान पर रखो, वापसी में लेना। अभी बैठो। एम्बुलेन्स चली। अस्पताल गए। बाद वे एस.पी के पास भी गए।

तब स्थानीय पुलिस की स्थिति पता चली। उनके पास वाहन नहीं था, वे क्या करते। जब पूछा कि वे वाहन का प्रबन्ध कर सकते थे- तब कोई उत्तर नहीं।

खैर! पोस्टमार्टम हुआ। और वहाँ से वापसी के लिए सरकारी वाहन मिला। कर्मचन्द गाँव वापस आया। रात हो गई थी। सूर्यास्त के बाद लाश नहीं जलाते की रिवाज के तहत उसे रुकना पड़ा। लाश वहीं घर के एक कमरे में पड़ी थी। गाँव के लोग, गाँव की कुछ स्त्रियाँ रात कटवाने बैठ गये। काफी देर तक लड़की के आत्महत्या के कारणों की चर्चा चलती रही। कई अटकलें, गाँव के गुण्डा छाप, मजनूं लड़कों के बाद देश में लड़कियों के साथ हो रहें अत्याचार भी

गुजराती कविता

कविता

मू. ले. : पन्ना नायक
अनु : जेठमल ह. मारू

एक



वर्षों तक
बरसात में भीगती
पुंछते शब्दों की
गुड़मुड़ी बनती
वह कागज थी-
जैसे कि जिंदगी।
सहेजकर घर में
छिदरी धूप में सुखाई
उसे पढ़ने का प्रयत्न किया तब
आधे पुंछे-मिठे शब्दों में
कविता
आलस मरोड़ कर उठ रही थी।

दो

कहते हैं
कि मृत्यु के समय
मनुष्य की गुजरी हुई
समूची जिंदगी
दृष्टि के समक्ष
'फ्लैश बेक' की तरह खड़ी होती है।
मेरे समक्ष खड़ा हुआ
इसका एक चित्र :
एक स्त्री
पानी में डूबती- लगभग लाश हो चुकी- जिंदगी
को बचा कर
किनारे लाती है।
वह स्त्री
कविता थी।

2-ए-2 पवनपुरी, बीकानेर, राजस्थान-334003

मूल कविता लेखिका का पता :
Panna Naik, 9074 Lykens Lane, Roxboro, Philadelphi, PA 19128, USA

चर्चा का विषय बनते रहें। असल में रात जाग कर काटने के लिए कुछ तो चाहिए कि बातों-बातों में सुबह हो जाए। कभी-कभार किसी चुप हुए व्यक्ति या महिला के मुँह से एक ठण्डी सिसकारी भी निकलती रहीं... कर्मचन्द की घरवाली का तो बुरा हाल था। रो-रो कर वह बेहाल थी। अब उसके भी आँसू सूख चुके थे। वह अपने चेहरे पर अपना दुपट्टा हाथ से पकड़े छत निहार रही थी। गाँव की उसकी एक सहेली उसी तरह उसे सम्भाले दिवार के साथ टेक लगाए थी। कर्मचन्द थका हुआ था, बड़ी देर तक वह लोगों के सवालों के उत्तर देता रहा फिर चुप हो गया। थकान और दिन भर की तड़पन से आँखे भारी हुई तो वहीं लड़की की बगल में लेट गया। एक हाथ लाश के शरीर पर मानों उसकी छोटी बेटी उसके साथ लेटी है और वह उसे अपने साथ सटाए है।

शमा के मरने की खबर सभी रिश्तेदारों तक पहुँच गई थी। सुबह तक वे भी आ गए थे। लाश के दाह संस्कार की आधी तैयारी तो पिछले दिन ही हो गई थी सो प्रातः सूर्योदय के साथ ही वे श्मशान की ओर चल पड़े। चिता जलने लगी थी। कर्मचन्द चिता को आग देकर एक ओर बैठ गया था। कपाल क्रिया तक सभी को रुकना था। सभी समय काटने को बतियाने लगे थे। धर्म-कर्म की बातें। समाज के विभिन्न रूपों की बातें, लोगों के चरित्र। अपने-अपने काम की बातें। इन्हीं बातों के बीच कर्मचन्द के कान में किसी झुण्ड से बात आई- 'यार..! अब मानवता ही नहीं रही, धर्म ही नहीं रहा कि... ।' वह चौंका-यह क्या कहा जा रहा है? शायद उनका पाला नहीं पड़ा-उसने सुनी-सुनाई बात कह दी। मन किया कि कहे- नहीं! अभी धर्म शेष है, मानवता भी बची है। पर उसने नहीं कहा- चुप आँखें मून्द एक ओर दीवार का सहारा लिए टेढ़ा हो गया।

किसी कस्बे से आए एक रिश्तेदार ने कहा कि वह तो अखबार में खबर पढ़कर आया है। बहुत बुरा हुआ।

2-हरबंस काटेज, संजौली, शिमला-171006

कहानी

प्रेमकथा : मैं, तुम और प्रेम

• विजय कुमार सप्पत्ति

खुदा से बड़ा रंगरेज कोई दूसरा नहीं है वो किसे क्या देता है, क्यों देता है, कब देता है, ये उसके सिवा कोई न जाने ये सब सिर्फ और सिर्फ वो रब ही जाने। मोहब्बत भी एक ऐसी ही नेमत है खुदा की। हमारी मोहब्बत भी उसी नेमत का एक नाम है, और हाँ नया एक और नाम है उस नेमत का तुम !!!

अंत

अकसर जब मुड़कर देखता हूँ तो पाता हूँ कि तुम नहीं हो. ..!

कहीं भी नहीं हो...बस तुम्हारा अहसास है...!

लेकिन क्या ये एक अंत है?

मुझे तो यकीन नहीं है और तुम्हें?

मध्य

तुम मुझे देख रही थी।

और मैं तुम्हारे हाथों की उंगलियों को।

जाने क्या बात थी उनमें मुझे लगता था कि तुम अपने हाथ को मेरे सीने से लगाकर कह दोगी कि तुम्हें मुझसे प्रेम है।

पर तुम कम कहती थी। मैं ज्यादा सुनने की चाह रखता था।

शब्द बहुत थे, लेकिन हम दोनों के लिए कम थे।

पहले मैं बहुत ज्यादा सोचता था और चाहता था कि तुम तक ये शब्द पहुँच जाए किसी तरह।

पर प्रेम और जीवन की राहें शायद अलग अलग होती हैं। शब्द अकसर राहें बदल दिया करते थे और मैं जीवन की प्रतीक्षा में जीवन को ही बहते देखता था। चुपचाप।

मैंने फिर लिख कर तुमसे अपने शब्दों की पहचान करवाई। तुम शब्दों को, मेरे शब्दों को जान जाती थी और समझ जाती थी कि मैं क्या कहना चाहता था। पर फिर भी तुम वो सब कुछ नहीं पढ़ पाती थी, जो मैं अपने शब्दों में छुपा कर भेजता था! हमारा लिखना पढ़ना बेकार ही साबित हुआ!

फिर मैंने कहना शुरू किया और तुमने सुनना। अब तुम मेरे शब्दों की कम्पन को पहचान जाती थी. लेकिन तुमने वही सुना जो मैंने कहा। तुम वो न सुन सकी जो मैं कह नहीं पाया!

और अब अंत में मैंने मौन को अपनाया है। तुम जानती तो होगी कि मौन के भी स्वर होते है। तुम सुन रही हो न मुझे मेरे मौन में ?

मैं ये भी चाहता था कि सत्य जानो तुम और शायद मुझे भी जानना ही था सत्य! पर मैं चाहता था कि तुम पहले जानो और समझो कि मैं प्रेम में हूँ, तुम्हारे प्रेम में !

लेकिन तुमने प्रेम को पढ़ा था, सुना था और शायद जाना भी था पर समझा था कि नहीं ये मुझे नहीं पता था, क्योंकि तुम मेरे प्रेम को पाकर असमंजस में थी। मैंने कोशिश की पर तुम जान न सकी।

क्योंकि तुम्हे प्रेम में होना पता न था! तुम सिर्फ प्रेम करना जानती थी। पर प्रेम में होना उसके बहुत आगे की घटना होती है और वही घटना मेरे साथ घट रही थी।

समय की गति और मन की गति के दरमियान प्रेम आ चुका था और अब एक बेवजह की जिद है कि प्रेम ज़िंदगी को जीत ले।

प्रेम शिखर पर ही होता है

और हम इनसान उसके नीचे!

हमेशा ही!

उम्र के और समय के अपने फासले थे। मेरे और तुम्हारे दरमियान। तुम्हारे और मेरे दरमियान। हम दोनों और दुनिया के दरमियान। हम दोनों, दुनिया और ईश्वर के दरमियान! सब कुछ कितना ठहरा हुआ था न। अब भी है। उम्र भी रुकी हुई ही है , समय भी ठहरा हुआ है और ज़िंदगी भी रुकी हुई है !

याद है तुम्हें, हम एक बहती नदी के बीच में खड़े थे। पानी की छोटी-छोटी लहरें हम दोनों के पैरों के बीच में से निकल जाती थीं। तुम पानी को देख रही थी। और मैं सोच रहा था कि काश एक



जीवन ही बीत जाता ऐसे ही। और ये भी सही है कि उस ज़िंदगी का उम्र से क्या रिश्ता, जिन लम्हों में तुम मेरे साथ थी, उसी में तुम्हें जी लिया। ज़िंदगी को जी लिया. प्रेम को जी लिया. खुदा को जी लिया. सच में!

मुझे कभी तुम छू लेती। कभी तुम्हारा आसमान छू लेता, कभी तुम्हारी धरती मुझे आगोश में ले लेती। कभी तुममें मौजूद नदी मुझे भिगो देती। कभी तुममें मौजूद समंदर ही मुझे डुबो लेता। कभी कभी तो सच में तुम ही मुझे छू लेती। तुम्हारी छुअन को अब तक सहेजे रखा है मैंने अपने मन की परतो में। सच्ची!

और तुम्हारी इसी छुअन की वजह से मुझे अब मेरे जिंदा होने का अहसास होता है.

इंतज़ार बहुत लम्बा हैं समय की सीमा से परे। तुम्हारे पुकार की तमन्ना रहती है। एक अधूरी आस। तुम पुकार लेती तो मन कह लेता न कि हाँ न, मैं हूँ। तुम हो और है हमारा प्रेम!

तुम्हें किसी से तो अपने मन की कहनी थी भले वो तुम्हारी बेचैनी हो या फिर मन की तलाश, पर कहनी तो थी मुझसे कह ली, मुझे मेरा सुकून तलाशना था बस इस तलाश की तलाश में कई और बाते भी जुड़ गई और मैं तुम तक पहुँच गया. एक सफ़र यहाँ ख़त्म हो रहा था। या हो गया था और दूसरा शुरू होने वाला था या हो गया था। कौन जाने। खुदा जाने या तो तुम जानो। मैं भला क्या जानू।

खोज शुरू थी एक अनंत काल से। मैंने हर मुनासिब जगह ढूँढा तुम्हें। जहाँ देवता पूजे जाते थे वहां भी और वहां भी जहाँ धरती आकाश से मिलती थी और वहां भी जहाँ अँधेरा उजाले से मिलता था। पता नहीं और भी कहाँ-कहाँ! पता नहीं किस जन्म का नाता था तुमसे। तुम्हें सपनों में देखता था पहले, फिर अपनी नज्मों में। फिर मन में और फिर एक बहती नीली नदी के किनारे! तुम ही तो थी! सच !

जहाँ सब ख़त्म हो जाता है, वहां कुछ नए के शुरू होने की उम्मीद होती है। बस जहाँ रीते हुए जीवन की अंतिम बूँद बनी, वहीं पर आकर तुम मिली और एक कथा शुरू हुई, नयी। मेरी और तुम्हारी। हाँ!

मुझे लिखना अच्छा लगता है और ख़ास कर तुम्हें लिखना। और जब मैं तुम्हें लिखता हूँ तो बस सिर्फ तुम ही तो होती हो और दूसरा कोई हो भी नहीं सकता न। मैं तुममें मौजूद स्त्री के प्रेम में हूँ और जब मैं उस स्त्री के प्रेम में होता हूँ जो कि तुम हो तो मेरी कोई और दुनिया नहीं होती है और सच कहूँ तो हो भी नहीं सकती! और जब तुम, तुममें मौजूद स्त्री और उस स्त्री में मौजूद प्रेम जो कि शायद मेरे लिए ही मौजूद होते हैं तब मैं लिखता हूँ अक्षर, प्रेम, कविता, कथा और ज़िंदगी!

प्रेम कठिन नहीं होता, ये तो सबसे सरल भाव है जिसे हमें अहोभाव के साथ स्वीकार करना चाहिए. पर हाँ जब हम उसे समाज के साथ जोड़ देते हैं तो फिर प्रेम कठिन हो जाता है तब वो प्रेम आत्मिक न होकर सामाजिक हो जाता है और फिर भला समाज ने कब प्रेम का साथ दिया है! हैं न! तो आओ सिर्फ प्रेम करे। कुछ और न सोचें और न ही जानें! बस प्रेम करें!

मुझे तुमसे तब प्रेम नहीं हुआ, जब मैंने तुम्हें देखा था और तब भी नहीं,जब मैंने तुम्हें पहली बार छुआ था और तब तो बिलकुल भी नहीं, जब मैं तुम्हारे साथ कुछ कदम साथ चला था। हाँ, जब उस बहती नदी ने कहा कि तुम मेरी soul mate हो और जब वहां मौजूद पर्वतों ने कहा कि तुम मेरी soul mate हो और उस बहती नाव ने कहा था कि तुम मेरी soul mate हो और उन मेघों से भरे आकाश ने कहा कि तुम मेरी soul mate हो तब हाँ शायद तब मुझे प्रेम हुआ तुमसे और फिर उसके बाद मुझे तुमसे प्रेम तब हुआ, जब तुमने मुझे देखा था. हाँ मुझे तुमसे प्रेम तब हुआ जब तुमने मुझे छुआ था और हाँ मुझे तुमसे प्रेम तब भी हुआ जब तुम कुछ कदम मेरे साथ चली थी. हाँ मुझे तुमसे प्रेम है।

नदी में तुम, रास्तों पर तुम, मंदिर में तुम, धरती, जल और आकाश, हर जगह बस तुम। तुम से ही तो है न ये कायनात। प्रेम में जब इनसान होता है तो कुछ ऐसा ही तो लगता है। मुझे भी लगा। हाँ, मैं प्रेम में हूँ, तुम्हारे प्रेम में... सच्ची!

याद है तुम्हें वो सर्दियों के दिन थे और एक रात हमने भी जी साथ-साथ। वो भी सर्द थी। हाँ, तब एक बार ये चाह उठी कि तुम से वो तीन शब्द कहता जो कि सदियों से दोहराए जा रहे थे और आश्चर्य कि वो अब भी उतने ही ताज़े महसूस होते हैं। प्रेम होता ही कुछ ऐसा है। उस सर्द रात में ऐसे कई लम्हें थे, जब तुम मेरे मन तक पहुंची और मैंने उन्हें संजोकर रख दिया इस जन्म के लिए। उसी रात को पता नहीं ऐसा क्या बो दिया था तुमने मेरी आँखों में कि सपने उग आये हैं मेरे मन में। सच्ची, खैर वो तीन शब्द अब

तक नहीं कहे जा चुके हैं। पता नहीं मेरी रूह की बारी कब आएगी।

मैं चाहता था कि तुम्हें कुछ फूल दूं, पर जिन रास्तों पर हम चले, उन पर फूल नहीं थे। उनपर ज़िंदगी थी। ज़िंदगी, फूल और प्रेम ये तीनों ही अलग-अलग दास्तानों की वजह हैं। ज़िंदगी की अपनी राह होती है और प्रेम की अपनी। फूल ज़िंदगी के लिए भी काम आते है और प्रेम के लिए। प्रेम में फूल अभिव्यक्ति बन जाते है - ज़िंदगी के लिए। सो मैं जीना चाहता था हूँ या प्रेम के संग तुम्हारे साथ। भले ही वो कुछ लम्हे हों, पर देवताओं की साज़िश कुछ अलग होती है। उनकी बातें तो वही जानें, मैं अपनी कहता हूँ। तुम सुन सकती हो मुझे? कहो तो!

समस्या वक्त की है। मैं वक्त के इन्तजार में हूँ और एक दुआ भी साथ-साथ करते रहता हूँ कि या तो वक्त आ जाए या फिर तू ही आ जाए। वक्त ही पहले आया। तुमने भी आना चाहा होगा, पर वक्त के आगे किसकी चली है और फिर जिन राहों पर चलकर तुम आना चाहती थी, वो शायद मुझ तक नहीं पहुँवती होंगी या फिर जिस राह पर मैं चला था तुम तक पहुँचने के लिए शायद वो ही गलत थी। या फिर तुम मुझ तक पहुंचना ही नहीं चाहती...पर जो भी हो, कुछ ठहर गया है। हमेशा के लिए!

दिन पानी की तरह गुजर जाते है जैसे कोई बहती हुई नदी हो और रात यूँ बेअसर सी निकल जाती है जैसे ज़िंदगी में एक ही रात आई हो, जो मैंने तुम्हारे संग जिया है। जीवन तो रेत की तरह फिसला है हाथों की लकीरों से, पर मैंने तुम्हारे प्रेम को अपनी ओक में लेकर अमृत की तरह पिया है इसलिए तो जीवित हूँ एक शब्द की गूँज की तरह! क्या जब तुम अकेली होती हो तो मेरे शब्दों की गूँज सुनाई देती है तुम्हें?

क्या किसी ने तुमसे पहले कहा है कि जब तुम खामोश रहती हो तो तब भी तुम कुछ कहती ही रहती हो। तुम्हारे अनकहे शब्द कुछ ज्यादा ही मुझ तक पहुँचते हैं। तुम जानती हो न कि मैं तुम्हारी खामोशी को भी सुन लेता हूँ पर सवाल तुम्हारा है कि क्या तुमने मुझे पूरी तरह सुना?



खैर मैंने यात्रा शुरू की है। ये यात्रा है मुझसे तुम तक और तुमसे मुझ तक और अंत में हम दोनों के प्रेम तक और प्रेम से अध्यात्म के अस्तित्व तक। देखते हैं क्या ये यात्रा हो भी पाती है या नहीं। क्योंकि जो चारवाह हमारी यात्रा करवा रहा है उसकी खुदाई हर बन्दे के लिए अलग ही होती है।

यात्रा पर हमारे साथ होंगे चन्द्रमा, तारे, बादल, सूरज, नदी, धरती, मेरा मैं और तुम्हारा तुम! इस यात्रा के साथ हमारे मन की भी यात्रा होगी बाहर से भीतर की ओर और भीतर से बाहर की ओर।

दूसरी सारी यात्रायें ख़त्म हो जायेंगी, बस हमारी ये यात्रायें चलती रहेंगी। मैं तुमसे वादा करता हूँ कि मैं तुम्हारा इन्तजार करूँगा इस उम्र भर के लिए और उस यात्रा के लिए भी। हो सकता है कि हम रुक जाएं पर मन चलते रहेंगे और फिर एक दिन मन भी रुक जायेंगे। यात्रा अनंत है किसी मन की तरह ... और मन अशांत होता है। प्रेम शांत है, पर कहीं कुछ चुभता है। जीवन की फांस! हाँ!

शायर बशर नवाज साहब ने लिखा था- करोगे याद तो हर बात याद आएगी। तुम्हे क्या-क्या याद है। बताओ तो? मुझे तो सब कुछ याद है, तुम्हारा मुझे थामना, मेरे लिए चिंतित होना और हाँ, शायद मन के किसी कोने में मेरे अहसास को घर देना। ये सब बस हुआ है। हो गया है। ठीक उसी तरह से जैसे दुनिया के सबसे बड़े डायरेक्टर ने कहा होगा- अब तुम ये करो और हम कर बैठे। ऐसे देखो और हमने देखा, ऐसे छुओ और हमने छुआ और उसने ये भी कहा था कि प्रेम करो। मैंने तो सुन लिया था और तुमने?

जो होता है सब पहली बार ही होता है। इस पहली बार में भले ही शब्द पुराने हों, पर धड़कन नयी होती है। उन शब्दों की ज़िंदगी नयी होती है। उनकी उम्र भी नयी होती है। उनकी तासीर नयी होती है। उनके जज़्बात नए होते हैं। पता नहीं, तुमने ये सब कुछ महसूस किया या नहीं। पर मैंने तो इन्हें जी लिया, उन चंद शब्दों में जो तुमने मुझसे कहे।

तुम्हारा हँसना वो दूसरी बात थी जिसने मुझे तुरंत ही तुमसे जोड़ा। तुम्हारी हंसी में पता नहीं कितनी मुक्तता भरी हुई है। जीवन की मुक्तता, उड़ने की मुक्तता। पता नहीं कितने आकाश चाहिए होंगे तुम्हे खुद को पंख देने के लिए या यूँ भी समझ लो, पता नहीं कितने पंख चाहिए होंगे तुम्हें इन आकाशों में उड़ने के लिए। तुम्हारे सपनों की उड़ानों में एक परवाज शायद मैं भी बन सकूं। कौन जानता है किसी की उड़ान को! हाँ, कौन उड़ सकता है ये मुझे पता है। मैं और तुम।

प्रेम की संभावनाएं अनंत है। जब हम किसी और लोक में होते हैं जो दुनियादारी से जुड़ी हुई होती हैं तो प्रेम की खुशबू मंद हो जाती है। हम इस कठोर और पागल समाज में अपने प्रेम को कैसे ढूंढें और कैसे बचाए रखें. पर जैसे कि मैंने कहा कि प्रेम की संभावनाए अनंत हैं. मैंने तो मेरा प्रेम तुममें ढूंढ लिया और संभव

हो कि तुम्हारा प्रेम भी मुझमें ही कहीं मौजूद हो। सवाल ढूँढने का है, तो ढूंढो! मैं अब भी तुम्हारी उस तलाश की प्रतीक्षा में हूँ जिसके द्वारा तुम मुझ तक पहुँचो।

मुझे लगता है कि तुम मौन में मुझसे कितना कुछ कह लेती हो। हाँ, ये एक सवाल जरूर है कि मैं उस अनकहे को किस तरह से decode करता हूँ। पर अगर हम प्रेम के एक वेवलेंथ पर हैं तो फिर सुनना क्या, समझना क्या और जानना क्या। पर बताओ तो भला, क्या तुम मुझे decode कर सकी हो।

तुमने कहा था कि तुम मुझे पुकारोगी। मैं इन्तजार करता रहा। एक एक पल में मैंने जैसे सदियों का सफ़र तय किया हो। दिन ढलते-ढलते रात में तब्दील हो गया और रात गुजरते-गुजरते फिर दूसरे दिन में बदल गयी। न तुमने पुकारा और न ही मैंने उम्मीद छोड़ी। मैं भूल-सा जाता था कि तुम्हारे अपने भी बंधन होंगे, अपनी दुनिया होगी, जिसमे मेरी तो यकीनन कोई जगह नहीं होगी। लेकिन मेरी प्रार्थना तुम्हारे दिल में पनाह पाने की थी, न कि दुनिया में, तुम्हारी दुनिया में। मेरी पनाह की ख्वाहिश बहुत बड़ी न थी, लेकिन उसके लिए दिल का बड़ा होना जरुरी था. सो तुम्हारे एक पुकार की चाह में मेरी पनाह की ख्वाहिश पी हुई है। न तुमने पुकारा और न ही मैंने अब तक उम्मीद छोड़ी है। मुझे तुम्हारे साथ लम्हों में जो जीना है। प्रेम लम्हों में ही तो होता है।

मुझसे शुरू होते दिनों को मैं भेज देता था तुम्हें छूकर वापस आने के लिए, पर किसी भी दिन ने मुझसे ये नहीं कहा कि वो तुम्हें छु पाया है। मैं इन्तजार करता रहता, दिन आते, तुम तक मैं उन्हें भेजता, और वो कभी भी वापस नहीं आते। हाँ, रातें आतीं जरूर एक मायूसी के साथ। मैं तुम्हारा नाम लिखते रहता हवाओं पर और मैं पूछता था अपने खुदा से तुम इस वक्त क्या कर रही होगी। क्या तुमने कभी मेरी छुअन को महसूस किया या फिर हवाओं से पुकारती हुई मेरी आवाज़ को सुना। वैसे जब तुम ये पढ़ रही हो क्या तुम्हें पता है कि मैं तुम्हे देख रहा हूँ अपने शब्दों से झांककर!

मुझे बड़ा गुमान था कि सारी सड़कें या तो तुझ तक पहुंचती हैं या फिर मेरे खुदा तक। मैं चलता रहा, अब भी चल ही रहा हूँ एक झूठी उम्मीद के सहारे, जिस राह पर मेरे कदम पड़े थे वो राह निश्चित ही तुम तक कभी भी नहीं पहुंचेगी, क्योंकि ये रास्ते विधाता ने बनाये हैं। मुझे विधाता के विधान से कोई एक शिकायत थोड़ी ही है। बहुत-सी हैं, पर तुम तक न पहुँच पाना यकीनन मुझे सबसे ज्यादा तकलीफ देता है। मैंने ईश्वर से कुछ ज्यादा थोड़े माँगा है। लेकिन देवता कब किसी की बाते सुनते हैं।

मैं अपनी प्रार्थना के साथ अकेला बैठा हूँ और रात बीत रही है। देवता भी सो चुके है। लेकिन मैं तुम्हारे सपने के साथ जग रहा हूँ। कम-से-कम सपनों में तो मिलने आ जाओ। एक बार! तुमसे मिल लूं, फिर मैं अपने खुदा से मिल लूँगा।

मैं तुमसे पूछना चाह रहा था कि क्या तुम्हारे हाथों की लकीरों में मेरा नाम है या तुम्हारी किस्मत में मेरी परछाई है। मुझे यकीन है, पर तुम्हारा मुझे पता नहीं। किसी नजूमी से पूछ तो लो कि तुम्हारी ज़िंदगी में क्या मैं हूँ ? किस्मत के फैसले भी तो अजीब होते हैं।

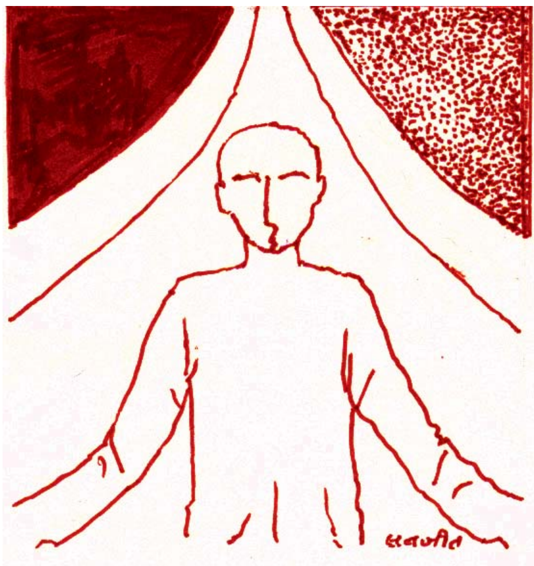
मेरे पास कई सवाल हैं, तुम्हारे पास शायद कुछ सवालों का जवाब हो, पर खुदा के पास तो हर सवाल का जवाब होता है। वो क्यों मूक बना रहता है। देवताओं को हमने पत्थर का क्या बनाया, वो बस पत्थर के ही हो गए। मेरे हर सवाल के तीन जवाब हैं, एक मेरा, एक तेरा और एक उस खुदा का। खुदा के जवाब मुझे नहीं सुनना है। हाँ, तुम कहो न। झूठ ही कह दो। मैं सच मान लूँगा।

मुझे विधाता के विधान से कोई एक शिकायत थोड़ी ही है। बहुत-सी हैं, पर तुम तक न पहुँच पाना यकीनन मुझे सबसे ज्यादा तकलीफ देता है। मैंने ईश्वर से कुछ ज्यादा थोड़े माँगा है। लेकिन देवता कब किसी की बातें सुनते हैं। मैं अपनी प्रार्थना के साथ अकेला बैठा हूँ और रात बीत रही है। देवता भी सो चुके है। लेकिन मैं तुम्हारे सपने के साथ जग रहा हूँ। कम-से-कम सपनों में तो मिलने आ जाओ। एक बार! तुमसे मिल लूं, फिर मैं अपने खुदा से मिल लूँगा।

हमारा बहुत कुछ जानना ही प्रेम को न जानने में हमारी मदद करता है। हां न, हम सारी दुनिया की बात जानते हैं और समझते हैं पर बस प्रेम को न जान पाते हैं और न ही समझ पाते हैं, दुनिया की दुनियादारी जो साथ-साथ चलती है, क्या करें? पर मैं तुमसे कहूं मुझे तो तुमसे प्रेम है और तुम्हें?

मैंने कुछ तस्वीरें ली थीं तुम्हारी और हर तस्वीर में थे... धरती, आसमान, नदी, तुम और हाँ खुदा भी तो था! मैंने तुम्हें आसमान के साथ चाहा! मैंने तुम्हें नदी के बहते पानी के साथ चाहा! हाँ तुम्हें धरती के साथ भी माना और जब खुदा की बारी आई तो मैंने पूछा कि इतनी देर से क्यों? खुदा की मुस्कुराहट कुछ अजीब सी थी। मैंने फिर एक ज़िंदगी की मांग की, तेरे संग! खुदा फिर मुस्कराया! मैं उसकी मुस्कुराहट को न समझ सका, क्योंकि मैं तुम्हारी मुस्कुराहट देख रहा था! और हाँ, हर तस्वीर में शायद मेरे प्रेम की आभा भी थी।

मुझे लगता है कि तुम तक पहुंचना बहुत आसान है मेरे लिए! पर इस राह में तीन दरवाजे हैं जो मुझे पार करने होते हैं। एक मेरा दरवाज़ा। एक दुनिया का दरवाज़ा और एक तुम्हारा दरवाज़ा। फिर तुम होती हो वहां अपनी मुस्कान के साथ और अपने स्पर्श के साथ! दरवाज़े पार करने की कवायद में कहीं ये उम्र न बीत जाए, बस कुछ इसी बात का डर है मुझे! हाँ, इन दरवाजों को पार करते हुए मैं तुम्हें देखता रहता हूँ कि कहीं तुम खो न जाओ, जब मैं अंतिम दरवाजे



तक पहुंचूं तो तुम मिलो वहां मुझे, भले ही हमेशा के लिए न सही, पर मिलो तो, कुछ लम्हों के लिए ही भला। मेरे लिए तो वो लम्हें ही अमूल्य होंगे!

जब मैंने तुम्हें उस दिन विदा किया तो बहुत देर तक वहां खड़ा रहा। तुम चली गयी और मैं सोचता रहा कि एक बार भी अगर तुमसे मैंने कहा होता कि रुक जाओ तो क्या तुम रुक जाती। कहो तो? नहीं न। पर मैंने मन-ही-मन कहा, क्या तुमने सुना? नहीं न। और अगर तुम सुन लेती तो क्या लौट आती, नहीं न। मैं अब भी कह रहा हूँ, रुक जाओ, आ जाओ. तुम सुन रही हो क्या?

तुमसे मिलते ही शायद यह तय हो गया था कि छूटना है साथ! पता नहीं, लेकिन मैं देवताओं पर बहुत विश्वास करता हूँ। तुम चली गयी पर शायद नहीं गई। हो न, मेरे साथ मेरी यादों में। पीछे तो बहुत कुछ छूट गया है। मेरा खाली मन भी उन सामानों में से एक है। हाँ और जो रह गया है, उसमें तुम्हारी छुअन, तुम्हारी साँसें, तुम्हारी बातें और तुम्हारी गहरी आँखे भी हैं। पता नहीं, तुम क्या-क्या साथ लेकर गयी हो। अगर मेरा कुछ है तो मुझे भी तो बताओ न !

मुझे तो लगता है कि हर बात आधी है। हमने जो जिया वो भी आधा और जो जियेंगे वो भी आधा। और जो न जी पायेंगे वो भी आधा ही होगा। हम कुछ कदम चले वो भी हमने आधी दूरी ही तय की। हमने आधा आसमान देखा, हमने आधी नदी देखी, हमने आधे पर्वत देखे, यहाँ तक कि जब भी देखते थे तो नाव भी आधी ही दिखती थी। कैसा कंट्रास्ट है लाइफ का! भला आधा कहीं होता है, नहीं न! पर हमारे मामले में ये आधा ही था। शब्द भी आधे, सफ़र भी आधा, ज़िंदगी भी आधी, उम्र भी आधी, आह क्या मुझे पूरा कुछ मिल पायेगा, हाँ, प्रेम है न, तुम्हारा प्रेम !

मिलना बिछड़ना, फिर मिलना और फिर बिछड़ना, क्या यही नियति है हमारी या यही नियति होगी हमारी। मैं नहीं जानता। मैं जानना भी नहीं चाहता। मुझे डर लगता है, ज़िंदगी से, किस्मत से और तुम से भी। भय है मुझे कि कहीं मैं तुम्हें खो न दूं। खोने का डर मुझे हमेशा ही रहा है। मैं तुम्हें खो कर रोना नहीं चाहता।

लेकिन क्या ये वाकई मेरे या तुम्हारे या हम दोनों के द्वारा संभव है, कहो तो। क्या हम भाग्य को जीत सकते हैं, कहो तो, क्या हम भाग्य बदल सकते हैं, कहो तो, क्या हम खुदा के निजाम को चुनौती दे सकते हैं। कहो तो... पता नहीं। सच कहूँ तो मैं ये सब जानना ही नहीं चाहता। ये सब दुनियादारी की बातें हैं और मैं इन बातों में पड़ना नहीं चाहता। हाँ, मैं ये जानता हूँ कि मैं तुम्हें चाहता हूँ और यही एक बात बहुत-सी हज़ार बातों पर भारी है, हैं न!

मैं बहुत चुप रहता हूँ। मैं अपनी ज़िंदगी में बहुत कम बात करता हूँ, हाँ, जब दूसरों के साथ होता हूँ तो बहुत हंसता हूँ बातें करता हूँ, पर मेरे निजी एकांत में सिर्फ मौन ही मेरा साथी होता है। मेरी प्रार्थनाएं भी चुप ही होती हैं। मैं, मेरे देवता और हम दोनों के मध्य का मौन और इसी मौन के अहोभाव में बसी हुई मेरी प्रार्थनाएं, इस पृथ्वी के लिए, इस संसार के मनुष्यों के लिए, बच्चों, स्त्रियों, बूढ़ों, वृक्ष, खेत और पशुओं के लिए और उस दिन भी जब नदी के तट पर मैं अपने भीतर से जुड़ा तो उसी मौन में मैंने तुम्हे पाया। मेरे लिए तुम ईश्वर के किसी आशीर्वाद से कम नहीं हो.

और फिर मानना क्या है, जानना क्या है। जो तुम कहो, वही मान लूँगा और वही जान लूँगा। मेरे लिए तो मेरा और मेरे प्रेम का CIRCLE तुम पर आकर ही पूर्ण होता है। तुम मानो या न मानो। तुम जानो या न जानो। पर मेरा सच तो यही है और मेरा प्रेम भी यही है!

हाँ ये भी हो सकता है कि बदलते वक्त के साथ तुम्हारे आसमान अलग हो जाएं या तुम्हारे आकाश की विस्तृता बड़ी हो जाए। असीम हो जाए। कौन जाने? हमारी आकांक्षाएं बढ़ती जाती हैं। कभी कभी ये इच्छाएं और आकांक्षाएं एक हथेली में नहीं समाती हैं। इनके लिए एक आसमान भी कम पड़ता है। पर मेरी हथेली में मैं सिर्फ तुम्हारे नाम की लकीरों को चाहता हूँ। मैं ये भी चाहता हूँ कि मेरा जो भी आसमान हो वो बहुत बड़ा न हो। बस छोटा-सा हो। बहुत छोटा-सा। जिसमें मैं तुम्हारे साथ सांस ले सकूँ, तुम्हारे नाम की सांस ले सकूं, तुम्हें छू सकूँ, तुम्हें पा सकूँ और कह सकूँ कि हाँ तुम मेरी हो।

मैं ये भी नहीं चाहता हूँ कि हम बने-बनाए संबंधों में अपने आपको ढाल लें। मैं किसी और रूप में खुद को या तुम को और हम दोनों को नहीं देखना चाहता हूँ। जो कुछ भी हो बस हमारा ही हो, नया, ठीक उस रात की यात्रा की तरह, ठीक उस नदी के बहते

पानी की तरह या मेरे निर्वाण की तरह... मोक्ष या तो मैं तुम्हारी आगोश में पाऊंगा या फिर बुद्ध के चरणों में! सच्ची!

हो सकता है कि एक दिन ऐसा आए कि सिर्फ शिकायतें ही बची रहें हमारी हथेलियों में। हम भी तो मनुष्य ही हैं। हो सकता है, या होगा भी। कौन जाने। पर मेरा विश्वास करना, मेरा प्रेम कम न होगा। मान्यताएं बदलें, जरूरतें बदलें, जीवन बदलें, सोच भी बदल जाए, पर तुम्हारी कसम, मेरा प्रेम न बदलेगा तुम्हारे लिए, इस बात का वादा तो कर ही सकता हूँ। प्रेम पर धूल चढ़े इस बात का खयाल रहेगा मुझे, हाँ वक्त पर धूल बैठ जाए। हमें क्या? नहीं?

बहुत बरसों का खालीपन था मेरे भीतर! तुमने भर दिया या मैंने ही उसे तुमसे भर दिया। दोनों एक ही बात नहीं है पर मेरे लिए एक ही है। ऐसे ही बावरा रहना चाहता हूँ। इसी में मेरी खुशी है, यही मेरी जन्नत है। अगर ये झूठ है तो यही सही। लेकिन इसकी ख़ामोशी में बहुत से शब्द हैं, जो मेरे होकर भी मेरे नहीं है। तुम जानती हो, तुमने क्या-क्या भरा मुझमें उस रात और उस दिन? नहीं... मैं जानता हूँ। एक उम्र भरी है जिसमें एक मोहब्बत का अफसाना है।

तुम शायद पूछना चाहोगी, तो मैं बता दूं, कि उस रात मैंने तुम्हें छूना चाहा था। मैं चाहता था छूना तुम्हारे गालों को और तुम्हारे होंठो को भी। मैं चाहता था छूना तुम्हारी साँसों को और चाहता था छूना तुम्हारे दिल को जिसे मेरे दिल ने पहले छुआ था! मुझसे भी पहले छुआ था और तुम जब संग बैठी थी तो एक आंच दिल में लगा गयी हो, वो आंच अब एक अलख बन कर जग रही है। तुम्हारी यादों के साथ!

मुझे तो लगता है कि हर बात आधी है। हमने जो जिया वो भी आधा और जो जियेंगे वो भी आधा। और जो न जी पायेंगे वो भी आधा ही होगा। हम कुछ कदम चले वो भी हमने आधी दूरी ही तय की। हमने आधा आसमान देखा, हमने आधी नदी देखी, हमने आधे पर्वत देखे, यहाँ तक कि जब भी देखते थे तो नाव भी आधी ही दिखती थी। कैसा कंट्रास्ट है लाइफ का! भला आधा कहीं होता है, नहीं न!

तुमने उस रात मेरा हाथ थामा था, मेरी हथेली की रेखाओं को पढ़ने की कोशिश कर रही थी। तुम्हें कैसे बताऊँ कि रेखाएं किस्मत नहीं होती हैं। रेखाएं बस दूरियों को बताती हैं कि तुम कितनी दूर हो मुझसे, या तुम्हें मुझसे मिलने में कितने जन्म लग गए या फिर शायद हमारी राहें अलग-अलग हैं। पर मैंने कभी रेखाओं को नहीं माना है। हाँ, खुदा को माना है, उसकी खुदाई को माना है, और हाँ न, तुम्हें भी तो माना है। सच में !

अकसर लौट जाता हूँ उन सपनों से जो मैं तुम्हारे लिए देखता हूँ, क्योंकि तुम नहीं हो उन सपनो में। राहें जानी होती हैं लेकिन मुझे अनजानी लगती हैं। मैं देवताओं से प्रार्थना करता हूँ कि वो तुम्हे मेरी ज़िंदगी में भेज दें। लेकिन देवता जवाब नहीं देते हैं। वो मुझे देखते हैं और मैं तुम्हें। कहाँ से शुरू करूँ और कहाँ ख़त्म!

तय करना होता है बहुत-सी बातों को। जीना भी होता है बहुत-सी बातों को। जीने में और तय करके जीने में बहुत-सा फर्क होता है। बस दोनों के मध्य तुम होती हो। जबकि मैं चाहता हूँ कि तुम या तो शुरुआत में रहो या फिर अंत में। और मैं बता दूं तुम्हें, मैं अंत नहीं चाहता हूँ कभी भी!

सब कुछ कभी भी ख़त्म नहीं होता है और न ही होगा। ठहर जाने से तो कभी खत्म नहीं होता है। शायद इसे शुरुआत ही कह लो। मैं रुक जाऊं या तुम रुक जाओ, कुछ भी कभी भी ख़त्म नहीं होगा!

मैंने तुम्हें ओक में जिया था उन लम्हों में और ओक है कि खाली ही नहीं होती, अच्छा है न। कभी भी खाली न हो। मेरी साँसें भले खाली हो जाएं, लेकिन ओक खाली न हो। तुमसे भरी रहे, तुम्हारी यादों से भरी रहे। जीवन से भरी रहे। प्रेम से भरी रहे और हाँ, खुदा की खुदाई से भी भरी रहे! तुम बस वादा करो कि कभी भी ये ओक जो तुमसे भरी हुई है खाली नहीं होंगी! तुम उसे खाली नहीं होने दोगी!

मैं इस जन्म में फिर से तुम्हें समेटना चाहता हूँ उन्हीं पत्थरों के बीच में, उसी बहती नदी के बीच में। वैसे ही किसी नाव में। उन्हीं हवाओ में ! इसी जन्म में। सच्ची! मिलोगी न ?

कितनी बातें करनी होती हैं तुमसे... लगता है ज़िंदगी ख़त्म हो जाएगी, लेकिन बातें ख़त्म न होंगी। सच्ची! कितना कुछ कहना है तुमसे, कुछ इस जन्म की बातें तो कुछ उस जन्म की बातें। कभी तो बहुत बातें और कभी तो कुछ भी नहीं। सिर्फ मौन। तुम और मैं। हम सिर्फ हम। और हाँ प्रेम भी रहे ताकि हम बचे रहें जीवित किसी और जन्म के लिए!

थोड़ा यकीन करना मेरा। थोड़ा यकीन करना खुदा का और थोड़ा कुछ तुम्हारी किस्मत का और थोड़ा कुछ मेरी किस्मत का! बस जीवन कट जायेगा! लेकिन मैं तो लम्हों में जीना चाहता हूँ। जियोगी मेरे साथ अपनी किस्मत के डोर लेकर? कहो न!

तुम जानती हो, मैं कितना कुछ लिखना चाहता हूँ, और कौन जाने तुम इसे पढ़ भी पाती हो या नहीं। लेकिन क्या तुम उसे भी पढ़ लेती हो, जो मैंने नहीं लिखा! जानती हो उन अक्षरों को, उस भाषा को जिसे सिर्फ प्रेम की आँखें पढ़ पाती है। हाँ, उसके लिए प्रेम में होना जरूरी होता है। मैं हूँ, तुम्हारे प्रेम में। क्या तुम भी हो? एक बार तो कह दो!

जिन कदमों के निशान हमने छोड़े थे, वो क्या वही रहेंगे उन राहों पर, जिन पर हमने कुछ कदम साथ चले थे। वो फिजा जिसमें

हमने साँसे ली थीं, वो सारी जगह जहाँ-जहाँ मैंने तुम्हें देखा, और हर बार पहली बार जैसे ही देखा। क्या वो सब कुछ हमेशा के लिए फ्रोजेन नहीं हो गया होगा। सोचो तो, मुझे लगता है की हाँ वो फ्रोजेन है एक टाइम फ्रेम में हमेशा के लिए। तुम्हारे लिए, मेरे लिए, हमारे लिए। खुदा के लिए और प्रेम के लिए भी !

हर आने वाला कल बीता हुआ कल बन जाता है। और तुम कहती रहती हो कि कल !!! कल तो आकर भी चला जाता है पर तुम नहीं आती हो। आ जाओ या बुला लो। दोनों सूरतों में मैं तुम्हारा ही होना चाहता हूँ।

मैंने कभी नहीं सोचा था कि तुम मिल जाओगी, पर मिली। भले ही कुछ समय के लिए, पर मिली। भले ही खो जाने के लिए शायद, पर मिली। अगर कभी न कुछ न मिला तो वो होगा ज़िंदगी का एक टुकड़ा जो मैं तुम्हारे साथ जीना चाहूँगा!

प्रेम अलग है, जीवन अलग है, समाज अलग है, प्रेम इन सब बातों से परे है, प्रेम समाज से परे होकर जीता है और वो उसका अपना ही समाज होता है। प्रेम की असफलता के कई कारण हो सकते हैं पर प्रेम के होने का सिर्फ और सिर्फ एक ही कारण हो सकता है और वो प्रेम ही है।

प्रेम हमेशा ही अधूरा होता है जिसे हम पूर्णता समझते हैं, वो कभी भी प्रेम नहीं हो सकता। प्रेम का कैनवास इतना बड़ा होता है कि एक ज़िंदगी उसमें समाई नहीं जा सकती है। जब आप प्रेम में होते हैं तो आपको पता चलता है कि आप एक ज़िंदगी भी जी रहे हैं... और ज़िंदगी; परत-दर-परत ज़िंदगी के रहस्य खोलती है। जिसे आप सिर्फ प्रेम ही समझते हैं और प्रेम में ही जीते हैं... और ऐसा जादू सिर्फ और सिर्फ प्रेम में ही होता है...! जैसे कि अब हो रहा है मेरे साथ !

मोड़ कई ऐसे आएंगे, जब तुम मुझसे अलग होगी या मैं तुमसे अलग होऊंगा, पर वो अलग होना हम दोनों को अलग नहीं कर सकता! At-least not me from you and I mean it!

और हां, मुझे जब तुम प्रेम में हो जाओगी, प्रेम को समझोगी, तब ही मुझे प्रेम करना। जब मैं तुम्हारा हिस्सा बन जाऊं तब ही तुम मुझे प्रेम करना। जब तुम्हें लगे कि तुम मेरे भीतर के मासूम बच्चे से जुड़ जाओ तब ही मुझे प्रेम करना। जब तुम्हें लगे कि मैं हूँ तुम्हारी साँसों में, तुम्हारी हथेली में, तुम्हारे माथे पर और तुम्हारे हृदय के भीतर तब ही मुझे प्रेम करना। और जब लगे कि मैं आजन्म तुम्हारे साए का एक हिस्सा बन चुका हूँ तब ही मुझसे प्रेम करना।

ये भी हो सकता है कि तुम कभी भी मुझसे प्रेम न करो। हम सब एक mind-set के साथ ही जीना चाहते हैं जो कि comfort zone हो। और प्रेम तो निश्चिंत ही comfort zone नहीं है। फैसला तुम पर ही छोड़ता हूँ। मेरा फैसला तो मैंने कर लिया है ! तुम जानती हो मेरे फैसले को। अब बारी तुम्हारी ही है। हो सकता है कि तुम न चाहो मुझे... (वैसे मैंने देवताओं से तुम्हें माँगा है पर देवता तो पत्थर के ही होते हैं न)

तुम मेरी हमउम्र होती हो जब बात खयालों की होती है, बात अहसासों की होती है, बात ज़िंदगी की होती है, बात प्रेम की होती है या फिर बात खुदा की होती है। सच्ची! हाँ जब बात खुदा की हो रही है तो कह दूं तुमसे, कि शायद तुमसे पहले ही जाऊं इस फानी दुनिया से। लेकिन तुम गम न करना। बस ये सोचना कि कोई था जो कुछ दूर चला तुम्हारे साथ। कुछ शब्द तुम्हारी झोली में डाल गया। कुछ देर तुम्हे देखता रहा। कुछ वक्त जिसमें हमने एक उम्र गुजारी... बस ऐसी ही कई बेमतलब की बातें जो मेरे जाने के बाद भी शायद तुम्हें याद रहेंगी...क्या तुम उन लम्हों को याद करके अपने कुछ आंसू मेरे नाम करोगी? वही तो मेरी सच्ची जायदाद रहेगी! सच्ची!

...प्रारम्भ..

कहानी अब शुरू होती है प्रिये! कहानी तो बहुत बार कही जा चुकी होगी, बहुत बार सुनी जा चुकी होगी, और कई बार दोहराई गयी होगी, पर मेरे लिए ये कथा नहीं है, क्योंकि इसमें तुम हो। हाँ, अब आगे की कथा मैं तुम्हे सौंपता हूँ। तुम्हारी किस्मत को सौंपता हूँ।

.......तुम्हारा मेल दोस्ती की हद को छू गया
दोस्ती मोहब्बत की हद तक गई!
मोहब्बत इश्क की हद तक!
और इश्क जूनून की हद तक!

-अमृता प्रीतम

हाँ, प्रिये, मुझे तुमसे प्रेम है।

दरअसल : असली प्रेम तो प्रेम में होना ही होता है, प्रेम में पड़ना, प्रेम में गिरना, प्रेम करना इत्यादि सिर्फ ऊपरी सतह के प्रेम होते हैं। असली प्रेम तो बस प्रेम में होना, प्रेम ही हो जाना होता है। प्रेम बस प्रेम ही ! और कुछ नहीं !

हाँ, प्रिय, मुझे तुमसे प्रेम है।
अब इन्तजार है बची हुई सारी उम्र के लिए।
तुम्हारा और तुम्हारे प्रेम का !
मैंने अपने दिल के दरवाजे खोल रखे है।
स्वागत है प्रिय। आ जाओ !!!

फ्लैट नं. 402, (पांचवीं फ्लोर), प्रमिला रेजिडेंसी, हाउस नं. 36 और 110(402), डिफेंस कॉलोनी, सैनिक पुरी पोस्ट, सिकंदराबाद, तेलंगाना-500094,
मो. 98497 46500

कहानी

अखाड़ा

• त्रिलोक मेहरा

अभी दिन नहीं निकला था। टैंपू से फौजी की निर्जीव देह उतार कर साथ आए ड्राईवर और बड़डेले ने उसके बरामदे में पटक दी थी और फौजिन की घुट-घुट कर निकलती रुलाई को सुन आंगन में जुड़ते लोग चर्चा का ठनकता बाक्स खोले खड़े थे।

-वह कुत्ता था । कुत्ते की मौत मर गया।'

-ऐसा मत कहो भई, वह आदमी था। अस्सी-पच्चासी साल निगल चुका आदमी कुत्ता नहीं होता। उसके पौते-दोहते होते हैं।'

- चुप-चुप। दामाद सुन लेगा।'

-तब क्या ? है तो बाहरी आदमी। गांव हमारा हैं। ससुर का कुत्ता, दोनों कुत्ते। ले गया था अपने साथ। कुछ होता है तब ही लोग जुबान खोलते हैं। सब पता है।'

-क्या पता खाली कर गला दबा दिया हो । देखो, अभी भी मुंह से रक्त रिस रहा है। आदमी अपना घर नहीं छोड़ता इस उम्र तक आ कर।'

-कह रहे हैं, अपने घर में तो इसकी सांस पूरी हुई है।'--- सब मुंह सफाई है।'

-सब झूठ। तृषा की भूख अब मिटी है। घर बनवा लिया। और कई कुछ करवाया होगा। दोनों जने उसके वश में थे।'

-वहीं से कर देते निकाल संस्कार के लिए।'

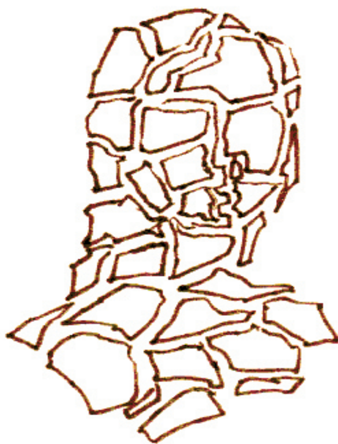
-तुम नहीं जानते। तृषा की लड़की की शादी है अगले महीने। इसलिए।'

-गलत, सब गलत । अब गांव क्यों याद आया ? गांव के मत्थे मढ़ने की बात।'

वह रिटायर हुआ तो अपना गांव छोड़ यहां जमीन खरीद घर बना लिया था। वह फौजी था। गांव वाले उसे कभी हवलदार कहते, कभी सूबेदार कहते और वह बढ़े रुतवे में उनसे तू-तड़ाक करता। उन्हें हेय समझता। फिर भी गांव ने उसको अपना लिया था। अचानक उसकी मौत सुनकर गांव के घरों में हबड़-तबड़ मच गई थी। पिछले पांच-सात महीनों से उसकी कोई खोज-खबर नहीं निकली थी। जब सुनते ,यही सुनते कि उसका मानसिक सन्तुलन कुछ गड़बड़ा गया है। कभी बड़डेला उसे बाजार से पकड़ कर ले जाता, कभी उसके मकान की ओर आते पिछले रास्ते से रोक लेता। एक बार वह दूसरे गांव को भाग गया था तड़के ही और वहां लोगों से कहता फिरता कि वह शमिंद्र को लेने जा रहा है। वह आने वाला है। यह भी सुना था कि एक बार वह अपने पुश्तैनी गांव जाने की कोशिश कर रहा था। तब वह उसे बीच रास्ते से गाड़ी में लाया था। उसके इस तरह वहां से लुप्त होने का पता ही नहीं चलता। पता तब चलता जब वे उसे अपनी जगह देखने आते। न उसने कभी अपने कपड़े फाड़े , न खोले, न किसी को गाली दी। बस, उनके घर से भागता था। लोग कहते थे कि वह अपने घर में रहना चाहता था तब ही इधर उधर भागता होगा। उस घर में उसकी रूह पिंजरे में फड़फड़ाती होगी।

आंगन में खड़े होते आस-पड़ोस को देख फौजिन,बेटी और बड़डेला कहने लगे कि जुबान दो दिन पहले चली गई थी, फिर लौट आई थी। रात को रोटी ठीक खाई थी। एक-डेढ़ चपाती खा लेते थे और तड़के तबीयत अचानक बिगड़ गई। घर में ही डा. बुलाया फिर यहां ले आए। क्या पता आखिरी इच्छा अपने घर आने की रही हो ।

दो दिन पहले जुबान चली गई थी ! वे सुन कर हैरान थे। उन्हें कुछ पता ही नहीं। उस समय बताते, कुछ करते। पर उनके घर की चारदिवारी में से उचक कर कुछ आया ही नहीं। वह उनके सारे सुखों-दुखों में सुखी-दुखी होता था। जब गांव में जमीन खरीद कर बसने आया था तो उनके लिए पराया था। एक तरफ गांव था और दूसरी ओर वह अकेला। फिर धीरे-धीरे उन्होंने उसे अपना लिया और उन तीनों ने उसे दोबारा पराया करा दिया। कई बच्चे जो बड़े हो गए थे उसे बापू कहते पीछे चलते। उसकी अक्कड़! नहीं मानता था वह किसी को अपने समक्ष। जोर जोर से बोलना उसकी आदत थी। पूरे गांव में गूंजता। गांव का कोई ऐसा व्यक्ति नहीं था जो उसकी आवाज नहीं मानता। फौजिन ने बड़ी गलती की है। हर सुबह-शाम दूध ले जाने के लिए घर आती थी। दरवाजा खोलती थी,



गौशाला जाती थी। घास-गोबर करने वाले से बात छेड़ जाती। किसी गांव वाले को ही सुना जाती। सब शत्रु कैसे हो गए। उन में ही दिन काटे थे इनके आने से पहले। धी-जवांईं ही अपने हैं अब, वे ही सच्चे हैं तो क्यों ले आए मुर्दे को दिखाने। बड़डेला बड़ा चालाक है, मछली है पूरा। फिसलते निकल जाता है। ससुर-दामाद फौजी थे। उससे पटरी ठीक बिठा ली तो कौन क्या करे। गांव के दूसरे छोर पर जमीन का एक टुकड़ा भी अपना घर बनाने के लिए उससे ले लिया। तब सब उसे भुक्खड़ कहने लगे। उसकी आंखें बड़ी बड़ी थीं तो ही उसका नाम बड़डेला पड़ा था और तृषा को तृष्णा कहने लगे कि उसकी भूख भी कभी मिटती ही नहीं। अपनी भाभी के पांव घर में लगने ही नहीं दिए उसने। उसे जमने देती तो उसे कौन पूछता। वह निरीह शमा ही थी अपने नाम के अनुरूप। कभी नहीं बोलती, विरोध नहीं करती। जलती रहती। विरोध करेगी तो नौकरी कैसे करेगी। उसके बच्चे दादा-दादी के पास थे और शमिंद्र अफसर, जो प्रायः टूअर पर रहता था। पैसे इकट्ठा करने की नीयत से उसकी लाइफ ही टूअर हो गई थी। दोनों के नौकरी के स्थान घर से और आपस से दूर-दूर थे। ननद-भाभी की अनबन को सब जानते। बेटी की आंखें से मां देखती तो सास के साथ भी पटरी खटपट करती रहती और सारे संबोधन चुभते-नुकीले होते। ककड़ियों की कड़वाहट छिलकों से निकलती, हद हो जाती कि कभी कभी वे उसके हाथ का बनाया खाना ही नहीं खाते। कसर यही रह जाती कि वे परोसी थालियां ही नहीं फेंकते।

-शमिंद्र को फोन किया''? किसी ने पूछा।

-हमारे पास नंबर ही नहीं है।'' बड़डेले ने मोर्चा संभाला।

-मां या बहन, किसी के पास भी नहीं ?''

-नही ''।

-तो ?''

-जिनके पुत्र नहीं होते, क्या उनका पिंडदान नहीं होता? होता है। माता है, तृषा है। मैं इसी औखे वक्त के लिए यहां हूं।''

यह सुन कर आंगन में भवैं तन गईं। नहीं, नहीं। ऐसे कैसै हो सकता है। शमिंद्र हमारा बच्चा है। वह ही आएगा और काम करेगा। देखो, किसके पास है उसका नंबर। पिछले महीने भी आया था। मिलने गया था पिता से । पता चला था कि वह मिल नहीं पाया था। उसे बताया कि पिता सोया है। डाक्टर ने आराम करने और डिस्टर्ब न करने के लिए कहा है। वह बाहर से लौटा दिया था। फीके मुंह आ गया था वापस। पूछो, पूछो। किसी के पास तो जरूर होगा। तभी तसल्ली की एक लहर फूट निकली कि अमृत ने फोन कर दिया है। उसने कहा कि पहले तो वह कहने लगा था कि तुम्हारे पिता मर गए हैं। घर में इज्जत मान नहीं तो मरना ही कहेंगे। लेकिन फिर सोचा कि अपनी जीभ गंदी क्यों करूं ऐसे कह कर। उसका भी क्या कसूर कि ऐसा वैसा सुने। फिर बताया कि उसके परम पूज्य पिता आज प्रातः ईश्वर को प्यारे हो गए हैं। बेचारा फोन पर ही रो पड़ा था। वह आ रहा है। पता नहीं सूरज अस्त होने के पहले पहुंचे या बाद। दूर से आएगा। शमा भी आएगी, बच्चे भी आएंगे। दादा को दहाड़ेंगे।............फौजिन कुनमुनाने लगी।

सारे गांव वाले एक-दूसरे का मुंह देखने लगे। क्या करें अब। सब टंग गए थे भूखे भाणे। निराहार रहकर दाह की लकड़ी डालते थे। उनकी आस्था थी। लेकिन यहां न जाने कब तक खाली पेट को अपनी आग में धुआं होना पड़ेगा। क्या पता ये लोग कुछ खा-पीकर ही लाश को यहां लाए हों। लूटपाट के बाद तसल्ली से काम करेंगे। इन्हें तो पता था कि क्या होने वाला है। उनके बोलों में रोष और चिंता थी। एक-एक करके वे वहां से गायव होते रहे और हाथ-मुंह धो-पोंछ कर लौटते रहे। सबके घरों में शोर बिना चूल्हा जला और आम समझौते से सबने चुपके-चुपके पेट भरे।

ढकी हुई लाश के सिर की तरफ उड़-उड़ कर विलाप करने वाली इक्का दुक्का मक्खियों को इंतजार में बैठे बुझे चेहरे देखते और सोचते कि प्राणी का जीव अभी तक अपने शरीर के पास ही भटक रहा है। शायद निश्छल रुदन के लिए तरस रहा है। उन्होंने फौजी को बरसात के दिनों स्वयं गरुड़ पुराण पढ़ते देखा था। जब बरसात आती वह गरुड़ पुराण स्वयं के लिए पढ़ता था। छोर वाले मकान में जाने से पहले उसे लाल कपड़े में बांध कर उसने ताक पर रख दिया था। उसने कहा भी था कि अब यह उसके दस दिनों में ही पढ़ा जाए, वह स्वयं थक गया है।

बड़डेले की नजर फर्श पर थी। उसने फौजी की शह में स्वयं को कभी इतना निर्बल महसूस नहीं समझा था। चाह रहा था कि लाश जाग जाए और उठ कर कहे कि तू वही कर जो करना चाहता है। शमिंद्र के इंतजार में रास्ता भूल जाएगा मेरा प्राणी।' घर की सारी कमान खिसकते देख उसके मन को लगा कीड़ा करड़-करड़ कर खीझ पड़ा था। उसने तृषा को कुछ कहा। वह कुछ विलम्ब सोचती बैठी रही।

-रात हो जाएगी। मैं इनकी बेटी हूं, मैं भी हकदार हूं। नहीं तो

बिट्टू से ही नाना को मुखाग्नि दिला दो।'' तृषा ने हवा में सबके लिए वाक्य उछाले ।

-चुप बैठ। वह आ रहा है। सगौत्र द्वारा ही अग्नि मान्य है।'' अमृत ने झिड़क दिया।

- सगौत्र-अगौत्र का पचड़ा व्यर्थ है। संस्कार कोई भी कर सकता है। युद्ध में किए संस्कार में भी सुगति होती है।'' बड़डेले ने दखल दिया ।

-पिता को यहां लाकर गलती की है। सोचा था, अपने घर से निकाल होगा । सब साथ देंगे।''

-रहने दे। सब एक हैं। हाय!' फौजिन ने उसे रोका।

-नहीं, कर लो अपनी मर्जी । गांव वाले चले जाते हैं।''

वे सब उठते हुए से आपस में बतियाने लगे। -इनके कहने से गांव नहीं चलता। इन्हें और इससे आगे करने की छूट दे दी तो जो बचा है उसे भी हड़प जाएंगे। फैाजी भाग -भाग कर अपने घर आना चाहता था तो उसकी मति भरमाने की बात फैला दी। पहरा बिठा दिया कि किसी से कोई बात न कर ले। कहने के लिए तरसता था। किससे बात करे ? बांध कर रखा दिया कि जानवर हो। भला चंगा हो वह भी ऐसे पागल हो जाए। इससे मन नहीं भरा तो चार दिवारी उंची कर ली। गेट पर ताला जड़ दिया। कोई आए ही न। इनके जाने से पहले आवाज दो फिर ताला खुले। गांव में बड़े-बड़े गेट! कोई पूछे तो ! कितने घर हैं हमारे ? बिना रुके एक-एक करके घुस जाओ सब में। बिना मतलब के कोई नहीं जाता। सब पता है क्या हैं ये लोग। फौजिन को भी झुरलू फेर दिया है। पुत्र को भ्रम में रखते। बाप को भ्रम में रखते। फौजी को स्वयं उन्होंने कहते सुना है कि शमिंद्र की अपनी पता नहीं क्या मजबूरियां हैं कि आता ही नहीं। यह कहते हुए उसकी आंखें छलक आती थीं। क्या आवाज थी उसकी! जब भौंकता था तो दीवारें कांपतीं थीं। लेकिन आप्रेशन क्या हुआ कि भौंकने में कंपन मर गई। दो जनों की रोटी बनाना खेत में काम करने वालों के लिए बड़ी बात नहीं। पर धी उन्हें अपने घर ले गई थी कि धी के घर खाना धर्म नहीं होता तो कीमत दे देना। सेहत सुधरते वापस अपने घर की दीवारों में आ जाना। वह मान गया था। कभी हर रोज सुबह या शाम, कभी दूसरे-तीसरे दिन अपनी जमीन का फेरा लाठी सहारे लगाता, काम करने वालों को बुलाता। धी के घर का खाया चुकाना था और फौजिन मेहरबान थी। गांव वालों ने ही तो बताया था शमा को सब कुछ जब वह छुट्टी वाले दिन वहां आती। वह भी कमाती थी जब भी आती और वहां ठहरती। उसके हिस्से कुढ़ने के सिवाय कुछ नहीं था। वे टेर लगाते फौजिन को तो कहती कि बहुतेरे पैसे हैं उसके पास। खरीद ले, बाजार भरा पड़ा है। शमा वेतन कमाती थी। वह सोचती -कोई बात नहीं, भुक्खड़ों को भूख चुका लेने दो। कब तक?

बड़डेला बात-बात में पिता-पिता, माता-माता कहता तो उन्हें अच्छा लगता। जानते हुए भी छोटी-बड़ी बात में राय पूछते कहता कि बुजुर्गों को ढोल में मढ़वा कर रखना चाहिए। वे सुन कर हंस देते कि उनका भी मान बढ़ा है। शमिंद्र के लिए उठती टीस उसमें समा जाती। सोचते हुए आपस में रोमांचित होते कि उन्होंने लड़की के लिए रिश्ते में अच्छी जगह हाथ डाला है। एक दिन आंगन में बड़डेले ने फौजी की कंवरी की जेब में हाथ डालते हुए कहा -आपकी दवाई के लिए पैसे चाहिए। फौजी ने जेब का मुंह घोंटते हुए उसकी ओर 'न, न' करते हुए देखा। एक ठिठक सी आ धमकी उनके बीच।

सारे गांव वाले एक-दूसरे का मुंह देखने लगे। क्या करें अब। सब टंग गए थे भूखे भाणे। निराहार रहकर दाह की लकड़ी डालते थे। उनकी आस्था थी। लेकिन यहां न जाने कब तक खाली पेट को अपनी आग में धुआं होना पड़ेगा। क्या पता ये लोग कुछ खा-पीकर ही लाश को यहां लाए हों। लूटपाट के बाद तसल्ली से काम करेंगे। इन्हें तो पता था कि क्या होने वाला है। उनके बोलों में रोष और चिंता थी। एक-एक करके वे वहां से गायब होते रहे और हाथ-मुंह धो-पोंछ कर लौटते रहे। सबके घरों में शोर बिना चूल्हा जला और आम समझौते से सबने चुपके-चुपके पेट भरे।

-शमिंद्र ने कभी मेरी जेब में हाथ नहीं डाला।'

फौजिन बरामदे में बैठी देख रही थी झपट- झपेटा। कहने लगी-दे दो। क्यों नहीं देते। आपकी दवाई के लिए चाहिए, अपने लिए तो नहीं ले रहे ।'

फौजी के चेहरे पर विदीर्ण मुस्कान बिखर गई और हाथ में पड़ा जोर ढीला पड़ गया। मुट्ठी भर नोट दबोचने के लिए उसके लिए जेब तक पहुंचने के दरवाजे खुल गए। वहां से गुजरते पड़ोसी की आंखों ने गेट की सुलाखों को बींधते हुए बड़डेले को ऐसा करते देख लिया और सारी बात कानोंकान गांव में गुजर गई। सुना था कि बड़डेला कहता कि ऐसा पुत्र किस काम का जो काम ही न आए समय पर। नौकरी चलती रहती है। आप्रेशन करवा दिया और घर छोड़ कर छुट्टी पाई।...........उसके पश्चात........? हो सकता है उसे यही बात याद आ गई हो।

तृषा की तृष्णा उसके साथ साथ बढ़ गई थी। कि उसने सेवा की है, वह डाका तो नहीं हो सकता। उसे छूट है। ससुर के घर में जंवाई कुत्ता नहीं है। शमिंद्र की जगह वह ही है।

इधर उधर उठते, बैठते, चलते और बातें करते सब इन्तजार करते जब्हाइयां मारते उकता गए थे। और कुछ नहीं कर सकते थे। अमृत को पूछते कि पता करो ,कहां पर है अब शमिंद्र और वह सिर हिला कर परे टिरक जाता। लेकिन अब उसने कहा था कि वह पहुंचने ही वाला है। फोन आया है। कुछ ने हाथ जोड़े, कुछ ने

माथे से उगंलियां छआईं कि शुक्र है खल्लासी हो।

शमिंद्र ने पिछवाड़े रास्ते में लम्बी रुदनाली चीख मारी। आ गया लाल। फौजिन सिसकने लगी। साथ धी भी विलापी। वह अकेला नहीं था। उन्होंने पीछे शमा को भी आते देखा। आधे घूंघट के अंदर वह भी उं, उं कर रही थी। वह सास से नहीं लिपटी। बड़डेले का मुंह कुछ स्याह पड़ गया।

-दोनों इकट्ठे ही! फौजिन को विश्वास नहीं था कि वह भी साथ आएगी। आ गई तो उसका रोना भी नकली होगा। उसका पल्ला हटाओ। एक बूंद का छींटा भी नहीं होगा आंखों में। यह सब केवल गले का धोखा है। वह क्यों रोएगी? मोटे मोटे कड़े सुनती थी इनसे घर में टिकती ही नहीं थी। छुट्टी आई कि मायके के घर पैर। बाकी के दिन देखो तो ड्यूटी। घर की दीवारों से जिस्म ही नहीं रगड़ा तो ममता कैसी! मौनी बाबा जैसी घुडुप चुप। इसके बच्चे भी पाल पौष कर बड़े कर दिए। इसको तो याद ही नहीं, इनका घूह-मूत्र क्या होता है। चिट्टे चरेले कपड़े ही नहीं होते सब कुछ। पर बड़े हो कर वे भी इसके हो गए। उखड़े-उखड़े रहते हैं। नौकरी करती है तो क्या, मैं मारती हूं जूती। अपने पैसे अपने पास रख। कुर्सी तोड़ते-तोड़ते इसका पीछा देखो। मोटी भैंस। अब छूट गई इनके कड़ों से। जमीन में कमाना आफत आती थी इसे। नौकरी वाली बड़ी नखरेली होतीं हैं। इन्हें गुस्सा आता था, तब कहते थे-जमीन कमाते हुए किस तरह चूतड़ फटते है, पता चलता है।' ऐसे कहना अच्छा नहीं लगता था लेकिन करें क्या ! इसने किया ही क्या । शमिंद्र को भी हमसे दूर ले गई। मर जाने गांव वाले तो इसी के साथ खड़े दिखते हैं। क्या सोचती, अब मजे में रहेगी। चैन लेने दूंगी, तब न।

मुर्दे को आंगन में केले के पत्ते पर शमिंद्र ने बावड़ी से लाए ताजे जल से स्नान करवाया। वहीं हरे बांस की अभी -अभी बनी अर्थी पर शव को जल्दी-जल्दी सजा दिया गया कि सूर्य डूबने से पहले या कम से कम लालिमा रहने तक चिता सुलग जाए। फौजिन ने शव का आधा फेरा लेकर पैरों पर फल और पैसे अर्पण कर दिए। शमा यही करने के लिए अपनी जगह से नहीं हिली। शमिंद्र ने उसे आवाज लगाई तो ही वह आगे बढ़ी। तब धी ने मां को कुन्ही मारी और मां ने शमा को अपने दोनों हाथ फैलाकर रोक लिया।

-यह नहीं कर सकती फेरा। यह इनकी कुछ नहीं लगती। यह हमारी कुछ नहीं लगती है। इसने हमारा कुछ नहीं किया है।'' वह एक सांस में कह गई।

क्या कहे शमिंद्र अब। वह यह देख हैरान परेशान था। मेरी मां को क्या हो गया है। यह कोई वक्त है ऐसा कहने का। अपनी ही बहू के विरुद्ध खड़ी हो गई है। रोके कोई उसे। इसके सिर में किसने बारूद भर दिया है। यही हैं दोनों। पिता से मिलने नहीं देते थे जब जिंदा थे। सौ बहाने घड़ कर बाहर से टरका देते थे। वह सोए हैं, कि अब किसी से भी बात करने से इन्कार करते हैं, कि अब पागलपन की स्थिति में हैं कि पहचानते नहीं किसी को। उनकी बातों में आ जाता था। और आज मां को भिड़ने के लिए आगे पेल दिया है। हद हो गई है।

तैयारी में जुटे और खड़े जमघट की आंखें फटी-की-फटी रह गईं। इनके अपने घर का मामला है। पर ऐसा तो दुश्मन भी नहीं करते। शायद बुढ़िया पगला गई है। प्रेतात्मा के पग आगे बढ़ते-बढ़ते पीछे हट रहे होंगे यह देखकर। सुबह से छटपटा रही थी आजाद होने के लिए। लगता है कि फिर फंस गई है। यह मृत देह का अवसान हो रहा है कि अपनी-अपनी कुंठाएं उफान पर हैं।

-यह क्या ? यह क्या ? कुछ शर्म करो। आसमान वाले से डरो।' लोगों में आवाजें गूंजने लगीं।

-देखता हूं कौन रोकता है उसे।' शमिंद्र ने आगे बढ़कर मां को एक तरफ किया और शमा को आगे बढ़ने को कहा। तभी वहां खड़े बड़डेले ने शमिंद्र को दोनों हाथों से धक्का दे मारा। वह संभलते-संभलते वहां रखे गमलों में जा गिरा।

-क्या कर रहे हो ? पागल हो गए हो क्या ?' सब बक पड़े। एक दो लड़के आगे बढ़ आए।

-सुंदर फूलों वाले गमले तोड़ दिए।' किसी ने कहा।

-माता नहीं चाहती तो यह जबरदस्ती क्यों कर रहा ?' उसने गुस्सा झाड़ा।

-रुको। अखाड़ा मत बनाओ।' अर्थी के पास खड़ा बुजुर्ग टल्लियां उछालते चिल्लाया। लेकिन बड़डेले के विरुद्ध में उड़े स्वर उछले बिना थमे नहीं।

-कठपुतलियां बना नचा रहा है इनको। लालची है। बेईमान है। सारी जमीन हड़पना चाहता है।'

-गोली मारो बड़डेले को।'

-सारा घर मधानी में रिड़क दिया। बुढ्ढे को क्या पता इसी ने मारा हो। ऐसे लोग कुछ भी कर सकते हैं।'

-वकील क्यों आया था मुंह न्हेरे? पूछो इससे। कुछ लोगों ने उसे इसके घर से निकलते देखा है।'

-डाक्टर-वाक्टर कोई नहीं आया था। सब मुंह धोनी बातें हैं। कुछ हेर फेर हुई है।'

-मुर्दे का दाह संस्कार नहीं करेंगे हम। मुर्दे से पूछो कि कौन कौन इसका क्या लगता है। फिर जलाएंगे इसे।'

-नहीं, नहीं। मुर्दे का अपमान न करो। सब जानते हैं कौन क्या लगता है। बड़डेले को भगाओ यहां से।'

शमशान में दाह के लिए ले जाने वाले हांडू में डाले धुखते उपले सुलग पड़ने वाले थे। हवा में घटाघट घुले धुएं में सारे गले खांसने लगे। लोग छींकने लगे। बिगड़ती स्थिति देख वह कब दीवार की ओट में हटा दिया गया पता न चला।

-जल्दी करो। मुर्दा कह रहा है।'

अमृत ने तब तक शमिंद्र को सम्भाल लिया था। कद्दू जिश्म।

खड़े लोगों को पीसता गया और आंगन की सीमा पर फूल पीस डाले। अपने सहपाठी से ऐसा सलूक होते देख उसकी आंखें भी सुर्ख लाल हो गईं। वह उसे कुछ कर देगा। लेकिन मन मार गया। उसने उसे उसकी जगह पर देखा परंतु वह वहां नहीं था। यह भी अच्छा हुआ। रस्म निभ जाए और अर्थी उठ जाए अब।

-मेरा बाप मरा है, इसका दाह संस्कार करने दो। मुझे मार डालना होगा तो फिर मार लेना। चैन आ जाएगी।' शर्मिंद्र ने हाथ जोड़ आंखें भरते हुए कहे। 'मुझे नहीं चाहिए जमीन जायदाद। ले लो। रख लो।'

फौजी के पैतृक गांव से आए मर्द-औरत बीच मंजधार थे कि वे किसे समझाएं। फौजिन में दबी आग एक बार फिर भड़की। शमा को पकड़ फेरा दिलातीं औरतों को देख बक पड़ी। -सब मेरी तरह रांडें हो जाएं।'

पैतृक गांव से आए लोग रुक नहीं सके अब। वे एक-दूसरे को खींचते उठे और बुड़बुड़ाते चले गए। उन्होंने पीछे मुड़ कर नहीं देखा। शमा के साथ चली औरतों ने उसे एक साथ घूरा कि अभी इसी मुर्दे के साथ इसको भी उठाकर सती कर दें।

-हाय नी फौजिन बोबो! हमें छोड़कर तू इतनी जल्दी चली गई। हाय बोबो!' वे दहाड़ें मार अपनी छातियां पीटने लगीं।

-चलो, चलो। राम नाम सत्त करो।' आंगन में सबने एक स्वर में कहा।

वह गांव का सबसे बुजुर्ग था। सम्मान के लिए अर्थी पर चांदनी लगाते थे। फूलों की मालाऐं सजतीं थीं। वे उस पर नहीं थीं।

-हम लाशों से खेलते आए हैं। क्या हुआ, यह अपने घर की लाश है।'

बड़डेले के शब्द शंख की सीधी फूंक में दब गए।

गांव मेड़हा डाक भवारना तह पालमपुर जिला कांगड़ा हिमाचल प्रदेश-176083, मो. 94590 78608

कविता

जिंदगी बुन रही है स्वप्न

● राजेंद्र निशेश

मन के आंगन में
कोई लय उतरी है
जैसे उतरती है गौरेया
जैसे बजती है शहनाई।

हवा में है ठंडक का आह्लाद
रफ्ता-रफ्ता ज़िंदगी बुन रही है
कुछ स्वप्न,
अधखिला सूरज धरती पर
झुक आया है
और भंवरा गुनगुना रहा है
कोई वीत-राग।



मन के आंगन में
कोई लय उतरी है
जैसे हो बांसुरी की तान
जिसमें डूब गई है तन्हाई!

2698, सेक्टर 40-सी, चंडीगढ़-160036

लघु कथा

भाग्यवती

● परमजीत कौर आशट

उसे गांव में बड़ी तकदीर वाली कहकर स्मरण किया जाता था। क्योंकि जब से वह इस घर में आई थी, तो घर की काया पलट गई थी। इसके अलावा उसके महज दो बेटे ही थे। इसीलिए उसे गांव में भाग्यवती ही कहा जाता था। बड़ा पुत्र युवा हुआ तो उसकी शादी कर दी गई। भाग्यवती को बहू भी बेहद खूबसूरत मिली। समय अच्छा गुजर रहा था। लेकिन कुदरत को कुछ और ही मंजूर था। एक सड़क हादसे में उसके बड़े पुत्र की मृत्यु हो गई। उस रोज गांव में चूल्हा नहीं जला था।

जैसे अकसर होता है लड़के की अंतिम-अरदास (भोग के दिन) के दिन, उसके ससुराल वाले, अपनी वेबा लड़की का हाथ उसके छोटे भाई के हाथ में देकर चले गए। एक मर्द को पत्नी मिल गई और पत्नी को नया खाविंद, मगर एक मां को उसका बिछुड़ा बेटा कभी न मिल सका। एक मां जिसे गांव में तकदीर वाली कहकर स्मरण किया जाता था।

गांव व डाक घग्गा, जिला पटियाला, पंजाब-147 102,
मो. 0 78144 95004

कहानी

कहीं देर न हो जाए

● आशा शैली

फ्चार चाय देना बालक।" कहकर वे चारों बेंच पर जम गए। सामने हरहराती गंगा को देखकर मधुकर बोल उठा, "वाह! क्या बात है गंगा की। देखकर ही मन को शांति मिलने लगती है, नहा लिया जाता तो आनंद ही आ जाता।"

"हां! आनंद तो ज़रूर आता, पर अब चाय के लिए कह दिया है तो पी ही लेते हैं। नहाना तो ज़रूर है। ला भाई, ला चाय।" कहकर प्रशांत ने चाय वाले लड़के की तरफ देखा।

मधुकर, प्रशांत, उस्मान और जोज़फ दिनभर की भाग-दौड़ से थककर हरकी पैड़ी पर आ बैठे थे। वे हरिद्वार घूमने आए थे। मधुकर को देहरादून में कुछ काम था जब उसने मित्रों से इसकी चर्चा की तो वे भी साथ चलने के लिए तैयार हो गए और ये चौकड़ी पहले हरिद्वार आ पहुंची। चारों की दोस्ती पक्की, यदि घूमने-फिरने का मामला हुआ तो जहां जाएंगे साथ ही जाएंगे।

थोड़ी ही देर में चाय आ गई, "अरे सुन, एक ब्रेड भी ले आ।" प्रशांत ने कहा तो लड़का अपने खोखे की ओर मुड़ गया। तभी मधुकर ने देखा, वहीं उनकी बेंच के पास बैठी एक मैले-से कपड़ों वाली वृद्धा ललचाई नज़रों से उनके चाय के गिलासों को देख रही थी, "चाय पियोगी?" मधुकर ने पूछा तो वृद्धा की आंखें भर आईं। पर वह बोली नहीं। मधुकर ने चाय वाले से कहकर एक गिलास चाय उसे भी दिलवा दी। चाय वाला लड़का डबलरोटी ले आया था, उस्मान ने ब्रेड लड़के से लेकर खोली और उसके चार टुकड़े निकालकर वृद्धा को दे दिए जो उसने बड़ी बेसब्री से झटक लिए और हबड़ तबड़ खाने लगी। उसे इस तरह से ब्रेड खाते देखकर मधुकर ने सारी डबलरोटी उस्मान के हाथ से लेकर वृद्धा को पकड़ा दी जो उसने लगभग झपटकर ले ली। चारों मित्र आश्चर्य से वृद्धा को खाते दे रहे थे। वह इस तरह से खा रही थी मानो, उसने खाने में यदि ज़रा-सी भी देर कर दी तो कोई ब्रेड को उससे छीन लेगा।

जल्दी ही वह पूरी-की-पूरी ब्रेड खाकर चाय पीने लगी। प्रशांत से नहीं रहा गया तो उसने पूछ लिया, "और खाओगी, माता?"

वृद्धा ने हां में सिर हिलाया तो उन लोगों ने उसे एक और डबलरोटी खरीदकर दे दी साथ ही एक गिलास चाय भी और दिलवा दी। अब वह आराम से बैठकर ब्रेड खा रही थी। अब उसे कोई जल्दी नहीं थी। उसकी आंखें की चमक बता रही थी कि उसे कितनी अधिक भूख लगी थी और चाय और ब्रेड से उसे कितनी तृप्ति हुई थी।

चारों मित्र उसे बड़े गौर से देख रहे थे। भूख तो उन्हें भी लगी थी परंतु इस वृद्धा को देखकर वे अपनी भूख को भूल गए। पेट भर जाने पर वहां से उठकर उसने गंगाजी में हाथ धोए, मुंह पर पानी के छींटे मारे और थोड़ी दूर जा बैठी। न तो उसने चारों को धन्यवाद कहा न उनकी तरफ देखा। तब प्रशांत बोला, "यार, जब हम यहां आए थे, तब तो यह बुढ़िया यहां नहीं थी। फिर अचानक कहां से प्रकट हो गई?"

"नहीं बाबू जी, यह तो तीन दिन से यहीं पड़ी थी। इधर, मेरी दुकान के इस तरफ।" चाय वाले ने खुलासा किया, "बस चुपचाप पड़ी रहती है, पर मैंने इसे आज तक किसी से मांगते भी नहीं देखा। आज भी तो उसने आप लोगों से कुछ नहीं मांगा। आपने खुद ही इसे चाय और ब्रेड दिया। शायद यह तीन दिनों से भूखी ही पड़ी थी।"

"पर क्यों?" इस बार जोजफ़ बोल पड़ा था, "कौन है ये और यहां क्यों पड़ी है?"

"क्या बताएं बाबू जी, कैसा ज़माना आ गया है। पांच दिन पहले यह औरत अपने बेटे और बहू के साथ आकर, वो...ऽ...ऽ ..ऽ साथ वाली धर्मशाला में रुकी थी।" दुकानदार ने एक तरफ को इशारा किया, "हमें तो अपने कारोबार से ही फुर्सत नहीं होती, किसी को क्या देखेंगे? यहां तो हज़ारों लोग रोज आते हैं, पर परसों सुबह-सुबह जब हल्ला मचा तो हम भी भागे गए माजरा देखने के लिए। तब पता चला कि जब यह बुढ़िया गंगाजी नहाने गई तो इसके बेटा-बहू सारा सामान लेकर चम्पत हो लिए। धर्मशाला वालों ने इसे निकाल दिया। तब से यह यहीं पड़ी है।"

"और आप लोगों ने इसे खाने को भी कुछ नहीं दिया होगा?"



"अब बाबूजी, हमें क्या पता। मैंने कहा न, इसने तीन दिनों में किसी से कुछ मांगा भी नहीं इसलिए हमने सोचा खा-पी लिया होगा कहीं कुछ। हम भी तो चौबीस घंटे दुकान पर नहीं रहते न।"

बुढ़िया अपनी मैली धोती लपेट कर एक पेड़ के साथ अधलेटी हो गई थी। तभी मधुकर अपनी जगह से उठकर बुढ़िया के पास गया तो वह वृद्ध स्त्री हकबका कर उठ खड़ी हुई, पर बोली फिर भी नहीं।

"माता जी, आपका घर कहां है?" उसने पूछा, पर वह फिर भी नहीं बोली, सिर झुकाकर बस आंखों से दो आंसू टपका दिए।

"देखिए, आप हमें अपने घर का पता दें तो हम आपको वहां पहुंचा सकते हैं।"

"..."

"चलिए, हम समझ सकते हैं कि आप अपने बेटे-बहू के व्यवहार से दुःखी हैं और हमें कुछ बताना भी नहीं चाह रहीं। पर आप इस तरह यहां कब तक पड़ी रहेंगी? धूप है, बारिश है। कोई तो प्रबंध करना ही पड़ेगा। देखिए, मुझे भी अपना बेटा ही समझिए और ये कुछ रुपये रखिए।" कहते हुए उसने जेब में हाथ डालकर सौ-सौ के तीन नोट निकालकर वृद्धा के हाथ पर जबरदस्ती रख दिए। वृद्धा डबडबाई आंखों से कभी मधुकर के हाथ में पकड़े अपने हाथ के साथ नोटों को देखती और कभी गंगाजी को। उसके कुछ न बोलने से उसके स्वाभिमानी स्वभाव की स्पष्ट झलक मिल रही थी। आस-पास भीड़ जुटने लगी थी।

हरकी पौड़ी के बहुत से दुकानदार आ जुटे थे। चाय वाला कह रहा था, "बाबू जी, जब ये लोग आए थे तो इस बुढ़िया के कपड़े भी साफ-सुथरे थे, देर तक बैठी घाट पर भजन गाती रहती थी। बेटे-बहू के जाने के बाद एकदम गूंगी हो गई है। तब से न कुछ बोली है और न कहीं गई है। रात को भी यहीं बैठी आसमान को और कभी गंगा जी को तकती रहती है।"

"ठीक है, आप कुछ मत बोलिए। पर ये पैसे रख लीजिए, प्लीज़। मैं एक ज़रूरी काम से जा रहा हूं। दो दिन बाद वापस आकर आपका कोई प्रबंध करता हूं। तब तक आप इनसे काम चलाइए। आपके भोजन का काम चल जाएगा और किसी धर्मशाला में कमरा ले लीजिए। मैं आकर पैसे चुका दूंगा।"

फिर वह चाय वाले की तरफ मुड़कर बोला, "भाया, ज़रा आप भी देख लेना। हम जल्दी ही वापस लौटने की कोशिश करेंगे।" अपने मित्रों को देखकर उसने उठने का इशारा किया तो वे सब उठ खड़े हुए।

000

देहरादून जाकर अपने काम के सिलसिले में मधुकर को कुछ अधिक ही समय लग गया। चार दिन बाद जब वह खाली हुआ तो उसे बुढ़िया की याद आई। वे चारों एक बार फिर गंगा जी के किनारे आकर उसी चाय वाले के पास जा पहुंचे। वही छोटा लड़का भागा आया, जो वहां ग्राहकों को चाय पहुचाता था।

"चाय लाऊं बाबू जी?"

अभी वह कुछ कहते कि ढाबे का मालिक वहां आ गया, "बाबू जी आप लोग लौट आए?"

"हां, भाई साहब। काम कुछ ज्यादा था इसलिए देर लग गई, पर वे माता जी दिखाई नहीं दे रहीं। कहां किया उनका प्रबंध?"

"अरे भाई साहब! मैं क्या प्रबंध करता उस बेचारी ने अपना प्रबंध अपने आप कर लिया है।"

"क्या मतलब?" मधुकर चौंककर उठ खड़ा हुआ तो ढाबे के मालिक ने जेब से सौ का एक नोट और कुछ छोटे नोट निकाल कर मधुर के हाथ पर रख दिए, फिर भर्राए गले से बताने लगा, "उसने दो दिन तक आपका रास्ता देखा, आप दो दिन कह कर गए थे न? तब के उसने इन पैसों से खाना भी खाया और मेरे खोखे के नीचे ही सोती रही। तीसरे दिन भी दोपहर तक वह उधर ही देखती रही जिस तरफ आप लोग गए थे, फिर वह उठ-उठकर उस तरफ देखने लगी। हम समझ रहे थे कि वह आप लोगों का इंतज़ार कर रही है, लेकिन जब आप लोग शाम तक भी नहीं आए तो वह मेरे पास आई और मुझे ये पैसे देकर बोली, "अगर वह लड़के आ गए तो ये पैसे उन्हें दे देना।" बाबू जी, सच कहता हूं इतने दिनों में मैने पहली बार उसे बोलते सुना। अभी मैं उससे पूछता कि वह कहां जा रही है, उसने जल्दी से कदम बढ़ाकर गंगा जी में छलांग लगा दी। गोताखोर कूदे भी पर उसे बचा नहीं सके।"

"ओह!" मधुकर धम्म से बैंच पर बैठ गया, "मुझे क्षमा कर दो मां! तुम्हें लगा होगा कि मैं भी तुम्हारे बेटे की तरह तुम्हें छोड़ गया हूं। अब नहीं आऊंगा। काश तुम मेरा विश्वास करतीं। पर किस आधार पर करतीं।" तीनों मित्र उसके कंधे थपथपाकर उसे दिलासा दे रहे थे। मधुकर अश्रुभरी आंखों से आसमान की ओर देख रहा था। सम्भवतया उस क्लांत चेहरे को आसमान में तलाश कर रहा था।

कार रोड, पो. लालकुआं, जिला नैनीताल,
उत्तराखंड-262402, मो. 9456717150

कहानी

बेटियां जन्म ले रही हैं

● सैली बलजीत

पिछले दिनों से उसकी बीवी ने फिर उदासी ओढ़ ली है।

वह इस उदासी का कारण जानता है। लेकिन, वह बीवी से इसके बारे में बतियाना नहीं चाहता। उसकी दुःखती रग को वह कैसे सहलाए? डॉक्टरों ने इस बार भी उसकी आशाओं पर पानी फेर दिया है। वह भयभीत रहने लगी है। वह इस बार पूरी तरह से आश्वस्त थी कि उसके आंगन में इस बार खुशियों की रिमझिम से बहारों के अनगिनत आयाम उमड़ आएंगे। उसे स्मरण है, जिस दिन डॉक्टर तनेजा के क्लीनिक से मुँह बाए हुए बाहर निकले थे तो बीवी का चेहरा मुरझा गया था। इस बार उसे पुख्ता उम्मीद बन्धी थी कि उसकी कोख में इस बार अवश्य ही खिलखिलाता हुआ फूल खिलेगा। उसका आंगन महक उठेगा। वह कांप उठी थी। जमीन धसकती हुई प्रतीत हुई थी।

"उदास थोड़े होते हैं पगली? भगवान की अगर यही इच्छा है तो बोल ... क्या हो सकता है ..." उसने बीवी को पलोस लिया था।

"पहले भगवान ने कोई कसर उठा रखी है? दो बेटियां कम होती हैं ... इस बार सोचा था ... हमारी किस्मत जाग उठेगी .. . " बीवी ने मुरझाए हुए स्वर में कहा था।

"तो बोल ... क्या हो सकता है ...?"

"अबार्शन ... मुझे निजात दिलाओ ... मैं तंग आ गई हूँ .. ."

"ठण्डे दिमाग से सोचना ... पागलों वाली बातें छोड़ो ..."

"बहुत सोचा है ... क्या हो गया है हमारी किस्मत को?"

"किस्मत का खेल है यह सारा ... फिर किस्मत को क्यों कोसें?"

"तो बोलिए ... क्या करूँ मैं ... हमारी किस्मत ही खराब होनी थी?"

"सब्र से काम लेते हैं ... अब ज्यादा नहीं सोचना ..."

"मुझे दिलासा दे रहे हो ...?"

"तो क्या करूँ, बोल?"

बीवी सुबकने लगी थीं उसे दुनिया घूमती हुई लगी थी।

उसने किसी भी हालत में इस बार समझौता नहीं करना है उसे स्मरण है, पिछली बार भी इसी तरह बीवी की दुनिया पर वज्रपात हुआ था। पिछली बार भी वह इसी तरह टूटी थी। पिछली बार भी उसने इस अनचाही लड़की से निजात पाई थी। वह तिलमिला उठी थी। जाने माँ को कैसे पता चल गया था ... माँ से उसने इस सिलसिले में बतिया नहीं था। माँ के सपनों का महल भी ढह गया था। वह भी तो कितने सालों से घर में अपने पौत्र की किलकारी सुनने को तरस गई थी ... लेकिन ... माँ खौल उठी थी। उसके भीतर का सुलगता हुआ लावा पिघल गया था। माँ के हिस्से के सपने एक बार फिर डॉक्टर तनेजा की दहलीज पर गुम हो गए थे। वे खाली हाथ वापस लौट आए थे ... माँ से चोरी ही तो की थी ... फिर भी माँ ने अपनी गिद्ध दृष्टि से सब कुछ भांप लिया था। वह अब क्या सफाई देता? माँ के सामने बौनापन समेटते रह गया था। लेकिन ... माँ ने जाने कहाँ से सारी जानकारी इक्कठा कर ली थी? बीवी भीतर तक कांप उठी थी। माँ के सामने वह भी मूक हो गई थी। फिर सच्चाई भला कभी छुपती है??

दूसरे दिन माँ ने घर नए अध्याय का सूत्रपात कर दिया था।

उसका खून खौल उठा था। वह भीतर तक खौलता हुआ लावा हो उठी थी। कड़कड़ाती आवाज में माँ बोली थी, "क्या नया चन्न चढ़ाया है ... तुम लोग समझते हो कि मुझे कुछ नहीं पता?"

"क्या बात हुई माँ?" वह फुसफुसाया था।

"तुम नहीं जानते ... क्या हुआ है ... घर में किसी से मशविरा करने की रीत भी भूल गए?"

"माँ ... बात तो बताओ ... क्यों गुस्सा कर रही हो?"

"शर्म तो नहीं आती ...? मुझ से क्या छुपाओगे?"

"भूल हो गई माँ ..."

"बकवास करोगे अब ...? बहू को क्यों मारने पर तुला है?"



"तो क्या लड़की को उठाए घर आ जाते? तब भी तो खफा होना था ना तुमने माँ ... इस बार भी ..."

"तो क्या आफत आ जानी थी ... पहले नहीं लड़कियों की सौगात को झेला ... बोल?"

"हम तो डरते ही चले गए डॉक्टर के पास ... माँ तुम्हारे सपनों की लाश लेकर घर आ जाते ...?"

"तो अब भी तो खाली हाथ लौटे हो ... बहू का तो खयाल करो कुछ ... लड़की ही थी ना कोख में ... कौन सा तूफान उठ खड़ा होना था ...?"

"माँ ... तुम्हारा पोता होता तो ही लेकर आते ना ...?"

"भाड़ में जाओ ... समझे? जो मन में आए करते जाओ ... घर में कोई हो तो ही मशविरा करने आते ना ...?"

"गलती हो गई माँ ..."

"मर गई तुम्हारी माँ ... तुमने इसकी जरूरत समझी? ... मुझ से सलाह करते तो कुछ मशविरा देती ... हमारे जमाने में भला लड़कियों को ऐसे मारते थे? अब तो आग लग गई है जमाने को . .. क्या-क्या चीजें आ गई हैं, लड़कियों का क्या होगा ...? आग लगे इस कलमुंहे जमाने को ..." माँ ने अपनी भड़ास निकाली थी। माँ हाथ उछालते हुए ... अपना गुस्सा ठण्डा करती रही थी।

किसी की हिम्मत नहीं हुई थी कि अपनी सफाई में कुछ कहने की। सभी दुबक गए थे। माँ ने कितने दिनों तक घर में बवाल मचाए रखा था। वह कितने दिनों तक मुँह फुलाए हुए रही थी। बहू से बतियाना तक भी उचित नहीं समझा था माँ ने ... सच ही घर के आंगन में आने वाली किलकारी की हत्या करने के लिए, वह स्वयं को दोषी समझने लगा था ... माँ के सपनों का वध कर दिया था उसने। माँ के गुस्से के आगे कोई भी टिक नहीं सका था। माँ का खून खोलता रहा था। लाख चाहते हुए भी माँ ने इस अध्याय के पन्नों को बेचने का क्रम खत्म नहीं किया था। उसने बीवी को सलीके से समझा दिया था। माँ के गुस्से से फिर वह भी तो अनभिज्ञ नहीं। लेकिन ... तीर कमान से निकल चुका था। माँ को सभी जने समझा चुके थे। माँ के हिस्से के सपने मर गए थे उस दिन।

तीसरे दिन, माँ का गुस्सा ठण्डा हुआ था।

उसे लगा था, इस अनचाहे अध्याय के पन्नों को माँ ने अभी जाने कितने दिनों तक बांचना था। उसकी तन्द्रा टूटी तो सामने सपना और कल्पना उसके पास आकर खेलने लगी थीं। उसने स्वयं को किसी तरह संयमित किया था। उसने सोचा था उसकी दुनिया अब यही बेटियां ही तो हैं। इन्हें ही अब उसने दुनिया की हर खुशी सौंपनी है। लेकिन, इस बार भी लड़की होने की त्रसद स्थिति से बीवी की मानसिकता को पंगु तो होना ही है, वह कई दिनों से गुपचुप सी रहने लगी है। उसे वह समझा चुका है कि बेटियों की तस्वीरों के फ्रेमों में अगर भाई की जगह नहीं तो क्या हो जाएगा ...??

उसके जेहन में सबसे अहम माँ का चेहरा आता है।

माँ का खौलता हुआ चेहरा उसे डरा जाता है ... वह माँ को कैसे समझाए कि इस बार भी उसके सपनों की अर्थी उठने वाली है ...? इस बार घर में उसने पोते की किलकारी की कितनी शिद्दत से प्रतीक्षा की है ... माँ लड़कियों की आचार-संहिता से अनभिज्ञ तो है नहीं ... उसे कैसे इस बार होने वाले वज्रपात से बचाया जाए . ..? माँ को बताया तो वह जड़ हो गई थी। उसके सपनों का महल धराशायी हो गया था। मां सुबकने लगी थी।

"पुत्र ... इस घर में मेरे पोते की किलकारियाँ अब नहीं गूँजेंगी?"

माँ टूट गई थी।

"क्यों नहीं माँ ... हिम्मत क्यों हारती हो ...?" वह बोला था।

"नहीं ओए पुत्तर ... अब और सब्र नहीं होता ... भगवान को क्या हो गया है ...?" माँ भगवान को कोसने लगी थी।

"तो क्या हो गया ...? लड़कियां भला किस तरह कम हैं लड़कों से ...? माँ तुम चिन्ता नहीं करनी ..."

"नहीं पुत्तर ... इस बार बहुत उम्मीद थी ..."

"अगर हमारी किस्मत में यही लिखा है तो बोल माँ ... किसे दोष दें ...?"

"किस्मत को क्यों कोसना ...?"

"पर ... माँ ... अपनी बहू को समझाओ ... उसे हौसला दो ... बहुत समझाया ... समझती ही नहीं ..."

"क्या कहती है ...?"

"बस रोती रहती है सारा दिन ..."

"उसे मैं समझाऊंगी पुत्तर ... हमारे जमाने में तो पूरे टब्बर में चार-पाँच तो लड़कियां ही होती थीं ... होती थीं ना?"

"पता है ... पर ... माँ अब जमाना बदल गया है ..."

"आग लगे तेरे जमाने को ... भाड़ में जाएं यह कलमुँही

दुनिया ...” माँ खौल उठी थी।

माँ पुराने जमाने को स्मरण करने लगी थी। लेकिन, वह माँ को कैसे समझाए कि उसकी बहू एक ही जिद पर अड़ी हुई है कि उसने इस बार हर हालत में इस मुसीबत से निजात पानी है ...?? माँ को जब पता चलेगा कि इस बार फिर उसी गलती को दुहराने का दुःसाहस कर रही है उसकी बहू तो वह घर में तूफान खड़ा कर देगी ... माँ को किसी भी हालत में इस तूफान से बचाना है। वह भीतर तक कांप उठा था ... माँ अपने घर में आने वाली किलकारी का वध सहन कर पाएगी? उसने फिलहाल पत्नी से मशविरा करना था ... माँ का कड़ियल चेहरा आँखों में मंडराने लगा था।

उसने फिलहाल पत्नी को समझाना चाहा था।

“तुम माँ का गुस्सा जानती हो ना? अबार्शन के चक्करों में पड़े थे ना पिछली बार ...?” उसने पत्नी के पास आकर कहा था।

“तो बताइए ... क्या करूँ ...?” पत्नी बिफर उठी थी।

“हिम्मत से काम लेना होगा ... अब ... कोई गलत बात दिमाग में नहीं लानी ... समझी ...?”

“तीन लड़कियाँ ... लोग क्या कहेंगे ...? मैं कहती हूँ, मुझे निजात दिलाएं ...”

“तुम वहम करती हो ... क्या हो जाएगा बोल? ... जहां दो हैं ... एक और आ जाएगी ... उसकी अपनी किस्मत ...”

“नहीं ... मैं इस बार लड़की नहीं चाहती ... “ पत्नी खीझ उठी थी।

“तो क्या चाहती है बोल ... अबार्शन ...? माँ का चेहरा देखा है .. .?

पिछली बार तो उसे समझा दिया था ... इस बार ... उसका सामना कर पाओगी? पागलपन छोड़ो ... अब कोई बात नहीं करनी ...” उसने पत्नी को आगाह किया था।

पत्नी एक ही जिद दुहराती रही थी ... निजात भला ऐसे ही मिल जाती है? माँ को दिलासा देना चाहा था ... माँ ने इस बार इसे सहजता से लिया था। फिर ... युग परिवर्तित हो गया है ... अनचाही औलाद की हत्या के ऐवज में कानून भी पेचीदा हो गया है ... फिर अब अनचाही औलाद का वध संभव कहां रहा? लड़ने की हिम्मत नहीं ... रोज अखबारों की सुर्खियां उसे हिला जाती हैं भीतर से ... कानून की पेचीदगियां भी फिर कम डराने वाली नहीं?? वह जड़ हो गया था।

उसने अपनी बेटियों के लहलहाते आंगन में उनके हिस्से के सुनहरी रंग भरने हैं ... बेटियों के हिस्से के गुलमोहर उगाने हैं .. . उन्हें मुरझाने नहीं देना ... तीसरी बिटिया भी अपनी किस्मत अपनी हथेली पर लेकर आएगी। उसके हिस्से के गुलमोहर भी तो सुरक्षित रखने हैं उसने ... वह सोचने लगा था।

उसने पत्नी के ‘अबार्शन’ के घिनौने निर्णय का वध कर दिया था।

उसे मानसिक रूप से राजी कर लिया था ... सिर्फ माँ के हिस्से के सपने अवश्य झर जाएंगे ... उसकी पोते की किलकारियां सुनने की ललक एक बार फिर मर जाएगी ... माँ के हिस्से के सपने अब तीसरी बिटिया के हिस्से आने हैं ... माँ को बता दिया था .. . पत्नी के भीतर सुलग रही चिन्गारियां शान्त हो गई थीं। माँ का पुख्ता फैसला जब पत्नी ने सुना तो वह संयमित हो गई थी।

किसी की हिम्मत नहीं हुई थी कि अपनी सफाई में कुछ कहने की। सभी दुबक गए थे। माँ ने कितने दिनों तक घर में बवाल मचाए रखा था। वह कितने दिनों तक मुँह फुलाए हुए रही थी। बहू से बतियाना तक भी उचित नहीं समझा था माँ ने ... सच ही घर के आंगन में आने वाली किलकारी की हत्या करने के लिए, वह स्वयं को दोषी समझने लगा था ... माँ के सपनों का वध कर दिया था उसने।

माँ ने कड़कड़ाते स्वर में कहा था, “इस बार घर में कोई गलत कदम उठाया तो मैं माफ नहीं करुंगी ... क्या हुआ इस बार भी बिटिया जन्म ले रही है ...? लड़कियां तो फिर लक्ष्मी का रूप होती हैं ... क्यों उन्हें जन्मने से पहले मारने लगे हैं लोग? क्यों रब्ब की दी हुई सौगात को ठुकरा देते हैं लोग ...? ना ... ना ... इन हत्यारों को तो रब भी माफ नहीं करेगा ...आग लगे इस जमाने को ...”

माँ का रौबीला स्वर कड़कड़ाता रहा था। उसकी उत्कट इच्छा को पलोसना है हर हालत में ... पत्नी ने फैसला कर लिया था... इस बार अपनी अजन्मी बिटिया को ‘नरसिहियों’ के मखमली बिस्तरों पर अकारण नहीं गंवाना है ... उसके वध में किसी भी सूरत में शामिल नहीं होना है ... अब उसे तीसरी बिटिया के जन्म की प्रतीक्षा है ... उसे हर हालत में इस दुनिया में लाना है ...।

1288, लेन-4, श्रीरामशरणम् कॉलोनी, डलहौजी रोड, पठानकोट, पंजाब-145001, मो. 0 98780 78570

बुद्धिमान मनुष्य अपने अनुभवों से सीखता है, किन्तु अधिक बुद्धिमान मनुष्य दूसरों के अनुभवों से सीखता है। -अज्ञात

मंजिल चाहे कितनी भी ऊंची क्यों न हो, रास्ते हमेशा पैरों के नीचे होते हैं। -अज्ञात

आपकी जिंदगी में दो ही अहम दिन हैं। पहला जिस दिन आप पैदा हुए और दूसरा जब आपको पता चला कि जीवन में आपका लक्ष्य क्या है। -मार्क ट्वेन

लघु कथा

गांव जिंदा है

● रामकुमार आत्रेय

मास्टर रामप्रसाद ने बस से नीचे उतरकर इधर-उधर देखा। उन्हें उम्मीद थी कि वहां कोई-न-कोई थ्री व्हीलर जरूर खड़ा होगा जिसमें सवार होकर लिंक रोड के सहारे वे अपने गांव तक पहुंच सकेंगे। अभी वहां कोई थ्री-व्हीलर मौजूद नहीं था। अबकी बार वे कोई तीन वर्ष उपरांत गांव जा रहे थे। पिछली बार जब वे गांव गए थे युवा पीढ़ी के बहुत कम सदस्यों ने उन्हें पहचाना था।

पुराने लोग जरूर उन्हें देखकर पांव छूने के लिए आगे बढ़ते, नमस्कार करते। अब तो उनके पढ़ने और सुनने में आ रहा था कि गांव की असली पहचान भाईचारा तथा एक दूसरे के दुखदर्द में काम आने की भावना लगभग समाप्त हो चुकी है। जिसका मतलब साफ था कि गांव की आत्मा मर चुकी है और अधिक लोग उन्हें भूल चुके होंगे।



ठीक तभी एक थ्री-व्हीलर उनके पास आकर रुका। थ्री-व्हीलर सवारियों से ठसाठस भरा हुआ था। इससे पहले कि वे कुछ कहते-व्हीलर का चालक नीचे उतरा और उनके पांव छूने के लिए नीचे की ओर झुकता हुआ बोला, “प्रणाम मास्टर जी।”

उनका हाथ तत्परता के साथ झुकने वाले की पीठ पर जा टिका। साथ ही उनके मुंह से निकला, “भगवान तुम्हारा भला करे, बेटा। मैंने तुम्हें पहचाना नहीं।”

“जब आप गांव के स्कूल में पढ़ाते थे तब मैं नौवीं, दसवीं कक्षा में आपसे पढ़ा था। आप मेरे गुरु हैं। गांव में चलना है क्या आपको?” उसने उत्तर देते हुए पूछा था।

“हां, बेटा। गांव जाने के लिए ही आया हूं। वे खुश होते हुए बोल उठे।”

वह उनकी बाजू पकड़ कर उन्हें थ्री-व्हीलर के पीछे ले गया। पीछे की सीट पर, जिसका मुंह भी पीछे की ओर ही था, पहले से ही तीन लोग बैठे थे। उसने हाथ के संकेत से सबको दायीं ओर खिसकने का इशारा करते हुए कहा, “मास्टर जी के लिए जगह बनाओ।”

वे तीनों तत्परता से एक ओर हट गए। चालक ने मास्टर जी को सहारा देकर ऊपर चढ़ा दिया। थ्री-व्हीलर को पूरी गति से दौड़ाने लगा। मास्टर जी को लगा कि वे पीछे की ओर खिसक रहे हैं और जल्द ही नीचे गिर जाएंगे। पीछे वाली सीट बहुत कम चौड़ी थी। ऊपर लगी छड़ को पकड़ने के बावजूद उन्हें लगा हाय वे गिरे, अब गिरे। उनके मुंह से अचानक निकल गया, “हे प्रभु! कहीं मैं गिर ही न जाऊं।”

“नहीं मास्टर जी आपको हम बिलकुल नहीं गिरने देंगे। विश्वास रखो, हम चाहे गिर जाएं, पर आपको नहीं गिरने देंगे।” पीछे बैठे व्यक्तियों में से एकदम दो आदमी बोल उठे। उनमें से एक ने अपना हाथ उनकी छाती के सामने अड़ा दिया तो दूसरे ने पीछे से उनके कंधे थाम लिए।

उन दोनों की बात सुनकर और उनका स्पर्श पाकर वे रोमांचित हो उठे। उनकी आंखें भर गईं। अपनत्व की आंच ने पलकों के पीदे छिपी खुशी को आंसुओं के रास्ते बाहर धकेल दिया। आंसू गाल से होता हुआ नीचे लुढ़क गया। पास बैठे व्यक्तियों ने यह सब देख लिया। द्रवित होकर बोले, “मास्टर जी, आप रो रहे हैं! क्या बात है?”

“भाई मेरे ये आंसू खुशी के आंसू हैं।” मास्टर जी ने मुस्कुराने का प्रयास करते हुए कहा।

“खुशी के आंसू! मैं समझा नहीं।” तत्काल पूछा था उसने।

“हा भाई, खुशी के आंसू हैं ये। गांव जिंदा है न अभी, इसलिए।” उन्होंने बताया।

व्यक्ति कही गई बात का मतलब नहीं समझ पाया। वह मास्टर जी के मुंह की ओर देखे जा रहा था।

864-ए/12, आजाद नगर, कुरुक्षेत्र, हरियाणा-136 119,
मो. 0 94162 72588

लघु कथा

जीवंतता

● योग राज शर्मा

वह मूलतः किसान परिवार से था और अपने माता-पिता की इकलौती संतान भी। परन्तु वह विपरीत परिस्थितियों के सामने आ खड़े होने के कारण अपने पुश्तैनी काम-धन्धे को अपना न पाया। अभी बालपन में ही था कि सिर से पिता का साया उठ गया। घर में कमाई करने वाला कोई नहीं था। उस पर मुसीबत का पहाड़ टूट पड़ा। मां ने हालात से समझौता कर लिया। खेती-किसानी कर मां ने उसे पढ़ने के लिए स्कूल भेजा। लेकिन विषम परिस्थितियों के कारण ज्यादा पढ़ाई नहीं कर पाया और स्कूल छोड़ दिया। गुजर बसर करने के लिए वह मां के साथ मेहनत मजदूरी करने लगा। स्कूल छोड़ने की टीस उसे सालती रही। मेहनत-मजदूरी में उसका वक्त निकल जाता। इस कारण अपने खेत-खलिहान पर काम करने की फुर्सत नहीं मिल पाती। खेत बंजर होते गए।

इसी बीच चचेरे भाई ने किसी काम धन्धे में लगवाने के कई प्रयास किए। शहर में एक जगह काम मिल भी गया। कम पढ़ा-लिखा होने की वजह से उसकी रुचि का काम नहीं मिला। शहर की आबोहवा उसे रास नहीं आई। शीघ्र ही उसका मन उचाट हो गया। वह गांव लौट आया। इस बीच उसकी शादी हो गई। बेटा भी घर में आ गया। खुशी का एक मौका मिला।

समय बीता, बच्चा बड़ा हो गया। घर के खर्चों में और भी बढ़ोतरी हो गई। बेटा पढ़ाई में अच्छा था। अब उसे पढ़ाई के लिए गांव के स्कूल से शहर की तरफ जाना था। लेकिन वित्तीय हालात फिर से दीवार बनकर खड़ा हो गए। बेटे ने पहले तो आगे की पढ़ाई करवाने के लिए संकोच किया। लेकिन नौकरी की चाहत अभी भी मन में थी। अपनी हसरत पूरी न होने का उसे मलाल था लेकिन वह अपने बेटे के साथ ऐसा नहीं होने देना चाहता था। ऐसा न हो कि बेटे को भी मेरी तरह ही आजीविका कमाने के लिए दर-दर भटकना पड़े। ऐसे विचार से मन घबरा गया। बेटे से कोई प्रोफेशनल डिग्री करवानी ही है। चाहे कुछ भी हो वक्त और हालात से समझौता नहीं करुंगा। अपने भाग्य को अपने कर्म से बदल दूंगा।

कड़ी मेहनत के लिए खूब भाग-दौड़ कर लोगों के घरों में मजदूरी करना भी ठान लिया। फीस पूरी करने के लिए लोगों से उधार उठाने से भी संकोच नहीं किया। उसके नेक दिल, व्यवहार और ईमानदार होने के कारण बहुत से हाथ उसकी आर्थिक मदद को बढ़े। राहत मिली। बेटे को पढ़ा-लिखाकर कुछ बनाने के उसके सपने को बल मिलता गया। बेटा भी होशियार निकला। उसने अपनी वर्षों की कड़ी मेहनत और पिता के देखे सपने को धुंधला न होने दिया। अपनी पढ़ाई पूरी कर गांव वापस लौटा।

करीब दो साल हो गए लेकिन नौकरी नहीं मिली। इसी बीच गांव के कई लोगों के बच्चे किसी न किसी काम धंधे में लग गए। उसका इम्तिहान अभी बाकी था। परेशानियां खत्म नहीं हुईं थीं। उसका धैर्य टूटने लगा था। चिंता की लकीरें माथे पर साफ झलकने लगीं। उसको अपना सपना टूट कर बिखरता नजर आ रहा था।

एक दिन एक नामीगिरामी कम्पनी से शुभ समाचार मिला कि उसके बेटे की सिलेक्शन हो गई है।

बधाई देने लोग उसके घर पहुंचे। आज वह बहुत खुश था। खुशी भरे इस समाचार से सुकून पाते हुए बोला, अच्छे दिनों की उम्मीद में जिंदगी संघर्ष में गुजर गई। बहुत भागदौड़ हुई। अब और भागमभाग नहीं। अपनी जमीन से जुड़ूंगा। अलगाव की इस पीड़ा को मैंने वर्षों झेला है। एक किसान अपनी जमीन से अलग नहीं रह सकता। धरती मां के आंचल को कौन छोड़ना चाहता है। खून के आंसू पिए हैं। बच्चों को भी जोड़े रखूंगा। वे चाहे कहीं भी रहें और जो भी काम करें, लेकिन इस मिट्टी से उन्हें कटने नहीं दूंगा। बरसों से बंजर हुए खेत संवारकर फिर से खेती-बाड़ी के काम में जुट जाऊंगा। लेकिन बरसों मदद को बढ़े हाथों का पहले धन्यवाद करूंगा। सबके सहयोग से ही मैं अपने बेटे को इस काबिल बना सका। उसके इरादों में गर्व झलक रहा था। आंखें खुशी से चमकने लगी थी। प्रसन्नता के बहाव में वह बोलता रहा। ...हालात के थपेड़ों ने इस कदर रुलाया कि आंख का पानी भी सूख गया है। जो बचा था वह उन हालात के दुःख-दर्द, तकलीफ और पीड़ा को अपने साथ बहा ले गया। अब कड़ी मेहनत से निजात मिल गई है।

इतना कहकर वह गौशाला की तरफ बढ़ा। कंधे पर हल उठाए वह वापस आया और निकल पड़ा वर्षों से बंजर पड़े खेतों की ओर।

गांव के ही एक बुजुर्ग ने कहा, 'हो सकता है उसकी देखा-देखी में कुछ और ग्रामीण जो खेती छोड़ चुके हैं, वे भी वे पुश्तैनी कर्म में जुट जाएं। ...गांव का कायान्तरण हो जाएगा। तकदीर संवर जाएगी। गांव फिर से जीवंत हो उठेगा।'

गांव नलावन डा. चलाहल, उप तह. धामी, जिला शिमला, हि. प्र.-171103, मो. 9418172686

समीक्षा

गहन अनुभवों का विस्तृत फलक

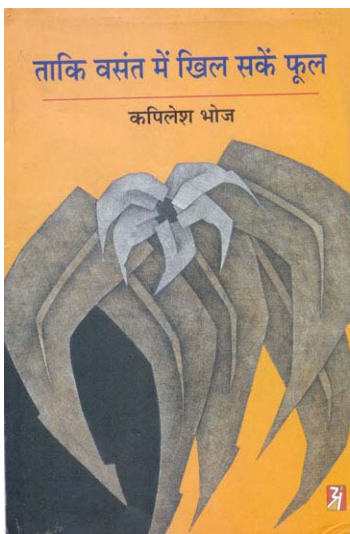
● डॉ. हेमराज कौशिक

'ताकि वसंत में खिल सकें फूल' कपिलेश भोज का छप्पन कविताओं का दूसरा संग्रह है। इससे पूर्व उनका कविता संग्रह 'यह जो वक़्त है' शीर्षक से प्रकाशित है। उनकी कविताओं में पर्वतीय परिवेश, अपनी ज़मीन, अपनी मिट्टी, वन-उपवन, पेड़-पौधे, नदी-निर्झर, ऋतुओं के परिवर्तन आदि के विविध दृश्य मूर्तिमान हुए हैं। इसके अतिरिक्त पर्वतीय जीवन की दुश्वारियों, सामाजिक जीवन की असंगतियों, विद्रूपताओं, नारी नियति और उसका जीवनव्यापी संघर्ष राजनीति और लोकतंत्र का निर्मम चेहरा, शिक्षा प्रणाली की यांत्रिकता और जड़ता, पर्यावरण प्रदूषण आदि से सम्बद्ध अनेक समस्याओं को कवि ने अपनी कविताओं में मुखरित किया है और ये समस्याएं उनकी कविताओं में गहन रचनात्मक स्तर पर प्रतिबिम्बित हुई हैं। उनकी कविताओं का एक पक्ष निजी सम्बंधों के विविध रूपों को सामने लाता है। कवि की अनुभूति अतीत स्मृतियों के आईने में प्रतिबिम्बित हुई है। कवि का 'स्व' सीमित परिधि से निकलकर साधारणीकृत होकर वैयक्तिकता से सामाजिकता की ओर उन्मुख है।

'चौबाटिया के पथ पर' में कवि की अतीत की समृतियां हैं। बाल्यकालीन जीवन की निश्छलता, चंचलता और चहलकदमी सब कुछ स्मृतियों के झरोखों से बाहर आते हैं कवि बेतालीस वर्ष बाद चौबाटिया के भूदृश्य को देखकर, पगडंडियों पर चलते हुए चार दशक का अंतराल समाप्त हो जाता है। कवि मां, बाप, भाई-बहनों व शिक्षकों को स्मरण करते हुए अतीत को पुनर्जीवित करता है। परंतु स्मृतियों से साकार हुआ वह बाल्यकाल पुनः कभी लौट नहीं पाता। 'मेरी यादों का सौनी' में भी कवि की किशोरावस्था की दहलीज पर कदम रखने की स्मृतियां हैं। मित्रों का सान्निध्य, पुस्तकों का अध्ययन, विसौनी, देवलीखेत की पगडंडी को स्मरण करते हुए कवि अपनी सृजन यात्रा की शुरुआत और अपने गुरु चंद्रमोहन पंत को भी कविता में बांधता है। कवि को सौनी सृजन के लिए प्रेरक भूमि प्रतीत होती है। 'कहो कैसे हो रानीखेत' रानीखेत को संबोधित कविता है। सैंतीस वर्ष पूर्व का रानीखेत साकार हो उठता है। उसकी कसम भरी यादें उसे विह्वल करती हैं। कवि ने रानीखेत को पुष्प से निःसृत सुगंध की भांति माना है जो उसके अंतस् तक में व्याप्त है। वह उसे शांत और सौम्य शहर मानता है जिसने उसे नई चेतना दी। 'इजा तू रहना सदा मेरे साथ' में कवि मां के दैनंदिनी ज़िंदगी और उसके संघर्ष को स्मरण किया है। पर्वतीय जीवन की दुश्वारियों और अभावों से संघर्ष करने वाली 'इजा' प्रतीक बन जाती है उन मांओं की जो दिन रात उन पहाड़ों में संघर्ष करती हैं, अपना जीवन खपा देती हैं जिनके लिए तब भी भर पेट खाना सपना होता है। 'यह है बौरा रौ घाटी' में कवि ने बौरा की घाटी का भूगोल ही नहीं अपितु इस घाटी में जन्म लेने वाले कथा शिल्पियों और रोजगार के लिए संघर्ष करने वाली पीढ़ी के आंदोलन को भी चित्रित किया है। 'मेरी यादों का लखनाड़ी' में कवि अपने गांव को स्मरण करता है। वर्षों के अंतराल के बाद भी गांव की मिट्टी की महक, चश्मों का पानी, फसलों, फल-फूल और हवा का अपने तन-मन और सांसों में अनुभूत करता है। 'फिर वही सोमश्वर, फिर वही कसौनी' कविता में कवि की स्मृतियां बार-बार सोमश्वर और कसौनी की ओर लौटती हैं, अभिभूत और आकर्षित करती हैं। 'अलविदा... महात्मा गांधी स्मारक इंटर कालेज चनौदा' में कवि उस विद्यालय को भी स्मरण करता है जिसमें रहते हुए उन्होंने नई पीढ़ी के लिए विद्यालय की प्रेरणा से बीज बोए और भविष्य के सपने देखे। 'मेरी यादों का नैनीताल' में कवि ने अध्ययनकाल के उन रचनाकारों और शिक्षकों को स्मरण किया है जिन्होंने उसे प्रभावित किया। 'रोशनी की झिलमिलाहट के बीच' में कवि को अल्मोड़ की एक वासंती शाम कुछ क्षणों तक अभिभूत करती है परंतु सहसा ही भटकोट के उन्नत शिखरों के पार गांव की दुश्वारियां, अभाव और मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए उनके संघर्ष को स्मरण करते हुए कवि की उदासी बढ़ जाती है। कवि अंधेरे सन्नाटे में डूबते गांव की तकलीफ़ को अनुभव करता है। समीक्ष्य संग्रह की

इन प्रारंभिक कविताओं में कवि के स्मृतिलोक में पहाड़ी जीवन है जिसके साथ वह वर्षों तक जुड़ा रहा है। वे इन कविताओं में कहीं भी काल बोध, स्थान बोध, प्रकृति की रमणीयता, भूदृश्य, भूगोल, पहाड़ों की धूसर पगडंडियों और पहाड़ी जीवन जीते हुए नर-नारी के संघर्ष को कहीं भी विस्मृत नहीं करते हैं।

'कहती हैं पहाड़ की औरतें' और 'क्या मनुष्य नहीं हूं मैं' जैसी कविताओं में कवि ने पर्वतीय क्षेत्र में नारी के जीवन व्यापी संघर्ष को मूर्तिमान किया है। पहाड़ी स्त्री न केवल घरों के अंधेरे कोनों को ही रोशन करती है अपितु भूख, प्यास और अभावों को झेलते हुए अपने खून पसीने से फसलें लहराती है। दुख दैन्य और अभावों में अपने अश्रुओं से सींचकर खुशियों और हौसलों के फूल खिलाती है। 'क्या मनुष्य नहीं हूं मैं' में नारी की उस चेतना को भी सामने लाया है जिससे वह पुरुष से प्रश्न करती है क्या मैं मनुष्य नहीं हूं? वह पुरुष के समक्ष यह सवाल उठाती है कि पैंतीस वर्ष की आयु पार करते-करते तीन बच्चों को जन्म देकर वह असमर्थ और जर्जर देह क्यों हो गई है। 'तलाश' में आधुनिकता और नगरबोध के फलस्वरूप आई संवेदन शून्यता की ओर संकेत है। कवि की यह आकांक्षा है और तलाश भी कि स्नेह से छलछलाते नयन कब मिलेंगे। 'आपने ही जलाई यह ज्योति' गुरुवर ताराचंद त्रिपाठी को संबोधित है जिसमें उनके अवदान को रेखांकित किया है। 'तुम भी क्या आदमी थे यार गिर्दा' में कवि गिर्दा के संघर्ष का चित्रण है जो अपनी देह की चिंता किए बगैर दूसरों के हितों और अधिकारों के लिए लड़ते रहे। 'हे चिर यात्री' कविता इतिहासकार शेखर पाठक के लिए है जिन्होंने राहुल सांकृत्यायन की भांति दुर्गम क्षेत्रों में घूम-घूम कर इतिहास के तथ्य एकत्रित किए। वे अपने इस कठिन कार्य के कारण पहाड़ के पर्याय बन गए।



'तुम्हारी आवाज़' में कवि गौरेया की चहचहाट के बीच से होकर आने वाली प्रिय की आवाज़ को सुनना चाहता है क्योंकि प्रिय की वह आत्मीयता से भरी आवाज़ अपने साथ प्रकृति के अनेक उपादानों को लेकर आती है। वह पुष्पों, धान की सुनहरी बालियों, ताज़े जोते गए खेतों की मिट्टी की महक, निर्बंध बहते झरनों और वन पाखियों की कुहू-कुहू की स्वर लहरियों की आवाज़ सुनना चाहता है जो जीवन में सरसता और कुछ नया रखने का उल्लास भर देती है।

'सपने में एक बच्चे की अपने पिता से बातचीत' शीर्षक कविता दिवंगत पुत्र भुवन की स्मृति में लिखी गई है। यह एक मार्मिक कविता है जो निराला की 'सरोज स्मृति' की याद ताज़ा करती है। एक कमसिन शिशु जिसने अभी तुतलाना ही सीखा है, उसकी बीमारी और मृत्यु को लेकर सृजित इस कविता में पिता के हृदय की विदारक पीड़ा है जो स्वप्न में यह अनुभव करता है कि जीवन की आपाधापी में पुत्र का उपचार ठीक तरह नहीं करा सका।

'कैदी बच्चा' 'पापा मत मारो मुझे' 'बदहवास बच्चे' जैसी कविताओं में कपिलेश भोज ने आज की शिक्षा की यांत्रिकता को लेकर सवाल उठाए हैं। 'कैदी बच्चा' में कवि ने आज के बालक पर पुस्तकों और कापियों के भार को दिखाया है जिसके कारण बालक प्रकृति की रागात्मकता और सरसता से कोसों दूर नीरस पुस्तकों को रटने के लिए विवश है। 'पापा, मत मारो मुझे' बाल मनोविज्ञान पर आधारित कविता है। मां बाप की महत्त्वाकांक्षाओं के कारण बालक की स्वतंत्रता छिन गई है। 'ऐसा करो ऐसा न करो' पर आधारित माता-पिता के निर्देश पूरी तरह निषेधपरक शिक्षा के अंग हैं जो बालक की सृजनशीलता को समाप्त कर उसकी भावनाओं को दमित करती है और व्यक्तित्व को कुंठित करती है। परिणामस्वरूप बालक के व्यक्तित्व का शारीरिक मानसिक और सामाजिक विकास अवरुद्ध हो जाता हैं 'भाउ यह मेला नहीं है' कविता में ग्रामीण जीवन की संघर्षशीलता और नगरीय जीवन की निष्क्रियता चित्रित है। नगरों की भीड़ में 'मेल' नहीं है उसमें न आत्मीयता है और न ही रागात्मकता विद्यमान है। शहर की भीड़ में इसके विपरीत असुरक्षा का भाव और अजनबीयत है। 'बदहवास हैं बच्चे' में बालक पर अनेक प्रकार के दबावों का चित्रण है। बालक पर पुस्तकों के दबाव के अतिरिक्त रीति-रिवाज, धर्म, जाति का भी दबाव है। इसके अतिरिक्त कुपोषण का भी शिकार है। 'पैर बंधा बच्चा' में ग्रामीण जीवन की जटिलता, कार्यों की व्यवस्तताओं के मध्य बालक के लिए अधिक समय नहीं दिया जाता। बालक को घर में अकेला छोड़ते हैं उसके पैर किसी चीज़ के साथ बांधते हैं ताकि वह अकेली अवस्था में कहीं गिर न जाए।

महाकवि की जयंती, 'जो सिर्फ कविता में जलाते हैं मशाल' 'समीक्षक का कमाल' जैसी कविताओं में कपिलेश भोज कवियों, समीक्षकों और अन्य साहित्यकारों पर भी व्यंग्य प्रहार करते हैं जिनकी कथनी और करनी में अंतर है। 'महाकवि की जयंती' में साहित्य समारोह की औपचारिकता और रिक्तता को चित्रित किया है। किसी रचनाकार की जयंती महज़ एक प्रदर्शन होती है जिसमें रचनाकार के कर्म और मर्म को समझने की किंचित भी कोशिश नहीं होती। 'जो सिर्फ कविता में जलाते हैं मशाल' शीर्षक कविता उन तथाकथित क्रांतिधर्मी कवियों की ओर संकेत करती है जो

केवल शब्दों में ओज उत्पन्न करते हैं। वास्तविक जीवन में जहां क्रांति की मशाल जलती है, उससे वे कोसों दूर रहते हैं। वे केवल कविता सुनाकर वाहवाही लूटते हैं, उनके पास किसी प्रकार की क्रांति की चिंगारी नहीं होती। 'समीक्षक का कमाल' में व्यंग्य के धरातल पर समीक्षा की स्थिति को रेखांकित किया है जिसमें समीक्षक अपनी विचारधारा को आरोपित कर उन चीजों की तलाश करता है जो चीजें उसमें विद्यमान नहीं होतीं।

कपिलेश भोज की कविताओं में निम्न मध्यवर्गीय समाज की पीड़ा भी मुखरित हुई है। 'आकाश बादलों से ढका है' 'कम हो गया है एक वोटर' 'बनाई गई है जो दुनिया' जैसी कविताओं में श्रमिक वर्ग की आर्थिक स्थिति का चित्रण है। 'आकाश बादलों से ढका है' में निर्धन श्रमिक वर्ग की चिंता है। भीषण बरसात श्रमिक की चिंता का कारण बन जाती है क्योंकि वह कहीं भी ऐसी स्थिति में मजदूरी का कार्य प्राप्त नहीं कर पाता। 'कम हो गया है एक वोटर' में निम्न मध्यवर्गीय परिवार की दशा का चित्रण है जिसमें मद्यपी पति के खोने की पीड़ा है। लोकतंत्र में उसका इस दुनिया से चले जाना एक वोटर का चले जाना है। राजनीति के निष्करुण रूप को यह कविता प्रस्तुत करती है। 'बनाई गई है जो दुनिया' में श्रमिक वर्ग द्वारा निर्मित वस्तु उससे किस प्रकार 'एलिनिएट' हो जाता है उस अलगाव के कारण अजनबी बन जाती है। वह उत्पादित अथवा निर्मित वस्तु उससे दूर ही नहीं जाती अपितु उसके शोषण का कारण भी बनती है।

पुस्तक का नाम :	ताकि वसंत में खिल सकें फूल (कविता संग्रह)
लेखक :	कपिलेश भोज
प्रकाशक :	अंतिका प्रकाशन, सी-56/यूजीएफ-4, शालीमार गार्डन, एक्सटेंशन-दो गाजियाबाद, उत्तर प्रदेश-201 005
पहला सजिल्द संस्करण :	2013
मूल्य :	230 रुपये

'होगा विकास एक दिन' में कवि ने जनता के द्वारा चुने गए प्रतिनिधियों के द्वारा विकास योजनाओं के नाम लगातार किए जाने वाले झूठे वायदों और आश्वासनों का चित्रण है जो विकास के नाम पर जनता को गुमराह करते रहते हैं। 'हमारे लिए' में कवि ने यह स्पष्ट किया है कि आम आदमी को भुलावे में रखने के लिए शराब, मनोरंजन और धर्म के नाम पर योग को साधना के रूप में प्रयोग किया जाता है। 'आखिर कब तक' में कवि ने यह प्रश्न उठाया है कि व्यवस्था की असंगतियों के विरुद्ध संघर्ष करने वाले को कब तक दमित किया जाता रहेगा।

कपिलेश भोज की कविताओं में राजनीति का वर्तमान स्वरूप, लोकतंत्र की विकृतियां, राजनेताओं के मिथ्या आश्वासन और विकास की योजनाओं का मायाजाल है जिसमें कथनी और करनी का अंतर है। राजनीतिक चेतना संपन्न इन कविताओं में किसी विचारधारा का आरोपण नहीं है। परंतु वर्तमान परिप्रेक्ष्य में राजनीति किस कारण से विश्वसनीयता खोती जा रही है, उसे कवि ने अपनी अंतर्दृष्टि से देखा और परखा है। 'होगा विकास एक दिन' 'विदीर्ण करो कुहासा' जैसी कविताओं में इसे बखूबी देखा जा सकता है। 'कभी कभी ऐसा ही सोचते हैं विमल दा- 'दोस्त फेलिक्स ग्रीन' शीर्षक कविताओं में क्रांति के स्वरूप, क्रांति पथ की कठिनाइयों तथा क्रांति के लिए जिस धैर्य और साहस की ज़रूरत होती है, उसे ये कविताएं व्यक्त करती हैं। 'दोस्त फेलिक्स ग्रीन' कविता में कवि कहता है :

गुस्से से चिल्लाना/ या/ किसी मकान की छत से/ गोली चला देना/ नहीं है क्रांति/ कि/ खेल नहीं है/ बल्कि/ चतुर और दुर्दांत शत्रु के विरुद्ध/ दीर्घकालिक युद्ध की योजना है यह/ आवश्यकता होती है इसके लिए/ वर्षो तक सावधानी से कार्य करने/ विचार करने/ संगठित होने/ और/ संगठित करने की।

कवि चारों ओर व्याप्त कुहासे को विदीर्ण करना चाहता है। शिक्षा, स्वास्थ्य और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता पर कार्यशालाओं, संगोष्ठियों और प्रशिक्षणों का तो आयोजन हो रहा है परंतु वास्तविक धरातल पर आम आदमी की स्थिति को देखकर प्रतीत होता है कि वह कुहासा और अंधकार अभी भी विद्यमान है उसे हराने की ज़रूरत है कवि कहता है : 'जनतंत्र और अभिव्यक्ति की आज़ादी पर/ जितनी बढ़ रही हैं/ घोषणाएं/ लिखने-पढ़ने/ और/ सोचने विचारने के/ नैसर्गिक अधिकार पर/ उतने ही/ सख्त होते जा रहे हैं पहरे'।

कवि 'उदासी है क्यों' कविता में यह प्रश्न उठाते हैं कि आज की इस आपाधापी भरी जिंदगी को क्या अकेले उदास होकर समाप्त कर देना चाहिए या ऐसी स्थिति से मुक्त होने के लिए संगठित होकर दुरुस्त करने का प्रयास करना चाहिए। 'उम्मीदों के हरकारे' में जीवन के झंझावातों में भी आगे बढ़ने की प्रेरणा है 'चलो, अब निकलें बाहर' में भी कवि ऐसी कविताओं के सृजन पर बल देता है जहां अंधेरे के विरुद्ध उजाले, युद्ध के विरुद्ध शांति और बुराई के विरुद्ध अच्छाई का जहां लगातार संघर्ष है। कवि की सोच सकारात्मक है और उसे यह उम्मीद है कि अंधकार के बाद उजाला अवश्य आता है। कवि यह मानता है कि यह 'बीहड़ पथ' है और कुहासा भी है परंतु अंततः संघर्ष के बाद वसंत के खिले फूलों की महक प्रसन्नता लाती है। समीक्ष्य संग्रह की शीर्षक कविता 'ताकि वसंत में खिल सकें फूल' में कवि को यह विश्वास है कि चारों ओर पतझड़ की हवा, तुषार से सूखे पौधों के पास बेतरतीव उग आए झाड़ झंखाड़ हैं। जीवन नाना जटिलताओं और विद्रूपताओं से

भरा है परंतु ऐसे भी श्रमशील कर्मशील क्रांति के पथ का नेतृत्व करने वाले लोग है जो पतझड़ के बाद वसंत के आगमन के लिए कृतसंकल्प हैं। इसीलिए कवि कहता है- तुषार से सूख गए/ पौधों के आसपास/ बेतरतीब उग आए। झाड़-झंखाड़ को/ साफ करने में/ जुटे हुए हैं कुछ माली भी। ताकि वसंत में/ पूरी तरह खिल सकें/ भांति भांति के फूल।

'तुम्हारा मिलन' 'झिलमिला उठे रुपहले शिखर- 'खुशबू ज़िंदगी की' आदि कविताएं प्रेमाभिव्यक्ति और प्रिय के सान्निध्य को लेकर लिखी गई हैं। इन कविताओं में प्रिय को जीवन की सरसता, प्रेरणा और ऊर्जा के स्रोत के रूप में स्मरण किया है। 'अलविदा शेफालिका' में पर्यावरण की चिंता है। 'सुनो हे गुरुवर' में शिक्षा को लेकर परम्परागत सोच को परिवर्तित करने की ओर संकेत है तथा नई पीढ़ी के लिए व्यवसायोन्मुख शिक्षा की ज़रूरत पर बल दिया है। इसीलिए कवि कहता है इन्हें तो चाहिए/ गरीबी, बेरोजगारी/ अन्याय और अत्याचार से/ मुक्त होने का/ मार्ग सबल।

कपिलेश भोज ने समीक्ष्य काव्य में विभिन्न दृश्यों और भाव भूमियों के यथार्थ में उतरकर कविता की अंतर्वस्तु की तलाश की है। ये कविताएं अपने समय की समस्याओं के वृतांत प्रस्तुत करती हैं। बहुआयामी फलक की ये कविताएं अपने काव्यात्मक तंतु विन्यास में भी सुगठित हैं। उनमें जनपदीय परिवेश अपनी संपूर्ण सच्चाइयों के साथ मुखरित हुआ है। तथा उनमें ग्राम्य जीवन की एक-एक स्पंदन को अनुभूत किया जा सकता है। उनमें पर्वतीय जीवन की अतीत कालीन स्मृतियां और प्रकृति स्वरूप जिस अंतर्दृष्टिपरक अनुभव के साथ रूपांतरित हुआ है, वह अपने आप में अनूठा है। समीक्ष्य काव्य संग्रह की प्रारंभिक दस बारह कविताओं में तथा कुछ अन्य कविताओं में भी मुखर हुआ है। उनके काव्य अनुभव किस प्रकार वैयक्तिक परिधि से निकलकर सामाजिक जीवन से संपृक्त होकर विश्वदृष्टि का अंग बनते हैं उन्हें कपिलेश भोज की कविताओं से गुजरकर अनुभव किया जा सकता है। जनपदीय परिवेश में रचित इन कविताओं में जीवन का संघर्ष तीव्र, गहन और वास्तविक होकर व्यंजित हुआ है। समीक्ष्य संग्रह की कविताओं की भाषा और रूप विधान में ताज़गी का अहसास होता है परंतु कई कविताओं में कवि ने भाव रूपों को एक ही तरह की शब्द शैली से व्यंजित किया है जिससे कुछ कविताओं में एकरसता और एकरूपता भी परिलक्षित होती है। ऐसा संभवतः इसलिए होता है कि कवि की लेखनी से एक प्रकार के भाव रूपों को व्यंजित करने के लिए एक ही प्रकार की शब्द शैली अनायास ही निःसृत हो जाती है। इसलिए एकरसता और एकरूपता की सीमा की संभावना उत्पन्न होती है। फिर भी सीमित परिधि में रचित इन कविताओं में गहन अनुभवों का विस्तृत फलक है। प्रस्तुत काव्य संग्रह पठनीय है और कविताओं की प्रकाशन की दृष्टि से प्रस्तुति भी आकर्षक है।

बातल-अर्की, जिला सोलन, हिमाचल प्रदेश-173208,
मो. 0 94180 10646

कविता

खजूर का पेड़

● **एल. आर. शर्मा**

किसानों के उस गांव में
एक किसान था मस्त राम
और था एक खजूर का पेड़
दोनों अपनी-अपनी जगह में ऊंचे थे

उस किसान का बेटा
पढ़ाई में श्रेष्ठ निकला
और अफसर बन कर
राजधानी के शानदार वातानुकूलित
दफ्तर में विराजमान हो गया।

गांव में खुशी की लहर
अब दौड़ती थी हर पहर
कि अब होगा गांव का कल्याण
गांव से झुंड के झुंड लोग
उस अफसर के पास जाते
और राजधानी से निराश
खाली हाथ मलते हुए आते।

जब कई बार ऐसा हो चुका तो
मस्त राम को बताया गया
मस्त राम ने गांव के ऊंचे खजूर के पेड़
की ओर इशारा किया, और कहा
"मेरा बेटा खजूर का पेड़ है
बहुत ऊंचा है, फल भी हैं
पर है कमज़ोरों की पहुंच से बाहर
समाज में होते हैं
कुछ खजूर के पेड़
जो छाया नहीं दे सकते
उनकी तसवीरें ही
अच्छी लगती हैं।

42/5, हरिपुर, सुंदर नगर
जिला मंडी, हिमाचल प्रदेश-174 401
मो. 0 94181 00983

समीक्षा

नारी हृदय में ठहरी हुई भावनाओं का चित्रण 'मन का अक्स'

● उषा चौहान

सुशील गौतम द्वारा प्रकाशित काव्य संग्रह 'मन का अक्स' प्रथम संस्करण, 2013, आधुनिक जीवन में एक स्त्री के हृदय में बसने वाली भावनाओं और मस्तिष्क द्वारा ग्रहण कर कागज़ में उतारने वाली कला का एक अनूठा उदाहरण एवं नमूना है। यह एक चौंसठ कविताओं का संग्रह है। नारी का मन अत्यंत कोमल एवं ममतामय होता है। इसका आभास हमें सुशील गौतम की कई रचनाओं को पढ़कर होता है।

'ऐसा शख्स क्यों नहीं?' शीर्षक से रचित कविता में हमारे दैनिक जीवन में मिलने वाले साधारण लोगों का स्वार्थी होना, अपनी सोच को अपने तक ही सीमित रखना एवं दूसरों के प्रति उदासीनता को दर्शाता है। जैसे कि उनकी इस कविता के आखिरी दूसरे पद्य में लिखा है-

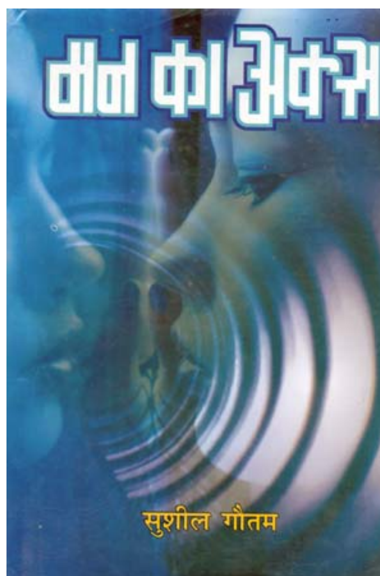
स्वार्थ की चादर में लिपटा
हर इंसान
जाति-पाति के बंधनों में जकड़ा
हर इंसान

हर स्वार्थ से परे, जाति-पाति के बंधन से मुक्त ऐसा शख्स क्यों नहीं? कोई ऐसा शख्स क्यों नहीं?

'मेरा नज़रिया' कविता में कवयित्री ने औरों से भिन्न अपनी पहचान को बनाकर रखने का अच्छा प्रयास किया है। जैसे

शरीर से जुड़ा यह मन
मिटना है शरीर को...
कितना हो मलिन शरीर, मन पावन है, पवित्र है
इस संशय को जानती हूं
मेरा नज़रिया... दुनिया से अलग।

'मां! मैं भी जीना चाहती थी' नामक कविता सरकार द्वारा चलाए गए 'बेटी है अनमोल' अभियान को और सशक्त करती है। 'रूह में बसता है भगवान' कविता में मनुष्य की आत्मा और परमात्मा के एक हो जाने का अनूठा उदाहरण है। जबकि 'बाऊ जी! तुम बहुत याद आते हो', कविता एक बेटी का अपने पिता के प्रति आदर एवं प्रेम की गहराई को प्रकट करता है। 'जिंदगी की वास्तविकता' कर्तव्य परायणता का बोध कराती है। 'बस इतना ही कह पाई' वृद्ध माता-पिता के प्रति नई पीढ़ी की संतान की उदासीनता को दर्शाता है। 'कुछ लोग' कविता ऐसे रिश्तों का चित्र चित्रण करती है जो खून के रिश्तों एवं स्वार्थ के रिश्तों से परे हाते हैं।



'मैं भारतीय नारी हूं' विदेशी नारी की अपेक्षा भारतीय नारी के हृदय के अंदर के साहस की छवि का वर्णन है। 'धिक्कार है तुम पर युधिष्ठिर!' कटाक्ष है पांडवों, भीष्म पितामह और युधिष्ठिर पर। इस कविता में कवयित्री ने युधिष्ठिर को कायर ठहराया है। युधिष्ठिर को कवयित्री ने एक नारी के मन के दृष्टिकोण से खूब धिक्कारा है, जैसे वह लिखती है-

किसने दिया था हक तुम्हें
दाव पर लगाओ
अपनी ही धर्मपत्नी को
क्या इसीलिए लाए थे
तुम पांचों- स्वयंवर में जीत कर उसको?
क्या तुमने तब उससे कहा था कि-
द्रोपदी! मैं तेरा चीरहरण करवाऊंगा
भरी सभा में
धिक्कार है...

'मत बुझाना दीए रोशनी के' कविता जीवन में आशा बनाए रखने की प्रेरणा देती है। 'में जानती हूं' कविता धनवान और निर्धन व्यक्तियों का तुलनात्मक अध्ययन है। निर्धन लोगों की मजबूरी और धनवानों की ऐशपरस्ती का चित्र चित्रण है। जैसे-

मैं जानती हूं-
शरीर तुम्हारा भी अर्धनग्न है
उस भिखारिन की तरह
पर कारण?
तुम्हारा फ़ैशन... उसकी ग़रीबी है

'कोई ऐसा अपना', कविता में कवयित्री मानो किसी ऐसे इनसान की खोज में है जो उसे सचमुच अपना समझे। 'शक- एक ज़हर' कविता में यह आग्रह किया गया है कि मित्रता के बीच कभी भी शक न पनपने पाए।

'शहर की तंग गलियां' कविता उन लोगों का चित्र चित्रण करती है जो सदा लोगों के बारे में गलत बातें करते हैं और दूसरों की निंदा में लगे रहते हैं। जैसे-

पाक साफ़ दामन देखकर
दुनिया जलती है
फेंकती है कीचड़
उछालती है मन का गुबार
दामन को बचाकर रखना संभल-संभल कर...

'अब कहां वो कोरी किताब' जीवन में घटी घटनाओं का लेखा जोखा दर्शाती है। कवयित्री की कविता 'मुझे मुर्दों से नहीं, इनसानों से डर लगता है' ने मुझे बहुत प्रभावित किया है। जैसे-

मुझे मुर्दों से नहीं, इनसानों से डर लगता है
मुर्दा तो निर्जीव
न नफ़रत, न द्वेष, न बैर, न विरोध
कुछ भी तो नहीं- उस निर्जीव में
जबकि सजीव इनसान में-
सब भावनाओं से ओत-प्रोत घृणित-सी
नफ़रत, द्वेष, बैर, विरोध...

यह पद्य इनसानों के अंदर चल रही घटिया सोच और गलत भावनाओं को दर्शाता है

'परिस्थितियां क्या कुछ नहीं करातीं' कविता में दर्द छुपा हुआ है उन लोगों की मृत्यु का जो असमय ही इस संसार से कूच कर जाते हैं। यह कविता बड़ी सुंदरता से यह भी वर्णन करती है कि मनुष्य को जीवन में कभी-कभी समझौते भी करने पड़ते हैं। 'कैसा प्यार? कैसा विश्वास?' कविता में कवयित्री ने अकेले ही संसार के लोगों के कटु शब्द बाण सहने का उल्लेख किया है।

'उज्ज्वल चेहरा दोस्ती का' में कवयित्री ने दोस्ती का सही अर्थ समझाने का प्रयास किया है। कवयित्री ने दोस्ती का चेहरा दर्पण जैसा उज्ज्वल बताया है। अपने-पराए का भेद कवयित्री ने 'अपने-पराए' नामक कविता में दर्शाया है। इस कविता में उन्होंने पराए लोगों की अपेक्षा अपनों को श्रेष्ठ बताने की कोशिश की है। अपनों का जीवन में बहुत महत्त्व है एवं अपनों से हम भावनात्मक तरीके से जुड़े होते हैं, यह कविता यह भी बताती है।

'ज़िंदगी वो नहीं जो दिखती है' में कवयित्री ने मनुष्य के ह्रदय में छुपी पीड़ा को बहुत सुंदर ढंग से प्रस्तुत किया है-

हज़ारों ग़म छुपाए हैं
इस दिल ने... अंदर ही अंदर
चेहरे पे मुस्कान है
सब आभासी है
जिंदगी वो नहीं जो दिखती है

'बस भ्रम! सिर्फ़ भ्रम' एक बहुत ही अच्छी कविता है जिसमें सुशील गौतम ने एक बहुत अच्छा यह संदेश दिया है कि मनुष्य पूरा जीवन भ्रम में जीता है और मृत्यु की सच्चाई को कम ही समझने का प्रयास करता है। 'मेरी आवाज़' में कवयित्री ने शायद अपनी हिम्मत को आजीवन बनाए रखने का संदेश दिया है।

झूठे मित्र मनुष्य को बुरे समय में अकेला छोड़कर चले जाते हैं। इसका वर्णन बहुत संदर पंक्तियों में सुशील गौतम ने किया है अपनी कविता 'हमने पहचान तो की' में। दुनियावालो! क्या यही कसूर किया? में उन मनुष्यों की भावनाओं का वर्णन किया है जो कि अपनों के लिए तो कुछ करते ही हैं परंतु पराए लोगों के लिए भी कुछ अच्छा करने का प्रयास करते हैं।

'नदिया की धारा' एवं 'ज़िंदगी के लम्हे' जीवन में घटी घटनाओं की यादों के महत्त्व को दर्शाती हैं अभागी चिड़िया किसी की स्वतंत्रता को छीनने का परिणाम बताती है। 'भीख' कविता उन नेताओं का चित्र चित्रण है जो राष्ट्र का अहित और मात्र अपने हित के लिए वोट मांगते हैं। 'उनके लिए' कविता में निम्नलिखित पंक्तियां ह्रदय को स्पर्श कर जाती हैं जिनके लिए हम कुछ नहीं कर पाते हैं और उनकी निर्धनता कितनी बड़ी चुनौती है-

भूख से चिपटा है पेट अपनी ही पीठ से
दुनिया भर की खुशी सिमटी है
सिर्फ़ रोटी के टुकड़े में
दूर हैं उनकी ज़िंदगी से
हर तरह की आकांक्षाएं

'क्यूं लगता है नामुमकिन-सा?' संसार में चल रहे सहनशीलता के अभाव को प्रकट करती है। 'जिंदगी परिवर्तन है' कविता में कवयित्री ने जीवन के प्रक्रम एवं बदलाव का वर्णन किया है। किस तरह हमारे मन के भाव हमारे चेहरे पर नज़र आ जाते हैं, इसका वर्णन कवयित्री ने कविता 'उभरती लकीरें' में किया है। 'उड़ान' कविता में कल्पना एवं यथार्थ का सुंदर शब्दों में अंतर बताया है। 'मन का संयम' कविता में यह दर्शाया गया है कि हमें

पुस्तक का नाम :	मन का अक्स (कविता संग्रह)
लेखिका :	सुशील गौतम
प्रकाशक :	अमृत प्रकाशन, 1/5170, लेन नं. 8, बलबीर नगर शाहदरा, दिल्ली-110032
पहला सजिल्द संस्करण :	2013
मूल्य :	200 रुपये

कविता

यादों का अहसास

● मीनल शर्मा

ढूंढती रहती हूं
वो चेहरा जो मेरे
मुस्कराने पर खिला जाता
वो चेहरा जो मेरे
रोने पर मुरझा जाता
वो तालियां जो मेरे
हर कदम पर आवाज देतीं
वो थपकी जो मुझे
फिर से बुलंद करती
वो बांहें जो मेरे सहमें
दिल को समेट लेती
वो बातें जो मेरे फर्ज़
को बताती
वो डांट जो मेरे
व्यक्तित्व को संवारती



वो स्वाद जिसे चखकर
मुझे संतुष्टि आती
ढूंढते ढूंढते
खुद आज एक मां बन गई
पर वो अहसास
आज भी पाना चाहती हूं
मां मैं तुम्हारी बांहों में
सिमटकर, रोना चाहती हूं
जानती हूं जो जहां छोड़ जाते हैं
लौट कर न कभी आते हैं
फिर भी यादों का कारवां लिए
ढूंढती रहती हूं
वो मां का अहसास, वो चेहरा
वो बांहें जिनमें एक बार
मां के लिए, मां की ही बांहों में
सिमट कर रोना चाहती हूं।
सिमट कर रोना चाहती हूं।

प्रवक्ता भूगोल, राजकीय वरिष्ठ माध्यमिक पाठशाला,
बल्देयां, शिमला हिमाचल प्रदेश

अपने मन पर काबू रखना कितना आवश्यक है। समाज द्वारा बनाए गए निमयों का हमें पालन करना चाहिए। 'क्या कसूर था?' कविता में उन बेटियों का वर्णन है जो दहेज की बलि चढ़ जाती हैं या फिर ससुराल में दबाई जाती हैं और बुरे व्यवहार का शिकार बन जाती हैं। 'आधुनिक शिक्षा प्रणाली' कविता में कवयित्री की पूरी-पूरी सहानुभूति बच्चों के साथ है और उनका प्रेम बच्चों के प्रति पूर्ण रूप से झलकता है। 'किसकी तलाश है मुझे' कविता में कवयित्री ने अपनी किसी अच्छे मनुष्य के प्रति खोज का वर्णन किया है। 'मेरे मन की चाह' कवयित्री के मन की कुछ बनने की इच्छा को प्रकट करती है एवं यह वर्णन भी करती है कि यदि मनुष्य के अंदर इच्छाशक्ति की कमी हो तो वह ऊंचाइयों को नहीं छू सकता। 'ममता की छांव' में कवयित्री ने वर्णन किया है अपनी मां से जुड़ी स्मृतियों का। 'मन के रिश्ते' कविता, वर्णन है उन रिश्तों का जो मनुष्य मन से निभाता है। कवयित्री ने इस कविता में ऐसे रिश्तों को श्रेष्ठ माना है जो खून के रिश्तों से बढ़कर होते हैं और जिन्हें मनुष्य मन से निभाता है। 'उसको देखा मैंने' कविता में किसी अपाहिज का दर्द छुपा है। 'ज़िंदगी की वास्तविकता' कर्तव्यपरायणता का बोध कराने वाली कविता है। 'कुदरत की नेमत जिंदगी' जीवन जीने के लायक और एक तरह से ईश्वर की सुंदर देन होना दर्शाती हैं 'टूटता कांच' मनुष्य के मन में चल रहे द्वंद्वों एवं दुनियादारी निभाने वाली भावनाओं को प्रकट करने वाली कविता है। 'कुछ तो है- तुममें' कविता किसी ऐसे व्यक्ति का चित्र चित्रण करती है जो औरों से अलग है और जिसे कवयित्री अपना मानती है और उसके गुणों को पहचानती है।

'मत तोड़ो कलियों को' शीर्षक से कविता करुणा रखने का बोध कराती है और बताती है कि सभी असहाय लोगों या कलियों को भी जीने का हक है और किसी को भी किसी के जीवन को बर्बाद करने का हक नहीं है। 'अजनबी नहीं तो क्या है?' कविता में जीवन के पथ पर चलने वाले उन लोगों का वर्णन है जो बस थोड़े से समय के लिए साथी बनकर साथ चलते हैं और फिर एक दूसरे से अलग हो जाते हैं। 'रिश्ता अनजान' शीर्षक से कविता किसी पेड़ की छाया में बैठे राहगीर और पेड़ के रिश्ते का वर्णन करती है।

'ऐसी बन गई ज़िंदगी' कविता में कवयित्री उन लोगों को भाग्यशाली मानती है जिन्हें जीवन में अच्छे लोगों की संगति प्राप्त होती है। 'मन का अक्स' काव्य संग्रह सुशील गौतम के हृदय में चलने वाली एवं ठहरी हुई भावनाओं का चित्रण है। एक नारी के पारिवारिक एवं समाज के प्रति प्रकट किए गए कर्तव्य, स्नेह, प्रेम एवं क्रोध का बोध है।

प्रधानाचार्य, राजकीय वरिष्ठ माध्यमिक पाठशाला, बल्देयां,
जिला शिमला, हिमाचल प्रदेश

हिमप्रस्थ

वर्ष : 60 जुलाई, 2015 अंक : 4

सम्पादकीय कार्यालयः हि. प्र. प्रिंटिंग प्रेस परिसर, घोड़ा चौकी, शिमला-5

वार्षिक शुल्कः 50 रुपये, एक प्रति : 5 रुपये

E-Mail : himprasthahp@gmail.com
Tell: 0177 2633145, 2830374

ज्ञान सागर

सुखी रहने के लिए खुद को अतिव्यस्त रखो। क्योंकि व्यस्त आदमी के पास दुखी होने का वक्त नहीं होता...।

इस अंक में

लेख

विकास

साक्षात्कार

कहानी

कविता/ग़ज़ल

लघु कथा

समीक्षा

अपनी बात

सृष्टि के अस्तित्व को बनाए रखने के लिए प्रकृति के शाश्वत नियमों का पालन अति आवश्यक है। इन शाश्वत नियमों का उल्लेख हमारे धर्मग्रंथों व साहित्य में मिलता है। इनका अनुसरण कर सदियों से भारतीय समाज ने पर्यावरण के मूल सिद्धांतों को जीवन का हिस्सा बनाया है। आज पृथ्वी पर उपलब्ध प्राकृतिक संसाधनों का बेहतर तरीके से सदुपयोग करने के लिए विकास को पर्यावरण संरक्षण के साथ जोड़ने की आवश्यकता महसूस की जा रही है। विकास की अवधारणा को महज आंकड़ों से ही न आंका जाए, बल्कि इसे पर्यावरणीय संतुलन और प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण के संदर्भ में लिया जाना चाहिए। पर्यावरण की कीमत पर होने वाला विकास अंततः मानवता के लिए ही घातक सिद्ध होगा। वर्तमान में दुनिया की आबादी सात अरब पार कर चुकी है और 2050 तक इसके साढ़े नौ अरब हो जाने का अनुमान है। पृथ्वी पर इस विशाल मानष आबादी को उसकी आवश्यकता के अनुरूप भोजन, पानी, ऊर्जा और अन्य जरूरतों को पूरा करना सबसे बड़ी चुनौती होगी। हमारी धरती का केवल 31 फीसदी भू-भाग ही वनाच्छादित है, और इसका भी बड़ी तेजी से क्षरण हो रहा है। हमारी बढ़ती कृषि एवं औद्योगिक जरूरतें, जनंसख्या वृद्धि, भूमिहीन लोग और तेजी से पनप रही उपभोक्तवादी संस्कृति जैसे अनेक कारक हैं जो जंगलों के रकबे को खत्म कर रहे हैं। हमारी बहुमूल्य वन सम्पदा वायुमंडल में फैली कार्बन डाइऑक्साइड गैस रूपी जहर को अवशोषित कर हमें शुद्ध ऑक्सीजन के रूप में प्राणवायु प्रदान कर रही है। वन न केवल ग्लोबन वार्मिंग एवं जलवायु परिवर्तन के दुष्प्रभावों को कम करते हैं बल्कि इनसे भूमि की उर्वरता बढ़ाने व पर्यावरण संतुलन को बनाए रखने में भी सहायता मिलती है। देश में वनों के अधीन क्षेत्र में वृद्धि कर हरित आवरण को बढ़ाने के लिए वर्ष 1950 में पहले वन महोत्सव के रूप में देशव्यापी शुरुआत हुई थी। देश के तत्कालीन कृषि मंत्री के.एम. मुनशी ने इस महोत्सव के शुभारम्भ पर कहा था, 'वृक्षों ने हमें जीवन दिया, किंतु हमने इनकी पूजा भूला दी। मानव अस्तित्व की रक्षा हेतु वनों की वृद्धि आवश्यक है, इसीलिए देश में वन महोत्सव की शुरुआत की जा रही है।' तदोपरांत देशभर में वन महोत्सव मनाने का सिलसिला बदस्तूर जारी है और वर्षा ऋतु के दौरान राष्ट्रीय व राज्य स्तर पर हर वर्ष समारोहों का आयोजन कर विशेष पौधरोपण अभियान चलाए जाते हैं। इस वर्ष हिमाचल प्रदेश के राज्य स्तरीय वन महोत्सव का शुभारम्भ मुख्यमंत्री श्री वीरभद्र सिंह ने 10 जुलाई, 2015 को शिमला जिले की सुन्नी तहसील के कोटला (थाची) में किया। इस वर्ष प्रदेश भर में लगभग 10 हजार हेक्टेयर भूमि पर पौधरोपण किया जाएगा और इस अवधि में 45 लाख औषधीय पौधे लगाने का लक्ष्य निर्धारित किया गया है। राज्य में पौधरोपण को जन आंदोलन बनाने के उद्देश्य से गत वर्ष वन महोत्सव के दौरान प्रदेशभर के 3000 स्कूलों के 5. 61 लाख बच्चों ने पौधरोपण कर लोगों को पर्यावरण संरक्षण का संदेश दिया। हिमाचल प्रदेश एक ऐसा पहाड़ी राज्य है जो हिमालयी क्षेत्र में पर्यावरण संरक्षण एवं पारिस्थितिकीय संतुलन को बनाए रखने में महत्त्वपूर्ण योगदान दे रहा है। प्रदेश में नब्बे के दशक के प्रारम्भ से ही हरे पेड़ों के कटान पर पूर्ण प्रतिबंध है जिससे राज्य की बहुमूल्य वन सम्पदा के संरक्षण एवं संवर्धन में खूब मदद मिली। पर्यावरण प्रदूषण के रोकथाम उपायों के तहत राज्य में पॉलीथीन के प्रयोग पर पूर्ण प्रतिबंध है। प्रदेश में पर्यावरण संरक्षण की दिशा में किए जा रहे सार्थक प्रयासों का ही परिणाम है कि हिमाचल, कार्बन क्रेडिट प्राप्त करने वाला एशिया का पहला राज्य बना है। प्रदेश में 10 जिलों में कार्यान्वित मध्य हिमालय जलागम विकास परियोजना के अंतर्गत पौधरोपण के माध्यम से कार्बन उत्सर्जन को बेहतर तरीके से नियंत्रित करने के लिए स्पेन सरकार ने हिमाचल को क्योटो प्रोटोकॉल के तहत 1.93 करोड़ रुपये की वित्तीय सहायता की पहली किस्त प्रदान की है। पर्यावरण संरक्षण की दिशा में प्रदेश में किए जा रहे सार्थक प्रयासों के परिणामस्वरूप हिमाचल के हरित आवरण में उत्तरोत्तर वृद्धि दर्ज की जा रही है। इस दिशा में प्रदेश के प्रयासों को सफल बनाने के लिए यह आवश्यक है कि वन महोत्सव जैसे अवसरों पर हम सभी को पौधरोपण में बढ़-चढ़ कर भाग लेना चाहिए। पौधरोपण एवं पर्यावरण संरक्षण जैसे पुनीत कार्यों को हमें अपनी दिनचर्या का अभिन्न अंग बनाकर इसे अपने जीवन में अपनाना होगा ताकि आने वाली पीढ़ियों को प्रदूषणमुक्त पर्यावरण दे सकें।

–सम्पादक

सांस्कृतिक आलेख

कांगड़ी लोकगीतों में फौजी

● रमेश चन्द्र 'मस्ताना'

हिम के आंचल में रसा-बसा और प्राकृतिक-सौंदर्य से परिपूर्ण हिमाचल प्रदेश को देवभूमि के साथ-साथ वीरभूमि के नाम से भी अलंकृत किया गया है। ऊंचे-ऊंचे हिमखंडों के समान अपना मस्तक ऊंचा रखने और गौरवपूर्ण जीवन व्यतीत करने वाले हिमाचली पहाड़ी गबरू दुर्गम एवं कठिन क्षेत्रों में जीवन यापन करते हुए कभी भी अपने माथे पर शिकन तक नहीं आने देते। देश के स्वाधीनता संग्राम से लेकर कारगिल-विजय और अन्य सैन्य अभियानों में हिमाचली वीर सूपतों की शौर्य- गाथाएं आज भी अपनी उज्ज्वल चमक बिखेरती सभी को प्रेरणा एवं प्रोत्साहन प्रदान करती हैं।

हिमाचल की गौरवशाली परम्पराओं विशेष रूप से पुराने कांगड़ा जनपद जिसमें हमीरपुर व ऊना भी सम्मिलित थे, में यह परम्परा रही है कि एक सपूत-बेटा अवश्य ही फौज में भर्ती होकर देश-सेवा करता रहा है। यहां पर कई उदाहरण ऐसे भी हैं, जिनमें परिवार का इकलौता बेटा भी बड़े गर्व एवं मान के साथ फौज में भर्ती होकर देश-सेवा में रह रहा है। आज भी जब कोई वीर सैनिक फौजी वर्दी पहन कर छुट्टी घर आता है तो सभी उसे बड़े आदर-सत्कार के साथ फौज में 'नौकर' कह कर सम्मान देते हुए यही पूछते हैं- "नौकर काह्लू दा आया?" "नौकरे दी छुट्टी कितणी है?" फौजी नौकर के घर आने पर घर व आस पड़ोस के युवकों-वृद्धों के द्वारा फौजी के साथ गपशप-महफिल का दौर प्रारम्भ हो जाता था और फौजी-नौकर भी अपने विभिन्न अनुभवों को एक विशेष भाषा-शैली में जिसमें कुछ-कुछ हिंदी, कुछ-कुछ पहाड़ी और कुछ शब्द अंग्रेजी के भी रहते थे, एक प्रकार की पंचमेल खिचड़ी भाषा का संयोग बनाकर वार्तालाप के द्वारा आनंद का रस परोसा जाता था। ऐसे संवाद से जहां सभी फौज की नौकरी व उससे सम्बंधित कठिन परिस्थितियों को जानते थे, वहां दृढ़ व कठोर कायदे-कानूनों से भी परिचित होते थे। लोगों की दृष्टि में फौज की नौकरी सबसे अधिक सम्माननीय मानी जाती रही है।

संपूर्ण हिमाचल के साथ-साथ कांगड़ा जनपद का इतिहास नौजवान-फौजी-शूरवीरों की शौर्य-गाथाओं से भरा पड़ा है। संपूर्ण स्वाधीनता संग्राम से लेकर वर्तमान तक फौज के लिए विभिन्न नाम लोगों की जुबान पर रहे हैं। आज़ाद हिंद फौज, वीर सैनिक, शूरवीर सेनानी, फौजी सैनिक, शेर-सूरमें, सीमाओं के पहरेदार, सजग प्रहरी, वीर जवान आदि-आदि नामों से भारतीय सेना के जां-बाज फौजियों-सिपाहियों को अभिहित किया जाता है। आज भी कांगड़ा के ऐसे जां-बाज वीर-सैनिकों के पराक्रमी किस्से लोगों की जुबान व इतिहास के पन्नों पर अंकित हैं, जिन्हें सुनकर आश्चर्य भी होता है और रोमांच भी होता है। नूरपुर के वजीर रामसिंह पठानिया ने अपनी चंडी तलवार से सैकड़ों अंग्रेज शत्रुओं पर अकेले ही धावा बोला और लड़ते हुए वीरगति को प्राप्त कर वीरगाथा के नायक बन गए-

"कोई किल्हा पठाणिया जोर लड़्या,
कोई बेटा बजीर दा खूब लड़्या... ।"

चढ़ियार के कैप्टन बख्शी प्रताप सिंह गुरिल्ला लड़ाई में चौदह दिनों तक भूखे लड़ते रहे और 'तमगा-ए-शत्रुनाश' से सम्मानित हुए। नैहरन पुखर-देहरा से मेजर मेहर दास को 'सरदार-ए-जंग' से नवाज़ा गया। देहरा-गोपीपुर से बाबा कांशी राम को नेहरू जी ने 'पहाड़ी गांधी' का खिताब दिया दिया और इन्होंने कविताएं गा-गाकर देश में आज़ादी की अलग जगाई। इन्होंने भगत सिंह, सुखदेव व राजगुरु को फांसी दिए जाने वाले दिन से ही देश को आज़ाद करवाने का संकल्प लिया और काले कपड़े पहनने का प्रण लिया जिसे उन्होंने अपने जीवन के अंतिम क्षणों तक निभाया। इनके अतिरिक्त घुग्घर पालमपुर के पंडित अमरनाथ शर्मा, वंदला टी-स्टेट पालमपुर के कन्हैया लाल बुटेल, के साथ-साथ सोम नाथ शर्मा, रामसिंह ठाकुर, मास्टर मित्रसेन, कर्म सिंह, युद्धवीर कटोच, दुर्गामल थापा, दल बहादुर थापा, पंडित भगतराम शर्मा, हरिराम चौधरी, प्रेम बहादुर गुरंग, शेर बहादुर, थापा आदि-आदि सैकड़ों नामों के साथ-साथ वर्तमान के विक्रम बतरा, सौरभ कालिया, सुधीर वालिया, शैलेश रियालच, मनमोहन सिंह आदि दर्जनों ऐसे नाम हैं जिनके बलिदान एवं सेवाओं पर देश व प्रदेश को अति गौरव है। सन् 1972 में धर्मशाला में बना शहीद स्मारक ऐसे ही



वीर सैनिकों को समर्पित है, जिसमें 1857 के स्वाधीनता संग्राम से 1947 तक के स्वाधीनता सेनानियों के अतिरिक्त 1962, 1965 और 1971 के आक्रमणों में शहीद हुए 1042 शहीदों के नामों की पट्टिकाएं एक आकर्षक फव्वारे के मध्य आज़ादी की लौ की प्रतीक 'म्यूरल' के मध्य में लगाई गई हैं।

कांगड़ा की लोक संस्कृति में जहां देश की सुरक्षा की भावना प्रत्येक फौजी में कूट-कूट कर भरी हुई है वहां यहां का लोक साहित्य और विशेष रूप से लोकगीतों में फौजी नायकों का गुणगान बखूबी मिलता है। मां-दादी के द्वारा अपनी बेटी-पोती के लिए फौजी नायक की मनोकामना करना, फौजियों से सम्बंधित शृंगारिक-संवाद, मिलान-बिछुड़न के प्रसंग, कई-कई महीनों तक फौजी का दूर रहना और घर पर फौजी की पत्नी का वियोग में जीवन बिताना, सास-ननद के तानों को सहना आदि-आदि ऐसे सैकड़ों प्रसंग हैं जिनका वर्णन लोकगीत रचयिताओं ने किया है और आज ऐसे लोकगीत सभी लोकगायकों के कलकंठ से सुरीली आवाज में निकलकर कांगड़ा की वादियों-घाटियों यहां तक कि नदी-खड्डों की जल-तरंगों पर गूंजते-तिरते सुनाई देते हैं। फौजियों की नौकरी के सम्बंध में सभी जानते हैं कि वह वर्ष में केवल एक-दो बार ही घर आ पाते हैं। कुछ ही समय का संयोग और फिर एक लम्बा वियोग तथा साथ ही छुट्टी काट कर जाने वाला नौकर जब इशारों-इशारों में अपनी मजबूरी बतलाता है तो वह नायिका-पत्नी के मन को बुरा लगता है। ऐसे में वह अपनी अन्य सहेलियों-कुड़ियों को फौजी-नौकरी के साथ विवाह न करने तक की नसीहत तक दे डालती है :

"फौजियां-सपाहिआ अड़या रमज़ां ना मार,
रमज़ां ना मार...
बयाह ना करायो कुड़ियो फौजियां दे नाल।
दो म्हीने छुट्टी औन्दे, दस्स महीने बाहर,
दस्स महीने बाहर।
छम्म-छम्म रोवे तिस फौजिए दी नार...।"

फौजी-नायक की रमज़ें-ताह्ने-मीहणें भले ही नायिका को गहरे तक चुभते हैं फिर भी वह अपने फौजी की अगली छुट्टी लेकर घर आने की कामना में दिन काटना शुरू कर देती है। चिट्ठी-पत्री के माध्यम से अपने मन की व्यथा को व्यक्त करती हुई प्रत्येक ऋतु-त्योहार पर अपने फौजी का इंतजार करती है और कई-कई बार दिन लंबी तांहग में गुजार देती है :

"फौजी मेरया ओ ऽ ऽऽ...
छुट्टिया तू आ जा फौजिया
सखियां छेड़दियां ओ ऽऽऽ
घरैं कदूं औणा लोभिया...।"
"दो दिन छुट्टी लेई के
आजा मेरे फौजिया, आई जा मेरे फौजिया
तेरी हां मैं राह तकदी
हो, तेरी हां मैं राह तकदी...।"

नायिका द्वारा पत्र-संदेश के द्वारा घर बुलाना और फौजी-नायक का छुट्टी न मिलने पर उसे अपनी मजबूरी से अवगत करवाने और तसल्ली देने के अनेक संवादात्मक लोकगीत नायिका की विरह व्यथा को उजागर करते दिखाई देते हैं :

"हो नौकरा ऽऽऽ... अम्ब पके घर आ,
के रसें भरीइयां डालियां...
हो गोरिए ऽऽऽ... अम्बां तोड़ी गोदा पा
के परदेसी स्हाड़े मामले....।"
"घर छुट्टिया आई जा ओ ऽऽऽ
मीआ फौजिया साहुकारा...
मेरे खेलण दे दिन दो
जुआनी चार धियाड़े हो ऽऽऽ
मेरा साहब छुट्टी नी दिन्दा
ओ, कांगड़े दीए गोरिए मुटियारे...
तेरे खेलण दे दिन दो
जुआनी चार धियाड़े हो ऽऽऽ...।"

अपनी चार दिन की जवानी का वास्ता देकर फौजी-नायिका अपने फौजी-पति को घर बुलाने का भरसक प्रयास करती है। बड़ी मुश्किल से दो दिन की छुट्टी लेकर जब फौजी घर आता है तो वापसी पर फौजिन-मुटियार अपने सिर का सालू (दुपट्टा) और

गले का हार आदि समर्पित करती हुई मंगल कामनाएं करती है :

"जे तू चलया फौजा नौकरी
हो ऽऽऽ मेरे सिरे दे सालुए लैंदा जायां ऽऽऽ...
हो ऽऽऽ मेरे सिरे दे...
जित्थु लगै तिजो धुप्प ओ छैला ओ ऽऽऽ...
तम्बू तांणी बौहआं ऽऽऽ...
नैणां देया लोभिया ऽऽऽ... ।"

फौजी-जवान के घर छुटट्टी आते ही सभी यही सोचते हैं कि इस बार तो वह अपनी पत्नी को अवश्य ही अपने साथ ले जाएगा। भले ही उसकी जाने की मर्जी हो अथवा न हो :

"फौजी मुण्डा आई गिया छुट्टी
बचारिए लेई जाणी...
लेई जाणी अणपुच्छी
बचारिए लेई जाणी... ।"

एक मां के लिए किसी कमाऊ दामाद की चाहत हमेशा उसके मन में होती है और वह चाहती है कि कोई सुंदर व अच्छी नौकरी वाला पति यदि बेटी को मिल जाए तो उसे और क्या चाहिए! ऐसे में यदि कोई फौजी-नौकरी से बात पक्की हो जाए तो कहना ही क्या? मां अपनी बेटी को अप्रत्यक्ष रूप से इस बात के लिए राजी करती है कि वह किसी भी प्रकार से यदि किसी भी प्रकार से किसी फौजी-नौकरी को दिल में बसाकर स्वीकार कर ले तो मां-बाप के कर्तव्य के साथ-साथ उसका भी जीवन संवर सकता है। एक मां-बेटी का ऐसा संवाद लोकगीत के माध्यम से देखते ही बनता है :

"बाईं पर किल्हिया कियां जांणा अम्मा जी
बाईं पर डेरे फौजियां दे...
छैल़-छैल कपड़े लाणे मेरी गोरिए
दिल परचांणे इन्हां फौजियां दे... ।"

देश पर बाहरी आक्रमण की स्थिति एक ऐसी विभीषिका होती है जिसकी चिंता सभी को सताती है। युद्ध की स्थिति में जहां वीर सैनिक सीमा पर चौकस होकर मोर्चा संभालते हैं वहां सैनिक-परिवारों के घर-बार में मां-बाप व पत्नी हर समय आकुल-व्याकुल रहते हैं।

कांगड़ा की वीर-प्रसू भूमि में तो कई सैनिकों की शौर्य गाथाएं तो ऐसी भी हैं जिसमें फौजी नौकर शादी कर के छुट्टी काटकर घर से गया और सीधा सीमा पर दुश्मन से लोहा लेता शहीद हो गया। ऐसी एक दिल दहला देने वाली शौर्य-शहीद-गाथा कांगड़ा जनपद के इतिहास की है जिसमें सन्साई-चढ़ियार के फौजी युवक द्वारा सरीमोलग-पलेटा की युवती से विवाह किया और धाम वाले दिन ही बुलावा आने पर विदाई ले ली। सुहागरात मनाए बिना ही फौजी घर से गया और 1971 के युद्ध में सीमा पर लड़ता हुआ शहीद होगया। उसी के इस बलिदान को बैजनाथ-पपरोला के शक्ति चंद राणा ने एक गीत के माध्यम से अभिव्यक्ति प्रदान की जो कि बाद में एक लोकगीत ही बन गया-

"लगनां दे बिछड़े हो साथी, लगनां ने मिलदे
हो भागां ने मिलदे...
डालुआं ते टुटयो फुल्ल, फिरि नैइयो खिड़दे
हो फिरि नैइयो खिड़दे...
करै कोई जतन हजार... ।"

आज़ाद हिंद फौज से ले करके वर्तमान तक फौजी-सैनिक वीर सिपाहियों ने एक कौमी गीत को अपने जीवन का आदर्श बनाकर रखा है और हंसते-हंसते प्रसन्नतापूर्वक अपने जीवन की बाजी देश की रक्षा की खातिर हमेशा लगाई है-

"कदम-कदम बढ़ाए जा, खुशी के गीत गाए जा
ये ज़िंदगी है कौम की, तू कौम पे लुटाए जा... ।"

इसी प्रकार विभिन्न गीतकारों, संगीतकारों, कवियों-शायरों ने जहां देशभक्ति की भावना से भरपूर गीत-कविताएं-ग़ज़लें एवं उन्हें संगीत के सुरों में पिरोकर भावात्मक रूप से प्रस्तुत किया है वहां फिल्म-निर्देशकों ने भी फौजी-जवानों के चरित्रों पर तथा देशभक्ति की भावना से ओतप्रोत फिल्मों का निर्माण करके सभी के सामने अनेक आदर्श प्रस्तुत किए हैं। बॉर्डर फिल्म का यह गीत एक चिट्ठी की पृष्ठभूमि में इतना मार्मिक व भावमय बन पड़ा है कि सारी फिल्म में फौजियों की महत्त्वपूर्ण भूमिका के साथ सारे परिदृश्य सार्थक बन गए हैं :



देश की रक्षा का जज़्बा लेकर फौज में भर्ती होना और फिर जल-थल एवं वायु मार्ग की सीमाओं पर एक सजग प्रहरी बनकर दुश्मन को ललकारना प्रत्येक फौजी वीर का कर्तव्य भी होता है और कांगड़ा के वीर-सपूतों ने इस भावना का निर्वहन भी बखूबी किया है। जहां देशभक्ति की भावना के साथ फौज की नौकरी करना गौरव की बात है वहां मोर्चे पर लड़ते हुए दुश्मन सैनिकों के दांत खट्टे करना, उन्हें मारना, भगना जहां महत्त्वपूर्ण है वहां पीठ न दिखाकर चौड़ा सीना तानकर, हंसते-हंसते गोलियों की बौछार को छाती पर झेल कर तिरंगे में लिपट कर शहीदी-अवस्था में घर लौटना कर्तव्य की इतिश्री भी कहलाता है और देश-प्रदेश के साथ-साथ पूरे हिमालय तक को गौरवान्वित कर जाता है। लोक के मानस में फौजी नौकर के प्रति विभिन्न भावनाएं बहुत गहरे तक उतरती हुईं लोक कलाकारों व लोकगीतों रचयिताओं को विभिन्न प्रसंगों पर रचनाएं रचित करने में सहायता भी करती है।

"संदेशे आते हैं, हमें तड़पाते हैं
चिट्ठी आती है, ये पूछे जाती है
कि घर कब आओगे.... ।"

इसी के साथ-साथ लता मंगेशकर द्वारा गाया गया एक गीत जो कि पूर्ण रूप से शहीदों को समर्पित रहा है, इतने भावनामय अंदाज में गाया गया है कि सभी की आंखों में सुनते ही आंसू आ जाते हैं और शहीदी की दूरी पूरी पृष्ठभूमि तथा आगामी पीढ़ी को एक वीर रस व करुण रस मिश्रित संदेश जज्बातों से परिपूर्ण संचारित होता है :

"ऐ मेरे वतन के लोगो, जरा आंख में भर लो पानी
जो शहीद हुए हैं उनकी, जरा याद करो कुर्बानी
तुम भूल न जाओ उनकी इसलिए कही ये कहानी
जो शहीद हुए हैं उनकी... ।"

इस प्रकार से देश की रक्षा का जज़्बा लेकर फौज में भर्ती होना और फिर जल-थल एवं वायु मार्ग की सीमाओं पर एक सजग प्रहरी बनकर दुश्मन को ललकारना प्रत्येक फौजी वीर का कर्तव्य भी होता है और कांगड़ा के वीर-सपूतों ने इस भावना का निर्वहन भी बखूबी किया है। जहां देशभक्ति की भावना के साथ फौज की नौकरी करना गौरव की बात है वहां मोर्चे पर लड़ते हुए दुश्मन के सैनिकों के दांत खट्टे करना, उन्हें मारना, भगना जहां महत्त्वपूर्ण है वहां पीठ न दिखाकर चौड़ा सीना तानकर, हंसते-हंसते गोलियों की बौछार को छाती पर झेल कर तिरंगे में लिपट कर शहीदी-अवस्था में घर लौटना कर्तव्य की इतिश्री भी कहलाता है और देश-प्रदेश के साथ-साथ पूरे हिमालय तक को गौरवान्वित कर जाता है। लोक के मानस में फौजी नौकर के प्रति विभिन्न भावनाएं बहुत गहरे तक उतरती हुईं लोक कलाकारों व लोकगीतों रचयिताओं को विभिन्न प्रसंगों पर रचनाएं रचित करने में सहायता भी करती है। भले ही इस संदर्भ में प्राचीन लोकगीतों के रचयिताओं का कोई नाम व पहचान नहीं मिलती है परंतु लोक गायकों के द्वारा इन्हें सुरीली-रसीली आवाज़ में गाने से और कर्णप्रिय तरंगों के सुनने से बहुत अधिक भावानुभूति एवं आनंद का संचार होता है। भले ही प्रसंग संयोग का हो, वियोग का हो, शृंगारिक सौंदर्य होने के कारण गीत व नृत्य का मिश्रण जब ढोलक-चिमटे की थाप पर गूंजता है तो एक अलौकिक आनंद की अनुभूति होती है। लोकगीतों के माध्यम से ही जबां-दिलो में उमंगे हिलोरे लेती है और भावी जीवन के सपने सुनहला रूप-आकार ग्रहण करते हैं। लोकगीत रचयिता एवं लोक गायक फौजी-नायक-नायिकाओं-दम्पतियों की संयोग-वियोग मिश्रित भावनाओं को इस प्रकार से लोकगीत के बोलों के माध्यम से जोड़ते-गूंथते हैं कि सारा वातावरण ही सहज, सार्थक एवं भावमय बनता जाता है। देश के भीतर चाहे स्थितियां शांतिमय हों, किसी आपदा में आपातकालीन स्थितियां हों अथवा बाहरी शत्रु के आक्रमणकारी होने पर युद्ध की स्थिति हो, फौजी नौकरों की भूमिका हमेशा चुनौतीपूर्ण रहती है तथा कठिन भौगोलिक परिस्थितियों में सेवाएं देने के कारण और घर से अति दूर रहने से इनकी भावनाओं को व्यक्त करने वाले लोकगीत लोक संस्कृति का एक अनूठा अंग रहे हैं। दिल को छूने वाली अभिव्यक्तियों के कारण फौजियों से जुड़े सभी प्रसंग एकदम मार्मिक बन जाते हैं और सभी के हृदय में गहरे तक उतर जाते हैं।

मस्त कुटीर, नेरटी (रैत), जिला कांगड़ा, हिमाचल प्रदेश-176208, मो. 94184 58914

आलेख

श्रेष्ठ शिक्षक है प्रकृति

● सीताराम गुप्ता

गांधी जी ने कहा है कि ये धरती अथवा प्रकृति हमारी आवश्यकताओं को पूर्ण करने में तो सक्षम है लेकिन हमारे लालच को पूर्ण करने में सक्षम नहीं। हमने अपनी लोभवृत्ति व अपरिग्रहवृत्ति के अभाव के कारण धरती व प्रकृति को नष्ट करने में कोई कसर नहीं रख छोड़ी है। हमने प्रकृति का बेतहाशा दोहन तो किया है लेकिन उसके संदेश को जानने-समझने का प्रयास कम ही किया है। यदि मानव जाति व इस धरती को नष्ट होने से बचाना है तो न केवल गांधीजी की बात के मर्म को समझना होगा अपितु प्रकृति के संदेश को भी समझना और आत्मसात करना होगा।

कुछ दिन पूर्व की बात है शहतूत के एक घनी छाँव वाले वृक्ष के नीचे खड़ा था। और भी कई वृक्ष थे आसपास। अलग-अलग प्रजातियों के लेकिन साथ-साथ उगे, पले-बढ़े और खड़े। सबके अपने-अपने अलग-अलग तने थे लेकिन शाखाएँ और पत्तियाँ एक दूसरे से उलझी हुईं। यहाँ उलझी हुईं कहना अधिक उचित प्रतीत नहीं होता क्योंकि वो उलझी हुई नहीं अपितु मिली हुई थीं। वे परस्पर गुत्थमगुत्था नहीं अपितु आपस में गलबहियाँ डाले हुए प्रतीत हो रही थीं। सभी पेड़ों की टहनियों और पत्तों ने पड़ोसी पेड़ों की टहनियों और पत्तों के लिए जैसे जगह सुरक्षित रखी हुई थी, एक स्पेस क्रिएट किया हुआ था। कहीं भी द्वंद्व अथवा प्रतियोगिता दिखलाई नहीं पड़ रही थी।

शहतूत की पत्तियाँ धीरे-धीरे हिल रही थीं। पत्तियों के स्पंदन में स्पष्ट रूप से कोई संगीत तो नहीं सुनाई पड़ रहा था लेकिन उनके हिलने में एक लय और ताल अवश्य दिखलाई पड़ रही थी। साथ ही अनेक प्रकार के जीव-जंतु भी इस शहतूत के वृक्ष की जड़ों, शाखाओं और पत्तियों पर उपस्थित थे। जिज्ञासा हुई कि देखूँ कौन-कौन से जीव-जंतु इस वृक्ष पर मौजूद हैं। लगता था पाँच-सात किस्म के जीव-जंतु तो अवश्य ही उपस्थित होंगे। देखा पेड़ की जड़ों के पास ही थोड़ी दूरी पर कुछ बिल बने थे जहाँ एक बिल के अंदर से एक चूहा कभी बाहर आ रहा था तो कभी अंदर जा रहा था। इस चूहे की कारगुजारियों से बेखबर कुछ गिलहरियाँ इस शहतूत के पेड़ के तने और शाखाओं पर उछल-कूद के साथ-साथ चिक-चिक की आवाज भी निकाल रही थीं।

आवाजों से पता चलता था कि वृक्ष पर कई प्रकार के पक्षी थे जिनमें से कई घने पत्तों में छिपे हुए थे। कुछ तोते थे जो अपने रंग के कारण पत्तों से एकाकार हो जाने के कारण तभी दिखलाई पड़ते थे जब वे टें-टें टें-टें करते थे। एक अपेक्षाकृत मजबूत सी टहनी पर कुछ कौवे विराजमान थे जो अपनी कर्कश आवाज के बावजूद आकर्षक लग रहे थे क्योंकि वो किसी को कोई हानि नहीं पहुँचा रहे थे। इसी दौरान कुछ अपरिचित परिंदे उड़ते हुए आए



और कौवों को वहाँ आराम करते देख उस वृक्ष पर बैठने का मोह त्याग कर वापस हो लिए। उनके हाव-भाव से सम्मान झलकता था और लगता था मानो कह रहे हों कि भाई साहब आप लोग यहाँ पहले ही से आराम कर रहे हैं अतः हम किसी अन्य खाली पेड़ की दूसरी शाख ढूंढ लेंगे। उसके बाद कुछ कबूतर उड़ते हुए आए और एक खाली सी डाल पर बैठ कर वहीं गुटरगूँ- गुटरगूँ का राग अलापने लगे।

परिंदों का कलरव बदस्तूर जारी था। कई प्रजातियों की चिड़ियाँ जो प्रायः देखी जा सकती हैं, अपने-अपने सुर में चहक रही थीं, लेकिन साथ ही कुछ नितांत अपरिचित और कभी-कभार दिखलाई पड़ने वाली प्रवासी चिड़ियाँ भी थीं जो अपने प्रवास के मार्ग में थककर कुछ देर के लिए बैठ गई थीं और अपनी उपस्थिति दर्ज करवाकर पुनः अपने लंबे सफर पर निकलने वाली थीं। वृक्ष की शाखाओं और पत्तों में छुपे अन्य प्रजातियों के कुछ और भी शांत-शर्मीले परिंदे अवश्य होंगे जो होते तो हैं पर दिखलाई कभी नहीं पड़ते। हाँ कई प्रकार के मच्छर-मक्खियाँ व अन्य कीट-पतंग अवश्य अत्यंत मुखर थे और अपने-अपने स्वर रूपी तानपूरों और सारंगियों से सब का ध्यान आकर्षित कर रहे थे। न तो कोई उन्हें उड़ने से रोकने का प्रयास कर रहा था और न ही पेड़ पर बैठने से रोकने का।

इसी दौरान कुछ खूबसूरत व आकर्षक तितलियाँ भी नजाकत से मँडराती हुई आ पहुँचीं। जहाँ तितलियाँ हों वहाँ मधुमक्खियाँ न हों ऐसा हो ही नहीं सकता। मधुमक्खियाँ शहद बनाने के लिए आसपास के पौधों पर लगे फूलों से रस चूस रही थीं लेकिन क्या मजाल कि किसी फूल की पंखुड़ी पर बाल बराबर भी कोई निशान पड़ जाए या उसका सौंदर्य रत्ती भर भी कम हो जाए। तभी अपनी जबरदस्त उपस्थिति दर्ज कराने एक भ्रमर भी वहाँ आ पहुँचा और वह भी लगा पंचम सुर में अपना राग अलापने। वही भ्रमर जो कठोर काष्ट को काट सकता है लेकिन सूर्यास्त के समय कमल के फूल में बंद हो जाने पर फूल की पंखुड़ियों को तनिक भी हानि नहीं पहुँचाता। वह अगले सूर्योदय तक चुपचाप वहीं दम साधे प्रतीक्षा करता रहता है। यहाँ भी उससे किसी अनिष्ट की आशंका नहीं है। हेलिकॉप्टर की तरह उड़ती हुई कुछ बर्रें भी अपने करतब दिखलाने से बाज नहीं आ रही थीं। सब अपनी-अपनी धुन में मस्त थे। कोई किसी की राह का रोड़ा नहीं बन रहा था, किसी का रास्ता नहीं काट रहा था और न ही कोई किसी से टकरा रहा था। लगता था सबकी उड़ान के मार्ग पूरी तरह से व्यवस्थित, निश्चित और नियंत्रित थे।

प्रकृति में जीव-जंतु भी एक दूसरे का भोजन बनते हैं लेकिन फिर भी गजब का सहअस्तित्व है इनमें। बिना पर्याप्त कारण के कोई किसी को नहीं सताता। कोई किसी के काम में बाधा नहीं डालता। एक ही जीव की विभिन्न प्रजातियों में ही नहीं जानवरों और पक्षियों में भी पूर्ण सामंजस्य है। जानवरों व पक्षियों में ही नहीं जंतु-जगत व वनस्पति-जगत में भी कोई आपसी वैमनस्य नहीं। पूर्ण सौमनस्य व संतुलन है। इसी सौमनस्य व संतुलन के कारण धरती पर जैव-विविधता का अस्तित्व बना हुआ है और इसी जैव-विविधता के कारण मनुष्य का अस्तित्व है। लेकिन मनुष्य?

पेड़ के तने के कुछ निकट गया तो पाया कि वहाँ भी असंख्य चींटियाँ ऊपर-नीचे आ-जा रही थीं। एक ही तरह की नहीं कई तरह की चींटियाँ वहाँ देखी जा सकती थीं। कुछ इतनी छोटी थीं कि मुश्किल से नजर आ रही थीं जबकि कुछ बड़ी-बड़ी व मोटी-ताजी नजर आ रही थीं। लग रहा था कि सभी बहुत व्यस्त हैं लेकिन कोई किसी के लिए बाधक नहीं। सब अपने-अपने तयशुदा रास्तों पर ही आ-जा रही थीं। चींटियाँ ही क्यों अन्य सभी जीव-जन्तु भी जैसे अपने-अपने कामों में इतने व्यस्त नजर आ रहे थे कि मानो उन्हें दूसरों के कामों में दखल देने की फुर्सत व आदत ही न हो। न तो चींटियाँ ही एक दूसरी प्रजाति के कार्य में बाधा डाल रही थीं और न अन्य जीव-जंतु ही। चूहे अथवा गिलहरियाँ भी न तो पक्षियों से ही परेशान थीं और न चींटियों अथवा अन्य कीट-पतंगों से। यद्यपि प्रवासी पक्षियों को जल्दी ही अपने अगले सफर पर निकल जाना था इसके बावजूद वो ऐसा व्यवहार कर रहे थे मानों इसी पेड़ और परिवेश के साथ पैदा हुए हों। स्थानीय पक्षी भी न तो किसी भी तरह से इन मेहमानों की उपेक्षा ही कर रहे थे और न उनसे बेचैन अथवा भयभीत दिखलाई पड़ रहे थे।

कुछ दूरी पर अन्य अनेक वृक्ष भी दृष्टिगोचर हो रहे हैं। उस कोने पर चुपचाप खड़े वृक्ष को देखिए। सारा बदन जैसे नए-पुराने जख्मों से भरा है। पुराने जख्म अभी पूरी तरह से भरे भी नहीं हैं और नए जख्मों से जैसे कुछ ताजा-ताजा रिस सा रहा है। उसके क्षत-विक्षत तने को देखकर लगता है कि अभी-अभी किसी युद्ध के मैदान से लौटा है। रास्ते के नजदीक होने के कारण जो भी इसके पास से गुजरता है वही जो हाथ में हो इसके तने पर दे मारता है। बच्चे इसकी टहनियों को तोड़ते-मरोड़ते रहते हैं। पत्तों को नोचते रहते हैं। तने पर खरोंचें मारते रहते हैं। कितना ऊबड़- खाबड़ हो गया है इसका तना! कितनी शुष्क व नीरस हो गई है इसकी छाल! कितनी बेडौल हो गई है समस्त रूपाकृति! इस पर भी पतझड़ में यह अपने बचे-खुचे

पर्यावरण-पौधरोपण

● दिलीप भाटिया

इस समय स्कूलों में प्रवेशोत्सव के समय बच्चों से पौधरोपण करवाकर पर्यावरण के प्रति कथनी और करनी वाली शिक्षा का पहला पाठ पढ़ाया जा सकता है। मानसून में पौधे पनप भी जाएंगे, स्कूल परिसर में हरियाली का प्रवेश भी होगा एवं प्रकृति का महत्त्व भी बच्चों को समझ में आएगा। भूतपूर्व संस्था प्रधानों ने जो पौधे लगाए थे, उन पेड़ों की छांह में आज बच्चे खेलते-कूदते हैं। जिन स्कूलों में भवन नहीं हैं, वहां उन पेड़ों के नीचे ही पढ़ते भी हैं। भविष्य के बच्चों के लिए सरकार, समाज, भामाशाह स्कूल भवन बनवा पाएंगे या नहीं, यह प्रश्न अनुत्तरित है। पर हां, भविष्य के उन बच्चों को वर्तमान के बच्चे पौधरोपण कर एक पेड़ का अनमोहल उपहार तो दे ही सकते हैं। इसके लिए सरकार एवं भामाशाहों से प्रार्थना करने की कहां आवश्यकता है?



372/201, न्यू मार्किट, रावतभाटा,
राजस्थान-323307, मो. 94615 91498

सारे पत्ते गिराकर पुनः नव पल्लव धारण कर हमें आनंदित करने से नहीं चूकता। समय पर फूलता व फलता है। मनुष्य व जीव-जंतु सबको पुनः अपने आकर्षण में बाँध लेता है। किसी से वैरभाव नहीं रखता। किसी की शिकायत नहीं करता। किसी की उपेक्षा नहीं करता। चीखना- चिल्लाना तो दूर कराहता तक नहीं। हमेशा शांत-स्थिर ही बना रहता है। क्या हम भी ऐसा ही करते हैं?

यद्यपि प्रकृति में जीव-जंतु भी एक दूसरे का भोजन बनते हैं लेकिन फिर भी गजब का सहअस्तित्व है इनमें। बिना पर्याप्त कारण के कोई किसी को नहीं सताता। कोई किसी के काम में बाधा नहीं डालता। एक ही जीव की विभिन्न प्रजातियों में ही नहीं जानवरों और पक्षियों में भी पूर्ण सामंजस्य है। जानवरों व पक्षियों में ही नहीं जंतु-जगत व वनस्पति-जगत में भी कोई आपसी वैमनस्य नहीं। पूर्ण सौमनस्य व संतुलन है। इसी सौमनस्य व संतुलन के कारण धरती पर जैव-विविधता का अस्तित्व बना हुआ है और इसी जैव-विविधता के कारण मनुष्य का अस्तित्व है। लेकिन मनुष्य? मनुष्य न केवल पर्यावरण प्रदूषण बढ़ाकर जैव-विविधता को नष्ट करने पर तुला हुआ है, अपने पैरों पर खुद कुल्हाड़ी मार रहा है अपितु अपनी स्वयं की प्रजाति से भी उसका व्यवहार ठीक नहीं है।

सारी दुनिया के मनुष्य एक ही प्रजाति के हैं लेकिन कहीं धर्म के नाम पर तो कहीं जाति के नाम पर एक दूसरे पर अत्याचार करने, एक दूसरे को नीचा दिखाने से बाज नहीं आते। कहीं रंगभेद व्याप्त है तो कहीं क्षेत्रीयता। एक ही धर्म के विभिन्न संप्रदाय एक दूसरे के खून के प्यासे बने रहते हैं। अमीर गरीब का सहारा बनने, उसकी मदद करने की बजाय उसका जम कर शोषण कर रहा है। समाज के विभिन्न वर्ग एक दूसरे को ऊपर उठाने की बजाय उन्हें नीचे गिराने में ज्यादा दिलचस्पी लेते प्रतीत हैं। शोषण ही नहीं पाखण्ड और हिंसा भी सर्वत्र व्याप्त है। बलात्कार जैसा जघन्य अपराध करते और बलात्कारियों की पैरवी करते हमें शर्म नहीं आती।

देश और समाज की छोड़िए एक घर के अंदर भी विभिन्न सदस्यों के शोषण की प्रक्रिया निरंतर बनी रहती है। लिंगभेद के रूप में कन्याभ्रूण हत्या अथवा महिलाओं के अधिकारों का हनन आम बात है। क्या हम मनुष्य प्रकृति से कुछ भी नहीं सीख सकते जहाँ हर प्राणी दूसरों को कष्ट पहुँचाए बिना आसानी से अपना भरण-पोषण करने में सक्षम है? प्रकृति हमारी सबसे अच्छी शिक्षक है अतः प्रकृति के संदेश को आत्मसात करना न केवल उत्तम है अपितु हमारे हित में भी है। हमें खुद के लिए ही नहीं औरों के लिए भी सम्मानपूर्वक जीवन व्यतीत करने के लिए अपेक्षित परिस्थितियों के निर्माण में सहायक बनना चाहिए।

ए.डी.-106-सी, पीतमपुरा,
दिल्ली-110034, मो. 09555622323

जीवन-दर्शन

सुख की तलाश

● गोपाल जी गुप्त

अनादि अनंत काल से मानव मन सुख, प्रसन्नता, आनंद की तलाश में भटक रहा है किन्तु कुछेक विरलों को ही आनंद, सुख की प्राप्ति हो सकी। वस्तुतः मनुष्य मन यह जान ही नहीं पाया कि सुख है क्या? अधिसंख्य मनुष्य प्रसिद्धि, धन सम्पदा, रोटी कपड़ा मकान की उपलब्धि, सफल व्यवसाय आदि को सुख का मानदंड मानते हैं किंतु हार्वर्ड विश्वविद्यालय, मेलबोर्न के व्यावहारिक अर्थशास्त्र एवं सामाजिक अनुसंधान संस्थान के विस्तृत अध्ययन एवं अनुंसधान से यह सिद्ध हुआ है कि ये उपलब्धियां सुख या प्रसन्नता का पैमाना नहीं हैं क्योंकि इन्हें पाने वाला व्यक्ति भी कुंठा, अवसाद, निराशा आदि से ग्रस्त होता है।

यूं तो लोग सुख, प्रसन्नता, आनंद को पर्यायवाची मानते हैं जबकि ऐसा नहीं है। चिंतकों, विचारकों, दार्शनिकों ने इन तीनों को विश्लेषित कर इस बात को सिद्ध किया है। समाज शास्त्री किसी मनुष्य के पूरे जीवन के समग्र गुणों के एक निश्चित अंश के मूल्यांकन को सुख मानते हैं। किंतु यह मान्यता एकांगी है क्योंकि मनुष्य के रमणीय संवेदनात्मक अनुभूतियों के क्षणों को कोई महत्त्व नहीं मिलता और यह उसके सम्पूर्ण जीवन को समेटता है। तमिल विचारक बी.पी. आर. विट्ठल ने 'सुख की सीमाएं' नामक अपने आलेख में सुख, आनंद तथा वेदना के बीच सम्बंध प्रदर्शित करते हुए लिखा है कि सुख का उद्गम ऐंद्रिक एवं मानसिक है। कुछ सुख को आनंद के समान, कुछ आनंद और वेदना को सुख के समतुल्य देखते हैं जबकि वेदना में कमी का परिणाम सुख के परोक्ष वृद्धि का द्योतक है। इसी प्रकार आनंद तथा सुख का सम्बंध भी कम जटिल नहीं है। प्रत्येक आनंद भी समान रूप से सुख का द्योतक नहीं। कुछ नैतिक, सामाजिक-मानदंडों के गहन मामलों में आनंद वेदना, अप्रसन्नता का कारक बन सकता है। अतः किस सीमा तक आनंद का परिणाम सुख होगा। यह भोक्ता के सामाजिक, मनोवैज्ञानिक एवं नैतिक आधार पर निर्भर करता है। सुख का प्रत्यक्ष सम्बंध मनुष्य की क्रिया-कलापों से भी होता है। अतएव इसके आकलन में आंतरिक और बाह्य क्रिया-कलापों की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। प्रो. डेनियल गिल्बर्ट ने अपनी पुस्तक 'स्टम्बलिंग ऑफ हैप्पीनेस' में सुख का सम्बंध तीन तत्वों- नैतिकता, भावनात्मकता, निर्णयात्मकता से जोड़ते हुए कहा है कि इनमें भावनात्मकता सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है। उल्लेखनीय है कि प्रत्येक मनुष्य के मामले में भावनात्मकता अलग-अलग होती है, इसी प्रकार निर्णयात्मकता तथा नैतिकता भी परिस्थित्यानुसार भिन्न-भिन्न होती है। अतः इनका सार्वभौमिक, सर्वग्राह्य मानदंड निर्धारण असंभव है। इसी प्रकार सुख की भी सार्वभौम परिभाषा नहीं दी जा सकती। क्योंकि सुख एक अनुभूति है जो प्रत्येक के मामले में अलग-अलग होती है। एक ही कार्य व वस्तु किसी के लिए सुख उत्सर्जक तो किसी के लिए वेदनामूलक हो सकती है।

सुख की ही तरह प्रसन्नता की मनोवैज्ञानिक, अनुभूतिजन्य भावना है। मनुष्य को उसकी इच्छा, कामनापूर्ति पर प्रसन्नता होती है अपूर्ति पर वेदना। मनोवैज्ञानिकों के अनुसार शारीरिक तथा मानसिक भावनाओं ईर्ष्या, द्वेष, द्वंद्व आदि को नियंत्रित करने से प्रसन्नता होती है। इनका नियंत्रण योग, ध्यान, क्षमाभाव द्वारा सम्भव है। इसके लिए पांच सूत्रों- आध्यात्मिक शक्तियों पर आस्था-विश्वास, सद्भाव, व्यस्तता, सकारात्मक विचार, लक्ष्य निर्धारण का प्रयोग किया जा सकता है। सकारात्मक विचार के लाभप्रद परिणाम प्रमाणित हो चुके हैं : बेलिंग्टन कॉलेज (लंदन) के डॉ. एन्थोनी सेल्डन कहते हैं कि कुशाग्र छात्र तेज रफ्तार जिंदगी को प्रसन्नता मानते हैं फिर भी वे कुंठित रहते हैं क्योंकि वे नकारात्मक विचार पर नियंत्रण नहीं रख पाते। सकारात्मक विचार सफलता की कुंजी है। शापेन होवर के अनुसार पीड़ा तथा बोरियत प्रसन्नता के शत्रु हैं। बर्ट्रेण्ड रसेल आशावादिता व परिश्रम को प्रसन्नता की पहली सीढ़ी मानते हुए अप्रसन्नता को आशावादिता द्वारा दूर करने की बात करते हैं। अर्थशास्त्री जे.एस. मिल प्रसन्नता को सामूहिक दृष्टिकोण से सम्बंधित करते हुए किसी भी व्यक्ति की प्रसन्नता को एकल से अलग नहीं मानते। उनके लिए सामूहिक प्रसन्नता ही एकल प्रसन्नता का निर्धारण है। दलाई लामा प्रसन्नता के स्रोत को मनुष्य के मन में अवगुंठित भाव मानते हैं तथा इसकी तलाश बाहर करना व्यर्थ का प्रयास कहते हैं :

इस तरह देखें तो प्रसन्नता-अप्रसन्नता, उपलब्धि, सफलता-असफलता में आपसी सहसम्बंध दृष्टिगोचित होता है। मानव जीवन में अनेक जटिलताएं, सीमाएं, विवशताएं आती हैं जिनमें घिर कर वह इन संवेगों की अनुभूति करता है। प्रसन्नता क्षणिक, तात्कालिक, दीर्घ, दैहिक, मानसिक, आध्यात्मिक कुछ भी हो सकती है जो मानवीय अपेक्षाओं, क्रिया-कलापों, प्रयास, संघर्ष, श्रम, निष्ठा, त्याग, आदि पर आधृत होती है और यह कहना कठिन है कि किस कारण, किस सीमा तक कोई व्यक्ति प्रसन्नता की अनुभूति कर सकता है।

आनंद भी मानसिक, भौतिक, आत्मिक, आध्यात्मिक होता है। चार्वाक की दृष्टि में मात्र दैहिक आनंद ही महत्त्वपूर्ण है क्योंकि उसकी मान्यता थी ऋणं कृत्वाकृतं पीवेत। दार्शनिकों के अनुसार आनंद अखंड, अनंत होता है और यही जीवन का चरम ध्येय है। आनंद असीम, चिरयुवा होता है। अक्षय सौंदर्य के भीतर-ही-भीतर अनुभवकर्ता सदा आनंदमग्न रहता है। आत्मानंद इसी भाव की ओर संकेत करता है। यही सच्चिदानंद प्राप्ति की स्थिति है। प्रकृति शास्त्रियों के लिए प्रकृति का सौंदर्य कभी फीका नहीं पड़ता वह चिरयौवना, चिर-सुंदरी है। उसके जीवन का शृंगार निरंतर प्रतिपल होता है। वह अक्षय अनंत भंडार की स्वामिनी होती है अतः उसमें आनंददायक मादकता का दर्शन होता है। इस चिर- नवीन, अक्षय सौंदर्य को अंतर्मन में अनुभूति करने वाला आनंद में मस्त, नर्तन करता है। न्यूरोलॉजिस्टों का कथन है जब मनुष्य सुख, हर्ष, विषाद, प्रसन्नता, आनंद से परे होता है तब उसकी शारीरिक क्रियाएं सामान्य रहती हैं किंतु उपर्युक्त संवेगी स्थितियों में शरीर के हार्मोन बदलने से उसे इनकी अनुभूति होती है। आनंदप्रद क्षणों में उसके शरीर में एंडार्फिन व सेरोटोनिम हार्मोन बहने लगता है और उसे मानसिक आनंदानुभूति होती है।

दार्शनिकों के अनुसार आनंद अखंड, अनंत होता है और यही जीवन का चरम धयेय है। आनंद असीम, चिरयुवा होता है। अक्षय सौंदर्य के भीतर-ही-भीतर अनुभवकर्ता सदा आनंदमग्न रहता है। आत्मानंद इसी भाव की ओर संकेत करता है। यही सच्चिदानंद प्राप्ति की स्थिति है। प्रकृति शास्त्रियों के लिए प्रकृति का सौंदर्य कभी फीका नहीं पड़ता वह चिरयौवना, चिर-सुंदरी है। उसके जीवन का शृंगार निरंतर प्रतिपल होता है। वह अक्षय अनंत भंडार की स्वामिनी होती है अतः उसमें आनंददायक मादकता का दर्शन होता है। इस चिर-नवीन, अक्षय सौंदर्य को अंतर्मन में अनुभूति करने वाला आनंद में मस्त, नर्तन करता है।

यद्यपि आज स्थितियां ऐसी हैं कि जिंदगी दिनोदिन बोझिल हो रही है तथापि यह मनुष्य की जिजीविषा ही है जो वह टूटने से बचा है और वह इन्हीं विषय परिस्थितियों में सुख की तलाश में भटकता रहता है। इनसे बचने के लिए उसे सकारात्मकता का अभ्यास करना ही श्रेयस्कर है।

सकारात्मक विचार सफलता की कुंजी है

मनोविज्ञान कहता है कि सकारात्मकता सफलता के साथ अच्छे स्वास्थ्य के लिए महत्त्वपूर्ण घटक है। मनोवैज्ञानिक जेम्स एलेन इसे स्पष्ट करते हुए कहते हैं कि मन एक ऐसे खेत की तरह है जिसमें सकारात्मक या नकारात्मक जैसा बीज डाला जाता है वैसी ही अच्छी या बुरी फसल उगती है जिससे ही मनुष्य की सदाचार या कदाचार की प्रकृति बनती है। मार्क्स के अनुसार मानव मन का एक अवचेतन भाग होता है। ज्यों ही मनुष्य कुछ सोचता है और उसके मन में कोई विचार जन्मता है तो अवचेतन मन तुरंत मस्तिष्क को आदेश देता है, तुरंत मस्तिष्क की कोशिकाएं (न्यूरोस) सक्रिय हो विचार को कार्यरूप में बदलने लगती हैं। अवचेतन मन द्वारा विचार मस्तिष्क में जाते ही मन हार्मोन का उत्सर्जन करता है- सकारात्मक में लाभप्रद नकारात्मक में ऋणात्मक हानिप्रद हार्मोन्स। गीता में अर्जुन ने कृष्ण से कहा कि मन चंचल होता है जिसमें विचारों का द्वंद्व चलता है तब कृष्ण ने कहा कि मनुष्य के लिए शक्य है कि वह स्वयं पर नियंत्रण रखने का प्रयास करे। इससे नकारात्मक विचार का निरोध होगा।

कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय के भाषाविद् जॉन ग्रेंडर तथा कम्प्यूटर विशेषज्ञ रिचर्ड वेंडलर ने मिलकर न्यूरोलिंग्विस्ट प्रोग्राम बनाया तथा कहा कि सुख-दुख, शांति-अशांति, सफलता-असफलता आदि मनुष्य के आस्था-विश्वास पर निर्भर है यदि वह मन में दृढ़ आस्था जगा ले तो उसके जीवन में सफलता, सुख, शांति, निरोगता आती है। यद्यपि यह मान लेना कि उसे कभी दुःख, अशांति या असफलता या व्याधि का सामना नहीं करना होगा, भ्रामक है तथापि उसे नकारात्मक भाव वाले मनुष्य की तुलना में कम संताप सहना पड़ता है। यदि वह रोगी होता है तो घबराता नहीं बल्कि स्वाभाविक प्राकृतिक प्रक्रिया मान उसका सामना करता है, वह हताश न हीं होता उसके मन में दुर्बलता नहीं आती। आयुर्वेद में कहा गया है कि चिकित्सक में आस्था रखने वाला रोगी शीघ्र रोगमुक्त हो जाता है किंतु आस्थाहीन अच्छी औषधि के बावजूद शीघ्र निरोगी नहीं होता।

इसी से कहा गया है कि सकारात्मक विचार सफलता की कुंजी हैं।

'प्रेमांगन', एम.आई.जी.-292, कैलास विहार, आवास
विकास योजना संख्या #1, कल्याणपुर, कानपुर,
उत्तर प्रदेश-208 017, दूरभाष: 0512 2571795

आलेख

कांगड़ा के लोक साहित्य में ऋतु गीत

● हरिकृष्ण 'मुरारी'

(गतांक से आगे)

कांगड़ा घाटी की यह रल़ी पूजन परम्परा भले ही अब सिमटती हुई दिखाई दे रही है फिर भी उचित, उपयुक्त एवं अपनी आयु से बड़ा वर प्राप्त करने की परम्परा से जुड़ा हुआ यह लोक-पर्व एक ऐसे विश्वास के प्रतीक रूप में देखा जा सकता है, जिसमें जवान होती हुई लड़कियों का भविष्य सहजता के साथ झांकता हुआ दिखाई देता है। चैत मास के सुहावने मौसम की प्रातः के शुभ मुहूर्त्त में जब सभी लोग सुखमय निद्रा का आनन्द ले रहे होते हैं, कांगड़ा की घाटियां रल़ी-पूजन के लोकगीतों से गूंजती सुनाई पड़ती हैं। सुबह-शाम रल़ी-पूजन परम्परा से घर-आंगन चहकता-महकता दिखाई देता है और वैसाख मास के प्रारम्भिक दिनों में खड्डों अथवा नदियों के किनारे लगने वाले मेलों में एक मनमोहक सौन्दर्य दिखाई देता है। रल़ी पूजन के इस सहज सौन्दर्य के बीच जहां कांगड़ा घाटी का सम्पूर्ण लोकमानस आनन्दित होता दिखाई देता है, वहां ग्रामीण परिवेश की नव यौवनाएं भविष्य के सुन्दर एवं सुखद स्वप्न संजोती हुई दिखाई देती हैं।

वैसे तो वर्ष भर प्रत्येक ऋतु में ऋतु-गीत गूंजते रहे हैं। कुछ विशेष दिन होते हैं, जिनमें यह गीत सुनाई देते हैं। समय-प्रवाह के साथ धीरे-धीरे कई ऐसे गीत प्रायः लुप्त हो रहे हैं। फिर भी इन गीतों का अथाह समुद्र है। इसमें काफी लोगों ने डुबकी लगाकर काफी मोती संजो लिए हैं। छोटी सी डुबकी मैंने भी लगाई जिससे इन्हें संजोने का आंशिक प्रयास कर पाया हूं।

गर्मियों के बाद बरसात ऋतु आती है। यह ऋतु आषाढ़, (हाड़) सावन (सौण) तथा भाद्रपद (भादों अथवा काला म्हीना) तीन माह तक रहती है। परन्तु पर्यावरण संतुलन के बिगड़ते परिवेश से इन सभी ऋतुओं पर विशेष प्रभाव पड़ रहा है।

बिगड़ा दा सम्हाल़ इसियो,
सोचा सब पटाके ने।
दुआ-दारूएं किछ नी करना,
पौणी पीड़ चणाके ने
नी लुभणा कोई चिड़ू-पखेरू
बरह्ी बरखा हणाटे ने
निम्बल लुभण पर 'मुरारी'
पौणी बिज्ज गड़ाके ने।

ज्येष्ठ मास के आखिरी आठ दिन तथा आषाढ़ महीने के प्रारम्भिक आठ दिन खेत तैयार करने के लिए तथा फसल बीजने के लिए महत्त्वपूर्ण माने जाते हैं। यह समय उप-ऋतु मिरग-सनाइयों का होता है। तपती गर्मी के कारण पानी के सभी स्रोत सूखने लगते हैं। इस समय में कृषक वर्ग अपने खेतों को सुबह-शाम जोतना शुरू कर देता है। जिससे खरपतवार उखड़ कर मिट्टी के ऊपर आ जाती है तथा गर्मी से जल कर नष्ट हो जाती है। इन दिनों दो-चार वारिशें हो जाएं तो वह फसल के लिए लाभदायक होती हैं। इसका फायदा उठाकर कृषक अपने-अपने खेतों में धान और मक्की की फसल बीज देते हैं। इसके उपरान्त तीर आते हैं। मिरग-सनाइयों में बीजी गई फसलें उग आती हैं तथा बढ़नी शुरू हो जाती हैं। इन्हीं दिनों धान की पनीरी को उखाड़ कर ऊर लगाते हैं तथा दूसरी विधियों द्वारा मच्च तथा बत्तर आदि से धान के पौधों को लगाया जाता है। इन्हीं दिनों मक्की की गोडाई भी की जाती है।

अब तो ऐसा बहुत ही कम देखने को मिल रहा है.......... आज से 35-40 वर्ष पूर्व जब ऊर या मच्च करके धान के पौधे लगाए जाते थे तो पुरुष हल-बैल से खेत बनाते थे और स्त्रियां ऊर अथवा मच्च में धान के पौधे लगाती थीं। खेत पानी से भरे होते थे। उनमें अपने हिसाब से धान के पौधों को लगाया जाता था।

उन दिनों जुआरी देते व लेते थे अर्थात आज अमुक किसान अपने खेतों में धान लगाना चाहता है या मक्की की गोडाई करवाना चाहता है तो वह अपने आस-पड़ोसियों को काम करने के लिए बुला लेता है। इसमें मजदूरी अथवा दिहाड़ी नहीं दी जाती

है। जो परिवार जुआरी के लिए बुलाता है,वह उन्हें रोटी-चाय बगैरा समय-समय पर देता है/खिलाता-पिलाता है। इसी प्रकार जुआरी देने वालों को जब काम पड़ता है तो वह उन्हें बुला लेते हैं, जिनके यहां उन्होंने जुआरी दी थी।

जब एक खेत में 10-12 महिलाएं जुआरी दे रही होती हैं तो वे कई प्रकार के लोक गीत भी इकट्ठी मिलकर गाती हैं, जैसे :-

राजे दिए बेटिए.......
ओ सौकणी तूं मेरिए.........
तिज्जो पर डुल्ली वो गिया.. ऽऽ
ओ मियां जसरोटिया ऽऽऽऽ।
इसी प्रकार :-
चम्बैं पत्तणे जानी दो बेड़ियां,
जानी दो बेड़ियां - 2
भला ओ मल्लाह्इया ओ ऽऽऽऽ
पैह्लड़ैं जानी पैह्लड़ैं पूरैं लंघाई दे.....।

सावन महीने का यहां के लोक में विशेष महत्व रहा है। इस महीने आम भरपूर मात्रा में पकते हैं और जगह-जगह वट, पीपल तथा अन्य मजबूत वृक्षों पर बौंटलू (बारीक बांस की प्रजाति का नाम) के डण्डों से झूले डाले जाते हैं। इस महीने सभी छोटे-बड़े, युवा बूढ़े झूला झूलते हैं तथा इसे शुभ माना जाता हैं। इन दिनों लोग कई प्रकार के सुरीले गीत गाते थे, जिनसे वातावरण संगीतमय हो जाया करता था।

जब हमारे देश का बंटवारा नहीं हुआ था। उस समय हिन्दू और मुस्लिम समुदाय के सभी लोग बड़े ही आपसी प्रेमभाव में रहते थे। उस समय इस क्षेत्र के मुस्लिम समुदाय में मरासी हुआ करते थे, जो संगीत विद्या के अच्छे जानकार थे। वह शास्त्रीय संगीत से ओत-प्रोत पहाड़ी लोकगीत गाया करते थे। बुजुर्ग बताते हैं कि जब वह पहाड़ी में मेघ-मल्हार राग छेड़ते थे, तो साफ आसमान में बादल छाने लगते थे और देखते ही देखते बरसने शुरू हो जाते थे। वह इस समय कृष्ण और राधा के विरह प्रेम से भरपूर श्रृंगारिक लोक गीतों को भी गाकर सुनाया करते थे।

इन दिनों विरह-बेदना, के गीत जिनमें बारहमासा, सत्तमासा, छःमासा (छमाह्ड़ी) आदि गीतों से वातावरण गूंज उठता है। यही गीत सावन के महीने में भी गाए जाते हैं। छमाह्ड़ियों के कुछ रूप यहां प्रस्तुत हैं, जिन्हें मेरी नानी सुनाया करती थी। इस प्रकार के पांच छमाहड़ी गीत प्रस्तुत हैं। यह गीत विरह-वेदना से भरपूर श्रृंगारिक गीत हैं।

नायिका अपने पति की विरह में अपने मन की उदासी इस प्रकार प्रकट करती हुई गाती है :-

1.

मीह्ना चैत्र अय्या-मीह्ना चैत्र अय्या,
फुल्ल फल्ली रिह्यो आं...ऽऽऽऽ-2
नि मेरे फुल्लां दे तोड़न वाल़े घर वो नयों।
फुल्लां तोड़ी रखां, नि तुड़ाई रखां
हार गुन्दी रखां,
नि मेरे हारे दे पैह्नण वाल़े घर वो नयों।

इसी प्रकार बैसाख मास का वर्णन करती है :-

मीह्ना बसाख अय्या-जी बसाख अय्या,
दाखां पक्की रेहियां आं...ऽऽऽऽ
नि मेरे दाखां दे खाणें वाल़े घर वो नयों।
दाखं तोड़ी रखां, नि तुड़ाई रखां आं...ऽऽ
नि मेरे दाखां दे खाणें वाल़े घर वो नयों।

इसी प्रकार ज्येष्ठ मास का वर्णन आता है :-

मीह्ना जेठ अय्या -जी आं जेठ अय्या,
धुप्पां तप्पी रेहियां आं....ऽऽऽऽऽ
नि मेरे पखुए दे झोल्लण वाल़े घर वो नयों।
पखुए झोल्ली रखां, नि झुल्लाई रखां,
कीलणियां टुंगी रखां आं....ऽऽऽऽऽ
नि मेरे पखुए दे झोल्लण वाल़े घर वो नयों।

इसी प्रकार आषाढ़ (हाड़) मास का वर्णन मिलता है :-

मीह्ना हाड़ अय्या -जी आं हाड़ अय्या
नदियां चढ़ी रेहियां आं....ऽऽऽऽऽ
नि मेरे नदियां दे लंघण वाल़े घर वो नयों।
नदियां लंघी जावां नि लंघाई जावां,
नि मेरे नदियां दे लंघण वाल़े घर वो नयों।

यहां के लोक में सावन मास को सौण महीना कहते हैं। इस माह का वर्णन इस प्रकार से है :-

मीह्ना सौण अय्या -जी आं सौण अय्या
अम्ब पक्की रिह्यो ....,
नि मेरे अम्बां दे खाणे वाल़े घर वो नयों।
अम्बां तोड़ी रखां, नि तुड़ाई रखां आं.,
ताकें चुक्की रखां आं....ऽऽऽऽऽ
नि मेरे अम्बां दे खाणे वाल़े घर वो नयों।

यहां के लोक में भाद्रपद को भादों तथा काल़ा महीना भी कहते हैं। इस माह का वर्णन इस प्रकार से है :-

मीह्ना काल़ा अय्या -जी आं काल़ा अय्या
रातां न्हेरियां जी ओ ..ऽऽऽऽऽ
मेरे दिबके दे बाल़ण वाल़े घर वो नयों।
दिबके बाल़ी रखां, नि बल़ाई रखां आं.,
मेरे दिबके दे बाल़ण वाल़े घर वो नयों

2.

चैत महीने सब फुल्ल फुल्ले,

पिए बिना फुल्ल न तोड़िए।
तोड़ी-ताड़ी रे चतन्न मोरी चिन्ता,
बैठड़ा सोच करे मन में।
जद पिया छोड़ चले मधुबन में,
आग लगे बिन्द्रावन में।

इसमें भी उपरोक्त छमाह्ड़ी की भान्ति बैसाख में दाख, जेठ में तेज धूप, हाड़ में नदियों की बाढ़, सौण में अंधेरी रातों का वर्णन है तथा काल़े महीने में तिल्लों के फूलों का वर्णन इस प्रकार से है :-

कालें मीहे तिल जे फुल्ले,
पिया बिना तिल-फुल्ल न तोड़िए।
तोड़ी-ताड़ी रे चतन्न मोरी चिन्ता,
बैठड़ा सोच करे मन में।
जद पिया छोड़ चले मधुबन में,
आग लगे बिन्द्रावन में।

3

अगली छमाहड़ी में नायक कृष्ण के मथुरा चले जाने पर नायिका राधा उसकी विरह में गाती है :-

चैत महीने सब फुल्ल फुल्ले,
पिया बिना फूल न पाए ए...ऽ
राधा ओ पुच्छदी सखियां-सहेलियां,
इस नगरी ते उठ जाणा रामा ए..ऽ

इस छमाह्ड़ी की भान्ति बैसाख में दाख, जेठ में तेज धूप, हाड़ में नदियों की बाढ़, सौण में अंधेरी रातों का वर्णन परन्तु साथ में कोयल विरह का भी वर्णन है। सावन मास को यहां के लोक में लैरा महीना भी कहते हैं :-

लैरे महीने न्हेरियां राती,
कोयल कूकां मरै ओ...ऽ।
जिन्नां ओ तरसै कोयल डाली,
इन्नां ओ तरसै राधा ओ।
मोहन बिच मथरा दे तरसै,
कुसजो हाल सुणावां वे..ऽ।
उच्चेया पिपल़ां पीहंगा पावां,-2
रल़-मिल़ झूटे लाइये वे..ऽ।
मै झूटां तूं देवे झूटेयां -2
रल़-मिल़ झूटे लाइये वे..ऽ।
मोहन बिच मथरा दे तरसै,
कुसजो हाल सुणावां वे..ऽ।
काल़े महीने का वर्णन इस प्रकार से है :-
कालैं महीने लगदी उदासी -2
देवी परसण जाणा ए .ऽ।
राधा ओ पुच्छदी सखियां-स्हेलियां,
हट्क (भुक्ख) लग्गै क्या खाणा रामा ए..ऽ ।।।

इसी प्रकार अगली छमाहड़ी में नायक, नायिका दोनों के प्रश्न-उत्तर हैं। वर्णन थोड़ा भिन्न है। शेष उसी प्रकार से है। चैत्र मास में फूलों का, बैसाख में दाख, जेठ में तेज धूप, परन्तु यहां पक्खी की हवा का वर्णन नहीं है, छतरी का वर्णन है।

4

जेठ महीने डोला धुप्पां जे पेइयां,
पेई रेहियां जोरो-जोर भल्लिये!
असां कद मिलणा.......
एह दिन गोरिए बाहर बणदे।
हत्थे दी छतरी गोरिए,
तिज्जो देइ भेजगा
असां दा औण नी हुणा भल्लिए!
असां कद मिलणा.......
एह दिन गोरिए बाहर बणदे।

इसी प्रकार हाड़ में आमों का, सौण में भैस के दूध का, तथा काल़े महीने में काली अंधेरी रात नायिका को अकेला रहने पर विवश कर देती है। इसी प्रकार की एक और छमाहड़ी है :-

5

चैत महीने सब फुल्ल फुल्ले - 2
पिया प्यारे घर बी नहीं ।
स्हेलिया सदाई ले प्यारी,
फुल्लां चुगाई लै।
असां दा औण घर बी नहीं।
काल़े-काल़े कुण्डल प्यारी,
गल़े बिच डुलदे,
हाखीं बिच जरा बी चनन्नी नहीं।

इसी प्रकार की कई छमाहड़ियां वृद्धाओं के कंठों में विराजमान थीं। इनके अतिरक्त डॉ. गौतम शर्मा 'व्यथित' जी की पुस्तक हिमाचली लोक काव्य बारहमासा' जो वर्ष 2003 में छपी थी, में भी चार छमाह्ड़ी लोक गीत है। इसके अतिरिक्त इस पुस्तक में 16 बारहमासा लोकगीत है और एक सत्तमासा, तीन चौमासा, एक त्रैमासा तथा सात गीत इकमासा भी हैं। जिनका सुन्दर वर्णन उक्त पुस्तक मिलता है। बारहमासा में बारह महीनों का ,सत्तमासा में सात महीनों का, छमाही में छः महीनों का इसी प्रकार चौमासा में चार, त्रैमासा में तीन तथा एकमासा में एक महीने का विरह-वेदना से भरपूर शृंगारिक वर्णन मिलता है।

इसी प्रकार ऋतुओं में गाए जाने वाले वियोगी लोक गीत भी है, उन्हें भी गाते हुए सुना है :-

1

सोने दी सोठी ओ भाईया गोहैं जे रणकी,

जी गोहैं जे रणकी,
इत्त कुण राजा अय्या....ऽऽऽ राजा जी।

औन्दा तां भाई परौऌी जे अय्या,
परौऌी जे अय्या,
भैण तां रोटियां पकान्दी........राजा जी।
बाहरैं तां बरियें भाई घरैं जे अय्या,
भैण तां रोटियां पकान्दी........राजा जी।

उठ-उठ भैणें तूं गऌै लग्ग मेरें,
जी गऌै लग्ग मेरें ....
हुन्दी मेरी अम्मा दी जाई......राजा जी।
उठदी ऐ भैण जी गऌे कन्ने लगदी,
जी गऌे कन्ने लगदी,
छम-छम देई भैण रोई.......राजा जी।

चुल्ही दी रोटी ओ भाईया! चुल्ही जे रही ऐ,
जी चुल्ही जे रही ऐ,
तौए दी गेई ऐ जऌी........राजा जी।
चुप जायां भैणें तूं चुपी जायां भैणें -2
कल भैणें लेई जांगा.......राजा जी।
उठदा ऐ भाई जी सौह्रे जो पुच्छदा,
जी सौहरे जो पुच्छदा,
कल भैण लेई जाणीं.......राजा जी।
तौन्दिया नी क्हल्दे ओ कुड़मां,
बरसाती नी भेजदे, बरसाती नी भेजदे,
लगदैं स्याऌें जायां लेई ......राजा जी।

इसी प्रकार भाई अपनी बहिन की सास को पूछता है। सास भी यही उत्तर देती है :-

तौन्दिया नी क्हल्दे ओ कुड़मां,
बरसाती नी भेजदे, बरसाती नी भेजदे,
लगदैं स्याऌें जायां लेई ......राजा जी।

इसके पश्चात वह अपने बहनोई को पूछता है तो वह भी यही उत्तर देता है :-

तौन्दिया नी क्हल्दे ओ साऌेयां,
बरसाती नी भेजदे, बरसाती नी भेजदे,
लगदैं स्याऌें जायां लेई ......राजा जी।
हटि औन्दा भाई जी मुड़ी औन्दा भाई,
जी मुड़ी औन्दा भाई,
भैण पुजाणा आई.........राजा जी।
हटि जायां भैणे तूं मुड़ी जायां भैणें,
तूं मुड़ी जायां भैणें,
घरैं तां सस्स गाऌीं दिंग्गी ....राजा जी।

सस्सू दियां गाऌीं ओ भाईया नित-नित सुणियां,
मैं रोज-रोज सुणियां,
भैणा दा भाई कद मिलगा ....राजा ऐ।

इसी प्रकार ससुर और पति के लिए वार्तालाप होता है। फिर भानजे के रोने की बात करता है :-

हटि जायां भैणे तूं मुड़ी जायां भैणें,
तूं मुड़ी जायां भैणें,
घरै तां बालकें तेरें रोणा ......राजा ऐ।

बालक तां मेरा ओ भाईया! नित-नित् रोन्दा,
जी नित-नित् रोन्दा,
भैणां दा भाई कद मिलगा ....राजा जी।

चली जान्दा भाई जी मुड़ी जान्दा भाई,
जी मुड़ी जान्दा भाई,
भाई तां रौआ टप्पी गिया ......राजा जी

मुड़ी करि दिक्खदा भाई हटि करि दिक्खदा,
जी हटि करि दिक्खदा,
भैण तां रौआ डुब्बी गेइऐ ....राजा जी।

रौआ दी कड्डी ओ भाईयें बन्ने जे लाई,
जी बन्ने जे लाई,
छम-छम देई भाई रोया .....राजा जी।

चन्नण कटाया भाईयें चिखेया चणाई,
जी चिखेया चणाई,
भैणा जो दाग दुआया........राजा जी।
हड्डियां बटोऌियां भाईयें गट्ठी जे बन्हियां,
जी गट्ठी जे बन्हियां,
मुड़ी घरे जो अय्या ......राजा जी।

घरैं तां औन्दे जो भावो जे पुच्छदी,
जी भावो जे पुच्छदी,
कुत्थू देइया नणद आई.........राजा जी।

भाई जब वापिस अपने घर पहुंचता है तो इसी प्रकार मां पूछती है, पिता पूछता है। सभी अपने-अपने सम्बन्ध से पूछते हैं तो भाई क्या करता है ?

हड्डियां तां खोह्लियां भाईयें ढेरू जे लाया,
जी ढेरू जे लाया,

इन्हां हड्डियां ने मिज्जी लिया.........सारे जी।

इसी प्रकार और भी ऐसे वियोग गीत हैं, जिन्हें सुनते हुए रोणा आ जाता है।

अब वह समय तो रहा नहीं जब बरसात में नाग, नागणी के बारों में तथा यहां के शक्तिपीठों को बड़े-बड़े समूहों में लोग पैदल जाया करते थे तो कई प्रकार की छंझोटियां तथा जातरा गीत गाते हुए चलते थे। उनसे आस-पास का वातावरण गूंजता रहता था। अब तो न वह समूह पैदल चलते हैं और न ही वह गीत सुनाई देते हैं।

यहां के लोक में जब सर्द ऋतु आती है तो लोग भोजन करने के बाद एक दूसरे के घरों के बरामदे में या किसी अलग कमरे में बनी अंगीठी में जहां खूब लकड़ियां डाल कर आग जलाई जाती थी और वहां पर अंगीठी के इर्द-गिर्द बैठ कर बूढ़े-बुजुर्गों से कई प्रकार की लोक-कथाएं, लोक गाथायें, छेह्ड़े आदि सुनते थे। तब आधी-आधी रात तक, जब तक अंगीठी में आग रहती थी.................बैठे रहते थे। परन्तु आज की इा दौड़-धूप में न तो अंगीठियां रहीं न लकड़ियां और न ही लोग उस प्रकार के प्रेम-भाव में दिखाई देते हैं। यह सारी बातें अब केवत पुस्तकों में ही मिलेंगी परन्तु उन्हें पढ़ने वाले भी बिरले ही मिलेंगे।

पौष मास को लोक में पौह महीना तथा लुक्कड़ियां आलघ महीना भी कहते है। यह समय सर्दियों का होता है। इस महीने लड़कियों द्वारा लुक्कड़ियां गाई जाती हैं। गांव की लड़कियां घर-घर जाकर लुकड़ी गीत गाती थीं। थीं इसलिए कि गत दो तीन वर्षों से लुक्कड़ियां नहीं सुनाई दे रही हैं। लगता है लड़कियां इनसे शायद नाता तोड़ चुकी हैं। समय प्रवाह के साथ परिवर्तन तो निश्चित ही है। इसलिए ऐसा हो रहा है।

यह लुक्कड़ियां माघ महीने के मासान्त से पूर्व तक गायी जाती थीं। मासान्त तथा सक्रान्ति को लोह्ड़ी मनाई जाती है। मासान्त की शाम को गांव के किशोर अपने-अपने आस-पड़ोस तथा गांव के घरों में लोह्ड़ी गानें समूहों में जाते हैं। यह समूह दो से लेकर 7,8,9 तक होते हैं। यहां हरण गाए जाते हैं :-

हरण मंगे तिलचौल़ी दे,
लाल गुड़े दी रोड़ी दे
हरणां दे सिंग मोटे थे
हरणें लाई सिंगे दी
हण्डी भज्जी हींगे दी
हरण गिया खेड़िया
टोप्पा भरेया पेड़िया
टक्कू-मटक्कू
देह धाना दा छक्कू।

इसी प्रकार और भी ऐसे तुकबन्दी टप्पे गीत गाए जाते हैं। इसके बदले में लोक उन्हें तिल्ल-चौल़ी, धान, चावल तथा पैसे आदि देते हैं।

इसी प्रकार अगले दिन सुबह तड़के से ही गांव की किशोर लड़कियां राजड़े गाती हैं :-

राजड़ेयो राजड़ेयो राजद्वारैं आए भाई
राजद्वारैं आए।
पैरां लग्गी ठण्डड़ी-ठण्डड़ी
सिरे दी सल़्हाई भाई
सिरे दी सल़्हाई
दियां नी माइये चौल़ मां.ऽऽऽ
चौल़ मां.ऽऽऽ
चौल़ां-मोल़ा गोद भरोए
चौल़ां-मोल़ा गोद
पैरां लग्गी ठण्डड़ी-ठण्डड़ी
कुड़ियां जो लग्गा सीत भाई
कुड़ियां जो लग्गा सीत

इस प्रकार गाने के बाद उन्हें भी लड़कों की भान्ति धान, चावल तथा पैस आदि देते हैं।

इस वर्ष जो लोहड़ी हुई उसमें इस तरह गाती हुई लड़कियां न तो दिखाई दी औ न ही राजड़े गाती सुनाई दी। लगता है आधुनिकता की दौड़ में यह प्रथा भी लुप्त होती दिखाई दे रही है। इसके अनेक कारण हैं जिन्हें सभी जानते हैं।

इसके उपरान्त बसन्त ऋतु आरम्भ हो जाती है। इस ऋतु में होली का त्योहार भी आता है। जिसे यहां पूरे प्रदेश में बड़ी धूम-धाम से मनाया जाता है। इसमें भी गीत गाए जाते हैं तथा नाच होते हैं, नाटियां डाली जाती हैं। लोग बसन्ती बहार में होली के रंगों से रंगीन हो जाते हैं।

हिमाचल प्रदेश के लोक साहित्य में सभी ऋतुओं के गीतों, गाथाओं आदि का समुद्र भरा पड़ा है। इसमें काफी लोगों ने डुबकी लगाकर काफी मोती संजो लिए हैं। अच्छी डुबकी भी वही लगा सकता है जो साधन सम्पन्न हो या फकीर-घुम्मकड़। साधना के लिए भी तो साधन चाहिए। इसलिए इस आलेख में हिमाचल प्रदेश के शिवालिक जनपद के कुछेक क्षेत्रों के लोक ऋतु गीतों का वर्णन हो पाया है। वास्तव में यह एक वृहद विस्तृत विषय है तथा यह तभी समृद्ध हो सकता है जब हिमाचल प्रदेश के समस्त भू-खण्डों के ऋतु लोक गीतों का वर्णन हो सके।

चिन्तन कुटीर, रैत, त. शाहपुर, जिला कांगड़ा,
हिमाचल प्रदेश-176208, मो. 98165 16978

कविता

डॉ. जयकरण की कविताएं

बेटी

● 'मिस्दाक़' आज़मी



बेटियों की अज़्मतों का सिर्फ़ इंसानों से क्या?
वास्ता क़ुरआन से, इंजील से, गीता से है
बेटियों के क़ातिलो! निस्बत यहां बेटी की तो
फ़ातमा ज़हरा कहीं, मरियम कहीं, सीता से है।

खुद कभी इक बाप की बेटी थी वो औरत मगर
आज बेटी को जनम देती है तो खुश मन नहीं
दादी, नानी, ख़ाला, फूफी के अलावा देखिए
इनसे बढ़ कर बेटियों का कोई भी दुश्मन नहीं।

मेरी बेटी मुझमें सांसें ले रही है इन दिनों
है बहुत छोटी मगर बातें बड़ी करती है वो
लालची दुनिया की लालच से अभी वाक़िफ़ नहीं
जाने क्यों गुड़ियों की शादी से बहुत डरती है वो।

पाक जज़्बों की मोहब्बत का चलन ज़िंदा रहे
मेरी बेटी तू मेरे दिल में यूं आईन्दा रहे
परवरिश कुछ इस तरह कर दूं मैं तेरी कम से कम
देख कर बेटी का क़ातिल तुझको शर्मिंदा रहें

पहले बेटी को वो ज़िंदा कर दिया करते थे दफ़न
जाहिलीयत के ज़माने का यही दस्तूर था
हम तरक़्क़ी याफ़्ता दुनिया के इंसानों की रीत
बेटियों को हम जला देते हैं ज़िंदा बा खुदा।

ग्राम जौम, पो. मेजवां फूलपुर, जिला आज़मगढ़, उत्तर प्रदेश-276 304, मो. 94514 31700

परिचय

मैं तट के किनारे रहता हूं
इसलिए परछाई को जमीन पर देख पाता हूं
यहां वृक्ष हरे भरे होते हैं
क्योंकि इनकी जड़ों को पानी भरपूर नसीब है।
अपनी परछाई को देख वे ज्यादा हरा-भरा महसूस करते हैं
वे अपनी परछाई को देख पाते हैं या नहीं?
यह मेरे लिए किसी जिज्ञासा से कम नहीं है
लेकिन इनकी हरियाली में
जीव समुदाय जीवन में स्वच्छ सांसें ले पाता है
भले ही कंक्रीट के महलों में रहने वाला
तटों से दूर शहरों में बसा मानव
इस सच्चाई से अनभिज्ञ है
प्रकृति से साक्षात्कार किए बिना
इसके सहचर बने बिना
अनुभव की अनुभूति असंभव है।

खूंटी से बंधा बैल

मेरे आंगन को गाड़ी मोटर बाइक नहीं
गाय, बैल, सुशोभित करते रहे हैं
आंगन में घास खाते, खेतों में हल जोतते
यहां वहां डोलते उनके गले में बजते
घुंघरुओं की आवाज चिरस्मरणीय है
सिवा पिता जी के किसी की हिम्मत नहीं थी
कि बैल के नजदीक फटक भी पाए
शायद बैल को साधने की कला
गांव में बहुत कम लोग जान पाए थे
रस्सी से नकेल खेंच उन पर काबू पाना
कितनी तकलीफों के बाद भी वह अपना
स्वभाव पूरी तरह नहीं बदलना चाहते
खूंटे से बंधा हल और जू के अधीनस्थ
क्या पशु असहाय व इच्छारहित होते हैं?
कहां गए वे गठीले, अक्खड़, तेजतर्रार बैल?
तेजस्वी आंखें, फुले नथुने और फुंकारने की गूंज।
मैं व्यर्थ जिस समय को याद कर रहा हूं
वह तो काफी पहले मर चुका है
क्यों मैंने पढ़ा है भूतकाल मरा हुआ समय होता है।

गांव व डा. सलाना, तह. व जिला शिमला, हिमाचल प्रदेश, मो. 94599 69717

साक्षात्कार

रंगमंच के दरवेश : सुशील कुमार सिंह

● सोहनदास वैष्णव

"**आइए-आइए** सिंहासन पर बैठिए। इसे खाली मत रहने दीजिए। यह आपको सर्वशक्तिमान, सत्ता-सम्पन्न बनाएगा... और आप इस पर बैठकर सत्य, अहिंसा और न्याय की मनचाही व्याख्या कर सकेंगे।" यह संवाद ख्यातिप्राप्त नाटक 'सिंहासन खाली है' का है, जिसका पूरे भारतवर्ष में लगभग पांच हजार से अधिक बार मंचन एवं लगभग सभी प्रमुख भारतीय भाषाओं में अनुवाद किया गया है। रंगमंच एवं दूरदर्शन का जाना-माना नाम है- सुशील कुमार सिंह। 'बीबी नातियों वाली' जैसे मील के पत्थर दूरदर्शन धारावाहिक के निर्माता-निर्देशक सुशील जी ने कानपुर विश्वविद्यालय से बी.एस.सी. तक की शिक्षा प्राप्त करने के पश्चात् राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, नई दिल्ली से नाट्य निर्देशन तथा भारतीय फिल्म एवं टी.वी. संस्थान, पूना से फिल्म एवं टी.वी. कार्यक्रम निर्माण एवं निर्देशन का विशेष प्रशिक्षण प्राप्त किया।

इसमें संदेह नहीं कि हिंदी साहित्य की अन्य विधाओं की अपेक्षा नाटक साहित्य का विकास मंद गति से हुआ। इसके दो कारण प्रतीत होते हैं; एक तो मंच का अभाव और दूसरा, स्वयं इस विधा का स्वरूप। वर्तमान समय में नाटक का प्राचीन स्वरूप तो बहुत कुछ लुप्त होता जा रहा है, क्योंकि अब बहुत से नाटककार नाटक रंगमंच के लिए न लिखकर पढ़ने के लिए लिखने लगे हैं।

बचपन में पांचवीं कक्षा के समय एक छोटे-से नाटक में अभिनय से अपनी यात्रा प्रारंभ करने वाले सुशील जी की इस सक्रियता के 68 वर्ष पूर्ण हो जाने पर दिल्ली में आयोजित एक राष्ट्रीय संगोष्ठी में बतौर मुख्य वक्ता पधारे सुशील जी से उनके रंगकर्म पर हुई लम्बी बातचीत के मुख्य अंश :

आप विज्ञान के छात्र थे, फिर नाटक के क्षेत्र में कैसे आए?

मैं पांचवीं कक्षा में था, उस समय हमारे मोहल्ले में नाटक का क्लब हुआ करता था जहां पारसी स्टाइल का नाटक खेला जाता था। नाटक के लिए एक महीने से स्टेज की तैयारी की जाती थी। नाटक रात के 9 बजे शुरू होता था तो सुबह 4 बजे खत्म होता था। ये सब देखकर मेरे मन में नाटक के प्रति रुचि निर्माण हुई। मैं निर्देशक से मिला। उन्होंने मुझे देखा और बाल कलाकार के रूप में चुना। तब पन्नाधाय पर नाटक खेला गया था। उसमें मैंने उदय सिंह की भूमिका निभाई थी।

हिंदी रंगमंच के सामने आज आप कौन-कौन सी समस्याएं देखते हैं?

हिंदी रंगमंच आज भी विविध प्रकार की एक साथ कई स्तरों की समस्याओं से ग्रस्त है। कहीं रंगशाला नहीं है, कहीं रंगशाला है तो उस दर्शक का अभाव है जिसके जीवन और मनोरंजन का रंगमंच अभिन्न अंग बन चुका है। कहीं प्रस्तुतकर्ता, निर्देशक और अभिनेताओं में समझौता नहीं है या जिनकी अपनी सीमाएं हैं। इन सबसे दूर नाटककार अपने बड़प्पन के बोझ से दबा अपनी ही चहारदीवारी में बंधा बैठा है और इन सबसे अलग नाट्य साहित्य का अध्यापक रंगमंच को दूर फेंककर नाटक के तत्त्वों पर भाषण देते हुए संवादों का अर्थ बताता जा रहा है। यह अलगाव है नाट्य-क्षेत्र में जो घातक है, दयनीय है।

आधुनिक हिंदी नाटक के सामने सबसे बड़ी चुनौती आप किसे मानते हैं?

आधुनिक हिंदी नाटक के सामने सबसे बड़ी चुनौती फिल्म तथा दूरदर्शन ने प्रस्तुत की है। इन दोनों माध्यमों में खूब पैसा है, जबकि रंगमंच के क्षेत्र में पैसा नहीं, संघर्ष-ही-संघर्ष है। रंगमंच की अनेक प्रतिभाएं फिल्म तथा टी.वी. के व्यावसायीकरण का शिकार हुई हैं- ओमपुरी, आशुतोष राणा, नसीरुद्दीन शाह, ओम शिवपुरी, शत्रुघ्न सिन्हा, राज बब्बर, अमरीश पुरी, हरीश तिवारी आदि इसके ज्वलंत उदाहरण हैं।

बाजारबाद के इस दौर में उपन्यास, कहानी और सिनेमा के समानांतर हिंदी का नाटक साहित्य सुधी पाठकों के मध्य अपनी कितनी जगह बना पाया है?

इस बात पर बहुत ज्यादा मंथन करने की आवश्यकता है। सिनेमा के बढ़ते प्रभाव तथा नाटक के प्रचार-प्रचार की कमी के कारण लोगों का रुझान रंगमंच की ओर कम हो रहा है। इसका मुख्य कारण नाटक को व्यावसायीकरण से न जोड़ पाना तथा सरकारी प्रोत्साहन की कमी है। बाजारवाद के इस दौर में नई फिल्म लगते ही पूरे शहर में फिल्म के विज्ञापन बोर्ड लगा दिए गए हैं। नाटककारों के पास इतना पैसा नहीं, कि वह विज्ञापन तथा रंगमंच पर नाटक के प्रस्तुतीकरण के समय आने वाला खर्च उठा पाएं या पात्रों को अधिक मेहनताना चुका पाएं। रंगमंच पर काम करने वाले पात्रों को सौ-दो सौ रुपये एक नाटक का मानदेय मिलता है, इससे परिवार नहीं चलाया जा सकता। अर्थ की अंधी दौड़ में व्यक्ति इतना थक जाता है कि शाम को उसके पास इतना समय नहीं रहता कि नाटक देखने प्रेक्षागृह में जाए। आज का दर्शक तो 'पिक्चर हाउस' में बैठना चाहता है।

आपका 'चार यारों की यार' बोल्ड या बाजारू नाटक लगता है। हमारा दर्शक इस तरह के बोल्ड दृश्यों को रंगमंच पर वर्जित समझता है। आप क्या सोचते हैं?

बात ऐसी नहीं है। इस नाटक में कविता चौधरी, सतीश कौशिक जैसे मशहूर कलाकार थे। इस नाटक को लेकर मिली- जुली प्रतिक्रिया हुई। नाटक के प्रति आज भी हमारा दृष्टिकोण बदला नहीं है। बड़े नगरों के अतिरिक्त अन्य स्थानों पर नाटक को उच्च कलात्मक दृष्टि से नहीं देखा जाता। नाटक और रंगमंच को हेय दृष्टि से देखने का बीज अभी तक भारतीय जनता में विद्यमान है। अभिनय एक कला है और कला का सदैव सम्मान होना चाहिए। लेकिन आज अधिकांश दर्शक वर्ग ऐसा है जो सस्ता मनोरंजन चाहता है और अनेक दृश्यों को रंगमंच पर वर्जित समझता है। प्रेम या रोमांस का साधारण-सा दृश्य देखकर, किसी स्त्री पात्र की साधारण-सी भाव-भंगिमा, नृत्य-कला या अभिनय देखकर सस्ते ढंग से फब्तियां कसना उनका अभ्यास है। ऐसी स्थिति में बहुत से अच्छे निर्देशक, कुशल अभिनेता-अभिनेत्रियां अपने उत्साह को दबाकर बैठ जाते हैं।

आपने कई राजनीतिक व्यंग्य नाटक लिखे हैं, कई जगह आप राजनैतिक प्रतिबद्धता के शिकार प्रतीत होते हैं, इसके बारे में आपके विचार?

मैं किसी राजनीतिक पक्ष से प्रभावित नहीं हूं। हमारा जो अनुभव होता है उससे सभी पक्ष एक जैसे लगते हैं, सिर्फ मुखौटे बदलते हैं। इस पर यदि आप प्रतिबद्धता की बात करें तो मेरी कोई गलती नहीं।

नाटक को लेकर आर्थिक समस्या की बात आपने की है। आर्थिक रूप को लेकर कुछ बताइए।

रंगमंच पर अभिनय के लिए किस प्रकार की व्यवस्था हो और निर्देश देने, वाद्य-यंत्रों को स्थापित करने, स्वरूप भरने, रंगमंच पर प्रवेश और निर्गम करने इत्यादि के लिए कहां और कितना स्थान सुरक्षित रखा जाए, कहां कितने खम्भे बनाए जाएं, कैसे दरवाजे हों, कहां परदा लगाए जाए और कहां दीवार उठाई जाए, भित्तियों का लेप कैसा हो, कैसे चित्र बनाए जाएं और कहां-कहां मूर्तियां स्थापित की जाएं, रंगमंच की प्रकाश व्यवस्था कैसी हो, रिहर्सल कहां की जाए, इन सब बातों का झंझट एक निर्देशक के सामने रहता है। इतना होने के बाद भी क्या दर्शक प्रेक्षागृह में नाटक देखने आएंगे? अतः इस रूप में नाटककार के सामने आर्थिक समस्या भी एक बड़ी

चुनौती है।

आपका दूरदर्शन से भी जुड़ाव रहा है, इसके बारे में आपका अनुभव बताइए?

1978-79 में मेरी दूरदर्शन में नौकरी लगी थी। उस समय दूरदर्शन की व्यापकता इतनी नहीं थी, जितनी वर्तमान में है। राजस्थान के जायपुर के साथ पंजाब के जालंधर, उत्तर प्रदेश के लखनऊ तथा बरेली सहित कई केंद्रों पर मैं रहा हूं। 2006 में दूरदर्शन से सेवानिवृत्त होकर इलैक्ट्रॉनिक मीडिया तथा रंगमंच के लिए लेखन में व्यस्त हूं। सबसे पहले हमने दूरदर्शन के लिए 'शेखचिल्ली' तथा 'उपग्रह दूरदर्शन' नामक सीरियल बनाए। दूरदर्शन पर आने वाले सबसे पहले धारावाहिक 'बीबी नातियों वाली' का भी निर्देशन मैंने ही किया था, जिसे के.पी. सक्सेना ने लिखा था।

आपको अभिनय में रुचि है या लेखन-निर्देशन में?

मैंने बाल कलाकार के रूप में अभिनय से शुरुआत की थी। ज्ञानदेव अग्निहोत्री के साथ कई नाटकों में काम किया। बाद में धीरे-धीरे हमारा रुझान लेखन और निर्देशन की ओर हो गया। अभिनय के साथ बड़ा झंझट होता है। कपड़े बदलो, मेकअप करो वगैरह-वगैरह। रंगमंच अभिनेता का माध्यम होता है। अभिनेता अपनी बात नहीं कर सकता वह तो नाटककार या निर्देश की बात कहता है। हमने जान लिया है कि यदि हमें कुछ कहना है तो लेखक या निर्देशक के रूप में पॉवर-फुल कह सकते हैं, इसलिए लेखन, निर्देशन की ओर ज्यादा ध्यान दिया।

युवा नाटककार जो इस क्षेत्र में आना चाहते हैं, उनके लिए क्या संदेश देना चाहेंगे?

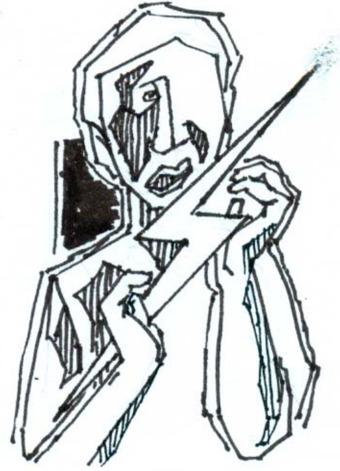
आजकल के छात्रों में डिवोशन नहीं है, आज का युवा आसानी से अमीर बनना चाहता है। नाटक रंगमंच से जुड़ाव है। पहले युवा खूब पढ़ें फिर रंगमंच से जुड़ें। सफलता अवश्य मिलेगी।

181, उत्तरी आयड़, रूपवाटिका, सुथारवाड़ा, उदयपुर, राजस्थान-313001, मो. 0 9799828291

लघु कथा

बिजली का झटका

● हरिन्दर सिंह गोगना



"अरे यह बिजली चोरी की आदती जाती नहीं तुम्हारी. .. घर में है कोई क्या...?" अचानक हरनाम सिंह के घर का गेट खोल कर भीतर आए बिजली अधिकारी ने बिजली चोरी की तार अपने हाथ में लेते हुए आवेश में आकर कहा।

हाथ में खिलौना लिए सात वर्ष की एक बच्ची बाहर आई व उस बिजली अधिकारी को पहचानते ही बोली, "अंकल नमस्ते... पापा किसी के घर गए हैं... आप उस दिन वाले अंकल हैं न...?" बच्ची ने बिजली अधिकारी के समीप आते कहा व अपने खिलौने को उडेल कर उसमें से कुछ पैसों के सिक्के निकाले व अधिकारी की तरफ बढ़ाते हुए बोली, "यह लीजिए पैसे...।"

"यह पैसे मुझे क्यों...?" मासूम बच्ची की तरफ देख कर अधिकारी थोड़ा नरमाई से बोला।

"उस दिन आपने हमारी बिजली की तार उतार ली थी तो पापा ने आपको पैसे दिए थे न... मेरे पास तो इतने ही हैं. ..।" बच्ची ने कहा तो बिजली अधिकारी बगलें झांकने लगा। मानो बिजली का झटका लगा था।

हरिन्दर सिंह गोगना, परीक्षा केंद्र, पंजाबी विश्वविद्यालय, पटियाला, पंजाब-147002, मो. 98723 25960

विकासात्मक आलेख

किशोरी शक्ति योजना
महिला सशक्तीकरण की दिशा में सार्थक पहल

● ममता नेगी

समाज के सामाजिक-आर्थिक उत्थान में महिलाओं की महत्त्वपूर्ण भूमिका है। प्रदेश में महिलाओं को आत्म निर्भर बनाने व उनका सर्वांगीण विकास सुनिश्चित बनाने के लिये महिला शिक्षा पर विशेष बल दिया जा रहा है। 11 से 18 वर्ष आयुवर्ग की किशोरियों को आर्थिक रूप से सशक्त बनाने के लिये राज्य सरकार ने उल्लेखनीय पहल की है ताकि वे स्वावलम्बन एवं आत्म सम्मान के साथ गरिमापूर्ण जीवन यापन कर सके।

राज्य सरकार ने किशोरियों के लिये एक महत्त्वाकांक्षी 'किशोरी शक्ति योजना' आरम्भ की है जो प्रदेश के आठ जिलों-शिमला, सिरमौर, किन्नौर, मण्डी, बिलासपुर, ऊना, हमीरपुर एवं लाहौल-स्पिति में 46 समेकित बाल विकास परियाजनाओं के माध्यम से प्रभावी ढंग से संचालित की जा रही है। इस योजना के कार्यान्वयन के लिये भारत सरकार द्वारा प्रति परियोजना 1.10 लाख रूपये की धनराशि उपलब्ध करवाई गई है।

किशोरी शक्ति योजना के अन्तर्गत प्रदेश में 11 से 14 वर्ष आयुवर्ग की 104994 किशोरियों को लाभान्वित किया जा रहा है। इनमें 30961 अनुसूचित जाति, 3701 अनुसूचित जनजाति और 70332 अन्य किशोरियां शामिल हैं। इसी तरह 14 से 18 वर्ष आयु की 112783 किशोरियों में अनुसूचित जाति की 33148, अनुसूचित जनजाति की 3935 और अन्यों में 75700 योजना का लाभ प्राप्त कर रही हैं। गरीबी की रेखा से नीचे रह रहे परिवारों की 41163 किशोरियों को लाभान्वित किया जा रहा है। इनमें अनुसूचित जाति की 14619, अनुसूचित जनजाति की 1145 जबकि 25399 अन्य किशोरियां शामिल हैं।

योजना के तहत 11 से 18 वर्ष आयुवर्ग की किशोरियों को गैर औपचारिक शिक्षा के माध्यम से आवश्यक साक्षरता व कौशल प्रदान किया जा रहा है जिससे पोषण एवं स्वास्थ्य स्थिमि में सुधार के साथ इनमें अपने निर्णय लेने की क्षमता का विकास हो सके। इसके अतिरिक्त, स्वास्थ्य जागरूकता, स्वच्छता, पोषाहर व परिवार नियोजन, गृह प्रबन्धन व शिशु देखभाल के उद्देश्य से घर-परिवार आधारित व्यावसायिक कौशल उन्नयन व प्रशिक्षण सुनिश्चित बनाया जा रहा है। किशोरियों को 18 वर्ष की आयु के उपरान्त वैवाहिक शिक्षा के सम्बन्ध में भी जागरूक किया जा रहा है।

योजना के अन्तर्गत स्कूली शिक्षा से वंचित 16 से 18 वर्ष आयु वर्ग की किशोरियों को भी आयरन फॉलिक एसिड पूरकता, स्वास्थ्य जांच, रेफरल सेवाएं, पोषण एवं स्वास्थ्य शिक्षा, परिवार नियोजन, परिवार कल्याण परामर्श, किशोरी प्रजनन एवं यौन स्वास्थ्य, शिशु देखभाल अभ्यास, जीवन कौशल शिक्षा तथा सार्वजनिक सेवाओं बारे व्यावसायिक प्रशिक्षण प्रदान किया जा रहा है।

किशोरी शक्ति योजना का लाभ प्राप्त करने की इच्छुक पात्र महिलाएं सम्बन्धित आंगनबाड़ी केन्द्र, जिला कार्यक्रम अधिकारी अथवा बाल विकास परियोजना अधिकारी से सम्पर्क कर सकती हैं।

सूचना अधिकारी, निदेशालय, सूचना एवं जन सम्पर्क, शिमला-2

विकासात्मक आलेख

पर्यावरण संरक्षण से बढ़ा हरित आवरण

● गंगा राम

हिमाचल प्रदेश के वन अपने सौंदर्य एवं भव्यता के लिए जाने जाते हैं। प्रदेश के कुल 55,673 वर्ग किलोमीटर भौगोलिक क्षेत्र में से 37,033 वर्ग कि.मी. भू-भाग वनों की श्रेणी में है जो देश के वन क्षेत्र का 4.80 प्रतिशत है। भारतीय वन सर्वेक्षण की वर्ष 2013 की रिपोर्ट के अनुसार प्रदेश की कुल 14,683 वर्ग कि.मी.भूमि वनाच्छादित है जोकि वर्ष 1991 में 11,780 वर्ग कि.मी. थी। सरकार प्रदेश के हरित आवरण को बढ़ाने के लिए कृतसंकल्प है ताकि पारिस्थितिकीय संतुलन और पर्यावरण संरक्षण को बनाया रखा जा सके।

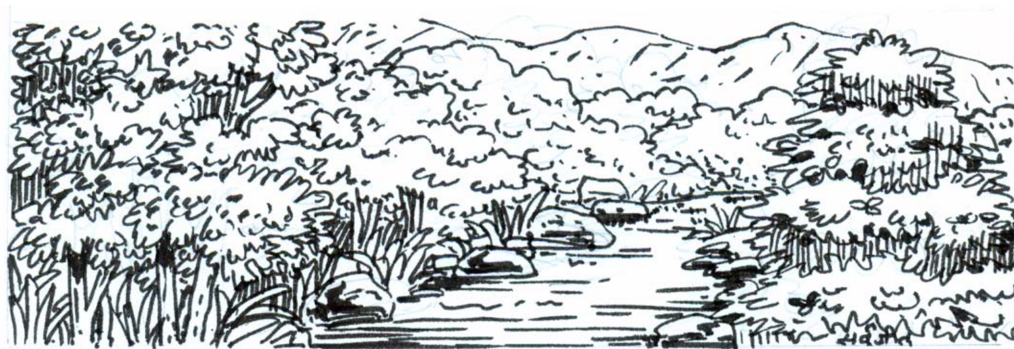
प्रदेश सरकार के हरित आवरण को बढ़ाने के प्रयासों के तहत वर्तमान वित्त वर्ष में 45 करोड़ रुपये खर्च करके विभिन्न योजनाओं के अंतर्गत 8712.45 हैक्टेयर क्षेत्र को वनों के अधीन लाने का लक्ष्य रखा गया है जबकि गत दो वर्षों में 29,745 हैक्टेयर क्षेत्र में पौधरोपण किया गया है। पौधरोपण कार्यक्रम में चौड़ी पत्ती, जंगली, फलदार व औषधीय प्रजातियों पर बल दिया जा रहा है ताकि ग्रामीणों को पशुचारे के साथ-साथ जंगली फल व औषधी जैसी वन सम्पदा से सम्बन्धित स्वरोजगार भी प्राप्त हो सके। इसके साथ ही चालू वित्त वर्ष के दौरान प्रदेश में प्रधानमंत्री सड़क योजना के अंतर्गत निर्मित सड़कों के किनारों पर विभिन्न प्रजातियों के पौधों के पौधरोपण की कार्य योजना तैयार की गई है जिसके अंतर्गत मनरेगा कामगारों के माध्यम से विभिन्न प्रजातियों जैसे शहतूत, जामुन, सरू, शीशम, सफेदा, पीपल, देवदार, नीम इत्यादि के एक लाख पौधे लगाए जाएंगे।

इसके अतिरिक्त इस वर्ष विभिन्न योजनाओं के अंतर्गत प्रदेश में 45 लाख औषधीय पौधे लगाने का लक्ष्य रखा गया है जबकि गत दो वर्षों में 90 लाख औषधीय पौधे रोपित किये गये हैं। वनों में नमी बनाए रखने व जंगल की आग बुझाने में वन सरोवरों की महत्त्वपूर्ण भूमिका है। वन सरोवर ग्रामीण सामुदायों की अजीविका को बढ़ाने में भी सहायक होते हैं। प्रदेश में इस वर्ष 100 वन सरोवरों के निमार्ण का लक्ष्य रखा गया है जबकि 405 वन सरोवरों का निर्माण सरकार द्वारा पहले ही करवाया जा चुका है।

प्रदेश में पौधरोपण कार्यक्रमों के तहत पौधों की मांग को पूरा करने के लिए प्रदेश में 725 पौधशालाएं स्थापित की गई हैं जिनमें बन्द पड़ीं 71 पौधशालाओं को पुनः कार्यशील किया गया है ताकि सरकार की हरित आवरण बढ़ाने की मुहिम में पौधों की किसी प्रकार की कमी न आए। इन पौधशालाओं में जंगली फलदार, चौड़ी पत्ती, औषधीय पौधों आदि के 2.49 करोड़ स्वस्थ पौधे तैयार किए गए हैं। पौधों की जीवित प्रतिशतता बढ़ाने के लिए पौधरोपण क्षेत्रों के रखरखाव की अवधि तीन साल से पांच साल व कैटप्लान के अंतर्गत सात साल की गई है।

जलवायु परिवर्तन तथा अनेक अन्य कारणों से प्रदेश आज लैंटाना जैसे खतरनाक खरपतवार से जूझ रहा है। इससे वनों में विद्यमान चरागाहों तथा स्थानीय लोगों की कृषि एवं बागवानी पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है। चालू वित्त वर्ष के दौरान 19.29 करोड़ रुपये खर्च कर प्रदेश के 12480 हेक्टेयर क्षेत्र को लैंटाना मुक्त कर ईंधन, चारा प्रजातियां तथा जल संरक्षण द्वारा स्थानीय लोगों व घुमंतू चरवाहों को राहत पहुंचाने का लक्ष्य रखा गया है। गत दो वर्षों में 21.48 करोड़ रुपये खर्च कर 15 हजार हैक्टेयर क्षेत्र को लैंटाना मुक्त किया गया है।

सरकार के हरित आवरण बढ़ाने के प्रयासों के अंतर्गत प्रदेश में बाह्य सहायता प्राप्त वानिकी परियोजनाओं को सफलतापूर्वक चलाया जा रहा है। सरकार का प्रयास है कि इन परियोजनाओं का लाभ अधिक से अधिक क्षेत्रों में लम्बे समय तक पहुंचे। इस दिशा में विश्व बैंक की सहायता से मध्य हिमालय जलागम विकास परियोजना की राशि 365 करोड़ से बढ़ाकर 630.76 करोड़ रुपये और अवधि बढ़ाकर 31 मार्च, 2016 तक की गई है। इस परियोजना में 102 नई पंचायतें सम्मिलित कर अब प्रदेश की कुल 710 पंचायतें लाभान्वित हो रही हैं। इस वर्ष इस परियोजना के तहत 60 करोड़ रुपये खर्च किए जा रहे है।



प्रदेश सरकार के प्रयासों से हाल ही में जर्मन सरकार व जर्मन विकास बैंक के सहयोग से जिला कांगड़ा और चम्बा के लिए 310 करोड़ रुपये की 'हि.प्र. फोरेस्ट इको-सिस्टम क्लाईमेट प्रुफिंग परियोजना' इस वित्त वर्ष से शुरू हो गई है। परियोजना के तहत मिलने वाली दो मिलियन यूरो की ग्रांट के अनुबन्ध पर भी हस्ताक्षर हो गए हैं, जिसे वन अधिकारियों, कर्मचारियों व स्थानीय समुदायों के क्षमता विकास पर खर्च किया जाएगा। इसी प्रकार से प्रदेश सरकार द्वारा जापान अंतरराष्ट्रीय सहयोग एजेंसी (JICA) से बाह्य सहायता प्राप्त करने के लिए 'हि.प्र. फोरेस्ट इको-सिस्टम मनेजमैंट एण्ड लाईवलीहूड परियोजना' प्रस्तुत की है, जिसके तहत लगभग 1507 करोड़ रुपये के परिव्यय के साथ यह परियोजना प्रदेश के 10 जिलों में कार्यान्वित की जाएगी।

प्रदेश सरकार प्रदेश की समृद्ध वन सम्पदा के संरक्षण एवं विकास के प्रति कृतसंकल्प है तथा प्रदेश के प्रत्येक नागरिक को भी वन सम्पदा एवं पर्यावरण संरक्षण के प्रति अपने सामाजिक दायित्व को निभाना होगा तभी सरकार के इस दिशा में किए जा रहे प्रयास फलीभूत होंगे।

सहायक लोक सम्पर्क अधिकारी
निदेशालय सूचना एवं जन सम्पर्क, हि.प्र., शिमला-2

विकासात्मक आलेख

राज्य कृषि विपणन बोर्ड
घर-द्वार के समीप सुलभ विपणन सुविधा

• जयंत शर्मा

रामसरण एक छोटा कृषक है, जो अपने उत्पाद को नजदीक की मंडी तक आसानी से पहुंचाने में सक्षम है। उसे अपने उत्पाद के उचित दाम भी प्राप्त हो रहे, जिससे वह आत्मनिर्भरता की राह पर अग्रसर है। इसका श्रेय वह प्रदेश सरकार की बेहतर विपणन नीति को देता है। रामसरण जैसे अनेक किसान व बागवान आज अपने उत्पादों को आसानी से प्रदेश सरकार द्वारा स्थापित नजदीक की मंडियों में बेच रहे हैं और उनके अच्छे दाम प्राप्त कर रहे हैं।

हिमाचल प्रदेश एक कृषि प्रधान राज्य है, जहां की 80 प्रतिशत से अधिक आबादी कृषि पर निर्भर करती है। प्रदेश सरकार राज्य कृषि विपणन बोर्ड के माध्यम से कृषकों की विभिन्न आवश्कताओं को पूरा करते हुए मंडियों में उनकी उपज के बेहतरीन मूल्य दिलाने में प्रयासरत है। इसके लिए बोर्ड कृषकों को राज्य और राज्य से बाहर विपणन के बेहतर अवसर उपलब्ध करवा रहा है। वर्तमान में, बोर्ड द्वारा 10 कृषि उपज विपणन समितियों और 56 विनियमित मंडियों के माध्यम से प्रदेश के विभिन्न स्थानों में किसानों को हर तरह की सुविधाएं मुहैया करवाई जा रही हैं।

देश के विभिन्न हिस्सों में बैमौसमी सब्जियों और फलों की बढ़ती मांग को देखते हुए राज्य सरकार ने सब्जी एवं फल मंडियों के आधुनिकीकरण की दिशा में अनेक कदम उठाए हैं, ताकि



किसानों को सभी सुविधाएं एक ही स्थान पर उपलब्ध करवाई जा सकें। किसानों की आवश्यकताओं के मद्देनजर राज्य के विभिन्न स्थानों पर 56 मंडियों का निर्माण किया गया है और चार अन्य का निर्माण कार्य प्रगति पर है। उपरोक्त मंडियों में से आठ विपणन प्रांगणों का निर्माण बीते अढ़ाई साल के कार्यकाल के दौरान पूरा किया गया है। वर्ष 2012-13 से लेकर 31 मार्च, 2015 तक उपरोक्त मंडियों के निर्माण पर 30.42 करोड़ रुपये व्यय किए गए हैं। देश के पहाड़ी राज्यों में हिमाचल प्रदेश ऐसा पहला राज्य है, जिसने हिमाचल प्रदेश कृषि एवं बागवानी उपज विपणन (विकास एवं नियामक) अधिनियम, 2005 को लागू किया है।

पहाड़ी क्षेत्र होने के कारण यहां पर उपज क्षेत्र छोटी-छोटी इकाइयों में बिखरे हुए हैं। कृषि उपज को मौसम की मार इत्यादि से बचाने के लिए राज्य में संग्रह केन्द्रों का निर्माण किया गया है। वर्तमान सरकार के अढ़ाई साल के कार्यकाल के दौरान 1,17,62,084 रुपये की लागत से ऐसे 27 फल एवं सब्जी संग्रह केन्द्र स्थापित किए गए हैं। बोर्ड द्वारा प्रदेश के विभिन्न क्षेत्रों में संग्रह केन्द्र स्थापित करने के लिए स्थान चिन्हित करने के निरन्तर प्रयास किए जा रहे हैं। वर्तमान में, शिमला जिले में चार संग्रह केन्द्र, कांगड़ा में तीन, सोलन और सिरमौर में दो-दो, ऊना में चार, चम्बा में एक, मण्डी और हमीरपुर जिला में तीन-तीन केन्द्र, बिलासपुर में चार और कुल्लू जिला में एक केन्द्र स्थापित किया गया है।

इसके अलावा, कृषि उपज विपणन समिति शिमला और किन्नौर द्वारा सब्जी और फल उत्पादक क्षेत्रों देलठ, जनेधाट और थरोला में, जहां परिवहन की सुविधा आसानी से उपलब्ध नहीं है, तीन संग्रह केन्द्रों का निर्माण किया गया है। इन संग्रह केन्द्रों के बनने से क्षेत्रों के किसानों को अब अपनी उपज को सड़कों के किनारे रखने और परिवहन की सुविधा के लिए लम्बे इंतजार से छुटकार मिला है।

प्रदेश के अति दुर्गम क्षेत्रों को सड़क सुविधा से जोड़ने के लिए राज्य सरकार द्वारा रज्जू मार्गों का निर्माण किया जा रहा है। वर्तमान सरकार ने अपने अढ़ाई साल के कार्यकाल में ऐसे आठ रज्जू मार्गों का निर्माण किया है, जिन पर 40.50 लाख रुपये व्यय किए गए हैं।

कृषि उपज विपणन समिति, शिमला और किन्नौर द्वारा दूर-दराज के किसानों की उपज सड़कों तक और फिर संग्रह केन्द्रों तक पहुंचाने के उद्देश्य से छह रज्जू मार्गों का निर्माण किया गया है। शिमला और किन्नौर जिले के किसानों की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए कुछ और नए रज्जू मार्गों के निर्माण के प्रस्ताव विचाराधीन हैं।

हिमाचल प्रदेश राज्य कृषि विपणन बोर्ड और कृषि उपज विपणन समितियों द्वारा किसानों के लिए जागरूकता शिविरों का भी आयोजन समय-समय पर किया जाता है। इन शिविरों के माध्यम से किसानों को फसल उपरांत तकनीकों, ग्रेडिंग और मानकीकरण, खाद्य सुरक्षा और गुणवत्ता, बेहतर कृषक पद्धतियों, विपणन सूचना प्रणाली आदि के बारे में जानकारी मुहैया करवाई जा रही है। बीते अढ़ाई सालों में इन शिविरों के माध्यम से 1400 किसानों को प्रशिक्षण प्रदान किया गया है। इन किसान प्रशिक्षण शिविरों में विभिन्न विभागों से विपणन विशेषज्ञ किसानों को विपणन से सम्बन्धित ताजा जानकारियों से अवगत करवाया जा रहा है और साथ ही खेती पूर्व और खेती उपरांत तकनीकों से भी उन्हें अवगत करवाया जा रहा है।

कृषि विश्वविद्यालय और इससे जुड़ी अन्य संस्थाएं देशभर में लगातार किसानों को उन्नत और वैज्ञानिक कृषि तकनीकों से अद्यतन करवा रही है और खास तौर पर इन संस्थानों के आस-पास के किसानों को खेती उपरांत प्रबन्धन के बारे में विशेष तौर पर प्रशिक्षित किया जा रहा है। इन प्रयासों से न केवल किसानों की उपज में बढ़ोतरी हुई है, बल्कि उनकी आय में भी उल्लेखनीय वृद्धि दर्ज की गई है।

किसानों को विपणन सम्बन्धी सूचनाओं से अद्यतन रखने के लिए मंडी समितियों द्वारा केन्द्र सरकार के विपणन एवं निरीक्षण निदेशालय के सहयोग से केन्द्र प्रायोजित विपणन अनुसंधान एवं सूचना तंत्र (एमआरआईएन) योजना के तहत 39 कम्प्यूटर केन्द्र स्थापित किए गए हैं। इसके तहत किसान वेबसाइट www.egmarknet.nic.in पर लॉग इन करके देश भर की मंडियों के भाव पता करने के साथ ही कृषि उपजों की मांग और उपलब्धता की जानकारी भी हासिल कर सकते हैं।

राज्य में कृषि क्षेत्र प्रदेश सरकार की प्रगतिशील योजनाओं और किसानों द्वारा उत्पादन में वैज्ञानिक तकनीकों के उपयोग से अभूतपूर्व विकास की ओर अग्रसर है। इसी का परिणाम है कि हिमाचल प्रदेश फल और सब्जियों के उत्पादन में अभूतपूर्व बढ़ोतरी के साथ ही विपणन आधिक्य की स्थिति हासिल कर पाया है।

सूचना अधिकारी,
निदेशालय, सूचना एवं जन सम्पर्क, शिमला-2

कहानी

मास्टर शिवेन्दर

● चित्रेश

यह भी अजीब रीति है हरिहरपुर की ! गाँव के अलग-अलग टोले से होलिहार निकलते हैं ... कौन किधर जायेगा ... कहाँ-कहाँ और कितनी देर रंग-अबीर उड़ायेगा... कबीरा जोगीरा की तान तोड़ेंगे या बीच पट्टी से निकलने वाले मिनी डीजे की धुन पर ठुमका लगायेंगे-इसका कुछ पक्का नहीं है। हाँ, यह तय है कि सारी की सारी रंग-अबीर और गुलाल से सराबोर टोलियाँ आखीर में होली का समापन शिवेन्दर के दरवाजे पर ही करेंगी।

नाम उनका था-शिवेन्द्र प्रताप सिंह ! मगर कहे जाते थे-शिवेन्दर मास्टर। प्राथमिक विद्यालय के अध्यापक थे। दबा हुआ गेहुँआ रंग, औसत लम्बाई का इकहरा शरीर और साधारण नाक-नक्श... यही थे शिवेन्द्र ! उनके लम्बोत्तरे चेहरे की खसखसी दाढ़ी एक चिंतनशील व्यक्तित्व का आभास देती थी। खानदानी हैसियत या रोब जैसा भी कुछ उनके साथ नहीं जुड़ा था।

जबकि हरिहरपुर एक बड़ा गाँव तो है ही, बड़े लोगों का भी गाँव है। यहाँ के दो दर्जन लोग तो सेना, प्रशासन और पुलिस में बड़े अधिकारी हैं। नामी-गिरामी कम्पनियों में प्रबन्धक और चीफ हैं। डाक्टर, इंजीनियर, वकील, ठेकेदार, ईंट भट्ठा मालिक से लेकर विदेश में डालर और पौंड कमाने वालों से भरा पड़ा है यह गाँव। एक दर्जन के करीब प्रिंसिपल, प्रोफेसर और लेक्चरर ही होंगे। इलाके में इस बात की शोहरत है कि यहाँ सरस्वती और लक्ष्मी दोनों मेहरबान हैं।

अब ऐसे हनकदार गाँव में एक अदने से मास्टर की वकत क्योंकर होने लगी... जबकि उनके तीन अन्य भाई जो हैं, उनमें दूसरे नम्बर वाले राघवेन्द्र इंजीनियर जरूर हैं। मगर गाँव से उनका सम्बन्ध पारिवारिक समारोहों-जन्मोत्सव, मुंडन वगैरह में मेहमानी करने जैसा है। नावल्द ससुराल की जायदाद मिल गई है, लिहाजा हरिहरपुर से वास्ता नहीं रखते। अन्य दोनों भाइयों में सुरेन्द्र भी प्राइमरी में अध्यापक हैं और सबसे छोटे तहसील में वकालत करते हैं। कुल मिलाकर शिवेन्द्र का परिवार कमाने-खाने की हैसियत से आगे नहीं बढ़ पाया है ...बच्चे अभी पढ़-लिख रहे हैं। शिवेन्द्र का सत्यम् बी.ए. कर रहा है, सुरेन्द्र का प्रशांत हाई स्कूल में है। वीरेन्द्र के लोकेश और रजत मिडिल स्कूल में पढ़ रहे हैं।

यानी ऐसा कुछ नहीं दिखता, जो शिवेन्द्र को किसी रुतबे लायक बनाता हो।

यहाँ तक कि वे वैसे खिलंदड़े लोगों में भी नहीं थे, जिनकी होली में छटा निराली रहती है। उनका दुर्भाग्य था कि जब वे इंटर में थे, उसी साल उनके पिता चल बसे। उनके जिम्मे आई थी-जर्जर गृहस्थी..., भाइयों की पढ़ाई और बहन की शादी का दायित्व. .. इन सबमें ऐसा उलझे कि किशोर वय की मस्ती और रास रंग जिन्दगी से अनजाने ही निकल गया और उनकी भंगिमा गम्भीर बनती चली गयी थी...

इंटर की परीक्षा देने के बाद शिवेन्द्र अपने मामा के साथ प्रागदीन साव की कपड़े की दुकान पर सेल्समैनी करने लगे थे। सेठ के यहाँ वे सिर्फ तीन साल नौकरी किए, बाद में मास्टर हो गए थे। मगर सेठ का गुणगान बराबर करते थे- ''अगर प्रागदीन मामा का सहारा न मिला होता तो राघवेन्द्र की इंजीनियरी की पढ़ाई और मुक्ता की शादी मैं न सपार पाता ....।''

एक बात जरूर है, शिवेन्द्र अपने दरवाजे के मुँहचोर नहीं, शाहखर्च और मिलनसार आदमी थे। होलिहारों के लिए उनके यहाँ अच्छा इंतजाम रहता था। गुझिया, मठरी और नमकीन के साथ उनकी ठंडाई सरनाम थी। वे स्वयं भी ठंडाई के शौकीन थे। लिहाजा औरों की तरह सौंफ और काली मिर्च के साथ ढेर सारी भांग नहीं घोटवाते थे। उनके यहाँ पंसारी की दुकान से ठंडाई का खास मसाला आता था। पिस्ता, बादाम और इलायची अलग से डलवाते थे। उनकी ठंडाई के आठ-नौ सौ गिलास में बमुश्किल सौ ग्राम भांग होती थी। यह सब रात में एक बड़े बर्तन में भिगो दिया जाता था। सबेरे इसे वे अपने हाथ से निकालकर घोटने के लिए कहार के हवाले करते थे।

होली के रोज छोटा-बड़ा जो भी दरवाजे पर पहुँचता, शिवेन्द्र उसे ठंडाई तो पिलाते ही, बड़े ही आदर भाव से गले मिलते थे।



शाम को उनके यहाँ एक और जमावड़ा होता, जिसमें थोड़ी-थोड़ी ठंडाई के साथ गरम-गरम समोसों और चिप्स का लुत्फ लोग उठाते थे। परिवार के अन्दरूनी सूत्रों से पता चलता है कि यह सब करने-धरने का प्रेरक बचपन का एक कड़वा प्रसंग है...

यही कोई ग्यारह-बारह साल के रहे होंगे शिवेन्द्र तो होली के मौके पर रामगढ़ वाली मौसी का लड़का बलबीर आया था। रात में दोनों होलिका-दहन से वापस घर आ रहे थे। बलवीर ने पूछा- ''शिब्बू ! तुम्हारे गाँव में ठण्डाई बनती है ?''

''हाँ।''- शिवेन्द्र ने बताया- ''मातबर सिंह ठेकेदार हैं। उनके यहाँ फगुआ होता है,

ठंडाई भी बनती है।''

''ठीक है ...., तो कल थोड़ी-थोड़ी ली जायेगी।'' बलवीर ने प्रस्ताव रखा था।

अगले रोज करीब दो बजे बलबीर स्नान करके कपड़ा पहन रहा था, तभी शिवेन्द्र कहीं से आ गया। बलवीर ने कहा- ''शिब्बू, तुम तो नहा-धोकर फिट्ट हो। ठंडाई बँटने का समय हो गया ?''

शिवेन्द्र अभी ठंडाई की टोह लेने गया था। वहाँ ठंडाई के शौकीन पहुँच चुके थे। वह बलवीर को लेकर ठेकेदार के यहाँ पहुँचा। कुएँ की जगत पर बैठा मातबर का छोटा भाई निरंजन ठंडाई बाँट रहा था। छोटे-बड़े ढेर सारे लोग उसे घेरे खड़े थे। दूसरी तरफ ओसारे के आगे पीले बौरों से लदे-फँदे आम के पेड़ के नीचे तखत पर ढोल, मंजीरा, करताल के साथ एक गोल फगुआ गाती झूम रही थी - ''गोरी सोवइ ओसरवा अकेली जोबन दुइनौ खोली ई... ई.... ई... एक तौ दिन दुपहर कै जुनियाँ, दुसरे केवरिया खोली. ..'' बलवीर ठंडाई के तलबगारों के पीछे खड़ा फगुआ वालों के हाव-भाव, लटके-झटके देखने लगा। इसी समय शिवेन्द्र को अपनी ओर बढ़ता देखकर मातबर गुर्रा उठा- ''क्यों बे, तू फिर आ गया ?''

''दादा तक मैं ठंडाई पीने नहीं आया था।''-शिवेन्द्र ने सहमते हुए सफाई दिया- ''मैं अपनी मौसी वाले बलवीर भइया के लिए ठंडाई देखने आया था ... ।''

''बुलाओ कहाँ है ? सारे रिश्तेदारों को हमारे बूते न्योत दिये हो... अय।'' बाल्टी में लोटा डुबाते हुए निरंजन ने कहा।

निरंजन को घेरे खड़े कुछ लोग हंस पड़े। पीछे खड़े बलवीर को निरंजन का रुख बेहद नागवार गुजरा। वह वहीं से खिसक लिया। शिवेन्द्र भीड़ से बाहर आया और बलवीर न दिखा तो वह मायूस होकर घर लौट आया। यहाँ बलवीर को देखकर बोला- ''भैया, मैं तुम्हें वहाँ ...?''

''छोड़ शिब्बू....''- उसने शिवेन्द्र की बात बीच में ही काट दी- ''ऐसे रद्दी आदमी के यहाँ क्या रुकना ? तुम भी कभी न जाना। ठेकेदार होने का यह मतलब नहीं कि सब उसके ताबेदार हो गए ! न जबान में लगाम और न तमीज से वास्ता....''

शिवेन्द्र को भी निरंजन की बात से चोट पहुँची थी। उसी दिन उसने गाँठ बाँध लिया था कि जब भगवान चार पैसे का आसरा देगा तो अपने दरवाजे पर फगुआ और ठंडाई का आयोजन करूँगा। उस समय लोग देखेंगे, व्यवहार किसे कहते हैं ? शिवेन्द्र प्रागदीन साव के यहाँ थे, तब फगुआ यानी फाग-गायन लोक जीवन से विदा हो चुका था। ठंडाई का चलन बाकी था। उस साल होली पर पहली बार उन्होंने अपने यहाँ ठण्डाई बनवाई थी। मास्टर होने के बाद तो कहना ही क्या ? यहाँ तक कि पाँच-सात साल गुजरते-गुजरते गाँव में और लोगों के यहाँ ठण्डाई बननी ही बन्द हो गई। क्योंकि उनकी लज्जतदार ठंडाई के आगे औरों की ठंडाई धरी की धरी रह जाती थी।

इधर तो शिवेन्द्र ठंडाई में एक-डेढ़ झाबा नारंगी और आठ-दस अनानास का रस भी मिलवाने लगे थे। महक के लिए केवड़ा जल अलग से पड़ता। पिछली दफे उनकी ठंडाई जिसने भी मुँह से लगाई, प्रशंसा की झड़ी लगा दिया- ''क्या गजब की चीज है...!''

सोहन बताता है। उस रोज शिवेन्द्र ने साढ़े पाँच बजे ही हाँक लगा दिया था- ''महरा... ओ महरा...''

सोहन महरा मुँह में बीड़ी दबाये तहमद लपेटता हाजिर हो गया। उन्होंने समझाया- ''देखो, यह परात में सारा माल रख दिया है। इसमें से एक बकोट भर मसाला निकालकर शिवजी के लिए घोट दो। मैं नहाकर मंदिर चला जाऊँ, फिर आराम से धीरे-धीरे करते रहना... ।''

सोहन ने अमरूद की हरी पत्तियों से रगड़कर सिल साफ करना शुरू किया और शिवेन्द्र नहाने चले गए। करीब बीस-पच्चीस मिनट बाद वे प्रेस किया हुआ पुराना कुर्ता-पायजामा पहने महरा के पास आ गए। सिल पर निगाह डालते हुए बोले- ''अभी नहीं... ''

''बस दो मिनट मास्टर साहब, डिल्लू लाएं...'' - सोहन ने सटासट बट्टा चलाते हुए जवाब दिया।

शिवेन्द्र स्टील के मझोले डिब्बे में चीनी लेकर आ गए। महरा ने सिल से उठाकर ठंडाई डिब्बे में डाल दिया। नल चलाकर थोड़ा सा पानी उन्होंने डिब्बे में लिया और साइकिल की हैंडिल में डिब्बा लटकायें बभनौटी के शिव मन्दिर में चले गए। सबसे पहले मंदिर की बाल्टी में रंग घोलकर शिव, पार्वती, गणेश, कार्तिकेय और नन्दी को सराबोर किया। सबके माथे पर अबीर लगाया, फिर ठंडाई में और पानी मिलाकर पूरे शिव परिवार को छकाया... शिवजी के सामने हाथ जोड़कर विनती करने लगे- ''भोले बाबा, सब पर दया रखना। आपकी बूटी लेने वाले किसी भगत का अनभल न होने पाए महाराज...।''

इस बीच बभनौटी से कुछ शौकीन इधर आ गए थे। सबको एक साथ प्रणाम करते हुए शिवेन्द्र ने पुजारी को आवाज लगाई- ''महाराज जी, भगत आए हैं। कुल्हड़ हो तो लायें। आप भी प्रसाद ले लें।''

पुजारी कुल्हड़ तो नहीं, लेकिन छोटे वाले फाइबर के गिलास की लच्छी लिए कोठरी से निकला। सबने प्रसाद लिया। किसी ने दो गिलास, तो किसी ने तीन..., जिसका जितना मन हुआ। सबके चेहरे की संतुष्टि देख, शिवेन्द्र आनन्दित थे। तभी पुजारी ने एक गिलास ठंडाई निकालकर उनकी तरफ बढ़ा दिया- ''मास्टर साहब आप भी प्रसाद पा लें।''

उन्होंने श्रद्धा भाव से गिलास मस्तक से छुआया, फिर होठों के पास ले आए। गुलाब और इलायची की गहरी महक से उनका मन लहक उठा और अगले क्षण गिलास खाली हो गया। इसके साथ उन्हें झटका- सा लगा- प्रसाद सिर से लगाने के बाद शंकर जी को अर्पित कर देना चाहिये था, पी लेना गलत हो गया। अभी साल भर भी नहीं हुआ, उनके हार्ट की बाईपास सर्जरी हुई थी। जिन्दगी दवा और परहेज पर आ टिकी थी। ऐसे में... खैर, एक छोटे गिलास ठंडाई से क्या बनना-बिगड़ना है-यही सोचते वे घर आ गए।

शिवेन्द्र को भी निरंजन की बात से चोट पहुँची थी। उसी दिन उसने गाँठ बाँध लिया था कि जब भगवान चार पैसे का आसरा देगा तो अपने दरवाजे पर फगुआ और ठंडाई का आयोजन करूँगा। उस समय लोग देखेंगे, व्यवहार किसे कहते हैं ? शिवेन्द्र प्रागदीन साव के यहाँ थे, तब फगुआ यानी फाग-गायन लोक जीवन से विदा हो चुका था। ठंडाई का चलन बाकी था।

यहाँ महरा दो तिहाई ठंडाई घोंट चुका था और इत्मीनान से बैठा चाय सुड़ुक रहा था। वीरेन्द्र एक बाल्टी पर महीन सूती कपड़े में ठंडाई रख के पानी डाल-डाल के 'कपड़छन' कर रहा था। शिवेन्द्र ने तत्काल स्टील के दो ड्रम में ठंडाई तैयार किया। मंदिर से स्टील के डिब्बे में जो बचा हुआ प्रसाद आया था, उसमें से एक-एक गिलास दोनों ड्रम में डाल दिया। अब यह शंकर जी का प्रसाद बन गया। उन्होंने स्टील का डिब्बा सोहन के हवाले कर दिया- ''अब घोंटने के बाद बाकी ठंडाई इसी में रख देना।''

दोनों ड्रम की साइज अलग थी। एक बड़ा ड्रम था, इसमें मसाला ज्यादा डाला गया था। यह सयाने लोगों के लिए था। छोटे ड्रम में बच्चों की ठंडाई थी। इसमें शक्कर और केवड़ा जल तो पर्याप्त था, लेकिन ठंडाई का मसाला नाम मात्र का पड़ा था। नारंगी और अनानास का रस अलबत्ता दोनों में बराबर था। दोनों ड्रमों से थोड़ी-थोड़ी ठंडाई निकल के उन्होंने चखा। तबियत खुश हो गयी। वे ठंडाई वितरण की जिम्मेदारी स्वयं निभाने लगे।

सबसे पहले पास-पड़ोस के पन्द्रह-बीस बच्चों की टोली आई। उन्होंने सबको एक-एक गिलास ठंडाई दी। कुछेक ने ज्यादा की माँग की तो उन्होंने मुस्कराते हुए सिर हिलाकर मना किया- ''नहीं... और नहीं।''

उनका कायदा है- बच्चों को एक गिलास और सयानों को दो ...। बच्चों ने देखा अब यहाँ दाल गलने वाली नहीं है तो चार-पाँच लड़कों ने पिचकारी भर के उनको रंग से तर कर दिया और 'होली है भाई होली है...' का हुड़दंग मचाते भाग गए। रंग से भीगे शिवेन्द्र बच्चों की इस हरकत पर मुस्कराने लगे। इसी समय नौजवान लड़कों की एक बड़ी टोली आ गई। इनको दो-दो गिलास ठंडाई मिली। इनमें भी दो-तीन लड़के ऐसे निकले, जो ठंडाई की महक और स्वाद से और माँगने के लिए विवश हो गए। किन्तु वे पसीजे नहीं। बोले- ''भाई, ऐसा है अभी रंग खेलकर आओ, दूसरी मीटिंग वाली बैठक में ले लेना, ऐसी भी क्या जल्दी है?''

यही बात कहकर वे सबको समझाते हैं। होलिहार उनकी बात मान भी जाते। आज भी किसी ने जिद नहीं की। ठंडाई पिलाते, अबीर-गुलाल और रंग लगाने वालों के गले मिलते दो बज गए। अभी दरवाजे पर न वीरेन्द्र दिख रहे थे, न सुरेन्द्र...। बच्चें का भी पता नहीं था। उन्होंने सुरेन्द्र की बिटिया को आवाज लगाई- ''सोनल बेटा, बड़ी मम्मी से लेकर मेरा मोबाइल तो लाना जरा ...।''

''बड़े पापा, ये तो स्विच आफ है।''- सोनल मोबाइल लेकर बाहर निकलते हुए बोली।

''तब क्या करना है ले जाकर चार्जिंग में लगा दो। बिजली आने का समय हो रहा है।''- उन्होंने कुछ उलझन भरे स्वर में कहा।

इसके बाद शिवेन्द्र ने एक गिलास में ठंडाई निकाला और धीरे-धीरे पी गए। किशमिशी स्वाद और तरावट का असर यह

हुआ कि एक गिलास और पी गए। ठंडाई में उनको गजब का स्वाद मिल रहा था। इसलिए वे एक गिलास और लेना चाहते थे, मगर तभी ... सुबह मन्दिर पर ठंडाई पीने के बाद जैसा झटका लगा था, वैसी ही अनुभूति हुई...। उन्होंने ठंडाई लिए उमगते मन पर लगाम लगाई। इसी समय रंग अबीर से चुपड़े हुए सात-आठ लोगों के साथ उनके वकील भाई आ गए। वे तत्काल ठंडाई वाली जगह से उठ गए- ''बिरेन्दर, अब तुम संभालो। मुझे थोड़ी फुर्सत दो...।''

वीरेन्द्र आगंतुकों को ठंडाई पिलाने लगे और वे तौलिया लेकर नल पर चले गये। वैसे भी उन्हें अधिक रंग नहीं लगा था। हल्का-सा साबुन लगाकर नहाते ही तरोताजा हो गए। घर के अन्दर से साफ कुर्ता- पायजामा पहनकर बाहर आए और शिव मन्दिर की तरफ निकल गए। यहाँ बाहर से ही भगवान का दर्शन किया। चौखट पर मत्था टेकने के बाद बभनौटी में जाकर अपने पुरोहित जी को अबीर लगाके चरण स्पर्श किया। पुरोहित जी ने गद्गद भाव से आशीर्वाद दिया। इस बस्ती में जो भी शुकुल, तिवारी, दूबे मिले, सभी को अबीर लगा के ब्राह्मणोचित अभिवादन. .. दक्खिन टोला में उनकी पत्नी की बुआ हैं। उनसे मिलने की उमंग के साथ वे बभनौटी से निकल आए।

बभनौटी और दक्खिन टोला के बीच में दलित बस्ती है। यहाँ दारू के नशे में टुन्न सुखराम मिल गया। अबीर लगा के पैर छुआ तो शिवेन्द्र ने उसे गले लगा लिया। उसी के साथ दलित बस्ती में चले गये। बिरजू भगत अपने दरवाजे पर बैठा था। वह ठहरा उनके बचपन के दिनों का हलवाहा ! शिवेन्द्र ने आगे बढ़कर उसके अबीर लगा दिया। वह मोटे-मोटे सीसे वाले चश्में के अन्दर से उन्हें पहचानने की कोशिश करने लगा। सुखराम ने बताया- ''द्दू, मास्टर बाबू हैं। पुरवा वाले शिब्बू भइया...।''

भगत हड़बड़ाकर चारपायी से उठने लगा... शिवेन्द्र ने कंधा पकड़कर बैठे रहने को कहा, फिर सोमन की तरफ चले गए। यहाँ रग्घू, धतिंगड़, फेरई से भी मुलाकात हुई। अबीर-गुलाल का आदान-प्रदान हुआ। इसके बाद आराम से हाथ जोड़कर बोले- ''अच्छा भाई, चलते हैं...। सबको राम-राम।''

वे चकरोड पकड़कर दक्खिन टोला में सीधे रघुराज सिंह के यहाँ पहुँचे। पत्नी की विधवा बुआ घर के बाहर ही मचिया डाले बैठी थीं। शिवेन्द्र आगे बढ़कर उनके सामने थोड़ी-सी अबीर गिरा के उनका पैर छुआ। बुआ के नाती उनके लिए एक तश्तरी में गुझिया और पापड़ ले आए। उन्होंने एक गुझिया लिया, आधा पापड़ खाए और आगे बढ़ गए। रास्ते में जो मिले, उनसे अबीर-गुलाल और गले मिलने का सिलसिला चलता रहा...।

सम्भवतः बत्तीस-पैंतीस साल बाद वे गाँव में होली मिलने निकले थे। उन्हें बड़ा आनन्द आ रहा था। लग रहा था, उनके पैरों में पंख लग गये हैं। दक्खिन टोला और पूरब पट्टी के बीसियों लोगों के यहाँ जाकर उन्होंने राम-राम और जैरामजी की किया। वहीं से बनिया टोला में प्रवेश किए। यहाँ राम-जोहार करते वे बीच पट्टी में पहुँचे। यहाँ हवेलीनुमा बड़ा-सा पहला घर तहसीलदार साहब यानी हीरा सिंह का है। इनके घर के सामने नीम के नीचे सात-आठ लोगों की अर्दली जमी थी और गर्मागर्म बहस का सिलसिला चल रहा था। ब्रिगेडियर जसवंत सिंह और एस.डी.एम. सुनील सिंह से अर्से बाद मुलाकात हुई। राजेश्वर सिंह जिला बेसिक शिक्षा अधिकारी हैं। उनको तो शिवेन्द्र पहचान ही न पाए। यहाँ अबीर लगा के सबसे गले मिले और चलने को हुए तो हीरा सिंह ने हाथ पकड़कर बैठा लिया- ''दस मिनट रुको तो सही।''

इसी समय घर के अन्दर से नौकर एक बड़ी तश्तरी लेकर आया और फाइबर की टेबुल पर रख दिया। तश्तरी में प्लेटें थीं और प्लेटों में पकौड़े ! एक कटोरी में चटनी साथ में चम्मच भी। हीरा सिंह ने प्लेटों में चटनी रख के सबकी तरफ बढ़ा दिया। लोग गर्म पकौड़ों का आनन्द लेने लगे। हीरा सिंह ने शिवेन्द्र को लपेटते हुए रुकी हुई बहस दोबारा आरम्भ की- ''मास्टर साहब , आप बताएं कि गाँव की जो पुरानी छवि है, क्या आजकल के बच्चे उसके अनुकूल उपलब्धियाँ हासिल कर रहे हैं ?''

''बिल्कुल नहीं।'' शिवेन्द्र ने पकौड़े में चटनी लगाते हुए दो टूक फैसला सुनाया- ''पढ़ाई-लिखाई से लेकर प्रतियोगी परीक्षा तक कहीं भी गाँव की नयी पीढ़ी छाप छोड़ने में कामयाब नहीं हो रही।''

जसवंत सिंह, सुनील और राजेश्वर सभी एक स्वर से नए लड़कों के नाकारापन और दोषों की चर्चा करने लगे... पड़ोस के जो तीन-चार अन्य लोग बैठे थे और किसी लायक नहीं थे, वे भी बीच-बीच में तुक्का जड़ने से बाज नहीं आ रहे थे। शिवेन्द्र मन ही मन इस बात को लेकर कुढ़न महसूस कर रहे थे। पकौड़ी समाप्त करके उन्होंने दो घूँट पानी पिया, फिर बहस में हस्तक्षेप किया- ''साहबान, बच्चे तो बच्चे हैं, मगर हम कैसे हैं- यह भी मायने रखता है। मेरा मानना है, गाँव के सफल लोग कम से साल में एक बार यहाँ आएँ, बच्चों से मिलें-जुलें, उन्हें आगे बढ़ने के लिए प्रेरित

बहस एक अलग दिशा में चल निकली... पकौड़े समाप्त हो चुके थे। हीरा सिंह ने सबके लिए चाय मंगवा ली थी। चाय की चुस्कियों के बीच यह निष्कर्ष निकला कि गाँव के सारे महत्त्वपूर्ण लोग एक साथ नहीं एकत्र हो सकते। यह असंभव है। हाँ, कोई दमदार और गम्भीर आदमी प्रयास करे तो हर साल अदल-बदलकर पन्द्रह-बीस लोगों के आने की आशा की जा सकती है।

करें, तो निश्चित रूप से यह असरकारक होगा।''

बहस एक अलग दिशा में चल निकली... पकौड़े समाप्त हो चुके थे। हीरा सिंह ने सबके लिए चाय मंगवा ली थी। चाय की चुस्कियों के बीच यह निष्कर्ष निकला कि गाँव के सारे महत्त्वपूर्ण लोग एक साथ नहीं एकत्र हो सकते। यह असंभव है। हाँ, कोई दमदार और गम्भीर आदमी प्रयास करे तो हर साल अदल-बदलकर पन्द्रह-बीस लोगों के आने की आशा की जा सकती है। ब्रिगेडियर साहब ने सुझाया- ''अगले साल होली पर सबको आमन्त्रित किया जाए और जो आ सकें, उनको लेकर होली मिलन समारोह जैसा आयोजन किया जायेगा। इसी में नए लड़कों से आमने-सामने की वार्ता होगी। देखा जाए, यह पिछड़ क्यों रहे हैं ? कारण समझ में आए तो निवारण का प्रयास हो। सामुदायिक मिलन केन्द्र पर साइबर कैफे की व्यवस्था तो हो ही सकती है, मास्टर साहब सच कह रहे हैं, पहले हम बच्चों के लिए करें, तब उम्मीद पालें...।''

तहसीलदार साहब ने इस आयोजन का मुख्य कर्ता-धर्ता शिवेन्द्र को बनाने का आग्रह किया। उन्होंने इस स्वीकार भी कर लिया। यहाँ से वे पश्चिम पट्टी प्रधान के यहाँ चल पड़े। चुनाव के समय से ही उसका मन मोटा चल रह था। इसलिए उसके दरवाजे पर पहुँचना जरूरी था। हालांकि प्रधानजी दरवाजे पर नहीं मिले। परिवार के और लोग थे। प्रेम भाव भी दिखा। प्रसन्न मन लिए वहाँ से परिवार के पुराने सहयोगी गनपत सादव के घर पहुँच गए। सबसे राम रमाहुज हुई। हालचाल के आदान-प्रदान का सिलसिला चल रहा था, तभी गनपत की पत्नी नई ब्यायी भैंस का गुनगुना दूध ले आई। वे बड़े प्रेम से धीरे-धीरे पी गए।

करीब साढ़े पाँच का समय हो चुका था। वे खड़े हो गए और



सबसे राम-जोहार करते सड़क पर आ पहुँचे, तभी पीछे से एक मोटरसाइकिल की आवाज सुनाई पड़ी। वे उसे रुकने का संकेत देते हुए खड़े हो गये। रंग-अबीर से सराबोर युवक ने मोटर-साइकिल रोक दी। हाथ जोड़कर सिर झुकाते हुए बोला- ''प्रणाम सर, आदेश करें।''

''चौराहे की तरफ जाना हो तो मुझे भी लेते चलो। कुर्मियाने वाले मोड़ पर छोड़ देना।'' - शिवेन्द्र ने कहा।

''जी आएं।'' - कहते हुए वह सीट पर थोड़ा आगे सरक गया। वे आराम से बैठ गए। दो मिनट बाद मोटरसाइकिल धीमी होती मोड़ पर रुक गई। अभी मजे का उजाला था। वे जल्दी-जल्दी चलते बस्ती के उत्तरी छोर पर बैरागी के यहाँ पहुँच गए। पिताजी के समय इस परिवार से घनिष्ठता थी। जब कि इधर एक अर्से से कार्य-प्रयोजन में भी आना-जाना ठप चल रहा था। बैरागी तो उन्हें पहचान ही न पाया, लेकिन खुद परिचय देने की नौबत नहीं आई। उसका छोटा लड़का सजीवन उन्हें देखते ही चहक उठा- ''शिवेन्दर भइया आप !''

''हाँ भाई इधर वर्षों से अपने लोगों की बात-व्यवहार ठप थी। इसे फिर से शुरू करने के लिए पहल जरूरी लगी... यही सोचकर चला आया।'' - बैरागी को अबीर लगाते हुए उन्होंने जवाब दिया।

''बड़ा अच्छा किये बाबू... हमारी धन्य भाग...।'' - बुजुर्ग हो चुका बैरागी काफी गद्‌गद था। अपने बड़े लड़के को आवाज दिया- ''परभूदयाल ! बाबू आए हैं, कुछ खाने- पीने को लाओ . ..''

शिवेन्द्र सामने वाली चारपायी पर बैठ गए और घर-परिवार की हालचाल लेने लगे, तभी एक लड़का छोटी-सी मेज लाकर उनके सामने रख दिया। प्रभूदयाल एक नई थाली में गुझिया, मठरी और पुए ले आया। बैरागी के प्रेम भरे मनुहार के आगे उन्हें थोड़ा-थोड़ा सब कुछ लेना पड़ा। खाँटी दूध की बनी चाय का आनन्द लेने के बाद वे विनम्रता से बोले- ''चौधरी साहब, अब चलने दें। अँधेरा घिरने लगा है।''

बैरागी ने अपने किशोरवय के नाती को बुलाकर कहा- ''जाओ बाबू को सड़क पर छोड़ आओ। उधर खुले में अँधेरा कम होगा...।''

शिवेन्द्र उसके साथ कुर्मियाने के बाहर आए, फिर बोले- ''बेटा, लौट जा, अब मैं अकेले चला जाऊँगा...।''

वे सूनसान सड़क पर आगे बढ़ने लगे.... आज वर्षों बाद वे दरबे की जिन्दगी से बाहर निकले थे। उन्हें अजीब सुख मिल रहा था। सामने आसमान पर चन्द्रमा के निकलने का सुनहला उजास झलक आया था, ऐसा ही उत्साह का सोता उनके मन में भी फूट रहा था... हीरा सिंह के यहाँ जा फैसला हुआ है, उस पर ढंग से काम करना होगा ... कल से ही सबका कांटैक्ट नम्बर जुटाना शुरू



करता हूँ। इससे सामाजिकता भी सघन होगी... यही सब सोचते-विचारते वह धीमी गति से चल रहे थे। किशमिशी ठंड बढ़ने लगी थी। आसमान पर पूरा चाँद डहडहा रहा था। मगर उनको कोई उतावली नहीं थी... वह एक पुलिया पर आधे घण्टे के लिए बैठ भी गए थे।

इधर घर में एक आशंका भरी बेचौनी फैली थी कि भइया कहाँ रह गए ? चार बजे से छह बजे के बीच मिलने-जुलने वाले कई लोग आए थे। वीरेन्द्र और सुरेन्द्र के साथ बच्चे भी आगंतुकों के सत्कार में लगे थे। मगर शिवेन्द्र की कमी खल रही थी। लोग पूछ ही बैठते- ''शिवेन्दर भइया नहीं दिख रहे !''

''यही पुरवा में किसी के यहाँ बैठे होंगे।'' वीरेन्द्र कह देते। मगर जब साढ़े छह से ऊपर होने लगा तो सुरेन्द्र और वीरेन्द्र को भी कचोट पड़ने लगी कि ढाई बजे के निकले अब तक कहाँ बैठे रह गए ? ले-देकर पुरवा में अपने ही परिवार के तीन घरों में अबीर लगाने जाते थे। बहुत हुआ तो मौसी के यहाँ तक चले गए, उनका घर भी पुरवा में ही है, दूर नहीं... ऐसे तो किसी होली में गुम नहीं होते थे। मोबाइल भी नहीं ले गए, अन्यथा... परिवार वाले हलकान हो रहे थे।

सत्यम और प्रशांत मोटरसाइकिल लेकर उनकी खोज में निकलने का मनसूबा बना रहे थे, तभी वे आ गए। सीधे नल पर पहुँचे। इत्मीनान से हाथ-मुँह धोये और दरवाजे पर आ बैठे। बोले - ''आज आधा गाँव गोंठ आया, खाने की तो बिल्कुल इच्छा नहीं है, बस लेट जाने का मन है...।''

सत्यम और लोकेश ने उनकी चारपायी पुराने बैठके में बिछा के, मच्छरदानी तान दिया। बिजली थी ही। घर से अपनी टार्च और मोबाइल लेकर बैठक में चले गए। वहीं दवा खाए और मोबाइल पर राघवेन्द्र की कुशल-क्षेम लेने लगे। बाद में काफी देर तक मुक्ता से बतियाते रहे...। कब लेटे, कोई नहीं जानता।

परिवार में शिवेन्द्र सबसे पहले बिस्तर छोड़ते थे। पहले गाय-भैंस को चारा डालते, फिर कुंचरा लेकर दुआर बहारते... मगर वर्षों बाद ऐसा नहीं हुआ। करीब साढ़े छह बज गए, शिवेन्द्र बिस्तर नहीं छोड़े। सुरेन्द्र ने बैठक में जाकर धीरे-धीरे पुकारा- ''भइया . .. हे भइया...।''

कोई प्रतिक्रिया नहीं हुई। तब सुरेन्द्र ने उन्हें हल्के से हिलाया-डुलाया... और फिर अचानक पता नहीं क्या सोचकर जल्दी से मच्छरदानी हटा दिया... इसके बाद अप्रत्याशित रूप से सुरेन्द्र घिघियाते हुए चीख पड़े- ''भइया ...ऽ...ऽ...''

सत्यम और रजत दौड़ते आए। 'का हुआ भइया ?' कहती हुई बड़के बाबू के यहाँ से भौजी आ गईं। वीरेन्द्र की पत्नी बैठक तक आते-आते गिर पड़ी। सुरेन्द्र भोकार छोड़कर रोने लगे। शिवेन्द्र की पत्नी भागकर आई। अचानक ही कोहराम मच गया। आस-पास के लोग आने लगे। आधे घंटे के अन्दर दारुण क्रन्दन के बीच तीन-चार सौ लोगों की भीड़ जुड़ गई। अधिकतर लोगों के मुँह पर एक ही सवाल था- ''यह क्या हुआ, अभी कल तक तो . ..।''

अभी आठ बजे थे। भीड़ में कुछ लोगों ने शिवेन्द्र के दादा के लड़के दीपेन्द्र को सुझाया- ''भइया तुम मुक्ता और इंजीनियर साहब को खबर करवा दो।

दीपेन्द्र ठकराये से बैठे एकटक शिवेन्द्र पर निगाह जमाये सुरेन्द्र को एक तरफ ले गया। मगर सुरेन्द्र इतना हतप्रभ था कि फोन भी न कर सका। दीपेन्द्र ने दोनों लोगों को जैसे-तैसे सूचित किया। इसके बाद उसने खानदान के सयाने लोगों को बताया- ''मुक्ता दो ढाई घण्टे में पहुँच रही है। राघवेन्द्र के पास कार है। लेकिन लखनऊ से यहाँ तक आने में चार घंटे लगेंगे ही। शवयात्रा एक बजे के बाद ही शुरू होगी। इस बीच सारी तैयारी पूरी कर ली जाए...।''

सभी सहमत थे, जो जिस लायक था, उसी में जुट गया। शिवेन्द्र इस सारी हलचल से बेखबर चिर निद्रा में खो चुके थे। करीब दस बजे तक अंतेष्ठि की व्यवस्था पूरी हो गई। बस, आने वाले भाई-बहन का इन्तजार था...।

शिवेन्द्र खास होली की रात स्वर्गवासी हुए, लिहाजा उनके परिवार में होली 'हंड़ही' हो गई। अब तो होली के दिन घर में किसी के पुत्र जन्म ले, तो होली की फिर शुरूआत हो। पिछले पाँच वर्षों से उनके यहाँ होली नहीं मनाई जाती। मगर गाँव वालों ने यह रीति बना रखी है, होली का समापन उन्हीं के दरवाजे पर करते हैं। होलिहार शांत से शिवेन्दर के दरवाजे पर आते हैं। पाँच-सात मिनट गम में डूबे चुपचाप बैठते हैं और फिर धीरे-धीरे उठकर अपनी-अपनी राह लग जाते हैं।

पोस्ट आफिस-जासापारा, गोसाईंगंज-228119
सुलतानपुर (उ.प्र.), मोबाइल-09450143544

कहानी

खुशियों का घर

● हेमचन्द्र सकलानी

अमर जी ने हाथ डालकर लैटर बॉक्स से डाक निकालते हुए एक सरसरी नजर से देखते हुए घर के अंदर प्रवेश किया। एक लिफाफे पर आदेश का नाम देख उन्होंने आवाज लगाई थी 'अरे आदेश तुम्हारा पत्र आया है।' 'अरे पापा मैं बाथरूम में हूं आप ही खोलकर देख लो' आदेश ने कहा था। आदेश के कहने पर उन्होंने लिफाफा खोलकर लैटर निकालकर पढ़ा तो खुशी से आदेश को आवाज लगायी 'अरे आदेश यूनिवर्सिटी से तुम्हारा एप्वाईंटमैन्ट लैटर है। बधाई है तुम्हें।' भागता हुआ चला आया था आदेश। पूरे घर में खुशी की लहर छा गई थी। इसी वर्ष अमर जी का रिटायरमैन्ट था। उनकी सबसे बड़ी इच्छा यही शेष रह गयी थी कि आदेश की सर्विस लग जाये और बेटी रंजना की और आदेश की शादी अपने सामने कर जायें। आदेश मिठाई लाने चला गया था और अमर जी उनकी धर्मपत्नी खुशखबरी परिचितों और रिश्तेदारों को देने में व्यस्त हो गये थे। एक छोटे से अपने पैसों से बनाये घर में, एक छोटा सा बड़ा सुखी परिवार है अमर जी की पत्नी और दो बड़े समझदार बच्चे। सुखी परिवार इस लहजे में था कि सुख दुख में सन्तुष्टि, और की लोभी लालसा, किसी भी प्रकार का लालच बिलकुल भी न होने के कारण। जितना है उसमें ही सन्तुष्ट रहने की भावना, हर आने जाने वाले का हंसते मुस्कराते स्वागत, सम्मान हो या विदा करने की भावना, सोच, उनके परिवार की सुख शान्ति का प्रमुख कारण थी।

यूनिवर्सिटी उसी शहर में थी इस कारण मां जी पिताजी को छोड़कर दूसरी जगह जाने का दुख, या उनकी चिन्ता में परेशान रहना जैसी कोई दूसरी बात भी आदेश के लिए नहीं थी। चरित्र, सभ्यता, संस्कृति, व्यवहार, शालीनता, तहजीब में उनके परिवार से सुंदर कोई अन्य उदाहरण नहीं था, ऐसा अड़ोसी पड़ोसियों का मानना था। आदेश का दायरा सर्विस लगने के बाद से काफी बड़ गया था। एक दिन प्रोफेसर गौतम और उनकी पत्नी बाजार में जब आदेश से मिले तो बड़ी गर्मजोशी से गौतम जी ने अपनी पत्नी का परिचय आदेश से और आदेश का परिचय अपनी पत्नी से कराया, तो जरा सी देर में गौतम जी की पत्नी की नजर में अपनी जवान बेटी के लिए आदेश छा गया था। उन्हें लगा अपनी बेटी के लिए वर तलाशने के दिन जैसे खत्म हो गये। बड़ी आत्मीयता से उन्होंने आदेश को घर आने का निमंत्रण दे दिया था। जिसे आदेश अस्वीकार न कर सका। गौतम जी को जब उनकी पत्नी ने अपने मन की बात बतायी तो उन्हें भी बात सही लगी। एक दिन गौतम जी आदेश को घर ले ही आये। दोनों ने आदेश का जोरदार स्वागत किया।"

"अरे बेटी मधु, जरा चाय वाय लेकर आओ, देखो प्रोफेसर आदेश आये हैं गत वर्ष ही एप्वाईन्टमेंट हुआ है इनका।'' कुछ देर बाद चाय की ट्रे लेकर सकुचाती हुई आयी थी मधु। ट्रे रखकर जाने लगी तो गौतम जी की पत्नी ने कहा 'अरे कहां जा रही हो जरा परिचय तो करवा दूं तुम्हारा' कहते हुए उन्होंने दोनों का एक दूसरे से परिचय कराया था। एक नजर आदेश ने देखा था मधु को। आधुनिकता में रंगी, पहली ही नजर में उसे अच्छी लगी थी, लगती भी क्यों नहीं सुंदर जो थी। तुरन्त उसने नजर झुका भी ली थी। सुंदरता और बातों का तरीका उसे बहुत अच्छी लड़की साबित कर रहा था। फिर तो दोनों का एक दूसरे के घर में आना जाना भी शुरू हो गया था।

एक दिन अमर जी ने आदेश से बातों बातों में पूछ ही लिया ''आदेश यदि मधु तुम्हें पसंद हो तो शादी की बात हम आगे बढ़ायें।" आदेश तो जैसे प्रतीक्षा में ही था। पर कुछ देर रुक कर बोला ''नहीं पापा पहले रंजना की शादी हो जाये उसके बाद सोचूंगा।'' इसी वर्ष अमर जी सेवानिवृत होने वाले थे उनकी हार्दिक इच्छा थी कि उससे पहले आदेश की सर्विस लग जाये और दोनों की शादी हो जाये। रंजना के लिए भाग दौड़ कर भी रहे थे। बहुत अमीर सम्पन्न, बडे अधिकारी जैसा कोई लोभ भर उन्हें नहीं था, बस चाहते यही थे कि लड़का स्वभाव, आचार-विचार का अच्छा हो, जहां खुश रह सके। जिस घर में बेटी जाये उस घर में सुख, शांति का वास हो।

कुछ महीने के प्रयास के बाद उन्हें अपनी हैसियत का मध्यम वर्ग का त्रिपाठी परिवार मिल ही गया। बेटी की शादी हो चुकी थी



और अपने बेटे अशोक के लिए बहु तलाश ही रहे थे जो भारत संचार निगम में कार्यरत था। अमर जी ने जब अपने मन की बात रंजना को बताई तो वह बोली ''नहीं पापा मुझे नहीं करनी शादी। पड़ोस में गुप्ता अंकल आंटी कितना लड़ते हैं आपस में। और वो वर्मा जी के घर में भी रात दिन लड़ाई झगड़े मारपीट, चीखने चिल्लाने की आवाजें आती रहती हैं।'' पर किसी तरह बाद में रंजना को तैयार कर ही लिया था। घर से बेटी को विदा करने से पहले अमर जी ने बहुत समझाया था बेटी को कि 'अब तुम्हें वहां अपना नया घर बसाना है। हजारों वर्षों से समाज की यह परम्परा रही है कि लड़की को दूसरे घर के लिए विदा होना ही होता है। अब वही तुम्हारे माता पिता हैं। अपने पति का सम्मान, अपने सास ससुर का सम्मान तुम्हारा पहला कर्तव्य है। उस घर के लोगों को अपने अनुसार एडजस्ट करने की कोशिश न कर उनके साथ अपने को एडजस्ट करना है। उनके सुख दुख तुम्हारे सुख दुख होने चाहिये इसी में तुम्हारी और उस घर की खुशी होगी। घर को घर समझना होटल की तरह नहीं।' 'पापा आप निश्चिंत रहें आपको कभी शिकायत सुनने को नहीं मिलेगी' कहा था रंजना ने।

रंजना की शादी के बाद मधु और गौतम जी का अमर जी के घर में आना जाना काफी बढ़ गया था। आदेश की सज्जनता, आचार, विचार, व्यवहार, आचरण ने उन्हें जैसे बांध कर रख दिया था। उन्हें लग रहा था इस परिवार में उनकी पुत्री बहुत सुख, शांति, और आराम के साथ रहेगी। गौतम जी की पत्नी बातें बनाने में एक्सपर्ट थी। महिला कर्तव्यों की नहीं, अधिकारों की जबर्दस्त हिमायती थीं। इस पर वक्तव्य देने बैठतीं तो एक घंटा यूं ही गुजर जाता, और गौतम जी बेचारे धीरे से हां हूं करते रहते। एक दिन अमर जी से रहा नहीं गया तब उन्होंने कह ही दिया ''बहन जी मेरी धर्मपत्नी ने इस घर में कभी अपने अधिकारों की बात नहीं की। उसने अपना सारा जीवन अपने कर्तव्यों को निभाने में इस तरह लगा दिया जैसे कर्तव्य ही उसके अधिकार हैं। और सच भी है अधिकार उसी के होते हैं जो अपने कर्तव्यों को ईमानदारी से निभाता हों। इसी कारण मुझे अपने अधिकारों के बारे में कभी सोचने का अवसर ही नहीं मिला और मैं यह मानता रहा जैसे सारे अधिकार ही उसके हैं।'' गौतम जी की पत्नी का चेहरा तब देखने लायक था। अमर जी को गौतम जी के अधिकतर चुप रहने का कारण तब समझ में आया। जल्दी ही वह दिन भी आया जब आदेश और मधु की शादी हुई। दोनों पति पत्नी सामान दिखाते बड़े प्रसन्न और खुश नजर आ रहे थे। मगर अमर जी उनकी पत्नी और आदेश को सामान से जैसे कोई मतलब ही नहीं था। वे सब अपने परिवार के भविष्य की खुशियां इस शादी के पीछे देख रहे थे।

कुछ दिनों तक सब सामान्य चलता रहा, जैसा कि भारतीय परिवारों में होता है। मगर एक वर्ष भी नहीं हुआ था कि मधु को उस परिवार में सास ससुर में आदेश में खामियां ही खामियां नजर आने लगीं थी। वह परिवार जहां आपसी प्रेम, स्नेह, आदर, सम्मान जिसका गहना था धीरे धीरे उस घर में इन सब की कंगाली नजर आ रही थी। मधु का सास, ससुर ही नहीं आदेश के प्रति भी व्यवहार भी बहुत बदल गया था। हंसी, खुशी से भरपूर उस घर में उदासी पसरी नजर आने लगी थी। किसी भी कलह से बचने के लिए सबने आपस में बोलना चालना छोड़ दिया। सुबह की चाय नाश्ते से लेकर रात के खाने तक का सारा ढर्रा, अपने मन से अपने लिए के कारण अस्त-व्यस्त हो गया था। किसकी क्या इच्छा है किसको क्या परेशानी है से किसी को कोई मतलब नहीं रह गया था। यहां तक कि आदेश से भी बस जरूरत भर की बात होती थी, सास ससुर से तो ना के बराबर।

एक दिन रंजना का फोन आया ''भाभी कुछ दिन के लिए मेरे पास आ जाओ कुछ चेंज हो जायेगा। मधु जैसे इंतजार में ही थी कि कब इस घुटन और दुःख भरे वातावरण से छुटकारा मिले कुछ समय के लिए। अगले दिन मुंह फेर कर वह आदेश से बोली ''रंजना का फोन आया था, दो तीन दिन के लिए मुझे बुला रही है। आज मैं उसके यहां जा रही हूं।'' '' ठीक है चली जाओ।'' धीरे से आदेश ने कहा। रंजना को फोन कर उसने बता दिया था कि शाम को पहुंच रही हूं। शाम को जैसे ही उसने मकान की काल बेल बजाई, कई कदमों की आवाजें एक साथ उसे सुनाई पड़ी थीं। दरवाजा खोलते ही रंजना, उसकी सास, उसके ससुर ने बड़ी गर्मजोशी से हंसते मुस्कराते उसका स्वागत किया। इतनी आत्मीयता भरे स्वागत की उसने कल्पना भी नहीं की थी। ''कैसी हो, कमजोर हो गयी हो, अपना ख्याल नहीं रखती, घर में सब कैसे हैं? ''जैसे अनेक प्रश्न उस तरफ से उठे थे। इतने प्रश्न, अपने सम्बंधों के प्रति इतनी चिन्ता, इतनी उत्सुकता देख वह चौंक पड़ी थी। रंजना की सास बोलीं ''रंजना तुम मधु के साथ बैठकर गप्पें लड़ाओ मै चाय बनाकर लाती हूं....।''

''नहीं मां जी आप बैठ कर इसके साथ बात करो, चाय मै बनाकर लाती हूं, पापा जी आप भी इधर आ जाओ' कह कर वह रसोई मे चली गयी थी। तभी काल बैल फिर बज उठी, रंजना दौड़ती हुई दरवाजा खोलने चली गई, उसे पता था यह समय अशोक के आफिस से आने का है। उसके हाथ से बैग लेते बोली ''आज थोड़ी देर कर दी आपने ''बड़े प्रेम से पूछा था उसने। ''हां थोड़ा देर हो गयी रास्ते में जाम की वजह से'' उत्तर दिया था अशोक ने। ''आप कमरे में बैठो देखो मधु आयी हुई है। आपके लिए वहीं चाय लाती हूं।'' रंजना द्वारा अपने पति का इतना आत्मीयता भरा स्वागत देख वह सोच में पड़ गयी थी। ''क्या सोच रही है मधु ?'' चाय सामने रखते पूछा था रंजना ने। चाय के साथ हंसी ठिठोली, एक दूसरे के प्रति मान सम्मान, आदर, एक दूसरे की भावनाओं का ख्याल रखते चलती रही। बहुत दिनों बाद हॅसने का अवसर आया था। जिस कारण मधु बड़ा हल्कापन आज महसूस कर रही थी।

सुबह जब सब सो रहे थे, चाय लेकर रंजना सभी को जगा रही थी। साथ ही साथ पूछती जा रही थी मम्मी आप नाश्ते में क्या लोगे, पापा आप नाश्ते में क्या लोगे, आप आफिस लंच के लिए क्या लेकर जाओगे" पूछते-पूछते वह थक भी नहीं रही थी। सब का हंसते हुए एक ही उत्तर था ''अरे रंजना जो बना दोगी वही ले लेंगे तुम परेशान मत हो।''

अशोक को आफिस जाने के लिए तक दरवाजे तक छोड़ने आयी थी, साथ साथ याद दिला रही थी पर्स रख लिया है, ड्राईविंग लाइसेंस रखा या नहीं। फिर शाम को आते समय भी दरवाजे पर उसका स्वागत करती थी।

''दीदी आप कैसे इतना सब कर लेती हो ?" रंजना के हाथ से चाय लेते पूछा था मधु ने रंजना से।

हंसते हुए रंजना ने कहा ''मधु सच बताऊं मेरी सोच, मेरे खयाल ही कुछ दूसरी तरह के हैं। मेरा स्पष्ट कहना है कि जो लड़की अपने पति, अपने, सास-ससुर का आदर सम्मान न कर सके उसे शादी ही नहीं करनी चाहिये और जो सास-ससुर, बेटा घर की बहू को अपनी बेटी की तरह न रख सकें उस लड़के को भी शादी नहीं करनी चाहिये। शादियां घरों को जोड़ने के लिए होती हैं तोड़ने के लिए नहीं। घर हो तो खुशियों का घर हो वरना.... ।'' थोड़ी देर ठहर कर बोली ''अरे भाभी सैकड़ों वर्षों से परिवार में समाज में ऐसा ही होता रहा है। जब भी हंसके कोई कार्य करती हूं तो सभी मेरे साथ खड़े रहते हैं, सहयोग करते हैं अब हंसके कर लो या मुंह फुलाकर बैठे रहो कुछ न करो। जब अपना परिवार है तो अपने परिवार की खुशियों के लिए क्या नहीं करना चाहिये, ये तो अपना काम है इसमें क्या ना नुकुर करनी।'' साथ-साथ कह रही थी ''पापा आपको डाक्टर के पास जाना है आज दस बजे याद है ना ?'' ''हां, हां याद है बेटी।"

''अरे हां, मधु जब एक औरत एक अच्छी मॉ हो सकती है, एक अच्छी बहन हो सकती है, एक अच्छी बेटी हो सकती तो भला एक अच्छी बहु, एक अच्छी सास क्यों नहीं हो सकती। यही प्रश्न मुझे हमेशा कौंधता रहा है।'' मन ही मन सोच रही थी मधु मेरे घर में जब भी कोई कुछ कहता वह उलटा जवाब देती थी। हमेशा तनाव रहता था किसी की किसी से बात चीत नहीं होती थी कितना बोझिल हो गया था घर का वातावरण। कौन है इसके लिए दोषी ? उसे लग रहा था जैसे उसकी उंगली उसी की ओर उठ रही थी। सच भी है, मैंने ही उस घर में कब किसी का खयाल रखा, कब किसी को मान सम्मान, आदर दिया। फिर मुझे कैसे उस घर में जो मेरा अब अपना था, वही सब कैसे कोई मुझे देता। उसे लग रहा जैसे उसी के कारण उस घर की यह हालत हुई। सोचते हुए वह अपना बैग ठीक करने लगी थी। ''अरे ये क्या कर रही हो कल ही तो आई थी। तीन चार दिन रुकना था तुम्हें।' ''नहीं दीदी आधुनिक सोच ने मेरा दिमाग खराब कर दिया था। आपके परिवार को आपको देखकर मुझे पता चला परिवार की खुशियों के लिए ही नहीं अपनी खुशियों के लिए भी परिवार के सदस्यों का आदर, सम्मान, अच्छा आचरण, उच्चारण पहली शर्त होती है, मैं अब पूरी तरह बदल चुकी हूं अपने को, कहते हुए उसने अपना बैग उठा लिया था।

1/240 विद्यापीठ मार्ग, विकासनगर, देहरादून, उत्तराखंड,
मोबा. 09412931781



कहानी

जादू की पुड़िया

● **श्याम लाल शर्मा**

"**दादू,** मेरे पेट में बहुत दर्द हो रहा है। स्कूल में भी आज लगातार दर्द होता रहा।" यह कहते हुए रामशरण की टांगों से लिपट उसका सात वर्षीय पोता स्वप्निल पेट ऐंठते हुए सुबक- सुबक कर रोने लगा।

दादू असमंजश में था कि क्या करे। उसने बच्चे को उठा बिस्तर पर लेटाया और उसके पेट की हल्की मालिश की। लेकिन बच्चे को इस मालिश से कोई खास आराम नहीं मिल रहा था। उसे दर्द से कराहते देख रामशरण बहुत दुःखी हो रहा था। परेशान बच्चे ने स्कूल में लंच तक नहीं किया था और महीनों से दी जा रही एलोपैथिक दवाइयां उसकी मर्ज पर कतई असर नहीं दिखा रही थीं। उसे यह भी चिंता हो रही थी कि लंबे समय से बदल-बदल कर दी जा रही अंग्रेजी दवाइयां कहीं बच्चे की सेहत पर उलटा असर न डाल दे।

रामशरण उस दिन बच्चे के स्वास्थ्य को लेकर गंभीर चिंता में था। चिंताग्रस्त मानसिकता के कारण उसके मन में भांति-भांति के प्रश्न पैदा हो रहे थे। स्वप्निल उसका इकलौता पोता था जो बेटे की शादी के पांच सालों बाद पैदा हुआ था। उसे डर था कि बच्चे का इस तरह रोगग्रस्त रहना उसे हमेशा के लिए कमजोर बना सकता है। बच्चा चंचल स्वभाव का था लेकिन पेट में दर्द उठने पर वह झट से रो पड़ता। दर्द के कारण उसका रोना रामशरण को बार-बार व्यथित करता।

रामशरण का जिगरी दोस्त रामतीर्थ इलाके का जाना-माना वैद्य था। रामशरण अपने लिए भी हमेशा उसी से दवाई लेता था। उसको पूरा विश्वास था कि अगर वह पोते को रामतीर्थ के पास ले जाए तो वह उसे अपनी दवाइयों से पूरी तरह ठीक कर देगा। पर उसे अपने बेटे-बहू का डर था जिनका किसी भी वैद्य पर विश्वास नहीं था। उनसे पूछे बिना वह स्वप्निल को वैद्य के पास ले जाकर परिवार में किसी तरह का झगड़ा भी पैदा नहीं करना चाहता था।

इधर बच्चा था कि लगातार कराह रहा था और उसका कराहना रामशरण की परेशानी बढ़ाता जा रहा था। स्कूल से घर लौटकर भी बच्चे ने कुछ नहीं खाया। बच्चे की पीड़ा देख एक बार तो रामशरण ने दूरभाष पर बेटे से कहना चाहा कि आज बच्चे की हालत ठीक नहीं है, इसलिए उसे उसके मित्र वैद्य को दिखलाने दिया जाए जो उसे पूरी तरह ठीक कर देगा, लेकिन उसे बेटे के उत्तर का जैसे पहले से ही पता था, इसलिए हर रोज की ही तरह आज भी उसका मन बेटे से यह पूछने को तैयार नहीं हुआ। उसे पता था कि अगर वह बेटे से यह पूछ भी लेगा तो वह साफ तौर पर इनकार करेगा, उलटे बहू से बताकर उसे भला-बुरा कहलवाएगा।

बेटा-बहू मजबूरी में दिन भर स्वप्निल को दादा के पास रखते तो थे लेकिन शक करते कि दादा कहीं बच्चे की देखभाल ठीक से करता भी है या नहीं। पर दादू था कि अपने पोते पर जान छिड़कता था और अपने से बढ़कर उसकी देखभाल करता था।

जमाना बदला है और यह बदलाव व्यक्ति के खान-पान या रहन-सहन में ही नहीं बल्कि सोच-विचार में भी हुआ है। एक जमाना था जब यह सोच हुआ करती थी कि बुजुर्ग ही बच्चों को अच्छी तरह से संभालना जानते हैं और उनकी देख-रेख में बच्चों का अच्छा पालन-पोषण होता है। लेकिन अब इस सोच में बदलाव आया है। बच्चों की देख-रेख के मामले में अब नई पीढ़ी बुजुर्गों पर विश्वास नहीं करती। उलटा उन्हें यह डर है कि बुजुर्ग अक्सर बीमार रहते हैं और उनकी बीमारी बच्चों को आसानी से लग सकती है। वह एक अनजान आया या अनजान व्यक्ति पर तो विश्वास कर लेते हैं लेकिन अपने उन माँ-बाप या बुजुर्गों पर शक करते हैं जिन्होंने उन्हें हर तकलीफ सहकर भी अच्छी तरह से पाल-पोष कर बड़ा किया होता है। नई पीढ़ी के माँ-बाप अपने आपको इतना ज्यादा समझदार मानते हैं कि बिना सरकारी डिग्री के अपनी कठिन मेहनत, लंबे तजुर्बे और पीढ़ियों से चली आ रही परंपरा की सीख से जांचा-परखा इलाज कर रहे वैद्य की दवाई को छूने तक से परहेज करते हैं। रामशरण द्वारा अपने लिए वैद्य से



लेकर घर में रखी गई दवाइयों को उसके बेटा-बहू बेकार समझकर कई बार कूड़ादान में फैंक चुके थे।

बीमार स्वप्निल को उसके मम्मी-डैडी ने बच्चों के एक से बढ़कर एक विशेषज्ञ डाक्टर को दिखाया था पर उसके पेट की पीड़ हटने का नाम नहीं ले रही थी। इस कारण बच्चा दिनोंदिन कमजोर होता जा रहा था।

रामशरण ने देखा कि आज स्वप्निल पहले से ज्यादा बेचैन है। उसका मुख सूख रहा है और चेहरा पीला पड़ रहा है। बच्चा पीड़ को दबाने के लिए लगातार अपने पेट को ऐंठ रहा था। दादा से बच्चे का दुःख देखा नहीं गया। घर में संभावित कलह के बारे में सोचे बिना वह स्वप्निल को कंधे पर उठा वैद्य के पास ले गया।

वैद्य रामतीर्थ अपने मित्र को पोते सहित अपने यहां आते देख खुश था। उसने रामशरण का हाथ पकड़ उसे आसन पर बिठाया और हाल-चाल पूछने लगा।

रामशरण द्वारा बच्चे की हालत के बारे में विस्तारपूर्वक बताने पर रामतीर्थ ने बड़े प्यार से अपना हाथ स्वप्निल के सिर पर रखा और उसे उसकी पीड़ा शीघ्र दूर करने का भरोसा दिया। उसने बच्चे की नाड़ी देखी और हाथ से भली-भांति पेट का निरीक्षण कर बीमारी का कारण जाना। रामतीर्थ ने अपने मित्र को प्यार भरी डांट लगाते हुए कहा कि उसे बहुत पहले बच्चे को उसके पास लाना चाहिए था। इस तरह लंबे समय तक रोगग्रस्त रहने से बच्चे कमजोर हो जाते हैं।

रामतीर्थ को बदले जमाने की सोच का पता था जिसने भोगवादी दृष्टिकोण को बढ़ावा दे खून के रिश्तों में भी अविश्वास पैदा कर दिया है। मित्रों में आपसी सुख-दुःख बारे अक्सर चर्चा होती रहती है और उन्हें एक-दूसरे के हालातों का पता होता है। मित्र की पारिवारिक परिस्थितियों का भेदी होने के कारण रामतीर्थ जमाने द्वारा अपने मित्र के मन पर दिए गए घाव को दोबारा हरा नहीं करना चाहता था। इसलिए उसने बेटे-बहू की चर्चा से दूर रह केवल पोते की तकलीफ के बारे में जान उसके इलाज की ओर ध्यान देना शुरू किया।

वैद्य रामतीर्थ ने बिना समय खोए स्वप्निल का इलाज शुरू कर दिया। उसने रामशरण को बताया कि बच्चा मंदाग्नि और भयंकर किस्म के अफारे से पीड़ित है। उसने उसी समय स्वप्निल को दवाई की एक पुड़िया चाटने के लिए दी और कहा, "बेटा, यह तुम्हारे दादू डाक्टर की जादू की पुड़िया है, यह तुम्हें झट से ठीक करेगी और तुम पहले जैसे बहादुर बन जाओगे।" वैद्य ने रामशरण को दवाई की कुछ और पुड़ियां तथा एक डिबिया में कुछ गोलियां बच्चे को खिलाने के लिए दीं और उन्हें खाने का समय व तरीका भी बताया। वैद्य द्वारा पुड़िया में दी गई दवाई का स्वाद चटपटा था, इसलिए बच्चा दवाई का सेवन खुशी-खुशी करने के लिए तैयार था।

मित्र रामतीर्थ से विदा ले रामशरण स्वप्निल को पीठ पर उठा वापिस घर पहुंचा। दवाई की पुड़िया के सेवन के पश्चात थोड़ी देर में ही स्वप्निल पहले से अच्छा दिखाई पड़ रहा था और दादा के साथ खेलने लगा था। ऐसा लग रहा था जैसे उसके पेट का दर्द उससे दूर भाग रहा हो।

दादा ने स्वप्निल को विश्वास में लेकर समझाया कि वह डाक्टर दादा के पास जाने और उसके द्वारा दी गई दवाई के बारे में अपने मम्मी-डैडी को कुछ भी न बताए अन्यथा वह नाराज होकर उन दोनों को डांटेंगे। स्वप्निल ने एक अच्छे दोस्त की भांति दादा से किए इस वायदे को पूरी तरह से निभाने की हामी भरी। बच्चे को पता था कि मम्मी-डैडी इस तरह की बातों को बहाना बना उसके दादा को जलील करते रहते हैं।

वैद्य द्वारा दी गई दवाई की पुड़ियां एक-एक घंटे के अंतराल में खाने व गोलियों की एक-दो खुराक चूसने के बाद अब स्वप्निल स्वस्थ दिखाई पड़ रहा था। उसके पेट से इतनी ज्यादा बदबूदार हवा बाहर आ रही थी, जैसे वह अर्से से भरी पड़ी हो। दादा-पोता पेट से लगातार निकलने वाली हवा की आवाज को लेकर खूब हंसी-मजाक कर रहे थे।

अब स्वप्निल के चेहरे पर रौनक पुनः लौट चली थी। उसने दादा के साथ बैठ खुशी-खशी अपना होमवर्क पूरा किया और फिर बाहर जाकर बच्चों के साथ खेलने लग पड़ा।

शाम तक मम्मी-डैडी अपनी-अपनी नौकरी से वापिस घर लौट चुके थे। स्वप्निल भी पड़ोस के बच्चों के साथ खेलकर वापिस घर आ चुका था और टी.वी. देख रहा था। टी.वी. पर अपने मनपसंद कार्टून चौनल पर बंदर को उछलते-कूदते देख वह खिल-खिलाकर हंस रहा था। दादा भी उसके साथ खुशी में झूम रहा था। स्वप्निल की यह हंसी कई दिनों के पश्चात देखी गई थी।

रीभा तिवारी की कविताएं

कुछ कर जाओ

एक विश्वास जगाते हो
एक एहसास दे जाते हो
कुछ कर जाओ
कुछ कर जाओ
जिंदगी चित्र है
इसमें रंग भर जाओ
आशा है निराशा है
ये तो जीवन का पासा है
जिसे, खेल समझ मत खेलो
अभी से संभल जाओ
समय जो बीत जाए।
उसे लौटाना है मुश्किल
हर समय कुछ नया कर जाओ
समय का उपयोग कर जाओ
अपनी कोई पहचान बना जाओ
ताकि तुम रहो न रहो
नाम तो रह जाए
जहां में तेरी पहचान तो रह जाए
तुम में तेरी पहचान तो रह जाए
तुम मिट्टी हो, मिल जाओगे मिट्टी में
भूली बिसरी यादों में
एक स्थान बना जाओ
अपने होने का निशान बना जाओ
मिलते तो सभी हैं
तुम तो कुछ दे जाओ
कुछ ऐसा कर जाओ
कुछ ऐसा कर जाओ।



बचपन

बड़े दिनों बाद
एक तितली आई
मेरे पास
बिलकुल पास
बैठ गई मेरे कपड़ों पर
फिर याद आया
मुझे बचपन का
वो तितली पकड़ना
फिर उड़ाना।
क्या दिन थे
वो बचपन के मौज मस्ती के
कैसे बदल गया
सबकुछ बदल गया
ना वो दिन है
ना वो मौज मस्ती
जैसे हम रहने लगे
नई बस्ती।
ना यहां तितली दिखती है
ना मौज मस्ती है
हर तरफ तन्हाइयों की बस्ती है।

द्वारा नागमणी तिवारी, मु. फजलगंज, एस.बी. आई. कॉलोनी के सामने सासाराम, जिला रोहतास, बिहार-821115, मो. 9430990167

बेटे को खिल-खिलाकर हंसते देख मम्मी उसे गोदी में बिठा प्यार-दुलार करने लगी। पापा मम्मी से कहने लगा - "लगता है, डाक्टर विनीत की दवाई ने स्वप्निल को पूरी तरह से ठीक कर दिया है। कल तक इसकी हालत ठीक नहीं थी लेकिन आज यह पूरी तरह स्वस्थ लग रहा है और पहले की ही तरह खुशी-खुशी खेल रहा है। लोग ठीक ही कहते हैं कि डाक्टर विनीत पूरे शहर में बच्चों का जाना-माना विशेषज्ञ है। उसका इलाज महंगा और लंबा जरूर है लेकिन बच्चे को खुशी और स्वस्थ देख यह महंगा इलाज भी अखरता नहीं है। आगे से अगर स्वप्निल को कोई भी ऐसी समस्या होगी तो हम डाक्टर विनीत के पास ही जाया करेंगे। पैसे खरचने का फायदा भी तभी होता है यदि रोग से छुटकारा मिले।"

मम्मी-डैडी की बात सुन स्वप्निल और दादा की आंखें दो-चार हुईं। दोनों को पता था कि यह असर डाक्टर विनीत की दवाई ने नहीं बल्कि दादू डाक्टर की दी हुई जादू की पुड़िया ने दिखाया है। पर मम्मी-डैडी को कौन समझाए कि सिर्फ जमाना बदला है, वैद्य की दवाई अब भी वैसी-की-वैसी असरदार है।

रामशरण आँखें मटकाकर इशारे-ही-इशारे में स्वप्निल से कह रहा था कि तेरे माँ-बाप की सोच अभी भी कहीं और ही अटकी है और इस सोच में सच्चाई सुनने की कतई हिम्मत नहीं है?

सीनियर रिपोर्टर,
हिमाचल प्रदेश विधान सभा, शिमला-4

राशि जमाल फ़ारूक़ी की ग़ज़ल व नज़्म

किश्ती रेत पर क्या कर रही है

मुझे कुछ देर रोना चाहिए था
फिर उसके बाद सोना चाहिए था।

ये किश्ती रेत पर क्या कर रही है?
इसे पानी में होना चाहिए था।

यूं ही बिस्तर से उठ कर आ गए क्या
कम अज़[1] कम मुंह तो धोना चाहिए था।

ये नम आंखें तो सब सच बोल देंगी
मुझे घुट-घुट के रोना चाहिए था।

मेरा दस्ते[2] दुआ भी नम नहीं है
मुझे दामन भिगोना चाहिए था।

तुम्हें मसनद[3] मुबारक और हमको
दरी का एक कोना चाहिए था।

चटख़ कर भी जो बहलाता रहे जी
उसे ऐसा खिलौना चाहिए था।

1. कम-से-कम 2. दुआ के लिए उठे हुए हाथ 3. तख़्त





हमारा शहर पागल हो गया है

हमारा शहर पागल हो गया है
धुएं और धूल में लिपटा हुआ।
चिंघाड़ता रहता है दिनभर।

फटी आंखों से रातें काटता है
यह जंज़ीरें तुड़ा कर भागता है
इसे क़ाबू में करने को
मची रहती है भागम भाग हर दम।

इसी संघर्ष में
सब गाड़ियां, इक दूसरे पर, भौंकती हैं
और इस महशर[1] में पुल भी कांते हैं।
और इस दहशत[2] से राहें चौंकती हैं
दुखों की भीड़ बढ़ती जा रही है
सुखों की आस घटती जा रही है
अलग सम्तों[3] में, सारे लोग भागे जा रहे हैं।
ये सारे लोग,
प्यारे लोग, आख़िर,
कहां जा कर रुकेंगे !?

1. क़यामत 2. आतंक 3. दिशाएं

सी-1452, आई.डी.पी.एल. टाउनशिल वीरभद्र
(ऋषिकेश), देहरादून, उत्तराखंड-249202

मिथिलेश दीक्षित के हाईकू

वर्षा ऋतु

कोई विरही
बूंद-बूंद तरसे
जल बरसे!

मां का आंचल
शीतल सुरभित
मलयानिल!

नर प्रबुद्ध
फिर भी कर देता
जग अशुद्ध।

दृष्टि पारखी
पावन हरीतिमा
पहचानती।

गंगा को दिये
एक दिन तो दिये
फिर कचरे।

बारिश आयी
रेशमी फुहारों से
पृथ्वी नहायी।

नहीं है चैन
मेघों के संग-संग
बरसे नैन।

छिपी प्यास है
पत्ता-पत्ता हिला है
पतझार है।

बिना जीवन
न छाया दे सकेंगे
वृक्ष ये सूखे!

जल चलता
चंचल लहरों की
हलचल में।

गन्दा बेनामी
रूढ़ियों की तरह
ठहरा पानी।

आते विचार
हरे-भरे वृक्षों की
शोभा निहार।

माने न हार
आगे ही बढ़ जाती
जल की धार।

झनक झन
झींगुरों के सुर भी
लुभाते मन।

पेड़ों के पत्ते
झूम-झूम डोलते
हवा से बोलते

धूप खेलती
लहर-लहर में
आंख-मिचौनी!

जी-91 सी, संजय गांधीपुरम, लखनऊ,
उत्तर प्रदेश-226016, मो. 9412549904

कविता

प्रदूषण निवारक

● केशव प्रसाद वर्मा



पर्यावरण-संरक्षण
औ' प्रदूषण-निवारण
जीवनीय अनिवार्यता की ओर इंगित करते हैं-
पादप-वृन्द!
आरण्यक जीवन-चर्या
पादपों का सान्निध्य
आरण्यमूलक है-
जंगलीपन
हमारा वानप्रस्थ?
किन्तु;
जहां रण की पूर्ण वर्जना
एक स्वस्थ परंपरा है।
बेदाग 'आरण्यक' की रचना,
आर्ष-जीवन की उपलब्धि
का ही परित्याग है-
पादपों का मूल-छेदन
पूर्ण प्रदूषण!

मानव तो वनस्पति व्युत्पन्न हैं
पादप-पुत्र!
वृक्षारोपण के कारण हैं
पिता!
औ' उसका संरक्षक बनाता है
तरु मित्र!
पलवों को
प्रदूषण-निवारक!

मागधी ग्रंथ अकादमी मेमोरियल, डाकघर दतियाना,
जिला पटना, बिहार-801104, मो. 99345 79770

कहानी/अनुवाद

सिमला के देवता

● **मिशेल व्हाईट** अनु : **नेम चन्द अजनबी**

(गतांक से आगे)

अचानक मिस क्रुडन अपने पैरों पर उछली। उसके अचानक इस कृत्य से मार्सटन भौचक्का रह गया। उसकी उंगलियों ने गुस्से से उसकी आस्तीन पर बनी सोने की कढ़ाई को पकड़ लिया। ''उसका नाम क्या है- मतलब उसका ईसाई नाम?'' उसने व्यग्रता से पूछा।

''क्यों- इर...,'' मार्सटन ने याद करने की कोशीश की। ''-मेरे अनुसार...... मुझे याद नहीं आता।''

''ओह, तुम निश्चित ही जानते हो।'' उसने दृढ़ता से कहा। ''क्योंकि निमन्त्रण पत्र तुमने ही भेजे थे।''

'हां, यह सत्य है परन्तु उसमें बहुत नाम थे । जोव तुम्हारी कसम ! मैं उम्मीद नहीं कर सकता कि मैं सब लड़कियों के नाम सिमला में याद कर सकूं। वायसराय ने भी शायद ही इस बात की मांग की होगी। उसका भी, एक विशेष नाम- शायद कुछ ईयुलालिआ।''

''क्या तुम निश्चित तौर पर कह सकते हो कि उसका नाम 'ई' से शुरू होता है ?'' उसने विनती की।

''हां, मैं जानता हूं कि मैंने यह किया है क्योंकि मैं नाम को लेकर काफी उलझा हुआ था कि सही तौर पर सूचि में शामिल किया जाये।''

''तब तुम्हें उसके पीछे घर जाना चाहिए- जल्दी !' उसने सुझाया। ''तुम्हे यह देखना चाहिए कि क्या वह घर जाती है और जब तक उसके माता-पिता वापस नहीं आते हैं क्या वह वहां रुकती है या नहीं ?''

''ओह, मैं देखता हूं।'' मार्सटन ने मिस क्रुडन की ओर घूरते हुए घबराहट में विरोध किया। ''क्या निस्संदेह यह सुझाव एक विचित्र बात नही हैं? मैं - मैं उसके टखने की मोच के लिये जिम्मेवार नहीं हूं। मैं उसके साथ नहीं नाच रहा था। न ही मुझे इस बात से कुछ लेना देना कि लोग क्या सोचते हैं।''

''इसमें मैं तुम्हारी कोई सहायता नहीं कर सकती। '' उसने उसकी सारी दलीलों को दरकिनार करते हुए कहा, ''तुम्हें उसके पीछे जाना चाहिए और उसे बिकन्द्रा के साथ भागने से रोकना चाहिए।''

''क्या?''अचानक ही विस्मय से मार्सटन के मुंह से निकला।

थोड़े ही शब्दों में उसने सारी बात बता दी और इशारा करते हुए कहा कि टखने की मोच उसकी साफ एक चाल है और यह भी कहा कि वह अपने अन्तःकरण से उस लड़की के सारे जीवन को नष्ट होने से बचाना चाहती है।

''इसलिये कृपया अगला क्षण मत बर्बाद करें!'' उसने लगभग भीख मांगते हुए कहा। ''और याद रखना कि जब तक तुम्हें वह सुरक्षित महसूस न हो वापस मत आना।''

अन्ततः मार्सटन मन में आधे विश्वास के साथ रात को यह मानते हुए चल पड़ा कि वो एक खुबसूरत अमेरिकन लड़की की जिद्द पर एक काल्पनिक और संक्षिप्त यात्रा पर है और वह उसके लिये इस धरती पर कुछ भी कर सकता है, जबकि उस लड़की ने उसकी अनुपस्थिति को पूरा करने के लिये कई उपयुक्त बहाने बनाये। परन्तु जब उसके नहीं आने के बाद कई घण्टे बीत गये तो उसके दिमाग में कई प्रकार की घण्टिया बजने लगी और अब उसके लिये अवश्य रूप से इस इन्तजार की हद हो गई। अन्त में जब नृत्य समाप्त हो गया और मार्सटन के आने का कोई संकेत न मिला तो वह इस डर के साथ घर को निकल पड़ी कि उसने उसको बड़ी मुश्किल में डाल दिया है। उसके बाद 'हांकी' ने उसको तसल्ली दिलाई कि अगली सुबह और भी अच्छी होने वाली है क्यांकि मार्सटन साहिब उत्सुकता से उसको मिलने का इन्तजार कर रहे थे। मिस क्रुडन एक दम उठी और उसने जल्दी जल्दी कपड़े पहने। 'हांकी' को एहसास हो गया था कि उसको लम्बी देर तक सोने की आज्ञा देना उसकी एक बहुत बड़ी भूल थी। उसकी सुबह घूमने की आदत बाद में ठीक सिद्ध हुई। उसने देखा कि मार्सटन बहुत ज्यादा चिन्तित हुए और उनके निजी कमरे की बगल में उपर नीचे घूम रहे थे।

'मैं बहुत खुश हूं कि तुम आखिरकार आ गये।' मिस क्रुडन ने कहा।

मैं उस थोर्पे लड़की के कारण बहुत परेशानी में हूं जिसके पास आपने मुझे भेजा था।'' मार्सटन ने कहा।

उसने उसको शान्त करते हुए कहा, ''कृपा करके बैठ जाओ और मुझे सारी बात बताओ कि आपने क्या किया है?''



''मैं तो एक क्षण के लिये भी शान्त नहीं रह सकता - कॉन्स्टेंस।''

यह पहली बार था कि उसने उसको क्रिश्चियन नाम से पुकारा था। अतः अब उसको दुबारा बोलने की आवश्यकता नहीं पड़ी।

''तुम्हें भी आवश्यकता नहीं पड़ेगी।'' वह कहता गया। ''यदि आपका नाता उसी आदमी के साथ जोड़ने की कोशिश की जाये जिसको आप जरा भी पसन्द नहीं करते तो या जिसे जनता पसन्द नहीं करती तो आप क्या करेंगे? खैर ! मुझे इस मामले को सुलझाने के लिये बारह बजे तक का वक्त था और ग्यारह बजने को दस मिनट बाकि थे। प्रिय! आगे आपकी गलती थी कि आपने मुझे उस थोर्पे लड़की के पीछे भेज दिया क्योंकि मेरे मन में तो उससे शादी करने का जरा सा भी विचार भी नहीं हैं।''

मिस क्रुडन ने सहजता से कहा, ''थोर्पे लड़की के साथ शादी कर लो।''

''क्यों, यह कैसे सम्भव है?'' मार्सटन ने बड़ी उदासीनता से जवाब दिया।

''यह बिलकुल सम्भव मतलब आसान होगा जब सब कुछ रात्री के एक दुःस्वपन की तरह इकट्ठा हो रहा है।''

''सुनों। मैं कैसे एक जुल्म से दूसरे जुल्म में डूबा जा रहा हूं। जब मैं बाहर गया मैंने काउंसलर के रिक्शेवाले को मिस थोर्पे का पीछा करने को कहा जो कि मेरा पहला जुर्म था। काउंसलर पहले यह जानना चाहता था कि किस की आज्ञा से मैंने उसके रिक्शे का प्रयोग किया और बाद में एक चालाकी का शिकार बन गया जो बिकन्द्रा ने खेली थी। उसने सूझबूझ से मिस थोर्पे के लिये एक वायसराय क्षेत्र को पार करने के लिये एक डोली का प्रबन्ध किया था। परिणामस्वरूप मैं पहाड़ों में एक खाली रिक्से का पीछा करता गया मुझे सेंट क्लेयर के बंगले पर पहुंचने के बाद गलती का अहसास हुआ। इसके बाद इस वित्त विभाग के कर्मचारी से मुझे पता चला कि उसने बिकन्द्रा को डोली के साथ नीचे की तरफ जाते हुए देखा है। मैंने एक दम एक किसान के घोड़े का पता लगाने की कोशिश की जिसके लिये मेरी वित्त विभाग के आगे जवाबदेही बनती थी। अन्त में जब मैं बिकन्द्रा के साथ ऊपर आया वह अपना ईनाम त्यागने के लिये तैयार नहीं था और न ही मिस थोर्पे चाहती थी कि उसकी सहायता की जाये। अन्ततः मैंने मजबूर होकर एक लड़ाई में बिकन्द्रा को उसके घोड़े से नीचे गिरा दिया। मैं कल्पना करता हूं कि इसके परिणाम के बारे में मुझे राजनीतिक विभाग से पता चलेगा।''

मिस क्रुडन ने बड़े भाव से कहा, ''भगवान यह सब अच्छा नहीं हुआ।''

''हां! लेकिन यह कहानी यहां पूरी नहीं हुई।'' मार्सटन कहता रहा, ''जब मैंने लड़की को अपने कब्जे में लिया तो उसने मेरे इस काम को सराहा। मैं आपको यकीन दिलाता हूं कि वह बड़ी आभारी भी नहीं थी। उसके बाद उसकी तबीयत बिगड़ने लगी और चीजों को स्पष्ट देखने के लिये उसे बहुत वक्त लगा। - वैसे बिकन्द्रा को निजी तौर पर कोई पसन्द नहीं करता है और वह सम्मान योग्य व्यक्ति नहीं हैं। उसने हालात को समझते हुए कहा कि यदि वह उसे नहीं जीत सका तो वह कोई भी नाजायज तरीका अपना कर उसे जीत लेगा। मैं समझता हूं कि वह बड़ी जल्दी ही बिकन्द्रा के साथ शादी करने के लिये राजी हो गई। जैसे उसको सलाह दी गई और उसने मेरे से प्रार्थना की कि यह बात उसके मां बाप को न बताई जाये। निस्संदेह ! मैं लड़की को बचाने के लिये तैयार हो गया। मुझे पता था कि यह बाद में मेरी बर्बादी का कारण बनेगा। कुछ समय में मैंने एक और रिक्सा पकड़ा जो कि कमिश्नर का था, मैंने विश्वास किया कि मिस थोर्पे को घर लौटते वक्त कोई परेशान करने वाले प्रश्न न पूछे।'' मार्सटन ने थोड़ा रुक कर पुनः कहना आरम्भ किया-

''अन्त में जब हम सेंट क्लेयर के बंगले पर पहुंचे। थोर्पे हमारे लिये बरामदे में बैठ कर हमारा ही इन्तजार कर रहा था। वह दोस्ती के मुड़ में नहीं था। वास्तव में वह उस समय गुस्से से फटने वाला था। मिस थोर्पे चिल्लाते हुए घर में घुस गई और बाकि की चीजों की व्याख्या उसने मुझ पर छोड़ दी। आपने देखा कि मैंने अपने वायदे को पूरा करने के लिये क्या कुछ नहीं किया ? मुझे चुप रह कर थोर्पे द्वारा उसकी बात सुनने के लिये मजबूर किया गया था। थोर्पे ने मुझ पर आरोप लगाया कि मैंने उसकी बेटी को वायसराय की नृत्य पार्टी से सुबह तीन बजे तक दूर रखा। वह बरामदे में उपर नीचे घूमता रहा, अपनी मुट्ठियां खोलता और बन्द करता रहा और हर तीन कदम पर यह घोषण करता रहा कि मुझमें भद्रपुरुष वाले व्यवहार के कोई भी लक्षण नहीं थे अन्यथा उसके अनुसार यदि मुझमें भद्रपुरुष वाले लक्षण होते तो मैं उसकी बेटी से शादी कर लेता। अन्त में, उसने यह मुझ पर छोड़ दिया कि या तो मैं जनता के सामने दोपहर तक मिस थोर्पे के साथ अपनी

सगाई के बारे में घोषणा कर दूं या फिर अपने बुरे व्यवहार के बारे में वायसराय को अवगत करवा दूं। मेरे लिये तो बड़ी कठिन स्थिति थी। यह कठिन स्थिति अभी भी है क्योंकि मेरा मुंह बिलकुल बन्द है और मैं समझ नहीं पा रहा हूं कि मुझे क्या करना चाहिए।'' बोलते बोलते उसका गला पक गया और शब्द न निकल सके।

इसी क्षण कर्नल क्रुडन अपनी सुबह की सैर के बाद दाखिल हुए। जब उसने दहलीज पर मार्सटन को देखा तो वह रुक गये और मार्सटन को अपने चश्मे से देखा। वह उससे गर्मजोशी से नहीं मिले बल्की सीधे काम की बात पर आ गये।

''मैं अभी मिस्टर थोर्पे को मिला हूं जो वायसराय के पास जा रहा था। उसने मुझे कुछ बताया जिससे कि मैं आपको यहां देख कर हैरान हूं - लार्ड मार्सटन। मैं आपको यह भी बता दूं कि मिस थोर्पे बहुत परेशान है और यह भी बताने के लिये समर्थ नहीं हैं कि पिछली रात क्या हुआ।''

मार्सटन ने बड़ी उदासी से कहा, ''इस बात ने मुझे गूंगा जानवर बना दिया है जिसको कि सजा के लिये एक खुंटी के साथ बांधा गया हो।''

मिस क्रुडन अपनी पूरी उर्जा इस विपत्ती को सुलझाने में लगा रही थी और उसको बोलने मे भी कष्ट हो रहा था। वह खिड़की के बाहर दूल्हे को गधे पर बैठे हुए चोरी से देखती है जो कि अपने गधे को कभी आगे और कभी पीछे लेकर जा रहा था। उसने सोचा कि उसको अब इस मामले को अपने हाथ में लेना चाहिए। वायसराय का उसके साथ बड़ा अच्छा घनिष्ट सम्बन्ध था और उसे इस बात का पूरा यकीन था कि वह उसकी बात अवश्य सुनेंगे तथा इस कठिन समय में सहायता करेंगे। सबसे पहले ये जरूरी बन गया था कि वह अपने पापा और मार्सटन में समझौता करवाये।

वह अपने पापा को बहुत अच्छे तरीके से कहती है, ''आप मेरे बहुत प्रिय पापा हैं और आपको नहीं पता कि अभी अभी क्या हो गया है। और आपकी बेटी के पास इसको बताने का वक्त भी नहीं हैं। मैं चाहती हूं कि आप दोनों बैठो और मेरे से वायदा करो कि आप मेरे वापस आने तक पोलो के सिवाये कोई बात नहीं करोगे। यदि आप ऐसा नहीं करोगे तो मैं पागल हो जाऊंगी और आपको पता है कि इसका क्या मतलब होगा।

इसके बाद उसने अपने पापा को जबरदस्ती कुर्सी पर बैठा दिया और उसकी उंगलियों में सिगार पकड़ा दी। फिर मार्सटन को बोली कि आप भी वैसा ही स्थिती ले लो।

''याद रखना।'' वह लगभग चेतावनी देती हुई कहती है। ''जब तक मैं वापस नहीं आती आप दोस्तों की तरह रहोगे ! इस विकट स्थिति को देखते हुए मैं आप दोनों पर विश्वास नहीं कर सकती आप तो आधे घण्टे में पूरा सिमला को लड़ा दोगे।''

कुछ ही क्षणों में वह अपने टट्टु पर बैठ गई और वायसराय लॉज की ओर निकल गई। लेकिन इस दौरान उसके मन में डर भावना हमेशा बनी रही।

अब, महामहिम वायसराय साहब अपने चेम्बर में अपनी सभा के सदस्यों के साथ बैठे थे जब उन्होंने एक लड़की को तेज भागते हुए उधर आते देखा। वह अपनी जरूरी समस्याओं की चर्चा में व्यस्त थे तो वह लड़की भारतीय साम्राज्य की सर्वोच्च परिषद के सामने खड़ी हो गई। वह कैसे वहां आई और उसको किसी ने भी नहीं रोका जिनमें सुरक्षा कर्मचारी और ए डी सी शामिल थे, इसका उसने कोई व्यौरा नहीं दिया। वह यह भी नहीं बोली कि उसने मिस्टर थोर्पे को कैसे संकेत दिया और उसने अपनी बात वायसराय तक पहुंचाने के लिये इन्तजार तो नहीं किया। इसके विपरीत उसने सीधे जाकर वायसराय के सामने अपनी निजी बात रखी और बड़ी साधारणता से उसने महामहिम को अपनी बात सुनने पर मजबूर कर दिया। फिर भी यह एक बड़ी जबरदस्त स्थिति थी जिसमें वह लड़की उन सब लोगों के सामने पेश हो गई और सारे के सारे सदस्य बड़ी हैरानी से एक दूसरे की ओर टकटकी लगाकर देखने लगे।

''मुझे पता है कि मैं जो भी कहूंगी वो आप सुनोगे।'' उसने कहा। ''क्योंकि, पापा ने मुझे चेतावनी दी है कि किसी को भी परेशान नहीं करना है जब वह अपने दफतर में बैठे हो। जब तक कि कोई बहुत ही जरूरी बात न हो। आप हमेशा मेरे लिये दयालु रहे हो।'' उसने साथ में जोड़ा।

वह उसकी बात को समझ गया और उसके वास्तविक भाव को भी समझा गया। आखिरकार वह व्यापारी थे। भारतीय साम्राज्य के शासन में कोई स्थिति तुच्छ नहीं है। जैसे कि सर डंकन ने देखा जो कि एक घमण्डी स्कॉटिश वित्तीय सदस्य था। जिसने कि उसके ऊपर सहमती से देखा। इतने ही समय में लड़ाकू आयरिश कमाण्डर नहीं चाहता था कि वायसराय एक युवती के सामने बैठा रहे। उसने और सर डंकन ने वायसराय को राय दी। वायसराय उठे और उन्होंने मिस क्रुडन को एक साथ वाले कमरे में बुलाया।

वायसराय ने कहा,''जहां तक मैं आपके पापा को जानता हूं। मुझे विश्वास है कि तुम संक्षित रूप से अपनी बात को रखोगी।''

उसने एकदम सीधे तौर पर अपनी कहानी को बताया। जैसे जैसे वह बताती गई वायसराय के माथे पर तियोड़ियां पड़ती गई। वायसराय ने गम्भीरता से मामले को सोचा और विचार किया।

जब उसने बात को खत्म किया तो वायसराय ने उसका धन्यवाद किया और कहा, ''आपने कहानी को सीधे तौर पर बताया है। मार्सटन को छुटकार मिल गया है परन्तु मैं मिस्टर थोर्पे से खुश नहीं हूं। जिसने कि बिकन्द्रा का वासी होने के नाते अपनी बेटी को महाराजा के साथ रिश्ता रखने के लिये आज्ञा दी। इस स्थिती में परिणाम घातक सिद्ध हो सकते थे। जिसके बारे में वह

शीघ्र ही सुनेगा।''

''ऐसा कभी नहीं होगा।'' मिस क्रुडन ने विरोध करते हुए कहा। उसने दोबारा दोहराया, ''ऐसा कभी नहीं होगा।''

वायसराय उसके खुलेपन से हैरान हो कर कहते हैं, ''ऐसा कुछ नहीं है जैसा तुम सोचती हो।''

''नहीं क्योंकि मिस थोर्पे को कष्ट सहन करना पड़ेगा। मुझे यकीन है कि आप उसे और दुःखी नहीं करोगे और ऐसा वैसा भयानक कुछ हुआ भी नहीं हैं।''

''शायद तुम मुझे बताओगी कि मुझे क्या करना चाहिए।'' हैरान होते हुए वायसराय ने लगभग प्रार्थनापूर्वक कहा।

''मेरी नाराजगी को देखते हुए और उसका खयाल रखते हुए उस नौजवान औरत की इज्जत भी बचानी है और इसके साथ-साथ मार्सटन का भी ध्यान रखना है।''

''अपने ए. डी. सी. के साथ भी खड़े होना है।'' उसने उत्तर दिया।

''आपकी बात पर प्रश्नचिन्ह नहीं लगाया जा सकता और बाकि लोगों को खुशी उन जगहों पर भेज दो ताकि यहां इस मामले को भुलाया जा सके। आपको मिस थोर्पे को बुलाने की आवश्यकता नहीं यदि आप नहीं चाहते।''

वायसराय का उदास चेहरा खिल उठा और वह बड़े खुलेपन से इस तरह हंसने लगे जिस जिम्मेवारी के आसन पर बैठे हैं पहले कभी नहीं हंसे थे। उन्होंने घण्टी बजाई और उनके एक सचिव हाजिर हो गये। सचिव के आते ही वायसराय ने निम्नलिखित आदेश दिये- ''महामहिम, सर्वसाधारण को सूचित किया जाता है कि लेफ्टिनेंट लॉर्ड मार्सटन ने सोलह तारीख की रात को जो राजनीतिक मिशन आदेश पास किया है उसको यथाकिंचित माना जाता है।

और आगस्टस वॉल्अन थोर्पे जो कि बिकन्द्रा की रियासत में सरकार के अफसर हैं, की पूर्व की सेवाओं को ध्यान में रखते हुए उनको एक अतिरिक्त साल के लिये युरोप अनुपस्थिति के लिये छुट्टी दी जाती है। और साथ में यह तत्काल प्रभाव से लागू समझा जाये।

महाराज बिकन्द्रा, जिन्होंने सर्वोच्च सरकार को सन्तोषजनक वायदा किया है, को भी आज्ञा दी जाती है कि वह अपनी रियासत में वापस चला जायें।''

''जब वह वहां होंगे वह उनका खयाल रखेंगे।'' वायसराय ने साथ में जोड़ा। ''क्या तुम सोचती हो कि ऐसा करने से मिस थोर्पे की स्थिति बच पायेगी।'' उन्होंने मिस क्रुडन से पूछा।

''यदि ऐसा नहीं हुआ तो यह उसकी अपनी कुशलता की कमी होगी।'' वह बोली।

हमने उसकी सहायता की यही कोशिश की है। आप कल्पना भी नहीं कर सकते कि मैं आपकी कितनी आभारी हूं लॉर्ड ग्रांटबरी।'' उसने अपना हाथ स्वीकारते हुए आगे की ओर बढ़ाया।

''और मै आपका भी आभारी हूं।'' वह बहादुरी से झुकते हुए बोले। ''आपने भारतीय साम्राज्य को शासन का पाठ पढ़ाया है। लेकिन आपने मेरे ए डी सी के साथ क्या किया ?''

''ओह ! उनको और अपने पापा को आमने सामने बैठा कर छोड़ा है इस वायदे के साथ कि वह पोलो के बारे में ही बात करेंगे।''

वायसराय फिर हंसते हैं और अपने सचिव को पुनः बुलाते हैं, ''एकदम से एक चपड़ासी को कर्नल और मिसेज क्रुडन के लिये निमन्त्रण लेकर भेजो। मार्सटन को भी बुला लेना। और हां मिस क्रुडन मेरे पास बैठी रहेगी।'' और अब वह उसकी ओर मुड़ते हैं - ''यदि तुम्हें लेडी ग्रांटबरी मिल जाये तो मैं अपने कांसिल बोर्ड में वापस जा पाऊंगा। मैं इच्छा करता हूं कि काश मेरे पास शक्ति होती तो मैं आपको इस बोर्ड में शामिल कर लेता।''

दूसरी ओर थोर्पे वायसराय को नहीं मिल पाया, लेकिन उसको वायसराय के आदेश मिल गये थे। वह परेशान होता हुआ घर गया लेकिन मार्सटन के बारे में उसने अपना मुंह तब तक बन्द रखा जब तक कि उसकी बेटी इसके बारे में कुछ बता न देती। जब वह कुछ बतायेगी तो ऐसा समझा जायेगा कि उसने मार्सटन को अपना रहस्य बताये बिना छोड़ दिया और इसकी सिमला के सामाजिक संसार में एक बात तक नहीं पहुंची। अभी भी संसार में हैरानी हुई कि मार्सटन की राजनीतिक सेवा को वायसराय ने दुनिया के सामने कैसे माना। बन्दरों के आराध्य- हनुमान ! आप जानते हैं, जिनकी शक्ल आपने पंजा मुंह पर रखे देखी होगी, उसका क्या मतलब है? उसका मतलब है जब हमारे बोलने से किसी को कष्ट हो तो हमें चुप रहना चाहिए।

वह अपने पापा को बहुत अच्छे तरीके से कहती है, ''आप मेरे बहुत प्रिय पापा हैं और आपको नहीं पता कि अभी अभी क्या हो गया है। और आपकी बेटी के पास इसको बताने का वक्त भी नहीं हैं। मैं चाहती हूं कि आप दोनों बैठो और मेरे से वायदा करो कि आप मेरे वापस आने तक पोलो के सिवाय कोई बात नहीं करोगे। यदि आप ऐसा नहीं करोगे तो मैं पागल हो जाऊंगी और आपको पता है कि इसका क्या मतलब होगा।

कमरा नं. 402-ए, शिक्षा अनुभाग, हि. प्र. सचिवालय,
एलर्जली बिल्डिंग, शिमला, हिमाचल प्रदेश-171002
मोबाइल नं. 94180-33783

समीक्षा

सामयिक इतिहासों की परख

● डॉ. वासुदेव शर्मा

आज कविता का सामाजिक पक्ष, दृढ़तर हुआ है। कवि की सोच और उसका दायरा सामाजिक व्यवहारों, उसके बनते-बिगड़ते सम्बंधों, उसकी पेचीदगियों और उसकी बारीकियों, उसकी विषमताओं, उसकी आर्थिकी, उसके श्रम, उसके भ्रमों, उसकी परम्पराओं तथा उसकी गतिशीलता एवं विकास पर केंद्रित है। कविता अब वायकी कल्पना, अनावश्यक सौंदर्य, लिजलिजेपन तथा आत्यंतिक निराकारता को तज कर वास्तविकता के लम्बे पठारों पर नंगे पांव भी चलने को तैयार है। वह अपनी उत्सवधर्मिता को छोड़कर, वस्तुपरकता को अंगीकार कर चल रही है। वह अन्तर्मुखी⁄ आत्ममुखी भी है और बाहरी सत्य और संघर्ष से रू-ब-रू भी। कहने का आशय है कि कविता अनायास सामाजिक हो गई है। डॉ. संगीता सारस्वत के डेढ़ वर्ष के अंतराल में ही प्रकाशित तीन कविता-संग्रहों, सैलाब (कविता संग्रह), सवाल (ग़ज़ल संग्रह) और समय, (कविता, ग़ज़ल और हाइकु संग्रह) को देखकर आश्चर्य हुआ है⁄ लोग उसकी इस क्षमता से परिचित तो थे कि वह भी लिखती है⁄ परंतु उसने इतना लिखा, यह विस्मयकारी है।

कवयित्री के 'सैलाब' कविता संग्रह में छोटी-बड़ी अड़सठ कविताएं हैं⁄ जो चिंतन के पल, पहाड़ी परछाइयां, मन के झरने और बिम्ब-प्रति बिम्ब, इन चार उप शीर्षकों के अंतर्गत विन्यस्त है। चिंतन के पल की पहली कविता 'शब्द', शब्दों के माध्यम से कविता की प्रतिपत्तियों⁄प्राप्तियों पर सुंदर⁄समर्थ संदर्भों का संयोजन करती है। कविता होती है⁄ स्वाति नक्षत्र की बूंद, वह होती है। किसी ऊंचे आशय की अनुगूंज⁄ वह है, अनूठा आत्मप्रकाश⁄ वह सारी अव्यवस्थाओं में शांति और अपने समेत पूरे समाज के मन की पुकार। कवयित्री की भंगीभणिति देखिए- शब्द⁄ जो स्वाति-नक्षत्र में⁄ भरी सार्थक सी बूंद। शब्द⁄ जो पहाड़ी ऊंचाई से गिरते झरने की अनुगूंज। शब्द⁄ जो मन-कंदरा में⁄ उगते उजाले की धूप। जो भावों के ऊबड़-खाबड़ में⁄ हरियाती दूब। शब्द⁄ केवल मेरे नहीं⁄ सबके मानस की हूक-अनूप। इसे कविता की आधुनिक परिभाषा कह सकते हैं। यहां प्रयुक्त शब्द कविता, उसके शब्दार्थ, उसकी प्रतीति, उसकी अर्थगर्भिता और उसकी स्वभावधर्मिता का द्योतक है। वह 'मामूली लोग' कविता में अब यह कहती है कि इतिहास में उनका नाम कहीं शामिल नहीं होता। जो फसल उगाते हैं, सड़कें बनाते हैं तथा देश को बचाते-बचाते शहीद हो जाते हैं। ताउम्र सूखी रोटी चबाते हैं। कर्जे चुकाते हैं या दिल पर इधर-उधर पैबंद लगाते-लगाते ही मर जाते हैं तो वह अनेक दिक्कतें⁄कष्ट सह कर तकलीफों से इतिहास बनाने वालों की हिम्मत की दाद नहीं दे रही परंतु इतिहास रचयिताओं को वे एक अधिमान भी दे रही हैं। इससे पहले इतिहास केवल वे रचते हैं, जो सिंहासनों पर बैठते हैं, शासन चलाते हैं या भवन बनवाते हैं। बड़े-बड़े कारनामें करते हैं, चोटियों पर चढ़ते हैं या काल का पहिया घूमाते हैं।' जब वे ऐसा कहती हैं तो काव्यन्याय के एक बड़े अर्थगर्भित व्यंग्य को बाहोश सामने लाती हैं। यहां पिछले भी इतिहासों को वर्तमान की वास्तविकताओं ने मानो आईना दिखा दिया हो। कल का इतिहास आज का सच सुनने को मजबूर है। स्वतः घटी घटनाएं और स्वतः संभूत सच युगों-युगों के पाखंडों को पोल खोलने में समर्थ हैं। कवयित्री वातल इतिहासों की मर्ज़ को, गहराई से परखती है।

प्रदूषण, महाप्रलय, पर्यावरण और जलजला, जहां वर्तमान के सच को काव्यसत्य का पर्याय बनाती है वहीं प्रवंचना, नियति और मंत्र कविताओं में जिम्मेदारियों से बचते हुए 'कछुआ' कविता में कछुआ बनकर रह जाने की मानव की प्रवृत्ति पर करारा व्यंग्य किया है। कछुआ कविता, नारी की बहु-आयामी क्षमताओं को उजागर करती है। तीसरा युग, कविता, जहां नारी के प्रति उपेक्षा और उसके शोषण को उद्घायित करती है। वहीं 'इंद्रधनुष' पुरुष की दिग्व्यापी लालसाओं और स्वार्थो युक्तियों की सीवन उधेड़ती है। नश्तर, तिलस्म, त्रिशत्रु और अस्तित्व अपने नामों के अनुरूप व्यक्ति, समाज और अस्तित्व के सवालों को उकेरती हैं। नियंता कविता, कवयित्री की संपूर्ण सोच को एकत्र करती हुई उसकी मनुष्य होकर जीने की इच्छा या महत्त्वाकांक्षा का सशक्त प्रमाण है और मैं समझता हूं यह आकांक्षा करोड़ों व्यक्तियों की हो सकती है, यह एक पूर्ण मानव होने की लालसा है। मुझे अपनी पूर्णता में सिमट कर⁄ जो अपनी सीमाओं का विस्तार कर सके एक बिंदु जो स्वयं में सुरक्षित हो सके। बेटी कविता में एक मां के दृश्य का सहज उद्वेलन भी दृष्टव्य है- हर चीज नहीं है-वैसी है इस बिखराव के लिए जिसकी डांट-डपट होती थी⁄ बस वही एक बेटी यहां नहीं है। संग्रह में मन के झरने प्रखंड, की कविताएं थीं और संवेदनशील हैं, वैसी अन्य प्रखंडों की बौराई चांदनी के कुछ प्राकृतिक बिम्ब आपको भी की आकृष्ट बिम्ब आपको भी की आकृष्ट करेंगे-बौराई चांदनी पूनों का चांद⁄ मोगरे का थाल। हवा के बोल⁄ पीपल के संग⁄ झींगुर के ताल। बदरी का पल्लू⁄ रेशम के घूंघर, सितारों का जाल⁄ मन के रने, रात की माटी⁄ चिंतन के काल⁄

संग्रह के आवरण पृष्ठ तथा बीच-बीच में विनियोजित मास्टर उत्सव के मनाली से लेह-लद्दाख तक के महामरुकानतार/ महाहिमालय के निसर्ग-सुंदर चित्र एक और यथार्थ कविता के नवीन अध्यायों को जोड़ते प्रतीत होते हैं।

कवयित्री डॉ. संगीता का दूसरा संग्रह 'सवाल' है जो ज़ाहिर है अपने नामानुरूप ही ज़िंदगी के सवालों से जूझता, व्यक्ति के सवालों को खड़ा करता कई सवालिया निशान छोड़ जाता है। प्रस्तुत संग्रह में, बावन ग़ज़लें संग्रहित हैं। कवयित्री प्रारंभ में ही पूछती है कि कौन-कौन से मसले पर छोड़ेंगे जेहाद/ यहां पर मुद्दा वर्षों से बीमार-सा है। कवयित्री ने व्यक्ति मन, समाज मन, राष्ट्र मन तथा विश्व मन तक के मसलों को छुआ है। कवयित्री ने आतंक, अत्याचार, भरम, हसरतें, बवाल, तमन्ना, हृदय, मयूर, सजदे, इल्ज़ाम, आफताब, आबशार, ज़िक्र आदि के सशक्त शीर्षकों/ माध्यमों द्वारा वर्तमान/ समकालीन ज़िंदगी के कई पहलुओं/ सवालों को बड़ी सतर्क, सावधान तथा सहज भाषा में उकेरा है।

आज कविता में भाषा का संकट है। वैसे रचना में भाषा की समस्या सदा से ही रही है। समाधाताओं ने भाषा-संस्कार पर सौ-सौ कोणों से विचार किया है। शब्द मर्मज्ञों को कहीं एक भी रमणीयार्थ प्रतिपादक शब्द मिल जाता था तो वे लुट-लुट जाते थे। कविता, उत्तम शब्द संस्कारों अथवा समीचीन भाषायी व्यवस्था का सुयोग है। आचार्यों ने साहित्य में निरंतर श्रेष्ठ संस्कारिता को ही प्रशस्य माना है।

ग़ज़ल, एक उर्दू-फारसी की छंदोबद्ध ऐसी रचना है जो पहले, प्रेमी-प्रेमिका में आपसी गुफ्तगू की द्योतक थी, परंतु आज ग़ज़ल ने अपना दायरा बढ़ा लिया है और यह अब प्रेम, वीरता, राजनीति, समाज, देश, राष्ट्र एवं विश्व के ज्वलंत प्रश्नों पर भी अपनी राय रखती है। डॉ. संगीता की ग़ज़ल की एक बानगी देखी जा सकती है- सुकूने ज़िंदगी का हर तरीका/ आज़मा के देख चुके/ निगाहें ख़्वाब से परे था जो/ पा के देख चुके/ एक ही पहलू/ हैरां किए देता है तुम्हें तो/ हम तो हर करवट/ पहलू जला के देख चुके। इसी तरह अत्याचार ग़ज़ल की पंक्तियां हैं- स्वतंत्र भारत के स्वतंत्र नागरिक/ स्वतंत्रता से कर रहे अत्याचार!/ एक ही आंगन के कर दिए हिस्से, हर दिल में खड़ी कर दी दीवार। कवयित्री के पास कहने का ज़ज्बा है और उस ज़ज्बे को पन्नों पर उतारने की कूव्वत।

अभी-अभी प्रकाशित डॉ. संगीता का 'समय' (दो सालों के भीतर) तीसरा कविता संग्रह है जो कवयित्री की लेखक/ सृजनात्मक क्षमताओं का परिचायक है। समय के संदर्भ में कवयित्री का यह कहना- समय झर रहा/ झरता रहेगा/ निरंतर/ ब्रह्मांड घट से/ बूंद-बूंद/ अक्षुण्ण, काल के एक व्यापक परिमाण और उसकी अनादि निरंतरता को दिक की परिणामता में अनुभावित करता है। आज का कवि ब्रह्मांड घट से बूंद-बूंद के झरते अनुभवों या ऐसे कुछ दूसरे आध्यात्मिक-आत्मिक शब्दों के प्रयोग से या तो बचता है या उसे इनका अनुभव नहीं। भारतीय कविता एक बहुत बड़े विस्तार में, एक गहन संसार एवं संस्कार की कविता है। प्रतीतिसंभव शब्दों का प्रयोग, कवि और कविता दोनों को समृद्ध करता है। यही कविता की आंतरिक शक्ति भी है।

प्रस्तुत संग्रह में अड़सठ कविताए हैं जो, समय, पैगाम, हाइकु, नारी और मौसम, उपशीर्षकों के अंतर्गत शब्दायित हैं। कवयित्री ने समय के परिवेश को पैनी-तीखी नज़रों से देखा है। उसने महसूसा है, आज के व्यक्ति- समाज का दर्द। वह पूछती है- मगर आखिर कब चमकेगी वो बिजली जो/ अपराध के जंगलों में/ पाप की मिट्टी के नीचे/ छिपे विषैले कुकुरमुत्तों को एक ही झटके में/ ला पाएगी पृथ्वी की सतह पर।

कवयित्री ने षड् विकार, पंचांग, पुरुष, मादा, विरासत, रिश्ते, श्रद्धा, ग्लानि, भाग्यचक्र, मशक्कत, जुगाड़, चारण, बातें, बतासे आदि कविताओं के द्वारा अनेक, मानवीय विकृतियों और सामाजिक संदर्भों के अर्थों को कई व्यापक आयाम दिए हैं। कवयित्री ने ऐसे शब्दों (जुमलों का नहीं, जो आज की कविता में ज्यादा हो रहे हैं) का भी प्रयोग किया है जो कविता से या तो नदारद हो रहे हैं या उपेक्षित। उल्लिखित कविताओं में ही ऐसे कई शब्दों का संज्ञान लिया जा सकता है। कवयित्री के हाइकु भी सशक्त बन पड़े हैं। इनमें कवयित्री के बर्फ, वसंत, देश, नारी, डंका और पर्याय, हाइकु छंद में अच्छे खासे नवगीतों के प्रकार बन कर उभरे हैं। कुछ पद्य देखे जा सकते हैं- रात इतराती/ रही चांद की नथ/पहन कर। प्रभात ने भी/ दुल्हन के गरूर/ का रूप तोड़ा। कभी रात ने/ कभी दिन ने स्वयं/ मुंह को मोड़ा। पर सांझ ने/ अऊ सुबह ने रोज़/ तारों को जोड़ा। ऐसे ही कुछ और भी सीपियां, कविता की पंक्तियां- देवदारू की छतरियों तले बैठ/ पंछियों की मन-बांसुरी सुने/ बारिश के सजल मोतियों को/ फूलों की अजुरि में चुनें। विस्तृत हिमखंड के धवल/ आकाश को धरती पर उतार/ इसमें मन की नौका चलाएं/ वादियों का संगीत सुनें। कवयित्री के पास भाव भाषा, कल्पना, कथ्य को कविता बनाकर कहने की कला/ शक्ति है तथा है, सामाजिक-अनुभवों को, व्यापक ऐतिहासिक संदर्भों से जोड़ने की युक्ति। पुस्तकों की साज-सज्जा एवं आवरण आकर्षक हैं।

गांव व डाकघर थुरल, तह. पालमपुर, जिला कांगड़ा,
हिमाचल प्रदेश

समीक्षित पुस्तकें :

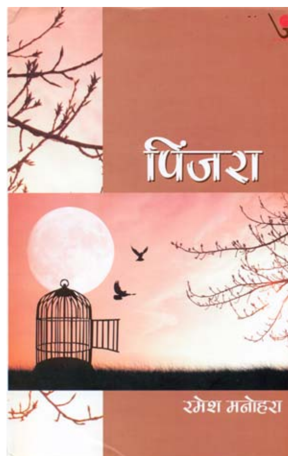
1. सैलाब (कविता संग्रह), 2. सवाल (ग़ज़ल संग्रह), 3. समय (कविता संग्रह), लेखिका : **डॉ. संगीता सारस्वत**

सभी पुस्तकों के प्रकाशक : महाजन प्रिंटर्ज एंड पब्लिशर्ज, संजौली, शिमला, हि. प्र.।

आम आदमी की समस्याओं का कथाई दस्तावेज 'पिंजरा'

● मोहम्मद आरिफ

साहित्य की बहुविध विधाओं के सशक्त हस्ताक्षर रमेश मनोहरा किसी परिचय के मोहताज नहीं हैं। अपनी अनूठी बेजोड़-बेमिसाल, सीधी, सरल-सरस भाषा शैली के चिरपरिचित अंदाज के साथ सदैव पाठकों के मानस पटल पर छाए रहते हैं। अपनी निरंतर निःस्वार्थ रचनाधर्मिता के कारण साहित्यिक पत्र-पत्रिकाओं की मांग बने हैं। इनकी कहानियों में सरलता-सरसता के सर्वत्र दर्शन होते हैं। कथ्य एवं शिल्प के धरातल पर तथा कथोपकथनों में यह गुण विशेष तौर से देखने में मिलता है। आम आदमी से सीधे- सीधे संवाद करती इनकी कहानिहयां सफलता की गारंटी हैं। इनके पात्र, सरल, सपाट और बेबाकी के साथ पाठकों के समक्ष उपस्थित होते हैं। कोई नवनूतन प्रयोग या बौद्धिक उछाड़-पछाड़ इनकी कहानियों में नहीं पाई जाती है। सीधे-सीधे आत्मीयत्व स्थापित करती हैं। कथ्य-शिल्प के धरातल की सपाट परम्परा का निर्वाह करते हुए नव-प्रकाशित सातवां कहानी संग्रह 'पिंजरा' भी यही आग्रह कर रहा है। 'अन्तर्द्वंद्व' की नायिका अनुपमा तिवारी अपने प्रशासनिक ओहदे के अहंकार के कारण पति से अलग रह रही है। कामवाली चमेली उसके अन्तर्मन के द्वंद्व को खत्म करने में सफल हो जाती है। अनुपमा अपने पति के पास जाने का आखिरकार निर्णय ले लेती है। एक औरत ही दूसरी औरत की कमजोरी को अच्छे से समझती है। विदेश आयातित संस्कृति के कारण भारतीय परिवारों पर बुरा असर पड़ा है। विदेशी चाल-चलन के कारण सबसे ज्यादा अगर कोई प्रभावित और अपमानित हुआ है तो वह घर के बुजुर्ग। तीन पुत्र और तीन पुत्रियों के पिता अपनी गांव की एकरस जिंदगी से ऊबकर शहर अपने प्रशासनिक अधिकारी बेटे के घर जाते हैं। लेकिन शहर में वे अपनी बहू को पियक्कड़ और आजाद खयालों की पाते हैं। यहां तक तो ठीक था परंतु वह अपने ससुर का बुरी तरह से अपमान भी करती है। 'अपमानित होकर' गांव लौट जाते हैं। कहानी सोचने पर विवश करती है कि क्या शहर में बुजुर्गों को कोई स्थान नहीं है? ईमानदार अफसर का अपने पद पर बने रहना बहुत मुश्किल होता है। ईमानदार अफसर मोहन बाबू को अपनी ईमानदारी की कीमत झूठे भ्रष्टाचार के षड्यंत्र में उलझकर



चुकानी पड़ती है। कई लोगों ने लोकायुक्त कानून को हथियार बना लिया है। इस कानून में संशोधन की आवश्यकता है वरना यह कइयों के साथ 'विश्वासघात' करता रहेगा।

आज की राजनीति महिलाओं के लिए 'पिंजरा' है। जिसमें वह मुक्त होकर बाहर नहीं आ पाती है। मीनाक्षी का कद पार्टी में बढ़ता चला जाता है किंतु वह गृहस्थी से दूर होती जाती है। पारिवारिक जिम्मेदारियों के निर्वहन में लगातार असफल पति कृष्ण पुरोहित के लाख मना करने के बाद भी वह पार्टी ज्वाइन करती हैं अंत में मीनाक्षी को पश्चाताप और पार्टी से किनारा करना ही पड़ता है।

नंदा की मां सरोज देवी पुरातनपंथी है। बेटी आजाद खयालों की है। उसके भाई उसे पढ़ाना चाहते हैं। स्वयं नंदा भी पढ़-लिख कर आगे बढ़ना चाहती है। सरोज देवी को सिर्फ उसकी शादी की चिंता है। आखिरकार नंदा के भाई अपनी मां की चिंता इस आश्वासन के साथ दूर कर देते हैं कि नंदा की परीक्षा के बाद उसके लिए लड़का तलाशना शुरू कर देंगे। सरोज देवी की चिंता दूर हो जाती है। यह कहानी 'आप भी तो लड़की थीं' एक पुरातन विचारधारा वाली मां की चिंता को रेखांकित करती है।

'दंश' कहानी की कमला बांझपन की पीड़ा से ग्रसित है। आज हमारे देश-समाज में कमला जैसी कई महिलाएं हैं जो संतान सुख से वंचित हैं। लेकिन क्या हमने यह जानने का प्रयास किया है कि इसमें सारा दोष केवल स्त्री का ही होता है पुरुष का नहीं। यह कहानी पुरुषों में पौरुष दोष को रेखांकित करती कहानी है। आज बांझपन कोई लाइलाज बीमारी नहीं रह गया है। कई तरीकों से संतान प्राप्ति के अवसर नई तकनीक ने उपलब्ध करवा दिए हैं। आवश्यकता है तकनीक को अपनाने की। जमीन जायदाद घर खेत का बंटवारा अगर माता-पिता अपने जीवित रहते संतानों में बराबर-बराबर कर दें तो ठीक है वर्ना 'बंटवारा' की विधवा की तरह आश्रम तलाशना पड़ेगा। संतान उपेक्षा करके घर से बाहर कर देगी। इस कहानी का मूल स्वर तो यही कहता है। विधवा लिपिक वंदना को वफादार चपरासी सखाराम अपनी वफादारी का परिचय देते हुए वासना के भेड़िये सुधीर सक्सेना के हाथों बर्बाद

होने से बचा लेता है। वह अपना 'नमक का कर्ज' चुकाता है। आज समाज में ऐसे वफादार सखाराम जैसे लोगों की सख्त जरूरत है।

मोहिनी अपनी दोनों बहनों अलका और निशा का भार अपने कंधे पर उठाए जी रही है। पिता की मृत्यु के बाद सारी जिम्मेवारी उस पर आ गई थी। अपनी जिम्मेवारियों का भली-भांति निर्वहन करते हुए समाज में प्रतिष्ठा की सूचक बनी है। बहनों की शादी करके चैन की सांस लेती है। बेटियां भी बेटों के समान बढ़ चढ़ कर सामाजिक दायित्वों को निभा रही हैं। बेटियां ईमानदार होती हैं। वे किंकर्तव्यविमूढ़ नहीं होतीं। मोहिनी जैसी कई लड़कियों के कंधे सामाजिक दायित्वों का बोझ हैं। सफलतापूर्वक अपने दायित्वों को निभाकर समाज में बेजोड़ मिसाल बनी हुई हैं। जाने क्यों समाज में बेटे बेटियों के बीच भेद किया जाता है।

सोलन कहानियों का संग्रह 'पिंजरा' आम आदमी, मध्य और निम्न मध्य वर्ग की समस्याओं, आक्रोश, विद्रोह, सुधार के आग्रहों, उनकी मनःस्थितियों, समझौतों, भ्रष्ट व्यवस्था के प्रति आक्रोश और समझौतावादी नीतियों, बदलते सामाजिक परिवेश, आयातित विदेशी संस्कृति के चलन, मूल्यों के टूटन, बिखराव, मानवतावादी दृष्टिकोण का कथाई दस्तावेज हैं। सभी कहानिहयां आपके हमारे परिवेश-वातावरण की कहानियां हैं। रमेश मनोहरा ने अपने पिछले कहानी संग्रहों की तरह इस संग्रह में भी वही सीधी-सादी भाषा शैली, सरल संवादों, आस-पास के वातावरण की परम्परा का निर्वाह किया है। रमेश मनोहरा वैसे भी आम आदमी के कथाकार हैं। इनकी कहानियां आम आदमी से सीधे संवाद करती हैं। समस्या के प्रति ध्यानाकर्षण है तो सुधार का आग्रह भी। बदलते भारतीय समाज के चेहरे और मुखौटों का पर्दाफाश करने में माहिर रमेश मनोहरा आम आदमी को केंद्र में रखते हैं। जिज्ञासा का संचार करती हुई ये कहानियां निश्चित रूप से सुधी पाठकों को पसंद आएंगी।

50, सिद्धवट मार्ग, मेन रोड, भैरवगढ़, उज्जैन, मध्य प्रदेश
मो. 9009039743

पुस्तक का नाम : पिंजरा (कहानी संग्रह)
लेखक : रमेश मनोहरा
प्रकाशक : ज्योतिपर्व प्रकाशन, गाजियाबाद
मूल्य : 179

— — — — —

जीवन की बारीकियों से रू-ब-रू करवाती 'दुनिया खूबसूरत'

● **हीरा सिंह कौशल**

मशहूर शायर जावेद अख्तर की जुबानी- आदमी जिस परिवेश, वातावरण व समाज में रहता है, वह उसी परिवेश की भाषा व बोली बोलता है। खासकर कवि शायद उसी के अनुरूप अपनी कल्पना को साकार करता है क्योंकि लेखक कवि अपने आस पास के समाज से जो भी ग्रहण करता है या अनुभव करता है, उसे ही कल्पना के शब्दों में ढालता है। यह बात यादवेन्द्र शर्मा के कविता संग्रह 'दुनिया खूबसूरत' में भी साफ झलकती है। संग्रह में 64 कविताएं हैं जो कवि की जिंदगी के अनुभवों से प्रेरित हैं।

कविता 'सुबह की धूप में' प्रकृति प्रेम को उजागर किया गया है जिसमें धूप, वायु, पेड़ पौधों का महत्त्व अंकित है, वहीं पर एक अबोध प्राणी भूखा रहता हुआ अपनी जिंदगी जीना चाहता है। 'बरसात' के बहाने अच्छी बरसात की महत्ता को तो प्रकट किया ही गया है, परंतु पड़ोसी की ईर्ष्या, द्वेष, जलन को भी बताया है, तो किसानों पर भी व्यंग्य कसा है कि सारे पानी का बहाव दूसरी तरफ मोड़ देने से उन्हें दूसरों के नुकसान का भान नहीं होता है। पक्षियों के बहाने यह बताने की कोशिश की जा रही है कि बड़ी मछली छोटी मछलियों को निगल रही है। 'वर्षों के बाद' कविता में ये लाइनें 'कुत्ते अंगडाई ले चहलकदमी करने लग पड़े, खच्चरों पर ढोई जाने लगी है सेबों की पेटियां' पहाड़ के संघर्ष को प्रदर्शित करती हैं। 'कुछ देर यहां' कविता की पंक्तियां 'जो उस कच्चे मकान के पिछवाड़े शराब पीकर बहने लगे हैं' जीवन के अलमस्तपन को दर्शाती है। 'अविश्वसनीय किंतु सरल' में ताना कसते हुए समाज का चेहरा उजागर किया है, प्रश्न खड़ा किया है कि आजकल हम क्या परोसे जा रहे हैं। 'दिव्य जूते' के बहाने बहुराष्ट्र कम्पनियों को तरजीह देने की तरफ इशारा किया गया है जबकि देशी उद्योग खत्म हो रहे हैं। 'लोग' की कविताओं में बताया गया है कि प्रगति के दौर में एक दूसरे के लिए समय नहीं परंतु कुछ लोग ऐसे भी हैं जिनमें रिश्तों की खनक अभी भी मौजूद है, इन कविताओं की ये पंक्तियां पाठकों को उद्वेलित करती हैं 'धरती पर कर्मरत इन लोगों पर बहुत प्यार आता है तथा अपने पक्ष के लिए लड़ भी जाते हैं, पर दूसरों के काम आते थे, इसलिए मुझे भाते हैं।'

'मेला' के माध्यम से कवि यह बताना चाह रहा है कि अब लोगों का मेले के प्रति आकर्षण नहीं रहा है। 'वे दर्शक जो पहलवानों के दाव पर सीटियां बजाते रहे, उन्हें अब यहां नहीं ला सकेंगे हम'। 'बर्फ' कविता के माध्यम से प्रकृति का वर्णन किया तथा प्रकृति कितनी बदल गई है, इसके लिए वर्तमान समाज जिम्मेवार है। कवि प्रकृति का चिंतन करता हुआ भविष्य में स्वस्थ समाज की कल्पना करता अपनी बेबसी भी प्रकट करता है।

'शीत के दिन' में पर्यटक या अमीर लोगों की अय्याशी को दर्शाने के साथ गरीब के जीवन को भी उकेरा गया है। 'घर की दहलीज पर' में कवि ने यह बताने की कोशिश की कि पुराने रिश्तों में अपनापन गायब-सा हुआ लगता है। कविता 'विश्वविद्यालय के होस्टल' में विश्वविद्यालय के जीवन का बखूबी वर्णन किया गया है। 'एक पागल' की ये पंक्तियां ध्यान अचानक खींच लेती हैं 'सुबह उठते ही एक हड़बड़ी मुझ पर सवार हो जाती है धुले कपड़े पहन बैग उठा मैं भी देखता हूं घर से दफ्तर, दफ्तर से घर।' 'प्रेम चन्द' में कवि संघर्ष की बात खूब उकेरी है। 'जम्हिरडिया में प्रकृति की अनूठी देन का बखूबी वर्णन किया है परंतु यह हाट से नहीं बिकती यह गांव में बिना कीमत की मिलती है, लुप्त होती जम्हिरडियों की खूबियों को खूब प्रकट किया है। 'गुमशुदा लड़की' में यह बताने की कोशिश की गई है कि इस आपराधिक संसार में अब यह नहीं मिलने वाली। 'गाय' कविता के माध्यम से कवि ने व्यंग्य कसा है कि गाय को माता कहने वाले हिंदुओं की यह माता आजकल आवारा श्रेणी में है। 'देवता' के द्वारा कवि ने ताना कसने के साथ-साथ पहाड़ी लोगों के मन का भोलापन भी उजागर किया है तथा बड़े-बड़े मंदिरों की भी पोल खोल कर रख दी है।

'एक प्रतिक्रियावादी विमर्श' में बताया गया है कि आजकल हम अपने बच्चों को किस तरफ ले जा रहे हैं, प्रकृति से अलग करके उन्हें कैद कर रहे हैं। 'धूप' में कवि यह बताने की कोशिश कर रहा है कि पहले लोगों के जीवन में ऊर्जा थी तथा हर हाल में लड़ने का मादा था जो अब बिलकुल खत्म है और एक अनजाने डर ने घेर लिया है। परंतु कवि ने आशा नहीं छोड़ी बल्कि उम्मीद की है कि पहले वाली धूप आएगी। ये पंक्तियां कविता को चार चांद लगा देती हैं। 'बेशक बूंद-बूंद इकट्ठा करेंगे हम और ले आएंगे दोस्तों के बीच।'

'पसंद आपकी अपनी' में कविवर ने बताने का प्रयास किया है कि किताबों को पढ़ने वालों का अकाल है परंतु दूसरी चीजों के प्रति समाज में झुकाव बढ़ रहा है। 'विविध भारती' में शर्मा जी ने यह समझाने की कोशिश की है कि आम आदमी की आवाज ये स्वप्न था। 'काश्मीर' में कवि ने पुरानी यादों को ताजा करते हुए यह कहना चाहा है कि शायद पुराना काश्मीर लौट आए, पहले जैसा खुशनुमा वातावरण हो।

'राग यमन कल्याण' में शर्मा जी ने बखूबी व्यक्त किया है कि जब हम दिल से कोई काम करते हैं तो चार चांद लग जाते हैं। 'सुंदर युवती' में कवि ने यह कोशिश की है कि बूढ़े व्यक्ति के पास कोई युवती बैठ जाती है तो उसके चेहरे में चमक आ जाती है अर्थात् सोच क्यों बदल जाती है। 'अभी बच्चा हूं' में बचपन ठीक था। प्रकृति में खुश था, नारी में ममता, बुजुर्गों से आशीर्वाद, तपास से सच बोलना तथा भोलापन सब बचपन में था परंतु उम्र बढ़ती है सारा भोलापन गायब हो जाता है। ये पंक्तियां पाठक को उद्वेलित करती हैं 'नहीं दूसरों की तरक्की की जलन, नहीं दुनियादारी की अक्ल, अभी रंगों और रसों में गुम हूं।'

'बड़ी खबर' में आज की पत्रकारिता पर तंज कसा है कि खोजी खबर बन नहीं पाती अनाप शनाप खबरें छापकर चौथे स्तम्भ का परिचय दे रहे हैं। ये पंक्तियां पाठकों का ध्यान बरबस खींच लेती हैं। 'खींच डाली मेरी पीठ की तसवीर और बता दिया कि मेरी इस मुद्रा के लिए गहरे अर्थ हैं।' दो प्रश्न कविता वर्तमान समाज का आईना बताती है कि राजनीति चमकाने के लिए शगूफा छोड़ते हैं। इन तमाम कविताओं में शर्मा जी ने जीवन के हर पहलू को छुआ है तथा अपनी भावनाएं सीधे सपाट शब्दों में व्यक्त किया है जिससे पाठक वर्ग आसानी से समझ सकता है। इसमें आम आदमी की मजबूरियों, तकलीफों व भोलेपन को उजागर किया है तथा साथ राजनीतिज्ञों व कालाबाजारियों व धर्म के ठेकेदारों पर गहरा व्यंग्य कसा है। कवि की भाषा शैली कलिष्ट न होकर आसान है जिसे साधारण सा पाठक भी आसानी से समझ लेता है। 'दुनिया खूबसूरत' कविता संग्रह रचना के हर उद्देश्य को पूरा करने में सक्षम है तथा पाठक की भावनाओं को भी उद्वेलित करता है तथा सोचने पर मजबूर करता है कि रिश्तों में इस प्रकार के वैमनस्य हो सकते हैं। इस कविता संग्रह में जीवन की सच्चाइयों को भी उजागर किया है। यह कविता संगह अपने उद्देश्यों को पूरा करने में सफल रहा है।

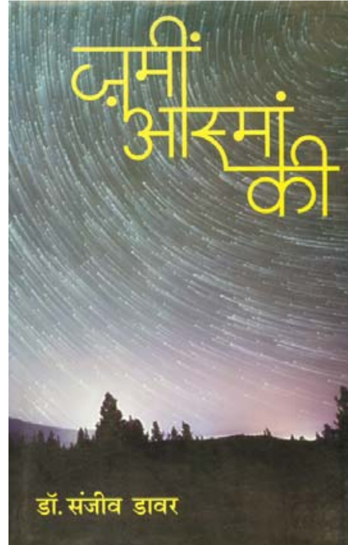
गांव व डाकघर महादेव, तह. सुंदरनगर, जिला मंडी, हिमाचल प्रदेश-175018, मो. 94181 44751

पुस्तक का नाम : दुनिया खूबसूरत (कविता संग्रह)
लेखक का नाम : यादवेन्द्र शर्मा
प्रकाशक : कश्यप पब्लिकेशन, गाजियाबाद
संस्करण : 2014, पृष्ठ : 104/-, मूल्य : 150

'जमीं आसमां की'
अध्यात्म के असीम रहस्यात्मक फलक का उद्बोधन

● डॉ. ज्ञान सिंह मान

'जमीं आसमां की' काव्य संग्रह कवि के अंतराल की स्वीकार्य यथार्थ चित्र विथियों से उत्सरित हो अध्यात्म के असीम रहस्यात्मक फलक का सफल उद्बोधन है। कवि का विषय वैभिन्नय तथा शैलीगत स्वरूप संरचना सहृदय पाठक को अभिभूत ही नहीं, चमत्कृत भी करती है। प्रतीक एवं अलंकार सुयोजना स्तुत्य है, अनुकरणीय है। कृति की रचनाएं वायु के धीमे प्रवाह की भांति जमीं से उठती स्नेहसिक्त आत्मीय संवेदना को आसमां तक पहुंचाती चिंतन की सभी प्रशांत एवं प्रसुप्त स्वर लहरियों को तरंगायित करती हैं। कृति पठनीय एवं मननीय ही नहीं अपितु पाठक को युगबोध के परत-दर-परत अनुभवों से तद्रूप करवाती हुई मानवीय उदात्त चेतना और चिंतन का साक्षात्कार भी करवाती है। ये सम्प्रेषणीय कविताएं संभावना और उपलब्धि के बीच के अंतराल को परिपूर्ण करती हुई जमीं से आसमां तक एक बहुआयामी इंद्रधनुषीय वितान बुनती प्रतीत होती हैं।



कुछ उदाहरण सहज स्तुत्य हैं- भावनाओं का सहज उद्रेक संतोष भरे मन की सत्यता प्रकट करता है, क्योंकि चलना ही जीवन का रहस्य है (पृ. 22) कवि के कोमलता की अद्भुत व्याख्या है, नए प्रतीक और अभिव्यक्ति की ताज़गी है- जब गम बिझरते हैं, हौसला टूट जाता है, कैसी संवेदनशील है यह अनुभूति (पृ. 28) चिंतन और अनुभूति के बीच की कड़ियों को खोलना कवि को अच्छा लगता है, इसीलिए वह खामोश दरिया और तूफानों के संवेग प्रवाह की चर्चा में रस विभोर हो उठता है। (पृ. 51)

जीवन जीने का सहज मार्ग कवि की अंतःप्रेरणा में स्वतः निहित है, इसीलिए उसे ईर्ष्या में कबाब हो जाना, नबाब हो जाना पसंद नहीं है। (पृ. 76)। पुनः कवि की रहस्यात्मक जिज्ञासा उसे दाता के द्वार तक दस्तक के लिए प्रेरित करती है- यदि मौला-बाबा साथ हैं तभी जीवन सार्थक है अन्यथा कुछ भी नहीं। (पृ. 82) कैसी गूढ़ एवं आत्मीय अभिव्यंजना है यह।

कवि डावर जीवन के यथार्थ बोध से अपरिचित नहीं है, उसे सामयिक दम तोड़ती मानवता का पूरा एहसास है, इसीलिए दोपहर को झुलसा मज़दूर उसे असहय टीस देता है। (पृ. 95) प्रकृति और सृष्टि के रचयिता का अनुभव पाने के लिए कवि डावर परिवेश की सहन एवं उन्मत्त सिहरन भी चुरा लाया है। वह बरसती बूंदों को बंजर जमीं का स्पर्श देकर जमीं आसमां को एक कर देता है। (पृ. 116)। साधुवाद। आशा करता हूं भविष्य में भी संजीव जी ऐसी काव्यगत उद्भावनों से हमें सराबोर करते रहेंगे।

6 एफ.एफ., एचआईजी फ्लैट, रानी झांसी रोड, सिविल लाइन्स, लुधियाना, पंजाब-141001, संपर्क : 0 0161 2721161

पुस्तक का नाम : जमीं आसमां की
लेखक : डॉ. संजीव डावर
प्रकाशक : प्रीत साहित्य सदन, लुधियाना, पंजाब
मूल्य : 250 रुपये

हिमप्रस्थ में ऊना जिला विशेषांक

'हिमप्रस्थ' मासिक पत्रिका में शीघ्र ही ऊना जिला विशेषांक प्रकाशित किया जा रहा है। अंक में विशेष रूप से ऊना जिला का इतिहास, सामाजिक-आर्थिक व राजनीतिक महत्त्व, देव संस्कृति, मेले व त्योहार, लोक साहित्य एवं संस्कृति, पर्यटन, ऐतिहासिक एवं पौराणिक धार्मिक स्थल तथा विकास इत्यादि पर सामग्री प्रकाशित की जाएगी। इस अंक के लिए आपका सहयोग अपेक्षित है। विस्तृत जानकारी के लिए गिरिराज/हिमप्रस्थ कार्यालय में सम्पर्क करें।

- वरिष्ठ सम्पादक

हिमप्रस्थ

वर्ष : 60 जून, 2015 अंक : 3

प्रधान सम्पादक
डॉ. एम.पी. सूद

वरिष्ठ सम्पादक
यादविन्दर सिंह चौहान

सम्पादक
वेद प्रकाश

कम्पोजिंग एवं पृष्ठ सज्जा : अश्वनी

सम्पादकीय कार्यालयः हि. प्र. प्रिंटिंग प्रेस परिसर, घोड़ा चौकी, शिमला-5

वार्षिक शुल्क : 50 रुपये, एक प्रति : 5 रुपये

E-Mail : himprasthahp@gmail.com
Tell: 0177 2633145, 2830374

ज्ञान सागर

कुछ भी नया करने में संकोच मत करो। ये मत सोचो कि हार होगी या जीत। हार तो किसी की नहीं होती। या तो जीत होती है या सीख मिलती है।
– अज्ञात

इस अंक में

अपनी बात

हिमाचल प्रदेश को आज देशभर में एक स्थिर, शांतिप्रिय एवं सुशासित राज्य के रूप में जाना जाता है। विश्व बैंक की एक रिपोर्ट के अनुसार हिमाचल प्रदेश ने गत दो दशकों के दौरान विकास और आर्थिक वृद्धि के क्षेत्रों में उल्लेखनीय उपलब्धियां हासिल की हैं। प्रदेश ने इस दौरान गरीबी उन्मूलन, आधारभूत ढांचागत निर्माण, सर्वांगीण विकास के अनेक मानकों में अन्य राज्यों को पीछे छोड़ते हुए विकास का आदर्श प्रस्तुत किया है। प्रदेश को इस मुकाम तक ले जाने का श्रेय जहां राज्य के नेतृत्व की दूरदर्शी नीतियों एवं कार्यक्रमों को जाता है, वहीं यहां के ईमानदार एवं कर्मठ नागरिक भी इसके बराबर के हकदार हैं। वर्तमान प्रदेश सरकार ने राज्य में अपने शासन के तीस महीनों का कार्यकाल सफलतापूर्वक पूर्ण कर लिया है जो प्रदेश में राजनीतिक स्थिरता के साथ-साथ समग्र विकास और शानदार उपलब्धियों भरा रहा है। प्रदेश सरकार के लिए यह संतोष का विषय है कि इसने लोगों से किए अपने अधिकांश चुनावी वायदों को इस अवधि में ही पूर्ण कर दिया है और प्रदेश समान एवं संतुलित विकास के पथ पर निरंतर अग्रसर हुआ है। सरकार की विकासोन्मुखी व जन कल्याणकारी नीतियों एवं कार्यक्रमों के बेहतर कार्यान्वयन से प्रदेश का हर क्षेत्र और समाज का हर वर्ग लाभान्वित हुआ है। बेरोजगार युवाओं को रोजगार एवं स्वरोजगार के पर्याप्त अवसर उपलब्ध करवाकर युवा शक्ति को राष्ट्र निर्माण गतिविधियों में संलग्न करने की दिशा में सरकार ने सराहनीय कार्य किया है। प्रदेश सरकार की महत्त्वाकांक्षी कौशल विकास भत्ता योजना से राज्य के शिक्षित बेरोज़गार युवा व्यापक रूप से लाभान्वित हो रहे हैं। अब तक प्रदेश के 75 हजार युवक इस योजना से लाभ उठाकर स्वावलम्बन की राह पर आगे बढ़े हैं। प्रदेशवासियों के लिए यह गर्व की बात है कि इस अवधि के दौरान राज्य को एक आई.आई.एम. और एक एम्स जैसे देश के प्रतिष्ठित संस्थान मिलने के साथ-साथ तीन मेडिकल कॉलेज स्वीकृत हुए हैं। इससे प्रदेश के युवाओं को विश्व स्तरीय व्यावसायिक एवं उच्च शिक्षा राज्य में ही ग्रहण करने के पर्याप्त अवसर उपलब्ध होंगे। प्रदेश की आर्थिकी की बुनियाद कृषि एवं बागबानी को सुदृढ़ करने के लिए प्रदेश में कृषि बागबानी आधारित उद्योगों की स्थापना को तरजीह दी जा रही है। सरकार ने शिमला जिले में ठियोग के समीप एक जूस फैक्ट्री स्थापित करने की घोषणा की है। फसलोत्तर प्रबंधन के लिए नई मंडियों और अभिशीतन केंद्रों का निर्माण किया जा रहा है। सरकार ने औद्योगिक विकास के क्षेत्र में दूरदर्शी सोच का परिचय देते हुए 'निमंत्रण से निवेश' कार्यक्रम के माध्यम से निवेशकों को राज्य में निवेश के लिए आकर्षित करने का सफल प्रयास किया है। सरकार की इस पहल से प्रेरित होकर देश के बड़े औद्योगिक घराने हिमाचल में निवेश के लिए स्वेच्छा से आगे आ रहे हैं। देश के औद्योगिक घराने टाटा ग्रुप ने प्रदेश में अधोसंरचना निर्माण, उत्पादन, पर्यटन, कृषि, चाय उद्योग और ऊर्जा जैसे अहम क्षेत्रों में निवेश की पेशकश की है। इससे राज्य के हजारों बेरोज़गार युवाओं को रोज़गार के व्यापक अवसर मिलने के साथ-साथ प्रदेश की आर्थिकी भी सुदृढ़ होगी। वर्तमान प्रदेश सर्वकल्याण-समग्र विकास की विचारधारा के साथ विकास पथ पर निरंतर अग्रसर है। सर्वांगीण विकास की दिशा में प्रदेश सरकार द्वारा किए जा रहे गंभीर प्रयासों के परिणामस्वरूप हिमाचल प्रदेश, आज विकास और उन्नति के नए शिखरों को छू रहा हूं।

–सम्पादक

विकास

सब्जी उत्पादन से स्वावलम्बन की राह

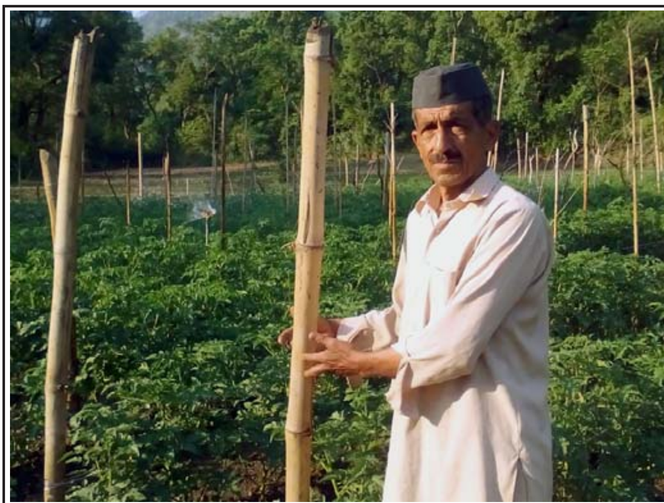
खेत खलिहान में लहलहाई खुशहाली की फसल

● योग राज शर्मा

अच्छी सरकारी नौकरी, सभी सहूलियतें भी उपलब्ध, गांव व समाज में भी अच्छी प्रतिष्ठा। लेकिन इसे मिट्टी की सौंधी खुशबू के प्रति आकर्षण ही कहा जाएगा कि शहर की सभी सुख-सुविधाएं छोड़कर वह फिर से गांव लौटा और आरंभ कर दी खेती-बाड़ी। सरकारी नौकरी से सेवानिवृति के बाद उसने कृषि क्षेत्र में एक नया मुकाम हासिल किया है। बात हो रही है शिमला ग्रामीण क्षेत्र की ग्राम पंचायत पाहल के नयासेर निवासी हेमचंद वर्मा की, जो आज प्रगतिशील किसान के रूप में जाने जाते हैं और बेरोजगार युवाओं के लिए किसी प्रेरणा स्रोत बने हैं। सरकारी योजनाओं के बूते अत्याधुनिक कृषि तकनीकों का उपयोग करते हुए आज वह क्षेत्र के चुनिंदा प्रगतिशील किसानों की श्रेणी में शामिल हो गए हैं।

देश के ग्रामीण क्षेत्रों में यदि शिक्षित बेरोजगार युवा अपने पुश्तैनी कृषि व सम्बद्ध गतिविधियों में अपना ध्यान लगाएंगे तो देश से बेरोज़गारी की समस्या स्वतः ही समाप्त हो जाएगी और यही देश की सेवा भी होगी।

यूं तो हेमचंद वर्मा कृषक परिवार से ही संबंधित हैं। लेकिन वर्ष 1968 में अपनी पढ़ाई पूरी करने के उपरांत उन्होंने हिमाचल प्रदेश सहकारी कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक में शाखा प्रबंधक के पद से करियर की शुरुआत की। नौकरी में रहते हुए तो कृषि कार्य के लिए इतना समय नहीं निकाल पाए लेकिन प्रबंध निदेशक के पद से सेवा निवृति के बाद वह अपने पुश्तैनी कार्य, कृषि के साथ जुड़ गए। सबसे पहले उन्होंने अपने खेतों में सिंचाई सुविधा के लिए सरकार द्वारा चलाई जा रही योजनाओं का लाभ उठाते हुए जल भंडारण टैंक बनवाया जिसमें 150 क्यूबिक लीटर पानी का भंडारण किया जा सकता है। साथ ही सरकार के सहयोग से लगाए गए हाइड्रम से भी वह अपने खेतों को सिंचित कर रहे हैं। खेतों के लिए पानी की व्यवस्था हो जाने के बाद वर्मा ने गैर मौसमी सब्जी उत्पादन का कार्य आरंभ किया और आज सालाना ढाई से तीन लाख रुपये प्रति वर्ष अपनी खेती से कमा रहे हैं। वे अपने खेतों में टमाटर, बीन, ब्रॉकली, बेंगन व खीरे का सफल उत्पादन कर रहे हैं। हालांकि जंगली जानवरों की समस्या से निपटने के लिए सरकार से कदम उठाने की बात भी करते हैं। उनका मानना है कि खरगोश, जंगली सुअर और दूसरे छोटे जानवरों के लिए उन्होंने खेतों में लोहे की जाली बनाकर फेंसिंग की है।



कृषि कार्य में व्यस्त नयासोर निवासी हेम चन्द वर्मा

ऐसा नहीं है कि नयासेर गांव में अकेले ही वे कृषि कार्यों को अत्याधुनिक ढंग से कर रहे हैं। उनकी प्रेरणा से गांव के प्रेमलाल, नोखराम, कैलाश व नेकराम सरीखे अन्य ग्रामवासियों ने भी कृषि को अपनाया है और कृषि कार्यों से अच्छी आमदनी प्राप्त कर रहे हैं। इन लोगों का भी यही मानना है कि गांव में सड़क आने व सिंचाई की सुविधा

प्रदेश में कृषि गतिविधियों को बढ़ावा देने के लिए सरकार द्वारा कारगर कदम उठाए जा रहे हैं। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए प्रत्येक विधानसभा क्षेत्र की पंचायतों में मुख्यमंत्री आदर्श कृषि ग्राम योजना आरंभ की गई है। इस योजना के लिए पंचायत में कृषि अधोसंरचना के लिए विकास के लिए 10 लाख रुपये की राशि उपलब्ध करवाई गई है। हिमाचल प्रदेश में किसानों द्वारा परंपरागत फसलों के साथ- साथ सब्जी उत्पादन खासकर बे-मौसमी सब्जियों का उत्पादन भी किया जा रहा है जिससे उनकी आर्थिक स्थिति मजबूत हुई है, आज प्रदेश में सालाना 2500 करोड़ की बेमौसमी सब्जी उत्पादन का कारोबार हो रहा है।

मिलने से उन्हें लाभ मिला है। साथ लगती घैणी पंचायत में में अधिकांश किसान कृषि की नवीन प्रौद्योगिकी को अपनाकर बेमौसमी सब्जी उत्पादन कर रहे हैं।

हेमचंद वर्मा बताते हैं कि कृषि कार्यों के लिए उनका बेटा भी सहयोग कर रहा है जो किसी बहुराष्ट्रीय कंपनी से प्रबंधक पद की नौकरी छोड़कर अपने पुश्तैनी कार्य से जुड़ गया है। वह नई कृषि तकनीकों का अच्छा इस्तेमाल भी कर रहा है। ऐसा नहीं है कि उनके बेटे ने पढ़ाई कम की है। उसके पास भी अपने पिता की तरह ही एमबीए की पेशेवर डिग्री है, लेकिन अपने पिता का सहयोग करने और पुश्तैनी कार्य को आधुनिक ढंग से करने लिए वह दोनों दिन रात मेहनत कर रहे हैं।

हेमचंद वर्मा का कहना है कि देश में कृषि क्षेत्र को बढ़ावा दिए जाने की जरूरत है और लोगों को जिंदा रहने के लिए तो फसलों की ही जरूरत है। वे इलेक्ट्रॉनिक चीजें तो खा नहीं सकते। ऐसे में कृषि व्यवसाय को अपनाकर इसे सुदृढ़ करना किसानों व सरकार दोनों की सामूहिक जिम्मेवारी है। डिपुओं से अगर कभी राशन मिलना बंद हो जाए तो ग्रामीण क्षेत्रों में ज्यादा दिक्कत होगी। वे यह भी मानते हैं कि किसानों को अपने उत्पाद को बेचने लिए विपणन की समस्या भी आ रही है और बाजारी शक्तियां इस कदर हावी हैं कि न तो किसानों को उसके उत्पाद के अच्छे दाम मिल रहे हैं और उपभोक्ता भी अनाज और फल-सब्जियां महंगी मिलने से पिस रहे हैं। इस दिशा में सरकार को कार्य करने की आवश्यकता है। युवाओं के लिए वे एक ही संदेश देते हैं कि सरकारी व कंपनी की नौकरी के बजाए, वे अपने पुश्तैनी कृषि व संबंधित काम की तरफ ध्यान दें तो देश से बेरोजगारी की समस्या स्वतः ही समाप्त हो जाएगी और यही सच्ची देश सेवा भी होगी। इसी से देश सही मायनों में समृद्धता की ओर बढ़ेगा।

ऐसा नहीं है कि शिमला ग्रामीण के नयासेर गांव के निवासी ही सरकारी योजनाओं का लाभ उठाकर सब्जी उत्पादन कर रहे हैं। प्रदेश भर में हजारों की तादाद में ऐसे किसान हैं जिन्होंने सरकार की ओर से चलाई गई कृषि व सिंचाई योजनाओं का लाभ उठाया है और आज उनकी आमदनी में सम्मानजनक बढ़ोतरी हुई है और वे भी प्रदेश के युवाओं के लिए किसी प्रेरणा से कम नहीं हैं।

सरकारी प्रयासों से कृषि क्षेत्र का लगातार विस्तार हो रहा है बल्कि कृषि व अन्य संबद्ध गतिविधियों का सकल घरेलू उत्पाद में 30 प्रतिशत योगदान है और यह क्षेत्र सीधे तौर 71 प्रतिशत लोगों को रोजगार उपलब्ध करवा रहा है। प्रदेश के कुल 55.67 लाख हैक्टेयर भौगोलिक क्षेत्र में से लगभग 9.68 लाख हैक्टेयर भूमि पर 9.33 लाख किसानों द्वारा खेती की जा रही है जो औसतन 1.04 हैक्टेयर है।

किसानों को उनके उत्पादों के अच्छे दाम मिल सकें इसके लिए सरकार का यह प्रयास है कि उन्हें घरों के समीप ही विपणन की सुविधा मिले। इसके लिए विभिन्न स्थानों पर विपणन यार्ड स्थापित किए जा रहे हैं। कृषि विभाग 11 मृदा जांच प्रयोगशालाओं और 4 सचल मृदा जांच प्रयोगशालाओं के माध्यम किसानों को निःशुल्क मृदा जांच सुविधा प्रदान कर रही है। पिछले ढाई वर्षों के दौरान 2.40 लाख किसानों को मिट्टी स्वास्थ्य कार्ड वितरित किए गए।

राज्य सरकार द्वारा कृषि को नई दिशा देने के लिए जैविक खेती को प्रोत्साहित किया जा रहा है और इस वर्ष दो हजार हैक्टेयर अतिरिक्त क्षेत्र को जैविक खेती के तहत लाया जा रहा है। राज्य में राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना लागू कर किसानों को राहत प्रदान की गई है और किसानों को उन्नत बीज व खाद पर उपदान दिया जा रहा है।

हिमाचल प्रदेश में किसानों द्वारा परंपरागत फसलों के साथ-साथ सब्जी उत्पादन खासकर बे-मौसमी सब्जियों का उत्पादन किया जा रहा है जिससे उनकी आर्थिक स्थिति मजबूत हुई है और सालाना 2500 करोड़ की बेमौसमी सब्जी उत्पादन का कारोबार हो रहा है।

उप सम्पादक, गिरिराज साप्ताहिक, शिमला

डॉ. वाई.एस. परमार किसान स्वरोजगार योजना

तीस माह में पचास हजार वर्गमीटर क्षेत्र में संरक्षित खेती

हिमाचल प्रदेश सरकार किसानों की सामाजिक-आर्थिक स्थिति को सुदृढ़ करने के लिए कृषि क्षेत्र को बढ़ावा दे रही है। राज्य में संरक्षित खेती को बढ़ावा देने के उद्देश्य से 111.19 करोड़ रुपये लागत की महत्त्वाकांक्षी की डा. वाई.एस. परमार किसान स्वरोजगार योजना कार्यान्वित की जा रही है। इसके अंतर्गत वर्ष 2014-15 से वर्ष 2017-18 तक 4700 पॉलीहाऊसों का निर्माण, 2150 स्प्रिंकल/ड्रिप इकाइयां लगाने का लक्ष्य रखा गया है। योजना के तहत पॉलीहाऊस, स्प्रिंकलर/ड्रिप इकाइयों के निर्माण के लिए 85 प्रतिशत तक का उपदान प्रदान किया जा रहा है। योजना के अन्तर्गत इन वर्षों में 8 लाख 35 हजार वर्ग मीटर क्षेत्र को संरक्षित खेती के तहत लाने तथा 8 लाख 20 हजार वर्ग मीटर से अधिक क्षेत्र को सूक्ष्म सिंचाई के अन्तर्गत लाने का लक्ष्य रखा गया है। योजना के अन्तर्गत गत अढ़ाई वर्षों के दौरान 50 हजार वर्ग मीटर क्षेत्र संरक्षित खेती के तहत लाया जा चुका है, जिसपर किसानों को 5.4 करोड़ रुपये का उपदान प्रदान किया गया है।

प्रदेश सरकार के सतत प्रयासों एवं कारगर नीतियों के बेहतर कार्यान्वयन के परिणामस्वरूप राज्य में सब्जी उत्पादन बढ़ कर 14 लाख टन से अधिक हो गया है। इस वित्त वर्ष के दौरान बे-मौसमी फसलों विशेषकर सब्जी उत्पादन को बढ़ावा देने पर 60 करोड़ रुपये व्यय किए जा रहे हैं।

प्रदेश में किसानों को समुचित सिंचाई सुविधा उपलब्ध करवाने के उद्देश्य से सिंचाई क्षेत्र बढ़ाने के लिए राज्य सरकार द्वारा राजीव गांधी सूक्ष्म सिंचाई योजना आरम्भ की गई है, जिसपर चार वर्षों की समयावधि के दौरान 154 करोड़ रुपये व्यय किए जाएंगे। परियोजना के माध्यम से 8500 हेक्टेयर क्षेत्र को टपक/फव्वारा सिंचाई प्रणाली के तहत लाकर 14 हजार किसानों को लाभान्वित करने का लक्ष्य रखा गया है। योजना के तहत किसानों को 113 करोड़ रुपये का उपदान दिया जाएगा।

प्रदेश में किसानों की सुविधा के लिए 'मुख्यमंत्री आदर्श कृषि गांव योजना' कार्यान्वित की जा रही है, जिसके अन्तर्गत हर विधानसभा क्षेत्र में दो चयनित पंचायतों के लिए कृषि विकास योजना तैयार की गई है। योजना के तहत चयनित पंचायत में 10 लाख रुपये की राशि कृषि संबंधी अधोसंरचना स्थापित करने के लिए खर्च किए गए हैं। योजना के तहत गत दो वर्षों के दौरान लगभग 8 करोड़ रुपये खर्च किए गए।

कृषि उत्पादन बढ़ाने व भूमि की उपयोगिता जानने के लिए मिट्टी परीक्षण का बहुत महत्व है। कृषि विभाग किसानों को निःशुल्क मिट्टी परीक्षण सुविधा उपलब्ध करवा रहा है ताकि किसान अपने खेतों में मिट्टी की जांच की सिफारिशों के अनुसार कृषि उत्पादन में वृद्धि कर सके। इसके लिए प्रदेश में चार सचल मिट्टी परीक्षण प्रयोगशालाओं व 11 मिट्टी प्रशिक्षण प्रयोगशालाओं की सुविधाएं प्रदान की जा रही हैं। इसके अतिरिक्त प्रदेश के दुर्गम तथा दूर-दराज क्षेत्रों में मिट्टी स्वास्थ्य कार्ड उपलब्ध करवाने के लिए 3 नई सचल मृदा परीक्षण प्रयोगशालाएं स्थापित करने का भी निर्णय लिया गया है।

प्रदेश सरकार राज्य में जैविक खेती को बढ़ावा देने के लिए प्रयासरत है। प्रदेश में अब तक 26,741 कृषकों को जैविक खेती के लिए पंजीकृत किया जा चुका है तथा 15,548 हेक्टेयर क्षेत्र में जैविक खेती की जा रही है।

नरेन्द्र शर्मा, स. लो.स. अ., निदेशालय, सूचना एवं जन सम्पर्क, शिमला

प्रदेश सरकार के सतत प्रयासों एवं कारगर नीतियों के बेहतर कार्यान्वयन के परिणामस्वरूप राज्य में सब्जी उत्पादन बढ़ कर 14 लाख टन से अधिक हो गया है। इस वित्त वर्ष के दौरान बे-मौसमी फसलों विशेषकर सब्जी उत्पादन को बढ़ावा देने पर 60 करोड़ रुपये व्यय किए जा रहे हैं।

सफलता की कहानी

कड़ी मेहनत व जुनून से हासिल किया बागबानी में नया मुकाम

वही मिट्टी, वही आबोहवा और वही ऊंचाई व नमी भी। लेकिन सबसे अलग करने की उसकी चाहत ने उसे कामयाबी का नया चेहरा बना दिया है। जी, हां बात हो रही है शिमला जिले के कोटखाई क्षेत्र के एक युवा बागबान संजीव चौहान की। कड़ी मेहनत व जुनून के चलते उसने बागबानी के क्षेत्र में एक ऐसा मुकाम हासिल किया है जो देश ही नहीं बल्कि विदेशी बागबानों के लिए भी एक प्रेरणादायक है।

उसके पास वकालत की डिग्री तथा पेशेवर पत्रकारिता में खासी महारत लेकिन बागबानी के प्रति लगाव के चलते उसने वर्ष 2006 में अपने पैतृक निवास स्थान बखोल में कुछ नया करने की राह पकड़ी। पांच साल तक कड़ी मेहनत की और बागबानी की नई प्रौद्योगिकी को सीखा। अपनी इसी लगन व मेहनत के बूते संजीव ने सेब उत्पादन में चीन व अमेरिका के बागबानों को प्रति हेक्टेयर उत्पादन में पछाड़ दिया है। विगत सेब सीजन में उसके सेब के बागीचे में 52 मीट्रिक टन प्रति हेक्टेयर उत्पादन हुआ जबकि चीन व अमेरीका में 30 से 40 मीट्रिक टन सेब उत्पादन प्रति हैक्टेयर हो रहा है।

संजीव ने प्रति हेक्टेयर सेब उत्पादन में रिकार्ड वृद्धि हासिल कर रचा इतिहास

इतना ही नहीं संजीव चौहान बागबानी पर आधारित अपनी पुस्तक व इंटरनेट के माध्यम से अपने बागबान साथियों को नवीनतम जानकारियां मुहैया करवा रहे हैं। हिमाचल के बागबानी इतिहास में एक नई इबारत लिखने को प्रयासरत इस युवा बागबान की सफलता की कहानी प्रदेश के युवाओं के लिए प्रेरणादायी साबित हो सकती है। अपने अनुभव को प्रदेश के बागबानों के साथ सांझा करने के लिए सेब पर आधारित पुस्तक में उन्होंने सेब के उत्पादन के विभिन्न पहलुओं पर वैज्ञानिक ढंग से प्रकाश डाला है। इसके अलावा चौहान ने युवा बागबानों के लिए आर्चर्ड ब्लूम डॉट कॉम नाम से वेबसाइट भी शुरू की है। इस साइट में बागबानी के सभी पहलुओं पर सामग्री रोजाना अपडेट होती है। इसमें वीडियो इंटरव्यू भी शामिल किए जाते हैं, जिसमें बागबानी विशेषज्ञ अलग-अलग समस्याओं पर अपनी राय देते हैं। यह वेबसाइट बागबानों के लिए बहुत ही उपयोगी साबित हो रही है। चीन व अमेरिका बागबानी में आधुनिक तकनीक व नई खोज से लैस रहते हैं, लेकिन हिमाचल के दूरस्थ गांव बखोल के निवासी संजीव चौहान ने यह सफलता अपनी मेहनत व नई सोच के बूते हासिल की है।

प्रदेश सरकार द्वारा बागबानों के लिए चलाई जा रही विभिन्न योजनाओं का भी संजीव चौहान ने भरपूर फायदा उठाया है। इसमें टपक सिंचाई, एंटीहेल नेट, प्रदेश सरकार के बागबानी विशेषज्ञों से परामर्श व अन्य सरकारी सुविधाओं का उनकी सफलता में महत्त्वपूर्ण स्थान है। इस सफलता के लिए चौहान को कई संस्थाओं ने सम्मानित भी किया है। वर्ष 2012 में बंगलुरू में आयोजित समारोह में उत्कृष्ट बागबानी के लिए आवार्ड मिला। इसके अलावा प्रदेश के मुख्यमंत्री वीरभद्र सिंह ने भी उन्हें उल्लेखनीय उपलब्धि के लिए सम्मानित किया है। नौणी विश्वविद्यालय सोलन में आयोजित एक समारोह में सिंचाई एवं जनस्वास्थ्य व बागबानी मंत्री श्रीमती विद्या स्टोक्स ने जिला स्तरीय पुरस्कार से सम्मानित किया। चौहान ने प्रति हैक्टेयर उत्पादन का रिकार्ड नई तकनीक व मिट्टी की न्यूट्रिशियन वैल्यू को बरकरार रखते हुए हासिल किया है।

वर्तमान में संजीव चौहान के बागीचे में 25 किस्म के विदेशी सेब के पौधे फल दे रहे हैं। इनमें सुपर चीफ, स्कारलेट स्पर, गेल गाला, ग्रेनी स्मिथ, आर्गेन स्पर, वाशिंगटन रेट डिलिशियस, ऐस व जोना गोल्ड जैसी किस्में शामिल हैं। इसके अलावा चीन की रेड फ्यूजी, व कोरेउ फ्यूजी किस्मों सहित इटली की रेड

सर्वेक्षण रिपोर्ट और अन्य आवश्यक दस्तावेज प्राप्त होने के 15 दिनों के भीतर दावों का भुगतान सम्बन्धित नोडल बैंकों के माध्यम से किया जाएगा। नोडल बैंक इसे आगे किसानों के बैंक खातों में जमा करेंगे। कार्यान्वयन एजेंसियां बैंकों को कुल एकत्र प्रीमियम के चार प्रतिशत की दर से सेवा कर का भुगतान करेंगी।

बागबानों के लिए मददगार मौसम आधारित बीमा योजना

● जयंत शर्मा

हिमाचल की आर्थिकी में बागबानी का महत्त्वपूर्ण स्थान है। प्रदेश सरकार इसके संवर्द्धन और उन्नयन के लिए कृतसंकल्प है। सेब और आम की फसलों को मौसम से हुए नुकसान के दृष्टिगत प्रदेश सरकार ने फल उत्पादकों को राहत देने के लिए पायलट आधार पर मौसम आधारित फसल बीमा योजना आरम्भ की है। प्रदेश सरकार के वर्तमान कार्यकाल के दौरान प्रदेश के 1,06,113 बागबानों को इस बीमा योजना के अन्तर्गत लाया गया है।

वर्ष 2015-16 में राज्य के सभी विकास खंडों में बीमा योजना का विस्तार

प्राकृतिक आपदाओं से बागबानी फसलों को हुए नुकसान की एवज में सरकार द्वारा 9.14 करोड़ रुपये की राशि आपदा राहत योजना के अन्तर्गत जारी की गई है, जो अब तक की सबसे अधिक राशि है। इससे बागबानों को सामग्री उपदान दर पर प्रदान की गई है।

वर्ष 2013-14 के दौरान 1,26,14,524 सेब के पेड़ों का बीमा करवाने वाले 64,782 बागबानों को मौसम आधारित फसल बीमा योजना के अन्तर्गत लाया गया है। इसके लिए प्रदेश सरकार द्वारा प्रीमियम का 25 प्रतिशत भाग लगभग 6.17 करोड़ रुपये वहन किया गया।

वर्ष 2014-15 में रबी मौसम के दौरान इस योजना के अन्तर्गत सेब फसल के लिए 17 विकास खंडों से बढ़ाकर 35 तथा आम के 42 खंडों को इस योजना के दायरे में लाया गया, इसके अतिरिक्त 14 खंडों में नींबू प्रजाति, 12 विकास खंडों में पल्म और 4 विकास खंडों में आडू की फसल को भी योजना के अन्तर्गत लाया गया है। प्रदेश सरकार द्वारा वर्ष 2015-16 में राज्य के सभी विकास खंडों में बीमा योजना का विस्तार किया गया है।

विलॉक्स, जेरोमाइन, रेडलम गाला, बुर्का गाला, एजटेक फ्यूजी किस्में मौजूद हैं। फ्रांस की कुछ किस्मों के कुछ पौधे भी उसने अपने बागीचे में लगाए हैं। साथ ही बागीचे में लगाए गए नाशपाती, प्लम, बादाम, व प्रून फ्रूट की विभिन्न किस्मों के पौधे भी अच्छी फसल दे रहे हैं। वर्तमान में संजीव प्रतिवर्ष तीन हजार पेटियों का उत्पादन कर रहे हैं। उनकी यह कामयाबी प्रदेश के अन्य युवाओं के लिए किसी प्रेरणा से कम नहीं है।

क्या कहते हैं संजीव चौहान

अपनी कामयाबी के बारे में संजीव चौहान का कहना है : "मैंने पौधों के साथ भावनात्मक लगाव पैदा किया है। मुझे हर पौधे की नेचर पता है। मैं उन्हें अपने परिवार के सदस्यों की तरह समझता हूं। बागीचे में काम करते वक्त मैं उनके साथ सुख-दुख बांटता हूं, उनके साथ संवाद स्थापित कर उन्हें अपना स्पर्श सौंपता हूं। मैं उन्हें अपना प्यार सौंपता हूं और बदले में वे मुझे अपनी समृद्धि की नेमत बख्शते हैं। कामयाबी का सबसे बड़ा श्रेय मैं अपने माता-पिता को देता हूं जिनके आशीर्वाद से मैं यह सब हासिल कर सका हूं।"

अनिल गोमा, जिला लोक संपर्क अधिकारी, शिमला

वर्ष 2014-15 में रबी मौसम के दौरान इस योजना के अन्तर्गत शिमला, कुल्लू और मंडी जिलों में ओलावृष्टि के लिए 'एड-ऑन/इंडेक्स प्लस योजना' क्रियान्वित की जा रही है। किसानों द्वारा इस रबी सीजन के लिए मौसम आधारित फसल बीमा योजना के अन्तर्गत पहले से ही बीमा करवाई गई सेब की फसल को भी एड-ऑन/इंडेक्स कवर के अन्तर्गत लाया जाएगा। इस रबी मौसम के लिए ओलावृष्टि एड-ऑन कवर के लिए भारतीय कृषि बीमा कंपनी, एच.डी.एफ.सी. एग्रो और आई.सी.आई.सी.आई लोम्बार्ड कार्यान्वयन एजेंसियां होगी। शिमला जिले में एडऑन इंडेक्स योजना के अन्तर्गत ओलावृष्टि के लिए ठियोग, जुब्बल, कोटखाई, चौपाल, चिड़गांव, रोहडू, ननखड़ी, रामपुर, नारकंडा, मशोबरा और बसंतपुर को फसल बीमा योजना के अधीन लाया गया है। इसी तरह कुल्लू जिले में कुल्लू, नग्गर, आनी, बंजार और निरमंड तथा मंडी जिले में करसोग और जंझैली क्षेत्रों को भी योजना के अधीन लाया गया है।

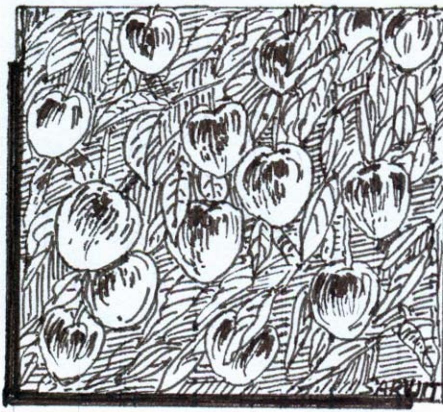
इसके अलावा 5 से 15 वर्ष की आयु श्रेणी वाले फलदार पौधों के लिए एड-ऑन इंडेक्स के तहत प्रति पेड़ 115 रुपये बीमा किया गया है जबकि 15 से 40 वर्ष आयु श्रेणी में प्रति पेड़ 230 रुपये का बीमा किया गया है। इसके तहत कुल प्रीमियम के 50 प्रतिशत की आदायगी बीमित बागबान द्वारा की जाएगी जबकि शेष 50 प्रतिशत प्रीमियम का वहन केन्द्र व राज्य सरकार द्वारा 50:50 के अनुपात में किया जाएगा जबकि वर्तमान रबी मौसम के दौरान मौसम आधारित फसल बीमा योजना के एड-ऑन इंडेक्स प्लस कवर के तहत सेब उत्पादकों द्वारा 5 से 15 वर्ष आयु श्रेणी में प्रति पेड़ 6.90 रुपये और 15 से 40 वर्ष आयु श्रेणी में 13.80 रुपये का प्रीमियम का भुगतान किया जाएगा।

ओलावृष्टि के लिए एड-ऑन कवर के तौर पर 10 अप्रैल 2015 से 30 जून 2015 की बीमा अवधि निर्धारित की गई थी। एड-ऑन कवर केवल उन्हीं बागबानों के लिए उपलब्ध है जिन्होंने वर्ष 2014-15 रबी मौसम के दौरान मौसम आधारित फसल बीमा योजना के अन्तर्गत अपनी सेब की फसल का बीमा करवाया है। इसके साथ-साथ यह ऋण लेने और ऋण न लेने वाले दोनों वर्गों के किसानों के लिए स्वैच्छिक है।

एड-ऑन कवर के लिए मौसम आधारित बीमा योजना के अन्तर्गत बीमित पेड़ों की संख्या के निरपेक्ष बागबानों को सेब के पेड़ों को दो आयु श्रेणियों में बीमित करना होगा। एड-ऑन कवर के लिए सेब के पेड़ों के आंशिक बीमा की अनुमति नहीं होगी। इस कवर का लाभ लेने के इच्छुक सभी किसानों के लिए बैंक खाते का होना अनिवार्य है जहां वे प्रीमियम और प्रस्ताव प्रस्तुत करेंगे। सभी शर्तों को पूरा करने वाले बागबान इसका लाभ लें पाएंगे तथा बैंक शाखाएं, बीमा मध्यस्थी बागबानों से प्रस्ताव प्रतिवेदन स्वीकार करने से पूर्व उपरोक्त शर्तों की अनुपालना सुनिश्चित बनाएंगी।

मौसम आधारित फसल बीमा योजना के अन्तर्गत एड-ऑन/इंडेक्स कवर प्रत्येक बागबान को हुए नुकसान के आकलन पर आधारित होगा। बीमित सेब की फसल को ही ओलावृष्टि से हुए नुकसान पर जोखिम छत्र के अधीन माना जाएगा। ओलावृष्टि या बादल फटने के कारण हुए नुकसान का आकलन व्यक्तिगत फार्म स्तर पर एक संयुक्त दल द्वारा किया जाएगा। इस दल में बागबानी, राजस्व विभाग, बीमा कंपनी द्वारा तैनात नुकसान आकलनकर्ता केन्द्र सरकार और सम्बन्धित एजेसियों के प्रतिनिधि शामिल होंगे। नुकसान का आकलन सामान्य फसल के नुकसान प्रतिशतता के आधार पर किया जाएगा। बागबानों को उनके दावों का भुगतान बीमित राशि के अनुपात में हुए नुकसान के आधार पर किया जाएगा।

दावों का भुगतान सर्वेक्षण रिपोर्ट और अन्य आवश्यक दस्तावेज प्राप्त होने के 15 दिनों के भीतर सम्बन्धित नोडल बैंकों को किया जाएगा। नोडल बैंक इसे आगे किसानों के बैंक खातों में जमा करेंगे। कार्यान्वयन एजेंसियां बैंकों को कुल एकत्र प्रीमियम के चार प्रतिशत की दर से सेवा कर का भुगतान करेंगी।





कौशल विकास योजना

बेरोजगार युवाओं के लिए आसान हुई स्वरोजगार की राह

कौशल प्रशिक्षण प्राप्त करने के उपरान्त यदि युवा स्वरोजगार अपनाना चाहते हैं तो वे ऋण के लिए बैंकों अथवा अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति और अन्य पिछड़ा वर्ग निगमों में आवेदन कर सकते हैं। प्रदेश सरकार द्वारा 1.50 लाख तक की लागत परियोजना पर आगामी पांच वर्षों के लिए ब्याज दर में चार प्रतिशत की छूट प्रदान की जा रही है।

प्रदेश के लाखों प्रतिभावान बेरोजगार युवाओं के हुनर को तराश कर उन्हें लाभप्रद रोजगार के लायक बनाने के उद्देश्य से कौशल विकास योजना कार्यान्वित की जा रही है। प्रदेश सरकार ने इस योजना के बेहतर कार्यान्वयन को सुनिश्चित बनाने हेतु वर्तमान वित्त वर्ष से हिमाचल प्रदेश राज्य कौशल विकास निगम का गठन किया है जो युवाओं के लिए कौशल आधारित कार्यक्रम तैयार कर उन्हें रोजगार के अवसर उपलब्ध करवाएगा।

प्रदेश सरकार युवाओं के कौशल उन्नयन के लिए सार्वजनिक निजी सहभागिता को भी बड़े स्तर पर प्रोत्साहित कर रही है। प्रदेश सरकार का बेरोजगार युवाओं को गुणात्मक एवं प्रमाणिकृत कौशल उपलब्ध करवाकर उनके लिए रोजगार सुनिश्चित बनाने के लिए एशियन विकास बैंक से भी सहायता प्राप्त करने का प्रस्ताव है। यह परियोजना पांच वर्षों की अवधि के लिए क्रियान्वित की जाएगी, जिस दौरान प्रदेश के एक लाख बेरोजगार युवाओं का कौशल विकास किया जाएगा।

प्रदेश में शिक्षित युवाओं के कौशल विकास के लिए प्रदेश सरकार ने 500 करोड़ रुपये की कौशल विकास भत्ता योजना कार्यान्वित की जा रही है। इस योजना के अंतर्गत युवाओं को कौशल उन्नयन के लिए प्रतिमाह 1000 रुपये का कौशल विकास भत्ता प्रदान किया जा रहा है। विशेष रूप से सक्षम युवाओं को प्रतिमाह 1500 रुपये कौशल विकास भत्ता दिया जा रहा है। इस योजना से अब तक प्रदेश के 75 हजार से अधिक युवा लाभान्वित हुए हैं। अधिक से अधिक युवाओं को इस योजना के अन्तर्गत लाने के लिए योजना के नियमों को और अधिक लचीला बनाया जा रहा है। राजगीरी, सुनार, बढ़ईगीरी के प्रशिक्षण के लिए न्यूनतम शैक्षणिक अहर्ता को हटाया दिया गया है। प्रदेश सरकार ने अब बीएससी नर्सिंग पाठ्यक्रम को भी कौशल विकास भत्ता योजना के अन्तर्गत लाने का निर्णय लिया है। सरकार के इस कदम से प्रदेश में विभिन्न सरकारी एवं निजी नर्सिंग संस्थानों में बीएससी नर्सिंग की पढ़ाई कर रही हजारों छात्राएं लाभान्वित होंगी।

कौशल प्रशिक्षण प्राप्त करने के उपरान्त यदि युवा स्वरोजगार अपनाना चाहते हैं तो वे ऋण के लिए बैंकों अथवा अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति और अन्य पिछड़ा वर्ग निगमों में आवेदन कर सकते हैं। प्रदेश सरकार 1.50 लाख तक की लागत परियोजना पर आगामी पांच वर्षों के लिए ब्याज दर में चार प्रतिशत की छूट प्रदान की जा रही है।

प्रदेश की 90 प्रतिशत से अधिक जनसंख्या ग्रामीण क्षेत्रों में रहती है, इसलिए ग्रामीण युवाओं के कौशल उन्नयन पर विशेष बल दिया जा रहा है। बीपीएल श्रेणी से संबंधित 8 हजार ग्रामीण युवाओं और 5 हजार शहरी क्षेत्र के युवाओं को वर्तमान वित्त वर्ष के दौरान राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन के अन्तर्गत लाया जाएगा।

नई औद्योगिक इकाइयों में 300 से अधिक हिमाचलियों को रोजगार उपलब्ध करवाने वाली इकाइयों से विशेष प्रोत्साहन के तौर पर पांच वर्षों के लिए मात्र एक प्रतिशत विद्युत डियूटी वसूली जाएगी।

विद्यार्थियों के कौशल में बढ़ोतरी और उनके लिए रोजगार के अधिक अवसर उपलब्ध करवाने के उद्देश्य से गत वित्त वर्ष से 9वीं से 12वीं कक्षा तक की पढ़ाई में ऑटोमोबाईलस, रिटेल, सुरक्षा, स्वास्थ्य देखभाल, पर्यटन और कृषि जैसी व्यावसायिक शिक्षा को आरम्भ किया गया है। वर्तमान वित्त वर्ष के दौरान यह व्यावसायिक शिक्षा 100 और राजकीय वरिष्ठ माध्यमिक पाठशालाओं में आरम्भ की जाएगी। प्रदेश सरकार राज्य में कौशल विश्वविद्यालय खोलने के लिए प्रतिष्ठित संगठनों को आमंत्रित करने पर भी विचार कर रही है।

सूचना अधिकारी, निदेशालय,
सूचना एवं जन सम्पर्क विभाग, शिमला

प्रदेश में राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन के अन्तर्गत आरम्भ में बीपीएल परिवारों की महिलाओं को सम्मिलित कराने के बाद इसमें अति गरीब एवं आंशिक तौर पर गरीब परिवारों की महिलाओं को भी शामिल किया गया है। इन समूहों में 70 प्रतिशत महिलाएं बीपीएल परिवारों से हैं जबकि 30 प्रतिशत गरीब परिवारों से शामिल की गई हैं।

राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन

पचास हजार ग्रामीण महिलाएं लाभान्वित

प्रदेश के ग्रामीण क्षेत्रों में गरीबी रेखा से नीचे रह रहे लोगों एवं निर्धन परिवारों की आर्थिक स्थिति में सुधार लाकर उनके सम्मानजनक जीवन व्यापन को सुनिश्चित बनाने हेतु प्रदेश में राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन (एनएलआरएम) को कार्यान्वित किया जा रहा है। राज्य में बीपीएल एवं गरीब परिवारों से लगभग 50 हजार महिलाओं को 9146 स्वंय सहायता समूहों के माध्यम से मिशन की मुख्यधारा में सम्मिलित किया गया है। मिशन के तहत गरीब परिवारों की महिलाओं के सशक्तिकरण के लिये उन्हें वित्तीय सहायता प्रदान की जा रही है। गरीब परिवारों की महिलाओं में सामाजिक संचेतना, संस्थागत और क्षमता निर्माण, वित्तीय समावेशन, संतृप्ति दृष्टिकोण, कौशल उन्नयन और सतत् आजीविका का सृजन जैसे उपायों से उनका सशक्तीकरण सुनिश्चित बनाया जा रहा है। प्रथम चरण में यह कार्यक्रम राज्य के पांच विकास खण्डों क्रमशः कण्डाघाट, मण्डी सदर, नूरपुर, हरोली और बसन्तपुर में कार्यान्वित किया जा रहा है। शेष बचे विकास खण्डों में यह कार्यक्रम अगले चार वर्षों के दौरान प्रभावी तौर पर लागू किया जाएगा।

प्रदेश में एनआरएलएम के अन्तर्गत आरम्भ में बीपीएल परिवारों की महिलाओं को सम्मिलित करने के बाद इसमें अति गरीब एवं आंशिक तौर पर गरीब परिवारों की महिलाओं को भी शामिल किया गया है। इन समूहों में 70 प्रतिशत महिलाएं बीपीएल परिवारों से हैं जबकि 30 प्रतिशत गरीब परिवारों से शामिल की गई हैं। ग्रामीण स्तर पर इन महिलाओं के स्वयं सहायता समूह बनाए गये हैं। स्वंय सहायता समूह में कम से कम 5 महिलाएं होना अनिवार्य है। 10 से 20 स्वयं सहायता समूहों के ग्राम संगठन बनाए गए हैं जबकि इतने ही ग्राम संगठनों की कलस्टर लेवल फेडरेशन बनाई गई हैं। प्रदेश में 16199 स्वयं सहायता समूहों का चयन करके इन्हें एमआईएस पोर्टल डाटा बेस में अपलोड किया गया है।

स्वयं सहायता समूहों को आजीविका अर्जित करने एवं किसी भी प्रकार के व्यवसाय करने के लिये इन्हें बैंकों से सम्बद्ध करके सात प्रतिशत ब्याज पर ऋण प्रदान किया जा रहा है। स्वयं सहायता समूह को इसके सृजन के छः माह के पश्चात विभाग द्वारा रिवॉल्विंग फंड प्रदान किया जा रहा है। रिवॉल्विंग फंड तथा निजी बचत को मार्जिन मनी मानकर बैंक द्वारा प्रत्येक समूह को 2 से 3 लाख रुपये तक ऋण प्रदान कर रहा है। एक समूह को अधिकतम 10 लाख रूपये तक ऋण प्रदान किया जा सकता है। इसके लिये बैंको की उप समिति का गठन किया गया है। प्रदेश में अभी तक 6345 स्वयं सहायता समूहों को विभिन्न बैंकों से सम्बद्ध करके 59.09 करोड़ रुपये के ऋण उपलब्ध करवाए गए हैं। इन समूहों को 2.97 करोड़ रुपये रिवॉल्विंग फंड के रूप में विभाग द्वारा वितरित किये गए हैं।

ऋण लेने वाली महिलाओं के समूह द्वारा एक वर्ष के भीतर ऋण की अदायगी करने पर ब्याज में 3 प्रतिशत की छूट प्रदान की जा रही है, इस तरह महिलाओं को केवल चार प्रतिशत ब्याज ही देना पड़ेगा। स्वयं सहायता समूह की महिलाएं अपना कारोबार अच्छा चलने पर अन्य महिला जो स्वयं अपना व्यवसाय शुरू करना चाहती हो, को ऋण प्रदान कर सकती हैं। इससे महिलाओं में स्वरोजगार भावना जागृत हुई है।

प्रेम ठाकुर, स. लो.स. अ., निदेशालय, सूचना एवं जन सम्पर्क, शिमला

औद्योगिक विकास

सरकार की दूरदर्शी सोच 'निमन्त्रण से निवेश'

बड़े औद्योगिक घरानों ने किया हिमाचल का रुख

• वेद प्रकाश

> प्रदेश में औद्योगिक विकास ने पकड़ी रफ्तार

हिमाचल प्रदेश की वर्तमान प्रदेश सरकार ने अपने शासनकाल के तीस माह पूर्ण कर लिए हैं। सरकार ने इस अवधि के दौरान राज्य के समग्र विकास तथा जन कल्याण की दिशा में उल्लेखनीय कार्य किया है। सरकार ने औद्योगिक विकास के क्षेत्र में दूरदर्शी सोच का परिचय देते हुए 'निमन्त्रण से निवेश' कार्यक्रम के माध्यम से निवेशकों को राज्य में निवेश के लिए आकर्षित करने का सफल प्रयास किया है। सरकार की इस पहल से प्रेरित होकर देश के कई बड़े एवं नामी-गिरामी औद्योगिक घराने अब हिमाचल में बड़े औद्योगिक निवेश के लिए स्वेच्छा से आगे आ रहे हैं। इस कार्यक्रम के तहत देश के मुम्बई, बंगलुरू तथा अहमदबाद जैसे बड़े शहरों में मुख्यमंत्री श्री वीरभद्र सिंह की अध्यक्षता में एक उच्च स्तरीय दल द्वारा 'इन्वेस्टर मीट' आयोजनों के परिणामस्वरूप देश के प्रतिष्ठित औद्योगिक समूहों ने राज्य में शीघ्र निवेश की इच्छा जाहिर की है और उनके निवेश प्रस्ताव आने आरम्भ हो गए हैं।

देश के बड़े औद्योगिक घराने टाटा ग्रुप ने प्रदेश सरकार के साथ आयोजित एक उच्च स्तरीय बैठक में अधोसंरचना निर्माण, उत्पादन, पर्यटन, कृषि, चाय उद्योग, ऊर्जा जैसे अहम क्षेत्रों में निवेश का प्रस्ताव प्रस्तुत किया है। टाटा ग्रुप ने नामी अन्तर्राष्ट्रीय कम्पनियों के सहयोग से रक्षा उपकरण, निर्यात के लिए उत्पादन क्षेत्र में बोतलबंद पेय बनाने, पर्यटन क्षेत्र में रज्जूमार्ग जैसी सुविधाओं के साथ धनाढ्य वर्ग के पर्यटकों हेतु पर्यटन रिजॉर्टों का निर्माण, चाय उद्योग तथा आवास एवं व्यवसायिक प्रतिष्ठानों के निमार्ण, पी.पी.पी. मोड में सुरगें बनाने तथा कचरा प्रबंधन जैसे क्षेत्रों में व्यापक निवेश की इच्छा जाहिर की है।

वर्तमान प्रदेश सरकार ने राज्य में अपने अढ़ाई वर्ष के कार्यकाल के दौरान देश के बड़े औद्योगिक धरानों को राज्य में निवेश के लिए आकर्षित कर औद्योगिक विकास को गति प्रदान करने के लिए कारगर कदम उठाए हैं। हिमाचल को उद्यमियों का पसंदीदा निवेश गंतव्य बनाने हेतु प्रदेश में उद्योग मित्र महौल तैयार किया जा रहा है। औद्योगिक इकाइयां स्थापित करने के लिए आवश्यक सरकारी प्रकिया का सरलीकरण, अत्याधुनिक बुनियादी अधोसंरचनात्मक सुविधाएं, गुणवत्ता युक्त रियायती दरों पर बिजली व समयबद्ध अनुमतियां प्रदान करने की दिशा में सतत् प्रयास किये जा रहे है।

प्रदेश सरकार ने निवेशकों को औद्योगिक इकाइयों के लिए त्वरित एवं समयबद्ध स्वीकृतियां प्रदान करने के उद्देश्य से राज्य स्तरीय एकल खिड़की स्वीकृति एवं अनुश्रवण प्राधिकरण की स्वीकृति प्रक्रिया को सरल बनाया है, जिसके अनुसार अब निवेशकों को राज्य में उद्योग लगाने के लिए एक साझा आवेदन देना होगा। संशोधित प्रक्रिया के अनुसार अब आवेदन पत्र के प्राप्त होने के 45 दिनों के भीतर ही, उद्योग लगाने की अनुमति प्रदान कर दी जाएगी। इस प्रक्रिया को पारदर्शी बनाने के लिए आवेदन की अद्यतन स्थिति की जानकारी हेतु ट्रैक प्रणाली स्थापित की जाएगी। इसके अतिरिक्त एकल खिड़की स्वीकृति एवं विभिन्न विभागो द्वारा ऑन लाईन/ समयबद्ध स्वीकृतियां प्राप्त होने के उपरान्त, डीम्ड स्वीकृति की प्रक्रिया अमन में लाई जाएगी।

प्रदेश में 'एकल खिड़की स्वीकृति एवं अनुश्रवण प्राधिकरण' द्वारा 7582.95 करोड़ रुपये की 118

परियोजनाओं को स्वीकृत किया गया है, इनसे लगभग 11000 व्यक्तियों को रोजगार मिलने की संभावना है। केन्द्रीय पूंजी निवेश अनुदान के अंतर्गत पात्र इकाइयों को 5351.77 लाख रुपये वितरित किए गए व 5351.77 लाख रुपये की स्वीकृति 246 इकाइयों को दी गई है। केन्द्रीय परिवहन अनुदान के अंतर्गत 2874.41 लाख रुपये के अनुदान पात्र इकाइयों को दिए गए व 3460.00 लाख रुपये की स्वीकृति 12 इकाइयों को दी गई है। उपरोक्त अवधि के दौरान 'राष्ट्रीय खाद्य प्रसंस्करण मिशन' के तहत 3.59 करोड़ रुपये 116 परियोजनाओं को अनुदान के रूप में प्रदान किए गए। शिमला में 50 करोड़ रुपये की लागत से सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्योगों के अध्ययन के लिए शिमला जिला में घणाहट्टी के नजदीक झुंडला में "भारतीय विदेश व्यापार संस्थान" द्वारा क्षेत्रीय कार्यालय स्थापित किया जाएगा, जिसके लिए राज्य सरकार द्वारा लगभग 50 बीघा भूमि का चयन कर लिया है।

प्रदेश को औद्योगिक दृष्टि से विश्व मानचित्र पर उभारने के उद्देश्य से मई 2015 में एक उच्च स्तरीय दल ने, जर्मनी के हैनोवर में आयोजित विश्व व्यापार मेले में भाग लेकर विदेशों से निवेश आकर्षित करने के प्रयासों को आगे बढ़ाया। प्रदेश सरकार ने औद्योगिक निवेश प्रक्रिया को सरल बनाते हुए 'नगर व ग्रामीण नियोजन कानून व नियमों' के अंतर्गत औद्योगिक इकाइयों के लिए 'फ्लोर एरिया अनुपात' में बढ़ौतरी की है। नये उद्योगों के लिए औद्योगिक 'इनपुट' पर वर्तमान के 2 प्रतिशत के स्थान पर अब एक प्रतिशत की दर से प्रवेश शुल्क वसूला जाएगा। नये निवेश पर उद्यमियों से 'सेल डीड व लीज डीड' पर स्टॉप ड्यूटी में 50 प्रतिशत की छूट दी गई है।

प्रदेश सरकार द्वारा उद्यमियों को रियायती दरों पर बिजली मुहैया कराने के उद्देश्य से निर्धारित एक्सट्रा हाई टैंशन (ईएचटी) श्रेणी के उपभोक्ताओं के लिए विद्युत शुल्क को वर्तमान 15 प्रतिशत से घटाकर 13 प्रतिशत करने, ईएचटी श्रेणी को छोड़कर, वर्तमान में स्थापित मध्यम तथा बड़े उद्योगों के लिए विद्युत शुल्क को वर्तमान दर को 13 प्रतिशत से घटाकर 11 प्रतिशत करने, लघु उद्योगों के लिए विद्युत शुल्क की वर्तमान दर को 7 प्रतिशत से घटाकर 5 प्रतिशत तथा नए उद्योगों के लिए 5 वर्षों तक केवल एक प्रतिशत की दर से विद्युत शुल्क के भुगतान का निर्णय लिया गया है। ईएचटी श्रेणी सहित किसी भी नये उद्योग, जो 300 से अधिक हिमाचलियों को रोजगार प्रदान कर रहा है, से 5 वर्षों तक केवल एक प्रतिशत की दर से विद्युत शुल्क वसूला जायेगा।

औद्योगिक विकास को बढ़ाव देने के लिए केन्द्र सरकार की एम.आई.एल.यू.एस योजना के अंतर्गत कागड़ा जिले के कन्दरोड़ी तथा ऊना जिले के पंडोगा में क्रमशः 107 करोड़ रुपये एवं 112 करोड़ रुपये की अनुमानित लागत से औद्योगिक क्षेत्र स्थापित करने की स्वीकृति प्राप्त हो गई है। भारत सरकार के MIIUS (Modified Industrial Infrastructure Scheme) के तहत ऊना जिला के पन्डोगा, में 88.05 करोड़ रुपये की लागत से स्टेट आफ द आर्ट इण्डस्ट्रियल एरिया व जिला कांगडा कन्दरोरी में 95. 77 करोड़ रुपये की लागत से स्टेट आफ द आर्ट इण्डस्ट्रियल एरिया स्थापित किए जा रहें है।

भारत सरकार के सौजन्य से जिला सोलन में बददी के बटोलीकलां गांव में Technology Centre की स्थापना हेतु लगभग 100 बीधा भूमि, निदेशक, लघु उद्योग संस्थान चम्बाघाट, जिला सोलन को सौंप दी गई है। बद्दी में कन्टेनर पार्किंग सुविधा हेतु कुल परियोजना लागत 14.42 करोड़, रुपये में से राज्य अनुदान भूमि के रूप में 3.29 करोड रुपये व स्वीकृत ग्रांट 11.13 करोड़ रुपये में से पहली किस्त 5.57 करोड़ रुपये की राशि जारी कर दी गई है। बदद्दी में निर्यात इकाइयों के लिए कम्पोजिट फार्मा लेब के लिए राज्य सहायता 1.60 करोड़ रुपये भूमि के रूप में तथा एसाईड ग्रांट की 6.49 करोड में से 3.25 करोड़ की पहली किस्त जारी की गई है। प्रदेश के ओद्योगिक क्षेत्र काला अम्ब के विद्युत अधोसरंचना के विकास हेतु कुल 12.34 करोड़ रुपये में से पहली किस्त 6.17 करोड़ रुपये की राशि जारी की गई है।

कांगड़ा जिला की इंदौरा तहसील के कंदरौरी तथा ऊना जिला की हरोली तहसील के पंडोगा व सोलन जिला के दभोटा में 'स्टेट ऑफ आर्ट' औद्योगिक क्षेत्रों का विकास किया जा रहा है। हरित श्रेणी की जो भी परियोजनाएं अधिसूचित औद्योगिक क्षेत्रों, परिसम्पतियों मे स्थापित की जाएंगी। उनके लिए पर्यावरण सम्बन्धित स्वीकृतियां आवेदन के आधार पर ही उद्योग लगाने की स्वीकृति (Consent to Establish) स्वतः ही देने का प्रावधान किया गया है, जबकि वर्तमान में "Consent to Establish" निरीक्षण एवं सत्यापन के आधार पर ही दी जाती हैं। प्रदेश में निवेश को बढ़ावा देने के लिए (HP Investment Promotion Cell) की स्थापना की गई है।

प्रदेश सराकर राज्य में स्थापित औद्यागिक इकाइयों में कार्यरत श्रमिकों को आवास तथा अन्य बुनियादी सुविधा प्रदान करने की दिशा में कारगर प्रयास कर रही है। औद्योगिक क्षेत्र बद्दी में 11 करोड़ रुपये की लागत से श्रमिकों के लिए पांच खण्डों में 320 कमरों के कामकाजी महिला होस्टल का निर्माण किया गया है। अगस्त 2014 से बद्दी में कामकाजी पुरुष होस्टल ने कार्य करना प्रारंभ कर दिया है। 12 करोड़ रुपये की लागत से निर्मित दो खण्डों के इस होस्टल में कुल 138 कमरे है।

आलेख



हिमाचल प्रदेश के वरिष्ठ साहित्यकार **मधुकर भारती** आज हमारे बीच नहीं रहे। प्रदेश के एक प्रख्यात कवि, लेखक व आलोचक का अचानक यूं चला जाना, निस्संदेह हिमाचल के साहित्यकारों एवं रचनाकारों के लिए एक गहरा साहित्यिक आघात है जिसकी भरपाई कर पाना शायद संभव नहीं। 15 अक्तूबर, 1950 को शिमला जिले के ठियोग में जन्मे श्री मधुकर भारती ने अपने रचना काल के दौरान 'सर्जक' नामक साहित्यिक संस्था गठित कर प्रदेश के साहित्यिक गलियारों में ऐसी हचल पैदा की जिससे पहाड़ी क्षेत्र की शांत वादियों में साहित्य सृजन का माहौल उत्पन्न होने के साथ-साथ अनेक नवोदित लेखकों को रचना कर्म की सद्प्रेरणा भी मिली। उन्होंने शिमला जिले के एक छोटे से नगर को साहित्यिक धारा से जोड़कर अपने रचना कर्म का परिचय दिया। वे 2 मई, 2015 को इस दुनिया को सदा के लिए अलविदा कह गए। श्री मधुकर जी एक साहित्यकार के साथ-साथ कृषि एवं बागबानी से भी निरंतर जुड़े रहे और इन व्यवसायों में किसी-न-किसी रूप में अपना बहुमूल्य योगदान देते रहे। बागबानी विषय पर उनका अंतिम वृहद शोधपरक लेख प्रदेश के युवा एवं प्रगतिशील बागबान द्वारा बागबानी पर हाल ही में प्रकाशित पुस्तक 'द एप्पल ब्लूम' में प्रकाशित हुआ था जिसे हम मधुकर भारती की स्मृति में इस अंक में प्रकाशित कर रहे हैं। -सम्पादक

सौ बरस का एक दिन

● मधुकर भारती

मेरी खग दृष्टि में भारत भूमि पर धड़कते जीवन के पिछले सौ वर्ष (1914-2014) का समयखंड एक बीते हुए दिन की तरह है। शुरू हुआ वह एक प्रकाश-पुंज के अविर्भाव से, व्यतीत हुआ चीखते-चिल्लाते, दौड़ते-भागते व्यक्ति की तरह और अस्त हो रहा है स्वप्न तथा आशंका के बीच से उभरे असमंजस की तरह। इतिहास से जो समकाल निकलता है वह सामाजिक जीवन के वर्तमान स्वरूप को इसी तरह उर्ध्वगति देता रहेगा या शिखर पर पहुंचकर पतन की ओर फिसलता चला जाएगा। इस असमंजस को एक नितांत स्थानिक घटना के संदर्भ में खोलना आवश्यक है। ठीक एक शताब्दी पहले हिमाचल प्रदेश के पहाड़ी इलाके में एक विदेशी व्यक्ति सैमुअल इवांस यानी सत्यानंद स्टोक्स ने सेब का एक पौधा रोपा। वह कौन थे, यहां क्यों आए थे और क्यों उन्हें सेब का पौधा रोपने की आवश्यकता जान पड़ी, इस पर अलग से इतिहास लिखा गया है। मेरे चिंतन में फिलहाल वह बातें नहीं हैं। मुझे तो उस असमंजस से मुठभेड़ की आकांक्षा है, जिसके खुलने से यह सुनिश्चित हो कि पर्वतीय भू-भाग पर सतत् मानवीय हलचल बनी रहे। मनुष्य जीवन की निरंतरता की आश्वस्ति की खोज है मुझे। ऐतिहासिक तथ्यों, ब्योरों, आंकड़ों, प्रणालियों और सरस पारस्परिक संबंधों की जो क्रियाएं, प्रतिक्रियाएं विगत सौ साल में उभरकर आई हैं, उनके आलोक में भविष्य के लिए निष्कर्ष निकल सके तो असमंजस छंट सकता है।

जब वर्ष 1914 में शिमला के पहाड़ों पर पहला पौधा रोपा गया तो यहां का समाज कई मायनों में अविकसित लेकिन कई मायनों में अर्थवान था। त्वरित तकनीकी अनुसंधानों के इस युग में हम खुद को भौतिक रूप से पर्याप्त विकसित समझ रहे हैं तो इस पौधे को श्रेय मिलना चाहिए, जिसके बल पर हम उन अनुसंधानों का उपयोग करने योग्य हुए हैं। उस प्रकाश-पुंज स्टोक्स को महान पुरुषों की दीर्घा में प्रतिष्ठापित करना उनके महान कार्य के प्रति एक कृतज्ञता ज्ञापन होगा। हम भारतवासी अपनी पराधीनता को खुद की दयनीयता का परिणाम मानने को आज भी तैयार नहीं हैं। उसका दोष हम विदेशियों की साम्राज्यवादी मनोवृति पर थोपना उचित समझते हैं। हमारी आत्ममुग्धता अभी भी समझ नहीं पा रही है कि कितने विदेशी स्टोक्स किन-किन सामाजिक क्षेत्रों में कौन-कौन से क्रांतिकारी पौधे हमारी धरती पर रोपते रहे होंगे, जिनकी बदौलत इन सौ वर्षों में हमारा जीवन आमूल-चूल बदला है।

हिमाचल के पहाड़ों की बात करें तो हमारे जीवन पर उन दिनों अंग्रेजी शासन का न्यूनतम नियंत्रण था। हमारे अपने ही लोग

राजा या राणा बनकर हम पर प्रत्यक्ष शासन करते थे। बीसवीं शताब्दी के पूर्वार्ध में पहाड़ की जनता अत्यंत निर्धन, लेकिन सरलमना थी। इन राजाओं और राणाओं की कई क्रूरताओं के शिकार लोग कठिन जीवन जीते थे। कठोर श्रम मगर अल्प से भी अल्प उपलब्धि। निष्कपट स्वभाव पहाड़ी पथरीली भूमि पर छोटे-छोटे सीढ़ीनुमा खेत, शीत जलवायु, बड़े-बड़े संयुक्त परिवार, अशिक्षित समाज, संचार माध्यमों का अभाव, विषैले अंधविश्वासों और स्थानीय देवी-देवताओं के प्रकोपों के बीच सामाजिक जीवन की कल्पना सहज ही की जा सकती है। यही नहीं, इस सबके साथ स्थानीय शासकों के अत्याचार भी थे। राजा और राणा लोग जब अपनी प्रजा के बीच जाते थे तो उनकी यात्राएं शोषण का पर्याय बनती थीं। राणा का आदेश मिलते ही लोग अपना सब कुछ छोड़कर मशालें जलाकर आधी रात को भी उनकी पालकी उठाने के लिए मजबूर थे। सामंतवाद का वह युग प्रजा के लिए अत्यंत कष्टप्रद था। सहने के लिए परंपरा के नाम पर भुंडा, शांद जैसी व्ययशील रूढ़ियां तो थीं ही।

बेशक कम ही सही, लेकिन इन पहाड़ों में हर प्रकार का अनाज पैदा होता था। गेहूं, जौ, मक्की, कोदा, बाथू, ओगला, फाफरा, चीणा, कावणी, धान जैसी बहुविध फसलों के उत्पादन से भूमि उर्वर रहती थी। खाने की विविधता से स्वास्थ्य सम रहता था। कोदा, ओगला व बाथू को अकाल का मसीहा माना जाता था, क्योंकि पौष्टिक तत्त्वों से भरपूर इनकी एक दो रोटियां भी श्रम से भरा सारा दिन निकाल लेती थी। हर बीमारी के लिए जड़ी-बूटियां सदा उपलब्ध थी।

इन कठिनाइयों के बीच भी समाज में एक अनुशासन था। अभाव के उस जीवन में दैन्य जरूर था, दरिद्रता नहीं थी। विषमताओं के बावजूद वह एक आत्मनिर्भर समाज था। उसका ताना-बाना पारस्परिक सौहार्द, विश्वास, समता व संवेदनायुक्त समरसता से बना हुआ था। भले ही छुआछूत अपने चरम पर था, लेकिन हर गांव में हर जाति के लोग रहते थे। हर जाति का अपना एक कौशल था, जो पूरे समाज के लिए उपयोगी और आवश्यक था। गांव में एक-एक परिवार लुहार, चर्मकार, बुनकर, सुनार, बढ़ई, राजमिस्त्री, ग्वाला, दर्जी, बजंतरी, कुल पुरोहित आदि का रहता था, जिनके पास जमीनें कम थीं, लेकिन उन्हें अपने कौशल के आधार पर प्रत्येक परिवार से हर साल नियमित अनाज मिलता था। शादी-ब्याह समीपवर्ती गांवों के लोगों के बीच ही संपन्न होते थे, ताकि बेटियां और बहनें आसपास ही रहें। उन्हें रबी और खरीफ की फसलें आने के बाद घर से पका-पकाया भोजन भेजा जाता था। उनका कुशलक्षेम जानने का उस समय यह भी एक तरीका था। मेले व त्योहार उद्देश्यपूर्ण तथा फसलचक्र के अनुसार मनाए जाते थे। चैत्र मास में बाहर खुले प्रांगण में रैहली यानी नाटी लगाने का शुभारंभ होता है। बैसाख संक्रांति को घरों में ब्रास के लाल फूलों की मालाएं इस बात की द्योतक थीं कि पहाड़ों का कामकाजी सीजन आ गया है। रक्षाबंधन की पूर्व संध्या पर ग्राम देवता मंदिर से बाहर प्रवास पर शोभा यात्रा में निकलते थे, जिसके बाद ब्राह्मण लोगों की कलाइयों पर अभिमंत्रित राखियां बांधते थे। यह राखियां भादों कृष्णपक्ष की चौदहवीं रात तक बंधी रहती थीं। वह काली रात भूतों-प्रेतों व पक्षियों की आवारागर्दी की रात मानी जाती थी, जिनसे बचाव के लिए घरों के हर द्वार पर भेखल की डाल का पहरा लगाया जाता था। दिवाली पर गांव कें केंद्रीय स्थल पर वेदों-उपनिषदों, रामायण व महाभारत के पद गाए जाते थे। ग्रामीण युवा इसी गायन के बीच अपना बल कुश्ती, दंगल में परखते थे। मकर संक्रांति पर पुरुष बर्फ से लदी बावड़ियों पर ठंडे पानी से स्नान करते थे। घरों के अन्दर आंचली गायन शुरू होता था, जो शिवरात्रि तक चलता था। शिवरात्रि में विविध पकवान बनाकर पूजा के बाद बहनों और बेटियों के घरों तक खुद पहुंचा जाते थे। लोकगीतों में समाज के ऐतिहासिक क्षण नीतिगत बोल, मधुर धुनें, उपदेशात्मक उक्तियां, प्रेम से उत्पन्न स्वरलहरियां, स्त्री-पुरुषों के पारस्परिक संबंधों की विनोदपूर्ण चुटकियां आदि समाहित होती थीं। किसी परिवार का कोई काम पिछड़ता तो पूरा गांव उसे संपन्न करवा देता था। किसी पर आई कोई अप्रत्याशित मुसीबत पूरे गांव की मुसीबत समझी जाती थी। उसका सामना सामूहिक रूप से किया जाता था। तिमंजिला मकान के साथ-साथ पालतू पशुओं के लिए भी स्थान होता था। आयुर्वेद में कहा गया है कि पशुओं के साथ रहने वालों की आयु लंबी होती है और शरीर स्वस्थ रहता है। जिस घर में गोबर की ढेरी लगी रहती है, उस घर के आसपास बीमारियां नहीं फटकतीं। साल में एक बार गोबर संयुक्त रूप से खेतों में पहुंचाया जाता था और वह समय हंसी-ठिठोली का होता था। घासनियों, खेतों व जंगलों से लामण, भौंरू, झूरी आदि की ऊंची और लंबी तानें गूंजती थीं, तभी वह कठिन समय आसानी से व्यतीत होता था।

बेशक कम ही सही, लेकिन इन पहाड़ों में हर प्रकार का अनाज पैदा होता था। गेहूं, जौ, मक्की, कोदा, बाथू, ओगला, फाफरा, चीणा, कावणी, धान जैसी बहुविध फसलों के उत्पादन से भूमि उर्वर रहती थी। खाने की विविधता से स्वास्थ्य सम रहता था। कोदा, ओगला व बाथू को अकाल का मसीहा माना जाता था, क्योंकि पौष्टिक तत्त्वों से भरपूर इनकी एक दो रोटियां भी श्रम से भरा सारा दिन निकाल लेती थी। हर बीमारी के लिए जड़ी-बूटियां सदा उपलब्ध थी। यहां तक कि चोट के कारण बहते खून को छांवरबूटी तुरंत रोक सकती है। टूटी हड्डियों को जोड़ने तथा दुखते दांतों को निकालने की व्यवस्थाएं भी गांव में विद्यमान थीं। जीवन यापन का सभी सामान स्थानीय स्तर पर ही निर्मित होता था। शीत क्षेत्र होने के कारण ऊनी वस्त्र घर में ही तैयार होते थे। पहनने के लिए लोइया एकोट, पट्टू, सुथण, टोपी, गाची आदि तथा ओढ़ने-बिछाने

के लिए भेड़ की ऊन से ढाभली (रजाई का विकल्प) तथा बकरे की ऊन से खारचा गद्दे या बिछावन का विकल्प) स्वयं निर्मित होते थे। बड़ा किसान उसे माना जाता था, जिसके पास अनाज, ढाभली व खारचे का प्रचुर भंडार होता था। बर्फ पर चलने के लिए बकरे की ऊन की गिड्स तथा सामान्यतः भांग के पौधे के शेल से बने तले पर भेड़ की ऊन के धागे से सिले हुऐ लवै (जूते) प्रयोग में लाए जाते थे। जूते उस चमड़े के भी होते थे जिसे गांव का चर्मकार मृत पशु से उतार लेता था। सभी खेती उपकरण व आभूषण स्थानीय स्तर पर निर्मित होते थे। दालों और सब्जियों में माश, राजमाह, आलू, कचालू, खीरा, कद्दू आदि प्रमुख थे। आलू और मटर की बिक्री के लिए किसान पीठ पर बोरियां लादकर नब्बे से सौ किलोमीटर शिमला से गांव और गांव से शिमला तक का पैदल सफर करते थे। मेरे पिताजी बताते हैं कि इतने कठोर श्रम से भी वे तीसरे चौथे दिन वापस गांव पहुंच जाते थे। यदि दालों और सब्जियों का उत्पादन कम रहता तो खाने के लिए प्राकृतिक रूप सें मौजूद वनस्पतियां जैसे छलापड़ा, निर्मली, बिच्छू-बूटी, कीमू के पत्ते, गोदी, छतरी आदि का उपयोग किया जाता था। तेलों की जरूरत सरसों व आड़ू की गुठलियां पूरा करती थीं। भांग के पौधे का बहुविध प्रयोग किया जाता था। जैसे दाने निकालकर चटनी, बेडन व मूड़ी के बीच डालना, उसके पौधे का शेल निकालकर रस्सियां बुनना। झाड़ू तो पके हुए मोटे घास का होता था। हर प्रकार के राजकीय शोषण, दुर्धर्ष संघर्ष और भयानक निर्धनता के बीच हर दृष्टि से आत्मनिर्भरता का पहाड़ी समाज था। बीसवीं सदी के पूर्वार्ध का समाज। वह एक निश्चित गति और सधी हुई लय का समाज था।

यूं तो सत्यानंद स्टोक्स से पहले भी हिमाचल में सेब आ चुका था, लेकिन शिमला के कोटगढ़ में सत्यानंद स्टोक्स ने वर्ष 1924 में पहला पौधा रोपा। स्टोक्स को यहां की भूमि और जलवायु सेब के लिए उपयुक्त लगी। दस से पंद्रह साल के श्रम से परिपक्व हुए पौधों ने जब फल देना शुरू किया तो उस इलाके की सूरत ही बदल गई। पहली बार जब चैत्र और बैसाख में सफेद फूलों के आवरण से प्रकृति नए सौंदर्य की प्रतिकृति दिखी और नई सुगंध से क्षेत्रीय वातावरण सुवासित हुआ तो वहां के क्षेत्रवासियों ने उस रोमांच को नए भविष्य की कल्पना से आवासित कर दिया। मात्र कुछ ही दशकों में कोटगढ़ एक सुरभित टापू की तरह दिखने लगाए जहां संपन्नता का नया अध्याय खुला। फिर अन्य क्षेत्रों यथा कुमारसैन, रामपुर, कोटखाई, जुब्बल, ठियोग आदि के किसानों ने इस ओर रुख किया। धीरे-धीरे किन्नौर, चंबा, मंडी, कुल्लू और सिरमौर के ऊंचाई वाले क्षेत्रों तक यह सुरभि फैली। आजादी के बाद यानी बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में सेब की पौधशालाएं बढ़ने लगीं और सेब क्षेत्र फैलता चला गया। पहले उपजाऊ भूमि में सेब लगाने से लोग संकोच करते थे। यदि कुल भूमि पर पौधे लग गए तो अनाज कहां उपजाएंगे? खाएंगे क्या? वे बंजर भूमि और घासनियों पर पौधे लगाते थे। तब केवल रायल, रेड, रिचर्ड और पीले गोल्डन की किस्में ही थीं। पौधरोपण योजनाबद्ध होता था यानि हर पौधे के बीच 18-20 फुट की दूरी इस तरह कि प्रत्येक पौधे को पूरा दिन धूप मिले और वह बारिश से पूरी नमी प्राप्त करे। चार-छह पौधे के बीच एक गोल्डन किस्म का पौधा ताकि परागण के लिए नर-मादा का सामंजस्य बना रहे। घर में पशु थे तो गोबर प्रचुर मात्रा में होता था। पिछली शताब्दी में 1960 और 90 के बीच सुदूर आंतरिक क्षेत्रों में बसे ग्रामीण में सेब के बाग लगाने का जुनून सवार हुआ। यह तीन दशक सेब क्रांति के दशक थे। पौधों को पोषित और संरक्षित करने की तमाम जानकारियां साझा होने लगी। रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग किया जाने लगा क्योंकि एक तो अनाज उगाने का क्षेत्र सेब के बागों में परिणत होता गया, दूसरे एकल परिवारों के बढ़ते चलन से पशुधन कम होता गया, जिससे गोबर की कमी हो गई। अब हर भूमि पर हर जलवायु में सेब उगने लगा। पौधरोपण बेतरतीब और योजना रहित होने लगा। बढ़ती जनसंख्या के कारण कई स्थानों पर जंगल भूमि का अतिक्रमण भी देखने को मिला। शताब्दी की ढलान पर नए बागों में फल आना शुरू हुआ। नए मकानों की आवश्यकता पड़ने लगी। वृक्ष कटान पर प्रतिबंध लगने से मकानों का शिल्प बदल गया। अब पॉलिशयुक्त चमकदार लोहे, एल्युमिनियम की चादरों वाली छत्तें दिखने लगीं। दूर-दूर भूमि पर जहां-जहां भी सेब के बाग बने, वहीं मकान बनने लगे। युवा पीढी को अच्छी शिक्षा के लिए शिमला, सोलन, चंडीगढ़ व अन्य शहरों की तरफ भेजा जाने लगा। प्रदेश की अर्थव्यवस्था में सेब का महत्त्व बढ़ने लगा तो ग्रामीण सड़कों के लिए बजट का प्रावधान बढ़ता गया। प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना ने इसमें महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। सड़कों के आने से आवागमन बढ़ा तो ग्रामीण मानसिकता शहरी होती गई। सेब की आय से हर साल महंगी कारें व अन्य वाहन खरीदे जाने लगे। पहाड़ के युवाओं पर इस नवधनाढ्य जीवन का जादू सिर चढ़कर बोलने लगा। यथा :

बड़े बागवान के छोटे लड़के की
स्कार्पियो पर ठक से ब्रेक
ताराहाल में पढ़ती किसी छात्रा के मन में
धक-धक करती ऋतु बेटियां अनेक

शिमला के पहाड़ी कस्बे में रह रहे कवि मोहन साहिल ने इस परिदृश्य को अन्य तरीके से व्यक्त किया है :

वे केवल धन की प्रतीक्षा में थे, उनका सारा विरोध
रोटी के पक्ष में सारी लड़ाई धनी होते ही समाप्त हो गई
और उनकी मान्यताओं के बदलते ही ठहाकों में बदल गया उनका चीखना

धन हाथ में आते ही मकानों का वास्तुशिल्प बाहर से आयातित होने लगा। मकान अब बड़े डिजाईनदार भवन हो गए जिनमें आधुनिक सुख-सुविधा के अतिरिक्त ऐश्वर्य का भी सामान

भरा जाने लगा। रसोई घर, स्नानघर, शौचालय व बैठक कक्ष का रूप, शिल्प, आकार बड़े होटलों से टक्कर लेने लगा। पहाड़ अब जहां-तहां आकर्षक भवनों से आच्छादित होने लगे, जिन्हें देखकर एक पूर्व मुख्यमंत्री ने आश्चर्य जताया था कि यहां तो चांदी की चादरों से बनी छत्तों वाले भवन हैं। इस समय यदि आप सुदूर पहाड़ी चोटी व उसकी ढलान को रात के समय देखें तो लगता है कि एक नया आकाश धरती पर उतर आया है। अधिकतर बागबान बच्चों को पढाई के लिए परिवार सहित शहरों में रहने लगे हैं। शिमला जिले के कुछ गांव अब मात्र बुजुर्गों के आश्रयस्थल है, जहां वरिष्ठ नागरिक बागीचों के चौकीदारों की तरह रहते हैं। शहरों में कुछ लोगों के अपने फ्लैट हैं। शिमला के अलावा कई शहरों में आलीशान भवन हैं। किसी समय शिमला में व्यापारियों या देश विभाजन के समय पूर्वी पंजाब से आए शरणार्थियों का वर्चस्व था। अब अधिकतर संख्या बागबानों की है। कहा जा सकता है कि अब शिमला शहर बागबानों का शहर है। एकाध राजनेता को छोड़कर शिमला शहरी विधानसभा क्षेत्र से ऊपरी शिमला के राजनीतिज्ञ ही निर्वाचित होते रहे हैं। प्रदेश के दो मुख्यमंत्री व कई मंत्री इसी शिमला जिला से आए हैं। नगर निगम शिमला के महापौर व उपमहापौर इसी जिला से बनते आए हैं। उनके हाथों में शहर के विकास की बागडोर रहती है। यह कैसे संभव हुआ? सेब क्रांति ही इसके पीछे का कारण है।

एक मुहावरा है कि 'पैसा कोई पेड़ पर नहीं उगता।' लेकिन बागबानों ने इस मुहावरे को निरर्थक सिद्ध कर दिया। पिछली पीढ़ी ने अनथक श्रम किया। नई जमीनें खोदी, पौधे रोपे, उन्हें 15-20 सालों तक पालते-पोसते रहे। नई पीढ़ी उसी संघर्ष का फल बेचकर आधुनिक जीवन शैली संवार रही है।

सेब ने हिमाचल व यहां के निवासियों के आर्थिक विकास में बड़ा योगदान दिया है। सेब बहुल इलाकों का शायद ही कोई ऐसा परिवार होगा, जो आर्थिक तंगी में हो। बड़े बागबानों की नई पीढ़ी अन्य व्यवसायों में भी जुट रही है। बहुत से युवा सेब कारोबार, दवाइयों, कार्टन, परिवहन, व्यापार, होटल व्यवसाय, ठेकेदारी व पत्रकारिता आदि में संलग्न हो रही है। विश्वबैंक ऋणों की आवश्यक शर्तों के कारण सरकारी नौकरियां निरंतर कम हो रही हैं। कारपोरेट घराने व अन्य कंपनियां छोटी-छोटी नौकरियों के लिए भी एमबीएए एमसीएए बीटेक शिक्षित युवाओं को रखती हैं। उनसे कई-कई शिफ्टों में काम लिया जाता है। ऐसे में नौकरी से पैसा कमाना जटिल हो गया है। सरकारी नौकरियां कम हो रही हैं। इस तरह सबसे बेहतर रोजगार के साधन तो सेब उत्पादन से उपलब्ध है। युवा शक्ति बिना किसी डिग्री के खुद की शर्तों पर अपने बाग में काम करते हैं। पौधों की कांट-छांट, रासायनिक दवाइयों व उर्वरकों का वितरण, पेटी सप्लाई, ग्रेडिंग, पैकिंग आदि कामों में उन्हें सारा साल कमाई का अवसर मिलता है और वह भी स्वतंत्र तौर पर। बहुत से युवा पिकअप, यूटिलिटी, ट्रैक्स जैसे वाहन खरीदकर सारा साल व्यस्त रहते हैं। यही कारण है कि अब शिमला जिला के कई युवा स्वरोजगार को प्राथमिकता दे रहे हैं। सेब उत्पादन ने शिमला और नेपाल को एक किया है। हर साल हजारों नेपाली श्रमिक जिला के बागबानों के पास आकर बागीचों में काम करते हैं। औसतन हर साल यहां से नेपाली श्रमिक 500 करोड़ रुपये नेपाल ले जाते हैं। यह नेपाल की अर्थव्यवस्था के लिए बड़ा संबल है। रोजगार के इस साधन से नेपाली युवाओं का आत्मबल व उत्साह बढ़ा है। निम्न काव्य पंक्तियों में इस आत्मबल की झलक मिलती है।

उधर नेपाल के किसी गांव में
बतिया रहे होंगे युवक, 'पईसा' क्या है?
इन्सानियत खोजने गए थे भारत में
यहां की वहां छोड़ आए
वहां की यहां ले आए

यदि आाप बड़े शहरों की मंडियों के बाजारों को देखें तो सैंकड़ों श्रमिक, दुकानदार, फेरी वाले, टैक्सी वाले, होटल, रेस्तरां वाले (जिसमें आदर्शनगर दिल्ली का मशहूर पहलवान ढाबा शामिल है) व अन्य खुदरा कारोबारी, यहां तक कि भिखमंगे भी सेब सीजन में उनकी हथेलियों पर धरे जाने वाले नोटों से संतुष्ट हो जाते हैं। हालांकि इस खर्च का सही-सही आकलन नहीं हो सकता है, लेकिन यह तय है कि लाखों रुपये बागबान वहीं पर खर्च करते हैं। यहां तक कि छोटे शहरों-कस्बों के कारोबारियों को भी बागबानों की इसी व्यय आदतों से कमाई होती है। छोटे-से-छोटे गांव में भी दुकानें खुली हैं। अनेक तरह की मशीनें आ रही हैं। प्रूनिंग, स्प्रे, ग्रेडिंग आदि की मशीनें आ रही हैं।

एक मुहावरा है कि 'पैसा कोई पेड़ पर नहीं उगता।' लेकिन बागबानों ने इस मुहावरे को निरर्थक सिद्ध कर दिया। पिछली पीढ़ी ने अनथक श्रम किया। नई जमीनें खोदी, पौधे रोपे, उन्हें 15-20 सालों तक पालते-पोसते रहे। नई पीढ़ी उसी संघर्ष का फल बेचकर आधुनिक जीवनशैली संवार रही है। इस धन की चकाचौंध ने हमारे ग्राम्य जीवन का माधुर्य लील लिया है। अब उस परिश्रम का अभाव है, जो किसानी के लिए कभी सबसे आवश्यक हुआ करता था। अब गाय तक लोग पालना नहीं चाहते। जिन पशुओं को पिछली पीढी ने संतान की तरह पाला-पोसा, वह अब जंगलों में निराश्रय छोड़े जा रहे हैं, जहां वे या तो हिंसक जंगली जानवरों का भोजन बन रहे हैं या वहां से भागकर सड़कों और बाजारों में भटकते हुए भूखे मर रहे हैं। जिस उल्लास से पर्व व त्योहार मनते थे, वह सार्वजनिक जीवन से गायब है। जिन बहनों और बेटियों को अपने खेत का मीठा अन्न नियमित अंतराल में सस्नेह मिलता था वे उससे वंचित हैं। उसका स्थान अब पैसा थमाने की

औपचारिकता ने ले लिया है। जिन आपातस्थितियों में एक दूसरे का दुख-दर्द बांटा जाता था, उन्हें अब अपने ठंडे कमरे के एकांत में झेलना पड़ता है। जिन अवसरों पर पूरा गांव एकत्र होकर नृत्य और संगीत में झूमता था, वह अवसर विलुप्त हैं। नए गीतों में वह मिठास, दार्शनिकता व अनुभव नहीं पिरोए जाते हैं। वहां अब दैहिक कामपिपासा की शब्दावली ही अधिक है। लोकगीत अब शिमला जिला के लोहाली गांव में बस रहे बुजुर्ग लोक कलाकार बूढ़े चौंअरा राम जी के गले में ही अटके रह गए हैं। शादी-ब्याह या पर्व-त्योहारों पर लोकगीतों से आकाश गुंजायमान नहीं होता है, बल्कि शामियाने के भीतर रिक्तलय गीत पर बेतरतीब अंग हिलाना एक प्रतिकर्षण पैदा करता है। पहले का आत्मनिर्भर समाज अब बाजार पर पूर्णतः आश्रित है। खाद्य सामग्री, वस्त्र, कृषि उपकरण, रस्सी, ऊन, गहने, बिस्तर, उर्वरक, वस्त्र यानी जीवनयापन की जरूरतें बाजार की कृपा से मिलती हैं। आटा चावल के अतिरिक्त अन्य अनाजों के नाम तक किसी को मालूम नहीं। कौन सी फसल रबी की है और कौन सी खरीफ की, नये लोग इससे अनजान हैं। बिशु मेला केवल बैसाख में मनाया जाता है, लेकिन अब वह कभी भी 'एरेंज' किया जाता है। जहां चोल्टू नृत्य के स्थान पर ठोडे का खेल दिखाया जाता है। प्रकृति से साहचर्य के प्रतीक ब्रास, भेखल, मिट्टी के चिड़े, पशुओं के गले में नागपंचमी पर फूलों की मालाएं आदि किस मास में और क्यों उपयोग में लाए जाते थे, नई पीढ़ी नहीं जानती। अब केवल पैसा-ही-पैसा लोकजीवन की तमाम क्रियाओं का पैगंबर बन गया है। वही नृत्य कर रहा है, गीत गा रहा है और गाड़ियों में दौड़ रहा है। औषधियों व सब्जियों की आवश्यकता वनस्पतियां नहीं, पैसा ही पूरी कर रहा है। बदहवास लोग मात्र पैसा कमाने व संपत्तियां जुटाने के लिए भाग रहे हैं। उनकी कार्यक्षमता अपनी कर्मठता पर नहीं बल्कि हाथ आए पैसों पर निर्भर है। कवि आत्मा रंजन अपनी एक कविता में कहते हैं :

जीवन की आपाधापी में जाने कहां खो गया
संगीत के उत्सव का संगीत
कैसे और किसने किया
श्रम के गौरव को अपदस्थ
क्यों और कैसे हुए पराजित तुम खामोश
अपराजेय सामूहिक श्रम की
ओ सुरीली तान

चलिए, मान लिया कि समय ने सब कुछ हमसे छीन लिया है। इतिहास का साक्ष्य है कि समय हर अच्छी-बुरी प्रवृत्ति को ठोकर मारकर आगे बढ़ता जाता है, लेकिन इक्कीसवीं सदी में जिस धन के लिए सब कुछ दांव पर लग गया, यदि वही अपना प्रवाह रोक दे या धीमा ही कर दे, तब क्या? सौ साल के सेब सीजन में ऐसा ही हो रहा है। मुद्रा प्रवाह बहुत धीमा रहने की आशंका पैदा हो चुकी है। हर साल सेब की पैदावार घट रही है। वर्ष 2010 में साढ़े चार करोड़ पेटियों का उत्पादन दर्ज हुआ था। तब से यह मात्रा घटती ही रही है। वर्ष 2014 में यह उसका साठ फीसदी के करीब रह गया है। सेब क्षेत्र हर साल हजारों हेक्टेयर बढ़ रहा है। लेकिन उत्पादन निरंतर घट रहा है। बागवानी संकट स्थिति की ओर अग्रसर है। जबकि नई जीवनशैली अधिक व्ययसाधन मांग रही है। एक समयखंड कभी-कभी अपने पराभव का दिग्दर्शन कराता है। यही वह समय होता है, जब भविष्य आशंका के पाश में बंध जाता है। ऐसा समय हमारी जिजीविषा का समय है।

सेब की चमक फीकी रहने के कई कारण हैं। अंधाधुंध पौधारोपण के लिए प्राकृतिक संसाधनों का क्षय, जलवायु परिवर्तन से कभी अनावृष्टि तो कभी अतिवृष्टि, ढलानदार भूमि पर बाग स्थापित करना, उसमें भी मात्र डिलिशियस किस्में लगाना, परागण किस्मों की अवहेलना, उन्नत मूलवृंतों का अभाव, रसायनों का अधिकाधिक व अविवेकपूर्ण प्रयोग (जैसे फल में कृत्रिम रंग लाने के लिए इथोपोन का प्रयोग), अनियमित व अवैज्ञानिक प्रूनिंग, पौध संरक्षण में लापरवाही य पौधों के स्रोतों की विश्वसनीयता न जांचना) और भी कारण होंगे जिनकी तथ्यपरक मीमांसा कृषि वैज्ञानिक कर रहे हैं। वे समय-समय पर मार्गदर्शन व परामर्श भी देते रहते हैं। जो कृषि साल में 12 करोड़ श्रम दिवस सृजित करती है, उस ओर सरकार, वैज्ञानिकों और स्वयं बागबानों का ध्यान जाना चाहिए। सेब की गुणवत्ता और परिमाण में अच्छे नतीजे हासिल करने की चेष्टा होनी जरूरी है ताकि आने वाली पीढ़ियों पर आशंका के बादल छंट सकें। एक शताब्दी से उसी लीक पर चलती बागबानी सम्भवतः नए प्रयोग चाहती है। पर्याप्त चिलिंग ऑवर्स मांगने वाली सेब बागवानी को आज की ब्रह्मांडीय उष्मिता ग्लोबल वार्मिंग के दृष्टिगत मिट्टी की वर्तमान स्थिति पर नए अनुसंधानों की दरकार है। निरंतर प्रयोगों से ही यह संभव हो सकता है। प्रयोग कालांतर में असफल भी हो सकते हैं, लेकिन आज की स्थिति में वह किए तो जाएं।

नए प्रयोगों के दो उदाहरण हमारे सामने हैं, जिनसे प्रेरणा ली जा सकती है। कोटगढ़ में स्टोक्स के एक वंशज विजय स्टोक्स ने पिछले छह सालों में पुरानी प्रजातियों के पचास साल पुराने पेड़ों पर बुलडोजर फिरवा कर वहां पर नई आधुनिकतम प्रजातियों के दस हजार पौधे रोप दिए। हर नए पौधे का विस्तृत डाटाबेस आधुनिक तकनीक से तैयार किया। इससे उन पौधों के इतिहास, वंशानुक्रम, स्वास्थ्य, उपचार का ब्योरा तैयार होगा। सीधा अर्थ है कि प्रत्येक पौधा अपने ऊपर किए गए प्रयोगों की कहानी दर्शाएगा। पानी की कमी का मुकाबला वर्षा जल संग्रहण प्रणाली की स्थापना से किया जाएगा। उन्होंने स्थानीय युवाओं को इस काम में प्रशिक्षित कराने की बात भी कही है। अब तक इस प्रयोग का परिणाम भी आ चुका होगा, लेकिन अभी तक पता नहीं चल पाया।

फल उत्पादन बढ़ाने के लिए प्रतिकूल जलवायु में पौधरोपण

का एक प्रयोग घुमारवीं (बिलासपुर) के किसान हरिमन शर्मा ने भी किया। उन्होंने दस साल के सतत शोध के बाद पांच हजार फीट से नीचे की ऊंचाई पर ऐसे गर्म इलाके में सेब तैयार किया है, जहां अभी माना जा रहा था कि यहां सेब नहीं उग सकता? अपना बाग तैयार करने के बाद एक पौधशाला तैयार की। उन्होंने 4200 पौधे कांगड़ा, हमीरपुर, सोलन, सिरमौर,और सर्वाधिक गर्म इलाके ऊना जिले में भी सप्लाई किए। उनका सेब जून मध्य में उस समय तैयार होता है, जब सेब के दाम ऊंचे होते हैं। उनके सेब का आकार, उसकी गुणवत्ता और स्वाद उत्तम है। बागबानी वैज्ञानिक डॉ. चिरंजीत परमार आश्चर्यचकित हैं कि बिना किसी परीक्षण या अनुभव के यह कार्य कैसे हुआ। यदि यह प्रयोग सफल होता है तो उत्पादन में अभूतपूर्व बढ़ोतरी होगी और संपूर्ण हिमाचल एक आदर्श फलराज्य के रूप में जाना जाएगा।

हिमाचल प्रदेश में सही विपणन व्यवस्था का अभाव है। मंडियों के आढ़ती इस तरफ ध्यान नहीं दे रहे। हर साल कुछ आढ़ती दुकान बंद कर अदृश्य हो जाते हैं। उनके द्वारा दिए गए चैक बैंकों और न्यायालयों में फडफड़ाते रहते हैं। बागबानों की करोड़ों रुपये की कमाई ये आढ़ती रोक कर बैठ जाते हैं।

इससे आर्थिक व्यवस्था को भी नुकसान है। इन सब व्यवस्थागत चूकों को यदि समाप्त किया जाए तो सेब उत्पादन कम रहने पर भी समुचित आय दे सकता है। तब हर बागबान कवि सुरेश सेन निशांत के स्वर में स्वर मिला सकता है कि सेब नहीं पहाड़ों से हमने अपनी कुशलता की चिट्ठी भेजी है।

उकेरे हैं इस चिट्ठी में हमने
धरती के सबसे प्यारे रंग
भरी है सूरज की किरणों की मुस्कान
दुर्गम पहाड़ों से हर बरस भेजते हैं हम चिट्ठी

किसी भी विपदा का सामना मनुष्य की जिजीविषा ही कर सकती है। पैदावार की कमी से जो उदासी व्याप्त हुई है, उसका सामना नवीन प्रयासों की सफलता सुनिश्चित कर दिया जा सकता है। सौ बरस का यह लंबा दिन तो अंत को जा चुका। नई सुबह में पौ फटते ही क्षितिज किसी नई किरण को निमंत्रण दे। सत्यानंद स्टोक्स ने एक उजले दिन की आधारशिला रखी। हम सब अब नए शताब्दी भरे दिन का स्वागत करें, जो अपने समय का प्रतिनिधित्व करे। पारदर्शी होकर वो बढ़ता चले ताकि आने वाली हर शताब्दी और हमारी हर पीढ़ी गर्व से गुनगुना सके -

उजले दिन की तरह पारदर्शी चाहिए व्यक्ति
जैसे सत्यानंद स्टोक्स
मरकर भी जीवनयात्रा में दमकता हुआ
चाहिए पहाड़ों की छाती पर पहाड़ सा निश्छल हठयोगी
जैसे वो डूम नेपाली
खूंखार मौसमों को आत्मसात करता हुआ।

अनन्त आलोक की ग़ज़लें

एक

प्यार करना सिखा जाना
साथ मरना सिखा जाना

चूम कर हाथ होठों से
पीर हरना सिखा जाना



दूर जाऊं तो आंखों में
नीर भरना सिखा जाना

जिंदगी में जो आए दुख
धीर धरना सिखा जाना

कूद जाऊं मुहब्बत में
तू ही डरना सिखा जाना

दो

मिले थे दिल जहां दिल से वहीं इक बार आ जाना,
मुहब्बत कितनी है हमसे कसम तुमको बता जाना।

रही मजबूरियां होंगी वफ़ा हम कर नहीं पाए,
निभाया हमने हर रिश्ता सदा ही बा वफ़ा जाना।

तुम्हारे हाथ की छुअन अभी तक हाथ में जिन्दा,
कि फिर इन हाथों में मेरे तू अपना हाथ पा जाना।

तुम्हारी बेरुखी अब तो हुई बर्दाश्त के बाहिर,
कि हमसे हो गई है क्या खता इतना बता जाना।

तुम्हारी हर अदा मेरी ग़ज़ल का एक मिसरा है,
मुकम्मल हो ग़ज़ल मेरी कमर थोड़ी हिला जाना।

करो तुम जो भी जी चाहे तुम्हारा मुआमला निजी,
नहीं आलोक फितरत से कभी भी बेवफा जाना।

सहितायालोक, ददाहू, सिरमौर,
हिमाचल प्रदेश-171 022, मो. 0 94187 40772

आलेख

कांगड़ा के लोक साहित्य में ऋतु गीत

• हरिकृष्ण 'मुरारी'

हिमाचल प्रदेश का लोक साहित्य पुरातन समय से ही समृद्ध रहा है। भारत पर फिरंगियों की हुकूमत से पूर्व राजाओं के समय में भी हिमाचली लोक साहित्य अधिकतर मौखिक रूप में ही एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में हस्तान्तरण होता रहा है। भले ही हिमाचल में विभिन्न प्रकार की, अपने-अपने क्षेत्र की बोलियां हैं जो कि प्राचीन काल से ही अपनी-अपनी विशेषताओं के साथ निरन्तर चलतीं आ रही हैं। इन सभी बोलियों में प्रत्येक विधा के लोक साहित्य का बेशुमार मौखिक भण्डार रहा है। इस भण्डार में विभिन्न प्रकार के लोक-गीत, लोक-संगीत, लोक-पहेलियां, लोक-मुहावरे, लोक-वार्ताएं, लोक संस्कार, रीति-रिवाज, लोक-त्योहार, लोक कहावतें, लोक-गाथाएं ,लोक-कथाएं, लोक नाटक आदि भरे पड़े हैं।

यहां केवल हिमाचली ऋतु लोक गीतों पर आलेख प्रस्तुत है, परन्तु इससे पूर्व लोक ऋतुओं का संक्षिप्त वर्णन देना भी आवश्यक समझ रहा हूं। हिमाचल प्रदेश में मोटे तौर पर चार ऋतुएं मानी जाती हैं। यह ऋतुएं क्रमशः तीन-तीन माह तक रहती हैं। गर्मी की ऋतु माह चैत्र की संक्रान्ति से शुरू होकर माह ज्येष्ठ के मासान्त तक रहती है। अर्थात 14 मार्च से 14 जून तक। इसी प्रकार बरसात ऋतु आषाढ़ की संक्रान्ति से शुरू होकर माह भाद्रपद के मासान्त तक रहती है। अर्थात 15 जून से 15 सितम्बर तक तथा सर्दी की ऋतु माह आश्विन की सक्रान्ति से शुरू होकर मार्गशीष के मासान्त तक रहती है। अर्थात माह 16 सितम्बर से 14 दिसम्बर तक और बसन्त ऋतु पौष की संक्रान्ति से शुरू होकर माह फाल्गुन के मासान्त तक रहती है। 15 दिसम्बर से 13 मार्च तक। इस प्रकार प्रत्येक ऋतु का समय तीन महीने माना जाता है।

इन ऋतुओं के अतिरिक्त यहां के लोक में उप-ऋतुएं भी हैं। यह उप-ऋतुएं प्रत्येक 16-16 दिन का समय लेती है। यह महीने के अन्तिम आठ दिनों तक जेठी अर्थात ज्येष्ठी तथा अगले महीने के आठ दिन कन्हीं अर्थात कनिष्ठी होती हैं।

सचमुच यहां का लोक जीवन बड़ा ही आन्नदमय रहा है। यहां की प्रत्येक वस्तु अपने आकर्षक रंगों में रंगीन होती रहती है। यहां का कण-कण अपना नया और हैरान करने वाला दृश्य दिखाता, मस्त होकर नाचता-गाता प्रतीत होता है। इसी प्रकार यह उप-ऋतुएं भी अपने अलग-अलग मस्ती भरे रंगों को लेकर आतीं, नाचतीं और सुरीले स्वरों गाती सुनाई पड़ती हैं तथा इसी प्रकार हंस-खेल, नाच और गा कर विदा लेती हैं। हिमाचली लोक में इनके नाम इस प्रकार से हैं :-

1. गोहर-सोत्तू 2. हूञ्जू-कूच्चू 3. मग्गर मनिषियां
4. ल्होटक-भोहट्रक 5. मिरग-सनाइयां 6. तीर
7. दक्खनैण 8. जलबिम्बियां 9. कुरल़-कुरल़ाणीं
10. जल षोख 11. ठाण 12 चम्बड़चीसियां
13. नैह-सूल़।

लगता है आगे वाली पीढ़ी शायद इनके बारे में न जानती हो। क्योंकि अब इनको जानने-बताने वाले लोग बहुत ही कम संख्या में रह गए हैं तथा लगता है नई पीढ़ी को ऐसी बातों में कोई रुची भी नहीं है, क्योंकि समय परिवर्तन के साथ ऐसा होता आया है एवं होता रहेगा।

हिमाचली लोक में चैत्र मास से नए वर्ष का शुभारम्भ माना जाता है। चैत्र, बैसाख और ज्येष्ठ यह तीन महीने गर्म ऋतु के माने गए हैं। इसे यहां के लोक में 'तौन्दी' कहते हैं। चैत्र मास की सक्रान्ति से लोक में ढोलरू लोक गाथाओं का गायन शुरू हो जाता है। यह गायन मासान्त तक रहता है। यह ढोलरू गायन भगवान शिव के विशेष गायक डोम जाति के लोगों द्वारा घर-घर जाकर सुनाया जाता है। लोक में इनके मुख से चैत्र मास का नाम सुनना अति शुभ माना जाता है। चैत्र मास की संक्रान्ति को डोम परिवारों के दो-दो, तीन-तीन लोगों के समूह घर-घर जाकर पहला नॉ ढोलरू सुनाते हैं इनको सुनाने का अधिकार केवल इन्हें ही है। लोग ढोलरू सुनने के बदले इन्हें अन्न, कपड़े तथा पैसे आदि देते हैं। इस ढोलरू को पहला फुल्ल भी कहते हैं। इस प्रकार के लगभग 19-20 ढोलरू गाथायें हैं। जिन पर लगभग 100 पृष्ठों की पुस्तक डॉ. गौतम शर्मा 'व्यथित' ने लिखी है, जो ढोलरू नाम से वर्ष 1980 में शीला

प्रकाशन नेरटी द्वारा प्रकाशित की गई है। इस पुस्तक में सभी ढोलरू रूपान्तर सहित बड़े ही अच्छे ढंग से संग्रहित हैं जो कि एक अमूल्य सांस्कृतिक दस्तावेज बन चुका है।

चैत्र मास की संक्रान्ति से ही लोक में रल़ी-पूजा भी शुरू होती है तथा बैसाख संक्रान्ति (बैसाखी) को और उससे अगले दो दिनों तक रली विसर्जन होता है। रली पूजा का रिवाज श्रमिक- कृषक वर्ग में विशेष रूप से रहा है। जिस गांव की लड़कियों ने रल़ी पूजा करनी हो, वह इकट्ठी होकर जिस घर में पूजा करनी हो, वहां जाकर मिट्टी के दो पिण्ड बनाती हैं, जिन्हें अटड़े-बटड़े कहते हैं। इन मिट्टी के पिण्डों को अपनी समझ के अनुसार मूर्तियों में ढाल लेती है। लड़कियां जिस मिट्टी से मूर्तियां बनाती हैं, उसे एक दिन पहले फाल्गुन मास के मासान्त को निमन्त्रण देने जाती हैं। जिसे यहां के लोक में 'नियून्द्र दैणा' कहते हैं। जिस जगह की मिट्टी को निमन्त्रण देती हैं, वहां एक कौड्डी थोड़ा सा गुड़ एकाध पैसा थोड़ा सा सूत (डोरी) का लाल धागा तथा थोड़े से चावलों को मिट्टी में दबाकर निमन्त्रण दे आती हैं। अगले दिन चैत्र संक्रान्ति को सुबह जाकर उस मिट्टी को घर ले आती हैं तथा उसमें रूई एवं पानी मिलाकर अच्छी तरह से गूंथती है। इस मिट्टी से दो अट्ड़े-बटड़े, रल़ी एवं शंकर के प्रतीक रूप में बनाए जाते हैं। पहले यह भी परम्परा थी कि अटड़े-बटड़े बनाने के बाद पन्द्रह-दिन के उपरान्त उसी स्थान की मिट्टी से ही गांव की कलाकार-स्त्रियां रल़ी और शंकर की प्रतिमाएं स्वयंमेव ही बनाती थीं और उन्हें सजा-संवार कर लड़कियां पूजती थीं। आजकल कई स्थानों पर कुम्भकार रल़ी और शंकर की मूर्तियां बनाकर बेचते हैं तथा लड़कियां वहां से खरीद कर उनकी पूजा करती हैं। यह पूजा पूरा चैत्र महीना चलती है तथा बैसाख की संक्रान्ति से तीज तक रल़ियों का विसर्जन निकट के नालों, खड्डों एवं नदियों में किया जाता है। विसर्जन तक इन रली गीतों से आस-पास का वातावरण गूंजता रहता है।

इससे सम्बन्धित गीत मुझे श्रीमती सुदर्शना कुमारी, निर्दोष कुमारी और शारदा देवी तथा रमेश चन्द्र 'मस्ताना' की पुस्तक 'लोकमानस के दायरे' में पृष्ठ 96, 97, 98, 99 तथा 101 और 102 मिले हैं और कुछ गीत डॉ. गौतम शर्मा 'व्यथित' की पुस्तक 'महके आंगन झूमें गांव' में गीत पूजा जातरा गीत पृष्ठ 59, 60, 61, 62, 63, 65, 66 तथा 67 से भी उपलब्ध हुए हैं।

लड़किया प्रातः रल़ी (मिट्टी की बनी शिव-पार्वती की मूर्तियां को) को उठाने का उपक्रम करती, ऐसे गीत गाती हैं :-

उठ वो रल़िये सूतड़िये
तेरी जागण बेला होई बलिये,
तेरा तोता करदा चुरभुरियां,
तेरी मैना करदी राम-राम, सीता-राम।

उठ वो सैंकरा सूतड़ेया,
तेरी जागण बेला होई भलिया,
तेरा तोता करदा चुरभुरियां,
तेरी मैना जपदी राम-राम, सीता-राम।

उठ वो वस्तुआ सूतड़ेया,
तेरी कौण भियाग होई बलिया,
तेरा तोता करदा चुरभुरियां,
तेरी मैना जपदी राम-राम, सीता-राम।

उठा वो कुड़ियो सूतडियो,
तुहाड़ी जागण बेला होई बलियो,
तुहाड़ा तोता करदा चुरभुरियां,
तुहाड़ी मैना लैंदी राम जी दा नाम।

यह गीत भी उठाने के उपक्रम का ही है :-

उठ भई रल़िये जाग भलिये,
तेरी जागण बेला होई भलिये।
तेरे तोते करदे चुर-भुरियां,
तेरी मैना लैंदी राम दा नाम।

उठ भई शंकरा जाग भलिया,
तेरी जागण बेला होई।
उठ भई वस्तुआ जाग भलिया,
तेरी जागण बेला होई।

औआ तां मिलो मेरी सहेलियो,
सहियो सहेलियो फुल्लां हुञ्जण जाणा ए।
होरना तां हुञ्जियां गोदां दियां गोदां,
रल़िया हुञ्जी छड़ सारी ए।
होरना तां गुन्दियां लड़ियां दो लड़ियां,
रलिया गुन्देया चौंसर हार ए।

तूं कजो रोन्दी रल़िये लाडलिए,
कन्ने तां जाणा वस्तुएं भाईयें।
वस्तुएं तां रहणा भैणे दो-चार दिहाड़े,
रल़िया कटणी उमर सारी ऐ।

इस रल़ी पूजा में हास्य-व्यंग भरे गीत भी गाए जाते हैं:-

म्हारें बाबें खूहआ दुआया, खूहआ दुआया,
म्हारा बापू मल़ी-मल़ी न्हौवे, मल़ी-मल़ी न्हौवे,
लै नकचुबो बाहर आवे, बाहर आवे,
तुहाड़ें बापुएं टोह्बा दुआया, टोह्बा दुआया,

तुहाड़ा बापू डरी-डरी न्हौवे, डरी-डरी न्हौवे,
लै नकचुभी डुबी-डुबी जाऐ, डुबी-डुबी जाऐ।

इसके उपरान्त लड़कियां समूह बनाकर अपना-अपना पूजा का छक्कू लेकर बावड़ी की ओर चल देती हैं। यह क्रिया मुंह-अन्धेरे ही शुरू हो जाती है और लड़कियां नहा-धो कर, अपने-अपने छक्कू पकड़कर फूल चुगने के लिए निकल पड़ती हैं। जंगली-गुलाबों एवं बसूंटियों के फूलों को तोड़ती-इकट्ठा करती हुई, लोकगीतों की सुरीली धुनें छेड़ती हैं, जिनसे पूरी घाटियां-वादियां गूंजती हुई दिखाई देती हैं :-

मैं कने भावों फूल्लां जो चलियां ऽऽऽ
नाल चले मेरा भाई मेरी भावो, मोर बोलो ....
मोरां शब्द सणाया मेरी भावो, मोर बोले ....।।

फूलों को चुगने के बाद छोटी-छोटी गिट्टियां भी एकत्रित की जाती हैं और इन सबको बावड़ी के पानी में छोड़ा जाता है। फिर एक-एक गिट्टी को एक-एक लड़की के द्वारा अपने भाई के नाम पर बावड़ी में समर्पित किया जाता है :-

इक्क मेरी गिट्टी, इक्क मेरा भाई,
इक्की दी बधाई ....।
दो मेरिया गिट्टियां, दो मेरे भाई,
दूंह दी बधाई ....।।

इसी क्रम से यह गीत आगे बढ़ाया जाता है। गिट्टियों के विसर्जन के उपरान्त पूजा के छक्कू को फूलों समेत पानी में डुबोकर धोया जाता है। छक्कू का भार चाहे कितना भी क्यों न हो, वह पानी में डूबना नहीं चाहिए। यदि किसी लड़की का छक्कू पानी में डूब जाए तो वह अपशकुन माना जाता है। इसके उपरान्त सारी लड़कियां घर की ओर चलती हैं :-

नौह्ई तां धौई जी कुड़ियां गुरमुख चलियां जी, गुरमुख चलियां,
गड़विया जो चलियां गुआई हो मेरे राम ऽऽऽऽ
गड़वी तां कुड़िए तिजो होर लेई दैणी, जी होर लेई दैणी ....
रल्लि़या दी सेवा तू कर कुड़िए ऽऽऽऽ
नौह्ई तां धौई जी कुड़ियां ....
बिन्दले जो चलियां गुआई हो मेरे राम ऽऽऽऽ
छोटा देया वास्तु, जी गेन्द बाजी खेलदा,
जी गेन्द बाजी खेलदा,
उन्हीं मेरा बिन्दला तपाया हो मेरे राम ऽऽऽऽ .... ।।

घर पहुंचने पर लड़कियां डयोढ़ी अथवा परौल़ी पर आकर यह गीत गाती हुई मां को सम्बोधित करती हैं :-

फुल्लां चुग्गी मैं जे आई, मैं जे आई,
दीतिया परौल़ी खोह्ल नी माए ....
बाड़िया फुल्ल गुलाबे दा ....।।

इसके उपरान्त बरामदे एवं घर की दहलीज पर 'पखड़ी-हंडाई' जाती है और फिर पूजन करने के बाद ही भोजन अथवा अन्य आहार ग्रहण किया जाता है। इसके उपरान्त दोपहर तक अटड़ों-बटड़ों की मिट्टी को न्यून्द्र वाले निर्धारित स्थान से लाकर रल़ी, शंकर एवं वास्तु-भाई के रूप में अटड़े-बटड़े बनाने की प्रक्रिया प्रारम्भ होती है। मिट्टी को कूट-पीस कर, रूई मिलाकर खूब गूंथा जाता है और गोल-गोल अटड़े-बटड़े बनाए जाते हैं। इन अटड़ों-बटड़ों में मुंह के लिए सफेद कौड्डी, आंखों के लिए रीठे के काले कलोडू लगाए जाते हैं और इनके सूखने पर रल़ी को लाल रीढ़ा अथवा लाल चुन्नरी, शंकर को छाल इत्यादि के वस्त्र और वास्तु भाई को कुर्त्ता-पाजामा जैसे वस्त्र पहनाए जाते हैं। इन तीनों को सजा-संवार कर, निर्धारित घर के अन्दर जहां रल़ी-पूजन करना होता है, ऊँचे एवं पवित्र स्थान पर रख दिया जाता है।

चैत्र-मास के पूर्वार्द्ध तक रल़ी-पूजन परम्परा में अटड़े-बटड़े के रूप में इन पिण्डियों की पूजा की जाती है। लड़कियों के द्वारा नित्य-प्रति सुबह उठकर फूल-चुगने जाना, नहाना धोना, गिट्टियां इकट्ठी करके बाबड़ी में डुबोना आदि क्रियाएं तो की ही जाती हैं, साथ ही बसूंटी की डालियां-लौंह्टियां लेकर 'डोडू' भी कूटा जाता है। डोडू-कूटने की क्रिया में लड़कियां बसूंटी की डालियों से पानी को पीटती हुईं, संवादात्मक-शैली में निम्नलिखित लोक-गीत गाती हैं :-

अज्ज डोडू जम्मया था .... भली होई जी भली होई,
अज्ज डोडू जुआन होया था .... भली होई जी भली होई,
अज्ज डोडू बणे जो गिया था .... भली होई जी भली होई,
अज्ज डोडू रूक्खें चढ़या था ...... भली होई जी भली होई,
अज्ज डोडू रिड़कया था .... हाय डोडुआ हाय .....
हाय डोडुआ हाय ....।

इसी 'हाय-हाय' के साथ ही लड़कियों के द्वारा बाबड़ी के पानी को बसूंटी की लौंह्टियों से कूटा जाता है। इसके उपरान्त घर पर आकर पूरे विधि-विधान से सारी पूजा की जाती है और छक्कू के सारे फूल रल़ी-शंकर एवं वास्तु के रूप में स्थापित अटड़ों-बटड़ों पर चढ़ाए जाते हैं :-

साह्ड़े शंकरे दे चरणां च डुल्लि वो जायां ।
डुल्ल-डुल्ल छावड़िए भैणे ....
साह्ड़िया रल़िया दे चरणां च डुल्लि वो जायां।
डुल्ल-डुल्ल छावड़िए भैणे ....
साह्ड़े वास्तुए दे चरणां च डुल्लि वो जायां ....।।

इस प्रकार से पन्द्रह दिनों तक अटड़ों-बटड़ों की पूजा की जाती है और इसी मध्य या तो स्वयं रल़ी-शंकर बनाकर अथवा बाजार से मोल लाकर स्थापित करके पूजन-विधान प्रारम्भ हो जाता है। किसी दिन खेतों के किनारे पर स्थित किसी 'दरेक' के वृक्ष की पूजा भी की जाती है, दरेक के वृक्ष की पूजा करके, फूल आदि चढ़ा कर व उसे पानी अर्पित कर निम्न लोकगीत गाया जाता है :-

दरेके ओ ऽऽऽ नी लाडलिए दरेके,

दरेका लालड़े दड़कानू ....।
इसा बत्ता शंकर जे आए, शंकर जे आए,
घोड़े दुड़क दुड़कैन्दे आए ....।
इसा बत्ता रल़ी जे आई, रल़ी जे आई,
डोल़े चीकदे जे आए ....।
इसा बत्ता वास्तु जे आया, वास्तु जे आया,
माखियां भुणक भुणकैन्दियां आइयां ....।।
डुल्ल-डुल्ल छावड़िए भैणें, डुल्लि वो जायां ....

रल़ी पूजन के प्रारम्भ से लेकर अन्त तक सारी लड़कियां रात को लगभग उसी घर में इकट्ठी ही रहती हैं औरे बड़े शौक, चाव एवं श्रद्धा के साथ भजन कीर्तन तथा रल़ी-पूजन से सम्बन्धित लोकगीत गा-गाकर रात्रि के नीरस वातावरण को संगीतमय बनाती हैं। रल़ी-पूजन के लोकगीतों में जहां रीत-व्यवहार, रल़ी के बड़े होने एवं उसके 'रबारों' से सम्बन्धित गीत गाए जाते हैं, वहां हास्य-व्यंग्य के अतिरिक्त विरह-वेदना से सम्बन्धित लोकगीत इस प्रकार से करुणामय ढंग से गाए जाते हैं कि मन दर्द व टीस से भर उठता है। रल़ी के वर्ष-बार बड़े होने का एक लोकगीत इस प्रकार मिलता है :-

अंगड़े-जंगड़े, पैरां-पसंगड़े, हड्डियां तोड़दे,
राय दी बेटी, पलैं पलेटी, धूपें धूपें हत्थें हत्थें ....
कितियां बरहां दी होई मेरे राजा 2
इक्की बरहे दी होई मेरे राजा,
इक्की बरहे दी होई ....।।

इसी प्रकार दूंह, त्रिहं, चौंह .... आदि वर्षों की बात से गीत को आगे बढ़ाया जाता है तथा रल़ी के रबारों से सम्बन्धित एक लोकगीत जिसमें विभिन्न स्थानों से सम्बन्धित विशेषताएं हास्य एवं सच्चाइयों के साथ प्रकट होती हुई दिखाई देती है :-

मेरिए रूणकां दीए चिड़िए सुणयां ओ ऽऽऽ ....
तेरे आए रबारू सुणयां ओ ऽऽऽ
सैह वी कुल्थू ते आए सुणयां ओ ऽऽऽ
सैह वी कांगड़े ते आए सुणयां ओ ....
कांगड़े दैणियां न लैणियां सुणयां ओ ऽऽऽ
कांगड़े क्या औगुण लगदे सुणयां ओ ऽऽऽ
कांगड़े बान्दर भह्तेरे सुणयां ओ ऽऽऽ ....।
मेरिए रूणकां दीए ....।।
इसी प्रकार 'रेहलुए बिच्छु भह्तेरे सुणयां ओ' ....,
'मटौरें देई-देई छड्डियां सुणयां ओ' ....।

आदि-आदि स्थानों के साथ गीत को आगे बढ़ाया जाता है।

रल़ी एवं शंकर की शादी तय होने पर रल़ी के द्वारा वस्त्र एवं आभूषणों की फरमाइशें संवाद-शैली के रूप में लोकगीतों के माध्यम से सुनते ही बनती है :-

साडी रल़ी साड़ी मंगदी, साड़ी मंगदी,
तुहाडा शंकर कहां से लाएगा .... ?
साडा शंकर लौह् गया, पशौर गिया,
लौह्रें साड़ी लियाएगा, ते रल़ी दे लक्कें पाएगा ....

इसी तरह कई फरमाइशें रल़ी के द्वारा की भी जाती हैं और शंकर के द्वारा पूरी भी की जाती हैं। रल़ी की विरह-व्यथा, मां-बाप से बिछुड़ने का गम एवं उसके अकेलेपन का एक दर्दनाक विरह :-

सब्ब-सब्ब फुल्ल फुल्ले, कराल़ी जे फुल्लियां 2
होर फुल्लया लैटर-चम्बा अज वे ऽऽऽ ....
तू कजो रौन्दी हो मेरिए रल़िए भैणे, जी रल़िए भैणे,
कन्नें जाणा वास्तु भाइएं अज्ज वे ऽऽऽ ....
वास्तु भाइएं तां दो दिन कटणे जी, चार दिन कटणे,
मैं तो कटणी उमर सारी अज्ज वे ऽऽऽ ....

रल़ी-पूजन करने वाली लड़कियां प्रत्येक रविवार को व्रत भी रखती हैं और व्रत वाले दिन जिस घर में अटड़े-बटड़े अथवा रल़ी-शंकर रखे होते हैं, वह उन सभी लड़कियों को दूध एवं फलाहार इत्यादि भी भेंट करते हैं। यदि उनकी सामर्थ्य हो तो वह रात का खाना भी उन्हें खिलाते हैं और यदि वह ऐसा कर पाने में समर्थ न हों तो सभी लड़कियां अपने-अपने घरों से रात का खाना लाती हैं और थोड़ा-थोड़ा भोजन एक थाली में रल़ी एवं शंकर के नाम पर रखकर पूजती हैं। इस खाने को बाद में उस घर की गृहस्वामिनी, जिसे रल़ी की मां माना जाता है, वह खाती है। इस प्रकार से सारी इकट्ठी बैठकर ही व्रत खोलती हैं। रात को भजन-कीर्तन के उपरान्त रल़ी एवं शंकर की आरती उतारी जाती है और उसके उपरान्त ही लड़कियां सोती हैं।

रल़ी पूजन के विधान में सबसे महत्त्वपूर्ण रल़ी एवं शंकर का विवाह और उस विवाह-मंडप में सम्पन्न होने वाले मोख/नजातरण होते हैं। चैत मास के मासान्त से पहले रल़ी एवं शंकर को अलग-अलग कर दिया जाता है। मासान्त के दिन शंकर वाले घर से बारात के रूप में शंकर को रल़ी के घर में लाया जाता है। रल़ी को दुल्हन के रूप में और शंकर को दूल्हे के रूप में सजाया एवं संवारा जाता है। रल़ी के घर में बाकायदा आंगन में मंडप एवं वेदी गाड़ कर पूरे विधि विधान के साथ रल़ी-शंकर का विवाह सम्पन्न करवाया जाता है। लड़कियां दो वर्गों में बंट कर रल़ी एवं शंकर के पूजन की परम्पराओं को निभाती हैं तो गृह-स्वामी व उसकी पत्नी रल़ी के मां-बाप का फर्ज निभाते हुए, शादी की पूरी रीत को निभाते हैं। इसी बीच गांव-वासी दान-पुण्य करके रल़ी एवं शंकर के प्रति निष्ठा भाव दर्शाते हैं। जिन्होंने मोख अथवा नजातरण करना हो, वह भी इस रीति को इसी वेदी एवं मण्डप के नीचे ही सम्पन्न करते हैं। रल़ी-शंकर के विवाह के दिन सभी लोग, विशेष रूप से पूजन करने वाली लड़कियां, रल़ी के मां-बाप और मोख/नजातरण करने वाले सभी व्रत रखते हैं और खाना तभी ग्रहण करते हैं जब रल़ी-शंकर की शादी की समस्त रीत-रस्में-लगन-वेदी आदि सम्पन्न हो

जाती हैं। शादी के उपरान्त एक बार फिर रल़ी एवं शंकर को शंकर की बारात निकालने वाले घर पर इकट्ठा रखा जाता है और फिर वैसाख मास की संक्रान्ति अथवा अगले दिन निर्धारित समय पर और निर्धारित स्थान पर किसी नदी विशेष के गहरे पानी में समर्पित कर दिया जाता है।

कांगड़ा-घाटी के विभिन्न स्थानों पर नदियों के किनारे वैसाख की संक्रान्ति, दो अथवा तीन प्रविष्टों को निर्धारित दिन पर रल़ी के मेले लगते थे। लड़कियां समूह बनाकर रल़ी एवं शंकर को बाहों में उठाकर अथवा डोली में बिठाकर घरों से निर्धारित स्थान तक लाती थीं। इस मध्य विभिन्न रल़ी-गीतों एवं भजनों से पूरी घाटियां-वादियां गूंजती थीं, पानी की लहरों पर संगीत तिरता हुआ दिखाई देता था और लड़कियों की भावुकता उनके आंसुओं और सिसकियों में झलकती दिखाई देती थी। पुहाड़ा में खौह्ल़ी खड्ड के किनारे, चड़ी एवं राजोल में गज्ज खड्ड के किनारे, मटौर में मणूणी खड्ड के किनारे, कांगड़ा में बंडेर के किनारे, चामुण्डा में नन्दिकेश्वर धाम के पास बंडेर के किनारे, भेडू महादेव में न्यूगल खड्ड के किनारे, बालकरूपी में न्यूगल के किनारे, सिंहनाल़ (शिव नगर) में मंद खड्ड के किनारे और ब्यास नदी के किनारों पर विशेष रूप से कुंज द्वार---लम्बा गांव, बसन्ती-पतन---जयसिंहपुर, सुजानपुर और ज्वालामुखी के पास कालेश्वर में लगने वाले रल़ी मेलों का अपना ही एक महत्त्व एवं आकर्षण था। आज भी कुछ एक स्थानों पर कुछ ही लड़कियों के द्वारा यह रीत निभाई अवश्य जा रही है, पर न ही मेलों में वह आकर्षण ही रह गया है और न ही लड़कियों में ही रल़ी-पूजन की उमंग ही बची है। रल़ी एवं शंकर को पानी में समर्पित करने का कार्य वही लड़का करता है, जिसे रल़ी-पूजन करने वाली लड़कियों के द्वारा 'वास्तु' भाई के रूप में मान्यता दी गई होती है। वह रल़ी एवं शंकर की दोनों मूर्तियों को लेकर गहरे पानी (आल़) में उतर कर छिपाकर रख देता है। एक महीने के इस रल्धी-पूजन से आस्था, विश्वास एवं आध्यात्मिकता की वशीभूत हुई यह लड़कियां इतनी भावुक हो चुकी होती हैं कि रल़ी-शंकर के विसर्जन पर रोती हैं, पीटती हैं और इसमें भी एक अपार सुख की अनुभूति प्राप्त करती हैं। रल़ी-शंकर की मूर्तियों के साथ ही अटड़ों-बटड़ों, सारी की सारी पूजा-सामग्री, फूलों के ढेरों को पानी में प्रवाहित कर दिया जाता है। रल़ी के डूबने एवं उसे निकालने की प्रार्थना वह एक लोकगीत के माध्यम से भाई वास्तु के पास कुछ इस प्रकार से करती हैं :-

रौआ दीयां पौड़ियां, कुछ डुगड़ियां, कुछ ऊचड़ियां,
रल़ी भैण डुब्बी गेई ऐ ऽऽऽ ....।
लायां नी वास्तुआ नक्कचुबड़ियां-नक्कचुबड़ियां,
रल़िया भैणा कड्डी ल्योआं ऐ ऽऽऽ ....।।

कुत्थू सैह रल़िया हत्थ-मुंह धोते,
कुत्थू सैह बिन्दली गुआई ए।
जमुना कनारें हत्थ-मुंह धोते,
ओत्थू सैह बिन्दली गुआई ए।

इसी प्रकार रल़ी-शंकर से बिछुड़ने का दुःख लड़कियों के कल-कण्ठ से निकलता हुआ, इस प्रकार से उभर कर सामने आता है :-

कीक्का किक्करीए, झौला-झौलरीए,
किह्नी मोड़या तेरा डालू ऐ ऽऽऽ ....
डालुए ना मोड़यां राजा, कल़ियां न तोड़यां,
फुल्लां चुग्गि बागें तरयां ए ऽऽऽ ....
रल़िए, अम्मां जाईए भैणे, शंकरा, अम्मा जाइया भाइया,
हुण होए पैहर बछोड़े वे आं ऽऽऽ ....।।

रल़ी-पूजन करके लड़कियां जहां उपयुक्त वर प्राप्ति की मनोकामना करती हैं और अपनी ऊमर से बड़ी आयु का पति प्राप्त करना चाहती हैं, वहां रल़ी पूजन अपने घर में करवाना भी एक मांगलिक एवं शुभ कर्म माना जाता है। कई बार अपनी किसी मन-वांच्छित कामना की पूर्ति होने पर अथवा किसी मन्नत के मांगने और विशेष रूप से सन्तान-प्राप्ति की इच्छा रखने वाले दम्पति द्वारा भी रल़ी-पूजन अपने घर में सम्पन्न करवाया जाता है। इसमें ऐसा दम्पति महीना भर रल़ी-शंकर का पूजन कर, लड़कियों के चाय-पान एवं खानपान के साथ-साथ व्रत-मोख की रीत निभाकर रल़ी-शंकर का विवाह सम्पन्न करवाते हैं। शादी के समय रल़ी-शंकर के लिए वस्त्रों एवं आभूषणों का प्रबन्ध भी वही करते हैं, विशेष रूप से रल़ी के लिए सोने की नथनी चाहे वह छोटी-सी ही क्यों न हो, अवश्य ही बनवा कर पहनाई जाती है। रल़ी-शंकर के आभूषणों को वास्तु भाई, उन्हें पानी में समर्पित करते समय उतार लेता है।

रल़ी और शंकर की शादी का मुहूर्त अर्थात् चैत मास का मासान्त और वैसाख मास की संक्रान्ति का दिन अति शुभ माना जाता है। जिस किसी लड़के अथवा लड़की की शादी निश्चित् करने के लिए कोई उपयुक्त तिथि की गणना संभव न हो पाती हो और किसी शुभ मुहूर्त्त का योग न बनता हो, तो उनके मां-बाप इस दिन बिना कोई मुहूर्त्त गणना किए शादी सम्पन्न करवा देते हैं। शादी के इस मुहूर्त्त को- 'बसोए दा मुहूर्त्त' अथवा 'रल़िया दीया पिट्ठी-पिच्छैं'-शादी का मुहूर्त्त माना जाता है। पहले तो इस मुहूर्त पर केवल मंगलमुखी डोम जाति के लोग ही अपने बेटे-बेटियों की शादियां करते थे, जिसका मुख्य कारण शायद इस महीने इन लोगों के द्वारा ढोलरू गायन से अच्छी कमाई एवं अन्न इकट्ठा करने की भावना रहा होगा। यह लोग शायद इस महीने अपनी गरीबी की दशा में सुधार कर लेते थे और इनको बेटे-बेटी की शादी करना आसान हो जाता था। इसके विपरीत आजकल और भी बहुत से लोग इस शुभ मुहूर्त्त का लाभ उठाकर शादियां सम्पन्न करवाने लग पड़े हैं। (शेष अगले अंक में)

पर्यटक की नज़र में

किन्नौर का अद्‌भुत सौंदर्य

हर वर्ष शारदीय नवरात्र पर बंगाल से प्रकाशित सभी पत्रिकाएं विशेषांक प्रकाशित करती हैं। 'अपरूप किन्नौर' शीर्षक से आनंद बाजार पत्रिका समूह की 'सानंदा' के विशेषांक में बंगाली पर्यटक तानाजी सेनगुप्त का किन्नौर यात्रा का लेख प्रकाशित हुआ था जिसका मूल बांग्ला से हिंदी में अनुवाद रतन चन्द 'रत्नेश' ने किया है। -सम्पादक

हिमाचल प्रदेश की विशेषता यह है कि यहां के जिस भी अंचल में चले जाएं प्रकृति के नैसर्गिक दर्शन होते हैं। इनमें किन्नौर तो जैसे सोने में सुहागा है। किन्नौर सर्किट के रंग-रूप-रस की अभिव्यंजना शब्दों से परे है। प्रकृति ने मानो अपने दोनों हाथों से विशेष तौर से गढ़ा हो इस अंचल को। इस मनोरम स्थल का पूर्णरूपेण उपभोग करना हो तो यात्रा आरंभ करनी होगी सराहन बरास्ता शिमला होकर।

शिमला से सराहन की दूरी लगभग 180 कि.मी. है। राह में पड़ेगा मनोरम शैलशहर नारकंडा। इससे कुछ आगे जाने पर शतद्रु नदी के किनारे रामपुर बुशहर है। नदी यहां पर कहीं उच्छल है तो कहीं शांत। देखकर ऐसा लगता है मानो कोई किशोरी तन्वी दोड़ी चली जा रही हो। रामपुर में देखने योग्य पद्‌म पैलेस है। बुशहर के राजा ने इसका निर्माण करवाया था। दीवार में म्यूरल चित्रकारी में मुगल स्थापत्य की छाप सतस्त दरबार हाल में दिखाई देती है- एक असाधारण शिल्प का नमूना। यहां 19वीं सदी का एक बौद्ध मंदिर भी है। अपरूप शिल्पकला का उदाहरण। रामपुर से आते समय वहां की बाहारी शॉल खरीदना न भूलें। हां, मोलभाव करना पड़ सकता है। रामपुर से कुछ दूरी पर स्थित है एक पौराणिक गांव निरमंड। यहां भगवान परशुराम रहा करते थे। उन्हीं को समर्पित एक कलात्मक मंदिर है। देख सकते हैं। मन को भाएगा।

रामपुर में कुछ समय बिताने के बाद सराहन की यात्रा पर हम चल पड़ते हैं। रामपुर से यह दूरी 40 कि.मी. की है। राह भी बहुत सुन्दर है। शिमला से 22 नं. राष्ट्रीय राजमार्ग पर कुफरी, फागु, नारकंडा रामपुर पारकर 180 कि.मी. दूर है तस्वीरमय सुन्दर सराहन। इसे किन्नौर का गेटवे भी कहा जाता है। आंखों में समाने लायक चारों ओर का अद्वितीय सौंदर्य। एक ओर हिमावृत पर्वतशिखर--- श्रीखंड व कार्तिक स्वामी, दूसरी ओर अपूर्व हरीतिमा। देखकर ऐसा लगता है जैसे प्रकृति ने अपना सर्वस्व यहां की वादी में उड़ेल दिया हो। 2165 मीटर की ऊंचाई पर स्थित है सराहन का मुख्य व विख्यात भीमाकाली मंदिर। लकड़ी और पत्थर से निर्मित। पैगोडा शैली में बना तीन तले का यह मंदिर हिंदू और बौद्ध स्थापत्य का बेजोड़ सम्मिश्रण है। काष्ठ शिल्प का अद्‌भुत प्रयोग पूरे मंदिर में दृष्टिगोचर होता है। दूसरी मंजिल में देवी भगवती की प्रतिमा और तीसरी मंजिल पर अष्टधातु की देवी भीमाकाली प्रतिष्ठित हैं। बुशहर राजाओं की कुलदेवी है मां भीमाकाली। मूर्ति लगभग दो सौ साल पुरानी है। मंदिर परिसर में रघुनाथ, शिव, भैरव, नरसिंह देवता के मंदिर भी हैं और साथ ही विद्यमान है ऊषा देवी। जनश्रुति है कि वाणासुर की कन्या ऊषा और श्रीकृष्ण के नाती अनिरुद्ध का प्रणय व विवाह यहीं सम्पन्न हुआ था। मंदिर प्रांगण में है एक चमत्कार म्यूजियम। मंदिर में चमड़े की वस्तु और कैमरा लेकर अंदर प्रवेश करने की मनाही है। यहां पर निकट ही देख सकते हैं एक आधुनिक पद्धति से बना स्टेडियम। आध कि.मी. की चढ़ाई चढ़कर देख सकते हैं एक पक्षी विहार केन्द्र भी। यहां मोनाल, ट्रैगोपन जैसे विलुप्तप्राय पक्षियों का प्रजनन और संरक्षण किया जाता है। इन पक्षियों के रंगों में एक विशेषता देखी जा सकती है। इसी स्थान से बहुत ही सुन्दर दिखता है श्रीखंड, गिसू, पिसू इत्यादि तुषार शृंग के रंगों का खेल भी। उपत्यका का एक अविस्मरणीय दृश्य यहां रोमांच पैदा करता है।

सराहन के आसपास अनेक सेबों के बगीचे हैं। खुबानी, अखरोट जैसे मेवों के खेत भी हैं। यहां के सेब बहुत मशहूर हैं। लाल-लाल और खाने में बेहद स्वादिष्ट। नवरात्र और दशहरे के समय यहां एक विराट उत्सव होता है। उस समय सराहन में गहमगहमी बढ़ जाती है। उत्साही व्यक्ति उस दौरान सरहान जाने के बारे में सोच सकते हैं। प्राकृतिक सौंदर्य के साथ-साथ उत्सव का भी लुत्फ उठा सकते हैं।

सराहन में दो दिन बिताकर सीधे चले आइए सांगला। हिमाचल प्रदेश के किन्नौर सर्किट का अन्यतम पर्यटन स्थल है यह। हिमाच्छादित पर्वत और हीर उपत्यका के मध्य सांगला जैसे

कुदरत की अपरूप रचना हो। उत्तर में किन्नर-कैलाश और दक्षिण में गढ़वाल पर्वतमाला की शिखर जैसे इस शैलशहर की पहरेदारी कर रहे हो। पास ही बहती है शतद्रु। एक ओर तस्वीर की तरह सुन्दर गांव और दूसरी ओर उच्च तुषारश्रृंग। देखकर ऐसा लगता है मानो किसी शिल्पकार ने सफेद कैनवास पर रंगों का क्लाइडोस्कोप रचा हो। यहां का प्राचीन किला भी दर्शनीय है। कई लोग इसे बस्पा उपत्यका का भी नाम देते हैं। सांगला की ऊंचाई लगभग 2680 मीटर है। सांगला का शाब्दिक अर्थ है- सांग अर्थात् उज्ज्वला और ला यानी दर्रा। अतः इसे आलोकोज्ज्वल गिरिवर्त्म कह सकते हैं। नाम से ही यहां की प्रकृति की शोभा का अंदाजा लगाया जा सकता है। शिमला से सांगला की दूरी प्रायः 226 किलोमीटर है। शिमला से रामपुर-ज्यूरी-वांगतु-रकछम के मध्य से गुजरता पथ। चारों ओर प्रकृति का बिखरा अपरूप सौंदर्य। रकछम से रास्ता दो हिस्सों मं बट जाता है- एक कल्पा की ओर और दूसरा सांगला की ओर। लौटते समय आप देख सकते हैं चीड़, फर, देवदार के वृक्षों का हरा भरा जंगल। चारों ओर पहाड़ और उपत्यका के मध्य आपकी नजरों में आएगा पीच, बादाम और सेबों के पेड़। एक सिलसिलेवार ये खड़े पेड़-पौधे मन मोह लेते हैं। शरद काल में सांगला के सेब के बगीचे लाल-लाल फलों से भर जाते हैं। यहां के सेब पूरे विश्व में विख्यात हैं। सांगला में लकड़ी के सभी घर तिब्बती स्थाप्त्य शैली में गढ़े हुए हैं। किन्हीं पुराने दिनों की तस्वीर सी लगती हैं ये। प्रत्येक घर की छत पर सफेद चिह्न दिखाई देंगे। यहां नदी के स्रोत को बांधकर छोटे डैम बनाए गए हैं। डैम के बगल में जलधारा के सन्निकट राजमाह, गेहूं, मक्की, आलू आदि की खेती होती है। सांगला के दर्शनीय स्थलों में मुख्य है कमरु फोर्ट। बस-स्टैंड से डेढ़ किमी की दूरी पर ऊंचे टीले पर कमरु गांव में यह दुर्ग है। पैदल या घोड़े पर चढ़कर वहां जाया जा सकता है। ऊंचे टीले के शिखर पर पांच मंजिला दुर्ग की गठन शैली कुछ हद तक टावर की तरह है। यहां एक म्यूजियम है जहां प्राचीन अस्त्र-शस्त्र और अन्य वस्तुएं संग्रह की गई हैं। दुर्ग के मध्य में ही काली मंदिर है। लौटते समय यहां उतराई पर गांव में बुद्ध और बद्रीनाथ मंदिर के दर्शन कर सकते हैं। सांगला के बाजार में आकर देख सकते हैं बेरीनाग का मंदिर। मंदिर की दीवार पर काष्ठ-शिल्प का नमूना है। यहां ट्राउट मछली अनुसंधान केन्द्र, जलविद्युत केन्द्र भी दर्शनीय है। सांगला से दिखाई देते हैं दो पर्वत शिखर- रूपन और सिगन। प्राकृतिक सौंदर्य में असाधारण सांगला के लोग सहज, सरल और अतिथि वत्सल हैं। सिर्फ सौंदर्य ही नहीं, इनसे मिलकर भी आपको अत्यन्त प्रसन्नता का अनुभव होगा। इस घाटी का भरपूर लाभ उठाना हो तो वर्षा ऋतु पश्चात शरद में उठाया जा सकता है। प्रकृति जैसे उस समय अपना छिपा हुआ सारा सौंदर्य पूरे परिवेश में उड़ेल देती है। लौटते समय बाजार से सूखे फल, सेब, नाशपाती, अखरोट आदि सस्ते में लेना न भूलें।

सांगला में लकड़ी के सभी घर तिब्बती स्थापत्य शैली में गढ़े हुए हैं। किन्हीं पुराने दिनों की तस्वीर सी लगती हैं ये। प्रत्येक घर की छत पर सफेद चिह्न दिखाई देंगे। यहां नदी के स्रोत को बांधकर छोटे डैम बनाए गए हैं। डैम के बगल में जलधारा के सन्निकट राजमाह, गेहूं, मक्की, आलू आदि की खेती होती है। सांगला के दर्शनीय स्थलों में मुख्य है कमरु फोर्ट।

सांगला होकर जा सकते हैं 3050 मीटर की ऊंचाई पर वर्धिष्णु ग्राम रकछम। यहां से 17 किमी दूर है यह गांव। यहां जाते समय राह में पहाड़ से उतरते झरने आकर्षण के केन्द्र हैं। साथ ही बह रही है बस्पा नदी। सुनहरे सेब और चमत्कार खेत यहां की शोभा में चार चांद लगाते हैं। रकछम से 11 किमी दूर है भारत-तिब्बत सीमांत का अंतिम गांव छितकुल। यहां कम ही लोग रहते हैं पर प्रकृति यहां अकृपण है। देखकर ऐसा लगता है जैसे किसी कलाकार का अद्वितीय कला-कौशल हो।

चीड़ के वनों को चीरकर सुन्दर भंगिमा में बढ़ी जा रही है बस्पा नदी। छितकुल में सर्वत्र शांति का साम्राज्य व्याप्त है। सेब के साथ-साथ जाफरानी चाय होती है संपूर्ण घाटी में। कालीमाता का मंदिर भी है यहां पर।

सांगला से 24 किमी दूर अब चलिए कल्पा की ओर। कैलाश का कल्पलोक कल्पा। 2759 मीटर की ऊंचाई पर स्थित किन्नौर जिले के इस रूपसी मुख्यालय को चारों ओर से हिमाच्छादित पर्वतों ने घेर रखा है। यहां से किन्नर-कैलाश के सुन्दर रूप को सहज ही देखा जा सकता है। किन्नर-कैलाश के पांव में कल्पा मानो शांति का नीड़ हो। सांगला से कल्पा की दूरी मात्र 51 कि.मी. है। एक-दो दिन यहां नहीं ठहरे तो यहां के सौंदर्य को पूर्णतः समेट नहीं पाएंगे। साथ ही समय निकालकर निकट के दो गांव भी देखे जा सकते हैं। पांगी गांव कल्पा 10 कि.मी. पर है। यहां एक आकर्षक बौद्ध गोम्पा और स्थानीय देवता के मंदिर हैं। सबसे बड़ी बात यह है कि यहां से किन्नर-कैलाश की पूरी रेंज देखी जा सकती है। कल्पा से भी कहीं अधिक स्पष्ट। कल्पा से रोघी गांव भी घूमा जा सकता है, दूरी मात्र 5 कि.मी.। यहां विष्णु और नारायण के दो मंदिर भी दर्शनीय हैं।

पूरे कल्पा में सेबों के बगीचे फैले हुए हैं। यहां के रसीले सेब जगतप्रसिद्ध हैं। इसके अलावा चेरी, चिलगोजा, अंगूर, खुबानी की भरपूर उपज होती हैं यहां पर। कल्पा के नीचे ही चीनी गांव की विशेषता यह है कि अधिकतर घर पुराने दिनों की लकड़ी और पत्थरों के बने हुए हैं। लोचाबा लाखांग नाम का एक बौद्ध गोम्पा भी दर्शनीय है। बगल में स्थापत्य का खूबसूरत नमूना नारायण-नागनी मंदिर भी देखा जा सकता है।

म. नं. 1859, सेक्टर 7-सी, चंडीगढ़-160 019,
मो. 94175 73357

आलेख

"संस्कार रहित जीवन वन है, संस्कारयुक्त जीवन उपवन है और शील सदाचार से शोभित जीवन नंदनवन है।"

सांस्कृतिक प्रदूषण

• शंकर लाल माहेश्वरी

मैं भारत की संस्कृति हूं। मैं मूल रूप से आध्यात्मिक, धार्मिक, नैतिक, सांस्कृतिक, सदाचार, कला और राजनीति की जननी कही जाती हूं। मैं सभ्यता के आंतरिक प्रभाव से परिपूर्ण हूं। विश्व के सर्वश्रेष्ठ विचारों और कथनों की नियामक हूं। मेरी सत्य के प्रति निष्ठा और असत्य के प्रति घृणा भाव रहा है। मैं रामायण और महाभारत की वाणी हूं। मेरा मूल स्वरूप वेदों और उपनिषदों में निहित है। मुझे गर्व है कि मैं ही गणित, ज्योतिष, विज्ञान, रसायन शास्त्र और नक्षत्र विज्ञान की प्रणेता हूं। महर्षि व्यास, वाल्मीकि, रामकृष्ण परमहंस, महर्षि अरविंद, कबीर, कौटिल्य तथा तुलसी दास आदि की जन्मदात्री मैं ही तो हूं। "सर्वे भवन्तु सुखीन' ही मेरा मूलमंत्र रहा है। अतिथि देवो भव!" के सिद्धांत का मैंने सदैव अनुसरण किया है। मेरा समाज से अन्योन्याश्रित सम्बंध है। यदि आप मेरा और समाज का अटूट संबंध देखना चाहें तो हमारे साहित्य का परायण कर सकते हैं। मेरी उदारता जगजाहिर है। अर्थ में त्याग, काम में संयम, धर्म में निष्ठा, गुरु का सम्मान, पारिवारिक जीवन की महत्ता, वर्ण व्यवस्था आश्रम जीवन और कर्म फल सिद्धांत को मैंने सर्वोपरि माना है। देवऋण, पितृऋण और ऋषिऋण से मुक्ति का संदेश मैंने ही दिया है। यह मेरे लिए गर्व की बात है कि देवता भी भारत भूमि पर ही अवतरित होना चाहते हैं। श्रमनिष्ठ जीवन जीना मैंने ही सिखाया है। विशेष रूप से मेरे आधारभूत तत्त्वों में मानवीय मूल्यों की शिक्षा, सहयोग और सहिष्णुता का बीजारोपण, शोषण से मुक्ति और जन कल्याण की भावना प्रमुख है। गुरुदेव रवीन्द्र नाथ ठाकुर ने मुझे अरण्य संस्कृति का नाम दिया है। मैं तो समाज की विविध साधनाओं की अंतिम परिणति हूं। लोग मुझे जाति, समाज और समुदाय तथा देश की आत्मा के रूप में सम्मान देते हैं।

महामंत्री चाणक्य ने मेरी मान्यताओं को पोषण प्रदान करते हुए नैतिकता और निष्ठा की महत्ता पर प्रकाश डालकर कहा है, "जहां कुल का प्रश्न हो वहां एक की उपेक्षा कर देनी चाहिए, जहां गांव का प्रश्न हो वहां कुल की उपेक्षा कर देनी चाहिए, जहां राष्ट्र का प्रश्न हो वहां गांव की उपेक्षा कर देनी चाहिए क्योंकि व्यक्ति से कुल और कुल से बड़ा है गांव तथा गांव से बड़ा है राष्ट्र।" जो व्यक्ति राष्ट्र के प्रति ईमानदार होता है वह गांव और कुल के प्रति स्वतः ही ईमानदार होता है। तपोवन में विराजित ऋषि-मुनियों का संरक्षण मुझे मिलता रहा है। मेरी समन्वय की भावना सदैव से रही है।

भारत देश में यूनानी, हूण, शक, फारसी, इस्लाम आदि बाहरी जातियों के आने से मेरे अस्तित्व पर संकट आया और बाद में पाश्चात्य संस्कृति से तो मैं अत्यधिक पीड़ित हो गई। मेरे मूल स्वरूप में काफी परिवर्तन आ गया। लोगों के खान-पान, रहन-सहन, व्यवहार, भाषा भाव, पहनावा और कामकाज में काफी गिरावट आ गई। आज पर्यावरण के विकृत स्वरूप से भारत ही नहीं समूचा विश्व प्रभावित हुआ है। जल प्रदूषण, वायु प्रदूषण, थल प्रदूषण, ध्वनि प्रदूषण, नाभिकीय प्रदूषण के बाद अब तो मेरा स्वरूप भी प्रदूषित हो गया है। अंग्रेज शासकों ने तो भारत देश में अपनी पैठ जमाने के लिए मेरा ही दुरुपयोग कर राज करने का सपना पूरा किया था। आज मेरे देश की अखंडता, एकता, राष्ट्रीयता और समरसता खतरे में पड़ गई है। राष्ट्र विरोधी तत्त्व अपने ही देश की विरासत को नष्ट कर रहे हैं। मेरा प्रभावशाली वाहन भाषा को माना जाता है। आज संस्कृत और हिंदी भाषा के प्रति लोगों की निष्ठाएं धूमिल होती जा रही हैं। नैतिकता, आस्था, निष्ठा, कर्तव्य परायणता, त्याग सहयोग, सम्मान, सदाशयता और शुभवृत्तियां धीरे-धीरे समाप्तप्राय होती जा रही हैं। मानवीय मूल्यों में गिरावट आ गई है। राजा राम के इस देश में ऐसे समाज कंटक पैदा हो गए हैं जो हमारी श्रेष्ठ परम्पराओं को धूल-धूसरित कर रहे हैं। ऋषि परम्पराओं और धर्म गुरुओं की सीख से जहां देशवासी त्याग तपस्या और नैतिक आचरण का पाठ पढ़ते रहे हैं, वे ही बाबा लोग पथभ्रष्ट होकर मेरी छवि को नष्ट करने में लगे हुए हैं।

कविता

सावधान

● के.एल. दीवान

शब्दों का
हथौड़ा बन जाना
दिल भारत मां का
शीशे सा टूट कर
चकनाचूर हो जाना।
शब्दों का
तेज छूरियां बन जाना
दिल
संवदेनशील जन-जन का
टुकड़ों में कट सा जाना।
शब्दों का
सर्प जहरीले बन जाना
दिल दुनिया भर में
मां टेरेसा का
खामोशी गोदी में
सो जाना।
शब्द
भारी भरकम हथौड़ा बन गए
शब्द तेज छूरियां बन गए
शब्द सर्प जहरीले बन गए
जब ऊंची चोटी से
आवाज आई
ये फुटपाथ पे सोने वाले
कुत्ते ही तो हैं
कुत्तों की मौत तो मरेंगे
सोने दो
मरने दो
गूंजी भटकी आवाजें
गूंजी बेरहम आवाजें
सुन जिनके
दिल मां धरती का
पागल-पागल हो उठा
सोच-समझ
खो गई-खो गई
हिचकियां भरते-भरते
उखड़ी-उखड़ी सांसों में
मां धरती
कह गई कवि से
संदेश मेरा
पहुंचा दो-पहुंचा दो
भटकी आवाजें तक
बेरहम आवाजों तक
जिसके सीने पर
खड़े तुम्हारे महल
चल रहे/ ये कारखाने
सज रहे/ ऐश घर
उसके सीने में
प्यार बड़ा है/ प्यार बड़ा है
फुटपाथ पे
सोने वालों के लिए भी
इनसान हो/ इनसान सी
बात करो/ घात मत करो
याद रखो
घड़ा भरते देर न लागे
सावधान-सावधान!

ज्ञानोदय अकादमी, 8-निर्मला छावनी, हरिद्वार, मो. 0 97562 58731

कविता

कलियुगीन फेरा

● पूर्ण चन्द कौशल

दिन-दिहाड़े
हो गया अंधेरा
मानव मन पर
लग गया
धन दौलत का डेरा।
अवैध संचित धन
जा रहा है विदेश
वापिस लाने का
मिल रहा है संदेश।
देखो कलियुग का फेरा
सब कुछ है मेरा-मेरा।
मानव हो गए,
लहू के प्यासे
जंगल नदी में
फेंक देते लाशें।
पुत्र मोहपाश में बंधे
वे मां-बाप
करते भ्रूण हत्या
कमाते पाप।
वृद्ध माता-पिता का सहारा संतान
अकेला भटकाते नौजवान
चटक-भटक का जमाना
अहंकार, क्रोध, लोभ, काम, लालच,
का रहा न ठिकाना।
धर्म-जाति-पांति का बोलबाला।



सेवानिवृत्त प्रवक्ता, गांव-पत्रालय मांगू, तहसील अर्की, जिला सोलन, हिमाचल प्रदेश-171 102, मो. 0 98161 35066

हमारे संचार साधन जो जन शिक्षा, मनोरंजन और प्रचार-प्रसार के साधन हैं, आज पश्चिमी चैनलों के प्रभाव से हमारी अस्मिता को खतरा पैदा हो गया है। व्यक्ति संवेदनशून्य हो गया है। प्रेम, उदारता, सहयोग, सहायता के भाव तिरोहित हो गए हैं। विश्व की आर्थिक गतिविधियों का दुष्प्रभाव भी हमें झेलना पड़ रहा है। नई पीढ़ी का भविष्य अंधकार में है। उसके पास न तो कोई मानदंड है और न कोई चिंतन। वह ऐसी नाव में सवार है जहां पतवार तो है किंतु उसे खेवनहार नहीं।

भौतिकवाद आध्यात्मिकता के लिए खतरा बन गया है। व्यक्ति का व्यक्ति के प्रति लगाव व सम्मान समाप्त हो गया है। ग्रामवासिनी भारतभूमि से श्रम साधना समाप्त हो गई है। राष्ट्रीय मूल्यों के प्रति सजगता का अभाव है।

आइए! मेरी पुरातन छवि और गौरव को पुनर्जीवित कर विश्व गुरु के रूप में मेरे धरा धाम को धन्य करें। संस्कार रहित जीवन वन है, संस्कारयुक्त जीवन उपवन है और शील सदाचार से शोभित जीवन नन्दनवन है।

संदर्भ : शब्द साक्षी है।

पूर्व जिला शिक्षा अधिकारी, पोस्ट आगूंचा, जिला भीलवाड़ा, राजस्थान, सम्पर्क : 09214581610

आलेख

लाहुल : हिन्दू और बौद्ध परम्परा का समवाय

● तुलसी रमण

(गतांक से आगे)

दूसरी बात यह कि सामंती समय में जो देवी-देवता शासक के कुलदेव या कुलदेवी की मान्यता पा लेते थे वे सारी प्रजा के लिए भी पूज्य हो जाते थे। त्रिलोकनाथ और मृकुला देवी दोनों के निर्माण और पूजा परम्परा में राणा या राजा के संदर्भ निश्चित रूप से जुड़े हैं। इसलिए भी इन दोनों पूजा-स्थलों में हर समुदाय की प्रजा के शामिल होने की परम्परा बनी है। तीसरी महत्त्वपूर्ण बात इन पश्चिम हिमालयी क्षेत्रों को लेकर हेरमन गोएत्स के इस कथन से निकलती है कि 'यहाँ गडरिये-कृषक, तिब्बती-भारतीय, लामा-हिन्दू एक-दूसरे से जूझते प्रतीत होते हैं। राजनैतिक दृष्टिकोण से पिछड़ी परन्तु खूबसूरत, इन घाटियों का स्वरूप समय-समय पर बदलता रहा है, क्योंकि मध्य एशिया के घुड़सवारों द्वारा इन्हें अनेक बार रौंदा गया और उतनी ही बार भारतीय कृषकों, व्यापारियों, राजपूतों तथा साधु-संतों द्वारा इन्हें पुनः आबाद किया जाता रहा।'[9] कुछ इन कारणों से ही ऐसी स्थितियाँ बनी प्रतीत होती हैं कि त्रिलोकनाथ में मूर्ति अवलोकितेश्वर की है, हिन्दू इसी को शिव मानते हैं और मृकुला देवी में मूर्ति महिषासुर मर्दिनी की है, बौद्ध उसे ही देवी वज्रवराही कहते हैं। इसी के साथ इन दोनों मंदिरों की स्थापत्य कला में भी दोनों परम्पराओं का सम्मिश्रण हुआ है। उदयपुर के मृकुला मंदिर में हिन्दू तथा बौद्ध परम्पराओं का समन्वय मिथक चित्रण के स्तर पर भी हुआ है। इसमें रामायण, महाभारत तथा दशावतार आदि के दृश्यों के साथ भगवान बुद्ध के जीवन चरित को भी काष्ठ चित्रों में उकेरा गया है। इस काष्ठ कला में दोनों परम्पराओं के एक साथ मिथक चित्रण के पीछे इसके निर्माता शासक या काष्ठ कलाकार का सोचा-समझा प्रयास भी हो सकता है। अंततः हिन्दू-बौद्ध संस्कृति के इस समवाय में जनजातीय संस्कृति की सहज प्रवृत्ति भी रूपायित हुई है।

मृकुला मंदिर के निर्माण को लेकर एक अनुश्रुति यह भी है कि इसका निर्माण उसी वास्तु शिल्पी ने किया है जिसने मनाली में हिरमा या हिड़मा मंदिर बनाया था। हेरमन गोएत्स का भी मत है कि मृकुला मंदिर के अतिरिक्त स्तम्भों, द्वारपाल की प्रतिमाओं, वातायन दिलों और छत के आधारक पादांगों का निर्माण उसी शिल्पी ने किया है, जिसने मनाली का हिड़मा मंदिर बनाया है। जनश्रुति के अनुसार कुल्लू के तत्कालीन राजा ने हिड़मा मंदिर तैयार हो जाने के बाद उस वास्तु शिल्पी का दायाँ हाथ काट लिया था, ताकि वह अन्यत्र ऐसा कला-कौशल न दिखा सके। लेकिन वह शिल्पी इतना दक्ष था कि उसने बाएँ हाथ से ही मृकुला मंदिर का काम भी कर दिखाया। इन मंदिरों की काष्ठ कला में कुछ समानताएँ स्पष्ट दिखाई देती हैं, लेकिन हाथ काटने सम्बन्धी घटना लोकानुश्रुति पर ही आधारित है।[10] इस तरह की घटनाएँ अतीत में अक्सर होती रही हैं, जब क्रूर शासकों ने कला के माध्यम से अपने राज्य की कीर्ति पताका फहराने के लिए सर्जक कलाकारों के हाथ-बाजू ही काट दिए। आगे चलकर ऐसे दृष्टांत कलाकार की ख्याति और शासक की कुख्याति दर्शाने के लिए जनश्रुतियों में बहुधा तथ्यहीन भी जोड़े जाने लगे। मगर मृकुला मंदिर की काष्ठकला उस कलाकार की प्रतिष्ठा को सार्थक करने में सक्षम है। यहाँ उसका कलाकर्म ही प्रमाण है। इसके लिए किसी अनुश्रुति के सहारे की आवश्यकता नहीं।

गुरु घंटा-पा यानी गुरु घंटाल

लाहुल की भागा नदी के बाएँ पार्श्व में गोज़ंग गाँव के ऊपर का शैल शिखर गुरु घंटापाद का तीर्थ स्थान है। प्राचीन नालंदा विश्वविद्यालय के आचार्य मतिसारश्री ने जब सिद्धत्व प्राप्त किया तो उनका नाम गुरु घंटा-पा हो गया था। उन्हीं से सम्बन्धित इस गुरु घंटा-पा विहार को स्थानीय लोग गुरु घंटाल या गुरु घंटार के नाम से जानते हैं। यह विहार चंद्र और भागा नदियों के तांदी संगम के ऊपर की ओर ढलान पर स्थित है। काष्ठ शिल्प, धार्मिक संकाय और लोक मान्यता के आधार पर यह लाहुल का एक महत्त्वपूर्ण सांस्कृतिक स्थल है। इस विहार तथा समुच्चय घंटा-पाद शैल को महासिद्ध ने गंधोला (ज्ञानोदय का सुगंधित स्थल) नाम दिया है। यह लाहुल में प्राचीनतम ध्यान स्थल माना जाता है। बौद्ध परम्परा में 'गंधोला' पवित्र तीर्थ के लिए संस्कृत नाम है।[11] इसी से मिलता निकटस्थ गाँव गोंधला है। कुछ विद्धानों गंधोला और गोंधला को एक ही मान लिया है।

घंटाल मठ की स्थापना को भी पद्मसंभव की लाहुल यात्रा

से जोड़ा जाता है, लेकिन इस यात्रा की तथ्यात्मक पुष्टि नहीं है। धार्मिक स्थल का महत्त्व स्थापित करने के लिए भी लोग ऐसी बातें निराधार चला देते हैं और अखबारों आदि में लिखने वाले ऐसी भ्रांतियों को आगे बढ़ाते हैं। इस मठ में आर्य अवलोकितेश्वर की संगमरमर से निर्मित शिरोभाग की पुरानी प्रतिमा है। इस प्रतिमा को कुछ पुराविदों ने त्रिलोकनाथ विहार की प्रतिमा का समकालीन मानते हुए उससे शैलीगत समानता के संकेत भी दिए हैं। इस मठ की लोक मान्यता से भी मालूम होता है कि उस समय यह ग्रंथालय-मठ पश्चिम हिमालयी क्षेत्रों में बौद्ध धर्म के प्रचार का एक प्रमुख केंद्र रहा होगा। परन्तु 18वीं सदी के उत्तरार्द्ध में यह ग्रंथालय-मठ भूकंप के कारण ध्वस्त हो गया था। उसके बाद इसकी पुरानी गरिमा और गतिविधियों में भी कमी आ गई। इस घटना को लेकर लाहुल में एक लोकगीत प्रचलित है, जिसमें इस विहार के नवनिर्माण की घटना वर्णित है। लोकगीत में वर्णन आता है कि घोशाल और तांदी गाँवों की फसल खराब हो गई तो दोनों गाँवों के लोगों ने एकत्र होकर इस बारे विचार किया। घोशाल, तांदी और बरगुल की तीनों कोठियों के नंबरदार भी इस संकट बैठक में शामिल हुए। लामा ने पोथी-पत्री बाँचकर फसल नष्ट होने का कारण गुरु घंटाल का कोप बताया। तभी तीनों नंबरदार तत्कालीन क्षेत्रीय प्रशासक नेगी हरिचंद के पास केलंग गए। उन्होंने लद्दाख के तग-ना मठ के प्रधान लामा टशी तम्फेल को पत्र लिखकर स्थिति से अवगत कराने के लिए दो आदमी भेजे। उसके बाद वास्तु विशेषज्ञ लामा टशी तम्फेल की देख-रेख में इस मठ का नवनिर्माण हुआ और सभी गाँवों की फसलें लहलहा उठीं।[12]

इस घटना से सिद्ध होता है कि गुरु घंटा-पा को स्थानीय लोगों ने एक ऐसे लोक देवता के रूप में स्वीकार कर लिया था, जिसके कोप से फसलें तबाह हो सकती हैं और फिर से प्रसन्न होने पर लहलहा सकती हैं। गुरु घंटा-पा को लेकर एक जनश्रुति यह भी है कि आचार्य मतिसारश्री सातवीं सदी में साधना करने लाहुल पहुँचे तो वह त्रिलोकनाथ से ऊपर वाले जंगल में साधनारत हुए। तभी स्थानीय जनता में उनकी व्यापक चर्चा होने लगी। उनकी महिमा जानकर स्थानीय सामंत ने उन्हें कई बार अपने आवास पर आमंत्रित किया, किन्तु सिद्धाचार्य ने संत-संन्यासी होकर इसे आचार के विरुद्ध मानकर आमंत्रण स्वीकार नहीं किया। सामंत ने क्षुब्ध होकर उनका शीलभंग करने के लिए षड्यंत्र रचकर एक सुंदर युवती को कई पकवानों और फल आदि के साथ उनके साधना स्थल पर भेजना शुरू किया। युवती के सेवाभाव और सौंदर्य को देखते हुए लम्बे समय के बाद वह साधक मोह में आ गए और उस धर्म-डाकिनी कन्या को उन्होंने अपनी साधना के अंग रूप में अपना लिया। उससे उनके एक पुत्र व एक पुत्री भी पैदा हो गए।

मुखिया ने यह सब जानकर ग्रामीणों के साथ मिलकर सिद्धाचार्य से बदला लेने का षड्यंत्र रचा। उन्हें सपरिवार ग्रामीणों के दर्शनार्थ आमंत्रित करके मुखिया ने नाटकीय ढंग से भरी सभा में उनका अपमान करना चाहा। उन्हें अतीत की याद दिलाते हुए अहसास कराया कि अब आपका वह संन्यास धर्म कहाँ गया। इस पर मुखिया के निर्देशानुसार ग्रामीणों ने सिद्धाचार्य का मज़ाक उड़ाते हुए तालियाँ भी बजा दीं। तभी महासिद्धाचार्य ने आत्म-विश्वास के साथ पहले पुत्र को पकड़ा, वह वज्र में परिणत हो गया। फिर पुत्री को पकड़ा, वह घंटी में परिणत हो गई। उसके बाद पत्नी को अंक में लेकर आकाश मार्ग से उड़कर वे इस मठवाले पर्वत पर आकर अंतर्धान हो गए। तभी से इस पर्वत का नाम घंटागिरि अर्थात ड्रिलबु-री पड़ा, जो अब तक प्रचलन में है।[13] मतिसारश्री की उपासना के परिणाम स्वरूप, तंत्राचार्य के रूप में उनकी सिद्धि को दर्शाने वाली यह अनुश्रुति जनसमुदाय में आस्था जगाने वाली है। किसी भी असाधारण पुरुष या घटना आदि को लेकर इस तरह की अनुश्रुतियाँ लोक में रची जाती रही हैं। लेकिन इस एक साधक के इर्द-गिर्द जिस तरह का आस्थामय वातावरण रहा होगा, उसका प्रभाव आज सदियों बाद भी लोकाचार में देखा जा सकता है; क्योंकि गुरु घंटा-पा और उनका तीर्थ स्थल अब लाहुल की संस्कृति के अभिन्न अंग बन चुके हैं।

उदयपुर के मृकुला मंदिर में हिन्दू तथा बौद्ध परम्पराओं का समन्वय मिथक चित्रण के स्तर पर भी हुआ है। इसमें रामायण, महाभारत तथा दशावतार आदि के दृश्यों के साथ भगवान बुद्ध के जीवन चरित को भी काष्ठ चित्रों में उकेरा गया है। इस काष्ठ कला में दोनों परम्पराओं के एक साथ मिथक चित्रण के पीछे इसके निर्माता शासक या काष्ठ कलाकार का सोचा-समझा प्रयास भी हो सकता है। अंततः हिन्दू-बौद्ध संस्कृति के इस समवाय में जनजातीय संस्कृति की सहज प्रवृत्ति भी रूपायित हुई है।

शशुर गोन्पा

शशुर शब्द का अर्थ सघन देवतरु वन-स्थल कहा जाता है। इसी आधार पर गाहर घाटी में केलंग से 3 कि.मी. की दूरी पर स्थित इस गोन्पा का नाम पड़ा है। यह चतुष्कोण भवन भोट वास्तुकला के अनुरूप निर्मित है। लाहुल का यह पुराना और सुंदर मठ यहाँ का प्रधान विहार भी है। करदंग, लपचम, प्यूकर, तयुल, बोकर, योरज़ङ (बेलिंग) मनिङ (गोंधला) आदि डुग्पा-कर्ग्युदपा सम्प्रदाय के मठ शशुर मठ के अधीन आते हैं। लाहुल में छोटे-बड़े लगभग पंद्रह मठ हैं। शशुर गोन्पा का प्रधान लामा इन्हीं मठों से चुनकर तीन वर्षों की अवधि के लिए नियुक्त

होता है। इस मठ में भिक्षु और भिक्षुणियाँ दोनों के लिए आवास की व्यवस्था है।

तिब्बत में शांतरक्षित और पद्मसंभव द्वारा स्थापित बौद्ध धर्म के ञिङ्-म-पा का लाहुली केंद्र शशुर गोन्पा था। तिब्बत पर मंगोलों के हमले से ञिङ-म-पा का गढ़ ध्वस्त हो गया। इसी कारण लाहुल में भी इस सम्प्रदाय का प्रचार-प्रसार शिथिल पड़ गया। इस बीच 17वीं शताब्दी में जंस्कर के राज-परिवार से प्रव्रजित युवा लामा देव-ग्य-छो धर्म प्रचारक के रूप में लाहुल आया। उसने तिब्बत में लामा मरपा (1012-1057 ई.) द्वारा प्रवर्तित कर्ग्युद-पा बौद्ध सम्प्रदाय का प्रचार आरंभ किया। समय के साथ शशुर गोन्पा इस सम्प्रदाय का मुख्य केंद्र बन गया और अब तक है। शशुर गोन्पा में श्रावण शुक्ल दशमी को 'छेचु' का मेला लगता है। छेचु का अर्थ ही दशमी तिथि है। इस प्रसिद्ध मेले के अवसर पर लामागण बौद्ध वाद्यों की धुनों पर कई घंटों तक नृत्य करते हैं। मुखौटे पहनकर किया जाने वाला यह नृत्य इस मेले का विशेष आकर्षण होता है। शांत और रौद्र इष्टदेवों के मुखौटे धारण करके अनेक पुरातन कथानकों पर आधारित नाट्याभिनय भी होता है। गोन्पा के प्रधान लामा की अध्यक्षता में, बौद्धमत के घोर विरोधी तिब्बती शासक लङ दर्मा को मार डालने की घटना पर आधारित नाटिका को भी लामा इस मेले के अवसर पर प्रस्तुत करते हैं। इस तरह यह 'छेचु' मेला धर्म विरोधी शासक के अंत की स्मृति में विशेष रूप से आयोजित होता है। इस 'छेचु' मेले में लाहुल के विभिन्न समुदायों के लोग विशेष रुचि से भाग लेते हैं।

करदंग गोन्पा

लाहुल के मुख्यालय के ठीक सामने करदंग गोन्पा दिखाई देता है। भागा नदी के दक्षिण तट पर स्थित करदंग गाँव के ऊपर की ढलान पर यह गोन्पा समुद्रतल से 11,500 फुट की ऊँचाई पर स्थापित है। यह देखने में तो केलंग के बिल्कुल निकट लगता है, लेकिन पैदल जाने-आने में नदी के दोनों तरफ की उतराई-चढ़ाई काफी समय ले लेती है।

करदंग मठ की स्थापना करीब नौ सदियों पहले हो चुकी थी। सन् 1912 तक यह एक छोटे साधना केंद्र के रूप में ही रहा। लेकिन सन् 1912 में लामा नोरबू द्वारा इसका जीर्णोद्धार किया गया और अब इसकी गणना लाहुल के महत्त्वपूर्ण मठों में होती है, क्योंकि अब यह विहार सबसे उन्नत और समृद्ध माना जाता है। इसमें भिक्षुओं की संख्या भी अधिक है। इस गोन्पा के नवनिर्माण और इसे वैभवशाली बनाने का श्रेय लामा नोरबू को जाता है, जिनका जन्म सन् 1881 में इसी करदंग गाँव में हुआ था। उन्होंने तिब्बत के दूरस्थ खम (पूर्वी तिब्बत) प्रदेश में बौद्ध धर्म की शिक्षा ग्रहण की और उसके बाद प्रख्यात सिद्धाचार्य शाक्यश्री से वहीं अध्यात्म ज्ञान प्राप्त किया।

पहले करदंग गोन्पा कर्ग्युद-पा की उपशाखा ल्हो-डुग-पा को समर्पित था। लामा नोरबू के ञिङ-म-पा में दीक्षित होने के फलस्वरूप इस मठ की पूजा-अर्चना के विधान में भी कुछ जुङ-डुग-पा के विधि-विधान का समावेश हो गया। बुद्ध और बोधिसत्वों की प्रतिमाओं के अतिरिक्त सिद्धाचार्य शाक्यश्री की भव्य मूर्ति भी इसमें स्थापित की गई। लामा नोरबू के प्रयासों से ही इस मठ में भिक्षुसंघ की स्थापना हुई। उन्होंने पाँच अन्य भिक्षुओं को साथ ले जाकर पहले खम में स्वयं भिक्षु-दीक्षा ग्रहण की। उसके बाद करदंग गोन्पा में भी भिक्षु-दीक्षा की परम्परा प्रारम्भ कर दी। इस मठ में अब नए दीक्षित भिक्षुओं के लिए मठीय शिक्षा देने की व्यवस्था भी है और यहाँ विनयधर भिक्षु निवास करते हैं। करदंग गाँव के ही निवासी लामा कुंगा भी लामा नोरबू के गुरुभाई थे। उन्होंने भी सिद्धाचार्य शाक्यश्री से शिक्षा ग्रहण की थी। सन् 1946 में 65 वर्ष की आयु में लामा नोरबू के देहांत के बाद लामा कुंगा ने ही करदंग गोन्पा के मुख्य लामा का दायित्व संभाल लिया था। अब करदंग गाँव के ही निवासी पलज़ोर मेमे इस मठ के प्रभारी लामा हैं।

हिन्दू परम्परा

लाहुल में बौद्ध धर्म के अनुयायी अधिकांश मंगोल मूल के लोग हैं; जबकि हिन्दू परम्परा को चलाए रखने वाले आर्यवंशी हैं। क्योंकि आर्यवंशी लोगों की सर्वाधिक आबादी पट्टन घाटी में है, इसलिए हिन्दू धर्म का प्रभाव भी इसी क्षेत्र में सबसे अधिक है। हिमाचल प्रदेश में हिन्दू समुदाय के प्रमुख देवता शिव हैं। यहाँ के अनेक लोक देवता भी शिव के उपासक या उनके सहायक देवता माने जाते हैं। शिव की पूजा का सबसे अधिक प्रचलन लिंग रूप में है और इसके अतिरिक्त शिव की मूर्तियाँ भी अनेक मंदिरों में स्थापित हैं। यहाँ लोकदेवता के विभिन्न रूपों में महादेव की पूजा-अर्चना का चलन है। शिवरात्रि के अवसर पर गोबर, आटे या मिट्टी से निर्मित शिव-परिवार की लोक विधि से पूजा होती है।

लाहुल की चंद्रभागा घाटी में हिन्दू धर्मावलंबियों का समाज होने के कारण प्रारंभ से ही शिवपूजा का चलन रहा है। शिवलिंग की पूजा के प्राचीन साक्ष्य इस घाटी में पर्याप्त मिलते हैं। मेलिंग, किशोरी और नालडा गाँवों में सबसे पुराने शिवलिंग हैं। यहाँ जलाभिषेक की बजाय शिवलिंग पर तेल लेपन किया जाता है। करीब दो दशक पहले इस घाटी के शांशा गाँव में एक मकान की नींव खोदते हुए कई शिवलिंग एक साथ मिले थे। इस क्षेत्र में त्रिलोकनाथ के प्राचीन मंदिर के साथ अनेक स्थानों पर शिव के छोटे देहरे पाए जाते हैं, जिनमें लिंग की स्थापना है या किसी खड़े आकार के अनगढ़ प्रस्तर को ही पूजा के लिए स्थापित किया गया है। लाहुल के अतीत की चर्चा करते हुए फ्रेंके ने लिखा है कि यहाँ का सबसे पुराना धर्म संभवत: लिंग और नाग

पूजा का था—ये दोनों सूर्य और जल की सर्जनात्मक शक्ति का प्रतिनिधित्व करते हैं। लिंग पूजा की मूल प्रथा में लिंगाकार अनगढ़ पत्थर को किसी छोटे वन या ग्राम-मंदिर के द्वार के पार्श्व में रखकर पूजा जाता था और इसका दूसरा रूप आधुनिक हिन्दू लिंग पूजा है। पुरानी किस्म के प्रस्तर लिंगों के ऊपर तेल या मक्खन पोता हुआ पाया जाता है और आधुनिक शिवलिंगों का जल से स्नान कराया जाता है। पुराने ग्राम-मंदिर छोटे देहरे के आकार में तख्तों की ढलानदार छतवाले होते हैं, जिनकी छतों के शीर्ष पर भेड़ के सिर की आकृति बनी होती है। ये मंदिर यहाँ की प्राचीन सभ्यता के प्रतीक हैं।[14]

शिव के सहायक देवता केलिंग का एक देहरा लोट गाँव में है। इसे 1950 के आसपास शरारती लड़कों ने नष्ट कर दिया था। इस देहरे की अनेक काष्ठ-कृतियाँ बच्चों ने सर्दी के दिनों में जला दी थीं। लेकिन 1979 में भारी हिमस्खलन की विनाशकारी घटना के बाद यह देहरा फिर से निर्मित कर लिया गया था।[15] दुर्घटना के बाद इस देहरे के नवनिर्माण से साबित होता है कि लोगों ने भू-स्खलन का कारण केलिंग देवता का प्रकोप माना होगा, तभी युवकों द्वारा देहरे को नष्ट करने की भूल का सुधार सयाने लोगों ने नया देहरा बनावाकर किया होगा।

पट्टन घाटी में शिव की उपासना का प्रचलन बनाए रखने में मणिमहेश के सान्निध्य का भी योग है। जुलाई के महीने में प्रतिवर्ष दूर-दराज से लोग पारम्परिक मणिमेहश यात्रा में भाग लेने के लिए जाते हैं। लाहुल की पट्टन घाटी से मणिमहेश बहुत दूर नहीं है, इसलिए चम्बा-लाहुल और पट्टन के हिन्दू और बौद्ध इस यात्रा में बड़ी संख्या में शामिल होते हैं। वैसे भी भरमौर के गद्दियों और लाहुल के लोगों का पुराना सम्बन्ध रहा है। गर्मियों में गद्दी अपने धण (भेड़-बकरियों) को चराने के लिए लाहुल की चरागाहों में ले आते हैं और यहीं 'थाच' जमाकर मैत्री का सम्बन्ध बनता है। इस रिश्ते के कारण गद्दी अपने लाहुली मित्रों को मणिमहेश यात्रा का न्यौता देते ही हैं।

मणिमहेश यात्रा और शिव की उपासना पर केंद्रित हिन्दू-बौद्ध समन्वय अतीत की ही बात नहीं है, बल्कि वर्तमान में भी इसके जीवंत उदाहरण लाहुल के समाज-सांस्कृतिक परिदृश्य में मौजूद हैं। पट्टन घाटी के घोशाल गाँव के शिव-भक्त लला मेमे (लाल चंद दादा) लाहुल की पट्टन, तिनन और गाहर आदि घाटियों की आम जनता के लिए सम्माननीय रहे हैं। उनका देहांत वर्ष 2011 में ही हुआ है। लला मेमे शिव के 'गूर' थे। उनमें मणिमहेश के शिव प्रकट होते थे और वे जनसाधारण की समस्याओं और संकटों का निदान बताते थे। उनकी प्रेरणा से लाहुल की घाटियों के हिन्दू तथा बौद्ध दोनों समुदायों के लोग मणिमहेश यात्रा पर जाते थे। यात्रा की शुभकामना के लिए लोग पहले लला मेमे के पास करछोल (घी-सत्तू का पिंड) लेकर जाते और उनका आशीर्वाद लेकर ही मणिमहेश यात्रा करते थे। यात्रा से लौटने के बाद विभिन्न घाटियों के दोनों समुदायों के लोग अपने घरों में डड़ी जातर (मणिमहेश यात्रा सम्पन्न होने की पूजा) का आयोजन करते और लला मेमे को इस पूजा के लिए घर पर आमंत्रित करके, उनसे यात्रा के सुफल के वचन पूछते थे। मणिमहेश यात्रा, जातर पूजा तथा शिव भक्त लला मेमे से जुड़े इस समस्त उपक्रम में हिन्दू और बौद्ध में कभी कोई भेद नहीं रहा।

शिव की अद्यतन आस्था का ही परिणाम है कि लाहुल के लोगों ने शिव भक्त लला मेमे को सिद्ध योगी मान लिया है। बारिंग गाँव के श्रवण कुमार के अनुसार सन् 2012 में घोशाल गाँव में एक मंदिर का निर्माण करके उसमें लला मेमे की संगमरमर की मूर्ति स्थापित की गई है। यह एक नए पूजा स्थल की स्थापना का उदाहरण है। लला मेमे के नाम से लाहुली युवकों ने सामाजिक कार्यों के लिए संस्था का गठन भी कर लिया है।

शिव की अद्यतन आस्था का ही परिणाम है कि लाहुल के लोगों ने शिव भक्त लला मेमे को सिद्ध योगी मान लिया है। बारिंग गाँव के श्रवण कुमार के अनुसार सन् 2012 में घोशाल गाँव में एक मंदिर का निर्माण करके उसमें लला मेमे की संगमरमर की मूर्ति स्थापित की गई है। यह एक नए पूजा स्थल की स्थापना का उदाहरण है। लला मेमे के नाम से लाहुली युवकों ने सामाजिक कार्यों के लिए संस्था का गठन भी कर लिया है।

पट्टन घाटी के समाज में शिव की मान्यता के अनेक परम्परागत साक्ष्य मिलते हैं। शिवरात्रि के दिन यहाँ के लोग विशेष प्रकार का चकमक पत्थर लाकर उसके टुकड़े करते हैं। उन्हें एक थाली में सजाकर घर के बाहर धूप, जल से उनकी पूजा करके अभिषेक करते हैं। फिर उन्हें घर के भीतर लाकर, प्रत्येक सदस्य के सिर पर एक-एक टुकड़ा रख देते हैं। इस पत्थर को 'शिव रग' कहा जाता है। यह एक तरह से शिव पिंडी को सिर पर धारण करना है। शिवरात्रि के दिन की यह प्रक्रिया वास्तव में शिव का आश्रय या वरदान लेने जैसी ही प्रतीत होती है।

गाहर घाटी के गोज़ंग गाँव में एक लोहार परिवार में शिव की विशेष उपासना की प्रतिष्ठा रही है। उस परिवार के प्रमुख सदस्य में प्रकट होकर शिवजी परदेस गए लोगों का हालचाल बताया करते थे। इसके लिए भी एक विशेष विधि होती थी। संचार साधनों के अभाववाले उस ज़माने में जिन लोगों ने अपने परदेस गए सम्बन्धियों का हाल जानना होता था, वे आटे का एक टंगरोल (जंगली बकरा) बनाकर लाते थे। ऐसे सारे टंगरोल एक

कविता

हिमालय

● सूर्य प्रकाश मिश्र



सच समझना आसान है
पर सच पर चलना
आसान नहीं होता
लेकिन सच पर चलने वाला भी
मानव ही होता है
कोई पाषाण नहीं होता
जो प्रतिकूल परिस्थितियों में भी
स्थिर होता है
वह साधारण मानव नहीं
युधिष्ठिर होता है
हिमालय तक पहुंचने में
हर साथी छूट जाता है
और कुछ रहे ना रहे
स्वत्व रह जाता है
और मानव अपनी नजरों में
हिमालय जैसा उठ जाता है
हिमालय जैसे उठना
सभी चाहते हैं
पर हिमालय कैसे मिलेगा
बिना सच अपनाए
या बिना उसकी तरफ
कदम बढ़ाए।

बी 23/42, ए. के., वसंत कटरा गांधी चौक, खोजवां (दुर्गाकुंड), वाराणसी, उत्तर प्रदेश-221 001, मो. 098398 88743

परात में एकत्र करके वह शिव उपासक उन्हें हवा में उछालता था। उसके बाद जिसका टंगरोल नीचे आकर सीधा पड़ जाए, उसका सम्बन्धी स्वस्थ समझा जाता था और जिसका टंगरोल लुढ़क जाए तो उसका सम्बन्धी संकट में समझा जाता था।[16] छेरिंग दोरजे का कहना है कि शिव उपासक का वह परिवार मंडी से निकलकर पहले कुल्लू में आ बसा था। उसके बाद लाहुल आकर गोज़ंग गाँव में वे लोग ज़मीन लेकर बैठ गए। वे मूलतः सुनार थे और लाहुल में बसने पर उनके रिश्ते लोहारों से हो गए। वे यहाँ शिवरात्रि मनाने लगे तो स्थानीय लोग भी देखने के लिए जाने लगे। तभी शिव उपासक से प्रश्न पूछने का चलन हुआ। गोज़ंग तथा आसपास के गाँवों में अब इनके ग्यारह परिवार हो गए हैं और शिवरात्रि का पारम्परिक त्योहार वे अब भी प्रत्येक घर में बारी-बारी से मनाते हैं। ये लोग अपने को कपूरवासी कहते हैं। पट्टन तथा कुछ अन्य क्षेत्रों में प्रत्येक परिवार का अपना निजी देवता भी होता है। लिंगाकार पाषाण खंड के रूप में यह देवता घर में सबसे ऊपर की छत में स्थापित होता है। विशेष तिथियों या पर्व-त्योहारों के अवसर पर इस गृह-देवता की पूजा-अर्चना होती है और कभी पशुबलि भी दी जाती है। इस तरह शैव-शाक्त परम्परा से जुड़े अनेक रीति-रिवाज़ पीढ़ियों से चलते आ रहे हैं, जिनमें से कुछ के अब तक अवशेष बचे हुए हैं और कुछ मान्यताएँ आज भी चलन में हैं। इस संदर्भ में यह तथ्य उल्लेखनीय है कि अनेक बौद्ध लोग भी लाहुल में शिव की पूजा-अर्चना करते हैं।

दयार-दुर्गा कालोनी, ढली, शिमला-171012
सम्पर्क : 0177-2647347, मो. 09418086986

संदर्भ

1. Ram Nath Sahni, Lahoul : The Mystery Land in the Himalayas, P. 236
2. Ibid, p. 237
3. अंजु भारद्वाज, 'त्रिलोकनाथ और अवलोकितेश्वर का धर्मस्थल', सोमसी अंक 85-86, पृ. 164
4. किशोरी लाल वैद्य, 'लाहुल का त्रिलोकनाथ मंदिर', विपाशा-अंक 68, पृ. 82-84
5. के. अंगरूप लाहुली, 'लाहुल-स्पीति के बौद्ध मंदिर', लाहुल-स्पीति : जीवन और संस्कृति, पृ. 104-5
6. हेरमन गोएत्स, 'विश्वकला के महान युगों की धरोहर', पांगी-भरमौर : जीवन और संस्कृति, पृ. 45
7. J.Ph.Vogal, Antiquities of Chamba State, Part I. p. 251
8. किशोरी लाल वैद्य, 'मृकुला देवी मंदिर', विपाशा-अंक 94, पृ. 95
9. हेरमन गोएत्स, पूर्वोक्तानुसार, पृ. 44
10. किशोरी लाल वैद्य, पूर्वोक्तानुसार, पृ. 96
11. Garsha-Heart Land of The Dakinies, Young Drukpa Association, Keylong, 2011
12. सतीश कुमार लोप्पा, गीत-अतीत, पृ. 26-27
13. के.अंगरूप लाहुली, 'घंटार गोन्पा का इतिवृत्त', चंद्रताल-अंक 21, पृ. 8-9
14. A.N. Francke, A History of Western Tibet, p. 188
15. Ram Nath Sahni, op. cit. pp. 237-38
16. डी.डी शर्मा, हिमालय की विस्मय भूमि : लाहुल, पृ. 166

आलेख

जालन्धर पीठ का आध्यात्मिक एवं धार्मिक महत्त्व

● अजय पाराशर

(गतांक से आगे)

प्रागैतिहासिक सृष्टि के उद्‌गम से ही कांगड़ा जनपद की जालन्धर पीठ एवं त्रिगर्त प्रदेश से अटूट सांस्कृतिक चेतना कायम रही है, जिसके परिणामस्वरूप त्रिगर्त प्रदेश कांगड़ा में किसी भी धार्मिक कृत्य के दौरान लिए जाने वाले पूर्व-संकल्प में जालन्धर पीठ के नामोच्चारण की निर्बाध परम्परा चली आ रही है। **संकल्पकर्ता 'ब्रह्माणे द्वितीय परार्धे श्री श्वेत वराह कल्पे जम्बू द्वीपे भरत खण्डे आर्यावर्तैक देशान्तर्गते जालन्धर पीठे'** उच्चारित करते हुए इस पावन क्षेत्र का यशस्वी निवासी होने की भावना के साथ गौरवान्वित महसूस करते चले आ रहे हैं। हस्तलिखित जन्मपत्रों या कुण्डिलियों में 'जालन्धर पीठ' लिखने की परम्परा और उसका नामोच्चारण भगवान के नाम की तरह कायम है, जिसे **'जालन्धर पीठे वज्रेश्वरी पुण्य क्षेत्रे ज्वालामुखी धाम अमुक ग्रामे निवसतः महाभाग्यवता अमुक गृहे पुत्रो जातः'** शब्दों में व्यक्त किया जाता है।

दुर्गा सप्तशती में भगवती दुर्गा के जिन नौ प्रमुख रूपों की चर्चा की गई है, जालन्धर पीठ को उनमें से आठ देवियों की निवास स्थली होने का गौरव प्राप्त है। इन देवियों में से वज्रेश्वरी को मध्यबिन्दु की देवी माना जाता है। अन्य प्रसिद्ध देवियां हैं- श्री ज्वालामुखी, चामुण्डा, गायत्री तथा तारा देवी।[16] दुर्भाग्य से गायत्री या सावित्री देवी का मन्दिर आधुनिक विकास की परिभाषाओं के तहत पौंग बांध में जलमग्न हो चुका है। इसके अतिरिक्त प्राचीन देव सृष्टि से सम्बद्ध, कश्यपेश्वर महादेव का मन्दिर भी जल समाधि ले चुका है। कश्यपेश्वर महादेव राजा श्रीकप, जो पंजाब के राजा शालवान के समकालीन थे, के कुलदेवता रहे हैं। श्रीकपपुरम्, जो अपभ्रंश होकर सरकापड़ा बना, उनकी राजधानी रही है। यह क्षेत्र भी अब जल समाधि ग्रहण कर चुका है। इस क्षेत्र में आज भी कई लोग सतियों के दर्शन होने के अनुभव कहते मिल जाते हैं।

जालन्धर पीठ पुनीत कर्मस्थली के रूप में भी ख्यात है। पौराणिक आख्यानों के अनुसार विश्वामित्र द्वारा ब्रह्मर्षि वशिष्ठ के सौ पुत्रों का वध कर किए जाने पर शोकग्रस्त वशिष्ठ ने व्यास किनारे स्थित कलेसर या कालेश्वर में वेदना से मुक्ति प्राप्त की थी। इससे अभिभूत होकर उन्होंने व्यास नदी को पाश-विमोचनी अर्थात् विपाशा की संज्ञा दी थी। इसी नदी के तटों तथा पार्श्ववर्तिनी भूमि पर अनेक ऋषियों ने अपने को तपा कर उमा-पार्वती की कृपा प्राप्त की है।[17]

जालन्धर पीठ के विभिन्न धार्मिक एवं आध्यात्मिक गुणों से परिपूर्ण होने के कारण मध्य तथा आधुनिक काल में अनेक साधकों ने कठोर तप और साधन से अपने आपको कुन्दन बनाया है। तुलसी राम नाथ, लट्ट निरंजन ब्रह्मचारी, रुद्रानन्द, घासीराम ब्रह्मचारी, निरंजन गिरि, गोविन्दा गिरि, भैया ब्रह्मचारी, छोटूनाथ, नरहरि नाथ, वनखंडी बाबा, गुद्दड़ बाबा, कृष्णानन्द, रुद्रानन्द, केशवानन्द, गोपालानन्द, घटाटोप, महात्मा शेषराम, स्वामी रामानन्द, स्वामी आत्मानन्द जैसे धारनी प्रभृत्ति योगाभ्यासियों ने कई सिद्धियां या आत्मतत्त्व प्राप्त कर इस भू-भाग की गरिमा को बढ़ाया है।[18] वर्तमान में बैजनाथ-बीड़ में महात्मा विशुद्धानन्द, पालमपुर के समीप बनाई वाले बाबा, तारा देवी मन्दिर, घुरकड़ी में लाल जी महाराज, कण्डबाड़ी स्थित महावतार आश्रम के योगी अमर ज्योति, लंघा देवी मन्दिर परिसर के स्वामी विज्ञानन्द, तपोवन-सिद्धबाड़ी में सुबोधानन्द आदि इस परम्परा को आगे बढ़ा रहे हैं।

इसके अतिरिक्त यह क्षेत्र नाग तथा यक्ष और कालान्तर में पीर, जैन तथा बौद्ध परम्पराओं का गवाह भी रहा है।

जालन्धर पीठ का धार्मिक महत्त्व

''जालन्धर पुराण'' तथा अन्य ग्रंथों में उपलब्ध वर्णन के अनुसार व्यास नदी के तट पर वीर शिरोमणि दैत्यराज जालन्धर को मारने के उपरान्त ब्रह्मा, विष्णु एवं महेश ने, उसकी अनन्य भक्ति एवं वीरोचित गुणों से प्रभावित होकर, जालन्धर क्षेत्र को पीठ का दर्जा प्रदान करते हुए कहा कि आज से इस क्षेत्र में सभी देवी-देवताओं का वास होगा। इस क्षेत्र में जो भी प्राणी अपने प्राणों का त्याग करेगा, उसे विष्णुलोक प्राप्त होगा। यह स्थान सभी प्रकार की समृद्धियों से परिपूर्ण होगा।

दैत्यराज जालन्धर की मृत्यु का समाचार मिलने पर शोकाकुल पतिव्रता पत्नी वृन्दा ने, श्रीहरि को अपने सतीत्व का हरण करने के कारण शाप देते हुए कहा था कि जिस तरह आपने

मेरे पति का रूप धारण कर मुझे ठगा है, उसी तरह जालन्धर क्षेत्र में मृत्यु को प्राप्त जीव आपका रूप धारण कर आपकी पत्नी को ठगेंगे। इतना कहते हुए अपने पति का ध्यान करती वृन्दा उनके लिए सजाई चिता में कूद कर भस्म हो गईं। वृन्दा ने चिता में कूदते समय महादेव को शाप दिया कि जिस शिव ने मेरे पति को छल से मारा है, उनकी पत्नी भी मेरी तरह आग में कूदकर अपने प्राणों का उत्सर्ग करेंगी और उन्हें पत्नी वियोग सहना पड़ेगा। वृन्दा ने ब्रह्मा को भी मूक रह कर, भगवान विष्णु तथा शिव द्वारा जालन्धर को छल से मारने में सहयोग देने के लिए, शापित करते हुए कहा कि उनके इस कृत्य के लिए आज से कहीं भी, कभी उनकी अग्रपूजा नहीं होगी।

वृंदा के इस शाप के प्रभाव से श्रीहरि निरन्तर उसके रूप लावण्य में खोए रहने से स्मृतिदोष से पीड़ित होकर, विक्षिप्तावस्था में इधर-उधर घूमने लगे। लक्ष्मी से उदासीन होकर, वह वृन्दा की चिताभस्म को अपने शरीर में मल कर श्मशान वास करने लगे। उन्हें इस प्रकार मर्यादाहीन देखकर इन्द्रादि देवगणों ने भगवती भवानी से इसका कारण और उनके इस अमर्यादित व्यवहार को दूर करने का उपाय पूछा। भगवती ने उपाय बताते हुए कहा कि वृन्दा का शाप ही, श्रीहरि की इस दशा का कारण है। इस अवस्था से मुक्ति पाने के लिए उन्हें जालन्धर क्षेत्र में ले जाना आवश्यक है। परन्तु इस कार्य के लिए किसी को वृन्दा का रूप धारण करना अनिवार्य था। इस निमित्त ब्रह्मा को पंचनद तीर्थ (पुष्कर) से बुलावा भेजा गया।

उनके आने पर देवी ने ब्रह्मा से कहा कि आप तीनों वीर जालन्धर की छल से की गई हत्या के कारण कलंकित हैं। उन्होंने तीनों को प्रायश्चित्तस्वरूप जालन्धर पीठ में जाकर बाणगंगा तथा चक्रकुण्ड में स्नान एवं मुण्डन और व्रत-उपवास की सलाह देते हुए, शक्तिमती विष्णुप्रिया भगवती की यथाशास्त्र पूजा-अर्चना के लिए कहा। देवी की आज्ञा मानते हुए ब्रह्मा ने जालन्धर क्षेत्र पहुंचकर देव पूजिता विमला भगवती की पांचों उपचारों से पूजा की तथा सर्वोत्तम विमला मंत्र का जाप किया। देवी के प्रसन्न होने पर उनके कथनानुसार, ब्रह्मा सती वृन्दा का रूप धारण कर, विक्षिप्त एवं स्मृतिरहित श्रीहरि के पास जा पहुंचे। उन्होंने विष्णु से कहा कि अगर वह उसे पाना चाहते हैं तो सिद्धपीठ जालन्धर क्षेत्र जाकर, भगवती त्रिपुरसुन्दरी की पूजा करें। उनके कथनानुसार वृन्दा के मोह से ग्रसित विष्णु, जालन्धर क्षेत्र में जाकर बाणगंगा में स्नान और मुण्डन के पश्चात् एक वर्ष तक निराहार व्रत करने एवं भगवती त्रिपुरा की भक्ति के कारण मोहमुक्त हो गए।

भगवान शिव भी दैत्यराज की छल से की गई हत्या में सम्मिलित थे। अतः उन्होंने भी इस हत्या के पाप से मुक्ति के लिए भगवती के आदेशानुसार, इस क्षेत्र में पहुंच कर भगवती महोग्रतारा की आराधना की।

इस प्रकार देवत्रय, वीर हत्या के प्रायश्चित्त से भार-मुक्त होकर अपने-अपने गंतव्य की ओर रवाना तो हो गए, परन्तु अभी पूरी तरह वे शाप के प्रभाव से मुक्त नहीं हो पाए थे।

'जालन्धर पुराणम्' में दिए गए वर्णन के अनुसार वृंदा के शाप के प्रभाव के कारण ही अपने पिता दक्ष के यज्ञ में महादेव को अपमानित किए जाने से क्षुब्ध होकर सती ने यज्ञकुण्ड में कूद कर अपने प्राण त्याग दिए थे। सती की दग्ध देह से उत्पन्न भगवती वज्रेश्वरी ने शिव के अपमान में सम्मिलित सती के पिता तथा देवगणों के अंग-भंग कर, उन्हें दण्डित किया था।

जालन्धर पीठ के विभिन्न धार्मिक एवं आध्यात्मिक गुणों से परिपूर्ण होने के कारण मध्य तथा आधुनिक काल में अनेक साधकों ने कठोर तप और साधन से अपने आपको कुन्दन बनाया है। तुलसी राम नाथ, लठ निरंजन ब्रह्मचारी, रुद्रानन्द, घासीराम ब्रह्मचारी, निरंजन गिरि, गोविन्दा गिरि, भैया ब्रह्मचारी, छोटूनाथ, नरहरि नाथ, वनखंडी बाबा, गुद्दड़ बाबा, कृष्णानन्द, रुद्रानन्द, केशवानन्द, गोपालानन्द, घटाटोप, महात्मा शेषराम, स्वामी रामानन्द, स्वामी आत्मानन्द जैसे धरनी प्रभृत्ति योगाभ्यासियों ने कई सिद्धियां या आत्मतत्त्व प्राप्त कर इस भू-भाग की गरिमा को बढ़ाया है।

प्रचलित मान्यताओं, जनश्रुतियों और 'जालन्धर पुराण' में उपलब्ध विवरण के अनुसार दक्ष प्रजापति द्वारा ब्रह्मा के सम्मुख यज्ञ करवाने की इच्छा व्यक्त करने पर उन्होंने दक्ष को जालन्धर क्षेत्र में यज्ञ करवाने की सलाह दी। दक्ष ने यज्ञ में सभी देवी-देवताओं को तो आमन्त्रित किया परन्तु अपनी पुत्री सती तथा दामाद शिव को, वृन्दा के श्राप के प्रभाव के कारण जान-बूझ कर बुलावा नहीं भेजा। भगवान शिव की मनाही के बावजूद सती अपने पिता के यज्ञ में बिना निमन्त्रण जा पहुंचीं। उन्हें इस तरह आया देख देव सभा में हड़कम्प मच गया। यज्ञ में अपने पति को अपमानित होते देख, स्वाभिमानी सती ने यज्ञकुण्ड में स्वयम् को भस्म कर, अपने प्राणों का बलिदान कर दिया। यज्ञाग्नि में गिरने से पूर्व उन्होंने कहा कि परम सती वृन्दा के प्रभाव के कारण मेरे वियोग से दुःखी मेरे पति, अपने शरीर पर मेरी देह की भस्म को मल कर यहां-वहां घूमते रहेंगे। जब तक वह इस जालन्धर क्षेत्र में आकर वीर जालन्धर की हत्या के कलंक से छुटकारे के लिए तप नहीं करेंगे, उनकी पूर्ण मुक्ति सम्भव नहीं।

इसी दौरान यज्ञाग्नि में देवी के भस्म हो रहे शरीर से वज्रेश्वरी नामक अतिप्रचण्ड भीषण नारीरूप आकृति प्रादुर्भूत हुई और उसने सम्पूर्ण यज्ञ को तहस-नहस कर डाला। वज्रेश्वरी ने शिव अपमानित यज्ञ में प्रतिभागी देवी-देवताओं को अपना निशाना बनाया। उसने देवी सरस्वती का नाक काट डाला, ब्रह्मा की आँखें

फोड़ दीं, सूर्य के दान्त तोड़ डाले, अग्निदेव की एक जिह्वा को छोड़कर, शेष छह काट दीं, धर्मराज को अण्डकोष खुजलाने पर अण्डकोष विहीन कर दिया तथा विष्णु की गोद में बैठे दक्ष का मुख बकरे सा बना दिया। प्रतिरोध करने पर श्रीहरि के सुदर्शन चक्र को उनके गले में डाल दिया। देवगणों की ऐसी दशा देखकर भयभीत इन्द्र मोर बनकर भागे और ऊंचे शिखर पर जाकर छिप गए। देवेन्द्र की यह दशा देखकर यज्ञपुरुष भी हिरण बनकर भागने वाले ही थे कि देवी ने उनका सिर काट डाला। उन्होंने सभी देवी-देवताओं को उनके अपराध के लिए यथा दंड दिया, किन्तु दक्षिणा के लोभी वशिष्ठादि ऋषियों को ब्राह्मण जानकर उनके अपराधी होने के बावजूद छोड़ दिया।[19]

भगवान शिव को जब सती के यज्ञकुण्ड में कूदने और उनकी मृत्यु का समाचार मिला तो उन्होंने अपने क्रोध से उत्पन्न वीरभद्र गण को नन्दी के साथ यज्ञ-स्थल पर भेज दिया। यज्ञस्थल पर पहुंच कर वीरभद्र ने देखा कि भगवती वज्रेश्वरी ने शिव को अपमानित होता देख, यज्ञ को तहस-नहस करने के बाद, वहां उपस्थित सभी देवी-देवताओं को पहले ही दण्डित कर दिया है। वज्रेश्वरी ने वीरभद्र से कहा कि अपनी स्वामिनी भगवती सती के वियोग को न सह सकने के कारण आग के समान प्रचण्ड होकर मैंने अपना कर्त्तव्य समझ कर, इन सभी देवी-देवताओं को उनके इस व्यवहार एवं अपराध के लिए शास्त्रसम्मत दण्ड दिया है। अब शिव के आदेश से आप जो चाहें निर्णय ले सकते हैं। यह सुनकर वीरभद्र ने कहा कि भगवान शिव का सारा कार्य तो उन्होंने पहले ही सम्पन्न कर डाला है। अब उनके करने के लिए कुछ भी शेष नहीं है। परन्तु उन्होंने देवी से शिव-निन्दकों की रक्षा में सतत् प्रयत्नशील रहे विष्णु, जो अपने ही सुदर्शनचक्र में फंसे पड़े थे, को बांधकर शिव के समक्ष प्रस्तुत करने की अनुमति मांगी।[20]

वीरभद्र द्वारा श्रीहरि को महादेव के सामने इस प्रकार बांध कर उपस्थित करने पर, शिव ने वीरभद्र से नाराज होकर उन्हें तत्काल पाशमुक्त करने का आदेश दिया। तत्पश्चात् शिव ने भगवान विष्णु से मुखातिब होकर कहा, ''हे हरे! सृष्टि में यज्ञ का विशेष महत्त्व है। यज्ञ का हर तरह से सम्मान होना चाहिए। मैंने क्रुद्ध होकर यज्ञ का ध्वंस किया है। अतः मैं राक्षसतुल्य हो गया हूँ। पातकी होने के कारण मुझे प्रायश्चित करना होगा।''[21]

इस कथनोपरान्त शिव सती की दग्ध देह को देखने के लिए जालन्धर क्षेत्र जा पहुंचे। सती के दग्ध शरीर को देखकर शिव मोहग्रस्त हो उठे। उन्हें इस प्रकार दुःखी देखकर भगवती वज्रेश्वरी ने शिव को सती की सार्वकालिक सत्ता से अवगत करवाया तथा उनके देह त्याग के लिए परम सती वृन्दा के शाप को कारण बताया। देवी के इन वचनों को सुनकर शिव मोहमुक्त हो गए। उन्हें अपने स्वाभाविक रूप में देखकर देवी से दण्डित सभी देवी-देवता शिव से प्रायश्चित्त स्वरूप प्रार्थना करने लगे।

महादेव ने कहा कि यज्ञाग्निकुण्ड में कूद रही सती को, न रोकने के लिए वे सभी देवगण प्रायश्चित्त के पात्र हैं, जिन्होंने उन्हें रोकने का प्रयास नहीं किया। परन्तु उनके बारम्बार प्रार्थना करने पर उन्होंने सभी दण्डितों एवं प्रायश्चित्त के इच्छुक देवगणों को, अपने कल्याण के लिए विभिन्न तीर्थस्थलों और जालन्धर पीठ में जाकर भगवती देवी की आराधना, जप-तप एवं पूजा-अर्चना के आदेश दिए।

महादेव ने कमलापति को द्वारिका जाकर, वहां मासपर्यन्त चान्द्रायणव्रत का पालन करने के निर्देश दिए। उन्होंने ब्रह्मा को अपने पाशान्त्यर्थ एवं सनेत्र होने के लिए तत्काल काशी जाकर एक मास तक भक्तिपूर्वक उपवास करने, ततः प्रयाग जाकर एक वर्षपर्यन्त एकान्तर व्रत का यथाशास्त्र पालन करने का आदेश भी दिया। भगवान शिव ने अग्निदेव को जिह्वा प्राप्ति के लिए एक वर्ष तक हरिद्वार में प्राजापात्य व्रत का पालन करने को कहा। शिव ने अण्डकोश-विहीन यमराज को अपने पापों के नाश के लिए तत्काल अयोध्या जाकर कृच्छ्र व्रत का पालन करने की आज्ञा दी। उन्होंने पूषन् देव को अपने पापों के निवारण के लिए अवन्ती जाने और भक्तिभाव से प्राजापत्य व्रत का पालन करने हेतु कहा। देवी सरस्वती को अपनी खोई नाक पाने के लिए मथुरा में कृच्छ्र व्रत का पालन करने के निर्देश दिए।[22]

उन्होंने प्रजापति दक्ष को तुरन्त काशी पहुंचने और निज पापनाशार्थ एक वर्ष तक कृच्छ्र व्रत का पालन करते हुए भक्तिपूर्वक लिंग की स्थापना करने को कहा।[23]

भगवान शिव ने इसके उपरान्त अपने सर्वसम्मत गण वीरभद्र को सभी क्षेत्रों में जाकर वहां गिरे सती के शरीर के विभिन्न दग्ध अंगों को लाने के आदेश देते हुए कहा कि ये अंग जहां भी गिरे हैं, वे सभी क्षेत्र पावन एवं पूजित होंगे तथा पुण्य स्थानों के रूप में प्रसिद्धि अर्जित करेंगे। देवी सती के अंग जिन क्षेत्रों में गिरे होंगे, वहां देव, असुर, नर एवं गंधर्व द्वारा उस अंग की पूजा होगी।[24] उनका आदेश सुनकर वीरभद्र उन्हें प्रणाम कर निर्दिष्ट स्थानों की ओर रवाना हो गए।

इसके पश्चात् महामना शिव ने स्वयम् चक्रतीर्थ पर स्नान किया और सती के लिए तिलोदक द्वारा तर्पण किया। शिव ने भगवान् विष्णु का यथाविधि पूजन किया और पातकान्त तक स्नान के बाद वहीं उनकी पूजा करते रहे।

शिव ने जैसे ही शुद्धि स्नान किया, मनस्वी हिमवान् के सन्देशवाहक के रूप में महामुनि नारद वहां आ पहुंचे। उन्होंने शिव से कहा कि आपकी पत्नी भगवती ने स्वयं ही अपने अक्षय होने की बात सबके समक्ष कह दी थी। वही अक्षया सती अब हिमवान् के घर में दिव्य कन्या रूप में अवतरित हो गई हैं। अब आप उसका यथाकाम वरण करें। शिव ने पातक अवधि का हवाला देकर तीन माह तक कोई भी मांगलिक कार्य करने से इन्कार कर दिया।

उन्होंने कहा, ''सपिण्डीकरण के पश्चात् भी सभी वर्णों के लिए पिता का वर्षपर्यन्त, माता का छरू मास तक, दादा-दादी तथा पत्नी का तीन मास तक और अन्य सगोत्रीय बन्धुवर्ग का एक मास तक अशौच होता है। अतरू मैं तीन मास तक अपने विवाह की चर्चा भी नहीं कर सकता।''[25]

ब्रह्मापुत्र नारद के जाने के उपरान्त शिव ने सोचा कि जिसके शाप से मेरी प्राणप्रिया का अन्त हुआ है, अब सबसे पहले मुझे उसको ही प्रसन्न करना चाहिए। उन्होंने जालन्धर पीठ के वृन्दावन में, जहां वृन्दा सती हुई थीं, उनकी आराधना आरम्भ कर दी। उनकी एक वर्ष की निरन्तर आराधना से प्रसन्न होकर सती ने वहां प्रकट होकर, उनसे देवदुर्लभ वर मांगने का आग्रह किया। शिव ने उनसे भविष्य में होने वाली अपनी पत्नी के अमरत्व का वरदान मांगा।

कुछ समयोपरान्त महादेव के आदेश से अपने पाप मिटाने के लिए भक्तिपूर्वक तीर्थ-यात्रा पर गए सभी देवता, उनकी शरण में वापिस लौट आए। उनकी प्रार्थना सुनकर भगवान शिव ने उन्हें जालन्धर पीठ के माहात्म्य के बारे में बताते हुए कहा, ''हे देवगण! इसी जालन्धर क्षेत्र में परमपूतात्मा जालन्धर दैत्य ने प्रचण्ड तप द्वारा प्रभु को प्रसन्न कर, अपने आपको (क्षेत्र) किया था। सभी पीठों में यह जालन्धर पीठ सर्वोत्तम है। अन्य तीर्थों की वर्ष भर यात्रा करने से जितना पुण्यार्जन होता है, उतना तो यहां मात्र एक दिन की यात्रा करने से मिल जाता है।

हे देववर्ग! जब तक जालन्धर पीठ की यात्रा न कर ली जाए तब तक अन्य तीर्थों की यात्रा का महत्व नहीं होता। इस पीठ में दिया दान, किया स्नान, जप, ब्रह्म भोज का आयोजन, देवार्चन, कुमारी-पूजन से अनन्त पुण्य प्राप्त होता है। इसलिए यहां तप, व्रत पूजादि सभी कुछ निरूसंकोच करने चाहिए।''[26]

शिवाज्ञा से इन्द्रादि सभी देवी-देवताओं ने जालन्धर क्षेत्र की चारों दिशाओं के द्वारों पर द्वारपालों की स्थापना की। पूर्व में महाकाल, पश्चिम में कुजेश्वर, उत्तर में नन्दिकेश्वर तथा दक्षिण में कालेश्वर की पूजा-अर्चना के उपरान्त यथाविधि स्थापना की गई।

इस दौरान वीरभद्र सती-स्तन को लेकर भगवान शिव के पास वापिस आ गए। उन्होंने महादेव को बताया कि सती के शेष अंगों के अतिरिक्त केवल यह बायां स्तन कहीं अन्यत्र गिरा हुआ था। शेष सभी अंग तीर्थों पर गिरे हुए थे। दूध का स्रोत होने के कारण, वह कुमार कार्तिकेय के पालण-पोषण के लिए उसे उठाकर ले आए थे। किन्तु इसी दौरान वह स्तन वीरभद्र के हाथ से फिसल कर नीचे गिर गया। भू-स्पर्श करते ही स्तन पथरा गया और रासायनिक प्रक्रिया से उसका रंग, ताम्बा मिले स्वर्ण जैसा हो गया। शिव ने उसी स्तन को चतुर्वर्ग की दात्री भगवती त्रिपुरा मान कर, ''विद्महे त्रिपुरां देवी'' आदि मंत्रों सहित अनेक प्रकार की सामग्री से उसकी पूजा-अर्चना की। उन्होंने त्रिपुर सुन्दरी से प्रलयकाल तक इसी स्थान पर निवास करते हुए, देवी सती के समान ही भक्तों की कामनाओं को पूरा करने का निवेदन किया। शिव ने स्वयम् भी पथराए स्तन को यात्रियों को प्रलय-पर्यन्त बादल के समान ही फल देने का वरदान दिया।

उनके इस कथन से प्रसन्न होकर, भगवती ने कहा कि जालन्धर के समान आज तक मेरा कोई प्रिय भक्त न हुआ है और न ही भविष्य में होगा। भू-मण्डल में ऐसे अनेक स्थान हैं जिनकी यात्रा से पाप मिट जाते हैं। परन्तु, यह जालन्धर क्षेत्र उनके पापों को मिटा कर उनके मनोरथ भी पूर्ण करता है। अब मैं भक्तों को सिद्धि लाभ प्रदान करने के लिए, सती के इसी पथराए स्तन में निवास करूंगी। किसी भी भक्त द्वारा आपसे स्थापित एवं पूजित सती स्तन की भक्ति भाव से पूजा करने पर, उसे मेरा और अन्य देवताओं की कृपा एवं वरदान का पात्र बनने से उसे सिद्धि प्राप्त होगी। हे शम्भो! मेरे भक्तों की चरण-धूलि से जो भी स्थान मण्डित होता है, वह पुण्यपीठ के समान पवित्र हो जाता है। फिर यह पीठ तो मेरे परमप्रिय भक्त जालन्धर के समूचे शरीर से आच्छादित है। जालन्धर क्षेत्र के इस माहात्म्य को जान कर ही, आपकी पत्नी सती ने यहां अपने पवित्र शरीर का त्याग किया था। इस क्षेत्र में अपने देह विसर्जन मात्र से वह हिमगिरि पर अवतार ले चुकी हैं। लोगों को अभी इस तथ्य का ज्ञान नहीं है कि वह सती ही हिमालय की कन्या के रूप में अवतरित हुई है। आपके सौभाग्य से वह आपको सुख प्रदान करेगी।[27]

उन्होंने वीरभद्र से भी उनकी प्रसन्नता के लिए सदा इसी पावन पीठ में निवास करने का आग्रह किया।

तत्पश्चात् भगवान शिव ने भी वीरभद्र को सम्बोधित करते हुए कहा, '' हे! भगवती त्रिपुरा-सुन्दरी की प्रसन्नता के पात्र, तुम परम पावन इस क्षेत्र में मेरे पावन और पुण्यवर्धक शिव-विग्रह की स्थापना करो। तुम्हारे नाम पर ही उसका नाम 'वीरभद्रेश्वर' होगा तथा मैं तुम्हारे स्थापित सर्वपालक शिवलिंग में निवास करुंगा।''[28]

वीरभद्रेश्वर ने उनके आदेशानुसार, भक्ति-भाव से शिवलिंग स्थापित कर, भगवान शिव से लोकहित में देवी भगवती के साथ प्रलय-पर्यन्त इसी विग्रह में निवास करने का आग्रह किया।

वीरभद्र द्वारा स्थापित शिवलिंग का अनुकरण करते हुए इन्द्रादि सभी देवताओं ने परम पवित्र एवं पापहारी जालन्धर पीठ में, अपने नामों से स्वयम् शिवलिंगों की स्थापना की।

जालन्धर क्षेत्र के माहात्मय को जानने के उपरान्त सभी देवताओं का नेतृत्व करते हुए विमलबुद्धि श्रीहरि ने शिव स्थापित सती स्तन पर एक वर्ष तक अनेक प्रकार की सामग्री से भगवती वज्रचण्डिका की यथाशास्त्र पूजा की। उन्होंने, ऋषि अगस्त्य द्वारा प्रेषित हृष्ट-पुष्ट सहस्त्रों पशुओं की बलि देने के उपरान्त भगवती की स्तुति करते हुए निवेदन किया :

प्रचण्डवीर्ययुक्तानां देवानां गर्वहारिके।[29]

वज्रेश्वरि महाभागे सती-साहाय्यकारिके।
वज्रखड्ग-धरे भीमे भीम-भीति-निवारके।।[30]

दैत्यचक्र-क्षय-कर-स्वचक्र त भूषणे।
वज्रेश्वरि महाभागे रमकर्मणि दक्षिणे।।[31]

मुखशीताशुं-बिम्बेन विनाशित-तमोवज्रे।
शीतांशुकलया युक्ते सीतासाहाय्कारिके।।[32]

पुण्डरीके क्षणे भव्ये भवदुरूख-निवारके।
सर्वदा कमल-प्रीते कमलासन-पूजित।।[33]

सुरेश-मारणस्य ऽऽशानाशिके नाकसाधिके।
सफले सर्वफलदेऽधर्मस्य फलभंजिके।।[34]

अजिह्ववीतिहव्यस्य जिह्वासंपातिके शुभे।
विलास-संयुते भव्ये भवसन्तोषदायिके।।[35]

द्विजिह्वभूषिते भव्ये भवसन्तोषसाधिके।
पूष-रदन विच्छेद-कारिके भक्तरक्षिके।।[36]

वज्रेश्वरी नमस्तुभ्यं सर्वमङ् गल-साधिके।
अकङ् कणो यथा स्त्रीणां मणिबन्धो न शोभते।।[37]

अचक्रस्तु तथा देवि मम हस्तोऽप्ययं शुभरू।
त्वङ् घ्रि-कमलाऽर्चातो दैत्यसंहारकरू स्वय्म।।[38]

हरार्चितरू सचक्रस्तु जायतां मम वै कररू।।[39]

''हे भगवति वज्रेश्वरी! आप अपने हाथ में वज्र और खड्ग धारण करती हैं। आप भक्तभय निवारणी हो, आप फलदात्री, पापनिवारिका और युद्ध-प्रवीणा हो। हे शिवप्रिया! आपने प्रचण्ड वीर्यशाली देवगण के गर्व को भी चूर-चूर कर, अग्रिदेव की जिह्वाओं को काट डाला है। स्वर्गदात्री, हे कमल नेत्रे भगवति! आप कमलप्रिया, चन्द्रकलाभूषिता, पुण्य-फलदा, भव्य विलासयुक्ता, शिव सन्तोष दायित्री, भवदुरूख निवारिका, चक्रधारिणी, स्वर्गदात्री और ब्रह्मा द्वारा पूजित हो। आपने इन्द्र-हत्या सम्बन्धी दैत्याशा और मुखचन्द्र की चमक में अंधकार को नष्ट किया है और यज्ञ-ध्वंस के समय सूर्य के भी दान्त तोड़ डाले हैं। आप शुभ कर्मों का फल तत्काल देती हैं और पाप के फल को नष्ट कर देती हैं। हे सौम्ये! जैसे स्त्रियों का कंकण-रहित मणिबंध शोभा नहीं देता, वैसे ही चक्ररहित मेरा हाथ भी। हे शुभे! आपके चरण-कमलों के पूजन से मेरा यह दैत्य संहारक एवं शिवस्तुत अचक्र हाथ सचक्र हो जाए।''[40]

यह स्तुति पूरी होते ही शत्रु-समूह-विनाशक एवं दिव्य सुदर्शन चक्र भगवान विष्णु के हाथ में प्रकट हो गया। इसके बाद प्रसन्नचित्त विष्णु भगवती को नमस्कार कर वीरभद्रेश्वर की पूजा करने चल दिए। उनकी पूजा के पश्चात् श्रीहरि ने भगवान शिव की पूजा-अर्चना की।

अग्रिदेव ने जब श्रीहरि को दिव्यचक्र युक्त देखा तो उन्होंने भी मोहशून्या भगवती धूमावती को प्रसन्न करने के लिए स्वस्थ बकरों और भैंसों की बलि सहित उनकी पूजा-अर्चना की और असंख्य ब्राह्मणों को दान दिया। अग्रिदेव की प्रार्थना स्वीकार होते ही अग्रिदेव पुनः रसास्वाद कर सकने योग्य जिह्वायुक्त हो गये। स्वाहापति अग्रिदेव की भक्ति से प्रसन्न देवी ने उन्हें श्रीवीरभद्रेश्वर की पूजा करने का निर्देश दिया। उन्होंने कहा कि जो उनकी पूजा से पूर्व वीरभद्र की पूजा करता है, वह पुण्य का भागी नहीं बन सकता। वीरभद्रेश्वर ने उनकी पूजा से प्रसन्न होकर, अग्रिदेव से ज्वालामुखी जा कर, भक्तिभाव और स्नेह से घी का हवन कर, दक्षिणा देने के निर्देश दिए।

स्वाहापति अग्निदेव ने ज्वालामुखी पहुंचकर यथाविधि स्नान के पश्चात् यथाशास्त्र भगवती की आराधना करते हुए, विभिन्न द्रव्यों से युक्त उन्हें तृप्त करने वाला हवन सम्पन्न किया। दानादि के अन्त में ब्राह्मणों के लिए भोज का आायोजन भी किया।

धर्मदेव ने, अग्रिदेव को जिह्वायुक्त देखकर सतीस्तन पर ही सर्वमंगला, भक्त कल्याणी एवं मुक्तिदात्री भगवती मातंगी की आराधना की। उन्होंने भी बलि, कुमारी-पूजन तथा दानादि से देवी को प्रसन्न किया और सांग हो गए।

दक्ष प्रजापति ने, भगवती के पूजन से धर्मदेव को सवृषण हुआ देख, सती स्तन पर विविध सामग्री से सर्ववन्दिता एवं ज्ञानदात्री भगवती बगुलामुखी की भक्ति के साथ पूजा की और बलियों, दानादि से उन्हें प्रसन्न किया। देवी ने दक्ष को जालन्धर क्षेत्र के प्रति उनके मन में निर्मल भक्ति उत्पन्न होने का वरदान देते हुए, अपना सर्वस्व त्याग कर भगवती के पार्थिव स्तन में निवासित वज्रेश्वरी, जयन्ती, रम्या ज्वालामुखी और अम्बिका की भक्तिपूर्वक पूजा करने का निर्देश दिया। उन्होंने यज्ञप्रिय दक्ष को वीरभद्रेश्वर की पूजा के साथ ज्वालामुखी जा कर यथाशास्त्र हवन करने एवं अन्य सभी देवियों की पूजा-अर्चना से प्रसन्न करने के आदेश दिए।

प्रजापति दक्ष के ज्वालामुखी गमनोपरान्त, ब्रह्मा ने भी सती स्तन पर भगवती भुवनेश्वरी की अनेक प्रकार की सामग्री से भक्तिपूर्वक पूजा की और अन्त में भक्तवरदा और विश्ववन्दिता की स्तुति की। देवी की अगाध भक्ति से ब्रह्मा सलोचन हो उठे।

सूर्य (पूषा) ने भी, ब्रह्मा को देवी प्रसाद से सलोचन हुआ देख कर, सती स्तन पर महादेवी छिन्नमस्ता की अनेक उपचारों तथा

बलियों से पूजा करते हुए उनका गुणगान किया। देवी की स्तुति समाप्त होते ही पूषा दान्तयुक्त हो गए।

देवेन्द्र ने उन्हें सदन्त देखकर, भगवती के स्तन पर सर्वपूजिता भैरवी की अनेक प्रकार की सामग्री, सुन्दर उपहारों और विभिन्न फूलों से पूजा करते हुए स्तुति की। स्तुति पूर्ण होते ही इन्द्र पहले की तरह निर्भय हो गए।

देवेन्द्र को विगत की भांति निर्भय देखकर सरस्वती ने भी सती स्तन पर कामनापूर्णी, शिवप्रिया और विश्ववन्दिता देवी कालिका की भक्ति के साथ पूजा एवं ततरू स्तुति की।

देवी स्तुति के दौरान ही उनकी नासिका को पूर्ववत् देख कर, वरूण देव ने भी सती स्तन पर अनेक प्रकार की सामग्री अर्पित करते हुए, धूप-दीप से कमला की भक्तिभाव से स्तुति एवं वन्दना की। उन्होंने कमला देवी से अपने विष समान अज्ञान और पाप का नाश करने का निवेदन किया।

सभी देवताओं की अगाध भक्ति से प्रसन्न होकर शिव ने सभी प्रकार के यज्ञों और प्रायश्चित से शुद्धित देवताओं को दक्ष महाराज के ध्वंस यज्ञ को सर्वथा आरम्भ करने का आदेश दिया। उन्होंने कहा कि अगर क्रोधाभिभूत होकर, उन्होंने यज्ञ के प्रति द्वेष न किया होता तो उनकी पत्नी कभी भी इस प्रकार दग्ध न हुई होती। यज्ञ पैदा करने वालों के जीवन में पदे-पदे विघ्न ही उत्पन्न होते रहते हैं। प्रारब्ध यज्ञ में विघ्न उत्पन्न करने वाला शीघ्र ही यज्ञ का बलि पशु बनता है और उसकी कीर्ति और सम्पत्ति दोनों नष्ट हो जाती हैं। अतः हे देवगण! अपना सदैव कल्याण चाहने वाले कभी यज्ञ में द्वेष न करें।

शास्त्रों में धर्म सम्मत यज्ञ ही वेद सम्मत है। चार वेद ही इसके चार सींग एवं ब्रह्मादन और प्रज्व्र्य, इसके दो सिर हैं। वैदिक सात छन्द ही इसके सात हाथ हैं। यह यज्ञपुरुष मंत्र, ब्राह्मण और कल्प, इन तीनों भागों से बंधा हुआ और सर्वत्र व्याप्त है। मानव समाज में इसके प्रवेश से अभिप्राय है कि प्रभु ने मानव समाज को भी यज्ञ करने का अधिकार मानव समाज को दे रखा है। मानव में मानवता, यज्ञ अर्थात् त्याग से ही संभव है। यह यज्ञ सर्वदा सर्वत्र व्याप्त है।

सभी देवी-देवताओं को भगवती कल्याणी की स्तुति करते देखकर वीरभद्रेश्वर ने भी सती स्तन पर शक्तिमती जगद्धात्री, नव-दुर्ग स्वरूपिणी एवं सूर्य-सन्निभा भगवती तारा की अनेक प्रकार की सामग्री, भेंट, दीप, धूप और विविध नैवेद्यों से पूजा और स्तुति की। उन्होंने देवी से स्वयम् को मोहपाश से मुक्त करवाने और अपने चरण-कमलों के ध्यान का वरदान प्रदान करने का निवेदन किया। शिव के आदेश के पश्चात् सभी देवताओं ने चक्र तीर्थ पर जाकर स्नान कर, उनके द्वारा स्थापित मांगलिक एवं पवित्र सती-स्तन पर भगवती वज्रेश्वरी की पूजा-अर्चना की।

वीरभद्र की भक्ति से प्रसन्न देवी भगवती ने उन्हें बताया कि उनकी पूजा के बाद कुमारी पूजन न करने से पूजा अधूरी रहती है, परन्तु इस पूजन से सभी देवताओं की अर्चना हो जाती है। उन्होंने कहा कि भगवान शिव के भय से संत्रस्त रतिप्रिय कामदेव ने इन्हीं कुमारियों के अंगों में छिपकर अपनी जान बचाई थी तथा आज तक भी वहीं विद्यमान हैं। अतरू भगवती की कृपा एवं अपना कल्याण चाहने वालों को यथाशास्त्र कुमारी पूजन करना चाहिए। पूजा में विघ्न से बचने के लिए रात को शिवा (गीदड़ी) अर्चन एकांत में ही करना चाहिए। बलि को गीदड़ियों द्वारा समय पर खाने से यात्रियों को तत्काल सिद्धि मिल जाती है। विलम्ब से स्वीकार किए जाने पर पूजा में विघ्न पैदा हो जाते हैं। अतः शीघ्र सिद्धि के इच्छुक भक्तों को श्रद्धा के साथ भक्तियुक्त होकर ही बलि देनी चाहिए।

वीरभद्र द्वारा भगवती निर्देशित विधियों से कुमारी पूजन किए जाने पर कल्याणी भगवती तारिणी ने प्रकट होकर कहा कि जालन्धर क्षेत्र में सिद्धा भगवती अंजनी भी जयन्ती आदि देवियों की तरह पूज्य हैं। अतः जो भक्त भगवती अंजनी की पूजा नहीं करता, उसकी अर्चना स्वीकार्य नहीं होती। हिमालय की ओपत्यका में विराजमान, मुक्तिदात्री अंजनी की अर्चना से ही हनुमान ने वीर बनकर समुद्र को लांघा था। यह सुनकर वीरभद्र ने ज्ञानदात्री और भक्तों की मायाहरिणी भगवती अंजनी की पूजा और स्तुति की।

वीरभद्रेश्वर की पूजा से प्रसन्न भगवती अंजनी ने वज्रेश्वरी द्वारा निर्जीव यज्ञ पुरुष को शास्त्र मयार्दानुसार जीवित करने के लिए कहा। देवी ने कहा कि भविष्य में पशु या मानवों में से कोई भी इसे न मार सके और सभी इसके प्रति सदय बनें। भगवती अंजनी की आज्ञा से वीरभद्र ने मृत यज्ञपुरुष को पुनः जीवित कर दिया। प्रभु कृपा से जीवित यज्ञपुरुष का आकार बड़ा विलक्षण एवं देहहीन होकर भी अपेक्षाकृत विशाल था। धर्मसम्मत यज्ञ के चार सींग, तीन पाद, दो सिर और सात हाथ थे। बलवान होने के बावजूद तीन स्थानों पर बंधा यज्ञ पुरुष शब्द कर रहा था। यह महान् देव मनुष्यों में प्रवेश कर गया।

शास्त्रों में धर्म सम्मत यज्ञ ही वेद सम्मत है। चार वेद ही इसके चार सींग एवं ब्रह्मादन और प्रज्व्र्य, इसके दो सिर हैं। वैदिक सात छन्द ही इसके सात हाथ हैं। यह यज्ञपुरुष मंत्र, ब्राह्मण और कल्प, इन तीनों भागों से बंधा हुआ और सर्वत्र व्याप्त है। मानव समाज में इसके प्रवेश से अभिप्राय है कि प्रभु ने मानव समाज को भी यज्ञ करने का अधिकार मानव समाज को दे रखा है। मानव में मानवता, यज्ञ अर्थात् त्याग से ही संभव है। यह यज्ञ सर्वदा सर्वत्र व्याप्त है। चारों दिशाएं इसके चार सींग और प्रातः, मध्याह्न एवं सायं, इसके तीन पैर हैं। दिन या उत्तराण और रात या दक्षिणायन,

इसके दो सींग हैं। सूर्य की सात किरणों से भासित यज्ञपुरुष के यही सात हाथ हैं। यह लोकत्रयरूप तीनों स्थानों से बंधा हुआ अर्थात् भूमिलोक, अन्तरिक्षलोक और द्युलोक, इन तीनों लोकों में व्याप्त होने से यह शब्दायमान भी है, वस्तुतरू यह तीनों लोकों में मनुष्य को याज्ञिक (त्यागमय) जीवन अपनाने के लिए प्रेरित कर रहा है।

वीरभद्र ने वृषभरूपी यज्ञ के पुनर्जीवित होने के पश्चात् देवी की आज्ञा से तत्काल हवन किया तथा ज्वालामुखी में दक्ष को सूचित किया। यज्ञप्रिय दक्ष तत्काल शिव-चरणों में आ गिरे और विनयपूर्ण शिष्टता से हाथ जोड़ कर बोले, ''हे शम्भो! मेरे जिस पाप से यज्ञ में विघ्न उत्पन्न हो गया था, उसके शमनार्थ मुझे क्या करना चाहिए, मुझे तत्काल बताने की कृपा करें ताकि आपकी तुष्टि के लिए मैं पुनः यज्ञ को यथाविधि सम्पन्न कर सकूं। हे पार्वतीप्रिय! सत्वसम्पन्न, मैं अपने हृदय से सत्य कह रहा हूं क्योंकि देवताओं के सामने तनिक सा झूठ बोलना शोभा नहीं देता।''[41]

दक्ष द्वारा शिव के अनुनय-विनय के दौरान आकाशवाणी हुई, ''हे हरे! ध्वस्त यज्ञ का एकमात्र कारण तुम ही तो हो। अब यज्ञ करने का अधिकार तुम्हें नहीं है, क्योंकि यज्ञ से बहिष्कृत हो। सपत्नीक गृहस्थ को ही यज्ञ करने का अधिकार है और तुम पत्नीविहीन हो। अब चुपचाप आँखें मूंद करके यज्ञ सम्पादन में यज्ञकर्ता दक्ष को यथाशक्ति सहयोग दो। हे शंकर! जब तक तुम दक्ष से अच्छी तरह यज्ञ नहीं करवा लेते तब तक तुम्हारे निज यज्ञ सम्बन्धी प्रयास सफल नहीं होंगे। हे कामारे! दक्षयज्ञ में सायास सहयोग देने के पश्चात् विवाहित होकर अपनी पत्नी के साथ अपने अभीष्ट यज्ञ को करना।''[42]

आकाशवाणी सुनकर शिव ने दक्ष को पूर्व समायोजित यज्ञ में हुए विघ्नों के दोष का निवारण करने के लिए पहले करोड़ आहुतियों वाले यज्ञ को यथाविधि करने की सलाह दी, क्योंकि मुख्य यज्ञ से पूर्व यह यज्ञ करने से सारे विघ्न-दोष दूर हो जाते हैं तथा भौतिक- उपद्रव समीप नहीं फटकते। किसी कामना पूर्ति के लिए किए गए कोटि यज्ञ से वह पूर्ण हो जाती है।

शिव के कथन सुनकर दक्ष ने अभीष्ट-सिद्धि के लिए सर्वप्रथम विघ्नवृक्ष को काटने वाले देव गणेश की पूजा सम्पन्न की। इसके बाद उन्होंने सभी मातृशक्तियों की प्रीतिपूर्वक पूजा की। तत्पश्चात् दक्ष ने पितृशाप से यज्ञ निष्फल न हो, इस उद्देश्य से यज्ञ की गुणवृद्धि के लिए शास्त्रविहित नान्दीमुख श्राद्ध करते हुए पितृपूजन किया। अतः उन्होंने कल्याणोत्पक एवं अमंगल-भयापहारी स्वस्तिवाचन पाठ भी किया। उन्होंने मंत्र स्वरूप असंख्य ऋत्विजों का भक्तिपूर्वकक आवरण कर, उत्कृष्ट मधुपर्क से उनकी पूजा की और यथाविधि यज्ञमण्डप की स्थापना करके मंगलकारक और दोषनिवारक कोटि होम किया। अन्त में उन्होंने हिमध्वल, कामारि, विश्ववन्दित और जगद्ख्यात शिवजी की पूजा करते हुए यज्ञ को आरम्भ करने और उसके सफल समापन की प्रार्थना की।

दक्ष की प्रार्थना पर शिव ने कहा कि अब तो यज्ञ की पूर्ति ही शेष है। अतः उसे दुबारा करने से क्या लाभ? शिव के वचनों को सुनकर दक्ष ने कहा कि जिस यज्ञ को वह ध्वस्त कर चुके हैं, उसकी पूर्ति मैं कैसे कर सकता हूं। आपकी पूजा किए बिना ही मैंने जो यज्ञ आरम्भ किया था, उसे आपके क्रोधानल ने जला डाला। अब मैं उस यज्ञ को सम्पूर्ण करना चाहता हूँ। यज्ञोचित यज्ञमंडप, यज्ञकुंड, यज्ञाग्नि, होता और स्वयं यज्ञ भी शेष नहीं है। हे प्रभो! कृपया मुझे बताने की कृपा करें कि इस यज्ञ की पूर्ति कैसे सम्भव है? दक्ष अभी यह प्रार्थना कर ही रहे थे कि शिवेच्छा से ध्वस्त यज्ञ की सामग्री तथा अन्यान्य उपकरण पहले की भांति अक्षय रूप में प्रकट हो गए। सामग्री को देखकर दक्ष अति प्रसन्न हुए और समस्त देवगणों की उपस्थिति में चन्द्रधवल-यशोवर्धक यज्ञ को यथाविधि सम्पन्न किया।

यज्ञ के समापन पर दक्ष ने स्नान के उपरान्त यथामति दान दिया और पत्नी के साथ कल्याणकारी देवगण की पूजा की। उन्होंने ऋत्विजों तथा ब्राह्मणों को यज्ञपूर्तिकारक पर्याप्त दक्षिणा देकर विदा किया। उन्होंने महादेव से अपने यज्ञ के सफल समापन की भांति देवी सती के जीवन का भी यथा उद्धार करने का निवेदन किया।

महादेव ने दक्ष के अनुरोध पर उन्हें बताया कि उनकी पुत्री अब हिमगिरि पर्वत पर महाराज हिमवान् की कन्या के रूप में अवतरित हुई हैं तथा वह स्वयं वहां जाकर उनसे मिलना चाहते हैं। वर्तमान में वह केदार पर्वत पर तपोलीना हैं। अवतरित होने की बात सुनकर आप चकित न हो, क्योंकि आत्मा कभी नष्ट नहीं होती। मात्र भौतिक शरीर ही नाशवान् है। इसके उपरान्त भक्तों के दुःखहर्ता शिव अपने हिमधवल बैल पर आसीन होकर हिमवान् की पुत्री पार्वती से विवाह करने के लिए देवगणों के साथ केदार पर्वतों की ओर रवाना हो गए।

धार्मिक कर्मकांड एवम् अनुष्ठान का प्रतिफल

जालन्धर पीठ में सम्पन्न किए जाने वाले धर्म सम्बन्धी कर्मकांडों एवम् अनुष्ठानों को रेखांकित करते कई आख्यान विभिन्न भारतीय धर्मशास्त्रों में उपलब्ध हैं। दैत्यराज जालन्धर ने जब युद्ध के दौरान इस क्षेत्र को पवित्र बनाने के लिए देवत्रय, ब्रह्मा, विष्णु एवं महेश को सुन्दर एवम् पावन व्यास नदी के तट पर तीन बार उठा कर पटका और उन्हें दयनीय स्थिति में लाकर उन्हें स्वयम् से वर मांगने को कहा, ''हे देवगण! मैं पुनः कहता हूँ कि तुम मुझसे वर मांग लो। इसी कारण मैंने तुम्हें निष्प्राण नहीं किया है। मैं यह भी जानता हूँ कि जो व्यक्ति हाथ में आए शत्रु को तत्काल नहीं मारता है, उसे उसी के शत्रु शीघ्र ही मरवा डालते हैं।''[43] यह कह कर उसने तीनों देवताओं को पुनः तीन मर्तबा जमीन पर दे पटका। उस दिन से यह क्षेत्र जालन्धर क्षेत्र के नाम से प्रसिद्ध हो गया। इस क्षेत्र में धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष, ये चारों पुरुषार्थ सुलभ हैं।

देवी से प्राप्त शक्ति के द्वारा व्यास नदी के तट पर वीर शिरोमणि जालन्धर को मारने के उपरान्त ब्रह्मा, विष्णु एवं महेश ने जालन्धर क्षेत्र को पीठ का दर्जा प्रदान करते हुए कहा कि आज से इस क्षेत्र में सभी देवी-देवताओं का वास होगा। इस क्षेत्र में जो भी प्राणी अपने प्राणों का त्याग करेगा, उसे विष्णुलोक प्राप्त होगा। यह स्थान सभी प्रकार की समृद्धियों से परिपूर्ण होगा। लोग जब तक इस पीठ की यात्रा नहीं कर लेंगे, तब तक उनके पापों का नाश नहीं होगा। जिस प्रकार काशी क्षेत्र में प्राण त्यागने वालों को शिवलोक की प्राप्ति होती है, वैसे ही इस पीठ में मरने वालों को विष्णु-सायुज्य प्राप्त होगा। आज से हम भी अपने आंशिक रूप में सदा ही इस पीठ में निवास करेंगे। सभी देवता इस क्षेत्र में अवस्थित देवियों की प्रसन्नता के लिए यहीं निवास किया करेंगे। उन्होंने जालन्धर पीठ को सभी प्रकार की समृद्धियों से परिपूर्ण रहने का वरदान भी दिया।

जालन्धर पुराण के एक अन्य विवरण के अनुसार भगवान शिव ने इसके उपरान्त अपने सर्वसम्मत गण वीरभद्र को सभी क्षेत्रों में जाकर वहां गिरे सती के शरीर के विभिन्न दग्ध अंगों को लाने के आदेश देते हुए कहा कि ये अंग जहां भी गिरे हैं, वे सभी क्षेत्र पावन एवं पूजित होंगे तथा पुण्य स्थानों के रूप में प्रसिद्धि अर्जित करेंगे। देवी सती के अंग जिस क्षेत्र में भी गिरे होंगे, वहां देव, असुर, नर एवं गंधर्व द्वारा उस अंग की पूजा होगी।

महादेव के आदेश से अपने पापों को मिटाने हेतु भक्तिपूर्वक तीर्थ-यात्रा पर गए सभी देवी-देवता जब उनकी शरण में वापिस लौटे तो उनकी प्रार्थना सुनकर भगवान शिव ने जालन्धर पीठ के माहात्म्य के बारे में बताते हुए उसे सभी पीठों में सर्वोत्तम बताया। उन्होंने बताया कि इस पीठ में दिये गए दान, स्नान एवं जप करने, ब्रह्म भोज के आयोजन, देवार्चन और कुमारी-पूजन से अनन्त पुण्य प्राप्त होता है। इसलिए यहां तप, व्रत पूजादि सभी कुछ निस्संकोच करने चाहिए। हे देवगण! क्योंकि इसी जालन्धर क्षेत्र में परमपूतात्मा जालन्धर दैत्य, जिसने प्रचण्ड तप द्वारा प्रभु को प्रसन्न कर के अपने आपको (क्षेत्र) किया था। युद्ध में शिव के हाथों मारे जाने के उपरान्त उसके शव पर ब्रह्मा ने भी वीरसाधन प्रयोग द्वारा सर्वस्वदात्री एवं प्रभु को सन्तुष्ट करने वाली भगवती को प्रसन्न किया था। इस पीठ के दक्षिण में सदा विराजमान रहने वाले और शिव प्रिया भगवती की आज्ञा का पालन करने को सदा उत्सुक कालेश्वर गण इस क्षेत्र की दक्षिण दिशा की सदैव रक्षा करते हैं। यह इस पीठ का प्रवेश द्वार है। भगवती चण्डी का प्रिय सेवक नन्दिकेश्वर उत्तर दिशा के द्वार पर सदा निवास और इस क्षेत्र की रक्षा करते हैं। पश्चिम में कुजेश्वर के स्थान पर व्यस्तुगण और पूर्व में मुझे आनन्दित करने वाले महाकाल विराजमान रहते हैं। हे देववृन्द! इस प्रकार के जालन्धर क्षेत्र को कौन उत्तमोत्तम नहीं मानेगा।[44]

जालन्धर पीठ में सभी देवी-देवताओं का वास होने के कारण यह क्षेत्र विघ्न रहित माना जाता है। यह क्षेत्र देवों एवं दानवों के जीवन की घटनाओं का साक्षी होने के कारण अपनी स्थापना के समय से ही श्रेष्ठ रहा है। देवों में भयोत्पादक दैत्यराज जालन्धर आज भी सूक्ष्म रूप में यहीं विराजमान हैं। सर्वप्रथम उनकी पूजा किए बिना इस क्षेत्र में दान-जपादि करने वालों को किए गए शुभ कर्मों का फल नहीं मिलता। इसके बाद क्षेत्रपालों को याद करके क्षेत्र में प्रवेश करना चाहिए।

जालन्धर क्षेत्र में स्थापित तीर्थ भारतवर्ष के अन्य पीठों के तीर्थों की भांति पावन और महत्ता प्राप्त हैं। इस क्षेत्र में पितरों को मोक्ष देने वाला अर्धगया तीर्थ भी विद्यमान है। इस पवित्र पीठ में जो तर्पण और श्राद्ध करते हैं, उनके पितृजनों का उद्धार हो जाता है। उत्तमोत्तम सिद्धियों से युक्त इस स्थान पर जप, तप, यज्ञ, दान आदि करने वालों के सब मनोरथ पूर्ण हो जाते हैं।

शास्त्रों के मतानुसार यात्री या भक्त जालन्धर पीठ के जिस भी क्षेत्र में निवास करे, उसे उस क्षेत्र की सभी देव-देवियों की पूजा करने के पश्चात् अपने इष्टदेव की पूजा-अर्चना कर अपना मनोरथ सिद्ध करना चाहिए। इस क्षेत्र में विष्णुतीर्थ पर सदैव भगवती और देवी-तीर्थ पर श्रीहरि के निवास करने से दोनों एक दूसरे से भिन्न नहीं हैं। अन्य देवता भी शक्ति से भिन्न नहीं हैं। इनकी पूजा-अर्चना से ये सभी देवता और सभी देवताओं की पूजा से भगवती प्रसन्न होती हैं। प्रचलित धारणाओं के अनुसार श्रद्धालु, भक्त या साधक को जालन्धर पीठ में किए गए तमाम कर्मों का कई गुणा प्रतिफल प्राप्त होता है।

उप निदेशक, क्षेत्रीय कार्यालय, सूचना एवं जन सम्पर्क, धर्मशाला, जिला कांगड़ा, हिमाचल प्रदेश

पाद-टिप्पणी

1. आचार्य प्रह्लादानन्द, ''जालन्धर-पीठ-दीपिका,'' संपादक, पृथुराम शास्त्री (निर्मल प्रकाशन, तुलसीसदन, वसदी, डाकघर-कोहाला, जिला-कांगड़ा (हि0 प्र0), पिन-176 836, प्रथम संस्करण, 1983) पृ. सं. 14.
2. पृथुराम शास्त्री, संपादित. जालन्धर-पीठ-माहात्म्य् (यशपाल साहित्य परिषद्, नादौन, जिला-हमीरपुर (हि0 प्र0), पिन-177 033, प्रथम संस्करण, 1987) पृ. सं. 5-6.
3. उपरोक्त, पृ. सं. 8.
4. ''त्रिगर्त दर्पण (जालन्धर पीठ विशेषांक)'', मुख्य संपादक, पी.सी. डोगरा, द कांगड़ा कल्चरल सोसायटी (पंजीकृत), धर्मशाला, अंक 7, 1988 (प्रथम-द्वितीय)) पृ. सं. 42-45.
5. उपरोक्त, पृ. सं. 14-15.
6. उपरोक्त, पृ. सं. 42. 7. उपरोक्त, पृ. सं. 16.
8. आचार्य प्रह्लादानन्द, ''जालन्धर-पीठ-दीपिका,'' संपादक, पृथुराम शास्त्री (निर्मल प्रकाशन, तुलसीसदन, वसदी, डाकघर-कोहाला, जिला-कांगड़ा (हि0 प्र0), पिन-176 836, प्रथम संस्करण, 1983) पृ. सं. 13.

कविता

लौकिक परिवेश : अलौकिक बिम्ब

● डॉ. जगदीश चंद्र शर्मा

झरने का बहाव
देखते ही रहें-
बनती हुई, उभरती हुई
फेन-राशि
कितनी अच्छी लगती है।
जैसे, तरल और
पारदर्शी चांदी के
बहाव और उछाल में
अनूठी दृश्यावली
मंगल-गीतों की
झड़ियां लगा रही हैं।

नदी के
शानदार बहाव में
जो ठसक है,
उभार है/ लावण्य है
किसे आकर्षित नहीं करते?
सूर्यास्त से पूर्व
किनारे के पानी में
सूर्य की स्वर्णिम किरणों
का अभूतपूर्व बिम्ब
संपूर्ण जल-राशि को
पिघले स्वर्ण का
दमकता हुआ
चमकता हुआ
ऐसा
अनंत और अटूट विधान
बना देता है/ कि
आगे अलौकिक सौष्ठव
के इस छलछलाते
सदैव आकर्षक स्वरूप को
अविराम देखते रहने के लिए
चिरस्थायी क्यों न रहने दिया जाता है?

सूर्योदय से पूर्व
सरोवर के पूर्वी भाग पर
पड़ती हुई/ उषा की
भव्य लालिमा से
प्रस्फुट होता हुआ
ओजस्विता का स्पन्दन
मानो
गगन और भू तल का
सर्वाधिक
चकिताभिभूत करने वाला और
गुदगुदाने वाला
उद्दाम/ उदात्त
उच्छल और
उन्मत्त
उल्लास का
उद्रेक बन कर



सूर्याभा की
मोहक झलक
प्रदान करता हुआ
विराट दृश्य
साकार हो उठा है।
उगता सूर्य
उषा की भव्यता को
चीरता हुआ
प्राची से
निकलता हुआ
कुंकुम की छोटी-सी
उभरती किरच-जैसा
प्रकट होते-होते
शनैः-शनैः
जब पूर्ण गोलाकार बनता है
तब भी
कुंकुम का सुरम्य गोला
प्रतीत होता है
और
देखते-देखते उसकी
तेजस्विता बढ़ती है
तो/ मन करता है कि
उसे/ अपने अंतस्तल में
सदा-सर्वदा के लिए
वैसा ही रखें।

ग्राम गिलूंड (राजसमंद, राजस्थान)-313207,
दूरभाष : 02952 266242

9. ''त्रिगर्त दर्पण (जालन्धर पीठ विशेषांक)'', मुख्य संपादक, पी.सी. डोगरा, कांगड़ा कल्चरल सोसायटी (पंजीकृत), धर्मशाला, अंक 7, 1988 (प्रथम-द्वितीय)) पृ. सं. 16.
10. उपरोक्त, पृ. सं. 16. 11. उपरोक्त, पृ. सं. 42.,
12. उपरोक्त, पृ. सं. 43.
13. उपरोक्त, पृ. सं. 43.
14. आचार्य प्रह्लादानन्द, ''जालन्धर-पीठ-दीपिका,'' संपादक, पृथुराम शास्त्री (निर्मल प्रकाशन, तुलसीसदन, वसदी, डाकघर-कोहाला, जिला-कांगड़ा (हि. प्र.), पिन-176 836, प्रथम संस्करण, 1983) पृ. सं. 23-24.
15. उपरोक्त, पृ. सं. 07-113.
16. ''त्रिगर्त दर्पण (जालन्धर पीठ विशेषांक)'', मुख्य संपादक, पी.सी. डोगरा, कांगड़ा कल्चरल सोसायटी (पंजीकृत), धर्मशाला, अंक 7, 1988 (प्रथम-द्वितीय)) पृ. सं. 43.
17. उपरोक्त, पृ. सं. 44. 18. उपरोक्त, पृ. सं. 44.
19. सुदर्शन वशिष्ठ, संपादित : जालन्धर पुराण, अनुवादक, पृथुराम शास्त्री (सचिव, हिमाचल कला संस्कृति भाषा अकादमी, शिमला-171 001, संस्करण, 2003) पृ. सं. 182-192.
20. उपरोक्त, पृ. सं. 193. 21. उपरोक्त, पृ. सं. 209.
22. उपरोक्त, पृ. सं. 224-232. 23. उपरोक्त, पृ. सं. 234.
24. उपरोक्त, पृ. सं. 243. 25. उपरोक्त, पृ. सं. 249.
26. उपरोक्त, पृ. सं. 255. 27. उपरोक्त, पृ. सं. 263.
28. उपरोक्त, पृ. सं. 264. 29. उपरोक्त, पृ. सं. 267-268.
30. उपरोक्त। 31. उपरोक्त। 32. उपरोक्त।
33. उपरोक्त। 34. उपरोक्त। 35. उपरोक्त।
36. उपरोक्त। 37. उपरोक्त। 38. उपरोक्त।
39. उपरोक्त। 40. उपरोक्त। 41. उपरोक्त, पृ. सं. 297.
42. उपरोक्त। 43. उपरोक्त, पृ. सं. 103. 44. उपरोक्त, पृ. सं. 255-256.

सुरेन्द्र अग्निहोत्री की कविताएं

युग

पांचवां युग
कोख में कत्ल
सुख के नहीं होंगे पल
आदिमकाल से कलजुग
एक कदम आगे का युग
इस युग की, अवधारणा पूरी हमारी
मानवता खुद अपने हाथों हारी
संवेदनात्मक खोती नारी
अपनी ही अगली पीढ़ी की हत्यारी
विडंबनाओं का इतिहास
कल होगा हमारे आस-पास
काल के समक्ष मगध की जो रही नियति
ढह गए जैसे हस्तनापुर, तक्षशिला, श्रावस्ती
मणिकर्णिका डोम शव की करेगा प्रतीक्षा
क्या तुम्हारी भी है यही इच्छा।
अपने हाथों अपना कल कत्ल करते
कांपते नहीं हाथ
क्यों तुम भी दे रही बताओ
कसाई बनने में साथ
पांचवां युग नहीं
युग होगा समाप्त
जब सृष्टिकरता का करोगी विनाश
तब कैसे पूरी तुम्हारी आस।

अर्थ नहीं खोते हैं शब्द

अर्थ नहीं खोते हैं शब्द
कभी न कभी अपनी ताकत पाते हैं
अघात सहते हुए
चुनौतियों के बीच नए रूप में आते हैं
शब्द की ताकत
किंवदंतियों में
लोकगाथाओं में आगे बढ़ती है
परिवर्तनकारी शक्तियों के आने पर
अपनी पूरी ताकत पर कर
अपने में समेटी है
शब्द की सत्ता
राजसत्ता की तरह नहीं होती है
इसीलिए उसकी व्याख्या
सुविधा अनुसार नहीं होती है
उसमें हरिया की हूंक
घीस की बेचारगी रहती है
इसीलिए
चाहे उजाले में रहे
या
अंधेरे में रहे
अर्थ नहीं खोते हैं शब्द
शब्द- शब्द ही होते हैं।

पानी

क्यों छिड़ी है बहस
जल संकट पर
बदलते समाज में
भयावह कथा पानी की
अंधेरे से
उजाले में जाने की
शिकंजे का दर्द
नैतिक चेतना के बीच
कौन समझ पाएगा
वक्त का बेतरतीब हिसाब
फिर दुहराया जाएगा
एक राजा जो फकीर था
जिसने खींची टेढ़ी लकीर
समाज का ताना-बाना बिखर गया
शांति से अशांति
आंखों के आगे नाचती रही मौत
तबाही करती रही वह सौत
दयामनी के उलगुलान की तरह
विस्थापित ही जानते हैं
जल, जमीन और जंगल का दर्द
वो बहस नहीं करते हैं
सूरज को अंजुली में भरते हैं।



ए-305, ओ.सी.आर. बिल्डिंग, विधान सभा मार्ग,
लखनऊ, उत्तर प्रदेश, मो. 9415508695

लोक कथा

पसीने की कमाई

● कृष्णा अवस्थी

एक राजा था। वह अपनी प्रजा का बहुत ध्यान रखता था और समय-समय पर भेष बदलकर प्रजा का हाल-चाल जानने के लिए निकल जाया करता था। एक बार घूमत-घूमते बहुत रात हो गई। दूर उसे रोशनी दिखाई दी, वह उसी ओर चला गया। वहां देखा एक लुहार अपने हथौड़े से औजारों को पीट-पीटकर आग में जलाकर ठीक कर रहा था। राजा वहां आकर बैठ गया और लुहार से कहने लगा, "क्या मैं आपकी मदद कर सकता हूं?"

लुहार ने स्वीकृति में सिर हिला दिया। राजा ने हथौड़ा पकड़ा और तपी हुई दराटी कुल्हाड़ी को पीट-पीट कर ठीक करने लगा। कहां राजा कहां मजदूरी का काम? राजा के हाथों में छाले आ गए। मुख पर पसीने की बूंदे छलछला आईं।

लुहार ने राजा के हाथ में एक टका रख दिया। राजा धन्यवाद करके वहां से चला गया।

राजा का यह नियम था वह प्रतिदिन नित्य कर्म से फारिग होकर पूजा-अर्चना के बाद वह दान करता था। याचकों की लम्बी कतार लग जाती थी।

याचक समय पर आ जाते और खूब सारा दान लेकर खुशी-खुशी घर लौट आते।

याचकों की पंक्ति में लुहार भी था। जब उसने हाथ बढ़ाया तो राजा ने उसकी हथेली पर एक टक रख दिया। मन-ही-मन वह उदास हो गया तथा घर लौट गया।

पत्नी और बच्चे प्रतीक्षा कर रहे थे कि पिता जी दान में कुछ लाएंगे तो घर में स्वादिष्ट भोजन बनेगा।

पत्नी ने उत्सुकता से पूछा, "आज राजा ने क्या दिया?"

लुहार ने पत्नी के हाथ पर टका रख दिया।

बस! यही एक टका? पत्नी देखकर हक्की-बक्की रह गई। क्रोध से उसके तन-बदन में आग लग गई। उसने टका लिया और घुमा कर परले कमरे में दे मारा और औंधे मुंह खाट पर सो गई। उस दिन घर में चूल्हा नहीं जला।

प्रातः जब वह उठी। कमरे बुहारने लगी तो जहां उसने टका फेंका था, वहां उसे कुछ सुनहरी सी कोई चीज नजर आई। सूरज की किरणें उसपर सीधी पड़ रही थीं और वह दप-दपा रही थी। उसने आगे चल कर देखा तो एक सोने की मूसली उग आई थी। वह बहुत हैरान हुई व प्रसन्न भी। उसने लुहार को बुलाया और यह अजूबा दिखाया।

अब उनके दिन फिरने लगे। वह रोज मूसली उखाड़ते उसे बेचते और घर का सारा सामान लाते और भिन्न-भिन्न प्रकार के घर में पकवान पकते। अब दिनो-दिन उनके ठाठ-बाठ बढ़ने लगे। कारण? वह टका राजा की मेहनत की, पसीने की कमाई थी इसी से वह सोने की बनी।

गांव व डाकघर विन्द्रावन, तह. पालमपुर, जिला कांगड़ा,
हिमाचल प्रदेश-176061, सम्पर्क 01894 232673

लघु कथा

तेजाब

● प्रियंका भारद्वाज

लड़का कई दिन से लड़की का पीछा कर रहा था। वैसे वे दोनों एक ही कॉलेज में पढ़ते थे। लड़के को अपनी बात कहने का अवसर नहीं मिल रहा था। इसलिए वह अवसर की तलाश में था। ज्यों ही उसे अवसर मिला, उसने लड़की की बांह पकड़ते हुए कहा, "मैं तुमसे प्यार करता हूं।"

लड़के की बात अभी पूरी भी नहीं हुई थी कि लड़की का दायां हाथ बिजली की-सी तेजी से लड़के के मुंह पर जा पड़ा- तड़ाक। चोट कड़ी थी। उसके हाथ से लड़की का हाथ अपने आप छूट गया। उसका मानना था कि आशिकों को शुरू-शुरू में पिटना ही पड़ता है। इसलिए उसने खुद को संभालते हुए फिर से कहा- "एक थप्पड़ से क्या फर्क पड़ता है। मैं फिर से तुम्हारी बांह पकड़ कर कहूंगा कि मैं तुमसे प्यार...।"

अभी उसने लड़की की बांह पकड़ने की कोशिश शुरू भी नहीं की थी कि लड़की का हाथ फिर से घूमा और आवाज सुनाई दी- "तड़ाक! तड़ाक॥"

लड़के का मुंह लाल हो उठा, चोट से भी और क्रोध से भी। वह चिल्लाया- "मैं समझ गया, तू ऐसे नहीं मानेगी। तुम्हें अपने इस सुंदर चेहरे पर ज्यादा ही घमंड है... मैं तेजाब से इसे और सुंदर बना देता हूं।"

ऐसा कहते हुए उसने अपनी पैंट की जेब में हाथ डालने के लिए आगे बढ़ाया ही था कि लड़की का हाथ अचानक फिर से ऊपर उठा। इस बार उसके हाथ में एक छोटी-सी शीशी थी, इत्र कंटेनर जैसी। लड़की की अंगुली ने शीशी के मुंह पर जरा-सा दबाव दिया कि उसमें से तेजाब की धार लड़के के चेहरे की ओर आग की लपट की तार लपकी। लड़का तत्काल पीछे हटा। उसका भाग्य अच्छा ही था जो तेजाब की धार उस पर नहीं पड़ी। वह उलटे पांव भाग खड़ा हुआ।

लड़की के खिल-खिलाकर हंसने की आवाज वातावरण में गूंज उठी। लड़का इस बात से बिलकुल अनभिज्ञ था कि लड़की के हाथ में तेजाब की शीशी नहीं बल्कि तेजाब के रंग वाले किसी अन्य द्रव्य की शीशी थी। लड़की ने जानबूझ कर वह द्रव्य भी उस पर नहीं पड़ने दिया था।

द्वारा रामकुमार भारतीय कविराज,
गांव व डाकघर अलेवा, जिला जींद, हरियाणा

जीवन-दर्शन

हम तेरी दुनिया में तन्हा हो गए

● रमेश चन्द्र शर्मा

यादों का क्या भरोसा! हमने सौ-सौ नीर बहाए। वे आज भी पूरे जोबन पर हैं। कायम हैं। हिरणों की भांति कुलांचे भरती हैं, कभी दिल के वीराने में, कभी दिमाग के मरुस्थल पर। मुझे अभी-अभी अपनी कविता 'वसन्त इस वर्ष' की अंतिम पांच पंक्तियां याद आईं-

मैंने तो फिर तुम्हें ही, याद किया/ बस तुम्हारा ख़याल ही बहला सकता है दिल को!/ वसन्त नहीं होता-
मोहब्बत का सरूर।
लोग कहते हैं। भगवान को याद करो। मगर मुझको यकीन है कि मुहब्बत ही खुदा है।

देखा! आसमान साफ हो गया है। बर्फ ने, बजरी ने, पिघलना शुरू कर दिया था। शाम की छतरी खुल गई थी मुझ पर। मैंने इधर-उधर देखा। पेड़ लग रहे थे प्रेत, राहें बाहर बैठी निहार रही थीं आते-जाते मुसाफिरों को; स्थानीय जाने-पहचाने लोगों को। अभी वाजिब नहीं था तुम्हारी यादों के नखलिस्तान को देखने निकलना। मैं, घर की बॉलकनी में खड़ा हो गया। पास वाले घर की खिड़की से झांकती रोशनी मुझे देख कर हैरान थी। हवा का एक झोंका अपने सिर पर धुएं-धुंध की गठरी उठाए निकल गया मेरे सामने से। रोशनी ने आंखें भींच लीं। वह खिड़की बंद हो गई। शाम की स्याही लगातार बहकने लगी यकीनन! सूरज डूब गया था। इस वक्त सड़क पर रौनक थी। कई लोग सिर झुकाए, सोच में डूबे धीरे-धीरे चल रहे थे। घर में शायद वही वातावरण होगा, बासी तानों का, मौसम को कोसने का, बजट से बढ़ती महंगाई, बेवफाई, खर्चे की इंतहाई का! दफ्तर के किसी, सीनियर अथवा बॉस की सौदाई प्रबलता का, घरेलू दुःख से दबे आत्मतिरस्कार की आत्मिक आशंकाओं का। बेसबब बहिसाब दलीलों का बेमतलब जमावड़ा इनसान को अपना वजूद भुलाने पर मजबूर करता है। शायद मैं ग़लत हूं। पर आदमी हूं। इनसान की उम्मीदारों के कई सपने; फौलाद जैसे आदेशों, निर्देशों और घृणित किचकिच से, जाने अनजाने में, गिरे शीशे के गिलास की तरह टूटते बिखरते महसूस होते हैं। समझौते का मुखौटा पहन कर रात गुज़ारनी पड़ती है, यदि ऐसा होता ही है। और जब भी यह अनहोनी घटती है। केवल तब ही।

मेरे कमरे का डरा-डरा स्वागत, अंधेरे के उदास गलियारों में, आज भी घूमना महसूस हुआ। एहसास हुआ कि प्यार का टूटा हुआ तार फिर से लयबद्ध है। संगीतमय है। मैंने कई बार सुना है वह वाद्य संगीत का स्वर! मेरा खाली नीरव शयन कक्ष अमंगल हो गया था जिसके बिना, उसी की वाणी का तराना गूंजता था यहां। मैं पतझड़ की पत्तियों की तरह बिखर गया। ध्यान दिया। मैं अपने बिस्तर पर था। फिर क्या था। थरथर कांपने लगी तुम्हारी याद। काश मैं मन पर काबू कर सकता! जीवन के कुछ ही दिन, शेष बचे हैं, इस दिल की आवारगी को देखने के लिए। कभी वे भी दिन थे जब मैं और तुम घूमा करते थे साथ-साथ। कई बार तो ऐसे ही। मानो सींग वाले खरगोश की खोज में निकले हों हम दोनों! समय के पल मदिरालय से निकलते कदमों की तरह लड़खड़ाते थे। हमारी बातों की फुसफुसाहट, अंधेरों में उजालों जैसी खुशगवार होती थी। आश्चर्य यह था कि हर मौसम में खूबसूरत लड़ी जैसा नज़र आता था वसन्त। तुम और मैं ही जानते थे कि वह लड़की फूलों की मानवाकार थी। इतनी मासूम कि आवारा सड़क भी सुहानी लगती थी उसके आने पर! मैं तुम्हें सपने में मिलना चाहता हूं, अब। ताकि तुमसे पूछूं कि गुलाब के फूलों के अलग-अलग रंगों का रहस्य क्या है? उन रंगों की बात करूं।

मैं फिर से बाहर आया। चांदनी की झील में कोई कमल न मिला। दीपक रोशनी की जलन से तड़पते दिखे। हर दिशा में स्मृतियों की बेबसी रो रही थी। समझ गया कि अब, मात्र बुढ़ापे का बोझ ही तो ढोना है। झुका, झुकता रहा सहारा लाठी का। कितना सुंदर था अतीत। धड़कते दिल को कहते हुए सुना। पार्क के बैंच पर बैठने को मन किया। वहां सो रहा था कोई, थका हारा पथिक, या बिना घर का परेशान भटकता इनसान। या फिर कोई शराबी,



जो अपने घर का दरवाज़ा खटखटाने से घबराता होगा। हो सकता है, उसकी पत्नी से झगड़ा, उसकी इस आरामगाह का कारण बना।

मुझे याद आया मैंने इस शख्स को कहीं पहले भी देखा है। मैं उसके पास गया। उसने करवट लेकर मुंह फेर लिया। देखा उसके सिरहाने एक तह की हुई बोरी, और उसके नीचे रस्सी है। उसे गहरी नींद में देखकर मैं, पीछे हट गया। वहां शराब की दुर्गंध भी न थी। यह तो थका-मांदा मज़दूर है। घर से दूर है। मुझे तरस आ गया। इच्छा हुई कि प्यार से इसके सिर पर हाथ फेरूं। गांधी के देश में कब निकलेगा खुशियों का सूरज! आदमी क्या इसी तरह रात को बंधन का सहारा ढूंढेगा? मैं घर की ओर लौटा। रात के अंधेरे में दूर कहीं बिजलियां गुल हो गईं।

अब न रहे वे दिन और वैसी खुशबूदार रातें। तुम क्या गईं वह वक्त ही रूठ गया है। शायद चला गया तुम्हारे साथ। न जाने क्यों मैं अकेले में किससे बातें करता हूं। वैसे तो मैं तुम्हीं को, किसी मौन में बोली हुई आवाज़ का जवाब देता हूं। खाने-पीने-सोने का समय निर्धारित है। सब कुछ यंत्रचलित तरीके से होता रहता है। हां, नींद ज़रूर सताती है। नखरेबाज़ औरत-सी जगा देती है इस बूढ़े को। उसका शुक्रगुज़ार हूं। वह कभी-कभी आ तो जाती है। पोता ज़रूर मेरे कमरे में चक्कर मारता है। मुस्कराता है। कुछ कहे-सुने बगैर लौट जाता है। रास्ते में एक ढलान में टेढ़ा पेड़ होता था। उस पर एक पक्षी रात को बड़ी अजीब-सी बोली बोलता था, जो घड़ी की टिक-टिक के समान थोड़ी-थोड़ी देर में सुनाई पड़ती थी। वह पेड़ गत बरसात में गिर गया। उसने ज़रूर कहीं और ठिकाना बना लिया होगा। वर्षा ऋतु भी क्या है? साथ-साथ आंधी तूफान आए तो दुःशासन बनकर पेश आती है। वातावरण की द्रौपदी का चीर हरण कर देती है। वह स्थान इतना उदास और उजड़ा लगा, जितना दुखी कोई हो ही नहीं सकता। पास से एक नवविवाहित जोड़ा गुज़रा। इतर की सुगंध से मेरा ध्यान उनकी ओर गया। मैंने घड़ी देखी। अभी ज़्यादा रात नहीं गुजरी थी। चांद निकला हुआ था। हंसा करते थे हम बिना बात आकाश पर लटके हुए चांद को देखकर। वह मुझे कवि कहकर पुकारने लगती थी जब मैं आसमान को चांद के लिए मचान कह बैठता था। मैंने किसी को गीत गाते सुना। 'तुम न जाने किस जहां में खो गए, हम तेरी दुनिया में तन्हा हो गए'। यह लता जी की आवाज़ नहीं थी। उनकी तो आवाज ही पहचान है। कोई अपने घर में ही गाए जा रहा था। मैं आगे बढ़ा। मैंने देखा कि पार्क की बैंच पर सोया पड़ा वह आदमी मेरे सामने खड़ा है। उसने मेरा रास्ता रोक कर, मेरे पांव छुए। बोला, मैं थक कर चूर था। मैंने एक ट्रक को ठेके पर 'अनलोड' किया। अपनी मदद के लिए एक ही कुली किया। इस कारण कनखियों से आपको देख कर भी, उठ नहीं पाया। मेरी घरवाली मुझे तलाश करती हुई वहां पहुंच गई। उसने मुझे उठाकर कहा कि घर चलो। वह मेरे साथ-साथ चलने लगा। इससे पहले कि मैं कुछ पूछता, उसने अपना परिचय देना शुरू किया। कहने लगा कि मुझे अकेले रहने की आदत पड़ गई है। पत्नी गांव में रहती है। संयुक्त परिवार है। पर हम लोग अमीर नहीं हैं। मेहनत मज़दूरी करके पेट भरते हैं। मैं ज़रूर पढ़ लिख गया था। मुझे अनुबंध-टीचर की सीमित अवधि के लिए नौकरी ज़रूर मिली। वेतन थोड़ा था। पत्नी को घर भेजना पड़ा। मेरे अब पांच वर्ष का बेटा भी है जो वहां स्कूल जाने लगा है। आजकल छुट्टियां थीं। वह इधर आई हुई। तभी तो मुझे पूछने वाला कोई है। मैंने उसे आपके बारे में बताया। उसने मुझे याद दिलाया कि जब उसके बच्चा हुआ तो माता जी ने, जो आपकी धर्मपत्नी थी, उसको अस्पताल में भर्ती करवाया था। बिलों का भुगतान उन्हीं ने किया था, क्योंकि उन दिनों मैं आपके घर दिहाड़ी लगाने आता-जाता था। जब मेरी पत्नी को प्रसव-पीड़ा हुई, तो उनके पास मदद के लिए आया, क्योंकि अस्पताल में मेरी कोई जान-पहचान न थी। सो मेम साहब माता जी के मरने पर अफसोस करने भी न आ सका। इसलिए शर्मिंदा हूं। यह भी एक और कारण है जो मैं बैंच पर लेटा रहा। अगले दिन आकर माथा टेकने का इरादा था। मगर उसने मुझे कहा कि मैं तुरंत ही आपको मिलूं। और भूल सुधार करूं। वह स्वयं भी सुबह अपने बेटे के साथ आपसे मिलने आएगी। मैंने पूछा कि उसने अध्यापक का काम क्यों छोड़ा। गुज़ारा नहीं होता था। कांट्रेक्ट थोड़ा था। बेहतर समझा कि दिहाड़ी मजदूरी करूं। कुछ कमाऊं। मात्र सफेद कपड़े पहनने के लिए खुद को मुफलसी, ग़रीबी के चंगुल में क्यों फंसने दूं। अब, आजकल मेरे पास कुछ-न-कुछ जेब में पैसा रहता है। कपड़े मैले हो जाते हैं। अपने लिए कपड़े धोने की मशीन भी खरीद ली है। कमरा ज़रूर एक है। ज़रूरत पूरी हो जाती है। मैंने कहा कि अब घर जा।

...सन्नाटे में डूबा बाकी पांच-दस मिनट का रास्ता तुम्हारे प्यार की भांति शालीन और एकांत-सा लगा।

टकसाल हाउस, छोटा शिमला,
शिमला, हिमाचल प्रदेश-171 002, दूरभाष : 0177 2621199

कहानी

रिश्ते

● डी. आर. भण्डारी

डूबते सूरज की लालिमा ने सारे कस्बे को लाल ओढ़नी पहना दी थी। कल की बरसात के कारण गांव की उबड़-खाबड़ जमीन को और भी खराब कर दिया था। जगह-जगह गड्ढे बन गए थे और उनमें बरसात का पानी भर गया था। किसान कांधे पर हल उठाए दिन भर खेतों में काम करके अपने घरों को लौट रहे थे। औरतें सिर पर घास का बोझ उठाए पशुओं को हांकती हुई लौट रही थीं। गांव की सड़क पर जगह-जगह गड़ढों में भरा पानी सूरज की लालिमा से मोतियों के समान चमक रहा था। बैलों के गले में घंटियों की आवाजें और दूर किसी गवाले की बाँसुरी का स्वर मन को बड़ा ही लुभावना लग रहा था।

गाँव की सड़क पर दूर एक बैलगाड़ी आती दिखाई दे रही है। बैल भी अपनी मस्ती में चले आ रहे हैं। अचानक बैलगाड़ी का पहिया गड्ढे में पड़ा और बैलगाड़ी सवार उछला।

''अरे, साली सड़क है, का है ... पूरा का पूरा शरीर दर्द करने लगा है।'' गाड़ीवान ऊंची आवाज में बोला था।

गाड़ीवान, जिसका नाम हरनाम था, एक सीधा-सादा इन्सान था, जो बचपन से इस गाँव में आकर बस गया था। उसका अपना कहने को वहां कोई न था। बस अपना कहने को वह बैलगाड़ी थी, जिस पर वह लोगों की जरूरत का सामान उन्हें लाकर दिया करता था।

''अरे हरनाम! क्या हुआ'' पीछे बैलगाड़ी में बैठे रतन सिंह ने हंसते हुए पूछा।

''अरे का कहें'', हरनाम ने सकुचाते हुए कहा। ''इस सड़क ने तो हमारी जान ही निकाल दी है। जब हमारा ये हाल है तो आपका का हाल हो रहा होगा।'' रतन पीछे बैठा हरनाम की बातें सुनता रहा और हंसता रहा।

रतन इसी गांव के एक ठाकुर परिवार से सम्बंध रखता था। उसके बाप-दादा गांव के जाने-माने जमींदार रहे थे। लेकिन अब जमीन-जायदाद खत्म हो जाने के बाद थोड़ी सी जमीन रह गई थी। उसी पर खेती-बाड़ी करके वह अपना परिवार चला रहा था। रतन और हरनाम में गहरी दोस्ती थी। और दोनों एक-दूसरे का बड़ा सम्मान करते थे। बचपन से जहां गांव के ठेकेदारों ने हरनाम को तुच्छ समझ कर धुतकारा था, वहीं रतन ने उसे अपने पैरों पर खड़ा होने में उसका साथ दिया था। इसी वजह से हरनाम भी रतन और उसके परिवार को अपनी जान से ज्यादा प्यार करता था।

''लो, रतन भइया! तुहार घर आई गवा ....'' हरनाम ने रतन के घर के सामने बैलगाड़ी रोक कर कहा।

''बहुत-बहुत धन्यवाद हरनाम!'' कहता हुआ रतन गाड़ी से नीचे उतर गया।

''तो हम चले भइया!'' हरनाम ने चलने की इजाजत मांगी।

''क्यों? आज अन्दर नहीं आओगे'' रतन ने अपना सामान समेटते हुए कहा।

तभी मकान के भीतर से रतन का छः साल का बेटा दौड़ता हुआ आया और ''बाबा-बाबा'' कहता हुआ रतन की टोंगों से लिपट गया।

''आप आ गए बाबा...'' ''अरे बेटा'' इतना कहकर रतन ने हरीश को गोद में उठा लिया। रतन ने देखा उसकी धर्मपत्नी शारदा द्वार पर खड़ी उन्हीं की ओर निहार रही थी।

''चाचा! आप भी अन्दर आओ ना'' मासूम हरीश ने कहा।

''अल्ले बिटुआ'' कहता हुआ हरनाम बैलगाड़ी से नीचे उतरा और हरीश को रतन की गोद से अपनी गोद में ले लिया।

''हम आपके साथ जरूर-जरूर चलेंगे'' यह कहते हुए हरनाम मकान की तरफ बढ़ चला। ''बिटुआ! देखो हम आपके लिए शहर से का लाए हैं,'' कहते हुए हरनाम ने एक पैकेट हरीश को थमा दिया।

''चाचा! इसमें क्या है,'' मासूम हरीश ने उत्सुक्तावश पूछा।

''बिटुआ! अन्दर चल कर खुद ही खोल कर देख लो...'' कहते हुए वे मकान में दाखिल हुए। सामने रतन की पत्नी शारदा खड़ी थी।

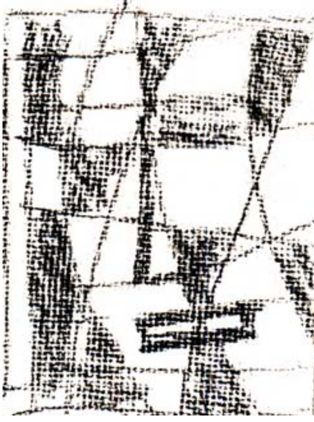
''पाए लागूं, भौजी।'' हरनाम ने शारदा के नजदीक आते हुए कहा।

''आओ हरनाम भैया'' शारदा ने रतन के हाथों से सामान के थैले सम्भालते हुए कहा। शारदा सामान लेकर अन्दर चली गई और हरीश हरनाम द्वारा लाए पैकेट को खोलने लगा।

''अरे चाचा! यह तो मोटर-कार है,'' हरीश पैकेट से मोटर निकाल कर जमीन पर चलाने लगा।

''हाँ बिटुआ! यह मोटर-कार है।'' इतना कहकर हरनाम हंसने लगा और हरीश गाड़ी लेकर अन्दर कमरे में चला गया।

''रतन भैया! हम हर रोज आपको तकलीफ देते रहते हैं। देखो ना,



हम हर रोज यहां आते हैं और भौजी कभी चाय तो कभी रोटी के वास्ते तकलीफ उठाती रहती है।''

''अरे हरनाम! तुम भी क्या छोटी-छोटी बातें लेकर बैठ जाते हो। तुम कोई गैर थोड़े ही हो। हमारे परिवार के सदस्य हो...''

''यह तो आपका बड़प्पन है, भैया! जो हमका इतना मान देते हो। हम तो एक अनाथ हैं।''

''खबरदार! जो अपने आप को अनाथ कहा तो'' रतन ने बीच में टोकते हुए कहा। तभी शारदा चाय लेकर आ गई।

''लो भैया चाय लो।'' शारदा ने एक प्याला हरनाम को तो दूसरा रतन को थमा दिया।

''रतन भैया! कभी-कभी हम सोचते हैं कि हमार-तुमार का रिश्ता है। कोई रिश्ता नहीं, फिर भी, न जाने वो कौन सी ताकत है जो हमें तुमार पास खैंच लाती है। जरूर हमार-तुमार कोई पिछले जनम का रिश्ता है, भैया।'' यह कहते-कहते हरनाम की आंखों में आँसू आ गए।

''अरे ये क्या हरनाम! जानते हो तुम्हारा-हमारा क्या रिश्ता है।'' रतन ने उसके कांधे पर हाथ रखते हुए कहा। ''हमारा-तुम्हारा इन्सानियत का रिश्ता है।''

''हाँ भैया! इतना कह कर हरनाम ने पास खड़े हरीश के सर पर प्यार से हाथ फेरा, आँसू पोंछे और उठकर बाहर गाड़ी की ओर बढ़ गया। रतन, शारदा और हरीश हरनाम को दूर तक जाते हुए देखते रहे। बैलों के गले की घंटियों की छनछनाहट अन्धेरे में दूर तक सुनाई देती रही। बस्ती की बत्तियाँ जल चुकी थीं। थोड़ी देर रुकने के बाद रतन, हरीश के साथ कमरे में बैठकर खेलने लगा और शारदा रसोई में चली गई।

000

अगले दिन सुबह होते ही रतन बैलों को लेकर खेतों की ओर चल पड़ा।

''अरे - ओह! रतन भैया!'' रतन को दूर बैलगाड़ी लेकर आते देखकर हरनाम ने पुकारा। ''का हाल है भैया,'' हरनाम की गाड़ी रतन के करीब आ गई।

''ठीक हूँ, हरनाम! तुम सुनाओ कहाँ जा रहे हो?'' रतन ने पूछा।

''हम कहाँ जाएंगे भैया! चले हैं शहर की ओर। मुल्ला की दौड़ मस्जिद तक।'' इतना कह कर वो दोनों हंस पड़े। ''कुछ मंगाना तो नाही, शहर से?'' हरनाम ने बैलों को पुचकारते हुए पूछा।

''नहीं हरनाम! मंगवाना तो कुछ नहीं। परन्तु तुम शाम को घर होकर जाना।''

''अच्छा भैया! चलते हैं'' इतना कह कर हरनाम ने गाड़ी हाँक दी। रतन ने भी बैलों को खेतों की ओर हाँक दिया।

रतन के दो रिश्तेदार कुछ दूर खड़े इन दोनों की बातें सुन रहे थे।

गंगू - ''ना जाने इस रतन की अक्ल पर क्यों पत्थर पड़ गए हैं। इसे ना तो अपनी इज्जत का ख्याल है ना हम लोगों की। देखो इस हरनाम के बच्चे को सिर पर चढ़ा रखा है। पता नहीं कहां से आकर यहां बस गया है। पता नहीं किस नीच जाति का है। और रतन है कि इसे सिर पर चढ़ा रखता है। इस कम्बख्त को तो जात बिरादरी का भी ख्याल नहीं।'' वो दोनों और भी जाने क्या-क्या बोलते हुए चले गए।

रतन अपनी मस्ती में बैलों को हांकता हुआ मुंह से कुछ गुनगुनाता हुआ खेतों की ओर बढ़ गया।

दोपहर हो चली थी। रतन खेतों में हल चला रहा था। दूर शारदा खाने की गठरी सिर पर उठाए हुए उस की ओर आती दिखाई दी। रतन ने बैलों को पुचकार कर खड़ा कर दिया और शारदा की ओर बढ़ गया। दोनों एक पेड़ की छाया में बैठकर खाना खाने लगे।

''शारदा! हरीश स्कूल से आ गया क्या?'' रतन ने पूछा।

''जी हाँ। वो अभी स्कूल से आया है। उसे खाना खिलाकर आई हूँ।''

''उसे घर पर अकेला छोड़ आई क्या?'' रतन ने मुंह में रोटी का निवाला डालते हुए पूछा।

''नहीं। आपके बड़े भईया आए थे। उनके साथ गंगू काका भी थे। हरीश उन्हीं के साथ घर पर है। काका कह रहे थे कि मैं आपसे कहूं कि आप हरनाम को ज्यादा मुंह मत लगाएं।''

''मैं जानता हूँ, शारदा। मेरे रिश्तेदारों को हरनाम के साथ मेरा मिलना-जुलना अच्छा नहीं लगता, क्योंकि वह छोटी जात का है। शारदा! एक दिन आएगा जब इन रिश्तेदारों के चेहरों से नकाब हट जाएगा। तब सभी को मालूम हो जाएगा कि कौन अपना है और कौन पराया।'' रतन ने शादा को समझाया।

000

हरनाम व हरीश में इस दौरान बड़ा ही प्रेम हो गया था। हरीश भी हरनाम चाचा को बहुत चाहता था। हरनाम ने भी कभी महसूस नहीं किया था कि उसका इस दुनिया में कोई नहीं है। मगर, जिन लोगों को उनका मिलना पसन्द नहीं था वो यह देख कर चिढ़ते रहते थे। इसी तरह से दिन व्यतीत हो रहे थे।

हरनाम शहर से आ रहा था। शाम के छः बज रहे थे। सूरज पश्चिम में क्षितिज से आधा ऊपर नजर आ रहा था। लोग खेतों से अपने घरों को लौट रहे थे।

''अरे - बन्सी भईया! हरनाम ने खेत से लौटते हुए बन्सी को आवाज लगाई।

''कौन? हरनाम भाई! लौट आए शहर से,'' बन्सी ने प्रश्न किया।

''हाँ भइया! लौट आए। तुम्हार वो सामान भी ले आए हैं हम।'' यह कहते हुए हरनाम ने एक पैकेट निकाल कर बन्सी को थमा दिया।

''हरनाम भइया! हम लोग तुम्हारे बड़े एहसानमन्द हैं। तुम हम लोगों के कितने काम आते हो।'' बन्सी ने कृतज्ञता प्रकट करते हुए कहा।

''अरे का कहत हो, बन्सी भइया? ये का बात की तुमने। एहसानमन्द तो हम तुहार है। कहाँ हम। अगर तुम लोगों का सहारा हमका ना मिलता तो हम तो मर ही गए होते। अच्छा भइया, अब चलत है। शाम घिर आई है। तुम भी जल्दी घर पहुंचो। पास के जंगल मा एक चीते ने बड़ा आतंक मचा रखा है। बद्रीपुर गांव के बहुत से पशु मार दिए है वो।'' इतना कह कर वह आगे बढ़ गया। वह रतन के मकान के पास पहुंचा तो वहां हरीश को खेलता पाया।

''अरे बिटुआ का करत हो।'' हरनाम ने गाड़ी रोक कर कहा। हरीश हरनाम चाचा के करीब दौड़ता हुआ आ गया। ''ये लो बिटुआ अपना बिस्कुट का पैकेट।'' हरीश के पैकेट पकड़ते ही हरनाम ने उसे गोद में उठा लिया और दोनों घर के भीतर चले गए।

'ये लो तुम्हार चीज।'' इतना कह कर हरनाम ने एक पैकेट रतन की ओर बढ़ा दिया, जिसे हरीश ने झपट लिया। ''अरे बेटा! तुम्हारे मतलब की चीज नहीं है। ये तो तुम्हार माँ की है। हरीश दौड़ता हुआ रसोई में चला गया।

''और सुनाओ हरनाम। सफर तो ठीक रहा ना।'' रतन ने पूछा।

''हां भईया, ठीक ही रहा। सुना है पास के जंगल में कोई ससुरा चीता आ गया है, जो बड़ा उत्पात मचाए है। वो अपना हरिया है ना। उसे भी जख्मी कर दिए है। भौजी नमस्ते!'' हरनाम ने रसोई से आती हुई शारदा को नमस्ते की।

'अरे का कहत हो, बन्सी भइया? ये का बात की तुमने। एहसानमन्द तो हम तुहार है। कहाँ हम। अगर तुम लोगों का सहारा हमका ना मिलता तो हम तो मर ही गए होते। अच्छा भइया, अब चलत है। शाम घिर आई है। तुम भी जल्दी घर पहुंचो। पास के जंगल मा एक चीते ने बड़ा आतंक मचा रखा है।

'नमस्ते हरनाम भाई! कैसे हो'' शारदा न उसे चाय दी।

''हम तो ठीक हैं भाभी, मगर यह 'चाह' तो आपने फिजूल ही बनाई।''

''हरनाम! अब तुम कुछ दिनों के लिए शहर का चक्कर छोड़ दो. ... जब तक यह खतरा टल न जाए।''

''हमार क्या है? ना कोई आगे ना पीछे। अपना खयाल रखना तुम। चलह है भइया।'' इतना कह कर हरनाम राम-राम करके द्वार से बाहर निकल गया। रतन हरनाम को जाते देखता रहा। उसके कानों में हरनाम के अंतिम शब्द गूंजते रहे - हमार क्या है भइया, ना कोई आगे है, ना पीछे। अपना ख्याल रखना तुम। बाहर अंधकार बढ़ रहा था। बहुत देर तक वह हरनाम के ही विषय में सोचता रहा।

सुबह की लालिमा ने सारे कस्बे पर अधिकार कर लिया था। रतन अपने आंगन में बैठा हुआ नीम की दातुन से दान्त साफ कर रहा था। शारदा पूजा की थाली थामे अन्दर दाखिल हुई। ''आपने कुछ सुना'' वो रतन के करीब आकर बोली।

''क्या बात है, शारदा। तुम कुछ परेशान लगी रही हो।'' रतन ने दांतुन एक ओर फेंकते हुए पूछा।

''वो शाम बाबू है ना, जो स्कूल में मास्टर है। उनकी गाय के बछड़े को रात को किसी जानवर ने खा लिया।''

''अच्छा! जरूर ये काम उसी चीते का होगा।'' रतन ने मुंह धोते हुए कहा। शारदा अन्दर कमरे में चली गई।

दिन चढ़ रहा था। रतन अपने खेतों की ओर चल पड़ा। उसने सामने से आते शाम बाबू को देखा - ''राम-राम श्याम बाबू'' उसने दोनों हाथ जोड़कर नमस्कार किया।

''राम-राम! रतन। कैसे हो बेटा...।''

''ठीक हूँ। सुना है कल रात किसी जानवर ने आपके बछड़े को मार डाला।'' रतन ने दुख प्रकट करते हुए कहा।

''हाँ बेटा! कल रात एक चीता इधर निकल आया, उसी का काम है ये।'' उन्होंने कल रात की घटना रतन को सुनाई।

''बड़ा दुख हुआ यह सुनकर। इस चीते के पाँव इस तरफ भी पड़ गए। अब तो सावधान ही रहना होगा। अच्छा चलता हूँ।'' इतना कह कर रतन खेतों की ओर चल पड़ा।

''शारदा! - आज हरनाम अभी तक शहर से नहीं लौटा।'' रतन ने शारदा से पूछा। ''बड़ा अजीब आदमी है। उसको भला-चंगा पता है कि रात होते ही लोग तो घरों से बाहर नहीं निकलते, और वो है कि शहर से आने में ही इतनी देर लगा देता है।''

खाना खा लेने के बाद रतन ने शारदा को सोने के लिए भेज दिया। हरीश भी सो चुका था। मगर आज उसको नींद नहीं आ रही थी। वो बाहर आंगन में आकर बैठ गया। हुक्का सुलगा कर उसे गुड़गुड़ाने लगा। उसकी निगाहें बार-बार आने वाले रास्ते पर चली जातीं। ठीक साढ़े दस बजे एक हल्की सा लालटेन की रोशनी दिखाई दी। बैलों के गले की घंटियों की आवाज सुनाई दी तो रतन हुक्का एक ओर रख कर खड़ा हो गया और उस दिशा में देखने लगा। धीरे-धीरे हरनाम की गाड़ी रतन के पास आकर रुक गई।

''बहुत खूब भई, हरनाम! बहुत खूब,'' रतन पास आते हुए बोला।

''अरे रतन भईया! आप ...ईहाँ.. आप अभी तलक सोये नहीं।'' हरनाम ने गाड़ी रोकते हुए कहा।

''आज तो तुमने कमाल ही कर दिया। ये वक्त है जंगल से होकर आने का। कम से कम इतना तो ख्याल कर लिया करो कि यहाँ कोई तुम्हारा इन्तजार कर रहा होगा।''

यह सुनकर हरनाम की आंखें आँसुओं से भीग गई। ''हमका माफ कर दो भइया ... हमका माफ कर दो। हमने आपको इतनी तकलीफ दी।'' उसने रतन के दोनों हाथों को मुंह तक लाकर चूम लिया। रतन ने उसको गले से लगा लिया। दोनों की आंखें आँसुओं से भीग गई थी...

। ''आओ थोड़ी देर बैठते हैं,'' इतना कह कर वो दोनों बाहर आकर बैठ गए और हुक्का गुड़गुड़ाने लगे। वो बाहर बैठे बातों में व्यस्त थे, उधर हरीश ने जब अपने पिता को अपने पास नहीं पाया तो वो आँखें मलता हुआ नींद से उठकर बाहर निकल गया। शारदा को भी पता ना चला कि हरीश बाहर जा चुका है। रतन व हरनाम गप्पों में ही व्यस्त रहे। हरीश नींद में उन दोनों से बेखबर काफी आगे निकल आया था। अचानक चीते की दहाड़ने की आवाज आई। हरनाम व रतन बुरी तरह चौंक गए।

''अरे! ये तो उसी आदमखोर चीते की दहाड़ है,'' रतन ने हरनाम को कहा। उसी वक्त हरीश की चीख पूरी बस्ती में गूंज गई।

रतन घर के अन्दर भागा तो वहां पर हरीश नहीं था। वह जोर से चीखा... ''हरीश ...'' रतन के भाई, पड़ोसी व रिश्तेदार चीख सुनकर रतन के मकान के पास जमा हो गए। चीते के दहाड़ने की आवाज से सभी काम्प गए । सभी डरके मारे मकानों के भीतर छुप गए। हरनाम उस दिशा में बढ़ा जिधर से हरीश के चीखने की आवाज आई थी। वहां का दृश्य देख कर हरनाम का खून जम गया। हरीश के बीच व चीते के बीच का फासला बिलकुल कम रह गया था। हरीश उस को देख कर एक पत्ते की तरह काम्प रहा था। इससे पहले कि चीता उछल कर हरीश पर हमला करता, हरनाम बीच में आ गया। उसने हरीश को एक तरफ धकेला और खुद चीते से उलझ पड़ा। चीता अपने शिकार को हाथ से जाते देखकर हरनाम पर बुरी तरह टूट पड़ा। इससे पहले के रतन कुछ लोगों को लेकर वहां पहुंचता, चीता हरनाम को बुरी तरह घायल कर जंगल में गायब हो गया।

''ह..र..ना..म!'' पास आता हुआ रतन जोर से चिल्लाने लगा। उसने आते ही खून से लथपथ हरनाम को अपने बाजुओं में उठा लिया। शारदा ने हरीश को गोद में लिया और वो हरनाम के पास बैठकर रोने लगी। रतन के रिश्ते-नाते वाले सभी मौका देखते ही वहां से खिसक लिए।

''ये तुमने क्या किया हरनाम!'' रतन जोर-जोर से रो रहा था।

''रतन ... भ..इ..या ह..म..का खुशी है कि हमार व्यर्थ जीवन.. हमार ..बिटुआ के ..काम आई ..गवा। यह जीवन ...तुहार ...अमानत थी भइया, ... आज तुहार ... अमानत तुमका ही ... वापिस कर रहे हैं।....'' हरनाम के मुंह से शब्द बहुत मुश्किल से निकल रहे थे।

हरीश भी दहाड़े मार कर रो रहा था, ''चाचा ... ये तुमको क्या हो गया है।''

हरनाम ने अपना हाथ हरीश के सिर पर फेरा। ''बिटुआ ... रोआ मत ..... आज तुहार चाचा ... तुझसे बहुत दूर जात है.... ।''

''देखो शारदा! हरनाम हम लोगों को छोड़ कर जा रहा है,'' रतन एक बच्चे की तरह चिल्ला रहा था। शारदा भी दहाड़े मारकर रो रही थी। वहां उपस्थित सभी की आंखें नम हो गई थीं।

''भ...इया ...हमका विदा करो ...'' उसने सबकी तरफ हाथ जोड़े। ''हमसे ... कोई भूल चूक ... हो गई हो तो ... हमका .... माफ कर दे।'' हरनाम की सांसें गले में ही अटकने लगी थी। थोड़ी देर तक उसने सबकी ओर देखा, फिर उसका सिर रतन की बाहों में झूल गया। रतन और हरीश उसके निर्जीव शरीर से लिपट कर रोने लगे। दूर कहीं कुत्तों के भौंकने की आवाज सुनाई पड़ रही थी। रात बहुत ही भयानक लग रही थी।

000

नदी के किनारे एक चिता सजी थी, जिस पर हरनाम का शव रखा हुआ था। रतन उसमें आग लगाने वाला ही था कि उसके एक रिश्तेदार ठाकुर सुन्दर सिंह ने कहा ''रतन इसकी चिता में तुम क्यों आग लगा रहे हो। ये काम तो किसी और से करवा लो।'' रतन की आँसुओं से भीगी पलकें उसकी ओर उठीं - ''क्यों .... मेरे ऐसा करने से क्या आप की इज्जत मिट्टी में मिल जाएगी। इसलिए के हरनाम एक नीची जात का इन्सान था। अरे तुम लोगों से अच्छा तो वो बेचारा छोटा इन्सान ही था, जो मेरा कुछ नहीं था फिर भी मेरे लिए अपने प्राणों का बलिदान दे गया। तुम लोग मेरे रिश्तेदार हो। मेरी दुनिया लुटते देखते रहे, मगर बच्चे को बचाने कोई आगे नहीं आया। रिश्ते केवल कहने के ही नहीं होते, ठाकुर साहब। किस काम के हैं ये रिश्ते-नाते, जो वक्त पर काम न आए। जो इन्सान तुम लोगों के लिए तुच्छ था वह मेरे लिए भगवान से भी बढ़कर निकला। उसने मेरे बच्चे की जान बचाने के लिए अपनी जान दे दी। उससे मेरा सबसे बड़ा रिश्ता है। अगर आप लोगों को बुरा लगता है तो आप लोग जा सकते हैं।'' रतन ने इतना कह कर मशाल उठाई और हरनाम के शरीर को अग्नि दी। सबके सिर शर्म से झुक गए। चिता ने आग पकड़ी और लपटें आकाश को छूने लगी। धीरे-धीरे लोग वहां से जाने लगे।

शाम की लालिमा ने नदी के पानी को लहु के समान लाल बना दिया था। हरनाम की चिता जल कर राख हो चुकी थी। रतन एक पत्थर पर बैठा हुआ उस चिता की राख को एकटक देखे जा रहा था। उसके आँसू गालों पर आकर सूख चुके थे। उसके मन में एक ही सवाल रह-रह कर उठ रहा था - कौन था यह हमारा, जिसने हमारे लिए खुद को मिटा दिया।

लीला भवन, सैट नं. 2, पहली मंजिल, शिवनगर,
कुसुम्पटी, शिमला, हिमाचल प्रदेश-171009

- *असफलता का मौसम, सफलता के बीज बोने के लिए सर्वश्रेष्ठ समय होता है।* **-परमहंस योगानंद**
- *योग्य होना अच्छी बात है। लेकिन दूसरों में योग्यता ढूंढ निकालना ही इस अच्छाई की असली परीक्षा है।* **-एल्बर्ट हबार्ड**
- *सीमाएं सिर्फ दिमाग में होती हैं। अगर हम अपने सपनों को जीने लगें तो संभावनाएं असीमित हो जाती हैं।* **-अज्ञात**
- *कोई भी सच स्वीकार किए जाने से पहले तीन सीढ़ियों से गुजरता है, पहला- उपहास, दूसरा- विरोध, तीसरा- भय।* **- आर्थर शो**

कहानी

डिलीट ऑल

● सीमा खन्ना

हवा के बहने में एक अजीब सी सनसनाहट थी। कभी दौड़ती कभी इठलाती और कभी थम जाती, उसका मन चाहा हवा के पंखों पर सवार हो खुद भी कहीं उड़ जाए।

पिछले तीन रोज से मौसम ऐसा ही था। रात भर धीरे-धीरे पानी बरसता रहा जैसे खेत सीचें जा रहे हों और फिर भोर होते होते सूरज देखता अपनी पूरी लखदख प्रभात रश्मियाँ बिखेरते हुए उपस्थित होते। आहिस्ता-आहिस्ता ताप की डिगरी बढ़ने लगती और लगता रात में बरसाया पानी वापिस खींचा जा रहा है फिर बरसाने के लिए। चैत्र की धूप में करारापन शुरू हो जाता है लेकिन बादलों के बरसने से करारापन सीला जा रहा था।

आज भी यही आलम था। दोपहर बाद से बादलों के टुकड़े आसमान में इकट्‌ठे होने लगे थे और शाम होते-होते अच्छे खासे सफेद बादल गहरे सलेटी बादलों में तब्दील हो चुके थे। रह रह कर बादलों की गड़गड़ाहट के साथ बिजली चमक रही थी। बादलों की गड़गड़ाहट उसे हमेशा अन्दर तक झंकृत कर देती है। ऐसे में वो जमीन से दो इंच उपर उठ जाती है जैसे रेगिस्तानी बालू सा प्यासा वजूद खुद को भिगो देने को आतुर हो।

बादलों की तेज गड़गड़ाहट के साथ बारिश होने लगी थी। उसने दुपट्‌टा सिर पर ओढ़ लिया मानो छतरी हो और भीगने से बच ही जायेगी। बादल फिर गरजे तड़ाक की आवाज के साथ बिजली चमकी और साथ ही उसके जहन में एक शेर कौंधा।

"बरसो-बरसो कि बरस भी जाओ
मेरे अहसास-ए-तश्नगी के सहरा में...

उसके होठों पर एक उदास सी मुसकराहट खिंच गयी। पानी और तेजी से बरसने लगा. उसने चाल तेज कर ली मगर रेलवे ट्रेक पर बिछे नुकीले पत्थर चाल में बाधा डालने लगे। उसके गोरे चिट्टे पाँव अब तक मिटटी और बारिश के पानी से लथपथ हो चुके थे। पुरानी घिसी चप्पल पाँव का साथ छोड़ने को आतुर थी. पत्थर पाँव में बार-बार चुभे जा रहे थे। बामुश्किल ही वो गति बनाये हुए थी, एक दूसरी सड़क का रास्ता भी था। मगर उसे तो रोज यहीं से गुजरना था.

शाम को देहरादून से दिल्ली जाने वाली जनशताब्दी अपने नियत समय से धड़धड़ाती हुई पास से गुजर रही थी। उसकी चाल थम गयी, होठ कमल की मुस्कराहट से खिल गये। रेल की तेजी और बारिश की सर्द हवा से दुपटटा उड़ने को ही था कि उसने झपट कर मुट्‌ठी में खींच लिया। बालों की लटे उड़-उड़ कर चेहरे को ढकने लगीं।

दिल की धड़कने रेल की धड़धड़ाहत से ताल मिलाने लगी। जिस्म के रोंगटे खड़े हो गये। बस बेसुध सी वो रेल को ओझल होने तक देखती रही और जब ट्रैक सूना हो गया तो उसने अपने रुके कदमों को गति दी।

वो चुम्बक बन जाती है। लाल-लाल डब्बों वाली वो रेल उसे अपनी तरफ खींचती है। दूर तक उसके पीछे वो भी उड़ जाती है। और उसका अपना वजूद शून्य हो जाता है. उन लाल डब्बों के आगे, जहन में दो बड़ी-बड़ी मुस्कराती आँखें उग आती है। उसे लगता वो आँखें नहीं है। खुल जा सिम-सिम है। वो समा जाना चाहती है उस जादुई सिम-सिम के अन्दर...

ट्रैक खाली हो चुका था हवा की सांय-सांय और तेज हो चुकी थी पानी तेजी से बरसने लगा था। उसके पाँव मिट्‌टी-मिट्‌टी हुए जा रहे थे। जी चाहा अन्दर तक गीली हो जाए। मगर ऊपर का गीलापन लिए इतना लम्बा घर तक का रास्ता कैसे तय करेगी। गीले बदन पर मोटे-ओलों की तरह चिपकती असंख्य आँखे घर तक पहुँच जायेगी। ट्रैक के किनारे उगे एक दरख्त के नीचे वो कुछ देर ठहर गयी।

पानी जोरों से बरसने लगा। कपड़े लगभग बदन से चिपक चुके थे। उसने ओढ़नी खोलकर ओढ़ ली। नज़रें अब भी लाल डब्बों के पीछे खाली ट्रैक पर इधर-उधर भटक रही थी।

घर पहुँचते-पहुँचते दीवा-बत्ती का वक्त हो चुका था। बारिश के बरसते कुछ ज्यादा देर हो गयी थी। गीले कपड़ों से बदन में कुछ लिजलिजापन महसूस होने लगा था। मुक्ति चाहिये उसे, अपने इस भीतर बाहर की चिपकन से, छटपटाहट कई बार उछाल मारने लगती है।

दरवाजा ठेल कर वो अन्दर आई। कमरा अन्धेरे से भरा हुआ है। अभ्यस्त हाथों से दीवार पर लगे बटनों को दबा देती है। मगर अंधेरा ज्यों का त्यों... घबराहट होने लगती है उसे अंधेरे में दम घुटता है उसका, अंधेरे के भी कई मायने होते है ना... मगर वक्त नहीं जो मायने ढूढे... बाहर नजर फेंकती है, बाकी घरों में रोशनी है। फ्यूज उड़ गया क्या ? दीप कहाँ हैं ?... ''दीपदीप'' वो आवाज लगाती है... उसके माथे की लकीरे अन्धेरे में भी पढ़ी जा सकती है। वो पर्स से मोबाईल निकाल कर बटन दबाती है. बारीक सी दूधिया रोशनी कमरे में टुकड़ा-टुकड़ा हो कर बिखर जाती है।

''मम्मा लाईट कट गयी, आप कितनी देर में आते हो, मुझे भूख लगी है।''

वो आवाज की दिशा में पलटती है। दीप खड़ा है, उसका प्यारा सा बेटा. औरत, माँ में बदल जाती है... मन ममता से भरने लगता है। मगर लाईट कैसे चली गयी?... वो मोबाईल की रोशनी में मोमबत्ती ढूंढने लगती है। मोमबत्ती नहीं मिलतीं वो चिढ़ जाती है। गीले कपड़ों से पानी टपक-टपक कर फर्श भी गीला कर रहा है।

वो झुझला कर पर्स से एक नोट निकालती है। ''जा लाला की दुकान से एक मोमबत्ती और माचिस ले आ... मैगी भी ले आना... सुन

मोमबत्ती बड़ी वाली दो लाना...'' पैसे ले कर दीप झट से बाहर निकल जाता है।

वो टटोल कर अलमारी से सूखे कपड़े खींचती है। और बाथरूम में घुस जाती है। दीप के आने तक खुद को और फर्श को मोबाईल की टुकड़ा रौशनी में सुखा चुकी है।

मोमबत्ती की रौशनी कमरे में भर जाती है। वो अभ्यस्थ हाथों से खाने के जुगाड़ में लग जाती है।

''लाईट कैसे कट गयी?'' -वो सवाल उछालती है. जबकि जवाब जानती है।

''मुझे नहीं पता। स्कूल से आया तो लाईट नहीं थी। आंटी कह रही थी हमने बिल नहीं भरा इस लिए वो लाईट काट गये।''

हाँ वो जानती है, पिछले चार एक साल से बिजली पानी का बिल नहीं भर पायी है। कैसे भरे।? कुकुरमुते की तरह नित उग आयी जरूरतों में ही अपने मुठी भर पैसों को खर्च कर देती है।

''चलो देखते हैं'' वो खुद से कहती है। मन और तन दोनों चाय की दरकार कर रहे हैं। वो मैगी के साथ नमक, अजवाईन का परांठा दीप के आगे परोसती है। दीप की आंखों के जुगनू उसे सन्तुष्टि से भर देते है। खुद भी चाय का गिलास और अजवाईन का पराठा लेकर पास ही कम्बल खोल कर बैठ जाती है। बाहर पानी फिर बरसने लगता है।

कमरा अंधेरे से भरा है। दीप बगल में सोया है। टटोल कर कम्बल को ठीक से ढक देती है। बाहर पानी की टपकन जोरो पर है। रात धीरे-धीरे सरक रही है। सालों से उसकी आदत है. वक्त को उसने पल-पल अंगुलियों पर गिना है। दिमाग थकता है तो खुद ही सो जाता है। वो खुद चैन से कभी नहीं सोती, चैन से उसका कुछ चुनिन्दा पलों का ही वास्ता है।

बिजली कट गयी, ये सोच जहन में आते ही कमरे का अंधेरा ओर गहरा लगने लगता है। वो करवट बदल लेती है। और जहन से इस ख्याल को झटक देना चाहती है. आसान नहीं है, मगर अपने सारे जोड़-घटाव, गुणा कर चुकी है. कहीं से कोई उम्मीद नहीं है। वो बन्द आंखों को और तेजी से बन्द कर लेना चाहती है ताकि सोचना भी बन्द हो जाए... फिर यूं अचानक अन्धेरे में दो मुस्कराती आंखें उतर आती है... एक उजास सा भरने लगता है उसके अन्दर...

''जब सारे रास्ते बन्द हो, साधिकार मेरे पास चली आना''-

स्वर चाँदी की घंटियों सा उसके अन्दर गूँजता है, इन तृप्त करते शब्दों के जाले से वो बाहर ही नहीं आ पाती कीट पतंगों सी फंस जाती है। फिर डूबने लगती है देह के उस जलते समन्दर में... एक प्यास जगने लगती... महसूस होती है उसे अपने प्यासे होठों पर किसी के लबों की सरसराहत एक मिठास लिए देह गर्माने लगती है ... महकती देह के पास असीम तृप्ति उसके अन्दर उतरना चाह रही है, बन्ध रही है अदृश्य बाहों में, आतुर है खुद को समर्पित करने को, भोग्य बन जाती है उसे अदृश्य, आदिम अबुझ सम्मोहन के आगे जलते जिस्म में एक एक कर खजुराहो की सम्भोगरत् रतियाँ उतरने लगती है. बेर्पदा - बेपरवाह सी उस सुख के चर्मोत्कर्ष तक पहुँचने को आतुर असंख्य सम्भोग मुद्राओं की स्वामिनी बन जाती है, अनगिनत होठ उग आते हैं जिस्म के इंच-इंच हिस्से में अनगिनत धाराएं बह उठती है उस पत्थर हुई देह की दरारों से।

प्यासी नदी सी बहने लगती है. निरन्तर अग्रसर जैसे प्रतीक्षारत हो कोई भगीरथी अपने करोड़ों श्रापित पुरखों के साथ जो मुक्त होना चाहते है इस जन्म-मृत्यु के चक्र से, बहते-बहते या जाना चाहती है, अपना ध्येय, अपना ठौर जहां मिल जाए तृप्ति का चरम और समाजाए अजन्ता के भित्तीचित्रों में जहॉ निर्वाण प्राप्त योगी ने प्रस्तुत है अपनी पूरी ऊर्जा के साथ...

बिल उसके हाथों में लहरा रहा है. वो बेनियाजी से पर्स में रख लेती है। जहन में कई चेहरे अटकने लगते है। किससे मदद माँगे? उम्मीद ना के बराबर है। फिर भी कुछ तो करना ही है। दीप स्कूल जा चुका है। उसे भी दवाखाने जाना है। मगर आज नहीं जायेगी बिल का कुछ करना है। आईने के आगे खड़ी बाल संवार रही है। उसकी आदत है खुद पर ऊपर से नीचे तक नजर मारने की। पैंतीस पार की देह तो ऐसी ही होगी ... कइयों से काफी-काफी बहेतर है ...

कसावत बनी हुई है। आँखों में कुछ है जो शरारत बन के होठों पर उतरता है और फिर देह में उतर जाता है. देह लहराने लगती है समन्दर के ज्वार-भाटे के उठान सी और कभी निश्चल झरने सी मगर ये बहते झरने प्रतिबन्धित है। यूं ही कोई आता जाता अपनी प्यास नहीं बुझा सकता।

आज जान के उसने अपना काला लिबाज पहना है फबता है। उसकी दुधिया देह पर। बालों की ढीला बान्धा है। लटे थोड़ी देर बाद खुद-ब-खुद चेहरे पर झुक जायेंगी। आँखों में काजल के डोरे खींचती है। गले में दुपट्टा डाल कर खुद को निहारती है. उसे महसूस होता है जैसे वो कोई चारा है। एक उदास-सी मुस्कुराहट उसके होठों पर खिंच जाती है।

वो एक नई बसी कॉलोनी है। रेसकोर्स से बस कुछ किलोमीटर की दूरी पर उसका दिल जोर-जोर से धड़क रहा है। कदम वापिस मुड़ जाना चाहते है। मगर वो जैसे खुद को घसीट रही है। रक्तचाप कम हो रहा है। खुद को चट्टान सा मजबूत दिखाती है मगर अन्दर से दरक-दरक जाती है।

मलिक साहब की शानदार कोठी सामने ही है। सतारूढ़ पार्टी के जानेमाने कार्यकर्ता है। काफी चलती है। उनका दरबान उसे पहले से जानता है। कुछ अजीब नजरों से घूरता है। पता नहीं हर्मदर्दी से या मजाक से अब ये बातें उसके लिए मायने नहीं रखती। लम्बी आर्हता पार करके ऑफिस के सामने पहुँचती है। वो पलट जाना चाहती है। मगर प्रत्यक्ष में एक गहरी सांस लेती है। सूख चले होठों पर जीभ फिरा कर गीला करती है। अंगुलियों से चेहरे पर झूलती लटों को कानों के पीछे अटका लेती है। दुपट्टा आगे फैला कर लपेट लेती है। खुद को सयंमित करके अन्दर झाँकती है। शानदार ऑफिस के वातानुकूलित वातावरण में एक अजीब सी घुटन है। महंगी कुर्सी पर एक सस्ती शख्सीयत का मालिक विराजमान है। वो झुक कर नमस्ते करती है। उसे अपने आप ही अजीब लगता है यहाँ आ कर।

''अरे आओ मैडम आज हमारे गरीबखाने में कैसे?''

मलिक काईयां सी हँसी हँसता है. उसे लगता है जम जायेगी। आदतन फिर प्रत्यक्ष में होंठ मुस्कराहट में हिलते है। मलिक साहब इशारा करते है। वो कुर्सी पर जैसे चिपक जाती है।

''हां जी क्या खिदमत करें आपकी''- मलिक जैसे आँखों से पी लेना चाहता है। टेबल पर रखी घंटी बजा देता है। तुरन्त एक लडका



हाजिर होता है। कोई बाईस-तेईस साल का पतला दुबला कुम्लाहया सा लडका। ''सभी का खून पी लेता है ये'' वो मन ही मन सोचती है। अपनी ही बात पर उसे हँसी आती है. मगर आँखों में पी लेती है।

''क्या लेंगी?'' मलिक साहब पूछते है। वो कुछ बोले इससे पहले ही वो दो चाय का ऑडर दे देते हैं।

वो उंगुलियों में पहनी अंगूठी को घूमाने लगती है. मलिक की नजर उस पर मानों चिपकी हुई है। जिन्हें वो महसूस कर सकती है। ''यहाँ आई ही क्यों कुछ नहीं करेगा कमीना'' वो खुद से बुदबुदाती है। गला सूखा जा रहा है। अजीब सी सिरहन नसों में आ जा रही है. उसे लगता है लकड़ी का ठूठ बन कर कुर्सी पर रखी मात्र है। जिसे उठा कर मलिक फेंकवा देगा किसी अंधेरे कोने में और जोर जोर से अपने मन मुताबिक छीलेगा वो, दर्द से कराह भी नहीं पायेगी।

लड़का चाय मेज पर रख जाता है। उसकी तन्द्रा टूटती है। अकसर ऐसा ही होता है। उसके साथ ऐसे पलों में उसके अन्दर तह पर तह जमती चली जाती है। मलिक अब भी उसे मुस्कराता हुआ मजे से धूरे जा रहा है। वो कुर्सी पर ही पहलू बदलती है। कैसे बात शुरू करें? फिर खत्म, और निकल भागें यहां से। वो इसी उधेड़बुन में लगी हुई है।

मलिक उसकी तरफ चाय का कप सरकाता है और खुद मोटी गद्देदार रिवॉलविंग चेयर की पुश्त के साथ सिर टिका कर अपना हाथ ठोढी पर रख कर उसे घूरने की प्रक्रिया को जारी रखता है।

बाहर बारिश पड़ने लगी है। हवा में तेजी है। बादल भी गड़गड़ाने लगे है। उसे पसन्द है बादलों का यूं आपस में बतियाना, रोमांचित हो उठती है वो... कमरे की बाई तरफ शीशे की बड़ी सी खिड़की है जिस पर फूलों वाले कीमती पर्दे लगे हैं, पर्दो में कहीं कहीं गेप है। उन खाली जगहों से वो देख सकती है बारिश की फुहारों को। उसका मन चाहा पर्दो को पीछे सरका शीशों को खोल दे और भर जाने दे हवा को अन्दर, सब कुछ घुमने लगे चक्कर घिन्नी सा ... मगर वो चाय सिप करने लगती है. ..

"तो आज कल कँही काम रही हो?"

मलिक ने चाय का बडा सा सिफ सुड़कते हुए पूछा।

''जी'' छोटा सा जवाब।

"कहां?"

"एक दवाखाने में।" उसने फंसे से स्वर में कहा।

''दवाखाना''-मलिक हँस पड़ा हँसते-हँसते उसकी आँखें और काइयां हो गयी।

"क्या मिलता है वहां ...मेरा मतलब सेलरी''

वो चुप रहती है। उसका जी चाह रहा है चाय का कप उस पर गिर जाए और वो कपड़े साफ करने के बहाने वहां से उठ जाए ..या फिर कप मलिक पर दे मारे मगर दोनों में से कुछ नहीं हुआ।

"कितनी बार कहा है तुमसे, इधर-उधर ना भटको यहीं चली आओ काम की कमी है यहाँ? मगर हम तो तुम्हें विलेन नजर आते है ना. ..''

और जाने कितने विलेन फिल्मी पर्दे से उतरकर जहन में चक्कर घिन्नी करने लगते है। मलिक बोले जा रहा है मगर उससे बेखबर वो खुद से बकझक किये जा रही है।

"हाँ मैडम''...वो चौकी, मलिक कुछ कह रहा था। वो जाने कहाँ अपने अन्दर ही विचरने लगती है। किसी दिन अन्दर बाहर का फर्क मिट जायेगा और पिटेगी खूब। अच्छा ही है मन की आवाज सुनाई नहीं देती।

"मैं बहुत परेशानी में हूँ'' वो बामुश्किल हो कह पायी।

दरअसल बिजली कट गयी है... और बिल बहुत ज्यादा है, अगर आप सरकारी हेल्प दिलवा देते तो ....'' वो मदद को जानबूझ कर हेल्प बोली जैसे हेल्प बोलने से मदद के बोझ और शर्मिन्दगी में कुछ कमी हो गयी हो।

"हाँ...हाँ क्यों नहीं ...हम किस लिए बैठे है यहाँ? कितना बिल है ...?'' मलिक की आवाज में लापरवाही वाली खनक थी।

उसने झिझकते हुए बिल मेज पर सरका दिया।

"अठाईस हजार! कब से नहीं दिये हो भई'' मलिक बिल को झंडी सा लहरा रहा था। वो फिर खामोश!

"क्या चाहती हो, हम क्या मदद करें... भई बिल तो देना ही पड़ता है...''

"कुछ बिल माफ करा दीजिऐ ना''... वो धीरे से बोली।

सब हो जायेगा। कुछ समझती तो हो नहीं। अरे कब तक उसके पीछे बैठी रहोगी? वो तो ऐश कर रहा है और तुम धक्के खा रही हो। जवानी लौट कर नहीं आती। मिला क्या तुम्हें खुद को गला कर अरे अन्धेरा तो अब है घर में। तुम्हारे दिन-रात तो वैसे ही अंधेरे है ...''

मलिक बोलता जा रहा है। उसके शब्द गर्म हो कर कानों के रास्ते अन्दर घुसने लगे है. वो पकने लगी है। इसी लिए नहीं जाती कही मदद माँगने ... उसके साथ जुड़े वुजूद के बखिये उधेड़ने लगते है लोग, साथ ही वो छिलती चली जाती है।

"हमने सुना है। बड़ी सुन्दर है, जिसके साथ आज कल बसा हुआ है..''

मलिक के शब्दों का चाबुक जोर से पड़ा... वो तटस्थ बैठी है... उसे अपनी खाल, खाल नहीं लगती, चमड़ा हो गयी है... अब एक एक कर तहे फिर जमने लगी है. चेहरा तपने लगा है... ऐसे वक्त बन्द मुँह वाले ज्वालामुखी में तबदील हो जाती है... उसका लावा उसके खुद के अन्दर बहने लगता है.. महसूस करती है वो दिमाग की नसों की धड़कन... सारी नसें एक-दूसरे से चिपकती हुई दिल की तरफ मुड़ जाती है, महसूसती है वो नसों में गर्म लावे का बहना। दिल खून से गन्दगी की जगह लावा साफ करने लगता है... जिस्म के कई हिस्सों में धड़कन होती है... वजूद भटटी-सा भभकने लगता है. जला देना चाहती है उसमें सबको, समाज के ताने, उलहाने और मान्यताओं को और इन से पहले उस गदेले वजूद को, जो उसके जिस्म के कई हिस्से पर प्रतीकों के रूप में चिपका रहता

है।

"आता है क्या कभी-कभी? कम्बख्त समझता नहीं क्या खो रहा है..."

मलिक शब्दो को जैसे चबा रहा था।

वो फिर अपने में खोने लगती है। याद हो आता है उसे खुद का शुरू होने से पहले खत्म हो जाना। जिस्म के ओर पोर से बहता दर्द ... गर्म बिस्तर पर अपना ठंडा बुझा हुआ वजूद...

"हम बहुत मानते है तुमको... तभी तो समझा रहे हैं वर्ना हमें कोई कमी थोड़े है..."

मलिक दोनों हाथ सिर तक ले जाकर लहराने लगता है.

वो फिर डूब रही है तेल के समंदर में... अजीब सी चिपचिपाहट से लबालब भरती हुई। विवाह वेदी पर सुर्ख लिबास में लिपटी उससे बन्धी हुई वो फेरे उलटने लगती है... खूरचने लगती है उस सुर्ख रंग को जो उसके जिस्म के कई पर्दावार हिस्सों से कितनी बार बह जाता है। बाई चार के स्नानघर की नाली में और बहता है वो अनदेखा वजूद और कतरा कतरा वो भी बहती है...

"बच्चा बहुत प्यारा है तुम्हारा, हमें तो अपना ही लगता है... काहे उसे भी ठोकरें खिलवा रही हो अपने साथ... हॉस्टल में रखवा देते है... भई रईसों के बच्चे पढ़ते हैं वहाँ... कुछ जीने का शऊर सीखेगा... कही अपने बाप जैसा..."

मलिक मेज पर मानों फैल गया था सिर अजगर सा रेंग रहा था आँखें और चिमटी सी हो गयी थी।

उसके पैरों में सरसराहट होने लगती है... वो ममी होती जा रही है। लिपटती जा रही है पट्टी दर पट्टी...

दो छोटे हाथ खींच रहें हैं उसे... झकझोर रहें हैं... दम घुटने लगता है...

''हरामी सारा जेवर भी ले भागा, तुम कहो तो आज रपट लिखवा दे पुलिस के डंडे पडेगें तो अक्ल ठीकाने आ जायेगी... भई हमसे तो तुम्हारा दुख देखा नहीं जाता...

मलिक पूरी तरह अजगर में बदल चुका है। उसे अपने हाथ में लिजलिजापन महसूस होता है।

"अच्छी-खासी तो हो... कुछ अच्छा पहना ओढ़ा करो, हम है ना कुछ भी मन करे। हम से कहा करो, वैसे मन तो करता होगा ना... भई जिन्दा जी को सब चाहिए... हमसे कोई पर्दा ना रखो... एक दूसरे की जरूरत समझनी पढ़ती है ना"

मलिक चिपटा जा रहा था। उसने जोर की सांस ली। खुद को झटके के साथ खोल के बाहर खींचा। कुर्सी से खुद को अलग करके मलिक को यूं घूरा जैसे अपने अन्दर का सारा लावा आँखों के रस्ते उस पर उलट देगी और जड़ करा देगी उसे उसकी बदनियती के साथ इतिहास का हिस्सा हो जाने के लिए।

लगभग भागती हुई वो बाहर निकल आयी, बूंदे उसके तपते वजूद पर पड़ते ही तड़तड़ाने लगी. वो जोर-जोर से सांस लेने लगी जैसे कोफिन से बाहर निकली हो. गीली-गीली सी वो, गीली काली चिकनी सड़क पर बह जा रही है दिशाहीन सी।

व्यथा ही बीत गया दिन। कमरे में मोमबती की पीली रौशनी धुंध की तरह भरी हुई है. वो घुटनों में सिर दिये सिमटी सी बैठी है। दीप बगल में उलट-पलट रहा है। वो बोलना बतियाना चाहती है मगर दिमाग की तारों में करंट दौड़ रहा है।

अगल-बगल के घरों में रौशनी भरी पड़ी है। उसे रौशनी चाहिए अपने लिए अपने बेटे के लिए मगर कहां से जुटाये इतना रुपया? क्या उससे माँग लूँ, मना तो नहीं करेगा ना...? मगर क्या सोचेगा? जो सीधा-सीधा मना ही कर दिया तो क्या मान रह जायेगा? अरे नहीं, इतना तो हाथ का मैल है उसके लिए और उसका मैल अपने स्वाभिमान पर मल लूँ...! उससे तो अन्धेरा अच्छा...! नहीं... नहीं कुछ तो करना होगा... वो असंख्य सवालों- जवाबों के पजल में व्यस्त है...

मोमबती बुझने लगती है। उसका जी चाहा बुझ जाए। कौन कबड्डी खेलनी है। मगर अभी वक्त कहाँ ज्यादा हुआ। रात गहराने में तो वक्त है। जबरदस्ती का अंधेरा सांसों में भर कर घुटन पैदा करता है।

मोबाईल टटोला- वो भी बन्द है। बत्ती नहीं तो चार्ज कहाँ से हो। उसे जैसे तलब महसूस होने लगती है। पड़ोस के घर जा कर चार्ज करा आये अभी जागे तो होंगे। नहीं-नहीं अच्छा नहीं लगता है। रात बिरात किसी के घर जाना, लोगों के आदमी घर में होते है। क्या सोचेंगे? इसे इतनी रात गये कहाँ फोन खड़काने है? वो खुद से ही सब कुछ कहने की आदी है।

"मम्मा हमारी लाईट कब आयेगी?" दीप जगा है अभी।

"मेरा बच्चा सोया नहीं।" वो ममता का हाथ फेरती है दीप के सिर पर।

"कुछ करो मम्मा, लाईट के बिना अच्छा नहीं लगता" दीप उसके घुटनों में सिर छुपा लेता है।

"हाँ मेरे बच्चे, तू फिकर ना कर कुछ करती हूँ ... माँ है ना ..."

वो हमेशा ढाल सी तनी रहती है उसके आगे। तनी तनी सी जंग लड़ा जा रहा है उसमें। जैसे पुरातन काल से पड़ी हो किसी तहखाने में...

दीप में खुद को देखती है और खुद में माँ को, यूँ ही तो मां की गोद में मचल कर अपनी ख्वाहिशों की फेहरिस्त खोल देती थी और वो मुस्करा कर आश्वस्त करती थीं। हाँ, अच्छा, जरूर जैसे शब्द उसे आकर्षित करते है। गति का बोध होता है। सकारात्मकता का आभास।

रात टहलती हुई बीत रही है। दीप सो गया। वो हौले से उसे कम्बल ओढ़ा देती है। बारिश फिर पड़ने लगी है। पहाड़ों और घाटियों के मौसम ऐसे ही होते है. उसके अन्दर भी खुदी हुई है। छोटी-बड़ी घाटियाँ, ऊँचें-नीचे पहाड़, पठार और जाने कितने मरुस्थल। कोई क्यों नहीं उसके भूगोल को जाँचता परखता। वो सिर तक कम्बल खींच लेती है। बाहर आँगन में शायद कोई कुत्ते का पिल्ला चढ़ आया है। उसके मिमयाने की आवाज उसे सहला रही है। चलो कोई और भी है जो जगा है।

बड़ी ढीठ होती है आदतें वो फिर सिरहाने के नीचे हाथ सरका कर मोबाईल बाहर खींच लेती है. बिना करंट का बुझा हुआ निर्जीव निष्प्राण सा एक उपकरण मात्र... मगर उसके लिए तो जादू की डिबिया है। जिसमें बन्द है उसकी अधखुली अंगड़ाइयाँ उम्मीदों की सुध लेती है। एक दिन इसी में से बाहर आया था वो जादूगर।

यूँ ही कभी कभी अपनी तकलीफों को किनारे करने के लिए किताबों में घुस जाती है। उस दिन भी ऐसा ही हुआ था। एक रचना कुछ

ज्यादा पसन्द आ गयी और बेइरादा हौसला अफजाई का मैसेज भेज दिया।

"मैसेज सेन्ट..."

उम्मीद से परे कुछ देर बाद जवाबी मैसेज आ गया।

उसके होठों पर मुस्कराहट खिंच गयी थी। दूसरे दिन पहली फुर्सत में उसने एक मैसेज और चिपका दिया था। जवाब तुरन्त आया था..." मेरी अगली रचना सम्भव हो जो जरूर पढ़ियेगा आपकी प्रतिक्रिया का इन्तजार रहेगा... आपका सादर... अभिनदन्न..."

उसे अच्छा लगा था। यूँ खुद को बिना खोले भी हम किसी से रूबरू हो सकते है. फिर एक और मैसेज टाईप हुआ।

"लेखक जादूगर होते है..."

कुछ पल टप टप करते बीतने लगे और मिनट से जा मिले। मिनट दस की गिनती पर पहुँचे तभी स्क्रीन चमकी सुरीली ट्रिन ट्रिन की आवाज उसका दिल धड़का गयी। तुरन्त मैसेज खोला... "नहीं... दीवाने होते है..."

वो बेसाख्ता खिलखिला कर हँस पड़ी थी। देर तक हँसती ही रही। जब तक कि आँखों से आँसू नहीं निकल पड़े उसने खुद को आईने में देखा जैसे सदियों बाद इतना हँसी थी। आँखों में कुछ टिमटिमाने लगा था। होठों पर एक सुनहरी परी बैठ गयी थी। वो जगने लगी थी। जैसे सदियों से कोई ममी मिस्र के पिरामिडो में बन्द चिरनिद्रा में विलनि हो।

अब जब तब सोया हुआ मोबाईल जगने लगा था. वो बेताबी से गुलाबी लिफाफों का इन्तजार करती स्क्रीन चमकते ही उन्हें बाहर खींच लेती।

उस दिन दवाखानों में ही फोन खनखना उठा था. नम्बर देखा, वही था। उसने बंद कर दिया। हिम्मत ही नहीं हुई। दिलजोर जोर से धड़कने जगा। हिम्मत ही नहीं हुई लिफाफे को खोल कर देखने की, डॉ. बेनर्जी चश्मा नीचे किये उसे ही देख रहे थे।

"जरूरी फोन है तो उठा लो "

"नहीं... कम्पनी का था" वो झूठ भी बोल सकती है। परी फिर आस पास मंडराने लगी थी। घर आ कर पहली फुर्सत में मैसेज किया था।

"मैं ज्यादा बातें नहीं कर पाती... सो..."

"कोई बात नहीं सुन तो सकती है।"

"डर लगता है..."

"किससे?"

वो खामोश हो गयी टप टप कर पल सरकने लगे। सक्रीन फिर चमकी।

"देख लिया ... कहीं सींग तो है नहीं हमारे..."

वो मुस्कराते हुए खामोश ही रही.रात एक अजीब सी खुमारी में गुजर गयी। सुबह आँख खुली तो गुलाबी मैसेज इन्तजार में था

"वो बेसाख्ता क्या मुस्करा दिये।

मेरे सहरा में बहार आ गयी। गुडमार्निंग।

परी फिर होठों पर आ बैठी जी चाह खुल कर अंगड़ाई ले।

उसका इनबाक्स भरने लगा था। रेशमी अहसासों से और एक दिन जब रहा नहीं गया तो...

"बात कर सकती हूँ..."

और जवाब में मोबाईल खनखना उठा था खुद को समेट कर बडी हिम्मत जुटा कर कॉल रिसीव का बटन दबा पायी थी।

"हैलो"

"हां जी... काहे परेशान हो? हम कोई भूत तो नहीं जो बात करते डरा जाए..."

उधर से आवाज कंचों की तरह खनखनाती हुई उस तक पहुँची थी। वो अपनी स्थानीय भाषा में बात कर रहा था।

वो मंदिर की घंटियों सी हँसती चली गयी थी। अब अनगिनत लिफाफे उसको इनबाक्स में इकट्ठे होने लगे थे। वो बदलने लगी थी और बदलने लगा था उसके आस पास का आलम। सालों बाद जैसे शरीर में सांस आ गयी थी।

वो उसके अन्दर फिर से यकीन भरने लगा था। उसके साथ भर रहा था। अपने प्यार और संबल का रंग। वो रंगने लगी थी। वो महसूस करने लगी थी कि इस दुनिया में कोई है जो उसकी परवाह करता है।

उसके मिनट, घटों में बदलने लगे थे। वो बेसुध हो कर उसे सुनती, महसूसती... दिन उससे शुरू होता और रात उसी पर खत्म होती। कतरा कतरा वो पूरी शालीनता के साथ उसमें समाता जा रहा था।

अब उसे रेलवे स्टेशन का रास्ता ज्यादा आने लगा था. कहाँ वो दवाखाने की नौकरी छोड़ने वाली थी। दवाखाना घर से काफी दूर था और सेलरी बस नाममात्र की थी। उससे पहले स्कूल में थी। छोड़ देनी पड़ी वो नौकरी या यूँ कहे बहाने से निकाल दी गयी थी। क्योंकि उसकी जगह एक कम उम्र स्टाईलिश ट्रेंड टीचर रख ली गयी थी। मजबूरी में दवाखाने की नौकरी करनी पड़ी थी, वो दूसरी नौकरी की तलाश में थी, मगर जब से गुलाबी लिफाफे गुनगुनाने लगे थे लाख मुश्किलों के बावजूद उसे वही नौकरी भाने लगी थी।

दवाखाने का एक रास्ता रेलवे लाईन के बीच से भी निकलता था. और वो चुम्बक सी उन डब्बों से चिपकी थी।

कितना सुख मिलने लगा था जैसे टूटी हुई गाड़ी में पहिया जुड गया हो। बिना कुछ लिए दिये ही वो उसका सर्वेसर्वा बन गया था। कितना संबल था उसके शब्दों में...

"मुझे बताओगी नहीं तो कैसे जान पाऊँगा क्या परेशानी है? अधिकार है तुम्हारा मुझ पर, बेहिचक कुछ भी माँग लिया करो... हम बहुत दूर तक साथ जायेंगे प्रिय..."

कभी गुलाबी लिफाफे में लिखा होता...

"तुम मेरी धुव्रतारा हो " और वो आकाश में धुव्रतारा टटोलने लगती।

किसी में लिखा होता। "हम एक दिन अवश्य मिलेंगे...सम्भव हुआ तो ब्लूमून को" वो हँस देती। "चाँद नजर आते है" वो किसी टीचर की तरह विस्तार से बताता चला जाता और वो खो जाती किसी और कालखण्ड में...

वो खुद को जरी वाली बनारसी भारी भरकम साड़ी में गठरी बना पाती। खजुराहों की मुर्तियों के सारे अलंकरण उसे अपने अंगों से चिपके लगते। माथे पर बड़ी-सी बिन्दी, आंखों में कोरों तक खिंचा हुआ डोरों वाला कॉजल, कमर पर चाँदी की चौड़े फूलों और मोती झालरों वाली करधनी, पैरों में ये मोटी-मोटी पाजेब, बिछुए और लाल-लाल आलते में रचे बसे पाँव। हाथ भर के घूंघट में वो पसीने चुह चुहाती हुई पटरी पर

उसके साथ मंडल में बैठी जाने कितने देवी देवताओं को पुजे जा रही है। चाँद-सूरज पूज रही है धरती आकाश पूज रही है। और वो देवता-गण, पीपल बरगद और समस्त दिशाओं को साक्षी मान कर उसकी माँग सिंधूर से भर रहा है। वो लजाई सकुचायी गौरान्वित सी उसके साथ गठबन्धन में बंधी कुल देवता को माथा टेक रही है।

सोहर, कजरी, चौत सब समझ आने लगे थे उसे सिर ढके पल्ले के छोर को होठों के बीच दबाये, आलता मले पाँवों में पायल छनकाती उसकी साइकिल के हत्थे पर लजाई सकुचायी सी बैठी वो दशकों पूर्व के गाँव, मोड़ों, खेत-खलिहान, कुओं बावड़ियों, बाग बगीचों में धूम आती।

सिहर सिहर जाती थी वो उस अनजाने जीवन को सोच कर, जो उसने ना कभी जीया था ना देखा था. वो उसे साधिकार बड़े मन के साथ बुलाता और सब कुछ छोड कर सवार हो जाना चाहती उन लाल-लाल डब्बों में। मगर नहीं जा पायी, लेकिन उसके शब्दों में वो अन्दर तक तृप्त होने लगी थी। निश्चल अविरल नदी सी बहे जा रही थी। मदमस्त, मदमाती गुनगुनाती सी जैसे दिशा मिल गयी हो.

अपना ध्येय मिल गया हो। उसे अब समझ आता विशाल, विराट गगां का शिव की जटाओं में हमेशा के लिए बन्ध जाना। प्रेम शायद ऐसा ही होता है अपना कुछ रहता ही नहीं।

दिन हफ्ते और महीनों में समय गुजरने लगा। और इसके साथ ही गुजरने लगा उसका मधुमास का मौसम, जो उसने चिरस्थायी समझ लिया था खयालों के भी कई बार हम आदी हो जातें है और जब वो टूटते है। तो उनकी किरचन वजूद को छलनी कर देते है।

जिस मंडप में वो खुद को बैठा देखती थी। वहाँ बरसों पहले कोई और बैठा था और उसे एतराज था उस अहसास पर जो उन दोनों के बीच पनप रहा था। खतों के सिलसिले खत्म होने लगे थे। वक्त पर पहरे लगने लगे थे। और धीरे-धीरे खतों की गुलाबी रंगत उड़ने लगी थी। नशे से बाहर आये शख्स की तरह वो बैचेन रहने लगी थी। आदतें भी नशे जैसी होती हैं।

कुशा कई बार कह चुकी थी उसके डिपार्टमेन्ट की नयी ब्रांच खुल रही है। सेलेरी भी अच्छी देंगे। उसे भी पैसों की सख्त जरूरत है। दवाखाने से मिलने वाली तनख्वाह ना के बराबर है मगर कौन समझाए दिल-ए नादां को...

वो अब उसे छोड़ चुका है। मगर वो लाल डब्बे उसे नहीं छोड़ते, दिल में जाने क्या कसमसाता रहता है. क्यों ईजात नहीं होता कोई इलाज इस बीमारी का।

"परवेज अजमल का शेर बेसाख्ता उसके जहन में कौध जाता है (''बस इस गुमान पर उसको भुला नहीं पाया। मैं एक रोज उसको याद आने वाला हूँ।)

दिन, हफ्ते और हफ्ते महीनों में तब्दील हो चुके थे। मगर उसकी दीवानगी में कोई तब्दीली नहीं आयी थी। उसके दिल में पतझड़ उदासी का मौसम मानों ठहर सा गया था। दीप जिन्दगी की हकीकत था। जो हर वक्त आईना बन कर सामने खड़ा रहने लगा था। पुराने घिसे कपड़ों में अपने बच्चे को देखती तो कलेजा मुँह को आ जाता। स्कूल की फीस के लिए हर महीनें जाने कितनी बार क्लास में खड़ा हो चुका था और अब ये अन्धेरा...

उसे ये अन्धेरा अपने आस पास से उठता महसूस होता है. काला गहरा-गाड़ा अन्धेरा, जो धीरे-धीरे दीप की तरफ बढ़ रहा है। वो छटपटाने लगती है। मोड़ना चाहती है उस धुएं की दिशा, मगर कहाँ? किसकी तरफ? खुद पे नजर डालती है. धुएं का उलट पीछा करती है। और खुद तक लौट आती है। आँखें फटी-की-फटी रह जाती है। वो तो एक सीली-सीली सी धूनी में तब्दील हो चुकी है। जो ना ठीक से जलती है ना बुझती है। वो झाड़ देंना चाहती है उस राख को... उस धूनी को मशाल में बदलना होगा. जो रौशनी दे उसके बच्चे को। ये भी तो प्रेम ही है। दीप उसके वजूद का एक हिस्सा है। कैसे मिट जाने दे उस नन्हे जीवन को. ..

धीरे-धीरे बड़ रही है वो अजन्ता के भिती चित्रों की तरफ। गुफा के गहन अन्धकार में पैर जमाये वो आगे बढ़ती जा रही है। गुफा में उजास भरने लगा है। निर्वाण प्राप्त योगिनों के चित्रों से प्रकाश फूटने लगा है। अचानक दीवारों से उतरकर वो एक-एक कर गतिमान होने लगते है। उसकी धुनी के अंगारों में ऊर्जा भरने लगती है। धहकने लगती है वो अपने सम्पूर्ण गौरव के साथ उसके होठों से शब्द फूटते हैं... '' नहीं बुद्ध ! में सब त्याग कर निर्वाण प्राप्त नहीं करूंगी। मुझे गृहस्थ में रह कर ही निर्वाण प्राप्त करना है।''

वो बढ़ रही है आगे ...और आगे ...उसे पुनर्जन्म लेना होगा तभी कुछ नया रच पायेगी। मुक्त करना होगा उसको अपनी आत्मा को पुराने बन्धनों से औरत आ खड़ी होती है उसके सामने... कई बार प्रेम में छली गयी... हारी क्षतविक्षिप्त-सी काया लिए हुए ...... नहीं ...नहीं मृत्यु के उपरान्त भी जीवन होता है ... उसे भी सजानी होगी एक चिता ...बिजली की भांति दृश्य फिर आँखों के आगे गुजरने लगते है... दर्शकों पूर्व का कालखण्ड... गाँव की कच्ची पगदण्डी ...ढोलक की थाप, मंडल, हवनकुंड की अग्नि ... सिंदूर ...बिछुए ... उसकी अतृप्त देह और अन्त में वो जादूगर...

पसीने से तर-ब-तर वो बटनों से खेल रही है। गुलाबी लिफाफे एक-एक कर पढ़ रही है। आँखे-सावन भादों बनी जा रही हैं। आज वो जी भर बिलखना चाहती है... खतों की इबारतें आँसुओं में धुंधली पड़ने लगी है... सब खत पढ़े जा चुके है... खट्ट... बटन दबता है... डिलिट ऑल!

और उसके साथ ही वो अतृप्त, असफल, अचंभित प्रेम को आतुर, अनन्त कालों से प्यासी, अबूझ पहेली सी... अनन्त यात्रा पर जाने को थकी अपराजित देह लेट जाती है चिता। पर... हवा में मंत्र गूंजने लगता है ... "यं यं वापि स्मरन्भावं व्यजत्यन्ते कलेव्रम" चिता धू ... धू कर जलने लगती है. हे प्रिय ! तुम मृत्यु के वक्त जिसकी इच्छा करो वही तुम्हें अगले जन्म में प्राप्त हो !

शान्ति ...शान्ति ...शान्ति ...

भोर का उजला उजास कमरे में भरने लगा है। वो आँखे खोलती है। दरवाजा खोल आंगन में आ जाती है... दिमाग और दिल खाली-खाली से लगने लगते है... हवा दोनों के आर पार आ जा रही है ... एक लम्बे अन्तराल बाद सांस ले पा रही है अचानक घड़ी की सुइयों में गति आ जाती है...

46, ई. डब्ल्यू.डी. इन्द्रापुरम् कॉलोनी
जी.एम.एस. रोड, देहरादून, उत्तराखण्ड-248001,
मो.-9634415271

कहानी/अनुवाद

सिमला के देवता

● **मिशेल व्हाईट** अनु : **नेम चन्द अजनबी**

(शिमला का स्केंडल प्वांईट अपने नाम के कारण शुरू से ही लोगों में कौतुहल का विषय रहा हैं। इसके नामकरण के पीछे स्थानीय लोगों के अनुसार महाराजा पटियाला द्वारा वायसराय की बेटी का अपहरण बताया जाता है जिसके बाद अंग्रेजों द्वारा महाराजा पटियाला का शिमला में प्रवेश निषिद्ध कर दिया गया था। यह भी बताया जाता है कि इसके बाद ही महाराजा ने चायल को बसाया था। महाराजा पटियाला का नाम आते ही महाराजा भुपेन्द्र सिंह के साथ उनके रंगीन मिजाज के कारण इस कहानी को जोड़ दिया जाता है परन्तु इतिहास की पुस्तकें मौन हैं। महाराजा भुपेंन्द्र सिंह का जन्म 1891 में हुआ था और चायल को 1892 में बसाया गया था। इसलिये महाराजा भूपेन्द्र सिंह यह दुस्साहस करने वाले शख्स नहीं हो सकते। उनके पिता महाराजा राजेन्द्र सिंह ने ही चायल को बसाया था और वह उस समय युवा थे। हिमाचल प्रदेश के इतिहासपुरोधा रहे स्व. मियां गोवर्धन सिंह ने एक बार चर्चा में कहा था कि स्कॅंडल प्वाईंट की घटना का सम्बन्ध महाराजा भूपेंन्द्र सिंह से नहीं बल्कि महाराजा राजेन्द्र सिंह के साथ है। वैसे भी यह ज्ञात है कि महाराजा राजेन्द्र सिंह की एक पत्नी अंग्रेज थी और उसका एक बेटा भी था, परन्तु इसके बाद इन दोनों का क्या हुआ? न तो पटियाला खानदान ने ही कभी कुछ उजागर किया और न ही अभी तक ज्ञात इतिहास की पुस्तकों में इसका वर्णन मिलता हैं। मियां जी ने यह भी जिक्र किया था कि जिस लड़की का अपहरण महाराजा पटियाला ने किया था वह वायसराय की बेटी नहीं बल्कि ब्रिटिश सरकार के उच्च्य पद पर आसीन किसी सत्ताधिकारी की बेटी थी। यह अफसर उक्त घटना से पूर्व महाराजा पटियाला के यहां भी अपनी सेवाएं दे चुका था। कालान्तर में जनमानस ने सत्ताधिकारी अफसर के स्थान पर वायसराय और महाराजा राजेन्द्र सिंह के स्थान पर अपने रंगीन मिजाज के कारण विख्यात महाराजा भूपेन्द्र सिंह जोड़ दिया। ''मिशेल व्हाईट'' की कहानी ''सिमला के देवता'' उक्त घटना को मद्देनजर लिखी गई सत्य प्रतीत होती है। यह कहानी 13 अगस्त 1911 को 'न्यूयार्क ट्रिब्यून' की कहानी प्रतियोगिता में प्रविष्टी संख्या 43 के तहत संडे मेग्जीन में प्रकाशित हुई।)

आमतौर पर भारत के वायसराय गर्मी के मौसम से बचने के लिये सिमला (अब शिमला) जाया करते थे। इसी कारण सभी बड़ी-बड़ी सरकारी हस्तियों के साथ एक या दो विदेशी सलाहकार वायसराय कोर्ट में राजनयिक दूतवर्ग को नेतृत्व देने के लिये आते थे। फलस्वरूप यू एस ए के महावाणिज्य दूत कर्नल क्रूडन और उसके परिवार के नाम से पेलिटी होटल का एक हिस्सा नामांकित किया गया था। दूसरा हिस्सा मिस क्रूडन के आग्रह पर रखा गया था। हालांकि उसका मानना था कि गर्मियों के लिये सिमला कभी भी पश्चिमी घाट या दार्जिलिंग से बेहतर सैरगाह नहीं है। वैसे वह इससे पहले वहां नहीं आई थी, लेकिन युरोप से आते हुए उसे रास्ते में ही 17वीं ड्रेगून के लेफ्टिनेंट लॉर्ड मार्सटन, जो वायसराय का ए. डी. सी. था, नामक किसी युवक ने इसके बारे मे बता दिया था। जब वह युवक सिमला के वातावरण का वर्णन करते हुए सचमुच ही बहुत गहराई से आदर्शवादी चित्रण पेश कर रहा था, कोई भी इस बात की कल्पना कर सकता है कि जब खड़ी की गई दो डेक कुर्सियां उष्ण कटिबंधीय सागर में आसानी से सरकते पी एण्ड ओ नामक जहाज में एक दूसरे के समीप आ रही थी तो उस समय इसका क्या प्रभाव पड़ा होगा। इसलिये वह अपने मां बाप को विश्वास दिलाकर उन्हें सिमला ले आई थी।

शीघ्र ही सिमला तक दूसरे लोग, जो यहां कि आबोहवा के अलावा अन्य चीजें चाहते थे, भी आ गये। उन लोगों में नागरिक सेवाओं के डिप्टी और सहायक, सैनिक सेवाओं के कर्नल और मेजर, उनकी पत्नियां, पुत्रियां तथा सत्ताधिकारी उनके नोकर चाकर शामिल थे। सभी इस उम्मीद से आते थे कि शायद कुछ भाग्य से

उन्हें वायसराय के साथ व्यक्तिगत रूप से पांच मिनट बातचीत करने को मिल जाये। खैर, अन्ततः पड़ोसी राजकुमारों के विरुद्ध पूर्व में लगाये गये सरकारी प्रतिबन्ध को कुछ शर्तों के साथ सावधानीपूर्वक हटा दिया गया था। कुछ विश्वसनीय शासकों को, जो वायसराय के करीबी थे और विशेषाधिकार सम्पन्न होने कारण आने की अनुमति भी मिल गई थी। इस प्रकार के आदेश सख्ती से लागू होते हैं अन्यथा ऐसा शक रहता है कि सिमला राजनितिक षड्यंत्रों के लिये एक बहुत बड़ा केम्प बन जायेगा।

सिमला मे पहले पहुंचने वालों में बिकन्द्रा का युवा महाराजा शामिल था। वह उच्चतर सरकार की नाखुशी के चलते अपनी याघ्रा के बारे में कुछ कार्रवाई का जवाब देने के लिये बाध्य था। घुड़दौड़ से भी कम दूरी की एक छोटी-सी शासकत्ववाली लघु रियासत के पक्ष में, शायद अच्छी से अच्छी देशीय विलक्षणता की अपेक्षा अवांछनीय युरोपीय आदतों को अपनाने की उसे सलाह देकर प्रभावित करने की कोशिश की गई। उसके पिता पूर्व के वायसरायों के चहेते थे इसलिये वर्तमान वायसराय ने उस युवा महाराजा को दिल से दिल की बात करने के लिये तुरन्त हाजिर होने को कहा। पगड़ी को छोड़ कर वह लंदन में बने कपड़ों को पहने व्यक्तिगतरूप से बहुत आकर्षक लग रहा था। परन्तु उसके आचरण को साफतौर पर नियन्त्रण की आवश्यकता थी। वह अपने समूह के साथ पेलिटी होटल गया जिसकी छत पर शिमला के पवित्र बन्दर उछल कूद कर रहे थे। नवाबों की तरह खिड़कियों से अन्दर प्रवेश करते और रोशनदानों से नीचे की ओर धकियाते, बालों की पीने चुराते, और यदि आपकों पहले नहीं सूचित किया गया हो तो सुबह आपको आपकी चारपाई के पांव के पास चटर-पटर करते दिखते ही आपके जीवन में दहशत पैदा कर देंगे। खैर, जैसा कि पहले ही अंकित किया गया है क्रुडन भी बिकन्द्रा के अतिथियों में पेलिटी होटल में शामिल थे।

सभी को पता है कि तीन सौ मिलियन लोगो पर शासन का कामकाज निपटाते हुए कर्मचारी सिमला में किस तरह सामाजिक मनोरंजन करते हैं। एक अजनबी इस सारी योजना की कल्पना कर सकता है कि किस तरह यहां नाच गाना, डिनर, नाट्य, पोलो, पिकनिक और माल रोड़ पर घुड़सवारी होती है परन्तु टेलीग्राफ की तारें जो सिमला से हिमालय के तराई के क्षेत्र तक जाती हैं, एक अलग ही कहानी बयां करती हैं। आमतौर पर वायसराय हमेशा गम्भीर दिखते थे और संसार में किसी के भी साथ वह इस बात को नहीं मानेंगे कि उसके दिमाग में दुःख के सिवाए कुछ और बात भी है क्योंकि एक बहुत बड़ी शख्सियत का किसी दूर दराज क्षेत्र में देहान्त हुआ था और पूरी की पूरी कचहरी शोक में डुबी थी। उन्होंने यह भी चाहा कि कुछ पेरिस की पौशाकें उनके सन्दूकों में होनी चाहिए ताकि वह सहज लगे।

सिमला के दूसरी ओर निस्सन्देह क्रुडन परिवार को सब कुछ



खुला खुला दिखा। इसमें कोई शक नहीं कि क्रुडन परिवार ने सिमला के इस तरफ के जीवन में काफी खुलापन पाया। पहले दो सप्ताह क्रुडनज मां बेटी अपने रिक्शों में कठिनाई से पहाड़ियों पर चढ़ने और उतरने के साथ साथ लोगों से बातें भी करती रहीं। जबकि कर्नल अपने सरकारी कार्यक्रम के दौरे के दौरान अपने परिचय पत्रों को बिखेरता हुआ गया। उसी समय मार्सटन ने पाया कि उसकी ड्यूटी के कारण प्रायः उसी रास्ते से जाना होता था जिस रास्ते से मिस क्रुडन का रिक्शा जो कि तेज गति से चल रहा था और एहसास करवा रहा था कि उनको बड़ी मेम साहिब का ध्यान नहीं रखना होगा जोकि एक बहुत ऊंचे दर्जे की औरत है और छोटे लोगों से बहुत बढ़कर है। इस सारी घटना की सिमला के लोगों ने दोपहर में चाय की चुस्कियां भरते भरते चर्चा की।

इस प्रकार सब कुछ सुखद चल रहा था जब तक कि एक दोपहर अपनी आदत के अनुसार मार्सटन के साथ सवारी करने के बाद मिस क्रुडन ने अपने कमरे में प्रवेश किया। उसने ध्यान दिया कि बरामदे में एक सिल्क की कढ़ाई किया हुआ सन्दूक पड़ा था, जैसा कि कभी स्थानीय सुनारों द्वारा हल्के मगर कीमती गहनों को रखने के लिये किया जाता था, और सम्भवतः यह छोटी टिक्किया या सन्दूक पूरी प्रचलित कारीगीरी और निपुणता के साथ अलग किया गया था। मानवीय प्रकृति के अनुसार उत्सुकता ने मिस क्रुडन को इस सन्दूक को खोलने के लिये और उस पर चढ़ाई गई परत को हटाने के लिये उकसाया। उसने सन्दूक के अन्दर एक चमकता हुआ महिलाओं के बालों का गहना और साथ में खुशबूदार एक आधा रंगीन पेज भी पाया। इस पेज में पारसी भाषा की कविता के कुछ पदों का अनुवाद उकेरा गया था व जिसमें गुलाब के फूल को इस तरह बनाया गया था कि उसके रंगों के कारण बारह अर्थ निकाले जा सकते थे जिससे साफ पता चलता था कि बनाने वाले ने सांस की धुन को एक सुन्दर भाषा में चित्रित किया है। साफ तौर

पर किसी को भी एक महिला के लिये पारसी भाषा की कविता को लिखते हुए सावधानी बरतनी चाहिए। एक बार तो मिस क्रुडन एक तरफ यह सोच कर बैठ गई कि सम्भवतः मार्सटन ही उपहार देने वाला व्यक्ति है। वह शेर के शिकार के बारे में काफी कुछ जानता है परन्तु उसे पारसी भाषा की कविता के माध्यम से अपनी भावनाओं को व्यक्त करने के खतरों का शायद ही पता हो। इसके अतिरिक्त कोई भी मार्सटन को गुलाबी पेपर पर ऐसा लिखने के लिये अपराधी नहीं ठहरायेगा और न ही अधिक जोर से सांकेतिक रूप से इसमें उसका हाथ नजर आया। वह उपहार देने वाले के नाम पर उलझ ही रही थी कि उसकी स्थानीय नौकरानी झनझनाती हुई कमरे में दाखिल हुई।

'हांकी', वह पैकेट जो मुझे बरामदे में मिला किसने भेजा?' उसने पूछा।

हांकी ने पहले अपनी मालकिन के चेहरे की ओर देखा और फिर उस सन्दूक की ओर। 'मेम साहब' मुझे नहीं पता।' उसने जवाब दिया।

'तुम नहीं जानती !' मिस क्रुडन ने निसंदेह जोर देकर दुबारा पूछा। उसके दिमाग में यह शक घर कर गया कि हांकी घुसखोरी की आड़ में यह कर सकती है। 'परन्तु तुम इसके बारे मे जरूर कुछ जानती हो ?'

'नहीं ! मैं नहीं जानती। ' हांकी ने विरोध जताया। 'मेम साहब क्या आप मुझ पर झूठ बोलने का आरोप लगा रही हो। जोकि अपने इज्जतदार माता पिता की सहायता से जीवनयापन कर रही है। क्या मैं एक इज्जतदार शादीशुदा महिला नहीं हूँ? जिसकी शादी मेम साहब की पसन्द के दुल्हे साथ हुई है। क्या मेरे एक चाचा नहीं है?'

'हां हां !' मिस क्रुडन ने परिवार की गुणगान की गाथा को छोटा करने की कोशिश की। 'परन्तु यदि तुमने यह नहीं रखा तो किसने रखा ?'

हांकी ने अपने दोनों हाथों को जो कि कांच की चूड़ियों से भरे थे, को जमीन पर लगभग पटकते हुए कहा 'मेम साहब, जब मैं जानती ही नहीं, तो मैं कैसे बताऊं?' वह चिल्लाई। क्या यहां दूसरे लोगों के पास नौकर नहीं हैं? यहां पर मेम साहिब के निचले रेंक तक नौकर हैं। और सफाई वाला, छोटी जाति के लोग जो पानी भरने का काम करते हैं जिनकों मेम साहिब आप जानती हैं। मैं उनका जिक्र नहीं करना चाहती। परन्तु यदि मेम साहिब चाहती है तो मैं मुख्य खिदमदगार मतलब उनके मुखिया से बात कर सकती हूं।

'नहीं ! ' मिस क्रुडन के दिमाग ने पलटी मारी। जिसमें उसे लगा कि मामले को बेवजह महत्वता नहीं देनी चाहिए जिससे यह सारे सिमला में चर्चा का विषय बन जाये। ''चलो में इसे दूसरे तरीके से पता करती हूं। खैर, इसके अलावा मैं अभी अपनी दूसरी आदतों के कारण थोड़ा जल्दी में हूं। ''

जब उसकी सवारी सजकर तैयार हो गई तो उसने अपने छोटे गहने को उसके डेस्क में बन्द कर दिया और गुलाबी नोट को अपने दस्ताने के अन्दर ठूंस दिया। तब वह बाहर निकल गई। मार्सटन सीट पर बैठा उसका साथ देने के लिये इन्तजार कर रहा था। वे सुन्दर कदमताल के साथ सड़क पर आगे बढ़ गये। सिमला वालों की चौकस निगाहों से बचने के बाद उन्होंने अपनी रफ्तार धीमी कर दी। अब उसने उसे अपने वर्तमान रहस्यमयी परिस्थितियों के बारे में बताना शुरू किया। उसने अपने दस्तानें से नोट को निकालकर मार्सटन को पकड़ाया। मार्सटन ने उसे देखा और एकदम अस्वीकृत कर दिया। वह चिल्लाया, 'जोव'। 'तुम्हें इस धरती पर इस प्रकार की चीज कौन भेज सकता है? यह कोई पड़ोसी युवक होना चाहिए। हमें एक सम्भावित अपराधी के बारे में सोचना चाहिए। क्या बिकन्द्रा।'

बात करते हुए वे दोनों कदम बढ़ाते रहे जब तक कि वे सिमला वापस नहीं आ पहुंचे। जब वह सिमला पहुंचे उस समय पहाड़ियों की ढलान पर बने बंगलों की खिड़कियों से जामुनी रंग की रोशनी एक बिन्दु की तरह चमकनी शुरू हो गई थी। और घाटियों के गहरे नालों से उठती रोंवेदार धुंध डर पैदा कर रही थी। इससे पहले कि मार्सटन अपनी रात्रि डियूटी के लिये तेज-तेज कदम बढ़ाता उन्होंने जल्दबाजी में एक दूसरे को फिर मिलने के वादे के साथ अलविदा कहा।

''परन्तु' वह मुझे अपने दिल से, और वह भी छंद में और बालों के आभूषण में जड़ित हीरे का तोहफा व तोड़ा गया गुलाब का फूल क्यों भेजेगा?' उसने विरोध किया। ''हम महाराज से कुछ बार मिले हैं और डैड और वह आपस में अनेक बार बात कर चुके हैं। परन्तु मुझे याद नहीं कि मैने दर्जन भर शब्दों से अधिक उससे बात की हो। इसलिए यह अनुमान लगाना कि उसने मुझे यह तोहफा भेजा है निरर्थक है।''

मार्सटन ने ध्यान से कहा 'कहना कठिन है।' उसने ध्यानपूर्वक अपनी गोरी मूंछों को खींचते हुए कहा। 'तुम यह कभी नहीं कह सकती कि तुम्हारे यह स्थानीय साथी आगे क्या करेंगे ? शायद, अगर मैं उसे पोलो की चुनौती दूं और गलती से उसके सिर पर वार करूँ तो शायद हमें सच्चाई मतलब रहस्य का पता चलेगा।''

''तुम ऐसा वैसा कुछ नहीं करोगे।' उसने मुस्कुराते हुए कहा। ''मुझे पक्का विश्वास है कि बिकन्द्रा ने यह नहीं भेजा है।''

''तब किसने भेजा।''

'यही तो मैंने 'हांकी' से पूछा। परन्तु कोई सन्तोषजनक उत्तर नहीं मिल पाया और जहां तक मैं सोचती हूं हमें इस मामले में अभी और इन्तजार करना चाहिए।'

एकदम वक्र मोड़ पर आती वायसराय की झूला सवारी के कारण उनके वार्तालाप में अवरोध पैदा हो गया। जब अभिवादन का

आदान प्रदान हो गया तो वार्तालाप प्रसंग से आगे बढ़कर वायसराय के दरबार और आगामी रात्री के नाच गान की ओर हो गया। मार्सटन ने सुना कि मामले को सहानुभूतिपूर्वक ए.डी.सी. ने पौशाक और पूर्वगामी तरजीहों की ओर मोड़ दिया।

''तब यह बोल्टन थोर्पे का काम है।' उसने एक विशेष मामले की व्याख्या की। 'थोर्पे एक सियासी आदमी है और वैसे भी वह बिकन्द्रा की राजधानी का निवासी है। और उसका परिवार सेंट क्लेयरस के साथ रह रहा है। सेंट क्लेयरस मात्र सर्जन जनरल के स्टाफ में है जबकि मिसेज सेंट क्लेयरस के पिता एक एक यौद्धा और एक एम.पी. है। अब, तब वह कौन है जो वायसराय को झांसा देगा, मिसेज थोर्पे, या मिसेज सेंट क्लेयर, मेहमान या मेहमानदारिन?''

'छोड़ो इसे।' मिस क्रुडन हंसी।

''हां। परन्तु कम से कम मैं नहीं।'' उसने थके हुए अन्दाज में शिकायत की। 'क्योंकि आप कूटनीतिक सूचि में शामिल हो अतः मैं सोचती हूं कि आप मेरी बेहतर सहायता कर सकते हो।''

इस तरह बात करते हुए वे दोनों कदम बढ़ाते रहे जब तक कि वे सिमला वापस नहीं आ पहुंचे। जब वह सिमला पहुँचे उस समय पहाड़ियों की ढलान पर बने बंगलों की खिड़कियों से जामुनी रंग की रोशनी एक बिन्दु की तरह चमकनी शुरू हो गई थी। और घाटियों के गहरे नालों से उठती रोंवेदार धुंध डर पैदा कर रही थी। इससे पहले कि मार्सटन अपनी रात्रि डियूटी के लिये तेज-तेज कदम बढ़ाते उन्होंने जल्दबाजी में एक दूसरे को फिर मिलने के वादे के साथ अलविदा कहा।

'कृपया किसी से भी उपहार के बारे में जिक्र मत करना।'' उसने मार्सटन से अनुरोध किया, ''मैं शक के आधार पर किसी पर भी बगैर सबूत के दोषारोपण नहीं करना चाहती। शायद इसे भेजने वाला शीघ्र ही दुबारा सम्पर्क करे या फिर कोई गलती करे।''

''मैं जानता हूं कि आदेश का पालन कैसे किया जाता है।'' मार्सटन हंसा। जैसे ही उसकी एड़ी के इशारे से घोड़ा पिछली टांगों पर खड़ा हुआ उसने अलविदा के लिये मिस क्रुडन की ओर हाथ हिलाया और सायं के धुंधलके में गायब हो गया।

उपहार देने वाले को सम्भवतः इस बात का भान नहीं था कि उसने कितना गम्भीर कार्य कर दिया था। वह अपनी पहचान उजागर करने में किसी भी प्रकार की जल्दी में नहीं लग रहा था। उसने अगले 24 घंटे तक किसी प्रकार का स्पष्टीकरण देने के लिये सम्पर्क नहीं किया और मिस क्रुडन इस मामले का कोई समाधान निकालने के लिये माथापच्ची करती रही। गहने की कीमत इसका एक अन्य कारण थी और मिस क्रुडन किसी भी तरह अपने आप को इसकी वास्तविक मालिक मानने को तैयार नहीं थी।

परन्तु कुछ समय के लिये वायसराय का नृत्य सबसे ऊपर था। क्रुडन परिवार ने जल्दी ही खाना खा लिया। दरवाजे पर उनके रिक्शे खड़े थे, जब मिस क्रुडन एक हल्की शॉल लेने के लिये वापस दौड़ती हुई कमरे में आई, उस समय वहां उसके लिखने पढ़ने की मेज पर एक भूरी गलमुंच्छों वाला बूढ़ा बन्दर बैठा था। वह एक बेतुकी शक्ल बनाते हुए एक आदमी की ऊपर से नीचे की ओर पत्र पढ़ने की नकल कर रहा था। वह निस्संदेह ही कहीं से पत्रों का एक पैकेट उठा कर लाया था जिनमें से लगभग आधा दर्जन इधर उधर बिखरे पड़े थे। बन्दर ने पत्र के किनारे से ताकझांक की और मिस क्रुडन पर जैसे मुस्कुराया। उसने समीप से ही हथियार के रूप में एक छाता उठाया और हनुमान के प्रिय इस जानवर को धमकाते हुए झिड़का। मिस क्रुडन ने छाते को हवा में लहराया और बन्दर ने निस्सन्देह रूप से यह पाया कि यह अंग्रेज उसकी पवित्रता के बारे में अनभिज्ञ हैं। भय के कारण टैं... टैं... ख्ड़ें... ख्ड़ें... करते हुए बन्दर ने एक चीख के साथ छलांग मारते हुए पत्र को नीचे गिरा दिया। एक छलांग के साथ ही वह पर्दे पर लटक गया और झूलते हुए पर्दे पर तब तक ऊपर चढ़ता गया जब तक कि उसे आसमानी रोशनी के बीच बाहर निकलने का रास्ता नहीं मिल गया।

प्रथमतः मिस क्रुडन यह सोच कर गुस्से में थी कि बन्दर ने उसके डेस्क की तलाशी ली परन्तु जैसे ही उसकी नजर पहले पत्र पर पड़ी उसने उसे उठाया और खोल कर देखा और पाया कि यह लिखावट किसी अपरिचित महिला की है। तब उसने पत्र पढ़ना शुरू किया और शुरू कि पंक्तियों में ही उसे पता चल गया कि यह महाराजा बिकन्द्रा के प्रति एक बेवकुफाना दिवानापन था। इससे भी बढ़कर उन्होंने इस पत्र को भेजने वाले के समझौते को प्रकट कर दिया था जिसमें उसने उसके भाग्य पर विश्वास करने के लिये उस रात वायसराय के नाचगान में बिकन्द्रा के हाथों में सौंप दिया था। साथ में ही डायमण्ड से जड़े बालों के गहने और सुगन्धित शायरी पर से भी पर्दा उठ गया था। बन्दर ने गहने का सन्दूक महाराजा के कमरे से चुराया था और उसके कमरे में लाया था जिसका कारण वही अच्छी तरह जानता था। शायद उसने सोचा होगा कि यह स्थान सन्दूक की तलाशी लेने के लिये सुरक्षित है, अगर उसने इस बारे में थोड़ा भी सोचा होगा। कमरे में किसी के प्रवेश के कारण डरकर उसने गहने के सन्दूक को यहां गिरा दिया जैसा कि उसने पत्रों के साथ किया।

अब सब साफ था, परन्तु लड़की का क्या? मिस क्रुडन इस निष्कर्ष पर पहुंची कि पत्र को लिखने वाली अभी तक रोमान्स के दौर से गुजर रही थी जिसका उद्देश्य उसके भविष्य की खुशहाली को अकथनीय पीड़ा की तरह सौ और एक के अनुपात में दाव पर लगाना था। यह स्वीकृत था कि बिकन्द्रा के वर्तमान इरादे ठीक थे जो उसके चरित्र के शायद ही अनुरूप थे, जिसने एक गठबन्धन के जाति बहिष्कार के दंड भय की महत्वता को कम कर दिया था और एक भयावह पृष्ठभूमि में महाराजा की अपनी महिलाओं में

ईर्ष्या और वैर था। मिस क्रुडन को अच्छे अधिकार पर बताया गया था कि जब एक महिला इस प्रकार का कदम उठाती है वह बाद में कुछ भी सुनने को तैयार नहीं होती। उनके बच्चे कभी भी परिपक्व नहीं हो पाते। कल्पना भर सकते हैं जो कि दर्ज नहीं हैं। उस लड़की के विचार से ही उसके रौंगटे खड़े हो गये जिसका भविष्य उसके हाथ में हैं परन्तु मात्र उसके हस्ताक्षर अंग्रेजी के केपिटल ई के अलावा उसकी पहचान गुप्त थी। वह इस संसार में इस अज्ञात महिला जिसका नाम ई से शुरू होता है समय पर कैसे ढूंढेगी ताकि वह मामले में जल्दबाजी और गोपनीयता के विरुद्ध होने वाले महत्वपूर्ण परिणामों के बारें में उसे बता सके। उसी समय कर्नल क्रुडन की आवाज ने उसे बेताबी से अपनी ओर आकर्षित किया।

''हां पिता जी ! मैं आ रही हूं।'' उसने जवाब दिया। उसने पत्रों को उठाया और अपनी सोच की उड़ान को विराम दिया। उसे कैसे पेश आना था ?

''कॉन्स्टेन्स ! कॉन्स्टेन्स !'' कर्नल ने पुकारा। ''क्या तुम्हें नहीं पता कि हम पहले ही लेट हो गये हैं ? और तुम शुरू से ही वायसराय और कमाण्डर इन चीफ के साथ नाच के लिये व्यस्त हो। और इसके अलावा भगवान जाने कौन कौन?''

''हां - हां, पिता जी।''

''ठीक हैं, साथ चलो मेरे बच्चे। ओह, मेरे प्यारे बच्चे ! तुमने समस्त ब्रिटिश साम्राज्य को इन्तजार करवाया है। खैर, अब पहले मुझे अन्तहीन अकूटनीतिक बहाने बनाने दो।''

उसने जल्दी से पत्र को एक सुरक्षित जगह पर रख दिया। उसकी पहली एक मात्र योजना इस मामले को मौका पाते ही मार्सटन से साथ साझा करने की थी। कुछ ही मिनटों में उसका रिक्शा वायसरीगल लॉज की ओर सड़क पर दौड़ रहा था। और उस रिक्शे की सैर के दौरान पहाड़ों से आती खुशगवार हवा उसके गालों को लगभग सहला रही थी। वायसरीगल लॉज में दरबार के दौरान रात्रियों का अपना ही आकर्षण होता है। मैदान में सलीके से सजाई हुई लालटेनों के बीच वर्दीधारी पालकी उठाने वालों की भीड़ जीवन को करीब से छूता एक मनोरम दृश्य पेश कर रहा था।

उसने जल्दी से पत्र को एक सुरक्षित जगह पर रख दिया। उसकी पहली एक मात्र योजना इस मामले को मौका पाते ही मार्सटन से साथ साझा करने की थी। कुछ ही मिनटों में उसका रिक्शा वायसरीगल लॉज की ओर सड़क पर दौड़ रहा था। और उस रिक्शे की सैर के दौरान पहाड़ों से आती खुशगवार हवा उसके गालों को लगभग सहला रही थी।

आदमी में शारीरिक पूर्णता के नमूने के रूप में वायसराय के शारीरिक रूप से सुडौल सिक्ख अंगरक्षक से बढ़ कर कोई नहीं हो सकता जो एक अस्त्र लिये ड्योढ़ी पर खड़ा रहता था। उस समय कलादीर्घा साम्राज्य के सबसे शक्तिशाली व्यक्ति से प्राप्त की गई ट्राफियों से भरी रहती थी जिनमें नागरिक सेवा तथा सेना के अफसरों के सबसे प्रतिभाशाली समूह द्वारा वायसराय की सुरक्षा के बारे में एक आधा सर्कल के गठन के लिये मिले तगमें, सुनहला फीता, शानदार आदेश, और प्रज्वलित रिबन आदि सम्मान शामिल थे। जब ताज चमकता था और कोर्ट का गाऊन पेरिस का अहसास करवाता था तब उस समय मामले में और ज्यादा कहने की क्या आवश्यकता? जवाहरात की चकाचौंध में चमचमाते हुए इधर उधर जाना भारतीय राजकुमारों की उपस्थिती दर्शाता था लेकिन इस मौके पर भी बिकन्द्रा ने खेद के साथ गहरा अभिवादन भेजा था।

परन्तु इसी बीच मिस क्रुडन ने थोड़ा ध्यान दिया कि एक भीड़ उत्सुकता से मार्सटन को ढूंढ रही है। ऐसा प्रतीत हो रहा था कि उसे किसी विशेष कार्य से भेजा गया था और वह नाच गाना शुरू होने से पूर्व प्रकट ही नहीं हो पाया। उससे एक के बाद एक प्रतिष्ठित साथी बहुत उत्सुकता से नाचने के लिये आग्रह कर रहे थे, परन्तु उसके विचारों के केन्द्र में हनुमान द्वारा दिया गया राज था। उसने एक या उससे अधिक बार उस नई आई इंग्लिश लड़की की ओर देखा जो लय के साथ फर्श पर मिलिट्री बैंड पर लचक लचक कर नाचते हुए लहरा रही थी। मिस क्रुडन ने अपने तरीके से पता लगाने की कोशिश की कि वह अंग्रेज लड़की किस जोखिम को निमन्त्रण दे रही है। परन्तु वहां सब इस बात बेखबर लग रहे थे।

उसने अपने आप को मार्सटन के इन्तजार में बैठे हुए पाया जिसका नाम उसके कार्ड में उस नम्बर पर लिखा गया था। उसे अब हल्की हल्की बैचेनी महसूस होने लगी थी। उसी समय प्रायः अनुपस्थित रहने वाला ए डी सी अपनी ड्रैगन सैनिक की वर्दी में लम्बे लम्बे डग भरता हुआ जल्दीबाजी में अपराध बोध के साथ उसकी ओर आया और लगभग टकराते हुए सट कर खड़ा हो गया।

''मुझे बहुत दुःख है और मुझे डर है कि तुम मुझे कभी माफ नहीं करोगी।'' उसने लगभग अनुनय करते हुए कहा। ''परन्तु, जैसे ही मैं आने वाला था एक दुखद घटना घट गई।''

मिस क्रुडन ने प्रश्नवाचक निगाहों से उसकी ओर देखा।

''तुम इतनी आसानी से नहीं समझ सकती।'' उसने विस्तार से बताना शुरू किया। ''परन्तु बिकन्द्रा के राजनीतिक प्रतिनिधि की पुत्री, मिस थोर्पे - जिसे तुम जानती हो, टखने पर मोच आने से बेहोश हो गई। निस्सन्देह ही यह एक बहुत ही दर्दनाक बात है। परन्तु सबसे विचित्र बात यह थी कि उसे पक्का तौर पर निश्चित नहीं था कि उसके किस टखने में चोट लगी थी। उन दोनों को मिला कर चेक करने के बाद भी सेंट क्लेयर पता नहीं लगा पाये। किसी तरह उसे रिक्शे में बैठाकर और वापस घर भेज कर आया हूं।''

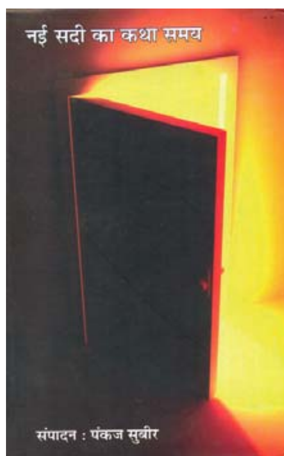
(शेष भाग अगले अंक में)

समीक्षा

'नई सदी का कथा समय' एक कीर्तिमान है और एक मानक भी

● डॉ. कमल किशोर गोयनका

'हिंदी चेतना ग्रंथमाला' के 'नई सदी का कथा समय' से गुज़रना एक सुखद अनुभव रहा। सम्पादकीय सरोकार, विषय वस्तु और उसकी व्यापकता इक्कीसवीं सदी की कहानियों तथा प्रवासी कहानीकारों की रचनाओं एवं अधिकतम लेखकों के सहयोग की दृष्टि से। सम्पादकीय ने सबसे पहले मेरा ध्यान आकर्षित किया। श्री श्याम त्रिपाठी के वैश्विक साहित्य और प्रवासी कहानी साहित्य पर विचार स्वागत-योग्य हैं। नई सदी ने जीवन और साहित्य सभी क्षेत्रों में चिंताजनक परिवर्तन किया है और भारत में हम इसका अनुभव कर रहे हैं। मनुष्यता, संवेदना, पारस्परिक मधुरता आदि संकट में हैं। साहित्य को इनसे लड़ना होगा। प्रवासी कहानीकारों ने नई वस्तु, परिवेश, जीवन-दृष्टि, भाषा आदि दी हैं और अब उनके स्वतंत्र अस्तित्व को कोई अस्वीकार नहीं कर सकता। डॉ. सुधा ओम ढींगरा ने भी वैश्वीकरण, प्रवासी साहित्य, अंतर्जाल आदि के प्रश्न को उठाकर प्रवासी साहित्य के हक की बात भी रखी है। मैं इस सम्बंध में इतना ही कहूंगा कि मैं सुधा जी के विचारों से सहमत हूं और कहना चाहता हूं कि प्रवासी साहित्य को उसका अधिकार और स्थान मिलना शुरू हो चुका है और वह अपनी स्वतंत्र सत्ता के साथ मुख्यधारा का अंग है।



पुस्तक का नाम :	नई सदी का कथा समय : हिंदी चेतना ग्रंथमाला (ग्रंथांक 101)
संपादक :	पंकज सुबीर
प्रकाशक :	शिवना प्रकाशन, पी.सी. लैब, सम्राट कॉम्पलैक्स बेसमेंट, बस स्टैंड, सीहोर, मध्य प्रदेश-466001
प्रकाशन वर्ष :	2014
मूल्य :	200 रुपये

हिंदी के प्रवासी लेखकों ने विगत दो दशकों से जिस प्रकार का साहित्य दिया है, अब उस पर कोई कमजोर साहित्य होने का लांछन नहीं लगा सकता। 'नई सदी का कथा समय' की कल्पना और संयोजन, विषय-वस्तु का वैविध्य सभी कुछ अनोखा और अनुपम है। सम्पादकों ने इक्कीसवीं सदी के 12-13 वर्षों को केंद्र में रखकर कहानी, आलेख, साक्षात्कार, परिचर्चा आदि विभिन्न विधाओं के माध्यम सर्वथा नई तथा महत्त्वपूर्ण सामग्री दी है। इसमें 13 सर्वश्रेष्ठ कहानीकारों तथा 10 श्रेष्ठ कहानियों का चयन, एक गोलमेज़ परिचर्चा तो बेहद मौलिक साहित्यिक उपक्रम है। इसमें सम्पादकों की सूझ-बूझ तथा संयोजकों की दृष्टि और परिश्रम से महत्त्वपूर्ण सामग्री सामने आई है। अंक में मनोज रूपड़ा, मंजुलिका पाण्डेय, सुधा ओम ढींगरा तथा तेजेन्द्र शर्मा की कहानियां हैं; जो इस अंक की शोभा हैं और एक नए संवेदनात्मक संसार से हमारा साक्षात्कार कराती हैं। पत्रिका में शास्त्रीय एवं आलोचनात्मक सामग्री की तुलना में कहानियां कुछ कम हैं। यह अंक इस दृष्टि से भी विशेष उल्लेखनीय है कि 50 से अधिक लेखकों के विचारों, लेखों और कहानियों को पढ़ने का सुअवसर देता है। इससे समझा जा सकता है कि संपादक पंकज सुबीर (सह संपादक- हिंदी चेतना) ने कितना परिश्रम और कितनी निष्ठा से कार्य किया है। 'नई सदी का कथा समय' एक कीर्तिमान है और एक मानक भी। हिंदी की प्रवासी कहानी को समझने तथा उसकी आत्मा को जानने के लिए इसे देखना-पढ़ना आवश्यक है। 'नई सदी का कथा समय' ने प्रवासी साहित्य को और भी अधिक पुष्ट और समृद्ध बनाया है। उसने मुख्यधारा तक पहुंचने के लिए सेतु का निर्माण कर लिया है। मैं इस सेतु का स्वागत करता हूं।

ए-98, अशोक विहार, फेस 2, नई दिल्ली-110052

समीक्षा

अलौकिक आनंद की सृष्टि के प्रेम गीत

● डॉ. रमेश सोबती

मनुष्य की रागात्मकता से प्रसूत गीत, साहित्य की आदिम काव्य विधा है। इसका सीधा सम्बंध गायन की मनोदशा से है। जब यह मनोदशा स्वतः स्फूर्त रूप में जन्म लेती है तो मानव मन एक विशिष्ट प्रकार की लय से गुंजित हो उठता है। यह गूंज गायक के चेहरे पर सपष्ट रूप से परिलक्षित होती है। गीत के गायन की इस मानसिक अवस्था को मनोलय की संज्ञा दी गई है। यही मनोलय गीत की वास्तविक ऊर्जा है। यही अवस्था शब्द तथा अर्थ से सन्युक्त मधुर ध्वनि (संगीत) का आश्रय पाकर गीत के रूप में अभिव्यक्त होती है। इस प्रकार मनोलय गीत का प्राण तत्त्व है। वेद प्रार्थना कराते हैं स्वरश्च मे श्लोकश्च मे अर्थात मुझे स्वर और छंद दोनों प्राप्त हों। क्योंकि गीत और संगीत एकमात्र स्वर्गोपम सुख देने वाले तत्त्व हैं। रसास्वादन की स्थिति में मात्र यही है कि रंजन गीत का प्रयोजन है और रंजकता प्राण। गीत के लिए रंजकता अनिवार्य है, रंजन ही रस है जिसका आस्वादन किया जाता है। इसी रंजक स्वर के संदर्भ को गीत भी कहा जाता है। शारन्ग्देव ने कहा है 'रञ्जक स्वरसदंर्भो गीतमित्यमिधीयते' समस्त स्वरशास्त्र ऐसे ही स्वर संदर्भो के निर्माण और विस्तार की ओर दिशानिर्देशन करते हैं जो सहृदय श्रोताओं के लिए उस अलौकिक आनंद की सृष्टि करते हैं।



श्री हर्षकुमार 'हर्ष' का गद्य प्रकाशित काव्य-संग्रह 'दर्पण में बिम्ब नहीं होगा' एक गीत प्रधान कृति है जिसमें प्रणय की सभी अनुभूतियां गौरेया के नीड़ के तिनकों के समान परस्पर गुम्फित हैं। सच्चे गीत से पाषाण हृदय का गुमान द्रवित हो जाता है। अहम् और दम्भ के हिमखण्ड भावपूर्ण गीत का ताप पाते ही आर्द्र होकर अश्रुधारा के रूप में प्रवाहित हो उठते हैं। इस कृति के गीतों में प्रेम तथा भावों की रागात्मकता और अभिव्यक्ति की अक्षय अस्मिता निहित है और प्रेम की virtue-frigidity शुचिशीतलता निर्मल धाराएं गीतों की नित्य नवीनता उसके सौंदर्य का हेतु है और अनुप्राणित सौंदर्य का शाश्वत सत्य इनके शब्दों में निम्नवत् प्रकट हुआ है-

तुझे हृदय की बात बताने⁄ रोम रोम मेरा भर आया
फिर से आज अधर की भाषा⁄ मूक-बधिर बन कर बह आई। पृ. 28

काव्य के यौवन का शृंगार करने के लिए गीत के fragrant flower लगातार जीवन सौंदर्य से संयुक्त रहे हैं। विद्यापति की युबति करति अस्नाने की शृंगार सिचित स्वर लहरी कबीर के काहे री नलिनी तू कुम्हिलानी के वैराग्य स्वर में प्रकट होकर नवीनता का बोध करा गई। सूर, नंददास, मीरा आदि की वाणी में उसी ने भावना की कोमलता को अभिव्यंजित कर अपनी कलात्मक साधना का परिचय दिया है। श्री हर्ष ने अपने गीतों में प्रणय के नवीन कलेवर धारण किए हैं। वे जानते हैं कि जब तक मनुष्य धरती पर रहेगा तब तक प्रणय और काव्य का सम्बंध भी अविच्छिन्न बना रहेगा। इस कृति में संकलति प्रेम-तत्त्व उनके काव्य की प्रेरिक शक्ति है। प्रेम-सम्बंधों में लौकिक स्तर पर प्रस्तुति प्रभावपूर्ण है। गीतात्मक वर्णन करने पर, इन गीतों की धारा का प्रेम मर्यादित है। एक उदाहरणः सीता द्वारा जनक की पुष्पवाटिका में राम के प्रथम दर्शन के समय प्रेम की मर्यादित प्रस्तुति सर्वथा स्पृहणीय है। स्वयंवर सभा में राम के चरण स्पर्श करती हुई सीता की हिचक तो सर्वथा अद्भुत है। श्री हर्ष के गीत की पंक्तियों में प्रेम की पराकाष्ठा इस अवस्था तक पहुंच जाती है कि प्रेमी का श्रीमुख जोहने को आतुर प्रणयासक्ति के दम्भ से भरे कामुक वासनाग्रस्त प्रेमी के यशोगान में ही कवि-कर्म की इति समझी जा सकती है। यथा-

तुम मेरे घर आंगन आओ   दिनकर जैसी आस लिए
तुलसी बन महकूंगी मैं   जीवित हूं यह बास लिए
जिंदा हूं कि मृत काया पर स्वस्थ बीज का रोपन हो।
तन की मिट्टी छान-छटा कर बैठक गई तृण-घास लिए॥
(पृ. 53)

श्री हर्ष कृति के उपोद्घात में अपने गीतों के प्रति स्वयं कहते

हैं, "कहीं नायक प्रेमालाप करता हुआ मिलेगा तो कहीं प्रेमिका अपने प्रेमी की मान-मनौती में अपने अग-जग जड़-चेतना में मनोहार करती हुई, उपालंभ देती अनुभव होती है।" यह अनुभव गीतकार का अपना है, नितांत अपना। आधुनिक हिंदी गीत में प्रेम सम्बंधों का स्वरूप भारतेंदु युगीन काव्य से बिलकुल भिन्न है। इस युग के कवियों ने रीतिकालीन रुग्ण शृंगार भावना का मुखर विरोध किया है और प्रेम को वंदनीय माना है। श्री हर्ष के शब्दों में :

संयम उखड़ी दीवारों पर सपन पुताया नहीं गया
लिख अश्क से नाम तुम्हारा कभी सुखाया नहीं गया।
भूलों की बालू का उष्मि सेंक सिकाता रहता हूं
अनशन बैठा नाम तुम्हारा होठों पर से नहीं गया
शायद झूठी सुन कर आओ खबर हमारे मरने की
जन्म दिवस तो खूब मनाए तुम से आया नहीं गया।

इस गीतांश में प्रणय-सम्बंध नैतिकता व गार्हस्थिय जीवन-मूल्यों पर आधारित है। यहां कवि प्रणय को hereditary क्रमिक विकास के रूप में स्वीकार करते हैं और प्रेम को मान्यता देते हैं। 'हर्ष' के गीत प्रणय-सम्बंध रागात्मकता पर आधारित हैं और रागात्मकता में व्यक्तिनिष्ठ दृष्टिकोण की प्रमुखता प्रचुर है। यहां प्रेम सम्बंधों को आवेश और कल्पना के श्रेष्ठ आयाम प्रदान किए गए हैं। 'हर्ष' का नारी के प्रति दृष्टिकोण में अंतर आया है और गीत विधा के स्तर पर प्रेम-सम्बंधों में स्त्री-पुरुष के बीच समभाव पूर्ण वैयक्तिक स्वच्छंद प्रेम प्रकट हुआ है-

पलकों भीतर सजी तुम्हारी यादों को आशा के हाथों ने चंवर ढुलाए हैं⁄ सपनों के घूंघट में छुपकर आंसू ने तुम से अपने कर्कश बोल छुपाए हैं⁄ सदा इश्क का सिल-बट्टा ले बैठ गई, नयनों भीगे पल मैंने पिसवाए हैं⁄ धीरज-शिला घिसाई प्रेम-बिवाई पे, घड़ी कटी न सूनी वक्त गंवाए हैं⁄ लिखे तुम्हारे नाम अधर की अंगुली से, मस्तक की रेखा ने सदा मिटाए हैं। (पृ. 57)

श्री 'हर्ष' के गीतों में अनुभूति की प्रामाणिकता सर्वत्र विद्यमान है। इन्होंने प्रेम के क्षेत्र में अपनी अनुभूतियों को गीतों के चित्रपट पर यथावत अंकित कर दिया है। यही कारण है कि इनके गीत विशेष रूप से लोकप्रिय होते हैं। अपने गीतों में ये जो कुछ कहने का साहस करते हैं, पूरे आत्मविश्वास से कह देते हैं। इनका स्वानुभव इनके विश्वास का आधार है। यह गीत-संग्रह अमृतजल से सुसिंचित हृदय-आंगन पर प्रेम के बीज अंकुरित कर रहा है। इससे पल्लवित प्रेम लतिका मिलन-सुख के अनंत में पहुंच कर, उल्लास, हर्ष, मस्ती इत्यादि का अनुपम सुख प्रदान करेगी।

एन.आर.आई.एवेन्यू, सुखचैन रोड, फगवाड़ा, पंजाब।
मो. 0 98153 85535

पुस्तक का नाम : दर्पण में बिम्ब नहीं होगा (काव्य संग्रह)
लेखक : हर्षकुमार 'हर्ष'
प्रकाशक : सभ्या प्रकाशन, नई दिल्ली-110064
प्रकाशन वर्ष : 2014
मूल्य : 500 रुपये

पत्र मिला

शिमला जिला विशेषांक पढ़ा। धन्यवाद। मां सरस्वती की सेवा और उसका पूजन कभी भी व्यर्थ नहीं जाता। यह प्रत्यक्ष प्रमाण है। शिक्षक दिवस के अवसर पर शिमला में आयोजित राज्य स्तरीय समारोह में सम्मानित शिक्षकों के साथ-साथ प्रदेश की राज्यपाल व माननीय मुख्य मंत्री के दर्शन पत्रिका के माध्यम से प्राप्त होना एक दुर्लभ संयोग ही तो है। कहां मध्य प्रदेश और कहां उत्तर भारत का प्राचीन शहर या कि (सेवन हिल्स) के नाम से जाना माना सीधे-साधे सरल व्यक्तियों का शहर शिमला भारत का हृदय स्थल है। पिछले अंक में साहित्यिक जानकारियों के साथ-साथ कविता, गीत एवं आलेख पढ़ने को प्राप्त हुए। यह अंक शिमला जिला विशेषांक के रूप में प्राप्त हुआ। इसमें शिमला प्रदेश की रचना और उसकी महत्ता का विशेष विवरण प्रस्तुत किया गया है।

पत्रिका को पढ़ते-पढ़ते लगा कि जानकारियों के अभाव में व्यक्ति कितना अबोध रहता है। आज इस पत्रिका के माध्यम से ज्ञात हुआ कि इस देवभूमि में अनेकानेक विशेषताएं विद्यमान हैं जिनसे मैं अपरिचित था। इस देवभूमि की महत्ता इस बात से भी है कि यहां जगदम्बा माता पार्वती जी की जिह्वा गिरी थी। इस कारण यह शक्तिपीठ माना जाता है। यहां आने वाले व्यक्तियों के पाप मुक्त हो जाते हैं। इस क्षेत्र की यात्रा मनुष्यों के लिए आवश्यक है और मेरा भाग्य अनजाने ही सही परंतु मां भगवती की कृपा से हिमालय की गोद में बैठने का अवसर प्राप्त हुआ। यह मेरे प्रारब्ध कर्म का ही प्रतिफल माना जा सकता है। 1864 का शहर शिमला भारत की राजधानी के रूप में भी अपना स्थान रखता है। सन् 1864 से 1947 तक (आज लाखों की आबादी है, उस वक्त कुल जनसंख्या 9000 हुआ करती थी), पत्रिका में जानकारियों का खजाना खोल दिया। धीरे-धीरे अध्ययन करूंगा एवं अपने विचारों से अवगत कराने का प्रयास करूंगा।

आर. एस. वर्मा, एडवोकेट, निवासी-23, अर्चना परिसर, उज्जैन, मध्य प्रदेश, मो. 9926631925

'हिमप्रस्थ' का शिमला जिला विशेषांक प्राप्त हुआ। कई दिनों से इंतज़ार था। और इंतज़ार का फल मीठा होता है। इस अंक को पढ़कर भी ऐसा ही अहसास हुआ। इस प्रयास हेतु समस्त हिमप्रस्थ परिवार को बधाई। विशेषांक शिमला जिला पर केन्द्रित है परन्तु शिमला नगर ने अधिक सुर्खियां बटोर लीं। यह स्वाभाविक ही है। यूं तो शिमला शहर पर ही पूरा विशेषांक अलग से निकल सकता था। फिर भी आपने शिमला से इतर दूसरे विषयों पर भी तथ्यपरक और विवेचनापूर्ण, सारगर्भित लेख प्रस्तुत किए हैं। शोधार्थियों और प्रदेश की लोक संस्कृति में दिलचस्पी रखने वालों के लिए ये लेख, जानकारियां सिद्ध हो सकती हैं।

शिमला का आकर्षण तो ऐसा है कि थोड़ी सी कलम चलाने वाला भी इस पर पन्ने रंग सकता है। हां, शिमला के साहित्यकारों/कलाकारों पर चर्चा हुई है। पर एकाध लेख और हो जाता तो शायद और अच्छा लगता। मैं तो शिमला और हिंदी फिल्मों पर लेख प्रेषित करना चाहता था पर यह सोच कर पीछे हट गया कि इस विषय पर ज़रूर ज्यादा अच्छे लेख आए होंगे। पर इस विषय पर कोई लेखक बंधु शायद आगे नहीं आए, या फिर आपके पास सामग्री अधिक हो गई होगी। बहरहाल, एक रोचक, आकर्षक, पठनीय और संग्रहणीय विशेषांक निकालने के लिए आपको पुनः बधाई। इस आशा के साथ कि शीघ्र ही अन्य जिलों के भी ऐसे विशेषांक हिमप्रस्थ की शोभा और शान बढ़ाएंगे।

हंसराज भारती, सरकाघाट, मंडी, मो. 0 98163 17554

हिमप्रस्थ हिमाचल की गौरवमय गाथा एवं पर्यटक की संभावनाओं को रेखांकित करने में पूर्ण सफल रहा है। दरिया-दरिया, साहिल-साहिल जाहिद अबरोल के काव्य संकलन की समीक्षा अच्छी है। फ़ारूकी जी को मुबारकबाद देता हूं। शायद उन तक पहुंचे? जिस बेहतरीन ढंग से हिंदी-उर्दू में समीक्षा लिखी है, जुबां सीधे हृदय में उतरती सी महसूस हुई। कविताएं- श्री अरविंद मुकुल, राजीव कुमार तथा डॉ. योगेन्द्र बहल की कविताएं, नवगीत का आनंद दे गईं। ऐसी ही कविताएं जनमानस के करीब होती हैं। अतुकांत कविताएं भी एक लय-सहजता-सरलता तथा प्रवाहमय भाषा सृजनता के निकट होती हैं। जनाब फ़ारूकी की भाषा के संदर्भ में किसी का यह शे'र काबिलेगौर है :

हिंदी की चांदनी में जलन उर्दू की वाज़िब है
उर्दू की फ़बन देखकर हिंदी भी रोती है।

दर्द कानपुरी, उन्नाव-229503, मो. 955 958 3434

हिमप्रस्थ का नवम्बर-दिसम्बर, 2014 (शिमला जिला विशेषांक) जिला शिमला जिले के सम्बंध में एक ही जगह स्तरीय सामग्री प्रदान करने के लिए संपादक मंडल बधाई का पात्र है। इतनी सारगर्भित जानकारी के लिए आपको साधुवाद। अंक में शामिल समस्त रचनाकारों ने अपनी लेखनी से इस अंक को ऐतिहासिक बना दिया है। पत्रिका में अगर कोई कमी नजर आती है, तो वह है पत्रिका में पाठकों के पत्रों को शामिल न किया जाना। वैसे भी आधुनिकीकरण के इस दौर में पत्र-विधा पर गहरा संकट छाया हुआ है। अगर आप पाठकों की प्रतिक्रियाओं को अंक में प्रकाशित करना शुरू करें तो अंक की गरिमा में और इजाफा होगा। कम कीमत में स्तरीय सामग्री पाठकों तक पहुंचाना इस देश में केवल हिमप्रस्थ के ही बूते का कार्य रह गया है। आशा है पत्रिका आगे भी पाठकों का इसी तरह मार्गदर्शन करती रहेगी।

कृष्णवीर सिंह, भोपाल, मो. 98265 83363

हिमप्रस्थ

वर्ष : 60 अगस्त, 2015 अंक : 5



प्रधान सम्पादक
डॉ. एम.पी. सूद

वरिष्ठ सम्पादक
यादविन्दर सिंह चौहान

सम्पादक
वेद प्रकाश

आवरण चित्र : **विनोद भारद्वाज**
कम्पोजिंग एवं पृष्ठ सज्जा : **अश्वनी**

सम्पादकीय कार्यालयः हि. प्र. प्रिंटिंग प्रेस परिसर, घोड़ा चौकी, शिमला-5

वार्षिक शुल्क : 150 रुपये, एक प्रति : 15 रुपये

E-Mail : himprasthahp@gmail.com
Tell: 0177 2633145, 2830374

ज्ञान सागर

पैसों से सफलता हासिल नहीं की जा सकती। सफलता के लिए प्रयास करने की आजादी जरूरी है।

– नेल्सन मंडेला

इस अंक में

लेख

कहानी

लघुकथा

कविता/ग़ज़ल

समीक्षा

अपनी बात

हो चित्त जहां भय शून्य, माथ हो उन्नत
हो ज्ञान जहां पर मुक्त, खुला यह जग हो...

कविवर रवीन्द्रनाथ टैगोर की कविता की इन पंक्तियों में आज़ादी का बोध निहित है। दरअसल, आज़ादी सांसारिक जीवों का मूल स्वभाव है, जिसकी हसरत मनुष्यों को ही नहीं, वरन् जीव-जंतु और वनस्पति जगत में भी होती है। यदि किसी बीज को मिट्टी में दबा दिया जाए तो वह भी धूप और खुली हवा की चाहत में बाहर की ओर ही अंकुरित होता है। भारतवर्ष वैदिक और पौराणिक काल से ही एक स्वतंत्र देश रहा है और इस दौरान यहां पोषित एवं विकसित विभिन्न सांस्कृतिक, आध्यात्मिक एवं जनतांत्रिक परम्पराएं आज भी हमारी सभ्यता की मूलाधार हैं। प्रागैतिहासिक काल के शायद इसी दौर में भारतवर्ष में किसी-न-किसी रूप में जनतांत्रिक व्यवस्था का उदय हुआ और इस संदर्भ में हमारे परवर्ती संस्कृत और वैदिक साहित्य में वृहद उल्लेख विद्यमान है। तात्पर्य यह कि आर्यों के भारत में आगमन से पूर्व यहां शासन की सुव्यवस्थित एवं सुनियोजित व्यवस्था स्थापित थी। लेकिन कालांतर में हमारे देश में राजतंत्रीय व्यवस्था विकसित होने से हमारी पारम्परिक लोकतांत्रिक व्यवस्था धीरे-धीरे गौण होती चली गई। तदोपरांत बाहरी आक्रांताओं एवं आक्रमणकारियों के दौर के बाद हमें लम्बे समय तक अंग्रेजों की दासता का दंश झेलना पड़ा। अपने ही देश में विदेशी दमन-चक्र एवं क्रूर अत्याचारों से त्रस्त भारतवासियों ने आज़ादी का पहला बिगुल 1857 की क्रांति के रूप में बजाया। स्वतंत्रता संग्राम के पहले प्रयास में हम भले ही सफल न हो पाए हों, लेकिन इसने भारतीय समाज में आज़ादी एवं देश प्रेम का ऐसा जज़्बा पैदा किया जिससे पूरे राष्ट्र को एकसूत्र में पिरोकर एकजुट कर दिया। बाल गंगाधर तिलक का नारा 'स्वतंत्रता हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है', हर राष्ट्रभक्त की जुबां पर था। बीसवीं सदी के शुरुआत से आरम्भ स्वतंत्रता संग्राम के इस दौर में चन्द्रशेखर, भगत सिंह, राजगुरु, सुभाष चंद्र बोस, खुदीराम बोस, रामप्रसाद बिस्मिल जैसे महान क्रांतिकारी नेताओं तथा महात्मा गांधी, तिलक, पटेल और नेहरू जैसे अनेक राष्ट्रभक्त जन नायकों तथा असंख्य अन्य स्वतंत्रता सेनानियों और देशप्रेमियों के लम्बे संघर्ष एवं कुर्बानियों के परिणामस्वरूप हमें 15 अगस्त, 1947 को आज़ाद भारत में जीने का अधिकार मिला। आज हम जिस खुली फिजां में सांस ले रहे हैं, वह हमारे इन्हीं पूर्वजों के महान बलिदानों के त्याग का परिणाम है। भारत के स्वतंत्रता संग्राम और उसके उपरांत देश की एकता एवं अखंडता को बनाए रखने में हिमाचल प्रदेश के लोगों का योगदान भी कमतर न था। प्रदेश की इस धरा पर 'धामी गोलीकांड', 'पझौता आंदोलन', प्रजा-मण्डल आंदोलन तथा 'सुकेत सत्याग्रह' जैसे अनेक आंदोलनों ने पहाड़ों में स्वाधीनता संग्राम को नई दिशा दी। हिमाचल निर्माता डॉ. यशवंत सिंह परमार के कुशल नेतृत्व में प्रदेशवासियों ने स्वतंत्रता संग्राम के साथ-साथ हिमाचल प्रदेश को देश का एक अलग राज्य बनाने के लिए लम्बी लड़ाई लड़ी जिसके परिणाम स्वरूप 25 जनवरी, 1971 को हिमाचल प्रदेश देश का 18वां राज्य बना। पूर्ण राज्य का दर्जा मिलने के उपरांत प्रदेश ने विकास के हर क्षेत्र में उल्लेखनीय प्रगति की है, आज प्रदेश को पहाड़ी क्षेत्रों में विकास का पर्याय माना जाता है। पंद्रह अगस्त का पावन दिवस हम सब भारतवासियों के लिए ऐसा राष्ट्रीय पर्व है जो हमें राष्ट्रीयता की भावना का बोध करवाता है। यह सत्य है कि हम बड़ी कुर्बानियों एवं मुश्किलों से मिली आज़ादी के अधिकार का प्रयोग निजी स्वार्थ के लिए करने लगे हैं। संविधान द्वारा प्रदत्त अभिव्यक्ति की आज़ादी का तो हम भरपूर लाभ उठा रहे हैं, लेकिन जब दायित्वों के निर्वहन की बात आती है, तो हम पीछे हट जाते हैं। आज़ादी के इस राष्ट्रीय पर्व पर हम सभी को एकजुट होकर देश के प्रति समर्पित भाव से कार्य करना होगा तभी एक सुदृढ़ एवं सशक्त राष्ट्र का सपना पूरा होगा।

– सम्पादक

स्वतंत्रता दिवस पर मुख्य मंत्री श्री वीरभद्र सिंह का आलेख

समान व संतुलित विकास की ओर अग्रसर हिमाचल प्रदेश



हम सभी भारतवासियों को अपनी स्वाधीनता एवं लोकतंत्र पर गर्व है। हमें यह भी स्मरण रखना चाहिए कि विकास के जिस मुकाम पर आज हम सिर ऊंचा किए मजबूत पांव से खड़े हैं, वह हमें हजारों-हजार देशवासियों के बलिदान की बदौलत प्राप्त हुआ है। हमारे राष्ट्र की प्रगति एवं समृद्धि हमारे स्वतंत्रता सेनानियों, सशस्त्र सेना के बहादुर जवानों, किसानों, श्रमिकों, वैज्ञानिकों एवं समस्त राष्ट्रवासियों के कठिन परिश्रम एवं बलिदान की मजबूत बुनियाद पर ही सम्भव हो सकी है। इस पावन दिवस पर मैं सभी देशवासियों, विशेष रूप से अपने प्रिय प्रदेश के लोगों को बधाई देता हूं। आज हम उन सभी शहीदों को याद करते हैं, जिन्होंने देश की स्वतंत्रता एवं गौरव के लिए अपने प्राणों को न्योछावर किया। मातृभूमि के इन महान सपूतों को सच्ची श्रद्धांजलि यही होगी कि हम राष्ट्र की एकता व अखण्डता के लिए स्वयं को पुनः समर्पित करें।

स्वाधीनता प्राप्ति तथा इसकी रक्षा के लिए स्वतंत्रता सेनानियों, सैनिकों तथा भूतपूर्व सैनिकों द्वारा दिए गए अमूल्य योगदान के लिए हम उनके ऋणी हैं। हमने यह सुनिश्चित करने का प्रयास किया है कि स्वतंत्रता सेनानी तथा उनके आश्रित समाज में सम्मानजनक जीवन-यापन कर सकें। राज्य सरकार ने स्वतंत्रता सेनानियों की सम्मान राशि 7,500 रुपये से बढ़ाकर 10,000 रुपये तथा उनकी विधवाओं एवं अविवाहित पुत्रियों की सम्मान राशि 3500 रुपये से बढ़ाकर 5000 रुपये प्रतिमाह की है।

हिमाचल प्रदेश के लोगों ने स्वाधीनता आंदोलन में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। 'प्रजामण्डल आंदोलन', 'धामी गोली काण्ड', 'पझौता आंदोलन', 'सुकेत सत्याग्रह' आदि ऐसी अनेक घटनाएं हैं, जिन्होंने प्रदेश के हजारों लोगों को स्वाधीनता आंदोलन में भाग लेने के लिए प्रेरित किया। हमारे प्रदेश के अनेक युवा देश को स्वाधीन बनाने के लिए आजाद हिंद फौज में शामिल हुए। हमें अपने महान स्वाधीनता सेनानियों पर गर्व है और हम उन्हें आदर के साथ नमन करते हैं।

हमारा प्रदेश स्वाधीनता प्राप्ति के ठीक आठ महीने बाद 30 पहाड़ी रियासतों के विलय के साथ अस्तित्व में आया। प्रदेश के गठन के समय हमारा प्रदेश निर्धनता, पिछड़ेपन व निरक्षरता की तस्वीर था। प्रदेश के सम्मुख अनेक चुनौतियां थीं और आगे का रास्ता कठित था। हिमाचल निर्माता तथा प्रदेश के प्रथम मुख्य मंत्री डा. यशवंत सिंह परमार ने राज्य के शैशव काल में इसके आगे के विकास के लिए ठोस नींव रखी। प्रदेश में अधिकतर समय सत्ता में रही कांग्रेस सरकारों ने विकास को नई गति दी तथा तब से हमारे प्रदेश ने विकास के पथ पर एक लंबा सफर तय किया है। वर्तमान प्रदेश सरकार ने 25 दिसम्बर 2012 को सत्ता संभाली। लगभग

अढ़ाई वर्ष की इस अवधि में हमारी सरकार ने समाज के सभी वर्गों का कल्याण व प्रदेश के सभी क्षेत्रों का विकास सुनिश्चित किया है। हमारी सरकार ने आम आदमी के कल्याण पर बल देते हुए सभी वर्गों को लाभान्वित करने का प्रयास किया है।

सामाजिक सुरक्षा पेंशन को 450 रुपये से बढ़ाकर 600 रुपये प्रतिमाह किया गया है तथा 80 वर्ष से अधिक सभी पात्र वरिष्ठ नागरिकों को 1100 रुपये प्रति माह की सामाजिक सुरक्षा पेंशन प्रदान की जा रही है। सरकार ने वार्षिक आय सीमा को बढ़ाकर 35 हजार रुपये किया है। आवासहीन निर्धन लोगों को आवास सुविधा प्रदान करने के लिए शहरी क्षेत्रों में दो बिस्वा तथा ग्रामीण क्षेत्रों में तीन बिस्वा भूमि उपलब्ध करवाई जा रही है। इंदिरा आवास योजना तथा राजीव आवास योजना के अन्तर्गत गृह निर्माण उपदान को 48,500 रुपये से बढ़ाकर 75,000 रुपये किया गया है। राज्य सरकार द्वारा मुख्यमंत्री कन्यादान योजना के अन्तर्गत प्रदान की जाने वाली सहायता को 21,000 रुपये से बढ़ाकर 25,000 रुपये तथा अंतरजातीय विवाह एवं विधवा पुनर्विवाह के लिए दी जाने वाली सहायता राशि को 25,000 रुपये से बढ़ाकर 50,000 रुपये किया गया है।

हम देश के उन प्रथम राज्यों में शामिल हैं जहां राजीव गांधी अन्न योजना को लागू करते हुए सभी को खाद्य सुरक्षा प्रदान की गई है। इस योजना के अन्तर्गत लगभग 37 लाख लोगों को प्रति व्यक्ति दो रुपये प्रति किलो की दर से तीन किलो गेहूं तथा तीन रुपये प्रति किलो की दर से दो किलो चावल प्रतिमाह प्रदान किए जा रहे हैं। सभी बी.पी.एल परिवारों को 35 किलो राशन प्रतिमाह मिल रहा है। प्रदेश की कांग्रेस सरकार ने अपने विगत कार्यकाल में सभी राशनकार्ड धारकों को तीन दालें, दो खाद्य तेल तथा आयोडीन युक्त नमक प्रदान करना आरम्भ किया था, ताकि बढ़ती कीमतों के असर को कम किया जा सके। गत दो वर्षों में प्रदेशवासियों को उपदानयुक्त दरों पर राशन प्रदान करने पर 457 करोड़ रुपये खर्च किए गए तथा वर्तमान वित्तीय वर्ष के दौरान योजना के अन्तर्गत 210 करोड़ रुपये आवंटित किए गए हैं।

प्रदेश सरकार का प्रयास हिमाचल प्रदेश को देश का ज्ञान राज्य बनाने का है। गत लगभग अढ़ाई वर्षों में 750 नये शिक्षण संस्थान खोले गए अथवा उनका दर्जा बढ़ाया गया है तथा प्रदेश के विभिन्न स्थानों में 22 महाविद्यालय खोले गए हैं। प्रदेश के सरकारी स्कूलों व केन्द्रीय विद्यालयों में पढ़ने वाले विद्यार्थियों को घर से स्कूल तथा वापिस घर आने-जाने के लिए राज्य पथ परिवहन निगम की बसों में निःशुल्क यात्रा सुविधा प्रदान की जा रही है। भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान अथवा अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान में स्नातक पाठ्यक्रमों तथा भारतीय प्रबन्धन संस्थान के स्नातकोत्तर डिग्री अथवा डिप्लोमा पाठ्यक्रमों में दाखिला लेने वाले प्रदेश के सभी विद्यार्थियों को 75 हजार रुपये की एकमुश्त प्रोत्साहन राशि दी जा रही है। वर्तमान वित्तीय वर्ष के दौरान 10वीं तथा 12वीं के मेधावी विद्यार्थियों को 10 हजार नेटबुक प्रदान की जा रही हैं। ऊना जिले में 122 करोड़ रुपये की लागत से एक भारतीय सूचना प्रौद्योगिकी संस्थान खोला गया है। प्रदेश के लिए एक भारतीय प्रबन्धन संस्थान भी स्वीकृत किया गया है, जिसे सिरमौर जिले में खोला जाएगा।

सभी को भरोसेमंद एवं विशेषज्ञ स्वास्थ्य सेवाएं प्रदान करना राज्य सरकार की प्राथमिकता है। गत अढ़ाई वर्षों में राज्य सरकार द्वारा प्रदेश में तीन चिकित्सा खंड, 11 नागरिक अस्पताल, 11 सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र, 39 प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र तथा 6 स्वास्थ्य केन्द्र खोले गए हैं। प्रदेश के नाहन, चंबा तथा हमीरपुर में तीन मेडिकल कॉलेज खोले जा रहे हैं, जिसके लिए प्रति मेडिकल कॉलेज 189 करोड़ रुपये का प्रावधान किया गया है। सरकार ने बिलासपुर जिले में अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान स्थापित करने का निर्णय लिया है। गर्भवती महिलाओं को घर से अस्पताल तथा प्रसव के बाद माता शिशु को सुरक्षित घर पहुंचाने के लिए निःशुल्क जननी एक्सप्रेस 102 एम्बुलेंस सेवा आरम्भ की गई है।

सामाजिक सुरक्षा पेंशन को 450 रुपये से बढ़ाकर 600 रुपये प्रतिमाह किया गया है तथा 80 वर्ष से अधिक सभी पात्र वरिष्ठ नागरिकों को 1100 रुपये प्रति माह की सामाजिक सुरक्षा पेंशन प्रदान की जा रही है। सरकार ने वार्षिक आय सीमा को बढ़ाकर 35 हजार रुपये किया है। आवासहीन निर्धन लोगों को आवास सुविधा प्रदान करने के लिए शहरी क्षेत्रों में दो बिस्वा तथा ग्रामीण क्षेत्रों में तीन बिस्वा भूमि उपलब्ध करवाई जा रही है।

राष्ट्रीय स्वास्थ्य बीमा योजना के अन्तर्गत सफाई कर्मचारियों, कूड़ा बीनने वालों, ऑटो रिक्शा एवं टैक्सी चालकों को भी शामिल किया गया है। प्रदेश में वर्तमान वित्तीय वर्ष से मुख्यमंत्री राज्य स्वास्थ्य देखभाल योजना आरम्भ की गई है जिसके अन्तर्गत ऐसे लोगों को शामिल किया गया है, जो राष्ट्रीय स्वास्थ्य बीमा योजना अथवा अन्य किसी चिकित्सा प्रतिपूर्ति योजना के अन्तर्गत नहीं आते। इस योजना से प्रदेश के लगभग 1.50 लाख लोग लाभान्वित होंगे, जिनमें एकल महिलाएं व 80 वर्ष से अधिक आयु के वरिष्ठ नागरिक भी शामिल हैं। इस योजना में आंगनबाड़ी कार्यकर्ता/सहायक एवं मिड-डे मील कार्यकर्ता, दिहाड़ीदार एवं अंशकालिक कार्यकर्ता, स्वायत्त निकायों, समितियों, रोगी कल्याण समितियों एवं बोर्डों तथा निगमों के कर्मचारी भी शामिल हैं।

राज्य सरकार प्रदेश में सड़कों के निर्माण एवं रखरखाव को सर्वोच्च प्राथमिकता दे रही है। गत अढ़ाई वर्षों के दौरान प्रदेश में 1300 किलोमीटर नई सड़कों तथा 120 पुलों का निर्माण किया गया। इसके अलावा इस अवधि में 232 गावों को सड़कों से जोड़ा गया।

विश्व बैंक द्वारा प्रदेश के लिए 1000 करोड़ रुपये की हिमाचल प्रदेश बागबानी विकास परियोजना स्वीकृत की गई है। यह परियोजना राज्य में बागबानी क्षेत्र के विकास के लिए सूचना प्रौद्योगिकी के उचित उपयोग से बेहतर फसलोत्तर प्रबन्धन सुविधा प्रदान करने के अतिरिक्त आपूर्ति प्रबन्धन तथा वैकल्पिक विपणन प्रबन्धन जैसी सुविधाएं प्रदान करेगी।

राज्य सरकार द्वारा गत वर्ष 111 करोड़ रुपये की डा. वाई.एस. परमार किसान स्वरोजगार योजना आरम्भ की गई थी। इस योजना के अन्तर्गत किसानों को पॉलीहाऊस एवं सूक्ष्म सिंचाई की सुविधाएं प्रदान की जा रही हैं। हमने प्रदेश में 154 करोड़ रुपये की राजीव गांधी सूक्ष्म सिंचाई योजना भी आरम्भ की है। इस योजना के अन्तर्गत किसानों को सूक्ष्म सिंचाई सुविधाएं प्रदान करने पर 113 करोड़ रुपये का उपदान प्रदान किया जाएगा। प्रदेश सरकार द्वारा मुख्यमंत्री किसान एवं खेतीहर मजदूर जीवन सुरक्षा योजना भी आरम्भ की गई है, जिसके तहत लाभार्थियों को जीवन बीमा की सुविधा प्रदान की जा रही है। हमने मुख्यमंत्री आदर्श कृषि योजना भी आरम्भ की है, जिसके तहत प्रत्येक विधानसभा की दो पंचायतों में कृषि विकास योजनाएं कार्यान्वित की जा रही हैं।

किसानों को 80 प्रतिशत उपदान पर एंटी हेलनेट प्रदान किए जा रहे हैं, ताकि उनकी फसलों को ओलावृष्टि से बचाया जा सके। किसानों को उनके उत्पाद के लाभकारी मूल्य सुनिश्चित बनाने के लिए सेब, आम तथा नींबू प्रजाति के फलों के समर्थन मूल्य में वृद्धि की गई है। प्रदेश सरकार ने मौसम आधारित फसल बीमा योजना को राज्य के सभी विकास खंडों में लागू करने का निर्णय लिया है।

विश्व बैंक द्वारा प्रदेश के लिए 1000 करोड़ रुपये की हिमाचल प्रदेश बागबानी विकास परियोजना स्वीकृत की गई है। यह परियोजना राज्य में बागबानी क्षेत्र के विकास के लिए सूचना प्रौद्योगिकी के उचित उपयोग से बेहतर फसलोत्तर प्रबन्धन सुविधा प्रदान करने के अतिरिक्त आपूर्ति प्रबन्धन तथा वैकल्पिक विपणन प्रबन्धन जैसी सुविधाएं प्रदान करेगी।

प्रदेश के सभी जनगणना गावों को बहुत पहले ही पेजयल सुविधा प्रदान की जा चुकी है। प्रदेश सरकार का प्रयास चरणबद्ध रूप से सभी बस्तियों में 70 लीटर पानी प्रति व्यक्ति प्रतिदिन उपलब्ध करवाना है। ऊना जिले में 922.48 करोड़ रुपये की स्वां नदी तटीकरण परियोजना तथा कांगड़ा जिले की इंदौरा तहसील में 180 करोड़ रुपये की छौंछ खड्ड तटीकरण परियोजना के निर्माण कार्य में तेजी लाई गई है। इस अवधि के दौरान 4600 से अधिक बस्तियों में स्वच्छ पेयजल प्रदान किया गया है तथा जलाभाव वाले क्षेत्रों में लगभग 3300 हैंडपम्प स्थापित किए गए हैं। प्रदेश सरकार गरीबी उन्मूलन, रोजगार सृजन, सामाजिक सशक्तिकरण तथा इन क्षेत्रों में मानव एवं आर्थिक संसाधनों के विकास पर विशेष बल दे रही है। वर्तमान वित्तीय वर्ष के दौरान इंदिरा आवास योजना, राजीव आवास योजना तथा अन्य आवास योजनाओं के अन्तर्गत 75 करोड़ रुपये खर्च कर 10 हजार घरों का निर्माण किया जा रहा है। किसानों द्वारा निजी भूमि पर मनरेगा के अन्तर्गत पानी के टैंक के निर्माण को प्रोत्साहित करने के लिए राज्य सरकार ने पानी के कच्चे टैंक को पॉलीलाईन्ड टैंक/पक्का टैंक में परिवर्तित करने के लिए 20

करोड़ रुपये की राशि प्रदान करने का निर्णय लिया है। स्वच्छ भारत मिशन (ग्रामीण) के अन्तर्गत प्रदेश सरकार का प्रयास वर्ष 2017 तक सभी आवासों को शामिल करने का है। इसके अलावा वर्तमान वित्त वर्ष के दौरान 477 पंचायतों में ठोस एवं तरल कचरा प्रबन्धन को लागू किया जाएगा। हमने पंचायती राज संस्थाओं एवं स्थानीय शहरी निकायों को वित्त हस्तातंरण के लिए समयबद्ध संस्तुतियां देने के लिए पांचवें राज्य वित्त आयोग का गठन किया है। हमारी सरकार ने पंचायती राज संस्थाओं के पदाधिकारियों के मानदेय में सम्मानजनक वृद्धि की है। राज्य सरकार ने वर्ष 2015-16 के राज्य बजट में पंचायतों के लिए 109 करोड़ रुपये का प्रावधान किया है। 14वें वित्त आयोग की संस्तुतियों के अनुरूप पंचायतों को वर्तमान वित्तीय वर्ष के दौरान 195 करोड़ रुपये जारी किए गए हैं। चालू वित्त वर्ष के दौरान पंचायत सहायकों के 400 पद भरे जाएंगे।

प्रकृति ने हिमाचल प्रदेश को असीम प्राकृतिक सौंदर्य प्रदान किया है। प्रदेश में उपलब्ध कुल जलविद्युत क्षमता में से अभी तक 9432 मैगावाट क्षमता का ही दोहन हो पाया है। वर्ष 2014-15 के दौरान 956 मैगावाट अतिरिक्त जलविद्युत क्षमता का दोहन हुआ है तथा वर्तमान वित्तीय वर्ष के दौरान हम 1050 मैगावाट क्षमता के अतिरिक्त दोहन के प्रति वचनबद्ध हैं। हमारी सरकार ने प्रदेश में ऊर्जा संरक्षण के लिए एक व्यापक एल.ई.डी. प्रोत्साहन योजना आरम्भ की है। गत दो वर्षों के दौरान प्रदेश के घरेलू उपभोक्ताओं को उपदानयुक्त दरों पर बिजली उपलब्ध कराने के लिए 708 करोड़ रुपये खर्च किए गए तथा वर्तमान वित्तीय वर्ष के लिए 380 करोड़ रुपये का प्रावधान किया गया है।

प्रदेश सरकार राज्य में औद्योगिक निवेश को व्यापक प्रोत्साहन दे रही हैं। गत लगभग अढ़ाई वर्षों के दौरान राज्य स्तरीय एकल खिड़की स्वीकृति एवं अनुश्रवण प्राधिकरण द्वारा 10879 करोड़ रुपये निवेश की 197 इकाइयां स्वीकृत की गई हैं, जिनमें 20,400 लोगों को रोजगार के अवसर उपलब्ध होंगे।

प्रदेश में स्थापित लगभग 40,500 औद्योगिक इकाइयों में तीन लाख से अधिक लोगों को रोजगार उपलब्ध है। प्रदेश में बेहतर एवं तीव्र औद्योगीकरण हेतु सुझाव देने के लिए एक औद्योगिक सलाहकार परिषद् का गठन किया गया है। प्रदेश में नई औद्योगिक इकाइयों के लिए प्रवेश शुल्क को दो प्रतिशत से घटाकर एक प्रतिशत किया गया है। एक ही आवेदन पर अब सभी स्वीकृतियां आवेदन पत्र प्राप्त होने के 45 दिनों के भीतर प्रदान की रही हैं।

प्रदेश के ऊना जिले के पंडोगा में 122 करोड़ रुपये की अनुमानित लागत से एक अत्याधुनिक औद्योगिक क्षेत्र स्थापित किया जा रहा है। इसके अलावा कांगड़ा जिला के कंदरोड़ी में 107 करोड़ रुपये की लागत से एक अत्याधुनिक औद्योगिक क्षेत्र विकसित किया जाएगा।

प्रदेश सरकार युवाओं के कल्याण एवं उनके दक्षता उन्नयन पर विशेष बल दे रही है। प्रदेश में उद्योगों की मांग के अनुरूप दक्षता विकास कार्यक्रम विकसित करने के लिए राज्य कौशल विकास निगम का गठन किया गया है। प्रदेश में प्रतिष्ठित संस्थानों को कौशल विकास विश्वविद्यालय स्थापित करने के लिए आमंत्रित किया जाएगा। राज्य के सभी जिला रोजगार कार्यालयों, स्कूलों, कॉलेजों, आई.टी.आई. तथा इंजीनिरिंग संस्थानों में रोजगार एवं कैरियर गाइडेंस सेवाएं प्रदान की जाएंगी।

प्रदेश सरकार पारिस्थितिकीय एवं पर्यावरण को बिना नुकसान पहुंचाए पर्यटन विकास के प्रति वचनबद्ध है। इसके लिए सतत् पर्यटन नीति 2013 तैयार की गई है, जिसे राज्य में उपलब्ध अपार पर्यटन क्षमता पर केन्द्रित किया गया है। राज्य सरकार प्रदेश में चिन्हित रज्जुमार्ग परियोजनाओं को शीघ्र पूरा करने के लिए भी वचनबद्ध है।

राज्य सरकार कर्मचारियों तथा श्रमिकों के कल्याण के प्रति वचनबद्ध है। सरकार द्वारा दिहाड़ीदारों की दिहाड़ी 150 रुपये से बढ़ाकर 180 रुपये की गई है। राज्य सरकार ने

प्रदेश सरकार राज्य में औद्योगिक निवेश को व्यापक प्रोत्साहन दे रही हैं। गत लगभग अढ़ाई वर्षों के दौरान राज्य स्तरीय एकल खिड़की स्वीकृति एवं अनुश्रवण प्राधिकरण द्वारा 10879 करोड़ रुपये निवेश की 197 इकाइयां स्वीकृत की गई हैं, जिनमें 20,400 लोगों को रोजगार के अवसर उपलब्ध होंगे। प्रदेश में स्थापित लगभग 40,500 औद्योगिक इकाइयों में तीन लाख से अधिक लोगों को रोजगार उपलब्ध है।

मनरेगा के मजदूरों, कृषि एवं बागवानी श्रमिकों, दुकानदारों, असंगठित क्षेत्र में कार्यरत अन्य श्रमिकों, आंगनवाड़ी कार्यकर्ताओं तथा मध्याह्न भोजन योजना के कार्यकर्ताओं के लिए अंशदायी पेंशन योजना आरम्भ की है। 31 मार्च 2015 को पांच वर्ष का सेवाकाल पूरा करने वाले सभी अनुबंध कर्मचारियों को तथा इसी तिथि को सात वर्ष का सेवा काल पूरा करने वाले दिहाड़ीदारों को नियमित किया जा रहा है। इसी प्रकार 31 मार्च 2015 को आठ वर्ष पूरा करने वाले सभी अंशकालिक कर्मचारियों को दिहाड़ीदार बनाया जा रहा है।

प्रदेश के लोगों को भ्रष्टाचार के प्रति शून्य सहनशीलता के साथ कारगर प्रशासन प्रदान करने के लिए राज्य सरकार ने हिमाचल प्रदेश लोक सेवा गारंटी अधिनियम को और अधिक कारगर तरीके से कार्यान्वित कर इसमें आवास, परिवहन, गृह एवं स्वास्थ्य विभागों की 30 और सेवाओं को शामिल किया है।

सरकार प्रदेश के सुदूर कोने तक में रहने वाले लोगों को बेहतर परिवहन सेवाएं प्रदान करने के लिए वचनबद्ध है। राज्य पथ परिवहन निगम के बेड़े में 1081 नई बसें शामिल की गई हैं तथा इस बेड़े में और 234 बसें शीघ्र शामिल की जाएंगी।

राज्य सरकार प्रदेश की समृद्ध वन सम्पदा के संरक्षण तथा इसे और अधिक बढ़ाने के लिए निरंतर प्रयासरत है। ग्रेट हिमालयन नेशनल पार्क को यूनेस्को द्वारा विश्व धरोहर स्थल घोषित किया गया है। वन्य अभ्यारण्य तथा इसके आसपास रहने वाले लोगों की समस्याओं के समाधान के लिए राज्य सरकार ने इन अभ्यारण्यों का युक्तिकरण करना आरम्भ किया है। इससे प्रदेश के 775 गावों को वन्य प्राणी संरक्षित क्षेत्र से बाहर किया गया है जिससे लगभग 1.14 लाख लोग लाभान्वित हुए हैं। राज्य सरकार ने किसानों के लिए टीडी के अधिकारों को बहाल करने का निर्णय लिया है।

प्रदेश के लोगों को भ्रष्टाचार के प्रति शून्य सहनशीलता के साथ कारगर प्रशासन प्रदान करने के लिए राज्य सरकार ने हिमाचल प्रदेश लोक सेवा गारंटी अधिनियम को और अधिक कारगर तरीके से कार्यान्वित कर इसमें आवास, परिवहन, गृह एवं स्वास्थ्य विभागों की तीस और सेवाओं को शामिल किया है।

स्वतंत्रता दिवस के इस पावन अवसर पर हम सभी राष्ट्र की एकता, अखण्डता एवं विकास के लिए समर्पित होने का संकल्प लेते हैं।



मुख्य मंत्री श्री वीरभद्र सिंह शिमला में ऐतिहासिक रिज़ पर आयोजित राज्य स्तरीय स्वतंत्रता दिवस के अवसर पर महिला पुलिस की टुकड़ी द्वारा प्रस्तुत परेड की सलामी लेते हुए

आलेख

आजादी का पहला दिन





● प्रो. योगेश चन्द्र शर्मा

भारतवासियों के लम्बे स्वाधीनता संघर्ष और हजारों लाखों सपूतों की कुर्बानी लेने के बाद अंग्रेजी हुकूमत ने घोषणा की कि वह 14 और 15 अगस्त की मध्यरात्रि को भारत का शासन उसकी संविधान-सभा को सौंप देगी। इससे संपूर्ण देश में हर्षोल्लास छा गया। गली, मोहल्ले तथा गांव-गांव में लोग खुशी से नाच उठे। उन्हें लग रहा था जैसे सभी दुखों का अंत आ गया हो और अब सर्वत्र चैन की वंशी बजने लगेगी। स्वतंत्रता का पहला महोत्सव देखने के लिए लोग काफी बड़ी संख्या में रेल, बस अथवा अन्य उपलब्ध साधनों से राजधानी दिल्ली पहुंचने लगे।

14 अगस्त की संध्या को दिल्ली में विजय चौक और नेशनल स्टेडियम के बीच सैंट्रल विस्टा के विशाल प्रांगण में विशाल जन-समुदाय एकत्रित था और उसकी नजरें उस चबूतरे की तरफ लगी हुई थीं, जहां इस समय अंग्रेजों का झंडा (यूनियन जैक) लहरा रहा था और थोड़ी ही देर बाद अंग्रेजी शासन के प्रतिनिधि के रूप में गवर्नर जनरल लॉर्ड माउंटबेटन वहां उस झंडे को उतारकर भारत के तिरंगे राष्ट्रध्वज को लहराने वाले थे। विजय चौक से नेशनल स्टेडियम के बीच के तीन लम्बे और तीन फर्लांग चौड़े रास्ते पर बेइंतहा भीड़ आगे बढ़ रही थी। सभी के चेहरों पर उत्साह और उमंग थी। थोड़ी देर के लिए भीड़ के लोग देश के विभाजन और उससे होने वाले भयानक जन संहार को भी भूल गए थे। इस समय उनके दिलों में अंग्रेजों के प्रति नफरत के भाव भी नहीं थे। भीड़ में अनेक अंग्रेज भी सहज रूप में उपस्थित थे। ऐसी अनेक अंग्रेज महिलाएं भी उस भीड़ में थीं जो अपने परिजनों से बिछड़ गई थीं। फिर भी उनके चेहरों पर न किसी अलगाव के भाव थे और न भय के।

देश के प्रथम प्रधान मंत्री पं. जवाहर लाल नेहरू अपनी बग्घी में उस रास्ते से आए। जन-सैलाब के कारण नेहरूजी की बग्घी आगे बढ़ नहीं पा रही थी। वे बग्घी से उतरकर भीड़ को नियंत्रित करने और समझाने की कोशिश करने लगे। इसी बीच गवर्नर जनरल लॉर्ड माउंटबेटन की भी बग्घी वहां आ पहुंची। ध्वज लगे चबूतरे पर जाकर उन्हें वहां यूनियन जैक उतारकर भारत का ध्वज लहराना था। मगर भीड़ के कारण उनकी भी बग्घी आगे नहीं बढ़ पा रही थी। नेहरूजी और माउंटबेटन का ध्वज-चबूतरे के निकट पहुंचना कितना आवश्यक है, यह भी सब लोग समझते थे। मगर उस भीड़ में इतनी गुंजाइश ही नहीं थी कि वे इधर-उधर हटकर उन्हें स्थान दे सकें। उन दिनों नेता और जनता के बीच इतना फासला नहीं था कि नेता के आने के लिए रास्ता ही बंद कर दिया जाए। नेता अपनी जनता से इतने आतंकित भी नहीं थे कि उन्हें जनता के बीच जाने में कोई खतरा महसूस हो। इसलिए उस भीड़ में पं. नेहरू और माउंटबेटन दोनों ही सहज रूप में फंसे हुए खड़े थे। लगता था जैसे विशाल जन समुदाय के सम्मुख सब विवश हों।

जन-सैलाब के उत्साह और जोश को देखकर लॉर्ड माउंटबेटन ने विवशता के स्वर में कहा- 'आज का दिन उनका दिन है। यदि वे इसे इस तरह मनाना चाहते हैं तो बीच में बोलने वाला मैं कौन हूं?' इसके बाद उन्होंने वहीं से ध्वज-स्तम्भ के निकट खड़े जवानों को संकेत किया कि वे यूनियन जैक को उतारकर भारतीय ध्वज को लहरा दें। संकेत पाकर जवान आगे बढ़े और उन्होंने हमारी दासता के प्रतीक यूनियन-जैक को उतारा और हमारा राष्ट्रीय ध्वज लहरा दिया। इस प्रकार स्वाधीन भारत का प्रथम राष्ट्रीय ध्वज किसी विशिष्ट जन-प्रतिनिधि या अधिकारी ने नहीं, बल्कि एक सिपाही ने लहराया। यह खेद की बात है कि उस

सिपाही का नाम किसी अखबार में नहीं छपा। सरकारी रिकॉर्ड में भी शायद उसका नाम दर्ज नहीं।

स्वाधीनता दिवस का मुख्य समारोह 14 और 15 अगस्त की मध्यरात्रि को संसद भवन के केंद्रीय हॉल में संपन्न हुआ। वहां उपस्थित लोगों को देखकर लगता था जैसे संपूर्ण भारत अपने लघु रूप में वहां सिमट आया हो। अधिकांश लोग श्वेत खादी के वस्त्र और गांधी-टोपी धारण किए हुए थे। कुछ लोग रंगबिरंगे परिधानों में भी सजे हुए थे। अचकन, राजस्थानी साफा, लुंगियां और सुनहरी जरी की सफेद पगड़ियां भी अपनी आभा बिखेर रही थीं। कुछ लोग अंग्रेजी सूट और टाई भी धारण किए हुए थे, मगर उनकी संख्या बहुत कम थी। महिलाएं रंगबिरंगी बनारसी तथा कांजीवरम् की किनारेदार साड़ियों में सजीधजी थीं। सबके चेहरों पर प्रफुल्लता और असीम आनंद की अवर्णनीय आभा थी।

धीरे-धीरे घड़ी की दोनों सूइयां मिलकर एक हुई और रात्रि के बारह बज गए। सैंट्रल हॉल 'भारत माता की जय' और 'महात्मा गांधी की जय' के नारों से गूंज उठा। पंडित गोविंद वल्लभ पंत अपने साथ शंख लेकर गए थे। उन्होंने उसमें जोरों से फूंक भरी और सेंट्रल हॉल शंख-ध्वनि से गूंज उठा। कुछ अन्य लोगों ने भी शंख बजाए और इस प्रकार हर्ष-ध्वनि के बीच भारत की स्वाधीनता की घोषणा कर दी गई।

इसके उपरांत संविधान सभा की औपचारिक बैठक शुरू हुई। बैठक में पं. जवाहर लाल नेहरू ने स्वतंत्र भारत के प्रति जनता की जिम्मेदारियों का स्मरण दिलाते हुए कहा- 'आजादी और हुकूमत अपने साथ जिम्मेदारियों भी लाती है। आने वाला समय आसानी अथवा आराम का नहीं है। उसमें हमें लगातार कोशिशें करनी हैं, ताकि हम अकसर ली जाने वाली शपथों के अलावा आज ली जाने वाली शपथ को भी पूरा कर सकें।'

संविधान सभा के अध्यक्ष डॉ. राजेंद्र प्रसाद के नेतृत्व में सभी सदस्यों ने शपथ ली, 'मैं, भारत की संविधान सभा का सदस्य पूरी नम्रता से अपने को भारत और उसकी जनता की सेवा में समर्पित करता हूं ताकि यह प्राचीन देश विश्व में अपना समुचित स्थान प्राप्त करे और विश्व-शांति तथा मानव-कल्याण के लिए अपना पूरा और स्वेच्छापूर्वक योगदान कर सके। इसके उपरांत संविधान सभा ने दो विशेष प्रस्ताव पास किए। प्रथम प्रस्ताव में कहा गया कि संविधान सभा ने भारत का शासन संभाल लिया है तथा दूसरे प्रस्ताव में स्वाधीन भारत के प्रथम गवर्नर जनरल के रूप में लॉर्ड माउंटबेटन की नियुक्ति को स्वीकार किया गया। इन दोनों प्रस्तावों की जानकारी लॉर्ड माउंटबेटन तक पहुंचाने के लिए डॉ. राजेंद्र प्रसाद और पं. जवाहरलाल नेहरू को अधिकृत किया गया।

आज के राष्ट्रपति भवन को उन दिनों गवर्नमेंट हाउस कहा जाता था। वही गवर्नर जनरल का निवास स्थान भी था। डॉ. राजेंद्र प्रसाद और पं. जवाहर लाल नेहरू कार से गवर्नमेंट-हाउस पहुंचे, जहां लॉर्ड माउंटबेटन उनकी प्रतीक्षा कर रहे थे। लॉर्ड माउंटबेटन ने गवर्नर जनरल के रूप में अपनी नियुक्ति को प्रसन्नता के साथ स्वीकार किया। तब पं. नेहरू ने जेब से एक लिफाफा निकालकर लॉर्ड माउंटबेटन के सामने रख दिया और कहा कि इसमें उनके मंत्रिमंडल के सदस्यों की सूची है। लॉर्ड माउंटबेटन ने जब वह लिफाफा खोला तो यह देखकर वे जोरों से हंस पड़े कि लिफाफे में एक खाली कागज था। पं. नेहरू ने भूलवश मंत्रियों की सूची वाले कागज के स्थान पर खाली कागज उस लिफाफे में रख लिया था। बाद में, मंत्रिमंडल की सूची भी प्रस्तुत कर दी गई।

15 अगस्त का प्रभात देशवासियों के लिए नई आशा और नया उत्साह लेकर आया था। प्रधानमंत्री निवास पर तंजौरनादस्वरम् वादकों ने मंगल ध्वनि के साथ उसका स्वागत किया। प्रभात की रश्मियों के साथ ही देश के कोने-कोने में लोग आह्लाद और प्रसन्नता से नाचने लगे। अनेक स्थानों पर आतिशबाजी भी की गई। प्रातः दस बजे गवर्नमेंट-हाउस के दरबार हॉल में शपथ समारोह आयोजित किया गया। सर्वप्रथम भारत के तत्कालीन मुख्य न्यायाधीश कानिया ने लॉर्ड माउंटबेटन को स्वतंत्र भारत के गवर्नर जनरल के रूप में शपथ दिलवाई तथा उसके बाद लॉर्ड माउंटबेटन ने प्रधान मंत्री पं. जवाहर लाल नेहरू तथा उनकी कार्यकारिणी के सदस्यों को शपथ दिलाई। प्रसन्नता और उत्साह के साथ सर्वत्र आत्मविश्वास और कर्तव्यनिष्ठा की भावना का अहसास हो रहा था। शपथ समारोह की समाप्ति के बाद लॉर्ड माउंटबेटन एक जुलूस के रूप में संविधान सभा में पहुंचे और वहां भारत की स्वाधीनता के बारे में अंग्रेजी सम्राट का संदेश पढ़कर सुनाया और फिर अपने वक्तव्य में कहा, 'आप मुझे अपने में से ही एक समझें- एक ऐसा व्यक्ति जो भारत के हितों का संवर्धन करने के लिए पूरी तरह समर्पित है।'

आजादी के पहले दिन के इस समारोह में उत्साह और प्रसन्नता के साथ विभाजन की पीड़ा भी झलक रही थी। उससे भी अधिक टीस जो लोगों को साल रही थी, वह थी महात्मा गांधी की अनुपस्थिति। देश में फैली साम्प्रदायिकता की आग से व्यथित होकर वे उस समय नोआखली के पीड़ितों को मरहम लगाने और लोगों की आपसी शत्रुता के विष को कम करने का प्रयत्न कर रहे थे। लगभग सभी वक्ताओं ने महात्मा गांधी की इस अनुपस्थिति को महसूस किया और स्वाधीनता संघर्ष में उनके योगदान को स्मरण किया। स्वयं गवर्नर जनरल लॉर्ड माउंटबेटन ने भी संविधान सभा में दिए गए अपने भाषण में कहा- 'हम इस ऐतिहासिक घड़ी में यह न भूलें कि भारत महात्मा गांधी का कितना ऋणी है। महात्मा गांधी ने अहिंसा के द्वारा भारत की स्वतंत्रता को गढ़ा। आज हमें उनकी अनुपस्थिति खल रही है। हम उन्हें बताएंगे कि वे हमारे दिलोदिमाग में कितना बसे हुए हैं।'

10/611, मानसरोवर, जयपुर, राजस्थान-302020

आलेख

अठारह सौ सत्तावन की प्रबल ज्योति बहादुरशाह जफर

● डॉ. बी. एल. कपूर

अठारह सौ सत्तावन के समर का प्रभाव ऐसा रहा कि लाल किले में बैठा एक शायर एकदम भारत के बादशाह के अवतार में उभरा। सीमित साधनों में जीवन के आनंद उसे प्राप्त थे। वह नाम मात्र का बादशाह था। उन दिनों एक मुहावरा प्रचलित हो गया था 'वाह बादशाह शाह आलम-सलतनत लालकिले से पालम'। अंग्रेजों की क्रूर दृष्टि उसके लाल किले पर भी थी। वे चाहते थे कि कुछ ऐसी परिस्थितियां पैदा कर दें कि बादशाह लाल किले को उन्हें सौंप दे। यद्यपि बादशाह शक्तिहीन था परंतु साम्राज्य का केंद्रबिंदु लालकिला अभी भी उसके पास है यह विचार फिरंगियों के जहन में था और वे कटिबद्ध थे लालकिले को हथियाने में। दिल्ली के बादशाह को अपमानित करने और निरंतर अनुचित व्यवहार भी बादशाह के लिए आपत्तिजनक तो था परंतु वह इतना बेबस था कि अंग्रेजों को खदेड़ने तक का विचार उसके मन में नहीं था। केवल एक बात उसे सताती रहती थी कि उसकी पेंशन बची रहे जिस पर भी अंग्रेजों की कैंची सतत चालू थी।



उपर्युक्त राय फिरंगियों और उनके इतिहासकारों ने अनेक स्थानों पर लिखी और इसका खूब प्रचार और प्रसार किया जिससे यह भ्रम स्थायी हो जाए कि बादशाह एकदम बेकार था और उसके मन में भारत की स्वाधीनता से कोई लेना-देना नहीं था। वे एक सत्य को वर्षों छुपाते रहे कि इस क्रांति के सूत्रधार बिठूर में बैठा नाना साहिब था जो वर्षों से बिठूर से दिल्ली और लखनऊ से लेकर दक्षिण तक आने वाले संग्राम के लिए तत्पर थे। नाना साहिब पूणे के पेशवा के दत्तक पुत्र थे और अंग्रेजों की पेंशन पर बिठूर में लगभग कैद ही थे परंतु देशाटन तथा तीर्थयात्रा के बहाने वे दिल्ली में बहादुर शाह से मिल चुके थे और वे दोनों विद्रोह की रूपरेखा पर सहमत थे। इसी भांति लखनऊ की बेगमों से भी नाना साहिब और उनके सलाहकारों की पहुंच थी और वे सभी अपने-अपने सरोकारों से परिचित थे। इतिहासकारों ने प्रमाणों से यह तथ्य उजागर किया है कि नाना के विशेष दूत दिल्ली से लेकर दूर दक्षिण तक प्रचारक फिरंगियों की सेनाओं और जनता को अपनी ओर करने के लिए सतत प्रयासरत थे। इस राष्ट्रीय योजना को कार्य रूप में परिणत करने के लिए सबसे उपयुक्त स्थान दिल्ली के लालकिले में मिला और बहादुरशाह की उसमें पूर्ण भागेदारी थी। सम्राट बहादुर शाह ने, उसकी बेगम जीनत महल ने और उनके सलाहकारों ने नाना का साथ देने का निश्चय कर लिया था। लिखा मिलता है कि इन विषयों में दिल्ली के सम्राट और ईरान के शाह के मध्य पत्र-व्यवहार भी हुआ था। दिल्ली नगर में गुप्त सभाओं का एक दौर था और बहादुरशाह का उनको वरदहस्त प्राप्त था। वह प्रायः हाथी पर सवार होकर, दिल्ली के समरकाल में नगर में निकला करता था और जनता और सिपाहियों को प्रोत्साहन देता रहता था। यह ऐलान हो चुका था कि जो मनुष्य गोहत्या का अपराधी होगा उसके हाथ काट दिए जाएंगे या गोली मार दी जाएगी। सम्राट का एक सेवक जहीर अपनी पुस्तक 'दास्ताने गदर' में लिखता है कि उन दिनों दिल्ली में सात सौ मन बारूद प्रतिदिन तैयार किया जाता था। बादशाह के घोषणा-पत्र के कुछ अंश निम्न आशय के थे। 'ए हिंदुस्तान के फरजन्दों (पुत्रो), यदि हम इरादा कर लें तो बात-ही-बात में शत्रु को समाप्त कर सकते हैं। हम दुश्मन का नाश कर डालेंगे और अपने धर्म और देश को जो हमें जान से भी

ज्यादा प्यारे हैं, खतरे से बचा लेंगे।'

एक दूसरी घोषणा को दक्षिण तक हाथोहाथ बांटा गया था। उसके वाक्य इस प्रकार के हैं- 'तमाम (समस्त) हिंदुओं और मुसलमानों के नाम। हम महज अपना धर्म समझ कर ही जनता के साथ शामिल हुए हैं। इस मौके पर जो कोई बुजदिली (कायरता) दिखाएगा या भोलेपन में दगाबाज (धोखा देने वाले) फिरंगियों के वादों पर एतबार करेगा, वह शीघ्र ही शर्मिंदा होगा और इंगलिस्तान के साथ अपनी वफादारी का वैसा ही इनाम पाएगा जो लखनऊ के नबावों को मिला है। इसके अतिरिक्त इस बात की जरूरत है कि इस जंग में तमाम हिंदु और मुसलमान मिलकर काम करें जिससे हमारा अमनो-अमन बने रहे। जहां तक मुमकिन (संभव) हो सबको चाहिए कि इस एलान (घोषणा) की नकल करके किसी आम जगह पर लगा दें। एक तीसरा घोषणा-पत्र बरेली से प्रकाशित हुआ था। उसका मंतव्य था कि फिरंगियों ने इतने जुर्म (जुल्म) किए हैं कि उनके गुनाहों का प्याला लबरेज (भर) चुका है। यहां तक कि हमारे पाक मजहब को नाश करने की नापाक ख्वाहिश भी उनमें पैदा हो गई है। क्या तुम अब भी खामोश रहोगे। अतः मैं कहता हूं उठो और मैदाने-जंग में कूद पड़ो।' वह देश दुनिया से बेखबर था। उसे देश, जाति या अपने पूर्वजों की महानता का कोई भान ही नहीं था। अंग्रेज लेखकों ने यही प्रयास रखा कि उसका उज्ज्वल चेहरा देश से छिपा ही रहे। परंतु उपरोक्त संदर्भो से ऐसा कोई आभास नहीं प्राप्त होता। बैठूर के नाना साहिब से उसका निकटत्व यही सिद्ध करता है कि फिरंगियों को मार भगाने के प्रति वह भी उतना ही प्रयत्नशील था जितने कि उसके समकालीन सत्तासीन राजप्रमुख विविध प्रदेशों में थे।

जफर को सत्तावन में हिंदू और मुसलमानों को बराबर का सम्मान प्राप्त था। वे उसे बादशाह मानते थे दिल्ली का ही नहीं, समस्त हिंदुस्तान का। जहां भी इस स्वतंत्रता संग्राम को सफलता मिली, वहां के निवासी और सैनिक अपने दल-बल के साथ दिल्ली के बादशाह के यहां आना नहीं भूलते थे और यह क्रम दिल्ली के पतन तक निरंतर चालू रहा। हिंदू प्रजा का भी पूरा-पूरा भरोसा उसे था। उसका एक विशिष्ट उदाहरण लाला मटोल चंद से बादशाह जफर के संपर्क और उसका सर्वस्व समर्पण से विदित होता है। मेरठ के सिपाहियों ने 10 मई 1857 को जिस क्रांति का सूत्रपात किया उसी के फलस्परूप दिल्ली ने अंग्रेजों की पराधीनता से मुक्ति पाई। बादशाह बादशाह तो बन गया परंतु कुछ ही दिनों में बहादुर शाह आर्थिक परेशानियों में फंस गया। यहां तक कि उसे सिपाहियों और कर्मचारियों के वेतन देना भी कठिन हो गया। ऐसी परिस्थिति में उसने गाजियाबाद जनपद के डासना उपनगर के लाला मटोल चंद अग्रवाल को अपने धन से सहायता के लिए आग्रह किया। वह अग्रणी धनाढ्य व्यक्ति था और वह जफर के पैगाम पर हतप्रभ नहीं हुए और इसे यह कहकर मान लिया कि यदि बादशाह हिंदुओं की गोभक्ति की भावना को आदर दें और गोहत्या पर प्रतिबंध लगा दें तो उसका समस्त धन बादशाह को समर्पित है। सेठ ने अपने खजाने के सोने के सिक्कों को दिल्ली भेज दिया। उसे देख जफर ने कहा था कि मेरे राज्य में लाल मटोल चंद अग्रवाल जैसा महान देशभक्त और दानी सेठ है और मुझे उस पर गर्व है। जैसे महाराणा प्रताप के लिए भामा शाह का बलिदान काम आया था उसी भांति भामा शाह के वंशज मटोल चंद, जफर को अंग्रेजी सेना से लोहा लेने में ससमर्थ कर पाए थे। इस कथानक से यही तात्पर्य है कि हिंदू और मुसलमान जफर को सभी अपना बादशाह मानते थे और फिरंगी को मार भगाने में बराबर का योगदान देते रहे। सत्तावन भारतीय इतिहास का वह पृष्ठ है जब इन दोनों समुदायों के हृदय आपस में ऐसे मिले थे कि उनमें परस्पर कोई भ्रम और भेद नहीं रह गया था और भारत में एक सुखद राष्ट्रीयता का प्रादुर्भाव हुआ था।

जिस कालखंड में इस आजादी के जंग का श्रीगणेश हुआ लाल किले में बहादुरशाह के बंधु-बांधवों की संख्या बहुत बढ़ गई थी। इनमें अनेक शाहजादों को बिना किसी न्याय के फांसी दे दी गई। इनमें से बहुत न तो आंदोलन में भाग लेने के योग्य थे और न ही उनका कोई अपराध था। इनमें एक शाहजादे मिर्जा कैसर का नाम लेना इसलिए उचित है कि वह इतना बूढ़ा था कि वह किसी प्रकार का भी उत्पात करने में सक्षम न था। उसे भी फांसी पर लटका दिया कि वह राजवंश से है।

यह सही है कि बादशाह अस्सी से ऊपर था। उसका लालन- पालन भोगविलासी वातावरण में हुआ था। उसके अधिकार शून्यप्राय थे परंतु वह इतना बेफिक्र और बेपरवाह नहीं था कि अंग्रेजों की चालों को न समझे। उसका देशप्रेम और त्याग तब झलकता नज़र आता है जब फिरंगी उसके बच्चों के सिर उसे भेंट करने का दुस्साहस कर रहे थे। जब सम्राट उसकी बेगम जीनत महल और शहजादे को हुमायूं के मकबरे के समीप अंग्रेजों ने गिरफ्तार कर लिया तो उन्हें लाल किले में कैद कर लिया। 134 दिन के बाद पुनः दिल्ली फिरंगियों के अधिकार में आ गया। कठिन परिश्रम और भयंकर युद्धों के पश्चात यह एक बड़ी त्रासदी थी। गिरफ्तारी के पश्चात बादशाह के बेटे और पोते वहीं हुमायूं के मकबरे में रह गए थे। उन्हें यह कहकर रथों में बैठा था कि वे लाल किले ले जाएंगे। पर हुआ यह कि मार्ग में ही हडसन ने जफर के दो बेटों और एक पोते को गोली मार कर ठंडा कर दिया। क्रूर हडसन उनके मस्तकों को काटकर

बादशाह के सामने लाया और कहा कि कंपनी की ओर से आपके लिए भेंट है जो वर्षों से बंद थी। एक प्रत्यक्षदर्शी लेखक ख्वाज़ा हसन निज़ामी ने लिखा है कि बादशाह ने कटे सिर देखे और आश्चर्यजनक धैर्य के साथ मुंह फेर कर कहा कि खुदा की तारीफ है। तैमूर की औलाद इसी तरह मुख उज्ज्वल करके बाप के सामने आया करती थी। इस भांति स्वतंत्रता के इस प्रतीक मानव ने देश के लिए बलिदान पुत्रों को श्रद्धांजलि अर्पित की थी। अंग्रेजों के अत्याचारों की लंबी कहानी है। 1857 में उनका नंगा नाच भारतीय जनता के लिए ही नहीं, विश्व के किसी अन्य जन-आंदोलन को कुचलने में कुख्यात है। शाहजादों का कत्ल तो एक उदाहरण मात्र है।

बादशाह कवि हृदय थे। उन्होंने कोई युद्ध नहीं देखा था। अंग्रेजों ने क्रमशः उन्हें अपमानित करने का एक सिलसिला चला रखा था। जनता भी 1857 के समर में अमानुषिक अत्याचारों से त्रस्त थी। असंख्य ग्रामों में असंख्य निरपराध भारतीयों को मात्र भ्रम कारणों से भी कठोर यातनाएं दे-देकर मार डाला था। उनके सिरों के एक-एक कर बाल उखाड़े जाते थे, उनके शरीरों को संगीनों से बींधा जाता था और सबके अंत में अर्थात मृत्यु से पहले भालों और नुकीली संगीनों के द्वारा इन सब ग्रामवासियों के मुंह में गाय का मांस ठूंस दिया जाता था। यही नहीं, इन यातनाओं के साथ-साथ उनके सामने उनके लिए फांसियों के फंदे तैयार किए जाते थे। इन अत्याचारों को सहते हुए भी भारतीयों ने अपना आंदोलन चलाए रखा। बादशाह का भी स्वपन था कि वह दिन कब आएगा जब इंगलिस्तान पर हिंदुस्तान की तेग (तलवार) उन्हें धराशायी करेगी।

गाजियों में बू रहेगी, जब तलक ईमान की
तख्ते-लंदन तक चलेगी, तेग हिंदुस्तान की।

जिस कालखंड में इस आजादी के जंग का श्रीगणेश हुआ लाल किले में बहादुरशाह के बंधु-बांधवों की संख्या बहुत बढ़ गई थी। इनमें अनेक शाहजादों को बिना किसी न्याय के फांसी दे दी गई। इनमें से बहुत न तो आंदोलन में भाग लेने के योग्य थे और न ही उनका कोई अपराध था। इनमें एक शाहजादे मिर्जा कैसर का नाम लेना इसलिए उचित है कि वह इतना बूढ़ा था कि वह किसी प्रकार का भी उत्पात करने में सक्षम न था। उसे भी फांसी पर लटका दिया कि वह राजवंश से है। एक अन्य शाहजादा आजीवन गठिया का रोगी था और वह सीधा खड़ा तक नहीं हो सकता था। उस मिर्जा मुहम्मदशाह नामक व्यक्ति को जो अकबरशाह का पोता था, को भी फांसी की सजा देकर मार डाला गया था। कुछ राजवंशी जेलों में रखे गए। उन्हें कठिन यातनाएं और कठिन कार्यों के द्वारा निर्दयतापूर्वक जीवित रखा गया। यदि वे अपना काम सही नहीं कर पाते थे तो उनपर कोड़ों की मार पड़ती थी। बहादुर शाह का एक बेटा मिर्जा कोयाश दिल्ली के

बहादुरशाह रंगून की कैद के दिनों में भी अपनी शायरी का प्रेम संजोए हुए थे। उनकी कुछ पंक्तियां केवल उनके भारत-प्रेम को ही नहीं दर्शाती हैं परंतु उनमें जो हूक इस भूमि के रजकणों के प्रति थी, उसका भी संवर्धन करती है। 'लगता नहीं है दिल मेरा उजड़े बयार में' उनके ही शब्दों में रंगून में फूट पड़े थे। 'दो गज जमीन भी न मिली कूवे यार में' तमन्ना हिंदुस्तान में ही आ मरने की और दफन होने का ही संकेत है।

निकट घूमता देखा गया था। हडसन उसे खोजता रहा और अंततः उसका कोई पता नहीं चला। यही हाल शाहजादियों का भी हुआ जो भूख से व्याकुल भीख मांगने को मजबूर थीं। इस प्रकार दिल्ली का राजवंश नष्ट किया गया। बादशाह, बेगम और शाहजादा जवाबएल को कैद करके बर्मा की राजधानी रंगून भेज दिया गया और वहीं 1863 में बहादुरशाह जफर की मृत्यु हो गई। जफर का हुक्के को गुड़गुड़ाते हुए लिया चित्र उसके निर्वासन की कहानी का प्रमाण शेष है। कहां बादशाह निरंतर अपने वतन को याद करता था और वह वतन मदिना या मक्का नहीं, गजनी या अफगानीस्तान नहीं परंतु भारत की पुण्यभूमि थी। एक मुलसमान का यह भारत-प्रेम सिद्ध करता है कि 1857 की दहलीज पर पहुंचते-पहुंचते मुसलमानों ने हिंदुस्तान को अपना देश स्वीकार लिया था। 1857 ने तो दोनों संप्रदायों को इस भांति जोड़ा था कि यह सिद्ध करना कठिन था कि कौन हिंदू है और कौन मुसलमान। अपने-अपने धर्मों का सम्मान सीख गए थे। बाद में जो मनमुटाव हुआ उसके मूल में अंग्रेजी नीति का वर्चस्व था कि दोनों को लड़ाओ और हिंदुस्तान पर अपना राज बनाए रखो।

बहादुरशाह रंगून की कैद के दिनों में भी अपनी शायरी का प्रेम संजोए हुए थे। उनकी कुछ पंक्तियां केवल उनके भारत-प्रेम को ही नहीं दर्शाती हैं परंतु उनमें जो हूक इस भूमि के रजकणों के प्रति थी, उसका भी संवर्धन करती है। 'लगता नहीं है दिल मेरा उजड़े बयार में' उनके ही शब्दों में रंगून में फूट पड़े थे। 'दो गज जमीन न मिली कूवे यार में' तमन्ना हिंदुस्तान में ही आ मरने की और दफन होने का ही संकेत है। जफर के प्रति बहुत से लोगों द्वारा प्रस्तुत मूल्यांकन मात्र पूर्वाग्रहों और दुराग्रहों का मिश्रण है। मरते दम तक हिंदुस्तान को याद करने वाला यह कैदी बादशाह 1857 के आकाश की प्रबल ज्योति है।

89/1, प्रभा निकेतन, मंडी, हिमाचल प्रदेश-175 001

आलेख

स्वतंत्रता संग्राम में शिमला एवं सिरमौर जनपद

● अरुण भारती

अंग्रेजों के विरुद्ध 1857 से पूर्व ही पूरे देश में उनके दमनचक्र के खिलाफ जो विद्रोह चल रहा था, 1857 में वह चिंगारी ज्वालामुखी का रूप धारण कर गई और अंग्रेजों को उखाड़ फेंकने की एक असफल कोशिश की गई। बहादुर शाह 'जफर' के नेतृत्व में लड़ा गया यह युद्ध भले ही अंग्रेजों ने अपनी धूर्तता और देश के रजवाड़ों की अंग्रेज भक्ति के चलते उस समय जीत लिया था लेकिन राख में शोले फिर भी भीतर-ही-भीतर अपने अंदर की आग को सुलगाए हुए थे। 1857 के इस युद्ध में पहाड़ी क्षेत्रों का भी महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है। इसमें शिमला, कांगड़ा, सिरमौर, चम्बा, मंडी-सुकेत और नालागढ़ रियासतों की जनता ने इस विद्रोह में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। शिमला, कसौली, जतोग, स्पाटू, डगशाई और कालका में पैदल सेना की छावनियां थीं। शिमला के साथ लगते जतोग और उसके ठीक सामने की पहाड़ी बनूटी में पैदल सेना की टुकड़ियां मौजूद थीं। इस तथ्य की पुष्टि इस बात से भी होती है कि बनूटी का एक और नाम 'पलाणी छावनी' भी था। इस स्थान पर छावनी के सैनिकों द्वारा बनाया गया अंबिका माता का एक मंदिर भी है जो लगभग 250 वर्ष पुराना है तथा इसकी दीवारों में कलई चूने का गारा इस्तेमाल किया गया है।

1857 के विद्रोह के पीछे एक नहीं अनेक कारण थे। लेकिन तात्कालिक कारणों में अचानक ब्रिटिश आर्मी में काम करने वाले हिंदू-मुसलमान सिपाहियों को ऐसे कारतूसों की आपूर्ति की गई जिनके सिरों पर गाय और सूअर की चर्बी लगी थी और राइफल में लोड करने से पूर्व इन्हें मुंह से हटाना पड़ता था। इससे सेना में विद्रोह फैल गया। मेरठ, बैरकपुर छावनियों में ये कारतूस भेजे गए। बैरकपुर छावनी में जब ये कारतूस दिए गए तो वहां के सिपाहियों ने अपने साथी मंगल पांडे के कहने पर इन्हें इस्तेमाल करने से इनकार कर दिया। यह घटना 28 मार्च 1857 की है। आनन-फानन में मंगल पांडे को गिरफ्तार कर उस पर मुकद्दमा चला कर फांसी पर चढ़ा दिया गया। देश के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम के महायज्ञ में यह पहली आहुति थी।

इतिहासकारों के अनुसार हिमाचल प्रदेश में कंपनी सरकार के विरुद्ध सबसे पहले कसौली छावनी में विद्रोह हुआ। 20 अप्रैल 1857 ई. को अंबाला राइफल डिपो के छह देशी जवानों ने कसौली में एक पुलिस चौकी को आग के हवाले कर दिया। कसौली उन दिनों पहाड़ी क्षेत्रों में ब्रिटिश सैनिक शक्ति की सबसे बड़ी छावनी मानी जाती थी जहां देशी सैनिकों की टुकड़ी और पुलिस के अलावा 300 से आसपास अंग्रेज सैनिक और अधिकारी मौजूद थे। ऐसे सशक्त किले को भेद कर स्वतंत्रता के दीवानों ने ब्रिटिश हुकूमत को खुली चुनौती दे डाली थी। अंग्रेजों ने इस घटना के बाद स्थानीय लोगों और नसीरी सैनिकों (देशी सैनिक) को प्रताड़ित करना शुरू कर दिया। इससे प्रजा में और सेना में भीतर-ही-भीतर विद्रोह पनपने लगा। डगशाई, सपाटू, कालका और जतोग छावनियों में भी अंग्रेजों के दमनचक्र के खिलाफ विद्रोह की भावना पनपने लगी। कांगड़ा, नूरपुर, धर्मशाला, सिरमौर, मंडी-सुकेत, हंडूर आदि कई रियासतों में अंग्रेजों की खिलाफत शुरू हो गई। नालागढ़ में मौजूद हथियारों और गोला-बारूद को क्रांतिकारियों ने लूट लिया, जब इस असले को शिमला लाने की तैयारी हो रही थी, बुशहर के राजा शमशेर सिंह, कुल्लू सिराज के युवराज प्रताप सिंह, सुजानपुर के राजा प्रताप चंद आदि अनेक पहाड़ी रियासतों के शासक और प्रजा क्रांतिकारी गतिविधियों में हिस्सा ले रही थी।

11 मई 1857 को मेरठ के विद्रोह की गुप्त सूचना जब शिमला पहुंची तो अंग्रेज घबरा गए। उसी दिन अंबाला से भी दिल्ली के विद्रोह और कत्ले-आम की सूचना शिमला में पहुंची। ब्रिटिश सेना के कमांडर-इन-चीफ जनरल जॉर्ज एनसन ने जतोग, सपाटू, कसौली और डगशाई छावनियों के सैनिकों को अम्बाला की ओर कूच करने का आदेश जारी किया लेकिन सैनिकों ने मना कर दिया और चर्बीयुक्त कारतूसों को लेकर अंग्रेज अधिकारियों का घेराव कर उन्हें आतंकित कर दिया। जतोग में तैनात गोरखा रेजिमेंट ने देशी सेना के सूबेदार भीम सिंह के नेतृत्व में जतोग छावनी और खजाने पर कब्जा कर लिया। मेरठ, दिल्ली और

शिमला के विद्रोह ने अंग्रेजों में खलबली मचा दी। लगभग 800 गोरे स्त्री-पुरुष मेजर जनरल निकोलस पैन्नी के आदेश पर पहले चर्च और फिर वर्तमान ग्रैंड होटल, जहां उस समय शिमला बैंक हुआ करता था, के पास इकट्ठा हुए। शिमला के डिप्टी कमिश्नर लॉर्ड विलियम हेय को जब पता चला कि एक गोरखा सैनिक ने एक अंग्रेज अधिकारी की गर्दन बाजार में सरेआम खुखरी से उड़ा दी थी तो उसे शंका हो गई कि नसीरी सेना विद्रोह पर उतर आई है। खबर फैलते ही शिमला बैंक (ग्रैंड होटल) के पास एकत्रित अंग्रेज अपनी जान बचाने के लिए कसौली, डगशाई छावनियों की ओर भाग खड़े हुए। कुछ अंग्रेजों ने जुन्गा, धामी, कोटी, बलसन और बघाट के देशी शासकों की शरण में जाकर अपनी जान बचाई। कुछ फिरंगी एकांत स्थानों में बने डाक बंगलों की तरफ भाग गए। लंदन के समाचार-पत्रों में इसे 'शिमला टैरर' (शिमला आतंक) का नाम दिया गया। इस अपूर्व भगदड़ को (शिमला भगोड़ा दल) 'Shimla Flying Squadern' का नाम दिया गया। मेजर जनरल गोवन्ज, कर्नल कीथयंग, कर्नल ग्रेट हैड आदि अनेक अनेक अंग्रेज अधिकारी इस भगदड़ में शामिल थे जिन्होंने अपनी डायरियों में इस घटना के बारे में लिखा है। नसीरी सेना को जब क्वार्टर मास्टर जनरल, ए.बेकर और शिमला के डी.सी. लॉर्ड विलियम हेय ने तुरंत अंबाला कूच करने का आदेश दिया तो नसीरी सेना ने साफ इनकार कर दिया और सेनापति जॉर्ज एनसन् को पेश करने को कहा। नसीरियों ने साफ कह दिया कि वे एनसन् को अंबाला पहुंचने ही नहीं देंगे। शिमला शहर के हिंदू-मुसलमान भी स्वाधीनता संग्राम में कूदने को तैयार हो गए। 16 मई 1857 को नसीरी सैनिकों ने संख्या में कम होते हुए भी कसौली छावनी पर चढ़ाई कर दी। अंग्रेज सैनिक, के. ब्लैकऑल के साथ छावनी से भाग खड़े हुए। इस युद्ध का नेतृत्व सूबेदार भीम सिंह ने किया। हैरानी की बात है कि ये बगावती सैनिक केवल 45 थे जबकि छावनी में 200 से अधिक अंग्रेज सैनिक और अधिकारी मौजूद थे।

स्वतंत्रता की इस लड़ाई में शिमला के आसपास की ठकुराइयों के कुछ शासकों, प्रजा और व्यापारियों ने क्रांतिकारियों का खूब साथ दिया। इतिहास साक्षी है कि जुब्बल, कोटगढ़, कोटखाई, रामपुर बुशहर और किन्नौर आदि क्षेत्रों में अंग्रेज अधिकारियों और व्यापारियों को प्रजा ने भागने पर मजबूर कर दिया। राजा बुशहर ने अंग्रेजों के खिलाफ बगावत कर दी और रियासत की ओर से दिया जाने वाला मुव. 15000 रुपये का टैक्स देने से इनकार कर दिया। अपनी रियासत को स्वतंत्रता घोषित करते हुए राजा बुशहर ने अंग्रेजों की आर्थिक और सैनिक सहायता देने की मांग को ठुकरा दिया। हिल रोड्स आर्मी ट्रांसपोर्ट के सुपरिंटेंडेंट, कै. ब्रिग्ज़ लिखते हैं कि 'बुशहर की दिशा में पहाड़ी लोगों का व्यवहार अत्यंत शत्रुतापूर्ण था। इन दूरस्थ घाटियों में भी लोग उत्तेजित, अशांत और असंतुष्ट थे। वे परिवर्तन चाहते थे और विद्रोह की भावना से प्रेरित थे।'

स्वतंत्रता का यह पहला प्रयास संगठन की कमी, आंतरिक कलह के चलते विश्वासघातियों की कुटिलता और आपसी संवाद की कमी के चलते, हजारों आहुतियों के बावजूद सफल नहीं हो पाया। अंग्रेजों ने 'फूट डालो और राज करो' की नीति का अक्षरशः पालन करते हुए हिंदुस्तान को बांट डाला। विलासिता और स्वार्थ-साधकों को अपनी ओर मिलाकर अंग्रेजों ने न केवल सुरक्षित ठिकाने ढूंढे अपितु भाई के हाथ से भाई को मरवा कर दुबारा हिंदुस्तान पर कब्जा कर लिया।

पहाड़ी रियासतों में फैला विद्रोह सहसा समाप्त हो गया, ऐसा नहीं। 24 मई 1857 को जतोग की क्रांतिकारी नसीरी सेना ने, दिल्ली, मेरठ और अंबाला आदि स्थानों से सैनिकों एवं हथियार आदि न मिलने के कारण आपसी विचार-विमर्श के बाद, अपने नेता भीम सिंह की अगुवाई में शिमला के डिप्टी कमिश्नर और कैप्टन ब्रिग्ज के साथ बैठक की। कै. ब्रिग्ज़ ने जतोग रेजिमेंट की सभी मांगें मान कर उसे शांत कर दिया। इसी दौरान कसौली की क्रांतिकारी सेना टुकड़ी को सायरी के नजदीक ब्रिटिश सेना ने घेर लिया और हथियार डालने पर मजबूर कर दिया। सभी को गिरफ्तार कर लिया गया। क्रांति का सपना अधूरा रह गया। सभी सैनिकों को गिरफ्तार कर अंबाला जेल में बंद कर दिया गया। 27 मई, 1857 को ब्रिटिश सेना के कमांडर जनरल एन.एन का देहांत हो गया। 28 मई 1857 को जतोग, सपाटू, कसौली, डगशाई और कालका छावनियों के सैनिकों ने विद्रोह त्याग दिया। हालांकि सैनिकों ने विद्रोह त्याग दिया था लेकिन जनाक्रोश के चलते शिमला स्थित अंग्रेज अब भी आतंकित थे। 7 जून, 1857 को शिमला के म्यूनिसिपल प्रेजीडेंट कर्नल सी.डी. ब्लेयर ने पंजाब के चीफ कमिश्नर जॉन लारेंस को चिट्ठी लिखकर शिमला के अंग्रेज नागरिकों, सरकारी कोष और अंग्रेजों की अपार दौलत की सुरक्षा के अतिशीघ्र उपाय करने के लिए चिट्ठी लिखी। इसी चिट्ठी में कैप्टन ब्रिग्ज़ को मार्शल-लॉ की शक्ति देकर शिमला की सुरक्षा की भी ताकीद की गई थी क्योंकि अंग्रेजों को अब शहर के उत्तेजित नागरिकों और क्रांतिकारियों के हमले का खतरा था। जॉन लारेंस के आदेश पर शिमला के डिप्टी कमिश्नर विलियम हेय ने 50 जवान दुनाली बंदूक वाले, 50 पुलिस कर्मी और 100 देशी गार्ड्स शिमला की सुरक्षा के लिए तैनात कर दिए।

देखा जाए तो पहाड़ी रियासतों और सैनिकों का यह विद्रोह कोई अलग प्रयास नहीं था। क्रांति की यह योजना पहाड़ों और मैदानों में समान रूप से चल रही थी। एक गुप्त संगठन, जिसके नेता सपाटू के रामप्रसाद 'बैरागी', जो एक पुजारी थे, अपने साधू-संतों, फकीरों की मदद से न केवल नसीरी (गोरखा और स्थानीय) सैनिकों से लगातार सम्पर्क बनाए हुए थे अपितु ठाकुरों-ठकुराइयों, राणा-राजाओं तक क्रांति का संदेश पहुंचा रहे थे। संगठन के गुप्त

केंद्र, मंदिर, मस्जिद और गुरुद्वारे थे। संगठन के सदस्य साधू-संतों और फकीरों के वेश में सक्रिय थे। 12 जून 1857 को संगठन के कुछ पत्र अचानक अंबाला के कमिश्नर जी.सी. वार्न्स के हाथ लगे जिससे संगठन का भेद खुल गया। वैरागी को गिरफ्तार कर लिया गया और अंबाला जेल में उसे फांसी पर चढ़ा दिया गया। संगठन के बाकी सदस्य भूमिगत हो गए। पहाड़ी रियासतों में विद्रोह शांत होता गया। ब्रिटिश हुकूमत के पांव इन पहाड़ों पर जमते चले गए। शिमला हिल्स फिर से अंग्रेजों के कब्जे में थी। आजादी की लड़ाई का यह पहला प्रयास था जिसमें पहाड़, विशेषतया 'शिमला' का अविस्मरणीय योगदान था। भले ही, इतिहास के पन्नों में इसे इतना स्थान न मिला हो। वैरागी के वंशज आज भी सपाटू से उजड़ कर कई स्थानों में बसे हैं लेकिन उन्हें अपने इस पुरखे के बलिदान के बारे में ज्यादा पता नहीं है। सूबेदार भीम सिंह के वंशजों का पता नहीं है। वह गोरखा समुदाय से था। पीढ़ियों की विरासत के रूप में क्रांति की ज्वाला भीतर-ही-भीतर जलती रही। अंग्रेजों ने राणा- राजाओं को प्रलोभन और उनके साथ मैत्री गांठ कर अपने कब्जे में ले लिया। लेकिन विद्रोह के स्वर उभरते ही रहे। अंग्रेज भारत को लूटते रहे। नई पीढ़ी के कुछ युवा कोशिश करते लेकिन अंग्रेज उन्हें या तो मार देते या फिर जेलों में ठूंस कर यातना देते।

इतिहास के पन्ने इन सब तथ्यों के साक्षी हैं। बीसवीं सदी का आरम्भ हुआ। स्वाधीनता की आग ने और जोर पकड़ा। पहाड़ों की उपत्यकाओं में क्रांति का दीप जलता रहा। इसी दौरान पहाड़ी जन में चेतना जगाने के प्रयास शुरू हो गए। तब तक महात्मा गांधी का अहिंसक आंदोलन, 'सविनय अवज्ञा' आंदोलन पूरे भारत में फैल चुका था। गांधी के विचारों ने पहाड़ के आंदोलनकारियों को एकजुट होने में बड़ी भूमिका अदा की है। लेकिन इससे पहले बिलासपुर रियासत में चल रहे भूमि बंदोबस्त का जन विरोध शुरू हो चुका था। यहां के लोग जलसों में शामिल हो कर 'लूण-लोटा' का पानी पीते और एक साथ आंदोलन में जीने मरने की कसमें खाते।

इतिहास के पन्ने इन सब तथ्यों के साक्षी हैं। बीसवीं सदी का आरम्भ हुआ। स्वाधीनता की आग ने और जोर पकड़ा। पहाड़ों की उपत्यकाओं में क्रांति का दीप जलता रहा। इसी दौरान पहाड़ी जन में चेतना जगाने के प्रयास शुरू हो गए। तब तक महात्मा गांधी का अहिंसक आंदोलन, 'सविनय अवज्ञा' आंदोलन पूरे भारत में फैल चुका था। गांधी के विचारों ने पहाड़ के आंदोलनकारियों को एकजुट होने में बड़ी भूमिका अदा की है। लेकिन इससे पहले बिलासपुर रियासत में चल रहे भूमि बंदोबस्त का जन विरोध शुरू हो चुका था। यहां के लोग जलसों में शामिल हो कर 'लूण-लोटा' का पानी पीते और एक साथ आंदोलन में जीने मरने की कसमें खाते।

इसी बीच 'सविनय अवज्ञा' आंदोलन के अंतर्गत, विदेशी वस्तुओं के बहिष्कार, अंग्रेजी शासन के विरुद्ध विद्रोह के अंतर्गत, अंग्रेजी शिक्षा संस्थानों का बहिष्कार, विदेशी वस्त्रों का बहिष्कार और ब्रिटिश सरकार को टैक्स न देने की अपील जनता से की जाने लगी। 16 अप्रैल 1930 को गांधी के विचार से प्रभावित होकर, बटलर हाई स्कूल, सनातन धर्मसभा स्कूल और सरकारी स्कूल के विद्यार्थियों ने मिलकर हड़ताल की। इन्होंने अंग्रेजी शासन और उसकी दमनपूर्ण नीतियों का विरोध करते हुए लोअर बाजार से लेकर जुलूस निकाला और गंज मैदान में सभा की। सात दिनों तक क्रांतिकारी विद्यार्थियों ने गांधी के 'सविनय अवज्ञा' आंदोलन में शांतिपूर्ण ढंग से हिस्सा लिया।

13 अप्रैल 1930 को जाखू मेले के दौरान शिमला के क्रांतिकारियों ने विशाल सभा की और कांग्रेस का झंडा फहराया। इनमें श्याम लाल खन्ना, दीनानाथ 'आंधी', प्रेमसागर, शाम लाल, लाल चंद, पूर्ण चंद, जयराम पेंटर और रत्न चंद आदि क्रांतिकारी शामिल थे। शिमला में तब तक कांग्रेस की कार्यकारिणी बन गई थी जिसके प्रधान लाला गेंडामल और महामंत्री द्वारिका प्रसाद थे। इन लोगों ने अपने जोशीले भाषणों से युवाओं को स्वाधीनता संग्राम में हिस्सा लेने के लिए प्रेरित किया। इस काल में हिमाचल के पर्वतीय राज्यों में स्वाधीनता संग्राम की राजनैतिक गतिविधियों बढ़ती गईं। बुशहर के पं. पद्मदेव ने आर्य समाज के प्रचारक के रूप में पहाड़ी रियासतों का भ्रमण किया और युवाओं को स्वाधीनता संग्राम में हिस्सा लेने के लिए प्रेरित किया। जुब्बल के भागमल सोहटा ने भी जन जागरण के लिए हर रियासत का दौरा किया और संगठन को मजबूत करने में अहम भूमिका निभाई। ठियोग के सूरत राम प्रकाश, दौलत राम, हीरा और मियां खड़क सिंह ने ब्रिटिश सरकार और रियासती शासक के विरुद्ध जनमत तैयार करने की कोशिश की। मधान रियासत के देवीदास मुसाफिर, कुनिहार केबाबू कांशी राम, भज्जी के भास्करानंद, बाघल के मंशा राम चौहान, धामी के बाबू नरायण दास और पं. सीताराम, अर्की के हीरा सिंह पाल, बघाट के जयंती प्रसाद वर्मा ने भागमल सोहटा के जन जागरण अभियान को अपनी रियासतों में प्रचारित करना शुरू किया। धामी के रेवा शंकर को राजद्रोह में गिरफ्तार कर लिया गया था। उन्हें न केवल देश निकाला दे दिया गया अपितु जेल में सड़ने के लिए डाल दिया गया। सन् 1937 ई. में धामी रियासत के बाबू नारायण दास, मोती राम, तुलसी राम, भगत राम, देवी सिंह, मनसा राम और देवी राम, जो शिमला में कार्यरत थे, ने धामी में भी आंदोलन चलाने के लिए एक संगठन स्थापित करने की योजना बनाई।

धामी में बेगार प्रथा के विरुद्ध जनाक्रोश पहले ही जड़ें जमा चुका था। राजा के आदेश के तहत शिमला तक मोटर योग्य सड़क बेगार में बनाई जा रही थी। बेगार न देने वालों को सजा दी जाती थी। सड़क इसलिए बनाई जा रही थी कि अंग्रेज अधिकारी शिकार खेलने इस रियासत में अपनी मोटरों से पहुंच सकें। राजा को खबर मिली तो उसने इन लोगों के विरुद्ध दमन चक्र चला दिया लेकिन तब तक धामी के लोगों ने 'प्रेम प्रचारिणी सभा' धामी का गठन कर लिया था। बाबू नरायण दास इसके प्रधान बने, पं. सीता राम महामंत्री बनाए गए थे। इसी दौरान प्रजामंडल की स्थापना भी सिरमौर में हुई और प्रजामंडल का संविधान बना। अखिल भारतीय रियासती प्रजा परिषद को लुधियाना अधिवेशन में शिमला की पहाड़ी रियासतों से पं. पद्म देव, भागमल सौहटा, हितेंद्र सिंह, सदाराम चंदेल, विद्यासागर आदि ने इसमें हिस्सा लिया और इसके बाद पहाड़ में प्रजामंडल बनने शुरू हुए।

दिसम्बर 1938 में शिमला में 'हिमालयी रियासती प्रजामंडल की स्थापना की गई। इसे बनाने का श्रेय टिहरी के देव सुमन, बुशहर के पं. पद्म देव और जुब्बल के भागमल सोहटा को जाता है। कालांतर में इसमें कई लोग जुड़े जिनमें लच्छीराम-थरोच, भास्करानंद-भज्जी, हीरा सिंह पाल-बाघल, सूरत राम प्रकाश-ठियोग, देवी दास मुसाफिर-मधान, पं. सीताराम- धामी, देवी राम केवला-क्योंथल, सदाराम चंदेल-बिलासपुर आदि शामिल थे जिन्होंने 'धामी विद्रोही' में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। लेकिन इससे पूर्व अनेक ऐसी राजनैतिक घटनाएं हो चुकी थीं जिनसे जनाक्रोश उभर कर सामने आ रहा था, खासकर बेगार प्रथा के विरुद्ध। कुमारसेन, बुशहर और जुब्बल रियासतों के पिछड़ा वर्ग ने बेगार के विरुद्ध शिमला में पॉलिटिकल एजेंट के यहां पैटीशन दायर की। पं. पद्म देव के नेतृत्व में पहाड़ी रियासतों के पिछड़ा वर्ग ने पहली बार राजा के आदेशों का उल्लंघन किया। धामी रियासत के एक पट्टे के मुताबिक, सरतेड़ों (राजा के परिजन) एहलकारों, वेदपाठी ब्राहमणों और रियासतों में काम करने वाले नौकरों, मियां बिरादरी के अलावा सभी को बेगार देनी अनिवार्य थी। बेगार न देने पर जुर्माना और कैद दोनों हो सकते थे।

तभी एक घटना हुई। धामी के स्वतंत्रता सेनानी स्व. पं. सीताराम ने एक बार लेखक को बताया था कि परगना कैम्बल के लोग घास और लकड़ी लेकर जतोग और शिमला के बाजारों में बेचते थे। एक दिन एक किसान घास लेकर जतोग की तरफ जा रहा था। हीरानगर के पास, चढ़ाई में जब वह कच्चे रास्ते से ऊपर चढ़ रहा था तो जतोग छावनी का एक अंग्रेज अधिकारी घोड़े पर सवार होकर नीचे उतर रहा था। किसान को देखकर घोड़ा थोड़ा बिदका तो अंग्रेज अधिकारी ने किसान पर चाबुक चला दिया। चाबुक घास को बांधने वाले लकड़ी के डंडे, जिसे स्थानीय भाषा में 'हूल' कहा जाता है, में फंस गया और वह अधिकारी घोड़े से गिर गया। गुस्से में उसने किसान को पीटना शुरू किया तो किसान भी भड़क उठा और उसने अंग्रेज अधिकारी की धुनाई कर दी और भाग गया। यह खबर जब प्रजामंडल तक पहुंची तो उन्होंने इस घटना का विरोध किया। इधर राजा धामी के बेगार और नजराने के विरुद्ध प्रजा में भीतर-ही-भीतर आक्रोश की भावना पनप रही थी। हीरानगर की घटना ने अंग्रेजों के क्रूर रवैये में अचानक वृद्धि कर दी थी। पैदल चलने वाले भारतीय ग्रामीण इनकी क्रूरता के निशाने बन रहे थे जिसने धामी रियासत के सीमांत ग्रामीणों में दहशत फैला दी थी। राजा धामी ने बेगार न करने वालों को झूठे आरोपों में जेल में बंद कर रखा था, जिनमें पं. सीताराम के अनुसार, पं. सूरत राम-बीणू, रेवा शंकर-कनोड़ी/भज्याड़ आदि लोग शामिल थे।

13 जुलाई, 1939 को प्रेम प्रचारिणी सभा के सदस्यों ने कम्हाली नामक स्थान पर एक बैठक की। इस बैठक में भागमल सोहटा की अध्यक्षता में धामी रियासत की 'प्रेम प्रचारिणी सभा' की बैठक हुई जिसमें इसका नाम 'धामी प्रजामंडल' कर दिया गया। इस सभा में एक प्रस्ताव पारित कर राजा धामी से मांग की गई कि इस प्रजामंडल को मान्यता दी जाए। बेगार बंद कर दी जाए। भूमि लगान में कमी की जाए और रियासत में प्रतिनिधि सरकार की स्थापना के लिए उचित कार्यवाही की जाए। प्रस्ताव में यह भी लिखा गया था कि यदि राजा धामी इस संदर्भ में कोई कार्यवाही नहीं करते तो प्रजामंडल का एक सात सदस्यीय दल धामी की राजधानी हलोग में जाकर राजा धामी से इन मांगों पर विचार करने के लिए मिलेगा। इस प्रस्ताव को राजा धामी ने सिरे से खारिज कर दिया। परिणामस्वरूप, 16 जुलाई 1939 को हिमालय रियासती प्रजामंडल के सदस्यों का एक सात सदस्यीय शिष्टमंडल भागमल सोहटा की अगुवाई में धामी की तरफ कूच कर गया। इस शिष्ट मंडल में भागमल सोहटा, हीरा सिंह पाल, मनशा राम चौहान, पं. सीताराम, बाबू नरायण दास, भगत राम और गौरी सिंह शामिल थे। इधर, सीमांत गांव रेहाणा से, परगना कैमबल, परगना बरी, परगना शकराह आदि से भी अनेक लोग तैयार होकर धामी की तरफ बढ़ने शुरू हो गए। शिष्ट मंडल जब घनाहट्टी पहुंचा तो पुलिस ने भागमल सोहटा को हिरासत में लेकर कौमी झंडा जला दिया। शिष्ट मंडल के साथ तब तक सैकड़ों लोग जुड़ चुके थे। पुलिस की हरकत से नाराज होकर उन्होंने सरकार और राजा विरोधी नारे लगाने शुरू कर दिए।

इधर परगना सीऊं के लोग, देवी राम, शिवराम, रामदयाल, नरायणु आदि अनेक प्रजामंडल के सदस्य सैकड़ों लोगों के साथ धामी के सती मंदिर, खेल चौंरा के पास इकट्ठे हो गए। इधर भागमल सोहटा और उनके साथियों को गिरफ्तार कर धामी लाया जा रहा था।

(शेष पृष्ठ 48 पर)

राष्ट्र-बलिदानियो तुम्हें नमन

● रामभवन सिंह ठाकुर, विद्यावाचस्पति

राष्ट्र-बलिदानियो तुम्हें नमन।
सुवासित है तुमसे ये वतन
हिमगिरि-सा उच्च तुम्हारा मान।
जग में निराली तुम्हारी आन-बान
मातृभूमि-हित दे-दी अपनी जान
तुम पर है बच्चे-बच्चे को अभिमान।

भारत-माता के अनमोल रतन
राष्ट्र-बलिदानियो तुम्हें नमन।
शिवि-दधिचि-सा तुम्हारा प्रतिदान।
शौर्य-गाथा से मण्डित है हिन्दुस्तान
अतुल-अनुपम तुम्हारा बलिदान
सलिल-सरिताएं करतीं यश-गान।

राष्ट्र-भक्ति की बहायी गंगा-जमन
राष्ट्र-बलिदानियो तुम्हें नमन
वीर-बहादुर राणा-शिवा की तुम संतान
बढ़ाया जग में तुमने भारत का मान
फूल-फूल को एक कर बांध नेह का धागा
भुला सभी मतभेद पहिन केसरिया बागा।

देश-द्रोहियों का किया दमन
राष्ट्र-बलिदानियो तुम्हें नमन।
जब-जब जय-माल चढ़ाई जाती है
भारत-माता की अंखियां भर-भर आती हैं
चरण-रज पाने उनकी झुक जाते आकाश
अपने 'खूं' से जो लिख जाते इतिहास।

बलि-बलि जाता ये सारा वतन
राष्ट्र-बलिदानियो तुम्हें नमन।

'रामाश्रम', महाराज बाग, भैरोगंज-सिवनी, मध्य प्रदेश-480 661

आलेख

एक कर्मयोगी व लोक नायक डॉ. यशवंत सिंह परमार

● जगदीश शर्मा

कुछ प्रतिभाएं ऐसी भी होती हैं जिन्हें देश-काल, धर्म, जाति तथा विधाओं और कर्मक्षेत्रों की सीमाओं में बांध कर नहीं रखा जा सकता। हिमाचल निर्माता डॉ. परमार ऐसी ही विभूतियों में से एक थे। भारतीय स्वाधीनता प्राप्ति, राष्ट्र निर्माण और राष्ट्र विकास में परमार साहब का विशेष योगदान रहा है। वह एक जागरूक राजनयिक, कुशल समाजसेवी, योग्य प्रशासक, निष्पक्ष न्यायाधीश, संवेदनशील साहित्यकार, पहाड़ी संस्कृति, लोक कला तथा भाषा पारखी और संरक्षक, कुशल बागबान, कृषक तथा सच्चे लोक नायक और विशेषतः पहाड़ी लोगों के मसीहा थे। बहुमुखी प्रतिभा के स्वामी डॉ. परमार तात्कालिक पंजाब हिल स्टेटस की विभिन्न पहाड़ी रियासतों को एकत्र कर एक स्वतंत्र राजनैतिक इकाई हिमाचल प्रदेश को अस्तित्व में लाने से लेकर इसे विशाल हिमाचल और पूर्ण राज्य का दर्जा दिलाने तक के सफल नायक, जन-जन के नेता, पहाड़ी लोगों को उनकी अस्मिता का बोध कराने और भाषा संस्कृति की पहचान करा कर, इसे राष्ट्र के सम्मुख एक सम्मानजनक स्थान दिलाने तथा पहाड़ों की आर्थिक उन्नति और विकास के मसीहा के रूप में सदा याद किए जाते रहेंगे।



4 अगस्त, 1906 को चन्हाल्ग गांव में जन्में 17 वर्षों से अधिक समय तक प्रदेश के मुख्य मंत्री, 7 वर्षों तक प्रदेश कांग्रेस के अध्यक्ष रहे। डॉ. परमार के बारे में यदि एक पंक्ति में कहना हो तो हम कह सकते हैं कि अपने आपको पहाड़िया कहलाने में गौरव अनुभव करने वाले डाक्टर परमार 'पहाड़' के साथ एकात्म हो गए थे। 'दो नाम मिलगुंथ कर/ एक हो गए हैं/ ...अर्थात् वे पर्याय हो गए हैं एक-दूसरे के- पहला नाम 'पहाड़' है और दूसरा 'परमार'।'

हिमाचल के विकास की कहानी वास्तव में डॉ. परमार के जीवन की ही कहानी है क्योंकि उनका स्वप्न, कर्म और वचन सब हिमाचल की खुशहाली ही देखना, करना तथा बखानना था। इतिहास में सदा उनके जीवन की कहानी इस प्रदेश के अद्भुत नेतृत्व वाले व्यक्तित्व का सुनहरी उदाहरण रहेगा, जिसका जीवन पहाड़ी लोगों की सेवा के ऊबड़-खाबड़ रास्ते में कभी न थकने वाली कहानी है। पहाड़ की माटी और लोक संस्कृति के पारंपरिक रूप से जुड़े हुए, पहाड़ से अजेय और अदम्य साहस वाले इनसान के रूप में कर्मयोगी की भांति सिद्धांतों के प्रति निष्ठावान, अद्भुत त्याग की मूर्ति थे परमार साहब। अपने सार्वजनिक जीवन की शुरुआत सिरमौर के सैशन जज के रूप में की तो सत्य व सिद्धांतों से समझौता न करते हुए स्वेच्छा से पद से त्याग-पत्र दे दिया और फिर पढ़ाई के लिए राजा सिरमौर से लिए उधार के बदले में घर-बार भी बेचना पड़ गया। हिमाचल को पंजाब में मिलाने की शर्त पर महापंजाब के मुख्यमंत्री के पद का प्रलोभन भी अलग हिमाचल के स्वरूप के लिए ठुकरा दिया और हिमाचल को पंजाब की कोख से छीन लिया। जब पंडित नेहरू ने उनके विरुद्ध किसी शिकायत के कारण नाराजगी जताई तो तुरंत कहा यदि आपके विचार से मैं ठीक से काम नहीं कर रहा हूं या मैंने कहीं कोई गलती की है तो मैं इसी समय अपना इस्तीफा दे देता हूं। नेहरू जी इनकी सत्यनिष्ठा व कर्तव्य भावना को समझते थे, भांप लिया कि यह किसी की चाल थी। इसीलिए इसके बाद परमार में उनका विश्वास और भी बढ़ गया। अंत में आपातलकाल के दौरान राजनैतिक अवमूल्यन से समझौता न करते हुए 24 जनवरी, 1977 को मुख्य मंत्री पद से स्वेच्छा से त्याग-पत्र देकर सबको सकते में डाल दिया और इंदिरा गांधी के आग्रह पर भी वापस न लेकर एक साधारण व्यक्ति की भांति कंधे से झोला उठाए खुशी-खुशी बस में सफर करते रहे।

जब हम डॉ. परमार के राजनैतिक और सामाजिक जीवन पर दृष्टिपात करते हैं तो स्वयमेव डॉ. परमार एक ऐसे ऊर्जा के रूप में दिखाई देते हैं जिनके विराट व्यक्तित्व ने एक संस्था का रूप ले लिया था और पूरा हिमाचल इनसे अनुप्राणित होता रहा। सड़क निर्माण को वह अपनी पहली प्राथमिकता मानते थे क्योंकि पहाड़ी प्रदेशों की यह जीवन रेखा होती हैं। दूसरी प्राथमिकता 'पनबिजली योजना' थी। इसके बाद वानिकी और औद्योगिकी उनकी प्राथमिकता रही। उन्होंने केंद्र के साथ इस बात को बड़ी शिद्दत के साथ उठाया कि योजना आयोग को पर्वतीय क्षेत्रों के विकास की रूपरेखा की दृष्टि से एक पृथक कक्ष स्थापित होना चाहिए तथा इसके लिए पृथक विभाग का गठन किया जाना चाहिए। उन्होंने तर्क देकर यह सिद्ध किया कि

'गरीबी पहाड़ों की नियति नहीं है, कल यही पहाड़ समृद्धि के परिचायक होंगे परंतु इतना अवश्य ध्यान रहे कि यह समृद्धि पर्यावरण को हानि पहुंचाकर नहीं होनी चाहिए' । इसलिए उन्होंने इस बात पर बल दिया कि पहाड़ों की योजनाओं के मानदंड मैदानों के आधार पर तय नहीं किए जा सकते ।

एक सफल कृषक तथा दूरदर्शी आर्थिक नीतिदार के रूप में उन्होंने प्रदेश में फलों की खेती, मिश्रित खेती, त्रिमुखी वन खेती तथा विद्युत परियोजनाओं की ओर लोगों और वैज्ञानिकों का भी ध्यान आकर्षित किया और इसीलिए आज प्रदेश सेब राज्य ही नहीं अपितु फल राज्य के रूप में आदर्श बन गया है । उस जमाने में जब सांस्कृतिक प्रदूषण और पर्यावरण के खतरे के बारे कोई सोच भी नहीं रहा था, उसी समय इसे भांपते हुए उन्होंने इसका दिशाबोध कराकर खबरदार कर दिया था । एक बहुत बड़े चिंतक, लेखक और रचनाकार । विद्वानों और रचनाकारों से मिलना उन्हें बहुत अच्छा लगता था । एक बार 15 अगस्त के उपलक्ष्य में कालीबाड़ी में आयोजित एक कवि सम्मेलन में मूसलाधार बारिश में भीगते हुए ठीक समय पर पहुंच गए । बहुत कम लोग आए थे, इस बात को उन्होंने तनिक भी बुरा नहीं मनाया । हंस के अपने भाषण में कहा, 'ऐसी बारिश में भी जो कवि और अन्य लोग आए हैं, उन्हें वीरचक्र पुरस्कार मिलना चाहिए । मैं इस घटना का प्रत्यक्ष गवाह हूं । कहने लगे इनकी 'पोलएंड्री इन हिमालयन' को उसी समय एक क्रांतिशील पुस्तक के रूप में आंका जाने लगा था । वह मूलतः एक मानवतावादी राजनेता थे जिनके जीवन पर नैतिक मूल्यों की छाया स्पष्ट दिखाई देती है और जिनका पूरा जीवन राजनैतिक संघर्ष की वीरतापूर्ण गाथा है ।

पहाड़ी होने का गर्व था उन्हें । आज हिमाचल प्रदेश जो कुछ भी है, वह महान स्वप्नद्रष्टा परमार के कारण ही है । उन्हें पहाड़ी होने व पहाड़ी कहलाने पर गर्व था । यही कारण था कि असंभव प्रतीत होती परिस्थितियों को भी उन्होंने संभव कर दिखाया । उनका मानना था कि यदि इस भू-भाग की अलग पहचान को बनाए रखना है तो यहां की संस्कृति को जिंदा इकाई का स्वरूप देना आवश्यक है, अन्यथा यहां की संस्कृति लुप्त हो जाएगी । पहाड़ों की हरियाली बनी रहे, यहां की संस्कृति, यहां के लोकगीत, लोक गाथाएं व यहां के लोग उन्नति के शिखर पर पहुंचे । पं. नेहरू ने विदेशी राजदूतों के एक सम्मेलन में डॉ. परमार का परिचय यूं कराया था- 'इनसे मिलिए ये हैं मेरे पहाड़ी राज्य के मुख्य मंत्री डॉ. परमार' केंद्र शासित प्रदेश होने की वजह से हिमाचल की जमीन पर बनी विद्युत परियोजनाओं में हिमाचल को कोई हिस्सा नहीं रखा गया, इसका दुःख उन्हें अंत तक रहा । एकदम सीधा-सादा जीवन जीने वाला एक असाधारण व्यक्तित्व । सदा पहाड़ी खान-पान, पहाड़ी संस्कृति में रचा-बसा जीवन और पहाड़ी वेशभूषा । मुख्य मंत्री बनने से पहले भी पीठ पर पिट्ठू और मीलों सफर तथा मंत्री पद छोड़ने के बाद भी कंधे पर झोला, हाथ में छड़ी, आज भी मेरे सामने उनका वह चित्र घूमता है- कांधे पर झोला, हाथ में छड़ी तेज-तेज चलते अकेले कॉफी हाउस में प्रवेश और मंद-मंद मुस्कान से चारों तरफ नजर दौड़ाना, सभी लोग उन्हें देख अदब से खड़े होकर टेबल छोड़ देते थे परंतु वह सरलता से बोलते- अरे भई! बैठे रहो मैं भी बैठ जाऊंगा कहीं और तुरंत एक टेबल खाली हो जाता आनंद से चाय की चुस्की लेते और हाथ हिलाते, मुस्कान बिखेरते काफी हाउस से बाहर हो जाते । बाद में सब्ज़ी मंडी से सामान झोले में डाल घर को पैदल लौटना । सफर केवल बस में । घर में कुल 500 रुपये की आय से ही घर खर्च चलाने की हिदायत । तंगी पर घर में गुड़ की चाय का प्रयोग । बच्चों को कभी सरकारी गाड़ी नहीं दी और न उनके लिए कोई सिफारिश न कोई अन्य लाभ पहुंचाने की आदत । जब इस दुनिया से गए तो कोई बैंक बैलेंस नहीं, पोस्ट ऑफिस में केलव 563 रुपये 30 पैसे थे । कहीं मिलेगी ऐसी मिसाल? परंतु पहाड़ के विकास और इसके स्वाभिमान की जो अमूल्य विरासत उन्होंने छोड़ी है, उसका मूल्य आने वाली पीढ़ियां शायद लगा पाएं । प्रायः महान व्यक्ति के प्रयासों की स्तुति उन्हें श्रद्धांजलि के रूप में ही की जाती है परंतु डॉ. परमार ऐसे सफल युगद्रष्टा रहे हैं, जिन्होंने अपने प्रयासों को अपने जीवन काल में ही फलीभूत होते देखा है और संतोष अनुभव किया, इतिहास में ऐसे विरल ही उदाहरण मिलते हैं । इसीलिए इस महान कर्मयोगी को अपने जीवन काल में ही न केवल प्रदेशवासियों अपितु देश की प्रख्यात हस्तियों से प्रशस्ति मिलती रही है । वह 17 वर्षों से अधिक समय तक मुख्य मंत्री रहे और ऐसा भी होता है कि जो व्यक्ति राजनीति में बहुत लंबे समय तक ऐसे शिखर पर रहता है, उसकी लोकप्रियता में कमी दिखने लग जाती है क्योंकि उसे बरकरार रखना मनुष्य के हाथ की बात नहीं रहती परंतु डा. परमार की प्रशंसा, प्रयत्न और लोकप्रियता उत्तरोत्तर ऊंचाइयों को छूती रही और यशवंत सिंह का 'यश' 'सिंह' की भांति उत्तरोत्तर बढ़ता ही गया ।

वह ऐसा अद्‌भुत करिश्मा कर गए कि उनका नाम देश-काल की सीमाओं से बाहर समाज, राजनीति, प्रशासन, न्याय, कला साहित्य अर्थात सभी क्षेत्रों में शीर्ष पर छा गया और रहेगा । आने वाली पीढ़ियां यह कथा बड़े शौक और विस्मय से सुना करेंगी कि ऐसा व्यक्ति भी इस भूमि पर हुआ था जो इतने लोगों के दिल पर राज करते हुए भी साधारण 'पहाड़िये' का जीवन जीता रहा । कोई दंभ नहीं, दिखावा नहीं, सीधा-सादा, किंतु धुन का पक्का, संघर्षशील पहाड़ी सपूत, हिमाचल का रक्षक, रचनाकार और शिल्पकार । सभी प्रलोभनों से निर्लिप्त और सिद्धांतों से समझौता न करते हुए एक कर्मयोगी-सा त्यागी जो पहाड़ी विकास का मसीहा और पहाड़ का गौरव होते हुए 'पहाड़ का ही पर्याय' बन गया । वास्तव में हिमाचल प्रदेश परमार से विहीन कभी हो सकता, वह यहां के कण-कण में व्याप्त है । उनकी स्मृति हिमाचल के लोक मन में एक दिग्दर्शक, एक रहनुमा, त्यागी और संघर्षरत कर्मयोगी के रूप में है जो उनके सच्चे लोकनायक थे क्योंकि हिमाचली और हिमाचल आज जो कुछ भी है, उन्हीं के कारण है ।

श्रीहरि कुंज, लोअर कैथू, शिमला, जिला शिमला,
हिमाचल प्रदेश-171003

शोध

आदिशक्ति माहेश्वरी शड़ी
एक सांस्कृतिक अध्ययन

● डॉ. हिमेन्द्र बाली 'हिम'

पश्चिम हिमालय की तलहटी में बसा हिमाचल देवभूमि के नाम से विश्वविख्यात है। इस पर्वतीय प्रदेश के सुरम्य गांव, शिखर, जलप्रपात, सरिताएं, नदियां, एवं पथ-जल संगम स्थल किसी-न-किसी देवात्मा, देवी, नाग, जल परी अथवा अन्यान्य पराशक्ति के आधिपत्य के कारण जन-आस्था के केंद्र हैं। हिमाचल प्रदेश के जिला शिमला के अंतर्गत राष्ट्रीय मार्ग-22 के दोनों ओर फैले मत्याना क्षेत्र की अधिष्ठात्री देवी माहेश्वरी की पूरे क्षेत्र में बड़ी मान्यता है। मत्याना ठियोग तहसील के अंतर्गत एक कस्बे के रूप में उभर रहा है। मत्याना के दक्षिण-पूर्व में मत्याना-माहोरी मार्ग पर लगभग आठ किलोमीटर की दूरी पर शड़ी गांव में मां माहेश्वरी का शिखर शैली का भव्य मंदिर जन-आस्था का प्रसिद्ध केंद्र है।

महाभारत काल में यह क्षेत्र कुलिंद जनपद के अंतर्गत था।[1] कुलिंद के वशंज खश व कनैत आज भी इस क्षेत्र में आबाद हैं।[2] मत्याना के समीपस्थ मूल मत्याना में शााठी खश वंशजों की ठौइ (काली का चबूतरा) है। बिशू मेले में यहां शाठी सिरमौर-शिमला में पाशी खशियों के साथ ठोडा नृत्य-नाटक का मंचन करते हैं। स्वाभाविक है कि यहां की संस्कृति व इतिहास वैदिक परम्पराओं से सम्बंधित रहे हैं। हिमाचल प्रदेश के 1948 में गठन से पूर्व मत्याना परगना क्योंठल रियासत के अधीन था।[3] हिमाचल प्रदेश के गठन के बाद यह क्षेत्र महासू जिला का अंग बन गया।

मां माहेश्वरी को निशासुरी भी कहा जाता है। सम्भव है कि मां ने निशासुर नामक राक्षस का संहार किया हो। लोक परम्परा के अनुसार माहेश्वरी को आदि शक्ति ज्वाला जी का स्वरूप माना जाता है। मां ज्वाला जालंधर पीठ (जालंधरायण) अर्थात् त्रिगर्त में उदभूत आद्यशक्ति है, जहां सती की जीभ गिरी थी। ज्वालामुखी को सागर के पोषित पुत्र जालंधर का मुख माना जाता है।[4] ऐसी भी मान्यता है कि जब जालंधर घायल अवस्था में पृथ्वी पर पड़ा था, तो वहां उसके सम्मुख चतुर्भुज विष्णु, शिव तथा दुर्गाओं के नौ रूपों में से आठ महादेवियां- तारा, चामुंडा, बगला, जयंती, वज्रेश्वरी, ज्वालामुखी, भद्रकाली और अम्बिका विद्यमान थीं। असुरराज जालंधर ने प्राण त्यागने से पूर्व वरदान रूप में याचना की कि विष्णु मेरे इस देहपात स्थल में प्रविष्ट हो विचरण करे, शिव द्वादश तेजोलिंगों के रूप में इस पर विराजमान हो तथा देवी-देवता यहां किए यज्ञों जपों द्वारा मनोरथ सिद्ध करें।[5] इस प्रकार आदिशक्तियों ने यहां विराजमान होकर अन्यान्य स्थानों को दिव्य शक्ति से आवेष्ठित किया। ऐसा भी माना जाता है कि दक्ष ध्वस्त यज्ञ की नौ करोड़ आहुतियों से यज्ञपूर्ति ज्वालामुखी के यज्ञ में हुई थी। ऐसी भी मान्यता है कि पार्वती व वज्रेश्वरी से अपंग बने अग्निदेव ने ज्वालामुखी में तपकर अभीष्ट पाया था।[6] कहा जाता है कि जालंधर बंध के आविष्कारक जालंधर नाथ ने पच्चीस वर्ष तक ज्वालामुखी में साधना की थी। जो तंत्र, मंत्र यंत्र के सिद्धहस्त थे।[7]

आद्यशक्ति स्थल होने के कारण ज्वालाजी महादेवी की त्रिगर्त एवं कुलिंद क्षेत्र (सिरमौर, शिमला व सोलन) में बड़ी मान्यता है। कलियुग के प्रारम्भ में सभी देवी-देवता और तीर्थस्थल त्रस्त थे कि वे अपनी अक्षुण्णता व शुचिता कैसे सुरक्षित रख सकेंगे। भगवान शिव ने उन्हें सुझाव दिया :

एतज्जालंधरं क्षेत्रं यत सर्वोत्तमोत्तमम्
अत्रगत्यांशतो यू यं सन्तिष्ठध्व मिहैव हि।

अर्थात् जालंधर क्षेत्र तीर्थों और देवस्थानों में श्रेष्ठ है। अतः यहां आकर निवास करो। यहां तुरंत पाप हरने वाली लोक पावनी व्यास नदी है। सद्यसिद्धि प्रदायिनी चंडिका, वज्रेश्वरी, चामुंडा और ज्वालामुखी है।[8]

मां माहेश्वरी का प्राकट्य शड़ी नामक स्थान पर हुआ माना जाता है। लोक परम्परानुसार गांव का गोप (ग्वाला) चरागाह में रोज गाय को चराने ले जाया करता था। एक गाय विशेष स्थान पर जाती और एक अलौकिक शक्ति-सम्पन्न सांप गाय के दूध को पी लेता था। यह क्रम निरंतर चलता रहा। गाय के मालिक ने गोप

को दोषास्पद मानकर प्रताड़ना दी। परंतु गोप अपनी निर्दोषता की याचना करता रहा। अंततोगत्वा गोअधिपति ने वास्तविकता को जानने के लिए स्वयं उस स्थान पर गया जहां वह गाय दैवी नाग को दुग्ध-पान करवाती थी। क्रोधावेश में मालिक ने उस नाग को मार डाला। उस अलौकिक नाग की निमर्म हत्या के उपरांत उसी घटनास्थल पर दैवीय चमत्कार हुआ। एक पौधा, जिसे स्थानीय बोली में छाम्बर कहते हैं, असामान्य तौर पर बढ़ने लगा। वही गाय उसी स्थान पर दूध त्यागने लगी। ये सभी दैवीय घटनाएं आदिशक्ति के प्राकृट्य की दृष्टांत मात्र थीं। अंततः माता ने चित्त भ्रमित व विस्मित गोप को स्वप्न में दिव्य दर्शन देकर कहा- इस स्थान पर मेरी प्रतिमा भूमिगत है। तुम इसे बाहर निकालो।

माता के दर्शन से अभिभूत ग्वाले ने विग्रह को उक्त स्थान पर खुदाई कर बाहर निकाला। माता के दिव्य विग्रह को ब्राह्मण समुदाय को देकर स्वयं अनंत समय तक मां की निःशुल्क सेवा का संकल्प धारण किया। आज भी उस गोप के वशंज माहेश्वरी मां की सेवा निःशुल्क संकल्प की परम्परा को शिरोधार्य कर करते आ रहे हैं।

एक अन्य लोकश्रुत मान्यता के अनुसार शड़ी गांव में बंजारों की बस्ती आबाद थी। माहेश्वरी इन्हीं की देवी थी। कालांतर में प्राकृतिक आपदा के कारण सम्पूर्ण बस्ती नष्ट हो गई। अधिष्ठात्री देवी का मंदिर भी जमींदोज हो गया। इस घटना के उपरांत माहेश्वरी ने गोप व गाय की घटना के माध्यम से स्वयं को पुनः प्रतिष्ठित किया।

मत्याना क्षेत्र के लोक समाज का जीवन माहेश्वरी मां द्वारा प्रेरित व संचालित होता है। कोई भी शुभ कार्य, विवाह, जन्म, लोकोत्सव एवं त्योहार इष्ट अनुमति के बगैर आरम्भ व सम्पन्न नहीं होते। मां माहेश्वरी के साथ पुजारी परिवार के आदिपुरुष मोती, वजीर, कालूनाग व मानणेश्वर महादेव विराजित होकर स्थानीय व अन्यान्य श्रद्धावनत लोगों की आदि भौतिक व आदि दैविक इच्छाओं की पूर्ति और दुख-दारिद्रय का निवारण करते हैं।

मत्याना क्षेत्र के लोक समाज का जीवन माहेश्वरी मां द्वारा प्रेरित व संचालित होता है। कोई भी शुभ कार्य, विवाह, जन्म, लोकोत्सव एवं त्योहार इष्ट अनुमति के बगैर आरम्भ व सम्पन्न नहीं होते। मां माहेश्वरी के साथ पुजारी परिवार के आदिपुरुष मोती, वजीर, कालूनाग व मानणेश्वर महादेव विराजित होकर स्थानीय व अन्यान्य श्रद्धावनत लोगों की आदि भौतिक व आदि दैविक इच्छाओं की पूर्ति और दुख-दारिद्रय का निवारण करते हैं।

माहेश्वर के मंदिर में शांद अथवा शांत महायज्ञ का आयोजन भी किया जाता है। शांद या शांत महायज्ञ का आयोजन पूर्व में बारह वर्ष के बाद होता था।[9] लोकमान्यता के अनुसार भगवदावतार परशुराम ने मातृ हत्या के पाप की निवृत्ति व चित्त शांति के लिए हिमाद्रि (हिमालय) में स्थित विमलोदक सरोवर के समीप बारह वर्ष तक शिवोपासना की थी। पदोपरांत सभी तीर्थस्थलों में स्नान, तर्पण-उपवास, जप-तप तथा यज्ञादि के बाद श्रीपटल आश्रम निरमंड पहुंचे। बारह वर्ष तक तपस्या से परशुराम के पाप व शोक की निवृत्ति हुई। अतः उन्होंने शांति नामक यज्ञ की परम्परा को स्थापित किया जो आज तक न्यूनाधिक परिवर्तन के साथ पश्चिम हिमालय के शिमला, कुल्लू व मंडी जनपद में प्रचलित है।[10] शांत महायज्ञ प्राकृतिक आपदा असाध्य रोग, संक्रामक रोग व चित्त भ्रम की निवृत्ति के लिए आयोजित किया जाता है। इसके अतिरिक्त मंदिर के जीर्णोद्धार, नवनिर्माण व शिखा काष्ठ (कुरण्ठ) की स्थापना पूर्ण होने पर भी शांत महायज्ञ आयोजित होता है। देवी-देवता के तीर्थाटन से लौटने पर भी यह यज्ञ आयोजित होता है।

शांत महायज्ञ के अतिरिक्त बलटी के यज्ञ-त्योहार का आयोजन तीसरे वर्ष अथवा पांचवे या सातवें वर्ष होता है। बड़ी बलटी जो पांचवें या सातवें वर्ष होती है, उसमें शिखा-पूजन होता है। नाण (स्नान) भी एक बड़ा धर्मोत्सव है जो बारह वर्ष बाद आयोजित होता है। माहेश्वरी के विग्रह को नगरकोट स्थित सरोवर में स्नानार्थ ले जाकर सारे क्षेत्र के लोग कई दिनों की पदयात्रा पर सम्पन्न करते हैं। माहेश्वरी नगरकोट के अतिरिक्त ज्वालाजी में विधिवत् पूजा के बाद निश्चित मार्ग होते अपने पावन धाम शड़ी पहुंचती है। इस पुण्य अवसर भव्य उत्सव का आयोजन होता है।

ज्येष्ठ मास की शुक्ल पंचमी को जठैन्जो का त्योहार आयोजित होता है। जठैन्जो ज्येष्ठ या जेठ का अपभ्रंश है। इस अवसर पर माहेश्वरी रथारूढ़ होकर मत्याना (कलीण्ड) बाजार के शीर्षस्थ नाग के टिब्बे की यात्रा करती है। ऐसी मान्यता है कि माता ने एक आततायी राक्षस का वध किया था। उसी घटना की स्मृति में इस धर्मोत्सव का आयोजन होता है। पूरे क्षेत्र के लोग अपने-अपने घरों से सीडें व घी लाकर नाग की चोटी पर देवी-पूजन के उपरांत आपस में मिल बांटकर नैवेद्य रूप में ग्रहण करते हैं। श्रद्धालुओं द्वारा अर्पित घी को माता के भंडार में तालाबंद रखा जाता है जिसे संक्रांति माघ महीने में पूजा में अर्पित करने के उपरांत प्रयोग किया जाता है।

माहेश्वरी देवी मंदिर में नवरात्र के अवसर पर नौ दिनों तक मूल मंदिर के समीपस्थ लघु मंदिर में मां लोक दर्शन के लिए मौजूद रहती है। दिवाली का त्योहार माता की दिव्य विद्यमानता में बरलाज पूजन और भारथ (महाभारत) गायन की चिर अनुसरित परम्पराओं के साथ आयोजित किया जाता है। यहां देवासुर (खश-

क्षणिकाएं

● रितेन्द्र अग्रवाल

1
सोच रहे थे
जीते
आकर्षक एवं
लघु जीवन
गुलाब-सा
जी रहे थे
दीर्घ निरर्थक
जीवन ताड़-सा।



2
दोस्ती और
प्यार के मध्य
शक का प्रवेश
दिये में जलती
बाती हो गई
'शेष'।

3.
दूरी अवरोध
पत्र माध्यम
सम्पर्क सूत्र में
फिर भी
कुछ अव्यक्त है
तभी उत्पन्न है
शून्यता
गायब है
चेतना।

4.
स्वच्छंद उड़ती
मतंग-सा जीवन
लहराता है
आकाश में
हवा के झोंकों
के साथ
शेष रह जाती है
डोर
पतंग कटने के बाद।



5.
चांद सितारे
रूप के नज़ारे
बस! खयालों में
ही थे सारे
किस्मत के आगे
हम जो हारे।

11/500, मालवीय नगर, जयपुर, राजस्थान-302 017, मो. 75974 36456

नाग) संघर्ष की स्मृति में बूढ़ी दिवाली का पारम्परिक आयोजन होता है। पाशी-शाठी (पांडव-कौरव) के महाभारतकालीन युद्ध नृत्य-नाटक ठोडा का आयोजन माहेश्वरी की देवाज्ञा से सम्पन्न होता है। शड़ी में माहेश्वरी का पहाड़ी (खश) शैली का भव्य मंदिर वास्तुकला का भव्य उदाहरण है। मंदिर व लघु मंदिर में द्वारपाल, रामायण, पुराण एवं नागों के सुंदर चित्र उत्कीर्ण हैं। समग्रतः यहां शाक्त, शैव, वैष्णव एवं नाग मत के समन्वित स्वरूप के दर्शन होते हैं। माहेश्वरी श्रद्धावनत् लोगों के सादर आग्रह पर जातर अथवा खीण पर क्षेत्र का दौरा करती है। मत्याना क्षेत्र की अधिष्ठात्री देवी माहेश्वरी यहां के सांस्कृतिक एवं सामाजिक जीवन की धुरी है, जो आर्त याचक को अभीष्ट फल देने वाली है।

प्राचार्य, राज. वरिष्ठ माध्यमिक पाठशाला, संधू, जिला शिमला, हिमाचल प्रदेश, मो. 94184 57274

संदर्भ ग्रंथ

1. A Cunningham, Coins of Ancient Indian, Varanasi, 1963. pp. 70-71
2. Mian Goverdhan Singh, Wooden Temples of Himachal Pradehsh, Delhi, 1991, p. 31
3. Gazetteer of Shimla Hill States, 1910, Reprint, 1905, New Delhi, p. 3
4. भाषा एवं संस्कृति विभाग, हिमाचल प्रदेश के धार्मिक संस्थान, शिमला, 2004, पृ. 2-3
5. डॉ. वेद प्रकाश अग्नि, 'त्रिगर्त क्षेत्र और जालंधर पीठ', युग-युगीन त्रिगर्त, सम्पादित, भारतीय, इतिहास संकलन समिति, हि. प्र. 2001, पृ. 130-31
6. डॉ. ब्रह्मदत्त शर्मा, 'जालंधर पीठ का परिचय', सोमसी, अंक 186, शिमला, अक्तू. दिस. 2012, पृ. 52
7. गोरक्ष संहिता संस्करण, 1976
8. जालधंर पुराण
9. तुलसी रमण, 'पशुबलि यज्ञ-त्यौहार परम्परायें', सोमसी, अंक 2, अप्रैल, 1978, शिमला, पृ. 59
10. डॉ. भवानी सिंह, शांत महायज्ञ : 'एक सांस्कृतिक धरोहर' सोमसी, अंक 131-132, जन-जून 2009, शिमला, पृ. 55-56

लोक संस्कृति

'सूरमी' की प्रणय गाथा

● सरला शर्मा

परम्परा हमारे देश की पहचान है। परम्पराओं के माध्यम से हमें पता चलता है कि हमारी संस्कृति कितनी विराट और कितनी प्रचीन है। परम्पराएँ ही हैं जो देश की सांस्कृतिक विरासत होती हैं। परम्पराओं से मिलकर संस्कृति बनती है। भारतीय संस्कृति प्राचीन संस्कृति है। परम्परा उस संस्कृति से जुड़े नीति, नियम होते हैं। संस्कृति के साथ-साथ ये भी चलते रहते हैं। जिस संस्कृति में परम्पराएँ नहीं वह संस्कृति धीरे-धीरे अपनी पहचान खो देती है। हमारे देश में ऐसी कई परम्पराएँ हैं, जो सदियों से चली आ रही है। ये परम्पराएँ हमें अपनी संस्कृति से भी बांधे रखती है।

हिमाचल प्रदेश अपनी संस्कृति एवं परम्पराओं के लिए प्रसिद्ध रहा है। सांस्कृतिक दृष्टि से शिमला जनपद की चौपाल तहसील का लोक साहित्य अत्यंत समृद्ध एवं पुष्ट है। चौपाल क्षेत्र के लोक साहित्य में लोककथाएँ, लोकगाथाएँ, लोक गीत, लोक नृत्य, मुहावरे एवं कहावतें आदि विविध रूप परिलक्षित होते हैं। यहां के लोक साहित्य में स्थानीय जन जीवन की यथार्थ अभिव्यक्ति निहित है। चौपाल क्षेत्र के पुरातन लोक जीवन को जानने और समझने की रुचि बाल्यकाल से रही। लोकगाथाओं में प्राचीन लोक जीवन के विभिन्न तत्त्वों की अभिव्यक्ति स्पष्ट होती है। चौपाल क्षेत्र की सांस्कृतिक विरासत अत्यंत समृद्ध है तथा यहां की संस्कृति को प्रकाश में लाना आवश्यक है।

इतिहास सच्चे प्रेम के प्रति वीरांगनाओं के बलिदान का साक्षी रहा है। जब भी राजपूत नारियों के पति जीवित नहीं रहे तो उन्होंने निस्संकोच अपने शरीर को अग्नि की लपटों में विलीन कर लिया। हिमाचल के जिला शिमला की तहसील चौपाल में प्रचलित ''सूरमी'' की प्रणय लोकगाथा एक सती की गाथा है, जो अपने सच्चे प्रेम के कारण पति के साथ अग्नि की लपटों में विलीन होकर सती हो जाती है। यह चौपाल तहसील के दोनों ओर लगभग बीस मील के भीतर की घटना है, जिसकी गाथा आज भी वृद्धों के मुख से इस प्रकार सुनी जाती है -

धैरौ दे झाऊं ठुँडू रै बालै कौनया जाए, भाटे तोब पौड़ते राशै छोड़े खौजणे लाए।

राशे लाऐऔ खौजणे आजौ खोंटिऐ खोटे, कै जौलले मास्ते कै जालै हारूला ओटे।

बाप झांऊ सींयो चोल्टू पलाऐ लौखीए धगै, उबौ कौरो एसी धीटू जीऔलो आपणै भागै।

बौरशै जाणी छमासिऐ उखड़े सुरमे बोड़े, पुला आणौ खौड़ौरा आणौ पाणी रै घोड़े।

जोगे तौबें सौरकली रा तौबे बिशटु आजा, म्हीने बशाऔ रै तौबे शादी रा सिहागटा लागा।

पौआड़ो री सूरमीऐ जावरै, कड़ला काठु, लांबे बाम्बै चौलणै उबा लाए समसाई रा ढाठू।

बीशू लागौ संराहे रो पाऊणै पौड़े जौड़णै रे देऊरे, बांठणौ डांडी सुरमी बादे दैखदै ई रोऐ।

रीशौ रा ठौणका तौबे जोगी दा गोआ औ आए, शाकड़ौ भोरी गोहणै सुरमीऐं, बीशु री जीबड़ी दो पाए।

बीशु रो डेअऔ जुबड़ी दू आजै न फीरयौ घौरै, जोगी तैने देवे मांडी दिता फैसला कौरे।

ताना चारौ बाकरी सुरमे बगाहरे दी गाऐ, कैथे थिए शाऊरै कैथेओ तू रोए छांटयों आऐ।

चारौ हाड़े पुन्दरौ चारौ छोड़े हाड़ेयौ बराड़ौ, ताने जोगे छेवड़े केथी भेटै न चौतरा नारौ।

हाथे किया ताने डिंगटा कान्है घौरूआ लेबा, झीनै रा छिटका तौबे ठुँडू री बगाहरै डेवा।

आगु बोशा आंगणै पाछु धैरी री भीतै, येओ सुणौ थियो बौणजौ तुओं लागदो भी चीते।

पीठै लेओ पलीटवौ तौबे सुरमिऐ हौसे, ढोबो नी हौलो बौणजौ जौरे देणौ नी कौसे।

झिनाणै औ ठुँडू रै बाइ रै पूराणै, मीतरी लाणै खे रूपोइये बी औ आणै।

भूशौ लाऔ ताना बातो तोलगी और तोलौ, चौबीश रपौइये का मैरे चोऊ गाबटू रो मौलौ।

मुलै री तौबै मुलाईये पौरे कैरे मुलाए, नौ नाली हामलौ गोई झीने खे जाजड़ू जाए।

सुरमौ थिए घौरे ताना टीरौ दा भेड़ौ आगै, शाशु लिखे शाखणों रान्डी सूरमी रै भागै।

औरी खै चाणो सिड़कू सूरमी खै जठीड़कू रांडौ, चीन जाए

छोअटू तैनी पाछै भुगतोऔ माड़ो।

कैई पोड़े तानेआ आँखे दै घैरे, पौशौ री दिनड़ रोईओं न ठुण्टीए तांह बिना मैरे।

करै न फिकरौ छोड़े न आंशु, दू भीनै शैड़ैरै फागणौ आईदा पाछु।

ग्रौह रो बादलों सुरमिए टोबे फिरदै लागौ, ताने तेसी झनाणटे पौरो चाइतौ से लागौ।

शाशु बोलौ सूरमी रे देखे म्हासते न जौले, भौरी गोंपो चाइतों ताने री आखटी गोई ढ़ौले।

झांऊ तौबै लौखें रूअऔ चूणौ ले पौलू, सूरमै बोलो आमे बापु खै आंह म्हासते जौलू।

चाल पौड़े सुरमीय तौबे मोरदौ रै हीकै, कीमू दे लाए तराइयै सौथी खे बचनों दितै।

तानै रे जलाइतौ पोरे गोए ठुंडणै जाए, हीठौ गोए मितरौ बादे और झीनै खे आए।

बाजगौ रा लागा गुड़कू चौऊ लेआ धुरौ दा शुणै, आमा झुरौ बापू सुरमीए चौड़ू पौखेरू बी रूणै।

चौपाल तहसील के हामल परगना के राजपूत नामक ''झांऊ'' के घर में एक सुन्दर कन्या ने जन्म लिया। ज्योतिषियों ने तरह-तरह से गणनाएं की परन्तु कन्या की राशि खोटी निकलती है। कन्या के माता-पिता ने फैसला किया कि हम कन्या को पालन-पोषण करेंगे। यह लगभग अठारहवीं सदी की बात है। पहाड़ों में कन्या का जन्म निरर्थक समझा जाता था। लड़की आठ-दस वर्ष में माता-पिता की दृष्टि से विवाह योग्य हो गई। उन्हीं दिनों सरकली निवासी ''जोगी'' नामक युवक कन्या से विवाह की इच्छा लेकर आया और कन्या का विवाह बैसाख महीने में हो गया। सराँह नामक स्थान पर मेला लगा है, सूरमी व जोगी दोनों मेला देखने गए। सूरमी ने लम्बी चौलणी (घाघरा) पहन रखा है। सिर पर मखमल का ढाठु (स्काफ) लगा रखा है, जो भी उसे देखते सब देखते ही रह जाते है। बाहल परगने के कुछ मनचले युवकों की हरकतें देखकर जोगी को ईर्ष्या हुई तथा नवविवाहिता के साथ झगड़ा हो गया। गुस्से में आकर सूरमी ने टोकरा भर कर गहने उतार कर मेले में फेंक दिए और वहीं से अपने पिता के घर वापिस आ गई। अंत में मजबूर होकर जोगी ने उसको तलाक दे दिया। सूरमी पिता के घर में रहती थी और पास के जंगल में गाए चराने जाती थी। बगाहर के उसी जंगल में झीना नामक गाँव का युवक ''ताना'' बकरियां चराता था। एक दिन दोनों की मुलाकात हो जाती है और दोनों को एक-दूसरे से प्रेम हो जाता है। दोनों एक-दूसरे पर अनुरक्त हो जाते हैं। ताना पूछता है कि तुम कहां से ऐसी सुन्दरी छंट कर आई हो। मैंने चारों परगने पुन्दर के और चारों परगने बराड़ (जुब्बल) के चल फिर कर देख लिए हैं, पर मेरे जैसे युवक के लिए कहीं भी योग्य, चतुर और सुन्दर पत्नी नहीं मिली। मैं तुम्हारे साथ विवाह करना चाहता हूँ। ताना ने अगले ही दिन हाथ में सोटी और कन्धे पर घरेलू कम्बल उठाया। झीना स्थान से चलकर ठुँडूओं की बगाहर पहुँचा। पीठ फेर कर सूरमी उसे देखकर मुस्करा रही थी। ताना सूरमी के घर जाता है और उसके माता-पिता से सूरमी का हाथ मांगता है। ताना कहता है कि मैं सूरमी से प्रेम करता हूँ आप मुझे उससे विवाह करने की अनुमति दें। माता-पिता कहते हैं कि ठुँडूओं और झीना निवासियों में तो पुराना बैर है। ये बैर मित्रता में कभी नहीं बदल सकता। अगर इसे मित्रता में बदलना ही है तो चौबीस रुपये दण्ड स्वरूप देने पड़ेंगे। ताना ने चौबीस रुपये दे दिए और दोनों का विवाह हो गया। ताना टीर में भेड़ें चराता और सूरमी घर में रहती थी। सूरमी और ताना एक-दूसरे को जल्द मिलने की सांत्वना देते हैं और वापस जल्दी आने की कसमें खाते हैं। ये सब यादें जाने के बाद उन्हें बहुत तड़पाती है। दोनों एक-दूसरे से गहन प्रेम करते हैं। उनके मन की अभिलाषा एक-दूसरे को देखकर ही बनती है। सूरमी की सास बहुत निर्दयी थी। सास औरों के लिए सिड़कू बनाती और सूरमी के लिए जौ की रोटियां बनाती। सूरमी के तीन बच्चे थे, इस कारण वह बेचारी सब कुछ सहन करती थी। उससे भी अधिक ईश्वरीय कोप का भाजन भी सूरमी को बनना पड़ा। ताना भी बीमार पड़ गया। ताना ने बहुत बीमारी बर्दाशत की परन्तु अंत में ताना की मृत्यु हो गई। सूरमी ने अत्यंत प्रेम के कारण ताना के साथ ही सती होने का फैसला कर लिया। सूरमी ने अपने तीनों बच्चों को माता-पिता की गोद में रखकर स्वयं पालकी में बैठकर श्मशान की ओर चल पड़ी और पति के साथ ही सती हो गई। वाद्यों की आवाज बादलों की गर्जना की तरह चारों दिशाओं में सुनाई दे रही थी। अम्मा, बापू तो पश्चाताप करते ही थे सूरमी तुम्हारे लिए चिड़ियां पखेरू भी रो दिए। इस प्रकार उस प्रेम वीरांगना ने पति के शव के साथ अपना भी अंत कर लिया। यह गाथा ऐसी स्त्री की गाथा है, जिसने अपने तीन बच्चों का मोह त्याग कर पति को दिए साथ जीने-मरने के वचन को निभाया।

चौपाल तहसील में प्रचलित इस लोकगाथा में त्याग भावना, श्रृंगार, सौन्दर्य और प्रेम का चित्रण बड़े प्रभावशाली ढंग से किया गया है। यह गाथा हमारे इतिहास में छुपे हुए प्रणय प्रसंगों तथा उनके साहस का परिचय दिलाती है। इस लोकगाथा में ''सूरमी और ताना'' जातीय शत्रुता के बन्धनों को त्यागकर प्रेम विवाह कर लेते हैं। इस लोकगाथा में सूरमी अपने पति को दिए साथ जीने-मरने के वचन और सच्चे प्रेम के लिए अपने तीन बच्चों को छोड़ कर पति के साथ जिंदा जलकर सती हो जाती है। अतः यह लोकगाथा प्रेम के सच्चे रूप को लेकर पूरे चौपाल क्षेत्र में प्रेम भाव से गाई जाती हैं।

गांव हनल, डाकघर नकौड़ा पुल, तह. चौपाल, जिला शिमला, हिमाचल प्रदेश-171 211, मो. 94187 18206

सरोकार

जमाना बदल गया है

● वंदना राणा

जमाना कितना बदल गया है बुजुर्गों से सुना करते हैं। जब हम उस देहरी पर आ खड़े हुए हैं तब, हम सोचने व समझने लगे हैं; -सचमुच जमाना बदल गया है- बदलाव यूं तो तरक्की का सूचक है; लेकिन यह कैसा बदलाव है, हम अपनी संस्कृति को विसारते जा रहे हैं, संस्कारों को भूलते जा रहे हैं। उन्नति के शिखर तक पहुंचने के लिए अपनी जमीन से जुड़ाव भी जरूरी है, मगर हम अपनी जड़ों से कटते जा रहे हैं। कहते हैं जोश के साथ यदि होश भी हो तो तरक्की के रास्ते में कोई बाधा नहीं आती, हम सीधे सपाट पथ पर सदैव अग्रसर रहते हैं, लेकिन नई पीढ़ी और पुरानी पीढ़ी की बातें कहकर हम सत्य की राहों से मुंह फेर रहे हैं। हम पुराने खयालों को बोरियत का नाम बहुत आसानी से दे लेते हैं। यदि हम पुराने दौर का जिक्र करें तो परिवारों में संस्कार अवश्य पलते नज़र आएंगे।

आजकल पुराने खयालात जिंदगी में कवाड़ की तरह लगते हैं। तभी तो घरों में पिता-पुत्र इकट्ठे एक ही कुर्सी-मेज पर बैठ कर कभी शराब पीते हैं कभी ताश के पत्ते बांचते हैं, तो कभी सिगरेट के कश लेते हुए, जिंदगी को धुएं की तरह उड़ा देते हैं। अपने बच्चों की नाजायज हरकतों पर खुश होते दिखाई देते हैं। उनकी मांगों को पूरा करते हुए उसे प्यार का नाम देते हैं। बच्चे हैं अब नहीं 'ऐश' करेंगे तो कब करेंगे। अभी तो इनके खेलने-कूदने के दिन हैं। जमाने के इस बदलाव ने ही, युवा पीढ़ी को नशे की लत सिखा दी। अच्छे-बुरे की परख करना भुला दिया। आजकल के बच्चे माता-पिता के साथ न रहकर अलग रहना ज्यादा पसंद करते हैं। उनके अपने जीवन में किसी की टोकाटोकी या दखलंदाजी पसंद नहीं है। जरा सा कुछ समझा दिया, बस आगबबूला होकर दरवाजा पटक कर घर से बाहर अपने यार-दोस्तों के साथ गप्पे लड़ाते हुए, शाम को हारे हुए जुआरी की तरह वापस आते हैं। हम अपने आस-पास ऐसे बच्चों का ग्रुप देखते हैं जो सिगरेट का कश बारी-बारी लेते हुए आसमान की तरफ मुंह करके धुआं उड़ाते हैं तो सोचते हैं क्या होगा हमारे समाज का जिसका भविष्य यूं धुआं हुआ जा रहा है।

नए जमाने की पीढ़ी आत्मा को सुकून देने वाले गीत नहीं सुनती। उन्हें सुनकर उन्हें जैसे नींद आने लगती हैं। फूहड़, अश्लील, बेहूदा भद्दे गीत सोसायटी में शान से सुने और गुनगुनाए जा रहे हैं। कानों के पर्दे फाड़ने वाला संगीत, रूह को घायल कर देता है जैसे... लेकिन नए जमाने को अच्छा लगता है। उन्हें मजा आता है। आधुनिकता में यही संगीत जीवन की शैली बन गया है। जमाने की हवा ने नारी जगत को भी नहीं छोड़ा है। तन से कम होते वस्त्र आधुनिक नारी के लिए फैशन और सोसायटी का स्टेटस सिंबल बन गया है। पुराने खयालों के लिए यह शर्म की बात लगती है। पुरुषों का पूरा बदन ढका होता है। बूट, पैंट, टाई-शाई सब पहनी होती है लेकिन नारी का बदन जैसे गर्म हवा का झोंका; देखने-सोचने वाले यही तो कहते हैं- जमाना कितना बदल गया है।

पुराने खयालों के लोगों के लिए नारी दया, शील, शर्मोहया की मूरत हुआ करती थी, देवी का साक्षात सुंदर रूप वसंत बहार की तरह नवेली सजी गुणों से लदी नारी कितनी सुघड़, अतुलनीय सौंदर्य की मल्लिका, यौवन की मादकता लिए हर मौसम में मधुमास लगती थी। चांद सी शीतलता, सूरज की दमकता उसमें थी। शायरों की ग़ज़ल कभी कवियों की सुंदर कविता थी नारी। आज नारी का रूप, यौवन हवा के झोंकों की तरह आया और चला गया, कब पता ही नहीं चलता। मौसमों की तरह रंग बदलता रूप यकायक फीका होता चला ही जा रहा है। किसको दोष दें, उसकी इस क्षणभंगुरता का, उसका आचरण... लिबास या बदलता परिवेश या समाज जो नारी को इसी रूप में स्वीकार करना चाहता है।

कितनी सार्थक और सोलह आने सच लगती है यह बात कि जमाना बदल गया है। हर चीज का स्वाद फीका-फीका लगता है। बाजार से कुछ भी चीज खरीदने जाओ, मिलावट के बगैर नहीं मिलती, रंग उड़े चेहरों की तरह सब्जियों के रंग पीले-लाल हुए लगते हैं। पहले सब कुछ सात्त्विक और शाश्वत होता था। खाना-पीना, कहना-बोलना, सुनना-सुनाना, मिठास-ही-मिठास फलों में, वाणी में, कानों में, शब्दों में, मिसरी सी घुली होती थी। लम्बे समय तक यह मिठास घुली रहती थी। रंग-बिरंगे पंछियों का सुबह-शाम आंगन में, पेड़ों के झुरमुट में कलरव करना कितना

सुहाता था! कितना आनंदमय सुरमय था वो समां जब आंगन में फूलों और पेड़ों की कतारें हुआ करती थीं। खेत-खलिहानों में फसलें लहलहाया करती थी। खेती-किसानी में कितना सकून और बरकतें हुआ करती थीं। किसान खुशहाल हुआ करते थे। गांवों में मेल-मिलाप था, विवाह शादियां क्या हर तीज-त्योहार, खुशियां-गमियां सबकी साझी हुआ करती थीं। गलतफहमियां कहीं अगर होती थीं तो मिल-बैठकर सारी उलझनें सुलझा लिया करती थीं। सारे मसलों के हल थे। घर की चारदीवारी के अंदर रिश्तों का लिहाज था। घर-परिवार में सलीका था, एक्का था- जब हमारे समाज का ऐसा प्रारूप था तो देश हमारा सुरक्षित था। देश के प्रति मर मिटने का जज्बा घरों-परिवारों से ही बच्चों के हृदय में हिलोरें लेता था। मेहनत में विश्वास था सबका। देखते-ही-देखते घर-परिवार, गांव, शहर, वतन, जीवन में ऐसा बदलाव आया है कि जिस तरह किसी जलजले में शहर और जीवन का नामोनिशां मिट जाता है, वैसे ही सब कुछ पहले का बदल गया। कुछ भी शेष नहीं, कड़वी-मीठी यादों के सिवा। पहले दौर की कहानियां बन गईं और नए दौर के जलवे देखकर तो लगता है आगे आने वाली नई पीढ़ी को क्या बचा है खाने-रहने, पीने-जीने के लिए। न आवोहवा बची है न तहजीब और न सभ्यताएं। गुबारे की तरह खोखले आचरण, व्यवहार सिर्फ दिखावे मात्र रह गए हैं।

तरक्की के साथ-साथ अगर अपने पर्यावरण की तरफ भी ध्यान दिया होता तो शायद हरियाली होती, खुली हवाएं सांस लेने के लिए मिलतीं। हमारी सोच अगर बेटियों के प्रति सही होती तो शायद आबादी देश की इतनी न बढ़ी होती। बेटे की चाह में परिवार बड़ा होता जा रहा है और भूखमरी और बेरोजगारी भी साथ-साथ बढ़ती जा रही है। हम इस सोच को क्यों नहीं बदल पाते हैं कि जब हम यह कहते नहीं थकते कि जमाना बदल गया है। काश, यह सोच भी बदल जाती तो शायद देश दुनिया की तसवीर कितनी सुंदर होती। सबको रोटी-कपड़ा और मकान मिलता। अखबारों और टीवी के हरेक चैनल में हम पढ़ते-सुनते- देखते हैं कि आज के इस नए जमाने में बेटियों की संख्या इतनी कम हो गई है कि बेटे के लिए बहू ढूंढना मुश्किल नहीं नामुमकिन भी हो जाएगा। हमारा देश तो संस्कारों, सभ्यताओं और धर्म निरपेक्षताओं वाला देश है। हमारे देश में यदि नारी का तिरस्कार होता है तो बेहद निंदनीय है। कहते हैं जहां नारी का, बेटी का सम्मान होता है, बरकतें होती हैं, शक्तियां होती हैं और बुद्धि होती है। जब से हमने बेटियों के प्रति गलत धारणाएं या संकीर्णताएं दिल-दिमाग में पाल रखी हैं तब से कहीं-न-कहीं हम कुदरत के गुस्से के भी शिकार हो रहे हैं। कहीं भूकंप आ रहा है, कहीं बाढ़ का प्रकोप हो रहा है। कहीं आग लग रही है। कहीं खेती-बाड़ी को नुकसान हो रहा है। बेमौसमी बारिश और बर्फबारी से हमें आभास ही नहीं, कुदरत की पीड़ा का। जंगल काट दिए। नदियों के बहाव रोक दिए। सागर तट तोड़ दिए। पहाड़ खोद दिए। पशु-पक्षियों के बसेरे उजाड़ दिए अपने स्वार्थ के लिए और उसे नाम दे दिया तरक्की का। कहीं-न-कहीं हम ही अपने आपको छलते जा रहे हैं।

बेशक, परिवर्तन संसार का नियम है, साईंस ने घर बैठे हर सुख-सुविधाएं मुहैया करवाई हैं। यह सही भी है कि वक्त के साथ-साथ बदलना भी जरूरी है। अब वो चिट्ठियों का दौर समाप्त हो चुका है, इंटरनेट से आगे की दुनिया में भी अब पैर पसारने की तैयारी में है हमारा विज्ञान जगत्। समाज के लोगों ने खेती-किसानी छोड़कर इंटरनेट की कार्यशैली को अपना लिया है। अब मेहनत कम और फायदे ज्यादा की सोच बन रही है। कभी-कभी मन में खयाल आता है कि हम ऐसे माहौल में खाएंगे क्या और पिएंगे क्या और जिएंगे कैसे? खैर, हर माहौल में जीना सबको आता है। नया जमाना है, नई सोच है, पुराना दौर जा चुका। सही पढ़ा-सुना है आपने- गया वक्त दोबारा नहीं आता या गया वक्त लौट कर नहीं आता। जो गया सो गया। अब सबकी यही जिम्मेवारी बनती है कि नए जमाने में साफ हवा-पानी मिले कैसे क्योंकि यह हवा पानी तो इनसान बना नहीं सकता। कृत्रिम गैस की तरह किसी सांस वाले मरीज को कुछ दिन-पल जिंदा रखा जा सकता है बस। इससे आगे का जीवन कैसा होगा? सोचने की बात है। अब भी अगर हम अपने आपको पुराने जमाने की यादों के साथ जीना चाहें तो कुछ हद तक हमारा पर्यावरण, हमारे संस्कार, हमारी विरासतें, हमारे रीति-रिवाज बच सकते हैं। ज्यादा नहीं तो जीने लायक कुछ तो बचा ही सकते हैं।

हमारे आस-पास पड़ोसी देशों में, हमारे देश के भीतर प्रदेशों में कुदरती आपदाएं घटती जा रही हैं। जान-माल और ऐतिहासिक धरोहरों का नुकसान होता जा रहा है। यह इस बात की कुदरत की तरफ से हमें चेतावनी है कि अब अपने लालच को खत्म किया जाए। जमाना बदला है सो बदला है, पर कुदरत नहीं बदली है।

आज यह जो नया जमाना है, कल को यही पुराना भी तो होगा। सोचिए जरा यदि आज हमारा ऐसा है तो कल कैसा होगा? बुनियाद जितनी गहरी होगी, घर उतना मजबूत बनता है। हमें सुधारना और समझना होगा। सोच को बदलना होगा। अपने लिए न सही, कम-से-कम अपनों के लिए। जमाना बदल गया है, हमें भी तो बदलना होगा। मन के भीतर छुपी कुंठाओं को बाहर निकाल कर खुले विचारों के साथ जीना और जीने देना होगा। कारवां बदलता जाएगा, जमाना बदला है बदलता जाएगा। क्यों न फूलों की खुशबू बनकर चहुं दिशाओं में महक जाएं नए जमाने में भी। फिर बेशक कहें, जमाना बदल गया है।

उसके कायदे-कानून सबके लिए अब भी; इस नए जमाने में वैसे ही हैं जैसे पहले जमाने में हुआ करते थे। उसके लिए नया-पुराना कुछ नहीं। जब भी किसी ने, कहीं भी कुदरत के उसूलों को तोड़ने की कोशिश की है, उसका खमियाजा हमें भुगतना पड़ा है। उत्तराखंड की तबाही को देखा। जन्नत की वादियों को बाढ़ में उजड़ते देखा और अभी हाल ही में नेपाल की धरती में ऐसा जलजला आया कि बरसों की कमाई, टिकाई विरासतें धराशायी होकर गिर गईं जैसे हवा में किसी ने घर बनाया था। कुदरती कहर जब भी बरपा है, नामोनिशां मिट गया है। अफसोस की बात है कि हम हादसों को भूल जाते हैं और फिर वही स्वार्थ, फिर वही घातें, फिर वही बातें कहने-करने लगते हैं। जब कहीं फिर कोई भूकंप आता है, कुछ पल ठहर कर फिर चल देते हैं। ठीक है चलने का नाम ही जिंदगी है, पर जिंदगी जीने के लिए अपने जल, जंगल, जमीन को तो हलाल न किया जाए। जब कुदरत मानवता को हलाल करती है तो क्यों कराहटें निकलीं और निकलती हैं। पुराने जमाने के लोगों के साथ नए जमाने के लोगों के साथ मिलकर हम अपनी कुदरत को, अपने संस्कारों, सभ्याचारों को एकसूत्र में पिरोकर आने वाली पीढ़ी के लिए सुंदर घर बना सकते हैं ताकि वे अपने जीवन को सुंदर बना सकें, उसे अलंकृत करके। नैतिक शिक्षा अपने बच्चों को देना भी जरूरी करें तभी वे जीवन मूल्यों को समझ सकेंगे। विज्ञान यदि हमें सुख-सुविधाएं जुटाता है तो जीवन विज्ञान, शास्त्र विद्या, साहित्य दर्पण हमारे जीवन को उज्ज्वल और सभ्य बनाता है। विज्ञान के साथ-साथ आत्मिक ज्ञान भी हासिल करना होगा। संवेदनहीन नहीं, संवेदनशील बनना होगा। पुराने जमाने की खिल्ली न उड़ाकर उससे हासिल तुजुर्बों को अपनाना होगा।

गौर करना चाहिए हमारे पुराने जमाने के लोगों ने हमारे लिए सुंदर पेड़-पौधों से हरी-भरी धरती सजा कर दी है। हमने उन पेड़ों को काटकर अपने घर बना लिए, अपने स्वार्थ की खातिर उन्हें ठूंठ बना दिया। खेतों में भी घर बना लिए। जरा सोचिए हमारे बुजुर्गों से मिली सौगात का हमने ऐसे प्रयोग किया है तो हम अपने बच्चों के लिए क्या छोड़ कर जा रहे हैं? वो क्या और कैसे कुछ प्रयोग में लाएंगे। न धरती बचाई चलने-रहने के लिए, न पानी बचाया पीने के लिए, न खेत बचाए हरियाली के लिए, अनाज उगाने के लिए, न हवा बचाई सांस लेने के लिए, न संस्कार बचाए सभ्य रहने के लिए। न नैतिक बने रिश्तों के लिए, क्या आने वाली पीढ़ियां, मकान, रेत, बजरी के ढेरों तले दम घुटकर नहीं रह जाएंगे। तरक्की के साथ कुदरत को उन्नत करना भी जरूरी है। जीने के लिए हवा पानी के साथ जमीन भी चाहिए। तभी अनाज होगा पेट भरने के लिए। कहते हैं भूखे पेट भजन न होई गोपाला। जमाना बदल गया है, यह कहना अपनी जगह है पर तमाम सच्चाइयों से भी हम अपना मुंह नहीं फेर सकते। हमारे सामने ज्वलंत प्रश्न हैं और इनके उत्तर हमें ही अपने भीतर तलाशने होंगे। गीता में उपदेश दिया है- भूत भविष्य की चिंता न कर वर्तमान में जी। हमें वर्तमान को देखना है यदि हमारा वर्तमान ठीक है तो भविष्य अपने आप ठीक हो जाएगा। हमें बबूल का पेड़ नहीं लगाना है। फलदार छायादार पौधे लगाने हैं जीवन में भी और धरती में भी। खुशहाली और हरियाली तभी हमारे और आने वाले नवजीवन कमे लिए बची रहेगी।

जिस तरह बहता नदी का पानी, बहते झरने निर्मल, शीतल लगते हैं, उसी तरह जीवन में तरक्की का बढ़ना भी वैसा निर्मल और शीतल लगे, ऐसा प्रयास करते रहना होगा। सोच नई और सुंदर होगी, तो तरक्की भी अच्छी लगेगी, बदलाव मन को भाएगा. .. संस्कार होंगे तो रिश्ते भी मधुर होंगे। पर्यावरण के प्रति हमारा प्यार और लगाव होगा तो धरती, जल, जंगल भी बचेंगे। जड़ों से जुड़ाव होगा तो गांव भी बचेंगे। रंग-बिरंगे फूलों से जिस तरह सुंदर गुलदान बनता है, उसी तरह नए-पुराने विचारों के मिलन से जीवन और घर आंगन भी सुंदर लगेगा। वास्तविकता है जमाना बदल गया है और बदलता रहेगा क्योंकि बदलाव में नयापन है। जीवन है। स्पंदन है। शाश्वता है। यह दिन महीने-साल बदले हैं बदलते रहेंगे, पर हम इस बदलने में कुदरत को न भूलें तो अच्छा होगा। मौसमों की तरह हम नहीं हैं जो फिर बदलकर वापस आएंगे। वक्त की तरह हैं, वापस नहीं आएंगे। इसलिए कुछ ऐसा छोड़ कर जाएं, जिस पर हमारी आने वाली पीढ़ियां गर्व महसूस करें न कि अफसोस में आहें भरें। जैसे हमने अपने बुजुर्गों से मिली सौगातों से अपने जीवन को हरा-भरा और संस्कारी बनाया, वैसे हमें भी करना होगा। आज यह जो नया जमाना है, कल को यही पुराना भी तो होगा। सोचिए जरा यदि आज हमारा ऐसा है तो कल कैसा होगा? बुनियाद जितनी गहरी होगी, घर उतना मजबूत बनता है। हमें सुधरना और समझना होगा। सोच को बदलना होगा। अपने लिए न सही, कम-से-कम अपनों के लिए। जमाना बदल गया है, हमें भी तो बदलना होगा। मन के भीतर छुपी कुंठाओं को बाहर निकाल कर खुले विचारों के साथ जीना और जीने देना होगा। हम सोचते हैं हम अपना स्वार्थसिद्ध कर लेंगे तो सब कुछ पा लेंगे लेकिन कभी सोचा भी है लालच की आग में हम अपना भविष्य ही जला रहे हैं। सब गंवा रहे हैं। इसलिए अब भी वक्त है संभल जाएं। जो पल आपके हाथ में उन्हें जी भर कर जिया जाए। हम भी मुसाफिर हैं, आप भी मुसाफिर हैं। कारवां बदलता जाएगा, जमाना बदला है बदलता जाएगा। क्यों न फूलों की खुशबू बनकर चहुं दिशाओं में महक जाएं नए जमाने में भी। फिर बेशक कहें, जमाना बदल गया है।

सैट नं. 3, टाईप-3, कैंडल लॉज, लौंगवुड, शिमला,
हिमाचल प्रदेश-171001, मो. 94184 39685

आलेख

हिंदी साहित्य जगत में जनवादी चेतना के परोधा भीष्म साहनी का यह जन्म शताब्दी वर्ष देशभर में मनाया जा रहा है। 8 अगस्त 1915 को रावलपिंडी (अब पाकिस्तान) में जन्मे भीष्म जी का लेखन जनसामान्य के प्रति समर्पित रहा जो यथार्थ की ठोस जमीन पर अवलम्बि है। मानवीय संवेदना के सशक्त हस्ताक्षर भीष्म साहनी ने अपनी लेखनी के माध्यम से भारत का सामाजिक, राजनीतिक, ऐतिहासिक और सांस्कृतिक यथार्थ का स्पष्ट चित्रण प्रस्तुत किया। साहनी जी ने झरोखे, कड़ियां, तमस, बसन्ती, मय्यादास की माड़ी, कुंतो, नीलू नीलिमा नीलोफर जैसे चर्चित उपन्यासों के अलावा हानूश, कबिरा खड़ा बजार में, माधवी मुआवजे जैसे प्रसिद्ध नाटक भी लिखे। देश का जाना-माना साहित्यकार 11 जुलाई, 2003 को इस दुनिया को सदा के लिए अलविदा कह गया। इस महान साहित्यकार की स्मृति एवं नव पाठकों को उनके साहित्य से रु-ब-रु करवाने के लिए उनके उपन्यास 'मय्यादास की माड़ी' पर **डॉ. हेमराज कौशिक** का समीक्षात्मक आलेख।

सामाजिक-आर्थिक व राजनीतिक संक्रमण की कथा 'मय्यादास की माड़ी'

'मय्यादास की माड़ी' भीष्म साहनी के अन्य उपन्यासों से भिन्न संवेदना का उपन्यास है तथा उनके औपन्यासिक कृतित्व में विशिष्ट स्थान रखता है । 'तमस' उनका चर्चित उपन्यास रहा है परन्तु इस उपन्यास में उनकी रचनात्मक प्रौढ़ता और कलात्मक निखार परिलक्षित होता है। इसमें माड़ी के इतिहास के माध्यम से मानवीय विकास की गाथा प्रस्तुत की गई है। घटनाओं का फलक उन्नीसवीं शती के उत्तरार्द्ध और बीसवीं शती के पूर्वार्द्ध तक व्याप्त है और घटनाओं का केन्द्र पंजाब का कस्बा है जहाँ माड़ी स्थित है। मय्यादास की माड़ी एक व्यक्ति की सूचक है परन्तु इस के माध्यम से दीवान मय्यादास से लेकर दीवान हुकूमतराय तक की तीन पीढ़ियों का वर्णन है। दीवान मथुरादास की पीढ़ी भी सांकेतिक रूप में भूमिका में प्रस्तुत की गई है। माड़ी का यह इतिहास और मानवीय विकास किसी क्षेत्र विशेष के इतिहास तक ही सीमित नहीं रहता अपितु भारत के राजनीतिक, समाजिकार्थिक इतिहास को भी प्रस्तुत करता है। भौतिक विकास के फलस्वरूप मानवीय व्यवहार में जो परिवर्तन आता है उसे भी लेखक ने तीन पीढ़ियों की इस यात्रा के माध्यम से प्रस्तुत किया है। जीवन की विवशता, स्थिरता और गतिशीलता के निरूपण में लेखक ने ऐतिहासिक तथ्यों, लोकगाथाओं, लोकगीतों, किस्से कहानियों आदि के द्वारा सामाजिक-राजनीतिक परिवर्तन का स्वरूप दिखाया है। मूल्यगत संक्रमण और परिवर्तन की दिशा को स्पष्ट करते हुए भीष्म साहनी कहते हैं 'समाज के भीतर अनेक प्रबल तत्त्व, परिवर्तन के कल घुमाते रहते हैं, कभी-कभी बाहर से ऐसे प्रबल दबाव पड़ने लगते हैं कि व्यक्तिगत राग द्वेष गौण हो जाते हैं और उन बाहरी दबावों के अधीन जीवन कायाकल्प होने लगता है । पर उस समय कस्बे के जीवन की स्थिरता के पीछे बहुत हद तक वे मूल्य और आदर्श भी थे जिन पर सिक्ख अमलदारी की स्थापना हुई थी। इंसान भले ही इंसान रहते हैं और उनके राग द्वेष उनके कार्यकलाप का निर्धारण करते हैं, पर साथ ही साथ ऐसे परिवेश में भी रहे होते हैं, जिसमें कुछ मूल्य और आदर्श वायुमण्डल में रचे बसे रहते हैं जो जन जीवन को भी प्रभावित करते हैं। जिन मूल्यों और आदर्शों से व्यक्तिगत स्तर पर भी लोग प्रेरणा ग्रहण करते हैं। जिन मूल्यों और आदर्शों से अनुप्राणित खालसा राज्य की स्थापना हुई थी वे सत्ता और व्यवहार की चट्टानों से टकरराकर भी चूर-चूर नहीं हो गए थे , बहुत से कार्य अभी भी उनके आलोक में किए जाते थे। साधारण नागरिक के हृदय में अभी भी उदारता, सद्भावना, आत्म बलिदान की भावना का संचार करते थे और सद्व्यवहार की प्रेरणा देते थे और मनुष्य के राग- द्वेष पर भी अंकुश लगाए रहते थे। (पृ0 99-100)

प्रस्तुत उपन्यास उस काल खण्ड से संबंध रखता है जब पंजाब में सिक्ख अमलदारी की जड़ें उखड़ रही थीं और ब्रिटिश साम्राज्यवाद अपनी सत्ता को विस्तार देकर उसे और अधिक मजबूत कर रहा था। इसमें प्रमुख रूप में पंजाब में खालसा राज से ब्रिटिश औपनिवेशिक राज में संक्रमण की कथा प्रस्तुत की गई है। उपन्यास तीन खण्डों में विभक्त है तथा इनमें परस्पर सम्बद्धता विद्यमान हैं । कथा सूत्र परस्पर अंतःग्रथित हैं तथा इनका क्रमिक विकास भी इनके माध्यम से हुआ है। प्रथम खण्ड के अन्तर्गत दीवान धनपत के प्रभुत्व और आधिपत्य सम्पन्न रूप को दिखाया है यह कथा सूत्र प्रांरम्भ में दिया गया है। कथा क्रम की दृष्टि से यह उपन्यास के मध्य की कथा से प्रांरम्भ होता है। दीवान धनपत

लोगों के बीच सनकी दीवान के रूप में जाना जाता है।

उपन्यास का दूसरा खण्ड काल क्रम और कथा क्रम की दृष्टि से प्रथम कड़ी है। इस खण्ड में माड़ी की पृष्ठभूमि और इतिहास प्रस्तुत किया गया है। इस वर्णन में मूल्यगत संक्रमण और परिवर्तन की दिशा की ओर भी सहेतुक संकेत विद्यमान है। 'माड़ी करीब सौ साल पुरानी तो रही होगी। उसका ऊँचा फाटक, फाटक के ऊपर बना छोटा सा छज्जा, और सबसे ऊपरवाली मंजिल पर बनी छतरी, ये सब सिक्ख अमलदारी या उससे भी पहले की मुगल अमलदारी की देन हैं। उसकी खिड़कियों-रोशनदानों में हरे, पीले, नील रंग के शीशे अंग्रेजों की अमलदारी के चिह्न हैं, कुछेक दरवाजों पर अभी भी मध्ययुगीन नक्काशी देखने को मिलती है, जबकि अधिकांश मध्ययुगीन दरवाजों की जगह अंग्रेजी चलन के सपाट और सीधे दरवाजे लगा दिए गए हैं। (पृ. 97)

ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में माड़ी की भूमिका प्रस्तुत करते हुए माड़ी को सौ साल पुरानी मानते हुए सिक्ख अमलदारी और उससे भी पूर्व मुगल अमलदारी की देन स्वीकार किया है। इससे यह स्पष्ट होता है कि माड़ी उन्नीसवीं सदी के प्रांरम्भ या उससे भी पूर्व अठारहवीं सदी के अंत में अस्तित्व में आई। दीवान मथरादास की पीढ़ी का उल्लेख पीठिका के रूप में ही है, दीवान मय्यादास को अतीत कालीन गौरव गरिमा और आदर्श मूल्यों के प्रतीक रूप में चित्रित किया है। ब्रिटिश उपनिवेशवाद काल में उनकी प्रतिष्ठा और गरिमा का क्षरण हो जाता है। दीवान धनपत से होते हुए हुकूमत राय तक आते-आते वे पूरी तरह विलुप्त हो जाते हैं। सामंतवाद से प्रांरम्भ हुई यह परिवर्तन की प्रक्रिया उपनिवेशवाद और पूंजीवाद तक पहुँचती है। इस प्रकार माड़ी का इतिहास मुगल, सिक्ख और अंग्रेज तीन अमलदारियों का साक्षी रहा है।

माड़ी के सौ वर्षों के इतिहास से ज्ञात होता है कि प्रारंभ में माड़ी का निर्माण दीवान मथरादास ने करवाया था। उन दिनों माड़ी एक साधारण सा, एक मंजिला, पुश्तैनी घर था। अमलदारियों के परिवर्तित होने के साथ माड़ी का स्वरूप भी परिवर्तित होता गया। माड़ी में रहने वाले लोग अपनी- अपनी भूमिका निभाते गए और आँखों से ओझल होते गए। मथरादास एक नेक इंसान थे और मानवीयता और करुणा उनके व्यक्तित्व के अवयव थे।

माड़ी के सौ वर्षों के इतिहास से ज्ञात होता है कि प्रारंभ में माड़ी का निर्माण दीवान मथरादास ने करवाया था। उन दिनों माड़ी एक साधारण सा, एक मंजिला, पुश्तैनी घर था। अमलदारियों के परिवर्तित होने के साथ माड़ी का स्वरूप भी परिवर्तित होता गया। माड़ी में रहने वाले लोग अपनी-अपनी भूमिका निभाते गए और आँखों से ओझल होते गए। मथरादास एक नेक इंसान थे और मानवीयता और करुणा उनके व्यक्तित्व के अवयव थे। उन्होंने दुर्भिक्ष के समय लोगों की स्वयं अपनी धन सम्पति से सहायता की थी। उनकी पत्नी भी उन्हीं की भाँति उदार दिल नारी थी। उन्होंने दुर्भिक्ष टलने की मन्नत के रूप में जन कल्याण के लिए पुश्तैनी हवेली में ताल बनाने की इच्छा की थी। परन्तु दीवान मथरादास किसी महामारी से ग्रस्त हुए और उनका देहवासन हो गया। पिता की सेवाओं के आधार पर दीवान मय्यादास को खालसा दरबार में कारदार नियुक्त किया। वे भी अपने पिता के पद चिन्हों पर चले और अपनी ईमानदारी, कर्मठता, मानवीयता के कारण उन्हें तोशखाना के अधिकारी बनाकर काबुल भेज दिया वहाँ उन्होंने यश और सम्मान अर्जित किया। उनके समय में माड़ी पर समृद्धि की छाप दिखाई देने लगी। उनकी कीर्ति और सम्मान के आगे कस्बे के राजा अमीर चंद की हैसियत भी कुछ-कुछ फीकी पड़ने लगी थी। परन्तु अमलदारी के परिवर्तन के साथ मय्यादास की माड़ी पर साये फैलने लगते हैं। खालसा राज की पराजय के साथ उनकी सारी सम्पति समाप्त हो जाती है। कालगति के साथ विपरीत और विषम परिस्थितियों में वे बूढ़े और अशक्त हो जाते हैं। उनके यश और सम्मान का सितारा फीका पड़ने लगता है। उस समय लोग भी कहने लगते हैं कि अपनी अकड़ में सारा रुपया पैसा खालसा दरबार में दे आये। यह नहीं जानते थे कि फिरंगी का सितारा बुलंदी पर है। मसखेर धनपत के सामान को फेंकने वाला मय्यादास स्वंय उसके समक्ष असहाय स्थिति में पहुँच जाता है। वे पहले ब्रिटिश सत्ता से दूरी बनाए रखते हैं और अपने सिद्धान्तों पर अडिग रहते हैं और अपना मान सम्मान बनाए रखते हैं। परन्तु विपरीत परिस्थितियों में वे अन्दर ही टूट जाते हैं। इससे पूर्व बेटे की मृत्यु ने उनके दिल को विदीर्ण कर दिया था। नये राजनीतिक आर्थिक परिवर्तनों में उनकी स्थिति विचित्र हो जाती है। कस्बे में जिस दिन रेलगाड़ी आती है और स्टेशन पर रुकती है। वे ट्रेनों के अंग्रेजी गार्ड को अंग्रेजी हाकिम समझकर फर्शी सलाम करते हुए कहते हैं - हजुर का इकबाल बना रहे। बंदा कस्बे के पुराने रईसों में से है उस समय धनपत उन्हें कहता है ताऊ जी यह फिरंगी हाकिम नहीं है, यह तो रेलगाड़ी का गार्ड है मैं आपको असली हाकिम के पास ले जाऊँगा। (पृ. 182) दीवान मय्यादास के इस व्यवहार को देखकर उनके प्रति अगाध श्रद्धा रखने वाले बंशी को भी दुख होता है। वह कहता है कि जो बात जिन्दगी भर की कमाई डूब जाने पर उन्होंने नहीं की, हमेशा अपना सिर ऊँचा रखा, वह आज कर दी।

मय्यादास अपने छोटे भाई दीवान गोकुल दास को निजी प्रभाव से काबुल दरबार में कारदार नियुक्त करवाता है। वह तीन लड़कियों का पिता बनता है परन्तु पुत्र की चाह में अंधा होकर चन्द्रा नामक एक स्त्री को रखैल बना कर लाता है। पत्नी के साथ

लड़ाई कर उसे पीटकर तीन बेटियों सहित मायके भेज देता है। उसके इस कृत्य को लेकर घर में और बाहर विरोध होता है परन्तु किसी की परवाह किए बिना वह चन्द्रा को ढाई तीन वर्ष तक माड़ी में रखता है। बाद में किसी बात को लेकर झगड़ा होता है और वह उसे निर्ममता से पीटकर माड़ी से बहिष्कृत करता है। बाद में उसकी पत्नी माड़ी में लौटती है और उन्हें लेखराज के रूप में पुत्र की भी प्राप्ति होती है। मय्यादास के छोटे भाई गोकुलदास की मृत्यु के अनंतर उनकी रखैल का बेटा धनपत बीस वर्ष बाद अचानक माड़ी में प्रकट होता है और मय्यादास से माड़ी में अपना हिस्सा मांगता है मय्यादास जब विरोध करते हैं तो वह कहता है, दीवान जी सीधे हाथ नहीं दोगे तो भी लूंगा और उलटे हाथ दोगे तो भी लूंगा। मैं माड़ी में अपना हिस्सा छोड़ने वाला नहीं हूँ। मैं भी दीवान हूँ। एक दिन धनपत मय्यादास के मुंशी पोहराम की बेटी मोतिया का माड़ी में बिठा देता है। धनपत के इस दुष्कृत्य को मय्यादास सहन नहीं कर पाते हैं और वे उसका सामान माड़ी से बाहर फिंकवाकर सभी कोठरियों में ताला लगवा देते हैं। इस समय धनपत उनसे कहता है कोई बात नहीं ताऊ जी फेंक दो समान, पर मैं भी दीवान हूँ अपना हक लेकर रहूँगा। (पृ0 108)

दीवान मय्यादास खालसा राज के प्रति आस्था रखते हैं और अपनी सारी सम्पति भी उसकी सुरक्षा के लिए लगा देते हैं जिससे उनकी आर्थिक स्थिति खराब होती है इसके बावजूद खालसा राज की सुरक्षा नहीं हो पाती क्योंकि खालसा सेना के मध्य ही लाल सिहं और तेजसिंह जैसे सालार अपनी ही सेना के साथ विश्वासघात करके ब्रिटिश सम्राज्य के हाथों बिक जाते हैं। उपन्यासकार ने इस संदर्भ में यह स्पष्ट किया है कि सिक्ख सेनायें उनकी अपेक्षा अधिक पराक्रमी और बलशाली थी बल्कि इसलिए कि सत्ता और सम्पति की लालसा के कारण कुछ सिपहसालार फिरंगियों से जा मिले थे।

लौहार दरबार के लिए जन-जन का तनमन धन का सहयोग मिलते हुए भी अपने ही सिपहसालारों के द्वारा अपने ही सैनिकों को धोखा देने के कारण सेना के सशक्त और संगठित होते हुए भी तीन युद्धों में पराजय का मुँह देखना पड़ा। उपन्यासकार द्वारा प्रस्तुत यह घटनाक्रम कल्पना प्रसूत नहीं है अपितु उन्होंने इसकी प्रामाणिकता को भी सिद्ध किया। उन्होंने युद्ध की घटनाओं को प्रस्तुत करते हुए इससे सम्बद्ध अनेक चिरंतन प्रश्नों को लेखराज के माध्यम से उठाया है। उसने दादी माँ के मुख से शौर्य और बलिदान की कहानियाँ सुनी थी और उनमें उसने शौर्य और बलिदान के उदाहरण भी देखे थे। उसने मृतप्राय मनोहर को मृत्यु से पूर्व तलवार झूलाते देखा था। वह युद्ध के सम्बंध में चिरंतन प्रश्न उठाता है 'कोई भी लड़ाई मात्र हार जीत की लड़ाई नहीं होती। (पृ. 133)

लेखक ने उन राजीतिक षड्यंत्रों और घोर निजी स्वार्थों को भी अनावृत किया है जिनके कारण देश और जाति उनके लिए गौण हो जाते हैं जबकि लेखराज और मनोहर जैसे सैनिक देश की रक्षा के लिए प्राणोत्सर्ग कर देते हैं या जीवित रहकर दर-दर भटकते रहते हैं। सैनिक किसी भी प्रकार के षड्यंत्र से बेखबर होता है। उसमें अदम्य विश्वास होता है और अपने विश्वास के बल पर समर स्थल पर प्राणोत्सर्ग के लिए तत्पर रहता है। लेखक ने संग्राम भूमि की उन दोनों स्थितियों को सामने लाया है जिसमें एक ओर ऐसे सैनिक होते हैं जो राष्ट्र रक्षा के लिए प्राणोत्सर्ग करने के लिए कृतसंकल्प होते हैं दूसरी ओर ऐसे लोग भी होते हैं जिनके लिए राष्ट्र का कोई मूल्य नहीं होता।

लेखराज की चरित्र-सृष्टि के माध्यम से देश प्रेम के कारण मातृभूमि के प्रति प्राणोत्सर्ग करने वाले वीरों की गाथा प्रस्तुत की है। उसके लिए वैयक्तिक स्वार्थ और निजी सुख का कोई महत्त्व नहीं होता है। उसके चरित्र निर्माण में उसकी दादी माँ की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है जो उसके बाल्यकाल में प्रत्येक शाम को महान् पुरुषों के शौर्य और पराक्रम की कहानियाँ सुनाया करती थी। जब बादशाह का हुक्म हर आम और खास के लिए होता है कि फिरंगी लश्कर सल्तनत-ए-खालसा की तरफ बढ़ते आ रहे हैं और शीश महल में भर्ती होगी। लेखराज के बाल्यकाल के संस्कार और वीरतापूर्ण कहानियों के शब्द उसके मन-मस्तिष्क को देश के लिए मर मिटने के लिए प्रेरित करते हैं और वह अपने मित्र के साथ शीश महल में जाकर फिरंगियों के विरुद्ध लड़ने वाली सेना में अपना नाम लिखवाता है। दादी माँ से सुनी शौर्य और आत्मोत्सर्ग की कहानियाँ उसके निर्णय और संकल्प को सुदृढ़ बनाए रखती है। मैत्री की लाज रखने के लिए उसका साथी मनोहर भी उसके साथ समर स्थल में जाता है। लेखक ने इस प्रसंग की अवतारणा से यह स्पष्ट किया है कि लेखराज जैसे वीर सैनिक अपनी मातृभूमि की रक्षा के लिए युद्ध भूमि में शत्रुदल को परास्त करने में कोई कसर नहीं छोड़ रहे थे परन्तु चन्द अशर्फियों वजीफों और पेंशनों के लिए अपनी ही सेना के आदेश देने वाले फिरंगियों के हाथों बिक गए थे। लेखराज ब्रिटिश अमलदारी के विरूद्ध तीन युद्धों में भाग लेता है परन्तु अपने ही सेनापतियों के धोखे के शिकार होकर सिक्ख अमलदारी के हजारों सैनिक मारे जाते हैं। ऐसी स्थिति में लेखराज अनुभव करता है।'जंग का एक स्तर वह है जिस पर सैनिक जान की बाजी लगाता है, अपनी कौम और राजा का नाम लेकर ललकारता हुआ रण भूमि में उतरता है। दूसरा स्तर वह है जहाँ कुटनीति अपनी चाले खेल रही होती है जहाँ साधारण सैनिकों के दस्तों को शतरंज के मोहरे बनाया जाता है, जहाँ षड्यंत्र रचे जाते हैं। यह स्तर साधारण सैनिक की नजर में छिपा रहता है । (पृ. 134)

भीष्मसाहनी ने धनपतराय और हुकूमतराय जैसे चरित्रों की सृष्टि करके यह प्रतिपादित किया है कि किस प्रकार चाटुकार,

विवेकहीन, धूर्त और राष्ट्र द्रोही व्यक्ति शक्ति और सता अर्जित करने में सफल होते हैं और मय्यादास और लेखराज जैसे कर्तव्यनिष्ठ, ईमानदार और देशभक्त व्यक्ति सता के केन्द्र से ही बाहर नहीं होते अपितु घोर उपेक्षा और अन्याय के शिकार होते हैं। आज समाज में भ्रष्ट, बेईमान, कर्तव्य विमुख, चाटुकार और घोर स्वार्थी लोग निजी स्वार्थों की सिद्धि के लिए भ्रष्ट राजनीति और सता से जुड़कर सता के केन्द्र बन जाते हैं। उसके बीज धनपतराय और हुकूमतराय जैसे खल चरित्रों में देखे जा सकते हैं। यह उपन्यास खलनायक धनपतराय से प्रारम्भ होता है और उन्हीं की भाँति दुष्चरित्र, विवेकहीन, निर्मम हुकूमतराय के साथ समाप्त होता है।

मय्यादास आदर्श मूल्यों के प्रतीक है जिसमें राष्ट्र के प्रति प्रेम, ईमानदारी, करुणा, त्याग और तपश्चर्या जैसे गुण विद्यमान है वो धनपतराय के दुष्कृत्य को देखकर उसके सामान को माड़ी से बाहर फेंकते हैं। परन्तु वही धनपतराय फिरंगी शासकों की चाटुकारी और अनुकम्पा से मय्यादास से प्रतिशोध लेता है। वह निजी स्वार्थों की सिद्धि के लिए अंग्रेजी सत्ता से लाभ उठाने के लिए अवसर की तलाश करता है। वह सोचता है- अमलदारी बदल गई है, अब न सिक्खों के लाहौर दरबार की चल सकती है, और न ही शीश महल के बौने राजा अमीर चंद की। और जब ये दो न रहे तो फिर मेरे सिवा रह कौन जाता है। इस स्थिति का लाभ उठाने के लिए वह फिरंगी शासकों की विजय के अनंतर अपनी वफादारी के प्रमाण के रूप में ऊंटो की दुमें लेकर फिरंगी अफसरों के पास जाता है। उसकी विचित्र वेशभूषा और उसके रूप को देखकर अंग्रेजी अफसर सोचता है 'मुचड़ा हुआ अंगरखा, मैला पाजामा और मैले बदरंग जूते। आया भी तो कौन आया, पर फिर साहब की नजर धनपत की पोटली पर पड़ी जिसमें मरे हुए ऊंटों की पूंछे झांक रही थीं और उसकी वफादारी की दुहाई दे रही थी। वफादारी की यही सनद वह अपने साथ ला पाया है। अगर इसको कुछ दे दिया तो कस्बे में उन रईसजादों के मुँह पर चमत पड़ेगी जो अभी तक हमारे पास नहीं पहुँचे हैं। वे धनपत को उसकी वफादारी पर तीन गांवों की सनद देते है। इस अनुकम्पा के पीछे उनकी भारतीय समाज को खण्डित करने की कुटिल दृष्टि है।

मय्यादास आदर्श मूल्यों के प्रतीक है जिसमें राष्ट्र के प्रति प्रेम, ईमानदारी, करुणा, त्याग और तपश्चर्या जैसे गुण विद्यमान है, वो धनपतराय के दुष्कृत्य को देखकर उसके सामान को माड़ी से बाहर फेंकते हैं। परन्तु वही धनपतराय फिरंगी शासकों की चाटुकारी और अनुकम्पा से मय्यादास से प्रतिशोध लेता है।

समाज को खण्डित करने और अपने स्वार्थों की सिद्ध का यह क्रम स्वतंत्रता के पश्चात भी जारी है। धनपत जैसे धूर्त और चापलूस और भ्रष्ट कार्यकर्ताओं से घिरकर उन्हे लाभ पहुँचाने के लिए नियमों को ताक पर रख देते हैं। दीवान धनपत का सबसे छोटा बेटा हुकूमतराय विलायत से वैरिस्टरी की शिक्षा ग्रहण कर भारत लौटता है अपने पिता की भाँति उस में भी अपने देश के प्रति अनुराग नहीं है वह भी अंग्रेजों का कृपा पात्र बनकर धन और सम्मान प्राप्त करना चाहता है। उसके परामर्श से ही डिप्टी कमीशनर हेनरी अंग्रेजी सत्ता के विरोध में जलूस निकालने वाले लोगों पर लाठी चार्ज करवाता है। पुलिस जलूस की भीड़ की लम्बी पंक्तियों पर निर्ममता से लाठी चार्ज करती है। इस सारे दृश्य को देखकर वह हेनरी से कहता है 'हिन्दुस्तान भीड़ का रंग देख लिया हेनरी ? इनमें गुर्दा नहीं। डंडा उठाने की देर थी कि सभी दुम दबाकर भाग गए। वह अंग्रेजी साम्राज्य के प्रति अपनी वफादारी का दावा करता है। इसलिए वह कहता है 'अंग्रेजी साम्राज्य के लिए जान हाजिर है हेनरी। हम दोनों एक ही देवता की पूजा करते हैं'। डिप्टी कमीशनर उसकी अंग्रेजी साम्राज्य के प्रति वफादारी और अपने देशवासियों के प्रति प्रतिरोध और घृणा का भाव देखकर प्रसन्न होता है क्योंकि यह उनकी प्रकृति और कुटिलता रही है कि देशवासियों ने फूट डालकर शासन करना आसान होता है। वह हुकूमतराय के इस व्यवहार से प्रसन्न होकर कहता है तुम जल्दी ही रायबहादुर बन जाओगे मैं तुम्हारे नाम की सिफारिश करूंगा। (पृ. 318) यह सुनकर वह अंग्रेजी साम्राज्य के प्रति अपने समर्पण और प्रतिबद्धता को प्रकट करते हुए कहता है, मेरे खून का आखिरी कतरा भी साम्राज्य के लिए हाजिर है हेनरी (पृ. 319) परन्तु अंग्रेजों की दमन नीतियों और उनके सहायक हुकूमत राय को तिलक राज आजाद चुनौती देता है। वह हुकूमतराय से कहता है कि कल फिर जलूस निकलेगा आगे आगे तीरथराम की अर्थी होगी। पीछे जख्मी लोग होंगे जिन पर आज लाठियां चली थीं उनके पीछे सारा कस्बा होगा। कल फिर लाठी चार्ज करवाना। लाठी नहीं गोली चलनाना। कुछ लोग आज घबराकर भागे हैं, पर कल नहीं भागेगें। सुना है तुम राय बहादुर बनोगे। (पृ. 333) इस चुनौती से वह विचलित नहीं होता अपितु स्वप्न में भी भयाक्रांत हो जाता है। पर यह जन संगठन की चुनौती है जिस की शक्ति को भीष्म साहनी ने प्रतिपादित किया है।

'मय्यादास की माड़ी' के दूसरे खण्ड में उन आर्थिक स्थितियों का सूक्ष्म विश्लेषण है जिनके कारण शक वर्ग निर्धनता की और अग्रसर हुआ। खालसा अमलदारी के स्थान पर ब्रिटिश शासन-व्यवस्था की स्थापना के अनंतर कृषि-व्यवस्था और भूमि संबंधी जिन नए कानूनों को क्रियान्वित किया गया उनसे कृषक वर्ग का शोषण हुआ और कृषि व्यवस्था प्रभावित हुई। नये कानून से गांव की सांझी जमीन टुकड़ों में बंट गई। प्रत्येक काश्तकार से लगान

के तौर पर जिस के स्थान पर नकद भुगतान की व्यवस्था की गई और लगान पहले से ही निर्धारित किया गया जिसे प्रति वर्ष देना है चाहे फसल हो अथवा न हो। नया कानून साहूकारों को तो रास आया। काश्तकार के पास नकद कहाँ। इसलिए किसान लगान चुकाने के लिए सेठ साहूकारों के आगे ऋण हाथ फैलाने लगे। ब्याज पर ऋण देने का सिलसिला प्रारंम्भ हुआ और कृषकों की आर्थिक स्थिति दिनोंदिन खराब होने लगी और ऋण के नीचे दब कर जमीन या अन्य सम्पति से साहूकारों के पास गिरवी रखने के लिए विवश हुए। नयी कानून व्यवस्था में पुराने कारदारों के स्थान पर नये कारदार सामने आए। अंग्रेजी शासकों के शासन में साधारण कानूनगो का रुतबा कारदार के रुतबे से ऊंचा हो गया। कानूनगो, नायब तहसीलदार और तहसीलदार से तो किसान थर-थर कांपने लगे। सेठ साहूकारों से ऊंचे ब्याज पर ऋण लेने, भूमि गिरवी रखने और ऋण वापस न करने की स्थिति में जमीन को साहूकारों को बेचने और भूमिहीन खेतीहर बनने की नियति के अनेक दृश्य और घटनायें उपन्यास में विद्यमान हैं। उपन्यास में ब्रिटिश उपनिवेशवाद की स्थापना से लघु उद्योगों को तहस नहस करने, आर्थिक शोषण और दोहन से कृषकों और श्रमिकों के शोषण की प्रक्रिया और देश की अर्थव्यवस्था खण्डित करने के अनेक प्रामाणिक साक्ष्य प्रस्तुत किए गए हैं। गोबिन्दराम, मनसाराम, रामजवाया, धनपत और हुकूमतराय, जैसे चरित्र सामान्य जन का शोषण करते हैं और ब्रिटिश अमलदारी में कारोबार करके किस प्रकार धनार्जन कर रहे थे, उनके माध्यम से लेखक ने पूंजी और सत्ता के चरित्र को उद्‌घाटित किया है।

सेठ साहूकार सामान्य निरीह निर्धन जन का किस प्रकार का शोषण कर रहे थे, उसे साहूकार गोबिन्द राम के दृष्टिकोण और चतुर वणिक बुद्धि के संदर्भ में प्रस्तुत किया जा सकता है। साहूकार गोबिन्दराम के पास एक किसान स्त्री बीस सेर गेहूँ उठाकर लाती है। पहले तो वह जिन्स लेने से इन्कार करता है वह कहता है 'बेचेगी तो ले लूंगा पर इसे लेकर बदले में तुम्हें भी कुछ लेना होगा। अठन्नी पंसरी के हिसाब से गेंहूँ खरीद लिया जबकि मंडी में भाव ऊँचा था और बिलायती छींट का कपड़ा दुगने मोल पर उसे बेच दिया, (पृ. 152) दीवान मय्यादास इस व्यापार को देखकर इसे ठगी कहता है। प्रत्युत्तर में गोबिन्दराम कहता है ठगी नहीं दीवान जी, यह व्यापार है। ब्रिटिश उपनिवेशवादी की स्थापना के पश्चात ऐसे धूर्त, चाटूकार और निर्मम शोषक वर्ग का उदय हो रहा था जो सामान्यजन और कृषक समाज का प्रत्येक स्तर पर शोषण कर रहा था। इस शोषण को गति देने का कार्य अंग्रेजी सत्ता कर रही थी। वे भारतीय समाज की शक्ति और एकता को खण्डित करने के लिए शासकों साहूकारों और सामान्य जन को बरगला रहे थे। अंग्रेजी साहिब बहादूर कहता है कि इन हिन्दुस्तानियों का कोई भरोसा नहीं कब कोई उन्हें बरगला ले। मैं भी तो इन्हें बरगलाने ही आया हूँ। पिछले बीस साल से हम इन्हें बरगला ही तो रहे हैं। कभी इनके हाकियों को बरगलाओ, इनके सबसे बड़े खैरख्वाह बनो, फिर इनके सालारों को बरगलाओ, और अब इनके सेठ साहूकारों को बरगलाओ, खूब बरगलाओ.....' (पृ. 155)

ब्रिटिश उपनिवेशवादी शासक भारत से रेल तार और औद्योगिक विकास से जिस आधुनिकता को ला रहे थे उसकी उस शोषण मूलक दृष्टि को भारतीय रेल के शेयर होल्डरों की मीटिंग में मंत्री के वक्तव्य और अन्य सदस्यों की प्रतिक्रिया के माध्यम से समझा जा सकता है। मंत्री महोदय भारत में कृषि व्यवस्था के विकास का दावा करते हैं और मीटिंग में गेहूँ और चावल के निर्यात का ब्योरा निम्न रूप में प्रस्तुत करते हैं -

1849 में 8 लाख 58 हजार पौंड दाम का अनाज

1858 में 3 करोड़ 80 लाख पौंड दाम का अनाज

1877 में 7 करोड़ 90 लाख पौंड का अनाज

1907 में 9 करोड़ 30 लाख पौंड की आशा है।

इस तरह पिछले 50 साल में भारत से अनाज का निर्यात लगभग 100 गुणा बढ़ा है। आठ लाख पौंड से 9 करोड़ पौंड दाम तक जा पहुँचा है, (पृ. 206) भीष्म साहनी ने ब्रिटिश शासकों की भारतीय अर्थव्यवस्था संबधी नीतियों और भारत को आधुनिक बनाने के दावों के संबंध में उन्हीं के देश में विद्रोही स्वर उठने दिया है जिसमें एक अध्यापक भारत में दुर्भिक्षों का ब्योरा मांगता है और मंत्री ब्योरा प्रस्तुत करने के लिए बाध्य होता है। वे कहते हैं 'गत शताब्दी के पहले पचास वर्षों में 24 दुर्भिक्ष पड़े। इन दुर्भिक्षों में मरने वालो की संख्या पहले 50 सालों में पन्द्रह लाख, पिछले 50 सालों में दो करोड़ (पृ. 206) ये आर्थिक विश्लेषण इस बात का साक्षी है कि ब्रिटिश साम्राज्य का शोषकवर्ग भारत में सामान्य जन का शोषण कर रहा था। इंगलैण्ड में आयोजित इस मीटिंग में मंत्री अपने संबोधन में उन सभी आर्थिक नीतियों को स्पष्ट करते हैं जिनके लिए कृषि व्यवस्था, औद्यौगिकीकरण और रेल आदि विकासात्मक कार्य भी उनके लिए पूंजी निवेश के लाभकारी कार्य बन गए। वे अपने संबोधन में कहते हैं कि भारत में चलने वाली रेलगाड़ियों से भारत को तो लाभ होगा ही, वे ब्रिटेन को भी मालामाल कर देंगी। कपास और कॉफी और चाय और गर्म मसाले ये सब बनवाएंगे भी हम उनके दाम भी हम निर्धारित करेंगे, उन्हें खरीदेंगे भी हम, और वहाँ से निर्यात भी हम करेंगे।(पृ. 199) वे पूंजी लगाने वाले सदस्यों को आश्वस्त करते हैं कि उन्होंने जो पूंजी भारतीय रेलवे में लगाई है वह भारत को दिया कर्ज है। इस का अभिप्राय है कि दिए हुए कर्ज पर उन्हें सूद भी मिलेगा और शेयरों पर जो मुनाफा होगा वह अलग रहेगा। (शेष अगले अंक में)

गांव व डाकघर बातल, तहसील अर्की

जिला सोलन हि.प्र.-173208 मो. 94180-10646

दोहा

जीवन

● डॉ. दिनेश चमोला 'शैलेश'

जीवन भी इक खेल है, जीतो या लो हार
गंवा इसे लो मीत या, या लो जन्म सुधार।

जीवन गाड़ी प्रीत की, डिब्बे सब संबंध
आकांक्षा बन सीटियां, हरती मन के छंद।

जीवन सच मानो सखे, उलझा हुआ निबंध
पढ़ना तो होगा इसे, कर नित नव अनुबंध।

जीवन आवगमन का, उत्तम वह स्थान
विविध जीवन आते जहां, ले साजो सामान।

कुछ, कुछ दिन बसते यहां, कुछ रहते दिन चार
कुछ देते पल में रचा, गुणों भरा संसार।

जीवन जी अति दीर्घ भी, छोड़ न पाते याद
सच जीवन उस मनुज का, व्यर्थ हुआ बरबाद।

सखे जी रहो वर्ष सौ, या फिर वर्ष हजार
बिन उत्प्रेरक कार्य के, जीवन है धिक्कार।

मानव जीवन पा सखे, गर न पराक्रम ओज
सच इस धरती पर रहा, मात्र वही तन बोझ।

अनगिन जन आते रहे, लाखों आते रोज
गुणीजनों की ही सखे, पर होती है खोज।

जिसने परहित दे दिया, जीवन का सर्वस्व
अमिट वही इतिहास पर, मनुज दीर्घ या ह्रस्व।

जिसने ज्ञान व कर्म का, किया न सद् विस्तार
कबके ऐसे मूर्ख को, भूल चुका संसार।

रहे याद इस जगत में, गर इसका है ध्यान
ज्ञानार्जन, तप, त्याग कर, सभी जगत को दान।

'अभिव्यक्ति', 167, गढ़ विहार (एच.पी.), देहरादून,
उत्तराखंड-248 005, दूरभाष : 0135 2660414

कविता

आत्म समर्पण

● रमेश कुमार सोनी

रातें सदा से
असफल रही हैं
अंधेरों का
पूर्णविराम लिखने में
भोर के उजाले में
शर्म की लाली के साथ
वह रोज आत्मसमर्पण करता है।
लौट जाती हैं रातें
अपने कालेपन की अंतरिक्ष में
किसी गुनाह का पछतावा करने
रातें उतनी काली नहीं होतीं
जितना काला दिन कभी होता है
इनसानी करतूतों से।
अपने चारों ओर इनसान
गंदगी, असामाजिकता और
असंयमित जीवन का जो
मायाजाल बुन रहा है
वहीं से गुम हो रहे हैं-
लोरी-किस्सों के शहंशाह लोग
परिंदों-पशुओं में
सद्भाव और प्रेम पालते लोग
साथ में लौटने लगे हैं
प्रकृति के सफाईकर्मी
अब तुम्हारी बारी है...।
ऐ जिंदगी के मुनीम जैसे मशीनी लोग
बंद करो, क्या खोया-पाया की जुगाली
विज्ञापनों की लकधक जिंदगी में
बचा लेना जिंदगी के गुल्लक में
कोई चेहरा, कोई आंखें, कोई कलम
जो लिख सके कभी कि-
कोई तुम्हारे जैसा अपना
कभी, कहीं रहता था... आदमी...
रातें सिखाती हैं आत्मसमर्पण करना
दिन सिखाता है जागो और पा लो
ताकि सनद रहे वक्त पर काम आए॥



जे.पी. रोड, बसना, छत्तीसगढ-493554,
मो. : 94242 20209

कविता

समय के पहिए

प्रोमिला भारद्वाज



समय के पहियों पे सवार
जा रहे किस ओर
घिसते पहियों तले
पिसते अपने अस्तित्व को
झुक के देखो जरा।
रुको, पल भर को तो देखो
कुचली जा रही सैकड़ों खुशियां
भौतिक सुखों से परे
नैसर्गिक सौंदर्य को देखो
देखो पलट कर।
प्रीत तुम्हें पुकारे
पथराई आंखों से, प्रतीक्षा करे पहरों
उन क्षणें की, चिंताओं से मुक्त हो
प्रियतम उसे निहारे
उन पलों को छुड़ाए
दूर ले जा रही
समय की उड़ानें
भरती जा रही रिक्तता से
हृदय की दरारें, खोखले हुए जा रहे
सम्बंध सारे नाते
समयाभाव ने छीना
अपनों से अपनों का
मधुर मिलन, वो मेल मिलाप
घंटों बैठै बतियाना।
वो हंसी ठिठौली
थकान-तनाव मिटाने वाली
माता-पिता लाडलों को अब
देखने को तरसते
स्मृतियों में मिलके खुश हो लेते
बच्चे बाट जोहते-जोहते सो जाते
सपनों में, गिले-शिकवे कर
सारी मांगें सुना, संतुष्ट हो जाते
मित्रों से वार्तालाप होता
केवल दूरभाष पर
दुःख-सुख में भागीदारी
मात्र एक औपचारिकता
संस्कारों की जड़ें हैं गहरी
इसलिए है ये अभी जारी
सिमटने लगी है कुछ कुछ
कार्डस व ईमेल तक
घर बनने लगे रैन बसेरे
क्या-क्या छिनता जा रहा
समय की अधीनता करते-करते
समय के रथ से उतर कर
देखो कभी धरातल
ऐ सृष्टि के सर्वश्रेष्ठ प्राणी!
भौतिक सुख सुविधाएं
तुम्हारे लिए हैं, तुम उनके लिए नहीं
न ही वो मापदंड, सफलता व सुख के
सफलता की अनिर्धारित
ऊंचाइयां छूने की धुन में
क्या-क्या वांछनीय
वास्तव में अनिवार्य
अनदेखा किए जा रहे
समय के पहियों पे सवार
जा रहे किस ओर!

प्रबंधक, जिला उद्योग केंद्र, जिला मंडी, हिमाचल प्रदेश-175 001, मो. 0 94180 04032

कविताएं

मां! मैं कैसे हुई पराई

● विद्या ओदक निर्गुड़कर

मां मैं कैसे हुई पराई
लोगों ने कहा, तूने भी माना
पर मैं नहीं समझ पाई
मैं कैसे हुई पराई।

नौ महीने कोख में पाला
तब तक मुझे खूब दुलारा
मुझे दिखला दुनिया का उजाला
क्यों तेरे मन में छाया अंधियारा।

आंचल में है मुझे छुपाती
छाती से है मुझे लगाती
भूख प्यास मेरी तू मिटाती
पर आंखों से नीर बहाती।

तेरी धड़-धड़ करती छाती
मुझे अंदर तक है हिलाती
पर तेरा ममता भरा दुलार
मुझे करता है बलवान।

तेरे संग मैं जी पाऊंगी
उंगली पकड़ कर मैया तेरी
पैयां-पैयां चल पाऊंगी
शक्ति पाकर तेरी मैया
दुनिया में कुछ कर पाऊंगी।

बड़ी होकर इस दुनिया को
बहुत कुछ कर दिखलाऊंगी
यह तुझसे है मेरा वादा
तेरा नाम रोशन कर दूंगी।

हर कोई कहेगा मुझे तेरी बेटी
मत मान तू मुझे पराई
मैं तो अंश हूं तेरा ही
फिर मैं कैसे हुई पराई?

आई.सी.आई.सी. बैंक के पास, काला पाठा रोड,
बैतूल, मध्य प्रदेश-460 001

कौन जिम्मेवार है

● मनोज कुमार 'शिव'

एक सुबह है एक राह है
एक जैसा है बचपन।

मगर मायने अलग हैं, ध्येय अलग हैं
जुदा हैं मन।

वो बतिया रहे आज कहाँ पर कूड़ा बीनने जाएंगे।
और वो सोच रहे अध्यापक आज हमें क्या पढ़ाएंगे।

उनको तलाश है प्लास्टिक के थैलों की, काँच के सामान की,
उनको चाह है कुछ सीखने की, कुछ पहचान की,
राष्ट्र एक है, हवा एक है,
मगर असमानताएं बढ़ी हैं।

मुश्किलें अनेक हैं, बाधाएं अनेक हैं,
समस्याएं अनेकों खड़ी हैं।

उनका ध्येय है मात्र रोटी का जुगाड़ हो जाए
वो चाह रहे हैं कैसे,
पढ़ाई से भविष्य उनका निखर पाए।

पढ़ाई तो पहुँच से दूर उनके,
सपना है बस दो वक्त का खाना।
वो पढ़ाई में हैं मशगूल इतने,
सपना है कुछ करके दिखाना।

समय के बहाव संग,
वो दोनो बहते जाएंगे।
अपनी अपनी जरूरतों को लेकर,
वो प्रयास करते जाएंगे।

सोच अलग है आवश्यकताएं अलग हैं,
जुदा हैं दृष्टिकोण।

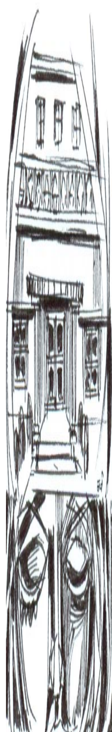
इतनी बड़ी विषमताएं,
इतना अलगाव,
आखिर जिम्मेवार है कौन,

पुत्र श्री गोकुल राम ठाकुर
गाँव लोअर घियाल, डाकघर नमहोल तह. सदर,
जिला बिलासपुर, हिमाचल प्रदेश-174032, मो. 8679146001

विनोद ध्रब्याल राही की कविताएं

घर

सदा मुस्कुराने वाली दादी
उदास रहती है
जब से तय हुआ है
नया घर बनना
पुराने को उखाड़कर,
सींक खा गई है
पुराने घर की लकड़ी को
प्लास्टर छोड़ रहा दीवारों को
पाईपें जंग खा गई हैं
सीलन से फटती हैं पपड़ियां,
दादी अक्सर सुनाती हैं यादें
सात दशक होने को आए
उसे इस घर में आए
पत्नी से मां
और मां से दादी बनी
गूंथा सम्बंधों को
प्रेम भरे संस्कारों की डोर से
अपने हाथों से सजाया-संवारा
इस घर को
सुख-दुख सहे
डगमगाए न कदम कभी,
पुराना हो गया है घर भले ही
यादें आज भी हैं ताजा
दादी को आज भी दिखते हैं
घर के कण-कण में दादाजी
रोज बिताती है
कुछ एकांत क्षण
दादाजी के साथ
बतियाती हैं दीवार पर टंगी
उनकी तस्वीर के साथ,
दादी की ख्वाहिश है
इसी घर से लेगी अंतिम विदाई
संभव हो तो
दादाजी की तस्वीर साथ लेकर
सुना है
नए घर की दीवारों पर
टिकती नहीं पुरानी तस्वीरें
ज्यादा दिन तक
दीवारें चूस लेती हैं
तस्वीरों के रंग।



खरपतवार

खरपतवार के गुणों से अनजान
कृषक पलने देता है उसे खेत में
धीरे-धीरे करने लगता है प्रतिस्पर्धा
खरपतवार फसल के साथ
चूसने लगता है
फसल के हिस्से का पानी
उसके हिस्से की वायु और प्रकाश पर
जमा लेता है अपना प्रभुत्व
देखते ही देखते फैला लेता है
अपना साम्राज्य पूरे खेत में
सूख जाती है फसल
निसरने से पहले ही
खड़ा रह जाता है खरपतवार
कृषक काटता है
फसल की जगह खरपतवार
जो बन जाता जानवरों का चारा
इंसान के काम कहां आता है खरपतवार
कृषक की मेहनत रह जाती है
धरी की धरी
बंजर होते जाते हैं खेत।

रा.मा.पा. अनूही (कोटला), जिला कांगड़ा,
हिमाचल प्रदेश-176 205, मो. 96259 66500

रत्न चन्द निर्झर की लघु कथाएं

श्राद्ध

आज पिता जी का श्राद्ध था। पत्नी ने अलसुबह उठकर श्राद्ध के लिए पकवान बनाने की तैयारियां शुरू कर दीं। पंडित जी को एक हफ्ता पहले बुलावा भेज दिया गया था। नौ बजते-बजते सभी तैयारियां पूरी हो गई। कुछ एक रिश्तेदार भी आ गए थे। बेटा रोहित मां द्वारा की जा रही खटर-पटर की आवाज से जल्द उठ गया था। वह बड़ी हैरत भरी निगाहों से मां के क्रिया-कलापों को देख रहा था। उसे अभी तक पीने को दूध नहीं मिला। भूख सता रही थी। ढेर सारे पकवानों को बना देख अपनी मां से मायूसी भरे अंदाज से पूछा, "मां आज इतने सारे पकवान क्यों बनाए?"

"बेटा, आज तुम्हारे दादा जी का श्राद्ध है। पंडित जी को जिमाना है।"

"मां, तुम अपना श्राद्ध कब मनाओगी?"

मां, बेटे के इस यक्ष प्रश्न के सामने निरुत्तर रह गई।

तमाचा

दीपू बड़ी तन्मयता के साथ किताबों में छिपकर कागज पर कुछ बना रही थी। मां बड़ी देर तक उसकी इन हरकतों की चुपके से देखती रही। अचानक पीछे से पहुंच कर दीपू को डांटते हुए एक तमाचा उसके मुंह पर मारते हुए कहा :

"यह हो रहा है पढ़ाई का नाटक? दिखा अब तक क्या लिखा है?" मां ने किताब के बीच छुपाकर रखे कागज को छीनते हुए कहा।

कागज को देखते हुए मां अवाक होकर रह गई। दीपू ने कागज में एक सुंदर सा बधाई कार्ड बना रखा था जिसमें लिखा था- 'प्यारी मां को जन्मदिन की हार्दिक बधाई।'

यह देखकर मां को लगा कि यह उलटा तमाचा उसके मुंह पर पड़ा है।

ग्रहण

"देखो जी! आज सूर्य ग्रहण है, दिन भर कुछ भी नहीं खाना पीना दफ्तर में ग्रहण के दौरान" पत्नी ने दफ्तर जाने से पूर्व हिदायत देते हुए कहा। दफ्तर में समोसे पकौड़े चाय की पार्टी खाकर शाम जब घर लौटा तो सारी कलई एक डकार ने खोल दी।

"अच्छा तो! ग्रहण के दिन भी तुमसे सब्र न हो सका। दूर रहना हमसे छूना मत।" हमने अभी-अभी स्नान किया, हां याद आया दान की थाली में दक्षिणा के लिए दस का नोट तो देना।" पत्नी ने हाथ आगे बढ़ाते हुए कहा। पति बोला, "ग्रहण हुआ दस का नोट क्या स्वीकार्य होगा? नोट भी तो अछूत हो गया है इस ग्रहण में।"

मुख्य प्रारूपकार, राजगढ़ मंडल, हि. प्र. लोक निर्माण विभाग, राजगढ़,
जिला सिरमौर, हिमाचल प्रदेश-173 101, मो. 94597 73121

कहानी

भंवर

● डॉ. गौतम शर्मा 'व्यथित'

उसके संशयग्रस्त स्वभाव से रेचन बखूबी परिचित था। इसी स्वभाव के कारण उसके व्यावहारिक जीवन में वह कोई-न-कोई दोष उसके सर मढ़ती रहती जिसके प्रभाव में हंसता-खिलता चेहरा घर की दहलीज़ पर पांव रखते ही मुरझा जाता। वह उसे समझाता अपने कार्य, व्यवहार व व्यस्तताओं की सफाई देता परंतु उसके मन में सदा यही शक-संदेह घर किए रहता कि वह उसे न चाह कर कहीं अन्यत्र किसी और के साथ ही मन परचाता रहता है। उसका यही मनोभाव ऐसे अनेक विचित्र जाले बुनता जाता जिसमें वह मकड़ी के जाले में उलझे कीट-पतंग की भांति निरंतर उलझती ही जाती। उसकी ऐसी मनोदशा का संक्रमण सारे घर को संक्रमित करता ऐसी स्थितियों को जन्म देता जिसमें दोनों के रिश्ते इतने दूर हो जाते जिसका अनुमान दोनों को नहीं होता। इस सारे घटनाक्रम से रेचन का व्यक्तित्व धरती में धंसता जाता। वह अपने व्यवहार में जितना नैतिक, सही रहता, घर के बाहर उसका जितना मान-सम्मान होता, घर में वह स्वयं को उतना ही घटिया, बदनाम समझता, बच्चों के सामने स्वयं को बहुत छोटा महसूस करता।

चार जन थे उसके घर में। तीन एक तरफ और वह एकदम अकेला पड़ जाता इस सारे परिदृश्य में। बच्चों का मां के प्रति संवेदित होना स्वाभाविक है परंतु पिता के सारे एहसानों को ताक में रखकर एकतरफा व्यवहार करना, कभी-कभी उसे सोचने पर विवश कर देता है कि वह जिस किसी के लिए, जो भी करता रहा, वह बेमायने है, व्यर्थ है, क्योंकि जो वह करता है, बच्चे उसे उसकी विवशता या दायित्व समझते हैं, उसे अपनी जरूरत मानते हैं इसलिए वह जो करता है उनके प्रति कोई एहसान नहीं, और जब बच्चे बढ़ती आयु के साथ घर के लिए एक रिमोट कंट्रोल की भूमिका अदा करने लग पड़ते हैं तब तो पति-पत्नी के परस्पर सम्बंधों के आगे भी कई प्रश्नचिह्न लग जाते हैं। ऐसा ही कुछ घटता रहा रेचन के घर में। घर की व्यवस्था का रिमोट कंट्रोल बच्चों के हाथ में हो गया था। शायद इसी कारण वह कई बार पत्नी के सम्मुख स्वयं को असहाय पाता और स्थितियों से बचने के लिए वहां से खिसक कर अपने कमरे में बंद हो जाता। स्थितियों से पलायन ही एक मात्र उसका सहायक होता।

बरसात के गरजते-बरसते मौसम की तरह जब बेरुखी के बादल छंटने लगते तो रेचन परिस्थितियों से उभरता स्वयं को सहज पाने की कोशिश करता। उसके जीवन में यह सिलसिला शादी के बाद ही शुरू हो गया था। उस समय गांव के स्कूल में अध्यापक दूर-दूर से नियुक्त होते जो किसी के घर-परिवार में कमरा लेकर (डेरा) रहा करते। दस-बारह टीचर थे उस समय जिनमें चार-पांच बाहर के थे। एक अध्यापिका उनके घर में भी रहती थी। दूर-पार के सम्बंधों से थी इसलिए घरवालों ने उसे ठहरा लिया था। घर खुला था, बच्चे भी पढ़ने वाली उम्र के थे। एक-डेढ़ वर्ष रहने के कारण उसका परिवार के हर सदस्य के साथ हंसी-मज़ाक चलता रहता। स्वभाव से भी सहज, सरल मिलनसार थी। परंतु स्वस्थ नहीं थी। हर महीने एक दो बार उसे दौरा पड़ जाता जिसके कारण उसके माता-पिता ने उसे विश्वस्त परिवार में ठहराया था। वह जब भी दौरे की पकड़ में आती तो पंद्रह-बीस मिनट तड़पती रहती फिर आधा घंटा निढाल अचेत पड़ जाती। जब होश में आती तो लज्जा जाती। रेचन की मां उसकी ऐसी स्थिति देखकर बड़ी संवेदित होती। वह उसे बहुत चाहने लगी थी। इस सारे हालात में परेश उसे संभालता, उपचार करता।

रेचन का ब्याह हो गया। भरे-पूरे परिवार में अंजना बहू बनकर आई। वह भी अध्यापिका थी। परंतु स्वभाव से संशयशील थी। ब्याह-शादियों में अकसर महिलाएं बहू को देखकर कई प्रकार का मज़ाक और बातें बनाती हैं। किसी ने पता नहीं क्या कह दिया जिससे अंजना को 'स्टैंजा' लगते देर नहीं लगी। रेचन ने स्थिति संभाल ली और सब नॉर्मल हो गया परंतु स्त्री-मानस की विचित्रता एकबार जो बात मन में ठहर जाती है, निकलती नहीं। व्यवहार और विश्वास के सारे प्रयास बेअसर रहते हैं। गृहस्थी स्वस्थ चलने लगी थी। ममता का स्थानांतरण उसके गांव में हो गया। माता-पिता के उपचार सम्बंधी प्रयासों व एक योगी के आशीर्वाद



से उसे कुछ रोग-मुक्ति मिली। कालांतर में उसकी शादी हो गई। एक-दो वर्ष बाद एक लड़की भी हुई। वह फिर कभी उसके गांव नहीं आई। परंतु अंजना संशय के भंवर में जो एक बार डूबी थी, पुनः निकल न सकी।

रेचन के घर जब डाकिया आता तो अंजना इस ताक में रहती, कि पता करूं किसकी चिट्ठी आई है। कहां से आई है? क्या लिखा है? प्रायः वह ऐसे दिखती मानो किसी उलझन में हो। मन में कोई उधेड़बुन चली रहती। किसी काम को सही ढंग से कर नहीं पाती। दीर्घसूत्रता भी आ गई थी उसके व्यावहारिक कार्यों में। कई बार तो उसे पता ही नहीं चलता कि वह क्या कर रही है, या क्या कह रही है। पहनने-सजने की बांकपन से भी मन ऊबता जा रहा था उसका। रेचन जब उससे इस स्थिति के बारे चर्चा करता तो वह साफ मुकर जाती कि उसे किसी प्रकार की कोई चिंता है। कोई दुःख कष्ट नहीं, बड़े मजे में है। वह व्यंग्य कसती कहती- मेरी फिक्र मत करो। वैसे भी तुम क्यों चिंता करते हो मेरी। आपको तो मन बहलाने के कई स्थान हैं। मस्त रहो, अपने में। मैं तो ऐसे ही जीयूंगी। मेरे तो कर्म ही ऐसे हैं।' ऐसा कहते-कहते कई बार उसकी मुखाकृति ऐसे बन जाती मानो जन्मों की शत्रुता-कटुता हो जिसे वह आंखों तथा चेहरे से उगल रही हो। फिर एकदम सहज होकर कहती- 'मेरी बातों का बुरा मत मानना। पता नहीं मुझे क्या होता है? मेरा मन वश में नहीं रहता। क्या कुछ बक जाती हूं, कुछ स्मरण नहीं रहता।' और फफक पड़ती। निढाल कंधे पर लुढ़क जाती। रेचन किंकर्त्तव्यविमूढ़ सा इस दृश्य से आहत स्वयं को संभालता उसे ढांढ़स बंधाता, मनाता ऐसा महसूस करता मानो उस पर पहाड़ टूट पड़ा हो।

वास्तव में अंजना एक अच्छे परिवार से थी। स्त्री स्वभाव से भोली, सादा तथा धर्मभीरू भी थी। अपनी संस्कृति के संस्कार भी खूब मिले थे उसे। परंतु हर बात में संदेह करना उसका जन्मजात स्वभाव था जिसके कारण उसके सारे गुणों को ग्रहण लग जाता। रेचन इस रहस्य को समझता था। उसके सारे प्रयत्न करने पर भी वह उसे अपने प्रति विश्वस्त न कर सका। जब कभी बहुत सफाई पेश करता तो वह और भी शंकाग्रस्त हो जाती यह सोच कर कि यह जो मुझे विश्वास दे रहे हैं, तो निश्चित ही कोई कारण है जिसे ढकने-छिपाने की साजिश है। रेचन उसकी मनःस्थिति को जान-भांपकर अपनी ओर से उसे अनेक विध विश्वस्त करने का प्रयास करता। कई उदाहरण भी देता, कई प्रसंग भी सुनाता परंतु वह संदेह के भंवर में एक बार जो उलझी सो उलझती ही चली गई। लाख कोशिश करने, समझाने पर भी वह उस भंवर से उभर न सकी। उसका मन तो पानी के भंवर में गए उस तिनके के समान हो गया था जो पानी के भंवर में फंसा कभी ऊपर आता तो कभी नीचे चला जाता परंतु बाहर नहीं निकल पाता। यही स्थिति बनती रही अंजना की जीवन पर्यंत। रेचन ने चाहा क्या कई बार कहा- चलो किसी मनोचिकित्सक को दिखाते हैं परंतु वह यही कहती कि मैं पूरी तरह स्वस्थ हूं। मुझे किसी प्रकार का न तो रोग है न मनोरोग। बल्कि परत में कहती आप हो गए हैं रोगी, स्वयं को दिखाओ किसी अच्छे से डॉक्टर को। मेरी छोड़ो। मुझे कुछ नहीं है। पता नहीं बी.पी. क्यों हाई हो जाता है।' और फिर एकदम इतनी सहज हो जाती, मानो उन दोनों के बीच कुछ घटा ही न था।

परिवार में दोनों के कटे-कटे या दूर-दूर रहने के कारण बच्चों की मानसिकता भी प्रभावित होती है। प्रायः हमारी प्रवृत्तियां वंशानुगत भी स्थानांतरित होती हैं, एक परिवार से दूसरे परिवार को पीढ़ी-दर-पीढ़ी। चिकित्सा मनोविज्ञान भी इन तथ्यों को दृष्टिगत रखते उपचार-निदान की प्रक्रिया अपनाता है। वंशानुगत संतानें अच्छे-बुरे संस्कार, प्रवृत्तियां, भाव, स्थायीभाव, मनोभाव ग्रहण करती हैं। रेचन जब मनोविज्ञान की पुस्तकों में ऐसे वर्णन पढ़ता अथवा किसी मनोचिकित्सक की वार्ता-संवाद सुनता तो आत्मविश्लेषण की पकड़ में आ जाता। वह पत्नी की समस्या से जूझता उभर नहीं पाया था कि कुछ ऐसी ही अस्वस्थता के आसार उसके लड़के में भी दिखाई देने लगे। स्थितियों से पलायन, झूठ बोलकर सच्चाई को ढकना, उम्र से ज्यादा योग्यता दिखाना, बिना बताए घर से बाहर रहना, आदि उसका स्वभाव बनता गया। रेचन की पूरी कोशिश रही उम्र भर परिवार में एक आदर्श पिता बना रहे जबकि उसका उठना-बैठना, मित्रता, भाईचारा ऐसे लोगों से भी था जिनमें खाने-पीने के कई शौक थे। परंतु रेचन उसी सिद्धांत की पालना करता रहा कि यथा पिता तथा पुत्र, यथा माता तथा पुत्री। वह कई बार एकांत में बैठा सोचता, मंथन करता अपने अतीत और वर्तमान पर परंतु मगज़ मारने पर भी उसे सही उत्तर नहीं मिलता, कोई समाधान हाथ नहीं लगता। उसने भर्तृहरि शतक के नीति शतक को भी दो-चार बार पढ़ा था। उसका एक मंत्र

लघु कथा

कलाकार

● राधेश्याम 'भारतीय'

बीच राह एक पत्थर पड़ा था। कलाकार की नजर पड़ी और ले आया अपनी झोपड़ी में। सप्ताह भर के परिश्रम के बाद उसने उस पत्थर को एक देवता का रूप दे दिया।

अब श्रद्धालु उस प्रतिमा को ले गए और प्राण-प्रतिष्ठा कर मंदिर में स्थापित कर दी।

एक दिन कलाकार झोंपड़ी से निकलकर मंदिर के द्वार पर था। वहां श्रद्धालुओं का तांता लगा था। श्रद्धालु भगवान के चरणों में शीश नवाते, मन्नत मांगते और पंडित जी दान दक्षिणा देकर लौट रहे थे।

मुझे सोचते देर न लगी कि कलाकार के दिमाग में यह प्रश्न अवश्य आया होगा कि मुझसे तो अच्छे ये पंडित जी हैं जो बैठे बिठाए मालामाल हो रहे हैं।

मैं भी भगवान से कुछ मांगता हूं। वे भगवान के सामने थे- कलाकार हाथ जोड़कर विनती करने लगा- हे मेरे देवता, आपके सामने श्रद्धालुओं की इतनी लम्बी लाइन देखकर मन प्रफुल्लित हो गया। बस, मुझे एक यही वरदान दीजिए कि सुंदर-से-सुंदर प्रतिमा बना सकूं।

मैं कलाकार को देखता रह गया।

नसीब विहार कालोनी, घरौंडा, करनाल, हरियाणा–132 114, मो. 93153 82236

'विधाता ने जो ललाट में रेखाएं लिखदी हैं, उन्हें मिटाने की समर्थ किस में है।' उसके होठों पर रहता और उसी के सहारे वह दुखद पलों को भी सुखद समझकर जीता रहता।

ऐसी स्थितियों से जब कोई गुज़रता है तो वह ज्योतिषियों, साधु-संतों, तांत्रिकों, पुछ देने वालों तथा झाड़फूंक (अपरा शक्तियों के प्रभावों का उपचार) करने वालों के यहां भी दस्तक देता है, राहत पाने की आशाएं पालता है, हितैषियों और सम्बंधियों के सुझाव पर। रेचन भी ऐसे रास्तों और पगडंडियों पर चला। जिस पर विश्वास नहीं था उस पर भी आस्था जोड़ी परंतु कुछ खास हाथ नहीं लगा, मानसिक अशांति के अतिरिक्त। उसे स्वयं में भी उसका प्रभाव महसूस होने लगा जिसकी पकड़ में उसके बच्चे थे, पत्नी थी। वर्ष-दर-वर्ष बीतते गुए। ढलती उम्र में दोनों को एहसास होने लगा। जीवन में सब कुछ था, सब कुछ है परंतु संशयग्रस्त मानसिकता ने जिस संतति को जन्म दिया उनसे वे आज तक मुक्त नहीं हो सके। रेचन एक विचारशील, धार्मिक वृत्ति का होने पर भी अंजना की मानसिकता को बदल नहीं सका। वह ही नहीं बल्कि उसके बच्चे भी वंशानुगत मिले संस्कारों के रोग से मुक्त न हो सके। परिणामस्वरूप हर सुख-सुविधा होने पर भी उनके परिवार में सदैव टूटन, रूठन, विवाद, मनमुटाव, झगड़ा आदि वृत्तियों का ऐसा संक्रमण बढ़ा जो मानसिक कैंसर बनकर निरंतर फैलता गया। सुबह मीठी होती तो शाम कड़वी हो जाती, यदि शाम मीठी होती तो सुबह का स्वाद बदल जाता।

फागुनी धूप में बैठा रेचन सामने धौलाधार पर गिरी ताज़ा बर्फ के फाहों को ढलते देख रहा था जो डूबते सूरज की रोशनी में सुनहरी दिख रहे थे। वह इलाचंद्र जोशी के उपन्यास 'सन्यासी' के कथानक को लेकर एक आलेख लिखने का मूड बना रहा था। पास ही टेबल पर रखा था उपन्यास और कागज़-पैंसिल। धार के आंचल में उड़ते बादलों के टुकड़ों के साए कभी पहाड़ के सुनहरी बर्फ को चांदी बना देते तो कभी स्वर्ण-चांदीनुमा।

संदेह और अविश्वास की पतझड़ के बाद भी जीवन में साठ वसंत देख चुके थे दोनों। दोनों में अतीत के प्रति धीमी-धीमी ग्लानि थी और भविष्य के प्रति उजली-उजली स्नेहभरी आस्था। दोनों अपने-अपने मन की कह कर स्वयं को हल्का महसूस करते। निर्दोष होने पर भी दोष कबूलते। वह सोच रहा था साहित्य में पूर्व लिखे कथानक व उनसे जुड़े पात्र किसी-न-किसी रूप में हर युग में जीवंत बने रहते हैं। दोहराते रहते हैं उन चित्तवृत्तियों को जो मानवी व्यवहार और उसके सुख-दुख के कारण बनती है। मनुष्य न चाहने पर भी उनकी पकड़ में आता रहता है। तभी वे कृतियां कालजयी कहलाती हैं।

प्रज्ञा पोती ने आकर कहा- दादा जी! दादी कह रही हैं मेरे हाथ की बनी चाय नहीं पीयोगे? उसके चेहरे पर अव्यक्त हंसी भाव से भीगता रेचन उसे गले से लगाता बोला- 'क्यों नहीं पोती- तेरी दादी के हाथ की बनी चाय क्यों नहीं पीऊंगा। वही तो पिलाती रही है उम्र भर अपने हाथ से बनाई चाय। उस चाय में तो स्वाद ही बड़ा होता है।' उसी क्षण एक विचार पुनः उसके मानस पर उतरता है-

'हम परस्पर कटने का, दूर रहने का, चुप रहने का कितना भी प्रयास क्यों न करें, परंतु हम कहां कट पाते हैं। हमारा परस्पर सम्बंध ही कुछ ऐसा है जिसे हर स्थिति में जीना, निभाना पड़ता है। यही तो हमारा परिवार व समाज धर्म है। यही जीवन का यथार्थ है। सामने धार पर बिछी धूप धीरे-धीरे आकाश को छूने के प्रयास में गुम होती गई। पोती ने दादा के कान में धीरे से कहा- दादा! ठंड हो गई है, दादी कह रही हैं, भीतर आ जाओ!

राजमंदिर नेरटी, कांगड़ा, हिमाचल प्रदेश–176208, मो. 94181 30860

कहानी

पुरानी नायिका का मिलना

● गंगा राम राजी

दिसम्बर की हल्की हल्की ठण्ड, और ठण्ड भी इतनी जिसमें पूरी बाजू वाला कुर्ता डालने से ठण्ड का प्रभाव रोका जा सकता। छह बजे प्रातः भ्रमण को जाना मुझे अच्छा लगता तो था ही और वहां पर विभिन्न प्रकार के लोगों के दर्शन भी हो जाते वह अलग। यहां मुम्बई में लोगों का प्रातः घूमना छह बजे के बाद ही आरम्भ होता। गांव की वादियों की भान्ति नहीं जहां प्रभात प्रेमी चार या पांच बजे से या मुर्गे की बांग से उठ जाते। यहां तो मुर्गा भी मुम्बइया हो गया लगता उसकी बांग भी छह सात बजे के बाद सुनी जा सकती है। वह भी क्या करे 'जैसा देश वैसा भेष' का पाठ तो उसे याद करना पड़ेगा ही।

यारी रोड के मन्दिर-मस्जिद के पास ही तीन बड़े बड़े पार्क एक पार्क में खिलाड़ियों के लिए स्थान, विभिन्न खेलों के खिलाड़ी, क्रिकेट, फुटबाल, हैंडबाल और एथलीट, योग, व्यायाम करने वाले पहुंचे हुए होते। इन सब में क्रिकेट की लगभग दस टीमें छोटे बच्चों से लेकर बड़ों बच्चों की होती जो मैदान के अलग अलग कोनों पर अपना जौहर आजमा रही होती दिखाई देतीं। कभी कभार फुटबॉल के प्रेमी भी अपना खेल खेलते दिखाई देते वह अलग। जब से टी वी का आना और उस पर लाईव क्रिकेट दिखाना, उस पर सट्टे बाजी आदि बातों से आज की पीढ़ी पर क्रिकेट का ऐसा खुमार चढ़ गया है कि दूसरी खेलों पर उनका ध्यान ही नहीं जाता।

पार्क नुमा मैदान के चारों कोनों पर पैदल चलने वालों के लिए टाईलों से जड़ित रास्ता बना हुआ है जहां पर प्रातः भ्रमण करने वाले मिल जाते। इसमें नौजवान कम मात्रा में नहीं होते लेकिन जो भी होते उनके कानों में मोबाइल का श्रवण यंत्र जुड़ा अवश्य होता। जिसे कान में लगाए होने पर उसकी स्वर लहरियां की प्रतिक्रिया में उनके चेहरे पर विभिन्न प्रकार की मुद्रा देखी जा सकती। कुछ को तो हाथों से, गर्दन से यहां तक कि शरीर से इशारा करते देखा जा सकता है और उन्हें देखने वाले को उनकी हरकतों से मनोरंजन भी होता रहता।

मैं भी यहां के हालात देख आठ बजे से पहले सैर करने नहीं जाता। आठ बजे तक पार्क भरा सा मिलता। विभिन्न वेश-भूषा में लड़के लड़कियां, प्रौढ़ बुजुर्ग सब अपने रंग में रंगे मिलते। मैंने भी इनके रंग में रंगने की कोशिश की थी परन्तु रंग ही नहीं सका क्योंकि रंग चढ़ने का नाम ही नहीं ले रहा था। भला अब पक्के रंग पर कौन सा रंग चढ़ पाएगा ? यहां की संस्कृति तो ऐसी बन गई है कि कोई किसी की परवाह ही नहीं करता, जो जिस को ठीक लगे उसे ही वह अपने पर धारण कर लेता। यह प्रवृति मुझे ठीक भी लगी इसमें बनावटीपन की गुंजाइश ही नहीं है। जो भाए सो खाए।

आज इतवार का दिन मैं अपनी दिनचर्या से प्रातः के भ्रमण को निकला। हमेशा की तरह पार्क में कदम रखते ही चारों ओर नजर दौड़ाई, नजर क्या दौड़ाई नजर अपने आप ही सब पर जाने लगती है। आज छुट्टी होने से लोगों की संख्या में बढ़ोतरी दिखाई दी। इसमें महिलाओं की संख्या दूसरे दिनों की अपेक्षा कुछ अधिक ही थी। उधर छोटे बच्चे फुटबॉल खेलते खेलते झगड़ने लगे,

'' .... बोला न यह गोल नहीं ..''

'' गोल क्यों नहीं का .... बॉल पोस्ट से जाने का न ?''

'' पोस्ट से जाने का नहीं ,साथ ही से जाने का ...''

तीसरा लड़का दौड़ कर आया,'' पोस्ट से जाने का मीनज गोल होने का ...''

'' हम नहीं मानता ... '' पहले लड़के ने कहा और वह बॉल लेकर एक ओर बैठ गया।

मुझे लगा कि मैं इन लड़को की बात को सुलझा दूं उनके पास जाने लगा तो दोनों टीमें एक जगह पर इकट्ठी हो कर झगड़ने का माहौल बना कर आपस में तर्क-वितर्क करने में लग गई थी।

'' क्यों झगड़ा करता है ? मेरी बात मानोगे तो मैं कुछ बताउं?'' मैं अपने को रोक नहीं सका आगे बढ़ा।

'' हां अंकल आपकी बात तो हम मानेंगे क्यों नहीं ? यह डॉन हमेशा ही फंड़ा करने का।''

बस डॉन बोलने की ही देरी थी वह लड़का जिसे डॉन बोला गया था भड़क उठा,



'' तूं क्या बोला ? डॉन बोला , फिर एक बार फिर बोलने का .... बोल.... ''

बस फिर क्या था फुटबाल मैच अब रैसलिंग में बदलने वाला ही था तो मैंने चिल्लाकर कहा, '' चुप करो... शट अप आई एम ए टीचर... ''

मेरे को न जाने कहां से अंदर से करंट आ गया था परन्तु मेरे चिल्लाने से सब चुप हो गए और मेरी ओर देखने लगे। सफेद बालों वाले अधेड़ आदमी को देखकर लड़के जो अभी लड़ने के इरादे से आए थे चुप हो गए और मेरी ओर देखने लगे। एक लड़के ने बॉल को मेरे पास दे दिया। मैं लड़कों की इस प्रतिक्रिया से अंदर ही अंदर खुश होने लगा।

'' देखो यहां से बॉल को हिट करो, सब अपनी अपनी जगह चले जाओ गो टू यूवर पलेसिज।''

सब अपनी अपनी जगह जाने लगे तो मैंने पहले सब को एक जगह पर इकट्ठा किया,

'' देखो खेल एक दूसरे को जोड़ने मित्रता बढ़ाने के लिए ही होता है न कि झगड़ने के लिए। खेल के अपने नियम होते हैं और सब खिलाडियों को उनका पालन करना पड़ता है। आप सब अच्छे लड़के हैं। सब अपना काम ठीक करो। ओ के ?''

'' ओ के सर। सर आप नए टीचर आए हैं न ? हमें हैड सर ने कहा था कि आपका डी पी सर आपको ग्राउंड में ही मिलेगा . .. ''

बस फिर क्या मेरी सब समझ में आ गया कि इनके खेल के नए टीचर आने वाले होंगे और मेरे को नए टीचर समझ कर वे शांत हो गए। इससे पहले मैं कुछ बोलता दो लोग जो लगता कि हैडमास्टर के साथ उनका नया डी पी टीचर हो आ पहुंचे और मैं वहां से कुछ कहे बिना ही चला आया। मैं अंदर ही अंदर मुस्करा रहा था और लड़के कभी मेरे को देखने लगे कभी अपने हैडमास्टर और नए डी पी मास्टर को, मैं वहां से मुस्काता हुआ चलता बना।

'' क्या देखता बाबू तूं ?'' एक सुरीली सी मधुर आवाज ने मुझे अपनी ओर आकर्षित किया।

मैंने देखा काले बुर्के में एक महिला खड़ी मुझे सम्बोधन कर रही थी। बुर्के में लिपटी होने से उसे अच्छी तरह से देखा नहीं जा सकता था परन्तु केवल मात्र उसकी बड़ी बड़ी आंखें जो मुझे भेद रही थी उसी से उसकी सुन्दरता का एहसास हो रहा था।

''नमस्ते जी, मैं इन बच्चों का खेल देख रहा था ... ''

'' ... और मैं तुम्हें देख रही ... . '' इससे पहले मैं कुछ और कहता वह बीच ही में बोल गई।

मैं उसके चेहरे पर देखने लगा तो मुझे केवल उसकी आंखों में एक सम्मोहक आकर्षण लगा। मुझे क्या कहना है ? क्या करना है इस क्या का कोई ध्यान न रहा और मैं उसकी आंखों में आंखें डाले उसकी ओर लगातार देखते हुए मुस्काता रहा। आंखों के चार होते ही मेरी बुद्धि उसकी आयु का ज्ञान यही बीस पच्चीस के पास होने का अनुमान लगा चुकी थी।

''मोहतरमा ... '' मैंने उसके लिबास के अंदाज में उर्दू सभ्यता में उसे संम्बोधन करना चहा। '' ..... मैंने आपको नहीं देखा माफी चाहता हूं ..... ''

'' आओ थोड़ी देर इस बैंच पर बैठ लेते हैं ?''

उसने मेरी ओर एक प्रश्न भरी नजर से देखा। मैं उसका अर्थ समझ रहा था और वहीं पर बैठ गया। मुझे लगा कि मेरे बैठने के पीछे महिला का सम्मोहन काम कर रहा था। मेरी सोचने की शक्ति ही नहीं रही थी। वह जैसे बोल रही थी मैं उसी तरह से कर रहा था। मेरे से बहुत छोटी आयु होने पर भी मुझे आदेश देने वाली भाषा का प्रयोग कर रही थी जो मुझे अजीब लगने पर भी अच्छा लग रहा था।

'' मैं तुम्हें रोज यहां पर देखती हूं तुम रोज इस समय घूमने आते हो ?''

'' मैंने तो आपको नहीं देखा। मेरी आप से आज पहली मुलाकात है। आप भी क्या घूमने आते हो ? ...... ''

'' मेरा नाम रूकसाना है। यहीं पास में रहती हूं। मैं अपने साथ आपको घर ले चलूंगी।'' मेरे प्रश्न का उतर देती वह अपने ही अन्दाज में बोलने लगी थी जैसे उसने मेरी बात सुनी ही न हो।

'' हमें मिले हुए युग हो जाते हैं। तुम भाग जाते हो या मैं, कुछ नहीं मालूम होता ? कुछ अर्से बाद मेल हो जाता है जैसे आचानक किसी मोड़ पर हम मिल जाते हैं। .... या किसी गजल की किताब में अचानक सूखा फूल मिल जाता है या ..... ''

वह बोले जा रही थी मैं मन्त्रमुग्ध उसे सुन रहा होता हूं। जैसे वह कोई गजल गुनगुना रही हो। एक टक उस ओर देखता हूं, मेरे से उसके किसी भी प्रश्न का उतर नहीं दिया जाता। उसकी बड़ी बड़ी आंखों में डूब गया होता हूं। उससे बाहर निकलना चाहने पर

भी नहीं निकल पाता। वह क्या कह रही होती है मेरा ध्यान उसकी हर कला पर होता। और जब वह यह कहती कि ,'' अच्छा मैं चली कल फिर मिलेंगे। मैं तुम्हें घर ले चलुंगी।''

तब देखता हूं कि वह मेरे किसी भी उतर का इंतजार किए बिना ही चली जा रही है मैं बैंच पर बैठ जाता हूं , उसे जाते देख रहा हूं काले बुर्के में उसके कदमों की आहट सुनता रहता हूं। उसने पीछे मुड़ कर नहीं देखा, मैं लगातार देखता, वह गायब हो जाती है।

मुझे आज मालूम होने लगा कि महिला में सम्मोहन की शक्ति पुरुषों से अधिक है। मैं लगातार उसे देखता वह पल भर के लिए भी पीछे मुड़के नहीं देखती। हो सकता है इसी स्त्री सम्मोहन के कारण से आजकल के लड़के अपने मां-बाप को पीछे भूलते जा रहे हैं। यह स्त्री सम्मोहन मुझे इस औरत के बारे सोचने पर मजबूर करने लगा था।

मैं घर लौट आता हूं। दिमाग में हलचल कम होने का नाम नहीं ले रही थी। एक जिज्ञासा बढ़ने लगी थी। अगले दिन का इंतजार करने लगा और इंतजार इतना लम्बा लगने लगा कि कल कब आएगी सोच के घबराने लगा था।

सुबह आई मैं प्रतिदिन की भांति पहले ही चला गया। पार्क के चक्कर काटने लगा। सब बैंचों पर नजर डालने लगा। वह काला बुर्का कहीं भी नजर नहीं आया। पार्क के राउंड तो लगा ही रहा था परन्तु मेरी नजर विशेष कर उस बैंच पर थी जहां मुझे रुकसाना मिली थी। पार्क का एक राउंड लगभग एक किलोमीटर का बनता है जो मैं दस मिनट में पूरा करता था परन्तु आज तो मैं आठ मिनट में ही पूरा करने लगा क्योंकि मुझे रुकसाना वाले बैंच के पास पहुंचना था। इस तरह से तेज चलने पर सांस तो नहीं चढ़ रही थी परन्तु पसीना पड़ने लगा था। मैं क्या कर रहा हूं लोगों को कोई मतलब नहीं। यहां तो युवा प्रेमी आपस में गुथमगुथी करते हुए भी चलते हैं परन्तु किसी को किसी से कोई मतलब नहीं होता।

इस घटना को हुए बहुत दिन होने लगे थे और मैं भूलने भी लगा था कि कुछ दिनों के बाद दूर से मेरी नजर उसी बैंच पर बुर्के में बैठी महिला पर पड़ी। मैं तेज कदमों से बैंच की ओर लपका। नजर बैंच पर उसी तरह से बांधे हुए जैसे क्रिकेट के बॉल को कोई खिलाड़ी कैच करने पर बाल को देखता है और बॉल हाथ से छूट जाता है, मेरे साथ भी इसी तरह से हुआ बैंच के पास पहुंचते ही रुकसाना गायब। मैं चारों ओर नजर दौड़ाता हूं। मुझे लगा कि कैच न करने पर उस खिलाड़ी को उसके साथी अफसोस भरी नजर से देखते हैं लोग मुझे भी देखने लगे थे। मैं समझ रहा था कि यह मेरा भ्रम ही था। मेरा भ्रम भी कैसे हो सकता है ? अरे क्या यह भी सम्मोहन की एक कड़ी थी ? मैं उसी बैंच पर उस चूहे की तरह बैठ जाता हूं जो अभी अभी ही बिल्ली के पंजों से अपने को छुड़ा के भागा हो।

थोड़ी देर सांस लेने के बाद सोचने लगा कि मेरी आयु अब महिला की ओर देखने की नहीं तो फिर यह क्या? खयाल आया कि पिछली शताब्दी के सातवें दशक में लिखी एक कहानी 'युगों पुराना संगीत' की नायिका जो अपने प्रेमी को कोट दिखा कर शिमला में जाखू के देवदार पेड़ों के झुरमुट में गायब हो जाती थी, आज चालीस साल बाद तो न प्रकट हो गई हो ? परन्तु इस वैज्ञानिक युग में आज कौन विश्वास करेगा? मैं स्वयं भी तो संदेह करने लग गया था।

अब मेरा काम हो गया था प्रतिदिन आना और रुकसाना को देखना। इसी बहाने मेरी सुबह की सैर में कोई व्यवधान नहीं पड़ा था। जब बहुत दिन मुझे कोई बुर्के वाली महिला नहीं दिखाई दी तो मैं फिर से भूलने लग गया था कि कोई रूकसाना से मेरी मुलाकात हुई थी। इसी बीच मुझे दिल्ली जाना पड़ा।

दस दिन बाद मैं लौट कर आया और सुबह ही अपनी रूटीन में प्रातः का भ्रमण करने चला आया। मैंने पार्क के गेट से प्रवेश किया ही था कि मेरे आखों ने उसी बैंच पर बुर्के वाली महिला को बैठे देखा। बैंच मेरे से दूर था। मैं एक टक उसे देखने लगा। मेरे कानों में उसके बोल गूंजने लगे,

'' तुम इतने दिन कहां चले गए थे ?''

मैं आस पास देखने लगा कि कोई और तो नहीं बोल रहा है। उसका बैंच मेरे से दूर था। उसकी आवाज मेरे पास नहीं पहुंच सकती थी। यह बातें तो पास खड़े ही हो सकती थी या मोबाइल पर। मुझे स्वयं बड़ा आश्चर्य होने लगा परन्तु मैं बैंच की ओर खिंचा जा रहा था।

'' चल मेरे पीछे।''

अरे यह क्या है ? मैं उसके पास जब पहुंचने वाला था तो वह बैंच छोड़ चुकी थी और पार्क के दूसरे रास्ते से बाहर निकल गई। सब कुछ जानते हुए भी मैं अपने होश हवास में उसके पीछे पीछे उसके आदेश से चल रहा था। दूर होने पर मुझे एक महिला की आवाज जो मेरे से इतने दिन गैर हाजिर होने के कई प्रश्न कर रही थी मैं कोई उतर नहीं दे रहा था। किसे देता मेरे कानों में तो केवल आवाज ही थी और काला बुर्का मेरे से बहुत आगे।

'' चल मेरे पीछे आता रह मैं आज अपने घर .... ।''

मैं पीछे तो चल ही रहा था वह मेरे आगे। दोनों का दौ सौ गज से भी ज्यादा का फासला होते हुए भी उसकी आदेश भरी बातें साफ सुनाई दे रही थी। मैं लगातार आश्चर्य में भी था और उसके पीछे चल भी रहा था।

पीछा करते करते एक जगह पर मैं रुक गया। वह भी रूक गई। उसने पलट कर मेरी ओर नहीं देखा खड़ी रही। मैंने भी मौका देखकर जल्दी से उसकी ओर कदम बढ़ाए तो वह भी चलने लगी। जितना तेज मैं चलता उतनी ही तेज वह चलती। मैं यह देखने लगा था कि वह बुर्का मेरी चाल से चल रहा था या मैं उसकी।

उसकी चाल मेरी चाल से मेल खा रही थी। आश्चर्य ! मैं अपने होश हवाश में था। एक जिज्ञासा मन में हो रही थी यह सोच कर कि देखी जाएगी जहां ले चलेगी वहीं ले चल, चलता गया।

अब मैं वर्सोवा के कब्रिस्तान के पास पहुंच गया था। बुर्के वाली को मैंने कब्रिस्तान के गेट से अंदर जाते हुए देखा। कब्रिस्तान के गेट के पास खड़े वॉचमैन ने उसे नहीं रोका। थोड़ी ही देर में जब मैं गेट के पास पहुंचा तो वॉचमैन ने मुझे भी नहीं रोका। जबकि मैं उसे बताने वाला था कि मैं इस महिला के पीछे पीछे ही आ रहा हूं। मैंने गेट के अंदर चारों ओर एक नजर दौड़ाई तो दूर मुझे उसकी एक झलक दिखाई दी। मैं उसी ओर चला गया परन्तु वह गायब, वह कहीं नहीं दिखाई दे रही थी।

इधर उधर देखता रहा तो कहीं भी रूकसाना नहीं दिखाई दी। मैं कभी एक जगह जाऊं कभी दूसरी जगह। अब मुझे डर लगने लगा कि मैं पागल हो गया हूं या मुझे किसी आत्मा की शक्ति ने अपने वश में करने के लिए जादू कर दिया है। मैं भयभीत सा बाहर लौटने लगा तो एक कब्र पर काला बुर्का पड़ा मिला। मैं उस कब्र के पास जल्दी से जाता हूं। वहां केवल बुर्का ही था यह उसी का बुर्का था। मैं चारों ओर नजर दौड़ाता हूं। वह कहीं भी नहीं दिखी। मन में था कि वह यहीं होगी। अभी ही तो उसने अपना बुर्का खोल कर इस कब्र पर रखा।

मैंने बुर्का उठाया। अरे कब्र पर कुछ लिखा था। परन्तु यह उर्दू में था। मैं इधर उधर देखने लगा कि कोई यहां हो और इस कब्र पर लिखा उर्दू पढ़ सके। मैंने देखा कि वॉचमैन जो मेरे पीछे पीछे चला आ रहा था सामने खड़ा मेरी ओर देख रहा था। मेरी उससे जब नजरे मिली तो मैंने उससे पूछ लिया,

'' भाई साहब यह किस का नाम लिखा है .. ?''

''रुकसाना रसूल मोहम्मद .... ''

वॉचमैन ने मेरी ओर नजर डाली मैं उसे देख रहा था। वह पढ़ कर मेरी ओर ही देख रहा था मैं चुप-चाप खड़े उसे।

'' आप किसी औरत के पीछे पीछे आए क्या ?''

मैं आश्चर्य में पड़ा उसे हां में सर हिला कर उत्तर दिया वह आगे बोला,

'' इस तरह से इसी कब्र के पास कई बार ऐसा होता आ रहा है। मैंने आपको देख लिया था। मैंने इसलिए आप से कुछ नहीं पूछा आपके पीछे आ गया।''

वह चुप हो गया था। मैं पहले ही चुप खड़ा उसे देख रहा था। वह चाह रहा था कि मैं कुछ बोलूं प्रश्न भरी नजर से मुझे देखने लगा।

'' पहले भी ...... '' मेरी बात पूरी होने से पहले ही वह बोलने लगा।

'' पहले भी कई बार मुझे भी जिज्ञासा होती है जानने की। इसलिए मैं चुप चाप आपके पीछे हो लिया। यह इसी कब्र के पास होता है और इसी पर ही बुर्का पड़ा मिलता है। '' बुर्के को मेरे हाथ में देख कर वह बोलते जा रहा था।

'' ...... यह रुकसाना की कब्र है कहते हैं रुकसाना किसी दूसरे धर्म वाले लड़के से प्यार करती थी और धर्म के ठेकेदारों ने उसे गांव के सब लोगों से पत्थरों से मरवा मरवा कर मार ही दिया और इसके प्रेमी लड़के को जब यह पता चला तो उसने भी इसी कब्र पर अपनी जान दे दी थी। कुछ रहम दिल वाले इनसानों ने इसके पास ही एक सांकेतिक कब्र बना दी क्योंकि प्रेमी लड़के को उसके रिश्तेदार यहां से ले गए थे। .... ''

मैं वर्सोवा के कब्रिस्तान के पास पहुंच गया था। बुर्के वाली को मैंने कब्रिस्तान के गेट से अंदर जाते हुए देखा। कब्रिस्तान के गेट के पास खड़े वॉचमैन ने उसे नहीं रोका। थोड़ी ही देर में जब मैं गेट के पास पहुंचा तो वॉचमैन ने मुझे भी नहीं रोका। जबकि मैं उसे बताने वाला था कि मैं इस महिला के पीछे पीछे ही आ रहा हूं। मैंने गेट के अंदर चारों ओर एक नजर दौड़ाई तो दूर मुझे उसकी एक झलक दिखाई दी। मैं उसी ओर चला गया परन्तु वह गायब, वह कहीं नहीं दिखाई दे रही थी।

वॉचमैन बोलता गया परन्तु अब मेरा ध्यान उस पर नहीं था कि वह क्या बोल रहा है। मैं बुर्का उठा कर बाहर की ओर चलते हुए रूकसाना और उसके प्रेमी लड़के के बारे ही सोचने लगा। 'ये धर्म के ठेकेदार सब युग में होते आए हैं। प्रेम के अर्थ को जाति में बदलने लगे हैं। पहले प्रेम था अब यह लव जिहाद बन गया है। कोई रूह तो आए इन्हें पाठ पढ़ाए, यह जल्लाद सच्चे प्रेमी को सजा देते रहेंगे .... हर युग में बेरहम क्लॉडियस पैदा होता रहेगा और वैलेण्टाइन को डण्डों और पत्थरों से मरवाता रहेगा ... और प्रेमी दण्ड भोगते रहेंगे .... ।'

प्यार की प्यासी रुकसाना की रूह प्यार ढूंढती हुई अब तक तड़फ रही है। मैं जब भी यहां आता हूं तो इस प्रेम की नायिका रुकसाना की कब्र पर जाता रहता हूं एक एक गुलाब का फूल दोनों की कब्र पर चढ़ा आता हूं। वॉचमैन मुझे देख पहचान जाता है वह मुझे जाने से नहीं रोकता यह कह कर,'' साहिब आपके बाद इस तरह से कोई घटना अभी तक नहीं हुई। लगता है रूकसाना की आत्मा को शांति मिल गई होगी। मैं मुस्कुरा कर लौट आता हूं।

राजमहल, पुराना बाजार, सुंदरनगर, जिला मंडी,
हिमाचल प्रदेश-175 019, मो. 94180 01224

कहानी

शूटिंग

• सोहन वैष्णव

मेरे पिताजी की तो मत मारी गई थी, जो तुम जैसे निठल्ले से शादी करवाई। कहानियां लिखने और पैसा धुएं में उड़ाने से जिंदगी नहीं चलती, हाथ-पैर मारने पड़ते हैं। तब जाकर कहीं दो वक्त की रोटी नसीब होती है। मैं तो ऐसी जिंदगी से रुख़्सत होना चाहती हूं। कोमल इस तरह के संवाद अकसर बद्री को सुनाती और वह बे-परवाह सुनता रहता।

उसकी लत के सामने कोमल की बौखलाहट भरी बातें उसके सिर के ऊपर से निकल जाती थीं। और कोमल से वह यही कहता- देखो कोमल, पन्द्रह साल की उम्र में ही मुझे रोजी-रोटी का रास्ता हमवार करना पड़ा था। मुफलिसी के उन दिनों में भी मैंने पढ़ाई जारी रखी। मैं रोज शाम को देवाली से पैदल शिल्पग्राम दर्पण थियेटर जाया करता था। दो सौ रुपये मेहनताना मिलते थे। पर वहां पर भी मैं अपने लिए जगह सुरक्षित नहीं कर पाया, मुझ पर किसी की नजर ही नहीं पड़ी। संघर्ष के उस दौर में मैं पढ़ता गया और यह पेशा अपना लिया। और इसके बाद तुम्हें देखा, अब क्या करें... हमे भी इश्क होना था तो कोमल चटर्जी से वरना इतने बदनजर हम भी नहीं थे। कामयाबी कब मिलेगी यह तो मैं नहीं जानता...खुदा तुम्हें महफूज रखे!

बद्री सुबह उठता और अपने चारों ओर अखबार बिखेर कर बैठ जाता। एक दो अंग्रेजी भाषा के और बाकी हिन्दी भाषा के अखबार होते थे। अखबार पढ़ने के साथ ही सिगरेट सुलगाई जाती, और प्रत्येक अखबार की समाप्ति पर या बीच-बीच में नई सिगरेट तक लाइटर की आग पहुंच ही जाती थी। धुएं के गुब्बार उड़ते रहते और अखबार के पन्ने बलदते रहते थे। वैसे तो बद्री चाय पीकर बैठता था, पर कभी-कभी पत्नी को आवाज देता रहता था कि एक-आध चाय और भेज देना। कम से कम दो घण्टे अखबार चाटता, फिर ब्रश करता, नहाता और ऑफिस जाने की तैयारी करता। जब कुछ काम-वाम नहीं होता तब, स्थानीय अखबारों के लिए कॉलम भी लिखता रहता था।

अशोक नगर मुख्य मार्ग पर सिल्वर स्क्वायर बिल्डिंग के पांचवे माले पर उसका टू बीएचके का फ्लैट था। और गुलाबबाग रोड़ पर उसका ऑफिस था। कहानियां लिखता और फिल्मों के लिए स्क्रिप्ट राइटिंग का काम करता था। पर, उसका दर्द यह था कि किसी डॉक्यूमेंट्री मूवी और स्थानीय नाट्य कार्यक्रमों में स्क्रिप्ट लिखने के सिवाय उसे किसी बड़ी फिल्म में ऐसा करने का अवसर ही नहीं मिला था।

घर में बद्री की राइटिंग टेबल पर सफेद कागद इधर-उधर उड़ते रहते थे। कोमल उन्हें बारी-बारी से सम्भाल कर टेबल पर व्यवस्थित करती रहती थी। ऐसा करना अब उसकी आदत बन गई थी। एक पत्नी के रूप में वह अपनी सारी जिम्मेदारियां पूरी शिद्दत के साथ निभा रही थी।

बद्री कोमल का बताया काम अक्सर भूल जाता, क्योंकि उसके दिमाग में कोई संवाद उभर आता या नयी कहानी के लिए कोई प्लॉट मिल जाता और वह लिखने में व्यस्त हो जाता। एक दिन कोमल ने कहा शाम को ऑफिस से आते वक्त झाड़ू लेकर आना, काम वाली बाई रोज पुराने झाड़ू से काम चला रही है। सुबह-सुबह चिड़ जाती है।

अब बद्री को याद तो रहता नहीं, और न ही वो इतना बड़ा राइटर था कि घर में नौकर रख सके। इसलिए उसने राइटिंग टेबल पर पड़ी दैनंदिनी डायरी पर एक टेग लगा दिया- झाड़ू। ...मतलब ऑफिस से आते वक्त झाड़ू लेकर आना है।

दूसरे रोज बद्री उठा, अखबार निपटाए और तैयार होकर ऑफिस निकल गया। दिन भर ऑफिस में लिखने में व्यस्त रहा। शाम को निकलते वक्त अचानक मुम्बई से उसके मित्र कैमरामैन तावड़े का फोन आया। ज्यादा तो नहीं, थोड़ी बहुत वार्ता में उसने बताया कि दो दिन बाद मैं उदयपुर आ रहा हूं, डायरेक्टर साहब



के साथ। वे किसी शादी में शरीक होने आ रहे है। मैंने उनसे तुम्हारे बारे में बात की है। उन्होंने भी मिलने की हां भर दी है।

डायरेक्टर कौन है? बद्री ने पूछा।

डायरेक्टर साब!.. अरे अपने खास.....तुम्हारे पसंदीदा, अनुराग कश्यप।

अरे वाह! उनके साथ काम करने से मझा आ जायेगा, मेरा सपना था उनके साथ काम करना, शायद अब ऊपर वाले ने मेरी सुध ली है। दुआ करो कि उन्हें मेरा काम पसन्द आए।

चलो फिर तुम तैयार रहो, हम आते है। इतना कहकर तावड़े ने फोन रख दिया।

बद्री ने अपना बैग उठाया और ऑफिस के ताला जड़ा। वहां से निकलते ही उसके दिमाग में उत्साह, उमंग और कई-कई विचारों के घोड़े दौड़ने लगें। अब घोड़े दौड़े तो, बद्री उनकी टापों की आवाज में झाडू लाना भूल गया। और घर आ गया।

घर आकर वह अपना बैग राइटिंग टेबल पर रखता कि कोमल देवी की तरह उसके सामने प्रकट हो गई।

झाडू कहां है?

झाडू का नाम आते ही बद्री झल्ला उठा। अरे भाग्यवान! यह क्या रोज-रोज झाडू की किच-किच लगा रखी है। मेरा दिमाग कहां उलझा रहता है, और तुम्हें झाडू की पड़ी है। मैं कोई सरकार के सफाई अभियान में थोड़े ही लगा हुआ हूं, जो झाडू लेकर घुमता रहूं। तुम औरतों को तो ना.....।

बद्री का बोलना जारी था कि उसके सामने वाले फ्लैट से चौबे जी आ निकले।

अरे भाई बद्री! इतनी आवाज क्यों आ रही है? लगता है बहू पर बिफर रहे हो। और यह झाडू-झाडू क्या है? राइटिंग का काम छोड़कर पार्टी में जाने का विचार तो नहीं है?

अरे चौबे साब! आप भी कितने प्रश्न करेंगे।

अरे कोमल, इस पर थोड़ा पानी डाल। दिमाग ठण्डा कर इसका। अच्छा हुआ जो स्क्रिप्ट राइटर है। डायरेक्टर नहीं बना, वरना अपनी बिल्डिंग को सिर पर उठा लेता।

आप भी कितना मजाक करते है!

अरे बद्री, मैं तो बस यूं ही तुम्हें बेवजह तंग करता रहता हूं।

आइए चौबे जी, बैठकर बात करते है। और हां तुम सुनो! दो कप चाय बनाओ। और ज्यादा खट-पट करने की जरूरत नहीं है, ये दो हजार रुपये पकडो, तुम्हारी साडी के लिए। तुम काम वाली बाई को क्यों नहीं कह देती, झाडू के लिए। वह सुबह आते वक्त लेती आयेंगी। किसी बात को समझा करो।

हां तो बद्री इन दिनों क्या नया लिख रहे हो।

अरे! चौबे साब, अनुराग जी आ रहे है, शूटिंग के लिए। मेरी कहानी पढ़ी है उन्होंने, स्क्रिप्ट लिखवाना चाहते है। अगर उन्हें मेरा काम पसंद आया तो अपनी तो निकल पड़ेगी। बस, एक मौके की तलाश में हूं। और यह अवसर मैं हाथ से नहीं गवाना चाहता।

बद्री! अगर तुम्हारा काम बन जाए, और फिर कभी कोई हीरोइन आए तो मुझे भी मिलवाना।

चौबे साब! निश्चिंत रहिए, पूरी कोशिश करूंगा, बस मेरा काम बन जाए।

दो दिन बाद कैमरा मैन तावड़े और अनुराग जी होटल में आकर ठहरे। तावड़े ने बद्री को मिलने के लिए बुलाया। बद्री अपना सारा ताम-जाम लेकर होटल मिलने पहुंचा। बड़े ही विनम्र लहजे में अनुराग जी ने बद्री को बैठने के लिए कहा। तावड़े ने बद्री की सिफारिश तो पहले ही कर रखी थी।

बद्री भाई! तुम्हारी लिखी एक प्रेम कहानी तीसरा देवदास, मैंने अखबार में पढ़ी है। मुझे वह पसंद आई, प्रेम का चित्रण काफी गहरा व लुभावना है। मैं चाहता हूं, इस कहानी को पर्दे पर उतारा जाए। और कहानी की विषय-वस्तु के हिसाब से, शूटिंग के लिए उदयपुर बेहतर रहेगा। मैं चार-पांच दिन यहीं ठहरा हुआ हूं, थोड़ा मनन कर इसके लिए अच्छी लोकेशन देख लेता हूं। तुम एक बार इस कहानी पर स्क्रिप्ट का खाका तैयार करो, फिर हम आगे बात करते हैं।

बद्री ने तीन दिन में ही कहानी के मुताबिक स्क्रिप्ट तैयार कर दी। स्क्रिप्ट डायरेक्टर को खूब पसंद आई।

तावड़े! तुम इनसे कोन्ट्रेक्ट साइन करवा लेना और एक लाख का चौक एडवांस....।

जी सर! तावड़े ने कहा।

लगभग एक महीने बाद फिल्म की शूटिंग शुरू हुई। डायरेक्टर ने अपनी कुर्सी जमाई। ऐसी कुर्सी जिसकी पीठ की बेंत ही गायब थी। कैमरा मैन तावड़े ने भी अपने कैमरे को सेट किया, बाकी यूनिट भी अपनी-अपनी जगह व्यवस्थित हो गई। हीरोइन जगदीश मंदिर के सामने वाली होटल के झरोखों में खडी है, जहां उसे मुस्कराते हुए हीरो के गले लगकर अपना सीन पूरा करना है।

बरसात के दिन शुरू हो रहे थे, आसमान में बादल भी बन

रहे थे। पर यह मौसम शूटिंग के लिए ज्यादा खराब भी नहीं था। हां, उमस से सब परेशान अवश्य हो रहे थे। खासकर हीरोइन, जो बार-बार अपना मेकअप साफ करवा रही थी। चौबे जी भी आए थे, बद्री ने हीरोइन के साथ फोटो खिंचवाकर उनकी तमन्ना को पूर्ण किया। चौबे जी सोसायटी में जाकर, हीरोइन के साथ वाली अपनी फोटो दिखाकर वाह-वाही लूट रहे थे। कोमल को फोटो बताई तो उसने अपनी भौंहे चढ़ा लीं।

जगदीश मंदिर परिसर में भीड़ जमा हो गई, शूटिंग देखने। कुछ लोग दूर से ही हीरोइन की फोटो लेने के लिए अपने कैमरे के फ्लेश चमका रहे थे, पर फोटो धुंधला आ रहा था। इंस्पेक्टर राम सुमेर वहां भीड़ को नियंत्रित करने के लिए मुस्तैद थे। जैसे ही एक्षन बोला गया, शॉट फिल्माना शुरू हुआ। कैमरा मैन तावड़े अपने ड्रॉन कैमरे से सज्जनगढ़ को दिखाता हुआ, जगदीश मंदिर की एक झलक के साथ मुख्य कैमरे की नजरों को वहां फेंका, जहां हीरोइन खड़ी थी।

कई बार शॉट दोहराया गया, पर हीरोइन ढंग से उसे पूरा नहीं कर पा रही थी। डायरेक्टर महोदय बीच-बीच में तेश में आकर कट, कट...... की ध्वनि को दोहरा रहे थे। मन ही मन गालियां भी निकाल रहे थे।

कितनी उमस है, घुटन हो रही है। मुझे तो कहा था कि झीलों की नगरी है, फतहसागर की पाल है, उबेश्वरजी की हरि-भरी पहाडियां है, सुहावना मौसम है। अब कहां पाल, पहाड़ियां और सुहावना मौसम! हीरोइन धीमे स्वरों में बुदबुदाई।

अरे बद्री! स्क्रिप्ट में ऐसा क्या लिख दिया जो पहला शॉट भी पूरा नहीं हो रहा। सारा दिन यहीं खराब करवाओगे क्या...? तावड़े ने मजाकिया अंदाज में कहा।

बद्री दौड़ा-दौड़ा डायरेक्टर के पास आया।

कश्यप साब! आप कहें तो सीन चेन्ज कर दें।

नहीं-नहीं, मुझे यही सीन आज पूरा करना है। तुम्हीं जाकर हीरोइन को समझाओ।

जी सर, मैं बात करता हूं।

देखिए मैडम जी, मैंने तो कहानी के प्लॉट के हिसाब से, आपका पहला शॉट हीरो के साथ घणगौरघाट पर, ठण्डी हवा के झोंकों में रोमांस के साथ, इसके बाद हरे-भरे गुलाबबाग में सुरों की धुन के साथ फिल्माने का लिखा था। पर, पता नहीं क्यों! कश्यप साब फिल्म की पहल जगदीश मंदिर से करना चाहते है। अब देखो, आप जैसी बड़ी एक्ट्रस को यहां उमस भरे वातावरण में लाकर खड़ा कर दिया। मैडम जी, दरअसल बात यह है कि फिल्म में स्टोरी और स्क्रिप्ट दोनों ही मेरी है, यह मेरा पहला अवसर है। आप मुझ पर तरस खाइए, जैसे-तैसे यह पहला शॉट तो यहां पूरा कर दीजिए। बद्री की इस विनम्रता को देख, हीरोइन उस पहले सीन को फिल्माने के लिए तैयार हो गई।

डायरेक्टर ने फिर एक्षन बोला। कैमरा फिर से हीरोइन पर आया तो कोने में खड़े बद्री ने हाथ ऊपर किया, मतलब... मैडम लाज रख लेना। और इधर एक ही बार में शॉट पूरा हो गया।

भाई बद्री! तुम बड़े कमाल के हो।' डायरेक्टर ने कहा।

थैंक्यू सर! बद्री तपाक से बोला।

फिल्म की शूटिंग लगभग दो-तीन माह उदयपुर में तथा शेष फिल्माकंन का कार्य फिल्म सिटी मुम्बई में चला। एक साल में फिल्म पर्दे पर आने के लिए लगभग तैयार हो गई। फिल्म सेंसर बोर्ड की अनुमती के बाद डायरेक्टर ने दीपावली पर फिल्म को पर्दे पर उतारा। पहले ही दिन दर्शकों का सैलाब उफान पर था। टिकिट के लिए कतारें लम्बी होने लगीं। करोडों की कमाई पहले दो-हफ्ते में ही पूरी हो गई। और बद्री का नाम पोस्टर के एक कोने में, आज भी भौर के तारे की तरह टीम-टीमा रहा था, किसी सूरज के उदय होने से पहले..... ।

फिल्म चलती गई। डायरेक्टर के नाम के साथ बद्री का नाम भी चमकता गया। अब तो दूसरे डायरेक्टर भी इंतजार में खड़े थे, बद्री से स्क्रिप्ट लिखवाने।

फिर एक दिन वही स्वर, अरे! यह झाडू फिर से टूट गया, नया मंगवा देना।

मैं काम से लोटा नहीं कि तुम दैत्य बनकर खाने को दौड़ती हो। चाय-पानी पिलाना तो दूर, काम ही काम की बात। आज वो ला देना, कल उसे लेते आना, यही रामायण लगी रहती है तुम्हारी। अब तो एक नौकर रख लो।

हां, तो..... कहूंगी, पूरे तीन महीने शूटिंग चली यहां, एक बार भी हीरोइन से नहीं मिलवाया। तुम्हें पता है, मैं उनकी कितनी बड़ी फैन हू। अब चौबे साब को इस उम्र में हीरोइन से मिलाने की क्या पड़ी थी। एक बार मुझे भी ले चलते.... ।

अच्छा! तो धुआं इस वजह से उठ रहा है। अब तुम चिन्ता मत करो, अगली स्क्रिप्ट में अपने घर की कहानी होगी, तुम रानी मैं राजा होंगे। शूटिंग भी अपनी सोसायटी से स्टार्ट करवाएंगे। फिल्म का नाम होगा -विनाशक महिला... ।

यह सुनते ही कोमल टूटा झाडू लेकर बद्री के पीछे दौड़ पड़ी। दौड़ने से बद्री के हाथ से कुछ कागज नीचे गिर गए। कोमल ने उन्हें उठाकर देखा, मरिन ड्राइव पर उसके नाम से खरीदे गए फ्लैट के कागजात थे। बहरहाल, अगली शूटिंग पर कोमल का हीरोइन के साथ फोटो शूट तय है। कोमल की तरफदारी करने वाले चौबे साब भी अब नहीं रहे..... । बद्री आज शोहरत की सबसे ऊंची मंजिल पर है और उसकी लिखी विवादास्पद कहानी वाली फिल्म सेंसर बोर्ड में अटकी पड़ी है। जल्द पर्दे पर आने की उम्मीद है.....!

सम्प्रति- अतिथि व्याख्याता, हिन्दी
मो.सु.वि.वि. उदयपुर (राज.), मोबाइल : 7877068648

स्वतंत्रता संग्राम में शिमला एवं सिरमौर जनपद

(पृष्ठ 16 से आगे) कुछ लोग कौतुहलवश, कुछ उत्तेजित होकर और कुछ संगठन के कार्यकर्ता के रूप में हलोग की तरफ, गिरफ्तार नेताओं के साथ चल दिए। धीरे-धीरे भीड़ बढ़ती गई। जैसे ही गिरफ्तार लोग रियासती थाने के पास पहुंचे, सीऊं परगना के लोग भी महल के बिलकुल साथ लगते पिछड़े वर्ग के गांव की पगडंडी पर पहुंच गए। महल की कमान कंवर रतन सिंह और कंवर विक्रम सिंह के हाथ में थी। महल के साथ लगते मैदान में दोनों तैनात थे। महल के साथ लगते गांव में पुलिस में कार्यरत तिक्खु मुंशी बंदूक दिखा- दिखाकर भीड़ को डराने की कोशिश कर रहा था। लेकिन भीड़ का उग्र रूप देख कर वह एक गौशाला में घुस गया। इसी बीच महल में घुसने का प्रयास कर रही भीड़ को नियंत्रित करने की कोशिश में लगे कंवर विक्रम सिंह पर किसी ने पत्थर फेंका जो कंवर विक्रम के जबड़े पर लगा और वह बेहोश हो गए। कंवर रतन सिंह ने तैश में आकर लाठीचार्ज का आदेश दे दिया। भगदड़ मची तो गौशाला में छिपे पुलिस के मुंशी ने बिना कुछ सोचे-समझे गोली चला दी जो गांव टंगीश के उमा दत्त नामक व्यक्ति को लगी। वह वहीं शहीद हो गया। दूसरी गोली गांव मद्देयाह के दुर्गादास को लगी जो वहीं शहीद हो गया। तब तक दरबार में मौजूद पुलिस वालों ने भी गोलियां चलानी शुरू कर दीं जिसमें 100 के लगभग लोग घायल हो गए। बंदूकों के प्रसिद्ध कारीगर और राष्ट्रपति पदक से सम्मान से सम्मानित स्व. तीखु राम मिस्त्री के आंगन में लगा ऊखल आज भी मौजूद है, जिस पर गोलियों के निशान आज भी मौजूद है। इस गोली कांड में गांव बठमाणा के रूप राम, कालवी के तुलसी राम और चइयां के नरायण दास अपंग हो गए थे। इस दर्दनाक घटना ने पहाड़ के सीने में दबी क्रांति की चिंगारी को जैसे हवा दे दी। आग धधक उठी। धामी रियासत से कई लोग शिमला पलायन कर गए और गंज बाजार में तीन महीनों से भी अधिक समय तक शरणार्थी बन कर रहे। लेखक को स्वतंत्रता सेनानी पं. सीता राम ने बताया था कि परगना सीऊं और नेओल परगना में राजा धामी के कर्मचारियों ने जमकर आतंक मचाया। अंग्रेजी हुकूमत ने शिमला में इस घटना से उपजे रोष को दबाने के लिए धारा-144 लगा दी। इस गोली कांड की जांच के लिए शिमला में अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी के सदस्य लाला दुनी चंद 'अम्बालवी' की अध्यक्षता में एक कमेटी का गठन किया गया जिसमें देव सुमन (टिहरी गढ़वाल), श्याम लाल खन्ना, लाला किशोरी लाल और पं. राजेंद्र दत्त शामिल थे। कमेटी ने तुरंत डिप्टी कमिश्नर शिमला से पूछताछ की। राजा ध ाामी ने डी.सी. शिमला से 100 जवानों की मदद मांगी तो संदेश वाहक को मदद के लिए राजा जुन्गा के पास भेज दिया। राजा जुन्गा ने टका-सा जवाब देते हुए कहा कि उसके पास प्रजा को मारने के लिए कोई फौज नहीं है। राजा जुन्गा ने प्रजामंडल सदस्य देवी राम केवला को दिए वचन को पूरी तरह निभाया।

इधर धामी प्रजामंडल के पं. सीता राम, भागमल सोहटा के भाई काहन सिंह सोहटा और पं. भास्करानंद, राजकुमारी अमृत कौर के साथ 26 जुलाई 1939 को महात्मा गांधी से मिलने दिल्ली चले गए। पीछे, पं. सीता राम के घर को आग लगा दी गई। उनके परिवार ने भाग कर शिमला में शरण ली। जहां पं. नेहरू और महात्मा गांधी के निर्देश पर आर्य समाज कार्यकर्ताओं ने सभी शरणार्थियों के रहन-सहन एवं खानपान का प्रबंध किया। पं. नेहरू के प्रतिनिधि सचिव शांति स्वरूप धवन प्रजामंडल सदस्यों के साथ धामी पहुंचे। राजा और प्रजा से मिले। फिर बाघल रियासत की तरफ निकल गए। पं. सीता राम को गिरफ्तार कर उनकी 'चेतावनी' नामक पुस्तक को जब्त कर लिया गया। उन्हें जेल भेज दिया गया। इससे जनाक्रोश बढ़ गया। परगना सीऊं के लोगों ने खुलेआम राजा की खिलाफत की। घबरा कर राजा ने विद्रोह को दबाने के लिए ब्रिटिश सरकार से सहायता मांगी। लगभग 250 जवान, पंजाब से धामी में भेजे गए जिन्होंने विद्रोहियों के घर तक जला डाले। परगना सीऊं के लोगों के खिंदड़ू तक फूंक डाले गए। गांव के गांव खाली हो गए। बाघल की सीमा पर लोग अपने बच्चों और पशुओं के साथ कई दिनों तक शरणार्थी की तरह रहे। इस बीच 200 से अधिक लोगों को गिरफ्तार कर लिया गया और जेल भेज दिया गया। कुछ लोग भूमिगत हो गए। धामी सत्याग्रह ने पहाड़ की शांत वादियों में अचानक हलचल मचा दी थी। पं. सीता राम, आजीवन धामी में एक कॉलेज और धामी को तहसील या उप-तहसील बनाने के लिए लड़ते रहे। 16 जुलाई को उन शहीदों की याद करने वाला अब कोई भी नेता वहां नहीं आता। शहीदों की चिताओं पर मेला लगने की बात तो छोड़ दीजिए। धामी सत्याग्रह ने क्रांतिकारियों में जोश भर दिया था। जगह-जगह राणा-राजाओं और ब्रिटिश हुकूमत के दमन शोषण के खिलाफ लोग लामबंद हो रहे थे। हालांकि धामी सत्याग्रह को ब्रिटिश शासन और रियासती हुक्कामों ने दो महीने में ही कुचल दिया था लेकिन पहाड़ में जनाक्रोश की आग सुलग चुकी थी।

अक्तूबर 1942 में सिरमौर रियासत के किसानों ने सरकार की नीतियों के खिलाफ भारी जन आंदोलन की योजना बनाई। 20

अक्तूबर 1942 को गिरी पार के कुछ जागरूक किसान गांव जदोल-टपरोली में इकट्ठे हुए। बैठक में किसान सभा का गठन किया जो बाद में पझौता किसान सभा के नाम से जानी गई। इस सभा के सभापति कोटला-बागी गांव के लक्ष्मी सिंह चुने गए। इनके अलावा, गांव टपरोली के गुलाब सिंह, जदोल के चूं चूं मियां, बैण कुफर के मेहर सिंह, धामला के मदन सिंह आदि सदस्य चुने गए। वैद्य सूरत सिंह को सभा का सचिव बनाया गया। 'लूण लोटा' हुआ। एक मांग पत्र तैयार हुआ, जिसके अनुसार,

1. प्रजा द्वारा निर्वाचित मंत्रिमंडल की स्थापना करना,
2. महिला रीत टैक्स और बाल विवाह प्रथा खत्म करना,
3. जबरदस्ती फौजी भर्ती खत्म करना,
4. चराई टैक्स, घराट टैक्स, पशु टैक्स खत्म करना आदि

प्रदंह सूत्री मांग पत्र रियासती प्रबंधन और राजा को सौंपना निश्चित हुआ। मांग पत्र सिरमौर के राजा राजेंद्र प्रकाश को भेज दिया गया, लेकिन राजा ने उस पर कोई कार्रवाई नहीं की। दरअसल, राजा राजेंद्र प्रकाश एक आरामपरस्त और अकुशल शासक थे, सो नौकरशाही राजकाज पर हावी थी, जिससे शोषण और भ्रष्टाचार का बोलबाला था। मांग पत्र में भ्रष्ट कर्मचारियों को बदलने, फसलों और आलू के मुक्त व्यापार और फसल कंट्रोल कानून को खत्म करना, गांव में स्कूल, डाकघर आदि खोलना, ग्राम सभा और ग्राम पंचायतों का गठन करने के साथ-साथ गिरी नदी पर पुल बनाने की भी मांग थी। इन मांगों के समर्थन के लिए पझौता किसान सभा के नेताओं ने गांव-गांव घूम कर जनता का समर्थन अर्जित किया। लेकिन राजा राजेंद्र प्रकाश और उसके गुमाश्तो ने जन समर्थन प्राप्त सभा की किसी मांग को नहीं माना। वास्तव में सिरमौर रियासत में सिर्फ एक मंत्री, जिसके पास राजस्व विभाग था, ही सबसे शक्तिशाली था। जिसका नाम राम गोपाल 'अम्भी' था। इसीलिए तत्कालीन रियासती व्यवस्था को लोगों ने गोपाल शाही' का नाम दिया था। मांगें न मानते हुए अंग्रेजों की सहायतार्थ जबरन भर्ती शुरू हो गई। राजा ने यह भर्ती दूसरे विश्व युद्ध में अंग्रेजों की सहायतार्थ शुरू की थी। प्रजा को रियासती दमन चक्र का सामना करना पड़ रहा था। तभी राष्ट्रीय स्तर पर स्वाधीनता संग्राम की बढ़ती सरगर्मियों ने सिरमौर सहित सभी रियासतों के किसानों को जागृत करना शुरू कर दिया था। किसान आंदोलन की राह पर बढ़ चले। गांव-गांव में राजाज्ञा का उल्लंघन होने लगा। तब रियासती सरकार ने आंदोलन को कुचलने के लिए 3 दिसम्बर, 1942 को डी.एस.पी. पं. रामस्वरूप के नेतृत्व में एक दल पझौता किसान सभा के आंदोलनकारियों को दबाने के लिए भेजा। यह पुलिस दल चार दिन बाद हाब्बण, धामला होते हुए वापस राजगढ़ पहुंच गया। किसान सभा के कार्यकर्ताओं ने इन्हें किसी भी नेता के नजदीक तक नहीं फटकने दिया। पं. रामस्वरूप, डी.एस.पी. किसान सभा के किसी एक भी नेता अथवा कार्यकर्ता को गिरफ्तार तक नहीं कर पाया। राजस्व मंत्री गोपाल अम्भी ने रियासती सेना के ले. बडोला को और पच्छाद के तहसीलदार दुर्गा राम को धामला गांव भेजा। उन्हें आंदोलन के नेताओं को बहला फुसला कर नाहन तक लाने का जिम्मा सौंपा गया था लेकिन वे भी असफल हो कर लौट आए। नेता उनकी चाल समझ गए थे। हालांकि गोपाल अंभी ने उन्हें अपने इन अहलकारों के माध्यम से नाहन आकर राजा से उनकी समस्याओं के समाधान हेतु मिलवाने का वादा किया था लेकिन नेताओं ने दो टूक जवाब देते हुए राजा को धामला आकर आंदोलनकारियों से बात करने की ताकीद की। इस पर रियासती सरकार ने राजा के बजाय आंदोलनकारियों से निपटने के लिए सेना और पुलिस को पझौता भेजने का निर्णय लिया। हालांकि इतिहासकारों के अनुसार यह सब साजिश गोपाल अंभी की ही थी क्योंकि राजा तो नाम मात्र का था। डी.एस.पी. जगत सिंह की अगुवाई में दो प्लाटूनें कनोग और भावगा के लिए रवाना हुईं। कनोग पहुंची प्लाटून ने इशरू और रामभज को गिरफ्तार कर लिया। दोनों को राजगढ़ लाया गया। कोटी मावगा में जब जगत सिंह डी.एस.पी. वहां के चेतराम नामक आंदोलनकारी को गिरफ्तार करने पहुंचा तो वहां के आंदोलनकारियों ने पुलिस टुकड़ी को घेर लिया। पुलिस दल के हथियार छीन लिए गए। उन्हें हिरासत में लेकर जदोल टपरोली गांव ले जाया गया। डर के मारे पुलिस दल ने इशरू और रामभज को छोड़ दिया। उत्तर में आंदोलनकारियों ने पुलिस दल को उनके हथियारों सहित रिहा कर दिया। यह घटनाक्रम मई 1943 के पहले हफ्ते के तीन दिन चला। इस घटना ने रियासत और अंग्रेजों के चमचों को जनशक्ति से परिचित करवा दिया। इस पर रियासत ने अंग्रेज सरकार के मेजर एच.एस. 'बाम' के नेतृत्व में सेना की एक टुकड़ी विद्रोहियों को दबाने के लिए 10 मई 1943 को पझौता के लिए रवाना कर दी। मेजर बाम ने राजगढ़ पहुंचते ही धारा-144 लगा दी और आंदोलन के रिंग लीडर्स को 24 घंटे के अंदर आत्मसमर्पण करने का आदेश जारी कर दिया। 14 मई 1943 को रियासती पुलिस

पझौता कांड के चश्मदीद और आंदोलन में शामिल पंडित मेहर चंद जी ने लेखक को बताया कि इस आंदोलन में तत्कालीन रियासत जुब्बल के भी लोग शामिल थे, जिनमें वह स्वयं भी शामिल थे। इस गोलीकांड में उनकी बाईं टांग में गोली लगी थी। उन्हें भी गिरफ्तार किया गया था लेकिन सिरमौर से न होने के कारण उन्हें उनके तीन साथियों सहित छोड़ दिया गया। नाहन में रह कर ही उन्होंने अपना इलाज करवाया, अलबत्ता सिरमौर रियासत की जेल में सिर्फ 69 आंदोलनकारियों पर मुकद्दमा चला।

और अंग्रेजी सेना ने दमनकारी नीति अपनाते हुए भोले भाले ग्रामीणों पर अत्याचार करना शुरू कर दिया। दिन दिहाड़े गांव और बस्तियों में बसे लोगों को लूटा गया। गांव कटोगड़ा, पालू, भाणन, भनेवड़, धामला, ज़दोल, टपरोली, सरथ, कनोग, कोटली आदि में छापे मारे गए। 21 मई 1943 को लै. बडेला ने कटोगड़ा गांव के वैद्य सूरत सिंह, जो किसान सभा को सचिव थे, के घर को डाइनामाइट से उड़ा दिया। गांव में लूटमार कर लै. बडोला अपने सैनिकों के साथ वापस राजगढ़ चला गया। दो महीनों तक फौज और पुलिस गांव-गांव जाकर किसानों को डराती-धमकाती और लूटमार करती रही। आंदोलन को कुचलने की कोशिश करती रही। 11 जून 1943 को फौज ने आंदोलनकारी कलीराम गांव कोटी मावगा के मकान को आग के हवाले कर दिया। गांव के लोग जब आस पास के अन्य गांव वालों के साथ आग बुझाने एकत्रित हुए तो फौज ने उत्तेजित लेकिन निहत्थी भीड़ पर अंधाधुंध गोलियां चलानी शुरू कर दीं। मेजर एच.एस. बाम के अनुसार कुल 29 राउंड फायर किए गए थे। इस गोलीकांड में कठोगड़ा गांव के कामनाराम मौके पर ही शहीद हो गए। तुलसी राम (कुफ्फट), जाती राम (डरेणा), हेत राम (पालू), चेत राम (ठाणधार), कमाल चंद (नेरी) और चेत सिंह (थाणा) बुरी तरह से घायल हो गए।

पझौता कांड के चश्मदीद और आंदोलन में शामिल पंडित मेहर चंद जी ने लेखक को बताया कि इस आंदोलन में तत्कालीन रियासत जुब्बल के भी लोग शामिल थे, जिनमें वह स्वयं भी शामिल थे। इस गोलीकांड में उनकी बाईं टांग में गोली लगी थी। उन्हें भी गिरफ्तार किया गया था लेकिन सिरमौर से न होने के कारण उन्हें उनके तीन साथियों सहित छोड़ दिया गया। नाहन में रह कर ही उन्होंने अपना इलाज करवाया, अलबत्ता सिरमौर रियासत की जेल में सिर्फ 69 आंदोलनकारियों पर मुकद्दमा चला। यह मुकद्दमा सिरमौर रियासत में सक्रिय ताज़ा-ए-रांत-ए-हिंद की राज्य सुरक्षा कानून, 1940 की धारा 120बी, 121, 121(ए), 122, 124(ए), 148, 149, 307, 347, 395, 397 और 109 आई.पी.सी. के अंतर्गत स्पैशल ट्रिब्यूनल में जज गौरी प्रसाद की अदालत में चला। सितंबर, 1943 में चले इस मुकद्दमे में 52 आंदोलनकारियों को काला पानी (उम्रकैद), तीन को दो-दो साल की कड़ी कैद जबकि शेष 14 को बरी कर दिया गया। लेकिन प्रजा की अपील पर एक न्याय सभा का गठन किया गया जिसके न्यायाधीश, वकील मुकुंद लाल को बनाया गया, जिसने अभियुक्त किसानों की उम्रकैद को 10 साल, 7 साल और 5 साल में बदल दिया तथा 50 रुपये से 150 रुपये तक का जुर्माना किया। कुल 51 लोगों को सजा मिली। 18 लोगों को एक-एक वर्ष जेल में बिताना पड़ा। 15 अगस्त 1944 को फैसला आने के समय तक कली राम, बिशना और सही राम जेल में ही शहीद हो गए थे।

स्वतंत्रता सेनानी, पं. मेहर चंद शर्मा निवासी गांव टील सुपुत्र स्व. साधराम सराहन, चौपाल को आज उम्र के चौरासी-पचासी वर्ष पूरा करने के बावजूद आजीविका के लिए दर-दर भटकना पड़ रहा है। हालांकि, पिछले एक वर्ष से भी अधिक समय से वे बीमार चल रहे हैं। नाहन जेल में बंद कैदियों के साथ अमानवीय व्यवहार किया गया। बेड़ियों में जकड़ कर रखा गया। इनमें से एक कैदी, कालिया गावं कोटी अमानवीय यातनाओं के दौरान शहीद हो गए।

सन् 1942-43 में सिरमौर में प्रजामंडल का काफी प्रभाव रहा। पझौता कांड के बाद भी पं. राजेंद्र दत्त, देवेंद्र सिंह, धर्म नारायण, वकील, शिवानंद रमौल, नगेंद्र सिंह, पाधा हरि चंद आदि ने प्रजामंडल के परचम तले आंदोलन जारी रखा। पं. शिवानंद रमौल ने प्रजामंडल का दफ्तर अम्बाला में खोला। लाला दुली चंद अंबालवी व पं. राजेंद्र दत्त ने पं. शिवानंद की मदद की। रियासत से बाहर होने के कारण प्रजामंडल सजा काट रहे किसानों की खास मदद नहीं कर पाया। अलबत्ता आज़ादी की लड़ाई की लौ को जलाए रखा।

पं. मेहर चंद जी के साथ सन् 2010 में लेखक स्वतंत्रता की हुकार भरने वाले, 'तुम मुझे खून दो- मैं तुम्हें आजादी दूंगा' का नारा बुलंद करने वाले 'आज़ाद हिंद फौज' के निर्माता एवं सेना नायक, सुभाष चंद्र बोस के एक सहयोगी, स्वतंत्रत सेनानी श्री हीरा सिंह से उनके निवास स्थान, नौहराधार में मिला था। दोनों ही सेनानी बरसों से एक दूसरे से परिचित हैं। हीरा सिंह ने बताया कि पझौता गोली कांड ने सिरमौर के युवाओं में जोश भर दिया था। अनेक युवक आंदोलनों से जुड़े। देश को आजाद कराने के लिए उन्होंने आजाद हिंद फौज' को चुना और बर्मा चले गए। सुभाष चंद्र बोस की वाणी खून में उबाल पैदा कर देती थी। लोग लाख कमियों के बावजूद अंग्रेजों से देश आजाद करवाने के लिए अपना खून बहाने को तैयार हो जाते थे। 5 फरवरी को 1944 को अराकान में अंग्रेजों के साथ हुए आजाद हिंद फौज के युद्ध के दौरान मात्र पच्चीस जवानों ने अंग्रेजों के 700 जवानों को पीछे हटने पर मजबूर कर दिया था। इस टुकड़ी का नाम 'बहादुर ग्रुप' था जिसकी कमान देहरा (कांगड़ा) के लै. कर्नल मेहर दास के हाथ में थी जबकि सैकिंड इन-कमांड चढ़ियार (पालमपुर) के कै. बख्शी राम थे। इन दोनों पहाड़ी अधिकारियों के बहादुर ग्रुप ने अंग्रेजी फौज को नाकों चने चबवा दिए लेकिन 1 मार्च 1944 को रसद और हथियारों की कमी के कारण इन्हें पीछे हटना पड़ा। आज़ाद हिंद फौज में लगभग 3,50,000 जवान थे जिनमें चार हजार से अधिक जवान अकेले हिमाचल प्रदेश के थे जिन्होंने अंग्रेजों के साथ अत्यधिक बहादुरी से लोहा लिया। भूखे प्यासे रहे लेकिन अंग्रेजों के आगे घुटने नहीं टेके।

1943 के बाद हिमाचल की सभी रियासतों में भारत छोड़ो आंदोलन, प्रजा मंडलों का गठन असहयोग आंदोलन तथा सत्याग्रह का दौर चल पड़ा। इन आंदोलनों में स्कूली बच्चों ने भी जुलूस

निकाल कर अंग्रेजी सरकार के खिलाफ नारे लगाए। इन बच्चों ने हर महीने की 9 तारीख को शिमला की सड़कों पर जुलूस निकाल कर अंग्रेजी सरकार के खिलाफ अपना विद्रोह जारी रखा।

भारत छोड़ो आंदोलन अपनी चरम सीमा पर था। पहाड़ी रियासतों में विद्रोह की चिंगारी लपटों में बदल गई थी। आजाद हिंद फौज ने जापानी सेना के साथ मिलकर अंग्रेजों का सामना करते हुए साम्राज्यवादी देशों की सेनाओं को छटी का दूध याद करवा दिया था। संसाधनों की कमी के कारण 20 जून 1944 को पीछे हटना पड़ा। युद्ध बंदियों को दिल्ली लाया गया। मेजर दुर्गामल, जिन्हें 27 फरवरी, 1944 को जासूसी के आरोप में गिरफ्तार किया गया था, ने अंग्रेजों से माफी मांगने से इनकार कर दिया। धर्मशाला के इस वीर गोरखा जवान को 31 वर्ष की आयु में दिल्ली के लाल किले में फांसी पर लटका दिया गया। मेजर दुर्गा मल ने अपने देश की आजादी के लिए हंसते-हंसते फांसी के फंदे को चूम लिया। आजाद हिंद फौज के युद्ध बंदियों को छोड़ने के लिए पूरे देश में प्रदर्शन हुए। हिमाचल प्रदेश की सभी रियासतों में भी प्रदर्शन हुए लेकिन धूर्त अंग्रेजों का दिल नहीं पसीजा। 1945 में 'भारत छोड़ो' आंदोलन शिथिल पड़ गया। युद्धबंदियों के साथ अमानवीय व्यवहार हुआ। गांव दाड़ी, धर्मशाला के वीर सपूत कैप्टन दल बहादुर थापा को अनेक शारीरिक-मानसिक यातनाएं दी गईं लेकिन सर पर कफन बांधे, मातृभूमि को आजाद कराने निकले आजाद हिंद फौज के इस वीर ने हार नहीं मानी। 3 मई 1945 को कैप्टन दल बहादुर थापा को ब्रिटिश सरकार ने फांसी पर लटका दिया।

स्वतंत्रता संग्राम के इतिहास को कुछ पन्नों में समेटना उन तमाम शहीदों-सेनानियों के साथ अन्याय होगा जिन्होंने अपना तन-मन-धन, अपना सर्वस्व, भारतमाता की बेड़ियों को काटने के लिए बलिदान कर दिया। लेकिन इस कलम में वह ताकत नहीं कि वह उन रणबांकुरों की महिमा का बखान कर सके, जिन्होंने आज हमें गुलामी की जंजीरों से आज़ाद करवाया। इसे दुर्भाग्य ही कहा जा सकता है कि अनेक राजवंशों की विलासिता और अंग्रेज-परस्ती ने इस देश को सदियों तक गुलाम बनाए रखा। लेकिन ऐसे भी रजवाड़े थे जो इस देश को धूर्त अंग्रेजों के पंजों से छुड़ाना चाहते थे। इतिहास गवाह है आखिर अंग्रेज समझ गए, अब इस मुल्क को ज्यादा देर तक गुलाम बनाकर नहीं रखा जा सकता। आजादी की लड़ाई अब निर्णायक दौर में थी। महात्मा गांधी, जवाहर लाल नेहरू, सरदार बल्लभ भाई पटेल, मौलाना अबुल कलाम आजाद, अरुणा आसफ अली, राजकुमारी अमृत कौर, सरोजनी नायडू, गोविंद वल्लभ पंत, मास्टर तारा सिंह और न जाने कितने सूफी-संतों, आम लोगों ने किसी-न-किसी रूप में इस महायज्ञ में अपनी आहूतियां डालीं। उन सबका ज़िक्र करना संभव नहीं है। जिला शिमला और जिला सिरमौर में अंग्रेजों की दमनकारी नीतियों ने जो कहर बरपाया था, उसने पूरे देश को हिला कर रख दिया था। इस सबसे घबराकर 23 जून, 1945 को लॉर्ड बेवल ने शिमला में राष्ट्रीय नेताओं का एक सम्मेलन बुलाया। इस सम्मेलन में सभी विशिष्ट नेताओं ने शिरकत की। महात्मा गांधी, जवाहर लाल नेहरू, अब्दुल गफ्फार खान, सरदार वल्लभ भाई पटेल, मौलाना अबुल कलाम आजाद, आचार्य कृपलानी, गोविंद वल्लभ पंत, अरुणा आसफ अली, भूले-भाई देसाई, सरोजनी नायडू आदि अनेक नेताओं ने इस सम्मेलन में भाग लिया। इस सम्मेलन में स्थानीय नेताओं ने इन राष्ट्रीय नेताओं का स्वागत-सत्कार किया। महात्मा गांधी समरहिल में राजकुमारी अमृत कौर के निवास स्थान में मन्सूर विला में ठहरे। 15 दिनों के शिमला प्रवास के दौरान इन राष्ट्रीय नेताओं ने अपने भाषणों से पर्वतीय रियासतों के शासकों की चूलें हिला कर रख दी थीं। स्वं. पं. सीता राम जी ने लेखक को बताया कि इन नेताओं की शिमला उपस्थिति ने सभी क्रांतिकारियों को एकजुट किया। इससे पहाड़ी रियासतों की रियाया जोश से भर उठी।

15 अगस्त 1947 को देश आजाद हुआ। लेकिन साथ ही दो टुकड़ों में भी बंट गया। अलबत्ता शिमला और सिरमौर के सेनानियों ने प्रदेश और देश के स्वतंत्रता सेनानियों के साथ कंधे-से-कंधा मिलाकर जिस तरह से अंग्रेजों की दमनकारी नीतियों का विरोध करते हुए अपने प्राण न्योछावर किए, उसे भुलाया नहीं जा सकता।

अफसोस इस बात का है कि 16 जुलाई 1939 की याद में अब कोई शहीदों को याद नहीं करता न ही पझौता के किसानों को बलिदान को राष्ट्र या प्रदेश याद करता है। यहां तक कि स्वतंत्रता सेनानियों और स्वतंत्रता संघर्ष को पाठ्य-पुस्तकों में भी स्थान नहीं मिल पा रहा है।

गांव व डाकघर हलोग (धामी) तहसील व जिला शिमला, हिमाचल प्रदेश-171 103, मो. 94180 21480

संदर्भ ग्रंथ एवं व्यक्ति

1. हिमाचल प्रदेश में स्वतंत्रता संग्राम का संक्षिप्त इतिहास, भाषा एवं संस्कृति विभाग, हि. प्र.
2. स्व. पं. सीताराम जी स्वतंत्रता सेनानी
3. स्व. मुंशी रामलाल जी (प्रत्यक्षदर्शी एवं तत्कालीन रियासत धामी में धामी गोलीकांड के समय के रियासती अहलकार)
4. ठाकुर हीरा सिंह, स्वतंत्रता सेनानी गांव नौहराधार (सिरमौर) आजाद हिंद फौज के सैनिक
5. पं. मेहर चंद (पझौता कांड के सैनिक) गांव टील, सराहन तहसील चौपाल, जिला शिमला।
6. स्व. मनसा राम चौहान गांव रौड़ी जिला सोलन (स्वतंत्रता सेनानी एवं डॉ. वाई.एस. परमार के सहयोगी)

समीक्षा

सामाजिक कसमसाहट का जीवंत चित्रण
दस प्रतिनिधि कहानियां

● पूजा प्रजापति

जैसे ही विदेश, प्रवासी या विदेशी शब्द जहन में आते हैं तो, एक ही बात ध्यान में आती है कि वह संस्कारहीन, आदर्शहीन होते हैं। क्या, यह सिर्फ एक धारणा है या एक मिथ्या भ्रम? संभवतः हो सकता है कि यह सत्य भी हो, लेकिन क्या यह तय कर लेना उचित है कि सभी विदेशी और प्रवासी संस्कारहीन और आदर्शहीन ही होते हैं? हमारे हाथ की पांचों उंगलियों में से अगर एक उंगली सबसे छोटी है तो क्या सभी छोटी कही जा सकती हैं? नहीं न फिर, यही तार्किकता विदेश, प्रवासियों और विदेशियों पर बात करते वक्त कहां चली जाती है? प्रायः कहा जाता है कि विरहावस्था में ही प्रेम पराकाष्ठा तक पहुंचता है। ठीक ऐसे ही भारत से दूर रह रहे हमारे भारतीय जब विदेश में चले जाते हैं तब उन्हें, भारत से और अधिक लगाव हो जाता है। वह लोग वहां जाकर पूरी तरह से विदेशी नहीं बन पाते हैं, क्योंकि उनके भीतर संस्कारों का बीज फल-फूल चुका होता है। उनके भीतर एक कसमसाहट रहती है, जिसके चलते वह दोनों संस्कृतियों की तुलना करते हुए, अपने को उसे जुदा रखने की कोशिश करते हैं। उनकी यही कोशिश उन्हें कभी पूर्णतः विदेशी नहीं बनने देती। प्रवासी साहित्य में प्रायः संस्कृति और मूल्यों की टकराहट के बीच फंसे व्यक्तियों के अंतर्द्वंद्व को दिखाया गया है। साथ ही, विदेशी पृष्ठभूमि पर होने वाले सामाजिक बदलावों की नींव तक पहुंचने की कोशिश भी की गई है।

जीवन के अनेक पहलुओं को चित्रित कर, भारतीय प्रवासी लेखिका सुधा ओम ढींगरा अपनी कहानियों में उस सच को प्रस्तुत करती हैं जो शायद, आधुनिकता की चकाचौंध तथा भावनाओं की मृत्युशैया में कहीं दफन हो गया था। इनकी कहानिहयों में केवल स्त्री ही केंद्र में नहीं बल्कि पुरुष के साथ-साथ हर वह पीड़ित तबका भी है जिसे किसी-न-किसी ने शोषित किया हो। फिर वह शोषक चाहे उसके अपने परिजन हों या कोई प्रतिष्ठित संस्था। विवाह भी एक ऐसी ही संस्था है जिसने कई व्यक्तियों की जिंदगी का भरपूर शोषण किया है।

शिवना प्रकाशन से प्रकाशित समर्थ लेखिका सुधा ओम ढींगरा की पुस्तक 'दस प्रतिनिधि कहानियां' श्रेष्ठ कहानियों का संकलन है। 'बेघर सच', 'कमरा नंबर 103', 'आग में गर्मी क्यों है?', 'सूरज क्यों निकलता है?', 'क्षितिज से परे', 'विष-बीज', 'कौनसी जमीन अपनी', 'टॉरनेडो', 'वह कोई और थी', 'पासवर्ड' इत्यादि कहानियां संवेदना और शिल्प की सम्पूर्णता लिए हुए हैं। इस कहानी संग्रह के शुरुआत में हिंदी के युवा प्रतिष्ठित लेखक पंकज सुबीर द्वारा लिखी विस्तृत भूमिका कहानियों पर बेहतर प्रकाश डालती है। उन्होंने विस्तृत रूप से कहानियों का आलोचनात्मक विश्लेषण कर लेखिका के कहानी-कौशल पर भी चर्चा की है। साथ ही, प्रतिष्ठित रचनाकारों द्वारा लेखिका सुधा ओम ढींगरा की कहानियों तथा उनके कथा-संसार पर की गई संक्षिप्त टिप्पणियां भी संगृहीत किया गया है।

'बेघर सच' कहानी में रंजो के माध्यम से लेखिका ने एक स्त्री के अस्तित्व की खोज की है। प्रायः बेटी के रूप में स्त्री को पराया धन कह कर अपने से मानो जैसे अलग कर दिया जाता है। मायके में दूसरे की अमानत और ससुराल में दूसरे घर से आई स्त्री का बिल्ला उसके दामन से कभी नहीं हटता। संस्कृति की वाहन मानी जाने वाली स्त्री प्रायः किसी-न-किसी कला की स्वामिनी भी होती

कहानी संग्रह
दस प्रतिनिधि कहानियां,
लेखिका : **सुधा ओम ढींगरा**,
प्रकाशक : **शिवना प्रकाशन, सीहोर, मध्य प्रदेश;**
संस्करण : **2015**,
मूल्य : **100 रुपये**



है। ऐसे में जब वह उसी कला के साथ ससुराल में आती है तो उसकी कला को निष्प्राण करने की भरसक चेष्टा की जाती है। इस कार्य में कई बार ससुराल पक्ष की जीत होती है, लेकिन उस आने वाली बहू की कला की असामयिक मृत्यु। क्या, स्त्री के शादी कर लेने का अर्थ खुद को तथा अपनी प्रतिभा को हमेशा के लिए तिलांजलि दे देना है?

'कमरा नंबर-103' में लेखिका ने बड़ी कुशलता से मुख्य पात्र (मिसेज वर्मा) को संवादहीन रखते हुए भी उसकी पीड़ा को मुखरता प्रदान की है। बार्नज अस्पताल की नर्सें टैरी और ऐमी की वाक्‌पटुता, मिसेज वर्मा की चुप्पी के साथ मिलकर एक नए किस्म की संवाद शैली को जन्म देती हैं। नर्सें टैरी और ऐमी के बीच का संवाद कहीं भी मिसेज वर्मा की चुप्पी से टूटता-बिखरता नहीं है। दोनों संवाद ऐसे घुल-मिल जाते हैं, जैसे तीनों आपस में ही कर रहे हैं। प्रवासी परिवेश की इन कहानियों में भागती-दौड़ती ज़िंदगी के बीच उस भाईचारे और सौहार्द के भी संकेत मिलते हैं, जिनके अब भारतीय भूमि से नामोनिशां तक मिटने लगे हैं। भारतीय अस्पतालों की अगर बात करें तो वहां नर्सें इतने रुखे व्यवहार से पेश आती हैं कि जैसे मरीज का खर्चा वही उठा रही हों। मरीज के शरीर की देखभाल तो क्या भर्ती होने पर उनसे आप अपनी दवाई भी दोबारा नहीं पूछ सकते। विदेशी सरकारी अस्पतालों की इस खूबी को यह कहानी प्रस्तुत करती है।

'आग में गर्मी कम क्यों है?' कहानी में जेम्ज के साथ सम्बंध रखने वाला शेखर अपनी मृत्यु के बाद साक्षी के लिए कई सवाल छोड़ गया। वह सब कुछ स्वीकार करते हुए भी जानना चाहती है कि उसके प्यार में कहां कमी रह गई थी।

लेखिका ने अपनी अगली कहानी 'सूरज क्यों निकलता है?' में होमलेस और गरीबी रेखा से नीचे बसर करने वालों को सरकार द्वारा प्राप्त होने वाली सुविधाओं का होता गलत इस्तेमाल इसमें प्रस्तुत किया गया है। बैठे-बिठाए मिलने वाली दो जून की रोटी का जुगाड़ लोगों को गतिविहीन, मक्कार, धोखेबाज बना देता है। पीटर और जेम्स खाना खाने के लिए मिलने वाले कूपन को बेचकर शराब से गला तर करना और जवानी की रंगत से आंखे चमकाना ज्यादा बेहतर समझते हैं। प्रस्तुत कहानी एक ऐसे बड़े समुदाय को सीख देती है जो मांगने वाले लोगों की हैल्प कर गुप्तदान से अपना जन्म सुधारते हैं। हम किसी के मुंह में निवाला देकर उसकी मदद के साथ-साथ उसे परिश्रम करने से भी रोकते हैं। कहानी में पीटर और जेम्स का जीवन ऐसे लोगों का प्रतिनिधित्व करता है जिन पर बदतर हालात पर भी रहम नहीं करना चाहिए। ऐसे लोग अपनी गरीबी हमेशा बनाए रखना चाहते हैं जिससे, उनकी मदद होती रहे और उन्हें मेहनत न करनी पड़े।

'क्षितिज से परे...' कहानी में लेखिका ने स्त्री के अस्तित्व की लड़ाई को पेश किया है। इसमें उन्होंने मानसिक और शारीरकि पीड़ा झेलती रहती उन स्त्रियों से संवाद किया है जो, समाज के डर से खुद को पीड़ित होने देती हैं। बचपन से समाज उन चार लोगों का डर घुट्टी की तरह पिला देते हैं जिसे फिर, दिमाग से या कहूं तो अपने अस्तित्व से निकाल पाना नामुमकिन होता है। यही अदृश्य डर कई ज़िंदगियों के लिए मात्र जहर से बढ़कर कुछ भी नहीं। सारंगी जिसने अपने 40 साल पति के साथ बिताए या कहूं तो घसीटे उसके लिए अब निभा पाना मृत्यु से कम नहीं था। हालांकि वह, मर तो रही थी हर पल। लेकिन अब पानी सर से ऊपर जा चुका था। अब वह केवल 10वीं पास एक मामूली स्त्री नहीं बल्कि एक प्रोफेशनल पेंटर, समाजसेवी नर्स तथा परिजन बन कर एक व्यापक परिवार का हिस्सा बन चुकी थी। अब उसकी प्राथमिकताएं पहले जैसी चारदीवारी में कैद नहीं थी, अब वह क्षितिज से परे खुले आकाश में स्थापित हो चुकी थीं। उसका पति सिर्फ एक मशीन बनकर रह गया था, जो सिर्फ जरूरत पड़ने पर पैसे तो दे सकता है लेकिन, किसी के दुःख-दर्द से पीड़ित नहीं हो सकता। बिलकुल, ए.टी.एम. जैसा। विदेश में जाकर नए परिवेश में बसने के संघर्ष को दोनों झेलते हैं लेकिन, दोनों का संघर्ष अलग-अलग और महत्त्वपूर्ण है। इसी बात को उसका पति समझना नहीं चाहता। अनगिनत अत्याचार सहकर भी शादी से बंधे रहना, इस तरह के दकियानूसी विचारों का मोह केवल लोगों के जीवन को तबाह कर सकता है, उन्हें आबाद नहीं। स्त्री-शक्ति को चित्रित करती यह कहानी काफी सशक्त कहानी है।

'विष-बीज' इस कहानी में एक बलात्कारी बनने की प्रक्रिया, उसका हवसभरा जीवन और फिर बाद में उसका इकबाल-ए-जुर्म है। रोजमर्रा की सहचर होती बलात्कारों की घटनाओं के चलते कई लोग बलात्कारियों के अंग-भंग की मांग करते हैं, जिससे संभवतः इनके रुकने तथा कम होने के आसार लगते हैं। कहानी में इस अहम मांग को भी उठाया गया है। इस कहानी के द्वारा ऐसे कई संस्थानों का पर्दाफाश भी किया गया है जो अपने स्वार्थों की पूर्ति के लिए सरकार से अनुदान प्राप्ति के लिए कई जिंदगियों से खिलवाड़ करते हैं।

'कौन सी जमीन अपनी' हमारे अपने खास रिश्ते जिन्हें हम संभवतः पूजते हैं, उन रिश्तों के द्वारा मिलने वाले विश्वासघात की कहानी है। एक बड़ी कहावत है जर, जोरू और जमीन यह तीनों फसाद की जड़ हैं। इस कहानी का यही केंद्र कहा जा सकता है। मनजीत सिंह, अमेरिका का ग्रीनकार्ड होल्डर लेकिन उसका मन पूर्णतः भारत का नागरिक। मनजीत सिंह बचपन से लेकर जवानी तक की सभी खट्टी-मिट्ठी यादों को अमेरिकी की सुख-सुविधा से परिपूर्ण जिंदगी में भी याद करता है। मनजीत सिंह एक ऐसे कल्पनालोक में जीता है जिसमें केवल और केवल रिश्तों का आदर्श रूप ही उस लोक का अधिष्ठाता है। इस कहानी में एक ऐसे मध्यवर्गीय परिवार की विडंबना को चित्रित किया गया है, जो

अपनी गरीबी मिटाने के लिए एन.आर.आई. बहू को तो अपना लेते हैं, लेकिन उसे हमेशा बेटे को दूर करने वाली करमजली से ज्यादा मान नहीं देते हैं। अपने सगे-रक्त-सम्बंधियों के लिए मनजीत केवल ए.टी.एम. मशीन है जो समय-समय पर कभी जमीन तो कभी पैसा उगलती है। 'पासवर्ड' कहानी में लेखिका ने उन मध्यवर्गीय लोगों को चित्रित किया है जो विदेश का वीजा प्राप्त करने के लिए लालायित रहते हैं। ऐसे लोगों से शादी कर उन्हें ग्रीन कार्ड पाने की जल्दी रहती है। ऐसे मध्यवर्गीय लोगों की जालसाजी का पर्दाफाश कर लेखिका ने अपनी कथ्य-विभिन्नता की विशेषता को समृद्ध किया है। स्त्री की उस छवि को चित्रित किया गया है, जो अपने प्रेमी के साथ मिलकर षड्यंत्र रचती है। वह अपने पति को सम्बंध बनाने नहीं देती लेकिन उससे मिलने वाले ग्रीन कार्ड का भरपूर फायदा लेना चाहती है। स्त्रियों पर होने वाले अत्याचारों को देखते हुए उनकी सुरक्षा के लिए कानून समय-समय पर कई संशोधन करता आया है। इन संशोधनों के प्रयोग से कई घर जहां टूटने से बचे भी हैं तो वहीं कई टूटे भी हैं। क्योंकि हर वस्तु, नियम का गलत और सही दोनों तरह से इस्तेमाल किया जा सकता है। यहां भी कुछ ऐसा मामला है। यहां स्त्री-अधिकारों का उपयोग अपनी ही स्वार्थसिद्धि के लिए हो रहा है। विदेश में प्रवास के दौरान लिखी गई इन कहानियों में भारतीय संस्कृति के मूल्यों, आदर्शों को विदेशी माहौल में जीवित रखने की एक द्वंद्वात्मक स्थिति मिलती है। इन कहानियों में दो संस्कृतियों तथा दो देशों की टकराहट व परम्परागत मूल्यों के निरंतर ह्रास को देखकर उत्पन्न हुई पीड़ा मिलती है। यह विशेषता भारतीय भूमि पर लिखे हिंदी साहित्य की कहानियों में प्रायः नहीं मिलती। लेखिका सुधा ओम ढींगरा किसी एक वर्ग (स्त्री-पुरुष) की पक्षपाती नहीं, बल्कि शोषण के विरुद्ध पीड़ित वर्ग के साथ दिखती हैं। ये सभी कहानियां रिश्तों के बीच की कसमसाहट को जीने वाले पात्रों का जीवंत कच्चा चिट्ठा है। यहां रिश्तों में आई कड़वाहट, ऊब, घुटन, बेचैनी, कसक, अनिच्छा, बोझिलता, पीड़ा, उदासीनता, उपेक्षा, खुदगर्जी, शून्यता इत्यादि स्पष्टतः देखी जा सकती है। लेखिका अपनी सभी कहानियों के पात्र तथा वातावरण विदेशी रखकर भी उसे कहीं बोझिल बनने नहीं देती। कहानियों को पढ़कर कहीं भी ऐसा नहीं लगता कि यह सभी कहानियां विदेश की हैं, क्योंकि इनमें आए पात्र और समस्याएं हमारे आस-पास ही मौजूद हैं। लेखिका की भाषा शुरू से ही पाठक को अपने से जोड़े रखती है। इनकी सहज, सरल और पात्रानुकूल भाषा कहानी में निरंतर कौतूहल बनाए रखती है। प्रवासी लेखिका सुधा ओम ढींगरा की इन दस प्रतिनिधि कहानियों को पढ़कर आप यह नहीं कह सकते कि यह दलितवादी या स्त्रीवादी लेखिका हैं। इन्होंने इन सभी कहानियों में विषय-वैविध्य को बनाए रखा है। समाज में जो जैसा, जितनी विद्रूपता को ओढ़ते हुए सच विद्यमान हैं इन्होंने उसे वैसा ही बिना छिपाए और अतिशयोक्ति प्रस्तुत किया है। यही विशिष्टता लेखिका की कहानियों की अपनी खास पहचान है।

एम.फिल., अम्बेडकर विश्वविद्यालय,
दिल्ली, मो. 97112 54428

समीक्षा

एक संवेदनशील विषय 'भारतीय शिक्षा चौराहे पर'

• मनोज कुमार 'प्रीत'

पंजाब के वरिष्ठ शिक्षाविद् डॉ. हरनेक सिंह कैले की नव प्रकाशित पुस्तक 'भारतीय शिक्षा चौराहे पर' ने एक ज्वलंत व संवेदनशील विषय को चुना है। इसमें डॉ. कैले के जीवन के छह दशकों का विशाल अनुभव समाहित है। उन्होंने अपना पूरा जीवन सादगी व ईमानदारी से शिक्षा के प्रति समर्पित किया है। प्रारम्भिक शिक्षा से लेकर उच्चतम शिक्षा को अनेक आयाम देकर पुस्तक को इक्कीस भागों में विभक्त कर, अनेक मुद्दों के प्रश्नों को समाधान सहित संजोया है। भारतीय शिक्षा प्रणाली के पूरे लगभग साठ वर्षों का लेखा-जोशा उन्नति व अवनति सहित दर्शाया गया है।

समय-समय पर होते परिवर्तन, शिक्षा का घटता स्तर विद्यार्थियों व अध्यापक वर्ग की जिम्मेदारियां, शिक्षा पद्धति का अनुचित मापदण्ड व युवा वर्ग के विघटन सरीखे कई पहलुओं पर बड़ी गंभीरता से विचार व समाधान झलकता है। नकली डिग्रियों, सरकारी कमीशनों व सरकारी खस्ता नीतियों को भी बड़ी दृढ़ता से पेश किया गया है। डॉ. कैले लिखते हैं कि भारतीय शिक्षा को भारी तबदीली, लगभग एक इन्कलाब की आवश्यकता है।



भारतीय शिक्षा चौराहे पर, लेखक : **डॉ. हरनेक सिंह कैले**, प्रकाशक : **अमृत बुक्स, कैथल, हरियाणा;** संस्करण : 2014, मूल्य : 200 रुपये

हमारा परीक्षात्मक ढांचा, विद्यार्थियों में सृजनात्मकता, अध्यापक बच्चे के गुणों का विकास कैसे करें? नकल की रोकथाम कैसे अध्यापक में सहनशीलता का गुण व मातृभाषा की शिक्षा आदि अनेक विचारशील मुद्दों का विश्लेषण किया है। शिक्षा के क्षीण हो रहे स्तर पर गहरी चोट दी गई है। न केवल सरकार बल्कि अध्यापक वर्ग के अवगुणों को भी सटीक प्रहार के रूप में दर्शाया गया है। आज हमारे समाज को एक नए क्रम व सार्थक शिक्षा प्रणाली की आवश्यकता है। जिसे वास्तव में एक इन्कलाब सरीखे नया रंग देना होगा। डॉ. हरनेक कैले की यह पुस्तक हमारे लिए उपयोगी सिद्ध होगी। डॉ. कैले की इसदसवीं पुस्तक उपरांत एक बड़े शिक्षा जगत से जुड़े वर्ग को जहां लाभ होगा, वहीं इस कलम से और जिज्ञासा बनी रहेगी।

प्रीत साहित्य सदन, अरजन देव नगर, समराला चौक, लुधियाना, पंजाब-141 008, मो. 98144 30162

समीक्षा

संघर्षमय जीवन की कविताएं 'क्षितिज के उस पार'

● **डॉ. लेखराज**

आदमी जो कुछ भी अनुभव करता है वह उसे अभिव्यक्ति देने को सदैव तत्पर रहता है। कवि जब अपने भीतर उत्पन्न भावनाओं से आंदोलित होकर जब किसी रचना का सृजन करता है तो उसे एक अद्भुत संतोष की प्राप्ति होती है। उसकी भावाभिव्यक्ति उसके मन को अद्भुत शांति से सराबोर कर उसे तनावमुक्त कर देती है। इसी प्रकार की क्रिया पाठक के मन-मस्तिष्क एवं हृदय पर अपना प्रभाव डाले तो कवि का उद्देश्य भी सफल हो जाता हे। लेकिन कुछ रचनाकार अपने भावों को शब्दों में पिराते तो हैं लेकिन अपनी व्यस्तताओं में खो कर इस तरफ अपना ध्यान लगातार नहीं रख पाते। कुछ आर्थिक कारणों से उन्हें प्रकाशित नहीं करवा पाते और गुमनामी के जंगल में उनकी रचनाएं पड़ी रहती है। हमारी साहित्यिक संस्थाओं का यही कर्तव्य रहता है कि ऐसे गुमनाम रचनाकारों को साहित्यिक कर्म से जोड़ें और गुमनामी के जंगल से निकाल कर लोगों पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करें। पालमपुर जैसे स्थान पर नरेश कुमार उदास जी तथा उनके सहयोगियों के सहयोग से निर्झर साहित्य मंच ऐसा ही कार्य कर रहा है जो हाशिए पर गए रचनाकारों को मुख्यधारा में लाकर उनकी रचनाओं से लोगों को अवगत करवाने का कार्य करता आ रहा है। पिछले दिनों उन्होंने प्रसिद्ध कवयित्री उषा कालिया के पहले काव्य संग्रह 'क्षितिज के उस पार' का लोकार्पण ही नहीं कराया बल्कि उस पर वृहद गोष्ठी भी करवाई। उषा कालिया अपने विद्यार्थी जीवन से ही कविता रचना करती रही हैं। लेकिन उनका यह क्रम विभिन्न पारिवारिक परिस्थितियों के कारण बीच-बीच में टूटता रहा है। कभी नौकरी के कारण व्यस्तता और कभी घर-गृहस्थी को संभालने का दायित्व आड़े आता रहा लेकिन उनकी साहित्य-सृजन सक्रियता नरेश उदास के सहयोग से धीमे- धीमे चलती रही। साहित्य सृजन की उमंग सदैव जीवित रही। आखिर उनके सपनों को फल लगा और उनका पहला काव्य संग्रह हमारे हाथों में है।

कविता के प्रति उनका दृष्टिकोण बड़ा सकारात्मक है। कविता मनुष्य को दुख से निकाल कर सुख के संसार में ले आती हैं। इस तरह वह कविता को लोकहित की उन्नायिका और जीवन को सुखमय बनाने वाली स्वीकार करती है। वह कहती है कि जब

किसी के हृदय में कविता उतरती है तो समझो उसके जीवन में वसंत का ही आगमन हुआ हो। उनकी इस संग्रह की प्रथम कविता ही उनके दृष्टिकोण को उजागर करती है-

‘वसंत का आगमन है कविता
किसी के जलते मन पर
ओस की बूंद है कविता
काल कोठरी से
भयभीत नहीं होने देती कविता...
कविता के बिना जीवन
भला कभी संभव है
शायद नहीं।’

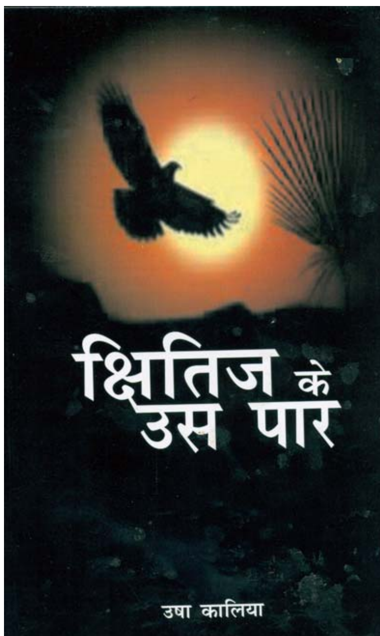
भारतीय मनीषियों ने भी काव्य को जीवन का एक अभिन्न अंग स्वीकार किया है। उषा कालिया की कविता भी जीवन के छोटे-छोटे अहसासों को अत्यंत सरल एवं सादा ढंग से अपनी कविताओं में पिरोने का प्रयास किया है। नैतिक जीवन मूल्यों के हक में खड़ी उनकी कविताएं आधुनिक युवा पीढ़ी की चेतना को खंगलाने का प्रयास करती दिखाई देती हैं। बहाने बनाकर अपनी अकर्मण्यता को टालने की आज की पीढ़ी की प्रवृत्ति को वह रद्द कर उन्हें अपने काम में जुट जाने की प्रेरणा देती हैं। इस तरह उनकी कविता जीवन में रंग भरने, जिंदगी के गमों को खुशियों में बदलने, सत्यपथ पर आगे बढ़ने, हिंसा द्वेष, लालच से दूर रहते हुए आगे बढ़ने का साहस उत्पन्न करती हैं। उनके अनुसार सब कुछ कर्म पर टिका हुआ है -

कर्म हमें सिखाता है
आगे बढ़ने को हमेशा प्रेरित करता है
हम अच्छे कर्म करें
सत्य कर्मों में जीवन जीएं
मात्र बातें न बनाएं
कुछ करके दिखाएं
और आने वाली पीढ़ी के लिए
प्रकाश स्तम्भ बन जाएं।’ (पृ. 109)

इन कविताओं में यहां उन्होंने मानव जीवन के प्रति प्रेम दिखाया है वहां पशु प्रेम की अभिव्यक्ति भी इन कविताओं में हुई है। प्रेम के साथ इन कविताओं में पीड़ा, उदासी, टूटन और संतोष आदि का सघन स्वर भी मुखर हुआ है। यह व्याकुलता कहीं बचपन में छूट चुकी सहेलियों से पुनः मिलन की है तो कहीं मौसमों की तरह बदलते, मतलबों के लिए मुखौटा ओढ़ते दोस्तों को देख कर और कहीं आवारा गाय की पीड़ा को देखकर उत्पन्न होती है। कहीं निकम्मे लोगों को बहाने बनाते देखकर उत्पन्न होती है तो कहीं बेरोजगार युवाओं को टूटते देखकर और कहीं ईमानदार लोगों को बेबस पैरों तले रौंदते और अपमानित होते देखकर होती है। वे इन सबसे छुटकारा पाने के लिए दुआओं का आसरा लेना चाहती है लेकिन जीवन का रास्ता भी छोड़ना नहीं चाहती। इन पीड़ाओं को दुखों को झेलने की ताकत संजोना चाहती है, झुकना नहीं चाहती।

‘बिखरना भी नहीं
जीवन भर संघर्ष करना चाहती है
बेशक समस्याएं
मुझे तार तार करने को आतुर हैं
मैं सत्यपथ पर निरंतर आगे बढूंगी
जीवन भर नहीं बिखरूंगी
नहीं हारूंगी।’

इस कविता संग्रह की कविताएं साधारण आदमी को संघर्षमय जीवन जीने के लिए उत्साहित करेंगी उनकी कविताएं जिंदगी के क्रूर यथार्थ से भी टकराती नज़र आती हैं। जीवन में नैतिक मूल्यों को स्वीकारने और सामाजिक विसंगतियों को दूर करने के लिए एक प्रयास है। इस तरह इस संग्रह की अनेक कविताएं जैसे दोस्ता, मुन्ना और दादा जी, नदी नहीं लौटती, सांसों की डोर, उजाला, महंगाई, कवि, इनसान, बेरोजगार, मंजिल, प्रारब्ध, अब मैं स्कूल जाऊंगी, अध्यात्म, मैं बिखरना नहीं चाहती अत्यंत सशक्त हैं और हमारे भीतर हृदय को प्रभावित करती हैं। आशा है कि हिंदी साहित्य के कविता काव्य रूप के पाठकों को पसंद करने वाले उषा कालिया की इन कविताओं को भी पसंद करेंगे।



क्षितिज के उस पार (कविता संग्रह), लेखिका : **उषा कालिया**, प्रकाशक : **एजुकेशनल बुक सर्विस, नई दिल्ली;** संस्करण : **2014**, मूल्य : **150 रुपये**

शहीद भगत सिंह नगर, सुजानपुर (पठानकोट),
पंजाब-145 023, मो. 94644 25912